पस्तक संख्या 2 खण्ड IV से VI -14 जलाई.1947 से 27 जनवरी.1948

अंक-4 पुस्तक संख्या-2 दिनांक 14.07.1947 से 31.07.1947

भारतीय संविधान सभा

(भारतीय विधान परिषद)

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली द्वारा पुनर्मुद्रित

CON. 3. 4.1.47
1000

अंक 4
संख्या 1

सोमवार
14 जुलाई
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1.	परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना	...	1
2.	बर्मा विधान परिषद के सभापति का संदेश	...	14
3.	आर्डर आफ बिजिनेस कमेटी की रिपोर्ट तथा नियमों में संशोधन	...	14
4.	कमेटियों के लिये सदस्यों का निर्वाचन	...	32
5.	उपाध्यक्षों का चुनाव	...	35
6.	परिशिष्ट	...	39

भारतीय विधान-परिषद्

सोमवार, 14 जुलाई, सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में सोमवार तारीख 14 जुलाई सन् 1947 ई. को प्रातःकाल 10 बजे माननीय डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना

***अध्यक्षः** जिन सदस्यों ने अभी तक अपने परिचय-पत्र पेश न किये हों और रजिस्टर पर हस्ताक्षर न किये हों, वे अब ऐसा कर सकते हैं।

मंत्री ने हाजी अब्दुल सत्तार हाजी इशहाक सेठ का नाम पुकारा।

***श्री देशबन्धु गुप्त** (दिल्ली): अध्यक्ष महोदय, क्या मैं एक वैधानिक आपत्ति पेश कर सकता हूं ?

माननीय सदस्य से हस्ताक्षर कराने के पूर्व मैं यह जानना चाहूंगा कि उनसे यह प्रश्न पूछना कि वे अब भी दो राष्ट्रों के सिद्धान्त में विश्वास रखते हैं या नहीं, क्या हाउस के लिये उचित नहीं होगा ? मैं यह मानता हूं कि एक स्वतन्त्र और सर्वोच्च अधिकार प्राप्त संस्था होने के नाते तथा विभाजन के विचार से, जिसका निश्चय हो चुका है, हमें सम्पूर्ण प्रश्न पर पुनः विचार करना चाहिये और यह निश्चय करना चाहिये कि जो सदस्य लक्ष्य-सम्बन्धी प्रस्ताव को, जो कि पास हो चुका है, स्वीकार नहीं करेगा वह रजिस्टर पर हस्ताक्षर नहीं कर सकता है।

श्रीमान् जी, इस विषय पर मैं आपका निर्धारित निर्णय चाहता हूं।

***अध्यक्षः** यह एक रोचक विषय उपस्थित किया गया है। पर मैं इसको वैधानिक आपत्ति नहीं मानता हूं। यह तो उन सदस्यों के अधिकार का प्रश्न है जो कि निर्धारित प्रणाली के अनुसार विधान-परिषद् के सदस्य चुने गये हैं। कोई भी चुना हुआ सदस्य जब तक इस्तीफा न दे हाउस में बैठने का अधिकारी है। इसलिये मेरे ख्याल से मैं किसी भी नियमानुसार चुने गये सदस्य को रजिस्टर में हस्ताक्षर करने से नहीं रोक सकता हूं।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेज़ी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

तत्पश्चात् निम्न सदस्यों ने अपने परिचय-पत्र पेश किये और रजिस्टर पर अपने हस्ताक्षर किये:

मद्रास

1. हाजी अब्दुलसत्तार हाजी इशहाक सेठ।
2. बी. पोकर साहब बहादुर।
3. महबूबअली बेग साहब बहादुर।
4. के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुर।

बम्बई

5. माननीय मि. इस्माइल इब्राहीम चुन्द्रीगर।
6. डा. बी.आर. अम्बेडकर।
7. मि. अब्दुलकादर मुहम्मद शेख।

पश्चिमी बंगाल

8. पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र।
9. श्री देवीप्रसाद खेतान।
10. श्रीमती रेणुका रे।
11. श्री डम्बरसिंह गुरंग।
12. मि. आर.ई. प्लेटल।
13. श्री प्रफुल्लचन्द्र सेन।
14. श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन।
15. श्री रागिव अहसन।
16. श्री नजीरुद्दीन अहमद।
17. मि. अब्दुल हमीद।
18. श्री सतीशचन्द्र सामन्त।
19. श्री सुरेशचन्द्र मजूमदार।
20. श्री बसन्तकुमार दास।
21. श्री सुरेशमोहन घोष।
22. श्री अरुणचन्द्र गुहा।

संयुक्त प्रान्त

23. चौधरी खलीकुज्जमा।
24. नवाब मुहम्मद इस्माइल खाँ।
25. मि. अजीज अहमद खां।
26. बेगम ऐज़ाज़ रसूल।
27. मि. एस.एम. रिजवन अल्लाह।

पूर्वी पंजाब

28. माननीय सरदार बलदेव सिंह।
29. दीवान चमनलाल।
30. मौलाना दाऊद गजनवी।
31. ज्ञानी गुरुमुखसिंह मुसाफिर।
32. शेख महबूब इलाही।
33. सूफी अब्दुल हमीद खां।
34. चौधरी रणवीर सिंह।
35. चौधरी मुहम्मद हसन।
36. श्री विक्रमलाल सोंधी।
37. प्रोफेसर यशवन्त राय।

बिहार

38. मि. तजम्मुल हुसेन।
39. मि. सैयद जफर इमाम।
40. मि. लतीफुर्रहमान।
41. मि. मुहम्मद ताहिर।

मध्य प्रान्त और बरार

42. काजी सैयद करीमुद्दीन।

आसाम

43. मौलवी सैयद मुहम्मद सादुल्ला।

रियासतें—मैसूर

44. सर ए. रामास्वामी मुदालियर।
45. श्री के. चेंगलराया रेड्डी।
46. श्री गुरुव रेड्डी।
47. श्री एस.वी. कृष्ण मूर्ति राव।
48. श्री एच. चन्द्रशेखरया।
49. मि. मुहम्मद शरीफ।
50. श्री टी. चन्नियाह।

ग्वालियर

51. श्री एम.ए. श्रीनिवासन।
52. लेफ्टिनेंट कर्नल बृजराज नारायण।
53. श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय।
54. श्री रामसहाय।

बड़ौदा

55. श्री चुन्नीलाल पुरुषोत्तमदास शाह।

उदयपुर

56. श्री मोहन सिंह मेहता।
57. श्री माणिक्यलाल वर्मा।

जयपुर

58. राजा सरदारसिंह जी बहादुर (खेतड़ी)।

अलवर

59. श्री (डा.) एन.बी. खरे।

कोटा

60. लेफ्टिनेंट कर्नल कुंवर दलेल सिंह जी।

पटियाला

61. सरदार जयदेव सिंह।

सिक्किम और कूच बिहार

62. श्री हिम्मतसिंह जी.के. महेश्वरी।

त्रिपुरा, मणिपुर और खासी रियासतें

63. श्री जे.एस. गुहा।

रामपुर और बनारस

64. मि. बी.एच. ज़ैदी।

पूर्वी राजपूताना की रियासतें

65. महाराज मानधाता सिंह।
66. महाराज नगेन्द्र सिंह।
67. श्री गोकुलभाई भट्ट।

पश्चिमी भारतवर्ष की और गुजरात की रियासत

68. कर्नल महाराज श्री हिम्मतसिंह जी।
69. श्री ए.पी. पाटनी।
70. श्री गगनविहारी लल्लूभाई मेहता।
71. श्री भवनजी आरियन खीमजी।
72. खानबहादुर फिरोज कोठावाला।
73. श्री विनायक राय बी. वैद्य।

दक्षिण की रियासतें

74. श्री एम.एस. अणे।
75. श्री बी. मुनावल्ली।

पूर्वी रियासतें

76. रायसाहब रघुराज सिंह।

77. रायबहादुर लाला राजकंवर।

78. श्री सारंगधर दास।

79. श्री युधिष्ठिर मिश्र।

अवशिष्ट दल

80. श्री बलवन्तराय गोपालजी मेहता।

***अध्यक्षः** क्या कोई और सदस्य हैं जिन्होंने अभी तक रजिस्टर पर हस्ताक्षर न किये हों ?

मैं समझता हूं कि यहां कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसने रजिस्टर पर हस्ताक्षर न किये हों।

श्री बालकृष्ण शर्मा (संयुक्त प्रांतः जनरल): अध्यक्ष महोदय, आपकी आज्ञा से प्रथम इसके कि आप आज की कार्यवाही को प्रारम्भ करें, मैं अपने कुछ प्रश्न आपके सम्मुख प्रस्तुत करना चाहता हूं। यदि आप आज्ञा दें तो मैं उन बातों को आपके सामने प्रस्तुत करूं।

अध्यक्षः जो कायदा अब तक रहा है वह यह है कि जब कोई सवाल पेश होता है तो उसके सम्बन्ध में कोई बात उठती है तो उस पर कहने की इजाजत दिये जाने या न दिये जाने पर ख्याल किया जाता है। अभी कोई सवाल पेश नहीं हुआ है। मैं क्या जानूं कि आप क्या कहेंगे। मैं समझता हूं कि जो कुछ आप कहना चाहेंगे अगर वह ठीक होगा तो उसकी इजाजत दी जायेगी।

श्री बालकृष्ण शर्माः मेरी प्रार्थना यह है कि यद्यपि इसमें सन्देह नहीं है कि इस समय कोई सवाल पैदा नहीं हुआ है फिर भी यदि आप आज्ञा दें तो मैं अपना आशय समझाऊं और फिर उसमें किसी प्रकार का विवाद हो सकता है।

अध्यक्षः मुझे तो मालूम नहीं है कि आप क्या कहना चाहते हैं। अगर आप मुझसे पहले मिलकर कुछ कह देते तो मैं आपको आज्ञा दे सकता था। अभी

कोई सवाल पैदा नहीं हुआ है तो मैं इस मौके पर आपको कुछ कहने की इजाजत कैसे दूं ?

*__श्री विश्वनाथ दास__ (उड़ीसा: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इससे पूर्व कि आप कार्यक्रम के किसी अन्य विषय को लें, मैं आपका ध्यान उस सरकारी विज्ञप्ति की ओर आकर्षित करना चाहता हूं जो कि उपसमिति की सिफारिश के अनुसार सशस्त्र सेना के बटवारे सम्बन्धी निर्णय पर है। श्रीमान् जी, यह कहा गया है कि यह निर्णय अन्तिम है। यह कहा गया है कि सशस्त्र सेना (Armed Forces Reconstruction Sub-Committee) का पुनर्निर्माण की सर्वसम्मति प्राप्त सिफारिश पर आश्रित साम्प्रदायिक आधार पर यह एक आसान मोटा-मोटा विभाजन है। यह भी कहा गया है कि यह जहाज इत्यादि के बटवारे के सम्बन्ध में है और प्रत्येक उपनिवेशों की आवश्यकताओं को दृष्टि में रखा गया है।

*__अध्यक्ष:__ मैं नहीं समझता हूं कि विधान-परिषद् किसी प्रकार भी इस स्थिति में अखबारों के समाचारों से कोई सम्बन्ध रखती है। इसलिये यह प्रश्न उत्पन्न ही नहीं होता है।

*__श्री विश्वनाथ दास:__ उसके औचित्य पर विचार करने के लिये आपके सामने मैं केवल उसकी विषय-सूची ही पेश कर रहा हूं। यह भारतवर्ष की सम्पत्ति सम्बन्धी विभाजन के प्रमुख प्रश्न से सम्बन्ध रखता है और इसने हम सबको चिंतित कर रखा है। व्यावहारिक रूप से यह हाउस धारा-सभा तथा सर्वोच्च अधिकार प्राप्त संस्था है। यह प्रश्न सब व्यक्तियों के मस्तिष्कों में हलचल पैदा कर रहा है।

*__अध्यक्ष:__ मेरे विचार से आप गलत धारणाओं में पड़े हुये हैं। यह संस्था अभी तक धारा-सभा नहीं है। जिस प्रकार कि यह अब तक कार्य करती चली आ रही है, यह एकमात्र विधान-परिषद् ही है। यदि यह धारा-सभा होती तो शायद आप इस प्रश्न को ला सकते थे। इस समय तो मेरे विचार से यह प्रश्न उठता ही नहीं है।

*__श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी__ (मैसूर): मैसूर के चुने हुए सदस्यों की ओर से मैं अध्यक्ष महोदय को यह सूचित करूंगा कि हमको अभी तक किसी प्रकार

[श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी]

का साहित्य नहीं दिया गया है, विशेषकर कार्य प्रणाली नियम सम्बन्धी। हमने दफ्तर से भी मांगा पर हमें नहीं मिला। हम कार्यवाही में भाग लेना चाहते हैं; पर उपरोक्त कारणवश असमर्थ हैं। हम आपसे निवेदन करते हैं कि दफ्तर को आवश्यक आदेश देने की कृपा करें।

***अध्यक्षः** मन्त्री इस बात को नोट करें और आवश्यक प्रबन्ध करें।

***श्री एच.जे. खांडेकर** (मध्य प्रांत और बरारः जनरल): सूचना प्राप्त करने हेतु मैं यह जानना चाहूंगा कि रियासतों के सदस्यों में से जिन्होंने अपने प्रमाणपत्र पेश किये हैं परिगणित जातियों के कितने सदस्य हैं जिन्होंने हस्ताक्षर किये हैं ?

***अध्यक्षः** यह दफ्तर इस प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थ है। संभव है कुछ समय पश्चात् आपको मन्त्री से पूरी जानकारी हासिल हो सकती है।

***मि. तजम्मुल हुसेन** (बिहारः मुस्लिम): क्या मैं आपसे यह जान सकता हूं कि आज यहां सिलहट का कोई सदस्य उपस्थित है या नहीं।

***सरदार के.एम. पनिक्कर** (बीकानेर): एक नियम सम्बन्धी आपत्ति है। क्या इस विधान-परिषद् में प्रश्नों के लिए कुछ समय नियत है ?

अध्यक्षः [कोई समय नियत नहीं है। मैंने इसे सदस्यों की उदारता पर छोड़ दिया है। आशा है कि इसका दुरुपयोग नहीं किया जायेगा।]

हजरात, आज से ढाई महीने पहले कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली का एक जलसा हुआ था। उस वक्त से और आज के दर्मियान बहुत से ऐसे वाकयात हो गये हैं जिनकी तरफ मैं इशारा कर देना मुनासिब समझता हूं। सबसे बड़ी बात तो यह हुई कि 3 जून को ब्रिटिश गवर्नमेंट की तरफ से एक बयान निकला और उस बयान का असर हिन्दुस्तान की सियासत पर बहुत ज्यादा पड़ा है। एक असर तो इसका यह हुआ कि सारे हिन्दुस्तान के टुकड़े किये गये, और इसके साथ-साथ दो सूबों को भी टुकड़े-टुकड़े करने का निश्चय हो चुका है, और इस बयान की वजह से इस वक्त मैं जहां तक जानता हूं हिन्दुस्तान की गवर्नमेंट में और इन दो सूबों की गवर्नमेंट के अन्दर बटवारे की बातचीत भी चल रही है और बटवारे

का काम भी हो रहा है। इसके अलावा इस कांस्टीट्युयेंट असेम्बली के मेम्बरों में भी कुछ थोड़ी-बहुत अदल-बदल हो गई है। जो मेम्बर पहले बंगाल और पंजाब से आये हुए थे, उनके बदले में फिर इन दो सूबों में जो अब 4 सूबे हो गये हैं अलग-अलग करके चुनाव हुये हैं, और कुछ पहले वाले और कुछ नये मेम्बर इन दोनों सूबों से चुन कर आये हैं। बहुत सी स्टेट जो अब तक इस कांस्टीट्युयेंट असेम्बली में शरीक नहीं थी वह भी आज के इस जलसे में शरीक हुई हैं और मुस्लिम लीग के मेम्बर जो अब तक कांस्टीट्युयेंट असेम्बली से अलग थे वह भी आज शरीक हो रहे हैं।

कांस्टीट्युयेंट असेम्बली ने अपनी तरफ से कई सब-कमेटियां मुकर्रर कर दी थीं और इन सब-कमेटियों ने आज तक जो काम किया है उसकी रिपोर्ट अखबारों में भी छप चुकी है और मेम्बरों के पास भी पहुंच गयी है। चूंकि सब-कमेटियों की रिपोर्ट अभी तैयार हुई है और वह कांस्टीट्युयेंट असेम्बली के जलसे में मौके पर पेश की जायेगी, और इन पर गौर करके आपको अपनी राय देनी होगी। इनमें से एक कमेटी इस काम के लिये मुकर्रर की गई थी जो सूबों के लिये कांस्टीट्यूशन बनाये और उसका एक नमूना तैयार करे; दूसरी कमेटी इसलिये बनाई गई थी जो हिन्दुस्तान के लिये कांस्टीट्यूशन बनायेगी और उसके लिये ऐसे उसूल तय करके लोगों के सामने पेश करेगी जिनके मुताबिक कांस्टीट्यूशन तैयार किया जाये, और एक तीसरी कमेटी इस काम के लिये बनाई गई थी जो हिन्दुस्तान के कांस्टीट्युशन में क्या-क्या अख्तियार होंगे, इन चीजों पर गौर करके रिपोर्ट करेगी। इन तीनों कमेटियों की रिपोर्टें तैयार हैं। इनमें से एक पेश हो चुकी है और दो कमेटियों की रिपोर्टें आपके सामने आयेंगी, और मैं उम्मीद करता हूं कि उन पर आप गौर करके इस जलसे के अन्दर तय कर देंगे। मेरा इरादा यह है, और मैं उम्मीद करता हूं कि आप इसे पसंद करेंगे। जब इन कमेटियों की रिपोर्ट आपके यहां मंजूर हो जाये तो कुछ लोग इस काम पर मुकर्रर किये जायें जो कांस्टीट्यूशन का मसविदा बाजाब्ता तैयार करें। और एक कमेटी ऐसी मुकर्रर की जाये जो इस मसविदा को खूब गौर से देखकर और विचार करके जब फिर कांस्टीट्युयेंट असेम्बली का जलसा हो तो वहां अपनी राय पेश कर दे। तब यह मसविदा यहां पर अगर पेश हो तो उस पर अच्छी तरह से गौर करके कांस्टीट्यूशन बन जायेगा।

एक और ऐसी सब-कमेटी जो एडवाइज़री कमेटी कहलाती है, बनाई गयी थी। मगर उसकी कार्यवाही अभी पूरी नहीं हुई। इसमें माइनोरिटी सब-कमेटी, फंडामेंटल

[अध्यक्ष]

राइट्स सब-कमेटी तथा ट्राइबल एरिया और एक्सक्लूडेड एरिया कमेटी बनाई गई, और वह तीनों इसके जुज़ हैं। इनमें से फंडामेंटल राइट्स कमेटी ने अपनी रिपोर्ट दे दी है मगर दो कमेटियों की रिपोर्टें अभी तैयार नहीं हुई हैं। मैं उम्मीद करता हूं कि इन दो कमेटियों की रिपोर्ट भी बहुत जल्द आ जायेगी ताकि वह भी जब कांस्टीट्यूशन तैयार हो उसमें वह शरीक कर दी जाये और आखिरी कांस्टीट्यूशन पूरा-पूरा हो जिसमें सब बातें रखी जायें।

मेरी उम्मीद ऐसी है कि अगर यह काम ठीक तरह से किया जायेगा तो शायद अक्टूबर के महीने में हम लोग कांस्टीट्युयेंट असेम्बली के जलसे में गौर करके विधान पास कर सकेंगे। मैं चाहता हूं कि कांस्टीट्युयेंट असेम्बली का काम जल्द किया जाये क्योंकि आपको मालूम है कि जो इंडिया इंडिपेन्डेंस बिल पेश हुआ है उसके मुताबिक कांस्टीट्युयेंट असेम्बली के मेम्बर लेजिस्लेटिव असेम्बली के मेम्बर हो जायेंगे; और लेजिस्लेटिव असेम्बली के सामने ही से बहुत सी बातें पेश हैं जिन पर गौर करना जरूरी है और कुछ दिनों के बाद बजट का भी मौका आ जायेगा। तो जितनी जल्दी हम कांस्टीट्युयेंट असेम्बली का काम खत्म कर सकेंगे उतनी ही जल्दी लेजिस्लेटिव असेम्बली के काम के लिये हमको मौका मिलेगा, और नवम्बर के बाद इस काम के लिये हमको पूरा मौका रहेगा। मगर मैं यह नहीं चाहता हूं कि कांस्टीट्युयेंट असेम्बली का काम इतनी तेजी से करें कि जिसमें कोई काम बिगड़ जाये। उसमें हर चीज अच्छी तरह से सोच कर करनी होगी। मैं यह प्रोग्राम आपके सामने रखता हूं तो इसका मतलब हरगिज़ यह नहीं है कि चाहे काम बिगड़े या बने, मगर काम जल्द से जल्द खत्म हो जाये। इसलिये जितना समय आप मुनासिब समझते हैं, देना चाहिये। अगर इसका ख्याल रख करके कि आइंदा हमको लेजिस्लेटिव असेम्बली बनाकर भी दूसरे काम करने हैं तो हमको इस काम को जल्द खत्म कर देना चाहिये।

जो नये मेम्बर आज आये हैं उनकी तादाद काफ़ी है। मैं उन सबका स्वागत करता हूं। मैं उम्मीद करता हूं कि हम सब मिलजुल कर कांस्टीट्युयेंट असेम्बली का काम जल्द से जल्द खत्म करेंगे और ऐसा कांस्टीट्यूशन तैयार कर सकेंगे जिससे सब खुश होंगे और सब राज़ी होंगे।

श्री एच. वी. कामत (सी. पी. तथा बरार: जनरल): जनाब सदर, कृपया आप यह बतला सकेंगे कि रियासतों के जितने नुमाइन्दे आज इस असेम्बली में शामिल हुये हैं उनमें से कितने 'इलैक्टेड' हैं और कितने 'नोमीनेटेड' हैं।

अध्यक्ष: मैं कुछ नहीं कह सकता। आपको बाद में खबर कर दी जायेगी।

श्री श्रीप्रकाश: सभापति जी, जहां तक मुझे मालूम है जिस वक्त इस कांस्टीटृयुयेंट असेम्बली का चुनाव हुआ था यह समझा गया था कि इसके ऊपर किसी बाहरी ताकत का कोई भी अख्तयार नहीं है। मैं यह जानना चाहूंगा कि पंजाब और बंगाल के बारे में जो तबदीलियां हुई हैं। उसमें आपसे राय ली गयी थी या नहीं ? क्या यह तबदीलियां उन कायदों के मुताबिक हुई हैं जिनको असेम्बली में बनाया गया था, मैं जहां तक मानता हूं हमारे कायदों के मुताबिक इसके मेम्बर उस वक्त अलग हो सकते हैं जब कि इस्तीफ़ा दें। मैं जानना चाहूंगा कि क्या जो पंजाब बंगाल के पुराने मेम्बरान इस वक्त मेम्बर नहीं हैं उन्होंने इस्तीफ़ा दिया था या वाइसराय के ऐलान की वजह से वह इसकी मेम्बरी से मौकूफ (खारिज) हुये और दूसरे इन्तखाबात (चुनाव) हुये। अगर ऐसा हुआ, और यह बात ठीक मालूम होती है, तो मैं यह भी जानना चाहूंगा कि आपकी खुद की राय इसके मुताल्लिक़ क्या है, और आप इसे मुनासिब समझते हैं यह नहीं ? हमसे यह कहा गया था कि जब एक मर्तबा कांस्टीट्युयेंट असेम्बली का इन्तखाब हो गया तब न तो इसमें कोई तबदीली हो सकती है और न कोई बाहर का आदमी इस पर अख्तियार रख सकता है। मुझे तो ऐसा मालूम पड़ता है कि वाइसराय के एलान की वजह से यह सब तब्दीली हुई जो नामुनासिब (अनुचित) और गैर कानूनी (नियम विरुद्ध) है।

अध्यक्ष: यह आपका कहना सही है कि वायसराय ने जो एलान किया है उस एलान (घोषणा) के मुताबिक कार्यवाही हुई है और उस एलान के बाद उन्होंने खुद कार्यवाहियां की हैं। मगर मैं जहां तक समझता हूं सब लोगों ने इन कार्यवाहियों को मंजूर कर लिया है और हमने भी मंजूर कर लिया है। इसलिये यह सवाल नहीं उठता है और जो मेम्बर पहले चुने गये उनमें से किसी ने आज तक इस हक को खत्म कर दिये जाने के खिलाफ़ कोई दरख्वास्त नहीं दी है। जो नये मेम्बर इलेक्ट किये गये हैं वे इस असेम्बली के मेम्बर बन गये और वे इसकी कार्यवाही चलायेंगे।

श्री बालकृष्ण शर्मा: सम्मान्य अध्यक्ष महोदय, आपके वक्तव्य के सम्बन्ध में एक बात है जिसको कि मैं सभा के सामने रखना चाहता हूं। वह यह है कि आपने अपने प्रारम्भिक भाषण में आगत महानुभावों का स्वागत किया है और इस बात की आशा भी प्रकट की है कि वह मिलजुल कर हमारी इस विधान-परिषद् के कार्य में सहायक होंगे और हमारे भारतवर्ष के लिये वह एक ऐसा विधान बनायेंगे.....।

अध्यक्ष: आप कोई भाषण दे रहे हैं या सवाल पूछ रहे हैं ?

श्री बालकृष्ण शर्मा: मैं सवाल पूछ रहा हूं।

अध्यक्ष: वह सवाल इस वक्त कर लीजिये।

श्री बालकृष्ण शर्मा: सवाल मेरा यह है कि जब आपने यह आशा प्रकट की है तब आप इस बात को नहीं भूले होंगे कि इस सभा में कुछ महानुभावों का चुनाव, जिनकी संख्या काफ़ी अच्छी है, एक विशेष प्रकार से हुआ है, और उन्होंने दो राष्ट्रों के सिद्धान्त के ऊपर विधान निर्मात् परिषद् में भाग लिया है।

अध्यक्ष: यह सवाल पूछ रहे हैं या आपने भाषण शुरू कर दिया है?

श्री बालकृष्ण शर्मा: क्या आपको इस बात का आश्वासन मिल चुका है कि जिन्होंने दो राष्ट्रों के सिद्धान्त पर अपना चुनाव करवाया है, वे इस समय आपकी कार्यवाही में सहायक होकर अपने उस पुराने सिद्धान्त का परित्याग करके आपके काम को आगे बढ़ाने के लिये सहयोग करेंगे ?

अध्यक्ष: पहले एक ऐसा ही सवाल देशबन्धु जी गुप्त ने किया था। मैंने उसका जवाब उस वक्त दिया था कि यहां पर जो मेम्बर चुन कर आये हैं, उस क़ायदे के मुताबिक चुन कर आये हैं और उनको मुझे यहां से हटाने का अख्तियार नहीं है। मैंने इस वजह से कोई आश्वासन नहीं मांगा है और इसलिये मुझे कोई आश्वासन नहीं दिया गया है। मैंने सब मेम्बरों को मेम्बर मान लिया है जो चुन कर आये हैं और हम उस काम को कर रहे हैं। आप सबकी कार्यवाही इस बात को ज़ाहिर करेगी कि कौन क्या करना चाहता है और किस का क्या इरादा है।

***एक माननीय सदस्य:** श्रीमान् जी, हम आपका उत्तर हिन्दी में नहीं समझ सके।

***अध्यक्ष:** प्रश्न हिन्दी में किया गया था और मुझे भी उत्तर हिन्दी में देना पड़ा। यदि कोई सदस्य अंग्रेज़ी में प्रश्न करेगा तो मैं उसका उत्तर अंग्रेज़ी में दूंगा।

***पंडित गोविन्द मालवीय** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): श्रीमान् जी, विषय को स्पष्ट करने के लिये मैं एक प्रश्न पूछना चाहूंगा। मेरे माननीय मित्र श्री श्रीप्रकाश ने एक प्रश्न उपस्थित किया है। वह प्रश्न यह है कि इस विधान-परिषद् के सर्वोच्च अधिकार प्राप्त संस्था होते हुये तथा इस विचार को दृष्टि में रखते हुये कि जो सदस्य पहले चुने गये थे उन्होंने पद त्याग नहीं किया है; अन्य सदस्यों ने किस प्रकार स्थान प्राप्त कर लिये हैं। श्रीमान् जी, आपने यह बतलाया कि प्रत्येक व्यक्ति इस स्थिति से सन्तुष्ट है, इसलिये वह ठीक है। मैं आपसे यह पूछना चाहता हूं कि क्या स्थिति ऐसी नहीं है कि यदि देश का कोई भाग देश के बाहर होने का निर्णय करता है या उससे पृथक् होता है, राज़ी से या नाराज़ी से, यदि प्रान्त के दो भाग अपने ही वोटों के द्वारा ऐसा निर्णय करते हैं तो क्या देश के इन भागों के सदस्यों को इस विधान-परिषद् के सदस्य बने रहने का कोई अधिकार नहीं है ? मैं इस विषय को स्पष्ट कराना चाहता हूं क्योंकि भविष्य में यह प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होगा। मेरा निवेदन है कि जिस समय देश का कोई भी भाग भारतवर्ष का अंग न बने रहने का निर्णय करता है तो उसी समय से वह स्वत: ही इस परिषद् से सम्बन्धित अपने समस्त अधिकारों को खो बैठता है।

***अध्यक्ष:** मैं यह मानता हूं कि प्रान्त के उस भाग के जो कि पृथक हो गया है किसी सदस्य को यहां बैठने का अधिकार नहीं है और मेरे विचार से ऐसा कोई भी सदस्य यहां नहीं है।

***श्री एच.जे. खांडेकर:** श्री सिधवा के सम्बन्ध में आप क्या कहते हैं ?

***अध्यक्ष:** श्री सिधवा आपके प्रतिनिधि हैं, *(हंसी)* और आपने ही मध्य प्रान्त और बरार से उनको चुना है।

बर्मा विधान-परिषद् के सभापति का संदेश

***अध्यक्ष:** अब हम कार्यक्रम के दूसरे मद् को लेंगे। मुझे विश्वास है कि हमारे भेजे हुये संदेश के उत्तर में बर्मा विधान-परिषद् के सभापति का जो संदेश हमें प्राप्त हुआ है उसे सुनकर यह परिषद् प्रसन्न होगी:

''अपनी तथा विधान-परिषद् की ओर से मैं आपके हितकारी तथा सद्भावयुक्त प्रिय संदेश के लिये आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। हमारी विधान-परिषद् तथा हमारे देश ने आपके संदेश का बहुत ही सम्मान किया है। आपके तथा भारतीय विधान-परिषद् के द्वारा हमारे विचार-विमर्श के प्रारम्भ करते ही इस प्रकार के शुभ सम्वाद और शुभकामनायें स्वतंत्र और संयुक्त बर्मा के विधान निर्माण कार्य में हमारे लिये प्रेरणा तथा उत्साह का स्रोत होंगी। मैं आपको यह विश्वास दिला सकता हूं कि आपके देश से अत्यन्त हार्दिक और मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखना और विश्व शांति तथा सुख के लिये यथासम्भव हर प्रकार की सहायता प्रदान करना स्वतंत्र बर्मा अपना प्रमुख कर्तव्य तथा विशेष सम्मान समझेगा।

क्या मैं इस अवसर पर आपको तथा सर बी.एन. राव को उन सब कृपा पूर्ण उपकारों तथा सहायताओं के लिये, जो कि हमारे वैधानिक सलाहकार के नई दिल्ली में ठहरने के अल्पकाल में प्रदान की गई थीं, और आपके प्रकाशन की मुफ्त भेंट के लिये जो कि हमारे कार्य में बहुत ही लाभदायक सिद्ध हो रही हैं धन्यवाद देने का लाभ उठा सकता हूं ?

इस देश की जनता तथा बर्मा की विधान-परिषद् की ओर से आपको तथा आपके द्वारा भारतवासियों और भारतीय विधान-परिषद् के सदस्यों को उनके परिश्रम की सफल परिणाम प्राप्ति के लिये तथा एक स्वतंत्र और संयुक्त भारत की स्थापना करने के प्रिय उद्देश्य की शीघ्र प्राप्ति के लिये शुभकामनायें भेजने के सुअवसर प्राप्त कर सकता हूं।'' (*करतल ध्वनि*)

आर्डर ऑफ बिजनेस कमेटी की रिपोर्ट

कार्यक्रम में आगे आने वाला विषय श्री मुंशी द्वारा पेश किये जाने वाला प्रस्ताव है।

***श्री के.एम. मुंशीः** (बम्बईः जनरल): मैं निम्न प्रस्ताव पेश करता हूं:–

''यह निश्चित किया कि विधान-परिषद् अपनी 25 जनवरी, सन् 1947 ई. के प्रस्ताव के अनुसार नियुक्त 'आर्डर ऑफ बिजनेस कमेटी' की आगे की रिपोर्ट करे।''

श्रीमान् जी, विषय निर्धारिणी समिति (आर्डर ऑफ बिजनेस कमेटी) की रिपोर्ट को पेश करने में मुझे बहुत खुशी है। जैसा कि हाउस अनुभव करेगा, परिषद् की पिछली बैठकों में जो रिपोर्ट पेश की गई थी उससे यह सर्वथा भिन्न है। पिछले अधिवेशन से अब तक इस देश में अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुये हैं। इन परिवर्तनों के फलस्वरूप यह रिपोर्ट आवश्यक हो गई है। देश के कुछ भाग भारतवर्ष से तथा विधान-परिषद् की अधिकार सीमा से अलग हो गये हैं। इस सप्ताह के अन्त तक ब्रिटिश पार्लियामेंट उस कानून को स्वीकार कर लेगा जिसके द्वारा 14 अगस्त सन् 1947 ई. से भारत स्वतंत्र हो जायेगा। यह वह घटना है जिसकी प्रतीक्षा हम शताब्दियों से कर रहे हैं। अन्तिम बात यह है कि 16 मई की योजना द्वारा जो बन्धन विधान-परिषद् पर लगाये थे वे अब हट गये। अतः इन परिवर्तनों के कारण यह आवश्यक है कि नये वातावरण में उन नई परिस्थितियों का, जो कि उत्पन्न हो चुकी हैं, सामना करने के लिये विधान-परिषद् का कार्यक्रम फिर से बनाया जाये।

श्रीमान् जी, मैं यह बताने का साहस कर सकता हूं कि 16 मई की योजना का समस्त व्यावहारिक प्रयोजन के लिये अन्त हो चुका है और हमारी सर्वाधिकार प्राप्त संस्था पूर्ण स्वतंत्र वातावरण में भावी विधान के पुनर्निर्माण की ओर अग्रसर हो रही है। रिपोर्ट के पैरा में जिस परिवर्तन का उल्लेख किया गया है उसका मैं विस्तारपूर्वक वर्णन करूंगा। 16 मई की योजना का एक आशय था... हर तरह से देश की अखंडता का निर्वाह करना। 16 मई की योजना में एक शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार का अखंडता रक्षक वेदी पर बलिदान किया गया था। योजना की सूक्ष्म परीक्षा करने के पश्चात् हम लोगों में से अनेकों को यह विदित हुआ कि वह इतनी अशक्त अखंडता थी कि उत्पन्न होते ही नाश को प्राप्त हो जाती। 16 मई की योजना के अन्तर्गत दो स्थितियां थीं, प्रारम्भिक स्थिति और संघीय विधान स्थिति।

[श्री के.एम. मुंशी]

अनेकों कमेटियों ने जिसको इस हाउस ने सहर्ष नियुक्त किया था, इन कठिनाईयों के होते हुये भी किसी प्रकार की एक दृढ़ और यथा नाम तथा गुण-युक्त सरकार बनाने का परिश्रम किया, परंतु मैं यह स्वीकार करूंगा कि उनका परिश्रम बहुत अधिक फलीभूत नहीं हुआ।

यदि मैं अपने भावों को व्यक्त कर सकता हूं तो वस्तुत: 16 मई की योजना की बारम्बार परीक्षा करने पर वह मुझे बहुधा पितृघाती के उस बोरे के समान प्रतीत हुई जिसका आविष्कार प्राचीन रोमन कानून द्वारा किया गया था। जैसा कि आपको विदित होगा कि रोम के प्राचीन फौजदारी कानून के अनुसार जब कि कोई व्यक्ति बहुत घृणित अपराध करता था तो वह एक बन्दर, एक सांप और एक मुर्गे के साथ एक बोरे में बन्द कर दिया जाता था और उस बोरे को टाइवर नदी में डाल दिया जाता था जब तक वह डूब न जाये।

जितना अधिक हमने इस योजना पर विचार किया उतना ही अधिक हमने इस योजना में अल्पसंख्यकों को अलग होने के लिऐ उत्सुक पाया, साम्प्रदायिक भागों को परस्पर घातक पाया और अपने लिए दोहरा बहुसंख्यक खंड अपनी ही सत्ता को विषमय करते हुए पाया। अन्य सदस्य चाहे जो कुछ विचार रखें, मैं तो यह कहता हूं कि ईश्वर को धन्यवाद है कि आखिरकार हम उस बोरे के बाहर निकल आये। उस योजना में पड़ने के लिये हमारे यहां न साम्प्रदायिक विभाग और न दल हैं, न वैसी विस्तारपूर्ण कार्यप्रणाली है जो योजना में बताई गई थी, न दोहरा बहुसंख्यक वाक्यखंड है, न अवशिष्ट अधिकारयुक्त कोई प्रान्त है, न प्रांतों के लिए बाहर निकलने का विकल्प है, न दस वर्ष बाद पुनर्विचार करना है और न केन्द्र के लिए अधिकारों की केवल चार श्रेणियां ही हैं। अत: हम अपनी इच्छानुसार एक ऐसा संघ बनाने में स्वतंत्रता का अनुभव करते हैं जिसका केन्द्र जितना हम बना सकते हैं उतना शक्तिशाली हो....पर उस बात के अधीन कि रियासतों को इस महान कार्य में, अधिकारों की चार श्रेणियों के आधार पर तथा अन्य ऐसे और अधिकारों के आधार पर जिनको वे समझौते द्वारा केन्द्र में आने के लिए पसंद करें, मिलाना होगा। श्रीमान्‌जी, इसलिए व्यक्तिगत रूप में यह जो परिवर्तन हुआ है उस पर मुझे तो कुछ भी खेद नहीं है। हमारा अब देश एक रूप है, यद्यपि हमारे सीमा-प्रदेश सिकुड़ गये हैं अर्थात् कुछ निकट आ गये हैं–इस समय हम केवल ऐसी ही आशा करें–और अब हम अपने शक्ति और स्वतंत्रता

के प्रिय उद्देश्य की ओर बिना किसी हिचकिचाहट के अग्रसर हो सकते हैं। इसलिए उस रिपोर्ट पर जो कि हाउस के सामने पेश की जा चुकी थी पुनर्विचार होना चाहिये। यह जानकर सदस्य प्रसन्न होंगे कि अधिकांश कार्य समाप्त हो ही चुका है। विधान के मुख्य निर्माण पर प्रान्तीय विधान कमेटी की रिपोर्ट हाउस के सदस्यों में घुमाई जा चुकी है और समयानुसार एक या दो दिन में वह प्रस्तुत की जायेगी। संघीय विधान के निर्माण पर संघीय विधान कमेटी ने भी श्वेतपत्र—यदि मैं उसे ऐसा कह सकूं—तैयार कर ही लिया है। इस बैठक में वह भी हाउस के समक्ष रखा जायेगा।

मैं हाउस को स्मरण करा दूं कि यूनियन पावर्स कमेटी की रिपोर्ट पिछले अधिवेशन में हाउस के समक्ष रखी गई थी। उसमें उन चार श्रेणियों में दिये हुये अधिकारों का विस्तृत विवरण था जिनका उल्लेख 16 मई की योजना में किया गया था। परिवर्तन हो जाने के कारण इन अधिकारों की फिर से जांच करनी पड़ी तथा यूनियन पावर्स कमेटी की एक पूरक रिपोर्ट भी हाउस के समक्ष विचारार्थ रखी जायेगी। रिपोर्ट में यह पेश किया गया है कि हाउस द्वारा इन सिद्धान्तों के स्वीकार किये जाने के पश्चात् उनको मस्विदा बनाने वाली उस कमेटी को दिया जायेगा जिसकी नियुक्ति इसी आशय के लिए होगी और जो भारतीय संघ के विधान के लिए आवश्यक बिल की रूप-रेखा बनाने का कार्य करेगी।

जैसा कि हाउस को विदित है रिपोर्ट के तीसरे पैरे के सम्बन्ध में नये मौलिक अधिकारों के अनेकों प्रस्ताव सलाहकार समिति के पास फिर से भेजे गये हैं। अल्पसंख्यक कमेटी (माइनोरिटी कमेटी) को अब भी अनेकों विषयों की विशेषतर अल्पसंख्यकों के सम्बन्ध में अपनाये जाने वाले सिद्धान्तों की जांच करनी है। कबायली विशेष कमेटियां कार्यरत हैं। उनमें से कुछ ने अपना कार्य समाप्त नहीं किया है, और मैं जानता हूं कि उनमें से कुछ का कार्य बिल्कुल ही न हो सकेगा। अभी इन समस्त विषयों पर सलाहकार कमेटी को निर्णय करना है। वे विषय सलाहकार कमेटी के समक्ष रखे जायेंगे और तब रिपोर्ट पेश होगी।

तीसरे पैरे के अंतिम वाक्य में यह सुझाव रखा गया है कि सलाहकार कमेटी अगस्त में अपना कार्य समाप्त कर देगी और उसकी सिफारिशें सीधी मस्विदा बनाने वाली कमेटी के पास जायेंगी। यह कमेटी एक्ट की आवश्यक व्यवस्थाओं की रूप रेखा बनायेगी और तब वे आगे आने वाले अधिवेशन में बिल की कुछ व्यवस्थाओं के रूप में हाउस के समक्ष रखी जायेंगी। लेकिन श्री सन्तानम् ने मेरे इस प्रस्ताव

[श्री के.एम. मुंशी]

पर एक संशोधन पेश किया है। जिसका हाउस के एक बड़े भाग ने पक्ष-समर्थन किया है। मैं समझता हूं कि जिस विचार को हाउस के अधिकांश सदस्यों ने अपनाया है वह यह है कि जहां तक अल्पसंख्यकों से सम्बन्धित विधान में अपनाये जाने वाले सिद्धांतों से सम्बन्ध है, उनको सीधे मस्विदा बनाने वाली कमेटी को नहीं भेजना चाहिए, बल्कि उनको इस अधिवेशन में इसी हाउस के समक्ष रखना चाहिए। सिद्धांतों पर निर्णय करने के पश्चात् उनको उचित व्यवस्था की रूप-रेखा देने के लिये मस्विदा बनाने वाली कमेटी के पास भेज दिया जाये। यदि हाउस का यह विचार है तो पैरा 3 के अंतिम वाक्य को इसके अनुकूल बनाते हुये भी सन्तानम् का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जायेगा।

रिपोर्ट का चौथा पैरा बतलाता है कि इस वर्ष में अक्टूबर के अन्त तक परिषद् को अपना कार्य समाप्त कर देना चाहिये। श्रीमान्जी, यह नितान्त आवश्यक है और आपने भी यह संकेत किया था कि विधान निर्माण-कार्य यथासंभव शीघ्र ही समाप्त किया जाना चाहिये, और यदि हो सके तो नवम्बर तक हम यह कार्य समाप्त कर दें। एक बार नियम इस आधार पर बनाये गये थे कि हमको अधिक समय लगेगा। वे नियम विभागों, दलों तथा अन्य विभिन्न विषयों के सम्बन्ध में थे। जिस समय ये नियम बने थे–पुराना नियम 63–यह सोचा गया था कि हाउस द्वारा विधान के सामान्य ढंग के स्वीकृत हो जाने के पश्चात् उसको धारा-सभा के सदस्यों में घुमाया जायेगा। उस विस्तारपूर्ण कार्यविधि में पड़ने की सर्वप्रथम तो यूं आवश्यकता नहीं है कि विधान-परिषद् के दफ्तर ने प्रश्नों की सूची का विज्ञापन द्वारा प्रचार कर दिया है जिनका उत्तर इस देश की विभिन्न धारासभाओं के सदस्यों ने दे दिया है। अत: उनकी सम्मतियां हाउस के समक्ष हैं। दूसरे परिवर्तन इतनी तीव्र गति से हो रहे हैं कि जिस गति से हमने पहले चलना चाहा था उस गति से हम नहीं चल सकते हैं। 15 अगस्त को भारतवर्ष स्वतंत्र और स्वाधीन उपनिवेश हो जायेगा। हम उस स्थिति को यथासंभव शीघ्र ही प्राप्त करना चाहते हैं और उस स्वनिर्मित विधान को प्राप्त करना चाहते हैं जो हमें आवश्यक शक्ति प्रदान करेगा। हमको यह बात विस्मरण नहीं करनी चाहिये कि उपनिवेशीय विधान (डोमिनियम-कान्स्टीट्यूशन) में जो कि 15 अगस्त से लागू होगा, रियासतों के प्रतिनिधियों के लिये कोई स्थान नहीं है। इसलिये हम चाहते हैं कि संघीय विधान शीघ्रातिशीघ्र लागू हो जाना चाहिये। यदि ऐसा ही है तो हमको हाउस के

सदस्यों में निश्चयों को घुमाने की अनावश्यक प्रणाली को छोड़ना पड़ेगा। इस हाउस को समस्त हितों का यथेष्ट प्रतिनिधित्व प्राप्त है और कोई कारण नहीं कि हम अपनी कार्यवाही को अनावश्यक रूप में लम्बी क्यों बनायें। साथ ही साथ हम यह भी जानते हैं कि यह हाउस भारी दबाव और सीमित समय में कार्य कर रहा है। इस अभिप्राय की पूर्ति के लिये सदस्य देखेंगे कि संघीय विधान कमेटी की रिपोर्ट में एक व्यवस्था रखी गई है जो इस आशय की है कि पहले तीन वर्ष में विधान सरलतापूर्वक संशोधित किया जा सके। विधान के निर्माण में चूँकि हम भारी दबाव में निर्माण कर रहे हैं, संभव है अनेकों दोष रह जायें, इसलिये यह आवश्यक नहीं है कि पहले तीन वर्ष में व्यवस्थाओं को संशोधित करने के लिए हम एक कड़ी विस्तृत और कड़ी योजना रखें। इसलिये रिपोर्ट द्वारा जो विषय हाउस के समक्ष रखा गया है वह यह है कि एक ओर तो सलाहकार समिति अपना कार्य पूरा करती रहेगी और दूसरी ओर मस्विदा बनाने वाली कमेटी विधान के सम्बन्धी बिलों को ले लेगी और अक्टूबर के मध्य या अन्त तक हाउस के समक्ष रखने के लिये बिल का मस्विदा तैयार कर लेगी। यह बहुत ही महत्वपूर्ण बात है कि यह विधान यथासम्भव जितना शीघ्र हम बना सकते हैं, बन जाना चाहिये।

एक अन्य विषय है। आज हमारे साथ मुस्लिम लीग के प्रतिनिधि हैं। मुझे इसमें सन्देह नहीं है कि वे यहां भारत के राजभक्त और राजनियम पालक नागरिकों के रूप में हैं और जितना शीघ्र हमसे हो सकता है उतना शीघ्र उस संघ का विधान बनाने में वे हमें पूर्ण सहयोग देंगे, जिसमें मुझे आशा है कि वे अल्पसंख्यक के रूप में आदरणीय स्थान प्राप्त करेंगे। मैं रियासत के प्रतिनिधियों का हवाला दूंगा जो यहां आये हैं, और मैं उनसे केवल एक प्रार्थना करूंगा कि समय बहुत कम है और रिपोर्ट अक्टूबर के अन्त तक या अधिक से अधिक नवम्बर के अन्त तक संघ के निर्माण करने का विचार उपस्थित करती है। विधान बनाने के इस आवश्यक कार्य में सहयोगियों के समान सदस्यों तथा रियासतों के प्रतिनिधियों के सहयोग की यह हाउस स्वभावत: आशा करता है।

रियासतों के यूनियन में सम्मिलित होने की रीति के सम्बन्ध में मुझे विश्वास है कि आरम्भ में जो कुछ भी संदेह उन्हें हुये थे, वे परिषद के कार्य करने के ढंग से तथा कुछ दिन पूर्व माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल द्वारा दिये गये वक्तव्य से जो कि रियासतों को पूर्ण आश्वासन देता है, दूर हो गये होंगे।

[श्री के.एम. मुंशी]

जहां तक विधान-परिषद् के सदस्यों का सम्बन्ध है वे चाहते हैं कि रियासतें सम्मिलित हों। 16 मई की योजना के आधार पर मुझे विश्वास है कि रियासतों के प्रतिनिधि शीघ्र ही निश्चय पर पहुंचने में समान रूप से हर्षित होंगे।

मैं केवल एक बात कहना चाहता हूं हमारी यहां की कार्यवाहियों के लिये समय ही सारभूत है। हमें शक्तिशाली भारत के–जो कि महान और शक्तिवान होगा–विधान बनाने के दृढ़ उद्देश्य के साथ संसार का सामना करना है। मुझे भय है कि संसार एक और संकट की ओर अग्रसर हो रहा है, और जब वह संकट उपस्थित हो–ईश्वर करे वह कभी न हो–तो वह हमें तत्पर पायें।

इन थोड़े से शब्दों के साथ मैं इस रिपोर्ट को विचारार्थ हाउस के समक्ष रखता हूं।

मुझे इस संशोधन के स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है, जिसको श्री के. सन्तानम् पेश करने का प्रस्ताव रख रहे हैं।

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रास: जनरल): श्रीमानजी, मैं यह पेश करने का निवेदन करता हूं कि:–

प्रस्ताव के अन्त में निम्न भाग जोड़ दिया जाये:

''आगे यह निश्चय किया जाता है कि पैरा तीन के अलावा रिपोर्ट स्वीकार की जाये और मौलिक अधिकारों तथा कबायली तथा पृथक क्षेत्रों की सलाहकार कमेटी से किसी निकट तिथि में और यदि हो सके तो इस अधिवेशन के समाप्त होने के पूर्व उन सामान्य सिद्धान्तों को तय करने के लिए कहा जाये जो कि अल्पसंख्यकों के सम्बन्ध में है, और जिन्हें विधान में रखना है ताकि विधान के मस्विदे में शामिल करने के पूर्व परिषद् उन सिद्धान्तों पर विचार कर सके और निर्णय दे सके। और जब ये सिद्धान्त इस प्रकार स्वीकार कर लिए जायें तब पैरा तीन में प्रस्तावित कार्य विधि का अनुसरण किया जाये।''

इस संशोधन की आवश्यकता पर मुझे अधिक नहीं कहना है। हम सब जानते हैं कि अल्पसंख्यकों के अधिकारों के संरक्षण के सम्बन्ध में जिन सिद्धांतों का पालन करना है उनसे हमारे मस्तिष्कों पर कितना अधिक जोर पड़ा है। यदि वे सिद्धांत विधान के मस्विदों में शामिल कर लिये जाते हैं तो हम उनके परिवर्तन

करने में अपने आपको एक विशेष प्रकार की असुविधा में डालेंगे। मस्विदे के प्रकाशित होने, प्रचार करने तथा समाचार पत्रों और जनता में उस पर टीका-टिप्पणी होने के पश्चात् यदि किसी मुख्य परिवर्तन करने की आवश्यकता होती है तो यह बड़ी हृदय वेदना का विषय होगा। इसलिये यह आवश्यक है कि विधान के अन्य सिद्धांतों के समान निर्वाचकों, मताधिकारों तथा ऐसे और विषयों के सिद्धांतों को पहले स्वीकार किया जाये और इसके बाद उनको मस्विदे में रखा जाये।

***अध्यक्षः** क्या कोई सदस्य प्रस्ताव के पक्ष में हाउस के समक्ष अपने विचार प्रकट करना चाहता है ?

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगालः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस हाउस में नवागन्तुक हूं। श्री के.एम. मुन्शी द्वारा प्रेषित प्रस्ताव से मुझे यह विदित होता है कि जो विषय विचारार्थ प्रस्तावित किया गया है वह आर्डर आफ बिजनेस कमेटी की आगे की रिपोर्ट है। इसका आशय यह है कि कोई रिपोर्ट पहली भी थी। हमारे पास उसकी कोई प्रति नहीं है। इससे हमें असुविधा होती है। हमारे लिये यह जान लेना कि अब तक क्या हुआ, अत्यंत आवश्यक है।

दूसरी बात यह है कि हमारे पास 16 मई और 3 जून की घोषणाओं की सरकारी प्रतियां भी होनी चाहियें। यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति ने उन्हें पढ़ा है, फिर भी हम उनकी सरकारी प्रतियां रखना चाहेंगे। केवल तभी हमारे लिए उचित रीति के अनुसार कार्य में अग्रसर होना संभव हो सकता है।

प्रस्तावक महोदय ने मुस्लिम लीग के सदस्यों से भारत के राजभक्त तथा राज-नियम पालक नागरिक बनने की प्रार्थना की है। मैं सोचता था कि इस बात में, कि हम यहां राजभक्त तथा राज-नियम-पालक नागरिक के समान आये हैं, किसी भी शंका की गुंजायश न थी। (*करतल ध्वनि*) मैं उचित सम्मानपूर्वक निवेदन करता हूं कि हम यहां यथासम्भव शीघ्र विधान बनाने को इस सभा के विचार-विमर्श में भाग लेने के लिये आये हैं। लेकिन इसके पूर्व कि हम सभा में लाभदायक भाग ले सकें हम नवागन्तुकों को पहली रिपोर्टों, वाद-विवादों और अन्य प्रसंग सम्बन्धी पत्रों के अध्ययन करने के लिए कुछ समय चाहिए।

श्री आर.वी. धुलेकर (यू.पी.) : जनरल श्रीयुत मुंशी ने जो रिपोर्ट आपके सामने पेश की है और जो अब तक इस कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली को काम करना चाहिये था उसके बारे में जो बातें बताई गई हैं, उनसे मैं सहमत हूं। दो-चार

[श्री आर.वी. धुलेकर]

प्रश्न जो कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली के सामने आयेंगे उनके सम्बन्ध में मैं आपसे कुछ कहना चाहता हूं। पहली बात यह है कि अभी हाल में कुछ ऐसी तब्दीलियां हुई हैं जिनकी वजह से कुछ कांस्टीट्युयेंट असेम्बली के मेम्बराम बाहर हो गये और नये यहां पर चुनकर आ गये। जो नए मेम्बर साहिबान आये हैं उनको कुछ दिन लगेंगे, जब कि वह पूरी कार्यवाही, जो कि हम कर चुके हैं, उसको वह समझ सकें। इस तरीके से जो कुछ कार्यवाही, आज छः महीने से वर्तमान कांस्टीट्युयेंट असेम्बली कर सकी है, वही बातें हमें फिर से समझनी हैं; और हम उन बातों पर जब तक फिर से गौर न कर लें तब तक हम कैसे आगे बढ़ें, इस बात के ऊपर गौर करना है। हम इस बात को देखते हैं कि जब कि हिन्दुस्तान के दो टुकड़े हो गये हैं तो हम इस बात को देखना चाहते हैं कि जो कांस्टीट्युयेंट असेम्बली बनी थी और जो उनका पहला दृष्टिकोण था वह वैसे का वैसा ही आज रहना चाहिए या उसमें तब्दीली होनी चाहिए। इस पर भी हमें विचार करना है। क्योंकि बहुत-सी बातें ऐसी होती हैं जो एक समय तो उपयुक्त होती हैं परन्तु जब समय बदल जाता है तो उस समय वह उपयुक्त नहीं रहतीं। पिछली दो-चार महीने की कार्यवाही के सम्बन्ध में पहली बात यह देखना है कि पहले उद्देश्य का प्रस्ताव जो हमारे सामने पेश हुआ था उसमें हमने यह वचन दिया था कि जो लोग इस हिन्दुस्तान में रहते हैं उनका सब प्रकार से उनकी संस्कृति, उनकी भाषा और उनकी सभ्यता का सब तरह का संरक्षण किया जायेगा। अब हमें यह सोचना है कि जो इन तीन बातों के माने पहले थे, आया उन बातों के माने अब भी वैसे के वैसे ही रहेंगे या कुछ हमको बदलना है। मैं समझता हूं कि अब दृष्टिकोण बदलने की आवश्यकता है और मैं समझता हूं कि जो प्रस्ताव पहले पास हो चुका है और जिस दृष्टिकोण से प्रस्तावों के ऊपर यहां बहस हुई है उनको बदलने की हमें आवश्यकता है। पहले जब कि मैंने प्रश्न किया था उस वक्त मैंने यह कहा था कि हमारी इस कांस्टीट्युयेंट असेम्बली की भाषा हिंदुस्तानी होनी चाहिए। मैं आपके सम्मुख अब यह बात पेश करूंगा कि आप कृपा करके इस पर विचार करें कि अब हमारी भाषा और उसके साथ क्या स्क्रिप्ट या लिपि होनी चाहिए। दूसरी बात जो कि रिपोर्ट में है वह अक्टूबर या नवम्बर की है। ऐसा कहा जाता है कि यह कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली अब सेन्ट्रल असेम्बली में परिवर्तित हो जायेगी और इसके लिऐ हो सकता है कि प्रान्त से चुने हुए जो लेजिस्लेटिव असेम्बली के मेम्बर यहां पर आये हुये हैं उनकी क्या परिस्थिति होती है; इस पर भी हमको विचार करना है। कुछ लोग ऐसा कहते हैं कि जो प्रान्तीय असेम्बली के मेम्बरान यहां आये हैं, उनसे यह सिफारिश की जायेगी कि वह यहां से वापस चले जावें।

अध्यक्षः मि. धुलेकर, मैं समझता हूं कि जो सवाल हमारे सामने पेश है उससे आप बहुत दूर चले गये हैं।

श्री आर.वी. धुलेकरः नहीं, मैं बहुत दूर नहीं गया हूं।

अध्यक्षः मैं समझ रहा हूं कि मैं अपना काम कर रहा हूं। मेरा ख्याल यह है कि आप बहुत दूर बदल गये हैं। हमारे सामने सवाल यह है कि हमारे सामने जो प्रोग्राम या टाइम-टेबल इस रिपोर्ट में पेश किया है, हम उसे मंजूर करते हैं। आप इतने सवालों को ला रहे हैं और जो कान्स्टीट्यूशन का सवाल आप यहां पेश करना चाहते हैं तो यह मौका नहीं है।

श्री आर.वी. धुलेकरः मैं क्षमा चाहता हूं और बतलाना चाहता हूं कि जो प्रोग्राम श्री मुंशी ने पेश किया है उस प्रोग्राम के अनुसार मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि जो बिजनेस कमेटी बैठी है वह इस बात को सोचती है कि इस प्रकार के नये चुनाव या कोई ऐसी बात न पेश हो जिसमें समय की देरी हो। इसलिए मैं इस बात की सिफारिश करूंगा कि इस समय कांस्टीट्युयेंट असेम्बली के मेम्बर बने हुऐ हैं वही मेम्बरान आखिर तक जब तक कि कांस्टीट्युशन न बन जाये तब तक काम करें।

अध्यक्षः यह सवाल तो इस वक्त उठता ही नहीं है कि कौन मेम्बर इसके रहेंगे और कौन इसके मेम्बर नहीं रहेंगे। सवाल इस वक्त सीधा और छोटा-सा यह है कि यह टाइम-टेबल कमेटी ने बनाकर पेश किया है उसे आप इस वक्त मंजूर करते हैं या नहीं। इस वक्त यह भी सवाल नहीं है कि कौन-सी भाषा रहेगी। इस सम्बन्ध में जो कुछ आप कह रहे हैं वह गलत कह रहे हैं। इस वक्त जो चीज़ें आपके सामने पेश हैं और जो टाइम-टेबल आपके सामने रखा गया है उसके सम्बन्ध में आप क्या कहना चाहते हैं ?

श्री आर.वी. धुलेकरः मैं क्षमा चाहता हूं और यह कहना चाहता हूं कि इस कांस्टीट्युयेंट असेम्बली के लिए यह सुविधा होगी कि जो सदस्य इस समय मौजूद हैं जिन्होंने सारा समय इसके लिए लगाया है वह सदस्य यदि अक्टूबर तक, जब तक कि पूरा कान्स्टीट्यूशन न बने तब तक मौजूद रहें।

अध्यक्षः फिर वही सवाल आप कर रहे हैं। मैंने पहले ही आपको और तमाम हाउस को बतला दिया है कि जब तक इस्तीफा नहीं देते हैं वह उसके मेम्बर हैं। फिर अगर किसी के रहने का इरादा होगा तो उस वक्त यह सवाल उठेगा।

श्री आर.वी. धुलेकरः मुझे संतोष है। मैं एक शब्द और कहना चाहता हूं कि कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली के इस सेशन में किसी समय ऐसा मौका दिया जाये कि इस समय तक जितना काम हमने किया है और जो कुछ बातें आगे आने वाली हैं, वह अगर किसी समय हमारे सामने उपस्थित की जायें और हमको मौका मिलना चाहिये कि उस पर सोच-विचार कर सकें। इतना ही मुझे कहना है।

***हाजी अब्दुल सत्तार हाजी इशहाक सेठ** (मद्रासः मुस्लिम)ः मैं सभा का ध्यान इस बात की ओर आकर्षित करना चाहता हूं कि इस महत्वपूर्ण संशोधन को सदस्यों में नहीं घुमाया गया है। मैं संशोधन का विरोध नहीं कर रहा हूं। यह एक महत्वपूर्ण संशोधन है और मैं इसके पक्ष में हूं, परन्तु बिना उसकी प्रति के उसे समझना बहुत कठिन है। क्या मैं आपसे इस सहायता के लिये निवेदन करूं कि आप यह देख लिया करें कि ऐसे महत्वपूर्ण संशोधन (जहां तक सम्भव हों), सदस्यों में ठीक समय में घुमा दिये गये हैं ?

***अध्यक्षः** मैं आपसे पूर्णतः सहमत हूं कि महत्वपूर्ण संशोधन की ठीक समय पर सूचना दी जानी चाहिये जिससे कि सदस्यों को अध्ययन करने का अवसर मिल जाये।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रांतः जनरल)ः अध्यक्ष महोदय, क्या मैं आपसे जरा और जोर से बोलने का निवेदन कर सकता हूं। आपके ध्वनिवर्धक यंत्र के द्वारा बोलने पर भी हम आपको नहीं सुन सके।

***अध्यक्षः** मुझे बहुत खेद है, पर इसके पूर्व किसी ने भी शिकायत नहीं की।

माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः अब हम आपको सुन सकते हैं।

***अध्यक्षः** लेकिन मेरे ख्याल से तो मैंने अपनी आवाज तेज नहीं की है।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्त प्रांतः जनरल)ः यह आपमें और ध्वनिवर्धक यंत्र में फासले के कारण है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास: जनरल): श्री मुंशी ने प्रस्ताव पेश करते हुए जो कुछ कहा है उसके सम्बन्ध में मैं एकाध शब्द कहना चाहता हूं। जो कुछ हुआ है उसमें मैं बहुत खुश नहीं हूं। यद्यपि मैंने और मेरे दूसरे हमख्याल वालों ने वर्तमान परिस्थितियों में स्वयं इसी तजवीज को सबसे अच्छा मान लिया है। श्रीमान्जी, मुझे प्रसन्नता है कि मुस्लिम लीग के सदस्य यहां आ गये हैं। जहां तक उनका भारतीय संघ के निवासियों के रूप में सम्बन्ध है, मुझे खुशी है कि बहुत-सी रियासतें भी आ गई हैं। मुझे और भी खुशी होती यदि समस्त भारतवर्ष का यहां प्रतिनिधित्व होता। मुझे इस बात पर आश्चर्य हुआ कि श्री मुंशी जो कि अखंड हिन्दुस्तान के हामी थे अब समान रूप से इस तजवीज के पक्ष में हैं। मेरा निजी विचार है कि 16 मई की तजवीज सबसे अच्छी थी। मुझे खेद है कि उस तजवीज का परित्याग कर दिया गया। लेकिन जो कुछ हो गया उस पर हम न पछतावें। यद्यपि जो कुछ हुआ है वह वर्तमान परिस्थितियों में उत्तम है, फिर भी हम सबको उस दिवस की आशा रखनी चाहिये जब हम फिर एक होंगे। यदि 16 मई के प्रस्ताव पर जो कि सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया था, दृढ़ रहते तो बंगाल का विभाजन, पंजाब का विभाजन, पश्चिमोत्तर सीमा-प्रदेश का अलग होना, सिलहट का हाथ से जाना यह सब बातें न होतीं।

***अध्यक्ष:** मैं आपसे पूर्णत: सहमत हूं, लेकिन उसके लिए श्री मुंशी पर दोषारोपण करने से क्या लाभ।

***मि. एच.एस. प्रेटर** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्जी, मैं संशोधन का समर्थन करने के लिये खड़ा होता हूं। हम उन नवीन प्रान्तीय विधान के सिद्धान्तों पर विचार कर रहे हैं जिनका अल्पसंख्यकों की स्थिति पर विशेष प्रभाव पड़ता है। इन सिद्धान्तों की स्वीकृति पर इसी अधिवेशन में निर्णय किया जा सकता है। मैं इसलिए प्रस्ताव रखता हूं कि माइनोरटीज कमेटी को उन सिद्धान्तों पर विचार करने का शीघ्र अवसर दिया जाये और उनके विचारों पर अंतिम स्वीकृति के पूर्व इस परिषद् द्वारा उचित विमर्श किया जाये। मैं इसीलिए इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, श्री सन्तानम् द्वारा प्रेषित प्रस्ताव का समर्थन करने में मुझे बड़ी खुशी है। यद्यपि यहां अपनी कार्यवाही का पालन करने में शीघ्रता की आवश्यकता का हम पूर्ण सम्मान करते हैं, फिर भी

[श्री जयपाल सिंह]

मैं अनुभव करता हूं कि पृथक क्षेत्रों की उप-समिति की रिपोर्ट का इसी अधिवेशन में उपस्थित करना असम्भव है। यह विचार रखा गया है कि बड़े-बड़े सिद्धान्तों का इस अधिवेशन में निश्चय कर दिया जाये। परन्तु जैसी सूरत है, पृथक क्षेत्रों की उप-समिति को अभी बिहार और संयुक्त प्रान्त के पृथक तथा आंशिक पृथक क्षेत्रों को देखना है। जबकि इन दो प्रान्तों को संभवतः वर्षा ऋतु में नहीं देखा जा सकता है तो मैं नहीं समझता कि आदिवासियों की समस्या पर तथा उन महत्वपूर्ण प्रश्नों पर जिनका आदिवासियों पर प्रभाव पड़ता है इस अधिवेशन में निर्णय करना संभव हो भी सकता है, जैसा कि श्री मुंशी सुझाव रखते हैं। मेरे विचार से जैसा कि मि. प्रेटर ने बताया है यह बहुत आवश्यक है कि इस यूनियन का जनता के किसी भी विभाग को–मुझे दुख है कि मुझे 'विभाग' शब्द का प्रयोग करना पड़ रहा है–किसी भी भाग को उनसे सम्बन्धित तथा प्रभावोत्पादक आवश्यक विषयों पर विचार करते समय अलग न रखा जाये। मैं केवल यह बताना चाहता हूं कि कबायली उप-समिति (ट्राइबल सब-कमेटी) की रिपोर्ट सम्भवतः अगस्त के अंत तक तैयार हो सकती है।

मौलवी अजीज अहमद खांः सदरे मोहतरम् (अध्यक्ष महोदय) मुंशीसाहब ने जो तजवीज जनाबे वाला के सामने पेश की है मुझको उससे इख्तलाफ (मतभेद) है और जो तरमीम (संशोधन) उसके सिलसिले में पेश की गई है, उससे इत्तिफाक करने के लिए हाजिर हुआ हूं। मुझे जनाबे वाला के इस इरशाद से इत्तफाक है कि यह न होना चाहिये कि अपने इस अजीमुश्शान (शानदार) काम को जिसमें बीसों मसायल (मुख्य प्रश्न) हमें तय करना है काफी तौर पर बगैर गौर किये हुए हम जल्द से जल्द खत्म कर दें। जनाबे वाला ने इरशाद फरमाया था कि हमको इस बात का ख्याल रखना चाहिये कि हमारे पास वक्त कम और काम ज्यादा है। लेकिन साथ ही साथ हमको इस बात का भी ख्याल रखना चाहिये कि हम काफी गौरोफिकर के साथ हिन्दुस्तान का दस्तूर (विधान) बनायें। बरखिलाफ इसके इस तजवीज में मैं यह पाता हूं कि मुहर्रिख साहब (प्रस्तावक महोदय) का ख्याल है कि वह तीनों कमेटियों का इन्तहायी (बहुत) अहम् (खास) है और जिनकी रिपोर्ट अभी तैयार नहीं होने पाई है; जब तैयार हों इस असेम्बली में उनके पेश होने की जरूरत बाकी न रहे।

इस कांस्टीट्युयेंट असेम्बली में बगैर इन पर गौरोफिकर किये हुये वह आगे बढ़ा दी जाये और दस्तूरे हिन्द (भारतीय विधान) के हुदूद में (सीमा में) इसके

मुताबिक दफाआत मुरत्तब कर दी है (बना दी है)। दस्तूर (विधान) में यह तजवीज इस तरह से है:–

"तदनुसार हम प्रस्ताव करते हैं कि यह परिषद् विधान के मसविदे पर विचार करने के लिये किसी समय माह अक्टूबर में, यदि आरम्भ में हो सके तो और भी अच्छा है, अध्यक्ष को अधिवेशन बुलाने का अधिकार दे।"

जनाबे वाला, जहां तक फंडामेंटल राइट्स का ताल्लुक है, हमको इस बात का मौका मिलना चाहिये कि हम इस पर काफी गौरोफिकर करने के बाद अपनी राय का इजहार करें और मस्विदा तैयार करने वालों को अपनी सोची हुई तजवीज सुपुर्द करें।

*__अध्यक्षः__ कान्स्टीट्रयुयेंट असेम्बली ने जहां तक फंडामेंटल राइट्स का सम्बन्ध है, काफी गौर किया है और उसको मंजूर कर लिया है। अब सिर्फ माइनोरिटी कम्युनिटी की रिपोर्ट और ट्राइबल एरिया की रिपोर्ट बाकी है।

मौलवी अजीज अहमद खांः ऐसी हालत में तजवीज में जो इबारत लिखी गई है वह गलत है, क्योंकि इस तजवीज में फन्डामेंटल राइट्स की कमेटी का तसकरा साफ अलफाज में है। जहां तक ट्राइबल एरिया कमेटी का ताल्लुक है, मैं समझता हूं मौजूदा हालत में वह तकरीबन बेकार होगी। क्यों बेकार होगी, यह आप हजरात मुझसे बेहतर जानते हैं। लेकिन माइनोरिटीज कमेटी की रिपोर्ट कब्ल इसके (इससे पहले) दस्तूर (विधान) में रखी जाये, मुनासिब यह होगा कि वह पहले कांस्टीट्युयेंट असेम्बली के सामने पेश की जाये और हमको उस पर गौर करने का पूरा मौका दिया जाये और गौर करने के बाद जो तरीकेकार हो उसी के मुताबिक ड्राफ्ट तैयार हो। लिहाजा जैसा कि सदरे मौहतरम ने अपनी इब्तदाई तकरीर (पहले भाषण) में इजहार फरमाया है, इन उमूर (कामों) में जल्दी न करनी चाहिये जिससे काम खराब हो। इस बुनियाद पर इस तजवीज की मैं मुखालिफत करता हूं और तरमीम से इत्तफाक करता हूं।

*__डा. मोहन सिंह मेहता__ (उदयपुर): श्रीमान्जी, संभव है मेरी भूल हो पर मैंने मुंशी के वक्तव्य से यह समझा कि उनको श्री सन्तानम् के संशोधन की पहले से जानकारी थी और उन्होंने उसे स्वीकार कर लिया था।

***अध्यक्षः** एक प्रकार से श्री मुंशी ने यह कहा कि वे श्री सन्तानम् के प्रस्ताव को स्वीकार कर चुके हैं। यद्यपि श्री सन्तानम् ने नियमपूर्वक संशोधन पेश नहीं किया था फिर भी श्री मुंशी ने उसे स्वीकार कर ही लिया।

माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः जनाबे सदर, मैंने बहुत गौर से तमाम उन तकरीरों को जो इस वक्त हुई हैं सुना, लेकिन मेरी समझ में नहीं आया कि आखिर इस चीज पर इतनी तकरीरें क्यों हुई। श्री मुंशी ने भी जो तकरीर की, बदकिस्मती से वह भी मेरी समझ में नहीं आई। बहरहाल यह एक छोटी-सी बात है कि किस तरह हमारा आयन्दा काम हो और हमें आयन्दा के कामों के उसूल को तय करना है। इस चीज से कोई मतलब नहीं कि इस सेशन में काम पूरा करें या नेक्सट् सेशन में पूरा करें। लेकिन हमारे सामने एक नक्शा होना चाहिये। श्री मुंशी ने एक नक्शा पेश किया है, उस पर हम गौर करके कोई फैसला करें। आखिर इसमें बहस किस बात की है ? जितना काम इस सेशन में खतम हो सकेगा, खतम करेंगे और जितना काम बाकी रह जायेगा वह अक्टूबर या नवम्बर के सेशन में खतम करेंगे।

श्री महमूद शरीफः जनाबे सदर, मौलवी अजीज अहमद साहब ने जो तकरीर आपके सामने पेश की है मैं उसकी ताईद करता हूं। आपने अपनी तकरीर के दौरान में फरमाया कि कोई तजवीज, कोई कानून या कोई मसविदा उस वक्त तक कामयाब नहीं हो सकता, जब तक कि माइनोरटीज का तहफ्फुज (सुरक्षा) काफी तौर पर और इतमीनानबक्स (संतोषजनक) न हो। यह उसूल बहुत ज्यादा अहम है, जिसकी तरफ मौलवी साहब ने आपकी तवज्जह मबजूल (ध्यान आकर्षित) की है। आप जानते हैं कि अगर यह तजवीज जिस तरह है मंजूर कर ली गई, तो माइनोरटीज में इख्तलाफात और दिलों में पेचीदगियां पैदा हो जायेंगी। इस वास्ते बेहतर बात यह है कि इसका जल्द से जल्द फैसला करना चाहिये। और जब तक हम इसका हल न हासिल कर सकेंगे, उस वक्त तक मैं समझता हूं कि तजवीज की ताईद करना कब्ल-अजवक्त (समय से पूर्व) होगा। इसलिये मैं तजवीज की मुखालिफत करता हूं और अजीज अहमद साहब की तकरीर की लफ्ज बलफ्ज ताईद करता हूं।

***श्री श्रीप्रकाश** (संयुक्त प्रांतः जनरल): अध्यक्ष महोदय, क्या आप संशोधन को फिर से पढ़ दीजियेगा ?

***अध्यक्षः** श्री संतानम् द्वारा पेश किया हुआ संशोधन इस प्रकार है, यह प्रस्ताव के अन्त में जोड़ दिया जायेः-

''आगे यह निश्चय किया जाता है कि पैरा 3 के अलावा रिपोर्ट स्वीकार की जाये और मौलिक अधिकारों और कबायली तथा पृथक क्षेत्रों की सलाहकार कमेटी से किसी निकट तिथि में और यदि हो सके तो इस अधिवेशन के समाप्त होने के पूर्व उन सामान्य सिद्धान्तों को तय करने के लिये कहा जाये जो कि अल्पसंख्यकों के सम्बन्ध में हैं और जिन्हें विधान में रखना है ताकि विधान के मसविदे में शामिल करने के पूर्व उन सिद्धान्तों पर परिषद् विचार कर सके और निर्णय दे सके और जब ये सिद्धान्त इस प्रकार स्वीकार कर लिये जायें तब पैरा 3 में प्रस्तावित कार्य विधि का अनुसरण किया जाये।''

मि. बी. पोकर साहब बहादुर (मद्रासः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, सर्वप्रथम मैं उस अयोग्यता को स्वीकार करूं जिसके कारण मुझे कष्ट हो रहा है और जिससे मैं अंग्रेजी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं में परिषद् की जो कार्यवाहियां हो चुकी हैं उन्हें नहीं समझ सका हूं। मैं इसलिये प्रधान महोदय से प्रार्थना करूंगा कि जो कार्यवाही यहां होती है उसका वे अंग्रेजी में प्रतिपादन करने की व्यवस्था करें। (*करतल ध्वनि*) अन्यथा कार्यवाहियों को समझना और उनमें भाग लेना हमारे लिये बहुत कठिन होगा। निस्संदेह मैं तो सहमत हूं कि एक सार्वजनिक भाषा, सार्वदेशिक भाषा तथा एक राष्ट्रीय भाषा का होना आवश्यक है। मैं इस सबसे सहमत हूं। लेकिन हमें तथ्यों को भी जिस रूप में वे हैं उसी रूप में स्वीकार करना है। विधान-परिषद् की वर्तमान रचना में ऐसे सदस्य हैं जो विभिन्न भाषाओं से परिचित हैं। हम सब जानते हैं कि इस परिषद् के समस्त सदस्य उर्दू से या हिंदी से परिचित नहीं हैं। ऐसे भी कुछ सदस्य होंगे जो अंग्रेजी नहीं जानते हैं, परन्तु मैं यह मानता हूं कि अधिकांश सदस्य अंग्रेजी से परिचित हैं। इसलिये यह एक लाभदायक प्रणाली होगी, यदि अध्यक्ष महोदय हम सबको कार्यवाहियों से परिचित कराने का मार्ग खोज निकालें।

श्रीमान् जी, हाउस के समक्ष उपस्थित प्रस्ताव से सम्बन्धित विषय पर आने के पूर्व मैं उन परिस्थितियों के विषय में एक दो शब्द कहूंगा जिनके कारण हम मुस्लिम लीग के सदस्य यहां आये हैं और इन कार्यवाहियों में भाग लेने का निर्णय कर चुके हैं। श्रीमान् जी, आप इस बात से सहमत होंगे कि हम संसार के इतिहास में एक अपूर्व घटना होने के पश्चात् यहां एकत्रित हुये हैं। अर्थात् खून की एक बूंद बहाये बिना भारत तथा पाकिस्तान दोनों के लिये स्वाधीनता प्राप्त करने के पश्चात्......

***अनेक माननीय सदस्यः** ऐसा नहीं, ऐसा नहीं।

***मि. बी. पोकर साहब बहादुरः** मैं अच्छी तरह जानता हूं कि ऐसे अनेक सदस्य हैं......

***श्री देवी प्रसाद खेतान** (पश्चिमी बंगालः जनरल): मैं एक वैधानिक आपत्ति पेश करता हूं। मैं निवेदन करता हूं कि माननीय सदस्य का वक्तव्य हाउस के समक्ष विचारणीय विषय से पूर्णतः परे है। श्रीमान् जी, मैं यह निवेदन करूंगा कि उनसे हाउस के समक्ष प्रस्ताव की सीमा में रहने के लिये कहा जाये।

***अध्यक्षः** मैं माननीय सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे इस कार्य को मुझ पर छोड़ दें।

***मि. बी. पोकर साहब बहादुरः** मैं लोगों की भावनाओं को जानता हूं। श्रीमान् जी, अनेकों क्षेत्रों में यह दुखदायी भावना है कि भारतवर्ष जिस रूप में पहले था, उससे अब विस्तार में कम हो गया है और एक दूसरा राज्य अर्थात् पाकिस्तान....

***अध्यक्षः** क्या आप अपने को हाउस के समक्ष उपस्थित प्रस्ताव पर सीमित रखेंगे ?

***मि. बी. पोकर साहब बहादुरः** श्रीमान् जी, मैंने केवल इसलिये इस बात का हवाला दिया कि हम एक ऐसी घटना के पश्चात् यहां इस समय एकत्रित हुए हैं, जिसका उदाहरण संसार के इतिहास में नहीं है।

हम सब प्रसन्न हैं कि हम यहां एकत्रित हुये हैं और मैं श्री मुंशी को उनके श्रेष्ठ वक्तव्य के लिये बधाई देता हूं और उस सुंदर प्रवृत्ति के लिये बधाई देता हूं कि जिससे प्रेरित होकर उन्होंने वह वक्तव्य दिया है जो कि समस्त सम्बन्धित व्यक्तियों से संयुक्त कार्य कराने में सहायक होगा। यह देखकर मुझे दुख हुआ कि एक अन्य माननीय सदस्य ने अपने वक्तव्य में विरोधी भाव प्रकट किया और मुझे विश्वास है कि उनका ऐसा करना उनके लिये कोई बुद्धिमानी की बात नहीं है। हमें तथ्यों को उनके वास्तविक रूप में स्वीकार करना है और मैं यह कह सकता हूं कि जहां तक विभाजन से सम्बन्ध है वह तो दो प्रमुख संस्थाओं–इस देश की दो महान् संस्थाओं–अर्थात् कांग्रेस और लीग के समझौते का विषय है। दोनों संस्थाओं द्वारा विभाजन स्वीकार कर लेने पर, विभाजन के प्रश्न पर विलाप करने के लिये कुछ नहीं रहता।

***अध्यक्षः** क्या मैं माननीय सदस्य को यह याद दिलाऊं कि वे हाउस के समक्ष उपस्थित प्रस्ताव की सीमा में रहें। वे विषय से बहुत परे हो गये हैं।

***मि. बी. पोकर साहब बहादुरः** मैं केवल उसी विषय को ले रहा हूं जिस पर श्री मुंशी बोल चुके हैं और एक अन्य माननीय सदस्य ने जो उत्तर दिया है, उसका हवाला दे रहा हूं। यदि मैं इन परिस्थितियों में नियम-विरुद्ध हूं तो मैं आपके निर्धारित सिद्धान्त (नियम निर्देशन) का सम्मान करता हूं और आगे कुछ नहीं कहना चाहता। श्री मुंशी ने मुस्लिम लीग के सदस्यों से भारत के राजभक्त नागरिक बनने और सहयोग देने की प्रार्थना की है। निस्सन्देह यह आश्वासन है ही और मुस्लिम लीग के सदस्य इस विधान-परिषद् में भक्तिपूर्वक सहयोग देंगे और दूसरी ओर से प्रत्युत्तर में वे सहयोग की आशा भी करते हैं।

श्रीमान् जी, जहां तक हाउस के समक्ष प्रस्ताव का सम्बन्ध है, निस्सन्देह उसे स्वीकार करना है। श्री सन्तानम् के संशोधान का मैं हृदय से समर्थन करता हूं।

***अनेक माननीय सदस्यः** अब वोट ली जाये।

***माननीय गोविन्द बल्लभ पन्त** (संयुक्त प्रांतः जनरल): मैं यह प्रस्ताव पेश करने को था कि अब वोट ली जाये।

***अध्यक्षः** मैं इस प्रस्ताव को स्वीकार करता हूं। मेरे ख्याल से हाउस अब और अधिक वाद-विवाद नहीं चाहता है। मैं श्री सन्तानम् के संशोधन को हाउस के समक्ष रखता हूं।

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** संशोधित प्रस्ताव हाउस के समक्ष रखा जाता है। संशोधित प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

नियमों में संशोधन

***अध्यक्षः** दूसरा विषय विधान-परिषद् के नियमों में संशोधन सम्बन्धी अनेकों प्रस्ताव हैं। श्री मुंशी उन्हें पेश करेंगे।

***श्री के.एम. मुंशीः** अध्यक्ष महोदय, स्टीअरिंग कमेटी की ओर से जिन संशोधनों को पेश करने का मुझे गौरव है, वे वास्तव में रिपोर्ट में स्वीकार किये गये आधार

[श्री के.एम. मुंशी]

पर हैं। आपकी आज्ञा से मैं एक नियम लूंगा। श्रीमान् जी, मैं पेश करता हूं कि:

''भारतीय विधान-परिषद् के नियमों में निम्नलिखित संशोधनों पर विचार किया जाये:

'नियम 2 वाक्य खंड (ख) में से शब्द 'section or' निकाल दिए जायें। वाक्य खंड (च) को निकाल दिया जाये'।''

***अध्यक्ष:** क्या कोई सदस्य कुछ कहना चाहता है? मि. मुंशी द्वारा प्रेषित इस प्रस्ताव पर मैं राय लेता हूं।

(इस समय कुछ सदस्यों ने कहा कि उनको कार्य पद्धति की नियमावली नहीं दी गई है।)

मुझसे यह कहा गया है कि सदस्यों के पते से नियमावली भेज दी गई है। परन्तु फिर भी जितनी प्रतियां दफ्तर में उपलब्ध हैं नये सदस्यों को दे दी जायेंगी।

***श्री सारंगधर दास** (उडीसा: जनरल): इस वाद-विवाद को हम कल पर रखेंगे।

***सर ए. रामस्वामी मुदालियर** (मैसूर): श्रीमान् जी, मैं इस सुझाव का समर्थन करना चाहूंगा कि नियमों पर कल विचार किया जाये।

***अध्यक्ष:** संशोधन नियमानुकुल है। परन्तु यदि सदस्य इस कार्य को कल पर रखना चाहते हैं तो मुझे सभा स्थगित करनी पड़ेगी। कुछ सदस्यों को यह आपत्ति है कि उन्हें परिषद् की नियमावली नहीं मिली है और संशोधनों के पेश करने के पूर्व वे उन्हें प्राप्त करना चाहेंगे। ऐसी हालत में और कोई सूरत नहीं है सिवा इसके कि नियमों पर कल तक वाद-विवाद स्थगित किया जाये। कुछ और प्रस्ताव हैं जिनको हम ले सकते हैं।

कमेटियों के लिए सदस्यों का चुनाव

***अध्यक्ष:** इसके बाद उपाध्यक्षों के चुनाव सम्बन्धी मद् हैं। यह आज नहीं लिया जा सकता है क्योंकि यह नियम में परिवर्तन पर निर्भर है, इसलिये इसको भी तब तक स्थगित करना पड़ेगा जब तक कि हम नियमों पर संशोधन को पास न कर लें। श्री सत्यनारायण सिनहा इसके बाद का प्रस्ताव पेश करेंगे।

***डा. पट्टाभि सीतारमैया** (मद्रास: जनरल): दो उपाध्यक्षों का चुनना नियम-विरुद्ध नहीं है। हम इस कार्य को कर सकते हैं।

***अध्यक्षः** हम उसको बाद में ले सकते हैं।

***श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहारः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम से जो प्रस्ताव है वह ज़ाब्ते का है:

''यह निश्चय किया जाता है कि यह परिषद् सदस्यों में से विधान-परिषद् के नियम 42 (1) के अनुसार स्टाफ एंड फाइनेंस कमेटी के लिए दो सदस्यों का निर्वाचन करे।''

श्रीमान् जी, आपको यह विदित है कि पिछली बार इस हाउस में हमने स्टाफ एन्ड फ़ाइनेंस कमेटी का चुनाव किया था। जो पहले सदस्य चुने गये थे वे अब इस हाउस के सदस्य नहीं हैं। इसलिये वे उस कमेटी के सदस्य भी नहीं रहे। अतः उस कमेटी में कुछ रिक्त स्थान हैं। अध्यक्ष को यह निश्चित करना है कि इन रिक्त स्थानों की पूर्ति किस प्रकार हो। अतः आपकी स्वीकृति के लिये मैं इस प्रस्ताव को रखता हूं।

***अध्यक्षः** श्री सत्यनारायण सिन्हा ने यह प्रस्ताव पेश किया है:

''यह निश्चय किया जाता है कि यह परिषद् सदस्यों में से विधान-परिषद् के नियम 42 (1) के अनुसार स्टाफ एंड फ़ाइनेंस कमेटी के लिए दो सदस्यों का निर्वाचन करे।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***श्री सत्यनारायण सिन्हाः** श्रीमान् जी, मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूं:

''यह निश्चय किया जाता है कि यह असेम्बली, सदस्यों में से विधान-परिषद् के नियम 44 (3) के अनुसार क्रिडेंशियल कमेटी के लिए तीन सदस्यों का निर्वाचन करे।''

पहले प्रस्ताव के सम्बन्ध में मैंने जो कुछ कहा वही मुझे कहना है। कमेटी के लिये जो सदस्य पहले चुने गये थे वे अब हाउस के सदस्य नहीं रहे। इसलिये अध्यक्ष द्वारा निर्धारित की जाने वाली रीति के अनुसार अपने वर्तमान सदस्यों से हाउस को तीन सदस्य चुनने हैं।

***एक माननीय सदस्यः** हमारे पास नियम नहीं हैं।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव केवल यह है कि कुछ कमेटियों के लिये नियमों के अनुसार कुछ सदस्यों का चुनाव करना है। यदि हम प्रस्ताव स्वीकार कर लेते हैं तो फिर

[अध्यक्ष]

नियमों के अनुसार सदस्यों का चुनाव करेंगे। मैं ख्याल करता हूं कि सदस्यों के चुनने के पूर्व आपको नियम मिल जायेंगे। (*हंसी*)। मैं नहीं समझता हूं कि इस पर भी किसी वाद-विवाद की आवश्यकता है। मैं प्रस्ताव पर वोट लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***श्री सत्यनारायण सिन्हाः** श्रीमान् जी, मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूं:

''निश्चय किया जाता है कि यह असेम्बली, सदस्यों में से विधान-परिषद् के नियम 45 (2) के अनुसार हाउस कमेटी के लिये तीन सदस्यों का निर्वाचन करे।''

पहले प्रस्ताव के सम्बन्ध में जो कुछ मैंने कहा वही मुझे फिर कहना है। क्योंकि इस कमेटी के लिए चुने गये पहले सदस्य अब हाउस के सदस्य नहीं रहे...।

***अध्यक्षः** क्या मैं अब इस पर भी वोट लूं?

प्रस्ताव स्वीकार हुआ।

***श्री सत्यनारायण सिन्हाः** श्रीमान जी, मैं प्रस्ताव रखता हूं:

''निश्चय किया जाता है कि यह परिषद्, सदस्यों में से विधान-परिषद् के नियम 40 (2) तथा (5) के अनुसार स्टीयरिंग कमेटी के लिये 9 सदस्यों का निर्वाचन करे।''

श्रीमान् जी, इस सम्बन्ध में मैं आपका ध्यान नियम 40 की ओर आकर्षित करना चाहूंगा जो इस प्रकार है :-

''परिषद् के कार्य-काल तक के लिये एक स्टीयरिंग कमेटी नियुक्त की जायेगी जिसमें अध्यक्ष के अतिरिक्त 11 सदस्य होंगे, जिनका चुनाव परिषद् आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत के अनुसार एक परिवर्तनीय वोट द्वारा करेगी।''

पिछली बार हमने 11 सदस्य चुने थे। पहले सदस्यों में से 3 सदस्य इस हाउस के सदस्य नहीं रहे। अतः तीन आकस्मिक रिक्त स्थान हैं। आपको उसी नियम के उपनियम (2) में यह मिलेगा।

''परिषद् समय-समय पर उस प्रणाली के अनुसार जिसे वह उचित समझे, आप अतिरिक्त सदस्य चुन सकती है जिनमें से चार स्थान देशी रियासतों के प्रतिनिधियों के निर्वाचन के लिये सुरक्षित रखे जायेंगे।''

इन आठ अतिरिक्त सदस्यों में से चार स्थान रियासतों के लिये नियत किये गये थे। इन चार स्थानों के लिये पिछली बार रियासत के सदस्यों में से हमने दो चुन लिये थे, अतः रियासतों के नियत स्थानों के लिये हमें दो रिक्त स्थानों की पूर्ति करनी है। अन्य चार स्थानों को हमें साधारण निर्वाचन क्षेत्र से सदस्यों का चुनाव कर भरना है। इन 6 रिक्त स्थानों की पूर्ति आनुपातिक प्रतिनिधित्व की विधि द्वारा करना है और तीन आकस्मिक रिक्त स्थानों की पूर्ति अध्यक्ष द्वारा निर्धारित की गई विधि से करना है। मैं यह सुझाव पेश कर रहा हूं कि जिस विधि से हमने आनुपातिक प्रतिनिधित्व द्वारा रियासतों के प्रतिनिधियों में से दो सदस्यों को चुना है, उसी विधि की मैं हाउस के सामने सिफ़ारिश करूंगा कि वे यह स्वीकार करें कि अन्य 6 रिक्त स्थानों की पूर्ति भी आनुपातिक प्रतिनिधित्व द्वारा की जाये और इन 6 रिक्त स्थानों में से दो स्थान रियासत के प्रतिनिधियों के लिये नियत किये जायें। अन्य तीन स्थानों की पूर्ति अन्य कमेटियों में जिस प्रकार की जाती है उसी प्रकार की जाये अर्थात् अध्यक्ष द्वारा निर्वाचन की उस निर्धारित विधि द्वारा जिसे वे उचित समझें।

***अध्यक्षः** क्या इस विषय पर कोई वाद-विवाद करने की आवश्यकता है ? मैं इस प्रस्ताव पर वोट लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

उपाध्यक्षों का चुनाव

***अध्यक्षः** अब वह प्रस्ताव है जिस पर हमें विचार करना है। वह दो उपाध्यक्षों के चुनाव के सम्बन्ध में है। वर्तमान नियमों के अनुसार हाउस द्वारा दो उपाध्यक्षों का चुनाव करना है और तीन उपाध्यक्ष पद के अनुसार थे जो कि तीन विभागों के सभापति होते। अब जो संशोधन प्रस्तावित किया गया है वह यह है कि चूंकि अब विभागों की बैठक नहीं होगी, विभागों के सभी हवालों को नियमों में से निकाल देना चाहिये। अतः वे तीन उपाध्यक्ष अब उपाध्यक्ष नहीं रहेंगे, क्योंकि वे विभाग ही न रहे जिनके अध्यक्ष पद के अनुसार विभागपरिषद् के उपाध्यक्ष बनते।

डाक्टर एच.सी. मुकर्जी उपाध्यक्ष थे जिनका पिछली बार चुनाव हुआ था परन्तु नवीन परिवर्तन के पश्चात् वे विधान-परिषद् के सदस्य न रहे, क्योंकि बंगाल

[अध्यक्ष]

के सभी सदस्य अब विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं। उनका फिर से चुनाव हो गया है लेकिन चूंकि वे सदस्य न रहे, इसलिये उपाध्यक्ष भी न रहे। उनके स्थान में अब किसी को चुनना है। मैं नहीं जानता हूं कि सदस्य उन्हीं को फिर से चुनना पसन्द करेंगे या नहीं, यह तो भिन्न विषय है। मैं यह बता रहा हूं कि यह कोई बड़ी कठिनाई नहीं है क्योंकि यह कोई पेचीदा प्रश्न नहीं है। प्रस्ताव केवल यह है कि दो उपाध्यक्षों का चुनाव करना है। चुनाव कल हो सकता है या परसों, परन्तु इस समय तो आपको केवल यही कहना है कि उपाध्यक्षों की यह दो जगह भर दी जायें। यदि सदस्यों को कोई आपत्ति न हो तो मैं प्रस्तावक महोदय से प्रस्ताव पेश करने के लिये कहूं, परन्तु यदि किसी सदस्य को कोई आपत्ति हो तो मैं इसको नहीं लूंगा।

***माननीय सदस्य:** कोई आपत्ति नहीं है।

***अध्यक्ष:** तो फिर श्री सत्यनारायण सिनहा, आप कृपा कर अपना प्रस्ताव पेश करें।

श्री सत्यनारायण सिन्हा: श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

''निश्चय किया जाता है कि यह परिषद् विधान-परिषद् के नियमों में रखी गई व्यवस्थाओं के अनुसार दो उपाध्यक्षों का निर्वाचन करे।''

श्रीमान् जी, आपने अभी समझा दिया है कि हमें दो उपाध्यक्षों का चुनाव करना है। पिछली बार हमने केवल एक उपाध्यक्ष का चुनाव किया था और दूसरे स्थान को बाद में भरने के लिये छोड़ दिया था। डाक्टर मुकर्जी सर्वसम्मति से इस हाउस के उपाध्यक्ष चुने गये थे। बंगाल विभाजन के कारण वे इस हाउस के सदस्य न रहे। मुझे प्रसन्नता है कि उनका इस हाउस के लिये फिर से चुनाव हो गया, परन्तु नियम के अनुसार स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। वे नये चुने हुये सदस्य तो हुये ही, तथा हमें अन्य उपाध्यक्षों का भी चुनाव करना है। जिस विधि से चुनाव होगा वह अध्यक्ष द्वारा निर्धारित की जायेगी।

***डा. एन.बी. खरे** (अलवर राज्य)**:** श्रीमान् जी, प्रस्ताव का समर्थन करते हुये मैं यह निवेदन करूंगा कि दो उपाध्यक्षों में से.......................।

***माननीय सदस्य:** कृपया ध्वनिवर्धक यन्त्र का प्रयोग कीजिये।

***डा. एन.बी. खरे:** मैं बहुत ज़ोर से बोल रहा हूं *(हंसी)*। एक स्थान रियासतों के दल द्वारा भरा जाना चाहिये।

***अध्यक्ष:** डा. खरे, मुझे खेद है कि जो कुछ आपने कहा मैं नहीं सुन सका *(फिर से हंसी)*।

***डा. एन.बी. खरे:** श्रीमान् जी, इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुये मैं सम्मान पूर्वक यह निवेदन करूंगा कि दो उपाध्यक्षों में से एक रियासत के प्रतिनिधियों में से होना चाहिये। इसका यह अभिप्राय नहीं है कि रियासतों के लिये आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर मैं यह चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** मैं इस प्रस्ताव पर वोट लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अध्यक्ष: अब मैं कुछ निवेदन करूंगा। जब हमने यह निश्चय कर लिया कि यहां चुनाव होने चाहियें तो मुझे नामज़दगी के लिये समय नियत करना है और यदि आवश्यकता हुई तो वोट लेने के लिये भी।

मैं इस प्रकार समय नियत कर रहा हूं:

16 मई को दिन के एक बजे तक सेक्रेटरी द्वारा उम्मीदवारी के पत्र लिये जायेंगे। मैंने नामज़दगी के लिये अब से 48 घंटे दे दिये हैं। यदि आवश्यकता पड़ी तो चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के अनुसार एक परिवर्तनीय वोट द्वारा 17 तारीख को अन्डर सैक्रेटरी के पहली मंजिल के 25 नम्बर के कमरे में दिन के तीन बजे से चार बजे तक होगा। यह उन विभिन्न उप-समितियों के सम्बन्ध में है, जिनके लिये हम अभी प्रस्ताव स्वीकार कर चुके हैं।

उपाध्यक्ष के सम्बन्ध में आनुपातिक प्रतिनिधित्व का कोई प्रश्न नहीं है, परन्तु कुछ नियम हैं जिनके अनुसार चुनाव होगा। मैंने कल दिन के 5 बजे तक उम्मीदवारी के पत्र प्राप्त करने के लिये समय नियत किया है और यदि आवश्यकता हुई तो दूसरे दिन चार बजे उसी कमरे में जिसका ऊपर उल्लेख किया गया है, निर्वाचन होगा।

एक बात और है जिसे आज सभा स्थगित करने के पूर्व मैं हाउस को बताना चाहूंगा। वह कल से अधिवेशन के समय के सम्बन्ध में है। सैक्रेटरी ने साधारण

[अध्यक्ष]

कार्य-पद्धति के अनुसार यह सूचना दे दी है कि कल हम 10 बजे आरम्भ करेंगे। मैं यह कह रहा था कि यदि हम प्रतिदिन दोपहर पश्चात् 3 बजे से 6 बजे तक बैठें तो अच्छा होगा। ऐसा करने से सदस्यों को उन विभिन्न प्रस्तावों पर जो पेश किये जायेंगे, विचार करने के लिये यथेष्ट समय मिलेगा। इसलिये मैं निवेदन करूंगा कि कल से हम अपना अधिवेशन दिन से 3 बजे से 6 बजे तक रखें।

मि. तजम्मुल हुसेन: श्रीमान् जी, मैं यह बताना चाहूंगा कि दिन के 3 बजे से 6 बजे तक बैठक रखने में सदस्यों को असुविधा होगी, क्योंकि उस समय बहुत गरमी होगी। हमें बहुत दूर से आना पड़ता है और 3 बजे तक यहां आने के लिये हमें अपने घरों से लगभग 12 या 1 बजे चल देना पड़ेगा। प्रातःकाल का समय जैसा कि आज था सबसे अच्छा रहेगा। यदि आवश्यकता हो तो हम प्रातः 11 बजे से दोपहर 1 या 1-30 तक सभा कर सकते हैं।

अध्यक्ष: एक बजे वापस होने के समय दिल्ली में काफ़ी गरमी पड़ती है। इसमें कोई अन्तर नहीं है, चाहे आप दिन के एक बजे जायें या दिन के दो बजे आयें।

बेगम ऐज़ाज़ रसूल (संयुक्त प्रान्त: मुस्लिम): क्या मैं यह बताऊं कि कुछ दिनों के बाद रमज़ान का महीना शुरू होगा और मुस्लिम सदस्यों को दिन के 3 बजे से 6 बजे तक बैठना बहुत असुविधाजनक होगा। क्योंकि उस वक्त के बाद ही रोज़ा खोलने का वक्त होगा। इसलिये मैं निवेदन करूंगी कि सुबह का वक्त ही सबसे अच्छा रहेगा।

अध्यक्ष: मुझे नहीं मालूम कि रमज़ान कब शुरू होगा। जब वह शुरू होगा उस वक्त इस प्रश्न पर हम विचार कर सकते हैं। हर सूरत में हम कार्य 6 बजे तक तो समाप्त कर ही देते हैं जो कि सूर्यास्त से लगभग एक घंटे पहले है। यहां सूर्य सात बजे के पश्चात् अस्त होता है। मैं यह मानता हूं कि सभा मेरे सुझाव को स्वीकार करती है। सभा कल दिन के 3 बजे तक स्थगित हुई।

तत्पश्चात् परिषद् मंगलवार ता. 15 जुलाई, सन् 1947 ई. के दिन के 3 बजे तक के लिये स्थगित हुई।

परिशिष्ट

संख्या वि. प./(22)/कमेटी/47

भारतीय विधान-परिषद्

आर्डर आफ बिजिनेस कमेटी की रिपोर्ट

कौंसिल हाउस,
नई दिल्ली
ता. 9 जुलाई, सन् 1947 ई.

प्रेषक

सभापति,
आर्डर ऑफ बिजिनेस कमेटी

सेवा में:

अध्यक्ष,
भारतीय विधान-परिषद्।

महोदय,

परिषद् के गत अधिवेशन में हमने एक रिपोर्ट पेश की थी जो उस समय की अनिश्चित राजनैतिक परिस्थितियों के कारण अनिवार्यत: प्रयोगात्मक थी। तब से अब तक महान् परिवर्तन हुए हैं तथा स्थिति स्पष्ट हो गई है। अंग्रेज़ी सरकार ने तीन जुलाई को एक नवीन घोषणा की है जिसको समस्त मुख्य राजनैतिक दलों ने स्वीकार कर लिया है। उस घोषणा के अनुसार निर्णय कर लेने के फलस्वरूप देश के कुछ भाग भारतवर्ष से पृथक हो जायेंगे। इन परिवर्तनों के कारण योजना के उन दोनों कार्य-पद्धति सम्बन्धी तथा मौलिक अंगों में बड़ा उलटफेर हो गया है, जिनके आधार पर हम अब तक कार्य करते चले आ रहे थे। जहां तक कार्य-पद्धति से सम्बन्ध है, परिषद् के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह विभागों में विभाजित न हो, तथा दलों के प्रश्न पर विचार करना और प्रमुख साम्प्रदायिक महत्वपूर्ण विषयों से सम्बन्धित दोहरी बहुसंख्यक व्यवस्थाओं पर विचार करना अब लाभदायक नहीं है।

इस परिस्थिति के कारण हमने 3 जुलाई को एक मीटिंग की। हमारी प्रार्थना पर पंडित नेहरू इस मीटिंग में उपस्थित हुए और जो सहायता उन्होंने हमें दी उसके लिये हम उनके कृतज्ञ हैं।

2. हम समझते हैं कि अगले अधिवेशन में परिषद् के समक्ष तीन रिपोर्ट विचारार्थ पेश होंगी:

यूनियन कान्स्टीट्यूशन कमेटी की, यूनियन पावर्स कमेटी की और प्राविंशियल कान्स्टीट्यूशन कमेटी की। कमेटियों की यह तीनों रिपोर्टें ऐसे बहुत से प्रश्न रखेंगी जिन पर परिषद् को निर्णय करना होगा। हम सिफ़ारिश करते हैं कि परिषद् इन रिपोर्टों पर जुलाई के अधिवेशन में निर्णय करे और यह आदेश देते हैं कि विधान सम्बन्धी बिल के मसविदा तैयार करने के कार्य को तुरन्त ही ले लिया जाये। हम यह भी सिफ़ारिश करते हैं कि परिषद् में तथा उसके आगामी अधिवेशन में पेश करने के पूर्व मसविदे का सूक्ष्म निरीक्षण करने के लिये परिषद् द्वारा सदस्यों की एक कमेटी नियुक्त की जाये।

3. जुलाई अधिवेशन के पश्चात् जो विषय रह जायेंगे वे मौलिक अधिकारों, अल्पसंख्यकों तथा कबायली और पृथक क्षेत्रों के शासन प्रबन्ध पर एडवाइजरी कमेटी की रिपोर्ट होगी। हम सुझाव पेश करते हैं कि एडवाइज़री कमेटी अपना कार्य अगस्त में समाप्त कर दे और जो सिफ़ारिशें वह करे उनको मसविदा-लेखक अपने बिल में शामिल कर ले और इस बात का विचार न करे कि परिषद् ने अभी इन पर कोई निर्णय नहीं किया है। कोई परिवर्तन यदि बाद में आवश्यक समझा जायेगा तो उसको उपयुक्त संशोधन द्वारा बिल के मसविदे में शामिल कर लिया जाएगा।

4. पिछली रिपोर्ट में हमने यह निवेदन किया था कि परिषद् अपने कार्य को इस वर्ष अक्टूबर के अन्त तक समाप्त कर दे। हम उस सिफ़ारिश को दोहराते हैं, तथा कमेटियों की प्रगति की ओर ध्यान देते हुये हम समझते हैं कि यह साध्य है। तदनुसार हम प्रस्ताव रखते हैं कि परिषद् अध्यक्ष को यह अधिकार दे कि विधान के मसविदे पर विचार करने के लिये वे अक्टूबर में किसी समय, यदि आरम्भ में हो तो और भी अच्छा है, अधिवेशन बुलावें।

5. परिवर्तित परिस्थितियों में विधान-परिषद् के 63 नियम के अनुसार जुलाई अधिवेशन के निश्चयों को घुमाये जाने की हम कोई आवश्यकता नहीं समझते हैं।

हमारी सिफ़ारिशों से नियमों में संशोधन की आवश्यकता होगी। हम निवेदन करते हैं कि स्टीयरिंग कमेटी इस पर विचार करे।

भवदीय—

के.एम. मुंशी, सभापति

कमेटी की ओर से

CON. 3. 4.2.47
1000

अंक 4
संख्या 2

मंगलवार
15 जुलाई
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

			पृष्ठ
1.	परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर	...	1
2.	नियमों में संशोधन	...	1
3.	अनुकरणीय प्रान्तीय विधान के सिद्धांतों के संबंध में रिपोर्ट	...	27
5.	परिशिष्ट	...	50

भारतीय विधान-परिषद्

मंगलवार, 15 जुलाई सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल नई दिल्ली में दोपहर को तीन बजे अध्यक्ष (माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद) की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्यों ने अपने परिचय-पत्र पेश किये और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये :–

1. माननीय मिस्टर हुसेन इमाम (बिहार: मुस्लिम)
2. श्री एन. माधव राव (पूर्वी रियासतों का ग्रूप 2)
3. राजा यादवेन्द्र सिंह जूदेव (मध्य भारतीय ग्रूप)
4. पं. ठाकुरदास भार्गव (पूर्वी पंजाब)
5. श्री जसीमुद्दीन अहमद (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम)

नियमों में संशोधन

***अध्यक्ष:** अब मैं नियमों पर आये हुये संशोधनों को लेता हूं।

नियम 2

***श्री के.एम. मुंशी:** (बम्बई: जनरल): अब मैं सिलसिलेवार नियमों पर अपने संशोधन पेश करना चाहता हूं। शायद सभा को इसमें सुविधा होगी।

अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव रखता हूं:

''नियम 2 के खण्ड (ख) से 'Sections or' शब्द निकाल दिये जायें। और खंड (च) भी निकाल दिया जाये।''

सभा यह देखेगी कि ये दोनों खण्ड सेक्शनों के सम्बंध में हैं। नियम 2 का खण्ड (ख) कहता है:–

'चेयरमैन' का मतलब है उस व्यक्ति से जो कुछ समय के लिए असेम्बली या उसके किसी सेक्शन अथवा समिति का सभापतित्व करता हो।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री के.एम. मुंशी]

सेक्शन अब होंगे ही नहीं, इसलिये 'Sections or' शब्दों को निकाल देना होगा। खण्ड (च) को भी, जिसका सम्बंध सेक्शनों से है, नियमों से हटा देना चाहिये।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि–

"नियम 2 के खण्ड (ख) से 'Sections or' शब्द निकाल दिये जायें और खण्ड (च) भी निकाल दिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 3

***श्री के.एम. मुंशीः** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:–

"नियम 3 में से 'or any section thereof' शब्द निकाल दिये जायें।"

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:–

"नियम 3 में से 'or any section thereof' शब्द निकाल दिये जायें।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 4

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, नियम 4 के सम्बंध में मुझे एक संशोधन रखना है। मेरा प्रस्ताव है कि:–

"नियम 4 में से आदेश मूलक व्यवस्था हटा दी जाये।"

भारतीय धारा-सभा (Legislative Assembly) के समाप्त होने पर यह आवश्यक है क्योंकि अब इस आदेश का कोई अर्थ नहीं है। इसलिये मैं इसे हटाने का प्रस्ताव रखता हूं।

***श्री के.एम. मुंशीः** श्रीमान् श्री सन्तानम् के संशोधन को मैं मंजूर करता हूं।

***श्री श्रीप्रकाश** (संयुक्त प्रांत: जनरल): उन सदस्यों का क्या होगा जो इस समय विधान-परिषद् में दिल्ली और अजमेर मेरवाड़ा के निर्वाचन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं ?

***श्री के.एम. मुंशी:** वर्तमान सदस्य बने रहेंगे पर अगर कोई जगह खाली होगी तो उस स्थिति के लिये श्री सन्तानम् के उस संशोधन में एक विशेष व्यवस्था रखी गई है जिसे नियम 5 के सम्बन्ध में वह अभी पेश करेंगे।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:-

''नियम 4 में से आदेश मूलक व्यवस्था हटा दी जाये।''

प्रस्ताव पास हुआ।

नियम 5

***श्री के.एम. मुंशी:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव रखता हूं कि:-

''नियम 5 के उपनियम (2) से ये शब्द 'or the appropriate authority in British Baluchistan' ''

''उपनियम 6 के स्थान पर यह रखा जाये:-

'(6) उपनियम (2) में उल्लिखित प्रार्थना के पाने के बाद जहां तक हो सके जल्द से जल्द सम्बंधित प्रांतीय धारा-सभा के अध्यक्ष-

(क) उपयुक्त सूचना द्वारा चुनाव के लिये किसी व्यक्ति को रिटर्निंग अफसर नियुक्त करेगा और इसी तरह वह और भी किसी व्यक्ति को नियुक्त कर सकता है जो रिटर्निंग अफसर के नियंत्रण के अधीन किसी भी चुनाव में रिटर्निंग अफसर के सारे कामों को अथवा उसके किसी काम को अदा कर सकता है, और

(ख) उपयुक्त सूचना द्वारा वह निम्नलिखित तारीखें भी निर्धारित करेगा-

(1) उम्मीदवारों की नामजदगी के लिये एक तारीख जो सूचना की तारीख से 15 दिनों से ज्यादा न हो;

[श्री के.एम. मुंशी]

(2) नामजदगी के परचों की जांच के लिए एक तारीख जो पहले बताई हुई तारीख के तीसरे दिन से आगे न जायेगी;

(3) उम्मीदवार द्वारा नामजदगी के परचों की वापसी के लिए एक तारीख जो परचे की जांच की तारीख से दो दिनों से आगे न हो; और

(4) एक और तारीख जो वापसी की तारीख से 21 दिनों से आगे न हो जिस दिन अगर जरूरत हुई तो वोट लिए जायेंगे'।''

इन संशोधनों को रखने का कारण यह है कि रिटर्निंग अफसर की नियुक्ति की कोई व्यवस्था नहीं की गई थी और अब इस व्यवस्था की आवश्यकता समझी गई है।

***अध्यक्षः** संशोधन यह है:–

''नियम 5 के उपनियम (2) से ये शब्द 'or the appropriate authority in British Baluchistan' ''

''उपनियम 6 के स्थान पर यह रखा जाये:–

(6) उपनियम (2) में उल्लिखित प्रार्थना के पाने के बाद जहां तक हो सके जल्द से जल्द सम्बन्धित प्रांतीय धारा-सभा के अध्यक्ष–

(क) उपयुक्त सूचना द्वारा चुनाव के लिए किसी व्यक्ति को रिटर्निंग अफसर नियुक्त करेगा और इसी तरह वह और भी किसी व्यक्ति को नियुक्त कर सकता है जो रिटर्निंग अफसर के नियंत्रण के अधीन किसी भी चुनाव में रिटर्निंग अफसर के सारे कामों को अथवा उसके किसी काम को अदा कर सकता है, और

(ख) उपयुक्त सूचना द्वारा वह निम्नलिखित तारीखें भी निर्धारित करेगा–

(1) उम्मीदवारों की नामजदगी के लिये एक तारीख जो सूचना की तारीख से 15 दिनों से ज़्यादा न हो;

(2) नामजदगी के पर्चो की जांच के लिये एक तारीख जो पहले बताई हुई तारीख के तीसरे दिन से आगे न जायेगी;

(3) उम्मीदवार द्वारा नामजदगी के पर्चे की वापसी के लिये एक तारीख जो पर्चे की जांच की तारीख से दो दिनों से आगे न हो, और

(4) एक और तारीख जो वापसी की तारीख से 21 दिनों से आगे न हो जिस दिन अगर जरूरत हुई तो वोट लिये जायेंगे।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:–

''नियम 5 के उपनियम (2) में 'as the case may be' शब्दों के बाद 'Advisory Councils of Delhi and Ajmer-Merwara' शब्द रखे जायें।''

''नियम 5 के उपनियम (5) में 'in any parts of India' शब्दों के बाद 'which is participating or entitled to participate in this Assembly' रखा जाये।''

''नियम 5 के उपनियम (ग) की जगह यह रखा जाये:–

'उपरोक्त नियम दिल्ली और अजमेर-मेरवाड़ा के सम्बंध में निम्नलिखित संशोधनों के साथ लागू होंगे:

(क) 'प्रान्तीय धारा-सभा' के स्थान पर 'दिल्ली एडवाइज़री कौंसिल या अजमेर-मेरवाड़ा एडवाइज़री कौंसिल, जैसी भी स्थिति हो' रखा जाये, तथा 'प्रान्तीय धारा-सभा के अध्यक्ष' के स्थान पर 'दिल्ली या अजमेर-मेरवाड़ा एडवाइज़री कौंसिल के चेयरमैन, जैसी भी स्थिति हो' रखा जाये।

(ख) बजाय इसके चुनाव में प्रान्तीय धारा-सभा का एक वर्ग भाग ले। दिल्ली या अजमेर-मेरवाड़ा एडवाइज़री कौंसिल के गैर सरकारी सदस्य भी भाग ले सकते हैं'।''

अपनाए हुए परिवर्त्तनों के परिणामस्वरूप ये संशोधन आवश्यक हैं। मैं नहीं समझता कि इनके सम्बन्ध में और कोई स्पष्टीकरण आवश्यक है।

***श्री के.एम. मुंशी:** श्रीमान्, श्री सन्तानम् के संशोधन को मैं मंजूर करता हूं। इनसे यह अर्थ निकलता है कि दिल्ली और अजमेर-मेरवाड़ा के प्रतिनिधियों का चुनाव उनकी एडवाइज़री कौंसिलों द्वारा होगा।

***अध्यक्ष:** विषय यह है:–

''नियम 5 के उपनियम (2) में 'as the case may be' शब्दों के बाद 'Advisory Councils of Delhi and Ajmer-Merwara' शब्द रखे जायें।''

''नियम 5 के उपनियम (5) में 'in any parts of India' शब्दों के बाद 'which is participating or entitled to participate in this Assembly' रखा जाये।''

''नियम 5 के उपनियम (ग) की जगह यह रखा जाये:–

'उपरोक्त नियम दिल्ली और अजमेर-मेरवाड़ा के सम्बंध में निम्नलिखित संशोधनों के साथ लागू होंगे:

(क) 'प्रांतीय धारा-सभा' के स्थान पर 'दिल्ली एडवाइज़री कौंसिल या अजमेरा-मेरवाड़ा एडवाइज़री कौंसिल, जैसी भी स्थिति हो' रखा जाये तथा 'प्रांतीय धारा-सभा के अध्यक्ष' के स्थान पर 'दिल्ली या अजमेर-मेरवाड़ा एडवाइज़री कौंसिल के चेयरमैन, जैसा भी स्थिति हो' रखा जाये।

(ख) बजाय इसके चुनाव में प्रांतीय धारा-सभा का एक वर्ग भाग ले। दिल्ली या अजमेर-मेरवाड़ा एडवाइज़री कौंसिल के गैर सरकारी सदस्य भी भाग ले सकते हैं'।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***श्री के.एम. मुंशी:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:–

''नियम 5 के उपनियम (5) में निम्नलिखित नया उपनियम रखा जाये:–

'यदि चुनाव हुआ तो सम्बंधित प्रांतीय धारा-सभा के अध्यक्ष उपयुक्त सूचना द्वारा वोट (मत) देने का स्थान निर्धारित करेंगे तथा इस बात के लिए कि उस तारीख को जो उपनियम (6) के खण्ड (ख) उपखण्ड (4) के अनुसार निर्धारित की गयी हो, वोटिंग कब से शुरू होगी और कब समाप्त होगी, समय निर्धारित करेंगे'।''

''नियम 5 के उपनियम (9) के अन्त में यह जोड़ा जाये:–

'जहां इस आशय के नियम या आदेश वर्तमान हैं, प्रान्तीय धारा-सभा के अध्यक्ष को अधिकार है कि वह प्रेसीडेंट की स्वीकृति लेकर उन नियमों में ऐसे संशोधन कर सकता है जो इस उपनियम के उद्देश्यों के लिए आवश्यक हों।'

उपरोक्त नियमों को रख लेने से चुनाव सम्बन्धी सारी बातें पूरी हो जाती हैं। नियम 5 में हमने रिटर्निंग अफसर की व्यवस्था जोड़ ली है। निर्वाचन सम्बंधी व्यवस्था को पूर्ण बनाने के लिये यह जरूरी है कि अध्यक्ष को यह अधिकार दिया जाये कि आवश्यक होने पर वह वोट ले सकता है। और फिर ऐसे भी नियम हो सकते हैं जिनमें संशोधन करना आवश्यक हो और हो सकता है कि विधान-परिषद् के पास पहुंचना सम्भव न हो। अत: निर्वाचन को पूरा करने के लिये अध्यक्ष को यह अधिकार दिया जा सकता है कि प्रेसीडेन्ट की स्वीकृति प्राप्त कर वह नियमों को संशोधित कर सकता है।

***श्री के. चेंगलराय रेड्डी:** श्रीमान्, जब पहले वाला संशोधन पेश हुआ था तो मैं यह प्रश्न करने के लिये खड़ा हुआ कि यदि किसी भारतीय रियासत में कोई जगह खाली हुई तो उसकी पूर्ति की क्या व्यवस्था की गयी है ? मुझे एक मित्र ने बताया कि नियमों में इसकी व्यवस्था शामिल कर ली गयी है और तब मैं बैठ गया। पर अब एक संशोधन पेश किया गया है जिसमें उपनिर्वाचन द्वारा रिक्त स्थान की पूर्ति की विधि निर्धारित की गयी है। नियमों को सरसरी निगाह से देखने पर मुझे उसमें ऐसी कोई व्यवस्था नहीं दिखाई देती, जिसमें भारतीय रियासतों में होने वाले रिक्त स्थान की पूर्ति की व्यवस्था हो। इसलिए मेरा सुझाव है कि जाब्ते के नियमों में इसके लिए कोई उपयुक्त व्यवस्था रखी जाये।

***श्री के.एम. मुंशी:** कुछ गलतफहमी पैदा हो गयी है। भारतीय रियासतों से होने वाले निर्वाचनों के सम्बंध में अध्यक्ष ने एक स्थायी आज्ञा निकाली है और ये निर्वाचन इसी आज्ञा के अनुसार होंगे। ये नियम तो चीफ कमिश्नर वाले प्रांतों के सम्बंध में हैं।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:–

''नियम 5 के उपनियम (5) में निम्नलिखित नया उपनियम रखा जाये:–

'यदि चुनाव हुआ तो सम्बन्धित प्रान्तीय धारा-सभा के अध्यक्ष उपयुक्त

[अध्यक्ष]

सूचना द्वारा वोट (मत) देने का स्थान निर्धारित करेंगे तथा इस बात के लिए कि उस तारीख को जो उपनियम (6) के खण्ड (ख) उपखण्ड (4) के अनुसार निर्धारित की गयी हो, वोटिंग कब से शुरू होगी और कब समाप्त होगी, समय निर्धारित करेंगे।''

''नियम 5 के उपनियम (9) के अन्त में यह जोड़ा जाये:-

'जहां इस आशय के नियम या आदेश वर्तमान हैं, प्रान्तीय धारा-सभा के अध्यक्ष को अधिकार है कि वह प्रेसीडेन्ट की स्वीकृति लेकर उन नियमों में ऐसे संशोधन कर सकता है जो इस उपनियम के उद्देश्यों के लिए आवश्यक हों'।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 10

***श्री के.एम. मुंशी:** अब मैं नियम नं. 10 को लेता हूं। यह सेक्शनों की बैठक बुलाने के सम्बंध में है। मैं प्रस्ताव करता हूं कि यह समूचा नियम निकाल दिया जाये।

***श्री श्रीप्रकाश:** मैंने आज सवेरे इस आशय के संशोधन की सूचना भेजी थी कि नियम 5 के बाद एक नया नियम जोड़ा जाये।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं, यह सूचना आज सवेरे मिली।

***श्री श्रीप्रकाश:** मैं इसे और पेश्तर न भेज सका। आज सवेरे 10 बजे इसे भेजा।

***अध्यक्ष:** क्या यह सूचना देर से नहीं आई है ?

***श्री श्रीप्रकाश:** मेरा ख्याल है कि यह संशोधन बड़ा ही आवश्यक है क्योंकि इससे वर्तमान नियमों की एक त्रुटि दूर हो जाती है। यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं इसे पेश करूं ?

***श्री के.एम. मुंशी:** क्या मैं नियम सम्बंधी एक प्रश्न उठा सकता हूं ? हमारा नियम नं. 66 कहता है:-''न तो कोई नया नियम बनाया जायेगा, न इन नियमों में से किसी में संशोधन किया जाएगा और न इनमें से किसी को निकाला जायेगा

सिवाय उस स्थिति के, जब कि नियम बनाने, उसमें संशोधन करने या उसको निकालने का प्रस्ताव स्टीयरिंग कमेटी के हवाले किया गया हो, जो प्रस्ताव पाने के दो सप्ताह के अन्दर अपनी रिपोर्ट विधान-परिषद् को भेज देगी।''

***श्री श्रीप्रकाशः** मैं आपके हाथ में हूं। मैं तो केवल एक खामी दूर करने की कोशिश कर रहा हूं। नये चुनाव हुये हैं। एक बाहरी अधिकारी द्वारा नियम 4 और 5 भंग किये गये हैं। यदि मेरा प्रस्ताव नहीं स्वीकार किया जाता है तो सारे चुनाव जो अभी बंगाल और पंजाब में हुए हैं नियम विरुद्ध हो जायेंगे।

***अध्यक्षः** कृपया तब तक रुकिये जब तक कि हम अन्य नियमों को निपटा न लें। इस बीच में मैं आपके संशोधन पर विचार करूंगा।

मसला यह है कि–

''नियम 10 स्वीकार किया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 11

***श्री के.एम. मुंशीः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं किः–

''नियम 11 में 'पांच उपाध्यक्ष' शब्दों की जगह 'दो उपाध्यक्ष' शब्द रखे जायें और इस नियम के अन्त में यह जोड़ दिया जायेः–

'Who shall be elected by the Assembly from amongst its members in such manner as the President may prescribe.'

(जो असेम्बली द्वारा इसके सदस्यों में से उस तरीके पर चुना जायेगा जैसा अध्यक्ष निर्धारित करें)।''

नियम 11 में पांच उपाध्यक्षों की व्यवस्था है और यह नियम 12 नं. से परस्पर सम्बन्धित है। जिसमें कहा गया है कि प्रत्येक सेक्शन के चेयरमैन अपने पद की हैसियत से असेम्बली के उपाध्यक्ष होंगे। चूंकि अब सेक्शन नहीं रह गये यह नियम अनावश्यक हो गया है। इसके परिणामस्वरूप अब दो उपाध्यक्ष होंगे और दोनों को ही यह सभा चुनेगी।

श्रीमान्, मैं इसे पेश करता हूं।

यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 12

***श्री के.एम. मुंशीः** मैं प्रस्ताव करता हूं कि नियम 12 निकाल दिया जाये। यह लाज़मी हो गया है। श्रीमान्, मैं इसे पेश करता हूं।

प्रस्ताव मंजूर हुआ।

नियम 13

***श्री के.एम. मुंशीः** अध्यक्ष महोदय, मेरा प्रस्ताव है कि–

''नियम 13 में 'नियम 12 (1)' शब्दों की जगह 'नियम 11' शब्द रखे जायें।''

नियम 13 में यह कहा गया है कि दो उपाध्यक्षों का चुनाव नियम 12 (1) के अन्तर्गत आता है। अब नियम 12 के हटा देने से तथा इस व्यवस्था को नियम 11 में मिला देने से, नियम 13 में तदनुकूल संशोधन कर देना चाहिए।

श्रीमान्, मैं इस प्रस्ताव को पेश करता हूं।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 14

***श्री के.एम. मुंशीः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं–

''नियम 14 के उपनियम (2) में 'an elected' की जगह 'a' रख दिया जाये और 'as a whole' शब्दों को निकाल दिया जाये।''

नियम 14 यह कहता है कि यदि उपाध्यक्ष असेम्बली का सदस्य न रह जायेगा तो वह उपाध्यक्ष पद पर भी न रह जायेगा। ''असेम्बली के निर्वाचित उपाध्यक्ष का स्थान रिक्त होने पर उसकी पूर्ति समस्त असेम्बली चुनाव द्वारा करेगी।'' जो परिवर्तन किये गये हैं उनको देखते हुए 'an elected' रखने का कोई कारण नहीं है क्योंकि दोनों उपाध्यक्ष निर्वाचित किये जायेंगे। 'as a whole' शब्दों को रखने की भी अब कोई जरूरत नहीं है क्योंकि दोनों ही उपाध्यक्ष अब समूची सभा द्वारा चुने जायेंगे।

श्रीमान्, मैं इसे पेश करता हूं।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 17

***श्री के.एम. मुंशीः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:–

''नियम 17 का उपनियम (6) निकाल दिया जाये और उपनियम (8) में से 'or a Joint Secretary' या एक संयुक्त-मंत्री शब्द हटा दिये जायें।''

उपनियम (6) में सेक्शन के मन्त्री के लिये व्यवस्था है और उसमें यह कहा गया है कि सेक्शन का मन्त्री असेम्बली का एक संयुक्त मन्त्री होगा। चूँकि संयुक्त मंत्री नहीं रखे गये हैं यह उपनियम निकाल देना चाहिये। 'संयुक्त मंत्री' शब्द उपनियम 8 में आगे चलकर आते हैं और इनको भी निकाल दिया जाये।

श्रीमान्, मैं इसे पेश करता हूं।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 18

***श्री के.एम. मुंशीः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:–

''नियम 18 से 'Sections and the' शब्द हटा दिये जायें।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 19

***श्री के.एम. मुंशीः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं कि:–

''नियम 19 का उपनियम 1 (3) निकाल दिया जाये और उपनियम 1 (9) से 'or the Sections' शब्द हटा दिये जायें।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 23

***श्री के.एम. मुंशीः** श्रीमान्, मेरा प्रस्ताव है कि:–

''नियम 23 के बाद बतौर 23 (क) के निम्नलिखित नियम जोड़ दिया जायेः–

'23(क) (1) असेम्बली या इसकी किसी कमेटी की बैठक के लिये सदस्यों की कुल संख्या की कम से कम एक तिहाई उपस्थिति आवश्यक होगी।

(2) बैठक में किसी समय किसी सदस्य द्वारा उपस्थित सदस्यों की संख्या-गणना की मांग किये जाने पर यदि अध्यक्ष यह स्थिर करते हैं कि कुल सदस्यों की एक तिहाई उपस्थिति नहीं है, तो वह

[श्री के.एम. मुंशी]

असेम्बली या कमेटी को, जैसी भी स्थिति हो, 15 मिनट के लिए स्थगित कर देंगे और इतने समय के बाद पुनः सदस्यगणना लेने पर अगर यह पाया गया कि अब भी कोरम पूरा नहीं है, तो वह (अध्यक्ष) असेम्बली या कमेटी को, जैसी भी स्थिति हो, दूसरे दिन के लिए जिस दिन की साधारणतः वह बैठती हो, स्थगित कर देंगे।''

गत अवसर पर नियमों में कोरम सम्बन्धी प्रश्न का निर्णय नहीं किया गया था। तब उसे छोड़ दिया गया था कि पीछे एक अतिरिक्त नियम में इसे शामिल कर लिया जायेगा। श्रीमान्, मैं इसे रखता हूं।

*__श्री के. संतानम्:__ अध्यक्ष महोदय, मैं अपना संशोधन नहीं पेश कर रहा हूं।

*__श्री श्रीप्रकाशः__ श्रीमान्, क्या मैं यह जान सकता हूं कि आया ये संशोधन जो मि. मुंशी ने पेश किये हैं और वे संशोधन जो बाद में श्री सन्तानम् ने उपस्थित किये हैं, स्टियरिंग कमेटी के हवाले किये गये और क्या ये संशोधन स्टियरिंग कमेटी की नोट के रूप में हैं, या श्री मुंशी और सन्तानम् इन्हें नियम के बाहर होकर पेश कर रहे हैं?

*__श्री के.एम. मुंशीः__ ये नियम मेरे बनाये हुये नहीं हैं। ये नियम जिन्हें मैं सभा के सामने रख रहा हूं स्टियरिंग कमेटी ही की रिपोर्ट हैं। स्टियरिंग कमेटी ने इन पर जोर दिया था और मैं उसकी ओर से इन्हें पेश कर रहा हूं।

*__श्री श्रीप्रकाशः__ और मिस्टर के. संतानम् के संशोधन के बारे में आपका क्या कहना है ?

*__श्री के.एम. मुंशीः__ स्टियरिंग कमेटी द्वारा प्रस्तावित नियमों में ये संशोधन हैं और इसलिए ये संशोधन नियम 66 के दायरे से बाहर हैं। ये नये नियम नहीं हैं।

*__श्री श्रीप्रकाशः__ श्रीमान्, मैं नहीं जानता कि मिस्टर मुंशी के कथन से आप संतुष्ट हैं या नहीं। मैं तो नहीं हूं। मेरा ख्याल है कि मुझे भी अपना संशोधन उपस्थित करने की अनुमति दे सकते हैं संशोधन आपके सामने है और मैं इसे बहुत महत्वपूर्ण समझता हूं।

*__अध्यक्षः__ माननीय सदस्य से मैंने कहा है कि वह नियमों के समाप्त होने तक प्रतीक्षा करें। इस समय इसे पेश करने का सवाल ही नहीं खड़ा होता है।

***श्री श्रीप्रकाशः** जब तब याद दिला देना कारगर होता है। *(हंसी)*

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्त प्रांतः जनरल): श्रीमान्, मैं अपना प्रस्ताव नहीं पेश करना चाहता।

***श्री आर.के. सिधवाः** मैं भी अपना संशोधन नहीं पेश कर रहा हूं।

***अध्यक्षः** तो मिस्टर मुंशी के संशोधन पर अब मत लिया जायेगा।

प्रस्ताव यह है कि–

''नियम 23 के बाद बतौर 23 (क) के निम्नलिखित नियम जोड़ दिया जायेः–

'23(क) (1) असेम्बली या इसकी किसी कमेटी की बैठक के लिये सदस्यों की कुल संख्या की कम से कम एक तिहाई उपस्थिति आवश्यक होगी।

(2) बैठक में किसी समय किसी सदस्य द्वारा उपस्थित सदस्यों की संख्या-गणना की मांग किये जाने पर यदि अध्यक्ष यह स्थिर करते हैं कि कुल सदस्यों की एक तिहाई उपस्थिति नहीं है तो वह असेम्बली या कमेटी को, जैसी भी स्थिति हो, 15 मिनट के लिए स्थगित कर देंगे और इतने समय के बाद पुनः सदस्यगणना लेने पर अगर यह पाया गया कि अब भी कोरम पूरा नहीं है, तो वह (अध्यक्ष) असेम्बली या कमेटी को, जैसी भी स्थिति हो, दूसरे दिन के लिए जिस दिन कि साधारणतः वह बैठती हो, स्थगित कर देंगे।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 31

***श्री के.एम. मुंशीः** अब मैं नियम 31 पर आता हूं। मेरा प्रस्ताव है कि–

''इस नियम का उपनियम (3) निकाल दिया जाये।''

नियम 31 कहता हैः–

''(1) ऐसा मसला जिस पर असेम्बली का निर्णय जरूरी हो, चैयरमैन द्वारा प्रश्न के रूप में सामने लाया जायेगा।

(2) उन सभी मामलों में, जिनमें असेम्बली का फैसला जरूरी हो, चैयरमैन सिर्फ तभी अपना मत देंगे जब समान मत आये हों।

(3) वक्तव्य के पैराग्राफ 19 (7) में उल्लिखित किसी मामले से सम्बन्ध रखने वाले किसी भी प्रश्न का निर्णय वहां दी हुई व्यवस्था के अनुसार किया जायेगा।''

[श्री के.एम. मुंशी]

श्रीमान्, उपनियम 3 में कोई अच्छाई नहीं है। यह निष्प्रयोजन है। इसलिए मेरा प्रस्ताव है कि यह उपनियम निकाल दिया जाये।

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): क्या माननीय प्रस्तावक कृपया वक्तव्य का पैराग्राफ 19 (7) पढ़ देंगे?

***श्री के.एम. मुंशी:** यह यों है:–

''यूनियम कान्स्टीयूएंट असेम्बली के किसी ऐसे प्रस्ताव के लिए जो वक्तव्य के पैराग्राफ 19 (7) से भिन्न हो या जिससे कोई वृहत साम्प्रदायिक प्रश्न उठता हो, उपस्थित प्रतिनिधियों का बहुमत तथा दोनों प्रमुख सम्प्रदायों में से प्रत्येक का मत लिया जाना जरूरी होगा। अगर इस तरह के प्रस्ताव हों इस बात का फैसला, कि किस प्रस्ताव से बड़ा साम्प्रदायिक प्रश्न उठता है, असेम्बली के अध्यक्ष करेंगे और अगर दोनों प्रमुख सम्प्रदाओं में किसी सम्प्रदाय के प्रतिनिधियों का बहुमत उनसे ऐसा अनुरोध करे तो वे अपना फैसला देने से पहले फेडरल कोर्ट से परामर्श ले लेंगे।''

यह दोहरे बहुमत वाला भाग है और जैसा मैं कह चुका हूं इसमें कोई अच्छाई नहीं रह गई है।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि–

''नियम 31 का उपनियम (3) निकाल दिया जाये।''

प्रस्ताव पास हुआ।

नियम 35

***श्री के.एम. मुंशी:** श्रीमान् मैं प्रस्ताव करता हूं कि:–

''नियम 35 की दो आदेश मूलक व्यवस्थायें हटा दी जायें।''

नियम और आदेश ये हैं:–

''असेम्बली के कार्य संचालन की विधि से सम्बन्ध रखने वाले सारे मामलों पर अध्यक्ष का फैसला आखिरी हो:

पर शर्त यह है कि अगर किसी प्रस्ताव से ऐसा प्रश्न उठता हो जिसके सम्बन्ध में यह दावा किया जाता है कि वह एक बड़ा साम्प्रदायिक प्रश्न है तो अध्यक्ष, यदि प्रमुख सम्प्रदाओं में से किसी भी सम्प्रदाय के प्रतिनिधियों के बहुमत ने उनसे ऐसा अनुरोध किया तो उस पर फैसला देने के पहले फेडरल कोर्ट का परामर्श लेंगेः

मगर फिर शर्त यह है कि कोई भी सेक्शन उन मामलों पर विचार नहीं करेगा जो यूनियन की विधान-परिषद् के अधिकार और कर्तव्यों के अन्तर्गत आते हों तथा वक्तव्य के पैराग्राफ 20 में उल्लिखित परामर्शदातृ-समिति की रिपोर्ट पर जो भी निर्णय यूनियन की विधान-परिषद् करेगी उसके प्रतिकूल कोई निर्णय न देगा।''

उन कारणों से जिनका उल्लेख मैंने कल किया था, ये आदेश बिल्कुल व्यर्थ हैं। इसलिये मैं प्रस्ताव करता हूं ये दोनों आदेश हटा दिये जायें।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 36

***श्री के.एम. मुंशीः** अब मैं नियम 36 को लेता हूं। पहले तो मेरा यह प्रस्ताव है कि पहली लाइन में 'exclusive' शब्द हटा दिया जाये। नियम कहता है कि– ''It shall be the exclusive function of the Advisory Committee referred to in paragraphs 19 & 20 of the statement to initiate and consider proposals'' अब चूंकि मूल वक्तव्य ही नहीं रहा तो 'exclusive' रखना बेमाने है।

दूसरे मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि इस नियम में जहां भी ''Union Constituent' शब्द आये हों वे, तथा ये शब्द ''shall be binding on the Section and'' निकाल दिये जायें।

***अध्यक्षः** आप केवल ''Union Constituent'' शब्दों को हटाना चाहते हैं ?

***श्री के.एम. मुंशीः** हां महोदय, 'Assembly' शब्द रहेगा।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि–''नियम 36 से–

(1) 'exclusive' शब्द,

(2) 'Union Constituent' शब्द, वे जहां भी आए हों, तथा

[अध्यक्ष]

(3) 'shall be binding on the section and' शब्द निकाल दिये जायें'।''

प्रस्ताव मंजूर हुआ।

नियम 41

***श्री के.एम. मुंशीः** श्रीमान्, नियम 41 स्टियरिंग कमेटी के कार्यों पर गौर करता है। उपनियम (1) (ग) यों है-''असेम्बली और सेक्शनों के बीच, भिन्न-भिन्न सेक्शनों के बीच, कमेटियों के बीच तथा अध्यक्ष असेम्बली के किसी शाखा के बीच, यह कमेटी सम्बन्ध स्थापित करने का काम करेगी।'' मैं प्रस्ताव करता हूं कि उपनियम (1) (ग) से ये शब्द-''असेम्बली और सेक्शनों के बीच, सेक्शनों के बीच'' हटा दिये जायें। अब इन शब्दों की कोई ज़रूरत नहीं रही।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 42

***श्री के.एम. मुंशीः** इस नियम के उपनियम (1) (ख) में 'five' शब्द की जगह 'two' शब्द रखा जाये। चूंकि अब केवल दो ही उपाध्यक्ष हैं। यह परिवर्तन आवश्यक है।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः** क्या मैं श्री मुंशी से यह जान सकता हूं कि नियम 41 (1) (ग) का संशोधित रूप क्या होगा ?

***श्री के.एम. मुंशीः** यह यों होगा-यह कमेटी कमेटियों के बीच तथा अध्यक्ष और असेम्बली की किसी भी शाखा के बीच सम्बन्ध स्थापित करने का काम करेगी।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः** असेम्बली और कमेटियों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने का काम करेगी ?

***श्री के.एम. मुंशीः** नहीं, कमेटियों के बीच।

***पं. गोविन्द मालवीयः** क्या श्रीयुत मुंशी यह समझाने की कृपा करेंगे कि अध्यक्ष और असेम्बली की किसी शाखा के बीच सम्बन्ध स्थापित करने से क्या मतलब है ? कमेटियों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने की बात तो मैं समझ सकता हूं।

***श्री के.एम. मुंशीः** इस बात को समझाने के लिए मैं जिम्मेवार नहीं हूं।

***अध्यक्षः** मुझे भय है कि व्याख्या करने का प्रश्न बड़ी देर करके उठाया गया है। जब इसकी व्याख्या जरूरी होगी तो हम कर देंगे।

***माननीय श्री हुसेन इमाम** (बिहारः जनरल): जब किसी बात की निरर्थकता सभा को ज्ञात हो जाये तो सभा को अधिकार है कि वह तदनुकूल आवश्यक परिवर्तन कर ले।

***अध्यक्षः** प्रस्तावित संशोधन को लेकर ऐसी बात उठती ही नहीं है।

***अध्यक्षः** श्री मुंशी का संशोधन है कि नियम 42 खण्ड (ख) उपनियम (1) में 'five' शब्द की जगह 'two' शब्द रखा जाये।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 45

***श्री के.एम. मुंशीः** अब मैं नियम 45 पर आता हूं। यह भी पूर्ववर्ती नियमों के कारण आवश्यक है। उपनियम (2) हाउस कमेटी के बाबत यह कहता है:–

''कमेटी में गवर्नर वाले प्रत्येक प्रांत का प्रतिनिधित्व करने वाले 11 सदस्य होंगे जिनका चुनाव असेम्बली उस तरीके पर करेगी जो अध्यक्ष निर्धारित करेंगे।''

अब गवर्नर वाले प्रांतों की संख्या 11 नहीं रही। कमेटी की सदस्य संख्या 11 रह सकती है, पर प्रत्येक गवर्नर वाले प्रांतों का प्रतिनिधित्व नहीं करेगा। मैं प्रस्ताव उपस्थित करता हूं।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 46

***श्री के.एम. मुंशीः** दूसरा संशोधन नियम 46 के सम्बन्ध में है। यह नियम भी एक दूसरी कमेटी के बारे में है। मैं प्रस्ताव रखता हूं कि–

''इसमें से ये शब्द–'Or a Section according as the business of the Committee relates to the Assembly or the Section' हटा दिये जायें।''

यह भी आवश्यक है।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 47

***श्री के.एम. मुंशीः** मैं प्रस्ताव करता हूं कि नियम 47 से 'and the secretary of any section' से लेकर अन्त तक के सारे शब्द निकाल दिये जायें।

***अध्यक्षः** यह पूर्ववर्ती नियमों और संशोधनों के परिणामस्वरूप आवश्यक है।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 48

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि नियम नं. 48 में 'shall' शब्द की जगह 'may' शब्द रखा जाये। कोरम के सम्बन्ध में आज सभा ने जो संशोधन स्वीकार किया है उसके परिणामस्वरूप यह आवश्यक है।

नियम का स्वरूप यह है–

''जिस प्रस्ताव के द्दारा कमेटी बनायी जायेगी उसमें कमेटी की बैठक के लिए सदस्यों की आवश्यक उपस्थिति की संख्या देनी होगी।''

(The motion by which a Committee is to be set up shall state the quorum necessary to constitute a meeting of the Committee.)

चूंकि कोरम के सम्बन्ध में कोई नियम नहीं था इसलिए कोरम का बनाना लाज़िमी था। अब हमारा नियम बन गया है जिसमें एक तिहाई कोरम रखा गया है। इसलिए अब यह बात लाज़िमी नहीं रह गई। मेरा संशोधन यह है कि जिस प्रस्ताव द्वारा कमेटी बनायी जाये उसमें कोरम व्यक्त किया जा सकता है क्योंकि कोरम सम्बन्धी नियम बन चुका है।

***श्री श्रीप्रकाशः** अध्यक्ष महोदय, क्या मैं आपका ध्यान नियम 66 की ओर आकृष्ट कर सकता हूं ? क्या यह नियम स्टियरिंग कमेटी के पास भेजा गया था ?

***अध्यक्षः** मैं नहीं समझता कि स्टियरिंग कमेटी से परामर्श लिया गया है, पर यह संशोधन एक दूसरे संशोधन के परिणामस्वरूप पेश किया गया है जिसे आपने स्वीकार किया है। यह भी परिणामस्वरूप आवश्यक है।

***श्री श्रीप्रकाशः** मुझे आशा है कि यही आदेश मेरे संशोधन के सम्बन्ध में भी लागू होगा।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:–

''नियम 48 में 'shall' शब्द की जगह 'may' शब्द रखा जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 49

***श्री के.एम. मुंशीः** मैं प्रस्ताव करता हूं कि ''नियम 49 से 'or to the section concerned, as the case may be' शब्द हटा दिये जायें।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

नियम 63

***श्री के.एम. मुंशीः** मेरा प्रस्ताव है कि नियम 63 हटा दिया जाये। प्रान्तीय धारा-सभाओं के द्वारा बनाये गये विधान के मस्विदे पर विचार करने के सम्बन्ध में यह नियम है। कार्यक्रम सम्बन्धी कमेटी की रिपोर्ट पेश करते समय मैंने अपना कारण बताया था और उसे यहां दुहराने की कोई जरूरत नहीं है।

***अध्यक्षः** श्रीयुत मुंशी का संशोधन यह है कि नियम 63 निकाल दिया जाये। कोई सदस्य इसके सम्बन्ध में कुछ बोलना चाहते हैं ?

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***श्री श्रीप्रकाशः** पेश्तर इसके कि मिस्टर मुंशी नियम 67 पर अपना संशोधन पेश करें, मैं प्रस्ताव करता हूं कि नियम 66 हटा दिया जाये। भले ही यह स्टियरिंग कमेटी के पास न भेजा गया हो क्योंकि पूर्ववर्ती नियमों और संशोधनों के परिणामस्वरूप यह नितान्त आवश्यक है। मुझे आशा है कि आप इस संशोधन को पेश करने की अनुमति देंगे। श्रीमान्, मेरे विचार में यह नियम हटा दिया जाना चाहिए और विधान-परिषद को यह क्षमता होनी चाहिए कि नियमादि में परिवर्तन करने के लिए वह आत्म-निहित अधिकारों का प्रयोग कर सके, बजाय इस बात के कि इसके सदस्यों को इस कार्य के लिए हर बार उसे स्टियरिंग कमेटी का मुंह देखना पड़े। आज दोपहर की कार्यवाही में ही यह बात हो चुकी है। श्री सन्तानम् ने मूल नियम पर जो संशोधन पेश किये थे वे मिस्टर मुंशी के संशोधन से सम्बन्धित नहीं थे। श्रीमान्, यदि आप मिस्टर सन्तानम् के संशोधन पर, जो उन्होंने नियम 4 और 5 पर पेश किये हैं, गौर करें तो आपको मालूम होगा कि वे बिलकुल नये संशोधन हैं और उन्हें स्टियरिंग कमेटी के पास नहीं भेजा गया था। जब आपने उन संशोधनों को पेश करने की अनुमति दी है तो मुझे आशा है कि इस संशोधन को भी उपस्थित करने की अनुमति देंगे।

***अध्यक्षः** आपका संशोधन कायदे के बाहर है। जिन संशोधनों का हवाला आपने दिया है उनका सम्बन्ध उन संशोधनों से था जो स्टियरिंग कमेटी द्वारा स्वीकृति हो जाने के बाद बाकायदा सभा के सामने आये थे। इसलिए वे संशोधन तो पूर्णतः नियमानुकूल थे। यह नियम तो स्टियरिंग कमेटी के पास गया ही नहीं इसलिए आपका संशोधन बिलकुल अनियमित है।

नियम 67

***श्री के.एम. मुंशीः** नियम 67 से सम्बन्ध रखने वाले आखिरी संशोधन के सम्बन्ध में मेरा प्रस्ताव है कि–"उसके प्रथम वाक्य से 'The sections and' शब्द तथा उसका समूचा दूसरा वाक्य निकाल दिया जाये।"

यह भी परिणामस्वरूप आवश्यक है।

अध्यक्षः कोई सदस्य इस सम्बन्ध में कुछ बोलना चाहते हैं ?

श्री जसपतराय कपूरः अध्यक्ष महोदय, इस सम्बन्ध में मेरी एक वैधानिक आपत्ति है। नियम 67 के आधार पर ही श्री मुंशी अब तक संशोधनों को पेश कर रहे थे। नियम 67 में यह आदेश है कि प्रत्येक प्रस्ताव को स्टियरिंग कमेटी के पास भेजना होगा और यह कमेटी उस पर विचार, अपनी रिपोर्ट असेम्बली के पास लाज़िमी तौर पर भेजेगी। श्रीमान्, इन प्रस्तावों पर जिन्हें श्रीयुत मुंशी ने पेश किये हैं, मैं समझता हूं, स्टियरिंग कमेटी ने विचार कर लिया है; पर इस कमेटी को इन पर विचार करने के अलावा अपनी रिपोर्ट भी तो देनी है। अभी तक तो हमारे सामने इस कमेटी की कोई रिपोर्ट नहीं रखी गई है। अब मिस्टर मुंशी नियम 67 के सम्बन्ध में एक संशोधन रख कर प्रस्ताव पेश कर रहे हैं। मैं यह जानना चाहता हूं कि आखिर स्टियरिंग कमेटी की रिपोर्ट क्या कहती है ? यदि श्री मुंशी के प्रस्तुत प्रस्ताव के सम्बन्ध में स्टियरिंग कमेटी की कोई रिपोर्ट हमारे सामने नहीं है तो मैं समझता हूं कि नियम 67 को संशोधित करने का उनका प्रस्ताव कायदे के बाहर है।

***अध्यक्षः** जहां तक श्री मुंशी से मैं जान पाया हूं, ये सारे संशोधन जिनके बारे में उन्होंने प्रस्ताव रखे हैं स्टियरिंग कमेटी की ओर से ही आये हैं। यद्यपि ये संशोधन के रूप में आये हैं पर वस्तुतः यही स्टियरिंग कमेटी की रिपोर्ट है।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः** क्या अध्यक्ष महोदय को यह सूचित किया गया था कि इन नियम सम्बन्धी संशोधनों को स्टियरिंग कमेटी ने प्रस्तावित किया है?

***अध्यक्षः** स्टियरिंग कमेटी की एक बैठक हुई थी जिसमें इन सभी नियमों और संशोधनों पर विचार किया गया था और वहीं से ये सब आये हैं।

***श्री जसपतराय कपूरः** मेरा निवेदन यह है—हमारे सामने स्टियरिंग कमेटी की रिपोर्ट अवश्य होनी चाहिए। एजेंडा पर इतना ही दिया हुआ है कि श्री मुंशी उन प्रस्तावों को पेश करेंगे जो कार्यक्रम की सूची पर दर्ज किये गये हैं। स्टियरिंग कमेटी की रिपोर्ट हमारे सामने नहीं है। इस कमेटी की रिपोर्ट समुचित ढंग पर माननीय अध्यक्ष महोदय के सामने उक्त कमेटी के सभापति या मंत्री की ओर से आनी चाहिए। श्री मुंशी न तो इस कमेटी के सभापति ही हैं और न मंत्री।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल** (बम्बई: जनरल): एक वैधानिक बात पूछनी है। मैं यह पूछता हूं कि नियमों के स्वीकृत हो जाने के बाद आखिर यह बात कैसे उठायी जा सकती है ? इसे तो आरम्भ में ही पूछना था।

***अध्यक्षः** यह प्रश्न तो शुरू में ही उठाया गया था और उसके जवाब में यह कहा गया कि इन संशोधनों पर स्टियरिंग कमेटी ने विचार कर लिया है। सम्भवतः यह भूल इसलिए हुई है कि एजेंडा में यह बात नहीं बतायी गयी है कि यह स्टियरिंग कमेटी की रिपोर्ट है। अन्यथा, जहां तक नियम पालन का प्रश्न है उसका पूरा निर्वाह किया गया है।

***श्री जसपतराय कपूरः** और फिर वस्तुतः क्या स्टियरिंग कमेटी की कोई रिपोर्ट है भी ?

***अध्यक्षः** यह स्टियरिंग कमेटी की रिपोर्ट कहकर व्यक्त नहीं हुई है पर है यह वस्तुतः उस कमेटी की रिपोर्ट ही। स्टियरिंग कमेटी ने श्री मुंशी को यह अधिकार दिया है कि वे उसकी ओर से इन संशोधनों को इस सभा के सामने पेश करें।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** स्टियरिंग कमेटी के सभापति परिषद के भी अध्यक्ष हैं और इसलिए उनका इतना बता देना ही काफी है।

***श्री के.एम. मुंशीः** स्थिति यह है कि विधान-परिषद् के अध्यक्ष अपने पद की हैसियत से स्टियरिंग कमेटी के भी सभापति हैं। इस हालत में स्वाभाविक है कि वह इस रिपोर्ट को नहीं पेश कर सकते। और जो सज्जन पद की हैसियत

[श्री के.एम. मुंशी]

से उक्त कमेटी के मंत्री हैं वे इस सभा के सदस्य नहीं हैं। इस स्थिति में स्टियरिंग कमेटी ने अपने एक सदस्य को कहा कि वे इसके निर्णय को सभा के सामने रखें। वे सभी नियम स्टियरिंग कमेटी की ओर से आये हैं और इस कमेटी ने मुझे इनको सभा के सामने पेश करने का अधिकार दिया है।

***अध्यक्षः** मैं व्यक्त कर चुका हूं कि संशोधन नियमित हैं। अब मैं श्री मुंशी के संशोधन पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है कि–

''नियम 67 के पहले वाक्य से 'the sections and' शब्द तथा उसका समूचा दूसरा वाक्य निकाल दिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** एक संशोधन मिस्टर श्रीप्रकाश रखना चाहते थे। वह स्टियरिंग कमेटी के पास तो नहीं भेजा गया है पर मैं समझता हूँ कि हमारे नियमों में एक खामी रह गयी है जिसे दूर करने के लिए मिस्टर श्रीप्रकाश उसे पेश कर रहे हैं। मैं सभा की अनुमति चाहता हूं कि वह इस संशोधन को पेश करने दे। यदि सभा ने अनुमति दी तो मैं श्री श्रीप्रकाश को उसे पेश करने को कहूंगा।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** मैं यह सुझाव रखना चाहता हूं कि श्री श्रीप्रकाश उसे स्टियरिंग कमेटी के पास भेज दें और बाद में उस पर यहां विचार हो।

***अध्यक्षः** कम या बेशी यह तो महज एक रस्म अदायगी की बात है। हमने अपने नियमों में एक खामी पायी है और इस संशोधन से वह दूर होती है। इसलिए यदि सभा अनुमति दे तो यह कोई जरूरी नहीं है कि केवल नियम निर्वाह के लिए हम उसे स्टियरिंग कमेटी के पास भेजें।

दीवान चम्मन लाल (पूर्वी पंजाबः जनरल): क्या हम अपने बनाये नियमों पर चलने के लिए बाध्य हैं ?

***अध्यक्षः** अवश्य! अपने बनाये नियमों को मानने के लिये हम बाध्य हैं।

*__दीवान चम्मन लाल:__ ऐसा तो कोई नियम ही नहीं है जिसके अनुसार अध्यक्ष के लिए सभा की अनुमति लेना आवश्यक हो। मैं यह जानना चाहता हूँ कि स्टियरिंग कमेटी द्वारा पास नियमों के संशोधन के लिए आखिर क्या तरीका है ?

*__अध्यक्ष:__ संशोधन को सुन लेने के बाद यदि सभा समझे कि इसे स्टियरिंग कमेटी के पास भेजना चाहिए तो मैं वैसा करूंगा। श्री श्रीप्रकाश कृपया अपना संशोधन पढ़कर सुना दीजिए।

*__श्री एम.एस. अणे__ (दक्षिणी रियासतें): नियम नं. 66 आदेशमूलक है और इसके अनुसार किसी भी सदस्य को यह अधिकार नहीं है कि वह इस सम्बन्ध में अपने मन से काम करे। मेरी समझ में जब तक कि नियमों से अध्यक्ष को यह अधिकार न प्राप्त हो कि वह गम्भीर आवश्यकता आने पर किसी भी नियम का अमल में आना रोक सकते हैं, अध्यक्ष सभा को किसी भी संशोधन को स्वीकार करने के लिए नहीं कह सकते।

*__अध्यक्ष:__ मेरा ख्याल था कि सभा को यह अधिकार है कि अगर वह चाहे तो अपने नियमों को प्रयोग में आने से रोक सकती है और इसलिए मैं इस संशोधन को पेश करने की अनुमति की जिम्मेदारी स्वयं नहीं लेना चाहता। जहां तक मैं समझता हूं, ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है जिसके अनुसार यह सभा या अध्यक्ष किसी भी नियम को अमल में लाने से रोक सके। परन्तु मैं यह मानता हूं कि सभा को यह अधिकार स्वयं प्राप्त है कि वह किसी भी नियम को कुछ काल के लिए अमल में आने से रोक सकती है और किसी भी सदस्य को कोई भी ऐसा प्रस्ताव या संशोधन उपस्थित करने की अनुमति दे सकती है जो इन नियमों में नहीं आता हो।

*__श्री जसपतराय कपूर:__ मैं आपका ध्यान नियम नं. 26 की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं, जिसमें कहा गया है:–

> **''जब तक कि अध्यक्ष का अन्यथा आदेश न हो, प्रत्येक प्रस्ताव की सूचना, उसकी एक प्रति के साथ, प्रस्ताव असेम्बली में पेश किये जाने वाले दिन से कम से कम साफ-साफ तीन दिन पहले दी जानी चाहिए।''**

*__अध्यक्ष:__ इसमें तो केवल प्रस्ताव की सूचना की बात कही गयी है। इसीलिए मैंने कहा था कि यदि सभा इसे अभी नहीं विचार करना चाहती तो मैं इसे उपस्थित

[अध्यक्ष]

करने की अनुमति न दूंगा। पर यदि सभा की अनुमति हो तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। इसलिए मैं इसे सभा पर छोड़ता हूं। श्री श्रीप्रकाश, कृपया अपना प्रस्ताव पढ़ दीजिए।

***श्री श्रीप्रकाशः** नियम नं. 5 के बाद निम्नलिखित नया नियम जोड़ा जाये:–

''उपरोक्त नियम 4 और 5 के आदेशों के बावजूद, इण्डिया के गवर्नर जनरल, बरतानवी सम्राट की सरकार के 3 जून 1947 वाले वक्तव्य के अनुसार, उन क्षेत्रों से जिनका जिक्र उक्त वक्तव्य के 4 से 14 तक पैरों में आया है, विधान-परिषद् के लिए नये निर्वाचन की आज्ञा जारी कर सकते हैं और इसके बाद यह समझा जायेगा कि वे सदस्य जो उक्त क्षेत्रों से चुने जा चुके हैं, नियम 3 में बताई हुई विधि के अनुसार चाहे वे परिषद में सम्मिलित हुए हों या नहीं, अपना स्थान रिक्त कर चुके हैं और नये निर्वाचित सदस्यों के सम्बंध में यह माना जायेगा कि वे परिषद के नियमानुसार निर्वाचित सदस्य हैं। यह नियम गत 3 जून सन् 1947 ई. से लागू माना जायेगा।''

श्रीमान्, मैं समझता हूं कि यह नियम इतना साफ है कि इसे समझाने की कोई जरूरत नहीं है। वस्तुस्थिति यह है कि वाइसराय महोदय ने जिस तरीके से काम किया है वह विधान-परिषद द्वारा निर्मित नियमों के प्रतिकूल है। नियम 4 और 5 में साफ तौर पर वह व्यवस्था दी हुई है जिसके अनुसार स्थान रिक्त होंगे और उनकी पूर्त्ति की जायेगी। गत कुछ महीनों के अन्दर उन नियमों की बिलकुल ही अवहेलना की गयी है और नये चुनाव किये गये हैं। बहुतेरे सदस्यों ने अपनी सदस्यता से इस्तीफा नहीं दिया, फिर भी यह समझा जायेगा कि उन्होंने अपना स्थान रिक्त कर दिया है। हम सब इसमें सहमत थे।

अब श्रीमान्, अपनी सम्मान रक्षा के लिए मैं इसे नितान्त आवश्यक समझता हूं कि हम एक ऐसा नियम बनावें, जिससे उन सभी कार्यों को जो इस बीच में हुए हैं, नियमतः स्वीकृति प्राप्त हो जाये। यदि हम इस नियम को नहीं पास करते तो महोदय, मैं यह निवेदन करूंगा कि बंगाल और पंजाब के नये सदस्यों को सभा में उपस्थित होने की अनुमति नहीं दी जा सकती। इसलिए इस नियम को मंजूर करना जरूरी है। आशा है सभा इससे सहमत होगी।

***अध्यक्षः** मैं यह जानना चाहता हूं कि आया यह सभा इस संशोधन को पेश करने की अनुमति देती है या नहीं। हम इसके गुण-दोष के विस्तार में न जायेंगे। प्रश्न केवल इतना ही है कि इस पर विचार करने की अनुमति दी जाये या नहीं ?

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** मैं इसके गुणों के सम्बन्ध में कुछ नहीं कह रहा हूं। जो कुछ मैं कहना चाहता था वह यह है कि यदि इस संशोधन को ले भी लिया जाये तो भी यह ऐसा विषय है जिस पर कि स्टियरिंग कमेटी को विचार करना चाहिये। यह एक अनिश्चित नियम है जिसको यदि गुणों के विचार से स्वीकार कर भी लिया जाये तो भी उस पर वकीलों तथा अन्य व्यक्तियों का विचार करना आवश्यक है। प्रश्न यह है कि इसे किस प्रकार स्वीकार किया जाये। इस ढंग से यह नहीं लिया जा सकता, अन्यथा एक कठिनाई को दूर करने के बजाय हम अन्य कठिनाइयां उत्पन्न करेंगे। मैं निवेदन करता हूं कि इसे स्टियरिंग कमेटी को भेज दिया जाये, उचित मार्ग यही है। *(करतल ध्वनि)*

***अध्यक्षः** मैं इसे हाउस के समक्ष रखता हूं।

संशोधन पर विचार करने की आज्ञा प्राप्त करने वाला प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

***श्री श्रीप्रकाशः** क्या मैं यह समझूं कि यह संशोधन गिर गया ?

***अध्यक्षः** वह गिरा नहीं है; केवल उसको लिया नहीं गया है। आप इसे स्टियरिंग कमेटी को भेज सकते हैं और वह यथाविधि आ जायेगा।

***श्री श्रीप्रकाशः** क्या मैं सम्मानपूर्वक यह पूछ सकता हूं कि उन नये सदस्यों की क्या स्थिति होगी जिनको चुन लिया गया है और जिन्होंने अपने स्थान ग्रहण कर लिये हैं ? नियम 4 तथा 5 के अनुसार क्या वे उपस्थित हो सकेंगे ?

***अध्यक्षः** कल मैंने उन्हें अपने स्थानों पर बैठने दिया था और वे बैठते रहेंगे।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** क्या मैं यह बताऊं कि जो प्रश्न श्री श्रीप्रकाश ने उठाया है वह महत्वपूर्ण है, पर समस्या यह है कि उसका समाधान किस प्रकार किया जाये। नियमों में विधि-विरुद्ध संशोधन पेश करने का

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

तरीका ठीक नहीं है। सम्भवतः हाउस को यह अधिकार होगा कि प्रस्ताव पास कर सके अथवा यदि नियमों का बदलना आवश्यक हुआ तो हम बदल सकते हैं। परन्तु इस पर उचित अधिकारियों द्वारा विचार होना चाहिये। मेरा एक मात्र निवेदन यह है कि यह इस आकस्मिक रीति से नहीं लिया जा सकता है।

श्री श्रीप्रकाशः हमने आकस्मिक रीति से सदस्यों को दाखिल किया है।

***अध्यक्षः** अब हम आगामी विषय पर अग्रसर हों।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रांत और बरारः जनरल)ः मेरा निवेदन है कि नये नियमों के बन जाने और पुराने नियमों के संशोधित होने अथवा हटा दिये जाने के कारण समस्त नियमों की क्रम संख्या फिर से रखी जाये और सब 'क' 'ख' इत्यादि निकाल दिये जायें।

***अध्यक्षः** हम यह कर लेंगे। मेरा ख्याल है कि संशोधनों के परिणामस्वरूप नियमों की क्रम-संख्या फिर से रखी जाने में हाउस को कोई आपत्ति नहीं है। मैं मान लेता हूं कि यह सबको स्वीकार है।

***पं. गोविन्द मालवीयः** श्रीमान् जी, मेरे विचार से उचित रीति यह होगी कि नियम फिर से संख्याबद्ध किये जायें, तत्पश्चात् नियमानुकूल विधि से हाउस के समक्ष रखे जायें और बिना किसी वाद-विवाद के स्वीकार किये जायें।

***अनेक माननीय सदस्यः** क्यों ?

***अध्यक्षः** अब हम आगे आने वाले विषय को लेंगे।

***श्री देशबन्धु गुप्त** (दिल्ली)ः श्रीमान् जी, आगे आने वाले विषय को लेने के पूर्व क्या मैं यह जान सकता हूं कि उस संशोधन का क्या हुआ जिसकी मैं सूचना दे चुका था ?

***अध्यक्षः** वही, जो कि श्री श्रीप्रकाश के संशोधन का हुआ।

***श्री देशबन्धु गुप्तः** संशोधन के महत्त्व को दृष्टि में रखते हुये मुझे यह निवेदन करने की आज्ञा दीजिये कि हाउस की इजाजत से उस संशोधन को ले लिया जाये।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से इस प्रयोग को दोहराने में कोई लाभ नहीं है। आप इसे छोड़िये।

अब हम कार्यक्रम में आगे आने वाले विषय पर अग्रसर होंगे। सरदार वल्लभभाई पटेल अपने प्रस्ताव को पेश करेंगे।

***श्री तजम्मुल हुसैन** (बिहारः मुस्लिम): प्रस्ताव पर अग्रसर होने के पूर्व मैं यह जानना चाहूंगा कि अभी पेश होने वाले प्रस्ताव के सम्बन्ध में मैंने जो प्रस्ताव 4 दिन पहले भेजा था उसका क्या हुआ ?

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि आप उस कमेटी के भंग करने का उल्लेख कर रहे हैं जो अपना कार्य समाप्त कर भी चुकी और अपनी रिपोर्ट पेश कर चुकी है। क्या आप उसी प्रस्ताव का हवाला दे रहे हैं ?

***श्री तजम्मुल हुसैनः** वही एक प्रस्ताव है जिसे मैंने आपके पास भेजा है।

***अध्यक्षः** मैंने उसको नियम विरुद्ध घोषित किया है क्योंकि कमेटी का कार्य समाप्त भी हो चुका और वह अपनी रिपोर्ट पेश कर चुकी है।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** क्या मैं यह समझूं कि इस हाउस की यह प्रथा है कि प्रस्ताव भेजने वाले माननीय सदस्य को यह सूचना न दी जाये कि उसको प्रस्ताव पेश करने की आज्ञा नहीं दी गई है ? अभी तक मुझे इसकी सूचना नहीं मिली।

***अध्यक्षः** मैंने इसे नियम विरुद्ध घोषित कर दिया है।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** मैं आपके निर्धारित निर्णय को स्वीकार करता हूं। मैं पूछ रहा हूं कि मुझे सूचना क्यों नहीं दी गई। क्या यही प्रथा है कि जब कोई माननीय सदस्य प्रस्ताव भेजता है और आप उसे पेश करने की इजाजत नहीं देते तो उस सदस्य को आप ऐसी सूचना नहीं देते।

***अध्यक्षः** यदि मैं किसी सदस्य को उसका प्रस्ताव पेश करने की इजाजत नहीं दूंगा तो उसको सूचना देने का भविष्य में ख्याल रखूंगा।

अनुकरणीय प्रान्तीय विधान के सिद्धान्तों के सम्बन्ध में रिपोर्ट

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं प्रस्ताव पेश करता हूं कि यह विधान-परिषद् अनुकरणीय प्रांतीय विधान के सिद्धान्तों के

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

सम्बंध में उस कमेटी की पेश की हुई रिपोर्ट (परिशिष्ट) पर विचार करे जो विधान-परिषद् के 30 अप्रैल 1947 ई. के प्रस्तावनुसार नियुक्त की गई थी।

इस कमेटी ने अपनी रिपोर्ट पेश कर दी है। यह रिपोर्ट एक पक्ष से इस हाउस के समस्त सदस्यों में घुमाई जा रही है। रिपोर्ट समस्त सदस्यों के पास है। इस प्रस्ताव को पेश करते हुये मैं यह बताना चाहता हूं कि यह रिपोर्ट प्रांतीय विधान का अंतिम मस्विदा नहीं है। दिये गये आदेशों के अनुसार कमेटी ने प्रांतीय विधान के कुछ सिद्धान्तों को तय किया है, अतः स्मृति-पत्र में दिये गये खंडों के मौखिक ब्यौरे अथवा उनके कानूनी या वैधानिक रूप-रेखा पर विचार करने की हाउस को आवश्यकता नहीं है। विचार करने के पश्चात् यदि रिपोर्ट के विभिन्न खंड स्वीकार किये जाते हैं, अथवा उनमें कुछ सुधार किया जाता है तो यह काम लेखकों अथवा वकीलों का होगा जिनको विधान का मस्विदा बनाने और इन खंडों को उचित रूप देने का कार्य सौंपा जायेगा। इसलिए विभिन्न खंडों की भाषा पर विचार करने में हाउस को अपना समय व्यर्थ नहीं खोना चाहिए।

यह स्मरण रखना चाहिये कि रिपोर्ट में लगभग 85 प्रतिशत मस्विदे अथवा 85 प्रतिशत प्रान्तीय विधान के सिद्धान्त हैं जिनकी रूप-रेखा बनानी है। आपको स्मरण होगा कि इस हाउस ने एक सलाहकार कमेटी नियुक्त कर दी है। अल्पसंख्यक कमेटी (Minority Committee) और कबायली और पृथक अथवा आंशिक पृथक क्षेत्रों की कमेटी (Tribal & Excluded and Partially Excluded Areas Committee) की रिपोर्टें आ जाने के पश्चात् यह कमेटी (सलाहकार कमेटी) अपनी रिपोर्ट पेश करेगी। ये रिपोर्टें अभी तक नहीं आई हैं। जब ये आ जायेंगी, सलाहकार कमेटी उन पर विचार करने बैठेगी और उस समय अल्पसंख्यकों की रक्षा और उनके हितों पर विचार किया जायेगा। यह तय कर लिया गया है कि सलाहकार कमेटी इसी माह में बैठेगी और इस अधिवेशन के विसर्जन होने के पूर्व अथवा आगामी अधिवेशन में अपनी रिपोर्ट पेश करेगी। इसलिए वह रिपोर्ट बाद में आयेगी।

आपके समक्ष रखे हुए स्मृति-पत्र के मस्विदे की मुख्य बातों की मैं किंचित-मात्र व्याख्या करूंगा। पहला प्रश्न जिस पर हमें विचार करना पड़ा, यह था कि

प्रांतीय विधान एकात्मक राज्य के (Unitary) नमूने का हो अथवा संघ शासन (Federal) के नमूने का। इस प्रश्न पर कोई मतभेद न था इसलिए कमेटी ने प्रांतीय विधान कमेटी और संघ विधान कमेटी का सम्मिलित अधिवेशन करना उचित समझा। ये दोनों कमेटियां सम्मिलित बैठीं और इस निश्चय पर पहुंचीं कि परिषदात्मक (Parliamentary) प्रणाली के विधान–हमारे परिचित ब्रिटिश ढंग के विधान–को अपनाना इस देश की दशा के लिए अधिक उपयुक्त होगा। यह दोनों कमेटियों ने मान लिया है और तदनुसार प्रांतीय विधान कमेटी ने यह सुझाव पेश किया है कि यह विधान परिषदात्मक ढंग के मंत्रिमंडल के अनुरूप होगा।

खंड 9 में दी हुई कुछ बातों में कुछ भ्रम उत्पन्न हो सकता है। खंड 9 के नोट के अन्तर्गत चार बातों की व्यवस्था है। पहली बतलाती है–प्रांत या उसके किसी भाग की शांति को गम्भीर संकट से बचाना। इसका मतलब है कि गवर्नर को सम्भवतः प्रांत की शांति सम्बंधी गम्भीर संकटावस्था में अधिकार दे दिए गए हैं। परन्तु मैं कह सकता हूं कि कमेटी की ठीक यही मंशा नहीं है। इस प्रश्न पर निर्णय करते हुए कमेटी ने यह बतलाना चाहा कि गवर्नर को केवल यही अधिकार होगा कि प्रांत में उस भीषण परिस्थिति के उत्पन्न होने की, जिससे कि प्रांत की शांति गम्भीर संकटग्रस्त हो जाये, रिपोर्ट अध्यक्ष को करे। कमेटी की यह मंशा न थी कि इस अधिकार या सत्ता का प्रयोग गवर्नर द्वारा किया जाये, जिससे मंत्रिमंडल और गवर्नर में संघर्ष या विरोध उत्पन्न होने की सम्भावना हो सकती है। गवर्नर का सरकारी सेवकों पर नियंत्रण न होने के कारण शासन प्रबन्ध की सत्ता पूर्णतः मंत्रिमंडल के हाथ में आ जाती है। इसलिए देश की वर्तमान दशा के कारण इस प्रश्न पर यद्यपि यथेष्ट मतभेद रहा। कुछ ने सोचा कि देश की वर्तमान असाधारण और अनिश्चित दशा में यह अनुमति योग्य होगा कि गवर्नर को कुछ सीमित अधिकार दिये जायें। अन्त में कमेटी इस निश्चय पर पहुंची कि यह कार्यान्वित (काम में लाने योग्य) नहीं होगा और गति अवरोध उत्पन्न करेगा। इसलिए उचित मार्ग यही होगा कि गवर्नर के अधिकारों को यूनियन के अध्यक्ष को रिपोर्ट करने तक सीमित रखा जाये। यह विषय, कि यूनियन का अध्यक्ष किस परिपाटी का अनुसरण करे अथवा किस अधिकार का प्रयोग करे, संघ अधिकार कमेटी (Union Powers Committee) का होगा और वह इसकी व्यवस्था यूनियन विधान के अन्तर्गत रखेगी। लेकिन जहां तक प्रांतीय विधान का सम्बन्ध है यह स्वीकार किया गया कि केवल रिपोर्ट करने के सीमित अधिकार ही गवर्नर को दिये जायें।

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

तत्पश्चात् खंड 9 के अंतर्गत दूसरी बात है—प्रांतीय व्यवस्थापिका का बुलाना और उसे भंग करना (इस भाग का खंड 20)। यह साधारण अधिकार है जो प्रत्येक विधान में गवर्नर को दिया जाता है, इसलिए इसके बाबत कोई खास बात नहीं है।

तीसरी बात, निर्वाचनों के प्रबंध, निरीक्षण, निर्देशन करने और उन पर नियन्त्रण रखने की व्यवस्था रखती है। इस विषय में मेरे ख्याल से मौलिक अधिकार समिति (Fundamental Rights Committee) ने यह सिफारिश की है कि यूनियन के अध्यक्ष द्वारा एक समिति (Commission) नियुक्त की जाये जो कि दल के प्रभावों से परे हो जिससे कि समस्त प्रांतों में न्याययुक्त निर्वाचन हो सके। मौलिक अधिकारों को स्वीकार करते समय मेरा ख्याल है कि हाउस ने यह भी स्वीकार कर लिया था। इसलिए इस खंड को इस हाउस द्वारा स्वीकृत पहले प्रस्ताव के अनुकूल रखना होगा।

तत्पश्चात् चौथी बात, प्रांतीय पब्लिक सर्विस कमीशन के चेयरमैन और मेम्बरों और प्रांतीय आडीटर जनरल की नियुक्ति के सम्बन्ध की है। इस विषय में भी प्रांतीय पब्लिक सर्विस कमीशन के चेयरमैन और मेम्बरों की नियुक्ति प्राय: मंत्रिमंडल की सिफ़ारिश से की जाती है।

अत: जब हम खंड 9 का विश्लेषण करते हैं तो व्यवहार में लाने के लिए जो अधिकार प्रांतीय गवर्नर के लिए रह जाते हैं, वे हैं केवल देश की शांति को भीषण खतरे में डालने वाली गंभीर आकस्मिक परिस्थिति के उत्पन्न होने पर अध्यक्ष को रिपोर्ट करना तथा प्रांतीय व्यवस्थापिका का बुलाना और भंग करना।

खंड 9 पर विचार कर लेने के पश्चात् हम कमेटी की उन सिफारिशों पर आते हैं जो व्यवस्थापक मंडल की रचना के सम्बंध में हैं—यानी मंडल दो होने चाहियें अथवा एक। कमेटी ने सामान्यत: यह स्वीकार किया कि केवल एक व्यवस्थापक-मंडल होना चाहिये। परंतु यह भी स्वीकार किया कि यदि कोई प्रांत द्विसभात्मक व्यवस्थापिका चाहता है तो उस प्रांत को इस प्रकार की व्यवस्था करने का अधिकार होगा, बशर्ते कि कमेटी के मतानुसार ऊपर की सभा (Upper House) की रचना आयरिश आधार (Irish Model) पर होनी चाहिए जिसमें कुछ प्रतिशत सदस्यों का चुनाव व्यवसायी प्रतिनिधित्व (Functional Representation) के आधार पर हो और कुछ प्रतिशत सदस्यों की नामज़दगी हो तथा निर्वाचन के

लिए (उक्त) व्यवस्था रखनी पड़ेगी। दूसरी सभा के सम्बन्ध में कमेटी की सिफारिश वर्तमान एक्ट से इस बात में भिन्न है कि व्यवसायी प्रतिनिधित्व के आधार पर आधे सदस्य चुने जायेंगे। नारी, श्रम, व्यवसाय, उद्योग, इत्यादि विशेष हितों का प्रतिनिधित्व निचली सभा (Lower House) में होगा। यह व्यवस्था यथोचित प्रतीत होती है और आयरिश विधान के अनुसार है।

कमेटी ने हाई कोर्ट के न्यायाधीशों की नियुक्ति के विषय पर विशेष ध्यान दिया है। कमेटी ने इस बात को बहुत महत्त्वपूर्ण समझा है। न्यायाधीश-समूह को अविश्वास और दल के प्रभावों से परे होना चाहिये, इसलिये यह स्वीकार किया गया कि हाई कोर्ट के न्यायाधीशों की नियुक्ति सर्वोच्च न्यायालय के प्रमुख न्यायाधीश, प्रांतीय हाई कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश और गवर्नर की जिसे प्रांतों से सम्बन्धित मंत्रिमंडल की सलाह मिल चुकी हो, सलाह से यूनियन के अध्यक्ष द्वारा होनी चाहिये।

इस प्रकार हाई कोर्ट में न्याययुक्त नियुक्तियां करने के लिये अनेकों प्रतिबन्धों की व्यवस्था कर दी है। ये विशेष रूप-रेखायें हैं। कमेटी द्वारा निर्णय किया गया सिद्धांत स्मृति-पत्र में दिया हुआ है और शेष विधान के लिये यह स्वीकार किया गया कि उपयुक्त परिवर्तन करके वर्त्तमान 1935 एक्ट के व्यवहार में आ जाने पर उसका (शेष विधान का) मस्विदा बनाया जाये। इसलिये मैं प्रस्ताव रखता हूं कि कमेटी की इस रिपोर्ट पर विचार किया जाये और यदि हाउस स्वीकार करता है तो रिपोर्ट का एक-एक खंड लिया जाये।

मौलाना हसरत मोहानी (संयुक्त प्रांत: मुस्लिम): जनाबे वाला, अभी मेरे दोस्त सरदार पटेल ने आपके सामने जो रिपोर्ट पेश की है मैं इस मौके पर उनका अहतराम (आदर) करते हुये उस पर यह ऐतराज (आपत्ति) करने के लिये खड़ा हुआ हूं कि जब तक यूनियन कांस्टीट्यूशन की रिपोर्ट पेश न हो जाये उस वक्त तक इस रिपोर्ट का पेश होना किसी सूरत में मुनासिब नहीं मालूम होता। इसकी वजह यह नहीं है कि जैसा पटेल साहब ने कहा कि यह फाइनल नहीं है और जो गलती होगी वह बाद में ठीक हो जायेगी। अगर सिर्फ लफ्ज़ी तब्दीली (शाब्दिक परिवर्तन) की ख्वाहिश (इच्छा) होती तो मैं इस बात को कभी नहीं पेश करता। मैं आपकी खिदमत में और आपके जरिये से अपने नेशनलिस्ट और नेशनल सोसलिस्ट दोस्तों से जो हमारे दरमियान (बीच में) मौजूद हैं

[मौलाना हसरत मोहानी]

कहना चाहता हूं कि मेरा यह ऐतराज अहम और दूररस (महत्वपूर्ण और दूर तक पहुंचने वाला) ऐतराज है। अगर आप इस चीज को सरसरी नजर से देख कर टालेंगे तो मुझको यकीन है कि आप को आखिरकार (अन्त में) फिर तर्जअमल (कार्यविधि) पर नादिम (लज्जित) होना और अफसोस करना (पछताना) पड़ेगा।

यह देखते हुये कि इस कांस्टीट्यूएन्ट असेम्बली में इस वक्त वजुज (केवल) नेशनलिस्ट मेम्बरों के और कोई भी मौजूद नहीं है। बंगाल से एक कम्यूनिस्ट मेम्बर था वह किसी न किसी तरह खारिज हो गया। फारवर्ड ब्लाक वालों में से शरत बोस ने इस्तीफा दिया। यू.पी. के श्री त्रिपाठी और सी.पी. के एक और फारवर्ड ब्लाकिस्ट ने इस्तीफा तो नहीं दिया, मगर मालूम नहीं किस सबब से वह भी इस वक्त यहां नहीं है। मैं अपना फर्ज (कर्त्तव्य) समझता हूं कि अपने उन गैरहाजिर दोस्तों के नुकतये नजर (दृष्टिकोण) को भी आपके सामने बेखौफखतर (निर्भय होकर) पेश कर दूं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** एक वैधानिक आपत्ति है। वाद-विवाद गलत तरीके पर हो रहा है। मैं नहीं समझ पाता हूं कि इस प्रश्न का कि विधान प्रतिनिधि शासनवादी (Republican Constitution) हो या न हो प्रांतीय-विधान से क्या संबन्ध है और न इस बात से संबंध है कि विधान उपनिवेशीय (Dominion Constitution) होना चाहिये-क्योंकि आज तो हम प्रांतीय-विधान के सिद्धांत का निर्णय कर रहे हैं-और जब यह प्रश्न उठे कि विधान प्रतिनिधि शासनवादी हो अथवा उपनिवेशीय, उस समय मौलाना हसरत मोहानी कोई संशोधन पेश कर सकते हैं या कुछ कह सकते हैं। आज हम केवल उस प्रांतीय विधान के मस्विदे पर विचार कर रहे हैं जो कि उस स्वाधीन भारत के लिये उपयुक्त हो सकता है जिसका साम्राज्यान्तर्गत स्वराज्य (Dominion-Status) से कोई सम्बन्ध नहीं है। विधान-परिषद् द्वारा पास किये गये प्रस्ताव के अनुसार यह मस्विदा प्रतिनिधि शासनवादी विधान के लिये भी उपयुक्त हो सकता है। इसलिये उन्हें विस्तारपूर्वक बोलने की आज्ञा न दी जाये क्योंकि वर्त्तमान प्रस्ताव से इसका कुछ सम्बन्ध नहीं है।

मौलाना हसरत मोहानी: अगर मुझको किसी खास नीयत से इसको पेश करना होता तो मैं इसको इस शक्ल में पेश न करता। मिसाल (उदाहरण) के

तौर पर अगर मुझको कम्यूनल फीलिंग (सांप्रदायिक भावना) या डालिएटिक टेक्टिक्स (विलंबकारी चालबाजियां) के सिलसले में यह सब करना होता तो मैं आपसे यह कहता कि यह रिपोर्ट उस वक्त तक पेश न की जाये जब तक कि माइनोरिटीज (अल्पसंख्यक समिति) की रिपोर्ट सामने न आ जाये, लेकिन दर-हकीकत सवाल तो सिर्फ इतना है कि आप उसूल से चलिये और जब तक कि यूनियन (संघ) की रिपोर्ट पेश न हो जाये उस वक्त तक आप प्रोविंशियल कांस्टीट्यूशन (प्रांतीय विधान) को पेश न कीजिये।

अगर आप मेरी इस बात को न मानें लेफ्टिस्ट ग्रुप्स को मिलाकर जायेंगे तो मेरी पार्टी कम्यूनिस्टों और फारवर्ड ब्लाकिस्टों की जो है वह दूसरी सूरत से अपनी बात को मनवा कर रहेगी। इस चीज को मैं इस तरह और समझा दूं और वह यह कि जब तक यूनियन की हालत नहीं बदलेगी और यूनियन का कांस्टीट्यूशन (संघीय विधान) नहीं ठीक तरह से बनेगा उस वक्त तक प्रोविंसेज़ की हालत जैसी इस वक्त है वैसी ही रहेगी सिर्फ सूबाजाती (प्रांतीय) आजादी तक महदूद (सीमित) रहेगी जिसकी मिसाल तक हिन्दुस्तानी मसल (कहावत) से दी जा सकती है। यानी ''मोची के मोची ही रहेंगे''।

बेशक पं. नेहरू ने आबजैक्टिव रेजोल्यूशन (लक्ष्य-सम्बन्धी-प्रस्ताव) रिपब्लिक का पेश कर दिया है लेकिन अभी तक उसकी तसरीह (व्याख्या) नहीं हुई कि रिपब्लिक वहदानी (एकाकी गणतन्त्र) (Unitary) किस्म की होगी या वफाती (संघीय गणतन्त्र) (Federal) किस्म की। फिर यह नहीं तय हुआ है कि फैडरल किस्म में से वह मरकजी (केन्द्रीय) (Centripetal) होगी या लाम्जगी (Centrifugal) होगी।

यह जो रिपोर्ट अभी सरदार साहब ने पेश की है उसमें उन्होंने बड़ी होशियारी के साथ यह कहा है कि हम चाहते हैं गवर्नर मुकर्रर किये जायें। आप देखें कि उनके एक लफ्ज के कहने से जो पूरा कांस्टीट्यूशन यूनियन का जो आप पेश करेंगे उसके ऊपर कलम फिर जाता है, इसके क्या माने हैं।

सरदार पटेल के कहने के बमूजिब (अनुसार) अगर यह बात मान भी ली जाये तो उसके यह साफ माने होंगे कि सूबों को सिर्फ प्रोविंशियल ओटोनोमी मिलेगी और अगर ऐसा है तो मैं कहूंगा कि आपकी इतने साल की कुरबानियां

[मौलाना हसरत मोहानी]

जाफिंसानियां (त्याग और परिश्रम) और कुइट इंडिया का रिजोल्यूशन बिल्कुल बेकार हो जायेगा।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से हसरत मोहानी का संशोधन वैधानिक है। हाउस को अधिकार है वह उसे स्वीकार न करे।

मौलाना हसरत मोहानी: आप यह कहते थे कि हम आजाद रिपब्लिक कायम करेंगे। पार्टियां धर्म के आधार पर नहीं होंगी, बल्कि शोसलिस्टिक आधार पर होंगी।

***अध्यक्ष:** यह सवाल इस वक्त नहीं है। मौलाना, इस वक्त तो बहुत सीधा सवाल यह है कि रिपोर्ट पर गौर किया जाये या नहीं।

मौलाना हसरत मोहानी: मेरे कहने का मतलब यही है कि आप प्रोविंशियल कांस्टीट्यूशन को बैकडोर से पास करना चाहते हैं।

अध्यक्ष: आप फरमा चुके जो वजूहात हैं। यह आप भूल चुके हैं कि आपके रिपब्लिक के बारे में और दुनियां के सब सवालों के बारे में बहस करने का मौका नहीं है। जहां तक इस अमेन्डमेंट का सवाल है, आप फरमा चुके हैं कि किन वजूहात पर आप इन्हें पेश करना चाहते हैं। और मैं समझता हूं कि दूसरे सवालों पर बहस न होनी चाहिये।

मौलाना हसरत मोहानी: जनाबे वाला, मैं थोड़ी सी देर में अपने बयान को खतम किये देता हूं। इस वक्त यहां पर जो फारवर्ड ब्लाक के मेम्बर हैं, और कम्यूनिस्ट हैं, वह सब गैरहाजिर हैं। मैं इन सबकी तरफ से सब के हुकूक की रक्षा करूंगा, और अगर आप अपने वोटिंग इस्ट्रेन्थ पर जिस तरह और जो चाहेंगे इस हाउस में पास कर लेंगे, तो मैं दूसरे तरीके सबके अधिकारों की रक्षा के लिए अख्तयार करूंगा। आखिर में एक बार फिर आपसे अर्ज करूंगा कि हरएक काम उसूल से कीजिए सबके अधिकारों का लिहाज रखिए।

***एक माननीय सदस्य:** श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है। क्या माननीय सदस्य का इस हाउस को भरा हुआ (Packed House) कहना वैधानिक है ? क्या यह परिषदात्मक भाषा है ? उनको इस कथन को वापस लेने के लिए कहा जाये।

***मौलाना हसरत मोहानी:** मैंने किसी अपरिषदात्मक कथन का प्रयोग नहीं किया है। मैंने केवल यही कहा था किसी कदर यहां सभी राष्ट्रीयता के मनुष्य हैं, अत: बहरे हैं। मेरा आशय हाउस की कोई अवज्ञा करने से न था।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू:** साहिबे सदर, जिस वक्त यूनियन कांस्टीट्यूशन कमेटी की रिपोर्ट पेश होती तो मैं आप हजरात के सामने एक खास हैसियत से खड़ा होता, लेकिन कुछ लोगों के दिमाग में जो गलतफहमी पैदा हो गई है मैं इस वक्त उसको दूर करना चाहता हूं। मुमकिन है कि मैं कामयाब न हूं। मौलाना हसरत मोहानी जो बहुत गहरे हैं, और अपने आपको कम्युनिस्ट और फारवर्ड ब्लाकिस्ट का नुमायन्दा और अलम्बरदार समझते हैं, मुमकिन है, कि मैं उनको न समझा सकूं। ऐसी सूरत में जाहिर है कि उनको परेशानी होगी लेकिन जो बात मैं अर्ज करना चाहता हूं वह यह है, और वह कोई खास बात नहीं है। यह बिलकुल ठीक होगा अगर हम प्रोविंशियल कांस्टीट्यूशन के उसूलों के बगैर किसी आब्जैक्ट या मकसद को सामने रखते हुए कि किधर हम जा रहे हैं, अगर इसको लेते हैं तो यह गलत बात है, इस वक्त हमने एक सूबे से शुरू किया है। करीब-करीब 6 महीने हुये इस हाउस ने एक रेजोलेशन मंजूर किया था, उसने एक नक्शा और एक चीज सामने रखी थी और उसको लोगों ने पसंद किया था। जब किसी चीज का एक मर्तवा नक्शा बना दिया जाता है तो ख्याल यह पैदा होता है कि किस चीज को पहले लें और किस चीज को आखीर में।

लेकिन इत्तफाक ऐसा हुआ कि प्रोविंशियल कांस्टीट्यूशन का सवाल पहले उठाया गया और प्रोविंशियल कांस्टीट्यूशन की रिपोर्ट पहले तैयार हो गई थी और उस पर मेम्बरान को काफी गौर करने का मौका मिल गया। दूसरी रिपोर्ट जो अभी सिर्फ 6 या 7 दिन हुए भेजी गई। चुनाचे मेम्बरों की सहूलियत के लिए यह ख्याल हुआ कि इनको इस पर गौर करने का मौका नहीं मिलेगा। इसलिए इस रिपोर्ट को अभी न पेश किया जाये; और प्रोविंशियल कांस्टीट्यूशन की रिपोर्ट को जिस पर काफी गौर हो चुका है, पेश कर दिया जाये।

आप साहिबान के पास यूनियन की रिपोर्ट मौजूद है। अगर साहिबे सदर मुझको आज्ञा दें तो अभी उसको पेश कर दूं। सिर्फ उसमें दिक्कत यह जरूर होगी कि मेम्बरान साहिबान मुमकिन है यह कहें कि हमको इस पर काफी गौर करने का मौका नहीं दिया गया या अगर इस पर गौर करने का मौका दिया जाये तो इस सिलसिलें में दो तीन दिन हमको अपने जाया करने होंगे। इसलिए मुनासिब यह

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

समझा गया कि जो रिपोर्ट पहले तैयार हो चुकी है और जिस पर काफी गौर हो चुका है वह पेश कर दी जाये। जिस तरह यह रिपोर्ट आपके सामने पेश कर दी गई है इसी तरह से यूनियन कांस्टीट्यूशन की रिपोर्ट भी पेश कर दी जायेगी। आप अच्छी तरह से जानते हैं कि कोई इसमें छुपाने की बात नहीं है और न कोई बात परदे के पीछे होगी।

इसमें एक लफ्ज गवर्नर का है मौलाना साहब इसको सुनकर भड़क गए हैं। यह सही बात है कि गवर्नर का लफ्ज पहले से चला आ रहा है और हम लोग इसको अच्छा नहीं समझते हैं लेकिन यहां पर लफ्ज का कोई सवाल नहीं है। हम नहीं कह सकते कि हमारा आईन अंग्रेजी में होगा या किस जबान में होगा। जहां तक गवर्नर लफ्ज का मतलब है आप जानते हैं कि अमरीका में भी गवर्नर हैं और उनके क्या-क्या अख्तयारात हैं। और वह क्या क्या कर सकते हैं इसलिए में अर्ज करूंगा कि जो हमारे उसूल हैं और जो मकसद हमारे सामने है उसमें कोई गड़बड़ी नहीं पड़ती। इसलिये मैं आपसे यह अर्ज करूंगा कि यह उसूल का सवाल नहीं है बल्कि आपके इतमीनान से काम करने का सवाल है। अगर आप सब लोगों की और सरदार पटेल की राय हो तो मैं यूनियन कांस्टीट्यूशन पेश करने को अभी तैयार हूं।

***श्री मोहम्मद ताहिर** (बिहार: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं मौलाना हसरत मोहानी द्वारा पेश किये हुए संशोधन का समर्थन करने के लिये उठा हूं और–वह इसलिये–कि वह तर्कपूर्ण है, अर्थात् यह कि जो पूरे के लिये सच है वह एक हिस्से के लिये भी सच है। श्रीमान्, अभी तक हमें यह मालूम नहीं है कि भारतीय संघ के लिये यह सभा किस प्रकार का विधान बनाने का निश्चय करेगी। निस्सन्देह प्रांत भारत के भाग हैं और जब तक हमें भारतीय संघ का विधान न मालूम हो जाये प्रांतीय विधान के सिद्धांतों पर विचार करना उचित न होगा। अभी श्रीमान्, माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू ने कहा कि भारतीय संघ का विधान भी तैयार है और हर एक सदस्य के पास उसकी एक प्रति है। लेकिन श्रीमान्, मैं कहूंगा कि उसकी प्रति सदस्यों के पास होना एक बात है और इस सभा द्वारा निर्णय किया जाना दूसरी बात है। इसके अलावा श्रीमान् माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू ने अभी कहा कि वे भारतीय संघ-विधान के सिद्धांतों को सभा के सम्मुख रखने के लिये तैयार हैं और यह कि प्रांतीय विधान के सिद्धांतों को सभा के सम्मुख पहले संयोगवशात ही रखा गया। इससे यह प्रकट होता

है कि वे भी यह समझते हैं कि भारतीय संघ के विधान पर पहले विचार होना चाहिये।

श्रीमान्, दूसरी बात मैं यह कहना चाहता हूं कि हमें अल्पसंख्यकों की कमेटी, कबाइली क्षेत्रों की कमेटी आदि की रिपोर्टों के बारे में कुछ मालूम नहीं है; लेकिन इन कमेटियों की सिफारिशें विधान में सम्मिलित की जायेंगी। जब तक ये रिपोर्टें न मिल जायें प्रांतीय विधान पर विचार करना उचित न होगा।

इन शब्दों के साथ श्रीमान्, मैं मौलाना हसरत मोहानी के संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्त प्रांत: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं मौलाना हसरत मोहानी द्वारा पेश किये हुए संशोधन का विरोध करने के लिये उठ खड़ा हुआ हूं। जब एक क्षण पूर्व वे खुदाई फौजदार का अभिनय करने का प्रयत्न कर रहे थे तो मुझे उनकी एक प्रख्यात उक्ति स्मरण हो आई थी। वे कहते हैं कि वे या तो साम्यवादी हैं या सम्प्रदायवादी।

कुछ माननीय सदस्य: वे दोनों हैं।

श्री बालकृष्ण शर्मा: अब वे साम्यवादी और सम्प्रदायवादी दोनों हो गये हैं और इस प्रकार उन्होंने कार्ल मार्क्स और ईसा मसीह के बीच की खाई को पाटने का प्रयत्न किया है। मौलाना एक अत्यंत महान पुरुष हैं। उनमें उद्देश्य के प्रति निष्ठा और ईमानदारी है और इसलिये हम सभी उन्हें हमेशा आदर की दृष्टि से देखते रहे हैं। लेकिन मैंने हमेशा यह देखा कि वे ऐसे आदमियों में से हैं जो हमेशा मिलजुल कर काम करने से इन्कार करते रहे हैं। वे बराबर अपनी खिचड़ी अलग पकाते रहे हैं। मुस्लिम लीग में भी जिसमें वे बहुत आगा पीछा करके सम्मिलित हुए और यद्यपि वे उसके हाई कमान्ड में भी शामिल कर लिये गये थे, उन्होंने अपना व्यक्तित्व अलग बनाये रखा। यहां उन्होंने जो संशोधन पेश किया है वह बहुत ही हास्यास्पद है और वह इस कारण कि चाहे हम संघ-विधान पर पहले विचार करें या प्रांतीय विधान पर इससे बहुत कम अंतर पड़ता है। हमने इस सभा में प्रस्ताव पास करके अपने सामने एक लक्ष्य रखा है और यदि कोई बात उस लक्ष्य के अनुकूल न हो तो इस सभा का कोई भी सदस्य अनुकरणीय प्रांतीय विधान पर या संघ-विधान पर विचार करते समय स्वतंत्रता से उसे जता सकता है। इसलिये हम चाहे प्रांतीय विधान पर पहले विचार करें या संघ-विधान पर, इससे कोई विशेष अंतर नहीं पड़ता। मौलाना ने यह कहकर एक बुनियादी सवाल उठाया है कि प्रांतीय विधान का उद्देश्य

[श्री बालकृष्ण शर्मा]

प्रांतों को केवल स्वायत्तशासन प्रदान करना होगा या वहां गणतांत्रिक विधान स्थापित करना। यदि मौलाना यह चाहते हैं कि यह सभा उनके मत को स्वीकार करे तो वे प्रांतीय विधान में अवश्य ही संशोधन पेश कर सकते हैं। जो शब्द उनको पसन्द न आये उनको निकालने का प्रस्ताव कर सकते हैं। यदि वे चाहें तो गवर्नर को प्रेसीडेंट बना सकते हैं और प्रांतीय व्यवस्थापिकाओं को जो भी अधिकार वे देना चाहें दे सकते हैं। यदि उनके संशोधनों को यह सभा स्वीकार न करे तो संघ-विध ान पर पहले विचार करने का प्रस्ताव करके उन्हें कोई मदद नहीं मिलेगी। मेरी समझ में नहीं आता कि इससे क्या अंतर पड़ता है ? यह अच्छी तरह समझ लिया जाये कि हमने यह निश्चय किया है कि हम किसी भी विधान का केवल अनुकरण माात्र न करेंगे, चाहे वह अमेरिकन विधान हो या ब्रिटिश या अन्य कोई विधान। हम अपनी आवश्यकताओं के अनुसार एक विधान बनाने जा रहे हैं और हम इसके लिये सच्चेष्ट रहेंगे कि कहीं किसी नमूने की बुराइयों को न अपना लें।

मौलाना ने बहुत मामूली ढंग से रूस का ज़िक्र किया। शायद ये मौलाना भूल गये थे कि रूस और इस अभागे देश में, जहां हम एक दूसरे की जान लेने के लिये उतारू हैं, बहुत फर्क है। हमें इस पर भी विचार करना है कि हम किस परिस्थिति में पड़े हुए हैं। मेरे विचार में यदि हमारा देश किसी ऐसे विधान को स्वीकार करना चाहे जो राज्य-संघ और एक सत्तात्मक शासन पद्धति के बीच का हो तो हमें उसके निर्माण करने की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिये। हमारे ऐसे देश में, जो हमेशा से विभाजन के तरह तरह के तरीके ढूंढता रहा है–विभाजन की प्रवृत्ति हमारे देश की ऐतिहासिक प्रवृत्ति है–मेरे विचार में हमें इसके लिये सावधान रहना चाहिये कि हम प्रांतों को इतने अधिक अधिकार न दें कि आगे चल कर देश का फिर विभाजन करना पड़े।

इससे किंचित मात्र भी अंतर नहीं पड़ता कि हम प्रांतीय-विधान पर पहले विचार करें या संघ-विधान पर। यदि मौलाना का यह विचार है कि प्रांतीय विधान को एक आदर्श गणतांत्रिक विधान का रूप देने के सम्बन्ध में यह सभा उनके मत को स्वीकार कर लेगी तो उनको अपने विचारों को उसके सामने रखने की पूरी स्वतंत्रता है। लेकिन यदि वे केवल उसे बिगाड़ना चाहें तो वे अपने प्रयत्न में सफल न होंगे।

श्रीमान्, मौलाना ने जिस संशोधन को सभा के सामने रखा है उसका मैं घोर विरोध करता हूं।

श्री नज़ीरुद्दीन अहमद (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं मूल प्रस्ताव का समर्थन करना चाहता हूं, यानि यह कि इस समय प्रांतीय-विधान पर विचार होना चाहिये। संशोधन का उद्देश्य यह है कि जब तक संघ-विधान से सम्बन्धित रिपोर्ट पर विचार न हो जाये प्रांतीय-विधान को विचारार्थ न लेना चाहिये। मेरी राय में प्रांतीय-विधान और संघ विधान दो अलग अलग चीजें हैं। चाहे हम जिस विधान को भी पहले लें तो इससे कोई अंतर नहीं पड़ता। यदि कोई दोष हो, यदि किन्हीं बातों के बारे में मतभेद हो, यदि कोई बातें ऐसी हों जिनके बारे में किसी सदस्य को आपत्ति हो, तो उसको इस सभा में इस सम्बन्ध में प्रस्ताव करने और संशोधन पेश करने की स्वतंत्रता होगी। जैसा कि बताया जा चुका है संघ-विधान सम्बन्धी प्रस्तावों को सदस्यों के पास भेज दिया गया है और हम यह जानते हैं कि वे किस प्रकार के हैं। इसलिये प्रस्तावित संघ-विधान और प्रांतीय-विधान या पूरा चित्र सभा के सामने है। मेरी राय में ऐसे विषय के सम्बन्ध में हमें अब सभा का अधिक समय न लेना चाहिये। इसका कोई महत्व नहीं है कि किस विधान पर पहले विचार किया जाये। इन थोड़े से शब्दों के साथ मैं मूल प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

***पं. गोविन्द मालवीय:** मेरा प्रस्ताव है कि अब यह बहस बन्द कर दी जाये।

***अध्यक्ष:** बहस बन्द करने का प्रस्ताव पेश हो चुका है। करने के पक्ष में हैं वे कृपा करके 'हां' कहें, और जो इसके पक्ष में नहीं हैं वे 'नहीं' कहें।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब प्रस्तावक वाद-विवाद का उत्तर देंगे।

माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल: इस प्रस्ताव पर मौलाना हसरत मोहानी ने जो संशोधन पेश किया है वह यह है कि संघ-विधान कमेटी की रिपोर्ट पर विचार करने के बाद इस प्रस्ताव पर विचार होना चाहिये। मौलाना ने शायद संघ-विधान से सम्बन्धित रिपोर्टों को देखा है क्योंकि वे इस असेम्बली की कार्यवाही को बड़े ध्यान से सुनते रहे हैं। और शुरू में जो लक्ष्य-सम्बन्धी प्रस्ताव इस सभा ने पास किया उसे भी उन्होंने देखा है। अब मैं मौलाना से पूछता हूं कि जो मसविदा मैंने पेश किया है उससे क्या किसी प्रकार उस लक्ष्य-सम्बन्धी प्रस्ताव के मौलिक सिद्धांतों को हानि पहुंचती है ? मेरी समझ में नहीं आता कि उनको इसमें सन्देह ही किस प्रकार हुआ कि यह विधान गणतांत्रिक विधान होगा या शरियत

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

का विधान होगा या जनतांत्रिक विधान होगा। असल बात यह है कि पैरों पर खड़ा होना अच्छा है या सर के बल। हम पैरों पर खड़ा होना अच्छा समझते हैं। हम प्रांत से आरम्भ करेंगे और अन्त में चोटी पर आ जायेंगे। लेकिन कुछ लोग कभी उछलकूद करने की कोशिश करते हैं। उन्हें ऐसा करने की स्वतंत्रता है। मौलाना कहते हैं कि इस प्रस्ताव को चालाकी से पेश कर प्रस्तावक ने कोई चाल चली है। मेरी समझ में नहीं आता कि मैंने कौन सी चाल चली है और वह चाल कहां पर है। सीधा सादा सवाल यह है कि जो मसविदा मैंने पेश किया है उस पर विचार हो या न हो। उन्होंने आज इस पर विचार न होने के समर्थन में कोई तर्क नहीं दिया है। वे यदि यह समझते हैं कि संघ-विधान में कोई वक्त और मौका मिलेगा कि वे अपने सुझाव दें और उसमें बदलाव या संशोधन करने के बारे में राय दें। इस प्रस्ताव में कोई भी ऐसी बात नहीं है जिससे शक शुब्हा पैदा हो सकता है और ऐसे साधारण प्रस्ताव के लिये इस सभा का अधिक समय लेना उचित न होगा। जैसा कि मि. नजीरुद्दीन ने स्पष्ट कर दिया है, इस प्रकार इस सभा का समय व्यर्थ ही नष्ट होगा। दोनों अलग-अलग चीजें हैं। उनमें से कोई भी दूसरे के कार्यक्षेत्र में बाधा नहीं पहुंचाता; इसलिए इन पर निश्चित कार्यक्रम के अनुसार आसानी से विचार हो सकता है। इसलिये इस सभा को इस प्रस्ताव को बिना किसी मतभेद के स्वीकार कर लेना चाहिये।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:–

''यह विधान-परिषद् अनुकरणीय प्रांतीय-विधान के सिद्धांतों से सम्बन्धित रिपोर्ट पर विचार आरम्भ करती है जिसे इस सभा के 20 अप्रैल सन् 1947 ई. के प्रस्ताव द्वारा नियुक्त कमेटी ने पेश किया है। इसमें एक संशोधन पेश किया गया है और वह यह है कि अनुकरणीय प्रांतीय विधान के सिद्धांतों से संबंधित रिपोर्ट पर तब तक विचार न हो जब तक कि संघ-विधान के सिद्धांतों से सम्बन्धित रिपोर्ट पर विचार न हो जाये।''

मैं संशोधन को मतदान के लिये रखता हूं।

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** संशोधन अस्वीकार किया गया है। मैं अब मूल प्रस्ताव को मतदान के लिए सभा के सामने रखता हूं।

प्रस्ताव यह है:–

''यह विधान-परिषद् अनुकरणीय प्रांतीय विधान से सम्बन्धित रिपोर्ट पर विचार आरम्भ करती है, जिसे इस सभा के 30 अप्रैल सन् 1947 ई. के प्रस्ताव द्वारा नियुक्त कमेटी ने पेश किया है।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब हम रिपोर्ट के एक-एक खण्ड पर विचार करेंगे।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, अब आपकी अनुमति से मैं रिपोर्ट का पहला खण्ड पेश करता हूं–अध्याय 1–प्रान्तीय प्रबन्धकारिणी।

''गवर्नर: हर एक प्रांत के लिए एक गवर्नर होगा जो प्रौढ़ मतगणना के आधार पर प्रत्यक्षत: लोगों द्वारा चुना जायेगा।''

[नोट–कमेटी ने यह विचार प्रकट किया कि गवर्नर का चुनाव, जहां तक सम्भव हो, उसी समय हो जब कि प्रांतीय असेम्बली के लिए आम चुनाव हो। कानून द्वारा इसकी व्यवस्था करना कठिन हो सकता है क्योंकि सम्भव है असेम्बली अपनी अवधि के मध्य में ही समाप्त कर दी जाये।]

इस खण्ड में दो महत्त्वपूर्ण बातों का उल्लेख है। पहली बात तो यह है कि हर एक प्रांत के लिये गवर्नर होगा। यह एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है। दूसरा महत्वपूर्ण सिद्धांत यह है कि वह प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुना जायेगा। आपने प्रांतीय विधान में देखा होगा कि गवर्नर को बहुत सीमित अधिकार दिये गये हैं परन्तु वह बहुत पेचीदे ढंग से चुना जायेगा, इसलिये सम्भवत: यह प्रश्न उठ सकता है कि यदि गवर्नर के सीमित ही अधिकार हैं तो हम ऐसा चुनाव क्यों करें जिसमें इतनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। प्रांतों में प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुनाव करना एक बहुत ही कठिन काम है परन्तु लोकप्रिय गवर्नर के पद की महानता को ध्यान में रखकर यह आवश्यक समझा गया है। इसलिये यह स्वाभाविक है कि सारे प्रांत की प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुने हुए किसी भी गवर्नर का मंत्रिमंडल पर तथा सारे प्रांत पर बहुत प्रभाव होगा। उसके व उसके पद की प्रतिष्ठा की दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि उसे देश के सभी वर्गों के लोगों का समर्थन प्राप्त हो। इस प्रकार इस प्रस्ताव में दो सिद्धांत निहित हैं एक तो यह है कि सभी प्रांतों में अनुकरणीय प्रांतीय विधान सम्बन्धी रिपोर्ट की

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

सिफारिशों के अनुसार गवर्नरों की नियुक्ति आवश्यक है और दूसरा प्रौढ़ मतगणना के अनुसार चुनाव का सिद्धांत है। इसलिये मैं इस प्रस्ताव को पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** इस खण्ड में कई संशोधनों की सूचना मुझे मिली है, उनमें से कई छपे हुए हैं और घुमा दिये गये हैं लेकिन मुझे संशोधन इस समय भी मिल रहे हैं। जो संशोधन मुझे इस समय मिल रहे हैं, उन्हें पेश करने का मेरा विचार नहीं है।

***एक माननीय सदस्यः** क्या मुझे एक सवाल पूछने की आज्ञा है ? सरदार वल्लभभाई पटेल ने अपने भाषण में कहा कि प्रांतीय विधान कमेटी और संघ विधान कमेटी की एक संयुक्त बैठक हुई थी और उस कमेटी के परामर्श के अनुसार कुछ परिवर्तन करने हैं। क्या मैं जान सकता हूं कि इस खण्ड पर भी विचार हुआ कि नहीं और क्या यह ठीक है कि उस कमेटी ने यह राय दी थी कि गवर्नर का चुनाव प्रत्यक्षतः प्रौढ़ मतगणना से न होना चाहिये बल्कि उसे प्रांतीय व्यवस्थापिका को आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत के अनुसार एकांकी हस्तान्तरित मत पद्धति द्वारा करना चाहिये ?

***अध्यक्षः** यह ऐसा प्रश्न है कि जिसका उत्तर प्रस्तावक ही, यदि वे चाहें तो दे सकते हैं।

***श्री टी.ए. रामलिंगम् चेट्टियर** (मद्रासः जनरल): मैं चाहता हूं कि एक बात स्पष्ट कर दी जाये। वह यह है कि इस अनुकरणीय विधान को जो प्रांतों के लिये बनाया गया है प्रांतों को क्या आवश्यक रूप से स्वीकार करना होगा, या इसे प्रांत अपनी इच्छा के अनुसार परिवर्तन करके स्वीकार कर सकते हैं ? मैं चाहता हूं कि यह बात स्पष्ट कर दी जाये।

***अध्यक्षः** इन सब प्रश्नों का उत्तर यदि प्रस्तावक चाहें तो वही देंगे।

***डा. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रांत और बरारः जनरल): श्रीमान्, जो संशोधन आपको इस समय मिले हैं उनके बारे में मैं एक शब्द कहना चाहता हूं। मैं यह बताना चाहता हूं कि यद्यपि हमसे कहा गया था कि हम संशोधनों को जल्दी ही भेज दें; लेकिन मूल प्रस्ताव इसी समय पेश हुआ है। प्रस्ताव के पेश होने के बाद ही सदस्यों को संशोधन पेश करने का अधिकार है।

इसलिये श्रीमान्, मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि जो संशोधन अभी आपके पास भेजे गये और आज छः बजे तक भेजे जायें उनको ले लिया जाये और उन पर विचार किया जाये। इन्हें न लेना थोड़ा बहुत अनुचित होगा।

*__अध्यक्षः__ डा. देशमुख इससे क्या मैं यह समझूं कि सदस्यों को ऐसे संशोधनों को पेश करने की सूचना देने का अवसर देने के लिये, जिन पर बाद को विचार होगा, हमें सभा स्थगित कर देनी चाहिये ?

*__डा. पी.एस. देशमुखः__ जी नहीं, मैं केवल यह सुझाव रख रहा हूं कि जो संशोधान छप चुके हैं उन पर हम विचार करें, लेकिन यदि आज कोई अन्य संशोधन भी पेश किया जाये तो उन पर विचार होगा। पहले ही खण्ड में बहुत से संशोधन पेश किये गये हैं और उन पर विचार होने में बहुत देर लगेगी। इसलिये नये संशोधनों को लेने में समय नष्ट न होगा।

*__अध्यक्षः__ यदि कोई ऐसे संशोधन हैं जिनकी सूचना आपने दे दी है और जिन पर, यद्धपि वे छपे न हों, सदस्यों ने सोच-विचार कर लिया है तो मैं कोई रुकावट नहीं डालूंगा; लेकिन मैं ऐसे संशोधनों को नहीं लूंगा जो काफी समय पहले बिना सूचना दिये और सदस्यों को सोच-विचार के लिये बिना अवसर दिये इस सभा में पेश किये जायें।

*__श्री महावीर त्यागी__ (संयुक्त प्रांतः जनरल): श्रीमान्, मुझे एक व्यवस्था सम्बन्धी आपत्ति करनी है ?

*__अध्यक्षः__ व्यवस्था सम्बन्धी आपत्ति किस प्रकार पैदा होती है ?

*__श्री महावीर त्यागीः__ मैं आपसे नियमों की व्याख्या के सम्बन्ध में एक प्रश्न पूछना चाहता हूं। श्रीमान्, एक नियम ऐसा है कि जिस दिन प्रस्ताव पेश हो उससे एक दिन पहले संशोधनों की सूचना मिल जानी चाहिये। मैं जानना चाहता हूं कि प्रस्ताव का अर्थ सारी रिपोर्ट से है या हर एक खण्ड को एक प्रस्ताव समझना चाहिये। जहां तक मैं जानता हूं हमारी प्रांतीय व्यवस्थापिका में प्रस्ताव का अर्थ कोई ऐसा प्रश्न होता है जो सभा से पूछा जाये या जिसके बारे में सभा में वाद-विवाद हो। हरएक प्रश्न एक प्रस्ताव होता है, इसलिये श्रीमान्, यदि मैं उदाहरणार्थ इस रिपोर्ट के खण्ड 21 में कोई संशोधन पेश करना चाहूं और यह समझूं कि उस पर परसों विचार होगा और किसी संशोधन की आज सूचना दूं तो मेरे विचार में वह संशोधन नियमित होगा; क्योंकि पूरे एक दिन पहले सूचना दे दी गई है।

***अध्यक्षः** नियम 32 में कहा गया है:

''जब तक सभापति की इजाज़त न हो किसी प्रस्ताव पर संशोधन की सूचना असेम्बली में प्रस्ताव पेश होने के कम से कम पूरे एक दिन पहले मिल जानी चाहिये।''

जो प्रस्ताव पेश किया गया है वह घुमाया गया था और उसकी सूचना कई दिन पहले दे दी गई थी। और सदस्यों के पास 24 घंटे पहले सूचना देने के लिये काफी समय था, इसलिये मैंने कहा है कि इस समय यदि किसी संशोधन की सूचना दी जाये तो उसको मैं विचारार्थ नहीं लूंगा।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान्, मैं यह पूछ रहा था कि तीन दिन बाद खंड 21 का पेश होना प्रस्ताव समझा जायेगा कि नहीं ? वह प्रस्ताव सभा के सामने रहेगा और वह उस पर तीन दिन बाद विचार करेगी। ऐसी स्थिति में मैं यह कहूंगा कि मुझे इस समय संशोधन प्रस्तुत करने का अधिकार है क्योंकि मैं उसे एक दिन से भी अधिक समय पहले दूंगा।

***अध्यक्षः** जैसा कि मैं कह चुका हूं, यदि मुझे किसी संशोधन की सूचना इतने समय पहले मिल जाये कि मैं उसे सदस्यों के पास भेज सकूं ताकि वे सभा में आने के पहले उस पर विचार कर सकें तो मैं उसे स्वीकार कर सकता हूं। लेकिन मैं ऐसे संशोधनों को स्वीकार नहीं कर सकता हूं जिनको छपवाने और पहले से सदस्यों के पास भेजने का समय न मिले। यदि इस समय किसी ऐसे प्रस्ताव में संशोधन की सूचना दी जाये जो सभा में तीन दिन बाद पेश होगा तो मुझे उसे स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान्, मैं आपको धन्यवाद देता हूं। मेरी आपत्ति साफ हो गई है।

***अध्यक्षः** अब हम संशोधनों पर विचार करेंगे।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (बङ्गालः मुस्लिम): श्रीमान्, मैं यह कहना चाहता हूं कि संशोधनों की नकलें हमें आज सुबह ही मिलीं। उनका सम्बन्ध जिन विषयों से है वे बहुत ही कठिन और दुरूह हैं और हमें उन पर विचार करने के लिए काफी समय नहीं मिला। इसलिये मैं चाहता हूं कि हमें संशोधनों को पढ़ने के लिए कम से कम चौबीस घण्टे का समय मिलना चाहिये, ताकि हम हां या नहीं कहने या अपने विचार प्रकट करने के लिए तैयारी कर सकें। मैं सिर्फ इतना ही चाहता हूं।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि ये संशोधन कल रात भेज दिए गए थे।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** लेकिन हमें वे आज सुबह ही मिले। मुझे मालूम हुआ है कि हममें से कुछ को वे आज इस सभा में आते समय ही मिले।

***अध्यक्षः** मैंने संशोधनों को भेजने के लिये सदस्यों को कल शाम तक का समय दिया था और उनको छपवाने और सदस्यों के पास भेजने में समय लगा है। कुछ सदस्यों को उनकी प्रतियां देर से मिली हैं। यदि सदस्यों का यह विचार है कि उनको संशोधनों पर विचार करने के लिए काफी समय नहीं मिला है, तो हम उन पर विचार बाद में करेंगे। लेकिन हमारे पास अभी 40 मिनट और हैं। और मैं यह सुझाव रखता हूं कि हमें उन पर विचार आरम्भ कर देना चाहिए। हम एक या दो संशोधनों से अधिक पर विचार नहीं कर सकेंगे और यदि कोई कठिनाई हो तो हम उनको स्थगित करने के बारे में विचार कर लेंगे।

***नवाब मोहम्मद इस्माइल खांः** (संयुक्त प्रान्तः मुस्लिम): ये संशोधन आज दोपहर के बाद मेज पर रखे गए। और इनके प्रकाश में बिल पर विचार करने के लिए हमें बिल्कुल समय नहीं मिला है। मेरे विचार में यह उचित ही है कि सदस्यों को संशोधनों के प्रकाश में बिल पर विचार करने का अवसर दिया जाये और उसके बाद संशोधन एक-एक करके लिए जायें।

***अध्यक्षः** मेरा ख्याल था कि संशोधन सदस्यों के पास कल रात भेज दिये गये थे।

नवाब मोहम्मद इस्माइल खांः हमें यह किताब आज दोपहर के बाद मिली है।

***श्री के.एम. मुंशीः** लेकिन अधिकतर सदस्यों को यह कल रात मिल गई थी।

***अध्यक्षः** मालूम पड़ता है कि संशोधनों को सदस्यों के पास भेजने में कुछ देर हुई है क्योंकि कुछ सदस्यों के पते दफ्तर को नहीं मालूम थे। यह जान पड़ता है कि कुछ सदस्यों को ये संशोधन आज दोपहर के बाद बहुत देर तक नहीं मिले। संशोधन पर इस समय विचार हो या न हो, इस सम्बन्ध में मैं सभा की राय से ही काम करना चाहता हूं।

(कुछ देर रुक कर) अब मैं मौलाना हसरत मोहानी से कहूंगा कि वे अपना संशोधन पेश करें।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुर** (मद्रासः मुस्लिम): कल मैंने प्रार्थना की थी कि भाषणों का अनुवाद अंग्रेजी में कराने का प्रबन्ध किया जाये। मैं आपको उसकी याद दिलाना चाहता हूं, क्योंकि बहुत से सदस्य अंग्रेजी के अलावा दूसरी भाषाओं में भाषणों को नहीं समझ पाते। इसलिए श्रीमान्, क्योंकि मौलाना उर्दू में बोलने जा रहे हैं। मैं प्रार्थना करता हूं कि उनके बहुमूल्य भाषण का अंग्रेजी में अनुवाद हमें देने का प्रबन्ध किया जाये। *(हर्षध्वनि)*

***मौलाना हसरत मोहानी:** श्रीमान्, मैं खण्ड 1 में अपना संशोधन पेश करता हूं। मेरा ख्याल है कि विदेशी भाषा में अपने विचार प्रकट करने में मुझे कठिनाई होगी, लेकिन अपने मद्रास के मित्र का ध्यान रखते हुए मैं उस भाषा में अपने विचार प्रकट करने का यथाशक्ति प्रयत्न करूंगा। मैं प्रस्ताव करता हूं किः

''खण्ड 1 में 'एक गवर्नर' शब्दों की जगह 'एक प्रेसीडेंट' शब्द रख दिये जायें।''

इससे मेरा मतलब यह है कि विधान-निर्माण करने वाले प्रांतों के हम सभी सदस्यों को यह अधिकार प्राप्त है कि हम हरएक प्रांत के लिए प्रांतीय गणतन्त्र (रिपब्लिक) की मांग करें। हमारा यही विचार था और हम यही चाहते थे और यही आशा भी करते थे कि हमें भारतीय गणतन्त्रों का संघ प्राप्त होगा। असेम्बली के पिछले अधिवेशन में श्री त्रिपाठी ने यह संशोधन पेश किया था कि समाजवादी शब्द रख दिया जाये। सभा ने उसका समर्थन नहीं किया। इसके बारे में हम बाद में विचार कर लेंगे। यदि हम गणतांत्रिक संघ स्थापित करें तो चाहे हम फिर उसे समाजवादी गणतन्त्र बनाना चाहें या न बनाना चाहें, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। पहले तो आप एक राष्ट्रीय विधान बना लें और अधिकांश सदस्य राष्ट्रीय मनोवृत्ति के हो जायें। लेकिन मुझे विश्वास है कि अब दुनिया समाजवादी होना चाहती है और हममें से हर एक व्यक्ति अब समाजवादी हो रहा है और मेरे विचार से हम जल्दी ही एक सुसंगठित वामपक्षी दल बना सकेंगे और यदि देर हुई तो अगले चुनाव तक हम सारे संगठन पर अधिकार जमा लेंगे। यदि आप इस समय प्रत्येक प्रांत में गणतांत्रिक शासन स्थापित करने के लिए सहमत हो जायें तो मुझे इसकी परवाह नहीं है कि आप उसे समाजवादी बनायें या न बनायें। हम उसे समाजवादी गणतन्त्र बना लेंगे। लेकिन मैं कहूंगा कि आप इस सवाल को टाल नहीं सकते। आप यह नहीं कह सकते कि हम केन्द्र में ही गणतन्त्र चाहते हैं और इन प्रांतों में से किसी प्रांत में भी ऐसी व्यवस्था न होने देंगे। आपने यह कहा है कि हर एक प्रांत में एक गवर्नर होगा। यह

आपकी एक चाल है। मैं कहता हूं कि एक प्रेसीडेंट होना चाहिये। यदि आप 'प्रेसीडेंट' शब्द को स्वीकार कर लेते हैं तो इसका अर्थ यह है कि आप हर एक प्रांत में गणतंत्र स्थापित करने के पक्ष में हैं। यदि आप 'प्रेसीडेंट' शब्द को अस्वीकार करते हैं तो इसका मतलब यह है कि आपका निश्चय यह है कि प्रांतों में केवल स्वशासन हो। आप प्रांतों को केवल स्वशासन दे रहे हैं और कुछ नहीं। यदि यही आपका इरादा है तो मैं इसका घोर विरोध करता हूं और अधिक जोरदार शब्दों का प्रयोग न करके केवल इतना कहूंगा कि आप सभी प्रांतों के लोगों के साथ मखौल कर रहे हैं विशेषतया मेरे प्रांत, संयुक्त प्रांत के साथ। मेरे मित्र पण्डित नेहरू कहते हैं कि बाद को आप संघ-विधान में किसी भी प्रकार का संशोधन कर सकते हैं। मैं कहता हूं कि मैं इसी समय यह संशोधन पेश करता हूं कि 'गवर्नर' शब्द की जगह 'प्रेसीडेंट' रख दिया जाये, ताकि संघ-विधान में मैं जब संशोधन पेश करूं तो आप इन बातों पर विचार करने से इन्कार न करें। जब संघ-विधान के बारे में विचार होगा तो यह कठिनाई उठ खड़ी होगी। मेरे मित्र सरदार पटेल ने भी कहा है कि चाहे हम गवर्नर का नाम रखें या प्रेसीडेंट का इसमें कोई अन्तर नहीं है। इसमें बहुत अन्तर है, यदि आप मेरे संशोधन को अस्वीकार करते हैं तो आप कहते हैं कि नहीं हम केवल गवर्नर शब्द को रखेंगे। इसका अर्थ यह है कि आप हमें केवल प्रांतीय स्वायत्त शासन देना चाहते हैं। आप बहुत से प्रांतों को एक कदम भी आगे बढ़ने नहीं देना चाहते। मैंने आपकी संघ-विधान सम्बन्धी रिपोर्ट को बड़े ध्यान से पढ़ा है। इस रिपोर्ट के पृष्ठ 12 में खण्ड 9 में कहा गया है–

''राज्यसंघ में सम्मिलित किसी रियासत के शासक का शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार उस रियासत में संघ-विषयों के सम्बन्ध में प्रयोग में रहेगा जब तक कि संघ के अधिकारी अन्य व्यवस्था न करें।''

इस खण्ड 9 में एक नोट जोड़ दिया गया है जिसमें कहा गया है:

''इस सम्बन्ध में प्रांतों की स्थिति कुछ भिन्न है। संघ-विषयों के सम्बन्ध में उनके शासन प्रबन्ध सम्बन्धी कोई अधिकार नहीं हैं सिवाय उन अधिकारों के जो राज्य-संघ के कानून द्वारा उनको दिये गये हों।''

भारतीय रियासतों के बारे में आप कुछ नहीं कहते हैं। लेकिन आप कहते हैं कि प्रांतों की स्थिति भिन्न है। विशेष विषयों के सम्बन्ध में उनको अवशिष्ट अधिकार प्राप्त नहीं हैं। आप केवल प्रान्तीय विषयों को निश्चित करते हैं और हमसे कहते हैं कि हम इस खण्ड को स्वीकार कर लें। हम स्वीकार नहीं करेंगे। निस्सन्देह आप

[मौलाना हसरत मोहानी]

बहुमत में हैं। आप जो कुछ भी चाहें पास कर सकते हैं। लेकिन मैं न्याय के नाम पर पूछता हूं कि आपको क्या हक है कि आप भारत के प्रांतों को राज्यसंघ के रिपब्लिक होने से, राज्यसंघ के रिपब्लिक ही नहीं बल्कि राज्यसंघ के समाजवादी रिपब्लिक होने से रोकें। यह प्रस्ताव इस परिषद की किसी पिछली बैठक में पेश किया गया था। आपने उसे स्वीकार नहीं किया। लेकिन उस समय स्थिति दूसरी ही थी। आपको सन्देह था कि पाकिस्तान के लोग शरारत करेंगे, लेकिन अब वे अलग कर दिये गये हैं। कुछ मुस्लिम लीगियों ने यह एतराज़ किया कि चूंकि अब भारत और पाकिस्तान अलग अलग हो गये हैं, इसलिये अखिल भारतीय मुस्लिम लीग का क्या अर्थ है ? अखिल भारतीय मुस्लिम लीग का अर्थ है भारत की मुस्लिम लीग यानी अल्पसंख्यक प्रांतों की मुस्लिम लीग। उन्होंने कहा कि यदि आप मुस्लिम लीग को चाहते ही हैं तो आप उसे पाकिस्तान में चला सकते हैं, जहां अल्पसंख्यक मुस्लिम प्रांतों का कोई प्रभाव नहीं रहेगा; सिवाय अखिल भारतीय मुस्लिम लीग की कौंसिल द्वारा, जो मि. जिन्ना के निर्णयानुसार अब भी वर्त्तमान है और जिसके लिये नये सदस्यों का चुनाव हुआ है। *(बाधा)*

*__अध्यक्ष:__ शांति, शांति।

*__एक माननीय सदस्य:__ क्या वक्ता यह समझ रहे हैं कि यह अखिल भारतीय मुस्लिम लीग की कौंसिल है ?

*__मौलाना हसरत मोहानी:__ जी नहीं, मैं यह बता रहा हूं कि मेरा पाकिस्तान से कोई सम्बन्ध नहीं है सिवाय इसके कि मैं अखिल भारतीय मुस्लिम लीग-कौंसिल का सदस्य हूं। यदि हम संघ-विधान पर पहले विचार करें तो इससे क्या हानि होती है? आपने जान-बूझकर प्रांतीय विधान को पहले रखा है। इसके क्या माने हैं? अनुकरणीय प्रांतीय विधान की रिपोर्ट पर पहले विचार करके आप हमारे साथ बड़ा अन्याय कर रहे हैं। निस्संदेह आप इसे पास कर सकते हैं लेकिन आप प्रांतों को स्वतंत्र होने की मांग करने और रिपब्लिक होने से नहीं रोक सकते। आपने कहा है कि आप सिर्फ एकात्मक रिपब्लिक चाहते हैं, तो आपने अपनी रिपोर्ट में 'राज्यसंघ' शब्द को क्यों रखा है? यह आपने सिर्फ लोगों को धोखा देने के लिए किया है। आपको एकात्मक शब्द के प्रयोग से शर्म मालूम होती है, इसलिये आपने 'राज्यसंघ' शब्द रख दिया है। यही कारण है कि आप प्रांतों को गणतन्त्रात्मक शासन की मांग करने से रोकना चाहते हैं।

मगर मैं आपसे कहूंगा कि आप उनके साथ जबरदस्ती नहीं कर सकते हैं। आप अपने अधिकार से उन्हें मजबूर नहीं कर सकते। हम समाजवादी गणतन्त्रों का संघ चाहते हैं और यदि आप अपने प्रांतों को राष्ट्रीयता या राष्ट्रीय विधान स्वीकार करने के लिए मजबूर करें तो इस दुनिया से जल्दी ही आपका नामो-निशान मिट जायेगा।

(सर्वश्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर, खुर्शेदलाल, बी. मुनिस्वामी पिल्लई, डा. पी. सुब्बारायन, टी. ए. रामलिंगम चेट्टियर, अजीतप्रसाद जैन और आर. के. सिधवा ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

*__अध्यक्षः__ खण्ड 1 के बारे में मुझे इन्हीं संशोधनों की सूचना मिली है। चूंकि कुछ सदस्यों ने संशोधन पेश करने की इच्छा प्रकट की थी और मैंने उस पर विचार करना चाहा था, इसलिए मैंने अभी एक संशोधन पेश करने की इजाजत दी थी। अन्य संशोधन पेश नहीं किये गये। इस संशोधन पर कल विचार होगा।

जहां तक संघ-विधान की रिपोर्ट का सम्बन्ध है, मैं समझता हूं कि वह सदस्यों के पास भेज दी गई है और मैं उनसे प्रार्थना करता हूं कि वे उस रिपोर्ट में अपने संशोधनों की सूचना बृहस्पतिवार की शाम तक दे दें।

अब हम कल दोपहर के बाद 3 बजे तक सभा स्थगित करते हैं।

इसके बाद परिषद् बुधवार 16 जुलाई सन् 1947 ई. के तीन बजे दिन तक के लिये स्थगित हो गई।

परिशिष्ट

भारतीय विधान-परिषद

कौंसिल हाउस,

नई दिल्ली, 27 जून सन् 1947 ई.

प्रेषकः

माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल, सभापति, प्रांतीय विधान-समिति।

सेवा में:

अध्यक्ष महोदय, भारतीय विधान-परिषद।

श्रीमान्,

भारतीय विधान-परिषद के 30 अप्रैल सन् 1947 ई. के प्रस्ताव के अनुसार माननीय अध्यक्ष महोदय ने अनुकरणीय प्रांतीय विधान के सिद्धांतों के सम्बन्ध में रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिये जो समिति नियुक्त की थी, उसके सदस्यों की ओर से मुझे सम्बद्ध स्मृति-पत्र प्रस्तुत करने का गौरव प्राप्त है। जिसमें समिति की सिफारिशें सम्मिलित हैं और जहां कहीं आवश्यक समझा गया है व्याख्यात्मक नोट जोड़ दिये गए हैं।

आपका आज्ञाकारी सेवक,

वल्लभभाई पटेल,

सभापति

भारतीय विधान-परिषद

प्रांतीय विधान समिति

अनुकरणीय प्रांतीय विधान के सम्बन्ध में स्मृति-पत्र

भाग 1

गवर्नरों के प्रांत

अध्याय 1

प्रांतीय शासन प्रबन्धकारिणी

1–गवर्नर: हर एक प्रांत के लिये एक गवर्नर होगा जो प्रौढ़ मतगणना के आधार पर प्रत्यक्षत: लोगों द्वारा चुना जायेगा।

[नोट–समिति ने यह विचार प्रकट किया कि गवर्नर का चुनाव, जहां तक सम्भव हो, उसी समय हो जब कि प्रांतीय असेम्बली के लिये आम चुनाव हो। कानून द्वारा इसकी व्यवस्था करना कठिन हो सकता है क्योंकि सम्भव है, असेम्बली अपनी अवधि के मध्य में ही समाप्त कर दी जाये।]

2–पद की अवधि: (1) गवर्नर चार वर्ष की अवधि के लिये पदासीन रहेगा जब तक कि मृत्यु, पदत्याग या पदच्युत किये जाने की दशा उत्पन्न न हो जाये।

(2) गवर्नर कथित दुराचरण के लिये सार्वजनिक दोषारोपण से पदच्युत किया जा सकेगा। अभियोग प्रांतीय व्यवस्थापिका लगायेगी और जहां व्यवस्थापिका की दो सभाएं हों तो नीचे की सभा अभियोग लगायेगी और फेडरल पार्लियामेंट की ऊपर की सभा अभियोग सुनेगी। हर एक दशा में सम्बन्धित सभा के सदस्यों की कुल संख्या में से कम से कम दो तिहाई सदस्यों को प्रस्ताव का समर्थन करना होगा।

(3) यदि गवर्नर अपनी अनुपस्थिति से बराबर कर्त्तव्य का पालन करे या बराबर अस्वस्थ रहे या चार महीने से अधिक समय तक अपने कर्त्तव्य का पालन न कर सके, तो यह समझा जायेगा कि उसने अपना स्थान रिक्त कर दिया है।

(4) गवर्नर को एक बार, किन्तु एक ही बार, पुनर्निर्वाचन का अधिकार होगा।

3–आकस्मिक रूप से रिक्त स्थानः (1) गवर्नरो के स्थान आकस्मिक रूप से रिक्त होने पर उनको प्रांतीय व्यवस्थापिका आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत के अनुसार एकाकी हस्तान्तरित मतपद्धति द्वारा निर्वाचित करके करेगी। इस प्रकार निर्वाचित व्यक्ति अपने पूर्वाधिकारी के पद की अवधि के शेष भाग तक पदासीन रहेगा।

(2) गवर्नर के अपनी अनुपस्थिति से कर्त्तव्य का पालन न करने पर या अस्वस्थ होने पर या अधिक से अधिक चार महीने तक अपने कर्त्तव्य का पालन न कर सकने पर राज्यसंघ का अध्यक्ष, गवर्नर के अपने कर्त्तव्य पालन के लिये वापस आने तक या गवर्नर का निर्वाचन होने तक, जैसी भी दशा ही, गवर्नर के कर्त्तव्यों के पालन के लिये ऐसे व्यक्ति को नियुक्त कर सकेगा जिसे वह इसके योग्य समझे।

4–आयु-सम्बन्धी योग्यताः भारतीय राज्यसंघ का हर एक नागरिक जिसकी आयु 35 वर्ष की हो गई हो, गवर्नर के पद के लिये निर्वाचित होने योग्य समझा जायेगा।

5–निर्वाचन-सम्बन्धी-झगड़ेः गवर्नर के निर्वाचन-सम्बन्धी-झगड़ों की जांच और उनका निर्णय राज्य संघ की सर्वोच्च अदालत करेगी।

6–गवर्नर के पद के लिये शर्तेः (1) गवर्नर प्रांतीय व्यवस्थापिका का सदस्य नहीं होगा और यदि प्रांतीय व्यवस्थापिका का कोई सदस्य गवर्नर के पद के लिये निर्वाचित हो जाये तो यह समझा जायेगा कि उस व्यवस्थापिका में उसका स्थान रिक्त हो गया है।

(2) गवर्नर किसी अन्य लाभप्रद पद या ओहदे पर नहीं रहेगा।

(3) गवर्नर का एक सरकारी निवासगृह होगा और वह प्रांतीय व्यवस्थापिका के एक्ट द्वारा निर्धारित वेतन और भत्ते पायेगा और जब तक इसकी व्यवस्था न हो उस वेतन और भत्तों को पायेगा जो परिशिष्ट में निश्चित किये गये हैं।

(4) गवर्नर का वेतन और उसके भत्ते उसके पद की अवधि में कम नहीं किये जायेंगे।

7–प्रांत का शासन प्रबन्ध सम्बन्धो अधिकार: प्रांत के शासन प्रबन्ध के अधिकार को गवर्नर या तो प्रत्यक्ष रूप से या अपने अधीनस्थ अफसरों द्वारा प्रयोग में लायेगा, परन्तु इससे राज्यसंघ की पार्लियामेंट को अधीनस्थ अधिकारियों को काम सौंपने में कोई बाधा नहीं होगी। न इसे यह समझा जायेगा कि गवर्नर को कोई ऐसे काम हस्तान्तर किये गये हैं जो किसी भारतीय कानून द्वारा किसी अदालत, न्यायाधीश या अफसर या किसी स्थानीय या अन्य अधिकारी को सौंपे गये हों।

8–प्रांत के शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार की सीमा: इस विधान के आदेशों, और यदि कोई विशेष समझौता हो, तो उसके विपरीत न जाते हुए हर एक प्रांत के शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार की सीमा उन मामलों तक होगी जिनके सम्बन्ध में प्रांतीय व्यवस्थापिका को कानून बनाने का अधिकार हो।

[नोट–इस आदेश में विशेष समझौतों की ओर जो संकेत किया गया है उसकी कुछ व्याख्या आवश्यक है। यह सम्भव है कि भविष्य में कुछ भारतीय रियासतों या भारतीय रियासतों के समूहों की यह इच्छा हो कि कुछ पारस्परिक हित के विशेष मामलों में उनका और किसी पड़ोस के प्रांत का एक ही शासन प्रबन्ध हो। ऐसी दशाओं में सम्बन्धित नरेश एक विशेष समझौते के द्वारा उस प्रांत को आवश्यक अधिकार सौंप सकते हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इससे किसी सम्बन्धित रियासत या रियासतों के राज्यसंघ में सम्मिलित होने में कोई बाधा नहीं होगी, क्योंकि राज्यसंघ में सम्मिलित होने के विषय का सम्बन्ध राज्यसंघ के विषयों से होगा और जिस अधिकार को सौंपने की यहां कल्पना की गई है उसका सम्बन्ध प्रांतीय विषयों से होगा।]

9–मंत्रिमंडल: एक मंत्रिमंडल होगा जो गवर्नर को उसके कर्त्तव्य पालन में सहायता व सलाह देगा, सिवाय उस दशा के जब कि उसे इस विधान द्वारा या इसके अधीन अपने कर्त्तव्यों का या अपने किसी कर्त्तव्य का अपने विवेक से पालन करने के लिये आदेश न हों।

[नोट–अधिकतर गवर्नर सलाह से काम करेगा लेकिन निम्नलिखित बातों के सम्बन्ध में वह अपने विवेक से काम करेगा:–

(1) प्रांत या उसके किसी भाग की शांति को गंभीर संकट में पड़ने से बचाना [इस भाग का खण्ड 15 (2)]

(2) प्रांतीय व्यवस्थापिका का अधिवेशन बुलाना और उसे समाप्त करना (इस भाग का खंड 20)

(3) निर्वाचनों की व्यवस्था और उनका निर्देशन करना व उन पर नियंत्रण रखना [इस भाग का खंड 22 आदेश (2)]

(4) प्रांतीय पब्लिक सर्विस कमीशन के चेयरमैन और मेम्बरों और प्रांतीय आडिटर जनरल की नियुक्ति (भाग 3)

इसकी ओर ध्यान देने की आवश्यकता है कि प्रस्तावित विधान के अधीन गवर्नर लोगों द्वारा निर्वाचित होगा, इसलिये इसकी सम्भावना नहीं है कि वह जिन अधिकारों को अपने 'विवेक' से प्रयोग में लायेगा उनका दुरुपयोग करे।]

10–यदि कोई ऐसा प्रश्न उठे कि कोई मामला गवर्नर के विवेक से तय होगा या नहीं, तो गवर्नर अपने विवेक से जो निर्णय देगा वह अन्तिम होगा।

11–कोई अदालत इस सम्बन्ध में जांच नहीं करेगी कि किसी प्रश्न पर मंत्रियों ने गवर्नर को सलाह दी है या नहीं, और अगर दी है तो क्या सलाह दी है।

12–मंत्रियों के सम्बन्ध में अन्य आदेश: गवर्नर के मंत्री गवर्नर द्वारा चुने जायेंगे और बुलाये जायेंगे और वे उसी काल तक पदासीन रहेंगे जब तक उसकी इच्छा हो।

13–(1) यदि कोई मंत्री बराबर छः महीने की किसी अवधि तक प्रांतीय व्यवस्थापिका का सदस्य न रहा हो तो वह उस अवधि के समाप्त होने पर मंत्री न रहेगा।

(2) मंत्रियों के वेतन वही होंगे जो प्रांतीय व्यवस्थापिका समय-समय पर एक एक्ट द्वारा निश्चित करेगी और जब तक प्रांतीय व्यवस्थापिका उन्हें इस प्रकार निश्चित न करे, गवर्नर उन्हें निश्चित करेगा:

परन्तु शर्त यह है कि किसी मंत्री का वेतन उसके पद की अवधि तक नहीं बदला जायेगा।

14–उत्तरदायी सरकार की प्रथाओं का अनुकरण होगा: अपने मंत्रियों की नियुक्ति और उनके प्रति अपने व्यवहार के सम्बन्ध में गवर्नर का पथप्रदर्शन

साधारणतया उत्तरदायी सरकार की प्रथाएं करेंगी जिनका विवरण परिशिष्ट में दिया हुआ है। किन्तु गवर्नर के किसी कार्य के औचित्य पर इस कारण आपत्ति न की जायेगी कि वह इन प्रथाओं के अनुकूल नहीं, बल्कि विपरीत किया गया है।

[नोट–परिशिष्ट इस समय गवर्नरों को जारी किये हुये आदेश-पत्र (इंस्ट्रयूमेंट आफ इंस्ट्रक्शन्स) का स्थान ले लेगी।]

15–गवर्नर के विशेष उत्तरदायित्व: (1) अपने उत्तरदायित्वों को पूरा करने में गवर्नर का निम्नलिखित विशेष उत्तरदायित्व होगा, अर्थात् प्रांत या उसके किसी भाग की शांति को किसी गंभीर संकट में पड़ने से बचाना।

(2) अपने विशेष उत्तरदायित्व को पूरा करने में गवर्नर अपने विवेक से काम करेगा:

परन्तु शर्त्त यह है कि यदि किसी समय अपने विशेष उत्तरदायित्व को पूरा करने में वह यह समझे कि कानून द्वारा व्यवस्था करना आवश्यक है; लेकिन ऐसे कानून की व्यवस्था प्राप्त करने में असमर्थ हो, तो वह राज्यसंघ के अध्यक्ष के पास एक रिपोर्ट भेजेगा जो उस पर ऐसी कार्यवाही करेगा, जिसे वह अपने आकस्मिक परिस्थिति के अधिकारों के अधीन उचित समझे।

16–प्रांत के लिये एडवोकेट जनरल: (1) गवर्नर किसी ऐसे व्यक्ति को जो किसी हाईकोर्ट का जज होने योग्य हो, प्रांत के लिये एडवोकेट जनरल नियुक्त करेगा जो प्रांतीय सरकार को कानूनी मामले में सलाह देगा।

(2) प्रधानमंत्री के इस्तीफा देने पर एडवोकेट जनरल अवकाश ग्रहण कर लेगा, किन्तु नये एडवोकेट जनरल नियुक्त होने तक अपने कर्त्तव्यों का पालन कर सकेगा।

(3) एडवोकेट जनरल वही वेतन पायेगा जिसे गवर्नर निश्चित करेगा।

17–प्रांतीय सरकार के कार्य का संचालन: किसी प्रांत के शासन प्रबन्ध सम्बन्धी कार्य का संचालन गवर्नर के नाम से होगा।

18–कार्य सम्बन्धी नियम: प्रांतीय सरकार के कार्य का संचालन अधिक सुविधाजनक रूप से करने और मंत्रियों के बीच कार्य विभाजन के सम्बन्ध में गवर्नर नियम बनायेगा।

अध्याय 2

प्रांतीय व्यवस्थापिका

19—प्रांतीय व्यवस्थापिकाओं की रचना: (1) हर एक प्रांत के लिये एक प्रांतीय व्यवस्थापिका होगी और गवर्नर व लेजिस्लेटिव असेम्बली उसके अंग होंगे: निम्नलिखित प्रांतों में इसके अतिरिक्त एक लेजिस्लेटिव कौंसिल भी होगी। (यदि कोई प्रांत ऐसे हों जो ऊपर की सभा स्थापित करने के इच्छुक हों तो उनकी गणना यहां कीजिये।)

(2) लेजिस्लेटिव असेम्बली में विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व जनसंख्या के आधार पर होगा और जनसंख्या के हर लाख के लिये एक प्रतिनिधि से अधिक नहीं होगा; लेकिन किसी भी प्रांत की इस सभा में कम से कम 50 प्रतिनिधि होंगे।

लेजिस्लेटिव असेम्बली के लिये चुनाव प्रौढ़ मतगणना के आधार पर होगा। प्रौढ़ वह व्यक्ति है जिसकी आयु 21 वर्ष से कम न हो।

(3) प्रत्येक प्रांत की प्रत्येक लेजिस्लेटिव असेम्बली, यदि वह इसके पहले समाप्त न कर दी जाये तो अपने पहले अधिवेशन के लिये निश्चित तिथि से चार वर्ष तक रहेगी।

(4) किसी प्रांत में जहां कि व्यवस्थापिका की ऊपर की सभा हो वहां उस सभा की रचना निम्नलिखित प्रकार होगी:—

(क) ऊपर की सभा की कुल सदस्य संख्या नीचे की सभा की कुल सदस्य संख्या के 25 प्रतिशत से अधिक न हो।

(ख) ऊपर की सभा में आयरिश विधान के आधार पर कुछ सीमा तक व्यवसायों का प्रतिनिधित्व होना चाहिये। वितरण निम्नलिखित प्रकार से होगा:—

आधे आयरिश ढंग से व्यवसायों के प्रतिनिधित्व के आधार पर चुने जायेंगे; एक तिहाई नीचे की सभा द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर चुने जायेंगे;

छटा भाग मंत्रियों की सलाह से गवर्नर द्वारा मनोनीत होगा।

[नोटः वर्त्तमान विधान के अधीन मद्रास, बंबई, बंगाल, संयुक्त प्रांत, बिहार और आसाम में दो सभाएं हैं और बाकी में एक सभा है।]

(5) यह तय हो गया था कि प्रत्येक प्रांत की विधान-परिषद के सदस्य अलग-अलग वोट देकर यह निर्णय करें कि उस प्रांत के लिये ऊपर की सभा रखी जाये या नहीं। लेजिस्लेटिव असेम्बली में विश्वविद्यालयों, मजदूरों या औरतों का विशेष प्रतिनिधित्व नहीं होगा।

20-प्रांतीय व्यवस्थापिकाओं की रचना इत्यादिः प्रांतीय व्यवस्थापिका का अधिवेशन करने, उसे स्थगित करने और समाप्त करने के बारे में आदेशः दो सभाओं के आपस के सम्बन्ध (जहां दो सभाएं हों), वोट देने की प्रणाली, सदस्यों के अधिकार, सदस्य के लिये अयोग्यता, सभा संचालन पद्धति जिसमें आर्थिक मामलों से सम्बन्धित पद्धति भी सम्मिलित है, इत्यादि सन् 1935 ई. के एक्ट में इस सम्बन्ध में जो आदेश हैं उनके आधार पर होंगे।

21-भाषाः प्रांतीय व्यवस्थापिका में प्रांतीय भाषा या भाषाओं या हिन्दुस्तानी (हिन्दी या उर्दू) या अंग्रेजी में कार्यवाही होगी। सभापति (जहां ऊपर की सभा हो) या स्पीकर, जैसी भी दशा हो, जब कभी वह आवश्यक समझे, किसी सदस्य ने जिस भाषा में भाषण दिया हो उससे अन्य भाषा में उसका सारांश सभा के सामने रखने का प्रबन्ध करेगा और यह सारांश सभा की कार्यवाही की रिपोर्ट में सम्मिलित किया जायेगा।

22-प्रांतीय व्यवस्थापिका के लिये मताधिकारः प्रांतीय व्यवस्थापिका निम्नलिखित विषयों या उनमें से किसी विषय के बारे में समय-समय पर आदेश बना सकेगी, अर्थातः

(क) निर्वाचन क्षेत्रों की सीमाबन्दी,

(ख) मताधिकार के लिये योग्यता और निर्वाचक-सूचियों की तैयारी,

(ग) किसी सभा का सदस्य निर्वाचित होने के लिये योग्यता,

(घ) किसी सभा में आकस्मिक रिक्त स्थानों को भरना,

(ङ) इस विधान के अधीन चुनावों का संचालन और उनमें वोट देने के तरीके,

(च) इन चुनावों में उम्मीदवारों के खर्चे,

(छ) इन चुनावों में या इनके सम्बन्ध में नाजायज तरीकों को काम में लाना और दूसरे अपराध,

(ज) इन चुनावों से या इनके सम्बन्ध में पैदा होने वाले सन्देहों और झगड़ों का निर्णय,

(झ) ऐसे मामले जो उपरोक्त किसी मामले से सम्बन्ध रखते हों।

परन्तु शर्त यह है कि–

(1) नीचे की सभा का कोई सदस्य 25 वर्ष से कम आयु का न होगा, और ऊपर की सभा का कोई सदस्य 35 वर्ष से कम आयु का न होगा;

(2) निर्वाचनों की व्यवस्था उनके निर्देशन और उन पर नियन्त्रण रखने का अधिकार जिसमें निर्वाचन सम्बन्धी ट्रिब्युनलों की नियुक्ति भी सम्मिलित है, गवर्नर को प्राप्त होगा और वह अपने विवेक से काम करेगा।

अध्याय 3

गवर्नर के कानून बनाने के अधिकार

23–(1) यदि किसी समय, जब कि प्रांतीय व्यवस्थापिका का अधिवेशन न हो रहा हो, गवर्नर को विश्वास हो कि ऐसी परिस्थिति उपस्थित है जिसमें तुरंत कार्यवाही करने की आवश्यकता है तो वह ऐसे आर्डिनेंसों को लागू कर सकता है जिन्हें वह उस परिस्थिति में आवश्यक समझे।

(2) इस खण्ड के अधीन लागू किये हुए किसी आर्डिनेंस का वही बल और प्रभाव होगा जो प्रांतीय व्यवस्थापिका के किसी ऐसे एक्ट का होगा जिसे गवर्नर ने स्वीकार कर लिया हो, लेकिन ऐसा हर एक आर्डिनेंस–

(क) प्रांतीय व्यवस्थापिका के सामने रखा जायेगा और प्रान्तीय व्यवस्थापिका के पुनः सम्मिलित होने के छः सप्ताह बाद प्रयोग में न रहेगा या अगर इस समय के पहले व्यवस्थापिका उसके विरुद्ध प्रस्तावों को पास कर दे तो ऐसे प्रस्तावों में से दूसरे प्रस्ताव के पास होने पर वह प्रयोग में नहीं रहेगा, और

(ख) गर्वनर उसे किसी भी समय वापस ले सकता है।

(3) यदि इस खण्ड के अधीन कोई आर्डिनेंस ऐसा आदेश रखे या ऐसी सीमा तक आदेश रखे कि उसे प्रांतीय व्यवस्थापिका इस विधान के अधीन कानून बनाने में असमर्थ हो तो वह रद्द समझा जायेगा।

[नोट–वर्तमान विधान के अधीन आर्डिनेंस बनाने के अधिकार की बड़ी आलोचना हुई है। परन्तु यह बताना आवश्यक है कि ऐसी परिस्थिति उपस्थित हो सकती है कि किसी कानून का तुरंत लागू करना आवश्यक हो जाये और प्रांतीय व्यवस्थापिका की बैठक बुलाने का समय न रहे। सन् 1925 ई. में लार्ड रीडिंग ने यह आवश्यक समझा कि रूई महसूल खत्म करने के लिये एक आर्डिनेंस जारी किया जाये क्योंकि देश के हित के लिये इसकी तुरंत ही और अवश्य ही आवश्यकता थी। यह सम्भव नहीं है कि गवर्नर, जो लोगों द्वारा निर्वाचित होगा और जिसे साधारणतया व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी मंत्रियों की सलाह से काम करना होगा, उसको दिये हुऐ आर्डिनेंस जारी करने के अधिकार का दुरुपयोग करेगा। इसलिये यह आदेश प्रस्तावित किया गया है।]

अध्याय 4

पृथक और अंशत: पृथक क्षेत्र

(इस अध्याय के अधीन उस समय तक आदेश नहीं रखे जा सकते जब तक कि सलाहकार समिति अपनी रिपोर्ट न पेश कर दे।)

भाग 2

प्रांतीय न्यायाधीश

1. भारत सरकार के सन् 1935 ई. के एक्ट के हाईकोर्ट सम्बन्धी आदेश आवश्यक परिवर्तनों के साथ स्वीकार किये जाने चाहियें परन्तु न्यायाधीशों को राज्यसंघ के अध्यक्ष को सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस, प्रांत के गवर्नर और प्रांत के हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस से सलाह लेकर नियुक्त करना चाहिये (सिवाय उस दशा के जब कि हाईकोर्ट का चीफ-जस्टिस ही नियुक्त होना हो)।

2. हाईकोर्ट के न्यायाधीश उन वेतनों और भत्तों को पायेंगे जिन्हें प्रांतीय व्यवस्थापिका कानून द्वारा निश्चित करेगी और जब तक वह ऐसा न करे उन वेतनों और भत्तों को पायेंगे जो परिशिष्ट में दिये हुए हैं।

3. न्यायाधीशों के वेतन और उनके भत्ते उनके पद की अवधि में कम नहीं किये जायेंगे।

भाग 3

प्रांतीय पब्लिक सर्विस कमीशन और प्रांतीय आडिटर जनरल

पब्लिक सर्विस कमीशनों और आडिटर जनरलों के बारे में आदेश सन् 1935 ई. के एक्ट के आदेशों के अनुसार रखे जाने चाहिये। प्रत्येक प्रांतीय पब्लिक सर्विस कमीशन के चेयरमैन और मेम्बरों तथा आडिटर जनरल की नियुक्ति का अधिकार गवर्नर को दिया जाना चाहिये, जिसे वह अपने विवेक से प्रयोग में लायेगा।

भाग 4

अन्तर्कालीन आदेश

1. इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले यदि किसी प्रांत में कोई व्यक्ति गवर्नर के पद पर हो तो वह पदासीन रहेगा और इस विधान के अधीन उस समय तक प्रांत का गवर्नर समझा जायेगा जब तक कि इस विधान के अधीन नियमित रूप से निर्वाचित उसका उत्तराधिकारी पदासीन न हो जाये।

2. मंत्रिमंडल लेजिस्लेटिव असेम्बली और लेजिस्लेटिव कौंसिल (उन प्रांतों में जो ऊपर की सभा रखने का निर्णय करें) के सम्बन्ध में भी आवश्यक परिवर्त्तनों के साथ, इसी प्रकार के आदेश होने चाहियें।

[नोट–ये आदेश आवश्यक हैं ताकि जैसे ही यह विधान प्रयोग में आये, उस समय प्रत्येक प्रांत में अधिकार अपने हाथ में लेने के लिये एक व्यवस्थापिका और एक सरकार हो।]

3. सब सम्पत्ति, अधिकारों और देने-पाने के सम्बन्ध में हर एक गवर्नर के प्रांत की सरकार इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले की उस प्रांत की सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी।

CON. 3. 4.3.47
750

अंक 4
संख्या 3

बुधवार
16 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	परिचय-पत्रों की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर	1
2.	समितियों के उपाध्यक्ष तथा सदस्यों का चुनाव	1
3.	अनुकरणीय प्रान्तीय विधान के सिद्धान्तों के सम्बन्ध में रिपोर्ट	3

भारतीय विधान-परिषद

बुधवार, 16 जुलाई, सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में दिन के 3 बजे अध्यक्ष, माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद, के सभापतित्व में प्रारम्भ हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्यों ने अपने परिचय-पत्र पेश किये और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:

1. श्री किशोरी मोहन त्रिपाठी (पूर्वी रियासतों का समूह)।

2. श्री रामप्रसाद पोताई (पूर्वी रियासतों का समूह)।

श्री श्रीप्रकाश (संयुक्त प्रान्त: जनरल): श्रीमान्, पेश्तर इसके कि आप आज की कार्रवाई शुरू करें, मैं आपकी निगाह में एक ऐसी बात लाना चाहता हूं जिसे मैं सभा के सदस्यों के विशेष अधिकारों पर जबर्दस्त कुठाराघात समझता हूं। मैंने यह देखा कि उन तांगों (सवारी) को जिन पर सदस्य आये थे, इस भवन की बरसाती में नहीं आने दिया गया। कल तक तो उन्हें (तांगों को) यहां आने दिया गया पर आज जबकि उन्हें बारिश की वजह से इसकी और ज्यादा जरूरत थी, एक यूरोपियन सार्जेण्ट बरसाती के बाहर उनको रोक देता था। जब मैंने उससे पूछा कि क्या सदस्य पानी में तर-बतर हो जायें ? तो उसने यही जवाब दिया कि उसको यही हुक्म है कि केवल मोटरों को ही बरसाती में जाने दिया जायेगा। श्रीमान्, मैं समझता हूं कि यह एक ऐसी बद्तमीजी है जिसे स्वयं आप नहीं बरदाश्त करेंगे।

***अध्यक्ष:** मैं सेक्रटरी को इस मामले को देखने का आदेश दूंगा।

समिति के उपाध्यक्ष तथा सदस्यों का चुनाव

***अध्यक्ष:** मुझे इस बात की सूचना देने में बड़ी प्रसन्नता है कि उपाध्यक्ष पद के लिये केवल दो ही उम्मीदवारों के नाम नियमानुसार प्रस्तावित और

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[अध्यक्ष]

समर्पित हुये हैं। एक हैं, डा. एच.सी. मुकर्जी और दूसरे सर बी.टी. कृष्णमाचार्य। मैं इन दोनों सज्जनों को इस परिषद् का नियमानुसार निर्वाचित उपाध्यक्ष घोषित करता हूं।

सभा को मालूम है कि कुछ और समितियों के लिये सदस्यों को चुनने की बात तय हुई थी। इन चुनावों का नतीजा भी मुझे सुना देना है।

इस सभा के 14 जुलाई, सन् 1947 ई. के प्रस्तावानुसार निम्नलिखित सदस्य भिन्न-भिन्न समितियों के लिये नामजद किये गये हैं।

1. क्रेडेंशियल्स कमेटी:

   बख्शी सर टेकचन्द
   बी. पोकर साहब बहादुर
   श्री रामसहाय

2. हाउस कमेटी:

   चौधरी मुहम्मद हुसैन
   श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन
   श्री जयनारायण व्यास

3. स्टीयरिंग कमेटी:

   हाजी सैयद मुहम्मद सादुल्ला
   मिस्टर अब्दुल कादिर मुहम्मद शेख
   श्री सुरेन्द्रमोहन घोष
   श्री जगत नारायण लाल
   आचार्य जे.बी. कृपलानी
   ज्ञानी गुरमुख सिंह मुसाफिर
   श्री चेंगलराया रेड्डी
   श्री बलवन्तराय मेहता
   दीवान चम्मन लाल

4. स्टाफ एण्ड फाइनान्स कमेटी:

   श्री भवनजी अर्जन खेमजी
   श्री के. सन्तानम्

सभी कमेटियों के लिये उतने ही उम्मीदवारों के नाम आये हैं जितनी कि जगहें खाली हैं। इसलिये मुझे इस बात को घोषित करने में बड़ी प्रसन्नता है कि सभी उक्त सदस्य इन कमेटियों के नियमानुसार निर्वाचित सदस्य हैं।

*__श्री एच.वी. कामत__ (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): श्रीमान्, यहां एक वैधानिक प्रश्न है। मैं समझता हूं कि डा. एच.सी. मुकर्जी और बख्शी सर टेकचन्द ने अभी तक रजिस्टर पर हस्ताक्षर नहीं किये हैं और इसलिये वे तब तक उन कमेटियों के सदस्य नहीं चुने जा सकते जब तक कि वे बाकायदा रजिस्टर पर हस्ताक्षर न कर दें।

*__अध्यक्ष:__ रजिस्टर पर हस्ताक्षर करने के बाद ही वे सदस्य की हैसियत से काम कर सकेंगे। यहां आते ही वे रजिस्टर पर हस्ताक्षर कर देंगे।

अनुकरणीय प्रान्तीय विधान के सम्बन्ध में रिपोर्ट

*__अध्यक्ष:__ अब हम कल के प्रस्ताव पर बहस को लेंगे।

*__काजी सैयद करीमुद्दीन__ (मध्य प्रांत और बरार: मुस्लिम): श्रीमान्, मैं एक वैधानिक महत्व का प्रश्न उठाता हूं। पूर्वी राजपूताना की रियासतों के प्रतिनिधि महाराजा नगेन्द्रसिंह इण्डियन सिविल सर्विस के एक सदस्य हैं और इनका नाम सूची में है। वे न तो अपनी नौकरी से अलग हुये हैं और न उन्होंने अपना कार्यकाल ही समाप्त किया है। क्या सम्राट का वेतनभोगी कर्मचारी सम्पन्न भारतीय विधान-परिषद् का सदस्य हो सकता है ? क्या यह बात उनके लिये अवैध या असंगत नहीं है कि एक तरफ तो वे बरतानवी सम्राट के प्रति निष्ठा रखें और साथ ही साथ सर्वसत्ता-सम्पन्न भारतीय विधान-परिषद् के सदस्य भी बने रहें ? ''सक्सेशन टू दी क्राउन एक्ट'' की 25वीं धारा में कहा गया है: ''यदि कोई व्यक्ति लोक-सभा (हाउस ऑफ कामन्स) का सदस्य चुने जाने पर सम्राट की ओर से कोई भी लाभ का ओहदा लेगा तो इस हालत में जब तक वह लोक-सभा का सदस्य रहेगा, उसका चुनाव रद्द समझा जायेगा और इसके द्वारा रद्द घोषित किया जाता है।''

*__अध्यक्ष:__ मैं समझता हूं कि जिन सज्जन का उल्लेख किया गया है वे अब भारत सरकार के रक्षा-विभाग में काम नहीं करते हैं और बूंदी रियासत में सम्भवत: दीवान के पद पर काम करने जा रहे हैं। वही वहां से चुने गये हैं।

*__काजी सैयद करीमुद्दीन:__ न तो उन्होंने नौकरी से अवकाश ग्रहण किया है और न उनकी नौकरी ही खत्म की गई है।

*__अध्यक्षः__ हमारे नियमों के अनुसार यह कोई अयोग्यता नहीं है।

कल पहला खण्ड पेश किया गया था और उस पर मौलाना हसरत मोहानी ने एक संशोधन रखा था। प्रस्ताव और संशोधन दोनों पर ही अब बहस हो सकती है।

खंड 1—जारी

*__श्री एच.वी. कामठः__ अध्यक्ष महोदय, कल हम सभी ने एक ऐसी वक्तृता सुनी जो मेरी समझ से इस सभा में अपने ढंग की पहली वक्तृता थी। यह वक्तृता कई बातों में बेजोड़ थी। यह वक्तृता राष्ट्रवाद, राष्ट्रीय समाजवाद, गणतंत्रवाद तथा साम्यवाद आदि कतिपय वादों की खिचड़ी थी। इसमें क्या नहीं था ? यह वक्तृता उग्रता की दृष्टि से बेजोड़ थी। परन्तु इन सब बातों के बावजूद मैंने उस वक्तृता को उतने ही ध्यान और सम्मान के साथ सुना जितना कि मौलाना हसरत मोहानी की वक्तृता के लिये लाजिमी है। हम सब समझते हैं कि मौलाना साहब अनुभवी हैं, पुराने योद्धा हैं और उन्होंने भारतीय स्वातंत्र्य-संग्राम की अनेकों लड़ाइयों में विजय पाई है। आज आपका राजनैतिक आदर्श कुछ भी क्यों न हो, आज आपने भले ही एक भिन्न राजनैतिक जामा पहल रखा हो, पर हमें खूब मालूम है कि अतीत में राष्ट्रीय आजादी की लड़ाई में आपने सदा ही कुशल योद्धा का काम किया है। हम उन दिनों को अभी नहीं भूले हैं जब मौलाना साहब कांग्रेस में हमारे साथ थे, जब वे महात्मा गांधी तथा कितने ही हमारे श्रद्धेय नेताओं के नजदीकी सहकर्मी थे परन्तु जो वक्तृता आपने कल यहां दी वह हमारे ध्यान में आये बिना नहीं रह सकती। उसमें संशोधन के सम्बन्ध में तो एक तरह से कुछ भी नहीं कहा गया और अन्य इधर-उधर की बातें इतनी कही गई कि मेरे लिये यह समझना मुश्किल था कि आखिर वह कहना क्या चाहते हैं और कह क्या रहे हैं। मौलाना साहब का ख्याल है कि ''गवर्नर'' शब्द की जगह ''प्रेसीडेंट'' शब्द रख देने से ही वह मानों जादू की तरह हर प्रान्त में समाजवादी प्रजातंत्र स्थापित कर देंगे। व्यक्तिगत रूप से मैं यह नहीं समझ पाता कि केवल गवर्नर की जगह प्रेसीडेंट रख देने से ही इतना बड़ा परिवर्तन कैसे लाया जा सकता है ? हम अच्छी तरह जानते हैं कि अमेरिका का प्रेसीडेंट फ्रान्स के प्रेसीडेंट से किस तरह भिन्न है। हम जानते हैं कि जर्मनी का चांसलर-रीख चांसलर या फुहरर यूरोप के अन्य चांसलरों से बहुत भिन्न था। इसलिये मुझे तो इस शाब्दिक परिवर्तन में कोई खास बात नजर नहीं आती।

दूसरी दलील जिस पर आपने बहुत जोर दिया, वह थी समाजवाद की। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस भी, जिनके फारवर्ड ब्लाक का जिक्र मौलाना साहब

ने अपने भाषण में किया है, बार-बार यह बात कहा करते थे कि फिलहाल हमारा लक्ष्य है, भारतीय स्वतंत्रता की प्राप्ति–एक संयुक्त स्वतंत्र और बलवान भारत की स्वतंत्रता की प्राप्ति। उनका कहना था कि स्वतंत्रता पा लेने के बाद ही हमें अपनी शक्ति को समाज निर्माण-सम्बन्धी विभिन्न क्षेत्रों में लगाना चाहिये। मुझे मौलाना साहब से इस बात की सब से कम आशा थी कि समाजवाद की दलील वह इस सभा के सामने रखेंगे। मैं जानता हूं कि आज मौलाना साहब मुस्लिम लीग के एक स्तम्भ हैं। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि मुस्लिम लीग ने साम्प्रदायिकता के आधार पर भारत के विभाजन की मांग की और यह मांग आज पूरी हुई। मेरी समझ से साम्प्रदायिकता को किसी भी राजकीय काम का आधार बनाना समाजवाद के सिद्धान्तों के प्रतिकूल है। अगर आज मौलाना साहब हमारे सामने खड़े होकर हमें समाजवाद की सीख देते हैं तो उनसे कहूंगा–''ए वैद्यराज, पहले अपने मर्ज का इलाज तो कर लीजिये''। जो लोग सम्प्रदायवादी नीति से बंधे हैं, जो लोग सम्प्रदायवादी दल के सदस्य हैं, वे हमारे सामने समाजवाद की दलील नहीं पेश कर सकते, जब तक कि साम्प्रदायिक नीति का वे परित्याग न करें। एक साम्प्रदायिक संगठन के सदस्य के मुंह समाजवाद की दलील अशोभनीय है। हम लोगों को जो महात्मा गान्धी, पंडित नेहरू, सरदार पटेल और नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के नेतृत्व में चलते हैं, समाजवाद के सम्बन्ध में किसी भी सीख की जरूरत नहीं है। समाजवाद की शिक्षा अगर किसी के लिये जरूरी है, तो मुस्लिम लीग के लिये जरूरी है जो गत कई वर्षो से बड़ी प्रचंडता के साथ साम्प्रदायिक नीति का उपदेश दे रही थी और आज जिसे कुछ हद तक सफलता भी प्राप्त हो गई है। व्यक्तिगत रूप से मैं आज भी मौलाना साहब से कहूंगा कि भारतीय राजनीति के प्रति उनका जो रुख है, दृष्टिकोण है, उस पर वे पुनः विचार करें। मैं उनसे कहूंगा कि आखिर अपने पाकिस्तान में जनता के लिये आप क्या करने जा रहे हैं ? क्या आप पाकिस्तान की जनता से यह कहेंगे कि ''समाजवादी नीति के आधार पर इंडियन यूनियन–भारतवर्ष–की जनता के साथ मिलकर चलो। अपनी सम्प्रदायवादी नीति का परित्याग करो और एक स्वतंत्र सुदृढ़ समाजवादी भारतीय संघ की स्थापना के लिये अग्रसर हो जाओ ?'' मैं सभा का और समय नहीं लेना चाहता। मैं केवल इस बात को दुहराऊंगा कि यह संशोधन बेमतलब है और 'गवर्नर' शब्द की जगह 'प्रेसीडेंट' शब्द रखने में कोई लाभ नहीं है। हमने 'प्रेसीडेंट' की संज्ञा इंडियन यूनियन के प्रधान के लिये रख छोड़ी है। यूनियन और प्रान्तों के प्रधानों की संज्ञा के बीच कुछ न कुछ अन्तर होना ही चाहिये। उन कारणों से मैं मौलाना हसरत मोहानी के संशोधन का विरोध करता हूं।

***अध्यक्षः** यदि प्रस्तावकर्ता उत्तर में कुछ कहना चाहते हों, तो वे अब ऐसा कर सकते हैं।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रान्तः मुस्लिम): क्या मुझे कुछ कहने की अनुमति मिलेगी ?

***अध्यक्षः** संशोधान रखने वाले सदस्य को उत्तर देने का अधिकार नहीं प्राप्त है।

***मौलाना हसरत मोहानीः** पूर्व वक्ता पूछ रहे थे ''मौलाना हसरत मोहानी क्योंकर समाजवादी बन गये हैं ? वह तो सम्प्रदायवादी हैं, इत्यादि, इत्यादि'' व्यक्तिगत स्पष्टीकरण के रूप में, मैं कुछ कहना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** मैं नहीं समझता कि सभा को इस व्यक्तिगत स्पष्टीकरण में कोई खास दिलचस्पी है।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल** (बम्बईः जनरल): श्रीमान् जी, संशोधनकर्ता ने अपने संशोधन के समर्थन में जो भाषण दिया है, उसका मैं उत्तर दूंगा। मैं देखता हूं कि वे दूसरी बार कुछ कहने के लिये उत्सुक थे। उन्होंने यह संशोधन रखा है कि बजाय 'गवर्नर' के प्रत्येक प्रान्त के लिये एक 'प्रेसीडेंट' हो। संघीय केन्द्र में हमने एक प्रेसीडेंट रखा है और अगर प्रान्तों में भी प्रेसीडेंट होंगे, तो इससे कुछ उलझाव पैदा होगा। ये गवर्नर बालिग मताधिकार के आधार पर चुने जायेंगे। इसलिये हम लोगों में यह मिथ्या धारणा नहीं आनी चाहिये कि नये विधान में जो कुछ भी शब्द आये हैं, वह उस विधान में सन्निहित पुराने अर्थो को ही सूचित करते हैं जिसके अन्तर्गत हम आज अपना कार्य चला रहे हैं। यह एक सीधी-साधी बात है, जिसमें न कोई गलतफहमी होनी चाहिये और न आगे अन्य विवाद ही। मुझे आशा है कि संशोधन वापस ले लिया जायेगा।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

'' 'गवर्नर' शब्द की जगह 'प्रेसीडेंट' शब्द रखा जाये।''

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): अध्यक्ष महोदय, इसके पहले कि आप उस खंड पर मत लें, क्या आप मुझे चन्द शब्द कहने की अनुमति देंगे ?

***अध्यक्षः** मैंने सभी सदस्यों को इस संशोधन पर बोलने का अवसर दिया था, पर उस समय तो इस पर किसी ने बोलना न चाहा।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः** अब तक संशोधन पर वाद-विवाद हो रहा था। समूचे खंड पर तो कोई वाद-विवाद हुआ नहीं।

***अध्यक्षः** मैंने साफ तौर पर कहा था कि खंड और संशोधन दोनों पर ही बहस हो सकती है और वाद-विवाद में शामिल होने के लिये सदस्यों को मैंने आमन्त्रित भी किया था, जब कोई भी बोलने के लिये न उठा तो मैंने समझा कि उस मसले पर किसी को कुछ भी नहीं कहना है।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः** अगर आपका यही मत है, जिस विधि से आप चल रहे हैं उसके अनुसार और बहस की अनुमति नहीं दी जा सकती तो मैं इस पर कुछ नहीं कहना चाहता। लेकिन यदि अभी भी सदस्य इस पर सरसरी तौर पर कुछ कह सकते हैं तो इस अवसर का मैं प्रसन्नता से उपयोग करूंगा।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि इस पर बोलने का समय समाप्त हो चुका है। जो लोग मूल प्रस्ताव के पक्ष में हैं वे 'हां' कहें और जो विरोध में हैं वे 'ना'।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

खंड 2

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मैं खंड दो को पेश करता हूं जो गवर्नर के पद की अवधि से सम्बन्ध रखता हैः

''2 (1) गवर्नर 4 वर्ष की अवधि के लिये पदासीन रहेगा जब तक कि मृत्यु, पदत्याग या पदच्युत किये जाने की दशा न उत्पन्न हो जाये।

(2) गवर्नर कथित दुराचरण के लिये सार्वजनिक दोषारोपण से पदच्युत किया जा सकेगा। अभियोग प्रान्तीय व्यवस्थापिका लगायेगी और जहां व्यवस्थापिका की दो सभायें हों वहां नीचे की सभा अभियोग लगायेगी और फेडरल गवर्नमेंट की ऊपर की सभा

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

अभियोग सुनेगी। हर एक दशा में सम्बन्धित सभा के सदस्यों की कुल संख्या में से कम से कम दो तिहाई सदस्यों के प्रस्ताव का समर्थन करना होगा।''

***डा. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): खंड 1 के सम्बन्ध में मेरा एक संशोधन है जिस पर विचार नहीं हो पाया है। वह संशोधनों की पूर्वक सूची में है।

***अध्यक्षः** मुझे भय है कि एक गलती हो गई है। खंड 1 में कई संशोधनों की सूचना गत रात को मिली है। जिन सदस्यों ने नये संशोधनों की सूचना दी है उन्हें संशोधन पेश करने का मौका मैंने नहीं दिया है। मैं समझता हूं कि उन्हें भी एक-एक करके अपना संशोधन उपस्थित करने का मौका मिलना चाहिये था। मेरी भूल की वजह से वे क्यों नुकसान में रहें।

(श्री आर.वी. धुलेकर ने अपना संशोधन नहीं पेश किया।)

***डा. पी.एस. देशमुखः** मेरा संशोधन, श्रीमान्!

***अध्यक्षः** वह उपखंड (3) में आता है जो अब पेश किया जायेगा।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं उपखंड (3) को नहीं पेश करना चाहता। मैं उपखंड (4) को पेश करता हूं जो अब उपखंड (3) होगा। यह यों है:

''(3) गवर्नर को एक बार किन्तु एक ही बार पुनर्निर्वाचन का अधिकार होगा।''

सभा की स्वीकृति के लिये मैं इस खंड के 3 उपखंडों को पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** श्री सिधवा के दो संशोधन हैं।

***श्री आर.के. सिधवाः** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल) मैं उन्हें नहीं पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** अब श्री संतानम् अपना संशोधन पेश कर सकते हैं।

*श्री के. सन्तानम्** (मद्रासः जनरल)ः श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव रखता हूं किः

"खण्ड 2 के उपखण्ड (2) में 'फेडरल पार्लियामेण्ट की ऊपर की सभा अभियोग सुनेगी' शब्दों की जगह 'फेडरल पार्लियामेण्ट की ऊपर की सभा अपने एक स्पेशल कमीशन द्वारा जांच के बाद अभियोग की पुष्टि करेगी' शब्द रखे जायें।"

संघ-विधान में इसी तरह की व्यवस्था प्रेसीडेण्ट पर सार्वजनिक दोषारोपण के सम्बन्ध में रखी गई है। वहां यह बात निर्धारित कर दी गई है कि नीचे वाली सभा अभियोग लगायेगी और ऊपर वाली सभा जांच के लिये एक कमीशन नियुक्त करेगी और जब उसे उसका पूरा सन्तोष हो जायेगा कि अभियोग प्रमाणित हो गया है, तो वह (ऊपर वाली सभा) एक प्रस्ताव द्वारा अभियोग की पुष्टि करेगी। मैंने यही विधि यहां अपनाई है अन्यथा इसका यह होगा कि समूची ऊपर की सभा गवर्नर पर लगाये हुये अभियोग को सुनेगी। इससे बड़ी असुविधा होगी और प्रान्त की प्रतिष्ठा को धक्का पहुंचेगा, क्योंकि गवर्नर का चुनाव बालिग मताधिकार के आधार पर होने जा रहा है। आशा है, सभा यह संशोधन स्वीकार करेगी।

*श्री एल. कृष्णास्वामी भारती** (मद्रासः जनरल)ः श्रीमान्, उपखण्ड को हटाने के सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता हूं कि यह अच्छा होगा कि सरदार वल्लभभाई पटेल बाज़ाप्ते उपखण्ड को सभा की स्वीकृति के लिये ज्यों का त्यों पेश कर दें और फिर जो अंश हटाने जरूरी हों, उनके हटाने के लिये, किसी से एक संशोधन रखवा दें। यह एक कमेटी की रिपोर्ट है और इसे पेश करने वाले सदस्य को चाहिये कि उसे ज्यों का त्यों पेश करें और उसके बाद अनावश्यक अंशों को निकालने के लिये एक संशोधन रखवायें। इसलिये उचित यह होगा........।

*अध्यक्षः** यह प्रश्न उठाया गया है कि प्रस्तावकर्ता को इस बात का अधिकार नहीं है कि रिपोर्ट में दिये हुये किसी खण्ड को वह हटा दें। वह तो एक संशोधन द्वारा ही हटाया जा सकता है। जिस पर प्रस्तावकर्ता अपनी स्वीकृति दे देंगे।

*माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** यह आपत्ति तो टेक्निकल किस्म की या महज़ रस्मी ढंग की है। मैं नहीं समझता कि इससे कोई वास्तविक अन्तर पड़ता है। अस्तु, अगर ऐसी बातों का भी समाधान करना है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। अच्छा तो उपखण्ड (3) कायम रहा। इससे प्रयोजन में कोई अन्तर नहीं आता है।

***अध्यक्षः** अब पं. पन्त अपना संशोधन पेश करेंगे।

माननीय पं. गोविन्द वल्लभ पन्त (संयुक्त प्रान्तः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं किः

''खंड 2 का उपखंड (3) हटा दिया जाये।''

इस उपखण्ड को पेश करने वाले सदस्य मुझसे सहमत हैं और सभा के बहुसंख्यक सदस्यों की भी यही राय है। वस्तुतः हम लोगों को इस उपखण्ड को रखने की इच्छा नहीं थी। भारतीय संघ के विधान के मसविदे में भी इसी तरह का एक खण्ड था पर गौर करने पर यह मालूम हुआ वह कार्यान्वित नहीं किया जा सकता और इसलिये वह मसविदे से निकाल दिया गया। जो रिपोर्ट वितरित की गई है उसमें आप उस खण्ड को नहीं पायेंगे। इसी तरह इस खण्ड पर भी जब बारीकी से विचार किया गया तो पता चला कि इसे हटा देना ही श्रेयस्कर है। यह खण्ड कहता है-''यदि गवर्नर अपनी अनुपस्थिति से बराबर कर्तव्य का पालन न करे या बराबर असमर्थ रहे या चार महीने से अधिक समय तक अपने कर्तव्य का पालन न कर सके तो यह समझा जायेगा कि उसने अपना स्थान रिक्त कर दिया है।'' इस बात का फैसला कौन करेगा कि किस स्थिति में वह अपने कर्तव्य-पालन में असमर्थ या असफल समझा जायेगा ? इन सब बातों पर गौर करने के बाद हम लोग इस परिणाम पर पहुंचे कि यह उपखण्ड वस्तुतः कार्यरूप में व्यवहृत नहीं हो पायेगा। इसके अलावा यह भी तय पाया गया था कि प्रान्तीय विधान को यथासम्भव केन्द्रीय विधान के अनुरूप ही रखा जाये। इन सब बातों को दृष्टि में रखकर यही तय हुआ कि इस उपखण्ड को निकाल दिया जाये। इन शब्दों के साथ मैं यह प्रस्ताव रखता हूं कि यह खण्ड निकाल दिया जाये।

***अध्यक्षः** कुछ और दूसरे संशोधन भी हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** अध्यक्ष महोदय, हमारे वयोवृद्ध राजनीतिज्ञों ने मुझे परामर्श दिया है कि दो तिहाई का बहुमत काफी है। इसलिये मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

***श्री एच.वी. पातस्कर** (बम्बईः जनरल): अब चूंकि उपखण्ड हटा दिया जा रहा है, मैं अपना संशोधन नहीं पेश करना चाहता।

(अन्य सदस्यों ने, जिन्होंने संशोधन की सूचना दी थी, अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***अध्यक्षः** श्री आयंगर आप अपना कोई संशोधन नहीं पेश कर रहे हैं ?

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल): नहीं, श्रीमान्!

(श्री के. सन्तानम्, पी. एस. देशमुख तथा एच. वी. पातस्कर ने अपने-अपने संशोधन नहीं पेश किये।)

***अध्यक्षः** मेरी समझ में यही संशोधन हैं जिनकी मुझे सूचना मिली है। अब खण्ड और संशोधनों पर बहस हो सकती है। यदि कोई सदस्य कुछ कहना चाहते हैं तो वे कह सकते हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, उपखण्ड (3) को हटाने की बात मानने में मुझे एक दिक्कत मालूम होती है। उपखण्ड (3) में कई खास विशेषतायें हैं। दूसरी अन्य विशेषतायें तो अव्यवहारिक हैं। इसकी एक अच्छी विशेषता यह है कि गवर्नर यदि अपनी अनुपस्थिति से बराबर कर्तव्य का पालन न कर पाये तो यह समझा जायेगा कि उसने अपना स्थान रिक्त कर दिया है। यह बड़ी ही वांछनीय व्यवस्था है। अगर गवर्नर चार महीने से अधिक समय तक अनुपस्थित रहे तो प्रान्त का सारा काम ही रुक जायेगा। हमारा यह विनम्र सुझाव है कि हम उपखण्ड के इस अंश को रहने दें।

जहां तक खण्ड के दूसरे अंश का सम्बन्ध है, अर्थात् इस अंश का कि बराबर असमर्थ रहने पर यह समझा जायेगा कि उसने अपना स्थान रिक्त कर दिया है, इसकी कोई व्याख्या नहीं की गयी है। यह फैसला करना मुश्किल होगा कि किस स्थिति में वह कर्तव्य-पालन में असमर्थ समझा जायेगा।

***माननीय पं. गोविन्दवल्लभ पन्तः** श्रीमान् यदि आपकी अनुमति हो तो इस अनावश्यक बहस को बचाने के लिये मैं एक शब्द कहूं। मैं आपका ध्यान एक और संशोधन की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं जो कार्यक्रम पर दर्ज है। उसमें मैंने यह प्रस्ताव रखा है कि डिप्टी गवर्नर नियुक्त किया हुआ होना चाहिये। यह खण्ड तीन में आता है। पूरक सूची के रूप में जो कार्यक्रम वितरित किया गया है उसमें यह 8वें नम्बर पर है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** यह बताया गया है कि मैंने जो सुझाव रखा है उसी आधार पर एक संशोधन पूरक सूची में है, पर हम लोगों को तो ऐसी कोई भी पूरक सूची नहीं देखने में आई। मैं समझता हूं कि बहुत से सदस्यों ने इसे नहीं

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

देखा हैं अगर कोई संशोधन है तो उसे इन संशोधनों के साथ ही पेश करना चाहिये ताकि उन सब पर साथ ही सदस्यों का ध्यान जा सके। अगर इस आशय का संशोध न है तो बहुत अच्छी बात है। खैर, मैं यह बता रहा था कि इस खण्ड की अच्छी बात को हमें रहने देना चाहिये। पर कर्तव्य-पालन में असमर्थता की जो बात यहां कही गयी है वह अस्पष्ट है। ''कर्तव्य-पालन में असफल'' होने की जो बात यहां कही गयी है वह भी अस्पष्ट है और इससे बड़ी दिक्कतें पैदा होंगी।

दूसरे उपखंड के सम्बन्ध में मुझे कुछ कठिनाई मालूम हो रही है। मैं पूर्णतः खण्ड का विरोध नहीं करना चाहता पर मैं अपनी कठिनाई निवेदन कर देता हूं ताकि उसका स्पष्टीकरण हो जाये या यदि आवश्यक हो उसमें सुधार कर दिया जाये। उपखण्ड (4) कहता है कि गवर्नर को एक बार किन्तु एक ही बार पुनर्निर्वाचन का अधिकार होगा। मुझे इसमें कोई भी बात नहीं दिखाई देती कि कोई गवर्नर दुबारा क्यों नहीं चुना जा सकता ? मान लीजिये एक बड़ा ही अच्छा गवर्नर है जो बहुत ही योग्य है और जनता की भलाई करने को सदा तैयार रहता है। इस उपखण्ड के आखिरी हिस्से की वजह से यह गवर्नर दुबारा चुनाव के लिये नहीं खड़ा हो सकता। खराबी खण्ड के आखिरी हिस्से में है। कोई भी कारण नहीं है कि गवर्नर के चुनाव के सम्बन्ध में जनता की मर्जी पर कोई प्रतिबन्ध लगाया जाये। गवर्नर के निर्वाचन के सम्बन्ध में यह पाबन्दी तो कुछ उसी तरह की बात हुई जैसा कि चिमनी साफ करने वाले लड़के के संबंध में बरती जाती है। चिमनी साफ करने वाला लड़का नीचे से उसके अन्दर घुस कर उसको ऊपर तक साफ करता चला जाता है, इसके लिये जरूरी है लड़का काफी छोटा हो। जब वह इस काम में अनुभवी हो जाता है और बढ़ जाता है तो इस काम के लिये फिट हो जाता है। यह प्रणाली गवर्नर के सम्बन्ध में तो लागू होनी चाहिये। माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल के सामने मैं केवल सुझाव रख रहा हूं ताकि वह इस पर गौर करें। मैं उस बात की ओर सभा का केवल ध्यान आकृष्ट करता हूं जो निरर्थक और निराधार जान पड़ती है क्योंकि कि मैं समझता हूं कि विस्तार की बातों में जाने का अभी समय नहीं आया है। आखिरी मसविदे पर राय देने के लिये सभा को काफी समय और मौका दिया जायेगा। इसलिये मैं महज सुझाव के तौर पर यह कह रहा हूं ताकि वे लोग, जिन्हें इस काम को पूरा करना है, यह बात ध्यान में रख सकें।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, जो प्रस्ताव मैंने रखा है उस पर कोई विशेष विवाद नहीं है। तीसरे खण्ड के सम्बन्ध में मैंने स्वयं

कहा है कि मैं समझता था कि एक परवर्ती खंड में उपयुक्त संशोधन पेश किया जाने वाला है। हम लोगों ने यह देखा कि यदि उपखण्ड (3) को रखा तो उससे यह कठिनाई उपस्थित होगी कि ''असमर्थ या कर्तव्य-पालन में असफल'' इस बात का निर्णय कौन करेगा। इन सब मुश्किलों से बचने के लिये परवर्ती खण्ड में एक संशोधन रखा गया है जिससे ये सारी दिक्कतें दूर हो जाती हैं। पं. गोविंदवल्लभ पन्त के संशोधन को मैं स्वीकार करता हूं। चौथे खण्ड के सम्बन्ध में यह सुझाव आया है कि गवर्नर के पुनर्निर्वाचन पर ऐसा कोई प्रतिबन्ध न लगाया जाये कि वह उतनी बार से ज्यादा नहीं चुना जा सकता। अगर उसे दूसरी बार चुनाव की अनुमति मिलती है तो आठ वर्षों तक इस पद पर आसीन रहता है। खण्ड में उसके तीसरी बार उम्मीदवार होने पर प्रतिबन्ध लगाया गया है क्योंकि कमेटी में जो बहस हुई उसमें यह सुझाया गया कि यदि प्रेसीडेंट दो बार अपने पद पर रह जायेगा तो हो सकता है कि वह अपनी शक्ति इतनी मज़बूत कर ले कि ऐसी बात कही जाये कि उसने अपनी स्थिति बड़ी दृढ़ कर ली है और सम्भव है कि उसे इस अभियोग से बरी करना मुश्किल हो जाये कि उसने तिबारा चुनाव में समर्थन पाने के लिये अपने पद से दांव-पेच किया है। यह अच्छा समझा गया कि गवर्नर के विरुद्ध ऐसे किसी अभियोग का मौका न दिया जाये और आठ वर्षों की अवधि को भी काफी लम्बा समझा गया। गवर्नर पद का उम्मीदवार काफी हैसियत का, उम्र का और अनुभव का व्यक्ति होगा और अच्छा होगा कि 8 वर्षों के बाद अलग हो जाये और अपने से कम उम्र वाले किसी व्यक्ति को गवर्नरी का मौका दे। मैं समझता हूं कि कमेटी काफी सोच-विचार करने के बाद इस निर्णय पर पहुंची है और मैं इसके सुझाव को ज्यादा अच्छा समझता हूं। इसलिये पं. पन्त के संशोधन के बाद मेरे प्रस्ताव का जो स्वरूप है, स्वीकार किया जाना चाहिये और यह खण्ड अपने संशोधित रूप में ज्यों का त्यों सभा द्वारा स्वीकृत होना चाहिये। मैं यह कहना भूल गया कि मैं श्री सन्तानम् के संशोधन को स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्षः** मुझे दोनों प्रस्तावित संशोधनों पर–एक तो खण्ड 2 के उपखण्ड (2) के सम्बन्ध में और दूसरा खण्ड 2 के उपखण्ड (3) के सम्बन्ध में–राय लेनी है। खण्ड के प्रस्तावकर्ता ने दोनों संशोधनों को मंजूर कर लिया है; इसलिये मैं समूचे खण्ड पर सभा का मत लूंगा। पर अच्छा होगा कि खण्ड पर मत लेने के पहले मैं संशोधनों पर भी मत ले लूं।

श्री सन्तानम् का संशोधन यह है:

''खंड 2 के उपखंड (2) मे 'फेडरल पार्लियामेंट की ऊपर वाली सभा अभियोग सुनेगी' शब्दों की जगह 'फेडरल पार्लियामेंट की ऊपर

[अध्यक्ष]

की सभा अपने एक स्पेशल कमीशन द्वारा जांच के बाद अभियोग की पुष्टि करेगी' शब्द रखे जायें।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** दूसरा संशोधन है पं. गोविन्दवल्लभ पंत का, जो यों है:

''खंड 2 का उपखंड (3) निकाल दिया जाये।''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब खण्ड 2 के संशोधित रूप पर आपकी राय ली जाती है।

खण्ड 2 अपने संशोधित रूप में स्वीकृत हुआ।

खण्ड 3

***अध्यक्ष:** अब हम खण्ड 3 को लेते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** आकस्मिक रूप से रिक्त स्थान। (1) आकस्मिक रूप से.....

***अध्यक्ष:** एक संशोधन की सूचना आई है कि खण्ड 2 के बाद एक दूसरा खण्ड जोड़ा जाये। मैं नहीं जानता कि आया यह संशोधन की शक्ल में पेश किया जा सकता है। हम इसे उपयुक्त स्थान में रख देंगे। अभी हम खण्डों पर, उनके मौजूदा शक्ल में विचार करेंगे।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** मेरा प्रस्ताव है कि:

''आकस्मिक रूप से रिक्त स्थान (1) गवर्नरों के स्थान आकस्मिक रूप से रिक्त होने पर उनको प्रान्तीय व्यवस्थापिका आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के अनुसार, एकाकी हस्तान्तरित मत पद्धति के अनुसार एकाकी हस्तान्तरित मत पद्धति द्वारा निर्वाचन करके पूरा करेगी। इस प्रकार निर्वाचित व्यक्ति अपने पूर्वाधिकारी के पद की अवधि के शेष भाग तक पदासीन रहेगा।

(2) गवर्नर के अपनी अनुपस्थिति से कर्तव्य का पालन न करने पर या अस्वस्थ होने पर, या अधिक से अधिक चार महीने तक अपने

कर्तव्य का पालन न कर सकने पर राज्य का अध्यक्ष, गवर्नर के अपने कर्तव्य-पालन के लिये वापस जाने तक, या गवर्नर, का निर्वाचन होने तक, जैसी भी दशा हो, गवर्नर के कर्तव्यों के पालने के लिये ऐसे व्यक्ति को नियुक्त कर सकेगा जिसे वह इसके योग्य समझे।''

इसमें पं. गोविन्दवल्लभ पन्त एक संशोधन का प्रस्ताव रखेंगे जैसा कि खण्ड 2 पर बहस के दौरान सुझाया गया था। इसलिये मैं केवल इसी हिस्से को विचारार्थ उपस्थित करता हूं और अधिक कुछ नहीं कहना चाहता।

(सर्वश्री वी.सी. केशवराव, एम. अनन्तशयनम् आयंगर तथा शिब्बनलाल सक्सेना ने अपने संशोधन नहीं पेश किये।)

***माननीय पं. गोविन्दवल्लभ पन्त:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड 3 के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाये:

''प्रत्येक प्रान्त के लिये डिप्टी गवर्नर होगा जिसको प्रान्तीय व्यवस्थापिका, आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के अनुसार एकाकी हस्तान्तरित मत पद्धति के द्वारा, हर साधारण निर्वाचन के बाद चुनेगी। गवर्नर का स्थान आकस्मिक रूप से रिक्त होने पर, उसके शेष कार्यकाल तक डिप्टी गवर्नर रिक्त स्थान की पूर्ति करेगा तथा गवर्नर की अनुपस्थिति में वह उसकी जगह काम करेगा।''

खण्ड 3 का प्रथम भाग अर्थात् उपखण्ड (1) हमारे संशोधन में शामिल है। चन्द मिनट पहले मैंने जो संशोधन रखा था उसके स्वीकार किये जाने के परिणामस्वरूप जो आकस्मिक स्थिति उत्पन्न हो सकती है उसके निर्वाह की इसमें व्यवस्था की गयी है और इसमें और खण्ड 3 में यही अन्तर है। मूल खण्ड में यह व्यवस्था थी कि आकस्मिक रूप से गवर्नर का स्थान रिक्त होने पर उसकी पूर्ति चुनाव द्वारा होगी। मामला व्यवस्थापिका के अधिकार में होगा और प्रांतीय व्यवस्थापिका, आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के अनुसार एकाकी हस्तान्तरित मत पद्धति के द्वारा एक स्थानापन्न गवर्नर का निर्वाचन कर लेगी।

यदि अल्पकाल के लिये गवर्नर का स्थान रिक्त हुआ, जैसा कि हो सकता है, तो उपखण्ड (2) में उसके लिये यह व्यवस्था कि फेडरेशन के प्रेसीडेण्ट

[माननीय पं० गोविन्दवल्लभ पंत]

स्थायी गवर्नर का कार्यभार संभालने के लिये एक गवर्नर मनोनीत करेगा। मेरी समझ में फेडरेशन के प्रेसीडेण्ट पर यह बोझा लादना बुद्धिमत्ता की बात न होगी। उसके अलावा, ऐसा करना कुछ हद तक प्रान्तीय स्वाधीनता के सिद्धान्त के प्रतिकूल भी होगा। जैसा कि माननीय सदस्यों को मालूम है, फेडरेशन के लिये जो विधान बनाया गया है उसमें यह व्यवस्था सोची गयी है कि साधारण निर्वाचन के बाद एक वाइस-प्रेसीडेण्ट चुना जाये। वाइस-प्रेसीडेण्ट इसलिये चुन दिया जाता है कि यदि स्थान रिक्त हुआ या ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई कि प्रेसीडेण्ट की जगह दूसरे व्यक्ति का आना आवश्यक हो तो इस हालत में प्रेसीडेण्ट का कार्यभार संभालने के लिये एक व्यक्ति हमें तुरन्त मिल सके। प्रस्तावित संशोधन द्वारा मैं एक ऐसी ही व्यवस्था का सुझाव रख रहा हूं जो फेडरेशन के लिये स्वीकार की जा चुकी है।

जैसा कि माननीय सदस्यों को मालूम है, कई बाहरी देशों के विधानों में प्रेसीडेण्ट के साथ-साथ साधारण निर्वाचनों द्वारा एक वाइस-प्रेसीडेण्ट के चुनाव की भी व्यवस्था रखी गयी है। हमारे लिये यह जरूरी नहीं है कि हम भी इसी तरह की एक बोझिल व्यवस्था अपना लें क्योंकि वाइस-प्रेसीडेंट पर कोई ज्यादा कार्य-भार नहीं है और फिर चार वर्ष के अन्दर अल्पकाल के लिये, गवर्नर का काम संभालने के लिये दुबारा गवर्नर चुनने में बड़ा अनावश्यक परिश्रम और खर्च पड़ेगा। इन सब बातों को देखते हुये यही वांछनीय समझ में आता है कि इसके लिये कोई और सरल व्यवस्था अपनाई जाये। इसीलिये इस संशोधन के जरिये यह सुझाया गया है कि व्यवस्थापिका द्वारा एक डिप्टी गवर्नर चुना जाये ताकि गवर्नर का स्थान स्थायी अथवा अस्थायी रूप से रिक्त होने पर, उसका कार्य-भार संभालने के लिये एक व्यक्ति तुरन्त मिल जाये।

यह भी सम्भव है कि गवर्नर को आवश्यक सार्वजनिक काम से बाहर जाना पड़े, आवश्यक कूटनीति सम्बन्धी कार्य से उसे कुछ काल के लिये बाहर भेजना पड़े या हो सकता है कि कुछ सीमित काल के लिये उसे दूसरे का काम देखना पड़े जिससे वह गवर्नर के काम का निर्वाह अच्छी तरह न कर पाये। ऐसे अवसरों के लिये हमारे पास एक डिप्टी गवर्नर होना चाहिये। जब मैंने अपना पहला संशोधन पेश किया था तो एक सदस्य ने यह प्रश्न उठाया था। मेरा यह संशोधन इसी स्थिति के निर्वाह के लिये है। यह बिल्कुल साफ है और आशा है सभा सर्वसम्मति से इसे स्वीकार करेगी।

***अध्यक्षः** श्री सन्तानम्, आपका भी एक संशोधन है।

***श्री के. सन्तानम्:** मैं उसे पेश करना नहीं चाहता।

***अध्यक्षः** श्री बी. दास, आपका संशोधन?

***श्री बी. दास** (उड़ीसा: जनरल): मैं उसे पेश करना नहीं चाहता।

***अध्यक्षः** खण्ड 1 में एक संशोधन की सूचना डा. देशमुख ने दी है। आप इसे पेश करना चाहते हैं ?

***डा. पी.एस. देशमुखः** पं. पन्त के संशोधन में मेरी बात आ जाती है, इसलिये मैं अपना संशोधन नहीं पेश करना चाहता।

***अध्यक्षः** खण्ड और पं. पन्त का संशोधन दोनों ही पेश हो चुके हैं। मूल प्रस्ताव और संशोधन पर सदस्य जो भी कुछ कहना चाहते हैं, अब कह सकते हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** अध्यक्ष महोदय, इन संशोधनों के सम्बन्ध में मुझे दूसरी बार यहां आना पड़ा, इसका मुझे अफसोस है। जो संशोधन अभी पेश किया गया है वह हम लोगों को नहीं भेजा गया था। पेश होने के बाद ही मैंने इसे देखा। इन संशोधनों की तह तक पहुंचना हम लोगों के लिये मुश्किल है। मूल खण्डों का मसविदा एक माहिर कमेटी ने तैयार किया है जिसमें ऐसे लोग हैं जो बड़े राजनीतिज्ञ, वैधानिक कानूनों के विशारद और साथ ही मसविदा बनाने में भी कुशल हैं। जब ऐसे लोगों ने रिपोर्ट तैयार की है तो यह जरूरी हो जाता है कि हम संशोधनों पर खूब गम्भीरता से विचार करें। मेरी समझ में, ऐसे खंडों और संशोधनों को, जिनका विधान सम्बन्धी शुष्क प्रश्नों से सम्बन्ध है, तुरन्त समझ लेना हम साधारण आदमियों के लिये और भी मुश्किल है। श्रीमान्, मेरा तो यह निवेदन है कि इस तरह के गम्भीर संशोधन को जिससे मूल खण्ड के बुनियादी स्वरूप में ही परिवर्तन आ जाता हो, तब तक पेश करने की अनुमति न मिलनी चाहिये जब तक हमें इस बात के समझने के लिये काफी समय न दे दिया जाये कि इसका खण्ड पर तथा समूची रिपोर्ट पर क्या असर पड़ेगा, क्योंकि इन्हीं क्लाजों के आधार पर बिल का आखिरी मसविदा तैयार होकर हमारे सामने विचारार्थ पेश किया जायेगा। ऐसे आवश्यक मामले में, मैं समझता हूं कि कुछ सावधानी से काम लेना चाहिये और इस पर विचार करने के लिये हमें कुछ समय मिलना

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

चाहिये। मैं देखता हूं कि मूल खण्ड पर बहुत से संशोधन रखे गये हैं। मुझे इसमें शक नहीं है कि अगर ये संशोधन हम लोगों को भेजे गये होते तो बहुतेरे संशोधनों का सुझाव आया होता।

ऐसी हालत में मेरा सुझाव है कि इस खण्ड को हम जल्दी में निपटा न दें। कुछ न कुछ समय, जैसा आप या सभा मुनासिब समझे, हमें मिलना चाहिये, भले ही वह थोड़ा ही क्यों न हो। श्रीमान्, मैं इस बात को साफ कर देता हूं। सहयोग की भावना से हम सभा से थोड़ा समय मांगते हैं। मैं खण्ड और संशोधन को उपस्थित करने वाले माननीय सदस्यों से भी जो हमारे देश की बड़ी विभूतियों में हैं, हमें थोड़ा समय देने का अनुरोध करूंगा। मैं उनसे कहूंगा कि जरा सोचिये तो सही कि हम साधारण आदमियों के लिये यह कितना मुश्किल काम है कि बिना काफी सोचे-समझे हम विधान सम्बन्धी अहम मामलों पर अपनी राय दे सकें। मेरी प्रार्थना है कि आप हमारे अनुरोध पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करें और हमें स्थिति को समझने के लिये थोड़ा समय दें।

***अध्यक्षः** खण्ड और संशोधन पर कोई और भी बोलना चाहता है?

***श्री बी. पोकर साहिब बहादुर** (मद्रासः मुस्लिम)ः अध्यक्ष महोदय, सभा को इस बात पर विचार करना है कि आया मूल खण्ड रखा जाये या उसकी जगह संशोधन में बताया हुआ खण्ड स्वीकार किया जाये। मैं समझता हूं कि हमें उन कई कारणों से, जिनका संशोधनकर्ता ने जिक्र किया है, संशोधन को ही स्वीकार करना चाहिये। यह बात बुद्धिमत्ता के बिल्कुल परे होगी कि हम इस पेचीदा पद्धति को अपनाकर चार वर्ष के अन्दर ही दुबारा चुनाव की स्थिति की सम्भावना उत्पन्न कर दें। इस स्थिति को बचाने के लिये यह कहीं अच्छा होगा कि हम आम चुनाव के साथ-साथ एक डिप्टी गवर्नर भी चुन लें। इसलिये मैं प्रस्तावित संशोधन का बड़ी खुशी से समर्थन करता हूं। परन्तु आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त पर एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति द्वारा चुनाव होने के सम्बन्ध में मुझे एक सन्देह है। श्रीमान्, मैं कहूंगा कि आप इस प्रश्न पर गौर कीजिये कि जब एक उम्मीदवार को चुनना ही हमारा उद्देश्य हो तो क्या यह पद्धति कार्यकारी होगी ? अगर एक से ज्यादा उम्मीदवारों को चुनना हो तो यह पद्धति बड़ी कार्यकारी होगी ? यह तो मैं समझता हूं। परन्तु जब एक ही उम्मीदवार को चुनना है तो मैं नहीं समझ सकता कि यह पद्धति किस हद तक हमारे उद्देश्य में सहायक हो सकेगी। आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त पर एकाकी हस्तांतरित मत-पद्धति द्वारा निर्वाचन

का उद्देश्य ही यह है कि इसके जरिये भिन्न-भिन्न दलों को या विचारधाराओं को प्रतिनिधित्व मिल सके। परन्तु अगर चुनाव के लिये एक ही उम्मीदवार है तो उस स्थिति में इस पद्धति के परिश्रम को ढोना, मुझे शक है कि कोई बुद्धिमानी की बात न होगी। यह सभा के विचारने की बात है और खास तौर पर उन विशेषज्ञों के जिन्होंने यह रिपोर्ट तैयार की है। निश्चय ही उन्होंने इस बात पर भी विचार किया होगा। इस प्रणाली का एक खास उद्देश्य है, और जब चुनाव के लिये एक ही उम्मीदवार हो तो इसके अपनाने में कोई फायदा नहीं है। पर जैसा मैंने कहा है, यह बात सभा के विचारने की है। मैंने किसी संशोधन की सूचना तो नहीं दी है, पर आशा है रिपोर्ट बनाने वाले विशेषज्ञ इस पर विचार करेंगे।

***श्री अनन्तशयनम् आयंगर:** मालूम पड़ता है कि अन्तिम वक्ता की यह धारणा है कि डिप्टी गवर्नर का चुनाव प्रान्त के सभी वयस्क मतदाता करेंगे। पर बात यह नहीं है। उसका चुनाव प्रान्तीय व्यवस्थापिका करेगी जहां केवल 150 या 200 मेम्बर होंगे। इस हालत में यह कोई बड़ा मुश्किल काम न होगा। 150 या 200 वोटरों की संख्या कोई बहुत बड़ी संख्या नहीं है। और कई भिन्न संस्थाओं के लिये भी आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त पर एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति द्वारा चुनाव की व्यवस्था हमारे यहां मौजूद है। उदाहरण के लिये, कौंसिल ऑफ स्टेट को ही लीजिये, वहां वोटरों की संख्या 3,000 है। प्रान्तीय व्यवस्थापिका में, मैं समझता हूं, वोटरों की कुल संख्या 300 से ज्यादा न होगी। इसलिये इस पद्धति को अपनाने में यह कोई बड़ी दिक्कत की बात न होनी चाहिये। मेरा ख्याल है, संशोधन को हम स्वीकार कर सकते हैं।

***माननीय रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय** (आसाम : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं संशोधन पर बोलूंगा। आकस्मिक रूप से गवर्नर का स्थान रिक्त होने पर उसकी पूर्ति की क्या व्यवस्था हो, इस पर इसमें प्रकाश डाला गया है। परन्तु इसमें इस समस्या का समाधान नहीं है कि डिप्टी गवर्नर का स्थान रिक्त होने पर क्या किया जाये। संशोधन कहता है:

''प्रत्येक प्रांत के लिये एक डिप्टी गवर्नर होगा जिसको प्रान्तीय व्यवस्थापिका आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत के अनुसार एकाकी हस्तांतरित मत-पद्धति द्वारा हर साधारण निर्वाचन के बाद चुनेगी। गवर्नर का स्थान आकस्मिक रूप से रिक्त होने पर उसके शेष कार्य-काल तक डिप्टी गवर्नर रिक्त स्थान की पूर्ति करेगा तथा गवर्नर की अनुपस्थिति में वह उसकी जगह काम करेगा।''

[माननीय रेवरेंड जे.जे.एम. निकोल्स राय]

परन्तु उस हालत में क्या होगा जब कि गवर्नर और डिप्टी गवर्नर दोनों के स्थान रिक्त हो जायेंगे ? उस हालत में एक चीज़ पैदा हो जायेगी और काम रुक जायेगा। इस स्थिति के लिये कोई व्यवस्था नहीं है। इसलिये श्रीमान्, मेरी समझ में इस संशोधन से मूल प्रस्ताव अथवा खंड ही अच्छा है। जब-जब गवर्नर का स्थान रिक्त हो, प्रान्तीय व्यवस्थापिका उसकी पूर्ति कर दे। परन्तु यदि गवर्नर और डिप्टी गवर्नर दोनों के ही स्थान रिक्त हो जायें तो इस संशोधन में उसके लिये कोई व्यवस्था नहीं है। इसलिये मेरी समझ में तो मूल खंड इस संशोधन से बेहतर है।

***श्री के.एम. मुंशी** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मि. पोकर ने सभा के सामने जो बात उठाई है कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के अनुसार एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति द्वारा चुनाव की व्यवस्था यहां क्यों रखी गयी है, इसका यथेष्ट स्पष्टीकरण तो स्वयं खंड में ही विद्यमान है। अगर चुनाव की यह पद्धति यहां न अपनाई जाती तो इसका नतीजा यह होगा कि कोई भी व्यक्ति आधे से भी कम मतदाताओं का समर्थन पाकर डिप्टी गवर्नर चुना जायेगा, पर अगर आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति के जरिये चुनाव होगा तो सफल उम्मीदवार को जितने भी वोट पड़ेंगे उनमें से आधा और एक वोट ज्यादा पाना होगा। इसीलिये तो यह पद्धति आवश्यक समझी गई है।

रेवरेंड निकोल्स राय ने कहा है कि अगर डिप्टी गवर्नर और गवर्नर दोनों के ही स्थान एक साथ खाली हो जायें तो क्या किया जायेगा ? इसके सम्बन्ध में यही कहना है उस समय इस स्थिति की कल्पना करना जरा कठिन है। हम तीसरे व्यक्ति की व्यवस्था कर सकते हैं, पर सम्भव है उसका भी स्थान खाली हो जाये। इसलिये इस समय तो हम केवल एक साधारण सिद्धान्त ही स्थिर कर सकते हैं। परन्तु अगर दुर्भाग्य से गवर्नर, डिप्टी गवर्नर और शेष लोग भी लुप्त हो जायें तो फिर हकूमत की समूची मशीन ही टूट जायेगी। ऐसी दुरूह कल्पनाओं में जाना हमें आवश्यक नहीं है। हम लोग यही आशा करते हैं कि गवर्नर अपना काम करते रहेंगे और यदि नहीं तो उनके कार्य-काल तक डिप्टी गवर्नर उनका काम देख देंगे।

श्रीयुत रोहिणी कुमार चौधरी (आसाम: जनरल): अध्यक्ष महोदय जिस कमेटी ने प्रस्तुत रिपोर्ट तैयार की है उसका सभापतित्व सरदार वल्लभभाई पटेल

जैसे प्रसिद्ध और सम्मानित व्यक्ति ने किया है और हम समझते हैं प्रत्येक पहलू पर विचार करने का पूरा मौका कमेटी में दिया गया था। और अब जबकि यह रिपोर्ट सभा के सामने आई है, इसमें किसी भी परिवर्तन की कोई जरूरत नहीं है। पर इससे यह नहीं समझना चाहिये कि मैं पं. पन्त का विरोध कर रहा हूं या उनकी आलोचना कर रहा हूं; क्योंकि शारीरिक, नैतिक और बौद्धिक तीनों ही दृष्टियों से मैं इसके लिये अक्षम हूं। *(हंसी)* पर मेरी समझ से यह ज्यादा अच्छा होगा, अगर हम यह जान लें कि गवर्नर की उपस्थिति में डिप्टी गवर्नर के क्या काम होंगे। क्या उसका यही काम होगा कि वह यही चाहे और इसी बात की प्रार्थना करे कि गवर्नर गैर हाजिर हो जाये या अपना कार्यभार संभालने में किसी प्रकार अक्षम हो जाये ताकि उसका स्थान रिक्त हो *(हंसी)*? यह प्रश्न हमारे ध्यान में आना चाहिये और इस पर हमें विचार करना चाहिये।

और फिर श्रीमान्, इस संशोधन के अनुसार प्रत्येक प्रान्त में एक डिप्टी गवर्नर होना लाजिमी होगा। यह डिप्टी गवर्नर अवैतनिक होगा या उसको वेतन दिया जायेगा? अगर वह वेतनभोगी होगा तो फिर आसाम और उड़ीसा जैसे गरीब प्रान्तों को आप बाध्य क्यों करते हैं कि वह एक डिप्टी गवर्नर रखे ही और उसके खर्चीले ठाट-बाट का निर्वाह करे?

और फिर श्रीमान्, मैं उन लोगों की ओर से बोल रहा हूं जो गवर्नर पद पाने के लिये प्रयत्नशील हो सकते हैं। पर ईश्वर न करे ऐसा हो, यदि चुनाव के बाद ही गवर्नर का निधन हो जाये तो क्या डिप्टी गवर्नर भी जिसका चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से चन्द व्यक्तियों द्वारा हुआ है, वही हैसियत पायेगा जो गवर्नर का होगा, जिसका निर्वाचन बालिग मताधिकार के आधार पर होगा? यहां यह कहा जा सकता है कि अमेरिका में वाइस प्रेसीडेंट को वही अधिकार प्राप्त हैं जो प्रेसीडेंट को, पर उसके निर्वाचन में समूचा देश भाग लेता है। इसलिये इतने व्यापक अधिकार आप डिप्टी गवर्नर को क्यों दे रहे हैं? जिसके निर्वाचन में सभी वयस्क लोग नहीं, प्रत्युत केवल चन्द लोग ही भाग लेंगे? ये बातें ऐसी हैं जिन पर हमें विचार करना चाहिये और आशा है इन प्रश्नों का समुचित उत्तर दिया जायेगा।

***श्री देवी प्रसाद खेतान** (पश्चिमी बंगालः जनरल): श्रीमान्, मसविदा के भिन्न-भिन्न खंडों को समझने के पहले हमें यह बात ध्यान में रखनी होगी कि सरदार पटेल ने इसको पेश करते हुये प्रारम्भ में ही कहा था कि ये खंड पूर्ण

[श्री देवी प्रसाद खेतान]

नहीं हैं और न आखिरी मसविदे के तौर पर पेश किये जा रहे हैं। ये सिर्फ सिद्धान्त के रूप में रखे जा रहे हैं जिन्हें हम स्वीकार कर सकते हैं। जिन सिद्धान्तों को हम स्वीकार करेंगे वह फिर एक दूसरी मसविदा-कमेटी के सामने जायेगा जो उन्हें ठीक-ठीक रूप देगी और उनमें जो भी त्रुटियां रह जायेंगी उनको ठीक करेगी। मूल मसविदे में, जो हमारे सामने पेश किया गया था, यह कहा गया था कि ''यदि गवर्नर अपनी अनुपस्थिति से बराबर कर्तव्य का पालन न करे या बराबर अस्वस्थ रहे या चार महीने से अधिक समय तक अपने कर्तव्य का पालन करने में असमर्थ रहे तो यह समझा जायेगा कि उसने अपना स्थान रिक्त कर दिया है।''

यहां कर्तव्य-पालन में असमर्थ रहने की जो बात कही गई है वह बड़ी अनिश्चित और अस्पष्ट है। यह कैसे समझा जाये कि वह कर्तव्य-पालन में अक्षम है? यह तय करना मुश्किल है कि बीमारी के अतिरिक्त और किस हालत में उसे बराबर कार्य में असमर्थ समझा जायेगा। एक आदमी तो यह समझ सकता है कि गवर्नर कर्तव्य-पालन में चूक रहा है, पर बहुत-से लोग और खुद गवर्नर यह मान सकते हैं कि वह अपने कर्तव्य-पालन में अक्षम नहीं हैं और फिर इसे खंड 3 के उपखंड 1 और 2 के साथ पढ़िये:

''गवर्नरों के स्थान आकस्मिक रूप से रिक्त होने पर उनको प्रांतीय व्यवस्थापिका चुनाव द्वारा पूरा करेगी।''

कहने का मतलब यह है कि आकस्मिक रूप से गवर्नर का स्थान रिक्त होने पर उसके लिये पहले से ही तो कोई योग्य व्यक्ति तैयार नहीं खड़ा रहेगा, जिसे हम उस पर बिठा देंगे। प्रान्तीय व्यवस्थापिका द्वारा चुनाव कराने में कुछ समय लगेगा और इस बीच में गवर्नर का स्थान खाली पड़ा रहेगा और उसके कार्यों को अंजाम देने वाला कोई भी न होगा, और फिर उपखंड 2 में जिसे खंड 2, 3, के साथ पढ़ना होगा, यह कहा गया है:

''यदि गवर्नर बराबर अस्वस्थ रहे या चार महीने से अधिक समय तक वह अपने कर्तव्य का पालन करने में असमर्थ रहे'' इत्यादि......

मान लीजिये कि गवर्नर बीमार है और वह छुट्टी लेकर कहीं जाना चाहता है। उसका ख्याल है कि वह तीन माह में चंगा हो जायेगा पर वह अस्वस्थ ही रह जाता है, तो इस हालत में यह तय करना बड़ा मुश्किल होगा कि चार महीने की अवधि

कब समाप्त होगी और कब नहीं। इन सभी बातों पर विचार करना पड़ा और इसके लिये समाधान ढूंढना पड़ा और यह सोचा गया कि इसके लिये दूसरी व्यवस्था सभा के सामने रखी जाये। पंडित पंत ने अपने द्वारा यही काम किया है। उनके संशोधन में कहा गया है कि हर आम निर्वाचन के बाद जब प्रान्तीय व्यवस्थापिका बैठेगी तो वह एक निश्चित व्यवस्था के अनुसार एक डिप्टी गवर्नर चुन लेगी। अभी भी कुछ त्रुटि रह गई है। वह यह कि डिप्टी गवर्नर, गवर्नर का स्थान रिक्त होने पर उसके शेष कार्य-काल तक उसका कार्य-भार संभालेगा। पर यह बात यहां नहीं बताई गई है कि स्थान आकस्मिक रूप से रिक्त कब समझा जायेगा और कब नहीं या यह कि खुद गवर्नर इसका फैसला करेंगे या विधान-परिषद् को सेवायें देने वाले, मसविदा तैयार करने वाले विशेषज्ञ लोग इसके लिये किसी अन्य अधिकारी की आवश्यकता पर विचार करेंगे।

***एक माननीय सदस्यः** श्रीमान्, क्या नियम के अनुसार माननीय सदस्य लिखा हुआ भाषण पढ़ सकते हैं?

***श्री देवी प्रसाद खेतानः** मेरे पास कोई लिखा हुआ भाषण नहीं है। मैं केवल खंडों को और संशोधनों को देख लेता हूं, क्योंकि वह जुबानी तो नहीं याद हैं।

जैसा मैंने कहा है, मसविदा बनाने वाले विशेषज्ञों को इस पर विचार करना पड़ेगा कि स्थान आकस्मिक रूप से रिक्त कब समझा जायेगा। इस बात का फैसला करने वाला अधिकारी कौन होगा कि स्थान आकस्मिक रूप से रिक्त हुआ है या नहीं और यह कि डिप्टी गवर्नर यदि यह संशोधन पास हो जाता है तो-गवर्नर के शेष कार्य-काल तक उसके पद पर काम करेगा या केवल उसकी अनुपस्थिति में कुछ दिनों के लिये उसकी जगह काम करेगा। इन सभी कठिन मसलों पर विचार करना होगा। अगर पं. पंत का सिद्धान्त स्वीकार किया जाता है तो बाकी विस्तार की बातों को भी पूरा करना होगा और उसे सभा के सामने पुनः विचारार्थ रखना होगा। इस स्थिति में, मैं समझता हूं कि खंड 2, 3 तथा खंड 3 के उपखंड (1) और (2) के बदले में पं. पंत का संशोधन एक अच्छा रास्ता होगा और आशा है, सभा इसे स्वीकार करेगी।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, श्रीयुत रोहिणीकुमार चौधरी ने जिस कठिनाई की कल्पना की है उससे बचने के लिये, जैसा कि हमने ऊपर वाली सभा के सम्बन्ध में प्रस्ताव रखा है, यह आदेश दे सकते हैं कि विधान-परिषद् के सदस्य

[श्री एच.वी. कामत]

अपने-अपने प्रान्तों के सम्बन्ध में राय देकर यह फैसला कर लें कि आया उनके प्रान्त में डिप्टी गवर्नर नियुक्त किया जाये या नहीं।

***अध्यक्षः** प्रस्तावकर्ता अब उत्तर दे सकते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मुझे बहुत कुछ नहीं कहना है, क्योंकि पूर्व वक्ताओं की बातों का जवाब उनके परवर्ती वक्ताओं ने दे दिया है। यह तो एक साधारण खंड है जिसमें यह कहा गया है कि आकस्मिक रूप से गवर्नर का स्थान रिक्त होने पर उसकी पूर्ति कैसे की जायेगी और पं. पंत के संशोधन से यह प्रस्ताव और भी अच्छा बन गया है। इस सम्बन्ध में संदेह प्रकट किया गया है कि अगर गवर्नर और डिप्टी गवर्नर दोनों ही अनुपस्थित हो जायेंगे तो उस सूरत में क्या होगा। किसी भी विधान में ऐसी कठिनाई उत्पन्न हो सकती है, पर मनुष्य की तीव्र-बुद्धि ऐसी असाधारण और अनियमित स्थितियों का उपचार हमेशा ढूंढ लेती है। और फिर सभा को यह भी मालूम होगा कि प्रारम्भिक तीन वर्षों के अन्दर जब भी आवश्यकता उत्पन्न होगी, इस विधान में तदनुसार रद्दोबदल या संशोधन किया जा सकता है। इसलिये अगर ऐसी अप्रत्याशित कठिनाई उत्पन्न हुई तो तत्कालीन धारा-सभा स्वयं इसकी चिन्ता करेगी और स्थिति का मुकाबला करने के लिये यथासमय कोई न कोई रास्ता निकाल लेगी। इसलिये पंत के संशोधन को स्वीकार करने में मुझे तो कोई कठिनाई नहीं दिखाई देती, तथा इस सम्बन्ध में और सुझाव देना मुझे अनावश्यक मालूम होता है।

***अध्यक्षः** खंड 3 पर एक संशोधन पेश किया गया है, जो यों हैः

''प्रस्ताव किया जाता है कि खंड 3 के स्थान पर निम्नलिखित रखा जायेः

'प्रत्येक प्रान्त के लिए एक डिप्टी गवर्नर होगा जिसको प्रान्तीय व्यवस्थापिका आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के अनुसार एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति के द्वारा हर साधारण निर्वाचन के बाद चुनेगी। गवर्नर का स्थान आकस्मिक रूप से रिक्त होने पर, उसके शेष कार्यकाल तक, डिप्टी गवर्नर रिक्त स्थान की पूर्ति करेगा तथा गवर्नर की अनुपस्थिति में वह उसकी जगह काम करेगा।''

यह प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

''खंड 3 अपने संशोधित रूप में स्वीकार किया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

खंड 4

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं किः

''भारतीय संघ के प्रत्येक नागरिक को जिसकी उम्र 35 वर्ष की हो चुकी हो, गवर्नर के चुनाव में खड़े होने का अधिकार होगा।''

यह खंड बिल्कुल साफ और सरल है।

***अध्यक्षः** इस खंड पर कई संशोधन हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, अधिकृत तौर पर मुझे मालूम हुआ है कि कोई पुरुष या स्त्री—क्योंकि स्त्री भी गवर्नर के चुनाव के लिये खड़ी हो सकती है—40 वर्ष की अवस्था के पहले भी परिपक्व बुद्धि का हो सकता है। इसलिये मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं देना चाहता।

***श्री वी.सी. केशव राव** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मैं अपना संशोधन नहीं पेश करना चाहता।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं किः

''निम्नलिखित अंश को जोड़ कर इसे खंड 4 का उपखंड 2 बनाया जाये और वर्तमान खंड 4 को 4 (1) गिना जाये।

'(2) कोई भी व्यक्ति जो प्रान्तीय सरकार अथवा संघ सरकार या उनके अधीनस्थ किसी स्थानीय अधिकारी की स्थायी नौकरी में किसी लाभप्रद पद या ओहदे पर होगा, गवर्नर पद के लिए उम्मीदवार नहीं चुना जा सकता'।''

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

श्रीमान्, यह एक सर्व स्वीकृत सिद्धान्त है कि कोई भी सरकारी नौकर किसी भी चुनाव वाले पद के लिये उम्मीदवार नहीं खड़ा हो सकता है और इसीलिये विधान में यह व्यवस्था रखने की आवश्यकता है। यह सम्भव है कि ऐसे ऊंचे और मशहूर ओहदे के चुनाव के लिये कोई उच्चाधिकारी सरकारी नौकर खड़ा हो जाये और कुछ लोग उसे मदद दें। मैं तो यहां तक चाहता था कि ऐसे व्यक्ति को भी जो सरकारी नौकरी से पांच साल पहले तक अवकाश पा चुका हो, गवर्नर के निर्वाचन के लिये खड़ा होने का अधिकार नहीं है। यह एक समुचित संरक्षण होगा। मैं नहीं समझता कि सरकारी नौकर, चाहे वह कितना भी बड़ा कुशल शासक क्यों न हो, इतना योग्य और क्षम होगा जितना कि सार्वजनिक कार्यों में अपने को लगा देने वाला सार्वजनिक व्यक्ति होगा। सार्वजनिक व्यक्ति बहैसियत गवर्नर के जनता की ज्यादा सेवा कर सकेगा। खैर, यह संशोधन अभी सभा के सामने नहीं है। सभा के सामने मैं उससे भी लघु और आपत्ति-शून्य संशोधन रख रहा हूं कि किसी भी सरकारी नौकर को गवर्नर के चुनाव के लिए खड़े होने का अधिकार न होगा। इन शब्दों के साथ मैं अपना प्रस्ताव उपस्थित करता हूं।

(सर्वश्री शिब्बनलाल सक्सेना और विश्वनाथदास ने अपने संशोधन नहीं पेश किये।)

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, श्री अनन्तशयनम् आयंगर के संशोधन को मैं स्वीकार करता हूं।

***श्री देवी प्रसाद खेतानः** श्रीमान्, गवर्नर के लिए तो उम्र का प्रतिबन्ध लगाया गया है, पर मैं जानना चाहता हूं कि डिप्टी गवर्नर के लिये भी उम्र की कोई कैद है क्या?

(कोई उत्तर नहीं मिला)

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

''निम्नलिखित अंश को जोड़कर इसे खंड 4 का उपखंड 2 बनाया जाये और वर्तमान खंड 4 को 4 (1) गिना जाये।

'(2) कोई भी व्यक्ति जो प्रान्तीय सरकार या संघ सरकार या उनके अधीनस्थ किसी स्थानीय अधिकारी की स्थायी नौकरी में किसी लाभप्रद पद या ओहदे पर होगा, गवर्नर पद के लिए उम्मीदवार नहीं चुना जायेगा'।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब प्रस्ताव यह है कि:

''खंड 4 संशोधित रूप में स्वीकार किया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

खण्ड 5

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

''गवर्नर के चुनाव सम्बन्धी झगड़ों की जांच और उन पर निर्णय संघ का सर्वोच्च न्यायालय करेगा।''

मैं नहीं समझता कि इस खंड में भी कोई वाद-विवाद की बात है। इसके सम्बन्ध में कोई संशोधन नहीं है।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***श्री एच.वी. कामतः** सदस्यों के नाश्ता-पानी के लिये आधे घंटे के अवकाश का अनुरोध करना चाहता हूं। यह ज्यादती तो न होगी?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** यह संशोधन है क्या? सिर्फ तीन घंटे तक सभा की बैठक होगी। वे चाय-पानी करके भी यहां आ सकते थे।

***श्री एच.वी. कामतः** अगर चाय-पानी के लिये आधे घंटे का अवकाश मिल जाये तो हम साढ़े 6 बजे तक बैठ सकते हैं।

***अध्यक्षः** सभा की कार्यवाही चालू है और सदस्यगण भी अपने चाय-पानी का क्रम चालू रख सकते हैं।

खण्ड 6

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मेरा प्रस्ताव है कि:

''6 (1) गवर्नर प्रान्तीय व्यवस्थापिका का सदस्य नहीं होगा और यदि प्रान्तीय व्यवस्थापिका का कोई सदस्य गवर्नर के पद के लिए निर्वाचित हो जाये तो यह समझा जायेगा कि उस व्यवस्थापिका में उसका स्थान रिक्त हो गया है।

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

(2) गवर्नर किसी अन्य लाभप्रद पद या ओहदे पर नहीं रहेगा।

(3) गवर्नर का एक सरकारी निवास-गृह होगा और यह प्रान्तीय व्यवस्थापिका के एक्ट द्वारा निर्धारित वेतन और भत्तों को पायेगा जो परिशिष्ट में निश्चित किये गये हैं।

(4) गवर्नर का वेतन और उसके भत्ते उसके पद की अवधि में कम नहीं किये जायेंगे।''

आप देखेंगे कि उपखण्ड 1 में यह व्यवस्था है कि यदि ऐसा कोई व्यक्ति जो व्यवस्थापिका का सदस्य है और चुनाव में वह गवर्नर चुन लिया जाता है, तो उसे व्यवस्थापिका में अपना स्थान खाली कर देना होगा। उस हालत में उसकी व्यवस्थापिका की सदस्यता अपने आप समाप्त हो जाती है और वह गवर्नर हो जाता है। इस सम्बन्ध में कोई विवाद ही नहीं हो सकता।

उपखण्ड 2 में गवर्नर द्वारा और अन्य ओहदों को ग्रहण करने के सम्बन्ध में विचार किया गया है। उसमें उसकी मनाही की गयी है। यह भी आवश्यक है। पूर्ववर्ती खण्ड पर श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने जो संशोधन रखा है उसकी स्वीकृति के लिये हमने इस खण्ड में आवश्यक स्पष्टीकरण रख दिया है। यह खण्ड आवश्यक है।

उपखण्ड 3 में गवर्नर के निवास स्थान और उसके वेतन और भत्ते की व्यवस्था है। इसके सम्बन्ध में कुछ कहना अनावश्यक है। जब तक कि व्यवस्थापिका उसको निर्धारित नहीं कर देती तब तक के लिये अस्थायी रूप से यह व्यवस्था की गयी है।

***डा. पी.एस. देशमुखः** मैं अपना संशोधन नहीं पेश करना चाहता।

***श्री एम.एस. अणेः** (दक्षिणी रियासतें): क्या मैं इस प्रस्ताव पर चन्द बातें कह सकता हूं?

***अध्यक्षः** अवश्य, पर संशोधन पेश हो जाने के बाद।

***श्री आर.के. सिधवाः** श्रीमान्, मेरे संशोधन में कहा गया है कि गवर्नर के वेतन की बात विधान में आनी चाहिये। मेरा यह दृढ़ मत है कि गवर्नरों की

प्रतिष्ठा और मर्यादा की रक्षा के लिये जो अब आगे से स्वयं भारतीय ही होंगे, यह आवश्यक है कि उनके वेतन निर्धारित करने की बात, प्रान्तीय व्यवस्थापिका के अस्थिर विचार और उसकी सनक पर छोड़ना ठीक न होगा और जब गवर्नर का चुनाव होगा वयस्क मताधिकार के आधार पर, तो उसका वेतन स्थिर करने का काम व्यवस्थापिका पर छोड़ना, जहां दलबंदी का बोलबाला होगा, प्रतिष्ठा के प्रतिकूल होगा। इसलिये श्रीमान्, मैं समझता हूं कि गवर्नरों के वेतन और भत्ते की व्यवस्था विधान द्वारा ही स्थिर होनी चाहिये। हां, मैं यह मानने के लिए तैयार हूं कि आसाम और उड़ीसा जैसे छोटे-छोटे प्रान्तों के लिये यह जरूरी नहीं है कि वे अपने गवर्नरों को अन्य प्रान्तों के समान वेतनादि दें। यह बात भी सूची में रख दी जा सकती है। मैं समझता हूं कि इस बात पर प्रान्तीय कमेटी, (प्रोविंशियल कमेटी) को पुनर्विचार करना चाहिये। इस सम्बन्ध में मैं यह बता देना चाहता हूं कि जिस सूची के रखे जाने की बात कही गयी है वस्तुतः वह सूची वहां रखी नहीं गयी है। प्रान्तीय कमेटी को इस सूची पर पुनर्विचार करना चाहिये। विधान में गवर्नरों का वेतन क्या रखा जाना चाहिये यह बात मैंने सूची में दे दी है। मुझे बताया गया है कि मेरी बात पर प्रान्तीय कमेटी विचार करेगी। इसलिये मैं इस बात को प्रस्ताव के रूप में तो नहीं रखना चाहता पर इस पर जोर जरूर देना चाहता हूं ताकि प्रान्तीय कमेटी सूची पर विचार करते समय इस बात को ध्यान में रखे। श्रीमान्, मैं फिर दुहराता हूं कि इस तथ्य को देखते हुये कि प्रान्तीय व्यवस्थापिकाओं में दलबन्दी का प्राधान्य होगा, हमें गवर्नरों के वेतन की व्यवस्था विधान में दे देनी चाहिये।

***अध्यक्षः** प्रान्तीय कमेटी अपनी रिपोर्ट दे चुकी है, मैं नहीं जानता कि यह बात उसके पास जायेगी। मैं यह जरूर समझता हूं कि जब अन्तिम रूप में विधान पर विचार होगा तो इस बात पर विचार किया जायेगा।

***श्री आर.के. सिधवाः** हां श्रीमान्, मुझे बताया भी गया है कि यह बात ध्यान में रखी जायेगी।

***अध्यक्षः** चूंकि इस खण्ड पर और कोई संशोधन नहीं है, मैं श्री अणे से कहूंगा कि वे अपना मन्तव्य व्यक्त करें।

***श्री एम.एस. अणेः** श्रीमान्, इस खण्ड के सम्बन्ध में मुझे चन्द ही बातें कहनी हैं। इसका उपखण्ड 1 कहता है कि गवर्नर प्रान्तीय व्यवस्थापिका का

[श्री एम.एस. अणे]

सदस्य न होगा और प्रान्तीय व्यवस्थापिका का सदस्य गवर्नर चुना गया तो यह समझा जायेगा कि उसने व्यवस्थापिका में अपना स्थान रिक्त कर दिया है। यह बात न सिर्फ निर्वाचित गवर्नर के सम्बन्ध में ही लागू होगी, बल्कि जो भी गवर्नर होगा उसके लिये लागू होगी। उदाहरणार्थ डिप्टी गवर्नर को लीजिये। जिस संशोधन की सूचना मेरे मित्र पं. पन्त ने दी है उसके अनुसार डिप्टी गवर्नर भी गवर्नर का काम कर सकता है। इस खण्ड के अन्दर गवर्नर की जगह काम करने वाला डिप्टी गवर्नर भी आ जाता है। उक्त संशोधन में यह बात नहीं कही गयी है कि जो व्यक्ति गवर्नर की जगह काम करेगा वह व्यवस्थापिका का सदस्य नहीं होगा। क्योंकि उसके गवर्नर हो जाने के कारण यही समझा जायेगा कि उसने व्यवस्थापिका में अपना स्थान रिक्त कर दिया है। इस हालत में व्यवस्थापिका में एक स्थान खाली होगा और उसकी पूर्ति करनी होगी। इस संशोधन का यह परिणाम होगा। हमें इस मसले पर विचार करके यह देखना चाहिये कि स्थिति को और स्पष्ट करने के लिये क्या किया जा सकता है और मुझे कुछ नहीं कहना है। यही एक बात मेरे ख्याल में आयी और मैंने व्यक्त कर दी।

***अध्यक्षः** और कोई सदस्य इस पर बोलना चाहते हैं?

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** अध्यक्ष महोदय, खण्ड 6 को लेकर जिस पर अभी गौर किया जा रहा है, मुझे एक कठिनाई मालूम हो रही है। पहले उपखण्ड में कहा गया है कि गवर्नर प्रान्तीय व्यवस्थापिका का सदस्य नहीं होगा और अगर ऐसा हुआ तो गवर्नर चुना जाने के बाद ऐसा समझा जायेगा कि उसने व्यवस्थापिका में अपना स्थान रिक्त कर दिया है। उपखण्ड 2 में कहा गया है कि गवर्नर किसी भी अन्य लाभप्रद पद या ओहदे पर नहीं रहेगा। हमने सभा में एक संशोधन रख कर जिसकी सूचना काफी पहले दी जा चुकी है, ऐसी व्यवस्था कर दी है कि गवर्नर के पद का उम्मीदवार व्यक्ति कहीं भी गवर्नमेंट के मातहत या स्थानीय हुकूमतों के मातहत भी कोई लाभप्रद पद या ओहदा नहीं ग्रहण कर सकता। यहां तक तो उपखण्ड 2 बिल्कुल दुरुस्त है।

उपखण्ड 2 में मुझे जो कठिनाई मालूम देती है वह यह है कि खण्ड में यह कहा गया है कि गवर्नर ऐसा कोई ओहदा नहीं ले सकता जिससे उसको माली नफा हो। इससे तो यह भी अर्थ निकलेगा कि गवर्नर ऐसा पद ग्रहण कर सकता है जो अवैतनिक हो। उदाहरण के लिए वह किसी म्युनिसिपैलिटी का मैम्बर हो सकता

है, या किसी लिमिटेड कम्पनी का या अन्य इसी तरह के प्रतिष्ठान का डाइरेक्टर हो सकता है। मेरा निवेदन है कि मसविदा बनाने वाली कमेटी आखिरी तौर पर विधान बनाते समय जब इस रिपोर्ट पर विचार करे तो इस बात पर भी पूरा विचार करे।

अब उपखण्ड 4 पर आइये। इसमें यह व्यवस्था की गयी है कि गवर्नर के काल में उसके वेतन और भत्ते आदि में कमी नहीं की जायेगी। पर इसमें यह नहीं कहा गया है कि उसके कार्य-काल में उसके वेतनादि में वृद्धि होगी या नहीं। कमेटी ने गवर्नर के वेतनादि में कमी नहीं करने दी है। इसका स्पष्ट कारण यही मालूम होता है कि गवर्नर राजनीति के दाव-पेंच का शिकार न बने और उसकी मर्यादा तथा उसके वेतनादि दलबंदी से ऊपर रखे जायें। यदि गवर्नर के वेतनादि में वृद्धि की बात व्यवस्थापिका पर छोड़ दी जाती है तो, गोकि गवर्नर वेतन-वृद्धि के किसी भी प्रयास में जरा भी हाथ न बटाये, पर जनता की ओर से यह आक्षेप लगाया जा सकता है कि अपनी वेतन-वृद्धि के लिये वह परोक्ष रूप से कोशिश कर रहा है। मेरी समझ में विधान में इस तरह की बात आ जाने से इस ऊंचे पद की मर्यादा में कमी आ जाती। इस खण्ड के सम्बन्ध में जो संशोधन पेश किया गया है, मैं उसका समर्थन करूंगा। गवर्नर के वेतनादि नियत करने में व्यवस्थापिका का कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिये।

***श्री के.एम. मुंशीः** यह संशोधन तो वापस ले लिया गया है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** यह तो अच्छा संशोधन था। खैर, मुझे इस पर और कुछ कहने की जरूरत नहीं है। इस बात को मसविदा बनाने वाली कमेटी ध्यान में रख सकती है।

कुछ अन्य बातें भी जिन पर सावधानी से विचार करना जरूरी है। गोकि मैं समझता हूं कि यह उपयुक्त समय नहीं कि विस्तार की बातों में जाया जाये, पर मसविदा बनाने वाली कमेटी के विचारार्थ मैंने यह सुझाव रख दिये हैं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्री अणे ने इस खण्ड के सम्बन्ध में जो कुछ कहा है, उसके बारे में मैं चन्द शब्द कहना चाहता हूं। उनका ख्याल है कि गवर्नर की अनुपस्थिति में जब डिप्टी गवर्नर कार्य करेगा तो व्यवस्थापिका में उसका स्थान रिक्त हो जायेगा। डिप्टी गवर्नर उसी सूरत में गवर्नर होगा, जब गवर्नर अपना ओहदा खाली कर देगा। पं. पन्त के संशोधन

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

के अनुसार गवर्नर का स्थान आकस्मिक रूप से रिक्त होने पर उसके शेष कार्यकाल तक डिप्टी गवर्नर उसके ओहदे पर रहेगा और उसकी अनुपस्थिति में भी वह उसकी जगह पर काम करेगा। अगर गवर्नर अपना पद त्याग करे या उसकी मृत्यु हो जाये तो उस हालत में जब डिप्टी गवर्नर, गवर्नर होगा तो व्यवस्थापिका की सदस्यता का उसका अधिकार जाता रहेगा। पर अगर बीमारी या अनुपस्थिति के कारण गवर्नर अपना काम नहीं कर पाता है तो डिप्टी गवर्नर उसकी जगह काम करेगा। पर बहैसियत डिप्टी गवर्नर के, न कि गवर्नर के और, इसलिये इस हालत में व्यवस्थापिका में उसका स्थान रिक्त न होगा।

अब पूर्ववक्ता की बात पर आता हूं। जो उन्होंने उपखण्ड 2 के सम्बन्ध में कही है। यह उपखण्ड कहता है कि गवर्नर कोई लाभप्रद पद या ओहदा ग्रहण नहीं करेगा। उनका कहना है कि मेरा यह संशोधन कि कोई सरकारी नौकर गवर्नर के निर्वाचन के लिये उम्मीदवार नहीं चुना जा सकता, काफी व्यापक है और इसलिये यह उपखण्ड अनावश्यक है। गवर्नर पद के लिये उम्मीदवार चुना जाना, और गवर्नर होने के बाद और कोई पद ग्रहण करना इन दोनों में अन्तर है, जिसे वह भूल जाते हैं। हो सकता है कि गवर्नर चुनाव के समय सरकारी नौकर न हो, पर चुनाव के बाद और कोई पद ग्रहण कर ले। मतलब यह है कि गवर्नर पूरा समय देने वाला सरकारी कर्मचारी है और वह दूसरा कोई पद नहीं ले सकता। इस उपखण्ड का यही प्रयोजन है।

अब उपखण्ड 4 को लीजिये। अक्सर जो व्यवस्थापिका गवर्नर के खिलाफ होगी, वह गवर्नर के वेतन को घटाने की कोशिश करेगी न कि बढाने की। फिर भी इस उपखण्ड में 'change' शब्द की जगह 'diminished' शब्द रखना पसन्द करूंगा।

यह खण्ड ज्यों का त्यों स्वीकार किया जा सकता है।

***अध्यक्षः** मैं खण्ड पर मत लेता हूं। कोई संशोधन नहीं रखा गया है।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

खण्ड 7

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** यह खण्ड यों है:

''खंड 7 प्रान्त के शासन प्रबन्ध के अधिकार को गवर्नर या तो प्रत्यक्ष रूप से या परोक्ष रूप से अपने अधीनस्थ अफसरों द्वारा प्रयोग में

लायेगा, परन्तु इससे राज्य संघ की पार्लियामेंट को अधीनस्थ अधिकारों को काम सौंपने में कोई बाधा नहीं होगी, न इससे यह समझा जायेगा कि गवर्नर को कोई ऐसे काम हस्तान्तरित किये गये हैं जो किसी वर्तमान भारतीय कानून द्वारा किसी अदालत, न्यायाधीश या अफसर या किसी स्थानीय या अन्य अधिकारी को सौंपे गये हों।''

मैं इस प्रस्ताव को सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** श्री. अनन्तशयनम् आयंगर, आपका एक संशोधन है न?

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** मैं अपने संशोधन को अभी नहीं पेश करता। किसी दूसरे खण्ड के लिये इसे रख छोड़ता हूं।,

***अध्यक्षः** जहां तक इस खण्ड का सम्बन्ध है, आप उसे नहीं पेश कर रहे हैं। बहुत अच्छी बात है।

***श्री विश्वनाथ दासः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं किः

''खंड 7 में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जायेः

'शर्त यह है कि संघीय व्यवस्थापिका ऐसे कर्तव्यों के लिए जो इसकी ओर से पूरे किये जायेंगे खर्च देगी।'।''

यह एक साधारण संशोधन है और शायद निगाह में न आया था जिससे छूट गया। सदस्यों को मालूम है कि प्रान्तीय तथा संघीय विधानों में उनके कर्तव्यों और दायित्वों को स्पष्ट रूप से रख दिया गया है। वर्तमान खण्ड में संघ को यह अधिकार दिया गया है कि वह प्रान्तीय शासन व्यवस्था को अपने प्रान्तीय कर्तव्यों के अलावा अन्य कई कामों को पूरा करने का आदेश दे सकता है। ऐसे कामों के लिये यह न्यायसंगत है कि संघीय व्यवस्थापिका प्रान्तीय व्यवस्थापिका को खर्च दे। मैं दो कारणों से यह संशोधन रखता हूं। एजेण्ट प्रिन्सिपल का काम करता है और यह उचित है। प्रिन्सिपल एजेण्ट को अपने लिये किये हुये कामों के लिये कुछ दे। दूसरे संघ की जिम्मेवारी तभी पूरी हो सकती है जबकि संघीय व्यवस्थापिका अपने संघ के खर्च से काम चलाने के लिये किसी को एजेण्ट तैनात करे। इन कामों का सम्बन्ध संघ पार्लियामेंट के आदेशों तथा संघ विधान द्वारा प्रान्तीय शासन प्रबन्धकों के सुपुर्द किये गये कामों से हो सकता

[श्री विश्वनाथ दास]

है। ऐसे कामों के लिये यह उचित है कि प्रिन्सिपल अपने कार्यों को अंजाम देने के लिये एजेण्ट को खर्च दे। यह सच है कि गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया एक्ट में एक ऐसी धारा है कि उसके कामों को प्रान्तीय शासन प्रबन्ध बिना कोई रकम लिये पूरा करें, पर हम एकात्मक शासन-पद्धति की जगह संघात्मक शासन-पद्धति स्थापित करना चाहते हैं। इसलिये मैं यह जरूरी समझता हूं कि प्रान्त को इन कामों के लिये खर्च मिलना चाहिये।

*__अध्यक्षः__ खण्ड 7 और उस पर संशोधन पेश हो चुके हैं। मूल प्रस्ताव और संशोधन दोनों पर ही अब विचार किया जा सकता है। जो सदस्य इस पर कुछ कहना चाहते हैं, कह सकते हैं।

*__श्री अजित प्रसाद जैन__ (संयुक्त प्रान्तः जनरल): श्रीमान्, प्रस्तुत खंड में यह कहा गया है कि प्रान्त के शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकारों को गवर्नर या तो प्रत्यक्ष रूप से या परोक्ष रूप से अपने अधीनस्थ अफसरों द्वारा प्रयोग में लायेगा। संघ-विधान समिति ने भी इसी तरह के एक खण्ड की सिफारिश की है, जो यों है: ''इस विधान के आदेशों के अधीन संघ का शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार राष्ट्रपति को प्राप्त होगा।'' प्रस्तुत खण्ड अर्थात् वह खण्ड जिसकी सिफारिश प्रान्तीय विधान समिति ने की है, कम या वेशी सन् 1935 के गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया एक्ट के आधार पर है। गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया एक्ट में इस बात को रखने का एक कारण था। सन् 1935 के एक्ट के अनुसार कुछ नौकरियां ऐसी थीं जो भारत मंत्री के नियंत्रण के अधीन थीं, पर उन्हें काम करना पड़ता था, भारत सरकार के अधिकाराधीन। परन्तु इस नवीन विधान में यह भेद उठा दिया जायेगा। मैं नहीं समझता कि किसी तरह के भेद को स्थायी बनाने के लिये यहां यह काव्य रचना की गयी है। पर जो भी हो, मेरा यह ख्याल है कि संघ-विधान समिति ने जो खण्ड रखा है वह सरल है और उसकी वाक्य रचना ज्यादा अच्छी है और शायद उसको रख लेने में ही अधिक बुद्धिमानी है।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः__ इस खण्ड के सम्बन्ध में एक ही संशोधन है जिसे श्री विश्वनाथ दास ने रखा है। वह यह है कि संघीय व्यवस्थापिका ऐसे कर्तव्यों के लिये जो इसकी ओर से पूरे किये जायें, खर्च देगी। मुझे डर है कि यहां कुछ गलतफहमी हो गयी है, अन्यथा यह संशोधन नहीं आता। उनकी

यह धारणा है कि यहां संघ के अधिकारियों के कर्तव्यों की बात कही गयी है। इस खण्ड का आशय यह है कि प्रान्त के शासन प्रबन्ध के अधिकार को गवर्नर या तो प्रत्यक्ष रूप से या परोक्ष रूप से या अपने अधीनस्थ अफसरों द्वारा प्रयोग में लायेगा। यहां केवल प्रान्त के शासन प्रबन्ध के अधिकार की बात कही गयी है न कि संघीय शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकारों की बात। इसलिये यह सवाल ही नहीं उठता कि संघीय व्यवस्थापिका से खर्च देने को कहा जाये। गलतफहमी या खण्ड को गलत समझने के कारण यह संशोधन पेश किया गया है। यह खण्ड बिल्कुल विवादशून्य है। आशा है, सभा इसे स्वीकार करेगी।

***अध्यक्षः** खण्ड 7 पर संशोधन रखा जा चुका हूं। प्रस्ताव यह है कि ''निम्नलिखित आदेश खण्ड में जोड़ दिया जाये:

'शर्त यह है कि संघीय व्यवस्थापिका ऐसे कर्तव्यों के लिए जो इसकी ओर से पूरे किये जायेंगे, खर्च देगी।''

संशोधन नामंजूर हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं मूल खण्ड पर राय लेता हूं, जो यों है:

''प्रान्त के शासन प्रबंध के अधिकार को गवर्नर या तो प्रत्यक्ष रूप से या परोक्ष रूप से या अपने अधीनस्थ अफसरों द्वारा प्रयोग में लायेगा, परन्तु इससे राज्य संघ की पार्लियामेंट को अधीनस्थ अधिकारियों को काम सौंपने में बाधा नहीं होगी, न इससे यह समझा जायेगा कि गवर्नर को कोई ऐसे काम हस्तान्तर किये गये हैं जो किसी वर्तमान भारतीय कानून द्वारा किसी अदालत, न्यायाधीश या अफसर या किसी स्थानीय या अन्य अधिकारी को सौंपे गये हों।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

खण्ड 8

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं खण्ड को पेश करता हूं, जो यों है:

''इस विधान के आदेशों के, और यदि कोई विशेष समझौता हो तो उसके, विपरीत न जाते हुये हर एक प्रान्त के शासन-प्रबंध सम्बन्धी अधिकार की सीमा उन मामलों तक होगी, जिनके सम्बन्ध में प्रान्तीय व्यवस्थापिका को कानून बनाने का अधिकार हो।''

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

[नोटः इस आदेश में विशेष समझौते की ओर जो संकेत किया गया है उसकी कुछ व्याख्या आवश्यक है। यह सम्भव है कि भविष्य में कुछ भारतीय रियासतों या भारतीय रियासतों के समूहों की यह इच्छा हो कि कुछ पारस्परिक हित के विशेष मामलों में उनका और किसी पड़ोस के प्रान्त का एक ही शासन प्रबन्ध हो। ऐसी दशाओं में सम्बन्धित नरेश एक विशेष समझौते द्वारा इस प्रान्त को आवश्यक अधिकार सौंप सकते हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इससे किसी सम्बन्धित रियासत या रियासतों के राज्य संघ में सम्मिलित होने में कोई बाधा न होगी, क्योंकि राज्यसंघ में सम्मिलित होने के विषय का सम्बन्ध राज्यसंघ के विषयों से होगा और जिस अधिकार को सौंपने की यहां कल्पना की गयी है उसका सम्बन्ध प्रान्तीय विषयों से होगा।]

सभा की स्वीकृति के लिये मैं इसे उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्षः** श्री सन्तानम्, आपने एक संशोधन भी दिया है न!

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रासः जनरल)ः श्रीमान्, मेरा ख्याल है कि इस खण्ड पर व्यापक रूप से विचार करना आवश्यक है। खण्ड का सार यही है कि हर एक प्रान्त के शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार की सीमा उन मामलों तक होगी जिनके सम्बन्ध में प्रान्तीय व्यवस्थापिका को कानून बनाने का अधिकार हो। जहां तक इस सिद्धान्त का प्रश्न है, इस पर कोई आपत्ति नहीं हो सकती।

***अध्यक्षः** क्या यह ठीक न होगा कि संशोधनों के पेश हो जाने पर हम इस पर विचार करें?

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** मैं यह कहने जा रहा था कि इस खण्ड पर विचार कल प्रात:काल के लिये स्थगित रखा जाये, यदि ऐया सम्भव हो तो।

***अध्यक्षः** यह सम्भव हो सकता है। पर मेरी समझ में यह ज्यादा अच्छा होगा कि संशोधन पेश कर दिये जायें, ताकि सदस्यों को मूल खण्ड और संशोधन दोनों पर ही विचार करने का मौका मिल जाये।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** तब मैं अपनी बात आगे के लिये सुरक्षित रखता हूं।

***अध्यक्ष:** ठीक है।

***श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

"खण्ड 8 में 'इस विधान के आदेशों के, और यदि कोई विशेष समझौता हो तो उसके, विपरीत न जाते हुये' शब्दों की जगह ये शब्द रखे जायें 'ऐसी सीमाओं और ऐसे विस्तारों के अधीन जिनकी व्यवस्था विधान में की गयी हो'।"

श्रीमान्, जैसा कि सर अल्लादी कृष्णास्वामी ने कहा है, साधारणत: प्रत्येक प्रान्त का शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार उन्हीं मामलों तक सीमित होता है जिनके सम्बन्ध में प्रान्तीय व्यवस्थापिका को कानून बनाने का अधिकार है। मेरे संशोधन का मतलब यह है कि प्रान्त को अपने शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार सीमा के बाहर जाने का अधिकार नहीं होना चाहिये। इसके लिये राज्य-संघ के विधान में खासतौर पर व्यवस्था होनी चाहिये कि किस प्रकार कोई प्रान्त अपने पड़ोसी प्रान्त या रियासत से समझौता करता है और अपनी शासनाधिकार सीमा बढ़ा सकता है। और इसी व्यवस्था के अधीन प्रान्त ऐसा कर सकते हैं, न कि अपने अधिकार के बल से। ऐसा न होगा तो समूचे राज्य-संघ में गड़बड़ी पैदा होगी और विकट स्थिति उत्पन्न हो जायेगी। हो सकता है कि केन्द्रीय मंत्रिमंडल को इसे रोकने की क्षमता न हो और वह कठिनाई में पड़ जाये। इसलिये मैं चाहता हूं कि ऐसे समझौतों के अधिकार उन नियंत्रणों तक ही सीमित रहें जो विधान में दिये गये हों। इसलिये ऐसे समझौते उन पाबन्दियों के अधीन ही किये जायेंगे जिनकी व्यवस्था विधान में हो। किसी भी प्रान्त को यह अधिकार न होना चाहिये कि वह विधान के बाहर जावे; किसी पड़ोसी प्रान्त या रियासत से कोई समझौता करे। इसी आवश्यक बात की ओर ध्यान आकृष्ट करने के लिये मैंने संशोधन रखा है।

हां, जैसा सर अल्लादी कृष्णास्वामी ने कहा है, यदि इस पर विचार स्थगित रखा जाता है और कोई इससे अच्छा मसविदा बनाया जाता है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मैं केवल यही चाहता हूं कि यह खण्ड ज्यों का त्यों रहने दिया जाये जिससे कि प्रान्त ऐसा समझे कि वह पड़ोसी रियासतों के साथ जैसा चाहे सम्बन्ध रख सकते हैं और इच्छानुसार संघ-सरकार को पूछे या बेपूछे, जैसा चाहें समझौता कर सकते हैं। ऐसे मामले में संघ-सरकार की अनुमति आवश्यक होनी चाहिये।

[श्री के. सन्तानम्]

न सिर्फ संघ-सरकार की ही अनुमति बल्कि कुछ मामलों में तो संघीय व्यवस्थापिका की अनुमति भी लाजिमी होनी चाहिये। किन मामलों में संघ-सरकार की स्वीकृति से समझौता होगा और किन मामलों में संघीय व्यवस्थापिका की स्वीकृति से, इन सबकी व्यवस्था संघ के विधान में होनी चाहिये। इस महत्वपूर्ण बात की ओर ध्यान आकर्षित करने के लिये ही मैंने यह संशोधन रखा है।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** श्रीमान्, मेरे पास इसका मसविदा तैयार है। श्री सन्तानम् का संशोधन दोषशून्य है। आप जैसा चाहें समझौता या व्यवस्था कर सकते हैं। इससे प्रश्न का अन्तिम रूप से फैसला नहीं हो जाता है। हो सकता है कि खण्ड के वर्तमान स्वरूप पर कोई आपत्ति न हो क्योंकि इससे हम किसी सिद्धान्त विशेष से बंध नहीं जाते हैं। परन्तु अगर हमारा उद्देश्य वस्तुत: यह है कि इस प्रश्न को सुलझाया जाये और प्रांतीय शासन प्रबन्ध को इस बात के लिये समर्थ बनाया जाये कि वह रियासतों के साथ समझौता करके आवश्यक विषय का शासन प्रबन्ध संभालें, तो इसके लिये हो सकता है विशेष व्यवस्था करनी आवश्यक हो। श्रीमान्, यदि आपकी अनुमति हो तो मैं एक संशोधन रखूंगा, अथवा अगर संशोधन न भी पेश हो तो मैंने जो कुछ कहा है उसके सम्बन्ध में अपना मन्तव्य स्पष्ट कर दूंगा।

***अध्यक्ष:** मैं आपको अवसर दूंगा। अब केवल एक ही संशोधन रह गया है और उसके पेश हो जाने के बाद मैं आपको मौका दूंगा।

श्री गोकुलभाई भट्ट (पूर्वी राजपूताना रियासत: समूह): सभापति जी, मैं एक संशोधन आपके सामने रख रहा हूं। यह मेरा क्लाज 8 में संशोधन है। उसके नोट में एक ठिकाने पर लिखा है कि ''In such cases the rulers concerned may by a special agreement cede the necessary jurisdiction to the province'', यहां जहां rulers शब्द आया है उस जगह पर मैं states शब्द रखना चाहता हूं क्योंकि अभी तक इस नोट में सब जगह 'स्टेट' शब्द आता रहा है। जब हमारी रियासतों में जिम्मेदाराना हुकूमत होने वाली है और कई जगहों से इसकी स्थापना भी हो रही है तब मैं मानता हूं कि rulers अकेले ही वहां न रह जायें। लेकिन 'स्टेट' शब्द रखने में हम rulers और रियाया दोनों को शामिल करते हैं। जो Agreement होने वाले हैं और जो होने चाहियें, वह states और हुक्मरान दोनों की राय से होने चाहियें

यह हमारा मतलब है। मैं मानता हूं कि हमारे सरदार पटेल साहब को इसे मानने में कोई आपत्ति नहीं होगी कि rulers के बजाय states शब्द रखने से ज्यादा इज्जत बढ़ती है।

श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीयः गोपाल भाई ने जो संशोधन रखा है कि रूलर्स के बजाय ''स्टेट'' शब्द रखा जाये वह मुनासिब है। क्योंकि स्टेट्स में रूलर्स शामिल हैं। इसलिये यह संशोधन मंजूर किया जाना चाहिये।

***माननीय पं. गोविन्दवल्लभ पन्तः** अध्यक्ष महोदय, यद्यपि बहुत ही महत्वशून्य और नगण्य बात है फिर भी यह प्रासंगिक है और इस सम्बन्ध में मैं प्रकाश चाहूंगा। श्री भट्ट का संशोधन एक शब्द को लेकर है जो खण्ड 8 के नोट में आया है। क्या यह नोट भी इस स्मृति-पत्र का अंश है? क्या सदस्यों को नोट के किसी शब्द पर या उसकी किसी भी बात पर संशोधन रखने का हक है? मैं नोट को इस खण्ड का लाजिमी हिस्सा नहीं समझता हूं। यह केवल व्याख्यात्मक है। व्यक्तिगत रूप से तो मैं यह समझता हूं कि नोट की भाषा के सम्बंध में चिन्ता करना आवश्यक है। यदि मूल खण्ड ही हटा दिया जाता है तो फिर नोट खुद खत्म हो जायेगा। यदि मूल खण्ड में कुछ वृद्धि की जाती है तो सम्भव है कि नोट संशोधित खण्ड से मेल न खाये। मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या आपका यह मत है कि नोट सम्बन्धी संशोधन रखा जा सकता है और उस पर विचार किया जा सकता है?

***श्री के.एम. मुंशीः** श्रीमान्, मैं अपने मित्र सर अल्लादी का समर्थन करता हूं। इस खण्ड पर पुनर्विचार आवश्यक है। खण्ड का स्वरूप यह है:

''इस विधान के आदेशों के, और यदि कोई विशेष समझौता हो तो उसके विपरीत न जाते हुये एक प्रान्त के शासन प्रबंध सम्बन्धी अधिकार की सीमा उन मामलों तक होगी जिनके सम्बन्ध में प्रान्तीय व्यवस्थापिका को कानून बनाने का अधिकार हो।''

पर यहां ''यदि कोई विशेष समझौता हो, तो उसके विपरीत न जाते हुये.....'' शब्द आये हैं। इनका स्पष्टीकरण नहीं किया गया है। इससे तो यही ज़ाहिर होगा कि प्रान्तीय व्यवस्थापिका को इस विधान की रू से नहीं प्रत्युत किसी भी किये गये विशेष समझौते की रू से कानून बनाने का हक हासिल होगा। इससे स्पष्टतः बड़ी जटिलतायें पैदा होंगी। इसलिये मेरा यह कहना है कि इस खण्ड पर विचार

[श्री के.एम. मुंशी]

करना आवश्यक है और इसको समुचित रूप देने के लिये कल तक का समय मिलना चाहिये। हो सकता है, इसका असर वैदेशिक विषयों पर भी पड़े।

*__अध्यक्षः__ कुछ सदस्यों ने यह इच्छा ज़ाहिर की है इस खण्ड पर आगे विचार कल के लिये स्थगित रखना चाहिये। मैं इस सम्बन्ध में अन्य सदस्यों की भी राय जानना चाहता हूं। यदि बहुत से सदस्य ऐसा ही चाहते हैं कि इस पर विचार स्थगित रखा जाये तो मैं इसके सम्बन्ध में शीघ्रता नहीं करूंगा।

*__सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः__ श्रीमान्, मैं श्री मुंशी के इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं कि इस मसले पर विचार कल के लिये स्थगित रखा जाये। पर मैं अपनी राय की पुष्टि के लिये एक बात कहना चाहता हूं और वह यह है कि विधान के अन्दर प्रान्त के बहैसियत एक इकाई के कुछ अधिकार और कर्तव्य हैं जिनकी व्याख्या की जा चुकी है। इस खण्ड के जरिये आप यह व्यवस्था कर देते हैं कि प्रान्त किसी रियासत के कहने पर कुछ विषयों का शासन प्रबन्ध अपने ऊपर ले ले। यह तो प्रान्तीय अधिकार-क्षेत्र को बढ़ा देना है। और अगर यही बात है तो क्या कानून-निर्माण सम्बन्धी, शासन प्रबन्ध सम्बन्धी तथा न्याय सम्बंधी विषयों तक उसकी अधिकार-सीमा बढ़ाई जायेगी और किस हद तक इस विशेष समझौते का समर्थन करना होगा? इस तरह के मामले में संघ की ओर से हस्तक्षेप आवश्यक है। यह ऐसे मामले हैं जिन पर सावधानी से विचार करना आवश्यक है। हम यहां केवल इतनी-सी बात जोड़ करके कि ''और यदि कोई विशेष समझौता हो तो उसके अधीन' कानून निर्माण सम्बन्धी, शासन प्रबन्ध सम्बन्धी तथा न्याय सम्बन्धी कर्तव्यों के लिये प्रान्त और रियासतों के बीच होने वाले किसी भी समझौते को निर्बाध रूप से प्रयोग में लाने का अधिकार नहीं दे सकते। इसलिये श्रीमान्, मैं श्री मुंशी के इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं कि इस समूचे खण्ड पर विचार कल प्रातःकाल के लिये स्थगित रखा जाये। मैंने एक संशोधन की सूचना दी है। सूचना मैंने आज 2 बजे दी है, पर आशा है कि वह समय के अन्दर प्राप्त मानी जायेगी। मेरा संशोधान यों है:

''1. अध्याय 1 के पैराग्राफ 8 में 'और यदि कोई विशेष समझौता हो तो उसके' शब्द निकाल दिये जायें।

2. अध्याय 1 के पैराग्राफ 8 के बाद निम्नलिखित पैरा जोड़ दिया जाये:

'8 (क) प्रान्त को कानून निर्माण सम्बन्धी, शासन प्रबंध सम्बन्धी या न्याय सम्बन्धी कर्तव्यों को जो किसी भारतीय रियासत को

प्रान्त और सम्बन्धित रियासत के बीच तय पाये हुये समझौते के अनुसार प्राप्त हैं, पूरा करने का अधिकार प्राप्त है। पर शर्त यह है कि समझौता उन्हीं विषयों से सम्बन्ध रखता हो जो प्रान्त के भारतीय राज्य-संघ का सदस्य होने के नाते उसकी अधिकार-सीमा के अन्तर्गत है।'

ऐसा समझौता होने पर, समझौते की शर्तों के अधीन प्रान्त को अपने समुचित अधिकारियों के जरिये कानून निर्माण सम्बन्धी, शासन प्रबंध सम्बन्धी तथा न्याय सम्बन्धी कर्तव्यों को प्रयोग में लाने का अधिकार होगा।''

अगर इस सम्बन्ध में आप कोई आदेश या व्यवस्था रखना चाहते हैं तो वह पूर्ण होनी चाहिये और इन्हीं मन्तव्यों पर होनी चाहिये। परन्तु अगर आपका यह विचार है कि इस प्रश्न को तब तक के लिये स्थगित रखा जाये जब तक कि संघ-विधान की सारी बातों पर विचार किया जायेगा, तो दूसरी बात है। पर मैं यह नहीं समझता कि एक उपखण्ड बढ़ा देने से या एक पैरा जोड़ देने से इसकी व्यवस्था हो जायेगी। इस मामले में मेरा अपना तो यही विचार है और यह मैं कह ही चुका हूं। इस सारे मामले पर विचार कल प्रातःकाल के लिये स्थगित रख सकते हैं।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः__ मेरा सुझाव है कि इस प्रश्न में बड़ी कानूनी जटिलतायें हैं और जैसा कि सर अल्लादी ने कहा है कि इस पर और विचार होना चाहिये। मेरा सुझाव है कि दो या तीन कानून-विशारदों की एक समिति नियुक्त कर दी जाये जो इस प्रश्न पर विचार करे और यदि आवश्यक समझे तो प्रस्तुत खण्ड में संशोधन रखे या कोई सुधार करे, ताकि कल सवेरे इस मामले को सुलझाने में हमें आसानी हो।

*__चौ. खलीकुज्जमां__ (संयुक्त प्रान्तः मुस्लिम): मैं इसका समर्थन करता हूं।

*__अध्यक्षः__ क्या आप समिति के सदस्यों का नाम सुझायेंगे ?

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः__ सर अल्लादी, डा. अम्बेडकर, श्री मुंशी और श्री चुंद्रीगर।

***एक माननीय सदस्यः** चूंकि मामला रियासतों से सम्बन्ध रखता है, मेरा सुझाव है कि समिति में एक रियासती प्रतिनिधि भी शामिल कर लिया जाये।

***श्री के.एम. मुंशीः** मैं इसके लिये सर बी.एल. मित्तर का नाम रखता हूं।

***श्री मुहम्मद शरीफ** (मैसूर): मेरा प्रस्ताव यह है कि प्रस्तावित समिति में सर आरकाट रामस्वामी मुदालियर का नाम शामिल किया जाये। इस मामले पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना आवश्यक है और इस मामले में रियासतों का हित भी शामिल है। चूंकि हम रियासतों का प्रतिनिधित्व करते हैं, हम चाहते हैं कि इस प्रश्न पर हम अपनी खूब सोची-समझी हुई बात कहें। मेरा अनुरोध है कि इस प्रश्न पर विचार स्थगित रखा जाये और जो कमेटी बने वह सारी बातों पर खूब विचार करे। इस काम के लिये मैसूर के दीवान का नाम कमेटी में शामिल करने का मैं सुझाव रखता हूं।

***अध्यक्षः** हमारे सामने कुल 6 नाम आये हैं। चार नाम तो पहले ही आये थे और दो नाम सर बी. एल. मित्तर और सर ए. रामस्वामी मुदालियर बाद में आये हैं। मैं समझता हूं कि सभा यही चाहती है कि यह मामला एक उपसमिति को सुपुर्द कर दिया जाये और समिति की रिपोर्ट परसों पेश हो। हम दूसरे खंडों पर विचार करेंगे और इस खंड पर परसों विचार करेंगे। एक सदस्य ने खंड के नोट के सम्बन्ध में यह प्रश्न उठाया था कि आया नोट भी प्रस्ताव का हिस्सा है क्या? मैं नहीं समझता कि नोट प्रस्ताव का हिस्सा हो सकता है। यह तो सिर्फ व्याख्या के लिये है और नोट के सम्बन्ध में कोई संशोधन रखने की जरूरत नहीं है।

***श्री देवीप्रसाद खेतानः** मैं एक सुझाव देना चाहता हूं। आपके इस निर्णय के सम्बन्ध में कि नोट प्रस्ताव का हिस्सा नहीं हो सकता। मैं आपका ध्यान खंड 9 के नोट की ओर खींचना चाहता हूं। शायद वह नोट प्रस्ताव का अंश ही माना जायेगा। नोट यों है: ''अधिकतर गवर्नर सलाह से काम करेगा, लेकिन निम्नलिखित बातों के सम्बन्ध में वह विवेक से काम करेगा।'' मैं मानता हूं कि आमतौर पर यह बात नहीं कही जा सकती और यह केवल इसी नोट के सम्बन्ध में लागू है।

***माननीय पं. गोविन्दवल्लभ पंतः** खंड 9 का नोट तो नई धाराओं के सम्बन्ध में है, जो बाद में दी गई हैं। वह खंड का हिस्सा कतई नहीं है।

***श्री एस.वी. कृष्णमूर्ति राव** (मैसूर)**:** श्रीमान्, कमेटी जब कल इस खंड पर विचार करे तो क्या साथ-साथ वह इस सम्भावना पर विचार करेगी कि कुछ प्रान्त कई विषयों में रियासतों के साथ समझौता कर लें और इन विषयों के शासन प्रबन्ध के लिये उन्हें कुछ अधिकार दे दें? प्रश्न के इस पहलू पर भी क्या कमेटी विचार करेगी?

***अध्यक्षः** जब भी कोई प्रश्न उठेगा, हम उस पर विचार करेंगे। इस खंड पर विचार परसों के लिये स्थगित रखा जाता है। और अब हम दूसरे खंड को लेते हैं।

***श्री एन.बी. गाडगिल** (बम्बईः जनरल)**:** 5½ बज चुके हैं और बेहतर होगा कि आज बैठक स्थगित हो और हम प्रातः फिर समवेत हों। हमने आज काफी काम किया है।

***अध्यक्षः** क्या सभा की यही इच्छा है कि अब बैठक स्थगित हो?

***माननीय सदस्यगणः** 'हां'।

***अध्यक्षः** सभा अब अवकाश चाहती है। अस्तु बैठक कल दोपहर तीन बजे के लिये स्थगित होती है। पेश्तर इसके कि हम सब उठें, मैं एक ऐलान सुना देना चाहता हूं। मेरी निगाह में यह बात लायी गयी है कि संघ-विधान पर संशोधन रखने की सूचना का समय कल पांच बजे शाम तक बहुत कम है और कुछ सदस्य चाहते हैं कि वह समय बढ़ा दिया जाये। मैं इसकी अवधि शुक्रवार 5 बजे शाम तक बढ़ा देता हूं।

इसके बाद सभा बृहस्पतिवार, 17 जुलाई, सन् 1947 ई, को दोपहर के 3 बजे तक के लिए स्थगित हुई।

CON. 3. 4.4.47
1000

अंक 4
संख्या 4

बृहस्पतिवार
17 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

अनुकरणीय प्रांतीय विधान के सिद्धांतों के सम्बन्ध में रिपोर्ट (खण्ड 9 से 18)
–गत संख्या से आगे 1

भारतीय विधान-परिषद्

बृहस्पतिवार, 17 जुलाई सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक तीन बजे दिन को कांस्टीट्यूशन हाल नई दिल्ली में माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में आरम्भ हुई।

***अध्यक्षः** कल हमने अनुकरणीय प्रांतीय विधान के सिद्धान्तों से सम्बन्धित रिपोर्ट के खण्ड 8 को एक छोटी कमेटी के पास भेज दिया था। मुझे मालूम हुआ है कि कमेटी किसी निर्णय पर पहुंच गई है और उसने एक रिपोर्ट पेश की है। यह रिपोर्ट आज सदस्यों के पास भेज दी जायेगी और कल उस खण्ड पर विचार होगा। अब हम खण्ड 9 पर विचार करेंगे।

खण्ड 9

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल** (बंबई: जनरल): मैं खण्ड 9 को पेश करता हूं। उसमें कहा गया है:

''एक मन्त्रिमंडल होगा जो गवर्नर को उसके कर्त्तव्यपालन में सहायता व सलाह देगा, सिवाय उस दशा के जब कि उसे इस विधान द्वारा या इसके अधीन अपने कर्त्तव्यों का या अपने किसी कर्त्तव्य का अपने विवेक से पालन करने के लिये आदेश न हो।''

इस खण्ड में यह व्यवस्था की गई है कि एक मंत्रिमंडल होगा जो गवर्नर को उसके कर्त्तव्यपालन में सहायता व सलाह देगा। लेकिन एक अपवाद है यानी सिवाय उस दशा के जब कि प्रस्तावित विधान के अनुसार उसे अपने कर्त्तव्यों या अपने किसी कर्त्तव्य का अपने विवेक से पालन करने का आदेश हो। इन बातों का उल्लेख बाद को आने वाले खण्डों में होगा, इसलिये सिर्फ एक व्याख्यात्मक नोट जोड़ दिया गया है। इसलिए मैं सिर्फ खण्ड 9 को पेश करूंगा और नोट को या उसके अधीन दिये हुये खण्डों को पेश न करूंगा क्योंकि उनका उल्लेख अन्य खण्डों में किया गया है। श्रीमान्, मैं खण्ड 9 को पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** मुझे इस खण्ड में कई संशोधनों की सूचना मिली है। मैं जानना चाहता हूं कि उनमें से कितने पेश किये जायेंगे।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्लई** (मद्रासः जनरल): अल्पसंख्यकों की कमेटी की रिपोर्ट अभी नहीं आई है। इसलिये मैं अपने संशोधन को इस समय पेश नहीं कर रहा हूं।

(सर्वश्री आर.के. सिधवा, एच.जे. खाण्डेकर और एच.वी. कामठ ने अपने संशोधनों को पेश नहीं किया। अन्य सदस्य, जिन्होंने संशोधनों की सूचना दी थी उपस्थित नहीं थे)।

***अध्यक्षः** जहां तक मि. पोकर साहब बहादुर के संशोधन का सम्बन्ध है, वह एक ऐसे संशोधन पर संशोधन है जो पेश नहीं किया गया है; इसलिये वह पेश नहीं हो सकता है। चूंकि कोई भी संशोधन पेश नहीं किये गये हैं, इसलिये प्रस्तावित मूल खण्ड पर अब बहस हो सकती है। कोई सदस्य उस पर नहीं बोलना चाहता इसलिये मैं उस पर वोट लेने के लिये सभा के सामने रखता हूं। प्रश्न यह है कि खण्ड 9 स्वीकार कर लिया जाये।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 10

***सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड 10 स्वीकार कर लिया जाये। उसमें कहा गया है:

> **''यदि कोई ऐसा प्रश्न उठे कि कोई मामला गवर्नर के विवेक से तय होगा या नहीं तो गवर्नर अपने विवेक से जो निर्णय देगा वह अन्तिम होगा।''**

भाषा के सम्बन्ध में कुछ सन्देह प्रकट किये गये हैं लेकिन मेरे विचार में यदि इस सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया जाये तो अंतिम मसविदा बनाते समय भाषा के सम्बन्ध में विचार किया जा सकता है। मैं समझता हूं कि जहां तक इस प्रस्ताव के सिद्धांत का सम्बन्ध है, उसके बारे में कोई आपत्ति नहीं होगी।

श्रीमान्, मैं इसे पेश करता हूं।

(कोई भी संशोधन पेश नहीं किये गये)

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 11

***सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मैं खण्ड 11 को सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं। उसमें कहा गया है:

''कोई अदालत इस सम्बन्ध में जांच नहीं करेगी कि किसी प्रश्न पर मंत्रियों ने गवर्नर को सलाह दी है या नहीं और अगर दी है तो क्या सलाह दी है?''

यह स्पष्ट है कि यदि गवर्नर को कोई मंत्री सलाह देता है तो वह ऐसा विषय नहीं है जो किसी अदालत में पेश किया जाये। इसलिये यह एक साधारण खण्ड है और इसकी व्याख्या की आवश्यकता नहीं है। श्रीमान्, मैं इसे पेश करता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 12

***सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड 12 स्वीकार कर लिया जाये। उसमें कहा गया है:

''गवर्नर के मंत्री गवर्नर द्वारा चुने जायेंगे और बुलाये जायेंगे और वे उसी काल तक पदासीन रहेंगे जब तक उसकी इच्छा हो।''

श्री अज़ीज़ अहमद खां (संयुक्त प्रांतः मुस्लिम): जनाब सदर साहब, जो तज़वीज आपके सामने पेश की गयी है उसके अलफाज यह हैं कि गवर्नर अपने वजीरों को मुकर्रर करेगा और जिस वक्त तक वह चाहेगा उस वक्त तक उसके वजीर वजारत की हैसियत से काम करते रहेंगे। इस तज़वीज के बजाय मैं जनाब वाला की खिदमत में इसलिये हाजिर हुआ हूं कि यह तरमीम पेश करूं कि गवर्नर के वजीर इस तरह से बजरिये इंतखाव मुन्तखब हुआ करें कि असेम्बली के मेम्बरान सिंगल नान ट्रांस्फरेबल वोट से अपनी राय का इजहार करते हुये उनको मुन्तखब करें। जो तज़वीज़ सरदार पटेल साहब ने जनाब की खिदमत में पेश की है वह असल में उस तरीके पर नहीं है कि जिसके ज़रिये से इंगलिस्तान में वजीर मुकर्रर किये जाते हैं। यानी अंग्रेज़ी दस्तूर में यह तरीका है कि वहां इन्तखाब जब आम खत्म हो जाता है तो यह देखा जाता है कि जो दारुलअवाम बना है उसमें कितनी सियासी जमात आई हैं और इनमें सबसे

[श्री अज़ीज अहमद खाँ]

बड़ी तादाद किस जमात की है या कोई और जमातें इस किस्म की हैं कि जो दूसरों से मिल कर इतनी माकूल तादाद रखती हैं जिससे वह दीगर मेम्बरान पर गालिब आ जायेगी। ऐसी जमात को यह हक दिया जाता है कि वह एक वजीरे आज़म मुकर्रर कर दे और वह वजीरे आजम वज़ीरों के नाम की सिफारिश कर दे। चुनाचे उसकी सिफारिश पर वही वजारत में आ जाते हैं। यही तरीका हमारे दस्तूर में भी तजवीज किया गया है। लेकिन जो तरीका मैं अपना इस तरमीम में पेश कर रहा हूं यह कोई नया तरीका नहीं है। दुनिया में बहुत से मुकामात ऐसे हैं जहां इस तरीके पर अमल किया जा रहा है। मिसाल के तौर पर अगर जनाब वाला तहकीकात फरमायेंगे तो पता चलेगा कि इस वक्त अमरीका में भी यही तरीका है कि वहां वजीरों का ताअय्युन (मुकर्रर) नामजदगी से नहीं होता है। बल्कि इन्फारादी तौर पर राय लेते हैं जिसके जरिये से वजीर मुन्तखिब होते हैं। इन्तखाब इसी तरह से स्वीट्जरलैंड और आस्ट्रेलिया में भी वज़ीरों का होता है। और जनाब अगर मुलाहिजा फरमायेंगे तो आपको मालूम होगा कि तमाम ऐसे मामलों को जिनमें फिरकेबन्दी और जमातबन्दी मौजूद है; उनके यहां भी यही तरीका रखा गया है कि वजीरों के तकर्रूर में उन तमाम जमातों का हाथ होता है जिनके ऊपर वे वजीर हुकूमत करने वाले हों ताकि हर जमात को वजारत पर ऐतकाद हो।

हमने जहां तक गौर किया तो यह पाया कि अंग्रेजी तरीका जम्हूरियत हिन्दुस्तान के लिये बिलकुल मौजू नहीं है। हम इस तरीके जम्हूरियत का नतीजा देख रहे हैं कि जो कुछ इस मुल्क में बदअमनी व कश्त व खून इस वक्त जारी है उसकी खास वजह यही है कि हमने वह तरीका जम्हूरियत जारी किया जो हर एक के लिये हर्गिज मौजू नहीं। अगर हमने हुकूमत का नकशा ऐसे दिमाग से ईजाद करने के बाद जारी किया होता तो यह गालिबान ऐसी बाहमी नफरत और इख्तलाफात पैदा न हुऐ होते जो आज पैदा होते जा रहे हैं। लिहाजा हमको यह चाहिये और मुनासिब तरीका यही है कि वजीरों का इन्तखाब आम राय से हुआ करे। इससे यह फायदा होगा कि जिन लोगों के वह वज़ीर होने वाले हैं उनको हर वक्त अपनी रायदेहन्दों से हमदर्दी का ख्याल रहेगा और जम्हूरियत का उसूल भी मुकम्मिल हो जायेगा। और अगर ऐसा न किया गया और अंग्रेजी तरीके ही पर इक्तफा की गई तो मैं ख्याल करता हूं कि यह तरीका मौजू नहीं होगा।

जनाब वाला, आज जो जमातें बनी हुई हैं उनमें से सियासी ऐतकादात पर बहुत कम हैं बल्कि मज़हबी ऐतकादात पर बहुत ज्यादा हैं। और यह वे जमातें हैं जो आज नहीं बनीं बल्कि सैकड़ों वर्ष से और इसी हालत में हजारों साल से चली

आ रही हैं। कौन नहीं जानता कि अछूत जमात हजारों वर्ष से जिन्दा नहीं है और यह तस्व्वुर करना कि दस्तूर बनते ही मज़हबी उसूलों की जमातबन्दी खतम होकर खालिसन सयासी और इक्तसादी नजरियों पर जमातबंदी हो जायेगी, एक ख्याल खाम है।

अगर हम यह समझें कि अंग्रेजी तरीका जम्हूरियत की, जिसमें कि निजाम जमातों का खालसन सियासी ऐतकादात की बदौलत है, वही हालत हम भी अपने मुल्क में पैदा कर लेंगे तो मैं समझता हूं कि यह बहुत खौफनाक तजुरबा होगा। इसलिये मैं समझता हूं कि आस्ट्रिया और स्विट्जरलैंड के ऐसे मुमालिक जहां हमेशा आपस में इख्तलाफात रहते थे, उन्होंने भी यही तरीका इन्तखाब वजारत रखा जिसमें वह कामयाब हुये। इस कामयाबी की खास वजह यह थी कि जब कोई शख्स किसी को वजीर इन्तखाब करने में राय देगा तो कुछ न कुछ उसको आयन्दा उससे तवक्कुब जरूर होगी और कुछ न कुछ वह उसके लिये अच्छाई जरूर करेगा। लिहाजा ऐसा ही तरीका अगर हिन्दुस्तान के वास्ते अख्तियार किया जाये तो ज्यादा बेहतर होगा।

अंग्रेजी तालीम होने की वजह से हमने कोई अपना तरीका नहीं अख्तियार किया। अंग्रेजों ने यह समझकर कि जिस तरीके से हम कामयाब हुये हैं उस ही तरीके को अपने मतलब के हासिल करने की गरज से हिन्दुस्तान में भी रायज़ करना चाहिये। उन्होंने ऐसा ही किया और वह उसमें कामयाब हो गये। हमको अंग्रेजों के तरीके को तर्क करना चाहिये और उससे बेहतर तरीका अख्तियार करने की कोशिश करनी चाहिये। मुझे यकीन है कि अगर हम वजीरों का इन्तखाब आम राय से करेंगे तो यह तरीका उस तरीके से बहुत अच्छा होगा। इसलिये मैं यह उम्मीद करता हूं कि जो मैंने तरमीम पेश की है वह औरों को काबिले-कबूल होगी।

एक बात और अर्ज करूं कि जिस वक्त यह तज़वीज़ पेश होने वाली थी, तो मुझे ज्यादा गौर करने का मौका नहीं मिला और तरमीम के अलफाज मुकम्मिल न लिखे जा सके; इसलिये आप इसके अलफाज पर निगाह न करें बल्कि तरमीम के उसूल को देखें। असल तज़वीज में वज़ीरों की नामजदगी और तरमीम में उनका इंतखाब पेश किया गया है। अगर जनाब मेरे बताये हुए उसूल को पसन्द फरमायेंगे तो मुकम्मिल तजवीज़ मसविदा तैयार होते वक्त बन जायेगी।

***श्री के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब** (मद्रासः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड 12 में अभी मि. अजीज अहमद खां ने जो संशोधन पेश किया है उसमें ये शब्द जोड दिये जायें:

''और वे प्रांतीय व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होंगे।''

यह एक बहुत साधारण संशोधन है और सभी लोकतंत्रों के मौलिक सिद्धांतों पर आधारित है। श्रीमान्, मंत्रियों को व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होना चाहिये। यह एक ऐसा मौलिक सिद्धांत है जिसका प्रभाव सभी लोगों पर पड़ता है।

रिपोर्ट में जिन सिद्धांतों का प्रतिपादन किया गया है वे ऐसे हैं कि गवर्नर को राज्य के सभी अधिकार प्राप्त हो जाते हैं। संक्षेप में राज्य के सभी अधिकार एक व्यक्ति विशेष में केन्द्रीभूत हो जाते हैं और मैं कहूंगा कि एक ही आदमी के हाथ में इतनी शक्ति हो जाना राज्य के लिये बहुत खतरनाक है, चाहे वह आदमी कितना ही प्रतिष्ठित हो और कैसे ही लोकतांत्रिक ढंग से चुना गया हो। यह सच है कि खण्ड 9 के नोट में कहा गया है कि प्रस्तावित विधान में गवर्नर लोगों द्वारा चुना जायेगा, ताकि अपने विवेक से काम में लाने के लिये उसे जो अधिकार दे दिये गये हैं उनका वह दुरुपयोग न करे। लेकिन इसे स्वीकार करना चाहिये कि ऐसे सब अधिकार किसी एक आदमी को दे देना खतरनाक है, चाहे वह किसी भी ढंग से चुना जाये।

आगे खण्ड 13 में भी कहा गया है कि साधारणतया उत्तरदायी शासन की प्रथाओं से गवर्नर का पथ-प्रदर्शन होगा, लेकिन किसी ऐसी प्रथा का अनुसरण करना उसके लिये अनिवार्य न होगा। फिर यदि इस सम्बन्ध में मतभेद हो कि उसने उन प्रथाओं के अनुसार कार्य किया है या नहीं, तो गवर्नर से सम्बन्धित कानून पर आपत्ति नहीं की जा सकती है। यह स्पष्ट है कि गवर्नर से मंत्रियों का सम्बन्ध और उनका उससे व्यवहार बिल्कुल गवर्नर के विवेक पर न छोड़ देना चाहिये। मैं यह कहूंगा कि इस प्रकार की कार्यप्रणाली लोकतंत्र के किसी सिद्धांत से भी सम्मत नहीं है। यदि यह व्यवस्था रहने दी जाये तो मंत्री केवल सलाहकार हो जाते हैं और व्यवस्थापिका केवल एक सलाहकार समिति हो जाती है। इसलिये हम यह चाहते हैं कि मंत्री प्रांतीय व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी हों और वे सम्बन्धित प्रांतीय व्यवस्थापिका द्वारा चुने जायें। यदि ऐसा न किया जाये तो इसकी सम्भावना बनी रहेगी कि गवर्नर अपने अधिकारों का दुरुपयोग करे और लोगों के अधिकारों में अनेक प्रकार से हस्तक्षेप करे। लोकतंत्र शासन को सुचारु रूप से चलाने के लिये ही हम चाहते हैं कि मंत्री

व्यवस्थापिका के प्रति और व्यवस्थापिका द्वारा अपने निर्वाचकों के प्रति उत्तरदायी हो और किसी एक व्यक्ति के प्रति उत्तरदायी न हो। सिद्धान्त यह है कि मंत्री व्यवस्थापिका द्वारा अन्तिम रूप से निर्वाचकों के प्रति उत्तरदायी हो और किसी एक आदमी के प्रति उत्तरदायी न हो, चाहे वह किसी भी तरीके से या किसी भी बहुमत से चुना गया हो। मुझे आशा है कि सभा इस संशोधन को स्वीकार कर लेगी क्योंकि यह मौलिक सिद्धांतों पर आधारित है।

****श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास: जनरल): मैं अपना संशोधन पेश नहीं कर रहा हूं परन्तु मैं उस पर बोलना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** माननीय सदस्य बाद को बोल सकते हैं।

मि. अजीज अहमद खां के इस संशोधन में बेगम ऐजाज रसूल का एक दूसरा संशोधन है। क्या आप कृपा करके उसे पेश करेंगी?

***बेगम ऐज़ाज़ रसूल** (संयुक्त प्रांत: मुस्लिम): श्रीमान्, मैं यह पेश करना चाहती हूं कि मि. अजीज अहमद खां के खण्ड 12 में पेश किये हुये संशोधन में निम्नलिखित शब्द जोड़ दिये जायें:

''और असेम्बली के जीवन-काल तक पदासीन रहेंगे।''

श्रीमान्, मैं यह संशोधन इस उद्देश्य से पेश कर रही हूं कि मंत्रिमंडल शक्तिशाली और स्थायी रहे और वह किसी दल या व्यवस्थापिका की, जिसके प्रति वह उत्तरदायी हो, सनक और स्वेच्छाचारिता पर निर्भर न रहे। श्रीमान्, इंगलैंड और फ्रांस में मंत्रिमंडल व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होता है। हम देखते हैं कि फ्रांस में आये दिन क्या होता है? मंत्रिमंडल कमजोर रहता है और कई बार पदच्युत हो जाता है। जहां कहीं भी व्यवस्थापिका में दो दल से अधिक होते हैं ऐसा हमेशा होता रहता है। इसलिये भारतवर्ष में जहां लोकतंत्र अभी शैशवावस्था ही में है और जहां उत्तरदायित्व की भावना न तो पूर्वोचित है और न उन्नतावस्था में ही है। हमारे मंत्रिमंडल शक्तिशाली और स्थायी होने चाहिये ताकि वे दीर्घकालीन नीतियों को प्रयोग में ला सकें और अपने दलों के आंतरिक उथल-पुथल से अपने प्रतिदिन के कार्य में प्रभावित न हों। हम नहीं चाहते कि हमारे देश में भी फ्रांस की-सी दशा उत्पन्न हो। श्रीमान्, जब से सन् 1935 ई. में भारत सरकार का कानून प्रयोग में आया

[बेगम ऐज़ाज रसूल]

है, मेरा यह अनुभव रहा है कि प्रांतों में जहां मंत्रिमंडल व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होते हैं, और अपने दल या व्यवस्थापिका द्वारा अविश्वास का प्रस्ताव पास करने पर गिर जाते हैं, वे किन्हीं दीर्घकालीन नीतियों को प्रयोग में नहीं ला सकते। जैसा कि मैं पहले कह चुकी हूं, वे प्रतिदिन अपने दल की भावनाओं से प्रभावित होते हैं और इसलिये स्वभावत: कमजोर होते हैं। इसलिये मैं यह अनुभव करती हूं कि जिस मंत्रिमंडल को व्यवस्थापिका चुने वह दीर्घजीवी हो, ताकि वह अपनी नीतियों को निर्धारित कर सके और अपने दल के मतमतांतर से प्रभावित न हो। हम अमेरिकन प्रणाली को स्वीकार कर सकते हैं जिसके अधीन अध्यक्ष अपनी प्रबन्धकारिणी को नामजद करता है। लेकिन यह हो सकता है कि हमारा देश उसके लिये तैयार न हो। परन्तु स्विस प्रणाली, जिसके अन्तर्गत व्यवस्थापिका एक नियत अवधि के लिये चुनती है और उस काल तक वह पदच्युत नहीं हो सकती, मेरे विचार से प्रांतों के लिये सबसे सुन्दर शासन प्रणाली है क्योंकि व्यवस्थापिका एक बार जिस मंत्रिमंडल को चुन लेती है वह उसके किसी अविश्वास के प्रस्ताव द्वारा पदच्युत नहीं किया जा सकता। इसलिये मेरी राय में अपने देश की राजनैतिक व अन्य दशाओं को ध्यान में रखते हुए जो कुछ काल तक रहेंगी, स्विस प्रणाली ही बीच की सबसे सुन्दर प्रणाली है। प्रबन्धकारिणी की नियुक्ति के लिये मेरे विचार से सबसे अच्छी प्रणाली एकाकी हस्तान्तरित मतपद्धति है, क्योंकि उससे सभी हितों का प्रतिनिधित्व हो जाता है और व्यवस्थापिका में किसी दल को यह सोचने का मौका न मिलेगा कि उसका प्रतिनिधित्व नहीं हुआ है। इसलिये मैं मि. अजीज अहमद खां के पेश किये हुए संशोधन का पूरे जोर से समर्थन करती हूं।

मैं यह भी बताना चाहती हूं कि मंत्रिमंडल का जीवन-काल वही हो जो कि असेम्बली का है, ताकि वह हटाया न जा सके।

मैं जो दूसरी बात बताना चाहती थी वह यह है कि हम जिस विधान को बना रहे हैं उसमें गवर्नर को, जो कि निर्वाचित गवर्नर होगा, इतनी शक्ति और विस्तृत अधिकार दे रहे हैं कि राज्य के किसी दूसरे अध्यक्ष की आवश्यकता नहीं रह जाती; क्योंकि गवर्नर मंत्रियों को विभिन्न विषय दे सकेगा, रस्मी अवसरों पर राज्य का प्रतिनिधित्व कर सकेगा और सभाओं में सभापति का पद ग्रहण कर सकेगा और मंत्रियों के कार्य का भी एकीकरण कर सकेगा। यह सब बातें गवर्नर और मंत्रियों के कर्त्तव्यों में सम्मिलित हैं। वे जिम्मेदार लोग होंगे और व्यवस्थापिका द्वारा चुने जायेंगे। वे नीति निर्धारित कर सकेंगे और अपनी दीर्घकालीन नीतियों

को अपने दल की स्वेच्छाचारिता से नहीं किन्तु अपनी ही सुदृढ़ स्थिति से कार्यरूप में ला सकेंगे। मेरा यह अनुभव है कि जहां कहीं मंत्री किसी दल के प्रतिनिधि होते हैं वे बिना अपने दल के सदस्यों से प्रभावित हुए प्रतिदिन का कार्य और शासनकार्य कर ही नहीं सकते। इससे स्वभावतः यह होता है कि मंत्रिमंडल कमजोर होता है और शासन-प्रबन्ध ठीक नहीं होता क्योंकि मंत्रियों को अपने दल के लोगों को खुश करने के लिये कई ऐसी बातें करनी होती हैं जो शासन-प्रबन्ध की दृष्टि से अच्छी नहीं होती। इसलिये मैं आशा करती हूं कि मेरे इस संशोधन को, जिसे मैंने प्रांतों में शक्तिशाली और स्थायी सरकारें स्थापित करने के उद्देश्य से पेश किया है, यह सभा स्वीकार कर लेगी। (*उच्च हर्षध्वनि*)

(श्री बी.एम. गुप्ते ने अपना संशोधन पेश नहीं किया।)

***अध्यक्षः** मेरे विचार में यही सब संशोधन हैं। अब इस खण्ड और संशोधनों पर बहस हो सकती है।

श्री सेठ गोविन्ददास (मध्य प्रांत और बरारः जनरल): सभापति जी, मैं, अजीज अहमद साहब ने जो सुधार पेश किया है और उनके सुधार पर जो दो सुधार और पेश हुए हैं, उनका विरोध करने के लिये उपस्थित हुआ हूं। अजीज अहमद साहब ने अमरीका का दृष्टांत दिया और यह बतलाया कि वहां पर मिनिस्टरों का चुनाव हुआ करता है और हमको, जो अंग्रेजों की पद्धति है, उस पर न चलकर अमरीका की पद्धति पर चलना चाहिये। मैं उनसे यह निवेदन करना चाहता हूं कि अमरीका के जो मंत्री होते हैं वे वहां पर जो कानूनी सभा है उसके प्रति जिम्मेदार नहीं होते। बहुत से देशों में जहां उत्तरदायित्वपूर्ण शासन है उनके विधान को यदि हम देखें तो हमको यह जान पड़ेगा कि प्रधान मंत्री उस दल के द्वारा चुने जाते हैं, जिस दल का वहां की परिषद् में बहुमत होता है और वह अपने साथियों को चुनते हैं। जहां तक गवर्नर के नामों को स्वीकार करने का प्रश्न है, वहां तक गवर्नर तो उन मंत्रियों को स्वीकार कर ही लेता है जो प्रधान मंत्री उसके सामने पेश करता है।

मैं यह कहना चाहता हूं कि जहां भी उत्तरदायित्वपूर्ण शासन है वहां के हालात से हमको यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि उत्तरदायित्वपूर्ण शासन तब तक नहीं चल सकता, जब तक संयुक्त जिम्मेदारी न हो और संयुक्त जिम्मेदारी तब तक हो नहीं सकती जब तक प्रधान मंत्री अपने साथियों को न चुने। अजीज अहमद साहब ने यह कहा कि यहां पर जो इतना झगड़ा हो रहा है उसके लिये अंग्रेजों की

[श्री सेठ गोविन्ददास]

यह पद्धति जिम्मेदार है। मैं उनसे यह निवेदन करना चाहता हूं कि यहां पर जो हालत है उसके लिये यह पद्धति जिम्मेदार नहीं ठहराई जा सकती; जिस पद्धति का अभी तक उपयोग ही नहीं हुआ है। इस पद्धति का उपयोग स्वतंत्र देशों में ही हो सकता है और जब तक देश स्वतंत्र नहीं है तब तक यह कहना कि यहां के इन सब तूफानों की जड़ इस तरह की पद्धति है, यह बात गलत होगी। इस समय जो कुछ यहां पर हो रहा है उसके लिये अगर कोई जिम्मेदार है तो वह लोग हैं जो द्विराष्ट्रीय सिद्धांत को देश के सामने रखते हैं। जो समय-असमय 'मजहब खतरे में है' इस किस्म के नारे लगाते रहते हैं। जो कहते हैं कि इस देश में दो सभ्यतायें हैं, दो संस्कृतियां हैं, दो तहजीबें हैं। यह कहना कि जो उत्तरदायित्वपूर्ण शासन हम यहां पर चलाना चाहते हैं वह इन सब तूफानों के लिये जिम्मेदार है, गलत है। फिर अजीज अहमद साहब यह भी देखें कि उनकी मुस्लिम लीग में भी इस समय तक क्या पद्धति रही है। मुस्लिम लीग के सदर का चुनाव होता है, कायदे आजम का चुनाव होता है, परन्तु सदर के साथ काम करने वालों की जो कार्यकारिणी बनती है, उसके चुनाव का अधिकार मुस्लिम लीग के सदर को है न कि मुस्लिम लीग इन सबका चुनाव करती है। यही पद्धति हमारी कांग्रेस में भी है। हम अपने राष्ट्रपति का चुनाव करते हैं, प्रांतीय कांग्रेस कमेटियों में अपने प्रधानों को चुनते हैं। इसके बाद हम राष्ट्रपति और प्रान्तपति को यह अधिकार देते हैं कि वह जैसी कार्यकारिणी उपयुक्त समझे उसको चुन ले और काम चलाये। इसलिये मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि यदि इस देश में उत्तरदायित्वपूर्ण शासन चलाना है, तो हमको अमरीका की नकल नहीं करनी होगी। अमरीका के जो मंत्री हैं वे वहां की जो कानूनी सभा है, वहां का जो हाउस आफ रिप्रेजेन्टेटिव या सीनेट है, उसके प्रति जिम्मेदार नहीं हैं। हमको उत्तरदायित्वपूर्ण शासन चाहिये। हम यहां के मंत्रियों को अपनी धारा-सभा के प्रति जिम्मेदार चाहते हैं और यदि इस प्रकार की पद्धति हमको चाहिये तो यह आवश्यक है कि हम इस तरीके से सिंगिल ट्रान्सफरेबल वोटों से अपने मंत्रियों का चुनाव न करें। बाकी जो सुधार अजीज अहमद साहब के सुधार पर आये हैं वे आश्चर्यजनक हैं। उनमें से एक में यह कहा गया है कि इस प्रकार से सिंगिल ट्रान्सफरेबल वोटों से जो मंत्री चुने जायें वे मंत्री अपनी धारा-सभा के प्रति जिम्मेदार रहने चाहियें। अलग-अलग मंत्री अलग-अलग प्रकार से किस तरह से धारा-सभा के प्रति जिम्मेदार रहेंगे, यह मेरी समझ में नहीं आता और जो दूसरा सुधार हमारी एक बहिन ने पेश किया है कि जब तक असेम्बली का जीवन रहे वे मंत्री रहने चाहियें, यह भी मेरी समझ में नहीं आया। अगर असेम्बली के अधिकांश मेम्बरों का विश्वास उन मिनिस्टरों पर नहीं है या प्रधान मंत्री पर नहीं है, तो असेम्बली के जीवन तक वे किस

तरह से रह सकते हैं? मुख्य सुधार और सुधार पर ये सुधार एक दूसरे के विरोध में आते हैं।

इसलिये मैं अन्त में फिर यह कहना चाहता हूं कि अगर हमको उत्तरदायित्वपूर्ण शासन इस देश में चलाना है और अब जबकि देश स्वतंत्र हो रहा है और उसका शासन कार्य हमको चलाना है, तो हमें उस पद्धति को काम में लाना होगा जो पद्धति आज ग्रेट ब्रिटेन में चल रही है।

***अध्यक्ष:** मद्रास के एक सदस्य ने मुझसे प्रार्थना की है कि चूंकि वे एक संशोधन के प्रस्तावक हैं इसलिये यहां जो भाषण हिन्दुस्तानी में हो, उनका अनुवाद अंग्रेजी में उनके लिये करा दिया जाये। मुझे खेद है कि मैं उनकी प्रार्थना को पूरी नहीं कर सकता हूं। क्योंकि एक तो हमारे पास किसी ऐसे अनुवादक का प्रबन्ध नहीं है कि जो हिन्दुस्तानी में दिये हुए सभी भाषणों का अंग्रेजी में अनुवाद कर सके और दूसरे मैं यह भी जानता हूं कि कुछ ऐसे सदस्य हैं जो अंग्रेजी नहीं जानते हैं और वे इस पर जोर देंगे कि अंग्रेजी भाषणों का उनकी भाषा में अनुवाद किया जाये। चाहे वह भाषा जो भी हो मेरी राय में हमें हर एक सदस्य की कठिनाइयों का विचार करना चाहिये क्योंकि सभी की अपनी-अपनी कठिनाइयां हैं। इसलिये बहस को उसी प्रकार चलने देना चाहिये जैसे वह चल रही है और हर एक वक्ता को उसी भाषा में बोलने देना चाहिये जिसमें वह बोलना चाहता हो।

***श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं बहुत कुछ अपने को एक मद्रासी की तरह पा रहा हूं। उस तरफ इससे पहले बोलने वाले वक्ता के भाषण को व इस तरफ मुझसे पहले बोलने वाले वक्ता के भाषण को मैं बिलकुल नहीं समझ पाया हूं। मैं इस राय से सहमत हूं कि जहां तक हो सके वक्ताओं को उस भाषा में बोलना चाहिये जिसे इस सभा के अधिकांश सदस्य अच्छी तरह समझते हैं। यदि मुझे ऐसी भाषा में बोलने दिया जाये जिसमें मैं अपने विचार सबसे अच्छी तरह व्यक्त कर सकता हूं तो मेरे विचार से शायद ही कोई सदस्य हो जो मुझे समझ पायेगा। मैं निश्चित रूप से अपनी भाषा में ही यानि आदिवासी भाषा में बोलना चाहूंगा। यहां कोई भी ऐसा सदस्य नहीं है जो मुझे समझ पायेगा। अध्यक्ष महोदय, आप भी उसी प्रांत के निवासी हैं जिसका कि मैं हूं, इसलिये किसी अनुवादक को ढूंढने में आपको भी बड़ी कठिनाई होगी। मुझे आशा है कि सदस्यगण जिस

[श्री जयपाल सिंह]

आवश्यकता का अनुभव करते हैं उसे ध्यान में रखते हुये और इस सभा में जो कुछ कहा गया है उसके प्रकाश में भी यह पसन्द किया जायेगा कि वक्ता ऐसी भाषा का प्रयोग करें जिसे अधिकांश सदस्य समझ सकें।

मैं संशोधन का विरोध करने के लिये यहां पर आया, लेकिन संशोधन का विरोध करने के पहले मैं एक नोट के बारे में दो एक शब्द कहना चाहता हूं। हालांकि माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल ने यह सलाह दी है कि हमें यहां किसी नोट पर नहीं बोलना है। मैं जानता हूं कि आप मुझे यह कहने की आज्ञा देंगे कि यह दुर्भाग्य की बात है कि किसी गंभीर विषय से सम्बन्ध रखने वाले पत्र में इस प्रकार के शब्द हों। मैं उसे पढ़ कर सुनाऊंगा:

''इसकी ओर ध्यान देने की आवश्यकता है कि प्रस्तावित विधान के अधीन गवर्नर लोगों द्वारा निर्वाचित होगा। इसलिये इसकी सम्भावना नहीं है कि जिन अधिकारों को वह अपने 'विवेक' से प्रयोग में लायेगा उनका दुरुपयोग न करे।''

जितना भी थोड़ा-बहुत तर्कशास्त्र का मुझे ज्ञान है उससे मुझे इस तर्क को समझने में सहायता नहीं मिलती। कोई व्यक्ति जो लोगों द्वारा निर्वाचित हो विवेक से प्रयोग में आने वाले अधिकारों का दुरुपयोग नहीं करेगा, यह बात मेरी समझ में नहीं आती। अब मैं उन तर्कों पर अपना मत प्रकट करूंगा जो प्रस्तावक और समर्थक ने इस संशोधन के सम्बन्ध में दिये हैं। यह एक दुर्भाग्य की बात है कि इन खण्डों को इस तरतीब से रखा गया है। मेरी राय में प्रस्तावक व उनकी सुन्दर समर्थक का मत दूसरा ही होता यदि खण्ड 2 की जगह खण्ड 14 रख दिया जाता। आप देखेंगे कि खण्ड 14 में एक परिशिष्ट की व्यवस्था है जो आदेश-पत्र (इंस्ट्रूमेंट आफ इंस्ट्रक्शन्स) के अनुरूप होगा। मेरे विचार में यदि हमें यह बता दिया जाता कि यह परिशिष्ट या आदेश-पत्र कैसा होगा तो बहुत कुछ भ्रम दूर हो जाता। अभी तक हम उत्तरदायी सरकार के बारे में बोलते रहे हैं। उत्तरदायी सरकार का अर्थ आखिर यही तो है कि प्रांत की प्रबन्धकारिणी का अध्यक्ष उत्तरदायी सरकार की प्रथाओं का आदर करे। उसके स्वेच्छाचारी होने का कोई सवाल ही नहीं पैदा होगा। यह स्वीकार करना होगा कि जहां तक उन खण्डों की भाषा का सम्बन्ध है जिन पर हमने अभी तक विचार किया है, उससे यह प्रकट होता है मानो हम प्रांत के सर्वोच्च अधिकारी को स्वेच्छाचारिता के अधिकार दे रहे हों। श्रीमान्, वास्तव में यह बात

नहीं है, विशेषतः यदि हम यह ध्यान में रखें कि हमने आदेशपत्र या परिशिष्ट की व्यवस्था की है जिससे वह बंध जाता है। ऐसी स्थिति में दूसरी तरफ मेरे मित्रों ने जो भय प्रकट किया है उसका कोई कारण नहीं मालूम होता।

श्रीमान्, मुझे स्वयं इस सम्बन्ध में आश्चर्य हुआ है कि आखिर हमारे विधान-विशेषज्ञों की क्या इच्छा है। एक साधारण मनुष्य की तरह मैंने यह समझने की कोशिश की कि क्या वे कम से कम इस बीच के समय के लिये एक ऐसा विधान बना रहे हैं जो प्रजातत्रांत्मक हो। इस समय तक मुझे इसका विश्वास नहीं हुआ। कम से कम ऐसी भाषा का प्रयोग हुआ है कि मुझे इसका विश्वास नहीं हो सका है कि इस प्रजातंत्र का ढंग प्रजातंत्रात्मक है। लेकिन जहां तक इस खण्ड विशेष का सम्बन्ध है मुझे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि गवर्नर अपने उत्तरदायित्व को समझकर काम करेगा।

श्री मुहम्मद शरीफ (मैसूर): हिन्दुस्तानी में बोलने लगे।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुर** (मद्रासः मुस्लिम): मुझे एक व्यवस्था सम्बन्धी आपत्ति करनी है। अध्यक्ष महोदय, क्या मैं आपसे प्रार्थना कर सकता हूं कि आप वक्ता महोदय से, जो अंग्रेजी जानते हैं, अंग्रेजी में बोलने को कहें?

***श्री मुहम्मद शरीफ**: श्रीमान्, आपने अपना निर्णय सुना दिया है।

***अध्यक्ष**: मैं किसी भी वक्ता को किसी विशेष भाषा में बोलने के लिये मजबूर नहीं कर सकता। यह उस पर निर्भर है कि वे जिस भाषा में भी बोलना चाहें, बोलें।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुर**: ऐसी सूरत में क्या मैं माननीय वक्ता से अपील कर सकता हूं कि वे अंग्रेजी में बोलें, क्योंकि मैं जानता हूँ कि वे उस भाषा से अच्छी तरह परिचित हैं?

श्री मुहम्मद शरीफ: मैं उर्दू में बोलना पसंद करूंगा।

साहबे सदर, मौलवी अजीज अहमद साहब ने और उनके बाद इब्राहीम साहब और बेगम ऐज़ाज़ रसूल साहिबा ने जो तरमीमात हमारे सामने पेश की हैं, मैं उन तरमीमात की पुरजोर ताईद करता हूं। तरमीमात की यह मंशा है

[श्री मुहम्मद शरीफ]

कि गवर्नर के अख्तियारात महदूद कर दिये जावें और वजीरों के इन्तखाब के मुतल्लिक लेजिस्लेटिव असेम्बली की राय इसमें मुकद्दम हो। अगर इन तरमीमात की कोई गरज है तो इंतजाम अमूर में जम्हूरियत के उसूल कारफरमा हों। हर रोज हम जम्हूरियत के उसूल को अपना नजबुल ऐन समझते हैं और यह चीख पुकार करते हैं कि हर एक मामले में ख्वाह वह किसी अमर से ताल्लुक रखता हो, जम्हूरियत के उसूल की तरवीज और इशाअत हो। इसकी रोशनी में यह बात जरूरी मालूम होती है कि गवर्नर के अख्तियारात महदूद कर दिये जायें। आपको यह मालूम हो कि स्विट्जरलैंड और दूसरी जगहों में जो, तरक्की पसंद कही जा सकती हैं वहां पर यह तरीकेकार राइज है और मुझे यह अर्ज करना है कि सरदार पटेल साहब ने जो कहा है कि शायद आपकी यह गरज हो कि गवर्नर का इन्तखाब जो होता है वह लोगों की राय की बिना पर होता है। इसलिये उनको पूरे तौर पर अख्तियारात दिये जावें। लेकिन मैं अर्ज करूं कि गवर्नर ख्वाह वह कितना ही बाअख्तियार हो, ताहम हमको चाहिये कि लोगों की आवाज़ और उनके खिदमात काम कर सकें। जिस उसूल की तरफ तरमीम पेश करने वालों ने इशारा किया है मेरे ख्याल में बेहतरीन उसूल है और जम्हूरियत के उसूल की बिना पर मैं समझता हूं कि सब जम्हूरियत के हामीबर बनें। इस जम्हूरियत के उसूल के अलमबरदार हों। मैं इन तरमीमात की पुरजोर ताईद करता हुआ अपील करता हूं कि आप सब उनकी हमनुमाई करेंगे।

***श्री एन.वी. गाडगिल** (बंबई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस संशोधन का विरोध करना चाहता हूं। मैंने सुना है कि यह संशोधन प्रजातंत्र के लिये एक सुन्दर वातावरण पैदा करने के लिये पेश किया गया है। मेरे विचार से प्रजातंत्र ही अन्तिम लक्ष्य नहीं है। कुछ आकांक्षाओं और फलों की प्राप्ति के लिये वह एक साध न मात्र है।

अब हमें देखना है कि किन उद्देश्यों से हम यह विधान बनाने जा रहे हैं। जो प्रस्ताव हमने पास किया है उसमें इन उद्देश्यों की परिभाषा दे दी गई है। इसके अलावा मैं यह मान लेता हूं कि देश में कई दल होंगे ओर हरएक दल अपने लक्ष्यों और उद्देश्यों की परिभाषा देगा। इन लक्ष्यों और उद्देश्यों को लेकर ही वे अपना कार्यक्रम निश्चित करेंगे। स्पष्टत: ये लक्ष्य और उद्देश्य कार्यक्रम में केवल इसलिये सम्मिलित नहीं किये जाते हैं कि वे लोगों से यह कह सकें कि हमारे लक्ष्य और उद्देश्य ये हैं। किसी भी दल का यही विचार होता है कि जब वह अधिकार प्राप्त

करे तो इनको कार्यरूप में परिणत करे। यदि वह दल अधिकार प्राप्त करता है तो वह इनको तब तक कार्यरूप में नहीं ला सकता जब तक कि उसे शासन प्रबन्ध का पूर्ण अधिकार प्राप्त न हो।

इसके अलावा मैं इस सभा के सामने यह राय रखना चाहता हूं कि जहां तक इस देश की राजनैतिक धाराओं का सम्बन्ध है, हमारा पालन-पोषण ऐसे वातावरण में हुआ है जो आमतौर से परिषदात्मक तथा उत्तरदायी कही जाने वाली शासन पद्धति की स्थापना में बहुत सहायक रहा है। कुछ विशेष दशाओं ही में ऐसा शासन चल सकता है। एक दशा यह है कि कम से कम दो बड़े दल होने चाहियें और सभा का नेता उस दल का विश्वासभाजन होना चाहिये जिसका सभा में बहुमत हो। दूसरे शब्दों में नेता का बहुत महत्व है और यदि आप उसे अपने सहयोगियों को चुनने का मौका नहीं देते हैं, यदि आप उसे उस कार्यक्रम को कार्यान्वित करने की जिम्मेदारी नहीं देते हैं, जिसकी बिना पर निर्वाचकों ने उसके दल को चुनाव में जिताया है, तो मेरे विचार से यह केवल प्रजातंत्र का ही विध्वंस नहीं है, बल्कि जो कुछ भी थोड़ी बहुत उन्नति हो रही हो उसके मार्ग में भी बाधा डालना है। किसी भी संयुक्त मंत्रिमंडल से देश में उन्नति नहीं हो सकती है और यदि हम इस संशोधन को स्वीकार कर लें तो इससे और भी उन्नति नहीं होगी। संयुक्त मंत्रिमंडल किसी समझौते का आदर करता है लेकिन इस संशोधन के अनुसार अजीब और परस्पर उदासीन लोग भी प्रबन्धकारिणी में सम्मिलित हो सकते हैं।

इसके अतिरिक्त यदि मंत्री एकाकी हस्तान्तरित या अहस्तान्तरित मतपद्धति द्वारा चुने गये तो जरा सोचिये तो इसका क्या असर होगा? गवर्नर किस आधार पर मंत्रियों को विभिन्न विषय देगा? एक तरफ तो हम सबको इसकी चिंता है कि वह केवल एक वैधानिक अध्यक्ष हो। दूसरी तरफ यदि आप इस संशोधन को स्वीकार करें तो आप उसे असीम अधिकार दे देंगे, जिन्हें वह प्रजातंत्र के हित में नहीं किन्तु अपने स्वेच्छाचारी शासन की अभिवृद्धि के लिये ही प्रयोग में लायेगा। उदाहरणार्थ, यदि प्रबन्धकारिणी में नौ व्यक्ति हों तो बहुमत वाले दल के चार सदस्य उसमें हो सकते हैं, किसी दूसरे दल के दो सदस्य हो सकते हैं और एक तीसरे दल का एक सदस्य हो सकता है और दो अन्य समूहों के एक एक सदस्य हो सकते हैं। यदि गवर्नर इतना शक्तिशाली बना दिया जाये तो वह निश्चित रूप से सबसे महत्वपूर्ण विषयों को अल्पसंख्यक समूहों के प्रतिनिधियों को दे सकता है। क्या ऐसी स्थिति में देश की उन्नति हो सकती है? क्या इससे वह कार्यक्रम कार्यान्वित हो सकता है जिसके आधार पर बहुमत वाला दल चुना गया हो? मेरे

[श्री एन.वी. गाडगिल]

विचार में यदि आप इस संशोधन को स्वीकार करेंगे तो आप निर्वाचकों के प्रति बड़ा अन्याय करेंगे और उस दल के प्रति भी बड़ा अन्याय करेंगे, जिसने निर्वाचकों के सम्मुख अपना कार्यक्रम रखा हो और उसके आधार पर उसके सदस्य चुने गये हों। निर्वाचकों का यह आशा करना उचित ही है कि वह कार्यक्रम प्रयोग में आयेगा; और यदि इस संशोधन को स्वीकार करके आप उस कार्यक्रम का कार्यान्वित होना असम्भव कर दें, तो मेरे विचार से आप निर्वाचकों के प्रति न्याय नहीं करेंगे। दूसरे शब्दों में मैं विनयपूर्वक यह बताना चाहता हूं कि यह संशोधन हर दृष्टि से खतरनाक है। इससे निर्वाचकों के प्रति अन्याय होता है और यह प्रयोग में भी नहीं आ सकता। इससे गवर्नर को बहुत अधिक अधिकार मिल जाते हैं। इस संशोधन में कोई भी बात ऐसी नहीं है जिससे मैं सहमत हूं। इस संशोधन के एक समर्थक ने यह कहा कि इससे एक शक्तिशाली और स्थायी सरकार का बनाना सम्भव हो सकेगा। जहां तक शक्तिशाली सरकार का सम्बन्ध है मेरे विचार में वह न बन सकेगी। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि वह एक शक्तिहीन सरकार होगी। संयुक्त उत्तरदायित्व के अभाव में शासन प्रबन्ध में न तो तारतम्य होगा और न एकमत। यदि आप इस संशोधन को स्वीकार कर लें कि वे असेम्बली के जीवनकाल तक पदासीन रहेंगे तो भले ही मंत्रिमंडल स्थायी हो किन्तु वह उन्नतिशील नहीं होगा। प्रजातंत्रात्मक और उत्तरदायी सरकार के माने ही यह हैं कि यदि निर्वाचित सदस्य कानून द्वारा निश्चित अवधि के अन्दर भी कोई ऐसी बात करें या इस प्रकार व्यवहार करें कि उससे उन पर देश का विश्वास न रह जाये, तो विधान के किसी आदेशानुसार उनको हटाया जा सकता है। लेकिन इस संशोधन से इस पर भी असर पड़ता है। इसलिये मैं यह कहूंगा कि सभा के लिये यह न्यायोचित ही होगा कि वह इस संशोधन को अस्वीकार कर दे।

काज़ी सय्यद करीमुद्दीन (सी. पी. तथा बरार: मुस्लिम): जनाब सदर, अजीज अहमद साहब ने और बेगम ऐज़ाज़ रसूल ने जो अमेंडमेंट पेश किये हैं मैं उसकी ताईद करता हूं। तीन दिन से डिबेट में मैं यह देख रहा हूं कि जब कोई लीग की तरफ से तकरीर करने खड़ा होता है तो उसके जवाब में यह कहा जाता है कि कल तक आप यह नारा लगाते थे कि 'मजहब खतरे में है' और इसलिये हम सोशियलिज्म और डिमाक्रिटिज्म की ताईद नहीं कर सकते हैं और मि. कामठ ने तो यह भी फरमाया कि पं. जवाहरलाल नेहरू और गांधीजी को सोशियलिज्म सिखाने की जरूरत नहीं है। मैं मि. कामठ से कहता हूं कि बहुत से जमाने

से आप इनको सिखाने की कोशिश कर रहे थे लेकिन शायद वह सोशलिज्म बहुत काफी समझते हैं। इन तमाम बातों के बावजूद मि. कामठ के लिये तो सिर्फ इतना कह देना काफी है:

रात तो खूब सी पी,
सुबह को तोबा कर ली।
रिन्द के रिन्द रहे
हाथ से जन्नत न गई।

कामठ साहब हीरो बन सके हैं, लेकिन मुस्लिम लीग को बदनाम करके क्यों?

इसके अलावा एक खास बात और भी है कि जब कांग्रेस कोई तजवीज रखती है तो हर मौके पर आप उसको मानने के लिये तैयार हो जाते हैं और जब लीग की तरफ से कोई बात, चाहे वह कितने ही फायदे के लिये क्यों न हो, यह कह कर नहीं मानी जाती कि हम पाकिस्तान वालों की बात नहीं मान सकते हैं। यह कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली कोई पोलिटिकल फील्ड नहीं है, बल्कि यह तो कान्स्टिट्यूशनल जमात है। इसमें मुस्लिम लीग अपना नुक्तेनजर पेश कर सकती है और हर एक मेम्बर को अख्तियार है कि वह अपना नुक्तानजर पेश करे। आज जो हमारे सामने अमेन्डमेंट है यह है कि "वजीरों का इन्तखाब हाउस करे"। अंग्रेज हिन्दुस्तान से जा रहे हैं लेकिन हिन्दुस्तानियों पर जो अंग्रेजियत छायी हुई है वह नहीं जाती। आप फरमाते हैं कि अंग्रेजी हुकूमत और ब्रिटिश एक्जीक्यूटिव आज जम्हूरियत पर बनी है, यह बिल्कुल गलत है। अमरीका और स्विट्जरलैंड के दस्तूर पर आपको गौर करना चाहिये।

मैंने 1921 ई. से हिन्दुस्तान में यह देखा है और खसूसन 1935 ई. के एक्ट के बाद मेजोरिटी पार्टी रूल में, जो मुखालिफ पार्टी होती है, उसके साथ लापरवाही बर्ती जाती है। मैं यह कहता हूं कि मेजोरिटी रूल का नतीजा यह होता है कि जो मुखालिफत में पार्टियां रहती हैं, ख्वाह कम्युनिस्ट हो या कोई और हो, उसकी तरफ से मिनिस्ट्री बददिल हो जाती है और मिनिस्ट्री को अपनी जगह कायम रखने के लिये पार्टी को खुश करने की जरूरत रहती है। मैं यह कहता हूं कि मेजोरिटी पार्टी के रूल में नेपोटीज़्म और फेवरेटीज्म है। जब तक यह दूर न हो तब तक यह निहायत मुश्किल है कि पार्टी का हर मेम्बर इसके साथ कायम रहे। इसलिये यह कहना कि मेजोरिटी पार्टी रूल जम्हूरियत पर बनी है, बिलकुल गलत है।

[काज़ी सय्यद करीमुद्दीन]

हजरात, जो तरमीम अजीज अहमद साहब ने पेश की है वह यह है कि मिनिस्ट्रों का इन्तखाब हो। आज हिन्दुस्तान में हम यह चाहते हैं कि ऐसा कांस्टीट्यूशन हो कि दुनिया के मुकाबले में हिन्दुस्तान भी एक प्रोग्रेसिव स्टेट कहलाई जाये। आज इन्तहाई नाजुक जमाना है और हिन्दुस्तान ऐसे दौर में से गुजर रहा है कि इसके इख्तलाफात को दूर करना जरूरी है। आपस के कानफ्लिक्ट इख्तलाफ को बन्द करना चाहिये। उसका तरीका यह हो सकता है कि जितनी पार्टीज हाउस में हों उन सबके नुमायन्दे मिनिस्ट्री में हों। जो मेजोरिटी पार्टी में हों, उनको ज्यादा नुमायन्दगी मिलेगी और जो अकलियत में हों उनको निशस्तेन कम मिलें। ऐसी हालत में जैसा कि बेगम साहिबा ने कहा है कि मिनिस्ट्री की जिन्दगी (लाइफ) हाउस की जिन्दगी हो। यह कोई नयी बात नहीं है। अमरीका के कान्स्टीट्यूशन में यह बात बहुत वाजुह है और आपके ऐसा करने में एक्जीक्यूटिव, जुडिशियरी और लेजिस्लेटिव के तीन हिस्से हो जाते हैं। जो पालिसीज का काम है वह लेजिस्लेटिव करे।

जुडिशियरी का काम यह है कि जो एक्जीक्यूटिव की ज्यादतियां हों, उनको दूर करे और एक्जीक्यूटिव का काम यह है कि जो पोलिसीज लेजिस्लेटिव बनाये उन पर अमल दरामद कराये। हजरात, इन वाक्यात में आज हम यह देखते हैं कि यहां पर मुख्तलिफ मजाहिब हैं, मुख्तलिफ पार्टियां हैं, मुख्तलिफ किस्म के लोग हैं। बेहतरीन उसूल यह हो सकता है कि हर पार्टी का नुमायन्दा गवर्नमेंट में हो। इसकी वजह से इत्मीनान हो जाता है कि गवर्नमेंट मजबूत होगी और आपस की जंग मिट जाती है। लिहाजा जो अमेन्डमेंट अभी पेश किया गया है, मैं उसकी ताईद करता हूं और उम्मीद करता हूं कि हाउस इसको मंजूर करेगा।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर** (मद्रासः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं बड़ी प्रसन्नता से अपने मित्र मि. अजीज अहमद खां साहब के संशोधन और उस पर बेगम ऐज़ाज़ रसूल के संशोधन का समर्थन करता हूं। इस सम्बन्ध में मेरा यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि इस विधान का मसविदा और उससे सम्बन्धित रिपोर्ट जो हमारे सामने रखी गई है, गवर्नर के चुनाव और एडवोकेट जनरल के पद की अवधि आदि कुछ प्रश्नों को छोड़कर प्रांतीय स्वायत्त शासन के बारे में सन् 1935 ई. के विधान की नकल सी मालूम पड़ती है। श्रीमान्, यदि हमारी यह इच्छा हो कि हमारा विधान प्रजातंत्रात्मक हो तो हमें इसका ध्यान रखना चाहिये कि व्यवस्थापिका, मंत्रिमंडल और प्रबन्धकारिणी में लोगों के विभिन्न वर्गों का प्रतिबिम्ब हो। यदि हम

प्रजातंत्र तथा तथाकथित पार्लियामेंटरी (परिषदात्मक) पद्धति पर विश्वास करें तो विधानों के पंडितों का यह निश्चित मत है कि वह शासनप्रबन्ध की प्रजातंत्रात्मक पद्धति नहीं है। हमें यदि अपने सामने किसी के उदाहरण को रखना चाहिये तो वह स्विस सरकार का उदाहरण है। कोई भी शासन-पद्धति तभी प्रजातंत्रात्मक कही जा सकती है जब व्यवस्थापिका में सभी वर्गों के लोगों का प्रतिनिधित्व हो। इस समय हमारे रास्ते में एक बाधा है, क्योंकि हमें यह मालूम नहीं है कि चुनाव का तरीका क्या होगा, कौन से चुनाव-क्षेत्र होंगे; आदि। जो भी सूरत हो, मैं समझता हूं कि चुनाव-क्षेत्र प्रादेशिक चुनाव-क्षेत्र होंगे और साथ ही विभिन्न जातियों व हितों के लिये जगहें सुरक्षित रखी जायेंगी ताकि वे अपने लोगों को धारा-सभा में भेज सकें। श्रीमान्, यदि आप इस तरीके से काम करेंगे और भारत के प्रांतों को देखते हुए यह ज़रूरी हो, तो प्रांतों के सभी वर्गों के लोग और विभिन्न हितों के लोग धारा-सभा के लिये चुने जायेंगे। यदि धारा-सभा में लोगों के प्रतिनिधित्व करने के इस तरीके को आप स्वीकार करें और जगहों को चाहें जिस तरीके से भी हो सुरक्षित रखें, क्योंकि यह सवाल इस समय नहीं पैदा होता है, तो इसका यह मतलब है कि मंत्रिमंडल में भी अल्पसंख्यकों और विभिन्न वर्गों के लिये भी जगह सुरक्षित रखी जाये। स्विस-शासन-प्रणाली में यही होता है और इसीलिये यह कहा जाता है कि स्विस सरकार सबसे अधिक प्रजातंत्रात्मक है। उसकी धारा-सभा में सभी वर्गों और देश के सभी भागों का प्रतिनिधित्व होता है। धारा-सभा में ही नहीं, बल्कि मंत्रिमंडल में भी यही होता है। स्विट्जरलैंड में इस तरीके से काम होता है। धारा-सभा मंत्रियों का चुनाव करती है और वह ऐसे तरीके से करती है कि सभी अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्व हो जाता है। यह तरीका एकाकी अहस्तान्तरित मतदान द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व का तरीका है। यही हम यहां भी चाहते हैं ताकि विधान प्रजातंत्रात्मक हो। उसमें ऐसे आदेश हों कि विभिन्न हितों और अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्व हो सके। इसका अर्थ अवश्य ही यह भी होता है कि इनके लिये मंत्रिमंडल में जगहें रखी जायें।

बेगम साहिबा का संशोधन ऐसा है जो मौलवी साहब के प्रस्ताव से स्वभावत: उत्पन्न हो जाता है। हम मंत्रिमंडल में किसी प्रकार की नामजदगी के लिये नहीं कह रहे हैं। हम केवल यह कह रहे हैं कि चुनाव एक ऐसे निश्चित तरीके से हो कि मंत्रिमंडल में अल्पसंख्यकों के हितों का प्रतिनिधित्व हो सके। आनुपातिक प्रतिनिधित्व से चुनाव का तरीका सबसे अच्छा समझा जाता है। जब धारा-सभा में 50 से 500 या 300 तक सदस्य होंगे, तो यह कोई पेचीदा तरीका नहीं होगा। इस प्रणाली को अपनाकर आप अपने इस पूर्व घोषित सिद्धांत के अनुसार ही काम

[श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर]

करेंगे कि अल्पसंख्यकों और लोगों के कुछ वर्गों का प्रतिनिधित्व होना चाहिये और विधान प्रजातंत्रात्मक होना चाहिये। यह कहना कि कोई निर्वाचित मंत्री अविश्वास का प्रस्ताव पास करके हटाया जा सकता है, उस सिद्धांत का खण्डन करना है। मेरे मित्र मि. इब्राहीम और बेगम साहिबा के संशोधनों में कुछ विरोध है जिसकी ओर ध्यान नहीं दिया गया है। मि. इब्राहीम कहते हैं कि मंत्रियों को उत्तरदायी बनाना चाहिये। यदि मौलवी साहब का संशोधन स्वीकार किया जाये तो इसका अर्थ यह होगा कि मंत्री हटाये जा सकते हैं। लेकिन, श्रीमान्, यह बहुत आवश्यक है कि ये मंत्री जो धारा-सभा द्वारा इसलिये चुने जायेंगे कि वे मंत्रिमंडल में विभिन्न वर्गों जैसे ईसाईयों, मुसलमानों, आदिवासियों आदि का प्रतिनिधित्व करें, उसके जीवनकाल तक पदासीन रहने चाहियें। यह बात इस प्रस्ताव से स्वभावतः उत्पन्न हो जाती है।

श्रीमान्, मुझे आशा थी कि जिस विधान द्वारा भविष्य में हम पर शासन होगा उसमें कुछ नवीनता होगी। मगर मैं यह देखता हूं कि सिवाय इसके कि गवर्नर का चुनाव होगा, इसमें कुछ भी नवीनता नहीं है। श्रीमान् आपकी मार्फत मैं सभा से यह अपील करता हूं कि मुसलमानों, हिंदुओं, आदिवासियों आदि सभी वर्गों में आप जो विश्वास पैदा करना चाहते हैं, उसकी नींव डालने के लिये सभा का विधान बनाने के इस प्रजातंत्रात्मक प्रणाली पर पूर्ण रूप से विचार करना चाहिये।

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं उस मूल खण्ड का समर्थन करता हूं जिसे कमेटी के माननीय अध्यक्ष ने पेश किया है। उसके अनुसार गवर्नर ही अपने मंत्रियों को चुनेगा और बुलायेगा और वे उसी की इच्छानुसार पदासीन रहेंगे। इस सम्बन्ध में मुझे कुछ ज्यादा नहीं कहना है। खण्ड 14 में कहा गया है कि अपने मंत्रियों की नियुक्ति और उनके प्रति अपने व्यवहार के सम्बन्ध में गवर्नर का पथप्रदर्शन साधारणतया उत्तरदायी सरकार की प्रथायें करेंगी, जिनका विवरण परिशिष्ट में दिया हुआ है, इत्यादि। खण्ड 14 में आगे चलकर यह कहा गया है कि गवर्नर के किसी कार्य के औचित्य पर इस कारण आपत्ति न की जायेगी कि वह इन प्रथाओं के अनुकूल नहीं बल्कि प्रतिकूल किया गया है। श्रीमान्, यदि अपने मंत्रियों को चुनने का अधिकार गवर्नर के हाथ में नहीं बल्कि धारा-सभा के हाथ में दिया जाता तो विशेषतया अल्पसंख्यकों के लिये यह अच्छा होता। उदाहरणार्थ, गवर्नर या प्रधानमंत्री अपनी इच्छानुसार ऐसे मंत्रियों को चुन सकता है जो सच्चाई से गवर्नर या प्रधानमंत्री की आज्ञायों का पालन

करेंगे। लेकिन ऐसे लोग उन विशेष वर्गों के विश्वासपात्र न होंगे जिनका प्रतिनिधित्व करने की उनसे आशा की जाती है। इसलिये यदि थोड़ी-बहुत स्विस विधान के अनुसार व्यवस्था की जाती, जिसमें धारा-सभा ही प्रबन्धकारिणी का निर्माण करती है, तो धारा-सभा के प्रत्येक समूह और प्रत्येक सदस्य को अपने प्रतिनिधियों को चुनने का अवसर मिलेगा। ऐसे प्रतिनिधि सच्चे प्रतिनिधि होंगे और वे कार्य कर सकेंगे। परंतु यही कठिनाई उठ खड़ी होती है। यदि इस ढंग से मंत्रिमंडल बनाया जाये तो उसमें विभिन्न प्रकार के लोग होंगे जो अलग-अलग दिशाओं में खींचातानी करेंगे और एकमत का बिल्कुल अभाव होगा। मुझे यही दिखाई देता है। ऐसी स्थिति को रोकने के लिये मंत्रियों को ही अपना प्रधानमंत्री चुनना चाहिये क्योंकि ऐसी दशा में उनको उसकी आज्ञा का पालन करना ही होगा।

श्रीमान्, इसमें सन्देह नहीं कि विधान के मसविदे में यह कहा गया है कि गवर्नर अपने मंत्रियों को चुनेगा। परन्तु इसका उल्लेख नहीं है कि गवर्नर को बहुसंख्यक दल के नेता की सलाह से प्रबन्धकारिणी अर्थात् मंत्रियों को चुनना चाहिये। उदाहरणार्थ, आपको मालूम है कि सन् 1935 ई. के विधान के अधीन सिंध के गवर्नर ने क्या किया, जो दल बहुत कुछ बहुमत में था उसको उन्होंने नहीं बुलाया। दो दल थे जिनके सदस्यों की संख्या बहुत-कुछ एक समान थी लेकिन गवर्नर ने अपनी इच्छानुसार काम किया। उसने जिसे योग्य समझा उसी को चुना। उसने उस दल को नहीं बुलाया जो वास्तव में लोगों का प्रतिनिधित्व करता था और जिसका बहुमत था। इसलिये इस प्रकार के अधिकार गवर्नर के हाथ में दे देना कभी खतरनाक साबित होता है। निस्सन्देह ये गवर्नर प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुने जायेंगे लेकिन इस कारण उनको यह अधिकार और भी न देना चाहिये। वह प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुना जायेगा इसलिये वह बहुसंख्यक दल का सदस्य हो सकता है। यह मनुष्य की प्रकृति नहीं है कि वह अपने दल की राजनीति से ऊपर उठ सके। वह गवर्नर भले ही हो, परन्तु है तो वह मनुष्य ही। वह जानता है कि वह लोगों द्वारा चुना गया है और यह भी जानता है कि किस दल ने चुनाव में उसकी सहायता की और किसने नहीं की। इसलिये अपने अधिकारों का दुरुपयोग करने के लिये गवर्नर के लिये काफी गुंजाइश है। इसलिये इस प्रकार आप उसके मंत्रिमंडल बनाने के कुछ अधिकारों को ही न ले लेंगे लेकिन साथ ही आप अल्पसंख्यकों को संतुष्ट करने के लिये बहुत-कुछ कर सकेंगे। वे अपनी बात कह सकेंगे और एकाकी हस्तान्तरित मतदान द्वारा उनका प्रभावपूर्ण प्रतिनिधित्व हो सकेगा। अन्यथा, यदि वह गवर्नर की स्वेच्छा पर छोड़ दिया जाये और यदि दो बराबर बल के दल हों या उनके बल में थोड़ा ही अन्तर हो,

[श्री एस. नागप्पा]

तो थोड़े से बहुसंख्यक दल को न बुलाकर गवर्नर सिंध के गवर्नर की तरह दूसरे दल को मंत्रिमंडल बनाने के लिये बुला सकता है। यदि इस तरह के मंत्रिमंडल बनाये जायें तो इसका क्या विश्वास कि सरकारें स्थायी और शक्तिशाली होंगी? प्रतिदिन सरकारों को अपनी स्थिति सम्हालने की ही चिन्ता लगी रहेगी। वे न तो नीतियां निर्धारित कर पायेंगी और न यह देख पायेंगी कि उनसे देशवासियों को लाभ हो रहा है या नहीं; मेरी राय में गवर्नर को इतने अधिक अधिकार दे दिये गये हैं कि इससे सन्देह होने लगता है। मैं यह नहीं कहता कि प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुना हुआ गवर्नर अपने अधिकारों का दुरुपयोग करेगा। लोग इस प्रकार के लोगों को नहीं चुनेंगे। लेकिन हमें याद रखना चाहिये कि आखिर गवर्नर मनुष्य ही है और उसकी भी अपनी रुचि और अरुचि होगी, इसलिये वह गलती कर सकता है और मैं यही बताना चाहता हूं।

दूसरी बात यह है कि जैसा मैं शुरू में कह चुका हूं कि अच्छा यही होगा कि मंत्रिमंडल को बनाने की इज़ाजत गवर्नर को न दी जाये, बल्कि धारा-सभा उसे बनाये। इससे यह होगा कि धारा-सभा के हर एक सदस्य को अपना प्रतिनिधि चुनने का अधिकार मिल जायेगा। ऐसी स्थिति में यह प्रश्न उठता है कि क्या ऐसा विधान प्रयोग में आ सकता है? मंत्रिमंडल में सब तरह के लोग होंगे और सवाल यह है कि उनका व्यक्तिगत उत्तरदायित्व होगा या सामूहिक। इसमें सन्देह नहीं कि प्रत्येक मंत्रिमंडल और संगठन में लोगों का संयुक्त उत्तरदायित्व होता है। यदि मंत्रिमंडल के सदस्य अपने प्रधान मंत्री को चुनेंगे तो इसके लिये कम से कम वे उत्तरदायी होंगे और उनका संयुक्त उत्तरदायित्व होगा।

अभी तक गवर्नर आदेश-पत्र (इंस्ट्रमैंट आफ इन्स्ट्रक्शंस) के अनुसार अल्पसंख्यकों के सदस्यों को स्वयं चुना करता था। खण्ड 14 के नीचे एक नोट दिया गया है जिसमें यह कहा गया है कि गवर्नरों को जारी किये हुए इस आदेश-पत्र (इंस्ट्रूमैंट आफ इंस्ट्रक्शंस) का स्थान एक परिशिष्ट ले लेगा। मुझे इसकी खुशी है कि इस प्रकार की व्यवस्था है और मुझे आशा है कि इस परिशिष्ट के अधीन इस खण्ड से कुछ अधिकार मिलेगा, हालांकि अच्छा तो यह होता कि इसके विपरीत व्यवस्था होती।

***डा. बी. पट्टाभि सीतारमय्या** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस वाद-विवाद को बड़ी दिलचस्पी से सुनकर मुझे एकाएक प्रेरणा प्राप्त हुई है।

विशेषतया मुझे इसकी खुशी है कि संयुक्त प्रांत के हमारे पुराने आदरणीय मित्र मि. अजीज अहमद खाँ ने यह बहस छेड़ी है। उन्होंने हमें इसका अवसर दिया है कि हम उत्तरदायी शासन और स्थायी प्रबन्धकारिणी पर पूर्णरूप से वाद-विवाद करें और उनके संशोधन में जो थोड़ी-सी कमी रह गई थी, उसे परम विदुषी बेगम ऐज़ाज़ रसूल ने पूरा कर दिया है। इसलिये मुझे भी इस बहस में भाग लेने के लिये प्रलोभन मिला और यदि यह मेरी धृष्टता न समझी जाये तो मैं चाहता हूं कि जिस निम्न स्तर में यह छेड़ी गई है, उससे उठाकर ऊंचे स्तर में ले जाई जाये।

हम पिछले कुछ सालों की बातों और दशाओं के आधार पर अपना निर्णय देते हैं। सन् 1935 ई. के एक्ट में जिस प्रांतीय स्वायत्त शासन की व्यवस्था थी वह अब प्रयोग में है। सौभाग्य से या दुर्भाग्य से आजकल की ऐतिहासिक दशाएं पिछले 30 या 40 वर्षों की देन हैं। हमें कुछ हालतें मिली हैं और हम उन हालतों के शिकार रहे हैं। उन दशाओं में जो उत्पीड़न हुआ है उससे हमें मुक्ति नहीं मिल सकी है। हम साफ दिल से बिल्कुल नये सिरे से काम शुरू नहीं कर सके हैं। हमें ब्रिटिश सरकार की पैदा की हुई ये हालतें मिली हैं। आपको अच्छी तरह मालूम है कि किस प्रकार सन् 1906 ई. में लार्ड मिन्टो के काल में श्री आगा खां ने एक प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व किया और पृथक चुनाव क्षेत्रों के लिये बातचीत की। यह विषैला बीज उगा और सन् 1916 ई. में लीग-कांग्रेस समझौते के रूप में फलीभूत हुआ; जिसका बहुत-कुछ अंश मांटेग्यू सुधारों की रिपोर्ट में सम्मिलित कर लिया गया। हमें यह आशा थी कि दस वर्ष बीतने पर इन दूषित पृथक निर्वाचन क्षेत्रों का अन्त हो जायेगा, परन्तु हमें सफलता प्राप्त नहीं हुई है। जब-जब भी हमें राजनैतिक प्रणाली में सुधार करने का अवसर मिला, इस पेड़ की जड़ें मजबूत होती गई और इसमें और भी खराब फल लगे। यहां तक कि हमें अन्तिम फल भी मिल गये हैं। इस अन्तिम स्थिति में भारत एक अलग राज्य के रूप में काम करेगा और पाकिस्तान एक अलग 'स्तान' के रूप में। हमें आशा करनी चाहिये कि यह स्थिति थोड़े ही दिनों तक रहेगी।

इस परिस्थिति में हमें इस प्रश्न पर एक नये दृष्टिकोण से विचार करना चाहिये और इस पर विचार करना चाहिये कि पृथक निर्वाचन-क्षेत्रों का रहना कहां तक ठीक होगा। इस समय पृथक निर्वाचन-क्षेत्रों से क्या लाभ हो रहा है? सारे राजनैतिक प्रश्न पर हमें फिर से विचार करना है। इनसे मद्रास के 7 प्रतिशत, बंबई के 9 प्रतिशत, मध्य प्रांत के $4^1/_2$ प्रतिशत और संयुक्त प्रांत के 14 प्रतिशत लोगों को किस प्रकार फायदा होगा? इनसे केवल बराबर शिकायतें होती रहेंगी;

[डा. बी. पट्टाभि सीतारमय्या]

इसीलिये हम संयुक्त निर्वाचन-क्षेत्रों की ओर देख रहे हैं। हमें उन सभी विरोधी भावनाओं को भूल जाना चाहिये जो पिछले वर्षों में उत्पन्न हुई हैं। यद्यपि उनके लिये हम दोषी नहीं ठहराये जा सकते। हमें कांग्रेस और लीग इन दो नामों तक को भूल जाना चाहिये। हमें कांग्रेस और लीग दोनों का एक संयुक्त संगठन स्थापित करना चाहिये। या हमें इन दो नामों को ही छोड़कर एक प्रजातंत्रात्मक, गणतंत्रात्मक या समाजवादी या अन्य किसी नाम का संगठन जिसे आप पसंद करें स्थापित करना चाहिये, जिसका आधार केवल राजनैतिक हो। वह किसी प्रकार के धार्मिक पक्षपात में दिलचस्पी न लेगा।

वास्तव में अन्य देशों में अल्पसंख्यक धार्मिक उपासना की स्वतंत्रता, विश्वास और रीतिरिवाजों की स्वतंत्रता तथा भाषा, लिपि और संस्कृति की सुरक्षा, इन्हीं तीन बातों की मांग करते रहे हैं। इसी अभागे देश में ब्रिटिश सरकार के हस्तक्षेप से अल्पसंख्यकों का प्रश्न राजनैतिक बातों से मिलाकर पेचीदा बना दिया गया है। लेकिन वह काल अब बीत गया है। अब हम देशोन्नति के एक नये काल में प्रवेश कर रहे हैं। इसलिये अब जब नये संयुक्त निर्वाचन-क्षेत्र बनाये जाते हैं और आपका और हमारा एक ही राजनैतिक कार्यक्रम है और जब हमें कृषि से आय तथा भूमि की सीमाबन्दी जैसे आर्थिक प्रश्नों को सुलझाना होगा तो हम सब एक ही नाव में होंगे। तब मैं जनाब महबूब अली बेग के घर पर जा सकता हूं और उनकी माता से बातचीत कर सकता हूं और वे मेरे घर आकर मेरी पत्नी से बातचीत कर सकते हैं। हम एक दूसरे को भोजन के लिये निमंत्रण दे सकते हैं। सर्वोत्कृष्ट शिष्टता का व्यवहार कर सकते है और एक बार फिर भाई-भाई हो सकते हैं। तब यह प्रश्न न रह जायेगा कि कांग्रेस के लोगों ने ही सरकारी जगहों का ठेका ले रखा है। हमारे सरकारी पदों में ईसाई होंगे, मुसलमान होंगे और पारसी होंगे। यदि किसी व्यक्ति में किसी पद के लिये योग्यता होगी तो वह देश-सेवा के आधार पर चुना जायेगा न कि जेल जाने के कारण। यह बहुत जल्दी ही भुला दिया जायेगा और बहुत कुछ अभी भुलाया जाने लगा है। वास्तव में यह अच्छा ही है कि पुरानी परम्परा भुला दी जाये और नई परम्परा का सृजन हो। हमें पिछली बातों को याद करके भविष्य के बारे में निर्णय न देना चाहिये। हमें भूतकाल पर पर्दा डाल देना चाहिये और भविष्य का नये सिरे से निर्माण आरम्भ कर देना चाहिये। हममें राजनैतिक संगठनों को नये आधार पर बनाने की योग्यता होनी चाहिये ताकि यह न कहा जाये कि मुसलमानों की अल्पसंख्यक जाति की उपेक्षा की गई है। भविष्य में इस प्रकार की कोई बात न होगी। इस मंच से जो शिकायतें की

गई हैं उनका किसी प्रकार भी खण्डन नहीं किया जा सकता। यह बड़े दुख की बात है कि लोग इस तरह की बातें कहने के लिये मजबूर हो जाते हैं। लेकिन यह भूतकाल का अनिवार्य परिणाम है जिसके लिये हम पूर्णत: उत्तरदायी नहीं हैं; यद्यपि यह स्वीकार करना होगा कि अंशत: हमारा भी उत्तरदायित्व हैं। हम फिर एक ही झंडे के नीचे, एक ही मंच पर एकत्रित हो गये हैं। हम एक ही कार्यक्रम के अनुसार कार्य करेंगे और अब किसी प्रकार की कठिनाई न होगी।

चौधरी खलीकुज्जमां (संयुक्त प्रांत: मुस्लिम): क्या मैं जान सकता हूं कि माननीय सदस्य किस विषय पर बोल रहे हैं? मेरे विचार से जिस विषय पर वे बोल रहे हैं उसका इस संशोधन से कोई सम्बन्ध नहीं है।

***डा. बी. पट्टाभि सीतारमय्या:** इस छोटी सी बात की ओर मेरा ध्यान दिलाने के लिये मैं अपने मित्र का आभारी हूं। यह प्रश्न विषय संगत इस प्रकार है कि सारा संशोधन इस शिकायत पर आधारित है कि मुसलमानों की एक छोटी-सी अल्पसंख्यक जाति है और इसलिये एक वर्ग बहुत बड़े बहुमत में होने के कारण चुनाव में जीत जायेगा और उत्तरदायी सरकार के सिद्धांतों के आधार पर मंत्रिमंडल के सभी पदों पर अधिकार जमा लेगा और इस प्रकार अल्पसंख्यकों को नुकसान पहुंचेगा। मैं यह कहता हूं कि जब राजनैतिक सिद्धांतों के आधार पर दल बनेंगे और एक नया समझौता हो जायेगा तो इस प्रकार की बातें न होने पायेंगी।

***काजी सय्यद करीमुद्दीन:** लेकिन जो वक्ता इस संशोधन के समर्थन में बोले हैं उनमें से किसी ने भी यह नहीं कहा कि अल्पसंख्यकों को नुकसान पहुंचेगा, हालांकि मेरे मित्र ऐसा कह रहे हैं।

***श्री बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्त प्रांत: जनरल): वे आपकी चाल पहचान गये हैं।

***डा. बी. पट्टाभि सीतारमय्या:** हमें नई परिस्थितियों का सामना करना पड़ेगा, किन्तु भूतकाल के दु:खद अनुभवों से हम पर कोई प्रभाव न पड़ेगा। इसलिये मैं यह राय देता हूं कि इस प्रश्न पर एक नये दृष्टिकोण से विचार होना चाहिये, तब हमारे लिये यह सम्भव हो सकेगा कि हम इस पर विचार करें कि राजनैतिक सिद्धांतों के आधार पर ही किस प्रकार ऐसे राजनैतिक दल बनायें, जिनका साम्प्रदायिक दृष्टिकोण न हो और यह भी सोचें कि ऐसी नई प्रणाली किस

[डा. बी. पट्टाभि सीतारमय्या]

प्रकार बनायें जिसका आधार उत्तरदायी शासन हो। यह प्रस्ताव पहले के कटु अनुभव के आधार पर किया गया है। वह अनुभव एक भूला हुआ स्वप्न है और अब हम अपनी राजनैतिक उन्नति का एक नया अध्याय आरम्भ करेंगे, जिसमें बिल्कुल दूसरी प्रकार की परिस्थितियों की कल्पना होगी। इसलिये श्रीमान्, मैं यह आग्रह करता हूं कि यह संशोधन अस्वीकार कर देना चाहिये।

(इसके उपरान्त श्री डी. गोविन्द दास ने निम्नलिखित भाषण तेलुगू भाषा में दिया)।

+श्री डी. गोविन्द दास (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे अंग्रेजी भाषा में अपने विचार व्यक्त करने में असमर्थ होने के कारण आपने अपनी मातृभाषा में बोलने का जो अवसर दिया है उसके लिये मैं आपको धन्यवाद देता हूं। इस खण्ड में जो संशोधन पेश किये गये हैं उनका विरोध करने के लिये मैं यहां खड़ा हुआ हूं। मेरी राय में प्रांत के शासन-प्रबन्ध के सम्बन्ध में गवर्नर की सहायता करने व उसको सलाह देने के लिये गवर्नर को स्वयं मंत्रियों को चुनना चाहिये। इस प्रकार गवर्नर के चुने हुए मंत्री तब तक पदासीन रहेंगे जब तक कि वे लोगों का विश्वास न खो दें। ऐसी दशा में वे पदत्याग कर देंगे। पूरे चार वर्ष तक उनको पदासीन न रहने देना चाहिये। मैं गवर्नरों को अपने ही विवेक से प्रयोग में आने वाले अधिकारों को देने का घोर विरोध करता हूं। यदि प्रांत की शांति भंग होने का भय हो तो उसे तुरंत संघ के राष्ट्रपति को इसकी सूचना देनी चाहिये और उसकी आज्ञा के अनुसार काम करना चाहिये।

मैं एक बार फिर अध्यक्ष महोदय को अपनी मातृभाषा तेलुगू में बोलने देने के लिये धन्यवाद देता हूं।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुर:** अध्यक्ष महोदय, माननीय सदस्य किस भाषा में बोल रहे हैं?

श्री रामनारायण सिंह (बिहार: जनरल): मैं एक व्यवस्था सम्बन्धी आपत्ति करना चाहता हूं। मैं यह जानना चाहता हूं कि आया माननीय अध्यक्ष महोदय श्री गोविन्द दास जिस भाषा में बोल रहे हैं उसे समझते हैं; अगर वे नहीं समझते हैं तो वे वक्ता पर नियंत्रण किस प्रकार रख सकेंगे?

+तेलुगू भाषण का हिन्दी रूपान्तर।

***अध्यक्षः** मैं नहीं समझता कि मेरे लिये वक्ता पर नियंत्रण रखना आवश्यक है। मैं समझता हूं कि वे बोलने में सीमा के बाहर नहीं जा रहे हैं। *(हंसी)*

***एक माननीय सदस्यः** श्रीमान्, मैं आपसे जानना चाहता हूं कि माननीय सदस्य प्रस्ताव के पक्ष में बोल रहे हैं या विरोध में? मैं नहीं समझ पाता कि वे क्या कह रहे हैं और मैं नहीं समझता कि कोई भी माननीय सदस्य यह जानता है कि वे सभा में पेश किये हुए प्रस्ताव के पक्ष में बोल रहे हैं या विरोध में?

***अध्यक्षः** वक्ता की एक कमजोरी है और अन्य सदस्यों की भी कोई न कोई कमजोरियां हैं। वक्ता कुछ भाषाओं से अपरिचित हैं और अन्य सदस्य उनकी भाषा से अपरिचित हैं। सबकी अपनी कमजोरियां हैं। नियमों के अनुसार जिस भाषा में वे बोल रहे हैं उसमें उन्हें बोलने की मैं आज्ञा देता हूं। मैं समझता हूं कि वे अंग्रेजी में अपने विचार व्यक्त करने में असमर्थ हैं और इसलिये अपनी ही भाषा में बोलना चाहते हैं।

(श्री डी. गोविन्ददास ने तेलुगू में अपना भाषण समाप्त किया और अपने अधिकार की रक्षा करने के लिये अध्यक्ष महोदय को धन्यवाद दिया।)

***चौधरी खलीकुज्जमांः** अध्यक्ष महोदय, मि. अजीज अहमद खां ने जो संशोधन पेश किया है उसके मेरे विचार से दो भाग हैं। एक मंत्रियों के चुनाव के सम्बन्ध में है और दूसरा उनके चुनाव के तरीके के बारे में। दुर्भाग्य से मुझे यह दिखाई देता है कि यहां मेरे मित्रों ने इस सिद्धांत की बिल्कुल उपेक्षा की है और उन्होंने संशोधन के दूसरे भाग पर ही, जिसमें मंत्रियों के चुनाव का उल्लेख है, अपना सारा दिमाग खर्च किया है। मैं सदस्यों को यहां यह आश्वासन दे सकता हूं कि जहां तक अल्पसंख्यकों के अधिकारों का प्रश्न है, मैं जानता हूं कि यहां एक अल्पसंख्यकों की कमेटी है और उसमें हमें अपने अधिकारों के बारे में बहस करने का अवसर मिलेगा। प्रांतीय विधान कमेटी की रिपोर्ट को देखकर और उसे पढ़कर हम इस नतीजे पर पहुंचे कि अल्पसंख्यकों की कमेटी ने इसके लिये प्रत्येक सम्भव प्रयत्न किया कि रिपोर्ट में कोई ऐसी बात न कही जाये जो अल्पसंख्यकों की कमेटी की सिफारिशों के विरुद्ध हो या उससे असंगत हो। इस हद तक हम प्रांतीय विधान कमेटी के सदस्यों के आभारी हैं। मैं आप सभी लोगों से यह प्रार्थना करता हूं कि आप अपने दिमाग में यह ख्याल न लायें कि इस संशोधन के पीछे कोई उद्देश्य छिपा हुआ है। यह हो सकता है कि जब एक बार मंत्रियों के चुनाव के बारे में कोई सिद्धांत आपस में तय हो जाये, चाहे वह अहस्तान्तरित मतदन का सिद्धांत हो या एकाकी हस्तान्तरित मतदान का सिद्धांत हो या कोई अन्य सिद्धांत हो, तो इसके कारण कोई भी कठिनाई नहीं होगी। लेकिन यहां सिद्धांत का

[चौधरी खलीकुज्जमां]

प्रश्न है। हम यह अनुभव करते हैं कि जब हमने गवर्नर को बहुत से अधिकार दे दिये हैं तो हमें मंत्रिमंडल को भी ऐसा बनाना चाहिये जो हटाया न जा सके। इसके समर्थन में मैं अमेरिकन विधान या स्विस विधान या अन्य किसी विधान का उल्लेख नहीं करूंगा। मेरे विचार से इस प्रश्न पर केवल अपने यहां के लोगों की संस्कृति को ध्यान में रखकर विचार करना चाहिये। हमें यह विचार करना चाहिये कि इस देश के लोगों की संस्कृति के अनुरूप क्या होगा।

सन् 1935 ई. के विधान को, जिसके अनुसार प्रांतों को वास्तव में कुछ अधिकार मिल गये थे, हम बहुत काल तक प्रयोग में नहीं लाये हैं। जब कांगेस ने पहली बार शक्ति ग्रहण की तो वह केवल ढाई वर्ष तक पदासीन रही और अबकी बार उसने अभी ही तो बागडोर सम्हाली है। हमें अन्य क्षेत्रों का कुछ अनुभव है। उदाहरण के लिये, म्युनिसिपल और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों में दूसरे ढंग से चुनाव करने की कोशिश की गई है। इनमें क्या होता रहा है? आये दिन म्युनिसिपैलिटियों और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों में चेयरमैन के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास किया जाता है। किसी की समझ में नहीं आता है कि उनको जो अधिकार दे दिये गये हैं उनका क्या होता है। प्रांतों के गवर्नर उनके मामलों से ऊब गये हैं, इसलिये वे इस प्रणाली को खत्म करना चाहते हैं। पहले दो तिहाई सदस्यों का बहुमत निश्चित किया गया था और मैं नहीं जानता कि प्रांतों की धारा-सभाओं को तीन चौथाई का बहुमत निश्चित करना पड़ेगा कि नहीं; वरना यही होगा कि इन बोर्डों के चेयरमैन और प्रेसीडेंट प्रतिदिन पदच्युत होते रहेंगे। कुछ ही दिन हुये कि मद्रास का मंत्रिमंडल पदच्युत हो गया। अपने इस अनुभव से हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि प्रबन्धकारिणी को स्थायी बनाना हमारे ही हित में होगा। वरना नारों के बदलने के साथ ही मंत्रिमंडल भी बदल सकता है। हमारे लोग नारों से प्रभावित हो जाते हैं। आप कहते हैं कि पाकिस्तान और दो राष्ट्रों के नारे लोगों की जबान पर चढ़ गये। इससे यह प्रकट होता है कि आपके लोग किसी भी नारे को और किसी भी नेतृत्व को स्वीकार कर सकते हैं। इसके कारण मैं आपसे कहता हूं कि आपको अपने मंत्रियों की रक्षा के लिये व्यवस्था करनी चाहिये। आपको ऐसे बदलते हुये दलों से और धारासभा में समूहों के पक्षपात से इनको बचाना चाहिये। यह एक सीधा-साधा प्रश्न हमने विचारार्थ आपके सामने रखा है। यह सोचना ठीक नहीं है कि यह केवल एकाकी हस्तान्तरित या अहस्तान्तरित मतदान का प्रश्न है; क्योंकि मेरे कुछ मित्रों को यह अरुचिकर है। मैं आपको आश्वासन देता हूं कि यदि आप इस सिद्धांत को स्वीकार कर लें तो हम चुनाव

के किसी भी दूसरे तरीके को स्वीकार कर लेंगे। इसलिये इस संशोधन को स्वीकार करने या अस्वीकार करने के प्रश्न को आपको चुनाव के तरीके की कसौटी पर न कसना चाहिये। यह हो सकता है कि आप इस संशोधन से संतुष्ट न हों। आप उसे रद्द कर सकते हैं। लेकिन यह कहना कि यह संशोधन इसलिये पेश किया गया है कि हम चुनाव के किसी विशेष तरीके से छुटकारा पाना चाहते हैं, इसके उद्देश्य को गलत समझना है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मेरी अपनी धारणा यह है कि कोई भी गवर्नर जो लोगों द्वारा चुना गया हो कभी भी ऐसा मंत्रिमंडल नहीं बनायेगा, जिसमें लोगों के प्रतिनिधि न हों। चाहे वह जो भी हो, मुसलमान हो या गैर मुसलमान। मेरा यह विश्वास है, इसलिये हमने इस दृष्टि से इस प्रश्न पर विचार करने को नहीं कहा है।

इन थोड़े से शब्दों के साथ मैं मि. अजीज अहमद खां के संशोधन का समर्थन करता हूं।

*__श्री के.एम. मुंशी__ (बंबई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र मि. खलीकुज्जमां ने जो विचार प्रकट किये हैं उनके बारे में मुझे थोड़े से शब्द कहने हैं। सभा को ज्ञात है कि मि. अजीज अहमद खां के संशोधन का उद्देश्य यह है कि मंत्रिमंडल का चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर हो। जो दो संशोधन पेश किये गये हैं वे एक दूसरे का खण्डन करते हैं। मि. अहमद इब्राहीम साहब कहते हैं कि अल्पसंख्यक प्रांतीय धारा-सभा के प्रति उत्तरदायी होंगे। इसका अर्थ यह है कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर जिस मंत्रिमंडल का चुनाव होगा वह प्रांतीय धारा-सभा के प्रति उत्तरदायी न होगा। दूसरे शब्दों में इसका अर्थ यह हुआ कि अविश्वास का प्रस्ताव पास होने पर मंत्रिमंडल को पदत्याग कर देना चाहिये। लेकिन दूसरी ओर बेगम ऐज़ाज़ रसूल द्वारा पेश किये हुये संशोधन का यह उद्देश्य है कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर चुना हुआ मंत्रिमंडल असेम्बली के जीवनकाल तक रहे। दूसरे संशोधन का उद्देश्य यह है कि मंत्रिमंडल आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर चुना जाये और वह असेम्बली के जीवनकाल तक रहे। श्रीमान् अब मैं यह चाहता हूं कि यह सभा इस योजना को समझे। हर कोई जानता है कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व का अर्थ यह है कि सभा में बहुमत का समर्थन प्राप्त करने के बजाय पहले एक छोटे समूह का मतदान प्राप्त करना आवश्यक है। मंत्रियों के चुनाव में देश के राजनैतिक जीवन को आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली से अधिक और कोई चीज छिन्न-छिन्न नहीं करती । मैं एक ठोस उदाहरण दूंगा। यदि किसी सभा में 300 सदस्य हों तो 151 सदस्यों के बहुसंख्यक दल को

[श्री के.एम. मुंशी]

सभी मंत्रियों का समर्थन करना ही होगा ताकि वे पदासीन रह सकें। लेकिन आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत के अनुसार यदि सात मंत्री हों और मतदान देने वाले सदस्यों की कुल संख्या 300 हो तो जो कोई सदस्य भी पहले 35 या 40 सदस्यों की वोट पा जायेगा, वह मंत्री होने का अधिकारी हो जायेगा। इसलिये सभा मंत्रिमंडल को एक ऐसे सुसंगठित मंडल के रूप में नहीं देखेगी जिसमें उन साधारण सिद्धांतों और नीतियों के आधार पर चुने हुए प्रतिनिधि हों जिनको कि मंत्रिमंडल को कार्यरूप में लाना हो। इसके विपरीत वह कई भागों में बँट जायेगा और प्रत्येक भाग आरम्भ में अधिक से अधिक वोट प्राप्त करने का प्रयत्न करेगा। मैं किसी कल्पना के आधार पर यह सब नहीं कह रहा हूं। पहले महायुद्ध के समाप्त होने पर बार्साई की सन्धि के उपरान्त प्रेसीडेंट विलसन के आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत के पक्ष में होने से मध्य यूरोप के कई देश इस सिद्धांत को अपने यहां प्रयोग में लाये और बाद को उन्हें पछताना पड़ा। अपने सामने सारे राष्ट्र की भलाई के आदर्श को रखने के बजाय मंत्रियों को किसी छोटे समूह की आरम्भ में वोट पाने की अधिक चिन्ता थी और वे बहुत ही संकुचित नारे लगाते थे। इसलिये आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली का नतीजा यही होगा कि मंत्रिमंडल साधारण सिद्धांतों के विस्तृत आधार पर संगठित होने, सब मंत्रियों के मिलजुलकर काम करने और सामूहिक उत्तरदायित्व होने तथा सारे प्रांत की भलाई में दिलचस्पी लेने के बजाय उसमें विभिन्न समूहों के प्रतिनिधि होंगे, जिनके विभिन्न आदर्श और विभिन्न सिद्धांत होंगे। चूंकि 35 सदस्यों का मतदान संदिग्ध रहेगा इसलिये इसका नतीजा अवश्य ही यही होगा कि एक संयुक्त मंत्रिमंडल की स्थापना होगी, जिसके सदस्यों की अलग-अलग नीतियां होंगी और जब उसकी स्थापना होगी तो हम जानते हैं कि उसका क्या नतीजा होगा? सम्भवत: सदस्य जानते हैं कि फ्रांस में पिछले 25 वर्षों में क्या हुआ और क्या हो रहा है। फ्रांस में संयुक्त मंत्रिमंडल स्थापित करने का फैशन सा हो गया है, जिसका नतीजा यह है कि मंत्रिमंडल बालू की भीति की तरह गिरते रहते हैं। पिछले 8 या 10 वर्षों में कुछ नहीं तो बीस मंत्रिमंडल बदल चुके हैं। कुछ मंत्रिमंडल तो केवल आठ या नौ दिन टिक पाये हैं। उस समय जब हिटलर ने आस्ट्रिया में प्रवेश किया था तो फ्रांस में कोई भी मंत्रिमंडल नहीं था। जब उसने राइनलैंड में प्रवेश किया तो वहां एक रक्षक मंत्रिमंडल था और कोई भी प्रधान मंत्री होने के लिये तैयार नहीं होता था। जहां संयुक्त मंत्रिमंडल होते हैं वहां ऐसी स्थिति हो जाती है। प्रजातंत्र के लिये यही सबसे बड़ा खतरा है और यह संयुक्त मंत्रिमंडलों से उपस्थित होता है। एक ही प्रकार से प्रजातंत्र प्रभावपूर्ण ढंग से कार्यरूप में आ सकता है और वह

यह है कि एक बहुसंख्यक दल हो। यदि कोई बहुसंख्यक दल न हो तो हमें एक ऐसे दल को स्थापित करना चाहिये। इसके बाद पहले बहुसंख्यक दल मंत्रियों को चुने और फिर उनका सामूहिक उत्तरदायित्व हो और इस सुसंगठित मंत्रिमंडल पर प्रधानमंत्री का नियंत्रण हो। श्रीमान्, यह सभा जानती है कि इंगलैंड में प्रधान मंत्री के अंतिम अधिकार होते हैं और यही कारण है कि ब्रिटिश सरकार इतनी शक्तिशाली हो सकी। प्रधानमंत्री ही इसका निश्चय करता है कि किसे मंत्री बनाया जाये और वह किसी मंत्री को हटा भी सकता है, तथा अपने दल पर यह कहकर नियंत्रण रख सकता है कि यदि मुझे अपने दल का समर्थन प्राप्त न हो तो मैं धारा-सभा को समाप्त करा दूंगा और लोगों के सामने मतदान के लिये जाऊंगा। इस देश में हम बहुत कुछ ब्रिटिश प्रणाली के अनुसार ही उत्तरदायी शासन चला रहे हैं और इस प्रकार एक नई बात पैदा करने से मंत्रिमंडल बहुत कमजोर हो जायेगा और प्रांतीय धारा-सभा एक विच्छिन्न सभा हो जायेगी और वह प्रांत की भलाई की ओर ध्यान न दे सकेगी। इसलिये यद्यपि आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली इतनी निर्दोष प्रतीत होती है कि कुछ लोग उसके लिये लालायित हैं, लेकिन कुछ देशों में इसी के कारण प्रजातंत्रात्मक संस्थायें समाप्त हो गई हैं। मि. अजीज अहमद खां का यह संशोध न वास्तव में प्रजातंत्र के लिये विध्वंसात्मक है। यदि आपके यहां प्रजातंत्रात्मक प्रणाली है तो आपको उसे इस ढंग से चलाना चाहिये कि यदि उसके विरुद्ध सभा में अविश्वास का प्रस्ताव पास हो जाये तो उसको इस्तीफा देने के लिये तैयार रहना चाहिये। यदि वह पदासीन रहता है तो इसका यही अर्थ है कि वह लोकमत की उपेक्षा करता है।

अब मुझे केवल एक तर्क के बारे में कहना है जिसे मेरे मित्र मि. खलीकुज्जमां ने इस सभा में उपस्थित किया है। उन्होंने कहा है कि गवर्नर को विस्तृत अधिकार दिये जा रहे हैं। यदि ऐसा है तो मंत्रियों को और भी अधिक विस्तृत अधिकार दिये जाने चाहियें। इसमें सन्देह नहीं कि खण्ड 9 के अधीन, जिसे कि सभा ने स्वीकार कर लिया है, गवर्नर को कुछ ऐसे अधिकार दिये जायेंगे जो विवेक से प्रयोग में लाये जायेंगे। यह सभा अभी इन अधिकारों के विस्तार और उनकी सीमा से परिचित नहीं है। यह समझना चाहिये कि ऐसे प्रजातंत्रों में जो अभी शैशवावस्था में हैं और जिन्हें अभी अनुभव प्राप्त करना है, सार्वजनिक शांति खतरे में पड़ने की अवस्था में शांति स्थापना के लिये किसी व्यवस्था की, किसी मजबूत व्यवस्था की आवश्यकता है और गवर्नर को जो विवेक से प्रयोग में लाये जाने वाले अधिकार दिये जायेंगे वे केवल उस काल के लिये हैं, जब सार्वजनिक शांति के लिये कोई बहुत बड़ा खतरा उपस्थित हो गया हो। यदि प्रजातंत्रात्मक संस्थाएं

[श्री के.एम. मुंशी]

ठीक ढंग से चलें और यदि सार्वजनिक शांति किसी गंभीर संकट में न पड़े तो किसी भी कठिनाई का सामना न करना पड़ेगा और मंत्रिमंडल काम करता रहेगा। गवर्नर उसी समय हस्तक्षेप करेगा जब सार्वजनिक शांति गम्भीर संकट में पड़ जाये। ऐसी परिस्थिति में अन्य बातों की अपेक्षा सबसे पहले प्रांत की शांति की ओर ध्यान देना होगा। उस अवसर पर गवर्नर, जिसे प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुने जाने से और भी अधिक अधिकार प्राप्त होंगे, हस्तक्षेप करेगा और कहेगा कि मेरा प्रथम और अंतिम कर्त्तव्य यह है कि मैं प्रांत में शांति स्थापित करूं। कुछ प्रांतों में ऐसे अवसरों में जब कि वहां कि सार्वजनिक शांति खतरे ही में नहीं पड़ी बल्कि नष्ट-भ्रष्ट हो गई, वहां से सर्वोच्च अधिकारी के अपने अधिकारों को प्रयोग में न ला सकने के कारण इस देश को बहुत नुकसान पहुंचा है। ऐसी ही आकस्मिक परिस्थिति के लिये विवेक से प्रयोग में लाये जाने वाले अधिकार दिये गये हैं। जब तक ऐसी परिस्थिति उत्पन्न न हो जाये और वह शायद ही कभी उपस्थित हो—हमें आशा करनी चाहिये कि वह कभी उपस्थित न होगी—मंत्रिमंडल एक उत्तरदायी मंत्रिमंडल के रूप में काम करेगा। मुझे कोई भी ऐसा कारण नहीं दिखाई देता जिनकी बिना पर मैं सभा से इन संशोधनों को स्वीकार करने का आग्रह करूं। *(हर्षध्वनि)*

श्री फूल सिंह (संयुक्त प्रांत: जनरल): साहबे सदर, मुंशीसाहब की तकरीर के बाद मुझे उन तरमीमात के खिलाफ कुछ ज्यादा अर्ज नहीं करना है। बजुज इसके कि प्रपोर्शनेट रिप्रजेन्टेशन से चुनाव हो, वजारत कोएलिशन वजारत भी नहीं कही जा सकती है। कोएलिशन वजारत एक पार्टी के बाहमी समझौते की बिना पर हो सकती है। लेकिन जब पार्टी मेम्बरान की वोट से वजारत अपने आदमी चुने तो यह उन वजीरों पर रहा कि वह मिलकर काम करें या न करें और मौलवी अजीज अहमद साहब की तजवीज और बेगम साहिबा की तरमीम ने और भी कमी पूरी कर दी है; यानी अगर ऐसे चुने हुए वजीर आपस में लड़ते-झगड़ते ही रहें और जो एक वजीर करे दूसरा वजीर उसको मलियामेट करने में रहे, तो लेजिस्लेचर का यह भी अख्तियार न रहा कि वह उन वजीरों को हटा दे। यानी वजीर भला करें, या बुरा करें, मगर उस लेजिस्लेचर की तमाम उमर तक वह बने रहेंगे। यह बात तो बिलकुल करीने कयास नहीं हो सकती। मैं, जैसा कि मैंने शुरू में अर्ज किया था, उसके मुतल्लिक कोई ज्यादा हाउस का टाइम वेस्ट करना नहीं चाहता। पार्टी गवर्नमेंट एक प्रोग्रेसिव गवर्नमेंट हो सकती है। कोएलिशन

गवर्नमेंट किसी खास मकसद के लिये मुनासिब हो सकती है, लेकिन ऐसी गवर्नमेंट जो न पार्टी गवर्नमेंट हो न कोएलिशन गवर्नमेंट हो, किसी मकसद को पूरा करने के लिये नहीं हो सकती; बल्कि खास मकसद को नाकामयाब करने के लिये हो सकती है। मैं यह कहने में हिचकता नहीं कि ऐसी गवर्नमेंट से किसी मुल्क का भला होने का इमकान नहीं है और मैं यह कहने की जुर्रत कर सकता हूं कि शायद जिन साहिबान ने इन तरमीमात को पेश किया है उन्होंने हमारी इंटरिम गवर्नमेंट से क्लु लिया हो।

यह इंटरिम गवर्नमेंट जिस तरह मुसीबतों का शिकार रही है अगर उन्हीं मुसीबतों में इस मुल्क के हर सूबे को नहीं फांसना है तो हम सबका फर्ज है कि हम इन तरमीमात की ज़ोर से सब मुखालफत करें। अब कोई वक्त नहीं रहा कि हम इस तरह के फिजूल तजुर्बात में मुल्क का वक्त जाया करें। काफी कुर्बानियां हमको देनी पड़ी हैं और अब महज़ पार्टी गवर्नमेंट ही इस मुल्क का भला कर सकती है। इन चन्द अल्फाज के साथ मैं दोनों तरमीमात की मुखालिफत करता हूं।

*श्री शंकर दत्तात्रेय देव (बंबई: जनरल): मैं बहस बन्द करने का प्रस्ताव करता हूं।

*अध्यक्ष: मेरे पास आधे दर्जन से अधिक सदस्यों के नाम हैं जिन्होंने बोलने का विचार प्रकट किया है।

*कई माननीय सदस्य: बहस बन्द होनी चाहिये, बहस बन्द होनी चाहिये।

*अध्यक्ष: यदि सभा यह चाहती है कि बहस बन्द कर दी जाये तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। बहस बन्द करने का प्रस्ताव पेश किया गया है। मैं किसी एक सदस्य के पक्ष में नियम का अपवाद नहीं कर सकता। बहस बन्द करने का प्रस्ताव पेश हो चुका है। मैं इसे सभा के सामने रखता हूं।

बहस बन्द करने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

*माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल: श्रीमान्, इस निर्दोष खण्ड के कारण बहुत विस्तृत और विवादग्रस्त बहस छिड़ी है और फिर भी कुछ वक्ताओं को संतोष नहीं हुआ है। मैंने यह सोचा था कि इस खण्ड पर कुछ भी विवाद न

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

होगा। जिस प्रधान संशोधन का सुझाव किया गया है वह सारे विधान की जड़ पर ही आघात करता है। हमने इंगलैंड का पार्लियामेंटरी (परिषदात्मक) ढांचा अपनाया है अर्थात् इस अनुकरणीय प्रांतीय विधान में मंत्रिमंडल की प्रणाली को स्थान दिया है। संशोधन के प्रस्तावक एक भिन्न ढांचे की कल्पना करते हैं और यदि हम उसे स्वीकार कर लें तो हमें सारे विधान पर सम्भवत: फिर से विचार करना होगा। यह राय दी गई है कि पिछले कुछ वर्षो में हमें वर्तमान विधान का बहुत अनुभव हुआ है। मैं नहीं जानता कि यह कहां तक सच है क्योंकि जिस विधान के अधीन हम काम कर रहे थे वह एक पेचीदा विधान था। उसमें चुनाव की प्रणाली, नौकरियों की प्रथा, गवर्नरों के अधिकार और तमाम तरह की रुकावटें इस प्रकार रखी गई थीं कि जब वह पास हुआ तो वाद-विवाद में यह मत प्रकट किया गया था कि किसी मनुष्य के लिये यह सम्भव नहीं है कि वह इस विधान के अनुसार कार्य कर सके और देवता भी इसमें सफल नहीं हो सकते। इसके बावजूद वे उस विधान को प्रयोग में लाये। उस विधान को प्रयोग में लाने में जो कठिनाइयां उपस्थित हुईं और हममें से कुछ लोगों को जो कटु अनुभव हुए वह मंत्रियों के चुनाव की प्रणाली या प्रधान मंत्री के अपने मंत्रियों को चुनने के अधिकार से नहीं हुए, बल्कि कई अन्य कारणों से हुए, जिनको बताकर मैं सभा का समय नहीं लेना चाहता। इन प्रश्नों को उठाने का मेरा कोई इरादा नहीं है। किसी कारण कुछ वक्ताओं ने इन प्रश्नों का उल्लेख किया है लेकिन मैं उस वाद-विवाद में नहीं पड़ना चाहता। आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर मंत्रियों के चुनाव की प्रथा इस विधान के सारे ढांचे के ही विपरीत है। उससे प्रजातंत्र की जड़ पर ही आघात होता है, इसलिये वह यहां ठीक नहीं बैठती। ऐसे विधान को प्रयोग में लाने में हमारा जो अनुभव होगा वह उस अनुभव से कहीं कटु होगा जो हमें वर्तमान विधान को प्रयोग में लाने में हुआ है। इसलिये मेरी राय में इस विधान में इस नवीनता को लाना बहुत खतरनाक होगा और उसे हमें न लाना चाहिये।

अब जहां तक पृथक या संयुक्त निर्वाचन-क्षेत्रों का प्रश्न है, उन पर जैसा कि मैं आरम्भ में अपने भाषण में कह चुका हूं, एक पृथक कमेटी विचार करने वाली है। इसलिये अब मैं इन प्रश्नों को नहीं उठाना चाहता।

यह बताया गया है कि गवर्नर को बहुत विस्तृत अधिकार दिये गये हैं। मेरे विचार से इस विधान में गवर्नर के उतने विस्तृत अधिकार नहीं हैं, जितने कि वर्तमान विधान के अधीन विदेशी गवर्नरों के हैं। वर्तमान विधान में केवल

यही नहीं है कि लोकमत का प्रतिनिधित्व करने वाले प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुने हुए गवर्नर नहीं हैं बल्कि विदेशी गवर्नर हैं जो आदेश-पत्र (इंस्ट्रुमेंट आफ इंस्ट्रक्शन्स) के अनुसार काम करते हैं। जिनका उद्देश्य विदेशी हितों की रक्षा करना है। इस विधान के प्रयोग में लाने से जो अनुभव हुए हैं उनकी तुलना प्रस्तावित विधान के अनुभवों से नहीं की जा सकती। इस विधान के प्रयोग में आने से हमें सुन्दर अनुभव होंगे या नहीं, या यह ठीक ढंग से चल सकेगा या नहीं, यह इस पर निर्भर है कि हम इस विधान को किस ढंग से प्रयोग में लाते हैं। लोगों के विधानों का अन्त करने की इच्छा होने पर ही उनका अन्त होता है। हमारे पास ऐसे उदाहरण हैं कि जब विधान इस प्रकार व्यवहार में लाया गया कि प्रधान मंत्री या कोई मंत्री सभा की अनुमति से न हटाया जा सका, तो उसे गोली मारकर हटा दिया गया। इसलिये यह कहने से कोई फायदा नहीं है ऐसी प्रबन्धकारिणी जो न हटाई जा सके, सुरक्षित रहेगी। यदि स्थायी प्रबन्धकारिणी इस तरह से काम करती है तो लोग उसे खत्म करने के दूसरे तरीके ढूंढ निकालते हैं। हमें आवश्यकता है एक अच्छे विधान को व्यवहार में लाने की, सद्भावना की और जो कोई भी विधान हो उसे प्रयोग में लाने की भावना की।

हमने यहां सामूहिक उत्तरदायित्व, संयुक्त उत्तरदायित्व की कल्पना की है। संशोधन के प्रस्तावक ने जिस निर्वाचन प्रणाली का सुझाव किया है उससे केवल व्यक्तिगत उत्तरदायित्व सम्भव है और मंत्री अपने-अपने ढंग से काम करेंगे। प्रत्येक मंत्री केवल पांच, सात या दस वोटों को ध्यान में रखकर काम करेगा और सम्भवत: वह उन्हें ऐसे तरीकों से प्राप्त कर सकेगा जो उचित न समझे जायें और सारा ढांचा दूषित हो जायेगा। इसलिये मैं यह सिफारिश करता हूं कि जो प्रस्ताव मैंने पेश किया है उसे स्वीकार कर लिया जाये।

मैं अन्य संशोधनों को नहीं उठाना चाहता, क्योंकि जैसा कि कुछ सदस्य बता चुके हैं, वे मुख्य संशोधन के विपरीत हैं। इसलिये संशोधनों को रद्द कर देना चाहिये और जो प्रस्ताव मैंने पेश किया है उसे स्वीकार कर लेना चाहिये।

***अध्यक्ष:** यह प्रस्ताव पेश किया गया है कि: ''गवर्नर के मंत्री गवर्नर द्वारा चुने जायेंगे और बुलाये जायेंगे और वे उसी काल तक पदासीन रहेंगे जब तक उनकी इच्छा हो।''

इसमें यह संशोधन पेश किया गया है कि खण्ड 12 की जगह निम्नलिखित रखा जाये:

[अध्यक्ष]

''गवर्नर के मंत्री प्रांतीय असेम्बली के सदस्य आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली के अनुसार एकाकी अहस्तान्तरित मतदान द्वारा चुनेंगे।''

इस संशोधन में दो संशोधन पेश किये गये हैं। पहला संशोधन यह है कि खण्ड 12 (मद 57) में मि. अजीज अहमद खां के संशोधन के अंत में ''और वे प्रांतीय व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होंगे'' शब्द जोड़ दिये जायें। दूसरा संशोधन यह है कि खण्ड 12 (मद 57) में मि. अजीज अहमद खां के संशोधन के अन्त में ''और वे असेम्बली के जीवनकाल तक पदासीन रहेंगे'' शब्द जोड़ दिये जायें।

मैं पहले यह करना चाहता हूं कि संशोधन में जो संशोधन पेश किये गये हैं उन पर वोट लूँ। यदि इन दो संशोधनों में से कोई भी स्वीकार कर लिया जाता है तो वह मुख्य संशोधन हो जाता है। फिर मैं संशोधित संशोधन पर वोट लूंगा और यदि वह स्वीकार कर लिया गया तो वह खण्ड का अंग हो जायेगा। इसके बाद मैं संशोधित खण्ड को सभा के सामने रखूंगा।

अब मैं संशोधन में जो संशोधन पेश किया गया है उस पर वोट लेता हूं। वह यह है कि संशोधन के अन्त में निम्नलिखित शब्द जोड़ दिये जायें:

''और वे प्रांतीय व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होंगे।''

संशोधन रद्द कर दिया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधन में जो दूसरा संशोधन पेश किया गया है उस पर वोट लेता हूं। वह यह है कि संशोधन के अन्त में निम्नलिखित शब्द जोड़े जायें:

''और वे असेम्बली के जीवनकाल तक पदासीन रहेंगे।''

प्रस्ताव रद्द कर दिया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं मि. अजीज अहमद खां के मूल संशोधन पर वोट लेता हूं।

संशोधन रद्द कर दिया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं मूल खण्ड पर वोट लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 13

***अध्यक्ष:** अब हम खण्ड 13 पर विचार करेंगे।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** मैं खण्ड 13 पेश करता हूं:

''13 (1) यदि कोई मन्त्री बराबर छः महीने की अवधि तक प्रांतीय व्यवस्थापिका का सदस्य न रहा हो तो वह इस अवधि के समाप्त होने पर मन्त्री न रहेगा।

(2) मन्त्रियों के वेतन वही होंगे जो प्रांतीय व्यवस्थापिका समय-समय पर एक एक्ट द्वारा निश्चित करेगी और जब तक प्रांतीय व्यवस्थापिका उन्हें इस प्रकार निश्चित न करे, गवर्नर उन्हें निश्चित करेगा।:

परन्तु शर्त यह है कि किसी मन्त्री का वेतन उसके पद की अवधि तक नहीं बदला जायेगा।''

यह ऐसा प्रस्ताव है जिसमें शायद ही कुछ विवाद हो सकता है और मैं समझता हूं कि इस पर कोई बहस न होगी। मैं इस प्रस्ताव को सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***अध्यक्ष:** मुझे कई संशोधनों की सूचना मिली है। मैं संशोधनकर्ताओं से अपने संशोधन पेश करने को कहता हूं।

(सर्वश्री आर.के. सिधवा, वी.सी. केशवराव और एच.वी. पातस्कर ने अपने संशोधन नं. 59, 60 और 61 पेश नहीं किये।)

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): मेरे संशोधन नं. 62 में यह कहा गया है कि मंत्रियों का वेतन गवर्नर के वेतन से अधिक नहीं होगा और वह गवर्नर के वेतन के समान भी न होगा। कल हमने एक बहुत ही उचित प्रस्ताव पास किया कि गवर्नर प्रौढ मतगणना के आधार पर चुना जाना चाहिये और यह कि उसे कुछ अधिकार भी दिये जाने चाहियें। वह प्रांत का सबसे पहला नागरिक होगा और यह समझना चाहिये कि उसकी अधिक प्रतिष्ठा हो गई है। इसलिये यह उचित ही है कि गवर्नर का वेतन उसके मंत्रियों के वेतन से कम न हो।

[श्री आर.के. सिधवा]

मुझसे यह कहा गया है कि यह एक सुन्दर संशोधन है लेकिन इसे विधान में स्थान देना उचित न होगा। इसलिये, श्रीमान् मैं उसे पेश नहीं करता हूं।

(श्री विश्वनाथ दास का संशोधन पेश नहीं किया गया।)

***अध्यक्षः** मुझे इन्हीं संशोधनों की सूचना मिली थी। मूल प्रस्ताव पर अब बहस हो सकती है। जो उस पर बोलना चाहते हैं वे अब बोल सकते हैं। कोई सज्जन नहीं बोलना चाहते। मैं अब उस पर वोट लूंगा।

खण्ड 13 स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 14

***अध्यक्षः** अब हम खण्ड 14 उठायेंगे।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं किः

''अपने मंत्रियों की नियुक्ति और उनके प्रति अपने व्यवहार के सम्बन्ध में गवर्नर का पथप्रदर्शन साधारणतया उत्तरदायी सरकार की प्रथायें करेंगी जिनका विवरण परिशिष्ट में दिया हुआ है। किन्तु गवर्नर के किसी कार्य के औचित्य पर इस कारण आपत्ति न की जायेगी कि वह इन प्रथाओं के अनुकूल नहीं, बल्कि विपरीत किया गया है।''

उत्तरदायी सरकार की प्रथाओं के अनुसार एक परिशिष्ट बना दिया जायेगा और यहां रख दिया जायेगा। यह भी कोई विवादग्रस्त विषय नहीं है और मैं इस प्रस्ताव को सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** इस खण्ड में किसी भी संशोधन की सूचना मुझे नहीं दी गई है। जब तक कि कोई सदस्य इस पर बोलना न चाहे मैं इस पर वोट लूंगा।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुरः** मुझे एक व्यवस्था सम्बन्धी आपत्ति करनी है। क्या यह आवश्यक नहीं है कि खण्ड को स्वीकार करने के पहले परिशिष्ट सभा के सामने रखा जाये?

***अध्यक्षः** विचार यह है कि मसविदा बनाने वाली कमेटी परिशिष्ट को तैयार करेगी और तब वह सभा में पेश किया जायेगा। केवल सैद्धांतिक रूप से उसे यहां स्थान दिया गया है।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुरः** इस खण्ड में एक परिशिष्ट का उल्लेख है और जब तक वह उसमें शामिल न किया जाए, तो क्या यह उचित है कि हम बिना परिशिष्ट को देखे हुए उसके सहित इस खण्ड को स्वीकार कर लें?

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान्, जब हम इस खण्ड को स्वीकार करेंगे तो हम केवल इस सिद्धांत की स्वीकृति देंगे कि कई बातें पूर्व प्रथाओं के अनुसार निश्चित की जायें। सभा के सामने इस समय केवल यही प्रस्ताव है। जहां तक परिशिष्ट का सम्बन्ध है, सदस्यों को यह आपत्ति करने की स्वतंत्रता है कि किसी प्रकार की भी प्रथा न होनी चाहिये। लेकिन इसका उद्देश्य यह है कि आवश्यकता और अनुभव के अनुसार ये प्रथायें समय-समय पर बदल दी जायें, वरना बाद को हम यह कहेंगे कि यह एक लम्बा और पेचीदा तरीका है और हमें सारे विधान में ही परिवर्तन कर देने चाहियें। उद्देश्य यह है कि विधान में परिवर्तन न करके भी परिशिष्ट में परिवर्तन किये जा सकते हैं। जहां तक प्रथाओं का संबंध है परिशिष्ट अवश्य ही असेम्बली के सामने रखा जायेगा और सदस्यों को उसमें से कुछ निकाल देने या उसमें कुछ जोड़ने का अवसर मिलेगा। इस समय विचार यह है कि सभा से इस सिद्धांत की स्वीकृति ली जाये कि कुछ प्रथाओं को यहां परिशिष्ट के रूप में स्थान देना है, जिसे अनुभावनुसार बदला जा सकता है। बिना सभा में पेश किये हुए परिशिष्ट को स्थान नहीं दिया जायेगा।

***हाजी अब्दुल सत्तार हाजी इशहाक सईद** (मद्रासः मुस्लिम)ः मेरे विचार से जो तर्क मेरे मित्र ने पेश किया है वह स्वीकार नहीं किया जा सकता। यदि हम इस खण्ड को इसी रूप में स्वीकार कर लेते हैं तो इसका अर्थ यह है कि हम परिशिष्ट को भी स्वीकार कर लेते हैं। इसमें परिशिष्ट का उल्लेख है। मैं यह कहता हूं कि यदि कोई व्यक्ति परिशिष्ट लिख दे और इसके साथ नत्थी कर दे तो इसका अर्थ अवश्य ही यह होगा कि वह स्वीकार कर लिया गया है। उन्होंने कहा है कि वह इस सभा में पेश किया जायेगा। यह ठीक ही है। कोई भी बेरोक-टोक परिशिष्ट लिख सकता है और इसके साथ नत्थी कर सकता है।

[हाजी अब्दुल सत्तार हाजी इशहाक सईद]

इसीलिये मैं यह सुझाव पेश करता हूं कि परिशिष्ट का उल्लेख ही न होना चाहिये। वाक्य इस प्रकार है:

''अपने मंत्रियों की नियुक्ति और उनके प्रति अपने व्यवहार के सम्बन्ध में गवर्नर का पथप्रदर्शन साधारणतया उत्तरदायी सरकार की प्रथायें करेंगी।''

यहीं पर इसे समाप्त कर दीजिये। यह न कहिये कि 'जिनका विवरण परिशिष्ट में दिया हुआ है।' आगे चल कर कहा गया है:

'किन्तु गवर्नर के किसी कार्य के औचित्य पर इस कारण आपत्ति न की जायेगी कि वह इन प्रथाओं के अनुकूल नहीं बल्कि विपरीत किया गया है।''

परिशिष्ट का बिलकुल उल्लेख ही न कीजिये। जब वह तैयार हो जाये तो उसे सभा के सामने रखा जा सकता है। इस प्रकार यह कठिनाई दूर हो सकती है और मेरी राय में ऐसा ही करना चाहिये।

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): अध्यक्ष महोदय, जो प्रस्ताव यहां रखा गया है उसका समर्थन करने में मैं कठिनाई का अनुभव कर रहा हूं। यह एक सर्वमान्य नियम है कि कोई भी प्रस्ताव जो सभा के सामने रखा जाये स्वावलम्बी हो और स्वव्याख्यात्मक भी हो। उसका जो अर्थ हो उसकी व्याख्या उसमें होनी चाहिये और उसमें कोई ऐसी न्यूनता न होनी चाहिये, जिसकी पूर्ति किसी अन्य ऐसी चीज से हो जो सभा के सामने पेश न की गई हो। मैं जानता हूं कि उद्देश्य यह है कि कुछ प्रथाओं का अनुसरण किया जाना चाहिये, लेकिन आप सभा के सामने यह प्रस्ताव नहीं रख सकते कि सभा इसको स्वीकार कर ले। मंत्रियों और गवर्नर और अन्य लोगों के आपस के व्यवहार में कुछ प्रथाओं का अनुकरण करना होगा। 'कुछ' शब्द से सारा प्रस्ताव अनिश्चित हो जाता है और एक अनिश्चित प्रस्ताव को आप सभा के सामने नहीं रख सकते । यह कठिनाई है। सबसे अच्छा यह होगा कि इसके साथ परिशिष्ट नत्थी कर दिया जाये और फिर बाद को यह प्रस्ताव सभा के सामने रखा जाये, क्योंकि जब परिशिष्ट ठीक तौर से तैयार हो जायेगा तो उसके लिये सभा की स्वीकृति प्राप्त करना कठिन न होगा। तब

यह प्रस्ताव पूर्ण हो जायेगा और मैं नहीं समझता कि परिशिष्ट को पढ़ने के बाद सभा को उसे स्वीकार करने में कोई कठिनाई होगी। परन्तु इस रूप में इस प्रस्ताव को सभा के सामने रखने का अर्थ यह है कि आप उससे सादे चेक पर हस्ताक्षर करने को कह रहे हैं। हम नहीं जानते हैं कि उस परिशिष्ट में क्या होगा? यह कहा गया है कि वर्तमान आदेश-पत्र (इंस्ट्रूमेंट आफ इंस्ट्रक्शन्स) इस परिशिष्ट का स्थान ले लेगा? मुझे मालूम नहीं है कि जो कमेटी बैठ रही है वह वर्तमान आदेश-पत्र की शर्तों पर भी विचार करेगी कि नहीं। उस पर अभी विचार करना है। यह कमेटी इस रिपोर्ट को तैयार करने के लिये बनाई गई थी और मेरे विचार से कमेटी ने आदेश-पत्र पर भी विचार कर लिया होगा। यदि वह उससे संतुष्ट थी तो वह उसे परिशिष्ट के रूप में रख सकती थी। उसने ऐसा नहीं किया जिसका अर्थ यह है कि कमेटी ने उसे पूर्णत: सम्मिलित करना ठीक नहीं समझा। ऐसी दशा में हम नहीं जानते हैं कि आदेश-पत्र का कौन-सा भाग सम्मिलित किया जायेगा।

ऐसी दशा में इस प्रस्ताव का अर्थ केवल यह है कि आदेश-पत्र में जिन प्रथाओं का उल्लेख है उन्हें यह सभा स्वीकार कर ले। कमेटी जो मसविदा तैयार करेगी उससे यह सभा परिचित नहीं है। इसलिये यह उचित नहीं है कि जिस रूप में यह प्रस्ताव रखा गया है उस रूप में सभा से उसे स्वीकार कर लेने को कहा जाये। इसलिये मेरी राय में यह अच्छा होगा कि प्रस्तावक महोदय इस समय इस प्रस्ताव को वापस ले लें और परिशिष्ट के तैयार हो जाने पर उसे सभा के सामने रखने का अधिकार सुरक्षित रखें।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर:** श्रीमान्, इस खण्ड 14 में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है कि जिस परिशिष्ट का उसमें उल्लेख है वह इस सभा के सामने उपस्थित किया जायेगा। उसमें केवल यह कहा गया है:

> **''अपने मंत्रियों की नियुक्ति और उनके प्रति अपने व्यवहार के सम्बन्ध में गवर्नर का पथप्रदर्शन साधारणतया उत्तरदायी सरकार की प्रथायें करेंगी जिनका विवरण परिशिष्ट में दिया हुआ है.....।''**

इसलिये पहले तो इसका कोई आश्वासन नहीं दिया गया है कि यह परिशिष्ट कभी भी सभा के सामने रखा जायेगा। इसके अतिरिक्त हाशिये में यह लिख दिया गया है कि उत्तरदायी सरकार की प्रथाओं का अनुकरण किया जाना चाहिये। हमें कम से कम यह मालूम होना चाहिये कि ये प्रथाएं क्या हैं और किस सरकार की प्रथाओं का अनुकरण किया जाना चाहिये? क्या वे स्विस सरकार की प्रथाएं होंगी

[श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर]

या ब्रिटिश सरकार की, या भारतीय सरकारों की? या वे कोई ऐसी प्रथाएं होंगी जो अब बनेंगी? इसके अतिरिक्त नोट में कहा गया है कि ''यह परिशिष्ट इस समय गवर्नरों को जारी किये हुए आदेश-पत्र का स्थान ले लेगा।''

हम यह देखते हैं कि सारा प्रस्ताव अनिश्चित है। हमसे एक ऐसे प्रश्न पर वोट देने या विचार करने को कहा जा रहा है जिसके सबसे महत्वपूर्ण अंग यानी परिशिष्ट से हम परिचित नहीं हैं। इसके अतिरिक्त इसका कोई आश्वासन तक नहीं है कि यह परिशिष्ट हम लोगों के सामने रखा जायेगा। श्रीमान्, मेरे विचार से यह उचित नहीं है कि हमसे ऐसे प्रश्न पर इस समय विचार करने को कहा जाये। मेरी राय में इस खंड पर तभी विचार होना चाहिये जब परिशिष्ट तैयार हो जाये। उसके वर्तमान रूप में हमसे यह नहीं कहा गया है कि परिशिष्ट आदेश-पत्र ही होगा या उसीके समान होगा। यदि हमसे यह कहा जाता तो हमारे पथप्रदर्शन के लिये कुछ होता। हम कम से कम आदेश-पत्र का उल्लेख कर सकते और हम किसी निश्चित चीज पर विचार कर सकते। धैर्यवान सदस्य आदेश-पत्र को पढ़ते और वाद-विवाद में सहायता देते। लेकिन वर्तमान प्रस्ताव अपनी अनिश्चित और अस्पष्टता के कारण दोषपूर्ण है। जैसा कि मुझसे पहले बोलने वाले सज्जन कह चुके हैं वह स्वावलम्बी और स्वव्याख्यात्मक भी नहीं है।

***डा. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): श्रीमान्, मैं समझता हूं कि इस खण्ड के विरोध में जो आपत्तियां की गई हैं उनमें काफी बल है। जैसे यह रखा गया है उस रूप में इसे स्वीकार करना हमारे लिये असम्भव है। जब तक परिशिष्ट पेश नहीं होता है हम इस खण्ड को सिद्धांत की दृष्टि से भी स्वीकार नहीं कर सकते हैं। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि सारा खण्ड वापस ले लिया जाये और जैसा कि श्री अणे ने कहा है, इसे बाद को किसी समय पेश किया जाये। मैं यह सुझाव पेश करता हूं कि परिशिष्ट शब्द के साथ के कुछ शब्दों को निकाल देने से सब कुछ ठीक हो जायेगा। हम यह कह सकते हैं:

> **''..........उत्तरदायी सरकार की प्रथायें जिनका विवरण बाद को दिया जायेगा......।''**

यदि हम सुझाव स्वीकार कर लिया जाये तो शब्दों में बहुत कम परिवर्तन करना पड़ेगा। मेरे विचार से इससे सब कुछ ठीक हो जायेगा और हमें एक ऐसे परिशिष्ट के लिये अपनी स्वीकृति देने की आवश्यकता न पड़ेगी जो हमारे सामने नहीं है। इससे यह भी तय हो जायेगा कि आगे चलकर आदेश-पत्र का जो अंश

भी हम सम्मिलित करना चाहें उसे हमारे सामने रखा जायेगा। हमें उन पर विचार करने के लिये काफी समय मिलेगा। मेरे विचार से मेरे इस छोटे से संशोधन से यहां जो कोई भी आपत्तियां की गई हैं वे सब दूर हो जायेंगी। बिना इस प्रकार संशोधित किये हुए हम किसी भी ऐसे अस्पष्ट और अनिश्चित प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर सकते।

*राय बहादुर श्यामनन्दन सहाय (बिहार: जनरल): श्रीमान्, मैं नहीं समझ पाया हूं कि खण्ड 14 में किस स्थान पर अनिश्चितता है। इस रिपोर्ट को पेश करते हुए माननीय प्रस्तावक महोदय ने यह बिल्कुल स्पष्ट कर दिया था कि साधारणत: उद्देश्य यह है कि सभा उन सिद्धांतों को स्वीकार कर ले जिनके आधार पर प्रांतीय विधान बनाया जायेगा। जहां तक इस खण्ड विशेष का सम्बन्ध है इसमें स्पष्टतया यह बता दिया गया है कि गवर्नर का पथप्रदर्शन साधारणतया उत्तरदायी सरकार की प्रथायें करेंगी जिनका विवरण परिशिष्ट में दिया हुआ है, इत्यादि। आगे चलकर उसमें कहा गया है कि यह परिशिष्ट इस समय गवर्नरों को जारी किये हुए आदेश-पत्र का स्थान ले लेगा। श्रीमान्, यह आदेश-पत्र प्रयोग में है और हममें से जिन लोगों ने इन आदेशों को देखा है वे इससे सहमत होंगे कि उसमें इस सम्बन्ध में आदेश है कि मंत्री कैसे चुने जायें। यह सब सन् 1935 ई. के कानून में दिया हुआ है।

*एक माननीय सदस्य: उस कानून पर सभा विचार नहीं कर रही है।

*राय बहादुर श्यामनंदन सहाय: प्रश्न यह नहीं है कि उस पर विचार हो रहा है कि नहीं। इस रिपोर्ट का उद्देश्य साधारण सिद्धांतों को निर्धारित करना है और विचार यह है कि उनके सम्बन्ध में सभा का मत जान लिया जाये। हम बाद को यह प्रश्न उठा सकते हैं कि वर्तमान सिद्धांतों में और उनमें कुछ भेद है या नहीं। यदि हम इसे स्वीकार करते हैं कि बहुसंख्यक दल से ही मंत्रिमंडल बनाने को कहा जाये तो मेरे विचार से खण्ड 14 पर विचार करने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती।

*श्री बी. पोकर साहब बहादुर: श्रीमान्, मैं चाहता हूं कि जैसा आदर इस समय इस सभा का किया जा रहा है उससे कुछ अधिक आदर किया जाये। इस खण्ड को सभा की स्वीकृति के लिये पेश करते समय यह कहकर कि परिशिष्ट बाद को उसके सामने रखा जायेगा, मेरे विचार से उसे उतना महत्व नहीं दिया जा रहा है जितना कि उसे देना चाहिये। मैं यह जानता हूं कि कुछ मामलों के बारे में इस सभा का अधिक आदर नहीं किया जाता है; क्योंकि हमसे यहां बैठकर ऐसे भाषणों को सुनने को कहा जाता है और ऐसी बातों को स्वीकार करने को कहा जाता है जिन्हें हम नहीं समझ पाते हैं। इसी प्रकार यह खण्ड भी

[श्री बी. पोकर साहब बहादुर]

पेश किया गया है और हमसे कहा जा रहा है कि परिशिष्ट बाद को पेश किया जायेगा, परन्तु इस समय यह खण्ड स्वीकार कर लिया जाये! प्रस्तावक महोदय स्वयं नहीं जानते हैं कि परिशिष्ट क्या है? मैं यह कहूंगा कि यह एक बिल्कुल अनियमित कार्यवाही है और श्रीमान्, आप इसे अनियमित ठहरा सकते हैं।

मैं केवल दो सदस्यों के सुझावों की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा। मि. हाजी अब्दुल सत्तार ने यह कहा है कि परिशिष्ट शब्द निकाल दिया जाये और प्रथाएं शब्द रहने दिया जाये। मगर बिना यह जाने हुए इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेना कि ये प्रथाएं क्या हैं इस सभा के पक्ष में बहुत ही अनुचित और अनुत्तरदायी होगा। इनके पहले बोलने वाले वक्ता महोदय ने जिन संशोधनों का सुझाव किया है उनके बारे में भी यही बात कही जा सकती है। इसलिये श्रीमान्, चूंकि आप अध्यक्ष हैं इसलिये मैं आपसे अपील करता हूं कि आप श्री अणे की यह प्रार्थना स्वीकार करके कि इस खण्ड पर विचार स्थगित किया जाये, इस सभा के सम्मान और इसकी प्रतिष्ठा की रक्षा करें।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम)ः अध्यक्ष महोदय, संक्षेप में इसका अर्थ यह है कि हमसे एक परिशिष्ट को स्वीकार करने को कहा जा रहा है जो मौजूद ही नहीं है। एक वक्ता ने यह बताया है कि यह परिशिष्ट आदेश-पत्र के आधार पर होगा। परन्तु श्रीमान् की अनुमति से मैं यह बताना चाहता हूं कि नोट में केवल यह कहा गया है कि यह परिशिष्ट आदेश-पत्र का स्थान ले लेगा। इस तरह का कोई संकेत नहीं है कि परिशिष्ट आदेश-पत्र के आधार पर होगा या उसके समान होगा। श्रीमान्, इसका अर्थ यह है कि सभा से एक ऐसे प्रस्ताव को स्वीकार कर लेने को कहा जा रहा है, जिसकी न तो परिभाषा दी गई है और न यही बताया गया है कि वह क्या है। यह दूल्हे से ऐसा कहना है कि, यद्यपि दूल्हन मौजूद नहीं है, आप ब्याह कर लीजिये, परन्तु आपको वचन दिया जाता है कि वह बाद को चुनी जायेगी और आपको मिल जायेगी।

***श्री शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रांतः जनरल)ः श्रीमान्, यह सभा खण्ड 6 के उपखण्ड (3) को स्वीकार कर चुकी है जिसमें एक परिशिष्ट का उल्लेख है और वह यहां पेश नहीं किया गया। उस समय किसी सज्जन ने आपत्ति नहीं की। इसके अतिरिक्त माननीय प्रस्तावक महोदय ने आरम्भ में ही कह दिया था कि ये केवल सिद्धांत हैं और यह कि इनका ब्यौरा बाद को निश्चित किया जायेगा।

इसलिये मैं नही समझता कि इस खण्ड पर किसी प्रकार की आपत्ति की जा सकती है। ऐसी अनर्गल आपत्तियों को करके हमें सभा का समय नष्ट न करना चाहिये।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्त प्रांत: जनरल): श्रीमान्, मेरे विचार से इस प्रस्ताव के पक्ष में और इसके विरोध में बोलने वाले सदस्यों ने अच्छा तर्क उपस्थित किया है। उस परिशिष्ट की अनुपस्थिति में जो गवर्नरों को जारी किये हुए आदेश-पत्र का स्थान लेगा, मेरे विचार से यह प्रस्ताव अपूर्ण ही है। इसलिये श्रीमान्, मैं यह कहता हूं कि प्रस्तावक महोदय सरदार पटेल कृपा करके बतायें कि यह आदेश-पत्र क्या 'अब गवर्नरों को जारी किया गया है', अब शब्द से एक नई पेचीदगी पैदा हो जाती है। मुझे यह मालूम है कि लोकप्रिय मंत्रिमंडलों के आने के पहले गवर्नरों को जो आदेश-पत्र का उल्लेख किया गया था वह सन् 1937 ई. में प्रयोग में आया। क्या उसी आदेश-पत्र का उल्लेख किया गया है या अब सरकार में परिवर्तन होने के बाद कोई नया आदेश-पत्र अब गवर्नरों को जारी किया गया है? 'अब' शब्द से यह प्रकट होता है कि कोई नया आदेश-पत्र जारी किया है, यद्यपि मैंने इसके बारे में कुछ नहीं सुना है। मेरे विचार से यहां तात्पर्य पुराने ही आदेश-पत्र से है और 'अब' शब्द या तो यहां संयोगवश आ गया है या मैं इसका गलत अर्थ लगा रहा हूं। जो भी हो, जब तक आदेश-पत्र का ब्यौरा न मालूम हो, इसे इस समय स्वीकार करना उचित न होगा। इसलिये मेरा यह सुझाव है कि हम प्रस्ताव को तो स्वीकार कर लें लेकिन उसके नीचे दिये हुए नोट को स्वीकार न करें। उसकी जगह हम यह कह सकते हैं कि परिशिष्ट पर बाद को विचार किया जायेगा। चूंकि हम अपने प्रांतीय विधान के केवल सिद्धांतों को ही स्वीकार कर रहे हैं इसलिये हम यह कह सकते हैं कि गवर्नरों के अमुक-अमुक अधिकार होंगे; जिनका विवरण परिशिष्ट में दिया हुआ है और जहां तक परिशिष्ट का सम्बन्ध है हम उस पर बाद को विचार कर सकते हैं। जब तक यह सभा उसे स्वीकार न करे वह नियमानुसार स्वीकृत परिशिष्ट नहीं कहा जा सकता है। उस पर हम बाद को विचार कर सकते हैं। परन्तु ये अधिकार हम गवर्नर को दे रहे हैं और उनका पूर्ण विवरण यहां नहीं दे रहे हैं और यह कह रहे हैं कि परिशिष्ट बाद को रखा जायेगा। इसलिये मेरे विचार से हम इसे बगैर नोट के स्वीकार कर सकते हैं। यह नोट निकाल दिया जा सकता है और इसकी जगह दूसरा नोट रखा जा सकता है या पूरे खण्ड पर विचार स्थगित किया जा सकता है। मेरे विचार से मेरे मित्रों की यह मांग ठीक ही है कि आप इस सम्बन्ध में अपना निर्णय दें। यह प्रस्तावक का कर्त्तव्य नहीं है कि वह प्रस्ताव को वापस ले या उस पर जोर

[श्री महावीर त्यागी]

दे। यह एक व्यवस्था-सम्बन्धी प्रश्न है। आपको यह निर्णय करना है कि क्या परिशिष्ट की अनुपस्थिति में इस सभा के अधिकांश सदस्यों के लिये यह उचित होगा कि वे इस पर वोट लेने के लिये जोर दें क्योंकि सभा को बिना आदेश-पत्र के ठीक-ठीक शब्दों को जाने ही वोट देनी होगी। इसलिये श्रीमान्, मैं कहूंगा कि आपको इस व्यवस्था-सम्बन्धी प्रश्न को हल करना है।

अध्यक्ष: पहले एक बार जब इन नोटों के बारे में यह प्रश्न किया गया था कि ये नोट नियमित रूप से सभा के सामने नहीं रखे गये हैं तो सभा ने इनको स्वीकार नहीं किया था। उनका उद्देश्य केवल खण्डों के अर्थ की ओर संकेत करने का है और उनमें जो कुछ लिखा गया है वह हमारे लिये बाध्य नहीं हो सकता। इसलिये इन खण्डों पर बिना नोटों का उल्लेख किये हुए स्वतंत्र रूप से विचार करना चाहिये।

***एक माननीय सदस्य:** यह नोट का प्रश्न नहीं है। यह खण्ड का ही प्रश्न है।

***श्री राजकृष्ण बोस** (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान्, चूंकि इस खण्ड को स्वीकार करने के बारे में बहुत सी आपत्तियां की गई हैं और चूंकि इनमें से कई सारगर्भित हैं, इसलिये मैं यह सुझाव पेश करता हूं कि बिना परिशिष्ट की बातें जाने हुए उसे सभा को स्वीकार न करना चाहिये। इसलिये मेरी राय में इस खण्ड को भी खण्ड 8 की तरह वापस भेज देना चाहिये और इसका नया मसविदा कल सभा के सामने पेश किया जाये, ताकि जो सदस्य इससे सहमत नहीं हैं उनकी आपत्तियां दूर हो जायें।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, मुझे यह दिखाई देता है कि इस स्मृति-पत्र पर विचार करने का प्रस्ताव करते समय जो बातें मैंनें कही थीं उनकी ओर ध्यान नहीं दिया गया है। वरना मेरी समझ में नहीं आता कि यह आपत्ति क्यों की गई है? मैं कई बार कह चुका हूं कि इस स्मृति-पत्र में केवल सिद्धांतों का उल्लेख है और यदि उन्हें स्वीकार कर लिया जायेगा तो मसविदा बाद को तैयार होगा। यह सुझाव किया गया है कि इसका कोई आश्वासन नहीं है कि यह परिशिष्ट सभा के सामने रखा जायेगा। यह उतना ही निश्चित है जितनी यह बात है कि कल इस सभा की बैठक होगी। इस खण्ड में यह कहा गया है कि एक परिशिष्ट होगा। जब वह तैयार हो जायेगा तो वह बाद

को पेश किया जायेगा। परिशिष्ट मसविदे के साथ होगा और जब वह सभा के सामने पेश किया जायेगा तो उसकी जांच करने, उसमें कुछ जोड़ने या उसमें कुछ परिवर्तन करने के लिये काफी अवसर मिलेगा। मेरी समझ में नहीं आता कि यह सिद्धांत किस प्रकार अनुचित कहा जा सकता है। आपको एक सिद्धांत को स्वीकार करना है और जिस रूप में यह खण्ड रखा गया है उसे देखते हुए यह कहा जा सकता है कि वह न्यायोचित है। आपको हर एक बात के लिये आश्वासन नहीं दिया जा सकता। यह एक बहुत साधारण बात है और इसके बारे में कोई आश्वासन नहीं दिया जा सकता। एक माननीय सदस्य ने कहा है कि सभा का आदर किया जाना चाहिये। मेरे विचार से यहां की बहस का अधिक आदर किया जाना चाहिये। यदि यहां की बहस अधिक गम्भीरता से सुनी जाती तो इस खण्ड पर कुछ वाद-विवाद ही न होता। यह एक साधारण प्रस्ताव है और उसमें यह कहा गया है कि गवर्नर प्रथाओं का अनुसरण करेगा और उनके बारें में बाद को एक परिशिष्ट रखा जायेगा। आप जानते हैं कि गवर्नर पर न्यायाधीशों के सम्मुख दोषारोपण किया जा सकता है और उसे यह समझना है कि उसे एक विशेष उत्तरदायित्व को लेकर काम करना है और अपने कर्त्तव्यों को समझना है। इसलिये परिशिष्ट में उन निश्चित कर्त्तव्यों का उल्लेख होना चाहिये जिनका कि उसे पालन करना है। इसलिये उन प्रथाओं का विस्तृत विवरण देना आवश्यक है। साधारण सिद्धांतों को निश्चित करते समय हमने इन प्रथाओं का ब्यौरा नहीं दिया है और इसलिये वह बाद को पेश किया जायेगा। उस समय आपको उस पर बहस करने का काफी अवसर मिलेगा। इस समय इस खण्ड को स्थगित करने का मुझे कोई भी कारण नहीं दिखाई देता। नोट खंड का अंग नहीं है। वह केवल व्याख्या के उद्देश्य से रखा गया है। आप चाहें तो उसकी उपेक्षा कर सकते हैं। आप उस पर तनिक भी विचार न करें।

*श्री महावीर त्यागी: अब चूंकि नोट रद्द कर दिया गया है इसलिये कोई व्यवस्था-सम्बन्धी प्रश्न नहीं उठता। नोट के कारण ही भ्रम हो गया था।

*अध्यक्ष: वास्तव में इन कागजों में कोई भी नोट सभा में पेश होने वाले किसी प्रस्ताव का अंग नहीं है। प्रश्न यह है कि:

''खण्ड 14 स्वीकार कर लिया जाए।''

***श्री बी. पोकर साहब बहादुर:** श्रीमान्, इस सम्बन्ध में मैंने आपसे एक प्रार्थना की थी। मैंने एक व्यवस्था-सम्बन्धी आपत्ति की थी और आपका यह कर्त्तव्य है कि आप इस सम्बन्ध में अपना निर्णय दें कि यह प्रस्ताव नियमित है या नहीं। खण्ड पर वोट लेने के पहले मैं इस सम्बन्ध में आपका निर्णय जानना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से कोई व्यवस्था-सम्बन्धी प्रश्न नहीं उठता। प्रस्ताव पेश किया गया है।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 15

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, मैं चाहता हूं कि आपकी आज्ञा से खण्ड 15 पर उस समय तक विचार न किया जाये जब तक कि खण्ड 20 और 22 पर विचार न हो जाये; क्योंकि उस पर उसी समय विचार करना उचित होगा। इसलिये मैं आपसे आज्ञा चाहता हूं कि खण्ड 15 पर विचार स्थगित किया जाये।

***अध्यक्ष:** खण्ड 15 पर विचार स्थगित किया जाता है।

खण्ड 16

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, मैं खण्ड 16 को पेश करता हूं:

"(1) गवर्नर किसी ऐसे व्यक्ति को, जो किसी हाइकोर्ट का न्यायाधीश होने योग्य हो प्रांत के लिये एडवोकेट-जनरल नियुक्त करेगा जो प्रांतीय सरकार को कानूनी मामलों में सलाह देगा।

(2) प्रधान-मन्त्री के इस्तीफा देने पर एडवोकेट-जनरल अवकाश ग्रहण कर लेगा किन्तु नये एडवोकेट-जनरल के नियुक्त होने तक अपने कर्त्तव्यों का पालन कर सकेगा।

(3) एडवोकेट-जनरल वही वेतन पायेगा जिसे गवर्नर-जनरल निश्चित करे।"

(सर्वश्री पी. कक्कन, एम. अनन्तशयनम् आयंगर, एच.वी. पातस्कर, के. सन्तानम् और गुप्त नाथ सिंह ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि, खण्ड 16 स्वीकार कर लिया जाये।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 17

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, आपकी आज्ञा से मैं खण्ड 17 पेश करता हूं:

''किसी प्रांत के शासन प्रबन्ध-सम्बन्धी कार्य का संचालन गवर्नर के नाम से होगा।''

यह केवल एक रस्मी प्रस्ताव है और मैं इसे सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान्, मैं अपना संशोधन पेश नहीं करना चाहता।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है कि खण्ड 17 स्वीकार कर लिया जाये।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 18

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं खण्ड 18 पेश करना चाहता हूं:

''प्रांतीय सरकार के कार्य का संचालन अधिक सुविधाजनक रूप से करने और मंत्रियों के बीच कार्य-विभाजन के सम्बन्ध में गवर्नर नियम बनायेगा।''

(सर्वश्री कालावेंकटराव, एम. अनन्तशयनम् आयंगर और आर.के. सिधवा ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है कि खण्ड 18 स्वीकार कर लिया जाये।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

इसके बाद परिषद् शुक्रवार 18 जुलाई सन् 1947 ई. को दिन के तीन बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

Con. 3. 4.5.47
750

अंक 4
संख्या 5

शुक्रवार
18 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना	1
2.	अनुकरणीय प्रान्तीय विधान के सिद्धान्तों के सम्बन्ध में रिपोर्ट	1
3.	परिशिष्ट . . .	50

भारतीय विधान-परिषद

शुक्रवार, 18 जुलाई सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में विधान-भवन, दिल्ली में दिन के 3 बजे प्रारम्भ हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना

निम्नलिखित सदस्य ने अपना परिचय-पत्र पेश किया तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये।

डा. रघुनन्दन प्रसाद (बिहार : जनरल)।

अनुकरणीय प्रांतीय विधान के सिद्धान्तों के सम्बन्ध में रिपोर्ट वाक्य खण्ड 8

***अध्यक्षः** सभा अब वाक्य खंड 8 पर विचार करेगी जिसको कल छोड़ दिया था।

श्री एच.जे. खांडेकर (मध्य प्रांत और बरार : जनरल) : अध्यक्ष महोदय, हमारे सी. पी. के एक मेम्बर गुरू आगमदास इस कांस्टीट्युएंट असेम्बली के मेम्बर हैं। उनको अभी तक इस सेशन का नोटिस नहीं मिला है। इसका कारण यह है कि जो पता उनका लिस्ट में लिखा हुआ है वह गलत लिखा गया है। वे रायपुर जिले में रहते हैं मगर लिस्ट में विलासपुर जिला लिखा हुआ है। उनको अभी तक चिट्ठी नहीं मिली है।

मैं अध्सक्ष महोदय से प्रार्थना करूंगा कि अभी टेलीग्राम करके उनको इस मीटिंग का नोटिस देना चाहिये।

***सर बी.एल. मित्तर (बड़ोदा):** प्रांतीय विधान के वाक्य खंड 8 पर विचार करने के लिये आपने एक कमेटी नियुक्त की थी। कमेटी ने एकमत होकर रिपोर्ट पेश की है (परिशिष्ट), और उसने इस वाक्य खंड का फिर से इन शब्दों में मसविदा तैयार किया है:

''फेडरल गवर्नमेंट से मंजूरी लेकर कोई प्रांत किसी देशी रियासत से समझौते द्वारा किसी व्यवस्था सम्बन्धी, शासन सम्बन्धी या न्याय

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[सर बी.एल. मित्तर]

सम्बन्धी रियासत के कार्य को अपने हाथ में ले सकता है, बशर्ते कि उस समझौते में वह विषय हो जो कि प्रांतीय व्यवस्था संबंधी विषय-सूची या सहगामी व्यवस्था संबंधी विषय-सूची में शामिल हो।

ऐसा समझौता हो जाने पर उसकी शर्तों के अधीन प्रांत अपने उचित अधिकारियों द्वारा समझौते में दिये गये व्यवस्था, शासन या न्याय संबंधी कार्य को करा सकता है।''

श्रीमान् जी, इसकी व्याख्या में मैं कुछ शब्छ कहूंगा। यह ठीक है कि प्रांतीय सरकार की शासन संबन्धी, न्याय सम्बन्धी या व्यवस्था सम्बन्धी किसी भी सत्ता का प्रांत की सीमा के बाहर विस्तार नहीं हो सकता, अर्थात् किसी प्रांत की अतिरिक्त प्रादेशिक सत्ता नहीं है। यह वाक्य खंड रियासत से समझौता हो जाने पर प्रांत को अतिरिक्त प्रादेशिक अधिकार प्रदान करता है। इसका कारण यह है: मान लीजिये कि प्रांत से मिली हुई एक बहुत पिछड़ी हुई रियासत के अधिकार में कुछ शासन सम्बन्धी या न्याय सम्बन्धी कार्य हैं, परन्तु उनको प्रयोग में लाने के या कार्यान्वित करने के साधन नहीं हैं। ऐसी दशा में वह रियासत पड़ोसी प्रांत से समझौता कर सकती है, जिससे कि दोनों के लाभ के लिये उस पिछड़ी हुई रियासत को निकटवर्ती प्रांत के साधन उपलब्ध हो सकें। लेकिन यह भी हो सकता है कि दो दलों का ऐसा समझौता किसी तीसरे प्रांत या रियासत द्वारा पक्षपातपूर्ण समझा जाये। ऐसे शक्य संकट से बचने के लिये ''फेडरल गवर्नमेंट से मंजूरी लेकर'' शब्द रखे गये हैं, जिससे कि फेडरल गवर्नमेंट समझौते की मंजूरी देने के पूर्व यह जान ले कि इस प्रांत और रियासत का यह समझौता है, और समझौता दोनों के लिये लाभदायक है तथा किसी के लिये हानिकारक नहीं है। इस मसविदे से प्रांत की सत्ता का क्षेत्र प्रादेशिक अधिकार-सीमा से अधिक हो जाता है। सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर द्वारा उठाई गई उन कुछ आपत्तियों के कारण जो कि जायज समझी गई थीं, मसविदे को फिर से तैयार करना आवश्यक हो गया। मुझे आशा है कि यह मसविदा समस्त स्पष्टताओं का निवारण करता है। अत: श्रीमान् जी, मैं इसे पेश करता हूं।

***अध्यक्ष:** क्या कोई व्यक्ति इस वाक्य खंड के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता है?

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास: जनरल): मैंने एक संशोधन की सूचना दी थी।

***अध्यक्षः** श्री गुप्ते को संशोधन पेश करना है। सर अल्लादी! मैं आपको अवसर दूंगा।

श्री बी.एम. गुप्ते (बंबई : जनरल): मैं यह निवेदन करता हूँ कि निम्न नये वाक्य खंड..........।

***अध्यक्षः** सर अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर! आप प्रस्ताव पर बोलना चाहते थे। मैंने समझा कि श्री गुप्ते का संशोधन होगा, पर उनका तो एकदम नया प्रस्ताव है।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** अध्यक्ष महोदय, इस संशोधन का समर्थन करते हुए मैं इस समय कुछ विचार पेश करना चाहता हूँ। वास्तव में इन्हीं बातों के कारण मैंने संशोधन की सूचना दी थी। हाउस द्वारा नियुक्त की गई कमेटी ने कुछ परिवर्तन करके उस संशोधन को वस्तुतः स्वीकार कर लिया था। परिवर्तन यह था कि केन्द्रीय सरकार की मंजूरी ले लेनी चाहिये। जैसा कि इस हाउस को विदित है, भारतवर्ष में ऐसी छोटी-मोटी अनेकों रियासतें हैं जिनके लिये शासन-सम्बन्धी या न्याय-सम्बन्धी कुछ अधिकारों का प्रयोग करना कठिन होगा। इसलिये कम खर्च तथा अच्छा प्रबन्ध दोनों का विचार रखते हुए यही व्यवस्था उचित और ठीक होगी कि निकटवर्ती प्रांत उन रियासतों के शासन-सम्बन्धी और न्याय-सम्बन्धी कुछ अधिकारों को जिन पर दोनों में समझौता हो चुका हो, अपने हाथों में ले सकें, तथा ऐसे प्रबन्धों की कानूनी मंजूरी प्रांत दे सकें। तदनुसार वाक्य खंड में केवल उन्हीं अधिकारों को प्रयोग में लाने की व्यवस्था दी गई है जो प्रांतीय तथा दोनों ओर लागू सूची के अनुसार प्रांतों के अधीन हैं। कार्य के महत्व तथा भारतीय संघ और प्रांतों के संबंध का विचार करते हुये संघीय सरकार की मंजूरी प्राप्त करने की व्यवस्था रखी है। यह आशा की जाती है कि जब विधान पर अन्तिम निश्चय होगा तो यूनियन के विधान में भी फेडरेशन सरकार के लिये यह व्यवस्था रखी जायेगी कि यूनियन सरकार में आये हुए प्रदेशों अथवा उसके नियंत्रण में आने वाले प्रदेशों में उसी प्रकार की पूर्ण अधिकार सीमा को प्रयोग में लाया जाये जैसी कि ब्रिटिश क्राउन की एजेन्सी द्वारा विदेशी ब्रिटिश अधिकार-सीमा के एक्ट के अनुसार प्रयोग में लाई जाती थी। जो व्यवस्था अब रखी जा रही है वह वास्तव में किसी ऐसी सामान्य व्यवस्था के बनाने के पक्षपात से परे है।

[सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

श्रीमान् जी, मैं यह बता दूं कि कुछ क्षेत्रों में ऐसे भी सुझाव पेश किये गये हैं कि उन प्रांतों के लिये भी व्यवस्था बनाई जाये जो रियासतों की अधिकार-सीमा से पृथक हो रहे हैं। हमारा रियासतों के विधान से कोई सम्बन्ध नहीं है। लेकिन जब रियासतें संघ में आ जायेंगी, जिसमें मुझे कोई संदेह नहीं है, उस समय किसी पृथक क्षेत्र के सम्बन्ध में यह विधान-परिषद किसी ऐसे सुझाव पर उचित विचार करेगी और जो रियासतें इस प्रकार के दायित्व को संभाल सकती हैं उनको किसी पृथक क्षेत्र की अधिकार-सीमा सौंपने पर गौर करेगी।

इन शब्दों में मैं अपने माननीय मित्र सर बी.एल. मित्तर द्वारा प्रेषित प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

*__श्री ए.पी. पट्टान्नी__ (पश्चिमी भारत की रियासतों का ग्रुप): अध्यक्ष महोदय, जो कुछ माननीय सदस्य कह रहे थे मैं उसे स्पष्ट न सुन सका लेकिन मैंने उनकी बात से यह समझा कि ब्रिटिश भारत प्रदेश से वे पृथक क्षेत्र जो कि रियासतों के अन्तर्गत आते हैं उसी प्रकार केन्द्रीय सरकार की आज्ञा से देशी रियासतों की अधिकार-सीमा के अन्तर्गत आ जायेंगे। यह सिर्फ इकतर्फा नहीं होना चाहिये। मैं विश्वास करता हूं कि निकट भविष्य में फेडरल विधान पर वाद-विवाद करते समय रियासतों के ग्रुपों के विधान के सम्बन्ध में कुछ न कुछ विचार होगा। इसके अतिरिक्त जो कुछ मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि यदि कोई रियासत किसी प्रांत की ओर से इन अधिकारों का प्रयोग करने की क्षमता रखती है तो फेडरल अधिकारियों की सम्मति से वह रियासत उन अधिकारों को प्रांतीय सरकार से समझौते द्वारा प्राप्त कर सके।

*__श्री बी.एल. मित्तर:__ अध्यक्ष महोदय, आपने जो कमेटी नियुक्त की थी उसने प्रांत और रियासत में परस्पर प्रबन्ध के प्रश्न पर विचार किया था और कमेटी इस निश्चय पर पहुंची कि चूंकि वह प्रांतीय विधान पर विचार कर रही है अत: रियासतों की अधिकार-सीमा पर विचार करना असंगत होगा। यह निश्चय किया गया कि इस दशा में हम परस्पर प्रबन्ध के सम्बन्ध में कुछ भी न कहें। तब यह प्रश्न उठता है कि किस स्थिति तथा किस स्थान में यह परस्पर प्रबन्ध हो सकता है? इसके कई उत्तर हो सकते हैं। यदि किसी रियासत को उसकी मर्जी से किसी ऐसे क्षेत्र के, जो अब ब्रिटिश भारत के अन्तर्गत है, अतिरिक्त प्रादेशिक अधिकार दिये जाते हैं तो ऐसे ही वाक्य खंड के अनुसार अर्थात् यूनियन

सरकार की मर्जी से रियासत को प्रांत की अतिरिक्त प्रादेशिक अधिकार-सीमा में रखने का समझौता रियासत और प्रांत में हो सकता है। रियासत स्वयं अपनी धारासभा में ऐसा कानून बना सकती है। इस प्रश्न को छोड़ नहीं दिया गया था और मैं आशा करता हूं कि रियासत के लिये परस्पर प्रबन्ध करने की वैसी ही स्वीकृति यह हाउस देगा जैसी कि अब प्रांत के लिये मांगी जा रही है।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है:

''फेडरल गवर्नमेंट से मंजूरी लेकर कोई प्रांत किसी रियासत से समझौते द्वारा किसी व्यवस्था सम्बन्धी, शासन सम्बन्धी या न्याय सम्बन्धी रियासत के कार्य को अपने हाथ में ले सकता है, बशर्ते कि उस समझौते में वह विषय हो जो कि प्रांतीय व्यवस्था संबंधी विषय-सूची या (सहगामी) व्यवस्था संबंधी विषय-सूची में शामिल है।

ऐसा समझौता हो जाने पर उसकी शर्तों के अधीन प्रांत अपने उचित अधिकारियों द्वारा समझौते में दिये गये व्यवस्था सम्बन्धी, शासन-संबंधी या न्याय-सम्बन्धी कार्य कर सकता है।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***श्री बी.एम. गुप्तेः** श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि फिर से मसविदा बनाने के लिये नियुक्त की गई तत्सम्बन्धी कमेटी ने जो वाक्य खंड 8 पेश किया है उसके पश्चात् निम्न नया वाक्य खंड रखा जायेः

''8(क) विधान की व्यवस्थाओं के अधीन तथा किसी विशेष समझौते के अधीन, जिसका उल्लेख वाक्यांश 8 में किया गया है, प्रत्येक प्रांत के शासन संबंधी अधिकार उन मामलों में लागू होंगे जिन पर प्रांतीय धारा-सभा को कानून बनाने का अधिकार है।''

तत्सम्बन्धी कमेटी ने, जो कि इस वाक्यांश का फिर से मसविदा बनाने के लिये नियुक्त की गई थी, अपनी रिपोर्ट पेश कर दी है और कमेटी के मसविदे को हमने वाक्य खण्ड 8 के रूप में अभी स्वीकार कर लिया है। मूल वाक्यखण्ड 8 में ''शासन सम्बन्धी अधिकारों'' का उल्लेख था। लेकिन दुर्भाग्यवश इस मसविदे में वह भाग नहीं है जो पहले मूलरूप में था। अतः मेरा यह संशोधन उस कमी को पूरी

[श्री बी.एम. गुप्ते]

करता है। जो मसविदा इस समय स्वीकार किया गया है वह केवल विशेष समझौते का उल्लेख करता है, और यह नया वाक्यखंड प्रांत के शासन सम्बन्धी अधिकार का समावेश करता है। मैं अपने संशोधन को स्वीकृति के लिये रखता हूं क्योंकि वह वास्तव में केवल उस कमी को पूरी करता है जो कमेटी को मान्य होगी और मुझे विश्वास है कि प्रस्तावक महोदय भी इसे स्वीकार करेंगें।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल__ (बम्बई: जनरल): सर बी.एल. मित्तर द्वारा प्रेषित संशोधन को तथा श्री बी.एम. गुप्ते द्वारा पेश किये गये नये वाक्य खंड को मैं स्वीकार करता हूं, क्योंकि मूल वाक्य खंड में जिस समझौते का उल्लेख था उसका अब स्पष्टीकरण सर बी.एल. मित्तर के संशोधन द्वारा हुआ है। लेकिन मूल वाक्य खंड रहना चाहिये। इसलिये श्री गुप्ते ने यह प्रस्ताव पेश किया है। कि अतिरिक्त वाक्य खंड को सर बी.एल. मित्तर के संशोधन के पश्चात् रख दिया जाये। मैं श्री गुप्ते के नये वाक्य खंड के साथ सर बी.एल. मित्तर के संशोधन को स्वीकार करता हूं।

*__अध्यक्ष:__ क्या कोई व्यक्ति इस वाक्य खंड के उस संशोधन पर बोलना चाहता है जिसे श्री गुप्ते ने पेश किया है?

*__श्री नजीरुद्दीन अहमद__ (पश्चिम बंगाल: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं इस संशोधन को आवश्यक नहीं समझता हूं। यदि आवश्यक समझा जाये तो इस विषय को प्रांतीय अथवा सहगामी व्यवस्था-सम्बन्धी विषय-सूची में सम्मिलित कर दिया जाये। इस व्यवस्था-सम्बन्धी विषय-सूची में यहीं तक व्यवस्था की जा सकती है कि व्यवस्था तथा शासनकार्य सम्बन्धी प्रांतीय अधिकार पूर्ण हों। यदि इसमें कोई कमी रह जाती है तो वह व्यवस्था सम्बन्धी सूचियों में संशोधन करने का विषय है। इस प्रकार के वाक्य-खंड को स्वीकार करने को मेरे तुच्छ निर्णय में कोई आवश्यकता नहीं है। मैं हाउस के सामने केवल यही निवेदन करता हूं और इस पर ही विचार किया जाये कि यदि यह आवश्यक हो तो स्वीकार किया जाये तथा अनावश्यक हो तो पास न किया जाये।

*__माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर__ (मद्रास: जनरल): श्रीमान् जी, मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इसकी व्याख्या के लिये कुछ शब्दों की आवश्यकता है, विशेषकर पूर्व वक्ता द्वारा की गई टिप्पणियों के सिलसिले में उनका यह विचार प्रतीत होता है कि यह संशोधन जिसकी क्रम संख्या

8 (क) रखी गई है, अनावश्यक होगा। श्रीमान्, जी इसके विपरीत मैं यह कहूंगा कि वह अत्यावश्यक है, जिसका कारण यह है। इसमें संदेह नहीं कि विधान के अन्तर्गत हम फेडरेशन और प्रादेशिक इकाइयों के अधिकारों में भेद रखते हैं। परन्तु वे अधिकार केवल न्याय सम्बन्धी अधिकार हैं। न्याय संबंधी अधिकार केन्द्र तथा प्रादेशिक इकाइयों में बांटे गये हैं; लेकिन हमें प्रांत के शासन सम्बन्धी अधिकारों के क्षेत्र की भी व्याख्या करनी है। फेडरेशन के लिये भी हम व्याख्या करेंगे। जब तक हम यह न कहें कि यहां पर दी गई बातों के अतिरिक्त प्रांत के शासन-सम्बन्धी तथा न्याय-सम्बन्धी अधिकार समान रूप से लागू होंगे तब तक हम यह प्रकट नहीं कर सकते कि शासन सम्बन्धी कार्य कहां तक किये जा सकते हैं। श्रीमान् जी, इसलिये मैं समझता हूं कि संशोधन अत्यावश्यक है।

***सर बी.एल. मित्तर:** श्रीमान् जी, मैं समझता हूं कि कुछ सदस्यों की समझ में कुछ भ्रम है। जब मैंने यह कहा कि हमने इस वाक्य खंड का फिर से मसविदा बनाया है; तो वह मसविदा अधिकार-सीमा के अतिरिक्त प्रादेशिक भाग के सिलसिले में है। लेकिन मुख्य वाक्य खंड प्रांतीय अधिकार-सीमा को साधारण प्रादेशिक सीमा की व्याख्या करता है। विधान में कहीं न कहीं आपको यह बताना चाहिये कि किन विषयों पर अथवा किन प्रादेशिक सीमाओं के अन्तर्गत प्रांतीय सरकार को कार्य करना है। वाक्य खंड 8 में दिया हुआ है कि ''इस विधान की व्यवस्थाओं के अधीन तथा किसी विशेष समझौते के अधीन प्रत्येक प्रांत के शासन-सम्बन्धी अधिकार उन मामलों में लागू होंगे जिन पर धारा-सभा को कानून बनाने का अधिकार है''। हम जानते हैं कि सन् 1935 ई. एक्ट के अन्तर्गत प्रांतीय अधिकार-सीमा प्रांतीय विषय तथा सहगामी विषय तक सीमित है न कि फेडरल के विषय तक। यहां भी यह कहा गया है: 'जिन पर कि प्रांतीय धारासभा को कानून बनाने का अधिकार है'', अर्थात् वहीं तक जहां तक कि अधिकार-सीमा विषय का सम्बन्ध है। कुछ प्रादेशिक अधिकार-सीमा भी होनी चाहिये। यह कहा गया है कि शासन सम्बन्धी अधिकार का प्रादेशिक क्षेत्र न्याय-सम्बन्धी अधिकार के समान होगा। हमें प्रांतीय अधिकार-क्षेत्र की प्रादेशिक सीमायें और इसके साथ-साथ अधिकार-क्षेत्र के विषय रखने हैं। इसलिये यह आवश्यक है। मेरा पहला प्रस्ताव प्रांत की अतिरिक्त प्रादेशिक अधिकार सीमा के सम्बन्ध में था। अत: श्रीमान् जी, मैं निवेदन करता हूं कि वाक्य-खंड 8 का, जैसा कि छपा है, विधान में रखना जरूरी है।

***अध्यक्ष:** मैं नहीं समझता कि जब वाक्य-खंड पर वोट ली गई थी उस समय सदस्यों के मन में कोई भ्रम था। मैं मानता हूं कि सर बी.एल. मित्तर का

[अध्यक्ष]

यह अभिप्राय है कि मूल रूप में वाक्य-खंड जिस प्रकार था वह वहां उसी प्रकार रहे और जो कुछ उन्होंने आज पेश किया है वह उसमें जोड़ दिया जाये। तीनों वाक्य-खंड रहेंगे।

श्री गुप्ते मूल वाक्य खंड 8 को फिर से रखना चाहते हैं। मैं समझ गया।

अभी गुप्ते ने जो वाक्य-खंड पेश किया है उस पर मैं वोट लेता हूं।

वाक्यांश 8(क) स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** अब हम दूसरे परिच्छेद को लेंगे। हमने वाक्य-खंड 15 को छोड़ दिया था। क्या हम तैयार हैं?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** जी नहीं।

***अध्यक्ष:** तो हम दूसरे परिच्छेद के नियम 19 को लेंगे।

द्वितीय परिच्छेद – नियम 19

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** मैं प्रस्ताव रखता हूँ:

"19 (1) हर एक प्रान्त के लिये एक प्रान्तीय व्यवस्थापिका होगी और गवर्नर व लेजिस्लेटिव असेम्बली उसके अंग होंगे। निम्नलिखित प्रांतों में इसके अतिरिक्त एक लेजिस्लेटिव कौंसिल भी होगी।"

श्रीमान् जी, मैं यह सुझाव रखूंगा कि जहां तक ऊपर की सभा का सम्बन्ध है हमें प्रांतों के नेताओं से परामर्श करना है कि वे आपस में यह निर्णय करें कि किस-किस प्रांत में दूसरे चेम्बर की आवश्यकता है तथा आपसे निवेदन है कि आप प्रांतीय प्रधान मंत्रियों की एक कमेटी नियुक्त करें जो मीटिंग करे और हमें सूची दे जिससे कि उस सूची को यहां लगा दिया जाये।

"(2) लेजिस्लेटिव असेम्बली में विभिन्न निर्वाचन-क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व जनसंख्या के आधार पर होगा और जनसंख्या के हर लाख के लिये

एक प्रतिनिधि से अधिक नहीं होगा, लेकिन किसी भी प्रान्त की इस सभा में कम से कम 50 प्रतिनिधि होंगे।

लेजिस्लेटिव असम्बली का चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर होगा, वयस्क वह व्यक्ति है जिसकी आयु 21 वर्ष से कम न हो।

(3) प्रत्येक प्रान्त की प्रत्येक लेजिस्लेटिव असेम्बली यदि वह इसके पहले समाप्त न कर दी जाये तो अपने पहले अधिवेशन की निश्चित तिथि से चार वर्ष तक रहेगी।

(4) किसी प्रान्त में जहां कि व्यवस्थापिका की ऊपर की सभा हो वहां उस सभा की रचना निम्नलिखित प्रकार से होगी:

'(क) ऊपर की सभा की कुल सदस्य-संख्या नीचे की सभा की सदस्य-संख्या के 25 प्रतिशत से अधिक न हो।

(ख) ऊपर की सभा में आयरिश विधान के आधार पर कुछ सीमा तक व्यवसायों का प्रतिनिधित्व होना चाहिये।' वितरण निम्न लिखित प्रकार से होगा:

आधे आयरिश ढंग से व्यवसायों के प्रतिनिधित्व के आधार पर चुने जायेंगे; एक तिहाई नीचे की सभा द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर चुने जायेंगे;

छठा भाग मन्त्रियों की सलाह से गवर्नर द्वारा मनोनीत होगा।''

मैं इस वाक्य-खंड को हाउस की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं। हमने यह निश्चय कर लिया है कि प्रत्येक प्रान्त के लिये एक लेजिस्लेटिव असेम्बली होगी, और जहां कहीं द्विसभात्मक प्रणाली होगी उन प्रान्तों की सूची यहां लगा दी जायेगी। अभी जैसा कि आप सबको विदित है लगभग 5 या 6 प्रान्त हैं जिनमें केवल एक हाउस है जैसे उड़ीसा, पंजाब, सिंध और पश्चिमोत्तर सीमा प्रदेश। अन्य प्रान्तों में दो हाउस हैं। बंगाल और पंजाब प्रान्तों का अब विभाजन हो गया है। यह एक प्रश्न है कि छोटे प्रान्तों में या बंगाल में जबकि उसका विभाजन हो जायेगा हम ऊपर की सभा पसन्द करते हैं या नहीं? हमारा सम्बन्ध केवल पश्चिमी बंगाल से है। यह प्रतीत होता है कि वहां यूरोपियनों का विशाल प्रतिनिधित्व है जो कि 15 अगस्त से हट जायेगा।

विभिन्न प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व जनसंख्या के हर लाख के लिये एक प्रतिनिधि से अधिक न होगा। संभव है कि यह अनुपात कुछ

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

प्रान्तों में बढ़ाया जाये और जो प्रान्त छोटे हैं वहां इस अनुपात को कम किया जाये। इसलिये हमने एक कम से कम संख्या नियत कर दी है। अधिक से अधिक संख्या नियत करने का सुझाव पेश किया जा सकता है। चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर होंगे। हमने इस विषय पर निर्णय भी कर लिया है और वयस्क की आयु 21 वर्ष नियत कर दी है। व्यवस्थापिका का जीवन चार वर्ष का होगा।

जहां ऊपर की सभा होगी वहां हमने आयरिश ढंग की रचना को ग्रहण किया है। कुल सदस्यों का कुछ अनुपात व्यवसायों के प्रतिनिधित्व के आधार पर होगा; ऐसे प्रतिनिधित्व द्वारा आधे सदस्य हों। आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर तिहाई सदस्य नीचे की सभा द्वारा चुने जायेंगे और छठवां भाग मंत्रियों की सलाह से गवर्नर द्वारा मनोनीत होगा।

मैं इस प्रस्ताव को हाउस की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** मेरे पास अनेकों संशोधनों की सूचनायें आई हैं। मैं सदस्यों से निवेदन करता हूं कि वे एक-एक करके संशोधनों को पेश करें।

(सर्वश्री कक्कन तथा एच.जे. खांडेकर ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***मौलवी सैयद मुहम्मद सादुल्ला** (आसामः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि:

''वाक्य-खंड 19 के उपवाक्य-खंड (2) में 'लाख' शब्द की जगह 'दो लाख' शब्द रखे जायें, और

वाक्य-खंड 19 के उपवाक्य-खंड (2) में 'किसी प्रांत' शब्दों के पश्चात् 'और अधिक से अधिक 300' शब्द बढ़ा दिये जायें।''

मेरा पहला संशोधन तो उद्देश्य प्राप्त करने का साधन मात्र है और उद्देश्य है अधिक से अधिक संख्या नियत करना। रिपोर्ट में कम से कम संख्या का विचार रखा गया है। छोटे प्रान्तों में रिपोर्ट की सिफ़ारिश बहुत अच्छी तरह कार्यान्वित होगी; अर्थात नये विधान के अन्तर्गत हर लाख के लिये एक सदस्य का प्रतिनिधित्व होगा। लेकिन यदि हम इस सिद्धान्त को बड़े प्रान्तों में लागू करें तो व्यवस्थापिका संस्थायें, मेरी राय में, इतनी बड़ी और बेकाबू हो जायेंगी कि कार्य में विघ्न पड़ेगा।

उदाहरण के लिये घनी से घनी आबादी वाले प्रान्तों को लीजिये—संयुक्त प्रान्त—जिसकी आबादी सन् 1941 ई. की जनसंख्या के अनुसार 5½ करोड़ है। इस विधान के मसविदे में दी हुई सिफ़ारिश के अनुसार यदि हम हर एक लाख के लिये एक प्रतिनिधि रखें तो हाउस में 550 सदस्य हो जायेंगे। हम जानते हैं कि प्रत्येक मर्दुमशुमारी में हिन्दुस्तान की आबादी औसतन 15 फीसदी बढ़ जाती है। इसलिये सन् 1951 ई. के बाद हमें इस बड़ी संख्या का 15 प्रतिशत और बढ़ाना होगा। दूसरे शब्दों में संयुक्त प्रान्त की प्रान्तीय असेम्बली में 600 से अधिक सदस्य होंगे। वही मद्रास प्रेसीडेंसी में होगा जिसकी इस समय 4,93,00,000 की आबादी है और जिसका हाउस 493 सदस्यों का होगा। यहां तक कि बिहार जिसकी आबादी 3,63,00,000 है, अपनी प्रान्तीय लेजिस्लेटिव असेम्बली में 363 सदस्य रखेगा। श्रीमान् जी, मेरी राय में यह बिलकुल ठीक-ठीक संख्यायें हैं। लगभग सभी व्यक्तियों को यह अनुभव है कि संस्था में जितने अधिक सदस्य होते हैं उतना ही कम सम्बन्धित दलों का हित हो जाता है। प्रान्तों की इन वैधानिक संस्थाओं को बड़ी अथवा बेकाबू न बनाये जाने के कारण मैंने यह प्रस्ताव पेश किया है कि एक बड़ी से बड़ी संख्या नियत की जानी चाहिये और वह संख्या 300 होनी चाहिये। सन् 1935 ई. के वर्तमान विधान में हमने इसी प्रकार के विघटन को मंजूर किया था, इसलिये मेरे इस सुझाव में कोई विलक्षण बात नहीं है। उदाहरण के लिये बंगाल में अभी कुछ समय पूर्व 250 सदस्यों का हाउस था, और उसकी जनसंख्या पिछली मर्दुमशुमारी में 6 करोड़ से भी अधिक थी। मद्रास में जिसमें अब 4,93,00,000 की जनसंख्या है, 216 सदस्यों का हाउस है, संयुक्त प्रान्त में 268 का और बिहार में 152 का।

इसी प्रश्न का एक और पहलू भी है। रिपोर्ट में अथवा यूनियन पार्लियामेंट के विधान के मसविदे में, जो कि इस असेम्बली के सामने आने वाला है, वाक्य-खंड 14 (1) (ग) इस प्रकार है:

> **''लोक-सभा (House of the People) में फ़ेडरेशन के अन्तर्गत प्रदेशों की जनता के प्रतिनिधि होंगे। अधिक से अधिक हर दस लाख की जनसंख्या के लिये एक प्रतिनिधि होगा और कम से कम हर 7,50,000 की आबादी के लिये एक प्रतिनिधि होगा।''**

भारतीय-विधान जो कि 30 करोड़ जनता के लिये कार्य करेगा, इस गणना के अनुसार कम से कम 300 और अधिक से अधिक 400 प्रतिनिधियों की

[मौलवी सैयद मुहम्मद सादुल्ला]

लोक-सभा (House of the People) बनायेगा। इस बात पर ज़ोर देना मेरे लिये अनावश्यक है कि यह राष्ट्रीय परिषद् भारतवर्ष के फ़ेडरेशन के समस्त राजनीति तथा शासन-सम्बन्धी अधिकारों की केन्द्र होगी। यदि हम 300 से लेकर 400 तक की प्रतिनिधि-संख्या से सन्तुष्ट हैं तो मेरे ख्याल से प्रान्तीय लेजिस्लेटिव असेम्बली, जिसका अधिकार-क्षेत्र अपने प्रदेश की हद तक ही सीमित है, अपनी असेम्बली में प्रतिनिधियों की इससे अधिक संख्या न रखे। श्रीमान् जी, इसी अभिप्राय से मैं यह सिफ़ारिश पेश करता हूं कि जिस प्रकार हमने प्रतिनिधियों की कम से कम संख्या 50 रखने की व्यवस्था की है उसी प्रकार हमें अधिक से अधिक संख्या की भी व्यवस्था करनी चाहिये, और मेरी तुच्छ राय के अनुसार 300 सदस्यों की असेम्बली समस्त प्रान्तीय कार्यों के लिये यथेष्ट होगी।

(सर्वश्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले, गोकुल भाई डी. भट्ट, आर.के. सिधवा, डी.पी. खेतान और एच.जे. खांडेकर ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान् जी, इस वाक्य-खंड के नोट में आपको एक वाक्य मिलेगा जो इस प्रकार है:

''यूनीवर्सिटियों के लिये, या श्रम के लिये या स्त्रियों के लिये लेजिस्लेटिव असेम्बली में कोई विशेष प्रतिनिधित्व नहीं होगा।''

यहां तक तो ठीक, परन्तु व्यापार, व्यवसाय तथा उद्योग-धंधे का कोई जिक्र नहीं किया है। मैंने एक संशोधन रखा है कि:

''व्यापार, व्यवसाय या उद्योग धंधे का कोई विशेष प्रतिनिधित्व नहीं होना चाहिये।''

मैं नहीं जानता हूं कि यह भूल से रह गया है। यदि किसी विशेष हित का कोई विशेष प्रतिनिधित्व नहीं होगा तो मैं अपने संशोधन को पेश नहीं करना चाहता हूं। मैं तो यह चाहता हूं कि किसी भी हित के साथ रियायत न की जाये।

***अध्यक्ष:** वह केवल नोट है, वाक्य-खंड का अंश नहीं है।

***श्री आर.के. सिधवा:** इस नोट से कमेटी का अभिप्राय विदित होता है। कमेटी ने जो कुछ कहा है उससे मैं पूर्णत: सहमत हूं क्योंकि अब समस्त हितों के लिये मताधिकार लागू हो जाने और किसी हित के लिये विशेष रियायत न होने के कारण प्रत्येक व्यक्ति को सीधे मार्ग से आना पड़ेगा। मैं नहीं समझता हूं कि व्यापार, व्यवसाय और उद्योग-धंधे को क्यों छोड़ दिया गया है। मैं माननीय सदस्य से निवेदन करता हूं कि वे अपने उत्तर में इस बात को स्पष्ट कर देंगे कि सब विशेष प्रतिनिधित्व की समाप्ति हो जायेगी।

***अध्यक्ष:** श्री सिधवा, मैं यह समझता हूं कि आपने अपना संशोधन पेश नहीं किया है, क्योंकि नोट पर कोई संशोधन नहीं हो सकता है। श्री देसाई!

***श्री खांडूभाई के. देसाई** (बंबई: जनरल): मेरा संशोधन भी लगभग वैसा ही है जैसा कि श्री सिधवा का, और जैसा कि मैं समझता हूं कि अब से आगे हम केवल प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्र रखेंगे और कोई विशेष निर्वाचन-क्षेत्र न होंगे। मैं अपना संशोधन पेश नहीं करना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** श्री अमिय कुमार दास!

श्री अमिय कुमार दास (आसाम : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूं कि:

''वाक्यखंड 19 के उप-वाक्यखंड (2) में 'लाख' शब्द के स्थान में 'पिचहत्तर हजार' शब्द रख दिये जायें।''

यद्यपि मेरे माननीय मित्र सर सादुल्ला ने आबादी के परिमाण को एक लाख से दो लाख बढ़ा देने के लिये संशोधन पेश किया है, मुझे खेद है कि उसी प्रान्त आसाम का होते हुए मुझे उनसे मतभेद हो रहा है। आसाम में यह आम मांग है कि निर्वाचन-क्षेत्रों की सीमा निर्धारित करने के सम्बन्ध में जनसंख्या का परिमाण पिचहत्तर हजार की संख्या तक नियत किया जाना चाहिये। श्रीमान् जी, जैसा कि आपको विदित होगा आसाम में बहुत सी पिछड़ी हुई जातियां हैं और बड़े निर्वाचन-क्षेत्रों में इन जातियों को चुनाव में आने का कोई अवसर नहीं मिलेगा। यद्यपि प्रांतीय कांग्रेस कमेटी आसाम की बैठक नहीं हुई है, फिर भी हममें से बहुत से कांग्रेसी इस सम्बध में निर्णय कर चुके हैं। आसाम की प्रांतीय कांग्रेस

[श्री अमिय कुमार दास]

कमेटी के अध्यक्ष ने इसी विषय पर माननीय सरदार पटेल के विचारार्थ उनको एक मेमोरेन्डम भेजा है। मेरा विश्वास है कि मसविदा बनाने वाली कमेटी, जो कि अभी बनाई जायेगी, इस प्रश्न पर विचार करेगी।

1-19 वाक्यखंड के अन्त में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

''या जमींदारों के लिये या व्यवसाय के लिये या उद्योग के लिये''।

मैं इस हाउस के सामने एक अन्य प्रश्न पर जोर देना चाहता हूं। माननीय सरदार पटेल ने हमसे अभी यह कहा है कि आसाम में ऊपर वाली सभा नहीं है। वास्तव में ऊपर वाली सभा है तो सही, पर हम उसे भंग करना चाहते हैं। यह मांग लगभग हम सबकी सम्मति से है। भविष्य में हम उस ऊपर की सभा को नहीं रख रहे हैं जिसको हम इतने अरसे से रखे हुए थे तथा यही उचित और न्याययुक्त है कि पिछड़ी हुई जातियों को एकमात्र इस सभा के चुनाव में आने का अवसर दिया जाये-मेरा आशय नीचे की सभा से है। हाउस के सामने मैं खासकर इस बात पर जोर देना चाहता हूं कि जब आप व्यवस्थापिका के लिये अधिक से अधिक सदस्यों की संख्या नियत कर देंगे तो बड़े-बड़े प्रान्तों, जैसे मद्रास या संयुक्त प्रान्त में परिमाण के घटा देने से हाउस के बड़े और बेकाबू होने की कोई कठिनाई नहीं होगी। यह कठिनाई अधिक से अधिक संख्या नियत कर देने से दूर हो जाती है। जैसा कि सर सादुल्ला ने अभी अधिक से अधिक 300 की संख्या सीमित करते हुए विचार रखा है और मेरा ख्याल है कि माननीय प्रस्तावक इस संशोधन को स्वीकार करेंगे। इस विचार से, मेरा ख्याल है कि हाउस को मेरा संशोधन स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

हाउस की स्वीकृति के लिये मैं अपना प्रस्ताव पेश करता हूँ।

***अध्यक्ष:** रेवरेन्ड निकोल्सराय!

***माननीय रेवरेंड जे.एम. निकोल्सराय** (आसाम: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं अपने संशोधन को पेश करता हूं जो इस प्रकार है कि:

वाक्यखंड 19 के उप-वाक्यखंड (2) में निर्मलिखित व्यवस्था जोड़ दी जाये-

''बशर्ते कि उन प्रादेशिक क्षेत्र अथवा क्षेत्रों को, जिनमें पहाड़ी कौमें रहती हों, प्रतिनिधित्व देने के लिये प्रान्तीय सरकार एक लाख से कम जनसंख्या के आधार का निर्णय कर सकती है तथा कुल प्रतिनिधियों की संख्या तदनुसार बढ़ा दी जायेगी।''

इस संशोधन को पेश करने का कारण यह है कि वाक्यखंड 19 के उप-वाक्य-खंड (2) की भाषा किसी प्रान्त को लेजिस्लेटिव असेम्बली में हर लाख की जनसंख्या के लिये एक प्रतिनिधि की आनुपातिक संख्या के हिसाब से अधिक प्रतिनिधि रखने में बाधा डालती प्रतीत होती है। यदि इस वाक्यखंड की भाषा से यही तात्पर्य है, तो आसाम की पहाड़ी जनता के लिये यह वास्तव में एक दु:खदायी बात होगी। मेरे प्रांत के पहाड़ी इलाके में बड़े-बड़े प्रदेश हैं जिनमें अनुपात से कम मनुष्य बसे हुए हैं। उदाहरणार्थ, लुशाई की पहाड़ियों का क्षेत्रफल 8,000 वर्गमील से अधिक है लेकिन उसमें लुशाई लोग (वे अपने आपको मिज्जू कहते हैं) केवल डेढ़ लाख से कुछ अधिक बसे हुए हैं। एक समलत इलाके में जिसका क्षेत्रफल 3,800 वर्गमील है, 12,54,000 की आबादी है। ऐसा होने पर यदि एक लाख प्रति सदस्य का हिसाब पहाड़ी क्षेत्रों में भी लगाया जाये तो स्पष्टतया पहाड़ी मनुष्यों के लिये यह एक बड़ी भयानक और दु:खदायी बात होगी।

श्रीमान् जी, एक और इलाका है—उत्तरी कचार पहाड़ियां—जिनका क्षेत्रफल 2,000 वर्गमील है जिनमें केवल 37,000 जनसंख्या की पहाड़ी कौमें रहती हैं। हमारे यहां आने से पूर्व आज प्रात:काल हमारे पास इस इलाके की जनता के पत्र आये हैं जिनमें यह लिखा है:

समाचार-पत्रों से मुझे यह विदित हुआ है कि अनुकरणीय प्रान्तीय विधान-कमेटी ने यह सिफारिश की है कि प्रान्तीय व्यवस्थापिकाओं में जनगणना के आधार पर प्रतिनिधित्व होगा जो कि एक लाख पर एक प्रतिनिधि से अधिक नहीं होगा और कम से कम संख्या (प्रतिनिधियों की) 50 होगी। विशेष परिस्थितियों में बिना किसी व्यवस्था के यदि यह स्वीकार कर लिया गया तो उत्तरी कचार

[माननीय रेवरेंड जे.एम. निकोल्सराय]

पहाड़ी इलाके का. जिसकी आबादी केवल 37,000 है, प्रतिनिधित्व स्थायी रूप से अस्वीकृत हो जायेगा। जनसंख्या के आधार पर एक पूरे इलाके के प्रतिनिधित्व को अस्वीकार करना अन्यायपूर्ण और यहां तक कि मूर्खतापूर्ण होगा।

श्रीमान् जी, आसाम की पहाड़ी जनता का यह भाव है, और यह केवल इसी विशेष पहाड़ी इलाके के लिये ही लागू नहीं होता वरन् आसाम के समस्त पहाड़ी इलाकों के लिये लागू है।

अब भी पहाड़ी क्षेत्रों से आसाम की असेम्बली में प्रतिनिधित्व है जो कि एक लाख की जनसंख्या से बहुत कम आधार पर है। एक इलाका है जिसका एक प्रतिनिधि है और इस इलाके की आबादी केवल 85,000 है, एक और है जिसकी आबादी 70,000 है और वह एक प्रतिनिधि भेजता है। यदि इस वाक्यखंड का यह अभिप्राय है कि उस इलाके से कोई प्रतिनिधि नहीं भेजा जा सकता जिसकी कि आबादी एक लाख से कम है तब तो इन निर्वाचन-क्षेत्रों को समाप्त कर देना होगा। जब हम हिन्दुस्तान की आजादी के बाबत बातचीत कर रहे हैं तो इन (उपरोक्त) बातों का मतलब पहाड़ी जनता की दासता से है जिसको पहाड़ी जनता कभी भी न्याय के रूप में स्वीकार नहीं कर सकती है। इसलिये श्रीमान् जी, मैं निवेदन करता हूं कि इस वाक्यखंड के मसविदे द्वारा किसी ऐसे प्रान्त में जनसंख्या के इससे कम आधार को मानने में रुकावट न हो जिसे व्यवस्थापिका में एक सदस्य भेजने के लिये जनसंख्या के ऐसे कम आधार को मानने की अवश्यकता हो। मुझसे किसी ने कहा है कि यह वाक्यांश संभवत: इन सब बातों की इजाजत देता है। यह इस बात की भी इजाजत देता है कि प्रान्त को प्रतिनिधि संख्या 50 से लेकर 300 या 400 तक रखनी चाहिये, यदि बड़ी से बड़ी यही संख्या रखी गई। परन्तु मुझे ऐसा लगता है कि इस भाषा की व्याख्या ठीक भिन्न प्रकार से की जा सकती है। यदि व्याख्या यही है कि प्रान्त प्रतिनिधियों की संख्या नियत करने में स्वतन्त्र है तब तो सब ठीक होगा। परन्तु यदि यह संख्या हर लाख के लिये एक प्रतिनिधि के हिसाब से नियत की गई तो बड़ी आपत्ति होगी और उसका प्रयोग पहाड़ी जनता के लिये घातक होगा। हमें इस बात पर भी विचार करना चाहिये कि आसाम के पहाड़ी इलाकों में अब भी ऐसे मनुष्य हैं जो कि पूर्ण स्वतंत्र होना चाहते हैं और एक पृथक राजसत्ता बनाना चाहते हैं। कुछ बर्मा से मिलना चाहते हैं और कुछ ऐसे भी हैं जो सम्भवत: पाकिस्तान से मिलना चाहते हैं। यदि इस प्रकार का प्रतिनिधित्व आसाम की पहाड़ी जनता पर लादा गया तो यह उपरोक्त प्रोपेगन्डा

में सहायक होगा और हिन्दुस्तान के लिये बड़ा कष्टदायक होगा। इसलिये मैं प्रार्थना करता हूं कि प्रस्तावक महोदय इस विषय पर प्रकाश डालेंगे और हाउस को यह बतायेंगे कि प्रान्त उन पहाड़ी क्षेत्र की जनता के लिये किसी कम आधाार पर प्रतिनिधित्व दे सकता है या नहीं जहां कि बड़े-बड़े प्रदेशों में आबादी कम है। ये इलाके सम्भावित सम्पत्ति के जरिये हैं। अतः आसाम के प्रान्त के लिये बड़े महत्व के हैं। यदि इस पर विचार नहीं किया जाता है तो वास्तव में एक बड़ी दु:खदायी बात होगी। श्रीमान् जी, मैं अपने प्रस्ताव को हाउस की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

(सर्वश्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर, शिब्बनलाल सक्सेना और विश्वनाथ दास ने वाक्य-खंड 19 पर अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

श्री लक्ष्मीनारायण साहू (उड़ीसा: जनरल): अध्यक्ष महोदय, वाक्य-खंड 19 के उपवाक्य खंड (1) के अन्त में मैं एक उपवाक्यखंड रखना चाहता हूं: ''जब उड़ीसा की रियासतें उड़ीसा प्रांत में सम्मिलित हो जायें तो उड़ीसा ऊपर की सभा रख सकता है''। लगभग आधे उड़ीसा में उड़ीसा की रियासतें है और अब उड़ीसा की रियासतों का वर्तमान राजनैतिक उड़ीसा में सम्मिलित हो जाने की बड़ी आशा है। इस कारण उड़ीसा रियासतों के राजाओं में अच्छी भावना पैदा करने के लिये मेरे विचार से उड़ीसा में ऊपर की सभा का रखना बहुत जरूरी है। वह ऊपर की सभा प्रजातंत्रात्मक विस्फोटकों को रोकने में अच्छा कार्य करेगी। उनको साधारणत: यह भय रहेगा कि प्रजातंत्र का बोल-बाला होगा और वे हटा दिये जायेंगे। इसलिये मेरे विचार से वाक्यखंड 19 के पश्चात् एक निश्चित उपवाक्यखंड होना चाहिये।

इसके अतिरिक्त सीमाओं की हदबन्दी करने की भी आशा है। उस दशा में उड़ीसा की सीमा विभिन्न दिशाओं में बढ़ा दी जायेगी। हमें यही आशा है। इस कारण आबादी बढ़ जायेगी। नई आबादी जो हामरी सीमा में आ जायेगी, धीरे-धीरे हमारे साथ एकीकरण तभी कर सकेगी जब वह इस आश्वासन का अनुभव करेगी कि एक ऊपर की सभा और है जहां कि सब कानूनों पर जिनको नीचे की सभा पास करती है फिर से विचार होता है और कानून-निर्माण सम्बन्धी कार्य उचित तरीके से होता है। यह दूसरा कारण है कि ऐसी व्यवस्था क्यों होनी चाहिये।

[श्री लक्ष्मीनारायण साहू]

प्रस्तावक महोदय सरदार वल्लभभाई पटेल ने बतलाया है कि यह प्रान्त पर निर्भर है कि यदि वह ऊपर की सभा चाहता है तो रख सकता है। यह बहुत अच्छा है। परन्तु इसके साथ-साथ मैं सारे हाउस को बताना चाहता हूं कि (आसाम के लिये) एक ऊपर की सभा की बड़ी आवश्यकता है। इसलिये मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूं कि:

''वाक्यखंड 19 के उपवाक्य खंड (1) के अन्त में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

'जब उड़ीसा की रियासतें उड़ीसा प्रान्त में सम्मिलित हो जायें तो उड़ीसा ऊपर की सभा रख सकता है'।''

मैं अपना दूसरा संशोधन भी पेश करता हूं जो यह है कि:

''वाक्य-खंड 19 के उपवाक्य-खंड (4) में मद (ख) के बाद निम्नलिखित नया मद जोड़ दिया जाये:

'प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र के मतदाताओं को अपने चुने हुये सदस्य या सदस्यों को हटाने का अधिकार होना चाहिये, यदि किसी परिस्थिति के कारण वे उनको हटाना चाहते हों'।''

यह बहुत जरूरी है क्योंकि हम जानते हैं कि कभी-कभी ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है जबकि मतदाता व्यवस्थापिका से सदस्य को हटाना चाहते हैं, पर ऐसा कर नहीं सकते क्योंकि एक्ट में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। जब हम नया एक्ट बना रहे हैं तो मैं समझता हूं कि हमें इस नये वाक्यांश की-अर्थात् सदस्य को हटाने के अधिकार की-व्यवस्था रखनी चाहिये।

इसको प्रयोग में लाने की कठिनाइयों के सम्बन्ध में मेरे ख्याल से तो कोई कठिनाई होगी ही नहीं क्योंकि निर्वाचन-क्षेत्र बहुत छोटा होगा। और फिर हम यह व्यवस्था रख सकते हैं कि सदस्य तभी हटाया जायेगा जबकि मतदाताओं का दो तिहाई अथवा ऐसा ही कोई अनुपात उस सदस्य के विरुद्ध मत दे जिसे वे नहीं चाहते हैं। मैं इस सम्बन्ध की पूरी कार्यविधि से जानकार नहीं हूं परन्तु वह मालूम की जा सकती है।

इसके अतिरिक्त मेरे ख्याल से जब कि हम पूरी शक्ति से लोकतंत्र की ओर बढ़ रहे हैं (सदस्यों को) इस प्रकार हटाने की व्यवस्था आवश्यक है। बिना इस व्यवस्था के हमारा कानून-निर्माण पूरा नहीं होगा क्योंकि अन्य स्थानों में भी यह कानून धीरे-धीरे लागू किया जा रहा है। उदाहरण के लिये, स्विट्जरलैंड में और अमेरिका के कुछ राज्यों में। बिहार और उड़ीसा की व्यवस्थापिका में सन् 1922 में ही लोकल सेल्फ गवर्नमेंट के मंत्री उड़ीसा निवासी श्री मधुसूदनदास ने लोकल लेजिस्लेटिव एक्ट में इस प्रकार की व्यवस्था जारी कर दी थी। यदि यह भय हो कि इस व्यवस्था का दुरुपयोग होगा और इसको प्रयोग में लाना जनता के लिये कठिन होगा तो मैं इस भय में कोई सार नहीं देखता हूं, क्योंकि इस प्रकार हटाने की व्यवस्था बिहार और उड़ीसा के लोकल सेल्फ गवर्नमेंट एक्ट में है पर उसका प्रयोग नहीं हुआ है यद्यपि मनुष्य उसकी चर्चा करने लगे हैं।

इस व्यवस्था से लाभ उठाना बहुत आसान नहीं है। इस कारण ऐसा कोई भय नहीं होना चाहिये कि यदि सदस्य को हटाने की व्यवस्था होगी तो जनता उसका दुरुपयोग करेगी और अनेकों पार्टियां बन जायेंगी जो एक सदस्य को हटाने और दूसरे को भेजने का प्रयत्न करेंगी। और यदि ऐसा हो भी तो मैं उसका स्वागत करूंगा क्योंकि वह हमारी जनता के लिये एक प्रकार की शिक्षा होगी। हमारी जनता साधारणतः एक बार वोट देने के बाद और किसी बात को सोचती ही नहीं और यदि ऐसा हो जायेगा तो वह सोचने लगेगी तथा लोग कार्य में अधिक तत्पर और संलग्न रहेंगे। अतः मैं यह प्रस्ताव रखता हूं कि ये दो उपवाक्यखंड इस वाक्यखंड में बढ़ा दिये जायें।

जनसंख्या के सम्बन्ध में मैं एक और विषय को लूंगा। श्री अमियकुमार दास और श्री निकोल्सराय ने बतलाया है कि निर्वाचन-क्षेत्र छोटे होने चाहिये। मेरा भी ऐसा विचार है क्योंकि उड़ीसा में बहुत से आदिवासी लोग हैं और उनके अलग-अलग दल हैं। यदि निर्वाचन-क्षेत्र छोटे हुए तो वे लोग अपना कोई आदमी भेज सकते हैं। उदाहरण के लिये, **अमन्तवास** केवल 60,000 हैं, वे अपना प्रतिनिधि नहीं भेज सकते हैं क्योंकि उनकी संख्या कम है। और भी पहाड़ी कौमें हैं जिनकी संख्या 20 या 30 हजार है। यह सच है कि हम इस व्यवस्थापिका सम्बन्धी अधिकार को सारे दलों के लिये लागू नहीं कर सकते हैं फिर भी हमें यह इच्छा तो रखनी ही चाहिये कि उन पहाड़ी मनुष्यों को, जिनकी इतने दिनों तक अवहेलना की है, इस प्रकार अधिकार दिये जायें कि उनको राजनैतिक ज्ञान जितना शीघ्र संभव हो प्राप्त हो सके, जिससे कि हम उन्हें अपने समान बनाने में समर्थ हों।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं। कि वाक्य-खंड 19 के उपवाक्य-खंड (2) में संख्या "50" के स्थान में संख्या "60" रखी जाये। नये विधान में हम वर्तमान से अधिक व्यापक मताधिकार रखना चाहते हैं जिसके कारण व्यवस्थापिका में प्रतिनिधियों की एक बड़ी संख्या होगी। यह बहुत वांछनीय है कि लोकतंत्र की भावना का अनुसरण करते हुये हम आने वाले विधान में व्यवस्थापिकाओं के लिये प्रतिनिधियों की एक बड़ी संख्या रखें। मैं मि. सादुल्ला के विचार से सहमत नहीं हूं कि बड़ी असेम्बली बड़ी और बेकाबू हो जाती है। ऐसे निर्जीव तर्क तो बहुधा उस समय उपस्थित किये जाते हैं जबकि लोग बड़ी असेम्बली नहीं चाहते हैं। यह विधान-परिषद् है जिसमें 225 सदस्य हैं। क्या यह बड़ी और बेकाबू है? विवाद ध्यानपूर्वक सुना जाता है तथा हम लोग शीघ्र तथा निर्विघ्न कार्य कर रहे हैं। केन्द्रीय या प्रांतीय व्यवस्थापिकाओं तक में, जिनमें केवल 100 ही सदस्य के लगभग होते हैं, मैंने कभी-कभी कोरम की कमी देखी है और स्पीकर तथा अध्यक्ष घंटी बजाते रहते हैं। और यहां यद्यपि इतने अधिक सदस्य हैं तो भी वे अपने कर्त्तव्यों में दत्तचित्त हैं और हम उनके उस ज्ञान तथा अनुभव से लाभ उठाते हैं जिसकी सहायता से एक बहुत लाभदायक विधान बनेगा। इसलिये मैं प्रस्तावक महोदय का समर्थन करता हूं कि असेम्बली में हर एक लाख की आबादी के लिये एक सदस्य होगा।

श्रीमान् जी, कम-से-कम संख्या को मैंने 50 की जगह 60 रखने का सुझाव रखा है, इसका यह कारण है। आज भारतीय संघ में से सबसे छोटा प्रान्त उड़ीसा है; जिसकी आबादी 84 लाख है और जिसके हाउस में, उस निर्वाचक समूह के आधार पर जो कि भविष्य में होने वाले निर्वाचक समूह से छोटा है, 60 सदस्य हैं। आगे होने वाले बड़े निर्वाचक समूह में हम इस संख्या को 50 तक नहीं ले जा सकते हैं। दोनों नये प्रान्त-पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल में प्रत्येक की आबादी 2 करोड़ 40 लाख है। वे बड़े प्रान्त हैं और हमें यह ध्यान रखना चाहिये कि उनको पूरा प्रतिनिधित्व मिले। इसलिये मैं यह सुझाव रखता हूं कि आसाम या उड़ीसा इत्यादि जैसे प्रान्तों में कम से कम संख्या 60 रखी जाये जैसी कि अब है।

***अध्यक्ष:** मेरे ख्याल से श्री सिधवा ने वाक्यखंड को गलत समझा है। वह तो केवल कम से कम संख्या है यदि आबादी 84 लाख है तो वाक्य-खंड के अनुसार यह संख्या 84 हो जायेगी। संशोधन उन मामलों से सम्बन्ध ही नहीं रखता, वह केवल उन मामलों से सम्बन्ध रखता है जहां कि संख्या 50 से कम है।

***श्री आर.के. सिधवा:** परन्तु यदि कोई कम से कम संख्या रखनी है तो मैं उसे 60 रखना चाहता हूं। यही मेरा संशोधन है और मुझे आशा है कि हाउस इसे स्वीकार करेगा। जितने अधिक सदस्य होंगे मेरे ख्याल से उतना ही अच्छा होगा, क्योंकि उनके चातुर्य, ज्ञान तथा अनुभव का लाभ प्राप्त होगा। श्रीमान् जी, मैं अपना प्रस्ताव पेश करता हूं।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव तथा संशोधन पर अब बहस हो सकती है।

***माननीय श्री गोपीनाथ बारदोलोई:** अध्यक्ष महोदय, मैं इस वाद-विवाद में भाग लेना चाहता था। लेकिन चूंकि मेरे मित्र श्री निकोल्सराय ने हाउस के सामने कुछ ऐसे वाद हेतु रखे हैं कि मैं भी कुछ विचार रखना आवश्यक समझता हूं।

श्रीमान् जी, मुझे पूर्वी कबायली और पृथक तथा आंशिक पृथक क्षेत्रों की सब-कमेटी का सभापति होने का गौरव है। इस सिलसिले में हमें पहाड़ी क्षेत्रों में केवल दौरा करने का ही अवसर न मिला बल्कि पहाड़ियों की दशाओं का अध्ययन करने का भी अवसर मिला। मोटे रूप में यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि प्रतिनिधित्व प्राप्त करने का जो तरीका सामान्य जनता के लिये प्रस्तावित किया जा रहा है वह पहाड़ियों पर लागू नहीं हो सकता।

सिलहट के अलग हो जाने पर आसाम की आबादी 71 लाख है और प्रान्त का क्षेत्रफल इस समय केवल 62,000 वर्गमील है। अधिकतर मनुष्य 30,000 वर्गमील के समतल इलाके में रहते हैं। पहाड़ी इलाके सहित आसाम का क्षेत्रफल 62,000 वर्गमील है। यदि आप 30,000 वर्गमील घटा दें तो आपको यह विदित हो जायेगा कि 13 लाख पहाड़ी 32,000 वर्गमील में रहते हैं। हमारे लिये जो अधिक महत्वपूर्ण बात जानने की है वह यह है कि वे अलग-अलग दल बनाकर रहते हैं न कि सार्वजनिक रूप में मिलकर जैसे कि हम मैदानों में रहते हैं। इसलिये यदि इन मनुष्यों को कोई प्रतिनिधित्व दिया जाता है तो उसका ढंग मैदानों में रहने वाली जनता को दिये गये प्रतिनिधित्व के ढंग से भिन्न होना चाहिये। ऐसी परिस्थितियों पर विचार करते हुये मैं सोचता हूं कि जो प्रस्ताव रेवरेन्ड निकोल्सराय ने हाउस के सामने रखा है उसका साधारणतया हम सबको समर्थन करना चाहिये। लेकिन मैं नहीं जानता हूं कि संशोधन जिस रूप में है उसी रूप में उसका स्वीकार करना आवश्यक है अथवा नहीं। कदाचित आप सबको यह विदित होगा कि एडवाइज़री सब-कमेटी

[माननीय श्री गोपीनाथ बारदोलोई]

प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में भी कुछ सिफारिश करेगी। यहां अब यही हो सकता है कि मैदानों को छोड़कर जहां तक अन्य क्षेत्रों से सम्बन्ध है, हम सामान्य सिद्धान्त को स्वीकार कर सकते हैं। मैं यहां इस बात पर बहस नहीं कर रहा हूं कि प्रतिनिधित्व कैसा होना चाहिये और वह 75,000 पर एक के हिसाब से हो या एक लाख पर एक के हिसाब से या दो लाख पर, यद्यपि मेरी राय से तो यह प्रान्तों की आबादी और क्षेत्रफल के अनुसार अलग-अलग होना चाहिये। परन्तु इस तथ्य को स्वीकार कर लेना चाहिये कि इन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व किसी विशेष योजना के अनुसार होगा। श्री निकोल्सराय की सिफारिश यह है कि इस विषय को सम्बन्धित प्रान्तीय सरकारों के निर्णय पर छोड़ दिया जाये। मेरे ख्याल से अच्छा तरीका यह होगा कि इस विषय को एडवाइज़री कमेटी के सुपुर्द छोड़ा जाये और उसकी सिफारिश की प्रतीक्षा की जाये और फिर उस समय हाउस इस प्रश्न पर विचार कर सकता है। हाउस को यह बात भी याद रखनी चाहिये कि वर्तमान विधान में इन पहाड़ियों को अधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त है। इन विचारों के साथ कि श्री निकोल्सराय के संशोधन की प्रवृत्ति तथा भावना को स्वीकार किया जाये, मैं अपना स्थान ग्रहण करता हूं।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस वाक्य-खंड के पहले उपवाक्यखंड का उत्तरार्ध इस प्रकार है–"निम्नलिखित प्रान्तों में इसके अतिरिक्त एक लेजिस्लेटिव कौंसिल भी होगी" और इसके बाद कोष्टों में दिया हुआ है–"(यहां, यदि कोई हो तो उन प्रान्तों का सर्वनाश किया जाये जो ऊपर की सभा रखना चाहते हैं)"। मुझे खुशी है कि "यदि कोई हो तो" इन शब्दों को यहां स्थान नहीं मिला है। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि कोई भी प्रान्त ऊपर की सभा रखना पसन्द नहीं करेगा। परन्तु कुछ प्रान्तों की ऊपर की सभा रखने की संभावना को पूर्णत: दूर नहीं कर सकते। इसलिये मैं आज हाउस के सामने वर्तमान दूसरी सभाओं को हटाने का और नई बनाने पर विरोध करने का तर्क उपस्थित करने के लिये खड़ा हूं।

श्रीमान् जी आधुनिक राजनैतिक प्रथा में दूसरी सभा समय के विरुद्ध होती जा रही है। फेडरल प्रजातंत्र में–जिसकी रचना हमने अपने हिन्द, अपने भारतवर्ष के लिये विचारी है–केन्द्र के लिये हम दूसरी सभा का विचार कर सकते हैं, लेकिन अपने फेडरल प्रजातंत्र को वैधानिक इकाइयों में दूसरी सभा का रखना हानिकारक और दोषपूर्ण होगा।

विभिन्न प्रयोजनों के कारण समस्त संसार में दूसरी सभाओं की स्थापनायें हुई हैं। गत शताब्दी में प्राय: एक स्वयंसिद्ध राजनैतिक प्रमाण के समान यह कहा गया था कि कोई भी लोकतंत्र बिना दूसरी सभा के नहीं होना चाहिये। परन्तु बीसवीं शताब्दी में यह प्रथा शीघ्रता के साथ मिट रही है और एक सभात्मक व्यवस्थापिकाओं के मुकाबले में पीछे हट रही है। (या और एक सभात्मक व्यवस्थापिकायें स्थान ग्रहण कर रही हैं) जैसा कि मैंने कहा कि विभिन्न प्रयोजनों के कारण दूसरी सभाओं की स्थापनायें हुई। पहली बात तो पुरानी परम्परा को कायम रखने की इच्छा थी। मुझे खुशी है कि कम से कम भारतवर्ष में तो हमारी ऐसी कोई परम्परा नहीं है। इस शताब्दी के पहले दस वर्षों में ब्रिटिश सरकार ने अधिकतर पिछली शताब्दी की योजना के रूप में दूसरी सभाओं की स्थापना की। लेकिन इस शताब्दी के मध्य में यह प्रथा निन्दनीय साबित हुई।

दूसरा प्रयोजन जिसके कारण दूसरी सभाओं की स्थापना हुई, पूंजीपतियों के हितों तथा रूढ़िगत अधिकारों के संरक्षण की चाह थी। यदि हम अपने फेडरेशन के हर एक प्रान्त में दूसरी सभा रखें तो मुझे भय है कि वही वर्ग जिसने हमारे देश में ब्रिटिश शासन को आश्रय दिया, जिसने ब्रिटिश राज्य के अन्तिम दिनों में उसको आश्रय तथा सहारा दिया, इन संस्थाओं में स्थान प्राप्त करेगा। मैं तो अपने देश में ऐसी प्रगति का समर्थन नहीं करूंगा।

तीसरा प्रयोजन जिसके कारण दूसरी सभाओं की स्थापना हुई, यह है कि वे नीचे के हाउस की वेगवती प्रवृत्ति में रुकावट पैदा करें। श्रीमान् जी, आधुनिक प्रजातंत्रों में कानून को एक बड़े पेचीदे ढंग से पास कराने की प्रथा है और इस कारण व्यवस्थापक अवरोधों को बढ़ाने की आवश्यकता नहीं है, विशेषकर उस संकटमय समय का विचार करते हुये जिसमें होकर हम गुजर रहे हैं। जब कि एक शक्तिशाली यूनियन बनाने की हमारी अभिलाषा है तो हम दूसरी सभा के ऐश्वर्य पर व्यय नहीं कर सकते हैं। जो कि मुझे भय है कि प्रान्तों के शासन को शिथिल बनायेगी तथा गवर्नमेंट को प्रगतिहीन अथवा किसी कदर न्यून गति वाली बना देगी। हम यह चाहते हैं कि ये सरकारें गतिशील होनी चाहियें, और मुझे यकीन है कि दूसरी सभायें प्रत्येक प्रान्त में शिथिलता उत्पन्न करेंगी। ये विचार हैं जो मुझे दूसरी सभाओं की स्थापना का विरोध करने के लिये प्रेरित करते हैं। मैं आशा करता हूं कि फेडरेशन की वैधानिक इकाइयां हमारे देश भारतवर्ष में दूसरी सभायें रखना पसन्द नहीं करेंगी।

***श्रीमती रेणुका रे** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं वाक्यांश 19 और विशेषकर इस वाक्यखंड के भाग (2) का समर्थन करने के लिये खड़ी होती हूं जो कि स्थानों का संरक्षण किये बिना प्रादेशिक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था करता है। स्त्रियों के लिये विशेष स्थान नियत करने का हम खासतौर से विरोध करती हैं। इस देश में महिला-आन्दोलन आरम्भ होने के समय से ही स्त्रियां विशेष अधिकार तथा संरक्षण का मौलिक रूप से विरोध करती रही हैं। (*वाह, वाह*)। शताब्दियों से पराधीन, निराहत तथा नाशोन्मुख रहने के कारण स्त्रियों की दशा इतनी गिर गई है कि धीरे-धीरे उसने अपने सब सामाजिक तथा कानूनी अधिकार खो दिये। लेकिन चेतना के प्रथम आवेश में भी उनके हृदय में कभी मताधिकार विस्तारवादी संकीर्ण भाव उत्पन्न नहीं हुये जो कि बहुत से उन्नत कहे जाने वाले राष्ट्रों में प्राय: पाये जाते हैं। इस देश की नारियों ने, स्थिति की समानता, न्याय और सद्व्यवहार प्राप्त करने के लिये और खासकर अपने देश के उत्तरदायित्व पूर्ण सेवा-कार्य में भाग प्राप्त करने के लिये प्रयत्न किये हैं। समाज में पिछड़ी हुई रहने के कारण उन व्यक्तियों ने जो कि देश में स्वतंत्रता नहीं चाहते थे, महिला समाज का उसी प्रकार शोषण किया है जिस प्रकार कि इस देश के कई दलों का शोषण पिछड़े हुये रहने के कारण हुआ है।

1935 ई. के एक्ट के लागू होने के पहले भारतवर्ष की महिला समाज के प्रतिनिधियों ने यह स्पष्ट कह दिया था कि वे स्थानों के सुरक्षित करने अथवा महिलाओं के लिये अन्य किसी विशेष अधिकार के खिलाफ हैं। उन्होंने इस वाक्य-खंड को अखिल भारतीय महिला सम्मेलन द्वारा प्रस्तुत किया था। हमारी तीन महिला प्रतिनिधियों ने जोइन्ट पार्लियामेंटरी कमेटी के सामने जो बयान दिया था उसमें यह साफ शब्दों में कह दिया था (मैं यहां यह बता दूं कि राजकुमारी अमृतकौर उन तीन महिला सदस्यों में थीं) कि हम अपने लिये स्थानों का संरक्षण नहीं चाहती हैं। लेकिन हमारे विरोध करने पर भी तथा हमारी इच्छाओं के ठीक विपरीत सन् 1935 ई. के एक्ट में स्थानों का संरक्षण नियत किया गया। लेकिन जहां हृदय मजबूत है और फैसला ठोस है कोई भी षडयन्त्र विचलित नहीं कर सकता है; अत: महिलाओं ने अपने स्वयं को उस जाल में नहीं फंसाया। यह कहना गलत होगा कि हमारी इस मनोवृत्ति का सारा श्रेय स्त्रियों को है। इस देश में महिलाओं में राष्ट्रीय जागृति आरम्भ होने के समय से ही ज्ञानवान पुरुष उनको साहस दिलाते रहे हैं कि वे स्वतंत्रता के युद्ध में समान सहयोगी के सदृश आगे बढ़ें और जीवन के विभिन्न पहलुओं में राष्ट्रीयता उत्पन्न कराने का कार्य करें। जब महात्मा गांधी ने राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने के लिये

इस देश की महिलाओं को अपना आदेश दिया तो देश के समस्त सामाजिक बन्धन टूट गये। भारतीय महिलाओं के पास इस महान व्यक्ति के लिये कृतज्ञता प्रकट करने के लिये शब्द नहीं हैं, जिसने कि आज देश को स्वतंत्रता के द्वार पर खड़ा कर दिया है। (*वाह, वाह*) इसलिये यह स्त्रियों के स्वाभाविक गुणों के कारण ही नहीं वरन् मैं तो कहूंगी कि यह विशेषकर हमारे पुरुष समाज के गुणों के कारण ही यह श्रेय प्राप्त हुआ है कि इस देश में कभी स्त्री और पुरुष में संघर्ष नहीं हुआ।

जब हिन्दू कानून सुधारक बिल (हिन्दू लॉ रिफ़ार्म बिल) केन्द्रीय असेम्बली में पेश हुआ तो स्त्रियां स्वभावतः उत्सुक थीं कि यह बिल जो कि उनको कुछ अधिकार दिलाते थे स्वीकार हो जाने चाहियें। लेकिन इसका विरोध हुआ जो यद्यपि किसी बड़ी संख्या द्वारा नहीं किया गया था, लेकिन बड़े उग्र रूप में था, क्योंकि वह विरोध उस प्रतिक्रियावादी दल द्वारा किया गया था जो कि उस समय की सरकार का बड़ा पक्षपाती था और जो कदम-कदम पर देश को भी धोका दे रहा था। विदेशी सरकार उनकी अप्रसन्नता न सह सकी और जब तक हम अपनी आत्मा तथा अपने अधिकारों में हेर-फेर करने के लिये तत्पर न होते तब तक हम उस विरोध का मुकाबला नहीं कर सकते थे। श्रीमान् जी जो हमने अब तक सोचा था वह आज हो रहा है। हमने सदैव यही सोचा कि जब पुरुष वर्ग, जिसने अपने देश की स्वतंत्रता के लिये युद्ध तथा संघर्ष किया है, अधिकार प्राप्त करेगा उस समय स्त्रियों के अधिकारों और स्वतंत्रता की भी गारंटी हो जायेगी। आज हम उसका प्रमाण देख रहे हैं। उस पुरुष वर्ग को, जिसने आज अधिकार ग्रहण कर लिया है, एक महिला को राजदूत के रूप में पसन्द करने के लिये स्थानों के विशेष संरक्षण की आवश्यकता न हुई जो कि संसार के इतिहास में दूसरी महिला राजदूत है। विजयलक्ष्मी पंडित इसलिये नहीं चुनी गई कि वे स्त्री हैं और नर-नारी का भेद इस नियुक्ति में बाधक था। यह उनकी प्रमाणित योग्यता के कारण है कि एक ऐसे देश के जो कि आज संसार में निर्विवाद रूप से बड़ा शक्तिशाली है, राजदूत के ऊंचे पद पर उनको नियुक्त किया गया है। इस बात ने हमारी स्थिति को प्रमाणित किया है और वास्तव में महिलाओं को इसका गौरव है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि केवल विशेष योग्यता प्राप्त स्त्रियां ही नहीं वरन् समस्त स्त्रियां, जो कि पुरुषों के समान योग्य हैं और कार्य-क्षमता रखती हैं, बिना स्त्री-पुरुष भेद-विभेद के, उत्तरदायित्व पद ग्रहण करने के लिये आमंत्रित की जायेंगी।

भारतवर्ष की व्यवस्थापिकाओं में कुछ महिलायें हैं, लेकिन सामान्य निर्वाचन-क्षेत्रों से जो महिलायें आई हैं उनकी संख्या कम है। मेरे ख्याल से जबकि स्त्रियों के

[श्रीमती रेणुका रे]

लिये विशेष स्थान नियत हो जाते हैं तो मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति क्रियान्वित हो जाती है और सामान्य सीटों पर स्त्रियों के भेजने के प्रश्न पर विचार ही नहीं उठता, चाहे वे कितनी ही योग्य क्यों न हों। यदि केवल योग्यता ही विचारणीय है तब तो हम अनुभव करती हैं कि स्वतंत्र भारत में कार्य करने के लिये और आगे बढ़ने के लिये स्त्रियों को भविष्य में अब से अधिक अवसर मिलेंगे।

उपरोक्त शब्दों के साथ, श्रीमान्‌जी मैं इस वाक्यखंड का समर्थन करना चाहती हूं, जिसने सदा के लिये स्त्रियों के उस स्थान-संरक्षण के प्रश्न का अन्त कर दिया, जिसे हम अपनी उन्नति में बाधक तथा अपने बौद्धिक ज्ञान और कार्य-क्षमता का अपवाद स्वरूप समझती थीं।

*__श्री सारंगधर दास__ (पूर्वी रियासतें): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, उड़ीसा में ऊपर की सभा स्थापित करने के सम्बन्ध में श्री लक्ष्मीनारायण साहू के उस संशोधन का विरोध करने के लिये मैं यहां खड़ा होता हूं जो इस आशा पर है कि भविष्य में उड़ीसा के राजा उड़ीसा प्रान्त में सम्मिलित हो जायेंगे। आजकल के लोकतंत्रात्मक समय में कहीं भी ऊपर की सभा की स्थापना काल के विपरीत है। वयस्क मताधिकार के आधार पर जब कि समस्त आवश्यक कानून-निर्माण तथा समस्त आवश्यक हितों का संरक्षण उस एक सभा में हो जाता है, जिसके सदस्य समस्त जनता द्वारा चुने जाते हैं, तो ऊपर की सभा की कोई आवश्यकता नहीं रहती। इसलिये मैं इस वाक्य-खंड के प्रस्तावक महोदय से प्रार्थना करूंगा कि वे यह देख लें कि भविष्य में ऊपर की सभा स्थापित करने के लिये कोई छिद्र न रह जाये और खासकर उड़ीसा में। साथ ही साथ मैं उड़ीसा व्यवस्थापिका का सदस्य हूं और उड़ीसा की जनता की भावना से परिचित हूं। कहीं भी किसी समय ऊपर की सभा की बाबत बातचीत नहीं हुई है और केवल राजाओं के रूढ़िगत अधिकारों को स्थिर रखने के लिये इसकी स्थापना करना हानिकारक होगा। अब तक तो यह रूढ़िगत अधिकार ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत में उत्पन्न किये गये थे, और अब प्रान्त में ऊपर की सभा स्थापित कर हम उन रूढ़िगत अधिकारों को दूसरे रूप में स्थिर कर रहे हैं। इसलिये मैं इस संशोधन का जबरदस्त विरोध करता हूं और आशा करता हूं कि हाउस इस प्रकार के प्रतिक्रियावादी विचार का किसी प्रकार समर्थन नहीं करेगा।

*__मौलवी सैयद मुहम्मद सादुल्ला__ (आसाम: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मुझे आशा है कि भारतीय फेडरेशन के छोटे-छोटे प्रांतों और विशेषकर आसाम के लिये

एक खास दलील पेश करने की हाउस मुझे इजाज़त देगा। जब तक साइमन सुधार प्रयोग में नहीं आये तब तक आसाम सारे भारतीय प्रांतों की ''सिन्ड्रेला'' थी अर्थात् एक निराहत प्रांत था। उसने बाद में कुछ तरक्की की और वह प्रांतों की सूची में अन्तिम संख्या से तीन चार संख्या ऊपर दर्ज हुआ क्योंकि आसाम से छोटे उड़ीसा पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत और सिंध जैसे प्रांतों की स्थिति कायम हुई। परन्तु वर्तमान प्रबन्ध तथा आसाम प्रांत के जिले सिलहट के जनमत के फलस्वरूप वह भारतीय संघ के एक निराहत प्रांत में फिर से बदल दिया गया। हाउस के अनेक माननीय सदस्यों को आसाम की हालात से परिचय प्राप्त नहीं है। आसाम दूर-दूर बसी हुई आबादी का क्षेत्र है। क्षेत्रफल में, जैसा कि वह तीन माह पूर्व था, लगभग बंगाल के बराबर है लेकिन उसकी आबादी बंगाल का केवल छटा भाग है। जैसा कि अभी इससे पूर्व मेरे दो देशवासियों ने कहा है हमारे क्षेत्र में वह आदिवासी जनता है जोकि साइमन सुधार के अन्तर्गत मंत्रिमंडल के प्रभाव से दूर कर दी गई थी। लेकिन तत्कालीन अधिकारियों ने आसाम और उसकी जनता की अवनत दशा पर विचार किया और हमें केवल 106 सदस्यों वाली प्रांतीय व्यवस्थापिका ही प्रदान नहीं की वरन् जनता के विरोध करने पर भी एक ऊपर की सभा और लाद दी। मेरा यहां ऊपर की सभा से कोई तात्पर्य नहीं है क्योंकि माननीय सदस्य यह जानकर प्रसन्न होंगे कि आसाम के समस्त सदस्यों ने, जोकि विधान-परिषद् में उपस्थित हैं, आसाम के विचार बताते हुये माननीय अध्यक्ष की सेवा में एक संयुक्त पत्र भेजा है। वे विचार कांग्रेस अथवा लीग के नहीं हैं वरन् आसाम की समस्त जनता के हैं कि हम भावी विधान में दूसरी सभा नहीं चाहते हैं। यह बताते हुये कि आसाम में 106 सदस्य हैं जब कि सन् 1931 की मर्दुमशुमारी में उसकी आबादी केवल 92 लाख थी। मैं इस बात को नहीं बता रहा हूं कि इस व्यवस्थापिका में आसाम के तिहाई भाग का प्रतिनिधित्व नहीं हुआ। आसाम के तीन सीमा प्रान्त के इलाके हैं, सबसे बड़ा साड्या सीमा प्रांत कहा जाता है, इसके बाद वालीपुर सीमा प्रांत है और तीसरा तिराय सीमा प्रांत है। सन् 1935 के सुधार में इन सबको अलग कर दिया था। कोई यह कह सकता है कि सीमा प्रांत के इलाके होने के कारण इनको अलग रखना ठीक था। लेकिन सीमा के भीतर के इलाके जैसे नागा पहाड़ियां, उत्तरी कचार पहाड़ियां और लुशाई पहाड़ियां भी सन् 1935 के सुधार के अनुसार भाग लेने से वंचित रखी गई थीं। इस महान् परिषद् के सामने मेरी दलील यह है कि आपको इस विषय पर गंभीर विचार करना पड़ेगा। यदि आप पिछड़े हुये प्रांतों की, आसाम जैसे अवनत प्रांत की-मैं दूसरे प्रांतों का जिक्र नहीं करूंगा क्योंकि शायद वे अपने आपको पिछड़े हुये न समझें-उन्नति चाहते हैं, तो भावी विधान में उनके साथ भिन्न प्रकार से विचार

[मौलवी सैयद मुहम्मद सादुल्ला]

किया जाना चाहिये। इसलिये मेरे माननीय मित्र अमियकुमार दास और रेवरेन्ड निकोल्सराय ने जो प्रस्ताव पेश किया है उसका समर्थन करने में मुझे बड़ी खुशी है। वास्तव में रेवरेन्ड निकोल्सराय ने हाउस के सामने एक सत्य बात रखी है कि एक बहुत बड़ा इलाका, जिसका क्षेत्रफल 2,000 वर्गमील है लेकिन आबादी सिर्फ 37,000 है, आसाम के भावी विधान में प्रतिनिधित्व प्राप्त करना चाहता है। लेकिन वे यह नहीं बताते कि प्रांतीय विधान में प्रतिनिधित्व प्राप्त करने के लिये आबादी की क्या सीमा होनी चाहिये। मेरे माननीय मित्र श्री अमियकुमार दास चाहते हैं कि आबादी का आधार एक लाख से 75 हजार कर देना चाहिये। कुछ वक्ताओं ने, जो मेरे प्रस्ताव पेश करने के बाद बोले, मुझे ग़लत समझा। मैं यह नहीं चाहता कि प्रतिनिधित्व के लिये आबादी-संख्या कम कर दी जाये। अब मैं अपनी साफ़ दलील रखता हूं कि छोटे प्रांतों को प्रांतीय व्यवस्थापिका की सदस्य-संख्या के सम्बन्ध में कुछ विशेष अधिकार दिये जायें। मैं हाउस के सामने अपना यह विनम्र निवेदन रखना चाहता था कि ऐसे प्रतिनिधित्व के लिये बड़ी से बंड़ी संख्या नियत कर देनी चाहिये जिसको मैंने 300 रखा था।

एक माननीय सदस्य-मैं अपने मित्र श्री सिधवा का, जो सिंध से है, हवाला दे रहा हूं-मुझसे झगड़ पड़े और कहा कि इस हाउस में जिसमें कि 228 सदस्य हैं हम यह महसूस नहीं करते कि यह बड़ा और बेकाबू है और प्रत्येक व्यक्ति ध्यानपूर्वक भाषणों को सुनता है। वास्तव में ऐसा ही होना चाहिये, क्योंकि इस विधान परिषद् में वे बुद्धिमान् तथा देशभक्त सदस्य हैं जिन्होंने देश की सेवा में सर्वस्व अर्पण कर दिया है। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है श्रीमान् जी, कि हम इतने ध्यान से तथा दत्तचित्त होकर सुनते हैं जबकि हमारे यहां श्री सिधवा जैसे व्यक्ति हैं जिनको इस विधान-परिषद में जगह देनी पड़ी, यद्यपि उनके निवास स्थान के आधार पर उनको इस हाउस में बैठने का अधिकार नहीं था।

***अध्यक्षः** श्री कक्कन तामिल में बोलना चाहते हैं। मैं जानता हूं कि बहुत से सदस्य तामिल नहीं समझ सकेंगे।

***श्री पी. कक्कन** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं तामिल में बोलना चाहता हूं जोकि मेरी मातृ-भाषा है। यदि मैं तामिल में बोलूं तो अपने विचार स्पष्ट प्रकट कर सकता हूं। इसलिये मैं तामिल में बोलना चाहता हूं जो कि मेरी मातृ-भाषा है!

(श्री कक्कन ने तामिल में भाषण दिया।)

*श्री राजकृष्ण बोस (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान् जी, मैं न तो हाउस का समय लेता और न इस प्रस्ताव पर बोलता; यदि मेरे एक साथी प्रांतीय विधान में इस प्रकार का संशोधन पेश न करते कि यदि उड़ीसा की रियासतें उड़ीसा में सम्मिलित हो जायेंगी तो उड़ीसा में ऊपर की सभा रख सकता है।

संशोधन का विरोध करते हुये मैं प्रस्तावक महोदय को यह बताना चाहूंगा कि संशोधन की सूचना देने से पूर्व कदाचित् उन्होंने प्रांतीय विधान के वाक्यखंड 19 का सूक्ष्म अध्ययन नहीं किया। वाक्यखंड 19 इस प्रकार है:

''किसी प्रांत में, जिसका व्यवस्थापक-मंडल ऊपर की सभा रखता है, सभा की रचना निम्न प्रकार की होगी।''

इसके पश्चात् रचना सम्बन्धी कार्यविधि बताई गई है। तत्पश्चात् नोट इस प्रकार है:

''यह स्वीकार किया गया कि प्रत्येक प्रांत की विधान-परिषद् के सदस्य अलग-अलग मत देंगे और यह निर्णय करेंगे कि प्रांत के लिये ऊपर की सभा बनानी चाहिये अथवा नहीं।''

मैं अपने माननीय मित्र को यह बताना चाहूंगा कि यदि उनकी इस संशोधन के पेश करने की इच्छा ही थी तो उनके लिये यह उचित होता कि वे अपने उन सहयोगियों से जो कि उड़ीसा व्यवस्थापिका के सदस्य हैं यहां यह परामर्श करते कि इस संशोधन का प्रांत पर क्या प्रभाव पड़ेगा। मैं इस संशोधन का विरोध नहीं करता यदि इसका आशय प्रांत को ऊपर की सभा स्थापित करने के लिये बाध्य करने से नहीं होता।

प्रत्यक्ष रूप से श्री साहू का संशोधन पेश करने से यह उद्देश्य है कि उड़ीसा की रियासतों का उड़ीसा प्रांत में सम्मिलित होना आसान हो जाये। यदि उनका उद्देश्य यही है तो मैं उनको यह बता दूं कि वे ऐसे किसी संशोधन के अभाव में भी ऐसा नहीं कर सकती हैं, क्योंकि यूनियन के विधान के मसविदे के वाक्यखंड 3 में वह व्यवस्था कर दी गई है जिसके द्वारा जो रियासतें प्रांतों में मिलना चाहती हैं वे मिल सकती हैं, और इसके लिये पार्लियामेंट के एक्ट आवश्यक होंगे। यूनियन-विधान का वाक्यखंड 3 इस प्रकार है:

[श्री राजकृष्ण बोस]

''संघ की पार्लियामेंट, एक्ट द्वारा प्रत्येक प्रान्त की धारा-सभा तथा प्रत्येक रियासत की धारा-सभा की मर्जी से जिस पर उस (एक्ट) का प्रभाव पड़ता हो;

(क) एक नई प्रादेशिक इकाई बना सकती है;

(ख) किसी प्रादेशिक इकाई का क्षेत्रफल बढ़ा सकती है;

(ग) किसी प्रादेशिक इकाई का क्षेत्रफल घटा सकती है;

(घ) **किसी प्रादेशिक इकाई की सीमाओं में परिवर्तन कर सकती है; और उसी प्रकार की मर्जी से ऐसी प्रासंगिक तथा परिणामभूत व्यवस्थायें कर सकती है जिसको वह आवश्यक तथा उचित समझे।''**

श्रीमान् जी, मैं नहीं जानता हूं कि जो कुछ साहू साहब चाहते हैं वह होने को है या नहीं, और यदि है तो कब और किस प्रकार; क्योंकि मैं जानता हूं कि विगत कुछ महीनों से ही नहीं वरन् गत कुछ वर्षों से उड़ीसा के प्रमुख व्यक्ति उड़ीसा की रियासतों को जिनकी संख्या 26 है उड़ीसा प्रांत में मिलाने का प्रयत्न कर रहे हैं। लेकिन अभी तक वे सफल नहीं हुये। मान लीजिये उनके प्रयत्न सफल होते हैं और कुछ या सब रियासतें उड़ीसा प्रांत में मिलने के लिये राजी हो जाती हैं तो यूनियन-विधान के मसविदे के वाक्य-खंड 3 में संघ की पार्लियामेंट के एक्ट द्वारा इस प्रकार की प्रादेशिक इकाई बनाने की व्यवस्था है। उस हालत में प्रत्येक भारतीय रियासत की धारा-सभा को जिस पर इसका प्रभाव पड़ता है ऐसी इकाई बनाने के सम्बन्ध में अपनी इच्छा प्रकट करनी पड़ेगी। श्रीमान् जी, जब ऐसी व्यवस्था यूनियन-विधान में है तो न मालूम क्यों साहू साहब ने यह संशोधन पेश किया है। वस्तुतः यह संशोधन प्रांत को ऊपर की सभा स्थापित करने के लिये बाध्य करेगा जिसकी वहां कोई आवश्यकता नहीं है। इसलिये यह संशोधन व्यर्थ है। दूसरा संशोधन जो साहू साहब ने पेश किया है इस बात की व्यवस्था रखता है कि यदि परिस्थिति उत्पन्न हो जाये तो मतदाता सदस्यों को हटा सकें। उन्होंने कहा कि स्विट्जरलैंड में ऐसी व्यवस्था है। मुझे विशवास है कि स्विट्जरलैंड में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। यदि ऐसी कहीं व्यवस्था है तो वह अमेरिका के कुछ राज्यों में है। लेकिन हमारे देश को वर्तमान दशा में, जहां कि लोकतंत्र राज्य अभी आरम्भ ही हुआ है, इस प्रकार की व्यवस्था करना अनुचित होगा और व्यर्थ ही उम्मीदवारों

के लिये निर्वाचन क्षेत्रों को रण-क्षेत्र बनाने में सहायक होगा तथा उनको प्रतिद्वन्द्वी राजनैतिक दलों का शिकार बनायेगा। मैं इसलिये दोनों संशोधनों का विरोध करता हूं।

***श्री जयपाल सिंह** (बिहारः जनरल): अध्यक्ष महोदय, जैसा कि वाक्य-खंड 19 है उसका उसी रूप में समर्थन करते हुये मुझे बड़ी खुशी है। इसके साथ ही साथ आसाम के सदस्यों ने आसाम की पहाड़ी स्थिति, दुर्गमता, दूर-दूर बसी हुई आबादी तथा और सब ऐसी भौगोलिक कठिनाइयां अंकित करते हुये जो चित्र उपस्थित किया है उसके पक्ष में भी मेरा कुछ-कुछ झुकाव है। परन्तु इसका मुझे पूर्ण निश्चय है कि जो संशोधन एक लाख के अलावा दो लाख की जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि भेजने के सम्बन्ध में पेश किया गया है, इस परिषद् द्वारा स्वीकार नहीं किया जाना चाहिये। यदि कुछ करना है तो हमें दूसरी दिशा की ओर बढ़ना चाहिये और प्रतिनिधित्व का जहां तक हो सके अधिक से अधिक विस्तृत आधार बनाना चाहिये और एक लाख की संख्या को कुछ कम कर देना चाहिये। मैं यह नहीं कहता कि वह संख्या 35,000 हो, 10,000 हो अथवा 50,000 हो। मेरे ख्याल से हमें वर्तमान प्रणाली में साध्य बातों पर गौर करना है। यदि हम वास्तव में प्रजातंत्रीय होना चाहते हैं तो वैसे ही हमारे प्रतिनिधि होने चाहियें और प्रतिनिधित्व का जितना अधिक हो सके विस्तृत आधार बनाना चाहिये। यहां हम संख्या को एक लाख से अधिक बड़ा नहीं कर सकते। आसाम प्रांत की दुर्गम तथा पहाड़ी स्थिति का अच्छा दृश्य हमारे सामने उपस्थित किया है। यह सत्य है और समस्त भारत में आदिवासियों के अधिकतर क्षेत्रों की यही विशिष्टता है। मैं छोटा नागपुर (पठार, झारखंड) का निवासी हूं, जो उतना ही पहाड़ी और उतना ही दुर्गम है जितने कि वे कुछ प्रदेश जिनका वर्णन मेरे मित्र श्री गोपीनाथ बारदोलोई आसाम वालों ने किया है। यदि निर्वाचन-क्षेत्रों की सीमा न्यून जनसंख्या के आधार पर निर्धारित नहीं की जाती है तो इसका केवल यही आशय होगा कि चुनावों का लोगों पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ेगा। जिन लोगों की हम वोट लेना चाहते हैं उन लोगों में रुचि पैदा करना कठिन होगा।

श्री मुहम्मद सादुल्ला ने अपने संशोधन में यह बताया है कि वे यह नहीं चाहते कि कोई सभा बहुत बड़ी और बेकाबू हो। उन्होंने हमें एक ऐसी संख्या बताई है कि जिसको और अधिक बढ़ाना वे नहीं चाहते। यह सब ठीक है लेकिन अध्यक्ष महोदय, संस्कृति तथा भाषा के आधार पर प्रांतों के पुनर्विभाजन तथा सीमा

[श्री जयपाल सिंह]

निर्धारण के सम्बन्ध में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एजेन्टों के विचारों को मैं बहुत कुछ सुनता रहा हूं और पढ़ता रहा हूं। 16 वर्ष पहले का कराची का अल्पसंख्यकों सम्बन्धी प्रसिद्ध प्रस्ताव और अभी-अभी आंध्र, केराला, कर्नाटक, महाराष्ट्र, महाकौशल, मिथला और झारखंड जैसे क्षेत्रों की जबरदस्त मांगें हमारे सामने हैं। मुझे यह नहीं मालूम कि कुछ क्षेत्र रह तो नहीं गये हैं लेकिन ये क्षेत्र अवश्य ऐसे हैं जो अपनी यह मांग पेश करते चले आ रहे हैं कि वर्तमान बड़े और बेकाबू तथा अप्राकृतिक प्रांतों की फिर से सीमा निर्धारित होनी चाहिये। मुझे आशा है कि सीमाओं का निर्धारण होगा, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करेगी, कराची के अल्पसंख्यकों सम्बन्धी प्रस्ताव का आदर करेगी और इस स्वप्न को क्रियान्वित करने का शीघ्र ही प्रयत्न करेगी। उस दशा में मैं विचार करता हूं कि गणित के हिसाब से मि. मुहम्मद सादुल्ला का डर बिलकुल ही निकल जायेगा।

श्रीमान् जी, पादरी निकोल्सराय ने जो प्रश्न उठाया है उसके सम्बन्ध में मैं अपने आपको भद्दी अवस्था में पाता हूं। स्वयं कबायली होने के कारण और यह अनुभव करते हुये कि आदिवासियों का देश की भावी प्रजातंत्र व्यवस्था में प्रभावशाली प्रतिनिधित्व होना चाहिये, मैं एक समस्या से स्वयं भयभीत हूं कि दशवर्षीय 1941 ई. की जनगणना में लगभग 177 कबायली जातियां हैं। यदि हम इसे स्वीकार कर लें तो कबायलियों के प्रत्येक दल का प्रतिनिधित्व होना चाहिये-यही मोटे रूप में पादरी साहब ने हमारे सामने रखा है। उन्होंने एक संख्या का जिक्र किया है-वह संख्या आसाम के विशिष्ट दलों के शामिल करने से आशय रखती है। यदि हम इस आधार पर कार्य करें तो मुझे भय है 1,000 तक की कम संख्या से भी-यदि एक हजार लोग अपना प्रतिनिधि भेजें-यह आशय होगा कि कोई न कोई छूट जायेगा। मेरे विचार से कहीं न कहीं तो हमें इसका अन्त करना ही है और मैं यह अनुभव करता हूं कि जो संख्या प्रस्तावक महोदय ने अपने वाक्यखंड में बताई है-अर्थात् एक लाख जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि-वह ठीक है और उसका समर्थन करने में मुझे खुशी है।

***श्री खांडूभाई देसाई:** श्रीमान् जी, मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि इस विषय पर अब राय ले ली जाये।

***अध्यक्ष:** विषय पर बहस बन्द करने का प्रस्ताव पेश किया जा चुका है। अब प्रस्तावक महोदय बहस का उत्तर दें।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:__ श्रीमान् जी, वाद-विवाद के समय अनेकों संशोधन पेश किये गये उनमें से कुछ संशोधनों का वक्ताओं ने विरोध भी किया है। वाद-विवाद का निचोड़ यह है कि दो संशोधनों को स्वीकार कर लेना चाहिये। पहला संशोधन श्री सिधवा का है जो यह व्यवस्था रखता है कि वाक्य-खंड 2 में कम से कम संख्या 50 को 60 कर दिया जाये। दूसरा संशोधन सादुल्ला साहब का है जो यह व्यवस्था रखता है कि अधिक से अधिक संख्या 300 नियत की जाये। केवल इन दो संशोधनों के जिनको स्वीकार करने का मैं प्रस्ताव करता हूं; शेष संशोधनों का मैं विरोध करूंगा।

उड़ीसा के एक मित्र ने एक संशोधन पेश किया है जिसमें यह सुझाया गया है कि आसाम प्रांत में ऊपर की सभा होनी चाहिये। मैं नहीं समझता कि इसके लिये किसी संशोधन की आवश्यकता है, क्योंकि प्रस्ताव में स्वयं यह व्यवस्था की गई है कि यह प्रांत की मर्जी पर निर्भर है कि वह ऊपर की सभा रखे अथवा नहीं। ठीक तो यह है कि वे इस बात को अपने प्रांत की परिषद् में कहते। वे अपने संशोधन को यहां इसलिये रख रहे हैं कि उनको भय है कि शायद प्रांत की परिषद् में वे सफल न हो सकें। लेकिन हम प्रांत की इच्छा के विरुद्ध उस पर ऊपर की सभा लादना नहीं चाहते हैं। हाँ उड़ीसा प्रांत में अब ऊपर की सभा नहीं है और उड़ीसा के एक दूसरे मित्र ने इसी हाउस में इस प्रस्ताव का, जोकि उड़ीसा में ऐसी सभा की स्थापना करने के पक्ष में हैं, विरोध किया है। कदाचित इस प्रयत्न में उन्हें सफल होने का कोई अवसर नहीं है। इसलिये हम भी उसे क्यों स्वीकार करें?

उन्होंने एक दूसरा संशोधन भी पेश किया है जिसमें वे चाहते हैं कि मतदाताओं को विधान द्वारा यह अधिकार दिया जाना चाहिये कि जिस सदस्य ने अपने निर्वाचन-क्षेत्र में विश्वास खो दिया है उसे वे हटा सकते हैं। मैं ऐसी व्यवस्था रखने का कोई कारण नहीं देखता हूँ। मेरे विचार से तो यह चुने हुये सदस्य के सम्मान पर छोड़ देना चाहिये। जब वह यह अनुभव करे कि निर्वाचन-क्षेत्र का उस पर विश्वास नहीं रहा तो इसकी अपेक्षा कि उसे हटाने के लिये बाध्य किया जाये तथा इस प्रकार की व्यवस्था विधान में रखी जाये उसे खुद ही इस्तीफा दे देना चाहिये। एक बुद्धिमान सदस्य सदा अपने निर्वाचन-क्षेत्र की नब्ज टटोलता रहेगा। मेरे विचार से ऐसी व्यवस्था रखने की अपेक्षा हम सदस्यों में उत्तरदायित्व की पुष्ट भावना तथा सम्मान के भावों को समुन्नत करने का प्रयत्न करें। यदि कोई विरला उदाहरण या कोई ऐसा नीच सदस्य हो जो निर्वाचन-क्षेत्र का विश्वास खोकर भी हाउस में सदस्य बना रहना चाहता है तो ऐसे बुरे उदाहरणों के लिये हमें अपने विधान को कुरूप नहीं

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

करना चाहिये। हमें इस बात को सम्बन्धित सदस्य की शुभ भावना पर ही छोड़ देना चाहिये।

आसाम के एक दोस्त ने, जिसमें क्षुद्रता का भाव भरा हुआ विदित होता है, यह सुझाव रखा है कि आसाम के साथ हमेशा खास बर्ताव करना चाहिये। यह बधाई देने का विषय है कि स्त्रियों ने आगे बढ़कर यह कहा है कि वे कोई विशेष व्यवहार नहीं चाहती हैं, परन्तु इसके साथ ही साथ यह खेद का विषय है कि पुरुष अभी उस स्तर की ओर नहीं बढ़ रहे हैं। हम यह आशा करें कि इस विधान में ऐसी कोई भी व्यवस्था न रखी जायेगी जिसका स्त्रियां विरोध करें और पुरुषों के वह पक्ष में हो।

यह कहा गया है कि कबायली तथा ऐसे ही कुछ क्षेत्रों के लिये प्रतिनिधित्व के विषय में कुछ रियायत की जाये। सबसे पहले तो मैं यह कहूंगा कि इस अभिप्राय के लिये नियुक्त की गई विशेष कमेटी इस विषय पर मुख्यत: विचार करेगी। अभी हमें कबायली तथा पृथक क्षेत्रों की सब-कमेटी की रिपोर्ट प्राप्त नहीं हुई है और हम उनके कार्य अथवा स्वतंत्र निर्णय में विघ्न डालना नहीं चाहेंगे। उनके एक स्वतंत्र रिपोर्ट बनाने के अधिकार में हम हस्तक्षेप नहीं करेंगे। इसलिये मैं यह सुझाव पेश करूंगा कि अभी हमें इस प्रश्न पर विचार नहीं करना चाहिये, बल्कि इस वाक्यखंड में जिस सामान्य सिद्धांत का प्रतिपादन किया गया है उसे स्वीकार कर लेना चाहिये। सब-कमेटी की रिपोर्ट आने के बाद यदि इस वाक्य-खंड में कुछ परिवर्तन करने की आवश्यकता हो तो वह इसमें शामिल कर दी जायेगी।

मेरे ख्याल से मुझे अब इससे अधिक नहीं कहना चाहिये। हमने पूरे दो घंटे तक वाद-विवाद किया है और अनेक तर्क जो उठाये गये थे उनका उत्तर दे दिया गया है। इसलिये अब मैं इस वाक्य-खंड को, उन दो संशोधनों के साथ जिनका मैंने उल्लेख किया है, हाउस की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***मौलवी सैयद मुहम्मद सादुल्ला:** श्रीमान् जी, मैं अपने संशोधन को वापस करने की आज्ञा चाहता हूं।

(परिषद् की आज्ञा से संशोधन वापिस किया गया।)

*श्री अमिय कुमार दास: श्रीमान् जी, मैं भी अपने संशोधन को वापस करने को आज्ञा चाहता हूँ।

(परिषद् की आज्ञा से संशोधन वापिस किया गया।)

***अध्यक्ष:** अब हम सादुल्ला साहब द्वारा पेश किये गये दूसरे संशोधन को लेते हैं:

''वाक्य-खंड 19 के उपवाक्य-खंड (2) में 'किसी प्रान्त' शब्दों के पश्चात् 'और अधिक से अधिक 300' शब्द बढ़ा दिये जायें।''

मैं समझता हूं कि इस संशोधन को प्रस्तावक महोदय ने तो स्वीकार कर लिया है, लेकिन यह हाउस द्वारा भी स्वीकृत होना चाहिये।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** इसके पश्चात् श्री सिधवा द्वारा पेश किया गया संशोधन है:

''वाक्य-खंड 19 के उपवाक्य-खंड (2) में संख्या 50 के स्थान में संख्या 60 कर दी जाये।''

इस संशोधन को भी, मैं समझता हूं प्रस्तावक महोदय ने स्वीकार कर लिया है, परन्तु हाउस द्वारा भी इसे स्वीकार करना है।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** इसके पश्चात् पादरी निकोल्सराय का संशोधन है कि:

''वाक्य खंड 19 के उपवाक्य खंड (2) में निम्नलिखित व्यवस्था जोड दी जाये:

'बशर्ते कि उन प्रादेशिक क्षेत्र अथवा क्षेत्रों को जिनमें पहाड़ी कौमें रहती हों, प्रतिनिधित्व देने के लिये प्रान्तीय सरकार एक लाख से कम जनसंख्या के आधार का निर्णय कर सकती है तथा कुल प्रतिनिधियों की संख्या तदनुसार बढ़ा दी जायेगी'।''

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रासः जनरल)**:** श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है, यह विषय एडवाइज़री कमेटी के सम्बन्ध का है।

***अध्यक्षः** मेरे ख्याल से अब इसके लिये काफी विलम्ब हो गया है। संशोधन यहां पेश हो चुका है और उस पर वाद-विवाद भी हो चुका है। मैं यह मानता हूं कि यदि एडवाइज़री कमेटी को इस प्रश्न पर कोई सुझाव पेश करना होगा तो हाउस उस पर विचार कर लेगा।

माननीय रेवरेन्ड जे.एम. निकोल्स रायः श्रीमान जी, जैसा कि माननीय प्रस्तावक सरदार पटेल कहते हैं कि इस प्रश्न पर पृथक और आंशिक पृथक क्षेत्रों पर विचार करने वाली एडवाइज़री सब-कमेटी विचार करेगी और उस सब-कमेटी की सिफरिशों पर यह हाउस वाद-विवाद करेगा तथा यह वाक्य-खंड उस सब-कमेटी की सिफारिशों के अधीन होगा। मैं अपने संशोधन पर जोर देने की आवश्यकता नहीं समझता हूं। मैं उसे वापस लेना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** मेरे ख्याल से इस विषय पर एडवाइज़री कमेटी विचार करेगी और उसकी सिफारिशें हाउस के सामने आयेंगी। मैं यह मानता हूं कि हाउस श्री निकोल्सराय को अपना संशोधन वापस लेने की आज्ञा देता है।

परिषद् की आज्ञा से संशोधन वापस हुआ।

संशोधन संख्या 13

अध्यक्षः श्री लक्ष्मीनारायण साहू के दो संशोधन हैं। क्या माननीय सदस्य उनको रखना चाहते हैं?

***श्री लक्ष्मीनारायण साहूः** श्रीमान जी, मैं दोनों को वापस लेना चाहता हूं।

परिषद् की आज्ञा से संशोधन वापस हुये।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधित वाक्यखंड पर वोट लूंगा। मेरे ख्याल से संशोधित वाक्यखंड को पढ़ना मेरे लिये आवश्यक नहीं है।

मौलाना हसरत मोहानी (संयुक्त प्रान्तः मुस्लिम): श्रीमान जी, मैं समस्त वाक्यखंड का विरोध करता हूं और इस सिलसिले में मैं अपने कुछ विचार प्रकट करना चाहता हूं। क्या आप मुझे इसके लिये इजाज़त देंगे?

***अध्यक्षः** वाक्यखंड पर अभी-अभी लम्बी बहस हो चुकी है और संशोधनों पर भी।

***मौलाना हसरत मोहानीः** मेरे राजनैतिक विचारों के सम्बन्ध में सरदार पटेल और नेहरू ने कुछ गलतफहमियां पैदा कर दी हैं। मुझे इन गलतफहमियों को दूर करने का मौका न मिला। यदि आप मुझे चंद मिनट दे दें तो मैं अपने उन विचारों को प्रकट करूं।

***अध्यक्षः** अब और अधिक वाद-विवाद करने के लिये काफी देर हो गई है। यदि मौलाना साहब भाषणों को सुनते और अन्य सदस्यों से बातें करने में न लगे रहते तो उन्हें अवसर मिल जाता।

***मौलाना हसरत मोहानीः** श्रीमान जी, मैं पूरे वाक्यखंड का विरोध करता हूं तथा इस रिपोर्ट का भी और मैं चाहता हूं कि इस बात को दर्ज कर लिया जाये कि मैं इस सबका उस समय विरोध करता हूं जब कि आप संशोधित प्रस्ताव को हाउस में वोट लेने के लिये रखते हैं।

***अध्यक्षः** मैं अब संशोधित वाक्य-खंड पर राय लेता हूं।

विषय यह है कि:

''वाक्य-खंड 19 संशोधित रूप में स्वीकार किया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

वाक्य-खंड 20

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान जी, मैं वाक्यखंड 20 पेश करता हूं:

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

''प्रान्तीय व्यवस्थापिका का अधिवेशन करने, उसे स्थगित करने और समाप्त करने के बारे में आदेश, दो सभाओं के आपस के सम्बन्ध (जहां दो सभायें हों), वोट देने की प्रणाली, सदस्यों के अधिकार, सदस्यता के लिये अयोग्यता, सभा-संचालन पद्धति जिसमें आर्थिक मामलों से सम्बन्धित पद्धति भी सम्मिलित है इत्यादि, सन् 1935 के एक्ट में इस सम्बन्ध में जो आदेश हैं उनके आधार पर होंगे।''

मैं समझता हूं कि अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर अन्तिम लाइन में कुछ संशोधन पेश करने वाले हैं अर्थात् ''सन् 1935 ई. के एक्ट में इस सम्बन्ध में जो आदेश हैं, उनके आधार पर होंगे'' इस लाइन में। इसके स्थान में वे इससे अच्छी बात का सुझाव रख रहे हैं जो अधिक व्यापक होगी और ब्रिटिश पार्लियामेंट की पद्धति के आधार पर होगी। जब वे इस संशोधन को पेश करेंगे मैं स्वीकार कर लूंगा। वरना यह वाक्यांश सीधा-साधा है और हाउस की स्वीकृति के लिये मैं इसे पेश करता हूं।

(श्री शिब्बनलाल सक्सेना ने अपना संशोधन नं. 25 पेश नहीं किया।)

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** श्रीमान जी, जिस रूप में वाक्यांश प्रस्तावित किया गया है उसमें मुझे संशोधन पेश करना है। इसके दो भाग हैं। इसके पहले भाग के सम्बन्ध में कुछ क्षेत्रों में मतभेद था कि इसको इस स्थिति में रखना चाहिये या नहीं और यह बाद में लिया जा सकता है या नहीं। अभी मैं इस बात पर कोई जोर नहीं दे रहा हूं। यद्यपि मैं यह विचार करता हूं कि इस भाग पर भी काफी कहा जा सकता है। पहला भाग उस संशोधन का यह है कि:

''वाक्य-खंड 20 के अन्त में निम्नलिखित बढ़ा दिया जाये:

'सन् 1935 ई. के भारत सरकार के एक्ट की धारा 71 के आदेशों में निम्नलिखित परिवर्तन के साथ–

धारा 71 की उप-धारा (1) में ''चेम्बर द्वारा या उसकी आज्ञा से ऐसी व्यवस्थापिका के प्रकाशन के सम्बन्ध में'' शब्दों के पश्चात् ''या ऐसी कार्यवाहियों की सही रिपोर्ट' जोड़ दिया जाये'।''

मेरा विश्वास है कि किसी ऐसे आदेश की आवश्यकता है लेकिन चूंकि कुछ क्षेत्रों में यह अनुभव किया गया है कि इस भाग की अभी और परीक्षा करने की जरूरत है। मैं इस पर अभी जोर नहीं दे रहा हूं। मैं प्रस्ताव रखता हूं कि बाद की कार्यवाहियों में इसको फिर रखा जाये।

मेरे संशोधन का दूसरा भाग इस प्रकार है:

''सन् 1935 ई. के भारत सरकार के एक्ट की धारा 71 की उप-धारायें (3) और (4) के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'प्रान्त की व्यवस्थापिका के सदस्यों को वे अधिकार, विशेषाधिकार और राजनियमों से छुटकारे सम्बन्धी अधिकार प्राप्त होंगे जो प्रान्तीय व्यवस्थापिका द्वारा घोषित किये जायेंगे। जब तक घोषित नहीं किये जाते हैं तब तक उनको ब्रिटिश पार्लियामेंट की लोक-सभा के सदस्यों के समान उपरोक्त अधिकार रहेंगे। इस विधान के लागू होने पर उसके अनुसार सदस्यों और उसकी कमेटियों को अधिकार प्राप्त होंगे'।''

श्रीमान जी, यदि आप धारा 71 को देखेंगे तो आप विशेषाधिकारों को बहुत सीमित पायेंगे। व्यवस्थापिका को अपने सदस्यों को सजा देने का कोई अधिकार नहीं है तथा और दूसरे प्रतिबन्ध भी हैं। जैसा कि बताया गया है, यह अनुभव किया गया है कि हमारी व्यवस्थापिका सभा को वे पूर्ण अधिकार प्राप्त होने चाहियें जो कि लोक-सभा को हैं, इस बात की गुंजाइश रखते हुये कि व्यवस्थापिका सभायें बाद में स्वयं इस सम्बन्ध में अपने आदेश दे सकती हैं। इस संशोधन का यही उद्देश्य है। यदि ऐसी भावना हो कि स्वतंत्र भारत के विधान में लोक-सभा के हवाला देने की कोई आवश्यकता नहीं है तो बाद में लोक-सभा के विशेष अधिकारों सम्बन्धी समस्त सामग्री को हम एकत्रित कर सकते हैं और उनको वहां रखा जा सकता है। अभी मैं इस बात पर जोर दूंगा क्योंकि लोक-सभा वह परिषद् है जिसे संसार की समस्त परिषदों से अधिक व्यापक विशेषाधिकार प्राप्त हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है, जबकि विचार-विमर्श हो रहा है एक माननीय सदस्य सिगरेट पी रहे हैं। क्या ऐसा करना नियमानुकूल है? यदि इस बात की आज्ञा दे दी जाती है तो अनेक माननीय सदस्य हाउस में सिगरेट पीने का साहस करेंगे।

***अध्यक्षः** यह इस हाउस की प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं है और न यह अपनी विगत परम्परा के अनुसार ही है कि कोई भी माननीय सदस्य यहां सिगरेट पीये।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** श्रीमान् जी, मैं यह भी प्रस्ताव रखता हूं। कि ''निम्नलिखित नया वाक्य-खंड 20वें वाक्यखंड के बाद रख दिया जाये। यह एक सारभौतिक आदेश है। मेरा संशोधन इस प्रकार हैः

''20–क (1) पद्धति की किसी अनियमितता के बताने पर प्रान्तीय धारा-सभा में हुई किसी कार्यवाही की प्रामाणिकता पर विचार नहीं किया जायेगा।

(2) धारा-सभा के जिस अफसर या अन्य सदस्य को इस एक्ट के द्वारा या इसके अन्तर्गत धारा-सभा में कार्य पद्धति को नियमित करने के लिये या कार्यवाही का संचालन करने के लिये या व्यवस्था कायम रखने के लिये जो अधिकार दिये गये हैं, उनको प्रयोग में लाने के सम्बन्ध में वह किसी भी अदालत के अधिकार-क्षेत्र के अधीन नहीं होगा।''

यह बहुत हितकारी तथा आवश्यक व्यवस्था है क्योंकि किसी व्यक्ति को किसी भी कानून की प्रामाणिकता पर दावा करने का अधिकार इस आधार पर नहीं होना चाहिये कि किसी विशेष नियम या व्यवस्था का पालन उस कानून के बनाने में नहीं किया गया। यह वह आदेश है जिसे प्रत्येक भारतीय सरकार के एक्ट में स्थान मिला है। यह बहुत लाभदायक व्यवस्था है, इसलिये मैं हाउस से प्रार्थना करूंगा कि उपरोक्त बातों के कारण वह इस संशोधन को स्वीकार करे।

***अध्यक्षः** और कोई दूसरा संशोधन नहीं है। इसलिये मूल प्रस्ताव तथा संशोधनों पर बहस आरम्भ हो सकती है। कोई भी सदस्य प्रस्ताव पर अथवा संशोधन पर बोल सकता है। *(कोई सदस्य बोलने खड़ा न हुआ।)* मैं देखता हूं कि कोई भी सदस्य बोलने के लिये उत्सुक नहीं है। इसलिये मैं माननीय प्रस्तावक महोदय से उत्तर देने के लिये निवेदन करूंगा।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान जी, मैं संशोधनों को स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्षः** पहले मुझे वोट लेने के लिये संशोधनों को पेश करना है जिन्हें प्रस्तावक महोदय ने स्वीकार कर लिया है। अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने जैसा पहला संशोधन पेश किया है उसको मैं पहले लूंगा।

वह इस प्रकार है कि–

वाक्यांश 20 के पश्चात् निम्नलिखित बढ़ा दिया जायेः

''सन् 1935 ई. के भारत सरकार के एक्ट की धारा 71 के आदेशों में निम्नलिखित परिवर्तनों के साथ–

सन् 1935 ई. के भारत सरकार के एक्ट की धारा 71 की उपधारायें (3) और (4) के स्थान में निम्नलिखित रखा जायेः

'प्रान्त की व्यवस्थापिका के सदस्यों को वे अधिकार, विशेषाधिकार और राजनियमों से छुटकारे सम्बन्धी अधिकार प्राप्त होंगे जो प्रान्तीय व्यवस्थापिका द्वारा घोषित किये जायेंगे। जब तक घोषित नहीं किये जाते हैं तब तक उनको ब्रिटिश पार्लियामेंट की लोक-सभा के सदस्यों के समान उपरोक्त अधिकार रहेंगे। इस विधान के लागू होने पर उसके अनुसार सदस्यों और उसकी कमेटियों को अधिकार प्राप्त होंगे'।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** मैं सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के दूसरे संशोधन को लेता हूं। वह इस प्रकार हैः

''वाक्य-खंड 20 के पश्चात् निम्नलिखित नया वाक्य-खंड रखा जायेः

'20क(1) पद्धति की किसी अनियमितता के बताने पर प्रान्तीय धारा-सभा में हुई किसी कार्यवाही की प्रामाणिकता पर विचार नहीं किया जायेगा।

(2) धारा-सभा के जिस अफसर या अन्य सदस्य को इस एक्ट के द्वारा या इसके अन्तर्गत धारा-सभा में कार्यपद्धति को नियमित करने के

[अध्यक्ष]

लिये या कार्यवाही का संचालन करने के लिये या व्यवस्था कायम रखने के लिये जो अधिकार दिये गये हैं उनको प्रयोग में लाने के सम्बन्ध में वह किसी भी अदालत के अधिकार-क्षेत्र के अधीन नहीं होगा।''

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अध्यक्षः प्रश्न है किः

वाक्यखंड इन दोनों संशोधनों सहित पास किया जाये।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अध्यक्षः अब हम वाक्यखंड 21 को लेते हैं।

वाक्य-खंड 21

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** वाक्यखंड 21 को अभी स्थगित रखे जाने की मैं आज्ञा चाहता हूं क्योंकि यूनियन के विधान में भी वाक्यखंड 16 इसी प्रकार का है और दोनों पर साथ-साथ विचार हो सकता है। दो विधानों में एक सी दो व्यवस्थाओं के होने के कारण यह एक विवादास्पद विषय होगा और कुछ गड़बड़ी होने की सम्भावना भी हो सकती है। इसलिये मैं यह सुझाव रखता हूं कि इस पर अभी विचार स्थगित किया जाये और दोनों पर साथ-साथ विचार किया जाये।

***अध्यक्षः** वाक्य-खंड 21 पर फिर कभी विचार किया जायेगा। हम वाक्यखंड 22 को लेते हैं।

वाक्य-खंड 22

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्जी, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं।

''प्रान्तीय व्यवस्थापिका निम्नलिखित विषयों या उनमें से किसी विषय के बारे में समय-समय पर आदेश बना सकेगी, अर्थात्ः

(क) निर्वाचन-क्षेत्रों की सीमा बन्दी।

(ख) मताधिकार के लिये योग्यता और निर्वाचक सूचियों की तैयारी।

(ग) किसी सभा का सदस्य निर्वाचित होने के लिये योग्यता।

(घ) किसी सभा में आकस्मिक रिक्त स्थानों को भरना।

(ङ) इस विधान के अधीन चुनावों का संचालन और उनमें वोट देने के तरीके।

(च) इस चुनावों में उम्मीदवारों के खर्चे।

(छ) इन चुनावों में या इनके सम्बन्ध में नाजायज तरीकों को काम में लाना और दूसरे अपराध।

(ज) इन चुनावों से तथा इनके सम्बन्ध में पैदा होने वाले सन्देहों और झगड़ों का निर्णय।

(झ) ऐसे मामले जो उपरोक्त किसी मामले से सम्बन्ध रखते हों। परन्तु शर्त यह है कि:

(1) नीचे की सभा का कोई सदस्य 25 वर्ष से कम आयु का न होगा और ऊपर की सभा का कोई भी सदस्य 35 वर्ष से कम आयु का न होगा।

(2) निर्वाचनों की व्यवस्था, उनके निर्देशन और उन पर नियन्त्रण रखने के अधिकार, जिसमें निर्वाचन सम्बन्धी ट्रिब्युनलों की नियुक्ति भी सम्मिलित है, गवर्नर को होगा और वह अपने विवेक से काम करेगा।''

शायद व्यवस्था (2) के हटाने का प्रस्ताव पेश होगा और मैं उसे स्वीकार कर लूंगा क्योंकि उसके लिये दूसरा आदेश बना दिया गया है। श्रीमान्जी, मैं इस प्रस्ताव को हाउस की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि:

''वाक्यखंड 22 में ''समय-समय पर'' शब्दों के पश्चात् निम्नलिखित शब्द रख दिये जायें:–

'प्रान्तीय विधान में संशोधन रखने की पद्धति के अनुसार'।''

[श्री के. सन्तानम्]

वाक्यखंड के वर्तमान स्वरूप के अनुसार केवल एक साधारण कानून से ऐसे-ऐसे महत्वपूर्ण मामलों में परिवर्तन किया जा सकता है जैसे कि निर्वाचन-क्षेत्रों की सीमाबन्दी, मताधिकार के लिये योग्यता और निर्वाचक सूचियों की तैयारी। इसका आशय यह होगा कि जनमत के क्षणिक आवेश द्वारा एक साधारण बहुमत प्रान्तीय विधान के समूचे आधार को उलट-पलट सकता है। वह अपने हित के लिये निर्वाचन-क्षेत्रों को बदल सकता है और ऐसे परिवर्तन कर सकता है जो हाउस को समाप्त कर दे और एक बड़े बहुमत से फिर अधिकार प्राप्त कर ले। इस कारण कुछ प्रतिबन्धों की आवश्यकता है। मैं निवेदन करता हूं कि यह परिवर्तन प्रान्तीय विधान में संशोधन करने की पद्धति के अनुसार ही किये जायें। वर्तमान रिपोर्ट में प्रांतीय विधान में संशोधन करने की पद्धति का निर्धारण नहीं किया गया है लेकिन मैंने इस आशय का एक वाक्यखंड बना लिया है। पद्धति में अनेकों आदेश हो सकते हैं, प्रान्तीय विधान का कुछ भाग किसी एक पद्धति द्वारा बदला जा सकता है और कुछ भागों के लिये बड़ी विस्तृत पद्धति की आवश्यकता हो सकती है। जो कुछ भी हो, इन विषयों में केवल उस पद्धति द्वारा ही परिवर्तन किया जाना चाहिये जो विशेषकर इसीके लिये निर्धारित की गई हो। साधारण कानून द्वारा इनमें परिवर्तन नहीं होना चाहिये। मुझे आशा है कि हाउस इस प्रस्ताव को स्वीकार करेगा।

(डा. पी.एस. देशमुख ने अपना संशोधन पेश नहीं किया।)

***श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि:

''वाक्य-खंड 22 के (ख) भाग में 'मताधिकार के लिये योग्यता' शब्दों के स्थान में निम्नलिखित शब्द रख दिये जायें:

'व्यक्तिगत अयोग्यताओं अथवा निवास-गृह न होने के कारण वयस्क मताधिकार की परिमिततायें जो कि जन्म, कौम, धर्म या जाति के आधार पर न हो'।''

श्रीमान् जी, समस्त योजना का आधार वयस्क मताधिकार है। मेरा संशोधन केवल उसे स्पष्ट करता है कि मताधिकार के लिये योग्यताओं से यह आशय नहीं है कि यह कोई अधिकार है जो किसी दूसरे को दिया जा सकता है।

वयस्कों के लिये भी कुछ योग्यताओं का होना आवश्यक है, विशेषकर निवास-गृह के आधार पर तथा व्यक्तिगत अयोग्यतायें जैसे पागलपन, कैद तथा और ऐसे ही अन्य आधारों पर। मैं यह व्यवस्था रखना चाहता हूं कि इनके अलावा वयस्क मताधिकार के लिये अन्य कोई प्रतिबन्ध नहीं होना चाहिये।

(सर्वश्री गोकुल भाई भट्ट और वी.सी. केशवराव ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि प्रस्तावक महोदय श्री खुरशेद लाल के संशोधन को स्वीकार करने के पक्ष में हैं जो वाक्य-खंड 22 के दूसरे आदेश के हटाने के सम्बन्ध का है। श्री खुरशेद की अनुपस्थिति में क्या कोई अन्य सदस्य उसको पेश करेगा?

***श्री के.एम. मुन्शी** (बम्बई: जनरल): आपकी आज्ञा से मैं उसे पेश करूंगा। मैं वाक्यखंड 22 के दूसरे आदेश को हटाने का संशोधन पेश करता हूं। इसको हटाने का यह कारण है कि यूनियन विधान कमेटी की रिपोर्ट में एक ऐसा आदेश आने वाला है जिसके द्वारा अखिल भारतीय निर्वाचन ट्रिब्यूनल बनेगा, जिसे समस्त निर्वाचन की केवल फेडरल की ही नहीं वरन् प्रान्तीय निर्वाचन की भी व्यवस्था, उनके निर्देशन और उन पर नियंत्रण रखने के अधिकार होंगे। इसलिये गवर्नर को अपने विवेक से कार्य करने का अधिकार देने की कोई आवश्यकता नहीं है।

(सर्वश्री काला वेन्कटराव और के. सन्तानम् ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***श्री एच.वी. कामत:** मेरा संशोधन वाक्य-खंड 22 में एक नया आदेश रखने के सम्बन्ध में है जो कि पृथक निर्वाचन और अधिक प्रतिनिधित्व के संरक्षण के महत्वपूर्ण विषय को प्रान्तीय व्यवस्थापिकाओं के अधिकार-क्षेत्र से पृथक करने के लिये है। लेकिन मुझसे कहा गया है कि अल्पसंख्यकों सम्बन्धी एडवाइज़री कमेटी की रिपोर्ट में इस विषय को तथा अन्य तत्सम्बन्धी विषयों को ले लिया गया है। इसलिये जब तक उनकी रिपोर्ट पर विचार नहीं होता है तब तक मेरे संशोधन के पेश करने का प्रश्न ही नहीं उठता है। इसलिये मैं उस पर जोर नहीं देना चाहता। वह संशोधन इस प्रकार है कि:-

[श्री एच.वी. कामत]

''वाक्य-खंड 22 में निम्नलिखित को आदेश 3 के रूप में रखा जाये:

'कोई प्रान्तीय व्यवस्थापिका किसी समय प्रान्तीय धारा-सभा में तथा प्रान्त की अन्य निर्वाचन के अधिकार रखने वाली संस्थाओं में किसी विशेष वर्ग या जाति के लिये, पृथक मताधिकार के लिये तथा अधिक प्रतिनिधित्व के संरक्षण के लिये आदेश नहीं बना सकेगी'।''

(सर्वश्री टी. ए. रामालिंगम् चैट्टियर और काला वेंकटराव ने अपने संशोधन नं. 108 और 109 पेश नहीं किये।)

(श्री शिब्बललाल सक्सेना ने अपना संशोधन पेश नहीं किया।)

सेठ गोविन्द दास (सी. पी. और बरार: जनरल): सभापति जी, मेरे नाम पर दो सुधार हैं। सप्लीमैंट्री लिस्ट 3 में एक नम्बर चार है और एक नम्बर पांच है। चार मैं पेश नहीं कर रहा हूं। पांचवां मैं पेश करना चाहता हूं और उसकी शब्दावली इस प्रकार है:

''उसके बाद वाक्य-खंड 22 में (क) से (झ) तक सारी व्यवस्थायें यहां संलग्न सूची के आदेशों के अनुसार और उनको पुष्ट करते हुए बनाये जायेंगे जिससे कि समस्त भारतीय संघ में इन विषयों में समानता रहे।''

मैं समझता हूं कि इस सम्बन्ध में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। मैं सिर्फ यह चाहता हूं कि ''क'' से लेकर ''झ'' तक जितनी बातें इस वाक्य-खंड में दी गई हैं वे सारे हिंदुस्तान में एक प्रकार से लागू हों। जबकि सारा भारत एक यूनियन बनने जा रहा है तब इन धाराओं का विधान एक प्रान्त में एक प्रकार हो और दूसरे प्रांत में दूसरे प्रकार, यह उचित नहीं होगा। इसलिये मैंने यह सुधार पेश किया है और मैं आशा करता हूं कि सरदार पटेल साहब इसको स्वीकार कर लेंगे।

***अध्यक्ष:** श्री काला वेंकटराव के दो संशोधन हैं।

(कोई उत्तर नहीं मिला।)

सब संशोधन पेश हो चुके हैं। जो कोई प्रस्ताव पर अथवा संशोधन पर बोलना चाहते हैं वे अब बोल सकते हैं।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** अध्यक्ष महोदय, श्री सन्तानम् ने जो पहला संशोधन पेश किया है उस पर मैं कुछ कहना चाहता हूं।

उस संशोधन को यहां सही बिठाने में मुझे कठिनाई है। उनका प्रस्ताव है कि ''समय-समय पर'' शब्दों के पश्चात् ''प्रांतीय-विधान में संशोधन रखने की पद्धति के अनुसार'' शब्द रख दिये जायें। स्वयं संशोधन के गुणों के विचार से तो जो कुछ उन्होंने कहा उसमें बहुत सार है। प्रत्यक्ष रूप से उनकी योजना यह है कि वाक्य-खंड में दिये हुये विषयों के सिलसिले में जो पहले आदेश बनाये जायेंगे उनको स्वयं विधान में या विधान की सूची में स्थान मिलना चाहिये। वे प्रत्यक्ष रूप से जल्दी में स्वीकृत किये गये संशोधनों के विरुद्ध और क्षणिक आवेश उत्पन्न करने वाले उन विचारों के प्रवाह के विरुद्ध, जो शायद आगे चलकर मान्य ही न हों, संरक्षण चाहते हैं। इसलिये वे ऐसी व्यवस्था रखना चाहते हैं कि प्रांतीय व्यवस्थापिका को विधान की ऐसी सूचियों में प्रांतीय विधान में संशोधन करने की नियत की हुई पद्धति के अनुसार ही संशोधन करना चाहिये। लेकिन यह वाक्य-खंड तो यह कहता है कि इन विषयों से सम्बन्धित पहले कानून प्रांतीय व्यवस्थापिका द्वारा बनाये जायेंगे। ''प्रांतीय व्यवस्थापिका निम्नलिखित विषयों या उनमें से किसी विषय के बारे में समय-समय पर आदेश बना सकेगी।'' यदि आप प्रांतीय व्यवस्थापिका को, बिना किसी विशेष रुकावट के, इन विषयों से सम्बन्धित पहले आदेश बनाने के अधिकार देते हैं, जैसा मैं समझता हूं, तो फिर ऐसे आदेश बनाने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है कि ऐसे आदेशों में संशोधन विधान में संशोधन करने की नियत पद्धति के अनुसार होना चाहिये। मैं समझता हूं कि उनके आशय की पूर्ति के लिये इस वाक्य-खंड का फिर से मसविदा बनाना होगा। हम यह कह सकते हैं कि इन विषयों के सम्बन्ध में पहले आदेशों को विधान की सूची में स्थान मिलना चाहिये और तब आप प्रांतीय व्यवस्थापिका को इन सूचियों में प्रांतीय विधान में संशोधन करने की निर्धारित पद्धति के अनुसार संशोधन करने का अधिकार दे सकते हैं।

एक और भी कठिनाई है। मुझे यकीन हे कि अनुकरणीय विधान का मसविदा प्रांतीय विधान में संशोधन करने की पद्धति का आदेश रखेगा। उसकी भी हमें व्यवस्था करनी है। जहां तक श्री सन्तानम् के संशोधन का सम्बन्ध है, मैं यह सुझाव रखूंगा कि उसको हम रोक लें जिससे कि हम एक ऐसा मसविदा तैयार कर सकें जो कि श्री सन्तानम् के आशय को पूरा कर सके। मैं यह आभास करता हूं कि उनके पेश किये हुये संशोधन को अभी स्वीकार न किया जाये, हम उसको बाद में लें।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** श्रीमान् जी मैं श्री गोपालस्वामी आयंगर के सुझाव का समर्थन करता हूं कि इस वाक्य-खंड पर विचार स्थगित कर

[सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

दिया जाये। यदि पहली बात निर्वाचन-क्षेत्रों की हदबन्दी साधारण कानून द्वारा हो सकती है तो यह तर्कसम्मत है कि बाद के परिवर्तन भी साधारण कानून द्वारा किये जा सकते हैं। इसके विपरीत यदि निर्वाचन-क्षेत्रों की हदबन्दी का आदेश विधान में दिया जाता है तो उसके बाद के संशोधन वैधानिक संशोधन होंगे। इसलिये यदि सूची में आप यह बताते हैं कि निर्वाचन क्षेत्रों की किस प्रकार हदबंदी होगी तो इस प्रकार के आदेश भी आवश्यक होंगे कि बाद के परिवर्तन वैधानिक संशोधन द्वारा होंगे। इन परिस्थितियों में मैं श्री सन्तानम् से निवेदन करूंगा कि अभी वे अपने संशोधन पर जोर न दें।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** मुझे ऐसी बड़ी कठिनाई नहीं मालूम होती जिसका हल खोजने का मेरे यह मित्र प्रयत्न कर रहे हैं। भाग 4 के अन्तर्गत परिवर्तनकाल की व्यवस्थाओं के अनुसार विधान के लागू होने पर भी वर्तमान व्यवस्थापिका कार्य करती रहेगी। अन्यथा विधान के लागू होते ही प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों की हदबन्दी करना और निर्वाचन करना संभव नहीं होगा। इस अरसे में वर्तमान व्यवस्थापिका द्वारा ही प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों की हदबन्दी होगी। वर्तमान व्यवस्थापिका भाग 4 के वाक्य-खंड 2 के अंतर्गत कार्य करेगी। ''मंत्रिमंडल, लेजिस्लेटिव असेम्बली और लेजिस्लेटिव कौंसिल (उन प्रांतों में जो ऊपर की सभा रखने का निर्णय करते हैं) के सम्बन्ध में वैसे ही आदेश आवश्यकता परिवर्तन सहित होंगे।'' पहला आदेश यह है ''इस विधान के लागू होने के निकट पूर्व में कोई व्यक्ति जो प्रांत में गवर्नर के अधिकार ग्रहण किये हुये है उसी प्रकार रहेगा और इस विधान के अन्तर्गत जब तक गवर्नर समझा जायेगा तब तक कि इस विधान के अनुसार निर्वाचित उत्तराधिकारी कार्यभार नहीं संभालता है।'' इसलिये व्यवस्थापिका कायम रहेगी और प्रांतों की हदबन्दी के कार्य को उसे सौंपा जा सकता है। निर्वाचन-क्षेत्रों की प्राथमिक हदबन्दी के बारे में श्री सन्तानम् के संशोधन को बिना किसी कठिनाई के स्वीकार कर लिया जाये। वह व्यवस्थापिका को भली प्रकार सौंपा जा सकता है।

***अध्यक्षः** क्या कोई और सदस्य प्रस्ताव अथवा संशोधन पर बोलना चाहता है?

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें)**:** मैं श्री सन्तानम् के दूसरे संशोधन पर बोलना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** छः बज चुके हैं, यदि कोई लम्बा वाद-विवाद है तो हम स्थगित कर दें। मैं यह जानना चाहूंगा कि और भी सदस्य बोलना चाहते हैं क्या?

कुछ माननीय सदस्यः ''जी हां''।

***अध्यक्षः** तो स्थगित करने के पूर्व मैं एक या दो घोषणा करना चाहूंगा।

आज सुबह अखबारों में यह समाचार दिये गये हैं कि एक हवाई जहाज जिसमें हमारे एक माननीय सदस्य श्री जगजीवनराम और दो प्राइवेट सेक्रेटरी सफर कर रहे थे, बसरा के पास टकरा गया। माननीय सदस्यों को यह सूचना देते हुये मुझे खुशी है कि श्री जगजीवनराम के कोई ज्यादा चोट नहीं आई है। यद्यपि मैं समझता हूं कि उनके घुटने की एक हड्डी टूट गई है। मुझसे कहा गया है कि अच्छे होने में उन्हें देर नहीं लगेगी। हम यह आशा करें कि वे जल्दी यहां वापस होने योग्य हो जायें और हमारे विचार-विमर्श में भाग लें।

कुछ सदस्यों ने यह कहा है कि यूनियन कमेटी की रिपोर्ट में संशोधन भेजने के लिये उनको कुछ और अधिक समय चाहिये और चूंकि अभी हमने प्रांतीय विधान पर विचार समाप्त नहीं किया है, मैं उनको संशोधन भेजने के लिये कुछ और समय देने के लिये तैयार हूं–अर्थात् कल सांयकाल के दो बजे तक–जिससे कि संशोधन सोमवार को सायंकाल के दो बजे के पूर्व छप जायें और सदस्यों में बंट जायें।

एक और घोषणा है कि अगले सोमवार से मैं प्रस्ताव रखता हूं कि हम सुबह 10 बजे से दोपहर के एक बजे तक बैठें। अब हम स्थगित करते हैं।

***श्री के.एम. मुंशीः** अल्पसंख्यकों सम्बन्धी सब-कमेटी सोमवार को बैठेगी। उसका समय प्रातःकाल 10 बजे का घोषित किया जा चुका है।

***अध्यक्षः** अनेक सदस्यों ने मुझसे कहा कि जब यह हाउस बैठता है तो उन सदस्यों को जो अल्पसंख्यकों सम्बन्धी सब-कमेटी के भी सदस्य हैं बैठे रहना बहुत असुविधाजनक होगा और दोनों अधिवेशनों के लिये जो कि दिन प्रतिदिन होते रहेंगे उन्हें समय नहीं मिलेगा। अल्पसंख्यकों सम्बन्धी सब-कमेटी की इस मीटिंग की सूचना दी जा चुकी है, लेकिन सदस्यों की बात का विचार करते हुये मैं उसे कुछ दिनों के लिये स्थगित करना पसन्द करूंगा और अन्य कोई तारीख नियत करूंगा जो कि सब सदस्यों के लिये सुविधाजनक हो। समस्त सदस्यों से परामर्श कर तथा उनको सुविधा का विचार कर तारीख की सूचना दे दी जायेगी।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** यदि अल्पसंख्यकों सम्बन्धी सब-कमेटी की बैठक स्थगित की जाती है तो एडवाइज़री कमेटी की रिपोर्ट और अन्य

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

सब बातें स्थगित करनी पड़ेंगी, इसलिये उनको अपना समय नियत करने और दोपहर बाद बैठक करने की इजाजत हो जानी चाहिये।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि अन्य सदस्यों को जो दोपहर बाद कार्य लगे रहते हैं। सदस्यों का उपस्थित होना बहुत कठिन होगा। किसी तरह भी सोमवार को दस बजे हम उसकी मीटिंग नहीं कर सकते हैं। अल्पसंख्यकों सम्बन्धी कमेटी को दोपहर बाद बैठना पड़ेगा।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्त प्रांत : जनरल): क्या मैं यह जान सकता हूं कि प्रातःकाल दस बजे का समय क्यों नियत किया गया है?

***अध्यक्षः** सदस्यों की सुविधा के लिये अनेक कारणों वश।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** न इधर न उधर—या तो जल्दी होता या देर में।

***अध्यक्षः** मैं सोचता हूं कि बहुत से सदस्यों ने इसे सुविधाजनक समझा है। अल्पसंख्यकों सम्बन्धी सब-कमेटी की बैठक के लिये हम दूसरे समय की सूचना दे देंगे। अब हम सोमवार को दस बजे प्रातःकाल सम्मिलित होंगे।

सोमवार तारीख 21 जुलाई 1947 ई. के दिन के दस बजे तक परिषद् स्थगित हुई।

परिशिष्ट

भारतीय विधान-परिषद

प्रांतीय विधान-भाग 1 के वाक्य-खंड 8 पर तत्सम्बन्धी कमेटी की रिपोर्ट।

कमेटी सिफारिश करती है कि:

''वाक्य-खंड 8 का मसविदा फिर से बनाया जाये जो इस प्रकार हो:

'फेडरल गवर्नमेंट से मंजूरी लेकर कोई प्रांत किसी देशी रियासत से समझौते द्वारा किसी व्यवस्था सम्बन्धी, शासन सम्बन्धी या न्याय सम्बन्धी रियासत के कार्य को अपने हाथ में ले सकता है बशर्ते कि उस समझौते में वह विषय हो जो कि प्रान्तीय व्यवस्था सम्बन्धी विषय-सूची या सहगामी व्यवस्था सम्बन्धी विषय-सूची में शामिल है।

ऐसा समझौता हो जाने पर उसकी शर्तों के अधीन प्रांत अपने उचित अधिकारियों द्वारा समझौते में दिये गये व्यवस्था सम्बन्धी, शासन सम्बन्धी या न्याय सम्बन्धी कार्य को करा सकता है'।''

कमेटी की ओर से हस्ताक्षर किये

—बी.एल. मित्तर

सभापति

नई दिल्ली

17 जुलाई सन् 1947 ई.

कमेटी के सदस्य

1. सर बी.एल. मित्तर—सभापति।
2. सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर।
3. मि. इस्माइल चुन्द्रीगर।
4. सर ए. रामास्वामी मुदालियर।
5. डा. बी.आर. अम्बेडकर।
6. श्री के.एम. मुंशी।

Con. 3. 4.6.47
750

अंक 4
संख्या 6

सोमवार
21 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	परिचय पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर	1
2.	जनरल आंगसान तथा उनके साथियों की हत्या पर शोक-प्रकाश	1
3.	अनुकरणीय प्रान्तीय विधान सम्बन्धी सिद्धान्तों की रिपोर्ट	2
4.	संघ-विधान सम्बन्धी सिद्धान्तों की रिपोर्ट	47
5.	परिशिष्ट 'क'	57
6.	परिशिष्ट 'ख'	89

भारतीय विधान-परिषद्

सोमवार, 21 जुलाई सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रात: 10 बजे माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि परिषद के तीन सदस्य यहां मौजूद हैं जिन्होंने अभी रजिस्टर पर हस्ताक्षर नहीं किये हैं। वे कृपया हस्ताक्षर करें।

निम्नलिखित सदस्यों ने अपने परिचय-पत्र पेश किये और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:

1. डा. एम.सी. मुकर्जी
2. मिस्टर एफ.आर. एन्थानी
3. कुमारराजा सर एम.ए. मुत्तिया चेट्टियर

जनरल आंगसान तथा उनके साथियों की हत्या पर शोक प्रकाश

***अध्यक्ष:** सभा को यह समाचार पाकर बड़ी ही वेदना हुई है कि परसों जनरल आंगसान और उनके साथियों पर बड़े ही अमानुषिक ढंग से हमला किया गया जिसके परिणामस्वरूप बड़ी ही दर्दनाक हालत में उन लोगों की मृत्यु हो गई। इस समाचार से भारतीयों को बड़ा ही सदमा पहुंचा है और विशेषतया इसलिये कि बर्मा के साथ हमारे सम्बन्ध, उसके भारत से पृथक कर दिये जाने के बाद भी, बड़े ही मैत्रीपूर्ण थे। जनरल आंगसान उन व्यक्तियों में थे जिन्होंने बर्मा को स्वतंत्रता के द्वार पर पहुंचा दिया था। उनकी और उनके साथियों की निर्मम हत्या उनके ही देशवासियों के हाथ से हो, यह बड़ी ही दुखद बात है।

मैं नहीं जानता कि संसार कब इस तथ्य को समझ पायेगा कि हिंसा से और विशेषत: इस प्रकार की हिंसा से संसार की कोई भी समस्या कभी नहीं सुलझाई जा सकती। यदि इस हत्या के पीछे कोई गहरा षडयन्त्र है तो फिर मुझे डर है कि बर्मा बड़े ही संकट के काल से गुजर रहा है। परन्तु हमें आशा है कि जो सरकार वहां जबर्दस्त जनमत के समर्थन से अधिकारारूढ़ हुई है वह स्थिति पर काबू

---

*इस चिन्ह का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[अध्यक्ष]

पाने में कामयाब होगी और बर्मा के लोग उस स्वतंत्रता के वरदानों का उपयोग करेंगे जिसे लाने का बड़ा श्रेय इन बलिदान हो जाने वाले व्यक्तियों को ही है।

आशा है कि सभा मुझे इसकी अनुमति देगी कि मैं अपने देशवासियों की ओर से बर्मावासियों के प्रति, उनकी सरकार के प्रति तथा शोकाकुल परिवारों के प्रति अपना हार्दिक दु:ख और शोक प्रकट करूं। आशा है माननीय सदस्य अपने स्थान पर खड़े होकर स्वीकृति सूचित करेंगे।

(सभी सदस्यों ने खड़े होकर इसे स्वीकार किया।)

***श्री गोकुलभाई भट्ट** (पूर्वी राजपूताना राज्य समूह)**:** अध्यक्ष महोदय, आपकी आज्ञा हो तो एक-दो प्रश्न पूछना चाहता हूं। इस असेम्बली की कार्यवाही इस समय कितने दिन और चलेगी? क्या अगस्त में फिर से हमें यहां इकट्ठा होना पड़ेगा? कार्यक्रम की सुविधा के लिये यह जानकारी चाहता हूं।

अध्यक्ष: मैं आशा करता हूं कि असेम्बली की कार्यवाही इस महीने के अन्दर-अन्दर ही खत्म हो जायेगी; क्योंकि हमारे सामने इस कमेटी की रिपोर्ट के बाद एक दूसरी कमेटी की रिपोर्ट है और उस पर असेम्बली का विचार जब पूरा हो जायेगा तो जो सबसे बड़ा काम हमारे सामने है, जिसमें सबसे ज्यादा वक्त लगने वाला है वह खत्म हो जायेगा। उसके अलावा शायद एक या दो रिजोल्यूशन भी आने वाले हैं। मगर मैं समझता हूं कि उनमें ज्यादा वक्त नहीं लगेगा। इसलिये मैं समझता हूं कि इस महीने के आखिर तक इस बैठक की कार्यवाही खत्म हो जायेगी। मुमकिन है कि 15 अगस्त को फिर मेम्बरों को यहां आना पड़े।

अनुकरणीय प्रान्तीय विधान सम्बन्धी सिद्धान्तों की रिपोर्ट–(जारी)

खंड 22

***अध्यक्ष:** जिस खण्ड पर हम अभी उस दिन बहस कर रहे थे उस पर अब विचार शुरू करेंगे। संशोधन आ चुके हैं और अब प्रस्ताव और संशोधनों पर बहस हो सकती है।

मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या ऐसा भी संशोधन है जिसकी सूचना तो दी जा चुकी है पर अभी पेश नहीं किया गया है। मेरा अपना ख्याल तो यह है कि सभी संशोधन पेश हो चुके हैं।

हां, श्री अणे, आप उस पर बोलना चाहते थे?

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): अध्यक्ष महोदय, खण्ड 22 के सम्बन्ध में श्री सन्तानम् ने एक दूसरा संशोधन नं. 2 रखा है और उस संशोधन के सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता था कि वह अनावश्यक है। वह इस बात का निश्चय कर लेना चाहते हैं कि कोई भी नियम जो यहां बनेंगे उनसे वयस्क मताधिकार सम्बन्धी प्रारम्भिक सिद्धान्त को, जो स्वीकार किया जा चुका है, कोई ठेस न पहुंचेगी। यह सर्व-विदित सिद्धान्त है कि नियम-निर्माण सम्बन्धी अधिकारों के अनुसार नियम निर्माताओं को यह बात सदा ध्यान में रखनी पड़ती है कि नियमों में कोई बात ऐसी न आ जाये जो उन सिद्धान्तों के विपरीत हो जो विधान में दर्ज किये जा चुके हैं। इस बात को देखते हुये तथा इस तथ्य को देखते हुये कि विधान में वयस्क मताधिकार का स्पष्ट आदेश आ चुका है, उनका दूसरा संशोधन मुझे अनावश्यक जान पड़ता है।

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रास: जनरल): सर एन. गोपालस्वामी आयंगर द्वारा उठाई हुई आपत्ति के सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता हूं कि मैंने एक संशोधन की सूचना दी है और उस संशोधन पर भी इसके साथ ही विचार किया जा सकता है। वह नई पूरक सूची में है। मैं यह बताना चाहता हूं कि प्रथम चुनाव के सम्बन्ध में कोई व्यवस्था अभी नहीं हुई है। जब तक कि कुछ ऐसी व्यवस्था न हो उस खण्ड को लागू करना कठिन होगा और इसीलिये मैंने यह संशोधन रखा है:

''खंड 22 के प्रारम्भ में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जाये:

'इस विधान के अन्तर्गत होने वाले प्रान्तीय व्यवस्थापिका के प्रथम चुनाव के लिये निर्वाचन-क्षेत्र, मतदाताओं की योग्यता और अन्य बातें वैसी ही होंगी जैसी कि उस विधान की सूची में निर्धारित हों'।''

और तब खण्ड का स्वरूप वैसा ही हो जायेगा जैसा दिया गया है और इसके बाद मेरा संशोधन आयेगा। मैं यह संशोधन पेश करता हूं। मैं नहीं समझता कि इस सम्बन्ध में और भी कोई बात स्पष्ट होनी बाकी है।

***अध्यक्ष:** क्या कोई सदस्य खण्ड या प्रस्तावित संशोधनों पर कुछ बोलना चाहते हैं। मैं संशोधनों पर मत लेता हूं। श्री सन्तानम् का संशोधन यह है:

''खंड 22 के प्रारम्भ में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जाये:

'इस विधान के अन्तर्गत होने वाले प्रान्तीय व्यवस्थापिका के प्रथम चुनाव के लिये निर्वाचन-क्षेत्र, मतदाताओं की योग्यता और अन्य बातें वैसी ही होंगी जैसी कि इस विधान की सूची में निर्धारित हों'।''

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल** (बम्बई: जनरल): मैं श्री सन्तानम् तथा सेठ गोविन्ददास दोनों के ही संशोधन को स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्ष:** मैं श्री संतानम् के संशोधन पर मत लेता हूं।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** श्री संतानम् का दूसरा संशोधन यों है:

''खंड 22 में 'from time to time' शब्दों के बाद 'In accordance with the procedure for the amendments the Provincial Constitution'.''

यह संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** श्री संतानम् का एक दूसरा संशोधन है जो यों है:

''खंड 22 के मद (ख) में 'मताधिकार के लिये योग्यता' शब्दों की जगह ये शब्द रखे जायें:

'व्यक्तिगत अयोग्यता (जो जन्म, जाति, धर्म तथा सम्प्रदाय जन्य नहीं होगी) के कारण और निवास न करने के कारण वयस्क मताधिकार पर प्रतिबन्ध।' ''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** श्री मुंशी ने एक संशोधन रखा है जो यों है:

''खंड 22 का दूसरा आदेश हटा दिया जाये।''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** एक दूसरा संशोधन सेठ गोविन्ददास ने रखा है जो यों है:

''खंड 22 में दूसरे आदेश के बाद निम्नलिखित नवीन आदेशमूलक व्यवस्था जोड़ी जाये:

'खंड 22 में क से झ तक की सारी आदेश मूलक व्यवस्थायें, उन सिद्धांतों के आधार पर होंगी तथा उन आदेशों के अनुरूप होंगी जो साथ

नत्थी की हुई सूची में निर्धारित किये गये हैं ताकि इन मामलों में सारे भारतीय राज्य-संघ में एकरूपता रहे'।''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधित खंड पर आपकी राय लेता हूं।

खंड 22 संशोधित रूप में पास हुआ।

खण्ड 23

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान् अब मैं खंड 23 उपस्थित करता हूंः

''(1) यदि किसी समय, जबकि प्रान्तीय व्यवस्थापिका का अधिवेशन न हो रहा हो, न गवर्नर को विश्वास हो कि ऐसी परिस्थिति उपस्थित है जिसमें तुरन्त कार्यवाही करने की आवश्यकता है तो वह ऐसे आर्डिनेंसों को लागू कर सकता है जिन्हें वह उस परिस्थिति में आवश्यक समझे।

(2) इस खंड के अधीन लागू किये हुये किसी आर्डिनेंस का वही बल और प्रभाव होगा जो प्रान्तीय व्यवस्थापिका के किसी ऐसे एक्ट का होगा जिसे गवर्नर ने स्वीकार कर लिया हो, लेकिन ऐसा हर एक आर्डिनेंसः

'(क) प्रान्तीय व्यवस्थापिका के सामने रखा जायेगा और प्रान्तीय व्यवस्थापिका के पुनर्सम्मिलित होने के 6 सप्ताह बाद प्रयोग में न रहेगा या अगर इस समय के पहले व्यवस्थापिका उसके विरुद्ध प्रस्तावों को पास कर दे तो ऐसे प्रस्तावों में से दूसरे प्रस्ताव के पास होने पर वह प्रयोग में नहीं रहेगा, और

(ख) गवर्नर उसे किसी भी समय वापस ले सकता है।'

(3) यदि इस खंड के अधीन कोई आर्डिनेंस ऐसा आदेश रखे या ऐसी सीमा तक आदेश रखे कि इसे प्रान्तीय व्यवस्थापिका उस विधान के अधीन कानून बनाने में असमर्थ हो, तो वह रद्द समझा जायेगा।''

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

आर्डिनेंस बनाने के अधिकार की बड़ी आलोचना हुई है पर दीर्घकालीन अनुभव के आधार पर यह अधिकर आवश्यक मालूम पड़ता है। ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो सकती है कि किसी कानून का तुरंत लागू करना अत्यावश्यक हो जाये और प्रांतीय व्यवस्थापिका की बैठक बुलाने का समय न रहे।

मैं नहीं समझता कि इस खंड के सम्बन्ध में कोई संशोधन रखा गया है। सभा की स्वीकृति के लिये मैं यह खंड उपस्थित करता हूं।

(सर्वश्री अजीत प्रसाद जैन, एच.वी. पातस्कर, आर.के. सिधवा, शिब्बनलाल सक्सेना तथा अनन्तशयनम् आयंगर ने अपने संशोधन नहीं पेश किये।)

***मि. नजीरुद्दीन अहमद** (बंगाल: मुस्लिम): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि खंड 23 के बाद निम्नलिखित नया खंड जोड़ा जाये:

''24. उन सभी विषयों को, जो, उक्त खंडों से अभिन्न हों या उनके अनुवर्ती हों, उक्त खंडों का अंश समझा जायेगा और उनमें ही शामिल किया जायेगा।''

श्रीमान् मेरा कहना है कि विधान का मसविदा बनाते समय परिभाषिक कठिनाइयां उत्पन्न हो सकती हैं और उनके निराकरण के लिये उपरोक्त खंड आवश्यक है। सभा ने मूल रिपोर्ट पर बहुसंख्यक संशोधन स्वीकार किये हैं और यह संभव है कि यत्र तत्र कुछ कमियां रह गई हों जो अन्तिम रूप से विधान बनाते समय दृष्टि में आयें। इसीलिये मैं इस संशोधन को स्वीकार करने का प्रस्ताव रखता हूं। ताकि अगर ऐसी कानूनी खामी रह गई हो तो उसे दूर कर सकें।

***अध्यक्ष:** मि. नजीरुद्दीन, मेरा ख्याल है कि आपका संशोधन वस्तुत: संशोधन नहीं है बल्कि यह एक स्वतंत्र खंड है। अच्छा होगा कि हम पहले खंड 23 को निबटा लें और फिर इस नये खंड पर विचार करें।

खंड 23 पर कोई संशोधन नहीं आया है। यदि कोई सदस्य इस पर कुछ कहना चाहते हों तो अब बोल सकते हैं।

(कोई सदस्य बोलने के लिये नहीं उठा।)

अब मैं खण्ड पर सभा का मत लेता हूं। खंड यों है:

''23 (1) यदि किसी समय जब कि प्रान्तीय व्यवस्थापिका का अधिवेशन न हो रहा हो, गवर्नर को विश्वास हो कि ऐसी परिस्थिति उपस्थित

है जिसमें तुरन्त कार्यवाही करने की आवश्यकता है तो वह ऐसे आर्डिनेंसों को लागू कर सकता है जिन्हें वह उस परिस्थिति में आवश्यक समझे।

(2) इस खंड के अधीन लागू किये हुये किसी आर्डिनेंस का वही बल और प्रभाव होगा जो प्रान्तीय व्यवस्थापिका के किसी ऐसे एक्ट का होगा जिसे गवर्नर ने स्वीकार कर लिया हो, लेकिन ऐसा ही एक आर्डिनेंसः

'(क) प्रान्तीय व्यवस्थापिका के सामने रखा जायेगा और प्रान्तीय व्यवस्थापिका के पुनर्सम्मिलित होने के 6 सप्ताह बाद प्रयोग में न रहेगा या अगर इस समय के पहले व्यवस्थापिका उसके विरुद्ध प्रस्तावों को पास कर दे तो ऐसे प्रस्तावों में से दूसरे प्रस्ताव के पास होने पर वह प्रयोग में नहीं रहेगा, और

(ख) गवर्नर उसे किसी भी समय वापस ले सकता है।'

(3) यदि इस खंड के अधीन कोई आर्डिनेंस ऐसा आदेश रखे या ऐसी सीमा तक आदेश रखे कि इसे प्रान्तीय व्यवस्थापिका उस विधान के अधीन कानून बनाने में असमर्थ हो तो वह रद्द समझा जायेगा।''

खंड स्वीकृत हुआ।

अध्यक्षः मि. नजीरुद्दीन अहमद अब अपना खंड पेश करेंगे।

श्री नजीरुद्दीन अहमदः श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि खंड 23 के बाद निम्नलिखित नया खंड जोड़ा जायेः

''24. उन सभी विषयों को जो उक्त खंडों से अभिन्न हों या उनके अनुवर्त्ती हों, उक्त खंडों का अंश समझा जायेगा और उनमें ही शामिल किया जायेगा।''

श्रीमान् मेरा यह कहना है कि मसविदा तैयार करते समय जो कानूनी अड़चनें आयेंगी उनको दूर करने के लिये यह खंड आवश्यक है। हमने सभा में कई नये संशोधन रखे हैं और शायद उनके लिये सूचना का भी काफी समय नहीं रहा है।

[श्री नजीरूद्दीन अहमद]

इसलिये यह बहुत सम्भव है कि यत्र तत्र कुछ कमियां रह गई हों। मेरा मतलब है ऐसी कमियों या कानूनी अड़चनों से जो ऐसे मौकों पर अज्ञात रूप से आ जाती हैं। इसलिये अन्तिम रूप से मसविदा तैयार करते समय यह बात उठाई जा सकती है कि अमुक बातें यानी वह बातें जो स्वीकृत संशोधनों से मिलती जुलती हों या उसके अनुवर्ती हों रिपोर्ट में शामिल करने के लिये इरादे से नहीं रखी गयी हैं। यही कारण है कि इस नवीन खंड को रखने का प्रस्ताव कर रहा हूं। मुझे ऐसी कोई कमी तो नहीं दिखती फिर भी मैंने यह खंड इसलिये रखा है कि अगर कोई कमी रह गयी हो तो इससे विधान निर्माताओं को सहायता मिल सके। इन चंद शब्दों के साथ मैं उसे सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

अध्यक्षः एक नवीन खंड, खंड 24 को यहां जोड़ने का प्रस्ताव रखा गया है। इस अतिरिक्त खंड का क्या प्रभाव होगा यह मैं खुद तो नहीं समझ पाया हूं। यदि कोई सदस्य इस पर कुछ बोलना चाहते हों तो मैं अनुगृहीत होऊंगा अगर वे इस सम्बन्ध में हमें कुछ प्रकाश दें।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल)**:** मैं नहीं समझता कि इस तरह के नवीन खंड की कोई आवश्यकता है क्योंकि यहां हम केवल स्थूल सिद्धांतों को ही स्वीकार कर रहे हैं। यह स्वाभाविक है कि जब अन्तिम रूप से विधान का मसविदा तैयार किया जायेगा तो उसमें ऐसी बातों को जो अधीनस्थ अभिन्न, पूरक, स्वरूप और परिणामजन्य हों, रखना ही होगा। प्रस्तावित नवीन खंड बिलकुल अस्पष्ट है। यदि हम इसे रखते हैं तो परिस्थिति संभालने के लिये यह काफी नहीं है और अगर नहीं रखते हैं तो हमारा कुछ नुकसान नहीं होता है। हर हालत में इस पर अभी विचार करने की या मत लेने की जरूरत नहीं है।

***अध्यक्षः** चूंकि और कोई वक्ता नहीं है मैं इस प्रस्ताव पर मत लेता हूं। प्रस्ताव यह है किः

निम्नलिखित नया खंड, खंड 23 के बाद जोड़ा जायेः

''24. उन सभी विषयों को जो उक्त खंडों से अभिन्न हों या उनके अनुवर्ती हों उक्त खंडों का अंश समझा जायेगा और उनमें ही शामिल किया जायेगा।''

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** श्री संतानम् ने एक अतिरिक्त खंड पेश करने की सूचना दी है। क्या श्री संतानम् उसे पेश करेंगे?

***श्री के. संतानम्,** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मेरा प्रस्ताव है किः

''खंड 23 के बाद निम्नलिखित नया खंड जोड़ा जायेः

'24. **एक सभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रांत के गवर्नर को अधिकार होगा कि वह अपने विवेक से धारा-सभा द्वारा स्वीकृत बिल पुनर्विचारार्थ लौटा दे और उसमें संशोधनों का सुझाव दे। अगर वह बिल धारा-सभा द्वारा पूर्ण बहुमत से संशोधन या बिना संशोधन के साथ पुनः स्वीकृत हो जाये तो गवर्नर उस पर अपनी स्वीकृति देगा'।''**

इस संशोधन में बहुत कुछ सार है। अनुकरणीय विधान के वर्तमान मसविदा के अनुसार अगर धारा-सभा येन-केन प्रकारेण या बहुत ही साधारण बहुमत से भी कोई बिल पास करती है तो वह तुरंत कानून बन जायेगा क्योंकि गवर्नर को कानून रद्द करने का या ऐसा अन्य विशेषाधिकार नहीं प्राप्त है। श्रीमान्, मैं यह नहीं चाहता कि गवर्नर को विशेषाधिकार दिये जायें। मैं चाहता हूं कि प्रत्येक प्रांत को पूर्ण उत्तरदायी तथा स्वायत्तपूर्ण शासन प्राप्त हो। पर मेरा यह मत अवश्य है कि गवर्नर को यह अधिकार होना चाहिये कि वह धारा-सभा द्वारा स्वीकृत किसी बिल को पुनर्विचारार्थ लौटा दे। पुनर्विचार के बाद भी अगर व्यवस्थापिका उस बिल को जबरदस्त बहुमत से स्वीकार करे तो गवर्नर को उसे रद्द करने का अधिकार न होगा और उस हालत में उस बिल पर उसे अपनी स्वीकृति देनी होगी।

मैंने यह अधिकार केवल उन्हीं प्रांतों के गर्वनरों को दिया है जहां की व्यवस्थापिका एक सभात्मक है, क्योंकि जहां व्यवस्थापिका द्विसभात्मक है वहां ऊपर वाली सभा पुनर्विचार का काम करेगी ही और फिर इस अधिकार का उपयोग मैंने गवर्नर के विवेक पर छोड़ा है। अवश्य ही जो मंत्रिमंडल नाममात्र के बहुमत से किसी बिल को जल्दी-जल्दी पास करा लेता है, वह उस बिल पर पुनर्विचार की कभी सिफारिश न करेगा। इसलिये यह अधिकार गवर्नर के विवेक पर छोड़ा गया है।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्र** (पश्चिमी बंगालः जनरल): श्रीमान्, मुझे तो यह शंका है कि इस संशोधन से गणतन्त्र के मूलभूत सिद्धान्त पर ही कुठाराघात होता है जिसके

[पं. लक्ष्मीकांत मैत्र]

आधार पर हमारा विधान बनने वाला है। आखिर श्री संतानम् के संशोधन में मूल बात क्या है? क्या उनका यह कहना है कि एक सभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रांत में अगर नाममात्र के बहुमत से कोई बिल पास हो जाये तो उस सूरत में गवर्नर को यह विशेषाधिकार होना चाहिये कि वह उसे व्यवस्थापिका के पास इस सुझाव के साथ लौटा दे कि वह उस पर पुनर्विचार करे और तब फैसला करे? मैं सभा से पूछता हूं कि इसका नतीजा क्या होगा? मेरी राय में तो इसका एकमात्र अवश्यंभावी परिणाम यह होगा कि गवर्नर मंत्रिमंडल का विरोधी हो जायेगा और उसमें तथा लोकप्रिय मंत्रिमंडल के बीच प्रत्यक्ष संघर्ष चल पड़ेगा। ऐसी स्थिति लाने की मुझे कोई आवश्यकता नहीं दिखाई देती। दूसरी ओर अगर कोई बिल जल्दबाजी में बिना पूरी तरह विचार किये पास ही कर दिया गया है तो व्यवस्थापिका को यह अधिकार तो है ही कि वह उसे अपने दूसरे अधिवेशन में रद्द कर दे या संशोधित कर दे। अगर सचमुच वह बिना पूरी तरह सोचे विचारे पास किया गया है तो इसलिये श्रीमान्, मैं तो यह अनुभव करता हूं कि गवर्नर को ऐसा अधिकार देने से व्यवस्थापिका के दायित्व और स्वातंत्र्य पर आघात पहुंचेगा। इससे गवर्नर और मंत्रिमंडल के बीच अनावश्यक संघर्ष उपस्थित हो जायेगा और मैं ऐसा समझता हूं कि उस प्रस्ताव का समर्थन न करना चाहिये।

***श्री एन.वी. गाडगिल** (बम्बई: जनरल): श्रीमान् मैं एक सुझाव देना चाहता हूं जिसे यहां और अभी शामिल करने की जरूरत नहीं है, पर बाद में अनुकूल अवसर पर उस पर विचार किया जा सकता है। मेरा सुझाव है कि गवर्नर द्वारा किसी भी बिल के संशोधन पर बिना संशोधन के पुनर्विचारार्थ लौटाने की एक अवधि रहनी चाहिये और इस अवधि के भीतर वह बिल को वापस न भेजे तो यह समझ लेना चाहिये कि गवर्नर ने उस बिल पर अपनी स्वीकृति दे दी है। अमेरिकन विधान में ऐसी व्यवस्था है और यहां भी होनी चाहिये।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्र:** अवधि निर्धारित करने के साथ-साथ क्या श्री गाडगिल इस सिद्धांत को स्वीकार करते हैं कि गवर्नर को व्यवस्थापिका के निर्णय पर पुनर्विचार करने का अधिकार हो।

***श्री अनन्तशयनम् आयंगर:** श्रीमान्, मैं श्री संतानम् के संशोधन को बड़ा वांछनीय समझता हूं। श्री गाडगिल ने संशोधन का समर्थन किया है और मैं नहीं समझता कि मेरे मित्र पं. मैत्र को उनके इस इरादे पर कोई सन्देह क्यों हो। वह सिद्धांत

स्वीकार करके ही अवधि निर्धारित करने की बात कहते हैं। अमेरिकन विधान में 16 दिन की अवधि रखी गई है। एक अवधि अवश्य निर्धारित होनी चाहिये जिसके भीतर गवर्नर बिल पर विचार कर उसे पुनर्विचारार्थ व्यवस्थापिका के पास जरूर भेज दे। ऐसा हो सकता है कि सदस्य काफी संख्या में न उपस्थित रहे हों और अल्पसंख्यक सम्बंधी कोई गंभीर मसला या अन्य कोई गंभीर प्रश्न उपस्थित रहा हो जिस पर, बजाय इसके कि उसे जल्दी-बाजी में पास कर दिया जाये, अधिक विचार करना जरूरी रहा हो। गवर्नर को हर समय सब बातों का ध्यान रखना होगा। ऐसी बात नहीं है कि हर समय वह लोकप्रिय मंत्रिमंडल के कामों में हस्तक्षेप करता रहेगा। वह सावधान रहेगा। वह समय-समय पर मंत्रिमंडल की बैठकों का सभापतित्व करेगा और हितकर प्रभाव रखेगा। बावजूद इन सारी बातें के कभी-कभी ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है कि सभा का कोई वर्ग यह चाहता हो कि कोई बिल जल्दी-जल्दी पास कर लिया जाये। ऐसी अवस्था में गवर्नर के हाथ में यह नियंत्रण रहने दीजिये कि वह बिल को व्यवस्थापिका के पास पुनर्विचारार्थ वापस कर दे। गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट में भी ऐसी व्यवस्था है। मैं अपने मित्र पं. मैत्र को विश्वास दिला सकता हूं कि एक लोकप्रिय गवर्नर सिवाय किसी खास गंभीर मामले के और सभी मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा। मैं संशोधन का समर्थन करता हूं।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार: मुस्लिम): श्रीमान्, मैं संशोधन का समर्थन करने के लिये खड़ा हुआ हूं। मान लीजिये कि बिल गवर्नर की स्वीकृति के लिये उनके पास भेजा जाता है पर वे उससे सहमत नहीं है। उस सूरत में क्या होगा? साधारणत: गवर्नर जो वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित होगा, व्यवस्थापिका द्वारा स्वीकृत किसी भी व्यवस्था में हस्तक्षेप नहीं करेगा पर अगर वह बिल से असन्तुष्ट है तो क्या उस हालत में उसे अपनी आत्मा के विरुद्ध उस पर स्वीकृति देनी होगी। या वह उसे अपने संशोधन के साथ व्यवस्थापिका को लौटा देगा या उसे अस्वीकृत कर देगा। अंग्रेजी विधान में यह व्यवस्था है कि लोक-सभा में स्वीकृत हो जाने के बाद बिल लार्ड-सभा में जाता है और वहां से फिर सम्राट के पास उनकी स्वीकृति के लिये भेजा जाता है। सम्राट को यद्यपि बिल को अस्वीकृत कर देने का अधिकार है और उस हालत में वह फिर दोनों सभाओं को भेज दिया जाता है; पर होता यही है कि सम्राट प्राय: सदा ही बिल पर स्वीकृति देते हैं। और अगर बिना किसी संशोधन के बिल फिर दोनों सभाओं में पास हो जाता है और वह सम्राट के पास भेजा जाता है तो उनको उस

[मि. तजम्मुल हुसैन]

पर स्वीकृति देनी ही होगी या सिंहासन त्याग करना होगा। यही बात यहां भी होनी चाहिये। गवर्नर को यह अधिकार दिया जाता है कि व्यवस्थापिका द्वारा स्वीकृत बिल पर स्वीकृति देना उनके विवेक पर है अथवा अगर वह बिल को अपने संशोधन के साथ वापस कर देता है तो व्यवस्थापिका गवर्नर के सुझाव के आधार पर उस पर विचार कर सकती है। यदि व्यवस्थापिका बिल को उस मौलिक रूप में पुनः पास कर देती है तो गवर्नर को उस पर स्वीकृति देनी होगी या उसे पदत्याग करना होगा। इसलिये मैं संशोधन का समर्थन करता हूं कि गवर्नर को एक मौका मिलना चाहिये और केवल काठ की मूर्ति की तरह उसे रहना चाहिये।

*__श्री रामनारायण सिंह__ (बिहारः जनरल): श्रीमान्, मैं संशोधन का समर्थन करता हूं। हमने विधान में निर्वाचित गवर्नर की व्यवस्था की है और मैं नहीं समझता कि उससे क्यों डर होना चाहिये, जो उसे भी अधिकार देना आप नहीं चाहते हैं। समय-समय पर गवर्नर को सूत्र अपने हाथ में लेने की आवश्यकता हो सकती है और अगर व्यवस्थापिका किसी बिल पर दुबारा विचार करती हे तो उसमें हानि क्या है? मैं सभा से अपील करता हूं कि वह गवर्नर को कुछ अधिकार दे जिससे वह समाज के लिये लाभप्रद हो सके, अन्यथा आप गवर्नर का पद ही हटा दीजिये। मैं समझता हूं कि सभा इस संशोधन को स्वीकार करेगी।

*__माननीय श्री हुसैन इमाम__ (बिहारः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, वाद-विवाद में इस स्थल पर मैं इसलिये दखल दे रहा हूं कि यहां यह प्रथा चल जाये कि जब भी इस तरह की गम्भीर बातों पर बहस हो तो विधाान-परिषद् को यह बताया जाये कि इनके सम्बंध में तमाम दुनिया में क्या होता है। मुझे खेद है श्रीमान्, कि इस समय बहुत से मित्रों के दिमाग में संसार के सभी देशों के विधानों का नक्शा नहीं मौजूद है। शायद उन्होंने उन विस्तृत नोटों को भी नहीं पढ़ा है जिन्हें वैधानिक सलाहकार के आदेश से विधान-परिषद् के स्टाफ ने सदस्यों को भेजा है।

मैं केवल एक उदाहरण यहां देता हूं। अमेरिका में बावजूद द्विसभात्मक परिषद् के सिनेट और प्रतिनिधि सभा के राष्ट्रपति को किसी भी बिल को रद्द करने का विशेषाधिकार प्राप्त है। पर यदि दोनों सभाओं के दो तिहाई बहुमत से अगर बिल फिर पास होता है तो राष्ट्रपति का विशेषाधिकार उस बिल के सम्बन्ध में लागू न होगा; इसके अलावा राष्ट्रपति को एक और विशेषाधिकार प्राप्त है जिसके जरिये वह किसी भी बिल को यदि वह सभा का अधिवेशन प्रारम्भ होने से 10 दिनों के अन्दर पास हो गया हो तो उसे नामंजूर कर सकता है। दुनिया में क्या होता

है यह बताने के लिये और भी बहुत सी बातें हैं। यह बड़ा ही लाभप्रद होगा अगर यहां यह परिपाटी चला दी जाये कि माननीय अध्यक्ष महोदय वैधानिक सलाहकार से सभा को यह व्यक्त करा दिया करें कि विवादास्पद मामलों में दुनिया के अन्य देशों में क्या पद्धति बरती जाती है। अवश्य ही वैधानिक सलाहकार महोदय ने हम लोगों को एक पुस्तिका दी है और यह हमारे लिये बड़े ही काम की होगी। फिर भी, दुनिया के अन्य भागों में विधान सम्बंधी इन प्रश्नों पर क्या पद्धति बरती जाती है, इसके सम्बंध में हमें और भी जानकारी मिलनी चाहिये।

मैं समझता हूं कि श्री सन्तानम् का संशोधन बड़ा ही आवश्यक है। संशोधन में आपने इस बात पर जोर दिया है कि यह आदेश केवल उन्हीं प्रान्तों पर लागू होगा जहां की व्यवस्थापिका एक सभामूलक होगी। संशोधनकर्ता का ख्याल है कि जहां व्यवस्थापिका की दो सभायें हैं, वहां तो नीचे वाली सभा पर ऊपर की सभा नियंत्रण का कार्य करेगी ही। श्रीमान्, हम समझते हैं कि यहां और स्पष्टीकरण की आवश्यकता हैं। अगर दोनों सभाओं में मतभेद होता है तो भिन्न-भिन्न देशों में इसे सुलझाने के भिन्न-भिन्न तरीके हैं। अर्थ सम्बन्धी बिलों के संबंध में कुछ देशों में ऐसा है कि दूसरी सभा बिल्कुल क्षमता शून्य है। उसे कोई अधिकार नहीं है। कुछ विधानों में अर्थ संबंधी बिलों के अलावा और सब प्रस्तावित कानूनों के सम्बन्ध में ऐसी व्यवस्था है कि दोनों सभाओं की सम्मिलित बैठक में फैसला किया जाता है और प्राय: नीचे वाली सभा के प्रबल बहुमत से ऊपर की सभा का निर्णय गिर जाया करता है। पर मैं जो कह रहा था वह यह है कि यह हमारी गलती है कि हम अब भी यही सोचें कि हमारा गवर्नर किसी बाहरी सत्ता द्वारा नियुक्त होगा। भविष्य में गवर्नर अपने पद पर इसलिये आसीन नहीं होगा कि वह तत्कालीन सत्ता के हितों की ही सेवा करे। वह हमारा अपना आदमी होगा जिसे हम बालिग मताधिकार के आधार पर चुनेंगे। इसलिये यह जरूरी है कि हमारा उस पर पूरा भरोसा और विश्वास हो। अगर आप उस पर भरोसा करते हैं, उस पर विश्वास रखते हैं और श्री सन्तानम् के संशोधन में सुझाई हुई व्यवस्था अपनाते हैं तो आप एक सुखद पथ पर पहुंच जायेंगे और देखेंगे कि अगर एक सभा किसी मामले में गलती पर है तो दूसरी सभा उसे सही-सही निपटा देती है। यही एकमात्र रास्ता है जिसके जरिये हम अंधकूप में गिरने से बच सकते हैं। मैं संशोधन का समर्थन करता हूं।

***महाराजा सर एम. ए. मुथैया चेट्टियार** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि श्री सन्तानम् ने यह संशोधन पेश किया है और

[महाराजा सर एम.ए. मुथैया चेट्टियार]

सभा द्वारा उसके स्वींकृत हो जाने की आशा है। पर मेरी खुशी इस बात से कुछ कम हो जाती है कि यह व्यवस्था केवल उन्हीं प्रान्तों में लागू होगी जहां की व्यवस्थापिका एक सभात्मक है।

श्रीमान्, जहां भी दूसरी सभायें हैं उनके सम्बन्ध में हम लोगों का यही अनुभव रहा है कि हम उन पर इस बात का भरोसा नहीं कर सकते कि वे किसी प्रस्तावित कानून के शीघ्र न पास कर देने के लिये यथेष्ट नियंत्रण मूलक सिद्ध होंगे। गत कई वर्षों के अन्दर नीचे की सभा ने इतनी जल्दबाजी में कई कानून पास किये हैं कि उनकी बहुत सी भूलें रह गयीं और निचली सभा के नेता ने ऊपर वाली सभा से यह अनुरोध किया कि वह भूलों को सुधार कर मस्विदे उन्हें फिर लौटा दें। यह सब दिक्कतें दूर हो जायेंगी अगर नीचे वाली सभा को पुनर्विचार का मौका दिया जाये।

पुनर्विचार का अवसर देने के लिये कई कारण हैं। बहुत से मौकों पर सभी स्थायी आज्ञायें स्थगित रख दी जाती हैं और ऐसी कानून सम्बन्धी व्यवस्थायें जो सरकारी गजट में गत सायंकाल को छपती हैं, वे दूसरे ही दिन देखते-देखते तुरंत पास होकर कानून बन जाती हैं। वह कहते हैं कि ऐसी आकस्मिक स्थिति आ पड़ी है कि अगर व्यवस्थापिका अपने उठने से पहले इसे पास नहीं कर देती तो गवर्नर को आर्डिनेन्स निकालना पड़ेगा।

इस कारण से मैं कहता हूं कि हमें इस दिशा में एक कदम और आगे जाना चाहिये और इस संशेधन में जो एक सभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रांत की बात रखी गयी है उसे हटा देना चाहिये ताकि यह उन प्रान्तों में भी लागू हो सके जहां द्विसभात्मक व्यवस्थापिकायें हैं।

इस आशंका की सम्भावना के सम्बन्ध में, कि गवर्नर कहीं अपने इस अधिकार का दुरुपयोग न करे, मुझे खुशी है कि मेरे मित्र मिस्टर हुसैन इमाम ने यह बता दिया है कि गवर्नर कोई अजनबी न होगा बल्कि वह अपना आदमी, भारत के किसी प्रान्त का आदमी होगा। इस स्थिति में हम उससे यह आशा कर सकते हैं कि वह जनमत को ठीक-ठीक समझेगा और अगर उसका यह विश्वास हो कि व्यवस्थापिका जल्दबाजी में जनमत के खिलाफ कोई कानून पास कर रही है तो वह उसे पुनर्विचारार्थ व्यवस्थापिका को लौटा देगा। ऐसे अवसर आ सकते हैं जब कि व्यवस्थापिका को किसी प्रस्तावित कानून को पूरी तरह समझने का मौका

न मिले और ऐसे अवसरों के लिये पुनर्विचार का मौका पाकर वे प्रसन्न ही होंगे। गवर्नर की राय कायम करने में समाचार-पत्रों और जनमत का जबरदस्त हाथ रहेगा। अगर गवर्नर गलती करता है तो मंत्रिमंडल और जनमत उसे उसकी भूल बतायेंगे। मैं नहीं समझता कि गवर्नर अपने इस अधिकार का दुरुपयोग करेगा। आशा है कि प्रस्तावक महोदय तथा विभिन्न दलों के नेता, इसमें से एकात्मक व्यवस्थापिका का जिक्र हटा देंगे ताकि यह नियंत्रण द्विसभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रांतों पर भी लागू हो सके।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुर** (बम्बई: जनरल): इस संशोधन का समर्थन करने में मुझे बड़ी ही प्रसन्नता हो रही है। पर मैं अपने पूर्ववक्ता की इस बात से असहमत हूं कि यह व्यवस्था द्विसभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रान्तों में भी लागू होनी चाहिये। ऊपर वाली सभा से हमारा नियंत्रण सम्बन्धी अभिप्राय बहुत हद तक पूरा हो जायेगा। इसलिये उन प्रान्तों में जहां ऊपर वाली सभा है, गवर्नर को यह अधिकार देने की जरूरत नहीं है। इन शब्दों के साथ मैं संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं संशोधन का समर्थन करता हूं। जो भाषण यहां हुये हैं, उनमें एक बात का जिक्र नहीं आया है। वह यह है कि कुछ ऐसे भी कानून पास हो सकते हैं जो कई अंशों में अनियमित, अवैधानिक और अधिकार से परे होते हैं। ऐसे मामलों में सम्भव है कि वह मन्त्री, जिसका उसके निर्माण में प्रधान हाथ रहा हो, खुद यह चाहता हो कि वह उस पर पुनर्विचार करे। इस तरह की व्यवस्था से उसे यह अवसर मिल जायेगा कि कानून के खिलाफ जनमत को देखकर वह अपने मन्तव्य पर पुनर्विचार कर सके। वह बात तो कल्पनातीत है कि नवीन विधान के अन्तर्गत गवर्नर अनुचित ढंग पर काम करेगा। इस हालत में, खुद मन्त्रिगण इस बात की इच्छा कर सकते हैं कि ऐसा अधिकार गवर्नर को दिया जाये। मैं समझता हूं कि 1935 के एक्ट में ऐसी व्यवस्था है और प्रस्तुत रिपोर्ट में इसी एक्ट का बहुत कुछ अंश रखा गया है। यह एक्ट अब एक अनुकरणीय कानून माना जा चुका है। मैं कह चुका हूं कि गवर्नर को यह अधिकार उन्हीं प्रान्तों में मिलना चाहिये जहां कि व्यवस्थापिका एक सभात्मक है और उससे यही आशा है कि वह इस प्रकार कार्य करेगा जिससे प्रान्त को लाभ हो।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर** (मद्रास : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, अभी उस दिन सभा ने एक खण्ड पास किया है जिसमें प्रान्तों को यह

[श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर]

अधिकार दिया गया है कि यह इच्छा पर है कि वे दूसरी सभा रखना पसन्द करते हैं या नहीं। इससे अभिप्राय यह था कि जो प्रान्त दूसरी सभा रखना चाहेंगे उनके सम्बन्ध में सभा उसे स्वीकार कर लेगी। इस हालत में इस नियंत्रणात्मक व्यवस्था को उन प्रान्तों के लिये क्यों कर अस्वीकार कर सकते हैं जो एकात्मक व्यवस्थापिका रखना चाहते हैं। या तो आप सभी प्रांतों को द्विसभात्मक व्यवस्थापिका रखने दीजिये या फिर उन प्रांतों को भी यह नियत्रंण मूलक व्यवस्था रखने दीजिये, जो केवल एक ही सभा रखना चाहते हैं। उन प्रांतों में जो एक सभात्मक व्यवस्थापिका रखना चाहते हैं, गवर्नर को यह अधिकार मिलना ही चाहिये जिससे जल्दबाजी में कोई कानून न पास हो; पर द्विसभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रान्तों को भी यह व्यवस्था हम अस्वीकार नहीं कर सकते। यही उचित, तर्कसंगत और आवश्यक है और इसलिये मैं इसका समर्थन करता हूं।

***श्री के. टी. एम. अहमद साहब बहादुर** (मद्रासः मुस्लिम)**:** श्रीमान्, कोई कानून जल्दबाजी में न पास कर लिया जाये। इसके लिये गवर्नर को यह अधिकार देना नितान्त आवश्यक है। मेरा मत है कि यह अधिकार लोकतांत्रिक सिद्धांतों से प्रतिकूल नहीं है। संघ-विधान में इस आशय का आदेश है कि राष्ट्रपति 6 महीने के अन्दर लोक सभा द्वारा पास किये हुये किसी भी बिल को पुनर्विचारार्थ उसे लौटा सकते हैं। जो अधिकार संघ-विधान में राष्ट्रपति को दिया गया है, वही अधिकार प्रान्तों के गवर्नरों को दिया जाना चाहिये। इसमें ऐसी कोई बात नहीं है जो लोकतंत्र से असंगत हो।

श्रीमान्, इसके अलावा प्रान्त के गवर्नरों को बड़े व्यापक अधिकार दिये गये और प्रान्तीय विधान समिति का कहना है कि वे इनका दुरुपयोग न करेंगे। तब श्रीमान्, यह स्पष्ट है कि जब राष्ट्रपति को, जिसका निर्वाचन सीमित मताधिकार के आधार पर हुआ है, यह अधिकार दिया गया है तो फिर यह सर्वथा उचित है कि गवर्नर को, जो बालिग मताधिकार के आधार पर निर्वाचित होगा, यह अधिकार दिया ही जाये। इसलिये श्री सन्तानम् के इस संशोधन का मैं खुशी से समर्थन करता हूं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, मैं श्री सन्तानम् के इस संशोधन को एक परिवर्तन के साथ मानने के लिये तैयार हूं। मेरा सुझाव है कि उनके संशोधन के अन्तिम वाक्य से ''पूर्ण बहुमत से'' शब्द निकाल दिये जायें।

यह कहा गया है कि यह व्यवस्था उन प्रान्तों के लिये भी लागू होनी चाहिये जहां कि व्यवस्थापिका द्विसभात्मक है। मैं इसे जरूरी नहीं समझता क्योंकि जहां दो सभायें होंगी, अगर उनमें मतभेद हुआ तो यह उनकी सम्मिलित बैठक के सामने आयेगा ही। इसलिये यह अनावश्यक है।

*__अध्यक्षः__ श्री सन्तानम्, आप उत्तर में कुछ कहना चाहते हैं?

*__श्री के. सन्तानम्:__ मुझे इतना ही कहना है कि मैं सरदार पटेल के सुझाव को मंजूर करता हूं पर इस सम्बन्ध में मैं एक बात कहना चाहता हूं। जब बिल पुनर्विचारार्थ वापस भेजा जायेगा तो उस समय दोनों ही दल अपनी सारी शक्ति इकट्ठी करेंगे और अगर मन्त्रिमण्डल को 51 प्रतिशत का समर्थन नहीं प्राप्त होता है तो वह हार जायेगा। ''पूर्ण बहुमत से'' ये शब्द रहें, न रहें इससे कुछ नहीं आता जाता।

*__पं. लक्ष्मीकान्त मैत्रः__ श्रीमान्, मुझे नहीं मालूम हुआ कि आया श्री सन्तानम् के संशोधन को सभा ने स्वीकार किया या नहीं। यह बात मुझे नहीं मालूम हो पाई है और मैं समझता हूं कि बहुत से सदस्यों को भी नहीं मालूम हो पाई है कि ''पूर्ण बहुमत से'' शब्दों के सम्बन्ध में सभा का क्या निर्णय है।

*__अध्यक्षः__ श्री मैत्र, आप किस बात के बारे में बोल रहे हैं?

*__पं. लक्ष्मीकांत मैत्रः__ मैं यह जानना चाहता हूं कि ''पूर्ण बहुमत से'' शब्दों के निकालने के सम्बन्ध में आप सभा की राय लेंगे क्या?

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः__ श्री सन्तानम् ने सुझाव मान लिया है।

*__अध्यक्षः__ अब संशोधन का स्वरूप क्या है?

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः__ श्री सन्तानम् ने जो कुछ कहा है उस पर मैं नहीं जाता। मैं उनके संशोधन को मंजूर करता हूं पर ''पूर्ण बहुमत से'' इन शब्दों को निकाल देने पर।

*__डा. बी.आर. अम्बेडकर__ (बम्बईः जनरल): अब वाक्य का स्वरूप यह होगा:

''अगर वह बिल धारा-सभा द्वारा संशोधन या बिना संशोधन के साथ पुनः स्वीकृत हो जाता है तो गवर्नर उस पर अपनी स्वीकृति देगा।''

***अध्यक्षः** अब मैं खण्ड 24 पर मत लेता हूं। ''पूर्ण बहुमत से'' शब्दों को निकाल देने पर संशोधन का रूप यह है:

''एक सभात्मक व्यवस्थापिका वाले प्रान्त के गवर्नर को यह अधिकार होगा कि वह अपने विवेक से धारा-सभा द्वारा स्वीकृत किसी बिल को पुनर्विचारार्थ लौटा दे और उसमें संशोधनों का सुझाव दे। अगर वह बिल धारा-सभा द्वारा संशोधन या बिना संशोधन के साथ पुनः स्वीकृत हो जाये तो गवर्नर उस पर अपनी स्वीकृति देगा।''

खण्ड 24 स्वीकृत हुआ।

भाग–2–प्रान्तीय न्यायाधीश

***अध्यक्षः** अब हम भाग 2–प्रान्तीय न्यायाधीश को लेते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मैं रिपोर्ट के भाग–2–प्रांतीय न्यायाधीय को सभा के सामने उपस्थित करता हूं:

''(1) भारत सरकार के सन् 1935 ई. के एक्ट के हाईकोर्ट सम्बन्धी आदेश आवश्यक परिवर्तनों के साथ स्वीकार किये जाने चाहियें परन्तु राज्यसंघ के अध्यक्ष को सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस 'प्रान्त के गवर्नर' और प्रान्त के हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस से सलाह लेकर (सिवाय उस दशा के जब कि हाईकोर्ट को चीफ जस्टिस की ही नियुक्ति करनी हो) न्यायाधीशों को नियुक्त करना चाहिये।

(2) हाईकोर्ट के न्यायाधीश उन वेतनों और भत्तों को पायेंगे जिन्हें प्रान्तीय व्यवस्थापिका कानून द्वारा निश्चित करेगी और जब तक वह ऐसा न करे उन वेतनों और भत्तों को पायेंगे जो परिशिष्ट में दिये गए हैं।

(3) न्यायाधीशों के वेतन और भत्ते उनके पद की अवधि के अन्दर कम नहीं किये जायेंगे।''

इस खण्ड का अभिप्राय यह है कि हाईकोर्ट के सम्बन्ध में सन् 1935 ई. वाले एक्ट की ही व्यवस्थायें अपना ली जायें पर न्यायाधीशों की नियुक्ति के सम्बंध

में इसमें यह व्यवस्था रखी गई है कि राष्ट्रपति सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस तथा प्रान्त के गवर्नर की सलाह से उनकी नियुक्ति करेंगे। इन सर्वांगीण नियंत्रणों के फलस्वरूप हाईकोर्ट के न्यायाधीश दल विशेष के प्रभाव या अन्य किसी तरह के प्रभाव से सदा ऊपर रहेंगे और उन पर किसी प्रकार के सन्देह की गुंजाइश न रह जायेगी। इस तरह न्यायाधीशों की स्वंतत्रता पूर्णतया सुरक्षित कर दी गयी है। दूसरे दो खण्ड, जो वेतन और भत्ते के सम्बन्ध में हैं, परिणामवर्ती हैं और इनके सम्बन्ध में मैं समझता हूं कोई संशोधन नहीं आया है। इसलिये सभा की स्वीकृति के लिये मैं इन प्रस्तावों को सामने रखता हूं।

(सर्वश्री सुब्बारायन मल्लाया, रामालिंगम चेट्टियर और सेठ गोविन्ददास ने अपने संशोधन नहीं पेश किये।)

***अध्यक्षः** तो अब इस खण्ड पर कोई संशोधन नहीं है। कोई भी सदस्य इसके सम्बन्ध में कुछ बोलना चाहते हैं?

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रासः जनरल): मेरा भी एक संशोधन है।

***अध्यक्षः** आप उसे इस समय पेश कर सकते हैं।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से भाग 2 के खण्ड 1 के सम्बन्ध में मैं निम्नलिखित संशोधन रखना चाहता हूं।

''भाग 2 के खंड 1 के बाद निम्नलिखित आदेश जोड़े जायेंः

'मगर शर्त यह है कि–

(क) भारतीय राज्य संघ के सभी हाईकोर्टों को उस समूचे इलाके में जहां की अपीलें सुनने का उन्हें अधिकार है, विशेषाधिकार-पत्र या इसकी जगह उपचार स्वरूप इसी तरह की अन्य आज्ञा जारी करने का अधिकार होगा।

(ख) गवर्नमेंट आफ इन्डिया एक्ट 1935 की दफा 226 में माल सम्बन्धी मामलों में उनकी अधिकार सीमा पर जो प्रतिबन्ध लगाया है वह हाईकोर्ट पर अब लागू न होगा।

[सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

(ग) गवर्नमेंट आफ इन्डिया एक्ट 1935 की धारा 224 में जो अधिकार संख्याबद्ध किये गये हैं उनके अलावा, हाईकोर्टों को अपने मातहत अदालतों पर निरीक्षण का अधिकार होगा जैसा कि गवर्नमेंट आफ इन्डिया एक्ट 1915 की दफा 107 के अनुसार उन्हें प्राप्त है'।''

अनियमितता या अन्तर दूर करने के हाईकोर्ट को जो अधिकार प्राप्त हैं उनमें कई ऐसी त्रुटियां रह गयी हैं जो बिल्कुल ही स्पष्ट हैं। इन खामियों को दूर करना तथा मौलिक अधिकारों को प्रयोग में लाने के लिये एक समुचित और कार्यकारी व्यवस्था का निर्माण करना ही इन संशोधनों का उद्देश्य है। खण्ड (क) में विशेषाधिकार-पत्र या इसकी जगह उपचारस्वरूप अन्य इस तरह की आज्ञा जारी करने की बात कही गयी है। उपचारस्वरूप उस तरह की अन्य आज्ञा जारी करने की बात इसलिये कही गयी है कि आज्ञा जारी करने के लिये सिर्फ दरख्वास्त दे देने से भी काम हो जाये जैसा कि इंग्लैंड में हाल के कानूनों के अनुसार होता है। कानून की मौजूदा सूरत में सिर्फ कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के हाईकोर्टों को उन मामलों में विशेषाधिकार-पत्र जारी करने का अधिकार प्राप्त रहे जिनमें आरम्भिक तौर पर अपील सुनने का उन्हें हक हासिल है। ''स्पेसिफिक रिलीफ एक्ट'' के अदालती हुक्मनामा की जगह दरख्वास्त की यह व्यवस्था अपनायी गयी पर केवल प्रेसिडेन्सी शहरों के लिये ही। इस बात का कोई कारण समझ में नहीं आता कि प्रेसिडेन्सी शहरों से बाहर रहने वाले नागरिकों को इस सम्बन्ध में एक बिल और विस्तार वाली व्यवस्था के ही सहारे क्यों छोड़ा जाये जब कि प्रेसिडेन्सी शहर के बाशिन्दों को इस सम्बन्ध में हाईकोर्ट दरख्वास्त देने की सुविधा दी जाती है। जहां तक Habeas Corpus कानून के खिलाफ गिरफ्तार व्यक्ति को अदालत में पेश करने के हुक्म का सम्बन्ध है, फौजदारी के जाब्ते के मुताबिक, उन सभी इलाकों के लिये जहां की अपील सुनने का हाईकोर्ट को हक है, एक दरख्वास्त द्वारा ही ऐसी आज्ञा पाई जा सकती है। प्रिवी कौंसिल ने अभी हाल में यह फैसला किया है कि प्रेसिडेंसी शहरों में लोगों को यह अधिकार प्राप्त है कि वे हाईकोर्ट से दरख्वास्त करके किसी मामले को छोटी अदालत से बड़ी अदालत में पेश किये जाने का हुक्म हासिल करें ताकि हाईकोर्ट मातहत अदालत या उस तरह की किसी संस्था की ऐसी कार्रवाई के सम्बन्ध में जिसे उसने अपने अधिकार सीमा से बाहर जाकर किया है, ठीक व्यवस्था कर सके। खण्ड (क) के पास हो जाने से भारतीय राज्य संघ की सभी हाईकोर्टों को इन मामलों में उस सारे इलाके में विशेषाधिकार-पत्र

जारी करने का अधिकार हो जायेगा, जहां की अपील सुनने का हक उन्हें हासिल है। विधान में जिन मौलिक अधिकारों की गारन्टी दी गई है, इस खण्ड से उनकी सुरक्षा की एक सफल व्यवस्था हो जाती है। खण्ड (ख) उस अनियमितता को दूर करने के अभिप्राय से रखा गया है जो हाईकोर्टों की अधिकार सीमा के सम्बन्ध में वर्तमान है। यह अनियमितता वारेन हेस्टिंग्ज के काल से ही है। कानूनों की मौजूदा सूरत में एक जिला मुन्सिफ पर भी यह पाबन्दी नहीं लागू है कि वह माल सम्बन्धी मुकदमे की सुनवाई नहीं कर सकता, पर हाईकोर्ट पर ऐसी पाबन्दी लागू है। अभी उस दिन फेडरल कोर्ट ने यह मानते हुये भी, कि विवादी को हाईकोर्ट में मामला पेश करने का हर सूरत में अधिकार प्राप्त है, यह फैसला दिया कि हाईकोर्ट में लाया हुआ मुकदमा, दफा 226 की कानूनी बिना पर खारिज कर दिया जा सकता है। हाईकोर्टों की अधिकार सीमा पर लगाई हुई पाबन्दी कानूनी पेशे के सभी लोगों को खटकती है और भारत के हाईकोर्टों के कई वक्तव्यों में इस बात पर जोर दिया गया है। सन् 1935 के एक्ट के अनुसार हाईकोर्टों को कई मामलों में अपनी मातहत अदालतों की कार्यवाही पर निरीक्षण का अधिकार नहीं प्राप्त है और इस त्रुटि को पूरा करने के लिये आखिरी खण्ड यहां रखा गया है। मैं साहसपूर्वक कह सकता हूं कि इन संशोधनों को कानूनी पेशे के सभी लोगों का पूर्ण समर्थन प्राप्त है और मैं आग्रह करता हूं कि सभा इसे स्वीकार करे।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, भाग 2 के खण्ड 1 का, जिसका सम्बन्ध प्रान्तीय न्याय विभाग से है, समर्थन करने के लिये मैं खड़ी हुई हूं। श्रीमान्, खण्ड के केवल उसी अंश के सम्बन्ध में ही मैं बोलूंगी जिसमें प्रान्तीय विधि निर्धारित की गई है। खण्ड का स्वरूप यों है:

> **''न्यायाधीशों की नियुक्ति राज्य संघ के अध्यक्ष द्वारा, सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस, प्रान्त के गवर्नर तथा प्रान्त के हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस के परामर्श से की जानी चाहिये, सिवाय उस दशा के जब कि हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस की ही नियुक्ति करनी हो।''**

श्रीमान्, हम देखते हैं कि इस खण्ड में जो विधि हमने निर्धारित की है उसके जरिये प्रान्तों और प्रान्तीय सरकारों पर हमने एक बाहरी अधिकारी का हस्तक्षेप लाद दिया है। मैं समझती हूं कि ऐसे हस्तक्षेप से और ऐसी विधि से जिससे किसी बाहरी अधिकारी का हस्तक्षेप आवश्यक हो, लोगों के मन में कम-से-कम

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

यह भय तो जरूर ही पैदा होगा कि प्रान्तीय सरकार के अधिकार क्षेत्र पर एक तरह का आघात है और प्रान्तीय स्वराज्य के सिद्धान्तों के बिल्कुल प्रतिकूल है। श्रीमान्, मैं स्वयं स्वीकार करती हूं कि कुछ समय तक मेरा अपना भी यही ख्याल था कि इस मसले को प्रान्तीय सरकार पर यानी मन्त्रिमण्डल की राय से काम करने वाले गवर्नर पर छोड़ देना शायद ठीक होगा। परन्तु जरा सावधानी से इस पर विचार करने के बाद मैं इस राय पर पहुंची कि खण्ड निर्माता ने जो विधि निर्धारित की है उसमें और व्यवस्थाओं से ज्यादा लाभ है। अब आगे चलकर नई व्यवस्था में परिस्थितियां अब से भिन्न होंगी और हाईकोर्टों को बड़े-बड़े काम और बड़ी-बड़ी जिम्मेदारियों का बोझ संभालना पड़ेगा। हाईकोर्ट विधान के संरक्षक होंगे, उन्हें उसका भाष्य करना होगा। विधान में दिये हुये मौलिक अधिकारों के वे संरक्षक होंगे। प्रत्येक सर्वसाधारण नागरिक न्याय और उचित व्यवहार के लिये हाईकोर्टों का सहारा लेगा। उन कोर्टों को सदा इस बात का ध्यान रखना होगा कि नागरिकों के अधिकार सुरक्षित हैं, इसलिये यदि हमें वस्तुतः इस उद्देश्य को प्राप्त करना है तो हमें यह देखना होगा कि हाईकोर्टों का काम खूब सफलतापूर्वक हो और यह सफलता निर्भर करती है जजों की योग्यता पर और उनकी नियुक्ति पर। न्यायाधीशों को निर्णय-स्वातंत्र्य होना चाहिये। यह स्वातंत्र्य बहुत कुछ निर्भर करता है उनकी नियुक्ति सम्बन्धी विधि पर। उनके मन में यह भावना नहीं आने देनी चाहिये कि किसी खास व्यक्ति, इस दल या उस दल की कृपा से उनकी नियुक्ति हुई है। उनको सदा यह अनुभूति होनी चाहिये कि वे स्वतंत्र हैं। सिर्फ इसी सूरत में न्याय विभाग का शासन समुचित रूप से चल सकता है। न्यायाधीशों के मन में ऐसी स्वातन्त्र्य भावना उत्पन्न हो इसके लिये वुछ न कुछ नियंत्रण मूलक व्यवस्था होनी चाहिये और खण्ड निर्माताओं ने, न्यायाधीशों की नियुक्ति के सम्बन्ध में बाहरी अधिकारी का हाथ रख कर यह व्यवस्था पूरी कर दी है। हमारे मन में यह बात आ सकती है कि आखिर चीफ जस्टिस को यहां क्यों घसीटा गया है। परन्तु न्याय विभाग के शासन की विशुद्धता में अब आगे से सर्वोच्च न्यायालय का बहुत प्रमुख हाथ होगा। यह भारत के हाईकोर्टों में सर्वोच्च न्यायालय होगा और इसे आमतौर पर परामर्श देने का और अपील सुनने का वैसा ही अधिकार प्राप्त होगा जैसा कि प्रिवी कौंसिल को भारतीय मामलों के सम्बन्ध में प्राप्त है। इसलिये इसे सभी हाईकोर्टों के कामों को देखना होगा और प्रान्तीय न्याय विभाग सम्बन्धी मामलों में निरीक्षण, आदेश और नियंत्रण सम्बन्धी अधिकारों का प्रयोग करना होगा। हाईकोर्ट के कई मसले इसके सामने पुनर्विचार के लिये या अपील के तौर पर आयेंगे। इसलिये सर्वोच्च न्यायालय के

प्रधान न्यायाधीश को इन हाईकोर्टों के सम्बन्ध में बहुत कुछ करना होगा और यही नहीं, इसके न्यायाधीश हाईकोर्ट के जजों में से ही लिये जायेंगे। अतः इन सब बातों को ध्यान में रखते हुये मैं समझती हूं कि प्रान्तीय न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति के सम्बन्ध में राज्य संघ के अध्यक्ष का सर्वोच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश से परामर्श करना अत्यन्त आवश्यक है। अवश्य ही इस व्यवस्था से हमारे मन में यह आशंका नहीं उत्पन्न होनी चाहिये कि प्रान्तों की स्वतंत्रता पर बहुत कुछ प्रतिबन्ध लगाया जा रहा है। प्रत्युत यह नियंत्रण मूलक तो बिरले मौकों पर काम में लायी जायेगी और साधारणतः तो वही सिफारिशें स्वीकार की जायेंगी जिन्हें मन्त्रियों की सलाह से और प्रधान न्यायाधीश के परामर्श से गवर्नर पेश करेगा। जब तक कि गवर्नर की सिफारिशें दुरुस्त हैं और उसका चुनाव ठीक है, जैसा कि आमतौर पर लाजिमी है, उसी की सिफारिशों के अनुसार नियुक्ति होगी सिवाय उन चन्द बिरले मौकों को छोड़कर जब कि राज्य संघ के अध्यक्ष का हस्तक्षेप आवश्यक न हो जाये।

एक और बात भी हमें विचार में रखनी होगी और वह यह कि हमें ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि इस व्यवस्था द्वारा हम कोई बहुत अस्वाभाविक या नया काम कर रहे हैं। दुनिया के सभी संघ विधानों में कोई एक सा सिद्धान्त नहीं है कि प्रदेशों के हाईकोर्ट के जजों की नियुक्ति का अधिकार हर जगह प्रान्तीय सरकार के हाथ में ही हो। यह आवश्यक नहीं है। हमारे सामने कनाडा के विधान का उदाहरण मौजूद है जिसमें जजों की नियुक्ति का अधिकार गवर्नर-जनरल को प्राप्त है। इसलिये हम इस सिद्धांत को बिना किसी आशंका के या बिना किसी पर कृपा दिखाये स्वीकार कर सकते हैं और अपनी व्यवस्था में इसे अपना सकते हैं।

इन चंद बातों के साथ, श्रीमान, मैं इस खण्ड का समर्थन करती हूं और सभा से सिफारिश करती हूं कि वह इसे स्वीकार करे।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुरः** अध्यक्ष महोदय, सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन का मैं बड़ी खुशी से समर्थन करता हूं। 1935 के इण्डिया एक्ट के कारण तथा छोटी अदालतों से बड़ी अदालतों में मुकदमा जाये, इस हुक्मनामें के संबंध में प्रिवी कौंसिल का जो अभी हाल में निर्णय हुआ था, इसके परिणामस्वरूप हमें बड़ी कठिनाइयां भुगतनी पड़ती हैं। इसे देखते हुये इनमें प्रत्येक खण्ड बहुत आवश्यक है। प्रिवी कौंसिल के इस निर्णय के पहले तो हम मुफस्सिल में भी इस हुक्म का फायदा उठा पाते थे, पर इस निर्णय के बाद अब

[श्री बी. पोकर सहाब बहादुर]

हम सिर्फ प्रेसिडेन्सी नगरों में ही इसका फायदा उठा पाते हैं। यह बहुत ही जरूरी है। यह उपचार मूलक व्यवस्था मुफस्सिल में भी लोगों को प्राप्त हो।

हाईकोर्ट को निरीक्षणादि का अधिकार दिया गया है और यह उपचार गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 के पास होने के पहले था, किन्तु 1935 के एक्ट के नवीन आदेशों द्वारा ये हटा दिये गये हैं और मुफस्सिल कोर्टों की कार्य विधि पर हाईकोर्ट का निरीक्षण उठ जाने से उन लोगों को, जिन्हें अक्सर मुकदमों का काम पड़ा करता है, बड़ी दिक्कत महसूस हो रही है। हाईकोर्ट के निरीक्षण उठा देने का नतीजा यह हुआ कि अब जनता को क्रिमिनल पेनल कोड की दफा 15 का ही सहारा रह गया और यह दफा काफी नहीं है और इसमें वे सभी मामले नहीं आते जिसमें उपचार आवश्यक है। अतः श्रीमान्, यह आवश्यक है कि इन बातों का साफ तौर पर खुलासा कर दिया जाये, खासकर इसलिये कि अब आगे हमें अंग्रेजी परम्परा या दस्तूर तथा इंग्लैंड की नजीरों पर भरोसा न करना पड़े। मैं नहीं जानता कि मेरा उक्त कथन कहां तक सही है पर मैं समझता हूं कि आगे से हमें अंग्रेजी नजीरें और उनके दस्तूर बतौर प्रमाण के शायद न उपलब्ध हों। इन स्थितियों को देखते हुये यह नितान्त आवश्यक है कि इन खंडों को उस व्यवस्था में स्थान मिलना चाहिये जिसे हम स्वीकार करने जा रहे हैं।

इस खण्ड के सम्बन्ध में मुझे केवल एक और बात कहनी है। मैंने एक संशोधन की सूचना दी है जिसमें मैंने यह सुझाया है कि बजाय सम्बन्धित प्रान्त हाईकोर्ट के प्रधान न्यायाधीश के स्वयं हाईकोर्ट से इस मसले में परामर्श लेना चाहिये। परामर्श न केवल प्रधान न्यायाधीश तक ही सीमित हो बल्कि पूरे हाईकोर्ट से लिया जाये। मेरा संशोधन डा. सुब्बारायन के संशोधन के ऊपर है जिसकी सूचना उन्होंने दी है। पर चूंकि उन्होंने अपना संशोधन नहीं पेश किया है, मेरा संशोधन अपने आप गिर जाता है। फिर भी मस्विदा बनाने वाली कमेटी को मैं यह सुझाव देना चाहता हूं कि यह बहुत ही वांछनीय है कि परामर्श केवल प्रधान न्यायाधीश तक ही सीमित न हो बल्कि सारे हाईकोर्ट से परामर्श लिया जाये ताकि हाईकोर्ट के सभी जज अपनी बैठक में इस पर विचार करें और उनका फैसला सम्बन्धित अधिकारी को बता दिया जाये।

इन बातों के साथ मैं सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन का समर्थन करता हूं।

***माननीय श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): श्रीमान्, मैं भाग 2 के 1-3 खण्डों का समर्थन करता हूं। साथ ही साथ माननीय प्रस्तावक महोदय

से मैं यह जानकारी चाहता हूं कि न्याय विभाग को शासन विभाग से बिल्कुल स्वतंत्र रखने का आन्दोलन देश में चल रहा है, उस पर भी कोई बहस हुई या नहीं और इस आन्दोलन का नतीजा हमें कब मालूम होगा। संघ अधिकार समिति की ओर से जो रिपोर्ट पं. जवाहरलाल नेहरू पेश करेंगे उसमें क्या इस पर विचार किया गया है। मैं केवल इतना ही पूछना चाहता हूं और आशा है माननीय प्रस्तावक इस बात पर हमें कुछ प्रकाश देंगे।

***रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय:** श्रीमान्, मैं प्रस्तावक महोदय तथा सभा का ध्यान भाग 2 के खण्ड 3 की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं, जिसमें यह कहा गया है कि ''जजों का वेतन और भत्ते में, उनके पद की अवधि के भीतर कमी नहीं की जायेगी।'' श्रीमान्, मैं यह सोच रहा था कि कमी न की जायेगी 'diminished' शब्द रखने से हमारी आवश्यकता की पूर्ति नहीं होती है और उसकी जगह ''घटाव बढ़ाव न किया जायेगा'' रखना ठीक है। मुझे खेद है कि मैंने संशोधनों की सूचना नहीं दी क्योंकि दूसरे संशोधन थे जो मैं समझता था, पेश किये जायेंगे। खैर, प्रश्न महत्वपूर्ण है और इसलिये मैंने प्रस्तावक महोदय का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहा। शायद आगे चलकर मस्विदा बनाते समय इसमें सुधार कर दिया जाये। जिन कारणों और सिद्धांतों से प्रेरित होकर प्रान्तीय विधान कमेटी के सदस्यों ने यह व्यवस्था की है कि जजों के वेतन और भत्ते में उनके कार्यकाल में कमी नहीं की जायेगी। वही कारण और सिद्धान्त, मैं समझता हूं, उसको बढ़ाने में भी लागू होता है। स्वभावत: आप यह नहीं चाहेंगे कि न्यायाधीश लोग सदा या तो वेतन बढ़ाने की फिक्र में रहें या इस भय में पड़े रहें कि कहीं उनका वेतन घटा न दिया जाये। इन हालतों में मैं समझता हूं कि प्रस्तावक महोदय की स्वीकृति से ''यहां कमी न की जायेगी'' की जगह ''घटाव-बढ़ाव न किया जायेगा'' रखा जाये।

बाजाब्ता मैंने संशोधन के रूप में इसे नहीं रखा है, पर मैं समझता हूं कि यह प्रश्न महत्वपूर्ण है और सभा का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहिये।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** श्रीमान् ससम्मान मैं निवेदन करना चाहता हूं कि मुझे यह दिखता है कि इस संशोधन से कई उलझनें पैदा हो सकती हैं। मैं सर अल्लादी कृष्णास्वामी के इस कथन से सहमत हूं कि हाईकोर्टों के अधिकारों को बढ़ाना होगा। गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट के अनुसार हाईकोर्ट के माल या राजस्व सम्बन्धी विचाराधिकार पर कई पाबन्दियां लगा दी गयी हैं। यही पहली त्रुटि है जिसे वह अपने संशोधन द्वारा दूर करना चाहते हैं, अपने संशोधन द्वारा वह चाहते हैं कि हाईकोर्टों को माल सम्बन्धी सभी मामलों

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

में भी विचार करने का अधिकार प्राप्त होगा, बावजूद उन तमाम प्रतिबन्धों और पाबंदियों के जो गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट में रखी गयी हैं। एक पाबन्दी दफा 226 में है, जिसकी इबारत यह है:

''समुचित व्यवस्थापिका के किसी कानून द्वारा जब तक कि अन्यथा व्यवस्था न हो किसी भी हाईकोर्ट को माल के मामलों में या मालगुजारी वसूली के सम्बन्ध में जो आज्ञा दी गयी है, या कार्यवाही की गयी हो उसके बारे में प्रारम्भिक तौर पर विचाराधिकार न प्राप्त होगा................।''

क्या संशोधनकर्त्ता महोदय विधान कानून द्वारा माल के मामलों में भी हाईकोर्टों को प्रारम्भिक विचाराधिकार देना चाहते हैं या केवल माल की वसूली के सम्बन्ध में। ये बातें तो बाद में दे दी गई हैं। अगर ऐसा अधिकार दिया जाता है और उसे विधान में लिपिबद्ध कर दिया जाता है तो उसका फल यह होगा कि अगर बाद में अनुभव के आधार पर कोई परिवर्तन करना आवश्यक हो जाये तो फिर विधान कानून में ही संशोधन करके हम ऐसा कर सकते हैं। व्यवस्थापिका को हाईकोर्टों की अधिकार सीमा को बढ़ाने या उन पर लगायी गयी पाबन्दियों को दूर करने के लिये कानून बनाने के अधिकार देने में तो कोई आपत्ति ही नहीं है।

जहां तक अदालती परवाना जारी करने के अधिकार का सम्बन्ध है वह वर्तमान समय में कौंसिल की किसी ऐसी आज्ञा के अधीन है जिसे सरकार ने दफा 223 के अनुसार पास किया हो या जिसे सपरिषद् सम्राट ने दी हो। कुछ अदालती परवाने तो ऐसे भी हो सकते हैं जो अप्रचलित हो गये हैं, कुछ आवश्यक हो सकते हैं और कुछ ऐसे भी होंगे जिनको चालू रखना आगे चलकर अनावश्यक हो जायेगा। हमें विस्तार की बातों में नहीं जाना है। अगर इसमें किसी सुधार की आवश्यकता हुई तो दोनों सभाओं में दो तिहाई सदस्य संख्या जरूरी होगी और विधान संशोधन सम्बन्धी सारे जाब्ते से हमें गुजरना होगा, जैसा कि और आवश्यक मामलों में होता है। हम आसानी से यहां यह व्यवस्था कर सकते हैं कि प्रान्तीय व्यवस्थापिका को हाईकोर्ट की अधिकार सीमा को बढ़ाने या उस पर पाबन्दी लगाने का अधिकार होगा। मैं नहीं समझता कि किसी भी ऐसी बात को इस तरह के विधान कानून में लिपिबद्ध करने की जरूरत है।

फिर खण्ड (ग) में कहा गया है कि 1935 के गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट की दफा 224 में जिन अधिकारों का जिक्र है, उनके अलावा गवर्नमेंट आफ इण्डिया

एक्ट की दफा 107 के अनुसार मातहत कोर्टों पर निरीक्षण रखने का भी अधिकार हाईकोर्ट को प्राप्त होगा।

मैं यह नहीं कहता कि हाईकोर्टों के अधिकारों को जिस तरीके पर सर अल्लादी अपने संशोधन के जरिये बढ़ाना चाहते हैं वह न बढ़ाया जाये। मेरा कहना यह है कि स्थानीय व्यवस्थापिका को तो खुद यह अधिकार प्राप्त है कि हाईकोर्ट को वह कुछ भी अधिकार दे, न सिर्फ वही अधिकार जिनका जिक्र दफा 107 में आया है बल्कि इससे भी ज्यादा। हम इस पर अमुक या तमुक पाबन्दी क्यों लगावें। स्पष्ट है कि सर अल्लादी का ख्याल है कि विधान का जो मस्विदा यहां पेश है और जिस पर हम विचार कर रहे हैं उसमें वह सारी व्यवस्थायें आ जानी चाहिए जो चालू गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट में विद्यमान हैं। मेरा मत यह है कि उन व्यवस्थाओं को हमें ज्यों का त्यों नहीं यहां शामिल कर लेना चाहिये, चाहे वे बुरी हों या भली। विस्तार की बातों पर विधान निर्माता खुद विचार करेंगे और स्थानीय व्यवस्थापिकाओं को बिना सपरिषद सम्राट के हस्तक्षेप के कानून या नियम बनाने का जरूरी मामलों में हाईकोर्टों की अधिकार सीमा को बढ़ाने का तथा जहां भी जरूरी हो अदालती परवाना जारी करने का अधिकार देंगे। यह विस्तार की बातें हैं और उन्हें एक समिति को सुपुर्द करना होगा जो विचार करेगी कि इन्हें किस तरह बढ़ाया जाये। इन सब बातों पर विचार करने का अधिकार व्यवस्थापिका को होगा जिसका हम निर्माण करने का इरादा करते हैं। अवश्य ही, सर अल्लादी यह कहेंगे कि यह बातें ऐसी नहीं हैं जिन्हें व्यवस्थापिका के सदस्य अपनी बैठक में निपटा लेंगे; इन्हें तो विशेषज्ञों की एक समिति के सुपुर्द कर देना चाहिये ताकि इन्हें अन्तिम रूप से विधान में शामिल करने के पहले, वे प्रत्येक खंड पर पूरी तरह से विचार करें। इस बात का मौका हमारे पास नहीं है। सर अल्लादी केवल इतना ही कहते हैं कि हाईकोर्ट के अधिकारों को एक खास तरीके पर बढ़ा देना चाहिये चाहे वे अच्छे हों या बुरे। हम मानते हैं कि अधिकार बढ़ाना अच्छा है पर बाद में ऐसा हो सकता है कि ये अधिकार बुरे, कष्टदायी या कठोर सिद्ध हों। इनको विकेंद्रित करने की आवश्यकता पड़ सकती है। मातहत अदालतों पर निरीक्षण का अधिकार कई मामलों में अनावश्यक और अवांछनीय हो सकता है। इसलिये, यदि हम इन अधिकारों को अखंडनीय रूप से या सदा के लिये हाईकोर्टों को दे देते हैं तो इससे बड़ी दिक्कत आयेगी। इन विस्तार की बातों को हम यहां क्यों रखें। इसलिये मैं तो यह कहूंगा कि इस ओर सभा का केवल ध्यान आकृष्ट करने के लिये ही मेरे मित्र ने संशोधन रखा है। निस्संदेह उन्होंने गलत तरीका चुना है। सही तरीका यह होगा कि व्यवस्थापिका के सामने ये बातें रख दी जायें और ऐसा किया जाये कि प्रांतीय व्यवस्थापिका को, माल के

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

मामलों में हाईकोर्ट के निरीक्षण सम्बन्धी अधिकार को बढ़ाने की क्षमता प्राप्त हो जाये। अत: मैं अनुरोध करता हूं कि वे अपने संशोधन पर जोर न दें क्योंकि इससे अनावश्यक जटिलतायें पैदा होंगी।

***श्री के.एम. मुंशी** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र श्री अनन्तशयनम् ने ये बातें वर्तमान गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट के आधार पर कही हैं। पर सर अल्लादी के संशोधन के कारण सभा को पूरी तौर से बता दिया गया है। जहां तक विशेषाधिकार पर (Prerogative writs) या विशेष परवाना जारी करने की बात है, वह तो एक बारीक कानूनी बात है और स्वाभाविक है कि साधारण आदमियों को उसे समझने में कठिनाई हो सकती है। पर हमें यह महत्वपूर्ण तथ्य जानना होगा कि ऐसे विशेषाधिकार-पत्र जारी करने का अधिकार हमारे देश में केवल तीन ही हाईकोर्टों को प्राप्त है। केवल बम्बई, कलकत्ता और मद्रास के हाईकोर्टों को ही इस सम्बंध में 'किंग्स बेंच डिवीजन' का दर्जा प्राप्त है और वे ही इन शहरों में इन मामलों में विशेषाधिकार-पत्र जारी कर सकते हैं जिनमें आरम्भिक तौर पर अपील सुनने का उन्हें अधिकार है।

दूसरे हाईकोर्टों को यह अधिकार नहीं प्राप्त है और इन तीन हाईकोर्टों को भी केवल इन्हीं नगरों में उन मामलों में जिनमें आरंभिक तौर पर सुनवाई का उन्हें हक है, ऐसी आज्ञा निकालने का अधिकार है। इस संशोधन का आशय यही है कि दूसरे हाईकोर्टों को भी विशेषाधिकार-पत्र जारी करने का वैसा ही अख्तियार हो जैसा कि इंग्लैंड में 'किंग्स बेंच डिवीजन' को है। यह बात गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट में नहीं आती है और न किसी दूसरे कानून से ही पूरी होती है। इस संशोधन का यही मतलब है कि भारत के प्रांतीय हाईकोर्टों को वही अधिकार प्राप्त हों जो, 'किंग्स बेंच डिवीजन' को प्राप्त हैं। ये विशेषाधिकार-पत्र बहुत प्राचीन हैं और अंग्रेजी कानून में इनका सुपरिचित स्थान है। पर इनमें बहुतों का प्रयोग कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के हाईकोर्टों में चालू किया गया है। सभा के कानूनदां सदस्य यह जानते होंगे कि सन् 1942-45 के कठिन दिनों में जबकि भारत रक्षा कानून पर आम अमल होता था, इन विशेषाधिकारों ने नागरिकों की स्वतंत्रता को जीवित रखने में बड़ा ही सहयोग दिया था। इसके अतिरिक्त हमें यह भी समझना चाहिये कि भारत का, स्वतंत्र भारत का यह विधान एक स्वतंत्रता-पत्र के समान होगा। इसमें मौलिक अधिकारों को भी लिपिबद्ध किया जायेगा। और कतिपय मौलिक अधिकारों के सम्बंध में जनता को क्या अधिकार

होंगे तथा सरकार के क्या कर्तव्य और दायित्व होंगे, यह भी लिपिबद्ध रहेगा। इन सबों को कार्यान्वित कराने के लिये कोई न कोई व्यवस्था होनी चाहिये और उसी तरह की जैसी कि एक अंग्रेज नागरिक को किंग्स बैंच डिवीजन के जरिये अपने अधिकार प्राप्त कराने की व्यवस्था उपलब्ध है। राज्य संघ के विधान में जहां सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की बात है, वहां इसी न्यायालय को विशेषाधिकार-पत्र जारी करने का अधिकार दिया गया है। अब अगर विधान सम्बंधी अधिकारों के बारे में या अन्य अधिकारों के बारे में यह विशेषाधिकार सिर्फ सर्वोच्च न्यायालय को हैं और अन्य हाईकोर्टों को नहीं हैं, तो इसका यह मतलब होगा कि अपने अधिकारों की मान्यता प्राप्त करने के लिये प्रत्येक नागरिक को दिल्ली ही आना होगा। सर अल्लादी कृष्णास्वामी के संशोधन का मूल अभिप्राय इतना ही है कि सभी हाईकोर्टों को भी अपने अधिकार सीमा के अंदर विशेषाधिकार पत्र जारी करने का अधिकार प्राप्त हो। इस खंड का यही उद्देश्य है। विधान में इसको रखना जरूरी है क्योंकि अन्यथा संभव है कि व्यवस्थापिका हाईकोर्ट के कतिपय अधिकारों को ले ले या लेने का प्रयास करे। इस सम्बंध में गवर्नमेंट आफ इंडिया से कोई समता लागू न होगी। हमारे उद्देश्य को देखते हुए इस संशोधन का रहना आवश्यक है। मैं जानता हूं कि "विशेषाधिकार पत्र" शब्द बड़ा स्पष्ट है। यही कारण है कि सर अल्लादी ने संशोधन में ये शब्द रखे हैं "any substituted remedy"। अभिप्राय यह है कि विधान में एक स्पष्ट आदेश द्वारा या विधान के अंतर्गत बनाये किसी कानून के द्वारा इन विशेषाधिकारों को कायम रखा जाये। इसके सम्बन्ध में कोई संदेह नहीं हो सकता। विशेषाधिकार-पत्र तो विशेषत: इंग्लैंड के सर्वसाधारण कानून से निकले हैं, पर इस बात की कोशिश की जा रही है कि इनको विधान पुस्तक में एक निश्चित रूप में लिपिबद्ध कर दिया जाये। कोई कारण नहीं है कि हम अब सर्वसाधारण प्रचलित कानून को वर्तमान मस्विदे में अस्पष्ट रूप में रहने दें, आगे चलकर इस बात की कोशिश की जायेगी। इन विशेषाधिकार-पत्रों या हुक्मनामों की समुचित कानून के जरिये व्याख्या कर दी जाये। इस संशोधन में सारभूत सिद्धांत यह है कि प्रांतीय हाईकोर्टों को विशेषाधिकार-पत्र जारी करने का या इसी तरह की अन्य किसी उपचार मूलक व्यवस्था को अपनाने का अधिकार होगा। अत: मेरे मित्र श्री अनन्तशयनम् द्वारा उठाई हुई आपत्तियां मान्य नहीं हैं। जहां तक खंड (ख) का सम्बंध है, गवर्नमेंट आफ इंडिया ने माल सम्बंधी मामलों के अधिकार के सम्बंध में एक पाबन्दी लगा दी है। चूंकि पहले से ऐसा होता आया है, भारत सरकार ने यह पाबन्दी लगाई है। प्रस्तुत संशोधन द्वारा यह सिद्धांत स्वीकार किया गया है कि माल सम्बंधी मामले भी कानून के अधीन

[श्री के.एम. मुंशी]

होंगे। जहां तक खंड (ग) का सम्बन्ध है जिसमें मातहत अदालतों पर निरीक्षण की बात कही गई है, हाईकोर्टों को अपनी सभी मताहत अदालतों की कार्रवाईयों पर निरीक्षण करने का अधिकार होगा और इस खंड की विस्तृत व्याख्या आवश्यक है। मूल उद्देश्य यह है कि यह सिद्धान्त विधान में लिपिबद्ध कर लिया जाये। यह इरादा नहीं है कि प्रांतीय व्यवस्थापिका को हाईकोर्टों के इन अधिकारों के साथ हस्तक्षेप करने का अधिकार प्राप्त हो। इन मामलों में हाईकोर्टों के अधिकार और उनकी स्वतंत्रता कायम रखनी होगी ताकि व्यवस्थापिका अपने बहुमत से नागरिकों की स्वतंत्रता और अधिकारों को कम न कर पाये। नागरिक स्वतंत्रता की रक्षा और गणतंत्र की भलाई के लिये ये अधिकार आवश्यक हैं।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** श्रीमान् भाग 2 का खंड 3 यह कहता है कि प्रांतीय हाईकोर्ट के न्यायाधीशों का वेतन उनकी पद की अवधि के अंदर कम नहीं किया जायेगा, पर उसमें यह बात कहीं भी नहीं कही गई है कि उनका वेतन बढ़ाया भी नहीं जा सकता। हर तरह हमें हाईकोर्टों की मर्यादा और निष्पक्षता को कायम रखना होगा। अगर हम इस बात को अपने विधान में नहीं व्यक्त करते कि उनके वेतन में तो कमी और वृद्धि न की जायेगी तो इससे हम इस बात का उनको मौका देंगे। क्योंकि आखिर वे भी मनुष्य हैं कि अपनी वेतन वृद्धि के लिये वे व्यवस्थापिका की कृपा दृष्टि की ताक में रहें। यह महत्वपूर्ण बात है। मैंने किसी संशोधन की सूचना नहीं दी है। क्योंकि कई माननीय सदस्यों ने अपने संशोधन भेजे थे। इसीलिये मेरे मित्र रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय ने परिवर्तन का सुझाव रखा है और मैं आशा करता हूं कि माननीय प्रस्तावक इसे स्वीकार कर लेंगे फिलहाल जो व्यवस्था रखी गयी है वह यों है:

''न्यायाधीश के वेतन और भत्ते में उनके पद की अवधि के अन्दर कमी नहीं की जायेगी।''

मेरा सुझाव है कि '' कमी न की जायेगी'' की जगह ''घटाव बढ़ाव न किया जायेगा'' रखा जाये। उस हालत में परिवर्तित पाठ यों हो जायेगा:

''न्यायाधीशों के वेतन और भत्ते में उनके पद की अवधि के अन्दर घटाव बढ़ाव नहीं किया जायेगा।''

सभा की स्वीकृति के लिये मैं इसको सामने रखता हूं।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, भाग 2 खंड 1 के सम्बंध में मैं एक बात कहना चाहता हूं। इसके पहले हिस्से में यह कहा गया है कि:

''1935 के गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट की हाईकोर्ट से सम्बन्ध रखने वाली व्यवस्थायें आवश्यक परिवर्तनों के साथ अपनाई जायें।''

मैं देखता हूं कि गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट की 219 लगायत 231 की धारायें हाईकोर्टों के सम्बंध में हैं। इस एक्ट की एक महत्वपूर्ण व्यवस्था में मैं देखता हूं कि भाषा सम्बंधी प्रश्न आया है। इस एक्ट की धारा 227 में कहा गया है:

''प्रत्येक हाईकोर्ट की कार्यवाही अंग्रेजी भाषा में होगी।''

मैं नहीं समझता कि इस बात की ओर काफी ध्यान दिया गया है। श्रीमान्, मैं यह नहीं समझता कि प्रस्तावक महोदय का यह मन्तव्य है कि हाईकोर्टों की कार्यवाही अंग्रेजी में दर्ज की जाये। हम आजकल अपनी राष्ट्रीय भाषा अथवा अखिल भारतीय भाषा के सम्बंध में चर्चा कर रहे हैं। मेरा अपना मत तो यह है कि प्रत्येक प्रांत में वहां की कार्यवाहियों में, जिसमें हाईकोर्टों की कार्यवाही भी शामिल है, वहां की ही भाषायें चलाई जानी चाहियें। यह हो सकता है कि कुछ परिवर्तन काल में कुछ समय के लिये हम अंग्रेजी भाषा रख लें, पर मैं नहीं समझता कि हम सदा के लिये हाईकोर्ट की भाषा अंग्रेजी ही रहने दें। पर वस्तुस्थिति यह है कि अगर हम इस खंड के पहले हिस्से को इसकी मौजूदा शक्ल में ''आवश्यक परिवर्तनों के साथ'' स्वीकार कर लेते हैं तो संभव है कि हम हाईकोर्टों में अंग्रेजी भाषा रखने की बात मान लेते हैं और उससे बंध जाते हैं। इसलिये मैं चाहता हूं कि इस खंड में ऐसी उपयुक्त व्यवस्था रखी जाये जिससे हम गवर्नमेंट ऑफ इंडिया एक्ट की धारा 227 से बच सकें।

***अध्यक्ष:** चूंकि और कोई बोलना नहीं चाहता, प्रस्तावक यदि चाहें तो अपना जवाब दे सकते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, मैं सर अल्लादी के संशोधन को स्वीकार करता हूं। दो एक प्रश्नों के सम्बंध में जो यहां अभी उपस्थित किये गये हैं, मैं चन्द शब्द कहना चाहता हूं। श्री जयपालसिंह के इस प्रश्न के सम्बंध में, कि न्याय विभाग को शासन विभाग से पृथक करने के सम्बंध में क्या किया गया है,

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

मैं केवल इतना ही कह सकता हूं कि इस प्रश्न को उठाने का यह उपयुक्त स्थान नहीं है। जिस खंड पर हम अभी विचार कर रहे हैं, उसमें तो केवल इन्ही बातों का जिक्र है कि हाईकोर्ट का निर्माण किस तरह हो, उसका विधान क्या हो, जजों की नियुक्ति का तरीका क्या हो और उसके अधिकार क्या हों इत्यादि, इत्यादि। जो प्रश्न उन्होंने उपस्थित किया है, उस पर तो व्यवस्थापिका ही विचार कर सकती है। यह नीति सम्बंधी प्रश्न है जिस पर व्यवस्थापिका को फैसला करना होगा और मैं नहीं समझता कि अब भी न्याय विभाग को शासन विभाग से पृथक करने में कोई मतभेद होगा।

दूसरी बात जो उठाई गयी है वह यह है कि ''कमी की जायेगी'' की जगह ''घटाव बढ़ाव न किया जायेगा'' रखा जाये। मैं इस परिवर्तन को आवश्यक नहीं समझता क्योंकि वर्तमान अवस्था में यह बात कही गई है कि वेतनादि में ऐसा कोई परिवर्तन नहीं किया जिससे जजों को नुकसान हो। इसलिये खंड की शब्दावली में कोई परिवर्तन नहीं करना चाहता।

जैसा कि मैंने कहा है, सर अल्लादी के संशोधन को मैं मंजूर करता हूं और सभा से सिफारिश करता हूं कि वह उनकी तजवीज को मंजूर करें।

***अध्यक्षः** अब मैं प्रस्ताव पर सभा की राय लूंगा।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारतीः** हाईकोर्ट की भाषा के संबंध में जो मेरा प्रश्न था उसका कोई उत्तर नहीं मिला। यह आवश्यक प्रश्न है।

***अध्यक्षः** वस्तुतः यह आवश्यक प्रश्न है, पर मैं समझता हूं कि मस्विदा बनाने वाली कमेटी इस पर ध्यान देगी।

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारतीः** श्रीमान्, ''आवश्यक परिवर्तनों के साथ'' का मतलब तो कुछ भी हो सकता है। मौजूदा शक्ल में तो इसका यह मतलब है कि विधान का मस्विदा बनाते समय गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट की व्यवस्थाओं में परिवर्तन नहीं कर सकते। हम अगर इसे ज्यों का त्यों स्वीकार कर लेते हैं तो मस्विदा बनाने वाली कमेटी इस बात से बंध जायेगी कि हाईकोर्ट की भाषा अंग्रेजी में रखी जाये।

***डा. बी. पट्टाभि सीतारमैया** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मैं तो समझता हूं कि "mutatis mutandis" का मतलब है "आवश्यक परिवर्तनों के साथ"।

***अध्यक्षः** हां, यही मेरी भी धारणा है। इसके अंतर्गत कोई भी परिवर्तन जो मस्विदा बनाने वाली कमेटी अंत में करना चाहेगी, आ जायेगा।

मैं सर अल्लादी के संशोधन पर मत लेता हूं। संशोधन यह है किः

"खंड 1 में निम्नलिखित आदेश जोड़ा जायेः

'मगर शर्त यह है कि–

(क) भारतीय राज्य संघ के सभी हाईकोर्टों को उस समूचे इलाके में, जहां की अपीलें सुनने का उन्हें अधिकार है, विशेषाधिकार-पत्र या इसकी जगह उपचार की अन्य आज्ञा जारी करने का अधिकार होगा।

(ख) गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 की दफा 226 में माल सम्बन्धी मामलों में उनकी अधिकार सीमा पर जो प्रतिबन्ध लगाया गया है वह हाईकोर्टों पर अब लागू न होगा।

(ग) गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट सन् 1935 ई. की दफा 224 में जो अधिकार संख्याबद्ध किये गये हैं उनके अलावा हाईकोर्टों को अपने मातहत अदालतों पर निरीक्षण का अधिकार होगा जैसा कि गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 की दफा 107 के अनुसार उन्हें प्राप्त हैं'।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** सभा का मत जानने के लिये मैं प्रस्ताव को संशोधित रूप में अर्थात् उन व्यवस्थाओं के साथ जो अभी स्वीकार की गई हैं, सभा के सामने रखता हूं। मैं नहीं समझता कि मुझे पूर्ण खण्ड पढ़ने की जरूरत है।

भाग 2 संशोधित रूप में स्वीकृत हुआ।

भाग 3–प्रान्तीय पब्लिक सर्विस कमीशन और प्रान्तीय आडिटर जनरल

***अध्यक्षः** अब हम भाग 3 को लेते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, यह भाग पब्लिक सर्विस कमीशन और आडिटर जनरल के सम्बन्ध में है:

> **''पब्लिक सर्विस कमीशन और आडिटर-जनरल के सम्बन्ध में, गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 की व्यवस्थाओं के आधार पर ही व्यवस्थायें रखनी चाहियें। प्रत्येक प्रान्त के पब्लिक सर्विस कमीशन के मेम्बरों और उसके अध्यक्ष तथा आडिटर-जनरल की नियुक्ति का अधिकार गवर्नर-जनरल को उनके विवेक पर देना चाहिये।''**

विचार यह है कि यह अधिकार गवर्नर को दिया जाये; मैं इस प्रस्ताव को आपकी स्वीकृति के लिये आपके सामने रखता हूं।

***अध्यक्षः** इस पर श्री खुरशीदलाल, श्री गोपीनाथ श्रीवास्तव, श्री एस.एल. सक्सेना, पं. पंत तथा श्री सन्तानम् के संशोधन आए हैं।

(संशोधन पेश नहीं किये गये।)

***श्री के. सन्तानम्ः** श्रीमान्, भाग 3 के सम्बन्ध में मेरा एक संशोधन है (ता. 16-7-47 की पूरक सूची में संख्या नं. 23)। यद्यपि मैं इस समय संशोधन नहीं उपस्थित करना चाहता हूं परन्तु, श्रीमान्, मैं चाहता हूं, कि इस सम्बन्ध में आप यह आदेश दे दें कि संघ विधान पर विचार करने के समय इस संशोधन पर विचार किया जा सकता है, जैसा कि अभी सुझाव आया है कि इस पर उस समय विचार किया जा सकता है। मैं केवल इस बात का निश्चय कर लेना चाहता हूं कि उस समय इसे अनियमित न करार दे दिया जाये।

***अध्यक्षः** यदि आप संशोधन पेश करना चाहते हैं तो अभी कर सकते हैं। भविष्य के सम्बन्ध में मैं आपको कोई वचन नहीं दे सकता। मैं आपको संशोधन अभी वापस लेने की अनुमति दे सकता हूं, अगर आप चाहें, और समुचित समय में इस प्रश्न पर विचार किया जायेगा कि आया अन्य रिपोर्ट के सम्बन्ध में संशोधन पेश किया जा सकता है या नहीं।

***श्री के सन्तानम्ः** मैं अपना संशोधन नहीं रखना चाहता।

अध्यक्षः प्रस्ताव यह है कि भाग 3 को स्वीकार किया जाये।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

भाग 3

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव रखता हूं किः

''1. इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले यदि किसी प्रांत में कोई व्यक्ति गवर्नर के पद पर हो तो वह पदासीन रहेगा और इस विधान के अधीन उस समय तक प्रान्त का गवर्नर समझा जायेगा जब तक कि इस विधान के अधीन नियमित रूप से निर्वाचित उसका उत्तराधिकारी पदासीन हो जाये।

2. मंत्रिमंडल, लेजिस्लेटिव असेम्बली और कौंसिल (उन प्रान्तों में जो ऊपर की सभा रखने का निर्णय करें) के सम्बन्ध में भी आवश्यक परिवर्तनों के साथ इसी प्रकार के आदेश होने चाहियें।

3. सब सम्पत्ति, अधिकारों और देने पावने के सम्बन्ध में हर एक गवर्नर के प्रान्त की सरकार, इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले की उस प्रान्त की सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी।''

यह आदेश परिवर्तन काल के लिये है ताकि शासन व्यवस्था के लुप्त हो जाने की स्थिति न उत्पन्न हो जाये। मैं नहीं समझता कि इस पर कोई मतभेद हो सकता है और आशा है, यह मंजूर किया जायेगा।

***श्री टी.ए. रामालिंगम चेट्टियार** (मद्रासः जनरल): खण्ड 1 पर मैं अपना संशोधन (संख्या 119 सूची ता. 15-7-47) नहीं रखना चाहता।

***श्री के. सन्तानम्ः** खण्ड 3 के सम्बन्ध में मैं अपना संशोधन (संख्या 24 दूसरी पूरक सूची ता. 16-7-47) को नहीं पेश करना चाहता हूं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** खण्ड 1 के सम्बन्ध में मैं अपना संशोधन (ता. 16-7-47 की दूसरी पूरक सूची सं. 24) नहीं पेश करना चाहता।

(पं. गोविन्द मालवीय, श्री रोहिणीकुमार चौधरी, श्री अनन्तशयनम् आयंगर, श्री मोहनलाल सक्सेना तथा प्रो. एन.जी. रंगा ने अपने संशोधन पेश नहीं किये, जो तीसरी और चौथी पूरक सूची में थे।)

***अध्यक्षः** श्री अनन्तशयनम् आयंगर के दो संशोधन हैं और दोनों ही स्वतंत्र प्रस्ताव हैं, इन्हें बाद में लूंगा।

***श्री के.एम. मुन्शी:** मुझे इस भाग के खण्ड 3 के सम्बन्ध में सिर्फ एक बात कहनी है। खण्ड का रूप यह है:

''सब सम्पत्ति, अधिकारों और देने पावने के सम्बन्ध में हर एक गवर्नर के प्रान्त की सरकार, इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले की उस प्रान्त की सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी।''

श्रीमान्, मैं ऐसा समझता हूं कि यहां ''सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी'' शब्दों के रखने से कुछ कठिनाई आ सकती है और इस समय खण्ड 3 को रखने से कोई अभिप्राय सिद्ध न होगा। इसलिये मेरा निवेदन यह है कि खण्ड 3 को हटा देना चाहिये। ''सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी'' इन शब्दों के रखने से और जटिलतायें बढ़ सकती हैं और इस स्थिति को अभी बुलावा देने की हमें जरूरत नहीं।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस भाग का खंड 1 अवश्य ही आपत्तिजनक नहीं है। मैं समझता हूं कि सभा को उसे मंजूर कर लेने में कोई कठिनाई न होगी। पर इसकी स्वीकृति के परिणामस्वरूप मैं समझता हूं कि कुछ परिस्थितियां आ जायेंगी। इसलिये इन परिणामजन्य स्थितियों की ओर मैं आपका तथा इस गौरवशाली सभा का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं। यह खण्ड अर्थात् भाग 4 का खण्ड यह कहता है:

''इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले यदि किसी प्रांत में कोई व्यक्ति गवर्नर के पद पर हो तो वह पदासीन रहेगा और इस विधान के अधीन उस समय तक प्रान्त का गवर्नर समझा जायेगा जब तक कि इस विधान के अधीन नियमित रूप से निर्वाचित उसका उत्तराधिकारी पदासीन न हो जाये।''

इस समय हम दासता के अन्धकार से स्वतंत्रता के प्रकाश की ओर बढ़ रहे हैं। हम अपनी औपनिवेशिक स्वाधीनता की स्थिति से बढ़कर पूर्ण स्वतंत्र प्रजातंत्र की प्राप्ति करेंगे, जिसके लिये हम सतत् प्रयत्नशील हैं। यह अन्तर्वतीकाल में शासन व्यवस्था के अभाव की स्थिति का उत्पन्न हो जाना अवश्यम्भावी है। यह स्थिति दीर्घकालीन अथवा अल्पकालीन हो सकती है। और आज और विधान

के प्रारम्भ करने में फिर एक व्यवधान पड़ जायेगा। विधान के प्रारम्भ करने से मेरा मतलब है विधान के प्रकाश में आने से। मैं समझता हूं कि इस साल के अन्त तक विधान प्रकाश में आयेगा, यानी घोषित हो जायेगा। और इस व्यवधान काल में हम एक नयी स्थिति में औपनिवेशिक स्वराज्य की स्थिति में प्राप्त रहेंगे। आगामी महीने की 15 तारीख को भारतीय राज्य संघ, स्वराज्य प्राप्त उपनिवेश का दर्जा बाजाब्ता प्राप्त करेगा। अतः इस खण्ड के अनुसार दिसम्बर में जबकि सम्भवतः विधान घोषित होगा, कई प्रान्तों में कुछ गवर्नर होंगे जो सम्भवतः अपने पदों पर आसीन रह जायेंगे और इस विधान के अन्तर्गत वे गवर्नर समझे जायेंगे। मैं यहां अपने इस शब्दों ''इस विधान के अन्तर्गत वे गवर्नर समझे जायेंगे'' पर जोर देना चाहता हूं। मैं समझता हूं कि प्रस्तुत विधान के अनुसार इस विधान के प्रारम्भ किये जाने और उसके अन्तर्गत नया चुनाव होने तक अगर कोई परराष्ट्रीय नागरिक गवर्नर रहने दिया जाता है तो इससे विधान की प्रतिष्ठा पर आघात पहुंचेगा। जैसा कि हम सभी जानते हैं, शीघ्र ही आगामी माह के मध्य में हमें अथवा हमारे नेताओं को यह क्षमता प्राप्त हो जायेगी कि वे यह समझ सकें कि किस प्रान्त का कौन गवर्नर होगा। यदि दुर्भाग्यवश कोई परराष्ट्रीय नागरिक अंग्रेज या यूरोपियन 15 अगस्त को किसी प्रान्त में गवर्नर रह जाता है या नियुक्त किया जाता है, तो इसका नतीजा यह होगा कि दिसम्बर में जब विधान बाजाब्ता चालू किया जायेगा वे अपने पदों पर रहेंगे और तब तक रहेंगे जब तक कि इस विधान के अन्तर्गत चुनाव न हो जायें और उनके उत्तराधिकारी पदासीन न हो जायें। अतः श्रीमान्, मेरा यह कहना है कि सर्वसत्ता सम्पन्न सभा होने के नाते तथा शीघ्र ही सर्वसत्ता प्राप्त व्यवस्थापिका होने की अभिलाषा रखने के कारण हम इस स्थिति की कल्पना नहीं कर सकते और न इसे सहन कर सकते हैं। भारत में विदेशी सत्ता का अन्त देखने के लिये हमने कई वर्षों से दशाब्दियों से घोर संघर्ष किया है। कुछ महीने कम पांच साल पहले हमने ''भारत छोड़ो'' का क्रांतिकारी आन्दोलन शुरू किया था और यह भाग्य की ही बात है कि उसी अगस्त महीने में हम अगर पूर्ण स्वतंत्रता नहीं तो औपनिवेशिक स्वराज्य प्राप्त करने जा रहे हैं, और मुझे आशा है कि हमें बहुत कुछ स्वतंत्रता और बहुत कुछ अधिकार प्राप्त हो जायेंगे। इस तरह श्रीमान्, जब अपना गवर्नर नियुक्त करने का अधिकार हमारे हाथ में आ रहा है तो मेरा अपना विचार यह है कि भारतीय राज्य संघ के हमारे अपने नागरिक ही नवीन विधान का प्रयोग आरम्भ होने पर गवर्नर बनाये जायें। परिवर्तन कालीन व्यवस्था या आदेश के इन शब्दों की ओर मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं।

[श्री एच.वी. कामत]

"इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले यदि किसी प्रान्त में.....।" हमें सतत सावधान रहना चाहिये कि इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले सभी प्रांतों में भारतीय नागरिक ही गवर्नर के पदों पर आसीन रहें न कि परराष्ट्रीय नागरिक। क्या हमने इतने कष्ट केवल इसलिये सहे हैं, शासकों से इतनी बार केवल इसलिये संघर्ष किया है कि इन तीखे शासकों को, मिथ्या उपाधिकारियों को तथा विदेशी साम्राज्यवाद के इन तुच्छ भृत्यों को ही अपने प्रांतों में शासन करते देखें? मैं इसका अन्त देखना चाहता हूं। मैं वह दिन नहीं देखना चाहता जबकि इस विधान के प्रयोग में आने के बाद भी वही यूरोपियन, जिनसे हम पांच साल पहले भारत छोड़ने की मांग करते थे, हमारे कुछ प्रांतों में शासक बने रह जायें। कुछ दिनों पहले एक सर्वसाधारण नागरिक को यह समझाने में मुझे बड़ी माथापच्ची करनी पड़ी कि लार्ड माउन्टबैटन को क्यों भारतीय उपनिवेशों के गवर्नर-जनरल बनाने की सिफारिश की गयी। कूटनीति, राजनीतिक कौशल युक्ति के विचार से प्रेरित होकर ही हमारे नेताओं ने भारत के गवर्नर-जनरल के पद के लिए लार्ड माउन्टबैटन के नाम की सिफारिश की है और हम उनके इस विचार को तो समझ सकते हैं और उसकी तारीफ करते हैं; पर साधारण नागरिक तो यह सब नहीं समझ सकता। यह सच है कि हम सर्वसाधारण नागरिकों के मतानुसार ही सदा नहीं चल सकते पर साथ ही यह भी सच है कि गणतंत्र में सर्वसाधारण नागरिकों के मनोभावों को भी स्थान दिया जाता है। गणतंत्र के स्वरूप निर्माण में सर्वसाधारण नागरिक के मनोविचारों की छाया का जबरदस्त हाथ हुआ करता है। अन्त में मैं माननीय प्रस्तावकर्त्ता से तथा इस सभा से अनुरोध करूंगा कि वे इन बातों पर ख्याल करें और ऐसा करें कि इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले किसी प्रांत का गवर्नर अभारतीय न हो बल्कि अपने आदमी, अपने नागरिक ही गवर्नर रहें। हम सर्वसाधारण नागरिक के मन में केवल तभी वांछनीय मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया पैदा कर सकते हैं जब हम इन बातों की ओर ध्यान दें। यदि स्वातंत्र्य सूर्य के उदित होने पर भी दुर्भाग्यवश भारत भूमि में हम एक विदेशी को ही शासक या गवर्नर की तरह अकड़ कर चलते देखेंगे तो हम यह वांछनीय मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया नहीं उत्पन्न कर सकते। हमारा "भारत छोड़ो" संबंधी प्रस्ताव तेजी से फलीभूत होता जा रहा है। ऐसे समय में सर्वसाधारण नागरिकों के मन में हमें यह धारणा पैदा करनी चाहिये कि "भारत छोड़ो" आन्दोलन की समाप्ति पर, जिसे हमने आज से पांच साल पहले आरम्भ किया था, सारे अधिकार हमारे हाथ आ गये हैं। नान्य: पन्था अयनाय विद्यते। जब हम शीघ्र ही स्वाधीनता का आलोक प्राप्त करने जा रहे हैं तो हमें इस बात के लिये महान् प्रयास करना चाहिये। सर्वसाधारण भारतीय यह समझे

कि अब हम ही अपने भाग्य विधाता हैं और हम पर किसी विदेशी का शासन नहीं रह गया है। जितने ही जल्दी हम इस दशा में प्रयास करेंगे; उतना हमारा और हमारे मुल्क का भला है। यदि हम इसमें सफल होते हैं तो शक्ति समुन्नति करने का बहुत कुछ काम कर लेते हैं जो भारतीय राज्यसंघ के निर्माण के लिये परमावश्यक है। मुझे विश्वास है कि ऐसा कहकर मैं इस सभा के बहुमत की भावना ही व्यक्त कर रहा हूं। मैं सभा की गतिविधि को ध्यान से देख रहा हूं। हमें इस बात की पूरी सावधानी रखनी चाहिये कि प्रांतीय विधान के अमल में आने के समय किसी भी प्रांत में कोई भी विदेशी गवर्नर न रहे। उस दिन के बाद किसी भी विदेशी को गवर्नर रहने देना बड़ी भूल होगी।

श्रीमान्, केवल उन शब्दों को कहकर ही अपनी बात समाप्त कर दूंगा जो एक अन्य ऐतिहासिक अवसर पर कहे गये थे और सभा से अनुरोध करूंगा कि वह भी विदेशियों से कह दे: ''पांच साल पहले हमने आपको भारत छोड़ने के लिये कहा था। आज हम और अधिक अधिकार और क्षमता प्राप्त कर आपसे कहते हैं कि भगवान के लिये आप यहां से चले जाइये। भारत को उसके भाग्य पर छोड़ दीजिये। उसे एक दृढ़ स्वतंत्र और सर्वसत्तासंपन्न प्रजातंत्र बनने दीजिये।'' ''जयहिंद''।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** परिवर्तनकालीन व्यवस्थाओं के सम्बन्ध में मैं चन्द शब्द कहना चाहता हूं। ये व्यवस्थायें पूर्णत: परिवर्तनकालीन ही होनी चाहिये। मेरी अपनी यही इच्छा है। विधान निर्माण से सम्बन्ध रखने वाले सभी लोग शीघ्र आवश्यक कामों को समाप्त कर देंगे ताकि 26 जनवरी को हमें भारतीय स्वतंत्रता प्राप्त हो जाये और उस दिन से हम स्वतंत्र विधान के अन्तर्गत कार्य करना प्रारंभ कर दें। जहां तक वर्तमान गवर्नरों के बने रहने की बात है, मुझे विश्वास है कि वे तभी तक गवर्नर रहेंगे जब तक कि जरूरत है, उसके बाद नहीं। जब नया विधान अमल में आ जायेगा तो मुझे उम्मीद है कि अपने राष्ट्र के नागरिक ही गवर्नर नियुक्त किये जायेंगे।

तीसरी बात यह है कि विधान बन जाने के बाद नया चुनाव करने में तथा निर्वाचन क्षेत्रों को बनाने में वुछ समय लगेगा। इन सभी कामों में कुछ समय लगेगा। मैं कोई निश्चित तिथि तो नहीं निर्धारित करना चाहता जिसके अंदर नवीन विधान के अनुसार चुनाव कर लिये जायें। पर साथ ही मैं इस बात पर जरूर जोर देता हूं कि नया विधान बन जाने के बाद हमें अवश्य ऐसा करना चाहिये। छ: माह के अंदर उससे ज्यादा नहीं, नवीन विधान पूरी तरह काम करने लगे। विधान निर्माण

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

के पहले भी, चूंकि हमने बालिग मताधिकार का सिद्धांत स्वीकार कर लिया है, हमें वर्तमान प्रांतीय सरकारों को आदेश दे देना चाहिये कि वे प्रत्येक नगर और ग्राम के बालिगों की वोटर सूची तैयार करें। उसके बाद निर्वाचन क्षेत्रों को बनाना होगा। हमें इस दिशा में कोई भी प्रयास नहीं छोड़ना चाहिये और हरचंद यह कोशिश करनी चाहिये कि नवीन विधान यथा-शीघ्र प्रयोग में आये। इन शब्दों के साथ मैं इन परिवर्तनकालीन व्यवस्थाओं का समर्थन करता हूं।

***अध्यक्षः** और भी कोई सदस्य इस सम्बन्ध में बोलना चाहते हैं?

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसाः जनरल): श्रीमान्, मैं माननीय सरदार पटेल को धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने कम से कम समय में रिपोर्ट तैयार कर ली है। बधाई देने के साथ मैं यह कहूंगा कि नव-निर्मित विधान के अंतर्गत प्रांतों को उससे कम अधिकार दिये गये हैं जो उन्हें सन् 1935 ई. के एक्ट द्वारा प्राप्त थे।

हम तो यह आशा करते हैं कि नये विधान में हुकूमत जनता की और जनता के लिये होगी। अब इन नारों का कोई मतलब नहीं रह जायेगा, यदि प्रांतों में वहां के जननायकों का गवर्नर न रहे। श्रीमान्, इस अंतर्काल को आज से लेकर नवीन निर्वाचन तक के समय को सिविल सर्विस वाले व्यक्तियों को ही गवर्नर रखकर हमें व्यर्थ या कष्ट प्रदत्त नहीं बना देना चाहिये। लार्ड माउन्टबैटन को गवर्नर जनरल बनाने का जो निर्णय किया गया है, मैं उसका समर्थन करता हूं। इसके लिये संभव है कि कोई गंभीर कारण और औचित्य हो। इस मामले में समस्त देश नेताओं के साथ है। पर श्रीमान्!, यही बात प्रांतों में नहीं की जा सकती। मैं यहां राष्ट्रीय नागरिक और परराष्ट्रीय नागरिक के बीच अंतर की बात बताने के लिये नहीं खड़ा हुआ हूं। मैं इस बात से सहमत नहीं हूं कि वे लोग जो जनता के नौकर (Public Servants) थे, गवर्नर पद पर कायम रहें। 'इंडियन सिविल सर्विस' के अधिकतर सदस्य भारतीय दृष्टिकोण नहीं रखते और उनको हम किसी भी अर्थ में जनता का नौकर नहीं कह सकते। इस हालत में मैं यह कहूंगा कि देश के लिये यह सहन करना बड़ा ही कठिन होगा कि प्रांतीय शासन व्यवस्था में अब भी वही सिविल सर्विस के आदमी कायम रखे जायें। मुझे विश्वास है कि हमारे नेता यह भूल न करेंगे।

इस कथन के साथ श्रीमान्, मैं प्रस्ताव का पूर्ण समर्थन करता हूं और समिति को बधाई देता हूं कि उसने एक ऐसी रिपोर्ट उपस्थित की जिस पर सभा इतनी एकमत थी कि उसने इतने जल्द उसे मंजूर कर लिया।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** अध्यक्ष महोदय, खंड 1 की तीसरी पंक्ति में मैं एक शाब्दिक परिवर्तन का सुझाव देता हूं। ''shall continue'' शब्दों की जगह में ''may be continued'' रखना चाहता हूं। ''इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले यदि किसी प्रांत में कोई व्यक्ति गवर्नर के पद पर हो तो वह पदासीन रखा जा सकता है''–मैं खंड का रूप यह चाहता हूं। इसके बाद ''और'' शब्द के बाद ''when so continued'' शब्द रखना चाहता हूं। ये केवल शाब्दिक परिवर्तन हैं।

मैं सभा को यह याद दिलाना चाहता हूं कि हमारे कई मित्र जिन्होंने अभी स्वास्तिवाचन मूलक भाषण दिये हैं, शायद यह भूल गये हैं कि एक खंड पर विचार करना अभी बाकी है, और वह है खंड 15। यह विवादास्पद खंड है और इसको तय करने में कुछ समय लगेगा।

***श्री सी. सुब्रह्मण्यम** (मद्रास: जनरल): ''पंदासीन रखा जा सकता है'' आप यह रखना चाहते हैं, पर किसके द्वारा? अधिकारी कौन होगा जो नवीन विधान के अंतर्गत उसे गवर्नर पद पर पदासीन रहने देगा?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** अवश्य ही वह भारतीय सरकार है जिसे गवर्नर को नियुक्त करने का अधिकार है। इस सम्बंध में कोई कठिनाई नहीं है।

***श्री एच. वी. कामत:** ''may be continued'' क्यों रखते हैं? ''may continue'' क्यों नहीं रखते।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** यदि आप चाहते हैं ''may continue'' ही रखिये।

***डा. पी. एस. देशमुख** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): ''may be continued'' रखना बेहतर है। ''may continue'' रखने से तो यह अर्थ निकलेगा कि उसे पदासीन रहना चाहिये और उससे श्री कामठ का मूल अभिप्राय ही खत्म हो जाता है। ''may be continued'' का अर्थ होगा कि यह पदासीन रहेगा, पर तभी जब सरकार का हुक्म हो।

***अध्यक्ष:** इस शाब्दिक परिवर्तन के साथ मैं प्रस्ताव पर मत लेता हूं:

''shall continue'' की जगह पर ''may be continued'' रखा जाये और बाद में ''और'' शब्द के बाद ''when so continued'' रखा जाये।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** श्री मुंशी, आपने यह प्रस्ताव रखा था कि खंड 3 हटा दिया जाये। मुझें खेद है कि मैंने उस पर मत नहीं लिया, पर मैं समझता हूं कि वह मंजूर है।

प्रस्ताव मंजूर हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं समूचे प्रस्ताव पर इस संशोधन के साथ, कि खंड हटा दिया जाये, मत लेता हूं; यह इसलिये कि कुछ गलतफहमी हो गयी थी।

भाग 4 अपने संशोधित रूप में स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने एक संशोधन की सूचना दी है।

(संशोधन नहीं पेश किया गया।)

***अध्यक्षः** एक खंड और था जो छूट गया था; वह था खंड 15। अब हम उसको लेते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं प्रस्ताव करता हूं।

''15 (1) अपने उत्तरदायित्वों को पूरा करने में गवर्नर का निम्नलिखित विशेष उत्तरदायित्व होगा, अर्थात प्रान्त या उसके किसी भाग की शांति को गम्भीर संकट में पड़ने से बचाना।

(2) अपने विशेष उत्तरदायित्व को पूरा करने में गवर्नर अपने विवेक से काम करेगाः

परंतु शर्त यह है कि यदि किसी समय अपने विशेष उत्तरदायित्व को पूरा करने में वह यह समझे कि कानून द्वारा व्यवस्था करना आवश्यक है, लेकिन ऐसे कानून की व्यवस्था प्राप्त करने में असमर्थ हो तो वह राज्य संघ के अध्यक्ष के पास एक रिपोर्ट भेजेगा जो उस पर ऐसी कार्यवाही करेगा जिसे वह अपने आकस्मिक परिस्थिति सम्बन्धी अधिकारों के अधीन उचित समझे।''

माननीय सदस्यों को मेरा वह प्रारंभिक भाषण देखना चाहिये जो इस सम्बन्ध में मैंने दिया था। गवर्नर के निजी विवेक सम्बंधी अधिकारों का प्रश्न महत्त्वपूर्ण है और उस पर बड़ी सावधानी से विचार करना होगा। एक तरफ तो इससे मंत्रिमंडल के अधिकारों में कमी आ जाती है। गवर्नर को नौकरियों पर कोई नियत्रंण

नहीं प्राप्त है और अगर उसके विवेक सम्बंधी उत्तरदायित्व के निर्वाह के लिये नौकरियों पर उसे नियंत्रणाधिकार दे दिया जाता है तो यह कल्पना करना भी कठिन है कि मंत्रिमंडल क्या करेगा, और यह तो एक तरह से चालू कानून की दफा 93 को लागू करना होगा।

दूसरी ओर देशव्यापी स्थिति को देखते हुये यह ख्याल भी किया जाता है कि आज देश में जो कठिन स्थिति पैदा हो गई है उसके निराकरण के लिये गवर्नर को विशेष उत्तरदायित्व प्रदान करने की व्यवस्था होनी ही चाहिये। इन सब बातों को देखते हुए इस खंड पर गंभीरतापूर्वक विचार करना आवश्यक है। आशा है कि बहस-मुबाहिसे के सिलसिले में सभी प्रकार के दृष्टिकोण सामने आ जायेंगे। इसलिये मैं इस प्रस्ताव को सभी की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

*__माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू__ (संयुक्त प्रांत: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं सहर्ष पूर्वक यह सुझाव देता हूं कि यह सब हम सबों के लिये हितकर होगा यदि हम इस पर विचार कल के लिये स्थगित कर दें। हमारे सामने एक नया संशोधन है जिसकी सूचना भी श्री मुंशी ने दी है और मैं यह वांछनीय समझता हूं कि इस पर सोचने का हमें कुछ समय दिया जाये। इसमें कोई शक नहीं कि हम इस प्रश्न पर कई दिनों से सोच रहे हैं। पर हमारे सामने ठीक-ठीक शक्ल में ऐसा कोई सुझाव नहीं था जैसा कि श्री मुंशी के संशोधन में है। इसलिये मेरा सुझाव है कि हम इस पर कल विचार करें। 12½ बज चुके हैं और अगर हम विचार कल को स्थगित रखते हैं तो इससे सभा का आधे घंटे से ज्यादा समय व्यर्थ नहीं जाता है। आशा है, श्रीमान्, मेरा संशोधन स्वीकार करेंगे और सभा भी स्वीकार करेगी।

*__अध्यक्ष:__ मैं यह सुझाव देता हूं कि बजाय इसके कि हम आधे घंटे का समय व्यर्थ जाने दें, हम आज अपने संशोधन पेश कर दें, और उन पर कल विचार हो, यदि सभा इसे चाहे तो। इस तरह से सदस्यों को यह अवसर मिल जायेगा कि वे संशोधनों पर तथा उनके उपस्थित करने वाले सदस्यों के भाषणों पर विचार कर सकें, यदि सभा इसे स्वीकार करे।

*__माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू:__ क्या आपका यह सुझाव है कि संशोधन तो आज पेश कर दिये जायें और उन पर भाषण कल हों?

*__अध्यक्ष:__ यदि कोई संशोधनकर्त्ता सदस्य यह अधिकार चाहते हैं तो उन्हें यह दूंगा।

***डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई: जनरल): आज इस पर अंतिम रूप से विचार नहीं होना चाहिये।

***अध्यक्ष:** पहला संशोधन है सर्वश्री अजीत प्रसाद जैन, खुरशीदलाल तथा गोपीनाथ श्रीवास्तव का।

(यह संशोधन पेश नहीं किया गया।)

(सर्वश्री के. संतानम्, कालावेंकट राव, एम. अनन्तशयनम् आयंगर, शिब्बनलाल सक्सेना और पं. गोविन्दवल्लभ पंत ने अपने संशोधन उपस्थित नहीं किये।)

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बम्बई: जनरल): श्रीमान् मेरा प्रस्ताव है कि ''खंड 15 के उपखंड 2 का शर्तिया फिकरा निकाल दिया जाये और निम्न उपखंड बढ़ा दिये जायें:

''(3) यदि अपने विशेष उत्तरदायित्व को पूरा करने में गवर्नर को इस बात का संतोष हो जाये कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गयी है जिसमें शीघ्र कार्यवाही की जानी चाहिये तो वह एक घोषणा द्वारा उन सभी अधिकारों को स्वयं ग्रहण कर लेगा जो सिवाय हाईकोर्ट के किसी प्रान्तीय सभा या अधिकारी को प्राप्त हैं या उसके द्वारा प्रयोग में लाये जा सकते हैं।

(4) घोषणा राज्य संघ के अध्यक्ष को शीघ्र ही भेज दी जायेगी जो उस पर ऐसी कार्यवाही करेंगे जिसे वह अपने आकस्मिक गम्भीर स्थिति सम्बन्धी अधिकारों के अन्तर्गत आवश्यक समझें।

(5) घोषणा निकलने के बाद दो सप्ताह बीतते ही वह प्रयोग में न रह जायेगी। यदि इससे पहले गवर्नर इसका खंडन न कर दे या राज्य संघ के अध्यक्ष अपने आकस्मिक गम्भीर स्थिति सम्बन्धी अधिकारों के अन्तर्गत उसका खंडन न कर दें, जो भी पहले हो जाये।''

***अध्यक्ष:** अब पं. हृदयनाथ कुंजरू अपना मन्तव्य व्यक्त करेंगे।

***पं हृदयनाथ कुंजरुः** अध्यक्ष महोदय, मेरा संशोधन जिसकी मैंने सूचना दी है, यों है किः

''खंड 15 के बदले निम्नलिखित अंश रखा जायेः

'जब भी गवर्नर को इसका निश्चय हो जाये कि प्रांत या उसके किसी भाग की शांति पर जबरदस्त खतरा है तो वह अपने विवेक से राज्य-संघ के अध्यक्ष को इसकी सूचना दे सकता है।

नोटः–राज्य संघ के अध्यक्ष उस सूचना को पाने पर ऐसी कार्यवाही कर सकते हैं जिसे वे अपने आकस्मिक गंभीर स्थिति सम्बन्धी अधिकार के अंतर्गत जरूरी समझें।' ''

श्रीमान् इस सम्बन्ध में मैं अपना भाषण कल दूंगा क्योंकि सभी संशोधनों के पेश कर लिये जाने पर सभी बातों पर विचार करने का मुझे मौका मिलेगा।

***अध्यक्षः** श्री मुंशी?

श्री के.एम. मुंशीः श्रीमान्, यह संशोधन तो श्री गुप्ते के संशोधन को ही और विस्तृत बनाता है। संशोधन पर मुझे जो कुछ भी कहना है, मैं कल कहूंगा।

***श्री एम.एस. अणेः** श्रीमान्, एक वैधानिक आपत्ति है। श्री मुंशी का संशोधन तो पं. गोविन्दवल्लभ पंत के संशोधन पर है। पर चूंकि पं. पंत ने अपना संशोधन पेश नहीं किया, श्री मुंशी के संशोधन उपस्थित किये जाने का प्रश्न ही नहीं उठता।

***अध्यक्षः** मैं यह बता दूं कि पं. कुंजरू ने एक संशोधन रखा है जो अक्षरशः पं. पंत के संशोधन से मिलता है।

***श्री एम.एस. अणेः** उस हालत में यहां शब्दों में परिवर्तन होना चाहिये, ''पं. हृदयनाथ कुंजरू ने एक संशोधन रखा है'' यों होना चाहिये।

***श्री के.एम. मुंशीः** मालूम होता है कि अणे साहब ने कागज को ठीक-ठीक नहीं पढ़ा है। मैंने दो संशोधन रखे हैं एक तो पं. पंत के संशोधन पर और दूसरा श्री गुप्ते के संशोधन पर। अब चूंकि पहला संशोधन नहीं पेश किया गया है और श्री गुप्ते ने अपना संशोधन पेश किया है, इसलिये बावजूद श्री अणे की आपत्ति के, मैं नियम के अंदर हूं। संशोधन यह हैः

''खंड 15 के बदले में निम्नलिखित अंश रखा जाये :

'1. जहां किसी प्रांत के गवर्नर को निजी विवेक से इस बात का निश्चय हो जाये कि ऐसी गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो गयी है जिससे

[श्री के.एम. मुंशी]

प्रान्त की शान्ति को जबर्दस्त खतरा है और धारा 9 की व्यवस्थाओं के अनुसार मंत्रिमंडल की सलाह से प्रान्तीय सरकार का चलाना सम्भव नहीं है, तो वह घोषणा द्वारा सरकार के सभी या किसी भी कर्तव्य को तथा उन सभी अधिकारों को या उनमें से किसी एक को जो प्रान्तीय संस्था या अधिकारी को प्राप्त हैं या जिनका वे प्रयोग कर सकते हैं, स्वयं ग्रहण कर सकता है। इस घोषणा में आकस्मिक स्थिति तथा परिणामवर्ती स्थिति सम्बन्धी आदेश रखे जा सकते हैं जो घोषणा की उद्देश्य सिद्धि के लिये उसे आवश्यक और वांछनीय मालूम हों और ऐसे आदेश भी जिनसे इस एक्ट के प्रान्तीय संस्था या अधिकारी से सम्बन्ध रखने वाले आदेशों का प्रयोग पूर्णतः या अंशतः स्थगित किया जाता हो:

किन्तु शर्त यह है कि इस उपधारा की किसी भी बात से गवर्नर को यह अधिकार नहीं प्राप्त होगा कि वह हाईकोर्ट को प्राप्त या उसके द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले अधिकारों में से किसी को स्वयं ग्रहण करें या इस एक्ट के हाईकोर्ट सम्बंधी आदेश का प्रयोग पूर्णतः व अंशतः स्थगित करें।

2. **गवर्नर इस घोषणा की सूचना फौरन राज्य-संघ के अध्यक्ष को देगा जो उसके पाने पर ऐसी कार्यवाही कर सकते हैं, जिसे वह आकस्मिक स्थिति सम्बन्धी अधिकारों के अन्तर्गत उचित समझें।**

3. **दो सप्ताह बीतते ही घोषणा का प्रयोग में आना बन्द हो जायेगा, यदि उससे पहले स्वयं गवर्नर या राज्य संघ के अध्यक्ष इसका प्रत्याख्यान न कर दें'।''**

***श्री एच.वी. कामतः** श्री कुंजरू की कानूनी और वैधानिक योग्यता के प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हुए भी मैं यह कहूंगा कि यहां 'satisfied in his discretion' यह शाब्दिक उपयुक्त नहीं है। अपने विवेक से कोई व्यक्ति कुछ कर सकता है पर ''अपने विवेक से संतुष्ट हो जाये'' यह कहना अस्वाभाविक-सा है।

***अध्यक्षः** इस पर विचार अब हम कल के लिये स्थगित रखेंगे।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** श्री कामठ की बात के संबंध में हम कल प्रकाश डालेंगे।

***अध्यक्षः** अब हम एजेंडा के दूसरे विषय पर विचार प्रारंभ कर सकते हैं, यह है संघ-विधान संबंधी समिति की रिपोर्ट। पं. नेहरू अब अपना प्रस्ताव पेश करेंगे।

***श्री एच.वी. कामतः** राष्ट्रीय पताका के संबंध में पं. नेहरू जो प्रस्ताव पेश करने वाले हैं उसकी सूचना हमें कल रात को मिली। कृपया यह बताइये कि इस प्रस्ताव पर आप संशोधन कब तक लेंगे?

***अध्यक्षः** चूंकि प्रस्ताव की सूचना आपको कल रात को मिल चुकी थी, आपको अब तक अपना संशोधन दे देना चाहिये था। अस्तु, यदि आपने अब तक संशोधन नहीं भेजा है तो आज शाम 5 बजे दे दीजिये।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रान्तः मुस्लिम): संघ-विधान सम्बन्धी रिपोर्ट पर मेरा एक संशोधन है, पर मैं उसका जिक्र नहीं पाता हूं। डा. देशमुख का एक संशोधन है। अपना संशोधन भी मैंने इसीके साथ दिया था।

***अध्यक्षः** ये संशोधन मेम्बरों में घुमा दिये गये हैं, जैसा कि सदस्य जानते हैं। यह संशोधन शनिवार को दोपहर बाद देर से मिला होगा। पर सभी संशोधन यहां रख दिये गये हैं।

***मौलाना हसरत मोहानीः** श्री देशमुख के संशोधन के दो दिन पहले ही मैंने अपना संशोधन श्री आयंगर को दे दिया था। कार्यक्रम में यह जरूर होना चाहिये और सभी सदस्यों के सामने यह आना चाहिये।

***अध्यक्षः** जब हम उस पर आयेंगे तो विचार करेंगे।

संघ-विधान सम्बन्धी सिद्धान्तों की रिपोर्ट

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** मैं प्रस्ताव रखता हूं किः

''निश्चय किया जाता है कि विधान-परिषद अपने 30 अप्रैल, सन् 1947 ई. के प्रस्तावानुसार नियुक्त समिति द्वारा उपस्थित की हुई संघ-विधान के सिद्धान्त सम्बन्धी रिपोर्ट पर विचार करे।''

यह रिपोर्ट सदस्यों में वितरित कर दी गयी है और पूरी रिपोर्ट सदस्यों के पास भेज देने के बाद एक पूरक रिपोर्ट यानी पहली रिपोर्ट को बढ़ाकर एक और

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

रिपोर्ट भी सदस्यों को दे दी जा चुकी है। यह पूरक रिपोर्ट पहली रिपोर्ट से कुछ भिन्न है। यानी इसमें कुछ परिवर्तन कर दिये गये हैं। इस तरह सभा के सामने मैं रिपोर्ट को संशोधित रूप में पेश कर रहा हूं। दो दिन पहले मैंने सदस्यों को इस रिपोर्ट के सम्बन्ध में एक नोट भेजा था और उसमें मैंने यह बताया था कि जहां तक प्रस्तावना और खण्ड 1 के भाग का सम्बंध है, वह सब लक्ष्य सम्बंधी प्रस्ताव में आ गया है। वह प्रस्ताव कायम है। उक्त प्रस्ताव के पास हो जाने के बाद देश में कुछ ऐसी राजनैतिक बातें हुई कि उनके परिणामस्वरूप हो सकता है कि कम आवश्यक मामलों में कुछ परिवर्तन करना पड़े।

एक उपसमिति के मस्विदा सम्बन्धी प्रश्न पर विचार करने के लिये कहा गया है। हम लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव को कतई नहीं बदलने जा रहे हैं। मैं जो चाहता हूं, वह यह है कि इसे प्रस्तावना के अनुरूप बना दिया जाये। लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव तो एक ऐतिहासिक चीज है और हम उन सभी सिद्धान्तों पर दृढ़ हैं जो इसमें निर्धारित किये गये हैं। इसे प्रस्तावना के अनुरूप बनाने में कुछ परिवर्तन करने ही होंगे। इस समय, जैसा कि सभा को मालूम है, हम विधान नहीं बनाने जा रहे हैं बल्कि उन सिद्धान्तों को स्थिर कर रहे हैं जिनके आधार पर विधान बनेगा। इसलिये प्रस्तावना का मस्विदा जरूरी नहीं है। हमने सिद्धान्तों को स्थिर कर लिया है। इसलिये मैंने नोट में यह कहा था कि शायद इस मसले पर हम विचार न करें।

दूसरे भाग में नागरिकता सम्बन्धी प्रश्न पर विचार किया गया है और उस पर उस समिति ने अभी अपना अन्तिम फैसला नहीं किया है। तीसरे भाग में मौलिक अधिकारों का जिक्र है और यह सभा उस पर विचार कर उसे स्वीकार कर चुकी है। इसलिये मैं यह सुझाव दूंगा कि अब हम इस रिपोर्ट के भाग 4 अध्याय 1 संघ शासन प्रबन्ध पर विचार कर सकते हैं। भाग 1 और 2 में कुछ छोटी-मोटी बातें हैं जिन पर आपको विचार करना पड़ सकता है। इन एक या दो मामूली बातों पर विचार करना जरूरी नहीं है। बेहतर होगा कि हम भाग 4 पर विचार करना प्रारम्भ करें और बाकी पर बाद में विचार करें।

मैंने अभी-अभी कहा है कि यह सभा मौलिक अधिकारों पर विचार कर उन्हें स्वीकार कर चुकी है। हमने जो कुछ भी पास किया है वह सब अन्तिम रूप से विचार करने के लिये सभा के सामने फिर आयेगा। सभा में कुछ नये सदस्य आ गये हैं और उनमें से कुछ लोगों ने मुझसे कहा कि जब मौलिक अधिकार स्वीकार किये गये थे वो सभा में मौजूद नहीं थे। यह तो बिल्कुल सही है, पर यह हमारे

लिये मुश्किल है कि हम बार-बार पीछे जायें और फिर से काम शुरू करें। मैं इसे ठीक नहीं समझता। पर यह तथ्य है कि सभी बातें अन्तिम रूप से स्वीकार करने के लिये सभा के सामने फिर आयेंगी और प्रत्येक सदस्य का हक होगा कि वह उस समय कोई सुझाव दे या उसके किसी हिस्से में कोई संशोधन रखे। इसलिये श्रीमान्, मेरा सुझाव है कि हम भाग 4 अध्याय 1 पर विचार प्रारम्भ करें। यदि आपके पास छपी प्रति मौजूद है तो आप पृष्ठ 5 पर देखिये। यह भाग शासन प्रबन्ध से शुरू होता है।

रिपोर्ट काफी लम्बी है। रिपोर्ट के अन्त में एक परिशिष्ट दिया गया है जो न्याय विभाग के सम्बन्ध में है। सर्वोच्च न्यायालय की तदुद्देश्य सम्बन्धी समिति की यह रिपोर्ट है। यह केवल आपकी जानकारी के लिये कह रहा हूं क्योंकि, कम या बेशी, ये निर्णय इस रिपोर्ट में आ गये हैं।

चूंकि विधान राष्ट्र का बुनियादी कानून होगा, यह बड़ा ही जटिल और महत्वपूर्ण मसला होगा और स्पष्ट है कि इस बिना पर पूरी तरह और काफी समय तक सोच विचार किये हम इसे जल्दी में नहीं पास करेंगे। मैं सभा को बता दूं कि जहां तक संघ विधान समिति का संबंध था उसने काफी और ध्यान देकर विचार किया और न सिर्फ एक बार बल्कि कई बार। कई मौकों पर हम प्रान्तीय विधान समिति से भी मिले और यह रिपोर्ट हमारे सम्मिलित परामर्श का फल है, पर विशेषतः इसमें संघ-विधान समिति का ही कृतित्व है।

मुझे अभी-अभी संशोधनों की सूची मिली है। इसमें 228 संशोधन हैं। मुझे बताया गया है कि सब मिलाकर संशोधनों की संख्या एक हजार तक पहुंचती है। मैंने अभी तक उनमें से किसी को नहीं देखा है। उनके सम्बंध में अभी विचार करना तो मेरे लिए मुश्किल है। इस सम्बन्ध में मैं सभा की इच्छानुसार चलूंगा।

इस समय अगर मुझे कहना है तो वह यह है कि हम भाग 4 शासन प्रबन्ध से विचार करें। पहली चीज जो आती है वह यह है कि संघ के अध्यक्ष का चुनाव कैसे हो। मैं समझता हूं कि इस सम्बन्ध में कई विचार हैं। सम्भवतः इस खास विषय पर हम अभी विचार करें। यह एक सरल विषय है। इस सम्बन्ध में चाहे जिस तरह के विचार हों पर यह एक सरल प्रश्न है और इस पर हम अभी विचार प्रारम्भ कर सकते हैं, इसलिये नहीं कि इसका कार्यक्रम में पहला स्थान है बल्कि इसलिये कि दूसरे बहुसंख्यक संशोधनों में क्या है, इसे बिना जाने भी हम इस पर विचार कर सकते हैं। इन शब्दों के साथ मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूं।

श्रीमान्, यदि आपकी अनुमति है तो मैं भाग 4 के पहले विषय को लूं।

***अध्यक्षः** मैं पहले इस प्रस्ताव पर कि प्रस्तुत रिपोर्ट पर विचार किया जाये, मत लूंगा।

***मौलाना हसरत मोहानीः** मैं कह चुका हूं कि पेश्तर इसके कि आप इस रिपोर्ट पर विचार करें, मैं कुछ बातें साफ कर लेना चाहता हूं। इस रिपोर्ट में, जिसे वह एक पूरक रिपोर्ट कहते हैं, पं. जवाहरलाल नेहरू ने कुछ सुझाव दिये हैं। ये केवल उनके सुझाव हैं। क्या मेरे लिये या अन्य सदस्यों के लिये यह आवश्यक है कि उनका सुझाव ही किया जाये? मैं खुद तो इनको नहीं मन्जूर करता हूं।

इसके अलावा इसके लिये मेरे पास जबर्दस्त कारण है। अभी उस दिन पं. नेहरू ने कहा था कि हम लोग लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव पास कर चुके हैं और अभी हम लोग जो भी मस्विदा तैयार करेंगे उसमें युक्त प्रस्ताव हमारे सामने रहेगा।

***अध्यक्षः** मौलाना साहब, सीधा-सा प्रस्ताव जो मैं इस समय सभा के सामने रख रहा हूं वह यह है कि समिति की रिपोर्ट पर विचार किया जाये। जब यह प्रस्ताव स्वीकार हो जायेगा तो हम एक-एक करके खण्डों पर विचार करेंगे।

***हाजी अब्दुल सत्तार हाजी इशहाक सेठ** (मद्रासः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, चाहे इस रिपोर्ट पर विचार हो या न हो पर सदस्य तो अपना मत व्यक्त कर ही सकते हैं। इस प्रस्ताव पर बोलने का हक तो हमें है ही। मौलाना साहब इसी प्रस्ताव पर बोल रहे हैं।

***अध्यक्षः** क्या आपका यह कहना है कि रिपोर्ट पर विचार नहीं किया जाये?

***मौलाना हसरत मोहानीः** हां, मेरा यही कहना है। पं. नेहरू कहते हैं कि लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव पहले भी सभा द्वारा स्वीकृत हो चुका है। मैंने कहा कि उस प्रस्ताव में कोई भी बात स्पष्ट रूप से घोषित नहीं की गई है। प्रस्ताव केवल इतना ही कहता है कि लोकतंत्र होगा। लोकतंत्र एकात्मक होगा या संघ मूलक, यह उसमें नहीं कहा गया है। अगर यह संघ मूलक लोकतंत्र होगा तो यह केन्द्र विमुख रहेगा या केन्द्रोन्मुख, यह बात भी यहां स्पष्ट नहीं है। और जब तक हम इन बातों का निर्णय नहीं कर लेते, प्रान्तीय विधान का नमूना निश्चित करना

व्यर्थ है इसलिये मैंने उस दिन अपने भाषण में कहा था कि आप प्रान्तीय विधान में एक बात को रखना तय कर लेते हैं और प्रान्तीय विधान पास कर लेते हैं। और अगर उस सूरत में हम यह संशोधन रखते हैं कि यह संघ राज्य समाजवादी लोकतंत्र होगा तो आप यह कह सकते हैं कि आप ऐसा नहीं कर सकते, क्योंकि यह बात तो पहले ही तय हो चुकी है। हमने प्रान्तीय विधान स्वीकार कर लिया है और अब आपके लिये कोई गुंजायश नहीं है कि इसके खिलाफ कुछ भी कहें।

श्रीमान्, मुझे डर है कि उस हालत में आपके लिये मेरे संघ-विधान सम्बन्धी संशोधन को अनियमित करार दे देना आसान होगा, जैसा कि आपने अभी उस दिन मेरे मित्र मि. तजम्मुल हुसैन द्वारा प्रस्तावित संशोधन के सम्बन्ध में कह दिया था। फिर तो आप यह कह देंगे कि प्रान्तीय विधान मंजूर हो चुका है, इसलिये आपका संशोधन अनियमित है। आप यह कह देंगे कि रिपोर्ट मंजूर हो चुकी है, इसलिये आपका संशोधन कायदे के बाहर है। यदि यह बात मान ली जाये तो मैं इस समय आपत्ति नहीं करूंगा। तब तो मुझे हक मिल जायेगा कि जब खण्डों पर विचार हो तो हम अपने संशोधन पेश करें या मुझे इस बात का पूरा हक होगा कि मैं लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव का भी विरोध करूं। मेरे पास दो कारण हैं एक तो मैंने खुलासा ही कर दिया है कि इससे किसी भी बात का फैसला नहीं होता है।

*__श्री शंकर दत्तात्रेय देव__ (बम्बई: जनरल): हम लोग वक्ता की एक भी बात या उनके एक भी विचार को नहीं समझ सके।

*__अध्यक्ष__ (मौलाना हसरत मोहानी से): कृपया आप ध्वनि विस्तार यंत्र के पास आ जायें।

*__श्री जयनारायण व्यास__ (जोधपुर): एक विधान-सम्बन्धी आपत्ति है, श्रीमान्। माननीय सदस्य ने तो रिपोर्ट पर विचार करना प्रारम्भ कर दिया है। सभा के सामने सवाल यह है कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये या नहीं। इस सवाल पर पहले विचार करना होगा।

*__मौलाना हसरत मोहानी:__ रिपोर्ट पर विचार करने से पहले अध्यक्ष महोदय को कुछ बातों का खुलासा कर देना चाहिये। अगर मैं रिपोर्ट को मंजूर कर लेता हूं तो मुझे बड़ी असुविधा होगी।

*__अध्यक्ष:__ जहां तक मैं समझता हूं, मौलाना साहब यह कहते हैं कि मैं उनको इस समय यह वचन दे दूं कि उनका संशोधन अनियमित नहीं घोषित किया जायेगा।

[अध्यक्ष]

यह साफ है कि जब तक मसला सामने न आ जाये, मैं किसी भी सदस्य को कोई भी वचन नहीं दे सकता। पर आप सभी ने यह देखा होगा कि मैं संशोधन पेश करने की अनुमति देने में बड़ा उदार हूं भले ही संशोधन समय के बाद आया हो, जब तक कि कोई बारीक कानूनी वजह न हो। मैं नहीं समझता कि उनके संशोधन को मैं क्यों अनियमित करार दे दूंगा। इस समय मैं इससे अधिक कुछ नहीं कह सकता। मौलाना साहब जैसा चाहते थे, मैंने एक तरह का वचन उन्हें दिया है। मैं समझता हूं कि सभा की इच्छा यह है कि रिपोर्ट पर विचार प्रारम्भ हो।

***अनेक माननीय सदस्यः** हां, हां।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुरः** जो तजवीज़ आपने रखी है उसके संबंध मे मैं एक शब्द कहना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** मैं इस पर मत ले चुका हूं और वह स्वीकृत हो गया है।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** मेरा सुझाव है कि हम भाग 4 अध्याय 1 से रिपोर्ट पर विचार प्रारम्भ करें।

''खण्ड 1 (1) संघ का प्रधान राष्ट्रपति (प्रेसीडेंट) होगा जो निम्नलिखित व्यवस्था के अनुसार चुना जायेगा।

2-चुनाव निर्वाचक मंडल द्वारा होगा जिसमें ये होंगे-

क-संघ की लोक प्रतिनिधि सभा पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के सदस्य।

ख-सभा प्रदेशों की इकाइयों की व्यवस्थापिकाओं के सदस्य या, जहां व्यवस्थापिका द्विसभामूलक है, उसके नीचे वाली सभा के सदस्य।

प्रदेशों के प्रतिनिधित्व में समता स्थापित करने के लिये उनकी व्यवस्थापिकाओं के मतों को सम्बन्धित प्रदेशों की जनसंख्या के अनुपात से वजन दिया जायेगा।

व्याख्याः प्रदेश, इकाई का मतलब प्रान्त या देशी रियासतों से जो अपने निजी अधिकार के आधार पर संघ की लोक प्रतिनिधि सभा के

लिये प्रतिनिधि चुनते हैं। देशी रियासतों में जहां राज्य-परिषद् कौंसिल आफ स्टेट के प्रतिनिधि निर्वाचन के लिये उनकी गुटबन्दी की गयी है, वहां प्रदेश का मतलब है उस गुट से जो इस तरह बना है और प्रदेश की व्यवस्थापिका का मतलब है उस गुट की सभी रियासतों की व्यवस्थापिकाओं से।

3–राष्ट्रपति का निर्वाचन ग्रुप मत पत्र द्वारा तथा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित मतपद्धति से होगा।

4–उपरोक्त आदेशों के अधीन राष्ट्रपति के निर्वाचन की व्यवस्था, संघ की लोक प्रतिनिधि सभा द्वारा बनाये गये कानून के अनुसार की जायेगी।''

अब श्रीमान्, हमें प्रारम्भ में ही एक बात का निर्णय कर लेना है और वह यह है कि हमारी शासन पद्धति का स्वरूप क्या होगा? क्या हमारी शासन पद्धति ऐसी होगी, जहां मन्त्रिमण्डल पर ही सम्पूर्ण दायित्व है या ऐसी जहां राष्ट्रपति ही शासन व्यवस्था का कर्ताधर्ता होता है, जैसी कि अमेरिका में है? बहुतेरे सदस्य तो सम्भवत: इस अप्रत्यक्ष निर्वाचन की बात देखकर ही उस पर आपत्ति करें और बालिग मताधिकार के आधार पर चुनाव का किया जाना पसन्द करें। इस मसले पर हमने गम्भीर चिन्तन किया है और इस दृढ़ निश्चय पर पहुंचे हैं कि ऐसा करना वांछनीय न होगा। पहले तो इसलिये कि हम, मंत्रिमण्डल मूलक शासन पद्धति पर ही जोर देना चाहते हैं। हम इस बात पर जोर देना चाहते हैं कि वस्तुत: शक्ति मन्त्रिमण्डल और व्यवस्थापिका में सन्निहित है न कि राष्ट्रपति में। पर साथ ही हम यह भी नहीं चाहते थे कि राष्ट्रपति केवल काठ की मूरत हो; यानी नाममात्र का प्रधान हो जैसा कि फ्रांस का होता है। हमने उसे कोई वास्तविक क्षमता तो नहीं दी है पर उसके पद को बड़ी ही मर्यादा और क्षमता सम्पन्न बनाया है। विधान के इस मस्विदे में आप देखेंगे कि अमेरिका के राष्ट्रपति की तरह यह समूची रक्षा सेना का प्रधान नायक है। इसलिये ऐसी हालत में यदि हम बालिग मताधिकार के सिद्धान्त पर उसका निर्वाचन करते और फिर भी उसे यदि कोई वास्तविक अधिकार न देते तो यह बात कुछ नीति विरुद्ध होती, और इसमें बहुत धन, समय और शक्ति लगानी पड़ती, जिसका हमें कोई अनुरूप फल नहीं मिलता। व्यक्तिगत रूप से मैं लोकतंत्रीय पद्धति से पूर्णत: सहमत हूं, पर इसमें अति हो जाती है और मुझे डर होता है कि अगर इतना समय बर्बाद करेंगे तो हमारे पास सिवा इसके कि चुनाव की तैयारी और चुनाव करें और किसी काम के लिये समय न बच पायेगा। शासन-व्यवस्था के लिये हमें काफी चुनाव करने

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

पड़ेंगे। बालिग मताधिकार के सिद्धान्त पर हमें संघीय व्यवस्थापिका का चुनाव करना होगा। और ऊपर से यदि हम यह व्यवस्था भी कर देते हैं कि राष्ट्रपति के चुनाव में भारत का हर वयस्क नागरिक भाग लेगा तो यह बड़ा ही भारी बोझ हो जायेगा। आर्थिक दृष्टि से यह एक बड़ा ही कठिन काम होगा तथा इससे वर्ष भर के लिये हमारे सारे कार्य अव्यवस्थित हो जायेंगे। अमेरिका में राष्ट्रपति के निर्वाचन से वस्तुतः कई महीनों तक बहुत से काम बन्द हो जाते हैं। यह मेरा काम नहीं है कि मैं अमेरिकन पद्धति या किसी अन्य पद्धति की आलोचना करूं। हर देश अपनी इच्छानुसार पद्धति अपनाता है। मैं यह जरूर सोचता हूं जहां अमेरिकन प्रणाली में गुण हैं, वहां अनेक दोष भी हैं। अमेरिका से हमारा कोई मतलब नहीं, इस समय हमारा मतलब है हिन्दुस्तान से और मैं इस बात को खूब समझता हूं कि अगर हम इस देश में इस पद्धति को ही अपनाने की कोशिश करेंगे तो मन्त्रिमण्डल मूलक शासन व्यवस्था को यहां विकसित होने से रोकेंगे तथा अपने समय और शक्ति की बड़ी बर्बादी करेंगे। कहा जाता है कि राष्ट्रपति के निर्वाचन में सम्पूर्ण अमेरिका की सारी शक्ति और सारा ध्यान निर्वाचन में केन्द्रित हो जाता है और इससे देश की एकता को हानि पहुंचती है। एक व्यक्ति समस्त राष्ट्र का प्रतीक बन जाता है। हमारे देश में भी राष्ट्रपति राष्ट्र का प्रतीक होगा, परन्तु मैं समझता हूं कि हमारे राष्ट्रपति का ऐसा निर्वाचन हमारे लिये बुरी बात होगी।

कुछ लोगों ने यह कहा है कि हमने जिस निर्वाचन प्रणाली को रखा है वह जटिल प्रणाली भी क्यों रखी जाये? क्यों न केन्द्रीय व्यवस्थापिका ही राष्ट्रपति चुन ले? अवश्य ही यह बहुत सरल होगा पर इसमें यह खतरा है कि इससे बड़ी संकीर्णता आ जायेगी। केन्द्रीय व्यवस्थापिका में एक दल या गुट प्राधान्य हो सकता है। या यों कहिये कि होगा ही और वह दल या गुट का मंत्रिमण्डल बनायेगा। अगर वह दल या गुट राष्ट्रपति का निर्वाचन करता है तो अवश्य ही वह अपने ही दल के किसी व्यक्ति को राष्ट्रपति चुनना चाहेगा। ऐसा राष्ट्रपति कठपुतली से अन्यथा क्या होगा। राष्ट्रपति और मन्त्रिमण्डल दोनों एक ही बात व्यक्त करेंगे। यदि ऐसा न हो तो भी यह सम्भव है कि राष्ट्रपति उसी दल, गुट या विचार-धारा का प्रतिनिधित्व करेगा जिससे मन्त्रिमण्डल सम्बन्धित हो। परन्तु हमने एक बीच का रास्ता अपनाया है और सम्पूर्ण भारत के सभी प्रदेशों की व्यवस्थापिकाओं के सदस्यों को मतदाता बनने को कहा है; बहुत सम्भव है कि वे लोग अपने ही दल के आदमी को चुने। अवश्य ही इसकी सदा सम्भावना है। जो भी हो केन्द्रीय व्यवस्थापिका द्वारा

राष्ट्रपति चुने जाने की व्यवस्था को संकीर्ण होने के कारण हम एकदम ही नामंजूर कर सकते हैं। राष्ट्रपति का चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर हो, इसके लिये किसी न किसी प्रकार का निर्वाचक मण्डल का बनाना आवश्यक है। यह सुझाव दिया गया है कि हम ऐसा निर्वाचक मण्डल बनायें जिसमें सभी तरह के लोग आ जायें, जैसे म्युनिसिपैलिटी, जिला बोर्ड आदि के सदस्य। मैं समझता हूं कि ऐसा करने में कोई लाभ नहीं है, बल्कि इससे और उलझन पैदा होगी। इससे यह होगा कि निर्वाचक मण्डल बनाने के लिये हमें बहुतेरे छोटे-छोटे चुनाव करने पड़ेंगे। विभिन्न व्यवस्थापिकाओं में तो आपका यह निर्वाचक मण्डल पहले से तैयार कर लिया गया है; अर्थात् सारे भारतवर्ष की व्यवस्थापिकाओं के सदस्यों की सूची प्रस्तुत ही है। शायद उनकी कुल संख्या कुछ हजार हो। यह माना जायेगा कि व्यवस्थापिकाओं के ये सदस्य ऐसी स्थिति में हैं कि वे राष्ट्रपति के निर्वाचन के सम्बन्ध में उम्मीदवार की योग्यता की परख ज्यादा अच्छी तरह कर सकते हैं, बनिस्बत उस वृहदकार निर्वाचक मण्डल के जिसमें म्युनिसिपैलिटी और जिला बोर्ड आदि के सदस्य होंगे। इसलिये सभा से मैं कहूंगा कि इस समिति ने इस सम्बंध में जो व्यवस्था बताई है वह सहज साध्य है और एक सही व्यवस्था है और उसके जरिये हम एक योग्य व्यक्ति को चुन सकेंगे जिसकी क्षमता और प्रतिष्ठा का देश और विदेश दोनों में ही आदर हो।

आप देखेंगे कि यह व्यवस्था चुनने में हमने इस बात का ध्यान रखा है कि मतों को वजन दिया जाये; क्योंकि जैसा कि नोट में समझा गया है, हो सकता है कि व्यवस्थापिकाओं में सम्बन्धित प्रदेश की जनसंख्या के हिसाब से प्रतिनिधित्व न प्राप्त हो। संयुक्त प्रान्त या मद्रास की व्यवस्थापिका में हो सकता है 300 सदस्य हों और करीब 5½ करोड़ या 6 करोड़ आबादी का प्रतिनिधित्व करते हों। मुझे ठीक-ठीक मालूम नहीं है। अन्य-अन्य व्यवस्थापिकाओं में 50-50 सदस्य हों सकते हैं, जो 50 हजार व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करते हों। इन सबके मतों को एक-सा वजन दिया जाये यह बड़ी बेतुकी बात होगी। इसका नतीजा यह होगा कि देश के कुछ छोटे-छोटे प्रदेशों का ही इस मामले में प्राधान्य हो जायेगा। इसलिये मत को वजन देने की बात नहीं रखी गयी है और सावधानी से एक ऐसी योजना बनानी होगी जिससे कि सम्बन्धित प्रदेश की जनसंख्या के अनुपात से ही वहां मत लिये जायें।

इन शब्दों के साथ श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्षः** कल इस प्रस्ताव पर आये हुये संशोधनों को हम लेंगे और इस पर वाद-विवाद प्रारम्भ करेंगे।

[अध्यक्ष]

उठने के पहले मैं एक बात की घोषणा कर देना चाहता हूं। संघ-विधान समिति की रिपोर्ट हमें मिल गयी है और सदस्यों को भी यह भेजी जा चुकी है। सदस्य अपने संशोधन परसों यानी बुधवार ता. 23 जुलाई को 5 बजे शाम तक दे सकते हैं।

***माननीय कुछ सदस्यः** हमें रिपोर्ट की प्रति नहीं मिली है।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि रिपोर्ट सदस्यों को दे दी गई है और वस्तुतः यह दो बार उनमें घुमाई जा चुकी है। फिर भी अगर किसी सदस्य को यह नहीं मिली है तो वे इसे अभी ले सकते हैं।

***माननीय सदस्यगणः** हम आगामी अधिवेशन की समय-सूची जानने के लिये चिन्तित हैं। क्या हम संशोधनों की सूचना बृहस्पतिवार को शाम तक स्थगित रख सकते हैं?

***अध्यक्षः** हां, संघ-विधान समिति की रिपोर्ट पर अपने संशोधन की सूचना आप बृहस्पतिवार, 24 जुलाई शाम के 5 बजे तक दे सकते हैं।

इसके बाद सभा मंगलवार, 22 जुलाई, सन् 1947 ई. के प्रातः 10 बजे के लिये स्थगित हुई।

गोपनीय

परिशिष्ट 'क'

No. CA/63/Cons./47

भारतीय विधान-परिषद्

कौंसिल हाउस

नई दिल्ली, 4 जुलाई, 1947

प्रेषक:

पं. जवाहरलाल नेहरू,

सभापति, संघ-विधान-समिति

सेवा में:

अध्यक्ष,

भारतीय विधान-परिषद्

श्रीमान्,

विधान-परिषद् के 30 अप्रैल, सन्, 1947 ई. के प्रस्तावानुसार संघ-विधान सम्बंधी सिद्धांतों पर रिपोर्ट तैयार करने के लिये माननीय अध्यक्ष ने जो कमेटी नियुक्त की थी उसके सदस्यों की ओर से मैं आपकी सेवा में यह संलग्न स्मृति-पत्र भेजता हूं। इसमें कमेटी की सिफारिशें तथा आवश्यक स्थलों पर व्याख्यात्मक नोट दर्ज हैं।

आपका सेवक

जवाहरलाल नेहरू

सभापति

भारतीय विधान-परिषद्

प्रस्तावाना: भारतीय विधान के सम्बन्ध में स्मृति-पत्र

हम भारतीय जन सर्वसाधारण की भलाई की कामना से अपने चुने हुये प्रतिनिधियों के द्वारा प्रस्तुत विधान बनाते हैं, इसे अपनाते हैं।

भाग 1

राज्य-संघ की अधिकार-गत भूमि तथा उसकी अधिकार-सीमा

(1) राज्य-संघ का नाम और उसका अधिकारान्तर भूमि-प्रदेश: इस विधान के अनुसार स्थापित राज्य-संघ एक सर्वसत्ता-सम्पन्न स्वतंत्र लोकतंत्रीय राज्य होगा और इसका नाम होगा इण्डिया।

सिवाय उन अन्यथा व्यवस्थाओं के जो इस विधान द्वारा या इस विधान या अन्य किसी संधि या समझौते के अन्तर्गत की गयी हो, फिलहाल सूची 1 में जो प्रदेश शामिल किये गये हैं वे राज्य-संघ की अधिकार-सीमा के अधीन होंगे।

[नोटः–इस विधान के अनुसार स्थापित किये जाने वाला राज्य-संघमूलक होगा, इसलिये यहां 'राज्य-संघ' शब्द का प्रयोग किया गया है।]

राज्य के लिये 'इण्डिया' नाम इसलिये सुझाया गया है, यह बहुत संक्षिप्त और व्यापक है।

'सिवाय उन अन्यथा व्यवस्थाओं के .... की गयी हो' शब्दों का रखना आवश्यक है क्योंकि ऐसी देशी रियासतें हो सकती हैं जो संघ में सम्मिलित न होने के कारण सूची 1 में न दर्ज हों, पर कुछ विशेष कार्यो के सम्बन्ध में अपने अधिकार संधि या समझौते के द्वारा सौंप दिये हों।

(2) नये प्रदेश को शामिल करना: राज्य-संघ की लोक प्रतिनिधि सभा समय-समय पर कानून बनाकर सूची 1 में नये प्रदेशों को ऐसी शर्तो पर जिन्हें वह ठीक समझे, सम्मिलित कर सकता है।

[देखियेः–संयुक्त राज्य अमेरिका के विधान की धारा 3 (1) का आर्टिकिल 4 तथा आस्ट्रेलिया विधान की धारा 121 संयुक्त राज्य में यह अधिकार कांग्रेस को प्राप्त है तथा आस्ट्रेलिया में कामनवेल्थ पार्लियामेन्ट को।]

नामकरण के लिये यह बात बता दी जा सकती है कि इस मस्विदे में राज्य संघ के व्यवस्थापक मण्डल को ''पार्लियामेंण्ट'' कहा गया है और प्रदेशों के व्यवस्थापक मण्डल को ''लेजिस्लेचर'' कहा गया है। संघ की पार्लियामेंट में राष्ट्रपति तथा द्विसभात्मक एक राष्ट्रीय परिषद् शामिल होंगे।

(3) नवीन प्रदेशों का निर्माण तथा उनकी सीमा में परिवर्तन संघ की पार्लियामेण्ट कानून बनाकर, प्रत्येक प्रान्त के व्यवस्थापक मण्डल की स्वीकृति से तथा उस कानून से प्रभावित होने वाली प्रत्येक रियासत के व्यवस्थापक मण्डल की स्वीकृति से–

(क) नये प्रदेश का निर्माण कर सकती है;

(ख) किसी प्रदेश का क्षेत्र-विस्तार कर सकती है;

(ग) किसी प्रदेश का क्षेत्र घटा सकती है;

(घ) किसी प्रदेश की सीमा में परिवर्तन कर सकती है;

तथा इसी तरह की स्वीकृति से ऐसी प्रासंगिक और परिणामवर्ती व्यवस्थायें बना सकती है जिन्हें वह आवश्यक और उचित समझे।

[नोट—यह सन् 1935 ई. के एक्ट की धारा 290 के समान है पर क्योंकि इसमें रियासती प्रदेश के प्रांत में सम्मिलित हो जाने की संभावना के संबंध में व्यवस्था की गई है, यह उससे अधिक व्यापक है।]

सूची 1

राज्यसंघ की अधिकार-सीमा के अधीनवर्ती प्रदेश

1. गवर्नरों के प्रान्त

मद्रास,

बम्बई,

पश्चिमी बंगाल,

संयुक्त प्रान्त,

बिहार,

पूर्वी पंजाब,

मध्य प्रान्त और बरार,

आसाम,

उड़ीसा

2. चीफ कमिश्नरों के प्रान्त,

दिल्ली,

अजमेर-मेरवाड़ा,

कुर्ग,

अन्डमान और निकोबार द्वीपसमूह,

पन्थ पिपलोदा।

3. भारतीय रियासतें

(यहां उन भारतीय रियासतों को दीजिये जो संघ में शामिल हो रही हैं या शामिल होने की स्वीकृति दे रही हों।)

(1) एकल रियसतें।

(2) रियासतों के समूह।

[गवर्नरों के तथा चीफ कमिश्नरों के प्रान्त, जो सूची में दिये गये हैं, वो स्वत: भारतीय संघ के अधिकार-क्षेत्र के अन्तर्गत आ जायेंगे। भारतीय रियासतों के सम्बन्ध में इस बात का निश्चय करने के लिये कि उनमें से कौन-कौन सी रियासतें शुरू में सूची में रखी जायें, कोई विधि निर्धारित करनी होगी। सन् 1935 के एक्ट के अनुसार संघ में शामिल होने का प्रमाण वह ''स्वाधिकार-दान-पत्र'' होगा जिसे राजा लोग सम्पादित करेंगे। यदि इस शब्दावली का प्रयोग या इस पद्धति का अपनाना अवांछनीय समझा जाये तो स्वीकृति की कोई विधि निर्धारित करनी होगी।

यदि इस विधान के प्रयोग में आने के पूर्व सूची में दिये हुये किसी प्रान्त का बटवारा हो जाये तो उस हालत में सूची में तद्नुसार परिवर्तन करना होगा।]

भाग 2

नागरिकता

यह भाग नागरिकता सम्बन्धी खण्ड के सम्बन्ध में बनी हुई समिति के निर्णय के अधीन है।

1–नागरिकता: इस विधान के प्रयोग में आने के दिन संघ के अधिकार क्षेत्रान्तर्गत प्रदेशों का अधिवासी प्रत्येक व्यक्ति–

(क) जो उस तारीख से ठीक पहले पांच साल तक, इससे कम नहीं, उन प्रदेशों का साधारण तौर पर बाशिन्दा रह चुका है, या

(ख) जो अथवा जिसके माता पिता या उनमें से कोई इण्डिया में पैदा हुआ हो, वह संघ का नागरिक होगा:

किन्तु शर्त यह है कि ऐसे किसी व्यक्ति को दूसरे राज्य का नागरिक होने के कारण संघीय कानून के अनुसार यह अधिकार होगा कि वह इस खण्ड द्वारा प्रदत्त नागरिकता को अस्वीकार कर सकता है।

व्याख्या: इस खण्ड के अभिप्रायों के लिये–"अधिवासी" का वही अर्थ होगा जो सन् 1925 के भारतीय उत्तराधिकार कानून (Indian Succession Act) में है।

2–इस विधान के प्रयोग में आने के बाद–

(क) हर व्यक्ति जो उन प्रदेशों में पैदा हुआ है जो संघ के अधिकार-क्षेत्र के अन्तर्गत हैं;

(ख) हर व्यक्ति जो संघीय कानून के अनुसार देशीय हो गया हो;

(ग) हर व्यक्ति जिसके माता पिता में से कोई भी उसके जन्म के समय संघ का नागरिक रहा हो,

वह संघ का नागरिक होगा।

3–संघीय नागरिकता की अवाप्ति और परिसमाप्ति के सम्बन्ध में संघीय कानून द्वारा और आदेश बनाये जा सकते हैं।

व्याख्या: जब तक कि प्रसंग (संदर्भ) में अन्यथा आवश्यक न हो, इस विधान में 'संघीय कानून' के अंतर्गत कोई भी वर्तमान भारतीय कानून शामिल है जो संघ के अधिकार-क्षेत्रवर्ती प्रदेशों में प्रयुक्त होता है।

[नोटः–नागरिकता सम्बन्धी व्यवस्थाओं को लेकर निस्संदेह घोर वाद-विवाद चलेगा। वर्तमान मस्विदा तो केवल इसलिये तैयार किया गया है कि इसके आधार पर किया जा सके।]

देखिये–आयरिश फ्री स्टेट के विधान का आर्टिकल 3 जो यों है:

"बिना स्त्री पुरुषगत भेदभाव के इस विधान के प्रयोग में आने के समय आयरिश फ्री स्टेट की अधिकार-सीमा वाले प्रदेश का प्रत्येक अधिवासी व्यक्ति, जो आयरलैंड में जन्मा हो या जिसके माता पिता में से कोई भी आयरलैंड में जन्मा हो या जो आयरिश फ्री स्टेट के अधिकारवर्ती प्रदेश में सात वर्षों से कम

का बाशिन्दा न हो, आयरिश फ्री स्टेट का नागरिक है और आयरिश फ्री स्टेट की अधिकार-सीमा के अन्तर्गत सभी रियायतें उसे प्राप्त होंगी और नागरिकता सम्बन्धी दायित्वों के वह अधीन होगा और वे शर्तें जिनके अधीन आयरिश फ्री स्टेट में नागरिकता की भविष्य में प्राप्ति या समाप्ति होगी, कानून द्वारा निश्चित की जायेंगी।''

खण्ड 1 उपरोक्त व्यवस्था के आधार पर रखा गया है, सिवाय इसके कि बजाय सात वर्ष के यहां सन् 1926 ई. के इण्डियन नैचुरलाइजेशन एक्ट 7 की धारा 3 (1) (ग) के अनसुार पांच वर्ष रखा गया है।

संघ प्रारम्भ में ही सारे इण्डिया पर अपनी अधिकार-सीमा को लागू नहीं करेगा, इस सम्भावना का समुचित ध्यान रखते हुये इस खण्ड की वाक्य-रचना करनी पड़ी है।

इस खण्ड के अनुसार इण्डिया में जन्मा हो और बम्बई का अधिवासी व्यक्ति जो इस नवीन विधान के प्रयोग में आने के समय लण्दन में रहता हो, संघ का नागरिक होगा पर सिंध या बलूचिस्तान का अधिवासी नहीं होगा, अगर संघ प्रारम्भ में ही अपनी सीमा को वहां लागू न करे। पर किसी भी व्यक्ति को अधिकार है कि इस विधान के प्रयोग में आने के पहले, दूसरे इलाके में स्थायी रूप से निवास करके नई नागरिकता के अधिकार प्राप्त करे।

सन् 1925 ई. के इण्डियन सक्सेशन एक्ट के अनुसार हर व्यक्ति का अपना ''मौलिक वासस्थान'' हुआ करता है और नागरिकता के सम्बन्ध में कानूनन उसका यहीं वासस्थान समझा जाता है जब तक कि वह वासस्थान बदल कर नयी नागरिकता न प्राप्त कर ले। संक्षेप में उसका मौलिक वासस्थान वही देश होता है जहां का उसकी पैदाइश के समय उसका पिता अधिवासी हो। दूसरे देश में अपना स्थायी निवास बनाकर वह वहां का अधिवासी बन सकता है। एक्ट में एक ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा कोई व्यक्ति ब्रिटिश इण्डिया की हुकूमत की ओर से प्रान्तीय सरकार द्वारा नियुक्त किसी कार्यालय में इस आशय की एक घोषणा कि वह ऐसी नागरिकता प्राप्त करना चाहता है, तैयार करके तथा उसे वहां जमा करके ब्रिटिश इण्डिया की नागरिकता प्राप्त कर सकता है। पर शर्त यह है कि वह इस घोषणा की तिथि से एक वर्ष पूर्व तक ब्रिटिश इण्डिया में रह चुका हो। साधारणत: पत्नी की नागरिकता उसके विवाहित जीवनकाल में वही होगी जो उसके पति की होगी। कोई भी व्यक्ति जो इस समय समझ लीजिये, हैदराबाद में रहता है

और दिल्ली की नागरिकता प्राप्त करना चाहता है तो इस विधान के प्रयोग में आने के पहले या तो दिल्ली में अपना स्थायी निवास बनाकर ऐसा कर सकता है या इण्डियन सक्सेशन एक्ट की उपरोक्त व्यवस्था में बताई विधि के अनुसार चलकर ताकि इस विधान के प्रयोग में आने के दिन वह 'संघ की अधिकार सीमा के अन्तर्गत प्रदेश' का अधिवासी हो जाये।

खण्ड 2 और 3 में वही व्यवस्थायें हैं जिनका तत्सम्बन्धी समिति ने सुझाव दिया है। अगर खण्ड 3 के अनुसार हम मसले को संघ-कानून पर छोड़ने के लिये रजामन्द हों तो फिर खण्ड 2 जरूरी नहीं है। इस सम्बन्ध में Calcutta Weekly Notes में प्रकाशित निम्नलिखित विचार के समर्थन में बहुत कुछ कहा जा सकता है:

"यह सम्भव नहीं है कि विधान द्वारा इस बात की विस्तृत व्याख्या की जाये कि राष्ट्रीयता की क्या शर्तें होंगी चाहे वह जन्म या देशीयकरण के आधार पर मानी जायें। अगर विधान में इसके लिये कुछ शर्तें निश्चित कर दी जाती हैं तो इससे भविष्य में बनाये जाने वाले कानूनों के भाष्य को लेकर, जो इन शर्तों के प्रतिकूल अथवा उनसे किसी तरह भिन्न दिखाई दे सकते हैं कठिनाई उपस्थित हो सकती है। उदाहरण के लिये राष्ट्रीयता सम्बन्धी खण्ड के उस मस्विदे को ही लीजिये जो विधान-परिषद् के सामने पेश है। उसमें कहा गया है कि राज्य संघ में जन्मा कोई भी व्यक्ति राज्य-संघ का नागरिक होगा। परन्तु राज्य-संघ के उन स्त्री और पुरुष नागरिकों के सम्बन्ध में क्या होगा जो विदेशी पुरुष और स्त्री से विवाह कर लें? क्या राज्य संघ की व्यवस्थापिका को यह अधिकार होगा कि वह ऐसा कानून बनावे कि स्त्री तो राज्य-संघ की नागरिकता से वंचित हो जायेगी और विदेशी पत्नी यहां की नागरिकता प्राप्त कर लेगी (जैसा कि बहुत से देशों में होता है)? ये बड़े जटिल प्रश्न हैं और पहले इसके कि विधान में इस सम्बन्ध में हम कोई कठोर खण्ड रखें इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार कर लेना जरूरी है। इसलिये हमारी राय में यह बेहतर होगा कि यह बात साफ तौर पर बता दी जाये कि विधान के प्रयोग में आने के समय भारतीय राज्य-संघ के कौन लोग नागरिक होंगे, जैसा कि आयरिश फ्री स्टेट के विधान में है और यह बात राज्य-संघ पर छोड़ दी जाये कि जातीयता सम्बन्धी कानून की व्यवस्था वह प्राइवेट अन्तर्राष्ट्रीय कानून के सर्वसम्मत सिद्धान्तों के अनुसार स्वयं कर ले।" (Calcutta Weekly Notes Vol. LI, No. 27, May 26, 1947)

इसी पत्र ने अपने बाद के दो अंकों में (संख्या 28 और 29, ता. 2 जून तथा 9 जून, 1947) खण्ड 2 के फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले कई प्रश्नों की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। सब बातों को देखते हुये यही अच्छा होगा कि इस खण्ड को बिल्कुल ही हटा दिया जाये और खण्ड 3 के अनुसार इन सभी बातों की व्यवस्था संघ-कानून पर छोड़ दी जाये।

भाग 3

मौलिक अधिकार तथा राज्य की नीति के सम्बन्ध में निर्देशात्मक सिद्धान्त

1. मौलिक अधिकारः [इस स्थल पर विधान-परिषद् द्वारा स्वीकृत मौलिक सिद्धांतों को और राज्य की नीति के सम्बन्ध में निर्देशात्मक सिद्धांतों को लिपिबद्ध कर दीजिये।]

भाग 4

अध्याय 1

संघ का शासन प्रबन्ध

1. राज्य संघ का प्रधानः (1) राज्य-संघ का प्रधान होगा राष्ट्रपति, जिसका निर्वाचन निम्नलिखित व्यवस्था के अनुसार होगा।

(2) निर्वाचन निर्वाचक-मण्डल द्वारा होगा जिसमें ये होंगेः

(क) राज्य-संघ की पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के सदस्य, तथा

(ख) सभी प्रदेशों की व्यवस्थापिकाओं के सदस्य अथवा जहां की व्यवस्थापिका द्विसभात्मक है, नीचे वाली सभा के सदस्य।

इकाइयों के प्रतिनिधित्व सम्बन्धी अनुपात में एकरूपता रखने के लिये, प्रादेशिक व्यवस्थापिका (Unit Legislative) के वोटों को सम्बन्धित इकाई की जनसंख्या के अनुपात से वजन दिया जायेगा।

व्याख्याः एक इकाई का अर्थ है एक प्रांत या भारतीय रियासत से, जो निजी अधिकार के नाते संघ-पार्लियामेंट के लिये अपने सदस्य चुनती है। उन भारतीय रियासतों में, कौंसिल आफ स्टेट के प्रतिनिधि चुनने के लिये जिनका

समूहीकरण कर दिया गया है, इकाई का अर्थ है ऐसे बने रियासती समूह से और इकाई की व्यवस्थापिका का मतलब है उस समूह की सभी रियासतों की व्यवस्थापिकाओं से।

(3) राष्ट्रपति का चुनाव गुप्त मत-पत्र द्वारा तथा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति से होगा।

(4) उक्त आदेशों के अधीन संघ-पार्लियामेंट के कानून द्वारा राष्ट्रपति पद के लिये चुनाव की व्यवस्था की जायेगी।

[नोटः-प्रदेशों (units) की आबादी के आधार पर वोटों को वजन देने की व्यवस्था का रखना यहां आवश्यक है, ताकि बड़े बड़े प्रदेशों के वोट छोटे छोटे प्रदेशों के वोटों से दब न जायें, जिनकी व्यवस्थापिका में हो सकता है कि सदस्य संख्या अपेक्षाकृत अधिक हो। वोटों को वजन देने की क्या पद्धति होगी यह बात यहां उदाहरण के तौर पर बता दी जा सकती है। एक व्यवस्थापिका में जहां का प्रत्येक सदस्य 1 लाख (100,000) की आबादी का प्रतिनिधित्व करता है, उसका वोट 100 के बराबर होगा, यानी एक वोट प्रत्येक 10,000 आबादी के लिये होगा और जहां की व्यवस्थापिका ऐसी है कि उसका हर सदस्य 10,000 की आबादी का प्रतिनिधित्व करता है, उसका वोट इसी पैमाने पर 10 के बराबर होगा।]

2. राष्ट्रपति का कार्यकालः (1) राष्ट्रपति पांच साल तक अपने पद पर आसीन रहेगा, पर शर्त है किः

(क) राष्ट्रपति हस्ताक्षर सहित अपना त्याग पत्र कौंसिल आफ स्टेट के सभापति या हाउस आफ पीपुल्स के अध्यक्ष को देकर पद-त्याग न कर दे।

(ख) राष्ट्रपति विधान का उल्लंघन करने के कारण सार्वजनिक दोषारोपण द्वारा उपखण्ड (2) में बताई हुई विधि के अनुसार अपने पद से हटा दिया जा सकता है।

(2) (क) विधान का उल्लंघन करने के कारण जब राष्ट्रपति पर सार्वजनिक दोषारोपण किया जायेगा तो उनके विरुद्ध यह अभियोग संघ-पार्लियामेंट की कोई सभा उपस्थित करेगी, परन्तु अभियोग उपस्थित करने का कोई प्रस्ताव वह सभा स्वीकार नहीं करेगी, जब तक उसकी कुल सदस्य संख्या के दो तिहाई सदस्यों का समर्थन प्रस्ताव को न प्राप्त हो।

(ख) जब संघ की पार्लियामेंट की किसी सभा द्वारा अभियोग उपस्थित कर दिया जायेगा तो दूसरी सभा उस अभियोग की जांच करेगी या करायेगी और ऐसी जांच के सम्बन्ध में राष्ट्रपति को स्वयं उपस्थित होने का तथा अपना प्रतिनिधित्व कराने का अधिकार होगा।

(ग) अगर जांच के फलस्वरूप, जिस सभा ने जांच की है या करायी है, उसके कुल सदस्यों की दो तिहाई द्वारा समर्थित ऐसा प्रस्ताव पास हो जाता है जिसमें यह घोषित किया गया हो कि राष्ट्रपति के विरुद्ध लगाया गया अभियोग सिद्ध हो गया है तो उस प्रस्ताव द्वारा प्रस्ताव की तिथि के दिन से राष्ट्रपति अपने पद से हटा दिया जायेगा।

(3) एक व्यक्ति जो राष्ट्रपति के पद पर आसीन है या रह चुका है, पुनर्निर्वाचन के लिये एक बार किन्तु केवल एक बार चुना जायेगा।

[नोटः उपखंड (1) (ख) तथा उपखण्ड (2) आयरिश विधान के आर्टिकिल 12 (10) के आधार पर रखे गये हैं और उपखंड (3) भी आयरिश विधान से ही लिया गया है।]

3. उम्र की शर्त : संघ का हर नागरिक जो 35 साल का हो चुका है और हाउस आफ पीपुल्स का सदस्य चुने जाने की योग्यता रखता है, राष्ट्रपति पद के लिये निर्वाचन के योग्य है।

[नोटः यह व्यवस्था अमेरिकन विधान के आर्टिकिल 2, धारा 1(5) तथा आयरिश विधान के आर्टिकिल 12(4) के आधार पर रखी गयी है।]

4. (1)राष्ट्रपति संघ-पार्लियामेंट की दो सभाओं में किसी का भी सदस्य न होगा और अगर किसी सभा का सदस्य राष्ट्रपति चुना गया तो यह समझा जायेगा कि उसने सभा में अपना स्थान रिक्त कर दिया है।

(2) राष्ट्रपति किसी अन्य लाभप्रद पद पर नहीं रहेगा।

(3) राष्ट्रपति का एक सरकारी निवासग्रह होगा और वह संघ-पार्लियामेंट के एक्ट द्वारा निर्धारित वेतन और भत्ते पायेगा तथा जब तक इसकी व्यवस्था न हो, उस वेतन और भत्ते को पायेगा जो परिशिष्ट में निर्धारित किये गये हैं।

(4) राष्ट्रपति का वेतन तथा उसके भत्ते उनके पद की अवधि में कम नहीं किये जायेंगे।

[नोटः–यह व्यवस्था आयरिश विधान के आर्टिकिल 12 (6) तथा 2 के आधार पर रखी गयी है।]

5. आकस्मिक रूप से स्थान का रिक्त होना तथा निर्वाचन पद्धतिः आकस्मिक रूप से रिक्त हुये स्थान की पूर्ति के लिये समुचित व्यवस्था होनी चाहिये। सभी निर्वाचनों के लिये, चाहे रिक्त स्थान सम्बन्धी हो या अन्यथा, विस्तृत विधि की व्यवस्था संघ-पार्लियामेंट के एक्ट पर छोड़ दी जाती है; पर शर्त यह है किः

(क) स्थान रिक्त होने के बाद यथासम्भव शीघ्र और किसी भी हालत में स्थान खाली होने की तिथि से 6 माह के बाद नहीं, रिक्त स्थान की पूर्ति के लिये चुनाव किया जायेगा।

(ख) रिक्त स्थान की पूर्ति के लिये किये गये चुनाव में जो व्यक्ति राष्ट्रपति निर्वाचित होगा, उसे पांच वर्ष की पूरी अवधि तक पदासीन रहने का हक़ होगा।

6. **उपराष्ट्रपतिः** (1) राष्ट्रपति की अनुपस्थिति में या उस हालत में जब कि राष्ट्रपति की मृत्यु हो जाये या वह पदत्याग कर दे या पदच्युत कर दिये जायें अथवा जब वे अपने अधिकारों के प्रयोग और कर्तव्यों के पालन में अक्षम या असफल हो जायें या जब कि उनका स्थान रिक्त हो जाये, तो उनके कर्तव्यों का पालन तब तक उप-राष्ट्रपति करेगा जब तक कि राष्ट्रपति अपने कार्यों का भार न ग्रहण कर लें या नया राष्ट्रपति न निर्वाचित हो जाये, जैसी भी दशा हो।

(2) उपराष्ट्रपति संघ-पार्लियामेंट की दोनों सभाओं द्वारा उनकी सम्मिलित बैठक में गुप्त मतपत्र द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति से चुना जायेगा और अपने ओहदे की हैसियत से वह कौंसिल आफ स्टेट का अध्यक्ष होगा।

(3) उप-राष्ट्रपति पांच वर्ष की अवधि के लिये पदासीन रहेगा।

7. **राष्ट्रपति के कर्त्तव्यः** (1) इस विधान के आदेशों के अधीन संघ का शासन सम्बन्धी अधिकार राष्ट्रपति को प्राप्त होगा।

(2) उपरोक्त आदेश की सामान्य रूपता को बिना हानि पहुंचाये–

(क) संघ की रक्षा-सैन्य (defence force) का प्रधान अधिनायकत्व राष्ट्रपति को प्राप्त होगा।

(ख) क्षमा प्रदान करने का तथा ऐसी किसी अदालत द्वारा, जिसे फौजदारी के मामलों को सुनने का अख्तियार है, दिये गये दण्ड को बदलने या माफ करने का अधिकार राष्ट्रपति को प्राप्त होगा। पर सजा बदलने या उसे माफ करने का अधिकार कानून द्वारा और अधिकारियों को भी दिया जा सकता है।

[नोटः उपरोक्त उपखण्ड 2 (ख) में जिन शब्दों के नीचे लकीर दे दी गयी है, वे आवश्यक हैं क्योंकि Criminal Procedure Code में ऐसी व्यवस्थाएं हैं जो इस सम्बन्ध में, सम्भवतः नवीन विधान के प्रयोग में आने के बाद भी अमल में रहेंगे। आयरिश विधान में भी इसी तरह के प्रतिबंध मूलक शब्द आये हैं।]

8. संघ के शासन प्रबंध सम्बंधी अधिकार का विस्तारः इस विधान के आदेशों के अधीन, संघ के शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार का विस्तार उन मामलों तक होगा जिनके सम्बन्ध में संघ-पार्लियामेंट को कानून बनाने का अधिकार प्राप्त होगा तथा उन अन्य मामलों तक होगा जिनके सम्बन्ध में संधि या समझौते के द्वारा शासन-प्रबन्ध का अधिकार संघ को सौंप दिया गया है और इन अधिकारों का प्रयोग संघ के किसी एजेन्सी (माध्यम) अथवा प्रदेशों द्वारा किया जायेगा।

9. संघ में सम्मिलित रियासत के शासक का संघ-गत विषयों के सम्बन्ध में अपने शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार को रियासत में प्रयोग में लाने का हक तब तक बना रहेगा जब तक कि उपयुक्त संघ-शासनाधिकारी (Federal Executive) द्वारा इस सम्बन्ध में अन्यथा व्यवस्था न कर दी जाये।

[नोटः सन् 1935 ई. के एक्ट की धारा 8 (2) में इसी तरह की व्यवस्था है। इस धारा की तरह यह खण्ड संघ में सम्मिलित भारतीय रियासतों के शासकों को संघ गत विषयों के सम्बन्ध में भी शासन-प्रबंध सम्बन्धी समवर्ती अधिकार तब तक के लिए प्रदान करता है जब तक कि संघ-शासनाधिकारी द्वारा इस सम्बन्ध में अन्यथा व्यवस्था न

कर दी जाये। (इस सम्बन्ध में प्रान्तों की स्थिति भिन्न है, क्योंकि संघ गत विषयों के सम्बन्ध संघ-कानून द्वारा इनको जो शासनाधिकार दिये गये हैं, उसके अलावा उन्हें और शासनाधिकार नहीं प्राप्त हैं।) इस तरह का खण्ड आवश्यक है क्योंकि अन्यथा संघ में सम्मिलित हुई रियासतों के संघ-गत विषयों के सम्बन्ध में सभी स्थायी विधानाश्रित अधिकार (Statutory powers) इस विधान के प्रयोग में आते ही समाप्त हो जायेंगे।]

10. **मंत्रिमण्डलः** राष्ट्रपति को उनके कर्तव्यों का पालन करने में सहायता और परामर्श देने के लिये एक मन्त्रिमण्डल होगा जिसका नेता प्रधान मन्त्री होगा।

11. **संघ का एडवोकेट जनरलः** संघ-सरकार को उन कानूनी प्रश्नों पर सलाह देने के लिये जो उसके सामने पेश किये जायेंगे, राष्ट्रपति एक ऐसे व्यक्ति को जो सुप्रीम कोर्ट का जज नियुक्त किये जाने के योग्य हो, संघ का एडवोकेट जनरल नियुक्त करेगा।

12. **संघ-सरकार का कार्य संचालनः** संघ-सरकार की सभी शासन प्रबन्ध सम्बन्धी कार्यवाहियों के सम्बन्ध में ऐसा व्यक्त किया जायेगा कि वे राष्ट्रपति की तरफ से की गयी हैं।

अध्याय 2

संघ-पार्लियामेंट

13. **संघ-पार्लियामेंट की रचनाः** संघ का कानून निर्माण सम्बन्धी अधिकार संघ की पार्लियामेंट को प्राप्त होगा जिसमें राष्ट्रपति तथा द्विसभात्मक राष्ट्रीय परिषद् (National Assembly) शामिल हैं। इस परिषद् की दो सभायें 'कौंसिल आफ स्टेट्स' और 'हाउस आफ पीपुल्स' होंगी।

14–1. (क) कौन्सिल आफ स्टेट्स में ये होंगेः

(1) मनोनीत सदस्य जिनको राष्ट्रपति विश्वविद्यालयों तथा विज्ञान सम्बन्धी संस्थाओं के परामर्श से मनोनीत करेंगे पर इनकी संख्या 10 से ज्यादा न होगी।

(2) अंगों (units) के प्रतिनिधि जो प्रदेश की प्रत्येक 10 लाख आबादी पर 50 लाख तक 1 प्रतिनिधि के हिसाब से और इसके ऊपर प्रत्येक 20 लाख आबादी पर 1 प्रतिनिधि के हिसाब से लिये जायेंगे, पर अंग-प्रतिनिधियों की कुल संख्या अधिक से अधिक 20 होगी।

व्याख्या: इकाई (units) का अर्थ है एक प्रांत या भारतीय रियासत, जो अपने निजी अधिकार के नाते संघ की पार्लियामेंट के लिये अपना सदस्य निर्वाचित करता है। भारतीय रियासतों के सम्बन्ध में जिनका, कौंसिल आफ् स्टेट्स में प्रतिनिधि भेजने के लिए गुट बना दिया गया है, प्रदेश का अर्थ है इस तरह बने गुट से।

(ख) कौंसिल आफ् स्टेट्स में आने वाले प्रत्येक प्रदेश के प्रतिनिधियों का चुनाव उस प्रदेश की व्यवस्थापिका की नीचे वाली सभा करेगी।

(ग) हाउस आफ् पीपुल्स में संघ की अधिकारगत भूमि के बाशिन्दों के प्रतिनिधि होंगे, जिनका अनुपात प्रत्येक 10 लाख की आबादी पर एक से कम न होगा और प्रत्येक 750 हजार पर 1 से ज्यादा न होगा।

(घ) प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र से किसी भी समय चुने जाने वाले सदस्यों की संख्या तथा उस निर्वाचन-क्षेत्र की आबादी का, जो सद्यः पूर्व की मतगणना में निश्चित हुई होगी, अनुपात यथा शक्य संघ के सारे प्रदेशों में एक समान होगा।

2. उपरोक्त प्रतिनिधियों का चुनाव उन व्यवस्थाओं के अनुसार होगा जो इसके सम्बन्ध में परिशिष्ट में दी हुई हैं:

पर शर्त यह है कि हाउस आफ पीपुल्स का चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर होगा।

3. प्रत्येक दस वार्षिक मतगणना के सम्पन्न हो जाने पर, ऐसे अधिकारी द्वारा, ऐसे तरीकों से तथा उस समय से जैसा कि संघ-पार्लियामेंट कानून द्वारा निश्चित करें, दोनों सभाओं में विभिन्न प्रांतों, भारतीय रियासतों और रियासती गुटों का प्रतिनिधित्व पुनः निश्चित किया जायेगा।

4. कौंसिल आफ स्टेट्स एक स्थायी सभा होगी जो भंग न की जा सकेगी परन्तु जहां तक हो सके लगभग उसके एक तिहाई सदस्य हर दूसरे वर्ष,

उन व्यवस्थाओं के अनुसार जो इसके लिये परिशिष्ट में दी गयी हैं, उससे अलग हो जायेंगे।

5. हाउस आफ पीपुल्स उस तारीख से जो इसकी प्रथम बैठक के लिए नियत की जायेगी, चार साल तक, इससे ज्यादा नहीं चालू रहेगी; अगर इससे पूर्व ही भंग न कर दी जाये तो उक्त चार साल की अवधि के समाप्त होने पर यह सभा भंग हो जायेगी।

6. पर शर्त यह है कि आकस्मिक आवश्यकता के समय उक्त अवधि राष्ट्रपति द्वारा बढ़ाई जा सकती है, पर एक साथ एक साल से अधिक के लिए नहीं तथा किसी भी हालत में आकस्मिक आवश्यकता की अवधि बीत जाने के बाद 6 माह से अधिक के लिए नहीं।

[नोटः केवल उन प्रांतों को ही गिनने से ''जो सम्मिलित होने के इच्छुक हैं'' कौंसिल आफ स्टेट्स के सदस्यों की अधिक से अधिक संख्या 200 के लगभग होती है तथा हाउस आफ पीपुल्स की अधिक से अधिक सदस्य संख्या 300 से 400 के बीच होती है। इस योजना के अंतर्गत ऊपर वाली सभा की रचना कैसे होगी, इसकी एक सरसरी तस्वीर निम्नलिखित तालिका से मिल जाती है।]

(नीचे वाली सभा का निर्माण केवल आबादी के आधार पर होगा)

कौंसिल आफ स्टेट्स

	प्रांत
मद्रास	20
बम्बई	12
बंगाल (पश्चिमी)	12
यू.पी.	20
पंजाब (पूर्वी)	9
बिहार	20
मध्य प्रांत	10
आसाम	7
उड़ीसा	6
कुल	116

	रियासतें
हैदराबाद	10
मैसूर	6
ट्रावनकोर	5
बड़ौदा	3
ग्वालियर	4
जयपुर	3
काश्मीर	4
जोधपुर	2
उदयपुर	2
पटियाला	2
रीवां	2
कोचीन	1
बीकानेर	1
कोल्हापुर	1
इन्दौर	1
कुल	47
बाकी रियासतों के समूहों के लिये जिनकी अपनी जनसंख्या 10 लाख से ऊपर नहीं है	24
कुल	71]

15. पार्लियामेंट का अधिवेशन बुलाने, स्थगित करने और उसे समाप्त करने के लिये, दोनों सभाओं के परस्पर सम्बन्ध की व्यवस्था करने के लिये तथा मतदान प्रणाली, सदस्यों के विशेषाधिकार, सदस्यता सम्बन्धी अयोग्यता और पार्लियामेंट की कार्यपद्धति, जिसमें आर्थिक मामलों की पद्धति भी शामिल है, इत्यादि के लिये सर्व सामान्य व्यवस्थायें होनी चाहियें। खास तौर पर अर्थ सम्बन्धी बिल प्रारम्भिक

रूप से नीचे वाली सभा में ही पेश होंगे। ऊपर वाली सभा को अर्थ सम्बंधी बिलों पर संशोधन रखने का अधिकार होगा। नीचे वाली सभा संशोधनों पर विचार करेगी और उसके बाद, चाहे वह संशोधनों को स्वीकार करे अथवा नहीं, बिल संशोधित रूप में (यदि संशोधन स्वीकार किये गये) अथवा अपने मौलिक स्वरूप में (अगर संशोधन स्वीकार नहीं किये गये) स्वीकृति के लिये राष्ट्रपति के सामने रखे जायेंगे और उनकी स्वीकृति प्राप्त होने पर वे कानून बन जायेंगे। अगर किसी बिल के सम्बन्ध में इस बात पर मतभेद हुआ कि वह अर्थ सम्बन्धी बिल है या नहीं, तो उस हालत में हाउस आफ पीपुल्स के अध्यक्ष का निर्णय अंतिम होगा। अर्थ सम्बंधी बिलों के अलावा अन्य मामलों में दोनों सभाओं को कानून बनाने का समान अधिकार प्राप्त होगा और गतिरोध होने पर दोनों सभाओं की सम्मिलित बैठक द्वारा उसके सम्बंध में फैसला किया जायेगा। राष्ट्रपति को यह अधिकार होना चाहिये कि वह नेशनल असेम्बली द्वारा स्वीकृत बिल को 6 माह के बाद पुनः विचार के लिए लौटा सके।

16. **भाषाः** संघ-पार्लियामेंट में कार्रवाई हिन्दुस्तानी (हिन्दी या उर्दू) अथवा अंग्रेजी में संचालित होगी, पर शर्त यह है कि चेयरमैन या अध्यक्ष, जैसी भी दशा हो, किसी भी वक्ता को जो इनमें से किसी भी भाषा में अपना विचार समुचित रूप से नहीं व्यक्त कर सकता, उसकी मातृभाषा में सभा के सामने बोलने की अनुमति दे सकते हैं। चेयरमैन या अध्यक्ष जैसी भी स्थिति हो, जब भी आवश्यक समझें, इस बात का प्रबन्ध कर देंगे कि सदस्य द्वारा व्यवहृत भाषा के अतिरिक्त अन्य किसी भाषा में सदस्य के भाषण का सार सभा को प्राप्त हो जाये और यह सार सभा की कार्यवाही में शामिल कर लिया जायेगा।

[नोटः–विधान-परिषद् के नियमों में इसी तरह की एक व्यवस्था है और उसी के आधार पर यह यहां रखा गया है।]

अध्याय 3

राष्ट्रपति के कानून बनाने के अधिकार

17. पार्लियामेंट के अवकाशकाल में राष्ट्रपति को आर्डिनेंस निकालने का अधिकारः (1) यदि किसी भी समय जब कि पार्लियामेंट का अधिवेशन न हो रहा हो; राष्ट्रपति को इस बात का निश्चय हो जाये कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है कि जिसमें शीघ्र कार्रवाई करना उनके लिये आवश्यक हो गया है, तो वे ऐसा आर्डिनेंस निकाल सकते हैं जिन्हें उस परिस्थिति में वे आवश्यक समझते हों।

(2) इस धारा के अन्तर्गत घोषित किये गये आर्डिनेंस को वही बल और प्रभाव प्राप्त होगा जो राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त संघ-पार्लियामेंट के किसी एक्ट को प्राप्त है; परन्तु ऐसा प्रत्येक आर्डिनेंसः

(क) संघ-पार्लियामेंट के सामने रखा जायेगा और संघ-पार्लियामेंट के पुनः सम्मिलित होने के 6 सप्ताह बाद प्रयोग में न रहेगा या, अगर इस समय के पहले दोनों सभाओं द्वारा उसके विरुद्ध प्रस्ताव पास हो जायें तो ऐस प्रस्तावों में दूसरे प्रस्ताव के पास होने पर वह प्रयोग में न रहेगाः और

(ख) राष्ट्रपति उसे किसी भी समय वापस ले सकते हैं।

(3) यदि इस धारा के अधीन कोई आर्डिनेंस ऐसा आदेश रखे जिसे संघ-पार्लियामेंट इस विधान के अन्तर्गत कानून बनाने में समर्थ न हो, तो वह रद्द समझा जायेगा।

[नोटः-वर्तमान विधान के अधीन आर्डिनेंस बनाने के अधिकार की बड़ी कड़ी आलोचना हुई है परन्तु यह बताना आवश्यक है कि ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो सकती है कि किसी कानून को तुरन्त लागू करना अत्यावश्यक हो जाये, संघ-पार्लियामेंट की बैठक बुलाने का समय न रहे। सन् 1925 ई. में लार्ड रीडिंग ने यह आवश्यक समझा कि रुई पर महसूल खत्म करने के लिए एक आर्डिनेंस जारी किया जाये और देश-हित के लिये इसकी तुरन्त ही और अवश्य ही आवश्यकता थी। यह सम्भव नहीं है कि राष्ट्रपति, जो जनता द्वारा निर्वाचित होगा और जिसे पार्लियामेंट के प्रति उत्तरदायी मंत्रियों की सलाह से काम करना होगा, उसको दिये हुए आर्डिनेंस जारी करने के अधिकार का दुरुपायेग करेगा। इसलिये यह आदेश प्रस्तावित किया गया है।]

अध्याय 4

संघ का न्याय सम्बन्धी शासन प्रबन्ध (Judicature)

18. **सर्वोच्च न्यायालयः** एक सर्वोच्च न्यायालय होगा जिसकी रचना तथा जिसके अधिकार और अधिकार-क्षेत्र उस प्रकार के होंगे जैसा कि संघ की न्याय-शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी कमेटी सिफारिश करेगी, सिवाय इसके कि सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश राष्ट्रपति द्वारा चीफ जस्टिस तथा सर्वोच्च न्यायालय के और हाईकोर्ट के उन न्यायाधीशों से सलाह लेने के बाद जो इस काम के लिये आवश्यक हों, नियुक्त किया जायेगा।

[नोटः–सर्वोच्च न्यायालय सम्बन्धी कमेटी+ ने कहा है कि इसके न्यायाधीशों की नियुक्ति को संघ के राष्ट्रपति की मर्जी पर छोड़ देना उपयुक्त न होगा। इस कमेटी ने इसके लिये दो विकल्प बताये हैं और दोनों में ही सम्मति देने के लिये 11 सदस्यों का एक विशेष मंडल बनाना होगा। एक विकल्प के अनुसार राष्ट्रपति प्रधान न्यायाधीश से परामर्श करके प्यूनीजज की नियुक्ति के लिये एक व्यक्ति को मनोनीत करेंगे और इस मनोनीत करण को मण्डल के कम से कम सात सदस्यों का समर्थन प्राप्त होना चाहिये। दूसरे विकल्प के अनुसार मण्डल तीन नामों की सिफारिश करेगा और उनमें से एक को राष्ट्रपति प्रधान न्यायाधीश से परामर्श करके नियुक्ति के लिये चुन लेंगे। उक्त खण्ड में सुझाई गयी व्यवस्था संघ-विधान समिति के निर्णय के आधार पर रखी गयी है।]

अध्याय 5

संघ का आडिटर-जनरल (प्रधान आय-व्यय परीक्षक)

19. **आडिटर-जनरलः** संघ का एक आडिटर-जनरल होगा जिसको राष्ट्रपति नियुक्त करेंगे और वह उसी तरह और उन्हीं कारणों से पदच्युत किया जायेगा जैसे कि सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश पदच्युत किया जयेगा।

20. **आडिटर-जनरल के कामः** आडिटर-जनरल के कर्तव्य और अधिकार उसी प्रकार के होंगे जैसा कि सन् 1935 के एक्ट की तत्सम्बन्धी आदेशों में हैं।

अध्याय 6

नौकरियां

21. **पब्लिक सर्विस कमीशनः** संघ के लिये एक पब्लिक सर्विस कमीशन होगा जिसकी रचना और जिसके कर्तव्य उसी प्रकार के होंगे जैसा कि सन् 1935 के एक्ट के तत्सम्बन्धी आदेशों में दिखाये गये हैं सिवाय इसके कि कमीशन के चेयरमैन तथा सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति अपने मंत्रियों की सलाह से करेंगे।

22. अखिल भारतीय सेवाओं के निर्माण के लिये, जिनकी भरती तथा सेवा सम्बन्धी शर्तों का नियमन संघीय कानून द्वारा किया जायेगा, एक व्यवस्था बनाई जानी चाहिए।

+कमेटी की रिपोर्ट-परिशिष्ट में देखिये।

अध्याय 7

निर्वाचन

23. **संघ पार्लियामेंट का चुनाव:** इस विधान के आदेशों के अधीन संघ पार्लियामेंट समय समय पर उन सभी मामलों के सम्बन्ध में, जिनका द्विसभात्मक संघ-व्यवस्थापिका की किसी भी सभा के चुनाव तथा निर्वाचन-क्षेत्र की सीमा स्थिर करने से सम्बन्ध हो, व्यवस्था बना सकती है।

24. **निर्वाचन का निरीक्षण, संचालन तथा नियंत्रण:** इस विधान के अन्तर्गत होने वाले सभी निर्वाचनों के, चाहे वे संघ सम्बन्धी हों या प्रान्तीय, निरीक्षण, संचालन और नियंत्रण का अधिकार तथा इन चुनावों के सम्बन्ध में उठने वाले झगड़ों और सन्देहों पर निर्णय देने के लिये निर्वाचन-पंचायतों की नियुक्ति का अधिकार राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त कमीशन को प्राप्त होगा।

भाग 5

संघ और इकाइयों के बीच कानून-निर्माण सम्बन्धी अधिकार का बटवारा

इस मद के अन्दर रखी जाने वाली व्यवस्थायें उस निर्णय पर निर्भर करती हैं जो संघ-अधिकार समिति की रिपोर्ट पर किया जायेगा। फिर भी संघ-अधिकार-समिति ने निर्णय किया है कि:

(1) विधान, एक सुदृढ़ता के साथ संघमूलक होना चाहिये।

(2) व्यवस्था सम्बन्धी तीन विस्तृत सूचियां होनी चाहियें, अर्थात् संघीय विषयों की, प्रान्तीय विषयों की तथा सहगामी विषयों की और अवशिष्ट अधिकार केन्द्र को प्राप्त रहेंगे।

(3) संघीय विषयों की व्यवस्था सम्बन्धी सूची के सम्बन्ध में रियासतों की स्थिति प्रान्तों के ही समान होगी, परन्तु सूचियों के पूर्णत: प्रस्तुत कर लिये जाने के बाद यदि कोई खास बात उठाई गयी तो उस पर विचार किया जायेगा।

भाग 6

संघ और इकाइयों के बीच शासन सम्बन्धी संसर्ग

1. केवल किसी संघीय विषय के सम्बन्ध में कानून बनाते समय, संघ पार्लियामेंट उस विषय के सम्बन्ध में अपने किन्हीं कर्तव्यों को पूरा करने का भार

किसी इकाई की सरकार को, चाहे वह रियासती हो या प्रान्तीय अथवा अन्य क्षेत्र की हो; अथवा उसके किसी अधिकारी को सौंप सकती है।

2. (1) इकाई की सरकार का यह कर्तव्य होगा कि वह अपने शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकारों का, जहां तक इस उद्देश्य के लिये वे आवश्यक हों और प्रयोग में लाये जा सकें, उस तरह प्रयोग करें जिससे उस इकाई के अन्दर संघ-पार्लियामेंट के हर कानून को, जो उस इकाई पर लागू होता हो, समुचित परिणाम सुनिश्चित रूप से प्राप्त हो सके। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिये इकाई की सरकार को आदेश देने का, संघ-सरकार को अधिकार होगा।

(2) संघ-सरकार को, इकाई की सरकार को यह आदेश देने का अधिकार होगा कि किसी ऐसे मामले के सम्बन्ध में जिसका प्रभाव संघीय विषयों के शासन पर पड़ता हो, अपने शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार का प्रयोग वह किस तरह करे।

[नोटः गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 की 122, 124 और 126 धारायें देखिये।]

भाग 7

आर्थिक व्यवस्था तथा ऋण प्राप्ति संबंधी अधिकार

1. उन साधनों से प्राप्त राजस्व, जिनके सम्बन्ध में केवल संघ-पार्लियामेंट को ही कानून बनाने का अधिकार है, संघ का राजस्व होगा परन्तु उन साधनों के सम्बन्ध में जिनका उल्लेख बाद के पैराग्राफ में किया गया है, संघ को यह अधिकार दिया जायेगा या उसके लिये यह लाजिमी कर दिया जायेगा कि उनसे प्राप्त आमदनी को वह इकाइयों में बांट दे।

2. इन करों को—यानी आयात कर, देश में पैदा होने और खपने वाले सामान पर कर, निर्यात-कर, मृत्यु-कर, कृषिजन्य आय के अतिरिक्त अन्य आयों पर कर तथा कम्पनियों पर कर—को लगाने और अगर जरूरत हो तो उनको बांटने के सम्बन्ध में व्यवस्था होनी चाहिये।

3. संघ-सरकार को यह अधिकार होगा कि संघ की आय से, किसी भी काम के लिये, चाहे वह काम ऐसा न हो जिसके सम्बन्ध में संघ पार्लियामेंट कानून बना सके, वह सहायता स्वरूप कुछ प्रदान कर सके।

4. उन शर्तों और प्रतिबन्धों के अधीन जो संघ के कानून द्वारा लगाये जायें, संघ के किसी काम के लिये संघ की आय की जमानत पर कर्ज लेने का संघ सरकार को अधिकार होगा।

5. संघ की किसी इकाई को उन शर्तों पर और उन सूरतों में जो संघ-सरकार निर्धारित करे, कर्ज देने या उसके मिलने वाले कर्ज की जमानत देने का संघ-सरकार को अधिकार होगा।

[नोटः—देखिये 1935 के गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट की धाराएं 136, 140, 162 तथा 163(2) जिनमें ऐसी ही व्यवस्था है।]

भाग 8

सीधे संघ द्वारा शासित प्रदेश

1. अन्तर्कालीन व्यवस्था के लिये चीफ कमिश्नरों के प्रान्तों पर केन्द्र का शासन जारी रहना चाहिये जैसा कि गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 में है और इस पद्धति में किसी भी परिवर्तन के प्रश्न पर बाद में विचार किया जाना चाहिये तथा विधान में अण्डमान और निकोबार द्वीप समूहों के साथ-साथ केन्द्र द्वारा शासित सभी क्षेत्रों का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिये।

2. कबायली क्षेत्रों के शासन के लिये विधान में उपयुक्त व्यवस्था होनी चाहिये।

[नोटः—कबायली क्षेत्रों के सम्बन्ध में जो व्यवस्था की जाये उसमें वह योजना भी शामिल रहनी चाहिए जिसे एडवाजरी कमेटी की रिपोर्ट पर विधानपरिषद् ने इन प्रदेशों के लिए स्वीकार किया है।]

भाग 9

विविध

एडवाजरी कमेटी की रिपोर्ट पर विधान-परिषद् ने अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिये जो व्यवस्थायें स्वीकार की थीं, वह सब विधान में शामिल रहनी चाहिये।

भाग 10

विधान में संशोधन

विधान सम्बन्धी संशोधन संघ-पार्लियामेण्ट की किसी भी सभा में पेश किया जा सकता है और जब प्रस्तावित संशोधन प्रत्येक सभा में उपस्थित और मत देने वाले दो तिहाई सदस्यों के बहुमत से स्वीकृत हो जाये और संघ की आधी इकाइयों की व्यवस्थापिकाओं द्वारा, उससे कम नहीं, अनुमोदित हो जाये, तो वह स्वीकृति के लिये राष्ट्रपति के सामने रखा जायेगा और उनकी स्वीकृति मिलने पर वह संशोधन प्रयोग में आयेगा।

[**व्याख्याः** इकाई (units) का इस खण्ड में वही अर्थ है जो भाग 4 के खण्ड 14 में है। जहां इकाई रियासती गुटों की है, वहां यह प्रस्तावित संशोधन उस हालत में इकाई की व्यवस्थापिका द्वारा अनुमोदित समझा जायेगा, जब कि उस गुट की रियासतों की बहुसंख्यक व्यवस्थापिकायें उसका अनुमोदन कर दें।]

भाग 11

परिवर्तन कालीन व्यवस्थाएं

1. सब सम्पत्ति, अधिकार और देने-पावने के सम्बन्ध में संघ-सरकार गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 के अनुसार स्थापित भारत-सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी।

[यदि इस विधान के प्रयोग में आने के पहले ही भारत में दो उत्तराधिकारिणी सरकारें स्थापित हो जायें तो उस खण्ड में वैसा संशोधन करना पड़ेगा जैसा कि देने और पावने का बंटवारा हो।]

2. (1) इस विधान के अधीन, विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले जो कानून संघ के प्रदेशों के अन्दर प्रयोग में रहेंगे उनका वहां प्रयोग में रहना तब तक जारी रहेगा जब तक कि अधिकृत व्यवस्थापिका या अधिकारी द्वारा उनको बदल न दिया जाये, या उनका प्रत्याख्यान न कर दिया जाये, या उनमें संशोधन न कर दिया जाये।

(2) राष्ट्रपति आज्ञा द्वारा यह व्यवस्था कर सकते हैं कि कोई कानून, जिसका प्रयोग प्रान्तों में जारी हो, अगर किसी अधिकृत अधिकारी द्वारा उसका प्रत्याख्यान या उसमें संशोधन न कर दिया जाये तो किसी निर्धारित तिथि से ऐसे परिवर्तनों और adaptations के अधीन जिन्हें राष्ट्रपति उस कानून को विधान-परिषद् के आदेशों के अनुरूप बनाने के लिये आवश्यक और उचित समझें, वह प्रयोग में आयेगा।

3. जब तक कि इस विधान के अनुसार बाकायदा सर्वोच्च न्यायालय की रचना न हो जाये, संघ-अदालत (फेडरल कोर्ट) को ही सर्वोच्च न्यायालय समझा जायेगा और सर्वोच्च न्यायालय के सभी कर्तव्यों का वह पालन करेगा:

किन्तु शर्त यह है कि इस विधान के प्रयोग में आने के समय जो भी विचाराधीन मामले संघ-अदालत और प्रिवी कौंसिल की न्याय सम्बन्धी समिति के सामने होंगे, उनका यह मानकर निपटारा किया जायेगा कि मानो विधान प्रयोग में ही नहीं आया है।

4. उन पदासीन व्यक्तियों के सिवाय जिनका उल्लेख सूची में आया है, हर व्यक्ति, मय संघ-अदालत या हाईकोर्ट के किसी जज के, जो इस विधान के प्रयोग में आने के ठीक पहले भारत में सम्राट की नौकरी में था, उस तिथि को उसका संघ या सम्बन्धित इकाई की नौकरी पर तबादला कर दिया जायेगा और वह अपने पूर्व पद की अवधि तक पदासीन रहेगा।

[नोट:-बाद के दूसरे खण्ड के अन्तर्गत इस नये विधान के प्रयोग में आने के समय से एक अस्थायी राष्ट्रपति होगा जिससे कि गवर्नर-जनरल की आवश्यकता न रह जायेगी। इसी तरह प्रान्तों में सम्राट द्वारा नियुक्त गवर्नर की आवश्यकता न रह जायेगी। यही बात कुछ अन्य पदाधिकारियों के सम्बन्ध में भी सही हो सकती है। ऐसे सारे पदों को एक सूची में लिपिबद्ध कर दिया जा सकता है। प्रस्तावित आदेश उन व्यक्तियों पर भी लागू होता है जो परिशिष्ट में उल्लिखित पदों को छोड़कर अन्य पदों पर आसीन हैं। तुलना के लिए आयरिश फ्री स्टेट के सन् 1922 ई. के विधान की अन्तरिम व्यवस्था संबंधी आर्टिकिल 77 देखिये जो नीचे उद्धृत कर दिया गया है:

''इस विधान के प्रयोग में आने के दिन ऐसा हर व्यक्ति जो अस्थायी सरकार का पदाधिकारी होगा, (ऐसा पदाधिकारी नहीं जिसकी सेवायें ब्रिटिश सरकार

द्वारा अस्थायी सरकार को उधार स्वरूप दी गयी हों) उसका तबादला कर दिया जायेगा और वह आयरिश फ्री स्टेट का पदाधिकारी हो जायेगा और अपने पूर्व पद की अवधि तक पदासीन रहेगा।'']

5. (1) जब तक कि नेशनल असेम्बली की दोनों सभाओं का इस विधान के अन्तर्गत यथाविधि निर्माण न हो जाये और उनकी बैठक न बुलाई जाये, स्वयं विधान-परिषद् दोनों सभाओं के सारे अधिकारों का प्रयोग करेगी और उनके सभी कर्तव्यों को पूरा करेगी।

व्याख्याः इस उपखण्ड की अभिप्राय सिद्धि के लिये विधान-परिषद् में ऐसे सदस्य सम्मिलित नहीं किये जायेंगे जो ऐसे क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हों जो परिशिष्ट 1 में न शामिल हों।

(2) ऐसा व्यक्ति, जिसे अपनी तरफ से विधान-परिषद् ने चुन लिया होगा, तब तक संघ का अस्थायी राष्ट्रपति रहेगा जब तक कि एक राष्ट्रपति इस विधान के भाग 4 के अनुसार चुन न लिया जाये।

(3) तब तक जब तक कि इस विधान के भाग 4 के अनुसार मंत्रियों को यथाविधि नियुक्त न कर लिया जाये, ऐसे व्यक्तियों का एक अस्थायी मंत्रिमण्डल रहेगा जिन्हें इस काम के लिये अस्थायी राष्ट्रपति ने नियुक्त किया हो।

[नोटः-यह आवश्यक है कि इस विधान के प्रयोग में आने के दिन एक व्यवस्थापिका तथा एक शासन प्रबन्ध सभा रहनी चाहिए जो अधिकार ग्रहण करने के लिए तुरंत प्रस्तुत रहे। इसके लिये सर्वोत्तम व्यावहारिक पथ यह है कि स्वयं विधान-परिषद् अस्थायी व्यवस्थापिका हो जाये। अस्थायी शासन-प्रबंध सभा सम्बन्धी खण्ड परिणामवर्ती है; फिर भी 1935 के गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट में संशोधन करके नवीन डोमिनियन एक्ट बनाने के बाद उन आदेशों में परिवर्तन की आवश्यकता हो सकती है।]

6. परिवर्तन काल में अप्रत्याशित कठिनाइयां उत्पन्न हो सकती हैं। इसलिये विधान में निम्नलिखित व्यवस्था के आधार पर एक खण्ड रहना चाहिये।

संघ-पार्लियामेंट कानून बनाकर, बावजूद किसी व्यवस्था के जो भाग 10 में हो यह कर सकती है:

(क) यह आदेश दे सकती है कि यह विधान सिवाय उक्त भाग के और इस खण्ड के आदेशों के उस अवधि के अन्दर, यदि ऐसी कोई अवधि हो जैसा कि कानून में निर्धारित की गयी हो, उन adaptations और संशोधनों के अधीन जो निर्धारित किये जायें, प्रयोग में रहेगा।

(ख) ऐसी किन्हीं कठिनाइयों को दूर करने के लिये जिनका जिक्र ऊपर आया है, यह ऐसी अन्य व्यवस्थायें बना सकती है जो कानून में निर्धारित की गयी हों।

इस विधान के प्रयोग में आने से 3 वर्ष समाप्त होने पर इस खण्ड के अन्तर्गत कोई कानून नहीं बनाया जायेगा।

[नोटः-कठिनाइयां दूर करने के सम्बन्ध में जो खण्ड यहां आया है वह अब बिलकुल ठीक है। उदाहरण के लिये, गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट 1935 की धारा 310 देखिये। 3 वर्ष की अवधि यहां आयरिश विधान के आर्टिकिल 51 से ली गयी है। इस खंड से प्रथम तीन वर्षो की अवधि में संशोधन संबंधी पद्धति में अपेक्षाकृत अधिक सरलता आ जायेगी।]

विधान परिषद्

सर्वोच्च न्यायालय सम्बन्धी विशेष कमेटी

प्रधान न्यायालय के अधिकार और निर्माण पर विचार करने के लिये नियुक्त की गयी कमेटी के निम्न हस्ताक्षर करने वाले सदस्यगण अपनी इस रिपोर्ट को सादर पेश करते हैं।

2. हमने निम्न शीर्षकों में इस विषय पर विचार किया:

1. प्रधान न्यायालय के अधिकार और क्षेत्र।
2. न्यायालय के परामर्श अधिकार।
3. न्यायालय के अधीन अधिकार।
4. न्यायालय का निर्माण तथा न्यायाधीश संख्या।
5. न्यायाधीशों की नियुक्ति-विधि तथा उनकी योग्यतायें।
6. न्यायाधीशों की मुलाजमत की शर्तें तथा उनकी अवधि।

1. प्रधान न्यायालय के अधिकार और क्षेत्र

3. एक्टों और कानूनों की वैधानिक प्रामाणिकता पर निर्णय देने का अधिकार रखने वाला प्रधान न्यायालय किसी भी संघ-योजना का आवश्यक अंश माना जा सकता है। यह आवश्यक नहीं है कि यह अधिकार केवल प्रधान कार्यालय को ही हो। वर्तमान भारतीय विधान में भी किसी न्यायालय में एक्टों और कानूनों की वैधानिक प्रामाणिकता पर प्रश्न उठाया जा सकता है जब कि वह प्रश्न न्यायालय के समक्ष मुकदमें के सिलसिले में उत्पन्न न हो जाये।

4. कुछ प्रयोजनों के लिये प्रधान कार्यालय को इस प्रकार आवश्यक जानकर हम विचार करते हैं कि न्यायालय को नये भारतीय विधान के अन्तर्गत निम्न अतिरिक्ताधिकार बखूबी दिये जायें।

(क) संघ और इकाइयों अथवा इकाइयों के पारस्परिक झगड़ों के सम्बन्ध में खास अधिकार।

5. इस प्रकार के झगड़ों का निर्णय करने के लिये प्रधान न्यायालय अत्यंत लाभप्रद अदालत है और उसका न्यायाधिकार क्षेत्र अनियन्त्रित होना चाहिये।

(ख) संघ द्वारा की हुई संधियों के सम्बंध में उत्पन्न विषयों पर विचाराधिकार।

6. विदेशी मामलों के विषय के अंश स्वरूप संधि करने का अधिकार संघ को है, इसलिये यह उचित होगा कि संघ के प्रधान न्यायालय को संधियों में उत्पन्न हुये तथा संघ और विदेशी राज्य के मध्य अपराधी प्रत्यर्पण के अन्तर्गत समस्त विषयों पर अन्तिम निश्चय करने के अधिकार सौंपे जायें। यद्यपि प्रथम बार ही यह अनिवार्य नहीं। अभी हम परस्पर इकाइयों में अपराधी प्रत्यर्पण पर विचार नहीं करते हैं क्योंकि यह संघ और इकाइयों में अधिकारों के अन्तिम विभाजन पर निर्भर है।

(ग) संघ के दायरे में अन्य ऐसे विषयों के सम्बंध में अधिकार जिनको संघ व्यवस्थापक मंडल निर्धारित करें।

7. यदि संघ-व्यवस्थापक मण्डल किसी विषय पर कानून बनाने में समर्थ है तो वह उस विषय पर अपनी मर्जी के न्यायालय को न्याय सम्बन्धी अधिकार सौंपने के लिये भी स्पष्ट रूप से समर्थ है और यदि वह इस प्रयोजन के लिये

प्रधान न्यायालय को चुनता है तो प्रधान न्यायालय को इस प्रकार सौंपे गये न्याय सम्बन्धी अधिकार प्राप्त होंगे।

(घ) विधान द्वारा गारंटी किये गए मौलिक अधिकारों को लागू करने के विचाराधिकार।

8. मौलिक अधिकार के मसविदे का वाक्यखण्ड 22 बतलाता है कि मौलिक अधिकारों को लागू करने के लिये उचित कार्यवाही द्वारा प्रधान न्यायालय में अभियोग पेश करने के अधिकार की गारण्टी की जाती है। तो भी हमारा यह विचार है कि केवल ऐसे विषयों के लिये प्रधान न्यायालय को ही अधिकार देना अवांछनीय है। मौलिक अधिकारों के भंग किये जाने पर यदि कोई व्यक्ति प्रधान न्यायालय से सहायता प्राप्त करने के लिये विवश हो जाता है तो उस नागरिक को मौलिक अधिकारों से वास्तव में वंचित रखा जायेगा, क्योंकि उनको पुनः केवल वहीं से प्राप्त किया जा सकता है। जहां आवश्यक अधिकार प्राप्त दूसरा न्यायालय नहीं है, वहां प्रधान न्यायालय को यह कार्य करना चाहिये। जहां आवश्यक अधिकार प्राप्त अन्य न्यायालय हैं, वहां प्रधान न्यायालय को अपील सुनने और पुनर्विचार करने के अधिकार होने चाहियें।

(ङ) अपील सुनने के उसी प्रकार के सामान्य अधिकार जो कि प्रीवी कौंसिल द्वारा वर्तमान समय में प्रयोग में लाये जाते हैं।

9. नये विधान के अन्तर्गत प्रीवी कौंसिल के अन्तिम अपील सुनने के अधिकार भंग होंगे और यह स्पष्ट वांछनीय है कि उसी प्रकार के अधिकार अब प्रधान न्यायालय को सौंप दिये जायें।

जहां तक ब्रिटिश भारतीय इकाइयों का सम्बन्ध है, यह अधिकार प्रीवी कौंसिल के वर्तमान अधिकारों के साथ समान रूप में व्यापक रहेगा। रियासती इकाइयों के सम्बन्ध में कम से कम दो प्रकार के मामले हैं जिनको साम्य रूप देने के हितार्थ यह स्पष्ट रूप से वांछनीय है कि अन्तिम निर्णय प्रधान न्यायालय पर निर्भर रहे, उदाहरणस्वरूप:

(1) वह मामले जिनमें संघ के नियम की व्याख्या शामिल हो, तथा

(2) वह मामले जिनमें इकाई के सम्बन्धित रियासत के अतिरिक्त नियम की व्याख्या शामिल हो।

सर बी.एल. मित्तर सुझाव पेश करते हैं कि इस प्रकार की समानता या तो प्रधान न्यायालय के अपील सुनने के अधिकारियों से निवेदन करने से या किसी विशेष वाद-हेतु का प्रधान न्यायालय को हवाला देने से प्राप्त हो सकती है। संघ के या किसी इकाई के नियम की वैधानिक प्रामाणिकता सम्बन्धी मामलों पर विचार हो ही चुका है, वे अनिवार्य रूप से प्रधान न्यायालय के अधिकार के अन्तर्गत आयेंगे।

10. प्रत्येक रियासती इकाई को विशेष प्रतिज्ञा-पत्र द्वारा उल्लिखित विषयों के अतिरिक्त विचाराधिकार प्रधान न्यायालय को सौंप देने का अधिकार होगा।

2. न्यायालय के परामर्श अधिकार

11. रियासत के प्रधान को कानून के कठिन प्रश्नों पर सलाह देने के दायित्व को प्रधान न्यायालय के सुपुर्द करने के औचित्य पर कानून के विशेषज्ञों और राजनैतिक विचारों में परस्पर यथेष्ट मतभेद रहा। विपक्ष में युक्तियां होते हुये भी वर्तमान विधान के अन्तर्गत 1935 ई. के एक्ट की धारा 213 के अनुसार यह उचित समझा गया कि परामर्श अधिकार फेडरल कोर्ट को सौंप दिये जायें। दोनों पक्षों की दलीलों पर पूर्णतया विचार करने पर हम यह अनुभव करते हैं कि नये विधान के अन्तर्गत भी इस अधिकार को कायम रखना सर्वोपरि उत्तम होगा। यह माना जा सकता है कि इस प्रकार के अधिकार को अनावश्यक रूप से प्रयोग में लाने की सम्भावना नहीं है, जैसा कि हम प्रस्तुत रखते हैं, न्यायालय में 10 या 11 न्यायाधीश होंगे। समूचे न्यायालय की घोषणा अधिकारपूर्ण सलाह के समान समझी जायेगी। इस बात का निश्चय इस भाग द्वारा किया जा सकता है कि प्रधान न्यायालय को सलाह के निर्देशों पर समूचे न्यायालय द्वारा विचार करना पड़ेगा।

3. न्यायालय के अधीन अधिकार

12. सन् 1935 ई. के एक्ट की धारा 214 के अनुसार अपने कार्य को सुव्यवस्थित करने के लिये कार्य-पद्धति के नियम बनाने के अधिकार प्रधान न्यायालय को सौंप देने चाहियें तथा जाब्ता दीवानी (Civil Procedure Code) के हुक्म 45 में दिये हुये आदेशों के समान आदेश प्राप्त हो जाने चाहियें, जिससे कि प्रधान न्यायालय में अपीलों के रिकार्ड तैयार कराने तथा डिग्रियों के तामील

कराने में सुविधा हो। सन् 1935 ई. के एक्ट की धारा 209 द्वारा फेडरल कोर्ट पर लगाये गये प्रतिबन्ध को कायम रखना हम आवश्यक नहीं समझते हैं। यदि प्रधान न्यायालय प्रीवी कौंसिल का स्थान ग्रहण करता है तो उसे जहां सम्भव हो अन्तिम फैसला और डिग्री देने की आज्ञा होनी चाहिये अथवा जिन कचहरियों से अपील आई हो उनको उन मामलों पर और आगे जांच करने के लिये वापस भेजने की आज्ञा होनी चाहिये। यदि इस प्रकार की जांच आवश्यक समझी जाये। सन् 1935 ई. के एक्ट की धारा 210 के अनुसार प्रधान न्यायालय का कुछ अन्तर्वर्ती अधिकार देने के आदेश भी बनायें जायें।

4. न्यायालय का निर्माण तथा न्यायाधीश संस्था

13. हमारे विचार से प्रधान न्यायालय को दो विभागों की आवश्यकता होगी और प्रत्येक विभाग में 5 न्यायाधीश होने चाहियें। अत: न्यायालय को 10 न्यायाधीश और एक मुख्य न्यायाधीश की आवश्यकता होगी, जिससे कि अनुपस्थित अथवा अन्य अदृश्य परिस्थितियों की पूर्ति हो सके। साथ ही साथ इनमें से किसी एक न्यायाधीश की अपील के अधिकार सम्बन्धी आकस्मिक अनेक विविध मामलों पर विचार करने में आवश्यकता पड़ जाये जिनमें नजरसानी तथा हवाला सम्बन्धी अधिकार भी शामिल हैं।

5. न्यायाधीशों की नियुक्ति-विधि तथा योग्यता

14. प्रधान न्यायालय के न्यायाधीशों की योग्यता फेडरल कोर्ट के न्यायाधीशों के लिये सन् 1935 ई. के एक्ट के आदेशों में दी गई योग्यताओं के अनुरूप रखी जानी चाहिये। इस बात का ध्यान रखना चाहिये जैसा कि सन् 1935 ई. के एक्ट में है कि यूनियन-संघ में सम्मिलित रियासतों के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश भी प्रधान न्यायालय में स्थान पाने के योग्य हों। हमारे विचार से प्रधान न्यायालय न्यायाधीशों की नियुक्ति का अधिकार यूनियन के सभापति के प्रतिबन्ध रहित अधिकार पर निर्भर करना उचित नहीं है। हम निम्न दो विधियों में से किसी एक को ग्रहण करने की सिफारिश करते हैं। एक विधि यह है कि सभापति, जहां तक कि प्यूनी न्यायाधीशों की नियुक्तियों का सम्बन्ध है, प्रधान न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की राय से किसी व्यक्ति को, जिसे वे प्रधान न्यायालय में नियुक्त होने के योग्य समझते हैं, नामजद करें और इस नामजदगी की पुष्टि वैधाानिक इकाइयों की हाईकोर्ट के 11 मुख्य न्यायाधीशों की बनाई गई सूची में से कम से कम 7 मुख्य न्यायाधीशों द्वारा हो; इस सूची में कुछ सदस्य दोनों

केन्द्रीय व्यवस्थापक मण्डलों के सदस्य हों और कुछ यूनियन के कानून के अफसर हों। दूसरी विधि यह है कि 11 सदस्यों की सूची तीन व्यक्तियों की सिफारिश करे जिनमें से सभापति प्रधान न्यायाधीश की राय लेकर किसी एक को न्यायाधीश की नियुक्ति के लिये चुने। मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति के लिये भी इसी प्रणाली का अनुसरण किया जाये सिवाय इसके कि इस हालत में मुख्य न्यायाधीश की राय नहीं ली जायेगी। इस बात को सुनिश्चित बनाने के लिये कि सूची स्वंतत्र हो और उसे सबका विश्वास प्राप्त हो, वह तत्सम्बन्धी संस्था न हो वरन् किसी निर्धारित काल के लिये नियुक्त हो।

6. न्यायाधीशों की मुलाजमत की शर्ते तथा उनकी अवधि

15. प्रधान न्यायालय के न्यायाधीशों की नौकरी की अवधि वही होगी जो कि वर्तमान विधान-एक्ट के अन्तर्गत फेडरल कोर्ट के न्यायाधीशों की है और उनके पूर्णावकाश ग्रहण (Retirement) की आयु भी वही होगी, 65। उनका वेतन और पैन्शन स्थायी विधानाश्रित नियमों के अनुसार होगा। देश की सर्वोच्च अदालत में अस्थायी न्यायाधीश रखना अवांछनीय है। अस्थायी न्यायाधीशों के स्थान में प्रधान न्यायाधीशों अथवा हाईकोर्ट के न्यायाधीशों में से तत्सम्बंधी न्यायाधीश रखने की प्रणाली अपनायी जाये। इस सम्बन्ध में हम कनाडा की प्रथा की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं जो कि कनाडा की सर्वोच्च न्यायालय के विधान की 30वीं धारा के अन्तर्गत है। धारा निम्न प्रकार है:

''**30. तत्सम्बन्धी न्यायाधीशों की नियुक्तिः** यदि किसी समय न्यायालय के अधिवेशन को प्रचालित रखने अथवा आरम्भ करने के लिये प्रधान न्यायालय के न्यायाधीशों का कोरम उपलब्ध न हो, पद अथवा पदों के रिक्त हो जाने से या बीमारी के कारण अनुपस्थित हो जाने से या छुट्टी पर होने से या स्थायी विधान अथवा कौंसिल की आज्ञा द्वारा नियत किये गये अन्य कर्तव्यों के पालन करने से या न्यायाधीश अथवा न्यायाधीशों की अयोग्यता से, तो मुख्य न्यायाधीश अथवा उसकी अनुपस्थिति में प्यूनी न्यायाधीशों में से ज्येष्ठ प्यूनी जज तत्संबंधी न्यायाधीश की हैसियत से न्यायालय, उच्च न्यायालय की बैठकों में उपस्थित होने का लिखित निवेदन न्यायाधीशों से, उस अवधि के लिये जो आवश्यक, हो, कर सकता है; यदि उच्च न्यायालय (Exchequer Court) के न्यायाधीश ओटावा में न हों अथवा किसी कारणवश उपस्थित होने में असमर्थ हों तो प्रान्तीय उच्च न्यायालय के न्यायाधीश से उपस्थित होने का निवेदन कर सकता है, जिसे मुख्य न्यायाधीश द्वारा या मुख्य न्यायाधीश की अनुपस्थिति में स्थानापन्न मुख्य न्यायाधीश

द्वारा अथवा किसी ऐसी प्रान्तीय न्यायालय के ज्येष्ठ प्यूनी जज, जिससे ऐसा निवेदन लिखित रूप में किया गया हो, द्वारा लिखित निर्देश हो।

* * * *

4. **कर्त्तव्यः** जिस न्यायाधीश को इस प्रकार उपस्थित होने का निवेदन किया गया हो अथवा जिसको अपने पद के अन्य कर्तव्यों से इस प्रकार प्रमुखता देने के निर्देश दिये गये हों, उसका यह कर्तव्य होगा कि वह बैठकों में उस समय में और उस अवधि तक जिसके लिये उसकी उपस्थिति की आवश्यकता हो, उपस्थित हो और इस प्रकार उपस्थित रहते हुये वह प्रधान न्यायालय के प्यूनी जज की सत्ता और विशेष अधिकार प्राप्त करेगा और उसके कर्तव्य का पालन करेगा।''

16. विधान-एक्ट में हमारी सब सिफारिशों को स्थान देने की आवश्यकता नहीं है। मुख्य लक्षणों का विधान एक्ट में समावेश किया जाये और विस्तारपूर्वक व्यवस्थायें यूनियन व्यवस्थापक मण्डल द्वारा एक पृथक न्याय विभाग के एक्ट में पास की जायें। उदाहरणस्वरूप मौलिक अधिकारों को लागू करने की व्यवस्था भी न्याय विभाग के एक्ट में दी जाये। हम यह बता दें कि प्रधान न्यायालय के आदेश (Mandamus) हुक्म इम्तनाई (Prohibition) हुक्म मिसलतल्बी के विशेषाधिकार को सन् 1938 ई. के स्थायी विधान द्वारा इंग्लैण्ड में हटा दिया गया है, सम्बन्धित आज्ञाओं को स्थानापन्न कर दिया गया है और न्याय विभाग के प्रधान न्यायालय को अधिकार दे दिया गया है कि वह उन मामलों की, जिनमें कि इस प्रकार की आज्ञायें प्राप्त हों, कार्यप्रणाली को निर्धारित करने के न्यायालय सम्बन्धी नियम बनाये। [देखिये सन् 1938 ई. के न्याय के शासन प्रबन्ध (Administration of Justice) के 7-10, धारायें (विविध आदेश)।]

17. हम समझते हैं कि हमारे लिये प्रधान न्यायालय के अधिकार और निर्माण के वर्णन करने की ही विचारणीय बातें थीं। इसलिये हमने इकाइयों की हाईकोर्ट के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा है, यद्यपि प्रसंगवश प्रधान न्यायालय सम्बन्धी सुझावों में हमें इनका उल्लेख करना पड़ा है।

1. एस. वरदाचार्य।
2. ए. कृष्णास्वामी अय्यर।
3. बी. एल. मित्तर।
4. के. एम. मुन्शी।
5. बी. एन. राव।

नई दिल्ली, 21 मई, सन् 1947 ई.

गोपनीय

परिशिष्ट 'ख'

मं.सी.ए./63/कान्स./47

भारतीय विधान-परिषद्

कौंसिल हाउस,

नई दिल्ली, 13 जुलाई सन् 1947 ई.

प्रेषक:

पं. जवाहरलाल नेहरू,

सभापति, संघ-विधान-समिति

सेवा में:

अध्यक्ष,

भारतीय विधान-परिषद्

श्रीमान्,

(1) विधान-परिषद् के 30 अप्रैल सन् 1947 ई. के प्रस्तावानुसार संघ-विधान सम्बंधी सिद्धान्तों पर रिपोर्ट तैयार करने के लिये आपने जो समिति नियुक्त की थी उसके सदस्यों की ओर से मैंने एक स्मृति-पत्र पेश किया था, जिसमें समिति की सिफारिशें दर्ज थीं।

(2) 12 जुलाई सन् 1947 ई. को उस समिति की फिर बैठक हुई और उक्त स्मृति-पत्र में कुछ परिवर्तन करने का निश्चय किया।

(3) समिति की राय में स्मृति-पत्र के क्लाज 3 में निम्नलिखित एक सबक्लाज जोड़ा जाना चाहिये, ताकि संघीय पार्लियामेंट किसी भी इकाई (unit) का नाम बदल सके:

"(ङ) किसी इकाई का नाम बदल सकती है।"

(4) समिति की यह राय है कि स्मृति-पत्र के भाग 4 के अध्याय 1 में, खण्ड 6 के उपखण्ड 2 में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जाना चाहिये, जिससे कि यह बात स्पष्ट हो जाये कि अगर कौंसिल आफ स्टेट्स का एक सदस्य उप-राष्ट्रपति चुना गया तो वह कौंसिल आफ स्टेट्स में अपना स्थान रिक्त कर देगा।

'और अगर संघीय पार्लियामेंट का एक सदस्य उप-राष्ट्रपति चुना गया तो वह संघीय-पार्लियामेंट में अपना स्थान रिक्त कर देगा।"

(5) और फिर समिति की यह राय है कि भारतीय विधान सम्बन्धी स्मृति पत्र के भाग 10 के स्थान पर निम्नलिखित अंश रखा जाये।

भाग 10

विधान में संशोधन

विधान सम्बन्धी संशोधन संघ-पार्लियामेंट की किसी भी सभा में पेश किया जा सकता है और जब प्रस्तावित संशोधन, प्रत्येक सभा में, उस सभा के कुल सदस्यों के बहुमत द्वारा तथा उस सभा में उपस्थित और मत देने वाले दो तिहाई सदस्यों के बहुमत से स्वीकृत हो जाये, तो वह स्वीकृति के लिए राष्ट्रपति के सामने रखा जायेगा और उनकी स्वीकृति मिलने पर वह संशोधन प्रयोग में आयेगा:

परन्तु शर्त यह है कि यदि संशोधन विधान के किसी ऐसे आदेश के बारे में हो जो निम्नलिखित मसलों में से सभी या किसी एक मसले से सम्बन्ध रखता हो, अर्थात:-

(क) संघीय विधायी सूची में कोई परिवर्तन

(ख) संघ-पार्लियामेंट में इकाइयों का प्रतिनिधित्व तथा

(ग) सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार,

तो यह भी आवश्यक होगा कि वह संशोधन संघ की संभी इकाइयों का आबादी के बहुमत का प्रतिनिधित्व करने वाली इकाइयों की व्यवस्थापिकाओं द्वारा अनुमोदित हो। इन इकाइयों में संघ में सम्मिलित रियासतों की एक तिहाई जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने वाली इकाइयां भी शामिल हैं।

व्याख्या: ''इकाई'' (unit) का इस खण्ड में वही अर्थ है जो भाग 4 के खंड 14 में है। जहां इकाई रियासती गुटों की है वहां यह प्रस्तावित संशोधन इकाई की व्यवस्थापिका द्वारा उस हालत में अनुमोदित समझा जायेगा, जबकि उस गुट की रियासतों की बहुसंख्यक व्यवस्थापिकाएं उसका अनुमोदन करें।

आपका

-जवाहरलाल नेहरू

Con. 3. 4.7.47
751

अंक 4
संख्या 7

मंगलवार
22 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1. परिचय पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना 1
2. राष्ट्रीय पताका सम्बन्धी प्रस्ताव 1

भारतीय विधान-परिषद्

मंगलवार, 22 जुलाई सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक विधान भवन, नई दिल्ली में दिन के दस बजे माननीय डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में आरम्भ हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना

निम्नलिखित सदस्य ने अपना परिचय-पत्र पेश किया और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:

श्री जैसुख लाल हाथी (अवशिष्ट रियासतें का गुट)।

***श्री रामनारायन सिंह** (बिहार: जनरल): श्रीमान् जी, एक बड़े महत्वपूर्ण वैधानिक विषय की ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। मैं समझता हूं कि हम यहां एक सर्वाधिकार प्राप्त संस्था के रूप में सम्मिलित हो रहे हैं और भावी स्वतंत्र भारत के लिये विधान बना रहे हैं। अन्य व्यक्ति भी ऐसा ही समझते हैं। लेकिन परिषद् के दफ्तर द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले लिफाफों के सिरों पर हमें अब भी 'सम्राट की सेवा में' शब्द दिखाई देते हैं। मेरे ख्याल से यह ठीक नहीं है। मैं इस विषय की ओर आपका तथा हाउस का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। मैं आशा करता हूं कि भविष्य में परिषद् पत्र-व्यवहार में लिफाफों पर इन शब्दों का प्रयोग नहीं करेगी।

राष्ट्रीय पताका सम्बन्धी प्रस्ताव

***अध्यक्ष:** हम कार्यक्रम को लेंगे। कार्यक्रम का पहला विषय पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा पताका विषयक प्रस्ताव है।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्त-प्रांत: जनरल): अध्यक्ष महोदय, निम्न प्रस्ताव को पेश करने का मुझे गौरव है:

''निश्चय किया जाता है कि भारत का राष्ट्रीय झंडा तिरंगा होगा जिसमें गहरे केसरिया, सफेद और गहरे हरे रंग की बराबर-बराबर की

---

*इस चिन्ह का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

तीन आड़ी पट्टियां होंगी। सफेद पट्टी के केन्द्र में चरखे के प्रतीक स्वरूप गहरे नीले रंग का एक चक्र होगा। चक्र की आकृति उस चक्र के समान होगी जो सारनाथ के अशोक कालीन सिंह स्तूप के शीर्ष भाग पर स्थित है।

चक्र का व्यास सफेद पट्टी की चौड़ाई के बराबर होगा। राष्ट्रीय झंडे की चौड़ाई और लम्बाई का अनुपात साधारणतः 2:3 होगा।''

श्रीमान्जी, यह प्रस्ताव साधारण भाषा में है। इसकी भाषा थोड़ी-सी लाक्षणिक भी है और जो शब्द मैंने पढ़े हैं उनमें तेज और उत्साह नहीं है। फिर भी मुझे विश्वास है कि इस हाउस में बहुत से सदस्य उस तेज और उत्साह का अनुभव कर रहे होंगे जिसका इस समय मैं अनुभव कर रहा हूं। क्योंकि इस प्रस्ताव तथा झंडे के पीछे, जिनको हाउस के समक्ष स्वीकार करने के लिये पेश करने का मुझे गौरव है, एक इतिहास है—राष्ट्रीय जीवन के एक अल्पकाल का घटनाओं से परिपूर्ण इतिहास है। कभी-कभी थोड़े से समय में हम शताब्दियों के मार्ग को तय कर लेते हैं। किसी व्यक्ति का केवल जीवन व्यतीत करना इतना महत्व नहीं रखता है जितने कि उस व्यक्ति द्वारा अपने अल्पकालीन जीवन में किये गये कार्य महत्व रखते हैं। किसी राष्ट्र का केवल अस्तित्व ही इतना महत्व नहीं रखता है जितने कि उस राष्ट्र द्वारा अपने जीवन के विभिन्न काल में किये गये कार्य महत्व रखते हैं। मैं यह कहने का साहस करता हूं कि पिछले 25 वर्ष में भारत संगठित रहा और उसने संगठित होकर कार्य किया और जिन भावनाओं से भारतीय जनता परिपूरित है वह कुछ वर्षों का क्षणिक आवेश ही नहीं हैं बल्कि उससे बहुत-कुछ अधिक है। उनका नाम इतिहास में आ चुका है और उस इतिहास को उन्होंने स्वयं गौरवान्वित किया है। वही इस देश में हमारी पैतृक सम्पत्ति है। इस कारण इस प्रस्ताव को पेश करते समय मुझे घटनाओं से परिपूर्ण उस इतिहास का ख्याल आता है जिसमें हम सबने विगत 25 वर्ष गुजारे हैं। अनेकों स्मृतियां मुझे घेरे हुये हैं। इस महान् राष्ट्र ने स्वतंत्रता के लिये जो महान् युद्ध किया मुझे उसकी सफलतायें और असफलतायें याद आती हैं। मुझे याद है और इस हाउस के अनेक सदस्यों को याद होगा कि हम किस प्रकार इस झंडे को केवल गौरव और उत्साह से ही नहीं वरन् शरीर में एक स्फूर्ति और उत्तेजना समेत मानते थे। कभी-कभी जब हम पराजित और निरुत्साह हो जाते थे तब इस झंडे का दर्शन आगे बढ़ने के लिये उत्साह दिलाता था। उस समय

हममें से अनेकों जो आज यहां उपस्थित नहीं हैं–हमारे अनेकों साथी जो संसार से कूच कर गये हैं इस झंडे को थामे रहते थे–और बहुत से तो मृत्युपर्यन्त इस झंडे को थामे रहे और मरते-मरते झंडे को ऊंचा रखने के लिये दूसरे को सौंप गये। इस कारण इन सादा शब्दों से जो भाव प्रगट होता है उससे कहीं अधिक भाव इनमें भरा हुआ है। लोगों का स्वतंत्रता के लिये युद्ध, उसमें सफलतायें तथा असफलतायें, मुकदमें और आपत्तियों के साथ-साथ मैं इस प्रस्ताव को पेश करते समय तत्सम्बन्धी कुछ विजय–उस युद्ध के अन्त में विजय के भाव इन शब्दों में भरे हुये हैं।

अब मैं पूर्णतया अनुभव करता हूं, जैसा कि यह हाउस भी अनुभव करेगा कि हमारी इस विजय में अनेक प्रकार से रुकावटें डाली गई। ऐसी भी अनेकों घटनायें हुई हैं, विशेषकर पिछले कुछ महीनों में जिनसे हमें दुःख पहुंचा है और जिन्होंने हमारे हृदय पर आघात किया है। हमने देखा कि हमारी प्यारी जन्मभूमि में से कुछ भाग काट दिये गये। हमने अनेकों मनुष्यों को असहाय कष्ट भोगते देखा, अनेकों को बेघरबार अनाथ पागलों की तरह भटकते देखा। हमने और भी बहुत सी बातें देखीं जिनको इस हाउस में दुहराने की आवश्यकता नहीं है, लेकिन हम उन्हें भूल नहीं सकते हैं। इन तमाम दुःखों ने हमारे मार्ग में बाधायें डाली हैं। विजय प्राप्त कर लेने पर भी हमारे लिये ये बाधायें हैं। हमें अभी और आगे बड़ी-बड़ी समस्याओं का सामना करना है। फिर भी मेरे ख्याल से यह सच है–मैं तो इसे सच ही समझता हूं–कि यह समय विजय का है और हमारे समस्त संघर्षों का परिणाम इस समय विजय है। (*वाह, वाह*)

अनेकों घटनायें जो हो चुकी हैं उन पर बहुत पश्चाताप तथा खेद प्रकट किया गया है। उन घटनाओं के कारण मैं दुखी हूं, हम सब मन में दुखी हैं। लेकिन विजय के दूसरे पहलू से हमें जो कुछ भी हुआ है–उसको पहचानना है–क्योंकि विजय में हर्ष है। यह कोई छोटी बात नहीं है कि उस महान् तथा शक्तिशाली सरकार ने जिसने देश में साम्राज्यशाही का आधिपत्य जमा रखा था, अपना शासन समाप्त करने का निर्णय कर लिया है। इसी की ओर हमारा लक्ष्य था। हमने उस उद्देश्य को प्राप्त कर लिया है अथवा शीघ्र ही प्राप्त कर लेंगे, इसमें कोई संशय नहीं है। हमारे उद्देश्य की पूर्ति ठीक उसी प्रकार नहीं हुई जिस प्रकार कि हम चाहते थे। हमारे कार्यों में जो मुसीबतें तथा और बातें आईं उन्हें हम नहीं चाहते थे। पर हमें याद रखना चाहिये कि ऐसा बहुत कम होता है

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

कि लोग जिस स्वप्न को देखें उसकी पूर्ति हो जाये। ऐसा बहुत कम होता है कि जिन उद्देश्यों तथा लक्ष्यों को लेकर हम चलते हैं; उनकी पूर्ण प्राप्ति किसी व्यक्ति के जीवन में अथवा राष्ट्र के जीवन में हो जाये।

हमारे सामने अनेकों उदाहरण हैं। हमें सुदूर अतीत काल में नहीं जाना है। हमारे पास वर्तमान अथवा निकटवर्ती अतीत के उदाहरण हैं। कुछ वर्ष पूर्व एक महान युद्ध हुआ–वह संसार-युद्ध जिसने मानवता पर भयानक विपत्तियां ढाई–यह युद्ध स्वतंत्रता, लोकतंत्रता तथा और बहुत-सी बातों के लिये लड़ा गया था। इस युद्ध का अन्त उन लोगों की विजय के रूप में हुआ जो कहते थे वे स्वतंत्रता तथा लोकतंत्रता के हामी हैं। फिर भी युद्ध समाप्त होने भी न पाया था कि नये युद्ध और संघर्षों की अफवाहें उड़ने लगीं।

तीन दिन पूर्व एक पड़ोसी देश में राष्ट्र के नेताओं की पाशविक हत्याओं ने इस हाउस, इस देश तथा संसार को थर्रा दिया। आज समाचार-पत्रों से यह मालूम होता है कि एक साम्राज्यवादी सत्ता ने दक्षिण-पूर्व एशिया के एक मित्र देश पर हमला किया है। इस संसार में अभी स्वतंत्रता बहुत दूर है और समस्त राष्ट्र छोटे या बड़े रूप में अपनी-अपनी स्वतंत्रता के लिये संघर्ष कर रहे हैं। यदि हमें जिसके लिये हम प्रयत्नशील थे, प्राप्त नहीं हुआ तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। इसके लिये शर्मिन्दा होने की कोई बात नहीं है; क्योंकि मेरे ख्याल से जो कुछ हमने प्राप्त किया है वह कम नहीं है। वह बड़ी पर्याप्त वस्तु है–महान् वस्तु है। कोई मनुष्य उसे खोने का प्रयत्न न करे केवल इसलिये कि और भी बहुत-सी ऐसी बातें हुई जिन्हें हम नहीं चाहते थे। हम इन दो चीजों को अलग-अलग समझें। इस महान् संसार में किसी देश की ओर देखिये। ऐसा कौन-सा देश है–बड़े-बड़े शक्तिशाली देशों में भी–जो आज भयानक समस्याओं से परिपूर्ण न हो, जो आज किसी न किसी रूप में चाहे राजनैतिक हो तथा आर्थिक हो, उस स्वतंत्रता को प्राप्त करने का प्रयत्न न कर रहा हो जो किसी न किसी तरह उसके अधिकार से परे हैं। इतने बड़े प्रसंग में भारत की समस्यायें भयानक प्रतीत नहीं होती हैं। ये समस्यायें हमारे लिये कोई नई नहीं हैं। अतीत में हमने अनेकों अप्रिय बातों का सामना किया है, पर हम पीछे नहीं हटे। हम और भी अनेकों अप्रिय बातों का सामना करेंगे जो अभी या भविष्य में हमारे सामने आयेंगी और हम न उनसे विमुख होंगे; न घबरायेंगे और न पद-त्याग करेंगे। (*घोर हर्ष-ध्वनि*)

इसलिये ऐसे वातावरण में भी मैं किसी उत्साहहीन प्रवृत्ति को लेकर इस राष्ट्र की, जो कुछ इसने प्राप्त किया है, प्रशंसा करने के लिये खड़ा नहीं हुआ हूं। *(पुन: तालियां)* यह ठीक और उचित है कि इस समय हमें इस प्राप्ति के संकेत को स्वतंत्रता के संकेत को स्वीकार करना चाहिये। यह स्वतंत्रता अपने पूर्ण रूप में और समस्त मानवता के लिये क्या वस्तु है? स्वतंत्रता क्या है, और स्वतंत्रता के लिये संघर्ष क्या है, और उसका अन्त क्या है? जैसे ही आप एक कदम आगे बढ़ाते हैं और कुछ सफलता प्राप्त कर लेते हैं, आपके सामने आगे और कर्त्तव्य आते हैं। इस देश में अथवा संसार में जब तक एक भी व्यक्ति परतंत्र है तब तक पूर्ण स्वतंत्रता नहीं होगी। जब तक देश के किसी भी व्यक्ति के लिये पुरुष, स्त्री अथवा बच्चे के लिये भुखमरी, कपड़ों की कमी, जीवन के लिये आवश्यक उपकरणों की कमी और उन्नति के लिये अवसर की कमी है तब तक पूर्ण स्वतंत्रता न हो सकेगी। हम उसके लिये प्रयत्न करेंगे। शायद हम उसमें सफल न हो सकें क्योंकि यह एक महान् कार्य है। लेकिन हम उस कार्य को पूरा करने के लिये भरसक प्रयत्न करेंगे और आशा करते हैं कि हमारे उत्तराधिकारियों को, जब वे आयेंगे, अनुसरण करने के लिये सरल मार्ग मिले। लेकिन स्वतंत्रता के मार्ग का कोई अन्त नहीं है। जैसे-जैसे हम आगे बढ़ते हैं और कभी-कभी मिथ्याभिमान में पूर्णता प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं, लेकिन वह कभी प्राप्त नहीं होती। यदि कठोर परिश्रम करें तो हम धीरे-धीरे अपने लक्ष्य के निकट पहुंच जाते हैं। जब हम लोगों को अधिक सुखी बनाते हैं तो कई प्रकार से हम उनके स्वास्थ्य में उन्नति करते हैं और हम अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होते हैं। मैं नहीं जानता कि इसका कहीं अन्त होता भी है या नहीं, लेकिन हम किसी लक्ष्य की ओर अग्रसर होते हैं जिसका कभी अन्त नहीं होता।

मैं आपको यह झंडा भेंट करता हूं। यह प्रस्ताव इस झंडे की व्याख्या करता है। मुझे विश्वास है कि आप इसे स्वीकार करेंगे। किसी विधिवत प्रस्ताव द्वारा तो नहीं वरन् सार्वजनिक प्रयोग तथा सम्मान द्वारा और अधिकतर उन बलिदानों द्वारा, जो पिछले दस वर्षों में इस झंडे के इर्द-गिर्द हुए, एक प्रकार से इस झंडे को स्वीकार कर लिया गया है। हम एक प्रकार से उस जन-साधारण की स्वीकृति की पुष्टि कर रहे हैं। यह वह झंडा है जिसका अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है। कुछ लोग इसके महत्व को न समझकर साम्प्रदायिक रूप से सोचने लगे और यह विश्वास करने लगे कि अमुक भाग अमुक सम्प्रदाय का द्योतक है, इत्यादि। लेकिन मैं यह कह सकता हूं कि जब इस झंडे का रूप विचारा गया था, उस समय इसके साथ कोई साम्प्रदायिक चीज न थी। हमने झंडे के एक ऐसे नमूने

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

पर विचार किया था जो सुन्दर हो, क्योंकि राष्ट्र का प्रतीक देखने में सुन्दर होना चाहिये। हमने उस झंडे का विचार किया जो अपने पूरे रूप में तथा पृथक-पृथक भागों में राष्ट्र की प्रवृत्ति का, राष्ट्र की परम्परा का—प्रवृत्ति और परम्परा के उस मिश्रित रूप का जो हजारों वर्षों से भारत में प्रचलित है—प्रतीक स्वरूप हो। अतः हमने यह झंडा रखा। शायद मैं पक्षपात कर रहा हूं, लेकिन मैं नहीं समझता कि यदि केवल कलात्मक दृष्टि से देखा जाये तो यह झंडा देखने में बहुत सुन्दर जंचे, परन्तु फिर भी इसमें अन्य अनेकों सुन्दर बातों का सादृश्य है—आत्मा सम्बन्धी तथा मन सम्बन्धी बातों का जो कि व्यक्तिगत जीवन तथा राष्ट्र के जीवन को महत्व प्रदान करती है—क्योंकि कोई भी राष्ट्र केवल भौतिक वस्तुओं के आधार पर जीवित नहीं रहता यद्यपि वे बड़ी महत्वपूर्ण हैं। यह आवश्यक है कि हम संसार की अच्छी वस्तुयें प्राप्त करें, संसार की भौतिक वस्तुयें प्राप्त करें और हमारे लोगों के पास जीवन के आवश्यक उपकरण उपलब्ध हों। यह बहुत ही आवश्यक है। तो भी राष्ट्र और भारत जैसा राष्ट्र जिसका अतीत बहुत प्राचीन है, अन्य उपकरणों पर भी जीवित रहता है—और वे हैं आध्यात्मिक उपकरण। यदि हजारों वर्षों से भारतवर्ष इन आदर्शों तथा आध्यात्मिक बातों से सम्पर्क रखे हुए न होता तो भारत क्या होता? अतीत काल में उसने बड़े-बड़े कष्ट और निरादर सहे, लेकिन उस निराहत दशा में भी किसी प्रकार भारत ने अपना सर ऊंचा ही रखा, अपने विचार उच्च ही रखे और आदर्श ऊंचे ही रहे। इस प्रकार हम उस महान युग में से निकले हैं और आज हम अपने अतीत को गौरव सहित धन्यवाद देने में समर्थ हैं तथा इससे भी अधिक अपने उस भविष्य को जो आने वाला है, जिसके लिये हम कार्य करने जा रहे हैं और हमारे उत्तराधिकारी कार्य करेंगे। जो यहां एकत्रित हुये हैं उनको यह गौरव प्राप्त है कि वे एक ऐसे विशेष प्रकार से जो स्मरणीय रहेगा, इस परिवर्तन को अंकित कर रहे हैं। मैंने आरम्भ में यह कहा था कि इस प्रस्ताव को पेश करने का मुझे गौरव है। अब, श्रीमान् जी! मैं इस विशेष झंडे के सम्बन्ध में भी कुछ शब्द कहूं। यह देखा जायेगा कि उस झंडे से जिसे हममें से बहुत विगत वर्षों से प्रयोग में ला रहे थे इस झंडे में कुछ थोड़ा अन्तर है। रंग वही हैं गहरा केसरिया, सफेद और गहरा हरा। सफेद पट्टी में पहले चरखा था जो भारत के जन-साधारण का प्रतीक स्वरूप था, जो जन-समुदाय का प्रतीक स्वरूप था, जो उनके उद्योग का प्रतीक स्वरूप था और जो हमें महात्मा गांधी जी के संदेश द्वारा प्राप्त हुआ था। (*तालियां*) इस विशेष चरखे के प्रतीक को इस झंडे में थोड़ा-सा बदल दिया है—उसे हटाया नहीं गया है। यह अन्तर क्यों किया गया? साधारणतया झंडे पर एक ओर का चिह्न ऐसा होना चाहिये जो दूसरी

ओर से ठीक वैसा ही दिखाई दे, अन्यथा एक कठिनाई उपस्थित हो जाती है जो नियम के विरुद्ध है। चरखा जिस रूप में झंडे पर पहले था, उसका चक्र एक ओर था और तकुआ दूसरी ओर। यदि आप झंडे के दूसरी ओर से देखें तो चक्र इस ओर आ जाता था और तकुआ उस ओर। यदि ऐसा नहीं होता तो वह अनुपात में नहीं है क्योंकि चक्र लट्ठे की ओर होना चाहिये न कि झंडे के सिरे की ओर। यह व्यावहारिक कठिनाई थी। इसलिये यथेष्ठ विचार करने के बाद हमने वास्तव में यह धारणा की कि इस महान् चिह्न को, जिसने लोगों में उत्साह भरा है, रखा जाये, लेकिन वुछ परिवर्तन के साथ और वह यह कि चक्र को रखा जाये और अन्य शेष भाग को नहीं रखा जाये–अर्थात् तकुए और माल को जोकि गडबड़ी पैदा कर रहा था। चरखे का महत्वपूर्ण भाग चक्र वहां है ही। इस प्रकार चरखे और चक्र की प्राचीन परम्परा कायम रही। लेकिन चक्र किस प्रकार का होना चाहिये। हमारे दिमागों में अनेकों चक्र आये पर विशेषकर एक प्रसिद्ध चक्र जो कि अनेकों स्थानों पर था और जिसको हम सबों ने देखा है–अशोक की प्रमुख लाट के सिरे पर का तथा अन्य स्थानों का चक्र। वह चक्र भारत की प्राचीन सभ्यता का चिह्न है–वह और भी अनेक बातों का प्रतीक है जिनको इस काल में भारत ने अपनाया। अतः हमने सोचा कि इस चक्र का चिह्न वहां होना चाहिये और वही चक्र दिखाई देता है। मैं स्वयं तो बहुत प्रसन्न हूं कि इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से हमने इस झंडे के साथ केवल उस प्रतीक को ही नहीं अपनाया बल्कि एक प्रकार से अशोक के नाम को भारत के ही नहीं वरन संसार के इतिहास के एक बड़े महान् नाम को भी अपनाया। यह अच्छी बात है कि इस झगड़े फिसाद और असहिष्णुता के समय हमारा विचार उस बात की ओर हुआ जिसका प्राचीन काल में भारत हामी था और मैं आशा तथा विश्वास करता हूं कि भूल और त्रुटियां करने पर तथा समय-समय पर निराहत होने पर भी इस समस्त काल में प्रधान रूप से भारत इस विचार का हामी रहा। क्योंकि यदि भारत किसी महान् लक्ष्य को न अपनाता तो मेरे विचार से भारत जीवित भी न रहता और न इस दीर्घकाल तक अपनी सभ्यता मूलक परम्पराओं को जारी रख सकता था। वह अपनी सभ्यता मूलक परम्परा को जारी रखने में दृढ़ न रहा, बल्कि परिवर्तन करता रहा लेकिन उसके मुख्य सार को सदैव पकड़े रहा, नई प्रगति तथा नये प्रभावों के अनुसार अपने को ढालता रहा। भारत की यही परम्परागत प्रथा रही–सदैव नई कलियां और पुष्प खिलाता रहा–सदैव सद्बातों को ग्रहण करता रहा जो उसे प्राप्त हुई–कभी-कभी बुरी बातें भी ग्रहण की परन्तु अपनी प्राचीन सभ्यता के प्रति सच्चा रहा। समस्त नये प्रभावों द्वारा हज़ारों वर्षों से हमारे ऊपर

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

असर पड़ा लेकिन हमने भी उनको खूब प्रभावित किया, क्योंकि आपको याद होगा कि अतीत काल का भारत कोई छोटा संकीर्ण देश नहीं था जोकि अन्य देशों को तुच्छ समझता हो। भारत अपने समस्त प्राचीन ऐतिहासिक काल में केवल अन्य देशों से अपना सम्पर्क ही न रखता रहा बल्कि वह एक अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र था जो अपने लोगों को अपने संदेश देने तथा दूसरों के संदेश लेने के लिये सुदूर देशों में भेजता था। यद्यपि अनेको परिवर्तन हुए, फिर भी भारत ने जिस आधार को ग्रहण किया उस पर अटल रहने के लिये वह यथेष्ठ शक्तिशाली रहा। यह कहा जाता है कि भारत की शक्ति इसी मजबूत आधार में है। उसमें एक और आश्चर्यजनक गुण है, वह जिस बात को अपनाना चाहता है अपना लेता है। किसी बात को वह इसलिये नहीं त्यागता कि वह उसकी ग्रहणशक्ति के परे है, वह तो हर-एक बात को ग्रहण कर लेता है। किसी भी व्यक्ति या राष्ट्र का यह सोचना मूर्खतापूर्ण है कि वह शेष संसार को दे सकता है उससे कुछ ले नहीं सकता। जब कोई राष्ट्र या कौम इस प्रकार सोचने लग जाती है तो वह रुक्ष हो जाती है, प्रगतिहीन हो जाती है, अवनति तथा विनाश को प्राप्त होती है। वास्तव में यदि भारत के इतिहास की खोज की जाये तो भारत की अवनति का काल वह होगा जबकि उसने अपने आपको सबसे पृथक कर लिया और बाहरी दुनिया की ओर देखना या उससे कुछ ग्रहण करना बन्द कर दिया। भारत का स्वर्णकाल वह था जब कि उसने सुदूर देशों में दूसरों को अपनाने के लिये अपने हाथ बढ़ाये, अपने राजदूत तथा गुप्तचर भेजे, अपने सौदागर और व्यापारिक एजेन्ट उन देशों को भेजे तथा दूसरे देशों के राजदूतों तथा गुप्तचरों का स्वागत किया।

चूंकि मैंने अशोक का उल्लेख किया है, मैं आपको यह बताना चाहूंगा कि भारतीय इतिहास में अशोक काल वास्तव में इतिहास का अन्तर्राष्ट्रीय काल था; वह संकीर्ण राष्ट्रीय काल न था। यह वह काल था जब कि भारतीय राजदूत सुदूर विदेशों में गये—साम्राज्य अथवा साम्राज्यवाद के रूप में नहीं; बल्कि शान्ति, सदाचरण और शुभकामना का संदेशा लेकर। (*तालियां*)

इसलिये जिस झंडे को आपको भेट करने का सम्मान मुझे प्राप्त हुआ है, मैं आशा करता हूं और मुझे विश्वास है कि वह झंडा साम्राज्य का साम्राज्यवाद का, किसी व्यक्ति पर आधिपत्य जमाने का नहीं, है वरन् वह एक स्वतंत्रता का झंडा है और वह भी केवल हमारी ही स्वतंत्रता का नहीं वरन् उन समस्त मनुष्यों की, जो भी इसे देखे, स्वतंत्रता का चिह्न है। (*तालिया*) मुझे आशा है कि यह

दूर-दूर तक पहुंचेगा, केवल वहीं नहीं जहां कि भारतवासी दूत तथा मंत्री के रूप में रह रहे हैं बल्कि समुद्र पार जहां कि भारतीय जहाजों द्वारा यह ले जाया जायेगा–चाहे जहां कहीं भी यह पहुंचे–यह मैं आशा करता हूं कि उन लोगों को स्वतंत्रता का संदेश देगा, मित्रता का संदेश देगा और यह संदेश देगा कि भारत संसार के प्रत्येक देश से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखना चाहता है और जो लोग स्वतंत्रता चाहते हैं उनकी सहायता करना चाहता है। (*वाह, वाह*) मैं आशा करता हूं कि इस झंडे का सब जगह यही संदेश होगा। मैं आशा करता हूं कि स्वतंत्रता प्राप्त करने के पश्चात् हम वह कार्य नहीं करेंगे जो कि दुर्भाग्य से अन्य अनेकों ने अथवा कुछ औरों ने किया है अर्थात्, नई शक्ति प्राप्त करते ही यकायक साम्राज्यवाद के रूप को ग्रहण करना। यदि ऐसा हुआ तो हमारे स्वतंत्रता के संघर्ष का भयानक अन्त होगा। (*वाह, वाह*) लेकिन ऐसा संकट है इसलिये मैं इस हाउस को याद दिलाने का साहस करता हूं यद्यपि इस हाउस को इस प्रकार याद दिलाने की कोई आवश्यकता नहीं है। जो देश एकदम बन्धनहीन होता है उसमें इस प्रकार से हाथ-पैर फैलाने तथा दूसरे पर बौछारें करने के संकट की संभावना होती है। यदि हम ऐसा करेंगे तो हम उन अन्य राष्ट्रों के समान हो जायेंगे जो कि लगातार एक प्रकार से संघर्षमय जीवन बिता रहे हैं तथा संघर्ष की तैयारी कर रहे हैं। दुर्भाग्यवश आज का संसार ही ऐसा है।

किसी सीमा तक विगत कुछ महीनों से वैदेशिक नीति की जिम्मेदारी मुझ पर ही है और सदैव मुझसे यहां या दूसरी जगह यह पूछा जाता है कि "आपकी वैदेशिक नीति क्या है? युद्ध-रत संसार में आप किस दल के साथी हैं?" आरम्भ में तो मैं यह कहने का साहस करता हूं कि हम किसी दल के पक्ष में नहीं हैं। हमारा विचार है कि जहां तक हो सके हम शांति स्थापित करने वालों के रूप में कार्य करें क्योंकि और किसी प्रकार से सफल होने के लिये हम यथेष्ठ शक्तिशाली नहीं हैं। लेकिन फिर भी हम संसार में राजनैतिक दलों की उलझनों से बचना चाहते हैं। हमारे इस प्रपंचमय संसार में ऐसा करना पूर्णतया सम्भव नहीं है लेकिन निश्चय ही हम इस उद्देश्य के लिये भरसक प्रयत्न कर रहे हैं।

इस प्रस्ताव में यह बताया गया है कि झंडे की चौड़ाई और लम्बाई का अनुपात साधारणतया 2 : 3 होगा। आपने "साधारणतया" शब्द पर ध्यान दिया होगा। अनुपात के लिये कोई पूर्ण सिद्धान्त नहीं है, क्योंकि वही झंडा किसी विशेष अवसर पर किसी ऐसे अनुपात का हो जो कि और भी अधिक उपयुक्त हो या किसी अन्य अवसर पर किसी अन्य स्थान में इस अनुपात में थोड़ा-सा परिवर्तन

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

करना पड़े। इसलिये इस अनुपात की कोई अनिवार्यता नहीं है। लेकिन साधारणतया 2:3 का अनुपात एक ठीक अनुपात है। कभी-कभी 2:1 का अनुपात इमारतों पर झंडा फहराने के लिये उपयुक्त होता है। अनुपात कुछ भी हो यह विषय इतना मुख्य नहीं है कि आपेक्षिक लम्बाई या चौड़ाई क्या हो, खास चीज तो उसका नमूना है।

श्रीमान्जी, अब मैं आपके सामने केवल प्रस्ताव ही उपस्थित नहीं करूंगा बल्कि स्वयं झंडे को भेंट करूंगा।

आपके सामने ये दो झंडे हैं, एक रेशम का जिसे मैं पकड़े हुये हूं और दूसरा जो उस ओर है, वह खादी का है।

मैं इस प्रस्ताव को पेश करता हूं। (*तालियां*)

***अध्यक्ष:** इस प्रस्ताव पर तीन संशोधनों की सूचनायें आई हैं।

***अनेक माननीय सदस्य:** नहीं, नहीं ।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त तथा बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरा संशोधन इस प्रकार है कि:

''निम्नलिखित नया पैरा इस प्रस्ताव में जोड़ दिया जाये:

'सफेद पट्टी के केन्द्र में चक्र के अन्दर स्वस्तिका, जो प्राचीन भारत का सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् का प्रतीक है, अंकित कर दी जाये'।''

जब मैंने यह संशोधन भेजा था, तो उस समय मैंने इस झंडे के नमूने को नहीं देखा था। उस समय मेरे मन में दो या तीन विचार प्रमुख थे। मैंने सोचा कि यह झंडा भारतवर्ष के नये भारतीय प्रजातंत्र का झंडा होने के नाते हमारी प्राचीन सभ्यता का और हमारी उस आत्मोन्नति का सच्चा चिह्न हो जिसने हमारे ऋषि मुनियों को उच्च जीवन प्रदान किया, संसार को शांतम्, शिवम्, सुन्दरम् का वह उपदेश दिया जो शांति का संदेश है-केवल अकर्मण्य शांति का संदेश नहीं, निष्क्रिय शांति का संदेश नहीं बल्कि उस शक्तिमान, गतिमान् शांति का संदेश-

जो बुद्धि से परे है– वह शांति जिसका गायन वाल्मीकि ने किया है–''समुद्र इव गांभीर्ये धैर्ये च हिमवानिव'' अर्थात समुद्र के समान गंभीर और हिमालय के सदृश धैर्यवान। श्रीमान्जी, मैंने सोचा कि यदि चक्र के अन्दर स्वस्तिका का चिह्न अंकित कर दिया जाता तो अशोक-चक्र के साथ यह हमारी प्राचीन सभ्यता का समुचित प्रतीक होता अर्थात् हमारी सभ्यता के प्रकट और अप्रकट दोनों स्वरूप रहते। धर्म-चक्र प्रकट प्रतीक होता और स्वस्तिका अप्रकट। लेकिन श्रीमान्जी, मैंने अभी झंडे को देखा और मैंने समझा कि इस चक्र के अन्दर स्वस्तिका को बैठाना कठिन है। चक्र में यह भद्दा लगेगा। चक्र धर्म-क्रम का या विश्व के चक्र का–संसार के चक्र का–चिह्न है जो कि शान्तम्, शिवम्, सुन्दरम, के सनातन सत्य पर घूमता है। यही सत्य संसार को स्थिर रखता है और उसमें हम विश्व का एक अंश बनकर रहते हैं, चलते-फिरते हैं और अपनी स्थिति रखते हैं। पंडित नेहरू ने हमारा शांति-प्रदायक तथा शांति-वाहक के रूप में परिचय दिया है। भारतवर्ष का अनादिकाल से सदा यह कर्त्तव्य रहा है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा है कि ''हमने कभी अपने पड़ोसियों के खून में अपने हाथ नहीं रंगे हैं, हमारी सेनायें कभी दूसरे देशों में विजय की लालसा से नहीं गई और इस युद्ध-विक्षत, युद्ध-व्यथित संसार में हम सदैव शांति प्रदान करने वाले और शांति वहन करने वाले बने रहे।'' श्रीमान्जी, झंडे के नमूने को देखकर मैं यह अनुभव करता हूं कि स्वस्तिका को बैठाना बड़ा कठिन है, यद्यपि मैं उसको वहां देखने के लिये बड़ा लालायित था। स्वस्तिका झंडे को भद्दा बना देगी। इन कारणों से मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं देना चाहता हूं और हाउस से अपने संशोधन को वापस लेने की प्रार्थना करता हूं।

***अध्यक्ष:** मि. तजम्मल हुसैन!

***माननीय सदस्यगण:** वे उपस्थित नहीं हैं।

***अध्यक्ष:** डाक्टर देशमुख!

डा. पी.एस. देशमुख (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, पंडित नेहरू का इतना प्रभावशाली तथा भावमय भाषण सुनकर किसी को भी और अधिक कहने का साहस नहीं होता कि कहीं कोई बात उस भाषण के प्रभाव को कम न कर दे। हम सदैव उनकी बातों का आदर करते हैं और ऐसे भावमय प्रश्न पर तो हमारा आदर भक्ति के निकट पहुंच जाता है।

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

मेरा संशोधन बड़े दृढ़ आधारों पर निर्भर था। वह किसी प्रकार भी जो वक्तव्य हमने अभी सुना है उसके विरोध में नहीं है। मेरा विचार था कि तिरंगे झंडे को चरखे समेत उसी रूप में जो कि अब तक था, रखा जाये। चरखा अहिंसा और सामान्य श्रमजीवी का प्रतीक है और हमारी राजनैतिक स्वतंत्रता और महात्मा गांधी से उसका तादात्म्य हो चुका है। लेकिन इस बात को सोचकर कि हाउस, जो झंडा पेश किया गया है, उसे ही स्वीकार करेगा, मैं अपना संशोधन पेश नहीं करना चाहता; यद्यपि मैं अब भी यह सोचता हूं कि मेरे विचारों में बहुत अधिक सार था ।

***अध्यक्षः** श्री शिब्बनलाल सक्सेना ने डाक्टर देशमुख के संशोधन में संशोधन करने की सूचना दी थी लेकिन चूंकि संशोधन पेश नहीं किया गया इसलिये उस पर संशोधन के रखे जाने का प्रश्न ही नहीं उठता। अब प्रस्ताव पर वाद-विवाद आरम्भ करेंगे।

श्री सेठ गोविन्ददास (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): सभापति जी, मैं पं. जवाहरलाल जी के प्रस्ताव का अनुमोदन करने के लिये उपस्थित हुआ हूं। आज का दिन मैं भारतीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण दिवस मानता हूं। आज स्वतन्त्र भारत अपनी पताका को घोषित कर रहा है। आज जैसे पंडित जी को इन 27 वर्षों की घटनाओं का स्मरण हो आया उसी प्रकार जिन-जिन ने भी इस स्वतन्त्रता के संग्राम में गत 27 वर्षों से भाग लिया है उन सबका हाल है। हमने निहत्थे होते हुये भी, निःशस्त्र होते हुये भी, स्वतन्त्रता प्राप्त करने के कोई साधन न होते हुये भी इन 27 वर्षों के अपने स्वतन्त्रता-संग्राम को जिस प्रकार लड़ा है और लड़ने के पश्चात् उसमें जिस प्रकार विजय प्राप्त की है, वह केवल भारतवर्ष के इतिहास में ही नहीं किन्तु सारे संसार के इतिहास में एक अभूतपूर्व घटना है और आज वह विजय हमें प्राप्त हो रही है जिसके लिये हम इतने वर्षों से लालायित थे। इन 27 वर्षों में अनेक बार इस झंडे को नीचा करने के लिये, अनेक बार उसे कुचलने के लिये, अनेक बार इसे जलाने के लिये, जो-जो आगे आये हैं उनका भी आज हमें स्मरण हो आता है, परन्तु जब सत्य हमारे साथ था, जब न्याय हमारे साथ था, तो इस झंडे का कुचला जाना, इस झंडे का रौंदा जाना, इस झंडे का इस प्रकार अन्त किया जाना सर्वथा असम्भव बात थी और 27 वर्षों के पश्चात् हमने यह संसार को सिद्ध कर दिया कि निःशस्त्र राष्ट्र भी-जिसके पास कोई साधन न हो-ऐसा राष्ट्र भी न्यायपूर्ण मार्गों से चले, सत्यपूर्ण मार्गों से चले तो स्वतंत्रता प्राप्त कर सकता है।

मुझे आज वह दिन स्मरण आ रहा है जब पहले-पहले सन् 1922 ई. में पं. मोतीलाल जी नेहरू जबलपुर पधारे थे। जबलपुर मेरा निवास-स्थान है। सबसे पहले सारे भारतवर्ष में यह झंडा–उस समय इसका लाल, सफेद और हरा रंग था, परन्तु तिरंगा झंडा अवश्य था–उस समय सबसे पहले सारे भारतवर्ष में झंडा जबलपुर के सार्वजनिक भवन टाउन हाल पर पहले-पहले उड़ाया गया था। पं. जवाहरलाल नेहरू को देखकर किसे पं. मोतीलाल जी का स्मरण न हो आता होगा? उस हाउस आफ कामन्स में यह सवाल उठा था कि जबलपुर के इस सार्वजनिक भवन पर यह झंडा किस तरह से उड़ाया गया और उस समय जो ग्रेट ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री थे उन्होंने इस बात का हाउस आफ कामन्स को आश्वासन दिया था कि भविष्य में इस प्रकार की घटना भारत में न हो सकेगी। परन्तु आज मुझे देखकर आनन्द हो रहा है कि 25 वर्ष पहले मेरे निवास स्थान जबलपुर में, जहां सबसे पहले एक सार्वजनिक भवन पर यह झंडा उड़ाया गया था, वहां आज सारे सार्वजनिक भवनों पर यह झंडा उड़ेगा। यह हर भारतीय के लिये गौरव की बात होगी।

इस झंडे के तीन रंगों में साम्प्रदायिकता नहीं है, यह बात पंडित जी ने अपने भाषण में आपको समझा दी। एक समय ऐसा अवश्य था जब इसके जो तीन रंग थे लाल, सफेद और हरा उसमें साम्प्रदायिकता थी। लेकिन जब हमने लाल, सफेद और हरे रंग को परिवर्तित कर केसरिया, श्वेत और हरे रंग को ग्रहण किया उस समय हमने इस बात को स्पष्ट शब्दों में घोषित कर दिया था कि अब जो तीन रंग हमारे झंडे में रहेंगे उनमें साम्प्रदायिकता का लवलेश नहीं है। उस समय हमने इन तीन रंगों का क्या अर्थ होगा, यह भी घोषित किया था और इस समय साम्प्रदायिकता से जो मदमत्त हो रहे हैं, साम्प्रदायिकता से जो पागल हो रहे हैं उनसे मैं कहता हूं कि वे इस झंडे को साम्प्रदायिक न माने। इस झंडे के बीच में अशोक चक्र है, यह आप देखते हैं। अशोक का हमारे इतिहास में कितना बड़ा स्थान रहा है यह पंडित जी ने आपको बतलाया। अशोक ने कलिंग युद्ध के पश्चात् प्रेम-सूत्र से सारे संसार को सम्बद्ध करने का प्रयत्न किया और वह प्रयत्न इतना सफल हुआ कि आज केवल इस देश के ही नहीं बल्कि सारे संसार के इतिहासकार भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि अशोक के सदृश सम्राट इस संसार में कोई नहीं हुआ। एच. जी. वेल्स ने संसार के इतिहास पर जो पुस्तक लिखी है उसमें यह स्वीकार किया है कि सम्राटों के रक्तपान भरे जीवन में एक अशोक का जीवन ऐसा है जिसने सारे संसार को प्रेम-सूत्र में बांधने का प्रयत्न किया। जिस समय हम इसके रंगों को देखते हैं हमें दूसरी बातों का भी स्मरण करना चाहिये। जो लोग कहते हैं कि भगवा रंग

[सेठ गोविन्ददास]

हिन्दुओं का है उनसे मेरा कहना है कि यह गलत है। एक जमाने में भगवा रंग हिन्दुओं का रंग अवश्य रहा है। पेशवाओं के समय में भगवा हिन्दुओं का रंग था, परन्तु हम इतिहास की दूसरी घटनाओं को देखें तो हमको मालूम होगा कि किसी समय केसरिया रंग भी हिन्दुओं का रंग रहा है। जितने राजपूतों के स्वातन्त्र्य-संग्राम हुये उनमें केसरिया बाना और केसरिया झंडा रहा और यदि हम और अधिक प्राचीनता की ओर बढ़ते जायें तो हमें मानना पड़ेगा कि क्या केसरिया रंग, क्या भगवा रंग, यह प्राचीनतम रंग नहीं था। महाभारत के समय आपको मालूम होगा कि रंगों का कोई प्रश्न नहीं था। उस समय अर्जुन के रथ पर वह पताका उड़ती थी जिसमें हनुमान का चिह्न बना रहता था, कर्ण के रथ पर हाथी की पताका रहती थी इसलिये किसी रंग को हिन्दुओं का प्राचीन कहना यह एक ऐतिहासिक भूल है। मैं कहना चाहता हूं कि इन 27 वर्षों के अपने इस स्वतंत्रता के संग्राम में जिन रंगों के नीचे हमने स्वतंत्रता की स्थापना की है, इतने बड़े संग्राम भी लड़े हैं, वही आज स्वतंत्रता प्राप्त करने के पश्चात फिर हमारा राष्ट्रीय झंडा हो, यह एक स्वाभाविक बात है। मुझे यह देखकर दु:ख होता है कि इस समय जो लोग साम्प्रदायिकता से मदमत्त हैं वह कुछ ऐसी घटनायें कर रहे हैं जो आगे चलकर मुझे विश्वास है कि जब यह ठंडे दिमाग से विचार करेंगे तो इन्हें स्वयं अत्यंत लज्जाजनक प्रतीत होगी। अभी परसों की बात है दिल्ली में हिन्दी के सम्बन्ध में एक सभा हुई। देवनागरी लिपि और हिन्दी ही राष्ट्रभाषा बने, इस प्रकार का प्रस्ताव उस सभा में आने वाला था। वहां हुल्लड़बाजी हुई। इतना ही नहीं कई मोटरों पर जो राष्ट्रीय झंडे लगे हुये थे, उन्हें निकाल कर फेंक दिया गया। मैं कहता हूं कि साम्प्रदायिकता से मदमत्त होकर इस प्रकार की बातें करना, इस प्रकार झंडे का अपमान करना सारे राष्ट्र का अपमान करना है। इस देश में मानव रहते हैं, देवता नहीं जिनमें सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण तीनों का समावेश है। इस प्रकार की घटनायें यदि घटती हैं तो जिस शांति का, जिस धर्म का और जिस आनन्द की बातों का यह झंडा द्योतक है वे हमारे देश में न रह सकेंगे। इसलिये मैं इन लोगों को चेतावनी देना चाहता हूं। साम्प्रदायिकता से जो लोग मतदत्त हैं उन्हें मैं चेतावनी देना चाहता हूँ कि इस प्रकार की बातें तो न करें। अगर हम हरे रंग पर दृष्टि डालें तो हमें मालूम होगा कि एक समय ऐसा था कि यह रंग भी स्वतंत्रता-संग्राम के झंडे का रंग था। सन् 1857 के स्वतंत्रता के संग्राम की मैं आपको याद दिलाता हूं। उस समय हमारे झंडे का हरा रंग ही था, जिसके नीचे हमने इस संग्राम को लड़ा था। उस समय यह हरा रंग न केवल मुसलमानों का रंग था, न केवल हिन्दुओं का रंग था, बल्कि जितने लोग उस स्वतंत्रता के

संग्राम में जूझे थे उन सबका रंग था। इसलिये किसी रंग विशेष के विरुद्ध होना, इस समय जब सारा भारतवर्ष स्वतंत्र हो रहा है और जब सारे भारतवर्ष में यह झंडा फहरायेगा, तो इससे ज्यादा दु:ख की बात नहीं हो सकती। इस झंडे को हमने विश्व विजयी कहा है और सारे विश्व को इस झंडे से प्रेम करने की बात कही है। विश्व को हम अहिंसा और प्रेम से जीतना चाहते हैं। इसी का यह द्योतक है। जब हम यह कर लेंगे उस समय हमारा प्रण पूरा होगा। मैं हृदय से इस प्रस्ताव का अनुमोदन करता हूं।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं आज आपके सामने हमारे महान राष्ट्रीय नेता पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा बड़ी योग्यता के साथ उपस्थित किये गये प्रस्ताव का समर्थन करने के लिये खड़ा होता हूं। पंडित जी ने इस महान् देश की स्वतंत्रता के युद्ध में एक बड़ा भाग लिया है।

श्रीमान् जी, उन्होंने इस झंडे के महत्व को हमें समझा दिया है। इस झंडे को ऊंचा रखना और इसकी रक्षा करना लाखों मनुष्यों का कर्तव्य है जो इस देश में रहते हैं। यह धनिकों का झंडा नहीं है बल्कि यह दलित, पीड़ित और निम्न वर्गों का झंडा है जो समस्त देश में व्याप्त हैं।

श्रीमान् जी, मैं केन्द्र में चक्र के समावेश का विशेषतया स्वागत करता हूं। महात्मा गांधी ने हमें वह महान मंत्र दिया है जो कि चरखे के मूर्त रूप में है। हममें से जिन लोगों ने चरखे को अपनाया उन्हें आज गौरव है कि देश में कई शताब्दियों के राजनैतिक संघर्ष के पश्चात् इस देश के लिये एक झंडा बना जो इन शताब्दियों में न था।

मैं सारनाथ में अशोक के सिंह-स्तम्भ के समावेश का भी स्वागत करता हूं। महात्मा बुद्ध की महान् व्यवस्था के पश्चात् अशोक ने मानवता के लिये समस्त सहानुभूति से भी सर्वोपरि महान् ''पंचशीलम्'' हमें प्रदान किया है।

हरिजन तथा अन्य सब जातियां, जोकि समाज में निम्न स्थान प्राप्त किये हुये हैं, अनुभव करती हैं कि जो विधान इस परिषद् द्वारा बनाया जा रहा है वह निम्न श्रेणियों के लाखों व्यक्तियों के लिये सांत्वना प्रदान करेगा। इस झंडे को स्वीकार कर लेने के पश्चात् श्रीमान् जी, मैं समझता हूं कि महात्मा बुद्ध के सिद्धांत का जिसने कि पीड़ित जन समाज के लिये महान् सहानुभूति का वास्तविक प्रदर्शन किया, यथार्थ रूप में पालन किया जायेगा। इन शब्दों के साथ मैं प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

चौ. खलीकुज्जमांः जनाब सदर, मैं इस तजवीज की ताईद करने के लिये आया हूं जो पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अभी आपके सामने पेश की है। मैं उम्मीद करता हूं कि आज से हर वह शख्स जो हिन्दुस्तान का बाशिन्दा अपने आपको कहता है, ख्वाह वह हिन्दू हो, मुसलमान हो या ईसाई हो, इस फ्लैग को जो यहां से मंजूर होकर हिन्दुस्तान का फ्लैग करार पायेगा बहैसियत शहरी के इज्जत व वकार बढ़ाने के लिये हर कुर्बानी पेश करेगा। (*तालियां*) मैं उस तारीख को जो निहायत गलत है, दुहराना नहीं चाहता। मैं चाहता हूं कि इन वाकयात को हम अपनी तरफ से अपने ख्यालों से भुला दें और इसलिये मैं उम्मीद करता हूं कि अक्सरियत भी गुजिस्ता वाकियात को अपने दिलों से महव कर देगी। हम आज हिन्दुस्तान और इण्डिया की एक नई तारीख बनायें जिसमें हर शख्स जिसको तामीर में दिलचस्पी हो, उसमें खलूस हो और उसकी इज्जत और वकत हो, अपनी कौम की इज्जत और वकार को समझें, मैं जानता हूं कि देखने में कोई फ्लैग तो एक कपड़े का टुकड़ा है, मगर किसी मुल्क का झंडा उसका नसबुल ऐन उसका इखलाकी और रूहानी जजबात का मजहर होता है। मुझे खुशी है कि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने इस झंडे की ताईद की है उससे किसी शख्स को भी जो हिन्दुस्तान का अपने आपको बाशिन्दा कहलाता है, इख्तलाफ राय रखने की कोई गुंजायश नहीं है। लिहाजा जिस नुक्तानजर से भी देखा जाये मैं समझता हूं कि आज जो कदम बढ़ाया गया है उससे हमारे हिन्दुस्तान की बुनियाद मजबूत होगी और इस झंडे को लहराने में हर मुसलमान, हिन्दू, ईसाई फख्र करेगा, और इस झंडे की इज्जत करेगा। (*तालियां*) इन चन्द अलफाज के साथ मैं इसकी ताईद करता हूं।

***सर एस. राधाकृष्णन्** (संयुक्त प्रांत : जनरल): अध्यक्ष महोदय, पंडित जवाहरलाल नेहरू ने जिस प्रभावात्मक रूप से इस झंडे और प्रस्ताव को उपस्थित किया है उसके पश्चात् मैं अधिक नहीं कहना चाहता हूं। झंडा अतीत और वर्तमान की संधि है। हमारी स्वतंत्रता के उन निर्माताओं द्वारा छोड़ी हुई यह पैतृक सम्पत्ति है जो इस झंडे के नीचे लड़े और जो भारत में स्वतंत्रता के इस महान् दिवस के लाने के भागी हैं। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने आपको यह बताया कि यह दुःख-विहीन सुख का दिन नहीं है। कांग्रेस ने एकता और स्वतंत्रता के लिये युद्ध किया। एकता संकट में डाल दी गई है और यदि हम उन कर्तव्यों को जो हमारे सामने हैं साहस, शक्ति और दूरदर्शिता से पालन न कर सके तो मेरे विचार से स्वतंत्रता भी संकट में डाल दी जायेगी। यदि इन कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करना है और यदि देश उस एकता और स्वतंत्रता के आदर्श को, जिसके लिये उसने संघर्ष किया, प्राप्त करना चाहता है तो आज हमारे लिये यह आवश्यक है कि हम अपने में नये बल और नये चरित्र

का संचार करें। बड़ा कठिन समय है। सर्वत्र हम कल्पना द्वारा नष्ट हो रहे हैं। हमारे मस्तिष्क मिथ्या कल्पनाओं से भरे हुये हैं। संसार मिथ्या भ्रम, शंका और अविश्वास से भरा पड़ा है। इन संकट के दिनों में यह हमारे ऊपर निर्भर है कि हम किस झंडे के नीचे लड़ें। यहां हम ठीक केन्द्र में श्वेत सूर्य की किरणों के श्वेत रंग की पट्टी रख रहे हैं। श्वेत का अभिप्राय प्रकाश के मार्ग से है। दोपहर में भी अंधेरा होता है जैसा कि कुछ लोगों ने जोर दिया है लेकिन हमारे लिये यह आवश्यक है कि हम इन अंधकार के बादलों को हटायें और उस आदर्श प्रकाश द्वारा अपने आचरण का नियंत्रण करें जो सत्य का, पारदर्शी साधुता का प्रकाश है और जो कि श्वेत रंग द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

जब तक हम सत्पथ पर न चलें, हम न पवित्रता प्राप्त कर सकते हैं और न अपने सत्य के उद्देश्य को प्राप्त कर सकते हैं। अशोक का चक्र हमारे लिये न्याय का चक्र है, धर्म का चक्र है। सत्य केवल धर्म-पथ के अनुसरण द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। जो इस झंडे के नीचे कार्य करें उन सबका अटल सिद्धान्त सत्य और धर्म होना चाहिये। यह (चक्र) हमको यह भी बताता है कि धर्म वह वस्तु है जो सदैव गतिमान है यदि निकट अतीत में इस देश ने हानि उठाई तो वह परिवर्तन के मार्ग में हमारे विरोध के कारण थी। हमें सदैव इतनी चुनौतियां दी गई कि यदि हममें समयानुकूल चलने का बल और साहस न होता तो हम पीछे रह जाते। जाति और अस्पृश्यता के समान आधारों पर अनेकों संस्थायें हमारी सामाजिक रचना में आ गई हैं। जब तक इनको दूर नहीं किया जाता हम नहीं कह सकते कि हम सत्य या धर्म प्राप्त कर लेंगे, यह चक्र जो गतिमान है, जो सदैव घूमने वाली वस्तु है यह सूचित करता है कि स्थिरता में मृत्यु है। जीवन गति में है। हमारा धर्म सत्य सनातन है। इसका यह आशय नहीं कि वह स्थिर है बल्कि यह आशय है कि वह सदैव परिवर्तनशील है। उसकी निर्बाध अविच्छिन्नता ही उसका सनातन लक्षण है। इस कारण हमारी सामाजिक दशाओं को विचारते हुये भी यह आवश्यक है कि हम आगे बढ़ें।

लाल, नारंगी और भगवा रंग त्याग की भावना प्रदर्शित करता है। यह कहा गया है कि ''सर्वे त्यागा राजधर्मेशु दृष्टा'' अर्थात् त्याग के समस्त रूप राजधर्म के अंतर्गत हैं। दार्शनिक को राजा होना चाहिये। हमारे नेताओं को निष्पक्ष होना चाहिये। उनको कर्तव्य परायण होना चाहिये। वे ऐसे व्यक्ति होने चाहिये जिनमें त्याग की भावना कूट-कूटकर भरी हो-वह त्याग जो कि हमारे इतिहास के आरम्भ काल से ही इस केसरिया रंग ने हममें भरा है। यह इस सत्य को सिद्ध करता है कि संसार धनाढ्यों का नहीं है, सम्पन्न व्यक्तियों का नहीं है बल्कि दीन-हीन, कर्तव्य-परायण और विरागियों का है। वैराग्य और त्याग की वह भावना

[सर एस. राधाकृष्णन्]

नारंगी या केसरिया रंग से प्रदर्शित की गयी है और महात्मा गांधी ने अपने जीवन में हमारे लिये उसका समावेश किया है और कांग्रेस ने उनके संदेश और उनकी नीति का अनुसरण किया है। यदि इस कठिन समय में हममें त्याग की भावना नहीं रहती तो हमारा फिर पतन होगा।

हरा रंग–भूमि से हमारा सम्बन्ध–यहां के वनस्पति जीवन से हमारा सम्बन्ध जिस पर कि अन्य समस्त प्राणीमात्र निर्भर हैं, प्रकट करता है। हमको इसी हरित भूमि पर यहीं अपना स्वर्ग बनाना चाहिये। यदि हमें इस प्रयत्न में सफल होना है तो हमें सत्य (श्वेत) का अनुसरण करना चाहिये। धर्म (चक्र) का पालन करना चाहिये। आत्म-नियंत्रण और त्याग (केसरिया) की नीति ग्रहण करनी चाहिये। यह झंडा हमें आदेश देता है कि "सदैव तत्पर रहो, सदैव प्रगति करते रहो, आगे बढ़ो; स्वतंत्र, परिवर्तनीय, दयावान, सभ्य और प्रजातंत्रात्मक समाज की स्थापना करने का प्रयत्न करो जिसमें ईसाई, सिख, मुसलमान, हिन्दू और बौद्ध सभी शरण पा सकें।"

आपको धन्यवाद।

(*घोर करतल ध्वनि*)

***डा. मोहन सिंह मेहता** (उदयपुर)**:** अध्यक्ष महोदय, जबकि मैं अपने स्थान से अपने महान नेता का इस महान विषय पर भाषण सुन रहा था तो मेरे मन में प्रथम यह विचार उठा कि इस विषय पर भाषण नहीं होने चाहियें और इस प्रस्ताव को हाउस के प्रत्येक विभाग द्वारा हर्षध्वनि पूर्वक स्वीकृत कर लेना चाहिये लेकिन चूंकि ऐसा न हो सका और कुछ भाषण हुये–सौभाग्यवश किसी संशोधन पर विचार नहीं हुआ–मैं यहां आने और प्रस्ताव के पक्ष में कुछ शब्द कहने का साहस करता हूं।

श्रीमान् जी, मैं यह कहूंगा कि जो प्रस्ताव हमारे सामने हैं उसे भारतीय रियासतों का समर्थन प्राप्त है। (*तालियां*) हमारे एक प्रतिनिधि एक विख्यात प्रधान मंत्री ने उस कमेटी के विचार-विमर्श में भाग लिया जिसने पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा इस प्रस्ताव को हमारे समक्ष रखा है।

श्रीमान् जी, यह एक ऐतिहासिक अवसर है जबकि स्वतंत्र भारत अपना राष्ट्रीय झंडा स्वीकार कर रहा है और मैं आपको यह बता देना चाहता हूं कि भारतीय रियासतों की एक बहुत बड़ी संख्या भारत का प्रधान अंग है और रहेगी। (*तालियां*)

श्रीमान् जी, जब मैं अपने स्थान से पंडित नेहरू का भाषण सुन रहा था—इस कमरे की गहरे रंग की चौखट में पंडित नेहरू को अपने उज्जवल धवल परिधान में देखकर मैंने अपनी कल्पना में प्रस्ताव के विषय की साकारता का अनुभव किया। पंडित नेहरू को भली प्रकार समझ कर मुझे विश्वास है कि मैं कोई अत्युक्ति नहीं कर रहा हूं जब कि मैं यह कहता हूं कि उन्होंने अपने स्वरूप में स्वयं इस प्रस्ताव के विषय के महत्व का प्रदर्शन किया।

जबकि वे झंडे के अंग और रूपरेखा की व्याख्या कर रहे थे, विशेषकर जब कि वे अशोक स्तम्भ के चक्र पर आये, मैंने सोचा कि वे इसे भारतीय रियासतों का भारतीय संघ में आने का प्रतीक भी बतायेंगे। श्रीमान् जी, अनेक वर्षों बाद भारत, भारत के लिये और भारतीयों द्वारा शासित होगा। पंडित नेहरू ने यह भी बताया कि यह स्वशासन का प्रतीक है। लेकिन आप मेरी इस बात के लिये मुझे क्षमा करेंगे कि भारत के, जिसे आप चित्र में पीला रंगते हैं, एक बड़े भाग में स्वशासन के आदर्श का निर्वाह भारतीय रियासतों में हो रहा था। कृपा कर राजनीति सम्बन्धी दर्शनशास्त्र के आधार पर इस बात का विश्लेषण न करें। हम भारत के झंडे पर वाद-विवाद कर रहे हैं न कि अव्यावहारिक सिद्धांतों अथवा राजनैतिक प्रथाओं पर बल्कि उन बातों पर जो कि विशेषतया लाक्षणिक हैं और भावात्मक हैं। क्या मेरा यह कहना बिल्कुल असत्य है कि अशोक का चक्र भारतीय रियासतों का प्रतीक है? क्योंकि अशोक के काल से समस्त देश भारतीय शासन के आधिपत्य में भारतीयों द्वारा भारतीयों के लिये शासित नहीं रहा। किसी प्रकार हममें से कुछ इस झंडे की ओर इसी भावना से देखेंगे। अतः मैं यहां केवल अपनी ओर से ही नहीं बोल रहा हूं बल्कि अनेकों रियासतों की ओर से भी बोल रहा हूं। यद्यपि मैंने उनसे विचार-विमर्श नहीं किया है, फिर भी मुझे विश्वास है कि वे मुझसे इस बात में सहमत होंगे कि यह झंडा चाहे किसी भवन पर फहराये, चाहे विदेशी समुद्रों की उत्ताल तरंगों पर फहराये वह भारतीय संघ की संयुक्त भावनाओं का प्रतिनिधि होगा। चाहे हम किसी पूजा-स्थल में जायें, चाहे हमारे नाम और नामकरण परिभाषाओं में अन्तर हो, हम सब भारतीय हैं और यह हमारा झंडा है।

श्रीमान् जी, मैं हृदय से इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

*__श्री मोहम्मद शरीफ__ (मैसूर): श्रीमान् जी, मुझे खेद है कि भारतीय झंडे के विषय पर पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा सराहनीय ढंग से पेश किये गये प्रस्ताव के सम्बन्ध में कुछ वादानुवाद उत्पन्न हो गया है। कुछ लोगों ने सुझाया है कि इस झंडे के रंगों में कुछ परिवर्तन होना चाहिये। कुछ लोग चाहते हैं कि.....

कुछ माननीय सदस्य: नहीं, नहीं बहुत अच्छा।

***श्री मोहम्मद शरीफः** उस भावना का आदर करते हुये जिससे प्रेरित होकर महानुभावों ने यह निवेदन किया, मैं स्वयं तो यही कहूंगा कि जहां तक झंडे का सम्बन्ध है यह उत्तम झंडा है और पंडित जवाहरलाल ने आज सुबह प्रस्ताव के पक्ष में जो कुछ भी कहा है मैं उसका समर्थन करता हूं।

श्रीमान् जी, श्वेत, केसरिया और हरे रंग निःस्वार्थता, पवित्रता और त्याग के द्योतक हैं। बड़े-बड़े महत्वपूर्ण आध्यात्मिक महत्व इन रंगों के साथ जुड़े हुये हैं। इन रंगों का सब लोग आदर करते हैं, चाहे वह हिन्दू हो, मुसलमान हो, इसाई हो या पारसी हो। चक्र जोकि झंडे के केन्द्र में है गति, प्रगति तथा उन्नति का प्रतीक है। ललित कला तथा अन्य बातों में भी यह भारत की बौद्धिक परम्परा और सभ्यता के उपयुक्त है। जैसा कि चौधरी खलीकुज्जमा ने कहा है, यह वह झंडा है जो कि प्रत्येक व्यक्ति के लिये, जो भारत में रहता है और रह रहा है, आदरणीय है। इन शब्दों के साथ पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा प्रेषित प्रस्ताव का समर्थन करने में मुझे हर्ष है।

***श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहारः जनरल)ः मैं प्रस्ताव रखता हूं कि अब इस विषय पर वोट ली जायें।

***माननीय सदस्यगणः** अब इस विषय पर वोट ली जायें।

***अध्यक्षः** मेरे पास 25 वक्ताओं के नाम हैं, क्योंकि यह ऐसा ही अवसर है जबकि प्रत्येक व्यक्ति अपने भाव व्यक्त करना चाहेगा। लेकिन मेरे विचार से अब इस विषय पर और अधिक वाद-विवाद करना आवश्यक नहीं है, क्योंकि जो कुछ भी कहा जा सकता था। वह हमने सदस्यों से सुन ही लिया। इसलिये मैं अब इस पर विवादान्तक प्रस्ताव रखना चाहूंगा।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहारः मुस्लिम)ः श्रीमान् जी, विवादान्तक प्रस्ताव रखने के पूर्व मैं यह निवेदन करूंगा कि और भी अधिक भाषण देने की आज्ञा होनी चाहिये, क्योंकि ऐसे अवसर पर प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचार प्रकट करने का अवसर दिया जाना चाहिये।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल)ः श्रीमान् जी, यह स्मरणीय दिवस है और जो कोई बोलना चाहे उसे अवसर मिलना चाहिये।

***रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय** (बिहार : जनरल): श्रीमान् जी, हर रोज हम राष्ट्रीय झंडा स्वीकार नहीं करेंगे। इस कारण यह उचित है कि यदि कुछ और सदस्य बोलना चाहते हैं तो उन्हें आज्ञा दी जाये।

***पंडित गोविन्द मालवीय** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): श्रीमान् जी, आज के सम्पूर्ण दिवस को हम झंडा-दिवस रखें।

***अध्यक्षः** मैं पूर्णतया हाउस के हाथों में हूं। यदि आप और अधिक भाषण नहीं चाहते हैं तो मैं यहीं बन्द कर दूंगा और यदि सदस्यगण बोलने के लिये और अधिक अवसर चाहते हैं, तो जो नाम मेरे पास हैं उनको मैं क्रमानुसार लूंगा।

***श्री बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्त प्रांतः जनरल): हम अपनी वृद्धा माता का भाषण सुनना चाहते हैं।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** हम बुलबुले हिंद का भाषण सुनना चाहते हैं।

***अध्यक्षः** मैं उनको सबके अन्त में बुलाऊंगा। मैं समझता हूं कि उनका बड़ा मधुर भाषण होगा और अपनी पुरानी प्रथा के अनुसर हमें मीठे से अन्त करना चाहिये। (*तालियां*) मि. सादुल्ला अब भाषण देंगे।

***मौलवी सैयद मोहम्मद सादुल्ला** (आसाम : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, पंडित जवाहरलाल नेहरू के बुद्धिमत्तापूर्ण सुन्दर भाषण और अन्य क्षेत्रों के भाषणों पर विचार करते हुये इस वाद-विवाद में मेरे भाग लेने की कोई आवश्यकता न थी। मेरे खड़े होने का कारण यह है कि मैं अपनी स्थिति को पूर्णतया स्पष्ट करना चाहता हूं। यद्यपि इस परिषद् के मुसलमान सदस्यों का प्रथम दिवस स्वागत किया गया था फिर भी कुछ सदस्यों द्वारा वे उपेक्षा की दृष्टि से देखे जाते हैं और उन पर विश्वास नहीं किया जाता। जब तक कि हम अपने कुछ विचारों का परित्याग न करें जिन्हें हम अपनाये हुये हैं, हमें इस विशाल परिषद् में भाग लेने से वंचित रखने के प्रयत्न किये गये। मैंने समाचार पत्रों में कुछ ऐसे समाचार देखे हैं कि इस विधान परिषद् में मुसलमानों की आवश्यकता नहीं है। कुछ समाचार पत्रों ने तो यहां तक लिख मारा कि मुसलमान पंचमवर्गीय हैं और विधान में अडंगा लगाने वाले हैं। मुझे बहुत खुशी है कि पंडित नेहरू के प्रस्ताव पर उस भारतीय संघ के प्रति, जिसमें कि संयोगवश जन्म लेने और निवास करने के कारण हम सम्मिलित हैं, अपनी निष्ठा की उच्च घोषणा द्वारा हमें कलंक धोने और अविश्वास मिटाने का अवसर मिला है। यह इस्लाम की आज्ञा है और लीग की हाई कमांड ने आदेश द्वारा इसकी पुष्टि की है कि हम जहां कहीं भी हों हम

[मौलवी सैयद मोहम्मद सादुल्ला]

वहां की सरकार के प्रति सद्भाव तथा भक्ति रखें। उस सिद्धांत का पालन करते हुये मैं इस झंडे का, जिसे कि पंडित नेहरू ने हाउस को भेंट किया, अभिवादन करता हूं।

मेरी राय में झंडा हमारी अभिलाषाओं के विकास का प्रतीक है, हमारे संघर्षों की सफलता है और हमारे त्याग का अन्तिम फल है। यदि मुझे प्रकृति से उपमा देने की आज्ञा दी जाये तो केसरिया पृथ्वी की दशा बतलाता है—वह तप्त दशा जो कि भारतीय सूर्य की भीषण ताप द्वारा हो जाती है। जब कि मोती समान श्वेत स्वच्छ जल-वृष्टि होती है और वह जल बरफ से ढकी हुई पहाड़ियों से नदियों में आता है तो हमारी मरुभूमि भी विहंसित हरित भूमि में परिवर्तित हो जाती है जिसकी उपज हमें जीवित रखती है और जन-समुदाय की वृद्धि के लिये उत्पादन करती है। इसी प्रकार हमारे राजनैतिक संघर्ष में कष्टमय दिवस आये लेकिन उसके पश्चात् आशाजनक समय आया और आज का दिन इस झंडे को इस हाउस में फहरा कर हमें उस उच्च स्थान पर ले गया है जो कि हमारे अतीत के संघर्षों का अभीष्ट था। श्रीमान् जी, मुझे हर्ष है कि झंडा वैसा ही रहा और जो संशोधन रखे गये थे वे पेश नहीं किये गये क्योंकि इस झंडे के विभिन्न रंगों में भारत का प्रतिनिधित्व हुआ है। भारत अपनी आध्यात्मिकता के लिये प्रसिद्ध है। सर्वत्र यह स्वीकार किया गया है कि भारतवर्ष के पास संसार के भिन्न-भिन्न देशों को देने के लिये एक महान् आध्यात्मिक संदेश है। केसरिया रंग, जैसा कि प्रसिद्ध है, उन लोगों का रंग है जो आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करते हैं। केवल हिंदुओं में ही नहीं वरन् मुसलमानों में भी। अतः केसरिया रंग हमें याद दिलाता है कि हम अपने को त्याग के उस ऊंचे स्तर पर रखें जिस पर हमारे साधु, संन्यासी, पीर और पंडित रहे हैं। मैं इसलिये झंडे में इस रंग के समावेश का स्वागत करता हूं।

इसके बाद मैं सफेद भाग को लेता हूं। दोनों हिन्दू और मुसलमानों में श्वेत रंग पवित्रता का चिह्न है। मैं भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को इस उत्तम विचार के लिये बधाई देता हूं कि उन्होंने अपने मत का चिह्न सफेद टोपी रखा है। इस झंडे का श्वेत भाग हमें यह याद दिलाता रहे कि हम केवल शब्दों में ही नहीं वरन् कर्मों में भी पवित्र रहे। हमारे जीवन का उद्देश्य व्यक्तिगत रूप में तथा राज्य के भी सम्बन्ध में, पवित्रता हो।

अन्त में श्रीमान् जी, हरा रंग मुझे इस बात की याद दिलाता है कि यह भारतीय स्वतंत्रता की उमंग का चिह्न है। हरा उस झंडे का रंग है जो सन् 1857 ई.

में बहादुरशाह ने खड़ा किया था। लेकिन मुसलमानों के लिये तो इसमें इससे भी अधिक महत्वपूर्ण भावनायें हैं, क्योकि तेरह शताब्दियों के पूर्व अरब के बड़े पैगम्बर के समय से मुसलमानों के झंडे का यही रंग रहा है। कुछ लोगों को संभव है खेद हो कि चरखे की जगह, जो कि जनता का चिह्न था, अशोक का धर्म-चक्र है। लेकिन मैं समझता हूं कि यह अधिकारियों को वास्तव में दैविक प्रेरणा मिली कि उन्होंने चरखे के स्थान में चक्र रखा। यद्यपि चरखा हमारी आत्म साहाय्य और जनसमुदाय से निकट सम्पर्क स्थापित करने का चिह्न था और महात्मा के संदेश द्वारा हमारी क्रियाओं में प्रविष्ट हो चुका था, फिर भी बाद में चरखे के आदर्श को दूषित कर दिया गया, महात्मा गांधी के आदेश और प्रेरणा से विमुखता हुई और जो अहिंसा के चिह्न चरखे को धारण किये हुये थे वे अपने कार्यो में बड़े हिंसावादी बने, जिनको एक बार अपने को एक बड़े संकट में डाल कर पंडित नेहरू ने शांत किया। अशोक का धर्म चक्र भारत के महान् बौद्ध सम्राट के समय में लोगों की दशा की हमें याद दिलाता है। उन्होंने अपनी व्यक्तिगत उन्नति के लिये राज नहीं किया बल्कि अपनी प्रजा के संतोष, शांति और प्रसन्नता के लिये राज किया। यह चिह्न, जो कि हमारे राष्ट्रीय झंडे में है, भारतीय संघ के प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक शासक को यह याद दिलाता रहे कि हम अतीत को भूल जायें और भविष्य की ओर देखें और उस महान् बौद्ध सम्राट अशोक की परंपरा को कायम रखने का प्रयत्न करें। हमें सदैव यह स्मरण रखना चाहिये कि हम यहां केवल अपने भौतिक लाभ के लिये ही नहीं हैं बल्कि अपनी आध्यात्मिक उन्नति के लिये भी हैं। यह चक्र धार्मिक चिह्न है और हम अपने धार्मिक वातावरण से अपने सामाजिक जीवन का विच्छेद नहीं कर सकते हैं।

श्रीमान् जी, इन शब्दों के सहित, जो कि केवल मेरे ही नहीं हैं बल्कि मुस्लिम लीग पार्टी के डिप्टी लीडर की हैसियत से तथा भारतीय संघ के एक सुदूरवर्ती छोटे से प्रान्त आसाम के निवासी की ओर से भी हैं, मैं भारतीय स्वतंत्रता के चिह्न स्वरूप इस झंडे का अभिवादन करता हूं।

*__डा. एच.सी. मुकर्जी__ (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, जबसे ईसाई समुदय ने यह समझा कि वह वास्तव में एक भारतीय जाति है, तभी से उसके बड़े-बड़े नेताओं ने भारतीय राष्ट्रीयता को पूर्णतया ग्रहण किया है। मुझे केवल उन लोगों को, जो कि मेरी बात सुनकर मुझे गौरव प्रदान करेंगे, बम्बई के स्वर्गीय काका बैप्टिस्ट, बंगाल के स्वर्गीय के.सी. बनर्जी, संयुक्त प्रान्त के स्वर्गीय पादरी चिदम्बरां और पंजाब के स्वर्गीय डा. एस.के. दत्त की याद दिलाना

[डा. एच.सी. मुकर्जी]

आवश्यक है। ये नाम उन अनेक नामों में से थोड़े-से हैं जिनको मैं यह साबित करने के लिये बता सकता हूं कि हमने पूर्णतया भारतीय राष्ट्रीयता को स्वीकार कर लिया है। केवल एक बात में हमें गलत समझा गया। क्योंकि हम ईसाई धर्म के मानने वाले हैं जो कि विशेषकर एशिया का धर्म है और क्योंकि हमारा कुछ विदेशी मिशनों से सम्पर्क है, इसलिये यह मान लिया गया है कि भारतीय ईसाई जाति वह वृत्ति रखती है जो कि ईसाई मानसिक वृत्ति के नाम से प्रसिद्ध है। ऐसा नहीं है और मैं यहां यह कहने के लिये खड़ा हुआ हूं कि यह मिथ्या विचार है। यह गलत धारणा है और मैं इस बात को अच्छी तरह बता देना चाहता हूं कि आज मैं अपनी जाति की ओर से एक बार फिर इस झंडे के प्रति अपनी निष्ठा की प्रतिज्ञा करता हूं।

मेरे लिये यह बात महत्वपूर्ण है कि कुछ कार्यकर्ता जो कांग्रेस से घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित किये हुये हैं भारतीय ईसाई हैं। मुझे विश्वास है कि मेरे मित्र इस बात का प्रमाण स्वीकार करेंगे कि हमने भी ऐसे-ऐसे नेता उत्पन्न किये हैं जिन्होंने भारतीय राष्ट्रीयता को पूर्णतया ग्रहण किया है। हम केवल इसलिये इस झंडे में अपनी निष्ठा प्रकट नहीं करते कि हम भारतीय ईसई हैं, वरन् इसलिये कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने अतीत काल में हमसे सदैव सद्व्यवहार किया है। वास्तव में इस विचार में कोई अत्युक्ति नहीं है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने हमारे साथ उनसे भी अच्छा बर्ताव किया है, जिनके साथ कि हम धार्मिक विषय में सम्बद्ध हैं। मैं इस अवसर पर माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरू को उस घटना की याद दिला रहा हूं जो कि 1936 ई. में हुई जबकि मुझे पंजाब के डा. एस. के. दत्त ने फोरमेन क्रिश्चियन कालेज के कार्य के सिलसिले में कुछ सेवाओं के लिये बुलाया था। उस समय इलाहाबाद के यूनिवर्सिटी संघ ने मुझे शराब के निषेध पर भाषण देने के लिये बुलाया और उन्होंने जोर दिया कि मैं उस विषय पर बोलूं क्योंकि कुछ काल पहले ही राजा जी की कृपा से मैं मद्रास के सालम जिले में गया था। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने उक्त कार्यवाही की अध्यक्षता स्वीकार कर ली थी लेकिन जिस विषय पर मुझे भाषण देना था वे उसे भूल गये। उनके पूछने पर सबसे पहले तो मैंने अल्पसंख्यकों के कर्तव्यों के प्रति जो मेरे विचार थे वे बताये और उनके कहने पर श्रोतागणों के सामने अल्पसंख्यक सम्बन्धी विषय पर अपने विचार प्रकट किये। उनको आधे घंटे पश्चात् दिल्ली जाना था लेकिन वे सब कुछ भूल गये और फलस्वरूप गाड़ी चूक गये। जब मैं भाषण समाप्त कर चुका, पं. नेहरू ने मुझसे कहा कि जिस बात को इस सम्प्रदाय ने लिया है उसे

जबकि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अधिकार प्राप्त करेगी याद रखेगी। तीन या चार दिन में मेरे पास कुछ अन्याय की शिकायतें आई जो भारतीय ईसाइयों पर कुछ गांवों में हुआ था। मैं गांवों में गया और मालूम किया कि शिकायतें ठीक थीं। मैंने उस सूचना को जो मैंने प्राप्त की पंडित नेहरू के सामने रखा और सात दिन में ही सारे मामले का निर्णय हो गया। इस प्रकार हमारी धार्मिक स्वतंत्रता हमें पुनः प्राप्त हुई। क्या मैं इस सिलसिले में एक और घटना का वर्णन करूं जबकि कांग्रेस से हमें तात्कालिक सहायता मिली? जब मैं मद्रास में था तो सईदपेट (Saidpet) के फिजिकल एज्यूकेशन क्रिश्चियन कालेज के प्रिंसिपल डा. बेक ने मुझसे कहा कि फिजिकल एज्यूकेशन की मद्रास कालेज के लिये जमीन मिलने में बड़ी कठिनाइयां हैं। जैसे ही राजाजी को अधिकार मिले तो कुछ दिनों में ही उन्होंने हमारी जमीन की मांग से भी अधिक जमीन हमें मंजूर कर दी। कांग्रेस से हमें ये सेवायें मिली हैं। अतः केवल इसीलिये नहीं कि हमें कांग्रेस के उद्देश्यों से सहानुभूति है बल्कि इसलिये भी कि हमारे साथ सद्‌व्यवहार हुआ है हमने कांग्रेस को ग्रहण कर लिया है। एक बार मैं फिर दुहराता हूं कि इस राष्ट्रीय झंडे के लिये भारतीय ईसाइयों की निष्ठा है।

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महोदय, इस प्रस्ताव के माननीय प्रेषक महोदय पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा कि इस प्रस्ताव को पेश करने तथा इस झंडे को भेंट करने का उन्हें गौरवपूर्ण शुभ अवसर मिला। श्रीमान् जी, यह गौरवपूर्ण शुभ अवसर आज केवल माननीय पंडित नेहरू के लिये ही नहीं है वरन् यह समस्त राष्ट्र के लिये गौरवान्वित सौभाग्य का अवसर है कि जिस झंडे के नीचे स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये लोगों ने घोर युद्ध किया, वहीं झंडा सत्य सिद्ध हुआ और आज के पश्चात् वही झंडा राष्ट्रीय झंडा होगा, सरकार द्वारा प्रमाणित झंडा होगा। जबकि हमारे जवान और बूढ़े पुरुष तथा स्त्रियां और बच्चे भी सार्वजनिक भवनों तथा निजी इमारतों पर इस झंडे को फहराते थे तो ब्रिटिश नौकरशाही इस झंडे को नीचे गिरा देती थी और अपने पैरों तले कुचल देती थी। ऐसा होते हुये भी जब हमारे देशवासियों ने फिर उसी झंडे को उठाया और जिस इमारत पर से उसे गिरा दिया था उसी पर फहराया। ऐसा करते हुये उन्होंने महात्मा गांधी के सिद्धान्त का अक्षरशः पालन किया कि संघर्ष अहिंसात्मक रूप में रहे। महात्मा गांधी ने हमें यह उपदेश दिया कि हम मन, वचन और कर्म से अहिंसा का पालन करें। श्रीमान् जी, मैं यह स्वीकार करता हूं कि मन और वचन से तो अहिंसा का पालन नहीं हो सका पर मैंने करोड़ों भारतवासियों के साथ भारत में ब्रिटिश नौकरशाही के विरुद्ध युद्ध करने में अहिंसा के सिद्धान्त

[श्री आर.के. सिधवा]

का अक्षरश: पालन किया। उस अहिंसात्मक युद्ध के कारण आज हम अपने इच्छित फल को प्राप्त कर सके हैं। झंडे के साथ-साथ एक सर्वप्रिय नारे की चारों ओर गूंज उठी ''राष्ट्रीय झंडा ऊंचा रहे, यूनियन जैक नीचे गिरे''। किसी राष्ट्र के झंडे के निरादर करने से हमारा आशय नहीं था वरन् हम ब्रिटिश झंडे का यहां फहराना दासता का चिह्न समझते थे। 15 अगस्त को यह झंडा जो आज हमें भेंट किया गया है इस महान् परिषद्-भवन पर फहराया जायेगा, विशाल सेक्रेटेरियट भवन पर फहराया जायेगा और श्रीमान् जी, मैं यह भी कह सकता हूं कि वाइसराय भवन पर भी। (*तालियां*) यूनियन जैक आदरपूर्वक धीरे-धीरे गंभीर भाव से नीचे उतारा जायेगा। नि:संदेह उस दिन समस्त भारत में राष्ट्रीय झंडा फहराया जायेगा और प्रत्येक व्यक्ति इसका अभिवादन करेगा।

श्रीमान् जी, सबसे पहला राष्ट्रीय झंडा मुझे स्वराज्य का झंडा कहना चाहिये, कलकत्ते के भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अधिवेशन में सन् 1911 ई. में एक महान सभापति द्वारा, एक महान कांग्रेसी द्वारा, उस महान भारतीय देशभक्त द्वारा जो कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संस्थापकों में से थे तथा मैं यह भी कह सकता हूं कि कांग्रेस के एक प्रमुख निर्माता स्वर्गीय दादा भाई नौरोजी द्वारा फहराया गया था। उस झंडे को मैंने चित्र में देखा है। वह मेरे घर में है। वह झंडा वैसा नहीं है जैसा कि आज हम यहां देख रहे हैं। जो कुछ उस महान् नेता ने सन् 1911 ई. में उस झंडे को फहराते हुये कहा था मुझे अब याद आता है।

***अध्यक्ष:** मैं भाषण में विघ्न डालना नहीं चाहता था परन्तु वक्ता महोदय वर्ष में गलती कर रहे हैं। वह वर्ष 1906 था न कि 19011।

***श्री आर.के. सिधवा:** धन्यवाद, श्रीमान् जी! झंडा फहराते हुये उन्होंने कहा था: ''मैं इस झंडे को भेंट करता हूं। इस झंडे के नीचे हमें अपना युद्ध करना चाहिये।'' श्रीमान् जी, उस समय से इस झंडे का रूप कुछ बदल गया है और अब यह सरकारी तौर पर राष्ट्रीय झंडा मान लिया गया है। हम सब इसका अभिवादन करेंगे। जहां कहीं यह फहराया जायेगा यह अनन्त काल तक दृढ़ बना रहेगा।

***माननीय श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, जब मैंने पंडित जवाहरलाल नेहरू का भाषण सुना, मैंने सोचा कि किसी भाषण की

आवश्यकता नहीं होगी। लेकिन चूंकि इस हाउस के भिन्न-भिन्न दलों ने एक-एक करके जिस झंडे को हम इस देश का राष्ट्रीय झंडा स्वीकार करने वाले हैं, उसके प्रति अपनी निष्ठा प्रकट करने तथा उसे स्वीकार करने का प्रयत्न किया, तो मैंने सोचा कि मैं भी कुछ कहूं उन तीन करोड़ आदिवासियों की ओर से जो कि इस देश के सच्चे स्वामी हैं, इस भूमि के प्रथम पुत्र हैं, भारत के अति प्राचीन शिष्ट जन हैं और जो पिछले 6 हजार वर्षों से स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये युद्ध कर रहे हैं। अपने इन लोगों की ओर से इस झंडे को देश का झंडा स्वीकार करने में मुझे बड़ी खुशी है। श्रीमान् जी, इस हाउस के बहुत से सदस्य यह सोचने लगे हैं कि झंडे फहराने का श्रेय आर्य सभ्यता को है। श्रीमान् जी, आदिवासी झंडा फहराने में और अपने झंडे के लिये युद्ध करने में सर्वप्रथम हैं। जो सदस्य बिहार प्रांत से आये हैं मेरी इस बात का समर्थन करेंगे कि प्रति वर्ष छोटे नागपुर के मेले, यात्राओं और उत्सवों में जब भिन्न-भिन्न कबायली दल अपने-अपने झंडे लेकर क्षेत्र में प्रवेश करते हैं, तब प्रत्येक दल 'जात्रा' में एक विशेष मार्ग से आता है केवल एक ही मार्ग से आता है और अन्य कोई दल उस मार्ग से नहीं आ सकता। प्रत्येक गांव का एक झंडा होता है और उस झंडे की नकल कोई दूसरा दल नहीं कर सकता है। यदि कोई व्यक्ति उस झंडे को चुनौती देता है तो श्रीमान् जी, मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि वह विशेष दल उस झंडे की प्रतिष्ठा की रक्षा करने के लिये अपने अन्तिम खून की बूंद बहा देगा। अब से वहां दो झंडे होंगे, एक वह जो वहां 6 हजार वर्षों से है और दूसरा यह राष्ट्रीय झंडा जो कि हमारी स्वतंत्रता का चिह्न होगा जैसा कि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने बतलाया है। यह राष्ट्रीय झंडा आदिवासियों को एक नया संदेश देगा कि स्वतन्त्रता के लिये उनका 6 हजार वर्षों का युद्ध अन्त में समाप्त हो गया और वे अब इस देश में उतने ही स्वतंत्र हैं जैसे कि अन्य व्यक्ति। श्रीमान् जी, पंडित जवाहरलाल नेहरू ने जो झंडा पेश किया है, भारत के आदिवासियों की ओर से उसे स्वीकार करने में मुझे बड़ा हर्ष है।

***मि. फ्रैंक रेजीनाल्ड एन्थानी** (बंगाल: जनरल): जब मैंने पंडित जवाहरलाल नेहरू का इस झंडे के परिचय कराने और भेंट करने सम्बन्धी प्रभावशाली भाषण को सुना, तो मैंने सोचा कि अवसर की गंभीरता पर मुहर लगाने के लिये वह यथेष्ठ है। लेकिन चूंकि सदस्यों की समझने योग्य भावनाओं तथा उनके उत्साह के कारण और भी अनेक भाषण हुये तो मैंने सोचा कि मैं भी कुछ शब्द कहूं। मुझे उस कमेटी की सेवा करने का श्रेय था जिसने इस झंडे की अन्तिम रूपरेखा बनाई।

[मि. फ्रैंक रेजीनाल्ड एन्थानी]

यह कमेटी में स्पष्ट कर दिया था कि यह झंडा किसी साम्प्रदायिक विचार या भावना का द्योतक नहीं है। यद्यपि हमने विशेषकर उस झंडे को ही रखा है जिसके नीचे भारतीय स्वतंत्रता का युद्ध लड़ा गया और उसका अन्त हुआ फिर भी झंडा जिस रूप में आज फहराया गया है कुछ गुण और प्रेरणायें रखता है, जिनका आदर उस प्रत्येक राष्ट्र को करना चाहिये जो कि उन्नति और स्वतंत्रता का पथिक है। मुझे दृढ़ विश्वास है कि यह झंडा वास्तव में अपने स्वरूप में तथा प्रेरणा प्रदान करने में एक सुन्दर झंडा है। आज यह झंडा राष्ट्र का झंडा है। यह किसी विशेष सम्प्रदाय का झंडा नहीं है वरन् समस्त भारतीयों का झंडा है। मुझे विश्वास है कि हमारे अतीत का चिह्न होते हुये भी यह भविष्य के लिये प्रेरित करता है। यह झंडा आज राष्ट्र का होकर फहराता है और प्रत्येक भारतीय का यह कर्त्तव्य तथा अधिकार होना चाहिये कि वह इसका केवल आदर ही न करे और इसके नीचे जीवन व्यतीत ही न करे बल्कि आवश्यकता पड़ने पर इस पर अपना बलिदान भी करे।

श्री ज्ञानी गुरुमुख सिंह मुसाफिरः जनाब सदर, इस वक्त पंडित जवाहरलाल नेहरू की तकरीर के बाद और श्री राधाकृष्णन, जैसे फाजिल बुजुर्गों की उस वजाहत के बाद जो उन्होंने रंगों के मुतल्लिक की है मैं समझता हूं कि बहुत ज्यादा कहने की जरूरत नहीं है। मैं सिर्फ इस ख्याल से यहां खड़ा हुआ हूं कि इस ढंग से अपनी समूलियत जाहिर करूं कि इस झंडे की खातिर और अपने देश की आजादी की खातिर जो जो कुर्बानियां हुई हैं, पंडित जवाहरलाल जी ने अपने खास अन्दाज में और दर्दनाक लहजे में यही बयान किया है। इस झंडे के मातहत इंडियन नेशनल कांग्रेस में शामिल होकर मेरी कौम ने अपनी ताकत के मुताबिक कुर्बानियां दी हैं और सिखों से ज्यादा मैं समझता हूं कि किसी को भी खुशी नहीं हो सकी कि हमारी कुर्बानियों को पहले फूल आये और अब फल लगे हैं। एक बात जरूर है कि जहां फूल है वहां खार भी होता है। मैं इस खुशी के वक्त थोड़ा-सा महसूस कर रहा हूं कि कुछ मेरे भाई ऐसे भी हैं जो हमारे साथ कुर्बानियों के वक्त तो मौजूद थे, कुर्बानियों में शामिल थे मगर इस खुशी में मजबूरन हमारे साथ शामिल नहीं हो सके। मगर बाज वक्त फूल को चमकाने के लिये, फूल की खसूसियत को बढ़ाने के लिये कांटा भी मुफीद साबित हो सकता है। इस वक्त मैं सिर्फ इन अलफाजों में अपने जजबात का इजहार करना चाहता हूं कि जहां इस झंडे को लहराने के लिये कुर्बानियां करनी पड़ी हैं, और आज हम इस पोजीशन में आये हैं कि हम हर जगह अपना ही यह झंडा लहरायें; वहां इस लहराये हुयें झंडे को मजबूती

के साथ, इज्जत के साथ कायम रखने की इतनी ही जरूरत है, इसे कायम रखने के लिये भी शायद वक्तन व वक्तन हमको उतनी ही कुर्बानियां देनी पड़े, जितनी इसको हासिल करने के लिये उठानी पड़ी हैं। इसलिये मैं इकरार करता हूं कि अपनी कौम की तरफ से, सिखों की तरफ से कि जिस तरह सिखों ने देश की आजादी को हासिल करने के लिये कुर्बानियां दी हैं, उसकी इज्जत को कायम रखने के लिये और बढ़ाने के लिये वह अपनी ताकत के मुताबिक इसी तरह जोर व शोर के साथ और बहादुरी और दिलेरी के साथ कुर्बानियां करते चले जायेंगे। इन अलफाज के साथ मैं इस रेजुलेशन की, जो पंडित जवाहरलाल नेहरू ने पेश किया है, ताईद करता हूं।

श्री एच.जे. खांडेकर: सभापति महोदय, माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरू ने जो प्रस्ताव झंडे के बारे में रखा है, उसका समर्थन करने के लिये मैं खड़ा हुआ हूं। आप जानते हैं कि इस झंडे को इस देश में जिन्दा रखने के लिये हमने कितनी बड़ी-बड़ी कुर्बानियां की हैं और यहां तक कि इस झंडे की इज्जत रखने के लिये कइयों की जिन्दगी बरबाद हो गई, बाल-बच्चे कुचले गये, वह खुद मारे गये, तबाह हो गये। इस झंडे को कुचलने के लिये अंग्रेजी सल्तनत ने जितनी भी उसके पास ताकत थी, सारी खर्च कर दी; मगर हमने, इस देश के बाशिन्दों ने, अपनी कुर्बानियों से इसको बराबर सींचा और इसे जिन्दा रखा। यह झंडा जिसके कि नीचे आज हम भारत को स्वतंत्र देख रहे हैं और जिसको कि आज स्वतंत्र भारत के ऊपर हम लहराना चाहते हैं, वह यही झंडा है जिस झंडे ने आज तक हमें स्वतंत्र करने की ताकत दी। इस झंडे के अन्दर तीन रंग हैं, एक है भगवा रंग जिसके बारे में खुद की कम्युनिटी का सम्बन्ध आता है। मैं डिप्रैस्ड क्लास में से हूं और मैं आपको याद दिलाना चाहता हूं कि महाराज शिवाजी की शक्ति का जब प्रादुर्भाव था और जब इस देश को स्वतंत्र कराने का मौका आया और हिन्दू पद पादशाही स्थापित करने का मौका आया तो इस भगवा झंडे के नीचे हमारी कौम ने लाखों की तादाद में कुर्बानियां की हैं। अगर आपको इसका उदाहरण देखना है तो सिद्धनाख महार का कोरेगांव में आज भी लोह-स्तम्भ उस जमाने की याद दिलाता है।

यह तो झंडा है, इसमें तीन रंग हैं, जिसके कि एक पहले रंग से मेरी कौम का सम्बन्ध आता है। इसका दूसरा रंग जो सफेद है वह शान्तिमय है और वह शान्ति रखने वाला है और दूसरी जो-जो कम्युनिटीज इस देश के अन्दर हैं उनकी यूनिटी का सम्बन्ध रखने का है और इसीलिये यह झंडा सारे देश और हर धर्म, हर भाषा व मजहब के लोगों का है और मैं आज आल इंडिया डिप्रैस्ड क्लास

[श्री एच.जे. खांडेकर]

के प्रेसीडेंट की हैसियत से इस हाउस के सामने यह आश्वासन देना चाहता हूं कि मेरी कम्युनिटी सदा इस झंडे के पीछे रहेगी जिसे हम आज पास कर रहे हैं। इन शब्दों के साथ मैं अपनी व अपनी सारी कम्युनिटी के भाइयों के साथ इस झंडे के रेजुलेशन की ताईद करता हूं। जिस झंडे की इज्जत को आज तक हम लोगों ने कायम रखा है और उस पर जब कभी ऐसा मौका आ जाये और इसकी इज्जत कहीं खतरे में पड़ जाये, तो इस देश के सारे लोगों के साथ मेरी कौम भी झंडे की इज्जत बचाने के लिये कुर्बानियां देगी। इन शब्दों के साथ मैं इस रेजुलेशन का समर्थन करता हूं।

श्री बालकृष्ण शर्माः सम्मान्य अध्यक्ष महोदय, बहिनो और भाइयो आज इस अवसर पर जब कि मेरे नेता पंडित जवाहरलाल नेहरू इस सम्बन्ध में अत्यंत ऊंचे स्तर से अपने विचार प्रकट कर चुके हैं इसके बाद मेरी स्वयं ही यह इच्छा थी कि यहां और कोई भाषण न हो, किन्तु प्रथा चल पड़ी और प्रत्येक वर्ग के भाइयों ने यहां आ आकर अपने विचार व्यक्त किये तो मैंने भी अपने कुछ गुरु जनों के कहने से अपना नाम अध्यक्ष की सेवा में अर्पित कर दिया और सूक्ष्म में मैं अपने विचार आज आपके सम्मुख रखना चाहता हूं।

आज का दिन पंडित जवाहरलाल के द्वारा इस प्रस्ताव उपस्थित किये जाने का दिन, हमारे देश में, हमारे देश के इतिहास में एक बधाई का दिन है और जिस समय मैं ध्यानपूर्वक जवाहरलाल जी का भाषण सुन रहा था उस समय मुझे ऐसा लग रहा था, मानो हम अपनी यात्रा में एक मंजिल को समाप्त करके आज दूसरी मंजिल का प्रारम्भ कर रहे हों और इस समय जब कि हमारी अपनी यात्रा का एक भाग समाप्त होता है उस समय हमारी आंखें बरबस पीछे की ओर मुड़ जाती हैं और हम अपने गत इतिहास का अवलोकन करने के लिये बाध्य हो जाते हैं। इस बीस वर्ष के इतिहास में हमारे बीच में एक महापुरुष ने अवतीर्ण होकर हमारे राष्ट्र की वीणा का तार-तार जिस सुन्दर और कलापूर्ण रीति से झंकृत कर दिया है, उसके प्रति अगर हम नतमस्तक न हों तो हम कृतघ्नता के दोष के भागी होंगे। महात्मा गांधी ने हमें हमारे राष्ट्रीय जीवन को जो कुछ दिया है, जो उनकी अब तक देन हमें मिलती जा रही है उसकी गणना कर सकना इस थोड़े समय में सम्भव नहीं है। किन्तु यदि आप अपनी दृष्टि को आज से 27, 28 वर्ष पहले ले जाकर उस समय की परिस्थिति की अवहेलना करने की थोड़ी-सी तकलीफ दें, तो आपको पता चलेगा कि किस परिस्थिति से उस एक महापुरुष

ने, इस एक लोकोत्तर जननायक ने हमारे देश को कहां से कहां पहुंचा दिया। एक समय वह था हमारे देश में जिस समय हमारी कांग्रेस महासभा केवल मात्र प्रस्तावों को पास करके वर्ष में तीन दिन बड़े दिन की छुट्टियों में अधिवेशन करके अपने कर्त्तव्य की इति श्री समझती थी। जिस समय महात्मा गांधी ने हमारी राजनीति में प्रविष्ट होकर हमें यह संदेश दिया कि प्रस्ताव पास करने से हमें स्वराज्य नहीं मिलेगा, अधिकारों को प्राप्त करने के लिये बल की आवश्यकता होगी, तो सारे के सारे राष्ट्र ने भौचक्का होकर उनकी ओर देखा और कहा कि यह शख्स पागल हो गया है। एक निशस्त्र राष्ट्र से यह कहना कि तुम शक्ति संचित कर सकते हो, संसार के इतिहास में एक पागलपन की बात लगती थी। संसार की राजनीति ने केवल-मात्र एक मार्ग को राष्ट्रीय अधिकारों के प्राप्त करने का साधन समझा था और वह मार्ग हिंसा का मार्ग था। महात्मा गांधी ने इस देश में अहिंसात्मक प्रणाली को चलाकर देश में जैसी सामूहिक चेतना का विकास किया, देश की आत्मा को जिस रूप में उन्होंने स्पन्दित किया, देश के आदमियों को जिस प्रकार संगठित किया गया आज हम उसका स्मरण न करें। मैं समझता हूं कि गांधी का यह एक बड़ा भारी दान था कि प्रस्ताव पास करने वाली कांग्रेस को उन्होंने लड़ने वाली संस्था बना दिया। दूसरा महान् दान जो हमारे देश को मिला वह यह था कि जो कांग्रेस केवल तीन दिन तक अपना कार्य करती थी उसे गांधी जी ने बारहमासी काम करने वाली संस्था के रूप में परिणत कर दिया। तीसरा महान् दान जो उन्होंने दिया वह यह था कि हम अपने विचारों को केवल दूसरी भाषा में, विदेशी भाषा में व्यक्त करते थे, गांधी जी ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में हमें प्रदान करके हमारी राष्ट्रीय भावना को सचेत और जागृत होने का अवसर दिया। यह राष्ट्रभाषा का वरदान महात्मा का ही दान है। उन वरदानों में से एक वरदान है झंडे का, जो उन्होंने इस देश को प्रदान किया। इस प्रकार उन्होंने इस झंडे के रूप में हमारे देश की सामूहिक शक्ति को केन्द्रित करके हमें बलिदान के मार्ग पर अग्रसर होने की ओर बढ़ते रहने की प्रेरणा दी। आज आप सब महानुभावों की ओर से अत्यंत विनीत भाव से उस महापुरुष के चरणों में श्रद्धांजलि अर्पित करने का साहस करता हूं।

जिस समय पंडित जवारलाल नेहरू भाषण दे रहे थे उस समय मैंने उनकी ओर देखा और मुझे ऐसा लगा कि इस एक महापुरुष ने जिसका नाम जवाहरलाल नेहरू है, हमारे देश में क्या-क्या नहीं किया है, हमने उससे कितनी आदर्शवादिता प्राप्त नहीं की है, इससे हमने कितनी लगन और सेवा की भावना प्राप्त नहीं की है! आज महात्मा गांधी के साथ-साथ आप सब लोगों की ओर से मैं पं. जवाहरलाल

[श्री बालकृष्ण शर्मा]

नेहरू के श्री-चरणों में अपनी श्रद्धा और अपना प्रणाम अर्पित करता हूं। जिस समय मैं उनके भाषण को सुन रहा था उस समय मुझे ऐसा लगा कि यात्रा का एक भाग समाप्त हो रहा है और मन में यह भावना आई कि जब यात्रा का एक भाग समाप्त हो रहा है तब क्यों न अवकाश ग्रहण करके इस झंझट से मुक्त होकर कुछ और किया जाये। इतने में ही पं. जवाहरलाल नेहरू आते हैं और हमारी इस राष्ट्रीय ध्वजा के मध्य में, इस राष्ट्रीय झंडे के बीच में एक चक्र को स्थापित करके कहते हैं कि यह चक्र गति का द्योतक है। जब हम यह बात सुनते हैं तो मेरे मन में वह पुरातन संदेश जागृत हो उठता है जो बृहदारण्यक उपनिषद् में मैंने एक बार पढ़ा था कि सोते रहना कलियुग है, आंखों को खोलना द्वापर है, उठकर बैठ जाना त्रेता और चल देना सतयुग है। आज पंडित जवाहरलाल इस चक्र के रूप में हमें गति का संदेश दे करके एक बार फिर से सतयुग का संदेश दे रहे हैं। उपनिषद्कार कहते हैं 'चरैवेति चरैवेति'। स्वयं भगवान बुद्ध ने कहा ''चरैवेति मिक्लवे चरैवेति'', सतत प्रयास करते जाओ, करते रहो और बार-बार करते जाओ, विश्राम का स्थान नहीं है। क्या मैं आज कांग्रेसजनों की ओर से अपने नेता पं. जवाहरलाल नेहरू को यह आश्वासन दूं कि प्यारे कप्तान, तुम्हारे नेतृत्व में हम सामर्थ्य के अनुसार तुम्हारा अनुकरण करते हुये चलने का प्रयास करते रहेंगे? मैं आज इस अवसर पर इस राष्ट्रीय ध्वजा को प्रणाम करता हूं और भगवान से यह प्रार्थना करता हूं कि इस देश में एक नया युग आये, इस देश में एक नया आसमान और एक नई धरती बने जो सारे मानव संसार को इस झंडे के नीचे अखंड रूप से शांति का संदेश देने में समर्थ हो सके।

पं. गोविन्द मालवीयः सभापति जी, आज मैं जब यहां आया था तो मुझे कोई विचार भी न था कि इस झंडे के ऊपर, झंडे के प्रश्न पर हम लोग कुछ कहेंगे। किन्तु अपने देश के नेता लाडले पंडित जवाहरलाल नेहरू के व्याख्यान से प्रत्येक सदस्य के हृदय में उत्साह और आनन्द की लहर फैली हुई है। उसके बाद हम सभी के चित्त में यह भावना उठी कि आज इस महत्वपूर्ण और पवित्र दिन पर अपनी श्रद्धान्जलि अपने देश के इस झंडे के प्रति अर्पित करें।

इसलिये मैंने भी अपना नाम सभापति जी, आपको भेजा कि मैं भी आपके सामने दो शब्द कह दूं।

किसी देश के झंडे का महत्व उस झंडे के अनेक रंगों या उसके भागों या उसके किसी टुकड़े या हिस्से के ऊपर निर्भर नहीं होता है। उसमें कितने रंग हैं या कितनी

और चीजें है उनका महत्व नहीं होता बल्कि झंडे का महत्व होता है। वह झंडा कुछ भी क्यों न हो, वह झंडा एक सफेद कपड़े का एक टुकड़ा ही क्यों न हो लकिन जिस चिह्न, जिस चीज को कोई देश अपना झंडा बना लेता है वही चीज, वही टुकड़ा, वही रंग और वही रूप उस देश के आत्मसम्मान का, उस देश की स्वतंत्रता का, उस देश की सारी हार्दिक भावनाओं का रूप वह झंडा उस देश की सबसे अधिक प्रिय वस्तु हो जाती है। यह तिरंगा झंडा हम आज 27 वर्ष से अपने माथे और छाती पर लिये हुये हैं और हिन्दुस्तान की स्वतंत्रता के लिये हमने इस झंडे को हाथ में लेकर कितने ही बलिदान किये हैं। मैंने कहा है कि कोई झंडा हो या कोई चिह्न हो, जिस चीज को देश अपना झंडा मान ले वह देश के इतिहास, देश के जीवन का सर्वप्रथम और सबसे ऊंची चीज हो जाती है। पर यह खास झंडा तो ऐसी चीज है जिसको 27 वर्षो से 40 करोड़ प्राणियों ने अपने हृदय की आशाओं का रूप, एक शक्ल और उसको आने वाली छवि मान रखा है। जिस चीज को देश में लाखों स्त्री-पुरुषों ने अपनी जान से ज्यादा महत्व देकर जिसकी इज्जत के लिये अनेकों कष्ट सहे हैं, जिसके लिये लोगों ने अपने बाल-बच्चों को भूखा और तड़पता हुआ रहने देना और जेल जाना पसन्द किया है; जिसके लिये अपने कामकाजों को छोड़कर लोगों ने पुलिस और फौज की लाठियों से अपनी हडिड्यां और सर तुड़वायें हैं। जिस झंडे का मान रखने के लिये, जिसकी रक्षा के लिये निहत्थे नवयुवकों और कौम के विद्यार्थियों ने अंग्रेजी फौज या पुलिस की बन्दूकों के सामने अपनी छातियां खोल दी हैं। ऐसे झंडे के लिये, जिसे देश ने कई पीढ़ियों से अपना झंडा मान रखा है देश के प्रत्येक प्राणी के हृदय में क्या लग्न होगी, क्या जोश होगा और क्या भावना होगी यह कहने की शक्ति मनुष्य की जिह्वा में नहीं हो सकती। उसी झंडे के प्रति अपनी-अपनी स्नेहयुक्त श्रद्धांजलि समर्पित करने को हम सब लालायित हैं।

मैं आपसे निवेदन करता हूं कि जिस झंडे के पीछे इतनी कुरबानी है जिसके सम्बन्ध में वीरता, त्याग, देशभक्ति की कहानियां और गाथायें बन गई हैं वह तो यहां की एक बुनियादी वस्तु हो जाती है। आज इस झंडे के विषय में इस देश में बहुत-सी राय दी जा रही हैं। बहुत से लोगों ने कई प्रस्ताव किये हैं। मैं जानता हूं कि प्रत्येक व्यक्ति जो प्रस्ताव करता है वह अपनी समझ से किसी न किसी विशेष और महत्वपूर्ण कारण से ही वैसा करता है। उसका प्रस्ताव यदि आज यहां नहीं माना जा सकता है तो इसके मानी यह नहीं हुये कि हम किसी अंग, किसी भाग या किसी व्यक्ति के विचार का आदर नहीं करते। हम यह नहीं सोचते कि जो झण्डा आज हमने अपनाया है उसमें किसी का मतभेद होने के कारण उसका

[पं. गोविन्द मालवीय]

अधिकार न होगा, बल्कि हम मानते हैं कि उसके इस झंडे के ऊपर उतना ही अधिकार होगा जितना हमारा है। जिन लोगों ने इस झंडे को राष्ट्रीय झंडा बनाने के विरुद्ध राय दी है या इसमें कुछ रद्दोबदल का प्रस्ताव किया है, जिन हिन्दू भाइयों ने इसके प्रति अपना अंसतोष प्रकट किया है उनसे भी मैं कुछ निवेदन करना चाहता हूं। उन्हें और कुछ शिकायतें भी यदि हों तब भी सब देखते हुये भी आज यह देखकर ध्यान में रखते हुये कि यह झंडा आज 27 वर्षों से हिन्दुस्तान की ऊंची से ऊंची राष्ट्रीय आशाओं का प्रतिबिम्ब रहा है, हिन्दुस्तान के स्वतंत्रता के संग्राम का प्रतीक रहा है, मैं पूछता हूं कि कौन ऐसा व्यक्ति इस देश में होगा जो हृदय से यह कहे कि 27 वर्षों के संघर्ष और बलिदान के बाद अब आज इस झंडे को छोड़कर हम कोई दूसरा झंडा आगे बढ़ायें। कांग्रेस ने जो संग्राम चलाया था वह केवल किसी विशेष सम्प्रदाय या किसी विशेष राय रखने वाले दल की तरफ से नहीं चलाया था। इस झंडे के नीचे कांग्रेस ने और खिलाफत ने मिलकर, हिन्दू और मुसलमानों ने मिलकर स्वतंत्रता के लिये हिन्दुस्तान के एक कोने से दूसरे कोने तक उत्साह की आग लगा दी थी। इस झंडे के नीचे सिखों ने अनगिनत कुरबानियां कीं। इस झंडे के नीचे हर एक सम्प्रदाय के लोगों ने भारतवर्ष की स्वतंत्रता के लिये अपना खून बहाया है और अपना सब कुछ न्यौछावर कर दिया है। यह झंडा किसी एक सम्प्रदाय-विशेष का नहीं है। यह झंडा हिन्दू का नहीं, मुसलमान का नहीं, ईसाई का नहीं, यहूदी का नहीं; जैन, सिख, बौद्ध किसी का नहीं यह झंडा सारे हिन्दुस्तान का है। भारतवर्ष के हर एक बच्चे का है और तब भी इसके साथ ही साथ इस झंडे की खूबी यह है कि हरएक व्यक्ति चाहे वह हिन्दू हो, मुसलमान हो, या ईसाई हो, इस झंडे को वह अपने-अपने ढंग से इसको अपना झंडा मान सकता है। अपने रंग से इसके वह माने निकाल सकता है, इसका अर्थ लगा सकता है। इसे अपनी विशेष भावनाओं का संतोषक मान कर इसके प्रति अपने चित्त में स्नेह, आदर, श्रद्धा और उल्लास का अनुभव कर सकता है। इस झंडे में हरा रंग मुसलमान दोस्तों का है, सफेद रंग ईसाई दोस्तों का तथा अन्य अल्प सम्प्रदायों का है, केसरी रंग हमारे सिख भाइयों का है। सबका इसमें स्थान है। लेकिन इसके यह माने नहीं हैं कि वह सिर्फ मुसलमानों, ईसाइयों व सिखों का रंग है और इनकी और कोई महत्ता नहीं। इन रंगों के तो और भी मायने हैं। यह रंग हिन्दुओं के भी हैं। यही इस झंडे की खूबी है कि इसमें हर एक को अपनी चीज समझने की पूरी गुंजाइश है। हमारे वेदों में 'ऋत' शब्द की कोई परिभाषा नहीं है लेकिन ऋत के हर एक अंग पर 'ऋत' का प्राधान्य है और ऋत की महिमा कवियों ने, विद्वानों ने, भाटों ने और पढ़ने-पढ़ाने वालों ने दुनिया में आज तक गायी है; लेकिन फिर

भी कोई नहीं कह सकता कि ऋत यही है और आज भी जीवन के हर एक अंग पर उसका प्राधान्य माना जाता है।

इसी तरीके से बड़े-बड़े कवियों ने मनुष्य के भिन्न-भिन्न गुणों के बारे में सत्य, सौंदर्य, कर्त्तव्य, परोपकार, दया, वात्सल्य आदि विषयों पर अपनी-अपनी भावना के अनुसार सुन्दर से सुन्दर शब्दों में मोतियों की माला की तरह अपने अच्छे से अच्छे भावों को पोह दिया है। कहते हैं सब एक ही चीज के बारे में, लेकिन कोई किसी दृष्टि से महिमा गाता है कोई किसी प्रकार से। उसी गुण की व्याख्या करने में एक कुछ कहता है दूसरा कुछ कहता है। सभी की कविता सभी के उद्‌गार भिन्न-भिन्न होते हैं। इसी तरीके से इस झंडे की यह खूबी है कि हर एक व्यक्ति उसके हर एक अंग के ऊपर अपने-अपने मन के अनुसार उसकी खूबी गा सकता है और उसको अपना झंडा मान सकता है। इस झंडे को हिन्दू अपना मान सकता है, मुसलमान अपना मान सकता है, सिख अपना मान सकता है, ईसाई अपना मान सकता है और किसी को यह शिकायत नहीं रह सकती कि हमारा झंडा यह नहीं है। हिन्दुओं को ही ले लीजिये। कुछ लोगों ने अखबारों में यह कहा है कि हिन्दुस्तान के झंडे में उन हिन्दू रंगों की प्रधानता होनी चाहियें और इस झंडे को बदल देना चाहिये। मैं पूछता हूं कि क्या और सभी सम्प्रदायों के साथ-साथ हिन्दुओं ने और सबसे बहुत अधिक संख्या में, इसी झंडे के लिये अपना खून नहीं बहाया है? इसके लिये अनगिनत आत्माहुति नहीं की है? फिर उन हिन्दू वीरों की, उन देशभक्तों की, जिनकी बदौलत इन सज्जनों को आज स्वतंत्रता की झलक देखने का यह सौभाग्य प्राप्त हुआ है, उन वीरों की आत्मा क्या नहीं पुकारती है? क्या उनके प्रति हम कृतघ्नता नहीं दिखाते हैं? और फिर मैं तो अपने कट्‌टर से कट्‌टर हिन्दू भाई से सादर और साग्रह निवेदन करता हूं कि यह झंडा हिन्दू भावनाओं से ओत-प्रोत है। हिन्दुओं की दृष्टि में यह झंडा उनकी हर-एक भावनाओं की हर-एक अंगों की पूर्ति करता है और हिन्दुत्व का इसमें पूरा-पूरा स्थान है। वेद भगवान कहते हैं झंडे का रंग अरुण होना चाहिये। अथर्ववेद में लिखा है ''अरुणाः सन्तु केतवः।'' अतः अरुण रंग वैदिक रीति से हिन्दुओं के झंडे का रंग है। इसके अलावा दूसरी तरह से भी देखिये यह जो सबसे ऊपर अरुण रंग है यह अग्नि का रंग है और यदि अरुण रंग सूर्य का रंग है तो इसके साथ-साथ बीच वाला सफेद रंग चन्द्रमा का रंग है। अब देखिये हिन्दुओं की दृष्टि से सृष्टि के आदि काल में जो बात संसार में हुई वह ब्रह्मा द्वारा सबसे पहले सूर्य और चन्द्रमा की रचना थी। हिन्दू जाति, आर्य जाति ने अपने आदि काल से सूर्य और अग्नि की पूजा

[पं. गोविन्द मालवीय]

की है। सूर्य और चन्द्रमा सर्वमान्य शाश्वत परमाराध्य देवता हैं। यह झंडा उन्हीं अग्नि, सूर्य और चन्द्रमा का चिह्न है। यह अरुण और सफेद रंग अपने साथ लिये हुये है। अब बचा नीचे का तीसरा रंग। यानी नीचे जो हरा रंग है, जैसा मैंने कहा है, मैं चाहता हूं कि मुसलमान दोस्त इसको अपना रंग मानें। लेकिन साथ ही वह रंग भी हमारा हिन्दुओं का रंग है। आप जानते हैं कि नवग्रहों में बुध नक्षत्र का बहुत ज्यादा महत्व और महिमा होती है और उन्हीं बुध का रंग हरा होता है। यही बुध हिन्दू भावनाओं के अनुसार गणेश माने जाते हैं। यह बुध का हरा रंग समाज की समृद्धि (प्रोस्परिटी) और समाज की सम्पत्ति का द्योतक है। इस धन-प्रधान नवग्रह बुध का रूप यह हरा रंग यहां पर मिला हुआ है। मैं पूछता हूं जिस झंडे में अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा और बुध हों, उससे अधिक हिन्दू भावनायुक्त झंडा हिन्दुओं के लिये और क्या हो सकता है? इसके अलावा और भी देखिये, इस झंडे के बीच में एक चक्र बना हुआ है। वह चक्र एक अद्भुत चीज है। हिन्दुओं के यहां अवतारों का बहुत महत्त्व है। जब संसार में उनकी आवश्यकता होती है तब ही अवतार हुआ करता है जब संसार में कष्ट, बुराई और आफत अधिक हो जाती है, जब यह जरूरी हो जाता है कि संसार को फिर से एक नये सिरे से अच्छे मार्ग पर लाया जाये तो हिन्दुओं का विश्वास है कि ईश्वर के विशेष अंश को लिये हुये किसी व्यक्ति-विशेष का अवतरण होता है और उसे लोग अवतार कहते हैं। हमारे यहां कृष्ण का अवतार हुआ। भगवान बुद्ध का अवतार हुआ है। उन्ही भगवान कृष्ण का आम प्रसिद्ध दैवी शस्त्र सुदर्शन चक्र था। सुदर्शन चक्र को कौन हिन्दू नहीं जानता? वही चक्र इसमें विद्यमान है। इसी तरह जिस भगवान बुद्ध का स्मरण प्रत्येक हिन्दू अपने संकल्प में बुद्धावतार कह कर नित्य हर बार करता है उन्हीं भगवान् बुद्ध का चिह्न रूप धर्मचक्र इस झंडे के बीचों-बीच इस चक्र के रूप में नाच रहा है। और इसके बाद यदि हिन्दुओं की भावना सत्य है तो जो आज संसार की भीषण अवस्था हो गई है उसमें से मनुष्य जाति का उद्धार करने के लिये, संसार में फिर से धर्म, न्याय और शांति स्थापित करने के लिये इस समय संसार का आखिरी अवतार हमारे यहां हुआ है और हमारे बीच मौजूद है। उसको चाहे हम या और कोई दूसरे लोग मानें या न मानें, लेकिन आज नहीं तो दस दिन बाद जिसको हिन्दू लोग अन्तिम अवतार अवश्य ही कहेंगे। वह महात्मा गांधी है और उनके हृदय का रूप चर्खा चक्र इस झंडे में विद्यमान है। इस तरह से मैं यह कहता हूं कि इस झंडे में सब लोगों को और हिन्दुओं का विशेष रूप से खुशी का पूरा सामान है। जैसा मैंने दिखाया है इस झंडे का अंग-अंग हिन्दू धार्मिक

भावनाओं के अनुकूल है। अतः इस झंडे का विरोध तो दूर रहा प्रत्येक सच्चे हिन्दू का कर्तव्य है कि वह इसका मान रखने के लिये अपने तन, मन, धन से इसका समर्थन करे, इसका आदर करे, इसकी पूजा करे और इस पर सब कुछ न्योछावर करने को तैयार रहे।

मैंने यह प्रयत्न किया था कि यद्यपि स्वयं मैं तो इस झंडे से पूरा संतुष्ट हूं, किन्तु देश में कुछ लोगों ने जो कहा था कि इसमें कुछ बढ़ाया, घटाया या बदला जाये उनका संतोष बिना कोई विशेष परिवर्तन के किया जा सके तो अच्छा हो। मैं यह विश्वास सबको दिलाना चाहता हूं कि उन विचारों और प्रस्तावों पर ध्यान दिया गया। अन्त में यही उचित लगा कि जिस झंडे के नीचे इतने दिनों से देश भर ने, जो आज विरोध कर रहे हैं उन्होंने भी, स्वतंत्रता का संग्राम चलाया है, इसे ही राष्ट्रीय पताका का स्थान देना चाहिये। जितना अन्तर अब कर दिया गया है उसके बाद अब तो किसी हिन्दू के लिये कुछ भी शिकायत का कोई सवाल ही नहीं हो सकता।

सभापति जी, हमारा ही यह देश है जिसने हमेशा से संसार को मार्ग दिखाया है, जिसने हमेशा संसार को अंधकार से ले जाकर ज्योति में खड़ा किया है। पूर्व-काल की भांति फिर इसी देश में संसार के सौभाग्य से आजकल के संसार के सब से बड़े व्यक्ति का जन्म हुआ है। जो व्यक्ति चारों तरफ से मानव जाति पर फट पड़ी हुई आफतों के समूह में सारी सृष्टि को सत्यानाश करने वाली दोनों लड़ाइयों के बाद तीसरी लड़ाई के कराल बादलों की घनघोर घड़घड़ाहट के बीच स्थित प्रज्ञ, अविचल, दृढ़ प्रतिज्ञ, एक महान् की भांति सुनिश्चित किन्तु विनम्र रीति से संसार को शांति का रास्ता दिखा रहा है और जो आज भी संसार से कह रहा है "पागलपन छोड़ो" तो दुनिया उस रास्ते पर जाये; जहां सबके लिये शांति, सुख, समृद्धि और कल्याण हैं। ऐसे महात्मा गांधी का प्रिय चिह्न रखने वाले चर्खे का सुदर्शन चक्र यह हमारा प्यारा झंडा है। मैं आशा करता हूं और भगवान से प्रार्थना करता हूं कि इस देश के प्रत्येक निवासी को वह बुद्धि और बल दे कि अपने इस झंडे के नीचे रहते हुये हम अपने को और संसार को फिर उस स्थान पर ले जा सकें, जहां का मार्ग दिखाने के लिये भारत ही उपयुक्त है और जिसके द्वारा ही संसार के कल्याण की अब भी कुछ आशा है।

मि. तजम्मुल हुसैनः मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। मेरा नाम सूची में नहीं है पर मैं 2 या 3 मिनट से अधिक नहीं लूंगा। क्या मुझे आपकी आज्ञा है?

***अध्यक्षः** नहीं, मेरे पास सूची में 25 से भी अधिक नाम हैं।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** मैं आशा करता हूं कि बाद में मुझे आपकी आज्ञा मिल जायेगी।

***अध्यक्षः** वक्ताओं से मैं अब निवेदन करूंगा कि वे अपना भाषण संक्षेप में दें, क्योंकि हमारे पास केवल 40 मिनट और हैं जिसे कि मैं अधिक से अधिक वक्ताओं को जो बोलना चाहते हैं, अवसर दे सकूं। मैं प्रत्येक वक्ता को दो मिनट देता हूं।

मैं डाक्टर जोसफ आल्बन डी' सौजा को भाषण देने के लिये आमंत्रित करता हूं।

***डा. जोसफ आल्बन डीसूजा** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं आपको तथा हाउस को यह गारन्टी देता हूं कि मैं दो या तीन मिनट से अधिक नहीं लूंगा। श्रीमान् जी, मैं इस परिषद् के मंच पर प्रथम तो एक भारतीय के रूप में और तत्पश्चात् एक भारतीय ईसाई के रूप में खड़ा होता हूं। (*तालियां*) इस कारण कि आज जबकि राष्ट्रीय झंडे का परिचय कराया गया और उसको गाढ़ दिया गया तो समस्त राष्ट्र में हर्ष और आनन्द छा गया। सर्वप्रथम प्रत्येक भारतीय ग्रह में और उसके साथ-साथ प्रत्येक भारतीय ईसाई के घर में। श्रीमान् जी, इस प्रस्ताव के प्रेषक महोदय पंडित जवाहरलाल नेहरू ने बड़े प्रभावशाली तथा सुन्दर ढंग से हमें यह बताया है कि किस प्रकार यह झंडा सबसे पहले तो हमारी पिछली सुन्दर तथा महान् परम्परा को बताता है और समान रूप से हमारी पिछली उज्जवल ऐतिहासिक दशाओं को बताता है। इसके पश्चात् उन्होंने यह बताया कि वर्तमान समय में यह क्या प्रदर्शित करता है। उन्होंने कहा कि वर्तमान समय में स्वतंत्रता की ओर उन्नति करने में यह हमारे उत्थान और पतन का द्योतक है और सबसे बड़ी बात यह है कि यह हमारी स्वतंत्रता की लड़ाई में अन्तिम विजय-फल का द्योतक है। श्रीमान् जी, यह बिल्कुल ठीक और उचित है कि इस प्रस्ताव का प्रेषक महान् पंडित जवाहरलाल नेहरू है। क्योंकि उनका व्यक्तित्व महान् है। श्रीमान् जी, इस महान् व्यक्तित्व से मेरा क्या अभिप्राय है? यदि मैं संक्षेप से संक्षेप रूप में कहूं तथा साथ ही साथ संपूर्ण महत्व भी बता सकूं तो वह इस प्रकार है। श्रीमान् जी उनका व्यक्तित्व सर्वस्व त्याग और पूर्ण नि:स्वार्थ की भावना पर आश्रित है और व्यक्तित्व के सर्वस्व त्यागमय तथा पूर्ण नि:स्वार्थमय होने के कारण वह सर्वतोमुखी है, सर्व व्याप्त है और सर्वजित है। मुझे इस विषय पर और अधिक नहीं कहना चाहिये। यह आवश्यक भी नहीं है क्योंकि

समस्त भारत ही नहीं वरन् समस्त संसार जानता है कि किस प्रकार इस भारत मां के लाल ने भारतीय राष्ट्र की उच्च बलि-वेदी पर अपने आपको न्यौछावर कर दिया। मेरे विचार से मेरा समय अब समाप्त होने वाला है। मैं अपनी तीव्र अभिलाषा कि जो झंडा आज हमने स्वीकार किया है उसके नीचे भारत उन्नति करे एक लेटिन भाषा के कथन से प्रकट करता हूं, जिसका हिन्दी भाषान्तर यह है: ''भारत इस झंडे के नीचे रहे, वृद्धि करे तथा उन्नत हो वह स्थिर लाभ तथा यश प्राप्त करने के लिये, जो केवल भारत के करोड़ों निवासियों के लिये ही न हो वरन् समस्त संसार के लिये व्यापक रूप में हो।'' इस विनम्र भारतीय ईसाई की यही प्रार्थना है। (*तालियां*)

श्री जयनारायण व्यास (जोधपुर): राष्ट्रीय झंडे की जो प्रशंसा की गई है, उसके बारे में ज्यादा कहने की जरूरत नहीं। इसकी महिमा का जो संगीत गाया गया है उसके स्वरों में मैं भी एक हल्का-सा स्वर देशी राज्यों की पिछड़ी हुई प्रजा की तरफ से मिला देना चाहता हूं। इस तिरंगे झंडे के नीचे न सिर्फ प्रान्तों के लोगों ने बल्कि देशी राज्यों की प्रजा ने भी लड़ाई लड़ी है। अपनी आजादी के लिये वह आजादी जो विदेशियों की गुलामी की वजह से हम पर लदी हुई थी अपनी आर्थिक आजादी के लिये, अपनी सामाजिक आजादी के लिये, ऐसी लड़ाइयों का जिनका इस तिरंगे झंडे से सम्बन्ध है इस व्यक्ति से भी सम्बन्ध है, जिस व्यक्ति ने आज आपके सामने इस झंडे का प्रस्ताव रखा है। मेरा मतलब पंडित जवाहरलाल नेहरू से है जिसके बिना हमारे देशी राज्यों की प्रजा का आंदोलन, प्रजा का मूवमेंट, प्रजा की प्रगति आज जिस हद तक पहुंच चुकी है, वह शायद नहीं पहुंच सकती थी। आज इस झंडे के साथ उनका नाम है और इस झंडे के साथ जो भावनायें उनकी हैं, उन भावनाओं में हम अपनी भावनाओं को मिलाते हैं। इस झंडे में पहले चर्खे का एक चिह्न था अब उसके बदले में चक्र का चिह्न है, जो गति का चिह्न है। इस चर्खे वाले झंडे के नीचे जो प्रान्तों के रहने वाले हैं उन्होंने अपनी आजादी हासिल कर ली है लेकिन जो देशी राज्यों के रहने वाले हैं उनको अब तक अपनी आजादी कुछ अंशों में हासिल करनी है और वह है हमारा उत्तरदायी शासन। हमें अपने राजा को हटाना नहीं है उनकी छत्रछाया में उत्तरदायित्वपूर्ण शासन प्राप्त करना है और वह हम इस झंडे के नीचे प्राप्त करेंगे, इसमें हमें कोई शक व शुबा नहीं है। यह झंडा हमारे देश का झंडा है, आज वह प्रान्तों में विभक्त है। यह अलग-अलग जातियों का झंडा है। आज वह हिन्दू का है, मुसलमान का है, सिखों का है, पारसियों का है इसलिये यह झंडा सब जगह लहराये, वायसराय की बिल्डिंग में लहराये, राजाओं के महलों में लहराये, गरीबों के झोंपड़ों पर

[श्री जयनारायण व्यास]

लहराये। यह हमारी भावना है और इस भावना के साथ मैं इस झंडे की वंदना करता हूं।

*श्री एस. नागप्पा (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, हमारे आदरणीय नेता पंडित जवाहरलाल नेहरू ने जो प्रस्ताव पेश किया है उसका समर्थन करने के लिये मैं खड़ा होता हूं। श्रीमान् जी, यह वह झंडा है जिसके नीचे हम विगत 60 वर्षों तक कूच करते गये और अन्त में विजय प्राप्त की। हमें इस झंडे पर अभिमान है। इसमें तीन रंग हैं और ये तीनों रंग हमारे देश में तीन सम्प्रदायों के द्योतक हैं जो कि संगठित होकर एक हो गये हैं। झंडा यह भी बताता है कि देश क्या चाहता है। हम दूसरे देशों को कैद करना नहीं चाहते, हम साम्राज्यवादी बनना नहीं चाहते, हम दूसरे देशों को अपने सामने शीश झुकाते देखना नहीं चाहते। जो कुछ हम चाहते हैं वह यह है कि हमारा झंडा शांति, उन्नति तथा समृद्धि का चिह्न बनकर समस्त संसार में फहराये।

महात्मा गांधी ने इस झंडे में गरीबों का चिह्न–गरीबों का उद्योग जिससे वे अपना जीवन-निर्वाह करते हैं–अर्थात् चर्खे के समावेश करने की कृपा की थी। श्रीमान् जी, मैं हरिजन हूं जो लोग कि अधिकतर कताई पर निर्भर हैं। महात्मा गांधी ने झंडे में चरखे को ठीक रखा है। पंडित नेहरू ने यह कहकर कृपा की कि यही चिह्न यदि एक ओर है तो दूसरे ओर भी होना चाहिये। लेकिन चक्र केवल चरखे का द्योतक ही नहीं है बल्कि यह हर्ष की बात है कि वह देश की उन्नति का भी द्योतक है और हमारे देश की स्वतंत्रता के बाल रवि का प्रतीक है। हम दो सौ वर्षों से पराधीन रह रहे हैं और कम से कम हम अब अपने देश में स्वतंत्रता के सूर्य को उगते देख रहे हैं।

यह चक्र महान् विष्णु चक्र का भी प्रतीक है जो संसार का चक्र है और जो समस्त संसार को शांति, उन्नति तथा सफलता प्राप्त करा सका।

श्रीमान् जी, झंडे को रखना, उसको फहराना तथा भवनों पर उसे उड़ते देखना बहुत सरल है। प्रत्येक व्यक्ति को उसका सम्मान रखना जानना चाहिये। जो व्यक्ति झंडे का सम्मान करता है वह समस्त राष्ट्र का सम्मान करता है। ज्यों-ज्यों झंडा ऊंचा उड़ता है त्यों-त्यों हमारे राष्ट्र का सम्मान बढ़ता जाता है।

अब तक यह कांग्रेस का झंडा कहा जाता था। अब यह कांग्रेस का झंडा नहीं कहा जायेगा। यह भारतीय राष्ट्रीय झंडा कहा जायेगा। प्रत्येक मनुष्य चाहे वह

मुसलमान हो, हिन्दू हो या ईसाई हो इस झंडे का स्वामी होगा। उसे इसकी रक्षा करनी होगी और आवश्यकता पड़ने पर अपना बलिदान भी करना होगा और तभी हमारे देश का संसार द्वारा उच्च सम्मान होगा।

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू** (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान् जी, पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा इतनी योग्यता, विलक्षणता और मैं तो कहूंगा कि जादूगरी से प्रेषित किये गये प्रस्ताव का हार्दिक समर्थन करता हूं। जो झंडा हमको भेंट किया गया है वह उड़ीसा में मेरे निजी स्थान की याद दिलाता है। उड़ीसा में जगन्नाथ जी का मंदिर है जिस पर एक हजार वर्ष के पूर्व से ही अनन्त चक्र स्थित है जो नील चक्र कहा जाता है और उसके साथ एक झंडा है जो ''पतित पावन-वन'' अर्थात् वह झंडा जो गरीबों का हो, अछूतों का हो, कहा जाता है। मैं चाहता हूं कि इस अवसर पर हमारे सब नेता लोग जगन्नाथ जी के मन्दिर में अछूतों के प्रवेश कराने का प्रयत्न करेंगे जो कि आज तक उनके लिये बन्द है।

इस झण्डे पर यह चक्र मुझे और भी अनेक बातों की याद दिलाता है जो कलिंग और उस मगध से सम्बन्धित है जिसके अध्यक्ष महोदय, आप स्वयं निवासी हैं। अशोक मगध से कलिंग गया और वहां एक महान् युद्ध किया। एक बड़े नर-संहार के पश्चात् वह दयावान व्यक्ति बना-दयावान अशोक; और एक प्रकार से कलिंगों ने अशोक को जीत लिया। जब मैं इस झंडे को अशोक और भगवान् बुद्ध के नाम से सम्बन्धित यहां देखता हूं तो मुझे यह याद आ जाता है कि हमारे देश कलिंग ने अशोक को अहिंसा का एक सुन्दर उपदेश दिया। उड़ीसा में आज भी अशोक के दो शिलालेख संसार को यह बताने के लिये खड़े हुये हैं कि जाति, धर्म तथा राष्ट्र का भेद-भाव किये बिना हमें समस्त देशों की तथा समस्त मानव-समाज की सेवा करनी चाहिये इत्यादि, इत्यादि। मैं यह अनुभव करता हूं कि यह झंडा वास्तव में हमारा केवल राष्ट्रीय झंडा ही नहीं है, बल्कि यह एक प्रकार से अन्तर्राष्ट्रीय है क्योंकि चक्र अनंत चक्र का द्योतक है। इसलिये हम सब, मैं तो यह कहूंगा कि जो कांग्रेस के साथ नहीं थे वे भी इस झंडे का आदर करेंगे। यह वह झंडा है जो कि आज पूर्णतया राष्ट्रीय हो गया है जबकि इस राष्ट्रीय झंडे पर पंडित जवाहरलाल नेहरू ने इतनी योग्यता के साथ प्रस्ताव पेश किया है।

जब मैं इस झंडे में तीन रंगों को देखता हूं तो मुझे जगन्नाथ जी के मन्दिर की तीन मूर्तियां भी याद आती हैं-जगन्नाथ भगवान का नीला रंग है, बलराम का सफेद और सुभद्रा देवी का पीला रंग है जिनके दायें बांये जगन्नाथ और बलराम हैं-एक प्रकार से नारी जाति की रक्षा करते हुये। इस चिह्न की मैं पूजा करता

[श्री लक्ष्मीनारायण साहू]

हूं क्योंकि एक प्रकार से यह मेरे देश का चिह्न है–जहां से कि मैं इस विधान-परिषद् में सदस्य होकर आया हूं।

मैं इसीलिये हृदय से पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा बड़ी योग्यता के साथ प्रेषित प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

रेवरेण्ड जेरोम डीसूजा (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस शुभ अवसर पर जबकि भारत बिना किसी धर्म, जाति या मत, प्रान्त या प्रदेश के भेदभाव के उस राष्ट्रीय चिह्न को स्वीकार कर रहा है जो संसार की कौंसिलों में उसका प्रतीक होगा। श्रीमान् जी, मैं आपको धन्यवाद देता हूं कि आपने इस आनन्द-गान में मुझे सम्मिलित होने का अवसर दिया। श्रीमान् जी, हममें से जिन लोगों ने विदेशों में जनता के प्रदर्शन और आडम्बर देखे हैं उन्होंने यह देखकर दीन भाव अनुभव किया होगा कि हमारा महान् देश, उसके विशाल जनसमुदाय, उसकी प्राचीन परम्परा तथा सभ्यता और उसके अतुलनीय सौंदर्य का प्रतीक उन आडम्बरों में नहीं पाया जाता था और जब ये अनजान व्यक्ति हमारी ओर देखते थे तो इस शर्म के मारे कि इस शिष्टाचार में हमारा स्वतंत्र प्रतिनिधित्व नहीं है हमारा सिर नीचे झुक जाता था। लेकिन आज उस दीनता का अन्त हो गया और यदि ऐसा प्रदर्शन होता है तो भारत के वे बच्चे जो कि वहां होंगे उसी गौरव का अनुभव करेंगे जो कि अन्य राष्ट्र अपने देश के प्रतीक को हवा में फहराते हुये उसका स्वागत और सम्मान कर गौरव प्राप्त करते हैं और उनके हृदय प्रसन्न होंगे जैसे-जैसे उनका झंडा हवा में ऊंचा लहरायेगा। श्रीमान् जी, यह भी झंडे का एक रूप है और मेरे विचार से हम सब एक विशेष प्रकार के संतोष की प्रतीति करेंगे।

मैं यह मानता हूं कि झंडे के लाक्षणिक अर्थ को, शास्त्रोक्त पद्धति को उसके फहराने के महत्त्व को तथा अन्य बातें जो उसके साथ हैं उन सबको हमारे लोग और लोगों से अच्छा समझते हैं। हमें अपनी शास्त्रोक्त विधि से बहुत प्रेम है। हम अपने प्रतीकों तथा चिह्नों को बौद्धिक सम्पत्ति से परिपूर्ण रखते हैं। हमारा बड़ा आनंददायक तथा एक अपूर्व रूप से भली प्रकार विचारा हुआ चिह्न है जिसमें रंगों का सुन्दर मेल है और केन्द्र में चक्र के रखने का एक अनोखा विचार है जिसके अनेकों अर्थ व्यक्त किये जा सकते हैं। श्रीमान् जी, मुझे विश्वास है और हममें से बहुत से जो उस ऐतिहासिक अवसर पर उपस्थित थे स्मरण करेंगे

कि जब इस भवन का जिसमें कि हम बैठे हैं प्रतिष्ठापन हुआ तो उस समय के वायसराय लार्ड इरविन ने इस भवन के गोलाकार निर्माण का हवाला देते हुये एक ईसाई उच्च कवि का उल्लेख किया था, उनकी पंक्तियां उद्धृत की थीं कि उन्होंने नित्यता को श्वेत प्रकाश के गोलाकार रूप में देखा था। श्रीमानजी, यह गोलाकार–यह चक्र जो समय तथा उसके प्रतिकार–उद्योग तथा उसके लाभ इत्यादि बहुत–सी बातों को दरशाते हुये हमारे लिये अनन्त तथा सनातन जीवन के माहात्म्य का प्रतीक भी है।

पंडित जवाहरलाल नेहरू ने उन आध्यात्मिक गुणों का उल्लेख किया था जिनके आधारस्वरूप राष्ट्र जीवित रहता है और जो इस झंडे द्वारा प्रदर्शित होने चाहिये। चक्र के अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु उन आध्यात्मिक गुणों का प्रदर्शन करने के लिये अधिक उपयुक्त तथा प्रशंसनीय नहीं हो सकती थी। यही वह चिह्न है जिसको धारण कर भारतवर्ष अपना युद्ध जारी रखेगा। क्या मुझे यह कहने की आज्ञा है कि भारत शान्ति के लिये भी संघर्ष जारी रखेगा और जिस प्रकार उसके योद्धाओं को इस झंडे का दर्शन अन्यायी बैरियों के विरुद्ध धर्म–युद्ध में साहस और उत्तेजना प्रदान करेगा उसी प्रकार यह झंडा हमारे शान्ति–प्रेम का परिचायक होगा? समस्त सद्कार्यों में और समस्त सामाजिक कुरीतियों को दूर करने में यह हमारा सहायक हो। हमारे आपसी लड़ाई–झगड़ों में जिनमें अन्याय किया जाता है, जोश बढ़ जाता है साम्प्रदायिक शांति भंग की जाती है, इस झंडे का दर्शन कटु तथा विरोधी कर्कश शब्दों को मधुर बनाने में और जिस प्रकार आज हम सब मिलकर हर्षपूर्वक भ्रातृ–भाव से परिपूर्ण अपने इस राष्ट्रीय झंडे का अभिवादन करने के लिये एकत्रित हुये हैं उसी प्रकार सहयोगपूर्वक सम्मिलित होने में हमारी सहायता करें।

*__अध्यक्षः__ अभी सूची में अनेक वक्ताओं के नाम हैं, परन्तु मैं पहले ही यह कह चुका हूं कि अन्तिम भाषण के लिये श्रीमती नायडू को आमंत्रित करूंगा। अतः मैं निवेदन करता हूं कि वे सभा में भाषण दें।

*__श्रीमती सरोजिनी नायडू__ (बिहारः जनरल): अध्यक्ष महोदय, हाउस इस बात से परिचित है कि आज प्रातःकाल ही भाषण देने के लिये मैंने बारम्बार मना कर दिया था। मैंने सोचा कि पंडित जवाहरलाल नेहरू का भाषण सुन्दरता, प्रतिभा और औचित्य के गुणों से इतना वीररसपूर्ण था कि वह भाषण ही इस हाउस की आकांक्षायें, भावनायें और आदर्शों को प्रकट करने के लिये पर्याप्त था। जब मैंने

[श्रीमती सरोजिनी नायडू]

विभिन्न सम्प्रदायों के प्रतिनिधियों को, जो कि इस हाउस के सदस्य हैं इस झंडे के प्रति अपनी-अपनी निष्ठा प्रकट करते हुये देखा तो मुझे खुशी हुई। मेरे पीछे बिहार प्रान्त के जो लोग बैठे हुये हैं उन्होंने मुझे विशेषकर याद दिलाई कि यदि मैं यह कहना भूल गई कि इस झंडे में जो आज स्वेच्छापूर्वक तथा गौरव सहित हाउस द्वारा स्वीकार किया जा रहा है, अशोक के धर्म-चक्र का चिह्न है जिसको वे बिहारी मानते हैं (मैं यह नहीं जानती कि यह किस ऐतिहासिक आधार पर है) तो मेरा जीवन और पद उनके प्रान्त में संकटमय हो जायेंगे। परन्तु आज मैं यहां जो कुछ कह रही हूं वह किसी सम्प्रदाय, मत अथवा स्त्रियों की ओर से नहीं है यद्यपि हाउस की सदस्यायों का यह हठ है कि किसी स्त्री को भाषण देना चाहिये। मैं समझती हूं कि विश्व-सभ्यता की प्रगति में अब वह समय आ गया है जब कि हमें स्त्री-पुरुष के भेदभाव की भावना या देश की सरकारी नौकरियों में स्त्री-पुरुष के पृथकत्व का विचार नहीं रखना चाहिये। मैं इसलिये उस प्राचीन माता की ओर से जिसने नवीन रूप धारण किया है, बोलती हूं। उसका हृदय अखंड है और उसकी आत्मा अभिवाज्य है। उसका प्रेम अपनी समस्त सन्तानों के लिये समान है चाहे वह कहीं का हो, किसी मन्दिर या मस्जिद में पूजा करता हो, किसी भी भाषा को बोलता हो और चाहे किसी संस्कृति को अपनाये हो।

मेरे दीर्घ जीवन-काल में कई बार विदेश यात्राओं में-क्योंकि भाग्य और प्रकृति से ही मैं स्वेच्छाचारिणी हूं-मैंने स्वतंत्र देशों में सन्ताप की भयानक घड़ियों को बिताया है क्योंकि भारत का कोई झंडा न था। उनमें से कुछ घटनाओं को मैं आपको बताना चाहूंगी।

विगत युद्ध के पश्चात् जिस दिन वार्सलीज में सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर किये जा रहे थे मैं संयोगवश पेरिस में थी। सर्वत्र हर्ष ही हर्ष था और संगीत भवन (Opera House) समस्त राष्ट्र के झंडों से सुसज्जित था। एक प्रसिद्ध अभिनेत्री रंगमंच पर आई, जिसके लिये कार्यक्रम में परिवर्तन किया गया जब तक उसने फ्रान्स के झंडे को अपने चारों ओर लपेट लिया। समस्त दर्शकगण एक-साथ खड़े हो गये और उसके साथ-साथ उन्होंने फ्रान्स के राष्ट्रीय गीत-''दी मार्सलीज'' को गाया। एक भारतीय ने अपनी आंखों में आंसू भरकर मुझसे पूछा कि हमारा झंडा कब बनेगा? मैंने उत्तर दिया कि शीघ्र ही वह समय आने को है जबकि हमारा अपना झंडा होगा और अपना राष्ट्रीय गीत होगा।

संधि-पत्र पर हस्ताक्षर हो जाने के पश्चात् ही न्यूयार्क के उत्सव में मुझे भाषण देने के लिये कहा। जिस विशाल भवन में परिषद् बैठी थी उसमें 44 राष्ट्रों के झंडे फहरा रहे थे। मैंने सब राष्ट्रों के झंडे की ओर देखा और बोलते ही मैंने पुकारा कि स्वतंत्र राष्ट्रों की इस विशाल परिषद में यद्यपि स्वतंत्र भारत का झंडा नहीं है फिर भी निकट भविष्य में ही उसका झंडा संसार का एक महान् ऐतिहासिक झंडा होगा। वह मेरे लिये सन्ताप का समय था जब कि कुछ मास पूर्व ही बर्लिन की अन्तर्राष्ट्रीय कान्फ्रेंस में 42 राष्ट्रों ने अपनी सदस्यायों को भेजा। वहां वे किसी दिन प्रातःकाल राष्ट्रीय झंडों की परेड करने की योजना बना रही थीं। भारत का कोई सरकारी झंडा नहीं था। लेकिन मेरे सुझाव पर कुछ भारतीय सदस्यों ने अपनी साड़ियों में से पटिट्यां फाड़ीं और वे सारी रात तिरंगा झंडा बनाने में लगी रहीं, जिससे कि राष्ट्रीय झंडे की अनुपस्थिति में हमारे देश का अपमान न होने पाये। लेकिन सबसे अधिक कष्टप्रद संताप अभी केवल कुछ मास पूर्व ही हुआ जब कि जवाहरलाल नेहरू की प्रेरणा से एशिया के राष्ट्र दिल्ली में सम्मिलित हुये और एशिया के संगठन की पुष्टि की। रंगमंच के पीछे की दीवार पर एशिया के प्रत्येक राष्ट्र के झंडे थे। ईरान का झंडा था, चीन का था, अफगानिस्तान का था और श्याम तक का भी। छोटे-बड़े सभी देशों के चिह्न थे लेकिन हमने आत्म-निषेधक सामयिक विधान (Self denying Ordinance) का प्रयोग किया जिससे कि हम सावधानी से इस प्रतिज्ञा का पालन कर सकें कि कान्फ्रेंस में दलाश्रित राजनीति के लिये कोई स्थान नहीं है। उस निश्चय पर जिसके द्वारा कांग्रेस के तिरंगे झंडे को एशियाई कान्फ्रेंस से अलग रखा, जितना हमें संताप हुआ क्या आप उसे नहीं समझ सकते और आपको दुःख नहीं होता? लेकिन आज हमारे उस दुःख और लज्जा का अन्त हुआ। आज इस झंडे की हम न्याययुक्त स्थापना, पुष्टि और इसका अभिवादन करते हैं, जिसके नीचे हममें से हजारों ने संघर्ष किया और बलिदान दिये। स्त्री-पुरुष, वृद्ध-युवा, राजा-रंक, हिन्दू तथा मुसलमान, सिख, जैन, ईसाई, पारसी सभी ने इस झंडे के नीचे संग्राम किया। जब मेरे मित्र खलीकुज्जमां बोल रहे थे मैंने अपने सामने उन मित्र और साथी महान् देशभक्तों को देखा जो मुसलमान थे, और जिन्होंने इस झंडे के नीचे कष्ट सहे। मुझे मुहम्मद अली, शौकत अली, डा. अन्सारी और अजमल खां का ख्याल आया। मैंने उस छोटे से पारसी सम्प्रदाय का जिक्र किया जो कि वृद्ध दादा भाई नौरोजी की जाति है और जिसकी प्रपौत्री ने अन्य लोगों के साथ संघर्ष में भाग लिया, जेल की यातना सही और भारत की स्वतंत्रता के लिये त्याग किये। मुझसे एक व्यक्ति ने जिसे पक्षपात के कारण कुछ सूझता न था पूछा, आप इस झंडे को भारत का झंडा कैसे कह सकती हैं भारत तो विभाजित हो गया। मैंने उससे कहा कि यह तो केवल अस्थायी

[श्रीमती सरोजनी नायडू]

भौगोलिक विभाजन है। भारत के हृदय में विभाजन की भावना नहीं है। (*वाह वाह*) आज मैं सबसे इस झंडे का आदर करने की विनती करती हूं। वह चक्र क्या बताता है? वह अशोक महान् के धर्म चक्र का प्रतीक है जिसने अपना शांति और भ्रातृत्व का संदेश समस्त संसार को दिया। क्या उन्होंने सहयोग, भ्रातृत्व और साहचर्य के आधुनिक आदर्श का आभास नहीं किया था? क्या वह चक्र प्रत्येक व्यक्ति के हित और कर्त्तव्य का चिह्न स्वरूप नहीं है? क्या वह मेरे कान्तिमान ओजस्वी प्रिय नेता महात्मा गांधी के चरखे का तथा काल चक्र का जो निर्बाध गति से अग्रसर होता जाता है प्रतीक नहीं है? क्या वह अनन्त का द्योतक नहीं है? क्या वह मानव बुद्धि का प्रतीक नहीं है? सार्वजनिक भारत का विचार किये बिना कौन उस झंडे के नीचे रहेगा? उसके कार्यों को कौन सीमित करेगा? इस झंडे के वंशानुगत क्रम को कौन सीमित रखेगा? यह किसका झंडा है? यह भारत का है। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने हमें बताया कि भारत कभी एकाकी नहीं रहा। मैं चाहती हूं कि वे यह और कहते ''भारत मित्र और शत्रु के लिये समान है''। क्या वह समान नहीं रहा? क्या संसार की समस्त संस्कृतियों ने उसकी संस्कृति को कुछ देन नहीं दी? क्या इस्लाम भारत में सार्वजनिक भ्रातृभाव के आदर्श को नहीं लाया? क्या पारसी अपने दृढ़ साहस को नहीं लाये जो अपने अग्नि-देवालय से दहकते हुये लट्ठे को लेकर ईरान से भागे और जिस मंदिर का फर्श आज हजारों वर्ष पश्चात् भी नाश को प्राप्त नहीं हुआ? क्या ईसाइयों ने दीन से दीन जनों की सेवा करने का सबक हमको नहीं पढ़ाया? क्या सनातन हिन्दू धर्म ने हमें मनुष्यमात्र को सम्पूर्णरूपेण प्रेम करना नहीं सिखाया? क्या उसने हमें यह नहीं सिखाया कि हमारा न्याय हमारे किसी संकीर्ण सिद्धांत पर आश्रित नहीं होगा बल्कि सार्वजनिक मानव सिद्धान्त पर आश्रित होना चाहिये?

मेरे बहुत-से मित्रों ने इस झंडे की अपनी अन्त:करण से प्रेरित काव्य द्वारा प्रशंसा की है। मैं स्त्री और कवि होते हुये भी आपके सामने आज यह गद्य में कह रही हूं कि हम नारियां भी भारतीय अखंडता की हामी हैं। याद राखिये, इस झंडे के नीचे न कोई राजा है न कोई रंक है, न कोई धनी है और न कोई निर्धन है। किसी को कोई विशेष अधिकार नहीं है; केवल कर्तव्य, उत्तरदायित्व और त्याग ही है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, जैन, सिख, पारसी या अन्य कोई भी हो हमारी भारत मां का अखंड हृदय है तथा अविभाज्य आत्मा है। नये भारत के नर और नारियों, उठो और इस झंडे का अभिवादन करो! मैं आपको आज्ञा देती हूं कि उठो और इस झंडे का अभिवादन करो! (*तालियां*)

***अध्यक्षः** मैं सदस्यों से निवेदन करूंगा कि जो प्रस्ताव उनके सामने रखा है उसकी स्वीकृति प्रकट करें और अपने-अपने स्थान पर आधे मिनट तक खड़े होकर झंडे के प्रति सम्मान प्रकट करें।

समस्त सभा ने खड़े होकर प्रस्ताव स्वीकार किया।

***अध्यक्षः** स्थगित होने के पूर्व मुझे एक घोषणा करनी है। भविष्य के कार्यक्रम पर कल मुझसे एक प्रश्न पूछा गया था। मैंने विधान-परिषद् के कुछ सदस्यों तथा कार्यकत्ताओं से परामर्श किया। मैं यह कह सकता हूं कि इस मास में संभव है कि संघीय विधान कमेटी की रिपोर्ट पर वाद-विवाद समाप्त हो जाये। यदि हम इस माह की 30 या 31 तारीख तक ऐसा कर सकें तो उसके पश्चात् हम अधिवेशन को स्थगित करें। आगामी माह की 15 तारीख को फिर हमें यहां आना है जब कि ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि जनता के प्रतिनिधियों को सत्ता हस्तान्तरित करेंगे। जब सदस्य उस कार्यक्रम के लिये यहां आयेंगे, मैं यह सुझाव रखता हूं कि 15 अगस्त के पश्चात हम अपनी बैठक करें और संघ सम्बन्धी अधिकार समिति की रिपोर्ट को लें। यदि हाउस को यह मंजूर है।

***माननीय सदस्यः** हां, हां।

***अध्यक्षः** अल्पसंख्यक समिति की रिपोर्ट भी हमारे सामने होगी और अगले अधिवेशन में हमें उसे भी समाप्त करना होगा।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** अध्यक्ष महोदय, क्या मैं यह आदर-पूर्वक निवेदन करूं कि ये दो झंडे जिनका आज प्रातःकाल प्रदर्शन किया गया है, विशेष रूप से सुरक्षित रखे जायें। अतः इनको राष्ट्रीय अजायबघर में रखवा दिया जाये। (*हर्षध्वनि*)

***अध्यक्षः** मैं इसे मंजूर करता हूं।

***एक माननीय सदस्यः** हाउस की ओर से मैं आपसे निवेदन करता हूं कि आप महात्मा गंधी जी के प्रति हमारे श्रद्धात्मक भावों को उन तक पहुंचा दें और उनको यह सूचना दें कि हम बड़े समारोह के साथ कार्यक्रम का पालन कर रहे हैं।

***अध्यक्षः** मैं यह बड़े हर्षपूर्वक कह दूंगा।

परिषद् बुधवार ता. 23 जुलाई सन् 1947 ई. के दस बजे तक के लिये स्थगित हुई।

Con. 3. 4.8.47
750

अंक 4
संख्या 8

बुधवार
23 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	अनुकरणीय प्रांतीय विधान के सिद्धांतों के सम्बंध में रिपोर्ट	1
2.	संघीय विधान सम्बन्धी रिपोर्ट	35

भारतीय विधान-परिषद्

बुधवार, 23 जुलाई सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कांस्टियूशन हाल, नई दिल्ली, में 10 बजे माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में आरम्भ हुई।

अनुकरणीय प्रान्तीय विधान के सिद्धांतों के सम्बन्ध में रिपोर्ट

*__अध्यक्षः__ हम प्रांतीय विधान के खण्ड 15 पर पिछले दिन जो बहस स्थगित की गई थी उसे आरम्भ करेंगे। वह खण्ड पेश किया गया था और उसमें संशोधन भी पेश किये गये थे। इसलिये अब उस खण्ड पर और उन संशोधनों पर भी बहस की जा सकती है।

*__श्री बी.एम. गुप्ते__ (बम्बईः जनरल)ः श्रीमान्, अपने संशोधन के समर्थन में तर्क देने के पहले मैं अपने संशोधन और दो मूल संशोधनों के बीच जो अंतर है उसे संक्षेप में बताना चाहूंगा। अपने संशोधन में मैंने मूल खण्ड के दो पहले उपखण्ड रहने दिये हैं। इसके अतिरिक्त मैं इस पर भी जोर देना चाहता हूं कि आकस्मिक अवसर पर जिस अन्तिम अधिकारी को सुव्यवस्था करनी होगी वह दोनों में एक ही है। वह संघ का राष्ट्रपति है। मूल खण्ड और मेरे संशोधन में केवल इतना ही अन्तर है कि जब आकस्मिक परिस्थिति उत्पन्न हो तो उस समय के लिये मूल खण्ड में यह व्यवस्था है कि गवर्नर राज्यसंघ के राष्ट्रपति के पास रिपोर्ट भेजेगा, लेकिन मैंने यह सुझाव पेश किया है कि यदि आवश्यक हो तो गवर्नर तुरंत कार्यवाही करे और उसके बाद राष्ट्रपति के पास रिपोर्ट भेजे। मेरे विचार से पंडित कुंजरू का संशोधन केवल मूल खण्ड को दुहराता है और अधिक स्पष्ट कर देता है। रहा श्री मुंशी का संशोधन, उसका आशय मेरे संशोधन से भिन्न नहीं है। उसमें कुछ और बातें भी कही गई हैं। उससे पूरे खण्ड का दूसरा मसविदा बन जाता है और उसका वही रूप हो जाता है जो मेरे संशोधन को स्थान देने से होगा।

इस सम्बन्ध में मेरा यह तर्क है कि मूल खण्ड में जिस योजना की व्यवस्था है वह कार्यरूप में नहीं आ सकती। उपखण्ड 1 के अधीन गवर्नर को बहुत बड़ा

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री बी.एम. गुप्ते]

उत्तरदायित्व दिया गया है; यानी वह प्रांत की सुख शांति को गंभीर संकट से बचाने के लिये उत्तरदायी है। ऐसे बड़े उत्तरदायित्व को पूरा करने के लिये उसे क्या अधिकार दिया गया है? यदि हम इसे अधिकार कहें तो उसे केवल राष्ट्रपति के पास रिपोर्ट भेजने का अधिकार है। इस अधिकार का भी वह कब प्रयोग कर सकता है? वह तभी इस अधिकार को प्रयोग में ला सकता है जब उसने उस आकस्मिक अवसर के लिये अपने मंत्रिमंडल से जिस कानून को वह आवश्यक समझता है उसे बनाने के लिये कहा-सुना हो और वह उसे इसके लिये राजी करने में सफल न हुआ हो। मैं यह राय प्रकट करना चाहता हूं कि यदि किसी समस्या को हल करने के लिये कानून बनाने की दीर्घकालीन प्रणाली का आश्रय लेना पड़े तो वह संकटापन्न काल की समस्या नहीं कही जा सकती। लेकिन यदि परिस्थिति भिन्न हो और वास्तव में गंभीर संकट उपस्थित हो तो मंत्रिमंडल से बातचीत व वाद-विवाद करने से अवश्य ही विलम्ब होगा, जो ऐसे संकटकाल में असहाय है। संकट आराम से उपस्थित नहीं होता, वह एकाएक प्रज्वलित हो उठता है और उसका विध्वंसक विस्फोट होता है। ऐसी परिस्थिति में केवल रिपोर्ट भेजने के अधिकार का कोई अर्थ नहीं है। यदि गवर्नर को अपने उत्तरदायित्व को सफलता से पूर्ण करना है तो उसे फौरन ही कार्यवाही करनी होगी और इसका उसे अधिकार होना चाहिये। मेरा संशोधन इसी की व्यवस्था करता है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि मेरे संशोधन का उद्देश्य गवर्नर को अनियंतित्र अधिकार दे देना है। पहले तो यह कहा गया है कि वह तभी कार्यवाही करेगा जब तुरंत कार्यवाही करने की आवश्यकता हो। यदि तुरंत कार्यवाही करने की आवश्यकता न हो तो गवर्नर को कोई कार्यवाही करने का अधिकार नहीं है। यदि राष्ट्रपति को सूचना देने और उनसे आज्ञा लेने का समय होगा तो गवर्नर कोई कार्यवाही नहीं करेगा। वह बिना किसी आवश्यकता के अपने ऊपर जिम्मेदारी क्यों ले? लेकिन यदि समय न हो तो वह शुरू की कार्यवाही करेगा और साथ ही राष्ट्रपति को भी सूचना देगा। इसमें सन्देह नहीं कि मुझसे यह कहा जा सकता है कि आखिर गवर्नर ही को तो इसका निर्णय करना है कि तुरंत कार्यवाही की जानी चाहिये कि नहीं। मैं इसे स्वीकार करता हूं कि यह निर्णय गवर्नर को ही करना है परन्तु मेरी राय में यदि वह गलत कार्यवाही करता है तो राष्ट्रपति तुरंत ही उसे ठीक रास्ते पर ला सकते हैं। यदि उसकी कार्यवाही दूषित हो तो उसके सिर पर सार्वजनिक दोषारोपण की तलवार लटकाई गई है।

इसके अतिरिक्त यह आदेश है कि वह हाईकोर्ट के अधिकार अपने हाथ में नहीं लेगा। हाईकोर्ट नागरिक अधिकारों की चारदीवारी है और उसका अधिकार अक्षुण्ण बना रहना चाहिये। यह दूसरी सुरक्षा है। इसके अतिरिक्त गवर्नर को अपनी घोषणा की सूचना राष्ट्रपति के पास भेजनी होगी और बाद को उनके आदेशों का पालन करना होगा। इसका अर्थ यह है कि केवल दो या तीन दिन के लिये गवर्नर को यह अधिकार दिया गया है। राष्ट्रपति के हाथ में मामला पहुंचते ही गवर्नर का अधिकार समाप्त हो जाता है। निस्सन्देह मैंने इस प्रकार का आदेश रखा है कि घोषणा अधिक से अधिक 15 दिन के लिये लागू रहेगी। यदि वह इतने काल तक लागू रहे तो इसका उत्तरदायित्व राष्ट्रपति पर होगा न कि गवर्नर पर। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मेरे संशोधन का उद्देश्य यही है कि जब तक राष्ट्रपति मामले को अपने हाथ में न ले ले, गवर्नर गढ़ की रक्षा करते रहें।

मुझसे यह भी कहा गया है कि आजकल क्योंकि टेलीफोन, रेडियो और हवाई जहाज से दूरी बहुत कम हो गई है इसलिये गवर्नर को इस साधारण अधिकार को देना आवश्यक नहीं है और उसके लिये इतना ही काफी है कि वह राष्ट्रपति को सूचना दे दे। मेरा कहना यह है कि उन्हीं शक्तियों से, जिनके कारण दूरी कम हो गई है, जीवन का तापमान भी तीव्र हो गया है और पुराने जमाने में जब किसी स्थिति के उत्पन्न होने में कुछ समय लगता था, वह आजकल देखते-देखते उपस्थित हो उठती है। इसलिये इस तर्क से मेरे विचारों का खण्डन नहीं होता।

कुछ और लोग हैं जो गूढ़ आपत्ति किया करते हैं। कार्यक्रम से यह मालूम होता है कि उनमें से कुछ ने अपना विरोध कुछ ऐसे संशोधन पेश करके किया है कि जिनका उद्देश्य पूरे खण्ड को ही निकाल देना है। ये सज्जन इससे संतुष्ट नहीं हैं कि गवर्नर या राष्ट्रपति के कोई आकस्मिक अधिकार होने चाहियें। मेरी समझ से वे यह भूल जाते हैं कि हम एक क्रांतिकारी युग में रह रहे हैं। हम बहुत-कुछ एक संकटापन्न काल में रह रहे हैं। सारा संसार आर्थिक तथा राजनैतिक उथल-पुथल से एक तप्त-कटाह-रूप हो गया है। हिंसात्मक भावनायें प्रबल हैं। केवल तीन ही दिन पहले एक वीभत्स काण्ड घटित हुआ। संसार की इस विकट परिस्थिति का प्रभाव भारत पर भी पड़ा है और हमारी विचित्र समस्याओं ने स्थिति को और भी गम्भीर कर दिया है। लूटमार और आग लगने की

[श्री बी.एम. गुप्ते]

भयानक कहानियों के समाचार हमें प्रतिदिन मिलते रहते हैं। इसमें तो किसी को संदेह नहीं है कि एक नवीन भारत, महान् भारत का जन्म हो रहा है। लेकिन मैं यह कहूंगा कि यह नवीन भारत तब तक नहीं पनप सकता है और सम्पन्न नहीं हो सकता जब तक अपने इतिहास के इस तूफानी आपत्ति-काल में हम समाज में सुव्यवस्था न रख सकें। सारा वातावरण उत्तेजना से परिपूर्ण है। कोई नहीं कह सकता कि कब और कहां विस्फोट हो जाये। इसलिये यह अत्यन्त आवश्यक हो गया है कि शासन और व्यवस्था के गम्भीर संकट में पड़ने पर उनके रक्षार्थ सरकार के अतिरिक्त कहीं सुरक्षित शक्ति हो। यह स्पष्ट है कि जब तुरन्त कार्यवाही करने की आवश्यकता हो तो उसका भार स्थानापन्न अधिकारी पर हो। यदि स्थानापन्न अधिकारी को ही यह कार्यवाही करनी हो तो वह विस्तृत मतगणना के आधार पर चुने हुए गवर्नर के अतिरिक्त और कौन हो सकता है? इसमें सन्देह नहीं कि अधिकतर मंत्रिमंडल ही तूफान को दबाने में समर्थ हो जायेगा और व्यवहार में कभी भी इस असाधारण अधिकार को प्रयोग में लाने की आवश्यकता न होगी। यदि इस अधिकार को कानूनी किताब में कीड़े खा जायें तो हमें प्रसन्नता ही होगी, किन्तु ऐसे अवसर आ सकते हैं जब मंत्रिमंडल उतनी योग्यता और शीघ्रता से कार्यवाही न कर सके जितनी कि हम उससे आशा करते हैं। ऐसी दशाओं में शक्ति गवर्नर के हाथ में सुरक्षित रहनी चाहिये।

हमसे कहा जाता है कि इससे मंत्रिमंडल के उत्तरदायित्व में हस्तक्षेप होगा। मैं यह पूछता हूं कि यदि शासन और व्यवस्था के हित में राष्ट्रपति लोकप्रिय मंत्रिमंडल को लांघकर काम कर सकता है तो गवर्नर, जो प्रांत का सर्वोच्च अधिकारी है, और जो वहीं रहता है और जो निर्वाचित नेता भी है, ऐसा क्यों न करे?

अन्त में मैं यह कहूंगा कि यदि यह नियंत्रित और सुरक्षाओं से सीमित अधिकार दो या तीन दिन के लिये भी एक ऐसे आदमी को विश्वासपूर्वक नहीं दिया जा सकता जिसे जनता ने उत्साह से चुना है और जो जनता के बहुसंख्यक लोगों का विश्वासपात्र है तो गवर्नर की स्थिति एक पुतले के समान हो जाती है; यद्यपि उस पर प्रांत का बहुत-सा रुपया खर्च होगा और उसे स्वयं भी काफी खर्च उठाना पड़ेगा, क्योंकि प्रौढ़ मतगणना के आधार पर जो चुनाव होगा उसमें बहुत खर्च लगेगा, प्रांत का भी और उसका भी। प्रौढ़ मतगणना के आधार पर

निर्वाचित किसी गवर्नर के लिये यह संतोषजनक स्थिति नहीं है। मैं आशा करता हूं कि यह सभा मुझसे सहमत होगी।

इसका मतलब यह नहीं है कि मैं शक्ति के अर्थ ही शक्ति देने के पक्ष में हूं या गवर्नर की स्थिति और प्रतिष्ठा के लिये शक्ति देने के पक्ष में हूं। मैं केवल यह कहता हूं कि अकस्मात संकटकाल उपस्थित हो सकता है और उसके लिये व्यवस्था करना व किसी को शक्ति देना आवश्यक है। हमारे पास प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुना हुआ गवर्नर है और वह लोगों का विश्वासपात्र है। उस पर इस विधान के निर्माताओं का विश्वास क्यों न हो? इसलिये मैं सिफारिश करता हूं कि सभा मेरे संशोधन को स्वीकार कर ले।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड 15 की जगह निम्नलिखित रखा जाये:

''जब कभी गवर्नर को यह विश्वास हो जाये कि प्रांत या उसके किसी भाग की सुख-शांति गंभीर संकट में पड़ने का भय है तो वह अपने विवेक से संघ के अध्यक्ष को रिपोर्ट दे सकता है।''

जो तीन संशोधन पेश किये गये हैं उनका सम्बन्ध एक ही महत्वपूर्ण विषय से है क्योंकि शासन और व्यवस्था राज्य के ही नहीं किन्तु समाज के भी आधार हैं। इसलिये यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि हमें विधान में ऐसे आदेशों को रखने की चिन्ता हो जिनसे सुख व शांति सुरक्षित रहे। लेकिन इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये हम जिन साधनों का उपयोग करें उनके बारे में हमें सावधानी से विचार करना चाहिये। इस सम्बन्ध में मैं केवल श्री मुंशी के संशोधन पर अपना मत प्रकट करना चाहता हूं क्योंकि श्री गुप्ते ने स्वयं ही कहा है कि वह उनके संशोधन से अधिक विस्तृत है और उसका मसविदा भी उससे अच्छा है।

श्रीमान् श्री मुंशी के संशोधन में बहुत कुछ भारत सरकार के सन् 1935 ई. के कानून की धारा 93 को दुहराया गया है। इस कानून में जो प्रणाली निर्धारित की गई है उसे स्वीकार करने के पहले हमें उसमें निहित योजना को भी समझना चाहिये। इस कानून द्वारा हमको पूरा उत्तरदायित्व नहीं दिया गया था। मंत्रियों को महत्वपूर्ण स्थान तो दिया गया था लेकिन उन्हें अपने ही प्रांतों में सब अधिकार नहीं दिये गये थे। महत्वपूर्ण क्षेत्रों में गवर्नर के कानून बनाने के व शासन प्रबन्ध

[माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू]

सम्बन्धी अधिकार थे। वास्तव में यह कहना ठीक ही होगा कि जहां तक विधान के प्रांतीय अंग का सम्बन्ध था उसकी स्थिति केन्द्रीय थी। अब क्या हमारी यह इच्छा है कि नई व्यवस्था में भी गवर्नर वैसा ही महत्वपूर्ण व्यक्ति हो जैसा वह पहले था? मेरे विचार से श्रीमान् कोई कारण नहीं है कि हमारा विधान ऐसे अविश्वास पर आधारित हो जो सन् 1935 ई. के भारत सरकार के कानून में सर्वत्र छाया हुआ है। ब्रिटिश सरकार का यह भय था कि हिन्दुस्तानी मंत्री अपने अधिकारों का इस प्रकार उपयोग करेंगे कि जिच हो जायेगी और ब्रिटिश अधिकार को बनाये रखना असम्भव हो जायेगा। इसलिये उसने मंत्रियों के अधिकार में रोक लगा दी। अब हम उस पद्धति के अनुसार किसी प्रकार कार्य नहीं कर सकते। हमें अपने मंत्रियों का विश्वास करना चाहिये और प्रांतीय शासन प्रबन्ध में उनकी स्थिति केन्द्रीय होनी चाहिये।

श्रीमान्, सम्भव है कुछ सदस्य अमेरिका के उदाहरण से प्रभावित हों, जहां राज्यों में गवर्नर होते हैं और उन्हें शासन व व्यवस्था बनाये रखने का अधिकार होता है किन्तु अमेरिकन राज्यों में उत्तरदायी मंत्रिमंडल नहीं होते, इसके अतिरिक्त उन राज्यों में भी जहां गवर्नर के अधिकार सीमित होते हैं, लोगों की दृष्टि में, राजनीति और राज्य शासन दोनों में, उसका स्थान प्रतिष्ठित होता है। इसके अतिरिक्त वह सेना और यदि केन्द्रीय पुलिस सेना या राज्य की पुलिस सेना हो तो उस पर नियंत्रण रखता है। इस प्रकार उसका अपना पृथक ही स्थान होता है। हम किसी प्रकार भी राष्ट्रपति-प्रणाली और मंत्रिमंडल-प्रणाली का सम्मिश्रण नहीं कर सकते। इसलिये मेरे विचार से श्री मुंशी का संशोधन जिस सिद्धांत पर आधारित है उसे भी हम स्वीकार नहीं कर सकते। प्रांतीय विधान-कमेटी की रिपोर्ट का आधार उस आधार से भिन्न है, जिस पर सन् 1935 ई. का भारत सरकार का कानून बनाया गया था और ब्रिटिश पार्लियामेंट में पेश किया गया था।

इसके अतिरिक्त श्रीमान्, हमें इस पर विचार करना चाहिए कि सन् 1935 ई. के भारत सरकार के कानून के अधीन गवर्नर किस प्रकार कार्य करता था। अपने निर्णयों को व्यवहार में लाने के लिये उसे यथेष्ट अधिकार दिये गये थे। जब सन् 1935 ई. के कानून के अनुसार सरकार न चल सके तो वह सरकार के कार्य संचालन का सारा भार अपने ऊपर ले सकता था। वह नौकरियों पर भी नियंत्रण रखता था। अखिल भारतीय नौकरियां जिनका सम्बन्ध जिलों के शासन से था

और जो भारत-मंत्री के अधीन थीं उनका कार्य भी वास्तव में उसी की इच्छानुसार होता था। जहां तक प्रांतीय नौकरियों का सम्बन्ध था उनके लोग गवर्नर से अपील कर सकते थे। इसके अतिरिक्त गवर्नर का एक विशेष उत्तरादायित्व यह था कि वह इन नौकरियों के लोगों के अधिकारों और हितों की रक्षा करे। इस प्रकार सभी नौकरियों के लोग, चाहे वे शाही नौकरी के लोग होते थे या प्रांतीय नौकरी के अंतिम रूप से गवर्नर के ही नियंत्रण में थे। इसके अलावा बिना उसकी स्वीकृति के पुलिस-सेना के संगठन और अनुशासन सम्बन्धी नियमों में कुछ भी परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। इसलिये प्रांतीय प्रबन्धकारिणी के कुछ साधनों पर उसका पूरा अधिकार था। जिस प्रकार का विधान हम बनाने जा रहे हैं यानी वह विधान जो इस रिपोर्ट में प्रतिपादित सिद्धांतों पर आधारित होगा उसके अधीन गवर्नर को ये अधिकार नहीं दिये जायेंगे। वे मंत्रियों को दे दिये जायेंगे। इस दशा में वह अपनी आज्ञाओं को अमल में कैसे ला सकेगा? वह एक विकट परिस्थिति में पड़ जायेगा। निस्संदेह वह एक निर्वाचित अधिकारी होगा लेकिन उसके और मंत्रियों के बीच विरोध होने की दशा में उसके लिये व मंत्रियों के लिये भी एक कठिन समस्या उत्पन्न हो जायेगी। इसकी कल्पना आसानी से की जा सकती है कि मंत्री कितनी कठिनाई में पड़ जायेंगे। गवर्नर नौकरियों पर जितना नियंत्रण रखेगा उतनी ही उनकी प्रतिष्ठा लोगों व नौकरियों के लोगों की दृष्टि में कम हो जायेगी और इससे निस्सन्देह शासन-प्रबन्ध में बड़ी पेचीदगियां पैदा हो जायेंगी; उन्हें फिर उसी विकट परिस्थिति का सामना करना होगा, जिसका उन्हें वर्तमान गवर्नर की उपस्थिति में करना पड़ता है।

श्रीमान्, हमें इस पर विचार करना है कि शासन-व्यवस्था बनाये रखने के लिये जिस प्रणाली का सुझाव दिया गया है वह साधारणता हमारे उद्देश्य की पूर्ति में सहायक होगा कि नहीं। क्या यह ठीक है कि हम एक ही आदमी को मंत्रियों पर निर्णय देने के लिये रखें? चाहे गवर्नर कितना ही बुद्धिमान क्यों न हो और चाहे वह किसी तरीके से चुना गया हो, मेरी राय में यह बहुत ही अनुचित होगा कि मंत्रिमंडल के सामूहिक मत की तुलना में उसी के मत का मान हो, यद्यपि मंत्रिमंडल को उससे अधिक सूचना होगी। श्री मुन्शी के संशोधन से सहमत न होने के लिये यह दूसरा तर्क है और मेरे विचार से यह बहुत बलशाली तर्क है।

श्री गुप्ते ने कहा है और शायद श्री मुन्शी भी यही कहेंगे कि गवर्नर को जो अधिकार दिया गया है वह केवल प्रांत की सुख-शांति गंभीर संकट में पड़ने

[माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू]

पर प्रयोग में लाया जा सकता है। सन् 1935 ई. के भारत सरकार के कानून के अधीन गवर्नर सारी सरकार की बागडोर तभी अपने हाथ में ले सकता है जब उसे यह विश्वास हो जाये कि इस कानून के अनुसार प्रांत का शासन-प्रबन्ध नहीं हो सकता है। उस धारा की उपधारा (5) में यह आदेश है कि ''इस धारा के अधीन जिन कार्यों का विवरण है उनको गवर्नर अपने विवेक से करेगा और इस धारा के अधीन गवर्नर बिना गवर्नर जनरल के अपने विवेक से सहमत हुए कोई घोषणा नहीं करेगा''। जिनको भारत सरकार के वर्तमान कानून पर विश्वास है उन्हें यह समझना चाहिये कि धारा 93 ने चाहे गवर्नर को जो भी अधिकार प्रदान किये हों, वह बिना पहले गवर्नर जनरल की राय लिये हुए कोई काम नहीं कर सकता है। इसलिये श्री मुन्शी के संशोधन से गवर्नर को सन् 1935 ई. के भारत सरकार के दिये हुए अधिकारों से भी अधिक अधिकार मिल जायेंगे। अब अगर संशोधन स्वीकार भी कर लिया जाता है तो भी गवर्नर जनरल के लिये यह सम्भव होगा कि वह अन्तिम रूप से इसका निर्णय करे कि गवर्नर की कार्यवाही न्यायोचित थी कि नहीं। श्रीमान् मेरी राय में यदि गवर्नर बिना गवर्नर जनरल के निर्णय की प्रतीक्षा किये हुए कोई सख्त कार्यवाही करे तो गवर्नर जनरल की प्रतिष्ठा को बहुत हानि पहुँच सकती है। यदि गवर्नर यह घोषणा करे कि सरकार के कार्य-संचालन का सारा भार व सब अधिकार उसने अपने हाथ में ले लिये हैं, तो यह स्पष्ट है कि यदि गवर्नर जनरल उससे सहमत न होगा तो उसे इस्तीफा देना पड़ेगा। इसके विपरीत यदि गवर्नर जनरल इस स्थिति का विचार करते हुए गवर्नर को अपनी घोषणा वापस लेने का आदेश न देगा तो वह स्वयं बड़ी कठिन परिस्थिति में पड़ जायेगा। वह अपने ही निर्णय के विरुद्ध आचरण करेगा और एक ऐसी नीति के परिणामों के लिये अपने को उत्तरदायी बनायेगा जिससे वह सहमत न हो। श्री गुप्ते का यह विचार था कि उनके संशोधन से गवर्नर को थोड़े समय के लिये स्वयं कार्यवाही करने का अधिकार मिल जाता है और उनके संशोधन व रिपोर्ट के खण्ड 15 में केवल यही अन्तर था। श्री गुप्ते को यह बहुत थोड़ा सा अंतर प्रतीत होता है किन्तु मेरी समझ से तो यह बहुत बड़ा अंतर है। यदि वास्तव में गवर्नर जनरल को ही यह निर्णय करना है कि क्या कार्यवाही की जाये तो हमें गवर्नर को अपने मंत्रियों को लांघकर और उनसे सब अधिकार अपने हाथ में लेकर स्थिति को न बिगाड़ने देना चाहिये।

श्रीमान्, जैसा कि मैं कह चुका हूँ, मैं अनुभव करता हूं कि इस सभा को इसकी बड़ी चिंता है कि किसी भी परिस्थिति में शासन और व्यवस्था को विश्रृंखल

न होने देना चाहिये। इसलिये अब प्रश्न यह है कि क्या हम बिना गवर्नर को उस अधिकार को दिये हुए, जो श्री मुंशी के संशोधन को स्वीकार करने से उसको मिलता है, अपने उद्देश्य को पूरा कर सकते हैं। मैं पहले कह चुका हूं कि यदि प्रांतीय मंत्रिमंडल को लांघना है तो वह किसी एक व्यक्ति द्वारा न लांघा जाना चाहिये। उसे किसी ऐसे अधिकारी को लांघना चाहिये जो लोगों की दृष्टि में प्रांतीय मंत्रिमंडल से अधिक प्रतिष्ठित हो। इसके अतिरिक्त यह भी वांछनीय है कि प्रांतीय मंत्रिमंडल का सामूहिक मत किसी एक व्यक्ति द्वारा नहीं बल्कि एक समिति द्वारा अस्वीकार होना चाहिये, जो केवल एक प्रांत की नहीं बल्कि सारे देश की परिस्थिति पर विचार करने के योग्य हो। राष्ट्रपति और संघ-सरकार के अधिकारी ऐसे लोग हैं। इसलिये मेरी राय में प्रांत की सुख-शांति की रक्षा के लिये आप यदि किसी अधिकारी को सुरक्षित अधिकार देना चाहते हैं तो ये अधिकार केन्द्रीय सरकर को दिये जाने चाहियें। प्रत्येक देश में केन्द्रीय सरकार अन्तिम रूप से देश की व देश के किसी भाग की शांति के लिये उत्तरदायी है। क्योंकि उसका यह उत्तरदायित्व है इसलिये इसे पूरा करने के लिये उसे आवश्यक अधिकार भी प्राप्त होने चाहियें। इसलिये श्रीमान, मैं यह कहूंगा कि मेरा संशोधन श्री गुप्ते और श्री मुंशी के संशोधनों से कहीं अच्छा है। प्रांतीय विधान के सिद्धांतों की रिपोर्ट को इस सभा के विचारार्थ पेश करते हुए सरदार पटेल ने जिस मत का प्रतिपादन किया था यह उसी के अनुरूप है। हम जो कुछ भी चाहते हैं वह इससे पूरा हो जाता है। इससे गवर्नर और उसके मंत्रिमंडल के बीच झगड़ा भी न होगा और उसे कोई ऐसा उत्तरदायित्व भी न देना होगा जो उस समय तक पूरा नहीं हो सकता है जब तक नौकरियों के लोग अन्तिम रूप से उसी के प्रति उत्तरदायी न बनाये जायें। इसका अर्थ यह होगा कि हम भारत सरकार के कानून की उसी योजना का अनुसरण करेंगे जिसकी हम इतने वर्षों से निन्दा करते आ रहे हैं। श्रीमान्, मेरे विचार से उन सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, जिनके हम समर्थक हैं, हम इस संशोधन की विचार-धारा को नहीं स्वीकार कर सकते। इसलिये हमें मंत्रिमंडल के उत्तरदायित्व के सिद्धांत को ही स्वीकार करना चाहिये, क्योंकि यही किसी विधान में स्थान पा सकता है। मैंने जो सुझाव दिया है वह किसी संघीय विधान के सिद्धांतों के विरुद्ध न होगा। यदि मेरा मत मान लिया जाये तो उसका अर्थ केवल यह होगा कि शांति और व्यवस्था की सुरक्षा के सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार की स्थिति सुदृढ़ हो जायेगी। यह कोई ऐसी बात नहीं है जो उत्तरदायी या संघीय शासन के विरोध में हो। चूंकि श्रीमान इस सिद्धांत का अनुसरण करके देश की सुख-शांति की रक्षा बिना उत्तरदायी शासन

[माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू]

के सिद्धांतों पर आघात किये हुए की जा सकती है। इसलिये मैं अनुरोध करता हूं कि यह सभा मेरे संशोधन की ओर ध्यान दे।

*__श्री टी. प्रकाशम्__ (मद्रास: जनरल): श्रीमान् मैंने बड़ी दिलचस्पी और बड़े ध्यान से पंडित कुंजरू का तर्क सुना, लेकिन उनका यह कहना मेरी समझ में नहीं आया कि शक्ति केन्द्र को दी जानी चाहिये और जब कभी गवर्नर यह देखे कि शांति संकट में पड़ी हुई है तो उसे केवल केन्द्र के पास रिपोर्ट भेजनी चाहिये और उससे आज्ञा लेनी चाहिये।

*__माननीय सदस्य:__ आपका भाषण सुनाई नहीं देता।

*__श्री टी. प्रकाशम्:__ अच्छी बात है। सन् 1935 ई. के भारत सरकार के कानून और जिस कानून को हम बनाने जा रहे हैं, उसका उल्लेख न करते हुए यह एक साधारण बुद्धि की बात है कि जब शांति भंग होने का बहुत खतरा हो तो स्थानापन्न व्यक्ति को तुरंत स्थिति सम्हालने का अधिकार होना चाहिये उसे स्थिति संभालने की कोशिश करनी चाहिये और तब केन्द्र को रिपोर्ट भेजनी चाहिये। यह साधारण बुद्धि की बात है और किसी देश के भी कानून में इसे स्थान दिया जाता है। मुझे आशा है कि यह विधान-परिषद्, जो कि एक सार्वभौम-सत्ता-सम्पन्न सभा है, जब पहला ही कानून इस उद्देश्य से बना रही है कि कार्य-स्वतंत्रता हो, प्रांतीय स्वायत्त-शासन हो और ब्रिटेन से शक्ति लेकर देश में स्वतंत्रता की स्थापना हो तो उसे इसके लिये सावधान रहना चाहिये कि पहले ही क्षण या कुछ ही समय के बाद शासन व व्यवस्था भंग न हो जाये और इसका प्रबन्ध करना चाहिये कि स्थानापन्न व्यक्ति केवल खड़ा-खड़ा घटनाओं को देखता न रहे और संघ-सरकार को रिपोर्ट भेजकर केवल आज्ञा प्राप्त करने के लिये प्रयत्न न करता रहे। श्रीमान, मैं यह कहूंगा कि इस विधान-परिषद् को ऐसी व्यवस्था नहीं करनी चाहिये। यह कर्त्तव्य-पालन के साधारण सिद्धांतों के विरुद्ध है। श्रीमान्, मुझे इसकी चिंता नहीं है कि इस काम की जिम्मेदारी गवर्नर पर हो या किसी मंत्री पर या पुलिस के अफसर पर। उस अफसर, उस स्थानापन्न व्यक्ति को स्थिति सम्हालने का अधिकार होना चाहिये और उसका प्रथम कर्त्तव्य यह है कि वह शांति भंग न होने दे। जब स्थिति शुरू से ही इतनी बिगड़ जाये कि उसे सम्हालना उसकी शक्ति में न रह जाये या जब वह परास्त हो रहा हो तो उसी समय उसे केन्द्र से या राष्ट्रपति से सेना के लिये या किसी दूसरी प्रकार की सहायता के लिये कहना चाहिये।

पंडित कुंजरू यह तर्क दे रहे थे कि सन् 1935 ई. के भारत सरकार के कानून द्वारा गवर्नर को जो अधिकार दिये गये हैं, उन्हें हमें स्वीकार न करना चाहिये। उनका यह तर्क मेरी समझ में नहीं आया। इस विधान में गवर्नर का जो रूप है वह सन् 1935 ई. के भारत सरकार के कानून में नहीं है। प्रांत का गवर्नर अब कोई अंग्रेज नहीं होगा। इस विधान के अधीन वही व्यक्ति गवर्नर होगा जिसे सारा प्रांत प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुनेगा। उसे ऐसी स्थिति में रखकर और उसे यह अनुभव कराकर कि वह प्रांत की किसी विशेष जाति या वर्ग के लिये उत्तरदायी नहीं है बल्कि वह प्रांत के हर एक व्यक्ति के लिये, जिसने उसे चुना है उत्तरदायी है। क्या हमारे लिये यह कहना उचित है कि चाहे वह यह सब कुछ हो और चाहे वह लोगों द्वारा निर्वाचित हो लेकिन हमें उसे वह अधिकार नहीं देने चाहियें जो सन् 1935 ई. के भारत सरकार के कानून द्वारा गवर्नरों को दिये गये हैं।

श्रीमान्, सन् 1935 ई. के भारत सरकार के कानून के अधीन हम गवर्नरों के साथ सन् 1937 ई. से काम करते रहे हैं। दक्षिण भारत में जब मैं थोड़े काल के लिये प्रधान मंत्री था तो पहले वर्ष हमें बहुत ही गम्भीर परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। श्रीमान, आपकी अनुमति से मैं आपसे तथा इस सभा के सदस्यों से कहना चाहता हूँ कि उत्तरी भारत में जैसी शांति रही वैसी दक्षिणी भारत में नहीं रही। परन्तु इसका कारण यह नहीं था कि वहां कोई ऐसी परिस्थिति नहीं थी बल्कि यह कि जहां गड़बड़ हुई वहीं बिना किसी की आज्ञा की प्रतीक्षा किये हुए वह सावधानी से दबा दी गई। दक्षिण भारत में बहुत गंभीर साम्प्रदायिक दंगे का भय था। उस परिस्थिति का सामना किस प्रकार किया गया? यद्यपि स्थिति गंभीर थी परंतु एक भी आदमी की जान नहीं ली गई। वह कैसे संभाली गई। हमारे मुस्लिम लीग के मित्र और प्रांत में लोगों के सभी नेताओं ने बड़ी नेकनीयती और सावधानी से काम लिया। मालूम हो गया कि दंगा होने वाला है और वे लोग रात को मेरे दरवाजे पर आये और कहा कि खतरा उपस्थित है। हम क्या कर सकते थे? हम फौरन ही उस जगह पर पहुँचे। परमात्मा की कृपा से ही हम रक्तपात और मृत्यु को रोक सके। लोगों ने ही, हिन्दू और मुसलमान दोनों ने ही स्थिति सम्हाल ली। दोनों सम्प्रदायों के लोगों ने शान्ति समितियां स्थापित कीं और वे उस इलाके में सेना और पुलिस के पहुँचने के पहले ही गश्त लगाने लगे। सब कुछ इतने अच्छे ढंग से किया गया कि कुछ भी नहीं हुआ, यद्यपि उस सारे इलाके में, उस जगह

[श्री टी. प्रकाशम्]

से लेकर रेलवे की पटरियों के पास-पास बिल्कुल उत्तर तक बहुत बड़े दंगे का अन्देशा था।

आपकी अनुमति से मैं यह भी बताना चाहता हूँ कि जिस समय अकाल ने विकट रूप धारण कर लिया था, अन्न की गाड़ियाँ मद्रास से पन्द्रह सौ मील की दूरी तक नहीं जा सकती थीं। इसका प्रबन्ध करने का काम पुलिस को सौंपा गया। जब उनको मालूम हआ कि ऐसी शक्तियां, जो उपद्रव के लिये संगठित की गई थीं, गाड़ी रोकने वाली हैं तो उन्होंने तैयारियां कर लीं और 1500 मील रेल की पटरी को सुरक्षित कर दिया, जिसके फलस्वरूप अन्न की गाड़ी जा सकीं और संकट टल गया। कोई भी यह आशा कैसे कर सकता था कि जिस व्यक्ति पर शासन-व्यवस्था की जिम्मेदारी थी या गवर्नर स्वयं, जिसे भी सन् 1935 ई. के कानून के अधीन अधिकार था केन्द्र को, संघ-सरकार के अध्यक्ष को रिपोर्ट भेजता और उनकी आज्ञा की प्रतीक्षा करता! क्या ऐसा करना खतरे से खाली होता? मुझे आशा नहीं थी कि यह प्रस्ताव इस रूप में उपस्थित किया जायेगा। मुझे मालूम है कि जब यह बहस किसी अन्य जगह हो रही थी तो पहला आक्रमण गवर्नर के पद पर ही किया गया था। यह मेरी समझ में आता है। यदि आप गवर्नर की नियुक्ति का ही विरोध करते हैं उसको कोई स्थान ही नहीं देना चाहते और मंत्रिमंडल को ही उत्तरदायी बनाना चाहते हैं तो यह बात दूसरी है। लेकिन बात यह नहीं थी। मैं अपने नेताओं को और प्रांतीय विधान कमेटी को, जिसने इस प्रांतीय विधान का मसविदा तैयार किया है, बधाई देता हूं। उन्होंने एक ही पंक्ति लिखकर सारे राष्ट्र का उत्थान कर दिया और प्रौढ़ मतगणना को फिर से व्यवहार में लाकर हमें जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था उन्हें दूर कर दिया। प्रौढ़ मतगणना कोई नई चीज नहीं है यद्यपि हमारे कुछ मित्र यह समझते हैं कि यह ब्रिटेन की देन है। कंजीवरम् से बीस मील की दूरी पर उत्तररामरूर के गांव के एक मंदिर की पत्थर की दीवारों पर प्रौढ़ मतगणना के सम्बन्ध में एक शिलालेख है। एक हजार वर्ष पूर्व सारी व्यवस्था प्रजातंत्रात्मक थी। हममें से कई लोगों का यह विचार है कि चुनाव की प्रजातंत्रात्मक प्रणाली हमने ब्रिटेन से पाई है; यह बात नहीं है। उस मन्दिर की पत्थर की दीवारों पर आपको तामिल भाषा में खुदा हुआ इस आशय का एक लेख मिलेगा कि एक हजार वर्ष पूर्व प्रौढ़ मतगणना के आधार पर प्रजातंत्रात्मक चुनाव हुआ करता था। उसमें बताया गया है कि प्रौढ़ मतगणना की

पद्धति थी। पर्चियां डालने के लिये लकड़ी के बक्स नहीं थे। खजूर की पत्तियां पर्चियों का काम कर देती थीं और वे बरतनों में छोड़ी जाती थीं। इस ढंग से वे देश का शासन-प्रबन्ध करते थे और गांवों में भी यह प्रथा थी। यह इस देश का दुर्भाग्य था कि हमें बुरे दिन देखने पड़े और अन्य राजे हम पर राज्य करने लगे। हमारी सब प्राचीन चीजें गुम हो गई और हम गुलाम हो गये। यहां तक कि जो कुछ हमने प्राप्त किया है उसे हम ब्रिटेन की देन समझते हैं। प्रौढ़ मतगणना को फिर से जीवित किया गया है और उसके आधार पर गवर्नर को एक विशेष स्थान दिया गया है। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि यह सब कुछ अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कैनेडा या किसी अन्य देश के विधान से नहीं लिया गया है। इन नेताओं और इस कमेटी ने देश की वर्तमान परिस्थिति को भी ठीक तौर से समझा है। अब हमें किस प्रकार की व्यवस्था करनी चाहिये। मैं प्रजातंत्र की ब्रिटिश प्रणाली का समर्थक था और जिन मित्रों ने ये संशोधन पेश किये हैं, उनकी भी यही भावना रही है। मुझे इसकी बड़ी चिंता थी कि हमें ब्रिटिश प्रणाली का अनुसरण करना चाहिये। हमने उसकी नकल की और हमें कई प्रकार के अनुभव हुए। हमारे नेताओं को कई प्रकार के अनुभव हुये और हमारे देश को जो हानि हुई है और उसकी जो दशाएं हैं उनको ध्यान में रखते हुए उन्होंने प्रौढ़ मतगणना से गवर्नर के निर्वाचन का सुझाव दिया है और इस प्रकार एक ही पंक्ति से सारे राष्ट्र को बहुत ऊँचा उठा दिया है। उन्होंने इस देश के प्रत्येक स्त्री-पुरुष को, जिसके लिये कांग्रेस इतने वर्षों से लड़ रही है यह अनुभव करा दिया है कि आखिर उन्हीं की सरकार के लिये तो वे गवर्नर को रख रहे हैं और वह उनके ही प्रति उत्तरदायी होगा। गवर्नर को कुछ कार्यवाही करने का अधिकार होना चाहिये। यदि गवर्नर की उपस्थिति में कुछ हो रहा हो तो क्या वह उसे उसी जगह न रोके, जब कि ऐसा करना उसकी शक्ति में है? यह सुझाव पेश करना कि कुछ न किया जाना चाहिये और गवर्नर को सन् 1935 ई. के कानून के अधिकारों को प्रयोग में न लाने देना चाहिये, ठीक नहीं है और न यह उचित ही है। सन् 1935 ई. के विधान से किसी अच्छी बात को लेने में कोई हर्ज नहीं है। इस प्रस्ताव को प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी प्रकार के मतभेद के स्वीकार कर लेना चाहिये। मुझे इसका दुख है कि इसे टालने के लिये ऐसा भी प्रस्ताव रखा गया कि जब तक संघ का अध्यक्ष सेना न भेजे या सलाह या आदेश न दे तो सारे मामले को स्थगित रखना चाहिये। मैं इस सभा से अनुरोध करता हूं कि इस प्रकार के किसी सुझाव को स्वीकार न करे। यदि हम यह कहें कि स्थिति का सामना किये बिना गवर्नर को इस जगह

[श्री टी. प्रकाशम्]

चले आना चाहिये तो सारा संसार हम पर हंसेगा; यदि हम इस संशोधन को स्वीकार करें तो हमारी मूर्खों में ही गिनती होगी।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्र** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): श्रीमान् इस सभा के सामने जो प्रस्ताव रखा गया है उससे एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठ खड़ा होता है और मैं सभा से प्रार्थना करता हूं कि किसी नतीजे पर पहुँचने के पहले वह उसके सभी पहलुओं पर विचार कर ले। श्रीमान्, मैं इस देश के एक अभागे भाग से आया हूं जहां शासन और व्यवस्था के भंग होने से और उसके लिये उत्तरदायी अधिकारी के हस्तक्षेप न करने से अत्यंत रक्तपात हुआ है और अनगनित कठिनाइयों और हानि का सामना करना पड़ा है। इसी कारण मैं अपने माननीय मित्र श्री मुंशी के संशोधन के पक्ष में कुछ शब्द कहना चाहता हूं। इस संशोधन का उद्देश्य क्या है? यह प्रांतीय गवर्नरों के लिये कुछ असाधारण अधिकारों का प्रस्ताव करता है जिन्हें वे संकटापन्न परिस्थिति में अपने विवेक से प्रयोग में लायेंगे। सभा को इसकी ओर ध्यान देना चाहिये कि इन अधिकारों का गवर्नर के प्रतिदिन के कार्य से कोई सम्बन्ध नहीं है। इन अधिकारों को वह केवल ऐसी संकटापन्न स्थिति में प्रयोग में लायेगा जब शासन व व्यवस्था के बिलकुल भंग होने का भय हो या कुछ हद तक वह भंग हो गई हो और तुरन्त कार्यवाही करने की आवश्यकता हो। मैं इस सभा के प्रत्येक सदस्य से पूछता हूं कि क्या वह आकस्मिक अवसरों पर शासन-प्रबंध के अधिकारी को भी इस प्रकर के अधिकार से वंचित करना चाहता है? मेरे माननीय मित्र पंडित कुंजरू ने जो सुंदर तर्क दिया है उसकी मैं सराहना करता हूं; किन्तु कोई भी व्यक्ति आदरपूर्वक उनसे भिन्न मत प्रकट कर सकता है। मैं उन्हें बताना चाहता हूं कि मुझे सन् 1935 ई. के भारत सरकार के कानून की धारा 93 के विरुद्ध कोई जोरदार टिप्पणी नहीं करनी है। मेरे विचार से धारा में कुछ बहुमूल्य आदेश हैं। हमें केवल यह शिकायत है कि धारा 93 के आदेशों का अक्सर दुरुपयोग ही हुआ है। सब कुछ कहने और करने के बाद भी संसार का सबसे अच्छा विधान भी यदि लोगों में उसे उसी भावना से प्रयोग में लाने का निश्चय, सद्भाव तथा बुद्धि न हो जिस भावना से वह बनाया गया है, तो वह लोगों के किसी उपयोग का नहीं हो सकता। इस विधान के अधीन जो व्यक्ति गवर्नर नियुक्त होगा वह आखिर होगा कौन? वह कोई विदेशी नहीं होगा। वह एक हिन्दुस्तानी होगा; वह नामजद नहीं किया जायेगा; वह

सार्वभौम प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुना जायेगा और इस कारण लोग उसका विश्वास करेंगे और उसका आदर करेंगे। उसकी बहुत प्रतिष्ठा होगी। इस प्रकार इस पद के लिये उस व्यक्ति को चुनने के बाद क्या आप उसे गवर्नमेंट हाउस में एक पुतले के समान रखना चाहते हैं? या किसी ऐसी स्थिति में जब तुरंत कार्यवाही करने की आवश्यकता हो आप उससे कुछ काम लेना चाहते हैं? ऐसे अवसर आ सकते हैं जब उसे तुरंत कार्यवाही करनी होगी। मैं इसे अच्छी तरह समझता हूँ कि इस अधिकार के दुरुपयोग की आशंका है, परन्तु मैं आपको बतलाना चाहता हूं कि यह भय बहुत कुछ काल्पनिक ही है। ऐसे बहुत ही कम अवसर आयेंगे जब उसे इस अधिकार को प्रयोग में लाने के लिये कहा जायेगा। इस संशोधन के विरुद्ध क्या आपत्ति है? यह कहा गया है कि शासन-प्रबन्ध करने वाले अफसरों पर गवर्नर का कोई अधिकार नहीं होगा और इसलिये उसके हस्तक्षेप करने से कोई प्रभाव न पड़ेगा।

मैं अपने माननीय मित्र श्री कुंजरू से पूछता हूं कि क्या संघ के अध्यक्ष का प्रांत के शासन-प्रबन्ध के अधिकारियों पर सर्वोच्च अधिकार नहीं होगा? इसलिये यदि हम प्रांतीय अधिकार का पूर्ण रूप से विश्लेषण करें तो प्रांतीय अधिकार-संघ के अध्यक्ष के अधिकार से परे न होगा। दो प्रतिबन्धों की व्यवस्था की गई है। पहले तो प्रांतीय गवर्नर से तुरंत कार्यवाही करने और संघ के अध्यक्ष को इसकी रिपोर्ट भेजने को कहा जाएगा कि उसने किन कारणों की बिना पर यह कार्यवाही की। कोई गवर्नर, जो चुना गया हो और जिसे गंभीर उत्तरदायित्व सौंपा गया हो और जो विधान भंग करने के अभियोग पर न्यायाधीशों के सामने दोषी ठहराया जा सकता हो, क्या बिना विचार करे और स्वेच्छाचारिता से काम करेगा? मुझे ऐसा विश्वास नहीं है। इसके विपरीत मुझे तो यह विश्वास है कि वह योग्यता से और ठीक ढंग से काम करेगा।

इसके अतिरिक्त यह आकस्मिक कार्यवाही केवल एक या दो सप्ताह के लिये होगी। आदेशों से यह स्पष्ट है कि घोषणा दो सप्ताह बाद प्रयोग में नहीं रहेगी, जब तक कि गवर्नर या संघ का अध्यक्ष इस सम्बन्ध में आज्ञा न दे। इस प्रकार जब तक उसे यह न मालूम हो कि मंत्रिमंडल में फूट हो गई है और शासन व व्यवस्था के भंग होने का भय है और यदि तुरंत कार्यवाही न की गई तो स्थिति बिगड़ने की संभावना है, तब तक वह हस्तक्षेप न करेगा और जब वह हस्तक्षेप

[पं. लक्ष्मीकांत मैत्र]

करेगा तो वह तुरन्त ही संघ के अध्यक्ष को, जिन्हें असाधारण अधिकार दिये गये हैं सूचित करेगा। इन कारणों से मेरा यह मत है कि विधान में कोई ऐसा आदेश होना चाहिये जिससे शासन व व्यवस्था बनाये रखने और शासन प्रबन्ध भंग न होने देने का अंतिम उत्तरदायित्व किसी व्यक्ति पर होना चाहिये तथा उसे उसका पूरा भार वहन करना चाहिये और वह व्यक्ति गवर्नर ही होना चाहिये। इस सीमित उद्देश्य के लिये यह काम उसे सौंपा जाना चाहिये। श्रीमान्, मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूँ।

***अध्यक्षः** इसके पूर्व कि मैं किसी अन्य सदस्य से बोलने के लिये कहूं, मैं यह कहना चाहता हूं कि आज से इस महीने की 31 तारीख तक केवल छः दिन रह गए हैं और सारे संघ-विधान पर विचार करना है, इसलिये मैं वक्ताओं से प्रार्थना करता हूं कि वे अधिक समय न लें ताकि अधिक सदस्य बहस में भाग ले सकें। मेरे पास आधे दर्जन ऐसे सदस्यों के नाम हैं जो बोलना चाहते हैं।

***एक माननीय सदस्यः** मैं बहस बन्द करने का प्रस्ताव पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** कुछ अन्य सदस्य भी अपनी जगहों से उठ रहे हैं। जिस क्रम से मेरे पास नाम लिखे हुये हैं उसी क्रम से मैं वक्ताओं से बोलने के लिए कहूंगा।

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, क्या बोलने का अवसर प्राप्त करने के लिए आपके पास नाम भेजना आवश्यक है? क्या सदस्य आपका ध्यान आकर्षित नहीं कर सकते?

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): क्या यह काफी नहीं है कि यदि कोई सदस्य बोलना चाहें तो वे अपनी जगहों में खड़े हो जाएं और इस प्रकार अध्यक्ष का ध्यान आकर्षित करें?

***अध्यक्षः** यह आवश्यक नहीं है कि कोई सदस्य बोलना चाहे तो वे अपना नाम मेरे पास भेजें। लेकिन यदि कोई सदस्य अपना नाम भेज देते हैं और उठ खड़े होते हें तो यह स्वाभाविक है कि वे मेरा ध्यान पहले आकर्षित करेंगे। मैं जिस प्रकार सूची में नाम लिखे गए हैं, उस क्रम से बोलने के लिये नहीं कहूंगा और उन्हीं सदस्यों से बोलने के लिए कहूँगा जिनकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित होगा। मैं सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि वे पांच-पांच मिनट में अपने भाषण समाप्त कर दें।

***माननीय श्री वी.जी. खेर** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं पांच मिनट का समय भी न लूंगा। मैं बोलने के लिये इसलिये उठा हूं कि यह विषय इतना महत्वपूर्ण है कि...!

***श्री बी. पोकर साहब बहादुर** (मद्रास : मुस्लिम): श्रीमान्, मुझे एक व्यवस्था सम्बन्धी बात पूछनी है। मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या यह आवश्यक नहीं है कि उन सभी सदस्यों को, जिन्होंने संशोधन पेश किये हैं, पहले बोलने दिया जाये ताकि सभी संशोधनों पर एक साथ विचार हो सके?

***अध्यक्ष:** जहां तक इस खण्ड का सम्बन्ध है, सभी संशोधन पेश हो चुके हैं और इस खंड और संशोधनों पर विचार हो रहा है।

***मि. बी. पोकर साहब बहादुर:** मैंने इस संशोधन में एक संशोधन पेश किया हैं। मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि मुझे इस समय बोलने दिया जाये। शायद यह मान लिया जायेगा कि वह पेश हो चुका है।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल** (बम्बई: जनरल): अब यह नहीं समझा जा सकता है कि वह पेश हो चुका है। कई सदस्य अपने विचार प्रकट कर चुके हैं; चूंकि यह अभी तक पेश नहीं किया गया इसलिये अब कुछ नहीं हो सकता है।

***अध्यक्ष:** कितने ही सदस्य अभी तक बोल चुके हैं और सदस्य महोदय ने इसके पहले इसे पेश नहीं किया। उनका संशोधन 21 जुलाई को मिला था। उसी दिन और सभी संशोधन पेश किये गये थे। यदि सदस्य महोदय अपना संशोधन पेश करने का इरादा रखते थे तो उस समय वे मेरा ध्यान आकर्षित कर सकते थे।

***माननीय श्री वी.जी. खेर:** अध्यक्ष महोदय पं. हृदयनाथ कुंजरू के संशोधन का विरोध करने के लिये मैं उठा हूँ। श्रीमान्, जैसा कि मैं कह चुका हूं, इस वाद-विवाद में भाग लेने की मेरी इच्छा नहीं थी लेकिन मैंने यह अनुभव किया कि माननीय श्री कुंजरू का संशोधन इस प्रकार का है कि प्रत्येक सदस्य का यह कर्तव्य है कि वह उसका विरोध करे। मैं यह कहूँगा कि यह दिखाने के लिये कि वह कितना निरर्थक है उसे केवल पढ़ देने की आवश्यकता है। वह इस प्रकार है।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू:** वह उस संशोधन के समान ही है जो पंडित गोविन्दवल्लभ पन्त द्वारा प्रस्तावित किया गया है।

*__माननीय श्री बी.जी. खेर:__ तब तो एक के बजाय आप दोनों दोषी ठहराये जायेंगे।

''जब कभी गवर्नर को यह विश्वास हो जाये कि प्रान्त या उसके किसी भाग की सुख-शान्ति गंभीर संकट में पड़ने का भय है तो वह अपने विवेक से राज्य-संघ के अध्यक्ष को रिपोर्ट दे सकता है।'' मुझे ज्ञात नहीं है कि यदि वर्मा में इस प्रकार का विधान है तो उसमें ऐसे खण्ड की व्यवस्था है या नहीं; किन्तु यह सोचकर मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं कि यदि वहां इस प्रकार का विधान था तो ऐसी घटनायें कैसे घटित हुई? हमारे यहां एक ऐसा व्यक्ति होगा जो प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुना जायेगा और जिसका प्रधान मंत्री उतना भक्त न होगा जितने कि लोग उसके भक्त होंगे। लेकिन वह केवल इतना ही कर सकता है कि संघ के अध्यक्ष को तार दे और प्रतीक्षा करता रहे। परन्तु श्रीमान, यह बड़े दुख की बात है कि माननीय सदस्य ने अपने संशोधन में इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं की है कि तार और टेलीफोन के कट जाने पर गवर्नर को क्या करना चाहिये? श्रीमान्, मैंने यह देखा है कि बम्बई से केवल 15 मील की दूरी पर भी गवर्नर या प्रधान-मंत्री या किसी अन्य अधिकारी से 20 घंटे तक सम्पर्क स्थापित करना लोगों के लिए असम्भव हो गया। ऐसी संकटमय स्थिति में गर्वनर से क्या कार्यवाही करने की आशा की गई है? उसे केवल अध्यक्ष के पास रिपोर्ट भेजने को कहा गया है। इस प्रकार आधुनिक यातायात के काल में भी प्रौढ़ मतगणना के आधार पर निर्वाचित गवर्नर को केवल यह करना है कि वह संघ के अध्यक्ष के पास रिपोर्ट भेज दे और प्रतीक्षा करता रहे तो यह सोचकर मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं कि इसका नतीजा क्या होगा। इसलिये मैं इस संशोधन का विरोध करता हूँ, क्योंकि यदि यह स्वीकार कर लिया गया तो इससे बड़ी हानि होगी।

इसके अतिरिक्त, जैसा कि मुझसे पहले बोलने वाले वक्ता बता चुके हैं, पिछले अनुभव से यह ज्ञात हुआ है कि किसी ऐसे देश में जहां अधिकारी-गण विभिन्न दलों की राजनीति में फंसे रहते हैं, यह आवश्यक है कि कोई ऐसा व्यक्ति हो जो कुचक्रों और दलों की उथल-पुथल से अलग रहे और लोगों की सुरक्षा की व्यवस्था करे। हम यहां केवल इसकी व्यवस्था करने जा रहे हैं कि गवर्नर उत्तरदायित्व को वहन कर ले और तब संघ के अध्यक्ष को, जिसकी सहायता उसका मंत्रिमंडल करेगा, स्थिति की सूचना दे और यह कि अध्यक्ष या तो गवर्नर

के कार्य का समर्थन करे या उसका विरोध करे। यदि आप प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुने हुए गवर्नर को रख रहे हैं तो उसे संघ के अध्यक्ष के पास तार भेजने के लिये एक नाममात्र का अधिकारी न बनाइये। पंडित कुंजरू ने जो संशोधन पेश किया है उसका मैं विरोध करता हूँ।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुर:** अध्यक्ष महोदय, मुझे एक व्यवस्था संबन्धी आपत्ति करनी है। मैंने श्री मुँशी के संशोधन में एक संशोधन की सूचना दी थी। मुझे यह ख्याल था, और मेरा यह ख्याल ठीक भी था कि अध्यक्ष का यह कर्तव्य है कि जिन लोगों ने संशोधनों को पेश करने की सूचना दी हो उनसे वह संशोधन पेश करने को कहें। मैंने इसे आवश्यक नहीं समझा कि मैं खड़े होकर अपने संशोधन को पेश करने की अनुमति मांगू। 21 ता. को मुझे अपना संशोधन पेश करने को नहीं कहा गया, केवल श्री मुंशी का संशोधन पेश हुआ और अधिक विचार स्थगित कर दिया गया। इसलिये मैं प्रार्थना करता हूं कि मुझे अपना संशोधन पेश करने दिया जाये।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** जब अध्यक्ष किसी व्यवस्था-सम्बन्धी प्रश्न पर अपना निर्णय दे चुके तो क्या वही प्रश्न फिर उठाया जा सकता है?

***अध्यक्ष:** जब अध्यक्ष कोई निर्णय दे चुकता है तो वही बात फिर नहीं उठाई जा सकती। इस सम्बन्ध में बहस समाप्त करने के पहले मैंने यह स्पष्ट कर दिया था कि सभी संशोधन पेश कर दिये गये हैं। उस समय माननीय सदस्य ने मुझे नहीं बताया कि उनका संशोधन पेश नहीं हुआ है। मुझे खेद है कि अब इस समय मैं उन्हें उसे पेश करने की आज्ञा नहीं दे सकता।

***डा. पी.के. सेन** (बिहार : जनरल)**:** अध्यक्ष महोदय, आपने भाषणों के लिये जो समय निश्चित किया है उसी के अन्दर अपना भाषण समाप्त कर दूंगा और मैं यथासम्भव संक्षेप में बोलूंगा। इस सभा में जो प्रश्न उपस्थित किया गया है उसका सम्बंध कुछ मौलिक सिद्धांतों से है। मैं स्पष्ट शब्दों में यह कहना चाहता हूं कि मैं अपने माननीय मित्र श्री मुंशी और श्री गुप्ते के संशोधनों का अपनी पूरी शक्ति से समर्थन करना चाहता हूं। मेरे विचार चाहे कुछ भी हो, मैं उन्हें अलग रख देने के लिये तैयार हूं क्योंकि मुझे विश्वास है कि यह सभा अपनी बुद्धिमत्ता और सूझ से ठीक ही रास्ता अपनायेगी। किसी प्रकार का भ्रम होने की आवश्यकता नहीं है। पहले तो यह आदेश संकटकाल के लिये है और संकटकाल

[डा. पी.के. सेन]

हमेशा नहीं आता। संकटकाल संकटकाल ही है, उसकी न तो परिभाषा दी जा सकती है और न उसके सभी पहलुओं का वर्णन ही किया जा सकता है। मालूम तो यह पड़ता है कि वह एकाएक आ गया परन्तु वास्तव में वह बड़ी चालबाजी से उपस्थित होता है। इस संशोधन में इसकी कल्पना की गई है कि गवर्नर एक ऐसा व्यक्ति होगा जिसमें सूझ और पूर्वदर्शिता के गुण होंगे और दृढ़ता से व तुरंत ही कार्य करने की क्षमता भी होगी। वह यह समझेगा कि किस अवसर पर उसे हस्तक्षेप करके अपने प्रदेश को विपत्ति से बचा लेना चाहिये। मेरे विचार से जब हमने प्रौढ़ मतगणना के आधार पर गवर्नर को चुनने का निर्णय किया तो हमने ऐसे ही व्यक्ति की कल्पना की थी। हम केवल इसकी व्यवस्था करना चाहते थे कि वह लोगों का अपना आदमी हो और उसे सारे प्रांत के लोगों का समर्थन प्राप्त हो। हम यह चाहते थे कि निर्वाचन-शाला में प्रत्येक स्त्री और पुरुष इसका विचार करके आयें कि वे ऐसे व्यक्ति के पक्ष में पर्ची डालने आ रहे हैं जिसमें ठीक समय में ठीक काम करने की क्षमता होगी। इसकी कल्पना ही नहीं की जा सकती कि कोई गवर्नर जान-बूझ कर अपने मंत्रिमंडल के मत की उपेक्षा करेगा। इसे सभी स्वीकार करते हैं कि चूंकि हमने परिषदात्मक शासन प्रणाली स्वीकार की है इसलिये शासन-प्रबंध का अंतिम अधिकार प्रधान मंत्री के नेतृत्व में मंत्रिमंडल को प्राप्त है। जब प्रधानमंत्री का अपने मंत्रियों से सामंजस्य और सद्‌भाव रहेगा और सभी पहिये ठीक चलेंगे तो काम सुचारू ढंग से चलेगा। ऐसी ही दशा में यह प्रजातंत्रात्मक व्यवस्था ठीक ढंग से चल सकती है। किंतु इसका भी भय है कि कभी अकस्मात संकटकाल उपस्थित हो जाये और मंत्रिमंडल उसका सामना न कर सके। यह हो सकता है कि विभिन्न दलों में एकता न हो और मतभेद हो। दलबन्दी के आधार पर बनाई हुई किसी भी सरकार को इस प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। जब ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाये कि एक पुर्जा दूसरे पुर्जे को चलाने के बजाय बाधक सिद्ध हो और राज्य की मशीन ठीक ढंग से न चलने लगे या या जब कोई बहुत बड़ा संकट उपस्थित हो जाये तो उसी दशा में, जैसी कि इस संशोधन में कल्पना की गई है, गवर्नर सारी शक्ति अपने हाथ में ले सकेगा और आवश्यक कार्यवाही करने के बाद तुरन्त संघ के अध्यक्ष के पास सूचना भेजेगा ताकि वह अपने विवेक से जो कुछ भी आवश्यक समझे, करे। गवर्नर को जो आकस्मिक परिस्थिति के अधिकार दिये जाने वाले हैं उनका विस्तार इतना ही है। प्रश्न यह उठता है कि क्या इस प्रजातंत्रात्मक तथा

परिषदात्मक शासन-प्रणाली में क्या शासनारूढ़ दल हमेशा इस प्रकार कार्य करेगा कि इन आकस्मिक परिस्थिति के अधिकारों की आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी। यदि हमें यह विश्वास हो तो गवर्नर को इन अधिकारों को प्रयोग में लाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी। परन्तु मैं फिर पूछता हूँ कि क्या हमें ऐसा विश्वास हो सकता है? क्या हमें इस शासन-प्रणाली का इतना अनुभव हो गया है कि हम विश्वास के साथ यह कह सकें कि प्रधान मंत्री या मंत्रिमंडल से भिन्न कार्य करने और अपने हाथों में सारी शक्ति ले लेने की किसी को आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी? वास्तव में बात यह है कि हमें किसी एक व्यक्ति के शासन का भय है और इसी भय के कारण इस संशोधन का इतना जोरदार विरोध हुआ है। यह कहा जाता है कि हम 24 घंटे के लिये भी एक व्यक्ति का शासन सहन नहीं कर सकते। यह प्रजातंत्र के मौलिक सिद्धांतों के विरुद्ध है, लेकिन यह भुला दिया जाता है कि संशोधन में केवल यह कल्पना की गई है कि प्रजातंत्र के ढांचे के गिर पड़ने पर ही या उसमें स्थिति को सम्भालने की क्षमता न होने पर ही एक ऐसे व्यक्ति को आकस्मिक परिस्थिति के सीमित अधिकार दिये जायें जो सारे प्रांत की प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुना गया है और जो निस्सन्देह हमारा विश्वास-भाजन है। बिना ऐसे अधिकारों को दिये हुए प्रांत का गवर्नर केवल एक नाममात्र का अधिकारी होगा। जिस धारा में गवर्नर के चुनाव की व्यवस्था है उसमें यह कल्पना की गई है कि वह संकटमय स्थिति को सम्भाल सकेगा और मेरे विचार से इसी कारण प्रौढ़ मतगणना के आधार पर उसके चुनाव का निर्णय किया गया था। जैसा कि मैं कह चुका हूं कि मैं अपने विचार अलग रख देने के लिये तैयार हूं लेकिन मैं आशा करता हूं कि हमें इस सम्बन्ध में कुछ भी भ्रम न होगा कि हम थोड़े काल के लिये भी अपने को एक व्यक्ति के शासन के अधीन रख रहे हैं। यह केवल आकस्मिक परिस्थिति की व्यवस्था है और इसी कारण वह न्यायोचित भी कही जा सकती है। इसलिये मैं विनय-पूर्वक यह मत प्रकट करता हूँ कि इस संशोधन को स्वीकार कर लेना चाहिये।

***माननीय पं. गोविन्दवल्लभ पंत** (संयुक्त प्रांत: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे वास्तव में खेद है कि मुझे इस प्रस्ताव पर बोलना पड़ रहा है। मेरा बोलने का इरादा नहीं था, वह इसलिये नहीं कि मैं इस सम्बन्ध में कोई विचार नहीं रखता बल्कि इसलिये कि मैं साधारणतया अपने आदरणीय मित्रों के विचारों का सर्वसाधारण के सम्मुख विरोध नहीं करना चाहता। परन्तु मेरे दुर्भाग्य से पं. कुंजरू एकाएक कह उठे कि उन्होंने जो संशोधन पेश किया है वह पहले मेरे

[माननीय पं. गोविंदवल्लभ पंत]

नाम से था। यह ठीक है और इससे मैं इंकार नहीं करता। फिर श्री खेर ने कहा कि कुंजरू के नाम के साथ उन्होंने मेरे नाम को भी उन दो मूर्खों में सम्मिलित करना है जिन्होंने मिलकर इस प्रस्ताव की सूचना दी है।

*__माननीय श्री बी.जी. खेर:__ मैंने यह नहीं कहा।

*__माननीय पं. गोविन्दवल्लभ पंत:__ आपने इसी आशय के कुछ शब्द कहे। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि अब वे समझते हैं कि उन्होंने जो कुछ कहा वैसा उनका मतलब नहीं था। मैं इसके लिये दुखित नहीं हूं, लेकिन फिर भी जब अपने दल का निर्णय मुझे मानना है और श्री मुंशी के संशोधन का समर्थन करना है, तो मैं समझता हूं कि मुझे इसका कारण बताना चाहिये कि मैंने इस संशोधन की सूचना देने की धृष्टता क्यों की है।

*__अध्यक्ष:__ क्या मैं यह बता सकता हूं कि इस सभा का किसी दल के निर्णयों से कोई सम्बन्ध नहीं है?

*__माननीय पं. गोविन्दवल्लभ पंत:__ इस सम्बन्ध में मुझे कुछ आपत्ति नहीं है। लेकिन फिर भी मैं यह समझता हूं कि सदस्यों को एक बड़े समूह के लोगों की बुद्धि के अनुसार काम करना चाहिये न कि अपनी ही बुद्धि के अनुसार। कम से कम जहां तक मेरा सम्बन्ध है मैं बड़े समूह की सम्मति को ही स्वीकार करने के लिये तैयार रहता हूं। फिर भी मुझको अपनी सफाई देनी है और बताना है कि उस समय मैंने किन कारणों को महत्वपूर्ण समझा। बात यह है कि जब सुख-शांति के गम्भीर संकट में पड़ने का भय हो तो ऐसी नाजुक परिस्थिति को कौन सम्हाले और कैसे सम्हाले? हमने विधान की जिस योजना को स्वीकार किया है उसे आपने देख लिया है। मैं इसे अच्छी प्रकार समझता हूं कि हम इससे सहमत हैं कि गवर्नर प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुना जाये परन्तु निर्वाचन की इस प्रणाली को स्वीकार करके हम उसे सहस्रबाहु नहीं बना देते। उसके फिर भी दो ही हाथ और दो ही आंखे होंगी। प्रश्न यह है कि नौकरियों के लोग किस व्यवस्था के अनुसार कार्य करेंगे। यदि यह समझा जाये कि प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुना हुआ गवर्नर दिन प्रतिदिन के शासन-प्रबन्ध में प्रबन्धकारिणी पर नियंत्रण रखे तो यह मेरी समझ में आता है कि वह किसी नाजुक स्थिति को सम्हाल सकेगा। परन्तु उसे सारे शासन-प्रबन्ध

से अलग रखने से और उससे कोई ऐसी नाजुक स्थिति सम्हालने को कहने से, जिसे शासन-प्रबन्ध के कर्त्ता-धर्ता भी न सम्हाल सकें, बहुत ही गड़बड़ पैदा हो जायेगी। यह समझ में आता है कि शासन-प्रबन्ध बराबर गवर्नर के हाथ में रहे और किसी नाजुक स्थिति के उपस्थित होने पर वह उसे सम्हाले। परन्तु किसी आदमी को बराबर पानी के बाहर रखने से और तूफान आने पर उससे नाव चलाने को कहने से केवल विपत्ति का ही सामना करना पड़ेगा। मुझे भय है कि यह कभी भी व्यावहारिक रूप नहीं ले सकता।

साधारणतया गवर्नर का कोई काम नहीं होता और अब भी दो सप्ताह के अतिरिक्त उसे केवल सम्वाददाता का काम दिया गया है। इन दो हफ्तों में वह बेचारा वह सारी योग्यता, बुद्धिमत्ता और विद्वता कहां से प्राप्त कर लेगा जो साधारणतया उसे प्राप्त न होगी? प्रजातंत्रात्मक शासन का अर्थ यह है कि निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा लोगों का शासन हो। अब वास्तव में आप किस प्रकार की स्थिति की कल्पना कर रहे हैं? वह यह है कि गवर्नर का अपने मंत्रियों से मतभेद हो जायेगा, वह धारासभा को राजी न कर सकेगा और अपने मत को स्वीकार न करा सकेगा। गवर्नर को हमेशा इसकी स्वतंत्रता है कि वह धारासभा के सम्मुख जाये और उससे कहे कि एक नाजुक स्थिति उत्पन्न हो गई है और यह कि दुर्भाग्य से मंत्रिमण्डल ठीक निर्णय नहीं कर सका है और इसलिये धारासभा को शासन-प्रबन्ध तथा उसके कर्त्ता-धर्ताओं के प्रति अपना दृष्टिकोण बदल देना चाहिए। यदि गवर्नर धारासभा को विश्वास दिलाने में असमर्थ हो और यदि वह मंत्रिमंडल को भी, जिसमें एक दो नहीं बल्कि मेरे विचार से 15 या 20 लोग होंगे, विश्वास न दिला सके तो उसको फिर भी नीचे की सभा के 400 सदस्यों, ऊपर की सभा के 60 सदस्यों और मंत्रिमण्डल में धारासभा के जो 20 सदस्य हों उनके मत की उपेक्षा करने का अधिकार होगा। जब कोई नाजुक स्थिति उठ खड़ी हो और उसके अधीन कोई प्रबन्धकारिणी न हो तो वह बेचारा इतने बड़े भार को कैसे वहन कर सकता है? आपको इस समस्या को हल करना है और मैं यह कहूँगा कि यदि इतने ही से सब कुछ समाप्त हो जाता तो मैं उस संशोधन की सूचना न देता। परन्तु बात यह है कि इससे नौकरियों की निष्ठा को हानि पहुँचती है। इससे एक ऐसा तत्व उत्पन्न हो जाता है जो प्रजातंत्र के मनोवैज्ञानिक आधार को ही उलट देता है और इससे लोग एक ऐसे आदमी से रक्षा की आशा करते हैं जो वास्तव में रक्षा करने में असमर्थ है। इससे नौकरियों के लोगों को यह आदेश मिलता है कि उन्हें संकटमय काल के लिये हमेशा तैयार रहना चाहिये और

[माननीय पं. गोविन्दवल्लभ पंत]

यह कि ऐसे काल में उन्हें मंत्रियों के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति की आज्ञा का पालन करना होगा। इससे बहुत गंभीर संकट उपस्थित हो सकता है। यदि श्री खेर को इसकी सूचना नहीं है तो उनके लाभार्थ मैं यह भी बताना चाहता हूं कि केवल मेरा और श्री कुंजरू का ही यह मत नहीं है। इस प्रश्न पर बहुत विस्तार से विचार हुआ है। प्रांतीय विधान-समिति और केन्द्रीय विधान-समिति की संयुक्त बैठक के सामने भी अपना दृष्टिकोण रखने का मुझे अवसर मिला था और दोनों ने यह स्वीकार कर लिया था कि श्री मुंशी के संशोधन में जिस प्रकार का अधिकार देने का सुझाव है उसे गवर्नर को न देना चाहिये। प्रांतीय विधान-समिति ने भी इस विषय पर विचार किया था और उसने भी अन्तिम रूप से यह मत स्वीकार कर लिया था कि गवर्नर के लिये इतना बड़ा उत्तरदायित्व पूरा करना सम्भव नहीं है। यद्यपि मुझे इसका खेद है कि श्री खेर से मेरा साथ छूट गया है, लेकिन इन समितियों में जिन लोगों के साथ मैं सम्पर्क में आया उनसे क्षतिपूर्ति हो गई है। इसलिये यद्यपि इस क्षति के लिये मुझे खेद है, परन्तु इसकी पूर्ति हो ही सकती है।

श्री खेर ने पूछा है कि यदि तार काट दिये जायें और मंत्रियों की हत्या कर दी जाये तो उस स्थिति में क्या होगा? मैं कहता हूं कि ऐसा संकटमय काल कभी न आयेगा। मैं अपने मंत्रियों की कभी भी हत्या न होने दूंगा। जब तक मैं प्रधान मंत्री हूं, किसी को भी मंत्रियों की हत्या न करने दी जायेगी। यदि मैं अपने को इस कर्तव्य का पालन कने में असमर्थ पाऊं तो मैं पद-त्याग कर दूंगा। यदि प्रधान मंत्री अपनी व अपने मंत्रियों की रक्षा नहीं कर सकता तो उसे पदत्याग कर देना चाहिये और किसी अन्य व्यक्ति के लिये स्थान रिक्त कर देना चाहिये, ताकि कोई दूसरा उससे अधिक शक्तिशाली प्रधान मंत्री उसका स्थान ले ले। उन्होंने पूछा है कि यदि तार कट जायेंगे तो क्या होगा? उन्होंने यह भी पूछा है कि यदि सभी मंत्रियों की हत्या हो जायेगी तो क्या होगा? यदि अकेला गवर्नर ही जिसे सूचना देनी है, जिसे तारों की रक्षा करनी है और जिसे आने-जाने वालों के लिये सड़कों को खुला रखना है, मार डाला जायेगा तो क्या होगा? लोग भूल जाते हैं कि यदि गवर्नर भी मार डाला जाये और प्रधान मंत्री भी मार दिया जाये तो सभा को, धारासभा को तो कुछ नहीं हुआ, वह आगे बढ़ सकती है, हस्तक्षेप कर सकती है और सुख-शांति की सुरक्षा के लिये सभी आवश्यक कार्यवाही कर सकती है। इसलिये जो संशोधन पेश किया गया है, वह यदि मुझे यह कहने दिया जाये तो

मैं कहूंगा कि वह एक अजीब गोरखधंधा है। उससे बड़ी दुर्गंध आती है। मुझे इन शब्दों के कहने की स्वतंत्रता नहीं है। हमें उसे निगलना है।

अब श्रीमान् आप उस कानून की योजना को तो देखें जिससे यह धारा 93 नकल की जा रही है। इस कानून के अधीन गवर्नर को ही नौकरियों पर नियंत्रण रखने का अधिकार है। भारत मंत्री से सम्बन्धित नौकरियां भी गवर्नर के ही नियंत्रण में रखी गई हैं। वे सुरक्षा और तरक्की के लिये उसी का मुंह ताकती हैं। आपको ज्ञात होगा कि सन् 1935 ई. के कानून के अधीन बिना गवर्नर की अनुमति के किसी भारत-मंत्री की नौकरी के आदमी का तबादला एक जगह से दूसरी जगह नहीं हो सकता। इसके फलस्वरूप सारी प्रबन्धकारिणी उसके हाथ में रहती है और वही संकटमय काल उपस्थित होने के लिये उत्तरदायी होता है। नौकरियों पर उसका पूर्ण नियंत्रण होने पर भी वह स्थिति को बिगड़ने देता है। जिस संगीत की मुख्यतः उसीने रचना की है, उसे उसको सुनना चाहिये। परन्तु जब कि सन् 1935 ई. के कानून के अधीन गवर्नर ऐसा रूख नहीं अपना सकता और उसे गवर्नर जनरल की स्वीकृति प्राप्त करनी होती है और गवर्नर जनरल को भी पार्लियामेंट को जवाब देना होता है, इसमें गवर्नर किसी के प्रति भी उत्तरदायी नहीं है। कोई भी सभा उससे इसे स्पष्ट करने के लिये नहीं कह सकती है कि उसने एक नाजुक स्थिति में बहुत बड़ी भूल कैसे की। इस संशोधन का विचार करके मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। किसी बहुत ही नाजुक स्थिति में जबकि मंत्रिमंडल को अच्छी से अच्छी कार्यवाही करने की स्वतंत्रता होनी चाहिये, गवर्नर हस्तक्षेप कर सकता है और मंत्रियों की स्थिति को उचित और ठीक ढंग से सम्हालने से रोक सकता है। किसी बहुत ही नाजुक स्थिति में जब मंत्रिमंडल को पूरी स्वतंत्रता होनी चाहिये, उसके मार्ग में अड़ंगे डाल दिये जायेंगे, जिसका नतीजा यह होगा कि यदि संकट टल सकता था तो वह उपस्थित ही होकर रहेगा। मुझे ऐसा भय है।

मैं समझता हूं कि मैंने बहुत समय ले लिया है। इस पर बहुत कुछ कहा जा सकता है। इस काम का मुझे थोड़ा-बहुत अनुभव है और मैं आपको कई उदाहरण दे सकता हूं। मैं अब भी समझता हूं कि जिस संशोधन की मैंने सूचना दी थी, वह अनुचित नहीं था।

***माननीय श्री बी.जी. खेरः** अपनी ओर से सफाई देने के लिये श्रीमान् मैं दो-एक शब्द कहना चाहता हूँ। मेरा उद्देश्य श्री पंत को रुष्ट करने का नहीं था,

[माननीय श्री बी.जी. खेर]

और मैं नहीं जानता कि मैंने कोई ऐसी बात कही हो जिससे उनको दुख पहुंचा हो। श्री पंत ने उसे अपने ही ऊपर ले लिया है…।

***माननीय पं. गोविन्द वल्लभ पंतः** नहीं, नहीं, बिल्कुल नहीं।

***माननीय श्री बी.जी. खेरः** आखिर वह बहस ही तो थी।

***माननीय श्री हुसैन इमाम** (बिहार : मुस्लिम)**:** अध्यक्ष महोदय, श्री पंत के ओजस्वी भाषण के बाद मेरा काम बहुत कुछ सरल हो गया है। मेरा वही मत है जो पंडित पंत का है और जिसे पंडित कुंजरू ने व्यक्त किया है। मैं अनुभव करता हूं कि यह संशोधन विचार-पूर्वक पेश नहीं किया गया है। यह प्रजातंत्र के सिद्धांतों के विरुद्ध है और यह तर्कपूर्ण भी नहीं है और सम्भवतः किसी अन्य उद्देश्य से पेश किया गया है। मुझे खेद है कि मैं इस शब्द को काम में लाया हूं परन्तु मुझे इसके लिये एक ऐसे आदमी की हास्यपूर्ण बात से इशारा मिला है जो पहले कांग्रेसी थे। वे केन्द्रीय धारा-सभा में मेरे सहयोगी हैं और उन्होंने कहा कि यह शायद इस उद्देश्य से पेश किया गया है कि यदि कभी वामपंथी प्रांतीय मंत्रिमंडल पर अधिकार पा जायें तो वे विश्रृङ्खल हो जायें। मैं कह चुका हूं कि यह केवल मजाक में कहा गया था।

मेरा सारा विरोध दो बातों के आधार पर है। पहले तो मैंने जितने विधान देखे उनमें से किसी में भी जिसमें मंत्रिमंडल धारा-सभा के प्रति उत्तरदायी है। इस प्रकार का कोई भी आदेश नहीं पाया कि यदि गवर्नर यह समझे कि मंत्रिमंडल ने सभा का विश्वास खो दिया है तो गवर्नर शासन की बागडोर अपने हाथ में ले सकता है, मंत्रिमंडल को अलग कर सकता है और अन्य मन्त्रियों को रख सकता है। यदि वह समझे कि सभा ठीक काम नहीं कर रही है तो वह सभा को ही समाप्त कर सकता है, किन्तु यह विचित्र नवीनता ब्रिटिश सरकार ने भारत की विशेष दशाओं में धारा 93 लागू करने के लिये ही उत्पन्न की और वह अब भी जारी है। जैसा कि पंडित पंत बता चुके हैं, वे दशाएं भिन्न थीं; उस समय गवर्नर एक पक्ष का आदमी था। उसके कुछ ऐसे हित थे, जो मंत्रिमंडल के हितों के विरोध में थे और यह आवश्यक था कि उसको कुछ अधिकार प्राप्त हों। साधारण कानून अक्सर अलग रख दिये जाते हैं। विभिन्न तरीकों से विभिन्न सीमाओं तक वे अलग

रख दिये जाते हैं। उदाहरणार्थ, धारा 144 से आपस में मिलने-जुलने की स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है। यदि कोई गम्भीर आर्थिक संकट उपस्थित हो तो मुकदमें की अवधि निर्धारित करने के कानून स्थगित कर दिये जाते हैं। यदि देश की शांति गंभीर संकट में पड़ जाये तो फौजी कानून से कुछ काल के लिये फौजी शासन स्थापित हो जाता है। इसलिये कानूनों को स्थगित करने की अवधि अलग-अलग सूरतों में अलग-अलग हुआ करती है। इसके अतिरिक्त मेरी समझ में नहीं आता कि यह सर्वाधिकार सम्पन्न व्यक्ति, जिसे गवर्नर कहा गया है, प्रांत की सारी परिस्थिति को 14 ही दिन के थोड़े से समय में कैसे बदल देगा, जब कि मंत्रीगण वर्षों से काम करते रहने पर भी उसे सम्हालने में असमर्थ हों? वह कौन-सा ऐसा विशेष साधन या अधिकार प्रयोग में लायेगा जो मंत्रिमंडल को प्राप्त न होगा? मंत्रिमंडल के होते हुए भी वह एक आर्डिनेंस जारी कर सकता है। मंत्रियों की उपस्थिति में भी उनकी स्वीकृति से वह फौजी कानून को अमल में ला सकता है। लेकिन ऐसी कोई कार्यवाही न करके और सारा अधिकार अपने हाथ में लेकर वह संसार में केवल यह प्रकाशित करेगा कि अब मैंने शांतिकाल के उन दुष्टों को अलग कर दिया है जो अभी तक केवल रिक्त स्थानों की पूर्ति करते थे और उत्तेजना फैलाते थे। इस धारा का अर्थ निम्नलिखित शब्दों से प्रकट हो जाता है:

''प्रांत के शासन को अपने मंत्रियों की सलाह से चलाना सम्भव न हो।'' इसलिये इसका अर्थ वास्तव में यह है कि मंत्रियों के उभाड़ने से ही प्रांत की सुख-शांति के लिये खतरा उपस्थित हो गया है। उनको अलग करने से ही आप ऐसी अणु शक्ति उत्पन्न कर देने की आशा करते हैं जिससे शांति स्थापित हो जायेगी। किन्तु 14 दिन बाद क्या होगा? क्या वही लोग जो शांति को संकट में डालने के लिये उत्तरदायी समझे गये थे, वापस बुला लिये जायेंगे? ऐसी दशा में उनकी क्या प्रतिष्ठा रह जायेगी? वे किस मुंह से अपने अधीनस्थ कर्मचारियों से अपनी आज्ञाओं का पालन करने के लिये कहेंगे जब कि वह कर्मचारी यह जानेंगे कि उनकी आज्ञाओं का उसी समय तक पालन करना है जब तक कि गवर्नर अपना विशेषाधिकार प्रयोग में न लाये? इस आशय का कोई भी आदेश नहीं है कि मंत्रियों को अलग करने का यह अधिकार बार-बार प्रयोग में न लाया जायेगा। एक बार वह उन्हें अलग कर देता है। दो सप्ताह बाद वह फिर विधान को प्रयोग में ले आता है परन्तु दूसरे ही दिन वह उसे फिर स्थगित कर देता है। इस घृणित चक्र का कोई अन्त ही नहीं है और न उस

पर कोई नियत्रंण ही है। वास्तव में जिस प्रांत में यह अधिकार प्रयोग में लाया जायेगा, वहां विधान की ऐसी दुर्गति हो जायेगी कि मेरे विचार से मंत्रियों की रक्षा करना आवश्यक हो जायेगा। आप जानते हैं कि मैं प्रबन्धकारिणी के अधिकार का समर्थक नहीं हूं। यदि संघ के अध्यक्ष स्वीकृति देंगे तो सम्भव है कि अन्त में स्वेच्छाचारी शासन स्थापित हो जाये। यदि संघ का अध्यक्ष यह समझता है कि किसी प्रांत में ऐसा मंत्रिमंडल स्थापित हो गया है जो संघ की प्रबन्धकारिणी को मान्य नहीं है तो वह मंत्रिमंडल काम नहीं करेगा और न वह काम कर ही सकता है। मैंने इस सम्बन्ध में संघ-विधान को भी इसलिये देखा कि अध्यक्ष को भी ऐसा अधिकार दिया गया है कि नहीं। मुझे खेद है कि संघ-विधान में इस प्रकार का कोई आदेश नहीं है। सम्भवतः जब वह पेश किया जायेगा तो इस आशय का एक संशोधन भी पेश कर दिया जायेगा जिससे अध्यक्ष को धारा 93 के उस शासन को चलाने का तानाशाही अधिकार मिल जायेगा जिसको भारतवर्ष में सभी वर्गों के लोग घृणा की दृष्टि से देखते रहे हैं। मेरे पास गवर्नर के लिये या मन्त्रियों के लिये अधिकारों का कोई चिट्ठा नहीं है। इस थोड़े से काल में जब कि विधान प्रयोग में रहा है, कई अवसरों पर मेरा मन्त्रियों से मतभेद रहा है। धारा 93 के आधीन जिस तरीके से शासन चलाया गया इससे भी मैं सहमत नहीं था। परन्तु मैं यह अनुभव करता हूं कि मन्त्रिमण्डल की प्रथा, चाहे उसमें कितने ही दोष क्यों न हों, एक प्रजातन्त्रात्मक प्रथा है और धारा 93 से स्वेच्छाचारी शासन को ही सहायता मिलती है और उसके फलस्वरूप किसी दिन ऐसी शासन-प्रणाली स्थापित हो सकती है जिसे बनाये रखना लोग पसन्द न करें। श्रीमान्, इस कारण मैं श्री मुंशी के प्रस्ताव का विरोध करता हूँ।

***प्रो. एन.जी. रंगा** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझसे पहले बोलने वाले दो वक्ताओं ने जो विचार धारा-सभा के सामने रखे हैं, उसका मैं घोर विरोध करता हूं। मेरे लिए यह समझना बहुत ही कठिन है कि मेरे ही एक नेता ने जिन्हें मंत्रिमंडलों को चलाने का अनुभव है, बर्मा की हाल की घटनाओं की कैसे उपेक्षा की है? हम इसका स्मरण तो करें कि वहां क्या हुआ! यदि हम यह मानें कि ऐसी ही दुर्घटना भारत में हो जाये और प्रधान मंत्री के साथ आधे दर्जन मंत्री समाप्त कर दिये जायें तो उस प्रांत में संघ के अध्यक्ष को फौरन ही सूचना देने और सहायता प्राप्त करने के लिए कौन रह जायेगा? संघ के मंत्रियों में से किसी मंत्री या संघ

के अध्यक्ष के लिये यह सम्भव न होगा कि वह खास तौर से एक हवाई जहाज लेकर मद्रास तक जाये या लखनऊ तक भी जाये और वहां जाकर संघीय या प्रांतीय सेना की मदद से असहाय लोगों की सहायता करे। यह बड़ी विचित्र बात है कि अनुभवी लोग यहां आकर ऐसे विचार प्रकट करें, जो हमारे यहां की वास्तविक घटनाओं के विरोध में हो।

श्रीमान्, जरा इस पर भी विचार कीजिये कि यह सम्भव है कि कांग्रेस-दल, जिसका विभिन्न प्रांतीय धारा-सभाओं में बहुमत है, जैसा वह आजकल है वैसा न रहे और धारा-सभाओं में कई प्रतिद्वन्द्वी दल बन जायें और कुछ दलों और समूहों को मिलाकर केवल संयुक्त-मंत्रिमंडल स्थापित करना सम्भव हो तथा प्रधान-मंत्री एक नाम-मात्र का अधिकारी रह जाये, तो ऐसी अवस्था में क्या हम यह समझें कि पंडित पंत जैसा प्रतिष्ठित व्यक्ति एकाएक उपस्थित होकर प्रधान-मंत्री का सारा कार्य अपने हाथ में लेगा और गवर्नर के पास जाकर यह कहेगा: ''आप हस्तक्षेप न कीजिये। मैं अपनी रक्षा स्वयं करने में समर्थ हूँ।'' ऐसी दशा में श्रीमान्, एक संयुक्त मंत्रिमंडल का अध्यक्ष होते हुए पंडित पंत के समान प्रतिष्ठित आदमी भी अपनी रक्षा स्वयं करने में समर्थ न होगा। ऐसे अवसर आयेंगे जब स्वयं प्रधान-मंत्री या कुछ मंत्री अवश्य ही गवर्नर के पास जायेंगे और उससे प्रार्थना करेंगे कि वह अपने विशेष अधिकार को प्रयोग में लाये ताकि देश के बदमाशों, गुंडों और संगठित डाकुओं से उनकी रक्षा हो सके। भले ही उनको अपने मंत्रिमंडल से सहायता क्यों न मिल सकती हो।

इस प्रकार का कोई सुरक्षित अधिकार गवर्नर को देना आवश्यक है। लेकिन यह गवर्नर कौन है? एक दूसरे मित्र आकर हमसे कहते हैं, ''उसे एक स्वेच्छाचारी शासक न बनाइये।'' स्वेच्छाचारी शासन से उनका क्या मतलब है? क्या उनका मतलब यह है कि जो गवर्नर प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुना जाये वह एक स्वेच्छाचारी शासक समझा जाये? जी हां, वह भी एक स्वेच्छाचारी शासक हो सकता है। बहुत से लोग जो प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुने गये, स्वेच्छाचारी शासक हो गये। यह बिलकुल सच है। इसी कारण हमने धारा-सभा को यह अधिकार दिया है कि यदि गवर्नर अपनी अधिकार-सीमा के बाहर जाये तो वह न्यायाधीशों के सन्मुख उस पर दोषारोपण करे। यदि वह दुर्व्यवहार करे तो धारा-सभा को ही उसके विरुद्ध कार्यवाही करने के लिये सुरक्षित अधिकार दिया गया है। फिर क्या कारण है कि हमें यह भय हो कि वह एक स्वेच्छाचारी शासक हो जायेगा या अपने मंत्रियों से ऐसा बर्ताव करेगा जैसा वह अपने चपरासियों के साथ करता हो?

[प्रो. एन.जी. रंगा]

इसके अतिरिक्त पंडित पंत ने एक दूसरी बात कही है। उन्होंने पूछा है, ''इस गवर्नर को किसी प्रकार का अनुभव कैसे होगा? उसके मंत्री दिन प्रतिदिन का शासन-प्रबन्ध करेंगे और दायित्व के अवसरों पर निर्णय करने के आदी हो जायेंगे परन्तु यह व्यक्ति एक पुतले की तरह बैठा रहेगा और उसे कुछ भी ज्ञान न होगा। जब कोई गंभीर संकट उपस्थित हो तो हमसे उसकी सहायता लेने को कहा गया है। उसके लिये ठीक निर्णय करना कैसे सम्भव होगा?'' क्या मैं उन्हें स्मरण करा सकता हूं कि प्रांत के शक्तिशाली प्रधान-मंत्री होने के नाते यह उनका कर्तव्य है, और यह उनके मंत्रियों का कर्त्तव्य है कि वे गवर्नर को दिन प्रतिदिन के शासन-प्रबन्ध के सम्पर्क में रखें। यह गवर्नर का कर्तव्य होगा कि वह अनुभव प्राप्त करे और यदि वह अपने मंत्रियों और पंडित गोविन्दवल्लभ पंत जैसे प्रधान मंत्री की सलाह से अनुभव प्राप्त नहीं करता है, तो वह निरा मूर्ख ही होगा। इसलिये श्रीमान्, गवर्नर एक अनुभवी व्यक्ति होगा। यदि उसे प्रौढ़ मताधिकारियों को प्रभावित करके अपने को पहली बार निर्वाचित कराना है तो उसे एक अनुभवी व्यक्ति होना है, लोगों का विश्वासभाजन होना है और अपने उत्तरदायित्व को समझना है। इसके अतिरिक्त चुनाव के बाद प्रधान-मंत्री ही नहीं बल्कि उसके मंत्री भी उसे बराबर सलाह देते रहेंगे। उसे मंत्रिमंडलों की बैठकों में उपस्थित होने का अधिकार है और उसे सभी मंत्रियों द्वारा सामूहिक रूप से सलाह देते रहना है। इस अनुभव के बल पर वह ठीक समय में यह निर्णय कर सकेगा कि वास्तव में संकट उपस्थित है। यदि वास्तव में संकट उपस्थित हो तो उसे दूर करने के लिये उसको आकस्मिक परिस्थिति के आवश्यक अधिकार भी प्राप्त होने चाहियें।

हमसे एक दूसरा प्रश्न भी पूछा गया है। ''इस गवर्नर के क्या अधिकार हैं? अपने अधीन किसको वह आज्ञा देगा?'' अभी मेरे मित्र मि. हुसैन इमाम ने हमसे कहा कि यदि आप उसे ये सब अधिकार दें तो सिविल सर्विसों के लोग आज्ञा प्राप्त करने के लिये मंत्रियों की ओर नहीं, बल्कि उसी की ओर देखेंगे। वास्तव में यही होगा। सिविल सर्विसों के लोग मंत्रिमंडल और गवर्नर दोनों की आज्ञा का पालन करना सीखेंगे। गवर्नर हमेशा सारे मंत्रिमंडल का प्रतिनिधित्व करता है। इस प्रकार सिविल सर्विसों के लोग और सुरक्षित सेना तथा पुलिस सेना के लोग भी गवर्नर की भी आज्ञा का पालन करना सीखेंगे। कुछ काल के लिये मंत्री शक्तिहीन या अनुत्तरदायी हो सकते हैं। हमारे मित्र हमसे पूछते हैं कि

ऐसी अवस्था में इन मंत्रियों का क्या होगा? यदि किसी संकटकाल में वे स्थिति को सम्हालने में असमर्थ हों और इसलिये गवर्नर को विशेष परिस्थिति के अधिकार प्रयोग में लाने दें तो इन अधिकारों की अवधि समाप्त होने पर यदि वे अपनी ही धारासभा के सदस्यों द्वारा बिल्कुल निकम्मे ठहराये जायें तो उन्हें दूसरे मंत्रियों के लिये स्थान रिक्त करने होंगे। लेकिन यदि धारा-सभा का उन पर विश्वास हो और वे शासन-प्रबन्ध चला सकें तो उनको चलाने दिया जाये। इसके विपरीत यदि धारा-सभा और मंत्री इस नतीजे पर पहुंचें कि गवर्नर ने अपने अधिकारों का दुरुपयोग किया है और एक संकट उपस्थित कर दिया है तो यह उनके अधिकार में होगा कि वे न्यायाधीशों के सम्मुख उस पर दोषारोपण करने का प्रस्ताव करें। जब आपने ऐसी सुरक्षा की व्यवस्था कर दी है तो मेरी समझ में नहीं आता कि मेरे नेता पंडित गोविन्दवल्लभ पंत यहां आकर किस प्रकार इस सुन्दर संशोधन के विरुद्ध असंगत तर्क उपस्थित करते हैं।

श्रीमान्, मैं एक ही बात और कहकर समाप्त कर दूंगा। हमें स्मरण रखना चाहिये कि यह गवर्नर प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुना जायेगा। हमें यह भी स्मरण रखना चाहिये कि उसे बराबर पांच वर्ष तक उस पद पर रहना है जब कि उसका मंत्रिमंडल तीन चार या छः महीने में ही समाप्त हो जाये। हमें मद्रास का हाल का अनुभव न भूलना चाहिये। इस बराबर रहने वाले व्यक्ति को हमें जितने अधिकार हो सकें, दे देना चाहिये ताकि जनसाधारण अपनी नागरिक स्वतंत्रता की रक्षा के लिये शासन में कुछ स्थिरता, कुछ तारतम्य और कुछ सुरक्षा देख सके।

अन्त में श्रीमान्, मैं यह कहना चाहता हूं कि इस देश के एक वामपंथी की हैसियत से मैं यहां बोल रहा हूं। अपने राजनैतिक जीवन के आरम्भ से ही मैं एक वामपंथी रहा हूं। मुझे निस्संदेह पंडित गोविन्दवल्लभ पंत के समान मंत्रिपद का अनुभव नहीं है और सम्भव है कि इसी कारण मैं आज सभी वामपंथियों के नाम पर बोल रहा हूँ। सभी वामपंथी यह समझेंगे कि हाल में बर्मा में जिस प्रकार का बलवा और संगठित गुँडापन हुआ और जिसे हम अपने देश में नहीं होने देना चाहते हैं, इसे रोकने के लिये यह एक सुरक्षा होगी।

*__श्री शंकर दत्तात्रेय देव__ (बम्बई : जनरल): श्रीमान्, मैं बहस बन्द करने का प्रस्ताव करता हूं।

***अध्यक्षः** बहस बन्द करने का प्रस्ताव पेश हो चुका है। क्या सभा इसके पक्ष में है?

***माननीय सदस्यः** जी, हां।

***अध्यक्षः** प्रस्तावक अब जवाब देंगे।

***श्री एम.एस अणेः** श्री मुंशी अपने संशोधन पर नहीं बोले हैं।

***श्री के.एम. मुंशी** (बम्बईः जनरल): क्या मैं बोल सकता हूँ।

***माननीय श्री जयपाल सिंह** (बिहारः जनरल): श्रीमान्, मुझे एक व्यवस्था-सम्बन्धी प्रश्न पूछना है। पिछले दिन अपना संशोधन पेश करते समय श्री मुंशी ने हमसे कहा था कि वे आज अपने विचार प्रकट करेंगे और श्री गुप्ते ने भी ऐसा ही कहा था। मेरे विचार से उन्हें बोलने का अवसर मिलना चाहिये।

***एक माननीय सदस्यः** यदि वे नहीं बोले हैं, तो इसमें हमारा कोई दोष नहीं है।

***सेठ गोविन्ददासः** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल): श्रीमान्, मुझे एक व्यवस्था सम्बन्धी बात करनी है। सभा ने बहस बन्द करने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है और अब केवल प्रस्तावक महोदय बोल सकते हैं।

***श्री के.एम. मुंशीः** मैं बोलने के लिये बहुत इच्छुक नहीं हूँ।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से सेठ गोविन्ददास ने ठीक ही व्यवस्था-सम्बन्धी बात कही है। प्रस्तावक अब बोलेंगे।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मैंने जो प्रस्ताव पेश किया है उसमें वास्तव में दो संशोधन पेश किये गये हैं। एक पंडित हृदयनाथ कुंजरू का संशोधन है, और दूसरा श्री गुप्ते का है जिन्होंने श्री मुंशी का संशोधन स्वीकार कर लिया है। इन दोनों का उद्देश्य एक ही है। शुरू में मैं कह चुका हूं कि यह एक विवादग्रस्त विषय है। दो दृष्टिकोण हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इस प्रकार मंत्रिमंडल के अधिकारों में हस्तक्षेप करने से असंतोष ही होगा, उससे अवश्य कठिनाइयां उत्पन्न होंगी और किसी प्रजातंत्रात्मक विधान में ऐसी बात शोभा नहीं पाती। इसलिये मैं इस आपत्ति को, जिसे हमारे प्रतिष्ठित प्रधान मंत्री पंडित गोविन्दवल्लभ पंत ने बड़े जोरदार शब्दों में कहा है, अच्छी प्रकार समझता हूं।

इसके विपरीत अन्य प्रधान मंत्रियों और ऐसे लोगों ने अपना मत प्रकट किया है, जिनको विधान को कार्यरूप में लाने का अनुभव है। उनका भी उतना ही निश्चित मत है कि यदि देश की वर्तमान परिस्थिति में इस प्रकार के आकस्मिक परिस्थिति के अधिकार की व्यवस्था न की जाये तो यह एक खतरनाक बात होगी। या जैसा कि श्री गुप्ते ने अपने संशोधन में कल्पना की है यानी जब शासन व व्यवस्था बिल्कुल छिन्न-भिन्न हो जाये और जब दुर्भाग्य से कोई ऐसी घटना घटित हो जाये, जैसी कि हाल में बर्मा में हुई थी या इसी प्रकार की कोई विपत्ति का सामना करना पड़े या ऐसी घटनाएं हों जैसी कि आजकल हमारे ही देश के कुछ प्रांतों में हो रही हैं, तो प्रांत के शासकों के लिये इतना ही काफी नहीं है कि वे केन्द्र को सूचित कर दें बल्कि कुछ अधिक प्रभाव-पूर्ण व्यवस्था होनी चाहिये। हमारे पास कोई अन्य साधन भी होने चाहियें ताकि शासन व व्यवस्था का कार्य एक क्षण की भी प्रतीक्षा किये बिना चल सके, वरना नतीजा खतरनाक होने की सम्भावना है।

ये दो दृष्टिकोण हैं और जैसा कि पंडित पंत ने कहा है उनके पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है, परन्तु उनके विरोध में भी बहुत कुछ कहा जा सकता है। साधारण मनुष्यों को बहुमत को और ऐसे लोगों के मत को स्वीकार करना पड़ता है, जिनको अनुभव हो। यहां जो मतप्रदर्शन हुआ है उससे यही प्रकट होता है कि संशोधन में जैसी व्यवस्था प्रस्तावित की गई है, उस प्रकार का कोई आदेश हमें रखना ही चाहिये।

मैं सभा का अधिक समय नहीं लेना चाहता क्योंकि बहुत वाद-विवाद हो चुका है और इस प्रश्न के सभी अंगों पर पूर्ण रूप से विचार हो चुका है। जिन्होंने इसके पक्ष में तर्क दिया है, और जिन्होंने इसके विरोध में तर्क दिया है उन सबके मस्तिष्क में केवल यही विचार था कि देश के हितार्थ विधान में कैसी व्यवस्था हो। उनके दिमाग में केवल यही विचार था। हम सबको अनुभव से शिक्षा ग्रहण करनी है। हमने कभी भी यह नहीं कहा कि हम इस विधान को अधिक सुन्दर नहीं बना सकते, या इसमें परिवर्तन नहीं कर सकते। यदि हम कुछ कठिनाइयां अनुभव करें तो हम ऐसा कर सकते हैं। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं कि महत्व तो इसका है कि हम किस भावना से इस विधान को कार्यरूप में लाते हैं। इसकी कल्पना करने के लिये कोई भी कारण नहीं है कि हमारे अध्यक्ष या गवर्नरों का जो सार्वभौम प्रौढ़

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

मतगणना के आधार पर चुने जायेंगे, मंत्रियों से झगड़ा होता रहेगा। यदि दुर्भाग्य से कभी ऐसा हुआ भी तो हमें इस विषय को फिर उठाने का अधिकार है। हमें इसकी स्वतंत्रता है। अपने विधान को सुधारने के लिये हमें ब्रिटिश पार्लियामेंट या किसी बाहर के अधिकारी के पास जाने की आवश्यकता नहीं है। इसलिये मैं श्री गुप्ते का संशोधन, जैसा कि वह श्री मुंशी के संशोधन द्वारा संशोधित हुआ है, स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्ष:** मैं पहले पंडित कुंजरू के संशोधन को सभा के सामने रखूंगा। वह यह है कि खण्ड 15 की जगह निम्नलिखित रखा जाये:

''जब कभी गवर्नर को यह विश्वास हो जाये कि प्रांत की सुख-शांति गंभीर संकट में पड़ने का भय है तो वह अपने विवेक से राज्य-संघ के अध्यक्ष को रिपोर्ट दे सकता है।''

संशोधन गिर गया।

अब मैं श्री मुंशी के संशोधन को आपके सामने रखूंगा जो कि श्री गुप्ते का भी संशोधन है, क्योंकि श्री गुप्ते ने श्री मुंशी का संशोधन स्वीकार कर लिया है।

वह यह है कि संशोधन की सूचना की पूरक सूची में श्री बी.एम. गुप्ते के संशोधन नं. 4 ता. 16 जुलाई सन् 1947 ई. की जगह निम्नलिखित रखा जाये:

''(1) जब किसी प्रांत के गवर्नरों को अपने विवेक से यह विश्वास हो जाये कि एक ऐसी गंभीर स्थिति हो गई है कि प्रांत की सुख-शांति संकट में पड़ गई है और यह कि धारा 9 के आदेशों के अनुसार अपने मंत्रियों की सलाह से प्रांत का शासन-प्रबन्ध करना सम्भव नहीं है तो वह घोषणा करके सरकार के सभी या कोई कार्य या किसी प्रांतीय सभा या अधिकारी द्वारा प्रयोग में आने वाले या उसको दिये हुए सभी या कोई अधिकार अपने हाथ में ले सकता है; और ऐसी किसी घोषणा में ऐसे आकस्मिक या अप्रत्यक्ष आदेश हो सकते हैं, जिन्हें वह घोषणा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये आवश्यक या वांछनीय समझे जिनमें किसी प्रांतीय सभा या अधिकारी से सम्बन्धित इस कानून के आदेशों को पूर्णत: या अंशत: स्थगित करने के आदेश भी सम्मिलित हैं:

परन्तु शर्त यह है कि इस उपधारा के किसी आदेश से गवर्नर को किसी हाईकोर्ट द्वारा प्रयोग में आने वाले या उसको दिये हुए कोई अधिकार अपने हाथ में लेने या हाईकोर्टों से सम्बन्धित इस कानून के आदेशों को पूर्णतः या अंशतः स्थगित करने का अधिकार प्राप्त न होगा।

(2) इस घोषणा की सूचना गवर्नर तुरंत ही संघ के अध्यक्ष को देगा, जो अपने आकस्मिक परिस्थिति के अधिकारों को प्रयोग में लाते हुए, जो भी कार्यवाही उचित समझे, करेगा।

(3) यह घोषणा दो सप्ताह समाप्त होने पर प्रयोग में न रहेगी, यदि गवर्नर स्वयं या संघ का अध्यक्ष इसके पहले न उठा ले।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** संशोधित प्रस्ताव अब वास्तविक प्रस्ताव हो जाता है और अब मैं उस पर वोट लेता हूं।

खण्ड 15 संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

संघीय विधान सम्बन्धी रिपोर्ट

***अध्यक्ष:** अब हम संघ-विधान सम्बन्धी रिपोर्ट पर विचार करेंगे। भाग 4 के खण्ड 1 को पंडित जवाहरलाल नेहरू ने पेश किया था। अब हमें उस खण्ड में जो संशोधन पेश किये गये हैं उन पर विचार करना है। मेरे पास कई ऐसे संशोधन हैं जिनकी सूचना दे दी गई थी।

श्री गोकुलभाई भट्ट (पूर्वी राजपूताना राज्य समूह): सभापति जी, यूनियन पावर कमेटी के लिये संशोधन भेजने का जो समय दिया गया था वह गुरुवार तक का था लेकिन अब आपने कार्यक्रम निश्चित कर दिया है तो इस सम्बन्ध में आप यूनियन पावर कमेटी के लिये संशोधन देने की मियाद बढ़ाने की कृपा करेंगे।

अध्यक्ष: मैंने कल कह दिया था कि जो वक्त मैंने दिया था वह अब नहीं रहा।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्तः जनरल)ः श्रीमान्, संघ-विधान के स्मृति-पत्र के भाग 3 में कहा गया है किः

"यहां विधान-परिषद् द्वारा स्वीकार किये हुए मौलिक अधिकारों तथा राज्य की नीति के सिद्धान्तों की गणना कीजिये।"

परन्तु श्रीमान, हममें से कुछ लोगों ने इन मौलिक अधिकारों और राज्य की नीति के सिद्धांतों में संशोधन पेश करने की सूचना दी है। विशेषतया मैंने यह संशोधन पेश किया है कि मौलिक अधिकारों में इस आशय का एक नया खण्ड जोड़ दिया जाये किः "भारतवर्ष में गोवध का कानून द्वारा निषेध होगा।" मैं यह जानना चाहता हूं कि मुझे यह संशोधन पेश करने का अवसर कब मिलेगा?

माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर (मद्रास : जनरल)ः मौलिक अधिकारों से सम्बन्धित खण्ड पर सभा में बहस हुई थी और जहां तक उनको विधान के मसविदा में स्थान देने का सम्बन्ध है, ये खण्ड पहले एक अधिवेशन में स्वीकार हो गये थे। जो सदस्य महोदय अभी बोले हैं उन्होंने पूछा है कि उनको तथा अन्य सदस्यों को जिन्होंने मौलिक अधिकारों के खण्डों में संशोधनों की सूचना दी है, उन्हें पेश करने का अवसर कब मिलेगा ताकि सभा उस पर विचार कर सके। मेरे विचार से ऐसे सभी संशोधनों को पेश करने के लिये उचित अवसर उस समय होगा जब कि सभा के अन्तिम अधिवेशन में मौलिक अधिकारों को सम्मिलित करके विधान के मसविदे पर विचार होगा। मेरे विचार से पंडित जवाहरलाल नेहरू ने स्थिति को बिलकुल स्पष्ट कर दिया है। उन्होंने कहा है कि जब मसविदा सभा में पेश किया जायेगा तो सदस्यों को मसविदा के शब्दों में ही नहीं बल्कि उसके आशय के सम्बन्ध में भी संशोधन पेश करने की स्वतंत्रता होगी।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से इससे स्थिति बिल्कुल स्पष्ट हो गई है। उसे पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भी स्पष्ट कर दिया था। मौलिक अधिकारों से सम्बन्धित विधान के समविदा में अन्तिम अधिवेशन में संशोधन पेश किये जा संकते हैं।

***एक माननीय सदस्यः** हमने मौलिक अधिकारों के सभी खंडों को स्वीकार नहीं किया है।

***अध्यक्षः** जब वे पेश होंगे तो उस समय हम उन पर विचार करेंगे।

कार्यक्रम में दिया हुआ संशोधन नं. 61—श्री विजयवर्गीय।

श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय (ग्वालियर राज्य): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, हालांकि बाद में जो विचार विनिमय अपने अमेंडमेंट देने के बाद हुआ है उसके अनुसार अपने अमेंडमेंट को मैं पेश नहीं करना चाहता। लेकिन कुछ बातें ऐसी हैं जिनकी तरफ आपका ध्यान दिलाना जरूरी समझता हूं। मेरे ख्याल से यह जो सैक्शन ''हैड आफ दी फेडरेशन'' के चुनाव के बारे में है, वह यह है कि वह किस तरह से चुना जाये और इसमें रियासतों के जो युनिट्स हैं, वह सब चुनाव में हिस्सा लें। अब चूंकि रियासतों के अन्दर धारा-सभायें बहुत ही नकली और बहुत ही रद्दी किस्म की हैं, वे इस चुनाव में असर डालेंगी। इसलिये मेरा ख्याल था कि मैं यह अमेंडमेंट पेश करूं। मैंने इसी ख्याल से अपना अमेंडमेंट पेश किया था कि चुनाव में सबको मौका दिया जाये और डाइरेक्ट एडल्ट फ्रैंचाइज के ढंग पर चुनाव हो लेकिन बाद के विचार विनिमय के अनुसार मैं इसको प्रेस नहीं करता और सिर्फ यह कहना चाहता हूं कि एक तरफ तो प्रान्तों के एलेक्टर वोट देंगे और दूसरी तरफ रियासतों की जो हालत है और जैसी रद्दी धारा-सभाएं हैं, उनसे आये हुए रियासतों के एलेक्टर प्रेसीडेंट को चुनेंगे। वह एक बड़ी अजीब बात होगी। रियासतों में कई तरह की नकली धारा-सभाएं हैं। उनमें नोमीनेटेड लोग हैं, जागीरदार हैं और स्पेशल इन्ट्रैस्ट्स के लोग हैं। जब तक हमारी रियासतों में डिमोक्रेसी नहीं होती तब तक फेडरेशन के लिये बड़ा खतरा है जो रियासतों से चुन कर आयेंगे, वह प्रेसीडेंट के इलेक्शन में हिस्सा लेंगे। कई खतरे हो सकते हैं। इसलिये मैं मुनासिब समझता हूं कि इस बात की तरफ उचित ध्यान रखा जाये कि रियासतों से जो एलेक्टर हों वह ठीक तरह से चुने जायें और जो जागीरदार, नोमीनेटेड या दूसरे स्पेशल इन्टरेस्ट के एलीमेंट हों, वह उसमें वोट न दे सकें। ऐसे जरूरी सेफगार्ड मुनासिब ढंग से रखे जायें।

फेडरेशन हमारे देश में हो रहा है लेकिन हमको मालूम नहीं है कि सारी रियासतें उसमें शामिल हो रही हैं या नहीं। जो शामिल होती हैं उनका रूख कैसा रहेगा, वह किस तरह से असर डालेंगी, यह भी नहीं मालूम है। मैं रियासतों की जनता की तरफ से आया हूं और मैं समझता हूं कि जो खतरा है उसके लिये सैफगार्ड किया जाना जरूरी है। यह बिलकुल सच्चा खतरा है। जब फेडरेशन के प्रेसीडेंट का इलैक्शन होगा तो जो रियासतों के एलैक्टेड मेम्बर होंगे, वह बड़ा असर डालेंगे। यहां हमारे कई एक रियासती मिनिस्टर साहिबान बहुत से अमेंडमेंट ला रहे हैं। जो मौजूदा मसविदा है, जो मौजूदा ड्राफ्ट है इसमें और भी

[श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय]

अधिक राजाओं के हक में अमेंडमेंट करना चाहते हैं। यह प्रजा के हक में ठीक नहीं है। मैं तो चाहता हूँ कि अगर प्रेसीडेंट का इलैक्शन डाइरेक्ट होता तो हर रियासत के लोगों को हर छोटे से छोटे आदमी को सैटीसफैक्शन होता कि वह प्रेसीडेंट के इलैक्शन में वोट देने का हकदार है। खैर, यह नहीं रहा है। कई कारणों से मैं प्रेस करना नहीं चाहता। लेकिन मैं यह बतलाना चाहता हूं कि रियासतों की जो हालत है उसको देखते हुए अमेंडमेंट जो मिनिस्टर साहब ला रहे हैं, उनके बाबत काफी होशियारी रखी जानी चाहिये। मैं अपना अमेंडमेंट वापस लेना चाहता हूं।

(श्री ए.के. घोष और श्री एस. निजलिंगप्पा ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): मुझे बताया गया है कि 'प्रेसीडेंट' शब्द का हिन्दी पर्यायवाची उस समय निश्चित किया जायेगा जब हिन्दी भाषा में विधान का मसविदा सभा में पेश किया जायेगा और उस पर बहस होगी। इसलिये इस अवसर पर मैं इस संशोधन (नं. 64) को पेश नहीं करना चाहता।

(श्री बालकृष्ण शर्मा ने अपना संशोधन नं. 65 पेश नहीं किया।)

श्री गोकुलभाई भट्ट: सभापति जी, मैं जो संशोधन रखना चाहता था वह राष्ट्रपति के नाम के बारे में था। 'राष्ट्रपति' या 'नेता' या 'कर्णधार' यह शब्द रखना चाहिये। लेकिन मुझे यह जानकारी मिली है कि इन नामों के बारे में सही नाम क्या होना चाहिये इसके मुतल्लिक एक कमेटी बैठेगी। उसके बाद इसका फैसला होगा। इस आशा से मैं यह संशोधन वापस लेना चाहता हूं।

(सर्वश्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर, मोहनलाल सक्सेना, बी.एम. गुप्ते और यदुवंशसहाय ने अपने संशोधन नं. 67, 68, 69 और 70 पेश नहीं किये।)

***श्री के. सन्तानम्:** पंडित नेहरू ने यह राय दी थी कि हम भाग 4 से शुरू कर सकते हैं।

***अध्यक्ष:** जी हां, हमने भाग 4 उठा लिया है और हम खण्ड 1 पर विचार कर रहे हैं।

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रास: जनरल): हम अल्पसंख्यकों की रिपोर्ट की प्रतीक्षा कर रहे हैं और इसलिये मैं इस समय इस संशोधन नं 71 को पेश नहीं करना चाहता।

***श्री टी. चनय्या** (मैसूर राज्य): अध्यक्ष महोदय, मैं निम्नलिखित संशोधन पेश करता हूं:

खण्ड 1 के उपखण्ड (1) में 'चुना जायेगा' शब्दों के बाद ''पारी-पारी से उत्तरी भारत से या दक्षिणी भारत से'' शब्द जोड़ दिये जायें। श्रीमान् संघ के अध्यक्ष की जगह के लिये इस निर्वाचित प्रणाली का सुझाव मैंने इन कारणों से दिया है। संघ के अध्यक्ष का चुनाव पारी-पारी से उत्तरी भारत और दक्षिणी भारत द्वारा होने से लोगों का उचित प्रतिनिधितव होगा, और उनको सन्तोष हो जायेगा क्योंकि भौगोलिक दृष्टि से वे स्पष्टत: दो भागों में अर्थात् उत्तरी भारत और दक्षिणी भारत में विभाजित हैं। भारत के इन भागों के लोगों की अपनी-अपनी संस्कृति, भाषाएं और विचारधाराएं हैं, जो अपने-अपने देशों की दशाओं के अनुरूप ही हैं। सबसे विशेष बात श्रीमान् यह है कि लोगों में मनुष्य मात्र के भ्रातृभाव का अभाव है और कई कारणों से प्रत्येक स्त्री-पुरुष को अपनी ही जाति का प्रेम है और वे दूसरों के हितों और अधिकारों को ध्यान में नहीं रखते। ऐसे लोग इसीके लिये संघर्ष करते रहेंगे कि उनका आदमी संघ का अध्यक्ष चुना जाये और उनको भ्रातृभाव का बिल्कुल भी ध्यान न रहेगा।

इसके अतिरिक्त श्रीमान् अधिकतर लोगों में हमारा आदमी, हमारा घर, हमारा राज्य या हमारे प्रान्त का ही भाव प्रबल रहता है और वे पूछते हैं कि राष्ट्रपति उत्तरी भारत का निवासी है या दक्षिणी भारत का निवासी, इत्यादि। इसलिये श्रीमान् हम देखते हैं कि विभिन्न परिस्थितियों में लोगों की विचारधारा क्या होती है और उदारता का रूप केवल स्वहित साधन हो जाता है।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान् मुझे एक व्यवस्था सम्बन्धी आपत्ति करनी है। क्या कोई माननीय सदस्य लिखित भाषण को पढ़ सकता है?

***श्री टी. चनय्या:** श्रीमान्, हमें उस स्थिति का भी विचार करना चाहिये जब भारत में कोई बहुसंख्यक दल होगा और उसका ही बोलबाला होगा। इस प्रकार का संगठन अपने ही आदमी को राष्ट्रपति की जगह के लिये खड़ा करने का प्रयत्न करता है और दूसरे छोटे संगठनों को इसका अवसर नहीं देता है।

[श्री टी. चनय्या]

यदि कोई छोटा संगठन अपनी भी तकदीर आजमाना चाहेगा तो बड़े संगठन के मस्तिष्क में यह भाव उत्पन्न होगा कि इस कठिनाई को शीघ्रातिशीघ्र दूर कर देना चाहिये।

इसके अतिरिक्त श्रीमान्, भारतवर्ष में असंख्य वर्णो का प्रश्न है। एक जाति दूसरी जाति पर अपना अधिकार जमा लेने के लिये संघर्ष करती है और प्रत्येक अवस्था में प्रत्येक जाति हर एक सरकार के शासन-प्रबन्ध में शक्ति व प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिये प्रयत्नशील रहती है; यह स्वाभाविक ही है।

इन सब बातों के अलावा यदि दलित जातियों और मुसलमानों जैसे अल्पसंख्यकों के अधिकारों की उपेक्षा की गई या देश के शासन-प्रबन्ध में उनकी जनसंख्या की ओर यथेष्ट ध्यान न दिया गया या इस पर बिल्कुल विचार न किया गया कि राष्ट्रपति के पद के लिये उनका भी अधिकार है, तो उनमें बहुत असंतोष फैल जायेगा।

जिस प्रकार भारत के लोगों में जाति-प्रेम है उसी प्रकार हम देखते हैं कि उत्तर भारत में उत्तरी-भारत का कर्मचारी दक्षिणी-भारत के कर्मचारी को नीची निगाह से देखता है और यही दशा दक्षिण भारत में भी है। इसलिये श्रीमान् हम देखते है कि देश के शासन-प्रबन्ध में किसी प्रकार का अधिकार प्राप्त करने के लिये हममें से प्रत्येक व्यक्ति संघर्ष कर रहा है। जब कई लोग शक्ति प्राप्त कर लेते हैं तो वे अन्य लोगों के हितों की उपेक्षा करते हैं और शक्ति प्राप्त करने की दौड़ में साधारण लोग उन प्रजातंत्रात्मक सिद्धांतों से भी हाथ धो बैठते हैं, जिनको प्राप्त करने और जिनका उपभोग करने के लिये वे प्रयत्नशील रहे हैं।

इसलिये भारतीयों के बीच सद्भाव उत्पन्न करने और राज्यसंघ के अध्यक्ष का चुनाव न्यायोचित रूप से करने के लिये यह परम आवश्यक है कि संघ के अध्यक्ष का चुनाव पारी-पारी से उत्तरी-भारत या दक्षिणी-भारत से हो।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): श्रीमान् मैं यह पेश करता हूं कि खण्ड 1 के उपखण्ड (1) में ''जैसे नीचे व्यवस्था की गई है'' शब्दों की जगह ''नीचे दिये हुये तरीके से'' शब्द रख दिये जायें। मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि यह संशोधन केवल मसविदा ठीक करने के लिये पेश किया

गया है। वही बात दूसरे शब्दों में कह दी गई है। इन थोड़े से शब्दों के साथ मैं अपना संशोधन पेश करता हूं।

(संशोधन नं. 74 से 84 तक पेश नहीं किये गये।)

***रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय** (बिहार: जनरल): आपकी अनुमति से मैं यह संशोधन पेश करना चाहता हूं कि खण्ड 1 के उपखण्ड (2) के पैराग्राफ (ख) में से ''या जहां व्यवस्थापिका की दो सभायें हों तो नीचे की सभा के सदस्य'' शब्द निकाल दिये जायें।

श्रीमान्, खण्ड 1 राष्ट्रपति के निर्वाचन की प्रणाली निर्धारित करता है। उसमें कहा गया है कि उनका चुनाव एक निर्वाचक-मण्डल करेगा जिसमें (क) संघीय पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के सदस्य और (ख) सभी प्रदेशों की व्यवस्थापिकाओं के सदस्य और जहां व्यवस्थापिका की दो सभाएं हों तो नीचे की सभा के सदस्य होंगे। श्रीमान्, इससे यह प्रकट होता है कि ऊपर की सभा के सदस्यों को राष्ट्रपति के चुनाव में भाग लेने से वंचित किया जा रहा है। इस सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता हूं कि चूंकि इस सभा ने यह निर्णय कर लिया है कि प्रान्तों को दूसरी सभा स्थापित करने की स्वतंत्रता है, इसलिये यह अच्छा नहीं मालूम देता कि हम ऐसी ऊपर की सभाओं के सदस्यों को, जो निर्वाचित सदस्य होंगे, राष्ट्रपति के चुनाव में भाग न लेने दें। वास्तव में यदि ऊपर की सभाओं के सदस्य इसके भी योग्य न समझें जायें कि वे राष्ट्रपति के चुनाव में भाग ले सकते हैं तो ऊपर की सभाओं को रखने की ही क्या जरूरत है? आपका, इस सभा का यह मत है कि ऊपर की सभाओं को प्रान्तीय विधान में स्थान दिया जायेगा और यह कि उनकी स्थापना प्रान्तों की इच्छा पर निर्भर है। ऐसी दशा में मेरे विचार से यह उचित ही होगा कि ऊपर की सभा या दूसरी सभा के सदस्यों को राष्ट्रपति के चुनाव में भाग लेने का अधिकार दिया जाये। संघ-विधान में यह स्वीकार कर लिया गया है कि ऐसी सभाओं की आवश्यकता है, क्योंकि आपने केन्द्र में भी एक दूसरी सभा की व्यवस्था की है। इस समय कई प्रान्तों में ऊपर की सभायें हैं और यदि मैं यह कहूं कि उनके पास नीचे की सभाएं जो कानून भेजती हैं, उनकी त्रुटियों को या यदि कोई बात रह गई हो तो उसको बताकर वे एक उपयोगी कार्य कर रही हैं, तो मैं नहीं समझता कि कोई सज्जन मेरा विरोध करेंगे। मेरा यह विश्वास है कि अधिकतर ऊपर की सभा के सुझावों को नीचे की सभा मान लेती है। यह मैं अपने बिहार प्रान्त के अनुभव से कह सकता हूं। जो सदस्य ऊपर की सभा के सदस्यों को राष्ट्रपति के चुनाव में भाग नहीं लेने देना

[रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय]

चाहते हैं, उनके हृदय में मेरे विचार से कुछ भय है। वह भय सम्भवतः इस कारण है कि ऊपर की सभा में अधिकतर जायदाद वाले लोगों के प्रतिनिधि होते हैं। पहले तो मैं इसका कोई कारण नहीं देखता कि जायदाद वाले लोगों को राष्ट्रपति के चुनाव में भाग क्यों न लेने दिया जाये? प्रान्त के गवर्नरों के सम्बन्ध में हमने यह निर्णय किया है कि वह प्रौढ़ मतगणना के आधार पर हो और प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह जायदाद वाला हो या न हो, उसमें भाग ले सकता है। फिर राष्ट्रपति के चुनाव में इस प्रकार का भेदभाव क्यों रखा गया है?

हमने अभी यह निश्चय नहीं किया है कि दूसरी सभा के निर्वाचन में मतगणना का आधार क्या हो। इस सभा को मतगणना का ऐसा आधार निश्चित करने की स्वतंत्रता है कि ऊपर की सभा में इस देश के केवल जायदाद वाले लोगों का प्रतिनिधित्व नहीं होगा। हम मतगणना का इस प्रकार का आधार रख सकते हैं कि इस देश के विभिन्न क्षेत्रों के अनुभवी लोग जैसे कि उद्योग-धंधों, व्यवसाय, शासन-प्रबन्ध, सार्वजनिक कार्य में लगे हुये अनुभवी लोग ऊपर की सभा में उचित अनुपात में रहें। मुझे विश्वास है कि राष्ट्रपति के चुनाव जैसे महत्वपूर्ण मामले में अनुभवी लोगों का मत लिया जायेगा और हम कोई भी ऐसा कार्य न करेंगे जिससे हम ऊपर की सभा के प्रतिनिधियों के मत से वंचित रहें। इस प्रश्न का एक दूसरा पहलू भी है। राष्ट्रपति के चुनाव सम्बन्धी आदेश में सदस्यों ने जितने भी संशोधन पेश किये हैं, उनसे श्रीमान्, आपको यह स्पष्ट हो जायेगा कि इस सभा का, एक बड़े भाग का मत यह था कि राष्ट्रपति का चुनाव प्रौढ़ मतगणना के आधार पर होना चाहिये। श्रीमान्, यदि यह सम्भव नहीं है तो अधिक से अधिक लोगों को इस सम्बन्ध में अपना मतदान देने का अवसर दिया जाना चाहिये। सम्भवतः हम कुछ व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण प्रौढ़ मतगणना के आधार को स्वीकार नहीं कर सके परन्तु हमें अपने बनाये हुये विधान द्वारा स्थापित व्यवस्थापिकाओं के एक भाग के निर्वाचित प्रतिनिधियों को राष्ट्रपति के निर्वाचन में भाग लेने का अधिकार न देकर इसे और भी अधिक संकुचित न बना देना चाहिये। इसका विचार करके कि हमें आगे चलकर बहुत ही महत्वपूर्ण कार्यों को करना होगा और सम्भवतः इस देश को बहुत ही कठिन परिस्थिति का सामना करना पड़े, मेरे विचार से अनुभवी लोगों को महत्वपूर्ण मामलों में भाग न लेने देने में कोई बुद्धिमता नहीं होगी। विशेषतः राष्ट्रपति के चुनाव के मामले में, जिसके सम्बन्ध में सिद्धांततः यह सभी स्वीकार करेंगे कि हर एक नागरिक को उसमें भाग लेने का अधिकार होना चाहिये। मैं प्रस्तावक महोदय को यह सुझाव देना

चाहता हूं कि ऊपर की सभा के सदस्यों के रास्ते में जो रुकावट है उसे हटा देना चाहिये और उन्हें राष्ट्रपति के चुनाव में भाग लेने का अधिकार होना चाहिये।

इस सभा को एक दूसरे प्रश्न पर भी विचार करना है। खण्ड 2 के साथ जो नोट है, उसमें कहा गया है:

''प्रदेशों की आबादी के अनुसार वोटों को बल देने का आदेश इसलिये आवश्यक है कि एक ऐसे छोटे प्रदेश की वोटें जिसकी बड़ी व्यवस्थापिका हो, एक बड़े प्रदेश की वोटों को निरर्थक न कर दें। यह बल इस प्रकार दिया जायेगा। किसी ऐसी व्यवस्थापिका में जहां प्रत्येक सदस्य एक लाख मतदाताओं का प्रतिनिधि हो तो उसे 100 वोटों का बल प्राप्त होगा यानी एक हजार लोगों के लिये एक वोट होगी और जहां व्यवस्थापिका इस प्रकार संगठित हो कि एक सदस्य 10,000 लोगों का प्रतिनिधि हो तो उसे इसी गणना के अनुसार 10 वोटों का बल प्राप्त होगा।''

इस व्यवस्था के अधीन कल्पना कीजिये कि यदि किसी प्रान्त की व्यवस्थापिका के सदस्यों की वोटों की संख्या किसी अन्य प्रान्त की व्यवस्थापिका के सदस्यों की वोटों की संख्या का 1/10 भाग है और यदि पहले प्रान्त की ऊपर की सभा के सदस्य वोट नहीं देते हैं तो उसमें जितना अधिक लोगों का प्रतिनिधित्व होगा उतना अधिक उस प्रान्त को नुकसान उठाना पड़ेगा। राष्ट्रपति के चुनाव में ऊपर की सभा के सदस्यों को भाग न लेने देने से हम कुछ प्रान्तों को अपने पूर्ण मत का प्रदर्शन करने का अवसर ही न देंगे, क्योंकि उसका आधार प्रान्त की कुल जनसंख्या होगी।

श्रीमान् इसके अतिरिक्त मुझे कुछ नहीं कहना है। मुझे आशा है कि मेरे इस सुझाव को माननीय प्रस्तावक पसन्द करेंगे।

***श्री के. चेंगलाराय रेड्डी** (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, मैं यह संशोधन पेश करना चाहता हूं कि खण्ड 1 के उपखण्ड (2) (ख) में जहां कहीं 'सदस्य' शब्द आया है वहां 'निर्वाचित सदस्य' रख दिया जाये। संशोधित खण्ड इस प्रकार होगा:

''सभी प्रदेशों की व्यवस्थापिकाओं के निर्वाचित सदस्य या, जहां व्यवस्थापिका की दो सभायें हों तो नीचे की सभा के निर्वाचित सदस्य।''

श्रीमान्, यह देखा जायेगा कि संघ का अध्यक्ष प्रत्यक्षतया प्रौढ़ मतगणना के आधार पर नहीं बल्कि एक निर्वाचन-मंडल द्वारा चुना जायेगा। प्रौढ़ मतगणना के आधार पर संघ के अध्यक्ष को चुनने के पक्ष में काफी लोगों ने अपना मत

[श्री के. चेंगलाराय रेड्डी]

प्रकट किया है परन्तु चूंकि सारे विधान में मंत्रि-संचालित शासन-प्रणाली की व्यवस्था है न कि राष्ट्रपति-संचालित शासन-प्रणाली की। इसलिये उचित यही होगा कि हम अपने राष्ट्रपति को निर्वाचन-मंडल द्वारा चुनें। परंतु श्रीमान्, इस उपखंड में जिस निर्वाचन मंडल की व्यवस्था है उसके दो भाग हैं। खण्ड (क) में संघीय पार्लियामेंट की दोनों सभाओं का उल्लेख है। इसके बाद खण्ड (ख) आता है जिसमें सभी प्रदेशों की व्यवस्थापिकाओं के सदस्यों का उल्लेख है। जहां तक प्रान्तीय व्यवस्थापिकाओं का सम्बन्ध है मुझे इसे स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं है, क्योंकि प्रान्तीय व्यवस्थापिकाओं में नीचे की सभाओं में सभी सदस्य प्रौढ़-मतगणना के आधार पर चुने जाते हैं। परन्तु रियासतों की व्यवस्थापिकाओं के सम्बन्ध में मुझे कठिनाई का अनुभव होता है। जहां तक रियासतों की व्यवस्थापिकाओं का सम्बन्ध है, यह सभी मानेंगे कि रियासतों की व्यवस्थापिकाओं का विधान एक समान न होगा। अपनी-अपनी प्रगति की विभिन्न अवस्थाओं आदि के अनुसार रियासतों में अलग-अलग प्रकार के विधान होंगे। चूंकि मैं इसकी कल्पना करता हूं कि कुछ रियासतों की व्यवस्थापिकाओं में मनोनीत सदस्य होंगे। मैं मतदान देने के अधिकार को केवल निर्वाचित सदस्यों तक सीमित करना चाहता हूं। यह तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि हम अप्रत्यक्ष रूप से यह मान ले रहे हैं और इसके लिये सहमत हैं कि रियासतों की व्यवस्थापिकाओं में मनोनीत सदस्य होंगे। श्रीमान्, मैं नहीं समझता कि इससे यह नतीजा निकाला जायेगा क्योंकि मैं तो यह कहूंगा कि यदि यह संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो इससे सम्बन्धित रियासतों की व्यवस्थापिकाओं को इसके लिये प्रोत्साहन मिलेगा कि वे मनोनीतकरण की प्रथा को त्याग दें और अपने विधान में भी निर्वाचन-प्रणाली की व्यवस्था करें। यदि कुछ अल्पसंख्यकों को, जिनके सदस्यों को अब रियासतों की व्यवस्थापिकओं में मनोनीत किया जा रहा है, संघ के अध्यक्ष के चुनाव में भाग लेने का अधिकार न दिया जाये तो बहुत सम्भव है कि ऐसे अल्पसंख्यक या अन्य हितों के लोग मनोनीतकरण के बजाय निर्वाचन की मांग करें ताकि उनके इस प्रकार चुने हुए प्रतिनिधियों को संघ के अध्यक्ष के चुनाव में भाग लेने का महत्वूपर्ण अधिकार प्राप्त हो। इसलिये श्रीमान्, चाहे जिस दृष्टि से भी विचार किया जाये, मेरा विश्वास है कि यह संशोधन इस सभा को मान्य होगा। कुछ लोगों का यह विचार है कि विधान के तैयार होने तक रियासतों के ऐसे विधान तैयार हो जायेंगे कि उनमें अपनी व्यवस्थापिकाओं में मनोनीत सदस्य रखने की व्यवस्था न होगी। यदि ऐसा हुआ तो मैं उसका स्वागत करूंगा। ऐसी दशा में विधान का

मसविदा तैयार होने तक इसके लिये काफी समय मिलेगा कि मेरे संशोधन में जिस भेदभाव की कल्पना की गई है, वह मिटाई जा सके। फिलहाल श्रीमान् मैं इस संशोधन को पेश करता हूं और आशा करता हूं कि इसे सभा स्वीकार कर लेगी।

श्री गोकुलभाई भट्ट: सभापति जी, मेरा संशोधन इस प्रकार है। मि. रेड्डी अभी जो ''इलेक्टेड मेम्बर'' रखना चाहते हैं वहां मैं ''टैरीटोरियल इलेक्टेड मेम्बर'' रखना चाहता था। इसका सबब यह है कि बहुत-सी जगह ऐसी होती हैं कि जहां इलेक्टेड होते हैं लेकिन स्पेशल कांस्टिट्युएंसीज बनी हुई होती हैं और इसके मुताबिक अगर वह भी इलेक्टेड माना जाये, तो सच्चे चुने हुए वह नहीं कहलायेंगे। लेकिन मैंने यह सोचा है कि ज्यादा पाबन्दी लगानी चाहिये और सिर्फ यह ध्यान दिलाना चाहता हूं कि जो इलेक्टेड मेम्बर हों वे सचमुच हल्कों से आये हुये होने चाहियें। तो मैं इस संशोधन को रखने के लिये आग्रह नहीं करता। मैं ध्यान उन 'इलेक्टेड मेम्बर' की तरफ दिलाना चाहता हूं कि जो स्पेशल कांस्टिट्युएंसीज से आते हैं और उनमें बहुत-से जागीरदार, जमीदार और दूसरे लैंडलार्ड आते हैं। वह अर्थ न लगाया जाये।

(सर्वश्री विश्वनाथ दास, आर.आर. दिवाकर, युधिष्ठिर मिश्र और जयनारायण व्यास ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

श्री शिब्बन लाल सक्सेना: सभापति जी, मेरा एमेंडमेंट इस प्रकार है कि क्लाज एक के सब क्लाज (2) और (3) को हटाकर यह रख दिया जाये: ''The Rashtrapati shall be elected directly by the people on the basis of adult suffrage'' यानी जनता राष्ट्रपति का चुनाव सीधे बालिग मताधिकार से करेगी।

यह एक बहुत ही गम्भीर प्रश्न है और मैं इस विषय पर बहुत गहराई से महसूस करता हूं और मैं समझता हूं कि हमने जो स्कीम प्रान्तीय विधान में गवर्नरों के चुनाव के लिये मंजूर की है वह स्कीम हमें इस यूनियन कांस्टिट्यूशन यानी फेडरेशन के विधान के लिये भी स्वीकार करनी चाहिये। हमने प्रान्तीय विधान में गवर्नर को adult suffrage यानी बालिग मताधिकार से चुनने का निश्चय किया है। अभी हम पंत जी और खेर साहब की जोरदार तकरीरें सुनीं और अंत में सरदार पटेल साहब ने मिस्टर मुंशी का अमेंडमेंट स्वीकार किया जिसमें यह कहा गया था कि adult suffrage यानि बालिग मताधिकार पर चुने हुये गवर्नर को कुछ विशेष

[श्री शिब्बन लाल सक्सेना]

अधिकार मिलना चाहिये जो संकटकाल में काम आये। इससे साफ जाहिर है कि सरदार पटेल साहब और यह विधान-परिषद् बालिग मताधिकार से चुने हुये गवर्नर के नैतिक बल के महत्व को और उससे होने वाले लाभ को मानते हैं। इसी तरह मैं समझता हूं कि राष्ट्रपति का चुनाव भी adult suffrage यानी बालिग मताधिकार से होना चाहिये। यह निश्चय है कि सारे देश के 12-13 करोड़ वोटर जिस व्यक्ति को अपना राष्ट्रपति चुनेंगे उसकी नैतिक शक्ति और प्रतिभा सारे देश में अद्वितीय होगी। वह सचमुच जनता का आदमी और उनका सच्चा प्रतिनिधि होगा। इसके अतिरिक्त मैं समझता हूं कि हमारे देश की एकता (unity), जो आज टूट गई है औ कुछ रियासतों के वर्तमान प्रयत्नों को देखते हुये जिस एकता के और भी अधिक टूटने का भय है, उस एकता (unity) को फिर से कायम करने के लिये हम प्रतिज्ञाबद्ध हैं। उसमें बालिग मताधिकार से राष्ट्रपति का चुनाव होना बहुत मदद करेगा। तब ट्रावनकोर से लेकर काश्मीर तक और कलकत्ते से लेकर बम्बई तक देश के कोने-कोने में गरीब से गरीब व्यक्ति भी यह महसूस करेगा कि वह भारतवर्ष के राष्ट्रपति के चुनने का अधिकारी है। अपने भारतीय होने के गौरव को तब वह पूरी तौर से अनुभव करेगा और भारतीय एकता की जड़ इस प्रकार मजबूत होती जायेगी और आज-कल हैदराबाद, काश्मीर, ट्रावनकोर इत्यादि में जो भारत से अलग होने की भावना है वह देश भर से मिट जायेगी। और देश के जो हिस्से हमसे अलग हो गये हैं उनकी जनता में भी फिर से भारतवर्ष में मिल जाने की इच्छा प्रबल होती जायेगी। इसलिये विशेषकर इस वर्तमान अवस्था में मैं राष्ट्रपति के बालिग मताधिकार से चुने जाने को अत्यन्त आवश्यक व लाभदायक समझता हूं।

हमारे देश की नेशनल जीनियस (national genius) भी यही है। हम वीर उपासक (Hero worshippers) हैं। किसी अद्‌भूत तपस्वी और प्रतिभाशाली व्यक्तित्व के मनुष्य के राष्ट्रपति रहने पर हमारे देश की प्रगति बहुत तेजी से हो सकेगी। 12 या 13 करोड़ वोटरों से चुना हुआ राष्ट्रपति ऐसे नैतिक बल और प्रतिभाशाली व्यक्तित्व को प्राप्त कर लेगा। हम 35 करोड़ आबादी के संसार में सबसे बड़े स्वतंत्र राष्ट्र होंगे। 12 या 13 करोड़ वोटरों के मत से चुने हुये राष्ट्रपति की संसार भर में एक विशेष नैतिक प्रतिभा होगी। उसकी इस नैतिक शक्ति और व्यक्त्वि से अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में देश को बहुत लाभ होगा और देश की जनता की वीरोपासना की भावनायें भी इससे तृप्त रहेंगी।

आज महात्मा गान्धी बिना चुने हुये भी हमारे सारे देश के पिता हैं। हम सब उन्हें बापू कहते हैं वह हमारे राष्ट्र के सदैव रहने वाले राष्ट्रपति (Permanent President) के समान हैं। उनके स्थान की पूर्ति चुना हुआ राष्ट्रपति किसी हद तक तब ही कर सकेगा जब देश के 12 या 13 करोड़ मतदाता अपने वोटों द्वारा उसे राष्ट्रपति चुनेंगे। इससे उसे भारी नैतिक बल, प्रतिभा और सम्मान प्राप्त होगा जिससे शासन के दैनिक कार्यों से अलग रहते हुये भी उससे देश को भारी फायदा होगा।

जिस विधान का मसविदा हमारे सामने पेश है वह विधान दो तरह के विधानों का सम्मिश्रण है। एक तो अमरीका के विधान का जहां प्रेसीडेंट का चुनाव सीधे बालिग मताधिकार से होता है और दूसरे विलायत के विधान का जहां प्रधान मंत्री पार्लियामेंट के बहुमत का चुना हुआ नेता होता है। विलायत में भी एक राजा (king) जिसके व्यकितत्व की बहुत भारी प्रतिभा है, और जनता किसी भी प्रधान मंत्री से अधिक उसकी इज्जत करती है और यद्यपि कानून में उसे कोई स्वतंत्र कार्य करने का अधिकार नहीं है, फिर भी वहां का राजा वहां के शासन को सुन्दर बनाने में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। हमारा राष्ट्रपति हमारे विधान में अंग्रेजी राजा (king) के स्थान की पूर्ति करेगा। मैं जानता हूं कि मेरे बहुत से नेता इस बात के पक्ष में नहीं हैं और वह इसका विरोध भी करेंगे। उनका कहना यह है कि हमने जब यह स्वीकार कर लिया कि हम पार्लियामेंटरी (Parliamentary) सरकार चाहते हैं, हम इस तरीके का विधान चाहते हैं जिसमें कि लेजिस्लेचर के चुने हुये नेता सारे राष्ट्र के प्रतिनिधि होंगे और उसकी जिम्मेदारी लिये हुये होंगे। इसलिये राष्ट्रपति का बालिग मताधिकार adult suffrage से चुनाव करना फिजूल वक्त बरबाद करना होगा और इससे खामखा (confusion) गड़बड़ी पैदा होगी। मैं इससे सहमत नहीं हूं। मेरा तो अपना ख्याल है कि जो पार्टी सारे देश के प्रेसीडेंट का चुनाव जीतेगी, वही पार्टी सम्भवत: लेजिस्लेचर में बहुमत रखेगी और उसका बहुमत फेडरल लेजिस्लेचर (Federal Legislature) में होगा।

मिसाल के लिये मान लीजिये कि हम प्रेसीडेंट के लिये अपने परिषद् के सभापति बाबू राजेन्द्रप्रसाद को चुनते हैं और सरदार पटेल या जवाहरलाल जी को प्रीमियर बनाते हैं तो इन दोनों नेताओं में सहयोग होगा और एक दूसरे की मदद करेंगे। वे आपस में एक दूसरे का सिर नहीं तोड़ेंगे। पन्त जी ने अभी दूसरे प्रस्ताव के समर्थन में कहा था कि अगर प्रेसीडेंट मर जाये तो फिर क्या

[श्री शिब्बन लाल सक्सेना]

होगा। मैं कहता हूं कि प्रेसीडेंट अगर नहीं रहता है तो वहां प्रधान-मंत्री है ही; उसकी मिनिस्ट्री अपना काम कर सकती है और प्रेसीडेंट का फौरन दुबारा चुनाव कर सकती है। पर बर्मा के अनुसार प्रधान मंत्री और उसके मंत्रिमंडल के कत्ल हो जाने पर राष्ट्रपति ही देश की बागडोर संभाल सकेगा और दूसरी मिनिस्ट्री बना सकेगा। मैं कहता हूं कि राष्ट्रपति के चुनाव से देश की शान बढ़ेगी। उसको चाहे हम शक्ति न दें लेकिन वह उस विशेष ओहदे की वजह से शासन के सब कार्यों पर एक खास असर डालेगा। महात्मा गान्धी कहने को तो कांग्रेस के चार आने के मेम्बर भी नहीं हैं लेकिन सब जानते हैं कि सारे देश के काम उन्हीं की राय से चलते हैं और आज आने वाला स्वतन्त्र भारत उन्हीं का निर्माण किया हुआ भारत है। मेरा अपना मत है कि प्रेसीडेंट का चुनाव हर दृष्टि से हमारे लिये लाभदायक है। लेकिन चूंकि मैं इस सम्बन्ध में स्वतंत्र नहीं हूं इसलिये मैं इस सुझाव (Amendment) को पेश नहीं करना चाहता।

***श्री एच. चन्द्रशेखरिया** (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम से जो संशोधन है वह इस प्रकार है:

"खण्ड 1 के उपखण्ड (3) के बाद निम्नलिखित उपखण्ड जोड़ दिया जाये:

'(3 क) राष्ट्रपति पारी-पारी से रियासत और गैर रियासती प्रदेशों से चुना जायेगा'।"

श्रीमान्, आप जानते हैं कि यह प्रस्ताव किया गया है कि संघ के अध्यक्ष को एक निर्वाचन मंडल द्वारा चुना जाये जिसमें संघ की दो सभाओं और संघ के प्रदेशों की व्यवस्थापिकाओं के सदस्य होंगे। इससे यह स्पष्ट है कि यदि किसी समय रियासतों के सदस्य अपने किसी आदमी को अध्यक्ष पद के लिये खड़ा करेंगे तो वह चुनाव में सफल न हो सकेगा, क्योंकि निर्वाचन-मंडल में गैर रियासती प्रदेशों के सदस्यों का ही बहुमत होगा।

रियासतों की जनसंख्या लगभग नौ करोड़ दस लाख है। इसका अर्थ यह है कि वह भारतीय संघ में सम्मिलित प्रान्तों की जनसंख्या की लगभग एक तिहाई है और पाकिस्तानी प्रदेशों की जनसंख्या की लगभग चौगुनी है। संघीय पार्लियामेंट की दोनों सभाओं में जो रियासतों के प्रतिनिधि हैं वे अल्पमत में होते हुए भी उसके महत्वपूर्ण अंग हैं। जहां तक राज-सभा का सम्बन्ध है उसमें कुल

287 सदस्यों में से 71 सदस्य रियासतों के ही हैं। इसी प्रकार लोक-सभा में भी, जो जनसख्या के आधार पर बनेगी, रियासती प्रदेशों के काफी सदस्य होंगे। इस दशा में यह न्यायोचित ही होगा कि रियासती प्रदेश को हर दूसरी बार राष्ट्रपति पद के लिये अपना आदमी खड़ा करने का अवसर दिया जाये। यदि यह एक अनर्गल मांग समझी जाये तो कम से कम यह व्यवस्था की जाये कि हर तीसरी बार रियासतें अपने आदमी को राष्ट्रपति पद के लिये खड़ा करें।

श्रीमान् आप जानते ही हैं कि रियासतें देश के महत्वपूर्ण अंग हैं। 15 अगस्त के बाद अन्य प्रदेशों के समान रियासतें भी स्वतंत्र हो जायेंगी। परन्तु मेरी अपनी यह इच्छा है कि रियासतें चाहे वे बड़ी हों या छोटी, अलग न रहें। उन्हें इस समय भारतीय उपनिवेश के साथ और विधान बनने पर भारतीय संघ के साथ सहयोग करना चाहिये। इसके लिये यह आवश्यक है कि सद्भावना हो और रियासतों का कुछ ख्याल किया जाये। मेरा विश्वास है कि इस संशोधन में जिस प्रकार की व्यवस्था रखी गई है उससे हमारे देश के रियासती और गैर रियासती प्रदेशों के सम्बन्ध कुछ हद तक बहुत अच्छे हो जायेंगे। इन शब्दों के साथ मैं सिफारिश करता हूं कि यह सभा कृपा करके इस संशोधन पर विचार करे और इसे स्वीकार कर ले।

***अध्यक्षः** आपके नाम एक दूसरा संशोधन भी है।

***श्री एच. चन्द्रशेखरियाः** मैंने जो दूसरा संशोधन पेश किया है वह इस प्रकार है:

खण्ड 1 के उपखण्ड (4) के बाद निम्नलिखित नया उपखंड जोड़ दिया जाये:

"(5) संयुक्त राष्ट्र अमेरीका के विधान के अनुरूप यह व्यवस्था की जाये कि राष्ट्रपति कर्त्तव्यपालन की शपथ लेगा।"

संघ के अध्यक्ष को एक अत्यन्त महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व यह भी सौंपा गया है कि वह विधान की रक्षा करे और उसका उल्लघंन न होने दे। विधान का उल्लंघन करने के कारण वह न्यायाधीशों के सामने दोषारोपण द्वारा अपने पद से हटाया जा सकता है। इस कारण यह आवश्यक है और उचित भी है कि राष्ट्रपति शपथ के रूप में इस प्रकार का इकरार करे। सभी विधानों में और विशेषतया संघ विधानों में यह आदेश रहता है कि प्रबन्धकारिणी के अध्यक्ष

[श्री एच. चन्द्रशेखरिया]

को शपथ लेनी चाहिये। उदाहरणार्थ, संयुक्त राष्ट्र अमरीका में प्रेसीडेंट पदासीन होने के पहले कर्तव्य-निष्ठा की निम्नलिखित शपथ लेता है:

"मैं गम्भीरता से यह शपथ लेता हूं और इसकी प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं संयुक्त राष्ट्र अमेरीका के प्रेसीडेंट के कर्तव्य का पालन निष्ठापूर्वक करूंगा और अपनी पूरी योग्यता से संयुक्त राष्ट्र अमेरीका के विधान को बनाये रखूंगा तथा उसकी रक्षा करूंगा।"

आयरलैंड के विधान में भी इसी प्रकार का एक आदेश है। वह इस प्रकार है:

"प्रेसीडेंट पद ग्रहण करते समय राष्ट्रीय पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के सदस्यों और सुप्रीम कोर्ट तथा हाईकोर्ट के न्यायाधीशों और अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों की उपस्थिति में सार्वजनिक रूप से निम्नलिखित घोषणा करेगा:

'सर्वशक्तिमान परमात्मा के सम्मुख मैं गम्भीरतापूर्वक व सच्चे हृदय से यह प्रतिज्ञा करता हूं और यह घोषणा करता हूं कि मैं विधान और कानून के अनुसार निष्ठापूर्वक व सच्चाई के साथ अपने कर्तव्यों का पालन करूंगा और मैं अपने पूरे बुद्धिबल से आयरलैंड के लोगों की सेवा व उनका हितसाधन करूंगा। परमात्मा मुझे इसके लिये निर्देश दे और उसका पालन करने की शक्ति दे'।"

हमारे विधान में इस प्रकार की कोई भी सपथ रखी जा सकती है और संघ के अध्यक्ष को पद ग्रहण करने के पहले इस प्रकार की शपथ लेनी चाहिये।

इसलिये मैं सिफारिश करता हूं कि यह सभा कृपा करके इस संशोधन पर विचार करे और इसे स्वीकार कर ले।

***अध्यक्ष:** अब एक बज गया है, इसलिये अब सभा कल दस बजे तक के लिये स्थगित रहेगी।

इसके बाद परिषद् बृहस्पतिवार, 24 जुलाई सन् 1947 ई. के दिन के दस बजे तक के लिये स्थगित रही।

Con. 3. 4. 9. 47
750

अंक 4

संख्या 9

बृहस्पतिवार
24 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1. परिचय-पत्रों की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर 1
2. स्टीयरिंग कमेटी का चुनाव 1
3. संघीय विधान की रिपोर्ट–(जारी) 2

भारतीय विधान-परिषद्

बृहस्पतिवार, 24 जुलाई सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक दस बजे कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में बृहस्पतिवार 24 जुलाई 1947 को माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर

***अध्यक्षः** मुझे ज्ञात हुआ है कि एक सदस्य ने अब तक रजिस्टर पर हस्ताक्षर नहीं किए हैं। क्या वे कृपा करके अब रजिस्टर पर हस्ताक्षर कर देंगे?

इसके बाद निम्नलिखित सदस्य ने रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:

श्री शमशेर जंग

स्टीयरिंग कमेटी का चुनाव

***अध्यक्षः** स्टीयरिंग कमेटी (कार्य संचालक समिति) के लिये कुछ सदस्यों के निर्वाचन के सम्बन्ध में श्री सत्यनारायण सिनहा की ओर से एक प्रस्ताव पेश किया जाएगा। क्या वे कृपया उसे पेश करेंगे?

***श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम में जो प्रस्ताव है, वह इस प्रकार है:

"निश्चय किया गया कि यह परिषद् विधान-परिषद् की नियमावली के नियम 40(5) में उल्लिखित विधि के अनुसार स्टीयरिंग कमेटी के दो सदस्यों का निर्वाचन करती है।"

इस परिषद् के दो माननीय सदस्यों, मौलाना अबुलकलाम आजाद और श्रीमान ने इस विधान-परिषद् से इस्तीफा दे दिया है और इसलिये रूल्स आफ प्रोसीजर (कार्य विधि सम्बन्धी नियम) के अनुसार अब वे स्टीयरिंग कमेटी

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री सत्यनारायण सिन्हा]

के भी सदस्य नहीं रहे, जिसके लिये इस परिषद् द्वारा वे चुने गये थे। इसलिये मैं प्रस्ताव करता हूं कि उनके रिक्त स्थानों की पूर्ति की जाये। जिस तरीके से निर्वाचन किया जायेगा, उसका निर्णय अध्यक्ष करेंगे।

*__अध्यक्षः__ क्या कोई सदस्य इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता है?

*__माननीय सदस्यः__ नहीं।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ स्टीयरिंग कमेटी के दो रिक्त स्थानों के लिये कल एक बजे तक नाम पेश किये जायेंगे और यदि आवश्यक हुआ तो चुनाव 26 ता. को अण्डर सेक्रेटरी के कमरा नं. 24 में, जो कौंसिल की निचली मंजिल पर स्थित है, दोपहर बाद चार बजे होगा। चुनाव एकाकी हस्तान्तरित मत पद्धति द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली से होगा।

संघीय विधान की रिपोर्ट–(जारी)

अध्यक्षः अब हम संघ-विधान के भाग 14 के खंड 1 पर बहस करेंगे।

*__श्री श्रीप्रकाश__ (संयुक्त प्रान्त : जनरल): मेरे उस प्रस्ताव का क्या हुआ, जो मैंने आज प्रातःकाल के अधिवेशन के सम्बन्ध में पेश किया था?

*__अध्यक्षः__ मेरा ख्याल है कि वह कल के लिये है।

*__श्री श्रीप्रकाशः__ मुझे खेद है।

*__माननीय सर गोपालस्वामी आयंगर__ (मद्रास : जनरल): एक संशोधन बाकी है जो पेश नहीं किया गया।

*__अध्यक्षः__ बहुत से संशोधन हैं, जो अब तक पेश नहीं किये गये। मैं उन्हें लूंगा।

*__श्री के. सन्तानम्__ (मद्रास : जनरल): मुझे इस विषय में व्यवस्था सम्बन्धी एक आपत्ति है। मुझे ज्ञात हुआ है कि विधान परिषद् के कार्यालय ने उन संशोधनों

को जो तीन या चार दिन पूर्व पेश किये गये थे—सदस्यों के पास नहीं भेजा है, क्योंकि आपने उस तारीख से पहले संशोधनों के सम्बन्ध में एक अवधि निश्चित कर दी थी। परन्तु आपने यह व्यवस्था दी है कि यदि प्रस्ताव पेश करने से कम से कम एक दिन पहले किसी संशोधन के सम्बन्ध में सूचना दी जायेगी तो हमें संशोधन पेश करने की इजाजत होगी। अन्यथा, संपूर्ण वाद-विवाद व्यर्थ हो जायेगा। क्योंकि जब हम किसी विषय पर बहस करते हैं तो उसमें कुछ संशोधन आवश्यक हो जाते हैं। उदाहरण के तौर पर, मैंने एक संशोधन पेश करने की सूचना सोमवार को दी थी। यह संशोधन मैंने मित्रों से विचार-विनिमय करने के बाद पेश किया था। इसके अलावा यह संशोधन मुझे इसलिये भी पेश करना पड़ा, कि उसका मसविदा अपूर्ण था। परन्तु उसे सर्वथा प्रचारित नहीं किया गया। जब मैंने इस बारे में पूंछताछ की तो मुझे बतलाया गया कि उन्हें केवल कार्यालय में नत्थी करके एक ओर रख दिया गया है और उनके बारे में कोई कार्रवाई नहीं की गई। मेरा विचार है कि यदि यही हाल रहा तो हमें बड़ी कठिनाइयां पेश आयेंगी। मुझे उम्मीद है कि आप इस बारे में कोई व्यवस्था देंगे।

*अध्यक्ष: मैंने संशोधन पेश करने के बारे में सदस्यों को काफी समय दे दिया है और हम संशोधनों की उस सूची से, जो प्रचारित की जा चुकी है, भली भांति जान सकते हैं कि विभिन्न खंडों के सम्बन्ध में हमारे पास बहुत से संशोधन आये हैं। मुझे बताया गया है कि उस अवधि के बाद भी जो मैंने निर्धारित की थी, बहुत से संशोधन आये हैं। यदि परिषद् चाहे तो मेरे पास इसके अलावा कोई और मार्ग नहीं कि मैं उन संशोधनों को भी प्रचारित कराऊं, परन्तु उस हालत में हमारे लिये उन पर सोच-विचार करना बड़ा कठिन हो जायेगा, क्योंकि संशोधनों का तांता सा बंध जाता है और वे अबाध रूप से पेश किये जाने लगते हैं। इसलिये हमें संशोधन पेश करने की एक निश्चित अवधि पर डटे रहना चाहिये।

*एक माननीय सदस्य: निश्चित अवधि तो स्वत: निर्धारित हो जाती है, जब हम उन पर सोच-विचार करते हैं।

*अध्यक्ष: तो इसका मतलब यह हुआ कि जैसे-जैसे संशोधन पेश होते रहेंगे, उन सभी को प्रचारित करना पड़ेगा।

*श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर (मद्रास : जनरल): प्रत्येक धारासभा में यही प्रथा प्रचलित है। श्रीमान्, बड़े आदरपूर्वक मैं यह कहना चाहता हूं कि

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

आपने जो व्यवस्था दी है, वह नियम संख्या 32 के प्रतिकूल है। नियम 32 के उप-खंड (3) में कहा गया है कि अध्यक्ष की आज्ञा के अतिरिक्त किसी भी संशोधन के सम्बन्ध में नोटिस प्रस्ताव पेश होने से कम से कम एक दिन पहले दी जानी चाहिये। प्रत्येक खंड परिषद् में पेश किया जाता है और जब उस पर बहस चल रही होती है और सदस्य संशोधन पेश करने की आवश्यकता अनुभव करते हैं तो हम वास्तविक बहस शुरु होने से चौबीस घंटे पहले ही उस सम्बन्ध में सूचना दे देते हैं। बस, हमें सिर्फ यही करना होता है। श्रीमान्, मेरा यह विचार है कि हम दो दिन का समय नहीं निर्धारित कर सकते। इसका मतलब तो सारे विषय को रस्मी और निर्जीव बना देना होगा। यदि संशोधनों की व्यवस्था करने के लिये काफी कर्मचारी नहीं हैं तो उनकी संख्या में वृद्धि करनी होगी, न कि हमारे अधिकार कम किये जायें।

***अध्यक्ष:** मैं चाहता हूं कि इस सम्बन्ध में कोई व्यक्ति जिसे धारासभाओं के काम का अनुभव हो मुझे विस्तृत रूप से अवगत कराये। मैं जानना चाहता हूं कि साधारणत: किस तरीके पर अमल किया जाता है। शायद श्री पुरुषोत्तमदास टंडन इस विषय पर प्रकाश डाल सकें। प्रतिदिन बहुत से संशोधन आते रहते हैं, उन पर सोच-विचार करने का साधारण तरीका क्या है?

***माननीय श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): श्रीमान्, साधारण प्रथा यह है कि जब बिल पर सोच-विचार हो रहा होता है तो संशोधन पेश किये जाते हैं लेकिन प्रत्येक संशोधन, विशिष्ट वाक्य खण्ड पर सोच-विचार किये जाने से कुछ समय पूर्व कार्यालय में पेश करना होता है। मिसाल के तौर पर, यदि आप किसी वाक्य खण्ड पर आज बहस कर रहे हैं और नियम के अनुसार संशोधन पेश करने के लिये 48 घण्टे का नोटिस देना आवश्यक है तो संशोधन, धारासभा के कार्यालय में बहस से अवश्य ही 48 घण्टे पूर्व भेज दिया गया होगा-अर्थात् आज जिस समय उस पर बहस की जायेगी। बस, इतना ही काफी होता है। यह आवश्यक नहीं है कि सभी संशोधन बिल पर बहस होने से पहले कार्यालय में पहुंचाये जायें।

***अध्यक्ष:** तो हम उसी कार्यविधि पर आचरण करेंगे और जिन संशोधनों के सम्बन्ध में हमें नियम 32 के अन्तर्गत समय पर नोटिस मिल जायेगा, उन्हें प्रचारित कर दिया जायेगा।

***डा. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान्, क्या उस अवस्था में, मैं खण्ड 1 के सम्बन्ध में अपना संशोधन पेश कर सकता हूं जिसकी सूचना मैंने सोमवार को दी थी?

***अध्यक्ष:** जहां तक खण्ड 1 का सम्बन्ध है, वह कई दिन पहले पेश हुआ था और उसके पेश होने के बाद जिन संशोधनों की सूचना दी गई है, उन पर बहस नहीं की जा सकती।

अब हम दूसरे संशोधनों पर सोच-विचार करेंगे।

श्री चन्द्रशेखरिया ने अपने दोनों संशोधन कल पेश किये थे।

क्या श्री ए.के. घोष अपना संशोधन संख्या 96 पेश करना चाहते हैं?

***श्री ए.के. घोष** (बिहार : जनरल): नहीं।

***अध्यक्ष:** सर एन. गोपालस्वामी आयंगर को एक संशोधन पेश करना है।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मेरे संशोधन का आशय खण्ड 1 के उप-खण्ड (2) के अन्तिम वाक्य में केवल साधारण-सा परिवर्तन है—अर्थात् "इकाई (यूनिट) धारासभाओं के वोटों" के स्थान पर "इकाई धारा-सभाओं के सदस्यों के वोट" शब्द रखे जायें। संशोधन के स्पष्टीकरण की शायद ही कोई आवश्यकता हो।

***अध्यक्ष:** एक और संशोधन श्री जे.एन. व्यास के नाम में है।

(संशोधन पेश नहीं किया गया।)

***अध्यक्ष:** क्या खण्ड 1 के सम्बन्ध में कोई और संशोधन नहीं है? यदि किसी सदस्य को इस खण्ड के सम्बन्ध में कोई संशोधन पेश करना है, जिसे मैं छोड़ गया हूं, तो वे कृपया उसे पेश करें और बाद में यह शिकायत न करें कि उन्हें संशोधन पेश करने का अवसर नहीं मिला।

चूंकि इस बारे में और कोई संशोधन नहीं है, इसलिये अब हम इस खण्ड और उसके सम्बन्ध में जो संशोधन पेश किये गये हैं, उन पर बहस करेंगे।

***सैय्यद काजी करीमुद्दीन** (मध्य प्रान्त और बरार : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, वाक्य खण्ड 1 के उप-वाक्यखण्ड (2) में कहा गया है:

चुनाव एक निर्वाचक मण्डल द्वारा होगा जिसमें--

(क) संघ की दोनों सभाओं के सदस्य और,

(ख) सभी इकाइयों की धारासभाओं के सदस्य अथवा जहां दो सभाएं हों वहां निचली धारासभा (लोकसभा) के सदस्य शामिल होंगे।

राष्ट्रपति का चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर करने से सम्बन्ध रखने वाले सभी संशोधन यद्यपि वापस ले लिये गये हैं, फिर भी इस परिषद् को समझाना चाहता हूं कि यह निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर क्योंकर वांछनीय है।

इस विषय में निर्णय मुख्यत: इस बात पर निर्भर करता है कि शासन प्रबन्ध की पद्धति गैर-पार्लियामेण्टरी होगी अथवा पार्लियामेण्टरी। मेरा विचार है कि भारत में विरोधी राजनीतिक दलों, विभिन्न सिद्धान्तों तथा अन्य बहुत सी विभिन्न बातों को देखते हुये, देश में शान्ति और व्यवस्था को कायम रखने के तथा मंत्रिमण्डल में सभी दलों के प्रभावशाली प्रतिनिधित्व की दृष्टि से यह आवश्यक है कि शासनप्रबन्ध गैर-पार्लियामेण्टरी पद्धति पर आधारित हो। वयस्क मताधिकार के सिद्धान्त पर अमल न करने के लिये केवल एक तर्क पेश किया गया है कि निर्वाचन करने के लिये बहुत बड़ी व्यवस्था करनी पड़ेगी और राष्ट्र की सम्पूर्ण शक्ति इन्हीं चुनावों में खर्च हो जायेगी। परन्तु यह तो सर्वथा कोई कारण नहीं है। अमरीका जैसे देश में राष्ट्रपति का निर्वाचन वयस्क मताधिकार से होता है और मेरा विचार है कि यदि राष्ट्रपति का चुनाव हर पांचवें या चौथे वर्ष वयस्क मताधिकार से हो तो उससे आम जनता को जागृत करने का अवसर मिल सकेगा--उसके सामने महत्वपूर्ण आर्थिक समस्यायें रखी जायेंगी। यदि राष्ट्रपति का निर्वाचन अखिल भारतीय आधार पर होगा तो उससे आम जनता में जागृति पैदा की जा सकेगी। वर्तमान वाक्यखण्ड 1 के उप-वाक्यखण्ड (2) के अन्तर्गत तो राष्ट्रपति केवल बहुसंख्यक दल की कठपुतली बन जायेगा और सम्पूर्ण यूनियन के लिये राष्ट्रपति का निर्वाचन वे लोग करेंगे जिन्होंने चुनाव आंशिक रूप से प्रांतीय आधार पर और आंशिक रूप से अखिल भारतीय आधार पर लड़े हैं। कल जब हम राष्ट्रपति को दिये गये अधिकारों पर बहस कर रहे थे, तो यह विचार प्रकट किया गया था कि उसे व्यापक अधिकार प्रदान किये गये हैं। उसे किसी

प्रान्त के सम्पूर्ण विधान अथवा उसके किसी भाग को स्थगित कर देने का अधिकार होगा। जिस राष्ट्रपति को बहुसंख्यक दल का भय होगा और जो उप-वाक्यखण्ड 2 के अन्तर्गत निर्वाचकों द्वारा चुना जायेगा, मेरे विचार में वह सम्पूर्ण राष्ट्र का अखिल भारतीय आर्थिक आधार पर अथवा अखिल भारतीय मामलों में प्रतिनिधित्व नहीं कर सकेगा। इस सम्बन्ध में एक और महत्वपूर्ण कठिनाई है। रियासतों की सुविधा की दृष्टि से हमने यह स्वीकार कर लिया है कि रियासती धारासभाओं के सदस्य यूनियन की निचली सभा के सदस्य होंगे। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि रियासतों में लोकप्रिय शासन नहीं है, और रियासतों की धारासभाओं में सम्भवत: ऐसे व्यक्ति होंगे जो उनके शासकों द्वारा नामजद किये गये होंगे अथवा जो जनता के वास्तविक प्रतिनिधि नहीं होंगे। ऐसे प्रतिनिधियों द्वारा जिनकी संख्या मतदाताओं की संख्या के लगभग एक तिहाई जितनी होगी--सभापति के निर्वाचन का अर्थ होगा कि वह रियासती जनता का प्रतिनिधि न लेकर रियासती शासकों द्वारा नामजद किये गये व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करेगा। इन परिस्थितियों में राष्ट्रपति को रियासतों की जनता का सच्चा प्रतिनिधि कदापि नहीं कहा जा सकता। इन परिस्थितियों में, मैं इस परिषद् से जोरदार अपील करता हूं कि यदि आप लोकतंत्रीय शासन चाहते हैं, यदि आप यह चाहते हैं कि राष्ट्रपति ऐसे लोगों का सच्चा प्रतिनिधि हो, जो उसे खण्ड 1 के उप-खण्ड 2 में उल्लिखित निर्वाचक मण्डल द्वारा वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनेंगे, तो जहां तक विशेष रूप से रियासतों का सम्बन्ध है, वह उनकी जनता का प्रतिनिधि नहीं हो सकता। इसलिये मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं।

*__श्री मोहम्मद शरीफ__ (मैसूर): श्रीमान्, मेरी राय में संघ के राष्ट्रपति का निर्वाचन बालिग मताधिकार के आधार पर होना चाहिये। यह सर्वथा वांछनीय होगा कि जो व्यक्ति शासन प्रबन्ध चलायेगा और जिसे इतने अधिकार और जिम्मेदारियां सौपी जायेंगी, उसका चुनाव इसी आधार पर किया जाये। प्रत्येक अधिकृत मतदाता को यह सन्तोष होना चाहिये कि जो व्यक्ति सारे राष्ट्र का शासक होगा उसके चुनाव में उसका भी हाथ था। यह कहा गया था कि यदि इस तरीके पर अमल किया गया तो उसमें बहुत-सा समय बर्बाद हो जायेगा और खासकर ऐसे मौके पर जब कि जनता की जानकारी और साक्षरता का स्तर इतना ऊंचा नहीं है, और इस प्रणाली पर सन्तोषजनक रूप से अमल भी नहीं हो सकेगा। साथ ही यह भी तर्क पेश किया गया था कि यदि इस तरीके पर काम किया गया तो भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी और इसी प्रकार की अन्य बहुत-सी घृणित और

[श्री मोहम्मद शरीफ]

दूषित प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन मिलेगा। श्रीमान्, मेरे विचार में, इस प्रणाली से प्राप्त होने वाले लाभों की अपेक्षा भी कठिनाइयां बहुत कम होंगी। स्वयं निर्वाचन एक बड़ा भारी सबक होगा। इससे जनता को अपना राजनीतिक दृष्टिकोण व्यापक बनाने का अवसर मिलेगा और अनेक अन्य लाभ भी प्राप्त होंगे।

ऐसी परिस्थितियों में, मेरी राय है कि राष्ट्रपति का चुनाव बालिग मताधिकार के आधार पर ही होना चाहिये। इसके अलावा जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूं कि इस प्रकार चुनाव पर अन्य वोटरों के समर्थन की मोहर भी लग जायेगी। इसलिये मैं इस प्रस्ताव का विरोध करता हूं।

***श्री तजम्मुल हुसैन** (बिहार : मुस्लिम)**:** श्रीमान्, भाग 4 के खण्ड 1 के उपखण्ड 1 में कहा गया है कि राष्ट्र का अध्यक्ष राष्ट्रपति (प्रेसीडेण्ट) कहलायेगा और प्रजातंत्र का कोई भी व्यक्ति या नागरिक, जिसकी आयु 35 वर्ष की है, संघ का राष्ट्रपति चुना जा सकेगा। श्रीमान्, इस बारे में एक संशोधन पेश किया गया है कि राष्ट्रपति का चुनाव बारी-बारी से हो अर्थात् एक बार राष्ट्रपति उत्तरी भारत से चुना जाये और दूसरी बार दक्षिण भारत से। इसके लिये माननीय प्रस्तावक ने यह दलील पेश की है कि दक्षिण भारत के लोग उत्तरी भारत से सर्वथा विभिन्न हैं। श्रीमान् मेरी राय में यह एक बहुत खतरनाक सिद्धान्त है। यदि आप यह सिद्धान्त स्वीकार करते हैं कि राष्ट्रपति के चुनाव के लिये स्थान सुरक्षित रखा जाये तो हो सकता है कि प्रत्येक प्रान्त यह दावा पेश करे कि बारी-बारी से राष्ट्रपति अमुक-अमुक प्रान्त से लिया जाये।

मिसाल के तौर पर पश्चिमी बंगाल के लोग यह कह सकते हैं कि वे शेष भारत से बिल्कुल भिन्न हैं।

***एक माननीय सदस्य:** नहीं, नहीं।

***श्री तजम्मुल हुसैन:** मुझे खुशी है कि एक आवाज मुझे नहीं, नहीं की भी सुनाई पड़ रही है। एक सूबे में दूसरे सूबे से कोई फर्क नहीं होना चाहिये। इसलिये श्रीमान्, मेरी राय है कि चूंकि राष्ट्रपति का पद समस्त राज्य में सर्वोच्च है और वह प्रजातंत्र का सबसे बड़ा अधिकारी है, अत: हमें सर्वोत्तम व्यक्ति को उस पद पर अधिष्ठित करना चाहिये; हमें इससे कोई सरोकार नहीं कि वह कहां का रहने वाला है। यह सर्वथा सम्भव है कि जब चुनाव हो रहा हो तो उस समय हमें

सबसे योग्य व्यक्ति कोई बिहारी, या ईसाई, या जैन अथवा पारसी ही मिले, और उसे राष्ट्रपति चुन लिया जाये। इसलिये, मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं।

भाग 4 के खण्ड 1 के उपखण्ड 2 के पैरा (ब) में कहा गया है कि जिस प्रान्त में दो धारा-सभायें होंगी, वहां राजसभा को प्रजातंत्र के राष्ट्रपति के निर्वाचन में भाग लेने का अधिकार नहीं होगा। बिहार के रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय ने इस बारे में यह संशोधन पेश किया है कि राजसभा को भी यह अधिकार मिलना चाहिये। जैसा कि आप जानते हैं कि उप-वाक्य खण्ड (अ) के अन्तर्गत केन्द्रीय धारासभा की दोनों सभाओं को संघ के राष्ट्रपति के चुनाव में भाग लेने का अधिकार दिया गया है। केन्द्रीय धारासभा की राजसभा और प्रान्तीय धारासभा की राजसभा में कोई फर्क नहीं है। दोनों को ही विशेष प्रतिनिधित्व प्राप्त है। यदि आप राजसभा को समाप्त कर देते हैं तो और बात है। मैं लोकतंत्रीय सिद्धान्त पर आपका समर्थन करने को तैयार हूं, लेकिन हमने केंद्रीय धारासभा के अन्तर्गत एक राजसभा रखने का फैसला किया है और कुछ प्रान्तों के लिये भी हमने ऐसा ही निर्णय किया है। ऐसी हालत में, मेरी राय है कि केन्द्रीय और प्रान्तीय धारासभाओं की राजसभाओं के सदस्यों की योग्यतायें एक समान ही होनी चाहियें, अर्थात् प्रान्तीय धारासभा को राजसभा के सदस्यों को भी संघ के राष्ट्रपति के निर्वाचन में भाग लेने का अधिकार होना चाहिये। मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि किसी प्रान्तीय धारासभा की राजसभा के सदस्यों को उनके साधारण अधिकारों, विशिष्ट अधिकारों और प्रजातन्त्र के लिये स्वयं अपना राष्ट्रपति चुनने की स्वतंत्रता से क्यों वंचित रखा जाये। इसलिये मैं श्री श्यामनंदन सहाय के संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी** (देशीराज्य : मैसूर) अध्यक्ष महोदय, कल मैं नामज़दगियों के सम्बन्ध में हो रही बहस में और खासकर उनसे सम्बन्ध रखने वाले सिद्धान्तों में बड़ी दिलचस्पी ले रहा था। हमारे एक योग्य सहयोगी कह रहे थे कि नामज़दगियों की प्रणाली को खासकर रियासतों में समाप्त कर देना चाहिये और यदि इस प्रणाली को कहीं और अपनाया जाये तो वह आपत्तिजनक नहीं होगी। श्रीमान्, मुझे इस सुझाव का यह तर्क समझ में नहीं आया। यदि नामज़दगियों की प्रथा बुरी है तो वह सभी जगह बुरी है और अगर हम उसे स्वीकार करते हैं तो उसे सैद्धान्तिक दृष्टि से सभी जगह मानना चाहिये। मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि यदि कोई निर्वाचित व्यक्ति नामज़दगियों की प्रणाली पर अमल करता है तो हम उसे पवित्र और युक्तियुक्त क्यों समझते हैं

[श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी]

और उसकी इस कार्रवाई को न्यायोचित और ठीक क्यों कर कहते हैं, और इसके विपरीत यदि किसी रियासत का शासक स्वयं अथवा अपने निर्देश के अन्तर्गत कोई नामज़दगी करता है तो उसे गलत और बुरा क्यों समझा जाता है? मुझे तो इसमें कोई औचित्य नहीं दिखाई देता कि एक जगह तो हम नामज़दगियों के सिद्धान्त को ठीक समझें और दूसरी जगह उसे गलत और अनुचित। यदि आप नामज़दगियों को बिल्कुल ही खत्म कर देना चाहते हैं तो हमें यह काम निर्भीक होकर और ताल ठोककर करना चाहिये। लेकिन, यदि विभिन्न स्वार्थों को प्रतिनिधित्व देने के लिये हमें नामज़दगियों को जारी रखना है तो हमें उन्हें रियासतों और अन्य इकाइयों में भी ज़ारी रखने में कोई एतराज़ नहीं होना चाहिये। किसी को यह डर नहीं होना चाहिये कि यह नामज़दगियां बहुत भारी तादाद में की जायेंगी। हमें यह आशंका नहीं होनी चाहिये कि कोई शासक ऐसे व्यक्ति को चुनेगा जो दूसरे लोगों के सभी अच्छे कामों पर पानी फेर देगा। वास्तव में, अगर हमें कोई खतरा दिखाई दे तो हमें सम्बद्ध शासक को उचित कदम उठाने के लिये और सभी स्वार्थों का प्रतिनिधित्व करने वाले लोगों को चुनने पर राज़ी कर लेना चाहिये। इसलिये, मैं यह बात फिर दोहराना चाहता हूं कि यदि हमें इस सभा में अथवा संघीय धारासभा के राष्ट्रपति को नामज़दगियों की प्रणाली को अपनाना है, तो फिर इसमें कोई तर्क नहीं कि वह प्रणाली अन्यत्र ठीक नहीं होगी।

एक और प्रवक्ता का यह कहना था कि इस तरीके से हम रियासतों अथवा अन्य इकाइयों को चुनाव की पद्धति पर अमल करने के लिये विवश कर सकेंगे। "विवश" करने का शब्द बहुत खटकने वाला है। यह कोई बहुत अच्छा शब्द नहीं है। किसी व्यक्ति को अपना दृष्टिकोण मनवाने अथवा उस पर अमल करने के लिये मजबूर करना कोई अच्छा और मुनासिब उसूल नहीं है। हमारी कोशिश तो उसे अपना कायल बना लेने की होनी चाहिये। इसलिये, श्रीमान्, यदि एक बार इस सभा में अध्यक्ष द्वारा नामज़दगियों का सिद्धान्त मान लिया जाता है तो सिद्धान्त के रूप में उसे और जगह भी अमल में लाने की आज़ादी होनी चाहिये। लेकिन जैसा कि मैं कह चुका हूं कि मेरे तर्क का आधार वास्तविक स्थिति न होकर सिद्धान्त हैं। मैं इस सम्मानित और महती सभा से अपील करूंगा कि चूंकि भारत के प्रस्तावित विधान में नामज़दगी का सिद्धान्त मान लिया गया है, इसलिये उस पर अन्यत्र अमल करने की भी आज़ादी होनी चाहिये और इस प्रकार निश्चय ही देश की जनसंख्या के उस भाग के साथ भी न्याय हो जायेगा जिसे अन्यत्र प्रतिनिधित्व नहीं मिलेगा।

श्रीमान्, अब मैं एक और दिलचस्प, अथवा अधिक परेशानी पैदा करने वाले सवाल को उठाता हूं, अर्थात् उत्तर और दक्षिण रियासतें अथवा गैर-रियासतें। श्रीमान्, जहां तक मेरा निजी ताल्लुक है, मैं उत्तर या दक्षिण को एक दूसरे से अलग-अलग नहीं मानता। मैं उन लोगों में से हूं जिनका यह दृढ़ विश्वास है कि कोई भी व्यक्ति, यदि उसमें आवश्यक योग्यता है और उसे मौका दिया जाता है तो वह दूसरों पर अपना सिक्का खुद ही बिठा लेगा। सवाल सिर्फ मौका मिलने का है। यह किसी प्रादेशिक विभाजन का प्रश्न नहीं है। हमें मालूम है कि किन खास कारणों से बहुधा उत्तर और दक्षिण वाले एक दूसरे से सशंकित रहा करते हैं। मेरे जैसा व्यक्ति जो दूर दक्षिण में मैसूर का रहने वाला है, यह महसूस करता है कि उत्तर के लोगों को इस विधान-परिषद् में उनके उचित अधिकार से कहीं अधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त है और भविष्य में ऐसा नहीं होना चाहिये। श्रीमान्, जब मैं ईमानदारी के साथ यह अनुभव करता हूं कि विभिन्न कारणों से कुछ समय से दक्षिण की उपेक्षा की गई है तो मैं इसका दोष किसी व्यक्ति के मत्थे अथवा जनता के किसी भाग पर नहीं मढ़ता। लेकिन मैं यह महसूस ज़रूर करता हूं कि दक्षिण की कुछ सीमा तक उपेक्षा अवश्य ही की गई है। लेकिन यह तो प्रश्न दक्षिण की जनता को मौका देने का है। अगर मौका मिले, तो मैं निश्चित रूप से कह सकता हूं कि दक्षिण के रहने वाले लोग यदि अधिक नहीं तो कम से कम उत्तर के लोगों के समकक्ष तो अपने को साबित कर ही सकते हैं।

श्रीमान्, रियासतों और गैर-रियासतों का यह सवाल भी वास्तव में बड़ा टेढ़ा और परेशान करने वाला है। मैं चूंकि खुद एक रियासत का रहने वाला हूं, इसलिये मेरी यह प्रबल अभिलाषा है कि रियासत के किसी व्यक्ति को भारत का राष्ट्रपति बनने का मौका दिया जाये। लेकिन यह भी एक दूषित चक्र ही समझिये। रियासतें समस्त भारतीय उपनिवेश का एक-तिहाई भाग हैं। इसके अलावा एक और परेशानी इस सम्बन्ध में निर्धारित की गई योग्यताएं और अन्य बातें हैं। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मैं चुनाव के लिये रियासतों और गैर-रियासतों को अलग-अलग रखने की बात नहीं मान सकता। जैसा कि मैं पहले भी कह चुका हूं कि यदि आवश्यक अवसर दिया जाये, रियासतों को आवश्यक प्रतिनिधित्व दिया जाये, तो कोई भी व्यक्ति जो दृढ़ विश्वास, साहस और ईमानदारी के साथ तथा निर्भय होकर अपने विचार प्रकट कर सकता है, भारतीय विधान में अपना स्थान प्राप्त कर सकता है।

श्रीमान्, विधान के अन्तर्गत गैर-रियासतों और रियासतों के लिये स्थान सुरक्षित रखना अथवा बारी-बारी से राष्ट्रपति के निर्वाचन की प्रणाली पर

[श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी]

अमल करना बहुत कठिन है। मैं "विधान" शब्द पर खास तौर से ज़ोर देना चाहता हूं। श्रीमान्, इन बातों पर हमें खूब सोच-विचार करना चाहिये और इनके लिये "परम्पराओं" के अन्तर्गत समुचित व्यवस्था कर देनी चाहिये। आज हम भारत के लिये नया विधान तैयार कर रहे हैं और स्वयं विधान भी एक नये परिवर्त्तन का प्रतीक है। हम इस विधान पर दो-तीन साल तक अमल करके देख लें और उसके बार अगर हमें कोई कठिनाई पेश आये तो हम उसमें आवश्यक परिवर्त्तन कर सकते हैं। इसके अलावा, इस काम के लिये मैं कदापि धारासभा की सहायता नहीं चाहूंगा। जैसा कि मैं कह चुका हूं कि इस समस्या को सुलझाने का एकमात्र तरीका उत्तर और दक्षिण तथा रियासतों और गैर-रियासतों के मध्य सद्भावना बनाये रखना और एक दूसरे को समझने की कोशिश करना तथा स्वस्थ परम्परा की स्थापना है। कानून की मदद से हम इस समस्या को कभी हल नहीं कर सकते।

इस सिलसिले में, मैं आपका ध्यान मद्रास के मेयर पद के प्रश्न की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। जहां तक मद्रास के मेयर के निर्वाचन का प्रश्न है, प्रान्त में बड़े झगड़े थे। हमें सर रामास्वामी मुदालियर का कृतज्ञ होना चाहिये कि आज से कुछ वर्ष पूर्व, जब कि उनका इस प्रश्न से कोई सम्बन्ध भी नहीं था, उन्होंने एक परम्परा की नींव रखी। और उस परम्परा पर आज भी अमल हो रहा है और उस परम्परा के अनुसार विभिन्न सम्प्रदायों तथा वर्गों के व्यक्ति मद्रास के मेयर चुने जाते हैं। अपने राष्ट्रपति के निर्वाचन में भी हम इसी परम्परा पर आचरण कर सकते हैं। यह कोई कठिन काम नहीं है। श्रीमान्, मैं यह बात फिर दोहराना चाहता हूं कि उत्तर और दक्षिण तथा रियासतों और गैर-रियासतों के बीच परम्परा, समझौते और सद्भावना की स्थापना द्वारा ही यह समस्या सुलझ सकेगी, किसी कानून अथवा कानून की धारा के ज़रिये नहीं।

श्रीमान्, अब मैं एक और छोटे से परन्तु महत्वपूर्ण विषय को उठाना चाहता हूं; और यह विषय है शपथ-ग्रहण का, जिसे मेरे माननीय और योग्य सहयोगियों ने इतनी सुन्दरता के साथ उपस्थित किया है। उन्होंने इसे अत्यधिक महत्वपूर्ण प्रश्न बताया है और मेरी समझ में नहीं आता कि संघीय-विधान की इस रिपोर्ट में यह खामी किस प्रकार रह गई। इसमें शपथ उठाने की कोई व्यवस्था नहीं की गई। श्रीमान्, यह व्यवस्था तो संसार में सभी जगह पाई जाती है। सभी सुव्यवस्थित सरकारों में यह व्यवस्था है कि राष्ट्र का अध्यक्ष अपना पद ग्रहण करने से पूर्व शपथ लेता है। यह बात भारत सरकार के लिये सर्वथा उचित और उपयुक्त होगी

कि राष्ट्रपति किसी उपयुक्त अधिकारी के सामने हलफ़ उठाये कि वह इस समय तैयार हो रहे और भविष्य मे कार्यान्वित किये जाने वाले विधान की रक्षा करेगा।

श्रीमान्, इन शब्दों के साथ मैं सभा से इन संशोधनों और सिद्धान्तों को जिन्हें मैंने अभी पेश किया है, स्वीकार करने की सिफ़ारिश और अनुरोध करता हूं।

*__पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र__ (पश्चिमी बंगाल : जनरल): श्रीमान्, मैं कोई भाषण नहीं देना चाहता। मैं यह कहना चाहता हूं कि हम जिस रफ्तार से चल रहे हैं, वह बड़ी धीमी है। मुझे डर है कि इस रफ्तार से हम अपने निर्धारित समय के अनुसार काम नहीं कर सकेंगे। मेरी राय है कि इस समय जबकि हम केवल विधान के सिद्धान्तों पर सोच-विचार कर रहे हैं, हमें भारतीय-संघ-विधान के समस्त क्षेत्र पर सोच-विचार न करके अपनी बहस केवल विशिष्ट वाक्यखण्ड अथवा संशोधन तक ही सीमित रखनी चाहिये।

*__अध्यक्षः__ मैं आपसे पूर्णतः सहमत हूं कि हमें विधान के समस्त क्षेत्र पर बहस न करके केवल विशिष्ट संशोधन पर जो पेश किया गया हो अथवा किसी विशिष्ट वाक्यखण्ड तक जिस पर बहस चल रही हो, अपना क्षेत्र सीमित रखना चाहिये। मैं सदस्यों से यह प्रार्थना भी करूंगा कि वे अपने भाषण के लिये पांच मिनट से अधिक समय न लें, जब तक कि किसी खास मामले में मैं यह न महसूस करूं कि जिस सवाल पर बहस की जा रही है, वह इस किस्म का है कि उसके लिये अधिक समय की आवश्यकता पड़ेगी।

*__श्री एच.वी. कामत__ (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान्, कल इस सभा में दो संशोधन पेश किये गये थे, एक मेरे मित्र रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय द्वारा और दूसरा मेरे मित्र चनैया द्वारा।

श्री सहाय के संशोधन में यह कहा गया है कि जहां दो धारा-सभाएं हों, वहां राजसभा को भी राष्ट्रपति के चुनाव में भाग लेने का अधिकार होना चाहिये। मैं इस संशोधन का विरोध करने के लिये खड़ा हुआ हूं। यह सवाल उठाया गया था कि जबकि संघ की राजसभा को वोट देने का अधिकार दिया गया है, तो वैसा ही अधिकार प्रान्तीय धारासभाओं की राजसभा को क्यों नहीं दिया जाता? यदि मेरे मित्र दूसरे अध्याय पर तनिक दृष्टिपात करें तो उन्हें पता चल जायेगा कि राज्य परिषद् की स्थापना का प्रस्ताव इकाइयों की राजसभाओं से बिल्कुल मुख़तलिफ़ है। इसके अलावा, हमने राष्ट्रपति को संघीय पार्लियामेंट का एक अविछिन्न अंग स्वीकार किया है, जिसमें राष्ट्रपति और राष्ट्रीय असेम्बली रहेंगे

[श्री एच.वी. कामत]

और इस असेम्बली में राज्य-परिषद् और लोकसभा दोनों ही सम्मिलित होंगी। जहां राष्ट्रपति एक अविच्छिन्न अंग माना जायेगा और उसे संघीय विधान का एक नितांत आवश्यक अंग माना जायेगा, तो यह सर्वथा न्यायसंगत प्रतीत होता है कि दोनों ही सभाओं को राष्ट्रपति के निर्वाचन में भाग लेने का अधिकार प्रदान किया जाये।

दूसरा संशोधन मेरे मित्र श्री चनैया ने पेश किया था। वह संशोधन आश्चर्यजनक और उपहासास्पद प्रतीत होता है। श्रीमान्, ऐसे समय में जबकि हमने साम्प्रदायिक आधार पर भारत का विभाजन स्वीकार कर लिया है, श्रीमान्, ऐसे समय में जबकि विकेन्द्रीकरण और विभाजन की प्रवृत्तियों का बोलबाला हो, ऐसे समय में श्रीमान्, जबकि हममें से अधिकांश लोग देश को फिर से एकता के सूत्र में आबद्ध करना चाहते हों और उसे पुन: उसके अतीतकालीन पद पर अधिष्ठित करना चाहते हों, नि:संदेह यह एक बड़ी विलक्षण और हास्यजनक बात है कि इस सभा का एक सदस्य उठकर हमारे देश के उत्तरी और दक्षिणी भागों में विषमता दिखाने की कोशिश करे। मेरा तो यह खयाल था कि विंध्याचल पर्वत के पार अगस्त्य के पदार्पण और बाली तथा रावण के साथ श्रीराम के युद्ध के बाद उत्तर और दक्षिण का यह भेद सदैव के लिये मिट गया होगा। यूरोप में हमने मैजिनों रक्षापंक्ति के बारे में सुना है, हमने यूरोप की कर्जन और ड्यूरेण्ड रक्षापंक्ति के बारे में भी सुना है। यदि श्री चनैया का संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है तो निकट भविष्य में ही हमें भारत के उत्तरी और दक्षिणी भागों के बीच एक चनैया रक्षापंक्ति भी स्थापित हुई मिलेगी। ऐसे समय में जबकि हम एक शक्तिशाली और दृढ़ राष्ट्र की स्थापना की कोशिश कर रहे हैं, जबकि हम अतीत के समस्त भेदभाव और अंतर को मिटाने का प्रयत्न कर रहे हैं, जबकि अत्यधिक अनिच्छापूर्वक साम्प्रदायिक आधार पर देश का बंटवारा मंजूर कर लिया गया है, यह निश्चय ही एक आश्चर्य की बात है कि इस सभा में इस तरह का कोई संशोधन उपस्थित किया जाये। श्रीमान्, ठीक इसी वजह से कम से कम फ़िलहाल मैं भाषा के आधार पर प्रान्तों के पुनर्विभाजन के भी ख़िलाफ़ हूं। इस समय तो हमें अपनी सारी शक्तियां एक महान् और बड़े भारतीय संघ की स्थापना में लगा देनी चाहियें। हमें अपनी सारी ताकत देश को फिर से एकता के सूत्र में संघठित करने के काम में लगा देनी चाहिये। श्रीमान्, हमें एक सुदृढ़, संयुक्त, अखण्ड और स्वतंत्र भारत की स्थापना के अपने आकांक्षित उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर देना चाहिये। हम भारत को

समस्त राष्ट्र की भलाई और कल्याण के लिये प्रयत्नशील और संसार की शान्ति के लिये कटिबद्ध देखना चाहते हैं। हम भारत को एक ऐसा देश बनाना चाहते हैं जहां सभी भारतीय हिन्दू, मुस्लमान, ईसाई, पारसी अथवा सिख एक दूसरे से कन्धे से कन्धा भिड़ाकर चलें, सभी अपने को एक ही सुदृढ़, संयुक्त और स्वतंत्र देश का नागरिक समझें। श्रीमान्, हमारे मस्तिष्क में सर्वोपरि विषय इस समय यही है। हम अभी तक पुनः अपने देश की एकता का स्वप्न पूरा करने की आशा करते हैं। उस सुप्रसिद्ध गीत की भावना से प्रेरित होकर जो आज सभी भारतीयों की जुबान पर है:

हर सूबे के रहने वाले, हर मजहब के प्राणी,
सब भेद और फर्क मिटाके, सब गोद में तेरी आके;
गूथें प्रेम की माला।
सूरज बनकर जग में चमके—भारत नाम सुभागा।

मैं इस सिद्धान्त का विरोध करता हूं जिसका प्रतिपादन कल मेरे मित्र श्री चनैया ने उत्तर और दक्षिण भारत को पृथक करने की कोशिश करते समय किया था। श्रीमान्, मेरे एक मित्र ने कहा है कि दक्षिण की उपेक्षा की गई है। मेरी समझ में नहीं आता कि कैसे और किस प्रकार दक्षिण भारत की उपेक्षा की गई है। यदि मेरे मित्र यह कहना चाहते हैं कि दक्षिण का अर्थ केवल मद्रास है, तो मैं उनसे सहमत नहीं। मैं यह चाहूंगा कि सबसे पहले वे यह बतायें कि दक्षिण भारत से उनका आशय किस बात से है, क्या दक्षिण का तात्पर्य केवल मद्रास से है अथवा मद्रास और बम्बई से तथा विभिन्न सम्बद्ध प्रदेश से। मेरा तो यह पक्का यकीन है कि दक्षिण की कतई उपेक्षा नहीं की गई। आज दक्षिण भारत की ही दो रियासतें, हैदराबाद और ट्रावनकोर, हमें सबसे अधिक परेशान कर रही हैं। अगर इसकी वजह उपेक्षा है और यदि इसकी वजह महत्वहीन होता है, तो श्रीमान्, मुझे नहीं मालूम कि मेरे मित्र का वास्तविक आशय क्या है। दक्षिण की ये दोनों रियासतें, श्रीमान्, आज हमारे अधिकांश राजनीतिज्ञों और नेताओं के लिये आधुनिक राजनीति के क्षेत्र में बहुत भारी परेशानी पैदा कर रही हैं। यदि मेरे मित्र के विचार में दक्षिणी भारत की उपेक्षा की गई है तो, श्रीमान्, मेरी समझ में नहीं आता कि वे यह बात कैसे भूल जाते हैं कि बम्बई और मद्रास के प्रमुख राजनीतिज्ञ ने राजनीतिक प्रगति और हमारी मातृभूमि के राजनीतिक विकास में कितना महत्वपूर्ण भाग लिया है।

[श्री. एच.वी. कामत]

श्रीमान्, इसके अलावा एक और बात यह कही गई थी कि संघ के राष्ट्रपति को शपथ लेनी चाहिये। मैं इससे सहमत हूं लेकिन यह स्थान उस शपथ के उल्लेख करने का नहीं है। जब भारतीय विधान का मसविदा अन्तिम रूप से तैयार किया जायेगा तो निश्चय ही शपथ का भी उसमें उल्लेख रहेगा। यहां तो हम केवल विधान के सिद्धान्तों पर सोच-विचार कर रहे हैं और इसलिये मेरी राय में इस जगह राष्ट्रपति द्वारा ली जाने वाली शपथ का उल्लेख सर्वथा अनुचित प्रतीत होता है। श्रीमान्, इस सम्बन्ध में, हम यह भी कह सकते हैं कि धारासभा के सदस्यों को भी देश के प्रति वफ़ादार रहने की शपथ ग्रहण करनी चाहिये, लेकिन आप इस प्रकार की किसी बात का कोई उल्लेख नहीं कर रहे यह तो केवल विस्तार और तफ़सील की बातें हैं, जिनका ख्याल हमें अन्तिम रूप से विधान का मसविदा बनाते समय करना होगा। इसलिये, श्रीमान्, मैं सभा का समय नहीं लेना चाहता हूं। मैं रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय और अपने मित्र श्री चनैया द्वारा पेश किये गये संशोधनों का विरोध करता हूं।

***श्री अजित प्रसाद जैन** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): जनाब वाला, जो प्रस्ताव पं. जवाहरलाल नेहरू ने पेश किया है, मैं उसका समर्थन करने के लिये खड़ा हुआ हूं। प्रेसीडेंट के चुनाव की जो स्कीम यहां रखी गई है, मैं समझता हूं, वह बहुत मुनासिब है। यहां पर कुछ आनरेबल मेम्बरस् ने यह तजवीज़ की थी कि प्रेसीडेंट का चुनाव बालिग मताधिकार से हो, इसके ख़िलाफ़ काफ़ी वजुहात बतलाई जा चुकी हैं, लेकिन मैं इतना अर्ज़ करना चाहता हूं कि ख़ास तौर से इस तजवीज़ का वह हिस्सा जिसमें यह कहा गया है कि मेम्बरों के वोटों को मुख़्तलिफ़ वजन दिया जायेगा याने वह मेम्बर जो कम आदमियों की नुमायन्दगी करते होंगे उनके वोट को हल्का समझा जायेगा और जो ज़्यादा आदमियों की नुमायन्दगी करेंगे उनको भारी समझा जायेगा। वह उस कमी को पूरा करता है जो आमतौर से राहेरास्त चुनाव न होने से पैदा होती है। एक मिसाल यह भी दी गई है कि अमरीका के अन्दर जहां की आबादी 13 या 14 करोड़ की है प्रेज़ीडेंट का चुनाव बालिग मताधिकार से होता है। मैं इतना अर्ज करना चाहता हूं कि वहां यह मुनासिब समझा गया है कि बराहेरास्त नहीं बल्कि एक एलेक्टोरल कालेज कायम करके प्रेसीडेंट का चुनाव हो। यहां भी एक एलेक्टोरल कालेज की तजवीज़ है। यह एलेक्टोरल कालेज चुने हुए मेम्बरों का होगा और इस तरह प्रेसीडेंट का चुनाव भी जनता के मत के अनुसार ही होगा। मुझे इसके मुतल्लिक इतना ही अर्ज़ करना था, लेकिन मुझे चंद दिक्कतें मालूम होती हैं। इस तजवीज़ में जो

पं. जवाहरलाल नेहरू ने रखी है प्रेसीडेंट का चुनाव इस तजवीज़ के मुताबिक एक इलेक्टोरल कालेज से होगा। उस इलेक्टोरल कालेज के मेम्बर फैडरल पार्लियामेंट के कुछ मेम्बर होंगे यानी कौंसिल आफ स्टेट के कुल मेम्बरान और हाउस आफ पीपुल्स के कुल मेम्बरान को इस चुनाव में वोट देने का हक होगा। साथ-साथ हिन्दुस्तान के तमाम सूबे और देशी रियासतों के मेम्बरों को इसमें वोट देने का एक हक दिया गया है। जहां तक युनिट लेजिस्लेचर के मेम्बरों के वोट देने का ताल्लुक है, इसमें यह कहा गया है कि उनके वोटों को मुख्तलिफ वजन दिया जायेगा। मसलन यहां वह मेम्बर जो दस हजार आदमियों की नुमायन्दगी करता है, अगर उसे 10 वोट मिलेंगे तो दूसरे मेम्बर को जो एक लाख आदमियों की नुमायन्दगी करता है 100 वोट दिये जायेंगे। जहां तक युनिट लेजिस्लेचर का ताल्लुक है यह बहुत सही, बहुत अच्छा तरीका है लेकिन इस तजवीज़ में यह नहीं बतलाया गया कि जो फेडरल पार्लियामेंट के मेम्बर होंगे यानी जो हाउस आफ पीपुल और कौंसिल आफ स्टेट के मेम्बर होंगे उनके वोट को कोई वजन दिया जायेगा या न दिया जायेगा या उनके वोट का क्या निस्बत होगा। युनिट लेजिस्लेचर के मेम्बर वोटों से मौजूदा हालत में इस तजवीज़ के मायने यह हैं कि हाउस आफ पीपुल का जो मेम्बर होगा उसको खाली एक वोट मिलता है। अगर इसके यह माने होते हैं तो मैं समझता हूं कि यह एक निहायत गलत चीज़ है। इस मसविदे में जो हमें दिया गया है, आगे चल कर यह बताया गया है कि हाउस आफ पीपुल का एक मेम्बर औसतन 10 लाख आबादी की नुमायन्दगी करेगा और अगर उसे एक ही वोट मिलता है तो उसके माने यह हैं कि वह आदमी जो युनिट लेजिस्लेचर का मेम्बर है और सिर्फ खाली 10 हजार आदमियों की नुमायन्दगी करता है उसे इस हिसाब से दस वोट मिलते हैं और वह आदमी जो फेडरल लेजिस्लेचर का मेम्बर है यानी हाउस आफ पीपुल में दस लाख आदमियों की नुमायन्दगी करता है, उसका इस हिसाब से एक वोट रहता है। मैं समझता हूं यह बात मुनासिब न होगी और इस पर दुबारा गौर किया जाये कि फेडरल हाउस आफ पार्लियामेंट के मेम्बरों को भी वोट का एक मुनासिब और सही वजन दिया जाये ताकि नुमायन्दगी ठीक तरीके से हो सके।

इसमें एक और भी दिक्कत मुझे मालूम होती है। मुमकिन हो सकता है कि देशी रियासतों में किसी किस्म का नामिनेशन भी रखा जाये और इस हालत में यह कहना मुश्किल होगा कि वह लोग जो नामिनेट या नामजद किये जावेंगे उनके वोट की क्या कीमत होगी। कुछ ऐसी भी कांस्टिट्यूऐंसी हो सकती हैं जो

[श्री अजित प्रसाद जैन]

टेरिटोरियल कांस्टिट्यूऐंसी न हो जैसे युनिवर्सिटी कांस्टिट्यूऐंसी है या लेबर कांस्टिट्यूऐंसी है। जहां तब सूबों का ताल्लुक है हमने यह तय कर लिया है कि सूबों में टेरिटोरियल कांस्टिट्यूऐंसी होगी और कोई खास नुमायन्दगी वहां पर न दी जायेगी। लेकिन रियासतों में मुमकिन हो सकता है कि कुछ टेरिटोरियल कांस्टिट्यूऐंसी हो कुछ न हो, और वहां यह भी मुमकिन हो सकता है कि कुछ नामजदगी हों। आपने मुख्तलिफ वोटों को जो यह वजन देने का तरीका निकाला है उससे एक दिक्कत पैदा हो सकती है कि वह लोग जो नामजद हों उनके वोट को किस कदर वजन दिया जाये और अगर आप यह भी तय करते हैं कि फेडरल पार्लियामेंट के मेम्बरान के वोटों को भी किसी किस्म का वजन दिया जाये, हालांकि इस तजवीज में कोई ऐसी बात नहीं है, तब भी यह सवाल पैदा होता है कि कौंसिल आफ स्टेट के अन्दर आपने कुछ लोगों को नामजद करने की तजवीज रखी है और अगर उन्हें नामजद किया जाता है तो उनके वोट का क्या वजन होना चाहिये। बहरहाल, मैं इस तरफ तवज्जह दिलाना चाहता हूं आपकी फेडरल पार्लियामेंट के मेम्बरान के वोटों के बारे में कोई साफ और सही तौर से यह तजवीज आ जानी चाहिये कि उनके वोट को किस कदर वजन दिया जायेगा और किस तरह से उनके वोट की शुमार होगी।

इन्ही चन्द अलफाज़ के साथ मैं उम्मीद करता हूं कि जो तजवीज मैंने आपके सामने पेश की है उस पर गौर किया जायेगा।

***अध्यक्षः** अभी मेरे पास तीन और वक्ताओं के नाम हैं। मैं देख रहा हूं कि कुछ और सदस्य भी बोलने के लिये खड़े हो रहे हैं। इस वाक्य खंड के सम्बन्ध में आज हम एक घंटे तक बहस कर चुके हैं और कल भी हमने लगभग एक घंटा लिया था। यदि हम इसी रफतार से बहस करते रहे तो मेरा खयाल है कि अगले बृहस्पति तक हम एक भी भाग पूरा नहीं कर सकेंगे और उसके बाद हम अपना अधिवेशन स्थगित कर देना चाहते हैं। इसलिये मैं सदस्यों से प्रार्थना करूंगा कि वे अपने भाषण छोटे और संक्षिप्त कर दें और यदि किसी प्रश्न पर किसी सदस्य द्वारा पहले ही प्रकाश डाला जा चुका हो तो कृपया वे उस पर पुनः भाषण न दें और उन्हीं युक्तियों को फिर न दोहरायें।

***डा. पी.एस. देशमुखः** श्रीमान्, क्या मैं यह सुझाव पेश कर सकता हूं कि वक्ताओं के नाम देने की प्रणाली बन्द कर दी जाये और उसकी जगह भाषण

करने की इजाजत केवल उसी सदस्य को दी जाये जिसकी ओर अध्यक्ष का ध्यान आकर्षित हो जाये।

***अध्यक्षः** मुझे यह मंजूर है। भविष्य में, मैं किसी सदस्य की पर्ची नहीं स्वीकार करूंगा। जिसकी ओर मेरा ध्यान जायेगा, मैं उसे बोलने की इजाजत दे दूंगा।

***श्री युधिष्ठिर मिश्र** (पूर्वी रियासत समूह संख्या 1): श्रीमान्, मैं वाक्य खंड 1 के उपवाक्य खंड (2) (ब) के सम्बन्ध में श्री के. चेंगलाराय रेड्डी के संशोधन का समर्थन करता हूं। श्री रेड्डी ने "सदस्य" शब्द की जगह "निर्वाचित सदस्य" शब्द रखने का संशोधन पेश किया है। सभा में उपस्थित बहुत से माननीय सदस्यों को यह शब्द अनावश्यक और व्यर्थ प्रतीत होगा, क्योंकि वर्तमान विधान के अन्तर्गत प्रांतीय धारासभाओं में कोई भी नामजद सदस्य नहीं होगा। परन्तु मैं माननीय सदस्यों को याद दिलाऊंगा कि रियासतों की धारासभाओं के विधान में इस प्रकार के परिवर्तन की व्यवस्था नहीं की गई है। बहुत सी रियासतों में, विशेष कर छोटी छोटी रियासतों की धारासभाओं में नामजद किये गये सदस्यों की भरमार है। वास्तव में कुछ रियासतों में तो कोई धारासभा ही नहीं है। मैं यहां उड़ीसा की रियासतों का प्रतिनिधि हूं और मैं इस सभा को बताना चाहता हूं कि वहां की कुछ रियासतों में कोई धारासभा ही नहीं है। जहां कहीं कोई धारासभा है भी, उसमें नामजद सदस्यों की इतनी अधिक भरमार रहती है कि निर्वाचित सदस्यों की उसमें कोई सुनता ही नहीं। कुछ रियासतों में वहां की राज्य कांग्रेस और प्रजामंडलों ने असंतोषजनक मताधिकार के कारण धारासभाओं के चुनाओं का बहिष्कार कर रखा है। जहां कहीं कोई धारासभा है, वहां मताधिकार संकुचित और सांप्रदायिक आधार पर हैं और उनमें नामजद सदस्यों की बहुत भारी संख्या रहती है। श्रीमान्, यदि आप नामजद सदस्यों को राष्ट्रपति के निर्वाचन में भाग लेने की इजाजत देंगे तो संभवत: कुछ रियासतें दिखावे के तौर पर झूठमूठ की और प्रतिनिधित्वहीन धारासभायें स्थापित करके प्रजातंत्र विरोधी तरीकों से चुनाव पर प्रभाव डालने की कोशिश करें। यदि भारत के भावी प्रजातंत्र के राष्ट्रपति के निर्वाचन में नामजद सदस्यों को भाग लेने की स्वतंत्रता दी गई तो लोकतंत्र की दृष्टि से यह एक बड़ा मजाक होगा। इसलिये मैं अपने मित्र श्री रेड्डी के संशोधन का समर्थन करता हूं।

साथ ही, श्रीमान्, मैं श्री चन्द्रशेखरय्या द्वारा पेश किये गये संशोधन का भी विरोध करता हूं। उनका कहना है कि राष्ट्रपति बारी बारी से रियासतों और

[श्री युधिष्ठिर मिश्र]

गैर रियासती इकाइयों से चुना जाये। यदि राष्ट्रपति के निर्वाचन पर इस प्रकार का प्रतिबन्ध लगाया जाता है तो रियासतों के लिये यह एक बड़े अपमान की बात होगी।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरी इस बहस में भाग लेने की कोई इच्छा नहीं थी । लेकिन, मैसूर रियासत के मेरे माननीय मित्र श्री रेड्डी ने जो सवाल उठाया है, उसकी वजह से मुझे बहस में शामिल होना पड़ रहा है। उन्होंने बारी-बारी से राष्ट्रपति के निर्वाचन की बात कही है और इसके समर्थन में उन्होंने मद्रास के म्युनिसिपल कारपोरेशन के मेयर के चुनाव का उदाहरण पेश किया है।

***एक माननीय सदस्य:** मैसूर के दो सदस्य हैं। श्रीमान्, इस उल्लेख का स्पष्टीकरण कर दिया जाये।

***अध्यक्ष:** (श्री सिधवा से) आपने वक्ता के नाम के सम्बन्ध में गलती की है।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान्, वे मैसूर के हैं। यह ठीक है कि मद्रास के म्यूनिसिपल कारपोरेशन में मेयर का चुनाव बारी-बारी से होता है। पहले साल एक ब्राह्मण चुना जाता है, दूसरे वर्ष एक अ-ब्राह्मण और तीसरे वर्ष एक हरिजन। बम्बई म्युनिसिपल कारपोरेशन में भी ऐसी ही प्रथा प्रचलित है। पहले साल एक हिन्दू चुना जाता है, दूसरे साल एक मुसलमान, तीसरे साल एक पारसी और चौथे साल एक ईसाई। कराची म्युनिसिपल कारपोरेशन में भी ऐसी ही प्रथा है। पहले साल एक पारसी चुना जाता है, दूसरे साल एक मुसलमान, तीसरे साल एक ईसाई और चौथे साल एक हिन्दू। कलकत्ता कारपोरेशन में भी ऐसी ही परम्परा है। भारत में मेयर के निर्वाचन की इस क्रमिक प्रणाली के विषय में चूंकि मेरा भी हाथ रहा है, इसलिये मैं यह कह सकता हूं कि इसका सूत्रपात इस उद्देश्य से किया गया था कि केवल इसी सम्मानित पद को सुशोभित करने के लिये प्रत्येक सम्प्रदाय को अवसर दिया जाये। श्रीमान्, मैं फिर कहता हूं कि केवल इसी सम्मानित पद को सुशोभित करने के लिये म्युनिसिपल कारपोरेशन की बैठकों का अध्यक्ष पद ग्रहण करने के अतिरिक्त मेयर को और कोई अधिकार नहीं प्राप्त है। श्रीमान्, मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि उसे शासन-सम्बन्धी

कोई अधिकार नहीं रहता, यद्यपि वह सम्बद्ध नगर का सर्वप्रथम नागरिक होता है। इसलिये आप मेयर के निर्वाचन की तुलना राष्ट्रपति के चुनाव से किसी भी हालत में नहीं कर सकते। भारत का राष्ट्रपति सर्वोत्तम व्यक्ति होगा। उसे शासन सम्बन्धी बहुत से अधिकार प्राप्त रहेंगे। उसे अपना प्रधानमंत्री और अपने मंत्री चुनने होंगे। उसे धारासभा को भंग करने का अधिकार होगा। इसके अलावा श्रीमान्, प्रस्तावित विधान के अन्तर्गत वह सेना का भी सर्वोच्च सेनापति होगा। तो क्या श्रीमान्, इन परिस्थितियों में आप राष्ट्रपति का निर्वाचन बारी-बारी से चाहेंगे? इसलिये मैं इस बात का जोरदार विरोध करूंगा कि राष्ट्रपति का निर्वाचन किसी साम्प्रदायिक आधार पर, अथवा क्रमिक प्रणाली या प्रान्तीय आधार पर किया जाये। हमें सर्वोत्तम व्यक्ति को राष्ट्रपति चुनना चाहिये। यदि निर्वाचित राष्ट्रपति सर्वोत्तम व्यक्ति है, तो हम उसे दूसरी बार फिर चुन सकते हैं—वह सर्वोत्तम व्यक्ति होगा, चाहे वह कोई भी क्यों न हो, चाहे वह उत्तर का हो, दक्षिण का अथवा पूर्व का। जैसा कि मैं कह चुका हूं कि हम यह कभी नहीं बरदाश्त कर सकते कि राष्ट्रपति साम्प्रदायिक अथवा प्रान्तीय अथवा किसी और आधार पर चुना जाये। मेयर के निर्वाचन की परम्परा राष्ट्रपति के चुनाव में नहीं लागू हो सकती। मेयर केवल एक नाममात्र का अध्यक्ष होता है। उसका काम केवल कारपोरेशन की बैठकों का सभापतित्व करना होता है। उसे कोई शासन सम्बन्धी अधिकार नहीं प्राप्त होते। इस परम्परा का एकमात्र उद्देश्य विभिन्न सम्प्रदायों को नगर के सर्वप्रथम नागरिक के उच्च और सम्मानित पद को सुशोभित करने का अवसर प्रदान करता है। इसलिये आप परम्परागत प्रणाली को राष्ट्रपति के निर्वाचन की लिये नहीं लागू कर सकते। इसलिये मैं इसका जोरदार विरोध करता हूं। इस सम्बन्ध में कोई संशोधन नहीं पेश किया गया। परन्तु हमारे सर्वोच्च नेताओं को भी प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से कोई ऐसी परम्परा अथवा व्यवस्था नहीं बनानी चाहिये जिससे कि हम अपने राष्ट्रपति का निर्वाचन प्रान्तीय आधार पर अथवा भारत के उत्तर, दक्षिण, पश्चिम अथवा पूर्व या पारसी, ईसाई अथवा मुसलमान की दृष्टि से कर सकें। सर्वोत्तम और सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति को ही राष्ट्रपति चुनना चाहिये। इसलिये श्रीमान् मैं राष्ट्रपति पद के लिये प्रान्तीय आधार पर निर्वाचन की परम्परा कायम करने का सख्त विरोध करता हूं।

***श्री आर.वी. धुलेकर** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): सभापति जी, जो यह पहली धारा पेश की गयी है उसके समर्थन में, मैं दो चार शब्द कहना चाहता हूं।

[श्री आर.वी. धुलेकर]

बहुत सी बातें इसके समर्थन में कही गयी हैं उन सबके सम्बन्ध में, मैं कुछ न कहूंगा। दो बातों की ओर आपका ध्यान आकर्षित करूंगा।

पहली बात यह है कि कुछ लोगों ने यह कहा है कि देशी राज्यों में अब तक चुनाव की बहुत बुरी नीति बरती गयी है। ये सज्जन यहां पर उनकी सरकार द्वारा या शासन द्वारा निर्वाचित करके भेज दिये गये हैं; ऐसा कहा गया है कि इन सज्जनों को इस चुनाव में भाग न लेना चाहिये। मेरा कहना है कि यदि उचित नीति को देखा जाये तो आपको यह मानना पड़ेगा कि जो शासक हममें सम्मिलित हो रहे हैं उनके साथ भी ब्रिटिश सरकार ने इतना ज्यादा अन्याय किया था जिसकी वजह से वह इतने भयभीत हैं और जैसा कि एक मसला है कि दूध का जला छाछ फूंक-फूंक कर पीता है। वह अन्याय सहते-सहते उनको यह मालूम होता है कि अगर संघ शासन में आयेंगे तो कदाचित हम कुचल दिये जायेंगे। मेरा कहना यह है कि उनको पहले यह नहीं समझना चाहिये कि वह गिरे हुये भारतवासी हैं। मैं तो समझता हूं कि उनकी भी परिस्थिति ही ऐसी थी जिसके कारण ब्रिटिश राज्य के अन्तर्गत रह कर वह जिस नीति को अपना सकते थे वैसी नीति को न अपना सके। इसलिये मैं समझता हूं कि इस समय इस बात को उठाना कि जो सदस्य नियोजित होकर आये हैं उनको अपने राष्ट्रपति के चुनाव में भाग न लेना चाहिये, यह ठीक नहीं है; इसलिये मैं समझता हूं कि इस समय उनकी यह बात हमको जरूर ही मंजूर करनी चाहिये और उनको समय देना चाहिये ताकि वह पूरा-पूरा समझ सकें कि संघ शासन में आ जाने से जो शासक वर्ग है और उनकी प्रजा दोनों मिलकर भारतीय संघ में वही स्थान प्राप्त करेंगे जो हमें प्राप्त है। जब उनको संघ शासन का लाभ मालूम हो जायेगा उस समय जो उनकी निरंकुशता है वह भी समाप्त हो जायेगी और कुछ दिन बाद जो शासक हैं वे यह भी समझेंगे कि हम साधारण भारतवासी हैं और हमको भी वही अधिकार होने चाहियें जो हर एक साधारण प्रजा को मिलते हैं।

दूसरी बात जो मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि प्रान्तीय धारासभायें जो हैं उनमें जो मेम्बर हैं उनके लिये यह विचार किया जायेगा कि वह कितने वोटों द्वारा चुने गये हैं। इसलिये यह प्रयत्न इसमें किया गया है कि एक तरफ संघ नीति इसमें लाई जाये जिसके लिये 'वेटेज' शब्द वहां दिया गया है। मेरा कहना यह है कि इसकी भी कोई आवश्यकता नहीं थी। हो सकता है कि कुछ सज्जनों ने इस बात को कहा होगा कि कुछ जगह पर ऐसा होगा कि जहां थोड़े

मनुष्य हों कि उनके अनुपात के अनुसार उनको अधिक मेम्बर मिल गये होंगे लेकिन मैं यह समझता हूं कि प्रत्येक मेम्बर को चाहे वह किसी प्रान्तीय सभा में हो, चाहे वह किसी शासक की तरफ से आया हो या और किसी तरह से आया हो उसको इतना गैर जिम्मेदार आदमी नहीं समझना चाहिये कि वह राष्ट्रपति के चुनाव में इस बात का ध्यान रखेगा कि मुझे दस हजार मनुष्यों ने चुना है या एक लाख ने। हम स्वयं इस बात को देखते हैं कि हमारे प्रान्त में किसी-किसी स्थान पर 50 हजार वोट एक मेम्बर को चुनते हैं, किसी जगह पर 10 हजार वोट भी या 15 हजार भी एक मेम्बर को चुनते हैं। लेकिन जो मनुष्य चुन कर आता है, तो मैं समझता हूं वह इस बात का ध्यान नहीं रखता है कि कितने आदमियों ने उसे चुना है। जिस समय वह चुन कर आता है, अपने को पूरा जिम्मेदार व्यक्ति समझता है। इसलिये वह वहां भी ऐसी नीति अपनाता है जिसमें उसको पूरा जिम्मेदार व्यक्ति समझा जाये। इसलिये मैं समझता हूं कि यहां जो बात रखी गयी है वह कुछ बहुत अच्छी नहीं मालूम होती लेकिन इसके रखने में बहुत हानि नहीं है। इसलिये मैं इसका कोई विरोध नहीं करता हूं।

इन दो शब्दों के साथ मैं इसका समर्थन करता हूं।

***अध्यक्षः** प्रस्तावक, पण्डित जवाहरलाल नेहरू अब इस बहस का उत्तर दे सकते हैं।

माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू (संयुक्त प्रान्त : जनरल): जनाब सदर, तरमीमें बहुत-सी हैं। लेकिन सबसे ज्यादा जोर एक बात में दिया गया है कि प्रेसीडेण्ट का चुनाव अडल्ट फरन्चाइज से हो यानी हर एक शख्य चुनाव में शरीक हो। एक तज़वीज़ यह है कि नाम राष्ट्रपति के बजाय नेता या कर्णधार हो, एक तरमीम यह है कि प्रेसीडेण्ट या राष्ट्रपति एक दफा उत्तर से हो और एक दफा दक्षिण से हो। एक तरमीम यह है कि अपर हाउस के मेम्बर भी इसके चुनाव में क्यों न शरीक हों।

और एक तरमीम यह है, मैं नहीं कह सकता कि यह पेश भी होगी या नहीं, कि प्रेसीडेण्ट एक दफा स्टेट का हो और एक दफा नान-स्टेट का हो।

एक तरमीम यह है कि जिसमें ओथ और औलिजियेन्स का जिक्र है।

मुझे अफसोस है कि सिवाय इस तरमीम के हम जहां मेम्बर लिखा है, वहां इलेक्टेड मेम्बर कर दिया जाये, मैं और कोई तरमीम मंजूर नहीं कर सकता। यहां पर इलेक्टेड के अलफाज़ से कोई खास बात नहीं पैदा हो जाती है। ड्राफ्टिंग

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]
में यह बात बिल्कुल साफ हो जाती है, लेकिन अगर आप इलेक्टेड के लफ्ज को यहां पर बढ़ाना चाहते हैं तो मैं उसको मंजूर किये लेता हूं।

कुछ ओथ के मुतल्लिक भी कहा गया है। जाहिर है कि इसका जिक्र कान्स्टीट्यूशन में आयेगा। यहां पर इसके जिक्र की कोई खास जरूरत नहीं मालूम होती है। जहां तक इस चीज का सवाल है कि प्रेसीडेण्ट का चुनाव उत्तर दक्खिन स्टेट या नान-स्टेट से हो, तो यह गलत उसूल मालूम होता है। इसलिये कि यह मुनासिब नहीं है कि एक दफा तो हम एक फिरके से प्रेसीडेण्ट चुनें और दूसरी दफा दूसरे फिरके से, लेकिन कायदा बनाना और कानूनी कायदा बनाना यह एक इन्तिहाई दर्जे की मुनासिब बात मालूम होती है।

जैसा आपने यह फरमाया कि प्रेसीडेण्ट के चुनाव में अपर हाउस के मेम्बर क्यों न हों; इस सिलसिले में, मैं यह अर्ज करूंगा कि हमारी स्टेट की यूनिट में और प्राविन्सेज के अपर हाउस में बहुत फर्क होगा। मैं नहीं कह सकता कि कहां-कहां अपर हाउस होंगे। दूसरी बात यह कि हमारे सूबों में और हमारी स्टेट के सूबों में फर्क होगा। पता नहीं कि उनके उसूल क्या होंगे और सूबों के उसूल क्या होंगे। अगर यह अख्तियार अपर हाउस को दिये जायेंगे तो इसमें बहुत गड़बड़ होगी। चुनाचे मेरी राय में यह बात बहुत ज्यादा साफ है कि सैंटर में दो हाउसेज को हक होगा और सूबों में और यूनिट्स में खाली लोयर हाउस को चुनाव का हक होगा। इसमें एक पेच है, जो साफ नहीं हुआ है, कि यूनिट को ज्यादा हक होगा या लेजिस्लेचर को ज्यादा होगा। यानी सैंटर लेजिस्लेचर में जो लोग मेम्बर होंगे उनका एक कोर्ट होगा और उनको कितना हक होगा, इसको बराबर-बराबर करना है। यह बात हमारे एडवाइजरों की है कि वह इसको साफ कर देंगे। लिहाजा इस वक्त मेरी राय में, जैसा मैंने अर्ज किया है और जैसा छपा हुआ है, इसको वैसा ही रहने देना चाहिए। इस बात को मैंने शुरू में भी कहा था और अब भी अर्ज करता हूं और अगर आप भी गौर करेंगे तो इसी नतीजे पर पहुंचेंगे कि बेहतरीन तरीका यही है कि हम इस चीज को महदूद न कर दें। मैं यह बात मानने के लिये तैयार नहीं हूं कि अडल्ट फ्रेन्चाइज जो होगा वह बहुत जरूरी होगा। यह बात जाहिर है कि जो लोग असेम्बली के मेम्बरान को चुनेंगे वह करोड़ों की तादाद में होंगे और माकूल आदमी होंगे। लिहाजा जब असेम्बली के मेम्बरान उन्हीं हजारों और करोड़ों आदमियों के वोट से मेम्बर होकर आयेंगे तो फिर क्या जरूरत है कि प्रेसीडेण्ट का चुनाव अडल्ट फ्रेन्चाइज से हो। लिहाजा अगर आप

चाहते हैं कि हम अपने कांस्टीटयूशन को जल्द से जल्द पास करके उस पर अमल करने लगें तो उन पेचीदगियों की वजह से जो पैदा हो रही हैं, हम जल्द से जल्द अपने बनाये हुए कान्स्टीट्यूशन पर अमल नहीं कर सकेंगे।

अगर आप प्रेसीडेण्ट का चुनाव अडल्ट फ्रेन्चाइज से करना चाहते हैं तो इसके मानी यह होंगे कि इलेक्शन करने में हमारा बहुत ज्यादा वक्त गुजरे और हम नये कान्स्टीट्यूशन पर अमल न कर सकेंगे। इसलिये मेरी ख्वाहिश है कि जिस तरह मैंने इसको आपके सामने रखा है आप भी इसको इसी शक्ल में मंजूर कर लें।

श्री महमूद शरीफ (मैसूर): एक चीज जरा साफ कर दीजिये कि अभी आपने फरमाया है कि क्लाज 2 (ए) में इलेक्शन।

तो जब आप इस तरमीम में नामजदगी के उसूल को तस्लीम करते हैं तो इस तरमीम को क्यों नही मंजूर करते और इसमें और उसमें तिजाद क्यों है?

पं. जवाहरलाल नेहरू (संयुक्त प्रांत : जनरल): आपने कौनसा क्लाज पढ़ा?

श्री महमूद शरीफ: पेज नाइन, क्लाज 14 ए।

पं. जवाहरलाल नेहरू: मैं नोमीनेशन मंजूर करता हूं या नामंजूर करता हूं इसका सवाल नहीं है। नोमीनेशन ऐसे खास किस्म का मंजूर करता हूं जो इसमें लिखा है, यानी प्वाइंट और साइंटिफिक बाडीज के लोग लिये जायें; यह तो सवाल नहीं है। मैंने इस वक्त अर्ज किया है कि प्रेसीडेण्ट का चुनाच इलेक्टेड मेम्बर करें।

अध्यक्ष: अब मैं वोट लेने के लिये पहले संशोधन पेश करूंगा। पहला संशोधन जो मैं पेश करने जा रहा हूं श्री चनया का है, जिसमें कहा गया है कि:

> **"खण्ड 1 के उपखण्ड (1) में 'निर्वाचित' शब्द की जगह 'उत्तर अथवा दक्षिण भारत द्वारा बारी-बारी से,' शब्द रखे जायें।"**

क्या मैं माननीय सदस्य को बता सकता हूं कि इस संशोधन के बारे में मुझे कितनी कठिनाई अनुभव हुई है? वे जो संशोधन पेश करना चाहते हैं, उसके अनुसार यह वाक्यखण्ड इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

> **"संघ का प्रमुख राष्ट्रपति कहलाएगा जो बारी-बारी से उत्तर भारत अथवा दक्षिण भारत से चुना जायेगा।"**

[अध्यक्ष]

इसका तात्पर्य यह हुआ कि एक साल केवल उत्तर भारत के सदस्य और अगले वर्ष केवल दक्षिण भारत के सदस्य राष्ट्रपति के चुनाव में भाग लेंगे। परन्तु मेरा विचार है कि उनका अभिप्राय सदस्यों से नहीं है, जो निर्वाचन में भाग लेंगे, बल्कि स्वयं राष्ट्रपति से है। मैंने यह बात स्पष्ट कर दी है और अब मैं इस संशोधन को राय लेने के लिये पेश करता हूं।

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** अगला संशोधन मि. नजीरुद्दीन अहमद का है जो इस प्रकार है:

"खण्ड 1 के उपखण्ड (1) 'जैसी कि नीचे व्यवस्था की गई है' शब्दों की जगह 'निम्नांकित तरीके से' शब्द रखे जायें।"

यह एक मामूली सा संशोधन है। मैं नहीं जानता कि यह आवश्यक है। खैर, कुछ भी हो, मैं उसे राय लेने के लिये पेश करता हूं।

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

अध्यक्षः अगला संशोधन रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय की ओर से पेश किया गया है, जिसमें कहा गया है कि:

"खण्ड 1 के उपखण्ड (2) के पैरा (ब) में 'अथवा जहां दो धारा-सभाएं हो वहां लोकसभा के सदस्य' शब्द हटा दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

अध्यक्षः श्री चेंगलराय रेड्डी की ओर से एक संशोधन पेश किया गया है कि:

"वाक्यखण्ड 1 के उप-वाक्यखण्ड (2) (ब) में जहां-कहीं 'सदस्य' शब्द का प्रयोग किया हो, उसकी जगह 'निर्वाचित सदस्य' शब्द रखे जायें।"

प्रस्तावक का यह संशोधन मंजूर कर लिया गया है।

प्रस्ताव स्वीकृत कर लिया गया।

अध्यक्ष: अगला संशोधन श्री चन्द्रशेखरिया की ओर से उपस्थित किया गया है कि खण्ड 1 के उप-खण्ड (3) के बाद निम्नलिखित नया उप-खण्ड जोड़ दिया जाये:

"3 (ए) राष्ट्रपति बारी-बारी से रियासती और गैर-रियासती इकाइयों से चुना जायेगा।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

अध्यक्ष: श्री चन्द्रशेखरिया की ओर से एक अन्य संशोधन पेश किया गया है कि खण्ड 1 के उप-खण्ड (4) के बाद निम्न नया उप-खण्ड जोड़ दिया जाये:

"(5) अमरीका के विधान की भांति राष्ट्रपति द्वारा शपथ ग्रहण करने की व्यवस्था की जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

अध्यक्ष: अगला संशोधन सर एन. गोपालस्वामी आयंगर का है:

"खण्ड 1 के उपखण्ड (2) के अंतिम वाक्य में 'इकाइयों की धारासभाओं के वोट' की जगह 'इकाइयों की धारासभाओं के सदस्यों के वोट' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकृत हो गया।

अध्यक्ष: मेरे विचार में इतने ही संशोधन पेश किये गये थे। इनमें से दो मंजूर कर लिये गये हैं। अब संशोधित प्रस्ताव वोट लेने के लिये पेश किया जाता है।

संशोधित खण्ड 1, स्वीकार कर लिया गया।

अध्यक्ष: अब हम खण्ड 2 पर सोच विचार करेंगे। पंडित नेहरू कृपया उक्त खण्ड को पेश करें।

खण्ड 2

माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू: श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव पेश करने की आज्ञा चाहता हूं कि:

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

"[1] राष्ट्रपति का कार्यकाल पांच वर्ष का होगा। बशर्ते कि–

[अ] राष्ट्रपति राज्य परिषद् के चेरयमैन अथवा लोकसभा के स्पीकर को अपना त्यागपत्र न दे दे;

[ब] राष्ट्रपति को विधान का उल्लंघन करने पर पार्लियामेंट मुकदमा चलाकर नीचे लिखे उप-वाक्यखण्ड [2] के अनुसार न हटाए।

[2] [अ] विधान की अवहेलना करने पर जो अभियोग लगाया जायेगा उसे संघ पार्लियामेंट की दोनों सभाओं में से कोई भी सभा निश्चित करेगी। लेकिन यह दोषारोपण भी एक प्रस्ताव द्वारा किया जायेगा जिसे सभा के दो तिहाई सदस्य पास कर दें।

[ब] जब संघ पार्लियामेंट की दोनो में से कोई भी सभा ऐसा अभियोग निश्चित कर देगी तो दूसरी सभा उसी दोष की जांच करेगी और उसके कारणों का भी पता लगायेगी। राष्ट्रपति को ऐसी जांच में उपस्थित होने अथवा सफाई देने का अधिकार होगा।

[स] यदि जांच पड़ताल के परिणामस्वरूप संपूर्ण सभा के कम से कम दो तिहाई सदस्यों द्वारा ऐसा प्रस्ताव पास कर दिया जाता है जिसके द्वारा राष्ट्रपति पर आरोपित अभियोग की जांच-पड़ताल की गई हो अथवा जांच पड़ताल कराई गई हो– कि राष्ट्रपति पर लगाया गया अभियोग ठीक था, तो प्रस्ताव के पास होने की तिथि से ही राष्ट्रपति पदच्युत माना जायेगा।

[3] एक बार राष्ट्रपति बन जाने के बाद किसी भी व्यक्ति को पुनः राष्ट्रपति पद के लिये चुनाव लड़ने का केवल एक ही बार और अवसर दिया जायेगा।"

श्रीमान्, हम ऐसा कह सकते हैं कि इस प्रस्ताव के तीन हिस्से हैं। एक का सम्बन्ध राष्ट्रपति के कार्यकाल से है––जो पांच वर्ष रखा गया है। यह कोई बड़े सिद्धान्त की बात नहीं है, लेकिन खूब सोच-विचार के बाद हम इस परिणाम पर पहुंचे कि पांच वर्ष की अवधि काफी होगी। चार साल बहुत कम होंगे और पांच साल से अधिक निश्चय ही बहुत ज्यादा होंगे। इस प्रस्ताव के शेष भाग का सम्बन्ध

मुख्यत: राष्ट्रपति पर मुकदमा चलाने और अभियोग लगाने से है और इस खण्ड में अन्तिम बात यह कही गयी है कि कोई भी व्यक्ति केवल दो बार चुना जा सकता है। अर्थात् न केवल एक के बाद दूसरी बार अथवा लगातार दो बार बल्कि कुल मिलाकर दो बार। इसका अर्थ यह हुआ कि कोई भी व्यक्ति अपनी जिन्दगी में कुल मिलाकर दस वर्ष से अधिक समय तक राष्ट्रपति नहीं रह सकेगा। इस प्रश्न पर जैसा कि सभी जानते हैं, अमरीका में बहुधा वाद-विवाद हुआ है और साधारणत: यह खयाल किया जाता था कि कोई भी व्यक्ति दो बार से अधिक राष्ट्रपति नहीं रह सकता। नि:संदेह, पिछली लड़ाई में राष्ट्रपति रूजवेल्ट वास्तव में चौथी बार इस पद के लिये चुने गये, लेकिन इस भारी जिम्मेदारी को उठाने के लिये, वास्तव में दस साल की अवधि किसी भी साधारण शारीरिक शक्ति वाले व्यक्ति के लिये बहुत काफी है। सम्भवत: जब कोई व्यक्ति राष्ट्रपति बनेगा तो वह बहुत कम आयु का न होगा। संभवत: चालीस पचास के दरमियान हो, और मेरी राय में, किसी व्यक्ति को यह जिम्मेदारी दस साल में अधिक समय तक उठाने के लिये कहना उचित नहीं है। राष्ट्रपति रूजवेल्ट परिस्थितियों से मजबूर होकर चौथी बार राष्ट्रपति तो चुन लिये गये, लेकिन चुनाव के बाद वे केवल दो तीन महीने तक ही इस भार को संभाल सके। इसलिये मेरा विचार है कि दो बार से अधिक न चुने जाने का यह निश्चय एक अच्छा नियम है और हमें उस पर दृढ़ रहना चाहिये।

जहां तक इस खण्ड की अन्य बातों का प्रश्न है, मुझे और अधिक कुछ नहीं कहना। अगर कोई संशोधन पेश किया जाए तो मैं उन पर बहस के अन्त में अपने विचार प्रकट करूंगा।

***अध्यक्ष:** इस खण्ड के सिलसिले में मेरे पास बहुत से संशोधन आये हैं।

***श्री एच.वी. पातस्कर** (बम्बई : जनरल): मैं अपना संशोधन नहीं पेश करना चाहता।

***अध्यक्ष:** श्री शिब्बनलाल सक्सेना!

***श्री शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): श्रीमान्, मैंने यह संशोधन पेश करने की सूचना दी है:

"खण्ड 2 के उपखण्ड (1) में संख्या '5' की जगह संख्या '4' रखी जाये।"

[श्री शिब्बन लाल सक्सेना]

अभी-अभी पंडित नेहरू बता रहे थे कि पांच वर्ष की यह अवधि क्यों निर्धारित की गई है और उन्होंने कहा था कि राष्ट्रपति के पद के लिये यह न तो बहुत लम्बी है और न बहुत छोटी ही। मैं उनसे सर्वथा सहमत हूं। परन्तु इस सम्बन्ध में, मैं एक बड़ी भारी त्रुटि की ओर ध्यान दिलाना चाहता हूं। बाद में वाक्य खण्ड 13 के उप-वाक्यखण्ड (5) में कहा गया है कि:

"लोक सभा यदि भंग न की गई तो अपनी पहली बैठक के समय से चार वर्ष तक कार्य करेगी-उससे अधिक नहीं.............।"

इसका अर्थ यह हुआ कि लोकसभा का कार्यकाल चार वर्ष होगा। इसी प्रकार हमारी धारासभाओं की अवधि भी चार ही वर्ष है। इसका मतलब यह हुआ कि पहले निर्वाचन में राष्ट्रपति प्रान्तीय धारासभा अथवा लोकसभा के कार्यकाल के बाद भी एक वर्ष तक अपने पद पर आसीन रहेगा। दूसरे निर्वाचन में वह लोकसभा के चुनाव के केवल दो वर्ष बाद चुना जायेगा, और उससे अगले चुनाव में तीन वर्ष बाद और इसी प्रकार आगे भी यही क्रम जारी रहेगा। इस प्रकार राष्ट्रपति के पुनर्निर्वाचन के समय धारासभाएं पुरानी पड़ जाएंगी और वे देश के तत्कालीन जनमत का सच्चा प्रतिनिधित्व नहीं करेंगी। राष्ट्रपति के प्रत्येक चौथे निर्वाचन में वे धारासभाएं भाग लेंगी जो कुछ महीनों के बाद स्वयं समाप्त हो जाएंगी। यह अत्यधिक अवांछनीय स्थिति होगी। सम्भवत: यह कहा जा सकता है कि धारासभायें हमेशा ही अपने निर्धारित चार वर्ष तक न जारी रह सकें और उन्हें उस अवधि से पूर्व ही भंग करना पड़ जाये। यह ठीक है, लेकिन ऐसी स्थिति कभी-कभी ही पैदा हो सकती है, बहुधा नहीं। लगभग पन्द्रह धारासभाओं के सदस्यों द्वारा राष्ट्रपति का निर्वाचन किया जायेगा। यदि अपनी साधारण निर्धारित अवधि से पूर्व उनमें से एकाध धारासभा भंग कर दी जाये और राष्ट्रपति के निर्वाचन के समय उनके सदस्य नये सिरे से चुने गए हों, तो भी बाकी तेरह या चौदह धारासभाओं के सदस्य तो नये सिरे से नहीं चुने जायेंगे। और इस प्रकार राष्ट्रपति के चुनाव के समय मतदाताओं की बहुत भारी संख्या आज के वास्तविक जनमत का प्रतिनिधित्व नहीं करेगी। यह कहीं अधिक अच्छा होगा कि राष्ट्रपति का निर्वाचन भी हर चौथे साल प्रान्तीय धारासभाओं के साधारण निर्वाचन के साथ ही हो।

इस सम्बन्ध मे यह तर्क पेश किया जा सकता है कि धारासभाओं के भंग हो जाने के बाद साधारण निर्वाचन के समय रखवालिया सरकार को

छोड़कर देश में कोई राष्ट्रपति नहीं होगा, और ऐसी हालत में कम से कम उसका होना आवश्यक है और वह काम चलाऊ राष्ट्रपति नहीं होगा। परन्तु श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि राष्ट्रपति तो केवल उसी हालत में अपना पद-त्याग करेगा जबकि उसका कोई उत्तराधिकारी चुन लिया जायेगा। इस प्रकार उसका स्थान कभी खाली नहीं रहेगा और न ही उस स्थान पर कोई काम चलाऊ राष्ट्रपति रहेगा। यह भी सर्वथा सम्भव है कि पांच वर्ष की निर्वाचन प्रणाली के अन्तर्गत राष्ट्रपति के चुनाव के चौथे साल के बाद जब धारासभाओं का नया चुनाव किया जायेगा तो नये सदस्य अपने जीवनकाल में राष्ट्रपति के चुनाव में भाग लेने से वंचित हो जायें।

मैं इन त्रुटियों की ओर इस सभा का ध्यान आकर्षित करना चाहता था, लेकिन मैं अपने संशोधन को आगे नहीं बढ़ाना चाहता।

***अध्यक्षः** तो क्या फिर आप अपना संशोधन पेश नहीं कर रहे?

***श्री शिब्बन लाल सक्सेनाः** नहीं।

***अध्यक्षः** भविष्य में मेरा खयाल है कि मैं सदस्यों से पहले अपने संशोधन पेश करने को कहूंगा और बाद में भाषण देने को।

***श्री मोहम्मद शरीफः** अध्यक्ष महोदय् मेरा संशोधन यह है कि:

''खण्ड 2 के उप-खण्ड (1) में संख्या '5' के स्थान पर संख्या '4' रखी जाये।''

इसका मतलब यह हुआ कि राष्ट्रपति का कार्यकाल पांच की बजाय चार वर्ष होगा। मेरा उद्देश्य धारासभा और राष्ट्रपति के लिये समान कार्यकाल निर्धारित करना है। ऐसा करना प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों के सर्वथा अनुरूप होगा। रिपोर्ट में कहा गया है कि धारासभा की अवधि चार वर्ष की होगी। यदि ऐसा ही है, तो धारासभा के समाप्त होते ही राष्ट्रपति का पद भी समाप्त हो जाना चाहिये और यदि इसके बाद भी वह अपने पद पर बना रहता है तो यह प्रजातंत्र के सिद्धान्तों के खिलाफ होगा। शायद यह कहा जाये कि चार साल के बाद चुनाव होगा और यदि उस समय राष्ट्रपति का पद भी समाप्त हो जायेगा, तो शासन प्रबन्ध कौन चलाएगा? इसके लिये मेरा सुझाव यह है कि चार साल खत्म होने

[श्री मोहम्मद शरीफ]

से दो तीन महीने पहले ही राष्ट्रपति का निर्वाचन कर लिया जाये, ताकि चार साल समाप्त होने तक नया राष्ट्रपति चुन लिया जाये।

इन शब्दों के साथ, श्रीमान्, मैं अपना संशोधन पेश करता हूं।

*__श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया__ (मैसूर): श्रीमान् सभापति, मेरा संशोधन इस प्रकार है कि:

"खण्ड 2 के उपखण्ड (1) में संख्या और शब्द "5 वर्ष" के स्थान पर निम्न शब्द रखे जायें:

'4 साल अथवा नये राष्ट्रपति का निर्वाचन होने तक, इनमें जो भी घटना बाद में हो'।"

हमारे विधान के अन्तर्गत राष्ट्रपति का कार्यकाल पांच वर्ष और लोकसभा का चार वर्ष निर्धारित करने का प्रस्ताव किया गया है। इस व्यवस्था के अनुसार लोकसभा के दूसरे चुनाव के बाद राष्ट्रपति एक साल पीछे रह जाता है, तीसरे निर्वाचन में दो साल और पांचवें निर्वाचन में चार साल। इस प्रकार आप देखेंगे कि ज्यों-ज्यों हम दूसरे चुनाव से पांचवें तक प्रगति करते हैं, राष्ट्रपति लोकसभा से निरन्तर दूर ही दूर हटता जाता है। ऐसी स्थिति कदापि स्वीकार नहीं की जा सकती। उसके लिये कोई तर्क भी तो पेश नहीं किया जा सकता।

प्रस्ताव किया गया है कि राष्ट्रपति का निर्वाचन संघ पार्लियामेंट और प्राचीन धारासभाओं द्वारा किया जायेगा। इसलिये यह सर्वथा समीचीन होगा कि राष्ट्रपति का निर्वाचन संबद्ध धारासभाओं के मत का प्रतिनिधित्व करे और यदि राष्ट्रपति पुराना हो जाता है और वह धारासभाओं के मत का सही तौर पर प्रतिनिधित्व नहीं करता तो राष्ट्रपति और संबद्ध धारासभाओं के मध्य संघर्ष होने की संभावना उत्पन्न हो जाती है। इसी संभावना को दूर करने के लिये यह प्रस्ताव किया गया है कि राष्ट्रपति का कार्यकाल भी वही होना चाहिये जो केन्द्रीय और प्राचीन धारासभाओं की लोक सभाओं का हो, अर्थात् राष्ट्रपति की अवधि और धारासभाओं की अवधि एक साथ संगत होनी चाहिये।

इस सम्बन्ध में यह तर्क पेश किया जा सकता है कि राष्ट्रपति के लिये पांच साल का कार्यकाल इसलिये निर्धारित किया गया है कि धारासभाओं की

समाप्ति पर शासन प्रबन्ध भंग न होने पाये और सरकारी नीति के पालन में कोई गड़बड़ न पैदा हो। जिन देशों में यह प्रणाली प्रचलित है, उनके अनुभव को देखते हुये मेरे विचार में ऐसा नहीं होगा। लेकिन यदि तर्क के तौर पर यह मान भी लिया जाये तो भी इस कठिनाई को आसानी से दूर किया जा सकता है। इसके लिये नई धारासभाओं के बनने और नये राष्ट्रपति का चुनाव होने तक उसी राष्ट्रपति को कुछ समय के लिये और अपने पद पर बने रहने को कहा जा सकता है।

इस सिलसिले में मैं संसार के कुछ प्रख्यात विधानों की प्रथा का उल्लेख करना चाहता हूं। अमरीका में राष्ट्रपति का निर्वाचन चार साल की अवधि के लिये होता है और वह लोकसभा की दो अवधियों तक रहता है। स्विट्ज़रलैंड में संघ परिषद् चार साल के लिये चुनी जाती है और यही कार्यकाल लोकसभा का भी होता है। रूस में जनता के कमिसार चार साल के लिये निर्वाचित होते हैं और सोवियट यूनियन की परिषद् का कार्यकाल भी चार ही वर्ष का होता है। आयरलैंड् में राष्ट्रपति और लोकसभा दोनों का कार्यकाल सात वर्ष का होता है। इस प्रकार अन्य देशों में प्रचलित प्रथा यह है कि राष्ट्रपति का कार्यकाल वही होता है जो लोकसभाओं का। मेरे विचार में उसी प्रथा का अनुकरण हमारे विधान के लिये भी उपयुक्त है। मेरा ख्याल नहीं कि पांच वर्ष के कार्यकाल में कोई खास आकर्षण है। इसलिये अन्य देशों में प्रचलित प्रथा और राष्ट्रपति तथा लोकसभा के लिये समान कार्यकाल निर्धारित करने के परिणामस्वरूप होने वाले लाभों को ध्यान में रखते हुए मेरा ख्याल है कि मेरा संशोधन बहुत युक्तियुक्त और ठोस है, और मुझे आशा है कि सभा उसे स्वीकार कर लेगी।

(संशोधन संख्या 102, 103 और 104 पेश नहीं किये गये।)

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, चूंकि विधान के अन्तर्गत राष्ट्रपति की स्थिति ऐसी है कि वह दुर्व्यवहार नहीं कर सकेगा, इसलिये मैं अनुभव करता हूं कि मेरे लिये अपना संशोधन संख्या 104 पेश करने की कोई आवश्यकता नहीं।

(संशोधन संख्या 106 से लेकर 120 तक पेश नहीं किये गये।)

भाग 4 खंड 2

***रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय** (बिहार : जनरल): श्रीमान्, मेरा संशोधन इस प्रकार है कि:

"वाक्य खंड 2 के उपवाक्य खंड (3) के बाद निम्नलिखित नया उपवाक्यखंड जोड़ दिया जाये:

'(4) जो वाक्य उपखंड 2 के अन्तर्गत राष्ट्रपति के पद से हटाया जायेगा वह दो बार तक पुनः निर्वाचित नहीं हो सकेगा'।"

[रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय]

श्रीमान्, आपकी आज्ञा तथा सभा की आज्ञा से मैं अपने संशोधन में से "दो बार तक" ये शब्द निकाल देना चाहता हूं। उस हालत में मेरा संशोधन इस प्रकार होगा "जो व्यक्ति उपवाक्यखंड (2) के अन्तर्गत राष्ट्रपति के पद से हटाया जायेगा वह पुनः निर्वाचित नहीं हो सकेगा।" इस संशोधन के अन्तर्गत जिस सिद्धान्त का प्रतिपालन किया गया है वह इतना स्पष्ट और प्रत्यक्ष है कि मैं उसके समर्थन में कोई दलील पेश नहीं करूंगा और मुझे पूरा यकीन है कि विधान का मसविदा तैयार करते समय इस त्रुटि को दूर कर दिया जायेगा। इसी प्रकार का एक संशोधन प्रान्तीय विधान के सम्बन्ध में भी पेश किया गया था। इसलिये मैंने संघीय विधान के सम्बन्ध में भी ऐसा ही संशोधन पेश करना उचित समझा।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, चूंकि खण्ड 2 के उपखण्ड 3 के सम्बन्ध में मेरा संशोधन आवश्यक प्रतीत होता है, इसलिये मैं उसे पेश नहीं करना चाहता।

***अध्यक्षः** वाक्य खण्ड 2 के सम्बन्ध में मुझे केवल इन्ही संशोधनों की सूचना दी गई थी। यदि कोई और संशोधन है, तो सदस्य जिन्होंने उनकी सूचना दी है, कृपया मुझे बता दें और उन्हें पेश करें। चूंकि कोई सदस्य संशोधन पेश करने के लिये खड़ा नहीं हुआ, इसलिये मेरा ख्याल है कि सभा अब इस वाक्यखण्ड और उसके सम्बन्ध में पेश किये गये संशोधन पर बहस कर सकती है।

क्या कोई सदस्य इस खण्ड के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहते हैं?

माननीय सदस्यः अब वोट लीजिये।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** इस खण्ड के सम्बन्ध में दो संशोधन पेश किये गये हैं जिनमें से एक में भी ऊंची नीति का प्रश्न नहीं उठाया गया है। अन्तिम संशोधन में तो विशेष रूप से एक प्रत्यक्ष बात पर ही जोर दिया गया है। व्यावहारिक दृष्टि से किसी भी राष्ट्रपति के लिये, जिसे उसके पद से हटा दिया गया हो, पुनः निर्वाचन के लिये खड़ा होना असंभव है। मुझे तो इसमें कोई बड़ा सिद्धान्त निहित नहीं दिखाई देता। हम इस समय बड़े महत्वपूर्ण विषयों पर सोच विचार कर रहे हैं। अगर हमें इसके लिये कुछ और करना है तो उसे बाद में भी किया जा सकता है।

जहां तक कार्यकाल के सम्बन्ध में पेश किये गये संशोधन का सम्बन्ध है, उसका भी किसी बड़ी नीति से वास्ता नहीं है। हमने यह अवधि विभिन्न दृष्टियों

से निर्धारित की है, जिनके बारे में मुझे इस समय कुछ कहने की जरूरत नहीं। इनमें से एक कारण यह है कि हम राष्ट्रपति का कार्यकाल अन्य निर्वाचनों की चार साल की अवधि के साथ नहीं रखना चाहते। बहुत से सदस्यों का ख्याल है कि एक और जहां प्रान्तीय अन्य धारासभाओं का निर्वाचन चार साल के बाद होगा, वहां दूसरी ओर केवल राष्ट्रपति का ही निर्वाचन पांच साल के बाद होगा। उनका यह भी ख्याल है कि कुछ समय बाद निर्वाचक पुराने पड़ जायेंगे, क्योंकि निर्वाचन हुए तीन-चार साल हो जायेंगे। यह ठीक है कि राष्ट्रपति का कार्यकाल पांच वर्ष की निर्धारित अवधि का होगा, यदि उससे पूर्व उसकी मृत्यु न हो जाये अथवा उस पर अभियोग न चलाया जाये अथवा उसे कुछ और न हो जाये। परन्तु जहां तक प्रान्तीय और अन्य निर्वाचनों का सम्बन्ध है, जैसा कि स्पष्ट है और संभव भी है कि चार साल की अवधि का कड़ाई के साथ पालन न हो सके, समय-समय पर चुनाव करने आवश्यक हो जायेंगे। कोई ऐसी घटना घट सकती है कि निर्वाचन निर्धारित अवधि से पूर्व ही करना पड़े, मंत्रिमंडल में परिवर्तन हो सकता है कि उसे धारासभा का विश्वास प्राप्त न रहे, इसी प्रकार की बहुत सी बातें हो सकती हैं। देश में कितनी ही प्रान्तीय धारासभाएं होंगी और आप कभी यह नहीं कह सकते कि धारासभाओं के सदस्यों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। धारासभाओं के सदस्यों में हर साल अथवा हर तिमाही में परिवर्तन होते रहेंगे। इसलिये इस ऐतराज में कोई दम नहीं है कि राष्ट्रपति का निर्वाचन ऐसे निर्वाचकों द्वारा किया जायेगा जो स्वयं कई साल पूर्व चुने गये होंगे। निर्वाचकों में हर समय परिवर्तन होता रहेगा और चार साल की अवधि तो केवल अधिकतम अवधि होगी। हो सकता है कि एक साल या छः महीने तक निर्वाचकों में कोई परिवर्तन न हो और नये निर्वाचन आजकल की भांति ही होंगे। इसलिये श्रीमान्, सभी बातों का ख्याल करते हुए, मेरी राय में पांच साल की अवधि ही बेहतर है।

अध्यक्षः मैं संशोधन को वोट लेने के लिये पेश करता हूं।

प्रश्न यह है कि:

"खण्ड 2 के उप-खण्ड [1] में संख्या "[5]" के स्थान पर संख्या "[4]" रखी जाये।"

प्रस्ताव अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** अब मैं दूसरे संशोधन पर वोट लेता हूं।

संशोधन यह है किः

"खण्ड 2 के उपखण्ड (1) में संख्या और शब्द '5 वर्ष के' स्थान पर निम्न शब्द रखे जायेंः

'4 वर्ष अथवा नये राष्ट्रपति का निर्वाचन होने, तथा उनमें से जो भी घटना पहले हो'।"

***रायबहादुर श्यामनन्दन सहायः** श्रीमान्, मैं इस सम्बन्ध में कुछ शब्द कहना चाहता हूं। मेरी राय में मेरे संशोधन (संख्या 121) पर नकारात्मक वोट लेना मुनासिब नहीं होगा। मैं उसे विधान का मसविदा तैयार करने वालों की मर्जी पर छोड़ देना अधिक अच्छा समझता हूं। इस संशोधन की अस्वीकृति का अर्थ, इस सभा की राय में यह होगा कि अभियुक्त राष्ट्रपति पुनः निर्वाचन में भाग ले सकेगा। यदि माननीय प्रस्तावक संशोधन स्वीकार नहीं करना चाहते तो मैं उसे अस्वीकृत होने की बजाय वापस लेना अधिक बेहतर समझता हूं।

***अध्यक्षः** तो मैं यह समझ लेता हूं कि सभा माननीय संशोधक को अपना संशोधन वापस लेने के पक्ष में है।

सभा की मंजूरी से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है कि खण्ड 2 स्वीकार कर लिया जाये।

खण्ड 2 स्वीकृत हो गया।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** मैं प्रस्ताव करता हूं कि वाक्यखण्ड 3 स्वीकृत कर लिया जाये, जो इस प्रकार हैः

"3. संघ का प्रत्येक नागरिक, जिसकी आयु 35 वर्ष की पूरी हो चुकी है और जो लोकसभा का सदस्य बनने का अधिकारी है, राष्ट्रपति पद के लिये चुनाव लड़ सकेगा।"

यह एक बड़ा सरल सा प्रस्ताव है, मेरे विचार में इसके समर्थन के लिये कोई दलील पेश करने की जरूरत नहीं है। यह ख्याल किया जाता है

कि जिस व्यक्ति ने 35 वर्ष की आयु तक कोई खास काम नहीं किया है, वह बाद में भी कुछ नहीं कर सकेगा। फिर भी, साधारणतः भारत में और खासकर अन्य जगहों में, कभी-कभी 35 साल तक तो लोगों को कुछ करने का अवसर ही नहीं मिलता। दूसरे ही लोग रंगमंच को संभाले रहते हैं। बहरहाल, 35 वर्ष की आयु कोई बहुत बड़ी सीमा नहीं है। मेरी राय में यह एक मुनासिब अवधि ही है। इसका मतलब यह हुआ कि जो व्यक्ति राष्ट्रपति चुना जायेगा उसे कम से कम बारह वर्ष या उससे अधिक समय मिल जायेगा, जिसमें वह व्यक्ति अनुभव प्राप्त कर सकता है। इसलिये मेरा खयाल है कि उम्मीदवारों को वंचित रखने के लिये यह एक काफी सुरक्षित आयु-मर्यादा है। मुझे उम्मीद है कि सभा इस वाक्यखण्ड को मंजूर कर लेगी।

(संशोधन संख्या 123 से 128 तक पेश नहीं किये गये।)

***श्री एच.वी. कामतः** यद्यपि मैं अपना संशोधन नहीं पेश करना चाहता, फिर भी मैं पण्डित नेहरू से एक बात का स्पष्टीकरण चाहता हूं। इसी प्रकार के उद्देश्य के लिये प्रान्तीय विधान में हमने "जो 35 वर्ष की आयु तक पहुंच गया हो" शब्दों का प्रयोग किया था, परन्तु इस जगह हम "जिसने 35 वर्ष पूरे कर लिये हों" शब्दों का प्रयोग कर रहे हैं। मुझे नहीं मालूम कि हम यहां विभिन्न भाषा का प्रयोग कर रहे हैं। क्या दोनों वाक्यों का एक ही अर्थ है?

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** मुझे खेद है कि जो कुछ श्री कामठ ने कहा है, मैं उसे नहीं सुन सका। बहरहाल, प्रान्तीय विधान की जिम्मेवारी मेरे ऊपर नहीं है। मेरा खयाल है कि ये शब्द अधिक बेहतर हैं। "पूरे" का अर्थ निश्चित रूप से वही है, जो होना चाहिये। दूसरे शब्दों के क्या मानी है, यह मैं नहीं जानता। (*हंसी*)

(श्री ठाकुरदास भार्गव, श्री राजकृष्ण बोस और श्री कामठ ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***अध्यक्षः** मेरा खयाल है कि मेरे पास कुल इतने ही संशोधनों की सूचना पहुंची थी। मेरा खयाल है कि अब और संशोधन नहीं रहे। अब मै इस वाक्यखण्ड पर राय लेता हूं।

वाक्यखण्ड 3 स्वीकृत हो गया।

खण्ड 4

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** मैं राष्ट्रपति पद की शर्तों से सम्बन्ध रखने वाले वाक्यखण्ड संख्या 4 को पेश करता हूं:

"(1) राष्ट्रपति संघ पार्लियामेण्ट की किसी भी सभा का सदस्य नहीं होगा और यदि संघ की किसी सभा का सदस्य राष्ट्रपति चुना जाएगा तो वह सम्बद्ध सभा का सदस्य नहीं रहेगा।

(2) राष्ट्रपति किसी अन्य पद अथवा सवैतनिक कार्यभार को ग्रहण नहीं कर सकेगा।

(3) राष्ट्रपति को रहने के लिए सरकारी मकान मिलेगा और उसे वह सब वेतन और भत्ते मिलेंगे जो संघीय पार्लियामेण्ट के कानून द्वारा निश्चित कर दिये जायेंगे और इस बीच उसे वेतन और भत्ता निर्धारित तालिका के अनुसार मिलता रहेगा......।

(4) राष्ट्रपति का वेतन और भत्ता उसके कार्यकाल के दौरान में घटाया नहीं जा सकेगा।"

एक मामूली-सा विषय है, जो मेरा खयाल है कि स्पष्ट कर दिया जाना चाहिये और उसे स्पष्ट करने के लिये मैं संशोधन मानने को तैयार हूं। उपवाक्यखण्ड (1) में कहा गया है कि "राष्ट्रपति संघ पार्लियामेंट की किसी भी सभा का सदस्य नहीं होगा"; प्रत्यक्ष है कि उसे किसी प्रान्तीय धारासभा का भी सदस्य नहीं होना चाहिये। मेरा खयाल है कि इस बारे में कोई संशोधन पेश किया जायेगा। अगर ऐसा कोई संशोधन पेश किया गया तो मैं उसे स्वीकार कर लूँगा।

***नवाब मोहम्मद इस्माइल खां** (संयुक्त प्रान्त : मुस्लिम): क्या मैं प्रस्तावक महोदय से पूछ सकता हूं कि "राष्ट्रपति किसी सवैतनिक कार्यभार को ग्रहण नहीं कर सकेगा" शब्दों से उनका क्या अभिप्राय है? क्या इसके मानी ये हैं कि वह किसी कम्पनी का डाइरेक्टर भी नहीं रह सकता अथवा इसका अर्थ केवल यह है कि वह किसी सरकारी सवैतनिक कार्यभार को ग्रहण नहीं कर सकता?

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** वह कोई और पद अथवा सवैतनिक कार्यभार नहीं ग्रहण कर सकता, चाहे वह कुछ भी हो। वह कोई भी ऐसा पद ग्रहण नहीं कर सकता जिससे उसे कुछ आर्थिक लाभ पहुंचता हो।

***नवाब मोहम्मद इस्माइल खां:** मुझे आशा है कि आप यह बात स्पष्ट कर देंगे।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू:** यह बिल्कुल स्पष्ट है। यह निर्विवाद रूप से स्पष्ट है। जैसा कि सभा को मालूम है, यहां तक कि मन्त्री भी किसी कम्पनी के डाइरेक्टर नहीं हो सकते। यही परम्परा कितने ही पदों में प्रचलित है, यद्यपि यह कानून नहीं बनाया जा सकता। जहां तक राष्ट्रपति का प्रश्न है, उसे किसी कम्पनी में डाइरेक्टर का पद अथवा किसी कारबार में कोई नफे का पद नहीं ग्रहण करना चाहिये।

***डा. पट्टाभि सीतारमैया** (मद्रास : जनरल): लेकिन शब्दों से तो ऐसे मानी नहीं निकलते।

***अध्यक्ष:** जब सब संशोधन पेश हो चुकेंगे तो हम इस पर बहस करेंगे।

(श्री सेठ गोविन्ददास, श्री अजित प्रसाद जैन, श्री एस. बी. कृष्णमूर्ति राव और श्री नजीरुद्दीन अहमद ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि वाक्य खण्ड (4) के उपवाक्य खण्ड (2) के स्थान पर निम्न वाक्य–खण्ड रखा जाये:

"(2) राष्ट्रपति संघ अथवा प्रान्तीय सरकार के अन्तर्गत अथवा किसी स्थानीय संस्था में या उसके अन्तर्गत अथवा किसी कारबारी संस्था में या उसके अन्तर्गत (चाहे उस संस्था की रजिस्टरी हो या नहीं) अवैतनिक रूप से अथवा, सवैतनिक रूप से या भत्ता लेकर किसी कार्यभार या पद को ग्रहण नहीं कर सकेगा।"

श्रीमान्, मैं देखता हूं कि सभा के कुछ माननीय सदस्यों को इस बात का खयाल आया है। रिपोर्ट में कहा गया है कि राष्ट्रपति किसी सवैतनिक कार्यभार अथवा पद को ग्रहण नहीं कर सकेगा, परन्तु सम्भव है कि यह किसी कारबारी संस्था में कोई अवैतनिक पद ग्रहण करे। यदि उसका सम्बन्ध किसी धार्मिक दातव्य, शिक्षा संस्था अथवा ऐसी ही किसी और संस्था से है तो उसमें कोई आपत्ति न होनी चाहिये, लेकिन मेरी राय में यदि उसका सम्बन्ध किसी कारबारी संस्था से हो, भले ही वह अवैतनिक रूप में हो, फिर भी वह बहुत आपत्तिजनक होगा। कोई भी कारबारी संस्था राष्ट्रपति को अपना संरक्षक बनाने को तत्पर होगी और

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

बहुत सम्भव है कि इस तरह से वह उसके लिये काफी कारबार उपलब्ध कर दे। उसका परिणाम राष्ट्रपति को दलगत राजनीति के चंगुल में फंसा देना होगा। मेरी राय में उसे इस प्रकार के कारबारी सम्पर्क रखने की इजाजत नहीं होनी चाहिये। मैं यह आग्रह इस उद्देश्य से कर रहा हूं ताकि मसविदा तैयार करने वाली समिति इसे अपने ध्यान में रखे। मैं सभा से केवल इतना ही निवेदन करना चाहता हूं।

***श्री एच.वी. पातस्कर:** वाक्यखण्ड 4 के उप-वाक्यखण्ड (2) के कारण कुछ आशंका पैदा हो गई थी, इसलिये मैंने यह संशोधन पेश करने की सूचना दी थी कि "न ही वह किसी कारबार, अथवा नफे में दिलचस्पी लेगा"। श्रीमान्, मुझे अब पता चला है कि इस वाक्यखण्ड का यह उद्देश्य नहीं है कि राष्ट्रपति किसी कारबार में किसी किस्म की दिलचस्पी ले, इसलिये मैं अपना संशोधन पेश नहीं कर रहा। लेकिन, फिर भी मैं यह निवेदन करूंगा कि जब विधान का मसविदा अन्तिम रूप से तैयार किया जाये तो इस चीज को और अधिक साफ कर दिया जाये।

***श्री टी.ए. रामालिंगम चेट्टियार** (मद्रास : जनरल)**:** मेरे संशोधन का सम्बन्ध उन नियुक्तियों से है जो राष्ट्रपति का पद पर रह चुकने के बाद की जायेंगी। मैं यह बात प्रस्तावक की मर्जी पर छोड़ देना चाहता हूं कि यदि वे चाहें तो उसे मंजूर कर लें या रद्द कर दें और यदि उसे वे मंजूर नहीं करते तो मैं उस पर राय नहीं लेना चाहता।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू:** यह किस संशोधन का जिक्र हो रहा है?

***अध्यक्ष:** श्री रामालिंगम चेट्टियर ने जिस संशोधन की सूचना दी थी, वह इस प्रकार है**:** "जो व्यक्ति राष्ट्रपति के पद पर रह चुका हो, वह संघ के किसी पद पर सवैतनिक रूप से नियुक्त होने का अधिकारी नहीं होगा।'' अर्थात्, जब वह राष्ट्रपति नहीं रहेगा, उसे किसी पद पर नियुक्त न किया जाये। संशोधन नियमित रूप से पेश नहीं किया गया। इसलिये हम आगे चलते हैं।

(श्री गोविन्ददास, श्री डी.पी. खेतान, श्री मुनिस्वामी पिल्ले और श्री पी.एम. वेलायुदपाणि द्वारा अपने संशोधन पेश नहीं किये गये।)

***श्री के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुर** (मद्रास : जनरल): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय! मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूं कि वाक्यखण्ड 4 के उप-खण्ड 3 में से "जो संघ पार्लियामेंट के कानून द्वारा निश्चित कर दिये जायेंगे और जब तक .... इत्यादि" शब्द निकाल दिये जायें।

श्रीमान्, संघ का राष्ट्रपति सम्पूर्ण राष्ट्र के शासन प्रबन्ध का सर्वोच्च अधिकारी होगा, इसलिये एक बार राष्ट्रपति चुने जाने पर उसे सभी प्रकार के दलगत प्रभाव से सर्वथा दूर रहना चाहिये। लेकिन यदि उसको वेतन और भत्ते संघीय पार्लियामेंट के किसी कानून द्वारा निर्धारित किये जायेंगे, तो यह सर्वथा संभव है कि वह इस बारे में सदैव यथेष्ट रहेगा कि उसका वेतन संघ के दल विशेष के प्रभाव पर निर्भर करता है, इसलिये बहुत सम्भावना है कि कभी-कभी वह इसी भावना से प्रेरित होकर काम करे। इसलिये, श्रीमान्, यह नितान्त आवश्यक और सर्वथा वांछनीय है कि राष्ट्रपति के केवल वेतन के प्रश्न को दलगत राजनीति के प्रभाव से दूर रखा जाये ताकि उसकी कार्रवाइयों के बारे में निष्पक्ष होने का यकीन हो सके और इसीलिये मैंने यह संशोधन पेश किया है। मुझे आशा है कि माननीय प्रस्तावक द्वारा उसे स्वीकार कर लिया जायेगा।

(श्री बी.एम. गुप्ते, श्री आर.के. सिधवा, श्री विश्वनाथ दास, श्री ठाकुरदास भार्गव, श्री श्यामनन्दन सहाय और श्री एस. नजलिंगप्पा ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

अध्यक्ष महोदय! मैं प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड 4 के उप-खण्ड 4 में "घटाया जा सकेगा" शब्दों की जगह "परिवर्तन किया जा सकेगा" शब्द रखे जायें।

मसविदे में यह व्यवस्था की गई है कि राष्ट्रपति का वेतन घटाया नहीं जा सकेगा; लेकिन इसके साथ ही यह व्यवस्था भी होनी चाहिये कि राष्ट्रपति के कार्यकाल के दौरान में उसका वेतन बढ़ाया भी नहीं जा सकेगा। इसका कारण भी वही है जो मैंने अपना पिछला संशोधन पेश करते समय दिया था, अर्थात् राष्ट्रपति को किसी भी तरह से यह ख्याल नहीं होना चाहिये कि उसका वेतन पार्लियामेंट के किसी कानून पर निर्भर करता है, और इसलिये यह नितान्त आवश्यक है कि उसके वेतन की मात्रा स्वयं विधान के कानून द्वारा निर्धारित की जाये।

***श्री रामनारायण सिंहः** (बिहार : जनरल): सभापति महाशय, मेरा प्रस्ताव है कि जो राष्ट्रपति हो वह किसी पार्टी का आदमी न हो। जिस वक्त पहला प्रस्ताव ओब्जेक्शन का इस सभा में पेश हुआ था और जिसमें क्या-क्या हमारे डिफेक्टिव हैं बतलाया गया था, उसमें भी मैंने एक संशोधन दिया था जिसका मतलब था कि हमारे कान्स्टीट्यूशन में एक प्रोसिडुअरी सेक्शन दफा लगा दी जाये कि जिससे देश में कोई पार्टी लीगल न समझी जाये। किसी तरह की पार्टी हो, चाहे किसी आदमी के नाम पर पार्टी हो या किसी सिद्धान्त पर, सब तरह की पार्टियां नाजायज करार दे दी जायें और उसकी वजह है।

दुनिया में कई मुल्कों में सिस्टम की सरकार चलती है और वह लोग फक्र भी करते हैं कि उनके यहां डैमोक्रेसी है। मेरी राय में, और मैं समझता हूं कि अगर आप लोग समझेंगे, देश के लोग समझेंगे तो सबको मालूम हो जायेगा कि डैमोक्रेसी का मतलब होता है पंचायती राज और पंचायती राज इतना पाक और साफ चीज मालूम होता है कि पार्टी सिस्टम आफ गवर्नमेंट और डैमोक्रेसी में जमीन आसमान का फर्क हो जाता है। कहा जाता है कि पंच तो परमेश्वर है। पंचायती राज्य को करीब-करीब परमेश्वर राज्य समझा जाता है। जब पार्टी सिस्टम की बात आती है तो मैं कह सकता हूं कि कभी-कभी ऐसा मालूम होता है कि यह धूर्त्तों का राज्य है। कभी-कभी ऐसा मालूम होने लगता है जैसे उस पार्टी में कोई भला आदमी ही न हो। दो-चार धूर्त लोग पार्टी बना लेते हैं और पंचायती राज्य के नाम पर अपना राज्य करने लग जाते हैं। मैं सारे देश के प्रतिनिधियों से अपील करता हूं कि इस पार्टी सिस्टम को किसी तरीके से खत्म करना ही होगा। जब तक पार्टी सिस्टम चलता है जब तक पार्टी की हकूमत चलती है तब तक पंचायती राज्य डैमोक्रेसी का नाम नहीं रह सकता। पार्टी सिस्टम डैमोक्रेसी को समूल नाश करने वाली चीज है।

माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः ओन ए पाइन्ट आफ आर्डर (वैधानिक आपत्ति पर)। जनाब सदर, मैं महज जानना चाहता हूं कि मेरे मोशन का इससे क्या ताल्लुक है।

***अध्यक्षः** उन्होंने यह प्रस्ताव पेश किया है कि "राष्ट्रपति का सम्बन्ध किसी पार्टी से नहीं होना चाहिये।"

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** मैं इसका महत्व समझना चाहता हूं।

अध्यक्षः वे राष्ट्रपति पद के लिये खड़े होने वाले उम्मीदवार के लिये अयोग्यता निर्धारित करना चाहते हैं।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** ऐसी अयोग्यता जिसे नापातोला जा सके, उसका वास्तविकता से तो कुछ सम्बन्ध अवश्य होना चाहिये।

***अध्यक्षः** जहां तक संशोधन का प्रश्न है, मैं उसे अनियमित घोषित नहीं कर सकता।

श्री रामनारायण सिंहः जी, मैं अर्ज किये देता हूं। मैं पार्टी सिस्टम को कंडम कर रहा हूं और बुरा कहता हूं और यह कहता हूं कि किसी पार्टी का हमारा प्रेसीडेंट न होना चाहिये और यह मेरे कहने का मतलब है कि पार्टी सिस्टम को लोग भूल से पंचायती राज्य कह दिया करते हैं। नजीर के लिये मैं इस तरह समझा हूं कि किसी समाज में ऐसेम्बली में 300 आदमी उस पार्टी में हैं।

***अध्यक्षः** आप सारे पार्टी सिस्टम पर बहस न कीजिये। आप यह कहिये कि प्रेसीडेंट किसी पार्टी का न होना चाहिये। सारे पार्टी सिस्टम पर बहस नहीं हो सकती है।

***श्री रामनारायण सिंहः** शिरोधार्य आपकी आज्ञा मैं इस पर नहीं बोलूंगा। यह सही है, लेकिन जब तक पार्टी सिस्टम को मैं कत्ल नहीं करता हूं तब तक मुझको इस संशोधन का समर्थन करना मुश्किल हो जायेगा। ताहम मैं इस पर इस वक्त ज्यादा जोर न दूंगा। आप समय देंगे और इस पर मुझे बोलने का मौका मिलेगा। लेकिन यह जरूरी बात है कि वह आदमी किसी दल का नहीं होना चाहिये।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, मैं खण्ड 4 के उपखण्ड 1 के सम्बन्ध में एक संशोधन पेश करना चाहता हूं। जो इस प्रकार है:

"खण्ड 4 के उप-खण्ड 1 के स्थान पर निम्न खण्ड रखा जायेः

> **'राष्ट्रपति पार्लियामेण्ट अथवा किसी धारा सभा का सदस्य नहीं होगा और यदि ऐसा कोई सदस्य राष्ट्रपति चुना जाये तो वह पार्लियामेण्ट अथवा सम्बद्ध धारा सभा का सदस्य नहीं रहेगा'।"**

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

उपखण्ड 1 का सिद्धान्त जो सभा के सम्मुख इस समय उपस्थित मसविदे के अनुसार केवल संघीय पार्लियामेंट पर लागू होता है, इस संशोधन के परिणामस्वरूप इकाइयों की धारासभाओं के सदस्यों पर भी लागू होगा। मैंने जानबूझ कर "पार्लियामेंट" और "धारासभा" शब्दों का प्रयोग किया है, क्योंकि इस दस्तावेज के मसविदे के सम्बन्ध में जिन सिद्धान्तों को अपनाया गया है, उनके अन्तर्गत "पार्लियामेंट" शब्द का प्रयोग संघ की धारासभा से है और "धारासभा" शब्द का सम्बन्ध इकाइयों (प्रान्तों) की धारासभाओं से है। मुझे इससे अधिक और कुछ नहीं कहना है।

***अध्यक्ष:** सब संशोधन पेश हो चुके हैं। मूल प्रस्ताव और संशोधनों पर अब बहस की जा सकती है।

***श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान्, मैं इस खण्ड का ज्यों का त्यों समर्थन करता हूं, परन्तु मैं यह अनुभव अवश्य करता हूं कि मसविदा तैयार करते समय उसमें कुछ बातों का उल्लेख किया जाना जरूरी है।

मेरे माननीय मित्र श्री रामनारायण सिंह ने एक संशोधन पेश किया था, जो उसके वर्तमान में उपयुक्त नहीं है। राष्ट्रपति को किसी न किसी दल की ओर से चुनाव में खड़ा होना है। लेकिन निर्वाचन के बाद यह नितान्त आवश्यक है कि वह किसी भी राजनीतिक दल से अपना नाता न रखे।

जैसा कि आप जानते हैं कि इस बारे में काफी विवाद रहा है कि क्या असेम्बली का अध्यक्ष किसी दल से अपना सम्बन्ध कायम रख सकता है, अथवा नहीं। इस बारे में अभी तक कोई फैसला नहीं हो सका है। मुझे आशा है कि नये विधान के अन्तर्गत राष्ट्रपति गवर्नरों और धारासभाओं के अध्यक्षों का किसी भी राजनीतिक दल से किसी प्रकार का भी कोई सम्बन्ध नहीं रहेगा।

इसके अलावा एक और सवाल कारबारी सम्बन्ध रखने के बारे में है। नि:संदेह "सवैतनिक कार्यभार" के अन्तर्गत कितनी ही चीजें शामिल हैं, लेकिन इसमें अन्य बातों का समावेश नहीं हो सकता। उदाहरण के तौर पर किसी कम्पनी में शेयर होने की बात ही लीजिये। राष्ट्रपति को शेयर लेने से रोकना सम्भव नहीं है, लेकिन यह बहुत जरूरी है कि जब वह राष्ट्रपति चुन लिया जाये तो सम्बद्ध कम्पनी में अपने शेयरों की तादाद आदि बातें स्पष्ट रूप से घोषित कर दे

ताकि जनता वास्तविक स्थिति से परिचित हो जाये। अपने कार्यकाल में सिवाय किसी विशिष्ट कार्य प्रणाली के जरिये उसे किसी कम्पनी के शेयर अथवा अचल सम्पत्ति खरीदने की इजाजत नहीं होनी चाहिये। हमें राष्ट्रपति को इन झंझटों और जटिलताओं से दूर रखना चाहिये। अन्यथा, सभी प्रकार की अफवाहें और झूठी बातें फैल जाने की आशंका है। राष्ट्रपति को बदनाम करने के लिये कितनी ही बातें फैल सकती हैं। मुझे आशा है कि विधान का मसविदा तैयार करने के लिये जो मसविदा-समिति स्थापित की जायेगी वह इन बातों का पूरा-पूरा ख्याल रखेगी और हमारे सामने एक अच्छा, श्रेष्ठ और व्यापक मसविदा उपस्थित करेगी, जिसे विधान के अन्तर्गत शामिल किया जा सकेगा।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** श्रीमान् सभापति, मैं अभी-अभी पेश किये हुये संशोधन के सम्बन्ध में कुछ शब्द कहना चाहता हूं।

मेरे माननीय मित्र मि. इस्माइल के सवाल के जवाब में प्रस्तावक ने यह बात सर्वथा स्पष्ट कर दी है कि संघ के राष्ट्रपति को किसी ज्वाइंट स्टाक कम्पनी अथवा लिमिटेड कम्पनी में कोई पद ग्रहण करने की आज्ञा नहीं होगी। वह किसी रजिस्टरी शुदा अथवा गैर रजिस्टरी शुदा संस्था का डाइरेक्टर नहीं बन सकता। वह किसी और तरीके से वेतन अथवा किसी और किस्म का आर्थिक लाभ नहीं उठा सकता। यह सिद्धान्त नि:संदेह बड़ा उत्तम और ठोस है। राष्ट्रपति पद पर एक ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जिसकी निष्ठा और भक्ति राष्ट्र के सिवाय किसी और संस्था इत्यादि के प्रति नहीं होनी चाहिये। ऐसा व्यक्ति जिसने फिलहाल अपनी सारी शक्ति देश सेवा के लिये अर्पित कर दी हो, उसे अपने कार्यभार के अतिरिक्त किसी और बात की ओर ध्यान नहीं देना चाहिये। उसकी समस्त शक्ति और ध्यान केवल अपने कर्त्तव्य पालन की ओर ही लगाना चाहिये।

मुझे इस बारे में यद्यपि कोई आशंका नहीं है और मुझे पूर्ण आशा है कि यह सभा भी इस बात से सहमत होती कि उसें कोई सवैतनिक कार्यभार ग्रहण नहीं करना चाहिये, फिर भी मेरी राय है कि हमें इससे एक कदम आगे और बढ़ना चाहिये। मेरे विचार में राष्ट्रपति को कोई अवैतनिक पद भी ग्रहण नहीं करना चाहिये। मिसाल के तौर पर यह किसी व्यापार मंडल, मजदूर संघ अथवा इसी तरह की किसी और संस्था का अध्यक्ष नहीं हो सकता। मेरा कथन यह है कि उसे इन अवैतनिक पदों से भी दूर ही रहना चाहिये, क्योंकि सम्भव है कि इस तरह से उसके पद से वर्ग विशेष अपना स्वार्थसाधन करने की कोशिश करे। मैं इस सिलसिले में कोई नियमित संशोधन नहीं पेश करने जा रहा। मुझे आशा है और मैं यकीन

[पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र]

भी करता हूं कि जब अन्तिम रूप से मसविदा तैयार होगा तो माननीय प्रस्तावक इन बातों का ख्याल रखेंगे और यह कोशिश करेंगे कि अन्तिम मसविदे में इन्हें शामिल कर लिया जाये।

इस बात से हम सभी सहमत हैं कि राष्ट्रपति ऐसा व्यक्ति होना चाहिये, जिस पर कोई अंगुली तक भी न उठा सके। इसके लिये हमें ये सही कदम उठाने चाहियें और यहां तक कि जैसा मेरे माननीय मित्र श्री रामनारायण सिंह ने सुझाव रखा है, हमें कड़े से कड़ा कदम उठाने से भी नहीं हिचकिचाना चाहिये। आप दल विशेष से सम्बन्ध रखने वाले किसी व्यक्ति को राष्ट्रपति पद के लिये खड़ा होने से रोक नहीं सकते। परन्तु ज्यों ही वह संघ का राष्ट्रपति चुन लिया जाये, उसे निश्चित रूप से अपने सभी राजनीतिक सम्बन्ध और राजनीतिक संस्थाओं से अपना सम्बन्ध तोड़ लेना चाहिये। उसे किसी भी दल से अपना सम्बन्ध कायम नहीं रखना चाहिये। इस पर तो बहस करने की कोई जरूरत ही नहीं। यह एक प्रत्यक्ष और निर्विवाद तथ्य है। मैं आशा करता हूं कि जब अन्तिम रूप से मसविदा तैयार होगा तो माननीय प्रस्तावक इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए ऐसी व्यवस्था करेंगे जिससे राष्ट्रपति की स्थिति पर कोई आंच न आ सके और उस पर कोई अंगुली तक न उठा सके।

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिण और मद्रास रियासतें): अध्यक्ष महोदय, मैं "सवैतनिक कार्यभार" शब्दों के सम्बन्ध में एक-दो सुझाव रखना चाहता हूं, ताकि जब यह स्मृति-पत्र अन्तिम मसविदा तैयार करने के लिये मसविदा-समिति के सामने पेश किया जाये, तो उन पर ध्यान दिया जा सके।

यह कहा गया है, और सर्वथा ठीक ही कहा गया है कि "सवैतनिक कार्यभार" शब्द इतने व्यापक नहीं हैं कि जिनके अन्तर्गत कितने ही ऐसे पद भी शामिल हों जिनके लिये पारिश्रमिक दिलाना हो और इसलिये उन्हें और अधिक स्पष्ट कर देना जरूरी है। मैं एक दो बातों पर प्रकाश डालना चाहता हूं जिनकी ओर शायद आप लोगों का ध्यान नहीं गया। उदाहरण के तौर पर, मध्य प्रान्त और बरार में मौरूसी (पैतृक) देहाती अफसर जिन्हें पाटिल और पटवारी कहा जाता है, चुनने की प्रणाली प्रचलित थी, इसी तरह के अन्य व्यक्ति भी हैं, जो भूतपूर्व परगना अफसर, देशमुख और देशपाण्डे इत्यादि कहलाते हैं। पुराने जमाने में ये लोग वास्तविक परगना अफसर होते थे और उसी पद की स्वीकृति रूप में

ब्रिटिश सरकार की ओर से उन्हें कुछ पारिश्रमिक भी दिया जाता है। मेरे माननीय मित्र डा. पी.एस. देशमुख जो इस सभा में हमारे एक सहयोगी भी हैं, इसी श्रेणी के अन्तर्गत शामिल हैं। इस वर्ग के लोगों को कुछ पारिश्रमिक दिया जाता है, जो "रस्म" कहलाता है, इन लोगों को भूतपूर्व परगना अफसर कहा जाता है। अब तक चुनाव से सम्बन्ध रखने, सभी मामलों में, मध्य प्रान्त और बरार में पाटिलों, पटवारियों और इन परगना अफसरों को ऐसे सवैतनिक पदाधिकारी नहीं समझा जाता था, जिन्हें चुनाव में उम्मीदवार के रूप में खड़ा होने की इजाजत न हो, हालांकि आम शहरियों को यह हक हासिल नहीं था। दूसरी बात जिसकी ओर मैं सभा का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं, यह है कि पुराने राजघरानों के लोगों को कुछ राजनीतिक पेन्शन दी जाती है, इन्हें पारिश्रमिक नहीं कहा जाता। क्या इस श्रेणी के लोगों को राष्ट्रपति पद के लिये खड़ा होने की आज्ञा न होगी? यह वेतन नहीं है, बल्कि एक तरह से मुआवजा है जो उनके शाही पूर्वजों से लिये गये प्रदेश इत्यादि के बदले में उन्हें दिया जाता है; यह निजी सम्पत्ति से मिलता जुलता है। देश के जिस भाग में मैं रहता हूं, वहां ये दो प्रकार के वेतन प्रचलित हैं। इसलिये मैं चाहता हूं कि विधान का मसविदा तैयार करने वाली समिति मसविदा बनाते समय इन बातों का ध्यान रखे ताकि इस वाक्यखण्ड के अन्तर्गत इन्हें "वेतन" सम्बन्धी वर्ग में सम्मिलित न किया जाये।

जहां तक मेरे मित्र श्री रामनारायण सिंह के संशोधन का सवाल है, मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि एक बार जब कोई व्यक्ति राष्ट्रपति चुन लिया जाये, भले ही उसका सम्बन्ध किसी भी दल से रहा हो, उसे उस दल से अपना नाता तोड़ लेना चाहिये और निर्दल व्यक्ति बन जाना चाहिये, लेकिन उस पद पर अधिष्ठित होने से पूर्व आप किसी व्यक्ति से निर्दल-व्यक्ति होने की आशा नहीं कर सकते। यह तो ऐसा होगा जैसे कि मछली को पानी से दूर रहने को कहा जाये। व्यक्ति को किसी न किसी दल से अपना सम्बन्ध अवश्य रखना चाहिये, यह जरूरी नहीं कि उसका सम्बन्ध कांग्रेस की तरह किसी राजनीतिक दल से ही हो। उसका ताल्लुक किसी और दल से हो सकता है। उसका सम्बन्ध किसी धार्मिक दल से भी हो सकता है। मनुष्य चूंकि सामाजिक प्राणी है, इसलिये यह ख्याल कर लिया जाता है कि उसका सम्बन्ध किसी न किसी दल अथवा समूह से अवश्य है और अगर हम "निर्दल व्यक्ति" शब्द का प्रयोग करें तो फिर किसी व्यक्ति को राष्ट्रपति पद के लिये चुनना ही कठिन हो जायेगा। इसलिये, यद्यपि मैं उनके विशिष्ट संशोधन का समर्थन नहीं कर सकता, फिर भी मैं यह

[श्री एम.एस. अणे]

सिद्धान्त मानने को तैयार हूं कि एक बार जब वह राष्ट्रपति चुन लिया जाये तो उससे "निर्दल व्यक्ति" होने की आशा की जाती है और उसे अपने दल से अपना सब प्रकार का सम्पर्क तोड़ लेना चाहिये तथा उसे सभी का होकर अथवा किसी का भी न होकर रहना चाहिये। उसे इन दोनों में से एक मार्ग का अवलम्बन करना होगा और उसी हालत में वह उचित रूप से अपना कर्तव्य पालन कर सकेगा और अपनी जिम्मेदारियों को निभा सकेगा।

अध्यक्ष: श्री श्रीप्रकाश!

श्री श्रीप्रकाश: श्रीमान्, कुछ भाषण सुनने के बाद मुझे पुन: यह कहने को विवश होना पड़ता है, जो कि मैं पहले भी एक और जगह कह चुका हूं कि ऐसा प्रतीत होता है कि कम से कम कुछ सदस्य चाहते हैं कि राष्ट्रपति ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जिसके पास जीविकोपार्जन का अपना कोई प्रत्यक्ष साधन हो। *(हंसी)* श्रीमान्, मेरे विचार में जिस व्यक्ति को हम अपना राष्ट्रपति चुन रहे हैं, उसमें कुछ तो यकीन होना चाहिये। हमें उसे किसी प्रकार भी जकड़ नहीं देना चाहिये। अगर हम किसी व्यक्ति के पेशे को पसन्द नहीं करते तो फिर उसे राष्ट्रपति पद के लिये उम्मीदवार खड़ा करने की भी कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन अगर हम उसे पसन्द करते हैं तो हमें उस पर भरोसा रखना चाहिये कि वह राष्ट्रपति के रूप में अपनी तरफ से सर्वोत्तम कार्य करेगा और हमें उसके व्यवसाय को उसके कार्यक्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं करने देना चाहिए। किसी व्यक्ति को आप जब तक वह राष्ट्रपति है तब तक वकालत करने अथवा डाक्टरी करने से रोकें तो यह बात हमारी समझ में आ सकती है, लेकिन उससे यह आशा करना मुनासिब नहीं है कि चूंकि अब वह राष्ट्रपति बन गया है, इसलिये उसे जीविकोपार्जन के अपने सभी साधनों का परित्याग कर देना चाहिये।

मैं पूछता हूं कि किसी आदमी के लिये यह कैसे मुमकिन हो सकता है कि यदि उसके पास घर, जमीन, शेयर अथवा कोई और जायदाद हो तो वह किसी के पास धरोहर के रूप में तब तक के लिये अपनी सारी जायदाद रख दे जब तक कि वह फिर से अपने गैर सरकारी जीवन में नहीं पदार्पण कर लेता? आप किस तरह से यकीन कर सकते हैं कि अपना पदत्याग करने पर उसे अपनी वह सभी जायदाद फिर सही सलामत वापस मिल जायेगी जो उसके पास राष्ट्रपति पद पर आरूढ़ होने से पूर्व थी। हां, मैं आपकी इस बात से सहमत हो सकता हूं कि यदि आप यह व्यवस्था और गारंटी कर दें कि एक बार जब कोई व्यक्ति राष्ट्रपति रह चुका

होगा उसे अपने शेष जीवन में जीविकोपार्जन के लिये काफी साधन उपलब्ध हो सकेंगे। उस हालत में यदि कोई सदस्य राष्ट्रपति को उसके सभी अथवा किसी एक व्यवसाय से जिसमें उस पद पर आरूढ़ होने से पूर्व वह था, वंचित करने की बात कहें तो वह मेरी समझ में आ सकती है। यहां तक बहुत दिनों के बाद फिर वकालत करने में वकीलों को भी काफी कठिनाई पेश आती है। मैं विशेष रूप से अपने जैसे व्यक्ति के बारे में बहुत चिन्तित हूं, जिसके पास अपनी कुछ जमीन और जायदाद है *(हंसी)*। जब तक मेरे और आपके प्रान्त में इन जमीदारियों को खत्म नहीं कर दिया जाता तब तक ऐसे लोगों के लिये–इससे आप यह न समझ लें कि मैं खुद राष्ट्रपति पद के लिये उम्मीदवार हूं–जिनके पास जमीनें हैं, कोई व्यवस्था अवश्य होनी चाहिये ताकि वे राष्ट्रपति पद के लिये उम्मीदवार खड़े हो सकें। इस बारे में कुछ न कुछ व्यवस्था अवश्य होनी चाहिये ताकि ऐसे लोग, जिनके पास दुर्भाग्य से कुछ जायदादें हैं–इस अधिकार से पूर्णतः वंचित न हो जायें।

श्रीमान्, यह भी मुनासिब नहीं होगा कि जो व्यक्ति राष्ट्रपति पद के लिये उम्मीदवार खड़ा हो, उससे विभिन्न कंपनियों में अपने सभी शेयर घोषित करने को कहा जाये। मान लीजिये कि वह अपने एक-दो गैर मुनाफे वाले शेयर बताना भूल जाये जैसे कि लखनऊ के पत्र "नेशनल हैरल्ड" के शेयर।

***श्री बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): क्या सूचना के तौर पर मैं यह जान सकता हूं कि उन्होंने किस आधार पर यह निश्चित मान लिया है कि जब कोई व्यक्ति राष्ट्रपति बनेगा तो उसे अपनी सभी प्रकार की सम्पत्ति से हाथ धोना पड़ेगा?

***श्री श्रीप्रकाशः** मेरा खयाल था कि श्री सन्तानम् का यही उद्देश्य है।

***श्री के. सन्तानम्:** मैं सिर्फ यह चाहता था कि वे अपने शेयर बता दें ताकि हमें भी उनका पता चल जाये।

***श्री श्रीप्रकाशः** श्रीमान्, मेरे विचार में, हमें मुख्यतः इस बात का खयाल रखना चाहिये कि हम किस व्यक्ति को राष्ट्रपति बना रहे हैं। उसकी जायदाद अथवा उसके शेयरों अथवा उसकी और बात से हमारा कोई सरोकार नहीं होना चाहिये। अगर हमें उस पर पूरा भरोसा है, तो हमें उस पद के लिये उसे खड़ा करना चाहिये। यदि हमें उस पर विश्वास नहीं तो फिर उसे खड़ा नहीं करना चाहिये।

[श्री श्रीप्रकाश]
यदि आप किसी भिखारी को राष्ट्रपति चुन लें तो वह भी किसी सबसे बड़े शेयर होल्डर अथवा किसी और की भांति बेईमान हो सकता है। ईमानदारी किसी व्यक्ति की आर्थिक स्थिति पर निर्भर नहीं करती। ईमानदारी तो कुछ और ही चीज है। हमारा उद्देश्य तो यह है कि हमारा राष्ट्रपति ऐसा व्यक्ति हो, जिस पर कोई आंच न आ सके और वास्तव में देखा जाये तो इसका कोई महत्व नहीं कि उसके पास पहले से कोई जायदाद है या नहीं। मेरी राय में हमें इस तरह की कोई व्यवस्था पेश करके राष्ट्रपति की स्थिति पर किसी किस्म का प्रतिबन्ध नहीं लगाना चाहिये।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान्, यह अपेक्षाकृत आश्चर्य की बात है कि हम ये शब्द श्री श्रीप्रकाश के मुंह से सुन रहे हैं। यह बात नहीं है कि वे संशोधन का कार्यक्षेत्र बिल्कुल गलत समझते हों। यदि वे राष्ट्रपति चुने जाते हैं तो उन्हें अपनी सम्पत्ति अपने पास ही रखनी चाहिये। लेकिन हम तो यह कल्पना करते हैं कि वे व्यापार मन्त्री बनेंगे। ज्यों ही वे मन्त्री बनें उन्हें शेयर के कारोबार में हिस्सा लेना छोड़ देना चाहिये। अन्यथा, यदि किसी सरकार का व्यापार मंत्री अथवा राष्ट्रपति शेयर बाजार में जाकर कारोबार करेगा तो उसका मतलब यह होगा कि जिस विशिष्ट शेयर को उसने खरीदा है, वह बड़ा पायेदार और टिकाऊ है। हो सकता है कि अगले ही दिन वह उन्हें बेच दे। इस प्रकार शेयरों पर उसका एकाधिकार स्थापित हो जायेगा। हम संघ के राष्ट्रपति को इस प्रकार के अनैतिक कारोबार में भाग लेने की कभी इजाजत नहीं दे सकते–– अनैतिकता कितने ही प्रकार की होती है। श्रीमान्, अब रहा प्रश्न मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम् के संशोधन का, जिसमें इस बात पर जोर दिया गया है कि राष्ट्रपति अपने शेयरों के सम्बन्ध में घोषणा करे। मेरे मित्र श्री श्रीप्रकाश का कहना है कि हो सकता है कि वह किसी शेयर के सम्बन्ध में सूचना देना भूल जाये। मेरे विचार में वह स्वयं अपने ही मामलों में इतना असावधान नहीं हो सकता। लेकिन वे राष्ट्रपति से अपने मामलों में असावधान बने रहने की आशा करते हैं। जहां तक कारबार का प्रश्न है, यदि वह किस संस्था का अवैतनिक अध्यक्ष अथवा डाइरेक्टर भी है और उसे केवल बैठकों में उपस्थित रहने का भत्ता ही मिलता हो, तब भी जब उसे किसी खास बिल के सम्बन्ध में स्वीकृति देनी होगी, उसे उस बिल को वापस पार्लियामेण्ट में भेज देने का लालच हो सकता है, विशेषकर उस हालत में अगर उन धाराओं का प्रभाव उसके बैंक अथवा कम्पनी पर पड़ता हो। मेरे कहने का यह अर्थ नहीं है कि

ऐसी कोई खास बात अवश्य पैदा हो जायेगी। लेकिन मैं तो सिर्फ इस बात की आवश्यकता पर जोर देना चाहता हूं कि राष्ट्रपति का ऐसी संस्थाओं से प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से भी कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिये।

इसके बाद, श्रीमान्, जहां तक सवाल उसका किसी दल से सम्बन्धित होने का है, यह तब तक असम्भव है, जब तक वह निरा मिट्टी का माधव न हो। उसे किसी न किसी दल से सम्बन्ध रखना ही होगा। चुनाव के बाद उसे अनिवार्य रूप से अपनी पार्टी से अपना सब सम्बन्ध तोड़ देना चाहिये और उसके प्रति अपनी भक्ति खत्म कर देनी चाहिये। उस सीमा तक तो यह बात तर्कसंगत प्रतीत होती है, लेकिन यह कहना कि उसका सम्बन्ध कतई किसी दल से न होना चाहिये, यह बात अव्यावहारिक प्रतीत होती है। मैं कोशिश कर रहा हूं कि मुझे किसी ऐसे व्यक्ति का पता चले जिसका ताल्लुक किसी भी पार्टी से न हो, लेकिन मेरा खयाल है कि ऐसा व्यक्ति हमें शायद ही मिल सके। मुझे तो केवल स्कूल का अध्यापक ही ऐसा निर्दल व्यक्ति दिखाई देता है। लेकिन सम्भव है कि वह भी अपने जिला बोर्ड के सभापति के पक्ष में हो, जिसका सम्बन्ध किसी पार्टी से हो। इसलिये किसी भी दृष्टिकोण से विचार करने पर आपको निर्दल व्यक्ति का मिलना असम्भव है। इतना ही बहुत काफी होगा अगर वह यूनियन अथवा संघ का राष्ट्रपति निर्वाचित होने के उपरान्त अपने दल से अपना सब प्रकार का सम्बन्ध तोड़ दे। श्रीमान्, मैं यह बात बड़ी जोर देकर कहना चाहता हूं कि इस तरह के प्रतिबन्ध और शर्तें निहायत जरूरी हैं, ताकि शासन प्रबन्ध ठीक से चल सके और उपयुक्त व्यक्ति इस पद के लिये उपलब्ध हो सके।

***अध्यक्षः** अब कोई और वक्ता नहीं रहा। क्या प्रस्तावक महोदय बहस के जवाब में कुछ कहना चाहेंगे?

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** श्रीमान्, राष्ट्रपति के वेतन के सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा गया है। मुझे यह बड़ा कठिन प्रतीत होता है कि ऐसे पदों की एक सूची बनाई जाये, जिन्हें वह ग्रहण नहीं कर सकता। इस सम्बन्ध में निःसंदेह खूब सोच-विचार करने के बाद कोई साधारण सिद्धान्त किया जा सकता है, लेकिन बाद में मुख्यतः सारी बात परम्परा पर आश्रित है। अगर आप बड़ी-बड़ी और लम्बी सूचियां तैयार करने लगें तो बहुत मुमकिन है कि कितनी ही बातें छूट जाएं जिन्हें वह कर सकता है। अतः साधारणतः हमें परम्परा पर ही निर्भर रहना होगा। बात तो यह है कि किसी मुनाफे वाले पद से उसका सक्रिय

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

रूप से कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिये। प्रत्यक्ष है कि आजकल के जमाने में अगर वह अच्छा खाता-पीता और संभ्रांत व्यक्ति है तो उसके पास कुछ शेयर अवश्य होंगे, अथवा वह श्री श्रीप्रकाश की भांति जमींदार हो सकता है, अथवा उसके पास कोई और सम्पत्ति हो सकती है। जहां तक मैं जानता हूं श्री श्रीप्रकाश के राष्ट्रपति पद के लिये खड़ा होने में कोई अड़चन नहीं हो सकती और यदि ऐसा हुआ तो निःसंदेह यह एक बड़ा दुर्भाग्य और संकट होगा। इसलिये मेरा निवेदन है कि इस वक्त हमें इस सवाल पर और बहस करने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि इसे इसी रूप में यहीं छोड़ देना चाहिये। हमें यह सवाल न केवल मसविदा समिति पर छोड़ देना चाहिये, बल्कि परम्पराओं पर भी।

मैं श्री सन्तानम् से एक बात में सहमत हूं, यद्यपि मैं उसे लिखित रूप में पेश करना आवश्यक नहीं समझता, और वह यह है कि किसी व्यक्ति से जो ऊंचे उत्तरदायित्व पूर्ण पद पर हो, यह कहा जाये कि वह अपने कारबारी सम्पर्क या अपनी सम्पत्ति और शेयर आदि के बारे में किसी प्रकार की घोषणा करे। मेरे खयाल में इससे कोई लाभ नहीं होगा, भले ही वह राष्ट्रपति हो अथवा मन्त्री अथवा कोई और बड़ा जिम्मेदार व्यक्ति *(वाह, वाह)*। श्रीमान्, मुझे सर एन. गोपालस्वामी आयंगर का संशोधन मंजूर है, जिसमें वाक्यखण्ड 1 का स्पष्टीकरण किया गया है।

मेरा खयाल है कि अब प्रश्न रह जाता है राष्ट्रपति के वेतन और भत्तों का। एक सुझाव यह रखा गया है कि "घटाया" शब्द की जगह कोई और शब्द रखा जाये। बहुत सोच विचार करने के बाद ही हम इस नतीजे पर पहुंचे थे कि "घटाया" शब्द रखना ही ठीक है। अगर हम चाहते तो "बदला" अथवा "बढ़ाया अथवा घटाया" शब्द भी रख सकते थे लेकिन सभी चीजों का खयाल करके हमने "घटाया" शब्द रखना ही ठीक समझा। यही शब्द हमें सर्वोत्तम जंचा। बात यह है कि धारासभा को अपनी मर्जी के अनुसार जो भी वह चाहे करने का हक है, लेकिन उसे उस व्यक्ति के हितों के खिलाफ अपने अधिकारों का प्रयोग नहीं करना चाहिये, जिसे राष्ट्रपति चुना गया हो। जब तक कि पार्लियामेंट न चाहे उसका वेतन अथवा भत्ते बढ़ाने का सवाल ही नहीं उठता। आपको पार्लियामेंट को कुछ करने से रोकना नहीं चाहिये, लेकिन सम्भवतः पार्लियामेंट अथवा जनता द्वारा राष्ट्रपति की स्थिति असम्भव बना देने का थोड़ा खतरा अवश्य है। इसलिये आप कहते हैं कि "घटाया" शब्द नहीं होना चाहिये। इन दिनों कोई नहीं कह सकता कि कब सहसा मुद्रा-बाहुल्य हो जाये और उसका स्थिति पर इतना

अधिक प्रभाव पड़े कि वेतनों और भत्तों के समस्त साधारण मान में परिवर्तन करना जरूरी हो जाये। इसलिये मेरी राय में इन शब्दों के बदलने की कोई जरूरत नहीं है।

अन्त में राष्ट्रपति का किसी दल विशेष से सम्बन्ध न रखने के बारे में पेश किये गये संशोधन का प्रश्न रह जाता है। मैं नहीं जानता कि इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में मेरी कुछ सहानुभूति क्योंकर है। लेकिन इसके बावजूद भी यह सुझाव मुझे सर्वथा अव्यावहारिक प्रतीत होता है। सदल व्यक्ति से आपका क्या अभिप्राय है? नि:संदेह राजनीतिक निर्वाचन लड़ने के लिये आप बड़े-बड़े दलों और संगठनों की बात सोचते हैं। लेकिन आपके लिये उन सभी को सलाह देना मुश्किल है। कितने ही तरह के दल होते हैं और कोई व्यक्ति इसलिये बुरा नहीं हो जाता कि चूंकि उसका सम्बन्ध किसी बड़ी या छोटी पार्टी से है। मेरा खयाल है कि प्रत्येक व्यक्ति एक न एक वर्ग अथवा संघ से अवश्य सम्बद्ध है। प्रश्न तो यह है कि एक बार राष्ट्रपति चुने जाने पर किसी व्यक्ति को किसी दल से सम्बन्ध नहीं रखना चाहिये। उसे दल विशेष से सम्बद्ध होने के रूप में काम नहीं करना चाहिये। समस्त बातों का खयाल रखते हुये ऐसा ही ठीक और युक्तियुक्त प्रतीत होता है। इस बारे में, मैं खुद भी कोई फैसला नहीं कर सका कि चुनाव के बाद राष्ट्रपति का अपनी पार्टी से किस प्रकार का सम्बन्ध रहना चाहिये। लेकिन यह सवाल उठता ही नहीं। खैर कुछ भी हो, जब यह इतने बड़े पद पर आसीन हो तो उसे, चाहे वह किसी दल का व्यक्ति हो या न हो, पूर्णत: निष्पक्ष होकर अपना काम करना चाहिये। उसे अपना काम उसी रूप में करना चाहिये जैसी कि उससे आशा की जाती है। इसलिये, श्रीमान्, मुझे खेद है कि मैं सर एन. गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन के अलावा कोई और संशोधन स्वीकार करने में असमर्थ हूं।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर वोट लूंगा। सबसे पहले मैं मि. नजीरुद्दीन अहमद का संशोधन पेश करता हूं, जो इस प्रकार है:

"खण्ड 4 के उपखण्ड (2) के स्थान पर निम्न खण्ड रखा जाये:

'(2) राष्ट्रपति संघ अथवा किसी प्रांतीय सरकार अथवा किसी स्थानीय संस्था में अथवा उसके अन्तर्गत अथवा किसी कारबारी संस्था में (चाहे वह रजिस्टर हो चुकी हो या नहीं) कोई अवैतनिक अथवा सवैतनिक पद ग्रहण नहीं करेगा'।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** अब मि. के. टी. एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुर का संशोधन पेश किया जाता है किः

"खण्ड 4 के उपखण्ड (3) में 'जो संघ की पार्लियामेण्ट द्वारा निश्चित कर दिये जायेंगे और जब तक कि...' शब्द द्वारा हटा दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** उक्त सदस्य के नाम में एक और संशोधन भी है, जिसमें कहा गया है किः

"खण्ड 4 के उपखण्ड (4) में 'घटाया' शब्द की जगह 'परिवर्तन किया' शब्द रखे जाएं।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** एक और संशोधन श्री रामनारायण सिंह की ओर से पेश किया गया है, अर्थात्

वाक्यखण्ड 4 के अन्तर्गत निम्नलिखित उप-वाक्यखण्ड (5) और जोड़ दिया जायेः

"(5) राष्ट्रपति निर्दल व्यक्ति होना चाहिये।"

***श्री रामनारायण सिंहः** मैं अपना संशोधन आगे नहीं बढ़ाना चाहता।

अध्यक्षः मैं यह मान लेता हूं कि सभा उन्हें अपना संशोधन वापस लेने की इजाजत देती है।

***माननीय सदस्यः** हां, बेशक।

सभा की मर्जी से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्षः** सर एन. गोपालस्वामी आयंगर द्वारा यह संशोधन पेश किया गया है किः

"खण्ड 4 के उपखण्ड (1) के स्थान पर निम्न खण्ड रखा जायेः

'राष्ट्रपति पार्लियामेण्ट अथवा किसी अन्य धारासभा का सदस्य नहीं होगा और यदि ऐसा कोई सदस्य राष्ट्रपति चुना जायेगा तो वह पार्लियामेंट अथवा सम्बद्ध धारासभा का सदस्य नहीं रहेगा'।"

संशोधन स्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** अब संशोधित प्रस्ताव आपके सामने राय देने के लिये पेश किया जाता है।

संशोधन सहित खण्ड 4 स्वीकृत हो गया।

खंड 5

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** श्रीमान्, मैं खण्ड 5 पेश करता हूं—आकस्मिक रिक्त स्थान की पूर्ति के लिये चुनाव सम्बन्धी उचित नियम बना देने चाहियें। सभी आकस्मिक तथा सामान्य चुनावों के सम्बन्ध में विस्तृत प्रणाली के नियमन का भार संघीय पार्लियामेंट के कानून पर छोड़ देना चाहिये।

बशर्ते कि:

"(अ) आकस्मिक रूप से रिक्त होने वाले स्थान के लिए चुनाव यथासंभव शीघ्र और किसी भी हालत में 6 महीने से पूर्व ही होना चाहिए।

(ब) आकस्मिक रिक्त स्थान के लिये चुना जाने वाला राष्ट्रपति पूरे 5 वर्ष तक अपने पद पर रह सकेगा।"

इस सम्बन्ध में प्रयुक्त "रिक्त" शब्द का प्रयोग श्रीमान्, बहुत प्रसन्नता के साथ नहीं किया गया, लेकिन विभिन्न स्थलों से उसे हटा देने के सम्बन्ध में, मैं संशोधन स्वीकार करने को तैयार हूं।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधनों को लेता हूं।

[श्री वी. एस. गुप्ते (संख्या 151), श्री ए. के. घोष (संख्या 152), श्री राजकृष्ण बोस (संख्या 152-अ), श्री विश्वनाथदास (संख्या, 153 और 154), और श्री एस. नगाप्पा (संख्या 155) ने कोष्टकों में उल्लिखित अपने संशोधन संख्या 151 से 155 तक पेश नहीं किये।]

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड 5 की धारा (ब) में से "चुनाव में" शब्द हटा दिये जायें। श्रीमान्, इसका सम्बन्ध मुख्यतः मसविदे से है और इसे अवश्य ही स्वीकार किया जाना चाहिये। उक्त धारा में कहा गया है कि:

"चुनाव में निर्वाचित राष्ट्रपति........"

"चुनाव में" शब्द व्यर्थ हैं, क्योंकि वह तो निर्वाचित हो चुका है। इस तथ्य से कि वह ऐसा व्यक्ति है जो राष्ट्रपति "निर्वाचित" हुआ है, स्पष्ट हो जाता है कि वह चुनाव में ही चुना गया है। जब आप यह कहते हैं कि राष्ट्रपति के

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

रूप में "निर्वाचित" तो "चुनाव में" शब्द तो उसी में अन्तर्निहित हैं और इसलिये ये शब्द व्यर्थ हैं। जैसा कि मैं कह चुका हूं कि मेरे संशोधन का सम्बन्ध केवल मसविदे से है, इसलिये प्रत्यक्ष कारणों के आधार पर उसे स्वीकार कर लेना चाहिये।

(श्री के. चेंगलारय्या रेड्डी, श्री शिब्बनलाल सक्सेना, श्री गोकुलभाई डी. भट्ट, श्री डी. एच. चन्द्रशेखरिया और श्री सी. सुब्रह्मण्यम् ने क्रमशः अपने संशोधन संख्या 158, 159, 161, 162 और 163 पेश नहीं किये।)

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, माननीय प्रस्तावक ने इस खण्ड के अन्तर्गत "आकस्मिक रिक्त स्थान" शब्दों के प्रयोग के बारे में पहले ही उल्लेख कर दिया है। इन शब्दों की वजह से बहुत सी कठिनाइयां पैदा हो गई हैं, जिन्हें दूर करना जरूरी हो गया है। आकस्मिक रिक्त स्थान साधारणतः ऐसे रिक्त स्थान होते हैं जो किसी खास पद के लिये निर्धारित अवधि के दौरान में घटित हो जाते हैं और जब उनकी पूर्ति की जाती है तो जो व्यक्ति उन पदों पर नियुक्त किया जाता है, उसे केवल शेष अवधि तक के लिये ही उस पद पर समझा जाता है। लेकिन इस वाक्यखण्ड का सम्पूर्ण उद्देश्य यह है कि जो व्यक्ति रिक्त स्थान के लिए चुना जायेगा वह पूरे कार्यकाल के लिये चुना जायेगा, इसलिये यह बहुत आवश्यक है कि इस वाक्यखण्ड का मसविदा इस तरीके से तैयार किया जाना चाहिये कि उससे यह उद्देश्य और इरादा और अधिक स्पष्टता के साथ प्रकट होता हो, जैसा कि उसके वर्तमान शब्दों से प्रकट नहीं होता। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये मैं निम्नलिखित संशोधन पेश करता हूं किः

"खण्ड 5 के स्थान पर निम्न खण्ड रखा जायेः

'5. राष्ट्रपति पद के लिये आकस्मिक रिक्त स्थान'।''

राष्ट्रपति पद के लिये आकस्मिक रिक्त स्थान की पूर्ति के लिये उचित व्यवस्था की जानी चाहिये, चाहे वह स्थान उस पद की निर्धारित अवधि से पूर्व या बाद में खाली हो, चुनाव सम्बन्धी विस्तृत प्रणाली का नियमन संघीय पार्लियामेंट के कानून पर छोड़ देना चाहिये।

बशर्ते कि उस हालत में अगर कोई स्थान विशिष्ट पद की निर्धारित साधारण अवधि के समाप्त होने से पूर्व खाली हो जाए तो,

(अ) रिक्त होने वाले स्थान की पूर्ति के लिये चुनाव उसके बाद यथासम्भव शीघ्र और अधिक से अधिक 6 महीने बाद अवश्य हो जाना चाहिये, और

(ब) आकस्मिक रूप से रिक्त होने वाले स्थान के लिये चुना जाने वाला राष्ट्रपति पूरे 5 वर्ष तक अपने पद पर रह सकेगा।

मेरे विचार में इसे स्पष्ट करने के लिये और अधिक शब्दों का प्रयोग करने की जरूरत नहीं है।

***अध्यक्षः** संशोधन पेश किये जा चुके हैं। अब प्रस्ताव तथा उसके सम्बन्ध में पेश किये गये संशोधनों पर बहस की जा सकती है।

***श्री जगत नारायण लाल** (बिहार : जनरल): श्रीमान्, मुझे श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव के सम्बन्ध में कुछ कहना है। उनका खयाल है कि उन्होंने जो तरमीम पेश की है, उसका सम्बन्ध केवल मसविदे से है, लेकिन दरअसल ऐसा नहीं है। वास्तव में रिक्त स्थान की पूर्ति कितने ही तरीकों से की जा सकती है। यदि रिक्त स्थान की पूर्ति नियमित चुनाव की बजाय किसी और तरीके से, जैसे कि नामजदगी या किसी दूसरे तरीके से की जाती है तो चुना जाने वाला पूरी अवधि तक उस पद पर बने रहने का अधिकारी नहीं हो सकता। इसलिये, श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि श्री नजीरुद्दीन अहमद द्वारा पेश किया गया संशोधन मंजूर नहीं किया जा सकता।

***अध्यक्षः** इस प्रस्ताव पर और कोई नहीं बोलना चाहता। प्रस्तावक महोदय अब बहस का जवाब दे सकते हैं।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): श्रीमान्, मुझे सर एन. गोपालस्वामी आयंगर का संशोधन स्वीकार है। बस मैं इतना ही निवेदन करना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** तो अब मैं संशोधन पर राय लेता हूं। संशोधन यह है किः

"खण्ड 5 की धारा (ब) में से 'चुनाव में' शब्द हटा दिये जाये।"

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** अब रहा सर एन. गोपालस्वामी आयंगर का संशोधन। उसे प्रस्तावक द्वारा स्वीकार कर लिया गया है, लेकिन सभा को उसे मंजूर करना अभी बाकी है।

संशोधन स्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** तो यह संशोधन अब एक पृथक् और स्वतंत्र वाक्खण्ड बन गया है।

अब मैं संशोधित खण्ड 5 पर राय लेता हूं।

संशोधन सहित खण्ड 5 स्वीकार कर लिया गया।

अब ठीक एक बज चुका है। सभा कल सुबह 10 बजे तक के लिये स्थगित रहेगी।

इसके बाद सभा शुक्रवार, 25 जुलाई, 1947 को प्रातःकाल 10 बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

Con. 3. 4.10.47
750

अंक 4

संख्या 10

शुक्रवार
25 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	परिचय-पत्र की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर...	1
2.	नियमों में संशोधन.....	1
3.	संघ विधान समिति की रिपोर्ट.....	9

भारतीय विधान-परिषद्

शुक्रवार, 25 जुलाई, सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल, नयी दिल्ली में प्रातःकाल 10 बजे से आरम्भ हुई। अध्यक्ष महोदय माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद ने सभापति का पद ग्रहण किया।

परिचय-पत्र की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्न सदस्य ने अपना परिचय-पत्र उपस्थित किया और रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:

श्री मिहिर लाल चट्टोपाध्याय (पश्चिमी बंगाल : जनरल)।

नियमों में संशोधन

***अध्यक्ष:** आज के कार्यक्रम में पहला मद श्री श्रीप्रकाश का एक प्रस्ताव है।

***श्री श्रीप्रकाश** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

"विधान-परिषद् की नियमावली के नियम 5 के पश्चात् निम्न नया नियम जोड़ दिया जाये:

'5-ए. नियम 4 और 5 में बतायी गयी व्यवस्था के बावजूद, भारत के गवर्नर-जनरल सम्राट की सरकार के 3 जून, 1947 ई. के वक्तव्य के अनुसार, यदि वे चाहें तो, उस वक्तव्य के 14 पैरा में उल्लिखित क्षेत्रों से विधान-परिषद् के लिये नये चुनावों का आदेश दे सकते हैं और ऐसा होने पर मान लिया जायेगा कि उपर्युक्त क्षेत्रों से पहले चुने गये सदस्यों ने, चाहे नियम 3 में निर्धारित विधि से परिषद् में उन्होंने स्थान ग्रहण किया हो अथवा नहीं-स्थान रिक्त कर दिये हैं और यह भी मान लिया जायेगा कि नवनिर्वाचित सदस्य उन स्थानों के लिए बाकायदा चुन लिये गये हैं।'

यह नियम 3 जून, 1947 ई. से अमल में आया समझा जायेगा।"

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री श्रीप्रकाश]

महोदय, मैंने यह प्रस्ताव सदन के सम्मुख तीन उद्देश्यों से रखा है। पहला उद्देश्य यह है कि मैं पिछले कुछ महीनों के दौरान घटित कुछ बहुत ही अवांछनीय घटनाओं को व्यवस्थित करना चाहूंगा। दूसरे, मैं इस परिषद् के सम्मान की रक्षा करना चाहता हूं और यदि आप मुझे कहने की अनुमति दें तो परिषद् के अध्यक्ष के रूप में मैं आपके सम्मान की रक्षा करना चाहता हूं और अन्त में, पिछले कुछ महीनों के दौरान जिस ढंग से बहुत सी चीजें की गई हैं उनके बारें में भी मैं अपनी आपत्ति दर्ज कराना चाहता हूं। परिषद् के बहुत से ऐसे पुराने सदस्यों को, जिन्हें आरम्भ में निर्वाचित किया गया था, सरसरी ढंग से बरखास्त कर दिया गया, नए चुनाव करवाकर उनके स्थान पर नए सदस्य निर्वाचित किए गए।

महोदय, जब पहली बार इस परिषद् का चुनाव हुआ–इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि यह किस प्रकार हुआ–तो यह एक प्रभुसत्ता सम्पन्न निकाय कहलाया जो यह स्पष्ट था और जिसे अपने प्रक्रिया संबंधी नियम बनाने का पूर्ण अधिकार था। यह बिल्कुल स्पष्ट था कि इस तरह की परिषद् का काम-काज इसके अपने संचालन संबंधी नियमों के बिना नहीं चल सकता और इसीलिये हमने एक नियमित पैम्फलेट तैयार किया था जिसमें इस सदन की प्रक्रिया संबंधी सभी नियम दिए थे। कोई भी व्यक्ति यह दावा नहीं कर सकता कि उसे इन नियमों के अस्तित्व के बारे में जानकारी नहीं थी। यदि किसी ने इस पैम्फलेट को पढ़ने का कष्ट किया हो, तो उसकी नजर नियम 4 तथा नियम 5 पर अवश्य पड़ी होगी जिनमें सदस्यों द्वारा निर्धारित ढंग से अपने स्थान खाली करने के उपरान्त परिषद् के नए सदस्यों को चुनने का तरीका स्पष्ट भाषा में निर्धारित किया गया है। तथापि हुआ यह है कि इस सदन के पिछवाड़े में कुछ लोगों के बीच कुछ बातचीत हुई, कुछ समझौते हुए, कुछ सदस्यों को इस सदन से सरसरी ढंग से बरखास्त कर दिया गया और नए चुनाव करवाकर उनके स्थान पर नए सदस्य चुन लिये गए और हमें उस समझौते को मौन स्वीकृति देनी पड़ी। चाहे हम इसे पसंद करें या नहीं, वास्तविकता यह है कि नए सदस्य चुन लिए गए हैं और पुराने सदस्य निकाल दिए गए हैं और इस सौदेबाजी में हमारे प्रिय देश के दो टुकड़े कर दिए गए हैं। मेरे विचार में यह उपयुक्त समय है कि हम अपना एक नियम जोड़कर कम से कम इस प्रक्रिया को व्यवस्थित करें ताकि हम अपनी कुछ इज्जत तो बचा सकें और यह कह सकें

कि जो कुछ किया गया है वह हमारे द्वारा बनाए एक निश्चित नियम के अनुसार ही किया गया है।

महोदय, मेरा दूसरा उद्देश्य इस सदन तथा अध्यक्ष के सम्मान की रक्षा करना है। उन विनाशकारी दिनों में मैंने निस्सहाय होकर यह देखा कि उन वार्ताओं के दौरान आपके नाम का जगह-जगह उल्लेख हो रहा था और यह विश्वास दिलाया गया कि आपसे परामर्श किया गया है। अन्तरिम सरकार के सदस्य के नाते तथा कांग्रेस उच्च कमान के सदस्य के नाते आपसे परामर्श किया गया होगा, लेकिन इस परिषद् के अध्यक्ष के नाते आप इस तस्वीर में कहीं नहीं थे। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि आपसे परिषद् के अध्यक्ष के नाते परामर्श किया होता तो जैसा कि आप मर्यादाओं के बारे में अत्यौपचारिक रूप से सावधान हैं, आपने इस विषय पर निश्चित रूप से परिषद् को अपनी राय देने के लिये कहा होता।

जब आपने उस दिन परिषद् से यह पूछा कि क्या मुझे ऐसा साधारण प्रस्ताव प्रस्तुत करने की अनुमति है, तो यदि परिषद् के अध्यक्ष के नाते आपसे परामर्श मांगा जाता तो ऐसे महत्वपूर्ण मुद्दे पर आप निश्चित तौर पर परिषद् की सलाह लेते। यदि आप हमें आश्वस्त करते कि चूंकि परिषद् का उस समय सत्र नहीं था, आपने परिषद् की ओर से इस प्रक्रिया के बारे में अपनी सहमति प्रदान कर दी थी, तो हम पूरी तरह संतुष्ट हो गए होते। आपको हमारी ओर से फैसला करने का पूरा अधिकार था। तथापि मैं तो यह कहूंगा कि परिषद् की पूरी तरह उपेक्षा की गई है। उस दिन जब पं. गोविन्दवल्लभ पंत ने दल के जनादेश का उल्लेख किया था, तो आपने ठीक ही कहा था कि परिषद् किसी दल को मान्यता नहीं देती। लेकिन यदि मैं भूल नहीं कर रहा हूं तो उन विनाशकारी दिनों के दौरान बार-बार दो प्रमुख दलों के नेताओं का समाचार पत्रों में प्रकाशित एक के बाद एक बयानों में उल्लेख किया गया। अतः जहां तक इस परिषद् का संबंध है, आप किसी दल को मान्यता नहीं देते, हमें उस समझौते को चुपचाप स्वीकार करना पड़ा जिसे हमारी पीठ के पीछे देश के प्रमुख दलों के नेता कहलाए जाने वालों ने किया था। इस संबंध में मैं यह महसूस करता हूं कि इस नियम के जुड़ जाने से किसी हद तक भूल का सुधार हो सकेगा और हमें कम से कम यह एहसास होगा कि जो कुछ किया गया है वह हमारी परिषद् के नियमों के अनुसार किया गया है।

[श्री श्रीप्रकाश]

अन्त में–और जहां तक मेरा संबंध है, यह सबसे महत्वपूर्ण है–मैं, जो कुछ हुआ है उसके विरुद्ध अपनी आपत्ति दर्ज कराना चाहता हूं। मैं नहीं समझता कि उन बयानों में उल्लिखित नेताओं या गवर्नर-जनरल के लिए ऐसे महत्त्वपूर्ण मामले में हमारे अध्यक्ष के नाते आपसे तथा परिषद् से परामर्श न करना उचित था। आप जानते हैं कि उन वार्ताओं के परिणामस्वरूप हमारे देश का विभाजन हो गया, जिसे हम पसन्द नहीं करते। हमें इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यदि मूल कार्य-विधि का अनुसरण किया जाता और इस परिषद् में चुने गये सभी व्यक्ति बैठक में भाग लेते और उनके सामने यह समस्या उचित रूप में उपस्थित की जाती तो हम स्वयं ही प्रसन्नता या खेदपूर्वक इसी व्यवस्था को स्वीकार कर लेते, जो अब हमारे सिर पर लाद दी गयी है। उस अवस्था में हमें कम से कम यही संतोष होता कि इस देश के प्रतिनिधि इस भवन में मिलकर बैठे और उन्होंने गम्भीर सोच-विचार के उपरान्त निश्चय किया कि कम से कम कुछ समय के लिये देश का हित इसी में है कि दो विधान परिषदें हों और देश के दोनों भागों में दो सरकारें हों। परन्तु हुआ यह है कि हमारे सम्मुख ऐसे ढंग से यह वस्तु उपस्थित की गयी कि साधारण व्यक्ति के लिये उसकी सराहना करना तो दूर रहा वह उसे समझ तक नहीं सकता। वर्तमान परिस्थिति में हमारे आगे इसके सिवाय और कोई चारा नहीं है कि जो कुछ हुआ है उसे खूबसूरती से मान लें। मुझे आशा है कि परिषद् की कार्यविधि में यह नया नियम जोड़ने के लिये यह सभा मेरे प्रस्ताव को सर्वसम्मति से स्वीकार कर लेगी।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में मैं अपने को बड़ी कठिनाई में अनुभव करता हूं। परन्तु माननीय सदस्य की गलती को–अगर ऐसी कोई गलती है–दुरुस्त करने की इच्छा के प्रति मेरी पूर्ण सहानुभूति है। यही नहीं, आपके सम्मान की रक्षा के सम्बन्ध में भी मेरी पूरी सहानुभूति है। और जहां तक बहुत सी हुई बातों के प्रतिवाद का सम्बन्ध है, मैं अपनी तटस्थता प्रकट करना उचित समझता हूं। यह सब बातें ऐसे विवश करने के ढंग से हुईं कि उनसे हम गरीबों का तो कुछ सम्बन्ध ही न था।

अब मैं प्रस्ताव के औचित्य के प्रश्न को लेता हूं। इसमें कहा गया है कि "भारत के गवर्नर-जनरल सम्राट की सरकार के 3 जून, 1947 के वक्तव्य के

अनुसार यदि वे चाहें तो उस वक्तव्य के पैरा 14 में उल्लिखित क्षेत्रों से विधान परिषद् के लिये नये चुनावों का आदेश दे सकते हैं....।" महोदय, इस प्रसिद्ध पैरा में निम्न क्षेत्र सम्मिलित हैं: (1) सिलहट, जो अब भारत के अधिकार क्षेत्र के बाहर है, (2) पश्चिमी बंगाल, जो अब भारत के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत है, (3) और (4) पूर्वी बंगाल और पश्चिमी पंजाब, जो भारत के अधिकार क्षेत्र के बाहर हैं, और (5) पूर्वी पंजाब, जो हमारे अधिकार-क्षेत्र के अन्तर्गत है।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्र** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): महोदय, मैं जानना चाहता हूं कि इस नियम के सम्बन्ध में सम्राट की सरकार के वक्तव्य पर विवाद उठाकर माननीय सदस्य का कथन कहां तक संगत है। माननीय सदस्य ने उपर्युक्त वक्तव्य की चर्चा विस्तार से की है और उसके कुछ अंशों का उल्लेख भी किया है और इस सबका इस प्रस्ताव से कुछ भी सम्बन्ध नहीं है।

***अध्यक्ष:** मेरा ख्याल है कि वे पैरा 14 की चर्चा इसलिये कर रहे थे क्योंकि स्वयं प्रस्ताव में उसका उल्लेख है और इसी आधार पर वे अपने तर्क को आगे बढ़ा रहे थे। उनका कथन संगत है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** महोदय, मेरा दृष्टिकोण ठीक यही है। वास्तव में विचारणीय प्रस्ताव में भी अप्रत्यक्ष रूप से इन क्षेत्रों का हवाला दिया गया है। मैं पैरा 14 में उल्लिखित क्षेत्रों का ही हवाला दे रहा था।

यह भी कहा गया है कि इन सदस्यों के चुने जाने और प्रस्तावित चुनाव के परिणामस्वरूप मान लिया जाएगा कि पहले चुनाव में चुने गये सदस्यों ने अपने स्थान रिक्त कर दिये हैं। इस प्रकार यह मान लिया गया है कि पहले चुने गये सदस्य प्रस्तावित चुनाव होने तक अपने स्थानों पर बने होंगे। यद्यपि जहां तक मेरी जानकारी है, वे अपने इस्तीफे दे चुके हैं। यह भी प्रकट किया गया है कि प्रस्तावित चुनाव हो चुकने पर नव-निर्वाचित सदस्यों को–मेरा विश्वास है कि वे सदस्य जो बाद में चुने जायेंगे–3 जून से निर्वाचित माना जाएगा, जो कि एक अव्यावहारिक और मूर्खतापूर्ण बात है। मेरे विचार में तीन चुनावों का प्रश्न विचारणीय है–पहला चुनाव, दूसरा चुनाव जिसके द्वारा हममें से कुछ व्यक्ति निर्वाचित होकर आये हैं और प्रस्तावित तीसरा चुनाव। प्रस्ताव में दूसरे चुनाव की बिल्कुल उपेक्षा कर दी गयी है, जिसके द्वारा हम कुछ व्यक्ति परिषद् में आये हैं। इसका अप्रत्यक्ष रूप से यह भी अर्थ है कि दूसरे चुनाव में जो व्यक्ति चुने गये हैं उन्हें अपनी स्वीकृति कराने का कुछ भी अधिकार नहीं है और उनका स्थान तीसरे चुनाव में चुने गये

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

व्यक्ति ले लेंगे और इस परिषद् में हमने जो भी कुछ कहा या किया है उसे रिपोर्ट में से निकाल दिया जाएगा।

अब हमें तीसरे चुनाव के सम्भावित समय पर भी विचार करना चाहिये। दूसरा चुनाव 3 जून वाला वक्तव्य प्रकाशित होने से एक महीने के भीतर, यानी जुलाई के आरम्भ में हुआ। इस प्रकार तीसरा चुनाव इस तारीख से एक महीने के भीतर अर्थात् 25 अगस्त के आसपास हो सकता है। यदि ऐसा है तो इसमें गंभीर पेचीदगियां आ सकती हैं। प्रस्ताव में सभी क्षेत्रों में, जिनमें वे क्षेत्र भी शामिल हैं जो उस समय भारत से बाहर होंगे, चुनाव कराने का उल्लेख है। 15 अगस्त तक देश में एक नया परिवर्तन होगा। दो नए राज्य (डोमीनियन) अस्तित्व में आ जायेंगे और यह कहना एक गंभीर बात होगी कि वाइसराय, लार्ड मांऊटबेटन ऐसे क्षेत्रों में चुनाव कराने का आदेश देंगे जो उन क्षेत्राधिकार से बाहर होंगे। ऐसी परिस्थितियों में मैं यह कहूंगा कि यह प्रस्ताव अव्यावहारिक है। इससे गंभीर विसंगतियां पैदा होंगी। प्रस्ताव का उद्देश्य—कम से कम वक्ता ने ऐसा आभास दिया है—जो कुछ हुआ है उसे व्यवस्थित करना है। इसमें सदन के सम्मान की रक्षा करने की बात कही गई है। माननीय सदस्य का मानना है कि यदि तीसरा चुनाव होता है तो दूसरे चुनाव में चुने गए सदस्य ही स्वतः चुन लिए जाएंगे। मैं यह कहना चाहता हूं कि हममें से कुछ नहीं चुने जा सकेंगे। ऐसा भी हो सकता है कि नए सदस्य चुनकर आएं। उस स्थिति में हम जैसे सदस्यों का तथाकथित नियमन की धज्जियां उड़ जाएंगी।

मैं यह पूछना चाहूंगा कि हमारे इस दृढ़ कथन का क्या होगा कि हम भारत के वफादार तथा कानून का पालन करने वाले नागरिकों की हैसियत से यहां आए हैं? यदि हमारी सदस्यता समाप्त हो जाती है, तो वह घोषणा पत्र यथावत् रहेगा या समाप्त हो जाएगा? और चौधरी खलीकज़्मन साहिब के न चुने जाने की स्थिति में उनके द्वारा लीग ग्रुप की ओर से यहां राष्ट्रीय झंडे को दी गई स्वीकृति का क्या होगा? इसी तरह इतिहास रचने वाली उस महान पुस्तक पर हुए हमारे हस्ताक्षरों का क्या होगा? क्या उन्हें मिटा दिया जाएगा? जो यात्रा भत्ता तथा दैनिक भत्ता हमें मिला है उसका क्या होगा? क्या ये रुपये हमें वापस लौटाने होंगे या इन्हें चुने जाने वाले भावी सदस्यों को, जो हमारे कानूनी उत्तराधिकारी तथा प्रतिनिधि होंगे, देना होगा? ये कुछ गंभीर विसंगतियां हैं, जिनका इस प्रस्ताव को स्वीकार करने की स्थिति में हमें सामना करना पड़ेगा। मैं यह पहले ही कह चुका हूं कि जिस

भावना के साथ यह प्रस्ताव लाया गया है, उसके साथ मेरी पूरी सहानुभूति है। तथापि यह प्रस्ताव अव्यावहारिक है। यह कहा गया है कि इससे सदन के सम्मान की रक्षा होगी। मेरा मानना है कि इससे अध्यक्ष के सम्मान की रक्षा नहीं होगी, बल्कि उसका उपहास होगा। माननीय अध्यक्ष ने अपने विवेक से हमें सदन की कार्यवाही में भाग लेने तथा अन्य कार्य करने की अनुमति दी है। यदि यह प्रस्ताव पारित होता है तो मेरे विचार में इससे हमारे अध्यक्ष की कार्यवाही का उपहास होगा। मैं यह कहना चाहता हूं कि यदि माननीय सदस्य की वास्तविक इच्छा इस सदन के अधिकारों तथा सम्मान की रक्षा करना है, तो हम ऐसा यह सीधी घोषणा करके कर सकते थे कि हम दूसरे चुनाव को स्वीकार करते हैं। इससे दूसरे चुनाव भली प्रकार से नियमित हो जाएंगे। यदि कुछ अनियमितताएं भी हुई हैं, तो वे भी इससे नियमित हो जाएंगी और सदन के सम्मान और गरिमा की भी रक्षा होगी। मैं यह फिर कहूंगा कि माननीय सदस्य जिस भावना के साथ इस प्रस्ताव को लाए हैं, मेरी उससे पूरी सहानुभूति है, लेकिन इसमें कुछ व्यावहारिक कठिनाइयां हैं और सदन के लिए सबसे अच्छा रास्ता यह होगा कि दूसरे चुनाव को स्वीकार किया जाए। इन शब्दों के साथ मैं यह कहूंगा कि अपने व्यावहारिक निहितार्थों के साथ इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया जा सकता और इसलिए मैं इसका विरोध करने की अनुमति चाहता हूं।

*__हाजी अब्दुल सत्तार हाजी इशहाक सेठ__ (मद्रास : मुस्लिम): क्या मैं माननीय सदस्य का ध्यान प्रस्ताव के उस खंड की ओर आकर्षित कर सकता हूं जिसमें कहा गया है कि यह नियम 3 जून, 1947 से पूर्वप्रभावी होगा?

*__श्री नजीरुद्दीन अहमद:__ इससे किसी भी तरह समस्या हल नहीं होती। मुद्दा यह है कि क्या वे सज्जन, वे माननीय सदस्य जो चुने गए हैं, तीसरे चुनाव में निर्वाचित होंगे? क्या कोई इस बात की गारंटी दे सकता है? वही माननीय सदस्य दोबारा चुने जाते हैं, तो पूर्व-प्रभाव वाले इस खंड का कोई अर्थ है। जहां तक मेरी विनम्र राय है, ऐसे सदस्यों के लिये जो तीसरे चुनाव में पहली बार चुने जाएंगे, पूर्वव्याप्ति का कोई व्यावहारिक अर्थ नहीं है। इसके अतिरिक्त प्रथम बैच तथा द्वितीय बैच के सदस्यों का परस्पर व्यापन हो जाएगा, क्योंकि प्रस्ताव के अनुसार वे कुछ समय के लिए साथ-साथ सदस्य होंगे। इन शब्दों के साथ मैं सम्मानपूर्वक इस प्रस्ताव का विरोध करता हूं।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्त प्रांत-सामान्य): महोदय, मैं इस प्रस्ताव को प्रस्तुत करने वाले माननीय सदस्य के साथ पूरी तरह सहमत हूं। इसके साथ-साथ मैं यह अवश्य कहूंगा कि मुझे इसे समझने में कठिनाई हो रही है। प्रस्ताव में महामहती सरकार के 3 जून के बयान के अनुसरण में गवर्नर-जनरल को भविष्य में भी कुछ कार्य करने की शक्ति दी गई है या दिए जाने का प्रस्ताव है। मैं समझ नहीं पा रहा हूं कि हमारे नियमों में गवर्नर-जनरल को क्यों लाया जाना चाहिए। श्रीयुत श्रीप्रकाशजी का उद्देश्य स्पष्टतया किसी ऐसे कार्य को वैध बनाना है, जो हो चुका है। उनके अनुसार कोई गलत काम हुआ है और मैं उनसे सहमत हूं कि वह कार्य मर्यादा के भीतर नहीं किया गया है।

मैं इस बात से भी सहमत हूं कि उसे हमें नियमानुकूल बनाना चाहिये किन्तु ऐसा हमें अपने नियमों में कोई आधारभूत परिवर्तन करके नहीं करना चाहिये और न इस सम्बन्ध में भविष्य के लिये गवर्नर-जनरल को ही कोई विशेषाधिकार देना चाहिये। इसलिये महोदय, मैं सुझाव उपस्थित करता हूं कि प्रस्ताव को इस रूप में पास करने के स्थान पर संविदा नये सिरे से बनाने के लिये इसे एक समिति के सुपुर्द कर देना चाहिये। मेरा सुझाव है कि इस समिति में निम्न सज्जन रहें:

श्री श्रीप्रकाश,

सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर, और

सर बी. एल. मित्तर।

यह कानूनी विषय है इसलिये मैंने इन तीन वकीलों के नाम उपस्थित किये हैं, यद्यपि श्री श्रीप्रकाश "प्रेक्टिस" करने वाले वकील नहीं हैं। मेरा ख्याल है कि नियमों के संशोधन के रूप में उपस्थित करने के स्थान पर इसे एक प्रस्ताव का रूप देने में अधिक समय नहीं लगेगा।

***श्री श्रीप्रकाश:** मेरे मित्र पंडित जवाहरलाल नेहरू ने जो कुछ कहा है मैं उससे सहमत हूं। सच तो यह है कि अधिवेशन के आरम्भ में जब मैंने इस प्रस्ताव की सूचना दी थी, उन दिनों सीमाप्रान्त में जनमत संग्रह होने जा रहा था और तीन और सदस्य बर्खास्त होने वाले थे। ये सदस्य अब बर्खास्त किए जा चुके हैं और इसीलिये मैंने भविष्य के लिये गवर्नर-जनरल को यह अधिकार देने का सुझाव उपस्थित किया था। अब इस प्रस्ताव का खात्मा हो चुका है और जहां

तक मुझे समझ में आता है और जहां तक 3 जून, 1947 ई. के वक्तव्य का सम्बन्ध है, गवर्नर-जनरल को इस सम्बन्ध में कुछ भी करना शेष नहीं रह गया है। हम यह प्रस्ताव के रूप में भी कर सकते हैं, जैसा कि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने सुझाव उपस्थित किया है। मैं समिति नियुक्त किये जाने और नियमानुकूलता लाने के लिये प्रस्ताव उपस्थित किये जाने से भी पूर्णत: सहमत हूं। उस स्थिति में, मैं अपने प्रस्ताव को सभा की अनुमति से वापस लेना चाहूंगा।

प्रस्ताव, विधानपरिषद् की अनुमति से वापस लिया गया।

***माननीय श्री हुसैन इमाम** (बिहार : मुस्लिम): और आसाम के बारे में क्या होगा? वहां अभी चुनाव होने वाला है।

***श्री श्रीप्रकाश:** यह समिति आसाम के सम्बन्ध में भी विचार करेगी। उसे करना ही चाहिये।

***अध्यक्ष:** मैं अभी यह कहने ही जा रहा था कि प्रस्ताव का जैसा मसविदा है उसमें यह कमी रह गई है। यह सिलहट के अलावा शेष आसाम पर लागू नहीं होता है। इसलिये मेरे विचार में सर्वोत्तम उपाय यही है, जैसा कि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने सुझाव उपस्थित किया है कि यह विषय एक उप-समिति के सुपुर्द कर दिया जाए और उप-समिति प्रस्ताव का मसविदा फिर से तैयार करे, क्योंकि जहां तक मुझे पता चला है उद्देश्य के सम्बन्ध में हमारे मध्य कुछ भी मतभेद नहीं है। अब मैं मान लेता हूं कि परिषद् की इच्छा इस प्रस्ताव को श्री श्रीप्रकाश, सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर और सर बी. एल. मित्तर की उप-समिति के सुपुर्द करने की है।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

संघ विधान समिति की रिपोर्ट

***अध्यक्ष:** अब हम यूनियन कांस्टीट्यूशन कमेटी की रिपोर्ट पर विचार करेंगे। हम भाग 4 के खंड 6 को लेते हैं।

खंड 6

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू:** महोदय, मैं उप-राष्ट्रपति से सम्बन्ध रखने वाले खंड 6 को स्वीकार करने का प्रस्ताव उपस्थित करता हूं।

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

"(1) राष्ट्रपति की अनुपस्थिति या उसकी मृत्यु होने, इस्तीफा देने, पद से हटाये जाने या अयोग्य होने या अपने पद के अधिकारों के उपभोग और कार्य करने में असफल होने की अवस्था में अथवा अन्य किसी ऐसी अवस्था में जबकि राष्ट्रपति का पद रिक्त रहे, उसके कार्य उप-राष्ट्रपति उस समय तक करता रहेगा जब तक राष्ट्रपति अपने कार्य फिर से करना प्रारम्भ न कर दे या नये राष्ट्रपति का चुनाव न हो जाए–जैसी भी अवस्था हो।

(2) उप-राष्ट्रपति का चुनाव संघीय संसद की दोनों सभाएं संयुक्त अधिवेशन में एकल हस्तान्तरणीय मतदान प्रणाली के माध्यम से आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर गुप्त मतदान द्वारा करेंगी तथा उप-राष्ट्रपति राज्य सभा का पदेन सभापति होगा।

(3) उप-राष्ट्रपति का कार्यकाल 5 वर्ष होगा।"

महोदय, मैं यह कहना चाहूंगा कि यदि और जब कभी इस प्रस्ताव में कुछ संशोधन पेश किए जाएंगे, तो मैं उन्हें स्वीकार करना चाहूंगा। ये संशोधन खंड की शब्द रचना को लेकर हैं और इस खंड की एक या दो खामियों को दूर किया जाना है। जहां तक उप-राष्ट्रपति की आयु का सम्बन्ध है, सदन की यह इच्छा है कि राष्ट्रपति की तरह उसकी आयु भी 35 वर्ष निर्धारित की जाए। मैं इसे स्वीकार करने को तैयार हूं।

(श्री ए.के. घोष ने अपना संशोधन संख्या 165 पेश नहीं किया।)

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि खंड 6 के उप खंड (1) के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए:

"(1) जब राष्ट्रपति संघ से अनुपस्थित हों या यदि उसकी मृत्यु होने, त्याग पत्र देने या पद से हटाए जाने के कारण राष्ट्रपति का पद रिक्त हो जाए या जब राष्ट्रपति बीमारी या किसी अन्य कारण से अपने कर्त्तव्यों का पालन करने के अयोग्य हों, ऐसी अनुपस्थिति, ऐसी स्थिति या ऐसी अयोग्यता जैसी भी स्थिति हो, की अवधि के दौरान उसके कार्य उप-राष्ट्रपति करेगा।"

महोदय, मूल खंड में कतिपय ऐसे शब्द हैं जिनसे मेरे विनम्र विचार में कुछ कठिनाई पैदा होती है। मैंने इस संशोधन का सुझाव रखा है, ताकि सदन इस कठिनाई पर विचार करे और सदन या प्रारूपण समिति इन पर गौर करे। इस खंड में

कतिपय आकस्मिकताओं में ही उप-राष्ट्रपति को कार्य करने की अनुमति है। उप खंड (1) में राष्ट्रपति की अनुपस्थिति का उल्लेख है। मुझे यह स्पष्ट नहीं है कि कहां से अनुपस्थिति। हम जानते हैं कि प्रांतीय मंत्री अपनी अनुपस्थिति में भी अपने मुख्यालय से कार्य करते हैं। क्या राष्ट्रपति की अनुपस्थिति का अर्थ राष्ट्रपति की संघ से अनुपस्थिति है जब वह अपने क्षेत्र से बाहर विदेश जाता है या अपने मुख्यालय से बाहर जाता है? मैं समझता हूं कि इसका अर्थ संघ से अनुपस्थिति है। अपने संशोधन में मैंने इसी का समावेश करने का प्रयास किया है। दूसरी कठिनाई यह है कि उप-राष्ट्रपति को तब कार्य करना चाहिए जब अयोग्यता सिद्ध हो जाए। अयोग्यता का अर्थ तथा निहितार्थ निर्धारित करने में काफी कठिनाई है। राष्ट्रपति किसी ढंग से कार्य कर सकते हैं। कोई व्यक्ति इसका यह अर्थ लगा सकता है कि उसने अयोग्यता दिखाई है। राष्ट्रपति कह सकते हैं कि आलोचक उनकी योग्यता को समझने में असफल रहा है और अनेक अन्य लोग उनकी बात से सहमत हो सकते हैं। ऐसा कोई न्यायालय या न्यायाधिकरण नहीं है जो अयोग्यता के बारे में अपना निर्णय दे सके। तब प्रश्न यह उठता है कि "क्या राष्ट्रपति अपने कर्त्तव्यों का पालन करने में अयोग्य हो सकते हैं?" इससे वैसी ही अनिश्चितता पैदा होती है। अतः यह अनिश्चितता दूर होनी चाहिए। अयोग्यता एक बहुत ही सन्देहास्पद अभिव्यक्ति है जिसके कारण गम्भीर जटिलताएं तथा झंझट पैदा हो सकते हैं।

दूसरी शर्त है, "अपनी शक्तियों का उपयोग करने तथा कृत्यों का निर्वहन करने में असफलता।" यह शर्त भी उतनी ही अस्पष्ट है। यह स्पष्ट नहीं है कि "अपने पद की शक्तियों का उपयोग तथा कृत्यों का निर्वहन करने में असफलता" का क्या अर्थ है तथा इसके बारे में भी वही तर्क दिए जा सकते हैं तथा आपत्तियां की जा सकती हैं जो अयोग्यता के बारे में उठाई गईं थीं। अतः मैंने सदन के विचारार्थ एक उपखंड प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जिसमें आधारभूत अंतर तथा आपत्तिजनक लक्षणों का लोप हो जाता है बशर्ते कि सदन इस पर विचार करे। जो प्रस्तावित उपखंड मैंने विचारार्थ प्रस्तुत किया है उसमें इसके अतिरिक्त कुछ भी नया नहीं है। मेरा निवेदन है कि इन गम्भीर बिन्दुओं पर विचार किया जाए और यदि सहमति हो तो जो उपखंड मैंने प्रस्तुत किया है उसके मूलतत्व को स्वीकार किया जाए। हम इस समय वास्तविक प्रारूप पर विचार नहीं कर रहे हैं, बल्कि कुछ कठिन समस्याओं, कतिपय आपत्तिजनक लक्षणों, सिद्धांतों को हटाने का प्रयास कर रहे हैं। संशोधन में कतिपय मूल तत्व हैं और इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। इन शब्दों के साथ मैं प्रस्ताव प्रस्तुत करने वाले माननीय सदस्य

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

से अनुरोध करता हूं कि वह इस पर विचार करें और यदि संभव हो तो इसमें अंतर्निहित मूल तत्वों को कार्यान्वित करें।

***अध्यक्षः** मेरा अनुमान है कि आपके संशोधन में "...........जब राष्ट्रपति का पद उसकी मृत्यु, इस्तीफे या पद से हटाये जाने के कारण" शब्दों के बाद "रिक्त हो" शब्द छूट गये हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** हां महोदय, "आकस्मिक रिक्तता" शब्द जोड़ देने चाहियें। जल्दी में इस गलती पर मेरी दृष्टि न पड़ी। आपने मेरा ध्यान जो आकृष्ट किया है, इसके लिये मैं आपका अनुगृहीत हूं। "रिक्त" शब्द भी उस स्थल पर जोड़ देना चाहिये, जहां ऊपर बताया गया है।

(श्री यदुवंश सहाय ने अपना संशोधन उपस्थित नहीं किया। इसकी सूची में 167 संख्या थी।)

***श्री बी. पोकर साहब बहादुर** (मद्रास : मुस्लिम)ः अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं किः

"खंड 6 के उपखंड (1) से '........ या अयोग्य होने या अपने पद के अधिकारों से काम लेने या कार्य करने में असफल होने' शब्दों को निकाल दिया जाए।"

वास्तव में इस संशोधन के उपस्थित करने के कारणों और तर्कों पर पिछले भाषणकर्ता प्रकाश डाल चुके हैं। महोदय, मेरा निवेदन है कि ये शब्द अस्पष्ट ही नहीं अनावश्यक और व्यर्थ भी हैं—विशेषकर खंड के अन्य अंशों को ध्यान में रखकर, जिनमें विशेष अवस्थाओं के लिये व्यवस्था की जा चुकी है। यह कौन निर्णय करेगा कि राष्ट्रपति अयोग्य है या अपने पद के अधिकारों से काम नहीं ले पाया है या उसके कार्यों को करने में असफल हुआ है? इसका निर्णय किस आधार पर किया जाएगा? यह बहुत ही अस्पष्ट है और इसलिये इस उपखंड की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि यदि कोई व्यक्ति अयोग्य पाया गया या अपना कर्त्तव्य पूरा न कर सके तो उसे पद से हटाया जा सकता है। इसलिये महोदय, मेरा ख्याल है कि ऐसे अस्पष्ट उपखंड को रखना अनावश्यक तथा अनुचित है। इसलिये मैं यह संशोधन उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्षः** श्री गुप्ते! आपका संशोधन वैसा ही है जैसा कि अभी उपस्थित किया जा चुका है।

श्री सुब्रह्मण्यम्, श्री दिवाकर और श्री नजीरुद्दीन अहमद! आपके संशोधन वैसे ही हैं जैसा कि अभी एक उपस्थित किया जा चुका है।

(संख्या 166, 170, 171 और 172 के संशोधन उपस्थित नहीं किये गये।)

(सर्वश्री राजकृष्ण बोस और शिब्बनलाल सक्सेना ने अपने संशोधन उपस्थित नहीं किये। ये संशोधन संख्या 173 से 176 तक थे।)

***श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया** (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"खंड (6) के उपखंड (2) के स्थान पर निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:

'(2) उप-राष्ट्रपति का निर्वाचन उसी निर्वाचक-मंडल द्वारा होगा..'।"

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): महोदय, पूरक सूची में खंड 6 के उपखंड (1) के लिये एक संशोधन मेरे नाम पर है।

***अध्यक्ष:** मैं पूरक सूची के संशोधनों को भी लूंगा।

***श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया:** मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

"खंड (6) के उपखंड (2) के स्थान में निम्न शब्द रखे जायें:

'(2) उप-राष्ट्रपति उसी निर्वाचक-मंडल द्वारा चुना जायेगा जो राष्ट्रपति के चुनाव के लिए लागू होगा और वही तरीका भी ग्रहण किया जाएगा और उप-राष्ट्रपति राज-परिषद् का अध्यक्ष भी होगा'।"

संघ-विधान के अन्तर्गत राष्ट्रपति का चुनाव एक ऐसे निर्वाचक-मण्डल द्वारा करने की व्यवस्था की गयी है, जिसमें संघ-पार्लियामेंट की दोनों सभाओं तथा प्रांतीय सभाओं के सदस्य रहेंगे। उप-राष्ट्रपति का चुनाव सिर्फ संघ-पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के सदस्यों द्वारा ही किये जाने की व्यवस्था की गयी है। इसका मतलब यह हुआ कि उप-राष्ट्रपति के चुनाव में प्रान्तीय सभाओं के सदस्यों का कुछ भी हाथ नहीं रहेगा। कम से कम मैं तो समझ नहीं पाया हूं कि राष्ट्रपति तथा उप-राष्ट्रपति के चुनाव में यह भेद क्यों किया गया है? संघ में उप-राष्ट्रपति का महत्व राष्ट्रपति के ही समान है जैसा कि आप जानते हैं, उसे राष्ट्रपति की अनुपस्थिति में उसका काम करना पड़ेगा और उसके अतिरिक्त उसे उच्च धारा-सभा का सभापतित्व भी करना पड़ेगा। मेरा ख्याल है कि राष्ट्रपति का चुनाव करने वाले उसी निर्वाचक-मंडल का बिना किसी कठिनाई के प्रयोग किया जा सकता है जो

[श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया]

राष्ट्रपति का चुनाव करता है। संयुक्त राज्य अमरीका में उप-राष्ट्रपति का चुनाव वही निर्वाचक मंडल करता है जो राष्ट्रपति का चुनाव करता है। यही तरीका यहां भी अपनाया जा सकता है और इसका काफी फायदा भी होगा। अतएव मैं निवेदन करता हूं कि मेरा यह संशोधन बहुत ही तर्कसंगत है और सदन इसे सहर्ष स्वीकार करेगा।

***अध्यक्ष महोदयः** श्री संतानम्, मेरे विचार में बेहतर यह है कि इस समय आप अपना संशोधन पेश करें।

***श्री के. संतानम्:** मैं प्रस्ताव करता हूं:

> "कि खंड 6 के उपखंड (1) के लिए निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाएः–
>
> 'राष्ट्रपति पद के रिक्त होने तथा उसे चुनाव द्वारा भरे जाने के बीच के अंतराल के दौरान और जब राष्ट्रपति अनुपस्थिति, रूग्णता या अन्य किसी कारण से अपने कर्त्तव्यों का पालन करने में असमर्थ हो, तो उप-राष्ट्रपति उसके कर्त्तव्यों का निर्वहन करेंगे'।"

यह मुख्यतः प्रारूपण से संबंधित संशोधन है और बहुत से अन्य वक्ताओं ने यह स्पष्ट कर दिया है कि इसमें परिवर्तन की आवश्यकता क्यों है। मैंने इसे अति संक्षिप्त तथा यथासंभव सुबोध रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

(सर्वश्री राजकृष्ण बोस, ए. के. घोष, एच. बी. पटासकर, बृजेश्वर प्रसाद, एच. जे. खांडेकर तथा एस. वी. कृष्णमूर्ति राव ने अपने संशोधन संख्या 178 से 183 प्रस्तुत नहीं किए।)

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बम्बई : सामान्य): महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि खंड 6 के उपखंड (3) के रूप में निम्नलिखित जोड़ा जाए तथा वर्तमान उपखंड 3 को उपखंड 4 के रूप में पुनः संख्या दी जाए:

> "ऐसी अवधि के दौरान जब उप-राष्ट्रपति, राष्ट्रपति के स्थान पर कार्य कर रहे हों, परिषद्, यदि आवश्यक हो, अस्थायी सभापति का चुनाव कर सकती है।"

महोदय, उप-राष्ट्रपति राज्य सभा के पदेन सभापति होंगे। राष्ट्रपति के रूप में कार्य करते समय वह राज्य सभा के सभापति के रूप में कार्य नहीं कर सकते। अतएव अस्थायी सभापति के लिए प्रावधान करना होगा और मेरे संशोधन द्वारा यही किया गया है।

(सर्वश्री राजकृष्ण बोस, एच.वी. पटासकर, तथा शिब्बनलाल सक्सेना ने अपने संशोधन संख्या 185 से 187 प्रस्तुत नहीं किए।)

***श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया:** अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम में जो संशोधन है वह इस प्रकार है:

> "कि खंड 6 के उपखंड (3) में संख्या तथा शब्द "5 वर्ष" के स्थान पर निम्नलिखित संख्या तथा शब्द रखा जाए:
>
> '4 वर्ष या नए उप-राष्ट्रपति का चुनाव होने तक, जो भी बाद में हो'।"

राष्ट्रपति के पद का कार्यकाल पांच वर्ष निर्धारित किया गया है और यह प्रस्ताव है कि उप-राष्ट्रपति के पद का कार्यकाल भी उतनी अवधि का रखा जाए। राष्ट्रपति तथा उप-राष्ट्रपति के कार्यकाल की अवधि एक समान रखने के पीछे मुझे कोई तर्क नजर नहीं आता।

राष्ट्रपति के मामले में यह कहा गया था कि वह पर्याप्त समय के लिए कार्य करते रहें ताकि नए पदधारी का चुनाव पूरा करने का प्रबंध किया जा सके। लेकिन ये कारण उप-राष्ट्रपति के मामले में लागू नहीं होंगे तथा उप-राष्ट्रपति के कार्यकाल की अवधि निचले सदन की अवधि के साथ समकालिक बनाना उपयुक्त और लाभप्रद होगा। जैसाकि मैंने कल स्पष्ट किया था कि इस व्यवस्था के अंतर्गत ज्यों-ज्यों वह दूसरे कार्यकाल से पांचवें कार्यकाल की ओर बढ़ता है, वह निचले सदन से दूर होता जाता है। यह एक ऐसी स्थिति है जो अधिक सुखद नहीं है।

सदन को ज्ञात होगा कि संयुक्त राज्य अमरीका में उप-राष्ट्रपति, राष्ट्रपति के साथ चार वर्ष के लिए चुना जाता है और संघ के संविधान में उप-राष्ट्रपति के प्रावधान की कल्पना अमरीकी संविधान में विद्यमान पूर्वोदाहरण के प्रकाश में ही की गई होगी। यदि ऐसा है, तो हमें अन्यत्र अपनाई गई परिपाटी का अनुसरण करने के लिए तैयार रहना चाहिए। अमरीकी संविधान 150 वर्ष पुराना है और उसको व्यवहार में लाते हुए अब तक काफी अनुभव हो गया होगा। हमारे अपने संविधान को तैयार करते समय अन्यत्र अपनाए गए सिद्धान्तों और तरीकों को स्वीकार करना उपयोगी होगा। किसी नई चीज, जिसके बारे में हम अधिक नहीं जानते, का आविष्कार करने की बजाए, अन्य देशों के अनुभवों का लाभ उठाकर ही हम अपने संविधान को अधिक परिपूर्ण और व्यावहारिक बना सकते हैं।

महोदय, मैं तो महसूस करता हूं कि उप-राष्ट्रपति के लिये 4 वर्ष की अवधि देश हित में है और विधान की दृष्टि से भी ठोस व्यवस्था है।

[श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया]

मैंने सुझाव उपस्थित किया है कि साधारण रूप से हम उप-राष्ट्रपति के लिये 4 वर्ष का कार्यकाल निर्धारित कर सकते हैं। परन्तु, जैसा कि संशोधन में कहा भी गया है, वह इस अवधि के बाद भी तब तक काम जारी रख सकता है जब तक कि नई धारा-सभा का चुनाव हो ले और नये उप-राष्ट्रपति को चुन लिया जाये। इस व्यवस्था से लाभ यह है कि उप-राष्ट्रपति का पद कभी खाली न रहेगा।

इसलिये मैं इस संशोधन को स्वीकार करने का अनुरोध परिषद् से करता हूं।

(संशोधन संख्या 189 उपस्थित नहीं किया गया।)

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

"खंड 6 में निम्न नया उपखंड (4) जोड़ दिया जाए:

'(4) खंड 4 की व्यवस्था आवश्यक परिवर्तनों के अनन्तर उप-राष्ट्रपति पर भी लागू होगी'।''

खंड 4 में कुछ शर्तें राष्ट्रपति के पद के लिये रखी गयी हैं। यह उचित जान पड़ता है कि ये शर्तें जहां तक लागू हो सकें, उप-राष्ट्रपति के पद के लिए भी लागू की जायें। इस संशोधन में सिर्फ मसविदे का ही महत्त्व है।

***पं. ठाकुरदास भार्गव** (पश्चिमी पंजाब : जनरल): जनाब प्रैसीडेण्ट साहब, जो अमेण्डमेण्ट मैं पेश करना चाहता हूं वह इस तरह है कि:

"उपधारा (3) के पश्चात निम्न नई उपधारा रखी जाये:

'(4) कोई व्यक्ति जिसने 35 वर्ष की आयु पूर्ण नहीं की है उपाध्यक्ष नहीं चुना जा सकता'।"

इस अमेण्डमेण्ट के बारे में मुझे ज्यादा वजूहात रखने की जरूरत महसूस नहीं होती। खुद हाउस ने क्लाज (3) को मानकार इस उसूल को तसलीम कर लिया है और हाउस उसूल पर committed है कि 35 साल से कम उम्र का आदमी प्रेसीडेण्ट नहीं बन सकता। चूंकि वायस प्रेसीडेण्ट को प्रेसीडेंट की जगह काम करना

है इसलिए बिला शक व शुबा वायस प्रेसीडेंट की 35 साल से कम उम्र न होनी चाहिये। इसके अलावा आनरेबुल मूवर (Mover) ने भी अपनी आमादगी इस तरमीम को मंजूर करने के बारे में जाहिर कर दी है। इसलिये मैं हाउस का वक्त मजीद दीगर वजूहात पर जाया नहीं करना चाहता।

(श्री मोहनलाल सक्सेना ने पहली पूरक सूची का संख्या 3 का संशोधन उपस्थित नहीं किया।)

***अध्यक्षः** मेरे विचार में यही संशोधन हैं, जिनकी सूचना मुझे मिली थी। अब ऐसा कोई संशोधन नहीं है, जिसकी किसी भी सदस्य ने सूचना दी हो। अब मूल खण्ड तथा संशोधनों पर बहस आरम्भ हो सकती है।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, खंड 6 के उपखण्ड 1 में व्यवस्था की गयी है कि अध्यक्ष की अयोग्यता या अपने पद के कर्तव्य और कार्य करने में असमर्थता की अवस्था में उप-राष्ट्रपति उन कार्यों को करेगा। दूसरे शब्दों में यदि राष्ट्रपति अयोग्य हुआ या अपने पद का कार्य न कर सका तो उप-राष्ट्रपति उसके स्थान पर काम करेगा। इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में दो संशोधन हैं। संशोधन के शब्द इस प्रकार हैं किः

" 'या अयोग्य होने या अपने पद के अधिकारों से काम लेने या कार्य करने में असफल होने' शब्दों को निकाल दिया जाये।"

इसका तात्पर्य यह हुआ कि यदि राष्ट्रपति अयोग्य हुआ अथवा अपने कर्त्तव्यपालन में असफल हुआ तो उप-राष्ट्रपति को उसके स्थान पर कार्य करने का अधिकार न रहे। अब प्रश्न यह है कि यदि राष्ट्रपति अयोग्य है या जान-बूझकर अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं करता तो उसके स्थान पर कौन काम करेगा? निश्चय ही राष्ट्रपति का काम करने के लिये कोई न कोई रहना ही चाहिये। जिन माननीय सदस्य ने यह संशोधन उपस्थित किया है उनके प्रति सम्मान की भावना रखते हुये भी मैं अनुभव करता हूं कि संशोधन निरर्थक है और इसीलिये मैं उसका विरोध करता हूं। महोदय, राज्य के दो प्रधान कर्मचारी हैं, राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति। यदि राष्ट्रपति बीमार हुआ तो उप-राष्ट्रपति उसके स्थान पर काम करेगा। किन्तु जब उप-राष्ट्रपति राष्ट्रपति के स्थान पर काम करेगा तो इसकी कोई व्यवस्था नहीं है कि उस समय उप-राष्ट्रपति की जगह कौन काम करेगा?

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): मान लीजिये कि तीसरा व्यक्ति भी बीमार पड़ जाता है?

***मि. तजम्मुल हुसैन:** यदि उप-राष्ट्रपति राष्ट्रपति का काम करता है तो उप-राष्ट्रपति की जगह पर भी तो किसी को काम करना चाहिये। श्री गुप्ते का एक संशोधन है, जिसमें कहा गया है कि उप-राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रपति का काम करने पर उप-राष्ट्रपति का काम करने के लिये अस्थायी रूप से एक सभापति चुन लिया जाये।

महोदय, मेरे माननीय मित्र सिधवा ने बीच में हस्तक्षेप कर दिया। वे कहते हैं कि यदि तीसरा व्यक्ति भी बीमार पड़ा तो क्या होगा? यदि मैं उनके साथ सहमत होता हूं तो यही कहूंगा कि यदि ऐसा है तो चौथा व्यक्ति भी रख लीजिये। हमारे सामने संशोधन सिर्फ यही है कि एक सभापति होना चाहिये। मैं उसका समर्थन करता हूं।

श्री भार्गव ने अभी एक संशोधन उपस्थित किया है कि जिस प्रकार प्रजातंत्र के राष्ट्रपति के लिये उम्र की सीमा निर्धारित की गयी है उसी प्रकार वह उप-राष्ट्रपति के लिये भी निर्धारित की जानी चाहिये। मेरे विचार में यह संशोधन उचित है, क्योंकि राष्ट्रपति की मृत्यु इत्यादि की अवस्था में उप-राष्ट्रपति स्वयंमेव राष्ट्रपति हो जाता है, और यह बड़ी विचित्र बात लगेगी कि जब स्थायी राष्ट्रपति 35 वर्ष का है तो उप-राष्ट्रपति 22 या 21 वर्ष का होगा। मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

इन शब्दों के साथ मैं अपना भाषण समाप्त करता हूं।

श्री महमूद शरीफ (मैसूर): जनाबे सदर, मेरी यह राय है कि दफा 2 में से यह अल्फाज "अधिकारों के प्रयोग करने तथा अपने कर्त्तव्य के पालन करने में असफलता अथवा असमर्थता" हजफ कर दिये जायें। अगर इन अल्फाज को बहाल रखा जाये तो मैं समझता हूं कि बहुत-सी मुश्किलात होंगी और हमको बहुत-सी मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा। दफा 7 का यह मफूम है कि जो अख्तियारात सदर को तज़वीज किये जाते हैं, अगर उन अख्तियारात का बाकायदा इस्तेमाल न हो तो उसको हटा दिया जा सकता है। मेरे ख्याल में जो अख्तियारात सदर की तरफ से तज़वीज किये जाते हैं उसका चलाना एक relative term है और मुमकिन है कि आपकी नज़र में जो काम बाकायदा हो वह मेरी नज़र में

बकायदा न हो। मुमकिन है कि जिन अख्तियारात को मैं बेकायदे समझता हूं, दूसरे साहिबान उसको बाकायदा समझते हों, तो जैसा कि मैंने आपसे अर्ज किया है कि यह एक ऐसी चीज है जो बिल्कुल relative हैसियत रखती है। इसलिये मैं समझता हूं कि इन अल्फाज को हजफ कर दिया जाये और हजफ करने के बाद जो अल्फाज होंगे उनको बहाल रखा जाये। दूसरी मेरी यह अर्ज है कि नायब सदर का तकर्रुर Adult Sufferage किस बिना पर होना चाहिये था। सदर के इन्तखाब के मुतल्लिक मैंने जो तकरीर की है, मेरे पेश नजर यह तस्वीर रखी है। जहां तक सदर और नायब सदर का ताल्लुक है वह इन्तखाब विलरास्त किस बिना पर हो? अगरचे पण्डित नेहरू जी ने इसके खिलाफ बहुत-सी बातें कही हैं लेकिन मैं समझता हूं कि चूंकि मैं जम्हूरियत के उसूलों का परस्तार हूं, इसलिये मेरे ख्याल में यह मुनासिब होगा। अगर नायब सदर का इंतखाब Adult Sufferage बिनां पर हो। मैं इन अल्फाज के साथ जो तरमीम मेरे भाइयों ने पेश की है, उसकी ताईद करता हूं।

*__अध्यक्षः__ मैं समझता हूं कि पण्डित जवाहरलाल नेहरू कुछ संशोधनों को स्वीकार करने की स्थिति में हैं। मैं उनसे ऐसे संशोधन स्वीकार करने को कहता हूं, क्योंकि इससे बहुत-सी बहस घट जायेगी।

*__श्री बी. पोकर साहब बहादुरः__ अध्यक्ष महोदय, एक नियम सम्बन्धी प्रश्न है। मैं अभी निवेदन करना चाहता हूं। जिन माननीय सदस्य ने अभी भाषण किया है उन्होंने स्पष्ट ही कुछ संशोधनों के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट किये हैं और इन्हीं में मेरा अपना संशोधन भी है। मैं नहीं जान सकता कि उन्होंने मेरे संशोधन का समर्थन या विरोध किया है और उसके सम्बन्ध में क्या कहा है? यह उचित ही है कि मैं उनके दृष्टिकोण को जान सकूं। इसलिये अध्यक्ष महोदय, क्या मैं आपसे अनुरोध कर सकता हूं कि आप उन सदस्य से अपने भाषण का संक्षेप अंग्रेजी में कहने को कहें? वे ऐसा करने में समर्थ हैं। वे अंग्रेजी अच्छी तरह से जानते हैं।

*__अध्यक्षः__ मैं इसके पहले ही निर्णय दे चुका हूं कि मैं किसी सदस्य को किसी विशेष भाषा में बोलने के लिये विवश नहीं कर सकता। यदि सदस्य को कठिनाई है तो उन्हें पहले भाषण करने वाले सदस्य से बातचीत करके जान लेना चाहिये कि उनका दृष्टिकोण क्या है? (*हंसी*)

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरूः** महोदय, जितने विभिन्न संशोधन उपस्थित किये गये हैं उन्हें दो या तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। मैं अधिकांश संशोधनों से कम से कम इस अर्थ में अवश्य सहमत हूं कि खण्ड 6 जिस रूप में छपा हुआ है उसकी शब्द योजना उत्तम नहीं है। सबसे पहली बात "अयोग्यता" (Incapacity) की है––यह शब्द अच्छा नहीं है। जितने संशोधन उपस्थित किये गये हैं मेरे विचार में सबसे संक्षिप्त तथा स्पष्ट श्री संतानम् का है। इसमें उन सभी कठिनाइयों का निवारण हो जाता है जिनकी तरफ ध्यान आकृष्ट किया गया है। इसलिये मैं उसे स्वीकार करता हूं। मैं श्री गुप्ते का संशोधन भी स्वीकार करता हूं कि खण्ड 6 में निम्न शब्दों को नये उपखण्ड (3) के रूप में जोड़ दिया जाये और वर्तमान उपखण्ड (3) को उप-खण्ड (4) कर दिया जायेः

"जिस अवधि में उप-राष्ट्रपति राष्ट्रपति के स्थान पर काम करेगा। उसमें राज-परिषद् चाहे तो अपने स्थायी सभापति का चुनाव कर सकती है।"

मैं पण्डित ठाकुरदास भार्गव का भी संशोधन स्वीकार करता हूं कि उप-खण्ड (3) के बाद निम्न उपखण्ड जोड़ दिया जायेः

"(4) ऐसा कोई व्यक्ति उप-राष्ट्रपति नहीं चुना जा सकता, जिसने 35 वर्ष की उम्र पूरी न कर ली हो।"

मेरे विचार में अब ऐसा कोई संशोधन नहीं है, जिसे मैं स्वीकार कर सकता हूं।

***श्री जगतनारायण लाल** (बिहार : जनरल): मैं कुछ स्पष्टीकरण चाहता हूं। उपखण्ड (2) में चुनाव का तरीका दिया हुआ है। उसमें कहा गया हैः

"उप-राष्ट्रपति का चुनाव फेडरल पार्लियामेंट की दोनों सभाएं संयुक्त अधिवेशन में एकाकी हस्तांतरित मत-पद्धति द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर गुप्त मत प्रदान-पद्धति से करेंगी और उप-राष्ट्रपति ही राज-परिषद् (कौंसिल ऑफ स्टेट्स) का अध्यक्ष भी रहेगा।"

यदि चुनाव केवल एक उप-राष्ट्रपति का होना है तो आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर चुनाव होने से लाभ ही क्या है? विधान-परिषद् नियमावली के

खंड 6 उपखण्ड (6) में चुनाव "बाहर निकाल देने" की प्रणाली दी हुई है। मैं इस बात का स्पष्टीकरण चाहता हूं कि जब एक ही उप-राष्ट्रपति का चुनाव होना है तब भी क्या आनुपातिक प्रतिनिधित्व आवश्यक है?

***अध्यक्षः** जिन लोगों के सम्बन्ध में यह माना जाता है कि वे प्रतिनिधित्व के नियमों से परिचित हैं, उन्होंने मुझसे कहा है कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली उस अवस्था में भी लागू की जा सकती है जब केवल एक ही स्थान की पूर्ति करनी हो।

***श्री जगत नारायण लालः** महोदय, मैं जानता हूं कि राष्ट्रपति के चुनाव के लिये भी आनुपातिक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की गई है और हम उस नियम को स्वीकार भी कर चुके हैं। परन्तु फिर भी मेरे विचार से यह बताना हमारा कर्त्तव्य है कि जहां एक ही व्यक्ति चुना जाना हो वहां "बाहर निकाल देने" की पद्धति ही सर्वोत्तम है, जो विधान-परिषद् की नियमावली में पहले ही से दी हुई है। यदि वह नियम परिषद् को अच्छा लगे तो मेरा निवेदन है कि इतनी देर होने पर भी यह किया जा सकता है कि जब मसविदा अन्तिम रूप से तैयार किया जाये तो प्रस्तुत नियम के स्थान पर, जिसका एक स्थान की पूर्ति के लिये काम में लाये जाने का कुछ मतलब ही नहीं है, उसी नियम को लागू किया जाये।

***अध्यक्षः** जैसा कि मैं कह चुका हूं, जिन व्यक्तियों के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वे इन नियमों को जानते हैं, उनका कहना है कि इस प्रणाली का उपयोग वहां भी किया जा सकता है जहां सिर्फ एक ही उम्मीदवार का चुनाव करना हो। परन्तु यदि माननीय सदस्य को कोई सन्देह हो तो मैं श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर से इसके स्पष्टीकरण का अनुरोध कर सकता हूं।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रास : जनरल): महोदय, मेरा खयाल है कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के सम्बन्ध में कुछ भ्रम है। निश्चय ही उसे ऐसी अवस्था में भी अमल में लाया जा सकता है जब केवल एक ही स्थान की पूर्ति करनी हो। इस सिद्धान्त के लागू करने पर उम्मीदवार का पूर्ण बहुमत से चुना जाना निश्चित हो जाता है। यदि उम्मीदवार दो से अधिक हैं और आप साधारण बहुमत का नियम लागू करते हैं, तो यह भी हो सकता है कि जिस व्यक्ति को कुल पड़े वोटों के 51 प्रतिशत से भी कम वोट मिले हों, वह भी चुना जा सकता है। इसके विपरीत,

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

यदि आप आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त को अमल में लाते हैं तो मत हस्तांतरित प्रणाली के अनुसार उम्मीदवार को पूर्ण बहुमत से निर्वाचित किया जा सकता है। यही कारण है कि जहां एक ही उम्मीदवार चुना जाने वाला हो वहां भी हम आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर एकाकी हस्तांतरित मत-पद्धति के द्वारा निर्वाचन की व्यवस्था करते हैं।

***श्री जगत नारायण लालः** महोदय, मैं इस सम्बन्ध में और अधिक विवाद जारी नहीं रखना चाहता। मेरा उद्देश्य सिर्फ परिषद् का ध्यान इसकी तरफ आकृष्ट करना ही था। मैं विधान-परिषद् नियमावली के खण्ड 6 के उपखण्ड (5) को पढ़ता हूं और सर गोपालस्वामी आयंगर का ध्यान उसकी तरफ आकृष्ट करता हूं। उपखण्ड (5) में कहा गया है :

"जहां चुनाव के लिए केवल दो उम्मीदवार हों, वहां जिसे बैलट में अधिक वोट मिलें उसी के निर्वाचित होने की घोषणा होनी चाहिए। यदि उन्हें बराबर वोट मिलें तो चुनाव चिट्ठी डालकर ऐसा किया जा सकता है।"

और उपखण्ड (6) इस प्रकार है:

"जहां दो से अधिक उम्मीदवार नामजद हुए हों और पहले बैलट में किसी उम्मीदवार को अन्य दोनों उम्मीदवारों को मिले कुल वोटों से अधिक वोट न मिले हों तो जिस उम्मीदवार को सब से कम वोट मिले हों उसे चुनाव के बाहर कर देना चाहिए और फिर बैलट डाला जाये और फिर सब से कम वोट जिस उम्मीदवार को मिलें उसे हर अगले बैलट से निकाल दिया जाये, और यह प्रक्रिया तब तक जारी रखी जाये जब तक कि एक उम्मीदवार के वोट शेष उम्मीदवार या उम्मीदवारों के कुल वोटों से अधिक पड़ें और इस उम्मीदवार को निर्वाचित घोषित कर दिया जाये।"

महोदय, मेरा खयाल है कि श्री गोपालस्वामी आयंगर ने इसी प्रणाली की चर्चा की है। मुझे सन्देह है कि आनुपातिक प्रतिनिधित्व में इस प्रणाली को सम्मिलित किया गया है।

***माननीय श्री हुसैन इमामः** अध्यक्ष महोदय, क्या मैं स्पष्टीकरण करूं?

***अध्यक्षः** हां।

***माननीय श्री हुसैन इमामः** आनुपातिक प्रतिनिधित्व का आधारभूत सिद्धान्त संख्या निर्धारित करना है। संख्या का निर्धारण कुल वोटों में रिक्त स्थानों से एक अधिक संख्या द्वारा भाग देने और भजनफल में एक जोड़ने से हो जाता है। उदाहरण के लिये, यदि वोटर 100 हैं और रिक्त स्थान 1 है तो निर्धारित संख्या निकालने के लिये 100 भागित 2, जिसका परिणाम निकला 50, जिसमें 1 जोड़ दिया गया और इस तरह 51 संख्या आई। इस प्रकार 51 से कम वोट प्राप्त करने वाला कोई भी व्यक्ति चुना नहीं जा सकता। यदि किसी को इतने वोट नहीं प्राप्त होते तो निर्धारित संख्या पूरी नहीं होती। जिस व्यक्ति को सबसे कम वोट मिलते हैं उसे चुनाव से निकाल दिया जाता है। इसके बाद एक के बाद दूसरे चुनाव में वोट अन्य उम्मीदवारों के पक्ष में तब तक डाले जाते हैं जब तक किसी न किसी उम्मीदवार के 51 वोट न आ जायें। 51 वोट आते ही उस उम्मीदवार को निर्वाचित घोषित कर दिया जायेगा।

चुनाव की यह विचारधारा फ्रांस की है। वहां राष्ट्रपति का चुनाव इस विचार से होता है कि उसे पूर्ण बहुमत प्राप्त होना चाहिये। वहां बैलट भी बार-बार पड़ते हैं, किन्तु हमारे विधान निर्माताओं ने एकाकी हस्तांतरित मत-पद्धति स्वीकार करके प्रक्रिया को संक्षिप्त कर दिया है। उन्होंने उसी उद्देश्य की प्राप्ति कर ली है, जो फ्रांस वालों के आगे रहता है, किन्तु उनकी प्रणाली अधिक सरल और सीधी है।

***अध्यक्षः** मेरे खयाल में इतना स्पष्टीकरण काफी है। क्या कोई सदस्य संशोधनों या मूल खण्ड के सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता है?

***मि. तजम्मुल हुसैनः** महोदय, अब सब कुछ खत्म हो चुका है। पण्डित जवाहरलाल नेहरू जवाब दे चुके हैं।

***अध्यक्षः** नहीं, उन्होंने उत्तर नहीं दिया है। उन्होंने सिर्फ वही संशोधन बताये हैं, जिन्हें स्वीकार करने को वे तैयार हैं।

***श्री अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास : जनरल): महोदय, मैं मसविदा समिति का ध्यान उन असुविधाओं की तरफ आकृष्ट करना चाहता हूं, जो खंड को वर्तमान रूप में स्वीकार करने से उठेंगी। अभी किसी संशोधन की आवश्यकता नहीं है। उप-राष्ट्रपति ऐसा व्यक्ति हो सकता है, जो राज-परिषद् या निम्न धारा-सभा में से किसी का सदस्य न हो। वर्तमान कानून के अन्तर्गत राज-परिषद् के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को परिषद् का सदस्य होना चाहिये। नये विधान के अनुसार उप-राष्ट्रपति परिषद् का एक अतिरिक्त सदस्य होगा, जिसे केवल मतभेद होने की अवस्था में ही मत प्रकट करने का अधिकार रहेगा। इसलिये यह विषय विचारणीय है। यह विचारणीय इसलिये है कि हम दोनों ही व्यवस्थापिका सभाओं में निर्वाचित सदस्य रखने की आशा करते हैं--सिवाय राज-परिषद् के उन दस स्थानों के, जो नामजदगी के लिये सुरक्षित कर लिये गये हैं। वह इन दस मनोनीत स्थानों में आ सकता है-बजाय इसके खण्ड में उल्लिखित स्थानों में एक की और वृद्धि की जाये।

दूसरी बात यह है कि वह निम्न धारा-सभा (प्रजा सभा) का सदस्य हो और इस अवस्था में व्यवस्था यह करनी पड़ेगी कि संघ के उप-राष्ट्रपति और उच्च धारा-सभा के अध्यक्ष चुने जाते ही वह निम्न धारा-सभा का सदस्य न रह जायेगा। मौजूदा कानून के अन्तर्गत उच्च धारा-सभा के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष की अलग से व्यवस्था की गयी है। पण्डित जवाहरलाल नेहरू पंडित ठाकुरदास भार्गव का यह संशोधन स्वीकार कर चुके हैं कि जब कभी उच्च धारा-सभा के अध्यक्ष को, जो उप-राष्ट्रपति भी है, राष्ट्रपति के स्थान पर काम करना पड़े, तो उच्च धारा सभा के लिये एक अध्यक्ष अस्थायी रूप से चुन लिया जाना चाहिये। इसके स्थान पर मेरा सुझाव यह है कि संघ के उप-राष्ट्रपति का चुनाव समाप्त होते ही राज-परिषद् के लिये एक उपाध्यक्ष का चुनाव भी हो जाना चाहिये, जो अध्यक्ष की अनुपस्थिति में साधारण तौर पर काम करे। महोदय, आप जानते हैं कि असेम्बली में अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष हैं। स्पीकर सभा में सदा बैठा नहीं रह सकता और इसीलिये डिप्टी स्पीकर को उनका स्थान कभी-कभी ग्रहण करना पड़ता है। इसी प्रकार भारतीय शासन-विधान कानून में उपाध्यक्ष की व्यवस्था की गयी है, जो अध्यक्ष की अनुपस्थिति में यह अनुपस्थिति चाहे एक दिन के ही मध्य में क्यों न हो-- उसकी जगह स्थानापन्न रूप से काम करेगा। इसलिये अस्थायी अध्यक्ष रखने के स्थान पर राज-परिषद् के सदस्यों में से किसी को अध्यक्ष के स्थान पर, जो उप-राष्ट्रपति भी है, काम करने के लिये उपाध्यक्ष के रूप में चुनने की व्यवस्था होनी चाहिये।

तीसरी बात यह है कि यह उपाध्यक्ष किसी भी धारा-सभा का सदस्य हो सकता है और इस अवस्था में उपाध्यक्ष चुने जाने पर वह उस धारा-सभा का सदस्य नहीं रह जायेगा।

मैं चाहता हूं कि मसविदा समिति सभा के आगे विस्तृत बिल उपस्थित करने से पूर्व इस बात का ध्यान रखे।

जहां तक पांच वर्ष की अवधि को घटाकर 4 वर्ष की करने के संशोधन का सम्बन्ध है, उसे स्वीकार करने का मुझे कोई कारण समझ में नहीं आता। राज-परिषद् के सदस्यों का पूरा कार्यकाल छः वर्ष है और पहले दल के अवकाश ग्रहण करने के बाद यही कार्यकाल साधारण रूप से सभी सदस्यों के लिये रहेगा, तो ऐसी हालत में उपाध्यक्ष का कार्यकाल 5 वर्ष रहे या 4 वर्ष, इसका कुछ भी महत्व नहीं है--हां वह छः वर्ष से अधिक न होना चाहिये।

इसलिये यह संशोधन करने का मुझे कोई उचित कारण नहीं जान पड़ता और मेरे विचार में उसे स्वीकार करना उचित न होगा।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा। दो संशोधन ऐसे हैं, जो खण्ड 6 के उपखंड (1) के विकल्प के रूप में उपस्थित किये गये हैं। इनमें एक श्री संतानम् का और दूसरा मि. नजीरुद्दीन अहमद का संशोधन है। मैं पहले श्री सन्तानम् का संशोधन लेता हूं। प्रश्न यह है कि:

"खंड 6 के उपखंड (1) के लिए निम्न शब्द बदल दिये जायें:

'राष्ट्रपति का स्थान रिक्त होने और चुनाव द्वारा उसकी पूर्ति के मध्यवर्ती काल में और ऐसी अवस्था में जबकि राष्ट्रपति अनुपस्थिति, बीमारी या अन्य किसी कारण से अपना कार्य करने में असमर्थ हो, उसके कार्य उप-राष्ट्रपति करेगा।'"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** मि. नजीरुद्दीन अहमद और मि. पोकर साहब के संशोधनों को उपस्थित करने की आवश्यकता नहीं है। प्रश्न यह है कि:

"खंड 6 के उपखंड (2) के स्थान पर निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:

'(2) उप-राष्ट्रपति उसी निर्वाचक-मण्डल द्वारा चुना जायेगा जो राष्ट्रपति के चुनाव के लिए लागू होगा और वही तरीका भी ग्रहण किया जायेगा और उप-राष्ट्रपति राज-परिषद् का अध्यक्ष भी होगा'।"

प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है कि:

"खण्ड 6 में निम्न शब्दों को उपखण्ड (3) के रूप में जोड़ दिया जाये और वर्तमान उपखण्ड (3) की संख्या उपखण्ड (4) कर दी जाये:

'(3) जिस अवधि में उप-राष्ट्रपति राष्ट्रपति के स्थान पर कार्य करेगा उसमें राज-परिषद् चाहे तो अपने अस्थायी उपाध्यक्ष का चुनाव कर सकती है।'"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न है कि:

"खण्ड 6 के उपखण्ड 3 में '5 वर्ष' शब्दों के लिये निम्न अंक और शब्द रखे जायें:

'4 वर्ष तक अथवा नये उप-राष्ट्रपति के चुनाव तक, जो भी बाद में हो, अपने पद पर काम करेगा।'"

प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है कि:

"खण्ड 6 में निम्न नया उपखण्ड (4) जोड़ दिया जाये:

'(4) खण्ड 4 की व्यवस्था आवश्यक परिवर्तनों के अनन्तर उप-राष्ट्रपति पर भी लागू होगी।'"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ प्रश्न यह है कि:

"उपखण्ड (3) के बाद निम्न उपखण्ड जोड़ दिया जाये:

'ऐसा कोई व्यक्ति उप-राष्ट्रपति नहीं चुना जायेगा, जो अपनी उम्र के 35 वर्ष पूरे न कर चुका हो।'"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** मेरा ख्याल है कि उपखंडों की संख्या फिर से निर्धारित करना आवश्यक हो गया है, और परिषद् द्वारा मसविदा समिति को उपखंडों की संख्या फिर से निर्धारित करने की अनुमति देनी चाहिये। अब खंड पर संशोधित रूप में मत लेना चाहता हूं। प्रश्न यह है कि खंड संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया जाये।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

खंड 7

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** अध्यक्ष, मैं प्रस्ताव करता हूं कि खंड 7 स्वीकार कर लिया जाये। इस खंड के सम्बन्ध में मुझे कुछ अधिक नहीं कहना है। किसी राज्य में संघ का प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार वास्तव में उस राज्य के प्रधान के ही हाथ में रहना चाहिये–यहां यह अधिकार संघ के प्रधान के हाथ में दिया गया है। नये राज्य की रक्षा-सेनाओं का प्रधान सेनापतित्व भी राज्य के प्रधान के जिम्मे किया गया है। उपखंड (2) (ए) में यही स्पष्ट करने की बात है।

जिन संशोधनों की सूचना दी गई है उनमें प्रायः सबका सम्बन्ध उपखंड (2) (बी) से है। इस सम्बन्ध में मुझे ज्ञात हुआ है कि सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर इस मद के सम्बन्ध में विचार स्थगित करने का प्रस्ताव स्थगित करने वाले हैं, क्योंकि इस विषय के कुछ पहलुओं की तरफ ध्यान आकृष्ट किया गया है और उन पर विचार किया जा रहा है। हमें आशा है कि यह विचार एक या दो दिन में ही समाप्त हो जायेगा और जब हम अगले सोमवार को एकत्र होंगे तो स्थिति पर विचार किया जा सकेगा।

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं किः

"7. **(1) इस विधान में उल्लिखित नियमों को पूरा करते हुए संघ का शेष प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार राष्ट्रपति में निहित रहेगा।**

(2) उपयुक्त नियम की व्यापकता में किसी प्रकार का हस्तक्षेप किये बिना–

(क) संघ की रक्षा-सेनाओं का प्रधान सेनापतित्व राष्ट्रपति में निहित रहेगा,

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

(ख) फौजदारी के न्याय सम्बन्धी अधिकार रखने वाले किसी न्यायालय द्वारा दिये गये दंड को रद्द करने या उसमें कमी करने और क्षमा करने का अधिकार भी राष्ट्रपति को रहेगा, किन्तु रद्द करने या कमी करने का यह अधिकार कानून के द्वारा अन्य अधिकारियों को भी दिया जा सकता है।"

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास : जनरल)**:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि उपखंड (2) (बी) का विचार स्थगित रखा जाये। मेरे विचार से इसके लिये विस्तार से कारण बताना आवश्यक नहीं है। इस खंड पर प्रान्तीय गवर्नरों, रियासतों की स्थिति आदि का ध्यान रखते हुये फिर से विचार करना आवश्यक हो गया है। यदि परिषद् विचार स्थगित रखना स्वीकार करे तो इस उपखंड पर सोमवार को विचार हो सकता है।

***अध्यक्षः** प्रश्न है किः

इस उपखंड पर विचार स्थगित कर दिया जाये।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय श्री हुसैन इमामः** महोदय, संशोधनों के सम्बन्ध में क्या स्थिति रहेगी? उपखंड का नया रूप उपस्थित होने पर क्या परिषद् को उसके सम्बन्ध में संशोधन पेश करने की अनुमति दी जायेगी?

***अध्यक्षः** हां, अवश्य। जब कुछ परिवर्तनों का प्रस्ताव किया जायेगा तो संशोधनों की सूचना देने का भी अवसर दिया जायेगा।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** कार्य-विधि यह हो सकती है कि हमारी छानबीन समाप्त होने पर एक स्वीकृत संशोधन की सूचना किसी के द्वारा दे दी जायेगी और उस संशोधन की प्रतिलिपियां माननीय सदस्यों के मध्य वितरित कर दी जायेंगी और माननीय सदस्य उन संशोधनों पर अपने संशोधन पेश कर सकेंगे।

खंड 8

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** महोदय, मैं खण्ड 8 उपस्थित करता हूंः

"8. इस विधान के नियमों को पूरा करते हुए संघ के प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार का विस्तार उन विषयों तक होगा, जिनके सम्बंध में संघ पार्लियामेंट का कानून बनाने का अधिकार है और उन विषयों तक भी, जिनके सम्बंध में किसी संधि अथवा समझौते द्वारा संघ को अधिकार प्रदान किया गया है और यह अधिकार उसकी अपनी प्रतिनिधिक संस्था अथवा प्रांतों द्वारा काम में लाया जायेगा।"

इसमें सिर्फ इस साधारण सिद्धान्त का ही वर्णन किया गया है कि प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार का व्यवस्थापन अधिकार जितना ही विस्तार हो सकता है। अपवाद केवल उन विषयों के सम्बन्ध में है जिनका प्रबन्ध विशेष रूप से संधियों या समझौतों द्वारा किया गया है और इसका उल्लेख खण्ड के अन्तिम भाग में किया गया है।

(संख्या 201 और संख्या 201-ए के संशोधन उपस्थित नहीं किये गये।)

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** अध्यक्ष महोदय, मैंने खण्ड 8 के एक संशोधन की सूचना दी है, जिसका नाम खण्ड 8-ए होगा।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** महोदय, पहले खण्ड 8 परिषद् में उपस्थित होना चाहिये। उपस्थित संशोधन एक नये खण्ड 8-ए के रूप में आयेगा।

***अध्यक्षः** वास्तव में मुझे दो संशोधन की सूचना मिली है, जिनमें पहला सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का है और दूसरा श्री अनन्तशयनम् आयंगर का है और इनका उद्देश्य एक नया खण्ड जोड़ना है।

चूंकि खण्ड के सम्बन्ध में कोई भाषण नहीं देना चाहता इसलिये मैं उस पर मत लेना चाहता हूं।

खण्ड 8 स्वीकार कर लिया गया।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** अध्यक्ष महोदय, मैं खण्ड 8 में निम्न भांति संशोधन करना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** यह खण्ड 8 का संशोधन नहीं है, बल्कि 8-ए के रूप में एक नया संशोधन है।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** हां महोदय, यहां मैं यह कह देना चाहता हूं कि जहां यूनियन शब्द आया है वहां मैंने उसका संघ (फेडरेशन) कर दिया है। आशा है कि परिषद् मुझे "यूनियन" की जगह संघ (फेडरेशन) शब्द को रखने की अनुमति प्रदान करेगी। यह गलती रह गयी थी। मैं निम्न संशोधन उपस्थित कर रहा हूं:

"खण्ड 8 के बाद निम्न नया खण्ड जोड़ दिया जाये:

'8-क. (1) संघ की सरकार किसी भी भारतीय रियासत से समझौता करके उस रियासत में व्यवस्थापक, प्रबंध सम्बन्धी अथवा न्याय सम्बंधी अधिकार ग्रहण कर सकती है, किंतु ऐसा करते समय भारतीय संघ और उसमें सम्मिलित होने वाली भारतीय रियासत के मध्य के सम्बन्धों के विषय में विधान में जो नियम बने हैं, उन्हें पूरा करना पड़ेगा।

(2) यदि यह समझौता किसी ऐसी रियासत से हुआ है, जो संघ में सम्मिलित नहीं हुई है तो उस समझौते पर संघ की पार्लियामेंट द्वारा विदेश में अधिकार चलाने से सम्बन्ध रखने वाले कानून की शर्तें लागू होंगी।

(3) यदि ऐसे किसी समझौते में कोई ऐसी बातें भी आ गयी हैं, जो किसी प्रांत और किसी रियासत के मध्य प्रांतीय विधान के खंड 8 के अनुसार होने वाले समझौते में आ चुकी हैं, तो प्रांत से होने वाले समझौते में आने वाली शर्तें रद्द समझी जायेंगी।

(4) उपखंड (1) के अनुसार समझौता हो चुकने पर समझौते के नियमों को पूरा करते हुए संघ उपयुक्त अधिकारियों द्वारा व्यवस्थापन, प्रबंध सम्बन्धी अथवा न्याय सम्बन्धी अधिकारों के अनुसार कार्रवाई कर सकता है।'"

इस खण्ड के समर्थन में आपकी अनुमति से मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। इस खण्ड का उद्देश्य इसे उस खण्ड के समकक्ष लाना है, जो यह परिषद् प्रान्तीय क्षेत्र में प्रान्तीय विधान के सम्बन्ध में पास कर चुकी है। उसके अनुसार प्रान्तों को कुछ विशेष विभागों के, जो प्रान्तीय क्षेत्र में समझौते के परिणामस्वरूप कोई रियासत हस्तांतरित कर चुकी है, प्रबन्ध का अधिकार मिल जाता है। इस खंड का उद्देश्य संघ को सर्वोपरि अधिकार प्रदान करना है। जहां तक उपखण्ड (1) का सम्बन्ध है, उसमें सिर्फ सम्मिलित होने वाली रियासतों को ही लिया गया है। ये रियासतें संघ में कुछ विशेष विषयों के लिये सम्मिलित हो सकती हैं। जहां तक अन्य विषयों का सम्बन्ध है, रियासतें संघ से कुछ खास कार्यों के लिये भी संघ से समझौता कर सकती हैं। इस खण्ड का उद्देश्य सम्मिलित होने वाली रियासतों को इस बात की सुविधा देना है कि वे ऐसे विषयों के सम्बन्ध में समझौते कर सकें, जिन्हें प्रवेश-पत्र की शर्तों में सम्मिलित न किया गया हो।

दूसरे उपखण्ड में उन रियासतों की चर्चा है, जो संघ में सम्मिलित नहीं होतीं, किन्तु फिर भी वे भारतीय संघ से समझौता करने को तैयार हों। परन्तु ऐसे समझौते के लिये उस विदेशी अधिकार-क्षेत्र-कानून की शर्तें पूरी करना आवश्यक होगा, जो धारा-सभा एक पूर्ण सत्ता सम्पन्न धारा-सभा के रूप में काम करते हुये पास करेगी। उसमें यही व्यवस्था की गयी है। यदि किसी ऐसी रियासत से समझौता हुआ है, जो संघ में सम्मिलित नहीं हुई है, तो उस समझौते के लिये संघ की पार्लियामेंट द्वारा पास किये गये विदेशी अधिकार-क्षेत्र-कानून की शर्तों का निर्वाह करना आवश्यक होगा।

तीसरे उपखण्ड का इरादा एक तरफ प्रान्तों और रियासतों तथा दूसरी तरफ संघ और रियासतों के संघर्ष से बचना है। प्रान्तीय विधान तक में व्यवस्था कर दी गई है कि उसके ऊपर संघ-सरकार का नियंत्रण रहेगा। इस उपखंड का उद्देश्य यह है कि यदि संघ और किसी एक रियासत में समझौता हुआ है और उस समझौते में वह क्षेत्र आ जाता है, जिसके सम्बन्ध में उस रियासत का प्रान्त से पहले कोई समझौता हो चुका है, तो केन्द्र और रियासत के मध्य हुये समझौते का प्रभुत्व प्रान्त और रियासत के मध्य हुये समझौते पर होना आवश्यक है।

खण्ड 8 (4) में बताया गया है कि समझौते का ठीक-ठीक प्रभाव क्या होता है। "उपखण्ड (1) के अन्तर्गत समझौता होने पर उसकी शर्तों का ध्यान रखते हुए संघ समझौते में उल्लिखित प्रबन्ध सम्बन्धी, न्याय सम्बन्धी तथा व्यवस्थापन सम्बन्धी कार्य उपयुक्त अधिकारियों द्वारा कर सकता है।" यह बहुत-कुछ वैसी ही

[सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

व्यवस्था है, जैसी परिषद् प्रान्तों और रियासतों के सम्बन्ध में पहले ही स्वीकार कर चुकी है। मैं परिषद् से खण्ड 8-ए का प्रस्ताव स्वीकार करने का अनुरोध करता हूं।

*__कर्नल श्री महाराज हिम्मतसिंह जी__ (पश्चिमी भारत-रियासत समूह): अध्यक्ष महोदय, हमें इस संशोधन की सूचना नहीं मिली है। कृपया हमें सोमवार तक इस पर विचार करने और आवश्यक हो तो संशोधन की सूचना देने का समय दीजिये।

*__अध्यक्षः__ यह संशोधन सदस्यों में वितरित कर दिया गया था।

*__कर्नल श्री महाराज हिम्मतसिंह जीः__ यह हमारे पास नहीं भेजा गया था। मेरे अतिरिक्त अन्य कितनों ही को यह सूचना नहीं मिली है।

*__माननीय श्री हुसैन इमामः__ सूचना कल सायंकाल 4 बजे मिली थी।

*__अध्यक्षः__ सूचना सायंकाल 4 बजे भेजी गई थी। यदि माननीय सदस्य का सुझाव स्वीकार किया जाता है तो हमें इस पर विचार स्थगित रखना चाहिये ताकि सदस्य इस संशोधन पर सोच-विचार करके संशोधन की सूचना दे सकें। मेरे विचार से सदस्यों को संशोधनों की सूचना देने के लिये पर्याप्त समय रहना चाहिये। मेरा ख्याल है कि सब-कुछ मिलाकर इसका विचार स्थगित करना ही उचित होगा।

*__माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः__ महोदय, मुझे कुछ भी आपत्ति नहीं है।

*__माननीय श्री हुसैन इमामः__ संशोधन की सूचना देने का समय प्रत्येक व्यक्ति को मिलना चाहिये।

*__अध्यक्षः__ कल हमने निश्चय किया था कि अगले दिन जिन खण्डों पर विचार होना है उनके संशोधनों की सूचना एक दिन पहले सायंकाल तक मिल जानी चाहिये। यदि संशोधनों के संशोधनों की सूचना देने के लिये समय आवश्यक है तो कहा नहीं जा सकता कि यह चक्र कहां समाप्त होगा।

***माननीय श्री हुसैन इमामः** ऐसे विषयों में किया यह जाता है कि अध्यक्ष कार्य-प्रणाली के नियमों को स्थगित कर देता है और यदि उसकी राय में कोई संशोधन आवश्यक है तो उसे उपस्थित करने की अनुमति दे देता है।

***अध्यक्षः** अच्छा अब आगे बढ़ना चाहिये। हम इस विषय पर बाद में विचार करेंगे। इसी प्रकार श्री अनन्तशयनम् आयंगर का संशोधन भी रोका जा सकता है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

***श्री टी. चनय्या** (मैसूर) एक संशोधन मेरे नाम से भी है।

***अध्यक्षः** हम सभी संशोधनों को तभी लेंगे जब खंड पर विचार होगा।

खण्ड 9

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** मैं खंड 9 उपस्थित करता हूं:

"संघ में सम्मिलित होने वाली किसी रियासत के शासक का प्रबंध सम्बंधी अधिकार, जहां तक उस अधिकार का सम्बंध संघ के विषयों से हो, उस रियासत में तब तक कायम रहेगा जब तक कि उपयुक्त संघ-अधिकारी इस सम्बंध में कोई और प्रबंध न कर ले।"

अभी संघ-विषय तथा रियासती विषय दोनों ही रियासतों के प्रबन्ध सम्बंधी अधिकार के अन्तर्गत आ जाते हैं। संघ की स्थापना होने पर जब कुछ विषय केन्द्र के जिम्मे कर दिये जाते हैं तो उनका प्रबन्ध, जो पहले से ही रियासतों के हाथ में है, उन्हीं के हाथों में तब तक बना रहने दिया जायेगा जब तक कि संघ-सत्ता उसके लिये कोई दूसरा प्रबन्ध नहीं करती। साधारण सिद्धान्त यह है, जैसा कि मैं पिछले खण्ड के विषय में कह भी चुका हूं कि संघ के प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार का विस्तार उसी सीमा तक होगा, जिस सीमा तक उसे व्यवस्थापन (कानून बनाने) का अधिकार प्राप्त है। उपस्थित खंड में भी इसी सिद्धान्त का खयाल रखा गया है। यहां तो केवल यही कहा गया है कि किसी विशेष विषय का प्रबंध अभी जहां रियासती अधिकारियों के पास है वहां उसे तब तक जारी रखा जायेगा, जब तक कि संघ-अधिकारी उस सम्बन्ध में कोई दूसरी व्यवस्था न कर लें। ऐसा करने का उद्देश्य केवल यही है कि कहीं संघ की स्थापना के समय शासन-प्रबन्ध की कोई गड़बड़ी न उठ खड़ी हो। इस सम्बन्ध में कुछ संशोधन

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

भी हैं, किन्तु मैं उनके सम्बन्ध में विस्तार से कुछ भी न कहूंगा। परन्तु एक संशोधन कई रियासतों के प्रधान मंत्रियों के नाम पर है। वह संशोधन वस्तुतः वर्तमान भारतीय शासन कानून की 125वीं धारा की पुनरावृत्ति है। मैंने उसके स्थान पर एक अन्य संशोधन की सूचना दी है और जिन प्रधान मंत्रियों ने उस संशोधन की सूचना दी है वे यदि अपने संशोधन को वापस लेना स्वीकार करें तो मैं अपना संशोधन उपस्थित कर दूंगा।

***अध्यक्षः** जहां तक मैं समझता हूं सर गोपालस्वामी, प्रधान मंत्रियों ने जिस संशोधन की सूचना दी है वह खंड 9-ए के रूप में बढ़ाया जायेगा, वह किसी खंड के बदले में नहीं रखा जायेगा। क्या आप उसी के सम्बन्ध में कह रहे हैं?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** हां, मैंने गलती की थी। मेरे खयाल में जो आपने कहा है वही ठीक है। परन्तु मेरा कहना है कि प्रधान मंत्रियों ने अतिरिक्त शब्द जोड़ने की जो सूचना दी है उसका प्रस्ताव यदि उपस्थित न किया जाये तो मैं खंड 9 में एक ऐसा संशोधन उपस्थित करूंगा, जो मुझे आशा है कि उन्हें मान्य होगा।

***सर बी.एल. मित्तर** (बड़ौदा): सर एन. गोपालस्वामी आयंगर जो संशोधन उपस्थित करने जा रहे हैं उसके कारण हम अपने उस संशोधन को नहीं उपस्थित करना चाहते, जो हमारे नाम पर है।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** मैं प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड 9 के अन्त मैं निम्न शब्द जोड़ दिये जायें: "उन रियासतों में जहां यह आवश्यक समझा जाये।"

इसका कुछ भी स्पष्टीकरण करने की आवश्यकता नहीं है।

***अध्यक्षः** अब हम अन्य संशोधनों को लेंगे। श्री चन्द्रशेखरिया!

***श्री डी.एच. चन्द्रशेखरियाः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड 9 के स्थान पर निम्न रखा जाये:

"संघ में सम्मिलित होने वाली किसी रियासत के शासक का शासन-प्रबंध सम्बंधी अधिकार, जहां तक उस अधिकार का सम्बंध संघ के

विषयों से हो, उस रियासत में कायम रहेगा किंतु संघ के प्रधान प्रबंधक को निरीक्षण और निर्देशन का अधिकार रहेगा।"

महोदय, इस खण्ड के वर्तमान रूप द्वारा संघ में सम्मिलित होने वाली रियासतों के शासकों को संघीय विषयों के सम्बन्ध में तब तक कार्रवाई करने का अधिकार दिया गया है जब तक संघ इस सम्बन्ध में कोई और प्रबन्ध न कर ले। यह व्यवस्था नहीं की गई है कि यह कार्रवाई किसी संघीय अधिकारी की देखरेख या नियंत्रण में हो। संघीय विषयों के सम्बन्ध में अनियन्त्रित कार्रवाई का अधिकार देना न तो ठीक ही है और न इससे कोई सहायता ही मिल सकती है। इसलिये इस संशोधन के द्वारा मैंने प्रस्ताव किया है कि कार्रवाई करने के अधिकार को संघ के प्रधान शासन-प्रबन्ध की देखरेख और निर्देशन में लाया जाये। यह संशोधन का एक पहलू है।

दूसरा पहलू यह है कि संघीय विषयों के प्रबन्ध के लिये रियासती अधिकारियों का उपयोग केवल उसी समय तक किया जायेगा जब तक कि संघ की तरफ से कोई दूसरा प्रबन्ध नहीं किया जाता। मेरा कथन यह है कि यदि रियासती अधिकारियों का उपयोग कुछ समय के लिए किया जा सकता है तो स्थायी रूप से क्यों नहीं किया जा सकता? चूंकि रियासतों द्वारा कार्रवाई को संघ का प्रधान अपने नियंत्रण और निर्देशन में रखेगा इसलिये गलतियों की तरफ रियासती अधिकारियों का ध्यान आकृष्ट किया जा सकेगा और शासन प्रबन्ध में सुधार किया जा सकेगा। जहां तक रियासतों का सम्बन्ध है प्रबन्ध के लिये संघीय विषय केवल सीमित संख्या में रहेंगे। और ऐसी अवस्था में वह अतिरिक्त जिम्मेदारी उनके लिये इतनी अधिक न होगी जिसका वे भार न वहन कर सकें। इसके अलावा मैसूर और बड़ौदा जैसी बड़ी रियासतें भी हैं, जिनका शासन-प्रबन्ध आधुनिक तथा सुव्यवस्थित है और मुझे विश्वास है कि नया प्रबन्ध उनके स्तर तक न पहुंच सकेगा।

परन्तु, सर एन. गोपालस्वामी आयंगर ने प्रस्ताव किया है कि खण्ड के अन्त में निम्न शब्द जोड़ दिये जायें-"उन रियासतों में जहां आवश्यक समझा जाये" और यह गर विभिन्न मतों में मध्यवर्ती मार्ग का काम देगा। मेरे विचार से इस संशोधन से परिस्थिति में उन्नति नहीं हो सकेगी क्योंकि इसमें यह कहने के लिये स्थान रह जाता है कि यह प्रत्येक रियासत के लिये आवश्यक है। यदि हम वास्तव में इन शब्दों को स्वीकार करते हैं और खण्ड में प्रस्तावित संशोधन करते हैं तो

[श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया]

मैं पहला सुझाव तो यह उपस्थित करता हूं कि रियासतों के भीतर जो संघीय शासन-प्रबन्ध हो उसके नियंत्रण तथा निर्देशन की व्यवस्था कर दी जाये और दूसरा यह कि रियासती अधिकारियों को संघीय विषयों का शासन-प्रबन्ध स्थायी आधार पर करने दिया जाये। मैं निवेदन करता हूं कि परिषद् मेरे संशोधन पर विचार करके उसे स्वीकार करेगी।

***श्री हिम्मतसिंह के. माहेश्वरी** (सिक्किम और कूच बिहार : ग्रुप): अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम जो संशोधन है वह साधारण ही है। इसके द्वारा खण्ड 9 के "उपयुक्त संघ-अधिकारी" शब्दों के स्थान पर "संघ के किसी कानून द्वारा" शब्द रखने का प्रस्ताव किया गया है। यदि प्रस्ताव स्वीकार किया गया तो खंड का निम्न रूप हो जायेगा:

"विधान में इसके विपरीत चाहे जो हो, संघ में सम्मिलित होने वाली किसी रियासत के शासक का प्रबंध सम्बन्धी अधिकार, जहां तक उस अधिकार का सम्बन्ध संघ के विषयों से हो जिनके सम्बन्ध में उस रियासत के लिये संघ व्यवस्थापिका सभा को कानून बनाने का अधिकार है, कायम रहेगा सिवाय उस अवस्था के जबकि संघ का प्रबंध सम्बंधी अधिकार रियासत में इस प्रकार काम में आने को हो कि संघीय कानून के द्वारा शासक के प्रबंध सम्बंधी अधिकार का निराकरण कर दिया गया हो।"

महोदय, "अधिकारी" शब्द स्पष्ट नहीं है। इसका मतलब संघ-सरकार के अंडर सेक्रेटरी से हो सकता है। इसलिये मैं परिषद् से ऐसी व्यवस्था स्वीकार करने का अनुरोध करता हूं, जिसके द्वारा जब कभी भी संघ के प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार से किसी रियासत में काम लिया जाने वाला हो तो ऐसा किसी संघ-अधिकारी के आदेश द्वारा न होकर संघ-कानून के द्वारा होना चाहिये। महोदय, कदाचित इस संशोधन की आवश्यकता ही न पड़े, क्योंकि खण्ड का मसविदा बनाने वाले अन्त में स्वयं ही शब्दों को अधिक स्पष्ट कर दें। मैं निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकता। यदि मसविदा-समिति इस विषय पर विचार कर ले तो मेरे उद्देश्य की सिद्धि हो जायेगी।

(सर्वश्री किशोरीमोहन त्रिपाठी, बी. एम. गुप्ते, विश्वनाथ दास, एच. आर. गुरुव रेड्डी, जयनारायण व्यास, एस. वी. कृष्णमूर्ति राव और के. चेगलारैया रेड्डी ने संख्या 204 से 210 तक अपने संशोधन उपस्थित नहीं किये।)

***अध्यक्षः** मेरे विचार में यही संशोधन हैं, जिनकी मुझे सूचना दी गयी है। अब खण्ड तथा संशोधनों पर बहस चल सकती है। क्या कोई सदस्य खण्ड या संशोधन पर कुछ कहना चाहते हैं?

श्री महावीर त्यागीः (संयुक्त प्रान्त : जनरल): श्रीमान् जी, कांस्टीट्यूशन का यह हिस्सा बहुत जरूरी हो जाता है, इसलिये कि इसका ताल्लुक हिन्दोस्तान की बहुत बड़ी आबादी से जो रियासतों में रहती है, पड़ेगा। आजकल रियासतों को बहुत काफी अधिकार अपने घरेलू इन्तजाम के हैं पर उन अधिकारों के बाद हर रियासत में एक रेजीडेण्ट भी अंग्रेजों का रहता है। वह रेजीडेण्ट राजाओं के इन अधिकारों पर कुछ थोड़ा-सा चैक रखता है और कुछ अपना हाथ रखता है और वह समय-समय पर प्रजा के अधिकारों की रक्षा भी करता आया है। यदि आज उस रेजीडेण्ट के हट जाने के बाद प्रजा के अधिकारों की रक्षा का कोई साफ-साफ रास्ता यह कान्स्टीट्युएंट असेम्बली नहीं निकाल सकी, तो मेरा यह कहना है कि हमारा कान्स्टीट्यूशन बनाने का जो काम है वह नाकामयाब माना जायेगा। इस कांस्टीट्युएंट असेम्बली का यह फर्ज हो जाता है कि जब रियासत और रियासतों की प्रजा हमारी इस यूनियन में शामिल होती है तो उस प्रजा के सुख, उस प्रजा के अधिकारों की रक्षा करना भी हमारा फर्ज है। मैं आज आपका थोड़ा-सा समय इसलिये लेने हाजिर हुआ कि कहीं रियासत में रहने वाले प्रजा के लोग यह न कहें कि रियासतों को अपने साथ शामिल करने के लालच में सारी असेम्बली खामोश बैठी रही जबकि उस प्रजा के अधिकारों की रक्षा का सवाल उपस्थित हुआ तो मैं इस समय कोई तरमीम करके इस कार्यवाही को रोकना नहीं चाहता, क्योंकि जो भी कानून इस समय बन रहा है या शर्ते हो रही हैं वह बाद में आखिरी शक्ल अख्तियार करके इस असेम्बली में आयेंगी। उस वक्त हमें आखिरी मौका होगा उनकी परख करने का और उनको बदलने का। पर मैं यह कहना चाहता हूं कि इस समय जो अधिकार रियासतों के हैं उन पर रेजीडेण्ट का एक चैक है, रेजीडेण्ट का एक कण्ट्रोल है, उनके हट जाने के बाद उनके ऊपर क्या चैक रहेगा, क्या कण्ट्रोल रहेगा? इसको वह कमेटी जो रियासतों के साथ बातचीत कर रही है, इस हाउस के सामने साफ-साफ खुले तौर से या तो इस समय या किसी और उचित समय रख दे क्योंकि जो अधिकार राजाओं के आज हैं वह उतने ही हैं जितने यूनियन के होंगे फिर उतने अधिकारों से भी और ज्यादा

[श्री महावीर त्यागी]

अधिकार जो उनके नहीं थे वह भी आज इसे मिलते हैं। इसका नतीजा यह होगा कि डेस्पाटिक रियासतें जो खुदमुख्तार हैं उन पर कोई चैक नहीं रहेगा। बहुत-सी रियासतें ऐसी हैं जिनके यहां कोई लेजिस्लेचर नहीं हैं। ऐसी हालत में अगर मनमाने अधिकार उसके बने रहे तो वहा रियासतें तो बड़े फायदे में रहीं, यूनियन में आने से। आज रियासतों को यूनियन में लाने के लिये हम यह कीमत अदा करते हैं। अगर उनके मनमाने अधिकार उनके साथ बने रहने देते हैं तो हर-एक राजा को हमारी यूनियन में आने से विशेष आराम रहेगा क्योंकि आज तक प्रजा कांग्रेस और दूसरी संस्थाओं की सहायता लेकर उनके विरोध में खड़ी हो सकती थी, अब वह भी बन्द हो जायेगी। इसके बाद तो राजा लोग अपने अधिकार और भी मनमाने तरीके से प्रयोग में लायेंगे। इसलिये बड़ी जरूरत है कि जब हम यह पास करें कि जो अधिकार इस यूनियन के हैं उसी प्रकार के अधिकार या जो अधिकार आज तक प्राप्त हैं वही सब अधिकार चलते रहेंगे। यह तो ठीक है इसको ऐसे ही पास भी कर दिया जाये, परन्तु उसके ऊपर चैक, उसके ऊपर कण्ट्रोल इस बात का कि नाजायज तरीके से वह अधिकार इस्तेमाल न हों इसका भी कोई प्रबन्ध हमारे इस विधान में होना चाहिये। जिस वक्त इसी फेडरेशन का गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट सन् 1935 बन रहा था उसके अन्दर भी रियासतों के सम्बन्ध में इसी विषय की चर्चा की गई। वहां साफ-साफ यह कहा गया है कि जहां-जहां भी किसी रियासत का कोई कानून फेडरेशन के कानून के विरोध में जायेगा या उसके साथ नहीं मिलेगा वहां रियासत का कानून रद्दी माना जायेगा और फेडरेशन का कानून और नियम लागू होगा। इस वक्त यह दिक्कत है कि दो डोमीनियन बन गई हैं, एक पाकिस्तान और दूसरी हिन्दुस्तान। एक को फिक्र है कि ज्यादा रियासतें हमारे अन्दर आ जायें। दूसरे को फिक्र है कि ज्यादा हमारे अन्दर चली आयें। और इस तरीके से रियासतों की कीमत बढ़ रही है। उनका ज्यादा दाम लग जाने से उनको असाधारण सहूलियतें दी जा रही हैं, इसलिये कि वह हमारे अन्दर आ जायें। मेरे ख्याल से बहुत ज्यादा कीमत देकर उनका खरीदना ठीक नहीं है। अगर वह हमारी यूनियन के लिये अपने एक भी अधिकार को कम नहीं करते हैं तो यहां आने में उनको तो हमारी फौज की सहायता मिलती है और हमको केवल यह लाभ होता है कि हमारे परिवार के मेम्बरों की तादाद बढ़ती है। हर रियासत को हमारी तलवार की रक्षा मिलती है। हमारे देशभर की

इतनी बड़ी सहायता उसे मिलती है पर उस सहायता के बदले वह अपने कितने अधिकार हमको देने को तैयार है, यह बात भी हमारे सामने आनी चाहिये। इसलिये रियासतों के साथ जो यूनियन की बातचीत हो रही है वह बातचीत साफ-साफ तरीके से इस हाउस के सामने बहस में आ जानी चाहिये। और इसे जानने के बाद हमें तय करना चाहिये कि हम रियासतों के कितने-कितने अधिकार उनके पास छोड़ेंगे और कितना-कितना कण्ट्रोल हम उन रियासतों पर रखेंगे। यूनियन का जैसा आपके सामने यह क्लाज रखा गया है उसमें रियासतों को अधिकार ग्राण्ट किये गये हैं, लेकिन इसके साथ-साथ यह जिक्र नहीं आया कि रियासतों पर यूनियन के अधिकार क्या होंगे? मैं इस प्रस्ताव में रुकावट नहीं डालना चाहता और मेरा ऐसा भी खयाल है कि ऐसा रिवाज भी डाल दें कि यह हो जाये कि जब मेम्बर भाषण करे तो उनकी जिम्मेदारी ऐसी न हो कि वह अवश्य ही किसी प्रश्न की ताईद या मुखालिफत करें जब कि जरूरी मसला पेश हो तो मेम्बर को हक़ हो कि बिना ताईद या मुखालिफत किये वह इस हाउस के सामने रख दे, अपने विचार पेश कर दे। ताकि यह रेकार्ड हो कि हाउस में इस किस्म का खयाल भी था। मैं सिर्फ इसलिये यहां आया हूं कि रेकार्ड में यह चीज रहे और जो रियासतों से बातचीत करते हैं उनके सामने भी ऐसा खयाल आ जाये कि कुछ लोग ऐसे हैं जो यह चाहते हैं। मैं चाहता हूं कि मेरे यहां आने से यह बात रोशनी में आ जाये कि रियासतों की लिबर्टीज़ क्या हैं और उनको हम क्या अधिकार देते हैं। मेरी खास मांग यह है कि किसी रियासत को जो अधिकार आज तक थे उससे ज्यादा अधिकार हमारे यहां आने से उन्हें न मिल जायें। जो अब तक थे वह पर्याप्त थे। हमारे यहां उनके आने से रेजीडेण्ट भी हट जायेंगे तो बाजी-बाजी रियासतें बगैर लगाम की हो जायेंगी। इसलिये मेरा कहना है कि बिना किसी रियासत का अपमान किये, बिना किसी प्रकार का दोष लगाये मैं यह कहना चाहता हूं कि जब रियासतें हमारे परिवार में आती हैं तो हमारे परिवार के जो डिमोक्रेसी के नियम हैं उन्हें उनका पालन करना अनिवार्य होगा। डेस्पाटिक रियासतों की हमारे इस परिवार में कोई जगह नहीं है। भले ही आज किन्ही लीडरों के कहने से उन्हें ऐसा मालूम पड़े कि वह आराम से रहेंगी। मैं कह देना चाहता हूं उन रियासतों से जो खुशी से आती हैं कि भले ही उनकी शर्तें मंजूर हो जा रही हों, यहां आने में उनका डेस्पाटिक तरीका खतरे में है। यह असेम्बली और हिन्दुस्तान बहुत जल्द डेस्पाटिक को खत्म कर देगी, इस बात को सुनने के बाद रियासतें यहां

[श्री महावीर त्यागी]

आयें। यह आज आम हिन्दुस्तानी की मांग है और इसलिये आज अगर यह असेम्बली डेस्पाटिज्म को खत्म नहीं कर सकती किन्हीं वजूहात से, तो इस असेम्बली के खत्म होने के बाद नेशन दूसरी कान्स्टीट्युऐंट असेम्बली बुलायेगी जोकि न केवल इकानामिक मामलों को बल्कि पोलिटिकल मामलों को भी हल करेगी और हमबार करेगी। वह इन्कलाबी असेम्बली कोई डेस्पाटिज्म का इशारा या निशान भी हिन्दुस्तान में नहीं रहने देगी। जो आजकल के जमाने में हिन्दुस्तान में डेस्पाटिज्म की लानत और काला धब्बा है, हमारी यूनियन ज्यादा दिनों तक उसे अपने माथे पर नहीं लगाये रहेगी। यही मेरा कहना है।

*__माननीय श्री हुसैन इमामः__ अध्यक्ष महोदय, पिछले वक्ता ने जो यह कहा है कि संघ में सम्मिलित होने वाली रियासतों में एक सीमा तक लोकतन्त्रवाद अवश्य होना चाहिए, यह एक ऐसी बात है जिसके सम्बन्ध में इस परिषद् में कोई मतभेद नहीं होना चाहिए। कुछ ऐसे स्तर हैं और ऐसी कार्रवाइयां हैं, जिन्हें आवश्यकता की दृष्टि से न्यूनतम माना जाता है, जीवन के लिए जरूरी माना जाता है और इस युग में किसी भी व्यक्ति के लिए निरंकुश शासन के ईश्वर प्रदत्त अधिकार का दावा बिल्कुल गलत है। मैं उन लोगों में हूं, जो संयत व्यवहार तथा बातचीत करके समझौता करने को अच्छा समझते हैं। परन्तु एक सीमा ऐसी अवश्य है, जिसके परे आप इन प्रक्रियाओं को नहीं ले जा सकते। कुछ आधारभूत सिद्धांत ऐसे हैं, जिन्हें आपको मानना ही पड़ेगा। चूंकि एक विदेशी सरकार ने 560 रियासतों को स्वीकार किया है इसलिए यह आवश्यक नहीं हो जाता कि यह विधान-परिषद् भी इनका पृथक अस्तित्व स्वीकार करे। आज संसार में यह साधारण सिद्धांत मान लिया गया है कि जीवन-संघर्ष में ये छोटी रियासतें कायम नहीं रह सकतीं। आप औद्योगीकरण तथा घरेलू उद्योग को ही देखिए। दिन-प्रति-दिन घरेलू उद्योग की अवनति हो रही है। हम उसकी रक्षा करके उसे ऊपर इसलिये उठाते हैं कि श्रमजीवी को उससे मिलों की अपेक्षा अधिक लाभ है। इसी प्रकार यदि साधारण व्यक्ति के हित में 560 रियासतों को बनाये रखना होता तो मैं निश्चय ही उनका समर्थन करता। परन्तु इनमें से कुछ रियासतें तो इतनी छोटी हैं कि स्वयं उन्हीं ने मिलकर अपने को बड़ी इकाइयों का रूप दिया है। यह प्रगति उचित दिशा में हुई है और यदि इस गति को प्रोत्साहन दिया जाये-जैसा कि होना चाहिए-तो उनका अस्तित्व आज भी बनाये रखा जा सकता है। परन्तु यदि पृथक व्यक्तित्व रखने की चेष्टा की गई और रियासतों द्वारा अपने संघ बनाकर साधारण जनता को समान विशेषाधिकार तथा समान लाभ प्रदान करने की जो नयी लहर चली

है उसे आगे नहीं बढ़ाया गया तो रियासतों का अस्तित्व खतरे में पड़ने की आशंका है। मैं पिछले वक्ता की इस अपील का समर्थन करता हूं कि यह परिषद् तथा बातचीत चलाने वाले सज्जन इस बात का ध्यान रखें कि रियासतों में साधारण व्यक्ति के उन अधिकारों की रक्षा होनी चाहिये, जो हमें ब्रिटिश भारत के नागरिकों के अधिकारों के ही समान प्रिय हैं *(वाह, खूब)*। प्रान्तों के नागरिकों के हितों की रक्षा के लिये हम जितनी लगन तथा सावधानी से काम ले रहे हैं उसी लगन तथा सावधानी का परिचय हमें इस विषय में भी देना चाहिये। लोकतंत्रवाद का एक न्यूनतम स्तर होना चाहिए और नागरिकता के न्यूनतम अधिकार होने चाहियें, जिनसे भारतीय महाद्वीप में किसी को वंचित न रहना चाहिए। रियासतें–चाहे छोटी हों या बड़ी–उन सभी को उन्नति की चेष्टा करनी चाहिये और यदि उन्नति नहीं हो सकती तो हम अपनी जिम्मेदारी पूरी करने में असफल रह जायेंगे। यदि हम इकाइयों के बहुत बड़े भाग को उसी पतित अवस्था में रहने देते हैं जिसमें वे अंग्रेजों के जाने से पहले थीं तो ऐसी आज़ादी की क्या कीमत है? इसलिये मैं अपील का समर्थन करता हूं और आशा करता हूं कि उसका कुछ परिणाम अवश्य निकलेगा।

श्री जयनारायण व्यास (जोधपुर): प्रेसीडेण्ट साहब, हमारे सामने इस समय रियासतों का सवाल दरपेश नहीं है। हमारे सामने सवाल यह है कि सेन्टर के जो सब्जेक्ट्स हैं उन सब्जेक्ट्स के ऊपर आथोरिटी एक्सरसाइज करने के राजाओं के अधिकारों के ऊपर गौर करें। इसलिये मैं इस सवाल से आगे बहुत लम्बे-चौड़े सर्किल में अपने को नहीं डालना चाहता हूं न हाउस को डालना चाहता हूं।

यह बात ठीक है कि अभी जो शक्तियां, जो सत्ता राजाओं या स्टेट गवर्नमेंट के हाथ में नहीं है वह सत्ता अब उनके हाथ में चली जायेगी। लेकिन इसके साथ-साथ अगर हम उन शब्दों को देखें तो ऐसा मालूम पड़ता है कि जिनके हाथ में शक्ति थी उन्हें वह रखने दी जायेगी; इससे ज्यादा नहीं होगा, जब तक दूसरी व्यवस्था न्याय के द्वारा न हो जाये।

यह सब होते हुये भी चूंकि हमारे फेडरल सब्जेक्ट्स बहुत हैं और बहुत तरह के हैं, इसलिये उनका दुरुपयोग होने की भी किसी-किसी जगह आशंका हो सकती है। लेकिन जब हम सब एक जगह आते हैं तो यह आशा करनी चाहिये बल्कि अपील करनी चाहिये कि रियासतें भी अब हमारी लाइन से आने की कोशिश करें। जिस जगह प्रान्तों के लोग हैं, उस जगह वह भी आयें और वह सत्ता जो उन्हें सेन्टर की तरफ से दी जा रही है, उस सत्ता का दुरुपयोग न करें। बल्कि इस तरह से उपयोग करें जिस तरह से प्राविन्सेज में हो रहा है। ऐसी हालत में मैं समझता हूं कि जहां तक ऐसे सेक्शन या क्लाज से ताल्लुक है उसका विरोध

[श्री जयनारायण व्यास]

करने की हमें कोई आवश्यकता नहीं मालूम होती। लेकिन त्यागी जी ने अभी हमारे सामने रियासतों के जनरल सवाल पर बहुत-सी बातें कही हैं। मैं एक रियासत की प्रजा हूं और प्रजा का प्रतिनिधि हूं। मैं मानता हूं कि प्रजा के प्रतिनिधियों की हैसियत अभी वह नहीं है जो मिनिस्टीरियल रिप्रेजेन्टेटिव्ज़ की है। वह लोग बातचीत करते हैं तो गवर्नमेंट की तरफ से बातचीत करते हैं। हम अभी ऐसी बातचीत करने की हैसियत में नहीं आये हैं। यह एक ऐसी पोजीशन है जिसके लिये हम भी दुखी हैं। लेकिन इसके यह माने नहीं हैं कि हम मायूस हो गये हैं। यह नामुमकिन हो गया है कि हम इस स्थिति में बहुत दिनों तक न पहुंच सकें। मुझे आशा है, मैं उम्मीद करता हूं कि हमारा सेण्टर भी राजाओं, मिनिस्टर्स और स्टेट गवर्नमेण्ट्स को प्रभावित करेगा, उनके ऊपर प्रभाव डालेगा और यह देखेगा कि हम अन्दरूनी मामलों में बराबरी की हैसियत हासिल करें और अगर ऐसा न भी हो, कोई टेकनिकल बात ऐसी हो, कानूनी पेच आ जाता हो तो हम खुद उम्मीद करते हैं और हम खुद कोशिश करेंगे कि बातचीत के जरिये मामलों को ठीक करें। अगर राजाओं से बातचीत करने से मामले ठीक न होंगे तो 15 अगस्त के बाद राजा एक तरफ रहेंगे और दूसरी तरफ प्रजा रहेगी। प्रजा में वह शक्ति है कि वह अपना फैसला आप कर लेगी। हमारे प्रति जो सहानुभूति प्रकट की गई है मैं उसके लिये धन्यवाद देता हूं। लेकिन साथ ही साथ मैं यह कहना चाहता हूँ कि जहां तक फेडरल सब्जेक्ट्स का ताल्लुक है इस पर उनका ज्यादा असर नहीं पड़ेगा। उसका असर सेण्टर पर पड़ेगा। वह अपने नफा-नुकसान को सोचेगा। ऐसी हम आशा करते हैं। मैं जो मूल प्रस्ताव है उसका समर्थन करता हूं।

***श्री एस.वी. कृष्णमूर्ति राव** (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, मैंने एक संशोधन उपस्थित किया था कि इन विषयों में रियासती प्रजा के प्रतिनिधियों को कुछ कहने का अवसर मिले, किन्तु मैंने उस संशोधन को वापस ले लिया, क्योंकि रियासतों के मंत्रियों ने सर एन. गोपालस्वामी आयंगर का एक संशोधन स्वीकार कर लिया। इसके द्वारा मैं रियासतों में एक नये युग का आविर्भाव देख रहा हूं। मुझे आशा है कि मंत्रियों ने इस संशोधन को उसकी समस्त सम्भावनाओं के साथ ही स्वीकार किया है। रियासती प्रजा के प्रतिनिधि-हम लोग-बड़ी नाजुक स्थिति में हैं। एक तरफ हम ऐसा कोई दृष्टिकोण ग्रहण नहीं करना चाहते, जिससे भारतीय संघ की स्थिति असुविधाजनक हो। इस समय एकता हमारी सबसे पहली आवश्यकता है। दूसरी तरफ हमें रियासती प्रजा के हितों की भी रक्षा करनी है। इसी दृष्टिकोण के कारण हमने सर एन. गोपालस्वामी आयंगर का संशोधन स्वीकार किया है।

महोदय, हमारा विश्वास है कि इस संशोधन की स्वीकृति के परिणामस्वरूप रियासतों में लोकतंत्रवादी शासन का न्यूनतम स्तर कायम हो जायेगा, क्योंकि संघ द्वारा इस संशोधन को स्वीकार करने का मतलब यह हुआ कि संघ परिषद् के प्रतिनिधियों का चुनाव बालिग मताधिकार के आधार पर होगा, नागरिकता के अधिकारों को स्वीकार कर लिया जायेगा और मौलिक अधिकार दे दिये जायेंगे। निश्चय ही इन आधारभूत सिद्धान्तों की स्वीकृति का प्रभाव रियासतों के शासन-प्रबन्ध पर पड़ेगा। मुझे आशा है कि शीघ्र ही मंत्रिगण, जिनके कंधों पर भारी जिम्मेदारी है, केवल राजाओं के प्रति ही नहीं बल्कि संघ तथा रियासती प्रजा के प्रति भी अपने कर्त्तव्य का पालन करेंगे और इस बात का प्रयत्न करेंगे कि रियासतों में उत्तरदायी सरकार की स्थापना हो जाये। इस आशा से मैं प्रस्ताव का सशोधित रूप में समर्थन करता हूं।

***दीवान बहादुर सर ए. रामास्वामी मुदालियर** (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, इस महान् परिषद् के समक्ष इस महत्वपूर्ण विषय पर मुझे कुछ ही शब्द कहने हैं। रियासतों के कुछ प्रतिनिधियों ने—यहां मैं प्रतिनिधियों शब्द का प्रयोग कुछ हिचकिचाहट से कर रहा हूं, क्योंकि मेरा मतलब रियासतों के सरकारी मंत्रियों से है—एक संशोधन की सूचना दी है, जिसके द्वारा उन्होंने भारतीय शासन कानून के खण्ड 125 की पुनरावृत्ति करने की चेष्टा की है। उस कानून में सुझाव उपस्थित किया गया था कि संघ के प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकारों को रियासतें और उनके शासक अपने कर्मचारियों द्वारा अमल में लायेंगे और संघ को निरीक्षण करने के इस अधिकार से संतुष्ट होना पड़ेगा कि उपर्युक्त अधिकार को ठीक तरह से अमल में लाया जाता है या नहीं। ऐसी कितनी ही रियासतें हैं, जहां संघ अथवा भारत सरकार की तरफ से जो भी कोई कार्रवाई होनी होती है, वह रियासती सरकारों तथा रियासती कार्रवाई द्वारा होती है। उन वर्षों में, जबकि भारतीय शासन-कानून पर विभिन्न गोलमेज सम्मेलनों में विचार हो रहा था, यह स्पष्ट कर दिया गया था कि संघ में सम्मिलित होने वाली रियासतों को हस्तान्तरित विषयों के सम्बन्ध में संघ व्यवस्थापिका परिषद् द्वारा कानून पास करने पर कोई आपत्ति नहीं होगी, किन्तु उन विषयों में शासन-प्रबन्ध का अधिकार अवश्य रियासतों के कर्मचारियों के हाथ में रहना चाहिये। दूसरे शब्दों में संघ को व्यवस्थापन सम्बन्धी अधिकार तो रहेगा, किन्तु रियासतों द्वारा हस्तांतरित विषयों के शासन-प्रबन्ध के सम्बन्ध में प्रबन्ध तथा कार्य सम्बन्धी अधिकार अब भी रियासतों के जिम्मे रहेगा। यह स्थिति 1930 तक थी। मध्यवर्ती काल में कुछ रियासतों में घटनाचक्र वेग से घूम गया

[दीवान बहादुर सर ए. रामास्वामी मुदालियर]

है और इस बात के लक्षण दिखाई देने लगे हैं कि कितनी ही रियासतों में वहां के शासन-प्रबन्ध में प्रजा को हिस्सा देने की दिशा में और भी प्रगति होने वाली हैं। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि घटनाचक्र की प्रगति, लोकमत के झुकाव, स्वयं रियासतों की जागृति और रियासतों के संघ में सम्मिलित होकर उसकी धारा-सभा में अपने प्रतिनिधि भेजने की सम्भावना-इन सभी तथ्यों के कारण रियासतों के शासन-प्रबन्ध में प्रजा के हिस्सा बंटाने की प्रक्रिया और प्रगति में बहुत तेजी आ जायेगी। मैं किसी विशेष रियासत का हवाला नहीं देना चाहता, किन्तु मेरे मन में कुछ ऐसी रियासतों का उदाहरण था, जो अपनी प्रजा को इतना अधिकार दे देंगी कि प्रजा को इस सम्बन्ध में कुछ भी शिकायत न रह जायेगी। यहां तक कि जिन लोगों ने 1930-31 के गोलमेज सम्मेलनों में रियासतों का प्रतिनिधित्व किया था उनका भी यही मत था कि व्यवस्थापन का अधिकार तो बिना किसी हिचकिचाहट के संघ-पार्लियामेंट को दिया जा सकता है किन्तु शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार तो रियासतों में ही रहना चाहिये और उसे रियासती अधिकारियों द्वारा अमल में लाना चाहिए। मैं खयाल कर सकता हूं-और यह प्रस्ताव मैं किसी नौकरशाही या अलोकतंत्री शासक की तरफ से नहीं रख रहा बल्कि यह तो एक ऐसा प्रस्ताव है जो स्वयं जनता की तरफ से ही रखा जा सकता है कि इन रियासतों में शासन-प्रबन्ध का अधिकार रियासती अधिकारियों या अफसरों के पास ही रहना चाहिये। यदि संघ अपने अफसरों के द्वारा शासन-प्रबन्ध रियासतों पर लादता है तो हानि उस प्रजा की ही होती है, जिसके प्रतिनिधियों के कंधों पर आगे से रियासत के शासन-प्रबंध का भार रहेगा। इसलिये यदि संघ किसी रियासत के शासन-प्रबन्ध में अपने अधिकारियों द्वारा हस्तक्षेप करता है तो मेरा तो खयाल है कि इससे शासकों की कुछ भी हानि नहीं हुई, इससे हानि उन लोकप्रिय प्रतिनिधियों की होगी, जो शासन-प्रबन्ध में प्रजा के हिस्सा मिलने के कारण यह हानि उठायेंगे और वही रियासत में अपने अधिकार द्वारा काम लेने से वंचित रह जायेंगे। कहा जा सकता है कि एक सीमा तक प्रान्तों में भी संघ के अधिकारी हस्तक्षेप करते हैं। परन्तु मेरा विश्वास है कि यूनियन कांस्टिट्यूशन कमेटी तथा जिन लोगों ने इस कार्यवाही में भाग लिया है वे अनुभव करते हैं कि प्रान्तों और रियासतों में एक आधारभूत भेद है। मैं नहीं कह सकता कि प्रान्तों में संघ के अधिकारों के विषय में जो निश्चय किये गये हैं उनके सम्बन्ध में प्रान्तों के लोग कहां तक खुश हैं। अभी इस परिषद् को प्रान्तीय तथा संयुक्त विषयों की सूची पर विचार करना शेष है। इस परीक्षण का क्या परिणाम होगा, यह भी अभी मैं नहीं बता

सकता। परन्तु महोदय, मेरा सम्बन्ध रियासतों से सदा से नहीं रहा है–यह नया सम्बन्ध कुछ ही समय पहले स्थापित हुआ है। मेरे सार्वजनिक जीवन के 30 वर्ष उन प्रदेशों में बीते हैं, जिन्हें 15 अगस्त से पूर्व ब्रिटिश भारतीय प्रान्त कहा जाता रहा है। इस दृष्टि से मैं यह विचार प्रकट कर सकता हूं कि जिस प्रान्तीय स्वायत्त शासन के लिये हम कितने ही दशकों से आन्दोलन करते रहे हैं, वह एक वास्तविक वस्तु होनी चाहिये। प्रान्त आसानी से इस बात को नहीं मान सकते कि मजबूत केन्द्रीय सरकार का मतलब यह हो कि केन्द्रीय सरकार की अधीनता में बहुत से विषयों का शासन-प्रबन्ध रहे। मेरे विचार से मजबूत केन्द्रीय सरकार का यह मतलब नहीं होना चाहिये। सरकार को केन्द्र में किस उद्देश्य से मजबूत होना चाहिये। यदि इस स्थिति का स्पष्टता से विश्लेषण किया जाये तो आप इस परिणाम पर पहुंचेंगे कि कुछ विषयों तथा कुछ अधिकारों की दृष्टि से संघ-सरकार के हाथ में काफी शक्ति रहनी चाहिये, किन्तु इसका यह मतलब नहीं है कि पेटेंट या कापीराइट का अधिकार केन्द्र को देने से–यहां केवल इसी विषय को लीजिये–मजबूत केन्द्रीय सरकार की स्थापना हो गई। मजबूत सरकार अन्य कारणों से भी वांछनीय हो सकती है। केन्द्रीय सरकार में मजबूती सहयोग तथा एकीकरण द्वारा आ सकती है–इस विचार द्वारा आ सकती है कि केन्द्र में जो शासन-व्यवस्था कायम की जा रही है उसके हाथ में यदि शक्ति नहीं तो कम से कम परामर्श द्वारा एकीकरण करने की योग्यता तो है। हम मजबूत केन्द्रीय सरकार की कामना तो करते हैं, किन्तु हमें यह न भूल जाना चाहिये कि शक्ति अधिकार-क्षेत्र के विस्तार में नहीं है–इसमें नहीं है कि केन्द्रीय सरकार की अधीनता में बहुत से विषय आ गये हैं। इसके विपरीत मेरा विचार तो यह है कि आप संघ की अधीनता में जितने ही विषय लाते हैं उतना ही आप उसे कमजोर बनाते हैं। इसलिये समय आने पर मैं तो प्रान्तों की तरफ से–अपने इस नये अवतार को भूल कर–इस बात पर जोर दूंगा कि केन्द्रीय सरकार की मजबूती के साथ ही साथ प्रान्तीय सरकारों के हाथ में व्यापक से व्यापक अधिकार रहने चाहियें *(वाह, खूब)*। ऐसे अवसर आ सकते हैं, जब मुझे इस बात पर कोई आपत्ति न रह जायेगी कि संघ-सरकार अपने क्षेत्र पर पूरा अधिकार कर ले। संकटकाल की घोषणा होने या प्रमाणित हो जाने पर भारतीय शासन कानून के अनुसार लगे प्रतिबन्ध भी हटाये जा सकते हैं और केन्द्रीय सरकार सभी अधिकार ग्रहण कर सकती है, किन्तु साधारण स्थिति में और दिन प्रतिदिन के शासन में और संकटकाल के अभाव में मेरी विनम्र सम्मति से प्रान्तों को अधिक से अधिक और व्यापक अधिकार होने चाहियें। यदि इस तथ्य को स्वीकार कर लिया जाये तो अध्यक्ष महोदय, मेरे विचार से रियासतों

[दीवान बहादुर सर ए. रामास्वामी मुदालियर]

को तो और भी अधिक विस्तृत अधिकार होने चाहियें और जिन विषयों का हस्तांतरण रियासतों की तरफ से हुआ है उनके अतिरिक्त रियासतों को अवशिष्ट विषयों का प्रबन्ध करने के लिये मुक्त छोड़ देना चाहिये। मेरा खयाल है कि कुछ क्षेत्रों और कुछ रियासतों में उन विषयों के शासन-प्रबन्ध में कठिनाई उठे। मेरे माननीय मित्र माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर ने अपने संशोधन द्वारा ऐसी परिस्थिति से मुकाबला करने का उपाय किया है। ऐसा हो सकता है। इसी कारण हमने अपने संशोधन पर, जो इस परिषद् के सामने उपस्थित है, अधिक जोर नहीं दिया है। परन्तु ऐसे अपवादों को छोड़कर, साधारण नियम तो यही होना चाहिये कि जो भी रियासतें शासन-प्रबन्ध करने में समर्थ हों—चाहे उनमें शासन-प्रबन्ध करने वाला जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि हो अथवा नहीं, जिसे उचित सिद्धांतों पर शासन करना आता हो—ऐसी रियासतों के शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी क्षेत्र में केन्द्रीय सरकार का हस्तक्षेप नहीं होना चाहिये। मेरे खयाल में कम से कम कुछ रियासतें तो शासन-प्रबन्ध का ऐसा लेखा दिखा सकती हैं, जो (यहां मैं वह कहने का साहस नहीं करता, जो कहना चाहता हूं, क्योंकि यहां इतने प्रान्तीय प्रतिनिधि तथा प्रान्तीय मंत्री उपस्थित हैं) कम से कम प्रान्तों की तुलना में कम उत्तम नहीं रहा है। ऐसा लेखा रहने के कारण मैं यह कहने का साहस करता हूं और मेरे विचार में इस परिषद् में उसे सभी स्वीकार करेंगे कि ऐसी रियासतों में जहां कि शासन-व्यवस्था उपयुक्त होने या न होने का प्रश्न ही नहीं उठता, शासन-प्रबन्ध उस रियासत का अपना ही रहेगा। इसलिये मैं स्थिति का स्पष्टीकरण करना चाहता हूं कि सर एन. गोपालस्वामी आयंगर का संशोधन स्वीकार करते समय हम इस महत्वपूर्ण सिद्धान्त का त्याग नहीं कर रहे हैं कि साधारण रूप से यही नियम होगा कि रियासतें अपना शासन-प्रबन्ध रखें और अपवाद केवल विशेष अवस्था में ही किये जायेंगे।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** इस प्रस्ताव पर भाषण करने का मेरा कोई इरादा न था—विशेषकर ऐसी अवस्था में जब कि प्रस्तावक तथा रियासतों के कतिपय प्रतिनिधियों के मध्य एक समझौता हो चुका हो। इस विषय की चर्चा उठाते समय संघीय विषयों के सम्बन्ध में संघ तथा प्रान्तों के क्षेत्रों की बात लाना मेरे विचार से बिल्कुल अनावश्यक है। सर रामास्वामी मुदालियर ने जो यह कहा है कि केन्द्र की शक्ति इन बातों पर निर्भर नहीं है कि उसकी अधीनता में कितने विषय हैं बल्कि इस पर कि उसकी अधीनता में कितने राष्ट्र निर्मायक विषय हैं और केन्द्र के पास सम्पूर्ण क्षेत्र में अपनी शक्ति से काम लेने के साधन कहां

तक मौजूद हैं। परन्तु परिषद् के सामने जो विषय उपस्थित है उस पर विचार करने के लिये यह बात बिल्कुल अप्रासंगिक है। पिछले खंड का सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यही है कि कार्रवाई करने के अधिकार का भी विस्तार उसी सीमा तक होना चाहिये जिस सीमा तक व्यवस्थापन अधिकार का हुआ है। यदि संघ को कतिपय कानून पास करने का अधिकार है तो उसे उन कानूनों के अनुसार कार्रवाई करने का भी अधिकार होना चाहिये। यह एक साधारण वैधानिक सिद्धान्त है, जिस पर रियासतों या प्रान्तों के अधिकारों के समर्थकों में से किसी को भी आपत्ति नहीं हो सकती।

दूसरा प्रश्न यह है कि शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार अमल में कैसे लाया जाये? यह संघ द्वारा नियुक्त व्यवस्था द्वारा सीधे अथवा अस्थायी रूप से रियासत या प्रान्तीय शासन-व्यवस्था के मार्फत अमल में लाया जा सकता है। परन्तु अंतिम अधिकार तथा उत्तरदायित्व संघ का होना चाहिये और उसे संतोष होना चाहिये कि शासन का प्रबन्ध उत्तम है अथवा नहीं। यदि रियासत 'क' या रियासत 'ख' या रियासत 'ग' का शासन-प्रबन्ध उत्तम है तो बड़ी अच्छी बात है। संघ कोई हस्तक्षेप न करेगा। परन्तु यूनियन भर में संघ ही इस बात का एकमात्र निर्णायक है और उस हद तक प्रत्येक रियासत की शासन-व्यवस्था और प्रत्येक प्रान्त की शासन-व्यवस्था संघ की शासन-व्यवस्था के अधीन है। इस संशोधन का उद्देश्य स्पष्ट है। यदि रियासती शासन-प्रबन्ध उत्तमता से कार्य कर रहा है तो आपको हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है और वर्तमान अवस्था ही जारी रहने दी जा सकती है। परन्तु अंतिम अधिकार संघ के पास रहेगा। यह एक ऐसा सिद्धान्त है, जिसे मानने के लिये हम विवश हैं। लेकिन इसका यह भी मतलब नहीं है कि संघ अथवा संघ-शासन-व्यवस्था केवल प्रयोग ही करती रहेगी। वह ऐसा क्यों करे? उदाहरण के लिये, यदि डाक-व्यवस्था अथवा किसी अन्य व्यवस्था का प्रबन्ध किसी रियासत ने उत्तमता से किया है तो संघ को हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ेगी। इसके विपरीत, यदि उस रियासत ने प्रबन्ध उत्तम नहीं किया है तो अंतिम अधिकार संघ के ही पास रहना चाहिये। इस संशोधन का यही सिद्धान्त है और मेरे विचार से किसी भी रियासत को इस पर आपत्ति नहीं हो सकती। दो उग्र विचारधाराओं के बीच यह मध्यवर्ती मार्ग है। एक विचारधारा तो यह है कि संघ को अपना कार्य एक विशेष शासन-व्यवस्था नियुक्त करके तुरन्त आरम्भ कर देना चाहिये। यह इस पक्ष की एकांगी विचारधारा है। दूसरी विचारधारा यह है कि रियासतों में मौजूदा शासन-प्रबन्ध ही जारी रखा जाये– विशेषकर उस अवस्था

[सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

में जब कि वह संतोषजनक हो। प्रस्तुत खंड में यह दृष्टिकोण ग्रहण किया गया है कि संघ-अधिकारी जब यह अनुभव करें कि प्रबन्ध उत्तम नहीं है तो संघ-अधिकारी–और वही एकमात्र परिस्थिति के निर्णायक होंगे–हस्तक्षेप करें। इस सम्बन्ध में कोई भ्रम नही रहना चाहिये। भारतीय-शासन-कानून के खंड 125 के सिद्धान्त का इस विधान में स्पष्ट रूप से परित्याग कर दिया गया है। संघ-अधिकारियों तथा रियासतों के मध्य सलाह-मशविरा करके समझौता करने का कोई प्रश्न नहीं उठता। यह तो संघ के उत्तरदायित्व का प्रश्न है। यह तो दूरदर्शिता की बात है। ऐसा शासन-प्रबन्ध में स्थिरता लाने के विचार से किया गया है। यदि रियासत के शासन-प्रबन्ध के अन्तर्गत किसी विषय की व्यवस्था उत्तम है तो रियासती प्रबन्ध को जारी रखा जा सकता है। परन्तु इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि जहां तक इस खंड और इससे पूर्ववर्ती खंड का सम्बन्ध है, संघ द्वारा पास किये गये कानूनों के अनुसार कार्रवाई करने का अंतिम उत्तरदायित्व संघ का–और केवल संघ का ही है और शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार का कानून बनाने के अधिकार की सीमा तक विस्तार के सिद्धान्त की साधारण रूप से अवहेलना नहीं की गई है। महोदय, मैं इसी आधार पर एन. गोपालस्वामी आयंगर द्वारा उपस्थित संशोधन तथा उसके संशोधित रूप का समर्थन करता हूं।

***श्री के. संतानम्:** महोदय, मुझे प्रसन्नता है कि सर अल्लादी ने संघ-प्रणाली के आधारभूत सिद्धान्त का इतने साफ तथा जोरदार शब्दों में स्पष्टीकरण कर दिया है। मैं फिर उस क्षेत्र में नहीं जाऊंगा। परन्तु सर रामास्वामी मुदालियर ने एक बात ऐसी कही है, जिस पर हमें ध्यान देना चाहिये। आपने कहा है कि रियासतों में लोकतंत्रवाद का प्रसार हो रहा है, इसलिये संघीय विषयों का प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार उनके हाथ में छोड़ देना उतना आपत्तिजनक नहीं है। महोदय, मेरे विचार से ऐसा कहना ठीक नहीं है। रियासतों का लोकतंत्रीकरण जितना ही होता जायेगा उतना ही संघीय तथा प्रान्तीय विषयों का भेद स्पष्ट होता जायेगा। मेरा मत तो यह है। यदि कोई राजा या उसका शासक संघ की अवज्ञा करता है तो उसके विरुद्ध कार्रवाई करना सहज है, क्योंकि उस हालत में संघ-अधिकारियों को जनता का समर्थन प्राप्त होगा। परन्तु यदि संघीय विषय लोकतंत्रवादी रियासतों की अधीनता में चले जाते हैं तो प्रजा के स्वार्थ भी निहित हो जाते हैं। तब प्रजा भी संघ-अधिकारियों की अवज्ञा कर सकती है। इसलिये सभी संघ योजनाओं में यथासम्भव संघ तथा इकाइयों के अधिकारों का भेद स्पष्ट रखा जाता है। सभी

संघीय विषयों में संघ के शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकारों पर जोर दिया जाता है और आन्तरिक विषयों में स्वाधीन इकाइयों को केवल अपने विषयों में ही प्रबन्ध -सम्बन्धी अधिकार दिया जाता है। इस भेद का विस्तार संयुक्त राष्ट्र अमरीका में तो इस सीमा तक किया गया है कि संघ के कानूनों को संघ-अदालतें अमल में लाती हैं और प्रान्तीय कानूनों को प्रान्तीय अदालतें अमल में लाती हैं। आगे जाकर भारतीय संघ को भी इसी सिद्धान्त से काम लेना पड़ेगा। मैं सर रामास्वामी मुदालियर से सहमत हूं कि संघ की शक्ति उसके अधीन विषयों की संख्या पर निर्भर नहीं होती। भारतीय संघ की अधीनता में भी चाहे मुट्ठी भर–चार या पांच–विषय ही हों, किन्तु जब तक संघ का अधिकार इन विषयों पर पूर्ण तथा अखंड रहेगा तब तक उसका मजबूत होना अनिवार्य है। मुझे खेद है कि सर रामास्वामी मुदालियर ने ये प्रश्न उठाये और विशेषकर यह कि संघ की शक्ति किन बातों से बढ़ती है और किनसे नहीं। संघीय विषयों तथा प्रान्तीय विषयों के क्षेत्रों का विस्तार कहां तक होना चाहिये–इस विषय में हममें से कितने ही उनसे बहुत आगे तक सहमत हो सकते हैं। परन्तु प्रस्तुत खंड का इससे कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। संघ के अधिकार में जाने वाले विषयों की व्याख्या करते समय प्रश्न उठता है कि इन विषयों के सम्बन्ध में संघ के अधिकार का विस्तार किस सीमा तक होना चाहिये। इस खंड की यही मुख्य समस्या है। सर अल्लादी ने साधारण सिद्धान्त का उल्लेख तथा स्पष्टीकरण कर दिया है। मेरा तो यह कहना है कि रियासतों के लोकतंत्री होने पर उनके हाथ में संघ सम्बन्धी अधिकार छोड़ देना तो और भी खतरनाक होगा। अखिल भारतीय भावना तथा स्थानीय भावनाओं में सघर्ष हो सकता है और स्थानीय संघर्ष खतरनाक हो सकते हैं। प्रान्तीय अधिकारी फूट डालने वाली शक्तियों को मुक्त कर सकते हैं, जिन्हें आरम्भ से ही रोकने की आवश्यकता है। इसलिये हमें स्पष्ट कर देना चाहिये कि संघ के सभी विषयों में संघ को जब भी वह चाहे कार्रवाई का अधिकार स्वयं ग्रहण करने की स्वतंत्रता रहेगी। अभी अधिकार चाहे किसी रियासत के हाथ में दे दिया जाये, किन्तु जब भी संघ उचित समझे तभी उस अधिकार को ग्रहण करने की सुविधा उसे रहनी चाहिये। यह तर्क कि रियासतों में प्रजा को अधिकाधिक अधिकार मिलता जायेगा–यहां अप्रासंगिक है। बल्कि इस तर्क से तो अधिकार रियासतों के हाथ में छोड़ने के विरोधी पक्ष की ही शक्ति बढ़ती है। इसलिये संघ के हाथ में संघीय अधिकार हमें अक्षुण्ण रहने देना चाहिये। मेरा सुझाव है कि अंतिम मसविदा बनाते समय इस बात के संदेह की कोई गुंजाइश न छोड़ी जाये कि सूची में दिये गये संघ के विषयों के शासन प्रबन्ध को संघ के अधिकारी जब भी चाहेंगे तब ही पुनः अपने हाथों में ले सकेंगे।

श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय (ग्वालियर)**:** श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, मैं एक देशी रियासत से आता हूं। मेरे दिल में यह भावना है कि हमारा देश एक मजबूत केन्द्र वाला देश बने। दुर्भाग्यवश हमारे देश के बहुत से टुकड़े हैं। और देशी रियासतों के दिलो में कहीं-कहीं लोकल पैट्रिओटिज्म के जोश में सूबों और प्रान्तों के दिलों में भी यही खयाल है कि हम ज्यादा आटोनामी का इस्तेमाल करें। ऐसा करने से देश एक कमज़ोर देश बन जाता है और हमारा केन्द्र मजबूत नहीं रहेगा।

मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि हम सब लोगों को इतना त्याग करना पड़ेगा और रियासतों को भी इतना त्याग करना पड़ेगा कि वह ज्यादा से ज्यादा सत्ता अपने केन्द्र को दें जिससे कि हमारा केन्द्र और देश मजबूत हो। जैसी हालत आज हमारे देश की है और रियासतों में भी जो एक्जीक्यूटिव पावर जिस तरह से इस्तेमाल होती है, वह भले ही मौजूदा हालत में रियासतों और प्रान्तों में रहे लेकिन इससे ज्यादा पावर नहीं दी जानी चाहिये। फेडरेशन के जो सबजैक्ट्स हैं और जैसा कि मुदालियर साहब ने कहा कि ज्यादा सब्जैक्ट रखने से कोई मजबूत केन्द्र नहीं बनता, यह बात सही है लेकिन कुछ सब्जैक्ट तो बिल्कुल केन्द्र को देने पड़ेंगे और उनकी बाबत फाइनल आथोरिटी रियासतों पर नही छोड़ी जानी चाहिये। रियासतों और प्रान्तों के केन्द्रीय मामले केन्द्र के हाथ में रहने चाहियें। एक्जीक्यूटिव पावर्स जितनी कम हो सके दूसरों पर छोड़ी जाये। केन्द्र के हाथ में ही रहना मुनासिब है। स्वीट्जरलैंड और दूसरी जगहों में वे छोटे-छोटे देश हैं जहां एक्जीक्यूटिव आथोरिटी उसके यूनिटों में छोड़ी जाती है लेकिन हम हिन्दुस्तान में ऐसा नहीं कर सकते। ऐसा करना खतरे से खाली नहीं है इसलिये हिन्दुस्तान में रियासतों को ज्यादा पावर नहीं दी जानी चाहिये। जितनी फेडरल आथोरिटी रियासतों में है उसको जहां तक हो सके फेडरल मैशिनरी द्वारा इन्तजाम किया जाना चाहिये। लेकिन जहां तक इस क्लाज में है जैसा सर गोपालस्वामी आयंगर ने पेश किया है फिलहाल शुरू में इसकी जरूरत होगी, ऐसा प्रोवीजन रखा जाये। इसमें हमको ऐतराज नहीं होगा; लेकिन मैं देश में मजबूत केन्द्र बनाने को बिल्कुल मुनासिब समझता हूं और रियासतों को इसमें उज्र नहीं करना चाहिये। अगर हमको देश के केन्द्र को मजबूत बनाना है तो फेडरल आथोरिटी के कम से कम कुछ सबजैक्ट्स केन्द्र को देने पड़ेंगे। बगैर इसके हमारा देश तरक्की नहीं कर सकता। इसलिये यह रियासतों और प्रान्तों के हाथ में है कि अगर देश के केन्द्र को मजबूत बनाना है तो वे अधिक से अधिक सत्ता केन्द्र को दे दें। हमको केन्द्र मजबूत करना चाहिये जिसके साथ संचालन और इन्स्पैक्शन की शक्ति भी फेडरेशन को होनी

चाहिये। रियासतें यह मोह न करें कि सत्ता उनके हाथ मे अधिक से अधिक होनी चाहिये। इसलिये फिलहाल मैं इसका कोई विरोध नहीं करता। जैसा यह है, अमेण्डमेण्ट श्री गोपालस्वामी आयंगर का मन्जूर किया जाना चाहिये, लेकिन हमारी भावना यह रहनी चाहिये कि केन्द्र को ज्यादा से ज्यादा मजबूत करें।

***श्री आर.के. सिधवा:** सर गोपालस्वामी आयंगर के भाषण के बाद प्रस्ताव के उद्देश्य के सम्बन्ध में स्थिति का स्पष्टीकरण करके सर अल्लादी ने बहुत ही उत्तम कार्य किया है। आपने निश्चित शब्दों में कह दिया है कि अन्तिम अधिकार संघ के ही पास है। महोदय, हम रियासतों के उन प्रतिनिधियों को बधाई देते हैं, जिन्होंने कृपा करके विधान-परिषद् की कार्यवाही में भाग लिया है और मैं उन रियासतों को भी बधाई देता हूं, जिन्होंने इस विषय में नेतृत्व किया है और दूसरी रियासतों के लिये रास्ता खोल दिया है। मैं उनसे यह भी कहना चाहता हूं कि जब देश का एक भाग लोकतंत्रवाद को अपना रहा है तो दूसरा भाग, जिसमें लगभग 10 करोड़ जनता है, निरंकुश शासन में नहीं रह सकता। यह सदा से हमारा सिद्धान्त रहा है और हम घोषित कर चुके हैं कि जब भारत स्वाधीन होगा तो हम रियासतों की जनता को भी स्वतंत्र करेंगे। इसलिये इस अवसर पर जबकि हम यहां एकत्र हुए हैं--और मुझे प्रसन्नता है कि ऐसा हुआ है--तो हमें नरेशों, उनके प्रतिनिधियों तथा रियासत की जनता से कह देना चाहिये कि हमारा लक्ष्य और हमारी इच्छा क्या है। मुझे प्रसन्नता है कि हमारे कुछ राजे यह महसूस करने लगे हैं कि ऐसे समय जबकि देश के एक भाग में लोकतंत्रवादी शासन चल रहा हो तो दूसरे भाग में वे निरंकुश शासन नहीं चला सकते।

मैं विभिन्न रियासतों की बातें यहां विस्तार से नहीं कहना चाहता, किन्तु मैं कुछ ऐसी रियासतों को जानता हूं, जिनमें न तो स्थानीय संस्थायें हैं और न म्यूनिसिपैलिटियां हैं और जहां धारा-सभाएं हैं वहां नामजद सदस्यों का बहुमत है। अब नामजदगी के दिन लद गये। अब म्यूनिसिपैलिटियों और धारा-सभाओं दोनों ही में निर्वाचित प्रतिनिधियों का बहुमत होना चाहिये। अब नामजदगी का जमाना नहीं रहा। यदि आप लोकतंत्री रूप देना चाहते हैं तो नामजदगी की प्रथा को बन्द कर दीजिये। मैं नरेशों से निवेदन करूंगा कि उन्हें अपनी धारा-सभाओं में निर्वाचित सदस्य रखने चाहियें और उन्हें प्रान्तीय धारा-सभाओं के सदस्यों की तरह काम करने की सुविधा मिलनी चाहिये। जिन रियासतों में स्थानीय संस्थायें नहीं है उनमें निर्वाचित सदस्यों की स्थानीय संस्थायें तथा म्यूनिसिपैलिटियां कायम होनी चाहियें। मैं एक रियासत को जानता हूं जिसमें छापा-खाना खोलने की अनुमति नहीं दी

[श्री आर.के. सिधवा]

गई। यह काफी बड़ी रियासत है। मैं यहां कोई ऐसी बात नहीं कहना चाहता, जिससे कोई मतभेद उठ खड़ा हो। हमारी भावना अच्छी है और हम राजों से कहना चाहते हैं कि अब हमारे द्वारा रियासती प्रजा को दिये गये वचनों को पूरा करने का समय आ गया है। हम उनसे कहते रहे हैं कि जब हमारी स्वाधीनता का समय आयेगा तो हम आपको भी स्वाधीन करायेंगे और इसीलिये इस अवसर पर मैं रियासतों की जनता से कहना चाहता हूं कि इस बात का प्रयत्न करने में हम कुछ भी उठा न रखेंगे कि रियासतों की जनता का भी शासन उसी प्रकार से होना चाहिये जिस प्रकार से भारत में शासन होता है।

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): अक्ष्यक्ष महोदय, जिस संशोधन पर बहस चल रही है वह कुछ महत्वपूर्ण रियासतों के मंत्रियों (जो यहां उपस्थित हैं और जिनकी रियासतों ने हमारी सहायता करने के लिये विधान-परिषद् में भाग लिया है) और ब्रिटिश भारत को प्रतिनिधित्व करने वाले कुछ गैर सरकारी सदस्यों के प्रतिनिधियों के बीच हुआ एक समझौता है। इसलिये समझौते का महत्व वही समझा सकते हैं, जिन्होंने यह समझौता किया है। अभी हमें सुनना है कि सर गोपालस्वामी आयंगर को क्या कहना है। परन्तु मंत्रियों के दल के एक महत्वपूर्ण सदस्य सर रामास्वामी मुदालियर ने अपने भाषण में बताया है कि इस समझौते को स्वीकार करते हुये, जो इस संशोधन में सम्मिलित कर लिया गया है, उन्होंने क्या दृष्टिकोण ग्रहण किया है। मैं केवल साधारण रूप से विचार प्रकट कर रहा हूं और कोई सुझाव उपस्थित नहीं कर रहा हूं। मुझे तो यह विचार स्पष्ट जान पड़ता है कि साधारण तौर पर संघ के विषयों के सम्बन्ध में शासन सम्बन्धी कार्रवाई रियासत का शासक ही करता रहेगा। परन्तु साथ ही खण्ड में रियासतों को चेतावनी दी गयी है कि शासन-प्रबन्ध के एक न्यूनतम परिमाण की आशा रियासतों से की जाती है। मेरा विचार है कि अभी तो परिषद् की यही भावना है। परिषद् नहीं चाहती कि संघ के अधिकारी रियासतों के शासन-प्रबन्ध में परिवर्तन करने के लिये अपने अधिकारों का प्रयोग करें। परिषद् यह भी आशा करती है कि महान घटनाओं की शक्ति और सामने आने वाली परिस्थितियों का रियासतों के शासकों की मनोवृत्ति पर वांछनीय प्रभाव पड़ेगा। प्रगति के लक्षण दिखाई भी देने लगे हैं। प्रगति आरम्भ हो गयी है और हमें आशा है कि वह कुछ समय तक अबाधित रूप से चलेगी। हमने एक समझौता किया है और अभी तो हम उस आशा पर निर्भर रहेंगे। हम यह भी रियासतों से कह सकते हैं कि समय आने पर जहां

आवश्यकता हुई वहां संघ के अधिकारी अपने अधिकार से काम लेने में हिचकिचायेंगे नहीं। मेरे विचार में खंड की भाषा पर्याप्त रूप से स्पष्ट है। जिन लोगों को देश का हित प्रिय है उन्हें यह समझने में कोई कठिनाई न होगी कि संघ के अधिकारियों तथा रियासतों के मध्य एक दूसरे के प्रति क्या जिम्मेदारियां हैं और क्या दायित्व हैं। रियासतों द्वारा यूनियनों में भाग लेने को प्रोत्साहित करके और यूनियन तथा रियासतों के मध्य सद्भावना स्थापित करके हम एक शक्तिशाली भारत का निर्माण करना चाहते हैं। हमारा प्रयत्न शक्तिशाली भारत के निर्माण का ही होना चाहिये। इस शक्ति की प्राप्ति संघ के अधिकारियों तथा संघ में सम्मिलित होने वाली रियासतों के मध्य सहयोग द्वारा ही हो सकती है। इसीलिये संघ-अधिकारियों की नीति एकता बनाये रखने की होगी। रियासतों के लिये उचित तो यह है कि वे प्रजा को शासन में हिस्सा देकर उसकी सहानुभूति प्राप्त करें और यह भी जितना सम्भव हो उतनी शीघ्रता से करना चाहिये।

इन कुछ शब्दों के साथ मैं संशोधन का समर्थन करता हूं।

***सर बी.एल. मित्तर:** यह बड़े आश्चर्य की बात है कि एक ऐसे संशोधन के सम्बन्ध में, जो बिल्कुल निर्दोष है और जिसके विषय में समझौता हो चुका है, इतनी ओजस्विता दिखायी गयी है और इतनी गर्मागर्मी हुई है। आखिर इस संशोधन का मतलब क्या है? इसके मतलब दो हैं। संशोधित खण्ड का पहला मतलब तो यह है कि इसके द्वारा संघ की सर्वोपरिता स्वीकार कर ली गयी है। उसके अन्तिम शब्द इस प्रकार हैं—"जब तक कि उपयुक्त संघ-अधिकारी इस सम्बन्ध में कोई और प्रबन्ध न कर ले—उन रियासतों में जहां यह आवश्यक समझा जाये।" इससे प्रकट है कि अन्तिम निर्णयकर्ता संघ-अधिकारी ही है। इस खण्ड के प्रथम भाग में जो यह कहा गया है कि "संघ में सम्मिलित होने वाली किसी रियासत के शासक का प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार, जहां तक उस अधिकार का सम्बन्ध संघ के विषयों से हो, उस रियासत में कायम रहेगा" तो इसमें केवल मौजूदा स्थिति को ही कायम रखा गया है।

इस परिषद् द्वारा हमने जिस विधान का निर्माण किया है वह कोई अवास्तविक वस्तु नहीं है। हमें देश के कुछ तथ्यों पर उसी रूप में विचार करना चाहिये जिस रूप में वे हैं और उन तथ्यों को ध्यान में रखते हुये ही नये विधान का निर्माण करना चाहिये। एक तथ्य यह भी है कि कुछ बड़ी रियासतों में कतिपय केन्द्रीय विषयों का प्रबन्ध भी रियासती अधिकारियों द्वारा होता है। इससे किसी

[सर बी.एल. मित्तर]

की परेशानी नहीं बढ़ी है। इससे कार्य की उत्तमता में अन्तर नहीं पड़ा है। यदि ऐसा है तो यही आगे भी होता रहेगा। यदि आपको बाद में जाकर ज्ञात होता है कि अधिकार का दुरुपयोग हुआ है अथवा कार्य की उत्तमता में अन्तर आया है तो आप दूसरा प्रबन्ध कर सकते हैं। यह तो सरल खण्ड है, जिसमें दो सिद्धान्तों का समावेश किया गया है : प्रथम संघ-अधिकारी की सर्वोपरिता और दूसरे वर्तमान स्थिति को कायम रखना।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** महोदय, एक ऐसे प्रश्न पर, जो महत्वपूर्ण तो अवश्य है किन्तु जिसके सम्बन्ध में विरोधी मत वालों के मध्य समझौता हो चुका है, बड़ी मनोरंजक बहस हो चुकी है। एक घण्टे या उससे भी अधिक समय से जो ओजस्वी भाषण हुये हैं उनमें मैं और वृद्धि नहीं करना चाहता। महोदय, मुझे तो केवल यही कहना है कि इस खण्ड का मूल सिद्धान्त यही है कि संघ के प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार का विस्तार उसी सीमा तक है जिस सीमा तक उसे कानून बनाने का अधिकार प्राप्त है और यह भी कि साधारण रूप से संघ के विषयों के समुचित प्रबन्ध का उत्तरदायित्व स्वयं संघ पर है। परन्तु हमने कुछ वर्तमान तथ्यों को ध्यान में रखा है कि नये विधान के अन्तर्गत जो विषय संघ की अधीनता में जायेंगे उनका शासन-प्रबन्ध कुछ बड़ी रियासतों के ही हाथ में है। हमने व्यवस्था की है कि मौजूदा स्थिति कायम रहेगी, किन्तु इस पर संघ का सर्वोपरि नियंत्रण रहेगा—जब भी वह ऐसा करना चाहे। इस स्थिति से हम किसी प्रकार हट नहीं सकते। जैसा कि सर बी.एल. मित्तर कह चुके हैं, संघीय विषयों के शासन-प्रबन्ध का सर्वोपरि अधिकार संघ को दिया गया है। सर रामास्वामी मुदालियर ने जो स्थिति ग्रहण की है उसे मैं उलट देना चाहता हूं। उनकी धारणा यह जान पड़ती है कि साधारण सिद्धान्त यह रहना चाहिये कि संघीय विषयों का प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार रियासतों के पास रहे, किन्तु कुछ अपवादों की अवस्था में जहां आवश्यक हो संघ शासन-प्रबन्ध स्वयं ग्रहण कर सकता है। मैं यह कहना चाहता हूं कि संघीय विषयों के शासन-प्रबन्ध के लिए स्वयं संघ उत्तरदायी है, किन्तु जिन रियासतों में संघीय विषयों का शासन प्रबन्ध आजकल स्वयं रियासतों द्वारा हो रहा है और उत्तम रूप से हो रहा है उनमें वह तब तक हस्तक्षेप न करेगा जब तक वह इसकी आवश्यकता महसूस न करे।

एक संशोधन में कहा गया है कि संघ को किसी रियासत से शासन-प्रबन्ध संघ-कानून द्वारा लेना चाहिये, न कि संघ-अधिकारी द्वारा जैसा कि खण्ड में कहा

गया है। मैं इस संशोधन के प्रस्तावक का ध्यान केवल एक परराष्ट्र विषय की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं। परराष्ट्र विषय के क्षेत्र में कानून द्वारा बहुत कम कार्रवाई होती है और अधिकांश कार्रवाई शासन-प्रबन्ध के ही स्तर पर होती है। ऐसी अवस्था में रियासतों में परराष्ट्र विषयों के शासन-प्रबन्ध के लिये संघीय कानून की शरण में जाना हमारे लिये बिल्कुल अनावश्यक होगा।

जहां तक प्रस्तुत विषय का सम्बन्ध है संघीय विषयों के शासन-प्रबन्ध की दृष्टि से रियासतों तथा प्रान्तों की तुलनात्मक स्थिति में कुछ भी अन्तर नहीं है, जैसा कि सर रामास्वामी मुदालियर कहते थे। भेद केवल यही है कि जब कि कुछ रियासतें कुछ संघीय विषयों का प्रबन्ध कर रही हैं, प्रान्त नहीं कर रहे हैं। परन्तु जहां तक उन विषयों के शासन-प्रबन्ध के अधिकार का सम्बन्ध है, प्रान्तों और रियासतों की स्थिति में कुछ भी अन्तर नहीं है। प्रान्तों और रियासतों का वास्तविक अन्तर केवल यही है कि उनमें आंतरिक शासन भिन्न प्रणालियों द्वारा चल रहा है। मैं इस विस्तृत क्षेत्र में नहीं आना चाहता, जिसके विषय में कई सज्जन कह चुके हैं, किन्तु मैं तो सिर्फ एक ही बात का समर्थन करना चाहता हूं और सिर्फ उसी पर जोर देना चाहता हूं, जिसकी ओर श्री सन्तानम् ध्यान आकृष्ट कर चुके हैं और वह यह है कि रियासतों में लोकतंत्रीय संस्थायें कायम होने पर संघीय विषयों का शासन-प्रबंध संघ द्वारा ग्रहण करने की आवश्यकता कम नहीं, अधिक ही पड़ेगी। आखिर हमें इस बात पर ध्यान देना ही पड़ेगा कि संघ-शासन का मुख्य सिद्धान्त केन्द्र तथा इकाइयों के मध्य शासन-प्रबन्ध का विभाजन है। मेरी समझ में नहीं आता कि इस स्थिति को स्वीकार करने में हिचकिचाहट क्यों अनुभव की जा रही है, क्योंकि किसी रियासत के शासक और प्रजा को जिस प्रकार उस रियासत के विधान को मानना पड़ता है उसी प्रकार उन्हें संघ के विधान को भी मानना पड़ेगा। संघ की धारा सभा में रियासतों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त होगा और यदि कभी किसी संघीय विषय के सीधे शासन-प्रबन्ध के सम्बन्ध में संघ-कानून पास हुआ तो उस कानून के पास होने में रियासतों के प्रतिनिधियों का भी हाथ रहेगा। इसलिये मुझे इसका कोई कारण नहीं दिखायी देता कि प्रान्तों में जिस सिद्धान्त का अनुसरण किया गया है उसे रियासतों में उलट दिया जाये। महोदय, एक ऐसे विषय के सम्बन्ध में मैं अधिक नहीं कहना चाहता, जिस पर समझौता हो चुका है। मेरा खयाल है कि परिषद् मेरे संशोधन को स्वीकार करने के पक्ष में है। मैं और कुछ नहीं कहना चाहता।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधन पर मत लूंगा। सबसे पहले मैं खण्ड में उन चार या पांच शब्दों के जोड़ने के संशोधन को लेता हूं, जिसे सर गोपालस्वामी ने स्वयं

[अध्यक्ष]

ही उपस्थित किया था। संशोधन है कि खण्ड के अन्त में ये शब्द जोड़ दिये जायें:

"उन रियासतों में जहां यह आवश्यक समझा जाये।"

मैं समझता हूं कि परिषद् इसे स्वीकार करती है।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अन्य संशोधन भी उपस्थित किये गये हैं।

श्री चंद्रशेखरिया का संशोधन है कि खंड 9 के स्थान पर निम्न शब्द रखे जायें:

"संघ में सम्मिलित होने वाली किसी रियासत के शासक का शासन-प्रबंध सम्बंधी अधिकार, जहां तक उस अधिकार का सम्बन्ध संघ के विषयों से हो, उस रियासत में कायम रहेगा, किन्तु संघ के प्रधान प्रबंधक को निरीक्षण तथा निर्देशन का अधिकार रहेगा।"

प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया।

श्री हिम्मतसिंह माहेश्वरी का संशोधन यह है कि खण्ड 9 के स्थान पर निम्न शब्दों को रखा जाये:

"विधान में इसके विपरीत चाहे जो हो, संघ में सम्मिलित होने वाली किसी रियासत के शासक का प्रबंध सम्बन्धी अधिकार, जहां तक उस अधिकार का सम्बन्ध संघ के विषयों से हो, जिनके सम्बन्ध में उस रियासत के लिए संघ व्यवस्थापिका सभा को कानून बनाने का अधिकार है, कायम रहेगा, सिवाय उस अवस्था के जबकि संघ का प्रबंध सम्बन्धी अधिकार रियासत में इस प्रकार काम में आने को हो कि संघीय कानून के द्वारा शासक के प्रबंध सम्बन्धी अधिकार का निराकरण कर दिया गया हो।"

प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया।

अब मैं मूल प्रस्ताव को सर गोपालस्वामी द्वारा संशोधित रूप में मत लेने के लिये उपस्थित करता हूं।

खण्ड 9 संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

माननीय सदस्यों को स्मरण होगा कि आरम्भ में श्री श्रीप्रकाश ने एक प्रस्ताव उपस्थित किया था और उस प्रस्ताव को तीन सदस्यों की एक समिति के सुपुर्द किया गया था कि वह प्रस्ताव का नया मसविदा तैयार करके उपस्थित करे। यह मसविदा तैयार है; यदि माननीय सदस्य उसे आज ही पास करना चाहें तो।

***अनेक माननीय सदस्य:** हां, महोदय।

***श्री श्रीप्रकाश:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

"विधान-परिषद् में उसकी रचना, चुनाव की प्रणाली तथा सदस्यता समाप्त होने के विषय में जो व्यवस्था की गयी है उसके बावजूद सम्राट की सरकार के 3 जून 1947 के वक्तव्य के अनुसार हुए तथा होने वाले सभी चुनावों को नियमानुकूल माना जायेगा और इस प्रकार चुनी गयी विधान-परिषद् सदा नियमानुकूल निर्वाचित विधान-परिषद् मानी जायेगी और उसकी अब तक जो कार्यवाही हुई है उसे भी नियमानुकूल माना जायेगा।"

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रांत और बरार : जनरल): महोदय, क्या मैं सुझाव उपस्थित कर सकता हूं कि विधान-परिषद् की नियमावली के खण्ड 68 में उठने वाली कठिनाइयों के निराकरण की व्यवस्था की गयी है। इसके अनुसार अध्यक्ष को अधिकार दिया गया है कि.........।

***अध्यक्ष:** उपस्थित कठिनाइयों को दूर करने के लिये प्रस्ताव उपस्थित किया गया है। क्या कोई इसके सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता है?

(कोई सदस्य नहीं उठा।)

तो मैं इस प्रस्ताव पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** परिषद् सोमवार 10 बजे तक के लिये स्थगित की जाती है।

तब परिषद् सोमवार, 28 जुलाई, 1947 के प्रातःकाल 10 बजे तक के लिये स्थगित हो गयी।

Con. 3. 4.11.47
750

अंक 4
संख्या 11

सोमवार
28 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1. परिचय-पत्रों की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर ...1
2. स्टीयरिंग कमेटी के मेंम्बरों का चुनाव ...1
3. संघ विधान समिति की रिपोर्ट ...1

भारतीय विधान परिषद्

सोमवार, 28 जुलाई, सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 10 बजे माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्यों ने अपने परिचय-पत्र पेश किए और रजिस्टर पर अपने हस्ताक्षर किये:

1. पण्डित चतुर्भुज पाठक (ओरछा रियासत)

2. मेजर महाराज कुमार पुष्पेन्द्रसिंह जी (पन्ना रियासत)

3. सर ज्वालाप्रसाद श्रीवास्तव (संयुक्त प्रान्त : जनरल)

स्टीयरिंग कमेटी के मेम्बरों का चुनाव

***अध्यक्ष:** सदस्यों को याद होगा कि कार्यवाहक समिति (Steering Committee) के लिये दो सदस्यों को चुना गया था। मैं सहर्ष घोषित करता हूं कि श्री रामचन्द्र मनोहर नलवदे और श्री सुरेशचन्द्र मजूमदार नियमानुसार कार्यवाहक समिति के सदस्य निर्वाचित किए गये हैं, क्योंकि दोनों रिक्त स्थानों के लिए केवल इन्हीं दोनों के निर्वाचन-पत्र प्राप्त हुए हैं।

संघ विधान-समिति की रिपोर्ट

अब हम संघ-विधान सम्बन्धी रिपोर्ट के खण्डों पर विचार करेंगे। खंड 8 पर विचार स्थगित रखा गया था।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): पहले इसके कि आज के कार्यक्रम पर विचार शुरू हो, मुझे छोटी-सी प्रार्थना करनी है। क्या मैं ऐसा कर सकता हूं? क्या आप कृपा करके यह आदेश देंगे कि यह हमारा राष्ट्रीय झण्डा इस महती सभा के प्रत्येक सदस्य को उपहार के रूप में दिया जाये और वह इसे अपनी सम्पत्ति समझकर प्रेम से सुरक्षित रखें? क्योंकि यह उस ऐतिहासिक

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री एच.वी. कामत]

अवसर की याद दिलाता है कि जब इस सभा ने सहर्ष और सर्वसम्मति से इसको स्वीकृत किया था और जबकि एक महान् स्वतन्त्र राज्य का जन्म हुआ था।

***अध्यक्षः** यह ऐसी बात है जिसमें थोड़े से विचार की आवश्यकता है। कार्यवाहक समिति के साथ परामर्श करने के पश्चात् मैं इस सम्बन्ध में वक्तव्य दूंगा।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार : मुस्लिम): मैं यह जानना चाहता हूं, क्या यह अधिवेशन पहली अगस्त को समाप्त हो रहा है? यह जानकारी इसलिए आवश्यक है कि हमको अपनी सीटों का पहले ही से प्रबन्ध करना पड़ेगा।

***अध्यक्षः** आज प्रातःकाल से मैं इस विषय पर सोच रहा हूं। हम वाक्य-खण्डों पर विचार करने में बड़ी मन्द गति से चल रहे हैं। जिस गति से हम अपना कार्य कर रहे हैं, उससे मुझे पता नहीं कि हम 31 जुलाई से पूर्व सभी वाक्य-खण्डों पर विचार-सम्बन्धी कार्य समाप्त कर सकेंगे या नहीं। मुझे स्वयं चिन्ता है कि यह अधिवेशन 31 जुलाई तक समाप्त हो जाए, ताकि सदस्य चले जाएं और फिर 15 अगस्त को वापस आ जाएं। जब वह यहां वापस आयें तो हमको अधिवेशन के लिए थोड़ा-सा समय मिल जाए, जिसमें हम संघ-विधान-समिति (Union Power Committee) और परामर्शदातृ-समिति (Advisory Committee) की रिपोर्टों और इसके अतिरिक्त कुछ और विषयों पर विचार कर सकें। जहां तक मुझे बताया गया है, मैं समझता हूं कि हम 31 जुलाई तक यह अधिवेशन समाप्त कर सकेंगे। परन्तु मैं आशा करता हूं कि सदस्य इस बात को ध्यान में रखेंगे। जहां तक सम्भव हो वाद-विवाद में वे समय कम लगाएं, पर साथ ही यह भी हो कि इस पर विचार पूर्णरूपेण हो और 31 जुलाई तक रिपोर्ट पर विचार हम समाप्त कर दें। इस प्रयोजन के लिए अभी चार दिन और हमारे हाथ में हैं।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** क्या मैं एक बात पूछ सकता हूं? क्या हम यह समझ लें कि यह अधिवेशन 31 जुलाई तक समाप्त हो ही जायेगा, चाहे Union Committee की रिपोर्ट समाप्त हो या न हो? हमको अपनी सीटों का पहले से ही प्रबन्ध करना होगा। यह अधिक उचित होगा कि निश्चित रूप से इसके लिए एक दिन नियत कर दिया जाए, चाहे कार्य समाप्त हो या न हो।

***अध्यक्ष:** मुझे जो सूचना मिली है, उसके अनुसार मैंने अभी कहा है कि 31 जुलाई इस अधिवेशन का आखिरी दिन होगा।

हमने 7 और 8 दो वाक्य-खण्डों पर वाद-विवाद स्थगित कर दिया था। क्या हम अब उनके विषय में विचार कर सकते हैं?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रास : जनरल): हम अब वाक्य-खण्ड 8 (क) पर विचार कर सकते हैं, जिसे सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने पेश किया था और जिस पर वाद-विवाद स्थगित रखा गया था।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि हमने वाक्य-खण्ड 8 स्वीकृत कर लिया है। अब हम वाक्य-खण्ड 8 (क) पर विचार करेंगे जिसे सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने पेश किया था। मुझे पता नहीं कि वह सदस्यों के सामने है या नहीं। परन्तु उसको मैं पढ़कर सुना दूंगा।

"वाक्य-खण्ड 8 के पश्चात् निम्नलिखित नया वाक्य-खण्ड रखा जाए:

'8 (क)–(1) संघीय सरकार, संघ में शामिल होने वाली किसी भारतीय रियासत से समझौता करके, पर विधान के उन आदेशों के अधीन जो भारतीय संघ तथा उस में सम्मिलित होने वाली रियासत के पारस्परिक सम्बन्ध के बारे में हो, उस रियासत के कानून-निर्माण-सम्बन्धी, शासन-प्रबन्ध-सम्बन्धी तथा न्याय-सम्बन्धी किसी भी कार्य का सम्पादन-भार स्वयं ग्रहण कर सकती है।

(2) भारतीय संघ में न सम्मिलित होने वाली किसी भारतीय रियासत से किया गया कोई भी समझौता ऐसे किसी कानून के अधीन होगा तथा उस पर ऐसा कोई कानून लागू होगा जो संघीय पार्लियामेंट के वैदेशिक अधिकार-क्षेत्र के प्रयोग के सम्बन्ध में हो।

(3) यदि ऐसे किसी समझौते के अन्तर्गत कोई ऐसा मामला आ जाता हो, जो प्रान्तीय विधान के खण्ड 8 के अनुसार किये जाने वाले एक प्रान्त और रियासत के पारस्परिक समझौते के अन्दर आता हो तो उस हालत में उक्त खण्ड 8 रद्द समझा जायेगा।

(4) उपवाक्य-खण्ड (1) के आदेशों के अधीन समझौते के सम्पन्न होने पर, संघ-समझौते की शर्तों के अधीन, कानून-निर्माण सम्बन्धी,

[अध्यक्ष]

> **शासन प्रबन्ध सम्बन्धी तथा न्याय सम्बन्धी कर्त्तव्यों को जो समझौते में निर्धारित किये गए हों, समुचित अधिकारी द्वारा प्रयोग में ला सकता है'।"**

यदि कोई सदस्य इस वाक्य-खण्ड के विषय में कुछ कहना चाहता है तो कह सकता है।

मैं अभी देखूंगा, वाक्य-खण्ड 8 (क) के सम्बन्ध में कोई संशोधन आए हैं या नहीं।

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बम्बई : जनरल): श्रीमान्, यह मौखिक (verbal) संशोधन है और वह यह है कि–प्रस्तुत खण्ड 8 (क) के उप-खण्ड 3 में जो 24-7-47 की पूरक सूची के नम्बर 5 के प्रकरण में आता है, वहां "the latter" शब्द के बाद यह सम्मिलित कर दिया जाए "to the extent it is covered by the agreement with the Federation."

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास : जनरल): मैं संशोधन स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्ष** क्या कोई और सज्जन इसके विषय में कुछ कहना चाहते हैं?

(कोई बोलने के लिए खड़ा नहीं हुआ।)

अब मैं इस संशोधन के बारे में मत लूंगा। यह सर अल्लादी द्वारा स्वीकृत हो गया है।

"प्रस्तुत खण्ड 8 (क) के उपखण्ड 3 में जो 24-7-47 पूरक सूची 1 के नम्बर 5 के प्रकरण में आता है, वहां 'the latter' शब्द के बाद यह सम्मिलित कर दिया जाये 'to the extent it is covered by the agreement with the Federation."

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं इस खण्ड Clause को संशोधित रूप में आपके आगे रखूंगा।

खण्ड संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

वाक्य-खण्ड 10

***अध्यक्षः** अब हम खण्ड 10 को लेते हैं।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): श्रीमान्, खण्ड 10 बहुत सरल है। वह यों है:

"मन्त्रियों का एक मण्डल होगा, जिसका नेता होगा प्रधान-मंत्री और यह मण्डल राष्ट्रपति को काम चलाने में सहायता और सलाह देगा।"

मैं इसे उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्षः** और कई संशोधन हैं, जिनकी मुझे सूचना मिली है। श्रीमान् पोकर साहब बहादुर अपना संशोधन उपस्थित करेंगे।

***हाजी अब्दुल सत्तार हाजी इशहाक सेठ** (मद्रास : मुस्लिम): वह चले गए हैं, परन्तु उन्होंने मुझे और दो-एक और सदस्यों को इन संशोधनों को पेश करने का अधिकार दिया है।

***अध्यक्षः** मि. अहमद इब्राहीम साहब बहादुर!

***हाजी अब्दुल सत्तार हाजी इशहाक सेठः** यह दोनों चले गए हैं। मुझे पता नहीं कि आप इस संशोधन को पेश करने की मुझे आज्ञा देंगे या नहीं।

***अध्यक्षः** कोई अन्य सदस्य इसको पेश कर सकता है। क्या आप इसको पेश करना चाहते हैं?

***हाजी अब्दुल सत्तार हाजी इशहाक सेठः** मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

"खण्ड 10 के स्थान में निम्नलिखित अंश रखा जाये:

'मंत्रियों का एक मण्डल होगा, जो राष्ट्रीय परिषद् (National Assembly) द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति से चुना जायेगा और वह मन्त्रिमण्डल राष्ट्रीय परिषद् के प्रति उत्तरदायी रहेगा।"

श्रीमान्, मैं नहीं समझता कि इस पर मुझे कोई लम्बा-चौड़ा व्याख्यान देने की आवश्यकता है। संशोधन सरल और स्पष्ट है और मुझे आशा है कि सभा इसको स्वीकार करेगी।

मैं इसे पेश करता हूं।

[हाजी अब्दुल सत्तार हाज़ी इशहाक सेठ]

(संशोधन नं. 213, 214, 215, 216 और 217 उपस्थित नहीं किए गए।)

*श्री एच.वी. पातस्कर (बम्बई : जनरल): मैंने इस संशोधन की सूचना यह स्पष्ट करने के लिए दी है कि सामूहिक उत्तरदायित्व का सिद्धान्त मन्त्रियों की सभा पर लागू होगा, जो इस वाक्य-खण्ड के अनुसार नियुक्त किए जायेंगे।

मैं संशोधन नं. 218 को पेश नहीं करना चाहता, क्योंकि सर एन. गोपालस्वामी आयंगर ने इसी तरह के एक संशोधन की सूचना दी है जो पूरक सूची में है।

पं. ठाकुरदास भार्गव (पूर्वी पंजाब : जनरल): अध्यक्ष महोदय, यह तरमीम, जिसे मैं पेश करना चाहता हूं, वह इस तरह पर है:

"कि क्लाज 10 के आखिर में यह जोड़ दिया जाये:

'The Prime Minister shall select the other Ministers and the whole ministry shall be responsible to the legislature and act on the principle of joint responsibility in the discharge of the duties of the Ministry'."

मुझे यह कहने की जरूरत नहीं है कि ओब्जेक्टिव रिज़ोल्यूशन में यह आम तय पा चुका है कि हिन्दुस्तान की यूनियन में डिमोक्रेटिक कार्य की गवर्नमेंट होगी। सवाल जो इस वक्त हल तलब है वह यह है कि आया डिमोक्रेटिक गवर्नमेंट के मेम्बर रिसपांसिबिल टाइप के होंगे या प्रेसीडेंट टाइप के, जैसा कि अमेरिका में है। जहां तक प्रोविन्सियल कांस्टीट्यूशन का सवाल है, वहां हम इस उसूल को मान चुके हैं कि सूबों में रिसपांसिबिल डिमोक्रेटिक गवर्नमेंट होगी सिवाय ज़रा से फर्क के जो गवर्नर की पावर्स के मुताल्लिक है। यूनियन गवर्नमेंट में जो उसूल माना जाना चाहिए वह यह है कि प्राइम मिनिस्टर ऐडमिनिस्ट्रेशन का पाइवाट होगा और इसको पूरे अख्तियारात हासिल होंगे और प्रेसीडेंट साहब महज़ कान्स्टीट्यूशनल हैड होंगे। कान्स्टीट्यूशनल हैड को कोई इनडिविजुअल पावर या डिस्क्रीशन नहीं दिये गये हैं। और जो कुछ प्रेसीडेंट साहब करेंगे वह मिनिस्टर साहब की ऐडवाइस पर होगा। यह एक ऐसा उसूल है जिसको एक भारी उसूल कहना चाहिए। ब्रिटिश

माडल की इस उसूल की वजह से सारी दुनिया उसकी नकल करती है और यही माडल है जिसके अन्दर एग्जीक्यूटिव पावर्स का पूरा विकास लोगों की भलाई के लिए होता है। यूनियन कमेटी ने बहुत गौर व खोज करने के बाद अमरीकन प्रेसीडेंशियल हक को पसन्द नहीं किया। इसलिए यह अमेंडमेंट एक फार्मूला-सा ब्रिटिश माडल का बन जाता है। गोकि हाउस पहले से ही कमिटेड है। लेकिन फिर भी यूनियन कान्स्टीट्यूशन में यह साफ तौर से दर्ज होना चाहिए कि प्राइम मिनिस्टर की वायस (voice) फाइनल वायस (final voice) होगी और प्रेसीडेन्ट महज़ उस पर साद करेंगे। कोई मौक़ा ऐसा नहीं होगा कि जब प्राइम मिनिस्टर की राय ठुकरा दी जाये।

दूसरी बात यह है कि प्राइम मिनिस्टर साहब को हक होगा कि वह अपने मिनिस्टर्स को पसन्द करें और कलेक्टिव रिसपांसिबिलिटी के उसूल को माना जायेगा।

मुझे इस बात पर ज्यादा जोर देने की जरूरत नहीं है और मैं अर्ज करूंगा कि यह उसूली तीनों तरमीमें जो पेश की गयी हैं वह कबूल कर ली जायें और पास की जायें।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, मेरा संशोधन पं. ठाकुरदास भार्गव के संशोधन के अन्तर्गत आ जाता है। इस कारण मैं अपने संशोधन को पेश नहीं करना चाहता।

***काजी सैयद करीमुद्दीन** (मध्य प्रान्त और बरार : मुस्लिम): श्रीमान्, मेरा संशोधन इस प्रकार है किः

"वाक्य-खण्ड 10 के अन्त में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जाए:

'भारतीय संघ की शासन-प्रबन्ध सभा अपरिषदात्मक (non-parliamentary) होगी, इस अर्थ में कि व्यवस्थापिका सभा के कार्यकाल के पहले वह नहीं हटाई जायेगी। पर मन्त्रिमण्डल अथवा मंत्रिमण्डलों के सदस्यों को भ्रष्टाचार अथवा राजद्रोह या छल के अपराध के कारण न्यायालय के समक्ष सार्वजनिक दोषारोपण करके हटाया जा सकता है। प्रधान मंत्री समूची सभा द्वारा एकाकी हस्तान्तरित

[काजी सैयद करीमुद्दीन]

मत-पद्धति से चुना जायेगा। मन्त्रिमण्डल के अन्य मन्त्री एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति से चुने जायेंगे'।"

श्रीमान्, इस प्रश्न के सम्बन्ध में प्रान्तीय समिति (Provincial Committee) की सिफारिशों को स्वीकार करने के समय वाद-विवाद हुआ था, परन्तु जबकि हम संघ-विधान पर विचार कर रहे हैं तो वह निर्णय यहां लागू नहीं है। मेरी प्रार्थना है कि सन् 1935 के कानून (Act) के अनुसार भारत में जो परिषदात्मक पद्धति चल रही है, वह जहां तक स्थानीय स्वराज्य, स्थानीय बोर्ड या म्युनिसिपैलिटियों का सम्बन्ध है, बुरी तरह नाकाम रही हैं। आपने देखा होगा कि सारे भारत में गतिरोध होते रहे हैं और जैसा कि मुस्लिम लीग के योग्य नेता ने कहा था--यह पद्धति जनता की चित्तवृति के अनुकूल नहीं है। प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओं में कुछ सफलता हुई, क्योंकि उस समय कांग्रेस अंग्रेजों से लड़ रही थी और सारे विरोधी दलों ने इस पद्धति को मान लिया था। पाकिस्तान की स्थापना मुस्लिम लीग का उद्देश्य था, बहुत से मुस्लिम सदस्य मुस्लिम लीग के टिकट पर चुने गए थे, परन्तु अंग्रेजी राज्य के समाप्त हो जाने पर, यदि जनता को स्वतन्त्र करने के कोई साधन नहीं होंगे और मुस्लिम लीग को पाकिस्तान प्राप्त हो जायेगा तो भारत में दलों और गुटों की रेल-पेल हो जायेगी। साम्यवादी, समाजवादी, लीग वाले और बहुत से दूसरे प्रकट हो जायेंगे। वह बहुमत, जो भूतकाल में मिलता रहा है, बिल्कुल असम्भव हो जायेगा। बहुत से दल प्रकट हो जायेंगे और यह आशा करना कि हमारी सरकार की ठोस और पक्की स्थिरता होगी, यह कोरी कल्पना मात्र है। हमने भूतकाल में देख लिया है कि प्रांतों में प्रांतीय विधान को कार्यान्वित करने में विपक्षी दल की अवहेलना और उपेक्षा की गई थी और समय-समय पर उन्हें दण्ड भी दिया गया। हमने यह भी देख लिया है कि जो परिषदात्मक प्रथा आजकल चल रही है, उसने पक्षपात का मार्ग खोल दिया है, जिससे उन्हीं लोगों को लाभ होता है जो मंत्रिमण्डल का समर्थन करते हों। मन्त्री लोग अपने दल के सदस्यों की सेवा अधिक करते थे और जनता की कम। मन्त्री अपने राष्ट्र का तुच्छ सेवक नहीं था बल्कि वह उनका सेवक था जो उसके मन्त्रित्व का समर्थन करते थे। इसी कारण मैं कहता हूं कि यह कार्य-पद्धति भूतकाल में सफल नहीं हुई। इस समय जब भारत स्वतन्त्रता के उच्च उद्देश्य को प्राप्त कर रहा है, हम अपने चारों ओर अग्नि-काण्ड, हत्या-काण्ड और लूट-मार ही देखते हैं। यह

क्यों? इसका यही कारण है कि हमारी दुर्बल शासन-प्रबन्ध-सभा उन मन्त्रियों से बनी है, जिनकी सत्ता ऐसे लोगों पर निर्भर है जो जातीय भेद और तनातनी को चाहते हैं। हर एक पुरुष पं. जवाहरलाल नेहरू नहीं है। पंडित जवाहरलाल नेहरू जब बिहार गए थे तो उन्होंने घोषणा की थी कि बिहार निवासियों पर गोले फेंके जायेंगे यदि उन्होंने यह लड़ाई-झगड़े जारी रखे। इसके बरखिलाफ़ सारे भारत में एक भी हिन्दू या मुस्लिम मन्त्री नहीं था, जिसने यह रुख अपनाया हो। कंकर-पत्थर बहुत हैं, पर हीरा दुर्लभ है। हमको आज आवश्यकता है एक दृढ़ और स्थिर शासन की, एक देशहितैषी शासन-व्यवस्था की। हमको आज एक मज़बूत सरकार की आवश्यकता है, जो निष्पक्ष और निर्भय हो और जो जनता की सनक के आगे सिर न झुकाए। सब प्रांतों में हमारे मन्त्रि-वर्ग आज निर्बल और डावांडोल हैं, जो अपने दल के सदस्यों की इच्छा के अनुकूल चलते हैं और उनको-जिनके बल पर वह वहां उपस्थित हैं—अप्रसन्न करना उनके लिए असम्भव हो जाता है। यह कहा जाता है कि शासन की परिषदात्मक प्रथा लोकतन्त्रीय (Democratic) शासन-प्रणाली है। अमरीका लोकतन्त्रीय देश है और शासन-विधान-जो वहां चालू है—वह भी लोकतन्त्रीय है। हम देखते हैं कि वहां की शासन-प्रबन्ध-सभा अपरिषदात्मक है और देश की सारी शासन पद्धति तीन भागों में बांटी गई है। एक न्याय-विभाग (Judiciary), दूसरा शासन-प्रबन्ध विभाग और तीसरा कानून निर्माण-विभाग। शासन-प्रबन्ध के लिए यह नामुमकिन हो जाता है कि वह कानून निर्माताओं की नीति की अवहेलना करे और उधर न्याय-विभाग (Judiciary) है, जो शासन-प्रबन्ध की ज्यादती रोकता है। ऐसी दशा में जबकि चारों ओर जातीय तनातनी चल रही है और देश में अनेक भेद उत्पन्न करने वाली शक्तियां मौजूद हैं, कोई दूसरा मार्ग ही नहीं है, सिवाय इसके कि एक ऐसी शासन-प्रबन्ध-सभा हो जिसको व्यवस्थापिका न हटा सके। अभी उस दिन जबकि प्रांतीय विधान पर विचार करते समय एक संशोधन उपस्थित किया गया था, उस समय डाक्टर पट्टाभि ने—यद्यपि भावावेश में बोले, तो भी—उच्च दृष्टिकोण से यह बताना चाहा था कि अपरिषदात्मक शासन-प्रबन्ध-व्यवस्था भारतीय स्थिति के अनुकूल नहीं है। पर उसके बदले में उन्होंने भारत में पृथक चुनाव के सम्बन्ध में चर्चा की। वह साम्प्रदायिक निर्णय (Communal Award) के सम्बन्ध में बोले, जिसका कोई प्रसंग न था। अमरीका में साम्प्रदायिक प्रश्न नहीं है, तो भी वहां अपरिषदात्मक शासन-प्रबन्ध-व्यवस्था स्वीकृत की गई है। इस देश में अनेक धर्म हैं, अनेक धारणायें हैं और नाना

[काजी सैयद करीमुद्दीन]

संस्कृतियां हैं। भारत के इतिहास के इस संकटपूर्ण समय में जब हम आन्तरिक झगड़ा नहीं चाहते और जब हम ऐसी प्रबल शासन-पद्धति चाहते हैं, जो उपद्रवों को शान्त करने में समर्थ हो, तो यह आवश्यक है कि अन्तरिम-काल में एक ऐसी परिषदात्मक शासन-प्रबन्ध-सभा हो जो हटाई न जा सके। भारत की जनता की मुक्ति इसीमें है। न इसमें पक्षपात होगा, न कोई अपने सम्बन्धियों पर अनुचित अनुग्रह कर सकेगा। अब मैं सभा से प्रार्थना करूंगा कि वह संशोधन को स्वीकृत करे।

***श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया** (मैसूर)**:** श्रीमान्, मेरा संशोधन इस आशय का है कि–"ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये जिससे मन्त्रिमण्डल में रियासतों को यथेष्ट प्रतिनिधित्व प्राप्त हो।" मैं इससे अधिक नहीं कहना चाहता कि इस संशोधन में जो बात कही गई, उस पर उस समय कृपया विचार किया जाए जबकि मन्त्रिमण्डल की वस्तुतः रचना होने लगे। मैं इस पर जोर देना नहीं चाहता।

***अध्यक्षः** श्रीमान् गोकुल भाई भट्ट!

***श्री गोकुलभाई डी. भट्ट** (राजपूताना स्टेट समूह)**:** अध्यक्ष महोदय, 20वीं धारा में यह कहा गया है कि कौंसिल आफ मिनिस्टर्स होगी और उसके बड़े वज़ीर भी होंगे। लेकिन उसमें यह नहीं कहा गया है कि मंत्रिमण्डल किस तरह से चुना जायेगा या पसन्द किया जायेगा। मंत्रिमंडल में मंत्री पार्लियामेंट के सदस्य होंगे या न होंगे, उनके पार्लियामेंट के सदस्य बनने में कौन-कौनसी धाराएं लागू होंगी, उनकी तनख्वाह कितनी होनी चाहिए और उस तनख्वाह में रद्दोबदल हो सकता है या नहीं; इन सब बातों के बारे में यहां कोई ज़िक्र नहीं किया गया है। मैं यह कहता था कि हमारे प्रान्तीय विधान के मस्विदे में इसके बार में साफ़तौर पर बतला दिया गया है कि ये सब बातें इस रीति से की जायेंगी। यहां भी अगर यह सब बतला दिया जाता तो बहुत अच्छा होता। लेकिन हमारे विधान-विशारद और कानून जानने वाले यह कहते हैं कि यह यूनियन की बात है, सेन्टर की बात है। इसको ज्यादा लम्बा-चौड़ा लिखने से फायदा नहीं होगा। जब वह ड्राफ्ट किया जायेगा और सब बातें सामने आयेंगी तो सब कुछ साफ़ हो जायेगा। मैं ज़रूर यह मानता हूं कि मंत्रिमण्डल किस रीति से चुना जाना चाहिए, उसके बारे में ज़रूर ज़िक्र होना चाहिए। लेकिन उनका आश्वासन मिल गया है कि यह सब चीज़ें

जैसा कि प्रान्तीय विधान में रखी गयीं हैं उसके मुआफ़िक होंगी। इस आशा से और उनकी इस राय और सलाह से कि यह संशोधन न रखा जाये, मैं यह संशोधन नहीं रखना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** श्री गुप्ते!

(कोई उत्तर नहीं।)

सर एन. गोपालस्वामी आयंगर!

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, यह वाक्यखण्ड, जैसा कि इसका वर्त्तमान स्वरूप है, इस विषय में कुछ नहीं बताता कि मंत्रिमण्डल कैसे चुना जायेगा और न यह बताता है कि कानून निर्माताओं के प्रति उसका उत्तरदायित्व किस प्रकार का होगा। इस विषय में अनेक संशोधन किए गए हैं, ताकि इन विषयों से सम्बन्ध रखने वाली सब आवश्यक बातें इनमें शामिल हो जाएं। इसी कारण मैंने इस संशोधन की सूचना दी है कि वाक्य-खण्ड 10 के अन्त में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जाएः

"प्रधान मंत्री राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जायेगा और दूसरे मंत्रियों को राष्ट्रपति प्रधान-मंत्री की सलाह से नियुक्त करेंगे। मंत्रिमण्डल लोकसभा (House of People) के समक्ष सामूहिक रूप से उत्तरदायी होगा।"

इस संशोधन के अन्तर्गत आने वाली बातों को बताने के लिए मुझे बहुत थोड़ा ही कहना है, मन्त्रिमण्डल को बनाने के लिए राष्ट्रपति प्रधान मन्त्री को बुलावा देंगे। स्वाभाविक है कि परम्परा के अनुसार राष्ट्रपति उसी दल के नेता को बुलायेगा जो दल स्वयं या सभा में और दलों की सहायता से जोरदार बहुमत रखता होगा। दूसरे मन्त्रियों को राष्ट्रपति प्रधान मन्त्री की सलाह से चुनेंगे। नीचे वाली सभा (Lower House) यानी लोकसभा (House of People) के प्रति मन्त्रिमण्डल उत्तरदायी हो, इसकी व्यवस्था की जायेगी। साधारणतः उसी सभा यानी निचली सभा के सामने ही मन्त्रिमण्डल उत्तरदायी होता है, न कि समूची पार्लियामेंट के समक्ष। मैं देखता हूं कि एक संशोधन में यह कहा गया है कि उत्तरदायित्व पृथक और सम्मिलित दोनों प्रकार का हो। मेरा यह विचार नहीं है कि राज्य को उस प्रथा की नकल करनी चाहिए, जो प्रायः साधारण-जन और बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स के

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

बीच में प्रचलित है। मेरी समझ से इतना काफी है कि हम यह व्यवस्था कर दें कि मन्त्रिमण्डल सामूहिक रूप से निचली सभा के सामने उत्तरदायी होगा। इन शब्दों के साथ मैं यह संशोधन पेश करता हूं।

*__अध्यक्षः__ श्री मोहनलाल सक्सेना!

(कोई उत्तर नहीं।)

यही वह संशोधन हैं जिनकी मुझे सूचना मिली है। खण्ड और संशोधन पर वाद-विवाद हो सकता है।

*__मि. तजम्मुल हुसैनः__ श्रीमान्, खण्ड 10 कहता है कि एक मन्त्रिमंडल होगा और प्रधान मंत्री उसका नेता होगा और यह मण्डल राष्ट्रपति को उसके कार्य चलाने में सहायता और परामर्श देगा। श्रीमान्, इस खण्ड में इस बात का उल्लेख नहीं किया गया है कि मन्त्रिमण्डल किस प्रकार बनाया जाए। इस कारण श्रीमान्, एक संशोधन आगे रखा गया है और वह यह है कि हर एक मन्त्री व्यवस्थापिका (Assembly) द्वारा चुना जायेगा और मंत्रियों का यह चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति से होगा, और यह मन्त्रिमंडल व्यवस्थापिका के समक्ष उत्तरदायी होगा। श्रीमान्, अब हम इस संशोधन को दो भागों में बांट सकते हैं। पहला भाग तो यह है कि मन्त्री सभा से चुने जाएं और दूसरा भाग यह है कि मन्त्रिमण्डल व्यवस्थापिका के समक्ष उत्तरदायी रहेगा। दूसरे भाग के विषय में मैं पूर्णतया सहमत हूं, यदि मन्त्रिमण्डल के पीछे बहुमत नहीं होगा तो वह अपने पद पर स्थित नहीं रहेंगे, और यदि उनके विरुद्ध अविश्वास का वोट पास हुआ तो भी उनको अपना पद छोड़ना पड़ेगा। इस कारण संशोधन के इस भाग की मैं प्रशंसा करता हूं। परन्तु दूसरे भाग के विषय में--जिसमें यह कहा गया है कि मंत्रियों का चुनाव व्यवस्थापिका (Assembly) करेगी--मुझे भय है कि मैं उससे सहमत नहीं हो सकता। यदि मन्त्रिमण्डल व्यवस्थापिका के सदस्यों द्वारा चुना जाए और वह चुनाव यदि आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति से हो तो ऐसी परिस्थिति में क्या होगा? हो सकता है कि एक छोटा दल हो और वह आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति से चुनाव हो तो वह छोटा दल अपना एक मंत्री चुनने में सफल हो जाए। श्रीमान्, और उस अल्पसंख्यक

दल के वैसे ही राजनैतिक विचार न हों जैसे कि बहुसंख्यक दल के हों, तो ऐसी परिस्थिति में मन्त्रिमण्डल में जो मन्त्री होंगे उनके भाव और विचार पृथक-पृथक दो प्रकार के होंगे। अब श्रीमान्, यदि ऐसा हो तो मन्त्रिमण्डल में एक मत से कार्य नहीं चलेगा और वह मन्त्रिमण्डल स्थिर नहीं कहा जा सकेगा। हमने अच्छी प्रकार देख लिया है कि अंग्रेज़ी प्रथा इंग्लैण्ड में शताब्दियों से चालू है और इसके द्वारा सफलता से कार्य होता रहा है। इंग्लैण्ड में क्या होता है? राज्य का नायक अर्थात् राजा नेता को आमंत्रित करता है और वही नेता प्रधान मंत्री नियुक्त किया जाता है। वह प्रधान मंत्री दूसरे मंत्रियों के नाम बताता है। राज्य का नायक अर्थात् राजा प्रधानमंत्री से सलाह करके और सब मंत्रियों को नियुक्त करता है। ऐसी परिस्थिति में मंत्रिमंडल स्थिर रहता है, क्योंकि जब सभा में प्रधान मंत्री का बहुमत रहता है तो वह कार्य संचालन कर सकता है, अन्यथा नहीं। परन्तु मैं यह अच्छा नहीं समझूंगा कि मंत्रिमण्डल में दो भिन्न विचार-ध राओं के मन्त्री हों।

श्रीमान्, अब एक दूसरा संशोधन इस आशय का है कि संघ (Union) की शासन-प्रबन्ध-समिति अपरिषदात्मक होगी और वह हटाई भी नहीं जा सकेगी। परन्तु मन्त्रिमण्डल के सदस्य को भ्रष्टाचार आदि के कारण न्यायालय के समक्ष सार्वजनिक दोषारोपण से हटाया जा सकता है। और संशोधन में यह बात भी है कि प्रधान मंत्री एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति के आधार पर सारी सभा द्वारा चुना जायेगा, जब कि दूसरे सारे मंत्री एकाकी अहस्तान्तरित मत-पद्धति से चुने जायेंगे।

यह संशोधन भी चार भागों में बांटा जा सकता है। पहला भाग यह है कि मन्त्रिमण्डल अपरिषदात्मक होगा और वह हटाया भी न जा सकेगा। अपरिषदात्मक मन्त्रिमण्डल को मैं नहीं पसन्द कर सकता। यह बात प्रजातन्त्रीय सिद्धान्त के विरुद्ध सी प्रतीत होती है। यदि सभा मन्त्रिमण्डल में विश्वास नहीं करती, तो उसे मन्त्रिमण्डल को हटा देना चाहिए। ऐसा मन्त्रिमण्डल एक क्षण भी नहीं टिकना चाहिए, जिसमें सभा को विश्वास नहीं है।

दूसरा भाग यह है कि मन्त्री लोग न्यायालय के समक्ष सार्वजनिक दोषारोपण से हटाये जा सकते हैं। यह बात मैं पसन्द नहीं कर सकता। यदि किसी मंत्री में सभा का विश्वास नहीं है और उसके विरुद्ध कोई अभियोग है, तो इस अभियोग को व्यवस्थापिका सभा के आगे लाकर उस मंत्री को हटा दिया जाए। उसको

[मि. तजम्मुल हुसैन]

न्यायालय में क्यों घसीटा जाए? मैं नहीं समझ सकता कि यह सिद्धान्त हमारे जैसे लोकतन्त्रीय देश में किस प्रकार कार्यान्वित किया जा सकता है?

और तीसरा भाग यह है कि सारी सभा को एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति से प्रधानमन्त्री को चुनना चाहिए। मन्त्रिमण्डल के अन्य मन्त्री एकाकी अहस्तान्तरित मत-पद्धति से चुने जाएं। मैं नहीं समझता कि इस व्यवस्था में माननीय प्रस्तावक महोदय क्या हित देखते हैं? यदि सारी सभा एक पुरुष को चुने तो वही पुरुष चुना जायेगा, जिसके पक्ष में बहुसंख्यक सदस्य होंगे। कल्पना कीजिए कि सभा में 150 सदस्य हैं और उसमें एक वर्ग है--वह प्राचीन कांग्रेस या प्राचीन लीग नहीं है, क्योंकि हिन्दुस्तान में अब ये न होंगे। अब दलों का निर्माण भिन्न आधार पर होगा--खैर उस सभा में जो वर्ग है वह समझ लीजिए कि वह समाजवादी वर्ग है और उसकी संख्या 100 है और विरोधी दल की संख्या 50 है।

*__काज़ी सैयद करीमुद्दीनः__ श्रीमान्, पूजनीय सदस्य को यह कैसे मालूम हुआ कि यहां लीग या कांग्रेस दल नहीं होगा?

*__श्री तजम्मुल हुसैनः__ मुझे प्रसन्नता हुई कि मुझसे यह प्रश्न पूछा गया है। श्रीमान्, ऐसे दल अब सभा में नहीं होने चाहिएं। पूर्ण स्वतन्त्रता ही प्राप्त करना कांग्रेस का उद्देश्य था जिसमें कोई विदेशीय प्रभाव न रहे और उसने यह स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली। कांग्रेस को अपने मनोरथ की प्राप्ति हो गई। लीग का उद्देश्य देश का बंटवारा और पाकिस्तान की प्राप्ति थी और लीग को वह प्राप्त हो गया। दोनों वर्गों ने अपने अपने उद्देश्य को प्राप्त कर लिया और उनका कार्य समाप्त हो गया। जो कांग्रेस चाहती थी वह कांग्रेस को प्राप्त हो गया और जो लीग चाहती थी, उसकी लीग को प्राप्ति हो गई। अब दोनों वर्गों में कोई भेद नहीं है। हम सब भारत में रहते हैं और भारतीय हैं। लेकिन, हमारे अधिकारों की रक्षा अवश्य होनी चाहिए।

*__अध्यक्षः__ माननीय सदस्य को अपने विषय के अन्दर ही रहना चाहिए। कांग्रेस और लीग के भविष्य पर सभा में विचार नहीं हो रहा है।

*__श्री तजम्मुल हुसैनः__ माननीय प्रस्तावक महोदय ने मुझसे यह बताने के लिए कहा कि मैंने ऐसा क्यों कहा कि अब न लीग रहेगी और न कांग्रेस। मेरा विचार

था कि यह बताने के लिए आपकी आज्ञा है, परन्तु अब आप आज्ञा नहीं देते। इस कारण मैं अब इस विषय के सम्बन्ध मे कुछ अधिक नहीं कहूंगा। मैं केवल इतना ही कहूंगा कि इन दोनों दलों की सत्ता पुराने रूप में कायम नहीं रहेगी, क्योंकि कांग्रेस और लीग दोनों ने अपने-अपने उद्देश्य प्राप्त कर लिए हैं। दोनों दल अब नए-नए विचारों की भित्ति पर खड़े होंगे।

मैं यह कह रहा था कि फर्ज़ करो कि सभा में 150 सदस्य हैं, जिसमें एक दल के 100 सदस्य हैं। वही दल अपने नेता को चुनेगा और वह प्रधान मंत्री होगा। फर्ज़ करो कि दो उम्मीदवार हैं और इनमें जो सफल होता है वह 60 वोटें प्राप्त करता है और शेष 40 उसका विरोध करते हैं, तो भी वह प्रधानमंत्री बन ही जाता है। परन्तु, यदि विरोधी दल के 40 सदस्य शेष 50 सदस्यों से सभा में मिल जाएं, तो फिर क्या फल होगा? उस परिस्थिति में सभा में 60 के विरुद्ध 90 सदस्य हो जायेंगे। फिर वह नेता, जिसकी ओर सभा में अधिक संख्या में भी सदस्य हों, चुना नहीं जायेगा। ऐसी परिस्थिति में यह सम्भव है कि वह पुरुष, जो अन्त में प्रधानमंत्री बनता है, विरोधी वर्गों का पुरुष हो। यह लोकतन्त्रीय सिद्धान्त के विरुद्ध है और यह उस अंग्रेज़ी लोकतन्त्रीय प्रथा के भी प्रतिकूल होगा, जिसकी मैं प्रशंसा करता हूं। मेरा विचार है कि जहां तक सम्भव हो, हमको अधिकतर अंग्रेजी विधान अपनाना चाहिये जिससे भारत का लाभ हो।

मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं। अंत में मुझे यह कहना है कि एक और संशोधन है जिसे सर एन. गोपालस्वामी आयंगर ने पेश किया है और जो पंडित भार्गव के संशोधन के समान है। उसका प्रयोजन भी मन्त्रियों का चुनना और प्रधान मंत्री को नियुक्त करना है। यह इस प्रकार है कि राष्ट्रपति प्रधानमन्त्री को नियुक्त करें और राष्ट्रपति ही प्रधानमंत्री की सलाह से दूसरे मंत्रियों को नियुक्त करें। इसके अतिरिक्त मन्त्रिमण्डल समस्त सभा के सामने उत्तरदायी होगा। यही प्रथा है जो विलायत की लोक सभा में प्रचलित् है। मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं। मैंने कहा है कि इंग्लैण्ड में इस प्रथा ने बहुत अच्छा काम किया है और कोई कारण नहीं कि हमारे देश में भी यह प्रथा सफल न हो। मैं पंडित भार्गव के भी संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, यह खण्ड हमारे भारतीय संघ की शासन-प्रबन्ध सभा का आधार बताता है। संशोधन एक नम्बर 212 और दूसरा नम्बर 221 इस खण्ड के सम्बन्ध में रखे गए हैं और इससे हमारी राष्ट्रीय शासन-प्रबन्ध-सभा निर्बल

[श्री एच.वी. कामत]

होती है। मेरे मित्र श्री क़ाजी और श्री हुसैन ने अमरीका और इंग्लैण्ड के नमूनों की प्रशंसा की है। इस अवसर पर श्रीमान्, हमारा किसी भी पद्धति या प्रथा से, जिसको हम अपने विधान में सम्मिलित करना चाहते हैं, कोई प्रयोजन नहीं है; चाहे वह प्रथा या पद्धति इंग्लैण्ड, अमरीका, रूस, तुर्की या फ्रान्स या किसी और देश की हो। इस समय श्रीमान्, हमको एक ऐसा लोकतन्त्रीय शासन चाहिए जो समर्थ और गतिशील हो। हमें ऐसे ही योग्य और गतिशील शासन की आवश्यकता है, जो हमको उस गड़बड़ी से बाहर निकाल दे, जो हमारे देश में फैली हुई है और जो हमारे इस देश को उस दलदल से--जिसमें यह फंसा हुआ है--निकाल दे। समर्थ और गतिशील लोकतन्त्रीय शासन का सबसे पहला और मौलिक सिद्धान्त, मेरी राय में यह है कि हर एक राजनैतिक विचार-धारा को व्यवस्थापिका में प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए, क्योंकि व्यवस्थापिका सभा में एक पुरुष की अपेक्षा दो पुरुष अधिक अच्छे हैं। और दो से बीस, बीस से दो सौ अच्छे हैं। परन्तु, इसके विरुद्ध शासन-प्रबन्ध-सभा के विषय में, विशेषकर जब हम एक समर्थ और गतिशील प्रबन्ध-सभा बनाने चले हैं, तो यह नियम चालू नहीं हो सकता। यहां श्रीमान्, शासन-प्रबन्ध-सभा के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि दो सौ से बीस पुरुष सदस्य अच्छे हैं, बीस से दो, और संकट के समय तो दो से एक पुरुष ही कहीं अच्छा है। संकट के समय जब फौरन ही निर्णय करना होता है और फौरन ही कार्य करना पड़ता है, उस समय गतिशील शक्ति की आवश्यकता होती है। और ऐसे समय में दो पुरुष से एक ही बहुत अच्छा है। परन्तु, ये संशोधन शासन-प्रबन्ध-सभा की नींव को कमज़ोर कर देंगे और वास्तव में उसको निष्क्रिय, अस्थायी और गतिहीन बना देंगे और जो कार्य हमारे सामने है उसका सामना करने में वह असमर्थ रहेगी। वास्तव में मन्त्रिमण्डल और शासन-प्रबन्ध-सभा शिव जी की बरात या अजायब घर या कोई खिचड़ी नहीं है, परन्तु वह है मंत्रिमण्डल-जिसे हम वस्तुतः शक्तिशाली बनाना चाहते हैं। यहां इस स्थान में मेरे मित्र क़ाजी ने पंडित नेहरू, जिन्होंने बिहार में जो काम किया है, उसके लिए उनकी प्रशंसा की है। श्रीमान्, मैं चाहता हूं कि हममें से बहुत से लोग मुस्लिम लीग के नेताओं की भी प्रशंसा कर पाते जब कि ऐसी या इससे भी अधिक क्रूर घटनाएं बंगाल और भारत के दूसरे भागों में हुईं। यह अच्छी प्रकार मालूम है कि जब यह अत्याचार पूर्वी बंगाल और भारत के दूसरे भागों में हो रहे थे, जबकि मनुष्य काटे जा रहे

थे, स्त्रियों के साथ बलात्कार हो रहा था, बालक अग्नि में जलाये जा रहे थे, उस समय किसी भी मुस्लिम लीग नेता ने अपनी आवाज न उठाई और न कोई मुस्लिम लीग का नेता उन स्थानों में गया और न पंडित नेहरू के समान कार्य किया। क्या यही रीति है, जिसके बल पर हम बलवान और अखण्ड भारत की नींव डालेंगे? क्या यही आत्मिक बल है, जो भविष्य में हमको प्रोत्साहन देगा? कल ही मैंने मुस्लिम लीग के सर्वोच्च नेता का लेख पढ़ा, जिसमें उन्होंने पाकिस्तान और मुस्लिम भारत का उल्लेख किया था। मुझको तो आशा थी कि पाकिस्तान और भारत में बंटवारा होने के पश्चात् विरोध-भाव दूर हो जायेगा। परन्तु, वही विरोध-भाव अब भी मुस्लिम लीग में देखा जाता है और वह भाव अब तक शान्त नहीं हुआ है। जनता पाकिस्तान और शेष भारत के विषय में ही विचारते...

***अध्यक्षः** माननीय सदस्य को अपने विषय के अन्दर ही रहना चाहिए।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं इस बात को समझाने का यत्न कर रहा था कि आज जिस बात की आवश्यकता है वह एकता, कर्म, बलिदान और श्रद्धा का अटल भाव है। विश्व कवि रवीन्द्रनाथ का सुन्दर स्वप्न, जिसको उन्होंने अनुपम सुन्दर शब्दों में चित्रित किया है, हमको कभी भी नहीं भूलना चाहिए। वह स्वप्न भविष्य में हमको प्रोत्साहित करे और हमारा पथप्रदर्शक हो, ताकि हम सब प्राचीन भारत के समान प्रशंसनीय भारत बना सकें और अपने त्यागमूर्तियों के त्याग के आधार पर भारत को सर्वोच्च कर सकें। श्रीमान्, आप मुझे आज्ञा दें ताकि वह शब्द, जिनमें उस सुन्दर स्वप्न का चित्र खींचा गया है, आपके सामने उद्धृत करूं:

"जहां मन निर्भय और सिर ऊंचा रहता है, जहां ज्ञान अज्ञान के अन्धकार से मुक्त होता है, जहां संसार स्वार्थ की तंग भित्तियों से टुकड़ों-टुकड़ों में बंटा नहीं होता, जहां शब्द सत्यता के गर्भ से निकलते हैं, जहां परिश्रम सदैव पूर्णता की ओर चलता रहता है, जहां ज्ञान की निर्मल नदी बनरूपी रीति-रिवाज़ के रेत में लुप्त नहीं होती, जहां मन विशाल विचार और कर्म की और बढ़ा चला जाता है, हे मेरे पिता, उसी स्वतन्त्रता के स्वर्ग में मेरे देश को जागृत कर दे।"

जय हिन्द!

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि पंडित जवाहरलाल नेहरू कुछ संशोधनों को स्वीकृत करना पसन्द करेंगे। यदि यह बात है, तो इससे वाद-विवाद कुछ संक्षिप्त हो सकता

[अध्यक्ष]

है। इससे पहले कि वाद-विवाद अधिक बढ़े, मेरी इच्छा है कि वह अपना बयान दें।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू:** मैं बीच में हस्तक्षेप करने का साहस करता हूं, ताकि यह बात मालूम हो जाए कि मैं कौन सा संशोधन स्वीकार करने के लिये तैयार हूं और कौन नहीं। चार संशोधन प्रस्तावित किए गए हैं। मैं आदि ही में यह कह सकता हूं कि मैं सर गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन को स्वीकार करने के लिए तैयार हूं, और दूसरों के नहीं। पंडित भार्गव का संशोधन थोड़ा-बहुत वैसा ही है, केवल शब्दों में भेद है। दूसरे संशोधनों में बिल्कुल ही भिन्न प्रश्न उठाए गए हैं। उदाहरण के लिए, आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर मन्त्रियों के चुनाव को लीजिए। मेरे विचार में इससे बढ़कर मन्त्रिमंडल और सरकार को निर्बल बनाने वाली और कोई बात नहीं हो सकती। इस कारण मैं चाहूंगा कि सभा इस संशोधन को अस्वीकार कर दे।

दूसरे संशोधन में एक बिल्कुल नई बात उठाई गई है। वह यह कि विधान किस प्रकार का होना चाहिए। उदाहरण के लिए श्री करीमुद्दीन का संशोधन कहता है कि--"संघ की शासन प्रबन्ध-सभा अपरिषदात्मक होगी, इस अर्थ में कि व्यवस्थापिका के कार्य-काल से पहले वह नहीं हटाई जायेगी।" यह बात एक बहुत मौलिक प्रश्न खड़ा करती है और वह यह कि हम अपना विधान किस प्रकार का बनायेंगे? परिषदात्मक मन्त्रिमंडल अथवा अमरीका के ढंग का? अब तक हम वही, वैसा ही विधान बनाने में लगे रहे हैं, जिसमें मन्त्रिमंडल प्रधान है, और मैं यह कह सकता हूं कि हम उससे नहीं फिर सकते; क्योंकि ऐसा करने पर विधान का ढांचा उलट-पुलट हो जायेगा। इस कारण मुझे शोक है कि मैं मि. करीमुद्दीन या पोकर साहब का संशोधन स्वीकार नहीं कर सकता।

यह सच है कि जो असली मस्विदा मैंने सभा के सामने रखा था, वह बहुत से अंशों में स्पष्ट नहीं था। वह इस कारण स्पष्ट नहीं था कि उसे अन्तिम रूप से अपनाने का कोई इरादा नहीं था। अपने भावी मस्विदे के लिए ये चन्द संकेत थे और इसमें अवश्य ही कुछ बातें हैं जो पहले ही तय मान ली गई थीं। यह बात पहले ही मान ली गई थी कि राष्ट्रपति प्रधानमंत्री को आमन्त्रित करेगा, क्योंकि वह सभा में सबसे बड़े दल का प्रतिनिधि होगा और यह बात भी तय समझ ली गई थी कि प्रधान मन्त्री अपने मन्त्रियों को चुनेगा और वे सबके सब

व्यवस्थापिका के समक्ष उत्तरदायी होंगे। ये सब बातें पहले ही तय समझ ली गई थीं। परन्तु, यह कह देना ठीक होगा कि सर गोपालस्वामी आयंगर का संशोधन इस बात को बिल्कुल स्पष्ट कर देता है। इसलिए वह संशोधन मैं स्वीकार करता हूं और मुझे आशा है कि सभा भी उसको स्वीकार करेगी और दूसरे संशोधनों को नामंजूर कर देगी।

*__माननीय श्री हुसैन इमाम__ (बिहार : मुस्लिम): श्रीमान्, इस वाद-विवाद में हस्तक्षेप करने का मेरा कोई विचार नहीं था; क्योंकि इस वाद-विवाद का विषय यह था कि––शासन-प्रबन्ध-सभा परिषदात्मक हो या अपरिषदात्मक (Parliamentary or non-Parliamentary) और यह सिर्फ बहस की बात है, परन्तु यह व्यावहारिक राजनीति नहीं है। क्योंकि, इस समय भारत में अंग्रेजी आदर्श की ओर ही सबका झुकाव है। अमरीका की राज्य-प्रणाली को यहां लागू करने की चेष्टा करना या उसका गुणगान करना व्यर्थ है। विधान बनाए जाते हैं, थोड़े ही काल के लिये; यद्यपि उसमें चिरता या स्थिरता का एक तत्त्व अवश्य रहता है। मैं उस समय तक जीने की आशा करता हूं कि जब मैं अंग्रेजी शासन-आदर्श का नाश देख लूं; अंग्रेजी प्रभाव समाप्त हो रहा है और उसके स्थान में एक अच्छी शासन-व्यवस्था ग्रहण कर ली जानी चाहिए। परन्तु, श्री कामठ के व्याख्यान के कारण मुझको विवश होकर यहां आना पड़ा। मि. काज़ी ने, बिहार में जो पण्डित नेहरू ने काम किया, उसकी प्रशंसा की। मैंने अपने नेत्रों से उनका सब काम और उनकी फटी हुई कमीज देखी। जब विरोधी दल का कोई पुरुष दूसरे की प्रशंसा करता है, तो इस अवसर पर उस दल की निन्दा करना उचित नहीं है। हमारा यत्न यह होना चाहिये कि भेद-भाव न बढ़े और एकता उत्तरोत्तर दृढ़ हो। श्रीमान् कामठ ने कुछ गलत बातें कहने की यहां चेष्टा की है और उनका यह प्रयास असामयिक था। यह कहना असत्य है कि लीग के हाई कमाण्ड ने उन अत्याचारों की बुराई नहीं की, जो गैर-मुस्लिमों पर हुए हैं।

*__अध्यक्ष:__ मुझे यह प्रतीत हो रहा है कि हम अप्रासंगिक वाद-विवाद करने लगे हैं।

*__माननीय श्री हुसैन इमाम:__ मैं इस विषय पर वाद-विवाद नहीं करूंगा मैं केवल इतना कहना चाहता हूं कि जो कुछ उन्होंने कहा, वह सच्ची बात नहीं थी। यदि पण्डित जवाहरलाल नेहरू बिहार गए तो उसका कारण यह था कि कांग्रेस का हाई कमाण्ड ही वहां प्रबन्ध करने वाला था और इस कारण उनका वहां जाना

और हस्तक्षेप करना उचित ही था। परन्तु, पंजाब में लीगी दल वहां के मन्त्रिमंडल पर कोई अधिकार नहीं रखता था। पंजाब में सेक्शन 93 के अनुसार शासन था। पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त में कांग्रेस का अधिकार था।

***अध्यक्ष:** मैं माननीय सदस्य का इस ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं कि हम किसी मन्त्रिमंडल या पंडित जवाहरलाल नेहरू या किसी और के आचार-विचार पर समालोचना नहीं करना चाहते। हम यहां केवल विधान के एक साधारण वाक्यांश के विषय में बातचीत करना चाहते हैं। इस कारण वह विधान के सम्बन्ध में ही बातचीत करें, यह प्रार्थना करूंगा।

***माननीय श्री हुसैन इमाम:** मैं आशा करता हूं कि जब दूसरे भी प्रसंग से बाहर जायें तो आप उनको भी रोकें। श्रीमान्, मैं यह कह रहा था कि अमरीका की शासन-विधि में बहुत लाभ है, पर इस समय लोग इसे नहीं समझते हैं। मैंने सुना कि हैरल्ड लास्की ने थोड़े ही दिन हुए एक पुस्तक लिखी, जिसमें अमेरिका की शासन-विधि की निन्दा की गई, क्योंकि उसका मन्त्रिमंडल हटाया नहीं जा सकता। उन्होंने अंग्रेजी शासन-विधि की, जिसको हम ग्रहण कर रहे हैं, प्रशंसा की है। इंग्लैंड में मन्त्रिमंडल हटाया जा सकता है और अमरीका में नहीं। इससे दोनों शासनों में कोई बड़ा भेद नहीं होता। बजट के न पास करने का अधिकार जो मंत्रिमंडल के लिए अत्यन्त आवश्यक है, वह अमरीकन और अंग्रेजी दोनों विधानों में कानून बनाने वाली सभा के पास है यद्यपि अमेरिकन विधान में राष्ट्रपति को वोटों का अधिकार भी है। परन्तु उन्होंने नियन्त्रण-मूलक ऐसी व्यवस्था की है, जिनसे कांग्रेस में दो तिहाई अधिकांश वोट पाने पर राष्ट्रपति के वोटों को उल्टा जा सकता है। इसलिए आपने यह अनुभव कर लिया होगा कि दोनों विधानों में कोष पर अधिकार कानून बनाने वाली सभाओं के ही पास है। कानून बनाने के सम्बन्ध में भी यही बात है। कुछ संरक्षणों को छोड़कर व्यवस्थापिका सभा के अधिकार सबसे व्यापक हैं। प्रतिदिन के शासन में इससे कोई विशेष परिवर्त्तन नहीं पड़ता कि किसी मेम्बर या गैर मेम्बर को नियुक्त किया जाए। कुछ सज्जनों ने यह सही कहा है कि संकट के दिनों में एक केन्द्रीय नियन्त्रण कहीं अच्छा होता है, बनिस्पत इसके कि अल्पबुद्धि व्यक्तियों का एक समूह साथ-साथ काम करे और उसमें गड़बड़ ही हो। जब एक विधान संकट के दिनों में लाभदायक हो तो कोई कारण नहीं कि वह शांति के दिनों में उपयुक्त न हो। इसलिए मेरा विचार है कि अमरीकन तरीका, जिसमें राष्ट्रपति को देश की कम से कम 51 प्रतिशत वोट मिलती हैं, वह प्रधानमंत्री की अपेक्षा देश की अधिक सेवा कर सकता है; क्योंकि प्रधानमंत्री

तो केवल अपने निर्वाचन-क्षेत्र और अपनी पार्टी के अधिकांश मेम्बरों का ही प्रतिनिधित्व करता है। मि. तजम्मुल हुसैन ने जो उदाहरण दिया, वह अनुपयुक्त था। उन्होंने कहा कि प्रधानमंत्री विरोधी पार्टी और सरकारी पार्टी दोनों से मिलकर चुना जा सकता है। उन्होंने उदाहरण में कहा कि यदि एक पार्टी में 100 सदस्य हों और दूसरी में 50, और लीडर के चुनाव में एक पार्टी (एक सदस्य को) 60 वोट दे और दूसरी 10, तो यह सम्भव है कि एक सदस्य जिसे अपनी ही पार्टी ने परास्त कर दिया, वह दूसरी पार्टी में मिलकर चुन लिया जाए, यद्यपि उसकी अपनी ही पार्टी के अधिकांश सदस्य उसके पक्ष में न हों। यह अनुभव न होने का कारण है कि इन्होंने ऐसा कहा। पार्टियों में जो मतभेद होते हैं, वे औरों को नहीं बताये जाते। कोई सज्जन, जो अपनी पार्टी को छोड़कर दूसरी पार्टी से जा मिलते हैं, उनको अपनी पार्टी से कोई वोट नहीं मिलता। आजकल प्रजातन्त्रीय राज्य के दिनों में ऐसा होना असम्भव है। यह सम्भव है कि एक-दो बातें इस प्रकार की कहीं-कहीं हो जायें, परन्तु प्राय: ऐसा नहीं होता है। क्या आप समझते हैं कि विरोधी पार्टी सरकार की पार्टी के छोड़े हुए एक आदमी का साथ देगी। न ऐसा हो सकता है और न ऐसा होने की सम्भावना है। परन्तु, इस पर विचार करने की आवश्यकता है कि प्रधानमंत्री सम्भवत: सभा के अधिकांश सदस्यों का विश्वास न रखता हो। आजकल पार्टी सिस्टम ऐसा है कि यदि आप पार्टी के अधिकांश सदस्यों को अपने पक्ष में ले लें, तो यह निश्चित है कि आपको पार्टी के सब वोट मिल जायेंगे। जो उदाहरण मि. तजम्मुल हुसैन ने दिया है, उसमें जो होगा वह यह है कि जो कोई 150 में से 60 वोट पायेगा, वह अन्त में प्रधानमंत्री बन जायेगा। अब आप चाहते यह हैं कि राष्ट्रपति अपने विचार के अनुसार न चले। किन्तु उस प्रधानमंत्री के कहने पर चले, जिसे 150 में से केवल 60 वोट मिले, यानी 40 प्रतिशत। इस कारण मेरा विचार है कि वह विधान जिसमें राष्ट्रपति को अपने मंत्री नियुक्त करने का अधिकार है, वह अंग्रेजी शासन की नकल करने की अपेक्षा अधिक प्रजातांत्रिक है। अंग्रेजी शासन-विधि फ्रान्स में अनुपयुक्त पाई गई, जहां पर छोटे-छोटे जनसमूह और पार्टियां हैं वहां पर उनको अंग्रेजी विधि बार-बार अनुपयुक्त प्रतीत हुई। अमेरिका में दूसरी विधि है, जिसके अनुसार राष्ट्रपति को अवसर के अनुसार सरकार बनाने का पूर्ण अधिकार है। उदाहरणत: युद्ध के बीच में राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने विपक्षी दल के दो जनों को अपनी राजसभा में नियुक्त किया और उन्हें आवश्यक विभाग दिए। इस प्रकार अमेरिका में मिली-जुली सरकार के वही नियम हैं, जो बर्तानियां में हैं, केवल

[माननीय श्री हुसैन इमाम]

उसके दोष नहीं हैं। एक मिली-जुली सरकार में बहुत से भिन्न-भिन्न समूह होते हैं, जो सब अपने-अपने विचार पर बोलते हैं। मेरा अपना यह विचार है कि अमेरिकन शासन-विधि इतनी बुरी नहीं है, जितनी कि वह बताई गई है। यह कहा जाता है कि वहां सरकार को हटाया नहीं जा सकता (अमेरिका में)। किन्तु वास्तव में सच तो यह है कि अमेरिका में सरकार को बर्तानियां की अपेक्षा अधिक सरलता से हटाया जा सकता है। बहुत से सदस्यों को ध्यान होगा कि कितना शोर-गुल मचा था, जब कि लार्ड टेम्पलवुड् को एबीसीनियां के विषय पर मंत्रिमण्डल से निकाल दिया गया था। किन्तु, अमेरिका में प्रतिदिन एक मन्त्री को निकाल कर दूसरे को नियुक्त किया जाता है। अभी-अभी जनरल मार्शल को नियुक्त किया है और किसी प्रकार का शोर-गुल नहीं मचाया गया। वहां पर किसी को अधिकार नहीं है कि वह राष्ट्रपति के मंत्री नियुक्त करने के अधिकार पर आलोचना करे। मान्यवर, मैं यह नहीं चाहता कि मैं सभा का अधिक समय लूं-अपने भाषण को लम्बा करने के लिए। मैं केवल अपने विचारों को साफ़ कर देना चाहता हूं। यह मेरी पार्टी की नहीं, किन्तु मेरी अपनी भावना है और मैंने यह उचित समझा कि यह अच्छा होगा यदि मैं यह बता दूं कि अमेरिकन शासन-विधि इतनी बुरी नहीं है, जितनी उसके आलोचक बताते हैं।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर** (मद्रास : मुस्लिम)**:** श्रीमान् सभापति जी, वाक्यांश 10 जैसा कि सर एन. गोपालस्वामी आयंगर ने बताया है, उस प्रकार का मन्त्रिमण्डल स्थापित करता है जो अंग्रेजी ढंग का है और परिषदात्मक है। काज़ी सैयद करीमुद्दीन का संशोधन इस वाक्यांश में परिवर्त्तन करना चाहता है कि शासन-प्रबन्ध-सभा मिले-जुले ढंग की स्विस देश जैसी हो। अब हमें यह देखना चाहिए कि क्या वैसी शासन-प्रबन्ध सभा, जैसा काज़ी साहब चाहते हैं, लोकतन्त्रीय सिद्धान्त के विरुद्ध होगी या नहीं और वह व्यवहार में लाई जा सकेगी और क्या देश में परिस्थिति के अनुकूल होगी अथवा नहीं? सभा को यह तीनों बातें आगे रखकर इस विषय पर विचार करना चाहिए। अब श्रीमान्, आप भी जानते हैं कि अंग्रेजी पार्लियामेण्ट प्रथा विधान-बद्ध नहीं है। यह तो क्रमागत ऐतिहासिक विकास के परिणामस्वरूप पैदा हुई है। शताब्दियों से राजा और प्रजा के बीच संघर्ष हुआ, जिसमें प्रजा के प्रतिनिधियों ने अधिकतर शासन-शक्ति लेने का प्रयास किया और उससे इस प्रथा का विकास हुआ। यह नि:सन्देह सत्य है कि पार्लियामेण्ट के सदस्य चुने जाते हैं और जब सदस्यों का चुनाव हो जाता है तो राजा बहुसंख्यक दल

के नेता को बुलाता है और वह अपना मन्त्रिमण्डल चुन लेता है। सदस्यों का पार्लियामेण्ट के लिए चुनाव होता है, यहां तक तो यह प्रथा लोकतंत्रीय ही रहती है। इसके बाद वह लोकतन्त्रीय नहीं रहती, क्योंकि बहुसंख्यक दल का नेता जिसको चाहे मन्त्री चुन ले। मन्त्री उसी दल से सम्बन्ध रखते हैं जिसे निर्वाचक चाहते हैं। परन्तु, ख़ास-ख़ास मन्त्री पार्लियामेण्ट के सदस्यों द्वारा नहीं चुने जाते हैं। इसके बाद श्रीमान्, सरकार बन जाती है और यह उस समय तक कार्य-निर्वाह करती जाती है जब तक पार्लियामेण्ट इस पर विश्वास करती है। फर्ज़ कीजिए कि पार्लियामेण्ट का कोई दल यदि मन्त्रिमण्डल से प्रसन्न नहीं है तो वह सरकार को निकाल नहीं सकता। यह सम्भव है कि पार्लियामेण्ट के अल्पसंख्यक दल में ऐसे लोग हों, जिनमें बहुत से निर्वाचक, जिसे असली सत्ता प्राप्त है, मन्त्रिमण्डल को हटा नहीं सकते। श्रीमान्, यह बात स्पष्ट है कि ऐसी परिस्थिति में पार्लियामेण्ट का मन्त्रिमण्डल या शासन-प्रबन्ध-सभा लोकतन्त्रीय नहीं रह सकती। पहली बात तो यह है कि पार्लियामेण्ट मन्त्रियों का चुनाव नहीं करती, दूसरी यह कि निर्वाचक लोग उनको हटा नहीं सकते। इसलिए पार्लियामेण्ट का लोक-तन्त्र शासन, जैसा कि इंग्लैण्ड में चल रहा है और जिसको हम यहां चालू रखना चाहते हैं, वह वस्तुतः लोकतंत्र शासन नहीं है। काज़ी साहब के विचारों पर हमको जरा सोचना चाहिए। चुनाव के बाद पार्लियामेण्ट के सदस्य अपने मन्त्रियों को आप ही चुनेंगे। इसलिए श्रीमान्, यह अंग्रेज़ी पार्लियामेण्ट के ढांचे की अपेक्षा अधिक लोकतन्त्रीय है। यहां दो पद्धतियां हैं। एक यह कि पार्लियामेण्ट के सदस्य जनता से चुने जाते हैं और दूसरा यह कि पार्लियामेण्ट के सदस्य, जो जनता के असली प्रतिनिधि हैं, अपने मन्त्रियों को अपने आप चुनते हैं। हमें यह देखना है कि वह ढांचा जो हम इस संशोधन के द्वारा देश की परिस्थिति में लागू करना चाहते हैं, वह क्या सम्भव हो सकता है? मैंने पहले एक बार कहा था कि पार्लियामेण्ट के सदस्यों के चुनाव की प्रणाली और मन्त्रिमंडल ऐसे होने चाहिएं, जिसमें देश के सब ही वर्गों के विचार आ जाएं। असली परिस्थिति की ओर से आंखें बन्द कर लेना उचित नहीं। यह निःसन्देह सत्य है कि जनता को दलों, वर्गों और स्वार्थ-भावों के आधार पर विचार नहीं करना चाहिए। परन्तु; प्रतिदिन हम देखते हैं कि सभा के अन्दर और बाहर लीग और कांग्रेस के दल यही कहते देखे जाते हैं कि थोड़ी संख्या वाली जातियों की, उन छोटी जातियों की जो धर्म के आधार पर बनी हैं, वर्गीय जातियों

[श्री महबूब अलीबेग साहब बहादुर]

की, पिछड़ी हुई जातियों की और उन छोटी जातियों की जो देश के अनेक प्रान्तों में रहती हैं, रक्षा होनी चाहिए। यह सत्य बातें हैं। हमें इनकी ओर से नेत्र नहीं मूंद लेने चाहिएं। अब यदि दल का नेता राज्य के प्रधान द्वारा बुलाया जाता है, तो वह उन पुरुषों की मन्त्री-सभा बनाता है, जो किसी हित या वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। वह यही करता है। वह ऐसा मर्यादा के बल पर या सद्भाव से करे, मगर होता ऐसा ही है। परन्तु, यदि ऐसा नहीं होता और वह ऐसा करने पर बाध्य न हो, तो श्रीमान्, बहुत असन्तोष और आपत्ति होगी। इसलिए यदि हम मन्त्रिमण्डल बनाने के लिए स्वयं विधान में ही एक लोकतन्त्रीय पद्धति की व्यवस्था कर दें, यानी मन्त्रियों के चुनाव की व्यवस्था कर दें और आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित या अहस्तान्तरित मत-पद्धति से चुनाव की व्यवस्था करें, तो यह सन्तोषप्रद होगा इस तरह बना हुआ मन्त्रिमण्डल लोकतन्त्रीय होगा और उसमें सभी विचारधारा के लोग आ जायेंगे। इसके अतिरिक्त श्रीमान्, प्रतिक्रियात्मक मन्त्रिमण्डल को उखाड़ फेंकना जनता के लिए सम्भव नहीं है। इसलिए हर दशा में मन्त्रिमण्डल जारी रहेगा और यह आशा की जाती है कि वह चार या पांच वर्ष पूरे समय तक जारी रहेगा। इस संशोधन में यह एक लाभ है कि आप अपने मन्त्रिमण्डल में सदस्यों को लोकतंत्रीय प्रथा के अनुसार चुनते हैं और उनको चुनकर उनसे वहां काम जारी रखने को कहते हैं। और वह मन्त्रिमण्डल, जो अंग्रेजी प्रथा के आधार पर चुना जाता है, निकाल दिए जाने के भय से सदा त्रस्त रहता है। सो श्रीमान्, यदि आप ऐसा मन्त्रिमण्डल बनाएं, जो हटाया न जा सके, तो वह अधिक अच्छा कार्य करेगा, योजनाएं बनाऐगा और उनको पूरा करेगा। श्रीमान्, वह स्विस ढांचा कई अवस्थाओं में समाधिक लोकतन्त्रीय है। यह सम्भव है कि देश के सब वर्गों के भाव उसमें शामिल हों। यह भली प्रकार कार्य करेगा और अपनी योजनाओं को पूरा कर सकता है, और देश की आधुनिक परिस्थिति में यही सबसे उत्तम रीति है। इसको यहां चलाने में कोई हानि नहीं होगी। इन रीतियों के सम्बन्ध में यह रखना चाहिए कि स्विस और अमेरिकन रीतियां उन अनुभवों का फल हैं जो लोकतन्त्रीय शासन वाले देशों ने प्राप्त किया था। विधान निर्माताओं का यह दृढ़ विचार है कि अंग्रेजी शासन-प्रणाली लोकतन्त्रीय नहीं है, इस लोकतन्त्रीय शासन में, यानी पार्लियामेण्ट में शक्ति किसके हाथ में रहती है? वास्तव में वह शक्ति प्रधानमंत्री या उसके मन्त्रिमण्डल में रहती है। सभी सदस्य अनुशासन के नाते प्रधानमन्त्री या मन्त्रिमण्डल का अनुसरण करते हैं। यदि ऐसा न करें तो उनके विरुद्ध अनुशासन की कार्यवाही की जाती है। मेरा विचार है कि स्विस रीति, जिसका उल्लेख काज़ी सैयद करीमुद्दीन के संशोधन में किया गया है, प्रशंसनीय और ग्राह्य है।

***अध्यक्षः** मैं ख्याल करता हूं कि इस खण्ड पर बहुत वाद-विवाद हो चुका। अब मैं चाहता हूं कि इस संशोधन और खण्ड पर वोट लिए जाएं।

***श्री के.एम. मुन्शी** (बम्बई : जनरल): मैं प्रस्ताव पेश करता हूं कि बहस बन्द की जाए।

***अध्यक्षः** श्री मुंशी ने कार्यवाही को बन्द करने का प्रस्ताव रखा है। मैं समझता हूं कि सभा को यह स्वीकार है। प्रस्ताव यह है कि:

"वाक्यांश 10 के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'मन्त्रियों का एक मण्डल होगा, जो राष्ट्रीय-परिषद् द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के आधार पर एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति से चुना जायेगा और वह मन्त्रिमण्डल राष्ट्रीय-परिषद् के प्रति उत्तरदायी होगा'।''

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

अब क़ाज़ी सैयद करीमुद्दीन के संशोधन पर मत लिया जायेगा। निम्नलिखित अंश वाक्य-खण्ड 10 के अन्त में शामिल किया जाये:

"भारतीय संघ की शासन-प्रबन्ध-सभा अपरिषदात्मक होगी; इस अर्थ में कि व्यवस्थापिका सभा के कार्य-काल के पहले वह नहीं हटाई जायेगी, पर मन्त्रिमण्डल अथवा मन्त्रिमण्डलों के सदस्य को भ्रष्टाचार अथवा राजद्रोह या छल के अपराध के कारण न्यायालय के समक्ष सार्वजनिक दोषारोपण करके हटाया जा सकता है।

प्रधानमन्त्री समूची सभा द्वारा एकाकी हस्तान्तरित मत-पद्धति से चुना जायेगा। मंत्रिमण्डल के अन्य मंत्री एकाकी अहस्तान्तरित मत-पद्धति से चुने जायेंगे।"

संशोधन नामंजूर हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं सर एन. गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन पर वोट लूंगा।

[अध्यक्ष]

"संशोधन यह है कि वाक्य-खण्ड 10 के अन्त में निम्नलिखित शामिल किया जाये:

'राष्ट्रपति प्रधानमंत्री को नियत करेगा और प्रधानमंत्री की सलाह से राष्ट्रपति दूसरे मंत्रियों को निर्वाचित करेगा। मंत्रिमण्डल पूर्णतया जन-सभा के प्रति उत्तरदायी रहेगा'।''

प्रस्तावक ने इसे स्वीकार किया है।

संशोधन मंजूर किया गया।

***अध्यक्ष:** श्री ठाकुरदास भार्गव का एक और संशोधन है। मेरे विचार में वह संशोधन इसीके अन्तर्गत आ जाता है और यह आवश्यक नहीं कि उस पर वोट लिया जाये। अब मैं असली वाक्यांश पर, जिसमें सर गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन से सुधार किया गया है, वोट लूंगा।

खण्ड संशोधित रूप से स्वीकार किया गया।

वाक्य-खण्ड 11

***अध्यक्ष:** वाक्य-खण्ड 11, सर एन. गोपालस्वामी आयंगर!

***सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** मैं वाक्य-खण्ड 11 को उपस्थित करता हूं।

"11. राष्ट्रपति ऐसे एक व्यक्ति को जो सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश होने के योग्य हो, संघ का सबसे बड़ा वकील बनायेगा और वह संघ-सरकार को कानूनी विषयों पर अपने विचार देगा।"

***श्री गोकुलभाई डी. भट्ट:** अध्यक्ष महोदय, सर अल्लादी जो संशोधन रखना चाहते हैं उसके हक में मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** खण्ड 11 के सम्बन्ध में मैं निम्न संशोधन पेश करता हूं:

"(1) वाक्य-खण्ड 11 में 'referred' शब्द के पश्चात् 'or assigned' शब्द शामिल किये जायें।"

"वाक्य-खण्ड 11 के पश्चात् निम्न जोड़ा जाये:

'राष्ट्रपति द्वारा या इस कानून या किसी संघीय कानून के अधीन प्रदान किये हुए अधिकार से इस एक्ट में या किसी संघीय कानून में वर्णित अपने अधिकारों को प्रयोग में लायेगा और कर्त्तव्यों का पालन करेगा और अपने कर्त्तव्य-पालन के सिलसिले में इसे भारतीय संघ की सभी अदालतों में सुनवाई का अधिकार प्राप्त होगा। एडवोकेट जनरल उसी काल तक पदासीन रहेगा, जब तक राष्ट्रपति चाहेंगे और वही वेतन पायेगा जिसे राष्ट्रपति निश्चित करेंगे'।"

यह केवल रस्मी संशोधन है, क्योंकि कर्त्तव्य तीन प्रकार के हैं। एक तो वह जिनको राष्ट्रपति उसके लिए निर्धारित करेगा, दूसरे वह जो उसके हवाले किये गए हैं। तीसरे वह जो बहुत से कानूनों द्वारा व्यवस्थापिका सभा से स्वीकृत किए गए हैं। व्यवस्था को पूर्ण बनाने के लिए ही मैं इस संशोधन को पेश करता हूं। मुझे आशाा है, इसका कोई विरोध नहीं होगा।

***अध्यक्ष:** वाक्य-खण्ड और संशोधनों पर अब वाद-विवाद हो सकता है।

(कोई सदस्य बोलने के लिए खड़ा नहीं हुआ।)

***अध्यक्ष:** यदि सर गोपालस्वामी आयंगर कुछ कहना नहीं चाहते तो मैं इन पर वोट लूंगा।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** मैं संशोधन स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्ष:** मैं पहले संशोधन पर वोट लूंगा।

"वाक्य-खण्ड 11 में 'referred' शब्द के पश्चात् 'or assigned' शब्द जोड़े जायें।"

"वाक्य-खण्ड 11 के अंत में निम्नलिखित शामिल किया जाये:

'राष्ट्रपति द्वारा या इस कानून या किसी संघीय कानून के अधीन प्रदान किए हुए अधिकार से इस एक्ट में या किसी संघीय कानून में वर्णित अपने अधिकारों को प्रयोग में लायेगा और कर्त्तव्यों का पालन करेगा और अपने कर्त्तव्य-पालन के सिलसिले में इसे भारतीय संघ की सभी अदालतों में सुनवाई का अधिकार प्राप्त

[अध्यक्ष]

> **होगा। एडवोकेट जनरल उसी काल तक पदासीन रहेगा, जब तक राष्ट्रपति चाहेंगे और वही वेतन पायेगा जिसे राष्ट्रपति निश्चित करेंगे'।''**

संशोधन स्वीकृत हुए।

***अध्यक्षः** सुधार किए हुए संशोधन पर अब मत लिया जाता है।

संशोधित खण्ड स्वीकृत हुआ।

वाक्य खंड 12

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, मैं खण्ड 12 को पेश करता हूं, जो इस प्रकार हैः

"संघीय सरकार की सभी शासन-प्रबन्ध-सम्बन्धी कार्यवाहियों के सम्बन्ध में यह समझा जायेगा कि वे राष्ट्रपति द्वारा की गई हैं।"

व्यवस्था के लिए इस सम्बन्ध में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है।

(सर्वश्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर और क़ाज़ी सैयद करीमुद्दीन ने अपने संशोधन पेश नहीं किए।)

***अध्यक्षः** मेरे विचार में इस वाक्य-खण्ड के सम्बन्ध में और कोई दूसरा संशोधन नहीं है। यदि किसी सदस्य ने इस सम्बन्ध में किसी संशोधन की सूचना दी है, जो मेरी निगाह में न आया हो, तो वह अपना संशोधन रख सकता है।

(कोई सदस्य बोलने के लिए खड़ा नहीं हुआ।)

***अध्यक्षः** चूंकि कोई संशोधन नहीं है, इसलिए मैं वाक्यांश पर वोट लूंगा।

वाक्य-खण्ड 12 स्वीकार किया गया।

वाक्य खंड 13

***अध्यक्षः** अब वाक्य खंड 13 लिया जायेगा।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रांत और बरार : जनरल): श्रीमान्, 12 (क) का एक नया वाक्य-खण्ड है। यह अतिरिक्त वाक्य-खण्ड, जो मेरे नाम में है, वह इस तरह है:

"वाक्य-खण्ड 12 के पश्चात् निम्नलिखित नया खण्ड जोड़ा जाये:

'12-क. संघ निम्नलिखित बातों के लिए नियम बनायेगा:

(1) समाज-वादी आर्थिक नीति, बड़े-बड़े उद्योग-धन्धों का राष्ट्रीयकरण तथा व्यावसायिक प्रतिष्ठानों की सहकारिता के आधार पर संचालन।

(2) प्राइवेट स्वामियों द्वारा पूंजी का समीकरण।

(3) शोषण का बन्द करना।

(4) बेकारी को दूर करना तथा हर एक नागरिक को इस बात की गारंटी देना कि उसे काम पाने का अधिकार है।

(5) मनोरंजन, वार्षिक छुट्टियां, प्रसूति के समय में सवेतन छुट्टी, बालकों के हित के काम, विश्राम-स्थान, क्लबें, हर श्रेणी के लिए सुखद निवास-स्थान।

(6) वृद्धावस्था में जीवन-निर्वाह की सुविधा का अधिकार, बीमार में और काम के लिए अयोग्य होने पर कुटुम्ब के निर्वाह का प्रबन्ध, मुफ्त चिकित्सा-सम्बन्धी सहायता...'।"

***अध्यक्ष:** मेरा विचार है कि यह तीसरे भाग के अन्दर आते हैं। जब हम उन पर विचार करना प्रारम्भ करें, तब आप इसको पेश करें। जहां तक मौलिक अधिकारों का सम्बन्ध है, वह सब विधान-परिषद् द्वारा स्वीकार कर लिये गये हैं। अन्तिम रूप से उन पर फिर विचार किया जायेगा। यह तो केवल विधान-सम्बन्धी स्थूल सिद्धांतों के सम्बन्ध में है। अन्तिम वाद-विवाद के समय उन पर जरूर विचार किया जायेगा।

अब श्रीमान् गोपालस्वामी आयंगर वाक्य-खण्ड 13 पेश करेंगे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् मैं खण्ड 13 उपस्थित करता हूं।

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

"13. (क) संघ का कानून-निर्माण-सम्बंधी अधिकार संघ की पार्लियामेण्ट को प्राप्त होगा, जिसमें राष्ट्रपति तथा 'कौंसिल आफ स्टेट्स' और 'हाउस आफ पीपुल्स' इन दो सभाओं वाली राष्ट्रीय परिषद् शामिल रहेंगे।"

इस सम्बन्ध में एक संशोधन की सूचना मिली है। जिसमें कहा गया है कि: "-दो सभाओं वाली राष्ट्रीय परिषद्" शब्द हटा दिये जाएं। अगर ऐसा किया गया तो खण्ड का रूप यह होगा:

"संघ का कानून-निर्माण-सम्बंधी अधिकार संघ की पार्लियामेण्ट को प्राप्त होगा, जिममें राष्ट्रपति तथा 'कौंसिल आफ स्टेट्स' और 'हाउस आफ पीपुल्स' ये दो सभायें शामिल होंगी।"

यह इस वास्ते किया गया है कि भविष्य में संघ की व्यवस्थापिका के बहुत से नाम न हो जायें। संघ की पार्लियामेंट में सभापति और दो सभायें होगी। "राष्ट्रीय परिषद्" यह शब्द वहां इस कारण रखे गये हैं कि वह सभापति को छोड़कर केवल दो सभाओं का निर्देश करें। यह जरूरी नहीं मालूम होता कि "पार्लियामेंट और दो सभाएं" इस वाक्य के बीच में "राष्ट्रीय सभा" शब्द अड़ा दिये जाएं। इसलिये यह उचित मालूम होता है "राष्ट्रीय परिषद्" शब्द दूर कर दिये जाएं और खंड उसी तरह पढ़ा जायेगा, जैसे मैंने कहा है। मेरा खयाल है कि संशोधन की सूचना श्री के. सन्तानम् ने दी है और मैं कहना चाहता हूं कि मैं इसको स्वीकार करने के लिए तैयार हूं।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान्, मेरा संशोधन इस प्रकार है:

"वाक्य-खण्ड 13 में 'संघ की पार्लियामेंट' इन शब्दों के पश्चात् 'जो कांग्रेस के नाम से परिचित होगी' यह शब्द जोड़ने चाहियें।"

मेरा प्रयोजन यह है श्रीमान्, चूंकि हमने स्वतन्त्रता, भारत की राष्ट्रीय कांग्रेस के आश्रय में प्राप्त की है; इस कारण मैं चाहता हूं कि कांग्रेस का नाम हमारे भावी विधान में अमर हो जाए। मैं जानता हूं कि बहुत से सदस्यों की इच्छा है कि अनेक शब्द, जो विधान में प्रयुक्त किए जाएं वह, इस समय छोड़ दिये जाएं; ताकि उन पर फिर विचार किया जाए। इस परिस्थिति में मैं इसको अभी प्रस्तावित

करने का साहस नहीं करता। परन्तु इतना चाहता हूं कि कांग्रेस का शब्द हमारे विधान में अवश्य आ जाए, जिससे यह स्मरणीय नाम हमेशा के लिए अमर हो जाए। क्योंकि इसी नाम के आश्रय में हमने अपने देश में पैंसठ वर्ष तक संग्राम किया है।

***श्री मोहम्मद ताहिर** (बिहार : मुस्लिम): जनाबवाला, मैंने जो तरमीम पेश की है उसमें अल्फाज का ज्यादा लिहाज़ नहीं रखा गया है। चूंकि हम लोग इस वक्त उसूली तौर पर गुफ्तगू करने वाले हैं तो मेरी तरमीम अगर पढ़ी जायेगी तो इस तरह होगी :––"That in Clause 13, for the words 'comprising two Houses, the Council of States and', the word 'namely' be substituted."

मेरा मक़सद इस तरमीम के पेश करने में यह है कि जहां दो असेम्बलियों का ज़िक्र है, ओरिजिनल रिज़ोल्यूशन में यह कहा गया है कि दो मज्लिसें कानून साज़ होनी चाहियें। तो मैं चाहता हूं कि एक ही मज्लिसे कानून साज़ होना चाहिए।

जनाबवाला, इस वक्त हमारे सामने एक नया हिन्दुस्तान है जो यकीनन आज़ादी का सेहरा लिये हुए हमारे सामने है, जब हम इसका दस्तूर बनाने के लिए तैयार हैं तो इस दस्तूर के बनाने में क़बल इसके कि मैं अपनी नाचीज़ ख़िदमात पेश करूं, मैं समझता हूं कि मुझे यह हक़ हासिल है कि मैं यह कहूं कि:

"सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा।
हम बुलबुलें हैं इसकी यह गुलिस्तां हमारा।।"

इसके बाद मैं तरमीम के मुताल्लिक यह अर्ज करूंगा कि जबकि हम हिन्दुस्तान के लिए एक दस्तूर बना रहे हैं तो कमज़कम हमारा फ़र्ज है कि यह दस्तूर हम इस तरह बनाएं, इस तरह मुल्क के सामने पेश करें कि हमारे मुल्क की आवाज़ और सारे मुल्क की जनता इस दस्तूर को देखने के बाद यह कहे कि वाक़ई यह दस्तूर हमारा है और हमारे मुल्क का है। इसमें ऐसा न हो कि लोग यह कहें कि अगर वे अंग्रेज हिन्दुस्तान से चले गये, उनकी रूह फिर भी बाकी है। लेकिन इस दस्तूर से साफ मालूम होता है कि अंग्रेजों की रूह अभी तक काम कर रही है। मेरे खयाल में इस दस्तूर को देखने के बाद और यह क्लाज़ जो मेरे सामने है उसे देखकर मैं यह समझता हूं कि वाकई अंग्रेज तो हिन्दुस्तान से जा रहे हैं लेकिन उनकी रूह हिन्दुस्तान में काम कर रही है। दस्तूर बनाने से

[श्री मोहम्मद ताहिर]

पेश्तर जब कोई नया मुल्क पैदा होता है, आज़ादी हासिल होती है तो सब से जरूरी चीज़ जो मेरी निगाह में है वह यह है कि जिस कदर पिछली रवाइयात मुल्क की हुई, जिस क़दर पिछले कांस्टीट्यूशन्स इस मुल्क के अन्दर काम कर रहे हों उनको इस तरह बदल दिया जाये कि मुल्क की ज़हनियत (mentality) ज़माना हाल के मुताबिक हो जाये। हुजूर वाला, आप अच्छी तरह जानते हैं कि ब्रिटिश हुकूमत के जितने सौ साल हमारे हिन्दुस्तान में गुज़र चुके हैं उससे हमारे मुल्क की ज़हनियत (mentality) और कितनी खराब और गुलामाना हो चुकी है। इसलिये दस्तूर बनाते वक्त हमारा यह भी फर्ज़ है कि हम इसको इस तरह बनायें कि हमारी ज़ेहनियत आज़ाद हो जाये और वह (mentality) जो ब्रिटिश गवर्नमेण्ट के वक्त थी उसका वजूद न रहने पाये। मैं यह अर्ज करूंगा कि हर एक मुल्क में मुतफर्रिक ताकतें (forces) बसावकात काम करती हैं। कोई मुल्क ऐसा होता है जहां सोशलिज्म काम करता है, कोई ऐसा होता है जहां कम्युनिज्म काम करता है, कोई ऐसा होता है जहां फैसिज्म काम करता है और बाज मुल्क ऐसे भी होते हैं जहां कैपिटलिज्म काम करता है और उसके साथ में इम्पीरियलिज्म फलती और फूलती है। बदकिस्मती से अंग्रेजों ने इन्हीं दो चीजों—कैपिटलिज्म और इम्पिरियलिज्म के ज़रिये हमारे हिन्दुस्तान को तबाही और बर्बादी के दर्जे तक पहुंचा दिया है। और मैं, हुजूर वाला, यह अर्ज करूंगा कि मौजूदा कांस्टीट्यूशन जो हम लोग बना रहे हैं उसको बनाने से पेश्तर हम हिन्दुस्तान की इस छोटी सी तवारीख जो सन् 1919 ई. से लेकर अब तक हमारी नज़रों से गुज़री है उस पर गौर कर लें। जनाब वाला, आप खयाल फरमाइये कि सन् 1919 से लेकर 1935 के अक्टूबर जिस कदर कांस्टीट्यूशन्स हिन्दुस्तान में बनाये गये हैं वह ब्रिटिश इम्पिरियलिज्म की पैदावार थीं। 1919 में आपने देखा होगा कि लोकल बाडीज़ (local bodies) सेल्फ हुकूमत हिन्दुस्मान को दी गयी। कहने को तो यह सेल्फ हुकूमत थी लेकिन, हुजूर वाला, अगर आप गौर करेंगे तो आपको मालूम होगा कि इम्पिरियलिज्म और कैपिटलिज्म दोनों इसके साथ तेज़ी से काम कर रहे थे। इसलिये वह लोकल बाडीज़ अपने प्रोग्राम के मुताबिक काम नहीं कर सके। यह इसलिए कि इनके साथ-साथ इम्पिरियलिज्म का जोर था और मुल्क की आम जनता अपनी ख्वाहिश और प्रोग्राम के मुताबिक मेम्बर मुन्तखिब करके भेजती थी। मगर नामिनेशन्स के जरिये इनके ज़ोर को कमजोर कर दिया जाता था और यह बुरा तरीक़ा अब तक जारी है। इस तरह मर्कज़ी कौंसिलों के अन्दर और सूबाई कोंसिलों के अन्दर जनता के

भेजे हुए मेम्बरान, अवाम के भेजे हुए मेम्बरान जो चाहते थे उनको नामिनेशन्स के जरिये कमज़ोर कर दिया जाता था और वह अपना सारा प्रोग्राम जो मुल्क की भलाई के लिए पेश करना चाहते थे उनको बिल्कुल नाकामयाबी हो जाया करती थी। यह 1919 की कान्स्टीट्यूशन के मुताबिक काम होता था। खुदा का शुक्र है कि हिन्दुस्तान के अन्दर जबसे इम्पिरियलिज्म और कैपिटलिज्म काम करते थे तो उस वक्त गरीब हिन्दुस्तान की आवाज़ उठाने वाली जमात एक पैदा हो गई जिसने महात्मा गांधी की सरकर्दगी में आवाज़ उठाई और वह आवाज़ इस तरह उठी कि हिन्दुस्तान आज आज़ाद हो गया है। तो क्या आज भी हिन्दुस्तान का यह फर्ज़ है कि वह इस किस्म का दस्तूर बनाये जिससे कैपिटलिज्म और इम्पिरियलिज्म की बू आती रहे और उसकी परवरिश होती रहे? बहर कैफ कुछ हंगामे और कशमकश के बाद 1935 का एक्ट बना। 1935 के एक्ट में ब्रिटिश गवर्नमेंट ने यह देखा कि अब हिन्दुस्तान में जागृति ज्यादा हो गई है और मजबूती के साथ अपनी मांग पेश कर रहे हैं तो उन्होंने 1935 के एक्ट को बदला। प्रोविन्सेज में लेजिस्लेटिव असेम्बलीज़ कायम की जहां सिर्फ अवाम के नुमायन्दे गये ताकि मुल्क का इन्तज़ाम करें। लेकिन असेम्बलियों को कायम करने का क्या फायदा हो सकता था। उसके साथ अपर हाउस और कौंसिल आफ स्टेट्स को जो इम्पीरियलिस्टिक दिमाग का नतीजा था, जोड़ देना लाजिमी करार दिया गया और वह इस तरह जम्हूरियत का समां था जो कि प्रोविंशियल असेम्बली के अन्दर था उसको खाक में मिला दिया गया। और वह इसलिये कि अंग्रेज़ों ने यह जाना कि उनकी सरमायादारी और हैसियत को कायम रखने का इससे बेहतर और कोई दूसरा हरबा इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है, क्योंकि अपर हाउस और नामिनेशन्स वगैरह के तरीके ऐसी चीज़े हैं जो इम्पीरियलिज्म की पैदावार हैं। इसलिये जबकि हम आज़ाद हिन्दुस्तान का कान्स्टीट्यूशन बना रहे हैं उस वक्त हमको इन बातों का लिहाज़ और खयाल रखना चाहिये कि कांस्टीट्यूशन ऐसा बनाया जाये जिस पर हमको यकीन हो सके कि कौम और मुल्क उसे मंजूर करेगा और उस पर अमल करने के लिये कोशां होगा। इसके अलावा मैं अर्ज कर रहा हूं कि असूलन अगर हमारे मुअज्जिज़ मुहर्रिक जिन्होंने इस तजवीज़ को पेश किया वह इस बात को मानते हैं कि जब तक दो हाउसेज़ की तशकील नहीं होती उस वक्त तक हिन्दुस्तान, किसी मुल्क का काम सरअंजाम नहीं हो सकता, अच्छे कवानीन नहीं बन सकते, अच्छी कार्रवाईयां नहीं हो सकती। मैं हुजूर वाला से चन्द बातें पूछूंगा। इस वक्त जो असेम्बली बैठी हुई है क्या हिन्दुस्तान में इससे अच्छी जिम्मेवार और

[श्री मोहम्मद ताहिर]

बेहतर असेम्बली कभी थी? मैं अर्ज़ करूंगा कि इस असेम्बली से ज्यादा जिम्मेवार असेम्बली आज तक कभी नहीं बैठी। क्या हम नहीं देख रहे हैं कि एक हाउस से यह सब काम हो रहा है और मुल्क का दस्तूर बन रहा है और इसके चन्द हफ्तों के बाद यही असेम्बली फेडरल पार्लियामेंट का काम करेगी जहां कानून बनेंगे। तो अगर उसूल यह क़रार दिया जाये कि दो हाउसों का बनाना लाज़िमी है तो उनका फर्ज़ होगा कि कांस्टीट्युएंट असेम्बली को डिज़ोल्व कर दें और इसकी तशकील अजसरेनी करें जिसमें दो हाउस हों। अगर मुअज्जिज़ मुहर्रिक उस कांस्टीट्युएंट असेम्बली को दो हाउसों में तकसीम नहीं कर सकते और फेडरल पार्लियामेंट जो बनने वाली है, उसको दो हाउसों में तकसीम नहीं कर सकते तो इससे साफ ज़ाहिर है कि वह खुद इस उसूल को तसलीम नहीं कर सकते कि दो हाउसों का होना जरूरी और लाज़िमी है। बल्कि किसी खास फोर्स से मजबूर होकर जो इनके इर्दगिर्द काम कर रही है और जो सर्मायादारी के साये में काम कर रही है ऐसी तजवीज़ पेश कर रहे हैं। लेकिन मैं अर्ज़ करूंगा कि यह कौंसिल-आफ स्टेट्स और नामिनेशन्स और अपर हाउस वगैरह के जो तरीके हैं वह सब इम्पीरियलिज्म की पैदावार हैं। तो क्या गरीब हिन्दुस्तान आज़ाद होने के बाद भी उन्ही तरीक़ों पर काम करने को जुटा रहे जिनके ज़रिये अखराजात में ज्यादती भी और काम में कोई खूबसूरती न हो? ऐसा न हो कि अंग्रेज हिन्दुस्तान से निकल गये हों और हमारी हुकूमत कायम हो गयी हो और कल अंग्रेज कहें कि हम तो निकल आए हैं लेकिन हमारा काम वहां हो रहा है वह कौंसिल आफ स्टेट्स के ज़रिये से नामिनेशन वाले मेम्बरों के ज़रिये से और अपर हाउस के ज़रिये से हो रहा है।

इन चन्द अल्फाज़ के साथ मैं अपनी तकरीर को खत्म करता हूं। अगर मेरे अल्फाज़ से किसी साहब को तकलीफ पहुंची हो तो मैं मुआफी चाहता हूं।

***अध्यक्षः** सर बी. एल. मित्तर!

***श्री एस.वी. कृष्णमूर्ति राव** (मैसूर)**:** श्रीमान्, एक व्यवस्था-सम्बन्धी प्रश्न है। 32वें नियम के वाक्य-खण्ड (1) में यह कहा गया है कि एक संशोधन उसी प्रस्ताव से सम्बन्ध रखे, जिसके लिए वह प्रस्तावित किया गया है। छोटी सभा यह शब्द उस प्रस्ताव में नहीं है। जिसके सम्बन्ध में यह संशोधन आया है, जिसका प्रयोजन यही बताना है कि छोटी सभा से क्या मतलब है। इसलिए यह संशोधन अनियमित है।

*__सर वी.टी. कृष्णमाचारी__ (जयपुर): मैं अभी यही कहने वाला था कि संशोधन पेश नहीं किया जायेगा।

*__अध्यक्षः__ इस हालत में व्यवस्था-सम्बन्धी प्रश्न उठता ही नहीं।

(श्री मोहनलाल सक्सेना ने संशोधन पेश नहीं किया।)

*__श्री के. सन्तानम्__ (मद्रास : जनरल): मैं प्रस्ताव रखता हूं कि वाक्य-खण्ड 13 में "दो सभाओं वाली राष्ट्रीय परिषद्" शब्द हटा दिए जाएं। सर एन. गोपालस्वामी आयंगर ने बता दिया है कि यह शब्द क्यों हटाए जाएं। संघ-विधान-समिति के साथ इस बात में मुझे पूरी सहानुभूति है कि सारे अच्छे-अच्छे शब्द उसमें शामिल किए जाएं। "राष्ट्रीय परिषद्" यह शब्द वास्तव में बड़ा ही सुन्दर लगता है, परन्तु "पार्लियामेण्ट" शब्द भी हमें अवश्य रखना चाहिये। इन दोनों वाक्यों को शामिल करने के लिए उन्होंने एक अच्छा उपाय निकाला है। "राष्ट्रीय परिषद्" इन शब्दों से यह प्रयोजन है कि उसमें दोनों सभाएं सम्मिलित हैं और "पार्लियामेण्ट" इस शब्द में दोनों सभाएं तथा सभापति शामिल हैं। यह उपाय चातुर्य-पूर्ण अवश्य है, परन्तु व्यवहार में बहुत अनुपयुक्त रहेगा। जब इसका हिन्दुस्तानी में अनुवाद करना पड़ेगा, तो कठिनाई अधिक सामने आएगी। "पार्लियामेण्ट" इस शब्द के लिए दूसरा शब्द हिन्दुस्तानी में ढूंढना कठिन है, इसी प्रकार "राष्ट्रीय सभा" इन शब्दों के लिए दूसरा शब्द पाना बहुत ही कठिन काम होगा। इसलिए मैं यह संशोधन आगे रखता हूं।

*__अध्यक्षः__ और कोई दूसरा संशोधन नहीं है। अब वाक्य-खण्डों और संशोधनों पर जो प्रस्तावित किए गए हैं, तर्क-वितर्क हो सकता है।

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना__ (संयुक्त प्रान्त : जनरल): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, इस प्रस्ताव में हमकों दोनों सभाओं–अर्थात नीचे वाली सभा और ऊपर वाली सभा––के लिए वोट देने को कहा है। मैं यह बताना चाहता हूं कि पिछले वर्षों में हमारा अनुभव यह रहा है कि ऊपर की सभा उन्नति के मार्ग में रुकावट रही है। मैं नहीं समझता कि यह उचित होगा कि उसी बात को हम अपने नवीन विधान में रखें। मेरा खयाल है कि संसार में सब स्थानों पर ऊपर की सभा के विषय में ऐसा ही अनुभव रहा है। ऊपर की सभा ने किसी भी देश में उन्नति में हाथ नहीं बटाया है। इसने हमेशा प्रगति के मार्ग में बाधा डाली है। सो यदि

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

हम अभी सावधान न हों तो हम ऐसी जल्दी-जल्दी उन्नति नहीं कर सकेंगे, जैसा कि हम चाहते हैं। भारत संसार में सबसे बड़ा राष्ट्र है। हमें रूस और अमेरीका के साथ मुकाबला करना है, यदि हम अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अपना उचित पद ग्रहण करना चाहते हैं, जो उन्नति साधारण रूप से 50 वर्षों में होनी है, वह हमको 5 या 10 वर्षों में करनी होगी। मैं यह खयाल नहीं कर सकता कि दोनों सभायें तेज़ी के साथ अपने कार्यक्रम पूरा करने में हमारी सहायता करेंगी। इसलिए मेरा विचार है कि प्रस्तावक इस विषय पर विचार करें और यह देखें कि हमारे नए विधान में दोनों सभाएं न हों।

श्री नज़ीरुद्दीन अहमद (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम)**:** अध्यक्ष महोदय, मैं वाक्य-खण्ड के मौलिक स्वरूप का समर्थन करता हूं और दूसरी सभा को हटाने का जो प्रस्ताव है, उसका विरोध करता हूं। हम सार्वभौम सत्ता प्राप्त करने जा रहे हैं। हमें महत्वपूर्ण विदेशी और घरेलू मामलों को निबटाना है, ऐसी परिस्थिति में दो सभाओं का रखना उचित है। नीचे वाली सभा अपनी कर्मशक्ति के लिये प्रसिद्ध हुआ करती है और अर्थ-सम्बन्धी मामलों में उसको एकमात्र अधिकार होगा, परन्तु दूसरी सभा से कार्रवाई में विचार, गाम्भीर्य तथा विवेचन आ जाता है। ऐसी दशा में और विशेषकर जब विदेशी मामले हमारे समाने आयेंगे, हमारे लिये यह उचित है कि हम दूसरी सभा रखें। पूर्ववक्ता ने जो यह कहा है कि दूसरी सभा से लाभ नहीं होगा यह सही नहीं है। मैं खयाल करता हूं कि दूसरी सभा केवल लाभप्रद ही नहीं है, बल्कि नितान्त आवश्यक है।

फिर संघ में रियासतें शामिल होंगी और इसके लिये मेरा खयाल है कि दूसरी सभा बहुत ही आवश्यक है। दूसरी सभा के बिना यह कठिन हो जायेगा कि रियासतों के प्रतिनिधि योजना के सम्मान में किस प्रकार भाग लेंगे?

इन थोड़े शब्दों में मैं उस संशोधन को, जो राज्य-सभा, अर्थात दूसरी सभा को न रखने के लिये रखा गया है, विरोध करता हूं।

***अध्यक्ष:** शायद और कोई बोलना नहीं चाहता। तो अब प्रस्तावक यदि चाहें तो उत्तर दे सकते हैं।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, इस वाक्य-खण्ड के विषय में, जिसका उद्देश्य है कि संघ की व्यवस्थापिका द्विसभात्मक हो, कोई लम्बा-चौड़ा व्याख्यान देने की आवश्यकता नहीं है। संसार में जहां कहीं महत्त्वपूर्ण संघ हैं, वहां दूसरी सभा की आवश्यकता अवश्य ही अनुभव की गई है। हमारे सामने जो प्रश्न उपस्थित है, वह यह है कि क्या इससे कोई लाभ होगा? दूसरी सभा जो ज्यादा से ज्यादा कर सकती है, वह यह है कि बड़े-बड़े मामलों पर मर्यादा पूर्वक वाद-विवाद करे और ऐसे कानूनों को जो तात्कालिक आवेश के परिणाम स्वरूप बन रहे हों, तब तक स्वीकृत होने से रोक दे जब तक कि उन पर शान्ति और गम्भीरतापूर्वक विचार करने का अवसर न मिल जाए। हम इस बात का ध्यान रखेंगे कि विधान में ऐसी व्यवस्था हो कि जब भी आवश्यक मसलों पर और खास करके आर्थिक प्रश्नों पर 'हाउस आफ पीपुल्स' और 'कौंसिल आफ स्टेट्स' में मतभेद हो तो उस हालत में 'हाउस आफ पीपुल्स' की राय ही मान्य हो। इसलिए दूसरी सभा के अस्तित्व से वस्तुत: हमें एक ऐसा साधन प्राप्त होता है, जिससे जल्दी-बाजी में किए गए काम पर नियन्त्रण आ जाता है और साथ ही ऐसे परिपक्व अनुभव वाले व्यक्तियों को जो राजनैतिक संघर्ष में न रहना चाहते हों, वाद-विवाद में विद्वत्ता-पूर्वक भाग लेने का अवसर मिल जाता है। इसीलिए दूसरी सभा रखने का प्रस्ताव किया गया है। मैं समझता हूं कि बहुमत यह चाहता है कि दूसरी सभा रखी जाए और ऐसी चेष्टा की जाए कि कानून-निर्माण या शासन-प्रबन्ध में वह बाधक न हो। इस खण्ड की सिफ़ारिश में मुझे और कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। खण्ड और संशोधन पर सभा स्वयं विचार करे।

***अध्यक्ष:** पहले मैं मि. मुहम्मद ताहिर के संशोधन पर मत लूंगा। वाक्य-खण्ड 13 में "इन दो सभाओं वाली" के स्थान में "इन दो नामों की" शब्द जोड़े जाएं।

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब श्री सन्तानम् के संशोधन पर मत लेता हूं। संशोधन यह है कि-वाक्यांश 13 में "-दो सभाओं वाली राष्ट्रीय परिषद्" शब्द हटा दिए जाएं।

संशोधन ग्रहण किया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं सारे संशोधित वाक्यांश पर मत लेता हूं।

संशोधित वाक्य-खण्ड 13 स्वीकार किया गया।

वाक्य-खंड 14

***अध्यक्षः** अब हम वाक्य-खण्ड 14 को लेंगे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** आपकी और सभा की आज्ञा से मैं खण्ड 14 को केवल रस्मी तौर पर उपस्थित करता हूं और प्रार्थना करता हूं कि इस पर संशोधनों का पेश किया जाना और वाद-विवाद किसी अगले दिन के लिए स्थगित रखा जाये। यह वाक्य-खण्ड व्यवस्थापिका सभा की दोनों सभाओं की बनावट के सम्बन्ध में है। अनेक संशोधन आये हैं और उनसे रियासतों और प्रान्तों की कुछ आवश्यक बातों के विषय में प्रश्न उठाये गये हैं। इन संशोधनों के गुण-दोष के विषय में दर्शकों में बहुत तर्क-वितर्क होता रहा है। यह सम्भव है कि इन वाद-विवादों के फलस्वरूप हम सभा के आगे एक ऐसी चीज़ रख सकें जो सभा के सब विचार वालों को ग्राह्य हो। श्रीमान्, मेरी प्रार्थना है कि इस कार्यवाही को, जिसका मैं सुझाव दे रहा हूं, आप मंजूर करें। यदि आप ऐसा करें तो मैं वाक्य-खण्ड 14 को केवल पढ़कर सुनाऊंगा।

***अध्यक्षः** मेरे खयाल में सभा को इस सुझाव के स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है कि यह वाक्य-खण्ड आज सिर्फ पेश कर दिया जाये पर इसके विषय में वाद-विवाद किसी अगले समय के लिए स्थगित रखा जाये।

***माननीय सदस्यः** हां, हां!

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** मैं वाक्य-खंड 14 को पेश करता हूं।

14. (1) (क) राज्य सभा में ये शामिल होंगेः

(1) मनोनीत सदस्य, जिनको राष्ट्रपति विश्वविद्यालयों तथा विज्ञान-सम्बन्धी संस्थाओं के परामर्श से मनोनीत करेंगे, पर इनकी संख्या 10 से ज्यादा न होगी।

(2) अंगों के प्रतिनिधि, जो अंग की प्रत्येक 10 लाख की आबादी पर 50 लाख तक 1 प्रतिनिधि के हिसाब से और इसके ऊपर प्रत्येक

20 लाख की आबादी पर 1 प्रतिनिधि के हिसाब से लिए जायेंगे, पर अंग प्रतिनिधियों की कुल संख्या अधिक से अधिक 20 होगी।

व्याख्याः– अंग का अर्थ है, एक प्रान्त या भारतीय रियासत जो अपने निजी अधिकार के नाते संघ की पार्लियामेंट के लिये अपना सदस्य निर्वाचित करता है। भारतीय रियासतों के सम्बन्ध में जिनका 'कौंसिल आफ स्टेट्स' में प्रतिनिधि भेजने के लिये गुट बना दिया गया है, अंग का अर्थ है इस तरह बने गुट से।

(ख) 'कौंसिल आफ स्टेट्स' में आने वाले, प्रत्येक अंग के प्रतिनिधियों का चुनाव उस अंग की व्यवस्थापिका की नीचे वाली सभा करेगी।

(ग) 'हाउस आफ पीपुल्स' में संघीय-प्रदेश-क्षेत्र के बाशिन्दों के प्रतिनिधि होंगे, जिनका अनुपात प्रत्येक 10 लाख की आबादी पर एक से कम न होगा और प्रत्येक 750 हजार की आबादी पर एक से ज्यादा न होगा।

(घ) प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र से किसी भी समय चुने जाने वाले सदस्यों की संख्या तथा उस निर्वाचन-क्षेत्र की आबादी का, जो सद्यः पूर्व की मतगणना में निश्चित हुई होगी, अनुपात यथाशक्य संघ के सारे प्रदेशों में एक समान होगा।

(2) उपरोक्त प्रतिनिधियों का चुनाव उन व्यवस्थाओं के अनुसार होगा जो इसके सम्बन्ध में परिशिष्ट में दी हुई है। पर, शर्त यह है कि 'हाउस आफ़ पीपुल्स' का चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर होगा।

(3) प्रत्येक दसवार्षिक मतगणना के सम्पन्न हो जाने पर, ऐसे अधिकारी द्वारा, ऐसे तरीकों से तथा उस समय से जैसा कि संघ पार्लियामेंट कानून द्वारा निश्चित करे, दोनों सभाओं में विभिन्न प्रान्तों, भारतीय रियासतों और रियासती गुटों का प्रतिनिधित्व पुनः निश्चित किया जायेगा।

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

(4) 'कौन्सिल आफ स्टेट्स' एक स्थायी सभा होगी, जो भंग न की जा सकेगी, परन्तु जहां तक हो सके लगभग उसके एक तिहाई सदस्य हर दूसरे वर्ष उन व्यवस्थाओं के अनुसार जो इसके लिये परिशिष्ट में दी गई हैं, उससे अलग हो जायेंगे।

(5) 'हाउस आफ पीपुल्स' उस तारीख से जो इसकी प्रथम बैठक के लिये नियत की जायेगी पर चार साल तक, इससे ज्यादा नहीं, चालू रहेगी अगर इससे पूर्व ही भंग न कर दी जाये और उक्त चार साल की अवधि के समाप्त होने पर यह सभा भंग हो जायेगी:

पर, शर्त यह है कि आकस्मिक आवश्यकता के समय उक्त अवधि राष्ट्रपति द्वारा बढ़ाई जा सकती है, पर एक साथ एक साल से अधिक के लिए नहीं तथा किसी भी हालत में, आकस्मिक आवश्यकता की अवधि बीत जाने के बाद 6 माह से अधिक के लिये नहीं।

***अध्यक्षः** इस खंड पर वाद-विवाद बाद में होगा। अब हम खंड 15 को लेते हैं।

वाक्य-खंड 15

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं यह वाक्य-खंड पेश करना चाहता हूं:

"पार्लियामेंट को बुलाने, स्थगित करने और भंग करने के लिये तथा दोनों सभाओं के पारस्परिक सम्बन्ध को व्यवस्थित करने के लिये और मतदान की विधि, सदस्यों के विशेषाधिकार, सदस्यता-सम्बन्धी अपात्रता, पार्लियामेंट की कार्यविधि, जिसमें आर्थिक प्रश्न-सम्बन्धी विधि भी शामिल है, आदि की व्यवस्था के लिये स्वाभाविक आदेश होंगे। खास करके, अर्थ-सम्बन्धी बिल आवश्यक रूप से निचली सभा में पहले पेश होंगे। ऊपर वाली सभा को अर्थ-सम्बन्धी बिलों में संशोधन रखने का अधिकार होगा। नीचे वाली सभा उन संशोधनों पर विचार करेगी और तत्पश्चात्, चाहे वह संशोधनों को स्वीकार करे या नहीं, बिल को संशोधित रूप में (जब कि संशोधन स्वीकृत हुये हों) या उसको

मौलिक स्वरूप में (यदि संशोधन स्वीकृत न हुये हों) राष्ट्रपति के समक्ष उनकी स्वीकृति के लिये रखा जायेगा और उनकी स्वीकृति मिलने पर वह कानून बन जायेगा। यदि इस बात पर मतभेद होगा कि बिल अर्थ-सम्बन्धी है या नहीं तो 'हाउस आफ पीपुल्स' के अध्यक्ष का निर्णय अंतिम होगा। अर्थ सम्बन्धी बिलों को छोड़कर अन्य मामलों में दोनों सभाओं को कानून बनाने का समान अधिकार होगा और गतिरोध उत्पन्न होने पर दोनों सभाओं की सम्मिलित बैठक उसका निर्णय करेगी। राष्ट्रपति को राष्ट्रीय परिषद् (National Assembly) द्वारा स्वीकृत बिल को 6 माह के अन्दर पुनर्विचारार्थ वापस भेजने का अधिकार होगा।"

श्रीमान्, ये ऐसे मसले हैं जिनके लिये सभी विधानों में व्यवस्था रहती है और हमारे विधान में इनके लिए पूर्ववत व्यवस्था होगी। इस खण्ड से मस्विदा बनाने वालों को केवल आवश्यक व्यवस्था रखने का अधिकार प्राप्त होता है।

(संशोधन नम्बर 300 और 301 फहरिस्त 2 में संशोधन नं. 27 परिशिष्ट सूची नं. 1 के नहीं पेश किए गए।)

***श्री. के. सन्तानम्:** श्रीमान्, मेरा प्रस्ताव है कि:

"वाक्य-खण्ड 15 में अन्तिम वाक्य के स्थान में यह लिखा जाए:

'अर्थ-सम्बन्धी बिलों के अतिरिक्त और बिल जो राष्ट्रपति के समक्ष उनकी स्वीकृति के लिए पेश किए गए हों, उनको वह पुनर्विचारार्थ संघ की व्यवस्थापिका सभा के पास वापस भेज सकते हैं, पर राष्ट्रीय परिषद् द्वारा स्वीकृत होने के 6 सप्ताह के बाद यह वापस नहीं किए जायेंगे'।''

दो परिवर्तन लाने के लिए ऐसा किया जाता है। वाक्य-खण्ड के अनुसार बिल 6 मास के समय के अन्दर पेश होने चाहिएं। वाक्य-खण्ड में यह शब्द कि "6 मास में फिर विचार के लिए" भ्रम पैदा करते हैं और वह इस प्रकार कि बिल 6 मास के अन्दर पेश होना चाहिए या यह कि 6 मास के भीतर राष्ट्रीय परिषद् का अधिवेशन हो और वह इस बिल पर विचार करे। इसके अतिरिक्त मेरे बहुत

[श्री के. सन्तानम्]

से मित्र 6 मास के समय को बहुत लम्बा समय समझते हैं। इसलिए 6 सप्ताह के अन्दर राष्ट्रपति द्वारा बिल लौटाने का संशोधन यहां रखा गया है।

फिर इस नए वाक्य-खण्ड के अनुसार सभी बिल लौटा दिए जा सकते हैं। यह अर्थ-सम्बन्धी बिलों के सम्बन्ध में बड़ा असुविधाजनक होगा। राष्ट्रपति को यह अधिकार न होना चाहिए कि वह अर्थ-सम्बन्धी बिलों को लौटा दे; क्योंकि सद्यः आवश्यक होने पर सभा उनको पास कर सकती है और उन्हें अन्तिम समझना चाहिए। ऊपर वाली सभा को भी इस बात के लिए समुचित योग्य नहीं समझा गया कि वह अर्थ-सम्बन्धी बिलों में परिवर्तन करे। जब अर्थ-सम्बन्धी बिलों पर पुनः विचार का अधिकार ऊपर वाली सभा से छीन लिया जाता है तो कोई कारण नहीं कि राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया जाए।

श्रीमान्, मैं इसे उपस्थित करता हूं।

*__अध्यक्षः__ और कोई संशोधन नहीं है। सो, संशोधन और असली वाक्य-खण्ड पर अब वाद-विवाद हो सकता है।

*__श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर__ (मद्रास : जनरल): मैं संशोधन का समर्थन करता हूं। हमें प्रसन्नता होगी यदि अर्थ सम्बन्धी बिलों के विषय में कोई व्यवस्था कर दी जाए, जिससे राष्ट्रपति द्वारा पुनर्विचारार्थ उसे लौटाने की अवधि में कमी हो जाए। मुझे मालूम है कि बहुत से मामलों में जब केन्द्रीय व्यवस्थापिका ने बिल पास कर दिए तो हमारे अभिप्राय के विरुद्ध कुछ व्यवस्थाएं उसमें आ गईं। एक आर्थिक मामले में भी ऐसा हुआ है कि बजट में, जिसे हमने नामंजूर कर दिया था, एक ऐसी रकम थी जिसे हम नामंजूर करना नहीं चाहते थे और वह ऊपर वाली सभा में गया और फिर गवर्नर-जनरल के हस्तक्षेप पर वहां से दूसरे रूप में वापस आया। बिल में भी बहुत सी गलतियां हो जाती हैं और हम उनको ठीक करना चाहते हैं। परिषद् को अपने आर्थिक बिलों को दुबारा विचारने के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। सिवा इसके कि स्थायी विधान में ही कुछ परिवर्तन किया जाए। मेरी समझ में नहीं आता कि आर्थिक बिलों के विषय में भी कोई ऐसा नियम क्यों न बनाया जाए। यह सच है कि राष्ट्रपति को कोई ऐसा अधिकार नहीं होना चाहिए, जिससे वह किसी तात्कालिक आवश्यकता के समय बिल की प्रगति में रुकावट डाले। मैं चाहता हूं कि मस्विदा बनाने वाले, जो बाद में विस्तार

की बातों का समावेश करेंगे, इस बात का ध्यान रखेंगे कि यदि कोई गलती रह गई है तो उसको ठीक करने के लिए यह अधिकार यहां दिया जाए कि बिल 10 दिन के अन्दर, बाद नहीं, वापस भेजा जा सके। अन्यथा किसी जरूरी मामले के विषय में राष्ट्रपति को उस बिल को वापस करने का अधिकार नहीं होना चाहिये। ऐसे मामले छोटी सभा के निर्णय पर पूर्णरूप से छोड़ देने चाहिएं और राष्ट्रपति को ऐसे मामलों में नीचे वाली सभा या ऊपर वाली सभा का स्थान नहीं लेना चाहिए। बिलों को पेश करने के विषय में मैं कह चुका हूं कि ऐसे बहुत से अवसर आते हैं कि जब एक सभा ने जल्दी में कुछ काम किया तो उसे दूसरी सभा ने ठीक कर दिया। ऐसा भी हुआ है कि जब दोनों सभाओं ने किसी मामले पर सोच-विचार कर लिया तब वह पुन: विचार के लिए भेजा गया। गवर्नमेण्ट आफ इंडिया एक्ट में वर्तमान व्यवस्था यह है कि गवर्नर-जनरल कुछ बिलों को सम्राट के विचार के लिए छोड़ रख सकता है और फिर वह बिल इस सुझाव के साथ कि उस बिल में क्या क्या परिवर्तन होने चाहिएं, वापस कर सकता है। वाक्य-खण्ड 15 में जो और बातें शामिल करनी चाहिएं, उनके विषय में मैं कुछ सुझाव पेश करना चाहता हूं। यह वाक्य-खण्ड उतने ध्यान और उतनी सावधानी से नहीं बनाया गया है, जितने दूसरे वाक्य-खण्ड बनाए गए हैं। कई और मामलों का ज़िक्र यहां नहीं किया गया है। मिसाल के तौर पर बजट के तख़मीने के बारे में यहां कोई ज़िक्र नहीं है। वर्तमान एक्ट के अनुसार बजट पहले व्यवस्थापिका सभा के सामने पेश किया जाता है और फिर 'कौंसिल आफ स्टेट्स' के सामने व्यवस्थापिका सभा और कौंसिल आफ स्टेट्स को यह अधिकार है कि वह उसको बदल दे या घटा दे। परन्तु यदि व्यवस्थापिका सभा किसी मांग पर इन्कार कर दे तो 'कौंसिल आफ स्टेट्स' उसको पुन: प्रतिष्ठित नहीं कर सकती। यह प्रसंग ऐसा है कि या तो 'कौंसिल आफ स्टेट्स' को यह अधिकार देना चाहिए और या व्यवस्थापिका सभा से यह अधिकार ले लेना चाहिए। मुझे खेद है कि यह उन विषयों की फ़हरिस्त में शामिल नहीं किया गया है, जिनके लिए और मामलों के साथ में विचार करने की व्यवस्था बनानी होगी। मैं यह भी सुझाव पेश करता हूं कि मन्त्रियों को रखने और बर्खास्त करने के लिये व्यवस्था होनी चाहिए। इस समय उसके लिऐ कोई व्यवस्था नहीं है। हमने अब एक संशोधन के द्वारा व्यवस्था बनाई है, जिसके आधार पर प्रधान मंत्री नियत किया जायेगा जो बाद में दूसरे मन्त्रियों को चुनेगा और फिर राष्ट्रपति उनको स्वीकार करेगा। परन्तु, जहां तक बर्खास्त करने का सम्बन्ध है, कोई व्यवस्था नहीं बनाई गई है। यदि सभा का मन्त्रियों

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

में विश्वास नहीं है तो राष्ट्रपति उनको अपने अधिकार से हटा सकता है। ऐसी कोई व्यवस्था यहां ज़रूर होनी चाहिए।

एक या दो और मामले हैं, जिनके लिए खण्ड 15 में व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए। उदाहरण के रूप में सेक्सन 103 को लीजिए, जिसमें दो या अधिक यूनिटों के लिए समान कानून रखने की व्यवस्था की गई है।

रियासतें और प्रान्त हैं, जो संघ में शामिल होंगे। रियासतों और उनके समूहों के बीच में कुछ-साधारण मामले हो सकते हैं। वह विषय बिल्कुल प्रान्तीय स्वरूप के हों। कुछ भी हो, आसानी के लिए वे दो यूनिट्स चाहेंगे कि केन्द्रीय सरकार कानून बनाए। उनकी मर्ज़ी से केन्द्रीय सरकार कानून बना सकती है। इस बात के लिए यहां कोई व्यवस्था नहीं है।

यदि हम तीनों फहरिस्तों को मान लें, तो इनमें से एक में वह मामले हैं जो खासतौर से प्रान्त के अधिकार में हैं। प्रान्तीय फहरिस्त में कुछ विषय हैं, और अगर दो या तीन समूह एक ही कानून को चाहें, तो उनके लिए विशेष व्यवस्था बनानी चाहिए और अगर कोई अधिकारी उसकी ओर ध्यान देने वाला हो सकता है तो वह केन्द्रीय सरकार ही है जो उन अंगों के सम्बन्ध में एक कानून बना सकती है। विधान में ऐसी कुछ व्यवस्था होनी चाहिए और वह वाक्य-खण्ड 15 में आना चाहिए। मस्विदा बनाने वालों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए।

***एक माननीय सदस्य:** श्रीमान्, मैं जानना चाहता हूं कि यहां एक बात रह गई है और वह शायद भूल से रह गई है। वाक्य-खंड 15 के पिछले भाग में ''राष्ट्रीय परिषद्'' यह शब्द हैं। उसके अनुसार राष्ट्रपति को अधिकार होना चाहिए कि वह परिषद् से पास किये हुए बिलों को वापस कर दे। अभी जब हम वाक्य-खंड 13 का विचार कर रहे थे, तो मालूम हुआ कि शब्द ''राष्ट्रीय परिषद्'' वहां नहीं लिखे गए हैं और उनके स्थान में ''संघ की पार्लियामेण्ट'' यह शब्द लिख दिए हैं। मेरा ख्याल है कि ''पार्लियामेण्ट की दोनों सभाओं'' यह शब्द वहां होने चाहिएं।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, संतानम् के संशोधन को मैं स्वीकार करता हूं। आखिरी वक्ता के शब्दों के सम्बन्ध में मैं बताना चाहता हूं–श्री सन्तानम् ने अपने संशोधन में ''राष्ट्रीय परिषद्'' के स्थान में ''संघ की व्यवस्थापिका सभा' (Federal Legislature) यह शब्द जोड़ दिए हैं। इस

कारण आखिरी वक्ता की आपत्ति संगत नहीं है। कुछ बातें हैं, जिनका ज़िक्र श्रीमान् अनन्तशयनम् आयंगर ने किया है और उनमें से आखिरी बात यह है कि दो अंग (Units) जो ऐसे मामलों के लिए, जो उनके बीच में समान हों, कानून का निर्माण चाहें तो संघ की व्यवस्थापिका सभा के पास इसकी व्यवस्था होनी चाहिए और संघ के दूसरे अंग यदि उस कानून को अपने ऊपर लागू करना चाहें तो कर सकते हैं, यदि उनकी ऐसी इच्छा हो। यह बड़ी ज़रूरी बात है। श्रीमान्, मैं उनको यह आश्वासन दे सकता हूं कि जब विधान बनेगा तो उस समय इस बात के वास्ते और साथ ही उन मामलों के लिए, जिनका संघ के विधान के सिद्धान्तों में जिक्र नहीं किया गया है, व्यवस्था बनाई जायेगी। परन्तु मैं इतना कह सकता हूं कि ऐसे मामलों की व्यवस्था उन प्रतिदिन के विषयों के अन्तर्गत नहीं आ सकती, जिनका उल्लेख वाक्य-खंड 15 में किया गया है। परन्तु मैं उनको विश्वास दिला सकता हूं कि यह विषय जिसका उल्लेख किया गया है, याद रखा जायेगा जब विधान की रचना की जायेगी। मुझे इससे अधिक कुछ नहीं कहना है।

*__अध्यक्षः__ मैं इस संशोधन पर वोट लूंगा। प्रश्न यह है कि वाक्य खंड 15 में आखिरी वाक्य के स्थान में निम्नलिखित जोड़ा जायेः

> ''अर्थ-सम्बन्धी बिलों के अतिरिक्त और बिल जो राष्ट्रपति के समक्ष उनकी स्वीकृति के लिये पेश किए गए हों, उनको वह पुनर्विचारार्थ संघ की व्यवस्थापिका सभा के पास वापस भेज सकते हैं, पर राष्ट्रीय परिषद् द्वारा स्वीकृत होने के 6 सप्ताह के बाद ये वापस नहीं किए जाएंगे।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ संशोधित वाक्य-खंड 15 पर मैं अब वोट लेता हूं।

संशोधित रूप में वाक्य-खण्ड 15 स्वीकार कर लिया गया।

वाक्य-खण्ड 16

*__माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः__ अगला वाक्य-खण्ड 16 है, यह भाषा के सम्बन्ध में है।

*__श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः__ क्या मैं माननीय प्रस्तावक से प्रार्थना कर सकता हूं कि वह इस वाक्य-खण्ड को अभी पेश न करें। इसे कुछ समय के लिए रोके रखें।

*माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु मैं बताना चाहता हूं कि सम्भवतः यह विशेष मामला इस अधिवेशन में वाद-विवाद के लिए उपस्थित नहीं होगा। यदि सभा की यही इच्छा है कि मैं इस वाक्य-खण्ड को पेश न करूं, तो मैं पेश नहीं करूंगा।

*अध्यक्षः अभी सुझाया गया है कि वाक्य-खण्ड 16 को इस समय पेश न किया जाए। मैं इस पर वोट लूंगा।

प्रस्ताव यह है कि वाक्य-खंड 16 पर विचार स्थगित रखा जाए।

प्रस्ताव ग्रहण किया गया।

अध्याय 3

वाक्य-खंड 17

*माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः वाक्य-खंड 17 राष्ट्रपति के उन अधिकारों के सम्बन्ध में है, जिनके बल पर वह पार्लियामेण्ट की छुट्टी के समय में विशेष कानून जारी कर सकते हैं।

"17. (1) यदि किसी समय में जब कि संघ की पार्लियामेण्ट (Parliament) की बैठक नहीं हो रही है, राष्ट्रपति को निश्चय हो जाए कि परिस्थिति ऐसी है जिसमें उनको फौरन कार्य करना चाहिए तो ऐसी दशा में वह विशेष कानून (Ordinance) जो परिस्थिति के कारण आवश्यक हो गया हो, जारी कर सकते हैं।

(2) इस सेक्शन के अधीन जारी किए हुए विशेष कानून को वही बल और प्रभाव प्राप्त होगा जो कि राष्ट्रपति से मन्जूर किए हुए संघ की पार्लियामेण्ट के एक्ट को होता है। परन्तु हर एक विशेष कानून–

(क) संघ की पार्लियामेण्ट के सामने रखा जाएगा। और संघ की पार्लियामेण्ट में पेश होने के 6 सप्ताह बाद प्रयोग में न रहेगा या अगर उस समय व्यवस्थापिका उसके विरुद्ध प्रस्तावों को पास कर दे तो ऐसे प्रस्तावों में से दूसरे प्रस्ताव के पास होने पर वह प्रयोग में नहीं रहेगा। और–

(ख) राष्ट्रपति किसी भी समय उसको वापस ले सकता है।

(3) यदि इस खंड के आधीन कोई आर्डिनेंस (विशेष कानून) ऐसा आदेश रखे या ऐसी सीमा तक आदेश रखे कि उसे संघ की पार्लियामेण्ट इस विधान के अधीन कानून बनाने में असमर्थ हो तो वह रद्द समझा जाएगा।''

इस वाक्य-खंड में राष्ट्रपति को विशेष कानून जारी करने का अधिकार दिया गया है। विशेष कानूनों को बनाने के लिए राष्ट्रपति को सीमित अधिकार देने में कोई आपत्ति नहीं है। विशेष कानून तब ही बनाये जा सकते हैं जबकि व्यवस्थापिका सभा की बैठक न हो रही हो। विशेष कानून जब भी बन जाए तो जितनी जल्दी सम्भव हो उसे पार्लियामेंट के सामने रखना चाहिए और संघ की पार्लियामेंट की बैठक से 6 सप्ताह के बीतने के बाद वह प्रयोग में न रहेगा। यदि राष्ट्रपति यह ख्याल करे कि उसको काम में लाने की आवश्यकता नहीं है, तो इसलिए राष्ट्रपति को अधिकार दिया गया है कि बीच के समय में वह इस विशेष कानून को वापस कर लें। यह अधिकार देना भी जरूरी समझा गया कि जब पार्लियामेंट की बैठक न होगी और कार्रवाई करना तुरंत जरूरी है जिसके लिए पार्लियामेंट की बैठक तक रुकना सम्भव नहीं है तो राष्ट्रपति तुरन्त कार्यवाही कर सके।

***अध्यक्षः** प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना!

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान्, इस संशोधन को पेश करने से पहले मैं एक बात जानना चाहता हूं। मैंने एक संशोधन की सूचना दी थी जो कि आयरलैंड के विधान के ढांचे पर था, उसमें 5 वाक्य थे। उनमें से एक यह था कि भारतवर्ष में गो-हत्या की मनाई कानून द्वारा कर दी जाए। इस छपी हुई फहरिस्त में, जो हमें दी गई है, उस संशोधन का मैं कोई ज़िक्र नहीं देखता।

***अध्यक्षः** श्री शिब्बनलाल सक्सेना का संशोधन, जिसकी उन्होंने सूचना दी थी, विधान के उस भाग से सम्बन्ध रखता है जो पास हो चुका है और जो मौलिक अधिकारों के विषय में है। अन्तिम अवस्था में उन पर वाद-विवाद होगा। इस अवस्था में इसका प्रश्न नहीं उठता।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** धन्यवाद श्रीमान्, मैं चाहता हूं कि यह सारा का सारा अध्याय हटा दिया जाए। यह अध्याय राष्ट्रपति के विशेष कानून बनाने के सम्बन्ध में है। मैं ख्याल करता हूं कि गत कई वर्षों के विदेशी शासन और आर्डिनेन्स के शासन के कारण हमको विशेष कानून से शामिल होने की बहुत आदत पड़ गई है और यही कारण है कि स्वतन्त्र भारत के विधान में भी इन

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

विशेष कानूनों (Ordinances) को स्थान दिया है। परन्तु इनसे बुराई की सम्भावना हो सकती है।

श्री जी. सुब्रह्मण्यम् (मद्रासः जनरल): क्या माननीय सदस्य इसको संशोधन के रूप में पेश कर रहे हैं?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** मैं संशोधन पेश कर रहा हूं। पहले संशोधन पढ़ कर ही सुना देता हूं।

***अध्यक्षः** यह संशोधन नहीं है। यह मूल प्रस्ताव से उलटा है। जब सब और संशोधन पेश हो चुकेंगे, तब आप बोल सकते हैं। जहां तक मैं देखता हूं यह संशोधन नहीं है।

(श्री मलवादे ने अपने संशोधनों, नम्बर 324 तथा 325 को पेश नहीं किया।)

***श्री एच.वी. कामतः** मुझे मालूम हुआ है, श्रीमान्, कि राष्ट्रपति के तात्कालिक परिस्थिति सम्बन्धी अधिकारों के लिए एक पृथक व्यवस्था की जाएगी। इसलिए इस समय मैं संशोधन नं. 326 को पेश नहीं करना चाहता।

***श्री एच.वी. पातस्करः** वह संशोधन जो मेरे नाम से है, इस प्रकार हैः

> ''वाक्यखण्ड 17 के उपखण्ड (1) के अन्त में निम्नलिखित आदेश जोड़ दिया जाएः
>
> 'पर शर्त यह है कि ऐसे आर्डिनेन्स जारी करने के 6 महीने के अन्दर संघ-पार्लियामेंट की बैठक अवश्य बुलाई जाएगी'।''

जहां तक वाक्यखण्ड 17 का सम्बन्ध है यह राष्ट्रपति को तात्कालिक आवश्यकता के समय विशेष कानून जारी करने का अधिकार देता है। उपखण्ड (2) में यह व्यवस्था की गई है कि इस सेक्शन के अधीन घोषित किए हुए विशेष कानून को वही बल और प्रभाव प्राप्त होगा जो संघ की पार्लियामेंट के एक्ट को होता है। उपखण्ड 2 (क) बताता है कि हर एक ऐसा विशेष कानून संघ की पार्लियामेंट के आगे रखा जाएगा और संघ की पार्लियामेंट की बैठक से 6 सप्ताह के बाद प्रयोग में नहीं रहेगा। माननीय प्रस्तावक ने यह बात स्पष्ट कर

दी है कि जितनी जल्दी हो सकेगा, ऐसा किया जाएगा। मैंने जो संशोधन बनाया वह इसी विचार से रखा है कि विशेष कानून ही घोषणा के 6 मास के अन्दर संघ की पार्लियामेंट का अधिवेशन बुलाया जाए। साल में किसी समय पार्लियामेंट का अधिवेशन होगा। प्रजातन्त्र के लिए विशेष कानून अहितकर होते हैं: जनता के चित्त में जो इस सम्बन्ध में भय है उसको दूर करने के लिए यह आवश्यक है कि यह व्यवस्था होनी चाहिए कि विशेष कानून की घोषणा के 6 मास के भीतर संघ की पार्लियामेंट की बैठक हो तो मैं यह सुझाना चाहता हूं कि जब अन्तिम मस्विदा बने तो सबके हित के लिए व्यवस्था होनी चाहिए। मुझे आशा है कि ऐसा ही होगा मैं इस समय संशोधन को पेश नहीं करता।

*__अध्यक्षः__ श्री कामठ!

*__श्री एच.वी. कामतः__ मैंने संशोधन नं. 326 के सम्बन्ध में जो कहा, उसको दृष्टि में रखते हुए मैं संशोधन नं. 327 को पेश नहीं करता हूं।

(संशोधन नं. 329 और 330 पेश नहीं किए गए।)

*__श्री एच.वी. कामतः__ श्री पातस्कर के वक्तव्य को देखते हुए संशोधन नं. 331 का प्रश्न ही नहीं उठता।

(श्री सिधवा ने अपना संशोधन नं. 332 पेश नहीं किया।)

*__अध्यक्षः__ इस वाक्यखण्ड से सम्बन्ध रखता हुआ कोई दूसरा संशोधन नहीं है, जिसकी मुझे सूचना मिली हो। इस कारण इस वाक्यखण्ड पर अब वाद-विवाद हो सकता है। श्री शिब्बनलाल सक्सेना!

*__प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः__ श्रीमान्, इस वाक्यखण्ड से राष्ट्रपति को राष्ट्रीय परिषद् के निर्णय के उल्लंघन करने का अधिकार मिल जाता है। हम विशेष कानून के शासन को काफी समय तक देख चुके हैं। मैं चाहता हूं कि अब जब हम स्वतन्त्र भारत का विधान बना रहे हैं तो यह अधिकार किसी को न दें। श्रीमान्, महायुद्ध के समय में अमरीका का राष्ट्रपति और इंग्लैण्ड का प्रधानमंत्री यह अधिकार नहीं रखता था। जब हम अपने स्वतन्त्र विधान के अनुसार चलना प्रारम्भ कर रहे हैं, तो हमको यत्न करना चाहिए कि इन महान् देशों के प्रजातन्त्र सम्बन्धी सिद्धान्तों पर ही हम भी चलें। यह अधिकार यदि एक बार दे दिए जाएं तो अवश्य ये बुराई की ओर ले जायेंगे। यह अधिकार जब दे दिया जाता है। तो प्रायः तुच्छ

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

चीज़ों के लिए भी इसका उपयोग कर दिया जाता है। सत्यत: इसी एक वर्ष में जबसे हमारे मन्त्रियों ने अधिकार प्राप्त किया, हमारे सामने कितने ही विशेष कानून आ गए। इसलिए मैं ख्याल करता हूं कि यदि वह अधिकार दे दिया गया, तो इससे प्रजातन्त्र का मूल अभिप्राय ही जाता रहेगा। मैं ख्याल करता हूं कि पराधीन भारत के निरंकुश तंत्र की इस देन को हमें स्वतन्त्र भारत में न रहने देना चाहिये। हमको यह भली प्रकार सोच लेना चाहिए कि इसको हमारे नए विधान में कोई स्थान न दिया जाए। यदि कोई आवश्यक घटना हुई तो हमारी राष्ट्रीय पार्लियामेंट उसका अवश्य प्रबन्ध करेगी। ब्रिटेन और अमेरीका में किसी ऐसे अधिकार के बिना ही सब कार्य भली प्रकार चलता रहा है; खासकर पिछले महायुद्ध के समय में जबकि इन राष्ट्रों का अस्तित्व संकट में था। वस्तुत: श्रीमान्, चर्चिल ने पिछले महायुद्ध के अन्धकारमय समय में लोक-सभा को सदा साथ रखा। इससे जनता की धीरता बहुत बढ़ी और उसने पूर्णरूप से सरकार की सहायता की। शायद किसी दूसरे मार्ग से इतनी सफलता न मिलती। विशेष कानून का शासन जनता को कभी भी पसन्द नहीं होता। मैं ख्याल नहीं करता कि हमारे प्रधान मन्त्रियों और मन्त्रियों को यह वाक्य-खण्ड अधिक रुचिकर है। मेरा पक्का ख्याल है कि ऐसी व्यवस्था से हमारा विधान ही व्यर्थ हो जाएगा। इसके अतिरिक्त यह उचित नहीं है कि इतने बड़े अधिकार उस पुरुष को दे दिए जाएं जो बालिग मताधिकार के आधार पर नहीं चुना गया है। क्योंकि इससे हमारे सारे विधान का प्रजातन्त्रीय स्वरूप नष्ट हो जाएगा। इसलिए मैं सुझाव रखता हूं कि हमारे नए विधान में इस वाक्य-खण्ड के लिए कोई व्यवस्था नहीं होनी चाहिए।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** श्रीमान्, ऐसा मालूम होता है कि पहले वक्ता ने यह सेक्शन भारतीय सरकार के एक्ट में से लिया है और इसको किसी दूसरे वाक्य-खण्ड के स्थान में गलती से समझ लिया है। 1935 के गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया एक्ट में दो व्यवस्थाएं हैं जो गवर्नर-जनरल को विशेष कानून बनाने का अधिकार देती हैं। पहले व्यवस्थापिका सभा के दो अधिवेशनों के बीच के समय में वह मन्त्रियों की सम्मति के अनुसार ऐसा करता है और मन्त्री उसका उत्तरदायित्व लेते हैं। वह अपने वैयक्तिक निर्णय के आधार पर भी ऐसा कर सकता है। इसका मतलब यह हुआ कि विशेष परिस्थिति में वह अपने मन्त्रियों के निर्णय को त्याग सकता है। परन्तु उनके साथ उसे सलाह अवश्य करनी पड़ती है। दूसरा अवसर जिसमें वह विशेष कानून बनाता है, वह है गम्भीर परिस्थिति का, क्योंकि इस समय

अमन और शान्ति रखने के लिए उसका पूरा-पूरा उत्तरदायित्व है और इसी उत्तरदायित्व को निभाने के लिए वह विशेष कानून बनाता है। इस विशेष कानून की आयु केवल छः मास ही है और फिर सम्राट की अनुमति बगैर वह जारी भी नहीं किया जा सकता। मेरे माननीय मित्र, ऐसा मालूम होता है कि पिछली व्यवस्था को पहली व्यवस्था समझ गए हैं। पहली व्यवस्था उस समय के लिए है जब परिषद् की बैठक नहीं हो रही हो। और यह सम्भव नहीं होता कि एक्ट बनाने के लिए परिषद् का अधिवेशन किया जाए। अतः एक्ट के स्थान में विशेष कानून बना दिया जाता है। मेरे माननीय मित्र ख्याल करते हैं कि राष्ट्रपति इसको अपनी मर्ज़ी ही से बना लेता है। मस्विदे में यह नहीं लिखा है कि राष्ट्रपति अपनी इच्छा से ही विशेष कानून बना सकता है। तो फिर यह मतलब हुआ कि राष्ट्रपति अपने मन्त्रियों की सलाह ही से विशेष कानून बनाता है। इसका यह भी अर्थ हुआ कि इस विशेष कानून का उत्तरदायित्व मन्त्रियों पर ही रहता है और राष्ट्रपति तो केवल रबर स्टाम्प के समान होता है और केवल अपनी स्वीकृति की छाप लगा देता है। व्यवस्थापिका के सम्मुख मन्त्री इसके लिये जिम्मेदार होता है। यह प्रश्न यहां नहीं उठता कि राष्ट्रपति बालिगों की राय से नहीं चुना जाता है, क्योंकि मन्त्री-जिन पर विशेष कानून बनाने का उत्तरदायित्व है, अपने पद से हटाये जा सकते हैं। इसमें कोई आपत्ति नहीं है; क्योंकि हम राष्ट्रपति को कोई उच्छृङ्खल अधिकार नहीं देते और न राष्ट्रपति को अपनी मर्ज़ी से ही इन विशेष कानूनों को बनाने का ज़रा-सा भी अधिकार है। प्रयोजन और कारण के बयान में अर्थात् उस नोट में जो प्रान्तीय विधान के इस वाक्य-खंड में लगा हुआ है—एक मिसाल दी गई है कि लार्ड रीडिंग ने महसूलों के सम्बन्ध में एक विशेष कानून बनाया था। इसकी बहुत आवश्यकता थी। ऐसे और बहुत अवसर होंगे और सरकार से यह अधिकार छीनकर हम अपनी मूर्खता नहीं दिखाना चाहते। इसमें कोई आपत्ति नहीं है, यदि 6 महीनों में व्यवस्थापिका की बैठक बुलाई जाए। व्यवस्थापिका की बैठक के बाद ही मन्त्री एकदम विशेष अधिकार काम में नहीं लायेंगे; क्योंकि व्यवस्थापिका की बैठक में पहले ही एक एक्ट पास करा देते, यदि उनके दिमाग में ऐसा कोई विचार आता। परिषद् की समाप्ति के बाद यदि कोई आकस्मिक स्थिति आ खड़ी हो तो वे इस अधिकार का उपयोग करेंगे और उसके 6 मास बाद व्यवस्थापिका की बैठक होगी ही। इस व्यवस्थापिका की आवश्यकता नहीं है कि विशेष कानून के बनने के बाद 6 महीने के अन्दर व्यवस्थापिका की बैठक अवश्य होनी चाहिये। बहुत से अवसर होंगे, जब छोटी-छोटी बातों के लिए विशेष कानून बनाना पड़ेगा। ऐसे छोटे-छोटे मामलों के लिये व्यवस्थापिका का अधिवेशन

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

नहीं बुलाया जा सकता। इसलिये मेरा विचार है कि न इस संशोधन में और न उस विरोध में तत्व है, जिसे श्री शिब्बनलाल सक्सेना ने इस वाक्य-खंड के सम्बन्ध में रखा है।

*__श्री एच.वी. कामतः__ श्रीमान्, मेरा विचार है कि वाक्य-खंड 17 में एक छोटी सी भ्रांति है, जिसे सर गोपालस्वामी, मेरी प्रार्थना है, अपने उत्तर में दूर कर दें। इस वाक्य-खंड में हम राष्ट्रपति और संघ की पार्लियामेंट को दो अलग-अलग चीज़ें समझते हैं। इसके विपरीत वाक्य-खंड 13 में हमने बताया है कि संघ की पार्लियामेंट राष्ट्रपति और दो सभाएं अर्थात् ''कौन्सिल आफ स्टेट्स'' ''हाउस ऑफ़ पीपुल्स'' से मिलकर बनी हुई है। मैं स्वयं यह अनुभव करता हूं, श्रीमान्, कि वाक्य-खंड 13 में ''राष्ट्रीय परिषद्'' इस शब्द का काटना दुर्भाग्य था; क्योंकि यदि हम उसको रखते तो हम दोनों सभाओं को राष्ट्रीय सभा के नाम से कह सकते थे और पार्लियामेंट राष्ट्रपति और राष्ट्रीय सभा इन दोनों से मिलकर बनती। वरना् संघ की पार्लियामेंट राष्ट्रपति और दोनों सभाओं के सम्बन्ध में सारे विधान में भ्रांति पैदा होगी।

*__श्री नजीरुद्दीन अहमदः__ श्रीमान्, मैं उस आलोचना के विषय में थोड़े से शब्द कहना चाहता हूं, जिसे उस माननीय सदस्य ने किया है जिसने अध्याय 3 को शामिल करने का विरोध किया था। उन्होंने अपने भाषण में एक भावना प्रकट की है जो सभा के सभी सदस्यों के मन में है। वह भाव यह है कि भारत स्वतंत्र होने वाला है, परन्तु उस संशोधन के संबंध में जो दूसरे भाव उन्होंने व्यक्त किये हैं, उनके साथ मेरी कोई सहानुभूति नहीं। माननीय सदस्य का ऐसा ख्याल मालूम होता है कि स्वतंत्र भारत में ऐसे कानून नहीं होने चाहियें। परन्तु हम लोकतन्त्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त कर रहे हैं और लोकतन्त्र का अर्थ है—कानून का शासन। माननीय सदस्य विशेष कानून के दुरुपयोग से डर रहे हैं जिसके पिछले संग्राम में हमें काफी अनुभव हो चुका है। मेरा विचार है कि यह भय नहीं होना चाहिये। यह अधिकार हमारे द्वारा निर्वाचित पुरुषों और हमारी पसंद के प्रतिनिधियों द्वारा ही उपयोग में लाया जाएगा और वे निःसंदेह विश्वसनीय मंत्रियों की सलाह से ही काम करेंगे। इसलिये यह अनुमान करना उचित ही है वह अपने अधिकार का बुरा उपयोग नहीं करेंगे। ऐसी परिस्थिति में मैं यही कहूंगा कि उनको अधिकार मिल जाने चाहिएं। परन्तु उस अधिकार का उचित और अनुचित प्रयोग ही असली समस्या है। मेरा ख्याल है कि सरकार को सुगमता से चलाने के लिए इस अधिकार

की आवश्यकता अवश्य है। जब व्यवस्थापिका सभा की बैठक न हो रही हो और जब कोई बड़ी आवश्यकता उपस्थित हो जाए, तो ऐसी परिस्थिति में क्या होगा? आकस्मिक स्थिति के विषय में यह है कि उनके भेद अगणित हैं। एक संग्राम का गदर या उसी प्रकार की कोई और चीज़ उपस्थित हो सकती है। खाद्य-पदार्थों की कमी और ऐसे ही दूसरे उपद्रव खड़े हो सकते हैं। सम्भव है, उस समय व्यवस्थापिका सभा की बैठक न हो रही हो। अतः राष्ट्रपति को यह अधिकार मिलना चाहिए, जिसको वह जाति के हित के लिए प्रयोग में ला सके। ऐसी दशा में मैं यही कहूंगा कि इस अधिकार का होना बहुत ही आवश्यक है। मैं यह कभी भी नहीं सोच सकता कि उसका दुरुपयोग होगा; बल्कि वह हमारे हित के लिए ही प्रयुक्त किया जायेगा।

माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः मैं अपने माननीय मित्र श्रीमान्, अनन्तशयनम् आयंगर का बहुत अनुग्रहीत हूं कि उन्होंने ऐसी सफलता से संशोधनों और इस वाक्य-खण्ड के पास होने में जो विरोध हुआ, उसका प्रत्याख्यान किया। उन्होंने इन दोनों बातों पर जो कहा उससे अधिक मैं कुछ नहीं कह सकता। मैं उस बात की ओर संकेत करना चाहता हूं जिसका जिक्र भी कामठ ने किया था और वह 'संघ की पार्लियामेंट' इन शब्दों के प्रयोग के विषय में है। यह ऐसा विषय है जिस पर सोच-विचार करना आवश्यक है। राष्ट्रपति विशेष कानून को जारी करता है और यदि वह उसको कानून की दोनों सभाओं के सामने रखता है तो दो स्थितियां सामने आती हैं, जिनको ध्यान में रखना चाहिए। यदि विशेष कानून एक ऐसे मामले से सम्बन्ध रखे जिसके लिए स्थायी कानून बनाना आवश्यक है, तो ऐसा विशेष कानून समूची पार्लियामेंट में मंजूर किया जाना चाहिए, जिसमें राष्ट्रपति भी शामिल हों; क्योंकि यह एक कानून होगा। परन्तु यदि यह ऐसा विशेष कानून है जो केवल अस्थायी काल के लिए है, या यह ऐसी बात है जिसमें व्यवस्थापिका की दोनों सभाएं एक प्रस्ताव द्वारा उसे अस्वीकृत करें, तो ऐसी दशा में इसका प्रयोग बन्द हो जाएगा। उस दशा में शायद ''पार्लियामेंट'' इस शब्द का प्रयोग ठीक नहीं है। परन्तु इस वाक्यांश के शब्दों के सभी पहलुओं पर उस समय विचार किया जाएगा जब विधान पर अन्तिम रूप से विचार होगा।

अध्यक्षः मैं अब वाक्य-खंड 17 पर वोट लूंगा।

वाक्य-खण्ड 17 ग्रहण किया गया।

वाक्य-खण्ड 18

***अध्यक्षः** हम अब अगला वाक्यांश लेंगे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, हम फेडरल जुडिकेचर के अध्याय 4 को लेते हैं। वह वाक्य-खण्ड, जिसको मुझे पेश करना है, विधान का एक बहुत आवश्यक भाग है। मेरे पास दो या तीन संशोधन हैं और मुझे आशा है कि आप मुझसे सहमत होंगे कि इस खास वाक्य-खण्ड को पेश करने के बाद, इस वाक्यांश के सम्बन्ध में जो और कार्यवाही होगी उसको कल तक के लिए रोक देंगे।

***अध्यक्षः** मैं अभी यह सुझाने वाला ही था कि आप वाक्य-खण्ड और संशोधनों को यथाविधि पेश कर दें और उन पर वाद-विवाद कल हो। यदि वाक्य-खण्ड को आप आज पेश कर सकते हैं, तो संशोधनों को भी पेश कर सकते हैं।

माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः वास्तव में यह सम्भव है कि एक सर्व-सम्मत संशोधन से और सब संशोधनों पर विचार करना जरूरी न रह जाए।

***अध्यक्षः** आप पहले वाक्य-खण्ड को पेश कीजिए।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** मैं वाक्य-खण्ड 17 को पेश करता हूं:

"17. एक सर्वोच्च न्यायालय होगा, जिसकी रचना तथा जिसके अधिकार और अधिकार-क्षेत्र उस प्रकार के होंगे जैसा कि संघ की न्याय-शासन प्रबन्ध सम्बन्धी कमेटी सिफारिश करेगी, सिवा इसके कि सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश राष्ट्रपति द्वारा चीफ जस्टिस तथा सर्वोच्च न्यायालय के और हाईकोर्टों के उन न्यायाधीशों से सलाह लेने के बाद, जो इस काम के लिए आवश्यक हो, नियुक्त किया जायेगा।"

***अध्यक्षः** मुझे दो या तीन संशोधनों की सूचना मिली है। रस्मी तौर पर वे आज पेश किये जा सकते हैं। ऐसा करने से कल का कुछ समय बच जायेगा।

(सर्वश्री जसपतराय कपूर, बी. पोकर साहब बहादुर, के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुर, रायबहादुर श्यामनन्दन सहाय और एच.वी. पातस्कर ने अपने संशोधन नं. 333 से 336 तक पेश नहीं किए।)

***श्री के. संतानम्ः** मैं प्रस्ताव करता हूं कि वाक्य-खण्ड 18 के स्थान पर निम्नलिखित अंश रखा जाएः

''18. एक सर्वोच्च न्यायालय होगा, जिसकी रचना तथा जिसके अधिकार और अधिकार-क्षेत्र उस प्रकार के होंगे जैसा कि संघ की न्यायशासन प्रबन्ध सम्बन्धी कमेटी सिफारिश करेगी, सिवा इन बातों के सम्बन्ध मेंः

(क) पैरा 10 के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय को जो अतिरिक्त न्यायाधिकार दिये जायेंगे, वह संघ के कानून द्वारा ही दिये जायेंगे।

(ख) सर्वोच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश तथा उसके अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति संघ की पार्लियामेंट की दोनों सभाओं की एक सम्मिलित स्थायी समिति से सलाह लेकर जिसमें 'हाउस आफ पीपुल्स' के 6 सदस्य और 'कौन्सिल आफ स्टेट्स' के 5 सदस्य होंगे, करेगा।

(ग) संघ के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का वेतन और पेंशन संघीय कानून द्वारा निर्धारित किये जायेंगे और किसी भी न्यायाधीश के सम्बन्ध में उनमें कोई परिवर्तन न किया जायेगा जिससे उसको नुकसान हो।''

श्रीमान, वाक्य-खण्ड (ख) के स्थान में एक पुनरावृत अंश रखने की सूचना मैंने आज दी है और आपसे अनुरोध है कि इसे कल पेश करने की मुझे अनुमति दें।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मैं निम्नलिखित संशोधन पेश करती हूं– वाक्य-खण्ड 18 के बाद निम्नलिखित नया खण्ड जोड़ा जायेः

''18 (क) किसी नव-निर्मित प्रान्त में नये हाईकोर्ट स्थापित किये जा सकते हैं, पर जब उस प्रान्त की व्यवस्थापिका इसके लिए गवर्नर से निवेदन करे और वह राष्ट्रपति द्वारा स्वीकृत हो।''

श्रीमान, मैं आपकी अनुमति चाहूंगी कि इस पर बाद में वाद-विवाद हो।

***अध्यक्षः** यह एक स्वतन्त्र खण्ड है और इस पर हम स्वतन्त्र रूप से विचार करेंगे। ठीक 1 बजा है। अब हमारी बैठक कल प्रातः 10 बजे तक के लिए स्थगित रहेगी।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** आज प्रातः काल मैंने एक संशोधन की सूचना दी थी। क्या मुझे उसे पढ़ने की आज्ञा है, श्रीमान्?

***अध्यक्षः** हमने सभा स्थगित कर दी है। इस पर हम कल विचार करेंगे।

तत्पश्चात् मंगलवार, 29 जुलाई 1947 ई. के 10 बजे के लिए सभा स्थगित हुई।

Con. 3. 4.12. 47
750

अंक 4

संख्या 12

मंगलवार
29 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	संघीय विधान कमेटी की रिपोर्ट	1

भारतीय विधान-परिषद्

मंगलवार, 29 जुलाई सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कांस्टीट्यूशन हाल नई दिल्ली में दस बजे से माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में आरम्भ हुई।

संघीय विधान-कमेटी की रिपोर्ट

खण्ड 18

***अध्यक्षः** कल हम खण्ड 18 पर विचार कर रहे थे। कुछ संशोधन पेश किये गये थे और कुछ संशोधन पेश नहीं किये गये थे। श्री अनन्तशयनम् आयंगर के नाम से एक संशोधन है। क्या आप उस पर अब विचार करेंगे?

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल)**:** श्रीमान्, इसके पूर्व कि हम आज का कार्य आरम्भ करें, क्या मैं यह कह सकता हूं कि राष्ट्रीय झंडे को स्वीकार करने के पश्चात् अब हमें अपने राष्ट्रीय गीत के प्रश्न को भी हल करना है? श्रीमान् अपने पद की हैसियत से आपको जो अधिकार प्राप्त हैं उनको प्रयोग में लाते हुये आपने कृपा करके झंडे के बारे में एक कमेटी नियुक्त की है। श्रीमान् क्या मैं आपसे प्रार्थना करूं कि इसी प्रकार इस सम्बन्ध में भी एक कमेटी नियुक्त की जाये ताकि वह हमारे राष्ट्रीय गीत के प्रश्न पर विचार करे और उसे जल्दी हल कर दे?

***अध्यक्षः** मैंने इस मामले पर विचार किया है लेकिन मैं अभी तक इसके बारे में कुछ निश्चय नहीं कर पाया हूं। राष्ट्रीय गीत का प्रश्न राष्ट्रीय झंडे के प्रश्न से कुछ अधिक समय ले सकता है और हमें उसके सम्बन्ध में शीघ्रता नहीं करनी चाहिये। इसलिये मुझे स्वयं कुछ जल्दी नहीं है। हम अब पूरक सूची (सप्लिमेंटरी लिस्ट) 2 का संशोधन नं. 15 उठायेंगे। अब वह खण्ड परिवर्धित है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल)**:** श्रीमती दुर्गाबाई उसे पेश कर चुकी हैं।

***अध्यक्षः** श्री अल्लादी का एक संशोधन है। क्या आप उस पर विचार करेंगे?

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास : जनरल): श्रीमान् मैं निम्नलिखित संशोधन पेश करने की अनुमति चाहता हूं:

"18. सर्वोच्च अदालत–एक सर्वोच्च अदालत होगी जिसके विधान तथा अधिकार व न्यायाधिकार वही होंगे जिनकी सिफारिश संघीय न्यायाधीशों से सम्बन्धित कमेटी करे परन्तु वे निम्नलिखित परिवर्तनों और दशाओं के अधीन होंगे:

(क) सर्वोच्च अदालत के किसी न्यायाधीश को अध्यक्ष सर्वोच्च अदालत के चीफ जस्टिस और वहां के ऐसे अन्य न्यायाधीशों और हाईकोर्टों के ऐसे न्यायाधीशों के परामर्श से रखेगा जो इसके लिये आवश्यक समझे जायें।

(ख) कमेटी की रिपोर्ट के पैराग्राफ 15 के दूसरे वाक्य के स्थान में निम्नलिखित रखा जायेगा:

'उनके वेतन की व्यवस्था कानून द्वारा की जायेगी'।

(ग) सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों को हटाने की व्यवस्था निम्नलिखित प्रकार से की जाए:

'भारत की सर्वोच्च अदालत का कोई न्यायाधीश अपने पद से तब तक न हटाया जायेगा जब तक प्रामाणिक दुराचरण या अयोग्यता के आधार पर संघीय पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के एक ही अधिवेशन में पद से हटाने के लिये प्रस्ताव करने पर उसे राष्ट्रपति स्वयं न हटाये। इस सम्बन्ध में कार्यविधि निश्चित करने के लिये संघीय कानून अधिक व्यवस्था कर सकता है'।"

श्रीमान्, श्री संतानम् ने कुछ और संशोधन भी पेश किये हैं। ये संशोधन बहुत कुछ एक दूसरे का उद्देश्य पूरा कर देते हैं। लेकिन इनके प्रति मैं अपना दृष्टिकोण स्पष्ट कर देना चाहता हूं। यदि उनका कोई संशोधन मेरे संशोधन से अधिक विस्तृत है तो मैं अपना संशोधन बड़ी प्रसन्नता से वापस ले लूंगा। एक बात मैं बिल्कुल स्पष्ट कर देना चाहता हूं। उद्देश्य यह नहीं है कि सर्वोच्च अदालत के सम्बन्ध में विस्तृत व्यवस्था की जाए। प्रत्येक विधान में केवल सर्वोच्च अदालत के मुख्य-मुख्य अधिकार बता दिए जाते हैं और यह असेम्बली द्वारा पास किये जाने

वाले न्याय-सम्बन्धी कानून पर छोड़ दिया जाता है कि वह विधान में दिये हुए अधिकारों की व्याख्या करे। यह सम्भव नहीं है कि आप सभी आदेशों को विधान में स्थान दें। आप यह संकेत कर सकते हैं कि मूल न्यायाधिकार के संबंध में न्यायाधिकार का शीर्षक वास्तव में क्या है। आप संकेत कर सकते हैं कि अपील सुनने के अधिकार का आधार वास्तव में क्या है। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि सन् 1935 ई. के विधान-सम्बन्धी कानून में अधिक विस्तृत आदेश रखने का कारण क्या था। इस विधान का उद्देश्य फेडरल कोर्ट को केवल सीमित अधिकार देने का था। दूसरे भारतीय व्यवस्थापिका सभा को उस समय सभी अधिकार प्राप्त नहीं थे। इसलिये पार्लियामेंट ने फेडरल कोर्ट द्वारा प्रयोग में आने वाले सभी अधिकारों की अधिक विस्तृत व्यवस्था की, यद्यपि अन्य राजसंघों की सर्वोच्च अदालतों के विधान में साधारणतया ऐसी व्यवस्था नहीं होती है। इसलिये उन दशाओं में, जैसा कि भारत सरकार के वर्तमान कानून में बताया गया है, कमेटी ने यह बताया कि न्यायाधिकार की सीमा क्या है, मूल न्यायाधिकार की दशा में कौन से अधिकार प्रयोग में आयेंगे और अपील सुनने के अधिकार की दशा में कौन से अधिकार प्रयोग में आयेंगे। कमेटी की वह रिपोर्ट काफी विस्तृत है। उदाहरणार्थ, यह प्रश्न भी उठाया गया है कि सर्वोच्च अदालत को पूरक न्यायाधिकार भी दिया जाना चाहिये कि नहीं। कमेटी की रिपोर्ट में इसकी भी व्याख्या है। इसलिये सर्वोच्च अदालत को पूरक न्यायाधिकार देने के बारे में भविष्य की संघीय व्यवस्थापिका सभा के रास्ते में कोई रुकावट नहीं है, उसे इसका अधिकार होगा। न्यायाधिकार की खास-खास मदें विधान-सम्बन्धी कानून में दी जायेंगी। दूसरे, पूरक न्यायाधिकार का उल्लेख रिपोर्ट में है। इसके अतिरिक्त रिपोर्ट में यह भी दिया गया है कि किन विषयों के सम्बन्ध में यह न्यायाधिकार रियासतों को सौंपा जा सकता है। उन दशाओं में मेरे विचार से यह आदेश उचित ही है। जहां तक सन् 1935 ई. के विधान में न्यायाधीशों को हटाने का सम्बन्ध है, यह अधिकार कौंसिल के सभापति के रूप में सम्राट को सौंपा गया है और सम्राट की सहायतार्थ एक न्यायाधीशों की समिति की भी व्यवस्था है। दुराचरण या दुर्व्यवहार की दशा में कौंसिल के सभापति के रूप में सम्राट को यह अधिकार दिया गया है कि वे संघीय अदालत के किसी न्यायाधीश या भारतीय हाईकोर्टों के किसी न्यायाधीश के विरुद्ध कोई कार्यवाही करें। यद्यपि कुछ लोगों ने यह राय दी है कि राष्ट्रपति को किसी कौंसिल या न्यायाधीशों की किसी समिति की सलाह से न्यायाधीशों को हटाने का अधिकार होना चाहिये, लेकिन मेरे विचार से इस प्रस्ताव को यह सभा स्वीकार नहीं करेगी। इससे इस देश के चीफ जस्टिस या हाईकोर्टों के चीफ जस्टिस जैसे सर्वोच्च न्यायाधीश केवल इंडियन सिविल सर्विश के नौकरों के समान हो

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

जायेंगे। कल्पना कीजिये कि राष्ट्रपति भारत के चीफ जस्टिस या प्रान्तीय हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस के आचरण के सम्बन्ध में जांच करने के लिये कुछ न्यायाधीशों का एक विशेष कमीशन नियुक्त करेगा। मेरे विचार से इस स्थिति को यह सभा पसन्द नहीं करेगी। यह विशेष आदेश जो मैंने यहां रखा है यानी, ''वह अपने पद से तब तक न हटाया जायेगा जब तक कि प्रामाणिक दुराचरण या अयोग्यता के आधार पर संघीय पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के एक ही अधिवेशन में पद से हटाने के लिये प्रार्थना-पत्र देने पर उसे राष्ट्रपति स्वयं न हटाये,'' ब्रिटिश कामनवेल्थ के विभिन्न कानूनों के आदेशों के अनुरूप है। आस्ट्रेलिया, कैनेडा और दक्षिणी अफ्रीका में इसी प्रकार का आदेश है। इंग्लैंड में भी जिस तारीख से बन्दोबस्त का कानून लागू हुआ, दोनों सभाओं के प्रस्ताव द्वारा ही किसी न्यायाधीश को पदच्युत किया जा सकता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि इस इस अधिकार का साधारणतया प्रयोग किया जायेगा। इसका प्रमाण यही है कि वहां यह अधिकार कभी प्रयोग में लाया ही नहीं गया है। यह एक सुन्दर आदेश है जिससे दुराचरण तो रुक जाता है परन्तु यह प्राय: प्रयोग में नहीं आता। मुझे इसमें कुछ भी संदेह नहीं है कि भविष्य की भारतीय व्यवस्थापिका सभायें, जिनको यह अधिकार दिया जायेगा, उसी प्रकार गम्भीरता और बुद्धिमता से काम लेंगी जिस प्रकार पार्लियामेंट की महान् सभाएं अन्य अधिकारों के प्रयोग में काम लेती रही हैं। इसीलिये यह आदेश रखा गया है। प्रामाणिक दुराचरण के सम्बन्ध में वे लोग सभा की एक कमेटी नियुक्त कर सकते हैं और यदि संभव हो तो उस पर गुप्त अधिवेशन में विचार कर सकते हैं। परन्तु अन्तिम रूप से इस प्रस्ताव को दोनों सभाओं को स्वीकार करना होगा। इसके उपरान्त कोई न्यायाधीश दुराचरण के लिये पदच्युत किया जा सकता है। किसी न्यायाधीश के पद की अवधि को व्यक्त करने के लिये यह सुन्दर भाषा नहीं है और इसीलिये यह नकार में प्रकट किया गया है। अर्थात् "अपने पद से तब तक न हटाया जायेगा, इत्यादि।'' इसके अतिरिक्त इस सम्बन्ध में जिस प्रणाली का अनुसरण किया जाए उसके बारे में संघीय कानून आदेश निर्धारित कर सकता है। आप इस विधान में कार्यविधि निश्चित करने के लिये विस्तृत आदेश नहीं रख सकते। वास्तव में इस प्रकार का आदेश कि ''इस सम्बन्ध में कार्यविधि निश्चित करने के लिये संघीय कानून अधिक व्यवस्था कर सकता है,'' अन्य विधानों में नहीं पाया जाता है लेकिन हमारे यहां लोग आदेशों की विस्तृत व्याख्या करते

हैं और इसीलिये मैंने इस खण्ड को यहां स्थान दिया है। भारत सरकार के वर्तमान कानून में जो विस्तृत आदेश हैं और जिनको, यदि वे हमारे विधान के मुख्य सिद्धान्तों के विरोध में न हों जैसे कि वे स्वतंत्र भारत के लिये जो व्यवस्था की जा रही है उसके विरोध में न हों, तो उनको अपने विधान के न्याय-सम्बन्धी आदेशों में आवश्यक परिवर्तनों के साथ सम्मिलित करने में कोई कठिनाई न होगी। हमारे एक मित्र ने इस आशय का एक आदेश पेश किया है कि किसी न्यायाधीश का वेतन उसके पद की अवधि में कम नहीं किया जा सकता है। भारत सरकार के कानून में यह आदेश है। इस प्रकार हमें विस्तृत आदेश रखने की आवश्यकता नहीं है। हमें आधारभूत सिद्धांतों की ओर ही अधिक ध्यान देना चाहिये जैसे कि (क) न्यायाधिकार (ख) पदच्युत करने के बारे में आदेश। अन्य बातें संघीय कानून और वर्तमान भारत सरकार के कानून के लिये छोड़ देनी चाहियें, जिसके आदेशों को आवश्यक परिवर्तनो के साथ इस विधान में स्थान देने का विचार है। इसी कारण मैंने ''वेतन'' शब्द रखा हैं इसमें वेतन, छुट्टी, भत्ते इत्यादि सम्मिलित किये जा सकते हैं किन्तु इन सब बातों को विधान में स्थान देने की आवश्यकता नहीं है। इन कारणों से मैं सभा से सिफारिश करता हूं कि वह इस संशोधन को स्वीकार कर ले। किन्तु यदि कोई तर्कपूर्ण कारण बताये जाएं तो मुझे अपने ही संशोधन से कोई लिप्सा नहीं है और मैं किसी भी दूसरे संशोधन को उसके स्थान में रखे जाने के लिये तैयार हूं।

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड 18 की जगह निम्नलिखित रखा जाए:

''सर्वोच्च अदालत–एक सर्वोच्च अदालत होगी जिसके विधान तथा अधिकार व न्यायाधिकार वही होंगे जिनकी सिफारिश संघीय न्यायाधीशों से सम्बन्धित कमेटी करे; सिवाय उन बातों के जो नीचे दी हुई हैं:

(क) सर्वोच्च अदालत के किसी न्यायाधीश को अध्यक्ष सर्वोच्च अदालत के चीफ जस्टिस और वहां के ऐसे अन्य न्यायाधीशों और हाईकोर्टों के न्यायाधीशों के परामर्श से रखेगा जो इसके लिये आवश्यक समझे जाएं।

(ख) पैरा 10 के अनुसार सर्वोच्च अदालत को जो अतिरिक्त न्यायाधिकार दिया जायेगा वह संघीय कानून द्वारा दिया जायेगा।

(ग) सर्वोच्च अदालत के चीफ जस्टिस और अन्य न्यायाधीशों के वेतन कानून द्वारा निश्चित किये जायेंगे और किसी भी न्यायाधीश का वेतन उसके पद की अवधि में कम न किया जायेगा।

[श्री के. सन्तानम्]

(घ) सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों को हटाने की व्यवस्था निम्नलिखित प्रकार से की जायेगी:

'भारत की सर्वोच्च अदालत का कोई न्यायाधीश अपने पद से तब तक न हटाया जायेगा जब तक प्रामाणिक दुराचरण या अयोग्यता के आधार पर संघ पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के एक ही अधिवेशन में पद से हटाने के लिये प्रस्ताव करने पर उसे राष्ट्रपति स्वयं न हटाये'।''

श्रीमान्, मैं विनयपूर्वक यह बताना चाहता हूं कि मेरे संशोधन में श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के दोनों खण्ड सम्मिलित हैं और उनके अतिरिक्त उसमें दो और खण्ड हैं। एक तो न्यायाधिकार के सम्बन्ध में है। अदालत सम्बन्धी आदेशों के सम्बंध में निर्णय करने में सर्वोच्च अदालत का न्यायाधिकार ही निस्सन्देह सबसे महत्वपूर्ण विचारणीय विषय है। इस न्यायाधिकार को मैं दो स्थूल भागों में विभाजित करता हूं-यह संघीय न्यायाधिकार और दूसरा असंघीय न्यायाधिकार। संघीय न्यायाधिकार चार कक्षाओं में विभाजित किया जा सकता है। पहली कक्षा मूल और पृथक न्यायाधिकार की है जिसका सम्बन्ध अन्तर्प्रादेशिक झगड़ों या प्रदेशों और संघ के बीच जो झगड़े हों, उनसे है। दूसरी कक्षा के न्यायाधिकार में जो सर्वोच्च अदालत के लिये एक नवीन अधिकार है, मौलिक अधिकारों के सम्बन्ध में अपील सुनने का अधिकार और कुछ मामलों में मूल अधिकार भी सम्मिलित हैं। हमारे विधान में यह एक नये किस्म के न्यायाधिकार की व्यवस्था की जा रही है। उसमें कहा गया है कि मौलिक अधिकारों के संबंध में उसे साधारणतया अपील सुनने का अधिकार होगा, परन्तु यदि किसी क्षेत्र में मौलिक अधिकारों पर विचार करने के लिये कोई प्रबन्ध न हो या कोई उचित अदालत न हो तो इन अधिकारों के सम्बन्ध में सर्वोच्च अदालत का मूल न्यायाधिकार भी हो सकता है। तीसरी कक्षा के अधिकार अपील सुनने के अधिकार हैं जो संघ-विधान की व्याख्या के सम्बन्ध में होंगे और चौथी कक्षा के अधिकार संघीय कानूनों के बारे में होंगे। संघ-अधिकारों की ये कक्षायें प्रान्तों और रियासतों दोनों के संबंध में एक समान हैं और ये सभी अधिकार सर्वोच्च अदालत को प्राप्त होंगे। इस संघीय न्यायाधिकार के अतिरिक्त सर्वोच्च अदालत को दो प्रकार के असंघीय न्यायाधिकार भी प्राप्त होंगे। ये प्रान्तों के ही संबंध में होंगे। उनमें से प्रथम यह है कि प्रान्तीय विधान की व्याख्या के सम्बन्ध में अपील सुनने का अधिकार होगा और दूसरा यह है कि प्रान्तीय कानूनों की व्याख्या के सम्बन्ध में अपील सुनने का अधिकार होगा। यह एक दुख की बात है कि संघीय न्यायाधीशों से सम्बन्धित कमेटी ने यह समझा कि वह रियासतों

के सम्बन्ध में सर्वोच्च अदालत को इसी प्रकार का न्यायाधिकार नहीं दे सकती है। मैं यह नहीं कहता कि वह किसी प्रकार के दबाव से किया जाए, परन्तु मैं रियासतों से यह अपील करता हूं कि यह उन्हीं के फायदे के लिये है कि वे रियासतों के विधानों और रियासतों के कानूनों के बारे में सर्वोच्च अदालत को उसी प्रकार न्यायाधिकार दें, जैसे प्रान्तों ने दिया है। अपने ही रियासतों के विधानों के बारे में लोगों और नरेशों के बीच झगड़े हो सकते हैं और इस सम्बन्ध में रियासतों की हाईकोर्टों का निर्णय लोगों के लिये बाध्य नहीं समझा जा सकता। वे यह सोच सकते हैं कि रियासत के विधान की व्याख्या करने के लिये रियासती अदालत यथेष्ट रूप से निष्पक्ष नहीं हो सकती और वे ऐसा कह सकते हैं कि केवल सर्वोच्च अदालत ही ऐसा निर्णय दे सकती है जिसे नरेश तथा उनकी प्रजा दोनों निष्पक्ष समझें।

इसके अतिरिक्त बहुत-सी रियासतों के कानूनों को केवल प्रान्तों के कानूनों को अदल-बदल कर बनाया गया है। कुछ रियासतों में कानूनों को बारीकी से बनाने के लिये पर्याप्त साधन और यथेष्ट कानूनी विभाग नहीं हैं। वे केवल प्रान्तों के कानूनों को अपना लेते हैं। ऐसी दशा में यदि रियासती अदालत किसी कानून की एक व्याख्या करे और सर्वोच्च अदालत उसकी दूसरी व्याख्या करे तो बड़ी गड़बड़ पैदा हो जायेगी। बहुत खर्च करने और कष्ट उठाने के बाद सर्वोच्च अदालत स्थापित की जा रही है और वह प्रान्तों और रियासतों दोनों की है, और मेरे विचार से यह बहुत ही ना-समझी की बात होगी कि रियासतें केवल प्रतिष्ठा का सवाल उठाकर सर्वोच्च अदालत से पूरा फायदा न उठायें।

खण्ड दस में यह कहा गया है कि:

''नि:संदेह किसी भी भारतीय रियासती प्रदेश को इसकी स्वतंत्रता होगी कि वह विशेष समझौता करके ऐसे मामलों के सम्बन्ध में, जिनका उस समझौते में स्पष्टीकरण हो, सर्वोच्च अदालत को अतिरिक्त न्यायाधिकार दे दे।''

मैं यह चाहता हूं कि प्रत्येक भारतीय रियासत को सर्वोच्च अदालत के न्यायाधिकार को उसी प्रकार स्वीकार कर लेना चाहिये जिस प्रकार उसे प्रातों ने स्वीकार किया है। मुझे यह पसन्द नहीं है कि कोई भारतीय रियासती प्रदेश कुछ मामलों के सम्बंध में विशेष समझौता करके सर्वोच्च अदालत को अतिरिक्त

[श्री. के. सन्तानम्]

न्यायाधिकार दे। केवल संघीय व्यवस्थापिका को ही ऐसा न्यायाधिकार देना चाहिये। केवल संघीय व्यवस्थापिका को ही यह अधिकार होना चाहिये कि वह सर्वोच्च अदालत के न्यायाधिकार में किसी प्रकार का परिवर्तन या संशोधन करे।

वेतन के सम्बन्ध में श्री अल्लादी ने जो कहा है कि वह पद की अवधि में कम नहीं किया जाना चाहिये, मैं इससे सहमत हूं। किन्तु वेतन के सम्बन्ध में यहां व्याख्या ही क्यों न कर दी जाए?

मैंने न्यायाधीशों को हटाने के बारे में इसी खण्ड को अपना लिया है, सिवाय इसके कि जो अनावश्यक आदेश है उसे हटा दिया है।

मेरे विचार से मेरा संशोधन अधिक विस्तृत है और मैं आशा करता हूं कि श्री अल्लादी उसे स्वीकार कर लेंगे।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** श्री सन्तानम् ने जो कुछ कहा है उसको दृष्टि में रखते हुये मैं सभा का ध्यान रिपोर्ट के कुछ अंशों की ओर दिलाना चाहता हूं। रिपोर्ट के पैरा 7 में कहा गया है:

> ''यदि संघीय व्यवस्थापिका को किसी मामले में कानून बनाने का अधिकार हो'...।''

***अध्यक्ष:** अच्छा तो यह होगा कि अन्य सभी संशोधन विचारार्थ पेश हो जाएं। यदि आप कोई भाषण देने जा रहे हो तो अच्छा यह होगा कि सभी संशोधनों के पेश होने पर आप ऐसा करें।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** श्री सन्तानम् ने अभी जो कुछ कहा उसके सम्बन्ध में मुझे कुछ बातें कहनी हैं। मैं कोई भाषण देने नहीं जा रहा हूं। रिपोर्ट के कुछ अंशों के सम्बन्ध में ही मैं अपनी स्थिति स्पष्ट करना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** दूसरे भाषण की इजाजत देना नियमित न होगा।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** श्री सन्तानम् ने जो कुछ कहा उसीके बारे में मैं बोल रहा हूं। मैं अपने संशोधन के बारे में बोलने नहीं जा रहा हूं। इस सभा के सदस्य की हैसियत से मुझे दूसरे सदस्य के संशोधन पर बोलने का अधिकार है। मैं भाषण बाद को दूंगा।

***अध्यक्ष:** मुझे उस पर उसी समय विचार करना होगा।

कल खण्ड के प्रस्तावक महोदय ने कोई भाषण नहीं दिया और हम इस पर सहमत हुए थे कि भाषण आज दिये जायेंगे। संशोधनों के प्रस्तावकों ने भी कोई भाषण नहीं दिये। अब इस समय खण्ड के प्रस्तावक और संशोधनों के प्रस्तावक बोल सकते हैं और उसके बाद उन सभी पर बहस हो सकती है। श्री गोपालस्वामी आयंगर, क्या आप इस समय बोलना चाहेंगे?

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रास : जनरल)**:** श्रीमान् मेरे विचार से संशोधनों के प्रस्तावक और अन्य वक्ता भी अपने भाषण दे लें। यदि मुझे कुछ कहना होगा तो मैं अन्त में कह लूंगा।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** श्रीमान् आप देखेंगे कि खण्ड 18 में सर्वोच्च अदालत विषयक कमेटी का उल्लेख है जिसमें अदालत के कार्य, न्यायाधीशों की नियुक्ति और उनको हटाने इत्यादि का विवरण है। इस रिपोर्ट में 15, 16 से अधिक पैराग्राफ हैं जिनमें से प्रत्येक पर टिप्पणी की गई है। इन पैराग्राफों में जो सुझाव दिये गये हैं और जो सिफारिशें की गयीं हैं उनमें हमने संशोधन किये हैं। इसलिये इस खण्ड में जो संशोधन पेश किये गये हैं उन सभी को तथा खण्ड 18 और सर्वोच्च अदालत विषयक कमेटी की रिपोर्ट को नियमित रूप से पेश किया जाए। फिर विभिन्न बातों पर बहस हो सकती है और तब क्रमानुसार उन पर वोट ली जाए।

***अध्यक्ष:** जहां तक मैं देख पाया हूं अब खण्ड 18 में कोई ऐसा संशोधन नहीं है जिसकी मुझे सूचना दी गयी हो। केवल आपका एक संशोधन है जो परिशिष्ट के सम्बन्ध में है। आप उसे अब पेश कर सकते हैं।

श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर: बिना परिशिष्ट के खण्ड 18 अपूर्ण है। वे अविच्छिन्न हैं। मैं संशोधन नं. 16 पेश नहीं कर रहा हूं। मैं संशोधन नं. 17 पेश करता हूं। मैं संशोधन नं. 18 और संशोधन नं. 19 को भी जो मेरे और श्रीमती दुर्गाबाई के नाम से हैं, पेश नहीं करता। उन्हें श्रीमती दुर्गाबाई पेश करेंगी। मेरा संशोधन इस प्रकार है:

परिशिष्ट के पैरा 9 में ये शब्द रखें जाएं:

(क) प्रिवी कौंसिल का किसी कानूनी मामले में अपील सुनने का न्यायाधिकार इससे समाप्त किया जाता है और वह सर्वोच्च अदालत को दिया जाता है।

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

(ख) प्रिवी कौंसिल को जो अपीलें सुननी हों उन पर सर्वोच्च अदालत विचार करेगी।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** रिपोर्ट में एक और खंड है। खण्ड 3, जिसमें उन मामलों का उल्लेख है जो संघीय अदालत को सुनने हैं। मेरे मित्र का संशोधन यह है कि उस आदेश को निकाल दिया जाए। मैं उन्हें यह सुझाव देता हूं कि इस संशोधन को भाग 11, खण्ड 3 की शर्त लगाकर पेश किया जाए। वह खण्ड इस प्रकार है:

''जब तक इस विधान के अधीन सर्वोच्च अदालत नियमित रूप से स्थापित न की जाए उस समय तक संघीय अदालत सर्वोच्च अदालत समझी जायेगी और वह सर्वोच्च अदालत के सभी कार्य करेगी:

परन्तु शर्त यह है कि इस विधान के प्रयोग में आने के दिन जितने भी मामलों पर संघीय अदालत और प्रीवी कौंसिल की जुडिशियल कमेटी को विचार करना हो उन सब पर उसी प्रकार विचार होगा जैसे कि इस विधान के प्रयोग में न आने पर होता।''

मेरे मित्र के संशोधन में यह कहा गया है कि यह नहीं रहे। इस खण्ड के सम्बन्ध में मैंने भी एक संशोधन पेश किया है। यदि मेरे मित्र के पेश किये हुये संशोधन के बारे में सभा ने कुछ निर्णय कर लिया हो और बाद को मैं अपना संशोधन पेश करूंगा तो यह नियमित न होगा। सभा पहले ही कुछ निर्णय कर चुकेगी। इसलिये मेरा यह सुझाव है कि भाग 11, खण्ड 3 के बारे में मेरे संशोधन पर इसके साथ ही विचार किया जाए ताकि सभी बातें स्पष्ट हो जायें क्योंकि भाग 11 के पैरा 3 में जो खण्ड बचे हुए हैं उनके बारे में एक विशेष आदेश है। इसलिये मैं यह सुझाव पेश करता हूं कि यदि मेरे मित्र बचे हुए खण्डों के बारे में कोई संशोधन पेश करना चाहते हैं तो उन्हें उसे अलग से पेश करना चाहिये। जैसी भी सूरत हो, मैंने आज सुबह पैरा 3 के बारे में भी एक संशोधन की सूचना दी है। उस पर उनके संशोधन के साथ विचार हो सकता है।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई** (मद्रास: जनरल): श्रीमान् मैं पूरक सूची के संशोधन नं. 19 को पेश करना चाहती हूं। वह यह है कि:

परिशिष्ट के पैरा 14 में निम्नलिखित जोड़ दिया जाए:

''प्रत्येक न्यायाधीश भारतीय संघ का नागरिक होगा।''

पैरा 14 में न्यायाधीशों के पद की अवधि और नौकरी की दशाओं का उल्लेख है। अध्यक्ष महोदय, मैं चाहती हूं कि प्रत्येक न्यायाधीश भारतीय संघ का नागरिक हो। मैंने केवल खण्ड (क) को पेश किया है। मैं खण्ड (ख) को पेश नहीं कर रही हूं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर :** श्रीमान् मैं पूरक सूची नं. 2 में दिये हुये अपने संशोधन नं. 20 को नहीं पेश कर रहा हूं। मैं संशोधन नं 21 को पेश करूंगा।

परिशिष्ट में निम्नलिखित जोड़ दिया जाए:

"1. (क) कोई न्यायाधीश राष्ट्रपति को सम्वाद भेजकर अपने पद से इस्तीफा दे सकता है।

(ख) कोई न्यायाधीश दुराचरण या मस्तिष्क या शरीर के दौर्बल्य के कारण इस सम्बन्ध में व्यवस्थापिका की दोनों सभाओं द्वारा राष्ट्रपति को प्रस्ताव भेजने पर पदच्युत किया जा सकता है, परन्तु शर्त यह है कि राष्ट्रपति के चुने हुये हाईकोर्टों के कम से कम 7 चीफ जस्टिसों की एक कमेटी इसकी जांच करेगी और यह रिपोर्ट देगी कि ऐसे किसी कारण से न्यायाधीश पदच्युत किया जाए।

(ग) कोई न्यायाधीश दिवालिया करार होने पर पदासीन न रहेगा।"

इसके सम्बन्ध में श्री अल्लादी कृष्णास्वामी बोल चुके हैं। यदि आप मुझे आज्ञा दें तो मैं अभी बोलूगा नहीं तो मैं बाद को बोलूंगा।

***अध्यक्ष:** तीसरी सूची में आपके नाम से एक दूसरा संशोधन भी है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** मैं उसे भी पेश करता हूँ। रिपोर्ट के परिशिष्ट में निम्नलिखित जोड़ दिया जाए:

"1. (क) सर्वोच्च अदालत का कोई न्यायाधीश राष्ट्रपति को इस्तीफा देकर अपने पद से इस्तीफा दे सकता है।

(ख) सर्वोच्च अदालत का कोई न्यायाधीश दुराचरण या मस्तिष्क या शरीर के दौर्बल्य के कारण, इस सम्बन्ध में राष्ट्रपति के सर्वोच्च अदालत

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

से कहने पर और काम के लिये हाईकोर्टों या सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों या भूतपूर्व न्यायाधीशों में से उनके एक विशेष ट्रिब्यूनल नियुक्त करने पर वह यह रिपोर्ट दे कि वह न्यायाधीश ऐसे किसी कारण से पदच्युत किया जाए।''

***अध्यक्षः** अब सभी संशोधन पेश हो चुके हैं और उन पर अब बहस हो सकती है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान्, खण्ड 18 और परिशिष्ट के विभिन्न पैराओं में कई प्रकार के संशोधन पेश किये गये हैं। उन सभी को पांच मदों में विभाजित किया जा सकता है। (1) उनमें से कुछ उस अधिकारी के सम्बन्ध में हैं जो सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों को नियुक्त करेगा; (2) कुछ उस अधिकारी के सम्बन्ध में हैं जिसे एक या अधिक न्यायाधीशों को हटाने का अधिकार है; (3) कुछ सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीश नियुक्त होने के लिये आवश्यक योग्यता के सम्बन्ध में है; (4) कुछ इसके बारे में हैं कि कौन वेतन नियत करेगा; और (5) कुछ संघीय अदालत के न्यायाधिकार के बारे में हैं। इन पांच मदों के बारे में संशोधन पेश किये गये हैं।

नियुक्ति के बारे में मैं यह देखता हूं कि इस सम्बन्ध में सभी एकमत हैं कि न्यायाधीशों को नियुक्त करने का अधिकार राष्ट्रपति को दिया जाए। राष्ट्रपति अपने विवेक से नहीं बल्कि अपने मंत्रियों से सलाह लेकर उन्हें नियुक्त करेगा। इसके अतिरिक्त वह संघीय अदालत के चीफ जस्टिस और हाईकोर्टों के न्यायाधीशों से भी राय ले सकता है। यह हो सकता है कि वह किसी हाईकोर्ट के न्यायाधीश को नियुक्त करना चाहे। ऐसी दशा में वह किसी अन्य हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस या न्यायाधीशों की राय ले सकता है। यह आवश्यक नहीं समझा जा सकता है की प्रांतों और रियासतों की सभी हाईकोर्टों के न्यायाधीशों से सलाह ली जाए। इसलिये उनको इसकी स्वतंत्रता देनी चाहिये कि वह ऐसे न्यायाधीशों से सलाह ले जिन्हें उस न्यायाधीश को जानने का अवसर मिला हो जिसे कि वह सर्वोच्च अदालत के लिये नियुक्त करना चाहे। इस सम्बन्ध में सभी एकमत हैं और यह कोई विवादग्रस्त विषय नहीं है।

जहां तक सर्वोच्च अदालत के किसी न्यायाधीश को हटाने के अधिकार का प्रश्न है, इस सम्बन्ध में बहुत मतभेद हैं। एक विचार-धारा के लोगों के नेता

श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर हैं जिन्होंने यह संशोधन पेश किया है कि व्यवस्थापिका की दोनों सभाओं के राष्ट्रपति के पास प्रस्ताव भेजने पर सर्वोच्च अदालत का कोई भी न्यायाधीश या चीफ जस्टिस पदच्युत किया जा सकता है। मैंने यह संशोधन पेश किया है कि राष्ट्रपति को इसकी स्वतंत्रता है कि वे हाईकोर्टों के कम से कम 7 न्यायाधीशों का एक ट्रिब्यूनल इस सम्बन्ध में जांच करने के लिये बैठायें और वह यह निर्णय करे कि कोई न्यायाधीश कथित दुर्व्यवहार या दुराचरण या इसी प्रकार के अन्य कारण से हटाया जाए या न हटाया जाए। इसके बाद राष्ट्रपति उसे हटा सकते हैं। मैंने इस आशय का एक दूसरा संशोधन भी पेश किया है कि राष्ट्रपति किसी न्यायाधीश को उस दशा में भी हटा सकते हैं जब इस कार्य के लिये उनकी नियुक्त की हुई न्यायाधीशों की समिति उसके विरुद्ध रिपोर्ट दे। श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का संशोधन इस कारण पेश किया गया है कि संघ में अदालती कार्य के सर्वोच्च अधिकारी का भाग्य-विधाता संघीय प्रबन्धकारिणी का अध्यक्ष हो जाता है। यह सच है कि राष्ट्रपति न्यायाधीशों की समिति की रिपोर्ट के आधार पर कार्यवाही करेगा और इस प्रकार राष्ट्रपति का अधिकार सीमित हो जाता है; परन्तु श्री अल्लादी का यह मत है कि यह अधिकार राष्ट्रपति को दिया ही न जाना चाहिये, क्योंकि इससे सर्वोच्च अदालत का न्यायाधीश राष्ट्रपति के अधीन हो जाएगा। इसलिए उन्होंने एक उपाय बताया है और वह यह है कि न्यायाधीश तभी हटाया जाना चाहिए जब व्यवस्थापिका एकमत होकर उनके पास इस आशय का प्रस्ताव भेजे। मैंने बीच का रास्ता लिया है और यह संशोधन पेश किया है कि सर्वोच्च अदालत का कोई न्यायाधीश व्यवस्थापिका की दोनों सभाओं द्वारा राष्ट्रपति के पास प्रस्ताव भेजने पर हटाया जा सकता है परन्तु इस प्रस्ताव के पहले राष्ट्रपति को इस मामले की जांच के लिये हाईकोर्टों के सात न्यायाधीशों की एक समिति नियुक्त कर लेनी चाहिये। यदि वे यह रिपोर्ट दें कि सम्बन्धित न्यायाधीश किसी ऐसे आचरण का दोषी है, जिसके लिये वह पदच्युत किया जा सकता है, तो उस रिपोर्ट की बिनां पर व्यवस्थापिका की दोनों सभायें राष्ट्रपति के पास एक प्रस्ताव भेज सकती हैं या उस रिपोर्ट को अस्वीकार कर सकती हैं। इसलिये इसमें दोनों उपायों का सामंजस्य है। न्यायाधीशों को पदच्युत करने में व्यवस्थापिका का नियंत्रण होगा और यह अधिकार अकेले राष्ट्रपति या न्यायाधीशों की समिति को नहीं दिया जायेगा। जिस प्रकर व्यवस्थापिका की दोनों सभाओं का निर्माण हुआ है उसमें लगभग 600 सदस्य होंगे। आपको स्मरण होगा कि राष्ट्रपति को पदच्युत करने के सम्बन्ध में यह संशोधन पेश किया गया था और स्वीकार भी कर लिया गया था कि जब कभी नीचे की सभा या कोई भी सभा राष्ट्रपति पर न्यायाधीशों के सम्मुख दोषारोपण करके पदच्युत करने का प्रस्ताव करे तो दूसरी

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

सभा एक कमेटी नियुक्त करेगी और उस कमेटी की रिपोर्ट के आधार पर प्रस्ताव बनाया जाना चाहिये। यह उचित ही है कि एक छोटी-सी समिति किसी संघीय न्यायाधीश के दुराचरण के सम्बन्ध में जांच करने के लिये बैठाई जाए और वह यह सिफारिश करे कि वह हटा दिया जाए। सारी व्यवस्थापिका के लिये, जिसमें लगभग 600 सदस्य होंगे, यह एक कठिन काम होगा कि वह स्वयं इस मामले की जांच करे। इसलिये यह सुझाव करना न्यायोचित है कि न्यायाधीशों की कमेटी की यह रिपोर्ट देने पर ही कि इस मामले में हस्तक्षेप करना उचित है, दोनों सभाओं से कार्यवाही करने के लिये कहा जाये। यह अकेले मेरा सुझाव नहीं है। सप्रू कमेटी ने, जिसके श्री गोपालस्वामी आयंगर एक सदस्य थे, जो रिपोर्ट निकाली है उसमें यह सुझाव किया गया है कि अध्यक्ष को तत्सम्बन्धी ट्रिब्यूनल की रिपोर्ट के अनुसार सर्वोच्च अदालत के किसी न्यायाधीश को पदच्युत करने का अधिकार दिया जा सकता है। यदि श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर को सप्रू कमेटी की रिपोर्ट की इस मद से इस कारण आपत्ति है कि इससे अध्यक्ष की रिपोर्ट को स्वीकार या अस्वीकार करने का निरंकुश अधिकार प्राप्त हो जाता है, तो मुझे कोई ऐसा कारण नहीं दिखता जिससे वे इस सम्बन्ध में मेरे संशोधन को स्वीकार न करें, क्योंकि उसमें न्यायाधीशों व शासन-प्रबन्धकर्ताओं के अधिकारों का सम्मिश्रण है।

मेरे संशोधन की दूसरी मद न्यायाधीशों की योग्यता के सम्बन्ध में है। इसमें केवल भारत सरकार के कानून में निर्धारित योग्यता को दुहराया गया है। इसमें श्रीमती दुर्गाबाई ने यह संशोधन पेश किया है कि न्यायाधीश को एक भारतीय नागरिक होना चाहिये। इस सम्बन्ध में प्रस्तावक ने जो कुछ कहा है उससे अधिक और कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है। अध्यक्ष की योग्यता सम्बन्धी खण्ड में हमने जैसी व्यवस्था की है उसी प्रकार सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीश के सम्बन्ध में भी, क्योंकि वह प्रजातंत्र का रक्षक होगा, हमारे लिये यह व्यवस्था करना आवश्यक है कि वह भारतीय नागरिक होगा। तीसरी प्रकार की योग्यता भी न्यायोचित है और स्वीकार की जानी चाहिये।

चौथी मद वेतन के सम्बन्ध में है। यह राष्ट्रपति के विवेक पर न छोड़ना चाहिये कि वेतन क्या होगा। इस सम्बन्ध में भी मैंने एक संशोधन पेश किया है परन्तु चूंकि श्री सन्तानम् का इसी प्रकार का संशोधन है, इसलिये मैं अपने संशोधन को पेश नहीं कर रहा हूं। जिस समय तक इस पद पर नियुक्त किया हुआ व्यक्ति

पदासीन रहता है उस काल तक व्यवस्थापिका को उसमें कोई परिवर्तन नहीं करना चाहिये।

अन्तिम संशोधन सर्वोच्च अदालत के न्यायाधिकार के बारे में है। मुझे यह कहते हुए खेद होता है कि श्री सन्तानम् ने इस प्रश्न पर जिस दृष्टिकोण से विचार किया वह सर्वथा ठीक नहीं है। वह ऐसा होना चाहिये कि सर्वोच्च अदालत को सभी मामलों में सर्वोच्च न्यायाधिकार होना चाहिए परन्तु असंघीय कानूनों के सम्बन्ध में रियासतों के पक्ष में अपवाद की व्यवस्था की जानी चाहियें। जहां तक विधान के कानून का सम्बन्ध है सर्वोच्च अदालत को ही उसे निर्धारित करना चाहिये और रियासतें भी उसे मानने के लिये बाध्य होनी चाहिये। ब्रिटिश भारत के सम्बन्ध में सर्वोच्च अदालत ही सबसे ऊंची अदालत है और अन्तर्रियासती मामलों में उसका न्यायाधिकार है तथा सभी प्रान्तीय हाईकोर्टों के सम्बन्ध में उसे अपील सुनने का अधिकार है। हमारी सर्वोच्च अदालत प्रिवी कौंसिल का स्थान ले लेगी जिसे कि अभी तक सभी दीवानी और फौजदारी के मामलों में अपील सुनने का न्यायाधिकार है। प्रिवी कौंसिल का यह न्यायाधिकार सर्वोच्च अदालत को दिया जा सकता है, किन्तु रियासतों के फौजदारी के मामलों के सम्बन्ध में अपील सुनने के न्यायाधिकार पर कुछ प्रतिबन्ध लगाया जा सकता है।

इस सम्बन्ध में मैं एक बात और कहना चाहता हूं। यह कहा गया था कि रियासतें समझौता करके सर्वोच्च अदालत को न्यायाधिकार नहीं दे सकतीं। भारत सरकार के सन् 1935 ई. के कानून में कुछ रियासतों के कुछ दशाओं में और कुछ शर्तों के साथ सम्मिलित होने की व्यवस्था है। यदि समझौते की शर्तों के अनुसार रियासतें संघ में सम्मिलित होते समय सर्वोच्च अदालत को न्यायाधिकार सौंप देती हैं तो उनके समझौतों की शर्तों और दशाओं की ओर अदालतें ध्यान देंगी और उनको अमल में लायेंगी। इसलिये इसी प्रकार के इस आशय के आदेश रखना कि यदि कोई रियासत शर्तों और दशाओं के साथ संघ में सम्मिलित हों तो ये शर्तें और दशायें सर्वोच्च अदालत के न्यायाधिकार की अंग होंगी, न तो गलत है और न अनुचित ही और न यह हमारे अधिकार के परे ही है। सर्वोच्च अदालत बिना इस सम्बन्ध में कोई और कानून बनाये हुये समझौते द्वारा उसको दिये हुये न्यायाधिकार को व्यवहार में ला सकती है। इसमें कोई नवीनता नहीं है। सन् 1935 ई. के कानून में इस प्रकार की व्यवस्था है और उसे स्वीकार किया जा सकता है।

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

जहां तक उन अपीलों का सम्बन्ध है जो इस समय प्रिवी कौंसिल के विचाराधीन हैं, यह सच है कि इस मसविदे के अन्त में अन्तर्कालीन आदेशों में उनके बारे में व्यवस्था है, परन्तु वह व्यवस्था इस प्रकार है कि सभी विचाराधीन अपीलों का फैसला प्रिवी कौंसिल ही को करना चाहिये। इसका अर्थ यह है कि स्वतंत्रता प्राप्त करने और विधान के प्रयोग में आने के बाद भी प्रिवी कौंसिल को विचाराधीन अपीलों के सम्बन्ध में न्यायाधिकार होना चाहिये। श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का यह सुझाव है कि यह मामला उस समय के लिये स्थगित किया जाए जब अन्तर्कालीन आदेशों पर विचार होगा। मैं इस सुझाव से सहमत हूं। मेरी राय में संशोधन की इन पांचों बातों पर एक साथ वोट ली जाए और नियुक्ति करने, पदच्युत करने, योग्यता, वेतन निर्धारित करने और सर्वोच्च अदालत को न्यायाधिकार देने के बारे में जो संशोधन पेश किये गये हैं उनको अलग-अलग न उठाया जाए।

***अध्यक्षः** मैं कुछ समय की गैर हाजिरी के लिये सभा की आज्ञा चाहता हूं क्योंकि आज श्री जगजीवनराम आ रहे हैं और उनका स्वागत करने के लिये मुझे हवाई अड्डे पर जाना है *(हर्ष ध्वनि)*। मैं श्री वी.टी. कृष्णमाचार्य से प्रार्थना करता हूं कि वे मेरी गैर हाजिरी में सभापति का आसन ग्रहण करें।

(अध्यक्ष महोदय ने इसके बाद अपना आसन छोड़ दिया और उपाध्यक्ष महोदय उस पर आसीन हुए।)

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (आसामः जनरल)ः उपाध्यक्ष महोदय, मैं माननीय सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि जब मैं माइक्रोफोन पर बोलूं तो वे अपने कानों की चिंता करें। मुझे जोर से बोलने की आदत है और जब मैं माइक्रोफोन पर बोलने लगूंगा तो मेरी आवाज उनको बड़ी कर्णकटु लगेगी। इस क्षमायाचना के साथ मैं अपना भाषण आरम्भ करता हूं।

श्रीमान् मेरे विचार से यह विषय बहुत पेचीदा बना दिया गया है और मैं सभा को यह बताने का प्रयत्न करूंगा कि मुझ जैसा साधारण बुद्धि का मनुष्य इस बहस से क्या समझ सका है। श्रीमान्, मेरी समझ में जब हम सर्वोच्च अदालत को स्थापित कर लेंगे तो प्रिवी कौंसिल समाप्त हो जायेगी और इस समय उसको जो न्यायाधिकार प्राप्त है वह सर्वोच्च अदालत के हाथ में आ जायेगा, परन्तु दीवानी

तथा फौजदारी के मामलों में और दूसरे मामलों में भी फैसला करने में प्रिवी कौंसिल जितनी देर लगाती थी उतनी देर अब सर्वोच्च अदालत नहीं लगायेगी। श्रीमान, यह कहा जाता है कि अदालत में जाना आसान है, परन्तु उसके बाहर निकलना बहुत कठिन है। जब कभी कोई मामला प्रिवी कौंसिल के पास गया हमारा बहुत कुछ अनुभव ऐसा ही रहा। यदि इस प्रकार के विलम्ब को रोकने के लिये कुछ न कहा गया या कुछ न किया गया तो मैं समझता हूं कि अब भी फैसले में उतनी ही देर होगी जितनी कि प्रिवी कौंसिल के दिनों में होती थी। श्रीमान्, इसके बजाय कि कुछ ऐसे वकीलों से इस सभा को सलाह देने को कहा जाए जो विधान के विशेषज्ञ हों या उससे अनभिज्ञ हों, मेरी राय में इस सभा के कुछ ऐसे सदस्य, जो हाईकोर्ट के न्यायाधीश रहे हों, कोई ऐसे उपाय निकालें जिनसे न्याय करने में देर न हो, क्योंकि यह सभी जानते हैं कि न्याय में देर करने का अर्थ न्याय न करना ही होता है।

श्रीमान्, दूसरी बात जो हमारी समझ में आई है वह यह है कि इन न्यायाधीशों को राष्ट्रपति न्यायाधीशों की एक समिति से सलाह लेकर नियुक्त करेगा। इस प्रकार सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों के चुनाव में न्यायाधीशों की समिति का मत प्रधान रहेगा। इसका अर्थ यह है कि निम्न कोटि के न्यायाधीश सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों को नियुक्त करेंगे। हाईकोर्टों के न्यायाधीश पहले यह राय देंगे कि वे किस व्यक्ति को सर्वोच्च अदालत का चीफ जस्टिस बनाना चाहते हैं। यह राय हाईकोर्टों के न्यायाधीश देंगे जो निस्संदेह सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों से निम्न कोटि के होंगे परन्तु मेरे विचार से इसमें कोई दोष नहीं है। जब एक पुलिस का दरोगा भी ऐसे मामलों की जांच कर सकता है, जो उसके ही अफसरों के विरुद्ध पेश किये गये हों और साधारण निर्वाचक भी राष्ट्रपति को चुन सकते हैं, तो हाईकोर्टों के न्यायाधीशों के सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों को नियुक्त करने या उनके नाम पेश करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। वास्तव में मैं स्वयं इसके अलावा कोई दूसरा तरीका नहीं बता सकता। इसलिये मेरी राय में यह ठीक ही है।

श्रीमान् जैसा कि मैं बहस से समझ पाया हूं, मेरा विश्वास है कि सर्वोच्च अदालत कुछ अवसरों में वैधानिक मामलों के सम्बन्ध में वही कार्य करेगी जो इस समय तक संघीय अदालत करती रही है। यही नहीं वह कुछ कानूनी मामलों के बारे में सरकार को सलाह भी देगी। जहां तक मेरा सम्बन्ध है मैं समझता हूं कि यह एक गम्भीर प्रश्न है। मेरी समझ में नहीं आता कि यदि सर्वोच्च अदालत कुछ कानूनी मामलों के बारे में सरकार को वास्तव में सलाह दे तो आगे चलकर

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

किसी व्यक्ति की सरकार के साथ मुकदमेबाजी होने पर न्यायाधीश किस प्रकार अपने विवेक से काम करेंगे और निष्पक्ष होकर निर्णय करेंगे। मैं यह चाहता हूं कि इसका थोड़ा-बहुत स्पष्टीकरण किया जाए। इन शब्दों के साथ जो संशोधन पेश किया गया है, मैं उसका समर्थन करता हूं।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** श्रीमान्, श्री अनन्तशयनम् आयंगर और श्री सन्तानम् की कुछ बातों का मैं जवाब देना चाहता हूं।

पहली बात यह है कि सर्वोच्च अदालत को विशेष या अतिरिक्त न्यायाधिकार देने के बारे में जो रिपोर्ट सभा की स्वीकृति के लिये पेश की गई है, उसमें व्यवस्था है। रिपोर्ट का खण्ड 7 इस प्रकार है:

> ''यदि किसी मामले के सम्बन्ध में संघीय व्यवस्थापिका को कानून बनाने का अधिकार हो तो स्पष्टत: उसे अपनी इच्छा से बनाये हुये ट्रिब्यूनल को इस सम्बन्ध में न्यायाधिकार देने का भी अधिकार है; और यदि इस काम के लिये वह सर्वोच्च अदालत को चुने तो उसे इस प्रकार दिया हुआ न्यायाधिकार प्राप्त होगा।''

इसलिये यदि आप उस रिपोर्ट को स्वीकार करें तो अतिरिक्त न्यायाधिकार देने के मार्ग में कोई रुकावट नहीं है। जब विधान अन्तिम रूप से निश्चित होगा तो हमें अतिरिक्त न्यायाधिकार देने की व्यवस्था करनी होगी।

इसके अतिरिक्त मेरे मित्र श्री सन्तानम् ने यह कहा कि रिपोर्ट के पैराग्राफ 10 में यह कहा गया है कि निस्संदेह किसी भारतीय रियासती प्रदेश को इसकी स्वतंत्रता होगी कि वह विशेष समझौता करके सर्वोच्च अदालत को अतिरिक्त न्यायाधिकार सौंप दे। इस पैराग्राफ में भारतीय रियासतों के सम्बन्ध में प्रयोग में आने वाले एक विशेष न्यायाधिकार के बारे में कमेटी ने विचार किया था, जैसे कि संघीय कानून या उस रियासत के अतिरिक्त किसी अन्य प्रदेश के कानून से उत्पन्न होने वाले मामलों के सम्बन्ध में; क्योंकि रियासतें इससे अधिक अधिकार देने के लिये तैयार नहीं थीं। इस अदालत के किसी कानून के वैधानिक औचित्य पर विचार करने के अधिकार के अतिरिक्त यह भी व्यवस्था की गई है कि भारतीय रियासतों को इसकी स्वतंत्रता होगी कि वे विशेष समझौते के द्वारा अतिरिक्त न्यायाधिकार दे दें। इससे व्यवस्थापिका के अधिकारों को कोई हानि नहीं पहुंचेगी।

कम से कम कमेटी का यह उद्देश्य नहीं है। दो बातें आवश्यक हैं। जहां तक रियासतों का सम्बन्ध है उन्हें पैराग्राफ 9 में बताये हुए न्यायाधिकार के अतिरिक्त पूरक न्यायाधिकार देने के लिये राजी हो जाना चाहिये। इसमें सन्देह नहीं कि यह दूसरी शर्त भी रखी गई है कि संघीय व्यवस्थापिका को सर्वोच्च अदालत को यह न्यायाधिकार देने के लिये राजी हो जाना चाहिये। अगर उद्देश्य यही है तो संशोधन की आवश्यकता नहीं रह जाती। यह उद्देश्य नहीं है और न यह हो ही सकता है कि राज्य को बिना व्यवस्थापिका की राय लिये हुये अतिरिक्त न्यायाधिकार देने का स्वतंत्र अधिकार दिया जाए। इसलिये जिस समय विधान का निर्माण होगा तो उस समय ऐसे मामलों के सम्बन्ध में, जिनमें रियासतों की दिलचस्पी हो और जिनके बारे में संघीय व्यवस्थापिका रियासतों से राय लेकर अतिरिक्त न्यायाधिकार देना चाहे, विशेष व्यवस्था करनी होगी। अतिरिक्त न्यायाधिकार की आवश्यकता के सम्बन्ध में श्रीमान्, मेरा यह मत है और रिपोर्ट के दो खण्डों का उद्देश्य भी यही है।

दूसरी बात पार्लियामेंट को न्यायाधीशों को पदच्युत करने का अधिकार देने के सम्बन्ध में है। इसके लिये श्रीमान्, मैं यह कहूंगा कि उपनिवेशों के विधानों में जिस प्रथा की व्यवस्था है उसका अनुकरण किया जाए। यद्यपि न्यायाधीशों की प्रतिष्ठा बढ़ाने की चिंता देखाई देती है, परन्तु मेरी समझ में नहीं आता कि एक प्रकार की विशेष समिति को उनको पदच्युत करने का अधिकार देकर उनको सरकारी नौकरों ही के स्तर पर क्यों लाया जा रहा है? इसीलिये उपनिवेशों के विधानों में 'प्रामाणिक दुराचरण' शब्दों का प्रयोग किया गया है। यद्यपि अंतिम अधिकार दोनों सभाओं का ही होता है, परन्तु खण्ड में यह व्यवस्था है कि आरोपों को साबित किया जाना चाहिये। संघीय कानून इसकी व्यवस्था करेगा कि इनको किस प्रकार साबित किया जाए। अन्य अधिकार-क्षेत्रों में जिन लोगों ने ऐसे मामलों का फैसला किया है उनसे अधिक विस्तार में जाने की हमें आवश्यकता नहीं है। मैं अपने मित्र से पूछता हूं कि क्या संसार के किसी अन्य विधान में न्यायाधीशों को पदच्युत करने के बारे में कहीं इससे अधिक विस्तृत व्यवस्था है? विधान में साधारण सिद्धांत बता दिया गया है और बाद को संघीय कानून में आवश्यक संगठन की व्यवस्था की जायेगी, इस खण्ड का यही आशय है। इसलिये मैं सभा से यही कहूंगा कि वह यह साधारण सिद्धांत स्वीकार कर ले कि राष्ट्रपति को इस देश की सर्वोच्च व्यवस्थापिका से सलाह लेकर पदच्युत करने का अधिकार होगा। इसका अर्थ यह नहीं है कि सर्वोच्च व्यवस्थापिका इस अधिकार का दुरुपयोग करेगी। 'प्रामाणिक दुराचरण' शब्दों में पर्याप्त सुरक्षा है और जो कोई संघीय कानून स्वीकार किया जाये उसमें हम इसके लिये विस्तृत व्यवस्था कर सकते हैं कि किसी

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

न्यायाधीश का अपराध पूर्ण रूप से साबित किया जाए। परन्तु यह एक दूसरा ही विषय है।

मेरे विचार से यह आवश्यक नहीं है कि किसी विधान में न्यायाधीशों के सम्मुख दोषारोपण करने या किसी न्यायाधीश के विरुद्ध आरोप लगाने के लिये विस्तृत व्याख्या की जाए। आप इसे किसी भी विधान में न पायेंगे। जर्मन विधान में भी जो विशेष रूप से विस्तारपूर्ण है, आप इस प्रकार की व्यवस्था न पायेंगे। न आपको यह बन्दोबस्त के कानून या ब्रिटिश पार्लियामेंट के बाद के कानूनों ही में मिलेगा, जिनमें न्यायाधीशों को पदच्युत करने का उल्लेख है। इसलिये चूंकि आप न्यायाधीशों का बहुत आदर कर रहे हैं इसलिए भी आपको चार या पांच न्यायाधीशों की एक समिति सर्वोच्च अदालत के चीफ जस्टिस के सम्बन्ध में निर्णय करने के लिये नहीं बिठानी चाहिये। क्या आप वास्तव में भारत के चीफ जस्टिस की प्रतिष्ठा बढ़ाना चाहते हैं? मुझे इसमें कुछ भी संदेह नहीं है कि आप ऐसा चाहते हैं। परन्तु किसी को पदच्युत करने का अधिकार होना चाहिये और इसीलिये आपने यह अधिकार सर्वोच्च पार्लियामेंट को दिया है, परन्तु यह निरंकुश रूप से नहीं दिया गया है। परन्तु इसे साधारण चिरपरिचित तथा परम्परागत प्रथाओं के अनुसार प्रयोग में लाना चाहिये। यह किसी एक सभा के विवेकाधीन नहीं है कि वह किसी न्यायाधीश को पदच्युत करे। इस सम्बन्ध में सार्वभौम अन्तिम अधिकार पार्लियामेंट की दोनों सभाओं को ही दिया जायेगा। श्रीमान्, मेरे संशोधन का यही आशय है।

अब जो दूसरी बात कही गयी है उसके बारे में मैं कुछ शब्द कहूंगा। मैं आपसे यह स्मरण रखने के लिये कहता हूं कि आप भारत सरकार के कानून से कुछ आदेश ले रहे हैं। सन् 1935 ई. के भारत सरकर के कानून के अनुसार आप किसी न्यायाधीश के पद की अवधि में उसके वेतन को कम नहीं कर सकते हैं और मुझे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि जिन सज्जनों को आप विधान का मसविदा तैयार करने का काम सौंप रहे हैं वे इस आदेश को नये विधान में स्थान देने की चिंता करेंगे। मैं सदस्यों से कहूंगा कि वे इस विधान में किसी न्यायाधीश-सम्बन्धी कानून को नियमित रूप से स्थान न दें। मुझे अपने संशोधन से कोई विशेष लिप्सा नहीं है। मैं इसे सभा की इच्छा पर छोड़ता हूं कि वह इसे स्वीकार करे या अस्वीकार करे, परन्तु मुझे आशा है कि अनावश्यक आदेशों को स्थान नहीं दिया जायेगा।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** श्रीमान्, मैंने यह संशोधन पेश किया था कि प्रत्येक न्यायाधीश भारतीय संघ का नागरिक होगा। अध्यक्ष महोदय, निस्संदेह मैं यह समझती हूं कि मुझे इस प्रश्न पर अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि मुझे आशा है कि यह सभा इस प्रश्न के महत्व को समझेगी और मुझसे सहमत होगी। यदि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जायेगा तो उसका प्रभाव यह होगा कि न्यायाधीशों का चुनाव कोई विदेशी नहीं कर सकेगा। मैं केवल दो चार शब्द कहना चाहूंगी। केवल वह भारतीय नागरिक, जो भारतीय उपनिवेश के प्रति कर्तव्यपालन की प्रतिज्ञा करेगा, इस पद पर नियुक्त होने योग्य समझा जायेगा और कोई भी विदेशी, चाहे वह कितना ही प्रतिष्ठित क्यों न हो और कितना ही कानून का ज्ञाता क्यों न हो, इस पद पर नियुक्त होने योग्य कभी भी न समझा जायेगा। मेरे संशोधन का यह प्रभाव होगा। अध्यक्ष महोदय, हम संघ के सम्बन्ध में और प्रांतों के गवर्नरों के सम्बन्ध में इस योग्यता को निर्धारित कर चुके हैं। यदि इनके सम्बन्ध में हमने यह व्यवस्था की है तो यह और भी आवश्यक है कि सर्वोच्च अदालत के या हाईकोर्टों के न्यायाधीशों के सम्बन्ध में भी हम यह व्यवस्था करें, क्योंकि सर्वोच्च अदालत प्रजातंत्र की रक्षक समझी जाती है और वह भारतीय नागरिकों के मौलिक व अन्य अधिकारों की रक्षा करेगी। अपना संशोधन सभा की स्वीकृति के लिये पेश करते हुये मैं सभा से केवल इतना ही कहना चाहती हूं।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मैंने वास्तव में यह समझा था कि संघ की सर्वोच्च अदालत के निर्माण और उसकी कार्यविधि जैसे महत्वपूर्ण प्रश्न को हल करने में जितना समय लगा है उससे कहीं अधिक समय लगेगा। मेरे विचार से जो संशोधन पेश किए गये हैं, उनमें मुख्य-मुख्य बातें सभा के सामने रख दी गयी हैं। श्री अल्लादी ने जो प्रस्ताव सभा के सामने रखे हैं उनसे मैं साधारणतया सहमत हूं। एक साधारण प्रस्ताव यह है कि नये विधान के सिद्धान्तों को निश्चित करते समय जिनके आधार पर उसका मसविदा तैयार किया जायेगा, हमें न्यायाधिकार या कार्यविधि के सम्बन्ध में अधिक विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है। इन सिद्धांतों में हमको केवल यह रखना है कि विधान का मसविदा तैयार करते समय किन मुख्य-मुख्य बातों का ध्यान रखा जाए। यह मसविदा सभा के सामने बाद को पेश होगा। श्रीमान्, जहां तक इस अदालत के निर्माण का प्रश्न है मुझे इसकी प्रसन्नता है कि तत्संबंधी कमेटी की रिपोर्ट को सभा ने आमतौर से स्वीकार कर लिया है। मैं इस कमेटी की रिपोर्ट की एक बात की ओर आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं। उसमें कहा गया है कि उसने विभिन्न विषयों पर विचार

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

किया है, परन्तु उनमें से कुछ ही को विधान में स्थान दिया जाना चाहिये और अन्य विषयों को न्यायाधीश सम्बन्धी कानून में ही स्थान देना उचित होगा जिसे कि संघीय पार्लियामेंट ही अस्तित्व में आने के बाद स्वीकार कर सकती है। यदि हम इसे ध्यान में रखें तो हम यह समझ जायेंगे कि इस समय विस्तारपूर्वक विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

मैं केवल एक दो बातों को लूंगा। आखिर में जो बात कही गई है उसे मैं पहले लूंगा। श्रीमती दुर्गाबाई ने यह सुझाव पेश किया है कि सर्वोच्च अदालत का प्रत्येक न्यायाधीश भारतीय संघ का नागरिक होगा। साधारणतया इससे किसी को मतभेद नहीं हो सकता है। परन्तु सम्भवतः हमें इस ओर भी ध्यान देना पड़े कि विधान के प्रयोग में आते समय इस अदालत का ढांचा किस प्रकार का है और इस प्रश्न पर भी विचार करना होगा कि संशोधन में यह प्रस्ताव जिस रूप में रखा गया है, उसी रूप में विधान में भी सम्मिलित किया जाए या उससे भिन्न रूप में। मेरा यह सुझाव है कि यह प्रश्न मसविदा तैयार करने वाले पर छोड़ दिया जाए।

श्रीमान् वाद-विवाद के सिलसिले में जो दूसरी बात कही गई थी, वह सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों की नियुक्ति के बारे में है। तत्सम्बन्धी कमेटी ने कुछ प्रस्ताव पेश किये। संघीय विधान-कमेटी ने उनमें परिवर्तन किये और अब हमारे सामने संघीय विधान-कमेटी की सिफारिशों में भी कुछ परिवर्तन करने के लिये प्रस्ताव हैं। अब, जहां तक मैं समझता हूं, न्यायाधीशों को नियुक्त करने के ढंग से श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर और श्री संतानम सहमत हैं। संघ का अध्यक्ष उन्हें नियुक्त करेगा। उनको नियुक्त करने के पहले वह ऐसे लोगों से सलाह लेगा जो उम्मीदवारों की योग्यता और उनके कार्य से परिचित होंगे। श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने यह प्रस्ताव किया है कि सर्वोच्च अदालत का कोई न्यायाधीश राष्ट्रपति द्वारा सर्वोच्च अदालत के चीफ जस्टिस और हाईकोर्टों के न्यायाधीशों से सलाह लेकर नियुक्त किया जायेगा जो इसके लिये उपयोगी समझे जायेंगे। श्री सन्तानम् ने भी अपने संशोधन में बहुत कुछ यही प्रस्ताव किया है। इस पर एक आलोचना यह की गई थी कि इसमें चीफ जस्टिस की नियुक्ति की व्यवस्था नहीं है। मेरा विश्वास है कि इस विषय में श्री अनंतशयनम् आयंगर की आलोचना को मैं ठीक समझ पाया हूं। मेरे विचार से श्रीमान्, खण्ड की शब्दावली के अनुसार भी सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीश से तात्पर्य सर्वोच्च अदालत के चीफ जस्टिस से भी है।

खण्ड में सर्वोच्च अदालत के किसी अधीनस्थ न्यायाधीश का उल्लेख नहीं है। जिन लोगों से सलाह ली जायेगी वे चीफ जस्टिस और अमुक-अमुक न्यायाधीश हैं। अवकाश ग्रहण करने वाले चीफ जस्टिस के पदत्याग करने के पहले ही साधारणतया नियुक्ति के सम्बन्ध में निर्णय हो जायेगा। यह कोई अनुचित बात नहीं है। सम्भवत: यह बहुत ही न्यायसंगत होगा कि किसी चीफ जस्टिस या उसके सहयोगियों या अन्य न्यायाधीशों से उनके पदत्याग करने के पहले नये चीफ जस्टिस की नियुक्ति के बारे में सलाह ली जाये। इसलिये श्रीमान्, श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने इस खण्ड को जिस प्रकार रखा है उसमें मेरे विचार से चीफ जस्टिस को नियुक्त करने की प्रणाली भी आ जाती है?

श्रीमान्, दूसरा महत्वपूर्ण विषय सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों को पदच्युत करने के सम्बन्ध में है। इस सम्बन्ध में दो उपाय हैं और उन पर विचार किया जाना चाहिये। इन दो उपायों को बताने के पहले मैं यह कहना चाहता हूं कि सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीश को पदच्युत करने का अवसर शायद ही कभी आये। मुझे तो ब्रिटेन में ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता कि पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के प्रस्ताव द्वारा कोई न्यायाधीश पदच्युत किया गया हो। सम्भव है, मैं गलती कर रहा हूं, परन्तु मुझे याद नहीं आता। उपनिवेशों में भी जिनके विधान में इस प्रकार का आदेश है मुझे कोई भी ऐसा उदाहरण नहीं मिलता, जिसमें इस आदेश को प्रयोग में लाने की आवश्यकता पड़ी हो। इसलिये प्रामाणिक दुराचरण के लिये न्यायाधीशों को पदच्युत करने की जो भी प्रणाली आप निश्चित करें वह शायद ही कभी काम में आयेगी और बहुत सम्भव है कि मेरे जीवनकाल में तो काम में न लाई जायेगी, और न उनके जीवनकाल में काम में लाई जायेगी जो इस सभा में मुझसे उम्र में बहुत छोटे हैं। ऐसी अवस्था में मेरी यह इच्छा है कि यह सभा प्रस्तावित दो उपायों पर उनकी उपयुक्तता के आधार पर ही विचार करेगी।

एक उपाय का सुझाव श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने किया है। उसके शब्द इस प्रकार हैं:

> ''भारत की सर्वोच्च अदालत का कोई न्यायाधीश अपने पद से तब तक न हटाया जायेगा जब तब प्रामाणिक दुराचरण या अयोग्यता के आधार पर संघीय पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के एक ही अधिवेशन में पद से हटाने के लिए प्रस्ताव करने पर उसे राष्ट्रपति स्वयं न हटाये। इस सम्बन्ध में कार्यविधि निश्चित करने के लिये संघीय कानून अधिक व्यवस्था कर सकता है।''

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने इन शब्दों का आशय समझा दिया है। एक बात जो मुझे बहुत अच्छी लगती है वह यह है कि उसमें सर्वत्र 'नकार' का प्रयोग है। इसमें इसका ध्यान रखा गया है कि न्यायाधीश कोई ऐसा कार्यकर्ता नहीं है कि जिसको पदच्युत करने की बात हम मामूली तौर से सोचें। वे कहते हैं कि कोई न्यायाधीश तब तक न हटाया जायेगा, जब तक अमुक प्रणाली के अनुसार कार्यवाही न की जाए। इस हद तक, मेरे विचार से यह सुझाव उन सुझावों से अच्छा है जो समय-समय पर दिये जाते रहे हैं।

दूसरा उपाय श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने सभा के सामने रखा है। उनके प्रस्ताव के शब्द इस प्रकार हैं:

''सर्वोच्च अदालत का कोई न्यायाधीश दुराचरण या मस्तिष्क या शरीर के दौर्बल्य के कारण, इस सम्बन्ध में राष्ट्रपति के सर्वोच्च अदालत से कहने पर और इस काम के लिये हाईकोर्टों या सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों या भूतपूर्व न्यायाधीशों में से उनके एक विशेष ट्रिब्यूनल नियुक्त करने पर वह यह रिपोर्ट दे कि वह न्यायाधीश ऐसे किसी कारण से पदच्युत किया जाये'।''

सप्रू कमेटी ने इस सम्बन्ध में जो सिफारिशें की हैं, उनमें थोड़ा परिवर्तन करके यह प्रस्ताव पेश किया गया है।

यह निर्णय करने से पहले कि इन दो संशोधनों में से किसको स्वीकार किया जाए, हमें कुछ बातों पर विचार करना होगा। इनमें से एक बात यह है कि यह एक अजीब सा लगता है कि किसी न्यायाधीश को पदच्युत करने के लिये हमें व्यवस्थापिका की दो सभाओं की बैठक करनी पड़े, जिनमें से एक में कुछ नहीं तो 500 से 600 तक सदस्य होंगे और दूसरी में इसके लगभग आधे सदस्य होंगे और तब वह यह प्रस्ताव करे कि किसी न्यायाधीश ने दुराचरण किया है या नहीं किया है और यदि किया है तो वह पदच्युत किया जाए या न किया जाये। श्रीमान, मुझे तो यह प्रतीत होता है कि इस प्रकार की प्रणाली को स्वीकार करने में सदस्यों को रोष होगा। मैं यह इसलिये कह रहा हूं कि साधारण सरकारी नौकरों के मामले

में भी हम उन्हें जनमत से नियुक्त करने या जनमत से पदच्युत करने के सिद्धांत से बहुत दूर चले गये हैं। यदि आप इस देश की सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों के सम्बन्ध में एक ऐसे सिद्धांत को लागू करने जा रहे हैं जिसे आप साधारण सरकारी नौकरों के सम्बन्ध में भी लागू करने के लिये तैयार नहीं हैं, तो यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं यह कहूंगा कि इसे न्यायोचित ठहराने के लिये आपको बहुत ही जबर्दस्त कारण देने होंगे। जो दूसरी प्रणाली सुझाई गई है, वह यह है कि इस प्रश्न पर कि किसी न्यायाधीश ने दुराचरण किया है या नहीं और अगर किया है तो उसे पदच्युत किया जाए कि नहीं, राष्ट्रपति एक ऐसे ट्रिब्यूनल की रिपोर्ट पर निर्णय देगा या फैसला करेगा, जिसे वह इस काम के लिये सर्वोच्च अदालत या हाईकोर्टों के वर्तमान या भूतपूर्व न्यायाधीशों में से नियुक्त करेगा। इस प्रकार भी श्रीमान्, वह न्यायाधीश जिस पर दुराचरण का अभियोग लगाया गया हो, फैसले के लिये ऐसे ट्रिब्यूनल के सामने पेश किया जायेगा जिसके कुछ सदस्य देश के न्याय-विभाग में उसके अधीन रहे हुये हों। इसलिये इस प्रणाली के विरुद्ध भी यह बात कही जा सकती है। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मैं यह कहने के लिये तैयार नहीं हूं कि यह उपाय अच्छा है या वह उपाय। क्योंकि आप चाहे जिस प्रणाली को स्वीकार करें, मुझे यह आशा है कि इसको सर्वोच्च अदालत के किसी न्यायाधीश के विरुद्ध प्रयोग में लाने का सम्भवत: कभी अवसर ही न आयेगा। इसलिये मैं इसे इस सभा पर छोड़ता हूं कि वह जिस प्रणाली को भी चाहे स्वीकार करे। उसे विधान के मसविदे में स्थान दिया जायेगा।

अतिरिक्त न्यायाधिकार के सम्बन्ध में, अर्थात् सर्वोच्च अदालत को दिये जाने वाले रियासतों से सम्बन्धित न्यायाधिकार के बारे में यह बात ठीक है कि यदि रियासतों को इस न्यायाधिकार को देना है या समझौते से इसके लिये राजी हो जाना है तो वास्तव में संघीय कानून द्वारा ही यह न्यायाधिकार सर्वोच्च अदालत को दिया जाना चाहिये। ऐसी अवस्था में श्रीमान्, आपके विचारार्थ मैं यह सुझाव पेश करता हूं कि न्यायाधीशों की नागरिकता और उनको अतिरिक्त न्यायाधिकार देने के सम्बन्ध में जो संशोधन पेश किये गये हैं, उन्हें यदि प्रस्तावक सहमत हों तो इस आश्वासन पर वापस ले लिया जाए कि इस वाद-विवाद में जो प्रश्न उठाये गये हैं उनको विधान का मसविदा बनाते समय ध्यान में रखा जायेगा। श्रीमान्, यदि आप सहमत हों तो सभा के सामने केवल सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों की नियुक्ति सम्बन्धी खण्ड और उनको पदच्युत करने के बारे में जिन खण्डों का प्रस्ताव किया गया है, उन्हें ही पेश किया जाये। इन दोनों प्रश्नों पर निर्णय

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

कर लेने के बाद और यह भी निर्णय कर लेने पर कि हम साधारणतया तत्सम्बन्धी कमेटी की रिपोर्ट को स्वीकार करते हैं, हमें मसविदा तैयार करने के लिये पर्याप्त अधिकृत सामग्री मिल जायेगी।

***उपाध्यक्ष** (श्री वी.टी. कृष्णमाचार्य): पहले मैं सभा के सामने उन संशोधनों को रखूंगा जो इस खण्ड को निकाल देने के सम्बन्ध में हैं। पहला संशोधन श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का है, जो पूरक-सूची 3 के पैरा 7 (ग) में दिया हुआ है:

> ''भारत की सर्वोच्च अदालत का कोई न्यायाधीश अपने पद से तब तक नहीं हटाया जायेगा जब तक प्रामाणिक दुराचरण या अयोग्यता के आधार पर संघीय पार्लियामेंट की दोनों सभाओं के एक ही अधिवेशन में पद से हटाने के लिये प्रस्ताव करने पर उसे राष्ट्रपति स्वयं न हटायें। इस सम्बन्ध में कार्यविधि निश्चित करने के लिये संघीय कानून अधिक व्यवस्था कर सकता है।''

मैं इस संशोधन को सभा के सामने रखता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्ष:** एक और संशोधन है 21 (ख) जिसे श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने पेश किया है। मेरे विचार से उसे पेश करने के लिये जोर नहीं दिया गया है।

अब मैं सभा के सामने श्री अनन्तशयनम् आयंगर का संशोधन 21-1 (क) पेश करता हूं जो पूरक सूची 2 में दिया हुआ है और जो इस प्रकार है:

> ''1 (क) कोई न्यायाधीश राष्ट्रपति को सम्वाद भेजकर अपने पद से इस्तीफा दे सकता है।''

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं सभा के सामने श्री अनन्तशयनम् आयंगर का संशोधन 21-1 (ग) रखता हूं, जो इस प्रकार है:

> ''कोई न्यायाधीश दीवालिया करार होने पर पदासीन न रहेगा।''

संशोधन गिर गया।

उपाध्यक्षः अब मैं सभा के सामने श्री अनन्तशयनम् आयंगर का संशोधन 19 (क) रखता हूं, जो इस प्रकार है:

''प्रत्येक न्यायाधीश भारतीय संघ का नागरिक होगा।''

श्रीमती जी. दुर्गाबाईः श्रीमान्, इस संशोधन को मैंने पेश किया था, परन्तु श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर के आश्वासन को दृष्टि में रखते हुये मैं अपने संशोधन के पेश किये जाने के लिये जोर नहीं देती। परन्तु उसे विधान के मसविदे में स्थान मिल जायेगा।

***उपाध्यक्षः** 19 (क) वापस लिया जाता है। क्या सभा उसे वापस लेने की आज्ञा देती है?

सभा की आज्ञा से संशोधन वापस ले लिया गया।

उपाध्यक्षः अब मैं सभा के सामने श्री संतानम् का संशोधन 8 (ग) रखता हूं जो पूरक सूची 3 में दिया हुआ है:

''(ग) सर्वोच्च अदालत के चीफ जस्टिस और अन्य न्यायाधीशों के वेतन कानून द्वारा निश्चित किये जायेंगे और किसी भी न्यायाधीश का वेतन उसकी पद की अवधि में कम न किया जायेगा।''

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्षः** अब मैं सभा के सामने सूची 2 का संशोधन 17 रखता हूं:

''(क) प्रिवी कौंसिल का किसी कानूनी मामले में अपील सुनने का न्यायाधिकार इससे समाप्त किया जाता है और वह सर्वोच्च अदालत को दिया जाता है;

(ख) प्रिवी कौंसिल को जो अपीलें सुननी हों उन पर सर्वोच्च अदालत विचार करेगी।''

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान्, मैंने यह सुझाव रखा था कि इसे मैं बाद को पेश करूंगा।

***उपाध्यक्ष:** अच्छी बात है, यह संशोधन स्थगित किया जाता है।

अब हम श्री सन्तानम् का संशोधन 8 (ख) उठायेंगे।

***श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान्, मैं इस संशोधन को पेश करने के लिये जोर नहीं देता।

***उपाध्यक्ष:** क्या सभा इस संशोधन को वापस लेने की इजाजत देती है?

***माननीय सदस्य:** जी, हां।

संशोधन सभा की स्वीकृति से वापस ले लिया गया।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं संशोधित खण्ड पर वोट लूंगा।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर:** क्या मैं यह बता सकता हूं कि न्यायाधीशों की नियुक्ति के बारे में जो संशोधन पेश किया गया था वह अभी सभा के सामने नहीं रखा गया।

***उपाध्यक्ष:** अब कोई संशोधन नहीं रह गये। मेरे विचार से सभी प्रस्ताव एक समान हैं। वे स्मृति-पत्र के पैराग्राफ के अनुरूप ही है और कोई विशेष अन्तर नहीं है।

अब मैं खण्ड 18 को उसके संशोधित रूप में वोट के लिये रखता हूं।

खण्ड 18 संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** उपाध्यक्ष महोदय, कल मैंने यह संशोधन पेश किया था कि खण्ड 18 के साथ खण्ड 18 (क) जोड़ दिया जाए। पूरक सूची में भी वह संशोधन 15 के नाम से रखा गया है। वह इस प्रकार है:

> "18 (क) किसी नवनिर्मित प्रांत में वहां की व्यवस्थापिका के गवर्नर के पास प्रस्ताव भेजने पर और राष्ट्रपति के उसको स्वीकार करने पर नये हाईकोर्ट स्थापित किये जा सकते हैं।"

***उपाध्यक्ष:** क्या कोई सदस्य इस प्रस्तावित खण्ड 18 (क) पर बोलना चाहते हैं?

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** अपने संशोधन के समर्थन में मैं कुछ शब्द कहना चाहती हूं। श्रीमान्, विधान के मसविदे में मैंने कोई ऐसा आदेश नहीं पाया जैसा कि मेरे संशोधन में है। इसलिये मैंने विचार किया कि इसकी आवश्यकता है। संघीय व्यवस्थापिका को जो अधिकार हमने दिये हैं उनके कारण कुछ नये प्रदेश उत्पन्न हो सकते हैं। यह आवश्यक भी हो जायेगा क्योंकि दो प्रदेशों, पश्चिमी बंगाल और पूर्वी पंजाब, का तो इसी समय निर्माण हो गया है। इसलिये इन नव-निर्मित प्रदेशों में हाईकोर्टों की स्थापना के लिये कुछ व्यवस्था होनी चाहिये। इसीलिये मैंने खण्ड 18 (क) जोड़ देने का प्रस्ताव किया है।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** मैं इस प्रकार की व्यवस्था की कोई आवश्यकता नहीं समझता, क्योंकि यदि कोई नये प्रांत का निर्माण होगा तो उसी के साथ न्याय-विभाग, व्यवस्थापिका आदि की भी स्थापना हो जाएगी और वे प्रान्तीय विधान और प्रान्तीय संगठन के अंग होंगे। इसलिये यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि एक हाईकोर्ट भी होगा। बिना पृथक न्याय-विभाग और पृथक व्यवस्थापिका के आप साधारणतया किसी प्रान्त की कल्पना भी नहीं कर सकते। इस सम्बन्ध में व्यवस्थापिका को कोई प्रस्ताव पेश करने की आवश्यकता नहीं है। यह प्रान्तीय विधान में रखा जा सकता है कि प्रत्येक प्रान्त में एक हाईकोर्ट होगा। इसलिये जो मसविदा तैयार किया जाए और सिद्धांत में जो परिवर्तन किये जाएं उनके अधीन श्रीमती दुर्गाबाई ने जो कुछ कहा है वह स्वीकार किया जा सकता है, परन्तु यह आदेश रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। साधारणतया हमारे यहां हाईकोर्ट हैं, परन्तु नई व्यवस्था में उनकी आवश्यकता नहीं भी हो सकती है। मुझसे कहा गया है कि आसाम और उड़ीसा में इनकी आवश्यकता होगी। जब अन्त में विधान तैयार होगा तो यह प्रान्तीय व्यवस्था के अधीन होगा। यदि इसे मान लिया जाये तो मुझे इस खण्ड को स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** इस प्रकार का आदेश विधान में आवश्यक है। जहां तक हाईकोर्टों के न्यायाधीशों की नियुक्ति का प्रश्न है, हमने जो प्रांतीय विधान स्वीकार किया है उसमें यह आदेश रखा है कि न्यायाधीशों को राष्ट्रपति, भारत के चीफ जस्टिस, सम्बन्धित प्रान्त के चीफ जस्टिस और अन्य चीफ जस्टिसों से भी सलाह लेकर नियुक्त करेगा। जबकि न्यायाधीशों की नियुक्ति भी संघ और संघ के अध्यक्ष के अधिकार में हैं, तो यह एक अजीब बात है कि नव-निर्मित प्रान्तों में हाईकोर्टों को स्थापित करने वाले अधिकारी का उल्लेख नहीं है। मैं यह पूछता हूं कि हाईकोर्टों को स्थापित करने वाला अधिकारी कौन है? इसकी कोई

[श्री एम. अनंतशयनम आयंगर]

व्यवस्था नहीं की गयी है। क्या यह अधिकार पूर्णतया प्रान्त को ही दिया जाने वाला है और इस सम्बन्ध में क्या केन्द्र की स्वीकृति की आवश्यकता नहीं है? वर्तमान विधान के अधीन कुछ प्रान्तों में स्थापित कई हाईकोर्टों को भारत सरकार का कानून स्वीकृति प्रदान करता है, परन्तु नये हाईकोर्टों के सम्बन्ध में उसमें कहा गया है कि वे सम्राट द्वारा स्थापित किये जा सकते हैं। भारत सरकार के कानून की धारा 219 देखिये। इसलिये हमको यहां इसी समय यह निर्णय करना है कि भविष्य में नये हाईकोर्ट किस अधिकारी द्वारा स्थापित होंगे। श्री अल्लादी की तरह क्या हम यह कह दें कि इस सारे मामले को प्रान्तों के लिये छोड़ देना चाहिये। तब तो किसी प्रान्त में हाईकोर्ट की स्थापना वहां की व्यवस्थापिका के अधिकार में होगी और न्यायाधीशों की नियुक्ति पर संघ के अध्यक्ष का नियंत्रण होगा जैसे कि हाईकोर्ट की स्थापना से यह काम जो अधिक महत्वपूर्ण है। इसका अर्थ यह है कि कार्यविधि उल्टी तौर से व्यवहार में लाई जाएगी। इस परिस्थिति में मैं आदरपूर्वक कहता हूँ कि मेरी माननीया मित्र श्रीमती दुर्गाबाई ने यह ठीक ही सुझाव रखा है कि किसी नये हाईकोर्ट की स्थापना के सम्बन्ध में प्रांतीय व्यवस्थापिका द्वारा पेश किए हुए प्रस्ताव को स्वीकार करने या अस्वीकार करने का अधिकार अध्यक्ष को प्राप्त होना चाहिये।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** उपाध्यक्ष महोदय, आपकी अनुमति से मैं इस संशोधन में कुछ शब्द और जोड़ना चाहती हूं। यह कि:

"उड़ीसा और आसाम के नये प्रान्तों में तथा नव-निर्मित प्रान्तों में नये हाईकोर्ट स्थापित किये जाने चाहियें।"

संशोधन का शेष भाग उसी प्रकार रहेगा। मैं यह सिफारिश करती हूं कि यह सभा इस संशोधन को स्वीकार कर ले।

***डा. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल) श्रीमान्, विनय-पूर्वक मैं भी यह कहना चाहता हूं कि इस सम्बन्ध में श्री अल्लादी के विचारों से मैं भी सहमत नहीं हूं। जैसा कि मुझसे पहले बोलने वाले वक्ता बता चुके हैं। हमें प्रान्तों में हाईकोर्टों की स्थापना की प्रणाली निर्धारित कर देनी चाहिये। हम सभी जानते हैं कि हाईकोर्टों की स्थापना का कार्य एक दीर्घकालीन कार्य है और यह प्रान्तों पर ही नहीं छोड़ा जा सकता कि वे अपने ही निश्चय और निर्णय से उनको स्थापित करें। यह निश्चय करने के लिये कि कोई प्रदेश इतना बड़ा है, इतना

योग्यता-सम्पन्न है और यह कि उसे इतनी आवश्यकता है कि वहां एक पृथक् हाईकोर्ट स्थापित किया जाए, कोई अधिकारी होना चाहिये और इसके लिये सबसे उपयुक्त संघीय पार्लियामेंट और राष्ट्रपति होंगे। किसी हाईकोर्ट की स्थापना कोई साधारण बात नहीं है और विधान में इस सम्बन्ध में उपयुक्त आदेश या प्रणाली का अभाव वास्तव में एक बहुत बड़ा अभाव होगा। श्रीमान्, मुझे इसकी प्रसन्नता है कि हमारी महिला सदस्य ने इस अभाव की ओर संकेत किया है और मुझे आशा है कि प्रस्तावित संशोधन स्वीकार कर लिया जायेगा।

***श्री राजकृष्ण बोस** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान्, इस संशोधन की प्रस्ताविका के प्रति आदर भाव दिखाते हुये मैं यह कहना चाहता हूं कि यह एक ऐसा प्रश्न है जिसको स्टीयरिंग कमेटी ने न तो उठाया और न उस पर विचार किया। चूंकि इस संशोधन से हाईकोर्टो की स्थापना के सम्बन्ध में प्रान्तों के अधिकारों पर प्रभाव पड़ता है और चूंकि यह प्रस्ताव किया गया है कि इन अधिकारों पर केन्द्र का नियंत्रण होगा, इसलिये यह कहा नहीं जा सकता कि इस सम्बन्ध में प्रान्तों के अधिकारों पर इस संशोधन का क्या प्रभाव पड़ेगा। कुछ प्रान्तों के नामों का उल्लेख किया गया था और उनमें से एक उड़ीसा भी था। श्रीमान्, मुझे मालूम है कि कुछ वर्ष पहले उस प्रान्त में हाईकोर्ट स्थापित करने के लिये एक कमेटी नियुक्त की गई थी और उस कमेटी ने एक रिपोर्ट दी थी। उस पर अभी व्यवस्थापिका ने विचार नहीं किया है और अभी कोई निर्णय नहीं किया है। मेरे विचार से यह संशोधन इतना महत्वपूर्ण है कि इसे स्टीयरिंग कमेटी के पास भेजा जाना चाहिये और सभा में अन्तिम विचार के लिये पेश किये जाने के पहले वहां उस पर उचित विचार हो जाना चाहिये। इसलिये मैं प्रस्ताविका महोदय से प्रार्थना करता हूं कि वे इसके लिये राजी हो जायें कि यह मामला स्टीयरिंग कमेटी के सामने रखा जाए ताकि इस सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय करने के पहले हमें उनके विचार मालूम हो जाएं।

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): श्रीमान्, इस संशोधन में प्रान्तीय हाईकोर्टो की स्थापना का उल्लेख है और इसलिए यह संघीय न्याय-विभाग के अध्याय के अन्तर्गत न आना चाहिये।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, श्री अणे ने जो बात कही है उससे मैं पूर्णतया सहमत हूं। मेरे विचार से प्रस्तावित खंड उस अध्याय में

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

सम्मिलित नहीं किया जा सकता, जिसका शीर्षक ''संघीय न्याय-विभाग'' हो। प्रस्ताव यह है कि नव-निर्मित प्रान्तों में हाईकोर्ट स्थापित किए जाएं। श्रीमान्, मैं समझता हूं कि जब आप नये विधान के मसविदे को देखेंगे तो आपको सम्भवत: इस आशय का एक आदेश मिलेगा कि प्रत्येक प्रान्त में उसी प्रकार एक हाईकोर्ट होगा, जिस प्रकार संघ के लिये एक सर्वोच्च अदालत होगी, या यदि उसमें उन प्रान्तों में भेद किया जाए जो हाईकोर्ट रख सकते हैं और जो नहीं रख सकते हैं, तो उसमें उन प्रान्तों का नाम होगा जहां हाईकोर्ट वर्तमान हैं और ऐसे प्रान्तों में पृथक् हाईकोर्ट स्थापित करने के बारे में, जहां वे न हों, उसमें आवश्यक अधिकार की व्यवस्था होगी। मेरे कहने का मतलब यह है कि यह कभी नहीं हो सकता कि विधान के प्रान्तीय भाग का आखिरी मसविदा तैयार करते समय इस प्रकार के विषय की ओर ध्यान ही न दिया जाए। जहां तक इस अध्याय का सम्बन्ध है, मेरे विचार से यह संशोधन पूर्णतया अनियमित है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** श्रीमान्, मैं स्टीयरिंग कमेटी का एक सदस्य हूं और मुझे यह मालूम है कि इस सभा में कई ऐसे संशोधन पेश किये गये हैं जो स्टीयरिंग कमेटी के सामने नहीं आये। मैं स्टीयरिंग कमेटी के कार्यक्षेत्र से परिचित हूं। इस विधान के मसविदे या प्रान्तीय विधान के प्रत्येक खण्ड पर उसने विचार नहीं किया। उसके अतिरिक्त अन्य परामर्शदातृ समितियां भी हैं जैसे कि प्रांतीय विधान कमेटी, संघीय विधान-कमेटी इत्यादि। इस खण्ड पर विचार करना स्टीयरिंग कमेटी का काम नहीं है और मुझे इस आपत्ति में कुछ भी बल नहीं मालूम पड़ता कि इसे पहले स्टीयरिंग कमेटी के पास भेजना चाहिये। यदि यह उसके पास भेजा भी जायेगा तो हम कह देंगे कि उस पर विचार करना हमारा काम नहीं है।

जहां तक श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर की इस व्यवस्था-सम्बन्धी आपत्ति का सम्बन्ध है कि यह संशोधन इस अध्याय विशेष के अन्तर्गत नहीं आता। मैं यह कहूंगा कि महिला सदस्या के खण्ड 18 (क) का उद्देश्य यह है कि व्यवस्थापिका के प्रस्ताव करने पर राष्ट्रपति हाईकोर्ट की स्थापना करें। यदि हम इसे पूर्णत: प्रान्तीय विधान के क्षेत्र में रख दें और यदि हम यहां यह व्यवस्था न करें कि राष्ट्रपति को समिति के अध्यक्ष के रूप में अपने मंत्रियों से सलाह लेकर निर्णय करने का अन्तिम अधिकार होगा, तो एक स्थान शून्य ही रह जायेगा। केवल एक ही तरफ यानी प्रान्तीय विधान में ही इस प्रकार की व्यवस्था होगी और विधान-सम्बन्धी

कानून के संघीय भाग में इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं होगी। चाहे यह खण्ड 18 (क) के रूप में रखा जाए या इस विधान के पहले रखा जाए या बाद को इससे कुछ नहीं बिगड़ता, परन्तु इस विधान में इस प्रकार की व्यवस्था करनी होगी और प्रान्तीय विधान में भी इसी आशय की विस्तृत व्यवस्था करनी ही होगी।

***उपाध्यक्षः** श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर के आश्वासन से मैं यह समझता हूं कि विधान के जिस भाग में भी उचित होगा मसविदा बनाने वाले इस प्रकार की व्यवस्था रखेंगे। इस आश्वासन को दृष्टि में रखते हुये क्या प्रस्ताविका अपने संशोधन पर जोर देती हैं?

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** इस आश्वासन पर मैं अपना संशोधन वापस लेती हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

खण्ड 19

***उपाध्यक्षः** अब हम खंड 19 को उठाते हैं।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगरः** खण्ड 19 इस प्रकार हैः

"संघ का एक आडिटर जनरल होगा, जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेंगे और वह उसी प्रकार व उन्हीं कारणों से पदच्युत किया जायेगा जिनसे सर्वोच्च अदालत का न्यायाधीश पदच्युत किया जायेगा।"

इस खण्ड में यह सिद्धांत निहित है कि यदि यह वांछनीय समझा जाए कि आडिटर जनरल अपना काम योग्यता से करे तो उसे एक ऐसा अफसर होना चाहिये, जो उस प्रबन्धकारिणी सरकार का कृपाकांक्षी न हो जिसके हिसाब-किताब की उसे जांच करनी हो और इसीलिये उसके पद तथा उसकी प्रतिष्ठा के लिये वैसी ही व्यवस्था की गई है जैसी कि सर्वोच्च अदालत के न्यायाधीशों के सम्बन्ध में की गई है। श्रीमान्, मेरे विचार से यह विधान का एक बहुत ही आवश्यक खण्ड है।

***उपाध्यक्षः** खण्ड 19 में केवल एक ही संशोधन है और वह श्री मोहनलाल सक्सेना के नाम से पेश है (पूरक सूची नं. 1 की मद 18)।

(संशोधन पेश नहीं किया गया)

***उपाध्यक्ष:** क्या कोई सदस्य मूल खण्ड 19 पर बोलना चाहते हैं?

प्रश्न यह है कि खण्ड 19 स्वीकार कर लिया जाए?

खण्ड 19 स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 20

***माननीय श्री ए. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मेरा यह प्रस्ताव है कि खंड 20 स्वीकार कर लिया जाये। वह खण्ड इस प्रकार है:

"आडिटर जनरल के कर्तव्य तथा उसके अधिकार इस सम्बन्ध में सन् 1935 ई. के कानून का आदेशों के आधार पर होंगे।"

(सूची नं. 2 का संशोधन नं. 337 पेश नहीं किया गया।)

खण्ड 20 स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 21

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मेरा यह प्रस्ताव है कि खंड 21 स्वीकार कर लिया जाये। वह इस प्रकार है:

"संघ के लिये पब्लिक सर्विस कमीशन होगा जिसका संगठन व जिसके कर्तव्य इस सम्बन्ध में सन् 1935 ई. के कानून के आदेशों के आधार पर होंगे, सिवाय इसके कि कमीशन के सभापति और सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति अपने मंत्रियों की सलाह से करेगा।"

***उपाध्यक्ष:** श्री पातस्कर के नाम से एक संशोधन है।

***श्री एच.वी. पातस्कर** (बम्बई : जनरल): श्रीमान्, मेरा यह प्रस्ताव है कि:

"खण्ड 21 में 'अपने मंत्रियों' शब्दों की जगह 'अपने मंत्रिमंडल' शब्द रखे जायें।" मैं देखता हूं कि मेरे संशोधन के बाद संशोधन नं. 339 है, जिसका उद्देश्य इन सब शब्दों को निकाल देना है। यदि वह संशोधन स्वीकार कर लिया गया तो मेरा संशोधन अपने आप ही गिर जाता है। परन्तु यदि इन शब्दों को रखना

ही है तो 'मंत्रियों' शब्द न होना चाहिये बल्कि 'मंत्रिमंडल' शब्द होना चाहिये, क्योंकि खण्ड 10 में, जिसे हम स्वीकार कर चुके हैं, 'मंत्रिमंडल' शब्द रखा गया है। मैंने केवल एक शाब्दिक संशोधन पेश किया है और यह बाद के संशोधन नं. 339 के भाग्य पर निर्भर है।

(संशोधन नं. 339 और 340 पेश नहीं किये गये।)

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास: जनरल): चूंकि अल्पसंख्यकों की उपसमिति इन मामलों पर विचार कर रही है, इसलिये मैं अपना संशोधन (नं. 341) पेश नहीं करता हूं।

(संशोधन नं. 342 पेश नहीं किया गया।)

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, केवल श्री पातस्कर ने एक संशोधन पेश किया है। वे चाहते हैं कि 'अपने मंत्रियों' शब्दों की जगह 'अपने मंत्रिमंडल' शब्द रखे जायें। यदि श्री शिब्बनलाल सक्सेना ने अपना संशोधन नं. 339 पेश किया होता तो मैं उसे स्वीकार कर लेता। क्योंकि, वास्तव में 'अपने मंत्रियों की सलाह से' शब्द बिल्कुल अनावश्यक हैं। यदि राष्ट्रपति को किसी की नियुक्ति करनी होती है तो संघ-विधान के सिद्धांतों के अनुसार बिना अपने मंत्रियों की सलाह लिये हुये ऐसा करने की स्वतंत्रता नहीं है। परन्तु चूंकि जिस प्रकार शब्द रखे गये हैं उनको निकाल देने का कोई प्रस्ताव नहीं है, इसलिये मेरी समझ में नहीं आता कि मुझे 'मंत्रियों' शब्द की जगह 'मंत्रिमंडल' शब्द रखने के प्रस्ताव को क्यों स्वीकार कर लेना चाहिये?

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना के नाम से जो संशोधन है उसे मैं पेश करना चाहता हूं, क्योंकि उससे एकरूपता आ जायेगी। जब कभी 'राष्ट्रपति' शब्द का प्रयोग होता है तो उससे राष्ट्रपति तथा उसका परामर्शदाता मंत्रिमंडल समझा जाता है। इसलिये यदि एकाएक हम किसी खंड में मंत्रियों का उल्लेख करें तो उससे कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। इसलिये स्पष्टता और एकरूपता के लिये यह अच्छा ही होगा कि 'अपने मंत्रियों की सलाह से' शब्द निकाल दिये जायें।

***उपाध्यक्ष:** मेरे विचार से श्री सक्सेना ने इस उद्देश्य से यह संशोधन पेश नहीं किया था। सम्भवत: उनका उद्देश्य बिल्कुल दूसरा ही था।

(इस बीच श्री सक्सेना सभा में उपस्थित हो गये।)

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्त : जनरल): श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं अपना संशोधन नं. 339 पेश करना चाहता हूं, जो इस प्रकार है:

''खण्ड 21 में से 'अपने मंत्रियों की सलाह से' शब्द निकाल दिये जाएं।'' ये शब्द अनावश्यक हैं। राष्ट्रपति को कोई ऐसे अधिकार नहीं दिये गये हैं जिन्हें वह अपने विवेक से प्रयोग में लायेगा। वह हमेशा अपने मंत्रियों की सलाह से काम करेगा, इसलिये इन शब्दों को निकाल दिया जाए।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर:** अब चूंकि संशोधन पेश हो चुका है, मैं उसे स्वीकार करता हूं।

***श्री एच.वी. पातस्कर:** इसको दृष्टि में रखते हुए कि संशोधन नं. 339 पेश हो चुका है मैं अपना संशोधन वापस लेना चाहता हूं।

संशोधन सभा की इजाजत से वापस ले लिया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

खण्ड 21 में से 'अपने मंत्रियों की सलाह से' शब्द निकाल दिये जायें।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

खण्ड 21 संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया जाए।

खण्ड 21 स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 22

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर:** मैं खण्ड 22 को पेश करता हूं। वह इस प्रकार है:

''22. अखिल भारतीय नौकरियों की स्थापना की व्यवस्था की जानी चाहिये। जिनके लिये भर्ती और जिनकी नौकरी की दशाओं के नियम संघीय कानून में रखे जायेंगे।''

सभा यह जानती है कि हमारे यहां बहुत काल से अखिल भारतीय नौकरियां हैं। वे हमेशा भारत-मंत्री के नियंत्रण में रही हैं। यह नियंत्रण 15 अगस्त से समाप्त हो जायेगा। प्रश्न यह उठता है कि क्या प्रान्तीय स्वायत्त शासन के सिद्धांत के अनुसार यह उचित है कि आप ऐसी नौकरी को बनाये रखें जिसके लिये भर्ती अखिल भारतीय आधार पर हुई हो और जो ऐसे अधिकारी के नियंत्रण में हो जिसको संघीय कानून निश्चित करेगा?

आप में से कुछ लोग शायद जानते हैं कि प्रान्तीय मंत्रियों की इस सम्बन्ध में राय जानने के लिये कि अखिल भारतीय एडमिनिस्ट्रेटिव सर्विस की स्थापना कहां तक उचित है, भारत सरकार के गृह विभाग ने क्या कार्यवाही की है। सभी लोग इस सम्बन्ध में सहमत थे और ऐसी नौकरी की स्थापना के लिये कार्यवाही की गई है। इस खण्ड में केवल यह प्रयत्न किया गया है कि जो शासन-प्रबंधात्मक कार्य किया जा चुका है उसे कानून द्वारा स्वीकृति प्रदान की जाये। इसमें यह व्यवस्था की गई है कि जहां कहीं भी अखिल भारतीय नौकरियां आवश्यक हों उनकी स्थापना के लिये विधान में आदेश होने चाहियें। जहां कहीं आपको देश के अच्छे से अच्छे लोगों को आकर्षित करने की आवश्यकता होगी, उन्हें आकर्षित करने के लिये अखिल भारतीय नौकरियां वांछनीय होंगी और इन लोगों को रखने के लिये आपको प्रान्तीय सीमाओं के परे जाना होगा, भले ही आप इन्हें प्रांतीय सरकारों या संघीय सरकार के अधीन रखना चाहें। इस सम्बन्ध में यह प्रश्न उठेगा कि क्या ऐसी कार्यवाही प्रान्तीय स्वायत्त शासन के सिद्धान्त के विरुद्ध होगी? और क्या यह उचित न होगा कि सब कुछ प्रान्तीय मंत्रियों के हाथ में छोड़ दिया जाये? इस समय मैं केवल इतना ही कह सकता हूं कि इन उत्तरदायी मंत्रियों को, जिनके हाथ में प्रान्तीय शासन-प्रबन्ध है, इस आवश्यकता का अनुभव हुआ है कि अखिल भारतीय आधार पर भर्ती की जाए और यह एक समझदारी का ही काम होगा कि नये विधान में इस प्रकार की व्यवस्था की जाए।

***उपाध्यक्ष:** श्री सन्तानम् ने एक संशोधन पेश किया है।

***श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान्, मैं उसे पेश नहीं कर रहा हूं।

***उपाध्यक्ष:** चूंकि इस खण्ड में और कोई संशोधन पेश नहीं किये गये हैं, मैं इस पर वोट लूंगा।

प्रश्न यह है कि खण्ड 22 स्वीकार कर लिया जाए।

खण्ड 22 स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 22(क)

***उपाध्यक्ष:** एक नये खण्ड 22 (क) की सूचना दी गई है। श्री अनन्तशयनम् आयंगर उसे पेश करें।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** श्रीमान्, मैं उसे पेश करता हूं।

''खण्ड 22 के बाद निम्नलिखित नया खण्ड रखा जाये:

'22 (क) थल, जल और आकाश सेनाओं में भर्ती करने तथा देश-रक्षा की अन्य नौकरियों में भी नियुक्ति करने और नौकरी की दशाओं तथा उन पर नियंत्रण के बारे में विधान में व्यवस्था की जायेगी।

सैनिक या देश-रक्षा की नौकरियों का कमीशन असैनिक सरकारी नौकरियों के कमीशन के आधार पर बनाया जायेगा'।''

श्रीमान्, हमने अभी नौकरियों के सम्बन्ध में अध्याय 6 को पेश किया और उसे स्वीकार कर लिया। खण्ड 21 में एक ऐसे पब्लिक सर्विस कमीशन को संगठित करने की व्यवस्था की गई है, जो भारत सरकार के सन् 1935 ई. के कानून के आदेशों के आधार पर बनाया जायेगा। भारत सरकार के कानून की धारा 266 में पब्लिक सर्विस कमीशन को केवल असैनिक नौकरियों के लिये भर्ती करने का अधिकार दिया गया है। उपधारा (क) इस प्रकार है: ''असैनिक नौकरियों और नागरिक फौजों के सभी मामलों के सम्बन्ध में'' इसलिये खण्ड 21 और 22 केवल नागरिक फौजों ही के बारे में है और अध्याय 6 में देश-रक्षा की नौकरियों के लिये कोई व्यवस्था नहीं की गई है। भारत सरकार के सन् 1935 ई. के कानून के भाग 10 में देश-रक्षा की नौकरियों के लिए भर्ती की व्यवस्था है। चाहे यह जानबूझ कर किया गया हो या अनजाने में, यह विशेष व्यवस्था कानून के मसविदे में शामिल नहीं की गई है। उस अध्याय का पहला भाग देश-रक्षा की नौकरियों के लिये भर्ती के बारे में है और दूसरा भाग असैनिक नौकरियों के लिये नियुक्ति के बारे में है, जिसके लिये एक पब्लिक सर्विस कमीशन स्थापित किया गया है। परन्तु, हमारे विधान के मसविदे में अध्याय 6 केवल असैनिक नौकरियों के लिये नियुक्ति के बारे में है। भारत सरकार के कानून के इस विषय के अध्याय का पहला भाग जिसमें देश-रक्षा की नौकरियों का उल्लेख है, छोड़ दिया गया है। वर्तमान विधान में कमीशन वाले पदों और सम्राट के कमीशन या वायसराय के कमीशन के लिये नियुक्ति सपरिषद् सम्राट की आज्ञाओं के अनुसार होती है। इसके अतिरिक्त साधारण देश-रक्षा की नौकरियों के लिये नियुक्ति का प्रश्न है। अब सपरिषद् सम्राट की आज्ञाओं का क्या होगा? देश-रक्षा की नौकरियां हमारी नौकरियों

का एक महत्वपूर्ण अंग है। देश-रक्षा की नौकरियों की गजेटेड जगहें और सिविलयन जगहें भी बहुत महत्वपूर्ण और उत्तरदायित्वपूर्ण हैं। क्या इन नौकरियों के लिये नियुक्ति के काम को हम विभागों के अध्यक्षों या कमांडर-इन-चीफ और उसके अधीनस्थ अधिकारियों पर छोड़ दें और उन्हें जिस तरह वे चाहें नियुक्ति करने दें? इसमें सन्देह नहीं कि इन जगहों के लिये नियुक्ति के सम्बन्ध में नियम बनाये जायेंगे। परन्तु क्या हम अफसरों की नियुक्ति और सम्राट् का कमीशन देने की सिफारिश करने के लिये पब्लिक सर्विस कमीशन जैसी कोई स्वतंत्र संस्था स्थापित नहीं करेंगे?

श्रीमान्, आज तक जो कोई भी अधिकारी थे उन्हेंने लोगों को सैनिक और असैनिक वर्गों में विभाजित किया, परन्तु पिछले युद्ध में जो असैनिक जातियां भर्ती की गई उन्होंने अच्छी प्रकार साबित कर दिया कि वे सैनिक जातियों के समान ही हैं। परन्तु यदि फिलहाल यह अधिकार केवल अधिकारियों के ही हाथ में छोड़ दिया जाए और देश-रक्षा की नौकरियों के लिये नियुक्ति करने के लिये पब्लिक सर्विस कमीशन जैसी कोई स्वतंत्र संस्था स्थापित न की जाए तो प्रांतवाद को स्थान मिलेगा और कुछ लोगों को तो सेना में भर्ती होने के लिये उत्साहित किया जायेगा और अन्य लोगों को उत्साहित न किया जायेगा। यदि असैनिक नौकरियों के लिये भर्ती के लिये पब्लिक सर्विस कमीशन जैसी एक स्वतंत्र संस्था की आवश्यकता समझी गई है ताकि वह निश्चित रूप से प्रांतों के बीच ठीक बटवारा कर सके तो देश-रक्षा की नौकरियों के कमीशन की और भी अधिक आवश्यकता है। मेरे संशोधन का यही आशय है। मैं यह जानना चाहता हूं कि इस प्रकार का आदेश क्यों नहीं रखा गया और इस विधान में देश-रक्षा की नौकरियों के लिये भर्ती के सम्बन्ध में किसी प्रकार की भी व्यवस्था क्यों नहीं की गई है? जब हम भारत सरकार के कानून के अध्याय 10 को सम्मिलित कर रहे हैं तो यह आवश्यक है कि हम उसे पूरे का पूरा सम्मिलित करें। देश-रक्षा की नौकरियों के लिये नियुक्ति का विषय एक महत्वपूर्ण विषय है और मैं नहीं चाहता कि उसे संघीय व्यवस्थापिका पर छोड़ दिया जाए, चाहे वह कितनी ही अच्छी सभा क्यों न हो। यह हो सकता है कि किसी एक ही दल के हाथ में शक्ति हो। मेरे कहने का उद्देश्य यह है कि किसी एक वर्ग को दूसरे वर्ग पर तरजीह न दी जानी चाहिये। श्रीमान्, मैं सभा की स्वीकृति के लिये यह

[श्री एम. अनंतशयनम् आयंगर]

प्रस्ताव पेश करता हूं कि पब्लिक सर्विस कमीशन के आधार पर एक देश-रक्षा की नौकरियों का कमीशन भी स्थापित किया जाना चाहिये।

***उपाध्यक्ष:** क्या इस संशोधन पर कोई अन्य सदस्य भी बोलना चाहते हैं?

***माननीय श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, अभी जो संशोधन पेश किया गया है उसका मैं बड़ी प्रसन्नता के साथ समर्थन करता हूं। आप अध्याय 1 से भाग 4 के पैरा 7 में देखेंगे कि हम राष्ट्रपति को संघ की देश-रक्षा की सेनाओं के सर्वोच्च नायकत्व का अधिकार दे चुके हैं। जब आपने 'सर्वोच्च नायकत्व' शब्दों का प्रयोग किया है तो मैं समझता हूं कि आपका उद्देश्य यह है कि राष्ट्रपति अपनी अधीनस्थ सेनाओं के लिये भर्ती की व्यवस्था करेगा। संशोधन में इसका स्पष्टीकरण किया गया है कि देश-रक्षा की सेनाओं के अफसर किस प्रकार नियुक्त किये जायेंगे। अध्यक्ष महोदय, आपको ज्ञात ही है कि इस समय सारे देश में नौकरियों के लिए नियुक्ति करने के कई बोर्ड हैं और पिछले तीन वर्षों से एक में मैं स्वयं काम करता आ रहा हूं। मैं यह जानता हूं कि नियुक्ति की वर्तमान प्रणाली ही ठीक है। वह एक मनोवैज्ञानिक प्रणाली कही जाती है। इसे पक्षपात नहीं होने पाता और समाज में सभी को समानाधिकार मिल जाते हैं। इस प्रणाली के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को कमीशन प्राप्त करने का समान अवसर मिल जाता है। इस संशोधन के प्रस्तावक बता चुके हैं कि भारत की भविष्य की सेना में कमीशन उसी प्रकार दिये जाने चाहियें जैसे अखिल भारतीय नौकरियों के उच्च पदों के लिये नियुक्तियां की जाती हैं और मेरे विचार से यह अत्यावश्यक है कि उसके लिये भी नौकरियों के लिये नियुक्ति करने वाले बोर्डों के समान कोई संस्था होनी चाहिये। चाहे हम उसे देश-रक्षा की नौकरियों का कमीशन कहें या नौकरियों के लिये नियुक्ति करने वाला बोर्ड कहें इससे कुछ अन्तर नहीं पड़ता। परन्तु इस सम्बन्ध में मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है कि इस प्रकार की एक संस्था की आवश्यकता है।

***रायसाहब रघुराज सिंह** (पूर्वी रियासतों का समूह 1): उपाध्यक्ष महोदय, जो संशोधन पेश किया गया है उसके सम्बन्ध में मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। देश-रक्षा की नौकरियों के लिये नियुक्ति का प्रश्न एक बहुत ही कला सम्बन्धी प्रश्न है। यह विषय देश-रक्षा के संगठन के अधीन होना चाहिये। यदि कोई देश-रक्षा

की नौकरियों का कमीशन स्थापित किया जायेगा तो उससे देश-रक्षा के संगठन के हाथ बंध जायेंगे। जहां तक मुझे मालूम है पहले भी कभी अफसरों की नियुक्ति के सम्बन्ध में सैनिक और असैनिक वर्गों का भेद-भाव नहीं किया जाता था। सैनिकों के सम्बन्ध में ही इस प्रकार का भेद-भाव बरता जाता था। युद्धकाल में नौकरियों के लिये नियुक्ति करने के लिये एक विशेष डाइरेक्टोरेट स्थापित की गई थी और उसने अपनी ही प्रणाली निकाली। मेरे विचार से इस विषय को रक्षा-विभाग के विवेक पर छोड़ देना चाहिये। यदि आप देश-रक्षा की नौकरियों के कमीशन को स्थापित करेंगे तो उससे देश-रक्षा के संगठन के अपने विवेक से निर्णय करने में बाधा पहुंचेगी।

*__प्रो. एन.जी. रंगा__ (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इसका अत्यंत विरोध करता हूं कि ऐसा महत्वपूर्ण विषय केवल देश-रक्षा के संगठन की स्वेच्छा पर छोड़ दिया जाए। बहुत समय से इंग्लैंड और यूरोप के दूसरे देशों में इसके लिये आन्दोलन चल रहा है कि देश-रक्षा की सेनाओं के लिये भर्ती प्रजातंत्र के सिद्धांतों के अनुसार की जाए ताकि सभी वर्गों के लोग उसमें भर्ती किये जा सकें। यह सभी जानते हैं कि किसी विशेष समूह से भर्ती किये हुये अफसरों ने संतोषजनक कार्य नहीं किया है। इस लड़ाई में तथा पिछली लड़ाई में मित्र राष्ट्रों ने जो विजय प्राप्त की उसका श्रेय बहुत-कुछ जनसाधारण से भर्ती किये हुये अफसरों को है। यदि आप जनसाधारण को इसका अवसर देना चाहते हैं कि वे अपनी नेतृत्व की शक्ति को शिखर में पहुंचाये और उनको यह विश्वास दिलाना चाहते हैं कि इस शक्ति से वे देश-रक्षा की सेनाओं के विभिन्न अफसरों के पदों पर नियुक्त किये जा सकते हैं, तो जैसा कि मेरे मित्र श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने बताया है, यह बहुत ही आवश्यक है कि एक कमीशन स्थापित किया जाए। कुछ लोग यह कह सकते हैं कि इसे संघीय पार्लियामेंट पर ही क्यों न छोड़ दिया जाए। श्रीमान्, यदि आपने असैनिक नौकरियों के बहुत से सरकारी कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए इस विधान में एक पब्लिक सर्विस कमीशन के लिए विशेष व्यवस्था करना आवश्यक समझा है तो अवश्य ही यह न्यायसंगत ही होगा कि आप देश-रक्षा की सेवाओं के अफसरों की नियुक्ति के लिए भी इसी प्रकार की व्यवस्था करें। असैनिक नौकरियों के लिये आप उतने लोगों को भर्ती न करेंगे जितने कि आप देश-रक्षा की सेनाओं के लिये भर्ती करेंगें। इस काल में हमारी देश-रक्षा की सेनाओं को अपने को उतनी ही उच्च कोटि का बनाना है जितनी कि अन्य देशों की सेनाएं हैं। आप सभी जानते हैं कि हमारी सीमा के उस पार एक देश सोवियत रूस के नाम से प्रख्यात है। हमें इसका सावधानी से अध्ययन करना चाहिये कि रूसी सेनाओं का किस प्रकार निर्माण तथा संगठन हो रहा है और किस प्रकार उन्हें

[प्रो. एन.जी. रंगा]

शक्तिशाली बनाया जा रहा है। उनके अफसर समाज की प्रत्येक जाति व वर्ग से भर्ती किये जाते हैं और वे सामाजिक जीवन के प्रत्येक अंग से लिये जाते हैं। यदि आप चाहते हैं कि हमारी देश-रक्षा की सेनायें उस देश की सेनाओं के साथ प्रतियोगिता में टिक सकें तो यह अत्यंत आवश्यक है कि यथासम्भव सावधानी से एक ऐसे कमीशन द्वारा, जिसका सुझाव श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने किया है, ऐसे सुयोग्य व्यक्तियों को निष्पक्ष रूप से भर्ती किया जाए जो युद्धकाल में सेनानायक होने की क्षमता रखते हों।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, यह सच है कि जो मसविदा सभा के सामने पेश किया गया है उसमें देश-रक्षा की नौकरियों का कोई उल्लेख नहीं है। इसका एक कारण मैं यह बता सकता हूं कि वर्तमान भारत सरकार के कानून के अध्याय 1 से भाग 10 में जो बातें हैं उनको जिस संघीय विधान पर हम विचार कर रहे हैं उसमें सम्मिलित नहीं किया जा सकता है। सन् 1935 ई. के भारत सरकार के कानून का वह अध्याय मुख्यत: ऐसे विषयों के सम्बन्ध में है जैसे कमांडर-इन-चीफ का वेतन, देश-रक्षा की नौकरियों के लिये नियुक्ति पर सम्राट का नियंत्रण, भारत-मंत्री का नियंत्रण, भारत-मंत्री को अपील करने का अधिकार, इत्यादि। जब हम अपना नया विधान बनायेंगे तो इनमें से कई बातें असामयिक हो जायेंगी। सम्भवत: इस कारण से भी जिस मसविदे पर हम विचार कर रहे हैं उसमें देश-रक्षा की नौकरियों के लिये विशेष व्यवस्था करना आवश्यक नहीं समझा गया। संशोधनकर्त्ता ने जो दूसरी बात कही है वह यह है कि देश-रक्षा की नौकरियों के सम्बन्ध में भर्ती करने और नौकरी की दशाओं को सुव्यवस्थित बनाने के लिये हमें पब्लिक सर्विस कमीशन के समान एक संस्था स्थापित करनी चाहिये। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मेरा तो यह विचार है कि विधान सम्बन्धी कानून में असैनिक नौकरियों के लिये भी पब्लिक सर्विस कमीशन की स्थापना के सम्बन्ध में आदेश रखने से कोई विशेष लाभ न होगा। इस प्रकार के कमीशन की स्थापना संघीय कानून द्वारा क्यों नहीं की जाए, आखिर पब्लिक सर्विस कमीशन है क्या चीज? यह संस्था भर्ती का प्रबन्ध करती है, इस सम्बन्ध में सलाह देती है कि किन लोगों को नियुक्त किया जाना चाहिये, किन मामलों में सजा से माफी पाने के लिये अपील की जानी चाहिये और नियुक्ति तथा नौकरी की दशाओं के सम्बन्ध में किस प्रकार के नियम होने चाहियें। यह सच है कि इन नियमों को व्यवहार में लाने के लिये हम एक ऐसी संस्था स्थापित करते हैं जिसके सदस्यों का उसी प्रकार स्वतंत्र पद होता है जैसे कि हाईकोर्ट के न्यायाधीशों का, क्योंकि

यह आवश्यक है कि इन नियमों को निष्पक्ष रूप से व्यवहार में लाया जाए। हमने असैनिक नौकरियों के सम्बन्ध में विधान सम्बन्धी कानून द्वारा पब्लिक सर्विस कमीशन की व्यवस्था करने के बारे में बढ़-चढ़ कर बातें कही हैं। देश-रक्षा की नौकरियों के बारे में भी यदि इसी प्रकार के प्रबन्ध की आवश्यकता समझी जाए तो संघीय कानून द्वारा उसकी व्यवस्था किये जाने में मुझे कोई विशेष आपत्ति नहीं है। मैं एक बात और कहना चाहता हूं। असैनिक नौकरियों और देश-रक्षा की नौकरियों में एक आवश्यकीय भेद रखा गया है। देश-रक्षा की नौकरियों में कठोर अनुशासन की आवश्यकता होती है और मेरे विचार से ऐसी असैनिक नौकरियों के लिये भी जिनमें कठोर अनुशासन की आवश्यकता होती है, यह बहुत वांछनीय नहीं है कि नियुक्ति और अनुशासन के मामलों में पब्लिक सर्विस कमीशन को अधिकार दिया जाए। मैं आपको भारत सरकार के कानून की धारा 243, जो असैनिक नौकरियों के अध्याय में है, पढ़कर सुनाऊंगाः

> ''इस अध्याय के पहले के आदेशों के बावजूद भारत की विभिन्न पुलिस सेनाओं की निम्न श्रेणियों की नौकरी की दशायें वही होंगी जो उन सेनाओं में से प्रत्येक से सम्बन्धित कानूनों द्वारा निश्चित की जायें या उनमें वर्णित हों।''

मैं यह बताना चाहता हूं कि सैनिक और असैनिक वर्गों में अन्तर, देश-रक्षा की सेनाओं में विभिन्न जातियों का प्रतिनिधित्व, विभिन्न नौकरियों में प्रांतों का प्रतिनिधित्व जैसे सभी प्रश्न निस्संदेह महत्वपूर्ण हैं। परन्तु मैं इस सभा को बताना चाहता हूं कि इन मामलों के सम्बन्ध में कैसी नीति अपनाई जाये, यह कोई ऐसी बात नहीं है जिसका निर्णय हमारा स्थापित किया हुआ कमीशन करे। शासनारूढ़ सरकार ही नीति निर्धारित कर सकती है। इसलिये मेरा यह सुझाव है कि यदि आप इन बातों के सम्बन्ध में अन्याय और भेदभाव नहीं होने देना चाहते तो इसके लिये आपको सरकार ही से कहना-सुनना होगा और इसका प्रबन्ध करना होगा कि वह न्यायोचित नीति का अनुसरण करे। इसमें सन्देह नहीं कि नीति को व्यवहार में लाने का प्रश्न भी है और मेरे विचार से आप संघीय कानून द्वारा एक संस्था स्थापित कर सकते हैं। सशस्त्र सेनाओं में इस समय जो नियुक्ति के बोर्ड हैं वे ही अच्छे समझे जा सकते हैं या कोई दूसरी संस्था स्थापित की जा सकती है परन्तु ऐसी संस्थायें हम भविष्य में जो संघीय कानून बनायेंगे उसी के द्वारा या उसी के आदेशानुसार स्थापित की जा सकती हैं। इसलिये मैं तो यह कहूंगा कि हमें विधान में इस प्रकार की एक साधारण व्यवस्था कर देनी चाहिये कि देश-रक्षा की नौकरियों के लिये नियुक्ति उनकी दशाओं इत्यादि के बारे में संघीय कानून

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

में उचित व्यवस्था होगी और अन्य बातों का निर्णय भविष्य के लिये छोड़ देना चाहिये। मैं माननीय संशोधनकर्ता को यह आश्वासन दे सकता हूं कि हम इस प्रकार के एक साधारण आदेश रखने का प्रयत्न करेंगे, यद्यपि उसके शब्द वे नहीं होंगे जो उनके संशोधन के हैं। यदि उनको इससे संतोष हो जाए तो मैं उनसे प्रार्थना करूंगा कि वे अपना संशोधन वापस ले लें।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** वह तो केवल उसके रूप का प्रश्न है। माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर इस संशोधन के आशय को किसी न किसी रूप में, जिसे वे ठीक समझें, स्थान देने के लिये तैयार हैं। इसलिये मुझे इस संशोधन को सभा में पेश करने में कोई दिलचस्पी नहीं है। मैं इसे वापस लेने के लिये सभा की आज्ञा चाहता हूं।

सभा की आज्ञा से संशोधन वापस ले लिया गया।

***उपाध्यक्षः** खण्ड 22 सभा के सामने रखा जाता है। संशोधन वापस ले लिया गया है।

खण्ड 22 स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 23

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आंयगरः** मैं खण्ड 23 पेश करता हूं । वह इस प्रकार है:

> ''इस विधान के आदेशों के विपरीत न जाते हुये संघीय पार्लियामेंट समय-समय पर संघीय व्यवस्थापिका की किसी सभा के लिये चुनाव के बारे में या उससे सम्बन्धित सभी मामलों के बारे में, जिनमें निर्वाचन क्षेत्रों की सीमाबन्दी भी सम्मिलित है, आदेश बना सकती है।''

***उपाध्यक्षः** खण्ड 23 में श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर और श्रीमती जी. दुर्गाबाई ने संशोधन पेश किया है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं कि:

खण्ड 23 के अन्त में निम्नलिखित जोड़ दिया जाए:

''प्रथम चुनाव और बाद के चुनाव परिशिष्ट के आदेशों के अनुसार होंगे (जो विधान के साथ नत्थी किया जायेगा) और निर्वाचन-क्षेत्र उसी प्रकार होंगे जैसे वे दूसरे परिशिष्ट में दिये हुये होंगे।''

मैं दूसरे वाक्य को पेश नहीं कर रहा हूं, जो इस प्रकार है:

''उक्त परिशिष्टों में किसी समय संघीय व्यवस्थापिका के किसी कानून द्वारा परिवर्तन किये जा सकते हैं।''

मैं पहले ही वाक्य पर रुक जाता हूं।

इसकी आवश्यकता इस प्रकार है कि हमने खण्ड 23 में यह प्रस्ताव किया है कि संघीय पार्लियामेंट के चुनावों को समय-समय पर संघीय व्यवस्थापिका के कानूनों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है और निर्वाचन-क्षेत्रों की सीमाबन्दी भी की जा सकती है। मैं इस विधान में ही प्रथम चुनावों और निर्वाचन-क्षेत्रों की प्रथम सीमाबन्दी की व्यवस्था करना चाहता हूं। हमने प्रान्तीय विधान में, जिसे हमने हाल में अर्थात् एक या दो सप्ताह पहले स्वीकार किया, इस प्रकार की व्यवस्था की है। इसी आधार पर मैंने यह संशोधन पेश किया है। इसलिये मैं इस संशोधन को सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, दूसरे वाक्य को निकाल देने पर, जैसा कि प्रस्तावक महोदय भी चाहते हैं, मैं इस संशोधन को स्वीकार करता हूं।

***उपाध्यक्षः** मैं इस संशोधन को सभा के सामने रखता हूं।

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्षः** अब मैं इस खण्ड को उसके संशोधित रूप में सभा के सामने रखता हूं।

खण्ड 23 संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

खंड 24

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान् मैं खण्ड 24 पेश करता हूं:

> ''24. इस विधान के अधीन होने वाले सभी संघीय या प्रान्तीय चुनावों के निरीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण का अधिकार, जिसमें ऐसे चुनावों से उत्पन्न होने वाले संदेहों और झगड़ों पर निर्णय देने के लिये चुनाव सम्बन्धी ट्रिब्यूनलों की नियुक्ति का अधिकार भी सम्मिलित है, एक कमीशन को दिया जायेगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेंगे।''

श्रीमान्, इस खण्ड का उद्देश्य यह है कि देश में सभी चुनाव, चाहे वे संघीय हों या प्रान्तीय, निष्पक्ष रूप से किये जायें। विचार यह है कि राष्ट्रपति एक कमीशन नियुक्त करें और उन्हीं के तत्वावधान में चुनाव और चुनाव के बाद की इन सभी बातों का नियमन होगा और उन पर नियंत्रण रखा जा सकेगा। सभा यह जानती ही है कि चुनाव की प्रणाली व चुनाव के संचालन के दुरुपयोग और चुनाव के समय में दुराचार की शिकायतें सारे देश में की जाती हैं। इस खण्ड का उद्देश्य यही है कि चुनाव के सभी कार्यों पर स्वतंत्र रूप से केन्द्र का नियंत्रण हो।

***श्री एच.वी. पातस्करः** श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं कि:

> ''खण्ड 24 में 'सभी संघीय या प्रान्तीय चुनावों' की जगह 'सभी संघीय चुनावों' रखा जाए और 'या प्रान्तीय' शब्दों को निकाल दिया जाए।''

इस संशोधन के बाद खण्ड 24 इस प्रकार होगा:

> ''24– इस विधान के अधीन होने वाले सभी संघीय चुनावों के निरीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण का अधिकार, जिसमें ऐसे चुनावों से उत्पन्न होने वाले संदेहों और झगड़ों पर निर्णय देने के लिये चुनाव सम्बन्धी ट्रिब्यूनलों की नियुक्ति का अधिकार भी सम्मिलित है, एक कमीशन को दिया जायेगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेंगे।''

श्रीमान्, इस संशोधन में यह विचार निहित है कि जहां तक संघीय व्यवस्थापिका के लिये चुनाव का सम्बन्ध है निरीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण का अधिकार राष्ट्रपति को प्राप्त होना चाहिये, परन्तु जहां तक प्रांतीय चुनावों का सम्बन्ध है यह अधिकार गवर्नर के लिये या प्रांत के ही किसी सुयोग्य अधिकारी के लिये छोड़ा जाना चाहिये।

इस प्रकार की व्यवस्था इन कारणों से की जानी चाहिये। श्रीमान्, अध्याय 7 को देखने से मालूम होगा कि खण्ड 23 संघीय चुनावों, संघीय पार्लियामेंट के लिये चुनावों के बारे में है। स्वभावतः खण्ड 24 जो उसके बाद ही आता है संघीय पार्लियामेंट के ही चुनावों के बारे में होना चाहिये। यह मालूम पड़ता है कि जो लोग विधान का मसविदा बना रहे थे उनके हृदय में यह विचार उठा होगा कि इस खण्ड में हम प्रांतीय चुनावों को भी क्यों न सम्मिलित कर दें। जहां तक मैं प्रस्तावक महोदय के भाषण से समझ पाया हूं, प्रान्तीय चुनावों के निरीक्षण, निर्देशन तथा नियंत्रण का अधिकार संघ के अध्यक्ष को देने के पक्ष में उनका प्रधान तर्क यही रहा है कि इससे चुनावों में पक्षपात नहीं होगा। मैं इस सम्बन्ध में बाद को कहूंगा। परन्तु श्रीमान, चाहे जो कुछ भी कहा जाये, प्रांतीय चुनावों के निरीक्षण की व्यवस्था करने के लिये यह उचित स्थान नहीं है। इस अध्याय में हम संघीय चुनावों के बारे में विचार कर रहे हैं और उन्हीं के बारे में विचार कर भी सकते हैं। इसके अतिरिक्त दो बहुत बलशाली कारणों से इस प्रकार की व्यवस्था न होनी चाहिये। अभी तक हम यह देखते आये हैं कि जहां तक प्रांतीय चुनावों के निरीक्षण, निर्देशन तथा नियंत्रण का सम्बन्ध है वह प्रान्तीय गवर्नरों के हाथ में रहा है। अब हम प्रान्तों में प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुने हुये गवर्नरों को रखने जा रहे हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसे गवर्नर को यह काम क्यों नहीं दे दिया जाता।

इसके अतिरिक्त दूसरी कठिनाई यह है कि सुदूर प्रान्तों में चुनावों का निरीक्षण, निर्देशन तथा नियत्रंण करने में संघ के अध्यक्ष को बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। जो लोग प्रान्तों में ही रहेंगे वे इसे अच्छी तरह कर सकते हैं। संघ के अध्यक्ष के पास बहुत काम रहेंगे और मेरे विचार से प्रांतीय चुनावों के निरीक्षण, निर्देशन तथा नियंत्रण के भार को भी उन पर डालना उचित नहीं होगा।

प्रस्तावक महोदय ने केवल यही बात कही कि यह व्यवस्था इसलिये की गई है कि चुनावों में निष्पक्षता हो। मेरी समझ में नहीं आता कि चाहे निरीक्षण का कार्य संघ के अध्यक्ष को सौंपा जाए या प्रांतीय गवर्नर को, इससे क्या अन्तर पड़ता है? यदि सावधानी से काम लिया जाए तो ये दोनों निष्पक्ष हो सकते हैं। इन शब्दों के साथ श्रीमान्, मैं इस संशोधन को सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***श्री टी. प्रकाशम्** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मैं इस संशोधन का समर्थन करना चाहता हूं। इस सम्बन्ध में प्रान्तों को केन्द्र के साथ न बांधना चाहिये। हाल में

[श्री टी. प्रकाशम्]

और सन् 1937 ई. में प्रान्तों ने बहुत बड़े-बड़े चुनाव किये हैं। आगामी चुनावों में...।

श्री रामसहाय (ग्वालियर राज्य): उपाध्यक्ष महोदय, मेरा एक पाइंट ऑफ आर्डर है। अभी सारे अमेंडमेंट मूव नहीं हुये हैं और आपने भी अभी असली प्रस्ताव या तरमीम पर बोलने की इजाजत नहीं दी है। ऐसी सूरत में क्या मि. प्रकाशम् का अपनी बहस शुरू करना मुनासिब होगा?

***एक माननीय सदस्य:** पहले सभी संशोधनों को पेश हो जाने दीजिये।

***उपाध्यक्ष:** मैं इससे सहमत हूं कि पहले सभी संशोधनों का ही पेश किया जाना अच्छा होगा।

संशोधन नं. 345 श्री मुनिस्वामी पिल्ले और अन्य लोग!

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले:** श्रीमान्, हम प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुनाव करने जा रहे हैं। मैं इसे आवश्यक समझता हूं कि जो ट्रिब्यूनल बनाया जाए उसमें परिगणित जातियों और अन्य अल्पसंख्यकों के भी प्रतिनिधि होने चाहियें। परन्तु मुझे ज्ञात हुआ है कि इन मामलों के बारे में नियम बाद को बनाये जायेंगे। इसलिये मैं इस संशोधन (नं. 341) को अभी पेश नहीं करता।

(सूची 2 के संशोधन नं. 346 और 347 और पूरक सूची 1 का संशोधन नं. 20 पेश नहीं किये गये।)

***श्री टी. प्रकाशम्:** श्रीमान्, इस संशोधन में यह प्रस्ताव किया गया है कि इस खण्ड से प्रान्तों को निकाल देना चाहिये। वास्तव में इसी प्रकार की व्यवस्था करनी चाहिये थी। मेरी समझ में नहीं आता कि इस खण्ड में प्रान्तों का क्यों उल्लेख किया गया है। प्रान्तों के सम्बन्ध में यह बिल्कुल अनावश्यक है कि केन्द्र के स्थापित किये हुये किसी कमीशन के साथ उनका गठबंधन किया जाए। प्रान्त अपना काम हर प्रकार अच्छी तरह चलाते रहे हैं और उन्हें किसी आपत्ति का सामना नहीं करना पड़ा है। सन् 1936 ई. में और हाल में सन् 1946 ई. में बहुत बड़े चुनाव लड़े गये हैं। इसलिये इसे आवश्यक न समझना चाहिये कि प्रान्तों को इस खण्ड में स्थान दिया जाए और उन्हें केन्द्र के किसी संगठन के अधीन रखा जाए। श्रीमान्, आगामी चुनाव, जो प्रौढ़ मतगणना के आधार पर लड़े जायेंगे,

बहुत बड़े पैमाने पर होंगे और उनका महत्व भी बहुत होगा। प्रान्तों को इसकी पूरी स्वतंत्रता होनी चाहिये कि अभी तक वे इस कार्य को जिस प्रकार चलाते रहे हैं उसी प्रकार अब भी स्वयं चलायें। यह विचार कि केन्द्रीय संगठन का प्रान्तों के काम पर नियंत्रण हो अव्यावहारिक है। केन्द्र को प्रत्येक विभाग के मामले में और इस सम्बन्ध में भी बहुत काम करना पड़ता है। इसलिये श्रीमान्, इस सम्बन्ध में अधिक तर्क देने की आवश्यकता नहीं है। जैसा कि संशोधन में कहा गया है, इस खण्ड में प्रान्तों को सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिये। श्रीमान्, मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं। इस सम्बन्ध में प्रान्तों का केन्द्र के साथ गठबन्धन करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

***डा. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय मेरे विचार से यह उचित होगा कि मैं इस सभा को बताऊं कि इस खण्ड की उत्पत्ति किस प्रकार हुई। यद्यपि यह खण्ड विधान के उस भाग में आता है जिसमें संघ की चर्चा है, परन्तु वास्तव में इस पर मौलिक अधिकारों की कमेटी ने विचार किया था। मौलिक अधिकारों की कमेटी इस नतीजे पर पहुंची कि यदि चुनावों को केवल प्रबन्धकारिणी के हाथ में छोड़ दिया जाए तो अल्पसंख्यकों और चुनावों के बारे में कोई आश्वासन नहीं दिया जा सकता। बहुत से लोगों ने यह सोचा कि यदि प्रबन्धकारिणी के तत्वावधान में चुनाव हुए और यदि उसे अफसरों को एक जगह से दूसरी जगह बदलने का अधिकार हुआ, जो अधिकार उसे होना भी चाहिये, तो इससे किसी ऐसे उम्मीदवार को, जिसे शासनारूढ़ दल चाहता हो, समर्थन प्राप्त हो सकता है और इससे जिस स्वतंत्र चुनाव को सभी लोग चाहते हैं उसमें अवश्य ही दोष आ जायेगा। इसलिये मौलिक अधिकारों की कमेटी के सदस्यों ने यह एकमत से निश्चय किया कि चुनावों को पवित्र और न्यायमुक्त ढंग से करने के लिये सबसे अच्छी सुरक्षा यह है कि उन्हें प्रबन्धकारिणी के हाथ में न रखना चाहिये, बल्कि स्वतंत्र अधिकारियों को सौंप देना चाहिये।

खण्ड 23 में मौलिक अधिकारों की कमेटी में जिस योजना पर विचार हुआ था उसका पूरा ब्यौरा नहीं दिया हुआ है। मैं सभा को यह बताना चाहता हूं कि मौलिक अधिकारों की कमेटी के सदस्यों के मस्तिष्क में यह योजना थी कि सारे भारत के चुनावों के नियमन के लिये राष्ट्रपति एक केन्द्रीय कमीशन स्थापित करेंगे। यद्यपि इस योजना की कल्पना की गई थी कि चुनावों के निरीक्षण, निर्देशन तथा नियंत्रण के लिये राष्ट्रपति एक केन्द्रीय कमीशन स्थापित करेंगे, परन्तु इसकी कल्पना कदापि नहीं की गई थी कि दिल्ली में या किसी केन्द्र में, जहां राजधानी हो,

[डा. बी.आर. अम्बेडकर]

केवल एक ही कमीशन होगा। योजना यह थी कि एक केन्द्रीय कमीशन होगा जो सम्भवतः संघीय पार्लियामेंट के चुनाव का काम करेगा परन्तु इस कमीशन के अधीन प्रत्येक प्रान्त में एक कमीशन होगा या यदि कोई प्रान्त छोटे हों तो दो-तीन प्रान्तों के लिये एक ही कमीशन होगा ताकि उनका चुनाव सम्बन्धी कार्य स्थानीय कमीशन द्वारा ही किया जाए। पहले से ही यह विचार था कि इसका विकेन्द्रीकरण किया जाए अर्थात् संघीय चुनावों के लिये एक केन्द्रीय कमीशन हो और विभिन्न प्रान्तों में होने वाले चुनावों के लिए कई कमीशन हों। मेरे कहने का मतलब यह है कि यदि यह योजना व्यवहार में आई तो श्री पातस्कर ने जिस उद्देश्य से इस संशोधन को पेश किया है उसकी पूर्ति हो जायेगी, क्योंकि जहां तक मैं समझ पाया हूं वे यही चाहते हैं कि प्रान्तों में चुनावों के कार्य के लिये स्थानीय अधिकारी हो या एक स्थानीय कमीशन हो। मेरे विचार से हमारा उद्देश्य यही था, यद्यपि खंड 24 में उस योजना का उल्लेख नहीं है। हमारे मस्तिष्क में निःसन्देह यही विचार था। फिर भी यदि मेरे मित्र श्री पातस्कर अपने संशोधन पर जोर देते हैं तो मैं उनसे एक विषय के बारे में एक प्रश्न पूछता हूं, क्योंकि उनका संशोधन पढ़ने से वह संदिग्ध ही रह जाता है। वे 'सभी संघीय या प्रान्तीय चुनावों' शब्दों को निकाल देना चाहते हैं और उनकी जगह 'सभी संघीय चुनावों' शब्दों को रखना चाहते हैं। यदि वे एक विषय में मुझे संतुष्ट कर दें तो मुझे उनके संशोधन से कोई आपत्ति नहीं रहेगी। मैं उनसे यह पूछना चाहता हूं कि क्या वे इस सिद्धांत को स्वीकार करते हैं, क्योंकि आखिर हमें सिद्धांत की ही तो चिन्ता है, कि चुनाव का कार्य प्रबन्धकारिणी के बाहर किसी स्वतंत्र संस्था के हाथ में होना चाहिये। यदि वे इसे स्वीकार करते हैं और सभा यह स्वीकार करती है कि खण्ड 24 के समान ही एक खण्ड विधान के प्रान्तीय भाग में भी सम्मिलित किया जाना चाहिये तो मुझे उस संशोधन से कोई आपत्ति नहीं है। मेरी यह इच्छा नहीं है कि केन्द्रीकरण ही किया जाए। हमारे मस्तिष्क में यही था कि चुनाव-कार्य सरकार के हाथों से ले लिया जाए।

***श्री एच.वी. पातस्करः** अधिक बहस करने के पहले मैं इस संशोधन के प्रस्तावक की हैसियत से यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि मैं अपने मित्र डा. अम्बेडकर से इस विषय में पूर्णतया सहमत हूं कि चुनावों का निरीक्षण, निर्देशन तथा नियंत्रण किसी प्रबन्धकारिणी के अधिकार में नहीं होना चाहिये और किसी स्वतंत्र संस्था को इसका अधिकार होना चाहिये और इस सम्बन्ध में प्रान्तीय विधान में व्यवस्था की जा सकती है।

***श्री के. सन्तानम्:** मेरे विचार से यह खण्ड बहुत विस्तृत है। चुनावों से हमारा अर्थ क्या है? सबसे पहले हमें निर्वाचकों की सूचियों को तैयार करना होता है। फिर चुनावों के समय हमें निर्वाचन-शालाओं और निर्वाचन करने वाले अफसरों का प्रबन्ध करना होता है। उसके बाद पर्चियां ली जाती हैं, उनकी गिनती की जाती है, इत्यादि। मेरे विचार से जब सार्वभौम प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुनाव होगा तो प्रन्तीय सरकार के सभी कार्यकर्ताओं को चुनाव के काम में लगाना पड़ेगा। इसलिये जब तक प्रबन्ध का पूरा अधिकार सरकार के हाथ में न होगा, कोई भी स्वतंत्र कमीशन प्रान्तीय सरकार के सभी कर्मचारियों पर नियंत्रण नहीं रख सकता। कुछ मामले जैसे चुनाव के ट्रिब्यूनल, उम्मीदवारों की योग्यता पर विचार, नामजदगियों पर आपत्ति आदि किसी स्वतंत्र संस्था को सौंपे जा सकते हैं परन्तु चुनावों का सारा काम उसको नहीं दिया जा सकता। मेरे विचार से यदि केन्द्रीय चुनावों या प्रान्तीय चुनावों का कार्य किसी स्वतंत्र कमीशन को सौंपने का प्रयत्न किया गया तो उससे कोई लाभ न होगा। वह उसे सम्हाल न पायेगा क्योंकि आजकल के चुनावों में सरकार के सभी प्रबन्धात्मक तथा आर्थिक साधनों का उपयोग करना होता है। इसलिये जब विधान का मसविदा बनाने का समय आयेगा तो इन प्रश्नों पर ध्यानपूर्वक विचार करना होगा। जहां तक कमीशनों का सम्बन्ध है उनको केवल वही काम दिया जाना चाहिये जो न्यायाधीन हो और जो प्रबन्धात्मक न हो। वह वास्तव में एक न्याय सम्बन्धी कमीशन होना चाहिये और प्रबन्ध सम्बन्धी कमीशन न होना चाहिये। प्रबन्ध सम्बन्धी कार्य उस समय की सरकार को सौंपे जाने चाहिये और जिन मामलों में न्याय करना हो केवल ऐसे ही कार्य चुनाव के कमीशन को सौंपे जाने चाहियें, अन्यथा सारी योजना निष्फल हो जायेगी।

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान्, खण्ड के वर्तमान रूप में कुछ अधिकार प्रान्तों के लिये छोड़ दिये गये हैं। चुनावों के निरीक्षण, निर्देशन तथा नियंत्रण का अधिकार उन संघीय अधिकारियों को दिया गया है जो नये विधान के अधीन बाद को नियुक्त किये जायेंगे। यह एक निरर्थक बात है कि कोई अधिकारी बिना प्रान्त के सहयोग के चुनावों को चला सकता है। उसके लिये यह कार्य करना असम्भव है। मैं माननीय सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि वे कल्पना तो करें कि चुनाव किस प्रकार होते हैं। उनके लिये निर्वाचकों की सूचियां तैयार करनी होती हैं, इमारतों का प्रबन्ध करना होता है, निर्वाचनशालायें बनानी होती हैं, इत्यादि। इस सब कार्य को प्रान्तीय सरकार को ही करना होता है। कोई भी संघीय

[श्री विश्वनाथ दास]

अधिकारी, चाहे वे कितने ही शक्तिशाली हों, इस उत्तरदायित्व को पूरा नहीं कर सकते हैं। श्रीमान्, प्रान्तीय कर्मचारियों का सहयोग आवश्यक है कोई संघ भी इस उत्तरदायित्व को पूरा नहीं कर सकता। जो लोग चुनावों से परिचित हैं वे इससे सहमत होंगे कि संघीय अधिकारियों के लिये, चाहे वे कोई भी क्यों न हों, इस उत्तरदायित्व को पूरा करना सम्भव नहीं है और किसी कमीशन के लिये तो यह और भी कम सम्भव है। इस दशा में यह आवश्यक है कि चुनाव का कार्य प्रान्तों को ही सौंपा जाए। मैं डा. अम्बेडकर से कुछ हद तक इस सम्बंध में सहमत हूं कि इन चुनावों के नियंत्रण और निरीक्षण का काम किसी ट्रिब्यूनल या कुछ केन्द्रीय अधिकारियों को सौंपा जाए ताकि वे सावधानी से देखरेख कर सकें। कुछ जगहों और कुछ प्रान्तों में म्युनिसिपल और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों तथा प्रान्तीय असेम्बलियों के चुनावों का कटु अनुभव होने के कारण हम जानते हैं कि सब कुछ प्रान्तों पर ही छोड़ देना कितना भयानक होगा विशेषतया जब भविष्य में विभिन्न दलों के आधार पर चुनाव होंगे। इस परिस्थिति में स्पष्ट रूप से कार्यविभाजन की ओर ध्यान देना चाहिये अर्थात् प्रान्तों को तो चुनाव करने चाहिये और केन्द्रीय अधिकारियों को इन चुनावों के निरीक्षण तथा नियंत्रण पर निगाह रखनी चाहिये।

कुछ शब्द मैं चुनाव के ट्रिब्यूनल के बारे में कहना चाहता हूं। श्रीमान्, हमें ऐसे मामलों की सूचना मिली है और हमें इसका अनुभव भी हुआ है कि मंत्रिमंडलों और मंत्रिमंडलों की सलाह से प्रान्तों के गवर्नरों ने कुछ जगहों में न्यायोचित रूप से ठीक-ठीक ट्रिब्यूनल तक स्थापित नहीं किये। उनको अपने दल के काम में लगाया गया जिससे विपक्षी दलों को बड़ी असुविधा का सामना करना पड़ा। इस अनुभव को देखते हुये उचित तो यह होगा कि यह कमीशन स्वतंत्र रूप से इन ट्रिब्यूनलों को स्थपित करे या वे संघीय अदालत जैसी स्वतंत्र संस्था द्वारा नियुक्त किये जायें। इस प्रकार यह उचित है कि चुनावों पर संघ का कुछ नियंत्रण रखा जाए परन्तु चुनावों को पूर्णरूप से संघ द्वारा ही चलाना एक असम्भव बात है और वास्तव में यह किसी भी संघ या ट्रिब्यूनल की शक्ति के बाहर है। इस दशा में मैं डा. अम्बेडकर से अपील करता हूं कि प्रस्तावक महोदय द्वारा उनके संशोधन के एक भाग की स्वीकृति के लिये वे सहमत हो जाएं।

***श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार: जनरल): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि इस प्रश्न पर अब मतदान लिया जाए।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): उपाध्यक्ष महोदय,...

***उपाध्यक्ष:** देखिये, बहस समाप्त करने का प्रस्ताव पेश हो चुका है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, बहस समाप्त करने का प्रस्ताव इस सिद्धांत पर निर्भर है कि वाद-विवाद हो चुका है और सारी सभा उस प्रस्ताव को स्वीकार करती है। सभा का मत अभी नहीं लिया गया है। मैं हमेशा की तरह बहुत संक्षेप में अपना भाषण दूंगा।

श्रीमान्, मैं संशोधन का समर्थन करने के लिये उठा हूं। डा. अम्बेडकर ने इस आदेश के इतिहास का बड़ा मनोरंजक मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है। उन्होंने एक बहुत ही न्यायोचित और सीधा-साधा प्रश्न पूछा है। वह यह है कि चुनावों के झगड़ों का फैसला करने के लिये जो संस्था स्थापित करने का विचार है वह क्या एक स्वतंत्र संस्था होगी। श्री पातस्कर उनसे सहमत हैं और मैं भी उनसे सहमत हूं। परन्तु मैं डा. अम्बेडकर और उनकी विचारधारा के लोगों से पूछता हूं कि क्या किसी प्रान्त में कोई ऐसी संस्था नहीं है जो बहुत-कुछ स्वतंत्र हो? मेरे विचार से डा. अम्बेडकर के भाषण से प्रान्तों की योग्यता तथा उनकी स्वतंत्रता पर संदेह होने लगता है। क्या प्रान्तों में न्यायाधीशों के ट्रिब्यूनल स्वतंत्र नहीं हैं और क्या वहां न्यायाधीशों का विश्वास नहीं किया जाता? मैं यह कहता हूं कि प्रान्तीय अधिकारी अच्छी प्रकार जानते हैं कि जहां चुनाव होते हैं वहां की परिस्थिति क्या है। मेरे विचार से यह काम हाईकोर्ट के न्यायाधीशों और प्रान्तीय अधिकारियों द्वारा चुने हुए अन्य सदस्यों पर बिना आगा-पीछा किये हुए छोड़ा जा सकता है। मेरी यह राय है कि केन्द्र कुछ मामलों में प्रान्तों के साथ बहुत-कुछ सौतेला व्यवहार करता है, बहुत हस्तक्षेप किया जाता है और प्रान्तों की योग्यता बहुत सन्देह की दृष्टि से देखी जाती है। श्रीमान्, मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, आवश्यक बातों के सम्बन्ध में हम सभी सहमत हैं और जो संशोधन पेश किया गया है उसे स्वीकार करने के लिये मैं तैयार हूं यानी यह कि संघीय विधान का यह खण्ड केवल संघीय चुनावों तक ही सीमित रखा जाए। इस सम्बन्ध में मैं केवल एक बात बताना चाहता हूं और वह यह है कि अल्पसंख्यकों से सम्बन्धित सलाहकार समिति ने निम्नलिखित सिफारिशें की थीं:

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

''संघीय या प्रादेशिक व्यवस्थापिका के सभी चुनावों के निरीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण का अधिकार जिसमें चुनाव के ट्रिब्यूनल की नियुक्ति का अधिकार भी सम्मिलित है, संघ के या प्रदेश के, जैसी भी दशा हो, चुनाव के कमीशन को दिया जायेगा और वह सभी दशाओं में संघ के कानून के आदेशानुसार नियुक्त किया जायेगा।''

अब इसमें संघीय कमीशन के अतिरिक्त, जो संघीय चुनावों की देख-रेख करेगा, प्रदेश के चुनावों की देख-रेख के लिये भी प्रादेशिक कमीशन की नियुक्ति के लिये व्यवस्था है। इस विशेष सिफारिश को सभा ने अनुकरणीय प्रान्तीय विधान पर विचार करते समय स्वीकार कर लिया था। इस पैराग्राफ में जो सिद्धांत सम्बन्धी वक्तव्य है उसका सभा ने समर्थन किया था।

जहां तक श्री सन्तानम् के इस कथन का सम्बन्ध है कि इससे विभिन्न स्थानों में प्रबन्धकारिणी के न्यायोचित अधिकार-क्षेत्र में हस्तक्षेप हो सकता है, मुझे केवल यह बताने की आवश्यकता है कि इस खण्ड में केवल निरीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण की व्यवस्था की गई है। चुनावों का वास्तविक संचालन और इसके लिये आवश्यक प्रबन्धकारिणी इत्यादि का प्रबन्ध सम्बन्धित प्रांतीय सरकार की सहायता से करना होगा। उदाहरणार्थ, निरीक्षण या नियंत्रण की आवश्यकता ऐसे मामलों में पड़ेगी जैसे कि निर्वाचन स्थानों के सम्बन्ध में निर्णय, नियंत्रण करने वाले अफसरों का चुनाव, वोट देने के तरीके, पर्चियों की गोपनीयता अखण्ड रखने के सिद्धांत की सुरक्षा के लिये व्यवस्था इत्यादि। यह आवश्यक है कि इस प्रकार के मामले निष्पक्ष तथा न्यायोचित रूप से तय किये जाएं। अन्यथा इनके कारण अन्याय, दुराचार इत्यादि हो सकता है। इसलिये ऐसे मामले इस प्रकार के किसी निष्पक्ष ट्रिब्यूनल के हाथ में होने चाहियें। श्रीमान्, मैं इस संशोधन को स्वीकार करता हूं।

उपाध्यक्षः संशोधन नं. 344, जिसका प्रस्ताव श्री पातस्कर ने किया है, सभा के सामने रखा जाता है:

''खण्ड 24 में 'सभी संघीय या प्रांतीय चुनावों' की जगह 'सभी संघीय चुनावों' रखा जाए और 'या प्रांतीय' शब्दों को निकाल दिया जाए।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्षः** अब मैं सभा के सामने खण्ड 24 को उसके संशोधित रूप में रखता हूं:

''इस विधान के अधीन होने वाले सभी संघीय चुनावों के निरीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण का अधिकार, जिसमें ऐसे चुनावों से उत्पन्न होने वाले सन्देहों और झगड़ों पर निर्णय देने के लिये चुनाव सम्बन्धी ट्रिब्यूनलों की नियुक्ति का अधिकार भी सम्मिलित है, एक कमीशन को दिया जायेगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेंगे।''

खंड 24 उसके संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

***उपाध्यक्षः** अब कल सुबह दस बजे तक के लिये सभा स्थगित की जाती है।

इसके बाद परिषद् बुधवार 30 जुलाई सन् 1947 ई. के सुबह के दस बजे तक के लिये स्थगित रही।

Con. 3. 4.13.47

अंक 4

संख्या 13

बुधवार,
30 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
1. परिचय-पत्र की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर	...1
2. अगस्त बैठक का कार्यकाल	...1
3. संघ-विधान-समिति की रिपोर्ट	...3

भारतीय विधान-परिषद्

बुधवार, 30 जुलाई सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कांस्टीट्यूशन हाल नई दिल्ली में प्रात: 10 बजे अध्यक्ष (माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में हुई।

परिचय-पत्र की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्य ने अपना परिचय-पत्र पेश किया तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर किया:

श्री मुकन्दबिहारी मल्लिक (पश्चिमी बंगाल: जनरल)

अगस्त बैठक का कार्यकाल

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, क्या कृपा करके आप हमें बतायेंगे कि अगस्त मास की बैठक कब तक चलेगी, ताकि उसके अनुसार हम अपने कार्यक्रम की व्यवस्था करें?

***अध्यक्ष:** सब सदस्यों को पता है कि 15 अगस्त को हम एक उत्सव मनायेंगे और यह आशा की जाती है कि उस दिन सब सदस्य उपस्थित होंगे और उत्सव में भाग लेंगे। 16 ता. को शनिवार है और 17 को रविवार, इन दोनों दिन हम कोई कार्य नहीं करते हैं। 18 और 19 अगस्त को ईद होगी और इन दोनों दिन भी कार्य नहीं होगा। अत: अगले दिन 20 तारीख को हम कार्य कर सकते हैं, और फिर सदस्यों पर निर्भर होगा कि वह कितने दिन में कार्य समाप्त करेंगे। संघ-अधिकार-समिति और परामर्शदातृ समिति (Advisory Committee)- की रिपोर्टों पर विचार करना होगा और यदि इसमें से कुछ पर विचार करना बाकी भी रह जायेगा, जिसकी मुझे आशा नहीं, तो उस समय वह भी पूरा कर लिया जाएगा। इसके अतिरिक्त और विषय भी हो सकते हैं, परन्तु विचार करने के लिए यही दो आवश्यक विषय होंगे। मुझे आशा है कि इन दोनों विषयों पर विचार करने में सात या आठ दिन से अधिक नहीं लगेंगे।

***एक माननीय सदस्य:** अल्पसंख्यक-समिति की रिपोर्ट के विषय में क्या होगा?

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***अध्यक्षः** परामर्शदातृ-समिति की रिपोर्ट में ही वह शामिल है।

***प्रो. एन.जी. रंगा** (मद्रासः जनरल): भारतीय संघ और प्रान्तों के सम्बन्ध में जो वाक्यांश हैं और जिनका अभी तक निपटारा नहीं हो पाया है, उनके विषय में क्या होगा?

***अध्यक्षः** यदि सम्भव हुआ तो इस रिपोर्ट पर विचार करने का कार्य भी हम समाप्त कर देंगे। परन्तु यदि कुछ बचा रह जायेगा तो उस समय उस पर भी विचार कर लिया जायेगा।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल): मैं यह बताना चाहता हूं कि चूंकि 18 और 19 तारीखों की छुट्टियां हैं, हम अपना कार्य 16 और 17 को कर सकते हैं; यद्यपि 17 को रविवार पड़ता है। यह भाव मिथ्या ही है कि रविवार को कार्य न हो; क्योंकि जब दो छुट्टियां आ गई हैं, तो हम रविवार को भी कार्य कर सकते हैं।

संशोधनों के विषय में मैं यह बताना चाहता हूं कि हमारे घर पहुंचने के बाद ही उनकी नकलें शीघ्र हमारे पास भेज देनी चाहिए, जिससे उन पर विचार करने के लिए हम तैयार होकर आयें।

***माननीय श्री बी.जी. खेर** (बम्बईः जनरल): सबसे अच्छी बात तो यह होगी कि 20 तारीख से लेकर मास के अंत तक हम कार्य करें।

***अध्यक्षः** यही करने का निश्चय हो रहा है।

पं. श्रीकृष्णदत्त पालीवाल (संयुक्त प्रांतः जनरल): सभापतिजी, मुमकिन है 16 तारीख को देश में स्वाधीनता दिवस मनाया जायेगा और बहुत से मेम्बर यह चाहेंगे कि 15 को यहां शामिल होकर फिर वापस चले जायें, अपने-अपने यहां उत्सवों में शामिल होने। इसलिए 16 तारीख को काम करना मुनासिब नहीं होगा।

अध्यक्षः आप क्या चाहते हैं?

पं. श्री कृष्णदत्त पालीवालः मैं चाहता हूं कि बहुत से मेम्बर स्वाधीनता दिवस के सिलसिले में अपनी जगह वापस जाना चाहेंगे; इसलिए 16 तारीख को क्यों काम न होना चाहिये।

***अध्यक्षः** जो वापस जाना चाहेगा वह जा सकेगा। 20 तारीख से हम लोग फिर काम करना शुरू करेंगे।

संघ-विधान समिति की रिपोर्ट

भाग 4–अध्याय 1–वाक्यांश 7

***अध्यक्षः** जो वाक्यांश बच रहे हैं, अब उन पर हम विचार करेंगे। वाक्यांश 7 ऐसा है, जिस पर वाद-विवाद नहीं हुआ है। मैं समझता हूं कि वाक्यांश 7 के स्थान पर एक और वाक्यांश है। सर गोपालस्वामी आयंगर, क्या वह तैयार है?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मैंने वाक्यांश 7 (2) (ख) के सम्बन्ध में एक संशोधन की सूचना दी है। परन्तु उसके विषय में कुछ थोड़ी-सी कठिनाई है। मैं समझता हूं कि कल प्रातःकाल मैं उस संशोधन को सभा के आगे पेश कर सकूंगा; क्योंकि मुझे उस संशोधन को इस प्रकार लिखना है, जिससे सभा के दोनों भाग उसको स्वीकार कर लें।

***अध्यक्षः** फिर हम उसको छोड़कर भाग 5 को लेते हैं।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** एक और वाक्यांश है जो बचा हुआ है और वह वाक्यांश नं. 14 है। उसके विषय में भी मुझे आशा है कि कल प्रातःकाल एक सर्वसम्मत योजना की शक्ल में मैं उसे पेश करूंगा।

***अध्यक्षः** ऐसी परिस्थिति में सभा नं. 5 पर विचार प्रारम्भ करेगी, जो कानूनी सभा के अधिकारों के बटवारे (Distribution of Legislative Powers) के सम्बन्ध में है; जो संघ और उसके अंगों में होना है। यद्यपि इसमें कोई विशेष संशोधन नहीं है, लेकिन रियासतों के मंत्रियों का एक सुझाव है कि इस पर विचार तब तक रोक रखें जब तक कि हम संघ-अधिकार-समिति (Union Powers Committee) की रिपोर्ट पर विचार न कर लें। यही अभिप्राय है तो?

***सर बी.एल. मित्तर** (बड़ौदा): ऐसा ही है। इसके सम्बन्ध में मेरा एक संशोधन है।

***अध्यक्षः** क्या उस संशोधन को इस समय पेश करना आवश्यक है? मेरा विचार है कि भाग नं. 5 पर विचार हम रोक सकते हैं।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** हमें कोई आपत्ति नहीं, यदि उसे रोक रखा जाये।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि सभा की यही इच्छा है कि संघ-अधिकार समिति (Union Powers Committee) की रिपोर्ट पर जब तक विचार न हो जाए तब तक के लिए भाग नं. 5 पर विचार करना रोक रखा जाये।

अब सभा भाग नं. 6 पर विचार करेगी।

भाग 6—वाक्यांश 1

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्तप्रांतः जनरल): श्रीमान्, मैं यह खण्ड पेश करता हूं:

''संघ की पार्लियामेंट एक संघीय विषयों के लिए कानून बनाने में, उस विषय के सम्बन्ध में किसी कर्त्तव्य को संघीय सरकार की ओर से सम्पादित करने का काम, किसी अंग की सरकार पर चाहे वह प्रांत की हो या देशी रियासत की या अन्य क्षेत्र की हो अथवा उस सरकार के किसी हाकिम पर सौंप सकती है।''

यह एक बहुत सरल व्यवस्था है और इस सम्बन्ध में मुझे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं।

***अध्यक्षः** रायसाहब रघुराज सिंह के नाम में इस वाक्यांश के सम्बन्ध में एक संशोधन है। क्या वह उसको पेश करते हैं?

(वह सदस्य उपस्थित नहीं थे, अतः संशोधन पेश नहीं किया गया।)

(श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले ने अपना संशोधन नम्बर 362 पेश नहीं किया)।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम): मैं यह संशोधन पेश करता हूं कि:

''खण्ड दो के उप-खण्ड (1) में 'जो इस अंग पर लागू होता है' इन शब्दों की जगह 'जहां तक यह उस अंग पर लागू होता है' ये शब्द रखे जायें।''

मेरा एक दूसरा संशोधन भी है जो उप-खण्ड (2) के सम्बन्ध में है।

***अध्यक्षः** माननीय पंडित नेहरू ने केवल खण्ड (1) को ही पेश किया है; अतः खण्ड (1) के सम्बन्ध में जो संशोधन हों वही अब पेश किए जा सकते हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** मेरा संशोधन केवल शाब्दिक है।

***रायबहादुर लाला राजकुंवर** (पूर्वी रियासत समूह): रायसाहब रघुराज सिंह अभी यहां पहुंचे हैं, परन्तु मैं संशोधन को पेश करने के लिए तैयार हूं। मैं यह संशोधन रखता हूं कि:

''खण्ड 1 के स्थान में निम्नलिखित अंश रखा जाये:

'प्रांतीय सरकार या संघ में सम्मिलित रियासत (state) के शासक की स्वीकृति से संघ की सरकार किसी शर्त्त या बिना शर्त्त के ही उस प्रांतीय सरकार या शासक को या उनके किन्हीं अधिकारियों को उस मामले के सम्बन्ध में, जिसमें कि संघ का शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार लागू होना हो, किसी भी कर्त्तव्य को सम्पादित करने का भार दे सकता है।

संघ की व्यवस्थापिका सभा का एक्ट जो सम्मिलित रियासत पर लागू होता है, रियासत या उसके उन अफसरों और अधिकारियों को, जो शासक द्वारा इसी प्रयोजन के लिए नियत किए गए हों; अधि कार दे सकता है और उनको कार्य सौंप सकता है।''

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार: मुस्लिम): श्रीमान्, एक वैधानिक प्रश्न है। जब वह सदस्य, जिसने संशोधन की सूचना दी हो, सभा में उपस्थित हो तो क्या दूसरा सदस्य संशोधन को पेश कर सकता है?

***अध्यक्षः** दोनों सदस्यों ने संशोधन पर हस्ताक्षर किए हैं, इस कारण संशोधन उपस्थित करने में वह नियम के अन्दर हैं।

रायबहादुर लाला राजकुंवरः उस संशोधन के शब्द जिसे मैंने अभी पेश किया है, भारतीय सरकार के 1935 के एक्ट धारा 124, उपधारा (1) और (3) के शब्दों के आधार पर हैं। इसका यह प्रयोजन है कि जब कभी वह कार्य, जो ऐसे मामले से सम्बन्ध रखता हो, संघ के शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार के अंतर्गत हो, प्रान्तीय सरकार या रियासत के शासक या उसके किसी अफसर को सौंपा जाये, तो यह उनकी स्वीकृति से करना चाहिए, न कि स्वतंत्र रूप से, और रियासत के अफसरों को शासक ही नियत करे, संघ नहीं। श्रीमान्, इस संशोधन की आवश्यकता इस कारण है कि प्रान्तीय सरकार या किसी एक रियासत को

[रायबहादुर लाला राजकुंवर]

अधिकार सौंपने का काम उनकी मरज़ी से ही होना चाहिए और विशेषकर भारत की रियासतों के सम्बन्ध में तो ऐसा ही करना उचित है और उन अधिकारों को प्रयोग में लाने के लिए अफसर शासक द्वारा ही चुने चाहिएं। इस कारण मैं सिफारिश करता हूं कि सभा इस संशोधन पर विचार करे और इसे स्वीकार करे।

***अध्यक्षः** क्या कोई और इस वाक्यांश या संशोधन पर बोलना चाहते हैं? अब दोनों पर वाद-विवाद हो सकता है।

***रायसाहब रघुराज सिंह** (पूर्वी रियासतों का समूह-2)**:** श्री अध्यक्ष महोदय, पहले के एक वाक्यांश में संघ के अधिकारों का सौंपना मंजूर कर लिया गया है, अर्थात् वाक्यांश 9 में। इस बात को भी स्वीकार कर लिया है कि संघ की इच्छा अनुसार यह वापस लिया जा सकता है। उस संशोधन में जो अभी पेश किया गया है, केवल इतना ही कहा गया है कि जब संघ की सरकार रियासत को अधिकार सौंपे, तो यह कार्य रियासत की अनुमति से होना चाहिए। अधिकारों का प्रयोग किसी ऐसी एजेंसी के द्वारा होना चाहिए, जो रियासत की सरकार या उसके शासक द्वारा स्वीकृत हो।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, यह संशोधन वास्तव में उसी बात को दुहराता है, जो 1935 के एक्ट की 124वीं धारा में दी हुई है। खण्ड 1 जो उपस्थित किया गया है, 124वीं धारा के तात्पर्य को बताने के लिए था। दो विषय हैं, जिनका ज़िक्र संशोधन के प्रस्तावक और अनुमोदक ने किया है और जो विचार करने के योग्य हैं। पहली बात जो मैं समझा, वह यह थी कि संघीय विषयों (federal subjects) के सम्बन्ध में शासन के अधिकारों को प्राँतों या रियासतों को जो सौंपने का काम है, वह प्रांतीय या रियासतों की सरकार की मरज़ी से ही होना चाहिए। दूसरी बात यह थी कि भारतीय रियासत के अफसरों को नियुक्त करने का कार्य जो अफसर-संघ के कानूनों से दिए हुए अधिकारों का प्रयोग करेंगे, शासक स्वयं करेगा या उसकी अनुमति से किया जाएगा। इस विषय में मैं कहूंगा कि जब कभी प्रांत या रियासत की सरकारों को या उन सरकारों के अफसरों को इस प्रकार के अधिकार दिए जाएं तो केन्द्र और अंगों (Units) के बीच में पहले परामर्श अवश्य होगा। हमें यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि जिन कार्यो को सम्पादित करने का भार उन्हें सौंपा जाये, वे संघीय विषयों के शासन-प्रबन्ध से ही सम्बन्ध रखते हों। संघीय विषयों के शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी व्यवस्था का अधिकार अन्ततः केन्द्र को ही होना चाहिए। हम परामर्श की व्यवस्था

रख सकते हैं, परन्तु मैं विचार करता हूं कि संघीय शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकारों को प्रयोग में लाने का जो मूल सिद्धान्त है, उसके प्रतिकूल यह बात होगी, यदि हम यह शर्त्त लगा दें कि अंग-सरकार (Unit Government) या उस अंग-सरकार के मुख्य अफसर की मंजूरी ऐसे अधिकारों के देने से पहले होनी चाहिए। इस संशोधन का तात्पर्य अवश्य ही भावी संघीय सरकार (Federal Government) मान लेगी, और संघीय कानून द्वारा या अन्य प्रकार इन कामों को सौंपने के पहले केन्द्रीय और अंग में यथेष्ट परामर्श अवश्य होगा। इसलिए श्रीमान्, मैं इस संशोधन के स्वीकार करने की सिफारिश नहीं कर सकता।

***रायबहादुर लाला राजकुंवरः** सर गोपालस्वामी आयंगर के आश्वासन को दृष्टि में रखकर मैं संशोधन वापस लेता हूं।

***अध्यक्षः** अब मैं इस खण्ड पर मत लेता हूं। संशोधनकर्त्ता ने संशोधन वापस ले लिया है। मेरा विचार है कि सभा उनको संशोधन के वापस लेने की आज्ञा देगी। अब मैं मौलिक खण्ड पर वोट लूंगा।

भाग 6 खण्ड 1 स्वीकार कर लिया गया।

भाग 6 खण्ड 2

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** खण्ड 2 इस प्रकार है:

"(1) अंग की सरकार का कर्त्तव्य होगा कि वह अपने शासन-प्रबंध सम्बन्धी अधिकार और शक्ति को जहां इस उद्देश्य के लिए यह आवश्यक और लागू होता हो, इस तरह प्रयोग में लायें कि हर संघीय कानून का, जो उस अंग पर लागू किया जाये, उस प्रदेश में यथोचित प्रभाव पड़े। संघीय सरकार को अधिकार होगा कि उस उद्देश्य-सिद्धि के लिए वह अंग की सरकार को आदेश दे।

(2) संघीय सरकार का अधिकार यहां तक होगा कि वह अंग की सरकार को आदेश दे कि उस मामले के सम्बन्ध में, जिसका किसी संघीय विषय सम्बन्धी शासन पर प्रभाव पड़ता हो, अपने शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार और शक्ति का वह किस तरह प्रयोग करे।"

यह दोनों उप-खण्ड वास्तव में 1935 के एक्ट के नियमों को ही दुहराते हैं।

[माननीय सन एन. गोपालस्वामी आयंगर]

इनका तात्पर्य यही है कि केन्द्र और अंग में कोई परस्पर विरोध न हो। इसका यह भी प्रयोजन है कि अंग-सरकार अपने शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार को इस प्रकार प्रयोग में लाये कि संघीय विषयों के सम्बन्ध में इसका जो शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी अधिकार है, उससे कोई विरोध न पड़े। मैं समझता हूं कि अधिक व्याख्या अनावश्यक है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मेरा प्रस्ताव है कि:

''खण्ड 2 के उप-खण्ड (1) में इन शब्दों 'जो अंग पर लागू होता है' के स्थान पर 'जहां तक अंग पर लागू हो' यह शब्द रखे जाएं।''

श्रीमान्, क्या मैं अपने संशोधन, नं. 365 को भी पेश कर सकता हूं?

***अध्यक्षः** हां!

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** मेरा दूसरा संशोधन यह है कि:

''खण्ड (2) के उप-खण्ड (2) में 'अंग की सरकार' की जगह 'अंग की सरकारें' रखा जाए।''

श्रीमान्, मैं निवेदन करता हूं कि यह संशोधन केवल शाब्दिक हैं और मसाविदा समिति के सुझाव के लिए रखे गए हैं।

(सर्वश्री ठाकुरदास भार्गव, के. सन्तानम् और पी.एस. देशमुख ने अपने संशोधन नम्बर 365, 366 और 367 पेश नहीं किए।)

***रायसाहब रघुराज सिंहः** मैं प्रस्ताव करता हूं कि खण्ड (2) के पश्चात् निम्न निर्दिष्ट नया खण्ड (3) शामिल किया जाये:

''3. खण्ड (1) के आधार पर जहां प्रांत या संघ में सम्मिलित रियासत अथवा उनके अधिकारियों या कर्मचारियों पर अधिकार और कर्तव्य सौंपे जायेंगे, वहां संघ, प्रांत या रियासत को ऐसी रकम अदा करेगा, जो उनके बीच तय हुई हो; या इसके तय न होने पर वह ऐसी रकम अदा करेगा, जिसे वह पंच निश्चित करेगा जिसको सर्वोच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश शासन सम्बन्धी उस अतिरिक्त

खर्च के सिलसिले में नियुक्त करेंगे, जो इन अधिकारों और कर्त्तव्यों को कार्यान्वित करने में प्रांत या रियासत को उठाना पड़ा हो।''

इस संशोधन का तात्पर्य स्पष्ट ही है और वह यह है कि जब किसी रियासत या प्रांत या संघ में सम्मिलित रियासत को अधिकार सौंपा जाये, तो उन अधिकारों के प्रयोग में लाने में जो खर्च पड़े वह रकम उस रियासत या प्रांत को दी जाये।

***अध्यक्षः** इस खण्ड के सम्बन्ध में और कोई संशोधन नहीं है; अतः अब खण्ड और संशोधनों पर बहस हो सकती है। जो सदस्य बोलना चाहें, वह बोल सकते हैं।

श्री रामसहाय (ग्वालियर): सभापति महोदय, रायसाहब का जो अमेंडमेंट है उसकी ताईद में मैं अर्ज करना चाहता हूं। मेरा अर्ज करना यह है कि यह अमेंडमेंट बहुत ही मुनासिब है और उसका होना निहायत जरूरी है। गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट 1935, सेक्शन 124, सब-सेक्शन (1) में Power of Federation to confer powers on Provinces and States with the consent of the Government of a Province or the Rulers of Federated State का विधान है, मगर इस धारा में यह अलफाज निकाल दिये गये हैं। सैन्टर को मजबूत बनाने के लिए बिला उनकी कन्सेन्ट ऐसा अख्तियार Federation को देना मुनासिब ही था। लेकिन सब-सेक्शन (4), सेक्शन 124, गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट का निकालना किसी तरह मुनासिब नहीं है। यह तरमीम रायसाहब ने इसी सब-सेक्शन के आधार पर की है। इसलिए मैं यह मुनासिब समझता हूं कि हाउस इस तरमीम को जरूर मंजूर कर ले। इस तरमीम को मंजूर करने से जो कुछ अखराजात सेन्टर के लिये प्रान्तीय गवर्नमेंट या स्टेट को करने होंगे, वह उससे पा सकेंगे। प्रान्त या स्टेट को आर्थिक स्थिति मजबूत, कायम रखने के लिये यह निहायत जरूरी है कि इस तरह के अखराजात उनको दिये जाएं। इसलिए मैं इस तरमीम की ताईद करता हूं।

***रायबहादुर लाला राजकुंवरः** वह संशोधन जिसका मैं समर्थन कर रहा हूं, स्वयं स्पष्ट है और उसकी पुष्टि में तर्क देने की आवश्यकता नहीं है। उसका उद्देश्य यही है कि एक कानून बनाया जाये जिसके द्वारा संघ की सरकार, संघ में सम्मिलित अंग को शासन का खर्च दे, जब कि संघ के किसी विषय का शासन उस अंग को सौंपा गया हो। यह व्यवस्था बहुत आवश्यक है और यह भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 124 की उपधारा (4) में दी हुई है। मेरा

[रायबहादुर लाला राजकुंवर]

यह कहना है कि यह आवश्यक व्यवस्था है और विधान में शामिल की जाये। इस समय विधान-समिति की सिफारिशों में ऐसे खर्चों का कोई जिक्र नहीं है। चूंकि यह आवश्यक व्यवस्था है, इसलिए यह सुझाया जाता है कि सभा इसको स्वीकार करे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** मि. नजीरुद्दीन अहमद ने जो दो संशोधन प्रस्तावित किए हैं, उनमें से पहला यह है कि यह शब्द 'जो अंग पर लागू होता है' इसके स्थान में 'जहां तक वह अंग पर लागू होता हो' यह शब्द होने चाहिएं। यह इस खास उप-खण्ड के मस्विदे को अच्छा बनाने के लिए एक सुझाव-सा है। यह कहना कठिन है कि इससे वह मसविदा सुधरेगा या नहीं। मैं समझता हूं कि जैसे संशोधन से तात्पर्य सिद्ध हो जाता है, वैसे ही उप-खण्ड के मूल स्वरूप से भी इसका अभिप्राय सिद्ध हो जाता है। जैसा यह खण्ड है, मैं इसको इसी के रूप में छोड़ता हूं। इस कारण मैं इस संशोधन को स्वीकार नहीं करता। उनका दूसरा संशोधन यह है कि 'अंग की सरकार' इन शब्दों के स्थान में 'अंग की सरकारें' यह शब्द रखे जाएं। इसे मैं स्वीकार करता हूं। इस खण्ड पर दूसरा संशोधन है, नम्बर 368 का। भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 124 की उप-धारा (4) से यह लिया गया है। जब इस सभा में वाद-विवाद के लिए विधान का मसविदा बनाया गया था, तो यह जरूरी नहीं समझा गया था कि सारे आवश्यक अधिकार और नियम इसी मसविदे में शामिल करने चाहिएं। धारा 124 की यह उप-धारा नहीं शामिल की गई, इसका यह कारण नहीं था कि जब अंतिम मसविदा बने तो उसमें यह शामिल न किया जाये। परन्तु चूंकि यह खण्ड एक अतिरिक्त खण्ड के रूप में प्रस्तावित किया गया है, मैं इसे स्वीकार करता हूं और यह भावी विधान में शामिल किया जाएगा।

***अध्यक्ष:** पहले मैं संशोधनों पर मत लूंगा। पहला संशोधन मि. नजीरुद्दीन अहमद का है वह यह है कि:

> **''वाक्यांश (2) के उप-वाक्यांश (1) में 'जो उस अंग पर लागू होता है' इन शब्दों के स्थान में 'जहां तक वह अंग पर लागू होता हो' ये शब्द रखे जाएं।''**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** दूसरा संशोधन यह है कि:

> **''वाक्यांश (2) के उप-वाक्यांश (2) में 'अंग की सरकार' इन शब्दों के स्थान में 'अंग की सरकारें' ये शब्द रखे जायें।''**

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** अंतिम संशोधन यह है कि खण्ड (2) के पश्चात् निम्ननिर्दिष्ट नया खण्ड (3) शामिल किया जाये:

> **''3. खण्ड (1) के आधार पर जहां प्रांत या संघ में सम्मिलित रियासत अथवा उनके अधिकारियों या कर्मचारियों पर अधिकार और कर्त्तव्य सौंपे जायेंगे वहां संघ, प्रांत या रियासत को ऐसी रकम अदा करेगा, जो उनके बीच तय हुई हो या इसके तय न होने पर वह ऐसी रकम अदा करेगा, जिसे वह पंच निश्चित करेगा जिसको सर्वोच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश शासन सम्बन्धी उस अतिरिक्त खर्च के सिलसिले में नियुक्त करेंगे जो इन अधिकारों और कर्तव्यों को कार्यान्वित करने में प्रांत या रियासत को उठाना पड़ा हो।''**

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** संशोधित खंड पर अब सभा की राय ली जाती है।

संशोधित खंड स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** एक दूसरे संशोधन की सूचना दी गई है। संशोधन यह है कि एक दूसरा खण्ड जोड़ा जाये। इसकी सूचना चार सदस्यों ने दी है।

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी** (मैसूर): मैं इस संशोधन को पेश करता हूं कि खण्ड 2 के बाद निम्ननिर्दिष्ट वाक्य जोड़ दिया जायें:

> **''3. संघ में सम्मिलित होने वाली रियासत को, संघ-सरकार की पूर्व स्वीकृति से इस बात का अधिकार होगा कि वह गवर्नर वाले या चीफ कमिश्नर वाले किसी प्रांत से या संघ में शामिल होने वाली किसी रियासत से इस सम्बन्ध में समझौता करके कानून निर्माण**

[श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी]

सम्बन्धी, शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी तथा न्याय सम्बन्धी किन्ही कर्तव्यों को, जो उस प्रांत या चीफ कमिश्नर वाले प्रांत या संघ में शामिल होने वाली रियासत को सौंपे गये हों, स्वयं ले सकती है; किन्तु शर्त यह है कि समझौता, जहां तक प्रांतों या चीफ कमिश्नर वाले प्रांतों का सम्बन्ध है, ऐसे विषय के सम्बन्ध में हो जो प्रांतीय या सहगामी विषयों की सूची में हो और जहां तक संघ में शामिल होने वाली रियासत का सम्बन्ध है, ऐसे विषय के सम्बन्ध में हो जो संघीय सूची में शामिल न हो।

ऐसा समझौता हो जाने पर रियासत समझौते की शर्तों के अनुसार कानून-निर्माण सम्बन्धी, शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी या न्याय सम्बंधी कर्त्तव्यों को, जो समझौते में निर्धारित किए गए हों, अपने समुचित अधिकारियों द्वारा सम्पादित करा सकती है।''

श्रीमान्, यह प्रान्तीय विधान-समिति (Provincial Constitution Committee) की रिपोर्ट के खण्ड 8 के अनुसार है। प्रान्तीय विधान के भाग 1 के खण्ड 8 पर तत्सम्बन्धी समिति की जो रिपोर्ट है, उसे इस सभा ने स्वीकार किया है। उसमें यह व्यवस्था है कि कोई प्रान्तीय अंग (Unit) रियासती अंग के किसी भाग को, जो उसके प्रदेश में पड़ता है, ले सकता है और उसका शासनप्रबन्ध कर सकता है। इसी प्रकार एक वाक्यांश जो रियासती अंग को यह अधिकार देता है कि दूसरे प्रांतों के भागों को अपने अधिकार में ले और उसका शासन-प्रबन्ध करे, अब यहां प्रस्तावित किया गया है।

श्रीमान्, यह उचित और न्यायसंगत है कि यदि शासन-प्रबन्ध के लिये किसी रियासती अंग के किसी भाग को ले लिया जाता है, तो ऐसी रियासत को जो शासन-प्रबन्ध करने में उसी तरह समर्थ और योग्य हो, उसे भी यह आजादी मिलनी चाहिये कि वह किसी प्रांत के किसी भाग को शासन-प्रबन्ध के लिये ले ले। किसी भी हल्के में यह सन्देह नहीं होना चाहिये कि इस खण्ड का पेश किया जाना उचित और न्यायसंगत नहीं है।

श्रीमान्, यहां कुछ पाबंदियां रखी गई हैं। सबसे पहली पाबंदी यह कि यह बात संघ की सरकार (Federal Government) की पूर्व स्वीकृति से होनी चाहिये, जो सर्वसत्ता-सम्पन्न है। इस बात का भय नहीं है कि ऐसा समझौता संघ की सरकार को बगैर सामने रखे और बगैर उसकी मंजूरी लिए ही दो स्वार्थी दलों

में जल्दी-जल्दी कर लिया जायेगा। दूसरी पाबंदी यह है कि यह समझौता समुचित होना चाहिये, जिसके आधार पर यह कार्य किया जा सके। इस कारण जब तक इस संशोधन के दोनों भाग कार्यरूप में परिवर्तित नहीं होते, तब तक कोई रियासत शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी ऐसा काम अपने हाथ में नहीं ले सकती।

श्रीमान्, यह उचित और ठीक ही है कि जब प्रांतीय-विधान (Provincial Constitution) में संशोधित वाक्यांश 8 कानून बना दिया गया है, तो सभा के लिये उचित है कि वह रियासतों को भी यही स्वतंत्रता दे। इससे अधिक कहने की यहां आवश्यकता नहीं है।

***श्री के.एम. मुंशी** (बम्बई: जनरल) मैं प्रस्ताव रखता हूं कि प्रस्तुत प्रस्ताव पर विचार स्थगित रखा जाये। इसका कारण बहुत ही सरल है। प्रांतीय विधान पर विचार करते समय सभा ने निर्णय किया था कि रियासतों के सम्बन्ध में प्रांत को एक ऐसा ही अधिकार देना चाहिये। फिर यह उचित मालूम होता है कि रियासतों-को भी ऐसा ही अधिकार मिलना चाहिए। परन्तु साथ ही जब तक संघ के अधिकारों पर वाद-विवाद और विचार न हो जाये और सभा इस स्थिति में न हो उन विषयों के स्वरूप और कार्य-क्षेत्र के सम्बन्ध में जिनके निमित रियासतें संघ में सम्मिलित हो रही हैं, निर्णय कर सके, यह असामयिक होगा कि इस प्रस्ताव पर विचार किया जाये। यह खंड अलग ही है। यह एक संशोधन के समान नहीं है, परन्तु एक स्वतंत्र प्रस्ताव ही है। उसके गुण-दोषों पर इस समय आलोचना करना मेरे विचार में उचित नहीं होगा। इस कारण मैं निवेदन करता हूं, श्रीमान्, कि इस पर उस समय तक वाद-विवाद स्थगित रखा जाये, जब तक सभा संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट पर विचार न कर ले।

(श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय बोलने के लिये खड़े हुए।)

***अध्यक्ष:** (श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय की ओर) क्या आप मुख्य संशोधन पर बोलना चाहते हैं या श्री मुंशी के सुझाव पर?

***श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय** (ग्वालियर): श्री मुंशी के सुझाव पर।

श्रीमान्, मैं एक रियासत से आया हूं। मैं इस संशोधन का जो कि प्रस्तावित किया गया है, पूर्णतया विरोध करता हूं। जब तक रियासतों और प्रांतों में राजनैतिक दशा का भेद रहे, तब तक रियासतों को अधिक अधिकार न दिये जायें और न

[श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय]

ऐसे अधिकार दिये जायें जिनको अभी प्रस्तावित किया गया है। परन्तु, क्योंकि यह विवादग्रस्त विषय है, इस कारण मेरा विचार है कि यह स्थगित होना चाहिए, जैसा श्री मुंशी ने कहा है।

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी:** इसके स्थगित करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

***अध्यक्ष:** सुझाव यह है कि इस खण्ड पर विचार उस समय तक टाल दिया जाये, जब तक संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट पर विचार न हो जाये।

क्या सभा की यही इच्छा है कि यह स्थगित कर दिया जाये?

***अनेक माननीय सदस्य:** हां।

***अध्यक्ष:** यह स्थगित कर दिया गया।

***अध्यक्ष:** श्री अनन्तशयनम् आयंगर, आपने एक प्रस्ताव की सूचना दी थी कि एक और खण्ड पूरक सूची (Supplementary List) में जोड़ दिया जाये।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** मैं उसको पेश नहीं करता हूं। श्रीमती दुर्गाबाई भी उसे पेश नहीं कर रही हैं।

मैं अपने संशोधन नं. 5 को भी, जो नम्बर 4 की पूरक परिशिष्ट सूची में है, पेश नहीं करता हूं।

भाग 7

***अध्यक्ष:** अब हम भाग 7 को लेंगे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, यह विधान का बहुत आवश्यकीय भाग है, जिस पर कि हम विचार कर रहे हैं। पहले के दो खण्ड बड़े महत्व के विषयों को उपस्थित करते हैं और यदि आप सहमत हों और यह सभा भी इसे माने तो मैं अनुमति चाहूंगा कि खण्ड 1 और 2 को अगली बैठक में पेश करूं। इस सम्बन्ध में मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि हमारे लिए यह आवश्यक होगा कि हमको खण्ड 2 के विषय में अधिक बातें मालूम हो जायें, जिससे हम उन आलोचनाओं का उत्तर दे सकें, जो इन खण्डों के सम्बन्ध में की जायें। इन खण्डों के निर्माताओं का यह विचार है कि हम आर्थिक विषय के सम्बन्ध में विशेषज्ञों की एक समिति बनायें, जो विस्तार-पूर्वक जांच-पड़ताल

करे और प्रस्तावना पेश करे, जिसे इस विधान के मूल शब्दों में जोड़ दिया जाये। मैं आशा करता हूं कि वह आपसे प्रार्थना करेंगे कि आप इस प्रकार की समिति नियुक्त करें, जिससे उस समिति की रिपोर्ट अगली बैठक से पहले ही, या बैठक के आरम्भ होने के थोड़े समय पश्चात् ही हमको प्राप्त हो सके। यदि आप सहमत हों तो मैं खण्ड 1 और 2 को बाद में पेश करूं।

वाक्यांश 3

*__अध्यक्ष:__ अब आप खण्ड 3 को ले सकते हैं।

*__माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:__ खण्ड 3 को मैं पेश करता हूं:

''संघ की सरकार को अधिकार होगा कि वह किसी उद्देश्य के लिये संघ के राजस्व में से आर्थिक सहायता प्रदान करे, चाहे वह उद्देश्य ऐसा न हो जिसके विषय में संघ की पार्लियामेंट नियम बना सकती हो।''

यह इस प्रयोजन से रखा गया है कि संघ की सरकार प्रांतीय कार्य-क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले कामों में धन से सहायता कर सके। इसे और अच्छी तरह यों कह सकते हैं कि उन कामों में सहायता दे सकेंगे, जो संघ के कार्य-क्षेत्र से बाहर हों, इस प्रकार के अधिकार की आवश्यकता है, क्योंकि इसके द्वारा संघ की सरकार उस राजस्व को जो संघ के शासन के कार्यो पर खर्च करने के लिए इकट्ठा किया गया है, उनको उन विषयों पर भी खर्च कर सके जो उस क्षेत्र के अन्दर नहीं हों। यह अधिकार एक दूसरी तरह भी उपयोगी होगा। भिन्न-भिन्न दिशाओं में तरह-तरह के विकास मूलक कार्य करने हैं और अंगों को ही यह सब करना होगा। सम्भव है कि इन कार्यों के संचालन के लिये अंग के पास यथेष्ट धन न हो। तरक्की के इन कामों के लिए यद्यपि यह प्रांतीय कार्य-क्षेत्र के अंतर्गत है, आर्थिक सहायता देना संघ सरकार के लिये जरूरी होगा; अत: यह आवश्यक है। सारे देश की तरक्की के ख्याल से संघ-सरकार को यह अधिकार मिलना बहुत जरूरी है।

*__अध्यक्ष:__ श्री अमियकुमार दास ने एक संशोधन की सूचना दी है।

*__श्री अमिय कुमार दास__ (आसाम: जनरल): श्रीमान्, मेरे नाम में जो संशोधन है, उसे मैं पेश नहीं करता हूं। मेरी दिलचस्पी खंड 2 से है, जिस पर वाद-विवाद अगले समय के लिए स्थगित कर दिया गया है। हमें विश्वास दिलाया गया है

[श्री अमिय कुमार दास]

कि विशेषज्ञों की समिति इस सारी समस्या की जांच पड़ताल करेगी। मुझे आशा और विश्वास है कि इस समिति से हमारे प्रांत को अवश्य बहुत कुछ प्राप्त होगा। सब संशोधनों के प्रस्तावित करने के पश्चात् मैं खंड 3 के विषय में सामान्य रूप से कुछ विचार प्रकट करूंगा, यदि आप मुझे आज्ञा दें।

*__अध्यक्ष:__ हां, हम पहले खंड 3 और उसके संशोधनों को लेंगे। यदि आप वाद-विवाद में भाग लेना चाहते हैं, तो आप ऐसा पीछे कर सकते हैं।

(सर्वश्री एच.वी. पातस्कर, टी.ए. रामालिंगम चेट्टियर, एच.जे. खांडेकर और माननीय जे.जे.एम. निकोल्सराय ने अपने संशोधन नम्बर 375, 376, 377 जो मुख्य सूची में हैं और नम्बर 23 को जो पूरक सूची 1 में है, नहीं पेश किए।)

जहां तक मुझे मालूम है खंड 3 के सम्बन्ध में और कोई संशोधन नहीं है। खंड और संशोधनों पर अब वाद-विवाद हो सकता है।

*__श्री बी. दास__ (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान्, मैं सर एन. गोपालस्वामी आयंगर से सहमत हूं कि यह संघ-विधान का जो अध्याय हमारे सामने रखा गया है वह बहुत ही महत्वपूर्ण अध्याय है। श्रीमान्, मौलिक अधिकारों में हमने अब तक इस बात को सुनिश्चित नहीं किया है कि सबको सामाजिक सुरक्षा प्राप्त होगी। सामाजिक सुरक्षा का अर्थ सबके लिए सामाजिक न्याय है और इसमें सबके लिये जीवन निर्वाह का एक निश्चित स्तर होना चाहिये। इसमें केवल जनता का स्वास्थ्य और सुरक्षा ही सुनिश्चित नहीं होनी चाहिये, परन्तु सबके लिये कम से कम शिक्षा भी निश्चित होनी चाहिये। श्रीमान्, दुर्भाग्य से हमारे ऊपर विदेशीय शासन था जो अंग्रेजी प्रभुत्व के लिये स्थापित था। इसकी आर्थिक नीति यही थी कि भारत और एशिया दोनों में अंग्रेजी प्रभुत्व और अंग्रेजी साम्राज्य को सुरक्षित करने के लिये यह जो कुछ भी ले सकता था, लेवे। इसने प्रांतों को कुछ नहीं दिया। यदि उसने उड़ीसा या आसाम जैसे अधिक निर्धन प्रान्तों को कुछ दिया भी तो वह भरण-पोषण के लिये ही था, अधिक नहीं। अंग्रेजों ने जो भारत को प्राप्त किया वह केवल अंग्रेज़ी तिजारत और व्यापार को बढ़ाने के लिये। केवल कलकत्ता, बम्बई, मद्रास और कराची जैसे बन्दरगाहों में उन्नति और सम्पति थीा। सारा यातायात इन्हीं बन्दरगाहों से होता था, इसीलिये ये प्रांत सम्पन्न हो गये। वह प्रान्त जो पीछे आये अर्थात् मेरा उड़ीसा का प्रान्त या आसाम वह परिस्थिति के शिकार बन गये। उनकी वही

दशा हुई जो एक निर्धन मनुष्य के घर में बालकों की होती है, जो सदा जन्मा करते हैं और उनको माता-पिता नहीं चाहते, क्योंकि वह उनको जीवन में भली प्रकार सुसज्जित नहीं कर सकते और न उनको पर्याप्त भोजन या शिक्षा दे सकते हैं।

इस सभा में मैं यह सुनते-सुनते थक गया हूं कि कुछ बातों में हम भारत सरकार के 1935 के एक्ट का अनुसरण करते हैं। हममें से जिन्होंने उस एक्ट के निर्माण का विरोध किया और हममें से जिन्होंने क्रमशः यह जान लिया कि अंग्रेज किस प्रकार अब हमारा गला घोटने में लगे हैं, और यह अंग्रेजी स्वेच्छाचारिणी सरकार किस प्रकार इस एक्ट के बल पर चिरस्थायी बनाई जा रही थी, वह यह सुनकर लज्जित और अपमानित बोध करते हैं कि आज जब हम स्वतंत्र भारत या (औपनिवेशिक) भारत के निकट पंद्रह दिनों में पहुंच रहे हैं तो हम भारत के लिए ऐसा विधान बनाने का यत्न कर रहे हैं, जो उस एक्ट के अनुसार होगा जिसने चिरकाल तक भारत को जकड़े रखा और जिसने 1935 से 1944 तक भारत में स्वाधीन सरकार की स्थापना को रोके रखा। श्रीमान्, वह थोड़े से सेक्शन जो हम गवर्नमेंट आफ इन्डिया के एक्ट में पाते हैं और जो आर्थिक प्रबन्ध उधार, लेन-देन और सहायतार्थ धन प्रदान करने के विषय में हैं, यह सब एक्ट में इस प्रयोजन से नहीं रखे गये कि उन प्रांतो की जनता को जिनका अकस्मात प्रादुर्भाव हुआ हो, सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक न्याय प्राप्त हो। हमने देखा है कि 1939 के द्वितीय संग्राम के समय इन सेक्शनों का किस तरह उपहास किया गया था। एक खास सेक्शन 126(ए) जो 1939 में पास हुआ था उसके द्वारा सारे प्रांत के साधन अधिकृत कर लिए गए थे और समस्त भारत के लोग अंग्रेजों के दास और दासी बना दिये गये थे। और यह इसलिए कि भारत के सिपाही इस युद्ध में लड़ें जिससे अंग्रेजों की सहायता हो और विजय प्राप्त हो, चाहे भारत की कितनी भी हानि हो। हम सब जानते हैं, जो हुआ। तकरीबन 5,000 करोड़ रुपये का माल भारत से इंगलैंड और उसके साथी देशों को लड़ाई से पहले के दर के अनुसार भेजा गया था, इसी प्रकार भारत के खाद्य-पदार्थ लूटे गये थे, जिसका यह फल हुआ कि पचास या पिचहत्तर लाख स्त्री और पुरुष दुर्भिक्ष और भूख के कारण बंगाल में मृत्यु को प्राप्त हुए। दूसरा फल पदार्थों का मूल्य बढ़ना था, यह सामाजिक सुव्यवस्था और सामाजिक न्याय था, जो हमें मिला। श्रीमान्, मुझको यह बात दुख देती है कि संघ के विधान की भूमिका में यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया है कि विधान का प्रयोजन जनता को सुख और शांति देना है और भारत निवासियों को धन-धान्य से युक्त करना है। इन बातों के विषय में

[श्री बी. दास]

अब तक कुछ कहा नहीं गया है, परन्तु मुझे आशा और विश्वास है कि इनके विषय में ठीक-ठीक बताया जाएगा। मेरा ख्याल है कि यह निर्दिष्ट कर देना चाहिये कि राज्य का मुख्य कर्तव्य यह है कि वह जनता के कुशल-मंगल की ओर ध्यान दे, न कि यह केवल शासन करे; जैसा कि अंग्रेजी सरकार ने इतने समय किया और भारत को अपने स्वार्थ-साधन का विषय बनाया और भारत पर मृत्यु और आपत्ति का पहाड़ तोड़ा। इस कारण मैं, श्रीमान्, सर गोपालस्वामी आयंगर से यह सुनकर प्रसन्न हूं कि आर्थिक विषयों पर जांच-पड़ताल करने वाली समिति नियत की जायेगी। परन्तु मुझे आशा है कि ऐसी समिति में केवल प्रसिद्ध वकील ही नहीं होंगे, परन्तु अर्थ शास्त्रज्ञ भी होंगे, जो यह निर्दिष्ट कर सकें कि सामाजिक जीवन का निम्नतम स्तर क्या होगा जिसे भारत की वर्तमान भार से कुल आर्थिक स्थिति उसको प्रदान कर सके। भाग 5 में हमने एक प्रबल केन्द्र के लिए व्यवस्था की है। परन्तु यह केवल केन्द्र का ही धर्म है कि वह शासन सम्बन्धी कार्य और कानून-निर्माण कार्य अपने हाथ में रखे। मैं यह चाहता हूं कि संघ-अधिकार-समिति में बड़े-बड़े अर्थ शास्त्रज्ञ भी हों। मुझे मालूम है कि मेरे मित्र पं. गोविन्दवल्लभ पंत उस समिति में थे और वह निःसन्देह आर्थिक विषयों के पूर्ण पंडित हैं। परन्तु अच्छा होता यदि ऐसे लोग और भी होते। सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक न्याय ही है जो हम चाहते हैं। शासन तो बेशक चल ही रहा है। मुझे यह कहने में दुख हुआ है, परन्तु मैं इस निश्चय पर पहुंचा हूं कि संघ-विधान ने शासन के भार को जो पहले के एक्ट में था, हलका नहीं किया है। निःसन्देह संघ-विधान का अन्तिम बिल वह हमारे सामने पेश करेंगे और हम अक्टूबर में उनको जांचेंगे। परन्तु जो भाषण हमारे नेताओं ने दिए हैं और जिनको हमने इस सभा में सुना है, उनसे यही मालूम होता कि वह अधिकार चाहते हैं—शासन के अधिकार, कानूनी अधिकार, इत्यादि। अधिकार तो देश में शांति और सुख स्थापित करके लाखों को सुखी और शान्त करने का केवल साधन है। संघ-विधान का आर्थिक विषयों से सम्बन्ध रखने वाला अध्याय ही बतायेगा, इन लोगों का असल में मतलब क्या है। क्या वह सामाजिक न्याय स्थापित करना चाहते हैं, या वे स्वेच्छाचारी सरकार बनाना चाहते हैं, जिसमें राजनैतिक प्रभुत्व ही प्रधान होगा। जिनके हाथ में अधिकार हैं चाहे वह मेरे भाई हो या भतीजे, वे अपने अधिकार को उसी प्रकार काम में लायेंगे जिस प्रकार अंग्रेज लाते थे। इसका कारण यही है कि हममें से बहुत से लोग अंग्रेजी परम्परा पर चलते-चलते उमर गवां चुके हैं। श्रीमान्, एकाएक उस परम्परा को त्यागना और ऐसे लोकतांत्रिक सिद्धांतो का अपनाना जरा कठिन है, जिससे लाखों जनों का हम सामाजिक हित कर सकें और उनके लिए सामाजिक सुव्यवस्था

स्थापित कर सकें। इसलिये मैं संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट का स्वागत करता हूं; जिस पर अगस्त की बैठक में तर्क-वितर्क होगा। मुझे मालूम हुआ है कि संघ-विधान-समिति के सदस्य इससे भी एक कदम आगे बढ़ गये हैं। वहां वे कहते हैं.....

(हस्तक्षेप)

***अध्यक्षः** मैं माननीय सदस्य को रोकना नहीं चाहता, परन्तु यह ध्यान दिलाना चाहता हूं कि इस समय हम खंड 3 पर वाद-विवाद कर रहे हैं। यह आर्थिक सहायता के सम्बन्ध में है।

***श्री बी. दासः** श्रीमान्, यही प्रश्न है जिस पर मैं बोल रहा हूं। इस खंड में प्रांतों में शिक्षा-दान देने का जिकर है। मैं भिक्षा दान नहीं चाहता। मैं केवल यही पढ़ रहा हूं जो संघ अधिकार समिति ने इस विषय में कहा है, क्योंकि यह उनकी भावना को बताता है। वे कहते हैं:

> **''यह बिलकुल स्पष्ट है कि यदि संघ उन करों की आय को जिसका हमने जिकर किया है अपने ही पास रखे, तो कभी-कभी इससे अंगों की आर्थिक सुव्यवस्था में बड़ी गडबड़ी आ जायेगी। इसलिये हम सिफारिश करते हैं कि इसके लिये ऐसी व्यवस्था हो कि इन करों की आय का कुछ भाग उस आधार पर दे दिया जाये जैसा संघ समय-समय पर निश्चय करे।''**

श्रीमान्, यह प्रदान या भिक्षा-दान या सहायता-दान, चाहे कोई भी देवे, चाहे वह अर्थ-मंत्री हो या राष्ट्रपति हो या संघ की सरकार हो, मुझे इससे प्रयोजन नहीं। मैं यह चाहता हूं कि विधान द्वारा ही इसकी व्यवस्था की जाए। मेरे मित्र सर गोपालस्वामी आयंगर ने हमसे कहा है कि विशेषज्ञों की एक समिति होगी। मैं यह चाहता हूं कि सहायता के लिये विधान में ही व्यवस्था हो जानी चाहिये। और यह अर्थ मंत्री या किसी और का भिक्षादान नहीं होना चाहिये, चाहे वह सर्वश्रेष्ठ विशेषज्ञ हो, चाहे निर्धन का सबसे बड़ा मित्र हो हमको इससे कोई प्रयोजन नहीं। यह प्रदान या सहायता हर तीसरे या पांचवें वर्ष नये सिरे से दी जानी चाहिये। यही सुझाव है जो मैं आगे रखता हूं। मैं चाहता हूं कि वह निश्चित करके बतायें कि वह करोड़ों के विशाल जनसमूह के लिये क्या करेंगे? प्रांतों में छोटी जमींदारियां और बड़ी जमींदारियां बन जायेंगी। मैं खंड तीन का समर्थन करता हूं, क्योंकि इससे मुझे अवसर मिलता है जिससे मैं अपना विचार सभा के आगे बताता हूं। और

[श्री बी. दास]

मुझे आशा है कि संघ-अधिकार-समिति इसको स्वीकार करेगी। मुझे विश्वास है कि विधान की धारायें भारत के हरएक नागरिक के साथ सामाजिक न्याय करेंगी और हर नागरिक के लिये एक निम्नतम जीवनस्तर की व्यवस्था करेगी और उसकी गारन्टी देगी।

***श्री अमिय कुमार दासः** श्रीमान्, अपने संशोधन को वापस लेते हुए मैंने आपको बता दिया है कि खण्ड 3 का समर्थन करते समय मैं कुछ विचार आपके आगे रखूंगा।

श्रीमान्, राजकीय आर्थिक सहायता का प्रश्न सारे संघों में एक बड़ी उलझन का प्रश्न है। परन्तु तो भी यह प्रश्न एक समझौते की भावना में सुलझाया जा रहा है। सारे संघों में विधान निर्माता समझौते की भावना से समस्या पर दृष्टि डालते हैं और यत्न करते हैं कि सब अंगों के साथ ठीक-ठीक न्याय हो। श्रीमान्, विधान के बनाने का काम हमको सोंपा गया है और आर्थिक सहायता का यह जटिल प्रश्न हमको हल करना है। यह समस्या और भी कठिन मालूम होती है, जब हम यह देखते हैं कि हमारी राष्ट्रीय आय बहुत ही कम है और भिन्न-भिन्न प्रान्तों में अनेक समस्यायें उपस्थित हैं और फिर प्रान्तों में अनेक ही पिछड़ी हुई जातियां और कबीलें हैं तथा और भी बहुत-सी जटिल समस्याएं हैं; परन्तु तब भी मुझे विश्वास है कि विशेषज्ञों की समिति, जो बनने वाली है, इस समस्या पर विचार करेगी और सभी अंगों के साथ समुचित न्याय का बर्ताव किया जाएगा।

इस विधान का मस्विदा बनाने में हमने भारतीय सरकार के एक्ट के वैधानिक ढांचे को ही प्रायः स्वीकार कर लिया है। और मेरे मन में संशय है कि हम उस आर्थिक प्रबन्ध को भी शायद स्वीकार कर लेंगे, जिसकी व्यवस्था भारतीय सरकार के एक्ट में की गई है।

श्रीमान्, मेरे लिये सभा को यह बताना जरूरी नहीं है कि जो आर्थिक व्यवस्था उस एक्ट में की गई थी वह एक भिन्न ही दृष्टिकोण से की गई थी। उस समय प्रान्तों में आय की कमी थी और औटो नैमियर कमेटी जो उस समय बनी उसको यह उपाय निकालना था कि बजट में समतुल्यता कैसे लाई जाए। उस समय सार्वजनिक, आर्थिक प्रबन्ध के विषय में जो विचार फैले हुए थे उनके होते हुए भी इस कमेटी ने बजट की समतुल्यता के प्रश्न को ग्रहण किया। इन थोड़े ही वर्षों में यह विचार बहुत ही बदल गये हैं और इनके स्थान में दूसरा ही आदर्श

आ गया है। वह आदर्श है कि सबको काम दिया जाए और जनता को अधिक से अधिक सुविधा पहुंचाई जाए। जो आर्थिक प्रबन्ध एक गतिहीन समाज के लिये बना था, वही अब गतिशील समाज के लिये रखा जा रहा है। श्रीमान्, अब हम एक ऐसी सरकार बना रहे हैं जो जनता की होगी और जनता द्वारा संचालित होगी। उसका क्या प्रयोजन और क्या उसकी उपयोगिता होगी, यदि वह शासन जनता के लिये अधिक से अधिक लाभदायक न हो सके?

श्रीमान्, यह अनुचित न होगा यदि मैं यहां कनैडा या आस्ट्रेलिया के विधानों की ओर संकेत करूं। उन विधानों के निर्माताओं ने एक बहुत ही उत्तम व्यवस्था बनाई है, जिसके द्वारा प्रान्तीय अंगों को अधिक अर्थ-सहायता देकर वह प्रान्तीय आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। श्रीमान्, मेरे आसाम के प्रान्त में विशेष समस्यायें हैं। वह प्रदेश कृषि-प्रधान है और उसमें शिल्पादि नहीं है। यह पिछड़ी हुई जातियों और कबीलों से भरा हुआ है और पिछड़े हुए लोगों की एक बड़ी संख्या इस प्रदेश में चाय के खेतों पर मजदूर के रूप में काम करने के लिए भेज दी गई है। इसके अतिरिक्त वहां पर बड़ी तेज नदियां हैं जो हरे-भरे खेतों का नाश कर देती हैं, भयंकर रोग भी होते हैं जो लोगों के सुख का नाश कर देते हैं; उन रोगों की रोकथाम का प्रबन्ध होना चाहिये। यह बड़ी समस्यायें हैं और जब तक हमारे पास एक उत्तम प्रकार का आर्थिक प्रबन्ध न हो, हम उनको दूर नहीं कर सकते। इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारा देश पिछड़ा हुआ देश है, परन्तु मैं सभा का ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहता हूं कि केन्द्रीय सरकार के खजाने में सबसे अधिक धन देने वालों में से हम भी एक हैं। चाय और सन पर निर्यात-महसूल की रकम और पेट्रोल पर चुंगी की रकम हम एक बड़ी संख्या में देते हैं। इस प्रकार केन्द्रीय सरकार के खजाने को हम सात करोड़ रुपये से कुछ कम नहीं देते हैं; परन्तु हाल के आर्थिक प्रबन्ध के अनुसार हमको केवल 25 लाख रुपये की एक छोटी-सी रकम मिलती है। मैं आशा करता हूं कि विशेषज्ञों की कमेटी जो इस प्रश्न पर सोच-विचार करेगी, हमको भविष्य में यथोचित भाग देगी।

इन थोड़े-से शब्दों के साथ मैं खंड 3 का समर्थन कर सकता हूं।

*__श्री मोहम्मद शरीफ__ (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, जिन्होंने इस रिपोर्ट को तैयार किया है वे हमारे धन्यवाद के पात्र हैं; क्योंकि उन्होंने इसमें ऐसी व्यवस्थाओं का रखना वांछनीय समझा जिनसे उन लोगों की समुन्नति हो सके जो आज तरह-तरह की कठिनाइयों से जीवन यापन कर रहे हैं। जहां तक इस खंड का सम्बन्ध है इसका यही प्रयोजन है कि संघ की सरकार को यह अधिकार हो कि वह संघ की आय में से किसी भी अभिप्राय के लिये धन प्रदान करे। चाहे वह अभिप्राय

[श्री मोहम्मद शरीफ]

ऐसा नहीं हो जिसके लिये संघ की पार्लियामेंट कोई कानून बना सके। श्रीमान्, मुझे यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि हमारे सामने कितनी युद्धोतर योजनायें हैं जो जनता के आर्थिक, व्यापारिक और शिक्षा सम्बन्धी स्तर को ऊंचा करने के लिये बनाई गई हैं। ये योजनायें बिलकुल तैयार हैं, परंतु आवश्यकता इस बात की है कि इनको कार्यरूप में लाने के लिये धन मिले। जहां तक प्रांतों का सम्बन्ध है उनके पास साधन नहीं हैं कि जिनसे यह फौरन ही उनको अमल में लायें। निर्धनता की ओर देखें तो निर्धनता केवल उत्तर में ही व्याप्त नहीं है, परन्तु दक्षिण में भी है। अनेक भूख से मर रहे हैं और जनता की समुन्नति और उसकी शिक्षा सम्बन्धी उन्नति की ओर भी तुरन्त ही ध्यान देना चाहिये। जहां तक राष्ट्र-निर्माण सम्बन्धी कामों का सम्बन्ध है मैं नहीं ख्याल करता कि प्रांतों के पास धन है। यह देखना केन्द्रीय सरकार का धर्म है कि उनको धन दिया जाये और उस धन को वह निर्धन पुरुषों की आवश्यकताओं और प्रयोजनों पर और उनको सचेत और शिक्षित बनाने में खर्च करें। यही दो बातें हैं जिससे देश की उन्नति और वृद्धि होगी। यह बहुत ही आवश्यक है और रिपोर्ट के निर्माताओं ने यह बहुत ही अच्छा किया कि उन्होंने इस प्रश्न के विषय पर विचार किया और यह निश्चय कर लिया है कि संघ की आय में से प्रांतों को आवश्कीय धन मिलना चाहिये। इन शब्दों के साथ मैं इसका प्रसन्नता से समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** मैं तो यह समझा था कि यह एक सीधा-सादा खंड है और इस पर इतने वाद-विवाद की आवश्यकता नहीं होगी। मैं सभा से पूछता हूं कि जब किसी ने विरोध नहीं किया तो क्या अभी वाद-विवाद की और आवश्यकता है?

***माननीय सदस्यगण:** नहीं, नहीं।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि ''संघ की सरकार को यह अधिकार होगा कि वह संघ की आय में से किसी भी प्रयोजन के लिये धन प्रदान करे; चाहे वह प्रयोजन ऐसा हो जिसके लिये संघ की पार्लियामेंट कोई कानून न बना सके।''

भाग 7 खंड 3 स्वीकार किया गया।

वाक्यांश 4

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** मैं वाक्यांश 4 को पेश करता हूं:

''अध्याय 7 भाग 7-संघ की आय की जमानत के ऊपर संघ के प्रयोजनों में से किसी एक प्रयोजन के लिये संघ की सरकार को ऐसे

प्रतिबन्धों और शर्तों के अधीन जो संघीय कानून द्वारा नियत किये जायें, ऋण लेने का अधिकार होगा।''

यह हर एक सरकार को करना पड़ता है। यदि उसे वह खर्चा पूरा करना पड़े जिसको वह अपनी चालू आय में से पूरा नहीं कर सकती, क्योंकि उसको उन बातों पर खर्च करना पड़ता है जिनका परिणाम स्थायी हुआ करता है। उदाहरण के लिए, उन्नति सम्बन्धी कामों के लिए खर्च करना। ऋण लेकर धन एकत्र करना सरकारी अर्थ प्रबन्ध में एक बड़ी आवश्यकीय बात है। विधान में यह खंड बहुत ही आवश्यक है।

***अध्यक्षः** क्या कोई संशोधन है, जिसकी किसी सदस्य ने सूचना दी हो?

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): मैं यह सुझाव रखता हूं कि ''संघ की आय की जमानत पर'' इन शब्दों के स्थान में ''संघ की सम्पत्ति और आय की जमानत पर'' ये शब्द जोड़े जायें।

***अध्यक्षः** श्री अणे का सुझाव है कि ''संघ की सम्पत्ति और आय की जमानत पर'' शब्द रखे जायें।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** जब हम मस्विदे पर विचार करेंगे तो इसका ध्यान रखेंगे। मैं नहीं ख्याल करता कि यह आवश्यक है।

***अध्यक्षः** क्या इस वाक्यांश के सम्बन्ध में कोई संशोधन है?

***श्री बी. दासः** (उड़ीसाः जनरल): मेरा एक संशोधन है। यह संशोधन नम्बर 1 की पूरक सूची में 24वां है।

***अध्यक्षः** मेरी समझ में यह एक नया ही खण्ड है। इस खण्ड से इसका सम्बन्ध नहीं है। खण्ड यह है:–

''संघ की आय की जमानत पर संघ के प्रयोजनों में से किसी एक प्रयोजन के लिये संघ की सरकार को ऐसे प्रतिबंधों और शर्तों के अधीन जो संघीय कानून द्वारा नियत किये जायें, ऋण लेने का अधिकार होगा।''

भाग 7 वाक्यांश 4 स्वीकार किया गया।

वाक्यांश 5

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, मैं निम्नलिखित खण्ड उपस्थित करता हूंः

''संघ की सरकार को ऐसे प्रतिबंधों और शर्तों के अधीन जिसे यह नियत करे, संघ के किसी अंग को ऋण देने का या किसी अंग द्वारा लिए हुए ऋण की जमानत देने का अधिकार होगा।''

यह भी एक सीधा और आवश्यक खण्ड है। अंग की सरकारें अंग का खर्चा पूरा करें और कर्जा देने के लिये समर्थ रहें, इन बातों का उत्तरदायित्व संघ की सरकार पर होगा। यदि उनको कर्जा लेने की जरूरत हो तो संघ की सरकार या तो उनको धन कर्ज देगी या उस कर्जे का जिम्मा लेगी, जो अंग इकट्ठा करेगा।

(फैहरिस्त 2 के संशोधन नं. 378 और 379 पेश नहीं किये गये।)

***अध्यक्षः** इसके सम्बन्ध में कोई संशोधन नहीं है।

खण्ड यह हैः

''संघ की सरकार को प्रतिबंधों और शर्तों के अधीन जिसे यह नियत करे संघ के किसी अंग का ऋण देने का या किसी अंग द्वारा लिए हुए ऋण की जमानत देने का अधिकार होगा।''

भाग 7 खण्ड 5 स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** मुझे इस भाग में कुछ जोड़ने के लिये एक संशोधन की सूचना मिली है।

***श्री बी. दासः** श्रीमान्, मैं उसे पेश नहीं करता हूं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रासः जनरल): मैं भाग 7 (क) को पेश नहीं कर रहा हूं, किन्तु 7 (ख) को पेश कर रहा हूं; इस कारण मैं चाहता हूं कि भाग 7 (ख) को 7 (क) बना दिया जाये।

मान्यवर मैं यह पेश करता हूं किः

''संघीय कानून द्वारा निर्धारित विधि के अनुसार एक अंतर्प्रादेशिक कमीशन का निर्माण किया जायेगा और उसको न्याय तथा शासन प्रबंध

सम्बन्धी ऐसे अधिकार प्राप्त होंगे जो संघीय कानून द्वारा, उस विधान के व्यवसाय एवं वाणिज्य सम्बन्धी आदेशों की रक्षा और उनको कार्यान्वित करने के लिये तथा आमतौर पर उसी तरह के मामलों का फैसला करने के लिए जो राष्ट्रपति द्वारा समय-समय पर उसके सामने रखे जायें, नियत किये जायेंगे।''

इस संशोधन को पेश करने का उद्देश्य यह है कि तिजारत सम्बन्धी नियमों के विषय में इस विधान में हमें केवल एक ही जिक्र मिलता है और वह मूल अधिकारों में खण्ड 10 में जिसे इस सभा ने पिछले अधिवेशन में ही स्वीकार कर लिया था। खण्ड 10 के अनुसार संघ के नियमों की सीमा के अन्दर तिजारत और व्यापार करने की और संघ के अंगों और जन-साधारण के बीच पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने की पूर्ण स्वतंत्रता होगी।

मैंने संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट में यह देखा कि अन्य देशों के साथ तिजारत व व्यापार का विषय संघीय सूची के मद 17 तथा प्रान्तीय सूची संख्या 2 के मद 26 में आया है। वास्तव में यह दोनों विषय 1935 के भारतीय विधान कानून की सूची 7, तालिका 1 के मद 19 से, तथा उसी सूची की तालिका 2 के मद 26 से मिलते हैं यहां शब्दों में कुछ परिवर्तन कर दिया गया है, परन्तु उनका अर्थ प्राय: एक ही है। किन्तु मुझे इसमें एक त्रुटि प्रतीत होती है। मैं यह देखता हूं कि इस विधान में गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट की धारा 297 के समान कोई व्यवस्था नहीं है जिससे अन्तर्प्रान्तीय व्यापार पर रोक लगाने के लिये कानून बनाने की मनाही हो जाये। मुझे पूर्ण निश्चय है कि सभा के सदस्य 1935 के एक्ट की इस धारा से पूर्णतया परिचित होंगे और इससे सम्बन्ध रखने वाले विषयों से भी वे परिचित होंगे। इस कारण मुझे कुछ आश्चर्य हुआ है कि इस प्रकार की कोई भी धारा इस विधान में नहीं रखी गई। ऐसा प्रतीत होता है कि संघ-विधान बनाने वालों ने इस विषय पर संसार के अन्य संघ-विधानों की प्रथा का अनुसरण किया है। श्रीमान्, जहां तक अमरीका का सम्बन्ध है, वहां पर विधान की धारा 8 की दफा 1 (Article 1) के अनुसार कांग्रेस को यह भी अधिकार है कि वह अपने वैदेशिक व्यापार या अन्तर्प्रादेशिक व्यापार सम्बन्धी प्रश्नों का नियमन कर सकती है। और उसी के आधार पर अमरीका में बहुत से कानूनी फैसले हुए हैं और इसी का यह परिणाम है कि अमरीका में भिन्न प्रकार की व्यापारिक कार्यवाहियों के विषय में नियम बनाने वाली कई संस्थाये बन गई हैं। मैं नहीं समझता हूं कि हम लोगों का राज्य-संघ जिसे हम अपने लिये

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

बनाने जा रहे हैं, वह इन सभी आवश्यक विषयों पर इतना स्पष्ट रह सकता है जितना कि अमरीकन विधान है। कारण यह है कि अमरीकन विधान में राष्ट्रपति प्रधान है और उसमें पहल यानी शुरू करने का हक एक ही मनुष्य अर्थात् राष्ट्रपति के हाथों में रहता है। परन्तु हमारा विधान संसदात्मक होगा जिसमें पहल किसी एक मनुष्य के पास नहीं होगी। इस कारण इस विषय में हमें कनाडा और आस्ट्रेलिया जैसे अन्य संघ-विधानों का उदाहरण लेना चाहिये।

जहां तक कनाडा का सम्बन्ध है, व्यापार सम्बन्धी नियमन का स्पष्ट उल्लेख अधिकार-विभाजन के प्रसंग में उस देश के विधान की धारा 91 में विषय नं. 2 में है। इस कारण जो वैधानिक स्थिति हमारी है उसका उदाहरण और कहीं नहीं मिलता। आस्ट्रेलियन विधान भी वास्तव में व्यापार सम्बन्धी विषयों पर कुछ ऐसा ही है जैसा कि हमें अपना विधान बनाना है। आस्ट्रेलिया के विधान की धारा 51 में देश के आन्तरिक व्यापार का उल्लेख है। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि अमेरिका के अनुभव से लाभ उठाकर उन्होंने इतनी विद्वता दिखाई कि व्यापार सम्बन्धी नियमों के विषय में कुछ और धारायें उन्होंने अपने विधान में बढ़ा दी हैं। यह धारायें 101, 102, 103 और 104 हैं, और मैं इस समय धारा 101 की ओर संकेत कर रहा हूं। मेरा संशोधन बहुत-कुछ इस धारा 101 की नकल है जिसके अनुसार व्यापार सम्बन्धी विषयों पर फैसला करने के लिए और विधान में रखी हुई योजनाओं के अमल में लाने के लिये एक अन्तर्प्रादेशिक कमीशन बनाया जा सकता है।

श्रीमान्, सम्भव है, यह कहा जाये कि मेरे इस संशोधन में उपयुक्त शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है। वास्तव में मैं शब्दों के प्रयोग में इस धारा के आस्ट्रेलिया के विधान से भी कुछ आगे चला गया हूं, क्योंकि मैंने यहां निम्नलिखित शब्द और बढ़ा दिये हैं:

''तथा आमतौर पर उसी तरह के मामलों का फैसला करने के लिये जो राष्ट्रपति द्वारा समय-समय पर उसके सामने रखे जायें।'' मेरे ऐसा करने का कारण यह है कि भारतीय एक्ट 1935, की धारा 135 में ऐसी व्यवस्था रखी गई है जिसके द्वारा गवर्नर-जनरल एक ऐसी प्रांतीय सभा बना सकता है जहां पर इस प्रकार के विषयों पर पूरी तरह से बहस हो जाये और विधान में जो कोई त्रुटियां या विवादग्रस्त बातें हों वह प्रांतों के सदस्य पारस्परिक वाद-विवाद से ठीक कर लें। मुझे प्रतीत

होता है कि जिस विधान पर हम सोच-विचार कर रहे हैं उसमें इस प्रकार की किसी योजना का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया है। इस कारण मैंने यह सोचा कि मेरा संशोधन आस्ट्रेलिया के विधान की धारा 101 से अधिक व्यापक होना चाहिये और राष्ट्रपति को इस अन्तर्प्रादेशिक कमीशन के सम्मुख और विषय रखने का भी अधिकार होना चाहिये।

श्रीमान्, सम्भव है कि यह कहा जाये कि इस प्रकार का उल्लेख कोई विशेष लाभदायक नहीं होगा। इस अन्तर्प्रादेशिक कमीशन के क्या अधिकार होंगे, यह मैं संघीय कानून पर छोड़ता हूं। मैंने आस्ट्रेलिया के विधान की धारा 103 की नकल नहीं की है, जिसमें यह कहा गया है कि सदस्य इतने हों और उनकी इतनी योग्यता हो इत्यादि, इत्यादि। यह सब विषय ऐसे हैं, जिन पर विस्तारपूर्वक उल्लेख उस समय किया जा सकता है जब कि विधान जारी हो जाये और उसके लिए संघ को कानून बनाने की आवश्यकता पड़े। मैं जो चाहता हूं वह यह है कि इस अन्तर्प्रादेशिक कमीशन के अधिकारों को बढ़ाने की गुंजाइश होनी चाहिए। यह प्रश्न कि कमीशन को केवल वही विषय दिये जायें जो व्यापार से सम्बन्ध रखते हैं या यह कि वह ऐसी संस्था बने जो अंगों की आर्थिक कार्यवाहियों में सामंजस्य लाए और उनके पारस्परिक झगड़ों को दूर करे, एक ऐसा विषय है जो विधान बनाने वालों पर और संघीय कानून जो आगे चल कर बनेगा उन पर छोड़ दिये जायें। मैं आशा करता हूं कि प्रस्तावक मेरे संशोधन को स्वीकार कर लेंगे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** आप ही तो प्रस्तावक हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मेरा अभिप्राय संघ-विधान-समिति की रिपोर्ट की योजनाओं के प्रस्तावक से था। मैं उन सब परिवर्तनों को मानने के लिये तैयार हूं जो मस्विदा बनाने वाले मेरे संशोधन के शब्दों में करना आवश्यक समझें। मैं अपने संशोधन को सभा की स्वीकृति के लिए उसके सामने रखता हूं।

***श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान्, मैं उस संशोधन का समर्थन करने के लिये खड़ा हुआ हूं जो कि मेरे मित्र श्री टी. टी. कृष्णमाचारी ने प्रस्तावित किया है। सभी संघ-विधानों में सदैव एक विरोधात्मक बात रहती है। एक तरफ तो एकता की आवश्यकता रहती है, दूसरी ओर स्थानीय स्वातंत्र्य आवश्यक होता है। कुछ विषयों पर यह ऐक्य संघ कानून द्वारा तथा संघ की शासन-व्यवस्था द्वारा प्राप्त किया जाता है; किन्तु बहुत से विषयों में ऐसा करना संभव नहीं है। इस कारण कुछ ऐसी

[श्री के. सन्तानम्]

और भी संस्थाएं बनानी पड़ेंगी जो संघ द्वारा न बनी हो। श्री टी. टी. कृष्णमाचारी के संशोधन में बहुत ही कम व्यापकता है। मैं आशा करता हूं कि समय आने पर हम उसके विस्तार को बढ़ा सकेंगे। हमको केवल यही एक कमीशन ही नहीं बनाना है, किन्तु अंगों में स्वेच्छापूर्ण सहयोग कायम करने के लिए और भी कमीशन बनाने पड़ेंगे। उदाहरण के लिए बिक्री-कर को लीजिये। यह सब प्रांतीय कर हैं। मैं यह आशा करता हूं कि आगामी वर्षों में यह कर अंगों के लिए आय का एक बहुत बड़ा साधन होगा, परन्तु जब तक अंग स्वेच्छा से परस्पर मिलजुल कर काम नहीं करेंगे और कर लगाने के विषय में एक ही प्रकार से नहीं चलेंगे तो यह सम्भव है कि व्यापार एक प्रदेश से दूसरे में जाता रहे और इससे अंगों की स्वाभाविक उन्नति में बाधा हो। कुछ दशाओं में ऐसा हो सकता है कि अंगों के लिए यह आवश्यक हो जाये कि उन्हें अपने प्रांतीय करों के जमा करने और बांटने का काम संघ को देना पड़े। इस कारण यही श्रेयस्कर है कि अंग स्वेच्छा से परस्पर सहयोग दें, और सहयोग देने के लिये एक संस्था बनायें और इन मामलों में एक निश्चित स्तर और पद्धति निर्धारित करें। पर उन्हें यह स्वतंत्रता रहे कि स्थान-भेद से जैसा आवश्यक होवे, उसमें परिवर्तन कर सकें। मेरे इस संशोधन के समर्थन करने का बड़ा कारण यह है कि मैं इसे अन्तर्प्रान्तीय सहयोग का एक आदर्श समझता हूं। चूंकि यह नियम विधान में आ जायेगा, यह एक उदाहरण बन जायेगा जिससे अंगों को दूसरे अन्य कार्यों में परस्पर सहयोग देने का एक तरीका मिल जायेगा; विशेषकर कृषि, नहर आदि मामलों में ऐसे कमीशन बड़े लाभप्रद होंगे। इस कारण मैं यह सुझाव दूंगा कि इससे पहले कि वह विधान के मस्विदे में रखा जाये, एक विशेष समिति द्वारा उस पर विचार हो और उसके विस्तार की छानबीन हो। यह कमीशन किस प्रकार बनाये जायेंगे, वह व्यवस्थापिका सभा द्वारा चुने जायेंगे या अंगों द्वारा मनोनीत किये जायेंगे; यह सब ऐसे विषय हैं जिन पर बहुत ध्यान देने की आवश्यकता है। मैं आशा करता हूं कि तत्सम्बन्धी योजनाओं को प्रान्तीय सरकारों के पास भेजने का यथोचित प्रबन्ध किया जायेगा और प्रान्तों के स्वीकार कर लेने पर ही इन्हें विधान में रखा जायेगा।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस प्रस्ताव को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करता हूं। यह बहुत आवश्यक है, परन्तु मैं यह अवश्य अनुभव करता हूं कि इसके शब्द जरा संकीर्ण हैं। ऐसे अन्तर्प्रादेशिक

कमीशन के लिये यह भी आवश्यक है कि वह देश की आर्थिक दशा का भी अनुसंधान करे और मैं यह सुझाऊंगा कि 'व्यापार', 'वाणिज्य' शब्द के अतिरिक्त यहां शब्द 'आर्थिक' भी होना चाहिये। भविष्य के विधान में धन सम्बन्धी प्रश्न बड़े महत्व का होगा और जैसा कि एक दूसरे खण्ड के सम्बन्ध में कुछ ही मिनट हुए श्री बी. दास ने कहा है, राष्ट्र निर्माण के कार्य के लिये बहुत धन की आवश्यकता होगी जिसे कि संघ-सरकार सहायता के रूप में प्रान्तों को देगी। यदि हमारे पास इस सहायता के रूप में देने को धन न हो तो राष्ट्र-निर्माण का कार्यक्रम पूरा करना सम्भव नहीं है। श्रीमान्, यह हमारी हार्दिक इच्छा रही है कि जब भारत स्वतंत्र हो तब राष्ट्र-निर्माण के कार्यक्रम को जल्दी पूरा कर लिया जाये और जब तक हम व्यापार सम्बन्धी कमीशन के नमूने पर एक आर्थिक कमीशन नहीं बनायेंगे, तब तक मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि हम अपने राष्ट्र-निर्माण सम्बन्धी कार्यक्रम को पूरा नहीं कर सकेंगे। यह संघ और प्रान्त दोनों के लिये बड़ी महत्वपूर्ण बात है। जब प्रान्तों की सरकार को आर्थिक सहायता देने का प्रश्न उठेगा तो संघ की सरकार कहेगी कि उसे भी धन की आवश्यकता है। इस कारण यह आवश्यक है कि विधान में ही इस बात को प्रबन्ध होना चाहिये, जिससे एक आर्थिक कमीशन बना दिया जाये जो राष्ट्र-निर्माण के कामों को पूरा करने के साधनों के विषय में सलाह दे। उदाहरण के लिये जन-स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक सहयोग इन सब चीजों के लिये यह आवश्यक है कि उन पर तुरंत ही ध्यान दिया जाये। यदि हम इन सब बातों पर तुरंत ही ध्यान न देंगे तो मैं आपको विश्वास दिला सकता हूं कि चाहे हम कैसा भी विधान क्यों न बनायें जनता उससे संतुष्ट नहीं होगी। हमने अपने लक्ष्य सम्बन्धी प्रस्ताव में यह स्पष्ट रूप से बता दिया है कि हम समाजवादी राज्य-पद्धति चाहते हैं। श्रीमान्, यह एक उत्तम सुझाव है, किन्तु मैं माननीय प्रस्तावक से प्रार्थना करता हूं कि वह खण्ड के शब्दों में ''आर्थिक'' शब्द और जोड़ दें। हम वस्तुतः एक नई बात करना चाहते हैं। हम ऐसा काम करना चाहते हैं जिससे जनता को लाभ हो और इसके लिये यह बहुत आवश्यक है कि हम एक आर्थिक कमीशन बनायें। इस संशोधन का समर्थन करने के साथ साथ मैं प्रार्थना करता हूं कि ''आर्थिक'' शब्द उसमें और जोड़ दिया जाये।

***अध्यक्षः** क्या और भी कोई सदस्य इस विषय पर कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, मैं इस प्रस्ताव पर कुछ अधिक नहीं कहना चाहता हूं। उसका सिद्धान्त ठीक है। उसका कहना है कि विधान

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

में अन्तर्प्रादेशिक कमीशन बनाने के लिये व्यवस्था होनी चाहिये, ताकि वह तात्पर्य जिसे प्रस्तावक ने विस्तारपूर्वक इस सभा को बता दिया है, पूरा हो सके। मैं केवल यही कहूंगा कि इस संशोधन को स्वीकार करने से मैं उसकी शर्तों को मानने के लिये वचनबद्ध नहीं होता हूं और हमें उसकी भाषा, और सम्भव है उसके तात्पर्य को भी परिवर्तन करने की पूर्ण स्वतंत्रता होगी। संघ-विधान में उसको धारा या धाराओं के रूप में रखने के पहले हमको ऐसा करने का पूर्ण अधिकार होगा। मान्यवर, इन शब्दों के साथ मैं उसको स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्षः** अब मैं श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के संशोधन पर मत लूंगा।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** भाग 7 में सीधे शासित प्रदेशों का जो उल्लेख है, जो खण्ड में मैं पेश करना चाहता हूं, वह इस प्रकार है:

"(1) बतौर अंतर्कालीन व्यवस्था के चीफ कमिश्नरों के प्रान्तों का शासन केन्द्र द्वारा ही जारी होना चाहिए जैसा कि गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट में किया गया है। इसमें कोई परिवर्तन हो, इस प्रश्न पर बाद में विचार किया जायेगा और केन्द्र द्वारा शासित सभी प्रदेश को जिनमें अंडमान टापू और निकोबार टापू भी हैं, विधान में स्पष्ट उल्लेख होना चाहिये।"

"(2)कबाइली प्रदेशों के शासन के लिये विधान में उपयुक्त व्यवस्था होनी चाहिये।"

इसका पिछला भाग परामर्शदातृ समिति की रिपोर्ट पर निर्भर है। वह समिति जो कुछ भी सुझायेगी और जो कुछ यह सभा स्वीकार करेगी, वही नये विधान में रखा जायेगा।

जहां तक सीधे शासित प्रदेशों का सम्बन्ध है, समिति का यह सुझाव है कि इस समय जो प्रबन्ध है, वही जारी रह सकता है। और चीफ कमिश्नरों के प्रान्तों के शासन और विधान में कोई परिवर्तन हो, इस प्रश्न को संघ की भावी पार्लियामेन्ट पर छोड़ देना चाहिये।

***अध्यक्षः** इस खण्ड के सम्बन्ध में कुछ संशोधन हैं।

(श्री एच.जे. खान्डेकर ने अपना संशोधन नं. 380 पेश नहीं किया।)

***श्री गोकुलभाई डी. भट्टः** सभापतिजी, मेरा जिस मतलब का संशोधन है करीबन उसी मतलब का दूसरा सुधरा हुआ संशोधन आने वाला है। इसलिये मैं यह संशोधन नहीं रख रहा हूं।

श्री देशबन्धु गुप्तः सभापतिजी, जो संशोधन मैं पेश करना चाहता हूं वह इस प्रकार है:

''खण्ड 1 पर विचार स्थगित रखा जाये, और चीफ कमिश्नर वाले प्रान्तों की शासन पद्धति में समुचित वैधानिक सुधार लाने के लिये जिससे कि वह देश की परिवर्तित स्थितियों के अनुकूल हो जाये और स्वतंत्र भारत के प्रजातांत्रिक विधान में उन्हें उपयुक्त स्थान मिल सके, अध्यक्ष द्वारा मनोनीत सात सदस्यों की एक विशेष उप-समिति की सिफारिश, विधान-परिषद् के आगामी अधिवेशन के पहले की जाये।''

इस सम्बन्ध में मुझे केवल इतना ही निवेदन करना है कि यूनियन कांस्टीट्यूशन कमेटी ने जो सिफारिश की है, उसका अर्थ यह होता है कि कांस्टीटुयूएंट असेम्बली चीफ कमिश्नर प्रावेन्सेज के बारे में अभी कुछ नहीं करना चाहती। मैंने यूनियन कांस्टीट्यूशन कमेटी के मेम्बरों से, प्रौविन्शियल कांस्टीट्यूशन कमेटी के मेम्बरों से और दूसरे मेम्बरों से भी इस बारे में बातें कीं, जिससे मैं इस परिणाम पर पहुंचा। उनका मतलब यह नहीं है कि चीफ कमिश्नर प्रावेन्सेज जिनमें दिल्ली, अजमेर-मेरवाड़ा और कुर्ग, ये तीन बड़े प्रावेन्स शामिल हैं, इनमें जैसी आजकल यहां पर हुकूमत चल रही है उसी प्रकार आगे भी होती रहे। लेकिन उन्होंने सहूलियत के ख्याल से ऐसी सिफारिश की है। कुदरती तौर पर इन सूबों की आबादी की भी, जो कि अब तकरीबन 30 लाख होती है, ख्वाहिश है कि जब सारे मुल्क का विधान बन रहा है, सारे मुल्क का नया कान्स्टीट्यूशन तैयार हो रहा है, तो इन सूबों के लिये भी कान्स्टीट्यूशन बनना चाहिये। और आगे यहां पर किस प्रकार से शासन होगा और काम चलेगा, उसका साफ-साफ स्वरूप हमारे सामने आना चाहिये। इसी ख्याल को सामने रखकर मैं आपके सामने यह तरमीम रख रहा हूं।

मैं समझता हूं कि जिस प्रकार हमने यूनियन कान्स्टीट्यूशन कमेटी सेन्टर का कान्स्टीट्यूशन बनाने के लिये बनाई है और प्रौविन्शियल कान्स्टीट्यूशन कमेटी

[श्री देशबन्धु गुप्त]

प्रौवेन्सेज का कान्स्टीट्यूशन बनाने के लिए बनाई है। इसी प्रकार से यह जरूरी था कि चीफ कमिश्नर प्रोवेन्स के लिए भी, जिनकी संख्या और आबादी यद्यपि कम है; लेकिन उनका महत्व कम नहीं है, इसलिए जरूरी था कि उनके लिए एक कमेटी बनाई जाती। मुझे खुशी है कि यह तरमीम एक तरह से ऐग्रीड तरमीम है और मैं समझता हूं कि जब यह सब-कमेटी बनाई जायेगी तो वह इस मसले के सब पहलुओं पर गौर करेगी। चूंकि आपमें से बहुत से भाई इस लिहाज से देहली के बाशिन्दे हैं कि साल का बड़ा हिस्सा जहां गुजारते हैं। आप में अक्सर हमारे मेहमान हैं, अतः मैं समझता हूं कि देहली वालों की मुश्किलात जब आपके सामने आयेंगी तो यह कान्स्टीट्यूशन कमेटी सही तरीके से उन पर गौर कर सकेगी।

इसलिए मैं इस समय ज्यादा कहना नहीं चाहता। चीफ कमिश्नर प्रौवेन्स के लोगों को जिन मुश्किलात का सामना करना पड़ता है, उन्हें इस वक्त तक किसी प्रकार सैल्फ गवर्नमेन्ट से महरूम न रखा जाये। इस पर भी उन्होंने स्वाधीनता की लड़ाई में कितना बड़ा हिस्सा लिया। यह सब बातें कमेटी के सामने आयेंगी और मुझे आशा है कि वह ऐसे कान्स्टीट्यूशन को रिकमण्ड करेगी जो सारे हाउस को मंजूर होगा।

मैं हाउस का ज्यादा वक्त नहीं लेना चाहता। मुझे उम्मीद है कि यह तरमीम मंजूर की जायेगी। अगर यह तरमीम मंजूर हो जाती है तो और तरमीमें जिनका नोटिस हम लोगों की ओर से दिया गया है फिर उनके पेश करने का सवाल पैदा नहीं होता।

अध्यक्षः इस खण्ड को लेकर कोई और संशोधन नहीं है, किन्तु यदि श्री देशबन्धु गुप्त का संशोधन मान लिया जाये तो अन्य संशोधन पर विचार करने की आवश्यकता नहीं रहेगी।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** मैं उनके संशोधन को स्वीकार करता हूं, लेकिन मैं उप-समिति शब्द के स्थान में समिति कर दूंगा।

***अध्यक्षः** सर एन. गोपालस्वामी ने स्वीकार कर लिया है।

***श्री आर.के. सिधवाः** मैं इस प्रस्ताव के पक्ष में बोलने के लिये खड़ा हुआ हूं। मैं कोई भाषण नहीं देना चाहता, मैं तो केवल उन सदस्यों को, जो इस समिति

की सदस्यता करेंगे, यह बता देना चाहता हूं कि यह प्रश्न कितना महत्वपूर्ण है और इस कारण मैं समझता हूं कि इस समय इस विषय पर कुछ कहना समुचित नहीं होगा। देहली शहर में बहुत से ऐसी बातें हैं जिन पर कभी ध्यान ही नहीं दिया गया। यह कहा गया है कि देहली केन्द्रीय सरकार का स्थान है, इस कारण सरकार सारे भारत के ही विषयों पर ध्यान देती है और इस तरह उसने देहली शहर और प्रांत की बातों पर ध्यान नहीं दिया। उदाहरणतया देहली में लाने और ले जाने वाली जी. एन. आई. टी. नाम की एक कम्पनी है। लोग इस कम्पनी को बहुत बुरा-भला कहते हैं। एक तो इस कारण कि वह आने-जाने वाले लोगों की सुविधा का पूर्ण रूप से प्रबन्ध नहीं कर सकी और दूसरे उसके किराये बहुत अधिक हैं। यदि देहली की अपनी प्रान्तीय सरकार होती और यदि यह विषय उसके क्षेत्र में आता तो वह उस विषय पर तुरत ही ध्यान देती। इस प्रकार का लाइसेन्स स्थानीय सरकार ही देती है। यदि यहां भी एक अलग दायित्वपूर्ण शासन होता तो, या तो इसको राष्ट्रीय सर्विस बना दिया जाता, जैसा कि पंजाब सरकार ने किया और या इसी सर्विस को अच्छा कर दिया जाता। यह एक छोटी-सी बात प्रतीत होती है, यद्यपि एक साधारण व्यक्ति पर उसका असर पड़ता है। साधारण मनुष्य सरकार को इस विषय पर कुछ न करने का दोषी ठहरायेगा। उसके अतिरिक्त और भी विषय हैं, जैसे खेती-बाड़ी वाले स्थानों में पानी का प्रबन्ध। पी. डब्लू. डी. और संघ निषेध का प्रबन्ध वगैरह। यदि कोई पृथक प्रान्तीय विधान होता तो यह निश्चित है कि वह सरकार ऐसे विषयों पर विचार करती, चाहे देहली की जनसंख्या कुछ भी हो। चूंकि देहली राजधानी है, इस कारण अभी तक इस पर कोई विचार नहीं किया गया। मुझे ऐसा मालूम होता है चूंकि देहली भारत की राजधानी रही है, इसलिये यह शहर और आस-पास के गांव पर भूतकाल में कभी ध्यान नहीं दिया गया। इस कारण मैं इस प्रस्ताव का स्वागत करता हूं और मैं समिति के सदस्यों को बता देना चाहता हूं कि देहली में दायित्वपूर्ण सरकार हो जिससे देहली की जनता अपनी आपबीती सुना सके। इस दृष्टिकोण से मैं इस प्रस्ताव का हार्दिक स्वागत करता हूं। इसमें पहले ही बहुत विलंब हो चुका है। मैं यह कह देना चाहता हूं कि जब मैंने विधान में यह देखा कि देहली ज्यों का त्यों रहेगा और भविष्य के विधान में सम्भव है कि कमीशन बना दिया जाये, तो मैंने यह संशोधन रखा था कि आने वाले नये विधान में देहली की अपनी

[श्री आर.के. सिधवा]

व्यवस्थापिका होनी चाहिए और देहली शहर या प्रान्त की जनता को इसका मौका मिलना चाहिए कि वह अपने दुखों और संकटों को प्रकट कर सके।

मैं इस प्रस्ताव का हार्दिक समर्थन करता हूं।

***श्री सी.एम. पुनाका** (कुर्ग): अध्यक्ष महोदय, मैं सर गोपालस्वामी को अपने इस संशोधन को स्वीकार करने पर धन्यवाद देता हूं और ऐसा करते समय मैं सुझाव के रूप में कुछ बातें कहूंगा। पहले एक अवसर पर इसी सभा-भवन में मैंने यह सुझाया था कि चीफ कमिश्नरों के प्रांतों के विषय पर सोच-विचार करने के लिए एक समिति गठित की जाये। यह चीफ कमिश्नरों के प्रांतों का विषय इतना सरल नहीं है, जितना प्रतीत होता है। भिन्न-भिन्न प्रांतों की समस्याएं एक दूसरे से भिन्न-भिन्न हैं। यह बात 1919 और 1935 के विधान-कानून के बनने से पहले जो विधान सम्बन्धी जांच-पड़ताल हुई थी, उसकी रिपोर्टों से स्पष्ट हो जाती है। चीफ कमिश्नरों के प्रांतों की समस्या पर उपयुक्त रूप से 1919 और 1935 के विधान-कानूनों में ध्यान नहीं दिया गया और अभी तक यह समस्या हल नहीं हुई है। श्रीमान्, इस कारण मेरा विचार है कि 1935 के कानून के अन्दर, इनमें से प्रत्येक प्रांत की क्या दशा थी, इसका ठीक-ठीक पता लगाया जाये और उसी के अनुसार उपयुक्त योजनाएं सुझाई जायें। सम्भव है कि ऐसा करने में स्थानीय पूछताछ या कम से कम प्रश्नोत्तरों द्वारा (लोगों के) दृष्टिकोणों का पता लगाना आवश्यक हो।

जहां तक कुर्ग का सम्बन्ध है, मैंने एक पिछले अवसर पर यह बताया था कि कुर्ग की व्यवस्थापिका सभा में अपने यहां के चुनाव के समय मैंने निश्चित रूप से कहा था कि कुर्ग के राज्य-शासन में कोई बड़ा परिवर्तन करने से पहले जनता के मत का पता लगाया जायेगा। कुर्ग की अपनी समस्याएं हैं और उसके लिए एक पूरी छानबीन की आवश्यकता है। मेरे लिए यह बता देना अनुपयुक्त न होगा कि समिति को कुर्ग जाना चाहिए, जिससे कि उसे कुर्ग की व्यवस्थापिका सभा का अच्छा ज्ञान हो जाये। यह सभा पिछले 24 वर्षों से चल रही है और समिति के लिए यह मालूम करना कि एक शताब्दी के चौथाई भाग से यह किस प्रकार अपना काम कर रही है, अत्यन्त लाभदायक होगा। अन्त में मैं यह कहने के लिए आपकी आज्ञा चाहता हूं कि चूंकि इन प्रदेशों के निवासियों के लिए

यह एक अत्यन्त आवश्यक विषय है, इस कारण चीफ कमिश्नरों के प्रांतों के सदस्यों को इस समिति की कार्यवाही में शामिल करना चाहिए। मैं यह भी कहूंगा कि चूंकि समस्या जटिल है, इसलिए अपने विधान सम्बन्धी कानूनदाओं को भी, जिन्होंने इस संघ-विधान-रिपोर्ट को तैयार करने में इतना परिश्रम किया है, इस समिति में ले लेना चाहिए। यह समस्या ऐसी जटिल है कि इसकी सावधानी से छानबीन करनी चाहिए और इसे योग्य नेतृत्व मिलना चाहिए।

*__पं. मुकुट बिहारीलाल भार्गव__ (अजमेर-मेरवाड़ा): माननीय अध्यक्ष महोदय, मैं श्री गुप्ता के संशोधन का पूर्ण रूप से समर्थन करता हूं। यह बड़े अचरज की बात है कि संघ-विधान-समिति ने जिसे चीफ कमिश्नरों के प्रांतों पर ध्यान देने के लिए विशेष अधिकार दिए गए थे, इस सम्बन्ध में कोई बात नहीं सुझाई। उसने तो केवल समस्या को एक तरफ रख दिया और कहा कि शासन में परिवर्तन की समस्या पर आगे चलकर ध्यान दिया जायेगा। यह वास्तव में एक बड़े हर्ष की बात है कि इस खण्ड के प्रस्तावक ने इस संशोधन को स्वीकार कर लिया है और अब अध्यक्ष एक समिति बनायेंगे, जो चीफ कमिश्नरों के प्रांतों के विषय पर ध्यान देगी।

श्रीमान्, चीफ कमिश्नरों के प्रांत देश के भिन्न-भिन्न भागों में स्थित हैं और वे भिन्न प्रदेश एक से नहीं हैं। उनका अपना निजी ऐतिहासिक महत्व है। जहां तक मेरे प्रांत अजमेर-मेरवाड़ा का सम्बन्ध है, वह राजपूताने के बीचोंबीच स्थित है और बड़े महत्व का स्थान है। वास्तव में अपनी विशेष स्थिति के कारण अंग्रेजी शासन-काल में मेरा प्रांत सदा स्वेच्छाचारी शासन (autocratic) के अधीन रहा। इस शासन के परिवर्तन के लिए जितने प्रयत्न किए गए, वह सब निष्फल हुए। 1901 के मौर्ले-मिण्टो सुधारों से, 1919 के मोण्टेग्यू-चेम्सफोर्ड-सुधारों से और 1935 के विधान-कानून से वह स्वेच्छाचारी शासन, जो इस प्रांत और अन्य चीफ कमिश्नरों के प्रांतों में प्रचलित है, हमेशा अछूता रहा। श्रीमान्, वास्तव में तो संघ-विधान-समिति का यह कहना कि इस विषय को आगे चल कर लिया जाये, जनतंत्रीय भारतवर्ष के प्रजातंत्रीय विधान के विपरीत है। इस कारण यह उपयुक्त है कि जब संघ के अन्य प्रांतों में बड़े वैधानिक परिवर्तन हो रहे हैं, तब साथ ही साथ चीफ कमिश्नरों के प्रांतों का भी विधान जो स्वेच्छाचारी है, परिवर्तित कर दिया जाये और शेष भारत के अनुसार बना दिया जाये। मैं आशा करता हूं कि विशेष

[पं. मुकुट बिहारीलाल भार्गव]

उप-समिति (Special Sub-Committee) जो हम बनायेंगे वह चीफ कमिश्नरों के प्रत्येक प्रांत की समस्याओं पर ध्यान देगी और ऐसा विधान सुझायेगी कि जो पूर्ण रूप से प्रजातांत्रिक हो।

जहां तक अजमेर का सम्बन्ध है, मेरा यह कहना है कि वह एक ऐसा प्रांत है, जो इस योग्य है कि उसे पूरा बड़ा प्रांत बना दिया जाये। केवल इन बातों पर कि वह बहुत छोटा है, या उसके आर्थिक साधन कम हैं, अधिक ध्यान नहीं देना चाहिए और जनता को अपने विषय में फैसला करने का और अपने घर में मालिक बनने का पूर्ण अधिकार होना चाहिए। इस कारण मैं यह सुझाव दूंगा कि उप-समिति जो आप नियुक्त करेंगे, वह इस समस्या पर पूर्ण रूप से सब दृष्टिकोणों से ध्यान दे और चीफ कमिश्नरों के प्रांतों के प्रतिनिधियों को इस उप-समिति में उचित स्थान दिया जाये, हार्दिक समर्थन करता हूं। कम से कम इस उप-समिति को इन प्रांतों के प्रतिनिधियों को सुने बिना किसी नतीजे पर नहीं पहुंचना चाहिए। श्रीमान्, मैं आशा करता हूं कि सितम्बर के अन्त तक उप-समिति इस सभा के सामने ऐसा विधान रख देगी, जो पूर्ण रूप से प्रजातांत्रिक होगा और उसमें इन प्रांतों की जनता को आने वाली स्वतंत्रता का तथा भारतीय गणतंत्र की स्थापना की एक झलक मिलेगी। समिति को यह विषय इस तरह उठाकर नहीं रख देना चाहिए था, जिस तरह कि वह अब तक रखा गया था।

इन शब्दों के साथ मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री बी. दासः** श्रीमान्, मेरे मित्र श्री देशबन्धु गुप्ता ने जो प्रस्ताव पेश किया है, मैं उसका हार्दिक समर्थन करता हूं। एक ऐसी समिति होनी चाहिए कि जो इन चीफ कमिश्नरों के प्रांतों के शासन-स्तर को ऊंचा उठाये और ऐसा करे कि वहां भी जनता को हमारी तरह समान अधिकार प्राप्त हों। मैं समझता हूं कि ऐसा करने में कठिनाइयां होंगी। ये चीफ कमिश्नरों के प्रांत भारत में अंग्रेजी प्रभुत्व और अंग्रेजी स्वेच्छाचारी शासन को रखने के लिए बनाये गए थे। अन्तिम वक्ता ने, जो अजमेर-मेरवाड़ा की ओर से बोल रहे थे, कहा कि अजमेर-मेरवाड़ा अब तक पोलिटिकल डिपार्टमेण्ट का स्वर्ग था। यद्यपि पोलिटिकल डिपार्टमेण्ट को अब बन्द कर दिया गया है तब भी वह अभी तक पोलिटिकल डिपार्टमेण्ट के लिये स्वर्ग

के समान है और वहां जनता के प्रतिनिधियों के हाथ में वास्तव में कुछ भी नहीं है।

दिल्ली ने यह दिखा दिया कि अंग्रेजी स्वेच्छाचारी शासन, भारत की सरकार के सामने ही, चीफ कमिश्नर द्वारा जो चाहता है, करता है। अभी तक लगातार एक अंग्रेज ही चीफ कमिश्नर होता था और वह, केन्द्रीय धारा-सभा के (Central Assembly) जो इस भवन के एक भाग में है, बावजूद और केन्द्रीय धारा-सभा में दिल्ली के एकांकी प्रतिनिधि के बावजूद भी जो चाहता था, कर सकता था। दिल्ली का म्युनिस्पल शासन भी बड़ा पुराना है। वह खुशामदियों की एक जमात है। वह एक परामर्शदातृ-सभा (Advisory Council) को चुनती है, जो एक बड़े अचरज की बात है।

अब मैं पन्थ-पिपलोदा के विषय में कुछ कहूंगा। यह राजपूताने में है और इसकी जनसंख्या 15 हजार है। अब प्रश्न यह है कि जनता को प्रतिनिधित्व का अधिकार हो सकता है या नहीं। मैं समिति को यह सुझाऊंगा कि इसको अजमेर-मेरवाड़ा की सी समानता मिलनी चाहिए और उसे चीफ कमिश्नर के प्रांत का भाग बना देना चाहिए। वह प्रांत अब गवर्नर या डिप्टी गवर्नर का प्रांत बने।

जहां तक निकोबार (Nicobar) और अंडमान (Andaman) टापुओं का सम्बन्ध है, जिसके बारे में हम इतना सुनते हैं, वहां पर केवल कुछ भारतवासी, जो पहले बन्दी थे, रहते हैं। निकोबार टापुओं में कोई बीस हजार स्थानीय निवासी रहते हैं। वह बहुत प्राचीन निवासियों की तरह रहते हैं। अभी तक अण्डमान और निकोबार टापुओं का शासन एक चीफ कमिश्नर के हाथ में रहा है और यह चीफ कमिश्नर सदैव आसाम सिविल सर्विस का था। मैं यह सुझाना चाहता हूं कि वहां के लोग इतने पढ़े-लिखे नहीं हैं केवल कुछ अंग्रेज और एंग्लोइंडियन ही पढ़े-लिखे हैं, जो वहां जाकर व्यापार के कारण बस गए हैं। मैं यह चाहूंगा कि अंडमान और निकोबार टापुओं के प्रतिनिधि को आसाम के कानून बनाने वाली सभा में लेना चाहिए और निकोबार टापू के लोगों को कबायली (Tribal) लोगों की तरह समझना चाहिए और उसी के अनुसार उनका बचाव होना चाहिए। जहां तक मुझे मालूम है, कबायली प्रदेशों के लिए जो परादर्शदातृ-समिति बनी है वह न तो अभी तक निकोबार टापू गई है, और न उसने वहां के निवासियों के रहन-सहन के विषय में ज्ञान प्राप्त किया है।

[श्री बी. दास]

जहां तक कुर्ग का सम्बन्ध है, वह एक चीफ कमिश्नर का प्रांत है और वहां पर चीफ कमिश्नर ही सब कुछ है। चीफ कमिश्नर को ही स्वाधीनता है और वह एक स्वेच्छाचारी शासक है—यदि इसमें कोई अशुद्धि हो, तो श्री पुनाका उसे शुद्ध कर दें। कुर्ग के जमींदार, जो अधिकतर अंग्रेज हैं, समझते हैं कि वह बरतानियां का भाग है। यह सब बातें एक मूल विषय से सम्बन्ध रखती हैं और चूंकि हम सारे भारत के लिए विधान बना रहे हैं, इस कारण इन लोगों को भी हमारे समान अधिकार होने चाहिएं। ऐसा कैसे करना चाहिए, इसका फैसला समिति ही करेगी; किन्तु समिति को जरूर निकोबार टापू जाना चाहिए और वहां के निवासियों की समस्याओं को समझना चाहिए। इसी प्रकार मैं श्री पुनाका के इस सुझाव का भी समर्थन करूंगा कि समिति को स्थानीय प्रतिनिधियों से मिलकर काम करना चाहिए। इस समिति को यह भी चाहिए कि वह कुर्ग जाये। सम्भव है कि मेरे मित्र सर एन. गोपालस्वामी आयंगर के अतिरिक्त, जो शायद कभी कुर्ग छुट्टी पर गए हों, हममें से बहुत कम ऐसे होंगे, जिन्होंने कुर्ग के स्वेच्छाचारी शासन को देखा हो, या उसके विषय में कुछ सुना हो; किन्तु हममें से वह लोग जो जानते हैं कि पिछले चीफ कमिश्नर कैसे होते थे, समझ सकते हैं कि कुर्ग की जनता को कितना कुचला गया होगा और उनको कितना दबाकर रखा गया होगा।

पं. ठाकुरदास भार्गव (पूर्वी पंजाब: जनरल): जनाब प्रेसिडेंट साहब, इस प्रस्ताव के बारे में मैं एक खास नुक्ता निगाह से इस हाउस के सामने चन्द बातें अर्ज़ करना चाहता हूं। मुझे अजमेर-मेरवाड़ा और दूसरे चीफ कमिश्नर के प्रोविंसेज़ के लोगों से बड़ी हमदर्दी है। देहली के साथ खासतौर से ज्यादा हमदर्दी है क्योंकि देहली वाले और जिस खित्ते से मैं मेम्बर होकर आया हूं, उसके लोग आपस में हर तरह मिले जुले हैं। असलियत यह है कि देहली जो 1915 के पहले हिन्दुस्तान की राजधानी रही, इससे पेश्तर अम्बाला डिवीज़न का हिस्सा था और पंजाब का एक हिस्सा था और देहली की तहसीलों में बल्लभगढ़, सोनीपत और पलवल जो थे, वह अब रोहतक जिले के साथ शामिल हैं। और जो इलाका पूर्वी पंजाब के नाम से मशहूर है, उसका एक हिस्सा अब देहली के अन्दर जितने गांव शामिल हैं, उनका सूबा के लिहाज़ से, आर्थिक दृष्टि से, रहन-सहन के तरीके से, उनके रस्मोरिवाज से और हर स्टैंडर्ड से जो किसी को एक प्रदेश में शामिल होने के लिए जरूरी हैं—इन सब बातों के लिहाज़ से देहली का यह हिस्सा जो

चीफ कमिश्नर के प्रोविंस में शामिल है, और जो अम्बाला डिवीजन का बड़ा हिस्सा है बड़ी मुद्दत से कोशिश कर रहा है कि गवर्नर के प्रोविंस में शामिल हो जाये। अभी चन्द दिनों में सभा के सामने एक प्रस्ताव आने वाला है जिसके अन्दर प्रोविंसेज़ का जुबान और कल्चर के लिहाज से फिर से बंटवारा किये जाने की बात है। इससे पहले बहुत से मसले आ चुके हैं। अब यह एक और चीज है कि जिसको जीने-मरने का सवाल कहा जा सकता है। आज के दिन कितनी कांफ्रेंसें पंजाब और यू. पी. के हिस्सों में हो रही हैं, जिनकी मांग यह है कि समूचे का एक हिस्सा बनाकर एक प्रोविंस की हैसियत दे दी जाये, यानी अजमेर-मेरवाड़ा, देहली जो एक जुबान बोलते हैं और जिनका रहन-सहन एक सा है। मैं यह अर्ज करने आया हूं कि अगर इस प्रदेश को हमेशा के लिये ईस्ट पंजाब से जुदा करना है तो मैं इसकी मुखालिफत करने के लिये तैयार हूं। और मैं चाहता हूं कि हिन्दुस्तान की आजादी का बड़ा सवाल तय किया जाये जिसकी रूह से कुछ बड़े प्रोविंसेज बनेंगे। उस वक्त तक इस सवाल का आखिरी फैसला न किया जाना चाहिये। जहां तक चीफ कमिश्नर के प्रोविंसेज़ के बनाने का सवाल है, मैं इसका मुखालिफ नहीं हूं, मैं इतना अर्ज करूंगा कि इसे भी हुकूक मिलने चाहिएं जब बाकी हिन्दुस्तान को डेमोक्रेटिक कांस्टीट्यूशन मिलता है। इसी तरह इन्हें लेजिस्लेचर में हुकूक मिलने चाहिएं। मैं इसका मुखालिफ नहीं हूं। बल्कि हमेशा देहली के उस हिस्से के बारे में ऐसे सवाल पेश करता रहा हूं। यह हिस्सा जो हमारा भाग है, ईस्ट पंजाब का ही प्रदेश है। मैं इसके साथ हमदर्दी रखता हुआ यह नहीं चाहता हूं कि इसको प्रोविंसेज में से अलग कर दिया जाये। मैं चाहता हूं कि डा. पट्टाभि की जो स्कीम है—जुबान और कल्चर के बुनियाद पर—उसके साथ यह हिस्सा रखा जाये और इस सवाल को किसी तरह खत्म न कर दिया जाये; और इस सवाल का इसकी मेरिट पर फैसला होने की इजाजत दी जाये। इसके ऊपर कमेटी काम करे तो मुझे कोई एतराज़ नहीं है। मैं यह नहीं चाहता कि इस तरीके से इस सवाल को हल कर दिया जाये ताकि यह सवाल आइन्दा न उठे। इसलिये मैं यह कैफियत हाउस के सामने पेश करता हूं और इसके साथ प्रस्ताव की ताईद करता हूं।

***माननीय श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस सुझाव का स्वागत करता हूं कि एक उप-समिति बनाई जाये, जो चीफ कमिश्नरों के प्रांतों के विषय पर सोच-विचार करे। मेरी दिलचस्पी यों है कि इन प्रांतों में, विशेषकर

[माननीय श्री जयपाल सिंह]

अण्डमान और निकोबार टापुओं में कहीं अधिक संख्या में कबायली लोग रहते हैं। उस उप-समिति के विषय में, जिसे विधान-परिषद् ने आदिवासी प्रदेशों–6 पूर्णतः पृथक प्रदेशों तथा 18 अंशतः पृथक प्रदेशों की समस्या को सुलझाने के लिए बनाया था–यहां कुछ कहा गया है। मैं समझता हूं कि यह आवश्यक है कि यह साफ-साफ बता दिया जाये कि यह दोनों उप-समितियां उन्हीं शब्दों से बंधी हैं जो वहां रखे गये थे। इसका सारांश यह है कि यह उप-समितियां इन आदिवासी प्रदेशों–पूर्णतः पृथक और अंशतः पृथक प्रदेशों के अतिरिक्त और भागों पर ध्यान नहीं दे सकती थीं। इस तरह समितियों ने अपना कार्य आरम्भ किया, किन्तु अब उन्हीं शब्दों के और उदार अर्थ निकालें गये हैं। और अब वह समिति अन्य और कबायली प्रदेशों (Tribal Areas) पर भी ध्यान दे सकती है। इस हालत में उन दोनों कबायली उप-समितियों की उस संशोधन द्वारा सुझाई उप-समिति के कार्य में समान रूप से दिलचस्पी रखती है। मेरा इतना कहना है कि जो अभी कबायली उप-समितियां बनी हुई हैं, उसमें से कुछ सदस्य नई समिति में, जो कि चीफ कमिश्नर के प्रांतों के विषय पर सोच-विचार करेगी, ले लेना चाहिए, क्योंकि कुछ प्रांत ऐसे हैं कि जहां पर सारी समस्या केवल कबायलियों की ही होगी। मैं संशोधन का समर्थन करता हूं।

***अध्यक्षः** अब संशोधन पर वोट लिये जायेंगे। इसको प्रस्तावक ने स्वीकार कर लिया है।

संशोधन को स्वीकार किया गया।

भाग 8–खंड 2

***अध्यक्षः** अब हम खंड 2 पर विचार करेंगे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, मैं उसे पेश कर चुका हूं।

***श्री के. संतानम्ः** श्रीमान्, एक वैधानिक प्रश्न है कि कबायली समिति ने अभी तक अपनी रिपोर्ट ही पेश नहीं की है।

***अध्यक्षः** किन्तु हमें तो इस समय उसी विषय पर विचार करना है। क्या कोई सदस्य इस खण्ड पर कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय श्री जयपाल सिंह** (बिहारः जनरल): मुझे बहुत थोड़ा ही कहना है, और मैं उसे कहना बहुत जरूरी समझता हूं ताकि उस स्थिति का प्रतिकार किया जा सके जो कि देश में शीघ्र ही भयानक रूप धारण कर सकता है। इससे

पहले कि मैं इसके विषय में कुछ कहूं मैं फिर वही कहूंगा कि जो मैंने कुछ मिनट हुए कहा था कि कबायली प्रदेश की समस्या पर विचार करने में हमें उन कबायली लोगों का भी ख्याल रखना होगा, जो कबायली प्रदेशों से बाहर रहते हैं।

श्रीमान्, सर अकबर हैदरी, आसाम के गर्वनर, नागा पहाड़ियों को 26 जून और 2 जुलाई के बीच में देखने गये। उस समय से कुछ अत्यंत दुखद बातें वहां पर हो रही हैं। सम्भव है कि सदस्यों ने समाचार पत्रों में पढ़ा होगा और सरकार के बहुत से सदस्यों के पास और मैं समझता हूं, श्रीमान्, आपके पास भी कुछ नागाओं के तार आये हैं जिससे पता चलता है कि उनका क्या करने का विचार है। स्वयं मेरे पास प्रतिदिन एक तार की औसत से तार आये हैं, अन्तिम तार और तारों की अपेक्षा कहीं अधिक चिन्ता में डालने वाला होता है। प्रत्येक तार पागलपन में एक पद आगे ही बढ़ जाता है। यदि आप मुझे बताने की आज्ञा दें तो अवस्था यह है कि कुछ लोगों ने यह कहकर नागाओं को भड़काया है कि अंग्रेजी शासन के हटने पर देश फिर से उनको मिल जाएगा। उनका विचार है कि उनका प्रदेश भी देशी राज्यों की तरह है जहां पर पूर्णाधिकार देशी राज्यों को मिल जायेंगे। इस कारण वह समझते हैं कि वह जो चाहे कर सकते हैं। यह बात कि नागा पहाड़ियां सदैव भारत का भाग रही हैं और उनको कभी भी देशी राज्यों का समानत्व प्राप्त नहीं हुआ है, नागाओं को कभी बताई ही नहीं गई हैं। इसके विपरीत ऐसा प्रतीत होता है कि नागाओं को यही बताया गया है कि नागा पहाड़ियां उन्हीं की हैं और वह कभी भारत के भाग थे ही नहीं और यह भी जैसे ही भारतवर्ष डोमीनियन बन जाये वैसे ही नागा पहाड़ियां उनकी अपनी हो जाएंगी। मान्यवर, नागा पहाड़ियों के कुछ नेता अभी देहली आये थे और सरकार के कुछ मुख्य सदस्यों से मिले। हममें से जो उनसे मिले उनको सब बता दिया. ..*(बाधा)* मैं केवल यह चाहता हूं कि मेरा कथन नागा पहाड़ियों तक गूंजे और उनको पता चले कि कुछ स्वार्थी लोगों ने यह गलत बताया है कि बरतानियां सरकार की जून वाली योजना के अनुसार वह भी वही कर सकते हैं जो देशी राज्य कर सकते हैं। मैं यह केवल इस कारण कहना चाहता था क्योंकि मैं समझता हूं कि इस सभा भवन से कुछ बातें निश्चित रूप से कही जायें। एक तार जो आन्तरिक सरकार के सदस्यों के पास भेजा गया था उसके अनुसार विधान-परिषद् ने व्यक्त किया है कि नागाओं ने संघ में सम्मिलित होने का निमंत्रण अस्वीकार कर दिया है। प्रस्ताव में निमंत्रण का प्रश्न ही नहीं उठता। इसके अतिरिक्त निमंत्रण की कोई आवश्यकता ही नहीं है; कारण यह है कि नागा सदैव भारत के भाग

[माननीय श्री जयपाल सिंह]

रहे हैं इस कारण उनके भारत से निकल जाने का प्रश्न ही नहीं उठता। वह कोई देशी राज्य थोड़े ही हैं।

मैं आशा करता हूं कि वहां पर जो गड़बड़ी पैदा की जा रही है, वह इस भवन के दिये हुए व्यक्तव्य से दूर हो जायेगी। शुद्ध वास्तविकता यह है कि नागा पहाड़ियां भारत का भाग हैं और वह कभी भी उसके बाहर नहीं हैं।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मैंने आदिवासियों की रक्षा के लिये एक संशोधन की सूचना दी थी, किन्तु नियम यह रखा गया है कि जो कोई बात विधान-परिषद् के सामने आये उस पर पहले परामर्शदातृ-समिति की रिपोर्ट होनी चाहिये। अभी तक परामर्शदातृ-समिति ने कबायली भागों और आदिवासियों के विषय में जो बहुत से प्रान्तों में बटे हुए हैं, अपनी रिपोर्ट पेश नहीं की है, और जब तक वह रिपोर्ट न आ जाये मैं इस संशोधन को पेश नहीं करना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** इसका असल मतलब यह है कि किसी योजना पर निर्णय करने से पहले उप-समिति की रिपोर्ट पर ध्यान देना आवश्यक है। मैं नहीं समझता कि इस विषय पर किसी सज्जन का दूसरा मत भी हो सकता है। इस कारण मैं इस पर वोट लेता हूं।

खंड 2 को स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** मैं यहां यह बता देना चाहता हूं कि अगर इस सम्बन्ध में और संशोधन हैं तो उन पर तब विचार किया जाएगा जब रिपोर्ट सभा के सामने रखी जाएगी।

***श्री के. संतानम्ः** श्रीमान्, मेरा भी एक संशोधन है, जो यह है कि भाग 8 के पश्चात् निम्नलिखित भाग जोड़ दिया जाए:

''भाग 8 अ—आकस्मिक संकटाधिकार

(1) यदि किसी समय प्रांत का गवर्नर यह समझे कि ऐसी दशा आ पहुँची है जिसमें प्रांत की सरकार इस विधान के नियमानुसार नहीं चलाई जा सकती और इस बात की सूचना वह संघ के राष्ट्रपति को दे, या यदि राष्ट्रपति को ही यह विश्वास हो जाये कि प्रांतीय शासन टूट जायेगा तो वह कोई भी कार्यवाही कर सकता है जो

कि वह आवश्यक समझे। इस कार्यवाही में (1) प्रांतीय विधान को स्थगित करना, (2) प्रान्त में लागू होने वाले विशेष कानूनों की घोषणा करना और (3) प्रान्त के गवर्नर और अन्य सरकारी कर्मचारियों को आज्ञा देना तथा आदेश जारी करना भी शामिल है।

राष्ट्रपति द्वारा अगर कोई कार्यवाही की गई है तो वह उसकी सूचना संघीय व्यवस्थापिका को देंगे और उनकी पहली कार्यवाही के छः माह के अन्दर यदि व्यवस्थापिका की दोनों सभायें उसकी पुष्टि न कर दे तो प्रान्त का अपना विधान पुनः चालू कर दिया जायेगा। हर छठे महीने व्यवस्थापिका द्वारा स्थिति का सिंहावलोकन किया जायेगा और यदि आवश्यकता हुई तो हर छठे महीने संकटकालीन कार्यवाही की स्वीकृति ली जायेगी।

ज्यों ही राष्ट्रपति को यह विश्वास हो जायेगा कि संकट की स्थिति नहीं रह गई तो वह स्वाभाविक विधान को पुनः लागू कर देंगे।''

यह सब उन नियमों के पूरक स्वरूप हैं जो कि अभी प्रान्तीय विधान में रखे गये हैं। श्री गुप्ते के संशोधन के अनुसार जिसे स्वीकार कर लिया गया है। गवर्नर को दो सप्ताह का आकस्मिक संकट की स्थिति के समय कार्यवाही करने का अधिकार होगा। यदि कोई आकस्मिक संकट की स्थिति आ जाए तो उसे राष्ट्रपति की स्वीकृति अवश्य लेनी होगी। यदि आकस्मिक संकट की स्थिति उत्पन्न हो जाए तो और दो सप्ताह तक की कार्यवाही अपर्याप्त हो तब भी राष्ट्रपति और संघ की सरकार कोई कार्यवाही करेगी। मैंने दो दशायें बताई हैं जिनमें राष्ट्रपति को कार्यवाही करनी पड़ेगी। एक तो वह है जब गवर्नर इस बात की सूचना दे कि जो विशेष अधिकार उसे दिये गये हैं उनसे वह स्थिति को नहीं सम्भाल सकता, और दूसरी यह कि जब प्रान्त की सरकार इस प्रकार टूट जाए कि वह कुछ कर ही नहीं सके और स्थिति को काबू में लाने में कोई अधिकारी ही न रह जाए तभी राष्ट्रपति अपने भरोसे कार्यवाही करेगा। जब वह ऐसा करेगा तो वह संघीय व्यवस्थापिका सभा को उसी सूचना देगा। और प्रत्येक छठे महीने ऐसा करता रहेगा और जैसे ही आकस्मिक संकट की स्थिति समाप्त हो जायेगी वैसे ही विधान फिर से चालू हो जायेगा।

[श्री के. संतानम]

मैं समझता हूं कि यह सब कुछ उपयुक्त और अत्यंत आवश्यक है। उदाहरणत: यदि प्रान्तीय संगठन पुलिस की मशीनरी टूट जाए और गवर्नर कुछ न कर सके तो उसको राष्ट्रपति से अधिकार मांगने पड़ेंगे और यह नियम राष्ट्रपति को यह अधिकार देता है। इस कारण मैं आशा करता हूं कि मैंने जो सुझाव आपके सामने रखा है उसको सारी सभा स्वीकार कर लेगी।

***श्री एच.वी. कामठ:** मान्यवर, इस पर ध्यान देते हुए कि श्री संतानम् का प्रस्ताव के भाग 8 से कोई सम्बन्ध ही नहीं है, मेरी समझ में नहीं आता कि उसको भाग 8 में किस प्रकार दिया गया है।

***अध्यक्ष:** उन्होंने एक नये भाग के जोड़ने का प्रस्ताव किया है और उस नये भाग को आकस्मिक संकटाधिकार कहा है।

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बम्बई: जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव पेश करना चाहता हूं कि भाग 8 के बाद निम्नलिखित नया भाग जोड़ दिया जाये:

''भाग 8 अ—आकस्मिक संकटाधिकार

(1) इस विधान के भाग...की धारा के अंतर्गत प्रान्त के गवर्नर के रिपोर्ट करने पर, संघ के राष्ट्रपति को अधिकार होगा कि वह अपने मंत्रिमंडल से परामर्श करके, एक घोषणा निकाले जिसके द्वारा वह सभी अधिकारों को, या किसी भी अधिकार को, जो किसी प्रान्तीय संस्था या अधिकारी को प्राप्त हो, या जिन पर वे अमल कर सकते हों, सिवा उन अधिकारों के जो हाईकोर्ट को प्राप्त हों, या उसके द्वारा अमल में जा सकते हों, स्वयं ग्रहण कर सकते हैं, और इन अधिकारों में गवर्नर द्वारा प्रचारित घोषणा की पुष्टि करने का, उसमें संशोधन करने का, तथा उसका प्रत्याख्यान करने का अधिकार भी सम्मिलित है।

(2) इस धारा के अंतर्गत निकली हुई घोषणा 2 माह के व्यतीत हो जाने पर प्रयोग में न रह जायेगी, अगर समय-समय पर संघीय व्यवस्थापिका द्वारा स्वीकृत एक प्रस्ताव से घोषणा को और किसी अधिक काल के लिये चालू न किया जाये।''

श्री संतानम ने बता दिया है कि ऐसा खण्ड कितना जरूरी है। हमने प्रान्तीय विधान के खण्ड 15 को स्वीकार करके यह मान लिया है कि कुछ आकस्मिक

संकटाधिकार राष्ट्रपति के पास रहेंगे। किन्तु रिपोर्ट में उन सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा गया है और यही मेरे और संतानम् के संशोधन का कारण है। वह दोनों इस त्रुटि को हटाने के लिये हैं। मेरे संशोधन के अनुसार राष्ट्रपति गवर्नर की की रिपोर्ट मिलने पर अपनी मंत्री सभा की सम्मति लेने के पश्चात् घोषणा कर सकते हैं चूंकि गवर्नर को तुरन्त काम करने का अधिकार है इस कारण राष्ट्रपति को अपने मन्त्रिमंडल की सम्मति के बिना काम करने की कोई आवश्यकता नहीं है और यही कि राष्ट्रपति अपनी मंत्रीसभा की सम्मति लेने पर ही कुछ कर सकता है। यह आवश्यक बात है जो मैं आपको बता देना चाहता हूं; यही मेरे और श्री संतानम् के संशोधनों में अन्तर है।

***श्री के. संतानम्:** मान्यवर, संघ-विधान के अनुसार राष्ट्रपति सदैव अपने मंत्रियों के परामर्श पर ही चलते हैं।

***श्री बी.एम. गुप्ते:** यह तो ठीक है। मैं तो केवल उस पर जोर देना चाहता हूं। गवर्नर के अधिकारों के सम्बन्ध में जो वाद-विवाद हुआ था, उसमें यह मान लिया गया था कि राष्ट्रपति को उल्लंघनाधिकार देना चाहिये। गवर्नर को अधिकार देने के विषय पर बहुत वाद-विवाद हुआ, किन्तु जहां तक राष्ट्रपति का सम्बन्ध है यह सर्वसम्मति से निश्चय किया गया था कि उल्लंघनाधिकार राष्ट्रपति को ही दिया जायेगा। पर यह शर्त लगा दी गई कि उसको अपने मंत्रियों का परामर्श अवश्य लेना होगा।

मेरे और श्री सन्तानम् के संशोधनों में जो अन्तर है, वह यह है कि उन्होंने छः माह का समय रखा है और मैंने केवल दो ही माह का समय रखा है। यह अधिकार एक विशेष दशा के लिये ही है और इस कारण कम से कम अधिकार देने चाहियें और दो माह का समय व्यवस्थापिका सभा को बुलाने के लिये पर्याप्त है। उतने ही अधिकार देने चाहियें जितने अनिवार्य हों। संघीय व्यवस्थापिका सभा इस विषय में सर्वोच्च अधिकारी है, इसलिये उसकी स्वीकृति अवश्य लेनी चाहिये। इसलिये यह मैंने रखा है कि जब तक व्यवस्थापिका सभा राष्ट्रपति के कार्य पर दो माह के अन्दर अपनी स्वीकृति न दे दे, राष्ट्रपति की घोषणा प्रयोग में न रह जायेगी। चूंकि व्यवस्थापिका सभा सर्वोच्च है, इस कारण मैंने उसके लिये समय की रोक नहीं की है। यदि आवश्यक हो तो व्यवस्थापिका सभा समय-समय पर घोषणा को स्वीकार कर सकती है। यदि कोई आकस्मिक संकट आ पड़ता है तो

[श्री बी.एम. गुप्ते]

वह अधिक समय तक नहीं रहेगा; किन्तु यदि वह जारी रहा तो व्यवस्थापिका सभा समय-समय पर घोषणा के जारी रहने के समय को बढ़ा सकती है।

इस कारण मेरा यह कहना है कि अपेक्षाकृत मेरा संशोधन अच्छा है। वास्तव में मेरा संशोधन इस सभा के द्वारा गवर्नर की घोषणा करने के अधिकार को मान लेने के आधार पर है। श्री सन्तानम् का संशोधन इस दशा के अनुसार नहीं है, वह गवर्नर की घोषणा के विषय में कुछ नहीं कहता। वह तो इस अनुमान के आधार पर बना है कि गवर्नर को केवल रिपोर्ट करने का अधिकार है; इस कारण मेरा यह कहना है कि मेरा संशोधन दूसरे की अपेक्षा अधिक उपयुक्त है, और इस कारण इस सभा को उसे मान लेना चाहिये।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): यदि सर गोपालस्वामी यह बता दें कि वह कौन से संशोधन को स्वीकार करने के लिये तैयार हैं, तो इससे वाद-विवाद सरल हो जायेगा।

***अध्यक्ष:** सर एन. गोपालस्वामी क्या आप इस समय कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् अध्यक्ष महोदय!

***अध्यक्ष:** श्री आयंगर!

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** श्रीमान्, किस आयंगर को कह रहे हैं?

***अध्यक्ष:** सर एन. गोपालस्वामी आयंगर।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, श्री सिधवा ने जो पूछा है, उसका मैं साफ-साफ जवाब नहीं दे सकता हूं, किन्तु मैं अवश्य ही अपनी विचार-धारा आपको बताऊंगा। दोनों संशोधन जो प्रस्तावित किये गये हैं, उस व्यवस्था के लिये हैं जिसे प्रान्तीय विधान के सम्बन्ध में सभा ने स्वीकार कर लिया है। इस सभा को याद होगा कि जब हम प्रान्तीय विधान के विषय में वाद-विवाद कर रहे थे तो उस विधान में एक ऐसा खंड रखा गया था जो भारत सरकार के 1935 के एक्ट की धारा 93वीं है; सिवा इसके कि विस्तार की बातों में थोड़ा परिवर्तन किया गया है। गवर्नर को सरकार के सभी या कुछ कर्तव्यों को, या उन अधिकारों को जो प्रान्तीय संस्थाओं को दिये गये हैं, अपने

हाथ में लेने का अधिकार तो दिया गया था; उसके अतिरिक्त इस आशय का एक खन्ड भी था:

''गवर्नर की घोषणा उसके द्वारा तुरंत संघ के राष्ट्रपति के पास भेजी जायेगी जो उसकी प्राप्ति पर ऐसी कार्यवाही कर सकता है जिसे वह अपने आकस्मिक संकटाधिकार के अंतर्गत उपयुक्त समझे।''

इस कारण यह आवश्यक है कि हम कहीं पर विधान में इसका प्रबन्ध करें कि किसी प्रान्त में आकस्मिक संकट आने पर राष्ट्रपति को क्या अधिकार होगा, और इस दृष्टिकोण से दोनों संशोधन उस कमी को पूरा करते हैं जो कि अन्यथा विधान के रेखाचित्र में रहेंगे। जिस विषय पर ध्यान देना है वह यह है कि किस प्रकार की योजना रखनी चाहिये। गवर्नर को वास्तविक प्रान्तीय विधान के सब या उनसे कुछ भागों को स्थगित करने और प्रान्तीय विधान के अनुसार भिन्न अधि कारियों के सब अधिकारों को अपने हाथ में लेने का अधिकार दिया गया है। ऐसा करने के पश्चात् उसे राष्ट्रपति को एक रिपोर्ट देनी होगी यदि और कुछ नहीं हुआ तो दो सप्ताह के पश्चात् घोषणा प्रयोग में नहीं रहेगी। आकस्मिक संकट ऐसा हो सकता है कि दो सप्ताह से अधिक चले, किन्तु यह भी संभव है कि संघ के राष्ट्रपति उन असाधारण कार्यवाहियों को उपयुक्त न समझे जो कि उस दशा में गवर्नर ने की हो। इस कारण यह आवश्यक है कि हमें राष्ट्रपति को कुछ अधिकार दे देने चाहियें जिससे कि प्रान्त के गवर्नर की रिपोर्ट मिलने पर वह कुछ कार्यवाही कर सके। श्री संतानम् ने अपनी रिपोर्ट में बहुत-सी बातें विस्तारपूर्वक बताई हैं जो कि प्रान्त के गवर्नर की रिपोर्ट मिलने पर राष्ट्रपति को करनी चाहियें। मेरे लिये उन सब बातों को मान लेना जो उन्होंने अपने संशोधन में समझाई हैं कि उन अधिकारों में राष्ट्रपति द्वारा प्रान्तीय विधान को स्थगित किया जाए, प्रान्त में लागू होने वाले विशेष कानूनों को जारी करना और गवर्नर या अन्य प्रान्तीय कर्मचारियों को आज्ञायें देने के अधिकार शामिल हैं। गवर्नर कुछ कार्यवाही करता है, वह ठीक भी हो सकता है, और गलत भी। यदि वह ठीक है तो उसे दो सप्ताह से भी ज्यादा जारी रखा जा सकता है। यद्यपि साधारणत: दो सप्ताह का समय भी काफी है, और यदि वह गलत है तो खंड के अनुसार जो कि प्रान्तीय विधान के सम्बन्ध में स्वीकार कर लिया गया है, राष्ट्रपति को गवर्नर की घोषणा को स्थगित करने का अधिकार है। और फिर राष्ट्रपति अपनी ही कार्यवाही करेंगे जो कि उस आकस्मिक संकट के लिये वह उपयुक्त समझे। यह कि राष्ट्रपति को इतने अधिकार दे दिये जायें जितने कि श्री संतानम् ने बताये

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

हैं यह एक ऐसा विषय है जिस पर बहुत विचार करने की आवश्यकता है। यह प्रान्तीय स्वतंत्रता पर ऐसा हस्तक्षेप है कि जिसे मानने के लिये हममें से बहुत से प्रस्तुत नहीं होंगे। किन्तु यह आवश्यक है कि राष्ट्रपति को उतने अधिकार होने चाहियें जो स्थिति विशेष को उन्हें संभालने के लिये आवश्यक हों। यदि श्री संतानम् उन लोगों को, जो इस विधान को तैयार करेंगे, यह आज्ञा दें कि वह इस योजना पर भाव और भाषा दोनों ही दृष्टियों से समधिक ध्यान दे सकें और विधान सभा के सामने ऐसा प्रस्ताव रखे कि जिसे गवर्नर की कार्यवाही और उसकी रिपोर्ट पर जो अध्यक्ष को जो कार्यवाही करनी पड़े उन दोनों में संतुलन होता हो तो मैं राष्ट्रपति को आकस्मिक संकटाधिकार देने के सिद्धान्त को स्वीकार करता हूं। यदि इन संशोधनों के प्रस्तावक मेरे आश्वासन पर विश्वास रखे तो मैं कह सकता हूं कि हम ऐसी योजनायें रखेंगे जो इस सिद्धान्त के आधार पर होंगी। फिर श्री संतानम् और श्री गुप्ते को इसके लिये समय रहेगा कि जब मसविदा सभा के सन्मुख आये तो वह उसको देखें और वह जो संशोधन उपयुक्त समझें सभा में प्रस्तावित करें। इस कारण मैं यह कहूंगा कि उस आश्वासन के आधार पर वह उन संशोधनों को वापस ले लें, जिनकी उन्होंने सूचना दी है।

***श्री के. संतानम्:** आश्वासन के आधार पर मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

***श्री बी.एम. गुप्ते:** श्रीमान्, मैं भी अपने संशोधन को वापस लेता हूं।

(सभा की आज्ञानुसार संशोधन वापस ले लिये गये।)

भाग 9

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मैं भाग नौ को पेश करता हूं, जो इस प्रकार हैं:

''अल्पसंख्यकों की रक्षा सम्बन्धी व्यवस्थायें जिन्हें परामर्शदातृ समिति की रिपोर्ट के आधार पर विधान-परिषद् ने स्वीकार कर लिया है, विधान में शामिल कर ली जायें।''

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि सभा भाग 9 को स्वीकार करे।

प्रस्ताव को स्वीकार किया गया।

इसके पश्चात् सभा बृहस्पतिवार, 31 जुलाई, सन् 1947 ई. के प्रात: दस बजे के लिये स्थगित हो गई।

Con. 3. 4.14.47
750

अंक 4

संख्या 14

बृहस्पतिवार,
31 जुलाई,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
1. नियमों में संधोधन	...2
2. यूनियन कांस्टीट्यूशन पर रिपोर्ट	...4
3. अध्यक्ष द्वारा घोषणा	...54

भारतीय विधान-परिषद्

बृहस्पतिवार, 31 जुलाई सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक दिन के 10 बजे कांस्टीट्यूशन हाल नई दिल्ली में माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में हुई।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि ऐसा कोई सदस्य नहीं है जो आज अपना आसन ग्रहण करने को हो। हम कार्यक्रम शुरू करेंगे।

कार्य-सूची की पहली मद में श्री देशबन्धु गुप्त का प्रस्ताव है, जो विधान-परिषद् में दिल्ली और अजमेर-मेरवाड़ा के प्रतिनिधित्व से सम्बन्धित नियम 5 में संशोधन करने के विषय में है।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रांत और बरारः जनरल): पंद्रह अगस्त के सत्ता हस्तांतरण समारोह के सम्बन्ध में क्या मैं निवेदन कर सकता हूं कि सर्व-सत्ता-युक्त विधान-परिषद् के सभापति के रूप में आपके मान-प्रतिष्ठा के ख्याल से यह आवश्यक है कि कम से कम जहां तक इस सभा में उक्त समारोह के कार्यक्रम का सम्बन्ध है वह, अधिकारियों के किसी प्रकार के हस्तक्षेप या हुक्म शाही के बिना केवल आपके ही द्वारा तय तथा पूर्णतया निश्चित किया जाना चाहिये। मुझे विश्वास है कि इस विषय में आपका आश्वासन पाने से यह सभा आपकी बहुत कृतज्ञ होगी।

श्रीमान्, मैं आपसे विनती करूंगा कि कार्यक्रम निश्चित करते समय आप उसमें हमारा परम्परागत राष्ट्रीय गीत ''वन्देमातरम्'' तथा हमारे महान् योद्धा, राजनीतिज्ञ नेताजी सुभाषचन्द्र बोस द्वारा लोकप्रिय किया हुआ वह दूसरा सुन्दर गीत भी शामिल रखें। यह वही गीत है जो इन शब्दों से आरम्भ होता है।

''शुभ सुख चैन की वरषा बरसे, भारत भाग है जागा!''
(Shubh sukh chain ki varsha barse, Bharata bhag hai jaga)

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री एच.वी. कामत]

इसके अतिरिक्त श्रीमान्, मुझे, आपको उस प्रार्थना का भी स्मरण दिलाने की अनुमति दें जो मैंने विधान-परिषद् के प्रत्येक सदस्य को राष्ट्रीय झंडा भेंट किये जाने के सम्बन्ध में आपसे सोमवार को की थी। एक प्रकार से हम 15 अगस्त से पहले झंडा प्राप्त करने के लिये उत्सुक हैं। मैं यह आशा करने का साहस करता हूं कि स्टीयरिंग कमेटी मार्ग में बाधक न होगी और इस प्रस्ताव पर कोई आपत्ति न उठायेगी।

***अध्यक्ष:** सभा को तथा माननीय सदस्य श्री कामठ को मैं सूचित करना चाहता हूं कि कार्यक्रम के सम्बन्ध में मेरा विचार आज की बैठक समाप्त होने के समय एक वक्तव्य देने का है। किन्हीं बाहरी अधिकारियों का हुकम चलने का कोई प्रश्न नहीं है। हम अपना कार्यक्रम स्वयं निश्चित करेंगे। *(हर्ष-ध्वनि)* 15 अगस्त के प्रबन्ध के सम्बन्ध में मेरे दिमाग में कुछ बातें हैं, जिन पर मैंने पंडित जवाहरलाल नेहरू तथा कुछ अन्य मित्रों के साथ विचार किया है। आज की बैठक विसर्जित होने से पहले, मैं इन विचारों को सभा के सामने रखूंगा।

नियमों में संशोधन

श्री देशबन्धु गुप्त (दिल्ली): सभापति महोदय, जो मोशन मेरे नाम में है, वह इस प्रकार है। प्रस्ताव यह है कि:

''(1) विधान-परिषद् के नियमों के नियम 5 (संशोधित) के उपनियम (2) में ''जैसी भी दशा हो'' शब्दों के बाद आने वाले ''दिल्ली और अजमेर-मेरवाड़ा की परामर्शदातृ कौंसिलें'' शब्द निकाल दिये जायें।

(2) नियम 5 (संशोधित) के उपनियम 12 की जगह निम्नलिखित रखा जाये:

'यदि विधान-परिषद् में दिल्ली या अजमेर-मेरवाड़ा का प्रतिनिधित्व करने वाले किसी सदस्य का स्थान मृत्यु, पदत्याग या अन्य किसी प्रकार रिक्त हो जाये तो अध्यक्ष इस रिक्त स्थान के बारे में विज्ञापन निकालेंगे और दिल्ली या अजमेर-मेरवाड़ा के चीफ कमिश्नर को जैसी भी दशा हो, आदेश देंगे कि वह रिक्त स्थान की पूर्ति के उद्देश्य से उपनिर्वाचन करने के लिये कार्यवाही करे।

यह उपनिर्वाचन यथासम्भव भारतीय लेजिस्लेटिव असेम्बली के दिल्ली या अजमेर-मेरवाड़ा, जैसी भी दशा हो, के निर्वाचन-क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्य के चुनाव के लिये लेजिस्लेटिव असेम्बली के निर्वाचन सम्बन्धी नियमों द्वारा निर्धारित प्रणाली के अनुसार किया जायेगा'।''

इस सम्बन्ध में मुझे इतना ही कहना है कि श्री सन्तानम् ने जो पिछली मर्तबा अपनी तरमीम से अमेंडमेंट कराया था उसका अर्थ यह होता है कि कैजुअल वैकेन्सी की सूरत में देहली और अजमेर-मेरवाड़ा की सूरत में इस वैकेन्सी को पूरा करें। एडवाइजरी कौंसिल के चन्द मेम्बरान जिनकी संख्या सात से अधिक नहीं है वह इस वैकेन्सी को पूरा करें। इस पर कुदरती तौर पर देहली की तरफ से और अजमेर-मेरवाड़ा की तरफ से यह ऐतराज किया गया है कि चूंकि एडवाइजरी कौंसिल इस प्रकार से नहीं चुनेगी जिस प्रकार से सूबों की लेजिस्लेटिव कौंसिल चुनी गई है, बल्कि यह इन्डाइरेक्ट इलेक्शन से बहुत छोटी-सी बाडी बनाई गई है।

इसके अधिकार परिमित हैं, इसलिये एडवाइजरी कौंसिल के चन्द मेम्बरान को यह अधिकार देना कि कैजुअल वैकेन्सी की सूरत में वह तमाम मेम्बरान को चुन कर भेज दें, यह मुनासिब नहीं है। अगर गौर से देखा जाये तो सात मेम्बरान से तीन नौन-औफिसियल मेम्बर रह जाते हैं जिनके सुपुर्द चुनने का काम होगा। देहली का जहां तक ताल्लुक है, देहली में एडवाइजरी कौंसिल का चुनाव म्युनिसिपैलिटी के एलैक्टैड मेम्बरान से किया गया है, और नई देहली की जहां कि बड़ी म्युनिसिपैलिटी है, इसके कुछ मेम्बरान नौमीनेटेड मेम्बरान थे।

इसलिये इसके तमाम मेम्बरान इस चुनाव में हिस्सा नहीं लेते थे। यह भी ऐतराज है कि अगर एडवाइजरी कौंसिल पर यह चुनाव छोड़ा जाये तो उसका यह असर होगा कि नई देहली के तीन लाख आदमियों को डिस्फ्रेंचाइज कर दिया जायेगा। ऐसा होने की इस समय कोई आशा नहीं थी। इस ख्याल से कि यहां पर कोई लेजिस्लेटिव कौंसिल नहीं है यह समझ लिया गया था कि एडवाइजरी कौंसिल ऐसी सूरत पैदा होने पर इसे पूरा कर सकेगी। लेकिन लोगों को इसके खिलाफ यह जायज़ शिकायत है कि ऐसा करना डेमोक्रेटिक उसूलों के खिलाफ होगा। इस दृष्टि से यह तजवीज की गई है कि इस रूल को बदल दिया जाये और इस वेकेन्सी की सूरत में इसको इस तरह पूरा किया जाये जिस सूरत में औरिजिनली देहली की एलेक्शन हुई थी। देहली के मैम्बरान की हैसियत दूसरे मेम्बरान से इसलिये भी मुख्तलिफ है कि जहां और प्रान्तों से मेम्बर चुनकर आते

[श्री देशबन्धु गुप्त]

हैं वहां की लेजिस्लेटिव असेम्बली की जानिब से देहली और अजमेर-मेरवाड़ा के प्रतिनिधि डाइरेक्ट वोट से चुनकर आते हैं। इसलिये उसूलन यह सही होगा कि जिस-जिस प्रकार से औरिजिनल इलेक्शन हो उसी प्रकार से बाई इलेक्शन हो। इस तरह से यह मोशन मैंने पेश किया है। मैं समझता हूं कि स्टीयरिंग कमेटी ने भी इसे मंजूर किया है, और आपको भी इस पर कोई ऐतराज नहीं होगा।

***अध्यक्षः** इस संशोधन के सम्बन्ध में क्या किसी सदस्य को कुछ कहना है?

(कोई भी सदस्य बोलने के लिये नहीं उठा।)

मैं मान लेता हूं कि इस सम्बन्ध में कोई भी सदस्य कुछ कहना नहीं चाहता। अब मैं संशोधन पर मत लूंगा।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

यूनियन कांस्टीट्यूशन पर रिपोर्ट

***अध्यक्षः** अब हम यूनियन कांस्टीट्यूशन कमेटी की रिपोर्ट के शेष वाक्यांश (क्लाजेज) विचार के लिये लेते हैं। क्या हम भाग 10 पर विचार करेंगे—सर गोपालस्वामी आयंगर?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रासः जनरल)ः श्रीमान्, आपके विचारार्थ क्या मैं यह तजवीज रख सकता हूं कि शायद हमें पहले उन वाक्यांशों को लेना चाहिये जो विचार करने के लिये छोड़ दिये गये थे।

***अध्यक्षः** आपकी तजवीज है कि अब हम वाक्यांश 7 तथा 14 पर विचार करें। मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** वाक्यांश 7 को मैं पहले ही विचारार्थ उपस्थित कर चुका हूं। अब आप उन सदस्यों से, जिन्होंने इस वाक्यांश पर संशोधन के प्रस्ताव रखने की सूचना दी है, अपने प्रस्ताव विचारार्थ उपस्थित करने का आदेश दे सकते हैं।

वाक्यांश—7

***अध्यक्षः** पहला वाक्यांश 7 है। वाक्यांश 7 के सम्बन्ध में कई संशोधन थे। हम इन संशोधनों पर विचार करेंगे; या ऐसा भी कोई संशोधन है, जो आपसी समझौते से तय किया गया है? क्या ऐसा कोई समझौता हुआ है?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मैं बताना चाहता हूं कि उन लोगों के साथ जो इस संशोधन में विशेष दिलचस्पी रखते हैं, विचारविमर्श करने के बाद, हम सबकी राजी से एक निष्कर्ष पर पहुंचे और इसी निष्कर्ष के आधार पर मैंने संशोधन की सूचना (नोटिस) दी। पर मैं समझता हूं कि जिस संशोधन की सूचना मैंने दी है, उसके स्वरूप तक के सम्बन्ध में मतभेद है। यदि राज्यों का प्रतिनिधित्व करने वाले माननीय सदस्य अपने वे संशोधन जिनकी सूचना वे दे चुके हैं, उपस्थित करेंगे तथा उन पर अपने विचार प्रकट करेंगे और यदि मुझे मालूम हुआ कि सभा में प्रकट किये गये ये विचार पूर्णतः वही नहीं हैं, जो मेरी समझ से कुछ दिन पहले उनके विचार थे, तो मैं किसी ऐसी कार्य-प्रणाली का सुझाव रखूंगा, जिससे शायद दोनों दृष्टिकोण एक में मिलाये जा सकें। इसलिये मेरा सुझाव है कि आप राज्य-प्रतिनिधियों को अपने संशोधन उपस्थित करने तथा उन पर अपने विचार प्रकट करने का आदेश दें।

***अध्यक्षः** सबसे अच्छा यह है कि उन सारे संशोधनों पर, जिन्हें पेश करने की सूचना मुझे प्राप्त हुई है, विचार कर लिया जाये। वाक्यांश 7 का पहला संशोधन मि. नाजीरुद्दीन अहमद का है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): सभापति महोदय, संशोधन नम्बर 192 को मैं कुछ मामूली मौखिक परिवर्तन के साथ पेश करता हूं। मेरा प्रस्ताव है कि वाक्यांश 7 के उप-वाक्यांश (2) के पैरा (बी) के स्थान में, यह पैरा रखा जाये:

> ''(बी) मौलिक अधिकार-क्षेत्र के प्रयोग में, किसी अदालत द्वारा किसी भी व्यक्ति को दी गयी सजा के सम्बन्ध में, 1898 के जाबता फौजदारी में या फिलहाल जारी किसी भी कानून में दी हुई व्यवस्था के बावजूद, अध्यक्ष (प्रेसीडेंट) को, उस व्यक्ति को उक्त अदालत द्वारा दी गयी सजा पूर्णतः अथवा अंशतः माफ करने का सर्वोच्च अधिकार और ताकत प्राप्त रहेगी।''

मेरी अर्ज है कि यह केवल मस्विदा सम्बन्धी संशोधन है और मैं इसे मस्विदा कमेटी के विचारार्थ दाखिल करता हूं।

***अध्यक्षः** सर बी.एल. मित्तर!

सर बी.एल. मित्तर (बड़ौदा): श्रीमान्, मैं जिस संशोधन का प्रस्ताव रख रहा हूं, वह यह है कि वाक्यांश 7 के उप-वाक्यांश (2) (बी) में, ''अधिकार क्षेत्र (ज्यूरिस्डिक्शन)'' शब्द के बाद ''एक प्रान्त में'' शब्द जोड़ दिये जायें।

संशोधन का उद्देश्य यह है कि क्षमा-दान या दंड-स्थगन का जो अधिकार इस समय एक राज्य के शासक में अवस्थित है, कायम रह सके। यदि यह संशोधन स्वीकार कर लिया गया, तो अध्यक्ष की इस ताकत का प्रयोग प्रान्तों में उठने वाले मामलों के लिये किया जायेगा, न कि एक राज्य में उठने वाले मामलों के लिये। मैं यह तर्क समझता हूं कि यूनियन के व्यवस्थापक मण्डल द्वारा निश्चित दोषों के सम्बन्ध में, 'अध्यक्ष' को सर्वोच्च अधिकारी होना चाहिये। मैं यह बात मान लेता, किन्तु राज्य नहीं चाहते कि शासकों की वर्तमान ताकतों में कमी की जाये। मामले का एक हल यह हो सकता है कि शासकों तथा 'अध्यक्ष' दोनों को इस विषय में समवर्ती अधिकार-क्षेत्र प्राप्त रहे। यदि सर गोपालस्वामी संशोधन का ऐसा मस्विदा तैयार करेंगे, जिसके द्वारा शासक की यह ताकत सुरक्षित रहे और 'अध्यक्ष' को भी वही ताकत दी जा सके, तो मैं उसे स्वीकार करने को बिल्कुल राजी हूं।

अध्यक्ष: इसके बाद मेरे पास तीन संशोधन और हैं, जो श्री चनैया, श्री गुरुव रेडड्ी तथा श्री हिम्मत सिंह महेश्वरी के नामों से हैं और सबका अभिप्राय यही है। इसलिये उन्हें इन्हें पेश करने की जरूरत नहीं है।

इनके बाद चेंगलाराय रेडड्ी का संशोधन है, जिसकी संख्या 197 है।

***श्री एच. चेंगलराय रेड्डी** (मैसूर): श्रीमान्, मैं उसका प्रस्ताव नहीं रख रहा हूं।

(श्री गुप्ते ने अपने संशोधन नम्बर 198 का प्रस्ताव नहीं रखा।)

श्री देवीप्रसाद खेतान (पश्चिमी बंगाल: जनरल): श्रीमान्, मैं अपने संशोधन नम्बर 199 का प्रस्ताव नहीं रख रहा हूं।

(श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने पूरक सूची 1 के अपने संशोधन नम्बर 4 का प्रस्ताव नहीं रखा।)

माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर: श्रीमान्, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि वाक्यांश 7 (2) (बी) के स्थान में यह रखा जाये:

''(बी) फौजदारी अधिकार-क्षेत्र के प्रयोग में किसी अदालत द्वारा दी गयी सजा की क्षमा, स्थगन, विश्रान्ति, छूट, मुल्तवी या बदली मंजूर करने की ताकत, निम्न सजायाबियों के सम्बन्ध में, 'अध्यक्ष' को रहेगी:

'(1) उन मामलों के सम्बन्ध में, जिनके विषय में 'संघ-पार्लियामेंट' को कानून बनाने की ताकत है और इकाई के व्यवस्थापक-मंडल (यूनिट लेजिस्लेचर) को नहीं है, संघ कानून के विरुद्ध किये गये अपराधों के लिये हुई, और

(2) फौजी अदालतों द्वारा सुने जाने वाले सारे अपराधों के लिये हुई। संघ कानून द्वारा ऐसी ताकत अन्य अधिकारियों को भी प्रदान की जा सकती है।'

किन्तु शर्त है कि इस उप-वाक्यांश में दी किसी बात से, एक फौजी अदालत द्वारा दी गयी सजा मुल्तवी करने, उसमें छूट देने या उसे बदलने की, 'संघ शासन की सशस्त्र सेनाओं' के किसी अफसर की ताकत में कोई फर्क न पड़ेगा।''

श्रीमान्, इस संशोधन की सूचना मेरे और श्री बी.एल. मित्तर द्वारा अभी पेश किये गये संशोधन के कई समर्थक राज्यों के प्रतिनिधियों के बीच सोच-विचार हो जाने के बाद दी गयी थी। उस संशोधन का विचार यह था कि इस वाक्यांश द्वारा प्रदत्त क्षमा-दान की ताकत को, केवल प्रान्तों में दी जाने वाली सजाओं तक के लिये सीमित रखा जाये। दूसरे शब्दों में, वे चाहते थे कि तमाम सजायाबियों के सम्बन्ध में क्षमा-दान देने की जो असीम ताकत, देशी राज्यों के शासकों को इस समय प्राप्त है, वह उन्हें प्राप्त रहे।

श्रीमान्, यह प्रश्न कुछ महत्वपूर्ण है। अब हम एक संघ (फेडरेशन) की स्थापना कर रहे हैं और सर्व-सत्तायुक्त ताकतों को हम संघ तथा उसकी (इकाइयों) यूनिटों के बीच बांट रहे हैं, कुछ विषयों के सम्बन्ध में कानून बनाने की ताकत संघ को है और अन्य विषयों के सम्बन्ध में संघ को नहीं, केवल यूनिटों को ही कानून बनाने की ताकत है। प्रान्तों के सम्बन्ध में, विषयों की एक तीसरी सूची

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

भी है और इन विषयों के सम्बन्ध में कानून बनाने की ताकत, संघ तथा प्रान्तों दोनों को ही है।

इस प्रश्न पर विचार करते हुये कि क्षमा-दान (माफी) की ताकत किसमें स्थित होनी चाहिये, हमें दो सिद्धान्तों को ध्यान में रखना होगा। पहला सिद्धांत यह है कि हमें उस सत्ता का भी उचित ध्यान रखना चाहिये, जो कानून निर्मित करती है और जिसके विरुद्ध अपराध किये जाते हैं। दूसरी बात जिसका हमें ख्याल रखना है, उन अदालतों के प्रकार की है, जो इन सजाओं या सजायाबियों की घोषणा करती हैं। स्थिति यह है कि जहां तक ब्रिटिश-भारत का ताल्लुक है, वहां न्याय-व्यवस्था की एक सदृश प्रणाली स्थापित है और प्रान्तों में छोटी से छोटी से लेकर ऊंची से ऊंची अदालतों को, न केवल प्रान्तीय कानूनों के खिलाफ किये जाने वाले अपराधों बल्कि संघ-कानूनों के खिलाफ किये जाने वाले अपराधों की भी सुनवाई का अधिकार-क्षेत्र प्राप्त है। देशी राज्यों में भी ऐसी ही स्थिति है। देशी राज्यों की अदालतों को सब प्रकार के अपराधों की सुनवाई करने की ताकत है—उन अपराधों की भी, जो संघ का जन्म होने के बाद, संघ-कानूनों के विरुद्ध अपराध माने जायें। और शायद एक अपवाद छोड़कर प्रान्त तथा देशी राज्य के बीच क्षमा-दान की ताकत भी न्यूनाधिक एक सी ही है। पिछली बार संशोधित, जाब्ता फौजदारी, (क्रिमिनल प्रोसीड्योर कोड) के अनुसार, एक अपवाद के सिवा प्राय: सारे अपराधों के सम्बन्ध में दी गयी सजाओं को माफ करने, बदलने या उनमें छूट देने की ताकत प्रान्तीय सरकार को ही है। इसमें एक अपवाद यही है कि यदि सजा मृत्यु-दण्ड की है, तो केन्द्रीय सरकार को भी ऐसी ही ताकत प्राप्त है। देशी राज्यों के सम्बन्ध में ऐसा कोई अपवाद इस समय विद्यमान् नहीं है। अब, हमें इस प्रश्न पर विचार करना है कि आया ऐसी परिस्थिति में क्षमा-दान की ताकत हमें प्रान्तों को देनी चाहिये, या केन्द्र को, या दोनों ही को। श्रीमान्, मेरा ख्याल है कि सभा इस बात से सहमत होगी कि जब हम संघ-शासन का एक प्रधान रखने जा रहे हैं और उसे अध्यक्ष (प्रेसीडेण्ट) का नाम दे रहे हैं, तो एक ताकत जो उसे प्राय: स्वत: प्राप्त होनी चाहिये, क्षमा-दान की है। अब हमें देखना है कि अध्यक्ष को क्षमा-दान की यह ताकत, क्या हम नि:सीम रूप में देने जा रहे हैं, या हम उसे क्षमा-दान की केवल सीमित ताकत ही देना चाहते हैं? अध्यक्ष की स्थिति उत्तराधिकार-प्राप्त किसी राजा की सी नहीं है कि वह क्षमा-दान की ताकत किसी राज-विशेषाधिकार आदि से प्राप्त करे। यदि

वह क्षमा-दान की ताकत का प्रयोग करता है, तो इसका अधिकार हमें उसे विधान के द्वारा अथवा किसी संघ-कानून के द्वारा ही देना चाहिये। यही कारण है कि विधान के ही अन्दर, हमें इस प्रश्न का निर्णय करना है।

मैं तुरन्त कह सकता हूं कि व्यावहारतः सभी संघ-शासनों में क्षमा-दान की यह ताकत 'संघ-शासन' के प्रधान और 'यूनिट' के प्रधान के बीच बांट दी गई है और जिस सिद्धान्त के आधार पर वह बांटी गयी है, यह है कि संघ-शासन के प्रधान को संघ-कानूनों के खिलाफ किये गये अपराधों को क्षमा करने की ताकत है तथा यूनिट के प्रधान को यूनिट के कानूनों के खिलाफ अपराधों को क्षमा करने की ताकत है। अब हमारे विचारने का प्रश्न यह है कि आया हम इन सारे संघ-शासनों की प्रथा का अनुसरण करेंगे।

मस्विदे का जो वर्तमान स्वरूप है, उसके अन्तर्गत दोनों ही यूनियन विधान में तथा प्रांतीय विधान में, क्षमा-दान की ताकत संघ-शासन के अध्यक्ष को दी गयी है। किन्तु साथ ही यह भी व्यवस्था रखी गयी है कि संघ-कानून के द्वारा यह ताकत अन्य अधिकारियों को भी दी जा सकती है। अनुकरणीय प्रान्तीय-विधान के मस्विदे में, जिसे आप पहले ही स्वीकार कर चुके हैं, और जिसमें क्षमा-दान की कोई भी ताकत प्रान्तों के गवर्नरों को दी गयी है, कोई शर्त नहीं रखी गई है। इसका मतलब यह होता है कि वर्तमान वाक्यांश का अभिप्राय यह है कि 'अध्यक्ष' ही क्षमा-दान देने वाला प्राथमिक अधिकारी है तथा संघ-कानून यह ताकत अन्य लोगों को भी प्रदान कर सकता है।

***अध्यक्षः** मुझे एक कठिनाई मालूम देती है। क्या आप कृपा करके उसे समझायेंगे? दंड-विधान के अन्दर आने वाले अपराधों–मान लीजिये हत्या के सम्बन्ध में–अध्यक्ष द्वारा क्षमा-दान क्या आपके संशोधन से बाहर है?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** वाक्यांश के वर्तमान स्वरूप के अनुसार, यही बात है।

***अध्यक्षः** वाक्यांश के आप द्वारा संशोधित रूप से, क्या 'अध्यक्ष' को हत्या का अपराध क्षमा करने की ताकत प्राप्त होती है?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** नहीं, उससे यह ताकत प्राप्त नहीं होती।

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

जैसा कि मैंने बताया है, वाक्यांश का प्रस्तुत रूप, क्षमा-दान की पूरी ताकत अध्यक्ष को प्रदान करता है, यद्यपि संघ के कानून द्वारा यह ताकत अन्य अधिकारियों को भी प्रदान की जा सकती है। मैंने जिस संशोधन की सूचना दी है, उसके द्वारा अध्यक्ष को केवल संघ-कानूनों के खिलाफ किये गये अपराधों के लिये क्षमा देने की ताकत मिलती है और यही सारी बात है। उदाहरणार्थ, साधारण फौजदारी कानून के अन्तर्गत दी गयी सजाओं के सम्बन्ध में वह क्षमा नहीं दे सकता। मेरा ख्याल है कि प्रान्तों का साधारण फौजदारी कानून समवर्ती (Concurrent) सूची की मद 2 में आता है और समवर्ती सूची के उस प्रकार के मामले में सन् 1935 को एक्ट का सिद्धान्त यह है कि शासन-सत्ता (एक्जीक्यूटिव पावर) के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह उन समवर्ती विषयों पर भी लागू हो, जिनके कि सम्बन्ध में संघ-शासन को भी कानून बनाने की ताकत प्राप्त है।

***अध्यक्षः** वे कौन से मामले हैं जिन्हें आप सोचते हैं कि उनके सम्बन्ध में अध्यक्ष को क्षमा-दान की ताकत रहेगी? प्रायः पूरा फौजदारी कानून ही प्रांतीय विषय है। वे कौन से अपराध होंगे जिनके सम्बन्ध में अध्यक्ष को क्षमा-दान की ताकत रहेगी?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, मुझे ऐसे अपराध बताने चाहियें जैसे आपका कानून के खिलाफ किये जाने वाले अपराध, समुद्री जकात कानून तथा अन्य इसी प्रकार के कानूनों के, जो पूर्णतः संघीय हों, खिलाफ होने वाले अपराध।

हां, तो मेरे संशोधन के पीछे यह सिद्धान्त है कि 'अध्यक्ष' को संघ-कानूनों के खिलाफ किये गये अपराधों के ही मामले में क्षमा, आदि देने की ताकत होगी। साधारण फौजदारी कानून के खिलाफ तथा प्रान्तों या राज्यों द्वारा निर्मित कानूनों के खिलाफ अपराधों को क्षमा करने की ताकत प्रान्तों या राज्यों के प्रधानों को होगी।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रासः जनरल)ः मैं मान लेता हूं कि संघ-सरकार द्वारा अधिकार सौंपे जाने से पृथक, समवर्ती विषयों तथा प्रान्तीय सूची में विशेषकर पड़ने वाले विषयों दोनों ही के सम्बन्ध में प्रान्तीय सरकार को ताकत देने के लिये प्रान्तीय विधान में भी इसी प्रकार का परिवर्तन कर लिया जायेगा।

***मान्नीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** हां, श्रीमान्, विचार यह है कि यदि यूनियन के विधान में आप यह संशोधन कर लें, तो नमूने के प्रांतीय विधान में भी तदनुसार व्यवस्था करनी होगी और ऐसा कर लिया जायेगा।

श्रीमान्, सर बी.एल. मित्तर के संशोधन द्वारा जो बात उठायी गयी है, अब मैं उसे लेता हूं। उनके संशोधन का मतलब है कि इस वाक्यांश की क्षमा-दान की यह ताकत केवल प्रान्तों तक ही सीमित रहनी चाहिये। बेशक, देशी राज्यों को इसकी चिन्ता नहीं है कि क्षमा-दान की ताकत को हम केन्द्र तथा प्रांतों के बीच किस तरह बांटते हैं। इस संशोधन-विशेष को उन बातों से प्रेरणा मिली है, जो देशी राज्यों में इस समय विद्यमान् हैं अर्थात् राज्यों में, उस प्रत्येक अपराध के सम्बन्ध में, जिसकी सजायाबियां शासकों की अदालतों द्वारा होती हैं, क्षमा-दान की ताकत शासकों को ही होती है। अब, श्रीमान्, ऐसे मामलों में क्षमा-दान की ताकत अध्यक्ष से बाहर रखने की आपत्ति किसी सिद्धान्त के आधार पर टिक नहीं सकती। इसका कारण अन्य बात है, क्षमा-दान के प्रश्न का विचार करते समय जिसका ख्याल रखने का अनुरोध मैंने सभा से किया था वह बात यह है कि जो सत्ता कानून निर्मित करती है और कार्यकारिणी (एक्जिक्यूटिव) जो उसके प्रति उत्तरदायी है तथा जिसका कार्य कानून को क्रियान्वित करना है, क्षमा, छूट, कमी आदि के नीति निर्णय के अधिकार से वंचित नहीं की जा सकती। इसलिये, संघीय अपराधों से सम्बन्ध रखने वाली ताकत, संघ के अध्यक्ष को रहना आवश्यक है। मैंने जिस संशोधन की सूचना दी है, उसमें एक बात का ध्यान रखा गया है। मुझे इस बात का भय था कि सजायें माफ करने आदि के सम्बन्ध में जिस ताकत का प्रयोग शासक इस समय करते हैं, उसमें कोई भी कमी करने के लिये शायद वे राजी न हों, क्योंकि इससे उन्हें एक प्रकार की घबराहट का, भाव सुकुमारता का अनुभव हो सकता है, और साथ ही उन्हें यह भी घबराहट हो सकती थी कि यदि उनकी इस ताकत का कोई अंश, आप समवर्ती ताकत के रूप में किसी बाहरी सत्ता में स्थिर करना चाहें, तो इसका अर्थ यह होगा कि किसी राज्य का एक शासक जिस भांति इस ताकत का प्रयोग करना पसन्द करेगा और जिस भांति संघ अध्यक्ष उसे प्रयोग में लाना चाहेगा, उसमें कुछ-न-कुछ विरोध तथा संघर्ष की आशंका रह सकती है। इसलिये मैंने जरूरी समझा कि यदि सम्भव हो सके, तो इस प्रकार के संघर्ष को मौका ही न दिया जाये। और यही कारण है कि इस संशोधन में मैंने अपराधों को दो श्रेणियों में विभक्त कर दिया है। इनमें से एक के अपराधों के क्षमा-दान की ताकत केवल संघ के अध्यक्ष को है और वह, संघ कानूनों के खिलाफ किये जाने वाले अपराधों के सम्बन्ध में है। दूसरी श्रेणी के वे अपराध हैं, जिनके क्षमा-दान की ताकत का प्रयोग किसी

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

राज्य का शासक अथवा प्रान्त का गवर्नर करेगा। मैं चाहता हूं कि सभा अब यह समझ सके कि यदि इससे एक राज्य-शासक की क्षमा-दान की वर्तमान ताकतों में कमी होती है, तो इससे क्षमा-दान की वे ताकतें भी कम हो जाती हैं, जो जाब्ता फौजदारी कानून के अनुसार इस समय प्रान्तीय सरकार को प्राप्त हैं। इस प्रकार यह संशोधन इस ताकत के सम्बन्ध में प्रान्तों तथा राज्यों दोनों को ही एक स्तर पर स्थापित करने की चेष्टा करता है। 'अध्यक्ष' में यह ताकत स्थिर करने की आवश्यकता इस बात से है कि हम एक संघ-शासन स्थापित करने जा रहे हैं और संघ के अध्यक्ष को कम-से-कम अपराध-क्षमा की ताकत तो हमें देनी ही होगी।

अब, श्रीमान्, कहा जा सकता है कि अध्यक्ष को यह ताकत आप संघ-कानूनों के विरुद्ध सारे अपराधों के लिये क्यों देना चाहते हैं, जबकि वर्तमान दशा में गवर्नर जनरल इस ताकत का प्रयोग प्रांतीय सरकार की केवल समवर्ती ताकत के रूप में कर सकता है और वह भी, मृत्यु-दंड मात्र के सम्बन्ध में। श्रीमान्, इसका केवल यही उत्तर है। हम एक नया विधान बना रहे हैं और वर्तमान किसी भी चीज से हम अनिवार्यत: बंधे नहीं हैं। नवीन विधान निर्मित करने में हमारे पथ-प्रदर्शन के लिये कुछ सिद्धान्त मौजूद हैं।

यदि उस विधान के अन्तर्गत, हम कुछ वे ताकतें जो पहले राज्यों को प्राप्त थीं, अब अकेले केन्द्र को देने जा रहे हैं, तो यह उचित ही है कि उन विषयों की शासन-व्यवस्था से सम्बन्ध रखने वाली सारी सहायक ताकतें भी केन्द्र को दी जानी चाहियें और यदि ऐसा करने से प्रान्तों की वर्तमान प्रथा में भी कुछ हस्तक्षेप हो रहा हो, तो हमें उस कमी को स्वीकार करने के लिये तैयार रहना चाहिये। जिस संशोधन की मैंने सूचना दी है, उसका वास्तव में यही तात्पर्य है।

अब, इस संशोधन के अन्त में दो-तीन बातें और हैं, जिनका मैं सरसरी तौर पर उल्लेख करना चाहता हूं। इस संशोधन द्वारा 'अध्यक्ष' को, फौजी अदालतों द्वारा सुनवाई किये जाने वाले सारे अपराधों के सम्बन्ध में क्षमा-दान आदि की ताकत प्रदान की गई है। फौजी अदालतें भारतीय सेना कानून द्वारा स्थापित की जाती हैं, और भारतीय सेना को केन्द्र के नियंत्रण में रहना है। अतएव, यह ठीक ही है कि भारतीय सेना के कर्मचारी, जिन्हें इन फौजी अदालतों से सजायें मिलती हैं, सजाओं की माफी, बदली तथा अन्य ऐसी ही रियायतें संघ के अध्यक्ष से प्राप्त करने की आशा करें।

दूसरी बात जिसका मैं उल्लेख करना चाहता हूं, मस्विदे के अन्त में दिया हुआ शर्तनामा है। यह सन् 1935 के 'भारत शासन विधान' की धारा 295 से लिया गया है। इसमें कहा गया है कि ''इस उप-वाक्यांश में दी किसी बात से, एक फौजी अदालत द्वारा दी गयी सजा मुल्तवी करने, उसमें छूट देने या उसे बदलने की, ''संघ-शासन की सशस्त्र सेनाओं' (ये शब्द भारत-शासन-विधान के 'हिज मैजेस्टीज फोर्सेज' शब्दों के स्थान में प्रयुक्त हुए हैं) के किसी अफसर की ताकत में कोई फर्क न पड़ेगा।'' 'भारतीय सेना कानून' के अन्तर्गत निर्मित 'नियमों' के अनुसार, भारतीय सेना के कुछ अफसरों को, सजाओं में छूट देने के अधिकार प्राप्त है और ये अधिकार इस शर्तनामें के द्वारा सुरक्षित रखे गये हैं।

श्रीमान्, मैं समझता हूं कि सब बातों को लेते हुये, यह संशोधन-विशेष उस सिद्धान्त के पूर्णतः अनुकूल है, जो किसी भी 'संघ-विधान के' निर्माण का आधार होता है और किसी राज्य के शासक तथा प्रान्तों के गवर्नरों की ताकतों में इससे जो कमी आती है, ऐसी बात है, जिसकी किसी भी संघ विधान में उम्मीद करना स्वाभाविक मात्र है। श्रीमान्, मैं इस संशोधन का प्रस्ताव रखता हूं।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव रखना चाहता हूं कि संशोधित मस्विदे के उप-वाक्यांश (2) (बी) के अन्त में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये। मैं सदस्यों में प्रचारित संशोधन के मस्विदे का जिक्र कर रहा हूं और यह सर एन. गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन का संशोधन है। यह संशोधन अध्यक्ष के अधिकारों के परिवर्तन के सम्बन्ध में है, उसका क्षमा-दान का अधिकार बढ़ा कर प्रान्तों में दी गयी मौत की सजाओं पर भी लागू करने के लिये है।

अब मैं अपने संशोधन की शब्दावली पढ़ता हूं:

> ''जहां किसी प्रान्त में किसी व्यक्ति को मौत की सजा दी गयी हो, 'अध्यक्ष' को सजाएं मुल्तवी करने, उनमें छूट देने तथा उन्हें बदलने की वे सारी ताकतें प्राप्त रहेंगी, जो उस प्रान्त के गवर्नर को प्राप्त हों।''

श्रीमान्, मैं इसे किसी प्रांत में दी गई मौत की सजा के क्षमा-दान की ताकत तक ही सीमित रख रहा हूं। इस ताकत को बढ़ा कर, किसी राज्य में दी गई मौत की सजा पर भी लागू करने से मुझे प्रसन्नता होगी। संसार के विभिन्न देशों में मौत की सजा देना बंद किया जा रहा है। नार्वे में मृत्यु दण्ड देना बंद

[श्री एम. अनंतशयनम आयंगर]

हो चुका है। रूस जैसे देश में भी काफी अरसा गुजरे, जहां की सामूहिक हत्याओं के बारे में हम सुना करते थे, प्राण-दण्ड देना बन्द किया जा चुका है। संसार के सभी प्रगतिशील देशों ने प्राण-दण्ड एकदम बन्द कर दिया है। वर्तमान भारत-शासन विधान के अनुसार प्राण-दण्ड के सारे मामलों में गवर्नर-जनरल को गवर्नर के साथ क्षमा-दान की समवर्ती ताकत प्राप्त है। अन्य मामलों में माफी, या दण्ड स्थगन या क्षमा-दान किसी भी तरह से देने का एक अधिकार साधारण फौजदारी कानून के अनुसार सारे प्रांतों में गवर्नर को प्राप्त है। गवर्नर-जनरल केवल प्राण-दण्ड के मामलों में हस्तक्षेप कर सकता है। सन् 1935 का कानून (एक्ट) पास होने से पहले गवर्नर जनरल को किसी भी दण्ड के मामले में हस्तक्षेप करने का अधिकार उसी प्रकार प्राप्त था, जिस प्रकार गवर्नर को क्षमा-दान के अपने अधिकार का प्रयोग करने का हक था। किन्तु सन् 1935 के कानून के बाद, प्रांतीय शासनाधिकार को पूर्ण बनाने के लिये प्राण-दण्ड के मामलों को छोड़कर अन्य दण्डों के सम्बन्ध में गवर्नर जनरल का क्षमा-दान का समवर्ती अधिकार क्षेत्र छीन लिया गया। केवल प्राण-दण्ड के मामले में ही उसका क्षमा-दान का अधिकार रक्षित रखा गया। अब, इस सभा के सामने श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर द्वारा जिस संशोधन का मस्विदा रखा गया है, उसके अनुसार, संघ-शासन के पूर्णतः अन्तर्गत मामलों को छोड़कर, 'अध्यक्ष' को क्षमा-दान का कोई अधिकार नहीं दिया गया है। दूसरे शब्दों में जहां कभी भी संघीय व्यवस्थापक मंडल कोई कानून पास करे, केवल उन्हीं विषयों के सम्बन्ध में 'अध्यक्ष' को क्षमा-दान की ताकत मिली है। इसमें संदेह नहीं कि इस प्रकार सन् 1935 के एक्ट की स्थिति में सुधार हुआ है। किन्तु मृत्यु-दण्ड के क्षमा-दान का अधिकार, दण्ड भले ही कहीं भी दिया गया हो, छीन लिया गया है। जीवन का दण्ड एक गम्भीर सजा है, इसलिये इस बात का विचार करने के लिये अन्य सूत्र भी होना चाहिये कि क्या ऐसे भी कोई मामले हैं, जिनके लिये क्षमा-दान की ताकत का प्रयोग किया जाना चाहिये। यदि कुछ मामलों में 'अध्यक्ष' को अपील की सुनवाई करने का अधिकार होता, तो कुछ संदेह भी किया जा सकता था। किन्तु यहां 'अध्यक्ष' के अपील सुनने के अधिकार-क्षेत्र का कोई प्रश्न नहीं है। उसका अधिकार-क्षेत्र तो समवर्ती है। गवर्नर को स्वयं क्षमा-दान की स्वतंत्रता है। यदि गवर्नर क्षमा नहीं करता, तो गवर्नर-जनरल क्षमा-दान के अपने अधिकार का प्रयोग करेगा। उन मामलों में, जिन में गवर्नर द्वारा क्षमा दे दी जायगी, 'अध्यक्ष' को वह क्षमा रद्द करके अपराधी को दण्ड देने का अधिकार नहीं है। यदि किन्हीं लोगों में इस विषय में कोई संदेह हों, तो मैं उन्हें बेकार बताने तथा दूर करने की कोशिश कर रहा हूं। फौजदारी

के मामलों में यदि गवर्नर किसी आदमी को क्षमा–दान करता है, तो वह आदमी बिना किसी क्षति के बच जाता है, किन्तु यदि गवर्नर क्षमा–दान नहीं देता, तो उस आदमी को 'अध्यक्ष' तक पहुंचने का मौका रहता है और 'अध्यक्ष' स्वयं हस्तक्षेप कर सकता है तथा प्राणदण्ड के मामलों में क्षमा–दान के अधिकार का प्रयोग कर सकता है। मुझे आशा है कि सभा कृपा करके यह संशोधन स्वीकार करेगी, जिसके द्वारा श्री गोपालस्वामी के इस संशोधन में वह ताकत शामिल करने की कोशिश की गई है, जो इस समय गवर्नर–जनरल द्वारा प्रयोग में लायी जाती है।

श्रीमान्, उन अन्य ताकतों के सम्बन्ध में, जो 'अध्यक्ष' को संघ–कानूनों के विरुद्ध होने वाले अपराधों के मामले में क्षमा–दान का एकाधिकार देने के लिये प्रदान की गयी हैं, मैं राज्यों से केवल यही अपील करूंगा कि जहां तक संघ–कानूनों के विरुद्ध अपराधों का सम्बन्ध है, वे 'अध्यक्ष' का वह अधिकार छीनने की कोशिश न करें। राज्यों ने समर्पण किया है, सोच–समझ कर वे आए हैं और रक्षा, परराष्ट्र विषय तथा यातायातादि (कम्यूनिकेशन्स) के सम्बन्ध में, वे यूनियन में सम्मिलित हो गए हैं। इन विभागों को चलाते रहने के लिए, कर–व्यवस्था सम्बन्धी अन्य बातों में भी वे सम्मिलित हो सकते हैं। यदि इन विभागों तथा इन कानूनों के खिलाफ अपराध हो सकते हैं, तो यह प्राकृतिक है कि जहां भी उनका प्रयोग किया जाये, 'अध्यक्ष' को ही उसकी ताकत रहनी चाहिये। राज्यों के शासकों को यह कदापि न खयाल करना चाहिये कि क्षमा–दान का उनका अधिकार छिन गया है। यूनियन में सम्मिलित होकर शासक ने स्वयं अपने राज्य के इस संघीय विषयों में दखल देने का अधिकार दिया है। इसलिये, इस प्रकार की आपत्ति का कोई मतलब नहीं है। यदि यह आपत्ति मान ली जाये, तो इसका अर्थ यह होगा कि जो चीज एक हाथ से दी गई वह दूसरे हाथ से ले ली गई। यदि रक्षा–व्यवस्था संघ–शासन को सौंपी गई है, तो उस विषय में किसी प्रकार का हस्तक्षेप या विरोध अध्यक्ष द्वारा आपत्ति पत्र के दायर करने पर दंडनीय होना चाहिये। इस मामले में प्रतिष्ठा का कोई प्रश्न नहीं है, वह भी विशेषकर जब राज्यों की प्रजा इस संशोधन के पक्ष में है। यहां पर राज्यों का प्रतिनिधित्व करने वाले मंत्रियों से मैं अपील करता हूं कि जहां तक संघीय विषयों की सम्बन्ध में क्षमा–दान का प्रश्न है, उन्हें राज्यों को संघ के अध्यक्ष को इसका पूर्णाधिकार देने से बचाने की कोशिश न करनी चाहिये। ऐसा इसलिये, क्योंकि रक्षा–व्यवस्था तथा वे अन्य विषय राज्यों के शासकों द्वारा ही संघ–शासन को सौंपे गये हैं। अन्यथा, जब तक अधिकार नहीं दिये जाते और वे क्रियान्वित नहीं किए जा सकते, केवल कानून पास करने से

[श्री एम. अनंतशयनम् आयंगर]

कोई लाभ न होगा। यदि संघ का 'अध्यक्ष' अथवा संघीय कार्यकारिणी एक ऐसा कानून कार्यान्वित करने की कोशिश कर रही है, जो उस अधिकार के अन्तर्गत है जो 'शासक' ने स्वयं दे रखा है, तो उसमें 'शासक' का कोई हस्तक्षेप उन ताकतों में हस्तक्षेप करना होगा, जो उसने 'अध्यक्ष' को दी हैं। मैं मंत्रियों से प्रार्थना करता हूं कि कृपा करके वे इस मामले पर विचार करें और सर एन. गोपालस्वामी आयंगर ने जिस संशोधन के मस्विदे का प्रस्ताव रखा है, उसमें कोई संशोधन न पेश करें। उनसे मेरा सादर अनुरोध है कि इस मामले को वे अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न न समझें। उन्होंने एक निश्चित कदम उठाया है, और यह उसी कदम के अधीन एक ताकत है, जो 'अध्यक्ष' को अवश्य प्रदान की जानी चाहिये। वर्ना, दोनों में संघर्ष ही होगा और केन्द्र को वह अधिकार दिया जाना बेकार हो जायेगा।

***अध्यक्षः** मूल वाक्यांश तथा संशोधनों पर अब बहस हो सकती है। मैं नहीं समझता कि अन्य कोई संशोधन भी हैं, जिनकी सूचना मुझे मिली हो।

***श्री मुहम्मद शरीफ** (मैसूर)**:** सभापति महोदय, इस अत्यंत जटिल प्रश्न पर सर एन. गोपालस्वामी आयंगर तथा श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने जो प्रशंसनीय भाषण किए हैं, उन्हें मैंने बड़े ध्यान से सुना है। यह प्रश्न जटिलता से पूर्ण है, इससे कोई भी इनकार नहीं कर सकता। मैं चाहता हूं कि इस प्रश्न की जटिलता के खयाल से, हमें उसकी भलाई-बुराई के विषय में अच्छी तरह से विचार कर सकने के लिए अधिक समय दिया गया होता, किन्तु चूंकि यह हमारे सामने रखा जा चुका है और आप चाहते हैं कि हम इसके विषय में अपने विचार प्रकट करें, मैं समझता हूं राज्य-प्रतिनिधियों के रूप में हमारे लिये यह बताना आवश्यक है कि इस मामले में हमारे क्या विचार हैं।

श्रीमान्, मैं जरूर मानता हूं कि जहां तक 'अध्यक्ष' का सम्बन्ध है, इस बात का खयाल करके कि उस पर शासन-व्यवस्था का भार है, उसको क्षमा-दान की ताकत रहनी चाहिये और फौजदारी-अधिकार-क्षेत्र में उठने वाले मामलों के सम्बन्ध में उसे सजाएं बदलने की भी ताकत रहनी चाहिए। ऐसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है कि उसे दया-दान का ताकत का प्रयोग करना हो। किन्तु श्रीमान्, आपसे मेरी अर्ज यह है कि जहां तक इस ताकत का सम्बन्ध है, वह केवल प्रान्तों तक ही सीमित रखी जानी चाहिए। यदि उसका असर शासकों की सर्व-सत्ता पर पड़ने दिया जायेगा, तो मेरी अर्ज है कि इसमें संघर्ष पैदा हो जायेगा। कांग्रेस पार्टी अनेक

बार कह चुकी है कि जहां तक जनता की सर्व-सत्ता का प्रश्न है, उस पर कोई असर न होगा। वाइसराय महोदय ने 25 तारीख को जो वक्तव्य दिया था, उसमें उन्होंने कहा था कि जहां शासकों का सम्बन्ध है, उन्हें किसी प्रकार के खतरे का डर न होना चाहिये। यह भी तर्क किया गया था कि जहां तक इस अधिकार का सवाल है, वह केवल संघीय विषयों के लिये होगा। कल हमने भाग 6 पर विचार किया था, जिसमें वाक्यांश 1 इस प्रकार है:

> ''किसी पूर्णतया संघीय विषय के लिये कानून बनाने में, संघ पार्लियामेंट, एक 'यूनिट' की सरकार पर, चाहे वह एक प्रान्त, एक देशी राज्य या अन्य इलाका हो, अथवा उस सरकार के किसी अफसर पर, उस विषय के सम्बन्ध में किन्हीं भी कार्यों को संघ-सरकार की ओर से संभालने का भार डाल सकती है।''

इस प्रकार जब हम कहते हैं कि जहां तक इन संघीय विषयों का प्रश्न है, उनकी शासन-व्यवस्था शासकों द्वारा चलायी जा सकेगी, तो मैं नहीं समझता कि क्या कारण है कि फौजदारी के अधिकार-क्षेत्र में, हम उनसे क्षमा-दान का अधिकार, दण्ड परिवर्तन का अधिकार, आदि छीन लें। जहां तक मैसूर का सम्बन्ध है, वहां श्रीमान्, महाराज ने इस राज-अधिकार का बहुत ही कम प्रयोग किया है। हर बात हाईकोर्ट के लिये छोड़ दी गयी है। महाराज बिल्कुल हस्तक्षेप नहीं करते। इस प्रकार फर्ज कीजिये कि यह ताकत उन्हें सौंपी ही जा रही है, तो भी उसके दुरुपयोग की कोई आशंका नहीं है। इसके खयाल से, मैं सर एन. गोपालस्वामी आयंगर द्वारा प्रस्तावित संशोधन से सहमत होने का निश्चय नहीं कर पा रहा हूं।

*__श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय__ (ग्वालियर): श्रीमान्, सभापति महोदय, मैं अपना दृष्टिबिन्दु प्रकट करने यहां उपस्थित हुआ हूं। मैं एक राज्य से आया हूं। मेरा खयाल है कि एक संघ-शासन में सर्व-सत्ता बट जाती है और सर्वसत्ता का कुछ अंश संघ-शासन को भी दिया जाता है। इसलिये यह उचित ही है कि 'अध्यक्ष' के लिये क्षमा-दान के जिस अधिकार की व्यवस्था की गयी है, कायम रहनी चाहिये। और यह ठीक भी नहीं है कि सर्व-सत्ता 'शासक' अपने हाथ में रखें। जब वे अन्य मामलों में अपनी सर्व-सत्ता संघ-शासन को सौंप रहे हैं, तो उन्हें यह अधि कार भी सौंपना चाहिये। इसलिये मेरी तजवीज है कि श्री अनंतशयनम् आयंगर तथा सर एन. गोपालस्वामी आयंगर का संशोधन अवश्य स्वीकार किया जाना चाहिये।

***श्री चेंगलराय रेड्डीः** श्रीमान् सभापति महोदय, सर एन. गोपालस्वामी आयंगर का सुबोध तथा विश्वासजनक भाषण सुनने के बाद मैंने सोचा था कि उन्होंने सभा के सामने जो मस्विदा पेश किया है, उस पर कोई विवाद न होगा। किन्तु मैं देखता हूं कि मैसूर के एक मेरे माननीय मित्र ने उसके सम्बन्ध में अपना मतभेद प्रकट किया है। यह मालूम किया जा सकता है कि स्मृति-पत्र में यह मस्विदा पहले पहल जिस रूप में रखा गया था, वह बहुत ही व्यापक था। इसके द्वारा सारे अपराधों के क्षमा-दान का अधिकार दिया गया था और मालूम होता था कि उससे संघ के अध्यक्ष को व्यापक ताकतें प्रदान की गयी हैं। पर मैं उन लोगों में से था, जिन्होंने समझा कि 8वें तथा 9वें वाक्यांशों को साथ लेते हुए भी, इस वाक्यांश के मस्विदे द्वारा वास्तव में व्यापक क्षमता नहीं दी गयी है, बल्कि वह ताकत कई शर्तों के साथ दी गयी है। किन्तु राज्यों के कुछ प्रतिनिधियों की ओर से इस संशोधन की सूचना दी गयी कि अध्यक्ष को दी जाने वाली क्षमा-दान अधिकार की यह ताकत केवल प्रान्तों में होने वाले अपराधों के लिये ही दी जानी चाहिये। श्रीमान्, यदि मुझे यह शब्द इस्तेमाल करने की इजाजत दी जाये, तो मैं कहूंगा कि इसके प्रत्यावेश के रूप में मैंने एक संशोधन की सूचना दी थी कि 'अध्यक्ष' को यह ताकत संघ-कानूनों के खिलाफ होने वाले अपराधों के सम्बन्ध में दी जानी चाहिये। श्रीमान्, मैं समझता हूं कि सर गोपालस्वामी आयंगर ने जो मस्विदा पेश किया है, वह दोनों पक्षों का खयाल करके रखा गया है और उससे इस सभा के सभी दलों को संतुष्ट होना चाहिये। श्रीमान्, हमें परायणता (निष्ठा) की उन भावनाओं में न बह जाना चाहिये, जो इस देश में अब तक विद्यमान् रही हैं। परायणता की नवीन भावनाओं का जन्म हो रहा है। जब हम उन राज्य के प्रति अपनी परायणता का विचार करें, जिनसे कि हम आये हैं, तो हमें यह बात न भूलनी चाहिये कि हमें उस संघ-शासन का भी परायण बनना है, जिसे हम अब इस देश में जन्म दे रहे हैं। *(हर्ष ध्वनि)* हमें परायणता का अपना भाव बदलना होगा; परायणता के हमारे इन भावों में सामंजस्य लाना आवश्यक है। हमें याद रखना चाहिये कि 'यूनिटों' का बल, संघ-शासन के बलवान् होने में है और संघ-शासन का बल भी 'यूनिटों' के बल में है। दोनों ही परस्पर निर्भर हैं। हमें छोटे विचारों से प्रभावित होकर, केवल 'यूनिट' के ही बल का अथवा अकेले 'संघ-शासन' के ही बल का खयाल न रखना चाहिये। मैं अनुरोध करना चाहूंगा कि हमें 'यूनिट' के बल को तथा 'संघ-शासन' के बल को एक सम्मिलित बल के रूप में देखना चाहिये। जिस हद तक राज्य अपने अधिकार संघ-शासन को सौंपेगा, उसी हद तक उन्हें संघ-कानूनों के विरुद्ध होने वाले अपराधों के सम्बन्ध में क्षमा-दान, आदि की ताकत 'अध्यक्ष' को देनी होगी। मैं यहां तक कहूंगा कि

संघ-कानूनों के खिलाफ होने वाले अपराधों के सम्बन्ध में, संघ-शासन के अध्यक्ष को सर्वोच्च अधिकारी होना चाहिये। इसलिये मेरा अनुरोध है कि सर गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन का मस्विदा दोनों पक्षों का खयाल करके बना होने के कारण, वह इस सभा के सभी दलों को स्वीकार्य होना चाहिये। यदि मुझे यह कहने की इजाजत हो तो मैं कहूंगा कि हमें बादशाह के प्रति, स्वयं बादशाह से भी अधिक भक्ति परायण न बनना चाहिये। देशी राज्यों के उन शासकों को भी, जो संघ-शासन में सम्मिलित हो रहे हैं, आंखें खोल कर और संघ में शमिल होने से जो बातें पैदा होती हैं वे सब स्वीकार करने के लिये तैयार होकर, ऐसा करना चाहिये, न कि हर तरह की शर्तों के साथ। श्रीमान्, इस प्रकार के एक दो प्रश्नों पर हमें साफ-साफ बात करनी चाहिये। इन प्रश्नों से बचने की हमें कोशिश न करनी चाहिये। संघीय विषय के सम्बन्ध में, मेरे दिमाग में इस समय केवल रक्षा-व्यवस्था, परराष्ट्र विषय तथा यातायात व्यवस्था ही है, और संघ-कानूनों के विरुद्ध होने वाले अपराधों के सम्बन्ध में, सर्वोच्च अधिकारी 'अध्यक्ष' ही होना चाहिये। यदि सारी समस्या पर हम उदारता, राजनीतिज्ञता तथा देश-प्रेम से पूर्ण दृष्टि से विचार करें, तो यही वह स्थिति है जिसे हमें स्वीकार करना होगा। मुझे आशा है कि सर गोपालस्वामी आयंगर ने जिस संशोधन का प्रस्ताव रखा है और जिसका समर्थन, उन्होंने इतने सुबोध तथा तर्कयुक्त ढंग से किया है, उस पर कोई आपत्ति न की जायेगी। राज्यों के हित के लिये, संघ-शासन के हित के लिये और सारे भारत के हित के लिये मैं बिना किसी शर्त के उनके संशोधन का पूर्ण समर्थन करता हूं।

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें)**:** श्रीमान्, क्या इस समय वाक्यांश पर और साथ ही संशोधनों पर भी बहस चल रही है?

***अध्यक्षः** हां, वाक्यांश तथा संशोधनों पर।

***सर बी.एल. मित्तरः** श्रीमान्, मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं देना चाहता हूं और सभा से उसे वापस लेने की इजाजत चाहता हूं।

***अध्यक्षः** क्या सभा, सर बी.एल. मित्तर को अपना संशोधन वापस लेने की इजाजत देती है?

***श्री हिम्मतसिंह के. महेश्वरी** (सिक्किम व कूच बिहार समूह)**:** किन्तु श्रीमान्, अन्य लोग भी हैं जिनके पास ऐसे ही संशोधन हैं, पर उन्होंने उनके प्रस्ताव इसलिए नहीं रखे, क्योंकि सर बी.एल. मित्तर ने अपना संशोधन पेश किया था। श्रीमान्, क्या मैं कुछ शब्द बोल सकता हूं?

***अध्यक्षः** निश्चय ही।

***श्री हिम्मतसिंह के. महेश्वरीः** श्रीमान्, अपने गुरू सर गोपालस्वामी आयंगर का भाषण, मैंने बड़े ध्यान तथा आदर के साथ सुना, किन्तु उनके प्रति उचित सम्मान के साथ मुझे कहना चाहिये कि मैं उससे प्रभावित नहीं हुआ हूं। मैं समझता हूं कि उनका मुख्य तर्क यही था कि चूंकि प्रान्तों के गवर्नरों को क्षमा-दान का अधिकार न रहेगा, इसलिये राज्य के शासकों द्वारा मुक्त क्षमा-दान की वर्तमान ताकत भी कम कर दी जानी या ले ली जानी चाहिये।

***सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, मुझे निश्चय नहीं है कि मैंने जो कहा है, इस रूप में कहा है।

***श्री हिम्मतसिंह के. महेश्वरीः** मैं गलती स्वीकार करता हूं। उनका खयाल यह मालूम देता है कि यह कम या अधिक, घबराहट का प्रश्न था। इस बात से मैं उनसे सहमत हूँ। भले ही कुछ हो, राज्य की सीमा के अन्दर 'शासक' की प्रतिष्ठा कायम रखना है, और यदि आप उससे न्याय-वितरण की वह ताकत भी छीन लें जिसका उपभोग, वह अभी तक करता आया है, तो उसकी प्रतिष्ठा पर इसका बुरा प्रभाव पड़ेगा और वह भी राज्य-सीमा के भीतर ही। अपने 5 जुलाई के वक्तव्य में माननीय सरदार पटेल ने नरेशों को यह आश्वासन दिया था कि हमारा मुख्य उद्देश्य एक-दूसरे का दृष्टिकोण समझने और ऐसे निर्णय पर पहुंचने का होना चाहिये जो सबको स्वीकार्य तथा देश के लिये सर्वाधिक हितकर हो। श्रीमान्, इस आश्वासन के प्रकाश में, मैं यह सुझाने का साहस करता हूँ कि इस मस्विदे के निर्माताओं को सारी स्थिति पर एक बार फिर विचार करना और देखना चाहिये कि क्या इसका कोई अच्छा रास्ता नहीं निकाला जा सकता। कठिनाई मुख्यतः एक बात के सम्बन्ध में पैदा होती है जो अदालतें संघ-कानून में आने वाले मुकदमों की सुनवाई करेंगी, राज्यों की अदालतें होंगी। इस प्रकार राज्य की अदालत तो, एक व्यक्ति को संघ कानून के अनुसार सजा देगी और राज्य की हाईकोर्ट उस सजा को बहाल रखेगी और फिर इतने सबके बाद, एक बाहरी सत्ता उस सजा की माफी दे देगी। ऐसे मामले में कुछ जटिलता तथा कुछ बेचैनी और

सम्भवत: संघर्ष भी पैदा हो सकती है। इस सबसे बचने के लिये, श्रीमान्, मुझे यह वांछनीय जान पड़ता है कि विधान-विशेषज्ञ इस विषय पर एक बार फिर एक साथ विचार करें। मैं स्वयं, इस मामले में कोई ऐसा समझौता या निश्चय नहीं चाहता जिससे अप्रसन्नता का कोई भाव पैदा हो जाये या जिससे कोई गलतफहमी पैदा हो; विशेषकर इसलिये, क्योंकि मुझ से पहले बोलने वाले कुछ वक्ताओं ने अपने भाषणों से यह संकेत दिया है अथवा सुझाया है कि इस मामले से कुछ उत्तेजना भी पैदा हुई है। जहां तक साधारण कानून के अन्तर्गत अपराधों का सम्बन्ध है, ताकतों का प्रश्न बिल्कुल नहीं उठता। असली मस्विदे से वह ताकत भी छिन गई थी। अब इस मसविदे में संशोधन हो गया है और यह स्पष्ट कर दिया गया है कि साधारण कानून के अन्दर आने वाले अपराध शासकों के ही पूर्ण अधिकार में रहेंगे और देश के साधारण कानूनों के अधीन दिये जाने वाले क्षमादान शासकों के ही पूर्ण अधिकार में रहेंगे। किन्तु इससे भी स्थिति में पर्याप्त सुधार नहीं होता। संशोधित मस्विदे में एक वाक्यांश है, जो इस प्रकार है:

> ''संघ-कानून द्वारा यह ताकत अन्य अधिकारियों को भी प्रदान की जा सकती है।''

विचार यह मालूम देता है कि ये ताकतें समवर्ती रूप में प्रान्त के गवर्नर को भी प्रदान की जायें। जहां तक राज्यों के शासकों का सम्बन्ध है, उनको कोई ताकत देने का सवाल हो ही नहीं सकता क्योंकि वे पहले से ही ऐसी ताकत का प्रयोग करते हैं। अतएव, इस वाक्यांश के प्रकाश में सारी स्थिति पर फिर विचार करना और भी जरूरी है। सबको अपने रुख के सम्बन्ध में पुन: सोच-विचार कर सकने का मौका देने के लिये, यदि 'सभा' इस वाक्यांश का विचार स्थगित करने को सहमत होगी, तो मैं बहुत कृतज्ञ होऊंगा।

श्री के.एम. मुंशी (बम्बई: जनरल): श्रीमान्, यह प्रश्न बड़े ही वैधानिक महत्व का है, और मेरी अर्ज है कि केवल राज्यों के शासकों या प्रान्तों के गवर्नरों के अधिकारों के खयाल से अथवा उस विषय के लिये, 'जाब्ता फौजदारी कानून' या वर्तमान भारत शासन-विधान की व्यवस्थाओं के खयाल से ही, उस पर विचार नहीं किया जा सकता। वास्तव में श्रीमान्, जैसा कि सर्व-ज्ञात है, संघ-शासन में एक नागरिक, अपने अधिकारों व दायित्वों के लिये, केन्द्र से प्रत्यक्ष रूप में सम्बन्धित होता है। प्रत्येक नागरिक की राजभक्ति, चाहे वह किसी देशी राज्य में हो या प्रान्त में जहां तक यूनियन का प्रश्न है, प्रत्यक्ष होगी। संघ-कानून प्रत्येक नागरिक

[श्री के.एम. मुंशी]

पर प्रत्यक्ष रूप में लागू होंगे, और इस कानून से सम्बन्ध रखने वाला कोई अपराध केवल उस राज्य या प्रान्त के ही विरुद्ध अपराध नहीं है, बल्कि संघ-सरकार के विरुद्ध अपराध है। इसलिये, वैधानिक सिद्धान्त के अनुसार, दण्ड-स्थगन अथवा क्षमा-दान के अधिकार का, संघ के प्रधान अर्थात् अध्यक्ष में स्थिर करना आवश्यक है। और मेरी अर्ज है कि यहां तक स्थिति निर्विवाद है। सभी शामिल होने वाले राज्य, जब वे संघ-शासन में आते हैं, यूनियन का एक अंग बन जाते हैं और अपने राज्यों में संघ-कानूनों का अनुसरण स्वीकार कर लेते हैं। उस हद तक वे स्वीकार कर लेते हैं कि संघ-कानून के क्षेत्र में, संघ-शासन सर्वोच्च सत्ता है और संघ-सरकार के प्रतिनिधि के रूप में केवल 'अध्यक्ष' ही अन्तिम तथा प्रथम सत्ताध ारी हो सकता है, जो दण्ड-स्थगन अथवा क्षमा-दान स्वीकार कर सकता है। यही कारण है कि अमेरिकन विधान में, जैसा कि सर्वज्ञात है, संयुक्त राष्ट्र (अमेरिका) के विरुद्ध अपराधों के लिये दण्ड-स्थगन या क्षमा-दान मंजूर करने का अधिकार 'अध्यक्ष' को ही दिया गया है। मेरी अर्ज है कि हमारे लिये भी, वैसी व्यवस्था, न केवल वैधानिक सिद्धान्त की दृष्टि से, बल्कि निपुणता की दृष्टि से भी आवश्यक है। श्रीमान्, स्थिति यह है। मेरे माननीय मित्र सर गोपालस्वामी आयंगर ने आय कर कानूनों का जिक्र किया है। किन्तु अन्य संघ-कानून भी हो सकते हैं—भगोड़े अपराधियों को दूसरे देश की सरकार को सौंपने से सम्बन्ध रखने वाले कानून, नागरिकता-प्रदान, रक्षा-व्यवस्था, पर-राष्ट्र, विषय, तथा संघ-सरकार के विरुद्ध राजद्रोह से सम्बन्ध रखने वाले कानून—जो, 'केन्द्र' के अस्तित्व के लिये अत्यधिक महत्व के विषय हैं; और इसीलिये, मेरी अर्ज है कि क्षमा-दान की ताकत संघ-सरकार के प्रधान के सिवा और किसी को नहीं दी जा सकती। यदि यह अधिकार राज्य के शासक को या प्रान्तीय गवर्नर को दिया गया, तो संयोग की स्थिति में इसका परिणाम विनाशकारी सिद्ध होगा। उदाहरणार्थ, यह लीजिये। सिद्धान्ततः गवर्नर या शासक को—क्योंकि उनकी स्थिति एक ही सी होगी—उस राज-अधिकार का, जिसका 'यूनियन' के प्रधान में पूर्णरूपेण स्थिर रहना आवश्यक है, केवल एक भाग ही सौंपा जायेगा। मेरी अर्ज है कि यह सिद्धान्त के प्रतिकूल है। किन्तु इससे पृथक, व्यवहार में असमानता भी होगी। फर्ज कीजिये कि प्रांत 'ए' में उत्तरदायी मंत्रिमंडल अपने मत का एक निश्चय करता है और गवर्नर को किसी व्यक्ति-विशेष को रिहा करने की सलाह देता है, इसकी कोई अपील नहीं है। किन्तु, फिर एक दूसरे प्रान्त में इससे भिन्न मत का निश्चय किया जाता है। इस प्रकार आप देखेंगे कि एक ही अपराध के लिये, एक प्रान्तीय गवर्नर क्षमा-दान देता है, और दूसरा गवर्नर क्षमा-दान नहीं देता और हमें यह भी मान लेना चाहिये कि राज्यों के शासक

सदा-सर्वदा के लिये ही पूर्णाधिकारी स्वल्प सत्ताधारी बने रहेंगे, जैसा कि वे समझते हैं कि आज हैं। बहुतेरे राज्य, एक अंश में उत्तरदायी शासन-व्यवस्था जारी कर चुके हैं। मुझे संदेह नहीं है कि देश की आम प्रगति, प्रत्येक राज्य को अपनी सरकार में उत्तरदायित्व का कुछ न कुछ अंश रखने के लिये बाध्य करेगी। और ऐसी स्थिति के आने पर तो, दण्ड-स्थगन तथा क्षमा-दान के अधिकार का जो प्रयोग करेगा, वह शासक न होगा, बल्कि राज्य का मंत्रिमंडल होगा जो शासक को परामर्श देगा और 'शासक' उसके परामर्श से क्षमा-दान करेगा। एक उदाहरण विचार में आता है; हो सकता है कि एक विशेष प्रकार के अपराधी को जेल में रहने देना किसी प्रान्त या राज्य के अनुकूल न हो। युद्ध-काल का एक मामला लीजिये; ऐसे मामले आयरलैंड तथा इंग्लैंड में हुये हैं, पर मैं उनका विवरण देना नहीं चाहता। युद्ध में प्राय: ऐसा हुआ है कि राज्य-विरोधी कुछ अपराधों के सम्बन्ध में विभिन्न मत निर्धारित किये गये हैं। ऐसी हालत में क्या होगा, यदि केन्द्र की इच्छा तथा नीति के विरुद्ध यूनिटों के मंत्रिमंडल, दण्ड-स्थगन अथवा क्षमा-दान स्वीकार करने का कार्य स्वयं अपने हाथ में ले लें? यदि राज्यों तथा केन्द्र की नीतियां विभिन्न प्रकार की हैं और राज्य एक श्रेणी के अपराधों के लिये दण्ड-स्थगन स्वीकार करना चाहते हैं—और जैसा कि आप जानते ही हैं, दण्ड-स्थगन का अर्थ किसी सजा का मुल्तवी करना है—तथा यदि यह ताकत 'अध्यक्ष' को नहीं बल्कि गवर्नर या 'शासक' को सौंपी गयी है, तो इससे जटिल समस्यायें पैदा हो जायेंगी। इसलिये मेरी अर्ज है कि संघ-सरकार के विरुद्ध एक अपराध, वास्तव में पूरी 'यूनियन' का एक नागरिक होने के नाते संघ-सरकार के प्रति प्रत्येक नागरिक की राज-भक्ति पर आधारित है। अतएव, इस सिद्धान्त के अनुरूप, दण्ड-स्थगन तथा क्षमा-दान की ताकत का संघ-सरकार के अध्यक्ष में स्थिर रहना आवश्यक है और वह उससे पृथक नहीं की जा सकती है।

अन्य बातों के सम्बन्ध में तो श्री अनन्तशयनम् आयंगर का संशोधन है ही। यदि मेम्बरों की इच्छा है कि मौत की सजाओं के सम्बन्ध में प्रान्तों को, 'अध्यक्ष' के साथ समवर्ती अधिकार रहना चाहिये, तो इसमें कोई कठिनाई नहीं है। अब रहा राज्यों के सम्बन्ध में, सो मैं अपनी ओर से इसके लिये बहुत उत्सुक नहीं हूं कि राज्य-कानूनों के विषय में, अध्यक्ष को कोई समवर्ती अधिकार दिये जाने चाहियें। पर हमें एक अति महत्वपूर्ण बात नहीं भूलनी चाहिये। राज्य दो प्रकार के हैं, छोटे और बड़े। संघ में सम्मिलित होने वाले राज्य, उन बड़े राज्यों की

[श्री के.एम. मुंशी]

बराबरी के नहीं हैं, जिनके प्रतिनिधियों को आप यहां अग्रिम पंक्तियों में बैठे देख रहे हैं। ऐसे राज्य भी हैं, जो मौजूदा स्थितियों में प्रभुशक्ति के किसी-न-किसी प्रतिनिधि की अनुमति बिना, मौत की सजा देने के अधिकारी नहीं हैं। मैं वस्तुतः जानता हूं कि बहुतेरे छोटे राज्य जब मौत की सजा देते भी हैं, तो उन पर प्रभुशक्ति के प्रतिनिधि से प्रभाव डलवाया जाता है। इसलिये, सारे देश को मिलकर इस बात पर विचार करना है कि क्या उन बहुत छोटे राज्यों को, जो ऐसी ताकत का उपभोग नहीं करते, स्वेच्छानुसार तथा अनियंत्रित रूप में प्राण-दण्ड देने और दण्ड-स्थगन तथा क्षमा-दान स्वीकार करने का निःसीम अधिकार दिया जाना चाहिये। ये ही जटिलतायें हैं, तो पूर्ण रूप से विचार किये जाने के लिये एक कमेटी को सौंपी जा सकती हैं। किन्तु प्रथम तथा मूल प्रश्न के बारे में मेरी अर्ज है कि संघ-कानून सम्बन्धी सारे मामलों में दण्ड-स्थगन तथा क्षमा-दान स्वीकार करने का अधिकार 'अध्यक्ष' से छीन लेना, संघ-सरकार के प्रति एक नागरिक की प्रत्यक्ष राज-भक्ति के साथ हस्तक्षेप करना है। श्रीमान्, यही मेरी अर्ज है।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** श्रीमान्, सर गोपालस्वामी आयंगर द्वारा इतने योग्यता-पूर्वक पेश की गयी तजवीज के समर्थन में तथा श्री अनन्तशयनम् आयंगर के संशोधन के भी समर्थन में, मैं कुछ शब्द बोलना चाहता हूं। पहले तो मुझे इउ बात का हर्ष है कि कुछ राज्यों के प्रजाप्रिय प्रतिनिधि आगे बढ़े हैं और उन्होंने इस तजवीज का समर्थन किया है कि संघ-शासन प्रणाली का यह प्रकृत परिणाम है कि संघ-शासन के 'अध्यक्ष' को क्षमा-दान का जन्मजात अधिकार रहना चाहिये।

एक माननीय सदस्यः श्रीमान, क्या मैं जान सकता हूं कि 'प्रजा-प्रिय प्रतिनिधि' शब्दों में क्या आक्षेप निहित है? क्या अन्य लोग प्रजा-अप्रिय प्रतिनिधि हैं?

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** मेरे कहने का मतलब यह नहीं है कि अन्य लोग प्रजा-अप्रिय-प्रतिनिधि हैं, किन्तु मैं नहीं मानता कि अफसर लोग प्रजा-प्रिय प्रतिनिधि हैं, क्योंकि मेरा विश्वास है कि कुछ राज्यों का प्रतिनिधित्व शासकों के प्रतिनिधियों और प्रजा के प्रतिनिधियों के बीच बटा हुआ है। इसमें शक नहीं कि दोनों ही, राज्य का प्रतिनिधित्व करते हैं, किन्तु व्यावहारिक तथा सामान्य बुद्धि की दृष्टि से, प्रतिनिधियों की इन दोनों श्रेणियों में अन्तर है। आप चाहें तो, मेरी बात को इस उक्ति या संशोधन के साथ समझ सकते हैं; पर इस

बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि जिस भाव से मैं उन शब्दों का प्रयोग करता हूं उस अर्थ में, इन प्रजा-प्रिय-प्रतिनिधियों और सरकार या शासक द्वारा चुने गये एक प्रतिनिधि में बहुत बड़ा फर्क है।

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी** (मैसूर): हम सभी लोग निर्वाचित हैं, न कि नामज़द।

***डा. बी. पट्टाभि सीतारमैया** (मद्रासः जनरल): मैं व्यवस्था-सम्बन्धी एक बात कहना चाहता हूं। ये प्रश्न मुख्य बात से पृथक हैं। मैं चाहता हूं कि पार्श्व-प्रश्न न उठाये जायें और न उन पर बहस हो। आप श्रीमान्, ऐसा न होने दें।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** राज्य, एक 'संघीय यूनियन' के मेम्बरों की हैसियत से शामिल हो रहे हैं।

***सर बी.एल. मित्तर:** श्रीमान्, व्यवस्था-सम्बन्धी एक बात है। मैंने अपना संशोधन वापस लेने की अनुमति मांगी है। इसलिये इस तर्क पर बहस की आवश्यकता नहीं है कि आया राज्यों को यह ताकत रहनी चाहिये या नहीं।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** उदाहरणार्थ, काठियावाड़ के प्रतिनिधि ने कुछ ऐसे भाषण किये हैं कि 'अध्यक्ष' को ये ताकत न रहनी चाहिये।

***अध्यक्ष:** कठिनाई यह है कि यद्यपि सर बी. एल. मित्तर ने अपना संशोधन वापस लेने के लिये सभा की अनुमति मांगी है, पर एक मेम्बर ने ऐसी अनुमति दिये जाने पर आपत्ति की है। मामला, यहां आकर रुक गया है।

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** यदि संशोधन वापस लेने की अनुमति दे दी गयी होती, तो किये गये बहुतेरे भाषण, जिनमें श्री मुंशी की वक्तृता भी सम्मिलित है, व्यवस्था के प्रतिकूल हो जाते। यदि वास्तव में सब लोग एक ही बात पर राजी हैं, तो बहस की एकदम जरूरत ही न थी।

संघ-शासन प्रणाली का प्रथम सिद्धान्त यह है कि संघ-कानून से प्रत्येक नागरिक बंधा है और एक नागरिक तथा संघ-सरकार के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। और संघ-कानून का उल्लंघन होने पर, संघ-शासन के प्रतिनिधि अर्थात् अध्यक्ष को उस संघ-कानून के विरुद्ध किसी अपराध को क्षमा करने का जन्मजात अधिकार अवश्य रहना चाहिये। सर एन. गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन का यही सिद्धान्त है। सर्व-सत्ता के सम्बन्ध में कोई प्रश्न उठाने की कोई बात ही नहीं है, क्योंकि राज्य

[सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

वैसे चाहे जो हों, एक बार जब वे संघ-शासन में सम्मिलित हो जाते हैं, तो 'यूनियन' को सौंपे गये विषयों के सम्बन्ध में उस सीमा तक वे अपनी सर्व-सत्ता का समर्पण भी करते हैं। राज्य, इतने से संतोष कर सकते हैं कि अन्य सारे मामलों में उन्हें सर्व-सत्ता के पूर्ण अधिकार प्राप्त हैं; किन्तु जो विषय वे यूनियन को सौंपते हैं उनके सम्बन्ध में उनकी सर्व-सत्ता-सम्पन्नता समाप्त हो जाती है। किसी राज्य के 'शासक' या राज्य की प्रजा के प्रति उक्त विषयों के सम्बन्ध में सर्व-सत्ता का प्रतिबन्धित होना, सम्मान के विरुद्ध नहीं है, क्योंकि यह तो किसी भी संघ-व्यवस्था का सार ही है। अमेरिकन यूनियन के महान् राज्य बहुत से विषयों में अब भी सर्व-सत्ता सम्पन्न हैं, किन्तु संघीय क्षेत्र में उन्हें सर्व-सत्ता प्राप्त नहीं है। सभी संघीय विधानों का यही स्वीकृत सिद्धान्त है। प्रस्तुत संशोधन केवल संघ-कानूनों के विरुद्ध अपराधों के सम्बन्ध में है। यदि इस पर किसी को कोई आपत्ति हो सकती है तो वह प्रान्तों को हो सकती है, क्योंकि प्रान्तीय सरकारों को संघीय विषयों के सम्बन्ध में क्षमा-दान की ताकत अब तक प्राप्त थी। राज्यों को संघीय आधार पर प्रान्तों के समान अवस्थित करने के ही लिये केवल प्रान्तीय प्रतिनिधि, संघीय विषय सम्बन्धी क्षमा-दान की ताकत, यूनियन के 'अध्यक्ष' में पूर्णतः स्थिर होने देने को राज़ी हैं। यदि कोई रिआयत की जा रही है, तो वह प्रान्तों के अधिकार-समर्पण द्वारा ही की जा रही है। वे अपना एक ऐसा अधिकार त्याग रहे हैं, जिसका प्रयोग वे वर्तमान भारत-शासन-विधान के अनुसार अब तक करते आये हैं। साथ ही, यह भी साफ तौर से समझ लिया जाना चाहिये कि जब प्रान्तीय विधान तैयार हो, तो समवर्ती तथा प्रान्तीय सूची के विषयों के सम्बन्ध में क्षमा-दान का अधिकार, प्रान्तीय गवर्नरों को प्रदान किया जाये। जहां तक इन विषयों का ताल्लुक है, क्षमा-दान की ताकत प्रान्तीय सरकार के प्रधान में अवस्थित करने के सम्बन्ध में उक्त विधान में इसी प्रकार की व्यवस्था अवश्य रखी जानी चाहिये।

सर एन. गोपालस्वामी आयंगर ने आश्वासन दिया है, और यह आश्वासन उसी भाव से दिया गया है जिस भाव से कोई भी वक्ता किसी प्रस्ताव के सम्बन्ध में आश्वासन दे सकता है कि बाद में उपयुक्त अवसर आने पर इस मामले पर विचार किया जायगा तथा उस सम्बन्ध में संशोधन का आवश्यक प्रस्ताव रखा जायगा। यह प्रान्तीय क्षेत्र के विषय में है।

अब, केवल प्राण-दण्ड सम्बन्धी बात रह जाती है। ख्याल किया गया कि यद्यपि तर्कतः प्राण-दण्डों के सम्बन्ध में कोई अपवाद रखने की आवश्यकता नहीं है,

किन्तु इस विचार से कि एक प्रान्त के नागरिक ने अब तक इस विशेषाधिकार का उपभोग किया है, उसे केन्द्र व प्रान्त दोनों की सहायता के आवेदन के विशेषाधिकार से वंचित करना अकारण समझा गया। श्री अनन्तशयनम् आयंगर के संशोधन का यही भाव है, और मैं उसका समर्थन करता हूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, सभापति महोदय! इस विषय के, जिसकी बहस में दबी हुई सी गर्मी भी पैदा हो गयी है, मैं केवल एक पहलू पर कुछ बोलना चाहता हूं। वह यह है कि हम उन राज्यों के मामले पर विचार कर रहे हैं, जो रक्षा-व्यवस्था, पर-राष्ट्र विषय तथा यातायात (कम्यूनिकेशन्स) के तीन विषयों के सम्बन्ध में संघ-शासन में सम्मिलित हो रहे हैं। सभी संघीय विधानों का यह सिद्धान्त है कि इन विषयों से सम्बन्ध रखने वाले अपराध भी उसी अधिकार-सीमा के अन्दर होने चाहियें ताकि संघ-शासन उन विषयों का काम-काज चला सके जो उसके सुपुर्द किये गये हैं। जरूरी है कि कुछ कर भी उसके जिम्मे दिये जायें, और वस्तुतः इन करों से सम्बन्ध रखने वाले अपराधों को भी, संघ-शासन को ही निपटाना चाहिये।

अब, श्रीमान्, मेरी अर्ज़ है कि जब कोई राज्य संघ-शासन में शामिल होता है, तो वह राज्य अपनी सारी सर्व-सत्ता तथा ताकत संघ-शासन को पूर्णतः समर्पित कर देता है, और इसका अर्थ यही निकलता है कि कुछ विषयों से सम्बन्ध रखने वाले अपराधों तथा उन विषयों की कर-व्यवस्था से सम्बन्ध रखने वाले अपराधों का अधिकार-क्षेत्र भी, वह समर्पित कर देता है। और यदि स्थिति ऐसी है तो यह एक स्वेच्छा-पूर्ण समर्पण का कार्य है। इस सम्बन्ध में कोई भी भ्रम न रहना चाहिये कि इस ताकत के समर्पण में, अपराधों को क्षमा करने अथवा सजा को बदल देने के सर्व-सत्ता-पूर्ण अधिकारों का समर्पण भी सम्मिलित है। परिस्थिति ऐसी होते हुये, मेरी अर्ज़ है कि इस सम्बन्ध में जो विवाद उठ खड़ा हुआ है तथा भावावेश-पूर्ण जो बातें कही गयी हैं, केवल गलतफहमी से ही हुई हैं। मेरा निवेदन है कि यदि इस समस्या पर इस दृष्टि-बिन्दु से देखा जाये कि कुछ आवश्यक ताकतों का समर्पण हुआ है, तो उससे यही निष्कर्ष निकलता है कि क्षमा-दान तथा अन्य ताकतें 'यूनियन' के 'अध्यक्ष' में ही अव्यवस्थित होनी चाहियें। इस विषय पर मुझे इतना ही कहना है।

***श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार: जनरल): श्रीमान्, अब सभा से प्रश्न किया जा सकता है।

***अध्यक्ष:** प्रश्न है कि अब सभा से प्रश्न किया जाये।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, बहस के उत्तर के रूप में मुझे बहुत कम कहना है। मेरे संशोधन के प्रस्ताव की कुछ सदस्यों ने जो आलोचना की थी, उसका उत्तर अन्य सदस्यों ने बहुत ही संतोषजनक रूप में दे दिया है। अतएव, मेरे कुछ कहने की वास्तव में बहुत कम गुंजाइश है।

श्री अनन्तशयनम् आयंगर के संशोधन के सम्बन्ध में केवल दो बातों का उल्लेख करने की जरूरत है। एक यह है कि यदि यह संशोधन उनकी तज़वीज के मुताबिक, केवल प्रान्तों तक के ही लिये सीमित रखा जाता है, तो इससे प्रान्तों और राज्यों का विभेद उत्पन्न हो जायेगा। यह पहली बात है। दूसरी बात यह है कि उस प्रकार, प्रान्तों से हम उस ताकत में से कुछ और ले लेंगे जो मेरा संशोधन उन्हें पूर्णत: प्रदान करता। पर यह छोटी-सी बात है। यदि सभा सहमत है कि मौत की सजाओं के मामले में, संघ-शासन के अध्यक्ष को केवल प्रान्तों के ही साथ समवर्ती सत्ता प्राप्त रहनी चाहिये, तो मैं अपनी ओर से इस पर कोई आपत्ति न करूंगा। राज्यों को इस मामले में अपना रास्ता खुद पसन्द करने के लिये हम स्वतंत्र छोड़ देंगे।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर मत (वोट) लूंगा। पहला संशोधन श्री अनन्तशयनम् आयंगर का है, कि सर गोपालस्वामी आयंगर द्वारा प्रस्तावित संशोधन के अन्त में, निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

> ''जहां किसी प्रान्त में किसी व्यक्ति को मौत की सज़ा दी गयी हो, अध्यक्ष को सजायें मुल्तवी करने, उनमें छूट देने तथा उन्हें बदलने की वे सारी ताकतें प्राप्त रहेंगी, जो उस प्रान्त के गवर्नर को प्राप्त हों।''

संशोधन सभा द्वारा स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं सर गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन को, श्री अनन्तशयनम् आयंगर द्वारा संशोधित रूप में, मत-दान के लिये रखूंगा।

संशोधित संशोधन सभा द्वारा स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं मूल वाक्यांश को, उसके संशोधित रूप में मत के लिये रखूंगा।

वाक्यांश 7 संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** अब हम वाक्यांश 14 पर विचार करेंगे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, इस वाक्यांश को मैं पहले ही सभा के सामने पढ़ चुका हूं, और मैं नहीं समझता कि अब मुझे उसे फिर पढ़ने की आवश्यकता है। इस वाक्यांश विशेष के सम्बन्ध में बहुतेरे संशोधनों की सूचना दी गयी थी और स्वाभाविकतः इस बात की कोशिश की गयी है कि क्या इन संशोधनों के रूप में व्यक्त किये विभिन्न दृष्टि-बिन्दु एक में मिलाये जा सकते हैं और सभा द्वारा सर्वसम्मति से स्वीकार किये जाने के लिये, समझौते से तय कोई व्यवस्था उसके सामने पेश की जा सकती है। श्रीमान्, आज सवेरे मैंने एक संशोधन की सूचना देने की स्वतंत्रता का उपयोग किया है जो मेरी समझ में, उपस्थित कठिनाइयों का सम्मत हल मालूम देता है। यदि सभा चाहे कि मैं यह संशोधन पेश करूं और यदि वह स्वीकार हो जाये, तो अन्य संशोधन पेश करने की आवश्यकता नहीं है। मैं इसे पेश करने को तैयार हूं।

***अध्यक्षः** कृपया इसे पेश कीजिये। अथवा, क्या आपका खयाल है कि हम लोग दूसरे संशोधनों पर विचार करें?

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** यदि यह संशोधन स्वीकार कर लिया गया, तो मेरा खयाल है कि अन्य संशोधनों को पेश करने की कोई जरूरत न रहेगी।

श्रीमान्, जो संशोधन मैं पेश करना चाहता हूं, यह है कि वाक्यांश 14 के उपवाक्यांश (1) की (ए), (बी) तथा (सी) मदों के स्थान में, निम्नलिखित रखा जाये:

''(ए) 'राज-सभा' का संख्या-बल इस रूप में निर्धारित किया जायेगा कि वह, लोक-सभा के संख्या-बल के आधे से अधिक न हो। कार्य-मूलक निर्वाचन क्षेत्रों (फंक्शनल कांस्टिटुएंसीज़) द्वारा अथवा सन् 1937 के आयरिश विधान की 18 (7) धारा की व्यवस्था के अनुरूप निर्मित मण्डलों (पैनेल्स) द्वारा 'राज-सभा' के 25 से अधिक मेम्बर न निर्वाचित होंगे। 'राज-सभा' के मेम्बरों का शेषांश, 'यूनिटों' के प्रतिनिधि निर्वाचन-क्षेत्रों द्वारा, सविवरण निश्चित किये जाने वाले पैमाने के हिसाब से निर्वाचित होंगे।

शर्त यह है कि देशी राज्यों का कुल प्रतिनिधित्व, इस शेषांश के 40 प्रतिशत से अधिक न हो।

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

स्पष्टीकरण–'यूनिट' से अर्थ है एक प्रान्त या देशी राज्य का, जो स्वयं अपने व्यक्तिगत अधिकार से संघीय पार्लियामेंट के लिये मेम्बर चुन कर भेजता है। उन देशी राज्यों के सम्बन्ध में, 'राज-सभा' में प्रतिनिधि भेजने के लिये जिनकी एक साथ गुटबन्दी हुई है, 'यूनिट' का अर्थ इस प्रकार निर्मित गुट से है।

(बी) 'राज-सभा' के लिये हर 'यूनिट' के प्रतिनिधि, उस 'यूनिट' के व्यवस्थापक-मंडल के निर्वाचित मेम्बरों द्वारा चुने जायेंगे, और जहां यह व्यवस्थापक-मंडल दो सभाओं का होगा, वहां, उस व्यवस्थापक-मंडल की निम्नसभा के निर्वाचित मेम्बरों द्वारा चुने जायेंगे।

(सी) 'लोक-सभा' का संख्या-बल इस रूप में निश्चित किया जायेगा कि वह 500 से अधिक न हो। संघ-शासन के यूनिट (इकाइयां), चाहे वे प्रान्त हों या देशी राज्य हों या देशी राज्यों के गुट हों, निर्वाचन-क्षेत्रों में विभक्त किये जायेंगे, और हर निर्वाचन-क्षेत्र के प्रतिनिधियों की संख्या इस भांति निर्धारित की जायेगी कि यह पक्का रहे कि आबादी के प्रत्येक 7,50,000 के लिये एक से कम और प्रत्येक 5,00,000 के लिये एक से अधिक प्रतिनिधि न रहेगा।

शर्त है कि देशी राज्यों की कुल आबादी से उनके प्रतिनिधियों की कुल संख्या का अनुपात, प्रान्तों की कुल आबादी से उनके प्रतिनिधियों की कुल संख्या के अनुपात से अधिक न होगा।''

(2) यह कि वाक्यांश 14 के उप-वाक्यांश (1) में, निम्नलिखित नयी मद (ई) शामिल कर ली जाये:

''(ई) राज-सभा तथा लोक-सभा के वास्तविक संख्या-बल का निर्धारण, संघ-शासन के यूनिटों के बीच इस प्रकार निर्धारित संख्या-बल का विभाजन, राज-सभा के लिये कार्यात्मक मण्डलों अथवा निर्वाचन-क्षेत्रों की संख्या, प्रकृति तथा गठन का निश्चय, वह तरीका जिसके अनुसार दोनों सभाओं के निमित्त निर्वाचन के लिये, छोटे राज्यों की गुटबन्दी से 'यूनिट' कायम किये जायें, वे सिद्धान्त, जिनके आधार पर दोनों सभाओं के निर्वाचन-क्षेत्रों की सीमायें निर्धारित की जायें और अन्य सम्बन्धित बातें 'यूनियन विधान कमेटी' के विचारार्थ वापस भेजी जायेंगी तथा वह कमेटी उनकी जांच करेगी। इस प्रकार की जांच के बाद, 'यूनियन विधान-कमेटी' इन विषयों की व्यवस्था सम्बन्धी अपनी सिफारिशें विधान-परिषद् के सभापति के पास दाखिल करेगी, जिन्हें यूनियन-विधान के मस्विदे में शामिल कर लिया जाना चाहिये।''

श्रीमान्, मैं इस संशोधन के मस्विदे के अधिक महत्वपूर्ण पहलुओं की ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं। श्रीमान्, पहली बात, जिसका कि मैं हवाला देना चाहता हूं, यह है कि इस संशोधन में हम राज-सभा का संख्या-बल निश्चित रूप में तय कर रहे हैं और ऐसा करने के लिये हमारा कहना है कि उक्त संख्या बल लोक-सभा के संख्या-बल के आधे से अधिक न होना चाहिये। श्रीमान् मैं समझता हूं कि 'सभा' इस बात से राजी होगी कि निश्चित करने के लिये यह अच्छा अनुपात है। अब इस प्रकार निश्चित किये जाने वाले संख्या-बल में से हम 25 मेम्बर कार्यात्मक निर्वाचन-क्षेत्रों के लिये रखने का विचार करते हैं। याद होगा कि जो मस्विदा मूल में सभा के सामने रखा गया था, उसके अनुसार 10 सीटें विश्वविद्यालयों तथा वैज्ञानिक संस्थाओं के परामर्श से अध्यक्ष द्वारा नामजदगी से भरी जाने को थीं। बहुत भारी संख्या में लोगों ने महसूस किया है कि उन लोगों को राज-सभा में लाने के लिये यह व्यवस्था पर्याप्त नहीं है, जो विश्वविद्यालयों या वैज्ञानिक संस्थाओं के लोग भले ही न हों, किन्तु जो राष्ट्र की कार्रवाइयों के अति महत्वपूर्ण पक्षों से सम्बन्धित होने के कारण इस प्रकार की 'सभा' में रखे जाने के सर्वथा योग्य हैं। इस सम्बन्ध में आयरिश विधान की 18 (7) धारा का हवाला दिया गया है। जैसा कि आप जानते हैं, आयरिश विधान के 'सेनेट' का अधिकांश इस प्रकार के कार्यात्मक निर्वाचन-क्षेत्रों से भरा जाता है। ये निर्वाचन-क्षेत्र संस्कृति, शिक्षा, वाणिज्य-व्यवसाय, कृषि, मजूर, सामाजिक सेवा-व्यवस्थाओं तथा इसी प्रकार की विभिन्न अन्य कार्रवाइयों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध के हैं। आयरिश विधान की व्यवस्था और उस व्यवस्था में जिसका कि प्रस्ताव यहां के लिये किया गया है, एक बड़ा अन्तर यह है कि वह सिद्धान्त हमारे यहां राज-सभा के केवल बहुत थोड़े मेम्बरों के लिये लागू होगा। यदि लोक-सभा का अधिकतम संख्या-बल हम 500 निर्धारित करें, तो राज-सभा का संख्या-बल केवल 250 ही हो सकता है। यदि इसमें से 25 जगहें हम इस प्रकार के निर्वाचन-क्षेत्रों से भरी जाने के लिये निकाल लें, तो वे कुल संख्या-बल का केवल दस प्रतिशत ही होती हैं और इस प्रकार लोक-सभा का स्वरूप मूल योजना के अनुरूप भी कायम रहता है। राज-सभा के मेम्बरों का बहुत बड़ा भाग 'यूनिटों' द्वारा न्यूनाधिक प्रादेशिक आधार पर चुनकर भेजा जायेगा, जब कि बहुत ही कम संख्या में जो दस प्रतिशत से अधिक न होगी, कुछ मेम्बर इस विशेष प्रकार के निर्वाचन-क्षेत्रों द्वारा चुनकर

[माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर]

भेजे जायेंगे। राज-सभा में देशी राज्यों के प्रतिनिधित्व को हमने एक अन्य तरीके से भी सीमित कर दिया है। इस संशोधन में कहा गया है कि देशी राज्यों को दिया गया कुल प्रतिनिधित्व राज-सभा के संख्या-बल के 40 प्रतिशत में से विशेष निर्वाचन-क्षेत्रों की संख्या घटाने के बाद जो संख्या आये, उससे अधिक न होना चाहिये।

अब श्रीमान्, मैं इस नये उप-वाक्यांश की मद (बी) का उल्लेख करूंगा। इसमें मूल वाक्यांश की मद (बी) प्राय: ज्यों की त्यों रख दी गयी है। महत्व का केवल एक ही अन्तर है, वह यह कि निर्वाचन व्यवस्थापक मण्डल के निर्वाचित मेम्बरों द्वारा होना चाहिये। और यदि किसी 'यूनिट' का व्यवस्थापक-मण्डल दो सभाओं का है, तो उक्त निर्वाचन उस व्यवस्थापक-मण्डल की निम्नसभा के निर्वाचन मेम्बरों द्वारा होना चाहिये। मुझे यह भी स्पष्ट कर देना चाहिये कि इस संशोधन में मैंने 'निम्न सभा' नाम ज्यों का त्यों रखा है, जो इस मस्विदा विशेष में अन्य स्थान में प्रयुक्त नाम के अनुकूल है। जो सभा (चैम्बर) हम सब लोगों के दिमाग में है, उसका नाम यह न रखकर और कुछ रखने का विचार है, जिसकी कि इस प्रकार की आलोचना न की जा सके।

अब श्रीमान्, 'लोक-सभा' के सम्बन्ध में अधिकतम संख्या-बल का निश्चय पांच-सौ किया गया है और 10,00,000 तथा 7,50,000 की सीमाएं, जो मूल मस्विदे में रखी गयी हैं, कम करके 7,50,000 तथा 5,00,000 कर दी गयी हैं। परिणामस्वरूप इसके द्वारा वे अनेक संशोधन, जिनकी सूचना दी गयी है और न्यूनाधिक जिनमें वही बातें हैं, स्वीकार कर लिये गये हैं।

अब श्रीमान्, हम मद (सी) के शर्तनामे पर पहुंचते हैं। सम्भवत: कुछ लोग इसे अधिक आवश्यक न समझेंगे, किन्तु भय या यों कहिये कि शंकायें दूर करने के लिये निश्चय किया गया है कि इस प्रकार का शर्तनामा रखना अच्छा होगा। 'लोक-सभा' अनिवार्यत: एक वह सभा है, जिसका सदस्यगण पूर्णत: आबादी पर आधारित है और यह उचित ही है कि देशी राज्यों की कुल आबादी से उनका प्रतिनिधित्व करने वाले कुल मेम्बरों की संख्या का अनुपात प्रांतों की कुल आबादी से उनकी सीटों की संख्या के अनुपात से अधिक न होना चाहिये। इसलिये मैं नहीं समझता कि इसका औचित्य सिद्ध करने की कोई आवश्यकता है। संघ-शासन के यूनिटों को, चाहे वे प्रान्त हों या देशी राज्य, हम जो भी विशेष सुविधा देना चाहते हों, वह 'राज-सभा' के सदस्यगण के अन्तर्गत दे दी जायेगी।

अब श्रीमान्, दोनों सभाओं के सदस्यगण के सम्बन्ध में ये साधारण सिद्धान्त बताने के बाद यह जरूरी है कि उनका विस्तार किया जाये और वे ऐसे रूप में रखे जायें, जो भविष्य के लिये निर्मित किये जाने वाले विधान के मस्विदे में लाये जा सकें। इस सिलसिले में बहुत-सी स्थूल बातें निबटानी होंगी, जैसे दोनों सभाओं के वास्तविक संख्या-बल का निश्चय, यूनिटों के बीच यह संख्या-बल जिस प्रकार बांटा जाना चाहिये वह तरीका, विशेष निर्वाचन-क्षेत्रों का प्रकार तथा सदस्यगण और वे सिद्धान्त जिनके आधार पर देशी राज्यों के निर्वाचन-क्षेत्रों की सीमायें निर्धारित की जानी चाहियें। ये सब बड़ी महत्वपूर्ण बातें हैं, जिनके सम्बन्ध में विधान को कुछ आधारभूत सिद्धान्त स्थिर करने होंगे। इसी अभिप्राय से मैंने (ई) की एक अतिरिक्त मद रखी है, जिसके द्वारा 'यूनियन विधान कमेटी' को इन प्रश्नों की सविस्तार जांच करने और उसके बाद ऐसे वाक्यांशों या धाराओं की जो नये विधान के मस्विदे में शामिल की जा सकें, तजवीज करने का कार्य सौंपा गया है। निश्चय ही सभा के विचार के लिये वह सामने आयेगा। 'यूनियन विधान कमेटी' अपनी रिपोर्ट 'अध्यक्ष' को देगी, तब वह रिपोर्ट वस्तुतः इस सभा की सम्पत्ति हो जाती है। यदि यह निश्चय किया जाये कि उक्त 'कमेटी' की सिफारिशें विधान के मस्विदे में शामिल की जाने से पहले सभा को इस रिपोर्ट पर विचार कर लेना चाहिये, तो अगले अधिवेशन में इस प्रकार विचार भी किया जा सकता है। किन्तु यदि 'सभा' राजी हो कि इन बातों के सम्बन्ध में 'यूनियन विधान कमेटी' की सिफारिशें यूनियन-विधान के मस्विदे में सीधे शामिल की जा सकती हैं, तो भी प्रस्तावित व्यवस्था की अच्छाई-बुराई की जांच करने का मौका सभा को उस समय मिलेगा, जब वह विधान के मस्विदे पर विचार करेगी।

श्रीमान्, मैं इस संशोधन का प्रस्ताव रखता हूं।

***अध्यक्षः** मेरे पास इस वाक्यांश के अनेक संशोधन हैं। अब मैं इन्हें एक-एक करके रखूंगा।

(सर्वश्री जगतनारायणलाल, एच.वी. पातस्कर, बी.एम. गुप्ते, आर.एम. नलवाड़े, सेठ गोविन्ददास, जी एल. मेहता ने अपने नम्बर 232 से 237 तक संशोधन नहीं पेश किये।)

***डा. मोहन सिंह मेहता** (उदयपुर): मैं अपना संशोधन (नं. 238) वापस लेता हूं।

***कर्नल बी.एच. जैदी** (संयुक्त प्रान्तीय राज्यः समूह 1): मैं अपना संशोधन (नम्बर 239) वापस लेता हूं।

***महाराज नगेन्द्र सिंह** (पूर्वी राजपूताना राज्य समूह): श्रीमान् सभापति महोदय, सर गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन से छोटे राज्यों का दृष्टि-बिंदु प्रशसनीय ढंग से पूरा हो जाता है। इस संशोधन के लिये उन्हें बधाई देना आवश्यक है, क्योंकि उससे प्रभावकारी लोकतंत्र उत्पन्न होता है। सब कुछ होते हुये भी श्रीमान्, एक विधान की महानता तथा संतुलन देश के विभिन्न स्वार्थों और हस्तियों के विवरण के लिये उसके अधिक से अधिक ध्यान से व्यवस्था करने में होती है। प्रस्तुत संशोधन से निश्चय ही इस उद्देश्य की पूर्ति होगी। मैं हृदय से उसका समर्थन करता हूं और इसलिये अपने संशोधन को वापस लेता हूं। किन्तु श्रीमान्, जहां तक राज्यों के बीच सीटों के बंटवारे पर विचार करने का प्रश्न है, मेरी प्रार्थना है कि 'यूनियन विधान कमेटी' में छोटे राज्यों के भी कुछ प्रतिनिधि होने चाहियें। छोटे राज्यों की ग्रुपबन्दी तथा निर्वाचन-क्षेत्रों का निश्चय करने का असर इन राज्यों पर अनिवार्य रूप से पड़ेगा। इसलिये इन राज्यों के ख्याल से यह बहुत जरूरी है कि छोटे राज्यों का मत व्यक्त करने के लिये 'यूनियन विधान कमेटी' में उनका भी एक प्रतिनिधि होना चाहिये।

मैं अपना संशोधन (नम्बर 239) वापस लेता हूं।

(सर्वश्री रायसाहब रघुराजसिंह तथा एच.जे. खाण्डेकर ने अपने संशोधन नम्बर 239 तथा 240 पेश नहीं किये।)

***श्री हिम्मतसिंह के. महेश्वरी:** मैं अपना संशोधन (नम्बर 241) वापस लेता हूं।

(नम्बर 242 से लेकर नम्बर 260 तक के संशोधन पेश नहीं किये गये।)

***श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी:** अध्यक्ष महोदय, मेरे संशोधन का अभिप्राय सर गोपालस्वामी आयंगर के प्रस्ताव से पूरा हो जाता है, अतः मैं अपना संशोधन पेश करना नहीं चाहता।

(संशोधन नम्बर 262 पेश नहीं किया गया।)

(सर वी.टी. कृष्णमाचार्य ने अपना संशोधन नम्बर 263 पेश नहीं किया।)

***अध्यक्षः** मैं माने लेता हूं कि अन्य कोई 'मन्त्री' भी पेश नहीं कर रहे हैं।

***सर वी.टी. कृष्णमाचारी** (जयपुर)**:** जी, हां।

(नम्बर 264 से लेकर नम्बर 271 तक के संशोधन भी पेश नहीं किये गये।)

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान् सभापति महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि**:**

''वाक्यांश 14 का उपवाक्यांश (2) निकाल दिया जाये।''

इस संशोधन का सीधा-सादा मकसद यह है कि उक्त उपवाक्यांश में ऐसे परिशिष्ट का हवाला है, जिसका अभी अस्तित्व ही नहीं है। उपवाक्यांश (2) रखने के लिये राजी होना एक कोरी चैक या बिना परिशिष्ट के दस्तावेज पर हस्ताक्षर करने के समान होगा। मेरी अर्ज है कि यह करना कठिन कार्य है।

फिर मैं देखता हूं कि मेरे माननीय मित्र सर गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन के बाद परिवर्तित दशा में यह संशोधन बे-मेल स्थिति में हो जाता है। हमारे बहुत से संशोधनों की सूचना देने के बाद मूल वाक्यांश का मस्विदा फिर से तैयार करके यहां इस सभा के सामने रखा गया। हमें इस मस्विदे पर विचार कर सकने का मौका ही नहीं मिला। जो संशोधित मस्विदा विचारार्थ उपस्थित किया गया है, उस पर मुझे कोई विशेष आपत्ति नहीं है। किन्तु फिर भी मुझे समझना चाहिये कि इस महत्वपूर्ण विषय पर विचार करने के लिये हमें कुछ समय देना शायद अधिक अच्छा होता। इस प्रकार की जटिल प्रकृति वाले मस्विदे पर जिसमें महत्व के वैधानिक सिद्धान्त हैं, क्षण भर की सूचना पर आसानी से विचार नहीं किया जा सकता। अतएव सविनय मेरा निवेदन है कि जैसा कि अन्य महत्वपूर्ण मामले में किया जाता है, इस विषय पर विचार करने के लिये कुछ समय दिया जाना चाहिये; और तब संशोधन पेश करना हमारे लिये आसान होगा। हो सकता है कि सिद्धान्तों से हम पूर्णतः सहमत होंगे, किन्तु फिर भी सुरक्षा के लिये हमें कुछ समय देना अधिक अच्छा होगा। मुझे आशा है कि माननीय सदस्य कृपा करके सोचेंगे कि हममें से कुछ लोग कैसी कठिनाई में डाल दिये गये हैं और इस विषय को भविष्य में विचार किये जाने के लिये स्थगित कर देंगे। यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है उसके इस महत्व की दृष्टि से मेरा यह सुझाव मुनासिब है।

(नम्बर 273 से 278 तक के संशोधन पेश नहीं किये गये।)

***श्री शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रांतः जनरल): श्रीमान् सभापति महोदय, वाक्यांश 14 के उप-वाक्यांश (4) के प्रति मेरा संशोधन इस प्रकार हैः

''यह कि वाक्यांश 14 के उप-वाक्यांश (4) में 'एक-तिहाई' शब्द की जगह 'आधा' शब्द रखा जाये।''

वाक्यांश 14 के उप-वाक्यांश (4) की वर्तमान स्थिति के अनुसार हर दूसरे साल एक तिहाई मेम्बर अवकाश ग्रहण करेंगे। हमने जो समय-विभाग रखा है, उसके अनुसार 'लोक-सभा' की जीवनावधि 4 वर्ष की होगी और नई 'लोक-सभा' तथा नवीन प्रान्तीय व्यवस्थापक-मण्डल सामान्य गति-विधि से हर चौथे वर्ष चुने जायेंगे। मैं जो चाहता हूं यह है कि 'राज-सभा' में भी हर दूसरे साल एक-तिहाई मेम्बर चुने जाने के बजाय आधे मेम्बर हर दूसरे वर्ष चुने जायें। इस प्रकार हर चौथे वर्ष हमें एक नवीन राज-सभा प्राप्त होगी। तर्क किया जा सकता है कि निम्न सभाएं उनकी जीवनावधि पूरी होने से भंग कर दी जाया करें, किन्तु मुझे निश्चय है कि सभाओं का इस प्रकार भंग किया जाना व्यवस्थापक-मण्डलों के जीवन का साधारण लक्षण न बनेगा और यदि एक या दो प्रान्तीय व्यवस्थापक-मण्डल अपनी पूरी अवधि से पहले भंग भी कर दिये गये, तो भी कम से कम वर्तमान शताब्दी के भीतर, चार-वर्षीय क्रम में अधिक अन्तर न पड़ेगा।

एक सदस्यः सूचना प्राप्त करने की बात; क्या वह संशोधन पेश करने जा रहे हैं?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** हां महोदय, मैं इसे पेश करता हूं।

सर एन. गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन के अनुसार, इस सभा में राज्यों का काफी अधिक प्रतिनिधित्व रहेगा। और जैसा कि सर्व-ज्ञात है, राज्यों की निम्न सभाओं में नामजद मेम्बरों का बहुमत है। इस प्रकार इस सभा के मेम्बरों का अधिकांश शासकों के प्रतिनिधियों का होगा। इसलिये मैं जो चाहता हूं, यह है कि यह

सभा जिसमें प्रतिक्रियावादी मेम्बरों की काफी संख्या रहेगी, ऐसी सभा न बनायी जाये, जो बहुत लम्बे अरसे तक कायम रह सके। मैं चाहता हूं कि कम से कम उसका आधा भाग हर दूसरे साल बदलता रहे। ऐसा होने से शायद वह इतनी प्रतिक्रियावादी न रह पायेगी। दूसरी 'सभाओं' (चैम्बरों) का मैं पहले ही विरोध कर चुका हूं, किन्तु यदि हमें उन्हें रखना ही है, तो कम से कम हर दूसरे वर्ष हमें उनके आधे मेम्बर बदल देने चाहियें, ताकि चौथे वर्ष पूरी की पूरी 'राज-सभा' बदल जाये।

(नम्बर 280 से 299 तक के संशोधन पेश नहीं किये गये।)

(पूरक सूची नम्बर 1 के संशोधन नम्बर 13 से संशोधन नम्बर 16 तक पेश नहीं किये गये।)

(पूरक सूची नम्बर 2 के संशोधन नम्बर 10 व 11 पेश नहीं किये गये।)

(पूरक सूची नम्बर 3 के संशोधन नम्बर 4 से 6 तक पेश नहीं किये गये।)

(पूरक सूची नम्बर 4 का संशोधन नम्बर 2 पेश नहीं किया गया।)

***बेगम ऐज़ाज़ रसूल** (संयुक्त प्रान्तः मुस्लिम): श्रीमान्, मेरे नाम से जो संशोधन है, यह है कि:

"वाक्यांश 14 के उप-वाक्यांश (1) (बी) के अन्त में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

'समानुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली द्वारा एकाकी हस्तांतरात्मक मत से'।"

श्रीमान् सर एन. गोपालस्वामी आयंगर द्वारा रखे गये संशोधन-प्रस्ताव के ख्याल से इस संशोधन को इस समय पेश करने का मेरा विचार नहीं है। मुझे आशा है कि अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा करने के लिये 'यूनियन विधान-कमेटी' राज-सभा के लिये होने वाले निर्वाचन के सम्बन्ध में प्रश्न के इस बहुत ही महत्व के पहलू पर विचार करेगी। श्रीमान्, इस समय मैं यह संशोधन इसलिये पेश करना नहीं चाहती, क्योंकि सभा द्वारा उसके ठुकरा दिये जाने की दशा में उस पर नकारात्मक मत मिलने की बड़ी आशंका है, किन्तु, आवश्यक होने पर इस संशोधन को बाद में पेश कर सकने का अपना अधिकार मैं सुरक्षित रखती हूं।

***अध्यक्षः** आपके नाम दूसरा संशोधन भी है।

***बेगम एज़ाज़ रसूलः** मेरे नाम से दूसरा संशोधन इस प्रकार है :

"यह कि वाक्यांश 14 के उप-वाक्यांश (4) में 'दूसरे' शब्द की जगह पर 'तीसरा' शब्द रखा जाये।"

यह उप-वाक्यांश तब इस रूप में हो जायेगा:

"राज-सभा भंग न होने वाली एक स्थायी सभा होगी, किन्तु जहां तक लगभग सम्भव हो, उसके एक तिहाई मेम्बर परिशिष्ट में इस सम्बन्ध में दी गयी व्यवस्था के अनुसार हर तीसरे साल अवकाश ग्रहण करेंगे।"

श्रीमान्, यह संशोधन पेश करने में मेरा उद्देश्य यह है कि मुझे महसूस होता है कि 2 साल की अवधि एक व्यवस्थापक के लिये बहुत ही कम है। जैसे ही वह अपने कार्य से अवगत होगा, व्यवस्थापक का काम समझने लगेगा और उसमें तत्पर होने लगेगा, उसे अवकाश ग्रहण करना होगा। मेरी समझ में यह बहुत उचित नहीं है। उसकी अवधि अवश्य ही कुछ अधिक होनी चाहिये, जिसमें वह अपनी योग्यता का परिचय दे सके और जिस सभा के लिये वह निर्वाचित हो, उसके प्रति न्याय कर सके। श्रीमान्, यदि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया गया, तो इसका अर्थ यह होगा कि सभा के एक स्थायी संस्था होने तथा उसके एक-तिहाई मेम्बरों के हर तीसरे वर्ष अवकाश ग्रहण करने से यह 9 वर्षों का एक चक्कर हो जायेगा। जैसा कि बहुतेरे माननीय सदस्य जानते हैं, सन् 1935 के भारत-शासन-विधान के अधीन आजकल यही प्रणाली प्रचलित है। अतएव भारत के लोग इस प्रणाली से अनभिज्ञ नहीं हैं। श्रीमान्, अधिकांश पाश्चात्य देशों के विधानों में व्यवस्थापक-मंडल दो-दो सभाओं के हैं, और इनमें से 'ऊपरी सभा' के अधिकांश मेम्बर या तो आजीवन सदस्य होते हैं या फिर उस सभा की जीवनावधि ही 'निम्न सभा' की जीवनावधि की समकालीन होती है। केवल संयुक्त राष्ट्र (अमेरिका) के 'सेनेट' में ही ऐसा होता है कि एक तिहाई मेम्बर हर दूसरे वर्ष अवकाश ग्रहण करते हैं। किन्तु मैं महसूस करती हूं कि हमारे-भारत के लोगों के लिये उस प्रणाली की नकल करने की जरूरत नहीं है, जो संयुक्त राष्ट्र में प्रचलित है। इसका एक कारण यह है कि संयुक्त राष्ट्र के 'सेनेट' के मेम्बर लोकप्रिय मत से चुने जाते हैं, जब कि उस 'राज-सभा' के लिये जिसकी कि व्यवस्था 'यूनियन' के विधान

में की जा रही है, ये मेम्बर प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा न चुने जायेंगे बल्कि 'निम्न सभा' के मेम्बरों द्वारा चुने जायेंगे। अपने पक्ष के समर्थन में जो दूसरी जोरदार बात मैं बताना चाहती हूं यह है कि मैं नहीं समझती कि निम्न सभा के मेम्बरों को 'राज-सभा' के लिये अपनी मेम्बरी की अवधि में दो बार मेम्बर चुनने चाहियें। मैं समझती हूं कि इस अधिकार का प्रयोग केवल एक बार ही होना चाहिये। यदि यह व्यवस्था ऐसी ही रहने दी गयी जैसी कि वह इस समय है और यदि 'ऊपरी सभा' के मेम्बरों को हर दूसरे वर्ष अवकाश ग्रहण करना पड़ा, तो इसका मतलब यह होता है कि 'निम्न सभा' के मेम्बरों को अपनी मेम्बरी की अवधि में राज सभा के लिये दो बार मेम्बर चुनने का अधिकार रहेगा। इन्हीं कुछ शब्दों के साथ मैं अपना संशोधन सभा के विचार के लिये रखती हूं। मैं समझती हूं कि यह बहुत ही उचित संशोधन है और आशा करती हूं कि स्वीकार किया जायेगा।

***अध्यक्षः** वाक्यांश तथा उसके संशोधनों पर अब बहस की जा सकती है।

***श्री जयनारायण व्यास** (जोधपुर): श्रीमान्, सभापति महोदय, सर एन. गोपालस्वामी आयंगर द्वारा हाल ही में रखे गये नये प्रस्तावों का समर्थन करने के लिये मैं उठा हूं, किन्तु ऐसा करते हुये मैं इस विषय पर कुछ शब्द कहना चाहता हूं। हमारे इन प्रस्तावों के समर्थन का अर्थ यह न समझा जाना चाहिये कि हम महसूस करते हैं कि देशी राज्यों के लोगों पर इन प्रस्तावों का अनुकूल असर पड़ेगा। हम इन प्रस्तावों का समर्थन विशुद्ध राजनीतिक कारणों से कर रहे हैं। जब ये प्रस्ताव स्वीकार कर लिये जायेंगे, तो निम्न सभा में चौदह और राज्य आ जायेंगे। इन 14 राज्यों में चार राज्य काठियावाड़ के होंगे, 7 पूर्वी राज्यों में से होंगे, एक राजपूताने का होगा, एक आसाम का होगा और एक शिमला के पहाड़ी राज्यों में से होगा। मुझे यह देखकर बड़ी प्रसन्नता है कि इन प्रस्तावों के कारण जूनागढ़, नवानगर, भावनगर तथा कच्छ के चार समुद्रतटवर्ती राज्य निम्न सभा में अपना स्थान प्राप्त करेंगे और मणिपुर का सीमावर्ती राज्य भी उसमें आ जायेगा। अतएव, इस दृष्टिकोण से निम्न सभा की सदस्य-संख्या बढ़ाना, जैसा कि किया गया है, बहुत अच्छी बात है। वाक्यांश 1 (बी) को सभा के सामने रखते हुये सर गोपालस्वामी आयंगर ने कहा है कि निम्न सभा के केवल निर्वाचित मेम्बर ही ऊपर वाली सभा के चुनाव में मत दे सकेंगे। मेरा मतलब राज्यों की 'लेजिस्लेटिव असेम्बलियों' के निर्वाचित मेम्बरों से है। ''निर्वाचित मेम्बरों'' शब्दों में कुछ गड़बड़ है। जब हम अपनी 'यूनियन' के निर्वाचित मेम्बरों के विषय में सोचते हैं, तो हम समझते हैं कि ये मेम्बर बालिग मताधिकार के आधार पर चुने जाते हैं। किन्तु देशी राज्यों

[श्री जयनारायण व्यास]

की स्थिति ऐसी नहीं है। मैं पंजाब के एक राज्य के सम्बन्ध में जानता हूं कि वहां एक शासक का बेटा 'असेम्बली' का निर्वाचित मेम्बर है और उनकी पत्नी भी निर्वाचित मेम्बरों में है, और श्रीमान्, दुर्भाग्यवश ये दोनों ही असेम्बली के मन्त्री बल्कि "प्रजा-प्रिय मंत्री" हैं। यही तरीका है, जिससे निर्वाचित मेम्बर तथा निर्वाचित प्रजा-प्रिय मंत्री राज्यों में असेम्बली की निम्न सभा के द्वारा आते हैं। एक राज्य ऐसा भी है, जिसमें निर्वाचन-क्षेत्र के चार मेम्बरों के पीछे एक निर्वाचित मेम्बर रहता है, सो भी एक निर्वाचित मेम्बर है। मैं अन्य एक राज्य के सम्बन्ध में जानता हूं, जिसकी निम्न सभा अर्थात् लेजिस्लेटिव असेम्बली में पचास निर्वाचित मेम्बरों में से दस जागीरदार हैं। इस प्रकार निर्वाचित मेम्बरों का अर्थ वस्तुत: निर्वाचित प्रतिनिधियों का नहीं हैं, क्योंकि वे लोक-प्रिय मताधिकार या बालिग मताधिकार के आधार पर नहीं चुने जाते। श्रीमान्, इन उदाहरणों को मैं आपकी और आपके जरिये इस सभा की निगाह में लाना चाहता हूं, ताकि जिस समय मस्विदा तैयार किया जा रहा हो, उस समय वे लोग जिनका कि उसके तैयार करने में हाथ हो, इस बात का ख्याल रखें कि वास्तव में निर्वाचित मेम्बरों को ही स्थान प्राप्त हो, ताकि धोखे के मताधिकार के आधार पर फर्जी व्यवस्थापक मंडलों में, जो कि कुछ राज्यों में विद्यमान हैं—चुने गये मेम्बरों को।

एक और बात मैं आपकी निगाह में लाना चाहता हूं। वह बात यह है कि राज्यों के लोकप्रिय प्रतिनिधियों को इस सभा की 'यूनियन-विधान-कमेटी' में कोई स्थान नहीं मिला है और जब नियम या वाक्यांश निर्मित होते हैं, तो विधान उप-समिति के सामने उनका मत प्रकट नहीं हो पाता। मुझे आशा है श्रीमान्, कि यूनियन-विधान-कमेटी में कोई जगह खाली होने पर लोकप्रिय तत्वों के दावे पर विचार किया जायेगा और यदि आवश्यक हो तो कमेटी की सदस्य-संख्या बढ़ा ली जायेगी, ताकि राज्यों के लोक-प्रिय मेम्बरों को उसमें स्थान मिल सके।

इन्हीं कुछ शब्दों के साथ श्रीमान्, मैं सभा से सर गोपालस्वामी आयंगर के प्रस्ताव पर अनुकूल विचार करने का अनुरोध करता हूं। और श्रीमान्, मुझे आशा है कि जिस समय मस्विदा तैयार करने का वास्तविक काम हाथ में लिया जायेगा, उस समय मेरी प्रार्थना पर भी विचार होगा।

श्री हीरालाल शास्त्री (जयपुर): अध्यक्ष महोदय, आज की इस बहस में हिस्सा लेने का मेरा कोई खास विचार नहीं था। लेकिन जब सर गोपालस्वामी आयंगर

ने यह फरमाया कि मैं सर्वसम्मति से एक संशोधन पेश करने जा रहा हूं, तब मेरी इच्छा हुई कि मुझे भी इस सम्बन्ध में कुछ कहना होगा। मैं श्री गोपालस्वामी से बड़े आदर के साथ पूछना चाहता हूं कि आपका यह संशोधन किस प्रकार सर्वसम्मत है? जहां तक मैं जानता हूं हम लोग रियासती जनता के प्रतिनिधि इस हाउस में मौजूद हैं वह आमतौर से इस राय के रहे कि जो मूल प्रस्ताव यूनियन कान्स्टीट्यूशन कमेटी की रिपोर्ट में है, उस पर कायम रहा जाये। दूसरे मुझे यह पूछना जरूरी मालूम होता है कि आखिर यह लोअर हाउस और अपर हाउस की स्ट्रेंथ को बढ़ाने की ज़रूरत क्यों मालूम हुई है। हमने आल इण्डिया स्टेट्स पीपुल्स कान्फ्रेंस में इस पर कई बार प्रस्ताव पेश किया है कि भारतीय संघ में बड़ी यूनिट्स शामिल होनी चाहिये और बीच के दरजे की जो छोटी-छोटी रियासतें हैं, उनको मिलाकर समूह बनाना चाहिये। हमने जो अपना स्टैण्डर्ड रखा है वह बहुत ऊंचा है। यानी पचास लाख की आबादी का तीन करोड़ की आमदनी का लें। लेकिन हमने तो संतोष माना था जब हमने यह देखा था कि दोनों हाउस के चुनाव के लिये सही दस लाख की मर्यादा की कम से कम आबादी रखी गई है। इस पर संशोधन लाये गये और कोशिशें की गई हैं। ताकि यह आबादी की मर्यादा दस लाख से घटाकर ढाई लाख कर दी जाये। आखिर वह तो नहीं हुआ, लेकिन मुझे साफ दिखाई दे रहा है कि यह जो तजवीज की गयी है दस लाख को साढ़े सात लाख करने की और साढ़े पांच लाख को पांच लाख करने की। आखिर इसमें भी यह नीति है कि कुछ रियासतें जिनकी आबादी पांच लाख से ज्यादा है उनको अलग प्रतिनिधित्व मिल जाये न सिर्फ अपर हाउस में बल्कि लोअर हाउस में भी। यह चीज मुझे पसन्द नहीं है। सर्वसम्मति से आखिर तक मैं इस वास्ते बराबर असहमत रहा हूं। यह ठीक है कि जब स्वयं सर गोपालस्वामी आयंगर जो उसके मूल रचियता रहे होंगे, वह जब एक दूसरा संशोधन ला रहे हैं, तो मैं ठीक नहीं समझता कि आपके संशोधन का विरोध करूं। लेकिन इस सम्बन्ध में मैं अपने मनोभाव प्रकट किये बिना नहीं रह सकता। और वह मनोभाव यह है कि जब हमारा देश भारतवर्ष एक हुआ जा रहा है, विभाजन हो गया उसके बावजूद जब एक हुआ जा रहा है और प्रान्तों और रियासतों का जो भेद है वह एक प्रकार से मिटा जा रहा है, इस वक्त मैं मुनासिब नहीं समझता कि छोटे-छोटे टुकड़े रियासतों के वह अलग-अलग इकाई के रूप में रहें।

मैं मुनासिब नहीं समझता हूं कि छोटे-छोटे टुकड़े रियासतों के अलग इकाई के रूप में रहें। जब मैं यह कह रहा हूं तो मैं यह भूल नहीं रहा हूं और इस

[श्री हीरालाल शास्त्री]

बात को समझ रहा हूं कि अगर इकाई कायम की जायेगी तो वह सिर्फ चुनाव के सिलसिले में की जायेगी। तथा मैं महसूस करता हूं कि जो इस सम्बन्ध में समूह बनाने की बात है उसके खिलाफ पड़ेगी और छोटी रियासतों को अलग इकाई बनने का मौका मिल जायेगा। अगर हमको समूह के तौर पर ही छोटे-छोटे रियासतों के समूह बनाकर संघ में शामिल करना है तो उनको इस हाउस के चुनाव में अलग इकाई बनने का मौका कम से कम मिलना चाहिये। जो हमारा प्रस्ताव था उसके अनुसार सिर्फ 15 रियासतें आती थीं। लेकिन प्रतिनिधि मानने की हैसियत से और जैसा यह संशोधन पेश किया गया है और जैसा रियासतों ने भी किया है कि इस संशोधन के अनुसार जो 15 रियासतें और शामिल हो जायेंगी तो यह छोटी-छोटी इकाई की संख्या इस तरह बढ़ जायेगी। इसके अलावा एक और धारा बढ़ी है। सर गोपालस्वामी के संशोधन में और बहुत-सी डिटेल्स की बातें हैं, इकाई बनाने, निर्वाचन-क्षेत्र कायम करने के बारे में हैं। यह यूनियन कान्स्टीट्यूशन कमेटी के पास जायेगी और वहां पर निर्णय होगा। इस सम्बन्ध में मैं बड़े अफसोस के साथ इस बात का इज़हार करना चाहता हूं कि यूनियन कान्स्टीट्यूशन कमेटी में रियासतों की जनता का कोई प्रतिनिधि अब तक नहीं लिया गया है। लेकिन इसकी कोई बहस नहीं। लेकिन एक खास बात हो रही है और वह यूनियन कान्स्टीट्यूशन कमेटी के पास जायेगी और जैसी महाराज नगेन्द्र जी ने इस वक्त मांग की है छोटी रियासतों का कोई न कोई प्रतिनिधि इस कमेटी में लिया जाना चाहिये। मुझे मालूम नहीं कि इसमें कितने प्रतिनिधि होंगे मगर मुझे इस बात की शिकायत है और मैं इस बात को ज़ाहिर करूंगा कि इस कमेटी में जनता का भी प्रतिनिधि जरूर होना चाहिये। अब बड़े-बड़े अहम मामले इस कमेटी के सामने आयेंगे और निर्णय होंगे तो रियासतों की जनता का प्रतिनिधि इस कमेटी में होना चाहिये ताकि वह अपनी राय दे सके। मैं खास तौर से इस हाउस को सावधान कर देना चाहता हूं कि छोटी-छोटी रियासतों को अलग इकाई के रूप में प्रतिनिधि मिलने का अवसर न आना चाहिये। जितना काम मेल से होगा, उतना ही अच्छा है। इस बात के लिये मेरे पास बहुत वजूहात हैं, मगर मैं इस बहस में पड़ना ठीक नहीं समझता हूं। छोटी-छोटी रियासतों में आज भी जितना अत्याचार और दमन दिखाई देता है उसको सुनकर बहुत आश्चर्य और दुख होता है। रियासती जनता उनकी मार से बहुत दुखी है।

बहुत सी रियासतें जो हमारे विधान-परिषद् में शामिल हो गई हैं, चाहे वह इकाई के समूह में बनकर शामिल हुई हैं या अलग आई हैं, वह समझने लगीं

हैं कि उन्होंने हमारे नेताओं और कांग्रेस पर अहसान किया। मैं इसका विरोध करना अच्छा नहीं समझता हूं। लेकिन जिस प्रकार यह धीरे-धीरे छोटी और बड़ी रियासतें भारतीय संघ में शामिल हुई हैं, वह यह समझने लगीं हैं कि उनको इस बात का पट्टा मिल गया है कि वह अपनी जनता के सब तरह का अख्तियार रखते हैं। इस तरह से उन्होंने रियासती जनता पर न केवल अख्तियार ही बल्कि अत्याचार करना भी शुरू कर दिया है। इस मौके पर मैं यह जाहिर किये बगैर नहीं रह सकता कि जितनी रियासतों की रोज़बरोज़ बड़ी-बड़ी खबरें अखबारों के फ्रण्ट पेज में तस्वीरों के साथ छपती हैं उन रियासतों के भीतर का हाल देखा जाये, तो वहां बहुत ही अत्याचार जनता के ऊपर मिलेगा। इस बात को कहने का यह ठीक मौका नहीं था, मगर मेरे दिल में दर्द है जिसे किसी समय प्रकट करना ही था।

अभी जैसा व्यास जी ने बतलाया कि वहां चुनाव में किस प्रकार अड़ंगा-बाज़ी हो रही है और होती रहती है। इसलिये मैं गोपालस्वामी आयंगर का ध्यान खासतौर से इस ओर दिलाता हूं कि वह मेहरबानी करें और इस बात का ख्याल करें कि जब निर्वाचन-क्षेत्र कायम करेंगे और अलग इकाई कायम करेंगे, तो फिर छोटी-छोटी रियासतें अनगिनती फेहरिस्त में न जायें और रियासती जनता के प्रतिनिधि की भी किसी न किसी रूप में राय हासिल की जाये।

मैं इस प्रस्ताव के संशोधन का विरोध करने नहीं आया हूं लेकिन यह ज़ाहिर करने आया हूं कि कम से कम रियासती जनता की राय का ख्याल किया जाये। मैं सभापति जी से भी अपील करूंगा कि रियासतों की जनता का प्रतिनिधि इस मामले में शामिल किया जाये।

***श्री सत्यनारायण सिन्हा:** अब प्रश्न रखा जाये।

***अध्यक्ष:** प्रश्न है कि:

"अब प्रश्न रखा जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों को रखूंगा। पहले मैं सर एन. गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन रखूंगा। प्रश्न है:

"1. यह कि वाक्यांश 14 के उप-वाक्यांश (1) की (ए), (बी) तथा (सी) मदों के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'(ए) राजसभा का संख्या-बल इस रूप में निर्धारित किया जायेगा कि वह 'लोक-सभा' के संख्या-बल के आधे से अधिक न हो। कार्यात्मक

[अध्यक्ष]

निर्वाचन क्षेत्रों द्वारा अथवा 1937 के आयरिश विधान की 18 (7) धारा की व्यवस्था के अनुरूप निर्मित मण्डलों द्वारा 'राजसभा' के 25 से अधिक मेम्बर न निर्वाचित होंगे। 'राज-सभा' के मेम्बरों का शेषांश यूनिटों के प्रतिनिधि निर्वाचन-क्षेत्रों द्वारा सविवरण निश्चित किये जाने वाले पैमाने के हिसाब से निर्वाचित होंगे।

शर्त यह है कि देशी राज्यों का कुल प्रतिनिधित्व इस शेषांश के 40 प्रतिशत से अधिक न हो।

स्पष्टीकरण– 'यूनिट' से अर्थ है एक प्रान्त या देशी राज्य का, जो स्वयं अपने व्यक्तिगत अधिकार से संघीय पार्लियामेंट के लिये मेम्बर चुनकर भेजता है। उन देशी राज्यों के सम्बन्ध में राज-सभा में प्रतिनिधि भेजने के लिये जिनकी एक साथ गुटबन्दी हुई है, 'यूनिट' का अर्थ इस प्रकार निर्मित गुट से है।

(बी) 'राज-सभा' के लिये हर 'यूनिट' के प्रतिनिधि उस यूनिट के व्यवस्थापक-मण्डल के निर्वाचित मेम्बरों द्वारा चुने जायेंगे और जहां यह व्यवस्थापक-मण्डल दो सभाओं का होगा, वहां उस व्यवस्थापक-मण्डल की निम्न-सभा के निर्वाचित मेम्बरों द्वारा चुने जायंगे।

(सी) 'लोक-सभा' का संख्या-बल इस रूप में निश्चित किया जायेगा कि वह 500 से अधिक न हो। संघ-शासन के यूनिट (इकाइयां) चाहे वे प्रांत हों या देशी राज्य हों या देशी राज्यों के गुट हों, निर्वाचन-क्षेत्रों में विभक्त किये जायेंगे और हर निर्वाचन-क्षेत्र के प्रतिनिधियों की संख्या इस भांति निर्धारित की जायेंगी कि यह पक्का रहे कि आबादी के प्रत्येक 7,50,000 के लिये एक से कम और प्रत्येक 5,00,000 के लिये एक से अधिक प्रतिनिधि न रहेगा।

शर्त है कि देशी राज्यों की कुल आबादी से उनके प्रतिनिधियों की कुल संख्या का अनुपात प्रांतों की कुल आबादी से उनके प्रतिनिधियों की कुल संख्या के अनुपात से अधिक न होगा।'

2. यह कि वाक्यांश 14 के उपवाक्यांश (1) में निम्नलिखित नयी मद (ई) शामिल कर ली जाये:

'राज-सभा तथा लोक-सभा के वास्तविक संख्या-बल का निर्धारण, संघ-शासन के यूनिटों के बीच इस प्रकार निर्धारित संख्या-बल का विभाजन, राज-सभा के लिये कार्यात्मक मण्डलों अथवा निर्वाचन-क्षेत्रों की संख्या, प्रकृति तथा गठन का निश्चय, वह तरीका जिसके अनुसार दोनों सभाओं

के निमित्त निर्वाचन के लिये छोटे राज्यों की गुटबन्दी से 'यूनिट' कायम किये जायें और अन्य सम्बंधित बातें 'यूनियन विधान कमेटी' के विचारार्थ वापस भेजी जायेंगी तथा वह कमेटी उनकी जांच करेगी। इस प्रकार की जांच के बाद 'यूनियन विधान कमेटी' इन विषयों की व्यवस्था के सम्बन्ध की अपनी सिफारिशें विधान-परिषद् के सभापति के पास दाखिल करेगी, जिन्हें यूनियन विधान के मस्विदे में शामिल कर लिया जाना चाहिये।'

संशोधन स्वीकार कर लिये गये।

***अध्यक्षः** छः अन्य संशोधन भी हैं, जो पेश किये गये थे। मैं मि. नजीरुद्दीन अहमद का संशोधन रखूंगा। प्रश्न यह है किः

''वाक्यांश 14 का उप वाक्यांश (2) निकाल दिया जाये।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** दूसरा संशोधन श्री शिब्बनलाल सक्सेना का है, जिसे मैं अब रखूंगा। प्रश्न यह है किः

''वाक्यांश 14 के उप-वाक्यांश (4) में ''एक-तिहाई'' शब्द के स्थान में ''आधा'' शब्द रखा जाये।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं बेगम ऐज़ाज़ रसूल द्वारा प्रस्तावित संशोधन सभा के सामने रखूंगा। प्रश्न यह है किः

''वाक्यांश 14 के उप-वाक्यांश (4) में ''दूसरे'' शब्द की जगह ''तीसरा'' शब्द रखा जाये।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं सर एन. गोपालस्वामी आयंगर के संशोधन के अनुरूप जो कि स्वयं स्वीकार किया जा चुका है, संशोधित मूल वाक्यांश सभा के सामने रखूंगा। प्रश्न यह है किः

''वाक्यांश 14 संशोधित रूप में स्वीकार किया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***श्री एम.एस. अणे:** इस वाक्यांश के नीचे एक नोट दिया हुआ है और उस नोट में विभिन्न प्रान्तों तथा राज्यों के नाम दिये हैं। मैंने देखा है कि इन नामों के बीच 'सेंट्रल प्राविन्सेज़' (मध्य प्रान्त) का नाम सी. पी. करके दिया हुआ है। जिस 'एक्ट' के अनुसार यह प्रान्त बना है, उसमें इसका नाम 'सी. पी. एण्ड बरार' (मध्य प्रान्त तथा बरार) है। यही नाम कुछ अन्य वाक्यांशो में भी आया है, जिन्हें हम स्वीकार भी कर चुके हैं। मैं समझता हूं कि क्लर्क की गलती से ऐसा हुआ होगा। किन्तु तो भी इस बात को मैं आपकी तथा सभा की निगाह में ज़रूर लाना चाहता हूं। अन्तिम मस्विदा तैयार किये जाने के समय भी यदि यह नोट वहां मौजूद हो, तो प्रान्त का सही नाम 'दी सेंट्रल प्राविन्सेज़ एण्ड बरार' (मध्य प्रान्त तथा बरार) दिया जाना चाहिये।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि यह भूल है, क्योंकि परिशिष्ट में वह सही दिया गया है।

भाग 10

***अध्यक्ष:** अब हम भाग 10 को लेंगे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मैं यह अनुरोध कर सकने की अनुमति चाहता हूं कि इस भाग का पेश किया जाना स्थगित रखा जाये, क्योंकि कई संशोधनों द्वारा यह बड़े महत्व का प्रश्न उठाया गया है कि प्रान्तीय व्यवस्थापक-मण्डलों को प्रान्त के विधान में संशोधन कर सकने के लिये कुछ मूल अधिकार प्रदान करने के अभिप्राय से क्या व्यवस्था की जाये। इसके लिये कुछ विचार करने की आवश्यकता है। अतएव यदि आप इजाज़त दें तो इस विषय पर हम दूसरे अधिवेशन में विचार कर लेंगे।

***अध्यक्ष:** भाग 10 पर विचार करना स्थगित रखा जायेगा।

भाग 11

***अध्यक्ष:** अब हम भाग 11 को लेंगे।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** भाग 10 के पहले वाक्यांश का शब्द-चयन इस प्रकार है:

> ''सारी सम्पत्ति, पावना, अधिकार तथा देना के सम्बन्ध में संघ-सरकार सन् 1935 के भारत-शासन-विधान द्वारा संस्थापित भारत सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी।''

मैं इस वाक्यांश को कुछ मौखिक परिवर्द्धन के साथ, जिससे उसकी व्यवस्था हाल की घटनाओं की दृष्टि से पूर्ण जंचेगी, पेश करने की अनुमति चाहता हूं। इस वाक्यांश का मस्विदा तैयार होने के बाद से पार्लियामेंट द्वारा 'भारतीय-स्वाधीनता कानून' पास किया जा चुका है। इस कानून द्वारा प्रदत्त अधिकारों के अनुसार गवर्नर-जनरल द्वारा भारत-शासन-विधान में व्यापक रूप से अनुकूल परिवर्तन करने के लिये आदेश दिये जा रहे हैं। अतः जिस समय हम इस नवीन संशोधन को लागू कर रहे होंगे, वह अनुकूल रूप में परिवर्तित 'सन् 1935 का भारत-शासन-विधान' ही होगा। इसलिये यदि आप मुझे इसकी अनुमति दें, तो मैं यह पेश करूंगा:

''वाक्यांश 1 में 'सन् 1935 के भारत-शासन-विधान' शब्दों के बाद 'भारतीय स्वाधीनता कानून की व्यवस्था के अधीन अनुकूल रूप में परिवर्तित' शब्द जोड़ दिये जायें।''

*__अध्यक्ष:__ वाक्यांश 1 कुछ परिवर्तन के साथ पेश किया गया है। हमारे पास कई संशोधन हैं, जिनकी सूचना मुझे प्राप्त हुई है।

*__श्री के. संतानम्__ (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मैं जानना चाहता हूं कि क्या परिवर्द्धन के लिये वे शब्द जोड़ लिये गये।

*__माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर:__ मेरे संशोधन के बाद वाक्यांश का स्वरूप नीचे लिखे अनुसार हो जायेगा:

''1-सारी सम्पत्ति, पावना, अधिकार तथा देना के सम्बन्ध में संघ-सरकार 'भारतीय स्वाधीनता कानून' के अधीन अनुकूल रूप में परिवर्तित 'सन् 1935 के भारत-शासन-विधान' द्वारा संस्थापित भारत सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी।''

*__श्री के. सन्तानम्:__ मैं अपना संशोधन (नम्बर 401) नहीं पेश करता।

*__अध्यक्ष:__ संशोधित रूप में जो संशोधन पेश किया गया है, यह है:

''1-सारी सम्पत्ति, पावना, अधिकार तथा देना के सम्बन्ध में संघ-सरकार 'भारतीय स्वाधीनता कानून' के अधीन अनुकूल रूप में परिवर्तित 'सन् 1935 के भारत-शासन-विधान' द्वारा संस्थापित भारत सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी।''

***श्री के. सन्तानम्:** कठिनाई यह है कि 'भारतीय स्वाधीनता कानून' को 'सन् 1935 के भारत-शासन-विधान' से पहले आना चाहिये। इसलिये 'सन् 1935 के भारत-शासन-विधान' को पहले रखना सही न होगा। कम को हमें उलटना ही होगा।

***अध्यक्षः** सन् 1935 के कानून में ही अनुकूल परिवर्तन किये गये हैं।

***श्री के. सन्तानम्:** चालू कानून 'भारतीय स्वाधीनता कानून' है और अनुकूल परिवर्तन इसी 'भारतीय स्वाधीनता कानून' के अधीन हैं।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** क्या मैं यह बात साफ कर सकता हूं। कुछ भी हो श्रीमान् 'भारतीय स्वाधीनता कानून' अधिकांशतः एक सामर्थ्य प्रदायक कानून है। 15 अगस्त सन् 1947 से आगे जिस विधान के अधीन हम कार्य करेंगे, फिर भी 'सन् 1935 का भारत-शासन-विधान' ही होगा, जो भारतीय स्वाधीनता कानून द्वारा गवर्नर-जनरल को दिये गये अधिकारों के अनुसार जारी किये जाने वाले आदेशों के अनुकूल परिवर्तित किया हुआ होगा।

***श्री के. सन्तानम्:** मैं नहीं समझता कि कानूनी दृष्टि से यह ठीक होगा। कई बातों के सम्बन्ध में हम 'भारतीय स्वाधीनता कानून' के अधीन कार्य कर रहे होंगे या 'सन् 1935 के भारत-शासन-विधान' के अधीन कार्य करेंगे?

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** मेरा ख्याल है कि श्री सन्तानम् ठीक कहते हैं। असली विधान तो स्वाधीन भारतीय उपनिवेश का विधान होगा। उपनिवेश-कानून (डोमिनियन एक्ट) के अनुकूल बनाने के लिये हम सन् 1935 के कानून (एक्ट) में आवश्यक परिवर्तन कर रहे हैं। भावी सरकार उपनिवेश-सरकार की उत्तराधिकारिणी होगी।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, मैं कानूनी मत के आगे सिर झुकाता हूं, यद्यपि मुझे इत्मीनान नहीं हो रहा है। मुझे इसके सही होने में सन्देह है।

***श्री के. सन्तानम्:** उपयुक्त व्यवस्था कर ली जाये।

***अध्यक्षः** यद्यपि अर्थों में कोई फर्क नहीं है, पर इस विषय में मतभेद अवश्य है। अच्छा होता यदि आप इस मामले को सर एन. गोपालस्वामी आयंगर पर छोड़ देते, ताकि वे इसे सही रूप में रख लेते।

चूंकि सर्वश्री निजलिंगप्पा, कृष्णमूर्तिराव तथा अनन्तशयनम् आयंगर अपने संशोधन नहीं रख रहे हैं, अतएव में भाग 11 का वाक्यांश 1 मत लेने के लिये रखूंगा।

प्रश्न यह है कि:

''भाग 11 का वाक्यांश 1 स्वीकार किया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

वाक्यांश 2

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव रखता हूं:

''2. (1) इस 'विधान' के अधीन संघ-शासन के प्रदेशों में विधान आरम्भ होने के तत्काल पहले चालू कानून वहां चालू रहेंगे, जब तक कि एक योग्य व्यवस्थापक-मंडल या अन्य योग्य सत्ता द्वारा वे परिवर्तित या रद्द या संशोधित न किये जायें।

(2) अध्यक्ष महोदय आदेश द्वारा व्यवस्था दे सकेंगे कि एक निश्चित तारीख से प्रान्तों में चालू किसी भी कानून का असर योग्य सत्ता द्वारा रद्द या संशोधित किये जाने तक के लिये उन अनुकूल परिवर्तनों व संशोधनों के अधीन होगा, जो उक्त कानून की व्यवस्था को इस विधान की अनुकूलता में लाने के लिये उन्हें आवश्यक या अच्छे मालूम हों।''

मौजूदा कानून (एक्ट) को चालू रखने के लिये ये जरूरी हैं।

(श्री जयनारायण व्यास ने अपना संशोधन नम्बर 404 पेश नहीं किया।)

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** सभापति महोदय, मैं यह प्रस्ताव रखना चाहता हूं कि:

''वाक्यांश 2 के उप-वाक्यांश (2) में 'योग्य सत्ता द्वारा' शब्दों की जगह 'एक योग्य सत्ता द्वारा' शब्द रखे जायें।''

श्रीमान्, यह केवल मस्विदे का संशोधन है।

***श्री एस.वी. कृष्णमूर्ति राव** (मैसूर): सभापति महोदय, यह केवल एक सामर्थ्यप्रदायक व्यवस्था है, जो वैसी ही है जैसी कि प्रान्तों के लिये की गयी है। इसका ताल्लुक उन्हीं राज्यों से है, जो यूनियन में शामिल हों। मेरा संशोध न इस प्रकार है:

''वाक्यांश 2 के उप-वाक्यांश (2) में 'प्रान्तों' शब्द के बाद निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

'और वे राज्य जो 1947 के भारतीय स्वाधीनता कानून की धारा 2 की व्यवस्था के अनुसार भारतीय उपनिवेश के अंग हैं'।''

मुझे आशा है कि वाक्यांश के प्रस्तावक महाशय यह संशोधन स्वीकार करेंगे।

***अध्यक्ष:** चूंकि इस वाक्यांश पर अन्य कोई संशोधन नहीं है और कोई सदस्य कुछ कहना नहीं चाहता, इसलिये अब सर एन. गोपालस्वामी आयंगर बहस के उत्तर में बोल सकते हैं।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** सभापति महोदय, श्री नजीरुद्दीन अहमद का सुझाव मस्विदे के संशोधन के सम्बन्ध में है। किन्तु मुझे निश्चय नहीं है कि वह मस्विदा सम्बन्धी संशोधन है। ''एक योग्य सत्ता द्वारा'' की जगह मैं ''योग्य सत्ता द्वारा'' ही रखना पसन्द करूंगा।

श्री राव के संशोधन के विषय में मुझे यह कहना है कि यदि राज्यों के प्रतिनिधि उससे सहमत हों, तो मैं उसे स्वीकार करने के लिये तैयार हूं। किन्तु मुझे भय है कि इस प्रश्न से सहमत होने के पहले हमें बड़ी सावधानी से उसकी जांच करनी होगी। मैं यह अधिक अच्छा समझूंगा कि यह वाक्यांश छोड़ रखा जाये और बाद में वह जांच लिया जाये।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा।

श्री नजीरुद्दीन अहमद का संशोधन कि वाक्यांश 2 के उप-वाक्यांश (2) में ''योग्य सत्ता द्वारा'' शब्दों की जगह ''एक योग्य सत्ता द्वारा'' शब्द रखे जायें।

संशोधन का प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया।

***श्री एस.वी. कृष्णमूर्ति राव:** श्रीमान्, मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

***अध्यक्षः** श्री कृष्णमूर्तिराव अपना संशोधन वापस लेते हैं। मैं समझता हूं कि उन्हें सभा इसे वापस लेने की इजाजत दे रही है।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं वाक्यांश पर मत लूंगा।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

वाक्यांश 3

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्, वाक्यांश 3 इस प्रकार हैः

''जब तक कि इस विधान के अनुसार 'सर्वोच्च न्यायालय' (सुप्रीम कोर्ट) की स्थापना नहीं हो जाती, 'संघ-न्यायालय' (फेडरल कोर्ट) ही 'सर्वोच्च-न्यायालय' माना जायेगा और वह 'सर्वोच्च न्यायालय' का सारा कार्य सम्पन्न करेगा।

साथ में यह शर्त भी है कि विधान के आरम्भ होने के समय संघ-न्यायालय तथा 'प्रिवी कौंसिल की ज्युंडिशियल कमेटी' के सामने जो मामले विचाराधीन होंगे, वे उसी प्रकार निपटाये जायेंगे, मानो यह विधान चालू न हुआ हो।''

अर्थात्, इस विधान के आरम्भ के समय 'ज्युडिशियल कमेटी' के सामने जो मामले विचाराधीन होंगे, उनका फैसला वही कमेटी करती रहेगी। श्रीमान्, मैं देखता हूं कि इस वाक्यांश में सुधार करने के लिये भी कुछ संशोधन रखे गये हैं। सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने जिस संशोधन की सूचना दी है, मैं उसे स्वीकार करने को तैयार हूं।

(सर्वश्री के. सन्तानम्, विश्वनाथदास तथा ठाकुरदास भार्गव ने अपने संशोधन नम्बर 407, 408 तथा 409 पेश नहीं किये।)

***श्री जसपतराय कपूरः** सर अल्लादी के संशोधन के ख्याल से मैं अपना संशोधन नम्बर 410 नहीं पेश कर रहा हूं।

(श्री सिधवा ने अपना संशोधन नम्बर 411 पेश नहीं किया।)

***सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** मेरा संशोधन इन शब्दो में हैः

''वाक्यांश 3 की शर्त-व्यवस्था के स्थान में निम्नलिखित रखा जायेः

[सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

'इस विधान के लागू होने पर तथा उसके बाद के किसी भी न्यायालय से की गयी अपीलों तथा दरख्वास्तों को सुनने व फैसला करने का सम्राट की प्रिवी कौंसिल की ज्युडिशियल कमेटी का अधिकार-क्षेत्र, जिसमें सम्राट के विशेषाधिकार के प्रयोगान्तर्गत फौजदारी मामलों के सम्बन्ध का अधिकार-क्षेत्र भी सम्मिलित है, समाप्त हो जायेगा और प्रिवी कौंसिल के विचाराधीन सारी अपीलें तथा अन्य कार्रवाइयां 'सुप्रीम कोर्ट' को हस्तांतरित समझी जायेंगी तथा उसी के द्वारा फैसल होंगी। इस व्यवस्था को क्रियान्वित करने तथा इसके अमल के लिये संघ-शासन की पार्लियामेंट और भी व्यवस्था कर सकती है'।''

श्रीमान्, सभा से इस संशोधन को स्वीकार करने का अनुरोध करते हुये मैं कुछ बताना चाहता हूं। ब्रिटिश राष्ट्र-मंडल तक में न्याय-सम्बन्धी स्वायत्त शासन उस नवीन पद का अनिवार्य अनुगामी समझा जाता है, जो पद कि उपनिवेशों ने प्राप्त किया है। आस्ट्रेलिया में उस देश की हाईकोर्ट की अनुमति बिना अपील करने का कोई अधिकार नहीं है। कनाडा में हाल की कानून-व्यवस्था के अनुसार दीवानी व फौजदारी दोनों ही के मामलों में वहां की 'सुप्रीम कोर्ट' के फैसले पर अपील कर सकने का अधिकार समाप्त कर दिया गया है। दक्षिण अफ्रीका में भी वहां के विधान के अनुसार 'ज्युडिशियल कमेटी' में अपील करने का अधिकार नहीं है। यदि ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल के उपनिवेशों तक में स्थिति यह है, तो समझ में नहीं आता कि भारत के एक स्वाधीन प्रजातन्त्र (रिपब्लिक) हो जाने और जो विधान हम तैयार कर रहे हैं उसके लागू हो जाने पर 'ज्यूडिशियल कमेटी' का उक्त अधिकार-क्षेत्र कायम रखना कहां तक उचित है। विचाराधीन अपीलों के सम्बन्ध में भी 'कमेटी' का अधिकार-क्षेत्र ऐसी दशा में अपने-आप समाप्त हो जाना आवश्यक है। समझ में नहीं आता कि वस्तुत: जो एक विदेशी न्यायालय है, वह भारतीय न्यायालयों के निर्णय उलट देने या उनमें परिवर्तन करने की स्थिति में कैसे रखा जाये। जो 'सुप्रीम कोर्ट' स्थापित होने को है, वही सारे भारत के लिये अपील करने का अन्तिम न्यायालय है; अत: उचित ही है कि जो भी मामले विचाराधीन हों, वे इस 'सुप्रीम कोर्ट' को हस्तांतरित कर दिये जायें। कुछ हल्कों में यह प्रश्न भी उठाया गया है कि क्या हम 'ज्युडिशियल कमेटी' को किसी मामले के कागज-पत्र हस्तांतरित करने का आदेश दे सकते हैं। हम केवल यही कानून बना रहे हैं कि विचाराधीन मामले हस्तांतरित समझे जायेंगे और यह कि इसके बाद इन सारे मामलों की सुनवाई का अधिकार-क्षेत्र सुप्रीम कोर्ट का होगा। मैं नहीं समझता कि 'ज्युडिशियल कमेटी' हमारी कानून-व्यवस्था के सहायतार्थ कार्य न करेगी। वस्तुत: 'ज्युडिशियल कमेटी' के पास बहुत ही कम असली कागज-पत्र

हैं। यदि कार्य-विधि या अन्य बातों के सम्बन्ध में कोई कठिनाई पड़ी तो संघीय कानून बना लिया जायेगा। इस संशोधन के अन्तिम भाग का यही लक्ष्य है। अतएव मैं सभा से अनुरोध करता हूं कि वह इस संशोधन को स्वीकार करे।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** मैं पूरक सूची 4 का अपना संशोधन नम्बर 11 नहीं पेश कर रहा हूं।

***अध्यक्ष:** मेरा ख्याल है कि अब केवल एक संशोधन और है।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** मैं सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का संशोधन स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्ष:** संशोधन वाक्यांश के प्रस्तावक द्वारा स्वीकार कर लिया गया है। अब मैं इसे मत लेने के लिये रखूंगा।

सभा द्वारा संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं वाक्यांश को सर अल्लादी द्वारा संशोधित रूप में मत लेने के लिये रखूंगा।

वाक्यांश 3, संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

अब केवल 2 मिनट समय रह गया है, और ...।

***माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर:** केवल दो या तीन वाक्यांश और बचे हैं।

***अध्यक्ष:** यदि सभा की इच्छा है कि इन वाक्यांशो को हम पूरा कर लें, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है, किन्तु $2^1/_2$ बजे दिन में 'एडवाइज़री कमेटी' की बैठक है और मेम्बरों की इच्छा हो सकती है कि . . . ।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** इस ख्याल से कि 'परिषद्' (असेम्बली) आज केवल 1 बजे तक ही बैठेगी। हम पहले ही आज के लिये अपनी सीटें (रेल में) रिजर्व करा चुके हैं।

***अध्यक्ष:** क्या सभा की यह इच्छा है कि शेष वाक्यांशों पर दूसरे अधिवेशन में विचार किया जाये?

***अनेक माननीय सदस्य:** हां।

***अध्यक्ष:** तब शेष वाक्यांशों का विचार स्थगित रखा जाता है।

अध्यक्ष द्वारा घोषणा

अध्यक्ष: किन्तु विसर्जित होने से पहले मुझे कुछ घोषणा करनी है। राजकुमारी अमृतकौर का प्रस्ताव था कि राष्ट्रीय झंडे के लिये खादी का व्यवहार किया जाये। इस प्रस्ताव की सूचना ऐसे समय मिली, जब हम 'स्टीयरिंग कमेटी' की बैठक नहीं बुला सकते थे। इसलिये इस प्रस्ताव को हम सभा के सामने नहीं रख सके। किन्तु मैं सभा को सूचित कर देना चाहता हूं कि जहां तक इस 'विधान परिषद्' का सम्बन्ध है, कोई ऐसा झण्डा इस्तेमाल न किया जायेगा, जो खादी के सिवा और किसी चीज का बना हो। सरकार की भी यही नीति है, जिसकी सूचना प्रान्तीय सरकारों को भी दी जा चुकी है कि सारे राष्ट्रीय झंडे केवल खादी के बनाये जाने चाहियें, अर्थात् हाथ के कते व बुने कपड़े के, चाहे वह कपड़ा सूत का हो अथवा ऊन या रेशम या अन्य किसी चीज का हो।

कल सभा ने एक प्रस्ताव स्वीकार किया था, जिसके द्वारा मुझसे चीफ कमिश्नरों के प्रान्तों के विधान का मस्विदा तैयार कराने के लिये एक कमेटी नियुक्त करने का अनुरोध किया गया था। मुझे यह घोषणा करते हुये हर्ष है कि इस कार्य के लिये मैंने इन महानुभावों की कमेटी नियुक्त की है:

माननीय सर एन. गोपालस्वामी आयंगर।

डाक्टर बी. पट्टाभि सीतारमैया।

श्री के. सन्तानम्।

श्री देशबन्धु गुप्त।

श्री मुकुट बिहारी लाल भार्गव।

श्री सी. एम. पून्या।

मि. हुसैन इमाम।

एक अन्य महत्वपूर्ण विषय भी है, जिसकी चर्चा बहस के शुरू में की गयी थी और उसके सम्बन्ध में भी, अर्थात् 15 अगस्त के समारोह के सम्बन्ध में मैं कुछ घोषणा करना चाहता हूं। हमने जो कार्यक्रम सोच रखा है, यह है कि:

14 और 15 के बीच की रात ठीक आधी रात में हम इस सभा का एक अधिवेशन करें और उस समय ठीक बारह बजते हम उस कार्रवाई को जिससे

कि हम पास हो चुके उस नवीन एक्ट (कानून) के अनुसार सत्ता ग्रहण करने जा रहे हैं, या तो आरम्भ कर दें या समाप्त कर दें। और एक प्रस्ताव द्वारा या अन्य प्रकार से हम सभा के नेता को अधिकार दें कि वह लार्ड माउण्टबैटन के पास जाकर उनसे गवर्नर-जनरल का पद स्वीकार करने की प्रार्थना करें, ताकि गवर्नर-जनरल के रूप में उनकी नियुक्ति नियम-पूर्वक तथा हमारी प्रार्थना से हुई समझी जाये। साथ ही सभा का नेता उस समय उन्हें अपने 'केबिनेट' (मंत्रिमंडल) के, जोकि वह बनायेगा, सदस्यों के नामों की भी सूचना देगा। यह कार्रवाई रात की होगी। तदन्तर सवेरे 10 बजे हम यहां इस सभा का अधिवेशन करेंगे जिसमें गवर्नर-जनरल उपस्थित होंगे और उस समय यहां जाब्ते का कोई उत्सव किया जायेगा, जिसमें हमें वस्तुतः सत्ता हस्तान्तरित की जायेगी।

***श्री एम.एस. अणेः** पंद्रह को?

***अध्यक्षः** वह तो 14 की आधी रात और 15 के तड़के होगी।

***श्री बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्त प्रांतः जनरल): वह हमारा मुक्तिदिवस होगा।

***अध्यक्षः** रात के अधिवेशन के या सवेरे के अधिवेशन के कार्यक्रम का पूरा विवरण अभी हमने तैयार नहीं किया है, किन्तु पंडित जवाहरलाल नेहरू जैसे तथा कुछ अन्य मेम्बरों के परामर्श से, जो यहां मौजूद होंगे, मैं यह विवरण निश्चित करने का विचार करता हूं।

***श्री बी. दास** (उड़ीसाः जनरल): अर्थ व्यवस्था संबन्धी अर्थ कमेटी के सम्बन्ध में क्या निश्चय हुआ है?

***अध्यक्षः** पहले मुझे यह बात पूरी कर लेने दीजिये।

जैसा कि माननीय सदस्य जानते ही हैं, दर्शकों के प्रवेश के सम्बंध में स्थिति यह है कि इस सभा-भवन में हमारे पास स्थान बहुत ही सीमित है। सदस्यों की ओर से मांग की गयी है कि हमें उन्हें अपने अतिथि लाने की, यद्यपि वे अतिथि साधारण शर्तों के अनुसार दिये गये कार्डों पर ही लाये जायेंगे, अनुमति देनी चाहिये। साथ ही इस उत्सव के लिये हमें विदेशों के उन प्रतिनिधियों को जो यहां मौजूद हैं और दूतावासों के प्रतिनिधियों तथा अन्य लोगों को भी आमंत्रित करना आवश्यक

होगा तथा भारत सरकार के कुछ उच्च सिविल मिलिटरी अधिकारियों को भी निमंत्रण देना ही होगा। इसके अतिरिक्त पत्र-प्रतिनिधि भी उस अवसर पर पूरी संख्या में उपस्थित होना चाहेंगे। अतएव उन सभी लोगों के लिये स्थान की व्यवस्था कर सकना, जो आना और उस अवसर पर उपस्थित होना चाहते हैं, बहुत ही कठिन होगा। किन्तु मुझे आशा है कि इस सम्बन्ध में कोई ऐसा कार्यक्रम निश्चित करने का भार सभा हमारे ऊपर छोड़ देगी, जिसके द्वारा हम यथासम्भव अधिक से अधिक लोगों को स्थान देने का समुचित एवं न्याययुक्त प्रबन्ध कर सकेंगे।

***एक माननीय सदस्यः** क्या हर मेम्बर को दो कार्ड दिये जा सकते हैं?

***अध्यक्षः** यदि हम हर मेम्बर को दो कार्ड दें और अन्य किसी को भी आने की इजाजत न भी दें, तो भी हमारे पास पर्याप्त स्थान न होगा।

***श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीयः** कम से कम हर मेम्बर के लिये एक कार्ड।

***अध्यक्षः** चौदह की रात को दर्शकों के पासों के लिये पूर्व की भांति साधारण अनुमति रहेगी।

श्री महावीर त्यागी (संयुक्त प्रांतः जनरल): क्या आप कृपा करके इस सभा को कार्यक्रम का वह अंश जानने देंगे, जिसके अनुसार हमें लार्ड माउण्टबैटन को भविष्य में हमारे गवर्नर जनरल बनने के लिये आमंत्रित करना है? ऐसा इसलिये, क्योंकि इस सभा ने इस प्रश्न पर कभी विचार नहीं किया है और न उसने इस सम्बन्ध में कोई प्रस्ताव ही पास किया है और न वह लार्ड माउण्टबैटन के भारत का गवर्नर-जनरल होने के विचार से ही सहमत हुई है। शेष कार्यक्रम जैसा है वैसे ही चल सकता है।

***अध्यक्षः** यदि माननीय सदस्य इतने उत्सुक हैं, तो मैं यह प्रश्न सभा के विचारार्थ सामने रख दूंगा।

(बहुत-सी आवाजें: नहीं, नहीं)

***अध्यक्षः** कम से कम ऐसा मेरा ख्याल था, किन्तु यदि माननीय सदस्य चाहते हैं तो मैं इसे सभा के विचारार्थ रख सकता हूं।

***श्री शंकर दत्तात्रेय देव** (बम्बईः जनरल): हम नहीं समझे कि प्रश्न क्या है। हमें समझाइये कि क्या बात है?

***अध्यक्षः** मैंने एक कार्यक्रम बनाया था, जिसकी चर्चा मैं अपने वक्तव्य के शुरू में कर चुका हूं। एक सदस्य का कहना है कि अब हमें लार्ड माउण्टबैटन के गवर्नर जनरल होने का प्रश्न लेना चाहिये, क्योंकि सभा ने अब तक इस सम्बन्ध में विचार नहीं किया है। मैंने कहा कि यदि वे उत्सुक हों, तो मैं यह प्रश्न सभा के विचारार्थ रख दूंगा।

(बहुत-सी आवाजें: नहीं, नहीं। यह सभापति के लिये छोड़ दिया जाना चाहिये।)

***पंडित गोविन्द मालवीय** (संयुक्त प्रांतः जनरल): श्रीमान्, प्रश्न की अच्छाई-बुराई का बिल्कुल विचार किये बिना क्या मैं कह सकता हूं कि मुझे मालूम देता है कि माननीय सदस्य का जो मतलब था, यह था कि चूंकि इस मामले का निश्चय सभा से किसी भी प्रकार बिना पूछे–किया गया है, इसलिए हमें इस रीति से काम न लेना चाहिये कि इस 'सभा का नेता' सभा से सीधे वाइसराय के यहां जाये और सभा की ओर से उससे गवर्नर-जनरल का पद स्वीकार करने की प्रार्थना करे। मैं समझता हूं कि माननीय सदस्य का केवल इतना ही मतलब था, न कि यह कि हमें लार्ड माउण्टबैटन को गवर्नर-जनरल न रखना चाहिये।

***श्री महावीर त्यागीः** मेरा मतलब लार्ड माउण्टबैटन के भारत के गवर्नर जनरल स्वीकार किये जाने पर इस सभा की ओर से कोई आपत्ति करने का नहीं था। ऐसा पहले ही किया जा चुका है और यदि इस सभा में कोई ऐसे माननीय सदस्य हैं जिन्हें इस पर आपत्ति हो, तो इस विषय में वे प्रस्ताव रख सकते थे। मैं उस प्रश्न को इस सभा में नहीं उठाना चाहता। जो बात मैं सुझा रहा था, यह थी कि अच्छा होता यदि कार्यक्रम का वह अंश निकाल दिया जाता, जिसके अनुसार जैसा कि आपने बताया है, गवर्नर-जनरल का पद स्वीकार करने के लिये लार्ड माउण्टबैटन को इस सभा की ओर से आमन्त्रित किया जाने को है। मैं समझता हूं कि ऐसा वे पहले ही कर चुके हैं और अच्छा होता यदि यह शिष्टाचार त्याग

दिया जाता, क्योंकि सभा ने इस प्रश्न पर कभी विचार नहीं किया है और यदि सभा के इस प्रश्न पर विचार किये बिना वे आमन्त्रित किये गये, तो यह कोरा शिष्टाचार और मेरे मत से कुछ अनुचित भी होगा। मेरा सुझाव यह था कि योजना में कोई फर्क डाले बिना अथवा उनके गवर्नर-जनरल होने पर कोई आपत्ति किये बिना, यह सभा बद्ध न हो। वे गवर्नर जनरल हैं ही। पद का प्रस्ताव वे स्वीकार भी कर चुके हैं और इस सभा की ओर से किसी प्रकार बद्ध हुये बिना भी उनका वह पद रहेगा।

*__पं. गोविन्द मालवीयः__ श्रीमान्, मेरी तजवीज है कि इस विषय पर अब और बहस न हो तथा इसे हम सभापति पर छोड़ दें कि जैसा वह सर्वोत्तम समझें, करें।

*__श्री तजम्मुल हुसैन__ (बिहारः मुस्लिम)ः श्रीमान्, इस सम्बन्ध में नियमित रूप में यह एक प्रस्ताव उपस्थित करने के लिये क्या मैं आपकी अनुमति प्राप्त कर सकता हूं?

यह कि स्वाधीनता-दिवस-समारोह के सम्बन्ध में माननीय अध्यक्ष द्वारा तैयार किये गये कार्यक्रम को यह सभा पूरे का पूरा स्वीकार करती है।

*__अध्यक्षः__ मैं नहीं समझता कि मत लेने के लिये इस प्रकार कोई प्रस्ताव उपस्थित करने की आवश्यकता है। मैं समझता हूं कि अपने कहे अनुसार मैं कार्यक्रम का निश्चय कर लूंगा और उसका विवरण भी मैं समझ लूंगा।

*__श्री एच.वी. कामतः__ क्या आप इतनी कृपा करेंगे कि आदेश दे दें कि इस ऐतिहासिक अवसर पर इस 'परिषद्' के सदस्य कम से कम एक-एक दर्शक को प्रवेश दिला सकने के अधिकार से वंचित न किये जायेंगे?

*__अध्यक्षः__ यह स्थान पर निर्भर करता है। जैसा कि मैं कह चुका हूं, हम अधिक से अधिक लोगों के लिये स्थान उपलब्ध करने की पूरी से पूरी कोशिश करेंगे, किन्तु यदि हम ऐसा न कर सके, तो हम ऐसे उपाय से काम लेंगे कि सब सदस्यों का न्यायोचित ध्यान रखा जा सकेगा।

***एक माननीय सदस्य:** श्रीमान्, क्या मैं जान सकता हूं कि हम लोग यहां किस समय आयें?

***अध्यक्ष:** आपको 14 तारीख की रात को यहां आना है। ठीक समय की घोषणा मैं बाद में करूंगा। वह आधी रात का समय होगा।

***श्री एच.वी. कामत:** हर सदस्य को राष्ट्रीय झण्डा भेंट किये जाने की बात है; यदि वह 15 अगस्त से पहले दिया जा सके, तो हम विशेष आभारी होंगे।

***अध्यक्ष:** प्रत्येक सदस्य एक झण्डा खरीद ले।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान् आप द्वारा भेंट।

***अध्यक्ष:** यह ऐसा मामला है, जो हमारे विचार करने का है। हम प्रत्येक सदस्य को एक झण्डा देने का वचन नहीं दे सकते। इस समय यह व्यावहारिक नहीं मालूम देता।

***श्री अजित प्रसाद जैन** (संयुक्त प्रांत: जनरल)**:** आपने कहा है कि आप ऐसी योजना तैयार करेंगे, जिसके अनुसार दर्शकों को न्यायोचित रीति से सभा में प्रवेश दिया जा सकेगा। मैं वह समय जानना चाहता हूं जब आपकी यह योजना हम लोगों को मालूम हो सकेगी।

***अध्यक्ष:** एक-दो दिन में हम उक्त योजना तैयार कर लेंगे और समाचार-पत्रों में उसकी घोषणा कर दी जायेगी।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान्, इस सम्बन्ध में क्या मैं एक सुझाव रख सकता हूं? चूंकि आप कहते हैं कि अनेक सम्मानित उच्च व्यक्तियों को निमंत्रण देना है और हम लोग भी अपने मित्रों को यह शुभ उत्सव दिखाने को उत्सुक हैं, इसलिये मेरा सुझाव है कि यह उत्सव यहां करने के बजाय हम लोग एक बार फिर पुराने किले में या अन्य ऐसे ही स्थान में, जहां भारी उत्सव का आयोजन किया जा सके और भारी संख्या में लोगों के लिये स्थान मिल सके, क्यों न एकत्र हों? भारत के बहुतेरे लोग, जो दिल्ली में नहीं हैं, समारोह देखने के लिये बाहर से आ सकते हैं। अतएव मेरा सुझाव है कि हम इसे एक विशाल समारोह बनायें और उसे किसी ऐसी जगह करें, जहां हमें पर्याप्त स्थान उपलब्ध हो सके।

***अनेक माननीय सदस्यः** नहीं, नहीं।

***अध्यक्षः** चूंकि हम अपने अधिवेशन इस भवन में करते आये हैं, अतएव उचित ही है कि यह समारोह भी हम इसी भवन में करें।

(जी हां, जी हां)

***एक माननीय सदस्यः** मेरा प्रस्ताव है कि अधिक दर्शकों के लिये स्थान की व्यवस्था करने के लिये साथ के इन कमरों का भी उपयोग होना चाहिये।

***अध्यक्षः** हम इंच-इंच जगह का भी उपयोग करेंगे।

मैं आपसे एक बात और कहना चाहता था। 14 की रात और 15 के सबेरे के लिए हमने अगले अधिवेशन की घोषणा की है। यथा-समय कार्यालय से सूचनायें भेजी जायेंगी। सम्भव है कि सदस्यों को ठीक समय से ये सूचनायें प्राप्त न हों। अतएव वे इसे ही सूचना समझ सकते हैं और समाचार-पत्रों में जो प्रकाशित हो उसे भी वे इस सम्बन्ध में अपने प्रति सूचना ही समझ सकते हैं। उन्हें नियमित रूप में सूचनायें मिलने की प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है।

अब हमारी बैठक 14 अगस्त तक के लिये स्थगित होती है।

इसके बाद परिषद् गुरुवार 14 अगस्त, सन् 1947 ई. तक के लिये स्थगित हो गयी।

पुस्तक संख्या 2 खण्ड IV से VI -14 जुलाई,1947 से 27 जनवरी,1948

अंक-5 पुस्तक संख्या-2 दिनांक 14.08.1947 से 30.08.1947

भारतीय संविधान सभा
(भारतीय विधान परिषद)
के
वाद-विवाद
की
सरकारी रिपोर्ट
(हिन्दी संस्करण)

लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली द्वारा पुनर्मुद्रित

Con. 3. 5.1.47
750

अंक 5-6

संख्या 1

बृहस्पतिवार,
14 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1. वंदेमातरम् का गायन 1
2. अध्यक्ष का भाषण 1
3. सदस्यों द्वारा प्रतिज्ञा-ग्रहण सम्बन्धी प्रस्ताव 4
   विधान-परिषद् द्वारा सत्ता ग्रहण की तथा लार्ड माउण्टबैटन के गवर्नर-जनरल नियुक्त किए जाने की वायसराय को सूचना
4. राष्ट्रीय पताका उपस्थित किया जाना 14
5. राष्ट्रीय गीतों का गायन 17

भारतीय विधान-परिषद्

बृहस्पतिवार, 14 अगस्त, सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् का 5वां अधिवेशन कान्स्टीट्यूशन हाउस नई दिल्ली में रात के 11 बजे, अध्यक्ष मा. डा. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में प्रारम्भ हुआ।

वन्देमातरम् का गान

***अध्यक्ष:** कार्यक्रम का पहला विषय है वन्देमातरम् का गान। हम सब खड़े होकर इसे सुनेंगे।

(श्रीमती सुचिता कृपलानी (संयुक्त प्रांत: जनरल)
ने वन्देमातरम् गान का प्रथम पद गाया।)

अध्यक्ष का भाषण

अध्यक्ष: हमारे इतिहास के इस अहम् मौके पर जब वर्षों के संघर्ष और जद्दोजहद के बाद हम अपने देश के शासन की बागडोर अपने हाथों में लेने जा रहे हैं, हमें उस परम पिता परमात्मा को याद करना चाहिये जो मनुष्यों और देशों के भाग्य को बनाता है और हम उन अनेकानेक, ज्ञात और अज्ञात, जाने और अनजाने पुरुषों और स्त्रियों के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं जिन्होंने इस दिन की प्राप्ति के लिये अपने प्राण न्यौछावर कर दिये, हंसते-हंसते फांसी की तख्तियों पर चढ़ गये, गोलियों के शिकार बन गये, जिन्होंने जेलखानों में और कालापानी के टापू में घुल-घुल कर अपने जीवन का उत्सर्ग किया, जिन्होंने बिना संकोच माता-पिता, स्त्री-संतान, भाई-बहिन यहां तक कि देश को भी छोड़ दिया और धन-जन सबका बलिदान कर दिया। आज उनकी तपस्या और त्याग का ही फल है कि हम इस दिन को देख रहे हैं।

हम अपनी श्रद्धा और भक्ति का उपहार महात्मा गांधी को भी भेंट करें। तीस वर्षों से वह हमारे पथ-प्रदर्शक (राह दिखाने वाले) और एकमात्र आशा और उत्साह की ज्योति बने रहे हैं। हमारी संस्कृति और जीवन के उस मर्म का वह प्रतीक हैं जिसने हमको इतिहास की आफतों और मुसीबतों में भी जिन्दा रखा। निराशा

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[अध्यक्ष]

और मुसीबत के अंधेरे कुएं से हमको उन्होंने खींच निकाला और हमारे दिलों में ऐसी जिन्दगी फूंकी कि हममें अपने जन्म-सिद्ध अधिकार (स्वराज्य) के लिये दावा पेश करने की हिम्मत और ताकत आयी और उन्होंने हमारे हाथों में सत्य और अहिंसा का अचूक अस्त्र दिया जिसके जरिये बिना हथियार उठाये स्वराज्य का अनमोल रत्न इतने कम दाम में, इतने बड़े देश के लिये और यहां के करोड़ों आदमियों के लिये हमने हासिल कर लिया। हमारे जैसे कमजोर लोगों को भी उन्होंने बड़ी चतुराई के साथ, अचल संकल्प के साथ और देश के लोगों में, अपने अस्त्र में और सबसे अधिक ईश्वर में, अटल विश्वास के साथ आगे बढ़ाया। हमारा कर्तव्य है कि हम सच्चे और अटल बने रहें। मैं आशा करता हूं कि अपनी विजय की घड़ी में हिन्दुस्तान उस अस्त्र को नहीं छोड़ेगा और उसके मूल्य को कम करके न आंकेगा जिसने उसे निराशा के गर्त से निकाल कर ऊपर उठाया और जिसने अपनी शक्ति और उपयोगिता को भी प्रमाणित कर दिया है। संसार के भविष्य के निर्माण में जब लड़ाई से दुनिया के लोग ऊब गये और घबराये हुये हैं, उस अस्त्र को बड़ा काम करना है। लेकिन ये बड़ा काम हिन्दुस्तान दूर से दूसरों की नकल करके नहीं पूरा कर सकता है और न हथियारों को जमा करने और ऐसे अस्त्रों के बनाने में, जो ज्यादा से ज्यादा बरबादी कम से कम समय में कर सकते हैं, दूसरों से मुकाबला करके वह पूरा कर सकता है। आज इस देश को मौका मिला है और हम आशा करते हैं कि इसमें उतनी हिम्मत और शक्ति होगी कि वह संसार के सामने लड़ाई, मृत्यु और बरबादी से बचाने का अपना अस्त्र पेश कर सकेगा। संसार को इसकी जरूरत है। अगर वह लड़खड़ाता हुआ बर्बरता के युग में जहां से निकल आने का वह दावा करता है, फिर पहुंचना नहीं चाहता है तो वह इसका स्वागत भी करेगा।

दुनिया के सभी देशों को हम विश्वास दिलाना चाहते हैं कि हम अपने इतिहास के अनुसार सबके साथ दोस्ती, मित्रता का बर्ताव रखना चाहते हैं। किसी से हमारा कोई द्वेष नहीं, हमें किसी के साथ घात नहीं करना है और हम उम्मीद करते हैं कि हमारे साथ कोई ऐसा नहीं करेगा। हमारी एक ही आशा और अभिलाषा है और वह यह कि हम सबके लिये स्वतंत्रता और मानव जाति में शान्ति और सुख स्थापित करने में मददगार हो सकें।

जिस देश को ईश्वर और प्रकृति ने एक बनाया था, उसके आज दो टुकड़े हो गये हैं नज़दीक के लोगों से बिछुड़ना तो दुखदाई होता ही है। बिछुड़ना हमेशा

दुखदाई होता है। ऐसे लोगों से भी बिछुड़ना जिनके साथ थोड़े ही दिनों का सम्बंध हो, दुखदायी होता है, इसलिये मुझे यह कहना पड़ता है कि इस बंटवारे से हमारे दिल में दुख है। मगर इसके बावजूद हम आपकी तरफ से और अपनी ओर से पाकिस्तान के लोगों को अपनी नेकनीयती और उनकी तरक्की और कामयाबी के लिये अपनी सद्इच्छा सद्भावना प्रकट करना चाहते हैं। जिस शासन के काम में आज वे लग रहे हैं उसमें हम उनकी पूरी कामयाबी चाहते हैं। ऐसे लोगों को जो बंटवारे से दुखी हैं और पाकिस्तान में रह गये हैं, हम अपनी शुभकामना भेजते हैं। उनको घबराना नहीं चाहिये अपने घरबार, धर्म और संस्कृति को बचाये रखना चाहिये और हिम्मत और सहिष्णुता से काम लेना चाहिये। उनके ऐसा भय करने का कोई कारण नहीं कि उनके साथ ठीक और न्यायपूर्ण बर्ताव नहीं होगा और उनकी रक्षा नहीं होगी। जो आश्वासन दिया है उसको मान लेना चाहिये और जहां पर आज वे रह रहे हैं वहां अपनी वफादारी और सच्चाई से अपनी मुनासिब जगह, उन्हें हासिल करनी चाहिये।

हिन्दुस्तान में जो अल्पसंख्यक लोग हैं उनको हम आश्वासन देना चाहते हैं कि उनके साथ ठीक और इन्साफ का बर्ताव होगा और उनके और दूसरों के बीच कोई फर्क नहीं किया जायेगा। उनके धर्म और संस्कृति और उनकी भाषा सुरक्षित रहेगी और नागरिकता के सभी अख्तियार और अधिकार उनको मिलेंगे। उनसे आशा की जायेगी कि जिस देश में वे रहते हैं उसकी तरफ और उस देश के विधान की तरफ, वे वफादार बने रहें। सभी लोगों को हम यह आश्वासन देना चाहते हैं कि हमारी अथक् कोशिश होगी कि देश से गरीबी और दीनता, भूख और बीमारी दूर हो जाये, मनुष्य मनुष्य के बीच से भेदभाव उठ जाये, कोई मनुष्य दूसरे का शोषण न करे, सबके लिये सुन्दर समुचित जीवन बिताने का साधन जुटा दिया जाये। हम एक बड़े काम में लगने जा रहे हैं। हम आशा करते हैं कि देश के सभी लोग हमारे इस काम में मदद और सहयोग देंगे और संसार के दूसरे देश अपनी सहानुभूति और सहायता देंगे। हम आशा करते हैं कि हम अपने को इस योग्य साबित कर सकेंगे।

अध्यक्षः इसके बाद अब मेरा प्रस्ताव है कि हम सब उन वीरों की पुण्य स्मृति में, जिन्होंने देश में और बाहर स्वातंत्र्य-संग्राम में अपनी बलि दी है, कुछ क्षण मौन खड़े रहें।

(सभा दो मिनट तक मौन खड़ी रही।)

सदस्यों द्वारा प्रतिज्ञा ग्रहण सम्बन्धी प्रस्ताव

अध्यक्ष: अब पण्डित जवाहरलाल नेहरू अपना प्रस्ताव उपस्थित करेंगे।

माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू (संयुक्त प्रांत: जनरल): साहब सदर, कई वर्ष हुये कि हमने किस्मत से एक बाज़ी लगाई थी, एक इकरार किया था, प्रतिज्ञा की थी। अब वक्त आया कि हम इसे पूरा करें। बल्कि वह पूरा तो शायद अभी भी नहीं हुआ, लेकिन फिर भी एक बड़ी मंजिल पूरी हुई। हम वहां पहुंचे हैं। मुनासिब है कि ऐसे वक्त में पहला काम हमारा यह हो कि हम एक प्रण और एक नई प्रतिज्ञा फिर से करें। इकरार करें, आइन्दा हिन्दुस्तान और हिन्दुस्तान के लोगों की खिदमत करने का। चन्द मिनटों में यह असेम्बली एक पूरी तौर से आजाद खुदमुख्तार असेम्बली हो जायेगी और यह असेम्बली नुमाइन्दगी करेगी एक आज़ाद खुदमुख्तार मुल्क की। चुनाचे, इसके ऊपर जबरदस्त जिम्मेदारियां आती हैं और अगर हम इन जिम्मेदारियों को पूरी तौर से महसूस न करें तब शायद हम अपना काम पूरी तौर से न कर सकेंगे। इसलिये यह जरूरी हो जाता है कि इस मौके पर पूरी तौर से सोच-समझ कर इसका इकरार करें। जो रिजोल्यूशन, प्रस्ताव, मैं आपके सामने पेश कर रहा हूं वह इसी इकरार, इसी प्रतिज्ञा का है। हमने एक मंजिल पूरी की और आज उसकी खुशियां मनाई जा रही हैं। हमारे दिल में भी खुशी है और किस कदर गुरूर है और इत्मीनान है लेकिन यह भी हम जानते हैं कि हिन्दुस्तान भर में खुशी नहीं है। हमारे दिल में रंज के टुकड़े काफी हैं और—दिल्ली से बहुत दूर नहीं—बड़े बड़े शहर जल रहे हैं। वहां की गर्मी यहां आ रही है। खुशी पूरे तौर से नहीं हो सकती; लेकिन फिर भी हमें इस मौके पर हिम्मत से इन सब बातों का सामना करना है। न हाय-हाय करना है न परेशान होना है। जब हमारे हाथ में बागडोर आयी तो फिर ठीक तरह से गाड़ी को चलाना है। आमतौर से अगर मुल्क आज़ाद होते हैं, काफी परेशानियां मुसीबतों और खूंरेजी के बाद होते हैं। काफी ऐसी खूंरेजी हमारे मुल्क में भी हुई है और ऐसे ढंग से हुई जो बहुत ही तकलीफदेह हुई है। फिर भी हम आज़ाद हुये, बाअमन तरीकों से, शांतिमय तरीकों से और एक अजीब मिसाल हमने दुनिया के सामने रखी। हम आज़ाद हुये लेकिन आज़ादी के साथ मुसीबतें और बोझे आते हैं। उनका हमें सामना करना है। उनको ओढ़ना है और जो स्वप्न हमने देखा था उसे असल बनाना है। हमें मुल्क को आज़ाद करना था, मुल्क से गैर हकूमत को अलग करना था, वह काम पूरा हुआ। लेकिन, गैर हकुमत को अलग करके काम पूरा नहीं होता। जब तक एक एक इन्सान हिन्दुस्तान का आज़ादी की हवा में न रहे सके और

जो मुसीबतें हैं वह हटाई न जायें और जो उसकी तकलीफें हैं, दूर न हो सकें इसलिये बहुत बड़ा हिस्सा हमारे काम का बाकी है और जब तक वह बातें पूरी न हों उस वक्त तक हमारा काम जारी रहेगा। बड़े-बड़े सवाल हमारे सामने हैं और उनकी तरफ देखकर कुछ दिल दहल जाता है, लेकिन फिर हिम्मत यह सोच कर आती है कि कितने बड़े सवाल हमने पुराने जमाने में हल किये तो क्या हम इन सवालों से दब जायेंगे? ताकत और गुरूर तो हमारा शक्शी और व्यक्तिगत नहीं है। लेकिन कुछ गुरूर है अपने मुल्क पर, और कुछ इतमीनान है अपने कौम की ताकत पर और उन पर जिन लोगों ने इतनी बड़ी मुसीबतें झेलीं। इसलिये यह भी इतमीनान होता है कि जो इस वक्त कुछ परेशानियों का बोझ है उनको भी हम ओढ़ेंगे और उन सवालों को भी हम हल करेंगे। आखिर हिन्दुस्तान एक आज़ाद मुल्क है, अच्छा है। जब हम आज़ादी के दरवाजे पर खड़े हैं, हम इसको खासतौर से याद रखें कि हिन्दुस्तान किसी एक फिरके का मुल्क नहीं है, एक मजहब वालों का नहीं है, बल्कि बहुत सारे और बहुत किस्म के लोगों का है। बहुत धर्म और मजहबों का है। किस तरह की आज़ादी हम चाहते हैं? हमारी तरफ से पहले भी यह कहा गया है। जो पहला रिजोल्यूशन मैंने पहले यहां पेश किया था उसमें भी यह कहा गया था कि यह जो आजादी हमारी है, वह हरेक हिन्दुस्तानी के लिये है, हरेक हिन्दुस्तानी का बराबर-बराबर का हक है, हर हिन्दुस्तानी को इस आज़ादी का बराबर-बराबर का हिस्सेदारी करना है। इस ढंग से हम आगे बढेंगे और कोई ज्यादती करेगा तो उसे हम रोकेंगे, चाहे वह कोई हो; किसी पर अगर ज्यादती होगी तो उसकी मदद करेंगे, चाहे वह कोई भी हो। अगर हम इस तरह से चलेंगे तो हम बड़े मसले हल कर लेंगे। लेकिन अगर हम तंग ख्याली में पड़ जायेंगे तो वह मसले हल नहीं होंगे।

मैं इस रिजोल्यूशन को आपके सामने पेश करता हूं और अंग्रेजी जबान में भी इसको पढ़कर अभी आपको सुनाऊंगा।

(इसके बाद पं. जवाहरलाल नेहरू ने प्रस्ताव को अंग्रेजी जबान में सभा को पढ़कर सुनाया)

निश्चय किया जाता है कि:

(1) रात के बारह बजते ही विधान-परिषद् के सभी उपस्थित सदस्य निम्नलिखित प्रतिज्ञा ग्रहण करेंगे:

''अब जबकि हिन्द वासियों ने त्याग (कुर्बानी) और तप से स्वतंत्रता (आजादी)

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

हासिल कर ली है, मैं . . . जो उस विधान परिषद् (आईन साज मजलिस) का एक सदस्य (मेम्बर) हूं अपने को बड़ी नम्रता (निहायत इनकिसारी) से हिन्द और हिन्दवासियों की सेवा (खिदमत) के लिये अपने को अर्पण (वक्फ) करता हूं ताकि यह प्राचीन (कदीम) देश (मुल्क) संसार में अपना उचित और गौरवपूर्ण (बाइज्ज़त) जगह पा लेवे और संसार शान्ति स्थापना (अमन कायम) करने और मानव जाति (इन्सान) के कल्याण (बहबूदी) में अपनी पूरी शक्ति लगा कर खुशी-खुशी हाथ बंटा सके।

(2) वे सदस्य जो इस अवसर पर अनुपस्थित हैं, उस समय जब वे परिषद् के अधिवेशन में इसके बाद उपस्थित हों तो इस प्रतिज्ञा को (ऐसे शाब्दिक परिवर्तनों के साथ जैसा अध्यक्ष निर्धारित करें) ग्रहण करेंगे। *(तुमुल हर्षध्वनि)*

***चौ. खलीकुज्जमां** (संयुक्त प्रांत: मुस्लिम): जनाबे सदर, गालिबन आधी रात के बाद हिन्दुस्तान की तारीख में वह अजीम इन्कलाब होने वाला है जिसके लिये एक सदी से हिन्दुस्तान अपनी आज़ादी की लड़ाई में मशरूफ रहा। वह घड़ी, वह साइत जिसके लिये बहुत से हिन्दुस्तान के बाशिन्दों ने अपनी जानें भी कुरबान कीं, वह साइत बहुत करीब आ रही है। जहां आज इन कुरबानियों के नतीजे में आपको आज़ादी नसीब हुई, वहां हमारे सामने एक दूसरा सवाल इससे भी ज्यादा अहम पेश हो जाता है। लड़ाई खत्म हुई, मगर एक दूसरी किस्म की लड़ाई शुरू होने वाली है। वह लड़ाई किसी गैर से नहीं, खुद अपनों ही से होने वाली है। जाहिर है कि जब किसी कौम से किसी दूसरी किस्म की लड़ाई थी तो उसमें दूसरे किस्म के जज्बात, दूसरे किस्म की हरकात और अमल हमको अख्तियार करना पड़ता। अब वह दौर आने वाला है जब हमको बहुत बड़ी जिम्मेदारियां संभालनी होंगी। इनमें तालियों की गुंजाइश नहीं होगी इनमें बड़े-बड़े नारे न होंगे, क्योंकि जो काम आज के बाद से इस मुल्क के लीडरान और हाउस के जिम्मे आने वाला है, वह दिखाने का नहीं है बल्कि वह मेहनत मशक्कत और खामोशी से इन्सान की खिदमत का है। हम जानते हैं बहुत बड़ी जिम्मेदारी इस असेम्बली के सामने है और वह एक दस्तूर बनाने की है। और एक ऐसा दस्तूर कि जिसमें हिन्दुस्तान की महज अकलियतों को नहीं, बल्कि तमाम बाशिन्दों व अवाम को, गरीब को, हर एक को, वह दस्तूर कफील हो और इसके जरिये से हम हिन्दुस्तान के रहने वाले बाशिन्दों की खिदमत कर सकें। यह बहुत बड़ा अज़ीम काम है।

इस तरह से बहुत सी जिम्मेदारी एडमिनिस्ट्रेशन की खास हाउस को उस वक्त तक जब तक कोई इन्तखाब न हो, संभालना है। एडमिनिस्ट्रेशन की जिम्मेदारी में कभी-कभी लानतें भी पड़ती हैं, कभी-कभी गालियां भी सुननी पड़ती हैं, ईंटें भी फेंकी जाती हैं, इन सबको बर्दाश्त करना पड़ता है। जिस किस्म की प्लैज, हलफ, आपके सामने है, इसको पढ़ने से आप यह मालूम कर लेंगे कि इसकी बड़ी जिम्मेदारी है। यों तो हलफ मैं समझता हूं कि जिस वक्त मेम्बरान यहां आये हैं, हलफ लेकर आये हैं कि जहां तक होगा, हकतुल मकदूर हम अपने मुल्क की पूरी खिदमत ईमानदारी और दियानत से करेंगे। एक बाजाब्ता हलफ का कुछ जहनी असर इन्सान की खिलकत और तवीयत पर पड़ता है। लिहाजा मैं समझता हूं, यह मौका बहुत अच्छा है कि आज कल इसके कि वह जिम्मेदारी लें, अभी यहां दुनिया के सामने अपने आपको पाबन्द करें। हलफ लेकर अपने आमाल व अफआल में सबसे पहले स्टेट और उसके कायदे को पेश नजर रख कर हम काम करेंगे। इसमें किसी जात के सिफात का खयाल न होगा। इसमें जहां तक होगा ईमानदारी के साथ हम हर सख्श का हक देने की कोशिश करेंगे। आज यह हलफ उठाकर जिस वक्त हम बाहर निकलेंगे, हम हिन्दुस्तान के रहने वालों को एक निवेदन देंगे कि हमने तुम्हारे लिये हलफ उठाया है कि हम ईमानदारी से पूरी जिम्मेदारी को उठायेंगे और जिम्मेदारी को अदा करने में किसी की रिआयत नहीं करेंगे।

मैं इन चन्द अलफाज़ के साथ हलफनामा और तजवीज की, जो पं. जवाहरलाल ने पेश किया है, ताईद करता हूं। और मैं समझता हूं हर वह मेम्बर जो यहां मौजूद है, निहायत ईमानदारी के साथ, दियानत के साथ इस हलफ को उठायेगा कि हम इस स्टेट की खिदमत में अपनी तमाम जिन्दगी खत्म करेंगे।

***श्री एस. राधाकृष्णन** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): अध्यक्ष महोदय, यह आवश्यक नहीं है कि इस प्रस्ताव पर, जिसे इतने प्रभावोत्पादक रूप से पं. जवाहरलाल नेहरू ने उपस्थित किया है और जिसका शानदार समर्थन चौ. खलीकुज्जमा ने किया है, मैं कुछ कहूं। आज के दिन को लेकर इतिहास रचा जायेगा तथा गाथायें प्रस्तुत की जायेंगी। हमारे गणतंत्र प्राप्ति के इतिहास में आज का दिन विशेष महत्वपूर्ण है, इससे हमारा एक नया क्रम प्रारम्भ होता है। भारतवासी आज पुनर्निर्माण के प्रयास में संलग्न हैं, वे अपना आमूल परिवर्तन करने में प्रयत्नशील हैं। इनके इस प्रयास के इतिहास में आज का दिन विशेष महत्व रखता है। एक चिरप्रतीक्षा की रजनी के अवसान पर ऐसी रजनी जो भाग्य निर्णायक शुभ-घटनाओं से परिपूर्ण

[श्री एस. राधाकृष्णन्]

थी, जिसमें स्वातंत्र्य सूर्य के दर्शन के लिये हमने नीरव प्रार्थनायें कीं, जिसमें क्षुधा मृत्यु के भयंकर भूतप्रेत सदा विभीषिश उत्पन्न करते रहे, जिसमें हमारे प्रहरी सदा जागरूक थे और जिसमें प्रकाश का आलोक सदा दीप्त रहा–अब स्वातंत्र्य सूर्य की रश्मियां निकल रही हैं और हम इसका साहोत्साह स्वागत करते हैं। जब हम आज दासता और पराधीनता से मुक्त होकर स्वतंत्रता के प्रांगण में पदार्पण कर रहे हैं तो वस्तुत: यह आनन्द का अवसर है। यह बड़े ही सन्तोष और प्रसन्नता का विषय है कि इस परिवर्तन को इतने सुव्यवस्थित रूप से मर्यादा पूर्वक कार्यान्वित किया जा रहा है। हाउस आफ कामन्स में मि. एटली ने जब यह कहा कि यह पहला महान् उदाहरण है जब एक सुदृढ़, शक्तिशाली साम्राज्यवादी राज्य अपनी सत्ता अपने शासितों को सौंप रहा है जिन पर उसने प्राय: दो शताब्दियों तक बड़ी दृढ़ता से और बलपूर्वक शासन किया है, तो उन्होंने एक अभिमान और गौरव का बोध किया था, जो स्पष्ट था। इसकी तुलना के लिये उन्होंने दक्षिणी अफ्रीका से ब्रिटेन के हट जाने का उदाहरण उपस्थित किया था। परन्तु जिस परिस्थिति में और जिस पैमाने पर ब्रिटेन आज भारत से हट रहा है उसकी तुलना में दक्षिणी अफ्रीका से उसका हटना कुछ भी नहीं है। जब हम आज इण्डोनेशिया में डच लोगों के कारनामें देखते हैं, जब हम यह देखते हैं कि फ्रांस किस तरह अपने उपनिवेशों से चिपटा हुआ है, तो अंग्रेजों के राजनैतिक साहस और बुद्धिमत्ता की प्रशंसा किये बिना नहीं रहा जाता। *(हर्ष ध्वनि)*

अपनी ओर से हमने भी विश्व के इतिहास में एक अध्याय जोड़ दिया है। जरा गौर कीजिये कि इतिहास में पराधीन जातियों ने किस तरह अपनी स्वतंत्रता प्राप्त की है। यह भी सोचिये कि किस तरह लोगों ने अधिकार प्राप्त किये हैं। वाशिंगटन, नैपोलियन, क्रामवेल, लेनिन, हिटलर, और मसोलिनी सरीखे व्यक्तियों ने किस तरह सत्ता प्राप्त की है? बल प्रयोग, आतंक, हत्या, नरमेध और विप्लव की उन पद्धतियों पर जरा ध्यान दीजिये जिनसे संसार के इन तथाकथित महापुरुषों ने सत्ता प्राप्त की थी। यहां इस देश में हमने उस व्यक्ति के नेतृत्व में जो सम्भवत: इतिहास में इस युग का सर्वश्रेष्ठ महापुरुष कहा जायगा *(तुमुल हर्ष ध्वनि)*, धीरता से क्रोध का सामना किया तथा आत्मिक शांति से नौकरशाही के अत्याचार के वार संभाले। और आज हम सभ्य एवं शांतिमय उपायों से सत्ता प्राप्त कर रहे हैं। आखिर उसका परिणाम क्या हुआ? इसका परिणाम यह हुआ कि यह महान्

परिवर्तन आज बिना लेशमात्र कटुता के, बिना रंचमात्र घृणा के कार्यान्वित किया जा रहा है। लार्ड माउण्टबैटन को हम भारत का गवर्नर-जनरल नियुक्त कर रहे हैं और इस तथ्य से ही हमारे पारस्परिक मैत्री और समझौते की भावना प्रकट है जिसके आधार पर यह समूचा परिवर्तन कार्यान्वित किया जा रहा है। *(हर्ष ध्वनि)*

अध्यक्ष महोदय, आपने अभी हमारे हृदयस्थित उस दुख और शोक की चर्चा की थी जिससे हमारा आज का आनन्द तिरोहित हो गया है। मैं यह कहना चाहता हूं कि वस्तुतः इसके लिये हम जिम्मेदार हैं, यद्यपि पूर्णरूप से नहीं। सन् 1600 ई. से अंग्रेज यहां आये हैं, उनके पादरी आये, ईश्वर से विकायें आई। व्यापारी, साहसी, यात्री, राजनीतिज्ञ (diplomats), धर्मप्रचारक और आदर्शवादी आये। उन्होंने यहां क्रय-विक्रय किया, लड़ाईयां लड़ीं, षडयन्त्र किया और उससे लाभ उठाया, देशवासियों की सहायता की और उनके दुख दर्द दूर किये। इनमें जो महापुरुष थे उन्होंने इस देश को आधुनिकता से सुसज्जित करना चाहा, इसके बौद्धिक और नैतिक स्तर को, इसकी राजनैतिक प्रतिष्ठा (status) को ऊंचा करना चाहा। उन्होंने समूचे देश को नवजीवन से अनुप्राणित करना चाहा। परन्तु इनमें जो क्षुद्र थे उन्होंने जघन्य उद्देश्यों की सिद्धि के लिये यहां काम किया। उन्होंने देश में अनैक्य (disunion) बढ़ाने की चेष्टा की और देश को अधिकाधिक निर्धन, दुर्बल और ऐक्य हीन बना दिया। उन्हें भी आज यहां अवसर मिला है। जो स्वाधीनता हमें आज उपलब्ध हो रही है, वह ब्रिटिश शासकों की इसी द्वैध मनोवृति का परिणाम है। भारत स्वाधीनता तो आज पा रहा है पर जिस ढंग पर इसकी प्राप्ति हो रही है उससे देशवासियों के हृदय में आनन्द नहीं उत्पन्न हो रहा है, उनके चेहरों पर स्वाभाविक आह्लाद की प्रभा नहीं दिखाई पड़ती है। जिन पर इस देश के शासन की जिम्मेदारी थी उनमें से कुछ लोगों ने साम्प्रदायिकता की भावना को और उग्र बनाने की तथा वर्तमान स्थिति लाने की कोशिश की, जो ब्रिटेन के लघु मस्तिष्कों द्वारा अपनायी हुई नीतियों का स्वाभाविक परिणाम है। परन्तु इसके लिये मैं उनको नहीं दोष दूँगा। हम पर लादी हुई पार्थक्य सम्बन्धी प्रवृतियों ने क्या हमें पराभूत नहीं किया? क्या हम चरित्र सम्बन्धी अपने उन जातीय दुर्गुणों को दूर नहीं करेंगे जिनके कारण हममें तरह-तरह के अन्धकार संकुचित मनोवृति और अन्धविश्वास जनित कट्टरताओं ने हमें दबा रखा है। दूसरे लोग हमारी कमजोरियों से लाभ उठाने में समर्थ हुए, और इसलिये समर्थ हुए कि कमजोरियां हममें थीं। इसलिये इस अवसर पर मैं आपसे कहूंगा कि आप आत्मपरीक्षण करें, अपने हृदयों को टटोलें, हमने स्वाधीनता प्राप्त की है पर उस तरह नहीं जैसे हम चाहते थे और इसके

[श्री एस. राधाकृष्णन्]

लिये हम स्वयं जिम्मेदार हैं। और जब हम प्रस्तुत प्रतिज्ञा में यह कहते हैं कि हम अपने देश की सेवा करेंगे तो इन मूलगत दुर्गुणों को दूर करके ही हम देश की सर्वोत्तम सेवा कर सकते हैं। इन दुर्गुणों के कारण ही हम अपने लक्ष्य की–स्वतंत्र, संयुक्त भारत की–प्राप्ति नहीं कर पाये।

अब जब भारत विभक्त हो गया है, हमारा यह कर्तव्य है कि हम आवेशपूर्ण शब्दों का प्रयोग न करें। इससे कुछ लाभ नहीं। हमें आवेश को रोकना होगा, क्रोध और बुद्धिमत्ता इन दोनों का समन्वय असम्भव है। राजनीतिक दृष्टि से हम भले ही विभक्त हो गये हों पर हमारी सांस्कृतिक एकता अभी पूर्ववत बनी है *(हर्षध्वनि),* राजनैतिक विभाजन, धरातल का बंटवारा बाह्य वस्तु है परन्तु मनोवैज्ञानिक विभाजन की नीति बड़ी गहरी होती है। सांस्कृतिक वैषम्य (cleavages) और भी सांघातिक होता है और हमें चाहिये कि इस वैषम्य को हम कभी न बढ़ने दें। हमारा कर्त्तव्य यह है कि हम उन सांस्कृतिक बंधनों को, उन आध्यात्मिक बंधनों को स्थायी बनाये रखें जिनके कारण अब तक हम सब एक प्राण थे। धीरतापूर्वक विचार, शिक्षा का शनैः शनैः प्रसार, एक दूसरे की आवश्यकताओं का समन्वय, उन दृष्टि बिंदुओं की खोज जो यातायात, रक्षा, वैदेशिक मामले आदि के सम्बन्ध में दोनों राज्यों के लिये समानरूप से आवश्यक हैं–ये ऐसी बातें हैं कि जिन्हें हमें अपने दैनिक जीवनचर्या में और शासन में प्रश्रय देना होगा। इसी तरह की प्रवृति को समुन्नत करके ही हम पुनः एक दूसरे के सन्निकट आ पायेंगे और देश की खोई हुई एकता को फिर से प्राप्त कर सकेंगे। यही इसका एकमात्र रास्ता है। हमें समधिक अवसर प्राप्त हैं, पर मैं आपको सावधान करूंगा कि अधिकार के सामने जब योग्यता का तिरस्कार किया जायेगा तो हम दुर्दिन में पड़ जायेंगे। हमें क्षमता और योग्यता को बढ़ाना होगा और इन्हीं की सहायता से हम उन अवसरों को उपयोग कर सकेंगे जो हमें अब प्राप्य हैं। कल सवेरे से, बल्कि आज मध्य रात्रि के उपरान्त से ही हम अंग्रेजों को अब दोष नहीं दे सकते। हम जो कुछ भी करेंगे उसका दायित्व हमें स्वयं ग्रहण करना होगा। भोजन, वस्त्र, आश्रयस्थान तथा सामाजिक सेवाओं के सम्बन्ध में सर्वसाधारण नागरिकों के लिये हम जो करेंगे उसी से स्वतंत्र भारत की परख (judge) की जायेगी। उच्च पदस्थ कर्मचारियों को भ्रष्टाचार (nepotism) के अधिकार का मोह, मुनाफाखोरी और चोर बाजारी, इन सबने गत कुछ दिनों से इस महान् देश के सुनाम को कलंकित कर रखा है और जब तक हम इन दूषणों का आमूल विनाश नहीं कर देते तब तक न तो हम देश की शासन व्यवस्था

को समुन्नत बना सकते हैं और न जीवनोपयोगी वस्तुओं के उत्पादन और वितरण सम्बन्धी स्तर को ही ऊंचा कर सकते हैं।

विश्व-शान्ति और मानव कल्याण की समुन्नति के लिए इस देश की कितनी बड़ी देन होगी। इसकी चर्चा पं. जवाहरलाल नेहरू ने की है। हमारी पताका पर अंकित सम्राट अशोक का यह चक्र एक महान् आदर्श का प्रतीक है। अशोक की महिमा के सम्बन्ध में लिखे हुए श्री एच. जी. वेल्स के इन शब्दों पर ध्यान दीजिये: ''महत्ता, महिमा, वैभव एवं गौरव आदि गुणों से भूषित पुरुषों का एक देदीप्यमान आदर्श–सर्वश्रेष्ठ सम्राट अशोक''। सम्राट अशोक ने विभेद और कलह जनित क्लेशों को दूर करने के लिये शिलाओं पर उपदेश खुदवाये। उसका कहना है कि अगर मतभेद है तो इसको दूर करने का सर्वोत्तम रास्ता है concord को पढ़ाना ''समवाय एव साधु:''। इसके सिवाय हम लोगों के पास इसका और कोई उपाय नहीं है। यह हमारा सौभाग्य है कि हमें एक ऐसा नेता प्राप्त है जो समस्त संसार का नागरिक है, जो मानवता का महान् पुजारी है, जो परिस्थितियों के विषमरूप से प्रतिकूल होने पर भी, मानव जीवन क्रम में घोर विरोधिता होने पर भी एक दृढ़ आशावादी बना रहता है और सद्बुद्धि पर सदा दृढ़ रहता है। हमने देखा है कि किस तत्परता और समयानुकूल ढंग से उनके विभाग ने इन्डोनेशिया के मामले में हाथ डाला *(हर्ष ध्वनि)*। इससे प्रकट है कि अगर भारतवर्ष ने स्वाधीनता प्राप्त की है तो वह उसका उपयोग न केवल अपने कल्याण के लिये ही करेगा बल्कि विश्व-कल्याण के लिए करेगा। हमारी प्रतिज्ञा में कहा गया है कि यह प्राचीन देश संसार में अपना उचित और गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त करेगा। हमें इस देश की प्राचीनता पर गर्व है क्योंकि इसने इतिहास की पांच सहस्त्राब्दियां देखी हैं, इसने कई उत्थान और पतन देखे हैं और इस समय भी यह अपने महान् आदर्शों की प्रेरणा प्रदान कर रहा है। सभ्यता एक आन्तरिक वस्तु है, आत्मा की चीज है, यह बाह्य जगत से सम्बन्ध रखने वाली और स्थूल और निष्प्राण वस्तु नहीं है। मानव हृदयों की आकांक्षा का यह प्रतिबिम्ब है। यह अन्तरात्मा की लालसा है। यह मानव जीवन के सम्बन्ध में अपनी कल्पना-मूलक व्याख्या है, मानव अस्तित्व सम्बन्धी रहस्य की अपनी उपलब्धि या अपना बोध है। सभ्यता वस्तुत: इन्हीं बातों के लिये है। इस महान् आदर्शों को हमें ध्यान में रखना होगा जिनको चिरकाल से हम अपनाते आ रहे हैं। अपने इतिहास के इस महत्वपूर्ण काल में विनय-पूर्वक भगवान के सम्मुख खड़ा होना चाहिये, इस महान् कार्य के लिए कटिवद्ध हो जाना चाहिए जो हमारे सामने है और ऐसा आचरण करना चाहिए जो भारत की चिरप्राचीन

[श्री एस. राधाकृष्णन्]

भावना के अनुरूप हो। यदि हम ऐसा करें तो मुझे इसमें रंचमात्र भी संदेह नहीं है कि इस देश का भविष्य वैसा ही महान् होगा जैसा कि इसका अतीत महिमामय रहा है।

सर्वभूतास्थमात्मानं सर्व भूतानि चात्मनि।
संपश्यं आत्म योगावै स्वराज्यं अधिगच्छति।।

ऐसी सहिष्णु प्रवृत्ति का विकास ही स्वराज्य है, जिसमें मनुष्य को मनुष्य में परमात्मा दिखाई देने लगता है। असहिष्णुता हमारी उन्नति में प्रबलतम बाधक रही है। एक दूसरे के विश्वासों, विचारों के प्रति सहिष्णु होना ही एकमात्र मार्ग है जिसे हम अपना सकते हैं। इसलिए मैं बड़ी प्रसन्नता से इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं जिसमें देशवासियों के हम सब प्रतिनिधियों से कहा गया है कि विनम्रता के साथ हम देशवासियों की सेवा में अपने को अर्पण कर दें। यहां विनम्रता का भाव यह है कि स्वयं हम कुछ नहीं हैं। हमारे प्रयास ही हमें बहुत दूर नहीं ले जा सकेंगे। हमें स्वयं अहम् को छोड़कर उस अन्य का, अर्थात् सदाचार और साधुवृत्ति का, सहारा लेना है। यहां विनम्रता का भाव यह है कि व्यक्ति महत्वशून्य है और सर्व महत्वपूर्ण है वह उद्देश्य जिसे पूर्ण करने का हमें आह्वान मिला है। अत: विनम्रता एवं आत्मनिवेदन की भावना से, आइए 12 बजते ही हम सब यह प्रतिज्ञा ग्रहण करें।

***अध्यक्ष:** अब मैं प्रस्ताव पर मत लूंगा।

पहले मैं प्रस्ताव को सुना देता हूं।

''निश्चय किया जाता है कि:

'(1) रात को बारह बजते ही विधान-परिषद् के सभी उपस्थित सदस्य निम्नलिखित प्रतिज्ञा ग्रहण करेंगे:

''अब जबकि हिन्दवासियों ने त्याग (कुर्बानी) और तप से स्वतंत्रता (आज़ादी) हासिल करली है, मैं . . . जो उस विधान-परिषद् (आईन साज मजलिस) का एक सदस्य (मेम्बर) हूं अपने को बड़ी नम्रता (निहायत इनकसारी) से हिन्द और हिन्दवासियों की सेवा (खिदमत) के लिए अपने को अर्पण (वक्फ) करता हूं ताकि यह प्राचीन (कदीम) देश

(मुल्क) संसार में अपना उचित और गौरवपूर्ण (बाइज्जत) जगह पा लेवे और संसार में शांति स्थापना (अमन कायम) करने और मानव जाति (इन्सान) के कल्याण (बहबूदी) में अपनी पूरी शक्ति लगाकर खुशी-खुशी हाथ बंटा सके।

(2) वे सदस्य जो इस अवसर पर अनुपस्थित हैं, उस समय जब वे परिषद् के अधिवेशन में इसके बाद उपस्थित हों तो इस प्रतिज्ञा को (ऐसे शाब्दिक परिवर्तनों के साथ जैसा अध्यक्ष निर्धारित करें) ग्रहण करेंगे।''

श्री एच. वी. कामत (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): श्रीमान् मेरे नाम दो संशोधन हैं, पर चूंकि अपने भाषण में आपने ईश्वर के पवित्र नाम का आवाह्न (invoke) किया है और प्रतिज्ञा का जो स्वरूप हमारे सामने है, उसमें संक्षिप्त सुधार करके प्रतिज्ञा में भगवद्-भावना लादी है, और सर्वोपरि इसलिए कि मुहूर्त का समय शीघ्रता से सन्निकट आता जा रहा है, मैं अपना संशोधन नहीं उपस्थित करना चाहता।

***अध्यक्ष:** धन्यवाद। अब मैं प्रस्ताव पर मत लेता हूं। सदस्यगण 'स्वीकार है' कहकर अपनी स्वीकृति देंगे।

प्रस्ताव स्वीकार हुआ।

***अध्यक्ष:** अभी हमने यह निश्चय किया है कि 12 बजते ही हम प्रतिज्ञा ग्रहण करेंगे। पहले मैं अपनी भाषा में इसका एक-एक वाक्य पढ़ता जाऊंगा और आशा है कि वे सदस्य जो उस भाषा को जानते हैं, उसको दुहराते जायेंगे। उसके बाद में अंग्रेजी में एक-एक वाक्य पढ़ता जाऊंगा और आशा करूंगा कि सदस्य उसे दुहराते जायेंगे। प्रतिज्ञा ग्रहण करने के समय कृपया सदस्य खड़े हो जायेंगे, पर दर्शक बैठे रहेंगे। बारह बजने में ठीक आधा मिनट बाकी है। बस घड़ी के 12 की घंटी देने की मैं प्रतीक्षा ही कर रहा हूं।

[घड़ी के 12 (मध्य रात्रि) बजाते ही अध्यक्ष तथा सदस्यगण खड़े हो गये और प्रतिज्ञा ग्रहण की। अध्यक्ष ने प्रतिज्ञा का एक-एक वाक्य पहले हिन्दुस्तानी में और फिर अंग्रेजी में पढ़ा और सदस्यों ने उसे दुहराया।]

[अध्यक्ष]

''अब जब कि हिन्दवासियों ने त्याग (कुर्बानी) और तप से स्वतंत्रता (आजादी) हासिल कर ली है, मैं... जो इस विधान परिषद् (आइने साज मजलिस) का एक सदस्य (मेम्बर) हूं अपने को बड़ी नम्रता (निहायत इनकिसारी) से हिन्द और हिन्दवासियों की सेवा (खिदमत) के लिए अर्पण (वक्फ) करता हूं ताकि यह प्राचीन (कदीम) देश (मुल्क) संसार में अपना उचित और गौरवपूर्ण (बाइज्जत) जगह पा लेवे और संसार में शान्ति स्थापना (अमन कायम) करने और मानव जाति (इन्सान) के कल्याण (बहबूदी) में अपनी पूरी शक्ति लगाकर खुशी-खुशी हाथ बटा सकें।''

विधान परिषद् द्वारा सत्ता ग्रहण की तथा लार्ड माउन्टबैटन के गवर्नर-जनरल नियुक्त किए जाने की वायसराय को सूचना

***अध्यक्ष:** मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

''वायसराय को इस बात की सूचना दी जानी चाहिये कि:

'(1) भारतीय विधान-परिषद् ने भारत का शासनाधिकार ग्रहण कर लिया है,

(2) भारतीय विधान-परिषद् ने इस सिफारिश को स्वीकार कर लिया है कि 15 अगस्त, सन् 1947 ई. से लार्ड माउन्टबैटन इन्डिया के गवर्नर-जनरल हों, और

(3) यह संदेश अध्यक्ष तथा पं. जवाहरलाल नेहरू द्वारा लार्ड माउन्टबैटन के पास पहुंचाया जाये।'' *(हर्ष ध्वनि)*

मैं माने लेता हूं कि सभा इसे स्वीकार करती है।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

राष्ट्रीय पताका का उपस्थित किया जाना

***अध्यक्ष:** अब भारतीय महिला समाज की ओर से श्रीमती हंसा मेहता राष्ट्रीय पताका भेंट करेंगी। *(हर्ष ध्वनि)*

श्रीमती हंसा मेहता (बम्बई: जनरल): आदरणीय अध्यक्ष महोदय, श्रीमती सरोजिनी नायडू की अनुपस्थिति में, मेरा यह परम सौभाग्य है और इसका

मुझे अभिमान है कि भारतीय महिलाओं+ की ओर से राष्ट्र को आपकी मार्फत यह पताका भेंट देती हूं।

+1–सरोजिनी नायडू
2–अमृत कौर
3–विजयलक्ष्मी पंडित
4–हंसा मेहता
5–अम्मू स्वामिनाथन्
6–सुचिता कृपलानी
7–कुदसिया ऐजाज़ रसूल
8–दुर्गाबाई
9–रेणुका राय
10–दाक्षायणी वेलायुदन
11–पूर्णिमा बनर्जी
12–कमला चौधरी
13–मालती चौधरी
14–अबला बोस
15–लक्ष्मीबाई राजवाडी
16–मैत्रेयी बोस
17–रामेश्वरी नेहरू
18–शरीफा हमीद अली
19–गोशीबेन कैप्टेन
20–धनवंती रमाराव
21–अनसुइयाबाई काले
22–प्रेमलीला ठाकरसी
23–मणिबेन पटेल
24–सरलादेवी साराभाई
25–अवन्तिकाबाई गोखले
26–सकीने लुक्मानी
27–जानकीबाई बजाज़
28–मुथुलक्ष्मी रेड्डी
29–चरुलता मुकर्जी
30–रुक्मिणी लक्ष्मीपति
31–मित्तनताता लाम
32–हन्नाह सेन
33–असवाह हुसैन
34–राधाबाई सुब्रायन
35–ताराभाई प्रेमचन्द
36–जेठी सिपाही मलानी
37–अम्बुजा अम्मा
38–जानकी अम्मा
39–लीलावती मुंशी
40–लावण्य प्रभादत्त
41–सोफिया वाडिया
42–मृणालिनी चट्टोपाध्याय
43–शारदा बेन मेहता
44–ज़रीना करीमभाई
45–प्रेम कैप्टेन
46–हेमप्रभा दासगुप्ता
47–प्रेमावती थप्पर
48–ज़ोरा अन्सारी
49–जैश्री रायजी
50–कित्ती शिवाराव
51–शन्नो देवी
52–वायलेट आल्वा
53–सुशीला जुल्कुसिंग
54–वीणादास
55–उमा नेहरू
56–इरावती कार्वे
57–रायवन तैय्यबजी
58–आशा आर्यनायकम्

[श्रीमती हंसा मेहता]

59—मृदुला साराभाई
60—रक्षा सरन
61—मारगरेट कजिन्स
62—कमला देवी
63—लक्ष्मी मेनन
64—लावण्य चन्दा
65—अयाशा अहमद
66—कृष्णा हथीसिंह
67—राजन नेहरू
68—इन्दिरा गांधी
69—सुराया तैयबजी
70—मेमोबाई
71—पद्मजा नायडू
72—किरन बोस
73—कुलसुम सयानी
74—लज्जावती देवी

मेरे पास एक सूची है जिसमें प्रायः भारत के सभी मुख्य संप्रदायों की एक सौ महिलाओं के नाम हैं जिन्होंने इस महोत्सव में सम्मिलित समझे जाने की इच्छा प्रकट की है। और भी कई शत महिलाऐं होंगी जो इसी तरह इस महोत्सव में सम्मिलित होना चाहती हों। इस परिस्थिति में यह उपयुक्त ही है कि पहली राष्ट्रीय पताका जो इस महिमा-मंडित भवन पर सुशोभित हो, उसे भारतीय महिला समाज एक उपहार की तरह उपस्थित करे *(हर्ष ध्वनि)*। इस केसरिया के अभ्युदय का श्रेय हमी को है। हमने देश की स्वतंत्रता के लिये संघर्ष किया है, कष्ट उठाये हैं और बलिदान किए हैं।

आज हमने अपना ध्येय प्राप्त किया है। अपनी स्वतंत्रता के प्रतीक स्वरूप इस पताका को उपस्थित करते हुए हम पुनः राष्ट्र के प्रति अपनी सेवाएं अर्पित करती हैं। हम सब इस बात के लिए प्रतिज्ञाबद्ध होती हैं कि महान् भारत के निर्माण के लिए, एक ऐसे राष्ट्र के निर्माण के लिए, जिसका सभी देश समादर करें, हम कार्य करेंगी। हम प्रतिज्ञा करती हैं कि प्राप्त स्वाधीनता के स्थायी बनाने के महत्तर उद्देश्य के लिए हम कार्य करेंगी। हमें उन महती परम्पराओं को, जिनके कारण अतीत काल में भारत इतना महान था, स्थायी रखना है। भारत के प्रत्येक स्त्री-पुरुष का यह धर्म है कि वह इन परम्पराओं की रक्षा करे ताकि भारतवर्ष संसार पर अपना आध्यात्मिक प्रभुत्व बनाये रखे। यह पताका हमारे महान् भारत का प्रतीक हो। यह सदा फहराती रहे और विश्व पर आज जो संकट की कालिमा छाई है, उसमें उसे यह प्रकाश दे। इसकी छत्र-छाया में रहने वाले प्राणियों को यह सुख और शांति दे। *(हर्ष ध्वनि)*

***अध्यक्षः** सभा की स्वीकृति की आशा करके मैंने चीन के भारत स्थित दूत, हिज एक्सिलेंसी डा. चियालानलो, द्वारा रचित एक कविता को इस अवसर के लिए सधन्यवाद स्वीकार किया है।

राष्ट्रीय गीतों का गायन

***अध्यक्षः** कार्यक्रम का दूसरा विषय है–''सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा'' तथा ''जन मन गण अधिनायक जय है'' शीर्षक कविताओं की प्रथम चन्द पंक्तियों का गान।

(श्रीमती सुचिता कृपलानी ने इन दोनों कविताओं की प्रथम कुछ पंक्तियों का गायन किया।)

***अध्यक्षः** अब सभा कुछ घंटों के लिए कल प्रातः 10 बजे तक स्थगित होती है।

इसके बाद सभा शुक्रवार, 15 अगस्त, सन् 1947 ई. को प्रातः 10 बजे के लिए स्थगित हुई।

Con. 3. 5.3.47
750

अंक 5
संख्या 2

शुक्रवार,
15 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्
के
वाद-विवाद
की
सरकारी रिपोर्ट
(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1.	शुभकामना के संदेश	1
2.	लार्ड माउन्टबैटन का भाषण	4
3.	अध्यक्ष का भाषण	10
4.	राष्ट्रीय पताका का उत्तोलन	17

भारतीय विधान-परिषद्

शुक्रवार, 15 अगस्त, सन् 1947 ई०

भारतीय विधान-परिषद् कान्स्टीट्यूशन हाल नई दिल्ली में 10 बजते ही समवेत हुई। अध्यक्ष (मा० डा० राजेन्द्र प्रसाद), भारत के गवर्नर, श्रीमान् लार्ड माउंटबैटन तथा श्रीमती माउंटबैटन के साथ परिषद्-भवन में प्रविष्ट हुये।

शुभकामना के संदेश

***अध्यक्षः** कतिपय प्राप्त सम्वादों को मैं पढ़कर सुना देता हूं।

(1) **संयुक्त राज्य के प्रधानमंत्री का तार, पं० जवाहरलाल नेहरू के नाम:**

''इस ऐतिहासिक अवसर पर मैं और संयुक्त राज्य के मंत्रिमंडल के मेरे सहकर्मी, भारतीय सरकार और भारतीय जनता के प्रति अपनी प्रसन्नता और शुभकामना समर्पित करते हैं। हमारी यह आन्तरिक अभिलाषा है कि भारतवर्ष सुख-शान्ति के साथ आगे बढ़ता जाए और विश्व की शान्ति और समृद्धि को समुन्नत बनाने में हाथ बंटाये।''

(2) **कैंटरबेरी के आर्कबिशप का संदेश, पं० जवाहरलाल नेहरू के नाम:**

''इस समय जब कि इंडिया और पाकिस्तान स्वतंत्र राज्य बन गए हैं और अपने शासन का सारा दायित्व उन्होंने अपने ऊपर ले लिया है, इस देश की ईसाई जनता की ओर से मैं आपको अपनी प्रसन्नता और शुभकामना समर्पित करता हूं।''

(3) **चीन प्रजातंत्र के प्रेसीडेण्ट जनरल च्यांगकाईशेक का संदेश, इंडिया के प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू के नाम:**

''इस शुभ अवसर पर जब भारत की जनता स्वतंत्रता के एक नवीन युग का महोत्सव मना रही है, उस उज्जवल एवं महती सफलता

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[अध्यक्ष]

के लिए, जिसकी प्राप्ति के लिए आपने तथा महात्मा गांधी ने इतनी प्रमुखता और उदारता से भाग लिया है और जिसके संबंध में मुझे विश्वास है कि वह स्वाधीनता, समानता तथा प्रगति के प्रति सारे उद्योगशील राष्ट्रों के लिए प्रेरणा का एक महान् साधन सिद्ध होगी। मैं आपको तथा आपके देशवासियों को हार्दिक बधाई देता हूं। सफलता एवं महानता से परिपूर्ण भारत के उज्जवल भविष्य के प्रति मेरी शुभकामनाएं स्वीकार कीजिएगा।''

(4) कनाडा के प्रधान मंत्री का संदेश, भारत के प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू के नामः

''इस अवसर पर, जब कि भारत अपना शासन पूर्णतः अपने हाथ में ले रहा है, मुझे इस बात की बड़ी ही प्रसन्नता है कि मैं आपको और आपके द्वारा भारतीय सरकार और जनता को, कनाडियन सरकार और वहां की जनता की हार्दिक शुभकामनाएं समर्पित करता हूं।

(5) आस्ट्रेलिया के प्रधानमंत्री का संदेश, भारत के प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू के नामः

''इस ऐतिहासिक अवसर पर जिसका महोत्सव 15वीं अगस्त को मनाया जा रहा है, मैं भारतीय सरकार और भारतीय जनता को आस्ट्रेलिया की सरकार और वहां के निवासियों की शुभकामनाएं समर्पित करता हूं।

आस्ट्रेलिया के लोग इस बात की खुशी मना रहे हैं कि आपके देश ने एक स्वतंत्र सर्वाधिकार सम्पन्न राष्ट्र का पद प्राप्त किया है और ब्रिटिश राष्ट्रमंडल का साथी सदस्य होने पर आपका स्वागत करते हैं।

विश्वासपूर्वक यह आशा की जाती है कि आपकी परम्परा, आपकी प्राचीन संस्कृति और भावना, जिससे इस परिवर्तन काल को सुगम बनाने की आपको प्रेरणा प्राप्त होती है, भारतवासियों के मंगलमय भविष्य और उनकी महत्ता को सुरक्षित रखेंगी।''

(6) नानकिंग की प्रबन्धकारिणी सभा युवान के सभापति का संदेश, भारत के प्रधानमंत्री पं॰ जवाहरलाल नेहरू के नामः

''इस ऐतिहासिक अवसर पर जब भारतवर्ष अपनी चिरसंचित अभिलाषा प्राप्त कर रहा है, मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मैं आपको तथा भारत के लोगों को अपनी हार्दिक बधाई देता हूं। चीन के लोगों को इस बात की बड़ी प्रसन्नता है कि एशिया महाद्वीप में एक और महान् राष्ट्र का अभ्युदय हुआ है। भारत और चीन की मिली हुई सीमा 2,000 मील लंबी है और इन दोनों देशों का पारस्परिक संबंध कई शताब्दियों तक घनिष्ट और मैत्रीपूर्ण रहा है। हम दोनों राष्ट्र गत महायुद्ध में एक साथ थे और निस्संदेह हम दोनों ही अपने विश्वशांति के उद्देश्य की ओर अग्रसर होते जायेंगे। आपकी सतत् सफलता तथा भारतवासियों के सुख और समृद्धि के लिए मैं अपनी हार्दिक शुभेच्छायें समर्पित करता हूं।''

(7) इंडोनेशिया के प्रजातंत्र की ओर से डा॰ स्योडार्सनो का संदेश, पं॰ जवाहरलाल नेहरू के नामः

''स्वाधीन भारतीय राष्ट्र की स्थापना पर इंडोनेशिया के प्रजातंत्र को इस बात की बड़ी प्रसन्नता है कि वह उसके प्रति अपनी हार्दिक प्रसन्नता, सहानुभूति और मैत्री की भावना व्यक्त करता है।

इंडोनेशियन प्रजातंत्र भारतवर्ष को अपना मित्र समझता है जिसने उसके संकट और कष्ट के काल में सदा सहायता की है और देगा। दोनों देशों की राष्ट्रीयता का आधार मानवता है, अतः इंडोनेशिया यह आशा कर सकता है कि सन्निकट भविष्य में दोनों देशों के बंधन और प्रगाढ़ हो जायेंगे—न्याय और शांति के लिए तथा उन लाखों मनुष्यों के सुख-स्वातंत्र्य के लिए, जो एक दीर्घकाल से वैभव और सम्पत्ति की अपार राशि रखकर भी दीन-हीन जीवन व्यतीत कर रहे हैं—इन दोनों देशों का मैत्री-बंधन और प्रगाढ़ हो जायेगा।

भारतवासी वर्षों से प्रख्यात नेताओं के नेतृत्व में रहे हैं और निस्संदेह वे और अधिक सुखद और मंगलमय भविष्य की ओर अग्रसर

[अध्यक्ष]

होते जा रहे हैं। भारत न केवल न्याय और सुख-समृद्धि का देश होगा बल्कि एशिया की शांति का वह प्रधान रक्षक होगा।

इंडोनेशियन प्रजातंत्र की सरकार तथा वहां के निवासी, श्रीमान् को, आपकी सरकार को और आपके देशवासियों को इस ऐतिहासिक अवसर पर सुख-समृद्धि के लिए अपनी हार्दिक शुभेच्छायें समर्पित करते हैं।''

(8) नेपाल सम्राट के मंत्री का संदेश, पं॰ जवाहरलाल नेहरू के नाम:

''भारतीय राज्य की स्थापना पर मेरे सहकर्मी तथा मैं हार्दिक अभिनन्दन व्यक्त करते हैं। राज्य और वहां के निवासियों की सुख-समृद्धि के लिए हम अपनी शुभकामनायें समर्पित करते हैं।''

(9) ओसलो से नार्वे के प्रधान मंत्री तथा स्थानापन्न वैदेशिक मंत्री का संदेश पं॰ जवाहरलाल नेहरू के नाम:

''भारतवासियों के इस राष्ट्रीय महोत्सव के महान् दिवस पर मुझे इस बात का गौरव है कि मैं आपको आपके देश की सुख एवं समृद्धि के लिए अपनी शुभकामना भेजता हूं।''

लार्ड माउंटबैटन का भाषण

***अध्यक्ष:** क्या मैं 'योर ऐक्सीलैंसी' से सभा के समक्ष भाषण देने को कहूं?

***श्रीमान गवर्नर-जनरल:** विधान-परिषद् के अध्यक्ष और सदस्यगण, आज मैं आपको सम्राट का एक संदेश देना चाहता हूं। सम्राट का संदेश इस प्रकार है:

''इस ऐतिहासिक दिन, जबकि भारत ब्रिटिश राष्ट्रमंडल में एक स्वतंत्र और स्वाधीन उपनिवेश के रूप में स्थान ग्रहण कर रहा है, मैं आप सबको अपनी हार्दिक शुभकामनाएं भेजता हूं।

आपके इस स्वाधीन महोत्सव में प्रत्येक स्वतंत्रता-प्रिय राष्ट्र भाग लेना चाहेगा, क्योंकि पारस्परिक स्वीकृति द्वारा सत्ता का जो यह हस्तांतरण हुआ है, उससे एक ऐसे महान् लोकतंत्रीय आदर्श की

पूर्ति हुई है जिसे ब्रिटेन और भारत दोनों देशों के लोग समान रूप से कार्यान्वित करने के लिए कटिबद्ध रहे हैं। यह बड़ी ही उत्साहवर्धक बात है। यह सब शांतिपूर्ण परिवर्तन द्वारा सम्पन्न हो सका है।

भविष्य में आपको बड़ी जिम्मेदारियों का भार वहन करना है, किंतु जब मैं आपके द्वारा प्रकट की गई राजनीतिज्ञता तथा किए गये त्यागों का विचार करता हूं, तो मुझे विश्वास हो जाता है कि भविष्य का भार आप समुचित रूप से वहन कर सकेंगे।

मैं प्रार्थना करता हूं कि सर्वशक्तिमान परमात्मा का आशीर्वाद आपको प्राप्त हो और आपके नेता आने वाले कार्यों को बुद्धिमत्तापूर्वक कर सकें। मेरी यह भी प्रार्थना है कि संसार के राष्ट्रों के प्रति संबंधों में आप मैत्री, सहिष्णुता और शांति की भावना से अनुप्राणित हो सकें। अपनी जनता की समृद्धि तथा मानव जाति के कल्याण के लिए आपके प्रयत्नों में मेरी सहानुभूति सदा आपके साथ रहेगी।''

छः महीने से भी कम हुआ कि जब श्री एटली ने मुझसे भारत का अंतिम वायसराय होने को कहा था। उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया था कि यह कोई सरल कार्य न होगा, क्योंकि सम्राट की सरकार जून 1948 तक भारतीयों को सत्ता हस्तांतरित करने का निश्चय कर चुकी थी। उस समय बहुतों ने अनुभव किया था कि सम्राट की सरकार ने सत्ता हस्तांतरित करने के लिए बहुत थोड़ी अवधि रखी थी। प्रश्न था कि यह महान् कार्य 15 महीनों के अंदर किस तरह समाप्त हो?

भारत में आये मुझे एक सप्ताह भी नहीं हुआ था कि मैंने अनुभव किया कि जून 1948 की अवधि बहुत थोड़ी नहीं बल्कि बहुत अधिक थी। साम्प्रदायिक मनमुटाव तथा उपद्रव इतनी अधिक मात्रा में बढ़ गये थे कि इंग्लैंड से रवाना होते समय मैं उनका अंदाजा नहीं लगा सका था। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि यदि सम्पूर्ण उप-महाद्वीप में अव्यवस्था से बचना है तो शीघ्र ही कुछ न कुछ निर्णय होना चाहिये।

[श्रीमान् गवर्नर-जनरल]

मैंने सभी दलों के नेताओं से तुरंत बातचीत प्रारम्भ कर दी और इसके परिणामस्वरूप 3 जून वाली योजना सामने आई। इसके स्वीकार किये जाने को संसार भर में राजनीतिज्ञता का एक उत्तम उदाहरण कहा गया है। नेताओं से प्रत्येक अवस्था में प्रकट रूप से बातचीत द्वारा ही इस योजना का विकास हुआ। इसकी सफलता का मुख्य श्रेय भी इन नेताओं को ही है।

मुझे विश्वास है कि ऐसी परिस्थिति के लिए, जिसमें समस्यायें जटिल हों और उत्तेजना इतनी अधिक हो, प्रकट रूप से बातचीत करना ही उपयुक्त मार्ग हो सकता था। मैं यहां नेताओं की बुद्धिमत्ता, सहनशीलता तथा सद्भावनापूर्ण सहायता की प्रशंसा करना चाहता हूं, जिसके कारण पूर्व निर्धारित समय से साढ़े दस महीने पहले ही सत्ता हस्तांतरित की जा सकी।

जिस बैठक में 3 जून वाली योजना स्वीकृत हुई थी उसमें मैंने नेताओं के आगे विभाजन के शासन संबंधी परिणामों के विषय में एक विचारपत्र उपस्थित किया था और उसी समय हमने इतिहास की एक सबसे बड़ी शासन संबंधी कार्रवाई करने के लिए एक व्यवस्था भी स्थापित कर दी थी। यह कार्रवाई 40 करोड़ निवासियों वाले इस उप-महाद्वीप के बटवारे और ढाई महीने से भी कम समय में दो स्वाधीन सरकारों को सत्ता हस्तांतरित किये जाने के संबंध में थी। इन बातों को शीघ्रता से सम्पन्न करने का कारण यह था कि एक बार विभाजन का सिद्धान्त स्वीकार करने के बाद शीघ्रातिशीघ्र उसे कार्यान्वित करने में ही सब दलों का हित था। सच तो यह है कि पहले जितनी शीघ्रता से काम होना सम्भव समझा जाता था, वह हुआ उससे भी कुछ कम समय में। इस आश्चर्यजनक परिणाम को प्राप्त करने के लिए जिन मंत्रियों तथा कर्मचारियों ने रात-दिन लगकर परिश्रम किया है, उनकी जितनी ही प्रशंसा की जाये थोड़ी है।

मैं भली-भांति जानता हूं कि स्वाधीनता जिस प्रसन्नता को लाई है वह आपके हृदयों की इस उदासी से कुछ फीकी पड़ गई है, क्योंकि यह (स्वाधीनता) अखंड भारत में न आ सकी। बटवारे के शोक ने आज की घटनाओं के आल्हाद को कुछ कम कर दिया है। आपके नेताओं ने कठिन निर्णय करके जिस प्रकार देशभक्तिपूर्ण राजनीतिज्ञता का परिचय दिया है, उसी प्रकार आपने अपने नेताओं का समर्थन करके उदारता तथा यथार्थता की भावना का परिचय दिया है।

मेरी स्थिति को सहानुभूतिपूर्वक समझकर इन राजनीतिज्ञों ने मुझे सदा के लिए अपना ऋणी बना लिया है। उदाहरण के लिए, उन्होंने अपनी इस मूल मांग पर

जोर नहीं दिया कि ट्रिब्यूनल का अध्यक्ष मैं बनूं। इसके अलावा पंजाब और बंगाल के बटवारे की जिम्मेदारी से भी मुझे छुटकारा देना उन्होंने आरंभ ही में स्वीकार कर लिया। उन्होंने ही सीमा-कमीशन के अध्यक्ष तथा सदस्यों का चुनाव किया, उन्होंने ही यह निश्चय किया कि कमीशन किन बातों पर विचार करे और निर्णय को अमल में लाने का दायित्व भी उन्होंने वहन किया। आप यह अनुभव करेंगे कि अगर नेता ऐसा न करते तो मैं बड़ी असम्भव स्थिति में पड़ जाता।

अब मैं देशी रियासतों की समस्या को लेता हूं। 3 जून वाली योजना में केवल ब्रिटिश भारत में सत्ता-हस्तांतरण की व्यवस्था की गई थी। रियासतों के संबंध में तो सिर्फ एक पैराग्राफ में यह कहा गया था कि सत्ता हस्तांतरित होने पर रियासतें, जिनकी संख्या 565 है, स्वतंत्र हो जायेंगी। यह एक और महती समस्या थी और इस संबंध में सभी तरफ आशंका थी। परंतु रियासत-विभाग स्थापित होने पर सम्राट के प्रतिनिधि की हैसियत से मैं इस जटिल समस्या को भी हाथ में ले सका। रियासत-विभाग के प्रधान दूरदर्शी राजनीतिज्ञ सरदार वल्लभभाई पटेल को इसका श्रेय प्राप्त है कि एक ऐसी योजना तैयार हो सकी जो मुझे भारत के स्वाधीन उपनिवेश के लिए तथा रियासतों के लिए-दोनों के लिए-समान रूप से हितकर जान पड़ी। अधिकांश रियासतों के भौगोलिक संबंध भारत के स्वाधीन उपनिवेश से हैं और इसलिए इस समस्या को हल करने में उसकी दिलचस्पी भी अधिक है। यह एक तरफ रियासतों के राजाओं और उनकी सरकारों की तथा दूसरी तरफ भारत सरकार की यथार्थता और उत्तरदायित्व संबंधी भावना की ही विजय है कि दोनों पक्षों को स्वीकार होने योग्य प्रवेशपत्र (Instrument of Accession) बनाया जा सका और वह भी इतना स्पष्ट और सरल कि तीन सप्ताह से भी कम समय में प्रायः सभी संबंधित रियासतों के प्रवेशपत्र तथा ''यथापूर्व'' (stand still) समझौते पर हस्ताक्षर हो सके। इस प्रकार 30 करोड़ मनुष्यों को इस उप-महाद्वीप के अधिकांश भाग की एक और अखंड राजनीतिक व्यवस्था स्थापित हो सकी है।

प्रमुख महत्व की रियासतों में हैदराबाद ही एक ऐसी रियासत है जो अभी तक शामिल नहीं हुई है। जनसंख्या, क्षेत्रफल और साधनों की दृष्टि से हैदराबाद की स्थिति अनूठी है। उसकी अपनी विशिष्ट समस्यायें भी हैं। पाकिस्तान में शामिल होने की तो हैदराबाद के निजाम की मंशा नहीं है, लेकिन वे अभी तक

[श्रीमान् गवर्नर-जनरल]

भारत में शामिल नहीं हो सके हैं। निजाम ने मुझे विश्वास दिलाया है कि विदेशी मामले, रक्षा और यातायात के तीन आवश्यक विषयों में वे उस डोमिनियन से सहयोग रखेंगे जिसके प्रदेश से उनकी रियासत घिरी है। सरकार की स्वीकृति से निजाम के साथ बातचीत जारी रखी जायेगी और मुझे आशा है कि हम संतोषप्रद समाधान ढूंढ निकालेंगे।

आज से मैं आपका वैधानिक गवर्नर-जनरल हूं और आपसे अनुरोध करूंगा कि आप मुझे आज से अपने ही जैसा एक व्यक्ति समझें, जो भारत के हितों को अग्रसर करने के लिए सच्चे हृदय से प्रयत्नशील रहेगा। मैं यह देखकर अपने को सम्मानित अनुभव करता हूं कि आपके नेताओं ने मुझे आपका गवर्नर-जनरल बने रहने के लिए आमंत्रित किया है और आपने उसे स्वीकार कर लिया है। इसे स्वीकार करने में, मैं केवल इसी विचार से प्रेरित हुआ हूं कि आगे जो कठिन समय आने वाला है उसमें शायद आपकी कुछ सहायता कर सकूं। भारतीय-स्वाधीनता-कानून पर विचार करते समय आपके नेताओं ने 31 मार्च, 1948 को इस अंतरिम काल का अंत निर्धारित किया था। मैं अनुरोध करता हूं कि अप्रैल में आप मुझे मुक्त कर दें। यह नहीं है कि आपकी सेवा में रहकर मैं अपने आपको सम्मानित नहीं अनुभव करता हूं, किंतु मैं यह जरूर महसूस करता हूं कि यथासंभव शीघ्र ही भारत अपनी प्रजा में से किसी को गवर्नर-जनरल चुनने के लिए स्वतंत्र रहे। तब तक मेरी पत्नी और मैं आपके साथ और आपके बीच काम करके अपना सौभाग्य समझेंगे। सभी अवसरों पर हमारे प्रति जो समझौता, सहयोग, सच्ची सहानुभूति और उदारता की भावना व्यक्त की गई है, उसके लिए कृतज्ञता प्रकट करने को मेरे पास कोई शब्द नहीं हैं।

मुझे यह घोषणा करते हुए प्रसन्नता होती है कि मेरी सरकार ने (जैसा कि मुझे अब वैधानिक रूप से ऐसा कहने का अधिकार है और मुझे ऐसा कहते गर्व होता है) इस ऐतिहासिक अवसर पर कैदियों को उदारतापूर्वक क्षमा प्रदान करने का निश्चय किया है। सार्वजनिक नैतिकता और सुरक्षा को सर्वोपरि ध्यान में रखकर कैदियों की कितनी ही श्रेणियां तैयार की गई हैं और राजनैतिक उद्देश्य पर खास ध्यान दिया गया है। फौजी अदालतों से जिन सैनिकों को सजायें दी गई हैं, उनको छोड़ने में भी यही नीति बरती जायेगी।

आपके आगे कार्य महान् है। युद्ध दो वर्ष पूर्व समाप्त हो चुका है। सच तो यह है कि दो वर्ष पूर्व इसी दिन, जब मैं भारत के महान् मित्र श्री एटली के

मंत्रिमंडल वाले कमरे में था, मुझे जापान के आत्मसमर्पण का समाचार मिला था। वह कृतज्ञता तथा खुशी का क्षण था क्योंकि 6 वर्ष तक विनाश और रक्तपात होता रहा था। परंतु भारत में हमने कहीं अधिक बड़ी सफलता प्राप्त की है, जिसे ''युद्ध के बिना ही शांति-संधि'' कहा जा सकता है। फिर भी युद्धजन्य हानि के चिन्ह संसार भर में दिखाई दे रहे हैं। भारत को भी, जिसने युद्ध में वीरतापूर्ण भाग लिया था—और इसका साक्षी दक्षिण पूर्वी एशिया से अपने अनुभव के कारण मैं खुद हूं—अपनी आर्थिक व्यवस्था में असामंजस्य होने और अपने वीर योद्धाओं के हताहत होने के रूप में मूल्य चुकाना पड़ा।

राजनैतिक समस्या में व्यस्त रहने के कारण आर्थिक सुधार के काम में बाधा पड़ी है। अब राष्ट्र के सुख और समृद्धि की व्यवस्था करना, खाद्य, कपड़ा तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं के अभाव की पूर्ति का प्रबंध करना और एक सामंजस्य-पूर्ण आर्थिक व्यवस्था का निर्माण करना आप ही का काम है। इन समस्याओं के निपटारे के लिए आपके तात्कालिक तथा पूर्ण हार्दिक प्रयत्न और दूरदर्शिता पूर्ण आयोजन की आवश्यकता है। किंतु मुझे विश्वास है, जन, साधन तथा नेतृत्व का अभाव न होने के कारण आप अपने इस कार्य में सफल हो सकेंगे।

भारत में जो कुछ हो रहा है उसका केवल राष्ट्रीय महत्व ही नहीं है। एक स्थिर तथा समृद्धशाली राज्य की स्थापना संसार की शांति के लिए सबसे अधिक अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की बात है। भारत की आर्थिक और सामाजिक उन्नति, सैन्य-दृष्टि से इसकी महत्वपूर्ण अवस्थिति और उसके साधनों की दृष्टि से, इन घटनाओं का विशेष महत्व है। यही कारण है कि सिर्फ ब्रिटेन और स्वाधीन उपनिवेश ही नहीं बल्कि संसार के सब महान् राष्ट्र उत्सुकता से इस देश की प्रगति दिलचस्पी से देखेंगे और उसकी समृद्धि और सफलता की कामना करेंगे।

इस ऐतिहासिक घड़ी में हमें यह न भूल जाना चाहिए कि भारत महात्मा गांधी का—अहिंसा द्वारा उसकी स्वतंत्रता लाने वाले महान् सूत्रधार का—कितना बड़ा ऋणी है। आज उनकी अनुपस्थिति हमें खल रही है और हम उन्हें बताना चाहते हैं कि उनका ध्यान हमें कितना अधिक है।

श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, मैं आप तथा पिछली अन्त:कालीन सरकार के अन्य सदस्यों को सूचित करना चाहता हूं कि आपकी तरफ से मुझे जो सहयोग और समर्थन मिलता रहा है, उसकी मैं कद्र करता हूं।

[श्रीमान् गवर्नर-जनरल]

अपने प्रथम प्रधान मंत्री पं॰ जवाहरलाल नेहरू के रूप में आपको साहस तथा सूझबूझ वाला एक संसार प्रसिद्ध नेता प्राप्त है। उनके विश्वास और मंत्रित्व से मुझे अपने कार्य में असीम सहायता प्राप्त हुई है। अब उनके नेतृत्व में और उन्होंने जिन साथियों को चुना है उनकी सहायता तथा जनता के सच्चे सहयोग से भारत शक्ति और प्रभावपूर्ण स्थिति प्राप्त कर सकेगा और संसार के राष्ट्रों के बीच अपना उचित स्थान भी पा सकेगा। *(अरसे तक तुमुल हर्षध्वनि)*

***अध्यक्षः** योर एक्सेलेंसी और मेम्बराने असेम्बली, मैं आपसे दरख्वास्त करना चाहता हूं कि बादशाह सलामत के पास आप इस असेम्बली की तरफ से शुक्रिया का संदेश भेज दें, उस संदेश के लिए जो उन्होंने इतनी मेहरबानी करके हमारे पास भेजा है। जिस काम में आज हम लगने जा रहे हैं उसमें उनकी हमदर्दी और मेहरबानी हमारे साथ रहेगी, यह जानकर हम इस काम को ठीक तरह से अंजाम दे सकेंगे।

अध्यक्ष का भाषण

***अध्यक्षः** मुझे सभा को यह सूचना देनी है कि फ्रांस के वैदेशिक मंत्री श्री एम॰ गिराड से भी शुभकामना का एक संदेश मिला है जो उन्होंने फ्रांस की सरकार तथा अपनी ओर से भेजा है। खेद है कि सम्वाद की इबारत मेरे पास नहीं है, पर अन्य सम्वादों के साथ, जिन्हें मैने आज सुनाया है, यह परिषद् की कार्रवाई संबंधी पुस्तिका में दर्ज कर लिया जायेगा।

योर एक्सेलेंसी, आपसे अनुरोध है कि आप श्रीमान् सम्राट को इस सभा की ओर से इसका निष्ठापूर्ण अभिनन्दन का सम्वाद तथा उनके शुभ सम्वाद के लिये जो उन्होंने महती कृपा करके हमें आज भेजा है, इसका हार्दिक धन्यवाद भेज दें। उस महान् काम को पूरा करने में, जिसे हम आज उठा रहे हैं, सम्राट के इस सम्वाद से हमें बड़ी प्रेरणा प्राप्त होगी और मुझे इसमें रंचमात्र भी संदेह नहीं है कि हम ग्रेट ब्रिटेन से एक मित्र की तरह के सम्पर्क की बड़ी प्रसन्नता से आशा रखते हैं। मुझे आशा और विश्वास है कि सम्राट की दिलचस्पी, सहानुभूति और उनका अनुग्रह, जिससे वह सदा ही प्रभावित रहे हैं, भारत को पूर्ववत् प्राप्त होते रहेंगे, और हम उन्हें पाने योग्य होंगे।

(यह संदेश तथा अमेरिका के प्रेसीडेंट का संदेश परिषद् में पढ़े नहीं गये थे, पर कार्रवाई में शामिल कर दिये गये हैं।)

तार–ता॰ 15-8-47

मो॰ जारजेस बिडाल्ट, वैदेशिक मंत्री, पैरिस की ओर से, पं॰ जवाहरलाल नेहरू के नाम:

''अपनी सरकार की ओर से तथा अपनी ओर से मैं इस ऐतिहासिक तिथि का अभिवादन करता हूं जब कि भारतवर्ष को विश्व के उन महान् स्वाधीन राष्ट्रों के समकक्ष श्रेणी में आने का गौरव प्राप्त हुआ जो शांति-स्थापन के कृत संकल्प हैं और हृदय से संसार के सभी लोगों की सुख-समृद्धि की कामना करते हैं। श्रीमान् से मेरा अनुरोध है कि इस अवसर पर आप हमारे इस पुनर्प्रदत्त आश्वासन को स्वीकार करें कि इन दोनों देशों की पारस्परिक मैत्री के लिए मैं सतत् प्रयत्नशील रहूंगा और इसका मुझे सर्वोपरि ध्यान है।''

अमेरिकन दूतावास

नई दिल्ली, (इंडिया)

15 अगस्त, 1947

श्रीमान्, मुझे गौरव है कि अमेरिका के राष्ट्रपति से प्राप्त निम्नलिखित संदेश को आपके पास भेजने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हो रहा है:

''इस चिरस्मरणीय अवसर पर मैं अमरीका की सरकार और उसकी जनता की ओर से आपके प्रति और प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू तथा भारतीय डोमिनियन की जनता के प्रति हार्दिक शुभकामनायें प्रकट करता हूं। भारत संसार के सर्वसत्ता सम्पन्न राष्ट्रों की पंक्ति में आया है। उसके इस नये और उन्नत पद का हम स्वागत करते हैं। नये स्वाधीन उपनिवेश को अपनी सतत् मैत्री और सद्भावना का आश्वासन देते हैं और पुन: अपना यह दृढ़ विश्वास प्रकट करते हैं कि भारत संसार में शांति स्थापना और सभी लोगों की प्रगति में तत्पर रहेगा तथा संसार में पारस्परिक विश्वास और सम्मान के आधार पर आश्रित समाज की स्थापना की होड़ में विश्व के राष्ट्रों की पहली पंक्ति में खड़ा होगा। भारत के सम्मुख बहुतेरी समस्यायें उपस्थित हैं; परन्तु उसके साधन विशाल हैं और मुझे विश्वास है कि उसकी जनता और नेताओं में अपनी इन भावी समस्याओं को सुलझाने की सामर्थ्य है। आगे आने वाले वर्षों में अमरीका इस नये और महान राष्ट्र की जनता का सदा मित्र रहेगा। मेरी यह हार्दिक आशा है कि भूतकाल की भांति भविष्य में भी अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र

[अध्यक्ष]

में हम लोगों में घनिष्ट और लाभदायक सहयोग बना रहेगा और हमारे पारस्परिक संबंध घनिष्ठ और सद्भावना पूर्ण बने रहेंगे।''

इस अवसर पर भारतीय उपनिवेश के गवर्नर-जनरल का पद ग्रहण करने पर श्रीमान् को मैं बधाई देता हूं और साथ ही उच्चतम प्रतिष्ठा प्रदान करने का आपको विश्वास दिलाता हूं।

भारतीय उपनिवेश के श्रीमान गवर्नर-जनरल-हेनरी टी॰ ग्रेडी

***अध्यक्षः** इस शुभ घड़ी में जब हम स्वतंत्रता के अधिकारों को, आजादी के अख्तियारों को अपने हाथों में लेने जा रहे हैं, हमारा पहला कर्तव्य है कि हम उनके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करें जिन्होंने इस दिन के लाने के लिये अपनी जिंदगी लगा दी और तरह-तरह के कष्ट सहे और मुसीबतें झेलीं।

इस ऐतिहासिक अवसर पर (इस तवारीखी मौके पर) हम अपने राष्ट्र के निर्माता महात्मा गांधी को भी अपनी भक्ति अर्पित करते हैं जिन्होंने इन कठिन दिनों में हमारी रहनुमाई की है और हमें अनुप्राणित किया है, और आज अपनी वृद्धावस्था में भी जो अधूरा रह गया है उसे पूरा करने में अपनी अद्भुत शक्ति लगा रहे हैं।

हमने आज जो स्वतंत्रता पायी है वह हमारे तप और त्याग और कुर्बानी का फल है। साथ ही हमको यह भी मानना चाहिये कि उसके लाने में संसार और दूसरे राष्ट्रों की स्थिति भी सहायक और मददगार रही है। हमें यह भी मानना चाहिये कि ब्रिटिश जाति ने भी अपने इतिहास और संस्कृति के अनुसार अपने तमुद्दन और तवारीख के मुताबिक अपने उन उदारचेता और दूरदर्शी नेताओं और राजनीतिज्ञों-अपने दूरअंदेश और फय्याज खयाल वाले लीडरों-के स्वप्नों और वचनों को पूरा किया है, जिन्होंने इस दिन की भविष्यवाणी की थी और समय-समय पर इसे लाने की प्रतिज्ञा की थी। आज हमें इस बात की खुशी है कि उस जाति के प्रतिनिधिस्वरूप नुमाइंदे की तरह हमारे बीच में वाइकाउंट माउंटबैटन आफ बर्मा और उनकी धर्मपत्नी मौजूद हैं, जिन्होंने अंतिम दिनों में इतनी मेहनत और उत्साह

के साथ काम किया है। आज से हिन्दुस्तान पर ब्रिटिश प्रभुत्व खत्म होता है और हमारा ब्रिटेन के साथ ऐसा संबंध कायम होता है जो बराबरी का है और जिसमें दोनों देशों की भलाई है और दोनों को लाभ हो सकता है।

हम जानते हैं कि देश में इस स्वतंत्रता प्राप्ति से जो उल्लास, जो खुशी और जो उत्साह होना चाहिये वह इसका बटवारा हो जाने के कारण किरकिरा हो गया है। हमारा काम है कि जो हमारे साथ रह गया है उसको हम ऐसा सुंदर, सुव्यवस्थित, सुसंगठित और समुन्नत करें कि बिछुड़े हुये प्रदेशों को फिर हमसे मिल जाना बहुत अधिक लाभप्रद मालूम हो। हम आशा करते हैं कि हम अपने व्यवहार से, अपनी कार्यदक्षता से उनको फिर अपनी ओर वापस ला सकेंगे। यह जोर जबर्दस्ती से नहीं हो सकता। जोर जबर्दस्ती का कहीं भी अच्छा अंत नहीं होता। वह एक चक्र है जिसका आदि-अंत कहीं नहीं है। हम यह उद्देश्य अपने सद्व्यवहार से पूरा कर सकते हैं। ऐसे लोग जो इस बटवारे को पसंद नहीं करते, पर जिनके घरबार उस पार में पड़ गये हैं, उनसे अनुरोध है कि वे वहां ही डटे रहें और जिस हिम्मत और उत्साह से उन्होंने स्वराज्य-प्राप्ति में काम किया है उसीसे अब भी काम लेते रहें। जो नया शासन और नई गवर्नमेंट वहां कायम हो रही है उसको हम अपना आशीर्वाद और शुभकामनायें भेजते हैं और चाहते हैं कि वह अपने उस बड़े काम में, जो आज वह शुरू करने जा रही है, पूरी तरह कामयाब होवे। हमारा पूरा विश्वास है कि वह वहां के सभी रहने वालों के साथ बिना कोई फर्क किये इंसाफ और न्याय का बर्ताव करेगी। हमारी सहानुभूति तो वहां के सब लोगों के साथ है ही। हम चाहते हैं कि वह अपनी वफादारी और अपनी हिम्मत से अपनी जगह वहां हासिल और कायम कर लेवें।

इस दिन हमें खुशियां मनानी हैं, मगर उससे भी अधिक अपनी जिम्मेदारियों को समझना है। हम गुजिश्ता को भूलें और आइंदा की ओर अपनी आंखें फेरें और ऐसा हिन्दुस्तान बनावें जिसका हम सपना देखते रहे। हमारा किसी भी विदेश के साथ कोई झगड़ा नहीं है और हम उम्मीद रखते हैं कि कोई दूसरा देश हमारे साथ झगड़ा मोल नहीं लेगा। हमारा इतिहास बताता है और हमारी संस्कृति सिखाती है कि हम शांतिप्रिय हैं, और रहें। हमारा साम्राज्य, हमारी फतह दूसरे प्रकार की रही है। हमने दूसरों को जंजीरों से, चाहे वह लोहे की हों या सोने की भी क्यों न हों, कभी बांधने की कोशिश नहीं की। हमने दूसरों को अपने साथ लोहे की जंजीरों से भी ज्यादा मजबूत मगर सुंदर और सुखद रेशम के धागे से बांध रखा है और वह बंधन धर्म का है, संस्कृति का है और ज्ञान का है। हम अब भी

[अध्यक्ष]

उसी रास्ते पर चलते रहेंगे और हमारी एक ही इच्छा और अभिलाषा रहेगी। यह अभिलाषा यह होगी कि हम संसार में सुख और शांति कायम करने में मदद पहुंचा सकें और संसार के हाथों में सत्य और अहिंसा का वह अचूक हथियार दें जिसने हमें आज आजादी तक पहुंचाया है। हमारी जिंदगी और संस्कृति में कुछ ऐसा है जिसने हमें समय के थपेड़ों के बावजूद जिन्दा रहने की शक्ति दी है। अगर हम अपने आदर्शों को सामने रखे रहेंगे तो हम संसार की बड़ी सेवा कर पायेंगे।

आज से हम कानूनी तरीके से अपने भाग्य के विधाता बने हैं और इस देश को शांत, सुखी और समुन्नत बनाने का सारा भार हमारे ऊपर आ गया है। जो स्वराज्य हमने हासिल किया है वह खोखला रह जायेगा, अगर हमने देश में रहने वाले सभी वर्ग, जाति और धर्म वाले लोगों में यह विश्वास पैदा नहीं किया कि वे यहां सुरक्षित हैं, उनकी उन्नति और तरक्की के रास्ते में कोई बाधा नहीं डाल सकता है, उनको धर्म और धर्माचार की पूरी आजादी है, उनकी भाषा और संस्कृति, जबान और कल्चर, पर कोई आघात नहीं पहुंचा सकता है, आदिम जातियों और दूसरे पिछड़े हुये लोगों की उन्नति के लिये उस समय तक विशेष आयोजन और प्रयत्न होता रहेगा–खास मदद होती रहेगी–जब तक वह सबों की बराबरी में न आ जायें, अछूतपन को सपने के संकट की तरह हम भूल गये, मजदूर और किसान और दूसरे हर प्रकार के श्रमजीवी मेहनत करने वाले किसी प्रकार से शोषित नहीं होने पायेंगे, सभी लोगों को अपने विचारों को प्रकट और प्रचारित करने का, अपने खयालों की इशायत का मौका और अधिकार है। जब इस देश में खाने के लिये पूरा अन्न होने लगेगा और फिर दूध की नदियां बहने लगेंगी। जब हमारे जवान लोग खेतों और कारखानों में हंसते-हंसते काम किया करेंगे, जब हर झोंपड़े और पल्ली में घरेलू धंधों के साथ-साथ हमारी युवतियां अपने मीठे स्वर अलापती रहेंगी। जब इस देश के सुखी घरों पर और हंसते हुये चेहरों पर सूरज और चन्द्रमा अपनी किरणें छिटकायेंगे तभी हमारा स्वराज्य सफलीभूत होगा।

काम बहुत बड़ा है, बहुत मुश्किल है और सब लोगों की सहायता और सहयोग के बिना यह पूरा नहीं हो सकता। देश के सभी लोगों से अनुरोध है कि वह इसमें पूरी सहायता करें। हम जानते हैं कि आज देश के अन्दर कई विचार-धारायें चल रही हैं। कितने ही दल हैं जो संगठित रूप से अपने विचारों का प्रचार करना और देश द्वारा उनको मंजूर कराकर उनके ही ढांचे में विधान और हमारे सामाजिक जीवन को ढ़ालना चाहते हैं। जहां एक ओर इन सबको अपने विचारों

के प्रचार का पूरा अधिकार होना चाहिये, दूसरी ओर देश को यह अधिकार है कि उनसे वह देश के प्रति सच्ची वफादारी का दावा करें और उनका फर्ज है कि वह वफादारी वे दें। हम सबको यह मानना होगा कि इस समय सबसे अधिक जरूरत निर्माण और रचना की है, संघर्ष की नहीं, ठोस तामीरी काम की है, बहस की नहीं। हम आशा करते हैं कि सभी मिल-जुलकर इस बड़े काम को पूरा करेंगे। हम चाहते हैं कि हमारे किसान ज्यादा से ज्यादा अन्न पैदा करें, कारखानों के मजदूर ज्यादा से ज्यादा माल पैदा करें और व्यवसायी और व्यापारी लोग अपनी बुद्धि और चातुरी जनता जनार्दन की सेवा में लगायें, और सबके लिये सुन्दर व्यवस्थित और सुखी जीवन, जिन्दगी का साधन, सामान जुटा दें और सबके लिये आत्मोन्नति (तरक्की) का रास्ता साफ कर दें।

जनता और जनता के प्रतिनिधियों के अलावा एक और वर्ग है जिसकी जिम्मेदारी भी कम नहीं है। वह है हमारे देश की सेना और सरकारी मुलाजिमों की। जो लोग आज तक हम पर और जन साधारण पर हुकूमत करते रहे हैं उनको अब से सेवक और खादिम का जामा पहनना होगा। हमारी फौज ने अपनी बहादुरी और युद्ध कौशल का सबूत दुनिया के अनेकों रणक्षेत्रों में दिया है। आज तक वह दूसरे प्रकार से संचालित हो रही थी। आज वह राष्ट्रीय सेना, कौमी फौज बन गयी जिसके ऊपर देश को सुरक्षित, महफूज रखने का भार होगा और जो जनता को दबाने के लिये नहीं उठाने के लिये, उन्नत करने के लिये, रखी जायेगी। अब हमारे देश के रहने वालों के लिये फौज के किसी विभाग में, चाहे वह जमीन, पानी या आसमान में काम करता हो, कोई भी ऐसी जगह नहीं जो न मिल सके। इतना ही नहीं, उनको जल्द से जल्द ऊंचे ओहदे तक पहुंचकर काम संभालना है। उसी तरह जो सरकारी मुलाजिम हैं उनको भी अब अपने को देश का शासक न मानकर देश का सेवक मानना होगा। जिस तरह स्वतंत्र देश के सरकारी मुलाजिम जनता की सेवा करते हैं उसी तरह इनको भी सेवा करनी होगी। अपनी सारी योग्यता, काबलियत और शक्ति का रुख दूसरी तरफ उनको फेरना पड़ेगा और जहां वह आज तक रोब-दाब से काम लिया करते थे वहां उन्हें अब केवल सेवा-भावना से काम करना होगा, जैसा स्वतंत्र देशों के सरकारी मुलाजिम किया करते हैं। जनता और गवर्नमेंट की तरफ से उनको भरोसा होना चाहिये कि उनके रहन-सहन के लिये देश की परिस्थिति के अनुकूल, यहां की हालत के मुताबिक जहां उनको रहना है पर्याप्त प्रबंध, काफी इंतजाम किया जायेगा।

हम उन देशी रियासतों का स्वागत करते हैं जो हमारे संघ में शामिल हो गई हैं और रजवाड़ों की जनता के प्रति हम अपनी सद्भावना प्रकट करना चाहते हैं

[अध्यक्ष]

और उनके नरेशों और रईसों को हम विश्वास दिलाना चाहते हैं कि उनके प्रति हमारा कोई द्वेष नहीं है, उनको चाहिये कि वह इंग्लैंड के राजा का अनुकरण करें और प्रजातंत्र का नियंत्रित अधिकार ही अपने हाथों में रखें। उनको भूलना नहीं चाहिये कि यूरोप में जहां दूसरे देशों के राज सिंहासन चकनाचूर हो गये, अंग्रेजी राजा की सत्ता दो बड़ी लड़ाइयों के बाद भी आज पहले जैसी ज्यों की त्यों खड़ी है।

विदेशों में प्रवासी भारतवासियों को, चाहे वह अंग्रेजी उपनिवेशों में बसे हैं या और जगहों में, हम विश्वास दिलाना चाहते हैं कि उनके सुख-दुख में हमारी गहरी दिलचस्पी है और उनके लिये दिलों में सद्‌भावना है।

देश में जो अल्पसंख्यक लोग हैं उनको हम विश्वास दिलाना चाहते हैं कि उनके साथ न्याय और इंसाफ का बर्ताव होगा और उनके अधिकार (हक) सुरक्षित (महफूज) रहेंगे।

विधान बनाने का काम जो बाकी है उसको जल्द से जल्द पूरा करना चाहिये ताकि हम अपने बनाये विधान के मातहत रहने लग जायें और काम शुरू कर दें। इस विधान को बनाने में सबकी सहायता आवश्यक है। ऐसा सुन्दर उसे बनाना है जिसमें जनमत प्रधान रहे और सेवा और जनता की उन्नति उद्देश्य रहे, और सबको इस बात का विश्वास रहे कि वह अपने धर्म, संस्कृति, भाषा, विचार सबको सुरक्षित रख सकते हैं और उनकी तरक्की के रास्ते में किसी किस्म की बाधा नहीं हो सकती। इसको बनाने में विदेशों के अनुभव, तजुरबा और विधान (कायदे) से हम लाभ उठायेंगे। अपनी संस्कृति और परिस्थिति से जो कुछ मिल सकता है उसे लेंगे और जहां जरूरत होगी आज की प्रचलित सीमाओं को, चाहे वह शासन-पद्धति की हो अथवा सूबाओं की, लांघकर नयी सीमायें बनायेंगे। हमारा उद्देश्य है कि हम ऐसा विधान बनायें जिसमें जनमत की प्रधानता रहे और जिसमें व्यक्ति को केवल स्वतंत्रता (आजादी) ही न मिले, पर वह स्वतंत्रता (आजादी) लोकहित (खलक की बहबूदी) का साधन (जरिया) बन जाये।

आज तक इस देश के लोग देश को आजाद करने के लिये संकल्प किया करते थे और इस कार्यसिद्धि के लिये त्याग और बलिदान की प्रतिज्ञा किया करते थे। आज दूसरे प्रकार के संकल्प और प्रतिज्ञा का दिन आया है। हममें से कोई ऐसा न समझें कि त्याग का दिन बीत चुका और भोग का समय आ गया। जो

देश को उन्नत करने का महान् कार्य हमारे सामने है उसमें आज तक हमने जितनी त्याग की भावना दिखलाई है उससे कहीं अधिक दृढ़ प्रतिज्ञा के साथ तत्परता, त्याग और कार्य-पटुता दिखलाने का समय है। इसलिये एक बार फिर भी भारत की सेवा में लग जाने का संकल्प करना है और ईश्वर से प्रार्थना करनी है कि जिस तरह से उसने हमारे पहले के संकल्प को पूरा किया उसी तरह से वह इसको भी पूरा करे।

राष्ट्रीय पताका का उत्तोलन

***अध्यक्ष:** अब हिज एक्सेलेंसी झंडोत्तोलन का संकेत देंगे।

(तोप की आवाज सुनाई पड़ी।)

***श्रीमान् गवर्नर-जनरल:** इमारत की छत पर झंडा फहराने का यह संकेत है।

***अध्यक्ष:** अब सभा 20 अगस्त को, 10 बजे के लिये स्थगित होती है।

माननीय सदस्यगण: महात्मा गांधी की जय, पं० जवाहरलाल नेहरू की जय, लार्ड माउंटबैटन की जय।

इसके बाद सभा बुधवार, 20 अगस्त, सन् 1947 के प्रातः 10 बजे के लिये स्थगित हुई।

Con. 3.5.4.47
750

अंक 5
संख्या 4

बुधवार
20 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्
के
वाद-विवाद
की
सरकारी रिपोर्ट
(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	परिचय-पत्रों की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर	1
2.	शपथ ग्रहण करना	2
3.	झंडोत्तोलन संबंधी भारत के कुछ भागों की घटनायें	2
4.	संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट	17
5.	स्वाधीनता कानून, अनुकूल, नियम आदि के संबंध में विचार	53
6.	परिशिष्ट	55

भारतीय विधान-परिषद्

बुधवार, 20 अगस्त, सन् 1947 ई०

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कांस्टीट्यूशन-हाल, नई दिल्ली में दिन के 10 बजे से माननीय डा० राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर

नीचे लिखे हुए मेम्बरों ने रजिस्टर में अपने हस्ताक्षर किये:

(1) माननीय श्रीयुत गोपीनाथ बोरदोलोई (आसाम: जनरल)

(2) माननीय रेवरेंड जे०जे०एम० निकोल्स राय (आसाम: जनरल)

(3) श्री निवारण चंद्र लश्कर (आसाम: जनरल)

(4) श्री ए०बी० लाठे (कोल्हापुर)

(5) चौधरी निहाल सिंह तक्षक (पंजाब-राज्य ग्रुप 3)

***श्रीयुत रोहिणी कुमार चौधरी** (आसाम: जनरल): कुछ ऐसे मेम्बर हैं जो 14 की रात को हाजिर नहीं थे, इसलिए उस दिन वे शपथ नहीं ले सके।

***अध्यक्ष:** हम अब इसी प्रश्न को लेंगे।

मेम्बरों को याद होगा कि 14 की रात परिषद् ने एक प्रस्ताव पास किया था जिसके द्वारा यह आवश्यक कर दिया गया था कि, परिषद् के सदस्यों को निर्धारित रूप में प्रतिज्ञा करनी चाहिए। उन सदस्यों ने जो उस रात को मौजूद थे, यह प्रतिज्ञा की थी, लेकिन मैं समझता हूं कि उस रात कुछ लोग गैर-हाजिर भी थे। निश्चय ही ऐसे सदस्य भी हैं जो इस परिषद् में आज ही सम्मिलित हुए हैं वे सारे सदस्य जिन्होंने अब तक प्रतिज्ञा नहीं की है, अब इस समय कर सकते हैं।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

शपथ ग्रहण करना

***अध्यक्ष:** जिन लोगों ने प्रतिज्ञा नहीं की है वे कृपया अपनी-अपनी जगह पर खड़े हो जायें।

(जिन्होंने पहले प्रतिज्ञा नहीं की थी, वे अपनी-अपनी जगहों पर खड़े हो गये।)

***अध्यक्ष:** मैं प्रतिज्ञा पढ़ता हूं और सदस्यों को चाहिये कि वे भी इस प्रतिज्ञा को मेरे साथ दुहराते जायें।

(इसके बाद सभापति महोदय ने अंग्रेजी व हिंदुस्तानी में प्रतिज्ञा पढ़ी और जिन सदस्यों ने पहले ऐसा नहीं किया था, उन्होंने नीचे लिखे अनुरूप प्रतिज्ञा ग्रहण की।)

प्रतिज्ञा

अब जब कि हिंदवासियों ने त्याग और तप से स्वतंत्रता हासिल कर ली है, मैं.......... जो इस विधान-परिषद् का एक सदस्य हूं, अपने को बड़ी नम्रता से हिंद और हिंदवासियों की सेवा के लिए अर्पण करता हूं, ताकि यह प्राचीन देश संसार में अपनी उचित और गौरवपूर्ण जगह पा लेवे और संसार में शांति-स्थापन करने और मानव जाति के कल्याण में अपनी पूरी शक्ति लगाकर खुशी-खुशी हाथ बटा सके।

झंडोत्तोलन संबंधी भारत के कुछ भागों की घटनायें

***श्री आर॰के॰ सिधवा** (मध्य प्रांत व बरार: जनरल): इसके पहले कि हम आज की कार्रवाई शुरू करें, मैं आपका ध्यान तत्काल सार्वजनिक महत्व के एक अति गम्भीर विषय की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं, जो यह है। खबर है कि स्वाधीनता दिवस को आगरा के किले (आगरा फोर्ट) में लाखों आदमी झंडोत्तोलन समारोह देखने के लिए इकट्ठे हुए थे। उस दिन की खबर है कि किसी ब्रिटिश कमान के आदेश से एक ब्रिटिश अफसर ने कहा कि यदि 'यूनियन जैक' नीचा करके नया झंडा फहराया जाने को है, तो मैं किन्हीं भी सैनिकों को इस समारोह में शामिल होने की इजाजत न दूंगा। सभी लोगों को घोर निराशा हुई किंतु भारतीय सैनिकों में से एक ने भारतीय यूनियन का हमारा झंडा फहरा कर दर्शकों को शांत किया। मैं इस सभा के माननीय नेता से जानना चाहूंगा कि यह बात कहां तक सच है और यदि सच है, तो इस अति गंभीर मामले में, अर्थात् जहां कहीं भी

राष्ट्रीय झंडे का किसी ब्रिटिश अफसर द्वारा अपमान हुआ हो, वे क्या कार्रवाई करने जा रहे हैं? मैं एक उदाहरण और भी पेश करना चाहता हूं। यह भी खबर है कि हैदराबाद राज्य के भारतीय डाकखाने में हमारा झंडा फहराया गया और हैदराबाद के अधिकारियों ने उसे नीचे खींच लिया। सभा के माननीय नेता से मैं जानना चाहूंगा कि यह भी कहां तक सच है और यदि सच है, तो हमारे इस राष्ट्रीय झंडे को, जो भारत सरकार की सम्मत्ति पर फहराया गया था, सुरक्षित रखने के लिए वे क्या कार्रवाई करने जा रहे हैं? स्वाधीन निजाम की बलवती सरकार चाहे जो कुछ हो, यह केन्द्रीय सरकार इस मामले में क्या करने जा रही है। हम किसी भी रूप में और किसी के भी द्वारा, अपने राष्ट्रीय झंडे का अपमान सहन नहीं कर सकते। अतएव मेरी आपसे प्रार्थना है कि कृपा कर आप इस सभा के माननीय नेता से इस विषय में वक्तव्य देने का अनुरोध करें।

***श्री बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्त प्रांतः जनरल): श्रीमान्, इससे पहले कि आप इस सभा के नेता से उक्त अधिकारियों के आचरण के संबंध में स्थिति स्पष्ट करने का अनुरोध करें, मैं भी एक बात की ओर आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं। वस्तुतः समारोह होने के लगभग तीन या चार दिन पहले, मैंने माननीय सरदार बलदेव सिंह, माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरू तथा माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल का ध्यान कानपुर में दो फौजी अफसरों द्वारा जारी किये गये दो आदेशों की ओर दिलाया था। इनमें से एक आदेश कर्नल हिलमैन का था, जो कानपुर में सी॰ओ॰डी॰ के इंचार्ज हैं और दूसरा एक अन्य फौजी अफसर का था जो टेकनीकल ब्रांच के इंचार्ज हैं। इन आदेशों में निश्चित रूप से कहा गया था कि यदि ऐसी आज्ञा मिले कि यूनियन जैक नीचे उतार दिया जाये तथा उसके स्थान में कोई दूसरा झंडा फहराया जाये, तो कोई भी समारोह न किया जायेगा। और यह भी कहा गया था कि यदि फौजी अधिकारी, सिविल अधिकारियों द्वारा ऐसे किसी समारोह में सम्मिलित होने के लिए निमंत्रित किये जायें, तो उनमें से कोई भी शरीक न हो। ये आदेश यू॰पी॰ एरिया के कहने पर निकाला गया था। मैं नहीं जानता कि इसका क्या अर्थ है; शायद यू॰पी॰ कमान से है, जो संयुक्त प्रांत में सारे सैनिक संचरण तथा सैनिक शक्ति की शासन-व्यवस्था करती है हां तो सी॰ओ॰डी॰ और टेकनीकल स्टाफ के भारतीय कर्मचारी हम लोगों के पास, कानपुर की कांग्रेस कमेटी के लोगों के पास आये और इन आदेशों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया। मैंने भारत के माननीय प्रधान मंत्री तथा संयुक्त प्रात के माननीय प्रधानमंत्री से भी इस मामले पर ध्यान देने की प्रार्थना की। मुझे मेरे माननीय मित्र

[श्री बालकृष्ण शर्मा]

श्री कृष्णदत्त पालीवाल से और सूचना मिली है कि आगरा में भी कोई झंडा फहराया नहीं गया और केवल भारतीय कर्मचारियों ने ही इन आदेशों के बावजूद झंडा फहराने की कोशिश की, पर मैं नहीं कह सकता कि वे इसमें सफल हुए या नहीं। झांसी में, कानपुर में तथा आगरा में, कम से कम मेरे प्रांत के सभी सैनिक अड्डों में इस प्रकार के हुक्म निकाले गये। यह स्वाभाविक है कि मैं जानना चाहूंगा आया ये हुक्म केन्द्रीय सरकार की निगाह में लाए गए थे।

***अध्यक्षः** क्या मैं कह सकता हूं कि आज हम लोग यहां विधान तैयार करने की कार्रवाई के लिए एकत्र हुए हैं। हमारी यह बैठक भारत की व्यवस्थापिका सभा के रूप में नहीं हो रही है, जहां इस प्रकार के तथा अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न उठाये जा सकें। अतएव सदस्यों से मैं प्रार्थना करूंगा कि इन्हें वे उस समय के लिए सुरक्षित रखें जब हमारी बैठक व्यवस्थापिका सभा के रूप में हो और विधान-परिषद की बैठक में उन्हें न उठायें, क्योंकि यहां हमारा कार्य केवल विधान निर्मित करने से संबंध रखता है, न कि दिन प्रतिदिन की वास्तविक शासन-व्यवस्था से। बेशक, मैं स्वयं अपने दिमाग में अभी तक व्यवस्थापिका सभा (लेजिस्लेटिव असेम्बली) और विधान निर्मातृ-परिषद (कांस्टिट्युएन्ट असेम्बली) के बीच का भेद साफ तरह से नहीं समझ पाया हूं कि इन दोनों के बीच की सीमा-पंक्ति कहां है। किंतु यह बैठक विशेषकर उसका विधान-निर्माण का कार्य निपटाने के लिए बुलाई गयी है, और हम आज वही कार्य संभाल रहे हैं।

***श्री बालकृष्ण शर्माः** आपके आदेश से पूर्णतः बद्ध होते हुए भी क्या मैं बता सकता हूं कि विधान-परिषद् ने ही देश का शासन-सूत्र संभाला है। विधान-परिषद् के रूप में हम लोगों ने ही ब्रिटिश सरकार से इस देश की शासन-व्यवस्था अपने हाथ में ली है। इसलिए श्रीमान्, मेरा ख्याल है कि भारतीय यूनियन की केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा के रूप में एकत्र न होने पर भी विधान-परिषद् में समय-समय पर इस प्रकार के प्रश्न उठा सकने का हमें अधिकार है।

***अध्यक्षः** सभा के नेता को नहीं मालूम था कि इस समय यहां इस प्रकार के प्रश्न उठाये जायेंगे, इसलिए इस क्षण वे यहां मौजूद नहीं हैं।

***एक माननीय सदस्यः** वे यहां मौजूद हैं।

***अध्यक्षः** मुझे खेद है। वे अपनी जगह पर मौजूद नहीं थे। मैं उन्हें सभा के अन्य भाग में देखा करता था। मैं नहीं जानता कि इन मामलों पर इस समय वे कुछ कहना चाहेंगे या नहीं।

सेठ गोविंददास (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): सभापति जी, इसके पहले कि माननीय प्रधानमंत्री साहब कुछ कहें, मैं इस संबंध में जबलपुर की एक घटना आपके सामने उपस्थित करना चाहता हूं।

जबलपुर भी एक प्रधान फौजी स्थान है, वहां फौजी परेड हुई है, जितनी सरकारी इमारतें थीं उन पर और खास बड़ी बड़ी इमारतों पर झंडा फहराया गया, यहां फौजी इमारतों पर बिना किसी रस्म अदाई के झंडा फहरा दिया गया। जिस प्रकार गैर फौजी सरकारी इमारतों पर झंडा फहराते समय उत्सव हुए वैसे फौजी इमारतों पर झंडा फहराते हुए नहीं। यह कहा गया कि केन्द्रीय सरकार से आज्ञा आई है कि बिना किसी प्रकार के जल्से या बिना किसी प्रकार के उत्सव के फौजी इमारतों पर झंडा फहराया जाये। फौजी इलाकों में कुछ ऐसे दफ्तर भी थे जिनमें काम करने वालों को यह भी कहा गया कि वहां झंडे फहराये ही नहीं जा सकते।

मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या इस संबंध में गैर फौजी अफसरों को एक तरह की और फौजी अफसरों को दूसरी तरह की आज्ञा हुई थी या दोनों की आज्ञाएं एक तरह की थी। और जो कुछ जबलपुर में किया गया है, वहां के फौजी अफसरों ने स्वयं ही किया?

*__माननीय श्री हुसैन इमाम__ (बिहार: मुस्लिम): सभापति महोदय, क्या मैं केवल एक क्षण के लिए बीच में बोल सकता हूं जो प्रश्न उठाया गया है, बड़े ही महत्व का है कि आया यह सभा केवल विधान-निर्मातृ सभा के रूप में काम कर रही है या व्यवस्थापिका सत्ता के रूप में भी। 14 तारीख तक, हम लोगों के ऐसे किसी भी प्रश्न का विचार करने पर रोक थी, जो कानून निर्माण संबंधी कार्य कहा जा सकता हो। किंतु उस दिन की आधी रात से, भारत के शासन का समस्त अधिकार हाथ में लेने पर, अब यह उचित ही है कि इस सभा के सदस्यों को तत्काल सार्वजनिक महत्व के विषयों पर विचार किये जाने के लिए कार्य-स्थगन प्रस्ताव पेश करने का कुछ मौका दिया जाना चाहिए। मैं नहीं कहता कि व्यवस्थापिका सभा का सारा कार्य हमें अभी संभाल लेना चाहिए, जिसके अनुसार एक घंटे का समय प्रश्नोत्तरों के लिए और शेष समय कानून बनाने के काम में लगाया जाया करे। इसका अर्थ तो वास्तव में विधान बनाने के समय का बहुत बड़ा भाग हड़प लेने और इस प्रकार प्रस्तुत कार्य में विलम्ब करने का होगा। किंतु कार्य-स्थगन प्रस्ताव पेश कर सकने का अधिकार अति महत्वपूर्ण तथा मौलिक अधिकार है, जो लोकतंत्र का एक संरक्षण है, जिसकी हमें रक्षा करनी है और

[माननीय श्री हुसैन इमाम]

जिसे इन दिनों प्राप्त करने की हमारी बड़ी इच्छा है। इसलिए मेरा सुझाव है कि माननीय सभापति महोदय, केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभा (असेम्बली) के कार्य-स्थगन प्रस्ताव संबंधी नियम इस सभा में लागू करने के लिए स्वीकार कर लें, ताकि की यदि और जब आवश्यक हो, इस सभा में तत्काल महत्व के सार्वजनिक विषयों की चर्चा छेड़ी जा सके।

***पं. लक्ष्मीकांत मैत्र** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): श्रीमान् सभापति महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा तथा श्री बालकृष्ण शर्मा ने जो प्रश्न उठाया है, उसकी अवहेलना नहीं की जा सकती। इस संबंध में सभापति के आसन से जो बातें कही गई हैं, उन्हें मैं खूब समझता हूं। वास्तव में अभी यह कह सकना कठिन है कि आया यहां हम द्विविधि रूप में—भारतीय विधान-निर्मातृ परिषद् के सदस्यों के रूप में और भारतीय उपनिवेश की पार्लियामेंट (कानून बनाने वाली व्यवस्थापिका सभा) के सदस्यों के रूप में—कार्य कर रहे हैं। कुछ भी हो, पर यह सही है कि भारतीय विधान-परिषद् के सदस्यों के रूप में बैठक करते हुए भी समय-समय पर इस प्रकार के तत्काल महत्व के प्रश्नों का उठाना निश्चित है और उनका विचार संभवत: उस समय तक के लिए नहीं रोके रखा जा सकता है, जबकि हम भारतीय उपनिवेश की पार्लियामेंट के रूप में कार्य संभालेंगे। वास्तव में हम अभी भी यह नहीं जानते कि वह समय कब आने वाला है, जब हम उपनिवेश (डोमिनियन) की विशुद्ध पार्लियामेंट के रूप में, न कि विधान-निर्मातृ-परिषद् के रूप में कार्य करेंगे। कोई नियम तैयार नहीं किये गये हैं और हमें इस बात का कोई पता नहीं दिया गया है कि आया विधान-निर्माण का कार्य समाप्त करने से पहले हम व्यवस्थापिका सभा (लेजिस्लेटिव असेम्बली) या औपनिवेशिक पार्लियामेंट (डोमिनियन पार्लियामेंट) के रूप में कार्य कर भी सकेंगे। इसलिए जब तक हम नहीं जान पाते कि व्यवस्थापिका सभा के रूप में हम कब से कार्य कर सकेंगे, निश्चय ही तब तक हमें महत्व के ऐसे विषयों की जैसे कि इस समय सभा के सामने रखे गये हैं, चर्चा छेड़ने के मौके दिये जाने चाहियें।

अब रहा प्रश्न की उपयुक्तता के संबंध में; सो श्रीमान्, यद्यपि उसका संबंध विशुद्धत: शासन-व्यवस्था के काम से है, पर सभा को याद होगा कि झंडोत्तोलन समारोह, भारतीय राष्ट्रीय झंडे की स्वीकृति के निश्चय इस सभा में ही सर्वसम्मति से किये गये थे और झंडोत्तोलन समारोह एक सार्वजनिक उत्सव था जिसे यह

रूप स्वाधीन भारतीय उपनिवेश की सरकार के तत्वावधान में ही प्रदान किया गया था। इसलिए भारत-सरकार के इन आदेशों के उल्लंघन का प्रश्न, जिसकी सूचना मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा तथा श्री बालकृष्ण शर्मा ने दी है और जिसकी खबर समाचार-पत्रों में भी प्रकाशित हो चुकी है, निश्चय ही ऐसा विषय है, जिसकी चर्चा अवश्य होनी चाहिए। श्रीमान्, विधान-परिषद् के कार्य-विधि संबंधी नियमों द्वारा वर्जित होने के कारण भले ही इस समय कार्य-स्थगन का प्रस्ताव पेश करना संभव न हो, किंतु निश्चय ही व्यवस्थापिका सभा के रूप में हमारे कार्य न करने तक के लिये ऐसे नियम बना दिये जाने चाहियें या प्रथा कायम कर ली जानी चाहिये, ताकि ऐसे प्रश्नों की चर्चा व विचार किया जा सके, जैसे कि इस समय सभा में पेश किये गये हैं। श्रीमान्, आपके ही समान मैं भी यह अनुभव करता हूं कि ठीक विभाजक रेखा के संबंध में हमारी स्थिति स्पष्ट एवं निश्चित नहीं है, उस रेखा के संबंध में जो हमारी विधान-परिषद् के सदस्य तथा भारतीय उपनिवेश-पार्लियामेंट के सदस्य की हैसियतों के बीच पार्थक्य स्थापित करने के लिए खींची जा सके। किंतु ऐसा होने से पहले के समय तक के लिए, नियमानुसार ऐसा होने से पहले के लिए, कम से कम कोई प्रथा (कंवेन्शन) कायम कर लेना आवश्यक है।

माननीय प्रधान मंत्री से प्रार्थना की जा सकती है कि वे इस संबंध में वक्तव्य दें और सारी बातें स्पष्ट करें तथा यह भी बतायें कि इस मामले में किस प्रकार की कार्रवाई करने का उनका विचार है। तब तक के लिये यदि वे वक्तव्य दे देंगे, तो हम लोगों को संतोष हो जायेगा। मैं नहीं समझता कि पूर्ण रूप में कार्य-स्थगन प्रस्ताव पेश किये जाने और उस पर विचार होने की कोई आवश्यकता है। किंतु इससे पृथक हमारा यह निश्चित मत है कि इस प्रकार के महत्वपूर्ण मामले पर भारत के माननीय प्रधान मंत्री को ऐसा वक्तव्य देना ही चाहिये, जिससे कि हमें संतोष हो जाये। महत्व के इस विषय पर मुझे इतना ही कहना है।

*__श्री महावीर त्यागी__ (संयुक्त प्रांतः जनरल): श्रीमान्, व्यवस्था-संबंधी एक बात है।

*__श्री एच॰वी॰ कामत__ (मध्य प्रांत व बरारः जनरल): श्रीमान्, क्या आप इतनी कृपा करेंगे कि हमें बता दें कि हम औपनिवेशिक व्यवस्थापिका-सभा के रूप में यहां विशुद्धतः एवं पूर्णतः कब एकत्र होंगे?

*श्री महावीर त्यागी: श्रीमान्, व्यवस्था-संबंधी जो बात मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि हम दोनों ही देश की विधान-निर्मातृ सभा के रूप में और व्यवस्थापिका सभा के रूप में एक साथ काम नहीं कर सकते। ऐसी स्थिति बहुत ही परस्पर-भिन्न होगी, क्योंकि पार्लियामेंट के चर्चा संबंधी विषयों के अंतर्गत हमें सरकार की नीति पर बहस करनी पड़ सकती है और स्वाभाविक है कि सरकारी नीति पर बहस होने के लिए एक स्पीकर (अध्यक्ष) की आवश्यकता होती है, जो निष्पक्ष हो और सरकार का सदस्य भी हो। विधान-निर्मातृ सभा में हम सरकार के रूप में अथवा सरकारी पक्ष या गैर-सरकारी पक्ष के रूप में नहीं बैठते। इसमें तो हम सब व्यक्तिगत रूप में बैठते और विधान-निर्माण-कार्य में अपना श्रेष्ठतम योगदान देते हैं और हमारे विचार-विमर्श का सभापतित्व आप करते हैं। उस ओर के मेरे माननीय मित्र के सुझाव के अनुसार यदि हम यहां निंदा के प्रस्तावों तथा कार्य-स्थगन प्रस्तावों पर विचार करना आरंभ कर दें, तो हमें अलग-अलग गुटों या दलों के रूप में बैठना होगा, जिससे अनेक कठिनाइयां पैदा होंगी। हमें अपने-अपने दलों के पक्ष में मत देने होंगे और स्वभावत: हमें अपने को कितने ही अनुशासित पार्टियों में विभाजित करना होगा। इस प्रकार सारी नियमित चर्चा अस्त-व्यस्त हो जायेगी। इसलिए मेरा सुझाव है कि यदि हमें उक्त दोनों प्रकार के कार्य एक साथ ही करने हैं, तो यह सब हम उसी दिन एक ही निश्चित दिवस या स्थान पर नहीं कर सकते। हमें समय बांटना होगा और समय-विभाग रखना होगा। हमें घोषणा करनी होगी कि अमुक दिन हमारी बैठक विधान-सभा के रूप में होगी, ताकि हम आपके सभापतित्व के अधीन आसन ग्रहण कर सकें और जैसा कि अब तक करते आये हैं, कार्य सम्पन्न करें। इसी प्रकार यदि हम उपनिवेश की व्यवस्थापिका सभा के रूप में बैठें, तो हमें अपने इस इरादे की घोषणा करनी होगी और दल-गत गुटों के रूप में बैठना, अपने दलों के प्रति वफादार रहना तथा अपने दल के प्रस्तावों का समर्थन या विरोधी दलों के प्रस्तावों का विरोध करना होगा। परन्तु इस अवस्था में हमारे लिए यह जरूरी नहीं है कि हम मंत्रियों या अन्य लोगों द्वारा पेश किये जाने वाले प्रस्तावों का समर्थन ही करें। इसलिए मेरी अर्ज यह है कि उसी सभा में और उसी सभापतित्व में हम विधान-सभा तथा व्यवस्थापिका सभा दोनों का ही काम नहीं चला सकते।

*अध्यक्ष: श्री संतानम्!

*माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू (संयुक्त प्रांत: जनरल): सभापति महोदय, इस सभा के एक माननीय सदस्य ने व्यवस्था-संबंधी प्रश्न उठाया है।

***श्री के॰ संतानम्** (मद्रास: जनरल): मैं व्यवस्था-संबंधी प्रश्न पर ही बोल रहा हूं।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू:** मेरी अर्ज है कि पहले उस प्रश्न का निर्णय हो जाना चाहिये और उसके बाद ही किसी सदस्य को बोलने की अनुमति दी जाये।

***श्री के॰ संतानम्:** मैं व्यवस्था संबंधी प्रश्न पर ही बोल रहा हूं। इस प्रश्न में दो बातें हैं। इस परिषद् की हैसियत क्या है? इस हैसियत की व्याख्या करने के बाद यह निश्चय करना है कि उसे किस प्रकार काम करना चाहिये। तर्क किया गया है कि इस परिषद् की दो हैसियतें हैं, एक विधान-सभा (परिषद्) के रूप में और दूसरी व्यवस्थापिका सभा के रूप में। मेरा खुद का मत है कि उसकी सिर्फ एक हैसियत है और वह विधान-परिषद् की है। भारतीय स्वाधीनता-एक्ट के अनुसार कहा गया है कि उपनिवेश की व्यवस्थापिका सभा के अधिकार पहले-पहले उपनिवेश की विधान-परिषद् द्वारा प्रयोग में लाये जा सकेंगे। यही वह परिषद् है, एक अविभाज्य संपूर्ण सभा, जिसे औपनिवेशिक व्यवस्थापिका सभा के अधिकारों का प्रयोग करना है। अतएव इस सभा को दो रूपों में विभक्त करने का कोई अभिप्राय नहीं है, कोई मतलब नहीं है। मेरा विचार है कि यह कहना गैर-कानूनी है कि यह सभा आज तो विधान-परिषद् है और कल व्यवस्थापिका सभा है। यह एक ही संस्था है। सुविधा के लिए हम कुछ समय एक कार्य में और कुछ समय दूसरे कार्य में लगा सकते हैं और यदि आवश्यक हो तो हम नियमों की दो अवलियां भी रख सकते हैं। मैं नहीं समझता कि यह बात पैदा करना किसी के लिए जायज है कि चूंकि आज वह व्यवस्थापिका सभा नहीं है, इसलिए उसमें कोई प्रश्न विशेष नहीं उठाया जा सकता और कल वह केवल व्यवस्थापिका सभा ही है, इसलिए दूसरे प्रकार का प्रश्न नहीं उठाया जा सकता। हमें इसे एक संस्था के रूप में समझना चाहिये। इन दोनों कार्यो के नियंत्रण के लिए कार्य-विधि संबंधी नियम तैयार करने के लिए एक कमेटी बनाई जा सकती है। इसलिए मेरा सुझाव है कि इस सभा की हैसियत के संबंध में आज उचित समय से पूर्व कोई निर्णय न किया जाना चाहिये और न कोई व्यवस्था ही दी जानी चाहिये। वकीलों को इस विषय पर सावधानी से विचार करना चाहिये और हमें किसी बात से बंध न जाना चाहिये कि अनेक प्रकार की कठिनाइयां उपस्थित हो जायें।

***मि॰ तजम्मुल हुसैन** (बिहार: मुस्लिम): अब श्रीमान्, हम यहां विधानपरिषद् के सदस्यों के रूप में उपस्थित हैं। निस्संदेह 15 अगस्त को हमने यूनियन

[मि. तजम्मुल हुसैन]

पार्लियामेंट के सदस्यों के रूप में अधिकार ग्रहण किया था, किंतु आप द्वारा आज हम विधान-परिषद् के अधिवेशन में उपस्थित होने के लिए बुलाये गये थे, न कि यूनियन की पार्लियामेंट के अधिवेशन के लिए। श्रीमान्, हम लोग यहां इस सभा द्वारा निर्मित कार्य-विधि के नियमों (रूल्स आफ प्रोसिड्योर) और स्थायी आदेशों से अनुशासित होते हैं। अन्य कोई नियम नहीं है, जिससे कि हम अनुशासित हों, हम केवल इन्हीं नियमों से बंधे हैं। आज हम विधान-परिषद् के सदस्यों के रूप में बैठक कर रहे हैं, न कि पार्लियामेंट (व्यवस्थापिका सभा) के सदस्यों के रूप में; क्योंकि यदि हम पार्लियामेंट की बैठक कर रहे होते, तो भारत-सरकार के सब सदस्यों (मंत्रियों) को आज यहां पर उपस्थित होना था। श्रीमान्, फर्ज कीजिये कि सार्वजनिक शिक्षा के संबंध में एक अत्यधिक तत्काल महत्व के प्रश्न पर यहां विचार होता है, ऐसी दशा में आप शिक्षा-विभाग के इंचार्ज सदस्य की उपस्थिति यहां चाहेंगे ही, किंतु वे यहां उपस्थित नहीं हो सकते, क्योंकि वे विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं। इसलिए मेरी अर्ज है कि यद्यपि विचाराधीन विषय निःसंदेह बड़े महत्व का है और भारत के माननीय प्रधानमंत्री को उसके संबंध में कोई गंभीर कार्रवाई करनी है, किन्तु अपने नियमों के अनुसार इस विषय का विचार हमारी ताकत के बिल्कुल बाहर है। इसलिए व्यवस्था संबंधी मेरी बात यह है कि हम आज यहां विधान-परिषद् के सदस्यों के रूप में बैठक कर रहे हैं और इस रूप में हम स्वयं अपने नियमों से बंधे हैं और उपस्थित विषय का विचार नहीं कर सकते।

श्री आर॰वी॰ धुलेकर (संयुक्त प्रांतः जनरल): सभापति जी, जो प्वाइंट आफ आर्डर पेश किया गया है, उससे मैं सहमत नहीं हूं। 15 तारीख के बाद से यह कांस्टीट्यूएंट असेम्बली पूर्ण अधिकार रखती है। अब इसकी दो सूरतें नहीं हैं। 15 तारीख के पहले यह कांस्टीट्यूएंट असेम्बली थी और उस समय यह कहा जा सकता था कि इसे इस तरह के अधिकार नहीं हैं, जिनसे यह कानून बना सके या जो अधिकार उसके शासन का है उसमें रद्दोबदल कर सके। 15 तारीख से संपूर्ण अधिकार जो भारतवर्ष के शासन का है या विधान बनाने का है, वह सब सम्मिलित हैं और हम एक ही स्थान पर बैठकर उसे पूर्ण कर सकते हैं।

एक और भी सवाल उठाया गया है कि 15 तारीख को यह कहा गया था कि कांस्टीट्युएंट असेम्बली 20 तारीख के लिए बुलाई गयी है। मेरा कहना यह है कि संपूर्ण अधिकार कांस्टीट्युएंट असेम्बली को दिये गये हैं। इसमें कोई खास फर्क नहीं है। जिस वक्त हम यहां बैठेंगे उस वक्त हर समय हर एक काम

हम कर सकते हैं। यह बात दूसरी है कि सुविधा के लिए हम दस बजे से एक बजे तक विधान की बातें कर सकते हैं, उसके बाद तीन बजे से बैठकर पांच बजे तक हम शासन की बात कर सकते हैं, लेकिन हमें यह पूर्ण अधिकार प्राप्त है और हमारे इस कार्य में कोई कानूनी रुकावट नहीं है। मैं समझता हूं कि जो सज्जन यह कहते हैं कि हमारे मार्ग में कानूनी रुकावटें हैं, वे कानून के विरुद्ध काम करते हैं। उन्हें इंडेपेंडेंट एक्ट देखना चाहिए और यह भी देखना चाहिये कि जब कि शासन हमारे हाथ में है, हम ऐसा भी कर सकते हैं कि इस बार हम यहां से चले जायें और महीने दो महीने बाद बतौर कानून बनाने वाली समिति के यानी लेजिस्लेचर के बुलाये जायें। इसलिए प्वाइंट आफ आर्डर जो आपके सामने उपस्थित किया गया है, मेरा ख्याल है वह उचित नहीं है। हमारी केवल एक सूरत है कि हम विधान भी बनायेंगे और उसके साथ शासन भी करेंगे।

***श्री टी॰ प्रकाशम्** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, यह कहना गलत है कि विधान-परिषद् की इस सर्व-सत्ता-युक्त संस्था की हैसियत एक और अविभाज्य है। 15 अगस्त के बाद से यह संस्था न केवल विधान निर्मित करने के संबंध में, बल्कि सर्व-सत्ता-युक्त व्यवस्थापिका सभा के रूप में आवश्यक कार्य करने के लिए भी सर्व-सत्ता-संपन्न संस्था हो गयी। अब श्रीमान् मेरी कोई ऐसी बात है, जो सर्व-सत्ता युक्त व्यवस्थापिका सभा के सामने रखी जाने को है और जिसका विधान-निर्माण से बहुत ही निकट संबंध है। मेरे मतानुसार जब तक वे बातें व्यवस्थापिका सभा में तय नहीं हो जातीं विधान-निर्माण का यह कार्य भी आगे नहीं बढ़ सकता इसलिए इस सभा की हैसियत द्विविध होनी चाहिये, ताकि जब भी जरूरत हो, यह सभा विधान-निर्माण के संबंध का समय व्यर्थ नष्ट किये बिना एक या दो महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार करने के लिए अपने को एक सर्व सत्ता-युक्त व्यवस्थापिका सभा के रूप में परिवर्तित कर सके और उसके बाद विधान निर्मित करने के लिए फिर अपने को एक विधान-परिषद् के रूप में बदल सके। यही सही तथा विधानानुकूल स्थिति है। अतएव यह न समझा जाना चाहिये कि इसकी एक पूर्ण एवं अविभाज्य हैसियत है और जो भी अन्य मामले यहां उपस्थित किये जायें, उनकी परवाह किये बिना इसे विधान तैयार करने में ही न लगा रहना चाहिये।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि इस बात पर हम लोग काफी विचार कर चुके। वस्तुत: दो प्रश्न उठाये गये हैं; इनमें से एक इस सभा की, जैसी कि वह आज है, हैसियत के संबंध में है और दूसरा उन घटनाओं के संबंध में है, जो 14-15

[अध्यक्ष]

को घटी हैं। अब मैं सभा के नेता से अनुरोध करूंगा कि इन दोनों ही प्रश्नों पर या उनमें से किसी एक प्रश्न पर जो भी वक्तव्य वे देना चाहते हों, देवें।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्त प्रांत: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह निश्चय नहीं कर पाया हूं कि इन प्रश्नों में से किसे हमें पहले लेना चाहिये, मुझे एक अड़चन रही है। जो कुछ भी इस सभा में कहा गया है, उसे मैं बहुत ध्यान से सुनने की कोशिश करता रहा हूं, पर यदि मोटे तौर पर कहा जाये, तो जो कुछ भी कहा गया है, उसका मैंने केवल एक चौथाई ही सुना है। मैं नहीं जानता कि इस भवन में शब्दों के ठीक सुनाई पड़ने के लिए जो व्यवस्था थी उसमें कोई अंतर पड़ा है या पिछले कई दिनों के हमारे अनुभवों के कारण हमारी आवाजें ही बदल गई हैं या कोई ओर बात हुई है। या तो लोग गर्ज कर बोले हैं या फुसफुसा कर। गर्जन समझ सकने में भी मुझे कठिनाई हुई है और फुसफुसाहट समझने में भी।

जो वैधानिक प्रश्न उठाया गया है, उसे यदि मैं एक विशेषज्ञ की भांति नहीं बल्कि न्यूनाधिक रूप में एक साधारण आदमी की भांति लूं, तो मुझे यह बिल्कुल साफ मालूम देता है कि यह सभा स्पष्टत: एक सर्व-सत्ता-युक्त सभा है और जो भी चाहे कर सकती है, किंतु यह मानते हुए कि सभा केवल यह कार्य करती है जिन्हें करने का उसने खुद निश्चय किया है। वह खुद अपने फैसले बदल सकती है। वह खुद अपने कायदे (नियम) बदल सकती है, पर जब तक वे नियम कायम हैं, वह खुद अपने नियमों का पालन करती है। यदि वह चाहे, तो उन्हें भी बदल सकती है। इसलिए इस बात में कोई संदेह नहीं है कि यदि वह चाहे तो कल से या और किसी समय से, इस सभा को, अपना काम एक व्यवस्थापिका सभा के रूप में चला सकने का अधिकार है, किंतु ऐसा करने से पहले उसे इसका निश्चय करना होगा और तदनुसार अपने नियम बनाने होंगे। इसलिए मैं अर्ज करूंगा कि हमारे लिए ठीक रास्ता यह है कि सभापति महोदय एक छोटी-सी कमेटी नियुक्त कर दें, जो दो-तीन दिन में हमें अपनी रिपोर्ट दे सकती है कि इस मध्यवर्ती काल के लिए हमें क्या नियम रखने चाहियें। जो हमारा वर्तमान स्वरूप है, उस रूप में हमारी एक व्यवस्थापिका सभा की भांति कार्य करने में एक स्पष्ट कठिनाई है। उदाहरणार्थ, प्रश्न किये जा सकते हैं, जिनका उत्तर संबंधित विभागों के मंत्रियों को देने होंगे। श्रीमान्, आप स्वयं सरकार के एक सदस्य हैं; और यदि खाद्य या कृषि-विभाग से संबंध रखने वाला कोई प्रश्न किया जाये, तो

क्या उसका उत्तर अध्यक्ष को देना होगा या किसे देना होगा? एक कठिनाई पैदा होती है। अनेक मंत्री इस सभा के सदस्य नहीं हैं। मैं समझता हूं कि मौजूदा नियमों के अनुसार भी वे इस सभा में उपस्थित हो सकेंगे और बिना मत दिये बोल सकेंगे, किंतु एक व्यवस्थापिका सभा के रूप में हमारे काम कर सकने से पहले, इन सारी बातों पर विचार करना और उन्हें साफ करना होगा। इसमें संदेह नहीं कि हम जो भी चाहें, नियम बना सकते हैं। यदि हमें पसंद हो तो हम मंत्रियों से यहां आने और इस सभा के सदस्यों के रूप में काम करने का अनुरोध कर सकते हैं। इसलिए मेरी अर्ज है कि सभापति महोदय को एक कमेटी नियुक्त करनी ही चाहिये जो 3 दिन में हमें रिपोर्ट दे सके कि इस मध्यवर्ती काल में हमें किस विधि से कार्य करना चाहिये। स्पष्ट है कि अभी हम विधान-परिषद् के रूप में बैठक कर रहे हैं, यद्यपि दूसरे रूप में भी हम बैठक कर सकते हैं। यह साफ है कि यदि इस विधान-परिषद् के सामने उसके इस रूप में करने के लिए काम न होता, और फर्ज कीजिये कि यूनियन विधान के सिद्धांत निर्धारित करने का आरंभिक कार्य हम दो-तीन सप्ताह पहले समाप्त कर चुके होते, तो आज हमारी बैठक न होती। उस कार्य विशेष के लिए हमने 14 की रात व 15 की सुबह बैठक की होती, और विधान-परिषद् का अगला अधिवेशन सितम्बर या अक्टूबर तक हम स्थगित रखते। अतएव हम इसलिए बैठक कर रहे हैं, क्योंकि दो सप्ताह पहले हम अपना कार्य नहीं समाप्त कर पाये थे और अब हम उसे अगले दो हफ्तों में या जो भी समय लगे, समाप्त करना चाहते हैं, ताकि वास्तविक विधान सविस्तार पूरा किया जा सके और तब हम किसी समय, संभवतः अक्टूबर में उस विधान को अंतिम रूप में पास करने के लिए बैठक कर सकें। इस प्रकार इस क्षण इस सभा से इत्तफाकिया एक व्यवस्थापिका सभा के रूप में काम लेने से हमारे सामने अनेक प्रकार की कठिनाइयां पैदा हो जायेंगी। लेकिन यदि सरकार के सदस्यों से सूचना प्राप्त करने या अन्य किसी बात के संबंध में सभा यही पसंद करती है तो स्वभावतः सरकार के सदस्य वह सूचना प्रदान करने में प्रसन्न होंगे। बात यह है कि हर चीज कायदे से की जानी चाहिये। इसलिए, श्रीमान्, मेरी अर्ज है कि सबसे अच्छा रास्ता यह होगा कि आप एक कमेटी नियुक्त कर दें, जो दो-तीन दिन में इस संबंध में अपनी रिपोर्ट दाखिल करे कि हमें किस तरीके से काम करना चाहिये और यदि जरूरत हुई तो उसके लिए हम फिर अपने नियम भी बदल लेंगे।

अब कुछ सदस्यों द्वारा किये गये प्रश्नों के संबंध में स्थिति यह है कि उनमें कुछ को तो मैं बिल्कुल ही नहीं समझ पाया। सेठ गोविंददास ने कुछ कहा था, किंतु सिवाय इसके कि उन्होंने जबलपुर के संबंध में कुछ कहा था, मैं यह कुछ भी न समझ पाया कि जबलपुर में क्या हुआ। मैंने उनकी बात सुनने की कोशिश

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

की, पर मुझे दु:ख है, कि शायद अपनी ही श्रवण-शक्ति के कारण मैं न सुन सका। इसी प्रकार दूसरे सदस्य की बात भी मैं आसानी से नहीं सुन सका। किंतु संक्षेप में मैं यह कहूंगा कि साफ है कि सभा के ही समान सरकार भी इस बात को अत्यधिक से अत्यधिक महत्व देती है कि राष्ट्रीय झंडे का सम्मान होना चाहिये और उसके किसी भी असम्मान की, वह चाहे जहां हुआ हो, अवश्य जांच होनी चाहिये तथा उस पर जरूरी कार्रवाई की जानी चाहिये। आगरे के किले में हुई किसी घटना के संबंध में जिन दो-तीन बातों की सूचना दी गई है, उनकी जांच की जा रही है। मुझे विश्वास है कि संयुक्त प्रांतीय सरकार.....

***श्री बालकृष्ण शर्मा:** क्या मैं जान सकता हूं कि 'सभा' के माननीय नेता को इन्हीं घटनाओं के संबंध में भेजे गये मेरे तार मिले थे?

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू:** मैं यह तुरंत नहीं बता सकता, क्योंकि पिछले चार या पांच दिनों में मुझे 7,000 तार मिले हैं और फौरन यह बता सकना कुछ कठिन है कि मुझे वह तार मिला था या नहीं। एक व्यक्ति के लिए या कई व्यक्तियों के गुट के लिए भी उन्हें छांटना या तेजी से पढ़ भी सकना वस्तुत: असंभव है। हम उनका काम पूरी तेजी से कर रहे हैं।

उन घटनाओं के संबंध में हम संयुक्त प्रांतीय सरकार से जांच कर रहे हैं और मुझे पक्का मालूम है कि हमारा रक्षा-विभाग भी जांच कर रहा है और हम आवश्यक कार्रवाई करेंगे।

जबलपुर के संबंध में मुझे कुछ भी मालूम नहीं है। यदि सेठ गोविंददास वहां की बातों की सूचना मुझे अलग देंगे, तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी और हम उस मामले के संबंध में भी जांच व जरूरी कार्रवाई करेंगे।

***एक माननीय सदस्य:** हैदराबाद का क्या हुआ?

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू:** मैं समझता हूं कि हैदराबाद के मामले में हमारे रियासती विभाग ने तुरंत जांच की और हैदराबाद सरकार ने इस बात से साफ इन्कार किया कि राष्ट्रीय झंडे का कोई अपमान हुआ है। उसने यह भी कहा कि राष्ट्रीय झंडे को उसने सर्वत्र फहराया जाने दिया है और निश्चय ही उसकी जानकारी में ऐसी कोई घटना नहीं घटी।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि परिषद् की हैसियत तथा कार्य का प्रश्न महत्वपूर्ण है और हमें उन नियमों का जो हमने यहां के कार्य-संचालन के निमित्त बनाये हैं तथा भारत-शासन-विधान में किये गये अनुकूल परिवर्तनों (अनुकूलन) का तथा स्वाधीनता-कानून का भी विचार करना है। इन सब चीजों का विचार करते हुए हमें मालूम करना है कि आया हम वैभागिक रूप में दो खंडों में काम कर सकते हैं या हमें एक ही संस्था के रूप में काम करना चाहिये। ये ऐसे प्रश्न हैं जिन पर विचार किया जाना आवश्यक है और मेरा ख्याल है कि सभा के नेता ने जो यह सुझाव रखा है कि इन सबका विचार करने तथा हमारे पथ-प्रदर्शन के नियमों के संबंध में सुझाव देने के लिए एक छोटी-सी उप-कमेटी नियुक्त कर दी जानी चाहिये, वह एक ऐसा सुझाव है जो इस सभा को स्वीकार होना चाहिये और मैं जानना चाहता हूं कि क्या सभा ऐसा किया जाना पसंद करेगी।

***माननीय सदस्यः** हां।

***अध्यक्षः** चूंकि सभा राजी है, इसलिए उप-कमेटी के सदस्यों के नामों की घोषणा मैं आज दिन में कर दूंगा और कमेटी से हम अनुरोध करेंगे कि वह यथासंभव शीघ्र अपनी रिपोर्ट दे दे।

अब हम विधान-परिषद् के रूप में अपना कार्य, जिसके लिए कि आज सवेरे यह बैठक हुई है, शुरू करेंगे। मैं श्री गोपालस्वामी आयंगर से अनुरोध करता हूं कि वे अपना प्रस्ताव पेश करें।

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसाः जनरल): सभा के नेता के वक्तव्य से उत्पन्न हुई एक बात, अर्थात् जिस कमेटी की तजवीज उन्होंने की है, उसके विचारणीय विषयों के संबंध में एक बात मैं कहना चाहता हूं। उन्होंने ठीक ही तजवीज की है कि जो मामले कमेटी के विचारार्थ सुपुर्द किये जायें, वे कार्य-विधि के ही संबंध के होने चाहियें। मैं समझता हूं कि कुछ अन्य प्रश्न भी हैं, जो उप-कमेटी के विचारार्थ सुपुर्द किये जाने चाहियें। इस विधान-परिषद् में 'मोघाबंदी (प्रांतों) तथा राज्यों के भी प्रतिनिधि हैं। इसलिए इन दोनों के ही प्रतिनिधि साथ-साथ कार्य करते हैं। अब श्रीमान्, यदि केवल कार्य-विधि का ही प्रश्न इस कमेटी के विचारार्थ सुपुर्द किया जाता है, तो राज्य-प्रतिनिधियों के कार्य करने तथा उनके मतदान के संबंध में कुछ कठिनाइयां हैं। मैं एक उदाहरण देता हूं। मान लीजिये कि हमें बजट पास करना है। जहां तक मालूम है, राज्यों ने केवल तीन विषय संघ-शासन के सुपुर्द किये हैं, मैं नहीं जानता यदि अन्य विषय भी सुपुर्द किये गये हों। यदि

[श्री विश्वनाथ दास]

ऐसी बात है तो बहुत अच्छा है, पर जहां तक समाचार-पत्रों की खबरों से मालूम हुआ है—क्योंकि अपने नेताओं से हमें इस संबंध में कुछ भी मालूम नहीं हुआ—उन्होंने तीन विषय ही सौंपे हैं। तो क्या इन तीन विषयों के अलावा अन्य विषयों के संबंध में कानून बनाते वक्त इन लोगों को विचार करने या मत देने का अधिकार होगा? इन अन्य विषयों के संबंध में, जो उक्त तीन विषयों से पृथक होंगे, राज्य-प्रतिनिधियों की स्थिति क्या होगी? ऐसी परिस्थिति में आपसे व सभा के नेता से मेरी तजवीज है कि उक्त कमेटी के विचारणीय विषय बढ़ा दिये जायें, ताकि वह (कमेटी) न केवल कार्य-विधि के संबंध में बल्कि कार्य तथा अन्य साथ के मामलों के संबंध में अपनी सिफारिशें पेश करे और स्थिति का पूरा चित्र हमारे सामने आ सके।

***अध्यक्षः** इस कमेटी के विचारणीय विषय बताने में मैं इस बात का ख्याल रखूंगा।

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, मुझे एक छोटी-सी बात कहने की इजाजत दीजिये। मैं इस बात की ओर आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं कि सदस्यों की मेजों पर न तो 14 की रात के आपके अभिभाषण की प्रतियां, न 15 के सवेरे के गवर्नर-जनरल के भाषण की प्रतियां और न उसके उत्तर में आपके भाषण की प्रतियां रखी गई हैं और न अब तक वे हम लोगों को प्राप्त ही हुई हैं। क्या आप कृपा करके इस संबंध में कार्रवाई करेंगे?

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि अब हम यूनियन पावर्स कमेटी का विचार शुरू करें।

***श्री शांतनु कुमार दास** (उड़ीसाः जनरल): श्रीमान्, क्या मैं आपके द्वारा इस सभा के नेता से मालूम कर सकता हूं कि पाकिस्तान सरकार ने उन लोगों के खिलाफ क्या कार्रवाई की है, जिन्होंने पाकिस्तान में हमारे राष्ट्रीय झंडे का अपमान किया है?

***अध्यक्षः** अब हम कार्य-सूची के अनुसार कार्य आरंभ करेंगे। यदि अन्य कोई प्रश्न है तो मैं समझता हूं कि उचित समय पर उनका विचार किया जा सकता है। श्री गोपालस्वामी आयंगर!

संघ अधिकार समिति की रिपोर्ट

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव रखना चाहता हूं कि निश्चय किया जाये कि:

''विधान-परिषद् के 25 जनवरी, 1947 के निश्चय के अनुसार नियुक्त कमेटी द्वारा यूनियन के अधिकारों के क्षेत्र के संबंध में दाखिल की गयी दूसरी रिपोर्ट + का विचार करने के लिए परिषद् कार्यारम्भ करती है।''

श्रीमान्, माननीय सदस्यों में इस रिपोर्ट की प्रतियां पहले ही वितरित की जा चुकी हैं। किंतु सभा के सामने यह रिपोर्ट रखते हुए मैं कुछ शब्द कहना चाहूंगा, जो पहले इस विषय में होंगे कि सभा के सामने यह रिपोर्ट कैसे पेश होने को आई।

सभा को याद होगा कि काफी अरसा गुजरा, 25 जनवरी सन् 1947 को इस कमेटी का जन्म श्री राजगोपालाचार्य द्वारा जिन्हें अब इस उपनिवेश (डोमिनियन) के एक अत्यधिक महत्वपूर्ण प्रांत का गवर्नर देखकर हम सबको गर्व है, पेश किये गये एक प्रस्ताव से हुआ था। उस प्रस्ताव में....।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रांत: मुस्लिम): श्रीमान्, व्यवस्था संबंधी एक बात है। मैंने एक संशोधन की सूचना दी है कि इस रिपोर्ट पर विचार न किया जाये।

***अध्यक्ष:** पहले प्रस्ताव पेश होने दीजिये।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, जिस समय उक्त प्रस्ताव स्वीकार किया गया था, हम मंत्रि-मिशन योजना क्रियान्वित करने का यत्न कर रहे थे। जैसा कि सभा को याद होगा, इस योजना द्वारा प्रांतों व राज्यों के एक संघ-शासन और सीमित संख्या में स्थूल रूप में वर्णित कुछ विषयों को संघ के अधीन रखने की व्यवस्था की गई थी तथा दोनों वस्तु एवं विधि (the substance

---

+परिशिष्ट

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

and the procedure) संबंधी विभिन्न अन्य विवरण की, जिन्हें कि देश के दोनों बड़े दलों के नेता पहले ही स्वीकार कर चुके थे, व्यवस्था की गई थी। अब एक महत्वपूर्ण कार्य जिसे इस सभा को उस योजना के सिलसिले में निबटाना था, उस योजना के अनुसार केन्द्र को सौंपे गये विषयों के क्षेत्र के संबंध में था। जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूं, इन विषयों का जिक्र बहुत ही स्थूल रूप में किया गया था। उनमें ये चीजें थी–रक्षा व्यवस्था, पर-राष्ट्र विषय और यातायातादि (कम्युनिकेशंस) तथा इन विषयों के लिए आवश्यक अर्थव्यवस्था। उस योजना के अंतर्गत स्वीकार की गई बातों में से एक यह भी थी कि दोनों ही प्रांतों व केन्द्र, संघ-शासन, तथा यदि सभा का निश्चय गुट (ग्रुप) कायम करने का होता, तो इन गुटों के विधान बनाये जाने को थे। प्रांतों तथा गुटों के विधान खंडों (सेक्शनों) द्वारा बनाये जाने को थे, क्योंकि आरंभिक बैठक के बाद विधान-परिषद् इन्हीं खंडों (सेक्शन्स) में विभक्त हो जाने वाली थी। यह विधान तैयार करने का काम संभालने से पहले यह आवश्यक समझा गया कि केन्द्र के अधिकार-क्षेत्र की परिधि का भी–यदि मुझे इस शब्द का प्रयोग करने की अनुमति हो–कुछ निश्चय कर दिया जाना चाहिये अर्थात् उन विषयों का निश्चय कर दिया जाना चाहिये जो संघ-शासन के क्षेत्र के भीतर रहेंगे, ताकि शेष विषयों के लिए आवश्यक व्यवस्था प्रांतों अथवा, यदि गुट भी कायम किये जायें, तो प्रांतों तथा गुटों के विधानों के अंतर्गत कर ली जाये। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए निश्चय किया गया था कि पहले हमें इन चार स्थूल श्रेणियों के अंदर पड़ने वाले वैयक्तिक विषयों की जांच का काम हाथ में लेना चाहिये। इस अभिप्राय से हमने एक कमेटी नियुक्त की, जो इस संबंध में जांच करे और सभा को अपनी रिपोर्ट दे। इस कमेटी की बैठकें हुईं और मेरा ख्याल है कि 17 अप्रैल को उसने अपनी रिपोर्ट दे दी। 28 अप्रैल को यह रिपोर्ट मैंने सभा के सामने पेश की। इसे पेश करते हुए मैंने कहा था कि सभा द्वारा रिपोर्ट पर विचार किये जाने का कोई प्रस्ताव मैं नहीं रख रहा हूं। इसका कारण यह था कि उस समय की स्थिति इतनी अनिश्चित थी कि उस रिपोर्ट पर विचार करके जो कुछ ही सप्ताहों में असामयिक हो जाने को थी, हम इस सभा का काफी समय व्यर्थ ही नष्ट करते। वास्तव में उस समय एक बड़ा ही भाग्य-निर्णायक निश्चय किया जाने वाला था और हम नहीं जानते थे कि इस निश्चय की रूप-रेखा कैसी रखी जाने को है, आया भारत अखंड रखा जाने को है या उसका विभाजन होने को है और यदि ऐसा भी है, तो इनकी तफसील की और क्या बातें रखी जाने को हैं। इन परिस्थितियों में मैंने सुझाया

कि सभा को उस समय इस कमेटी की पहली रिपोर्ट पर विचार करने की जरूरत नहीं है। मैंने यह भी बताया कि कमेटी को अपनी बैठक फिर करने और उन सिफारिशों पर जो उसने अपनी पहली रिपोर्ट में की हैं, उन राजनीतिक निर्णयों की दृष्टि से जो शीघ्र ही होने को है, फिर से विचार करने की आवश्यकता है। जैसा कि इस सभा को विदित है, वह निर्णय 3 जून को किया गया और प्राय: उसी तारीख से उस पर अमल भी शुरू हो गया और उसके बाद पार्लियामेंट ने भारतीय स्वाधीनता कानून भी पास कर दिया और श्रीमान्, इस कानून ने हमें 15 अगस्त से पहले के भारत के स्थान में दो स्वाधीन उपनिवेश (डोमिनियन्स) प्रदान किये हैं।

अब हमारा एक स्वाधीन उपनिवेश (डोमिनियन) है। 'हम स्वाधीनता के क्षेत्र में प्रविष्ट हुए हैं' इन शब्दों का प्रयोग मैं जानबूझकर कर रहा हूं, क्योंकि मैं नहीं समझता कि हमने जाकर उसे छीना है। वह वहां मौजूद था। हम प्रविष्ट हुये और कहा कि हमने शासन-सत्ता संभाल ली। और अब हमारे पास काम देने योग्य एक विधान मौजूद है, जो यदि मैं ऐसा कह सकूं, भारतीय स्वाधीनता कानून की व्यवस्थाओं तथा भारतीय स्वाधीनता कानून के अनुसार आवश्यक रूप में परिवर्तित भारत शासन विधान 1935 की व्यवस्थाओं का समन्वय है।

श्रीमान्, यह वर्तमान वस्तुस्थिति है। 28 अप्रैल के बाद यूनियन पावर्स कमेटी की बैठक फिर ऐसे समय हुई, जब भारतीय स्वाधीनता बिल तक पार्लियामेंट में पेश नहीं किया गया था। बेशक, हम जानते थे कि इस प्रकार का बिल पेश किया जाने वाला है, किंतु जिस समय हमने अपनी दूसरी रिपोर्ट तय की, उस समय हमें इस बात का पूरा निश्चय नहीं था कि अंततोगत्वा उस कानून की व्यवस्थाओं का स्वरूप क्या होगा। तो भी, हमने वह रिपोर्ट तैयार की। उसके बाद यह स्वाधीनता कानून बना। हमें जो अब प्राप्त है, एक डोमिनियन (स्वाधीन उपनिवेश) है, यदि मैं उसे 'डोमिनियन' कह सकूं, क्योंकि भारत शासन विधान के परिवर्तनों द्वारा उसे यही नाम दिया गया है। किंतु मुझे इसका पूरा निश्चय नहीं है, क्योंकि उस असाधारण गजट (गजट एक्स्ट्रा आर्डिनरी) की प्रतियां जो 14 की रात या 15 की सवेरे प्रकाशित हुआ समझा जाता है, अभी भी हमें मिलने को हैं, किंतु श्रीमान्, मैं समझता हूं कि उक्त परिवर्तनों द्वारा इस डोमिनियन का उल्लेख एक यूनियन के तौर पर किया गया है, जिसमें पहले के ब्रिटिश भारत के वे प्रांत शामिल हैं जो पाकिस्तान के नये डोमिनियन (स्वाधीन उपनिवेश) में सम्मिलित नहीं हुये हैं। इनमें वे देशी राज्य भी हैं, जो उपनिवेश में सम्मिलित हो गये हैं। जब मैंने 'प्रांतों' कहा तो मुझे दो प्रकार के प्रांतों का उल्लेख करना चाहिये था, जो कि इस देश में पाये जाते हैं अर्थात् गवर्नर के प्रांत और चीफ-कमिश्नर के प्रांत।

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

इनके अतिरिक्त अन्य क्षेत्र भी हो सकते हैं जो उपनिवेश (डोमिनियन) में सम्मिलित किये जा सकते हैं। इस प्रकार वास्तव में अब इस देश में एक संघीय यूनियन (फेडरल यूनियन) है और इस संघीय यूनियन की शासन व्यवस्था, भारतीय स्वाधीनता कानून तथा संशोधित भारत शासन विधान की व्यवस्थाओं के अनुसार करनी होगी। अब श्रीमान्, यूनियन पावर्स कमेटी की इस रिपोर्ट में हमें संघीय यूनियन से, जो अब विद्यमान है, कुछ नहीं करना है। भविष्य में हम एक संघ-शासन स्थापित करने का यत्न कर रहे हैं और इस बात का विचार करने के लिए कि यह संघ-शासन क्या होना चाहिये, हमें उन अनिवार्य तत्वों का ख्याल रखना है जिनकी कि व्यवस्था एक संघ-विधान में करनी होती है। और संघ-विधान का एक अनिवार्य सिद्धांत यह है कि उसमें सर्व-सत्ता को इस विधि से विभाजित कर सकने के उपाय की व्यवस्था रहनी चाहिये कि केन्द्र की सरकार तथा यूनिटों की सरकारों में से प्रत्येक, एक निश्चित क्षेत्र के अन्दर सम-सूत्रित (को-आर्डिनेट) तथा स्वाधीन हो। सभा की सूचना के लिए मैं यहां संघ-शासन (फेडरेशन) की एक रूढ़िवादी परिभाषा उद्धृत कर सकता हूं, जिससे विदित होता है कि राजनीति-विज्ञान के विचारकों ने, उन लोगों ने जिन्होंने संघ-विधान तैयार करने में अपना समय लगाया है, संघ-शासन का क्या स्वरूप अपने मन में सोचा है। उदाहरणार्थ यहां मैं एक उदाहरण उपस्थित करता हूं, जो आस्ट्रेलियन विधान के संबंध में रायल कमीशन की 1929 की रिपोर्ट से लिया गया है। इस परिभाषा के लिये सर राबर्ट गैर्रन उत्तरदायी हैं, जिनका नाम संघ-विधानों के इतिहास में प्रसिद्ध हो चुका है। उन्होंने संघ-शासन (फेडरेशन) की व्याख्या यों की है-''शासन-व्यवस्था का एक स्वरूप, जिसमें सर्व-सत्ता (सावरेण्टी) अथवा राजनीतिक सत्ता केन्द्रीय तथा स्थानीय सरकारों के बीच इस तरह बंटी होती है कि उनमें से हरेक स्वयं अपने क्षेत्र में दूसरी से स्वाधीन है।'' श्रीमान्, इसे मैं रूढ़िवादी परिभाषा कहता हूं, क्योंकि यदि हम संसार की ओर देखें और उन संघ-विधानों की ओर देखें जो वस्तुतः विद्यमान हैं, तो मुझे करीब-करीब निश्चय है कि उनमें से एक भी ऐसा न निकलेगा जो इस परिभाषा की शर्तों के ठीक अनुरूप हो। केन्द्र तथा यूनिटों के बीच की रेखा इतने निश्चित रूप में नहीं स्थिर की गई है, जितना कि इस परिभाषा के अनुरूप होना चाहिये था। केन्द्र और यूनिटों का संबंध है। ऐसे मामले भी हैं जिनमें यूनिटों को केन्द्र पर निर्भर होना पड़ता है। संकट-काल के लिये संघ-शासन में नियंत्रण के अधिकार अवस्थित हैं, जब संघ-शासन यूनिटों के अधिकार क्षेत्र के ऊपर आरूढ़

हो सकता है और स्थिति को अपने हाथ में ले सकता है। इस प्रकार कार्य करने की वह पूर्ण स्वाधीनता, जिसका उल्लेख उक्त परिभाषा में किया गया है, व्यवहार रूप में नहीं आ पाई है। किंतु संघ-शासनों के इतिहास की एक खास बात है, जो यह है—हमारे लिये क्षेत्र की सीमा निर्धारित कर देना आवश्यक है जिसके कि अंदर एक ओर केन्द्र और दूसरी ओर यूनिट सर्व-सत्ता पूर्ण अधिकारों का प्रयोग कर सकें। वस्तुतः यही बात उन सब प्रयत्नों के पृष्ठ में रही है जो उन विषयों की, जो केन्द्र को सौंपे जाने चाहियें तथा उनकी, जो यूनिटों को सौंपे जाने चाहियें, या इस बात का विचार करके कि शेष अधिकार (रेजिडुअरी पावर्स) अन्ततोगत्वा कहां अवस्थित किये जाएं जो विषय यूनिटों द्वारा अपने लिये रख लिये जाने चाहियें, उनकी सीमा निश्चित करने के लिये विभिन्न संघ-शासनों में किये गये हैं।

अब, श्रीमान्, अपने देश के संबंध में हमारे सामने जो समस्यायें हैं, वे इतिहास में अन्य संघ-शासनों के सामने नहीं रही हैं। हमने संघ-शासन में वे क्षेत्र सम्मिलित करने का निश्चय किया है, जो 15 अगस्त से पहले ब्रिटिश सर्व-सत्ता के अधीन थे तथा वे क्षेत्र भी जो सिद्धांत रूप में स्वाधीन थे पर जो साथ ही ब्रिटिश ताज के अधीन थे। इन दो प्रकार के क्षेत्रों को एक संघ-शासन के अधीन करने में हमारे सामने वे समस्यायें उत्पन्न हैं, जो अन्यत्र संघीय-विधान निर्मित करने वालों के सामने उत्पन्न नहीं हुई थीं। इसके अलावा एक बात और है। वह यह कि प्रांतों की शासन व्यवस्था ऐसी योजना के अनुरूप करनी है जो राजतंत्रात्मक न हो, और देशी राज्यों को इस संघ-शासन में एक राजतंत्रात्मक रूप में सम्मिलित होना तथा उसमें रहना है। किन्तु मैं उन लोगों में से हूं जिनका ख्याल है कि लोकतंत्रात्मक शासन-व्यवस्था के तत्व पर इस प्रकार के अन्तर से, जिसका कि मैंने जिक्र किया है, कोई असर नहीं पड़ता, चाहे वह शासन-व्यवस्था का राजतंत्रात्मक रूप हो अथवा लोकतंत्रात्मक रूप हो। जहां तक मैं इस सभा का मत समझ पाया हूं, मैं समझता हूं कि इस सभा में हम लोग जिस बात से बंधे हैं यह है कि सरकार ऐसी होनी चाहिये जो व्यवस्थापक सभा के प्रति उत्तरदायी हो। यह उत्तरदायी शासन आप एक राजतंत्रात्मक प्रणाली के अधीन भी प्राप्त कर सकते हैं और एक प्रजातंत्रात्मक प्रणाली के अधीन भी। स्थिति का सार यह होने पर हम उन बेकार की कठिनाइयों के सहज ही पार लग सकते हैं, जो इस देश में इन दो प्रकार के क्षेत्रों में दो तरह की प्रणालियां मौजूद होने के कारण उठ रही हैं और साथ ही ऐसा संघीय-विधान विकसित कर सकते हैं जिसके द्वारा उक्त दोनों प्रकार के क्षेत्रों में शासन-व्यवस्था संबंधी कार्रवाइयों में सामंजस्य-पूर्ण तारतम्य स्थापित हो सके।

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

श्रीमान्, अपना विधान तैयार करने में हमने इस बात का बराबर ध्यान रखा है। यूनियन के अधिकारों से संबंध रखने वाली इस कमेटी में भी हमने इसी सिद्धांत का बराबर ध्यान रखा है।

हमें जो कार्य करने को कहा गया है, उसकी एक-दो और विचित्रताओं की ओर सभा का ध्यान अब मुझे आकृष्ट करने दीजिये। जो पहले ब्रिटिश-भारतीय प्रान्त थे उनमें तथा देशी राज्यों में, केन्द्र को हम जिस मात्रा में अधिकार-क्षेत्र सौंपेंगे उसके विषय में हमारे कुछ अन्तर रखने का सिद्धांत किसी हद तक स्वीकार किया जा चुका है। यह माना जा चुका है कि राज्यों को अपना अधिकार-क्षेत्र समर्पित करना तथा संघ में सम्मिलित होना है। यह भी माना जाता है कि संघ के साथ उनका यह सम्मेलन कम-से-कम कुछ निश्‍चित विषयों के संबंध में होना चाहिये तथा अन्य संघीय विषयों के संबंध में उनका सम्मेलन उनकी मर्जी से होना चाहिये। मुझे यह कह सकने में प्रसन्नता है कि देशी राज्यों के साधिकार वैधानिक परामर्शदाताओं ने तथा देशी राज्यों की प्रजा के प्रतिनिधियों ने भी, यदि संभव हो तो, इस बात से राजी होने की बुद्धिमत्ता साधारणतः स्वीकार कर ली है कि केवल रक्षा-व्यवस्था, पर-राष्ट्र संबंध तथा यातायातादि (कम्यूनिकेशन्स) के अंदर आने वाले विषय केन्द्र को सौंपने की अपेक्षा, उसे सौंपे जाने वाले विषयों का क्षेत्र अधिक विस्तृत होना चाहिये। किन्तु एकमात्र बात जिसकी अपील मैं इस सभा से करूंगा यह है कि वह इन परामर्शदाताओं से इस हद तक अनुरोध करे कि वे स्वीकार कर लें कि जो विधान हम बनायेंगे उसमें ऐसी कोई चीज नहीं है जो उन्हें उन कार्यों को क्रियान्वित करने में निरुत्साहित करे जिनको क्रियान्वित करने से मैं जानता हूं कि वे बहुत प्रसन्न होंगे यदि वे मेरी बात से, जिसका मैंने जिक्र किया है, संतुष्ट हो जायें।

अब श्रीमान्, इस बात से कि एक ओर देशी राज्यों द्वारा और दूसरी ओर ब्रिटिश-भारतीय प्रान्तों द्वारा केन्द्र को सौंपे जाने वाले अधिकार-क्षेत्र के परिमाण में हमें यह अन्तर रखना है, इस रिपोर्ट की रूप-रेखा पर, जिसे कि इस कमेटी ने सभा के सामने रखने का निश्‍चय किया है, काफी असर पड़ा है। आप देखेंगे कि रिपोर्ट के साथ विषयों की सूचियां दी गई हैं और इनका उल्लेख संघीय सूची, प्रान्तीय सूची तथा समवर्ती सूची के नाम से किया गया है। इस समय राज्यों का संबंध केवल संघीय सूची से ही है।

अन्तर की एक बात और भी है, जिसकी ओर मुझे आपका ध्यान दिला देना चाहिये। जब हम केवल मंत्रिमिशन योजना क्रियान्वित करने की कोशिश कर रहे थे, हमने मंत्रिमिशन का यह प्रस्ताव मान लिया था कि वे विषय जो केन्द्र को न दिये जायेंगे, प्रान्तों के नाम कर दिये गये समझे जायेंगे, और प्रान्तों के संबंध में यह भाषा इस्तेमाल की गई थी–"वे विषय जिन्हें राज्य संघ-शासन को न सौंपेंगे, उनके पास रह जायेंगे"। वस्तुतः यह न्यूनाधिक उसी के समान था अर्थात्, संघीय-विषयों को सूची-बद्ध करके जो कुछ रह गया, यानी शेष अधिकार, एक ओर प्रान्तों के पास और दूसरी ओर राज्यों के पास रहेंगे।

अब श्रीमान्, पहली रिपोर्ट पेश हो जाने के बाद जब इस कमेटी की बैठक हुई तो हम लोग उन प्रतिबन्धों से मुक्त हो गये जो हमने स्वयं मंत्रिमिशन योजना स्वीकार किये जाने के कारण अपने ऊपर लगा रखे थे, और कमेटी इस निष्कर्ष पर पहुंची कि हमें इस देश के केन्द्र को यथासंभव अधिक से अधिक शक्तिशाली बनाना चाहिये, किन्तु यह ख्याल रखते हुये कि प्रान्तों के लिये विषयों का समुचित विस्तृत क्षेत्र छोड़ा जा सके, जिसके कि भीतर उन्हें अपने इच्छानुसार व्यवस्था करने की अधिक से अधिक स्वतंत्रता हो। इस विचार के अनुकूल यह निश्चय किया गया कि हमें तीन पूरी सूचियां बना लेनी चाहियें, एक संघीय विषयों की, दूसरी प्रान्तीय विषयों की और तीसरी समवर्ती विषयों की और यह कि यदि कुछ विषय शेष रहें, यदि भविष्य में कोई ऐसा विषय उत्पन्न हो जो इन तीनों सूचियों में से किसी में न रखा जा सकता हो, तो जहां तक प्रान्तों का संबंध है वह विषय केन्द्र के पास रहा समझा जाये।

किन्तु फिर भी यह निश्चय ऐसा नहीं है जिसे कमेटी ने राज्यों पर भी लागू किया हो। आप इसका उल्लेख रिपोर्ट में भी पायेंगे। उसमें कहा गया है कि यह अवशिष्ट विषय जब तक कि राज्य उन्हें केन्द्र को सौंपना न चाहें, उन्हीं के पास रहेंगे। मैं नहीं जानता कि वे लोग जो इस सभा में राज्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं, ऐसा कोई निश्चय करेंगे जिसकी कि आशा कमेटी ने यह कहते समय प्रकट की है, किन्तु हमें स्थिति को उसके वर्तमान स्वरूप में लेना है।

एक और भी बात है, जिसे हमें मान लेना महत्वपूर्ण है। प्रान्तों के मामले में अवशिष्ट विषय वे विषय हैं, जो उन तीनों लम्बी सूचियों में से किसी में नहीं हैं, जिन्हें कि हमने इस रिपोर्ट के साथ शामिल किया है। राज्यों के मामले में अवशिष्ट विषयों का अर्थ वास्तव में उन सारे विषयों का होगा जो संघीय सूची में शामिल नहीं हैं। मैं इस ओर ध्यान दिलाना चाहता हूं, क्योंकि मेरे माननीय

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

मित्र डाक्टर अम्बेडकर शायद यह चाहेंगे कि समवर्ती सूची की सब नहीं तो कुछ मदों के संबंध में भी, राज्य संघ में शामिल हों। कुछ लोग ऐसा होने के पक्ष में हैं। किन्तु जैसी कि वर्तमान वस्तुस्थिति है, जैसा कि रिपोर्ट का इस समय का स्वरूप है, वे सारे विषय जो प्रान्तीय सूची में दिये गये हैं, वे तमाम विषय जो समवर्ती सूची में हैं और वे विषय जो संघीय सूची में न सम्मिलित किये जा सकें–राज्यों के पास हैं।

यह एक ऐसा अंतर है, जिसे मैं समझता हूं सभा को इस रिपोर्ट पर विचार करते समय ध्यान में रखना चाहिये। श्रीमान्, जहां तक इस रिपोर्ट का संबंध है, मैं एक बात का ध्यान दिलाना चाहता हूं, वह इसीलिये कि इस संबंध में सम्भाव्य आशंकाओं से बचा जा सके कि आया कोई चीजें उसमें शामिल हैं या उससे निकाल दी गई हैं। पहली रिपोर्ट में इन चारों ही सिरनामों में से प्रत्येक के नीचे एक-एक विषय-सूची दी गई थी। विधान में कुछ अन्य व्यवस्थायें जो कि इन सूचियों में न रखी जा सकें शामिल करने की सिफारिशें भी उस रिपोर्ट के द्वारा की गई थीं, उदाहरणार्थ पहली रिपोर्ट के पैरा 2 (ए) का अंतिम वाक्य, जिसके द्वारा रक्षा के संबंध में हमारे ऐसी व्यवस्था करने का उल्लेख किया गया था जो भारत-शासन-विधान की 102 तथा 126 (ए) धाराओं में दी गई व्यवस्था के समान हो। इसके अलावा श्रीमान्, पैरा 2 (डी) का अंतिम उप-पैरा भी है, जिसके द्वारा कमेटी ने राज्य-प्रतिनिधियों की इच्छा के ख्याल से निश्चय किया था कि राज्यों के संबंध में कुछ समय निश्चित रहना चाहिये, जिसके भीतर वे अपने यहां की अर्थ-प्रणाली इस रूप में पुनः व्यवस्थित कर सकें कि वे शेष भारत के स्तर पर लाये जा सकें। यह व्यवस्था अब भी मौजूद है और दूसरी रिपोर्ट से निकाली नहीं गई।

अब श्रीमान्, स्वयं दूसरी रिपोर्ट ने कुछ अन्य बातों, निश्चित बातों का ध्यान दिलाया है....।

*__श्री एच.वी. कामतः__ सभापति महोदय, मेरी अर्ज है कि ध्वनि-वर्द्धक यंत्र (लाउड-स्पीकर) इतना अच्छा काम नहीं दे रहे हैं, जैसा कि वे 15 तारीख तक देते रहे हैं।

*__अध्यक्षः__ स्वतंत्रता मिलने से वे भी स्वतंत्र हो गये हैं, हम उनकी जांच करा कर उन्हें ठीक कराने जा रहे हैं।

*__माननीय श्री एन० गोपालस्वामी आयंगर:__ श्रीमान्, मैं कहना चाहता हूं कि यद्यपि प्रस्ताव यह है कि इस कमेटी की दूसरी रिपोर्ट पर विचार किया जाये, पर मैं समझता हूं कि सभा को पहली रिपोर्ट के उन अंशों पर विचार कर सकने का भी अधिकार है जो दूसरी रिपोर्ट में दी गई व्यवस्था के विपरीत न हो। श्रीमान्, स्वयं इन सूचियों की बात यह है कि कोई व्यक्ति जो सरसरी तौर पर उन्हें देखेगा शायद यही सोचेगा कि वे बहुत लंबी हैं, विशेषकर संघ-सूची के संबंध में जिसमें 87 मदें हैं, वह यही सोचेगा। लोगों का ख्याल हो गया है कि इस कमेटी ने बहुत सी मदें प्रांतीय तथा समवर्ती सूचियों से हड़प ली हैं और संघीय सूची में रखकर उसे अनुचित रीति से लंबा बना दिया है। मेरा विचार है कि यदि माननीय सदस्य इन सूचियों की परीक्षा करेंगे और 1935 के एक्ट से उनकी तुलना करेंगे, तो वे देखेंगे कि शायद एक-दो अपवादों को छोड़कर ऐसी कोई चीजें नहीं हैं, जहां हमने उक्त एक्ट द्वारा प्रान्तों के लिये रखे गये क्षेत्र का अतिक्रमण किया हो। जहां तक संघीय सूची का संबंध है, मैं एक और भी बात सामने रखना चाहता हूं। संघीय-सूची में हमने अनेक मदों को काटकर उनके टुकड़े कर दिये हैं और यह भी एक कारण है कि उसकी मदों की संख्या इतनी बढ़ गयी है। दूसरे, हमने अन्य विधानों से भी कुछ मदें, जो कि भारत-शासन विधान में नहीं थीं, रख ली हैं, किन्तु कमेटी के मत में उनमें कोई भी ऐसा नहीं है कि उनका प्रान्तीय या समवर्ती सूची में रखा जाना आवश्यक हो।

इस सिलसिले में एक और बात का भी मैं जिक्र कर सकता हूं। भारतीय-स्वाधीनता कानून से इस देश में पैदा एक सिर-दर्द वह तरीका भी था, जिसके अनुसार भारत-सरकार और देशी राज्यों की सरकारों के बीच का राजनीतिक संबंध होने को प्रोत्साहन दिया गया था। यदि वह एक्ट (कानून) या यों कहिये कि वह बिल, उसी रूप में कानून बन जाता जिसमें कि वह मूलत: निर्मित हुआ था, तो शायद यह संबंध-विच्छिन्न्ता एकदम पूरी ही होती, किन्तु उस बिल में ऐसी व्यवस्था सम्मिलित करने के लिये कुछ कदम उठाये गये, जिनसे कि समझा गया कि संकट की वह स्थिति टल जायेगी। तो भी, पार्लियामेंट द्वारा पास किये गये इस कानून (एक्ट) में जो कुछ भी शामिल किया गया, वह उसके आधे के भी बराबर नहीं था जिसकी कि मांग उस राजनीतिज्ञ के पूरे समर्थन के साथ यहां से की गयी थी, जो इस समय इस स्वाधीन उपनिवेश (डोमिनियन) का गवर्नर-जनरल है। हमें जो प्राप्त हुआ, वह हमारे उस दृष्टि-बिन्दु का, जिसका कि हमने यहां से अनुरोध किया था, एक अंशमात्र था और उसके द्वारा केवल उन आर्थिक संबंधों को कायम रखने की कोशिश की गयी थी जो केन्द्र और देशी

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

राज्य के बीच विद्यमान हैं। यों कहा जा सकता है कि राजनीतिक संबंध की नित्यता को उसके द्वारा अनिश्चित दशा में छोड़ दिये गये। यदि कानूनी भाषा में कहा जाये तो वास्तव में, जब तक कि यह संबंध किसी न किसी प्रकार से पुनः स्थापित करने के लिये कोई कदम न उठाया जाये, उससे यह संबंध तोड़ दिया गया। और यहां मैं कह सकता हूं कि इस देश के लिये यह हर्ष की बात है कि पुनः संबंध स्थापन का यह कार्य संपन्न किया जा चुका है जिसका परिणाम यह है कि जहां तक इस संबंध का प्रश्न है, भारतीय स्वाधीनता कानून के अधीन भारतीय उपनिवेश के भीतर आज हमारी स्थिति उससे बहुत अच्छी है, जो 1935 के विधान के अनुसार थी। भारतीय उपनिवेश की भौगोलिक सीमाओं में पड़ने वाले राज्यों का बहुत बड़ा भाग उपनिवेश में सम्मिलित हो चुका है। इन राज्यों ने यह स्थिति भी स्वीकार कर ली है कि जिन विषयों के बारे में वे सम्मिलित हुये हैं, उपनिवेश उनके संबंध में कानून बना सकता है। यह स्थिति ऐसी है जो 15 अगस्त से पहले नहीं थी। उन्होंने, मेरा ख्याल है कि उनके अधिकांश ने, इस विधान-परिषद् में अपने प्रतिनिधि भेजे हैं और यह परिषद् उपनिवेश की व्यवस्थापिका सभा के रूप में कार्य करने जा रही है; इस प्रकार केन्द्र तथा राज्यों के बीच इस समय जो राजनीतिक एवं वैधानिक संबंध विद्यमान हैं, वह पिछले 150 वर्षों के इस संबंध की अपेक्षा कहीं अधिक सामीप्य का है। मैंने केवल राजनीतिक एवं वैधानिक संबंध का जिक्र किया है। मैं उस नियंत्रण की प्रभावकारिता का जिक्र नहीं कर रहा, जिसका प्रयोग पिछले दिनों इन देशी राज्यों पर किया जाता था। नियंत्रण की यह प्रभावकारिता मौजूदा स्थिति में जितनी कार्यक्षम हो सकती है, उसकी अपेक्षा शायद वह थोड़ा अधिक कार्यक्षम रही हो, किन्तु जिस बात की ओर मैं विशेष ध्यान दिलाना चाहता हूं यह है कि हमने एक अजीब राजनीतिक एवं वैधानिक ढांचा खड़ा कर लिया है, जिसने 15 अगस्त से काम करना भी शुरू कर दिया है। मैं समझता हूं कि इसका श्रेय पहले राज्यों में जनमत की महान् जागृति को दिया जाना चाहिये। उसके बाद इसका श्रेय, उपनिवेश में राज्यों के सम्मेलन के लिये दिये गये निमंत्रण की उस सुविचारित नीति को दिया जाना चाहिये, जिसकी कि घोषणा सरदार वल्लभभाई पटेल द्वारा, जो आज राज्य विभाग की अध्यक्षता कर रहे हैं, की गयी थी। किन्तु मुझे कहना चाहिये कि भारी संख्या में देशी राज्यों के वास्तविक सम्मेलन का सबसे अधिक श्रेय उस राजनीतिज्ञता तथा प्रतिभा को जाना चाहिये जिसे कि उन्होंने स्वयं खुली राजनीतिक चातुरी कहा है जिसके द्वारा लार्ड माउंटबैटन उन सब राज्यों को सम्मिलित करा सके हैं। मैं

सोच-समझ कर ही ऐसा कह रहा हूं, क्योंकि मेरा ख्याल है कि जिस शक्ति एवं योग्यता से उन्होंने इस मामले में काम किया है, उसके बिना शायद हम उस नतीजे पर न पहुंच सकते जिसे देखकर आज हम इतना प्रसन्न हैं।

हां, तो श्रीमान्, मैं इन बातों का जिक्र यह बताने के लिए कर रहा था कि राज्यों के इस सम्मेलन के विषय में लोगों की कुछ अस्पष्ट धारणायें भी हैं। कहा जाता है कि राज्य तो केवल तीन विषयों के लिये सम्मिलित हुये हैं। यह ठीक है कि बहुत स्थूल रूप में उल्लिखित विषय तीन ही हैं, किन्तु वस्तुतः जिस सम्मेलन-पत्र पर उन्होंने हस्ताक्षर किये हैं, उसमें इन तीनों में से हरेक के अंतर्गत मदों का सविस्तार उल्लेख किया गया है और आपको मालूम होना चाहिये कि वास्तव में ये मदें 18 या 20 के लगभग हैं। और यदि हम उन्हें उस रूप में रखें, जिस रूप में कि वे संघीय-अधिकार-समिति की रिपोर्ट के साथ की सूची में दी गयी हैं, तो शायद यह संख्या और बढ़ जायेगी। इस विशेष बात का जिक्र करने का मेरा कारण यह है कि राज्यों के जो प्रतिनिधि इस सभा में शामिल हैं, वे यहां सम्पन्न किये जाने वाले कार्य में बहुत ही दिलचस्पी रखते हैं, चाहे वह कार्य विधान-निर्माण के रूप में हो या व्यवस्था-निर्माण के रूप में या केन्द्रीय शासन-व्यवस्था के नियंत्रण के रूप में। इस मामले में उनकी अनिवार्य रूप में दिलचस्पी है और मैं चाहूंगा कि वे महसूस करें कि उनमें और इस सभा में शामिल भारत के अन्य प्रतिनिधियों में किसी भी प्रकार का भेद नहीं है। श्रीमान्, यह कह चुकने के बाद, अब मुझे अंत में स्वयं इन तीनों सूचियों का जिक्र करना है। पहला प्रश्न, जिस पर कि यहां उपस्थित माननीय सदस्यों में से बहुतों को खूब विचार करना होगा, यह होगा कि इन सबके बाद आया शेष अधिकारों की अवस्थिति के संबंध में इस प्रकार का भेद जारी रहना चाहिये। यह भेद मिटाने के दो तरीके हैं। एक तरीका शायद यह है कि इस ख्याल से कि हमने तीनों सूचियों में विषयों का पूर्ण उल्लेख कर दिया है, हम मंत्रि-मिशन-योजना पर वापस जायें, और प्रान्तों के संबंध में भी शेष अधिकारों को उन्हीं प्रांतों में अवस्थित रखें। दूसरी बात ऐसी है जिस पर राज्यों को विचार करना होगा। देशी राज्यों की शासन-व्यवस्था से संबंधित अति विख्यात राजनीतिज्ञ बहुत अरसे से कहते आये हैं कि वे एक शक्तिशाली केन्द्र चाहते हैं, और केन्द्र के शक्तिशाली बनाये जाने पर विधान-परिषद् में उनके सम्मिलित होने तथा उसके कार्य में भाग लेने के संबंध का उनका संकोच लुप्त हो जायेगा। यदि उनके सहयोगी और देशी राज्यों की जनता के प्रतिनिधि भी इससे सहमत हों, तो इस कमेटी की रिपोर्ट में संशोधन करने तथा शेष अधिकारों को स्वयं केन्द्र में ही अवस्थित रहने के लिये राजी होने के

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी]

दूसरे तरीके पर विचार करना उन्हीं का काम होगा। श्रीमान्, यह एक ऐसी बात है जिस पर कि इस सभा को बहुत गंभीरता के साथ विचार करना होगा। किन्तु मुझे इस बात पर भी जोर दे देना चाहिये कि कमेटी की रिपोर्ट शेष अधिकार को राज्यों के संबंध में राज्यों में, ओर प्रांत के संबंध में केन्द्र में स्थिर करने के पक्ष में हैं। श्रीमान्, मैं सभा का और अधिक समय नहीं लेना चाहता। मैं प्रस्ताव रखता हूं।

मौलाना हसरत मोहानी: जनाबे सदर, इससे कब्ल जो एक गलती सरदार पटेल साहब ने की थी, मैं समझता हूं कि इससे ज्यादा और इससे बड़ी गलती इस वक्त मेरे दोस्त श्री एन० गोपालस्वामी, जो बहुत बड़े कानूनदां हैं, ने की है। लेकिन मैं यह अर्ज करूंगा कि आप गौर कीजिये कि आप क्या तर्जेअमल इख्तियार कर रहे हैं। मैंने उस वक्त सरदार पटेल से अर्ज किया था कि अभी आपने मरकजी उसूल तय नहीं किया और यह भी तय नहीं किया कि यूनियन का कान्स्टीट्यूशन किस किस्म का होगा। क्या वह यूनियन डोमिनियन का है या रिपब्लिक का। अगर आप लोग रिपब्लिक के हक में होंगे, तो आया वह सोशलिस्ट रिपब्लिक होगी या नेशनलिस्ट। गर्ज, आपने यह नहीं तय किया कि इसकी हैसियत क्या होगी। सिर्फ आखिर से आपने यह चीज निकाल ली कि सारे अख्त्यारात मरकज को होंगे और मरकज सारे मरकजी अख्त्यारात खुद ले लेगा। मैं अर्ज करता हूं कि इससे बड़ी कोई और गलती नहीं हो सकती। इसके माने ये होंगे कि हम लोग (मेम्बरान) जो यहां पर आये हुये हैं, आप इन सबको बेवकूफ समझते हैं। लिहाजा जब मैंने बहुत सोच-समझकर और आप पर यह ऐतराज किया था कि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने इसका जवाब देते हुये कहा था कि हमारा आब्जेक्टिव रेजोल्यूशन मौजूद है। उसमें रिपब्लिक का लफ्ज मौजूद है। मैंने उस वक्त कुछ नहीं कहा, लेकिन इस वक्त यह कहता हूं कि आप किस ख्वाबे खरगोश में मुब्तिला हैं। पंडित जवाहरलाल को मालूम होना चाहिये कि हमारे ब्रिटिश इम्पीरियलिस्ट दोस्त जो हैं उन्होंने आपको पहले से ही पाबंद कर लिया है और अब वे आपको डोमिनियन में रखेंगे। चुनाचे इन्होंने इसके लिये एक नई चीज क्रियेट की और इस चीज के क्रियेट करने वालों ने फ्रांस, हालैंड, इंग्लैंड, अमरीका और पांचवें सवारों में दाखिल होने वाले चांगकाई शेख भी हैं, जिनसे बदतर इन्सान इस वक्त दुनिया में शायद बहुत कम होंगे, शामिल हैं। और वह चीज यह है:

*[उन्होंने एक प्रकार के जनतंत्रात्मक उपनिवेश (रिपब्लिकन डोमिनियन) का आविष्कार किया है। यह जनतंत्रात्मक उपनिवेश वे इंडोनेशिया पर ठूंस रहे हैं।

इंडोनेशिया पर यह जनतंत्रात्मक उपनिवेश हालैंड लाद रहा है। और हिंदचीन, वियेटनाम पर यह जनतंत्रात्मक उपनिवेश फ्रांस ठूंस रहा है। आप बेवकूफ बनाये गये हैं। इसी प्रकार का जनतंत्रात्मक भारतीय उपनिवेश वे आप पर लाद रहे हैं और मुझे निश्चय है कि आप इससे बच न सकेंगे। आपको सदा के लिये एक उपनिवेश बना रहना होगा।]

मैंने जो कुछ भी यह कहा है वह ब्रिटिश इम्पीरियलिस्ट लोगों के लिये कहा है।

*[शब्द-जाल रचने और धोखे का व्यवहार करने की कला में वे उस्ताद हैं। वे कहते एक बात हैं और उनका मतलब बिल्कुल दूसरी बात से होता है।]

हमारे गवर्नर-जनरल लार्ड माउंटबैटन ने यह किया कि तमाम इंडियन स्टेट्स को मजबूर करके इंडियन यूनियन में शामिल कर लिया। देखने में तो यह बहुत ही अच्छा मालूम होता है कि तमाम स्टेट्स को हमने काबू में कर लिया-मगर मैं कहता हूं कि जरा गौर कीजिये कि आपने इंडियन स्टेट्स को काबू में नहीं किया बल्कि आप उनके कब्जे में खुद चले गये और वह इस तरह कि अभी आप यूनियन का कांस्टीट्यूशन बनायेंगे तो इसमें क्या होगा। आप कहेंगे कि अभी तो यह इंडियन डोमिनियन गवर्नमेंट है, इसमें कोई शुबा नहीं कि आपको यह हक मिला है कि आप डोमिनियनं कान्स्टीट्यूशन को बदल सकते हैं। लेकिन इसके साथ ही साथ आपको इसका भी ख्याल चाहिये कि इस कान्स्टीट्यूशन को बदलने के लिये आपको किस बात की जरूरत होगी। कान्स्टीट्यूशन बदलने के मामले में तीन चौथाई मेम्बर जब तक किसी तजवीज की मुखालफत न करें वह तजवीज चल नहीं सकती और वो स्टेट्स जो हमेशा के लिये डोमिनियन में रहेंगी और जिनको आपने कांस्टीट्यूशन में शामिल कर लिया है, उनकी तादाद करीब-करीब एक तिहाई होगी। मैं कहता हूं कि स्टेट्स के नुमाइंदे जो कांस्टीट्यूशन में शरीक होंगे, क्या वे भी इंडियन डोमिनियन को रिपब्लिक और सोशलिस्ट रिपब्लिक में तब्दील करना मंजूर कर लेंगे? इसके माने यह होंगे कि अपने आपको आप खुद धोखा दे रहे हैं।

*[यदि आप यह ख्याल करें कि आप इस दुष्ट औपनिवेशिक स्वराज्य (डोमिनियन स्टेट्स) से बाहर निकल सकते हैं, तो आप अपनी आत्मा को धोखा दे रहे हैं। आपके सदस्यों में से एक तिहाई राज्यों के हैं और आपका प्रस्ताव है कि विधान में परिवर्तन करने के लिये आपको विधान-परिषद् के तीन-चौथाई

[मौलाना हसरत मोहानी]

सदस्यों के बहुमत की आवश्यकता होगी। क्या आप नहीं समझते कि इस प्रकार से विधान में परिवर्तन करना, आपके लिये असम्भव हो जायेगा। ब्रिटिश साम्राज्य में एक उपनिवेश (डोमिनियन) के रूप में ब्रिटिश राष्ट्रमंडल (ब्रिटिश कामनवेल्थ) में रहने की आपने स्वयं निंदा की है। इसीलिये मैं कहता हूं कि आप बेवकूफ बनाये गये हैं। मैं नहीं जानता कि किस प्रकार मेरे ये मित्र कांग्रेस उच्चाधिकारी (हाई-कमाण्ड), जो मेरे मित्र व सहकारी हैं...]

इसके अलावा पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि हमने आब्जेक्टिव रिजोल्यूशन पेश कर दिया है। अब किसी को कुछ कहने का हक हासिल नहीं है। मैं कहता हूं कि जिसको वे रिपब्लिक कहते हैं वह रिपब्लिक नहीं है। वह वही लानती चीज है जिसको ब्रिटिश इम्पीरियलिस्ट या दूसरे नामों से याद करते हैं। ब्रिटिश ने यही चीज इंडोनेशिया में भी पैदा कर रखी है जो किसी से पोशीदा नहीं है। लिहाजा इस हिमाकत में, जिसमें आज इंडोनेशिया मुब्तिला है, उसमें आप भी न फंसिये।

*__श्री एम॰एस॰ अणे__ (दक्षिणी रियासतें): श्रीमान्, व्यवस्था-संबंधी एक बात कहना चाहता हूं; क्या एक सदस्य दो भाषाओं में भाषण कर सकता है?

*__अध्यक्ष:__ मेरा ख्याल है कि अन्य सदस्यों की सुविधा के लिये, वे अपनी बात अंशत: अंग्रेजी भाषा में समझा रहे हैं।

मौलाना हसरत मोहानी: इस सिलसिले में यह भी कह देना जरूरी है कि जो इंण्डिपेण्डेन्स आपको मिली है उसका नाम पहले डोमिनियन स्टेट्स था जिसको बाद में इन्होंने खुल्लमखुल्ला सोच समझकर इण्डिपेण्डेन्स कर दिया। इससे हरगिज इनका मतलब इण्डिपेण्डेन्स नहीं हो सकता। हमसे ज्यादा बेवकूफ कौन होगा कि यह जानते हुये भी कि हमको धोखा दिया जा रहा है, हमने इण्डिपेण्डेन्स भी मना ली और चिरागां भी कर लिया। चूंकि जमहूर से मुखालिफत करने की मेरी आदत नहीं है, इसलिये मैंने इस वक्त कुछ नहीं कहा। लेकिन अब कहता हूं दरहकीकत हरगिज हमको इण्डिपेण्डेन्स नहीं मिली है। मेरे दोस्तों में बहुत बड़े-बड़े कानूनदां और समझदार लोग मौजूद हैं मगर मेरी समझ में नहीं आता कि उनकी आंखों पर कैसे परदे पड़े हुये हैं और वे किस ख्वाबे खरगोश में मुब्तिला हैं।

*[मैं कह रहा था कि कांग्रेस हाई-कमाण्ड के सदस्य मेरे मित्र हैं और मेरे सहकारी रहे हैं। यहां इस विधान-परिषद् में मुस्लिम लीग के द्वारा मैं साधारणत:

अपने पुराने मित्रों के साथ सहयोग करने के अभिप्राय से आया था। किन्तु अब मैं देखता हूं कि वे मेरा सहयोग नहीं चाहते और वे उसे (मेरे सहयोग को) ठुकरा रहे हैं। उनका कट्टर विरोध करने के सिवा मेरे लिये और रास्ता नहीं रह गया है और जो कारण मैं अभी-अभी बता चुका हूं उसके आधार पर मैं उनका विरोध करता हूं; वह यह है कि वे इन ब्रिटिश साम्राज्यवादियों द्वारा बेववूफ बनाये गये हैं।

इस बात का दूसरा सबूत कि आप बेवकूफ बनाये गये हैं, यह है कि भारतीय स्वतंत्रता के श्री चर्चिल जैसे शत्रु ने भी, अपना तरीका छोड़कर, इस चीज के पास किये जाने के लिये मजदूर सरकार को बधाई दी है। उन्होंने कहा है, ''इसकी मैं चिन्ता नहीं करता कि ऐसा थोड़े ही समय के लिये है। मेरे लिये इतना बहुत काफी है कि उन्होंने अभी इस समय उपनिवेश (डोमिनियन) में रहना स्वीकार कर लिया है।'' आप यह जानते ही हैं कि श्री चर्चिल काफी चालाक हैं। मुझे इस बात का बहुत दुख और आश्चर्य भी है कि श्री राजगोपालाचार्य, डाक्टर राधाकृष्णन तथा डाक्टर अम्बेडकर जैसे इतनी तीक्ष्ण बुद्धि वाले मेरे मित्र भी इस चाल और धोखेबाजी को नहीं समझ पाये।

आपने कहा है कि इन देशी राज्यों को शामिल करने के लिए आप राजी हो गये हैं और आपने अपने सदस्यों में से एक-तिहाई राज्यों से लिए हैं। आप यह भी व्यवस्था करने जा रहे हैं कि आपके विधान में परिवर्तन करने के लिए, उपनिवेश-पद से उसे एक समाजवादी जनतंत्र (सोशलिस्ट रिपब्लिक) में परिवर्तित करने के लिए आपको तीन-चौथाई सदस्यों के बहुमत की आवश्यकता पड़ेगी। स्पष्टत: यह असम्भव है। जब तक कि राज्यों के ये प्रतिनिधि आपकी असेम्बली (परिषद्) के, आपकी पार्लियामेंट (व्यवस्थापिका सभा) के अंग हैं, तब तक आप इस बेहूदी चीज डोमिनियन और कामनवेल्थ, से बाहर नहीं निकल सकते।]

मैं यह अर्ज करूंगा कि आखिर आपको क्या हो गया है? मैं समझता हूं कि जब तक पाकिस्तान अलहदा नहीं हुआ था, उस वक्त तक आप यह समझ सकते थे कि जब तक सेंटर स्ट्रोंग नहीं होगा, उस वक्त तक मुस्लिम अकसरियत के सूबों से गड़बड़ का अंदेशा रहेगा, लेकिन अब पाकिस्तान अलहदा हो गया है।

***श्री मोहम्मद शरीफ** (मैसूर): क्या मैं आपसे प्रार्थना कर सकता हूं कि इन महाशय से अनुरोध करें कि वे अपनी बात कहें।

मौलाना हसरत मोहानी: *[जी हां, मैं यह बता रहा हूं कि पंडित जवाहरलाल नेहरू की पिछली यूनियन-विधान योजना पर मुझे क्या आपत्तियां करनी पड़ी थीं; वही आपत्ति इस योजना पर भी लागू होती है, क्योंकि दोनों एक समान हैं।]

मैं कहता हूं कि नैचुरल चीज यह है कि बजाय इसके कि हम पावर्स सब सेंटर को दे दें और वह जो चाहे प्राविंसिस को ट्रांसफर करे, अच्छा यह हो कि हम प्राविंसिस को पावर्स दे दें। फिर वह चाहे तो कुल मरकजी, अख्त्यिारात सेंटर को दे दें। या सिर्फ तीन महकमे यानी डिफेंस, फौरन अफेयर्स, एंड कौम्यूनिकेशन्स।

*[मैं किसी साम्राज्य, राजाओं या डोमिनियनों (उपनिवेशों) या कामनवेल्थ (राष्ट्रमंडल) में विश्वास नहीं करता। इन्हें हम काफी देख चुके। अब हम उनमें से कोई भी नहीं चाहते; न सम्राट, न डिक्टेटर, न कामनवेल्थ, न डोमिनियन। हम केवल अपनी समाजवादी जनतंत्रों की यूनियन (यूनियन आफ सोशलिस्ट रिपब्लिक्स) रखेंगे; इससे कम कोई भी चीज नहीं। इसलिए अपने मित्र श्री गोपालस्वामी आयंगर से मेरा अनुरोध है कि यह कहकर वे अपने को बेवकूफ न बनायें कि हम एक शक्तिशाली केन्द्र चाहते हैं। मैं ऐसे केन्द्र को नहीं मानता। एकमात्र केन्द्र जिसे मैं स्वीकार करूंगा, हमारी 'यूनियन आफ सोशलिस्ट रिपब्लिक' (समाजवादी जनतंत्र संघ) का होगा।]

यह मेरा आमतौर पर एतराज है लेकिन जबसे आपने रियासतों को अपने में शामिल कर लिया है, मेरा एतराज पहले से दस गुना ज्यादा हो गया है। आपने हमारे सूबों को क्या अख्त्यिारात दिये हैं। मेरे ख्याल में सूबों को आपने पहले से भी और घटाकर अख्त्यिारात दिये हैं। इतने अख्त्यिारात तो इंडीपेंडेंस मिलने से पहले भी सूबों को हासिल थे। आपने इससे एक नुक्ता भी बढ़ाकर नहीं दिया है। बल्कि बहुत कम कर दिया है। खैर यह तो आपकी मरजी है क्योंकि आपकी मजोरिटी है। यहां पर जितने भी मेम्बरान हैं उनको नैचुरल तरीके पर कांग्रेस ने अपने पाबंद कर दिया है। दरअसल यहां पर कांग्रेस पार्टी और लीग पार्टी का कोई दखल न होना चाहिये क्योंकि आपने कोम्यूनलिज्म को दूर कर दिया है। इंसाफ का तकाजा यह है कि जितने मेम्बरान हैं उन सबसे कह दिया जाये कि यहां पर अब पोलिटिकल पार्टियों की हैसियत से रह सकेंगे न कि हिंदू और मुस्लिम या कांग्रेस और मुस्लिम लीग की हैसियत से।

*[आपको एक शक्तिशाली केन्द्र रखने की, जिससे कि सारे अधिकार केन्द्र में ही स्थिर किये जायें, क्या आवश्यकता है? इसका क्या कारण है? और इससे आपका क्या उद्देश्य है?]

जनाबे वाला, आप यह देखें कि मैंने इसलिए यह अर्ज किया कि आपने सूबों को कुछ अख्त्यारात नहीं दिये हैं। मैंने इस तरफ इसीलिए इशारा किया कि शायद आप लोगों ने हमको बिल्कुल बेवकूफ समझ लिया है।

***मि. तजम्मुल हुसैन:** मैं जानना चाहूंगा कि मौलाना एक मजबूत (शक्तिशाली) केन्द्र चाहते हैं या कमजोर केन्द्र चाहते हैं।

***अध्यक्ष:** मौलाना साहब, आप जिस चीज को पेश करना चाहते हैं आप उसके मुताल्लिक जो कुछ चाहें कहें, यानी उस रेज्यूल्यूशन पर गौर इस वक्त किया जाये या नहीं।

मौलाना हसरत मोहानी: मैं कहता हूं कि आपको उस वक्त यह शुबाह हो सकता था जब तक पाकिस्तान अलहदा नहीं हुआ था।

***अध्यक्ष:** शांति, शांति! मौलाना, वास्तव में आप विषय क्षेत्र से बाहर जा रहे हैं। आपने यह प्रस्ताव रखा है कि रिपोर्ट पर विचार करना स्थगित रखा जाये। फिर आप खुद रिपोर्ट के गुण-दोष का जिक्र कर रहे हैं। इसके अलावा, आपने बहुत सी अन्य बातों का भी जिक्र किया है, जिनका कि आपके प्रस्ताव से कोई संबंध नहीं है।

मौलाना हसरत मोहानी: मैं यह अर्ज करूंगा कि आपने स्टेट्स को यह लालच देकर अपने में शामिल कर लिया है जैसा कि आप पहले भी करते चले आये हैं कि आपको सिवाय डिफेंस, फौरन एफियर्स और कौम्यूनिकेशन के बाकी और सब मरकजी पावर्स भी हासिल रहेंगे। मैं इस चीज पर सख्त एतराज करता हूं।

*[वे (श्री गोपालस्वामी आयंगर) समझते हैं कि वे ही एक चतुर वकील हैं और बाकी सब लोग बेवकूफ हैं।]

***अध्यक्ष:** शांति, शांति! मौलाना, मैं समझता हूं कि अच्छा होगा, यदि आप अपने को स्वयं अपने प्रस्ताव तक ही सीमित रखें।

मौलाना हसरत मोहानी: अगर उनको यह मरकजी हक हासिल है तो कम से कम इससे ज्यादा या इसके बराबर अख्त्यारात आप सूबों को भी दें वरना आपकी यह तजवीज बिल्कुल फ्रौड होगी और इसीलिए मैं कहता हूं कि जब तक आप इस चीज को साफ न कर दें, मेरे ख्याल में यह तजवीज बिल्कुल खुराफात है। इस पर हरगिज गौर न किया जाये।

***अध्यक्षः** सभा के सामने इस समय जो प्रस्ताव उपस्थित है, उसका आशय यह है कि श्री गोपालस्वामी आयंगर ने जो रिपोर्ट पेश की है, उसका विचार एक निश्चित समय के लिए जोकि उसमें उल्लिखित है स्थगित रखा जाये। सदस्यों को अब इस विषय में अपने विचार प्रकट करने की स्वतंत्रता है। सदस्यों से मेरा अनुरोध है कि इस अवस्था में वे रिपोर्ट के गुण-दोषों के संबंध में अपने विचार प्रकट न करें, क्योंकि प्रस्ताव केवल रिपोर्ट का विचार स्थगित करने का ही है।

***श्री बालकृष्ण शर्माः** श्रीमान्, स्वयं अपनी जानकारी के लिये मैं मालूम करना चाहता हूं कि क्या किसी सदस्य के लिये यह संभव है कि रिपोर्ट की मुख्य बातों का जिक्र किये बिना वह प्रस्ताव के पक्ष या विपक्ष में बोल सके और कह सके कि चूंकि हमने यूनियन का विधान पूरा नहीं किया है, इसलिए इस पर विचार न करना चाहिए। यही मेरी कठिनाई है।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं सदस्यों के लिए यह संभव है कि सभा के सामने जो प्रस्ताव है, उस तक ही वे अपने को सीमित रखें। यदि अपने पक्ष के समर्थन में वे रिपोर्ट की किन्हीं संबंधित बातों का जिक्र करना चाहें, तो मुझे इसमें कोई आपत्ति न होगी, किन्तु इस अवस्था में मैं रिपोर्ट के गुण-दोषों का विचार किया जाना पसंद न करूंगा।

***दीवान चमन लाल** (पूर्वी पंजाबः जनरल)**:** श्रीमान्, व्यवस्था संबंधी एक बात है। हमारे सामने जो प्रस्ताव है, वह श्री गोपालस्वामी आयंगर का है कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये; और मौलाना हसरत मोहानी ने इसके संशोधन में एक प्रस्ताव पेश किया है। अब हमें संशोधन की शब्दावली तक अपने को सीमित रखना है अथवा हम श्री गोपालस्वामी आयंगर के मूल प्रस्ताव पर विचार करने जा रहे हैं।

***अध्यक्षः** अभी मैं केवल संशोधन को ही विचारार्थ ले रहा हूं, जब संशोधन पर विचार कर लिया जायेगा, तब हम मूल प्रस्ताव को ले सकते हैं। यदि हम रिपोर्ट के गुण-दोष पर अभी विचार करते हैं, तो इससे हमारी बहस में विश्रृंखलता आ सकती है। इसीलिए मैं पहले सारा ध्यान विचार स्थगित करने के संशोधन की ओर देना चाहता हूं।

***श्री महावीर त्यागीः** श्रीमान्, व्यवस्था संबंधी एक बात!

***अध्यक्षः** किस विषय की व्यवस्था-संबंधी बात?

***श्री महावीर त्यागीः** मौलाना हसरत मोहानी द्वारा रखे गये संशोधन के विषय की।

***अध्यक्षः** उस विषय में मैं पहले ही व्यवस्था दे चुका हूं, विचाराधीन प्रश्न स्थगित प्रस्ताव का है।

***श्री महावीर त्यागीः** किंतु श्रीमान्, मैं इस प्रश्न पर आपकी व्यवस्था चाहता हूं कि मेरा विश्वास है कि यह संशोधन स्वयं ही व्यवस्था विरुद्ध है।

***अध्यक्षः** किस प्रकार?

***श्री महावीर त्यागीः** यह सभा के समक्ष उपस्थित मूल प्रश्न का नकार मात्र है। इसलिए मैं अर्ज करता हूं कि यह संशोधन व्यवस्था के विरुद्ध है।

***अध्यक्षः** मैं नहीं समझता कि यह व्यवस्था के विरुद्ध है, क्योंकि यह मूल प्रस्ताव का विचार स्थगित रखने के लिए एक प्रस्ताव है।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी** (सिक्किम व कूच बिहार ग्रुप)**:** श्रीमान्, मैं संशोधन का समर्थन करता हूं, यद्यपि मेरे ऐसा करने के कारण आदरणीय मौलाना हसरत मोहानी द्वारा बताये गये कारणों से कुछ भिन्न हैं। किंतु अपने विचार प्रकट करने से पहले मैं सभा को फारसी का एक शेर सुनाना चाहता हूं, जिसकी याद मुझे जनाब मौलाना साहब का भाषण सुनकर आ गयी है। शेर इस प्रकार है:

जबाने यार मन तुर्की व मन तुर्की नमीदानम्

''चे खुश बूदे अगर बूदे जवानश्दर दहाने मन।''

श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं इस शेर का तर्जुमा कर देना चाहता हूं, जो इस प्रकार है:

''मेरी प्रियतमा तुर्की बोलती है। (इस जगह, अंग्रेजी मिली हुई हिंदुस्तानी, न कि उर्दू मिली हुई हिंदी) अच्छी बात होती, यदि उसकी जबान मेरे मुंह में होती।''

जो सुंदर तुर्की वह बोलती थी, मैं नहीं बोल सकता—इसीका मैं अपराधी हूं।

[श्री हिम्मतसिंह के. महेश्वरी]

अब मैं मुख्य विषय, जुलाई 1947 की रिपोर्ट को जो सभा के सामने उपस्थित है, लेता हूं। मेरे मत से यह रिपोर्ट पहले ही पुरानी पड़ चुकी है, जिसके दो कारण हैं। पहला कारण यह है कि भारतीय स्वाधीनता कानून यह रिपोर्ट तैयार हो जाने के बाद पास किया गया है; और दूसरा कारण यह है कि जुलाई के आखीर के समय भारत सरकार तथा राज्यों द्वारा ऐसे निश्चय किये गये, जिनके फलस्वरूप बहुतेरे राज्य (भारतीय उपनिवेश में) सम्मिलित हो गये और सम्मेलन-पत्रों तथा स्थिरावस्था समझौतों पर उनके हस्ताक्षर हुए। इस प्रकार श्रीमान्, सभा के समक्ष उपस्थित रिपोर्ट में वे सारे परिवर्तन नहीं आ सके हैं जो उसके पहली बार लिखे जाने के समय से अब तक हुए हैं। संघीय व्यवस्थापिका सूची के अंदर आने वाले विषयों तक के संबंध में प्रांतों तथा राज्यों के बीच स्पष्ट अंतर रखना पड़ा है। जैसा कि मैं समझता हूं, भारतीय यूनियन में राज्य केवल तीन विषयों के संबंध में ही सम्मिलित हुए हैं, जब कि प्रांत न केवल कानून बनाने और नीति निर्धारित करने के काम के लिए बल्कि शासन-व्यवस्था के लिए भी केंद्र को अन्य अनेक विषय सुपुर्द करने को राजी हैं। जिन तीन विषयों के संबंध में देशी राज्य इस समय उपनिवेश में सम्मिलित हुए हैं अथवा भविष्य में संघ-शासन में सम्मिलित होने को हैं, उनके संबंध में केन्द्र को एक निश्चित रकम खर्च करनी ही होगी। इसके अतिरिक्त केवल प्रांतों के फायदे के लिए, केन्द्र को अन्य विषयों के संबंध में अलग खर्च उठाना पड़ेगा। इसलिए श्रीमान्, केन्द्र को अपना खर्च चला सकने के लिए कर-व्यवस्था की जिन मदों की जरूरत होनी चाहिए, उनका निश्चय अभी करना समय से कुछ पहले की बात है। स्पष्ट है कि राज्यों से उन विषयों के खर्च के संबंध में कुछ भी नहीं लिया जाने को है, जिनसे कि उन्हें कोई लाभ न हो।

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्त प्रांत: जनरल): श्रीमान्, मैं समझता हूं कि वक्ता महोदय यूनियन-पावर्स-कमेटी के एक सदस्य हैं; और ऐसी दशा में उस कमेटी की रिपोर्ट का विचार किया जाने पर जिसके कि वे स्वयं एक मेम्बर हैं, क्या वे आपत्ति कर सकते हैं?

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** मैं उस कमेटी का मेम्बर नहीं था।

***श्री जसपतराय कपूर:** मुझे खेद है।

श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी: श्रीमान्, मजबूत केन्द्र स्थापित करने की इस सभा की इच्छा एक बहुत ही उचित आकांक्षा है; किंतु मुझे भय है कि कभी-कभी

यह भुला दिया जाता है कि एक मजबूत केन्द्र का अर्थ अनिवार्यतः एक कमजोर प्रांत या एक कमजोर राज्य से नहीं है। किसी भी हालत में, राज्यों ने भूतकाल में प्रांतों से कहीं अधिक स्व-शासन का उपभोग किया है, और मुझे भय है कि चाहे हम ऐसा पसंद करें या न पसंद करें, यह भेद तो कायम रखना ही होगा। जो दूसरी रिपोर्ट हमारे सामने है, उसके तीसरे पैरे में कहा गया है कि जहां तक संघीय-विषय सूची 16 मई के वक्तव्य से बाहर चली गई है, राज्यों पर आम तौर से उसके लागू होने......।

*__श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:__ क्या मैं व्यवस्था संबंधी एक बात कहने के लिए उठ सकता हूं? मेरा ख्याल है, श्रीमान्, कि आपने निर्णय किया था कि मौजूदा बहस स्थगन-प्रस्ताव तक ही सीमित रहनी चाहिये।

*__श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:__ मैं केवल एक बहुत ही छोटी सी बात की ओर सभा का ध्यान आकृष्ट कर रहा हूं। जहां तक कि संघीय-विषयों की सूची 16 मई के वक्तव्य से बाहर चली गई है, वहां तक राज्यों पर आमतौर से वह उनकी राजी से लागू की जानी चाहिये। इसका मतलब यह निकलता है कि उनके संबंध में शेष अधिकार उनमें ही स्थिर रहेंगे, जब तक कि उन्हें केन्द्र में स्थिर करने के लिए वे सहमत न हों। हमारे सामने की संघीय व्यवस्थापिका सूची (परिशिष्ट की सूची 1) में अनेक ऐसी मदें शामिल हैं, जो पूर्णतया उन तीन विषयों के अंतर्गत नहीं हैं जिनके कि संबंध में राज्य सम्मिलित होने का विचार करते हैं। ऐसी दशा में श्रीमान्, अधिक तर्क-संगत रास्ता तो 'संघीय व्यवस्थापिका सूची' को दो सूचियों में तोड़ देने का होगा।

*__श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:__ श्रीमान्, क्या हम रिपोर्ट के गुण-दोष का विचार कर रहे हैं?

*__श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:__ मैं केवल वे बातें बता रहा हूं, जिनसे कि रिपोर्ट का विचार स्थगित किया जाना न्यायोचित समझा जाये।

*__श्री ए॰पी॰ पट्टानी__ (भावनगर: पश्चिमी भारत के राज्य): जब तक पहले इन अधिकारों का निश्चय नहीं कर लिया जाता, विधान तैयार नहीं किया जा सकता। प्रस्ताव द्वारा अनुरोध किया गया है कि विधान तैयार हो जाने के बाद इन अधिकारों पर विचार किया जाये। मेरी अर्ज है कि जब तक कि इन अधिकारों का निश्चय नहीं कर लिया जाता, विधान तैयार नहीं किया जा सकता।

****श्री हिम्मतसिंह के० महेश्वरी:** चूंकि संघीय व्यवस्थापिका सूची में, दो भागों के अंतर्गत काफी संशोधन व रूपान्तर होने को है, जिनमें से एक भाग यूनियन के लिए और दूसरा केवल प्रांतों के लिए लागू होगा, इस कारण इस सभा के लिए उक्त रिपोर्ट का विचार स्थगित रखना उचित ही है।

श्रीमान्, साथ ही मैं यह सुझाव रखने का भी साहस कर रहा हूं, कि इसलिए ताकि इस रिपोर्ट पर, गत चार सप्ताहों में हुए महत्वपूर्ण परिवर्तनों के प्रसंग में नये सिरे से विचार किया जा सके, आप (सभापति) द्वारा एक और बड़ी कमेटी, जिसमें कि राज्यों के प्रतिनिधि अधिक संख्या में रहें, नियुक्त की जानी चाहिये, ताकि वह इस रिपोर्ट की फिर से जांच करे तथा यथासंभव कम से कम समय के भीतर अपनी और रिपोर्ट दाखिल कर दे।

इस समय इस रिपोर्ट पर विचार करने में हमें एक और भी कठिनाई है। यहां अप्रैल 1947 की मूल रिपोर्ट और जुलाई 1947 की दूसरी रिपोर्ट, दोनों ही मौजूद हैं। अप्रैल वाली रिपोर्ट के कुछ अंश सही जचेंगे और कुछ अंश नहीं। किसी भी रिपोर्ट में से ठीक वे ही वाक्य चुनने में जो सही हों, सदस्यों को बड़ी कठिनाई होगी। अप्रैल व जुलाई की रिपोर्टों की इस सूची में दी हुई मदों का मिलान 1935 के भारत-शासन-विधान की 'संघीय व्यवस्थापिका सूची' में दी हुई मदों से करने में, मुझे पूरे 6 घंटे लग गये। इसलिये, श्रीमान्, मेरा ख्याल है कि इस अवस्था में रिपोर्ट पर विचार करने में सभा को भारी अड़चन पड़ेगी।

इन कुछ शब्दों के साथ मैं आशा करता हूं कि इस महत्वपूर्ण कार्य में जल्दबाजी करने के बजाय, यह सभा उसके लिये अधिक समय देने तथा उस पर और विचार करने के प्रति सहमत होगी, ताकि जो भी कार्य हम सम्पन्न करें, वह प्रान्तों तथा राज्यों के लिये स्थायी लाभ का सिद्ध हो।

श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय (ग्वालियर): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, आज जो देश की स्थिति है उसमें हम मामलों को इसी तरीके से छोड़ते नहीं जा सकते। जो हसरत मोहानी साहब का अमेण्डमेण्ट आया है कि हम इसको स्थगित करें (मुल्तवी करें), यह मुनासिब नहीं है। मैं समझता हूं और ऐसा अनुभव कर रहा हूं कि दिनों दिन हालत ऐसे हो रहे हैं कि कान्स्टीट्यूशन मेकिंग का काम जल्द से जल्द खत्म करना चाहिये और एडमिनिस्ट्रेशन के और हिन्दुस्तान के जो प्लानिंग के काम हैं, वह सामने आने चाहियें। क्योंकि जनता के सवालात सामने हैं। जो दलीलें हसरत

साहब ने पेश की थीं वह तो बेबुनियाद हैं। और एक बड़े ताज्जुब की बात यह है कि एक तरफ तो उन्होंने कहा कि हमको सोशलिस्ट रिपब्लिक चाहिये, इसलिये मुल्तवी करना चाहिये और दूसरी तरफ एक रियासत के प्राइम मिनिस्टर साहब ने भी इसको स्थगित करने की वही दलील दी है। तो यह दरअसल सोशलिज्म लाने का तरीका नहीं है। सोशलिस्ट पार्टी इस कान्स्टीट्यूशन के अन्दर भी काम कर सकती है। हम संयुक्त और बड़ा देश बनाना चाहते हैं। यह कोई दलील नहीं है कि केन्द्र को कोई ताकतें न दी जायें और सारी ताकतें प्रान्तों को दी जायें। मैं तो मौलाना साहब की तकरीर का मतलब यही समझा कि केन्द्र को कोई ताकत ही न दी जाये और इस तरह हिन्दुस्तान टुकड़ों-टुकड़ों में बंटा रहे। आज इस बात की जरूरत है कि हिन्दुस्तान मजबूत हो। हिन्दुस्तान का वर्षों से पुराना इतिहास यह रहा है कि हम टुकड़ों में बंटे रहे हैं, मगर इस वक्त देश में एक मजबूत सेन्टर होने की आवश्यकता है।

मैं एक देशी रियासत से आया हूं और मैं कहता हूं कि सेन्टर मजबूत रहना चाहिये। मैं देशी नरेशों से, यहां जो मिनिस्टर हैं उनसे और जो रियासतों के प्रतिनिधि हैं उन सबसे कहूंगा कि वे ज्यादा से ज्यादा ताकत केन्द्र को देकर उसको मजबूत करें, जिससे कि हिन्दुस्तान एक बहुत अच्छा देश बन सके। इसलिये यह जो स्थगित करने की दलीलें हैं यह सब गलत हैं और इससे देश को नुकसान पहुंचता है। हम देर नहीं कर सकते हैं। जैसा कि अभी श्री पट्टानी साहब ने कहा कि जब तक यूनियन पावर्स का मसला तय नहीं हो जाता, उस वक्त तक कान्स्टीट्यूशन की रूप-रेखा भी हम तय नहीं कर सकते हैं। इसलिये बहुत जरूरी है कि यूनियन पावर्स का मसला हाथ में लिया जाये और यह हरगिज स्थगित न किया जाये।

***श्री मोहम्मद शरीफः** साहब सदर, मौलाना हसरत मोहानी की तकरीर को मैंने बहुत दिलचस्पी के साथ सुना है। मौलाना ने बहुत से दलायल इस रिजोल्यूशन के मुल्तवी करने के लिये दिये हैं। जिस जज्बे के मातहत मौलाना ने तकरीर की है मैं उस जज्बे की वाकई कद्र करता हूं अगरचे मैं सोशलिस्ट रिपब्लिक से, जिसके मुतअल्लिक उन्होंने अपने ख्यालात का इजहार किया है, पूरी तौर से इत्तफाक नहीं करता हूं। लेकिन इस करारदार के मुल्तवी करने की जो तजवीज है, मेरे ख्याल में बहुत अच्छी तजवीज है। यूनियन पावर्स कमेटी की रिपोर्ट के मुताल्लिक इसके साथ जो तीन लिस्टें मुन्सलिक हैं जिसको पढ़ने की कोशिश की गई है तो इससे यह जाहिर होता है कि सेंटर रियासतों के मुताल्लिक जितनी ताकत है, वह सर्फ करे। आप जानते हैं कि गुजिश्ता दो हफ्ते हुये जब वायसराय बहादुर

[श्री मोहम्मद शरीफ]

ने स्टेटमेंट दिया था। उसमें उन्होंने यह कहा था कि जहां तक कान्स्टीट्यूऐंट असेम्बली का, रियासतों का ताल्लुक है वह उनके अन्दरूनी मामलात में कोई दखलदेही करना नहीं चाहते, लेकिन यूनियन कमेटी की रिपोर्ट हमारे सामने है। इसको पढ़ने के बाद हम यह देखते हैं और अफसोस के साथ देखते हैं कि मरकज इन अख्तयारात के अलावा जो तीन अबवाब हैं उन पर ताकत सर्फ करना चाहता है। हमारे मरकज की जो कांग्रेस पार्टी है और जो एक जबर्दस्त पार्टी है उसने यह ऐलान किया है कि रियासतों के अन्दरूनी मामलात में वह दखल देना नहीं चाहती। लेकिन मैं यह कहने पर मजबूर हूं कि रिपोर्ट जो हमारे सामने पेश है वह इतनी तसल्लीबख्श है जैसी होनी चाहिये। इसके तहत मैं यह अर्ज करना चाहता हूं कि इस रिपोर्ट को फिलहाल मुल्तवी कर दिया जाये जैसा कि अगले मुकर्रिर ने कहा है और एक ऐसी कमेटी जिसमें स्टेट्स के रिप्रेजेंटेटिव हों, बना दी जाये। और यह रिपोर्ट इस कमेटी के सामने पेश कर दी जाये, वह इस सवाल पर काफी गौर करके अपना फैसला दे ताकि हम फिर से इस पर गौर कर सकें।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): श्रीमान्, इस स्थगन-प्रस्ताव का मैं समर्थन करना चाहता हूं, पर उस हद तक नहीं जितना कि स्वयं संशोधन में किया गया है और न उस आधार पर जिस पर उसका समर्थन हुआ है। मैं सभा के सामने वे कठिनाइयां रखना चाहता हूं जो उन सदस्यों के रास्ते में हैं जो इस समस्या को हल करना चाहते हैं; और इस कारण तथा अन्य कारणों से भी मैं सभा से इस सुझाव पर विचार करने का अनुरोध करूंगा कि एक कमेटी नियुक्त कर दी जाये, जो 28 अप्रैल की तथा इस समय विचाराधीन दोनों ही रिपोर्टों को एकजा करके सभा के सामने एक नई रिपोर्ट पेश करे, जिसमें उन महत्वपूर्ण परिवर्तनों का ध्यान रखा जाये जो दूसरी रिपोर्ट तैयार होने के बाद से हो चुके हैं। इस नई कमेटी के सदस्यों के बारे में मुझे कुछ नहीं कहना है।

विद्वान प्रस्तावक ने उर्दू और अंग्रेजी में बारी-बारी से जो विचार प्रकट किये हैं, वे मुझे बिजली की वैकल्पिक धाराओं के समान मालूम देते हैं; जैसा मैं नहीं करना चाहता। इससे कुछ सदस्यों को काफी असुविधा हुई है और रिपोर्टरों को भी मेहनत करनी पड़ी है; क्योंकि उनमें से कुछ केवल अंग्रेजी के भाषण लिख सकते हैं और कुछ केवल उर्दू के।

श्रीमान्, मेरी अर्ज है कि 28 अप्रैल की रिपोर्ट एकदम पुरानी पड़ गयी है, किन्तु माननीय प्रस्तावक श्री आयंगर ने फिर भी कहा है कि इस रिपोर्ट के उन

अंशों पर भी विचार कर लिया जाये, जो विचाराधीन रिपोर्ट के प्रतिकूल नहीं हैं। जो सदस्य 3 जून के वक्तव्य के अनुसार चुने गये हैं, उनकी ओर से मुझे कहना चाहिये कि पहली रिपोर्ट हमारे सामने नहीं है और–जैसाकि बताया जा चुका है–दूसरी रिपोर्ट भी अधिकांश पुरानी पड़ गयी है, जिसका कारण यह है कि भारतीय स्वाधीनता कानून का जन्म उसके प्रकाशित हो जाने के बाद हुआ है। इस प्रकार एक नई रिपोर्ट की नितान्त आवश्यकता है।

इसके अतिरिक्त एक अन्य कठिनाई भी पैदा हो गई है। अखबारों की खबरों से हमें मालूम हुआ था कि राज्य तीन विषयों–रक्षा-व्यवस्था, परराष्ट्र विषय तथा यातायात (कम्युनिकेशन्स)–के ही संबंध में सम्मिलित हुये हैं। किन्तु श्री आयंगर ने हमें बताया है कि वास्तविक सम्मेलन-पत्र में वस्तुतः 18-20 निश्चित सिरों के नीचे विषय दिये गये हैं।

मैं समझता हूं कि हमें इस तरह के कागजातों की मौजूदगी की कोई खबर नहीं है और मेरा ख्याल है कि उन महत्व के कागज-पत्रों की प्रतियां हमें तुरंत दी जानी चाहियें। इस दृष्टि से यह और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि सूचियों के कुछ विषयों का ताल्लुक राज्यों से होगा। इन महत्वपूर्ण कागजों के बिना, हम यह निश्चय करने की स्थिति में नहीं है कि उक्त सूचियां राज्यों के संबंध में कहां तक लागू हैं।

फिर, आज ही एक वक्ता ने यह भी कहा है कि प्रांतों के लिए लागू होने वाली तथा राज्यों पर लागू होने वाली विभिन्न सूचियों में भेद रखा जाना चाहिये। चूंकि ये दोनों एक में ही मिली हुई हैं, इसलिए उनमें भेद करना तथा यह मालूम करना कि उनमें क्या संशोधन सुझाने चाहियें, कठिन है।

इसके अतिरिक्त, अन्य कठिनाइयां भी हैं। मैं मानता हूं कि मूल प्रस्ताव के प्रस्तावक महोदय ने अपने सुबोध भाषण में सारे विषय को बड़े ही पांडित्य के साथ समझाया है। किंतु यह विषय स्वयं ही बहुत विशिष्ट प्रकार का तथा जटिल है। इसलिए सदस्यों के इन विभिन्न सूचियों तथा विचाराधीन प्रश्न को अच्छी तरह से समझ सकने के लिए, उस पर बड़ी सावधानी से विचार करने की जरूरत है। इन्हीं कारणों से मेरी अर्ज है कि इसका विचार प्रलय के दिन तक के लिए नहीं, जैसा कि सुझाया गया है, पर कुछ समय तक के लिए स्थगित कर दिया जाये। मेरा सुझाव है कि मूल प्रस्ताव के प्रस्तावक महोदय को एक छोटी सी कमेटी नियुक्त किये जाने के लिए राजी हो जाना चाहिये, जो अपनी बैठक करके

[श्री नजीरूद्दीन अहमद]

सारी बातों पर उक्त परिवर्तनों की दृष्टि से विचार कर सके और यह साफ करते हुए कि प्रांतों, राज्यों तथा केन्द्र के लिए लागू होने वाली सूचियों में क्या भेद है, हमें एक पूरी रिपोर्ट दे सके। मैं समझता हूं कि यह एक उचित प्रार्थना है और इसका अभिप्राय कार्य में देरी करने का नहीं है। फुर्ती के साथ कार्य सम्पन्न किये जाने के लिए हम उतने ही उत्सुक हैं जितने कि अन्य लोग और इसलिए मैं सोचता हूं कि जो तरीका मैंने सुझाया है उस पर अमल करके स्थिति सुविधाजनक बनाई जा सकती है। इन्हीं कुछ शब्दों के साथ मेरा निवेदन है कि थोड़ा सा समय दिया जाना चाहिये और हमें अधिक विस्तृत रिपोर्ट प्राप्त होनी चाहिये, ताकि हम सरलता के साथ विषय को समझ सकें।

***अध्यक्षः** अब दीवान चमनलाल बोलेंगे।

श्री अलगू राय शास्त्री (संयुक्त प्रांतः जनरल): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, इस संशोधन पर अब राय ले ली जाये। इस पर अधिक बहस करने की आवश्यकता नहीं। मैं क्लोजर मूव करता हूं। बहुत समय दिया जा चुका है।

***अध्यक्षः** मैं दीवान चमनलाल को बोलने के लिए पहले की बुला चुका हूं। उनके भाषण के बाद मैं बहस बंद करूंगा।

***दीवान चमन लाल** (पूर्वी पंजाबः जनरल): श्रीमान्, बहस सुनने में यह जानकर मुझे आश्चर्य हुआ कि हमारे देश के अति योग्य तथा बुद्धिमान नेता श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर द्वारा पेश किये गये इस प्रस्ताव के संबंध में कुछ गलतफहमी में हैं। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि विचार स्थगित रखने का प्रस्ताव पेश करने से पहले मानों इन लोगों ने रिपोर्ट को पढ़ा तक नहीं है।

सभा के सामने मुख्य प्रश्न यह हैः रिपोर्ट, इस सभा के सामने दो भागों में उपस्थित की गई है, एक अप्रैल के महीने में और दूसरी अगस्त के महीने में। दूसरे शब्दों में, एक 3 जून की घोषणा से पहले और दूसरी उस घोषणा के बाद में। प्रस्ताव यह है कि इस रिपोर्ट के दोनों भागों पर विचार कर लिया जाये।

इस पर मौलाना हसरत मोहानी ने यह प्रश्न उठाया कि जब तक कि यूनियन विधान कमेटी की अंतिम रिपोर्ट सभा के सामने उपस्थित नहीं कर दी जाती, उक्त

रिपोर्ट पर विचार न किया जाना चाहिये। आपको समझना चाहिये कि यह एकदम साधारण बुद्धि में आने वाली बात है कि जब तक कि आप उन लोगों से, जिनका कि इससे संबंध हो, यह न कह दें कि यूनियन के विधान में क्या अधिकार रखे जाने को हैं और जब तक कि आप प्रांतों तथा केन्द्र आदि के बीच अधिकारों का वितरण न कर दें तब तक यूनियन विधान कमेटी की अंतिम रिपोर्ट इस सभा में उपस्थित नहीं की जा सकती। जब तक कि आपको स्वयं अपनी स्थिति का ठीक पता नहीं हो जाता कि आया आपको क्या अधिकार मिलने वाले हैं और प्रांतों को क्या अधिकार मिलने को हैं और समवर्ती सूची में क्या विषय रखे जाने को हैं, तब तक आप कोई अंतिम रिपोर्ट नहीं पेश कर सकते। इसलिए मैं अर्ज करता हूं कि मौलाना हसरत मोहानी द्वारा दिये गये तर्क ही असंगत एवं दोषयुक्त हैं।

मैं समझता हूं कि विचार-स्थगन प्रस्ताव के समर्थन में बोलने वाले दूसरे वक्ता महोदय, कूच बिहार राज्य के प्रतिनिधि हैं। वे उस राज्य के दीवान हैं। वे ऐसे राजनीतिज्ञ हैं, जिनके संबंध में समझा जाता है कि उस राज्य के लोगों का भाग्य उनके हाथ में है। उन्होंने यह असाधारण आपत्ति की: आपने हमें एक रिपोर्ट दी; फिर आपने हमें दूसरी रिपोर्ट दी। हम इन दोनों रिपोर्टों के समझने में असमर्थ हैं। इसलिये यदि एक तीसरी रिपोर्ट दी जाये, तो पहले की दोनों रिपोर्टें समझने में हमें सहायता मिल सकती है। (*हंसी*) मैं यह जरूर अर्ज करूंगा कि श्री गोपालस्वामी आयंगर का प्रस्ताव साधारण-सा है। किसी न किसी प्रकार का संघ-शासन रखने के लिए यह सभा सहमत हो चुकी है और श्री गोपालस्वामी आयंगर हमसे केवल यह निश्चय करने का अनुरोध कर रहे हैं कि इस संघ-शासन के अधिकार क्या होंगे। इस अवस्था में आपको उन अधिकारों के प्रकार तथा परिमाण पर, जो आप चाहते हैं, बहस करने का हक है। आप कह सकते हैं, जैसा कि कुछ लोगों ने कहा भी है कि यूनियन की संघीय सत्ता उल्लिखित तीन विषयों तक ही सीमित रखी जानी चाहिये। पहली रिपोर्ट में आपको इन तीनों विषयों की तफसील बतायी गयी है; वे अधिकार जो केन्द्र, प्रान्तों आदि में स्थिर होंगे। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि उसके मत से, कुछ शेष अधिकार भी हैं जो यूनियन के सुपुर्द किये जा सकते हैं और इनके अलावा कुछ अन्य अधिकार हैं जो 16 मई की योजना के अंतर्गत नहीं पैदा होते थे, जिन्हें भी केन्द्र अपने तई ले सकता है। पहली रिपोर्ट में यही बातें बतायी गयी हैं। उसकी कोई बात संदिग्ध नहीं है और तफसील भी दे दी गयी है।

[दीवान चमनलाल]

दूसरी रिपोर्ट 3 जून वाले वक्तव्य के बाद आयी, जब सभा ने निश्चय किया कि केन्द्र मजबूत होना चाहिये। इसमें केन्द्र और प्रान्तों के बीच अधिकारों का बंटवारा किया गया है और तीन सूचियों-संघीय सूची, प्रान्तीय सूची तथा समवर्ती या सहगामी (कांकरेन्ट) सूची-हमारे सामने रखी गयी हैं। अब क्या इन सूचियों में कोई ऐसी चीज है जिस पर किसी को आपत्ति हो? ये आपत्तियां करने का यही समय है। यदि राज्यों या प्रान्तों द्वारा आप कोई अधिकार केन्द्र के नाम किया जाना पसंद नहीं करते, तो इस विषय में बहस का यही समय है। मैं नहीं समझता कि इस प्रश्न के स्थगित किये जाने की मांग सकारण तथा तर्कयुक्त है। मेरी अर्ज है कि यह तो केवल काम टालने का प्रस्ताव है, जिसका समर्थन किसी उचित तर्क द्वारा नहीं किया जा सकता। हमें रिपोर्ट में दी गयी बातों पर विचार शुरू करना चाहिये।

***अध्यक्षः** विवादान्तक प्रस्ताव हो चुका है। अब मैं यह प्रस्ताव सभा के सामने रखता हूं। प्रश्न है कि-''अब मत लिया जाये।''

विवादान्तक प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः** विचार-स्थगन के प्रस्ताव पर यह जो बहस हुई है, शिष्टता के लिए मुझे इस सभा में उसका उत्तर देना चाहिये। अन्यथा मैं सोच सकता था कि विस्तार के साथ मुझे उत्तर देने की आवश्यकता नहीं है। मैं केवल यही कहना चाहता हूं कि दीवान चमनलाल ने अपने भाषण में जो बातें कहीं हैं, वे विचार-स्थगन प्रस्ताव के समर्थन में दिये गये तर्कों का पूर्ण उत्तर हैं। दीवान चमनलाल ने जो बातें कही हैं, उन्हें मैं मानता हूं और कुछ अधिक कहना नहीं चाहता। श्रीमान्, मेरी प्रार्थना है कि आप इस प्रस्ताव पर मत (वोट) ले लें।

***अध्यक्षः** मौलाना हसरत मोहानी के विचार-स्थगन प्रस्ताव को अब मैं मत लेने के लिए रखता हूं। वह इस प्रकार हैः

''जैसा कि स्वयं पंडित जवाहरलाल नेहरू ने तजवीज किया है, यूनियन विधान की संशोधित एवं अंतिम रिपोर्ट तथा संशोधित लक्ष्य-प्रस्ताव की रिपोर्ट पर भी, विधान-परिषद् के आगामी अधिवेशन में विचार हो जाने से पहले, यूनियन अधिकार कमेटी की रिपोर्ट पर विचार न किया जाये।''

प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं उन संशोधनों को लेता हूं, जिनकी कि सूचना मुझे प्राप्त हो चुकी है। पहला संशोधन श्री डी० पी० खेतान का है। सूची 2 का नम्बर 1।

***श्री डी० पी० खेतान** (पश्चिमी बंगालः जनरल): सभापति महोदय, जहां तक कि श्री गोपालस्वामी आयंगर द्वारा रखे गये प्रस्ताव में केवल दूसरी रिपोर्ट का उल्लेख किया गया था, मैंने एक संशोधन की सूचना दी थी कि......।

***मि० तजम्मुल हुसैनः** मैं एक व्यवस्था संबंधी बात कहने के लिए खड़ा होता हूं। श्री गोपालस्वामी आयंगर के मूल प्रस्ताव पर बहस नहीं हुई है। हमने केवल विचार-स्थगन पर विचार किया था और वह गिर गया। अब हमें मूल प्रस्ताव पर विचार करना चाहिये।

***अध्यक्षः** मूल प्रस्ताव की बहस में, ये संशोधन उठेंगे ही। हां, तो श्री गोपालस्वामी आयंगर द्वारा पेश किये गये मूल प्रस्ताव का यह संशोधन है।

***श्री एन० गोपालस्वामी आयंगरः** रिपोर्ट पर विचार किये जाने के प्रस्ताव को मतदान के लिए रखना शायद पार्लियामेन्टरी पद्धति के अनुकूल होगा; उसके स्वीकार हो जाने पर संशोधनों पर भी एक-एक करके विचार किया जा सकता है। मेरा ख्याल है कि सदस्य महोदय का कहना ठीक है।

***अध्यक्षः** तब मैं यह मूल प्रस्ताव कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये, मत लेने के लिए रखता हूं। क्या कोई सदस्य इस प्रस्ताव पर बोलना चाहते हैं?

***श्री हुसैन इमामः** सभापति महोदय, मेरा विश्वास है कि इस सर्वाधिक महत्वपूर्ण विषय पर हम अत्यधिक महत्व का निश्चय कर रहे हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि शांति एवं स्थिरता के साथ हम इस रिपोर्ट की सारी बातों पर विचार कर लें। श्रीमान्, मैं मुस्लिम लीग पार्टी की ओर से नहीं, बल्कि भारत के एक नागरिक की हैसियत से बोल रहा हूं। मेरा ख्याल है कि मामले के प्रति इस विधान-परिषद् का प्रयास उससे भिन्न होना चाहिये, जो कि श्री गोपालस्वामी आयंगर ने किया है। मैं महसूस करता हूं कि जो लोग पहले से अमीर हैं उन्हें अधिक अमीर न होने दिया जाना चाहिये और जो गरीब हैं, उनकी गरीबी और न बढ़ने दी जानी चाहिये। मेरे कहने का मतलब यह है कि हममें से वे लोग सौभाग्य अथवा दुर्भाग्यवश जो देशी राज्यों में रहते हैं, जहां की शासन-व्यवस्था

[श्री हुसैन इमाम]

में वे बोल नहीं सकते, जहां की विधान-व्यवस्था में कुछ कहने का अधिकार उन्हें नहीं है, पहले से भी अधिक सोचनीय अवस्था में न पड़े रहने दिये जाने चाहियें। स्थिति यह है कि भूतपूर्व ब्रिटिश भारत में आज व्यवस्थापक-मंडल और उनकी व्यवस्था के लिए लोकतंत्र तथा प्रजाप्रिय प्रतिनिधि मौजूद हैं। पर राज्यों में इन तीनों में से एक भी नहीं है। तो भी पैरा 3 में कहा गया है कि देशी राज्यों पर केवल उसी सीमा तक नियंत्रण रहेगा, जहां तक कि वे केन्द्र में सम्मिलित होना पसंद करें। तो ये लोग कौन हैं, जो इसका निश्चय करेंगे? राज्य के शासकों को, जिस प्रकार भी वे चाहें, स्वराज्य का अधिकार दे दिया गया है। हमारे कुछ आधुनिक राज्यों के प्रति मेरे दिल में बहुत इज्जत है। कुछ राज्य ऐसे हैं कि उनकी शासन-व्यवस्था ब्रिटिश भारत से भी अच्छी है और सामाजिक औचित्य तथा सामाजिक समानता के मामलों में जो ब्रिटिश भारत की अगुवायी कर सकते हैं। कुछ देशी राज्य ऐसे हैं कि उनकी तुलना छोटे प्रांतों तथा चीफ-कमिश्नर के इलाकों से की जा सकती है, किंतु पांच सौ से भी कुछ अधिक राज्यों में से अधिकांश केवल भारत-सरकार के राजनीतिज्ञ विभाग के सौजन्य तथा खुशी के कारण ही राज्य कहलाते हैं। श्रीमान्, पहली बात मैं यह चाहता हूं कि देशी राज्यों को जो ये अधिकार तथा विशेषाधिकार दिये जा रहे हैं, वे 562 ही राज्यों को न दिये जाएं। अधिक से अधिक ऐसे दो-तीन दर्जन ही राज्य हैं, जो आर्थिक दृष्टि से प्रांतीय स्वराज्य की समानता कर सकते हों। प्रांतीय स्वराज्य तो हमें कुछ ही राज्यों को देना चाहिये और भारत के अधिकांश राज्यों को या तो अन्य राज्यों में शामिल होकर अपने यूनिट (इकाइयां) बना लेने चाहियें या उन्हें फिर ब्रिटिश भारत में मिला लिया जाना चाहिये। इन निरंकुश शासकों को बम्बई व्यवस्थापक-मंडल या मध्य-प्रांतीय मंत्रिमंडल द्वारा प्रयुक्त अधिकारों से भी अधिक अधिकारों का प्रयोग करने देना हमारी गलती है। प्रजा के प्रतिनिधि भी हैं, किंतु वे भी उन अधिकारों का प्रयोग नहीं कर सकते, जो राज्यों के इन निरंकुश शासकों द्वारा बरते जाते हैं।

देश की रक्षा-व्यवस्था का खर्च केन्द्रीय सरकार को उठाना पड़ता है। रक्षा-व्यवस्था के इस खर्च में देशी राज्य प्रति व्यक्ति के आधार पर या आमदनी के आधार पर क्या हिस्सा बंटाने को तैयार है? उनका कहना है कि प्रांत भी इसमें कोई हिस्सा नहीं बंटा रहे हैं। किंतु ये प्रांत संघीय कर चुकाते हैं, जिन्हें राज्य अपने लिए वसूल करना चाहते हैं। संघीय कर लगाने के राज्यों के अधिकार

छीन लिए जाने चाहिये। इस रिपोर्ट से यह मेरा पहला और बुनियादी मतभेद है। संघ-सत्ता के सिवाय और किसी को भी संघीय-कर न लगाना चाहिये, चाहे वह ब्रिटिश राज्य हों अथवा देशी (भारतीय)। अपनी इस व्यापक उक्ति से मैं भारत के सर्वाधिक आधुनिक राज्य को भी न बरी करूंगा, किंतु इतनी रियायत कर सकता हूं कि मैं देशी राज्यों को उतनी ही मात्रा में अधिकार दिये जाने में सहमत हूं, जितने कि आपने सूची 2 के अंतर्गत प्रांतों को दिये हैं। किसी भी देशी राज्य को उससे अधिक न दिया जाना चाहिये। समवर्ती (कांकरेन्ट) सूची को भी पुराने ब्रिटिश भारत तथा देशी राज्यों दोनों पर समान रूप से लागू होना चाहिये। ब्रिटिश भारत आज विद्यमान नहीं है, पर हम उसकी सारी बुराइयों के उत्तराधिकारी बन रहे हैं। जिनकी कोई हस्ती नहीं है, उन्हें व्यापक अधिकार देकर जो बुराइयां पैदा की गयी थीं, इस सभा की स्वीकृति द्वारा उन्हें प्रतिष्ठित न करना चाहिये। हमें पैरा 3 में इस प्रकार संशोधन करना होगा, ताकि संघीय-कर सब यूनिटों पर लगा सकने की केन्द्र की सर्वोपरि सत्ता उसके क्षेत्र में आ जाये।

श्रीमान्, इस सिलसिले में मैं महत्व की एक बात का भी जिक्र कर देना चाहता हूं। स्वीकृति-पत्र (इंस्ट्रूमेंट आफ ऐक्सेशन) में इस पर जोर दिया गया है कि 16 मई के वक्तव्य से बाहर की शर्तें राज्यों की अनुमति से होनी चाहिये। 16 मई का वक्तव्य रद्द हो गया है। अब उसका अस्तित्व नहीं है। समझौता न होने का वह भी एक कारण था और उसी के कारण 3 जून का वक्तव्य निकाला गया। अन्य हर काम के लिए आपने 16 मई का वक्तव्य रद्द कर दिया है, पर केवल देशी राज्यों के लिए आप उसे जीवित रख रहे हैं। गुटों की व्यवस्था उड़ा दी गई है केन्द्रीय अधिकारों का केन्द्र तथा गुटों के बीच का बंटवारा उड़ा दिया गया है और यूनिटों की संख्या उड़ा दी गई है। हर चीज उड़ा दी गई है और सर्वसत्तायुक्त सभा की हैसियत से हम 16 मई वाले वक्तव्य से बद्ध नहीं हैं। इस युक्ति का सहारा लेना कि 16 मई के वक्तव्य में यह व्यवस्था और वह व्यवस्था थी, गलत है। आपकी ऐसी जो भी व्यवस्था थी, वह सब 14 अगस्त की अर्धरात्रि की कार्रवाई से उड़ गयी है। अब आपके सामने कोई त्रुटि नहीं है। ब्रिटिश-साधारण सभा (हाउस आफ कामन्स) द्वारा जो स्वाधीनता कानून पास किया गया है, वह भी हमारे सामने है और हम उसमें भी संशोधन कर सकते हैं। आपको इसका अधिकार प्रदान किया गया है। इसलिए, श्रीमान्, मेरा दावा है कि 16 मई के वक्तव्य के पीछे सहारा लेना उचित नहीं है। यदि राज्य शामिल होने को तैयार नहीं हैं तो मेरी समझ से यह अच्छा होगा कि वे बाहर रहें; आर्थिक दबाव तथा अन्य सबल अनुरोधात्मक तरीकों से जिनका कि प्रयोग केन्द्रीय सरकार कर सकती है, हम उन्हें ठीक रास्ते पर ला सकते हैं। पर हम उनसे क्या कराना

[श्री हुसैन इमाम]

चाहते हैं? हम किसी भी प्रकार से उनके अधिकार हड़पना नहीं चाहते। हम उन्हें वही बनाना चाहते हैं, जो वे वास्तव में हैं, अर्थात् एक संघ-शासन की इकाइयां (यूनिट)। इकाइयों को विभिन्न अधिकारों, कार्यो तथा कर-व्यवस्था का प्रयोग करते हमने कभी नहीं सुना। यह एक ऐसी बात है जो लोकतंत्र के सिद्धांतों के भी बहुत कुछ अनुकूल होगी और यही कारण है कि विधान-परिषद् के अपने मित्रों से मेरी प्रार्थना है कि इस मामले पर वे शांतिपूर्वक विचार करें और देशी राज्यों के प्रति किसी द्वेष या दुर्भाव से प्रेरित न होकर वे इसका निश्चय करें। यह हमें खुले दिल और ईमानदारी से करना चाहिये। और देशी राज्यों को भी ईमानदार रहना चाहिये। वे ऐसा अधिकार प्राप्त करने का दावा ही क्यों करें जिसका दावा मेरे मित्र पंडित शुक्ल अपने मध्य-प्रांत तक के लिए नहीं करते? यदि वे अपने अधिकारों से संतुष्ट हैं, तो रीवां या मध्य-प्रांत के इलाके में पड़ने वाले अन्य राज्य अधिक बड़े अधिकार क्यों चाहते हैं? यह केवल धर्म तथा न्याय की बात है। इसका अर्थ है कि इन दो बातों में सामंजस्य होना चाहिये। चाहे कर-व्यवस्था हो या विधान-व्यवस्था, देशी राज्यों को यूनिटों से अधिक अधिकार कदापि न मिलने चाहियें।

*__अध्यक्ष:__ मालूम देता है कि अन्य कोई वक्ता बोलने को राजी नहीं है। अतएव मैं प्रस्ताव को मतदान के लिए रखता हूं। वास्तव में अब 1 बजने में सिर्फ 5 मिनट रह गए हैं।

*__एक माननीय सदस्य:__ बहस की समाप्ति (क्लोजर)।

*__दूसरा माननीय सदस्य:__ नहीं श्रीमान्, ऐसा बहुत ही अनुचित होगा।

*__अध्यक्ष:__ इस संबंध में एक वक्ता बोले हैं। क्या सभा की इच्छा है कि बहस और होनी चाहिये।

*__अनेक माननीय सदस्य:__ हां, श्रीमान्।

*__अध्यक्ष:__ जो भी बोलना चाहता हो, पांच मिनट तक बोल सकता है। पांच मिनट अब भी बाकी हैं।

*__श्री के॰ संतानम्:__ सभापति महोदय, अधिकार-वितरण की जो व्यवस्था यूनियन-पावर्स-कमेटी द्वारा हमारे सामने रखी गई है, उसकी तफसील में मैं जाना नहीं चाहता। जब मदों पर बहस होगी, तो हर मद के संबंध में अपनी बात मैं

स्वयं कहूंगा; किन्तु कुछ आम बातें भी हैं, जिनका हमें इन मदों का विचार करते समय ख्याल रखना है। दयनीय बात है कि पिछले 6 महीनों के भीतर हमारी राजनीति बहुत ही डांवाडोल रही है, जिसका नतीजा यह हुआ है कि स्वयं हमारे नेताओं को भी अपने विचार एक चरम-सीमा से लेकर दूसरी चरमता तक दौड़ाने पड़े हैं। मंत्रि-मिशन-योजना का विचार यह था कि यूनिट पूर्णतः स्वायत्त और सर्व-सत्ता-युक्त भी रहने चाहिये तथा उन्हें अपने अधिकार का थोड़ा अंश केन्द्र को सौंप देना चाहिये। निस्संदेह उसमें गुट-विधान की जटिलता थी और सारी चीज स्पष्ट छोड़ दी गई थी; पर जहां तक केन्द्रीय सरकार का संबंध था, उसके अधिकार बहुत ही सीमित रहने थे। हमारे कुछ नेता एक कमेटी में, इन अधिकारों की व्याख्या करने के लिए भी रखे गये थे और उन्होंने इन अधिकारों के विस्तार की, जहां तक कि वे विस्तृत हो सकते थे पूरी कोशिश की। मुझे संदेह है कि मंत्रि-मिशन-योजना के अमल मे आने पर वास्तविक परीक्षा में उक्त विस्तार शायद ही टिक पाता। किन्तु 3 जून वाली योजना तथा तज्जन्य स्वाधीनता कानून से स्थिति एक बारगी बदल गई। अब स्थिति यह है कि हमारा केन्द्र प्रायः यूनिटरी (संयुक्त शासनात्मक) है, जो कुछ अधिकार प्रांतों कों सौंपने का यत्न कर रहा है, और यूनियन पावर्स-कमेटी की सारी योजना इसी प्रणाली पर आधारित हैं। इसने भारतीय-शासन-विधान को अपना आधार बनाने का यत्न किया है और यह विचार किया है कि कौनसी मदें प्रांतीय सूची से समवर्ती सूची में और संघ-सूची में परिवर्तित की जा सकती हैं। मुझे भय है कि उसने इस समस्या को गलत तरह से हल करना चाहा है। इस देश के लिए इतनी मजबूत सरकार रखे जाने का मैं भी उत्सुक हूं, किंतु केन्द्र की मजबूती का मेरा विचार संभवतः उससे भिन्न है, जो यूनियन अधिकार कमेटी की रिपोर्ट में दिया गया है। मैं नहीं चाहता कि हर चीज के लिए केन्द्रीय सरकार ही उत्तरदायी बनायी जाये। प्रांतों के लोगों के कल्याण का प्राथमिक उत्तरदायित्व प्रांतीय सरकारों पर रहना चाहिये। केन्द्रीय सरकार का उत्तरदायित्व केवल सर्व-भारतीय मामलों में ही रहना और बरता जाना चाहिये। अतएव, एक केन्द्र की शक्ति-शालीनता, सर्व-भारतीय विषयों के प्रति न केवल उसके अधिकारों की पर्याप्तता, वरन् उन विषयों के प्रति जो सर्व-भारतीय क्षेत्र के नहीं बल्कि प्रांतीय क्षेत्र के हैं, उत्तरदायित्व से मुक्ति में भी है। अधिकारों के इस सकारात्मक एवं नकारात्मक सीमाकरण में ही एक वास्तविक संघ-शासन प्रणाली स्थिर होती है और मेरे विचार से कमेटी की रिपोर्ट द्वारा जिस रूप में संघीय अधिकारों की व्याख्या की गई है वह गलत है। उसके द्वारा केन्द्र पर हर प्रकार के अधिकारों का बोझ रखने का प्रयत्न किया गया है, जो कदापि न किया

[श्री के. सन्तानम्]

जाना चाहिये था। उदाहरण के लिए 'आवारगी' (वैग्रैंसी) को ही लीजिये। मैं नहीं समझ सकता कि 'आवारगी' को प्रांतीय सूची में से निकाल कर समवर्ती सूची में क्यों रखा गया है। क्या आप चाहते हैं कि सारा भारत आवारों के लिए परेशान हो। प्राय: एक धारणा-सी जम गई है कि हर प्रकार के अधिकार केन्द्र को देकर हम उसे शक्तिशाली बना सकते हैं। एक और विषय आर्थिक आयोजना का है, जो भी समवर्ती सूची में रखा गया है। मैं जानता हूं कि आयोजन एक वह अत्यधिक महत्वूर्ण कार्य है, जिसमें केन्द्रीय तथा प्रांतीय सरकारें पहले से लगी हुई हैं, और केन्द्रीय व प्रांतीय नीति में एकरूपता रखने की हमें कुछ कोशिश अवश्य करनी चाहिये। किंतु क्या उसे समवर्ती सूची में रखना उचित तरीका है, जिससे कि केन्द्र कोई भी अधिकार हथिया सकता तथा प्रांतीय विषयों के क्षेत्र में उदाहरणार्थ कृषि के क्षेत्र में भी, किसी यूनिट का अपने मन का आयोजन रोक सकता है? डेरियों के मामले तक में, केन्द्र बिल पास कर सकता और अपने इच्छानुसार अपने लिये अधिकार ले सकता है। मेरा कहना है कि यूनियन विधान के एक पृथक अंश में यह व्यवस्था की जानी चाहिये थी कि आयोजन संबंधी कौन से अधिकार यूनियन सरकार को रखने चाहियें और आयोजन संबंधी कौन से अधिकार प्रांतीय सरकार को मिलने चाहियें, और परामर्श तथा समिति के द्वारा इन अधिकारों में एक सूत्रीकरण किस प्रकार स्थापित रखा जाना चाहिये-न कि केवल यह कह देना काफी था कि आयोजन की यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण मद समवर्ती सूची की मदों में भी रखी गई है।

अब, अर्थ-व्यवस्था संबंधी वितरण लीजिये। मालगुजारी और मादक द्रव्यों के आबकारी-कर जैसी कम पड़ती जाने वाली एक-दो मदों को छोड़कर, अन्य सारी कर-व्यवस्था संघ-सूची में रखी गई है। रिपोर्ट में कहा गया है कि अंश-निर्धारण की कुछ व्यवस्था रहनी चाहिये। पर जब तक मदों के साथ ही वसूली के हिस्सा बांट का तरीका भी नहीं दिया जाता, तब तक प्रांतों को केन्द्र के दरवाजे का भिखारी ही समझना चाहिये। मैं ऐसा कोई भी विधान नहीं चाहता, जिससे यूनिट को केन्द्र के पास जाकर यह कहना पड़े कि ''मैं अपने लोगों की शिक्षा-व्यवस्था नहीं करा सकता; मैं उनके लिए सफाई का बंदोबस्त नहीं कर सकता; सड़कें सुधारने के लिए, उद्योग-धंधों के लिए, आरम्भिक शिक्षा के लिए मुझे दान दीजिये।'' भले ही हम संघ-शासन (फेडरल) प्रणाली हटा दें और संयुक्त-शासन (यूनिटरी) प्रणाली अपनायें। आज हमारी अर्थ-व्यवस्था संबंधी स्थिति यह है कि चाहे आप केन्द्र को कर-व्यवस्था संबंधी सारे ही अधिकार क्यों न दे दें, पर केन्द्र के पास

पर्याप्त अर्थ (रुपया) न होगा। फिर चाहे आप अर्थ-व्यवस्था संबंधी सारे अधिकार प्रांतों को ही दे दें, पर प्रांतों के पास भी काफी रुपया न होगा। क्योंकि, आरम्भिक शिक्षा-व्यवस्था के लिए ही अकेले, 'सार्जेंट कमेटी' की रिपोर्ट के अनुसार, केन्द्र तथा प्रांतों के सारे अर्थ की आवश्यकता पड़ेगी। इसी प्रकार यदि आप 'भोर कमेटी' के अनुसार सार्वजनिक स्वास्थ्य-व्यवस्था को लेते हैं, तो उसके लिए भी 300 करोड़ रुपयों की जरूरत होगी, जो रकम प्रांतीय तथा केन्द्रीय करों से वसूल होने वाली सारी रकमों का जोड़ है। यदि आप रक्षा-व्यवस्था को लें, तो वह कौनसी रकम है जिसे हम केवल जल-सेना या वायु-सेना या स्थल-सेना की एक मद पर ही खर्च नहीं कर सकते? आज हमारे पास इन मदों में से किसी एक के लिए भी काफी पैसा नहीं है। अतएव, विधान द्वारा न्यायोचित वितरण हमारे लिए आवश्यक है और उसे भविष्य में निर्मित की जाने वाली किसी टालने वाली रचना पर छोड़ देना ठीक नहीं है। हमें मौजूदा अर्थ-व्यवस्था का, जिस रूप में भी वह है, उचित वितरण करके कार्य आरम्भ करना चाहिये और फिर उन साधनों को बढ़ाना चाहिये। यदि अधिकारों का यह वितरण बिना अधिक छानबीन तथा सावधान परिवर्तन-संशोधन के स्वीकार कर लिया गया, तो तीन वर्षों के ही समय में सारे प्रांत केन्द्र के विरुद्ध विद्रोह कर देंगे और केन्द्रीय मंत्रिमंडल बड़ी ही शोचनीय अवस्था में पड़ जायेगा। हमें ऐसा विधान तैयार करना चाहिये जिसके अंतर्गत केन्द्र कह सके-''यह हमारा काम नहीं है, वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित आपका गवर्नर मौजूद है, आपके अपने मंत्री भी हैं, उनके पास जाइये; हम उन्हें राजस्व के लचीले साधन दे चुके हैं।'' संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में क्या हो रहा है? केन्द्र तथा राज्य दोनों ही सब प्रकार के कर लगा सकते हैं। वे आय-कर लगा सकते हैं। प्रजा की इच्छा के सिवा, उन्हें इसमें रोकने वाला कोई नहीं है। वहां के मंत्री अथवा गवर्नर प्रजा के पास जाकर उनसे कह सकते हैं-''कर बिठाने के अधिकार हमें प्राप्त हैं; कर दीजिये और हम आपके लिए मनोरंजन की, सरकसों की तथा जो कुछ भी आप चाहेंगे उसकी व्यवस्था करेंगे।'' इसके बजाय यहां पर उन्हें यह कहना पड़ेगा-''हम आपके मनोरंजन की व्यवस्था करेंगे; केन्द्र को हमें रुपया देने दीजिये।'' यह एक शोचनीय अवस्था होगी, और केन्द्र के लिए एक कमजोर स्थिति होगी। जो नेता इस रिपोर्ट का काम संभाल रहे हैं, उन्हें मैं सचेत कर देना चाहता हूं कि वे सावधान हो जायें और सब प्रकार के विषयों को केन्द्र में ही न जोड़ते जायें।

उद्योग-धंधों का मामला लीजिये। रक्षा-संबंधी उद्योग एक केन्द्रीय मद है। दूसरी केन्द्रीय मद में 'कोई भी उद्योग' रखा गया है, 'जिसे कि संघ-व्यवस्थापक-मंडल, एक संघीय उद्योग घोषित करे'। प्रांतीय सूची में 'और कोई भी उद्योग' शामिल

[श्री के. सन्तानम्]

किया गया है, जिसे कि 'संघ व्यवस्थापक-मंडल' ने उक्त मद के अंतर्गत या रक्षा-संबंधी मद के अंतर्गत या रक्षा-संबंधी तैयारी के अंतर्गत, अपने लिए न ले लिया हो। प्रांत करेंगे क्या? उनसे कहा जायेगा कि अमुक उद्योग रक्षा-संबंधी तैयारी के अंदर या रक्षा-संबंधी उद्योगों के अंदर या अन्य उद्योग में जिसकी कि घोषणा संघ कानून द्वारा संघीय उद्योग होने की की जा चुकी है, आ जाता है और उसकी उन्नति का दायित्व उनका नहीं है। उनसे कहा जायेगा कि केन्द्र के पास जाइये। क्या यही तरीका है जिसके अनुसार हम कार्य करना चाहते हैं? नहीं, श्रीमान्, यदि आप कहना चाहें कि इस्पात तथा ऐसे ही अन्य उद्योग केन्द्र के नाम कर दिये जायेंगे और ग्रामोद्योग, मध्यम श्रेणी के उद्योग तथा खाद्य-संबंधी उद्योग जैसे अन्य धंधे प्रांतों के नाम कर दिये जायेंगे, तो यह स्वीकार्य होगा।

सदैव यही तर्क किया जाता है-"आखिर, केन्द्र में कौन लोग हैं? वे आपके ही प्रतिनिधि हैं। आप उनसे यह अपेक्षा क्यों करते हैं कि वे ऐसी बात करेंगे जिसे आप नहीं चाहते।" मैं समझता हूं कि बहुधा यह एक गलती ही होती है। केन्द्रीय व्यवस्थापक मंडल का एक सदस्य होने के नाते, केन्द्र के लिए मैंने सदा ही अधिक रुपया चाहा है। यदि आप मुझे प्रांतीय व्यवस्थापक मंडल में रख दें, तो मैं प्रांतों के लिए अधिक रुपया चाहूंगा। समाज-संगठन की भावना एक अनिवार्य वस्तु है और वह हमें परास्त कर देती तथा हम पर विजय पा जाती है। इसलिए हमें देखना चाहिये कि यूनिट के अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण केन्द्र न करने पाये और केन्द्र के अधिकारों का अतिक्रमण यूनिट द्वारा न हो सके। चीजों को केवल यथार्थ एवं स्पष्ट बनाकर ही, उन्हें कानूनी अदालतों के निर्णय-योग्य बनाकर ही, आप संघ-शासन प्रणाली को अखंड रख सकते हैं। सब प्रकार के उद्योग, रक्षा संबंधी उद्योग तथा वे उद्योग जो संघ-कानून द्वारा संघीय घोषित किये जायें, केंद्र के हाथ में रखने से सारी प्रगति अवरुद्ध हो जायेगी।

सन् 1935 का भारत-शासन-विधान पास करते समय तथा सन् 1921 का कानून (एक्ट) पास करते समय, पार्लियामेंट ने सदा यही कहा-"हमने विशेष अधिकार तथा विवेक से काम लाने के अधिकार दिये हैं, पर हम नहीं समझते कि उन्हें प्रयोग करने की जरूरत कभी पड़ेगी।" किन्तु क्या हमें ऐसा कोई एक भी अधिकार देखने को मिला, जिसका प्रयोग ही नहीं बल्कि अधिक से अधिक सीमा तक का प्रयोग, न किया गया हो? दफा 93 चरम सीमा की एक दफा समझा जाती थी। पार्लियामेंट में कहा गया था कि ऐसा कोई न होगा जो विधान को स्थगित कर

दे। किन्तु पहले ही दिन केवल एक टेकनिकल आधार पर गवर्नर ने एक आज्ञा पर हस्ताक्षर मात्र कर दिये और शासन-व्यवस्था अपने हाथ में ले ली।

***श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** क्या मैं माननीय सदस्य से पूछ सकता हूं कि क्या पिछले कुछ वर्षों में किन्हीं बड़े उद्योगों को केन्द्र ने अपने अधीन ले लिया है?

***श्री के॰ सन्तानम्:** पिछले कुछ वर्षों में केन्द्रीय सरकार निश्चेष्ट अवस्था में रही है। नीति-कमेटी की रिपोर्टों द्वारा, हर प्रकार के उद्योग केन्द्रीय नियंत्रण में ले लिये जाने की सिफारिश की गई, पर कानून बनाने की व्यवस्था न हो सकी। निश्चेष्टता की यह अवस्था ही अनेक उद्योगों के केन्द्र के अधीन न लिये जाने की उत्तरदायिनी थी। मैं कहता हूं कि जब तक नई सरकार पर भी निश्चेष्टता की ऐसी ही कोई अवस्था नहीं आती, तब तक अनेक उद्योगों के उसके अपने अधीन न लेने पर मुझे आश्चर्य होगा। एक व्यक्ति कह सकता है कि बम्बई का कपड़े का उद्योग केन्द्र के अधीन लिया जा सकता है और वह ले लिया जायेगा। दूसरा व्यक्ति कहेगा कि दूध में मेल रहता है, अत: हमें डेरियों (दुग्धशालाओं) को ले लेना चाहिये। अधिकार की कोई सीमा नहीं है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में भी संघ-सरकार अधिकाधिक अधिकार लेती चली जा रही है।

इसलिये श्रीमान्, मैं कहता हूं कि हम सावधान हो जायें; सारी ताकत हम केन्द्र को ही न सौंप दें। यूनिटों के लिए कुछ कार्य, कुछ उत्तरदायित्व तथा कुछ साधन रहने दीजिये। जब तक हम ऐसा न करेंगे, हमारे विधान का आधार मजबूत न होगा और सारी इमारत बैठ जायेगी। यही चेतावनी है, जो मैं यहां देना चाहता हूं।

स्वाधीनता कानून, अनुकूलन, नियम आदि का विचार करने के लिए कमेटी के सदस्यों के संबंध में घोषणा

***अध्यक्ष:** कल इस संबंध में फिर बहस होगी।

किन्तु बैठक स्थगित होने से पहले मैं एक घोषणा करना चाहता हूं। भारतीय स्वाधीनता कानून, 1935, के भारत-शासन-विधान के अनुकूलन (एडेप्टेशन), व्यवस्थापिका सभा (लेजिस्लेटिव असेम्बली) के नियमों तथा स्थायी आदेशों, विधान-परिषद् में चालू नियमों तथा स्थायी आदेशों आदि पर विचार करने और निम्न बातों के संबंध में रिपोर्ट देने के लिये श्री मावलंकर, मि॰ हुसैन इमाम,

[अध्यक्ष]

श्री पुरुषोत्तमदास टंडन, डा॰ अम्बेडकर, श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर, श्री गोपालस्वामी आयंगर तथा श्री बी॰एल॰ मित्तर की एक कमेटी नियुक्त की जाती है:

(1) भारतीय स्वाधीनता कानून के अधीन, विधान-परिषद् का ठीक काम क्या है?

(2) एक विधान-निर्मात्री संस्था के रूप में विधान-परिषद् के कार्य में और उसके अन्य कार्य में विभेद करना क्या संभव है और क्या विधान-परिषद् पहले कार्य के लिये निश्चित दिन अथवा अवधियां अलग नियत कर सकती है?

(3) विधान-परिषद् में देशी रियासतों का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्यों को, क्या उन कार्रवाइयों में, जो विधान-निर्माण कार्य अथवा उन विषयों से जिनके संबंध में उक्त रियासतें सम्मिलित हुई हैं, ताल्लुक नहीं रखतीं, भाग लेने का अधिकार दिया जाना चाहिये?

(4) विधान-परिषद् या उसके सभापति द्वारा, क्या नये नियम या स्थायी आदेश, यदि कोई बनाने हों, बनाये जाने चाहियें और मौजूदा 'नियमों' (रूल्स) या स्थायी आदेशों (स्टैंडिंग आर्डर्स) में क्या संशोधन, यदि कोई करने हों, किये जाने चाहियें?

मैं समझता हूं कि इस बैठक के शुरू-शुरू में जिन बातों पर बहस हुई थी, वे इसके अन्दर आ गई हैं। मैं यह कमेटी नियुक्त कर रहा हूं और अपेक्षा करता हूं कि कमेटी हमें अपनी रिपोर्ट बहुत जल्द दे देगी।

***डा. पी॰एस॰ देशमुख** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): श्रीमान्, एक बात है जिसका सुझाव मैं देना चाहता हूं; वह है, उसी एक सदस्य के दो व्यवस्थापिका सभाओं का सदस्य होने की शक्यता अथवा अशक्यता की जांच। इसके बाद से, हम लोग....।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि अनुकूलन (एडेप्टेशन्स) के अन्तर्गत यह आ जाती है।

कल दिन के दस बजे तक के लिये बैठक स्थगित की जाती है।

इसके बाद परिषद् की बैठक बृहस्पतिवार, 21 अगस्त, 1947 ई॰ के दस बजे दिन तक के लिए स्थगित हो गई।

गोपनीय

परिशिष्ट

भारतीय विधान-परिषद्

संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट

प्रेषक:

पंडित जवाहरलाल नेहरू,

सभापति, संघीय अधिकार-समिति।

सेवा में,

अध्यक्ष,

भारतीय विधान-परिषद्।

श्रीमान्,

28 अप्रैल, सन् 1947 ई॰ को हमारी समिति की ओर से माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर ने हमारी पहली रिपोर्ट विधान-परिषद् में पेश की थी। उसे पेश करते समय उन्होंने बताया कि राजनैतिक स्थिति में क्या परिवर्तन हो रहे हैं और उनका समिति की सिफारिशों पर क्या प्रभाव पड़ सकता है और साथ ही उन्होंने आगे चलकर किसी तारीख को एक पूरक रिपोर्ट करने की आज्ञा मांगी थी। सभा ने कृपा करके हमें यह आज्ञा दे दी थी।

2. तब से कई महत्वपूर्ण परिवर्तन हो गये हैं। देश के कुछ भाग एक अलग राज्य स्थापित करने के उद्देश्य से पृथक हो रहे हैं और 16 मई के वक्तव्य में जो योजना प्रस्तावित की गई थी और जिसके आधार पर यह समिति कार्य कर रही थी उसके बहुत-से आवश्यक अंग अब प्रयोग में नहीं हैं। विशेषतया संघीय अधिकारों की जो सीमा निर्धारित की गई थी, उसके अंदर काम करने के लिए अब हम बाध्य नहीं हैं। इसलिए सबसे पहले हमने जिस विषय पर विचार किया, वह यह था कि बदली हुई परिस्थिति में इन अधिकारों की सीमा को अधिक विस्तृत क्यों न किया जाये। इसके संबंध में निर्णय करने में हमें कोई कठिनाई नहीं हुई। मंत्रि-प्रतिनिधि-मंडल की योजना में केंद्रीय अधिकारों की सीमा को कठोरता से निर्धारित किया गया था, परन्तु यद्यपि इस प्रकार की व्यवस्था देश के शासन

प्रबंध के हित-साधन के विपरीत थी परन्तु हमारे विचार से सभा ने उसे मुस्लिम लीग को अपने साथ लेने के लिये ही समझौते के रूप में स्वीकार किया था। अब चूंकि विभाजन के बारे में निर्णय हो चुका है हम सबका यही मत है कि यदि हम अल्पशक्ति केन्द्र की व्यवस्था करें जो न तो शांति की रक्षा कर सके न सभी से संबंध रखने वाले मामलों का एकीकरण कर सके और न अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में सारे देश के मत को प्रतिध्वनित कर सके तो इससे देश के हितों को बहुत हानि पहुंचेगी। साथ ही हमें इस संबंध में कुछ भी संदेह नहीं है कि कई ऐसे मामले हैं जिनके संबंध में अधिकार केवल प्रदेशों को ही प्राप्त होना चाहिये और एक सत्तात्मक राज्य के सिद्धांत के आधार पर विधान-निर्माण करना राजनैतिक तथा शासन-व्यवस्था की दृष्टि से पृष्ठगमन ही होगा। इसलिये हमने यह निर्णय किया है और यही निर्णय संघीय-विधान-समिति ने भी किया है कि हमारे विधान का सबसे अच्छा ढांचा यही होगा कि एक संघ हो और एक शक्तिशाली केन्द्र हो। केन्द्र और प्रदेशों के बीच अधिकार विभाजन के संबंध में हमारे विचार से सबसे संतोषजनक व्यवस्था यही होगी कि तीन सर्वांगीण सूचियां तैयार की जायें जो सन् 1935 ई० के भारत सरकार के कानून के अनुरूप हों अर्थात् संघीय, प्रांतीय तथा सहगामी। इसलिये हमने तीन इस प्रकार की सूचियां तैयार की हैं और ये परिशिष्ट के रूप में दी गई हैं।

हमारे विचार से अवशिष्ट अधिकार केन्द्र को ही प्राप्त होने चाहियें। परन्तु जो सूचियां हमने तैयार की हैं, वे सर्वांगीण हैं। इसलिये अवशिष्ट अधिकार केवल उन मामलों के संबंध में हो सकते हैं जिनका यद्यपि भविष्य में वर्गीकरण हो जाये, परन्तु उनके बारे में इस समय यह नहीं कहा जा सकता कि वे किस वर्ग के अधीन आते हैं और इसलिये वे इन सूचियों में सम्मिलित नहीं किये जा सकते।

3. हमने जो योजना प्रस्तावित की है उसमें भारतीय रियासतों की स्थिति का भी स्पष्टीकरण आवश्यक है। जो रियासतें विधान-परिषद् में सम्मिलित हुई हैं वे 16 मई के वक्तव्य के आधार पर ही सम्मिलित हुई हैं। उनमें से कुछ ने यह इच्छा प्रकट की है कि उस वक्तव्य में जिन अधिकारों को देने की जो व्यवस्था है उससे अधिक अधिकार वे केन्द्र को सौंपने के लिए तैयार हैं। परन्तु हम यह बता देना आवश्यक समझते हैं कि यदि कोई ऐसे विषय, जो 16 मई के वक्तव्य में सम्मिलित नहीं हैं, संघीय सूची में दे दिये गये हैं तो वे रियासतों के संबंध में उनकी स्वेच्छा से ही प्रयोग में लाये जायेंगे। इससे यह स्पष्ट है कि अवशिष्ट अधिकार उस समय तक उन्हीं को प्राप्त होंगे जब तक कि वे उन्हें केन्द्र को न सौंपना चाहें।

4. हम यह सिफारिश करते हैं कि विधान में संघीय सरकार को संघ के अंदर उन विषयों के संबंध में अधिकार प्रयोग में लाने का अधिकार दिया जाना चाहिये जो उसको एक या एक से अधिक प्रदेशों ने सौंपे हों ताकि यदि रियासतें और प्रांत चाहे तो वे केन्द्र को अधिकार सौंप सकें। यह स्पष्ट है कि इनके संबंध में केवल उन्हीं प्रदेशों में कानून प्रयोग में आयेंगे जिन्होंने ये विषय सौंपे हों या जो बाद को कानून को स्वीकार कर लें। यह व्यवस्था आस्ट्रेलिया की प्रणाली के आधार पर रखी गई है, जैसी कि वह आस्ट्रेलिया की धारा 51 (37) में निर्धारित है।

5. संघीय सूची में हमने "भारतीय रियासतों में निर्मित और नियुक्त सशस्त्र सेनाओं की जनशक्ति, उनका संगठन तथा नियंत्रण" की मद को रखा है। हमने यह इस उद्देश्य से किया है कि इन सेनाओं का इस समय जिस प्रकार एकीकरण होता है और जिस प्रकार इन पर नियंत्रण रखा जाता है वह उसी प्रकार रहे।

6. हम सिफारिश करते हैं कि हमने अपनी पिछली रिपोर्ट के पैरा 2-घ में संघ द्वारा कर लगाने के बारे में जो प्रस्ताव किये हैं उन्हें यह सभा स्वीकार कर ले। परन्तु यह स्पष्ट है कि जिन करों का हमने स्पष्टीकरण किया है उन सब की आय को संघ के हाथ में रखने से प्रदेशों की आर्थिक स्थिति डांवाडोल हो जायेगी और कुछ की तो बहुत ही डांवाडोल हो जायेगी और इसलिये हम यह सिफारिश करते हैं कि इनमें से कुछ करों की आय को उस आधार पर प्रदेशों को देने या उनका विभाजन करने की व्यवस्था की जाये जिसे कि संघ समय-समय पर निश्चित करे।

आपका आज्ञाकारी सेवक

नई दिल्ली, जवाहरलाल नेहरू,

5 जुलाई, सन् 1947 ई० सभापति।

संबंधित सूची-पत्र

सूची 1–संघीय विधायी सूची

(1) संघ के प्रदेशों और उसके प्रत्येक अंग की रक्षा और साधारणतया रक्षा की सभी तैयारी और साथ ही ऐसे सब कार्य जो युद्ध-काल में सफलता से युद्ध-संचालन के लिये आवश्यक हों और युद्ध समाप्त होने पर प्रभावपूर्ण ढंग से सेना का विघटन।

(2) रक्षा के लिये भूमि को अपने अधिकार में लेना, जिसमें काम सिखाना और गश्त लगाना भी सम्मिलित है।

(3) केन्द्रीय इंटेलिजेंस ब्यूरो।

(4) राज्य के हित के लिये संघ के प्रदेशों में रोकथाम के लिये हिरासत में रखना।

(5) संघ के प्रदेशों की रक्षा के लिये और संघ के तथा उसके प्रदेशों के कानूनों को प्रयोग में लाने के लिये जल, थल और आकाश-सेना का निर्माण, उनको काम सिखाना, उनका भरण-पोषण और उन पर नियंत्रण; भारतीय रियासतों में निर्मित तथा नियुक्त सशस्त्र सेनाओं की जनसंख्या, उनका संगठन और उन पर नियंत्रण।

(6) रक्षा-संबंधी उद्योग-धंधे।

(7) जलसेना, थलसेना और आकाश-सेना से संबंध रखने वाले कल-कारखाने।

(8) फौजी छावनी वाले क्षेत्रों में स्थानीय स्वशासन, इनके अधिकारियों की स्थापना और उनके अधिकार तथा इन क्षेत्रों में वासस्थान संबंधी व्यवस्था और इन क्षेत्रों की सीमाबंदी।

(9) हथियार, बारूद वाले हथियार, गोली-बारूद और विस्फोटक पदार्थ।

(10) परमाणु शक्ति और ऐसे खनिज साधन जो इसके उत्पादन के लिये आवश्यक हैं।

(11) वैदेशिक मामले, ऐसे मामले जिनसे संघीय सरकार का किसी दूसरे देश से संबंध पड़ता हो।

(12) कूटनीति, दूतावास और व्यापार संबंधी प्रतिनिधित्व।

(13) संयुक्त राष्ट्र संघ।

(14) अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संघों तथा अन्य संस्थाओं में सम्मिलित होना और उनके निर्णयों को कार्यान्वित करना।

(15) युद्ध और शांति।

(16) दूसरे देशों के साथ संधि और समझौते करना तथा उनको कार्यान्वित करना।

(17) दूसरे देशों के साथ व्यवसाय-वाणिज्य।

(18) वैदेशिक ऋण।

(19) नागरिकता, देशीकरण और विदेशी।

(20) अपराधी भगोड़ों का आदान-प्रदान।

(21) पासपोर्ट और विसाज (विदेश-यात्रा के लिये और विदेश के यात्रियों को प्रमाण-पत्र)।

(22) वैदेशिक अधिकार सीमा।

(23) राष्ट्रों के कानूनों के विरुद्ध सामुद्रिक मार्गों में डकैती और अपराध तथा आकाश-मार्ग में अपराध।

(24) संघ के प्रदेशों में आने देना तथा वहां से बाहर प्रवास और निष्कासन; भारत के बाहर यात्रायें।

(25) बन्दरगाहों में क्वारेंटीन की व्यवस्था; नाविकों और नौसेना के अस्पताल और बन्दरगाहों में क्वारेंटीन व्यवस्था से संबंधित अस्पताल।

(26) संघ-सरकार द्वारा निर्धारित चुंगी-सीमा के अंदर और बाहर आयात तथा निर्यात।

(27) वे संस्थाएं जो 15 अगस्त, सन् 1947 ई० को इम्पीरियल लाइब्रेरी, इंडियन म्यूजियम, इम्पीरियल वार म्यूजियम, विक्टोरिया मेमोरियल के नाम से कहे जाते

थे और कोई अन्य संस्थायें जो संघीय कानून द्वारा राष्ट्रीय महत्व की संस्थाएं घोषित की जायें।

(28) वे संस्थाएं जो 15 अगस्त, 1947 ई॰ को बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी और अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी के नाम से कही जाती थी।

(29) आकाश-मार्ग।

(30) थलमार्ग और जलमार्ग जिन्हें संघीय सरकार ने संघीय थलमार्ग और जलमार्ग घोषित किया हो।

(31) जहां तक मशीन से चलने वाले जहाजों का संबंध है, देश के भीतर उन जलमार्गों में, जिन्हें संघीय सरकार ने संघीय जलमार्ग घोषित कर दिया हो, जहाज चलाना और जहाजी तिजारत करना; ऐसे जलमार्गों के यातायात संबंधी नियम तथा इन जल-मार्गों से माल और मुसाफिरों को ले जाना।

(32) (क) डाक और तार; मगर शर्त यह है कि इस विधान के प्रयोग में आने पर किसी रियासती प्रदेश को जो भी अधिकार प्राप्त होंगे वे तब तक उसके ही रहेंगे जब तक संघ और संबंधित प्रदेश के बीच समझौते से परिवर्तित या रद्द न कर दिये जायें या संघ द्वारा अपने हाथ में न ले लिये जायें, परन्तु उनके नियमन और नियंत्रण के संबंध में कानून बनाने का अधिकार संघीय पार्लियामेंट को ही प्राप्त होगा।

(ख) टेलीफोन, बेतार के तार, ब्राडकास्टिंग और इस प्रकार के यातायात के अन्य साधन, चाहे वे संघ के हों या न हों।

(ग) डाकखानों के सेविंग बैंक।

(33) संघ की रेलें; सुरक्षा की दृष्टि से छोटी रेलों के सिवा सभी रेलों का नियमन, अधिक से अधिक और कम से कम महसूल और किराया, स्टेशन और सर्विस टर्मिनल टैक्स और मुसाफिरों का एक रेलवे से दूसरी रेलवे में तबादला तथा माल और मुसाफिरों को स्थानांतरित करने की दृष्टि से रेलवे के शासन-प्रबंध की जिम्मेदारी; सुरक्षा की दृष्टि से-छोटी रेलों का नियमन तथा माल और मुसाफिरों को स्थानांतरित करने की दृष्टि से इनके शासन-प्रबंध की जिम्मेदारी।

(34) समुद्री जहाजरानी जिसमें ज्वारभाटा वाले जल में जहाजरानी भी शामिल है।

(35) नौसेना का अधिकार-क्षेत्र।

(36) बन्दरगाह जो संघीय कानून या वर्तमान भारतीय कानून द्वारा या उसके अधीन बड़े बन्दरगाह घोषित किये गये हों जिसमें उनकी सीमाबन्दी भी शामिल है।

(37) हवाई जहाज और हवाई जहाजों का चलाना; हवाई अड्डों की व्यवस्था और हवाई यात्रियों तथा हवाई अड्डों का नियमन और संगठन।

(38) प्रकाश-स्तम्भ जिनमें रोशनी देने वाले जहाज तथा जहाजों और हवाई जहाजों की सुरक्षा के लिये प्रकाश-संकेत तथा अन्य प्रकार की व्यवस्था भी सम्मिलित है।

(39) समुद्र या आकाश के मार्गों से माल और मुसाफिरों को ले जाना।

(40) भारत का भूमीक्षण, भारत का भूमि संबंधी, वनस्पति संबंधी और पशु संबंधी ईक्षण, अंतरिक्ष विद्या संबंधी संघीय संस्थायें।

(41) क्वारेंटीन की अंतर प्रादेशिक व्यवस्था।

(42) संघीय न्याय-विभाग।

(43) संघ के कामों के लिये सम्पत्ति को अधिकार में ले लेना।

(44) अनुसंधान संबंधी काम के लिये, पेशे या विशेष कलाओं की शिक्षा के लिये अथवा विशेष अध्ययन की समुन्नति के लिये संघ की एजेंसियां और संस्थायें।

(45) जनगणना।

(46) इस सूची में जो बातें बताई गई हैं उनके संबंध में कानून के खिलाफ अपराध।

(47) संघ के कामों के लिये अनुसंधान, पैमाइश और आंकड़ों का संकलन।

(48) संघ की नौकरियां और संघीय पब्लिक सर्विस कमीशन।

(49) संघीय कर्मचारियों से संबंधित कल-कारखानों के झगड़े।

(50) भारत का रिजर्व बैंक।

(51) संघ की सम्पत्ति और उसकी आय; परन्तु जहां तक किसी प्रदेश में स्थित सम्पत्ति का संबंध है, उस पर हमेशा उस प्रदेश का ही कानून लागू होगा, सिवाय उस दशा के जबकि संघीय कानून द्वारा अन्य प्रकार की व्यवस्था की गई हो।

(52) संघ का सरकारी कर्ज।

(53) सिक्का, वैदेशिक विनिमय, सिक्के की ढलाई और कानूनी सिक्का।

(54) संघ के किसी भूभाग में कोई ऐसी गंभीर आर्थिक स्थिति उत्पन्न होने पर जिसका असर संघ पर पड़ता हो उसके निराकरण की व्यवस्था करना।

(55) बीमा।

(56) कार्पोरेशन अर्थात् व्यापारिक कार्पोरेशन को सम्मिलित करना उनका नियमन करना तथा उनको समाप्त करना जिसमें बैंक-व्यवसाय, बीमा और आर्थिक कार्पोरेशन भी सम्मिलित हैं, परन्तु इसमें वे कार्पोरेशन या सहकारी सभायें सम्मिलित नहीं हैं जिन पर संघ में सम्मिलित किसी रियासत का स्वामित्व या नियंत्रण हो और जो उस रियासत ही के अंदर व्यवसाय करते हों और उन कार्पोरेशनों को, चाहे वे व्यापारिक हों या न हों, सम्मिलित करना, उसका नियमन करना तथा उनको समाप्त करना जिनके उद्देश्य केवल एक ही प्रदेश तक सीमित न हों परन्तु इसमें विश्वविद्यालय सम्मिलित नहीं हैं।

(57) बैंक-व्यवसाय।

(58) चैक, विनिमय-पत्र, प्रतिज्ञा-अर्थ-पत्र (प्रामिसरी नोट) और इसी प्रकार के अन्य पत्र।

(59) एकस्व (पेटेंट), प्रतिलिप्यधिकार, आविष्कार, नमूने, व्यापारिक चिन्ह और वाणिज्य संबंधी चिन्ह।

(60) प्राचीन और ऐतिहासिक स्मारक; पुरातत्व महत्व के स्थान और खंडहर।

(61) प्रामाणिक मापतोल का निर्धारण।

(62) अफीम, जहां तक इसको उपजाने और इसके उत्पादन और निर्यात के लिये बिक्री का संबंध है।

(63) पेट्रोलियम और दूसरे तरल व अन्य पदार्थ जो संघीय कानून द्वारा जहां तक उन्हें पास रखने, इकट्ठा करने और इधर-उधर ले जाने का संबंध है, भयंकर रूप से दाहक घोषित किये गये हों।

(64) उद्योग-धंधों का विकास, जहां कहीं संघीय नियंत्रण में विकास संघीय कानून द्वारा लोकहित की दृष्टि से श्रेयस्कर घोषित किया जाये।

(65) श्रमिकों का नियमन और खातों तथा तेल के क्षेत्रों में सुरक्षा।

(66) उस सीमा तक खानों और तैल-क्षेत्रों की व्यवस्था के संबंध में नियमन तथा खनिज पदार्थों का विकास जहां तक कि संघीय नियंत्रण के अंदर यह नियमन और विकास संघ-कानून द्वारा सार्वजनिक हित के लिये उपयोगी घोषित किये जायें।

(67) किसी गवर्नर वाले या चीफ कमिश्नर वाले प्रांत के किसी भाग के पुलिस-बल के सदस्यों के अधिकार तथा अधिकार-क्षेत्र को किसी दूसरे गवर्नर-प्रांत या चीफ कमिश्नर-प्रांत के किसी इलाके में लागू करना, परन्तु इस तरह नहीं कि एक प्रदेश की पुलिस अपने अधिकार तथा अधिकार-क्षेत्र का प्रयोग बिना प्रांत की सरकार या चीफ कमिश्नर की अनुमति के, जैसी भी दशा हो, दूसरे प्रदेश में कर सके। किसी भी प्रदेश के पुलिस-बल के सदस्यों के अधिकार तथा अधिकार-क्षेत्र को, उस प्रदेश से बाहर वाली रेलवे के इलाके में लागू करना।

(68) सभी संघीय निर्वाचन; सभी संघीय तथा प्रांतीय निर्वाचनों के निरीक्षण, संचालन तथा नियंत्रण के लिये निर्वाचन संबंधी कमीशन।

(69) संघ के मंत्रियों, कौंसिल आफ स्टेट्स के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष और हाउस आफ पीपुल्स के स्पीकर और डिप्टी स्पीकर के वेतन। संघीय पार्लियामेंट के सदस्यों के वेतन, भत्ते तथा विशेषाधिकार।

(70) संघीय पार्लियामेंट की समितियों के सामने साक्षी देने के लिये या दस्तावेजों को पेश करने के लिये व्यक्तियों को उपस्थित होने के लिये बाध्य करना।

(71) बन्दरगाह-कर जिसमें आयात तथा निर्यात-कर दोनों ही शामिल हैं।

(72) तम्बाकू तथा भारत में उत्पन्न या बनाये अन्य मालों पर आबकारी-कर, पर इन चीजों को छोड़कर:

(क) मद्यमूलक तरल पदार्थ जो मनुष्यों के खपत में आती हो।

(ख) अफीम, भारतीय पटुआ तथा अन्य निद्राकारी औषधियां और निद्राकारी द्रव्य एवं अनिद्राकारी औषधियां।

(ग) औषधिमूलक और श्रृंगार प्रसाधन की वस्तुएं, जिनमें मद्य हो अथवा और कोई पदार्थ जिसका उल्लेख इस मद के अंश (ख) में आया हो।

(73) कारपोरेशन टैक्स।

(74) राज्य की लाटरी।

(75) एक प्रदेश (Unit) से दूसरे प्रदेश में जाकर बसना।

(76) इस सूची में आये हुये मामलों में से किसी भी मामले के संबंध में सभी न्यायालयों के अधिकार तथा अधिकार-क्षेत्र।

(77) कृषिजन्य आय के अतिरिक्त अन्य आयों पर कर।

(78) कृषिभूमि के अतिरिक्त व्यक्तियों या कम्पनियों की सम्पत्ति के पूंजीगत मूल्य पर कर; कम्पनियों की पूंजी पर कर; पूंजी पर कर।

(79) कृषि भूमि के अतिरिक्त अन्य सम्पत्ति के उत्तराधिकार पर कर।

(80) कृषि भूमि के अतिरिक्त अन्य सम्पत्ति कर, भूसम्पत्ति-कर।

(81) हुंडी, चैक, प्रोमिसरी नोट, जहाजी बिल्टी (bill of lading) साखपत्र, बीमा की पालिसी, शेयरों का तबादला, ऋणपत्र (debenture) प्राक्सी-पत्र (boxes) तथा रसीदों पर टिकट-कर की दर।

(82) रेल या हवाई जहाजों से जाने वाले माल या मुसाफिरों पर सीमा-कर।

(83) बाढ़ रोकने, सिंचाई, जहाजरानी और जल से बिजली पैदा करने के लिये अन्तर्प्रादेशिक जल-मार्गों का विकास।

(84) अन्तर्प्रादेशिक व्यापार तथा व्यवसाय।

(85) तटलग्न समुद्र-भाग से परे मछली मारना या मछली मारने का कारोबार।

(86) संघ की ओर से नमक बनाने तथा उसके वितरण का कार्य। दूसरी एजेंसियों द्वारा नमक बनाने तथा उसके वितरण संबंधी कार्य का नियंत्रण।

(87) इस सूची में आये हुये मामलों में से किसी भी मामले पर शुल्क पर किसी न्यायालय द्वारा लिये जाने वाले शुल्क को छोड़ कर।

सूची 2–प्रांतीय विधायी सूची

(1) सार्वजनिक शांति (पर, असैनिक शासनाधिकारियों की सहायता के लिये, जहाजी बेड़े, सैन्य शक्ति या हवाई बेड़े का प्रयोग इसमें शामिल नहीं किया जायेगा); न्याय संबंधी शासन, सर्वोच्च न्यायालय के अतिरिक्त अन्य सभी न्यायालयों की रचना तथा उनका संगठन और उनके द्वारा लिये जाने वाले शुल्क, सार्वजनिक शांति की रक्षा के कारणों से नजरबंद करना तथा ऐसे नजरबंद आदमी।

(2) उस सूची में आये हुये मामलों में से किसी भी मामले के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय के अतिरिक्त अन्य सभी न्यायालयों के अधिकार तथा अधिकार-क्षेत्र। माल की अदालतों का जाप्ता।

(3) पुलिस, जिसमें रेलवे और ग्राम-पुलिस भी शामिल है।

(4) जेल, अल्पवयस्क अपराधियों के सुधारने के स्थान तथा इस तरह की अन्य संस्थायें और इनमें रोक रखे गये व्यक्ति। जेलों और अन्य संस्थाओं के इस्तेमाल के लिये दूसरे प्रदेशों से व्यवस्था करना।

(5) प्रान्त का सरकारी कर्ज।

(6) प्रान्तीय सार्वजनिक सेवायें और प्रान्तीय पब्लिक सर्विस कमीशन।

(7) सार्वजनिक इमारतें, सड़क वगैरह तथा भूमि, मकान जिन पर प्रांतीय सरकार का स्वामित्व हो या जो प्रान्तीय सरकार के अधिकार में हो।

(8) संघ के कामों के अलावा अन्य के लिये भूमि को अनिवार्य रूप से अधिकृत करना।

(9) पुस्तकालय, अजायबघर और इसी प्रकार की अन्य संस्थायें जो प्रान्तों के नियंत्रण में हों या उनके खर्च से चलती हों।

(10) सूची 1 के पैरा 68 के अधीन, प्रान्तीय व्यवस्थापिकाओं का चुनाव या प्रान्तों के गवर्नरों का निर्वाचन।

(11) प्रान्तीय मंत्रियों के, व्यवस्थापिका असेम्बली के स्पीकर तथा डिप्टी स्पीकर के और यदि व्यवस्थापिका कौंसिल हो तो उसके स्पीकर और डिप्टी स्पीकर के वेतन। प्रान्तीय व्यवस्थापिका के सदस्यों के वेतन, भत्ते और विशेषाधिकार तथा प्रान्तीय व्यवस्थापिका की समितियों के सामने साक्षी देने के लिये और दस्तावेज पेश करने के लिये व्यक्तियों की उपस्थिति को अनिवार्य करना।

(12) स्थानीय सरकार, अर्थात् म्युनिसिपल कारपोरेशनों, इम्प्रूवमेंट ट्रस्टों, जिला बोर्डों, माइनिंग सेटलमेंट अधिकारियों तथा स्थानीय स्वशासन या ग्राम्य शासन के लिये बनने वाले अन्य प्राधिकारियों का निर्माण और उनके अधिकार।

(13) सार्वजनिक स्वास्थ्य और सफाई संबंधी अस्पताल और डिसपेन्सरियां। जन्म और मृत्यु का रजिस्ट्रेशन।

(14) भारत से बाहर के स्थानों के अतिरिक्त अन्य स्थानों की तीर्थयात्रा।

(15) कब्रिस्तान तथा श्मशान और दफनाने की जगह।

(16) शिक्षा मय विश्वविद्यालयों के, पर उन विश्वविद्यालयों को छोड़ कर जिनका उल्लेख सूची 1 के पैरा 28 में है।

(17) यातायात अर्थात् सड़कें, पुल, घाट और यातायात के अन्य साधन जिनका उल्लेख सूची 1 में नहीं है। छोटी रेलें, पर उन व्यवसायों के अधीन जो इन रेलों के संबंध में सूची 1 में हैं। म्युनिसिपल ट्रामें, रज्जुमार्ग (रोपवेज), अन्तर्वर्ती जलमार्ग तथा इन पर होने वाला व्यापार पर उन व्यवस्थाओं के अधीन जो इन जलमार्गों के संबंध में सूची 1 तथा सूची 3 में दी हुई हैं। बन्दरगाह पर उन व्यवस्थाओं के अधीन जो बड़े-बड़े पोर्टों के संबंध में सूची 1 में दी हुई हैं। सवारी की गाड़ियां जो इंजन के सहारे न चलती हों।

(18) जल अर्थात् जल की सप्लाई, सिंचाई और नहरें, गन्दे जल आदि के निकास-मार्ग और बांध, जल संचय के स्थान तथा जल-शक्ति।

(19) कृषि जिसमें कृषि संबंधी शिक्षा एवं अनुसंधान, नाशकारी बीमारियों से पौधों की रक्षा और पौधों की बीमारियों की रोकथाम भी शामिल है। पशुधन की समुन्नति तथा पशुरोगों की रोकथाम। पशु-चिकित्सा संबंधी शिक्षा और पशुओं की चिकित्सा। मवेशियों के बाड़े और मवेशियों के अनधिकार प्रवेश पर रोकथाम।

(20) भूमि अर्थात् भूमि संबंधी अधिकार जिसमें भूमि के ऊपर तथा अन्तर के अधिकार भी शामिल हैं। भूमि का पट्टा जिसमें जमींदार और रैयत का संबंध भी शामिल है तथा लगान का इकट्ठा करना। कृषि-भूमि का हस्तांतरण, भूमि संबंधी स्वत्वाधिकार का हस्तांतरण तथा परिवर्तन-भूमि संबंधी समुन्नति तथा कृषि संबंधी ऋण। नई बस्ती बसाने का काम। अवयस्क और अक्षय भूस्वामियों की सम्पत्ति का प्रबंध। ऋणग्रस्त और कुर्क की हुई जायदाद तथा भूमि के अन्दर की सम्पत्ति।

(21) जंगलात।

(22) खानों और तैल-क्षेत्रों की व्यवस्था संबंधी नियम तथा खनिज विकास पर उन व्यवस्थाओं के अधीन जो संघीय नियंत्रण के अन्दर नियमन तथा विकास के संबंध में सूची 1 में दी हुई है।

(23) मछली मारने के जलस्थान।

(24) जंगली पशु और पक्षियों की रक्षा।

(25) गैस और गैस के कारखाने।

(26) प्रान्त के अंदर व्यवसाय वाणिज्य। बाजार और मेले।

(27) महाजन और महाजनी का कारोबार।

(28) सराय और उसकी रखवाली करने वाले।

(29) उत्पादन, वस्तुओं का वितरण और उनकी सप्लाई। उद्योग धन्धों का विकास पर उन व्यवस्थाओं के अधीन जो संघीय नियंत्रण के अंदर कतिपय उद्योग धन्धों के विकास के संबंध में सूची 1 में दी हुई हैं।

(30) खाद्य पदार्थों में और अन्य वस्तुओं में मिलावट।

(31) वजन और माप किन्तु नाप-जोख का मापदण्ड स्थिर करने को छोड़कर।

(32) मादक तरल पदार्थ तथा निद्राकारी औषधियां अर्थात् मादक तरल पदार्थ, अफीम और अन्य निद्राकारी औषधियों का उत्पादन, निर्माण, उनको अधिकार में रखना, उनको एक जगह से दूसरी जगह ले जाना, उनका क्रय-विक्रय पर जहां तक अफीम का संबंध है, उन व्यवस्थाओं के अधीन जो सूची 1 में हैं, और जहां तक विष तथा अन्य भयानक औषधियों का संबंध है, उन व्यवस्थाओं के अधीन जो सूची 3 में हैं।

(33) गरीबों की सहायता; बेकारी।

(34) कारपोरेशनों (संस्थाओं) का, किन्तु उन कारपोरेशनों का नहीं जिनका उल्लेख सूची 1 में है, संयोजन, नियमन तथा विघटीकरण अथवा विश्वविद्यालय, व्यापार, साहित्य, विज्ञान एवं धर्म संबंधी तथा अन्य संस्थायें और संगठन।

(35) दान और धर्मार्थ मूलक संस्थायें। दान तथा धर्म-संबंधी धन-समर्पण।

(36) नाट्यशाला, नाट्याभिनय और चल-चित्रों का प्रदर्शन पर इसमें चल-चित्रों के प्रदर्शन की स्वीकृति शामिल नहीं है।

(37) बाजी लगाना और जुआ खेलना।

(38) इस सूची में दिये हुये मामलों में से किसी के भी संबंध में बने हुये कानूनों के खिलाफ अपराध करना।

(39) इस सूची में दिये हुये मामलों में से किसी के भी संबंध में अन्वेषण और आंकड़ों का संकलन।

(40) जमीन की सरकारी मालगुजारी, जिसमें मालगुजारी निश्चित करना और उसका इकट्ठा करना भी शामिल है। भूमि संबंधी सरकारी कागजात को कायम रखना, कर-निर्धारण करने के लिये पैमाइश तथा अधिकार संबंधी सरकारी कागजात और मालगुजारी को अन्य काम के लिये देना।

(41) निम्नलिखित वस्तुओं पर, जो प्रान्त में बनती हैं या पैदा होती हैं, कर तथा इसी दर पर या इससे कम दर संघ के प्रदेश में अन्यत्र कहीं बनने वाली या पैदा होने वाली इसी तरह की वस्तुओं पर, साम्य-कर।

(क) आदमियों के इस्तेमाल में आने वाले मादक तरल पदार्थ।

(ख) अफीम, भारतीय पटुआ तथा अन्य निद्राकारी औषधियां और वस्तुएं। अनिद्राकर औषधियां।

(ग) औषधि-मूलक और श्रृंगार प्रसाधन की वस्तुएं जिनमें मादक पदार्थ हों या अन्य ऐसा पदार्थ हो जिसका उक्त पैरा (ख) में उल्लेख हो।

(42) कृषिजन्य आय पर कर।

(43) जमीन, इमारत, चूल्हे और खिड़कियों पर कर।

(44) कृषि-भूमि के उत्तराधिकार पर कर।

(45) कृषि-भूमि पर स्थावर-सम्पत्ति-कर।

(46) खनिज पदार्थ संबंधी अधिकारों पर कर किन्तु खनिज-विकास के संबंध में संघीय पार्लियामेंट के किसी कानून द्वारा निर्धारित प्रतिबंधों के अधीन।

(47) वह कर जो प्रत्येक व्यक्ति के हिसाब से लगाया जाये। (Capitation tax)

(48) व्यवसाय, व्यापार, पेशे और नौकरी-कर।

(49) पशुओं और नावों पर कर।

(50) वस्तुओं की बिक्री पर तथा विज्ञापनों पर कर।

(51) सड़कों पर चलने लायक सवारियों पर कर चाहे वे इंजन से चलती हों या बिना इंजन के और इसमें ट्रामवे भी शामिल हैं।

(52) बिजली की बिक्री और खपत पर कर।

(53) खपत, इस्तेमाल या बिक्री के लिये किसी इलाके में आने वाली वस्तुओं पर चुंगी।

(54) विलास-सामग्रियों पर कर जिसमें उत्सव, मनोरंजन, बाजी लगाने और जुआ खेलने के कर भी शामिल हैं।

(55) उन दस्तावेजों को छोड़ जिनका स्टाम्प-कर के संबंध में सूची 1 में उल्लेख है, अन्य दस्तावेजों के संबंध में स्टाम्प-कर की दर।

(56) अन्तर्वर्ती जलमार्गों से ले जाये गये मुसाफिरों और माल पर महसूल।

(57) चुंगी।

(58) इस सूची में आये हुये किसी भी मामले के संबंध में शुल्क किन्तु इसमें अदालत द्वारा लिया जाने वाला शुल्क शामिल नहीं है।

सूची 3—सहगामी विधायी सूची

(1) फौजदारी का कानून जिसमें वे सभी मामले शामिल हैं जो कि इस विधान के प्रयोग में आने के दिन भारतीय-दण्ड-विधान में शामिल थे परन्तु इसमें वे अपराध शामिल नहीं हैं जो सूची 1 तथा 2 में उल्लिखित मामलों से संबंध रखने वाले कानूनों के खिलाफ किये गये हों तथा इसमें असैनिक अधिकारियों की सहायता के लिये नौशक्ति, सैन्य शक्ति तथा हवाई बेड़ों के उपयोग भी शामिल नहीं हैं।

(2) दण्ड-विधि जिसमें वे सभी मामले शामिल हैं जो कि इस विधान के प्रयोग में आने के दिन दण्ड-विधान-संग्रह में शामिल थे।

(3) बन्दियों का और अभियुक्त व्यक्तियों को एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश हटाना।

(4) जाप्ता दीवानी जिसमें समय-निर्धारण का कानून (Law of libitation) तथा वे सब मामले शामिल हैं जो कि इस विधान के प्रयोग में आने के दिन दीवानी-विधान-संग्रह में शामिल थे। गवर्नर या चीफ कमिश्नर वाले प्रान्त में टैक्स संबंधी पावनों की प्राप्ति। तथा अन्य सार्वजनिक मांगें जिनमें जमीन संबंधी मालगुजारी की बकाया रकम और अन्य प्राप्य रकम भी शामिल हैं जिसे प्रान्त के बाहर कहीं से पाना है।

(5) साक्ष्य और शपथ। कानून, सरकारी कार्रवाइयां, सरकारी कागजात और अदालती कार्रवाइयों की स्वीकृति।

(6) विवाह और विवाह-विच्छेद। शिशु और अवयस्क। कृत्रिम पुत्र को गोद लेना।

(7) वसीहतनामा, बिना वसीहतनामे के उत्तराधिकार पाना तथा कृषि-भूमि के अतिरिक्त अन्य सम्पत्ति पर उत्तराधिकार।

(8) कृषि-भूमि के अतिरिक्त अन्य सम्पत्ति का हस्तांतरण। लेख, पत्र और दस्तावेजों की रजिस्ट्री।

(9) धरोहर और धरोहर रखने वाले (trust and trustees)।

(10) ठेके (contracts) जिसमें साझीदारी, आढतदारी, यातायात के ठेके तथा अन्य विशेष प्रकार के ठेके भी शामिल हैं परन्तु इसमें कृषि-भूमि संबंधी ठेका शामिल नहीं है।

(11) पंचायत द्वारा निर्णय।

(12) दिवाला और नादेहेनदारी।

(13) वह अधिकारी और ट्रस्टी जो लावारिस जायदाद के प्रबन्ध के लिये सरकार की ओर से नियत किये जायें।

(14) स्टाम्प-कर, परन्तु इसमें वे कर या शुल्क नहीं शामिल हैं जो अदालती स्टाम्पों के जरिये एकत्र किये जाते हैं तथा इसमें स्टाम्प कर की दर भी शामिल नहीं है।

(15) ऐसे अन्याय जिनके विरुद्ध कार्रवाई की जा सके।

(16) इस सूची में दिये हुये किसी मामले के संबंध में–सर्वोच्च न्यायालय को छोड़कर–अन्य सभी न्यायालयों के अधिकार-क्षेत्र तथा अधिकार।

(17) कानून-संबंधी, चिकित्सा-संबंधी तथा अन्य व्यवसाय।

(18) समाचार-पत्र, पुस्तकें और छपाई के प्रेस।

(19) पागलपन और मस्तिष्क संबंधी विकार जिनमें वे स्थान भी शामिल हैं जहां पागल और विकृत मस्तिष्क व्यक्तियों को रखा जाता है या चिकित्सा की जाती है।

(20) विष और भयंकर औषधियां।

(21) इंजन से चलने वाली गाड़ियां।

(22) ब्यालर (Boilers)

(23) पशुओं पर होने वाली क्रूरता की रोकथाम।

(24) आवारगी। खानाबदोश और स्थान बदलते रहने वाली जातियां।

(25) फैक्ट्रियां।

(26) मजदूरों की भलाई। मजदूरों की दशा। प्रोविडेण्ट फण्ड। मालिकों का दायित्व और श्रमिकों की क्षतिपूर्ति। स्वास्थ्य संबंधी बीमा जिसमें अक्षमता संबंधी पेंशन भी शामिल है। बुढ़ापे की पेंशन।

(27) बेकारी तथा सामाजिक अक्षमता संबंधी बीमा (Social Insurance)।

(28) मजदूर संघ। कल-कारखानों से संबंध रखने वाले झगड़े और मजदूरों के झगड़े।

(29) स्पर्श या सम्पर्क से फैलने वाली बीमारियों की तथा उन बीमारियों की रोकथाम जो मनुष्य, पशु और पौधों को हानि पहुंचाती हैं ताकि वे एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में न फैल सकें।

(30) बिजली।

(31) जहां तक इंजन से चलने वाले जलयानों का संबंध है, अन्तर्वर्ती जल भागों में जहाजरानी और जलयानों का चलाना। ऐसे जलमार्गों पर यातायात के नियम तथा उन व्यवस्थाओं के अधीन जो सूची 1 में संघीय जलमार्गों के संबंध में दी हुई हैं, अन्तर्वर्ती जलमार्गों से माल और मुसाफिरों का ले जाना।

(32) प्रदर्शन के लिये चल-चित्रों की मंजूरी देना।

(33) संघीय अधिकार के अन्दर नजरबंद किये गये व्यक्ति।

(34) अर्थ संबंधी एवं समाज संबंधी योजनायें।

(35) इस सूची में दिये हुये किसी भी मामले के लिये अनुसंधान और आंकड़ों का संकलन।

(36) इस सूची में दिये हुये किसी भी मामले के संबंध में शुल्क परन्तु इसमें किसी न्यायालय द्वारा लिया जाने वाला शुल्क शामिल नहीं है।

Con. 3.5.4.47
750

अंक 5
संख्या 4

बृहस्पतिवार
21 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1. परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर 1
2. संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट-(जारी) 1

भारतीय विधान-परिषद्

बृहस्पतिवार, 21 अगस्त, सन् 1947 ई०

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक विधान-भवन, नई दिल्ली में दिन के दस बजे माननीय डा० राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में आरम्भ हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्न सदस्यों ने अपने परिचय-पत्र पेश किये तथा रजिस्टर में अपने हस्ताक्षर किये:

बिलासपुर के राजा।

निम्न सदस्यों ने शपथ ग्रहण की:

(1) बिलासपुर के राजा।

(2) श्री सुरेन्द्र मोहन घोष (पश्चिमी बंगाल: जनरल)।

संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट–(जारी)

***अध्यक्ष:** कल जिस प्रस्ताव पर वाद-विवाद हो रहा था आज हम उसी पर वाद-विवाद करेंगे।

***श्री एच०वी० कामत** (मध्यप्रांत और बरार: जनरल): केवल कार्य की परिपाटी की ओर आपका ध्यान आकर्षिक करने की मुझे आज्ञा दीजिये। औपनिवेशिक व्यवस्थापिका (Dominion Legislature) के सदस्य होते हुये क्या हम भारतीय गजट तथा अन्य सरकारी प्रकाशनों को यथोचित रीति से प्राप्त करने की आशा न करें जो कि इससे पूर्व केन्द्रीय व्यवस्थापिका के सदस्यों को भेजे जाते थे।

अध्यक्ष: मैं इस संबंध में पूछताछ करूंगा।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***श्री मोहम्मद शरीफ** (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट का वह भाग जो कि आज के वाद-विवाद का विषय है, बड़ा महत्वपूर्ण है क्योंकि वह प्रांत तथा रियासत के निवासियों के सामान्य तथा असामान्य अधिकारों पर विशेष प्रभाव डालता है। मुझे इसलिये भी यह महत्वपूर्ण प्रतीत होता है कि केन्द्र तथा प्रांतों और रियासतों के मध्य शासनाधिकारों के उचित और ठीक विभाजन पर ही देश की भावी उत्तम शासन-व्यवस्था निर्भर है। इसलिये यह आवश्यक है कि शासनाधिकारों का इस प्रकार बंटवारा किया जाये कि केन्द्र में प्रभावशाली नियंत्रण भी रहे तथा रियासत और प्रान्त के निवासियों को उनके अधिकारों से भी वंचित न रखा जाये। श्रीमान् जी, आप जानते हैं कि संघ में राजनिष्ठा और स्वार्थों में प्रामाणिक पार्थक्य रहता है। इन दोनों में मेल रखने के लिये एक शक्तिशाली केन्द्र की बड़ी आवश्यकता है। परन्तु आप यह भी जानते हैं कि आवश्यकता से अधिक शक्तिशाली केन्द्र फलत: निर्दयी हो जाता है और एक प्रकार से संघ के प्रादेशिक भागों के निवासियों की स्वतंत्रता और उनके विशेषाधिकारों का अपहरण करने लग जाता है। अत: शासनाधिकारों के बंटवारे के विषय में हमें बड़ा सावधान और सतर्क रहना चाहिये। हमें इस बात में सावधान रहना चाहिये कि बंटवारा इस प्रकार से हो कि एक ओर शक्ति और दूसरी ओर प्रान्तों तथा रियासतों के सामान्य और असामान्य अधिकारों में सुखद सामंजस्य रहे। इस रिपोर्ट के साथ संलग्न सूचियों को मैंने सावधानी से पढ़ा है तथा श्री गोपालस्वामी के स्पष्ट भाषण को बड़े ध्यानपूर्वक सुना। उन्होंने इस प्रश्न के विभिन्न पहलुओं पर पूर्ण रूप से वाद-विवाद किया है। उन्होंने हमारे सम्मुख प्रश्न के समस्त पहलुओं को रख दिया है। श्रीमान् जी, उन्होंने कहा "अब चूंकि देश का विभाजन निश्चय है, हम इस विचार से सहमत हैं कि शक्तिहीन केन्द्रीय अधिकार देशहित के लिये घातक होगा। वह शांति का आश्वासन देने में, सार्वजनिक हितों संबंधी प्रमुख विषयों के एकीकरण में और अन्तर्राष्ट्रीय जगत में समस्त देश की ओर से प्रभावोत्पादन करने में असमर्थ रहेगा। साथ ही साथ हमने यह बात भली प्रकार समझ ली है कि ऐसे अनेक विषय हैं जिनके अधिकार पूर्णतया प्रदेशों के अधीन रहने चाहियें और यह भी समझ लिया है कि एक सत्तात्मक राज्य के आधार पर विधान निर्माण करना दोनों राजनीति और शासन में पीछे कदम रखना होगा। तदनुसार हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि हमारे विधान का सुदृढ़ रूप एक संघ में है जिसका केन्द्र शक्तिशाली हो।" श्रीमान् जी, श्री गोपालस्वामी आयंगर का उचित सम्मान करते हुये मैं नहीं समझता कि यह रिपोर्ट बहुत संतोषजनक है क्योंकि वह प्रान्तों और रियासतों को एक गौण रूप प्रदान करना चाहती है। 150 वर्ष के विप्लव के पश्चात्, भारतीय जनता के

150 वर्ष तक बलिदान और त्याग करने के पश्चात्–जिसका स्पष्ट रूप से अभी कुछ दिन पूर्व पं० जवाहरलाल नेहरू ने वर्णन किया था हम ब्रिटिश साम्राज्यशाही का उन्मूलन कर सके हैं। उस साम्राज्यवाद को किसी अन्य रूप में न जमने दीजिये। केन्द्र अपने प्रादेशिक भागों से क्यों डाह रखे? आखिर रियासतों और प्रान्तों में रहने वाले लोग सारी भारतीय जनता का एक भाग हैं। उनकी क्रियायें केन्द्र की क्रियाओं के अनुरूप ही हैं इसलिये यह संदेह होना ही नहीं चाहिये। मैं इसलिये निवेदन करता हूं कि केन्द्र ही सारे अधिकारों को हड़प न करे। मैसूर रियासत का तो मैं हूं ही। मैं अनुभव करता हूं कि यह रिपोर्ट अत्यन्त असंतोषजनक है। श्रीमान्‌जी, आप जानते हैं कि हम भारतीय संघ में तीन प्रमुख विषयों को लेकर सम्मिलित हुये हैं; वैदेशिक विभाग, यातायात और रक्षा। इन विषयों पर हमने संधि की है और संघ में शामिल हुये हैं। जहां तक संघ-व्यवस्थापिका की विषय-सूची से संबंध है आपने हमसे अधिकार छीनने का प्रयत्न किया है; उदाहरणार्थ, आप हमारे व्यापार में बाधायें डालना चाहते हैं। विदेशों से व्यापार और व्यवसाय आप अपने हाथ में रखना चाहते हैं। रक्षा-हित भूमि पर कब्जा करने के अधिकार आप चाहते हैं। इन सब बातों से अधिकार प्राप्त करने के प्रयत्न की गंध आती है। श्रीमान्‌जी, जहां तक इस रिपोर्ट से संबंध है आपने कल कहा था कि हम केवल प्रमुख विषयों को ही लेंगे।

*__एक माननीय सदस्यः__ इस संबंध में नहीं।

*__श्री मोहम्मद शरीफः__ मुझे खेद है। किसी तरह हो, मैं सभा से निवेदन करूंगा कि वह इस बात का ध्यान रखे कि केन्द्र समस्त अधिकारों को हड़प न ले; बल्कि केन्द्र और प्रदेशों में अधिकारों के बंटवारे में समान रूप से सौख्यपूर्ण सामंजस्य रहे।

*__श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर__ (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री गोपालस्वामी आयंगर ने इस रिपोर्ट पर पूर्ण रूप से प्रकाश डाला है। अतः इस विषय पर, अर्थात् संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट पर विचार, जो आज सभा के समक्ष है, मैंने वाद-विवाद में भाग लेना नहीं चाहा था। लेकिन मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम् की कुछ बातों ने मुझे विवश किया (जिनकी राय और बातों का मैं सदैव उच्च आदर करता हूं) जो इस संबंध की थीं कि कमेटी

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

ने अपने कर्तव्य का पालन गंभीरतापूर्वक नहीं किया। मेरे माननीय मित्र के रिमार्क दो शीर्षकों के अंतर्गत आते हैं:

(1) संघ की आर्थिक व्यवस्था के विषय का संबंध और संघ तथा प्रदेशों में कर लगाने वाले अधिकारों का बंटवारा।

(2) संघ की विषय-सूची या सहगामी विषय-सूची में कुछ विषयों को बढ़ाकर प्रान्तीय व्यवस्थापिका की सत्ताओं पर सामान्य अधिकार जमाना। मैं इन दोनों विषयों पर क्रम से विचार प्रकट करूंगा।

यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि संघ की आर्थिक व्यवस्था का विषय और संघ तथा प्रदेशों में कर लगाने वाले अधिकारों के बंटवारे का विषय किसी भी संघ-नियोजित शासन-व्यवस्था में एक कठिन और पेचीदा समस्या है, जिसे सावधानी और विवेक से सुलझाना चाहिये और इस विषय पर विचार करते हुये हमें हर समय यह याद रखना चाहिये कि यह सब होते हुये भी वह व्यक्ति या समाज ही है जिस पर कर लगाना है चाहे कर लगाने वाली दो एजेंसियां हों और कर लगाने के लिये कोई असीमित क्षेत्र न हो। दूसरी बात यह है कि देश का औद्योगिक, व्यावसायिक और कृषि प्रबन्ध परस्पर इतनी घनिष्ठता से संबंधित है कि एक पर कर लगाने से दूसरे पर कर लगाने की प्रतिक्रिया आवश्यक हो जायेगी। इन बातों को ध्यान में रखते हुये हम अन्य संघों की कर-प्रणाली पर विचार करें और इस देश की विशिष्ट परिस्थितियों, गरीबों और इस देश के मध्यम वर्गीय नागरिकों की कर देने की क्षमता पर उचित ध्यान रखते हुये देखें कि अन्य देशों की प्रणाली से भारत में प्रचलित प्रणाली में कुछ सुधार है अथवा नहीं। आस्ट्रेलिया में कामनवेल्थ को कर लगाने के पूर्ण अधिकार हैं केवल इस बात के कि वह प्रदेशों या प्रदेशों के भागों में कोई अन्तर नहीं रख सकती। आस्ट्रेलिया का मैं विशेषकर जिक्र कर रहा हूं क्योंकि वह ऐसा संघ है जिसमें कि अवशिष्ट अधिकार यूनियन को हैं। प्रदेश को कानून बनाने के पूर्ण अधिकार हैं और केवल विशेष विषयों के अधिकार केन्द्र को दिये गये हैं। उस देश में भी आधुनिक प्रदेशों की आवश्यकताओं के कारण यह आभास किया गया कि कर लगाने का सम्पूर्ण अधिकार केन्द्र को होना चाहिये। आस्ट्रेलिया के केन्द्र के कर लगाने के अधिकार में कोई सीमा नहीं है सिवा इसके कि वह प्रदेशों में अंतर न करेगा। कर और चुंगी के संबंध में केन्द्र को एक मात्र अधिकार है यद्यपि अन्य कर-संबंधित विषयों में

केन्द्र को प्रदेशों के अधिकारों के साथ समान रूप से मिले-जुले और व्यापक अधिकार हैं। कनाडा उपनिवेश के विधान में कर लगाने के संबंध में प्रान्त के अधिकार मालगुजारी बढ़ाने के निमित्त प्रत्यक्ष कर लगाने, दुकानों पर तथा अन्य लाइसेंसों पर कर लगाने तक सीमित हैं और यह प्रत्यक्ष कर लगाने के अधिकार के प्रयोग के कारण है कि कनाडा के प्रान्त कारपोरेशन-टैक्स, आय-कर (इन्कम टैक्स) और उत्तराधिकार-कर (सक्शेशन ड्यूटी) लगा रहे हैं जहां कि उत्तराधिकार प्रान्त की सीमा के अन्दर हो। जहां तक केन्द्र का संबंध है उसको सम्पूर्ण तथा असीमित अधिकार हैं। संघ और प्रान्तीय संबंधों की जांच करने के लिये जो रॉयल कमीशन अभी नियुक्त किया गया था वह निश्चयात्मक रूप से इस पक्ष में था कि प्रान्तों से कारपोरेशन-टैक्स का अधिकार हटा लिया जाये। उनके अधिकार में लाभदायक लाइसेंस-टैक्स, वास्तविक जायदाद पर कर या कन्सम्यूशन टैक्स, जो कारपोरेशन तथा अन्य भोक्ताओं पर लागू करने योग्य हों, रखे जायें। डिफरेंशियल टैक्सों ने, जो कि कनाडा के विभिन्न प्रान्तों ने निर्धारित किये हैं, साहस और तत्परता को कुचल डाला तथा दुहरे और तिहरे करों के कारण और अधिकार क्षेत्र के बंटे हुये होने के कारण निपुणता और एकरूपता में कमी कर दी। प्रान्तों द्वारा उत्तराधिकार-कर के विषय ने अधिकार-क्षेत्र में वैमनस्य उत्पन्न कर दिया तथा इसके कारण प्रिवी कौंसिल में विरोध के मुकद्दमे गये। संबंधित उद्योगों द्वारा प्रान्तों और केन्द्र के दुहरे कर लगाने पर विरोध हुआ। कर-निर्धारण-पद्धति में पूर्णरूपेण परिवर्तन करने की सिफारिश कमेटी ने की जिससे कि एकरूपता हो सके। खास सिफारिश यह थी कि कर निर्धारित करने का अधिकार केन्द्र को हो और कर-निर्धारण करने के विषय पर प्रान्तों में एकीकरण किया जाये। इस विषय पर मैं यह कह दूं कि मैं प्रान्तों और केन्द्र में एक निश्चित अनुपात के नियत करने के पक्ष में हूं यद्यपि कर एकत्रित करने का माध्यम एकरूपता के कारण केन्द्र रहे। मुझे इसमें संदेह नहीं है कि यदि कोई फाइनेन्शियल कमीशन या कमेटी इस विषय पर विचार करे तो वह किसी संतोषजनक नतीजे पर पहुंच सकती है, जिससे कि प्रान्तों को विभिन्न सामाजिक कार्यों पर व्यय करने के लिये आवश्यक भाग (कोटा) मिल सके। अमेरिका में भी धारा 'एस' के अंतर्गत कर-निर्धारण करने का अधिकार कांग्रेस को है, केवल यह प्रतिबंध है कि जो कर लगाये जाते हैं आबकारी पर और देशी माल पर लगाये जाने वाले करों को शामिल करते हुये, समस्त यूनाइटेड स्टेट्स एक रूप होंगे और किसी प्रदेश से बाहर भेजे जाने वाले माल पर कर नहीं लगेगा।

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

भारतीय-विधान-धारा की आर्थिक बंटवारे की योजना के अंतर्गत और किसी सीमा तक जैसे कि इस रिपोर्ट में विचार किया गया है जहां तक हो सका है इस बात का ध्यान रखा गया है कि नागरिक पर दो जगह से कर न लगने पाये। इसी कारण कुछ विशिष्ट कर केन्द्र के अधिकार में दे दिये गये हैं और अन्य कर प्रान्तों के अधिकार में। उन करों को जिन्हें उगाहने का अधिकार सुविधा के कारण केन्द्र को है, प्रान्तों में बांटने के लिये ऐसी व्यवस्था कर दी गई है जो केवल वसूल करने के खर्चे के अधीन है या समस्त आय को केन्द्र और प्रान्तों में बांटने के अधीन है। कुछ कर जैसे कि कारपोरेशन-कर, चुंगी और एक्साइज की कुछ खास मदों पर कर, इनको वसूल करने और उसकी आय पर अधिकार करने के लिये केन्द्र को उत्तरदायित्व दे दिया है। जायदाद-कर, उत्तराधिकार-कर और इनके समान अन्य करों को एकरूपता लाने, शीघ्रता के साथ वसूल करने और शासन-व्यवस्था में सुचारूता लाने के कारण एकत्रित करने का अधिकार केन्द्र को है, लेकिन आय प्रांतों में बांट दी जायेगी। आय-कर के संबंध में योजना है कि वह प्रांतों और केंद्रों में बांटी जाये। कर-निर्धारण के कुछ मदों को उगाहने तथा उसकी आय पर एकमात्र अधिकार रखने का हक प्रान्तों को दे दिया गया है। यद्यपि कर के कुछ मदों में परिवर्तन करने या उनका फिर से बंटवारा करने पर मैं आपत्ति नहीं करता, यदि वह इसी कार्य के लिये नियोजित कमेटी की सिफारिशों के आधार पर हो। फिर भी मैं यह कहने का साहस करता हूं कि भारतीय सरकार में कर बांटने की योजना और किसी सीमा तक प्रथम कमेटी की रिपोर्ट ठीक है और कुछ बातों में तो दूसरे देशों की कर-निर्धारण की योजना से अच्छी है।

केवल साधारण विचारों के अतिरिक्त मेरे माननीय मित्र ने यह नहीं बताया कि किन कारणों से कर-निर्धारण और बंटवारे की योजना ठीक नहीं है और किन कारणों से कमेटी की सिफारिशें दोषपूर्ण हैं। इतना तो हुआ आर्थिक व्यवस्था के संबंध में।

अधिकारों के बंटवारे की योजना के संबंध में सभा यह अनुभव करेगी कि सामान्यत: इसका अपवाद करने की कोई गुंजाइश नहीं है। केन्द्र की सूची के बहुत से विषय रक्षा, वैदेशिक विभाग और यातायात के तीन मुख्य शीर्षकों के अंतर्गत रखे जा सकते हैं जैसा कि मंत्रिमंडल-योजना में दिया गया है। दूसरे विषय जैसे कि विनिमय-पत्र (Bills of Exchange), बैंकिंग, कारपोरेशन लॉ, परस्पर व्यापार (Inter unit-trade), देश के समान्य कल्याण से संबंध रखते हैं। आस्ट्रेलिया और

कनाडा के अनुसार यह संभव है कि बैंकिंग, कारपोरेशन लॉ और बीमा से संबंधित उन कारपोरेशन में जिनका केवल प्रान्तीय उद्देश्य हो और उन कारपोरेशन में जिनका उद्देश्य प्रदेश की सीमा से बाहर भी हो कुछ विभेद रखा जाये। यदि ऐसा है तो किसी कमेटी या इस सभा को यह अधिकार होगा कि वह इस पर विचार करे और बहस करे कि उन कारपोरेशन और बैंकों के लिये जिनका केवल प्रान्तीय उद्देश्य है कोई अपवाद तो नहीं करता है। हम एक शक्तिशाली केन्द्र के लिये चीख रहे हैं। यदि आप प्रान्तीय विषय-सूची पर ध्यान दें तो बहुत कम प्रान्तीय विषयों को लिया गया है और उनको संघ विषय-सूची में सम्मिलित किया गया है। यह बहुत लाभदायक होगा यदि प्रान्तीय विषय-सूची के एक-एक विषय को लिया जाये और केन्द्रीय विषय-सूची के विषयों को भी क्रम से लें और फिर यह देखें कि उनमें से कौन-कौन से विषय प्रान्तीय सूची में रखे जा सकते हैं बनिबस्त इसके कि केन्द्र और प्रान्त, शक्तिशाली केन्द्र और निर्बल प्रान्त, शक्तिशाली प्रान्त और निर्बल केन्द्र के विषयों पर संक्षेप में वाद-विवाद करें। जबकि हम भविष्य के लिये विधान बनाने के लिये व्यावहारिक प्रश्न पर विचार कर रहे हैं तो उपरोक्त वाद-विवाद से हमें कोई सहायता नहीं मिलेगी। थोड़े दिनों के पश्चात् ही हमें विशेष विषयों पर ध्यान केन्द्रित करना होगा और यह देखना होगा कि कौन-कौन से विषय परिवर्तन करने योग्य हैं। शक्तिशाली केन्द्र या निर्बल केन्द्र नाम की वस्तु पर आक्षेप करने की अपेक्षा यह अधिक लाभदायक सिद्ध होगा। केन्द्र में बहुत कम विषय रखे जायें फिर भी वह केन्द्र शक्तिशाली हो सकता है। आज यह नहीं कहा जा सकता कि आस्ट्रेलिया का या अमेरिका का केन्द्र शक्तिशाली नहीं है। अत: भारत की स्थिति पर विचार करते हुये और विषय से संबंधित मुख्य राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखते हुये हमें यह देखना है कि कौन-सा विषय केन्द्रीय सूची में रखा जा सकता है, कौन सहगामी विषय-सूची के लिये है और कौन प्रान्तीय विषय-सूची में रखने योग्य है। केन्द्र और प्रान्तों इत्यादि पर सामान्य आक्षेप करने की अपेक्षा विषय के निकट पहुंचने के लिये यह अधिक लाभदायक ढंग होगा। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं प्रान्तीय सूची के बहुत कम विषयों को केन्द्र को दिया गया है।

सहगामी विषय-सूची में साधारण भारतीय कानूनी जाब्ते या हिन्दू कानून जैसे विषयों का शामिल करना कानून को एकरूपता प्रदान करता है। यह भी हमारे विधान की एक अत्यन्त लाभप्रद रूपरेखा है। उदाहरणार्थ, जायदाद हस्तांतरित करने का एक्ट (Transfer of Property Act), हिन्दू कानून, उत्तराधिकार कानून इत्यादि। बहुत

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

से सहगामी सूची के विषयों को स्वीकार करने में रियासतों को भी कोई आपत्ति नहीं है। मैं कोई कारण नहीं पाता कि रियासतें क्यों केवल सर्वोच्च सत्ता की लोलुपता के कारण नकल करती रहें या थोड़ा-बहुत परिवर्तन करके समस्त भारत से संबंधित मुख्य और सार्वजनिक हित संबंधी विषयों पर अपने एक्ट बनाती रहें। यह आजकल आम रिवाज है और बहुत-सी रियासतों में प्रचलित है कि जैसे ही भारतीय व्यवस्थापिका में कोई एक्ट स्वीकृत होता है उस एक्ट की नकल थोड़े परिवर्तन के साथ रियासतों में होती है जिससे वकीलों की जेब गरम होती है और भारत के विभिन्न प्रदेशों में कानून की एकरूपता नहीं रह पाती।

संकट कालीन व्यवस्थाओं (Break down Provision) को लेते हुये मैं यह कहूंगा कि वे प्रान्त के उन प्रतिनिधियों के कहने और यदि कह सकूं तो हठ के कारण शामिल की गई हैं जो भारत के विभिन्न प्रान्तों में मंत्री का पद ग्रहण किये हुये हैं। इसलिये श्रीमान् जी, मैं यह कहने का साहस करता हूं कि संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट इस सभा के लिये विचारणीय है, और मुझे इसमें संदेह नहीं है कि परिश्रम और सूक्ष्म अन्वेषण के पश्चात्, जो नि:संदेह इस सभा के विचारशील क्षेत्रों द्वारा किया जायेगा, आपको इस रिपोर्ट में ऐसी कोई भी बात नहीं मिलेगी जिसका अपवाद किया जाये। इसलिये मैं प्रस्ताव का समर्थन करता हूं कि इस रिपोर्ट पर सभा विचार करे।

***श्री बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं कि संघ-अधिकार-समिति की दूसरी रिपोर्ट पर विचार किया जाये।

जब हम इस रिपोर्ट पर प्रारम्भिक वाद-विवाद कर रहे हैं हमको सामान्यत: उन आधारभूत विचारों को प्रकट करने के लिये कहा गया है कि जिन पर संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट अवलम्बित है। रिपोर्ट के दूसरे पैरे में यह कहा गया है:

''मंत्रिमंडल की योजना में केन्द्रीय सत्ता के क्षेत्र में कठोर परिमितितायें थीं जिन पर हम समझ सकते हैं कि परिषद् को देश की शासन-व्यवस्था संबंधी आवश्यकताओं पर अपने निर्णय के विरुद्ध मुस्लिम लीग को संतुष्ट करने के लिये समझौता स्वीकार करना पड़ा। अब विभाजन अवश्यम्भावी है, हम सबकी एक राय है कि

केन्द्र के निर्बल अधिकार देश-हित के लिये घातक होंगे जो कि शांति का आश्वासन देने में, सार्वजनिक हितों संबंधी प्रमुख विषयों के एकीकरण में और अंतर्राष्ट्रीय जगत में समस्त देश की ओर से प्रभावोत्पादन करने में असमर्थ रहेंगे।''

श्रीमान् जी, मैं समझता हूं कि यह वह सिद्धान्त है जिसका कोई विवेकशील व्यक्ति अपवाद नहीं कर सकता है। जब हमने 16 मई की योजना को स्वीकार कर लिया और जब उसके फलस्वरूप इस नतीजे पर पहुंचे कि जो अधिकार केन्द्र को सौंपे जा रहे हैं वे बहुत परिमित हैं तो हममें से अनेकों ने यह आभास किया कि यह बात ठीक नहीं, केन्द्र को अधिक अधिकार होने चाहियें जिससे कि वह अपनी उन जिम्मेवारियों को निभा सके जो स्वतंत्रता प्राप्त करने पर आयेंगी। परन्तु जैसा कि ठीक बताया गया है, 16 मई की योजना में निर्धारित सिद्धान्तों को स्वीकार करने के अतिरिक्त हम कुछ नहीं कर सकते थे। अब वह योजना रद्द कर दी गई है और आज हमें यह बात स्पष्ट समझ लेनी है कि शक्तिशाली केन्द्र से हमारा क्या आशय है और जिन अधिकारों को हम केन्द्र को सौंप रहे हैं वे प्रान्तों की स्वतंत्र उन्नति में बाधक तो नहीं हैं।

सूचियों में दिये हुये विभिन्न विषयों को लेने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम यह ध्यान रखें कि शक्तिशाली केन्द्र की क्या-क्या विशेषतायें हैं। शक्तिशाली केन्द्र की विशेषतायें मेरे विचार से तो ये हैं कि उसकी स्थिति ऐसी हो कि वह समस्त देश की भलाई के लिये विचार कर सके और योजना बना सके, जिसका यह अभिप्राय है कि उसे केवल संकटकाल में कार्रवाइयों में एकरूपता लाने का ही अधिकार न हो वरन् देश की आर्थिक प्रगति में विभिन्न प्रान्तों को आदेश देने के भी अधिकार हों। शक्तिशाली केन्द्र की दूसरी विशेषता यह है कि आवश्यकता पड़ने पर प्रान्तों में शासन संबंधी सुधार-हित साधन उपलब्ध कर सके। तीसरी विशेषता यह है कि संकटकालीन अवस्था में समस्त देश के हित के लिये प्रान्तों को अपनी आर्थिक और औद्योगिक परिपाटी को सुव्यवस्थित रखने के आदेश दे सके। शक्तिशाली केन्द्र की चौथी विशेषता यह है कि देश को विदेशी हमले और परस्पर घातक विद्रोह से बचाने के यथेष्ट अधिकार उसके पास हो। शक्तिशाली केन्द्र की पांचवीं विशेषता यह है कि अंतर्राष्ट्रीय जगत में समस्त देश का प्रतिनिधित्व करने के लिये वह यथेष्ट शक्ति सम्पन्न हो।

मैं एक शक्तिशाली केन्द्र की ये विशेषताएं समझता हूं।

[श्री बालकृष्ण शर्मा]

दूसरा प्रश्न यह है कि शक्तिशाली केन्द्र की ये विशेषतायें होते हुये भी हम एक शक्तिशाली केन्द्र चाहते हैं या नहीं। इस प्रश्न पर वाद-विवाद करने से पूर्व हमको यह समझ लेना चाहिये कि शक्तिशाली केन्द्र की स्थिति उसके अंतर्गत रहने वाले किसी शक्तिशाली प्रदेश की स्थिति से किसी प्रकार का कोई संघर्ष उत्पन्न नहीं करती है।

कल हमने प्रान्तीय स्वायत्त शासन के दो वीरों के अनोखे भाषण सुने। एक भाषण मौ॰ हसरत मोहानी का था और दूसरा श्री के॰ सन्तानम् का। श्री सन्तानम् ने तो संघ-अधिकार-समिति की इस योजना के अनुसार केन्द्र को दिये जाने वाले अधिकारों के विषय पर बड़ा तीक्ष्ण और उग्र भाषण दिया। परन्तु यदि हम उन विषयों का विश्लेषण करें जो कि योजना के साथ सूची में हैं तो हम यह मालूम करेंगे कि ऐसे बहुत कम विषय हैं जिनका श्री सन्तानम् जैसे विकेन्द्रीकरण योजना के प्रवर्त्तक भी अपवाद कर सकें। विश्लेषण करने पर मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि संघ की विषय-सूची में संख्या 1 से 10 तक के विषय भिन्न-भिन्न रूप से रक्षा-कार्य के अंतर्गत आते हैं, और मैं नहीं समझता कि ऐसा भी कोई व्यक्ति होगा जो इसका अपवाद करे। उदाहरणार्थ, संघ के प्रदेशों या उसके किसी भाग की रक्षा, रक्षा के लिये सब तैयारियां और इसके साथ-साथ वे समस्त कार्य-साधन जो कि युद्धकाल में विजय प्राप्त कराने में सहायक हों और युद्ध समाप्त हो जाने के पश्चात् सेना तोड़ने का कार्य। केन्द्र को इस प्रकार के कार्य सौंपने में इस सभा के किसी सदस्य को कोई आपत्ति नहीं होगी। मैंने कहा था कि संख्या 1 से 10 तक के भिन्न-भिन्न विषय केन्द्र को रक्षा के उत्तरदायित्व के अन्तर्गत आते हैं और मैं नहीं समझता कि कोई व्यक्ति इसका अपवाद करेगा।

इसके बाद संख्या 11 से 25 तक के भिन्न-भिन्न विषय विदेशी विभाग के अन्तर्गत आते हैं और इनके लिये भी मैं नहीं समझता हूं कि श्री सन्तानम् या मौ॰ हसरत मोहानी भी कोई अपवाद करेंगे।

इसके बाद हम मद 26 से 28 तक को लेते हैं। ये आयात और निर्यात, पुस्तकालय, अजायबघर और विश्वविद्यालयों के संबंध में हैं। ये वे उत्तरदायित्व हैं जो कि केन्द्र के अधिकार में हैं ही और उनको केन्द्र के ही अधिकार में रखना है और मैं यह नहीं समझता कि इस उत्तरदायित्व को केन्द्र को सौंपने के विरुद्ध कोई सारयुक्त बात कही भी जा सकती है क्या!

इसके बाद हम 29 और 30 मदों पर आते हैं जो यातायात के अंतर्गत आते हैं। इनको भी केन्द्र के आवश्यक अंग मानने में कोई कठिनाई नहीं हो सकती है।

संघ की सूची में 40 मद से 53 मद तक पैमाइश (Survey) संघ का, न्याय-विभाग तथा जायदाद का संघ-हित के लिये ग्रहण करना, अनुसंधान, जनगणना, भारतीय रिजर्व बैंक, सरकारी ऋण, सूद, मुद्रा (Currency) जैसे विभिन्न विषय हैं। श्रीमान्जी, मुझे संदेह है कि ये विषय भी प्रान्तों को दिये जा सकेंगे। यह ठीक और उपयुक्त है कि संघ-अधिकार-समिति ने इन सब विषयों को केन्द्र के सुपुर्द किया है।

तत्पश्चात् 54 मद से 59 मद तक हम कुछ ऐसे विषयों पर आते हैं जो व्यापार, अर्थ, बीमा, कारपोरेशन्स, बैंकिंग, चैक, विनिमय-पत्र (Bill of Exchange), सनद (Patent) और मुद्रणाधिकार (Copy Right) से संबंध रखते हैं। किसी प्रान्त पर इनके उत्तरदायित्व का भार नहीं लादा जा सकता है। इस प्रकार यदि आप सूची की सूक्ष्म परीक्षा करें तो किसी मद का अपवाद नहीं किया जा सकता है। बेशक मद 54 और 64 विवादास्पद हैं।

मद संख्या 54 कहता है:

''संघ के अंतर्गत प्रदेशों के किसी भाग में संघ पर असर डालने वाली बड़ी-बड़ी आकस्मिक संकटपूर्ण आर्थिक परिस्थितियों पर विचार करने और प्रबंध करने के अधिकार।''

मद संख्या 64 बताता है:

''उन स्थानों में उद्योग-धंधों की उन्नति जहां कि संघीय कानून द्वारा जनता के हितार्थ संघ के नियंत्रण में उन्नति करने की घोषणा की जा चुकी हो।''

ये दो विषय हैं जिनका यह कह कर अपवाद किया जा सकता है कि ये प्रांतों के उत्तरदायित्वों का अपहरण करते हैं।

लेकिन मैं यह निवेदन करूंगा कि प्रान्तों में ऐसे अवसर आ जाते हैं और परिस्थितियां उत्पन्न हो जाती हैं जबकि प्रान्त स्वयं इन गंभीर समस्याओं को नहीं सुलझा पाते और यदि हमें देश में समान औद्योगिक वितरण की प्रगति का उपभोग

[श्री बालकृष्ण शर्मा]

करना है तब तो हमें इन दोनों मदों में दिये गये अधिकारों को केन्द्र के लिये सुरक्षित रखना ही है। इसलिये मैं नहीं समझता कि इन विषयों को केन्द्र के सुपुर्द करने में कोई विरोध हो सकता है। जो कुछ भी श्री सन्तानम् और हसरत मोहानी ने कहा उसमें मैंने विकेन्द्रीकरण के भाव को पाया और जब मैं उनके भाषण को सुन रहा था, मैं अपने मन में प्रश्न कर रहा था कि कहीं यह भारत की प्राचीन ऐतिहासिक विश्लेषणात्मक प्रवृत्ति तो नहीं है जो कि स्वयं इन वीरों के रूप में भाषण दे रही है। श्री सन्तानम् ने बहुत-कुछ कहा कि विधान निर्माताओं के मस्तिष्क में केन्द्र को आवश्यकता से अधिक अधिकार देने की बात जड़ जमा चुकी थी। जहां तक मस्तिष्क में किसी बात के जड़ जमा लेने से संबंध है, मैं समझता हूं कि यह तो बिल्कुल उलटा ही है। ये तो विकेन्द्रीकरण के प्रवर्त्तक ही हैं जो इस भय से भयभीत हैं कि जब तक केन्द्र को निर्बल न बनाया जायेगा, तब तक समस्त अधिकार जिनका प्रान्तों में उपभोग करने की उन्हें आशा है, नाममात्र को रह जायेंगे। इस प्रकार के भय से हमें भयभीत नहीं होना चाहिये। हमको ''हौआ'' का विचार नहीं करते रहना चाहिये और इसके साथ-साथ दूसरों से उससे डरने के लिये न कहना चाहिये।

मेरे ख्याल से मौ० हसरत मोहानी ने देश में समाजवादी गणतंत्र की स्थापना करने के संबंध में बहुत-कुछ कहा। मैं समझता हूं कि मौलाना साहब यह नहीं जानते कि सोवियत समाजवादी जन इस देश में जब तक नहीं पनप सकते हैं तब तक कि उनका सुसंगठन न हो और केन्द्रीय आदेश न हों। यह सब होते हुये भी हम सबको औद्योगिक सामाजीककरण के परिणाम के लिये तत्पर रहना चाहिये। औद्योगिक समाजीकरण ऐसे विषय नहीं है कि वह एकदम लागू कर दिया जाये। उसके लिये केन्द्र से आदेश मिलना चाहिये। उसके लिये केन्द्र को पथ-प्रदर्शक बनाना चाहिये और फिर हम सबको राष्ट्रीयकरण और सामाजीककरण के क्रम में अनेकों विचित्र बातों के लिये तत्पर रहना चाहिये। हम उससे बच नहीं सकते हैं। और फिर समाजवाद स्थापन करने के लिये हमें अपने देश में विकेन्द्रीकरण के ढंग की सरकार बनानी होगी। उससे हमें बहुत अधिक लाभ नहीं होगा। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि रिपोर्ट, जैसी कि बनाई गई है, हमारे पूर्ण समर्थन प्राप्त होने योग्य है और जब हम इसके एक-एक मद पर वाद-विवाद करेंगे तो सभा को यह अवश्य विदित होगा कि जो कुछ भी इसके विरोध में कहा गया है वह यथार्थ नहीं है।

यह भी कहा गया था कि अधिकार और आय का समान बंटवारा होना चाहिये। यह तो है ही। प्रान्तीय विषय-सूची की ओर देखिये। आपको ऐसे 19 अर्थात् 40 से 58 तक मद मिलेंगे जो कि कर-निर्धारण के समस्त अधिकार प्रान्तों को देते हैं। मुझे उन सब मदों के वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है। प्रान्त अपनी मालगुजारी ले सकते हैं जिसमें मालगुजारी लगाना और उगाना, भूमि संबंधी रिकार्ड का सुरक्षित रखना, मालगुजारी और अधिकारों के रिकार्ड के लिये पैमाइश, तथा कृषि-आय पर कर, भूमि और इमारतों पर कर, कृषि-भूमि के उत्तराधिकार पर कर, कृषि-भूमि पर सम्पत्ति-कर (Estate-Duty), खनिज अधिकारों पर कर, वैयक्तिक कर (Capitation Tax), धंधे, व्यवसाय पर कर इत्यादि, इत्यादि शामिल हैं। प्रान्तों को कर लगाने के इतने अवसर दिये गये हैं और श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के अत्यंत विद्वतापूर्ण तथा स्पष्ट भाषण को सुनकर, जो कि अभी कुछ मिनट पूर्व ही हुआ है, हम समझ सकते हैं कि किसी प्रकार भी प्रान्तों के हितों की उपेक्षा इस रिपोर्ट के निर्माताओं ने नहीं की है। श्रीमान्जी, इसलिये मैं इस रिपोर्ट का हार्दिक समर्थन करता हूं और मैं समझता हूं कि गंभीर विचार करने पर सभा को यह विदित हो जायेगा कि ऐसी कोई भी मद नहीं है जिसका अपवाद किया जा सके।

***श्री जी॰एल॰ मेहता** (पश्चिमी भारतीय रियासतें): कल जब हममें से कुछ सदस्यों ने इस वाद-विवाद में भाग लेना चाहा था, मेरा ऐसा ख्याल था कि इस रिपोर्ट का जो कि बड़ी योग्यता तथा कुशलता के साथ श्री गोपालस्वामी आयंगर ने पेश की है, इस सभा द्वारा स्वागत किया जायेगा। यह ठीक है कि मौलाना हसरत मोहानी ने दो भाषा मिश्रित भाषण में जो संशोधन पेश किया है उसके लिये हम तैयार थे। श्री के॰ सन्तानम् की उद्देश्यमूलक प्रवृत्ति का मैं बहुत सम्मान करता हूं, परन्तु उनके भाषण ने तो मुझे आश्चर्यचकित कर दिया। अध्यक्ष महोदय, अधिकारों के बंटवारे के विषय पर हम इस प्रकार वाद-विवाद कर रहे हैं कि मानो वह रस्साकशी हो अथवा दो अधिकारियों में परस्पर संघर्ष। इस प्रकार की कोई बात नहीं है। यह एक योजना है जिसमें परस्पर रियायतों द्वारा प्रान्तीय और सांस्कृतिक राजभक्ति की रक्षा की जानी चाहिये और भारतीय संघ की राजनैतिक शक्ति और दृढ़ता में उन्नति हो। दूसरी रिपोर्ट ने यह स्पष्ट बता दिया है कि केन्द्र को अवशिष्ट अधिकार क्यों होने चाहिये। मौलाना हसरत मोहानी ने कल यह कहकर हमें अचम्भे में डाल दिया कि चूंकि अब भारत का विभाजन हो गया है केन्द्र को इन अवशिष्ट अधिकारों को सौंपने की कोई आवश्यकता नहीं है।

[श्री जी.एल. मेहता]

इसके विपरीत प्रदेशों को अवशिष्ट अधिकारों में रियायतें देने का कारण साम्प्रदायिक हितों के लिये एक प्रकार का सौदा था। लेकिन अब चूंकि विभाजन हो गया, कोई कारण नहीं है कि भारतीय संघ एक शक्तिशाली केन्द्र न बनाये। अध्यक्ष महोदय, समाजवादी गणतंत्र राज्य (रूस) का हवाला देने में कुछ आनन्द आता है, लेकिन यदि आप सोवियत रूस के विधान और प्रगति का अध्ययन करें तो आपको यह मिलेगा; पृथक् होने के अधिकार तथा अन्य अधिकार जो कि प्रदेशों को दिये गये हैं केवल नाममात्र के सिद्धान्तीय अधिकार हैं। समस्त राष्ट्र का शासन कम्युनिस्ट दल के कठोर और निरंकुश अनुशासन द्वारा किया जाता है। इसलिये भारतवर्ष में सदैव रूस का उदाहरण देने से कोई लाभ नहीं कि वह स्वतंत्र है। जैसा कि पूर्व वक्ता श्री बालकृष्ण शर्मा ने बताया कि यदि देश में समाजवाद हो भी जाये तो भी यह नितान्त आवश्यक है कि केन्द्र की ओर से आदेश हों। अध्यक्ष महोदय, हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि जो संघ हम बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं वह ऐसा संघ है जिसका उदाहरण संसार-भर में नहीं है क्योंकि अब तक ब्रिटिश-शासन-पद्धति के कारण तथा रियासतों से उनकी संधियों और राजीनामों के कारण हम इस देश में एक शक्तिशाली केन्द्र रखते चले आये हैं। अन्य अनेकों देशों में जहां संघ-शासन की स्थापना हुई वहां स्वतंत्र सर्वोच्च अधिकार प्राप्त प्रदेशों को सम्मिलित होने के आधार पर हुई। लेकिन यहां सन् 1935 तक सारी समस्या विकेन्द्रीकरण की थी। दूसरी बात यह है कि 15 अगस्त तक ब्रिटिश भारत की शासन-पद्धति के अन्तर्गत केन्द्र और भारतीय रिसासतों के मध्य एक विलक्षण-सा संबंध था। लोगों को इस बात के लिये चिन्तित रहने से कि प्रान्तों और रियासतों में आरम्भ से ही समानता रहनी चाहिये, कोई लाभ नहीं। हमारे अंत:करण शुद्ध नहीं हैं और यदि यह प्रणाली तर्कहीन है तो हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि तर्क सदैव राजनीति में लागू नहीं होता है, हमने यह देखा है। उदाहरणस्वरूप अंग्रेजों ने, जो कि वास्तव में तर्कहीन व्यक्ति हैं अपने विधान में खूब सफलता प्राप्त की। अत: हमें यथासंभव सुन्दर रीति से भारत में राष्ट्रीय अखंडता स्थापित करनी है। केन्द्र और प्रान्तों के बीच इस संबंध के प्रश्न को एक केवल राजनैतिक रचना और अधिकारों का पृथक्करण ही समझा जाता है। लेकिन जो चीज कि इस संबंध को अंत में निश्चित करेगी वह आर्थिक घटनायें तथा माली (फाइनेन्शियल) विचार होंगे। सम्मानपूर्वक क्या मैं यह कह सकता हूं कि हम बहुधा अपने विधान बनाने में तथा विचार सामग्री प्राप्त करने में 19वीं शताब्दी के ब्रिटेन के राजनैतिक सिद्धांत के विधान पर निर्भर हैं? संघ-शासन पद्धति अथवा किसी विशेष प्रकार की

शासन-पद्धति पर भावात्मक रूप से सोचने में, कि उनमें कुछ ऐसे विशिष्ट गुण हैं जो उनको स्वयं वांछनीय बना देते हैं, कुछ संकट हैं। हमें सदैव किसी अनुकरण के उल्लेख करने की रुचि है और यह वाद-विवाद करने की कि जब तक क, ख और ग अधिकार संसार के किसी विधान के अंतर्गत नहीं हैं तो हम उन्हें अपने देश में भी नहीं रख सकते हैं। इस प्रकार से राजनैतिक संस्थाओं की नकल, दूसरे देशों की राजनैतिक संस्थाओं के आधार पर, अपने देश में राजनैतिक संस्था स्थापित करने में सदैव कुछ न कुछ संकट रहता है। अफ्रीका में बन्दरों का एक दल है जो मनुष्यों के मकान की ठीक-ठीक नकल करता है और फिर उसके अन्दर रहने की अपेक्षा वह उसके बाहर रहता है। अन्य राजनैतिक संस्थाओं के आधार पर संस्थायें स्थापित करने से ये संस्थायें स्पष्टताओं के ग्रहण करने और तत्वों को छोड़ने के संकट से नहीं बच सकती हैं। हमें अपने देश की परिस्थितियों के अनुसार न कि किसी भावमूलक सिद्धान्त पर इस पद्धति का निर्माण करना है। हमारे देश में हमारी आवश्यकताओं और हितों के लिये किसी विशेष उपचार की आवश्यकता है और कोई व्यक्ति भी यह नहीं मानता कि इस विशाल देश में, जिसका इतना बड़ा क्षेत्र है और जिसमें असंख्य जन हैं, एकात्मक राज्य-प्रणाली द्वारा शासन किया जा सकता है। एक फ्रांसीसी राजनीतिज्ञ ने कहा है कि ''आवश्यकता से अधिक केन्द्रीकरण प्रदेशों को अशक्त बना देता है और केन्द्र में बौखलाहट उत्पन्न कर देता है। एकरूपता प्राप्त करने के लिये अनुचित केन्द्रीकरण कोई साधन नहीं है।" वास्तव में हम इस देश में एकीकरण करना नहीं चाहते हैं बल्कि कुछ खास विषयों में एकरूपता लाना चाहते हैं। लेकिन मैं इस बात पर जोर दूंगा कि हमें विकेन्द्रीकरण की प्रवृत्ति से रक्षा करना है जो कि सदैव पैदा होती रहेगी और हमें अपने राष्ट्रीय संगठन को भी ध्यान में रखना है जिसको हमने प्राप्त कर लिया है और जिसकी अपनी अमूल्य निधि के समान हमें रक्षा करनी है। अध्यक्ष महोदय, अंग्रेज मित्रों द्वारा यह तर्क उपस्थित किया जाता है कि इस देश को ब्रिटिश सरकार की शासन सम्बन्धी इकाई की एक देन मिली है। निःसंदेह इसमें कुछ सत्य है, परन्तु इसमें भी झूठ नहीं है कि जैसे जैसे राष्ट्रीय आन्दोलन जोर पकड़ता गया वैसे-वैसे ही, ब्रिटिश सरकार ने इस देश में हर प्रकार की फूट और कुसंगठन की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया, जिसका प्रत्यक्ष फल आज हमारे सामने विभाजन के रूप में है। दुर्भाग्य से हम इस फूट की दुष्प्रवृत्ति के आसानी से शिकार बन जाते हैं। यद्यपि यह असत्य-सा प्रतीत होगा परन्तु एक शक्तिशाली केन्द्र ही पर्याप्त प्रान्तीय स्वायत्त शासन का निर्माण कर सकता है और विकेन्द्रीकरण कर सकता है। आपके सामने जो योजना पेश

[श्री जी.एल. मेहता]

है उसके अंतर्गत यह मोटे रूप से कहा जा सकता है कि आर्थिक जीवन को नियमित करने का अधिकार प्रांतों और केन्द्र में बांट दिया गया है और आर्थिक तथा सामाजिक जगत में प्रान्तीय उत्तरदायित्वों और अधिकारों के लिये वृहद् क्षेत्र है। फिर भी हमें सामान्य नागरिकों की आवश्यकता को दृष्टिकोण में रखते हुये इस समस्या का निर्णय करना है और यह देखना है कि किस प्रकार उनको संतुष्ट किया जा सकता है। हमें अपने आपको राजनैतिक रचना तथा उसके कुशल संचालन में ही नहीं भुला देना है।

वास्तव में केवल दो मुख्य बातें हैं जिनके द्वारा हमें इस प्रश्न का निर्णय करना है, अर्थात् एक अच्छी राज्य व्यवस्था के लिये क्या आवश्यक है तथा लोगों की सामाजिक आवश्यकताओं के लिये क्या उपयोगी है। इन आवश्यकताओं की, चाहे भौतिक हों चाहे सांस्कृतिक, पूर्ति की जा सकती है। यदि विभिन्न प्रान्तीय सरकारें इनको पूरा करने में समर्थ हों—उन आवश्यकताओं को पूरा करने में जिनकी मांग आज नागरिक करते हैं।

अध्यक्ष महोदय, हमें यह भी नहीं भूल जाना चाहिये कि आर्थिक शक्तियां और भेदनीति वर्तमान समय में हमें शक्तिशाली केन्द्र बनाने के लिये विवश करती हैं। यदि हम आर्थिक और सामाजिक उन्नति के लिये संगठन करना चाहते हैं जिस प्रकार कि मनुष्य युद्ध के लिये संगठन करते हैं तो हमारा भावी राज्य वास्तविक अर्थ में सत्ता सम्पन्न राज्य होना चाहिये। समाज सेवा करने वाला होना चाहिये। उसे बहुत धन की आवश्यकता होगी और इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये प्राय: समान आर्थिक परिस्थितियों का निर्वाह करना होगा।

सहगामी सूची के विषयों में ''योजना बनाने'' के विषय को सम्मिलित करने पर मेरे मित्र श्री सन्तानम् का विरोध सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ। और हो भी क्या सकता था? केन्द्र की योजनायें होती हैं प्रान्तों की योजनायें होती हैं तथा कुछ देशी रियासतों की अपनी योजनायें होती हैं। श्री नियोगी की अध्यक्षता में योजना-परामर्शदातृ-समिति (Advisory Planning Committee) ने इस वर्ष के आरम्भ में अपनी रिपोर्ट में कहा है कि उन्नति के विषय में केन्द्र और प्रांत की सरकारों को संगठित होकर संयुक्त प्रयत्न करना चाहिये और जहां तक भी हो सके अपने आर्थिक साधनों को समुन्नत करने के लिये एक ही नीति को स्वीकार करना चाहिये। वास्तव में योजना बनाने का विषय सहगामी....

*श्री के॰ सन्तानम्** (मद्रासः जनरल)**: मैं वक्ता का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहूंगा कि मैंने ''योजना बनाने'' के विषय को विधान के अलग परिच्छेद में रखने के लिये कहा था न कि उस पर केवल एक मुद्दे के रूप में विचार करने के लिये। केन्द्र और प्रान्तों के मिलकर योजना क्रियान्वित करने पर मैंने कोई विरोध नहीं किया।

***श्री जी॰एल॰ मेहता:** यदि यही बात है तो मैं समझता हूं कि मेरे मित्र राष्ट्रीयकरण की योजना को सहगामी विषय-सूची में रखने के विरोध में नहीं हैं। किसी हालत में भी योजना का विकास, निर्देशन तथा उसको क्रियान्वित करने की विधि केन्द्र से ही प्राप्त होगी और ऐसे निश्चय विभिन्न प्रदेशों के सहयोग के साथ पूर्ण किये जायेंगे। आर्थिक, शिल्प संबंधी और विज्ञान संबंधी प्रगतियों ने केन्द्र और प्रदेशों में अधिकारों के बंटवारों को अप्रचलित बना दिया है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के टेनिसी घाटी अधिकार को लीजिये। उसकी सफलता ने संघीय एजेंसी को स्थापित करने से प्रदेश के अधिकारों तथा शासन-व्यवस्था में क्षति होने के भय को निर्मूल सिद्ध कर दिया। हम इस प्रकार का संगठन कर सकते हैं कि केन्द्रीय उत्पादन भी हो और प्रान्तीय उत्तरदायित्व भी बने रहें। चाहे कैसा भी वैधानिक प्रबन्ध हो केन्द्र और प्रान्तों के संबंध का निर्णय आर्थिक शक्तियों तथा प्रवृत्तियों और माली विचार-विमर्शों द्वारा होगा। आजकल व्यवसाय, व्यापार और उद्योग तथा इनमें परस्पर आर्थिक संबंध का क्षेत्र राष्ट्रीय है और नियम बनाने के आशय से इनको सरलतापूर्वक प्रान्त और संघ में नहीं बांटा जा सकता है। अध्यक्ष महोदय, श्री सन्तानम् ने कल संघ की सूची में उद्योग-धन्धों के बारे में कुछ कहा था। मद 6 में रक्षा संबंधी उद्योगों के अतिरिक्त मद 65 में उद्योग-धंधे की उन्नति का उल्लेख है जिसमें जनता के हित के लिये संघ के कानून द्वारा प्रगति को संघ के नियंत्रण में रखना आवश्यक कहा गया है। इस समस्या पर विचार करने की यही विवेकपूर्ण विधि है। सन् 1945 में उद्योग-धंधे संबंधी नीति की घोषणा में भारतीय सरकार ने यह कहा था कि जिन उद्योग-धंधों में एक ही नीति वांछनीय समझी जाये उनको केन्द्र के नियंत्रण में लाना चाहिये। क्या हम भावी केन्द्रीय सरकार में यह विश्वास नहीं कर सकते कि वह इस बात का निश्चय करे कि कौन-कौन से उद्योग-धंधे रक्षा के लिये महत्वपूर्ण हैं, कौन-कौन से प्रमुख उद्योग धंधे हैं और ऐसे कौन-कौन से उद्योग हैं जो कि अन्तर्प्रान्तीय हैं और केन्द्र के नियंत्रण में आने चाहियें? श्रम के संबंध में तो हम जानते हैं कि कई कारणों से एकरूपता वांछनीय है, अन्यथा एक प्रान्त के पिछड़ जाने और दूसरे के उससे

[श्री जी.एल. मेहता]

आगे बढ़ने की आशंका है। इसलिये राष्ट्रीय आधार पर नियम बनाने की बात में बल है। देशी रियासतों के संबंध में, कुछ उल्लेखनीय अपवादों सहित, उदाहरणार्थ श्रम संबंधी कानून तथा कर-निर्धारण की परिस्थितियां आवश्यक परिमाण की नहीं हैं। हमें औद्योगिक नीति, कर-निर्धारण और श्रम संबंधी कानूनों के दायरे में.....

***श्री एच॰वी॰ कामतः** श्रीमान् जी, क्या हस्तलिखित प्रति से पढ़ने की सदस्य को आज्ञा है?

***श्री जी॰एल॰ मेहता:** मैं पढ़ नहीं रहा हूं, लेकिन यदि आप मेरा पढ़ना पसंद नहीं करते, यदि यही आपका निर्णय है.....।

***अध्यक्ष:** मैं मानता हूं कि सदस्य पढ़ नहीं रहा है। उसके सामने केवल नोट है।

श्री जी॰एल॰ मेहता: यदि श्री कामठ, जिनके समान धाराप्रवाह भाषण देने की प्रतिभा मुझमें नहीं है, तत्क्षण कृत भाषण दे सकते हैं, तो मैं उनसे निवेदन करूंगा कि वे मेरा अनुसरण करें।

अध्यक्ष महोदय, किसी समय भी भारतीय एकता का महत्व इतना स्पष्ट नहीं हुआ जितना हमने युद्धकाल और उसके पश्चात् अनुभव किया। उदाहरणस्वरूप खाद्य विषय, मूल्य नियंत्रण का पूरा विषय, राशनिंग का सम्पूर्ण विषय, इन सबके लिये अखिल भारतीय आधार पर संगठन और प्रगति करने की आवश्यकता है जिसमें प्रादेशिक प्रतिबंधों या अन्तर्प्रान्तीय द्वेष के लिये स्थान नहीं है। इन समस्याओं के लिये हमें एक विस्तृत और व्यापक आर्थिक नीति की आवश्यकता है जो केवल हमारी भौतिक प्रगति के लिये ही आवश्यक नहीं है वरन् हमारी राष्ट्रीय स्थिति के लिये भी आवश्यक है। कई बातों में मिसाल के तौर पर जंगी और व्यापारी जहाजी बेड़े के संबंध में, हवाई जहाजी बेड़े की विभिन्न शाखाओं की शिक्षा के संबंध में, उच्च शिल्पकला शिक्षण-संस्थाओं के शासन-प्रबन्ध के संबंध में, उच्च शिक्षा के एकीकरण के लिये और विशेषकर उच्च शिल्पकला संबंधी शिक्षा के लिये हमें आवश्यकता है कि ये अखिल भारतीय नीति तथा उपायों के अधीन रहें। इस अभिप्राय से शक्तिशाली और निर्बल केन्द्र की साधारणरूप में व्याख्या नहीं की जा सकती है जैसा कि श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने बताया है।

कुछ विशेष मदों के लिये तुम्हें जम कर बैठना है और फिर यह निश्चय करना है कि वह मद वास्तव में केन्द्र द्वारा अच्छे रूप में क्रियान्वित किया जा सकता है या प्रान्तों द्वारा।

मैं केवल एक बात और कहना चाहता हूं। हमें यह नहीं भुला देना चाहिये कि प्रान्तों का अधिक अधिकार मांगने का एक प्रमुख कारण आर्थिक प्रगति की आवश्यकता है। हमें इस देश से आर्थिक असमानता को दूर करना है। हमें सम्पूर्ण देश में योजना को क्रियान्वित करना है। हमें यह देखना है कि जो क्षेत्र बहुत पिछड़े हुये हैं और उन्नत नहीं हैं उनको अग्रमण्यता दी जाये। यदि यह नहीं किया जायेगा तो इन भागों का निम्न जीवनयापन और न्यून राष्ट्रीय आय अन्य भागों के उच्च परिमाण के लिये संकट उत्पन्न करेगा। अन्तर्प्रान्तीय ईर्ष्या दूर करने के लिये, समस्त देश की आर्थिक प्रगति के लिये एक सुन्दर सक्रिय योजना की बड़ी आवश्यकता है। लेकिन फिर वही प्रश्न होता है कि इसके अधिकारी कौन हैं? जब तक कि कोई राष्ट्रीय अधिकारी न हो और जब तक कि साधनों के विभाजन करने और अग्राधिकार के निर्णय करने के लिये और इन विभिन्न योजनाओं के एकीकरण करने के लिये किसी को अधिकार न हो तो हम अपने देश के पिछड़े हुये या निम्नोन्नत क्षेत्रों की वास्तविक उन्नति नहीं कर सकते हैं।

कनाडा में संघ और प्रान्तों के संबंधों पर रायल कमीशन की रिपोर्ट से उद्धृत करने के अतिरिक्त मैं और किसी श्रेष्ठ विधि से अपने वक्तव्य को समाप्त नहीं कर सकता हूं और यदि ऐसी दशा में मैं थोड़ा-सा अंश पढ़ूं तो मुझे आशा है कि मेरे मित्र श्री कामठ किसी प्रकार की आपत्ति नहीं करेंगे।

''नागरिकों की राज्यनिष्ठा के लिये राष्ट्रीय संगठन और प्रांतीय स्वशासन को प्रतियोगी के समान नहीं समझना चाहिये क्योंकि वे एक ही वस्तु संघीय-पद्धति के दो रूप हैं। राष्ट्रीय संगठन प्रांतीय स्वशासन पर आश्रित रहना चाहिये और जब तक समस्त देश में राष्ट्रीय संगठन की भावना विद्यमान न हो, प्रांतीय स्वशासन स्थापित नहीं किया जा सकता।''

***एक माननीय सदस्य:** विवादन्तक प्रस्ताव।

***सर ए॰ रामास्वामी मुदालियार** (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, कुछ संकोच के साथ मैं इस वाद-विवाद में भाग लेने का साहस करता हूं। यह न समझा जाये

[सर ए. रामास्वामी मुदालियार]

कि मैं रियासतों की ओर से बोल रहा हूं, यद्यपि वह मेरा प्रमुख उत्तरदायित्व है। मैं आशा करता हूं कि परिषद् मुझे संघ की सभी इकाइयों की ओर से बोलने और इस समय विवादान्तर्गत विषय पर अपने स्पष्ट विचार प्रकट करने की आज्ञा देगी। सर्वप्रथम मैं यह कह दूं कि इस परिषद् के प्रत्येक सदस्य की भावनाओं से मैंने यह समझा है कि सभा में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जिसकी यह भावना हो कि केन्द्र शक्तिशाली न हो। केन्द्र और प्रान्तों में यह कोई रस्साकशी नहीं है। एक दृढ़, शक्तिशाली, अपने विचारों से परिचित तथा अपनी नीति को क्रियान्वित करने में निडर केन्द्र की आवश्यकता की अवहेलना करने का यह विषय नहीं है। हम तो ऐसा ही केन्द्र चाहते हैं। जो रियासतें इस संघ में सम्मिलित हुई हैं वे अपने पूरे खुले दिल से सम्मिलित हुई हैं। (*करतल ध्वनि*) इस संघ को सफल बनाने की इच्छा से और इस उत्कंठा से हम इस संघ में सम्मिलित हुये हैं कि यह संघ जहां तक हो सके राष्ट्रमंडल में सम्मानित स्थान पा जाये, इसके प्रतिनिधित्व मानवता की अंतिम सीमा तक प्रगति कर सकें, अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में उनके भाषण और लेख इस प्रकार के हों कि वे अद्वितीय माने जायें। *(घोर करतल ध्वनि)* इस कारण अध्यक्ष महोदय, ऐसा कोई संदेह न रहे कि इस सभा में ऐसा कोई व्यक्ति है जो रियासतों का प्रतिनिधि हो अथवा रियासतों की ओर से बोल रहा हो, प्रादेशिक इकाई का प्रतिनिधि हो अथवा उसकी ओर से बोल रहा हो जो इस केन्द्र के महत्व को, केन्द्र के अधिकारों को अथवा उन सत्ताओं को जिनका केन्द्र प्रयोग करना चाहता है, कम करने की किंचितमात्र इच्छा रखता हो। यद्यपि प्रान्तीय स्वशासन नाम की कोई वस्तु नहीं है, यह तो मिथ्या नाम है क्योंकि अधिकारों का विभाजन तो केन्द्र और प्रान्तों में हो रहा है फिर भी यदि प्रान्तीय स्वायतशासन के संबंध में कभी-कभी धीमी, कभी-कभी घोर और कदाचित कभी-कभी बड़ी साहसपूर्ण बात उठाई गई है तो यह इसी कारण है कि इस प्रश्न का एक और पहलू भी है जिसका ख्याल इस महान परिषद् को रखना है। योजना से क्या आशय है और इससे क्या लाभ होगा? इन बातों को पूर्णतया समझने के लिये उसके दोनों पहलुओं अर्थात उससे लाभ और हानि का अध्ययन कर लेना चाहिये। अध्यक्ष महोदय, मैं आपको यह बता दूं और मुझे आशा है कि आप परिषद् के अध्यक्ष होने के नाते मुझसे सहमत होंगे, चाहे केन्द्रीय सरकार के सदस्य होने के नाते न हों, कि प्रादेशिक इकाइयों के प्रमुख शासन प्रबन्धकर्ता भी कम से कम उतने ही बहादुर हैं जितने कि केन्द्र के प्रमुख शासनकर्ता। उनके सामने भी ऐसी समस्यायें हैं जो अपने दायरे में पेचीदी, गम्भीर और कठिन हैं। बड़ी-बड़ी आर्थिक समस्यायें

हैं, ऐसी-ऐसी शिकायतें हैं जिनको दूर करना कठिन है, ऐसी-ऐसी अभिलाषायें, आशायें और उत्कण्ठायें हैं जिनकी पूर्ति करना कठिन है। श्रीमान् जी, यह याद रखिये कि इस प्रकार के बहुत-से कार्य-व्यवहार जो कि प्रत्येक व्यक्ति के सुख का साधन हो सकते हैं, प्रान्तों के या प्रादेशिक इकाइयों के अंतर्गत आते हैं न कि केन्द्र के। प्रांतों में आप लोगों पर ही नि:शुल्क अनिवार्य शिक्षा देने का वह भार है जिसको आपने स्वयं स्वीकार कर लिया है। आप पर उचित चिकित्सा संबंधी व्यवस्था, स्वास्थ्य रक्षा, स्वास्थ्य-वृद्धि, 25 या 27 वर्ष की औसत आयु से अधिक जीवित रहने के लिये मनुष्यों को साधन देने–इस देश में हमारे भाग्य में अभी तक यही औसत आयु रही है–का भार है। आप पर यह भी भार है कि आप यह देखें कि निवासगृह तथा अन्य सुविधाओं की परिस्थितियां पर्याप्त हैं। ये समस्त उत्तरदायित्व प्रान्तीय शासन-व्यवस्था पर हैं। इन उत्तरदायित्व के भार का ही कारण है कि प्रादेशिक इकाइयों के शासनकर्ता यह अनुभव करते हैं कि अधिकारों के विभाजन में विशेषतया कर-निर्धारण के विषय में उनको इन उत्तरदायित्वों को पूर्ण करने के लिये पर्याप्त साधन नहीं मिले हैं। हम यह सोचकर अपनी आत्मा पर मिथ्या प्रशंसा के लेप न करें कि यदि हम शक्तिशाली केन्द्र का समर्थन करते हैं तो हम अच्छे देशभक्त होंगे तथा जो इन साधनों की पुष्ट जांच का समर्थन करते हैं वे ऐसे व्यक्ति हैं जिनमें देशभक्ति की राष्ट्रीय भावना पर्याप्त मात्रा में नहीं है। इसलिये मैं अपने दोनों मित्रों श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर तथा पूर्व वक्ता और मेरे मित्र श्री जी०एल० मेहता द्वारा व्यक्त भावनाओं के स्वर में स्वर मिलाऊंगा कि जिस विषय पर वाद-विवाद करना है तथा जिसका पूर्णतया विश्लेषण करना है वह शक्तिशाली केन्द्र तथा निर्बल केन्द्र अथवा केन्द्र, संघ और प्रान्तों में उत्तरदायित्वों और अधिकारों के विभाजन का सामान्य विषय नहीं है बल्कि वास्तविक साधनों का जो कि संघ-अधिकार कमेटी की रिपोर्ट में दिये गये हैं। मैं यह भी कह दूं कि अपने मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी की यह अंतिम बात सुनकर मुझे खुशी हुई जिसमें उन्होंने सैद्धान्तिक उदाहरणों को, जो कि संघ संबंधी विधानों अथवा मूल ग्रन्थों में से उद्धृत किये जाते हैं, अलग फेंक दिया और हम से इस पत्र में दिये हुये वास्तविक प्रस्ताव पर विचार करने के लिये तथा उसका विश्लेषण करने के लिये कहा। मेरे ख्याल से ऐसा करना कल्याणकारी होगा। इसी दृष्टिकोण से मैं इन प्रस्तावों की परीक्षा करने का साहस करता हूं।

श्रीमान् जी, इस (रिपोर्ट) का मुख्य लक्षण इसके कर-निर्धारण के प्रस्ताव हैं। यही एक चीज है जिसने अधिकांश उन लोगों को भयभीत कर दिया है जिन्होंने

[सर ए. रामास्वामी मुदालियार]

इस समस्या का प्रादेशिक इकाइयों के दृष्टिकोण से अध्ययन किया है। मैं पहले भी कह चुका हूं और उसको फिर दुहराता हूं कि प्रान्तों पर उन अति गंभीर उत्तरदायित्वों को, जो कि राष्ट्र-निर्माण के कार्य कहे जाते हैं, लाद दिया गया है। अध्यक्ष महोदय, यह याद रखिये कि राष्ट्र-निर्माण कार्य वे कार्य हैं जो राष्ट्र का निर्माण करते हैं और ये प्रादेशिक इकाइयों के पूर्ण उत्तरदायित्वों में है न कि केन्द्र के। देश की रक्षा का अधिक महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व केन्द्र पर है। क्योंकि यदि हमसे परिश्रम द्वारा प्राप्त स्वतंत्रता छिन गई तो फिर अन्य कोई वस्तु अपनाने के योग्य नहीं है। मैं इस विचार का प्रशंसक हूं। मैं चाहता हूं कि रक्षा के लिये समस्त आवश्यक अधिकार केन्द्र के पास रहें। मैं चाहता हूं कि देश की रक्षा करने के मुख्य उद्देश्य की पूर्ति के लिये समस्त आवश्यक साधन केन्द्र को प्राप्त हों। इस पर कोई प्रश्न नहीं उठता। लेकिन हमें यह भी याद रखना चाहिये, जैसा कि मैंने कहा था कि इस चित्र का दूसरा पहलू भी है कि रक्षा संबंधी कार्य तब तक ठोस नहीं हो सकते जब तक कि राष्ट्र स्वयं तथा व्यक्ति जो राष्ट्र का निर्माण करता है शक्तिशाली न हो, जब तक उनका पुष्ट पोषण न हो, जब तक उनको उचित शिक्षा न दी जाये, जब तक कि वे राष्ट्र के सच्चे वीर योद्धा के समान स्थान न पा सकें-और ये उत्तरदायित्व मैं फिर कहूं कि प्रान्तों पर हैं न कि केन्द्र पर।

श्रीमान् जी, अब हम इस रिपोर्ट में जो प्रान्तों या प्रादेशिक इकाइयों को कर-निर्धारण के अधिकार दिये गये हैं उनकी परीक्षा करें। वे 40 से 58 मद तक हैं। इससे अधिक प्रान्त और क्या चाहता है? कर-निर्धारण के 19 मद तो हैं लेकिन हम उसकी परीक्षा करें। सभा मुझे दो मिनट के लिये एक-एक मद पर शान्ति के साथ विश्लेषणात्मक परीक्षा करने के लिये क्षमा करेगी। पहला मद मालगुजारी का है। श्रीमान् जी, यह प्रसिद्ध सत्य है कि वर्षों तक यह आन्दोलन रहा कि बन्दोबस्त फिर से न किया जाये और जहां तक हो सके मालगुजारी के प्रश्न को अलग रखा जाये। प्रान्तों के मंत्री और प्रधान मंत्रियों को, जिनका वयस्क मताधिकार द्वारा निर्वाचन हुआ है और कौंसिलों में चुनाव संबंधी अधिकारों का सम्पूर्ण भार जिन पर है, मालगुजारी बढ़ाने में बड़ी कठिनाई होगी। आन्दोलन के होते हुये कौन-सा प्रधानमंत्री ऐसा करने का साहस कर सकता है? क्या मैं यह भविष्यवाणी करने का साहस करूं कि मालगुजारी, बढ़ती हुई आय होने के अतिरिक्त भविष्य में घटती हुई आय होगी, इस कारण मालगुजारी से, जैसा कि समझा जाता है, अधिक आय नहीं होगी। मद 41 की ओर देखिये-निम्न पदार्थों पर कर-नशीले

पेय पदार्थ, अफीम तथा चिकित्सा और शृंगार-संबंधी सामग्री। नशीले पेय पदार्थों के संबंध में, अध्यक्ष महोदय, केन्द्र से निषेध की आज्ञा होने पर जिसे बहुत से प्रान्तों ने स्वीकार भी कर लिया है, और दोनों जनता की मांग तथा केन्द्र के आदेश द्वारा भी इसका प्रतिरोध होने के कारण हम नशीले पदार्थों से कितनी आय की आशा कर सकते हैं? अफीम पर केन्द्र का नियंत्रण है और यह अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों और नियमों के अधीन है। इसकी आय का क्षय होना निश्चित है। सूची में प्रान्तों के लिये आय का साधन होने के रूप में मद 41 को सम्मिलित करने को हम यह समझ लें कि वह हटाया हुआ है। कृषि संबंधी आय पर कर–इस मद को कृषि योग्य भूमि तथा उन पर उत्तराधिकार-कर के संबंध में मैं सम्पत्ति-कर (Estate Duty) के अंतर्गत रखता हूं। जब कि जमींदारी मिटाने का स्वर वायु में गूंज रहा है और मैं समझता हूं कि शीघ्र ही इसकी पूर्ति हो जायेगी, जब कि बड़ी-बड़ी जमींदारियों का बंटवारा हो जाना निश्चित है, जब कि कृषकों के स्वामित्व को प्रामाणित किया जा रहा है अथवा यथासंभव शक्य बनाया जा रहा है तो कृषि योग्य भूमि पर कर वास्तव में मालगुजारी का एक निर्बल साधन हो जायेगा और यदि आप उसे कृषि योग्य भूमि के संबंध से सम्पत्ति-कर में सम्मिलित करें तो दो एकड़ से चार एकड़ तक की जायदाद पर आप किस प्रकार का कर लगाना चाहते हैं?

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** बंजर भूमि के संबंध का सम्पत्ति-कर भी यद्यपि केन्द्र द्वारा वसूल किया जायेगा परन्तु वास्तव में प्रान्तीय आय का साधन है।

***सर ए० रामास्वामी मुदालियार:** रिपोर्ट द्वारा, जिसमें इस प्रश्न पर विचार किया गया है, मैं इस बात से परिचित हूं और शीघ्र ही मैं उसका उल्लेख करूंगा। कृषि योग्य भूमि पर सम्पत्ति-कर, मेरे विचारानुसार भ्रमपूर्ण है। इस कर को लगाने का अधिकार रखते हुये भी आप उसे प्राप्त नहीं कर सकते हैं। और फिर श्रीमान् जी, जमीन, जायदाद तथा चौके और खिड़की (hearths and windows) पर कर! मैं समझता हूं कि यह मद सन् 1935 के एक्ट के अंतर्गत है और कुछ कबाइली इलाकों में म्यूनिसिपल तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्डों को चौकों और खिड़की (hearths and windows) पर कर लगाने का अधिकार है। किसी प्रकार भी ये ऐसे कर नहीं हैं जिनसे प्रान्तों को अधिक आशा हो। ये तो बोर्डों के लिये कर हैं न कि प्रांतों के लिये आमदनी के जरिये। कृषि योग्य भूमि पर कर तथा सम्पत्ति-कर के संबंध में मैं कह ही चुका हूं।

[सर ए. रामास्वामी मुदालियार]

मद 46–खनिज-सम्पत्ति पर कर, खनिज पदार्थ संबंधी उन्नति के संबंध में संघ पार्लियामेंट के किसी एक्ट द्वारा लगाये गये प्रतिबंधों के अधीन। यहां फिर पार्लियामेंट से ही प्रतिबंध लगाये जाते हैं। मद 47 वैयक्तिक-कर (Capitation tax)–हां, यह वास्तव में आय का अच्छा साधन होगा, यदि कोई प्रान्तीय प्रधान मंत्री इस कर को लगाये जो कि पुराने जमाने के लगाये गये जजिया-कर का दूसरा रूप होगा। मुझे आश्चर्य है कि कितने प्रान्तीय प्रधान मंत्री और उनके साथी प्रान्तीय व्यवस्थापिकाओं में इस कर के लगाने का प्रस्ताव रखने की धृष्टता करेंगे। मद 48–पेशा, व्यापार, व्यवसाय तथा नौकरियों पर कर। यह भी बहुत कम आय देने वाला कर है, जो खास कर स्वायत्त शासन के अधीन संस्थाओं के लिये है। मद 49–जानवरों तथा नावों (boats) पर कर–कृषि प्रधान तथा देहाती इलाकों के भारी दबाव के होने पर जो कि नई व्यवस्थापिकाओं पर अवश्य पड़ेगा, मुझे फिर आश्चर्य होता है कि कितने लोग जानवरों तथा नावों पर कर लगा सकेंगे। मद 50–सामान की बिक्री तथा विज्ञापनों पर कर–यह एक कर है जिससे आजकल आय की जाती है। लेकिन मैं यह साहसपूर्वक कह सकता हूं कि इस कर की भी सीमा है। जहां तक हो सके यह कर सब प्रान्तों में लगभग समान रूप से लगाना चाहिये। यदि आप बिक्री पर कर बढ़ाते हुये जायेंगे तो अंडे के लोभ में आप मुर्गी को मार डालेंगे। क्रमागत ह्रास का नियम प्रयोगान्वित होगा जैसे कि आने वाले माल पर आयात-कर के मामले में हुआ।

सूची में इसके बाद 'मद 51–सड़कों पर चलने वाली गाड़ियों पर कर' चाहे वे यंत्र द्वारा संचालित हों अथवा नहीं मय ट्राम गाड़ियों के। यह स्थानीय संस्थाओं के लिये आय का साधन है। इसके बाद मद 52 है–बिजली की बिक्री तथा खर्चे पर कर। जब कि यह प्रयत्न किया जा रहा है कि प्रान्तों में बिजली की प्रगति हो, जब कि उद्योग स्थापित करने के लिये विद्युत-शक्ति को सस्ता करना चाहा जा रहा है जिससे कि यथासंभव अधिक से अधिक उद्योग प्रान्तों में स्थापित किये जा सकें तो विद्युत के प्रयोग पर कर बढ़ाना तथा उससे अधिक आय की आशा करना मेरे ख्याल से एक काल्पनिक आशा में प्रवृत्त होना है।

इसके बाद "मद 53–खपत, प्रयोग अथवा बिक्री के लिये स्थानीय क्षेत्रों में सामान के लाने पर कर" यह एक प्रकार का म्यूनिसिपलिटी तथा अन्य स्वशासित संस्थाओं के लिये चुंगी के प्रकार का कर है।

मद 54–विलास सामग्री पर कर, मय विनोद, मनोरंजन, शर्त तथा जुए पर कर के। यहां फिर शर्त तथा जुए पर प्रान्तीय मंत्रियों द्वारा कर हटाने का प्रयत्न है। कुछ भी हो जनमत शर्त तथा जुए के हटाने के पक्ष में है। घुड़दौड़ ही, जो कि अनेकों संघीय प्रदेशों में अनिश्चित-सी हो रही है, आय का एक साधन है जिससे अधिक आमदनी की जा सकती है। और विनोद पर कर! मैं आपको यह बताऊं कि संघ के अधिकृत क्षेत्र में जीवनशुष्क है और मैं नहीं समझता कि विलास सामग्री जैसी वस्तु पर कोई भारी कर उस साधारण मनुष्य के लिये वास्तव में सुख का लक्ष्य होगा जो कि परिवर्तन के लिये शराब की दुकान पर जाने के अतिरिक्त अब सिनेमा जायेगा। मद 55 के स्टाम्प शुल्क के संबंध है और मद 56 देश के अन्दर जल-मार्ग द्वारा सामान तथा यात्रियों पर कर एकत्रित करने के संबंध का है। प्रान्तों से आये हुये मेरे माननीय मित्र जानते हैं कि इस जरिये से क्या आय हो सकती है। मेरे ख्याल से बहुत कम प्रान्तों को इस मद से यथेष्ट आमदनी होती होगी।

अध्यक्ष महोदय, मैंने सोचा था कि चुंगी को हटाने का सुधार किया जायेगा। कई प्रान्तों में चुंगियां हटा दी गई हैं। बल्लियां लगाकर मार्ग रोकने के भद्दे ढंग को पुनः स्थापित करना कठिन होगा। यह प्रथा हमारे देश के अनेक शहरों में थी। मैं यह सोचने का साहस करता हूं कि चुंगियों से न तो अधिक आमदनी होगी और न समस्त प्रान्तों में इनको ग्रहण करना सम्भव होगा।

श्री एम॰ अनन्तशयनम आयंगर (मद्रासः जनरल): रियासतों में अब भी चुंगिया वर्तमान हैं।

***सर ए॰ रामास्वामी मुदालियारः** उनमें से बहुतों को हटा दिया गया है। बहुत थोड़ी सी रह गई हैं और उनको भी शीघ्र हटाया जा रहा है।

इसके बाद मद 58 'इस सूची में दिये गये विषयों से संबंधित फीस, परन्तु इसमें वह फीस शामिल नहीं है जो अदालतों में ली जाती है।' यह एक अपरिचित तथा अनिश्चित आय का साधन है जिस पर मुझे कुछ भी टीका नहीं करनी है।

इस रिपोर्ट के आखिरी पैरा 6 में यह कहा गया है:

''यह बिल्कुल स्पष्ट है कि हमने जिन करों का वर्णन किया है उनकी आय को संघ में लाने से प्रदेशों की आर्थिक दृढ़ता में कहीं-कहीं तो प्रचण्ड रूप से बाधा पड़ेगी; इसलिये हम सिफारिश करते हैं

[सर ए. रामास्वामी मुदालियार]

कि कुछ करों की आय का समय-समय पर संघ द्वारा निर्धारित आधार पर समर्पण या बंटवारे की व्यवस्था बना देनी चाहिए।''

इन सब अगर, मगर तथा सहायक और अधिकरण वाक्यखंड के होते हुये भी, प्रान्तों के लिये यह कम आय का साधन एक तुच्छ सांत्वना है। यह अस्पष्ट है और मायावी भी हो सकती है। आय बहुत कम है और उस पर भी संघ उस अनुपात और आधार को निर्धारित करेगा। मुझे आश्चर्य है कि कितने प्रान्तीय मंत्री ऐसी स्थिति से प्रसन्न होंगे।

अब मुझे केन्द्र की ओर आने दीजिये। अनेकों संघों की आय के साधनों की तुलनायें हमारे सामने की गई हैं। जैसा कि श्री जी॰एल॰ मेहता ने संकेत किया कि हमारा संघ अनेक बातों में विलक्षण है। हमें सर्वत्र जीवन-निर्वाह के माप तथा वास्तविकता पर भी विचार करना है और कम से कम इस समय तो उनका हवाला देते हुये विधान बनाना है। मैंने यह कह ही दिया है कि इस सभा में ऐसा कोई भी नहीं है जो कि एक ऐसे शक्तिशाली केन्द्र के विरुद्ध हो जिसके पास अपनी स्थिति को कायम रखने के लिये यथेष्ट साधन हों। लेकिन एक आधारभूत सत्य है जिसकी उपेक्षा की गई है और जो युद्धकाल में प्रचलित हो गया है—आय के साधनों में उन्नति करने की नई विधि। श्रीमान् जी, हमें यह याद रखना चाहिये कि प्रान्तों के पास निश्चित तथा निर्धारित साधनों के अतिरिक्त अन्य आय के साधन नहीं हैं, परन्तु केन्द्र के पास नासिक के छापेखाने का एक अनन्त आय का साधन है। मैं यह सावधानी से कह रहा हूं क्योंकि मैं जानता हूं कि विगत कुछ वर्षों में क्या होता रहा है। पुराना विचार, कि किसी देश की मुद्रा का पूर्ण विश्वसनीय आधार होना चाहिये, और नोटों के चलाने पर सोना, चांदी या अन्य कोई ऐसी वस्तु जमा होनी चाहिये, समस्त देशों में लुप्तप्राय हो गया है। आज हमारी मुद्रा को वह आधार प्राप्त नहीं है। यूनाइटेड स्टेट्स आफ अमेरिका तथा स्विट्जरलैंड को छोड़कर अन्य किसी देश में मुद्रा को वह विश्वसनीय आधार प्राप्त नहीं है जिस पर एक समय समस्त कागजी मुद्रा के चलाने पर आग्रह किया जाता था। अब किसी संकट-काल में आप अपनी मुद्रा को बढ़ा सकते हैं। आप सरकारी हुंडी चला सकते हैं। आप अपनी खुद की मुद्रा चला सकते हैं। मैं इस समय यह नहीं कह रहा हूं कि ऐसा करना उचित होगा। उससे महंगाई तथा अन्य ऐसे संकटों की संभावना हो सकती है, और मैं तो उन लोगों में से हूं जो यह विश्वास करते हैं कि वर्तमान काल में भी महंगाई को जितनी जल्दी तथा जिस प्रकार भी हो सके मिटाना है। केवल केन्द्र ही इसको मिटा सकता है।

(*हर्ष ध्वनि*)—इसलिये मैं इसका पक्ष-समर्थन नहीं करता हूं। लेकिन मैं यह सावधानीपूर्वक कहता हूं कि संकटकाल में जब कि आय के अन्य साधनों से लाभ नहीं उठाया जा सकता वे इस साधन को बढ़ा सकते हैं जैसा कि अव्यवस्थित काल में अन्य देशों ने किया है। लेकिन प्रान्त क्या कर सकता है? समय-समय पर वह कर्ज ले सकता है। लेकिन जैसा कि इतिहास बताता है, इससे सदैव सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती है। इस हालत में मैं यह सोचने का साहस करता हूं कि प्रान्तीय स्वायत्त शासन, प्रान्तों पर निर्भर कुछ विषयों के होते हुए भी, वास्तव में तुच्छ प्रकार का होगा। श्रीमान् जी, रिपोर्ट में इस संबंध में जो कुछ कहा गया है उसकी प्रशंसा करते हुये मुझे यह भी कह लेने दीजिये कि चित्र का दूसरा पहलू भी है, जिस पर इस रिपोर्ट के निर्माताओं ने निःसंदेह विचार किया है। परन्तु फिर भी यह कहते हुये मैं समाप्त करूंगा कि मेरी इच्छा है कि वे चित्र के पहलू पर और अधिक विचार करते। मैं समाप्त कर चुका हूं।

***अध्यक्षः** मेरे पास अनेकों सदस्यों के नाम हैं जो बोलना चाहते हैं, परन्तु श्री रामास्वामी मुदालियर से वक्तव्य देने के लिये कहने से पूर्व ही विवादान्तक प्रस्ताव पेश किया जा चुका था।

***श्री आर॰के॰ सिधवा** (मध्य प्रांत तथा बरारः जनरल)ः श्रीमान जी, विवादान्तक प्रस्ताव के रखने के पूर्व मैं आपसे एक बात पर ध्यान देने का निवेदन करूंगा। यह विषय बहुत महत्वपूर्ण है। यह भारत की आर्थिक स्थिति पर प्रभाव डालता है, इसलिये यह महत्वपूर्ण है। सदस्यों को अपने विचार प्रकट करने का यथेष्ट अवसर देना चाहिये। विवादान्तक प्रस्ताव स्वीकार करने से पूर्व मैं अध्यक्ष महोदय से यह निवेदन करूंगा कि वे यह देख लें कि दोनों पक्षों में वाद-विवाद हो गया है या नहीं। एक विचारधारा प्रकट की जा चुकी है और दूसरी विचारधारा प्रकट नहीं की गई है। वह होनी चाहिये। अतः मैं आपसे निवेदन करूंगा कि आप दोनों पक्षों को विचार प्रकट करने की आज्ञा दें ताकि सभा यह जान जाये कि वे इस महत्वपूर्ण विषय पर क्या विचार रखते हैं।

***अध्यक्षः** मैं पूर्णतया सभा के हाथों में हूं। लेकिन जहां तक वक्ताओं का संबंध है, मैं समझता हूं कि उनका समानता से प्रबन्ध किया गया है; तीन एक ओर और तीन दूसरी ओर, इसलिये एक पक्ष के वक्ता होने का प्रश्न ही नहीं है। मैं सभा के सामने यह रखना चाहूंगा कि वह और अधिक वाद-विवाद चाहती है। प्रश्न यह है कि अब विवादान्तक प्रस्ताव रखा जाये।

विवादान्तक प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** मैंने इस ओर के (दाईं ओर को संकेत) अनेकों सदस्यों को बोलने का अवसर दिया है। इस ओर के (बाईं ओर को संकेत) मेरे पास थोड़े से नाम हैं। श्री बी॰ दास!

***श्री आर॰के॰ सिधवाः** अध्यक्ष महोदय, मैं आशा करता हूं आपके पास नामों की जो स्लिपें हैं आप उनके क्रम का उल्लंघन करेंगे। हमें भी बोलना है।

***अध्यक्षः** जो नाम मेरे पास हैं उनके क्रम का मैं उल्लंघन करूंगा। पहले एक बार मैंने कहा था कि मैं स्लिपों के क्रम पर ध्यान नहीं दूंगा। यदि कोई सदस्य खड़ा होता है तो वह मेरा ध्यान आकर्षित करेगा।

***श्री बी॰ दास** (उड़ीसाः जनरल)**:** श्रीमान् जी, प्रान्तीय मालगुजारी और आय पर सर रामास्वामी मुदालियर का वक्तव्य सुनकर मुझे बड़ी खुशी हुई। सन् 1935 ई॰ के एक्ट के अंतर्गत कर के विभाजन में सन् 1933 ई॰ के पूर्व तक के सम्मिलित थे। मुझे बहुत आश्चर्य हुआ कि इस सभा के माननीय सदस्य सन् 1935 ई॰ के एक्ट के अंतर्गत कर-प्रणाली को कायम रखने का प्रयत्न कर रहे हैं। उस एक्ट का क्या आधार है? उस एक्ट ने समस्त अधिकार और समस्त साधन एक विदेशी सरकार को दिये। विदेशी सरकार के उस भूत ने भारत को छोड़ दिया है, लेकिन उस भूत की प्रणाली अब भी वर्तमान है। 1935 ई॰ के एक्ट ने समस्त साधन केन्द्र को दे दिये थे जिससे कि केन्द्र शासन कर सके, आतंक जमा सके और देश की आय को जिस प्रकार चाहे खर्च कर सके। इस माह की 15 तारीख से जनतंत्रात्मक राज्य हो गया है। यह चौथी रिपोर्ट है जिस पर हम वाद-विवाद कर रहे हैं और मैं यह न समझ सका कि किस जनतंत्रात्मक भावना से संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट का मसविदा तैयार किया गया है। मुझे बड़ी खुशी हुई कि दो सज्जन श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर तथा सर गगनबिहारी लालू भाई मेहता सामाजिक भलाई तथा सामाजिक न्याय के बारे में बोले। मुझे सुखद आश्चर्य हुआ जबकि मैंने इन दोनों सज्जनों को, जो कि उच्च पद पर आसीन हैं तथा सर्वसाधारण की कोटि से ऊपर हैं, सामाजिक भलाई तथा सामाजिक न्याय पर बोलते हुये सुना। मैं समझता हूं कि श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने जो कि संघ-अधिकार-समिति के सदस्य हैं, जनता के साथ सामाजिक न्याय करने में रियासत के प्रमुख कर्तव्य की ओर ध्यान नहीं दिया। केवल विदेशी शासन-प्रणाली की नीतियों को चालू रखने के लिये जो कि खर्चीली तथा बहुत भारी हैं, हम सरकार या मंत्रिमंडल को अधिकार देने के लिये तत्पर नहीं हैं। रक्षा, हां वास्तव

में रक्षा तो होनी ही चाहिये। क्या रक्षा राष्ट्रीय प्रकृति तथा भारत की राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुकूल होगी या वह पश्चिमी पूंजीवादी राष्ट्रों के जैसे कि अमेरिका और इंग्लैंड के समान होगी? मैं नहीं समझता कि संघ-अधिकार-समिति या संघ-विधान-समिति के सदस्यों ने कभी भी इस बात का अपने मस्तिष्क में आने दिया हो कि भारत की प्रकृति को केन्द्र के खर्चे की नीति में एक भिन्न प्रकार की पूर्वीय स्थिति की आवश्यकता होगी।

श्रीमान् जी, केन्द्र की ओर से कोई भी दान नहीं चाहता है। यद्यपि मैं एक अति निर्धन प्रान्त उड़ीसा का हूं, जिसका युद्ध के पूर्व प्रत्येक व्यक्ति पर $1^1/_2$ रु० खर्चा होता था, तो भी मैं इसे नहीं चाहता हूं, परन्तु करों का सुनीति युक्त विभाजन होना चाहिये। केन्द्रीय सरकार को मय गवर्नर-जनरल के या अध्यक्ष के जो कि 6 माह के अरसे में यहां हो जायेंगे, और मंत्रियों के सामाजिक भलाई को अपना प्रमुख कर्तव्य समझना चाहिये। कहीं भी न तो संघ-विधान में और न संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट में ही मुझे केन्द्रीय सरकार के प्रमुख कर्तव्य की व्याख्या मिली। क्या यह केवल समस्त अधिकारों को ग्रहण करने के लिये है? कभी नहीं। हमें एक ऐसी शासन-प्रणाली का विचार करना पड़ेगा जिसके द्वारा कि कर द्वारा प्राप्त अधिकांश आय जो कि जनता से प्राप्त की जाती है पुनः जनता के ही काम में आये। शस्त्र बनाने या अणुबम बनाने के काम में उसको खर्च नहीं करना चाहिये। सर रामास्वामी मुदालियर ने प्रांतीय कर-निर्धारण का विश्लेषण किया और यह बताया कि किस प्रकार प्रांतों को केवल जीवन-यापन करने योग्य भत्ते पर रखा गया है। केन्द्र में विदेशी सरकार प्रान्तों से केवल तोपों की खुराक चाहती थी। अकाल तथा भुखमरी से विवश होकर लोग सेना में जाते थे, स्वेच्छा से नहीं, और ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा करते थे भारत साम्राज्य की उतनी नहीं। यह तीसरी बार है कि मैं सामाजिक न्याय और सामाजिक सुरक्षा के लिये निवेदन कर रहा हूं। समाचार-पत्रों से यह विदित हुआ है कि संघ-विधान-बिल का मसविदा बनाया जा रहा है या वह आधा बनाया जा चुका है। सरकार के समस्त अधिकार ग्रहण करने से कोई लाभ नहीं है। हम यह सोच सकते हैं कि व्यवस्थापिका के रूप में हम कार्य करेंगे परन्तु अवशिष्ट अधिकार सरकार को, प्रबन्ध-सभा (Executive) को सौंप दिये गये हैं। संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट से मुझे विदित होता है कि प्रवृत्ति यह है कि वे अधिक अधिकार चाहते हैं। वे चाहते हैं कि धारा 126 (क) संघ-विधान बिल में सम्मिलित कर ली जाये जिससे कि अध्यक्ष, वर्तमान समय में गवर्नर-जनरल और मंत्रिमंडल को व्यापक अधिकार प्राप्त हो जायें।

[श्री बी. दास]
यह अभिलाषा क्यों है? अध्यक्ष या मंत्रिमंडल में इन शासनाधिकारों को केन्द्रित करने के लिये यहां उपस्थित मेरे साथियों के मन में यह लालसा क्यों है? व्यवस्थापिका को अपने जनतंत्रात्मक कार्यों को करना चाहिये तथा जनता को व्यवस्थापिका के द्वारा प्रबंध-सभा के कार्यों का, जो कि जनतंत्रात्मक सिद्धान्तों की पुष्टि करते हैं, नियंत्रण करना चाहिये। श्रीमान् जी, इसमें मैंने जनतंत्रात्मक किसी भावना को नहीं पाया।

परामर्शदातृ-समिति की चौथी रिपोर्ट हमें प्राप्त हुई है, हमें अब तक और भी अनेकों रिपोर्टें मिल चुकी हैं—जिन पर यहां वाद-विवाद करने का विषय नहीं है। अल्पसंख्यक जातियों के लिये कुछ रियायतों की सिफारिश की गयी थी। रियायत कौन नहीं चाहता? हम अपने अधिकार तथा विशेषाधिकार चाहते हैं और हम अपने समस्त आय के साधनों को मंत्रिमंडल के सुपुर्द करना नहीं चाहते हैं। सरकार के चलाने के लिये हम अपने समस्त आय-साधन सौंपना नहीं चाहते जो कुछ हम चाहते हैं वह यह है कि हमारे आय-साधनों का इस प्रकार विभाजन किया जाये कि वह जनता की भलाई पर खर्च हो। अत: मैं श्री अल्लादी के लिये कृतज्ञता प्रकट करता हूं कि उन्होंने इसका जिक्र किया। मैं अपने मित्र श्री गगनबिहारी लाल लालूभाई मेहता के लिये भी कृतज्ञता प्रकट करता हूं जो कि भारतीय व्यवसाय-मंडल (Indian Chamber of Commerce) के भूतपूर्व प्रधान रह चुके हैं और जो उन्नति द्वारा हित साधन तथा आर्थिक सुव्यवस्था के बारे में सोचते हैं। वे चाहते हैं कि बड़े-बड़े पूंजीवादी भारत में उन्नत हों। मैं चाहता हूं कि आधा कर सार्वजनिक भलाई के लिये, भुखमरी हटाने के तथा मनुष्यों के जीवन-स्तर को उन्नत करने के काम में आये। परन्तु यदि हम पूंजीवादियों का वर्ग उत्पन्न करें जिनमें बड़े-बड़े पूंजीवादी हों तो हम सर्वसाधारण के जीवन-स्तर को उस स्तर पर कभी नहीं ला सकते हैं। मैं बड़े-बड़े उद्योगों के विरोध में नहीं हूं, लेकिन मैं यह नहीं चाहता हूं कि सभा बड़े-बड़े पूंजीवादियों की सहानुभूति में अनुरक्त हो जाये कि वे (पूंजीवादी) भारत की आर्थिक उन्नति तथा आर्थिक प्रसार के बाबत सोचते हैं। अब सरकार हमारी है और सरकार के किसी सदस्य ने भी आज के वाद-विवाद में भाग नहीं लिया है। विधान-परिषद् के सदस्य होने के नाते उन्हें हमें यह बताना चाहिये कि उनका रुख क्या है और उनकी विचारधारा क्या है। मैं व्यवस्थापिका के सदस्य होने के नाते नहीं बोल रहा हूं। मैं इस सभा का सदस्य होने के नाते बोल रहा हूं। सरकार में हमारे प्रतिनिधियों का यदि यह

रुख है कि भारतीय जनता का सार्वजनिक हित-साधन उनका कार्य है, तो श्रीमान् जी, उनका यह प्रमुख कर्तव्य है कि संघ-अधिकार-समिति की इस रिपोर्ट को–इस रिपोर्ट की आन्तरिक भावना को नष्ट कर दिया जाये। संघ-विधान इस प्रकार का बनाना चाहिये जिससे कि भारत के आय-साधन की, भारत की बुद्धिमत्ता की, भारत के सर्वोत्तम आर्थिक सुव्यवस्था संबंधी विचारों की भारतीय जनता के प्रगति पूर्ण लाभ के लिये उन्नति करनी चाहिये। इस भावना को मैंने नहीं पाया और मुझे खेद है कि यद्यपि कमेटी में बड़े-बड़े विशेषज्ञ थे, आर्थिक व्यवस्था में उच्च योग्यता प्राप्त तथा कानून के धुरंधर विद्वान् थे परन्तु उन्होंने इस ओर अपने विचार नहीं दिये। मुझे आशा है कि आज के वाद-विवाद के पश्चात् या तो संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट फिर कमेटी को वापस की जाती है या जब कि संघ-विधान बिल का मसविदा तैयार हो जायेगा और हमारे सामने आयेगा तब वे इस कर्तव्य की भावना को लाखों मनुष्यों में उन्नत करेंगे।

श्री रामनारायण सिंह (बिहार: जनरल): सभापति जी, जो रिपोर्ट अभी उपस्थित की गयी है उस पर विचार हो, इस प्रस्ताव का मैं समर्थन करता हूं। मुझे जो कहने की कुछ जरूरत पड़ गयी वह यूं कि यहां कुछ ऐसी बहस छिड़ गयी है कि इस सरकार को कितने अधिकार दिये जायें। अधिकारों का बंटवारा शुरू हो गया है और हम लोगों को इस संबंध में बहुत विचार करना चाहिये। जहां तक मेरा ख्याल है वह यह है कि किसी सरकार को जितने कम अधिकार दिये जायें, उतना ही अच्छा होता है। साहब, सारी जिन्दगी सरकार से लड़ने में ही बीती। एक सरकार को खत्म किया और दूसरी सरकार हम लोग कायम कर रहे हैं और अभी तक जो राज्य अथवा सरकार रही है उनके प्रति दिल में अच्छा भाव पैदा नहीं हो रहा है। सीधी बात यह है। बात होती है कि केन्द्रीय सरकार और सूबे की सरकार के कितने अधिकार हों। हमारी इच्छा होती है कि सबसे पहले ग्राम में सरकार होनी चाहिये थी। सबसे अधिक अधिकार ग्राम सरकार को मिलने चाहियें थे, उससे कम सूबे की सरकार को और उससे भी कम केन्द्रीय सरकार को। मगर दुर्भाग्यवश अभी ग्राम-सरकार लापता है। लेकिन जो सूबे व प्रान्त की सरकार बन रही है, इस पर जनता का जितना अधिकार है केन्द्रीय सरकार पर उससे कम है। सरकार को कितना अधिकार हो, इसकी चिन्ता सबको होनी चाहिये। लेकिन उसके साथ-साथ यह भी चिन्ता होनी चाहिये कि सरकार पर जनता का कितना अधिकार रहे। हमें सबसे अधिक इसी विषय पर सोचना है। केन्द्रीय सरकार को सारे देश की रक्षा का अधिकार मिलता है। सारे देश में शान्ति रखना और रक्षा करना, क्या यह कम अधिकार है? यह कम अधिकार नहीं है और यही एक अधिकार इस सरकार के लिये काफी था। उसके साथ-साथ सारे देश

[श्री रामनारायण सिंह]

में आमदरफ्त का अधिकार भी देश की सरकार को है। यह भी कम नहीं है। और अब उसके साथ-साथ सारे विदेशियों से जो संबंध हैं उसमें भी इस सरकार को अधिकार है। यह भी कम अधिकार नहीं है। बात यह है कि लोग व्यग्र हैं कि केन्द्रीय सरकार को अधिक मजबूत किया जाये। मैं भी यही चाहता हूं और जो सबको चाहना चाहिये कि सरकार मजबूत हो और भली भी हो। जब तक भली सरकार नहीं होगी तब तक मजबूत सरकार होने से हमारी बुराई ही होगी, भलाई नहीं हो सकती। मैं आपसे कहता हूं कि केन्द्रीय सरकार कभी-कभी ऐसी हो जाया करती है कि वह कहने लगे कि अब राजधानी दिल्ली में न होकर मद्रास में हो जाये। ऐसी केन्द्रीय सरकार हो सकती है। कोई सरकार भली व ईमानदार हो, तो उससे बड़े-बड़े काम हो सकते हैं, लेकिन तनिक भी गड़बड़ हो जाने से सारा गुड़ गोबर हो जाता है। नजीर के तौर पर मैं कहूं कि केन्द्रीय सरकार क्या गड़बड़ी करती है। एक जमाना था बिहार पूसा के लिये अच्छी जगह समझा गया कि वहां पर भारत सरकार का पूसा कालिज हो और जितने खेती के विषय में विशेष जानकारी रखते हैं वे जानते होंगे कि पूसा कालिज जितनी खूबी और नफे के साथ बिहार में चलाया जा सकता था, उतना दिल्ली में नहीं चल सकता। एक जमाने में पूसा कालिज बिहार में सरकार ने स्थापित कराया था, दूसरी भारत की केन्द्रीय सरकार बनी, उसने पूसा कालिज वहां से उठाकर यहां दिल्ली में बना दिया। यही काम केन्द्रीय सरकार के होते हैं, इसको आपको ध्यान में रखना चाहिये। आप जानते हैं कि इसमें कितना खर्चा है और कितनी परेशानी है जिसका कोई हिसाब-किताब नहीं। यह जानी हुई बात है कि एक सूबे की जो आवश्यकता है, दूसरे सूबे से भिन्न रहती है। मैं जानता हूं कि केन्द्रीय सरकार को फूड राशनिंग व फूड डिपार्टमेंट पर अधिकार है, लेकिन हालत क्या है? यू॰पी॰ और पंजाब के लोगों को चावल नहीं चाहिये, उनको गेहूं चाहिये और मद्रास के लोगों को गेहूं नहीं बल्कि चावल चाहिये। केन्द्रीय सरकार मद्रास के लोगों से कहती है कि तुम्हें चावल ही नहीं, गेहूं भी खाना पड़ेगा और पंजाब और यू॰पी॰ के लोगों से कहती है कि नहीं तुम्हें चावल खाना ही पड़ेगा। यह काम है केन्द्रीय सरकार का। केन्द्रीय सरकार को खूब मजबूत बनाइये, मैं भी मानता हूं और मैं भी यही चाहता हूं। केन्द्रीय सरकार जितनी मजबूत होगी, भला ही होगा, लेकिन उसके साथ-साथ सूबे के अधिकारों को कम नहीं करना चाहिये। जो-जो अधिकार यूनियन कमेटी में मिले हैं वह तो है ही और जो आप लोगों की राय होगी, वह तो होगा ही। लेकिन मेरी अपनी राय है कि सूबों में जो रेजीडुअल पावर्स

बंटी हुई हैं, वह सूबों में ही रहनी चाहिये। एक सूबे की आवश्यकता दूसरे सूबे की आवश्यकता से बहुत भिन्न है जिसके बारे में मुझे ज्यादा कहने की जरूरत नहीं है। यह कि इस पर आप ज्यादा गौर न कीजिये। पहले पाकिस्तान न होने की वजह से हमने मान लिया था, लेकिन अब उसकी जरूरत नहीं है इस वास्ते दूसरी बात मान ली, यह ठीक नहीं है। किसको अधिकार देने से हमारी जनता को कितना नफा होगा, इस बात पर विचार करना चाहिये। रेजीडुअल पावर्स सूबों को होनी चाहिये। अगर आप कांकरेण्ट लिस्ट मे रख दें तो कुछ काम चल सकता है। इस वास्ते मैं अपील करूंगा कि इस बात पर खूब सोचा जाये। केन्द्रीय सरकार खूब मजबूत हो, सब कोई चाहता है, लेकिन मजबूत होने के साथ-साथ कोई ऐसा काम उनके मत्थे न होना चाहिये जो सारे देश का हाल न जाने जिससे कि किसी सूबे का नुकसान ही हो। रिपोर्ट में मुझे कुछ बातें खटकती हैं। मैं स्वतंत्र देश का रहने वाला हूं, मुझे राजाओं से कोई मुहब्बत नहीं, लेकिन जैसा रिपोर्ट से मालूम हो रहा है उससे देशी नरेशों को कुछ आशंका हो रही है कि उनके अधिकार कुछ कम किये जा रहे हैं। यह आशंका उनके दिल में पैदा नहीं होनी चाहिये। ऐसी कार्यवाही यहां से होनी चाहिये। आशंका बनी रहने से असंतोष होगा और ठीक से काम नहीं चलेगा। हमें यह देखना है कि देशी नरेश हमारे साथ रहें और जो-जो काम करें सारे प्रजा के हित के काम करें। जो प्रजा के हित का काम नहीं करेगा उनको हटा देने का भी अधिकार हम लोगों को है। लेकिन जितने अधिकार उनको अंग्रेजी राज्य में मिले हुये हैं और उचित हैं, उन अधिकारों को कम करने की चेष्टा हमारे दिलों में नहीं होनी चाहिये। ऐसी चेष्टा करने में हमारी ही बुराई है। यह हमें विचार करना है। यह रेजीडुअल पावर्स उनके दिलों में भी पैदा हो सकती है। इस वास्ते मैं चाहता हूं कि इस अधिकार के बारे में जहां तक हो रेजीडुअल पावर्स सूबों को दी जानी चाहिये।

पं. हीरालाल शास्त्री (जयपुर): आज जो रिपोर्ट हमारे सामने उपस्थित है उसके सिद्धान्तों के समर्थन में मैं दो शब्द कहना चाहता हूं। मुझे इस बहस में नहीं पड़ना है कि केन्द्रीय सरकार के अधिकार बहुत होने चाहियें या कम होने चाहियें। दोनों तरफ की बातें कही जा रही हैं लेकिन मैं स्वयं इस बात को मानने वाला हूं कि केन्द्रीय सरकार के पास काफी अधिकार होने चाहियें। मैं इस रिपोर्ट का समर्थन इसलिए करना चाहता हूं कि इसमें केन्द्र के अधिकारों और प्रान्तीय इकाइयों के अधिकारों का सुन्दर समन्वय किया गया है। देश में शान्ति कायम रखने के लिये और दूसरे कारणों से भी केन्द्र को मजबूत होना चाहिये। लेकिन हमारा देश इतना बड़ा है कि यहां पर प्रान्तीय इकाइयों के पास भी काफी

[पं. हीरालाल शास्त्री]

अधिकार छोड़ने पड़ेंगे। मुझे आज खास तौर से यह अर्ज करना है कि प्रान्तीय इकाइयों में एक तो हमारे प्रान्त हैं और दूसरे देशी रियासतें हैं। कल हुसैन इमाम साहब ने कुछ कठोर शब्दों का प्रयोग किया और इस बात पर आग्रह किया कि इन दोनों में भेद नहीं होना चाहिये। भेद नहीं होना चाहिये, इस बात को हम मानते हैं और हम चाहते हैं। हम जानते हैं कि आज भेद बहुत है। कई प्रकार के भेद हैं। क्षेत्रफल में भेद है, आबादी में भेद है और आमदनी में भेद है। आजकल देशी रियासतों में जिस प्रकार की शासन-व्यवस्था है उसमें भी भेद है। ये सब भेद हैं और हम इनको जानते हैं और समझते हैं। फिर भी मैं मानता हूं कि जो नीति हमारे लिये नये रियासती विभाग की ओर से बरती जा रही है, वह ठीक है। 16 मई के बयान के उपरान्त इससे अधिक आज की घड़ी में देशी रियासतों को न दबाया जायेगा तो ज्यादा ठीक होगा। जितना वह अपनी इच्छा से आज दे देना चाहती हैं उससे हमको एक प्रकार से संतोष मानना चाहिये। लेकिन मैं साथ में इस बात की ओर भी ध्यान दिलाना चाहता हूं कि देशी रियासतों के अधिकारी यह न समझ लें कि विधान-परिषद् में आ जाने से उनके कर्तव्य की इतिश्री हो गई और भारतीय संघ में ले लिये जाने मात्र से उनकी देशभक्ति की भी समाप्ति हो गई। अगर वह ऐसा मानते हैं तो वह बहुत बड़ी भूल करते हैं। क्योंकि आने वाले युग में यह नामुमकिन है कि भारतवर्ष की एक इकाई में एक प्रकार की शासन व्यवस्था रह जाये और दूसरी इकाई में दूसरी रह जाये। यह अनिवार्य है कि तमाम भारतवर्ष में चाहे वह देशी रियासत हो, चाहे वह प्रान्त हो छोटी जगह हो या बड़ी जगह हों, तमाम देश में एक प्रकार की जनतंत्र के आधार पर बनी हुई शासन-व्यवस्था कायम करनी होगी। इस मामले में हमें इस समय दुख है कि देशी रियासतों की जनता को अभी तक स्वराज्य नहीं मिला है। हम कहते हैं और ऐलान कर दिया गया है कि भारत आजाद हो गया है और सारे देश में खुशियां मनाई जा रही हैं। जरूर भारत आजाद हो गया। इन खुशियों में हम तहेदिल से शामिल हैं। जो आजादी मिली समझी जाती है उस आजादी को प्राप्त करने में, उसको नजदीक लाने में हमने भी अपना कुछ हिस्सा, चाहे वह थोड़ा-सा रहा हो, बटाया है। इसका भी हमें गर्व है। लेकिन यह सब होते हुये भी हमें दुख है कि आज जबकि हिन्दुस्तान को आजादी मिली हुई बताई जाती है तो हमको यह महसूस करना पड़ता है कि देशी रियासतों की जनता को अभी आजादी नहीं मिली है। यह बड़े अफसोस की बात है।

आज तो हम इस बात पर आशा लगाये बैठे हैं कि अब 15 अगस्त निकल गया, नया जमाना आ रहा है, तब्दीलियां हो रही हैं तो देशी रियासतों में भी

तब्दीलियां कैसे न होंगी। देशी रियासतों के जो अधिकारी हैं, राजा हैं या आजकल के मंत्री हैं, उनकी दूरदर्शिता पर हम थोड़ा-बहुत भरोसा रख सकते हैं। वह जरूर समझते होंगे कि जमाने के दबाव के आगे उनको झुकना पड़ेगा। अगर वह न झुकेंगे तो उनको टूट जाना पड़ेगा। इस बात पर भी हमें कुछ भरोसा है। थोड़ा-बहुत भरोसा हमें इस बात पर है कि शायद केन्द्रीय सरकार भी हमारी कुछ मदद करेगी। जो पिछली केन्द्रीय सरकार थी, वह हमारी मदद नहीं करती थी। वह तो उन लोगों की मदद करती थी जो सरकार की मदद करते थे और उसको यहां बनाये रखने में मददगार होने से गर्व अनुभव करते थे। उनकी मदद वह करती थी हमारी मदद नहीं करती थी। हमारी प्रगति में वह बाधा, जितना उससे बनता था, पहुंचाती थी। लेकिन उस सरकार का अन्त हो गया और उस सरकार के अधिकारी भी कहीं छिप गये और वह अब हमारे सामने नहीं हैं। नई सरकार अब आ गई है और इससे हम मदद की आशा भी रखते हैं। मुमकिन है वह मदद न करें, लेकिन हम इतनी आशा जरूर रखते हैं कि वह हमारे काम में बाधा नहीं पहुंचायेगी।

मैंने आपसे अर्ज किया कि मैं मजबूत केन्द्रीय सरकार का समर्थन करता हूं। और मैं यह भी कहता हूं कि इस समय रियासतें अगर थोड़ी चीजों के साथ शामिल होती हैं तो उन्हें हो जाने दीजिये। यह कहने के साथ-साथ मैं यह बता देना चाहता हूं कि आखिरकार हम भरोसा करते हैं, तो कुछ समझ कर ही भरोसा करते हैं। केवल देशी रियासतों को दूरदर्शिता के भरोसे पर नहीं, केन्द्रीय सरकार की मदद के भरोसे पर नहीं, बल्कि हम अपने भीतर कोई शक्ति पाते हैं, अपने भुजबल में कोई चीज देखते हैं, उसके भरोसे पर मैं यह बात कहना चाहता हूं। क्योंकि देशी राजा चाहें या न चाहें, केन्द्रीय सरकार वचनबद्ध होने से वहां दखल दे सके या न दे सके, देने की इच्छा रखे या न रखे, और कोई बात हो या न हो, लेकिन हम जानते हैं कि जनतंत्रीय सरकार स्थापित करने के लिये हम अपने यहां कुछ उठा नहीं रखने वाले हैं। जो हम कर सकते हैं वह जरूर करने वाले हैं। जनता की शक्ति इतनी बढ़ेगी कि फिर उसके सामने राजा, महाराजा या उनके मददगार कोई भी नहीं ठहर सकते। इसलिये वर्तमान शासन-व्यवस्था वहां भी जरूर कायम रहने वाली नहीं है। इसलिये हमें अधीर नहीं होना चाहिये। कुछ कड़ी बातें कह कर हम देशी रियासतों को न बेचैन करना चाहते हैं, न परेशान करना चाहते हैं और न डराना चाहते हैं। आज उनकी देशभक्ति कुछ उभड़ी हुई मालूम होती है और इस देशभक्ति के आधार पर वे आ रहे हैं। वे आ रहे हैं तो उन सबको आ जाने दीजिये। लेकिन आने के बाद इतिश्री न हो जायेगी; वहां

[पं. हीरालाल शास्त्री]

भी परिवर्तन करना पड़ेगा। इतना कहने के बाद मैं इस बात का समर्थन करना चाहता हूं कि केन्द्रीय सरकार को हर सूरत में मजबूत बनाना चाहिये। अगर कमजोर सरकार रहेगी तो देश में शान्ति कायम न रह सकेगी। देश में शान्ति रखना सबसे पहला काम है। उसके बाद मौका आयेगा नई सामाजिक रचना करने का, नई आर्थिक रचना करने का। वह मौका आयेगा और ये सब काम पूरे होंगे। इसलिये केन्द्रीय सरकार को मजबूत होना चाहिये। प्रान्तीय सरकार के पास भी पर्याप्त अधिकार होने चाहियें। मैं यह भी बता दूं कि देशी रियासतों के साथ एक झगड़ा और है। देशी रियासतें एक समान नहीं हैं। कोई बड़ी है और कोई छोटी है। उनके समूह बनाने पड़ेंगे ताकि वे नये भारत में एक ठीक पैमाने की इकाइयां हो जायें।

यहां जितनी बातें केन्द्रीय सरकार को मजबूत बनाने के लिये कही गई हैं उनका कोई खास असर मुझ पर नहीं पड़ता है। मैं मजबूत सरकार बनाने का समर्थन करता हूं।

***श्री देवीप्रसाद खेतान** (पश्चिमी बंगालः जनरल): अध्यक्ष महोदय, जितने भी वाद-विवाद इस सभा में हुये हैं उनमें आज के प्रश्न पर जो वाद-विवाद चल रहा है वह देश की वास्तविक आवश्यकता के ज्ञान पर उतना निर्भर नहीं है जितना कि अलंकारात्मक प्रभावशाली भाषा पर निर्भर है। श्रीमान् जी, विशेषकर अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त सर रामास्वामी मुदालियर ने जो प्रभावशाली वक्तव्य दिया है उसके लिये मैं यह कह सकता हूं। उन्होंने अपनी अलंकारात्मक भाषा के सौंदर्य में अपने तर्क की निर्बलता तथा खोखलेपन को ढक लिया है। उस समय वे देश की रक्षा के लिये आवश्यकताओं तथा युद्ध करने के लिये चाहे वह रक्षात्मक हो या विध्वंसात्मक, जो सामान जरूरी हो जाता है उसे वे भूल गये। वे सरलतापूर्वक इस बात को भूल गये कि युद्धकाल में किस प्रकार समस्त देश में सेनायें खड़ी की जाती हैं, जिसके चिन्ह संसार में दृष्टिगोचर हो रहे हैं और जिसका शिकार हमारा अभागा देश, जो कि पूर्णतः उन्नत नहीं है, किसी भी निकट तिथि में बन सकता है। इस प्रकार कहकर मैं किसी संकट की भविष्यवाणी नहीं कर रहा हूं, लेकिन मैं विश्वास करता हूं कि चाहे अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करने के लिये हो, चाहे शिक्षा तथा सुन्दर स्वास्थ्य के प्रसार करने के लिये हो, या चाहे अधिक उत्पादन करने के लिये हो, यह आवश्यक है कि समस्त भारत को एक मानना चाहिये और हममें से प्रत्येक को, चाहे वह प्रान्तीय शक्ति में विश्वास करता हो चाहे राष्ट्रीय शक्ति में, यह देखना चाहिये कि आन्तरिक सुरक्षा तथा शान्ति और बाहरी हमलों

से रक्षा की जाये तथा कृषि और उद्योग संबंधी उत्पादनों की वृद्धि हो। क्योंकि राष्ट्रीय सम्पत्ति की वृद्धि द्वारा ही हम राष्ट्रीय निर्माण कार्य में उन्नति कर सकते हैं जिस पर सर रामास्वामी मुदालियर ने इतना प्रभावशाली वक्तव्य दिया।

उन्होंने प्रान्तीय सूची में दिये हुये मदों का विश्लेषण किया और अनेक मदों पर उन्होंने ताना मारा। सबसे पहला मद जिसको उन्होंने लिया मालगुजारी का था और प्रान्तों द्वारा भूमि संबंधी हितों की प्राप्ति की याद सभा को दिलाई। परन्तु क्या सबसे अधिक शक्तिशाली तर्क का इस प्रस्ताव के पक्ष में प्रयोग नहीं किया गया जब यह कहा गया था कि वे मध्यवर्ती पट्टेदार हैं जो कि समस्त आय को ले जाते हैं और प्रान्तीय सरकार को वह आय नहीं मिलती? क्या यह आशा नहीं की जाती है कि मध्यवर्ती पट्टेदारों को समाप्त करने या खरीद लेने पर वर्तमान मालगुजारी की प्रथा के अंतर्गत प्रान्तीय सरकारों को जितना अब फायदा होता है उससे अधिक फायदा होगा।

दूसरे, उन्होंने मद 42 कृषि द्वारा आय पर कर की हंसी उड़ाई। प्रान्तों ने सदैव यही सोचा कि वे कर-निर्धारण की इसी पद्धति को अपनायेंगे और जब तक मध्यवर्ती पट्टेदार रहते हैं तब तक किंचित मात्र भी आशा नहीं की जा सकती कि प्रान्त इसे एक अच्छी आय का साधन बना सके।

इसके बाद उन्होंने ''चूल्हे और खिड़की'' शब्दों का मजाक उड़ाया, परन्तु उनके पूर्व आने वाले शब्दों, अर्थात् ''भूमि तथा इमारतों पर कर'' को सरलता से भूल गये। यह कौन अस्वीकार कर सकता है कि भूमि तथा इमारतों पर कर केवल प्रान्तीय सरकार के लिये ही नहीं वरन् म्यूनिस्पैलिटी के लिये भी शिक्षा में उन्नति करने, अच्छे मकान बनवाने तथा अन्य लाभदायक कामों को प्रोत्साहन देने के लिये, जिनकी प्रान्त निवासियों को आवश्यकता है, एक अच्छी आय का साधन है।

कृषि योग्य भूमि के उत्तराधिकार सम्बन्धी कर, एक दूसरा मद है जिसके बाबत सर रामास्वामी मुदालियर ने आसानी से यह कह दिया कि प्रान्तों के लिये यह लाभदायक नहीं है। परन्तु प्रान्तों ने सदैव यह सोचा कि कृषि योग्य भूमि पर उत्तराधिकार के संबंध में सम्पत्ति-कर की अवहेलना की गई, जिनको वे बिल्कुल ही भूल गये और जो कि आय का लाभदायक साधन होगा।

खनिज सम्पत्ति पर कर—पहले चाहे यह कितना ही तुच्छ रहा हो परन्तु जबकि हमारे खनिज साधनों की उन्नति की जाती है तो अनेकों प्रान्तों के लिये यह आय

[श्री देवीप्रसाद खेतान]

का लाभदायक साधन होगा तथा समस्त देश को एक बड़ी शक्ति प्रदान करने के ये साधन होंगे।

श्रीमान् जी, प्रान्तीय सूची के प्रत्येक मद को लेकर मैं सभा का समय गंवाना नहीं चाहता हूं।

मैं सभा का ध्यान सूची 1 अर्थात् केन्द्रीय सूची में दिये गये मदों की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। यह मालूम करने के लिये हम इन मदों का विश्लेषण करें कि यदि इन करों को प्रांतीय दायरे में रख दिया जाये तो शासन-प्रबन्ध द्वारा इन करों का उगाहना संभव होगा अथवा यदि इनको प्रान्तों के अधिकार में दे दिया जाये तो क्या देश के आर्थिक साधनों को उन्नत करने की आवश्यकता पूरी की जा सकेगी। केन्द्रीय कर-निर्धारण सूची 1 में मद 77 से प्रारम्भ होते हैं। कृषि संबंधी आय के अतिरिक्त अन्य आयों पर कर। यह भली प्रकार विदित है कि एक ही व्यक्ति, फर्म या कम्पनी के नाम से विभिन्न प्रांतों में व्यापार चल रहे हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि किसी कम्पनी का मुख्य कार्यालय तो एक प्रांत में है और माल तैयार करने का कारखाना दूसरे प्रांत में। ये समस्त कठिनाइयां तथा समानता की आवश्यकता के कारण यह बहुत जरूरी है कि आय पर कर निर्धारित करना और उसको उगाहना केवल केन्द्र द्वारा ही किया जा सकता है। श्रीमान् जी, मैं आशा करता हूं कि यहां ऐसा कोई भी नहीं है कि जो यह कहे कि आयकर या कारपोरेशन कर जो मद 73 में है प्रांतों को दे दिये जायें। यदि आप ऐसा करेंगे तो विभिन्न प्रांतों में होड़ होगी जैसी कि अमेरिका के कुछ प्रदेशों में हुई। प्रदेशों में करों को भिन्न-भिन्न दर से लगाया गया, कुछ प्रदेशों में व्यापार को प्रलोभन देने के लिये तथा अन्य प्रदेशों में उस व्यापार की उन्नति रोकने के लिये यहां तक कि समुन्नित प्रदेशों में कुछ व्यावसायिक केन्द्रों तथा अन्य आय के साधनों से अनुचित तथा अधिक आमदनी करने के लिये। अतः यह बहुत वांछनीय है कि आय तथा कारपोरेशन करों को केन्द्र के सुपुर्द करना चाहिये। विगत काल में इस कर की आय का प्रांतों में बंटवारा किया जाता था और मुझे इसमें किंचित-मात्र भी शंका नहीं है कि वह सही था। रिपोर्ट के छठे पैरे में अन्तिम वाक्य-जिसका भी सर रामास्वामी मुदालियर ने मजाक उड़ाया-बताता है कि कुछ करों की आय का समय-समय पर संघ द्वारा निर्धारित आधार पर समर्पण या बंटवारे की व्यवस्था बना देनी चाहिये। ''समय-समय पर'' ही विशेष शब्द हैं जिनका सर रामास्वामी ने मजाक उड़ाया। लेकिन मैं कहूंगा कि समय-समय पर यह होना चाहिये। समयानुसार विभिन्न प्रांतों की विभिन्न आवश्यकतायें होती हैं और परिस्थितियों के

अनुसार केन्द्रीय सरकार को यह देखना होगा कि प्रांतीय सरकार किसी कठिनाई में तो नहीं पड़ जायेगी। क्या मैं हाउस को उन दुःखजनक परिस्थितियों की याद दिलाऊं जिनमें सन् 1943 ई० में बंगाल था? यदि इस प्रकार की व्यवस्था न होती कि करों की आय का प्रांतों की आवश्यकता के अनुसार समय-समय पर बंटवारा किया जा सकता है तो न मालूम बंगाल की क्या दशा होती, यदि केन्द्रीय सरकार उस प्रांत की सहायता करने के लिये सन् 1943 में और उसके बाद अग्रसर न होती। उत्तरी भारत में आजकल हम अकाल के किनारे खड़े हैं। कौन यह कल्पना कर सकता है, किसमें यह कल्पना करने का साहस है कि वह यह कहे कि निकट भविष्य में उत्तरी भारत की आवश्यकतायें अन्य प्रांतों की आवश्यकताओं से अधिक महान नहीं हैं? अतः श्रीमान् जी, समय-समय पर विभिन्न प्रांतों की तथा विभिन्न प्रदेशों की आवश्यकताओं पर निश्चय करने के आशय से केन्द्र को कुछ गुंजाइश देनी चाहिये। कुछ ऐसे प्रांत हैं जो अन्य प्रांतों से उद्योगों में अधिक उन्नत हैं और हमारे लिये यह आवश्यक है कि जहां तक हो सके उन प्रांतों को जो कि बहुत पिछड़े हुये हैं अधिक उन्नत प्रांतों के स्तर पर लायें। भविष्य में उनकी मांग अनुपात से अधिक होगी। केवल उद्योग तथा कृषि संबंधी उन्नति के लिये ही नहीं, वरन् स्वास्थ्य सुधार, शिक्षा तथा अन्य राष्ट्र निर्माण कार्यों के लिये भी जिन पर सर रामास्वामी मुदालियर ने जोर दिया है। रिपोर्ट के निर्माताओं की समालोचना करने से कोई लाभ नहीं जिन्होंने कि रिपोर्ट में प्रकाशित प्रत्येक शब्द पर उचित ध्यान दिया है और फिर उस पर हम उचित ध्यान दिये बिना हंसें जब कि हम ध्यान देने में समर्थ हैं, और उस बुद्धि का प्रयोग न करें जिसका सर रामास्वामी जैसे मनुष्य अपने अंतर्राष्ट्रीय अनुभव के सहित तथा एक दीर्घकाल तक भारत सरकार की प्रबन्धकारिणी परिषद् की सदस्यता के अनुभव के सहित प्रयोग कर सकते हैं। उन्होंने नासिक यंत्रालय का केन्द्र की आय के लिये एक लाभदायक साधन के रूप में जिक्र किया है। उस समय सर रामास्वामी मुदालियर भारत में पौंड पावना (Sterling Balance) का जोरदार समर्थन करते थे और यह समझाते थे हमारे देश के लिये यह मूल्यवान सम्पत्ति है। आज वही सर रामास्वामी मुदालियर जब कि हमारी मुद्रा हटाने के संबंध में बात करते हैं तो वे सरलता से पौंड पावने के अस्तित्व को भूल जाते हैं जिसके लाभों की वे बड़ी जोरों से घोषणा किया करते थे और इंग्लैंड को हमारे देश का माल इतने सस्ते भाव में बेचा करते थे, जितना सस्ता इंग्लैंड को अन्य स्थानों से नहीं मिलता था, यहां तक कि नियंत्रित मूल्य से भी कम दामों में तथा अन्य साधनों द्वारा। यह केवल सस्ते भाव के ही कारण था कि हमारा पौंड पावना बना। अब वे हमारा ध्यान नासिक यंत्रालय की ओर आकर्षित करने का प्रयत्न करते हैं और यह भी कहते

[श्री देवीप्रसाद खेतान]

जाते हैं कि वे महंगाई के पक्ष में नहीं हैं। देश की आर्थिक स्थिति बड़ी नाजुक है। क्या वे यह जानते हैं कि हमारे देश की आर्थिक स्थिति इस समय क्या है? पहले भारत सरकार अर्थ हेतु बाजार में जा सकती थी और प्रतिवर्ष 100 से लेकर 150 करोड़ तक रुपया कर्ज ले लिया करती थी, लेकिन आज वस्तुस्थिति क्या है? रिजर्व बैंक को सरकारी जमानतों का मूल्य कायम रखने के लिये सदैव बाजार में रहना पड़ता है और सरकारी जामिनगीरी (Government Securities) खरीदनी पड़ती है, अलावा इसके कि वह कर्ज लेने के आशय से बाजार जाने का साहस करे। हमारे देश के हित के लिये, प्रांतों के हित के लिये भी तथा प्रांत में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति के हित के लिये भी यह आवश्यक है कि हमारी वह केन्द्रीय सरकार, जिसे रक्षा की ओर ध्यान रखना है, जिसे औद्योगिक उन्नति की ओर ध्यान देना है और जिसे आवपाशी, जल द्वारा विद्युत उत्पादन करने के कारखाने तथा अन्य विधियों द्वारा कृषि उद्योग में सहायता करना है, शक्तिशाली हो तथा हम केवल किसी सैद्धांतिक तर्क के आधार पर अपने केन्द्र को अशक्त न बनायें। इसी प्रकार, श्रीमान् जी, आप देखेंगे कि केन्द्रीय विषय सूची में जो कर रखे गये हैं वे केवल ऐसे हैं जिनका केन्द्र द्वारा सुविधापूर्वक प्रबन्ध किया जा सकता है, जो कि विभिन्न प्रांतों में समान रूप से लागू किये जाने के लिये आवश्यक है और जिनकी कृषि संबंधी तथा औद्योगिक उन्नति इत्यादि के लिये नितांत आवश्यकता है। हमें मीलों रेलगाड़ियां चालू करनी हैं, हमें समुद्रीय व्यवसाय उन्नत करना है। हमें इतनी बातों में उन्नति करनी है कि वे केन्द्र द्वारा ही की जा सकती हैं, और जब तक कि इनमें से प्रत्येक मद की यथेष्ट उन्नति न हो तब तक न तो हम स्वतंत्रता का निर्वाह कर सकेंगे और न हमारे लिये यह संभव होगा कि हम शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि अथवा अन्य किसी राष्ट्र निर्माण के कार्य में उन्नति कर सकें जिनकी उन्नति करने के लिये हम सब आतुर हैं। अन्त में श्रीमान् जी, कहां इन करों की आय चली जाती है? केन्द्रीय सरकार समस्त देश का प्रतिनिधित्व प्राप्त किये हुये है, वह उस केन्द्रीय व्यवस्थापिका का उत्तरदायित्व ग्रहण किये हुये हं, जिसमें समस्त प्रांतों के प्रतिनिधि बैठते हैं और यह निर्णय करते हैं कि कर द्वारा प्राप्त आय किस प्रकार खर्च की जाये। क्या वे केन्द्रीय सरकार को देश के सर्वोत्तम हित-साधन में प्रयोग करने के अतिरिक्त कर की आय को नष्ट करने देंगे? वे उसका देश के हित के लिये प्रयोग करेंगे या तो सीधे रूप से या कर की आय को प्रांतों में बांट कर, जिनका कर्तव्य होगा कि वे देश की उन्नति के लिये उसे खर्च करें। अतः मैं अपने माननीय मित्रों से निवेदन करता हूं कि वे केन्द्र तथा प्रांतों के पक्ष विपक्ष के नारे से प्रभावित न हों बल्कि अपने मन में गंभीर चिंतन करें

कि देश के हित के लिये उत्तम बात क्या है। हम अपनी स्वतंत्रता का निर्वाह करें और अपनी रक्षा को दृढ़ बनायें। हम अपने साधनों को कायम रखें, अधिकाधिक व्यापारिक तथा औद्योगिक केन्द्र खोलें जिससे कि हम समस्त देश में समुचित धनराशि बढ़ा सकें। केवल देश की समुचित धनराशि की नींव पर ही हम शिक्षा, स्वास्थ्य, संस्कृति, कला तथा अन्य उन साधनों का, जो प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को सुसम्पन्न, सुन्दर तथा सुखी बनाने के लिये सहायक होते हैं, भवन निर्माण कर सकते हैं।

***श्री अमिय कुमार दास** (आसाम: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इतने शानदार वाद-विवाद के पश्चात् मैं इसमें भाग लेने की इच्छा नहीं रखता था। लेकिन मैंने सोचा कि मैं अपने कर्तव्य का पालन नहीं करूंगा यदि मैं उन कुछ प्रमुख प्रश्नों पर प्रकाश नहीं डालूं जिनमें मेरे प्रांत का हित है। श्रीमान् जी आरम्भ में ही मैं यह स्वीकार कर लूं कि मैं हृदय से इस कमेटी के सदस्यों को इस रिपोर्ट के पेश करने की बधाई नहीं दे सकता हूं। श्रीमान् जी, मैं इससे सहमत हूं कि संघ-विधान में अधिकारों का विभाजन एक प्रमुख प्रश्न है। समस्त विधानों में यही झगड़े की जड़ रही है कि केन्द्र और प्रांतों में किस प्रकार अधिकारों का विभाजन किया जाये। विगत अनेकों वर्षों से भारतीय राजनीति के क्षेत्र में अवशिष्ट अधिकारों का प्रश्न विवादास्पद विषय रहा। एक वर्ग यह मांग करता रहा कि अवशिष्ट अधिकार प्रांतों को सौंप दिये जायें और दूसरा वर्ग यह मांग करता रहा कि वे केन्द्र को सौंप दिये जायें तथा कांग्रेस को इन अवशिष्ट अधिकारों को प्रांतों को सौंपने की स्थिति ग्रहण करनी पड़ी जिससे कि जनता के एक वर्ग को सान्तवना दी जा सके। आज कांग्रेस ने जो विपरीत स्थिति ग्रहण की है, मैं माने लेता हूं कि वह भारत के अत्याज्य परन्तु खेदनीय विभाजन के कारण परिस्थिति की प्रतिक्रिया के द्वारा ही उत्पन्न हुई है। परन्तु मैं उसके तर्क को नहीं समझ सकता हूं, अवशिष्ट अधिकारों को केन्द्र के सौंपने की स्थिति ग्रहण कर लेने के पश्चात् क्यों इस कमेटी के सदस्यों ने रियासतों के प्रति भिन्न रुख लिया है। उस स्थिति को ग्रहण करने के पश्चात् रियासतों तथा प्रांतों के लिये उन्हें एक ही नीति का निर्वाह करना चाहिये। प्रांतों में उन्होंने अधिकार छीन लिये हैं जहां कि जनतंत्रात्मक राज्य है, लेकिन रियासतों में जब कि जनता को शासन-व्यवस्था में कोई अधिकार नहीं है उन्होंने स्वेच्छाचारी शासकों को अधिकार सौंप दिये हैं। मेरे विचार से तो यह जनतंत्रात्मक सिद्धांतों का अस्वीकार करना प्रतीत होता है।

श्रीमान् जी, उस शासन-प्रणाली के वसीयतदार होने के नाते जिसको विगत काल में प्रमाणित नहीं किया गया था कि वह प्रान्तों के साथ आर्थिक व्यवस्था के विषय

[श्री अमिय कुमार दास]

पर ठीक तथा परिपूर्णता के साथ विचार कर सकी थी, लेकिन मैं आज यह अनुभव करता हूं कि केन्द्र को शक्तिशाली बनाने की चिंता में हम पुनः उन्हीं प्रान्तों को खोकर केन्द्र को शक्तिशाली बनाने की नीति को ग्रहण कर रहे हैं। केन्द्र को शक्तिशाली तो हमें बनाना ही चाहिये क्योंकि हमारे सामने वह स्थिति है जो कि एक ओर तो ज्वालामुखी के समान है और दूसरी ओर गत्यात्मक है, परन्तु हमें प्रान्तों को दुर्बल नहीं बनाना चाहिये। यह सब होते हुये भी वे केवल प्रान्त ही हैं जिन्हें कांग्रेस के गत्यात्मक कार्यक्रम को पूरा करना है। आर्थिक व्यवस्था, जो कि केन्द्र को शक्तिशाली बनाने की चिन्ता का परिणाम है, जिसके द्वारा केवल केन्द्र में आर्थिक दृढ़ता आती है तथा जिससे प्रदेशों में राष्ट्र-निर्माण के कार्यक्रम को पूरा करने के लिये धन की कमी रहेगी, आज भी वैसी ही है और मैं उसमें कोई अन्तर नहीं देखता हूं। प्रान्तों को खोकर केन्द्र को शक्तिशाली बनाने की नीति आज भी सुन्दर प्रतीत होती है।

श्रीमान् जी, मैं जानता हूं कि अपने प्रान्त की कोई खास वकालत करने का यह अवसर नहीं है, लेकिन मैं समझता हूं कि मैं अपने कर्तव्य का पालन नहीं करूंगा यदि मैं अपने देश की आर्थिक अवस्था के संबंध में कुछ बातों पर प्रकाश न डालूं। मेरा प्रान्त आसाम, चाय और पेट्रोल के देशी माल पर कर तथा निर्यात-कर के रूप में केन्द्रीय खजाने के लिये आठ करोड़ वार्षिक आय का साधन रहा है। परन्तु आसाम को जो आर्थिक सहायता मिली वह केवल 30 लाख रुपये थी, इसमें मैं आज भी कोई परिवर्तन नहीं देखता हूं। मैं अनुभव करता हूं तथा श्रीमान् जी, मुझे यह कहने में खेद है कि हमारे नेता अभी भारतीय सरकार के एक्ट के प्रभाव से दूर रहने में समर्थ नहीं हो सके। श्रीमान् जी, कांग्रेस मंत्रिमंडल के पदारूढ़ होने पर केवल प्रान्तों में ही नहीं वरन् केन्द्र में भी लोग क्रान्तिकारी परिवर्तन की आशा कर रहे हैं और ऐसी आशा करना अन्यायपूर्ण नहीं है। हमें अपनी शासन-व्यवस्था को दफ्तर के रस्मी गोरखधंधे के जंजाल से मुक्त कर देना चाहिये और हमें अपने कार्यक्रम को शीघ्रता के साथ पूरा करने की योजना बनानी चाहिये।

अन्त में समाप्त करने के पूर्व मुझे इस सभा के समक्ष एक और बात, जिसमें कि मेरे प्रान्त का हित है, लाना चाहिये। संघ-विषय-सूची में जो विषय दिये गये हैं उनमें मैं स्थानान्तर गमन तथा नागरिककरण को पाता हूं। मेरे मन में यह आता है कि इन दोनों विषयों को भी सहगामी सूची में रख दिया जाये या भाषा में इस प्रकार परिवर्तन कर दिया जाये कि प्रांत इन विषयों को अपने कार्य क्षेत्र के

अंतर्गत ला सकें। श्रीमान् जी, मैं नहीं जानता कि अन्य प्रांतों की क्या दशा है, हमारे लिये तो यह बहुत दुःखदायी है। हम जानते हैं कि किस प्रकार जनसमूह के आसाम में आ जाने से आबादी की आकृति ही बदल गई है। साम्प्रदायिक निर्णय तथा साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व के साथ-साथ हमारे लिये यह उचित नहीं था कि हम एक विशाल रूप में जनसमूह का स्थानान्तर करें और यहां तक कि खाली कराने पर भी–जो कि हमारे प्रान्त में हो रहा है–मैं प्रान्त में ऐसे बहुत से मनुष्य पाता हूं जो प्रान्त के नहीं हैं बल्कि सरकारी भूमि में प्रवेश करने की अनधिकार चेष्टा करने वाले हैं और अब भी अपने रिश्तेदारों के साथ रहकर प्रान्त पर निर्भर हैं। इस वातावरण में श्रीमान् जी, मैं चाहता हूं कि कमेटी के सदस्य और विशेषकर इस प्रस्ताव के प्रेषक इस प्रश्न पर और अधिक समझदारी के साथ विचार करें और इस विषय में प्रान्तों को कुछ अधिकार दें। यदि आसाम जो कि आसामियों की मातृभूमि है और यदि उनकी रक्षा नहीं की जा सकती तो अपने लिये तो मैं यह कहूंगा कि मुझे इस सभा में आने का कोई न्यायपूर्ण अधिकार नहीं है। आसामियों की संस्कृति अन्य प्रान्तों से भिन्न है। आसामियों की भाषा पृथक है और जिसका यद्यपि मूल रूप संस्कृत ही है पर उस पर तिब्बत तथा बर्मा की भाषा का प्रभाव है। हमें आसामियों की रक्षा करनी चाहिये। इस विषय पर इन विचारों के द्वारा मैं इस प्रस्ताव के प्रेषक से निवेदन करता हूं कि वे प्रान्तों द्वारा कार्यवाही किये जाने की व्यवस्था करें। श्रीमान् जी, इन शब्दों के साथ-साथ मैं श्री आयंगर द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

***सर बी॰एल॰ मित्तर** (बड़ोदा): अध्यक्ष महोदय, मैं कुछ शब्द कहने में अधिक समय लेना नहीं चाहता हूं। मुझे वे शब्द इसलिये कहने पड़े कि उनके अंतर्गत विचारों को अभी तक वाद-विवाद में नहीं लाया गया। यह मान लिया गया है कि इस रिपोर्ट में अधिकारों का विभाजन स्वेच्छाचारिता से किया गया है, कुछ सोचते हैं कि आवश्यकता से अधिक अधिकार केन्द्र को दे दिये गये हैं, कुछ सोचते हैं कि प्रान्तों को दुर्बल बना दिया गया है, इत्यादि, इत्यादि। मैं कमेटी का सदस्य था। अधिकारों के विभाजन के विषय पर कमेटी ने एक निश्चित सिद्धान्त का पालन किया, जो यह है–राष्ट्रीय विषय केन्द्र को सौंपे जाने चाहियें तथा प्रान्तीय विषय प्रान्तों को। जबकि हमने इन सूचियों को बनाया, हमारे मन में यही मौलिक सिद्धान्त थे। हमने देखा कि सन् 1935 ई॰ का एक्ट एक अच्छा पथ-प्रदर्शक था क्योंकि सन् 1935 ई॰ के एक्ट की सूचियों को बनाने में इसी सिद्धान्त को दृष्टि में रखा गया था। मैं माननीय सदस्यों से निवेदन करूंगा कि जब हम विभिन्न

[सर बी.एल. मित्तर]

मदों पर वाद-विवाद करें, वे कृपया इस मौलिक सिद्धान्त को ध्यान में रखें कि राष्ट्रीय हित के विषय केन्द्र के अंतर्गत रहने चाहियें तथा प्रान्तीय हित के विषय प्रान्त के अंतर्गत रहने चाहियें। ऐसे कुछ विषय हैं जिनके लिये सहगामी सूची होनी चाहिये, जिस पर कि दोनों प्रान्तों तथा केन्द्र के अधिकार होने चाहियें। मेरा दूसरा विषय रियासतों के संबंध में है। कुछ सदस्यों ने प्रश्न किया है कि रियासतों की प्रान्तों से कुछ भिन्न स्थिति क्यों होनी चाहिये? कारण स्पष्ट है। भारत लगभग आधा-आधा है—आधा ब्रिटिश भारत तथा आधा रियासत के रूप में। हम रियासतों को संघ में रहने देना चाहते हैं या नहीं? मैं समझता हूं कि इस बात पर तो यहां कोई झगड़ा नहीं होगा कि हम रियासतों को भारत में आने देना चाहते हैं, उन सूबों को जो कि भारत कहे जाने वाले देश की सीमा के अंतर्गत हैं। रियासतों ने 16 मई की घोषणा के आधार पर सम्मिलित होना स्वीकार किया है। अतः यदि आप रियासतों को आने देना चाहते हैं और एक दृढ़ शक्तिशाली भारत बनाना चाहते हैं तो आपको उन शर्तों को स्वीकार करना पड़ेगा, जिनके आधार पर वे आये हैं। इसी कारण रियासतों के लिये कुछ विशेष व्यवस्था बनानी पड़ी। एक बार रियासत सम्मिलित हो गई तो इसमें संदेह नहीं कि शनैः शनैः रियासतें और प्रान्त एक दूसरे के सन्निकट आ जायेंगे। रियासतें उन्नति करेंगी। मान लीजिये कि रियासतें पिछड़ी हुई हैं तो पिछड़े हुये भागों के लिये आपको कुछ अनुग्रह प्रदर्शन करना होगा। उनको आने दीजिये, उनको अपने साथ सम्पर्क बढ़ाने दीजिये और फिर आप देखेंगे कि शनैः शनैः वे एक ही दर्जे के निकट आ जायेंगे। यही हमारा उद्देश्य है और इस प्रकार भारत एक दृढ़ शक्तिशाली देश हो जायेगा। मैं प्रान्तों के सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे रियासतों के साथ जो पक्षपात किया है, उसको ध्यान में न लायें।

***अध्यक्षः** मेरे ख्याल से अब हमने यथेष्ट वाद-विवाद कर लिया है और यदि प्रस्ताव स्वीकार कर भी लिया जाये तो उसका केवल यही मतलब होगा कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये तथा रिपोर्ट का विवरण वाद-विवाद के लिये प्रस्तुत होगा। इसलिये यदि सभा मुझे आज्ञा देती है तो मैं इस प्रस्ताव पर प्रस्तावक महोदय को, यदि वे चाहते हैं, तो उत्तर देने का अवसर देने के पश्चात् वोट लूं।

***माननीय श्री एन० गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, इतने लम्बे वाद-विवाद के पश्चात् मैं नहीं समझता कि मेरे लिये सभा का

अधिक समय लेना आवश्यक है, विशेषकर जबकि एक या अन्य वक्ता द्वारा किसी विशेष सिद्धान्त पर उपस्थित किये गये तर्क का विरोधी विचार धारण करने वाले सदस्यों द्वारा प्रत्याख्यान किया जा चुका है। मेरे लिये यह अब आवश्यक है कि मैं उन सब विवरणपूर्ण प्रश्नों का उल्लेख करूं जो कि वाद-विवाद में उठाये गये हैं। श्रीमान् जी, मैं एक या दो प्रमुख विचारों का उल्लेख करना चाहता हूं। एक का अभी मेरे मित्र सर बी०एल० मित्तर ने हवाला दिया था कि प्रान्तों तथा रियासतों में इन सूचियों के बनाने में जो भेद-विभेद है। मैंने अपने प्रथम भाषण में इस बात का उल्लेख किया था और मैंने उन विचारों की ओर संकेत किया था, जिनका इस निश्चय पर पहुंचने में कमेटी पर प्रभाव पड़ा था कि संघ के आरम्भ काल में किसी प्रकार रियासतों तथा प्रान्तों में जो भिन्न-भिन्न प्रकार की परिस्थितियां हैं, उन पर कुछ महत्व दिया जाये। अन्तिम आदर्श के रूप में इस विचार को दृष्टि में रखना वास्तव में ठीक है कि कालान्तर में रियासतें प्रान्तों के निकट आ जायेंगी और जो भी अन्तर इस समय हैं वे दोनों की सम्मति से अपने आप ही दूर हो जायेंगे। इस समय हमारा इस बात में हित है कि हम एक संगठित राजनैतिक ढांचा बनायें जिसका अस्तित्व हो चुका है और यदि सम्भव हो सके तो उस ढांचे को जितना हम बना सकते हैं, दृढ़ बनायें और ऐसा करने में भिन्न प्रकार की परिस्थिति वाले क्षेत्रों के पक्ष में, शायद कुछ के पक्ष में, हमें कुछ अन्तर रखना पड़ेगा जिसको मैं पक्षपात तक कहूंगा। श्रीमान् जी, हमें इस स्थिति को स्वीकार करना पड़ेगा और संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट इस अन्तर की स्वीकृति पर निर्भर है।

दूसरा बड़ा प्रश्न जो कि वाद-विवाद के अंतर्गत उठाया गया है, मेरे ख्याल से वह पूर्णतया भ्रांति पर आश्रित है। प्रश्न यह है कि उपयोगिता संबंधी समझ की कमी के कारण अथवा विषय पर सावधानी से मनन न करने के कारण संघ-अधिकार-समिति ने केन्द्र को वे कर्तव्य तथा आर्थिक साधन सौंप दिये हैं जिनका प्रान्तों को सौंपा जाना अधिक उपयुक्त होता। इसको मैं भ्रांति कहता हूं। यह भ्रांति इस कारण उत्पन्न हो गई है कि जिन लोगों ने यह आपत्ति की है उन्होंने संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट द्वारा बनाई गई केन्द्र तथा प्रान्तों की सूचियों का मुकाबला उन सूचियों से नहीं किया जो कि आपको उदाहरणार्थ भारत सरकार के 1935 ई० के एक्ट में मिलेंगी। मेरा यह तर्क उस बयान पर आश्रित है जिसे मेरे एक रियासत के मित्र ने यथेष्ट परिश्रम करके तैयार किया और मुझे दिखाया। मैं समझता हूं कि मेरा यह कहना ठीक है कि भारत सरकार के अंतर्गत वर्तमान प्रान्तीय सूची में ऐसा कोई भी मद नहीं है जिसको इस कमेटी ने, जिसकी इतनी आलोचना की गई है, इस संघ-अधिकार-समिति ने संघ-सूची में रखा हो।

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

(वाह वाह) मैं इस बात का इसलिये जिक्र नहीं कर रहा हूं कि मैं भारत सरकार एक्ट की वर्तमान सूची को श्रेय दे रहा हूं। इन समालोचकों के लिये यह कहना सम्भव है कि भारत सरकार के एक्ट से संलग्न सूचियों में जो कुछ आपको मिलता है वह ठोस निर्णयात्मक विचारों पर आश्रित नहीं है, तथा यह भी कि संघ-अधिकार-समिति को आगे कदम बढ़ाना चाहिये था और यदि सम्भव था तो भारत सरकार के एक्ट की संघ-सूची के कुछ मदों को प्रान्तीय सूची में ले आना चाहिये था। मैं चाहता हूं कि इस समय केवल दैव ही इस बात को बताये कि यह समालोचना का, कि उन विषयों के अधिकारों को हमने केन्द्र को दे दिया है जो कि जहां तक हमने विचार किया है प्रान्तों के अंतर्गत रहने चाहियें, कोई सारपूर्ण आधार नहीं है।

एक बात और है जिसका मैं हवाला देना चाहता हूं और जिस पर मेरे एक मित्र ने बड़ी लम्बी व्याख्या की है; जिनके शासन-संबंधी अनुभव तथा वाक्‌पटुता का मैं बहुत सम्मान करता हूं। उन मित्र ने प्रान्तीय सूची में करों के मद से आरम्भ किया और आपको जो मद वहां दिखाई देते हैं उनको तुच्छ बताने तथा उनका मजाक उड़ाने का प्रयत्न किया। मेरे ख्याल से उन्होंने इस बात का प्रयत्न किया कि संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट में केन्द्र और प्रान्तों में कर लगाये जाने वाले साधनों के बंटवारे में जानकर प्रान्तों के साधनों को कम करने तथा केन्द्र के साधनों को बढ़ाने का हिसाब लगाया गया है। श्रीमान् जी, यह विचार तथ्य की वास्तविक स्थिति से बहुत दूर है। सच तो यह है कि हमने प्रान्तीय सूची में कर-निर्धारण और मालगुजारी के उन सब साधनों को शामिल किया है जिनको आप भारत सरकार के एक्ट की प्रान्तीय सूची में पायेंगे। इस सिलसिले में मैं यह कहूंगा कि यह एक विचित्र-सी बात है कि जब मेरे माननीय मित्र ने इतना समय और वाक्‌चातुरी प्रान्तीय सूची के अन्तर्गत इन विभिन्न मदों को एक-एक करके तुच्छ बताने में व्यय की, उन्होंने उस समय तथा वाक्‌चातुरी का कुछ उपयुक्त भाग उन मदों में व्यय नहीं किया जिनको हमने संघ-सूची में शामिल किया है। वहां भी हमने जो कुछ भारत सरकार के एक्ट में दिया हुआ है उसको दुहराया है। ऐसा भी प्रतीत होता है कि उन्होंने उस विषय पर भी यथेष्ट महत्व नहीं दिया है जिस पर कमेटी ने रिपोर्ट के अंतिम पैरे में विशेष ध्यान आकर्षित किया है। कमेटी इस बात को स्वीकार करती है कि जो साधन केन्द्र के लाभ के लिये सूची में दिये गये हैं, उनसे इतनी आय हो सकती है जो कि आधुनिक मापदण्ड से केन्द्र की आवश्यकता के लिये पर्याप्त से अधिक होगी। किसी प्रकार कमेटी इस बात को मानती है कि यदि कमेटी कथित केन्द्रीय करों की सारी आय को

रखती है तो यह प्रान्तों की आर्थिक समता में गड़बड़ी कर सकता है। और इसीलिये उसने यह विशिष्ट सिफारिश की है कि इन साधनों (की आय को) में से कुछ साधनों (की आय को) केन्द्रों को पूर्णतया समर्पण करें अथवा किसी अधिकारी के विवेक पर आश्रित, जिसकी विधान बनाने के अरसे में हम इसी आशय से स्थापना कर सकते हैं, अन्य साधनों (की आय) को किसी नियत काल के पश्चात् केन्द्र तथा प्रदेशों में बांटें।

***श्री टी॰ प्रकाशम्** (मद्रासः जनरल): श्रीमान् जी, क्या मैं यह बताऊं कि भारत सरकार का एक्ट पार्लियामेंट में उस समय शीघ्रता के साथ लाया गया था जबकि देश में भीषण आंदोलन चल रहा था? (माइक, माइक की आवाज)।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः** सभा के लाभ के लिये श्री प्रकाशम् ने जिस बात की ओर ध्यान आकर्षित किया है मैं उसे दुहरा दूं। उनका ऐसा तर्क है कि सन् 1935 ई॰ के एक्ट को शीघ्रता के साथ पार्लियामेंट में लाया गया था, इस देश को पार्लियामेंट में अपने पर्याप्त विचार रखने का अवसर नहीं मिला और इसलिये वह एक ऐसा एक्ट नहीं है जिसे कि हम अपने विधान के लिये अनुकरणीय मानें। इसके उत्तर में मैं जो कुछ कह सकता हूं वह यह है कि सन् 1935 ई॰ का एक्ट वह अन्तिम एक्ट है जो कि लगातार उन कार्रवाइयों में लिया गया जो कि मेरे ख्याल से आठ या दस वर्ष पूर्व आरम्भ हुईं और उसमें जो प्रस्ताव रखे गये हैं वे अनेकों कमीशनों तथा कमेटियों में होकर आये और अन्त में एक संयुक्त पार्लियामेंट की कमेटी द्वारा जिसमें इस देश के प्रतिनिधि भी थे, स्वीकृत हुये और इस सम्पूर्ण योजना का इतने परिश्रम तथा विचार करने के पश्चात् प्रादुर्भाव हुआ है कि जो साधारणतया इस प्रकार के कानून निर्माण करने के लिये हम इतना परिश्रम तथा विचार नहीं करते।

श्रीमान् जी, ऐसा हो सकता है कि उसके अंत में जो कुछ दिया हुआ था उस सबसे हम किसी विशेष रूप में संतुष्ट नहीं हुए। लेकिन हम वास्तव में यह शिकायत नहीं कर सकते कि यह कानून-निर्माण शीघ्रता के साथ किया गया या शीघ्रता के साथ पार्लियामेंट में लाया गया। उसमें जो कुछ दिया हुआ है उस सबको हम स्वीकार न करें।

वाद-विवाद के उत्तर में जिस बात को बताने की मेरी इच्छा है, वह यह है कि संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट में हमने ऐसा कुछ भी नहीं दिया है जिसका आप तर्क के आधार पर विरोध कर सकते हैं। हमने प्रांतों के साधनों के निर्धन होने के बारे में तथा केन्द्र के साधनों के पूर्ण सम्पन्न होने के बारे में

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

तथा ऐसी ही बातों के बारे में हमने बहुत-कुछ सुना है। लेकिन मुझे यह याद नहीं आता कि मैंने इस सभा में किसी वक्ता को यह कहते हुये सुना हो कि प्रांतीय सूची में हमें क्या बढ़ा देना चाहिये और संघ-सूची में क्या घटा देना चाहिये।

श्रीमान् जी, मैं मानता हूं कि रिपोर्ट इस रूप में हमारे नये विधान का पूरा मसविदा तैयार हो जाने के बाद हमारी अंतिम आर्थिक व्यवस्था क्या होगी, इसका पूरा चित्र सभा के सामने नहीं रखती है। मैंने सभा के समक्ष यह कई बार कहा है कि जो योजना विचाराधीन है, वह यह है कि आय के उन साधनों का समूचा प्रश्न जिनको देश में खोजकर प्रयोग किया जा सकता है, उन आय के साधनों को केन्द्र तथा प्रदेश में बांटना और वह प्रबन्ध जिसके द्वारा यह विभाजन सबका सब एक बार में या समय-समय पर अमल में लाया जा सकता है, जिसका सर्वप्रथम विशेषज्ञों की एक समिति द्वारा परीक्षण हो जाना चाहिये और शायद इसके बाद संघ-विधान-समिति द्वारा उस पर विचार हो जाना चाहिये और अंत में वह योजना समिति के सामने लायी जाये जिससे कि उस योजना के निर्माताओं को सभा के सदस्यों द्वारा क्रियात्मक सुझाव प्राप्त करने का लाभ हो सके। इसका जो वर्तमान रूप है, श्रीमान् जी, उसमें हमने केवल मदों को रखा है जिनको हम इन तीन विभिन्न सूचियों में लाना चाहते हैं। हमने आपसे यह भी कह दिया है कि यह मंशा नहीं है कि आय अथवा कर के इन साधनों को एकमात्र केन्द्र को दे दिया जाये। हमारा यह विचार है कि कुछ मद पूर्णतया प्रांतों को दे दिये जायें। हमारा यह विचार है कि अन्य मदों का प्रांतों तथा केंद्र में सुनीतियुक्त विभाजन कर दिया जाये। अतः श्रीमान् जी, इस समालोचना के लिये न्यायपूर्वक स्थान कहां है कि इस संबंध में संघ-अधिकार-समिति प्रांतों के साथ न्याय नहीं कर सकी? मैं स्वयं तो इस समालोचना के किसी आधार को नहीं पा सका। श्रीमान् जी, मैं सभा का अधिक समय नहीं लेना चाहता हूं और विधान के संबंध में इस प्रमुख वाद-हेतु पर हमारे सामने बड़ा रोचक वाद-विवाद हो चुका है और मैं आशा करता हूं कि माननीय सदस्य यह स्वीकार करेंगे कि गत कुछ महीनों में शीघ्रता के साथ जो परिवर्तनशील घटनायें हुई हैं उस काल में कमेटी ने जो कार्य किया है वह यदि प्रशंसा योग्य न समझा जाये तो कम से कम स्वीकार तो किया ही जायेगा।

***अध्यक्षः** श्री गोपालस्वामी आयंगर का यह प्रस्ताव है:

''निश्चय किया जाता है कि यह विधान-परिषद् अपने 25 जनवरी सन् 1947 ई॰ के प्रस्ताव द्वारा नियुक्त समिति की संघ-अधिकार संबंधी दूसरी रिपोर्ट पर विचार करे।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***एक माननीय सदस्यः** मैं मत-विभाजन पर जोर देता हूं।

***माननीय श्री हुसैन इमामः** (बिहारः मुस्लिम): क्या मैं उस विधि को बता सकता हूं जिसका पहले समय में राज्य-परिषद् (Council of State) में कभी-कभी अनुसरण किया जाता था, अर्थात् अल्पमत वालों को अपना विरोध प्रदर्शन करने के लिये अपने-अपने स्थानों पर खड़े होने के लिये कहा जाता था? इससे आप एक नोट बना सकते हैं और समस्त सभा को मत गृह में जाने से बचा सकते हैं।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रांतः जनरल): उन लोगों की क्या संख्या है जो तटस्थ हैं?

***अध्यक्षः** मेरे लिये यह पूर्ण स्पष्ट है कि प्रस्ताव के पक्ष में एक बड़ा बहुमत था। जो प्रस्ताव के विरोध में हैं वे अपने-अपने स्थानों पर खड़े हो जायें।

(6 माननीय सदस्य खड़े हुये।)

***अध्यक्षः** अतः मेरा अनुमान बिलकुल ठीक था। 6 सदस्य विरोध में हैं।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***मौलाना हसरत मोहानीः** मैं प्रस्ताव के पक्ष में हूं, लेकिन मैंने सुझाव रखा था कि सभा का एक बड़ा भाग, जिन्होंने मत नहीं दिया है, तटस्थ था।

***अध्यक्षः** मुझे पूर्ण संतोष है कि सभा इस प्रस्ताव को स्वीकार करने के पक्ष में है और इस विषय की समाप्ति हुई।

***श्री एम॰एस॰ अणे** (दक्षिणी रियासतें): अध्यक्ष महोदय, चूंकि आपने मतगणना स्वीकार कर ली है और जो विरोध में थे उनसे पूछ लिया है, इसलिये आपके लिये यह आवश्यक है कि जो लोग पक्ष में हैं उनसे भी आप पूछें।

***अध्यक्षः** मैं नहीं समझता हूं कि यह आवश्यक है। वह बिलकुल स्पष्ट है और मैं घोषणा भी कर चुका हूं। परन्तु यदि सभा का यही हठ है तो मैं उन सदस्यों से, जो कि प्रस्ताव के पक्ष में हैं, निवेदन करूंगा कि कृपया खड़े हो जायें।

(माननीय सदस्यों की एक बहुत बड़ी संख्या खड़ी हुई।)

***अध्यक्षः** अब तो यह बिलकुल स्पष्ट है।

***एक माननीय सदस्यः** और जो लोग तटस्थ हैं?

***अध्यक्षः** तटस्थों को जानने की आवश्यकता नहीं है। अब हम रिपोर्ट को लेंगे। हमें संशोधन को लेना है। पहला संशोधन श्री डी॰पी॰ खेतान द्वारा है।

***श्री देवी प्रसाद खेतानः** अध्यक्ष महोदय, मैंने इसलिये इस संशोधन की सूचना भेजी थी कि श्री गोपालस्वामी आयंगर के प्रस्ताव के शब्दों में केवल ''दूसरी रिपोर्ट'' का जिक्र आया है। उस हालत में कुछ थोड़ी-सी अस्पष्टता थी कि पहली रिपोर्ट पर विचार होगा या नहीं। लेकिन श्री गोपालस्वामी आयंगर ने अपना प्रस्ताव पेश करते हुए जो भाषण दिया उसमें यह स्पष्ट कर दिया कि केवल ''दूसरी रिपोर्ट'' इन शब्दों के होते हुए भी सभा को पहली रिपोर्ट पर विचार करने का अधिकार है। इन परिस्थितियों में श्रीमान् जी, जो संशोधन मेरे नाम से है उसे पेश करने की मैं कोई आवश्यकता नहीं समझता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम)**:** अध्यक्ष महोदय, मैं एक वैधानिक आपत्ति उपस्थित करता हूं कि सभा ने प्रस्ताव को केवल उसी रूप में स्वीकार किया है जिस रूप में उसे पेश किया गया है। उसने प्रस्ताव के पक्ष में माननीय सदस्य के वक्तव्य को स्वीकार नहीं किया है। यह एक मान्य वैधानिक बात है कि जब प्रस्ताव पास हो जाता है तो कोई वक्तव्य जो उसके विरोध में है अथवा उसके अनुरूप नहीं है, आवश्यक रूप से स्वीकार नहीं किया जाता बल्कि अस्वीकार किया जाता है। प्रस्ताव में दिया हुआ है कि 'दूसरी रिपोर्ट' पर विचार किया जाये और भाषण में यह बताया गया था कि पहली रिपोर्ट के उस भाग पर जो कि इसके अनुरूप है, विचार किया जाये। पहली रिपोर्ट की जो भूमिका कही जाती है वह बहुत मर्यादापूर्ण है और उसका वह भाग ही ऐसा है जो कि इस रिपोर्ट के अनुरूप है और सदस्य के मतानुसार उस पर ही गौर करना है। मेरे मन में यह बात आती है कि पहली रिपोर्ट असामयिक है और रद्द कर दी गई है तथा उसका केवल वही भाग जो कि दूसरी रिपोर्ट के अनुरूप है, संयोगवश एक सम्बद्ध प्रमाणपत्र के रूप में विचारार्थ ले लिया जाये।

एक बात और है जो संशोधन आ गया था, वह प्रस्ताव पर मत लेने के पूर्व पेश किया जाना चाहिये।

*__अध्यक्षः__ उसे पेश नहीं किया गया।

*__श्री नजीरुद्दीन अहमदः__ जी हां, चूंकि संशोधन पेश नहीं किया गया इसलिये उस पर प्रश्न ही नहीं उठता। यदि वह माननीय सदस्य जिसने कि संशोधन रखा था इस बात से खुश हैं कि पहली रिपोर्ट अभी विचाराधीन है तो उन्हें खुश होने दीजिये। परन्तु वैधानिक स्थिति यह है कि पहली रिपोर्ट रस्मी ढंग से सभा के समक्ष नहीं है।

इस निवेदन को करने के लिये मेरे पास एक और कारण भी है। उन सदस्यों को जो कि दुर्भाग्यवश आरम्भकाल से सभा में नहीं हैं अर्थात् वे सदस्य जो 3 जून की घोषणा के फलस्वरूप यहां आये हैं, उनको अभी तक पहली रिपोर्ट की प्रति नहीं मिली है। इसका भी यही मतलब है कि सभा के सामने जिस रूप में वह आज निर्मित है, पहली रिपोर्ट नहीं है।

इन परिस्थितियों में मैं इस बात के लिये आपका निर्देश चाहता हूं कि पहली रिपोर्ट केवल इस बात के कारण कि माननीय सदस्य ने सुन्दर ढंग से कहा कि इस पर भी विचार किया जाये, सभा के समक्ष है। मैं निवेदन करता हूं कि संयोगवशात् तर्क के रूप में उस पर विचार किया जा सकता है न कि सभा के समक्ष उचित रूप से मत लेने के लिये एक मौलिक रिपोर्ट के रूप में।

*__अध्यक्षः__ क्या माननीय सदस्य को नीली किताब की प्रति मिल गई है? उसमें पहली रिपोर्ट भी है।

*__श्री नजीरुद्दीन अहमदः__ दुर्भाग्य से वह पैकेट कान्स्टीट्यूशन हाउस के मेरे उस पते से भेजा गया था, जहां मैं पिछले अधिवेशन में रहा था। अब मैं वैस्टर्न कोर्ट में रहता हूं। कान्स्टीट्यूशन हाउस को अनेकों बार पत्र तथा नौकर भेजने पर भी मुझे पैकेट नहीं मिला।

*__अध्यक्षः__ यह दुर्भाग्य की बात है कि वह आपके पास नहीं पहुंची। आपको दूसरी प्रति दी जायेगी।

अब हमें रिपोर्ट पर विचार करना है। रिपोर्ट में कुछ पैरे हैं और दो परिशिष्ट भी हैं जिनमें सूचियां हैं। मेरे पास कुछ संशोधनों की सूचना है जिसमें यह सुझाव रखा है कि कुछ पैरों के स्थान में अन्य पैरे रख दिये जायें, कुछ पैरों में कुछ जोड़ दिया जाये तथा कुछ नये पैरे बढ़ा दिये जायें। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि

[अध्यक्ष]

पूरी रिपोर्ट अब सभा के सामने है और ये रिपोर्ट कमेटी की रिपोर्ट है। मुझे नहीं मालूम है कि रिपोर्ट के एक पैरे के स्थान में अन्य किसी पैरे को रखने का सभा को अधिकार है या नहीं। शायद सभा यह कह सकती है कि किसी विशेष पैरे में निहित सिद्धान्त के स्थान में अन्य कोई सिद्धान्त होने चाहिये या रिपोर्ट के सारांश को एक विशेष रूप में परिवर्तित कर देना चाहिये। मैं नहीं जानता हूं कि यह कहना ठीक है या नहीं कि रिपोर्ट के एक पैरे के स्थान में दूसरा पैरा रख देना चाहिये।

खैर, यह एक पारिभाषिक विषय है। अब हमें रिपोर्ट के औचित्य पर विचार करना है। हमें एक-एक पैरा करके रिपोर्ट को लेना है और यदि सदस्यों द्वारा कोई संशोधन होगा तो मैं उनको अपने उन सुझावों को रखने के लिये बुलाऊंगा, जिनकी उन्होंने संशोधन के रूप में सूचना दे दी है। हम रिपोर्ट को एक-एक पैरा करके लेंगे। श्री गोपालस्वामी आयंगर, क्या आप एक एक पैरा करके रिपोर्ट को लेंगे?

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, मैं आपके उस सुझाव को नहीं समझ सका जिसको आपने कृपा करके बताया था। क्या आपका ऐसा विचार है कि मैं उसे एक-एक पैरा करके पढ़ूं?

अध्यक्ष: नहीं, मेरे ख्याल से पैरों का पढ़ा जाना आवश्यक नहीं है।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** क्या मैं एक दूसरा सुझाव रख सकता हूं जो कि शायद अधिक सरल होगा और यह उस विधि के आधार पर होगा, जिसका प्रस्तावित कानून के संबंध में हम व्यवस्थापिका में अनुसरण करते हैं। किसी निर्वाचित समिति की रिपोर्ट पर विचार करने का प्रस्ताव स्वीकृत हो जाने के बाद विधि यह है कि अध्यक्ष कहते हैं कि प्रश्न यह है कि वाक्यखण्ड (1) प्रस्तावित कानून का भाग है और फिर संशोधन पेश किये जाते हैं। श्रीमान् जी, यदि मैं विधि पेश करूं तो वह यह है कि आप इस रिपोर्ट में दिये गये पैरों की संख्या को ले सकते हैं कि यह पैरा रिपोर्ट का भाग है और फिर यह कहें कि यदि कोई संशोधन है तो उस पर विचार किया जाये और पैरे पर मत लिये जायें।

***अध्यक्ष:** मैं इसी पद्धति का अनुसरण करूंगा। हम एक-एक पैरा करके लेंगे। मुझे पैरा 1 पर किसी संशोधन की सूचना नहीं मिली है।

***श्री के॰ सन्तानम्:** श्रीमान् जी, मुझे एक सुझाव रखना है। मेरे विचार से हमें मदों को पहले ले लेना चाहिये और रिपोर्ट के शेष विषय को अंत में, क्योंकि वह केवल मदों का संक्षिप्त रूप है। मदों को समाप्त करने के पश्चात् हम भिन्न-भिन्न पैरों पर वाद-विवाद कर सकते हैं। यदि हम मदों को पहले ले लें तो बहुत समय बच जायेगा। यदि हम पैरों को पहले लेते हैं तो जो कुछ इन दो दिनों में कहा जा चुका है, उसका ही दुहराना होगा।

***श्री एम॰एस॰ अणे:** अध्यक्ष महोदय, रिपोर्ट दो भागों में है। पहले भाग में वे सिद्धान्त दिये हुये हैं जिनके आधार पर दूसरे भाग में तीन सूचियां बनाई गई हैं। अब यदि हम उस बात को लें जिसका मेरे एक मित्र ने उल्लेख किया है कि प्रस्तावित कानून के समान, जब वह सभा में पेश किया जाता है इस पर विचार किया जाये तो इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि साधारणतया प्रस्तावित कानून का एक वह भाग होता है, जिसे प्रस्तावित कानून के उद्देश्य और लक्ष्य तथा कारण कहते हैं। इसके पश्चात् प्रस्तावित कानून होता है। प्रस्तावित कानून को पहले स्वीकार किया जाता है। अन्त में प्रस्तावित कानून के स्वीकृत हो जाने के पश्चात् हम उन उद्देश्यों तथा कारणों को स्वीकार करते हैं जो हमें केवल प्रस्तावित कानून को समझने संबंधी आधार प्रदान करता है, इससे अधिक और कुछ नहीं। हमें इस रिपोर्ट पर एक-एक वाक्यखंड लेकर विचार नहीं करना है। इसमें वे सामान्य सिद्धान्त दिये गये हैं जिनके आधार पर तीन सूचियां बनाई गई हैं। हमें इन दिये गये सिद्धान्तों के आधार पर इन सूचियों की परीक्षा करनी है। अतः उचित पद्धति यह होगी कि इन मदों पर पहले विचार किया जाये और उसके अंत में यदि हम मूल विषय पर विचार करते समय यह अनुभव करते हैं कि पैरों के सिद्धान्तों में कुछ परिवर्तन हो गया है तो रिपोर्ट के दूसरे भाग में हम वे परिवर्तन कर सकते हैं।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, मैं श्री अणे से पूर्णतया सहमत हूं कि यदि हम दृढ़ता से अनुसरण करें.......

***श्री बी॰ पोकर साहब बहादुर:** श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है। मैं यह जानना चाहूंगा कि केवल दूसरी रिपोर्ट अकेली या दूसरी रिपोर्ट पहली रिपोर्ट के साथ-साथ सभा के सामने विचारार्थ है।

***अध्यक्ष:** दूसरी रिपोर्ट विचारान्तर्गत है। पहली रिपोर्ट का बहुत-कुछ अंश इसमें शामिल है। यदि कोई अंतर है तो केवल यही कि यह दूसरी है जिस पर अब विचार करना है।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** यदि हम प्रस्तावित कानून की पद्धति का दृढ़ता से अनुसरण करें तो मैं श्री अणे से पूर्णतया सहमत हूं कि जो कुछ उन्होंने बताया है वही उचित मार्ग होगा। विशेष बात जो मैंने रखी वह इस कारण थी कि आपने अभी यह निर्देश किया था कि हमें रिपोर्ट पर भी एक-एक पैरा लेकर विचार करना है। हमने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये और इस स्वीकृति से ही सभा की रिपोर्ट को विचार के अंतर्गत लेने की यथेष्ट स्वीकृति समझी जाती है और हमें केवल सूची के मदों पर विचार करना है। आप संभवतया अन्त में व्यापक रूप से वाद-विवाद कर सकते हैं और जैसे आप चाहें वैसे निश्चय कर सकते हैं। अत: यदि आप यह आदेश देते हैं कि हम रिपोर्ट पर एक-एक पैरा लेकर विचार करें तब तो मैंने जिस पद्धति को सुझाया है उसे ग्रहण किया जा सकता है। और यदि आप यह समझें कि रिपोर्ट पर विचार हो चुका है तो उस रिपोर्ट के विवरणपूर्ण पैरों के लेने की कोई आवश्यकता नहीं है; हम केवल मदों को ले सकते हैं और उन पर विचार समाप्त कर सकते हैं।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से यह अच्छा होगा कि हम मदों को पहले ले लें। हम सूचियों के मदों को एक-एक करके लेंगे और जब वे समाप्त हो जायेंगे, यदि आवश्यकता होगी तो हम पैरों को ले लेंगे। सम्भव है इसकी आवश्यकता ही नहीं पड़े। हम इसे कल लेंगे। सभा अब स्थगित होती है।

तत्पश्चात् शुक्रवार ता॰ 22 अगस्त सन् 1947 ई॰ के प्रात: दस बजे तक परिषद् स्थगित हुई।

Con. 3.5.5.47
750

अंक 5
संख्या 5

शुक्रवार,
22 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1. सदस्यों द्वारा शपथ-ग्रहण 1

2. संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट 1

भारतीय विधान-परिषद्

शुक्रवार, 22 अगस्त, सन् 1947 ई०

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में दस बजे आरम्भ हुई। माननीय डा० राजेन्द्र प्रसाद अध्यक्ष थे।

सदस्यों द्वारा शपथ-ग्रहण

निम्न सदस्यों ने शपथ ली:

(1) श्री प्रफुल्ल चन्द्र सेन (पश्चिमी बंगाल: जनरल)।

(2) माननीय पंडित गोविन्द वल्लभ पंत (संयुक्त प्रान्त: जनरल)।

संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट

***अध्यक्ष:** अब हम संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट के परिशिष्ट की सूची 1 की मदों पर बहस जारी करेंगे। हम मद 1 को लेते हैं। सर रामास्वामी मुदालियर, सर वी०टी० कृष्णमाचार्य, श्री श्रीनिवासन और श्री वेंकटाचार्य के संशोधन की सूचना मिली हुई है।

मद 1

***सर वी०टी० कृष्णमाचारी** (जयपुर): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

मद 1 में ''उसके'' (देयरआफ) शब्द के बाद के सब शब्द रद्द कर दिये जायें।

मेरा कारण यह है कि ''साधारणत: (जनरली) से आरम्भ होने वाला शब्द-समूह अनावश्यक है। उसमें स्पष्टीकरण है। मेरा ख्याल है कि इन शब्दों को आस्ट्रेलियन हाईकोर्ट के किसी निर्णय से लिया गया है। मुझे विषयों की सूची में ये वर्णनात्मक शब्द जोड़ना अनावश्यक जान पड़ता है। यही कारण है कि हमने इस संशोधन की सूचना दी है। हमें शब्दों के सार पर कुछ भी आपत्ति नहीं है, किन्तु हमारे विचार में सूची में ऐसा वर्णनात्मक स्पष्टीकरण असंगत है।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[सर वी.टी. कृष्णमाचारी]

(सर्वश्री के॰ सन्तानम्, नजीरुद्दीन अहमद और टी॰ए॰ रामलिंगम चेट्टियर ने क्रमशः सूची 1 में संख्या 5, सूची 4 में संख्या 4 और सूची 1 संख्या 6 के अपने संशोधन उपस्थित नहीं किये।)

***अध्यक्षः** इस मद के और किसी संशोधन की सूचना मुझे नहीं मिली है। यदि कोई उपस्थित संशोधन पर बोलना चाहे तो बोल सकता है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम से जिस संशोधन की सूचना मिली है वह वैसा ही है जैसा अभी उपस्थित किया जा चुका है, यद्यपि उसके शब्द भिन्न हैं। मेरा निवेदन है कि संशोधन द्वारा जिन शब्दों को रद्द करने का प्रस्ताव किया गया है वे अनावश्यक हैं। मद 1 में ''रक्षा' शब्द पर्याप्त रूप से व्यापक है। वर्णन के लिये अधिक शब्दों की आवश्यकता नहीं है, जैसा कि सूची की अन्य अनेक मदों से स्पष्ट है–उन मदों से जो रिपोर्ट की सूची में हैं और उन मदों से भी जो भारतीय शासन-कानून से संबंधित सूची में हैं। मैं एक या दो उदाहरण दूंगा। मद 3 ''सेंट्रल इंटेलीजेंस ब्यूरो'', मद 6 ''रक्षा उद्योग'', मद 7 ''नौसैनिक, सैनिक तथा वायु सैनिक निर्माण-कार्य।'' ऐसी ही अन्य असंख्य मदें हैं। मदों से केवल नामों का ही उल्लेख किया गया है। ऐसे विषयों में अमल में आने वाले एक सुप्रसिद्ध सिद्धान्त के अनुसार उन्हें पूर्णरूप से प्रभावपूर्ण बनाने के लिये जिन अधिकारों की आवश्यकता है वे सबके सब इन शब्दों के अर्थ में निहित हैं। ये सारगर्भित शब्द हैं और इतने स्पष्ट हैं कि उनके स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं है। इन विषयों के लिये सभी आवश्यक बातें अप्रत्यक्ष रूप से मान ली गयी हैं। ऐसी परिस्थिति में फालतू शब्दों के निकाले जाने पर यह मद भी अन्य मदों के समकक्ष आ जायेगी। इसलिये फालतू बातों को निकालने और साथ ही समानता लाने के विचार से मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल): महोदय, इन सूचियों में आने वाली बातों का विस्तार से स्पष्टीकरण कोई असाधारण बात नहीं है। मैं परिषद् का ध्यान भारतीय शासन-कानून, 1935 की सूची 1 की मद 33 की ओर आकर्षित करना चाहता हूं। कारपोरेशन केन्द्रीय विषय माने गये हैं। इस संबंध में निम्न भाषा का प्रयोग किया गया है–''कारपोरेशन–व्यापारिक कारपोरेशनों का नियंत्रण तथा उनका

समाप्त किया जाना, जिसमें बैंक, बीमा कम्पनी तथा आर्थिक कारपोरेशन सम्मिलित हैं, किन्तु संघ में सम्मिलित होने वाली किसी रियासत द्वारा नियंत्रित अथवा उसके अपने कारपोरेशन सम्मिलित नहीं हैं''। कारपोरेशन से तात्पर्य क्या है इसका स्पष्टीकरण भली-भांति किया गया है।

जिन विभिन्न देशों में संघीय विषयों में ''रक्षा'' को सम्मिलित किया गया है उनमें इस मामले को अदालतों तक ले जाया गया है। मतभेद उत्पन्न हुये और अदालतों को ''रक्षा'' शब्द तक की व्याख्या करनी पड़ी। मेरे सामने एक मुकदमे की नजीर मौजूद है (आस्ट्रेलियन ब्रेड केस 21 सी॰एल॰आर॰ 433), जिसमें ग्रिफिथ सी॰जे॰ ने कहा कि ''रक्षा'' शब्द में उन सभी कार्यों को सम्मिलित किया जा सकता है, जो ब्रिटेन में पार्लियामेंट के अधिकार के अनुसार या राज्य के शाही विशेषाधिकार के अनुसार हुये हों। अन्य बातों के अतिरिक्त उसमें शान्ति के समय युद्ध की तैयारी को तथा ऐसे किसी भी कार्य को सम्मिलित किया जा सकता है, जिसे युद्ध करने और शत्रु को पराजित करने के लिये किया जाये। महोदय, यह स्पष्टीकरण या निर्णय अदालत में बहस के बाद हो पाया था। क्या हमें फिर इस पृष्ठपोषित मार्ग से चलना पड़ेगा? महोदय, मेरा ख्याल है कि यदि संशोधन के प्रस्तावक को कोई आपत्ति न हो तो इन मदों को सम्मिलित करने की अनुमति प्रदान कर दी जाये। आपत्ति केवल यही है कि इसकी भाषा सुन्दर नहीं है। परन्तु हम यहां साहित्य का सृजन नहीं कर रहे हैं। यह तो कानून है। इसमें विशिष्ट लक्ष्य की ही तरफ ध्यान रखा जाता है। जहां भी संदेह से बचना सम्भव हो वहां अवश्य बचना चाहिये।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रास: जनरल): जिन शब्दों के छोड़े जाने का सुझाव उपस्थित किया गया है उन्हें सम्मिलित करने के कारण पर प्रस्तावक महोदय ने प्रकाश डाला है और श्री अनन्तशयनम आयंगर ने भी उसका स्पष्टीकरण किया है। इस संबंध में और कुछ कहना मेरे लिये शेष नहीं रहा है। मेरे ख्याल में सब कुछ मिलाकर उत्तम तो यही है कि इस तरह के प्रश्न पर अदालतों को दूसरा मत स्थिर करने का अवसर ही न दिया जाये। जैसा कि हम सभी मानते हैं, इन शब्दों द्वारा जिस विचार को प्रकट किया गया है, उसके ''रक्षा'' शब्द के साथ समावेश करने की आवश्यकता है। इसलिये इन शब्दों को मद में रहने देना ही उत्तम होगा। यदि माननीय प्रस्तावक महोदय को आपत्ति न हो तो मैं उनसे यह संशोधन वापस लेने का अनुरोध करूं।

***अध्यक्ष:** प्रस्तावक अपना संशोधन वापस लेना चाहते हैं। क्या परिषद् उन्हें इसकी अनुमति देती है?

[अध्यक्ष]

परिषद् की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया और सूची 1 की मद 1 स्वीकार कर ली गई।

मद 2

***अध्यक्षः** सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के नाम से एक और संशोधन है।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, मैं मद 2 के निकाल दिये जाने का प्रस्ताव करता हूं। मेरा कारण यह है कि प्राप्त कर लेना दूसरे शब्दों में उस सम्पत्ति पर अस्थायी रूप से अधिकार कर लेना है। मद 43 में संघ के लिये सम्पत्ति पर अधिकार जमाने की व्यवस्था है और मद 2 में जो कुछ कहा गया है वह इसमें आ ही जाता है। मुझे इसमें अनावश्यक पुनरावृत्ति दिखायी देती है। इसीलिये मैं मद 2 के निकाले जाने का प्रस्ताव करता हूं। जहां तक युद्ध-काल का संबंध है, मद के द्वारा सम्पत्ति पर अधिकार करने के समस्त अधिकार दिये गये हैं।

***अध्यक्षः** कुछ अन्य संशोधन भी हैं। मेरा ख्याल है कि हम पहले इस पर विचार कर लें, क्योंकि संशोधन में समस्त मद को निकाल देने का प्रस्ताव किया गया है। ऐसे संशोधनों पर बाद में विचार किया जाये, जिनमें कुछ जोड़ने या घटाने के लिये कहा गया हो। क्या कोई इस संशोधन के संबंध में कुछ कहना चाहता है?

***श्री के॰एम॰ मुंशी** (बम्बईः जनरल): अध्यक्ष महोदय, यह संशोधन भ्रम पर आधारित है-यदि मैं ऐसा कह सकूं। सम्पत्ति पर कब्जा करने का अधिकार रक्षा संबंधी अधिकार में समाविष्ट माना गया है और इंग्लैंड में यह सम्राट का ही विशेषाधिकार है। भारत में यह प्रश्न पिछले महायुद्ध के दिनों में उस समय उठा जब केन्द्रीय सरकार ने सम्पत्ति पर कब्जा करने के अपने अधिकार का उपयोग किया और उन्हीं दिनों यह प्रश्न भी उठाया गया कि युद्ध के दिनों में सम्पत्ति पर कब्जा कर सकना रक्षा संबंधी अधिकार के अंतर्गत है और चूंकि रक्षा का विषय केन्द्रीय धारासभा के व्यवस्थापन क्षेत्र के बाहर है, इसलिये भारत रक्षा-कानून में सम्पत्ति पर कब्जा करने के अधिकार को सम्मिलित नहीं किया जा सकता। इसे हाईकोर्टों ने काफी अंश में मान भी लिया और तब पार्लियामेंट का हस्तक्षेप आवश्यक हो गया। इसलिये कहा जा सकता है कि संघ को मद 1 के अंतर्गत रक्षा का अधिकार मिला होने के कारण युद्ध-काल में वह चल तथा अचल सम्पत्ति पर अधिकार कर सकेगा, परन्तु शांतिकाल में और ऐसे समय जबकि युद्ध की

तैयारियां हो रही होंगी, सम्पत्ति पर कब्जा करने के अधिकार का प्रयोग रक्षा के अंतर्गत किया जा सकना संदिग्ध ही है। इस संबंध में संदेह का निराकरण करने के विचार से ही मद 2 को विशेष रूप से रखा गया है। जैसा कि मेरे मित्र श्री अनन्तशयनम् आयंगर बहस के आरम्भ में कह चुके हैं, इनमें से कुछ मदों के विषय में पहले ही असंख्य निर्णय हो चुके हैं और हम नहीं चाहते कि इस प्रश्न पर बार-बार मुकदमेबाजी हो, जिसमें मुकदमेबाज जनता तथा मेरे पेशे के सदस्यों को खुशी हो। इसलिये इस अधिकार का विशेष रूप से उल्लेख और उसमें ट्रेनिंग देने तथा जंगी अभ्यास का सम्मिलित किया जाना आवश्यक है, क्योंकि शान्ति के समय भी सम्पत्ति पर कब्जा करने के अधिकार के प्रयोग की आवश्यकता पड़ सकती है। यही इस मद का उद्देश्य है और मुझे विश्वास है कि मेरे माननीय मित्र सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य अपना संशोधन अवश्य वापस ले लेंगे।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी** (सिक्किम और कूचबिहार ग्रुप): अध्यक्ष महोदय, युद्धकाल में सम्पत्ति पर कब्जा कितने ही स्थानों में एक विशेष उपाय के रूप में किया जाता था। परन्तु उसके कारण कितने ही व्यक्तियों को बड़ी परेशानी उठानी पड़ती थी और बहुत से मामलों में अधिकार का दुरुपयोग भी किया जाता था। युद्धकाल में अधिकार के दुरुपयोग को सहा भी जा सकता था किन्तु अब यही अधिकार प्रत्येक स्थानीय 'हिटलर' को दिया जाने वाला है, जो उसका प्रयोग ऐसे हरएक आदमी के विरुद्ध करेगा, जिससे वह नाराज हो। महोदय, मेरा सुझाव है कि साधारणजन की सुरक्षा और स्वाधीनता के हित में इस मद को अस्वीकार कर दिया जाये।

***माननीय श्री हुसैन इमाम** (बिहार: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, रक्षा के लिये सम्पत्ति पर कब्जा कर सकना एक ऐसा अधिकार है, जो हमें संघ की स्थिरता तथा शक्ति बनाये रखने के लिये केन्द्र को देना ही चाहिये। परन्तु, पिछले वक्ता ने जो कुछ कहा है उसकी यथार्थता में भी कुछ संदेह नहीं है। जमीनों पर कब्जा कर लिया गया था और युद्ध समाप्त होने के दो वर्ष बाद भी कितनी ही सम्पत्ति पर सरकार का कब्जा है। निस्संदेह पिछली सरकार के जमाने में इसका बड़ा कुप्रबन्ध रहा। परन्तु पिछली सरकार के कुप्रबंध के कारण यह नहीं हो सकता कि हम अपने प्रतिनिधियों से समय आने पर उत्तम प्रबंध की आशा नहीं करें।

मैं यहां एक सुझाव करना चाहता हूं। रक्षा के लिये सम्पत्ति पर अधिकार करना आवश्यक होने के कारण उसे केन्द्रीय सूची में रखना ठीक है। मेरा सुझाव है कि सम्पत्ति पर कब्जा शांति-कालीन उद्देश्यों के लिये भी होना चाहिये। ऐसा समय आता है, जब शांतिकाल में भी भूमि पर कब्जा करना पड़ता है। अभी केन्द्रीय

[माननीय श्री हुसैन इमाम]

तथा प्रांतीय सरकारों को विभिन्न प्रदेशों के शरणार्थियों की समस्या का सामना करना पड़ रहा है। ऐसी समस्याओं का सामना करने के लिये सरकार को सम्पत्ति पर कब्जा करने का अधिकार होना चाहिये। इसलिए मैं मसविदा बनाने वालों से अनुरोध करूंगा कि वे ऐसी एक धारा उस सूची में भी जोड़ दें, जिसमें केन्द्र तथा प्रादेशिक इकाइयों को एक साथ अधिकार दिये गये हैं।

***श्री डी॰एच॰ चंद्रशेखरिया** (मैसूर)**:** अध्यक्ष महोदय, उपस्थित संशोधन बहुत ही तर्कसंगत है। श्री के॰एम॰ मुंशी ने संशोधन का विरोध किया है और यह नहीं बताया है कि सुझाव सम्मिलित करने का समर्थन क्यों किया जाये। उन्होंने एक ऐसे मामले का हवाला दिया, जो युद्ध-काल में हुआ था, किंतु उन्होंने किसी ऐसे मामले का हवाला नहीं दिया, जो शांति-काल में हुआ हो। जिस प्रकार कब्जा करने का यहां प्रस्ताव किया गया है उसमें संबंधित प्रांत या रियासत से पहले सलाह तक लेने की आवश्यकता महसूस नहीं की गई है। यहां तक कि 1935 के भारतीय शासन कानून में संघीय विषयों की सूची में इस विषय को सम्मिलित नहीं किया गया है। उस कानून के खंड 127 में कहा गया है कि संघ की तरफ से जब भी भूमि पर कब्जा किया जाये तो ऐसा कुछ शर्तों के साथ किया जाये और क्षतिपूर्ति के रूप में भी कुछ दिया जाये। परन्तु उपस्थित प्रस्ताव में सीधे भूमि पर अंधाधुंध कब्जा कर लेने का सुझाव किया गया है और यह व्यवस्था भी नहीं की गई है कि ऐसा करने से पहले संबंधित प्रादेशिक इकाई को इसकी सूचना दी जाये। इन सब कारणों से मैं परिषद् से प्रार्थना करता हूं कि वह सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य का संशोधन स्वीकार कर ले।

***श्री अनन्तशयनम् आयंगर:** महोदय, संशोधन के प्रस्तावक की आपत्ति इस मद के संबंध में यह नहीं है कि यह अनावश्यक या असुविधाजनक है, बल्कि उनकी आपत्ति तो यह है कि यह विषय बाद के एक नियम-सूची की मद 43-के अंतर्गत आ जाती है। यह मद है-''संघ के लिये सम्पत्ति पर कब्जा।'' उनके मत में यह मद अधिक व्यापक है और इसीलिये सूची में मद 2 को पृथक स्थान नहीं मिलना चाहिये। उनकी यही आपत्ति है। परन्तु मैं अनुभव करता हूं कि पृथक मद रखना आवश्यक है। सम्पत्ति पर रक्षा की दृष्टि से कब्जा करना उस पर संघ के साधारण कार्य के लिये कब्जा करने से भिन्न है। यदि पहली अवस्था में केवल भूमि पर कब्जा होता है तो दूसरी अवस्था में कब्जा प्रत्येक प्रकार की सम्पत्ति पर हो सकता है।

यदि सम्पत्ति पर किसी विशेष उद्देश्य से कब्जा होता है तो उस उद्देश्य की कोटि भी भिन्न होती है। कभी-कभी खतरनाक या हानिकर व्यापार करने के कारण भी सम्पत्ति पर अधिकार कर लिया जाता है और स्थानीय बोर्डों को ऐसा करने के लिये विशेष अधिकार दिये जाते हैं। इसलिए मैं कहता हूं कि रक्षा संबंधी तथा अन्य उद्देश्यों में भेद करना चाहिये। मद 43 में इसकी व्यवस्था करके परिषद् का ध्यान इसी भेद की ओर आकृष्ट किया गया है।

पिछले वक्ता ने कहा है कि 1935 में भारतीय शासन कानून के अंतर्गत प्रांतीय सरकारें क्षतिपूर्ति की रकमें देकर संघ के लिए सम्पत्ति पर अधिकार कर सकती हैं। मुझे विश्वास है कि यहां भी क्षतिपूर्ति की व्यवस्था अवश्य की जायेगी और किसी भी व्यक्ति की सम्पत्ति पर हर्जाना दिए बिना कब्जा न किया जायेगा। आधारभूत अधिकारों में कहा भी जा चुका है कि क्षतिपूर्ति की रकम के भुगतान के बिना किसी भी सम्पत्ति पर कब्जा नहीं किया जायेगा। इसलिए इस मद को सूची में रहने देना चाहिये।

*__श्री बी॰ पोकर साहब बहादुर__ (मद्रासः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, अब यह प्रायः स्वीकार कर लिया गया है कि इस मद का विषय संघीय सूची की मद 1 या मद 43 के अंतर्गत आता है। अब प्रश्न है कि मद 2 को रखा जाये या निकाल दिया जाये और बेकार होने पर भी क्या उसे रहने न दिया जाये? मेरा मत तो यह है कि मद 1 के अंतर्गत आ जाने के कारण इसे पृथक मद के रूप में रखने की आवश्यकता नहीं है। इसके अलावा, यदि इस मद को बने रहने दिया जाये तो यह समस्या उठ खड़ी होगी कि क्या मद 1 में उसकी कितनी ही बातें नहीं आ जातीं। यह तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि उसकी एक बात ही मद 2 के रूप में आती है, किंतु अन्य बातें मद 1 के अंतर्गत नहीं आतीं। इसलिए कहा जा सकता है कि मद 2 को पृथक मद के रूप में बनाये रखने की कुछ भी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वह मद 1 के अंतर्गत आ जाती है। इसलिए महोदय, मैं निवेदन करता हूं कि इसे रद्द कर दिया जाये।

*__श्री एस॰वी॰ कृष्णमूर्ति राव__ (मैसूर): महोदय, मेरा निवेदन है कि मद 2, मद 1 या मद 43 में से किसी के अंतर्गत नहीं आती है। भारत जैसे बड़ी सेना वाले देश को अपनी सेना उचित अवस्था में रखने के लिये उसे विभिन्न भौगोलिक अवस्थाओं तथा अनेक प्रकार की जलवायु में अभ्यास कराना पड़ेगा। इसके लिए सेना को देश के विविध भागों में तथा विभिन्न ऋतुओं में भूमि लेनी पड़ेगी।

[श्री एस.वी. कृष्णमूर्ति राव]

इसलिए केन्द्र के लिए यह अधिकार बहुत ही आवश्यक है, क्योंकि रक्षा एक केन्द्रीय विषय है। इसलिए मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं।

मि. तजम्मुल हुसैन (बिहार: मुस्लिम): मिस्टर प्रेसीडेंट, नम्बर दो यह है कि सेंट्रल लेजिस्लेचर को जिस वक्त अपने को बचाने यानी डिफेन्स आफ पावर की जरूरत हो वह इंडियन यूनियन में जहां पर चाहे, जमीन ले सकती है, या रेक्यूजीशन कर सकती है। इसके ऊपर मेरे लायक दोस्त की तरफ से एक अमेंडमेंट पेश हुआ है कि यह आइटम हटा दिया जाये। मिस्टर प्रेसीडेंट, मेरी अक्ले-नाकिस में यह बात नहीं आई कि ऐसा अमेंडमेंट क्यों पेश हुआ? अगर किसी वक्त में इंडिया पर धावा या इन्वेजन हो जाये और इंडिया की जरूरत हो या मसलन इंडिया में ट्रावनकोर पर धावा बोला जाये जिसने इंडियन यूनियन ज्वाइन कर लिया है और जरूरत है कि वहां पर बेस बनाया जाये तो ऐसी हालत में क्या हम अपने सेंट्रल लेजिस्लेचर को पावर न देंगे कि वहां जमीन एक्वायर करें? मुझको सख्त ताज्जुब है कि ऐसा अमेंडमेंट क्यों पेश हुआ। मेरे ख्याल में जरूर सेंट्रल लेजिस्लेचर को यह पावर दिये जायें कि जहां पर वह चाहे मनूवर के लिये जमीन रिक्यूजीशन कर सकती है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मैं मद 2 की भावना का–कि केन्द्र के हाथ में अपने उद्देश्य-पूर्ति के लिए अधिकार रहें–समर्थन करता हूं, किंतु मैं निवेदन करना चाहता हूं कि यह धारा अनावश्यक है। यह मद 1 में भली-भांति आ गया है। भूमि पर बाकायदा अधिकार जमा लेने और कुछ समय के लिए उसे प्राप्त करने में बहुत अंतर है। इसलिए मेरे विचार से मद 2 मद 43 के अंतर्गत नहीं आती, किंतु वह मद 1 के अंतर्गत अवश्य आ जाती है। जब एक बार हम अधिकार का विस्तार करने लगते हैं तो यह विस्तार अधिकाधिक होने लगता है। कुछ ऐसी बातें होती हैं, जो केवल चुने हुए शब्दों से ही प्रकट की जा सकती हैं। इसलिए यदि हम इस अधिकार की व्याख्या करते हैं तो हमें और भी कितने ही सहायक अधिकारों की व्याख्या करनी पड़ती है। इससे एक कुचक्र चल पड़ता है। रक्षा में शांति-काल की व्यवस्था भी आ जाती है। यदि इसमें कोई संदेह है तो वह मद 15 से दूर हो जायेगा। इन सभी कारणों से मैं निवेदन करता हूं कि मद 2 व्यर्थ तथा अनावश्यक है और उसे अस्वीकार कर देना चाहिये।

***माननीय श्री एन० गोपालस्वामी आयंगर:** महोदय, मेरी धारणा है कि परिषद् ने यह सिद्धान्त स्वीकार कर लिया है कि संघ की धारासभा को रक्षा के लिये भूमि प्राप्त करने के संबंध में कानून बनाने का अधिकार होना चाहिये। संशोधन के पक्ष में जो कुछ कहा गया है वह यही है कि यह अधिकार मद 43 या मद 1 के अंतर्गत पहले ही प्राप्त है। जैसा कि परिषद् जानती है, मद 43 का संबंध संघ के लिये भूमि पर अधिकार करने से है और उसे यह भी पता है कि भारत-रक्षा कानून के एक ऐसे खंड की व्याख्या करते हुये, जिसका संबंध भूमि को प्राप्त कर लेने से था, कतिपय हाईकोर्टों ने मत ग्रहण किया था कि प्राप्त करना अधिकार करने के अंतर्गत नहीं आता। ऐसी अवस्था में जिन सम्पत्तियों को 3 वर्ष के सीमित काल के लिये प्राप्त कर लिया गया था उनके संबंध में कार्रवाई करने का कानूनी अधिकार केन्द्र को प्रदान करने के लिये उचित उपाय करना आवश्यक था–विशेषकर ऐसी अवस्था में जबकि युद्ध समाप्त हो चुका था। परन्तु यहां तो हम एक ऐसे विधान पर सोच-विचार कर रहे हैं, जो स्थायी होगा। महोदय, यह तो माना ही जायेगा कि भूमि प्राप्त करने की आवश्यकता युद्ध अथवा अन्यथा विशेष काल में ही रक्षा-कार्यों के लिये पड़ेगी, जिनमें सैनिकों का शिक्षण तथा अभ्यास दोनों ही सम्मिलित हैं। हमें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि जब ऐसा करने की आवश्यकता पड़े तो संघ की धारा-सभा को ऐसा कानून बना सकने का अधिकार रहे। यदि मद 1 से अधिकार प्राप्त किया गया है–मैं पहले ही कह चुका हूं कि मद 43 से अधिकार प्राप्त करने के संबंध में संदेह प्रकट किया जा चुका है–तो मद 2 बिल्कुल अनावश्यक हो सकती है, परन्तु हमारे सामने यह तथ्य मौजूद है कि ऐसी कितनी ही मदें, जिनका विस्तार से उल्लेख किया गया है, मद 1 के अंतर्गत लायी जा सकती थीं फिर भी सूची में उन्हें विस्तार से दिया गया है। प्रश्न उठता है कि जब आपने इतनी मदों को स्वीकार कर लिया है तो उनमें भूमि प्राप्त करने की मद जोड़ देने में क्या हानि है–यह मद कि रक्षा के साधारण अधिकार के अंतर्गत भूमि प्राप्त करने की बात भी सम्मिलित कर ली जाये। संघ के विषयों की सूची में यह अधिकार भी रहेगा। शान्ति के समय में इस अधिकार का प्रयोग किया जाये या नहीं और भूमि प्राप्त करने के संबंध में कानून बनाया जाये या नहीं–यह बात हमें संघ की भावी धारा-सभा पर छोड़ देनी चाहिये। यह हो सकता है कि सम्पत्ति प्राप्त कर लेने का जो कानून बनाया जाये उसमें कुछ ऐसी शर्तें रख दी जायें, जिनके कारण सम्पत्ति को अनावश्यक रूप से प्राप्त न किया जा सके। परन्तु इस कारण कि कुछ अवस्थाओं में सम्पत्ति प्राप्त करना अनावश्यक होगा–यह नहीं कहा जा सकता कि इस मद को सूची से बिल्कुल ही निकाल दिया जाये। एक और भी बात की चर्चा मैं

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

करना चाहता हूं। यह मानते हुये कि विरोधी मत ही ग्रहण किया जाये और यह माना जाये कि भूमि को प्राप्त करने की बात इस सूची की मद 1 के अंतर्गत नहीं आती तो स्थिति क्या होगी? स्थिति यह होगी कि यह मद तीनों सूचियों में से किसी में नहीं होगी और इसलिये वह एक अवशिष्ट मद हो जायेगी और इस मद के अनुसार कार्रवाई करने का अधिकार केन्द्र को प्राप्त होगा। मैं इस स्थिति को भली-भांति समझता हूं कि अवशिष्ट अधिकारों की मात्रा तथा प्रान्तों व केन्द्र के मध्य अधिकारों के विभाजन के संबंध में हमारे द्वारा किये भेद के कारण यदि यह मद अवशिष्ट मद हो जाती है तो जहां तक रियासतों का संबंध होगा वे अपने यहां इस मद के संबंध में कानून बनाने के अधिकार का दावा कर सकती हैं। किन्तु रियासतों के प्रतिनिधियों ने जो संशोधन उपस्थित किया है आखिर उसका क्या प्रभाव होगा? यदि मद हटा ली जाती है तो संघ के लिये कुछ परिस्थितियों और कतिपय संकटों के समय इस अधिकार की आवश्यकता पड़ेगी। तब हम अपने सभी तर्कों द्वारा केन्द्र की तरफ से यह सिद्ध करने की चेष्टा करेंगे कि रक्षा के साधारण अधिकार के अंतर्गत सम्पत्ति प्राप्त करना आवश्यक है और इसलिये हमें इस संबंध में कानून बनाना ही पड़ेगा। इसलिये विचारधारा का झुकाव इस मद को संघ की सूची में बने रखने के पक्ष में है और जब भी कभी इस मद के अनुसार कोई कानून बनाया जाये तो इस बात का खास तौर पर ध्यान रखा जाये कि इस अधिकार का अनावश्यक रूप से प्रयोग न किया जाये। इसलिये मैं अनुरोध करता हूं कि इस संशोधन को स्वीकार करने के लिये जोर न दिया जाये।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारी:** इस संशोधन में मुख्य बात यह कही गयी है कि युद्धकाल में सम्पत्ति प्राप्त करने के जितने भी अधिकार की आवश्यकता हो वह अवश्य दिया जाये और मद 1 के अंतर्गत दिया भी गया है। परन्तु सार्वजनिक हित की दृष्टि से यह आवश्यक है कि शान्ति के समय भूमि-प्राप्ति कानून के अंतर्गत ही इस अधिकार का उपयोग किया जाये। यह तो सार्वजनिक नीति का प्रश्न है कि हम शान्ति के समय सम्पत्ति प्राप्त करने के अधिकार का प्रयोग चाहते हैं या नहीं? इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि शांतिकाल में यदि सैनिकों की ट्रेनिंग या अभ्यास के लिये भूमि की आवश्यकता हुई तो भूमि प्राप्त करने की साधारण विधि से काम लेना चाहिये।

***मि॰ तजम्मुल हुसैन:** महोदय, मुझे एक नियम संबंधी आपत्ति है। क्या प्रस्तावक द्वारा उत्तर देने के उपरान्त कोई भाषण हो सकता है? किसी को उत्तर देने का अधिकार नहीं है। महोदय, मैं आपका निर्णय चाहता हूं।

*__अध्यक्षः__ मेरा ख्याल था कि श्री वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य संशोधन वापस ले रहे हैं। इसी कारण उन्हें बोलने की अनुमति दी गयी थी।

*__सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारीः__ महोदय, मैं संशोधन स्वीकार किये जाने पर अधिक जोर नहीं देना चाहता।

*__अध्यक्षः__ मेरा अनुमान ठीक ही था। वे संशोधन स्वीकार किये जाने पर अधिक जोर नहीं देना चाहते।

*__मि. तजम्मुल हुसैनः__ तब मैं अपनी आपत्ति वापस लेता हूं।

*__अध्यक्षः__ संशोधन वापस ले लिया गया। मेरा ख्याल है कि परिषद् उन्हें ऐसा करने की अनुमति देती है।

संशोधन परिषद् की अनुमति से वापस ले लिया गया।

*__अध्यक्षः__ कुछ अन्य संशोधन भी हैं, जिनकी सूचना दी गयी है।

(सर्वश्री के॰ संतानम्, मोहनलाल सक्सेना, अनन्तशयनम् आयंगर और एन॰ माधव राव ने अपने संशोधन उपस्थित नहीं किये।)

*__अध्यक्षः__ मेरे विचार में और कोई संशोधन शेष नहीं है। अब मैं मूल मद पर मत लेता हूं।

मद 2 स्वीकार कर ली गयी।

मद 3

*__अध्यक्षः__ अब हम मद 3 को लेते हैं। मेरे ख्याल में मद 3 का कोई संशोधन नहीं है।

*__श्री के॰ सन्तानम्__ (मद्रासः जनरल): महोदय, मैं मद 3 के संबंध में कुछ कहना चाहता हूं। 'सेंट्रल इंटेलीजैंस ब्यूरो' उपयुक्त विषय नहीं है। 'सेंट्रल इंटेलीजैंस' विषय होना चाहिये। व्यवस्थापन अधिकार ब्यूरो तक ही क्यों सीमित रहे? मुझे क्षेत्र को सीमित करने की कोई आवश्यकता नहीं जान पड़ती। मैं सुझाव उपस्थित करना चाहता हूं कि अंतिम शब्द छोड़ दिया जाये तो ''सेंट्रल इंटेलीजेंस'' उपयुक्त विषय हो सकता है।

*__अध्यक्षः__ श्री गोपालस्वामी आयंगर, यह सुझाव उचित जान पड़ता है।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** मसविदे पर विचार करते समय हम इसका ध्यान रखेंगे।

***अध्यक्ष:** तब मैं मद 3 पर मत लेता हूं।

मद 3 स्वीकार कर ली गयी।

मद 4

***अध्यक्ष:** अब हम मद 4 पर विचार आरम्भ करते हैं।

(सर्वश्री के॰ सन्तानम्, एच॰वी॰ पातस्कर और नजीरुद्दीन अहमद ने अपने नाम के संशोधन वापस ले लिये।)

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** महोदय मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

मद 4 के स्थान पर निम्न शब्द रखे दिये जायें:

''रक्षा तथा परराष्ट्र विषय संबंधी राज्य के कारणों के लिये किसी प्रान्त में नजरबंदी।'' 1935 के भारतीय शासन कानून की सूची 1 में जो मद 1 का अंश है अब वही मद 4 है। कानून में मद इस प्रकार है-''रक्षा या परराष्ट्र संबंधी राज्य के कारणों के लिये या भारतीय रियासतों से संबंध रखने वाली सम्राट की जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिये ब्रिटिश भारत में नजरबंदी।'' महोदय, यह स्पष्ट है कि इस मद का संबंध केवल ब्रिटिश भारतीय प्रान्तों से है, संघ में सम्मिलित होने वाली रियासतों से नहीं। कारण यह है कि यदि किसी को कोई कार्य करने से रोकने के लिये नजरबंद करने का अधिकार रियासतों के क्षेत्र में केवल संघ-सरकार को रहे तो रियासतें संकटकाल उपस्थित होने पर स्वयं कोई निवारक कार्रवाई तुरन्त करने में असमर्थ रहेगी। प्रस्तुत मद के द्वारा संघ के सभी प्रदेशों तक इस अधिकार के विस्तार का प्रयत्न किया गया है और इस हद तक रियासतों की स्थिति अनावश्यक रूप से कठिन हो जाती है और उनकी शासन-व्यवस्था में अनावश्यक रूप से हस्तक्षेप होता है।

महोदय, एक अन्य जिस आवश्यक बात की तरफ मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं वह यह है कि इस मद में उन परिस्थितियों को अस्पष्ट रूप से प्रकट किया गया है जिनमें नजरबंदी का आदेश दिया जा सकता है। परिस्थितियों का सार ''राज्य के कारणों के लिये'' शब्दों में दिया गया है। परन्तु इसमें प्राय: संसार की किसी भी बात को सम्मिलित किया जा सकता है। मेरा सुझाव है कि रियासत के किस कारण से नजरबंदी उचित समझी जायेगी। इसलिये मैंने सुझाव

किया है कि इस प्रकार की नजरबंदी का आदेश केवल रक्षा या परराष्ट्र विषयों के संबंध में ही दिया जाये, अन्य विषयों के संबंध में नहीं, क्योंकि संघ-सरकार की अधीनता में आने वाले ये अन्य विषय बहुत से होंगे।

कल हमें सूचित किया गया था कि वर्तमान रिपोर्ट की सूची 1 भारतीय शासन-कानून, 1935 में संघ की व्यवस्थापन सूची के ही समान है। वस्तुस्थिति यह है कि यद्यपि यह विशिष्ट मद सूची में नहीं है किन्तु रियासतों और रियासती प्रजा के लिये हानिकर बताते हुये उसमें संशोधन कर दिया गया है, क्योंकि उसकी शाखायें असीम क्षेत्र में फैल गयी हैं। महोदय, मुझे आशा है कि रिपोर्ट के रचयिता इस विशिष्ट मद पर पुनर्विचार करेंगे और मेरे सुझाव को ध्यान में रखते हुये उसमें संशोधन करेंगे।

श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय (ग्वालियर): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, अभी जिन मित्रों ने यह पेश किया है कि यह अमेंडमेंट हटा दिया जाये, मैं इसका विरोध करने के लिये खड़ा हुआ हूं। कारण यह है कि उन्होंने यह दलील दी है कि यह रियासतों के हक में ठीक नहीं है। मेरे ख्याल में यह दलील गलत है। क्योंकि हम एक फेडरेशन बनाने जा रहे हैं और रियासतों का भी उतना ही कर्तव्य है कि स्टेट की रक्षा हो। जब हम एक संयुक्त शासन-व्यवस्था कायम करने जा रहे हैं, मजबूत स्टेट बनाने जा रहे हैं तो क्या वह चाहते हैं कि स्टेट के खिलाफ जो अपराध करने वाले हैं वह रियासतों में रहें और कानून से बचे रहें? तो जो-जो देशद्रोह या राजद्रोह करने वाले हैं चाहे वह प्रान्तों में हों या रियासतों में उन सबको रोकना होगा और सब जगह एक ही कानून होना चाहिये।

मैं एक रियासत की तरफ से आया हूं और मैं कहता हूं कि हम अधिकार बड़ी खुशी से फेडरेशन को देते हैं और हमको देना चाहिये। यह आइटम जरूर होना चाहिये।

***सर बी॰एल॰ मित्तर** (बड़ोदा): अध्यक्ष महोदय, मैं श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी द्वारा उपस्थित संशोधन का विरोध करता हूं। उन्होंने अपने संशोधन के समर्थन में जो कारण दिये हैं उनमें रियासतों को शेष भारत से पृथक करने की प्रवृत्ति दिखायी देती है। मद है: ''संघ की भूमि में राज्य के कारणों से नजरबंदी।'' यदि रियासतें भारत के स्वाधीन उपनिवेश की अंग हैं तो जिन कारणों से प्रेरित होकर भारत सरकार को कार्रवाई करने की आवश्यकता पड़ सकती है वे शेष भारत की तरह रियासतों पर भी समान रूप से लागू हो सकते हैं। राज्य तब तक कोई कार्रवाई नहीं करता जब तक वह सम्पूर्ण उपनिवेश के हित में न हो। इस हालत में जबकि

[सर बी.एल. मित्तर]

ऐसी कार्रवाई के संबंध में विचार किया जा रहा हो जो सम्पूर्ण उपनिवेश के हित में आवश्यक मानी गयी हो, तो रियासतों तथा शेष भारत के मध्य कोई भेद क्यों किया जाये? मान लीजिये कि किसी रियासत में कोई गड़बड़ होने वाली है और सम्पूर्ण उपनिवेश के हित में उस व्यक्ति की नजरबंदी आवश्यक है और यदि केन्द्रीय धारासभा को ऐसी कार्रवाइयों को रोकने का अधिकार नहीं है तो नजरबंदी का उद्देश्य सिद्ध नहीं होगा। मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** अध्यक्ष महोदय, मैं निवेदन करना चाहता हूं कि मैं हृदय से चाहता हूं कि रियासतें पूर्ण रूप से संघ में सम्मिलित हो जायें ताकि उनके प्रति ठीक प्रान्तों की ही तरह व्यवहार हो सके। इस उद्देश्य के अतिरिक्त हमें कानूनी तथा वैधानिक रूप से व्यवहार करना चाहिये। मेरा विचार है कि रियासतें तीन व्यापक विषयों-रक्षा, परराष्ट्र संबंध और यातायात-की दृष्टि से संघ में सम्मिलित हुई हैं। श्री आयंगर ने परिषद को सूचित किया है कि रियासतों के प्रवेशपत्र में लगभग 18 या 20 मदें हैं और इन मदों के संबंध में ही वे संघ में सम्मिलित हुई हैं। मेरा निवेदन है कि वैधानिक दृष्टि से संघ का रियासतों पर प्रभुत्व उन विषयों के संबंध में ही होना चाहिये, जिनके विषय में उन्होंने संघ में सम्मिलित होना स्वीकार किया है। इसके आगे रियासतों में अधिकार-क्षेत्र का विस्तार अनुचित ही नहीं असंभव भी होगा। जैसा कि मैं निवेदन कर चुका हूं, रियासतों को पूरी तरह सम्मिलित करना चाहिये, किन्तु यह सिर्फ बातचीत द्वारा और स्वेच्छापूर्वक ही किया जाये। रियासतों को संघ में एक-दूसरे की स्थिति को समझते हुये, पारस्परिक हितों का विचार करते हुये और सम्पूर्ण भारत की सुरक्षा और कल्याण के लिये पारस्परिक निर्भरता को ध्यान में रखते हुये ही सम्मिलित किया जाये। इसलिये मैं मद 4 के सब परिणामों को ध्यान में रखते हुये उसे स्वीकार करने में कठिनाई का अनुभव कर रहा हूं। इसलिये मैं वैधानिक विशेषज्ञों से, जिनकी संख्या परिषद में कम नहीं है, अनुरोध करना चाहता हूं कि वे तटस्थ होकर वैधानिक दृष्टिकोण से इस प्रश्न पर विचार करें और उस पर अपना निर्णय देने की कृपा करें। कहा गया है कि यदि किसी रियासत में कहीं गड़बड़ हो तो संघ को उसका सामना करने के लिये पर्याप्त अधिकार होना चाहिये। किन्तु मेरा ख्याल है कि इससे वे शर्तें भंग होती हैं, जिनके आधार पर रियासतें संघ में सम्मिलित हुई हैं। यदि कार्रवाई रक्षा अथवा किसी ऐसे विषय के संबंध में की जाती हैं, जिनके संबंध में रियासतें संघ में सम्मिलित हुई हैं तो कोई कठिनाई

नहीं होनी चाहिये। परन्तु उस तरह कार्रवाई करना, जैसा सुझाया गया है, उचित चाहे जितना हो–वह होगा हमारे वैधानिक अधिकार के परे और वैधानिक सौजन्य के विरुद्ध ही। इसलिये मैं रिपोर्ट उपस्थित करने वाले माननीय सदस्य से इस पर गौर करने का अनुरोध करूंगा और मुझे विश्वास है कि परिषद् उस पर समुचित रूप से विचार करेगी।

इस मद के संबंध में जो अन्य कठिनाई मैंने अनुभव की है, वह बहुत छोटी सी है। यह इस मद के शब्द 'राज्य' (स्टेट) के संबंध में है। मद भारतीय शासन कानून की सूची 1 की मद 1 से ली गयी है और यह शब्द भी भारतीय शासन कानून से वैसे का वैसा ही ले लिया गया है। परन्तु इस रिपोर्ट में 'राज्य' शब्द का प्रयोग दूसरे और भिन्न अर्थ में भी किया गया है अर्थात् रियासत के अर्थ में और इस अवस्था में कुछ भ्रम उत्पन्न हो सकता है। कम से कम एक ही विशिष्ट शब्द का दो भिन्न अर्थों में प्रयोग अवांछनीय है और उससे बचना चाहिये। भले ही इसके परिणामस्वरूप कोई भ्रम न भी उत्पन्न हो, किन्तु मेरा सुझाव यह है कि मसविदा-समिति को किसी दूसरे उपयुक्त शब्द का चुनाव करना चाहिये ताकि राज्य शब्द के उस अर्थ से भ्रम न हो, जैसा कि वह रियासत में समझा जाता है। इसलिये मेरा विचार है कि सब कुछ मिलाकर इस मद पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाये और सुविधा के स्थान पर न्याय और साधारण बुद्धि का ध्यान रखा जाये।

***माननीय श्री हुसैन इमामः** अध्यक्ष महोदय, मैं संशोधन का विरोध करता हूं, क्योंकि इसके द्वारा संघ की विभिन्न प्रादेशिक इकाइयों के मध्य यह भेदभाव किया गया है कि संघ का अधिकार प्रान्तों में तो रहे किन्तु रियासतों में नहीं। इस प्रस्ताव से मैं कभी सहमत नहीं हो सकता, किन्तु मुझे आशंका है कि यह मद स्वयं उन आधारभूत अधिकारों के विरुद्ध है, जिन्हें प्राप्त करने की हमें आशा है। नजरबंदी का अर्थ यही है कि किसी व्यक्ति को मुकदमा चलाये बिना रोक रखा जाये। यदि आप किसी व्यक्ति पर मुकदमा चलाते हैं तो यह साधारण कानून के अंतर्गत आता है। इसके लिये किसी विशिष्ट कार्रवाई की आवश्यकता नहीं पड़ती। मुझे तो जान पड़ता है कि हम 1818 के रेगुलेशन 3 तथा ऐसे ही अन्य प्रतिबंधों को पुनरुज्जीवित करना चाहते हैं। निस्संदेह आधुनिक प्रजातंत्र में ऐसे अधिकार दिये जाते हैं, परन्तु वे उसी हालत में दिये जाते हैं जब देश की शान्ति और व्यवस्था के लिये संकट उत्पन्न हो गया हो। साधारण काल में इस प्रकार के अधिकार का दुरुपयोग किया जाता है। मानव-प्रकृति की विशेषताओं का ध्यान रखते हुये

[माननीय श्री हुसैन इमाम]

हमें कोई न कोई ऐसा उपाय निकालना चाहिये, जिससे अधिकार का दुरुपयोग होने से रोका जा सके। अधिकार के साथ ही मद होता है और यह कल्पना करना कठिन है कि शान्ति के समय अधिकार का दुरुपयोग नहीं किया जायेगा। इसलिये मैं इसके रद्द किये जाने के स्थान पर इसके स्पष्टीकरण का सुझाव उपस्थित करता हूं जिससे इसके दुरुपयोग से बचने के लिये काफी सावधानी से काम लिया जा सके।

*__श्री लक्ष्मीकान्त मैत्र__ (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, यह मद संख्या 4 ''संघ के प्रदेशों में राज्य के कारणों से नजरबंदी'' बहुत ही महत्वपूर्ण है और इसमें एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण सिद्धान्त निहित है। अभी हाल मेरे माननीय मित्र मि० हुसैन इमाम ने जो भाषण दिया है उसे मैंने बड़े ध्यानपूर्वक सुना है। मैं उनसे कह सकता हूं कि मैं उन लोगों में से हूं, जो पहले किसी भी रूप में नजरबंदी का विरोध करते रहे हैं। मि० हुसैन इमाम की आशंका ठीक ही है कि इस नियम का दुरुपयोग हो सकता है और इसे अत्याचार का एक साधन बनाया जा सकता है। क्या मैं उन्हें सूचित कर सकता हूं कि अब परिस्थिति बिल्कुल बदल गयी है। हमें अनुभव करना चाहिये कि हम एक नये राज्य की स्थापना कर रहे हैं जो बिल्कुल स्वतंत्र होगा और उसकी केन्द्रीय सरकार के हाथ में ऐसे अधिकार अवश्य रहने चाहिये, जिनका उपयोग साधारण कारणों से नहीं बल्कि राज्य के कारणों से किया जा सके। उपस्थित संशोधन द्वारा मद 4 द्वारा दिये जाने वाले अधिकारों का क्षेत्र सीमित करने की चेष्टा की गयी है।

मि० हुसैन इमाम ने 1818 के प्रतिबंध 3 की चर्चा की है। मुझे विश्वास है कि वे इस बात का अनुभव करेंगे कि जब अंग्रेज इस देश में पहले पहल आये थे और अपने शासन में स्थिरता लाने के लिये उत्सुक थे तो उन्हें अपने राज्य की प्रारंभिक अवस्था में कोई-न-कोई ऐसी कानूनी व्यवस्था करने की आवश्यकता महसूस हुई, जिससे शरारतियों को राज्य के प्रति गड़बड़ करने से रोका जा सके, इसलिये इस देश में ब्रिटिश शासन की प्रारंभिक अवस्था में अंग्रेजों के दृष्टिकोण से यह आवश्यक समझा गया कि 1818 के प्रतिबंध के समान किसी उपाय द्वारा शरारतियों का मुकाबला करने के लिये सरकार को अधिकार दिया जाये। अब प्रश्न यह है कि उन्हें नये विधान के अनुसार स्थापित संघ-सरकार से अधिकार के दुरुपयोग की आशंका क्यों है? मैं जानता हूं कि मनुष्य द्वारा स्थापित कोई भी व्यवस्था पूर्ण नहीं है। परन्तु आपको केन्द्रीय सरकार को कुछ ऐसे अधिकार देने

ही पड़ेंगे, जिनका विशेष अवसर पर राज्य के हित के लिये प्रयोग किया जा सके। जैसी कि मेरे माननीय मित्र को आशंका है, यदि अधिकार का दुरुपयोग हुआ, क्योंकि ब्रिटिश शासन-काल में बाद में जाकर 1818 के रेगुलेशन का काफी दुरुपयोग हुआ–मैं ऐसे बहुत से आदमियों को जानता हूं जिन्हें इस रेगुलेशन के अंतर्गत देश निकाला दिया गया और नागरिक स्वतंत्रता का अपहरण किया गया–तो हमें स्मरण रखना चाहिये कि अब हमारा अपना राज्य है, हमारी अपनी सरकार है, जो जनता द्वारा चुनी हुई है और जनता द्वारा निर्वाचित राष्ट्रपति भी है और इतना ही नहीं, हमें यह भी भूल न जाना चाहिये कि मौलिक अधिकारों में हमें कैद के छुटकारे का भी लाभ प्राप्त है। अब नागरिक स्वाधीनता के निर्ममता तथा असावधानी से कुचले जाने की आशंका नहीं है, जैसा कि अब तक ब्रिटिश शासन में होता रहा है। उदाहरण के लिये, मान लीजिये यदि संघ के किसी भाग में, जो प्रान्त नहीं बल्कि रियासत है, सरकार को कुछ व्यक्तियों द्वारा गड़बड़ मचाये जाने की संभावना की विश्वसनीय सूचना मिलती है–ऐसी गड़बड़ जिससे सम्पूर्ण राज्य को हानि ही नहीं पहुंच सकती बल्कि उसकी शांति के लिये संकट भी उपस्थित हो सकता है, तो क्या सरकार को इस विषय में केवल इसीलिये चुपचाप बैठे रहना चाहिये कि उस व्यक्ति ने अभी तक ऐसा कार्य नहीं किया है, जिससे वह कानून के चंगुल में आ सके? स्वयं राज्य के भीतर या उसके किसी भाग में ऐसे गुप्तचर हो सकते हैं, जिन्हें किसी विदेशी सरकार से रुपया मिल रहा हो अथवा उन्हें भारत में ही किसी प्रतिस्पर्द्धी राज्य से धन मिल रहा हो। इसलिये वर्तमान परिस्थिति में, जब हमारी भौगोलिक सीमाओं के भीतर एक अन्य स्वाधीन राज्य है, यह और भी आवश्यक है कि हमारी संघ-सरकार को जरूरत पड़ने पर उपयोग के लिये यह अधिकार दिया जाये। यह भी संभव है कि एक रियासत में दूसरी के विरुद्ध षडयंत्र चल रहा हो, किन्तु इसे किसी प्रत्यक्ष कार्य द्वारा सिद्ध न किया जा सकता हो। ऐसी हालत में उस रियासत को किसी प्रकार कानून के चंगुल में नहीं फंसाया जा सकता। यदि भारत सरकार को विश्वस्त सूचना मिल चुकी है कि ऐसे कार्यों से भारतीय राज्य के दो विभिन्न भागों की शांति भंग हो सकती है तो निश्चय ही केन्द्रीय सरकार को इसमें हस्तक्षेप करके शरारत रोकने का अधिकार होना चाहिये।

इसलिये यहां समस्या नागरिक स्वतंत्रता की न होकर राज्य के लिये महत्त्वपूर्ण कारणों की है और निश्चय ही राज्य के लिये महत्त्वपूर्ण कारण ही सर्वोपरि होते हैं। इसलिये मैं संशोधन का विरोध और मद 4 के संघीय विषयों की सूची में जोड़े जाने के मूल प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

***मि॰ तजम्मुल हुसैनः** अध्यक्ष महोदय, मैं मद 4 का समर्थन करता हूं और संशोधन का विरोध करता हूं। महोदय, मेरे मत में केन्द्रीय धारासभा को राजकीय कारणों से किसी व्यक्ति अथवा व्यक्ति-समूह को नजरबंद करने का अधिकार होना चाहिये। महोदय, मान लीजिये कि कुछ व्यक्तियों का किसी विदेशी शक्ति से यह षडयंत्र चल रहा है कि वह विदेशी शक्ति भारत पर आक्रमण करे तो ऐसी हालत में हमें क्या करना चाहिये? ऐसी अवस्था में केन्द्रीय धारासभा को उन व्यक्तियों को नजरबंद करने तथा उन्हें अधिक शरारत से रोकने का अधिकार होना चाहिये और ऐसे मामले में खुली अदालत में कोई मामला भी न चलना चाहिये। खुली अदालती कार्रवाई में क्या होगा? राज्य की कितनी ही गुप्त बातें, जिनमें भारतीय रक्षा-व्यवस्था की कितनी ही कमजोरियां भी सम्मिलित होंगी, जाहिर हो सकती हैं। शत्रु को पता लग सकता है कि हमारा कौन स्थल कमजोर है। महोदय, कानून के दावपेंच आप जानते ही हैं। अभियुक्त अपराधी होने पर भी बरी हो सकते हैं। महोदय, इन थोड़े शब्दों द्वारा मैं समर्थन करता हूं कि मद 4 अपने मूल रूप में बनी रहे और संशोधन का विरोध किया जाये।

***श्री महबूब अली बेग बहादुर** (मद्रासः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, इस विवाद के मध्य मेरे कुछ कहने का कारण यह बताना है कि सूची में इस मद को सम्मिलित करने का कारण यह है कि धारासभा इस मद के संबंध में कानून बना सके। यदि हम इस बात को समझ लें तो विवाद के बीच उठायी गयी आपत्तियों के लिये कोई स्थान नहीं है। परन्तु चूंकि नजरबंदी स्वाधीन देश तथा स्वाधीन नागरिकों के लिये घृणित वस्तु है, इसलिये कुछ माननीय सदस्यों ने यह चेतावनी दी है कि शासन-सत्ता ग्रहण करने वाली नयी सरकार अधिकार द्वारा मदोन्मत्त होकर और जोश में आकर जैसा कि मि॰ हुसैन इमाम ने कहा है, शक्ति कायम रखने के लिये सभी उपायों से काम ले सकती है और मुकदमा चलाये बिना स्वाधीनता न छीने जाने के जनता के मौलिक अधिकार को पद्दलित कर सकती है—खासकर ऐसी हालत में जबकि यह सरकार किसी एक दल की हो। इसलिये मेरे विचार में मि॰ हुसैन इमाम भी केन्द्रीय धारा-सभा को यह अधिकार देने के विरुद्ध नहीं थे और उन्होंने सिर्फ चेतावनी ही दी थी।

इस अवस्था में भी हमारे लिये यह अनुभव करना आवश्यक है कि केन्द्रीय धारासभा कानून बनाते समय सूची में सम्मिलित इस मद से अनुचित लाभ न उठाये। एक माननीय सदस्य ने मि॰ हुसैन इमाम के भाषण की इस संबंध में जो आलोचना की है वह भी ठीक नहीं है, क्योंकि, जैसाकि मैं कह चुका हूं, उन्होंने सिर्फ

चेतावनी ही दी थी। और यह भी कहना ठीक नहीं है कि बिना मुकदमा चलाये गिरफ्तार न किये जाने का जो अधिकार है उससे लोगों की अनावश्यक तथा नाजायज नजरबंदी से रक्षा हो सकेगी। यदि 1818 के रेगुलेशन जैसा कानून पास किया गया तो मुकदमा चलाये बिना गिरफ्तारी न होने के अधिकार के लिये क्या स्थान रह जायेगा? इसलिये इस अधिकार से हमें कुछ भी राहत नहीं मिल सकती। मेरा निवेदन है कि राज्य द्वारा कतिपय व्यक्तियों को युद्ध-काल तथा शान्ति भंग होने की कतिपय अवस्थाओं में नजरबंद करने का अधिकार तो अवश्य रहना चाहिये, परन्तु इतने पर भी कानून में यह व्यवस्था अवश्य होनी चाहिये कि मौलिक अधिकारों तथा नागरिक स्वाधीनता की रक्षा के लिये उन व्यक्तियों पर उपयुक्त अदालत में मुकदमा चलाया जाये और यदि संभव हो तो उन्हें अपराधी या दोषहीन करार दिया जाये। इसलिये जहां मैं इस मद के सम्मिलित किये जाने के विरुद्ध नहीं हूं, वहां मैं मि॰ हुसैन इमाम के साथ यह चेतावनी देना चाहता हूं कि जब भी इस मद के संबंध में कोई कानून बनाया जाये तो ऐसा प्रबंध कर दिया जाये कि किसी स्वाधीन भारतीय की स्वतंत्रता का स्वाधीन भारत में अपहरण न किया जा सके।

***एक माननीय सदस्य:** अब यह प्रश्न किया जा सकता है।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** महोदय, मैं समझता हूं कि परिषद् के सम्मुख इस समय मुख्यत: उस संशोधन पर विवाद हो रहा है, जो मेरे माननीय मित्र श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी ने उपस्थित किया है। इस संशोधन द्वारा उस अधिकार को सीमित करने का प्रयत्न किया गया है, जो इस मद के द्वारा रक्षा तथा परराष्ट्र से संबंध रखने वाले राज्य के कारणों से प्रांत में नजरबंदी के संबंध में देने का प्रस्ताव किया गया है। इस संशोधन तथा मूल मद के अंतर के दो पहलू हैं। पहला तो यह है कि नजरबंदी का क्षेत्र रक्षा तथा परराष्ट्र से संबंध रखने वाले कारणों तक सीमित रहे और दूसरा यह है कि संघ-धारा-सभा को केवल प्रांतों की सीमाओं के भीतर ही नजरबंदी के लिये कानून बनाने का अधिकार रहे। पहले मैं दूसरे पहलू को लेता हूं। मान लीजिये कि किसी व्यक्ति को राज्य के कारणों से नजरबंद करना आवश्यक हो जाता है और यदि वह व्यक्ति भागकर किसी रियासत की सीमा में चला जाता है तो क्या संशोधन उपस्थित करने वाले माननीय सदस्य की यह इच्छा है कि संघ उस व्यक्ति को वहां नजरबंद न करा सके या ब्रिटिश भारत में मंगवाकर वहां नजरबंद न करा सके? रियासतें संघ की भूमि के अंतर्गत हैं और यदि राज्य के कारणों से किसी व्यक्ति की नजरबंदी आवश्यक हो जाती है तो वह नजरबंदी संघ के किसी भाग या क्षेत्र में संभव होनी चाहिये।

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

महोदय, रियासतों को जिस भावना से प्रेरित होकर संघ में सम्मिलित होना चाहिये—यह संशोधन उसके अनुरूप नहीं है।

दूसरे, जहां तक रक्षा तथा परराष्ट्र संबंधी विषयों तक मद को सीमित करने का संबंध है, मैं निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि हमें इन दोनों विषयों तक उसे सीमित करना चाहिए या नहीं? ऐसी बातों की कल्पना की जा सकती है, जिनका रक्षा या परराष्ट्र विषयों से संबंध न हो, किंतु फिर भी उनके कारण संघ की सरकार को खास व्यक्तियों की नजरबंदी की आवश्यकता पड़ सकती है। इस बात का संबंध राज्य के अस्तित्व से हो सकता है और फिर भी रक्षा या परराष्ट्र विषयों से वह असम्बद्ध हो सकती है। यदि हमें खतरनाक व्यक्तियों की गतिविधि पर कुछ समय के लिए नियंत्रण रखने और उन्हें उस समय तक नजरबंदी में रखने का अधिकार प्राप्त है जब तक कि वातावरण में सुधार हो जाये और उन्हें छोड़ा जा सके तो उन परिस्थितियों का अंत हो सकता है, जिनके कारण राज्य के अस्तित्व के लिए संकट उपस्थित हुआ है। यदि रक्षा तथा परराष्ट्र विषयों के संबंध में कुछ व्यक्तियों की नजरबंदी की आवश्यकता हो सकती है तो कुछ अन्य विषय भी हो सकते हैं, जिनके लिए नजरबंदी की आवश्यकता पड़ सकती है। महोदय, इसलिए इन दोनों ही आधारों पर मेरे विचार में परिषद् को इस संशोधन का समर्थन नहीं करना चाहिये।

माननीय सदस्यों ने कुछ अन्य बातें भी कही हैं। मि॰ नजीरुद्दीन अहमद ने हमें चेतावनी दी है कि हमें कोई ऐसा अधिकार ग्रहण न करना चाहिए, जो वैधानिक दृष्टि से अनुचित हो, क्योंकि रियासतें केवल कुछ ही विषयों के संबंध में संघ में सम्मिलित हुई हैं। महोदय, मुझे विश्वास है कि इस बात की सावधानी रखी जायेगी कि कोई अधिकार ग्रहण करते समय हम कहीं रियासतों के उस क्षेत्र का तो अतिक्रमण नहीं करते, जिसमें संघ में सम्मिलित होने के उपरांत रियासतों को कार्य करने के लिए स्वतंत्र रहना चाहिए। यह बात खंड का मसविदा बनाने की है और मैं मि॰ नजीरुद्दीन अहमद को विश्वास दिलाता हूं कि इस संबंध में उन्होंने जो कुछ कहा है उसका ध्यान रखा जायेगा।

अब मैं एक या दो उन बातों पर आता हूं, जो मेरे माननीय मित्र मि॰ हुसैन इमाम ने कही हैं। कहा गया है कि नजरबंदी एक ऐसी बात है, जो मौलिक अधिकारों के विरुद्ध है। मौलिक अधिकारों का समावेश हमारे विधान में किया जायेगा और

यदि हम संघीय सूची में नजरबंदी को सम्मिलित करते हैं तो इस मद के संबंध में कानून बनाते समय विधान में उल्लिखित मौलिक अधिकारों के विरुद्ध न जाने की सावधानी रखी जायेगी। ऐसी अवस्था में हमारे द्वारा इस अधिकार के द्वारा बनाया गया कानून विधान में स्वीकृत मौलिक अधिकार के विरुद्ध नहीं जा सकता।

अब एक अन्य बात है। मेरा ख्याल है कि इसकी चर्चा मि॰ हुसैन इमाम ने न उठाकर मि॰ नजीरुद्दीन अहमद ने उठाई है। उन्होंने ''राज्य के कारणों'' शब्दों में ''राज्य'' (स्टेट) शब्द के प्रयोग का जिक्र किया है। माननीय सदस्य का ख्याल यह जान पड़ता है कि राज्य (स्टेट) शब्द से देशी राज्य या रियासत (इंडियन स्टेट) का भ्रम हो सकता है। मैं नहीं कह सकता कि मैं उनका दृष्टिकोण समझ सका या नहीं। परन्तु यदि मैं उनका दृष्टिकोण ठीक तरह समझ पाया हूं तो इसके उत्तर में मेरा सिर्फ यही कहना है कि ''राज्य'' शब्द का ''देशी राज्य'' या ''रियासत'' से कुछ भी संबंध नहीं है। दुर्भाग्यवश भारतीय शासन कानून में, जहां से यह शब्द लेकर हमने अपनी सूची में सम्मिलित किये हैं–जैसा कि माननीय सदस्य ने ठीक ही कहा है–स्टेट (State) शब्द बड़े (Capital) अक्षर से छपा हुआ है। मेरा ख्याल है कि यह कदाचित गलती थी। यदि हम बड़े (Capital) अक्षर की जगह छोटा (Small) अक्षर रखें तो राज्य के कारणों (Reasons of State) से वही भाव प्रकट होगा, जो होना चाहिये। इसलिए महोदय, मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं और परिषद् से अनुरोध करता हूं कि मद को उसके मूल रूप में ही स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

''मद 4 के स्थान पर निम्न शब्द रखे जायें:

'रक्षा तथा परराष्ट्र विषय संबंधी राज्य के कारणों के लिये किसी प्रांत में नजरबंदी'।''

प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं मूल प्रस्ताव परिषद् के सम्मुख उपस्थित करता हूं।

प्रश्न है कि:

''संघीय व्यवस्थापन सूची की सूची 1 की मद 4 को स्वीकार कर लिया जाये, जो निम्न प्रकार है:

'संघ की भूमि में राज्य के कारणों से नजरबंदी।' ''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** मैं परिषद का ध्यान इस बात की ओर आकर्षित करना चाहता हूं

कि अभी हमने सिर्फ 4 मदें स्वीकार की हैं और इसमें साढ़े चार घंटे लग गये हैं। सूची में 84 मदें हैं। इस गति से मदों पर विचार करने में पांच दिन लग जायेंगे। मैं जल्दबाजी में मदें पास नहीं कराना चाहता, किंतु मैं सदस्यों से यथासंभव शीघ्रता करने का अनुरोध करता हूं।

मद 5

***श्री के॰ संतानम्:** सूची 1 के स्थान पर सूची 5 में अपने संशोधन को उपस्थित करने की अनुमति मैं चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** हां।

***श्री के॰ संतानम्:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

''मद 5 में 'संघ की भूमि की रक्षा के लिये और संघ तथा उसकी प्रादेशिक इकाइयों के कानूनों को अमल में लाने के लिये' शब्दों को निकाल दिया जाये।''

मुझे परिषद् का अधिक समय लेने की आवश्यकता नहीं है। इन शब्दों से मद का क्षेत्र अनावश्यक रूप से सीमित हो जाता है। संघ सभी उचित उद्देश्यों के लिए अपनी सेना का उपयोग करने में समर्थ होना चाहिए—इसमें ऐसे कार्यों को भी सम्मिलित किया जा सकता है, जो उसे संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा करने को कहा जाये या जो समझौतों या संधियों के कारण करने पड़ें। इन शब्दों के निकाल देने से हमें अपनी स्थल, जल और वायु सेनाओं के उपयोग का अधिक स्वच्छंद क्षेत्र मिल जाता है। मुझे आशा है इसे स्वीकार कर लिया जायेगा।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव उपस्थित किया गया:

''मद 5 में 'संघ की भूमि की रक्षा के लिए और संघ तथा उसकी प्रादेशिक इकाइयों के कानूनों को अमल में लाने के लिए' शब्दों को निकाल दिया जाये।''

सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारी: अध्यक्ष महोदय, मैं सूची 1 में मद 5 के संबंध में 11 और 12 संख्या के संशोधन उपस्थित करना चाहता हूं।

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

''मद 5 में 'वायु सेना (एयर फोर्सेज)' शब्दों के आगे 'संघ के खर्चे पर रखी गयी (बोर्न ओन फेडरल ऐस्टिब्लिशमेंट्स)' शब्द जोड़ दिये जायें।''

यह एक नियम संबंधी संशोधन है।

मेरे दूसरे संशोधन का संबंध मद 5 के दूसरे भाग से है।

महोदय, मेरा प्रस्ताव है कि:

''मद 5 में 'रियासतों द्वारा भरती की गयी और रखी गयी सशस्त्र सेनाओं की शक्ति, संगठन और नियंत्रण' शब्दों के स्थान पर निम्न शब्द रखे जायें:

'रियासतों द्वारा भरती की गयी और रखी गयी सशस्त्र सेनाओं की शक्ति तथा सेनाओं के उस भाग का संगठन और नियंत्रण, जो समझौते द्वारा संघ-सेनाओं के साथ काम करने के लिए निर्धारित किया गया हो।' ''

महोदय, इसके संबंध में आपको रिपोर्ट के पांचवें पैरा में चर्चा मिलेगी। इरादा सिर्फ यही है कि इन सेनाओं के एकीकरण और नियंत्रण के संबंध में जो अधिकार अभी हैं उन्हें कायम रखा जाये। हम इस विषय में सहमत हैं कि अभी जिन अधिकारों से काम लिया जा रहा है उनसे भावी संघ भी काम लेता रहे, किन्तु अपने संशोधन के वर्तमान रूप द्वारा हमने चालू स्थिति को कायम रखने का प्रयत्न किया है। यदि श्री गोपालस्वामी आयंगर इस पर फिर से विचार करें और देखें कि वर्तमान स्थिति आती है या नहीं, तो हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। हम यह भी अनुभव करते हैं कि मूल मद की तुलना में संशोधन द्वारा वर्तमान स्थिति अधिक ठीक-ठीक प्रकट की गई है और हमें बड़ी प्रसन्नता होगी यदि श्री गोपालस्वामी आयंगर इस पर फिर से विचार करेंगे और ऐसी भाषा का प्रयोग करेंगे जिससे वर्तमान स्थिति ठीक तरह प्रकट होती हो।

***श्री एच॰वी॰ पातस्कर** (बम्बई: जनरल): मद 5 अपने वर्तमान रूप में स्थल, जल और वायु सेनाओं का उपयोग दो विशिष्ट उद्देश्यों तक सीमित करती है, जो निम्न है–''संघ की भूमि की रक्षा के लिए उनका उपयोग और संघ तथा उसकी प्रादेशिक इकाइयों के कानूनों को अमल में लाने के लिए उनका उपयोग....''

[श्री एच.वी. पातस्कर]

चूंकि सेनाओं का उपयोग इन दो उद्देश्यों तक सीमित कर दिया गया है इसलिए मैंने एक संशोधन की सूचना दी है कि उद्देश्यों का क्षेत्र निम्न शब्द जोड़कर बढ़ा दिया जाये:

''संघ की भूमि के भीतर शान्ति और सुरक्षा बनाये रखने के उद्देश्य से अन्य देशों के साथ होने वाले समझौतों और संधियों को अमल में लाने के लिए।''

इस संशोधन की सूचना देने का उद्देश्य क्षेत्र का विस्तार अधिक करना है, क्योंकि हमारा देश अन्य देशों से संधियां कर सकता है और इन सेनाओं का उपयोग इन संधियों को अमल में लाने के लिए किया जा सकता है। अब मुझे ज्ञात हुआ है कि मेरे मित्र श्री संतानम् एक संशोधन पहले ही उपस्थित कर चुके हैं, जिसका क्षेत्र मेरे संशोधन की तुलना में अधिक विस्तृत है। वे इन शब्दों को जिनमें सेनाओं के उपयोग की चर्चा की गई है, निकाल देना चाहते हैं। यदि यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है, तो मेरे संशोधन के उपस्थित किये जाने में कोई तुक नहीं है। इसलिए मैं आपसे निवेदन करता हूं कि श्री संतानम् का संशोधन स्वीकार या अस्वीकार हो जाने के बाद आप मुझे अपना संशोधन उपस्थित करने या न करने की अनुमति प्रदान करें।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** मैं सीधे ही बता देना चाहता हूं कि हम श्री संतानम् का संशोधन स्वीकार करना चाहते हैं।

***श्री एच॰वी॰ पातस्कर:** इसलिए मुझे अपना संशोधन उपस्थित करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

***श्री एस॰वी॰ कृष्णमूर्ति राव:** महोदय, मेरा संशोधन दो भागों में है कि:

'मद 5 में से 'तथा उसकी प्रादेशिक इकाइयों' शब्दों को निकाल दिया जाये और 'भरती की गयी और रखी गयी (raised and employed)' शब्दों के स्थान पर 'खर्च उठाकर रखी गयी (Maintained)' शब्द रखे जायें।''

संशोधन के पिछले अंश का महत्व केवल भाषा संबंधी है और उस पर मैं अधिक जोर नहीं देना चाहता। अब मैं संशोधन के पहले अंश को लेता हूं। भारतीय

संघ के दो भाग हैं—एक तो लोकतंत्री प्रांत, जिनके निर्वाचित प्रधान हैं, और रियासतें जिनमें निरंकुश राजाओं की सरकारें हैं। यदि संघ रियासतों के कानूनों को अमल में लाने के लिए अपनी सेना के उपयोग की जिम्मेदारी लेता है तो इसके लोकतंत्र का विनाश ही होता है। मेरे ख्याल में कोई लोकतंत्री सरकार ऐसा न होने देगी। इसे रोकने के लिए ही मैंने यह संशोधन उपस्थित किया है। परन्तु श्री संतानम् के संशोधन से मेरे उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है और यदि उसे स्वीकार कर लिया जाता है तो मैं अपने संशोधन को आगे नहीं बढ़ाना चाहता।

(सर्वश्री वी०आई० मुनिस्वामी पिल्ले और डी० गोविन्द बोस ने अपने संशोधन उपस्थित नहीं किये।)

***अध्यक्ष:** हमें इन्हीं संशोधनों की सूचना मिली है। अब मूल मद तथा संशोधनों पर बहस आरम्भ हो सकती है।

श्री रामसहाय (ग्वालियर): सभापति जी, मैं एक स्टेट के प्रतिनिधि के नाते इस अमेंडमेंट की मुखालिफत करने के लिये खड़ा हुआ हूं, जो मि० वी०जी० ने पेश किया है। मि० वी०जी० ने जो अमेंडमेंट पेश किया है वह बजाहिर यह मालूम होता है कि कुछ फारसेज स्टेट के अधिकार में रहे और कुछ फोरसेज पर सेंटर का अधिकार रहे। लेकिन साथ ही साथ उसमें जिस भाषा का उपयोग किया गया है उससे यह नतीजा निकलता है कि उसमें एग्रीमेंट का लफ्ज डाल दिया गया है और उससे जो कुछ भी रही सही अहमियत थी वह भी खत्म हो जाती है। इसलिये मैं हाउस को यह बताना चाहता हूं कि स्टेट में आर्मी की जो हालत रहती है, वह इतनी खराब रहती है कि वह किसी तरह भी डिफेंस के उपयोग में नहीं लाई जा सकती है। जब कभी लाई जाती है तो कुछ ट्रेनिंग के बाद लाई जा सकती है। इसलिये उस पर पूरा अधिकार यूनियन का होना लाजिमी है। इसलिये मैं इस तरमीम की मुखालिफत करता हूं।

***श्री युधिष्ठिर मिश्र** (पूर्वी रियासत-समूह): अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री सन्तानम् ने सूची 1 की मद 5 के संबंध में जो संशोधन उपस्थित किया है, उसका मैं समर्थन करता हूं। इस संशोधन में जिन शब्दों को निकाल देने का अनुरोध किया गया है, उनसे प्रकट होता है कि संघ-सरकार की स्थल, जल और वायु सेनाओं का उपयोग किस प्रकार किया जायेगा। यह उचित ही है कि सेनाओं को रखना और उन्हें काम में लाना भावी संघ-धारासभा के अधिकार-क्षेत्र के अंतर्गत रहे और उस पर विधान-परिषद् कोई प्रतिबंध न लगाये। महोदय, मैं ''प्रादेशिक

[श्री युधिष्ठिर मिश्र]

इकाइयों के कानूनों के अमल में लाने'' शब्दों पर विशेष रूप से आपत्ति करता हूं। रियासतों के, जैसी वे अभी हैं, कानूनों को अमल में लाने के लिये यदि संघ की सेनाओं को काम में लाया गया तो यह बड़ी हानिकर बात होगी। प्रान्तों में कानूनों का निर्माण प्रांतीय धारासभाएं करेंगी, जिनमें जनता के ही प्रतिनिधि होंगे। महोदय, परन्तु इसकी कोई गारंटी नहीं है कि रियासतों के कानून बनाने में वहां की जनता का कुछ हाथ रहेगा। जब तक रियासतों की प्रजा को लोकतंत्री अधिकार प्राप्त नहीं होते, तब तक वह राजाओं की निरंकुशता से लड़ती रहेंगी और अपने आंदोलन को कुचलने के लिए बनाये गये कानूनों का भी सामना करती रहेंगी। कितनी ही रियासतों में विशेषकर उड़ीसा की रियासतों में सार्वजनिक सुरक्षा के नाम पर प्रजा के आंदोलनों का दमन करने के लिये विशेषाधिकार कानून पास किये गये हैं और यह प्रजा अपनी स्वाधीनता के लिये लड़ रही है। यदि संघ-सरकार की सेनाओं का प्रयोग उन्हीं लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये लड़ने वाली रियासती प्रजा के विरुद्ध किया गया, जिनके लिये कांग्रेस तथा भारतीय जनता पिछले 27 वर्ष से लड़ती रही है, तो यह एक बड़ी दुःखद बात होगी। महोदय, इन शब्दों के द्वारा मैं श्री सन्तानम् द्वारा उपस्थित संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर:** अध्यक्ष महोदय, परिषद् को एक बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है, क्योंकि माननीय सदस्य श्री पातस्कर ने जिस संशोधन की सूचना दी थी, उसे उन्होंने वास्तव में उपस्थित नहीं किया है। इसके विपरीत उन्होंने यह भी कहा है कि यदि श्री सन्तानम् का संशोधन पास हो गया तो वे अपना संशोधन उपस्थित नहीं करेंगे। मैं नहीं कह सकता कि महोदय, यह कार्य-विधि कहां तक नियमानुकूल है। जो कुछ भी हो, जिन सदस्यों का इरादा श्री पातस्कर के संशोधन के समर्थन करने का था उन्हें यह नहीं समझ में आता कि यह संशोधन श्री सन्तानम् के संशोधन के अंतर्गत कैसे आ जाता है। यह कहा जा सकता है कि श्री संतानम् के संशोधन के अनुसार ''रक्षा'' शब्द का महत्व इतना व्यापक है कि उसके अंतर्गत श्री पातस्कर के संशोधन में उल्लिखित विषय भी आ जाते हैं। श्री पातस्कर के संशोधन का तात्पर्य केवल यही है कि संघ की सेनाओं का उपयोग अन्य देशों के साथ हुई संधियों तथा समझौतों को अमल में कराने के लिये किया जा सके। सरकार अन्य देशों के साथ आक्रामक या रक्षात्मक संधियां कर सकती है। ऐसे विषयों के संबंध में इन संधियों को अमल में लाने के लिये सरकार को सेनाओं का उपयोग करने 100का अधिकार मिलना चाहिये। यदि भारतीय सेनाओं के ये कार्य ''रक्षा'' शब्द में सम्मिलित कर लिये

गये हैं, जो मेरे विचार में होना ही चाहिये, तो मेरे मत से श्री पातस्कर को अपना संशोधन उपस्थित करने की अनुमति मिलनी ही चाहिये। उन्होंने दूसरे जिस विषय की चर्चा की है वह संघ की सीमाओं के भीतर शान्ति और सुरक्षा बनाये रखना है। यह भी कहा जा सकता है कि संघ के प्रदेशों की रक्षा के अंतर्गत संघ की सीमाओं के भीतर शान्ति और सुरक्षा बनाये रखना भी आ जाता है। महोदय, यहां कुछ कठिनाई उठ खड़ी होती है। यदि संघ-सरकार किसी रियासत में सेना भेजना चाहती है तो धारा-सभा को ऐसा करने का अधिकार है या नहीं अर्थात् संघ-सरकार को रियासतों में शान्ति और सुरक्षा बनाये रखने के लिये सेनायें भेजने का अधिकार है या नहीं? मान लीजिये कि किसी रियासत में कोई उपद्रव, विद्रोह या भारी गड़बड़ हो गई है तो ऐसी अवस्था में केन्द्रीय सरकार या संघ-सरकार को रियासतों में सेना भेजने का अधिकार होगा या नहीं? ये ऐसे उदारहण हैं, जो श्री पातस्कर के संशोधन के अंतर्गत आ जाते हैं। जैसा कि मैं कह चुका हूं, परिषद् को इस विषय में भारी कठिनाई है। प्रस्तावक महोदय कह चुके हैं कि यदि श्री संतानम् का संशोधन पास हो गया तो वे अपना संशोधन उपस्थित नहीं करेंगे। संशोधन को इस प्रकार शर्त के साथ उपस्थित करने का तरीका विचित्र है। कुछ भी हो, संशोधन के प्रस्तावक या उसके समर्थकों को श्री संतानम् का संशोधन पास होने के बाद भी यह संशोधन उपस्थित करने का अवसर मिलना चाहिये।

***श्री एºपीº पट्टानी** (पश्चिमी भारतीय रियासत समूह)**:** अध्यक्ष महोदय, सर वीºटीº कृष्णमाचार्य द्वारा उपस्थित किये गये संशोधन पर पर्याप्त विचार होने की आवश्यकता है—विशेषकर इसलिये और भी कि प्रस्तावक ने कहा है कि संशोधन का इरादा वर्तमान स्थिति को कायम रखने का है। जहां तक मेरी जानकारी है, रियासतों में तीन प्रकार के सैनिक हैं। पहले प्रकार के हैं फील्ड सर्विस ट्रूप्स, दूसरे प्रकार के हैं सेंट्रल सर्विस ट्रूप्स और तीसरे प्रकार के हैं इंटर्नल सेक्योरिटी ट्रूप्स। मैं जानता हूं कि पिछले महायुद्ध से पूर्व कुछ रियासतों में ऐसी सेनाएं थीं, जिनका संबंध इंडियन स्टेट्स फोर्सेज योजना से नहीं था और न वे इस योजना के ही अंतर्गत आती थीं। यहां स्मरण रखना चाहिये, ऊपर जिन तीन वर्ग के सैनिकों का जिक्र किया गया है वे तीनों ही प्रकार के सैनिक इस योजना के अंतर्गत आ जाते हैं। परन्तु वे रियासतें भी, जो इंडियन स्टेट्स फोर्सेज योजना के अतिरिक्त सैन्यदल रखती थीं, वे इन अतिरिक्त सैनिकों के लिये हथियार तथा साज-सामान केन्द्रीय सरकार की मार्फत खरीदती थीं। महोदय, मैं परिषद् के आगे निवेदन करता

[श्री ए.पी. पट्टानी]

हूं कि फील्ड सर्विस ट्रूप्स, सेंट्रल सर्विस ट्रूप्स, इंटर्नल सेक्योरिटी ट्रूप्स या इन संगठनों के बाहर के और कोई भी सैनिक क्यों न हों–इन सभी सैनिकों की शक्ति और साज-सामान केन्द्रीय सरकार की अनुमति से रखा जाता था या निर्धारित किया जाता था। यदि मेरी व्याख्या ठीक है तो महोदय, मैं निवेदन करता हूं कि समिति की सिफारिश ही ठीक है और प्रस्तावक महोदय भी यही दृष्टिकोण रखेंगे।

*__श्री बी॰ पोकर साहब बहादुर:__ अध्यक्ष महोदय, मैं माननीय महबूब अली बेग साहब के इस कथन से पूर्णतः सहमत हूं कि परिषद् को प्रस्ताव तथा संशोधनों के संबंध में वास्तविक स्थिति को समझने में बड़ी कठिनाई हो रही है। हम नहीं जान सकते कि परिषद् किन संशोधनों पर विचार करेगी। निस्संदेह परिषद् के सम्मुख प्रस्ताव उपस्थित हुआ। सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य का संशोधन भी उपस्थित हुआ। श्री संतानम् का संशोधन भी उपस्थित हुआ। श्री पातस्कर का संशोधन भी परिषद् के सम्मुख है, यद्यपि उन्होंने इसे इस शर्त के साथ पेश किया है कि यदि श्री सन्तानम् का संशोधन पास हो गया तो वे अपना संशोधन उपस्थित न करेंगे। शर्त के साथ संशोधन उपस्थित करने की विधि नियमानुकूल है या नहीं–इसका निर्णय महोदय, आप ही कर सकते हैं।

*__माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:__ महोदय, मेरा ख्याल है कि श्री पातस्कर ने कहा था कि वे अपना संशोधन उपस्थित नहीं कर रहे हैं।

*__अध्यक्ष:__ हां, उन्होंने संशोधन उपस्थित नहीं किया।

*__श्री बी॰ पोकर साहब बहादुर:__ मान लीजिये कि श्री संतानम् का संशोधन पास नहीं होता है–क्या तब भी यही माना जायेगा कि श्री पातस्कर ने अपना संशोधन उपस्थित नहीं किया?

*__अध्यक्ष:__ कारण चाहे जो भी हो, यदि किसी सदस्य ने संशोधन उपस्थित करने की सूचना दी है, तो उन्हें वह प्रस्ताव उपस्थित न करने की भी स्वतंत्रता है। वे चाहें तो अपना संशोधन उपस्थित न करें–कारण चाहे जो भी हो। प्रस्तुत संशोधन श्री पातस्कर ने उपस्थित नहीं किया–चाहे ऐसा करने के लिये वे किसी भी कारण से प्रेरित हुये हों।

*__श्री एच॰वी॰ पातस्कर:__ महोदय, मैं इस संशोधन के संबंध में–मेरा अपना नहीं–एक शब्द कहना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** उन्होंने अपनी बात समाप्त नहीं की है।

***श्री बी॰ पोकर साहब बहादुरः** अब भी श्री पातस्कर ने निश्चित रूप से नहीं बताया है कि उन्होंने अपना संशोधन उपस्थित किया है या ऐसा करने से इन्कार किया है।

***अध्यक्षः** जैसा कि मैं कह चुका हूं, संशोधन उपस्थित नहीं किया गया है और वह परिषद् के सम्मुख उपस्थित नहीं है।

***श्री बी॰ पोकर साहब बहादुरः** यदि ऐसा है तो मेरा निवेदन है–यह एक ऐसा विषय है जिस पर आपको अपना निर्णय देना चाहिये–कि यदि किसी संशोधन की सूचना दी हुई है और जिन माननीय सदस्य ने सूचना दी है वे उस पर बोल चुके हैं और यह नहीं बताया है कि उस संशोधन को उन्होंने उपस्थित नहीं किया है या किसी शर्त के साथ उपस्थित किया है–जो भी कुछ हो–तो मैं आपसे निर्णय करने का अनुरोध करूंगा कि सभा का कोई सदस्य अध्यक्ष की अनुमति से उस संशोधन को उपस्थित कर सकता है या नहीं? चूंकि वर्तमान स्थिति अनिश्चित है, महोदय, मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि यदि संशोधन सभा के सामने उपस्थित न हो तो आप उस संशोधन को अपने संशोधन के रूप में उपस्थित करने की अनुमति प्रदान करें और यदि यह संशोधन पहले ही परिषद् के सामने उपस्थित हो तो मैं उसका समर्थन करना और समर्थन के लिये अपने कारण देना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** मेरा ख्याल है कि नियमों के अनुसार कोई भी सदस्य अपने संशोधन की सूचना देकर बाद में किसी कारण से उसे उपस्थित न करने का निश्चय कर सकता है, किन्तु यदि उसने किसी संशोधन की सूचना नहीं दी है तो वह किसी दूसरे के संशोधन को अपने संशोधन के रूप में उपस्थित नहीं कर सकता। श्री पातस्कर का संशोधन उपस्थित ही नहीं किया गया और वह सभा के सम्मुख नहीं है।

***श्री बी॰ पोकर साहब बहादुरः** श्री पातस्कर ने कारण दिया था कि उनके संशोधन का विषय श्री सन्तानम् के संशोधन के अंतर्गत आ जाता है और इसी आधार पर उन्होंने अपना संशोधन उपस्थित करने से इन्कार किया है। महोदय, मेरा कहना है कि श्री सन्तानम् के संशोधन से उद्देश्य की सिद्धि नहीं होती और इस कारण सम्पूर्ण खंड अपूर्ण रह जायेगा। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि यह खण्ड

[श्री बी. पोकर साहब बहादुर]

ऐसा रहना चाहिये कि उसमें कम से कम श्री पातस्कर के संशोधन का उद्देश्य सम्मिलित रहे। इस देश में अभी या कुछ समय बाद ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं, जिनमें भारत को पड़ोसी राज्यों से, विदेशी आक्रमण से बचने के लिये किसी न किसी प्रकार की संधि करनी पड़ेगी। उदाहरण के लिये भारत को पाकिस्तान या अफगानिस्तान से रूस या किसी अन्य देश के आक्रमण से बचने के लिये रक्षात्मक संधि करनी पड़ सकती है। ऐसी परिस्थिति का सामना करने के लिये श्री पातस्कर के संशोधन की आवश्यकता थी, ताकि संघ इस अवस्था में आवश्यक कानून बना सके। इसलिये मेरा निवेदन है कि इस विषय में नियम संबंधी स्थिति कुछ भी क्यों न हो कि श्री पातस्कर का संशोधन परिषद् के सम्मुख है या नहीं, यह बहुत ही आवश्यक है कि इस विषय पर कानून बनाने का अधिकार संघ को दिया जाये।

***श्री एच॰वी॰ पातस्कर:** महोदय, सबसे पहले मैं यह बात स्पष्ट करना चाहता हूं कि मेरे नाम से जिस संशोधन की सूचना दी गई थी, उसे मैंने उपस्थित नहीं किया और इस कारण मेरे मित्र श्री संतानम् द्वारा उपस्थित किया गया वह संशोधन है, जिसका क्षेत्र अधिक व्यापक है। इस संबंध में मैं कुछ अधिक बात कहना चाहता हूं। महोदय, जिस खण्ड पर विवाद चल रहा है उसमें श्री सन्तानम् द्वारा उपस्थित संशोधन के कारण "जल, स्थल तथा वायु सेनाओं के भरती करने, उन्हें ट्रेनिंग देने, उनका खर्च उठाने, उनका नियंत्रण करने और उनसे काम लेने" शब्द बच गये हैं और "संघ की भूमि की रक्षा के लिये और संघ तथा उसकी प्रादेशिक इकाइयों के कानूनों को अमल में लाने के लिये" शब्दों को छोड़ दिया गया है। मद 5 में कहा गया था कि जल, स्थल तथा वायु सेनाएं उल्लिखित उद्देश्यों, अर्थात् "संघ की भूमि की रक्षा के लिये और संघ तथा उसकी प्रादेशिक इकाइयों की रक्षा के लिये" ही काम में लाई जायें। मैंने विचार किया कि उपर्युक्त सेनाओं का उपयोग उन उद्देश्यों के लिये भी किया जाये, जिनका उल्लेख मेरे संशोधन में किया गया है। यह संभव है कि हमारी अन्य देशों से संधियां हों और इस अवस्था में उन संधियों को अमल में लाने के लिये इन सेनाओं के उपयोग की आवश्यकता पड़ सकती है। पहले जब खण्ड में केवल दो उद्देश्यों का ही उल्लेख किया गया था तो मैंने सोचा कि अन्य दोनों उद्देश्यों को भी, जो मेरी समझ में महत्वपूर्ण थे, शामिल कर लिया जाये, किन्तु जब मुझे ज्ञात हुआ कि मेरे मित्र श्री सन्तानम् ने एक ऐसा संशोधन उपस्थित किया है, जिसके कारण उद्देश्यों का उल्लेख करने का विचार त्याग कर संघ-सरकार तथा राज्य पर किसी भी उद्देश्य के लिये सेनाओं का उपयोग करने की बात छोड़ दी जायेगी, तो मेरे लिये यह

सोचना स्वाभाविक था कि श्री सन्तानम् के संशोधन का क्षेत्र अधिक व्यापक है और इसीलिये मेरा अपना संशोधन अनावश्यक है। अब मैं अपने उन मित्रों से कहना चाहता हूं, जिन्हें अभी तक कुछ संदेह बना हो कि ''जल, स्थल तथा वायु सेनाओं के भरती करने, उन्हें ट्रेनिंग देने, उनका खर्च उठाने, उनका नियंत्रण करने और उनसे काम लेने'' शब्दों का यही मतलब है कि उनका राज्य से संबंध रखने वाले प्राय: किसी भी कारण के लिये उपयोग किया जा सकता है। यदि आवश्यक हो तो उद्देश्य के अधिक स्पष्टीकरण के लिये ''राज्य के कारणों के लिये'' शब्दों को और भी जोड़ा जा सकता है और यदि प्रस्तावक को आपत्ति न हो तो मैं श्री सन्तानम् के संशोधन में एक और संशोधन यह करना चाहता हूं कि छोड़े गये शब्दों के स्थान पर ''राज्य के कारणों के लिये'' शब्दों को जोड़ दिया जाये। यदि ये शब्द न भी रहें तब भी सेनाओं का काम में लाना राज्य के अधिकार के अंतर्गत रहेगा और ये सेनाएं उसीके निर्णय के अनुसार काम में लाई जायेंगी। इसलिये मेरा ख्याल है कि मैं जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिये अपना संशोधन उपस्थित करना चाहता था उसका अब अस्तित्व नहीं रह गया है, क्योंकि अब राज्य किसी भी उद्देश्य की पूर्ति के लिये सेना का उपयोग करने को स्वतंत्र है। इन शब्दों के साथ मैं निवेदन करता हूं कि मैं अपना संशोधन उपस्थित नहीं करना चाहता।

*__श्री एम॰एस॰ अणे__ (दक्षिणी रियासतें): अध्यक्ष महोदय, परिषद् दो संशोधनों पर विचार कर रही है। पहला श्री के॰ संतानम् का है और दूसरा माननीय सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य का है। विचारणीय मद का संबंध रक्षा से है, जो मेरे मत में अत्यंत महत्व की बात है और इसीलिये परिषद् को इस मद पर बड़ी सावधानीपूर्वक विचार करना चाहिये। आप जो निर्णय करेंगे उन्हीं पर हमारी रक्षा और उसके उद्देश्य निर्भर रहेंगे। मद के प्रथम भाग का संबंध संघ की सेनाओं से है और दूसरे भाग का संबंध रियासतों में रखी जाने वाली सेनाओं से है। मैं इन दोनों प्रकार की सेनाओं के संबंध में पृथक् से विचार प्रकट करूंगा। पहले भाग में संघ की जल, स्थल और वायुसेनाओं की भरती, उनकी ट्रेनिंग, उनका खर्च उठाने और उन्हें काम में लाने का दावा केन्द्रीय सरकार ने किया है और दूसरे भाग में भी, जिसमें रियासतों में रखी गई सेना की शक्ति और संगठन का जिक्र है, केन्द्रीय या संघ-सरकार या केन्द्रीय सरकार की तरफ से अधिकार प्राप्त करने का दावा उपस्थित किया गया है। श्री सन्तानम् मद के उस भाग को निकाल देना चाहते हैं, जिसमें संघीय-सेनाओं के काम में लाने के उद्देश्यों का वर्णन है। श्री संतानम् के संशोधन के अनुसार संघ की सेनाएं जिन उद्देश्यों के लिये काम में लाई जायें उनके संबंध में कोई उल्लेख मद में नहीं होना चाहिये। मैं परिषद्

[श्री एम.एस. अणे]

का ध्यान इस बात की ओर विशेष रूप से आकृष्ट करना चाहता हूं, क्योंकि प्रादेशिक इकाइयों की दृष्टि से उसका असाधारण महत्व है। संघ की सेनाओं के उपयोग के लिये दो उद्देश्यों का निर्देश किया गया है। पहला उद्देश्य संघ की भूमि की रक्षा और दूसरा संघ तथा उसकी प्रादेशिक इकाइयों के कानूनों को अमल में लाना है। संघ की भूमि की रक्षा एक विवादहीन विषय है और राज्य की सेनाओं का इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उपयोग एक ऐसी बात है, जिसे प्रत्येक व्यक्ति समझ सकता है। दूसरे उद्देश्य की पूर्ति के लिये केन्द्रीय सरकार के लिये आप के द्वारा किये गये प्रबन्ध के अनुसार उस सेना का उपयोग करना आसान न होगा। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये इस सेना का उपयोग आवश्यक है या नहीं–इस पर भी आपको विचार करना है। मान लीजिये कि संघ-राज्य के किसी कानून पर जनता अमल नहीं करती अथवा किसी प्रादेशिक इकाई की जनता उस इकाई के किसी कानून पर अमल नहीं करती, तो क्या संघ की सेना को अमन-कानून कायम करने में उन प्रादेशिक इकाइयों की सहायता करनी चाहिये और जनता से जबरन संघ तथा प्रादेशिक इकाइयों के कानूनों का पालन कराना चाहिये? जब आप इकाइयों को संघ में सम्मिलित करते हैं या रियासतों से ऐसा करने के लिये अनुरोध करते हैं, तो आप अप्रत्यक्ष रूप से आवश्यकता पड़ने पर उनमें अमन और कानून बनाये रखने में सहायता करने की जिम्मेदारी भी लेते हैं और यह जिम्मेदारी संघ को पूरी तरह उठानी भी चाहिये। इसलिये केन्द्रीय सरकार को संकट के समय इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये अपनी सेना के उपयोग का अधिकार होना चाहिये। मेरे विचार में उद्देश्य का निर्देशन आवश्यक है। अन्य उद्देश्य भी ऐसे हो सकते हैं, जिनकी पूर्ति के लिये संघ की सेनाओं के प्रयोग की आवश्यकता पड़ सकती है और यदि हम उन सभी उद्देश्यों का उल्लेख करना नहीं चाहते तो हम अंत में ये शब्द जोड़ सकते हैं–"राज्य के अन्य उन उद्देश्यों के लिये जिनका निर्णय राज्य स्वयं ही समय-समय पर करता रहे"। कैसे संकट के समय राज्य की सेनाओं का उपयोग किया जा सकेगा–इसका भी विशेष रूप से उल्लेख आवश्यक है। संघ की सेनायें सिर्फ संघ की भूमि की विदेशी आक्रमण से रक्षा के लिये ही नहीं होतीं, बल्कि संघ के भागों या प्रादेशिक इकाइयों की रक्षा के लिये भी होती हैं। मेरे मत में इस पिछले उद्देश्य के लिये भी राज्य की सेनाओं का उपयोग महत्वपूर्ण और आवश्यक है। हमारी नयी सरकार को जिन परिस्थितियों में काम करना पड़ेगा उनमें यह आवश्यक है कि संघ-सरकार को इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये भी कुछ अधिकार दिये जायें। जहां तक इस विषय का संबंध है, मेरे

विचार में श्री सन्तानम् और मेरे मध्य कोई मतभेद नहीं है। श्री सन्तानम् का कहना है कि जिन शब्दों में उद्देश्यों की व्याख्या की गई है उन्हें छोड़ देने से राज्य के अधिकार व्यापक हो जायेंगे। मुझे आशंका है कि ऐसी अवस्था में कहीं अधिकारों की संकुचित व्याख्या न की जाये, जिससे संकट के समय कठिनाइयां उठ खड़ी हों और रियासतों की सुरक्षा संकट में पड़ जाये। इसलिये यद्यपि मैं श्री सन्तानम् के संशोधन का विरोध नहीं करता, फिर भी मेरे ख्याल में उनके लिये अपने संशोधन पर अधिक जोर न देकर एक दूसरा संशोधन उपस्थित करना अधिक बुद्धिमानी होगी, जिसमें निम्न शब्द जोड़ दिये जायें–"अन्य ऐसे उद्देश्यों के लिये भी जिन्हें राज्य उचित और ठीक समझे"। श्री सन्तानम् ने अपना संशोधन उपस्थित करते समय जिन उद्देश्यों को दृष्टि में रखा है वे सबके सब इस संशोधान के अंतर्गत आ जाते हैं। ये विचार मैं परिषद् तथा मसविदा-समिति द्वारा बाद में ध्यान देने के लिये उपस्थित कर रहा हूं।

अब मैं दूसरे संशोधन पर आता हूं, जिसे मेरे माननीय मित्र सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य ने उपस्थित किया है। इस संबंध में मैं श्री गोपालस्वामी आयंगर से, जो इस कानून के संबंध में प्रारम्भिक कार्य कर रहे हैं, अनुरोध करता हूं, कि वे रियासतों के प्रवेश-पत्रों पर दृष्टि रखते हुये ऐसा संशोधन करें, जिससे रियासतों को असुविधा न हो। हमें भारत सरकार की तरफ से रियासतों को आश्वासन देना चाहिये कि यह सूची बनाते समय वह रियासतों के अधिकारों का अतिक्रमण नहीं करना चाहती। मैं उनसे अनुरोध करता हूं कि वे इन नियमों की छानबीन करके पता लगायें कि जैसी भाषा का प्रयोग किया गया है उससे कहीं रियासतों के सुरक्षित अधिकार-क्षेत्र का अतिक्रमण तो नहीं होता। यह एक ऐसा विषय है, जिस पर बातचीत द्वारा उनके और रियासत के बी॰एल॰ मित्तर जैसे प्रतिनिधियों के मध्य कुछ फैसला होना चाहिये। उनका उद्देश्य भी संघ-सरकार के लिये एक ऐसी शक्तिशाली सेना का निर्माण करना है, जो अमन और कानून की रक्षा कर सके और देश के भीतर गड़बड़ होने से रोक सके। मुझे आशा है कि श्री गोपालस्वामी आयंगर मेरे इन सुझावों पर विचार करेंगे।

***श्री के॰टी॰एम॰ए॰ इब्राहीम साहब** (मद्रास: मुस्लिम): महोदय, इस अवसर पर मैं आपका ध्यान उस कठिनाई की तरफ आकृष्ट करना चाहता हूं, जो परिषद् के सदस्य कितने ही संशोधन वापस लेने के कारण अनुभव कर रहे हैं। कार्यक्रम में जो संशोधन रखे गये हैं उनका सिर्फ कागजी महत्त्व है। अचानक एक के बाद दूसरा सदस्य उठता है और उन संशोधनों को वापस लेता है। महोदय, यह स्पष्ट

[श्री के.टी.एम.ए. इब्राहीम साहब]

है कि संशोधनों को सदस्यों ने अपने व्यक्तिगत निर्णय पर वापस नहीं लिया है, बल्कि यह निर्णय तो उस दल का है जिसके संशोधन की सूचना देने वाले सदस्य हैं। मैं परिषद् के सदस्यों और अध्यक्ष महोदय से अनुरोध करता हूं कि संशोधन वापस लेने की सूचना वे परिषद् के अन्य सदस्यों तक पहुंचा दें, जिससे कि संशोधन वापस लेने पर होने वाली असुविधा से वे बच सकें। जब हम परिषद् में आते हैं तो हमें कार्यसूची में दिये गये सब संशोधनों के लिये तैयार होकर आना पड़ता है और उनका समर्थन या विरोध करने के लिये अपना मत स्थिर करना पड़ता है। अचानक हमें संशोधन वापस लेने से उत्पन्न होने वाली स्थिति का सामना करना पड़ता है और इस प्रकार हमारी कितनी ही शक्ति और समय का अपव्यय होता है। संबंधित दल द्वारा संशोधनों के संबंध में कोई निर्णय करते ही इस निर्णय की सूचना कार्यालय तक पहुंच जानी चाहिये, ताकि कार्यालय इसकी सूचना परिषद् के अन्य सदस्यों तक भेज सके कि अमुक संशोधन वापस ले लिये गये हैं। मुझे आशा है कि संबंधित दल सदस्यों की सुविधा का ख्याल करके संशोधनों के संबंध में अपने निश्चयों की सूचना समय रहते ही कार्यालय को दे देगा, ताकि हम जान सकें कि कौन से संशोधन उपस्थित किये जायेंगे और कौन से नहीं। यह बात मैं भली-भांति जानता हूं कि अध्यक्ष, परिषद् या खुद मैं किसी सदस्य को संशोधन वापस लेने की सूचना देने को विवश नहीं कर सकता। परन्तु यह ज्ञात होने पर कि संबंधित दल परिषद् की बैठक होने से काफी पहले ही अमुक संशोधनों के संबंध में किसी निश्चय पर पहुंच चुका है, तो यह सूचना मिलने पर कि अमुक संशोधन उपस्थित नहीं किये जायेंगे, सदस्यों को बड़ी सुविधा होगी। महोदय, मैं आपसे यह कार्यविधि जारी करने का अनुरोध करता हूं। सैकड़ों संशोधनों की सूचना दी जाती है, किन्तु उपस्थित बहुत कम किये जाते हैं। यह असुविधा और शक्ति का अपव्यय क्यों हो? महोदय, मैं आपसे और संबंधित दल से सदस्यों की असुविधा की ओर ध्यान देने की अपील करता हूं।

***अध्यक्षः** मेरा ख्याल है कि प्रत्येक सदस्य का यह अधिकार है कि वह चाहे जिस संशोधन की सूचना दे और यदि कोई सदस्य अपने उस अधिकार से लाभ नहीं उठाता और अपने नाम से संशोधन की सूचना देने के स्थान पर किसी अन्य सदस्य के संशोधन पर निर्भर रहता है और यदि वह अन्य सदस्य अपना संशोधन उपस्थित न करे तो पहले सदस्य को कोई शिकायत नहीं होनी चाहिये। यदि कुछ सदस्यों को अपने संशोधनों की सूचना देने के लिये समय दिया जाता है और वे उन्हें उपस्थित नहीं करते तो इसमें सुविधा या असुविधा का कोई प्रश्न

नहीं उठता। निस्संदेह, इस प्रकार संशोधन वापस लेने पर कुछ असुविधा अवश्य होती है, किन्तु किसी सदस्य द्वारा अपना संशोधन उपस्थित न करने पर दूसरे सदस्य को शिकायत नहीं होनी चाहिये। यदि कोई माननीय सदस्य किसी विषय को महत्त्वपूर्ण समझ कर संशोधन उपस्थित करने की आवश्यकता का अनुभव करते हैं तो उन्हें समय के भीतर ऐसे संशोधन की सूचना खुद देनी चाहिये। यदि कोई सदस्य अपना संशोधन उपस्थित नहीं करना चाहते तो मैं उनसे ऐसा न करने के लिये कह सकता हूं, किन्तु मुझे विश्वास है कि माननीय सदस्य अन्य सदस्यों की सुविधा का ख्याल रखेंगे।

अब श्री गोपालस्वामी बहस का उत्तर दे सकते हैं।

***माननीय श्री एन० गोपालस्वामी आयंगर:** महोदय, जहां तक इस विवाद को मैं समझ पाया हूं, इस मद के संबंध में निर्णय करने के लिये केवल दो संशोधन ही हमारे सामने हैं। पहला श्री सन्तानम् द्वारा उपस्थित किया गया है। महोदय, इसे मैं एक शाब्दिक परिवर्तन के साथ स्वीकार किये लेता हूं। उनके द्वारा संशोधित रूप में मद 5 का पहला भाग इस प्रकार होगा:

> **''दि रेजिंग, ट्रेनिंग, मेंटेनेंस एंड कंट्रोल आफ नेवल, मिलिट्री एंड एयर फोर्सेज एंड दि एम्प्लायमेंट देयरआफ।''**

इस वाक्य के शेष शब्दों को छोड़ दिया जायेगा। मेरे ख्याल में ''एण्ड देयर एम्प्लायमेंट'' कहना और 'देयरआफ'' शब्द को निकाल देना अधिक उत्तम होगा। बस यही है।

***श्री के० सन्तानम्:** मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

***माननीय श्री एन० गोपालस्वामी आयंगर:** जहां तक श्री अणे द्वारा उठाई गई बात का संबंध है, इसमें कोई संदेह नहीं कि ये सेनायें जिन उद्देश्यों के लिये काम में लाई जा सकें, उनका निर्देशन आवश्यक है। परन्तु साथ ही उन्होंने यह बात भी स्वीकार कर ली है कि इस प्रकार के निर्देशन से सेनाओं का प्रयोग उन्हीं उद्देश्यों तक सीमित हो सकता है। सब कुछ मिलाकर मेरा ख्याल है कि मूल मसविदे में जो उद्देश्य बताये गये हैं, वही उचित हैं और यदि हम उन्हें छोड़ दें तो भी ''देयर एम्प्लायमेंट'' शब्दों के कारण वे तथा अन्य कितने ही उद्देश्यों को, जिनके लिये सशस्त्र सेनाओं का प्रयोग किया जा सकता है, सम्मिलित किया जा सकता है। महोदय, मेरे विचार से सब कुछ मिलाकर मद के पहले भाग के बाद के शब्दों को छोड़ना ही उत्तम रहेगा, जैसा सुझाव श्री सन्तानम् ने

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

उपस्थित किया है। महोदय, दूसरा महत्वपूर्ण संशोधन सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य ने उपस्थित किया है। इस संशोधन के समर्थकों के उद्देश्य में तथा मसविदा बनाने वाली समिति ने मूल मद के पिछले भाग का मसविदा इस रूप में बनाते समय अपने सामने जो उद्देश्य रखा था उसमें कुछ भी भेद नहीं है। समिति का इरादा रिपोर्ट के पांचवें पैरा में स्पष्ट कर दिया गया है। इसमें कहा गया है:

''हमने संघ की मदों में निम्न मद को भी सम्मिलित कर लिया है– 'रियासतों में भरती की गई और रखी गई सशस्त्र सेनाओं की शक्ति, संगठन और नियंत्रण।' रियासती सेनाओं के एकीकरण तथा नियंत्रण के लिए अभी जो अधिकार काम में लाये जाते हैं, हमारा इरादा उन्हें बनाये रखने का है।''

संशोधन का उद्देश्य यह बताना है कि केन्द्र तथा रियासतों की सशस्त्र सेनाओं के मध्य उनकी विभिन्न कक्षाओं के अनुसार कितना संबंध रहेगा। इन कक्षाओं का उल्लेख मेरे माननीय मित्र श्री पट्टानी कर चुके हैं और समिति ने वस्तुस्थिति को जिस रूप में समझा है उसी रूप में इसे इस विशिष्ट मद में रखा है। इस संशोधन के प्रस्तावक का विचार है कि संशोधन के शब्द मूल मद की अपेक्षा समिति के इरादे को अधिक सच्चाई के साथ प्रकट करते हैं, किन्तु वे नहीं कह सकते कि उनका यह मत निस्संदेह ठीक है। उन्होंने कहा है कि मैं इस विषय की छानबीन करके इस बात का भी प्रबन्ध कर दूं कि समिति का जो इरादा वास्तव में है, वही इसके द्वारा प्रकट हो। इसलिये इस संशोधन के प्रस्तावक को मैं यह आश्वासन देता हूं कि मैं ऐसा अवश्य करूंगा और यदि आवश्यक होगा तो विधान की शब्दावली में ऐसा हेरफेर कर दूंगा, जिससे रिपोर्ट के पैराग्राफ 5 में प्रकट किया गया इरादा पूरा होता हो। महोदय, मुझे आशा है कि इस आश्वासन के कारण प्रस्तावक महोदय अपने संशोधन को आगे न बढ़ायेंगे।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारी:** मैं अपने संशोधन को आगे नहीं बढ़ाना चाहता।

***अध्यक्ष:** अब हमारे सामने सिर्फ श्री सन्तानम् का संशोधन है, जिसे मद के प्रस्तावक ने स्वीकार कर लिया है। इसमें सिर्फ एक शाब्दिक परिवर्तन किया गया है।

***अध्यक्षः** सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य का एक शाब्दिक संशोधन और है कि मद 5 में 'वायु सेना' (एयर फोर्सेज) शब्दों के आगे 'संघ के खर्च पर रखी गई' शब्द और जोड़ दिये जायें।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारीः** इस संशोधन को मैं दूसरे संशोधन के कारण वापस लेता हूं।

***अध्यक्षः** इसे वापस ले लिया गया है और दूसरे संशोधन को आगे बढ़ाया नहीं जा रहा है। अब हमारे सामने श्री संतानम् द्वारा संशोधित रूप में मूल संशोधन है और इस पर मत लिये जाते हैं।

श्री संतानम् द्वारा संशोधित रूप में मद स्वीकार कर ली गई।

मद 6

***अध्यक्षः** अब हम मद 6 को उठाते हैं।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारीः** श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन के कारण मैं अपना संशोधन आगे नहीं बढ़ाना चाहता। मैं श्री अल्लादी कृष्णास्वामी के संशोधन का समर्थन करता हूं। इसलिए मैं अपना संशोधन उपस्थित नहीं करता हूं।

***अध्यक्षः** श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर, आप को मद 6 पर अपना संशोधन उपस्थित करना है।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रासः जनरल): मैंने जिस संशोधन की सूचना दी है वह इस प्रकार है:

''मद 6 के स्थान पर निम्न शब्दों को रखा जाये:

'ऐसे उद्योग, जो रक्षा या युद्ध चलाने के उद्देश्य से आवश्यक समझे जायें और जिनके संबंध में संघ के कानून द्वारा ऐसी घोषणा की गई हो।' ''

मैं यह कहना चाहता हूं कि कुछ क्षेत्रों में यह सुझाव उपस्थित किया गया है कि संशोधन के पहले भाग के परिणामस्वरूप यह बात अदालती कार्यवाही का विषय बन सकती है कि उनका उद्योग रक्षा के लिये आवश्यक है या नहीं और इसलिए मेरे संशोधन में यह शाब्दिक परिवर्तन करने का सुझाव उपस्थित किया गया है कि ऐसे व्यवसायों की घोषणा की जाये जो संघ के कानून द्वारा रक्षा या

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

युद्ध-संचालन के लिये आवश्यक समझे गये हों। यदि परिषद् को इस शाब्दिक परिवर्तन पर कोई आपत्ति न हो तो मैं उस शाब्दिक परिवर्तन के साथ अपना संशोधन उपस्थित करूंगा कि ''ऐसे व्यवसायों की घोषणा की जाये, जो संघ के कानून द्वारा रक्षा या युद्ध-संचालन के लिये आवश्यक समझे गये हों।''

इस संशोधन को उपस्थित करते समय मैं कुछ बातें कहना चाहता हूं। पहली बात तो यह है कि इस मद के साथ यह इरादा नहीं है कि व्यवसायों को नियंत्रण करने का प्रांतीय सरकारों का जो कर्तव्य है, उसमें किसी प्रकार से हस्तक्षेप किया जाये। यह उस नियम का अपवाद माना जायेगा और इसीलिए ''रक्षा-उद्योग'' शब्दों का प्रयोग किया गया है। परन्तु ''रक्षा-उद्योग'' शब्दों के संबंध में यह उचित ही कहा गया है कि आधुनिक युद्धों के समय प्राय: किसी भी उद्योग को युद्ध-उद्योग कहा जा सकता है और इस बहाने से संघ-धारा-सभा प्रांतीय स्वाधीनता तथा प्रांतीय शासन में हस्तक्षेप कर सकती है। इसलिए ''रक्षा-उद्योगों'' की कोई न कोई व्याख्या आवश्यक है और इस संशोधन द्वारा यह व्याख्या जोड़ दी गई है। निस्संदेह इसके द्वारा संघ-धारा-सभा को संघ-कानून द्वारा ''रक्षा-उद्योग'' घोषित करने का अधिकार दिया गया है। फिर कहा जा सकता है कि इससे क्या अंतर पड़ा? उत्तर यही है कि संघ-धारा-सभा का ध्यान विशेष रूप से इस बात की तरफ आकृष्ट किया गया है कि उसे घोषणा करनी चाहिये कि अमुक उद्योग रक्षा की दृष्टि से आवश्यक है या नहीं। यदि प्रस्तावित कानून के अनुचित रूप से उपयोग की संभावना होगी तो धारा-सभा में जनता के प्रतिनिधि कानून बनाने पर आपत्ति करेंगे और मत प्रकट करेंगे कि इससे उद्देश्य अर्थात् ''संघ की रक्षा'' की सिद्धि नहीं होती और यह भी कि यह तो एक ऐसा उद्देश्य है, जिसका उल्लेख भूमिका में किया गया है, किंतु वास्तविक उपखंडों से उद्देश्य की सिद्धि नहीं होती। इसलिए, धारा-सभा के सदस्य इस संबंध में यह आपत्ति करने के लिए स्वतंत्र रहेंगे कि इससे रक्षा के उद्देश्य की सिद्धि नहीं होगी। मुझे विश्वास है कि संशोधन के कारण जहां रक्षा के उद्देश्य की पूर्ति में बाधा न पड़ेगी वहां प्रांतों की यह आशंका भी मिट जायेगी कि कहीं केन्द्रीय धारा-सभा प्रांतों में वहां के उद्योगों के प्रोत्साहन के प्रांतीय अधिकार-क्षेत्र में बाधा न पहुंचाये।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम का संशोधन इस प्रकार है:

''मद 6 में 'रक्षा-उद्योगों' के स्थान पर 'आग्नेय अस्त्र, परमाणु बम और गोली-गोले बनाने के उद्योग' शब्दों को रखा जाये।''

इस मद के अस्पष्ट होने की बात मान ली गई है। सबसे पहली बात तो यह स्पष्ट नहीं है कि इस कक्षा के अंतर्गत कौन उद्योग आते हैं। कपड़ा और चीनी की मिलें, वनस्पति तेल की मिलें, सीमेंट तथा लोहे व इस्पात के कारखाने, अनाज की खेती—इन सबका उद्देश्य रक्षा हो सकता है। यदि इरादा इनमें से कुछ या सबको मद 6 के अंतर्गत सम्मिलित करने का हो तो कितना ही भ्रम फैल सकता है। प्रस्तुत सूची की 1935 के भारतीय शासन-कानून से तुलना करने से स्पष्ट हो जाता है कि कानून के निर्माता इस मद को अपनी सूची में सम्मिलित करना आवश्यक नहीं समझते थे। अब भी किसी को स्पष्ट रूप से ज्ञात नहीं है कि किन उद्योगों को सम्मिलित किया जायेगा। श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का जो संशोधन अभी उपस्थित किया गया है, उससे भी स्थिति स्पष्ट नहीं होती। उन्होंने जो संशोधन उपस्थित किया है उसके बावजूद भी स्थिति अस्पष्ट है। इसीलिए महोदय, मैं चाहता हूं कि परिषद् को कम से कम यह बताया जाये कि इस मद में किन उद्योगों को सम्मिलित किया जायेगा। यह स्पष्टीकरण होने पर ही मैं विचार करूंगा कि मुझे अपना संशोधन वापस लेना चाहिये या नहीं।

***अध्यक्षः** श्री माधवराव, मैं एक संशोधन को छोड़ गया हूं, जिसकी सूचना आपने दी थी।

***श्री एन॰ माधव राव** (पूर्वी रियासत समूह संख्या 2): महोदय, श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर द्वारा संशोधन उपस्थित किये जाने के कारण मैं अपना संशोधन उपस्थित नहीं करना चाहता।

***अध्यक्षः** यही संशोधन हैं, जिनकी सूचना मुझे मिली है। अब संशोधनों तथा मद पर बहस की जा सकती है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** महोदय, मैं श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन का समर्थन और हिम्मतसिंह महेश्वरी के संशोधन का विरोध करता हूं।

मेरा विचार है कि इस मद की आवश्यकता पर श्री गोपालस्वामी आयंगर पहले ही प्रकाश डाल चुके हैं। मेरा अपना तो ख्याल यह था कि रक्षा संबंधी मद 1 ही पर्याप्त थी। परन्तु, जैसाकि वे बता चुके हैं, इससे मुकदमेबाजी और गड़बड़ हो सकती है और भ्रम से बचने के लिए विभिन्न उपमदों का समावेश किया गया है। परन्तु मद के वर्तमान रूप में भी ''रक्षा-उद्योगों'' के वास्तविक अर्थ के संबंध में अस्पष्टतायें रह गई हैं। श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने अपने संशोधन के द्वारा इस भ्रम को दूर करने का प्रयत्न किया है। उद्देश्य की व्याख्या करने

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

के लिए संघ के कानून की आवश्यकता अनुभव की गई है। इसमें कोई भी संदेह नहीं है कि जब संघ-कानून व्याख्या करने का प्रयत्न करेगा, तो इस विषय में बड़ी सावधानी से छानबीन की जायेगी कि उद्देश्य की सीमाओं के भीतर किन उद्योगों का समावेश करना उचित है। परन्तु, इससे अधिक स्पष्टीकरण असंभव है, क्योंकि ऐसा करने से मद के क्षेत्र में अनावश्यक रूप से कमी होने की आशंका है। चूंकि आश्वासन प्रथम संशोधन के प्रस्तावक की तरफ से दिया गया है, इसलिए परिषद् के नेता की तरफ से उसे रिपोर्ट उपस्थित करने वाले माननीय सदस्य का आश्वासन नहीं माना जा सकता। अस्तु, मैं चाहता हूं कि रिपोर्ट उपस्थित करने वाले माननीय सदस्य यह आश्वासन दें कि कानून बनाते समय रक्षा के उद्देश्य से बाहर जाने का प्रयत्न नहीं किया जायेगा। यदि ऐसा किया जाये तो फिर कोई गड़बड़ होने की संभावना नहीं है।

जहां तक पिछले संशोधन का संबंध है, मेरी आशंका है कि उससे मद का क्षेत्र अनावश्यक रूप से सीमित हो जाता है। रक्षा ऐसा महान् और महत्त्वपूर्ण विषय है कि उसकी आवश्यकताओं के मुकाबले में व्यक्तिगत–और यहां तक कि राष्ट्रीय सुविधाओं का बलिदान हो जाना चाहिये और इन परिस्थितियों में संघ-धारा-सभा को उसके विषय में पूर्ण अधिकार मिलना चाहिये। इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारत की रक्षा की आवश्यकताओं को पूरा करते हुए जनता की सुविधा का भी पर्याप्त ख्याल रखा जायेगा। इन शब्दों के साथ, जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, मैं पहले संशोधन का समर्थन और दूसरे का विरोध करता हूं।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर:** अध्यक्ष महोदय, मैं श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन को अनावश्यक समझता हूं। रक्षा-उद्योगों को सम्मिलित करने का प्रस्ताव ठीक है। वह पर्याप्त है। यदि श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है तो एक कठिनाई उठ खड़ी होती है। यदि हम स्मरण रखते हैं कि इस सूची में उल्लिखित मदें वही मदें हैं, जिनके संबंध में धारा-सभा को कानून बनाने का अधिकार प्राप्त है तो ऐसी अवस्था में आपके लिए इस मद में यह बात सम्मिलित करना आवश्यक नहीं है कि उद्योगों को संघ-कानून द्वारा रक्षा के लिए आवश्यक घोषित किया जाये। इस विशिष्ट मद में इस बात को सम्मिलित करना अनावश्यक है कि कुछ उद्योगों को संघ-कानून द्वारा रक्षा के लिए आवश्यक घोषित किया जाये। इस सूची में कतिपय मदों को सम्मिलित करने से क्या यह तात्पर्य है कि इन मदों के संबंध में धारा-सभा को

कानून बनाने का अधिकार है? ऐसी परिस्थितियों में इस मद में यह उल्लेख करने की क्या आवश्यकता है कि कुछ मदों को संघ-कानून के अंतर्गत रक्षा-उद्योग घोषित कर दिया जाये? यदि हम इस संशोधन को स्वीकार कर लेते हैं तो इस मद तथा अन्य मदों की शब्दावली में भेद के कारण अन्य मदों को लेकर इस मद के संबंध में कितनी ही कठिनाइयां उठ सकती हैं।

यह खंड ''संघ-कानून द्वारा घोषित'' अनावश्यक है। इस मद को उसके मूल रूप में ही छोड़ देना चाहिए। यदि आप इस मद में कतिपय उद्योगों का उल्लेख करना चाहते हैं तो मैं श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी के संशोधन को तरजीह दूंगा, जिसमें कहा गया है कि धारा-सभा को अमुक उद्योगों के संबंध में कानून बनाने का अधिकार रहेगा—यद्यपि मैं उनकी इस बात से सहमत नहीं हूं कि उल्लिखित मदों का विस्तार नहीं किया जा सकता। मैं मद को मूल रूप में पसंद करता हूं। जैसा कि मैं निवेदन कर चुका हूं, श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का संशोधन सिर्फ अनावश्यक और व्यर्थ ही नहीं है, बल्कि इसमें अन्य मदों के संबंध में अनावश्यक कठिनाइयां भी उठ खड़ी होने की संभावना है। यदि परिषद् चाहती है कि धारा-सभा जिन मदों के संबंध में कानून बना सके उन्हें गिना दिया जाये तो उन सभी मदों का बताया जाना अच्छा होगा। इसलिए मैं दोनों ही संशोधनों का विरोध करता हूं और मूल मद का ही समर्थन करता हूं।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यरः** भारतीय शासन-कानून और वर्तमान कानून दोनों ही में आपको ''संघ-कानून द्वारा घोषित'' शब्द कितनी मदों में मिलेंगे और ऐसे स्थलों पर सूची में मद को सम्मिलित करने के लिए इस प्रकार की घोषणा आवश्यक शर्त बना दी गई है। संघ के कानून द्वारा रक्षा या युद्ध-संचालन के लिए आवश्यक घोषित किये जाने का यही उद्देश्य है।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुरः** इससे वहां सम्मिलित किया जाना उचित सिद्ध नहीं होता।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः** महोदय, मि॰ महबूबअली बेग ने सूची की मूल मद का जिस प्रकार समर्थन किया है, उसके लिए साधारण रूप से मैं उनका अनुग्रहीत होता, किंतु मुझे राजी कर लिया गया है कि संघ-धारा-सभा को दिये जाने वाले अधिकार के वर्णन के लिए मूल मद की अपेक्षा श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का संशोधन अधिक उत्तम है। इसका कारण श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने स्वयं बताया है। अब मैं श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन में दिये गये इस वर्णन की तरफ परिषद् का ध्यान आकृष्ट करना

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

चाहता हूं। उद्योगों के विषय का संबंध मुख्यतः प्रांतों से है। यदि हम इस विषय से एक अंश पृथक् कर लेते हैं, जिसके संबंध में संघ-धारा-सभा को कानून बनाने का अधिकार रहेगा–तो वांछनीय है कि उस अंश की समुचित रूप से व्याख्या कर दी जाये और अधिकार केवल उन्हीं उद्योगों के संबंध में ग्रहण किया जाए, जिन्हें प्रांतों के अधिकार-क्षेत्र से निकालकर केन्द्र के अधिकार-क्षेत्र के अंतर्गत किया गया है। यदि हम मद को मूल रूप में छोड़ दें तो यह निर्णय देना अदालतों के अधिकार-क्षेत्र की बात होगी कि अमुक उद्योग रक्षा-उद्योग है या नहीं, किंतु यदि हम श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन की भाषा स्वीकार करते हैं तो संघ-धारा-सभा ही पहले यह निर्णय कर लेगी कि अमुक उद्योग को रक्षा के उद्देश्य से संघ की अधीनता में करना आवश्यक है या नहीं। जब धारा-सभा एक बार यह निर्णय कर लेगी तो कोई अदालत यह कहकर हस्तक्षेप न कर सकेगी कि अमुक उद्योग रक्षा के उद्देश्य के लिए आवश्यक नहीं है। इसीलिए इस संशोधन को स्वीकार करने का निश्चय किया गया है।

जहां तक मेरे माननीय मित्र श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी द्वारा उपस्थित संशोधन का संबंध है, मि॰ नजीरुद्दीन अहमद पहले ही इस विषय की चर्चा कर चुके हैं। हम रक्षा-उद्योगों को आग्नेय अस्त्र, परमाणु बम तथा गोली-गोलों के निर्माण तक सीमित नहीं कर सकते। यहां तक कि शांति के समय भी संघ को कितने ही उद्योगों के संबंध में अपने अधिकार का उपयोग करना पड़ता है। यदि सशस्त्र सेनाओं के लिए अन्न, वस्त्र तथा साज-सामान उपलब्ध करने के उद्देश्य से कतिपय उद्योगों पर संघ का अधिकार स्थापित करना आवश्यक हो जाता है–चाहे वे उद्योग संघ के स्वत्व में हों या उसके नियंत्रण में रहें–तो संघ धारा-सभा द्वारा उपयुक्त कार्रवाई किये जाने में कोई बाधा नहीं पड़नी चाहिए। इसलिए मैं श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी के संशोधन का विरोध करता हूं और श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का संशोधन स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्षः** मैं पहले श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन पर मत लेता हूं।

प्रश्न यह है कि मद 6 के स्थान पर निम्न शब्दों को रखा जायेः

''ऐसे उद्योग जो रक्षा या युद्ध चलाने के उद्देश्य से आवश्यक समझे जायें और जिनके संबंध में संघ के कानून द्वारा ऐसी घोषणा की गई हो।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***श्री हिम्मतसिंह के. महेश्वरी:** मैं यह मतलब लगाता हूं कि श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन का उद्देश्य निर्णय को स्थगित करना है और इसीलिए मुझे अपना संशोधन वापस लेने में कोई आपत्ति नहीं है।

***अध्यक्ष:** श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन ने मूल मद का स्थान ग्रहण कर लिया है और इसलिए मैं इसे फिर परिषद् के आगे उपस्थित करता हूं।

प्रश्न यह है कि:

''मूल मद श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन द्वारा संशोधित रूप में स्वीकार कर ली जाये।''

मद 6 संशोधित रूप में स्वीकार कर ली गई।

मद 7

***अध्यक्ष:** मद 7 के लिए सिर्फ एक ही संशोधन है। यह श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी का है और सूची 6 में उसकी मद 4 है।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** अध्यक्ष महोदय, जिस संशोधन को उपस्थित करने की मैं अनुमति चाहता हूं वह इस प्रकार है कि:

मद 7 में अंत की ओर निम्न शब्दों को जोड़ दिया जाये:

''संघ में सम्मिलित होने वाली रियासत के निर्मित कार्यों के अतिरिक्त।''

यह मद अभी इस प्रकार है–''नौसेना, स्थल सेना तथा वायु सेना के निमित्त कार्य।'' महोदय, जहां तक मेरी जानकारी है, संघ में सम्मिलित होने वाली कुछ रियासतों ने स्थल सेना तथा वायु सेना की इमारतें आदि अपने खर्च से बनवाई हैं। मैं समझता हूं कि संघ का इरादा इन्हें अपने अधिकार में करने का नहीं है। इस संबंध में रिपोर्ट तैयार करने वालों से आश्वासन मिल सकता है और मैं उनका मत भी जानना चाहता हूं। इसीलिए इस समय मैं कुछ नहीं कह रहा हूं।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री हिम्मतसिंह ने जो अंतिम बात कही है, उसके संबंध में मैं कहना चाहता हूं

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

कि इस मद को मूल रूप में सूची में सम्मिलित कर लेने का यह मतलब नहीं है कि किसी रियासत ने अपने यहां यदि कोई सेना की इमारत आदि बनवाई है तो संघ उससे इस अधिकार को छीन लेगा। परन्तु साथ ही मैं उन्हें यह चेतावनी भी देना चाहता हूं कि देश की रक्षा के विचार से यदि संघ यह फैसला करे कि उसे रियासतों द्वारा तैयार कराई गई ऐसी इमारतों आदि पर अधिकार कर लेना चाहिए या उन पर नियंत्रण कर लेना चाहिए तो ऐसा करने के लिए वह स्वतंत्र रहेगा। मेरे ख्याल में स्वयं श्री हिम्मतसिंह भी संघ के इस अधिकार के संबंध में कोई संदेह नहीं उठायेंगे कि देश की रक्षा के विचार से वे इस प्रश्न का फैसला करें कि स्थल, जल और वायु सेनाओं की किन इमारतों आदि पर संघ का अधिकार रहना चाहिए और किन्हें स्वयं रियासतों के लिए छोड़ा जा सकता है। जो भी कानून बनाया जायेगा–उसमें इन बातों को तय किया जा सकता है। परन्तु अधिकार तो वास्तव में संघ का ही रहेगा।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** ऊपर किये गये स्पष्टीकरण के कारण मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

(परिषद् की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।)

***अध्यक्ष:** प्रश्न है कि मद 7 को मंजूर कर लिया जाये।

मद स्वीकार कर ली गयी।

मद 8

***श्री आर॰के॰ सिधवा** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): महोदय, परिशिष्ट की सूची 1 में मद 8 इस प्रकार है–''छावनी-क्षेत्रों में स्थानीय स्वायत शासन, छावनी अधिकारियों की नियुक्ति और उनका अधिकार संबंधी प्रबंध, इन क्षेत्रों में रहन-सहन की व्यवस्था और इन क्षेत्रों का सीमा निर्धारण''। यदि आप भारतीय शासन-कानून, 1935 (पृष्ठ 299, मद 2) पर दृष्टि डालेंगे तो प्रकट होगा कि उसके भी शब्द प्राय: यही हैं। उसमें कहा गया है कि:

''छावनी-क्षेत्रों में स्थानीय स्वायत्त शासन–किन्तु रियासतों के छावनी क्षेत्र इसमें सम्मिलित न होंगे–इन क्षेत्रों में रहन-सहन की व्यवस्था.............. .... आदि।''

इस सूची में शब्द प्राय: भारतीय शासन-कानून के ही हैं। मेरा संशोधन इस प्रकार है कि:

''मद 8 में 'छावनी-क्षेत्रों में स्थानीय स्वायत्त शासन, छावनी-अधिकारियों की नियुक्ति और उनका अधिकार संबंधी प्रबंध' शब्दों के स्थान पर निम्न शब्द रखे जायें:

'केवल उस क्षेत्र का नियंत्रण, जिसमें सेना रखी गई हो या शस्त्रागार, (निर्माण क्षेत्रों में) कारखाना और गोली-गोले रखे गये हों। ''

मैंने जो संशोधन उपस्थित किया है उससे स्पष्ट हो गया होगा कि मैं स्थानीय स्वायत्त शासन क्षेत्र और छावनी-क्षेत्र में भेद करता हूं। पिछले बीस वर्ष से इस विषय पर विवाद छिड़ा हुआ है और भारत में विभिन्न अधिकारी–यहां मेरा मतलब एक तरफ स्थानीय तथा छावनी वाले अधिकारियों से और दूसरी तरफ प्रांतीय सरकारों तथा केन्द्रीय सरकार से है–इस प्रश्न पर विचार करते रहे हैं। युद्ध से कुछ ही पहले भारत सरकार को इस गुत्थी को सुलझाने के विचार से हस्तक्षेप करना पड़ा। परन्तु इसी बीच युद्ध छिड़ गया और बात जहां की तहां रह गई। जो लोग छावनियों में गये हैं और जिन्होंने इस विषय का अध्ययन किया है वे इसे सहज ही में समझ लेंगे। फिर भी मैं माननीय परिषद् से अनुरोध करूंगा कि इस मद का जिस पेचीदी समस्या से संबंध है, उसे समझने के लिए मेरे कुछ शब्द सुनने का धैर्य रखें।

भारत में कितनी ही छावनियां हैं, जिनमें सैनिक रखे जाते हैं। इस छावनी के क्षेत्र और सैनिकों को रखने के क्षेत्र के मध्य में कुछ गैर सैनिक जनता रहती है। इस गैर सैनिक जनता पर भी छावनी-कानून लागू होता है। जहां तक सैनिकों के क्षेत्र का संबंध है, छावनी के अधिकारी उसे अधिक से अधिक साफ रखते हैं और सैनिकों को सभी सुविधाएं उपलब्ध की जाती हैं। परन्तु डेढ़ मील आगे जहां पर गैर सैनिक जनता रहती है, ये सुविधाएं उपलब्ध नहीं की जातीं। पीने के पानी का अभाव होता है, जल की निकासी का प्रबंध त्रुटिपूर्ण होता है और अस्पताल तथा कुओं का अभाव होता है। कहीं-कहीं तो यह क्षेत्र एक मील से लेकर 8 और 9 मील तक होता है और सीमाओं का निर्धारण इस प्रकार किया जाता है कि कहीं-कहीं यह क्षेत्र स्थानीय अधिकारियों की–मेरा मतलब प्रांतीय सरकार से है–देख-रेख में आ जाता है और सिर्फ 25 गज आगे ही छावनी का क्षेत्र रहता है। इस प्रश्न को लेकर स्थानीय अधिकारियों, केन्द्रीय अधिकारियों और प्रांतीय

[श्री आर.के. सिधवा]

अधिकारियों के मध्य गुत्थी उत्पन्न हो गई है, क्योंकि छावनी-क्षेत्र के बाहर गैर सैनिक जनता को जो सुविधाएं उपलब्ध होती हैं उनसे छावनी-क्षेत्र में उन्हें वंचित रखा जाता है। कारण यह है, जैसा कि मैं कह भी चुका हूं। छावनी-कानून से ही छावनियों का प्रबंध होता है। इस कानून के अंतर्गत छावनी के प्रबंध के लिए सैन्य अधिकारी कुछ व्यक्तियों को नामजद कर देते हैं और कुछ अन्य व्यक्ति शेष जनता की तरफ से रख लिये जाते हैं। गैर सैनिक स्थान जमींदार आदि लोगों से भरे जाते हैं और शेष स्थानों पर सैन्य अफसर होते हैं। परिणाम यह होता है कि छावनी के भीतर गैर सैनिक जनता को उसकी सुविधाओं तथा अधिकारों से वंचित रखा जाता है, जब कि सिर्फ 25 गज की दूरी पर अन्य जनता अपनी म्युनिसिपैलिटियों तथा स्थानीय संस्थाओं की तरफ से उन अधिकारों तथा सुविधाओं का उपभोग करती है।

***श्री एम॰एस॰ अणे:** माननीय सदस्य अभी कितना समय लेंगे?

***श्री आर॰के॰ सिधवा:** महोदय, मुझे काफी समय लगेगा। यह एक ऐसा विषय है, जिस पर मैं सिर्फ अपने विचार प्रकट नहीं कर रहा हूं, बल्कि जिस पर वर्ष-प्रतिवर्ष अखिल भारतीय स्थानीय संस्था, संघ................।

***अध्यक्ष:** इस हालत में हम अपनी बहस कल जारी रख सकते हैं। यदि आप चाहें तो अपना भाषण कल जारी रख सकते हैं।

माननीय सदस्य: कल नहीं बल्कि सोमवार।

***अध्यक्ष:** हां, सोमवार। परिषद् सोमवार, 10 बजे तक के लिए स्थगित की जाती है।

परिषद्, सोमवार, 25 अगस्त, 1947 को 10 बजे प्रात:काल तक के लिए स्थगित हुई।

Con. 3.5.6.47
750

अंक 5
संख्या 6

सोमवार
25 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना	1
2.	शपथ ग्रहण करना	1
3.	बर्मा विधान-परिषद् का संदेश	1
4.	कार्यक्रम के संबंध में अध्यक्ष की घोषणा	1
5.	पश्चिमी पंजाब की दुर्घटनाओं के प्रति सहानुभूति	3
6.	संघ अधिकार समिति की रिपोर्ट–जारी	5

भारतीय विधान-परिषद्

सोमवार, 25 अगस्त, सन् 1947 ई०

माननीय डा० राजेन्द्र प्रसाद जी की अध्यक्षता में भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रात:काल दस बजे आरम्भ हुई।

रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना

निम्न सदस्य ने रजिस्टर में अपने हस्ताक्षर किये:

श्री सैयद अब्दुल रऊफ।

शपथ ग्रहण करना

निम्न सदस्यों ने शपथ ग्रहण की:

श्री काला वैंकटा राव।

मि० सैयद अब्दुल रऊफ।

माननीय श्री बृजलाल नन्दलाल बियाणी।

बर्मा विधान-परिषद् का संदेश

***अध्यक्ष:** हमने बर्मा विधान-परिषद् के प्रधान को जो संदेश भेजा था उसके उत्तर में मुझे उनका एक पत्र मिला है। पत्र इस प्रकार है:

''जनरल आंगसांन और उनके साथियों की हत्या से बर्मा को जो हानि हुई है उस पर समवेदना तथा सहानुभूति सूचक आपके संदेश के लिये बर्मा विधान-परिषद् की ओर से मैं स्वयं धन्यवाद देता हूं। बर्मी राष्ट्र उस स्वतंत्रता का अवश्य ही शांतिपूर्वक उपयोग करेगा जिसे इन स्वर्गवासी वीरों ने बर्मा के लिये प्राप्त किया था। आपके सहानुभूति संदेश के प्रति हमारे सम्मान की सूचना अपनी विधान-परिषद् के समस्त सदस्यों को कृपाकर दीजिये। आपके समवेदना सूचक संदेश की सूचना दुखी परिवारों को मैं पहुंचा दूंगा।

कार्यक्रम के संबंध में अध्यक्ष की घोषणा

***अध्यक्ष:** सूची के शेष मदों पर विचार के विषय को लेने के पूर्व मैं इस

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[अध्यक्ष]

अधिवेशन के कार्यक्रम के संबंध में कुछ घोषणा करूंगा। मैंने ऐसा ही एक दिन और कहा था कि हम यथासंभव शीघ्र ही संघ अधिकार समिति की रिपोर्ट पर विचार समाप्त करने का प्रयत्न करें। अब तक की हमारी प्रगति बड़ी धीमी है, मैं संघ अधिकार समिति की रिपोर्ट पर विचार करने के लिये आज और कल के समय का प्रस्ताव रखता हूं और बुधवार से हम अल्पसंख्यकों तथा मौलिक अधिकारों से संबंधित परामर्शदातृ की रिपोर्ट आरंभ करेंगे, और मेरे ख्याल से वह बुधवार तथा बृहस्पतिवार ले लेगी। शुक्रवार, उस कमेटी की रिपोर्ट पर विचार करने के लिये नियत किया जायेगा जिसको हमने यह सुझाव रखने के लिये नियुक्त किया था कि इस परिषद् के विधान-परिषद् तथा व्यवस्थापिका के कार्यों के संबंध में क्या कदम उठाया जाये। इस प्रकार मैं आशा करता हूं कि हम इस अधिवेशन के कार्य को अधिक से अधिक 31 तारीख तक समाप्त कर सकेंगे। यदि आवश्यकता हुई तो मैं प्रस्ताव रखता हूं कि हम दोपहर बाद सम्मिलित हों और यदि और भी आवश्यकता हुई तो रात्रि में अधिवेशन करें। हमें इतने अधिक कार्य करने हैं कि इस अधिवेशन को इस माह से आगे ले जाना संभव नहीं है, इसलिये मैं जितना शीघ्र हो सके उतना ही शीघ्र इस कार्य को समाप्त करने के लिये चिन्तित हूं। अब मैं यह प्रस्ताव उपस्थित कर रहा हूं कि इस सूची के विषयों पर विचार स्थगित किया जाये और इस काल में परामर्शदातृ समिति की रिपोर्ट पर विचार किया जाये। जहां तक मस्विदा तैयार करने का प्रश्न है वह बहुत कुछ उन विचारों पर निर्भर है जिनको यह परिषद् मौलिक अधिकार संबंधी परामर्शदातृ समिति की रिपोर्ट में सम्मिलित विषयों पर निश्चित करती है। लेकिन जहां तक केवल सूची का संबंध है, अधिक मस्विदा तैयार करने की आवश्यकता नहीं है और चाहे परिषद् कुछ विषयों को स्वीकार करे अथवा अस्वीकार, इस परिवर्तन को जब कि रिपोर्ट का मस्विदा तैयार किया जायेगा, शामिल करना सरल होगा। इसलिये मैं इस परिषद् के उस कार्य के समाप्त करने के लिये उत्सुक हूं जो कि मस्विदा तैयार करने के अभिप्राय से आवश्यक है। मैं चाहता हूं कि मस्विदा यथासंभव शीघ्र तैयार कर दिया जाये और इसके लिये एक मस्विदा तैयार करने वाली समिति की नियुक्ति करनी होगी जिसे हम अधिवेशन के आखिरी दिन नियुक्त कर देंगे। एक और कुछ काम है जो थोड़ा सा समय लेगा। स्वर्गीय प्रभा शंकर पट्टानी ने इंग्लैंड के प्रसिद्ध कलाकार श्री ओस्वाल्ड वर्वी द्वारा बनाया हुआ चित्र राष्ट्र को अर्पण किया था। उसे उनके पुत्र ने, जो कि इस सभा के सदस्य हैं, भेंट किया है। सदस्यगण अवश्य इस भेंट की प्रशंसा करेंगे और यह चाहेंगे कि उस चित्र को इस परिषद् में किसी उपयुक्त स्थान पर रख दिया जाये। इस कार्य के लिये इन्हीं दिनों में से किसी दिन हमें कुछ समय की आवश्यकता होगी जिसे

मैं उस कार्य के लिये नियुक्त कर दूंगा। मैं उस दिवस की घोषणा कर दूंगा। संभव है अगले शुक्रवार को यह हो, लेकिन निश्चित रूप से मैं इसे बाद में नियत करूंगा।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार: मुस्लिम): श्रीमान् जी, आपने हमें यह तो बता दिया कि यह अधिवेशन शायद इस माह के अंत तक समाप्त हो जायेगा, लेकिन आपने यह नहीं बताया कि अगला अधिवेशन कब आरम्भ होगा।

पश्चिमी पंजाब की दुर्घटनाओं के प्रति सहानुभूति

श्री अलगुराय शास्त्री (संयुक्त प्रांत: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं कुछ कहना चाहता हूं। इससे पहले कि आज का कार्यक्रम प्रारम्भ किया जाये मैं आपका ध्यान इस बात की ओर दिलाना चाहता हूं कि पश्चिमी पंजाब में जो दुर्घटनायें घट रही हैं, जिस तरह से वहां हत्याएं हो रही हैं और जिस तरह से लोग मारे-काटे जा रहे हैं, उन दुखियों के प्रति सहानुभूति प्रकट करने के लिये हमारी आज की कार्यवाही पन्द्रह मिनट के लिये स्थगित की जाये। यह अच्छा नहीं मालूम होता कि हम अपना विधान बनाने का कार्यक्रम जारी रखते जायें और जो घटनायें घट रही हैं, उनकी तरफ हमारा ध्यान न जाये! मैं यह अनुभव करता हूं और कई दिन से इस बात को उपस्थित करने की टोह में था लेकिन यह सोचकर कि डोमिनियन पार्लियामेंट के रूप में यह असैम्बली बैठे तब इसके लिये अच्छा अवसर होगा, यह सोचकर रुक गया था। लेकिन जब उस दिन झंडे का प्रश्न लेकर हमारे कुछ साथियों ने आपका ध्यान दिलाया तो आपने लीडर आफ हाउस को इस बात की आज्ञा दी कि वह यहां पर कुछ बयान दें। मैं समझता हूं कि ऐसे प्रश्न हमारे सामने आ सकते हैं जिनको दृष्टि में रखकर हम अपने कार्यक्रम को थोड़ी देर के लिये स्थगित कर दें और यह अनुचित न होगा। विधान-परिषद् एक जनतंत्र और स्वतंत्र बाड़ी है अपने कुल कामों पर पूरी खुदमुख्तार जमात है। इसलिये, जो घटनायें आज देश के एक हिस्से में घट रही हैं जहां अबोध बच्चों, अबलाओं का कत्लेआम हुआ और लोगों को स्टेशनों पर गाड़ी रोककर मारा गया। इन पिछले दिनों ऐसी रोमांचकारी घटनायें हुई हैं जिनका कि उदाहरण भारत के बर्बर युग के इतिहास में शायद ही मिलता हो।

अब, जब कि प्रजातंत्र शासन की स्थापना हुई है ऐसे समय इस प्रकार की घटनाओं का होना काफी चिंताजनक है। यदि हम अपना विधान बनाने के कार्य में लगे रहे और उन बातों की तरफ ध्यान नहीं दिया तो आने वाली सन्तानें कहेंगी कि रोम जल रहा था और नीरो बंसी बजा रहा था। लाहौर और दूसरे इलाके जल रहे थे, लोग मारे जा रहे थे, और हम अपना विधान बनाने के कार्य में संलग्न रहे, ऐसा आरोप हमारे ऊपर लगाने का अवसर न दिया जाये। हमारे अन्दर

[श्री अलगूराय शास्त्री]

जो मानवता है, वह कुंठित हो जायेगी यदि हम उन असहाय लोगों के प्रति अपनी हार्दिक सहानुभूति प्रकट न करें जिनकी लाखों, करोड़ों की सम्पत्ति लुट गयी और जो अपनी सम्पत्ति और घरों की जो कि पंजाब में पड़ी है, रक्षा के लिये आतुर हैं। भागते हुए लोगों को पकड़कर मौत के घाट उतारा जा रहा है। आदमियों की इस प्रकार हत्या की जा रही है कि जैसे घास काटने वाला हथियार घास काटता है, उसी प्रकार इन्सानों का सिर काटा जा रहा है। कितनी लज्जाजनक बात है। पंद्रह तारीख के बाद से हमारी डोमिनियन पार्लियामेंट भी है। हमारे हृदयों में जो आवाज है, क्षोभ है, चिंता है, और लज्जा है कि हम इतने असमर्थ हैं कि उन असहाय बच्चों, बालकों, बूढ़ों और अबलाओं की रक्षा नहीं कर सकते। यह एक ऐसी असहाय अवस्था है, ऐसी दीन अवस्था है, जिस पर हमें लज्जा और ग्लानि है। आज यदि होम मेम्बर महोदय, लीडर आफ दी हाउस या डिफेंस मेम्बर कोई इस संबंध में बयान देते तो और बात थी। इसलिये मैं प्रस्ताव करता हूं कि कोई कार्यवाही प्रारम्भ करने के पहले हम मरे हुए आदमियों के प्रति तथा उनके परिवार से बचे हुए लोगों के प्रति सहानुभूति प्रकट करने के लिये इसकी कार्यवाही स्थगित की जाये। मैं समझता हूं कि इस पर एतराज हो सकता है लेकिन हमने देखा कि नेता लोगों की गिरफ्तारी पर हमारी कार्य-परिषद् की कार्यवाही स्थगित होती थी। जब पिछले कारणों से हम कार्यक्रम को स्थगित करने का प्रस्ताव कर सकते हैं तो आज ऐसा करने में कोई दिक्कत न होनी चाहिए। मौलाना हसरत मोहानी ने तो सुझाव पेश किया कि इस पर विचार ही न किया जाये। कार्यक्रम को थोड़ी देर तक स्थगित करने का हमें पूरा वैधानिक अधिकार होना चाहिये और मैं आशा करता हूं कि हाउस अपनी कार्यवाही को थोड़ी देर के लिये, कम से कम 15 निमट के लिये स्थगित कर देगा।

अध्यक्षः इस वक्त जो कुछ कार्यवाहियां हो रही हैं और जिनकी वजह से जितने कत्ल हो रहे हैं, इतनी लूट-मार, घरों का जलाना और जो कुछ बरबादी हो रही है, इसमें कोई शक नहीं कि कोई हिंदुस्तानी ऐसा नहीं होगा जिसका कि दिल बहुत न दुखा हो और जिसको कि बहुत रंज न हो। अब सवाल इतना है कि हम यहां इस असेम्बली में बैठकर क्या कर सकते हैं और क्या नहीं कर सकते हैं। जो कुछ इसके मुत्तालिक हो सकता है, आप विश्वास रखें कि आपकी गवर्नमेंट जो कार्य कर रही है, भरसक प्रयत्न करेगी और आपके प्राइम-मिनिस्टर खुद उन जगहों का दौरा कर रहे हैं और इसी कारण वह इस समय यहां उपस्थित नहीं हैं, तो इसमें कुछ शक नहीं है कि जो मुसीबत इस वक्त बहुत से लोगों

पर गुजर रही है, उससे हमारी पूरी हमदर्दी है और हम जहां तक हो सकता है इसको करेंगे और इससे बाज न आयेंगे। इस वक्त अगर हाउस के सब लोगों की ख्वाहिश हो तो इसमें कोई शक नहीं कि हम अपनी हमदर्दी, जो इस मुसीबत में मुब्तिला हैं और जिन्हें यह सब तकलीफें भुगतनी पड़ रही हैं, उन सबके लिये हम खड़े होकर अपनी तरफ से दुःख जाहिर करें और हमदर्दी जाहिर करें। अगर सबकी राय हो तो मैं आशा करता हूं कि इतना काफी होना चाहिये कि हम सब उठकर अपनी हमदर्दी उन लोगों के साथ जो मुसीबत में मुब्तिला हैं, प्रकट करें और उन आदमियों के प्रति श्रद्धांजलि भेंट करें जो इन मुसीबतों में फंसकर दुनिया से गुजर गये हैं।

एक ऐसा सुझाव उपस्थित किया गया है कि यह सभा 15 मिनट तक स्थगित होकर उन लोगों के प्रति सहानुभूति प्रकट करे जिनको उन बलवों में हानि हुई है, जो देश में हो रहे हैं। मैंने यह सुझाव रखा है कि परिषद् के कार्य को स्थगित करने के अतिरिक्त हम सब अपने-अपने स्थानों पर खड़े हों और उन दुखियों के प्रति हार्दिक सहानुभूति प्रकट करें। इस बात में मतभेद हो ही नहीं सकता कि जो बलवे हो रहे हैं वे राष्ट्र के दृष्टिकोण से बड़े अपमानसूचक हैं और जो घटनायें हो रही हैं वे ऐसी हैं कि किसी भी देशभक्त के हृदय को दुःखी कर सकती हैं। इसीलिये मैंने सदस्यों से अपने-अपने स्थानों पर खड़े होने तथा दुःखियों के प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करने के लिये निवेदन किया है। मैंने यह भी बता दिया कि जहां तक सरकार का संबंध है, प्रधानमंत्री हवाई जहाज द्वारा उस स्थान पर गये हुये हैं और आज यहां उपस्थित नहीं हैं। वे वहां गये हुये हैं और दुःखियों को सहायता देने के लिये जो कुछ भी किया जा सकता है वे कर रहे हैं और जो घटनायें वहां हो रही हैं, उनका अंत करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

(सदस्य अपने-अपने स्थान पर खड़े हुये और एक मिनट तक शांत रहे।)

अब हम वाद-विवाद को लेंगे।

संघ अधिकार समिति की रिपोर्ट....जारी

***डाक्टर पी॰एस॰ देशमुख** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): श्रीमान् जी, यदि हम कार्यक्रम में, जो आप घोषित कर चुके हैं, परिवर्तन कर सकते हैं तो मैं आपके विचारार्थ एक सुझाव रखना चाहता हूं। यह स्पष्ट है कि हम संघ-अधिकार कमेटी की रिपोर्ट पर विचार समाप्त नहीं कर सकते हैं। इस बात को लेते हुए कि हम कुछ मदों को ही और ले सकते हैं, मेरे विचार से हमारे लिये यह अच्छा होगा कि यदि आप अल्पसंख्यकों संबंधी कमेटी की रिपोर्ट के लिये कल

[डा. पी.एस. देशमुख]

का दिन और नियत कर दें और जो आपने कमेटी नियुक्त की थी उसके लिये इस प्रकार एक दिन और रखें। मेरा विचार यह है कि इन दोनों कामों के किये बगैर हमको स्थगित नहीं करना चाहिये। सर्वप्रथम तो हमें अल्पसंख्यक अधिकार समिति की रिपोर्ट पर विचार समाप्त करना चाहिये और फिर संघ-व्यवस्थापिका होने के नाते पश्चिमी पंजाब की स्थिति पर वाद-विवाद करने का अवसर प्राप्त किये बिना हमें नहीं जाना चाहिये। मैं चाहूंगा कि आप इन दो बातों पर विचार करें। यदि आप मेरे सुझाव को मंजूर करें तो हम अल्पसंख्यकों संबंधी उपसमिति की रिपोर्ट पर अच्छी तरह से विचार समाप्त कर सकेंगे और फिर पश्चिमी पंजाब और पूर्वी पंजाब के भी घोर नारकीय दृश्यों पर व्यवस्थापिका के रूप में वाद-विवाद करने के लिये दो दिन के लिये सम्मिलित हो सकेंगे। श्रीमान् जी, हमें यह पूर्ण विश्वास है कि हमारी सरकार अपना भरसक प्रयत्न कर रही है और हमें इसमें संदेह नहीं है कि जो कुछ भी हो सकता है, वह किया जा रहा है, फिर भी क्योंकि हमने व्यवस्थापिका का रूप धारण कर लिया है हममें से प्रत्येक पर उन लाखों व्यक्तियों का उत्तरदायित्व है जिनके हम प्रतिनिधि हैं। इस कारण जो घटनायें वहां वास्तव में हो रही हैं तथा हमने कहां तक अपने कर्तव्य का पालन किया है, इन बातों को हमें जानना चाहिये, संसार को जानना चाहिये और भारत को जानना चाहिये। इस दृष्टिकोण से श्रीमान् जी, मैं ख्याल करता हूं कि आपको मेरा सुझाव मान लेना चाहिये जिससे कि कमेटी की रिपोर्ट पर विवाद करने के लिये हमें एक दिन और मिल जाये, या यदि संभव हो सके तो इसी वर्तमान अधिवेशन में संघ-व्यवस्थापिका के रूप में, चाहे कुछ घंटों के लिये ही हो, हम बैठ सकें।

***अध्यक्षः** बैठकों के कार्यक्रम पर हम और अधिक समय व्यतीत न करें। मैंने परसों नियत किया है जिससे सदस्यों को अल्पसंख्यकों तथा मौलिक अधिकारों पर सोच-विचार करने के लिये जितना समय वे चाहते हैं उतना मिल सके। मैंने परसों इसलिये नियत किया है कि सदस्यों को संशोधनों के वाद-विवाद के लिये प्रस्तुत होने के पूर्व उन संशोधनों को भेजने का समय मिल सके। परिषद् का व्यवस्थापिका के रूप में बैठक करने का प्रश्न उप-समिति की रिपोर्ट प्राप्त होने के पश्चात् ही तय किया जा सकता है। हमको उसकी रिपोर्ट की प्रतीक्षा करनी होगी।

परिषद् अब संघ-अधिकार समिति की रिपोर्ट पर विचार-विमर्श करेगी।

श्री सिधवा मद 8 संबंधी अपने संशोधनों पर भाषण देंगे।

*__श्री आर॰के॰ सिधवा__ (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): गत शुक्रवार को छावनी के अधिकारों के संबंध में जबकि मैं मद 8 पर अपना संशोधन पेश कर रहा था, मैंने कहा था कि भारत में कई स्थलों पर ऐसी छोटी-बड़ी छावनियां हैं जो कि 8 से 9 मील तक के घेरे में हैं। जहां तक सेना का प्रश्न है, वे बारकों में रखी जाती हैं और जाब्ता छावनी या छावनी एक्ट द्वारा अनुशासित की जाती हैं। इन सेनाओं को समस्त सुविधाएं दी जाती हैं। इस पर मेरी कोई आपत्ति नहीं है। सेनाओं को समस्त सुविधाएं जैसे पर्याप्त जल, उचित नालियों की व्यवस्था, चिकित्सालय संबंधी सहूलियतें इत्यादि मिलनी चाहियें। उनके मनोविनोद के लिये नाटक घर तथा चल-चित्रालय (सिनेमा) भी हैं। इसके अतिरिक्त उनके अपने भोजनालय तथा कैन्टीन और दुकानें हैं जिनसे वे अपनी अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते हैं। जहां तक सेनाओं की सुविधाओं का प्रश्न है, हम इन प्रबंधों में कोई भी परिवर्तन करना नहीं चाहते हैं। हम तो चाहते हैं कि सेनाओं की अच्छी देखभाल रखी जाये और जिस क्षेत्र में वे रहते हैं वहां उन्हें संतुष्ट रखा जाये। जो कुछ हम चाहते हैं वह यह है, इन क्षेत्रों से, जहां कि सेनाएं रखी जाती हैं, दो मील के अंदर नागरिकों की आबादी भी है। यदि सभा थोड़ी देर के लिये भी मेरे साथ सहानुभूति रखे तो मैं यह कहना चाहूंगा कि इन नागरिकों को समस्त अधिकार तथा विशेषाधिकारों से वंचित रखा जाता है। जिनका कि अन्य नागरिक उपभोग करते हैं। हम यह नहीं चाहते हैं कि इन नागरिकों को वे सुविधायें मिलें जिनका सैनिक उपभोग करते हैं। परन्तु मैं विनय करता हूं कि कम से कम कुछ प्राणी मात्र संबंधी सुविधायें इन नागरिकों को भी दी जायें। मेरे विचार में पीने के लिये जल, नाली, चिकित्सालय के प्रबंध तथा बिजली की रोशनी संबंधी व्यवस्थायें हैं।

दूसरी बात यह है कि इन क्षेत्रों को गंभीर विचार किये बिना आरंभ में अव्यवस्थित ढंग से पसंद किया गया। इनका इस प्रकार प्रबंध किया गया है कि सड़क के एक ओर सिविल सरकार कार्य कर रही है और दूसरी ओर फौजी सरकार। इस बात ने असंतोष तथा असुविधायें उत्पन्न की हैं जिनका समाचार-पत्र सम्मेलनों तथा प्रांतीय और केन्द्रीय सरकार के मध्य पत्र-व्यवहार में प्रकाशन किया गया है। असंतोष के कारणों को दूर करने के लिये कुछ भी नहीं किया गया। नागरिक जनता को सुविधायें देने की व्यवस्था के संबंध में फौजी अधिकारियों ने कोई सहानुभूति नहीं दिखाई।

इन प्रश्नों को जब इस समय उठाया जाता है तो यह तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि अब हम अपनी सरकार चला रहे हैं और इन विषयों पर अब

[श्री आर.के. सिधवा]

हमारा भिन्न दृष्टिकोण होना चाहिये। हमें यह भी बताया जाता है कि हम अब भी दीन-हीन अवस्था में परिश्रम कर रहे हैं। ऐसे तर्कों का उत्तर दिया जा सकता है कि जन-प्रिय सरकार होने के कारण पुराने भारतीय सरकार के एक्ट प्रचलित रखे जा सकते हैं और नये विधान बनाने के झंझट में नहीं पड़ना है। यह स्मरण रखना चाहिये कि इस प्रश्न में एक सिद्धांत का समावेश है कि छावनी में नागरिक जनता को वही अधिकार होने चाहियें जो कि उन्हें अन्यत्र प्राप्त हैं। भविष्य में उनको मत प्रदान करने तथा अपनी शिकायतों को दूर करने का अवसर प्राप्त करने से वंचित नहीं रखा जाना चाहिये।

छावनी कमेटी में चन्द नामजद सदस्य होते हैं और नागरिक जनता का प्रतिनिधित्व करने के लिये और भी कम सदस्य होते हैं। श्रीमान् जी, यह अनुचित है कि जिन अधिकारों तथा विशेषाधिकारों का विज्ञापित क्षेत्रों (Notified Areas) की नागरिक जनता तक उपभोग करे और छावनी क्षेत्रों के नागरिक उनसे वंचित रखे जायें। यह अधिकार का विषय है, अतः मेरे संशोधन का आशय है कि जहां-जहां सेनायें हैं वहां छावनी कमेटी शासन करे, लेकिन जहां नागरिक जनता है, उन स्थानों को म्यूनिसिपल कमेटी के शासन में होना चाहिये जिससे कि नागरिकों को वही अधिकार प्राप्त हों जिनका उपभोग अन्य नागरिक करते हैं। मैं आपको यह भी बता दूं कि कभी-कभी जब कि इन क्षेत्रों के मनुष्य रोगग्रस्त हो जाते हैं तो उनको वह चिकित्सा की सहायता भी नहीं मिलती जो म्यूनिसिपल क्षेत्र में रहने वाले लोगों को मिलती है, क्योंकि वर्तमान एक्ट के अनुसार जो व्यक्ति म्यूनिसिपल सीमा से बाहर रहता है उसे म्यूनिसिपल क्षेत्र के अन्तर्गत लाभप्रद साधनों के प्रयोग करने का अधिकार नहीं है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस क्षेत्र का एक बड़ा भाग तथा भूमि एक विशेष वर्ग के लोगों को लगभग मुफ्त ही दे दी गयी है। मैं यह कहूंगा कि यदि वह भूमि बेची जाये तो करोड़ों रुपयों की आमदनी होगी। ये जमीन दो हजार से लेकर पचास हजार वर्ग गज तक नाममात्र की 500 या 1,000 रुपये की कीमत में दे दी गयी हैं। इन जमीनों पर जायदादें बना ली गई हैं जो कुछ मनुष्यों द्वारा आबाद की गईं और फिर उनका क्रय-विक्रय हुआ और उस वर्ग के मनुष्यों ने मनों रुपया पैदा किया। वह राज्य की भूमि है। प्रांतीय सरकार इस भूमि से वंचित है। केन्द्रीय सरकार भी इस मूल्यवान भूमि से वंचित है। और समस्त लाभोपयोग एक वर्ग के मनुष्यों ने किया। श्रीमान् जी, यहां मैं आपको यह बता दूं कि एक स्थान में 80 प्रतिशत जायदाद एक ही व्यक्ति की है।

***अध्यक्षः** मैं हस्तक्षेप करना नहीं चाहता, हम छावनियों के कुप्रबंध पर वाद विवाद नहीं कर रहे हैं। हम सूची के विशेष मद पर वाद-विवाद कर रहे हैं कि संघीय शासन की सूची में उसे रखा जाये या नहीं। अतः आपको छावनियों के कुप्रबंध तथा कुशासन के समूचे प्रश्न को यहां लेने की जरूरत नहीं है।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रासः जनरल): यदि आप कृपया मुझे कुछ शब्द कहने की आज्ञा दें तो मैं आशा करता हूं कि श्री सिधवा अपना भाषण आगे नहीं बढ़ायेंगे। मैं केवल कुछ शब्द ही कहूंगा। श्रीमान् जी, इस वाक्य खंड के संबंध में पांच संशोधनों की सूचना आई है। इस विशेष मद के संबंध में अनेकों प्रश्न उठाये गये हैं और, श्रीमान् जी, यह विचार किया गया है कि इस मद का अंतिम रूप निश्चित करने के पूर्व इन प्रश्नों के समस्त पहलुओं पर विवरण पूर्ण जांच करना वांछनीय होगा। श्रीमान् जी, यदि आप मुझे आज्ञा दें तो मैं यह निवेदन करूंगा कि इस मद को अभी तो स्थगित कर दिया जाये। हम उसे बाद में लेंगे।

***अध्यक्षः** सुझाव यह है कि इस मद को स्थगित कर दिया जाये और ऐसे रूप में प्रस्तुत किया जाये जो सबको मान्य हो और फिर ये सब संशोधन अनावश्यक हो जायेंगे। हम सूची के अन्य मद 9 को लेंगे।

मद 9

(सर्वश्री मोहनलाल सक्सेना और अनन्तशयनम् आयंगर ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूं कि मद 9 को निकाल दिया जाये। कारण यह है कि विगत काल में इस बात पर पर्याप्त असन्तोष रहा है कि हमें अस्त्रशस्त्र प्रयोग करने की कोई भी स्वतंत्रता नहीं है। इस बात पर लगातार बड़े-बड़े आंदोलन होते रहे हैं जिसकी व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है। मेरा संशोधन अब है कि इसे संघ की सूची में से निकाल देना चाहिये और प्रांतीय सूची का विषय बना देना चाहिये जिसके लिये एक उपयुक्त संशोधन बाद में पेश कर दिया जायेगा। मेरा ख्याल है कि जब तक अंग्रेज यहां थे उनका उद्देश्य जनता का निशस्त्रीकरण करना था। भारतीयों से ईर्ष्या तथा द्वेष के कारण उन्होंने ऐसा किया और इसे केन्द्र का विषय रखा। अब चूंकि अंग्रेज चले गये हैं, मैं निवेदन करता हूं कि इस विषय

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

को केन्द्र में रखने के कारण भी विलीन हो गये। केन्द्र की यह एक बड़ी विचित्र चेष्टा होगी कि वह प्रान्तों को इस अधिकार का प्रयोग करने दे। यदि प्रान्तों को यह विशेषाधिकार देने में कुछ कठिनाई है तो इसे सूची संख्या 3 में रखना चाहिये और यह सहगामी विषय हो जायेगा। मैं यह निवेदन करता हूं कि इस मद का केन्द्रीय विषय के रूप में जारी रखना गलत होगा। मेरा विश्वास है कि यद्यपि अंग्रेज चले गये हैं लेकिन उनका भूत अभी तक हमारे हृदय पर सवार है और हम अधिकारों से सटे रहना चाहते हैं।

*__अध्यक्षः__ केवल एक संशोधन है। वह यह है कि मद संख्या 9 को निकाल दिया जाये। क्या कोई सदस्य इस विषय पर बोलना चाहता है?

*__माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः__ श्रीमान् जी, मि॰ नजीरुद्दीन अहमद के वक्तव्य से मैंने यह समझा कि वे इस अस्त्र, शस्त्र, गोलाबारूद तथा विस्फोटक पदार्थों के मद को कानून निर्माण के क्षेत्र से बाहर हटाने का प्रस्ताव पेश नहीं करते हैं। उनके सुझाव से प्रतीत होता है कि इस विषय पर संघ द्वारा कानून निर्माण करने की आवश्यकता नहीं है तथा इस विषय को प्रान्तों को दे दिया जाये। श्रीमान् जी, मैं समझता हूं कि विशेषकर इन दिनों में अस्त्र, शस्त्र, गोलाबारूद तथा विस्फोटक पदार्थों जैसे महत्त्वपूर्ण विषय पर यह बड़ा आवश्यक है कि कानून द्वारा जो भी नियंत्रण किया जाये वह केन्द्र से ही किया जाना चाहिये। अस्त्र, शस्त्र, गोलाबारूद तथा विस्फोटक पदार्थों का निर्माण करने, उन पर अधिकार रखने, उनका स्थानांतरण करने में तथा प्रयोग करने में समानता रहनी चाहिये। मि॰ नजीरुद्दीन अहमद को शायद यह जानकर लाभ होगा कि रियासतें भी जो संघ में शामिल हैं उन्होंने इस विषय को स्वीकार कर लिया है, जिसका मतलब यह है कि वे भी इस विषय पर केन्द्रीय व्यवस्थापिका द्वारा कानून निर्माण किये जाने के लिये तैयार हैं। मैं आशा करता हूं कि वे इस संशोधन पर जोर नहीं देंगे।

*__अध्यक्षः__ मैं मद संख्या 9 पर मतदान लूंगा। संशोधन यह है कि इस मद को निकाल दिया जाये।

संशोधन अस्वीकार किया गया।

*__अध्यक्षः__ मैं मद पर मतदान लेता हूं कि इसे रखा जाये।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 10

***अध्यक्षः** अब हम मद 10 को लेंगे। यदि श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी अपना संशोधन पेश करना न चाहें तो इस मद पर भी कोई संशोधन नहीं है।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी** (सिक्किम और कूच बिहार समूह): अध्यक्ष महोदय, मद 10 में निम्न पद अन्त में बढ़ा दिया जाये:

''प्रदेशों को मुआवजा देने के अधीन''

मेरे इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि अणु शक्ति (atomic energy) उत्पादन करने के लिये जिन जिन स्थानों के खनिज पदार्थों के साधनों की आवश्यकता हो उनको मुआवजा दिया जाना चाहिये। इसके लिये किसी लम्बे तर्क की आवश्यकता नहीं है और मैं आशा करता हूं कि रिपोर्ट के निर्माता बिना किसी हिचकिचाहट के इसे स्वीकार कर लेंगे।

***अध्यक्षः** क्या कोई और व्यक्ति इस विषय पर कुछ कहना चाहता है?

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्‌जी, यह मद केवल अणु शक्ति तथा उसके लिये आवश्यक खनिज पदार्थों के संबंध का है। संघ की सूची में ऐसे मदों के शामिल करने का आशय यह नहीं है कि केन्द्र किसी के निजी खनिज साधनों को अपनाना चाहता हो, चाहे वे देशी रियासतों के हों, प्रान्तों के हों अथवा किसी के व्यक्तिगत हों। यदि संघ के हित के लिये यह आवश्यक है कि नियंत्रण का प्रयोग किया जाये या उन साधनों को प्राप्त कर लिया जाये तो उचित मुआवजा अवश्य दिया जायेगा। मैं इसलिये इन शब्दों को अन्त में जोड़ना आवश्यक नहीं समझता।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरीः** जो आश्वासन दिया गया है उस पर विचार करते हुये मैं, अपने संशोधन पर जोर नहीं देना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** मैं यह मान लेता हूं कि संशोधन को वापस लेने दिया जाये। मैं मूल मद 10 पर वोट लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 11

***अध्यक्षः** हम दूसरे मद को लेते हैं (मद 11)। अब तक इस मद 11 पर कोई संशोधन नहीं है। मैं इस पर मतदान लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 12

***अध्यक्ष:** हम मद 12 को लेते हैं। रियासतों के प्रधानमंत्रियों की ओर से इस पर एक संशोधन है।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारी** (जयपुर): हम अपने संशोधन को पेश नहीं करते हैं।

***अध्यक्ष:** मद 12 पर और कोई संशोधन नहीं है। जो इस मद के रखे जाने के पक्ष में है, वे 'हां' कहेंगे।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 13

***अध्यक्ष:** हम मद 13 पर आते हैं। मद 13 पर कोई संशोधन नहीं है। मैं इस पर वोट लूंगा।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 14

***अध्यक्ष:** अब हम मद 14 को लेते हैं। सर रामास्वामी मुदालियर तथा रियासतों के अन्य प्रधानमंत्रियों की ओर से एक संशोधन है।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि निम्न पद मद 14 के अंत में जोड़ दिया जाये:

> **''बशर्ते कि केवल इस मद को सूची में शामिल कर लेने के आधार पर किसी प्रान्त या संघ में सम्मिलित रियासत के लिये इन निर्णयों को क्रियान्वित करने का अधिकार संघ को नहीं होगा जब तक कि प्रान्त या रियासत की पूर्व स्वीकृति न हो।''**

श्रीमान् जी, हम अनेक प्रकारों के अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संघों तथा अन्य संस्थाओं में भाग लेते हैं। इन सम्मेलनों, संघों तथा अन्य संस्थाओं के निर्णयों को क्रियान्वित करने के अधिकार का आधार यह होना चाहिये कि निर्णय का विषय प्रान्तीय है या केन्द्रीय। मेरा प्रस्ताव यह है कि यदि ये निर्णय प्रान्तीय विषयों से

संबंधित हैं तो इन निर्णयों को क्रियान्वित करने के पूर्व प्रान्तों की स्वीकृति ले लेनी चाहिये। ऐसे प्रतिबंध की अनुपस्थिति में प्रान्तों और रियासतों के अधिकार प्राय: शून्य रूप हो जायेंगे। ये सम्मेलन कृषि, खाद्य पदार्थ तथा अधिकतर और भी ऐसे विषयों से संबंध रखते हैं जो कि प्रान्तीय अधिकारों के अंतर्गत आते हैं। माननीय सदस्यों को याद होगा कि भारतीय सरकार एक्ट में धारा 106 है जो इसकी व्यवस्था करती है। यदि धारा 106 के पुनर्निर्माण करने की मंशा हो तो मेरे संशोधन की आवश्यकता नहीं होगी। और यदि ऐसी कोई मंशा नहीं है तो मैं प्रस्ताव रखता हूं कि इन शब्दों को मद 14 के अंत में जोड़ दिया जाये।

***अध्यक्ष:** श्री माधवराव जी, आपके नाम से मद 14 पर एक संशोधन है।

***श्री एन॰ माधव राव:** (पश्चिमी रियासतों का समूह 2): मैं संशोधन को प्रस्तुत नहीं करना चाहता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि मद 14 के अंत में निम्न जोड़ दिया जाये:

''कानून निर्माण की अपनी क्षमता के अंतर्गत विषयों पर तथा प्रान्त अथवा रियासत पर प्रभाव डालने वाले अन्य विषयों पर ऐसे प्रदेशों की स्पष्ट स्वीकृति से।''

जिस विषय को मैं इस संशोधन में रखना चाहता हूं वह यह है कि ऐसे विषय हो सकते हैं जो पूर्णतया केन्द्रीय हों या वे सूची संख्या 3 के अंतर्गत आ सकते हैं, और इस सूरत में भी केन्द्र को उन पर न्यायाधिकार होगा। परन्तु सूची संख्या 2 में भी विषय हो सकते हैं अर्थात् प्रान्तीय न्यायाधिकार के अंतर्गत। इस सूरत में बिना प्रांत की स्वीकृति के केन्द्र को कुछ करने का अधिकार देना अनुचित होगा। वास्तव में वह एक ऐसी चीज पर दूसरों के अधिकारों का अप्रत्यक्ष रूप से दबा बैठना होगा जो कि पूर्णतया केवल प्रान्त के लिये नियत किये गये हैं।

रियासतों के संबंध में जो कागजात हम लोगों में घुमाये गये हैं उनसे हमें विदित होता है कि रियासतें कुछ प्रमुख प्रतिबंधों के अधीन सम्मिलित हुई हैं। वे कुछ विषयों के संबंध में सम्मिलित हुई हैं, जिनकी इस समझौते के साथ लगी हुई सूची में स्पष्ट व्याख्या की गई है। ऐसे विषय भी हो सकते हैं जो इस सूची के क्षेत्र के बाहर हों। उस हालत में प्रान्तीय सरकार से कानून निर्माण के लिये

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

कहना अथवा समझौते के क्षेत्र से बाहर के विषयों के अंतर्गत मामलों पर समझौता करना उस सरकार का समझौते के विरुद्ध दूसरों के अधिकार दबाना होगा। समझौता इसे पूर्णतः स्पष्ट करता है कि रियासतें सूची में शामिल विषयों के अतिरिक्त अन्य किसी विषय के लिये सम्मिलित नहीं हुई हैं। इन परिस्थितियों में, मैं निवेदन करता हूं कि केन्द्र के लिये यह उचित नहीं होगा कि वह उन विषयों का अधिकार प्राप्त करे जो उसके दायरे के बाहर है। इसलिये मेरे संशोधन में निहित सिद्धान्त गड़बड़ी रोकने तथा कुछ विषयों के अधिकार झपटने में रुकावट डालने के लिये आवश्यक है।

*__अध्यक्षः__ और कोई संशोधन नहीं है। अब संशोधनों तथा मूल मद पर वाद-विवाद हो सकता है। जो चाहे वे बोल सकते हैं।

*__श्री के॰एम॰ मुंशी__ (बम्बईः जनरल): अध्यक्ष महोदय, जो संशोधन मेरे माननीय मित्र श्री वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य ने प्रस्तुत किया है मैं उसका विरोध करता हूं। माननीय सदस्य देखेंगे कि मद 16 इस प्रकार है, ''विदेशों से संधियों तथा समझौते में सम्मिलित होना तथा उनको क्रियान्वित करना''। इस मद पर उन्हीं चार माननीय सदस्यों का एक ऐसा ही संशोधन और है। इस संशोधन पर मैं तर्क की प्रत्याशा नहीं चाहता हूं। लेकिन मद 16 जैसा कि माननीय सदस्यों ने देखा होगा, विदेशों से संधियों तथा समझौते को क्रियान्वित करने के संबंध में है। ये समझौते और संधियां इस देश और अन्य देश में द्विरूपात्मक हैं। जहां तक मद 14 का संबंध है....।

*__सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारीः__ क्या हम मद 16 पर हैं?

*__श्री के॰एम॰ मुंशीः__ मैं इन दोनों में भेद बतला रहा हूं, यदि माननीय सदस्य में सुनने का धैर्य हो। मद 14 द्विरूपात्मक संधियों के संबंध का नहीं है बल्कि अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के संबंध का है। सभा इस बात को भली प्रकार जानती है कि आजकल अंतर्राष्ट्रीय संबंध संधियों द्वारा शासित नहीं किये जाते हैं। ऐसे बहुत से सम्मेलन हैं जहां भारत अपने प्रतिनिधि भेजता है और भविष्य में और भी अधिक प्रतिनिधि भेजेगा। इन सम्मेलनों में इस आधार पर निर्णय किये जाते हैं कि भारत के प्रतिनिधियों को इन निर्णयों को कार्यान्वित करने का अधिकार है। भारत के प्रतिनिधि की बात का कोई भी प्रभाव नहीं होगा, यदि उसको इस प्रतिबंध का पालन करना पड़े कि वह देश को वापस आये और अपने 35 प्रदेशों की सरकारों

से परामर्श करे और यदि उनमें से एक भी असहमत हो तो वह उन निर्णयों को क्रियान्वित न कर सके। इस आधुनिक जगत में भारत के लिये ऐसी परिस्थितियों में यह असंभव होगा कि वे किसी सम्मेलन में प्रभावयुक्त भाग ले सकें; सिवाय इसके कि वह वाद-विवाद संस्था में बिना किसी निर्णय पर पहुंचने के लिये भाग ले सके। इसलिये यह नितांत आवश्यक है कि केन्द्रीय सरकार को इन सम्मेलनों में भाग लेने के तथा उनके निर्णयों को क्रियान्वित करने के पर्याप्त अधिकार हों।

उदाहरण के रूप में, आप इस सरल उदाहरण को लीजिये जो मैं अभी आपके सामने रखता हूं। मान लो कि किसी देश के साथ व्यापारिक संबंध की बात हो और निकट युद्ध के फलस्वरूप अथवा उसके किसी ऐसे व्यवहार से जो अंतर्राष्ट्रीय नीति के विरुद्ध हो, इन व्यापारिक संबंधों को समाप्त करना हो और मान लो कि अंतर्राष्ट्रीय संघ के समस्त सदस्य एकमत होकर यह कहते हैं कि उनको इन संबंधों का परित्याग कर देना चाहिये या उनके संबंध में किसी विशेष नीति का अनुसरण करना चाहिये तो ये एक निर्णय होगा न कि संधि। उस निर्णय को लगभग समस्त संसार द्वारा ग्रहण करने पर भी भारत के प्रतिनिधि को यह कहना पड़ेगा कि वह भारत में वापस जायेगा और उसे भारत के प्रत्येक प्रदेश से यहां तक कि 20 या 25 हजार की आबादी की रियासतों से उसे उस निर्णय के बारे में परामर्श करना होगा और जब तक कि ऐसी स्वीकृति प्राप्त न हो वह उसे क्रियान्वित नहीं कर सकता। यह सब अंतर्राष्ट्रीय जगत के समक्ष समस्त केन्द्रीय सरकार का एक प्रहसन होगा। जैसा कि सभा को विदित है हम ऐसी स्थिति की ओर अग्रसर हो रहे हैं जिसमें बड़ी-बड़ी नीतियों के संबंध में अधिकांश निर्णय अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों द्वारा वास्तविक संधियों के रूप में नहीं बल्कि समझौते के रूप में किये जायेंगे। शिक्षा, श्रम-काल तथा अन्य अनेक विषयों पर इसी प्रकार निर्णय किये जाते हैं। यदि यह वाक्यांश हटा दिया जाये तो फिर इसका अर्थ ठीक यह होगा कि भारत का एक छोटा भाग शेष संसार द्वारा स्वीकृत निर्णय को क्रियान्वित करने से रोक सकता है। मान लीजिये यह अधिकार ले लिया जाता है तो भारत के प्रतिनिधि ऐसे किसी सम्मेलन में जा सकते हैं और उनके सारे निर्णयों में सहायक हो सकते हैं और जब वे यहां आते हैं तो भारत का 60वां अंश उन निर्णयों को क्रियान्वित करने में रोक लगा सकता है। इस संशोधन के स्वीकार करने का यह प्रभाव होगा। अत: यदि भारत अपना अंतर्राष्ट्रीय व्यक्तित्व स्थापित करना चाहता है और संसार के अन्य सर्वोच्च राष्ट्रों के समान बनना चाहता है तो उसे इन निर्णयों में केवल भाग लेने का ही नहीं वरन उनको क्रियान्वित करने का अधिकार होना चाहिये।

[श्री के.एम. मुंशी]

संरक्षण यह है। इस मद को यहां रखने से आशय यह है कि इन निर्णयों को क्रियान्वित करने के लिये केन्द्रीय व्यवस्थापिका को कानून निर्माण करने का अधिकार होगा। किसी निर्णय को क्रियान्वित करने से पूर्व वह केन्द्रीय व्यवस्थापिका के सामने रखा जायेगा। वह व्यवस्थापिका उस पर पूर्णरूप से वाद-विवाद करेगी और फिर वह यह निश्चित करेगी कि वह उसको क्रियान्वित करे या नहीं। यूनियन के किसी भी सदस्य के पीठ पीछे इस विषय को नहीं लिया जायेगा। इससे यह अभिप्राय है कि नीचे की सभा को ही नहीं वरन ऊपर की सभी प्रदेशों की सभा के सामने यह विषय रखा जायेगा। इस प्रकार समस्त भारत के प्रतिनिधियों को—जनता तथा रियासत दोनों के प्रतिनिधियों को—इस पर मत देने का अधिकार होगा और समस्त भारत के मत का प्रभाव रहेगा। जिस रूप में वाक्यांश है उसका यही प्रभाव है। अत: यह इस कारण नहीं है कि किसी रियासत तथा प्रान्त की पीठ पीछे कुछ कर दिया जायेगा। इन दोनों व्यवस्थापिकाओं में सम्मिलित भारत एकरूप होकर प्रत्येक प्रदेश के दृष्टिकोण पर जिस रूप में कि उसके सामने रखा जायेगा, विचार करेगा और फिर समस्त भारत के हित के लिये निर्णय करेगा। यदि दोनों व्यवस्थापिकायें बहुमत से यह निश्चय करती हैं कि किसी निर्णय को क्रियान्वित करना है तो क्या यह सुझाव रखा गया है कि कोई रियासत या छोटा प्रान्त यह कह सकता है कि व्यवस्थापिका ने चाहे जो कुछ किया हो उसको इस निर्णय के क्रियान्वित करने की स्वतंत्रता है? इससे तो देश की सर्वोच्च सत्ता के आधार का नाश होता है। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि यह संशोधन अहितकर प्रतीत होता है। इसके द्वारा जो फल होगा वह अंतर्राष्ट्रीय समाज में भारत के उच्च सदस्य होने के अधिकारों को कुचल डालेगा। मैं निवेदन करता हूं कि इस संशोधन को सभा द्वारा अस्वीकृत किया जाये।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रांत: जनरल): श्रीमान् जी, मैं यह अनुभव करता हूं कि सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य ने जो संशोधन सभा के समक्ष रखा है और जो कि भारत सरकार के सन् 1935 ई॰ के एक्ट की धारा 10 (ख) का लगभग दुहराना मात्र है, वह बहुत बुरा है। गत दस वर्ष से इस व्यवस्था पर जितनी समालोचना हुई है उससे वे अपरिचित नहीं हो सकते; विशेषकर श्रम से संबंधित विषय पर। यद्यपि उस एक्ट के अंतर्गत श्रम से संबंधित प्रश्न पर दोनों केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों द्वारा विचार किया जा सकता है, फिर भी यह स्पष्ट है कि समस्त मुख्य बातों में श्रम का प्रश्न अखिल भारतीय प्रश्न है, और इस पर आंशिक रूप से प्रान्तों द्वारा विचार नहीं किया जा सकता है। यदि इस पर सफलतापूर्वक

विचार किया जाता है, दूसरे शब्दों में इस प्रकार कि जिससे समस्त देश में संतोष उत्पन्न हो जाये तथा वह अंतर्राष्ट्रीय विचार और माप के अनुसार हो, तो यह बिल्कुल स्पष्ट है कि यह केन्द्र के अधिकार में पूर्णतया रहे जिससे कि अंतर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलनों में किये गये समझौते पर अंतिम प्रयत्न किया जा सके। परन्तु 1935 ई॰ के विधान के अंतर्गत उसको यह अधिकार नहीं थे। इन विषयों से संबंधित किसी भी प्रश्न ने जिनके क्रियान्वित करने के लिये प्रदेशों की सरकारों की अनुमति की आवश्यकता थी, इतना असंतोष उत्पन्न नहीं किया जितना कि श्रम से संबंधित प्रश्न ने। मैं समझता हूं कि यदि और कोई उदाहरण भी विचार के लिये न हो तो भी सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के संशोधन को निकाल फेंकने में हम पूर्णतया न्याययुक्त हैं।

और भी अनेकों प्रश्न हैं जिन पर इन दिनों सम्पूर्ण देश द्वारा विचार करने की आवश्यकता है। सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य को भय था कि मद 14 द्वारा केन्द्र में जो अधिकार प्रदान किया जायेगा वह बहुत अधिक होगा और उन विषयों का उदाहरण देते हुये, जिन पर अधिक अधिकार हो जायेंगे, उन्होंने खाद्य तथा कृषि का उल्लेख किया था। मुझे तो आश्चर्य हुआ था जब मेरे माननीय मित्र ने इन विषयों का उल्लेख किया। आज कोई भी विषय यदि है जिन पर कि राष्ट्रीय सरकार को विचार करना है, तो वह कृषि तथा खाद्य के विषय हैं। हम उस भीषण स्थिति से परिचित हैं जिसमें हम 1943 ई॰ और 1944 ई॰ में थे क्योंकि भारतीय सरकार के पास प्रान्तीय सरकारों पर नियंत्रण रखने और उनसे समान नीति को स्वीकार कराने के या तो अधिकार नहीं थे या कुछ समय तक उनको प्रयोग में लाने के लिये उसकी अनिच्छा थी। मैं और आगे विषय को बढ़ाते हुए कहता हूं कि अनुभव ने यह प्रकट किया है कि यह विषय इतना महत्त्वपूर्ण है कि यद्यपि युद्ध की परिस्थिति विद्यमान नहीं है फिर भी केन्द्रीय सरकार को खाद्य और कृषि के संबंध में प्रान्तीय नीतियों के समीकरण करने के अधिकारों को कम से कम कुछ समय तक और प्रयोग में लाते रहना चाहिये। श्रीमान् जी, ये प्रश्न इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं को इन पर लगातार ध्यान रखने की आवश्यकता है। एक खाद्य और कृषि संस्था है जिसको इसलिये स्थापित किया गया है कि समस्त प्रमुख कृषि प्रधान देशों में इन प्रश्नों पर समान रूप से विचार किया जा सके। यह बड़े दुर्भाग्य की बात होगी, यह अवनति का कारण होगा यदि हम खुली आंखों से तथा उन खतरों का जिनमें हम पड़ जायेंगे, पूर्ण ज्ञान रखते हुये सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के संशोधन को स्वीकार करें। समान नीति को ग्रहण करने के लिये यदि हमें प्रत्येक प्रदेश की सम्मति प्राप्त करनी पड़े तो हम फिर सन् 1943 ई॰ की स्थिति में पड़ जायेंगे।

[प. हृदयनाथ कुंजरू]

श्रीमान् जी, इसके अतिरिक्त हाउस द्वारा मद 14 के स्वीकार कर लेने पर जिस अधिकार का केन्द्र उपभोग करेगा उसके संबंध में रियासत अथवा अन्य किसी प्रदेश के प्रतिनिधियों को जो कुछ भी भय है, उसके संबंध में, मैं एक बात कहना चाहूंगा। किसी उत्तरदायित्व को लेने के पूर्व राष्ट्रीय सरकार स्वभावतः यह विचार करेगी कि उत्तरदायित्व ऐसा है जिसे प्रदेश स्वयं अपने साधनों से पूरा कर सकता है, अथवा वह राष्ट्रीय सरकार की सहायता से ही पूरा हो सकता है। जल्दी में ऐसे समझौते नहीं किये जायेंगे जिन पर अधिक खर्च होगा, क्योंकि उस सूरत में उसे उत्तरदायित्वों को पूर्ण करने के लिये प्रान्तों की सहायता करने में नैतिक रूप से बाध्य होना पड़ेगा। माननीय सदस्यों को भय होगा कि अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों की बात स्वीकार कर लेने से प्रदेशों का इतना खर्च बढ़ जायेगा जिसे वे बरदाश्त नहीं कर सकेंगे। मैं नहीं समझता कि इस प्रकार डरने की कोई आवश्यकता है क्योंकि यह भली प्रकार विदित है कि वर्तमान काल में प्रदेशों को चाहे कैसे भी उपयुक्त आर्थिक अधिकार दिये जायें, वे न तो शिक्षा को निःशुल्क कर सकेंगे और न अनिवार्य, न वे जन-साधारण के स्वास्थ्य संबंधी सर जोसेफ भोर कमेटी की सिफारिशों को क्रियान्वित कर सकेंगे और न वे अन्य उन विषयों में संतोषजनक प्रगति कर सकेंगे जोकि उनके अधिकार में हैं, जब तक केन्द्र से उन्हें बहुत अधिक आर्थिक सहायता न मिले। इन परिस्थितियों में मेरे लिये यह अविचारणीय है कि बिना यथेष्ट विचार किये तथा प्रदेशों से पूर्व परामर्श लिये बिना केन्द्रीय सरकार उनको उन नीतियों के ग्रहण करने के लिये विवश करे जिनको क्रियान्वित करना उनके साधनों से परे है। एक बात और है, श्रीमान् जी, कि उन विषयों से संबंध रखने वाले अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में, जिनका प्रांतों से भी संबंध है, केवल केन्द्रीय मंत्रिमंडल या केन्द्रीय व्यवस्थापिका की ओर से ही भारतीय प्रतिनिधि नहीं होंगे। वे प्रान्तों तथा अन्य प्रदेशों से भी लिये जायेंगे। अतः भारतीय सरकार द्वारा किसी अंतर्राष्ट्रीय समझौते के करने से प्रदेशों की आर्थिक व्यवस्था पर प्रभाव के बारे में हम आशंका क्यों करें? श्रीमान् जी, विगत अनुभव पर विचार करते हुये तथा भारतीय सरकार के सन् 1935 ई० के एक्ट द्वारा केन्द्रीय सरकार पर अभागे प्रतिबंध के लगाये जाने के कारण अंतर्राष्ट्रीय श्रम-सम्मेलनों में पिछले 25 वर्षों से भी अधिक काल तक जो हमारी स्पर्धाहीन हालत रही है उस पर विचार करते हुये, मेरी राय से यह उचित तथा आवश्यक है कि अंतर्राष्ट्रीय समझौतों को करने के लिये केन्द्रीय सरकार को व्यापक अधिकार होने चाहियें। अपने वक्तव्य को समाप्त करने के पूर्व मैं यह कहना चाहूंगा कि यदि प्रदेशों की संख्या सीमित होती और यदि वे इस आकार के होते कि भारतीय सरकार को उनसे परामर्श

करना तथा उनके विचार पर उचित ध्यान देना संभव हो सकता था तब तो सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के संशोधन को स्वीकार करने की सूरत होती। लेकिन अभी तक हमें यह नहीं मालूम कि प्रदेशों की कितनी संख्या होगी और छोटे से छोटे प्रदेश का क्या आकार होगा। यदि प्रदेश में चन्द हजार या सौ व्यक्ति हुये तो सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य का संशोधन हमें कठिन स्थिति में डाल देगा। अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में हमारा मजाक उड़ाया जायेगा, अगर हम यह कहेंगे कि हम उन प्रदेशों से परामर्श किये बिना भारत को बाध्य नहीं कर सकते जो कि बड़ी जमींदारियों के समान हैं। इस पर विचार करते हुये सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के संशोधन से जो स्थिति उत्पन्न हो जायेगी उसका विचार करना असंभव है। अतः मैं सम्पूर्ण हृदय से उसके अस्वीकार किये जाने के पक्ष में हूं।

***सरदार के॰एम॰ पनिक्कर** (बीकानेर)**:** अध्यक्ष महोदय, सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के प्रस्ताव के पश्चात जो वाद-विवाद हुआ उसमें मेरे विचार से बहुत गलतफहमी रही है। वाद हेतु यह नहीं है कि अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन के निर्णयों को केन्द्रीय व्यवस्थापिका द्वारा पुष्ट किया जाये या क्रियान्वित किया जाये। प्रत्येक व्यक्ति ने यह स्वीकार किया है कि भारत द्वारा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में किये गये समझौतों को केन्द्रीय व्यवस्थापिका में पुष्ट किया जाना चाहिये तथा क्रियान्वित किया जाना चाहिये। फिर वाद हेतु क्या है? वाद हेतु यह है कि ऐसा करने के लिये इसको संघ के मदों के साथ रखा जाये अथवा सहगामी सूची में रखा जाये, जिससे कि इसके संबंध का कानून निर्माण करने का अधिकार केन्द्रीय व्यवस्थापिका को हो। सर्वश्री मुंशी और कुंजरू ने जो वाद हेतु उठाया है वह यह है कि ऐसे कई सम्मेलन हैं जिनमें भारत को सम्मिलित होना तथा भाग लेना है, जिनमें निर्णय किये जायेंगे और समस्त प्रदेशों से परामर्श करना संभव नहीं है जिसके लिये कि हम वापस आयें और उन निर्णयों की व्यवस्था करें और उनको क्रियान्वित करें। यहां मैं यह कहने का साहस करता हूं कि इसमें थोड़ी सी गलतफहमी है क्योंकि यदि आप उदाहरण के रूप में आई॰एल॰ओ॰ का प्रश्न लेते हैं जिसका प्रमुख रूप में वर्णन किया गया है, तो यदि आप सहगामी सूची की ओर ध्यान दें तो आप देखेंगे कि मद 26 श्रम की भलाई, श्रम की शर्तें, प्रोविडेन्ट फण्ड, मालिकों का देना तथा श्रमिकों का मुआवजा, स्वास्थ्य बीमा, मय असमर्थ होने पर तथा वृद्धावस्था में पेंशन के संबंध में है। जब तक कि यह मद सहगामी सूची में है तब तक किसी कानून के पास करने का अधिकार, जिसे वह (संघ) आवश्यक समझे, चाहे वह किसी अंतर्राष्ट्रीय समझौते की शर्त के अनुकूल हो या उसके विपरीत अपनी

[सरदार के.एम. पनिक्कर]

नीति को प्रभावान्वित करने के लिये हों, संघ व्यवस्थापिका को है। यही प्रकार प्रत्येक महत्त्वपूर्ण विषय के लिये है चाहे वह सहगामी सूची का हो, चाहे संघ सूची का। अत: वाद हेतु जो उत्पन्न होता है वह संघ के किसी प्रमाणित सम्मेलन जैसे कि यू॰एन॰ओ॰ या आई॰एल॰ओ॰ में जाने मात्र का नहीं है वरन् यह कहिये कि नैतिक आधार पर स्विट्जरलैंड की पुन: शस्त्रीकरण तक के सम्मेलन (Moral Re-armament Conference) में क्या हम उन निर्णयों को प्रभावान्वित कर सकते हैं? ऐसा करने के लिये यह नितांत आवश्यक है कि उसको संघ या सहगामी सूचियों के किसी प्रमुख मद से संबंधित किया जाये और संघ या सहगामी सूचियां इस प्रकार बनाई गई हैं कि सर्वसाधारण के हित की समस्त बातें उनमें शामिल हैं। अत: जो कुछ भी रियासतों या प्रांतों के लिये शेष रह गया है वे केवल स्थानीय शासन के विषय हैं जोकि अखिल भारतीय या सार्वजनिक नहीं हैं। ऐसी हालत में व्यापक अधिकार देना जैसे कि कानून-निर्माण द्वारा निर्णयों को लागू करना, अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में तय किये गये समझौते या प्रबंध को क्रियान्वित करना-जो कि स्वयं संकटपूर्ण व्याख्या है, क्योंकि यह नहीं बताया गया कि ये किस प्रकार के अंतर्राष्ट्रीय संघ या सम्मेलन होंगे-बहुत संकटपूर्ण है जो कि प्रत्येक प्रांत तथा रियासत के विधान को शक्तिहीन करेगी, क्योंकि यह संघ या सहगामी सूची के विषयों के अंतर्गत नहीं है। यह सब होते हुये भी भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 106 जो कि विशिष्ट रूप में है, इस प्रकार के निर्णयों को क्रियान्वित करने के अधिकारों को सीमित करती है। मैं अन्य किसी सदस्य के समान ही इच्छुक हूं कि अन्य देशों से समझौते तथा संधियां करने में केन्द्रीय व्यवस्थापिका को यथेष्ठ अधिकार हों। परन्तु ऐसा करने के लिये इसे सहगामी या संघ की सूचियों में किसी न किसी विषय से संबंधित कर देना चाहिये। जिस रूप में मद 14 है, यद्यपि इसका अनोखा शब्द विन्यास है, वह कहता है:

"अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संघों तथा अन्य संस्थाओं में भाग लेना और वहां किये गये निर्णयों को क्रियान्वित करना।"

यदि यह संघ तथा सहगामी सूचियों में दिये गये विषयों से संबंधित है तब तो यह वाक्यखंड आवश्यक ही नहीं है। यदि यह संघ तथा सहगामी सूचियों के बाहर का विषय है तो यह वाक्यखंड प्रदेशों की सूची या प्रांतीय सूची के प्रत्येक मद को अशक्त बना देगा। अत: मैं जोरदारी के साथ निवेदन करूंगा कि आप मद 16 में चाहे जो कुछ रखें, आप आई॰एल॰ओ॰ और अन्य प्रमाणित अंतर्राष्ट्रीय

सम्मेलनों तथा संघों के संबंध में स्थिति स्पष्ट करें। मैं सम्मानपूर्वक निवेदन करूंगा कि केन्द्रीय व्यवस्थापिका को और अधिक अधिकार देना जो व्यापक हों और जिनकी व्याख्या नहीं की जा सकती, प्रांतों तथा प्रदेशों के प्रत्येक समूह को अशक्त बनाना होगा और बिना किसी उस उचित व्यवस्था के संघ को अधिकार के प्रत्येक क्षेत्र में हस्तक्षेप करने का अधिकार देना होगा जिस पर उसका कोई अधिकार नहीं है। अतः मुझे सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के संशोधन का समर्थन करने में खुशी है।

***सर बी॰एल॰ मित्तर** (बड़ौदा): अध्यक्ष महोदय, मैं इस परिषद् का ध्यान एक बात की ओर आकर्षित करना चाहता हूं जिसे अभी तक स्पर्श नहीं किया गया है। मैं सरदार पनिक्कर से सहमत हूं कि इस विषय में कुछ गलतफहमी हैं जिसके लिये उन्होंने भारत सरकार के एक्ट की धारा 106 का हवाला दिया है। धारा 106 का उस समय निर्माण किया गया था–जैसा कि उस एक्ट में दिया गया है–जब कि भारत की एक स्वतंत्र सत्ता नहीं थी। भारत ब्रिटिश भारत और रियासतों का भारत था अतः रियासतों के लिये विशेष व्यवस्था बनानी पड़ी थी। परन्तु अब भारत एक स्वतंत्र सत्ता है। जहां तक बाह्य संसार का संबंध है, प्रांतों और रियासतों में अब कोई भेद-विभेद नहीं है। अतः भारत सरकार के किसी भी विधान का हवाला देना संगत नहीं है।

यह मद अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में किये गये निर्णयों को क्रियान्वित करने के बारे में है।

निर्णय को क्रियान्वित करने से पूर्व आपको उसकी पुष्टि करनी है। निर्णय को पुष्टि के लिये केन्द्रीय व्यवस्थापिका के सामने लाया जायेगा। इसके बाद यदि केन्द्रीय व्यवस्थापिका इस प्रकार का निर्णय करती है कि कानून निर्माण द्वारा इस पुष्टि को क्रियान्वित करने की आवश्यकता है तभी मद 14 का प्रयोग होता है। विचार करिये कि अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में निर्णय करने के लिये क्या-क्या विषय हो सकते हैं। वे ऐसे विषय होंगे जो समस्त राष्ट्रों पर लागू होते हों, जो राष्ट्रीय हित के विषय होंगे न कि प्रांतीय हित के संबंध के। ऐसा होने पर संघ या सहगामी सूची के बाहर का विषय सामान्यतः अंतर्राष्ट्रीय निर्णय का विषय नहीं होगा। परन्तु मान लीजिये कि प्रांतीय महत्त्व का विषय अंतर्राष्ट्रीय निर्णय में निहित हो गया, तो इस प्रश्न पर केन्द्रीय व्यवस्थापिका में वाद-विवाद होगा जिसे प्रदेशों का प्रतिनिधित्व प्राप्त है और यदि कोई संकट की बात होगी तो स्वभावतः केन्द्रीय

[सर बी.एल. मित्तर]

व्यवस्थापिका उसका ख्याल करेगी। फिर केन्द्रीय व्यवस्थापिका को अंतर्राष्ट्रीय निर्णयों को क्रियान्वित करने का अधिकार देने में कहां खतरा है?

अतः मेरा प्रश्न यह है कि प्राय: वे ही अंतर्राष्ट्रीय निर्णय होंगे जोकि राष्ट्रीय हितों के तथा अनेकों राष्ट्रों पर लागू होने वाले विषय हों। भारत अब अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में सत्तात्मक इकाई के रूप में सम्मिलित होता है न कि जैसा कि भारत सरकार के विधान के अंतर्गत दिये हुये अनेकों राजनैतिक इकाइयों के समूह के रूप में। ऐसा होते हुये श्रीमान् जी केन्द्रीय व्यवस्थापिका के यह अधिकार सौंपने में, मैं किसी संकट का आभास नहीं करता हूं। मैं अपने माननीय मित्र सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य से निवेदन करूंगा कि वे अपना संशोधन वापस ले लें।

***श्री एम॰एस॰ अणे** (दक्षिणी रियासतें): अध्यक्ष महोदय, इस मद ने यहां विवाद उत्पन्न कर दिया, जिसकी मुझे बिल्कुल ही आशा नहीं थी। परन्तु सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के संशोधन के पेश हो जाने से और दूसरे संशोधन मि॰ नजीरुद्दीन अहमद के भी पेश हो जाने से वाद-विवाद ने वह रूप धारण कर लिया है जिसमें मैं देखता हूं कि विषय से संबंधित कुछ मौलिक सिद्धांतों का लोप हो गया है। हम देखें कि इस मद पर सभा को क्या विचार करना है। यह अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लेने के संबंध में है। जहां तक भाग लेने का संबंध है मैं समझता हूं कि कोई भी सदस्य इसका अपवाद करता हुआ प्रतीत नहीं होता कि भारत के नाम से इन सम्मेलनों में प्रतिनिधियों को भेजने का अधिकार केन्द्रीय सरकार या संघीय सरकार को होना चाहिये। वास्तविक कठिनाई इन निर्णयों के क्रियान्वित करने के संबंध में है। जैसाकि मेरे मित्र सर बी॰एल॰ मित्तर ने सही बताया है कि ये निर्णय अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में विचार-विमर्श तथा परामर्श के पश्चात् किये जायेंगे। उनमें उन विषयों पर निर्णय निहित होंगे जो कि किसी देश के विशेष भाग के हित के लिये न हों वरन् व्यापक दृष्टिकोण से अंतर्राष्ट्रीय लाभ तथा हित विषयक हों। प्रश्न यह है कि जब कि अंतर्राष्ट्रीय विचारधारा के निर्णयों को क्रियान्वित किया जाता है, चाहे वे प्रांतीय जगत के अंतर्गत विषयों से संबंधित हों, क्या वे निर्णय केन्द्रीय या संघ की सरकार द्वारा विचारणीय नहीं है? प्रादेशिक इकाइयों से यह आशा की जाती है कि वे प्रदेश के अंतर्गत रहने वाले मनुष्यों के हित के आधार पर कुछ विषयों में अपने प्रदेशों पर शासन करें। अतः उनके विचार अवश्य ही उस प्रादेशिक प्रकृति द्वारा सीमित रहेंगे जो कि उन भौगोलिक सीमाओं से घिरे हुये हैं, जिनके अंतर्गत प्रादेशिक इकाइयों को अपना शासन चलाना

है। परन्तु ये ऐसे निर्णय हैं जिनमें विश्व का दृष्टिकोण है; अतः इन निर्णयों को पूर्ण करने के लिये केन्द्र की सत्ता उत्तम होगी कि वह यह देखें कि उन निर्णयों को क्रियान्वित करना है या नहीं और यदि करना है तो उनको क्रियान्वित करने का क्या उचित रूप है, जिससे कि सभ्य संसार के समक्ष भारत का औचित्य स्थापित हो सके। यह विचार है जिस पर इन निर्णयों के लिये हमें सोचना है। मेरी राय में यह विषय ही ऐसे हैं कि प्रांतों तथा प्रादेशिक इकाइयों के निर्णय पर इन्हें छोड़ना संभव ही नहीं है। यही वह संस्था है—मेरा आशय केन्द्रीय व्यवस्थापिका से है—जोकि अधिक व्यापक तथा अंतर्राष्ट्रीय विचार कर सकने में समर्थ है। अतः इन निर्णयों को क्रियान्वित करने के अधिकार भी इसी को सौंपने चाहियें। मेरे ख्याल से यह सबको स्पष्ट है कि यदि समस्त संसार के सामने भारत को एक रूप होकर खड़ा होना है, तो वह केन्द्रीय व्यवस्थापिका ही होगी जो कि समस्त संसार के सामने भारत का प्रतिनिधित्व कर सकती है और उसे इन निर्णयों को क्रियान्वित करने का उत्तरदायित्व भी होना चाहिये। भारत से बाहर के समस्त विषयों के लिये अधिकार एकमात्र केन्द्रीय सरकार के शासन प्रबंध तथा नियंत्रण पर छोड़ दिये गये हैं। मैं निवेदन करता हूं कि यह विषय भी उसी प्रकार का है, अर्थात् वैदेशिक विभाग की सूची के अंतर्गत आने वाला। अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन बाह्य विषय है जो कि देश के अंतर्गत विषयों को प्रभावित करता है। अतः विषयों के स्वाभाविक प्रवाह में यह विषय केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्णय किया जाना चाहिये, और मुझे विश्वास है कि यदि सर कृष्णमाचार्य अपने संशोधन पर जोर नहीं देते हैं और इस मद को इसी रूप में रहने देते हैं, तो वे देखेंगे कि कुछ भी हानि नहीं होगी। मैं इसलिये संशोधन का विरोध करता हूं।

*__श्री टी॰ चनैया__ (मैसूर): (कनाड़ी भाषा में बोले)

*__श्री एच॰वी॰ कामत__ (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, माननीय सदस्य अंग्रेजी जानते हैं और मेरा निवेदन है कि आप उनसे अंग्रेजी में बोलने की प्रार्थना करें।

*__श्री टी॰ चनैया:__ मुझे किसी भी मनचाही भाषा में बोलने का अधिकार है।

(कनाड़ी में बोलना जारी रखा)

***श्री शंकर दत्तात्रेय देव** (बम्बई: जनरल): श्रीमान् जी, हमें कम से कम यह तो बता दिया जाये कि माननीय सदस्य किस भाषा में बोल रहे हैं।

***अध्यक्ष:** मुझे यह सूचना मिली है कि वे कनाड़ी में बोल रहे हैं। *(हंसी)*

***श्री मोहनलाल सक्सेना** (संयुक्त प्रांत: जनरल): हम किस प्रकार मालूम करें कि वे कनाड़ी में बोल रहे हैं या नहीं?

***दीवान चमनलाल** (पूर्वी पंजाब: जनरल): श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है। क्या मेरे माननीय मित्र द्वारा दिये गये वक्तव्य का किसी समझ में आने वाली भाषा में अनुवाद करने का कोई प्रबंध है?

***अध्यक्ष:** अनुवाद का कोई प्रबंध नहीं है। यदि कोई माननीय सदस्य अपनी मातृभाषा में बोलना पसंद करता है, मैं उसे नहीं रोक सकता हूं। अन्य सदस्यों की समझ में वह वक्तव्य नहीं आता और वक्ता भी यहां उपस्थित अधिकांश सदस्यों को प्रभावित नहीं कर सकता है। अत: हानि वक्ता को ही अधिक है अपेक्षाकृत सदस्यों के जो उसको नहीं समझ सकते। मैं किसी सदस्य के सामने बाधा उत्पन्न करना नहीं चाहता हूं जोकि अपनी मातृभाषा में बोलना चाहता है।

***श्री टी॰ चनैया:** धन्यवाद, अध्यक्ष महोदय! (कनाड़ी में भाषण जारी)

***श्री एम॰एस॰ अणे:** श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है। क्या आप यह जान सकते हैं कि वे संगत बोल रहे हैं अथवा असंगत?

***अध्यक्ष:** मैं यह नहीं जान सकता हूं कि वे संगत बोल रहे हैं अथवा असंगत। यह तीसरा अवसर है जबकि एक सज्जन ऐसी भाषा में बोले हैं जिसे यहां अधिकांश सदस्य नहीं समझ सके। मैंने एक सदस्य को तेलगू में बोलने तथा दूसरे सदस्य को तमिल में बोलने की आज्ञा दी थी और मैंने सोचा कि मैं किसी सदस्य को कनाड़ी में बोलने से नहीं रोक सकता हूं। मैं जानता हूं कि वे स्वयं अनुभव करेंगे कि जो वक्तव्य वे दे रहे हैं उसे अधिकांश सदस्य नहीं समझ रहे हैं और यह भी अनुभव करेंगे कि वे अपना समय व्यर्थ खो रहे हैं। अत: मैं उनसे निवेदन करूंगा कि वे अपने वक्तव्य को संक्षिप्त करें।

***श्री बी॰जी॰ खेर** (बम्बई: जनरल): वे रियासतों पर और केन्द्र पर बोल रहे हैं। मैं निवेदन करता हूं कि जिस विषय पर हम वाद-विवाद कर रहे हैं, उसका इससे कोई संबंध नहीं है।

***दीवान चमनलाल:** इस परिषद् के कार्य-विधि संबंधी तथा स्थायी आज्ञाओं के नियम 59 बताता है: ''परिषद् में कार्यवाही हिन्दुस्तानी, हिन्दी या उर्दू या अंग्रेजी में होगी बशर्ते कि प्रधान किसी सदस्य को, जो इन दोनों भाषाओं में से किसी में भी अपने विचार पर्याप्त रूप में प्रकट नहीं कर सकता, अपनी मातृभाषा में परिषद् में भाषण देने के लिये आज्ञा दे दे।'' मैं निवेदन करता हूं कि इस समय माननीय सदस्य इस नियम का लाभ उठा रहे हैं और उनको इस नियम से लाभ उठाने की कोई आवश्यकता नहीं है। वे अंग्रेजी जानते हैं। उन्होंने अभी पर्याप्त रूप में अंग्रेजी में अपने विचार प्रकट किये हैं। अत: उनको अपनी मातृभाषा में बोलने का अवसर नहीं दिया जाना चाहिये।

***अध्यक्ष:** यह नियम अन्य व्यवस्थापिकाओं में भी पाया जाता है और वहां यद्यपि सदस्य अंग्रेजी भाषा में अपने आप को व्यक्त कर सकता है फिर भी सदस्यों को अपनी मातृभाषा में बोलने की इजाजत दी जाती है। अत: मैं उन्हें उनकी मातृभाषा में बोलने की आज्ञा देता हूं। फिर भी मैं उनसे निवेदन करूंगा कि वे अपने भाषण को संक्षिप्त करें।

***श्री राजकृष्ण बोस** (उड़ीसा: जनरल): उस हालत में जब कि आप सदस्यों को उस भाषा में बोलने की इजाजत देते हैं जिसे अधिकांश सदस्य नहीं समझ सकते हैं, तो कम से कम अध्यक्ष को अपने पास एक द्विभाषिया रखना चाहिये जिससे कि वे यह जान सकें कि सदस्य क्या बोल रहा है।

***श्री टी॰ चनैया:** (अपना भाषण कनाड़ी में समाप्त किया।)

***अध्यक्ष:** हमने काफी वाद-विवाद कर लिया है। मैं अब श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर से निवेदन करता हूं कि यदि वे चाहें तो उत्तर दें।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, दो संशोधन जो सभा के समक्ष विचारार्थ उपस्थित हैं, वे सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य और मि॰ नजीरुद्दीन अहमद के हैं। मेरे ख्याल से सार रूप में दोनों लगभग एक-सा ही वाद हेतु उपस्थित करते हैं। जहां तक संशोधन के औचित्य से संबंध है, उन पर वक्ताओं

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

द्वारा यथेष्ठ प्रकाश डाला जा चुका है जिन्होंने मेरे सामने विषय को लिया। जो वाद-विवाद हो चुका है उसमें मैं कोई तत्व की बात नहीं बढ़ाना चाहता हूं। हमारे विचार के लिये मुख्य बात यह है कि अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संघों अथवा अन्य संस्थाओं में संघीय व्यवस्थापिका को उन सम्मेलनों तथा संघों में केवल भाग लेने का अधिकार ही नहीं वरन् उनमें किये गये निर्णयों को क्रियान्वित करने के भी अधिकार होने चाहियें अथवा नहीं।

श्रीमान् जी, जैसा कि बताया गया है, अंतर्राष्ट्रीय जगत में भारत ने जो नई स्थिति ग्रहण की है उस पर विचार करते हुये यह बहुत आवश्यक है कि यह देश उन सम्मेलनों तथा संघों में एक स्वर में बोले और यदि यह भी स्वीकार किया जाता है कि भारत वहां किये गये निर्णयों में सहयोगी हो तो मेरे विचार से तो यह आवश्यक है कि एकरूप होकर भारत को इन निर्णयों को क्रियान्वित करने का कदम उठाना चाहिये। साधारण रूप में, मैं सरदार पनिक्कर के तर्क से सहमत हूं कि संघीय व्यवस्थापिका को इन सम्मेलनों में किये गये निर्णयों के संबंध में कानून निर्माण करने के अपने अधिकारों को संघीय विषय-सूची या सहगामी विषय सूची में केवल सम्मिलित करने के लिये विदित कर लेना चाहिये। बात ऐसी ही है, परन्तु हमें यह भी याद रखना चाहिये कि हम इन सम्मेलनों में उस संघ की ओर से सम्मिलित नहीं होते हैं जिसका संघीय प्रदेशों से कुछ भेद-विभेद रखा गया है। हम उन सम्मेलनों में समस्त भारत की ओर से सम्मिलित होते हैं अर्थात् प्रदेशों तथा संघ का संयुक्त भारत-और यदि हमारे ऊपर उन सम्मेलनों में किये गये निर्णयों को स्वीकार करने का जोर डाला जाता है तो ठीक बात केवल यही है कि हम उन सम्मेलनों में जिन निर्णयों से सहमत होते हैं, उन्हें क्रियान्वित कर सकें। हमारे उन निर्णयों को स्वीकार कर घर आने से कोई लाभ नहीं जब कि हम केन्द्र में होते हुये उनको क्रियान्वित नहीं कर सकते तथा हम उनको विभिन्न प्रादेशिक इकाइयों को भेजें और वे उन पर अपना निर्णय करें कि उन निर्णय को क्रियान्वित किया जाये या न किया जाये। श्रीमान् जी, इससे अंतर्राष्ट्रीय जगत में भारत की एक देश के रूप में बड़ी भद्दी स्थिति होगी। यह बात सच है कि जब हम इन सम्मेलनों में उन निर्णयों को निश्चित करते हैं तो वे विभिन्न महत्त्व लिये हुये होते हैं। बहुत से सम्मेलनों में केवल पवित्र निर्णय ही किये जाते हैं, परन्तु बहुतों में मानव स्वतंत्रता घोषित की जाती है, तथा ऐसे ही और निर्णय किये जाते हैं। हमारे लिये उन सम्मेलनों में स्वीकार किये गये प्रत्येक प्रस्ताव

को क्रियान्वित करने का प्रयत्न करना कठिन होगा। परन्तु इस मद का वास्तविक अर्थ क्या है? इसका अर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक निर्णय जो कि उन सम्मेलनों में किया जाता है, क्रियान्वित होना चाहिये। इसका केवल यह अर्थ है कि यदि यह निश्चय किया जाता है कि उन निर्णयों को क्रियान्वित किया जाना चाहिये तो संघ को उनकी व्यवस्था करने का अधिकार है। यही पूरी बात है। अत: श्रीमान् जी, इस दृष्टिकोण से इस पर विचार करते हुये मुझे यह प्रतीत होता है कि यदि सभा ऐसे सम्मेलनों में भाग लेने की व्यवस्था करती है तो ऐसे निर्णयों के लिये जो क्रियान्वित करने योग्य हैं, क्रियान्वित करने के अधिकार देने के लिये भी उसे सहमत होना चाहिये।

एक और बात है जिसको मैं कहना चाहूंगा। इस मद के संबंध में जो व्यवस्था सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य ने पेश की है वह वास्तव में ऐसी चीज नहीं है जिसे स्वीकार किया जाये। मेरे विचार से वास्तव में यदि उस प्रश्न पर वाद-विवाद करना ही है तो जब कि विधान का मूल विषय सभा के समक्ष आये, उस समय उनको संशोधन की सूचना देकर अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिये भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 106 के समान किसी विशिष्ट धारा बनाने के लिये निवेदन करना चाहिये। उन मदों की सूची के केवल विषय गणना में इस प्रकार की व्यवस्था का रखना जिनके लिये कि संघीय व्यवस्थापिका को कानून निर्माण करने का अधिकार है, मेरी राय में विषय के प्रस्तुत करने की उपयुक्त विधि नहीं है। मुझे और अधिक कुछ नहीं कहना है।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा। पहला संशोधन सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य द्वारा पेश किया गया है।

प्रश्न यह है कि:

''निम्न पद 14 के अंत में जोड़ दिया जाये:

'बशर्ते कि केवल इस मद को सूची में शामिल कर लेने के आधार पर किसी प्रान्त या संघ में सम्मिलित रियासत के लिये इन निर्णयों को क्रियान्वित करने का अधिकार संघ को नहीं होगा जब तक कि प्रान्त या रियासत की पूर्व स्वीकृति न हो'।''

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** इसके पश्चात् मि० नजीरुद्दीन अहमद का संशोधन है।

प्रश्न यह है कि:

''मद 14 के अंत में निम्न जोड़ दिया जाये:

'कानून निर्माण की अपनी क्षमता के अंतर्गत विषयों पर तथा प्रान्त अथवा रियासत पर प्रभाव डालने वाले अन्य विषयों पर ऐसे विषयों की स्वीकृति से'।''

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** मैं मूल मद 14 पर राय लूंगा।

प्रश्न यह है कि:

मद 14 स्वीकार की जाये।

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

मद 15

***अध्यक्ष:** मद 15 पर कोई भी संशोधन नहीं है। इसलिये मैं उस पर सीधे मत लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 16

***अध्यक्ष:** सर ए० रामास्वामी मुदालियर, सर वी०टी० कृष्णमाचार्य, श्री एम०ए० श्रीनिवास तथा श्री सी०एस० वेंकटाचार्य द्वारा संशोधन की सूचना है।

***सर वी०टी० कृष्णमाचारी:** मैं अपने संशोधन को वापस लेता हूं।

***श्री एम० माधवराव:** मैं भी अपने संशोधन को वापस लेता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान् जी, मैं निवेदन करता हूं कि मद 16 के अंत में निम्न जोड़ दिया जाये:

''कानून निर्माण करने की क्षमता के अंतर्गत विषयों पर तथा प्रान्त या रियासत पर प्रभाव डालने वाले अन्य विषयों में ऐसे प्रदेशों की आवश्यक स्वीकृति द्वारा।''

श्रीमान् जी, इस विषय पर पूर्ण वाद-विवाद हो चुका है और जो कुछ कहा जा चुका है उसको मैं दुहराना नहीं चाहता हूं। मैं एक बात कहने की प्रार्थना करता हूं कि वाक्य खंड 14 के वाद-विवाद में श्री मुंशी ने अपनी बात को स्पष्ट कर दिया जब उन्होंने यह कहा कि प्रदेशों तथा रियासतों से परामर्श किये बिना केन्द्र द्वारा कोई भी कार्यवाही नहीं की जायेगी और केन्द्र उनकी पीठ पीछे कोई भी काम नहीं करेगा। यह एक बहुत अप्रत्यक्ष रियायत है कि प्रांत तथा रियासतें परामर्श किये जाने के अधिकारी हैं। इसके बाद श्री आयंगर ने भी उत्तर में कहा था। मेरे ख्याल से वह मद 14 के संशोधन की व्यवस्था के संबंध में था कि इस मद के लिये यह उपयुक्त स्थान नहीं है, यह सुझाते हुये, मैंने उनको सही-सही समझा कि उसी चीज को किसी उचित रूप में स्वयं विधान में रखा जा सकता है। इन दो प्रमुख व्यक्तियों के सभा में ये भाषण मुझे यह संकेत करते हैं कि उन्होंने भी अपनी स्थिति की कठिनाई का आभास किया। वास्तव में प्रश्न केवल यह है कि श्री आयंगर तथा मुंशी केन्द्र में बड़े प्रभावशाली व्यक्ति हैं, हम यह मान लें कि वे अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में जाते हैं और वहां वे इस बात से सहमत होते हैं कि आदमी के सब गुणों का अपहरण कर लिया जाये और प्रभावशाली व्यक्तियों में उनको बांट दिया जाये। वह आदमी कहता है ''बिना मेरी स्वीकृति के आप ऐसा नहीं कर सकते हैं।'' लेकिन प्रभावशाली व्यक्ति कहते हैं, ''यदि तुम हमारे अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के शुभ-कार्यों में बाधा डालते हो तो हम ख्याल करते हैं कि तुम हमें रोकते हो।'' ठीक यही दशा है। चाहे इस कार्य के पीछे सद्भावना हो, फिर भी यह प्रान्तों अथवा रियासतों के अधिकारों का प्रश्न है। प्रश्न यह है कि क्या आपको यह आज्ञा मिल सकती है, चाहे अप्रत्यक्ष रूप में हो चाहे वह समस्त भारत के लाभ के लिये हो, कि आप इस प्रकार के आदेशों द्वारा प्रान्तों तथा रियासतों के व्यवस्था संबंधी संरक्षणों को सीमित करें? मैं निवेदन करता हूं कि वाद-विवाद ने इस कठिनाई का उत्तर नहीं दिया है जिसे मैं महसूस कर रहा हूं। वास्तव में अपनी कानूनी क्षमता के अंतर्गत सूची (2) में दिये गये एकमात्र प्रान्तीय न्यायाधिकार क्षेत्र के अंतर्गत विषयों पर प्रान्त का अधिकार है और रियासतों का उन विषयों पर अधिकार है जिनको उन्होंने सौंपा नहीं है। प्रश्न यह है कि क्या केन्द्र को उन एकमात्र अधिकारों को दबा लेने की अप्रत्यक्ष रूप से आज्ञा दी जानी चाहिये? इस प्रकार तो व्यवस्था संबंधी सूची में समस्त भेद-विभेदों को रद्द कर दिया जायेगा। सिद्धांत के प्रश्न पर मेरे विचार से ऐसा नहीं होने देना चाहिये, चाहे भावना कितनी ही उच्च क्यों न हो। जो कुछ मैं चाहता हूं वह यह है कि विषय-सूची का इस प्रकार संशोधन किया जाये या विधान के अंतर्गत कुछ यथेष्ठ संरक्षणों का समावेश किया जाना चाहिये कि

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में जाने से पहले प्रान्तों या रियासतों से वाद-विवाद कर लिया जाये और उनकी स्वीकृति प्राप्त कर ली जाये और तब केन्द्र ऐसे सम्मेलनों में अपने प्रतिनिधि भेजे। इस विधि के बिना वहां जाना मूर्खतापूर्ण है। यह मुझे बिल्कुल सरल तथा न्याययुक्त प्रतीत होता है। मैं नहीं समझता कि केन्द्र की निपुणता तथा उसके यश के नाम पर इस अधिकार अपहरण का सहारा लिया जाये। मैं समझता हूं कि जो प्रश्न मैंने उठाया है वह ठोस वैधानिक तर्क पर आश्रित है और प्रदेशों के एकमात्र अधिकारों के संबंध में उनकी पीठ पीछे केन्द्र द्वारा किसी कार्यवाही के किये जाने के विरोध में कोई व्यवस्था होनी चाहिये।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास: जनरल): यद्यपि मद 14 पर सभा द्वारा निर्णय से मद 16 पर कोई भी वक्तव्य अनावश्यक हो जाता है, फिर भी इस कथन को विचार में रखते हुये कि जब तक संधि या समझौता प्रांत द्वारा क्रियान्वित न किया जाये तब तक वह संधि या समझौता स्वीकृत नहीं माना जाना चाहिये तथा एक ऐसा विचार भी रखा गया है कि भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 106 के समान विधान में पर्याप्त व्यवस्था रख दी जाये, मैं कुछ शब्द कहना चाहूंगा। श्रीमान जी, मैं यह निवेदन करता हूं कि जैसा सर बी॰एल॰ मित्तर द्वारा बताया गया है कि भारतीय सरकार के एक्ट की धारा 106 के निर्माण करने के कारण अब वर्तमान नहीं हैं और विदेशों से जो संधियां तथा समझौते किये जाते हैं, उनको क्रियान्वित करने के अधिकार केन्द्रीय व्यवस्थापिका को होने चाहियें। इस प्रकार की व्यवस्था में कोई शोभनीय बात नहीं है। प्रत्येक संघ-विधान में, चाहे केन्द्र तथा प्रदेशों में अधिकारों का कैसा ही बंटवारा हो, इस बात का ध्यान न करते हुये कि संधि उस अधिकार का अपहरण करेगी जो कि प्रान्तीय अधिकार के नाम से है, केन्द्र को उस संधि के क्रियान्वित करने का अधिकार है, इस ओर ध्यान किये बिना भी कि ऐसी संधियों का विषय प्रान्तों के अधिकार में होना चाहिये। मैं केवल थोड़े से उदाहरण दूंगा। अमेरिका विधान में भी केन्द्र तथा प्रदेशों में अधिकारों का बंटवारा है। अवशिष्ट अधिकार प्रदेशों को हैं, परन्तु फिर भी यह सबने स्वीकार किया है कि यदि संधि करने के अधिकारों के प्रयोग करने में अमेरिका की केंद्रीय सरकार यदि किसी विदेशी राज्य से संधि कर लेती है तो वह संधि प्रदेशों को भी मान्य होगी तथा उन पर लागू होगी, इस बात का ख्याल किये बिना कि संधि का विषय प्रदेशों के अधिकारों के अंतर्गत था। यह सच है कि अमेरिका के विधान की व्यवस्था तो यहां तक कहती है कि ऐसी संधि देश का उच्च कानून होगा। अमेरिका में यह स्थिति है।

आस्ट्रेलिया में भी अवशिष्ट अधिकार प्रदेशों को हैं और केन्द्र के अधिकार कुछ विशिष्ट विषयों पर हैं। फिर भी यदि केन्द्र विदेशी विभाग के अंतर्गत अपने अधिकारों को प्रयोग में लाते हुये किसी विदेशी राज्य से संधि या समझौता कर लेता है तो वह संधि प्रदेशों पर अवश्य लागू होगी। उस संधि या संधि को क्रियान्वित करने वाले कानून के विरुद्ध इस आधार पर किसी साधारण परिस्थितियों में यह संधि करना प्रदेशों के अधिकार-क्षेत्र में था, कोई कार्यवाही करने का प्रदेशों को अधिकार नहीं है।

कनाडा में जुडीशियल कमेटी के अपीलों के फैसलों में बड़ा तीव्र मतभेद रहा। परन्तु कनाडा का प्रभावशाली तथा शक्तिशाली राष्ट्रीय मत इस विचार का है कि संघ द्वारा किसी अंतर्राष्ट्रीय संस्था के सदस्य होने के नाते जो संधियां की जाती हैं उनको क्रियान्वित करने का केन्द्र को अधिकार होना चाहिये। प्रान्तों को यह कहने का कोई अधिकार नहीं है कि क्योंकि ये विशेष विषय साधारण परिस्थितियों में प्रान्त के अधिकार के अंतर्गत हैं, इसलिये प्रान्तों पर ये संधियां लागू नहीं हो सकती हैं। जहां तक निर्णयों (फैसलों) का संबंध है, इसमें संदेह नहीं कि उनमें मतभेद है। लेकिन मैंने यह भी कह दिया है कि कनाडा का प्रभावशाली तथा शक्तिशाली राष्ट्रीय मत ऐसी संधि को बल देने के पक्ष में है।

इन परिस्थितियों में भारत की अनोखी प्रकृति पर विचार करते हुये, अनेकों रियासतों के अस्तित्व को तथा अनेकों प्रदेशों को जो संघ का निर्माण करते हैं, दृष्टि में रखते हुये इस देश को संधि करने का तथा उस संधि को क्रियान्वित करने का अधिकार होना चाहिये। लेकिन हमारे राजनीतिज्ञों को प्रतिबंध रहित, संधि करने के लिये सचेत रहना चाहिये। उनको कोई आवश्यक अधिकार सुरक्षित रखना चाहिये और उनको इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि जब तक हमारी व्यवस्थापिका संधि को क्रियान्वित नहीं करती वह लागू नहीं की जायेगी। वे कोई अन्य अधिकार सुरक्षित रख सकते हैं जो प्रान्तों तथा केन्द्रों की सरकारों से परामर्श करने के संबंध में हों। अन्यथा किसी संधि प्रबंध में केन्द्र अपने आपको मूर्ख बनायेगा। धारा 106 के बहुधा हवाले दिये गये हैं, उस पर विचार करते हुये मैं यह समीक्षा कर रहा हूं। इस मद के रखने के पक्ष में, मैं इस आधार को ग्रहण करता हूं कि धारा 106 जैसी कोई धारा नहीं होगी। संधियों के अलावा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों या जिसे कि एक प्रकार के अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के समझौते कहा जा सकता है, उनको किसी अन्य आधार पर लिया जा सकता है।

***श्री एम० अनन्तशयनम् आयंगर:** श्रीमान् जी, मैं भी इसी विचार का था कि भारत सरकार के एक्ट की धारा 106 के समान एक व्यवस्था बना देनी चाहिये;

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

लेकिन पुनः विचार करने पर मैंने मालूम किया कि उसके द्वारा देश पर अनेकों कष्ट आ पड़ेंगे, वे हमारे मामले को अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में नहीं रख सकेंगे और यहां तक कि उन विदेशों के संबंध में भी जिनसे हमने संधियां तथा समझौते कर लिये हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि प्रान्तों या प्रादेशिक इकाइयों की स्वीकृति लिये बिना या उनसे परामर्श किये बिना इस विषय में केन्द्र को स्वतंत्रता देने में खतरा है। प्रदेशों की संख्या बहुत बड़ी है और यह संभव नहीं हो सकता कि निर्णयों को क्रियान्वित करने के पूर्व उनकी स्वीकृति प्राप्त की जा सके या हरएक से परामर्श किया जा सके। चित्र के दो पहलू हैं। मध्यमार्ग का सदैव अनुकरण करना चाहिये और वह सम्मेलन के तरीके पर किया जा सकता है।

मुझे मालूम है, श्रीमान् जी, कि समस्त सधियां तथा समझौते, उनके अतिरिक्त जो कि राजनैतिक विषयों पर विदेशों से किये जाते हैं, और सब अन्य समझौते, व्यापार संबंधी समझौते तथा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों द्वारा किये गये निर्णय क्रियान्वित करने के पूर्व केन्द्रीय व्यवस्थापिका के सामने रखे जाते हैं और उसकी स्वीकृति या पुष्टि के बिना उनको कानून का श्रेय प्राप्त नहीं होता है। अतः कम से कम इस देश में एक ऐसी व्यवस्थापिका है जो इन निर्णयों को स्वीकार करती है और उनको कानून का बल या श्रेय देती है। प्रश्न केवल यही है कि प्रान्तीय विषयों के संबंध में प्रान्तीय व्यवस्थापिका की भी सुनी जाये या नहीं। इस बात पर विचार करते हुये कि प्रदेशों की संख्या बहुत बड़ी है यह असंभव होगा। जिनेवा में खाद्य तथा कृषि का एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन है। मैं ठीक-ठीक जानता हूं कि प्रान्तों से उन प्रतिनिधियों के बारे में जो वहां जायेंगे तथा उनको क्या आदेश होने चाहियें इसके बारे में परामर्श नहीं किया गया है, कम से कम एक प्रान्त से तो परामर्श नहीं लिया गया। यदि प्रान्तों के ऊपर प्रान्तों की स्वीकृति के बिना तथा प्रान्तों से खास आदेश लिये बिना कि उन प्रतिनिधियों को इन सम्मेलनों में किन-किन बातों पर जोर देना है इन अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में प्रतिनिधि भेजे जाते हैं तो उनकी (प्रान्तों) आरम्भ तथा अंत दोनों में अवज्ञा करनी है,–आरंभ में प्रतिनिधि भेजने में और अन्त में निर्णय करने में। यह कठिनाई केवल प्रान्तीय विषयों के संबंध में उत्पन्न होती है। प्रतिनिधियों के चुनाव करने के विषय में तथा उनको आदेश देने में और अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में खास निर्णयों के करने के पश्चात् प्रतिनिधियों के यहां आने पर प्रान्तों या इकाइयों को इस विषय में कुछ भी कहने का अधिकार नहीं देने में यदि प्रान्तों के साथ पूर्ण शिष्टता के साथ बर्ताव नहीं किया जाता तो यह खेदजनक विषय है। मैं केन्द्र को असमर्थ बनाने तथा निर्णयों के क्रियान्वित

करने में बाधा डालने के लिये किसी कानूनी व्यवस्था को नहीं चाहता हूं। यदि ऐसी कोई व्यवस्था हुई तो केन्द्र संसार के सामने अपने आपको मूर्ख सिद्ध करेगा और उस सीमा तक, मैं मानता हूं, इस संशोधन को नहीं ले जाना चाहिये।

परन्तु व्यवहार में जो कुछ होना चाहिये, वह यह है। उन विषयों के लिये जिन पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन बहुधा होते हैं, स्वास्थ्य, शिक्षा, श्रम तथा अन्य विषयों के लिये एक अंतर्राष्ट्रीय कौंसिल या अखिल भारतीय कौंसिल स्थापित की जानी चाहिये। जब कभी प्रतिनिधियों को सम्मेलनों में जाने के लिये कहा जाये, इस कौंसिल की राय ली जाये। प्रतिनिधियों के चुनाव करने में भी इससे परामर्श करना चाहिये। प्रतिनिधियों को इससे परामर्श करना चाहिये और आदेश प्राप्त करने चाहियें कि वे एक स्वर में केन्द्रीय सरकार की ओर से तथा प्रान्तीय सरकार की ओर से क्या कहें। लौटने पर वे इस अन्तर्प्रान्तीय या अखिल भारतीय कौंसिल को रिपोर्ट करें और उस पर निर्णय करें। जब निर्णय हो जाये तो उस निर्णय को केन्द्र द्वारा क्रियान्वित किया जाये, यह उन अनेकों असुविधाओं को दूर कर देगा जो कि प्रदेशों की स्वीकृति प्राप्त करने के लिये कानूनी व्यवस्था बना देने से उत्पन्न होंगी। यह वांछनीय नहीं है कि प्रदेशों तथा कई प्रान्तों की सरकारों की अवज्ञा की जाये। मध्यवर्ती मार्ग का अनुसरण करना चाहिये। परन्तु वह कानूनी व्यवस्था द्वारा न हो, वह सम्मेलन द्वारा हो। इन कारणों से मैं संशोधन के पक्ष में नहीं हूं। न मैं इस पक्ष में हूं कि भारत सरकार के एक्ट की धारा 106 के समान एक व्यवस्था का समावेश विधान में कर दिया जाये। परन्तु केन्द्र इस बात को ध्यान में रखे कि अनेकों मदों तथा विषयों के संबंध में, जो कि इन अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में आते हैं और जो कि प्रान्तीय सूची में हैं, शीघ्र ही एक अखिल भारतीय कौंसिल स्थापित कर दी जाये और प्रतिनिधि भेजने के विषय में, आदेश देने के विषय में और जबकि निर्णय कर लिये जायें तो पूर्व इसके कि वे केन्द्रीय व्यवस्थापिका द्वारा पुष्ट किये जायें उनको क्रियान्वित करने के विषय में इस कौंसिल से परामर्श किया जाये।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, सभा में संशोधन पर जो कुछ कहा जा सकता था वह संशोधन पर वाद-विवाद करते समय तथा मद 14 पर वाद-विवाद करते समय कहा जा चुका है। मैं केवल एक प्रश्न लेना चाहता हूं जिसे श्री नजीरुद्दीन अहमद ने उठाया है। वह यह है। उन्होंने चाहा कि यदि मद के संबंध में यह संशोधन स्वीकृत नहीं होता तो विधान में इस संशोधन

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

के सार को लेते हुये कोई अन्य व्यवस्था बना देनी चाहिये। श्रीमान् जी, मद 14 पर वाद-विवाद करते समय मैंने यह विषय लिया था कि इस मद पर जो संशोधन पेश किया गया है उस पर विचार करना ही है तो उसका सार रूप जो इस मद के सिलसिले में न हो, संशोधन के रूप में विधान में लाया जा सकता है जब वह सभा के समक्ष विचारार्थ उपस्थित हो। मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि मेरे उस कथन से केवल सही पद्धति की ओर संकेत करने से आशय था जिसका अनुसरण किया जाना चाहिये। मुझे आश्चर्य है, मैं सोचता रहा कि कुछ सदस्यों के मन में ऐसी भावना है कि मैंने स्वयं विधान में धारा 106 के समान किसी व्यवस्था के समावेश करने का सुझाव रखा। मेरा यह आशय नहीं था। मैंने केवल यह कहा था कि यदि ऐसा कुछ हुआ तो यह विधान के मूल विषय के हवाले द्वारा होना चाहिये। विधान में इस प्रकार की किसी व्यवस्था के रखे जाने के औचित्य पर मुझे अपने मन में किंचितमात्र भी संदेह नहीं है कि जहां तक मद 16 का संबंध है, इस देश की परिस्थितियों में इस प्रकार के आदेश की कोई बात नहीं है। इस विषय पर श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के प्रश्न से मैं सहमत हूं। ऐसा होने पर मुझे भय है कि मुझे मि॰ नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन का विरोध करना चाहिये और मैं उनको इस बात की आशा नहीं दिला सकता हूं कि उनके यहां पेश किये गये संशोधन के समान या भारत सरकार के 1935 ई॰ एक्ट की धारा 106 के समान विधान के मूल विषय तक मैं किसी संशोधन को स्वीकार करने में मेरी सम्मति होगी।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधन पर मत लूंगा।

विषय यह है किः

''मद 16 के अंत में निम्न जोड़ दिया जायेः

'कानून निर्माण करने की क्षमता के अंतर्गत विषयों पर तथा प्रान्त या रियासत पर प्रभाव डालने वाले अन्य विषयों में ऐसे प्रदेशों की आवश्यक स्वीकृति द्वारा'।''

संशोधन अस्वीकृत किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न है किः

''मद 16 स्वीकार की जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 17

***अध्यक्षः** मुझे दो संशोधनों की सूचना मिली है और दोनों इस विषय के हैं कि इस मद को हटा दिया जाये।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारीः** मैं अपने संशोधन को पेश नहीं कर रहा हूं।

***मि. नजीरुद्दीन अहमदः** मैं अपने संशोधन को पेश नहीं कर रहा हूं।

***अध्यक्षः** प्रश्न है किः

''मद 17 को स्वीकार किया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।

मद 18

***अध्यक्षः** श्री माधवराव!

***श्री एन॰ माधवरावः** मैं अपना संशोधन पेश नहीं कर रहा हूं।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरीः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं किः

''मद 18 के अंत में निम्न को जोड़ दिया जायेः

'संघ द्वारा लिये गये।' ''

इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि यह स्थिति स्पष्ट हो जाये कि इस मद में जिन विदेशी कर्जों का हवाला दिया है, वे केवल संघ द्वारा लिये गये कर्ज होंगे या इससे यह मंशा है कि प्रदेशों, गैर सरकारी व्यापारिक केन्द्रों या व्यक्तियों को विदेशों से कर्ज लेने का कोई अधिकार नहीं होगा। मद, जिस रूप में है, इस बात को स्पष्ट नहीं करता है। मैं कृतज्ञ होऊंगा कि यदि इस मद के वास्तविक आशय पर कुछ प्रकाश डाला जाये।

***श्री ए॰पी॰ पट्टानी** (पश्चिमी भारतीय रियासतों का समूह): अध्यक्ष महोदय, जहां तक मैं समझ सकता हूं जो संशोधन पेश किया गया है वह यह सुझाव रखता है कि केवल संघ या केन्द्रीय सरकार ही नहीं वरन् प्रदेश भी विदेशी कर्ज ले सकें। मेरे ख्याल से प्रदेशों को यह अधिकार देना बड़ा खतरनाक होगा, विशेषकर संघ-सूची के उस मद के होते हुये जिसके द्वारा कि संघ-सरकार ने देश के किसी भाग में गंभीर आर्थिक संकट का सामना करने का उत्तरदायित्व ले लिया है। यदि किसी प्रान्त या रियासत को विदेशों से कर्ज ले लेने दिया जाता है तथा संघ के लिये आर्थिक कठिनाइयां उत्पन्न करने दी जाती हैं तो संघ सरकार पर बड़े संकट पड़ेंगे। मैं इसीलिये संशोधनकर्ता से निवेदन करूंगा कि वे इसे कृपया वापस ले लें।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, संशोधन पेश करने वाले महोदय ने इस विशेष मद के अंतर्गत क्या क्या आता है, इस बात का स्पष्टीकरण चाहा है। ''विदेशों से कर्ज'' ये शब्द तो मेरे ख्याल से जिस आशय से रखे गये हैं उसे स्पष्ट करते ही हैं। स्पष्टतया संशोधन का उद्देश्य यह है कि संघ व्यवस्थापिका के कानून निर्माण करने के अधिकार संघ द्वारा लिये गये विदेशी कर्ज तक ही सीमित रहने चाहियें। श्रीमान् जी, मैं इस स्थिति को स्वीकार नहीं कर सकता हूं। माननीय संशोधनकर्ता इस बात का हवाला दे रहे थे कि प्रदेशों को विदेशों से कर्ज लेने की स्वतंत्रता हो। मैं नहीं समझता हूं कि केन्द्र का हवाला दिये बिना यदि प्रदेश, विदेशों से कर्ज लेता है तो केन्द्र इस बात को स्वीकार कर सकता है। यदि उसे (प्रदेश) ऐसा करना है तो उसे केन्द्र की स्वीकृति प्राप्त कर लेनी चाहिये और उसे इस प्रकार के कर्ज के लिये केन्द्र द्वारा प्राय: कार्रवाई करनी चाहिये, यदि यह आपत्तिजनक न हो। यह मद विदेशों से कर्ज लेने में संघ को पूर्ण अधिकार देने के आशय से है।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** गैर सरकारी व्यापारिक केन्द्र या व्यक्ति के बारे में क्या है?

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** यदि संघ व्यवस्थापिका इस प्रकार के कर्जों को नियमित करना तथा उन पर प्रतिबंध लगाना आवश्यक समझती है तो उसे इसका अधिकार होगा। लेकिन इसका प्रयोग किया भी जाये या नहीं या इसका कुछ विशेष परिस्थितियों में प्रयोग किया जाये, इस विषय पर संघ-व्यवस्थापिका द्वारा ही निर्णय होगा।

***अध्यक्षः** मैं संशोधन पर मत लूंगा।

प्रश्न है किः

''मद 18 के अंत में निम्न जोड़ दिया जायेः

'संघ द्वारा लिये गये'।''

संशोधन अस्वीकृत किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न है किः

''मद 18 स्वीकार की जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 19

(श्री कृष्णमूर्ति राव ने तथा श्री कुमारदास ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***अध्यक्षः** प्रश्न है किः

''मद 19 को स्वीकार किया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 20

***श्री हिम्मतसिंह के० महेश्वरी** (सीमा प्रान्त, सिक्किम और कूचबिहार समूह): श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव रखता हूं किः

''मद 20 के अंत में निम्न जोड़ दिया जायेः

'एक प्रदेश तथा दूसरे प्रदेश के मध्य वर्तमान समझौते के अधीन'। ''

अपराधी प्रत्यर्पण का विषय भारत सरकार के 1935 ई० के एक्ट मद 3 का जो कि विदेशी विभाग से संबंधित है अंश है। ठीक मद इस प्रकार हैः

''विदेशी विभागः अन्य देशों से संधियां तथा समझौते क्रियान्वित करना, अपराधी प्रत्यर्पण जिसमें फौजदारी तथा दीवानी अपराधियों को भारत से बाहर अंग्रेजी सरकार के उपनिवेशों में समर्पण करना शामिल है।''

[श्री हिम्मतसिंह के. महेश्वरी]

इस व्यवस्था में, श्रीमान् जी, अपराधी प्रत्यर्पण प्रकट रूप में विदेशों से अपराधी लाने या भेजने मात्र से संबंध रखता था। वर्तमान सूची में अपराधी प्रत्यर्पण को अन्य विषयों से जो कि विदेशी विभाग के अंतर्गत है, पृथक कर दिया है। उदाहरण के लिये, विदेशी विभाग से संबंधित हमारा मद 11 है तथा विदेश संबंधी विषयों से संबंधित हमारे मद 14, 16 तथा अन्य भी हैं। अपराधी प्रत्यर्पण के विषय को एक पृथक मद के रूप में रखने में यह उलझन है कि संघ-व्यवस्थापिका को केवल विदेशों से अपराधी लाने ले जाने के संबंध में ही कानून बनाने का अधिकार नहीं होगा वरन् प्रदेशों से संबंधित विषयों में भी अर्थात् प्रदेशों परस्पर प्रदेशों अथवा रियासत और प्रान्तों या परस्पर प्रान्तों में वर्तमान समझौतों पर विरुद्ध प्रभाव पड़ेगा। मुझे विश्वस्त रूप से मालूम नहीं है कि इसको एक पृथक मद को रूप में रखने से क्या आशय है; लेकिन मैं ख्याल करता हूं कि इस विषय को संघ का विषय बनाकर रियासतों तथा प्रान्तों के परस्पर समझौतों में परिवर्तन या रद्दोबदल किया जा रहा है। कैसी भी सूरत हो मैं इस विषय पर कुछ प्रकाश डलवाना चाहूंगा।

***अध्यक्षः** क्या कोई सदस्य इस विषय पर बोलना चाहता है?

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** अध्यक्ष महोदय, मैं सोचता हूं कि एक बात को स्पष्ट करने की आवश्यकता है। अपराधी प्रत्यर्पण वह विषय है जिसे, मुझे प्रतीत होता है कि रियासतों ने अर्पण नहीं किया है। उस सूरत में यदि कानून बनाया जाता है या कोई प्रबंध संबंधी कार्यवाही की जाती है तो प्रश्न उठता है कि रियासतों से परामर्श किया जायेगा या नहीं या उनकी सम्मति ली जायेगी या नहीं। यह विषय स्पष्टीकरण चाहता है।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान् जी, मेरे विचार से भारत सरकार की संघ-सूची के अंतर्गत मदों के समूह से जो एक स्थान पर दर्ज किये गये हैं इस अपराधी प्रत्यर्पण के विषय को पृथक करने में कोई विचित्र आशय नहीं था। सच तो यह है कि यह विशेष मद इतनी उलझी हुई बातों से भरा पड़ा है कि हमने यह सोचा कि अपराधी प्रत्यर्पण के विषय को, जो स्वयं एक महत्त्वपूर्ण विषय है, सूची में अलग दर्ज किया जाये।

इस संशोधन के प्रेषक ने जो बात उठाई है तथा स्पष्टीकरण के प्रश्न पर जिसको मि॰ नजीरुद्दीन ने उठाया है, उस पर मुझे केवल यह कहना है।

साधारण रूप में अपराधी प्रत्यर्पण के प्रबंध परस्पर प्रदेशों के विषय हैं, दोनों प्रदेश विशेष रूप से अपने-अपने अधिकारों को प्रयोग में लाने के लिये स्वतंत्र हैं। ऐसे संघ भी संसार में हैं जिनमें अपराधी प्रत्यर्पण के प्रबंध संघ के अंतर्गत प्रदेशों में परस्पर पाये जाते हैं। मुझे विश्वास है कि संसार में ऐसे संघ भी हैं जहां ऐसे विषयों का प्रश्न जिनकी अपराधी प्रत्यर्पण द्वारा व्यवस्था की जानी चाहिये इतनी आसानी से हल किया जाता है जितनी आसानी से कि वह दो परस्पर स्वतंत्र प्रदेशों में अपराधी प्रत्यर्पण की व्यवस्था को विधिवत पूर्ण करने के तरीके से नहीं किया जा सकता। लेकिन चाहे यह हो चाहे वह, अपराधी प्रत्यर्पण वास्तव में दो प्रदेशों के समझौते का विषय है जो इन प्रबंधों में प्रवेश करते हैं। अपराधी प्रत्यर्पण का संघ-सूची में दाखिल करना आवश्यक रूप से उन समझौते या प्रबंधों को जिनका कि अस्तित्व है, भंग नहीं करता है। यह संभव है कि जब कानून स्वीकृत हो जाता है तो जैसा कि वर्तमान अपराधी प्रत्यर्पण संबंधी धारायें आदेश देती हैं वह भी अधिक संभव है कि प्रदेशों को परस्पर समझौते करने के आदेश दे और यदि भारत के भावी संघ के प्रदेशों में अपराधी प्रत्यर्पण के संबंध में व्यवस्था रखनी ही है तो मुझे विश्वास है कि वह कानून भी इसी प्रकार की व्यवस्था रखेगा। इस प्रकार के कानून बनाने के अधिकार को इन शब्दों द्वारा जिनको कि माननीय प्रस्तावक ने पेश किया है कि ''एक प्रदेश तथा दूसरे प्रदेश के मध्य वर्तमान समझौते के अधीन'' प्रतिबंधित करना चाहिये—यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका मैं स्वीकृति-सूचक उत्तर नहीं दे सकता हूं। वे समझौते उन कानूनों की व्यवस्था द्वारा किये जायेंगे जो कि बनाये जायेंगे। मैं यह प्रत्याशा नहीं कर सकता हूं कि वे क्या व्यवस्थायें होंगी; वह भविष्य का विषय है। लेकिन इस बात को कि वर्तमान समझौते चालू रहें या परिवर्तित समझौते किये जायें, कानून की व्यवस्था पर छोड़ देना चाहिये जो भविष्य में बनाया जायेगा। यह मान लेना चाहिये कि जब अपराधी प्रत्यर्पण की व्यवस्था बना दी जायेगी तो अपराधी प्रत्यर्पण के प्रबंध में जो रियासतें प्रवेश करेंगी उनसे परामर्श किया जायेगा और यह साधारणतया केवल उस प्रबंध में प्रवेश करने वाली रियासतों की परस्पर स्वीकृति द्वारा ही ऐसे प्रबंध किये जा सकेंगे। बात यह है कि श्रीमान्‌जी, मैं निवेदन करूंगा कि माननीय प्रस्तावक महोदय अपने संशोधन पर जोर न दें।

श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी: श्रीमान् जी, मैं अपने संशोधन को वापस लेने की प्रार्थना करता हूं।

परिषद् की आज्ञा से संशोधन वापस किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न है कि मद 20 स्वीकार की जाये।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 21

***अध्यक्षः** हम मद संख्या 21 पर आते हैं। इस मद पर संशोधन की कोई सूचना नहीं है। इसलिये मैं इस पर मत लूंगा।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 22

***अध्यक्षः** मद 22!

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारीः** श्रीमान्जी, इस संशोधन के (कि मद 22 निकाल दिया जाये) रखने से यह उद्देश्य था कि इस बात का स्पष्टीकरण किया जाये कि इस मद से इस देश के नागरिकों पर जो कि अन्य देश में हैं, कानूनी अधिकार का प्रयोजन है या इसका उससे भी अधिक आशय है। इस प्रश्न का हम स्पष्टीकरण चाहते हैं।

***अध्यक्षः** दो संशोधन हैं जिनकी मुझे सूचना मिली है, दोनों एक ही प्रभाव के हैं। एक मि॰ नजीरुद्दीन अहमद का है और दूसरा श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी का है।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरीः** श्रीमान्जी, जो कुछ श्री वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य ने कहा है उससे अधिक मुझे कुछ नहीं कहना है।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान्जी, सर वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के प्रश्न पर मेरा उत्तर यह है कि विदेशी कानूनी अधिकार वह अधिकार है जिसका इस देश के नागरिकों पर अन्य देश में प्रयोग किया जाता है। केवल यही नहीं है। इस कानूनी अधिकार को प्रयोग में तभी लाया जा सकता है जब कि हमें उस विदेशी सरकार की स्वीकृति प्राप्त हो। अतः इस मद से वास्तविक आशय यह है कि जब हमें उस विदेशी मुल्क की उसके अंतर्गत रहने वाले अपने नागरिकों पर, कानूनी अधिकार प्रयोग में लाने की इजाजत मिल जाती है तब हम अपने उन नागरिकों के परस्पर संबंधों पर शासन करने के आशय से कानून बनायेंगे जोकि उस देश में हैं।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारी:** श्रीमान् जी, श्री गोपालस्वामी आयंगर ने जो कुछ कहा है उस पर विचार करते हुये मैं अपने संशोधन को लौटाने का निवेदन करता हूं।

परिषद् की आज्ञा से संशोधन लौटाया गया।

***अध्यक्ष:** तो मैं इस मद पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 23

***अध्यक्ष:** हम अब मद 23 पर आते हैं। इस मद पर कोई संशोधन नहीं है।

***श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगर:** मैं केवल एक सुझाव रखना चाहता हूं। मद 23 में दिया हुआ है:

''राष्ट्रों के कानून के विरुद्ध समुद्र में बिना अधिकार के जहाज की गिरफ्तारी तथा अन्य घोर अपराध तथा वायु में घोर अपराध।''

मैं ''वायु में'' शब्दों के हटाने का सुझाव रखना चाहता हूं। अमेरिका विधान की धारा 8 के ऐसे ही मद से इस इन्द्राज को पूर्णतया हटा दिया गया था। इसमें वही मद था तथा हूबहू वही शब्द थे। लेकिन उस मद में राष्ट्रों के कानून के विरुद्ध समुद्र में बिना अधिकार के जहाज गिरफ्तार करना तथा वायु में किये जाने वाले अपराधों के लिये कोई प्रतिबंध नहीं है। राष्ट्रों के विरुद्ध समुद्र में अपराध करने अथवा वायु में अपराध करने में भेद-विभेद करने का कोई कारण नहीं है। मेरा विश्वास है कि यह शब्द असावधानी से यहां रख दिये गये हैं और हटाये जा सकते हैं और इस मद को संयुक्त राज्य अमेरिका के विधान की ऐसी ही व्यवस्था के समान बनाया जा सकता है। मैं इस सुझाव को परिषद् के सामने विचारार्थ रखता हूं।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, श्री अनन्तशयनम् आयंगर द्वारा जो बात रखी गई है उसे मैंने समझ लिया। लेकिन मुझे इस बात पर इतना विश्वास नहीं है कि हमको मेरे ख्याल से 160 वर्ष पूर्व रखी गई भाषा

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

को पूर्ण रूप से वैसा ही रखना चाहिये। इस कारण मैं उनके इस खास उद्देश्य की इस प्रकार पूर्ति करूंगा यदि वे इस मद में निम्न परिवर्तन को स्वीकार कर लें।

''राष्ट्रों के कानून के विरुद्ध समुद्र में तथा वायु में बिना अधिकार के जहाज की गिरफ्तारी तथा अन्य घोरतम अपराध।''

***श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगर:** इसमें मेरी बात आ जायेगी।

***अध्यक्ष:** मैं यह मान लेता हूं कि सभा श्री गोपालस्वामी आयंगर को इस मद को उस रूप में परिवर्तन करने की आज्ञा देती है जैसा कि उन्होंने अभी बताया है।

ततपश्चात् मैं इस मद को उस रूप में जिसमें कि उन्होंने अभी रखा है परिषद् के मत के लिये रखता हूं।

मद 23 संशोधित रूप में स्वीकार किया गया।

मद 24

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि मद 24 के स्थान में निम्न रख दिया जाये:

''संघ-प्रदेश के वर्तमान कानूनों के अधीन संघ-प्रदेशों में प्रवेश करना तथा उनसे बाहर निकलना या बाहर निकाला जाना, भारत की उन सीमाओं के बाहर तीर्थ-यात्रा में जोकि 15 अगस्त सन् 1947 ई॰ में थीं।''

श्रीमान् जी, इस संशोधन को रखने में दो उद्देश्य विचारगत हैं। पहला—कुछ प्रदेशों में विदेशियों के प्रवेश करने तथा उनकी सीमा से बाहर निकलने तथा निकाले जाने को नियमित करने वाले कुछ कानून हैं। यदि संघ इस विषय को पूर्णतया ले लेता है, अर्थात् प्रदेश के कानूनी अधिकार को बहिष्कृत करने की सीमा तक, तो प्रदेश के तात्कालिक कार्यवाही करने के अधिकार छिन जाते हैं जो कि कानून तथा व्यवस्था कायम रखने में घातक होगा। अत: श्रीमान् जी, केन्द्र को लोगों के संघ के प्रदेशों में प्रवेश करने, उनसे बाहर निकलने तथा निकाले जाने के आदेश देने के अधिकार सौंपने की कुछ भी व्यवस्था बनाई जाये तो मेरे विचार से वह

एक शर्त के अधीन होनी चाहिये कि इस विषय में संघ-प्रदेश के विवेक में बाधा नहीं डालनी चाहिये।

दूसरी बात जिसे मैं रखना चाहता हूं यह है कि पाकिस्तान में गुरुद्वारा तथा ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती की अजमेर में दरगाह के समान कुछ स्थानों को तीर्थयात्रा ऐसे विषय नहीं हैं जिन पर केन्द्र द्वारा कानून का निर्माण किये जाने की आवश्यकता हो। भारत के किसी गांव से गुरुद्वारा 10 मील की दूरी पर हो सकता है और मैं आशा करता हूं कि यह एक साधारण सी घटना होगी। बिना किसी आज्ञा या रुकावट के इस प्रकार के धार्मिक प्रयोजन से लोग एक संघ से दूसरे संघ में आते-जाते रहेंगे। इसी प्रकार मैं नहीं समझता कि पाकिस्तान में रहने वाले मुसलमानों के लिये अजमेर जैसी जगह के दर्शन करने में अड़चनें क्यों रखी जायें। अत: श्रीमान् जी, मैं आशा करता हूं कि दो बातों पर सावधानीपूर्वक विचार किया जायेगा तथा रिपोर्ट निर्माताओं का उत्तर इस विषय की इन आपत्तियों को दूर कर देगा।

*__श्री मुहम्मद ताहिर__ (बिहार: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि शब्द ''भारत से बाहर के स्थानों को तीर्थयात्रायें'' को पृथक एक विशिष्ट मद यानी मद 88 या 24 (क) के रूप में रखा जाये।

श्रीमान् जी, यह एक ऐसा संशोधन है जो कि बहुत सीधा-साधा तथा निष्पाप है। श्रीमान् जी, मुझे यह प्रतीत होता है कि हमारे विधान का यह पहलू सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है, परन्तु दुर्भाग्यवश विधान में इसे बड़ा ही निम्न स्थान दिया गया है। मैं इसलिये माननीय प्रस्तावक से निवेदन करता हूं कि वे इससे उसी प्रकार सहमत हों जैसे कि मद 14 पर प्रांतीय सूची में उचित कार्यवाही की गई थी। ऐसा करने में माननीय सदस्य को कोई कठिनाई नहीं होगी क्योंकि मद 27 के संबंध में प्रांतीय सूची में हमने ऐसा किया था। भारत सरकार के एक्ट के अंतर्गत मद 26 तथा 27 के विषयों का एक में समावेश कर लिया गया है, यानी मद 27 में और वह यहां प्रांतीय सूची में पृथक कर दिया गया है। अत: मैं निवेदन करता हूं कि यदि यह विषय अर्थात् भारत से बाहर स्थानों की तीर्थयात्रायें को एक पृथक मद का रूप दिया जाता है तो कोई कठिनाई नहीं होगी। अंत में मैं निवेदन करता हूं कि मद 24 के प्रथम भाग का उस दूसरे भाग से कोई संबंध नहीं है जिसका मेरे संशोधन से संबंध है। इन शब्दों के साथ मैं माननीय प्रस्तावक से निवेदन करूंगा कि इस संशोधन को स्वीकार करने के लिये वे अपने दिल और दिमाग को और अधिक कोमल बनायें।

***श्री ए०पी० पट्टानी:** अध्यक्ष महोदय, मद 14 के अंतर्गत दिये गये अधिकार, जैसा कि मैं समझता हूं, मद 21 में दिये गये अधिकारों से बहुत कुछ संबंध रखते हैं। अपने देश में विदेशियों के आवागमन को नियमित करना संघ सरकार के लिये अत्यंत आवश्यक होगा और जिस रूप में मद 24 है उसमें कुछ और बढ़ाने की मेरी इच्छा है। यह मद ''संबंध के प्रदेशों में प्रवेश, उनसे बाहर निकलना या निकाले जाने'' के संबंध में है। मेरा सुझाव केवल ''प्रवेश करने और निकाले जाने'' के विषय से संबंध रखता है। यह संभव है कि ऐसे कुछ देश के क्षेत्र या रियासतें हों जो अभी संघ में सम्मिलित नहीं हुई हैं। श्रीमान् जी, मैं निवेदन करता हूं कि श्री गोपालस्वामी आयंगर इस बात का ध्यान रखें कि ऐसी रियासतों से यदि कोई समझौता होता है तो इस प्रकार की व्यवस्था बना देनी चाहिये कि विदेशी यदि संघ के लिये अवांछनीय हैं तो या तो उनको पृथक कर दिया जाये या बाहर निकाल दिया जाये। मैं इसलिये यह कहता हूं कि पुरानी सरकार ने सर्वोच्च सत्ता के अंतर्गत भारत से उन विदेशियों को निकालने के अधिकार रखे थे जो कि भारत में रक्षित स्थान चाहते थे। सर्वोच्च सत्ता के विरुद्ध हम सदैव बहुत कुछ कहने के लिये चिंतित रहते हैं और मैं स्वयं उसे नहीं चाहता हूं। लेकिन यह एक ऐसी बात है कि अपने देश की रक्षा या उचित देखभाल के लिये अपने आप ही पैदा होती है। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि एक नोट लगा देना चाहिये कि उन रियासतों से, जो कि संघ में शामिल नहीं हुई हैं, किसी समझौते के करने में उन विदेशियों को संघ के प्रदेशों से बाहर निकालने के लिये ही नहीं वरन् भारत से भी बाहर निकालने की व्यवस्था होगी जोकि संघ के लिये अवांछनीय हैं।

***माननीय श्री एन० गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान् जी, श्री हिम्मतसिंह के संशोधन पर मुझे अधिक नहीं कहना है लेकिन मेरे ख्याल से यह महत्त्वपूर्ण है कि ''संघ में प्रवेश करने, उससे बाहर निकलने या निकाले जाने'' के कानून बनाने के अधिकार एकमात्र केन्द्र को होने चाहियें। मुख्य कारण जिसके लिये यह आवश्यक है कि संघ पर भारत को एकरूपता बनाये रखने, आंतरिक सुरक्षा रखने, रक्षा के लिये व्यवस्था करने इत्यादि का उत्तरदायित्व है। इन गंभीर उत्तरदायित्वों के भार को वहन करने वाली संस्था को प्रदेशों में प्रवेश करने तथा उनसे बाहर निकलने को नियंत्रित करने के लिये कानून बनाने के पूर्ण अधिकार होने चाहियें। श्री पट्टानी ने मेरा ध्यान इस ओर आकर्षित किया कि यह संभव हो सकता है कि कुछ रियासतें सम्मिलित न हो सकें और उनसे कोई राजनैतिक संबंध स्थापित

करने में यह महत्त्वपूर्ण है कि इस बात का विश्वास कर लिया जाये कि इस विशेष मद में दी हुई शर्तों के समान उन पर कोई शर्त लगा दी गई है। श्रीमान् जी, मुझे विश्वास है कि वे लोग जोकि इस देश की सरकार में होंगे और जिनके ऊपर भविष्य में भारतीय रियासतों से संबंध स्थापित रखने का भार होगा, चाहे वे (रियासतें) संघ में शामिल हों अथवा न हों, इस महत्त्वपूर्ण बात का ध्यान रखेंगे और आवश्यक व्यवस्था बना लेंगे। श्रीमान् जी, दूसरा संशोधन मि० मुहम्मद ताहिर द्वारा पेश किया गया, इस मद को दो भागों में विभाजित करने के संबंध में है। जो कुछ उन्होंने तर्क किया है वह यह है कि भारत से बाहर के स्थानों की तीर्थयात्राओं का इस मद के शेष भाग से बहुत कुछ संबंध है। एक नैतिक आधार जिसके कारण ये दो विषय एक साथ रख दिये हैं, यह है कि भारत से बाहर तीर्थयात्राओं में एक प्रकार से अस्थायी रूप से बाहर निकलना होगा; लेकिन मैं मानता हूं कि आवश्यक रूप से यह विषय इस विशेष मद के शेष भाग के साथ नहीं रखा जाना चाहिये। मैं इसको एक पृथक मद के रूप में रखने के लिये राजी हूं यद्यपि मैं आशा करता हूं कि सभा संघ अधिकार की इस सूची के निर्माताओं को क्षमा करेगी यदि इससे 87 मदों की जोकि हैं, संख्या बढ़ जाये।

***अध्यक्षः** मैं इन दोनों संशोधनों पर मत लेता हूं—पहले एक फिर दूसरा।

***श्री मुहम्मद ताहिरः** मैं अपने संशोधन को वापस लेता हूं।

परिषद् की आज्ञा से संशोधन वापस किया गया।

***अध्यक्षः** श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी का एक संशोधन है जो इस प्रकार है:

''संघ प्रदेश के वर्तमान कानूनों के अधीन, संघ प्रदेशों में प्रवेश करना उनसे बाहर निकलना या बाहर निकाला जाना; भारत की उन सीमाओं से बाहर तीर्थयात्रायें जोकि 15 अगसत सन् 1947 में थीं।''

मैं इस पर मत लेता हूं।

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं मद 24 पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 25

***अध्यक्षः** अब हम मद 25 को लेंगे।

(सर्वश्री आर॰के॰ सिधवा, एम॰एस॰ अणे तथा मि॰ नजीरुद्दीन अहमद ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

तो फिर मद 25 पर कोई संशोधन नहीं है और मैं उस पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

मद 26

***अध्यक्षः** अब हम मद 26 को लेते हैं। श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी का केवल एक संशोधन है।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरीः** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि मद 26 के अंत में निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:

''संघ प्रदेश को चुंगी-कर लगाने तथा अपने ही सीमा प्रदेश में समय-समय पर चुंगी-कर में परिवर्तन करने के अधिकार के अधीन।''

चुंगी-कर अनेकों रियासतों में उनकी आमदनी का एक प्रमुख अंग होता है और यदि यह मंशा है कि रियासतें किसी प्रकार के चुंगी-कर को न लगायें तो मैं बिना किसी संकोच के कह सकता हूं कि रियासतों के अपने क्षेत्र में सुचारू रूप से शासन करने के अधिकार पूर्णतया लुप्त हो जायेंगे। बिना धन के कोई भी रियासत स्कूल तथा अस्पताल न चला सकेगी और यदि इस महत्त्वपूर्ण मद का लोप हो जाता है, तो मुझे भय है कि अनेकों रियासतों की आर्थिक व्यवस्था, यहां तक कि बड़ी-बड़ी रियासतों को भी प्रायः क्षीण हो जायेगी। अतः मैं आशा करता हूं कि इस संशोधन पर गंभीर विचार किया जायेगा और स्वीकार किया जायेगा।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः** श्रीमान् जी, इस सूची में दो मद हैं जिन पर इस पेश किये गये संशोधन के सिलसिले में विचार करना आवश्यक है। प्रथम यह मद 26 है, जिस पर हम अब विचार कर रहे हैं। दूसरा मद 71

है, ''चुंगी-करमय निर्यात करके''। श्रीमान् जी, यदि संशोधन का संबंध केवल उन प्रदेशों के अपने चुंगी-कर लगाने को प्रचलित रखने के अधिकार से है, जो कि संघ के सीमा प्रदेश में स्थित हैं, तो यह विशेष संशोधन पर मद 71 के अंतर्गत विचार करना अधिक उपयुक्त होगा। श्रीमान् जी, मुझे यह कहना चाहिये कि मद 26 केवल उस कानून-निर्माण का उल्लेख करता है जिसका सीमा प्रदेश के इधर-उधर आयात तथा निर्यात कर से संबंध है। चूंकि चुंगी-कर के लगाने का एक पृथक मद है, मैं यह मानता हूं कि कोई न्यायालय इस मद 26 को चुंगी-कर को सम्मिलित न करते हुये व्याख्या करेगा यह मानते हुये कि मद 71 भी हमारी सूची में वर्तमान रहेगा। इसलिये इस आधार पर इस समय इस संशोधन पर विचार करने का प्रश्न ही नहीं उठता। श्री हिम्मतसिंह ने दूसरा वाद हेतु कुछ महत्त्वपूर्ण उठाया है और वह संघ प्रदेश का अपने ही सीमा प्रदेश में चुंगी-कर लगाने तथा समय-समय पर उसमें परिवर्तन करने के अधिकार संबंधी है। ये सीमा प्रदेश संघ के सीमा प्रदेश न हों। वे केवल परस्पर रियासतों के सीमा प्रदेश या एक रियासत और शेष भारत के सीमा प्रदेश हो सकते हैं। इन अधिकारों को प्रचलित करने के संबंध में सारी बात केन्द्र तथा केन्द्रीय प्रदेशों में आर्थिक साधनों के बंटवारे के निर्णयों पर निर्भर है। इस पर भी इस रिपोर्ट के सिलसिले में बाद में विचार किया जायेगा। किसी गलत मिथ्या धारणा को हटाने के विचार से, जो कि रियासतों के प्रतिनिधियों के मन में हो, मैं कह सकता हूं कि संघ द्वारा चुंगी-करों, सामान्य रूप से यहां तक कि परस्पर रियासतों के सीमा प्रदेश के चुंगी-करों के अधिकार ले लेने से यदि प्रदेश की आर्थिक-व्यवस्था में गड़बड़ी पैदा होती है तो उस प्रदेश को संपन्न बनाने के उत्तरदायित्व से संघ कदाचित मुख नहीं मोड़ेगा। अभी केवल इतना ही कहना पर्याप्त है। यदि इस प्रकार का कोई प्रस्ताव उस समय किया जायेगा जब कि हम आर्थिक साधनों के बंटवारे पर विचार करेंगे, तब मैं इस विशेष विषय की विशेष व्याख्या करूंगा। इस बात का विचार करते हुये मैं आशा करता हूं कि श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी अपने संशोधन पर जोर नहीं देंगे।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** चूंकि यह विषय फिर आने को है मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं देता हूं।

परिषद् की आज्ञा से संशोधन वापस हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न है कि:

''मद 26 स्वीकार की जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** मुझे सदस्यों से एक पत्र प्राप्त हुआ है जिसमें उन्होंने उस स्थिति पर वाद-विवाद करने के लिये अवसर चाहा है जोकि पंजाब में तथा देश के कुछ भागों में उत्पन्न हो गई है। उस पत्र में एक यह बात है कि उस कमेटी की रिपोर्ट जिसको हमने एक दिन नियुक्त किया था मुझे दे दी गई है और मैं उसे सभा के सामने उपस्थित नहीं कर रहा हूं। मैं सदस्यों को यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि मुझे रिपोर्ट नहीं मिली है चाहे समाचार-पत्रों में कुछ भी निकल गया हो। जैसे ही मुझे रिपोर्ट प्राप्त होगी मैं उस पर वाद-विवाद करने का अवसर सभा को दूंगा और उसके बाद हम वह कार्यवाही करेंगे जो कि रिपोर्ट के आधार पर अवश्य विचारी जायेगी।

सभा कल प्रातःकाल के दस बजे तक स्थगित की गई।

तत्पश्चात् परिषद् मंगलवार, 26 अगस्त, सन् 1947 ई॰ के प्रातःकाल के दस बजे तक स्थगित हुई।

Con. 3.5.7.47
750

अंक 5
संख्या 7

मंगलवार
26 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	शपथ ग्रहण करना	1
2.	संघीय अधिकार-समिति की रिपोर्ट (गत संख्या से आगे)	3

भारतीय विधान-परिषद्

मंगलवार, 26 अगस्त, सन् 1947 ई॰

भारतीय विधान–परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल नई दिल्ली में दस बजे दिन से माननीय डा॰ राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में आरम्भ हुई।

शपथ ग्रहण करना

निम्नलिखित सदस्यों ने शपथ ग्रहण की:

श्री एस॰के॰ पाटिल (बम्बई: जनरल)।

***अध्यक्ष:** अब हम सूची एक में दी हुई मदों पर विचार करेंगे।

***श्री एच॰वी॰ कामत** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, आपकी अनुमति से मैं आपका ध्यान एक घटना की ओर दिलाना चाहता हूं जो 14–15 अगस्त की ऐतिहासिक अर्धरात्रि को घटित हुई थी। श्रीमान् मैं आपसे तथा इस सभा से गड़े मुर्दे उखाड़ने के लिये क्षमा मांगता हूं परंतु यह मामला इतना महत्त्वपूर्ण है कि मैं उसे अविलम्ब आपके ध्यान में लाना चाहता हूं। श्रीमान्, आपको स्मरण होगा कि शक्ति हस्तांतरणोत्सव की रात्रि के कार्यक्रम में पहला विषय वन्देमातरम् का गान था। इस सभा में हममें से कुछ लोग यानी कई एक माननीय सदस्य इस सभा-भवन में उस समय एक फौज-सी बना कर आये जिस समय वह गीत गाया जा चुका था। श्रीमान्, मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप इस मामले की ओर ध्यान दें क्योंकि उनके इस कार्य से कई बातें उत्पन्न होती हैं। उन सब लोगों ने सभा–भवन में एकबारगी इस प्रकार प्रवेश किया कि उससे यह मालूम होता था कि यह कार्य अकस्मात नहीं हुआ, बल्कि जान बूझकर किया गया। आपको स्मरण होगा कि सभा ने यह निश्चय किया था कि कार्यक्रम निश्चित करने का कार्य आप पर छोड़ दिया जाये, इस कारण इस सभा के सदस्यों की हैसियत से उनका यह कर्तव्य था कि वे कार्यक्रम में सम्मिलित होते। मेरे सभी मित्र इसे अच्छी प्रकार जानते हैं कि यद्यपि इस सभा ने इस गीत को राष्ट्रीय

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री एच.वी. कामत]

गीत के रूप में अभी स्वीकार नहीं किया है। परन्तु श्रीमान्, यह एक ऐसा गीत है जो हमारे देश के हजारों नर और नारियों की त्याग व तपस्या तथा प्राणदान व अश्रुदान से पवित्र हो गया है। यदि वे सदस्य जो राष्ट्रीय गीत के गान के उपरान्त उपस्थित हुये, यह कहें कि वे जान बूझकर नहीं बल्कि अकस्मात ही अनुपस्थित रहे तो मुझे बड़ा हर्ष होगा। मैं आपको धन्यवाद देता हूं।

*__श्री बालकृष्ण शर्मा__ (संयुक्त प्रांत: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे वास्तव में इसका दुख है कि मेरे एक ऐसे माननीय मित्र ने यह प्रश्न उठाया है, जिनके प्रति मेरा बड़ा आदरभाव व प्रेमभाव है। श्रीमान्, वास्तव में हममें से बहुत-से लोगों ने यह अनुभव किया था कि इस सभा के हमारे कुछ साथियों का व्यवहार उचित नहीं था, परंतु हम यहां किसी पर दबाव नहीं डाल सकते....

श्री एल॰ कृष्णास्वामी भारती (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, क्या मैं एक व्यवस्था संबंधी आपत्ति कर सकता हूं? मैं नहीं समझ पाया हूं कि हम किस विषय पर बोल रहे हैं। मैंने यह देखा है कि कई अवसरों पर, चाहे सभा के सम्मुख कोई प्रस्ताव हो या न हो, कुछ सदस्य उठ खड़े होते हैं। श्रीमान्, आप इतने नेक हैं कि इन सब बातों के लिये आज्ञा दे देते हैं। परन्तु मुझे यह मालूम नहीं है कि क्या बिना आपके कहे हुये किसी सदस्य का उठ खड़ा होना उचित है कि नहीं। सभा के सम्मुख कोई निश्चित प्रस्ताव होने पर ही हमको अपने विचार प्रकट करने चाहिये। इसलिये मेरे विचार में कुछ सदस्यों के पक्ष में यह बहुत अनुचित है कि बिना सभा में कोई प्रस्ताव पेश हुये ही वे उठ खड़े हों; इसलिये इस संबंध में मैं आपका निर्णय चाहता हूं।

*__कुछ माननीय सदस्य:__ शांति, शांति।

*__अध्यक्ष:__ मेरे विचार से अब यह विषय समाप्त कर देना चाहिये। श्री कामठ को जो कुछ कहना था वह हमने सुन लिया है। श्री बालकृष्ण शर्मा ने भी कुछ कहा और उसे भी हमने सुन लिया है। मैं नहीं समझता कि इस संबंध में अधिक वाद-विवाद करने से हम किसी नतीजे पर पहुंचेंगे। मेरे विचार से हमें इस विषय को यहीं समाप्त कर देना चाहिये।

अब हम कार्यक्रम की मदों पर विचार करेंगे। दूसरी मद, मद नं॰ 27 है।

संघीय अधिकार समिति की रिपोर्ट

(गत संख्या से आगे)

मद 27

***श्री के० सन्तानम्** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं सूची नं० 1 में दिये हुये संशोधन के बजाय सूची नं० 7 में मेरे नाम से दिये हुये संशोधन को पेश करना चाहता हूं। मैंने संशोधित संशोधन पेश किया है।

***अध्यक्ष:** जी हां।

***श्री के० सन्तानम्:** आपकी अनुमति से मैं यह पेश करना चाहता हूं कि मद 27 में 'अन्य संस्थाओं' शब्द के बाद ''संघ द्वारा पूर्णत: या अंशत: जिन संस्थाओं का खर्च पूरा किया जाता हो और'' शब्द रख दिये जायें।

यह संशोधन इसलिये पेश किया गया है कि इस मद द्वारा केन्द्रीय सरकार को यह अधिकार दिया गया है कि वह संघीय कानून द्वारा किसी संस्था को राष्ट्रीय महत्त्व की संस्था घोषित कर सकती है। कई ऐसी संस्थायें हो सकती हैं जो निजी तौर पर या प्रान्तीय कोष से रुपया देकर बनाई गई हों। केन्द्रीय सरकार के लिये यह उचित न होगा कि वह किसी संस्था के संबंध में यह कहे कि वह राष्ट्रीय महत्त्व की संस्था होने जा रही है। इस प्रकार की घोषणा का परिणाम यह हो सकता है कि यद्यपि कोई संस्था किसी विशेष स्थान या किसी विशेष वर्ग के लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करती हो, वह एक अखिल भारतीय संस्था हो जायेगी और सभी लोग उसके साधनों का उपयोग करने लगेंगे। मैं यह अनुभव करता हूं कि कुछ संस्थाओं के संबंध में ऐसी घोषणा से लाभ हो सकता है। किन्तु इस अधिकार का उपयोग उन्हीं संस्थाओं के संबंध में होना चाहिये जिनका खर्च पूर्णत: या अंशत: केन्द्रीय सरकार उठाती हो। इसी दिशा में केन्द्रीय सरकार को किसी संस्था को राष्ट्रीय महत्त्व की संस्था घोषित करने का अधिकार हो सकता है। श्रीमान्, मैं इस संशोधन को पेश करता हूं।

***अध्यक्ष:** श्री पातस्कर, इन्हीं शब्दों में आपके नाम से भी एक संशोधन है।

***श्री एच०वी० पातस्कर** (बम्बई: जनरल): श्रीमान्, श्री सन्तानम् के संशोधन को दृष्टि में रखते हुये मैं अपना संशोधन पेश नहीं करना चाहता। आपकी अनुमति से मैं यह बताना चाहता हूं कि यह मद 27 उसी प्रकार है जिस प्रकार भारत सरकार के सन् 1935 ई० के कानून की मद 11 है। उसमें भी इस प्रकार की व्यवस्था थी कि इस प्रकार की संस्था को संघ से सहायता प्राप्त होनी चाहिये। मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं और अपना संशोधन पेश नहीं करता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मैं यह पेश करना चाहता हूं कि मद 27 में ''और किसी अन्य'' शब्दों के बाद ''समान'' शब्द रख दिया जाये और ''संघीय कानून द्वारा यह घोषित किया गया हो कि वह राष्ट्रीय महत्त्व की संस्था है'' की जगह ''संघ द्वारा जिन संस्थाओं का नियंत्रण होता हो या खर्च पूरा किया जाता हो'' रखा जाये।

श्रीमान्, इस संशोधन का प्रभाव यह होगा कि यह उसी प्रकार हो जायेगी, जिस प्रकार भारत-सरकार के कानून की सूची 1 की मद 11 है जिससे कि यह विचार उठा है। इसमें कुछ परिवर्तन किये गये हैं, परंतु मेरी राय में भारत-सरकार के कानून का आदेश कुछ अधिक स्पष्ट है। मेरे संशोधन का यह प्रभाव होगा कि इससे यह मद अन्य समान प्रकार की संस्थाओं के संबंध में लागू की जा सकेगी। समान शब्द बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इससे उन संस्थाओं का बोध होता है जिन पर संघीय सरकार इस मद को लागू कर सकती है।

इसमें मैं जो दूसरा परिवर्तन करना चाहता हूं वह यह है कि मैं ''संघीय कानून द्वारा यह घोषित किया गया हो कि वह राष्ट्रीय महत्त्व की संस्था है'' शब्दों को निकाल देना चाहता हूं और उनकी जगह ''संघ द्वारा जिन संस्थाओं का नियंत्रण होता हो या खर्च पूरा किया जाता हो'' रखना चाहता हूं। मेरी राय में संघीय कानून द्वारा घोषणा करने की कोई आवश्यकता नहीं है। चूंकि यह मद सूची 1 में सम्मिलित है इसलिये संघ को कानून बनाने का अधिकार स्वत: प्राप्त हो जाता है। इसलिये संघीय कानून द्वारा घोषणा करने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती, क्योंकि इस मद में कानून बनाने का अधिकार सम्मिलित है। इसके स्थान में ''संघ द्वारा जिन संस्थाओं का नियंत्रण होता हो या खर्च पूरा किया जाता हो'' शब्द अधिक उपयुक्त होंगे। इस संशोधन का यही आशय है। इससे केवल मसविदा ठीक हो जाता है और इससे इस मद के उद्देश्य या इसके विस्तार पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता।

जहां तक श्री सन्तानम् के संशोधन का संबंध है, मैं उसकी भावना से सहमत हूं।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी** (सिक्किम और कूच बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह पेश करना चाहता हूं कि मद नं॰ 27 में ''किसी अन्य संस्था'' के पहले ''किसी प्रान्त में'' शब्द रख दिये जायें।

श्रीमान्, मेरा यह सुझाव है कि भारतीय रियासतों में इस प्रकार की संस्थाओं को अछूता रखा जाये, अन्यथा इस सीधे-साधे आदेश के अधीन बहुत हस्तक्षेप हो सकता है।

***अध्यक्ष:** मुझे इन्हीं संशोधनों की सूचना मिली है। अब संशोधनों और मूल मद पर बहस हो सकती है।

(कोई भी सदस्य बोलने के लिये नहीं उठे।)

***अध्यक्ष:** यह मालूम पड़ता है कि अन्य कोई सज्जन नहीं बोलना चाहते। श्री गोपालस्वामी आयंगर, क्या आप कुछ कहना चाहते हैं?

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, मैं श्री सन्तानम् का संशोधन स्वीकार करता हूं जो इस प्रकार है कि ''अन्य संस्थाओं'' शब्दों के बाद ''संघ द्वारा पूर्णत: या अंशत: जिन संस्थाओं का खर्च पूरा किया जाता हो और'' शब्द रखे जायें।

मि॰ नजीरुद्दीन के संशोधन के बारे में मैं यह कहना चाहता हूं कि 'समान' शब्द की जगह जान बूझकर 'कोई अन्य' शब्द रखे गये हैं क्योंकि मद 27 में जिन संस्थाओं का स्पष्टतया उल्लेख किया गया है वे इम्पीरियल लाइब्रेरी, इंडियन म्यूजियम, इम्पीरियल वार म्यूजियम और विक्टोरिया मेमोरियल हैं। यह विचार किया गया कि ये उस प्रकार की संस्थायें नहीं दिखाई देतीं जिनको संघ आर्थिक सहायता देना चाहेगा और जिनको संघीय व्यवस्थापिका राष्ट्रीय महत्त्व की संस्थायें समझेगी। श्रीमान्, यह आवश्यक नहीं है कि हम यहां प्रतिबंधात्मक विशेषण 'समान' को रखें।

मि॰ नजीरुद्दीन के संशोधन में जो दूसरी बात कही गई है वह यह है कि भारत-सरकार के कानून के मद 11 की भाषा अधिक उपयुक्त है। उस भाषा में और इस मद में जो भाषा रखी गई है उसमें यह अंतर है कि ''संघ द्वारा पूर्णत: या अंशत: जिन संस्थाओं का खर्च पूरा किया जाता हो'' शब्दों की जगह ''संघ द्वारा जिन संस्थाओं का नियंत्रण होता हो या खर्च पूरा किया जाता हो'' शब्द रखे गये हैं। जहां तक बाद के हिस्से का संबंध है यह बहुत कुछ वैसा ही है जैसा कि श्री सन्तानम् का संशोधन है। ''नियंत्रण होता हो या'' शब्दों के प्रयोग से इस मद के अधिकार-क्षेत्र में वे संस्थायें भी आ जायेंगी जिनका खर्च पूर्णत: या अंशत: संघ द्वारा पूरा न किया जाता हो परन्तु जिन पर संघ केवल

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

नियंत्रण रखता हो। श्री सन्तानम् के संशोधन का यह उद्देश्य है कि संघ ऐसी संस्थाओं के संबंध में कानून न बनाये जिनका खर्च पूर्णत: या अंशत: संघ द्वारा न उठाया जाता हो। इसलिये इस संशोधन के उद्देश्य की पूर्ति के लिये, जिसे मैंने स्वीकार भी कर लिया है, यह संभव नहीं है कि मैं भारत सरकार के कानून की भाषा को स्वीकार कर लूं।

जहां तक श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी के संशोधन का संबंध है, मेरे विचार से उनका यह भय अनुचित है कि संघ भारतीय रियासतों के अधिकार-क्षेत्र में हस्तक्षेप करेगा। मैं उनसे यह कहता हूं कि वे इसका अनुभव करें कि यदि हम देशी रियासतों में स्थित इस प्रकार की संस्थाओं को उस आर्थिक सहायता से वंचित कर दें, जिसकी कि वे संघ से आशा रखते हों, तो उनकी कितनी हानि होगी और यदि यह मद उसी तरह रहने दी जाये तो यह दशा उत्पन्न हो जायेगी। मैं इन्हें यह आश्वासन देना चाहता हूं, इस मद के पीछे यह भावना कदापि नहीं है कि भारतीय रियासतों में स्थित संस्थाओं के अधिकार-क्षेत्र को अपने हाथ में ले लिया जाये। यदि भारतीय रियासतों के लोग और वहां के नरेश इस प्रकार की संस्थाओं को स्वयं चलाना चाहते हों और उनका पूरा खर्च भी उठाना चाहते हों तो मेरे विचार से संघ को इन संस्थाओं पर कोई भी नियंत्रण रखने की चिंता न होगी, परंतु यह भी संभव है कि राष्ट्रीय महत्त्व की ऐसी संस्थाओं के संबंध में, जिनको सुचारू रूप से रखने के लिये नरेश आर्थिक सहायता देने में असमर्थ हों, केन्द्र से सहायता प्राप्त करके भारतीय रियासतों के लोगों को लाभ हों। श्रीमान्, मेरे विचार से यदि यह मद इसी रूप में रहने दी जाये तो इससे भारतीय रियासतों को लाभ ही होगा।

***अध्यक्ष:** पहले जो संशोधन पेश हुआ है और जिसे श्री गोपालस्वामी आयंगर ने स्वीकार कर लिया है, वह श्री सन्तानम् का संशोधन है।

प्रस्ताव यह है कि:

''मद 27 में ''अन्य संस्थाओं'' शब्दों के बाद ''संघ द्वारा पूर्णत: या अंशत: जिन संस्थाओं का खर्च पूरा किया जाता हो और'' शब्द रख दिये जायें।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मुझे अपना संशोधन वापस लेने की आज्ञा दी जाये।

(सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।)

***अध्यक्षः** अब श्री हिम्मतसिंह महेश्वरी का संशोधन है। प्रस्ताव यह है किः

''मद 27 में 'किसी अन्य संस्था' शब्दों के पहले 'किसी प्रान्त में' शब्द रखे दिये जायें।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि मद 27 श्री सन्तानम् के संशोधन द्वारा संशोधित रूप में स्वीकार कर ली जाये।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

मद 28

(मद 28 में कोई संशोधन पेश नहीं किया गया।)

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

''मद 28 स्वीकार कर ली जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** श्रीमती रेणुका रे के नाम से एक प्रस्ताव यह है कि मद 28 के बाद एक नई मद 28 (क) जोड़ दी जाये।

***श्रीमती रेणुका रे** (पश्चिमी बंगालः जनरल): श्रीमान्, मैं अपना संशोधन पेश नहीं करना चाहती।

मद 29

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** श्रीमान्, मैं यह पेश करना चाहता हूं कि मद 29 की जगह निम्नलिखित रख दिया जाये:

"आकाश-मार्ग, संघ में सम्मिलित किसी रियासत के अपनी सीमा के अन्दर हवाई यातायात स्थापित करने के अधिकार के अधीन।"

संभवत: इस सभा को ज्ञात है कि इस समय रियासतों को अपनी भूमि में हवाई यातायात स्थापित करने का अधिकार है। मैं यह चाहता हूं कि यह निश्चित रूप से बता दिया जाये कि क्या यह उद्देश्य है कि उनको यह स्वतंत्रता पूर्ववत् प्राप्त होगी या भविष्य में रियासतों में हवाई अड्डों और हवाई यातायात को संघ के नियंत्रण में रखने का विचार है।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मेरे विचार से ऐसी कोई बात नहीं है कि श्री हिम्मतसिंह को जिसका भय है वह अवश्य ही चरितार्थ होकर रहेगा। कोई अपवाद करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि अपनी सीमाओं के अंदर जो आकाश-मार्ग भारतीय रियासतों के प्रबंध में हैं उनके संबंध में भी नियंत्रण के लिये यह आवश्यक होगा कि केन्द्र को अधिकार सौंपा जाये।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि मद 29 की जगह निम्नलिखित रख दिया जाये:

"आकाश-मार्ग, संघ में सम्मिलित किसी रियासत के अपनी सीमा के अंदर हवाई यातायात स्थापित करने के अधिकार के अधीन।"

प्रस्ताव गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"मद 29 स्वीकार कर ली जाये"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

मद 30

*श्री हरि विनायक पातस्कर: श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव रखना चाहता हूं कि मद 30 में 'संघीय' शब्द जहां दूसरी बार आया है वहां उसके स्थान में 'राष्ट्रीय' शब्द रख दिया जाये। प्रान्तीय सूची की मद 17 में प्रान्तीय थल-मार्गों और जल-मार्गों का उल्लेख है, इसलिये यह उचित है कि यहां उनका राष्ट्रीय थलमार्ग और जलमार्ग के रूप में उल्लेख किया जाये। मुझे आशा है कि यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जायेगा। श्रीमान्, मैं इसे पेश करता हूं।

*श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव रखना चाहता हूं कि मद 30 में ''और जलमार्ग'' शब्द निकाल दिये जायें और ''संघीय सरकार'' शब्दों की जगह ''संघीय कानून'' शब्द रख दिये जायें। इस संशोधन को पेश करने का कारण यह है कि मद 31 में यह शब्द हैं: 'भूमि के ऐसे जल-मार्गों में जहाजरानी का संचालन तथा यातायात जिन्हें संघीय सरकार ने संघीय जल-मार्ग घोषित किया हो।' इसलिये यदि आप यहां जल-मार्ग शब्द को रहने देते हैं तो मद 30 और 31 बहुत कुछ एक समान हो जायेंगी। इसके अतिरिक्त यदि आप 'जलमार्ग' जैसे साधारण शब्द का प्रयोग करते हैं तो इससे यह अर्थ भी निकाला जा सकता है कि जल-मार्गों के नियंत्रण का पूरा अधिकार जिसमें सिंचाई तथा दूसरी बातों का अधिकार भी सम्मिलित है केन्द्र के हाथ में आ जायेगा, परंतु इस मद का यह उद्देश्य कदापि नहीं है। इसलिये यह स्पष्ट करने के लिये कि यह मद सीमित रूप से ही प्रयोग में आयेगी, अच्छा यह होगा कि मद 30 से जल-मार्ग शब्द निकाल दिया जाये और मद 31 में उसे स्थान दिया जाये। जल-मार्गों की उन्नति के लिये बाद को विशेष आदेश रखे गये हैं। उद्देश्य यह है कि जल-मार्गों के संबंध में प्रान्तों के अन्य सभी अधिकार यथावत् रखे जायें। इन सभी कारणों से मैं इस संशोधन को पेश कर रहा हूं।

श्री पातस्कर के संशोधन से जिसके अनुसार 'संघीय थलमार्गों' की जगह 'राष्ट्रीय थल-मार्गों' रखा जाना चाहिये, मुझे कोई आपत्ति नहीं है। श्रीमान्, मैं इसे पेश करता हूं।

*श्री एन० माधवराव (पूर्वी रियासतें: समूह): श्रीमान्, इस मद में मैं केवल इस उद्देश्य से एक संशोधन पेश कर रहा हूं कि मैं उन बातों पर जोर दूं जो इस सूची के निर्माताओं के मस्तिष्क में रही होंगी। थलमार्ग और जलमार्ग साधारणतया प्रदेशों के अधिकार-क्षेत्र में आते हैं और यदि किसी विशेष मामले में उन्हें संघीय

[श्री एन. माधवराव]

घोषित किया जाये तो यह उचित ही है कि संबंधित प्रदेश या प्रदेशों की सरकार से राय ली जाये और उसको यथेष्ट महत्त्व दिया जाये। यदि संघ इस प्रकार की घोषणा करेगा तो वह संबंधित थल-मार्ग या जल-मार्ग को सुधारने या उन्हें ऐसी कोटि का बनाने के लिये ही करेगा जिस कोटि का बनाने के लिये प्रदेशों के पास पर्याप्त साधन न हों। ऐसी दशा में यह कदापि संभव नहीं है कि कोई भी प्रदेश आपत्ति करेगा जब तक कि इस प्रस्ताव के साथ बहुत ही अस्वीकार्य दशायें न लगा दी गई हों। संघीय सूची में कई ऐसी बातें रखी गई हैं जिनसे यह जान पड़ता है कि संघीय सरकार ने केवल एक-पक्षीय कार्य के बारे में सोचा था परंतु मुझे विश्वास है कि वास्तव में उद्देश्य यह नहीं था। यह उचित ही होगा कि इस धारणा का निराकरण कर दिया जाये। श्रीमान्, इस संशोधन को वास्तव में मैं पेश नहीं करने वाला था क्योंकि मैं चाहता था कि समय नष्ट न हो। मैं यह विचार करता था कि इस प्रकार की घोषणा करने के पहले संबंधित प्रदेशों की राय अवश्य ली जायेगी। परंतु श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन के बाद मुझे इस मद के वास्तविक उद्देश्य और इसके अर्थ के संबंध में भ्रम हो गया है।

क्या इसका संबंध केवल थलमार्गों के निर्माण, उनकी उन्नति तथा उनकी देख-रेख से ही है? या इसका उद्देश्य यह है कि संघीय सरकार को सामान और यात्रियों को ले जाने के संबंध में कानून बनाने का अधिकार दिया जाए? 30 और 31 दोनों मदों की शब्दावली स्पष्ट है। श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधनों से ही कुछ संदेह उत्पन्न हो गया है। मैं यह जानना चाहता हूं कि वास्तव में इन संशोधनों का उद्देश्य क्या है और इनको स्थान देने से इन मदों का रूप क्या हो जायेगा और (क) थल-मार्गों के देख-रेख के संबंध में तथा (ख) इन मार्गों से यात्रियों और सामान के आने-जाने पर नियंत्रण रखने के अधिकारों और उत्तरदायित्व पर इनका क्या असर पड़ेगा।

***माननीय श्री हुसैन इमाम** (बिहार: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, इस सभा के विचारार्थ तथा, यदि मेरा मत स्वीकार कर लिया गया तो, मसविदा तैयार करने वालों के पथप्रदर्शनार्थ मैं कुछ राय देना चाहता हूं। जहां तक जल-मार्गों का संबंध है मैं एक विशेष बात का हवाला देना चाहता हूं। हम इस पर सहमत हैं कि जहां तक जहाजरानी के नियंत्रण का संबंध है वह मद 31 में आ जाता है और उसे मद 30 में सम्मिलित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन जल-मार्गों

के संबंध में एक बात और भी है जिसकी ओर हमें इस समय ध्यान देना है और वह यह है कि उनसे हमें जो बिजली प्राप्त होगी या उनसे हम जो सिंचाई कर सकेंगे उसकी उन्नति किस प्रकार करें। हमारी दामोदर घाटी की योजना में दो प्रान्तों को दिलचस्पी है। अर्थात् बिहार और पश्चिमी बंगाल को। वर्तमान व्यवस्था के अधीन बिना इन दो प्रान्तों की राय लिये हुये केन्द्रीय सरकार इस संबंध में कानून नहीं बना सकती थी। इसी प्रकार रिहान्द घाटी की योजना भी है जिसका संबंध संयुक्त प्रांत के जिला मिर्जापुर और बिहार के जिला पलामु से है। इन दो प्रान्तों की राय से ही इस योजना के कार्य को भी आगे बढ़ाया जा सकता है। अब चूंकि हम नये सिरे से कानून बना रहे हैं इसलिये यह आवश्यक है कि सिंचाई और बिजली के कार्यों को पृथक करने की व्यवस्था की जाये। छोटी नदियों के संबंध में, अर्थात् ऐसी नदियों के बारे में जिनका संबंध एक ही प्रान्त से हो, इस समय प्रान्तों को ही अधिकार दिया जा सकता है। परन्तु बड़ी नदियों के बारे में जिनका संबंध एक से अधिक प्रांतों से हो या उनकी उसमें दिलचस्पी हो, यह उचित ही है कि उनको केन्द्र या संघ के अधीन रखा जाये ताकि इस समय खर्च के कुछ भाग को उठाने में प्रान्तों को तैयार करने में हमें जो कठिनाई हो रही है वह दूर हो जाये। यह सभी जानते हैं कि प्रांत बहुत गरीब हैं, उनको बहुत ही कम साधन उपलब्ध हैं। उदाहरणार्थ, उड़ीसा की महानदी की योजना को लीजिये। अपने ही साधनों से उस योजना का खर्च उठाना उस प्रांत के लिये असंभव है। इसलिये मेरा यह सुझाव है कि इस मद की शब्दावली निर्धारित करते समय जहां तक ऐसी नदियों का संबंध है जिनसे प्रांतों को दिलचस्पी हो या जिनसे उनका संबंध हो, इसका ध्यान रखा जाये कि कहीं किसी प्रान्त के अधिकारों में हस्तक्षेप तो नहीं होता। यदि किसी नदी में एक से अधिक प्रान्तों की दिलचस्पी हो और बिजली या सिंचाई का ऐसा कोई बड़ा कार्य हाथ में उठाना हो तो यह आवश्यक है कि वह नदी संघ के अधिकार-क्षेत्र में रहे। मैं इस सुझाव को सभा के विचारार्थ पेश कर रहा हूं, इसलिये मुझे कोई संशोधन पेश नहीं करना है। यदि सभा इस विचार से सहमत हो तो इसे विधान का मसविदा तैयार करते समय उसमें स्थान दिया जा सकता है।

***श्री एम० अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मुझसे पहले बोलने वाले वक्ता महोदय को जिस कठिनाई की आशंका है वह भारत सरकार के कानून के इस आदेश से पूर्णतया दूर हो सकती है कि यदि किसी प्रान्तीय विषय में दो प्रदेशों की दिलचस्पी हो तो संघीय व्यवस्थापिका एक से अधिक प्रदेशों के संबंध में कानून बना सकती है। वर्तमान मद में कोई परिवर्तन करने की आवश्यकता

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

नहीं है और उसे सूची 1 में भी सम्मिलित करने की आवश्यकता नहीं है। कोई विशेष प्रदेश अपने पक्ष में किसी अधिकार का प्रयोग चाहे या न चाहे, संघीय व्यवस्थापिका को सभी अधिकार सौंपने की कोई आवश्यकता नहीं है। पहली बात मैं यही कहना चाहता हूं।

जहां तक श्री माधवराव के संशोधन का संबंध है उन्होंने जो कुछ कहा है उसमें कुछ सार है। यदि थल-मार्ग भारत सरकार को सौंपे जायें और संघीय सूची में उनको बिना किन्हीं शर्तों के सम्मिलित किया जाये तो इन पर आमद-रफ्त की व्यवस्था भी केन्द्र को ही करनी होगी। थल-मार्ग कई प्रदेशों से होकर जाते हैं। कोई भी ऐसा थल-मार्ग नहीं है जो प्रदेशों से होकर नहीं जाता और जहां तक सड़कों का संबंध है उनका प्रबंध प्रांतों के हाथ में है। इसलिये उनका यह प्रश्न ठीक ही है कि क्या केन्द्र का यह विचार है कि जहां तक सड़कों में आमद-रफ्त का प्रश्न है इसे प्रान्तीय व्यवस्थापिका के अधिकार-क्षेत्र से अलग कर दिया जाये। मेरी यह धारणा है कि इसे पूर्णत: केन्द्र के अधिकार-क्षेत्र में रख देना चाहिये। कई अवसरों पर संघ के हित के लिये इन सड़कों पर आमद-रफ्त पर नियंत्रण रखना आवश्यक हो जायेगा। परंतु साधारण आमद-रफ्त का प्रबंध प्रान्तों के हाथ में छोड़ा जा सकता है। केन्द्र के मोटर गाड़ियों के कानून से हम परिचित हैं। केन्द्रीय सरकार के मोटर गाड़ियों के कानून द्वारा आमद-रफ्त के प्रबंध के लिये आमद-रफ्त की प्रान्तीय बोर्डों को स्थापित करने का भार प्रान्तों को सौंपा गया है। इसी प्रकार यद्यपि थल-मार्गों को सूची 1 में सम्मिलित किया गया है परन्तु आमद-रफ्त के नियंत्रण के लिये कुछ अधिकारों को केन्द्र के हाथ में रखने के लिये व्यवस्था की जा सकती है और आमद-रफ्त की साधारण देख-रेख प्रान्तों के हाथ में दी जा सकती है। इसलिये श्री माधवराव ने जिस संशोधन का सुझाव रखा है उसे स्वीकार करने की कोई आवश्यकता नहीं है और वर्तमान मद यथावत् रखी जा सकती है।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने जो यथेष्ट कारण बताये हैं उनको ध्यान में रखते हुये मैं उनके इस सुझाव को स्वीकार करता हूं कि मद 30 से 'जल-मार्ग' शब्द निकाल दिया जाये। यदि हम उसे वहां रहने दें तो मद 30 और मद 31 का कुछ अंश बहुत कुछ एक समान हो जायेगा और सूची के शेष अंश में जल-मार्गों से संबंधित मदों के बारे में भी बहुत कुछ ऐसा ही हो सकता है। इन्होंने वास्तव में जो संशोधन पेश

किया था उसके शब्द यह थे कि ''थल-मार्ग जो संघीय कानून द्वारा इस प्रकार घोषित किये गये हों'' और हमारे सामने श्री पातस्कर का भी यह संशोधन है कि ''संघीय थलमार्ग और जलमार्ग'' के स्थान में ''राष्ट्रीय थलमार्ग और जलमार्ग'' रखे जायें। मैं यह कह चुका हूं कि इस मद से हम 'जल-मार्ग' शब्द को निकाल रहे हैं लेकिन मेरे विचार से यदि इस मद की शब्दावली निम्न प्रकार रखी जाये तो इन दोनों माननीय सदस्यों की आपत्ति दूर हो जायेगी।

''राष्ट्रीय थलमार्ग जो संघीय कानून द्वारा इस प्रकार घोषित किये गये हों।''

यदि सभा इस छोटे से संशोधन को स्वीकार कर ले तो हमें फिर कोई कठिनाई न होगी।

दूसरा संशोधन श्री माधवराव ने पेश किया था। मेरे विचार से उन्होंने स्वयं इसे स्वीकार किया है कि बिना पहले प्रदेशों की राय लिये हुये थलमार्गों को राष्ट्रीय थलमार्ग घोषित करना सम्भव न होगा। यह प्रतिदिन के शासन-प्रबंध की बात है और मेरे विचार से यह आवश्यक नहीं है कि उन्होंने जिन शब्दों का सुझाव किया है उनको मद 30 में स्थान दिया जाये। परन्तु वे इसका स्पष्टीकरण चाहते थे कि जिस प्रकार इस मद की शब्दावली रखी गई है उससे क्या अर्थ निकलता है जैसे कि क्या इसमें संघीय व्यवस्थापिका द्वारा सड़कों पर आमदरफ्त पर नियंत्रण करने का अधिकार अपने हाथ में ले लेना भी सम्मिलित है? मैं उनसे यह समझने के लिये कहूंगा कि इस मद की शब्दावली जिस प्रकार रखी गई है उसमें मुख्यत: राष्ट्रीय थलमार्गों के निर्माण और उनके देख-रेख का उल्लेख है। जहां तक आमदरफ्त पर नियंत्रण रखने का संबंध है हम केन्द्र को स्पष्टतया कोई अधिकार नहीं दे रहे हैं। वास्तव में यातायात के अन्य साधनों जैसे जलमार्ग, रेलवे और मैं समझता हूं आकाश-मार्ग के संबंध में हमने इस सूची में स्पष्ट शब्दों में इसकी व्यवस्था की है कि केन्द्र यात्रियों के आवागमन पर नियंत्रण रखेगा। इस मद में हमने इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं की है। इसलिये मैं उनको यह बतलाना चाहता हूं कि राष्ट्रीय थल-मार्गों में भी आमदरफ्त पर नियंत्रण रखने के संबंध में प्रदेशों के जो अधिकार होंगे उनसे वे वंचित नहीं किये जायेंगे।

अब मैं उस प्रश्न को उठाना चाहता हूं जिसका हवाला मेरे माननीय मित्र मि॰ हुसैन इमाम ने दिया है। उन्होंने जलमार्गों का हवाला दिया था; परंतु जैसा कि मैं कह चुका हूं कि हमारा यह इरादा है कि जलमार्ग शब्द को हम इस मद से निकाल देंगे। इसके अलावा उन्होंने जो कुछ कहा उसके आधार पर दूसरी तरफ श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने यह कहा कि विधान में यह व्यवस्था होगी कि

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

किसी ऐसे जलमार्ग के बारे में जिसका संबंध दो प्रदेशों से हो, वे दोनों प्रदेश केन्द्र से यह प्रार्थना कर सकेंगे कि वह उस जलमार्ग का नियमन और नियंत्रण करे। इस व्यवस्था के अतिरिक्त, जिसे अवश्य ही स्थान दिया जायेगा, मैं मि॰ हुसैन इमाम का ध्यान संघीय सूची की मद 83 की ओर आकर्षित करता हूं जिसमें बाढ़ के नियंत्रण, सिंचाई, जलमार्गों में यातायात और पन-बिजली के लिये अन्तर प्रादेशिक जलमार्गों की उन्नति का उल्लेख है, उससे उन्हें पूर्ण संतोष हो जाना चाहिये।

***श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगर:** क्या मैं श्री गोपालस्वामी आयंगर से एक प्रश्न पूछ सकता हूं? उन्होंने यह कहा कि यदि 'राष्ट्रीय थलमार्गों' शब्दों को बिना किसी विशेषता के प्रयोग किया जाये तो उनसे केवल राष्ट्रीय थल-मार्गों का निर्माण और उनकी देख-रेख समझा जायेगा और उन्होंने कहा कि मद 31 में ''ऐसे जलमार्गों से यात्रियों व सामान के आने-जाने'' की व्यवस्था है। उनके कथनानुसार केन्द्र को जो अधिकार दिए गए हैं उनसे इस व्यवस्था में कोई बाधा नहीं पड़ती, बिना इस व्यवस्था के केन्द्र को यह अधिकार प्राप्त ही न होंगे। इसके विपरीत क्या यह न समझा जाये कि इससे केन्द्र के अधिकारों को बाधा पहुंचती है और यदि यह ठीक है तो क्या यह आवश्यक नहीं है कि श्री माधवराव का संशोधन किसी रूप में स्वीकार किया जाये?

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मेरा जवाब यह है। मैंने जो बातें कहीं वह इस प्रश्न पर विचार करते हुये कहीं। कानून की दृष्टि से मैं केवल सतह पर ही रहा। इस मद में यदि 'जलमार्गों' ही शब्द का प्रयोग हो तो इसमें आमदरफ्त के संबंध में भी नियम बनाने का अधिकार सम्मिलित है। मैंने यह नहीं कहा कि केन्द्र को यह अधिकार प्राप्त नहीं होगा। मैं वास्तव में यह बताना चाहता था कि हम राष्ट्रीय थलमार्गों में भी आमदरफ्त के नियम के लिये अकेले केन्द्र को ही अधिकार नहीं देना चाहते और इस सूची में इस मद को सम्मिलित करने का अर्थ यही है। मैंने श्री माधवराव से यह कहा कि यदि इस मद को इसी तरह भी रहने दिया जाये तो प्रदेशों से नियम बनाने का कोई अधिकार नहीं छिनता। मेरे विचार से जो कुछ मैंने कहा उससे इन मदों की शब्दावली का कोई बारीक अर्थ निकाला जा रहा है, परंतु मुझे विश्वास है कि उससे उसके आशय का बोध हो जाता है।

***अध्यक्ष:** श्री गोपालस्वामी आयंगर ने श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर और श्री पातस्कर के संशोधन के आशय को स्वीकार कर लिया है। इसलिये मैं इन

संशोधनों को आपके सामने उस रूप में रखता हूं जिस रूप में वे रखना चाहते हैं। अर्थात्–

मद 30 की जगह निम्नलिखित रखा जाये:

''राष्ट्रीय थलमार्ग जो संघीय कानून द्वारा इस प्रकार घोषित किये गये हों।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब श्री माधवराव का संशोधन आता है।

***श्री माधवराव:** श्रीमान्, मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

***अध्यक्ष:** श्री माधवराव ने अपना संशोधन वापस ले लिया है। मैं आशा करता हूं कि सभा उन्हें अपना संशोधन वापस लेने की आज्ञा दे देगी।

संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं इस मद को, इसके संशोधित रूप में मतदान के लिये सभा के सामने रखूंगा। वह इस प्रकार है:

''30–राष्ट्रीय थलमार्ग जो संघीय कानून द्वारा इस प्रकार घोषित किये गये हों।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

मद 31

***अध्यक्ष:** मद 31। श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने एक संशोधन पेश किया है।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर:** श्रीमान्, चूंकि मद 30 स्वीकार कर ली गई है इसलिये मद 31 को इस परिवर्तन के साथ रहने देना चाहिये। मेरा सुझाव यह है कि मद 31 में ''संघीय सरकार'' शब्दों के स्थान में ''संघीय कानून'' शब्द रख दिये जायें। संशोधित मद इस प्रकार होगी:

''यंत्र संचालित जलयानों के संबंध में भूमि के उन जलमार्गों में, जिन्हें संघीय कानून ने संघीय जलमार्ग घोषित किया हो, जहाजरानी का संचालन और

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

यातायात और ऐसे जलमार्गों का आवागमन संबंधी नियम, इत्यादि।''

इससे मद 31 मद 30 के अनुरूप हो जायेगी।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम से जो संशोधन है वह दो रूपों में पेश किया गया है। उसको उसके पहले रूप में मैं पेश करना नहीं चाहता। मैं केवल उसका दूसरा रूप उपस्थित करना चाहता हूं। दूसरे रूप में भी वह दो भागों में विभाजित है। मैंने दो अलग-अलग भागों में उसकी सूचना दी थी किन्तु वे दोनों एक साथ छाप दिये गये हैं। दूसरे रूप में जिस प्रकार संशोधन रखा गया है उसके अंतिम भाग को ही मैं पेश करना चाहता हूं। जिस भाग को मैं पेश करना चाहता हूं, वह इस प्रकार है:

''मद 31 में 'ऐसे जलमार्गों पर' शब्दों के स्थान में 'ऐसे जलमार्गों में' शब्द रखे जायें।''

श्रीमान्, यह संशोधन केवल मसविदा ठीक करने के लिये पेश किया गया है। जब हम थल-मार्गों का जिक्र करते हैं तो हम ऐसे थलमार्गों पर कहते हैं और जब हम जलमार्गों का जिक्र करें तो हमें ऐसे जलमार्गों में कहना चाहिये। जब आप सड़क से यात्रा करते हैं तो आप सड़क पर चलते हैं और जब जलमार्ग से यात्रा करते हैं तो जलयानों का कुछ हिस्सा सतह के नीचे होता है। इस संबंध में मेरा यही विचार है। जैसा कि मैं कह चुका हूं यह संशोधन केवल मसविदा ठीक करने के लिये पेश किया गया है और मुझे आशा है कि माननीय प्रस्तावक इसके औचित्य पर विचार करेंगे।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मैं श्री अल्लादी के इस आशय के संशोधन को स्वीकार करता हूं कि मद 31 में 'संघीय सरकार' शब्दों की जगह 'संघीय कानून' शब्द रख दिये जायें।

जहां तक मि॰ नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन का संबंध है वह केवल इस बारे में है कि सही अंग्रेजी क्या होगी। आखिर इससे गति का बोध तो होता ही है। हम सड़क पर चलते हैं यह तो मानी हुई बात है। परंतु मैं नहीं जानता कि हम पानी में चलते हैं, कहना कहां तक ठीक होगा। मेरे विचार से 'पर' शब्द बिल्कुल गलत नहीं कहा जा सकता। मैं इस संशोधन को तुरंत ही स्वीकार नहीं कर सकता, परंतु मैं मसविदा तैयार करने वालों से कहूंगा कि वे इस मद की अंग्रेजी भाषा की ओर विशेष ध्यान दें और यह निर्णय करें कि 'पर' शब्द उपयुक्त होगा कि 'में'।

***श्री आर॰वी॰ धुलेकर** (संयुक्त प्रांत: जनरल): सभापति जी, इनका जो यह संशोधन है वह ''आउट आफ आर्डर'' है, क्योंकि ''आन'' और ''इन'' के संबंध में अंग्रेजों को निर्णय करना चाहिये और वह अपने यहां ऐसा कर लेंगे। यह विधान चूंकि हिन्दी भाषा में बनने वाला है इसलिये इस प्रकार की आवश्यकता नहीं है।

***अध्यक्ष:** जब हिंदी होगी, तब देखा जायेगा।

***अध्यक्ष:** पहला संशोधन श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर का है। उसे श्री गोपालस्वामी आयंगर ने स्वीकार कर लिया है। मैं यह समझता हूं कि सभा उसे स्वीकार करती है।

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

***अध्यक्ष:** मैं आशा करता हूं कि सभा मि॰ नजीरुद्दीन को दूसरा संशोधन वापस लेने की आज्ञा दे देगी।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** मैं इस मद को मतदान के लिये सभा के सामने रखता हूं।

मद 31 संशोधित रूप में स्वीकार कर ली गई।

मद 32

***अध्यक्ष:** अब हम मद 32 को उठाते हैं। इसमें श्री वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य ने एक संशोधन पेश किया है।

***सर वी॰टी॰ कृष्णमाचारी** (जयपुर): मैं उसे पेश नहीं करता हूं।

***श्री के॰ सन्तानम्:** श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं कि:

''मद 32 के पैराग्राफ (ख) से 'ब्राडकास्टिंग' शब्द निकाल दिया जाये और अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

'संघीय ब्राडकास्टिंग और कानून और ब्राडकास्टिंग का नियमन'

[श्री के. सन्तानम्]

मैं यह सोच रहा था कि मद 32 पेश की जायेगी और यदि वह पेश होती तो मैं उसका समर्थन करता। जिस प्रकार इस मद की शब्दावली रखी गई है उसमें कानून का ही उल्लेख नहीं है बल्कि टेलीफोन, बेतार का तार, ब्राडकास्टिंग और अन्य प्रकार की यातायात, चाहे उस पर संघ का अधिकार हो या न हो, उनके स्वामित्व और नियमन पर केन्द्र के नियंत्रण का भी उल्लेख है। जहां तक कानून या इन यातायातों के नियमन का संबंध है इसमें कुछ भी संदेह नहीं किया जा सकता कि यह केन्द्र के अधिकार में होना चाहिये; परंतु केन्द्रीय यातायात के अतिरिक्त किसी प्रदेश में इस प्रकार के अन्य यातायात हों या न हों, यह एक ऐसा विषय है जिस पर सावधानी से विचार करना चाहिये। ऐसे बड़े देश में जहां सभी प्रकार की कठिनाइयां हैं और कई भाषायें हैं, यह आवश्यक है कि अधिकारों को बहुत सख्ती के साथ निश्चित किया जाये। मेरे विचार से कम से कम जहां तक ब्राडकास्टिंग का संबंध है यह आवश्यक है कि प्रत्येक ऐसे प्रदेश का जिसकी अपनी भाषा हो, इसके लिये अपना अलग प्रबंध हो किन्तु यह इसके अधीन अवश्य हो कि कानून या अन्य ऐसे मामलों के संबंध में जिनका नियमन आवश्यक हो केन्द्र नियमन करे। मैं यह चाहता था कि दूसरे मामले जैसे कि टेलीफोन और अन्य प्रकार के यातायात भी इसमें सम्मिलित कर लिये जाते, परंतु चूंकि वह संशोधन पेश नहीं किया गया है इसलिये मैं अपना संशोधन पेश कर रहा हूं; ताकि कम से कम ब्राडकास्टिंग सम्मिलित कर लिया जाये। श्रीमान्, मैं अपना संशोधन पेश करता हूं।

*__श्री एॅ॰पी॰ पट्टानी__ (पश्चिमी भारत की रियासतों का समूह): अध्यक्ष महोदय, मैं जो संशोधन पेश करना चाहता हूं। वह इस प्रकार है:

''मद 32 के पैराग्राफ (ख) के स्थान में निम्नलिखित रखा जाये:

'टेलीफोन, बेतार का तार, ब्राडकास्टिंग और इसी प्रकार के अन्य यातायात जिन पर संघ का अधिकार हो; और प्रान्तों या रियासतों के अधिकार में इसी प्रकार की यातायात का नियमन'।''

श्रीमान्, रियासतों ने रक्षा, यातायात तथा वैदेशिक मामलों के संबंध में संघ में सम्मिलित होना स्वीकार कर लिया है। यदि मेरी व्याख्या ठीक हो तो वे इन विषयों के संबंध में संघ के साथ पूर्णतया सहयोग करने के लिये तैयार हैं। वे ऐसे अधिकारों को सुरक्षित नहीं रखना चाहते जिनकी उन्हें आवश्यकता न हो। यातायात और रक्षा

का कार्य एक दूसरे पर निर्भर है। जब यातायात की ठीक व्यवस्था होगी तभी रक्षा हो सकेगी। इसलिये श्रीमान्, मेरे संशोधन का यह उद्देश्य नहीं है कि संघ के अधिकार सीमित किये जायें। मेरा सुझाव केवल इतना ही है कि संघीय टेलीफोनों, बेतार के तार, ब्राडकास्टिंग इत्यादि और प्रान्तों और रियासतों के इसी प्रकार के यातायात में कुछ अंतर होना चाहिये। प्रान्तों और रियासतों के यातायात पर केन्द्र का नियंत्रण होना चाहिये। मैं केवल दो प्रकार के स्वामित्व में अंतर रखना चाहता हूं। इसी उद्देश्य से मैं इस संशोधन को पेश करता हूं।

***श्री एन॰ माधवराव:** अध्यक्ष महोदय, इन संशोधनों को मैंने मुख्यत: सूचना प्राप्त करने के लिये पेश किया है और इनका उद्देश्य मसविदा ठीक करना नहीं है। मैं अपने उद्देश्य की व्याख्या करूंगा।

पहली उपमद, डाक और तार में, यह कहा गया है:

''परंतु शर्त यह है कि इस विधान के प्रयोग में आते समय किसी रियासती प्रदेश के स्वत्व उस काल तक सुरक्षित रखे जायेंगे जब तक कि उनमें परिवर्तन न किया जाये या उन्हें समाप्त न किया जाये।''

अब जहां तक डाक और तार का संबंध है कुछ ऐसे अधिकार हैं जो कुछ रियासतों को बहुत कुछ प्रतिज्ञापत्रों के आधार पर दिये गये हैं। मुझे मालूम नहीं है कि तार के संबंध में ऐसा कोई प्रतिज्ञापत्र है कि नहीं, परंतु टेलीफोनों के संबंध में ऐसा समझौता है कि रियासतें अपने यहां उनको लगा सकती हैं व उनका प्रबंध कर सकती हैं। भारतीय रियासतों को टेलीफोन लगाने, उनकी देख-रेख करने, उनको जनसाधारण को अपने उपयोग के लिये देने, उनको मुनाफे के लिये चलाने या इसी उद्देश्य से लोगों या निजी तौर से चलाई जाने वाली कम्पनियों को लाइसेंस देने का अधिकार है, परंतु शर्त यह है कि रियासत की सीमा के बाहर ब्रिटिश भारत में या दूसरी रियासत में तार न दौड़ाये जायें।

अब मैं यह जानना चाहता हूं कि संघीय व्यवस्था संबंधी सूची की इस मद को स्वीकार करने से पहले दिये हुये इस आश्वासन पर क्या असर पड़ेगा।

इसके अतिरिक्त श्रीमान्, जहां तक सेविंग बैंकों का संबंध है यह मद यातायात के अधीन नहीं आती है। इसका उल्लेख यहां केवल इसलिये किया गया है कि

[श्री एन॰ माधवराव]

डाक विभाग उन्हें चलाता है। सेविंग बैंकों के संबंध में यह प्रश्न डेविड-सन कमेटी के सामने रखा गया था। उस कमेटी ने भारत सरकार से राय ली थी और उसने यह राय दी थी:

''यह कार्य जो सेविंग बैंक के हिसाब और कैश सर्टिफिकेटों की बिक्री का रूप ले लेता है, एक तरह का व्यावसायिक आदान-प्रदान है जिससे उससे संबंधित प्रत्येक व्यक्ति को लाभ होता है और इसका विचार किया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति न्यायोचित लाभ उठाये। परन्तु हम इसे स्वीकार करते हैं कि राजनैतिक व्यवहार में यह एक नवीन और अनुचित सिद्धांत होगा कि नरेशों की इच्छा के प्रतिकूल और कुछ अवसरों पर दरबार की स्थानीय व्यवस्था से प्रतिस्पर्धा करते हुये इस प्रकार के आदान-प्रदान का अधिकार सर्वोच्च सत्ता के हाथ में समझा जाये, इसलिये यदि कोई रियासत निश्चित रूप से इसके लिये कहे तो हम इस प्रकार के आदान-प्रदान को समाप्त करने के लिये बिल्कुल तैयार हैं।''

मैं कुछ ऐसी रियासतों से परिचित हूं जो अपने ही सेविंग बैंक स्थापित करने के बारे में सोच रहे हैं और बहुत संभव है कि उनके उचित संचालन के लिये यह आवश्यक हो कि डाक-विभाग से यह कहा जाये कि वह अपने सेविंग बैंकों को हटा ले। अब जहां तक इसका प्रश्न है कि जो आश्वासन उस उद्धरण में दिया गया है जिसे मैंने आपके सामने रखा है, अब भी प्रामाणिक समझा जाता है या केवल ऐसी अस्थायी नीति का मामला समझा जाता है जिसे किसी समय भी बदला जा सकता है। यदि सभी बातें स्पष्टतया बतला दी जायें तो मैं बहुत आभारी हूंगा।

जहां तक बेतार के तार और ब्राडकास्टिंग का संबंध है, भारत-सरकार के कानून की धारा 129 में एक आदेश है। मैं यह जानना चाहता हूं कि नये विधान में क्या इसी आशय की व्यवस्था की जायेगी। इन्हीं बातों के स्पष्टीकरण के लिये मैं तीन संशोधन पेश कर रहा हूं। वे इस प्रकार हैं:

''मद 32 के पैराग्राफ (क) में 'डाक और तार' शब्दों के बाद 'टेलीफोन डाकखाने के सेविंग बैंक' शब्द रख दिये जायें।''

''मद 32 के पैराग्राफ (ख) में 'टेलीफोन' शब्द निकाल दिया जाये और अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

'भारत सरकार के कानून सन् 1935 ई॰ की धारा 129 के समान इस विधान के आदेश के अधीन'।''

"मद 32 का पैराग्राफ (ग) निकाल दिया जाये।"

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं यह पेश करता हूं कि मद 32 में पैरा (ख) के बाद निम्नलिखित नया पैरा जोड़ दिया जाये:

"(ख ख) इसी के समान अन्य प्रकार के यातायात के साधन," यह संशोधन केवल मसविदा ठीक करने के लिये पेश किया गया है क्योंकि इसका उद्देश्य गणना पूरी कर देना है।

खंड (क) में डाक और तार का उल्लेख है जिनकी स्वामिनी और प्रबंधकर्त्री सरकार है। खंड (ख) में टेलीफोन, बेतार के तार और ब्राडकास्टिंग का उल्लेख है। इसके साथ जिस उप-पैरा को मैं जोड़ना चाहता हूं उससे इस सूची में इसी के समान अन्य प्रकार के यातायात भी सम्मिलित हो जाते हैं। संभव है लोगों द्वारा डाक का व्यवसाय निजी तौर पर चलाया जाता हो। भारत सरकार को डाक संबंधी यातायात के संचालन का एकाधिकार प्राप्त है। इसलिये ताकि लोग डाक का व्यवसाय निजी तौर पर न चला सकें; इसलिये मैंने इस उप-पैरा को जोड़ देने का सुझाव रखा है। यह सुझाव मसविदा तैयार करने वाली कमेटी के विचारार्थ ही रखा गया है और मैंने यह संशोधन केवल इसलिये पेश किया है कि वह इस संबंध में जो कुछ आवश्यक हो, करे।

श्री माधवराव ने डाकखाने के सेविंग बैंकों के बारे में जो संशोधन पेश किया है, मेरे विचार से यद्यपि उनका डाक-विभाग से ऐतिहासिक संबंध है लेकिन वे यातायात के अंग नहीं हैं और यातायात के लिये रियासतें संघ में सम्मिलित हुई हैं। इसलिये मेरे विचार से डाकखाने के सेविंग बैंकों के कानून को उठाने के पहले रियासतों के अधिकारियों से कुछ परामर्श किया जाना चाहिये। इस संबंध में मुझे केवल इतना ही कहना है।

***श्री हिम्मतसिंह के॰ महेश्वरी:** अध्यक्ष महोदय, मैं यह पेश करना चाहता हूं कि मद 32 के पैरा (क) के "या संघ द्वारा अपने अधिकार में लिये गये हों" शब्द निकाल दिये जायें और मद 32 के पैरा (ग) के अंत में "प्रान्त में" शब्द रख दिये जायें।

श्रीमान्, अन्य संशोधनों के संबंध में जिन्हें मैंने आज सुबह पेश करने का दुस्साहस किया था, मुझ पर यह दोष लगाया गया है कि मैं सूक्ष्मग्राही हूं और

[श्री हिम्मतसिंह के. महेश्वरी]

यह कि मेरा भय निराधार है। मैं इन दोषों को स्वीकार करता हूं और मैं यह कहूंगा कि केन्द्र द्वारा अधिकारों को अपने हाथ में ले लेने की प्रवृत्ति के संबंध में मेरा भय मद 32 की शब्दावली या इस उपमद की किसी उपमद से दूर नहीं हो जाता। मैंने केवल (क) और (ग) मदों के संबंध में संशोधन पेश किये हैं, परंतु मद 32 के खंड (ख) के बारे में भी जो संशोधन पेश किया गया है उससे मैं पूर्णतया सहमत हूं।

श्रीमान्, इस संबंध में मैं इस सभा का ध्यान अप्रैल में इस सभा के सामने जो रिपोर्ट रखी गई थी उसकी मद 4 के खंड (ग) के उपखंड (क) की ओर दिलाना चाहता हूं। श्रीमान्, उस समय उस रिपोर्ट के निर्माताओं का यह इरादा नहीं था कि डाक और तार के संबंध में रियासतों के अधिकारों को अपने हाथ में ले लिया जाये। इन अधिकारों को अपने हाथ में ले लेने का विचार बाद की उपज मालूम पड़ती है।

जहां तक अप्रैल की रिपोर्ट के खंड (ग) की मद 4 के खंड (ख) का संबंध है, उसकी ओर फिर ध्यान दिया जाये। उस समय इरादा यह था कि इसमें संघीय टेलीफोन, संघीय ब्राडकास्टिंग और संघीय बेतार का तार ही सम्मिलित होंगे और इसके अधीन वे टेलीफोन, बेतार के तार और ब्राडकास्टिंग नहीं होंगे जो रियासतों के अधिकार में हों या जिन पर उनका नियंत्रण हो। स्पष्टतः उद्देश्य यह था कि बेतार के तार और ब्राडकास्टिंग और इसी प्रकार के अन्य यातायात के साधनों का, जिन पर रियासतों का अधिकार हो नियमन किया जाये, परंतु उन पर नियंत्रण न रखा जाये। इसके विपरीत इस मद में ऐसी व्यवस्था है कि सभी टेलीफोनों, बेतार के तार के स्टेशनों, ब्राडकास्टिंग के स्टेशनों और इसी प्रकार के अन्य यातायात पर नियंत्रण रखा जाये, चाहे वे संघ के अधिकार में हों या न हों। मेरे विचार से अप्रैल की रिपोर्ट का मसविदा तैयार करते समय जिस सिद्धान्त का अनुकरण किया गया था उसे यहां स्पष्टतया अधिक विस्तृत कर दिया गया है।

इसके अतिरिक्त श्रीमान्, खंड (ग) के संबंध में अन्य वक्ता यह बता चुके हैं कि डाकखानों के सेविंग बैंक यातायात के अंतर्गत नहीं आते हैं, जो उन तीन विषयों में से एक है जिनके संबंध में रियासतें या तो संघ में सम्मिलित हो गई हैं या आगे चलकर होने वाली हैं। व्यवहार में श्रीमान्, डाकखाने जो काम करते

हैं उससे उनको थोड़ा-बहुत लाभ ही होता है और यह उचित ही है कि भारतीय रियासतों को भी, जिन्होंने अपने बैंक स्थापित किये हैं, सेविंग बैंकों का कार्य अपने हाथ में लेने की आज्ञा दी जाये और उनके यहां भविष्य में इस कार्य को न करें।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रांत: जनरल): श्रीमान्, मेरा संशोधन इस प्रकार है:

''मद 32 के पैरा (ख) की जगह निम्नलिखित रखा जाये:

'(ख) टेलीफोन, बेतार का तार, ब्राडकास्टिंग और इसी प्रकार के अन्य यातायात, यदि इन पर संघ का इस समय तक अधिकार न हो तो इन पर अधिकार कर लेना।''

श्रीमान, तीन विषयों अर्थात् रक्षा, यातायात और वैदेशिक मामलों के संबंध में रियासतें संघ में सम्मिलित हुई हैं। श्रीमान्, वैदेशिक मामलों के संबंध में संघीय विषयों की सूची से यह स्पष्ट हो जायेगा कि इस संबंध में संघीय सरकार को ही पूर्ण अधिकार प्राप्त हैं। रक्षा के संबंध में भी नियंत्रण का पूर्ण अधिकार संघीय सरकार को प्राप्त है। वास्तव में मद 5 में यह व्यवस्था है कि रियासतें अपनी सेनायें रख सकती हैं, यद्यपि उनकी संख्या निश्चित करने, संगठित करने और उन पर नियंत्रण रखने का अधिकार संघ को प्राप्त है। मेरे विचार से अच्छा तो यह होता कि यह व्यवस्था होती ही नहीं और किसी प्रदेश को अपनी अलग सेनायें रखने का अधिकार न दिया जाता। इसी प्रकार यातायात के संबंध में मेरा यह विचार है कि रक्षा का कार्य उस समय तक नहीं हो सकता जब तक कि यातायात पर संघ का पूर्ण अधिकार न हो। हमें पिछले युद्ध का अनुभव है और हम यह जानते हैं कि किस प्रकार पंचम सेना के लोगों ने अपने गुप्त कार्य को आगे बढ़ाने के लिये बेतार के तार के ट्रांसमीटरों और अन्य साधनों का उपयोग किया। हम दूसरे युद्ध की भी कल्पना कर सकते हैं। उसके छिड़ने पर जब तक संघ यातायात पर पूर्ण नियंत्रण न रखेगा, वह रक्षा के संबंध में अपना उत्तरदायित्व उचित रूप से पूरा नहीं कर सकता। इसलिये मेरे विचार से जहां तक यातायात का संबंध है उस पर संघ का पूर्ण अधिकार होना चाहिये। इसमें संदेह नहीं है और मैं इसकी कल्पना करता हूं कि हमारा संघ अपने प्रदेशों का विश्वास करेगा और शांतिकाल में अपने अधिकार उनको दे देगा और संघीय कानूनों द्वारा उनको स्वायत्त शासन प्रदान करेगा; परंतु संकटकाल में उसे नियंत्रण रखने का पूर्ण अधिकार होना चाहिये,

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

ताकि वह पूरी तैयारी के साथ उसका सामना कर सके। यदि इन साधनों के स्वामित्व का अधिकार हमें उपलब्ध न होगा तो हम इन पर अधिकार नहीं कर सकते हैं। यह तभी संभव हो सकेगा जब हम इस संघीय सूची में यह व्यवस्था करें कि यातायात के सभी साधनों के स्वामित्व का पूर्ण अधिकार संघ को प्राप्त है और उसे उन साधनों को भी अपने हाथ में ले लेने का अधिकार प्राप्त है जिन पर इस समय उसका अधिकार नहीं है। इसलिये मैं समझता हूं कि यह रियासतों के सभी सदस्यों के ध्यान में आ जायेगा कि इस संशोधन को स्वीकार करने से उनका अपने प्रदेशों में अपनी ही भाषा में ब्राडकास्ट करने के लिये समुचित प्रबंध करने का अधिकार नहीं छिनता। केवल वे युद्धकाल में ब्राडकास्टिंग के प्रबंध पर नियंत्रण रखने का पूर्ण अधिकार संघ को सौंप देंगे। इसलिये मैंने यह सुझाव रखा है कि ''चाहे इन पर संघ का अधिकार हो या न हो'' शब्दों को निकाल दिया जाये और वर्तमान खंड के अंत में ''यदि इन पर संघ का अधिकार न हो तो इनको अधिकार में ले लेना'' शब्द जोड़ दिये जायें। चूंकि कुछ रियासतों में उनका अलग प्रबंध है इसलिये मैं यह चाहता हूं कि कम से कम संकटकाल में संघ को उसे अपने हाथ में लेने का अधिकार होना चाहिये और मेरे विचार से इसमें किसी को आपत्ति नहीं होनी चाहिये।

***श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगर:** श्रीमान्, मैं श्री सन्तानम् के संशोधन का समर्थन करता हूं। हम सब इससे सहमत हैं कि केन्द्रीय सरकार को ब्राडकास्टिंग पर नियंत्रण रखने का अधिकार होना चाहिये। रियासतों के मंत्रियों ने अंत में यही तय किया कि संघीय सरकार से नियंत्रण का अधिकार लेने का प्रयत्न न किया जाये। उनके संशोधन से मैं केवल यह समझ पाया हूं कि उनको अपने ब्राडकास्टिंग स्टेशन स्थापित करने दिये जायें और कुछ हद तक उन पर नियंत्रण रखने दिया जाये। मुझे विश्वास है कि कानून में भारत-सरकार के कानून की धारा 129 के समान कोई व्यवस्था की जायेगी। उसमें संधियों और ऐसे उत्तरदायित्वों का उल्लेख है जिन्हें केन्द्रीय या संघीय सरकार तथा रियासतों या रियासतों के नरेशों को एक दूसरे के प्रति पूरा करना है और जो इस संबंध में हैं कि अधिकारों का प्रयोग किस प्रकार हो और इसका भी उल्लेख है कि संकटापन्न स्थिति उत्पन्न होने पर गवर्नर जनरल को सारे देश के ब्राडकास्टिंग को अपने हाथ में ले लेने का अधिकार होना चाहिये चाहे कोई ब्राडकास्टिंग स्टेशन किसी रियासत में हो या प्रान्त में। मुझे विश्वास है कि संकटापन्न स्थिति की दशा में केन्द्रीय सरकार को इस संबंध में अधिकार दे देने की व्यवस्था यहां भी की जायेगी। श्री सन्तानम् के संशोधन में

इस प्रकार की पर्याप्त व्यवस्था है। वे उसे स्वीकार करते हैं कि प्रान्तों और रियासतों को अपने ब्राडकास्टिंग स्टेशन चलाने दिये जायें, परंतु उन पर राज्य के कानूनों और नियमों द्वारा नियंत्रण रखा जाये।

इसके अतिरिक्त मैं देखता हूं कि श्री महेश्वरी को मद 32 के खंड (क) की एक बात से आपत्ति है और वह किसी रियासत में ब्राडकास्टिंग स्टेशनों और डाक और तार को अधिकार में लेने के बारे में है। यह सच है कि भारत-सरकार के कानून की सूची 1 की मद 7 में इसका उल्लेख नहीं है। श्रीमान्, एकरूपता के उद्देश्य से यदि कोई रियासत अपने यहां के डाक और तार के यातायात के साधनों को बेच देना चाहे तो संघ को उन्हें अपने अधिकार में ले लेने की स्वतंत्रता होनी चाहिये। अधिकार में लेने का अर्थ यह नहीं है कि जब अधिकार में लेने की प्रार्थना की जाये या इस संबंध में समझौता किया जाये तभी उसे अधिकार में लिया जाये, परंतु उसका अर्थ अनिवार्य रूप से अधिकार में लेना भी है। उनको केवल अनिवार्य रूप से अधिकार में लेने से आपत्ति है।

जहां तक रेल का संबंध है, सम्पूर्ण रियासतों के हितार्थ सभी रेलों के केन्द्रीयकरण का प्रयत्न किया गया है। मैं इन रियासतों का उल्लेख नहीं कर रहा हूं जो संघ में सम्मिलित नहीं हो रही हैं। जो रियासतें संघ में सम्मिलित हो रही हैं उनके संबंध में पहले मंत्रि-प्रतिनिधि मंडल की योजना का भी यह उद्देश्य था कि वे तीन विषयों के संबंध में अर्थात् रक्षा, वैदेशिक मामलों और यातायात के संबंध में सम्मिलित हों। यातायात के साधन बहुत-कुछ रक्षा की धमनियां कही जा सकती हैं। जब हम रक्षा का उल्लेख करते हैं तो हम संकटापन्न स्थिति की कल्पना करते हैं। इसलिये यातायात को संघीय विषयों के अंतर्गत आना ही चाहिये और इसमें कोई आगा-पीछा करने की आवश्यकता नहीं है। इस संबंध में रियासतों को मान या प्रतिष्ठा का कोई प्रश्न नहीं उठाना चाहिये। उन्हें रियासतों के अंदर डाक और तार को अपने हाथ में लेने का अधिकार केन्द्रीय सरकार को या तो स्वेच्छा से दे देना या समझौता से दे देना चाहिये और यहां तक कि अनिवार्य रूप से भी दे देना चाहिये।

मैं अपने माननीय मित्र श्री सन्तानम् के संशोधन का समर्थन करता हूं और अन्य संशोधनों का विरोध करता हूं।

***श्री एस॰वी॰ कृष्णमूर्ति राव** (मैसूर): श्रीमान्, मैं नहीं समझता कि खंड 32 में कोई प्रदेश ब्राडकास्टिंग, बेतार के तार, टेलीफोन इत्यादि का प्रबंध करने से

[श्री एम. वी. कृष्णमूर्ति राव]

वंचित किया गया है क्योंकि खंड (ख) में कहा गया है, टेलीफोन, बेतार का तार, ब्राडकास्टिंग और यातायात के अन्य प्रकार के साधन चाहे वे संघ के अधिकार में हों या न हों। इसलिये इस खंड का उद्देश्य केवल इतना ही है कि संघीय व्यवस्थापिका को इस संबंध में कानून बनाने का अधिकार दिया जाये कि इस प्रकार के यातायात के साधनों पर संघ का स्वामित्व का अधिकार है या नहीं। विशेषतया भारतवर्ष जैसे देश में युद्ध-काल और संकट-काल में यातायात के साधनों का रक्षा-कार्य से निकट संबंध स्थापित करना होता है और इसलिये इनके संबंध में नियमन करने और कानून बनाने का अधिकार केन्द्र को और केवल केन्द्र को ही प्राप्त होना चाहिये।

मैं डाकखानों से सेविंग बैंकों को हटाने के संबंध में जो संशोधन पेश किया गया है उसके भी विरोध में हूं, क्योंकि डाकखाने बराबर सेविंग बैंकों का काम करते रहे हैं। कोई भी रियासत उतनी अच्छी सेवा नहीं कर सकती जितनी कि ये डाकखानों के सेविंग बैंक कर रहे हैं, विशेषतया देहात में। लगभग प्रत्येक रियासत के खजानों में अपने बैंक हैं और इसके अतिरिक्त ऐसे भी बैंक हैं जिनका कि खर्च पूर्णत: या अंशत: रियासतें उठाती हैं। परंतु ये सेविंग बैंक देहात में छोटे-छोटे गांवों में स्थित हैं और मेरा यह विचार है कि कोई भी रियासत या प्रान्त देहात में सेविंग बैंक नहीं स्थापित कर सकता। डाकखाने ही इस काम को बहुत अच्छी तरह चला सकते हैं। डाकखानों व उनकी शाखाओं के इस काम से बहुत लाभ हो रहा है। इसलिये डाकखानों के प्रबंध से सेविंग बैंकों को हटाने के उद्देश्य से जो संशोधन पेश किया गया है उसका मैं विरोध करता हूं।

मैं सभी संशोधनों का विरोध करता हूं और मूल खंड का समर्थन करता हूं।

श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय (ग्वालियर): श्री अध्यक्ष महोदय, मेरा ख्याल है कि ''ब्राडकास्टिंग'' ''कम्यूनिकेशन्स'' के अंदर ही आता है। ब्राडकास्टिंग भी अपने विचारों को कम्यूनिकेट करने का, व्यक्त करने का, एक साधन है। इसलिये यह भी एक फेडरल सब्जेक्ट रहना चाहिये और इसके बारे में जो आपत्ति उठाई गई है वह ठीक नहीं है। सन्तानम् साहब का अमेंडमेंट मुनासिब है इस विषय में और ब्राडकास्टिंग फैडरल सब्जेक्ट रहना चाहिये। बहुत-सी रियासतें आज यह कहती हैं कि यह अधिकार रियासतों को रहना चाहिये। इस विषय में मेरा यह कहना है कि जब हम सब मिलकर फैडरेशन बना रहे हैं और इस पर ऐसा अमेंडमेंट

आता है तो कहा जाता है कि यह रियासतों के अधिकार हैं, यह सुरक्षित रहने चाहियें और इस विषय में फैडरल दखल न दें। मैं समझता हूं कि यह स्पिरिट अच्छी नहीं है। आज हम रियासतों और प्राविन्सेज को मिलाकर ही एक फैडरेशन बना रहे हैं। इसलिये यह आपने जो कुछ अधिकार थोड़े से सीमित विषयों में दिये हैं वह पूरी तरह से फैडरेशन को देने चाहियें। इसी में पोस्ट आफिस और टेलीग्राफ्स आते हैं जो हमें जरूर फैडरेशन को देने चाहियें।

मेरा अनुभव है कि छोटी रियासतों में जहां सिर्फ रियासतों के डाकखाने होते हैं, वह लोगों की आजादी के अधिकारों में बहुत-सी बाधायें डालते हैं। वहां अक्सर रियासतें पोस्ट आफिस से मिलकर सी॰आई॰डी॰ के द्वारा और कई प्रकार से ऐसी तरकीबें करती हैं जिनसे जो लोग न्यूज भेजते हैं उन्हें सप्रेस किया जाता है और लोगों के खुफिया लेटर्स को बार-बार डिटेन कर लेते हैं और उनके खिलाफ मुकदमे वगैरह चलाने के काम में लाते हैं। इसलिये पोस्ट आफिस वगैरह को इस विषय में कुछ ज्यादा स्वाधीन होना चाहिये और रियासतों को इस विषय में कम से कम अधिकार दिये जायें ताकि जो जनता की सेवा पोस्ट आफिस द्वारा हो सकती है वह समुचित रूप से हो सके। यह फैडरल सब्जेक्ट होने से ही रियासतों की इन्ट्रीग्स और बदइंतजामी से बच सकते हैं।

इसलिये यह पूरा विषय जो है वह पूरा का पूरा मि॰ सन्तानम् के संशोधन के साथ होना चाहिये।

***श्री ए॰पी॰ पट्टानी:** अध्यक्ष महोदय, अंत में बोलने वाले सदस्य महोदय ने उन रियासतों के संबंध में, जो जैसा कि मैं रियासतों के एक सदस्य की हैसियत से कह चुका हूं, हर प्रकार सहयोग करना चाहती हैं, जिन बातों को कहा उन्हें मैं नहीं समझ पाया हूं। उन्होंने रियासतों के किस कुचक्र का उल्लेख किया है। हम आपसे कह रहे हैं कि संघ के लिये जो यातायात आवश्यक हों उन्हें आप ले लीजिये। हम तो इसकी प्रार्थना कर रहे हैं कि जिन यातायात के साधनों पर रियासतों या प्रान्तों का अधिकार है उनका नियमन केवल केन्द्र ही करे। इसमें क्या कुचक्र है? श्रीमान्, इसे मैं नहीं समझ पाया हूं और मेरी यह इच्छा है कि माननीय सदस्य महोदय इसका स्पष्टीकरण करें।

***श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय:** बात यह है कि जिस कुचक्र का मैंने जिक्र किया वह आजकल के मामलों के बारे में नहीं है। परंतु कुछ डाकखानों में कुछ चिट्ठियों को रोक दिया गया और रियासतों ने कुछ अन्य बातें भी कीं। मेरा मतलब इन्हीं बातों से था और आजकल की स्थिति से नहीं था।

चौधरी निहाल सिंह तक्षक (पंजाबी रियासतों का समूह): अध्यक्ष महोदय, श्री महेश्वरी के संशोधन के आधे भाग का विरोध करने के लिये मैं खड़ा हुआ हूं तथा देशी रियासत का नागरिक होने के नाते मुझे भी उन देशी रियासतों का जहां डाक का विभाग है, विशेषकर उन छोटी रियासतों में जहां डाक का अपना प्रबंध है, कुछ अनुभव है। वहां की रियासती प्रजा को बहुत कठिनाइयां हैं। वह रियासतों की आय का एक साधन समझे जाते हैं। इसलिये उनका यह प्रयत्न होता है कि जहां तक संभव हो डाकखानों की संख्या और डाक पहुंचाने वालों की संख्या कम हो। जहां प्रान्त के डाकखानों में एक ग्राम में सप्ताह में दो बार गश्त होती है, वहां देशी राज्यों में डाकखानों में डाक पहुंचाने वालों की कमी के कारण वह एक सप्ताह के बजाय एक महीने में भी दो बार मुश्किल से पहुंचते हैं।

एक विशेष कठिनाई दूसरी यह भी है कि वहां जो मनीआर्डर भेजे जाते हैं, उसका एक्सचेंज होता है और उसके लिये पहले अंग्रेजी भारत के डाकघर में जाकर एक्सचेंज होता है। इससे बड़ा विलंब होता है और कई बार तो ऐसा होता है कि किसी रियासत के खजाने में पैसा कम होने के कारण मनीआर्डर बहुत दिनों के बाद आते हैं और महीनों तक ढिलाई में पड़े रहते हैं।

एक तीसरी कठिनाई यह है कि ऐसी रियासतों में जहां उनका अपना डाक-विभाग है और उन्हें पेंशन भारतीय प्रान्तों के डाकखानों से मिलती है, उसके लिये उन्हें बहुत दूर जाना पड़ता है। उन विधवा स्त्रियों को मैंने कई बार देखा है कि वह पेंशन लेने के लिये कितना कष्ट उठाकर जाती हैं।

दूसरी यह बात कि जो विषय है उसमें डाकघर है, लेकिन उसमें जो सेविंग्स बैंक दिया गया है वह उससे अलग नहीं किया जा सकता। देशी रियासतों में जहां अपना डाक-विभाग है, उस जगह उन्हें यह सेविंग्स बैंक की सुविधा नहीं मिलती। इसलिये जो शब्द हैं ''आर ऐक्वायर्ड बाई दि फैडरेशन'' यह जब तक संघ हस्तांतरित न कर लें, यह डिलीट न हो जाये। बल्कि इस प्रकार करना चाहिये। मैं सभा से प्रार्थना करूंगा कि जैसे ही विधान काम करने लगे, उस वक्त शुरू से ही यह चीज हो कि डाक-विभाग को संघ को हस्तांतरित कर लेना चाहिये, ताकि रियासत की प्रजा की कठिनाई दूर हो।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, इस मद में जो पहला संशोधन पेश किया गया है वह श्री सन्तानम् का है। मेरे विचार से उन्होंने उसे

इसलिये पेश किया कि सूची में उससे पहले दिया हुआ संशोधन पेश नहीं किया गया था। मैं इसी समय यह कह देना चाहता हूं कि यद्यपि श्री वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य ने उस संशोधन को पेश नहीं किया परंतु बहुत कुछ उसी आशय का एक संशोधन श्री पट्टानी ने पेश किया है और यदि यह सभा मुझे इसकी आज्ञा देगी तो मैं श्री पट्टानी के संशोधन का आशय श्री वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के उस संशोधन की भाषा में स्वीकार करना चाहता हूं जिसे कि उन्होने पेश नहीं किया है। मैं श्री वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य के मसविदे में केवल यह शाब्दिक परिवर्तन करूंगा कि मैं 'संघ' शब्द की जगह 'राज्यसंघ' शब्द रख दूंगा। वह इस प्रकार हो जायेगा: ''राज्यसंघ के टेलीफोन, बेतार के तार, ब्राडकास्टिंग के साधन और यातायात के साधन और यातायात के इसी प्रकार के अन्य साधनों का नियमन और उन पर नियंत्रण।'' इसमें श्री सन्तानम् के संशोधन का आशय आ जाता है, इसलिये मैं उसे स्वीकार नहीं करूंगा।

*__श्री के॰ संतानम्:__ मैं उसे वापस लेता हूं।

*__माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:__ अब श्रीमान्, इस मद की शब्दावली के संबंध में श्री माधवराव ने जो बातें कहीं उन पर मैं विचार करूंगा। मैं उनके सूचनार्थ यह कहना चाहता हूं कि एक ऐसी रियासत है जिसके और सर्वोच्च सत्ता के बीच तार के संबंध में समझौते हुये थे। मेरा मतलब काश्मीर से है। काश्मीर में भारत के तार के प्रबंध के अतिरिक्त रियासत का अपना तार का प्रबंध भी है और इन दो प्रबंधों के पारस्परिक संबंध और इनके एकीकरण के बारे में उस रियासत और भारत-सरकार के बीच एक समझौता हुआ है। उन्होंने श्रीमान् सम्राट के प्रतिनिधि के दिये हुये उन आश्वासनों और नीति-संबंधी वक्तव्यों का भी उल्लेख किया जो उन्होंने डाकखानों, टेलीफोनों, डाकखानों के सेविंग बैंक और बेतार के तार के संबंध में दिये थे। इस समय मैं सर्वोच्च सत्ता की तरफ से दिये हुये इन नीति-संबंधी वक्तव्यों पर विचार करना नहीं चाहता क्योंकि वह सत्ता अब समाप्त हो चुकी है। मैं केवल यह कहूंगा कि इस प्रकार के आश्वासन चिरस्थायी नहीं समझे गये थे। यह संभव है कि यदि सर्वोच्च सत्ता इस देश में बनी भी रहती तो यह प्रबंध रियासत और सर्वोच्च सत्ता के बीच समझौते से बदल भी दिया जाता। यह आगे चलकर भी हो सकेगा। इन मामलों के संबंध में श्री माधवराव को थोड़े-से शब्दों में उत्तर इस प्रकार दिया जा सकता है। मैं उनका ध्यान संघ में सम्मिलित होने के उस आदेश-पत्र के आदेशों की ओर दिलाना चाहता हूं, जिसमें इस उपनिवेश में सम्मिलित होने वाली सभी रियासतों ने हस्ताक्षर किये हैं। यातायात

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

के अधीन, जिसके संबंध में वे राजी हो गये हैं, एक मद यह भी है कि संघीय धारा-सभा को निम्नलिखित के संबंध में कानून बनाने का अधिकार होना चाहिये:

''डाक और तार, जिनमें टेलीफोन, बेतार के तार, ब्राडकास्टिंग के साधन और यातायात के इसी प्रकार के अन्य साधन सम्मिलित हैं।''

यहां किसी प्रकार की सीमाबंदी नहीं है। वास्तव में विस्तृत आशय की शब्दावली की यह मद अन्य प्रकार के संबंध से सीमित हो जाती है। इन मामलों के संबंध में मैं समझौतों का जिक्र कर रहा था। भारत-सरकार और रियासतों के बीच जो अस्थायी रूप से अविचल समझौता हुआ है उसमें समझौतों के संबंध में जो खंड है उसकी शब्दावली निम्न प्रकार है:

''जब तक कि इस संबंध में नये समझौते न हों सम्राट और किसी भारतीय रियासत के बीच परस्पर के मामलों के संबंध में किये हुये सभी वर्तमान समझौते और शासनकार्य-संबंधी व्यवस्था, जहां तक उचित होगा, उसी प्रकार रहेगी जैसे कि वह भारतीय उपनिवेश या उसके किसी हिस्से, जैसी भी दशा हो, और किसी रियासत के बीच समझौते से हुई हो।''

इसलिये जो कोई आश्वासन दिये गये हैं या समझौते किये गये हैं वे उस समय तक उसी प्रकार रहेंगे जब तक कि नया प्रबंध न हो जाये। अस्थायी रूप से किये हुये अविचल समझौते के साथ संबंधित परिशिष्ट के अनुसार इस प्रकार के समझौते डाक, तार और टेलीफोनों पर लागू हो सकते हैं। इसलिये संघीय अधिकारों की कमेटी की रिपोर्ट की संघीय सूची की इस मद की शब्दावली के संबंध में कोई झगड़ा नहीं हो सकता है। वास्तव में यह नये विधान में संघीय धारा-सभा के अधिकारों को सीमित कर देती है, परंतु संघ में सम्मिलित होने के आदेश-पत्र में जिसमें कि आपने हस्ताक्षर किये हैं यह व्यवस्था नहीं है, इससे इस विधान के प्रयोग में आते समय किसी रियासत के जो अधिकार हों उनकी भी रक्षा हो जाती है। जब तक कि संघ और संबंधित प्रदेश के बीच उन अधिकारों में परिवर्तन करने या उन्हें समाप्त करने के बारे में समझौता न हो जाये वे उसी प्रकार सुरक्षित रहेंगे। इससे वे बातें साफ हो जाती हैं जिनका स्पष्टीकरण श्री माधवराव चाहते थे।

इस मद का एक भाग ऐसा है अर्थात् मद 32 का खंड (क) जिस पर मेरे मित्र श्री हिम्मतसिंह ने संशोधन पेश करके आपत्ति की है। उनका यह विचार है कि इस खंड के ''या संघ जिन पर अधिकार कर ले'' शब्दों से उनको केन्द्र के संबंध में जो भय है उसकी पुष्टि हो जाती है। अब मैं सभा के सामने यह रखना चाहता हूं: केन्द्र और प्रदेशों के बीच अधिकारों का जो विभाजन किया गया है उसके अनुसार डाक और तार पर संघ का ही नियंत्रण होना चाहिये। हम इसे स्वीकार करते हैं कि संघ में सम्मिलित होने वाली रियासतों में जो कोई प्रबंध हो वह नये प्रबंध के होने तक उसी प्रकार रहे। अब यदि भविष्य में किसी समय संघ यह तय करे कि सारे देश के हित के लिये यह आवश्यक है कि किसी विशेष रियासत के डाक के प्रबंध में सुधार किया जाये और चूंकि यह आशा नहीं की जा सकती कि वह रियासत इस प्रकार सुधार करेगी, इसलिये यह आवश्यक है कि संघ उस रियासत के डाक और तार के प्रबंध को अपने हाथ में ले ले; तो श्रीमान्, मेरे विचार से देश के व्यापक हितों के ध्यान से संघ को उस रियासत के किसी अधिकार को अपने हाथ में ले लेने का अधिकार होना चाहिये। जब हम 'या संघ जिन पर अधिकार कर ले' शब्दों को कहते हैं तो इनका अर्थ किसी संघीय विषय से संबंधित अधिकारों से है। यदि किसी देश का कोई स्थायी हित हो तो इस पर अधिकार करने पर उसकी क्षतिपूर्ति उचित रूप से कर दी जायेगी। कोई भी व्यक्ति जो संघीय व्यवस्था का समर्थक हो, केन्द्र को इस प्रकार का अधिकार देने के संबंध में आपत्ति नहीं कर सकता।

अब मैं श्रीमान् श्री हिम्मतसिंह के पेश किये हुये संशोधन को उठाता हूं। वे चाहते हैं कि डाकखानों के सेविंग बैंक केवल प्रान्तों में हों। इनसे जो लाभ होता है उसकी ओर यदि ध्यान न भी दिया जाये तो इससे वर्तमान व्यवस्था में बड़ी गड़बड़ी पैदा हो जायेगी। सैकड़ों ऐसी रियासतें हैं जिनमें हजारों डाकखाने इस समय इस काम को कर रहे हैं। क्या इस सुझाव का अर्थ यह है कि किसी भी भारतीय रियासत में संघ को इस प्रकार के प्रबंध से कोई संबंध न होना चाहिये? हमें केवल इसकी व्यवस्था करनी चाहिये कि यदि कोई रियासत इसका प्रमाण दे कि इसकी आवश्यकता है कि वह स्वयं ऐसे सेविंग बैंक चलाये जिनका डाकखानों से कोई संबंध न हो तो भारत-सरकार और उसके बीच इस संबंध में बातचीत होगी कि शासन-प्रबंध की दृष्टि से आया डाकखानों को इस आशय का आदेश दिया जाये कि वे सेविंग बैंकों का काम न करें। वह संभव है और मैं इसका विश्वास दिलाता हूं कि यदि कोई रियासत इसका प्रमाण दे तो इस उपनिवेश की

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

भावी सरकार उस पर विचार करेगी। परंतु सभी भारतीय रियासतों के डाकखानों के सेविंग बैंकों को संघ के अधिकार से हटाने का अर्थ यह होगा कि भारतीय रियासतों की आर्थिक स्थिति अव्यवस्थित हो जायेगी और मैं तो अपनी तरफ से सभा से यह सिफारिश न करूंगा कि इस प्रकार का प्रस्ताव स्वीकार किया जाये।

इसके अतिरिक्त श्रीमान् प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना का संशोधन है जो इस प्रकार है:

''मद 32 के पैरा (ख) की जगह निम्नलिखित रखा जाये:

(ख) टेलीफोन, बेतार का तार, ब्राडकास्टिंग और इसी प्रकार के अन्य यातायात, यदि इन पर संघ का इस समय तक अधिकार न हो तो इन पर अधिकार कर लेना।''

श्रीमान्, मैंने जो कुछ कहा है उसके फलस्वरूप जिस संशोधित रूप में यह मद रखी जायेगी उसमें प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन का आशय आ जायेगा।

मुझे अब केवल मि० नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन ही की ओर संकेत करना है। उनका यह कहना ठीक ही है कि 'इसी के समान अन्य प्रकार के यातायात के साधन' शब्दों से, जो अब खंड (ख) में सम्मिलित हैं केवल टेलीफोन, बेतार का तार, ब्राडकास्टिंग जैसे यातायात के साधन समझे जायेंगे। वे यह चाहते हैं कि केन्द्र को डाकखाने और तार जैसे यातायात के साधनों का नियमन करने का भी अधिकार होना चाहिये। इस संबंध में मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि मद (क) में डाकखाने और तार संघीय विषय में सम्मिलित हैं। आप यह देखेंगे कि किसी प्रकार के डाकखानों और तार के संबंध में, जोकि कुछ भारतीय रियासतों के विशेष प्रबंध में रखे गये हैं, केन्द्र को, संघीय पार्लियामेंट को उनके नियमन और नियंत्रण के लिये कानून बनाने का अधिकार होगा।

उन क्षेत्रों में जहां इस प्रकार का विशेष प्रबंध न हो संघीय पार्लियामेंट को किन्हीं व्यक्तियों के बीच में या व्यक्तियों के समूहों के बीच में किसी अन्य प्रकार के डाक के यातायात के साधनों की स्थापना का निषेध करने का एकाधिकार प्राप्त होगा। वास्तव में मेरा यह विश्वास है कि डाकखानों के वर्तमान कानून में

एक धारा इस प्रकार है कि नियमित रूप से स्थापित डाक के साधन की उपेक्षा करके किसी क्षेत्र और दूसरे क्षेत्र के बीच चिट्ठी भेजने का निजी प्रबंध करना अपराध है। डाकखानों के एक्ट के अनुसार यह एक अपराध है। मुझे विश्वास है कि वह आदेश रहने दिया जायेगा। इस समय कोई व्यक्ति सरकारी तार-घर के अतिरिक्त किसी अन्य साधन से तार नहीं भेज सकता। इसको ध्यान में रखते हुये मेरे विचार से उन्हें अपनी मद को जोड़ने के लिये जोर देने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। श्रीमान्, मुझे और कुछ नहीं कहना है। मेरा उद्देश्य यह है कि मैं श्री पट्टानी के संशोधन को श्री वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य की भाषा में स्वीकार करता हूं और अन्य सभी संशोधनों का विरोध करता हूं।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर मतदान लूंगा और मेरे विचार से अच्छा तो यह होगा कि मैं प्रत्येक मद के एक-एक पैराग्राफ को उठाऊं।

पहले श्री माधवराव का संशोधन है:

''मद 32 के पैराग्राफ (क) में 'डाक और तार' शब्दों के बाद 'टेलीफोन, डाकखाने के सेविंग बैंक' शब्द रख दिये जायें।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** अब श्री हिम्मतसिंह का संशोधन है:

''मद 32 के पैरा (क) के 'या संघ द्वारा अपने अधिकार में लिये गये हों' शब्द निकाल दिये जायें।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं खंड (ख) में जो संशोधन पेश किये गये हैं उनको उठाऊंगा।

***श्री के॰ संतानम्:** खंड (क) में मैंने 'रियासती प्रदेश' शब्दों के बारे में एक संशोधन पेश किया है। इन शब्दों से कुछ भ्रम हो सकता है।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, इस वाक्य की भाषा के शोधन का प्रश्न मसविदा तैयार करने वालों पर छोड़ा जा सकता है।

***श्री के॰ संतानम्:** क्या इनका मतलब रियासतों से है?

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः** जी, हां।

***अध्यक्षः** मद नं॰ 32 (ख) में पहला संशोधन श्री पट्टानी का श्री वी॰टी॰ कृष्णमाचार्य की भाषा में है।

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** तब क्या मैं यह समझूं कि श्री संतानम् ने अपना संशोधन वापस ले लिया है?

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्षः** अब हम श्री माधवराव का संशोधन उठाते हैं।

***श्री एन॰ माधवरावः** इस संशोधन का प्रश्न परिणामस्वरूप ही उठता है। वह और 32 (ख) में जो संशोधन मैंने पेश किया है वह भी गिर जाते हैं।

***अध्यक्षः** अब हम श्री हिम्मतसिंह के संशोधन को उठाते हैं।

"मद 32 के पैरा (ग) के अंत में 'प्रान्त में' शब्द रख दिये जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से अब केवल एक संशोधन रह गया है और उसे मि॰ नजीरुद्दीन अहमद ने पेश किया है:

"मद 32 में पैरा (ख) के बाद निम्नलिखित नया पैरा जोड़ दिया जाये:

'(ख ख) इसी के समान अन्य प्रकार के यातायात के साधन।' "

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्षः** तब मैं इस मद को उसके संशोधित रूप में सभा के सम्मुख मतदान के लिये रखता हूं।

मद नं॰ 32 उसके संशोधित रूप में स्वीकार कर ली गई।

मद 33

***अध्यक्षः** अब हम मद 33 को उठाते हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं किः

"मद नं॰ 33 में जिन कोष्ठकों में 'मामूली रेलों से अन्य' शब्द रखे गये हैं वे निकाल दिये जायें।"

यह संशोधन केवल मसविदा ठीक करने के लिये पेश किया गया है। यह मद भारत-सरकार के कानून की सूची नं॰ 1 की मद 20 के अनुरूप है। यह बिल्कुल उसके समान है सिवाय इसके कि यहां दो कोष्ठक रख दिये गये हैं जो कि मूल कानून में वर्तमान नहीं हैं। मेरी राय से ये कोष्ठक अनावश्यक हैं और इनके हटाने से यह मद पढ़ने में अच्छी लगेगी। वास्तव में मुझे तो ये कोष्ठक खटकते हैं और पाठक के लिये रुकावट पैदा करते हैं।

मेरे संशोधन का उद्देश्य केवल मसविदा ठीक करना है और सभा के विचारार्थ मैं उसे पेश करता हूं।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः** मैं इससे सहमत हूं कि इस प्रकार की सूची में कोष्ठक बहुत भद्दे दिखाई देते हैं और मैं इस संशोधन को स्वीकार करता हूं। परंतु यदि मि॰ नजीरुद्दीन इसे अनुचित न समझें तो मैं उन शब्दों के पहले और अंत में एक-एक अर्ध विराम रखना चाहूंगा। (*हंसी*)

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं इससे सहमत हूं।

***अध्यक्षः** इस मद में और कोई संशोधन पेश नहीं किया गया है और मि॰ नजीरुद्दीन अहमद का संशोधन श्री गोपालस्वामी आयंगर ने स्वीकार कर लिया है।

मैं इस संशोधन पर मतदान लेता हूं।

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** अब मैं इस मद पर, इसके संशोधित रूप में, मतदान लेता हूं।

मद संशोधित रूप में स्वीकार कर ली गई।

मद 34

***श्री के॰ सन्तानम्:** श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं कि मद 34 के अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

''तिजारती जहाजरानी के लिये शिक्षा-संबंधी तथा काम सिखाने की व्यवस्था और प्रदेशों व अन्य प्रतिष्ठानों की इस प्रकार की शिक्षा और काम सिखाने के कार्य का नियमन।''

तिजारती जहाजरानी के इंजीनियरों, चालकों और प्रबंधकर्ता अफसरों की आवश्यक योग्यता के केन्द्रीयकरण के संबंध में विस्तृत व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है। यह आवश्यक है कि सभी श्रेणियों की शिक्षा पर तथा शिक्षा-संबंधी-व्यवस्था पर केन्द्र का नियंत्रण होना चाहिये, परंतु यदि विश्वविद्यालय या कोई अन्य संस्थाएं इस प्रकार की शिक्षा का प्रबंध करें तो उसका निषेध करने की भी कोई आवश्यकता नहीं है। केवल इस प्रकार की शिक्षा और काम सिखाने का कार्य उसी कोटि का होना चाहिये जो कि केन्द्र द्वारा निश्चित किया जाये। जो संशोधन मैं पेश कर रहा हूं उसमें केन्द्र के प्रबंध तथा केन्द्र द्वारा विश्वविद्यालयों तथा रियासतों के प्रबंध के नियमन की व्यवस्था है।

(श्री जी॰एल॰ मेहता और प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, मैं श्री सन्तानम् के संशोधन को स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्ष:** श्री सन्तानम् का पेश किया हुआ संशोधन श्री गोपालस्वामी आयंगर ने स्वीकार कर लिया है। वह इस प्रकार है:

''मद 34 के अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

'तिजारती जहाजरानी के लिये शिक्षा-संबंधी तथा काम सिखाने की व्यवस्था और प्रदेशों व अन्य प्रतिष्ठानों की इस प्रकार की शिक्षा और काम सिखाने के कार्य का नियमन'।''

मैं अब इस संशोधन पर मतदान लेता हूं।

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि मद 34 उसके संशोधित रूप में स्वीकार कर ली जाये।

मद संशोधित रूप में स्वीकार कर ली गई।

मद 35

***अध्यक्षः** मद 35 में कोई संशोधन पेश नहीं किया गया है।

मैं उस पर मतदान लेता हूं।

मद स्वीकार कर ली गई।

मद 36

***श्री एच॰वी॰ पातस्करः** श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं कि मद 36 के अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जायेः

''वहां बंदरगाह के अधिकारियों की नियुक्ति तथा उनके अधिकार।''

***श्री आर॰के॰ सिधवा** (मध्य प्रांत और बरारः जनरल)ः श्रीमान्, जब तक सन् 1935 ई॰ का भारत-सरकार का कानून लागू नहीं हुआ था भारत के सभी बड़े-बड़े बंदरगाह प्रान्तीय सरकारों के नियंत्रण में थे, परंतु उसके पहले कई बंदरगाहों के धरोहरों का प्रबंध करने वाली समितियों के लिये अधिक विस्तृत निर्वाचन-प्रणाली की व्यवस्था की गई थी और इस प्रकार गैर सरकारी प्रतिनिधियों का पहले से कहीं अधिक बहुमत हो गया। परंतु भारत-सरकार ने, जो उस समय एक नौकरशाही सरकार थी और जिसका उन बंदरगाहों के धरोहरों पर नियंत्रण था, उन अधिकारों को प्रांतीय सरकारों के हाथ से छीन लिया। मैं तो यह चाहता हूं कि इन बड़े-बड़े बंदरगाहों पर नियंत्रण रखने का भार केन्द्रीय सरकार पर फिर से न डाला जाये। फिर भी यदि यह समझा जाये कि वर्तमान परिस्थिति में सभी बड़े-बड़े बंदरगाहों के लिये एक ही कानून हो तो मैं अपने इस संशोधन पर जोर नहीं देता कि इस मद को इस सूची से निकाल कर सूची नं॰ 2 में रख दिया जाये।

***श्री एन्पी॰ पट्टानी:** अध्यक्ष महोदय, इस संबंध में मुझे केवल यह राय देनी है कि इस मद के अंत में निम्नलिखित शर्तिया आदेश जोड़ दिया जाये:

''परंतु शर्त यह है कि संघ में सम्मिलित तटवर्ती रियासतों के बंदरगाहों के बारे में इस प्रकार की घोषणा और सीमाबन्दी संबंधित रियासत से सलाह लेकर की जायेगी।''

मैंने यह सुझाव केवल इसलिये रखा है कि पहले केन्द्रीय सरकार ने रियासतों से बिना सलाह लिये हुये स्वेच्छाचारिता से कार्य करने की मनोवृत्ति का परिचय दिया है। चूंकि हम संघ में सम्मिलित हो रहे हैं इसलिये हमारे बंदरगाहों की एकाएक सीमाबंदी करने के पहले हमसे राय ली जानी चाहिये और यही किसी छोटे या बड़े बंदरगाह के संबंध में घोषणा करने में भी किया जाना चाहिये। श्रीमान्, मैं इस संशोधन को पेश करता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं कि मद 36 की जगह निम्नलिखित रखा जाये:

''36—बड़े-बड़े बंदरगाह अर्थात् इन बंदरगाहों के संबंध में घोषणा या इनकी सीमाबंदी और बंदरगाहों के अधिकारियों की नियुक्ति और उनके अधिकार।''

श्रीमान्, इस संशोधन के शब्द भारत-सरकार के कानून की सूची 1 की मद 22 के शब्दों के ही बिल्कुल समान हैं। उसी मद से लेकर वर्तमान मद 36 रखी गई है। इसका आशय वही है। केवल मसविदे में कुछ अंतर है। इस संशोधन से इस विषय के संबंध में पूर्ण अधिकार मिल जाता है अर्थात् इस संबंध में कि किसी बंदरगाह को एक बड़ा बंदरगाह घोषित किया जाये। इस संशोधन में संघ को जो अधिकार प्राप्त होगा उस पर जोर दिया गया है, परंतु विचाराधीन मद में घोषणा और इस मद के अधीन जो कार्यवाही की जायेगी उस पर जोर दिया गया है। मेरे विचार से इस संशोधन से हमारे उद्देश्य की पूर्ति अधिक अच्छी प्रकार होगी। परंतु यह संशोधन केवल मसविदा ठीक करने के लिये है और यह मसविदा तैयार करने वाली कमेटी के विचारार्थ पेश किया जाता है।

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू** (उड़ीसा: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस मद से पूर्णतया सहमत हूं, परंतु साथ ही मैं यह चाहता हूं कि प्रत्येक तटवर्ती प्रान्त में

कम से कम एक नया बड़ा बंदरगाह स्थापित करने की कोई व्यवस्था होनी चाहिये। मेरा संशोधन इस प्रकार है:

मद 36 के अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

''और प्रत्येक तटवर्ती प्रान्त में कम से कम एक नये बड़े बंदरगाह की स्थापना।''

अपने प्रान्त के लिये चिंतित होकर ही मैंने इस संशोधन को पेश किया है। जिस रूप में इस समय उड़ीसा का प्रान्त है उसकी दशा बड़ी दयनीय है। कभी वह एक बड़ा सम्पन्न प्रांत था और उसकी वर्तमान दरिद्रता का कारण यही है कि उसका कोई बड़ा बंदरगाह नहीं है। इसीलिये मैं यह चाहता हूं कि इस प्रकार का एक खंड रखा जाये ताकि हम तटवर्ती प्रांतों के लोगों के पास कम से कम एक बड़ा बंदरगाह हो जाये। इसके विपरीत श्री सिधवा यह चाहते हैं कि यह विषय संघीय सूची में नहीं होना चाहिये। परंतु मैं इसका विरोध करता हूं और यह राय प्रकट करता हूं कि जब तक इस विषय को केन्द्र के अधीन न रखा जाये तब तक प्रान्तों के लिये यह संभव नहीं है कि वे एक नये बंदरगाह की स्थापना करें। मेरे मित्र मि० नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन से मेरे संशोधन का अंशत: समर्थन होता है और इसलिये मुझे आशा है कि मेरा संशोधन भी स्वीकार कर लिया जायेगा। उड़ीसा का प्रान्त जो कभी एक सम्पन्न प्रदेश था, इतना दरिद्र हो गया है कि यह सारे संघ के लिये एक लज्जा की बात है और जब तक वह उन्नत होकर सभी प्रान्तों के समान न हो जायेगा, संघ को बराबर लज्जित होना पड़ेगा। जब आप एक नई व्यवस्था स्थापित करने जा रहे हैं तो सभी प्रान्तों को समान रूप देना होगा। इसीलिये मैं इसकी आवश्यकता अनुभव कर रहा हूं कि हमारे यहां एक बड़ा बंदरगाह होना चाहिये, ताकि व्यापार और व्यवसाय की उन्नति हो सके। हमारे पास अपने प्रांत को सम्पन्न बनाने के लिये कोई साधन होना चाहिये। एक बार उड़ीसा में नहर निकालने की नीति अपनाई थी परंतु वह असफल रही और उसके कारण उड़ीसा निवासियों को असुविधा ही नहीं हुई बल्कि उन्हें बहुत खर्च भी उठाना पड़ा। रेलें चलाई गयीं और वह योजना भी बहुत कुछ असफल ही रही, क्योंकि उड़ीसा के पास बहुत साधन नहीं हैं और तीन साल में एक बार हमारे यहां बाढ़ आ जाती है जिससे कि बहुत नुकसान उठाना पड़ता है। तटवर्ती प्रान्तों की सम्पन्नता उनके बंदरगाहों पर ही निर्भर है। प्राचीन काल में उड़ीसा अपने बंदरगाहों के कारण सम्पन्न था। लगभग प्रत्येक जिले में हमारा एक बंदरगाह था।

[श्री लक्ष्मीनारायण साहू]

बलासोर में पिपली और चांदबली के बंदरगाह थे और पुरी में वेलीटोला का प्रख्यात बंदरगाह था। आज ये सब बंदरगाह बेकार हैं। इसीलिये मैं यह चाहता हूं कि हमारा नवीन संघ हमारी इस प्रकार सहायता करे कि हम उड़ीसा के प्रान्त में कम से कम एक बड़ा बंदरगाह स्थापित कर सकें। आंध्र प्रान्त को लीजिये, क्योंकि वह एक नया प्रांत होने जा रहा है, उसके पास विजगापट्टम का बंदरगाह होगा। परंतु हमारे प्रान्त में जिसकी स्थापना सन् 1936 ई० में हुई और जो एक तटवर्ती प्रांत है, एक भी बंदरगाह नहीं है। इसलिये मैं यह चाहता हूं कि इस संशोधन को मद 36 में स्थान दिया जाये। इसकी भाषा के संबंध में मैंने यह अनुभव किया, परंतु मुझे आशा है कि उसे मसविदा तैयार करने वाले ठीक कर लेंगे।

***श्री गगनबिहारी लालूभाई मेहता** (पश्चिमी भारतीय रियासती ग्रुप): अध्यक्ष महोदय, कुछ बातों को स्पष्ट करने के लिये ही मैं इस वाद-विवाद में हस्तक्षेप कर रहा हूं। जहां तक इस देश के बंदरगाहों का संबंध है, उनका यातायात से, जो कि एक केन्द्रीय विषय है, घनिष्ठ संबंध है और इसलिये वे केन्द्र के नियंत्रण में होने चाहियें और साथ ही उनकी स्थिति अत्यंत महत्त्वपूर्ण भी है। पिछले वर्ष भारत-सरकार ने एक बंदरगाहों की उन्नति की कमेटी नियुक्त की और उसने एक बहुमूल्य रिपोर्ट तैयार की। यदि इस सभा के माननीय सदस्य उस रिपोर्ट को पढ़ें तो वे देखेंगे कि कमेटी ने रक्षा तथा व्यवसाय के लिये भारत के तटवर्ती प्रदेशों में बंदरगाहों के महत्त्व को समझा है और उस पर जोर दिया है। बंदरगाहों के अतिरिक्त अन्य स्थानों की रेलगाड़ियों से भी बंदरगाहों का संबंध रहता है और रेलगाड़ियां केन्द्रीय विषयों के अंतर्गत आती हैं। इसीलिये मैंने यह राय दी है कि बंदरगाहों पर केन्द्र का नियंत्रण होना चाहिये। श्री पातस्कर ने इस संशोधन की सूचना दी है कि बंदरगाहों के अधिकारियों की नियुक्ति और उनके अधिकार केन्द्रीय सूची में सम्मिलित किये जाने चाहियें। मेरे विचार से यह संशोधन तर्कपूर्ण है क्योंकि जब बंदरगाहों की सीमाबंदी का विषय उसमें सम्मिलित है तो बंदरगाहों के अधिकारियों की नियुक्ति और उनके अधिकारों का विषय भी उसमें सम्मिलित किये जाने चाहियें। श्री पट्टानी ने इन शब्दों में एक संशोधन पेश किया है, ''परंतु शर्त यह है कि संघ में सम्मिलित तटवर्ती रियासतों के बंदरगाहों के बारे में इस प्रकार की घोषणा और सीमाबंदी संबंधित रियासत से सलाह लेकर की जायेगी''। श्रीमान्, मेरा विश्वास है कि यह तो किया ही जायेगा और मेरी समझ में नहीं आता कि इन शब्दों को संघीय व्यवस्था संबंधी सूची में स्थान दिया जाये या नहीं;

श्री गोपालस्वामी आयंगर ने निस्संदेह इस संबंध में प्रकाश डाल सकेंगे। मेरे विचार से यह तर्कपूर्ण ही होगा कि इस मद को संघीय व्यवस्था संबंधी सूची में सम्मिलित किया जाये। यदि हम सन् 1932 ई॰ के पहले गलती करते रहे हैं तो कोई कारण नहीं कि अब भी वही गलती की जाये।

जहां तक इस सुझाव का संबंध है कि प्रत्येक प्रांत में एक बड़ा बंदरगाह होना चाहिये, उसके बारे में विस्तृत रूप से कला संबंधी जांच होने की आवश्यकता है। इसका संबंध उस प्रांत के तथा सारे देश के आर्थिक साधनों से भी है। यह ऐसा विषय है जिसके बारे में बाद को कानून बन सकता है और यह आवश्यक नहीं है कि इसे विधान में या संघीय व्यवस्था संबंधी सूची में स्थान दिया जाये। यदि आप बंदरगाहों की आपस की प्रतिस्पर्धा को रोकना चाहते हैं तो इसके लिये एकीकरण और केन्द्रीय नियंत्रण की आवश्यकता है। इसलिये श्री गोपालस्वामी आयंगर ने जिन शब्दों में इस मद को रखा है, उसी प्रकार इसे संघीय सूची में स्थान देने के प्रस्ताव का मैं समर्थन करता हूं।

***श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगर:** अध्यक्ष महोदय, मैं श्री लक्ष्मीनारायण साहू की इस राय से सहमत हूं कि बंदरगाहों को स्थापित करने तथा उनकी उन्नति करने के संबंध में केन्द्र को अधिकार दिया जाना चाहिये। जहां तक बंदरगाहों की आपस की प्रतिस्पर्धा का प्रश्न है, यह एक केन्द्रीय विषय है और संघीय व्यवस्थापिका इसे रोकने के लिये कानून बना सकती है। जैसा कि श्री साहू ने कहा है कि जहां तक उड़ीसा का संबंध है रेलों इत्यादि में सुधार करने के लिये जो प्रयत्न किये गये वे असफल रहे और यदि वह प्रांत अन्य कोई साधन प्राप्त कर सकता है तो वह एक बड़ा बंदरगाह है, विशेषतया जब कि वहां कोई ऐसा बंदरगाह नहीं है। सन् 1935 ई॰ के कानून में और जो सूची इस समय विचाराधीन है इसमें भी उन्नति की व्यवस्था है। यदि पहले से कोई बड़ा बंदरगाह वर्तमान है तो उसे सुधारने की स्वतंत्रता है और यदि कोई बंदरगाह है तो संघीय व्यवस्थापिका सभा को इसकी स्वतंत्रता है कि वह इसे एक बड़ा बंदरगाह घोषित कर दे; परंतु संघीय सरकार को नये सिरे से एक बड़ा बंदरगाह स्थापित करने का अधिकार नहीं है। मेरे विचार से उन स्थानों में बड़े बंदरगाहों का निर्माण करने के लिये व्यवस्था होनी चाहिये जहां कि वे वर्तमान नहीं हैं। इसमें उन्नति का उल्लेख नहीं है। घोषणा और सीमाबंदी ये ही शब्द प्रयुक्त हुए हैं। इसका अर्थ है केवल बड़े बंदरगाहों के संबंध में घोषणा और उनकी सीमाबंदी। निस्संदेह इससे केन्द्र को इसका अधिकार मिल जाता है कि किसी प्रांत द्वारा उन्नत किये हुए किसी बंदरगाह को

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

वह एक बड़ा बंदरगाह घोषित करे। केन्द्र को बंदरगाहों की उन्नति के लिये प्रांतों को आर्थिक सहायता देनी चाहिये। इसलिये मैं श्री गोपालस्वामी आयंगर से यह अनुरोध करता हूं कि वे ''घोषणा और सीमाबंदी'' शब्दों के साथ ''स्थापना और उन्नति'' शब्दों को भी स्वीकार कर लें।

*__श्री टी॰टी॰ कृष्णामाचारी__ (मद्रास: जनरल): मैं इस संबंध में केवल एक बात कहना चाहता हूं और वह यह है, मेरे मित्र श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने कहा है कि प्रांत बंदरगाहों को उन्नत बनाते हैं और फिर केन्द्र उनको अपने हाथ में ले लेता है। मेरे प्रांत में तो ऐसा कभी नहीं हुआ। मेरे प्रांत में छोटे बंदरगाहों के लिये एक विशेष धनराशि अलग रखी गई है। वह 60 लाख की हो गई थी और उसमें से प्रांतीय सरकार ने 40 लाख की रकम लेकर आम आय की मद में रख दी। इसलिये हमेशा ऐसा नहीं होता कि बंदरगाहों के संबंध में प्रांत ही ठीक काम करते हैं और केन्द्र गलत कार्यवाही करता है।

*__माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:__ मैं श्री पातस्कर का इस आशय का संशोधन स्वीकार करता हूं कि मद 36 के अंत में ''वहां बंदरगाह के अधिकारियों की नियुक्ति तथा उनके अधिकार'' शब्द जोड़ दिये जायें। इन शब्दों को जोड़ना ही चाहिये था और यही मि॰ नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन का भी उद्देश्य है। मि॰ नजीरुद्दीन अहमद ने वास्तव में भारत-सरकार के कानून की सूची में यह मद जिन शब्दों में है उन्हीं शब्दों को नकल कर लिया है। हमने उस मद को, कम से कम जहां तक इसके पहले भाग का संबंध है, अधिक विस्तृत कर दिया है। 'बड़े बंदरगाह' शब्दों के स्थान में हमने ये शब्द रखे हैं-''बंदरगाह जो संघीय कानून या वर्तमान भारतीय कानून द्वारा या उसके अधीन बड़े बंदरगाह घोषित किये गये हों और इसमें उनकी सीमाबंदी भी सम्मिलित है।'' मैं समझता हूं कि भारत-सरकार के कानून में यह मद जिस प्रकार है उसके समर्थन में कोई विशेष तर्कपूर्ण बात नहीं की जा सकती।

इस वाद-विवाद के सिलसिले में जो दूसरी बात कही गई है वह यह है कि कुछ प्रांतों में बड़े बंदरगाह नहीं हैं या छोटे बंदरगाहों को इतना उन्नत नहीं किया गया है कि वे बड़े बंदरगाह घोषित किये जा सकें। अब श्रीमान्, जहां तक इनका संबंध है इस बारे में पहले से ही कानून है और भविष्य में हम कानून बना सकते हैं। अपनी संघीय व्यवस्थापिका में हमें उन शर्तों को निश्चित करना होगा जिन्हें कि इसके पूर्व कि संघीय सरकार किसी बंदरगाह को कानून के अनुसार

एक बड़ा बंदरगाह घोषित करे, पूरा करना होगा। मेरे विचार से विधान में यह आदेश रखना कि प्रत्येक तटवर्ती प्रांत में कम से कम एक बड़ा बंदरगाह होना चाहिये, एक गलत कार्यवाही होगी। यह हो सकता है कि किसी प्रांत का तट ऐसा न हो कि वहां एक बड़े बंदरगाह का निर्माण किया जाये और उसे तरक्की दी जाये। जो तट इसके योग्य न हो वहां रुपया खर्च करना निरर्थक ही होगा। मुझे इसका विश्वास है कि नई व्यवस्था में यदि किसी प्रांत में एक बड़े बंदरगाह के निर्माण के लिये अनुकूल दशाएं और आवश्यक सुविधाएं होंगी तो अपने यहां उसे एक बड़ा बंदरगाह स्थापित करने का अवसर अवश्य ही प्रदान किया जायेगा। श्रीमान्, इतना काफी है कि जहां कहीं इस प्रकार के बंदरगाहों की आवश्यकता हो और जहां कहीं उनको स्थापित किया जा सके तथा उनको तरक्की दी जा सके वहां उनका निर्माण करने और उनको तरक्की देने का अधिकार हम अपने हाथ में ले लें।

एक बात मैं श्री पट्टानी के संशोधन के बारे में कहना चाहता हूं। वह यह व्यवस्था करता है कि संघ में सम्मिलित किसी तटवर्ती रियासत के किसी क्षेत्र को एक बड़ा बंदरगाह घोषित करने के पहले उससे इस संबंध में सलाह ली जायेगी। जैसा कि मैंने अन्य मदों के संबंध में कहा है कि इस प्रकार सलाह लेना भविष्य में एक साधारण कार्य हो जायेगा। मैं श्री पट्टानी की यह बात समझता हूं कि भूतकाल में कुछ भारतीय रियासतों के बारे में ऐसी बातें की गई जिनसे उनकी कई इच्छाएं पूरी नहीं हुईं जो कि वास्तव में पूरी हो जानी चाहिये थीं। मैं इसे भली-भांति समझता हूं। पहले भारतीय रियासतों का केन्द्र से कोई वैधानिक संबंध नहीं था। बड़े बंदरगाहों के संबंध में भारत सरकार निर्णय करती थी। उन रियासतों का भारत-सरकार से कोई प्रत्यक्ष सम्पर्क नहीं था और उन्हें सम्राट के प्रतिनिधि के विभाग के मार्फत बातचीत करनी पड़ती थी। यह इन प्रश्नों को हल करने का कोई अच्छा तरीका नहीं था क्योंकि उससे न तो केन्द्र को संतोष होता था और न संबंधित रियासत को। भविष्य में जो रियासतें संघ में सम्मिलित हो गई हैं वे संघ की अंग हो जायेंगी और किसी क्षेत्र को एक बड़ा बंदरगाह घोषित करने के पहले जैसे प्रांतों से सलाह ली जायेगी वैसे भारतीय रियासतों से भी सलाह ली जायेगी। यह बात भी सच है कि इन भारतीय रियासतों के केन्द्र में प्रतिनिधि होंगे और मुझे विश्वास है कि व्यवस्थापिका में भी उनके प्रतिनिधि होंगे और मुझे इसका भी विश्वास है कि शासन-प्रबंध का कार्य करने के लिये भी कुछ ऐसे लोग होंगे जिनका रियासतों से संबंध होगा या जिनको उनका अनुभव होगा। इसलिये श्रीमान् चाहे पहले जो कुछ हुआ हो, श्री पट्टानी को इसका विश्वास

[माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर]

होना चाहिये कि यह आवश्यक नहीं है कि भविष्य में भी वही हो। यदि कभी ऐसा हो तो उनके पास संघीय सरकार का ध्यान आकर्षित करने के लिये साधन होंगे और वे उसे रोकने के लिये आवश्यक कार्यवाही कर सकते हैं।

***श्री ए॰पी॰ पट्टानी:** क्या मैं एक शब्द कह सकता हूं? बहुधा विभिन्न तटवर्ती रियासतों के हित एक समान नहीं होते। वर्तमान व्यवस्था के अधीन यह संभव नहीं है। तटवर्ती रियासतों के अपने-अपने हित हैं और उन्हें सरकार के सम्मुख अपना मामला रखने का अवसर मिलना चाहिये। यह संभव नहीं होगा कि सभी का प्रतिनिधित्व एक ही व्यक्ति या एक ही प्रतिनिधि करे।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** इसका मैं यह उत्तर देना चाहता हूं कि मेरे विचार से भविष्य में प्रत्येक ऐसी तटवर्ती रियासत का, जिसका कुछ भी महत्त्व होगा, संघीय व्यवस्थापिका में अपना प्रतिनिधित्व होगा। उन रियासतों के संबंध में जिनका इस प्रकार का प्रतिनिधित्व नहीं है, उनका प्रतिनिधित्व निश्चित रूप से इस प्रकार हो जाता है कि अन्य रियासतों के साथ उनको संघीय व्यवस्थापिका में अपना प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है, इसलिये संघ में सम्मिलित होने वाली किसी रियासत का संघीय व्यवस्थापिका में प्रतिनिधित्व न होने का सवाल ही नहीं उठता।

मुझे खेद है कि श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने जो कुछ कहा उसका जिक्र नहीं कर सका। मेरे विचार से इस कानून की शब्दावली जिस प्रकार रखी गई है उसमें उन्होंने जो बातें कही हैं वे सब आ जाती हैं। निस्संदेह संघ को इसकी स्वतंत्रता है कि वह बंदरगाहों को बड़े बंदरगाह घोषित करे। इसका केवल यही अर्थ लगाया जा सकता है कि आपको केवल एक छोटे बंदरगाह को एक बड़ा बंदरगाह घोषित करने का अधिकार दिया गया है। आप देश के किसी क्षेत्र को भी एक बड़ा बंदरगाह घोषित कर सकते हैं और उसकी उन्नति इत्यादि के लिये आवश्यक साधनों की व्यवस्था कर सकते हैं। मेरे विचार से इसकी शब्दावली इतनी विस्तृत है कि इसमें उनकी बात आ जाती है।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर मतदान लूंगा। मि॰ नजीरुद्दीन ने एक संशोधन पेश किया है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं श्री गोपालस्वामी आयंगर द्वारा स्वीकृत श्री पातस्कर के संशोधन पर मतदान लेता हूं।

''मद 36 के अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

'वहां बंदरगाह के अधिकारियों की नियुक्ति तथा उनके अधिकार'।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** दूसरा संशोधन श्री पट्टानी का है।

''मद 36 के अंत में निम्नलिखित शर्त या आदेश जोड़ दिया जाये:

''परंतु शर्त यह है कि संघ में सम्मिलित तटवर्ती रियासतों के बंदरगाहों के बारे में इस प्रकार की घोषणा और सीमाबंदी संबंधित रियासत से सलाह लेकर की जायेगी'।''

***श्री ए॰पी॰ पट्टानी:** मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब श्री लक्ष्मीनारायण साहू का संशोधन आता है। वह इस प्रकार है:

''मद 36 के अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

'और प्रत्येक तटवर्ती प्रांत में कम से कम एक नए बड़े बंदरगाह की स्थापना'।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** अब मूल मद पर जैसी कि वह श्री पातस्कर के संशोधन से संशोधित हुई है, मतदान लिया जाता है।

मद 36 संशोधित रूप में स्वीकार कर ली गई।

मद 37

***अध्यक्ष:** अब हम मद 37 को उठाते हैं।

(श्री के॰ संतानम् ने अपना संशोधन पेश नहीं किया।)

***श्री जी॰एल॰ मेहता** (पश्चिमी भारत की रियासतों का समूह): अध्यक्ष महोदय, मेरा यह प्रस्ताव है कि मद 37 के अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

> ''वायुयान-कला की शिक्षा तथा उसका काम सिखाने की व्यवस्था और प्रदेशों तथा अन्य संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली इस प्रकार की शिक्षा तथा इस प्रकार के काम सिखाने का नियमन।''

इस संशोधन को स्वीकार करने के लिये सिफारिश करके मैं सभा का समय नष्ट नहीं करना चाहता। व्यापारिक जहाजी बेड़े को नौकरियों के लिये शिक्षा व काम सिखाने के बारे में श्री सन्तानम् ने जो कारण बताये थे उनकी बिना पर हमें वायुयान-कला की शिक्षा और उसके काम सिखाने पर केन्द्रीय नियंत्रण तथा एकीकरण की आवश्यकता है। मैं केवल एक बात कहना चाहता हूं और वह यह है कि व्यापारिक जहाजी बेड़े और वायुयान बेड़े की नौकरियों के संबंध में हमें अपने साधनों का एकीकरण करना है और आरंभ में इसकी आशा नहीं की जा सकती कि प्रत्येक प्रदेश और प्रत्येक रियासत इस प्रकार की संस्थाएं स्थापित कर लेगी। हमारे यहां कला विज्ञ लोगों की कमी है और इसके अतिरिक्त आवश्यक वायुयान, सामान इत्यादि प्राप्त करने में भी हमें कठिनाई होती है। इसलिये आरंभ में इसकी आवश्यकता होगी कि कोई केन्द्रीय संस्था हो। परंतु यदि प्रदेश इस प्रकार की संस्थाएं खोलना चाहें तो उन्हें रोकने की कोई आवश्यकता न होगी। केवल शर्त यह होनी चाहिये कि एक ही कोटि की शिक्षा दी जाये और एक सी कोटि का काम सिखाया जाये, तथा एक ही कोटि की योग्यता निर्धारित की जाये। श्रीमान् मैं इस संशोधन को पेश करता हूं।

(श्री जी॰एल॰ मेहता ने अपना दूसरा संशोधन पेश नहीं किया।)

(प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना ने अपना संशोधन-सूची 8 की मद 5 पेश नहीं किया।)

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मैं यह पेश करना चाहता हूं कि मद 37 में कोलन की जगह सेमीकोलन रख दिया जाये और कौमा की जगह सेमीकोलन रख दिया जाये (*हंसी*)। श्रीमान् मैं देखता हूं कि मेरे इस संशोधन से सभा का कुछ मनोरंजन हो गया है परंतु उसका एक गंभीर अंग भी है। वास्तव में मद 37 में तीन भिन्न-भिन्न विषयों का उल्लेख है। पहला वायुयान और वायुयान-संचालन का है। दूसरा हवाई अड्डों का विषय है और तीसरा वायुयान-यात्रा

के संबंध में नियमन और संगठन का विषय है। मेरी राय में इन तीन स्पष्टतया भिन्न विषयों को सेमीकोलन लगाकर अलग-अलग कर देना चाहिये। इस प्रकार की मदों का मसविदा तैयार करने में हम पहले भी ऐसा ही करते आये हैं। वास्तव में इन तीन भिन्न उपमदों के आगे एक ही प्रकार के विराम लगाकर अलग कर देना चाहिये। यहां पहली उपमद और दूसरी उपमद के बीच में एक कोलन है। पाठक को एकाएक रुक जाना पड़ता है। यह बहुत-कुछ पूर्ण विराम का काम करता है। दूसरी और तीसरी उपमद के बीच में एक कौमा है। पाठक को जल्दी से एक विषय के बाद दूसरा विषय पढ़ना पड़ता है। मैंने इस मद को भारत-सरकार के कानून की सूची 1 की मद 24 से, जिसके यह अनुरूप है, बड़ी सावधानी से मिलाया है। वहां विराम उसी प्रकार हैं जैसे कि मैंने सुझाये हैं। मेरे विचार से यहां जान-बूझकर भिन्न प्रकार के विराम नहीं रखे गये हैं; परंतु भारत-सरकार के कानून और इस मद में यह थोड़ा-सा अंतर शायद दफ्तर की गलती से आ गया है। यह संशोधन केवल मसविदा ठीक करने के लिये रखा गया है और मैं इसे श्री गोपालस्वामी आयंगर के विचारार्थ पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** श्री संतानम् आपके नाम से एक दूसरा संशोधन भी है।

***श्री के॰ संतानम्ः** श्रीमान्, मैं उसे पेश नहीं करना चाहता।

***अध्यक्षः** हमारे सामने अब दो संशोधन हैं। क्या कोई सज्जन उनके बारे में बोलना चाहते हैं?

***श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगरः** श्रीमान्, जहां तक काम सिखाने के बारे में श्री मेहता के संशोधन का संबंध है मुझे उससे कुछ आपत्ति नहीं है। जो अधिकार दिये गये हैं उनकी वह केवल विस्तृत व्याख्या करता है। आप जानते हैं कि आप इसी पर जोर दे रहे हैं कि वायुयान-चालक या चालक विशेष योग्यता रखें और स्वेच्छा से आयें। इसलिये वायुयान-कला और समुद्री-कला की शिक्षा के स्कूलों को खोलने की भी आवश्यकता नहीं है। केवल कानून में ही इसे स्थान देकर यह समस्या हल हो सकती है कि नाविकों, जहाज चलाने वालों या वायुयान-चालकों के लिये अमुक योग्यता आवश्यक है। इसलिये इस संशोधन की आवश्यकता नहीं है परंतु इसे सम्मिलित करने से भी कोई हानि नहीं होती। मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

इस अवसर पर एक मौलिक बात की ओर मैं सभा का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। जहां तक थल-मार्गों का संबंध है ये दो प्रकार के हैं, अर्थात् राष्ट्रीय थलमार्ग और प्रांतीय थलमार्ग। जहां तक रेलों का संबंध है, रियासती रेलें, अखिल भारतीय रेलें और छोटी रेलें हैं। इसी प्रकार जलमार्गों के संबंध में भूमि के जल-मार्ग हैं और ऐसे जल-मार्ग हैं जो संघीय जल-मार्ग घोषित किये गये हैं। आकाश मार्गों के संबंध में मुझे यह कहना है कि इन्हें केन्द्र के लिये सुरक्षित कर देना चाहिये। इन मार्गों की शाखाओं को प्रांतों के लिये छोड़ा जा सकता है और वे उन्हें तरक्की दे सकते हैं, क्योंकि इन मार्गों में यात्रा को वे केन्द्र से अधिक सुविधाजनक बना सकते हैं। मैं किसी संशोधन का विरोध नहीं कर रहा हूं और नियमित रूप से कोई संशोधन भी पेश नहीं कर रहा हूं परंतु मैं चाहता हूं कि इस अवसर पर यह सभा इसकी ओर ध्यान दे कि जब कभी संघीय व्यवस्थापिका इस संबंध में कोई कानून बनाये तो उसे थलयात्रा के बोर्डों के समान आकाश-यात्रा के प्रांतीय बोर्डों की भी व्यवस्था करनी चाहिये, ताकि प्रांतों में आकाश-यात्रा का नियमन तथा विस्तार हो सके और नये मार्ग खोले जा सकें, जो मुख्य मार्गों के सहायक हों या एक प्रांत और दूसरे प्रांत के बीच में आकाश-मार्ग स्थापित किये जा सकें।

एक खतरा भी है। यद्यपि मैं केन्द्रीभूत पूंजी के सभी तरफ फैलाये जाने के विरोध में नहीं हूं और वास्तव में मैं उसका स्वागत करता हूं, परंतु मैं देखता हूं कि इससे देश का धन कुछ ही लोगों के हाथ में आ जायेगा। केन्द्र यह कर सकता है कि वह उन्हीं लोगों को हवाई जहाज का बेड़ा सौंप दे और वे गांवों में भी जा सकते हैं। इससे उन थोड़े-से लोगों का नुकसान हो सकता है जो प्रांतों में कुछ रुपया कमाने के लिये हवाई जहाजों की कंपनियां चलाना चाहें। परंतु इससे प्रांतों की सम्पन्नता बढ़ेगी। प्रतिस्पर्धा न होने देने के लिये भी एक आकाश-यात्रा का बोर्ड होना चाहिये जो एक प्रांतीय बोर्ड होना चाहिये और प्रांतों में ही वह स्थित होना चाहिये।

जब कभी हम सभी लोगों के हितों के संरक्षण के लिये संघीय कानून बनायें तो हमें इन कठिनाइयों की ओर ध्यान देना चाहिये। इसको दृष्टि में रखते हुये और यह भी विचार करते हुये कि इसे सभा स्वीकार करेगी, मैं कोई संशोधन पेश नहीं कर रहा हूं। जिस प्रकार यह मद रखी गई है मैं इसका समर्थन करता हूं।

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगर:** श्रीमान्, श्री मेहता ने यह प्रस्ताव किया है कि मद 37 के अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

''वायुयान-कला की शिक्षा तथा उसका काम सिखाने की व्यवस्था और प्रदेशों तथा अन्य संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली इस प्रकार की शिक्षा तथा इस प्रकार के काम सिखाने के नियमन।''

और मैं उसे स्वीकार करता हूं।

दूसरा संशोधन इस मद के विरामों के संबंध में है। मैं मि॰ नजीरुद्दीन अहमद की इस राय से सहमत हूं कि ''वायुयान-संचालन'' शब्द के बाद सेमी-कोलन रखा जाना चाहिये था और गलती से कोलन रख दिया गया है और मैं उनके संशोधन को स्वीकार करता हूं। मैं उनकी इस राय से भी सहमत हूं कि ''हवाई अड्डों की व्यवस्था'' शब्दों के बाद कौमा की जगह सेमीकोलन होना चाहिये।

इस संशोधन को पेश करने में उन्होंने जिस विचारधारा का अनुसरण किया है उसको ध्यान में रखते हुये मेरी राय से, यदि वे सहमत हों, तो ''व्यवस्था'' के पहले जो ''वह'' शब्द है उसे निकाल दिया जाना चाहिये। परंतु यदि वे इससे सहमत न हों तो हम नियमन के आगे ''वह'' शब्द रख सकते हैं। मेरी तो अपनी यह राय है कि ''व्यवस्था'' के पहले जो ''वह'' शब्द है उसे निकाल दिया जाये। इससे मद निम्न प्रकार हो जायेगी:

''वायुयान और वायुयान-संचालन; हवाई अड्डों की व्यवस्था; आकाशयात्रा और हवाई अड्डों का नियमन और संगठन; वायुयान-कला की शिक्षा तथा उसका काम सिखाने की व्यवस्था और प्रदेशों तथा अन्य संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली इस प्रकार की शिक्षा तथा इस प्रकार के काम सिखाने का नियमन।''

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर मतदान लेता हूं। पहला संशोधन श्री मेहता का है। मैं समझता हूं कि उसे श्री गोपालस्वामी आयंगर ने स्वीकार कर लिया है। मैं अब उस संशोधन पर मतदान लेता हूं:

''मद 37 के बाद निम्नलिखित नई मद जोड़ दी जाये:

'वायुयान-संचालन की विभिन्न शाखाओं अर्थात् नागरिक और सैनिक शाखाओं का काम सिखाना'।''

[अध्यक्ष]

जो सज्जन इसे जोड़ने के पक्ष में हैं वे 'हां' कहेंगे।

*__कई माननीय सदस्यः__ जी, हां।

*__माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः__ उन्होंने इस संशोधन को वापस ले लिया है।

*__अध्यक्षः__ मुझे खेद है कि गलती हो गई है। मुझे इसका खेद है कि मतदान वापस लेना होगा। गलती से मैंने इस पर मतदान ले लिया।

अब मैं इस संशोधन पर वोट लेता हूं कि मद 37 के अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जायेः

''वायुयान-कला की शिक्षा तथा उसका काम सिखाने की व्यवस्था और प्रदेशों तथा अन्य संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली इस प्रकार की शिक्षा तथा इस प्रकार के काम सिखाने का नियमन।''

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

*__श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगरः__ श्रीमान्, आप सभा की भावना समझकर यह घोषणा कर रहे हैं, क्योंकि हम 'हां' का उच्चारण नहीं सुन पा रहे हैं। कम से कम किसी संशोधन के प्रस्तावक को तो 'हां' कहना चाहिये। वरना हम उसे स्वीकार क्यों करें? यह सभा का ही कर्तव्य नहीं है कि वह 'हां' कहे बल्कि प्रस्तावक का भी यह कर्तव्य है।

*__अध्यक्षः__ मैं समझता हूं कि प्रस्तावक महोदय ने 'हां' कहा है।

अब सेमीकोलनों के साथ संशोधित मद पर मतदान लिया जाता है।

*__एक माननीय सदस्यः__ क्या सभा यह जान सकती है कि अब वह किस प्रकार हो गई है?

*__अध्यक्षः__ ''वायुयान और वायुयान-संचालन; हवाई अड्डों की व्यवस्था; आकाश-यात्रा और हवाई अड्डों का नियमन और संगठन; वायुयान-कला की शिक्षा तथा उसका काम सिखाने की व्यवस्था और प्रदेशों तथा अन्य

संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली इस प्रकार की शिक्षा इस प्रकार के काम सिखाने का नियमन।''

संशोधित मद स्वीकार कर ली गई।

***अध्यक्षः** अब एक बज गया है। अब सभा कल दस बजे तक के लिये स्थगित रहेगी।

इसके उपरांत परिषद् बुधवार, 27 अगस्त सन् 1947 ई० के दिन के दस बजे सुबह तक के लिये स्थगित रही।

Con. 3. 5.8.47
750

अंक 5
संख्या 8

बुधवार
27 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्
के
वाद-विवाद
की
सरकारी रिपोर्ट
(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर रिपोर्ट	1
2.	परिशिष्ट 'क'	101
3.	परिशिष्ट 'ख'	105

भारतीय विधान-परिषद्

बुधवार, 27 अगस्त, सन् 1947 ई०

माननीय डा० राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में दिन के दस बजे भारतीय विधान-परिषद् की बैठक प्रारम्भ हुई।

अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर रिपोर्ट

***अध्यक्ष:** मेरा विचार है कि परिषद् को इस समय अल्पसंख्यकों के लिये निश्चित की गई परामर्श समिति की रिपोर्ट पर विचार करना चाहिये।

मैं समझता हूं कि इस विषय में जिस विधि का अनुसरण हमें करना है वह इस प्रकार होनी चाहिये:

इस रिपोर्ट पर विचार करने के लिये एक प्रस्ताव किया जाए। परंतु इस संबंध में मुझे ज्ञात हुआ है कि संशोधन के रूप में कई एक प्रस्ताव (परिषद् के सामने) हैं। ये सब संशोधन इस आशय के हैं कि रिपोर्ट पर विचार को आगामी अधिवेशन तक स्थगित कर दिया जाये, अथवा उस समय तक इस रिपोर्ट पर विचार न हो जब तक कि पहली रिपोर्ट जो कि परिषद् के विचाराधीन थी, समाप्त न कर ली जाए। मैं उन संशोधनों को इस रिपोर्ट पर विचार करने के प्रस्ताव पर होने वाले साधारण वाद-विवाद के साथ ही लूंगा। जब उस पर विचार समाप्त हो जाए तो मेरी इच्छा है कि फिर इस परिशिष्ट को हाथ लगाया जाये और प्रत्येक मद पर बारी-बारी से एक-एक मद संबंधी संशोधनों को दृष्टि में रख कर विचार किया जाये। इस प्रकार बहुत से संशोधन, जो कि रिपोर्ट के साधारण कलेवर से संबंधित हैं, स्वमेव समाप्त हो जायेंगे, क्योंकि यह रिपोर्ट आखिरकार परिशिष्ट में दी गई सिफारिशों का संग्रह मात्र ही तो है। मेरी समझ में इस विषय को निपटाने के लिये यही उचित मार्ग और सरलतम उपाय है।

***श्री एच०वी० कामत** (मध्य प्रांत तथा बरार: जनरल): 'ध्वनि यंत्र' बिगड़ गया प्रतीत होता है, क्योंकि हमें तो यहां एक शब्द भी सुनाई नहीं दिया।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***अध्यक्षः** यदि ऐसा है तो मुझे सब कुछ पुनः दोहराना होगा। मेरे पूर्व कथन का सार है कि आज के कार्यक्रम को निपटाने के लिये सरलतम मार्ग यह है: मेरा विचार है कि (सबसे पहले) अल्पसंख्यकों के लिये निश्चित की गई परामर्श समिति की रिपोर्ट पर विचार किया जाये। इसे विचाराधीन लाने के लिये नियमपूर्वक एक प्रस्ताव पेश किया जायेगा। इस संबंध में और भी कई-एक प्रस्तावों का नोटिस मुझे मिल चुका है। इन प्रस्तावों का आशय है कि इस रिपोर्ट पर विचार को आगामी अधिवेशन तक स्थगित कर दिया जाये, अथवा उस समय तक इस रिपोर्ट पर विचार न किया जाये जब तक कि कार्यावली पर के अन्य विषय, जो कि कल तक परिषद् के विचाराधीन थे, समाप्त न हो जायें। इसके पश्चात् मैं रिपोर्ट का परिशिष्ट लेना चाहता हूं। हमें इसकी एक-एक मद पर विचार करना होगा। इस प्रकार प्रत्येक मद से संबंधित संशोधन बारी-बारी से पेश किये जायेंगे और वाद-विवाद के पश्चात् उन पर निश्चय किया जाएगा। इस भांति जब हम परिशिष्ट पर वाद-विवाद करके निश्चय कर लेंगे तो रिपोर्ट के साधारण कलेवर पर विचार किया जायेगा। रिपोर्ट का साधारण कलेवर और कुछ भी नहीं, यह तो केवल परिशिष्ट के आशय का संग्रह मात्र है।

अब मैं सरदार वल्लभभाई पटेल से प्रार्थना करूंगा कि वह रिपोर्ट पर विचार करने का अपना प्रस्ताव पेश करें।

***श्री बी॰ पोकर साहब बहादुर** (मद्रासः मुस्लिम): आपने जिस कार्य-विधि की व्यवस्था की है, वह यह है कि परिशिष्ट के सब विषय एक-एक करके मदवार लिये जायें। परंतु मेरा निवेदन है कि परिशिष्ट में संशोधनों से संबंधित प्रत्येक मद में अनेकों विषय हैं जो भिन्न-भिन्न प्रकार के हैं। इसलिये मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि प्रत्येक मद पर समान ढंग के संशोधनों को एक-एक करके जुदा-जुदा निपटाया जाये। ऐसा होने से एक ही मद पर समान ढंग के सब संशोधनों पर एक ही बार विचार करके उन्हें तुरंत ही निपटाया जा सकेगा। अन्यथा यदि सबको एक बार ही इकट्ठा कर दिया गया तो कई एक बाधायें उत्पन्न हो जायेंगी।

***अध्यक्षः** यही तो बात है जो मैं करने की सोच रहा हूं। परिशिष्ट में लिखी प्रत्येक मद को जुदा-जुदा एक-एक करके लिया जायेगा। और प्रत्येक मद पर तत्-तत् मद संबंधी सारे संशोधनों पर एकदम ही विचार कर लिया जायेगा।

***श्री बी. पोकर साहब बहादुर:** विविध प्रकार के संशोधनों को निपटाने में संशोधनों के प्रकार को अवश्य ही ध्यान में रखा जाना चाहिये। अर्थात् प्रत्येक मद पर किसी विशेष प्रकार के संशोधन को पूर्णतया निपटा कर ही, उसी मद पर किसी अन्य प्रकार के संशोधनों को हाथ लगाया जाना चाहिये।

***अध्यक्ष:** माननीय सदस्य 'संशोधनों के प्रकार' से क्या आशय लेते हैं, मैं यह समझ नहीं सका। प्रत्येक मद पर विचार करते समय तत्-तत् मद संबंधी सारे संशोधनों पर एकदम ही विचार कर लिया जायेगा।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल** (बम्बई: जनरल): श्रीमान्, मैं परामर्श समिति की ओर से अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर लिखी गई रिपोर्ट परिषद् के सामने रखने की आज्ञा आपसे मांगता हूं। यह रिपोर्ट 'अल्पसंख्यक समिति' की रिपोर्ट तथा विविध अल्पमतों को दिये जाने योग्य संरक्षणों से संबंधित देश भर में चर्चा किये गये सारे दृष्टिकोणों पर पूर्णतया विचार करके लिखी है। आप सब को यह भली भांति स्मरण ही है कि अल्पमतों को दिये जाने वाले संरक्षणों पर कई बार पर्यालोचन हो चुका है, तथा कई समितियां इस पर खूब विचार कर चुकी हैं। अत: इस विषय में किसी नये दृष्टिकोण के उठाये जाने की संभावना नहीं। पिछले कई वर्षों से सर्वदा ही एक न एक समिति में इस प्रश्न पर विचार कई बार विस्तृत रूप से और कई बार साधारणतया होता आया है। कई बार इस पर्यालोचन ने भयंकर रूप धारण किया है और कई एक बार इसके परिणामस्वरूप (विविध संप्रदायों में) कटुतम वाद-प्रतिवाद उत्पन्न हुआ है। परंतु मुझे यह कहते हुये प्रसन्नता होती है कि यह रिपोर्ट अल्पसंख्यकों के विचारों से बहुमत के विचारों के समन्वय का फलस्वरूप है। यद्यपि सबको संतुष्ट करना संभव नहीं, तो भी आप देखेंगे कि इस रिपोर्ट में बहुत-सी बातों पर सर्वसम्मत निश्चय किये गये हैं, और जहां कहीं मतभेद उत्पन्न हुआ है तो अतिप्रबल बहुमत की ही सिफारिशें मानी गई हैं। अत: एक विषय के अतिरिक्त यह रिपोर्ट यथार्थ रूप में सर्वसम्मत ही है। कई एक भाई कुछ एक विषयों पर हमारे साथ सहमत नहीं हो सके पर हम मजबूर हैं, हमें तो सब अल्पसंख्यकों के-चाहे वे छोटे हों या बड़े-सारे दृष्टिकोणों, भावों और अनुभवों को सामने रखना है। हमने जहां तक संभव हो सका है सब अल्पमतों की इच्छाओं को पूर्ण करने का प्रयत्न किया है। अल्पसंख्यक आपस में भी विभक्त हैं। उनके हित कई स्थानों पर आपस में टकराते हैं। हमने अल्पमतों के पारस्परिक मतभेदों से लाभ उठाने का प्रयत्न नहीं किया। हमने इस बात का प्रयत्न किया है कि अल्पसंख्यक बजाय इसके कि आपस में विभक्त

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

रहें, अपने हितों की रक्षा के लिये वे एक संगठित रूप उपस्थित कर सकें। परंतु कई एक ऐसे विषय हैं जिन पर अल्पसंख्यक एकमत हो ही नहीं सकते, क्योंकि अल्पसंख्यकों में भी अल्पसंख्यक विद्यमान हैं। सो यह एक बड़ी कठिन समस्या है। हमने इस कठिन समस्या को बिना किसी प्रकार की कटुता और तीव्र वाद-प्रतिवाद के जिससे कि किसी प्रकार का विद्वेष अथवा कार्य में कोई विघ्न उत्पन्न होने की संभावना हो, निपटाया है। और मुझे पूर्ण आशा है कि यह परिषद् भी इस प्रश्न का निश्चय मित्रता के भावों से युक्त और सदाशापूर्ण वायुमंडल में ही करेगी। हमें आशा है कि पूर्वोत्पन्न पारस्परिक कटुता को त्यागते हुये और इस प्रकार अतीत को भुलाकर हम शुद्ध अंतःकरण से आरंभ करेंगे। हमारे इर्द-गिर्द बहुत सी ऐसी घटनायें हो रही हैं जिनके कारण हमें अपना कार्य यथासंभव शीघ्रातिशीघ्र समाप्त करना चाहिये। इसके साथ ही हमें इस परिषद् में कोई ऐसी बात नहीं करनी चाहिये जिससे हमारी अथवा हमारे उन पड़ोसियों की, जो कि इस समय एक तीव्र संघर्ष में उलझे हुये हैं, बाधाओं में वृद्धि हो। विशेषतया ऐसे समय में जबकि हमारे हृदय भारत के सर्वोत्तम प्रांत पर शत्रुओं द्वारा लगाई गई चोटों से विचलित हो रहे हों, हमें इस बात का और भी ध्यान रखना चाहिये। अतः मुझे विश्वास है कि इस परिषद् में एक ऐसे प्रश्न पर विचार करते हुये कि जिसका प्रभाव सब अल्पसंख्यकों पर पड़ना है, हम किसी प्रकार का जोश व्यक्त न करेंगे तथा न ही किसी ऐसी युक्ति का सहारा लेंगे जिससे कि अन्यत्र प्रतिघात होने की आशंका हो। मुझे आशा है कि हम इस विषय को मित्र-भावना से शीघ्र ही निपटा लेंगे।

आपको स्मरण होगा कि हमने 'परामर्श समिति' द्वारा भेजी गई 'मौलिकाधिकार-समिति' की रिपोर्ट पास की थी। उन अधिकारों के एक बड़े भाग पर इस परिषद् ने अपना निश्चय कर लिया है और वे पास हो गये थे। इनमें अल्पमतों को अपनी रक्षा के लिये दिये गये अधिकारों का एक बहुत बड़ा भाग आ गया है। परंतु फिर भी हमें कुछ एक राजनैतिक संरक्षणों पर विशेष रूप से विचार करना होगा। इस रिपोर्ट में उन संरक्षणों को, जो कि साधारण ज्ञान का विषय है, गिनने का प्रयत्न किया गया है, जैसे कि धारा-सभाओं में प्रतिनिधित्व अर्थात् देश में संयुक्त निर्वाचन हो या पृथक निर्वाचन। यह वह प्रश्न है जिस पर कि लगभग पिछले दस वर्षों से जनता में एक बड़ा भारी वाद-प्रतिवाद उत्पन्न हो गया है। इससे हमारी बहुत हानि हुई है और हमें इसका बहुत बड़ा मूल्य देना पड़ा है। परंतु सौभाग्य की

बात है कि इसका निपटारा इस ढंग से हुआ है कि हम सारे ही इस बात पर सहमत हो गये हैं कि भविष्य में पृथक् निर्वाचन न हुआ करे और आज के पश्चात् हम संयुक्त निर्वाचन से ही काम लेंगे। इस प्रकार यह एक बहुत बड़ा लाभ हमें प्राप्त हुआ है।

पुनः पासंग (weightage) के प्रश्न पर भी हम एकमत हो गये हैं। निश्चय किया गया है कि पासंग (weightage) उड़ा दिया जाये और संयुक्त निर्वाचन द्वारा विविध संप्रदाय अपनी जनसंख्या के अनुपात से प्रतिनिधित्व ग्रहण करें। हमने एक मत से यह भी निश्चय किया है कि यह उचित ही है कि अल्पमतों के भाग को उनकी जनसंख्या के अनुपात से सर्वत्र सुरक्षित कर दिया जाये। कुछ एक अल्पमतों ने हर्षपूर्वक अपने इस अधिकार को छोड़ दिया है। वे कहते हैं कि उन्हें न पासंग (weightage) चाहिये और न ही पृथक् चुनाव। वे तो भारत में होने वाले उथल-पुथल में अपने आपको मिटा कर राष्ट्र से अभिन्न हो जाना चाहते हैं। उन्हें अपने आप पर विश्वास है और वे अपने पैरों पर खड़ा होना चाहते हैं। जिन्होंने अपना ऐसा पक्ष निर्धारित किया है, मैं उन्हें बधाई देता हूं। परंतु साथ ही मुझे उनसे भी सहानुभूति है, जिन्हें उचित मान (standard) पर पहुंचने के लिये अभी तक भी राष्ट्र से सहायता लेने की आवश्यकता है। हमने अब यह भी निश्चय किया है कि सरकारी नौकरियां भी कतिपय संप्रदायों के लिये एक विशेष अनुपात से सुरक्षित कर दी जायें–विशेषकर ऐंग्लो-इंडियन संप्रदाय और परिगणित जातियां कतिपय बातों में विशेष व्यवहार के योग्य हैं। हमने इस विषय में अपनी सिफारिशें लिख दी हैं। मुझे यह कहते हुये हर्ष होता है कि इस विषय में भी हम और वे संप्रदाय, जिनके हितों पर आघात पहुंचता है, एकमत हैं।

हमने इन संरक्षणों को जो यहां दिये गये हैं, कार्यरूप में परिणत देखने के लिये एक शासन व्यवस्था भी उपस्थित कर दी है, ताकि संबंधित संप्रदायों को यह शिकायत न हो कि उक्त संरक्षण केवल नाममात्र के ही हैं; और कि उन पर अमल तो होता ही नहीं। विविध प्रांतों की शासन-व्यवस्था के कार्य में उपस्थित किये गये संरक्षणों पर निरंतर जागरूकतापूर्वक ध्यान रखा जाना चाहिये। इस कार्य से संबंधित अफसर अथवा शासन व्यवस्था का यह कर्तव्य होगा कि अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा में जो त्रुटियां अथवा न्यूनतायें हों, धारासभाओं अथवा प्रांतीय सरकारों का ध्यान उनकी ओर आकर्षित करें। हमने अल्पसंख्यकों को उनकी सत्ता अथवा उनकी जनगणना के अनुसार विभक्त कर दिया है। इस परिगणना में तीन

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

भाग बनाये गये हैं और जुदा-जुदा इन पर विचार किया गया है। तीनों की जनसंख्या को सामने रखते हुये उनकी ओर जुदा-जुदा ध्यान देना आवश्यक ही था।

ऐंग्लो-इंडियन को विशेष अधिकार अथवा विशेष सुविधायें अर्थात् खास रियायतें प्राप्त हैं। इन अधिकारों का उपयोग वे कुछ एक विभागों की नौकरियों में जैसा कि रेलवे की अथवा एक या दो अन्य विभागों में भी करते रहे हैं। इस समय एकदम इन रियायतों को हटा लेना और उनसे कहना कि वे इन विशेष सुविधाओं अथवा अधिकारों को छोड़ दें और सर्वसाधारण के मान-दंड (standard) को अपना लें, उचित न होगा। क्योंकि ऐसा होने से संभवत: वे एक विकट स्थिति में फंस जायेंगे। वे शायद इस समय इस बात के लिए तैयार भी न हों। इसलिये यह अच्छा होगा कि हम उन्हें अपने आपको वातावरण के अनुकूल बनाने के लिये कुछ समय और दें। उन्हें अब पता लग गया है कि इस बात के लिये उन्हें तैयार होना ही पड़ेगा। उन्हें पर्याप्त समय की पहले ही सूचना मिल गई है। मैं प्रसन्न हूं कि उन्होंने इस सूचना को अंगीकार कर लिया है। उन्होंने धीरे-धीरे इन सुविधाओं को छोड़ना स्वीकार कर लिया है। ऐसी ही सुविधायें उन्हें शिक्षा के विषय में भी प्राप्त हैं। कतिपय शिक्षा संस्थाओं के लिये वे विशेष आर्थिक सहायता लेते हैं। ये शिक्षा संस्थाएं अन्य संप्रदायों के छात्रों के लिये भी खुली हैं। परंतु साधारणतया ये संस्थायें ऐंग्लो-इंडियन संप्रदाय के लिए ही हैं। और उन्हें वहां पर आर्थिक सहायता संबंधी विशेष रियायतें भी प्राप्त हैं। यह विचार उपस्थित किया गया है कि कुछ समय के लिये यह सहायता जारी रखी जाए और फिर धीरे-धीरे घटा दी जाए। ऐसा करने से कुछ समय पश्चात् एक ऐसी स्थिति आ जायेगी जब कि ये दूसरे संप्रदायों के बराबर आ जायेंगे और आर्थिक बोझ, आभारों तथा संकटों में उनका हाथ बटायेंगे। अत: इस विषय में भी हमने एकमत से ही इस समस्या को हल किया है।

रही धारा-सभाओं में प्रतिनिधित्व की बात; यह एक बड़ी मुश्किल की बात थी। यह एक लाख या इससे कुछ अधिक का एक बहुत ही छोटा सा संप्रदाय है। इतने थोड़े होते हुए भी ये सारे भारत में फैले हुए हैं और किसी एक प्रांत में इकट्ठे बसे हुए नहीं। साधारण चुनाव में खड़े होकर 'स्थानों' पर वे कब्जा नहीं कर सकते। इसलिये निर्वाचन की साधारण विधि से यदि किसी प्रांत अथवा केन्द्र में उन्हें उचित अथवा पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं होता तो उनकी नियुक्ति के लिये रास्ता बना दिया गया है। नियुक्ति का यह अधिकार स्थानानुसार गवर्नर या गवर्नर जनरल को दे दिया गया है।

अब दूसरे विषय अर्थात् पारसियों के संबंध में सुनिये। उन्होंने तो स्वयं ही 'सुविधाओं' को जो कि उन्हें मिलनी थीं छोड़ दिया है। उनका यह निश्चय बड़ा ही बुद्धिमत्तापूर्ण है। इसके अतिरिक्त उनके संबंध में यह बहुत मशहूर है कि यद्यपि वे थोड़े हैं पर हैं बड़े शक्तिशाली और संभवतया बुद्धिमान भी। उन्हें पता है कि इस प्रकार प्राप्त हुई 'सुविधायें' उन्हें लाभ के स्थान पर अधिक हानि ही पहुंचायेंगी। अब वे अपनी योग्यता से कहीं पर भी अपने लिये स्थान बना सकते हैं। इस प्रकार वे अवश्य ही किसी भी प्रकार की सुविधा (Reservation) अथवा निर्वाचन की किसी पृथक विधि द्वारा प्राप्त अधिकारों से अधिक अधिकार तो हस्तगत कर ही लेंगे। धारासभाओं में अथवा नौकरियों में कहीं पर भी हो, वे इतने उच्च स्थान पर स्थित हैं कि उन्होंने स्वयं ही किसी प्रकार की भी रियायतों को लेने से साफ इन्कार कर दिया है। मैं उन्हें इस निश्चय पर बधाई देता हूं।

अब ईसाइयों के विषय में भी सुन लीजिये। यह संप्रदाय दो या तीन प्रांतों में तो पर्याप्त संख्या में बसा हुआ है। परंतु अन्य प्रांतों में इसकी स्थिति ऐसी नहीं कि यह चुनाव-विधि से किसी प्रकार के थोड़े से भी साक्षात प्रतिनिधित्व (direct representation) को हस्तगत कर सके। ऐसा होने पर भी वे अपनी जनसंख्या के अनुपात से 'सुरक्षा' मिल जाने पर 'पृथक निर्वाचन' के अधिकार को छोड़ने के लिये मान गये हैं। इसके अतिरिक्त अन्य किसी संरक्षण के लिये उन्होंने मांग की ही न थी।

जहां तक मंत्रिमंडल में प्रतिनिधित्व का प्रश्न है, हमने सन् 1935 के एक्ट में एतत्संबंधी व्यवस्था को, जिस पर कि आजकल भी अमल हो रहा है, अपना लिया है। वैधानिक रीति से उचित समझते हुये ही हमने इसे सर्व-सम्मति से अंगीकार किया है।

इसके पश्चात् नौकरियों में प्रतिनिधित्व का प्रश्न सामने आता है। साधारण मान-दंड, जो हमने इस विषय में स्वीकार किया है, यह है कि प्रतियोगिता द्वारा दी जाने वाली नौकरियों पर नियुक्तियां आमतौर पर योग्यता को ध्यान में रखकर ही की जानी चाहियें। यदि इस नियम से विपरीत हम आचरण करेंगे तो शासन-कार्य में सर्वत्र हानि ही होगी। यह सबको ज्ञात ही है कि जब से नौकरियों के संबंध में इस नियम का उल्लंघन किया गया है तब से राजकार्य में पर्याप्त हानि हुई है। अब क्योंकि हम नये सिरे से कार्य आरंभ करने लगे हैं तो हमें यह ध्यान में रखना चाहिये कि जहां कहीं उच्च 'राजकर्मचारी' की नियुक्ति करनी हो, तो

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

ऐसी नौकरियां प्रतियोगिता, परीक्षा अथवा मुकाबले के इम्तिहानों द्वारा ही दी जायें। हमने कुछ एक संप्रदायों के संबंध में जिन्हें अभी कुछ और सहायता की आवश्यकता है, कतिपय सुविधायें इस विषय में रख दी हैं।

संक्षेपतः यह रिपोर्ट दोनों पक्षों के द्वारा सावधानीपूर्वक किये गये विचार-समन्वय का फलस्वरूप है।

मैं एक और बात की ओर भी आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं। अल्पसंख्यकों को धारासभाओं में दिये गये प्रतिनिधित्व और जनसंख्या के अनुपात से दी गई 'स्थानों की सुरक्षा' के अतिरिक्त यह भी अधिकार दिया गया है कि वे किसी भी 'साधारण स्थान' पर चुनाव में खड़े हो सकते हैं।

इस विषय पर ''परामर्श-समिति'' और ''अल्पमत समिति'' दोनों में ही बहुत वाद-प्रतिवाद उत्पन्न हो गया था। परंतु अंत में यह बहुमत से स्वीकृत हो ही गया। एक और विषय भी है जिस पर मुस्लिम लीग और परिगणित जातियों के एक भाग की ओर से बड़ी आपत्ति उठाई गई। आपत्तिजनक बात यह थी कि जीतने वाले उम्मीदवार के लिये कुछ प्रतिशत वोट अपनी जाति के प्राप्त करने आवश्यक करार कर दिये जायें। इस बात पर बड़ा मतभेद उत्पन्न हुआ। परिगणित जातियों के प्रतिनिधियों में से बहुत बड़ी संख्या ने कल मुझे निवेदन-पत्र भेजा था जिसमें कहा गया था कि वे इस बात के विरुद्ध हैं। परंतु ''परामर्श समिति'' ने वाद-विवाद के पश्चात् बड़े भारी बहुमत से इसके विरुद्ध निश्चय कर दिया था।

यह है रिपोर्ट का आशय। परंतु यह संभव है कि जब हम परिशिष्ट पर मद-वार विचार करेंगे तो हमें कई स्थानों पर पास करने से पूर्व रिपोर्ट में कुछ अदल-बदल करना पड़े। इसलिये, जैसे अध्यक्ष महोदय ने प्रेरणा की है, हमें अब परिशिष्ट की मदों पर एक-एक करके विचार करना चाहिये। इस प्रकार जब मदें पास हो जायेंगी तो रिपोर्ट में अपने आप यथास्थान अदल-बदल हो ही जायेगी।

***अध्यक्षः** मेरे पास दो प्रस्तावों की सूचना आ चुकी है। इनका आशय है कि इस साधारण प्रस्ताव पर हम विचार करना स्थगित कर दें। मैं उन माननीय सदस्यों से प्रार्थना करूंगा कि वे अपने प्रस्ताव पेश करें।

***मि॰ महबूब अली बेग साहब बहादुर** (मद्रासः मुस्लिम): मैं अपना प्रस्ताव पेश नहीं कर रहा हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): मैं भी अपना प्रस्ताव पेश नहीं कर रहा।

***अध्यक्ष:** तब साधारण प्रस्ताव, कि रिपोर्ट पर विचार आरंभ किया जाये, पर्यालोचन के लिये उपस्थित है।

***डा॰ पी॰एस॰ देशमुख** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, अल्पमतों के लिये बनाई गई परामर्श समिति के योग्य और प्रतिष्ठित सभापति और अन्य सारे सदस्य भी हमारे हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं, क्योंकि उन्होंने भारत में अल्पमतों के अधिकार और प्रतिनिधित्व के प्रश्न पर इतनी अधिक संतोषजनक रिपोर्ट तैयार की है। मेरे विचार में भारतीय इतिहास में ''अल्पसंख्यक'' से अधिक क्रूरतापूर्ण और कोई शब्द नहीं है। भारत ने ज्योंहि राजनैतिक शिशुकाल से बाहर पैर रखा तभी से अल्पसंख्यकों के अधिकार तथा उनकी रक्षा का भूत हमारे सामने आ खड़ा हुआ। तभी से यह देश की उन्नति का अवरोध किये हुये हैं। यह सब कुछ ब्रिटिश नीति का फल था जो कि अब इतिहास का विषय बन चुका है। अंग्रेजों की यह नीति बड़ी सफल रही। और सचमुच यह अल्पसंख्यक रूपी शैतान का ही कार्य है कि हमारा प्यारा देश, जो एक सौ वर्षों से अखंड चला आ रहा था, अब एक से अधिक भागों में बांटा जा चुका है। इस भूत के आखिरकार अब पर काटे जा चुके हैं। सच पूछो तो यह एक उल्लेखनीय विजय है। मेरा ख्याल है कि परामर्श समिति के सदस्यों ने ऐसा करके एक बहुत बड़ी बात की है। इसलिये मैं उन्हें हार्दिक बधाई देता हूं।

सबसे पहली और सबसे बड़ी बात उन्होंने यह की है कि पृथक निर्वाचन हटा दिया गया है। दूसरी बात जो वे कर सके हैं, यह है कि न्याय पर अनाश्रित पासंग (Weightage) की विधि का खात्मा कर दिया गया है। कानूनन और वैधानिक तौर पर अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधियों को मंत्रिमंडल में लेना अब आवश्यक नहीं। अत: मंत्रिमंडल की बनावट में एतत्संबंधी जो विकट कठिनाइयां उपस्थित हुआ करती थीं, अब वे नहीं रहेंगी। इसके साथ ही हमें विविध विभागों में कर्मचारी भर्ती करते समय अल्पमतों के हिस्से को, दशमलव के दूसरे अंक तक गिनने के कष्ट से भी छुटकारा मिल गया। क्योंकि अल्पसंख्यकों के विविध प्रतिनिधियों ने इन विषयों में 'सुरक्षा' के लिये अनुरोध नहीं किया। मुझे विश्वास है कि मैं इस परिषद् के बहुत बड़े भाग के हार्दिक उद्गार व्यक्त करता हूं, जब मैं यह कहता हूं कि इन अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधियों ने इस सारे मामले पर बड़ी उदारतापूर्ण और

[डा. पी.एस. देखमुख]

राष्ट्रीय भावों से प्रेरित होकर दृष्टिपात किया है। मैं सबकी ओर से उन्हें यकीन दिलाता हूं कि यदि उन्होंने स्वयं ही इस बात को न बिगाड़ा तो भविष्य में कभी भी ऐसा अवसर न आयेगा जबकि उन्हें अपने किये पर पछताना पड़े। यह सर्वदा स्मरण रखना चाहिये और यह है भी यथार्थ सच ही कि हम अत्यधिक दानी और उदारचित्त लोग हैं। परंतु फिर भी हमारे कतिपय मुस्लिम मित्रों ने प्रायः अंग्रेजी राजनीति से प्रभावित होकर हमें क्रूर और ''बहुमत से मादित'' जालिम के रूप में चित्रित किया है। मुझे इस आरोप के लिये अभी तक कोई आधार नहीं मिल सका। परंतु फिर भी यह आरोप बड़े जोर-शोर से बार-बार दोहराया जाता रहा है और पिछले कई वर्षों से इसे जिस किसी तरह से कायम भी रखा गया है। इन्हीं झूठी बुनियादों पर पाकिस्तान की मांग की गई थी; और इन्हीं अवास्तविक आधारों पर उसे स्वीकार कर लिया गया है। बहुत थोड़े लोगों ने इस बात का विश्लेषण करके विचार करने का कष्ट उठाया है। अल्पसंख्यकों को भयभीत करने की तो बात ही छोड़ दो, तथ्य तो यह है कि बहुत सारे स्थानों पर अल्पसंख्यकों ने बहुसंख्यकों को भयभीत किया। मुसलमान प्रत्येक स्थान पर न्याय और औचित्य द्वारा, जो उन्हे मिलना चाहिये था, उससे कहीं अधिक अधिकार प्राप्त किये हुये थे। मेरे अपने विचित्र प्रांत में अब तक भी ऐसे अधिकारों का उपभोग वे कर रहे हैं जो कि 60 प्रतिशत कृषकों और श्रमिकों को हमारे अपने हिन्दू शासकों ने अभी तक नहीं दिये हैं।

यहां अवसर नहीं कि इस विषय में इससे अधिक मैं और कुछ कहूं। मुझे संतोष है कि कोई भी अल्पसंख्यक भविष्य में दूसरों के उचित अधिकारों पर छापा मारने का प्रयत्न न करेगा। पिछले कई वर्षों से बहुसंख्यकों पर अत्याचार होते आये हैं। दुर्भाग्यवश तथाकथित बहुसंख्यक बधिर और मूक हैं। हममें से बहुत से यद्यपि सर्वदा उनके नाम पर बोलने का प्रयत्न करते हैं, परंतु मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं कि हम अपने वचनों को कार्यरूप में परिणत करने में सर्वथा असफल रहे हैं। श्रीमान्, क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि लाखों जाट, अहीर, गूजर कुर्मी, कुनबी और आदिवासी तथा अन्यों को हमने अब तक कौनसा स्थान दिया है? क्या यह सच नहीं कि हम अपने ही मामलों में बहुत उलझे रहे हैं और हमने उन हजारों निर्धन लोगों की ओर जिन्होंने हमारे लिये वर्तमान स्वतंत्रता को लाने में अपनी जानों की बलि दी है, कुछ ध्यान ही नहीं दिया। हमने राष्ट्र में उनका कौनसा स्थान निश्चित किया है? यही न कि अब भी हम

उनके संबंध में यही सोचते हैं कि वे पहले की तरह अब भी अंधाधुंध चुपचाप धर्म समझ कर हमारे द्वारा चुने गये व्यक्ति के लिये मत (Vote) डाल देंगे? इस दृष्टिकोण से देखा जाये तो स्थिति आज भी अंधकारमय है। और अब तो यह हमारे वर्तमान शासकों का कर्तव्य है। हां, यदि वे इस कर्तव्य को पूरा करना चाहते हैं तो उन्हें चाहिये कि जो कुछ मैंने कहा है उस पर विचार करें, सोचें और समझें और फिर उसे कार्य में परिणत करें। यदि वे ऐसा न करेंगे तो कष्ट और बरबादी भविष्य में सामने आयेगी। इसलिये मैं प्रेरणा करूंगा कि कम-अज-कम अब जब कि अल्पसंख्यक मंत्रिमंडल में अपना उचित भाग और सरकारी नौकरियों में उपयुक्त अनुपात लेने मात्र से संतुष्ट हो गये हैं, तो हमारे शासकों को चाहिये कि वे ग्रामीण जनता की ओर ध्यान दें। अब तक हम इनकी ओर पूरा ध्यान नहीं दे सके। ग्रामीण लोग सर्वदा सताए ही जाते रहे हैं और कांग्रेस के पवित्र नाम के जेरेअसर से भी उनका उपकार के स्थान पर अधिक अपकार ही हुआ है। राजनैतिक बातों के दबावों में आकर बड़े-बड़े प्रजातंत्रवादियों ने भी छोटे-छोटे अल्पसंख्यकों के हितों को ही आगे लाने का प्रयत्न किया है। वे उन नौकरियों और सुविधाओं का उपभोग करते रहे हैं जिन पर कि उनका कुछ भी अधिकार न था। यह सुस्पष्ट ही है कि जो व्यक्ति अपने अधिकार से अधिक उपभोग करता है तो वह अवश्य ही किसी अन्य को अपने उचित अधिकार से वंचित करता है। विविध हिन्दू संप्रदायों में शक्ति और नौकरियों का बंटवारा करते समय इस नियम को ध्यान में रखा जाना चाहिये और आज से आगे इस शैतानियत की नीति का खात्मा होना चाहिये।

*__श्री वी॰आई॰ मुनिस्वामी पिल्ले__ (मद्रास: जनरल): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, मैं अनुभव करता हूं कि आज का दिन इस विस्तृत देश में रहने वाले अल्पसंख्यकों की भलाई की दृष्टि से एक चिरस्मरणीय दिवस होगा। विषय पर अग्रसर होने से पूर्व मैं माननीय सरदार पटेल को बधाई देता हूं कि जिन्होंने अपनी उच्च बुद्धि और योग्यता से यह रिपोर्ट तैयार करवाई है। इस रिपोर्ट की विशेषता यह है कि यह इस देश में रहने वाले बहुसंख्यकों और अल्पसंख्यकों दोनों के लिये ही संतोषजनक है। परामर्श-समिति द्वारा जो लिखतम की गई है, मेरे विचार में इस देश के रहने वाले हरिजनों के लिये वह 'मेगना कार्टा' के तुल्य है। श्रीमान्, जैसे पहले ही मेरे एक मित्र ने कहा है कि विविध अल्पसंख्यकों की उत्पत्ति देश में रहने वाली तीसरी पार्टी के कारण ही हुई; मैं इस बात को तो स्वीकार करता हूं। परंतु श्रीमान्, यह अवतार रूप महात्मा गांधीजी के भाग्य में ही लिखा था

[श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले]

कि हिन्दुओं के एक भाग अर्थात् दलित जातियों की, जो कि विविध नामों से परिज्ञात थी, कष्टों का पता लगा कर उनकी सहायता को आते। उन्होंने युग-स्मरणीय अनशन व्रत रखा जिसने भारत के सारे प्रदेशों में सवर्ण हिन्दुओं को 'अछूत' कौन हैं, 'दलित जातियां' किन्हें कहते हैं, 'परिगणित जातियां' कौनसी हैं और उनके लिये क्या किया जाना चाहिये इत्यादि बातों पर विचार करने के लिये बाध्य किया। यह पूना पैक्ट ही था कि जिससे इस देश में (एतद्विषयक) बहुत जागृति उत्पन्न हुई। आपको स्मरण होगा कि डा॰ अम्बेडकर के साथ आपने और मैंने भी इस पैक्ट पर हस्ताक्षर किये थे। श्रीमान्, उस समय देश के प्रत्येक व्यक्ति के मन में यह प्रश्न था कि क्या पूना पैक्ट सवर्ण हिन्दुओं में हृदय परिवर्तन के चिन्ह प्रदर्शित करेगा या नहीं? श्रीमान्, आज आपको मैं विश्वास दिला सकता हूं कि वह परिवर्तन आ गया है। यद्यपि शत प्रतिशत नहीं, किन्तु 50 प्रतिशत तो अवश्य ही आ गया है। मैं यहां एक उदाहरण दे दूं। डा॰ अम्बेडकर का औपनिवेशिक मंत्रिमंडल में सम्मिलित किया जाना ही सवर्ण हिन्दुओं के हृदय परिवर्तन का परिचायक है। यह साफ जाहिर करता है कि हरिजनों की अब अवहेलना नहीं की जाया करेगी। श्रीमान्, मैं आपको बता दूं कि मेरे अपने प्रांत में भूतपूर्व बड़े मंत्री श्री प्रकाशम् ने दलित जातियों की स्थिति को सुधारने के लिये एक करोड़ रुपया अलग रख दिया था *(सुनो, सुनो की आवाजें)* और वर्तमान प्रधानमंत्री श्री ओमन्दर रामस्वामी रेडियर ने एक बड़ी समिति की नियुक्ति की है, जो इस विषय में जांच करके दलित जातियों की स्थिति को बेहतर बनाने के लिये पंचवर्षीय योजना उपस्थित करेगी।

अब श्रीमान्, समुपस्थित साध्य (proportion) अर्थात् इस रिपोर्ट पर विचार करने के विषय में मुझे यह कहना है कि कोई भी विधान जो कि इस देश के 30 करोड़ लोगों के लिये बनाया जाये उसमें उचित संरक्षणों का होना आवश्यक ही है। कुछ अपने मन में सोच रहे होंगे कि क्या वे इस देश में अल्पसंख्यक नहीं। श्रीमान्, अछूत लोग जो कि इस उपमहाद्वीप (Sub-continent) की आबादी का छठा हिस्सा है और जिनकी सामाजिक, राजनैतिक और शिक्षा के क्षेत्र में स्थिति बहुत निम्न है, वे तो अवश्य ही एक अल्पसंख्यक हैं।

श्रीमान्, पूना पैक्ट के पश्चात् अब हम दूसरी स्टेज (Stage) की ओर आ रहे हैं। सचमुच यह दूसरी स्टेज (Stage) है क्योंकि अछूतों अर्थात् परिगणित जातियों को इस रिपोर्ट के अनुसार जो कि अब इस परिषद् के सामने प्रस्तुत की जा

रही है, कतिपय सुविधायें दी गई हैं। श्रीमान्, एक महत्त्वपूर्ण बात जिसकी ओर मैं परिषद् का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं, यह है कि हमें हानिकारक पृथक निर्वाचन से छुटकारा मिल गया है। इसको इतना गहरा दबाया गया है जिससे कि यह उठकर फिर हमारे देश में न आ सके। विविध प्रान्तों में उस समय जो हालात विद्यमान थे वे ही असल में पृथक निर्वाचन विधि के जारी किये जाने के असली कारण थे। पूना पैक्ट ने हमें पृथक और सम्मिलित दोनों ही चुनाव दिये। परंतु इस रिपोर्ट के अनुसार जो कि यहां प्रस्तुत की गई है, हमें बताया गया है कि दलित जातियां भविष्य में सम्मिलित निर्वाचन का उपभोग करेंगी। श्रीमान्, यह आशा की जाती है कि इस वृहत् संघ में, जिसे निर्माण करने का हम स्वप्न देख रहे हैं, यह देश भावी कतिपय वर्षों में ऐसा बन जायेगा कि जहां सम्मिलित निर्वाचन सवर्ण हिन्दुओं और अल्पसंख्यकों को पारस्परिक सम्पर्क और मिल कर कार्य करने के समान अवसर प्राप्त करायेगा। ऐसा होने पर ही हम भारत को बेहतर बना सकते हैं। श्रीमान्, अब जनसंख्या के आधार पर ''स्थानों की सुरक्षा'' हमें प्राप्त होगी। श्रीमान्, भूमि की काश्त करने वाली और जंगलों को काटने वाली दलित जातियों के लिये यह अधिकार उपयुक्त ही है। देश के शासन-कार्य में उन्हें बराबर का भाग मिलना ही चाहिये। इसके अतिरिक्त क्योंकि उनकी आर्थिक स्थिति कुछ अच्छी नहीं होती, अतः उनके लिये यह संभव नहीं कि वे असुरक्षित 'स्थानों' पर चुनाव लड़ सकें। सो 'परामर्श समिति' ने यह महत्त्वपूर्ण सिफारिश करके कि सारे अल्पमतों को असुरक्षित स्थानों पर चुनाव लड़ने का भी अधिकार दिया जाये, एक शुभ कार्य किया है। याद रहे कि विविध प्रान्तीय धारा-सभाओं में 'स्थानों' की 'सुरक्षा' उन्हें इसके अतिरिक्त मिली ही रहेगी। यह भी बहुत अच्छा शकुन है कि आज के पश्चात् सवर्ण हिन्दू तथा हरिजन अर्थात् परिगणित जातियां मिलकर काम करेंगी। इससे देश की भलाई के लिये जो सुधार यहां प्रचलित किये जायेंगे, तथा जो एक्ट इस परिषद् के सामने लाये जायें वे सारे सब जातियों को मान्य हों। साथ ही वह वाक्य-खंड जो कि अल्पसंख्यकों को असुरक्षित स्थानों पर चुनाव लड़ने की आज्ञा देता है, बहुसंख्यकों का अल्पसंख्यकों के प्रति सदाशय प्रदर्शित करता है।

मंत्रिमंडल में अल्पमतों के प्रतिनिधित्व के संबंध में बहुत कुछ कहा गया है। श्रीमान्, मैं उन लोगों में से हूं जो देश के निर्बल भाग को उठाने के लिये राजनैतिक शक्ति में विश्वास रखते हैं। पदों को प्राप्त करके ये लोग अवश्य ही इन अभागे अल्पसंख्यकों के सम्पर्क में आयेंगे और फिर अपनी आंखों से देखकर विचारेंगे कि इनकी दशा को सुधारने के लिये क्या किया जाना चाहिये। श्रीमान्, यदि मैं

[श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले]

इस बात पर जोर देता हूं कि इन अल्पमतों को मंत्रिमंडल में उचित प्रतिनिधित्व मिलना चाहिये तो मेरा आशय यह नहीं कि ऐसा होने से मंत्रिमंडल अपवित्र या अयोग्य बना दिये जायें। मैं तो केवल सबके लिये (सर्वत्र) समान अवसर की मांग करता हूं। श्रीमान्, यदि आप एक बार जनसंख्या के अनुपात से 'सुरक्षा' देंगे तो मेरा यह दावा है कि इसी अनुपात से मंत्रिमंडल में प्रतिनिधित्व भी आपको देना ही होगा। श्रीमान्, वाकियात (घटनाओं) ने देश भर में यह स्पष्ट कर दिया है कि विविध पदों पर जो सदस्य परिगणित जातियों की ओर से मंत्री अथवा धारासभाओं के अध्यक्षों के रूप में नियुक्त किये गये थे वे दूसरों की तरह अपने कार्य में पूर्णतया योग्य साबित हुए हैं। अब आगे से बहुमत को अपने मन से यह विचार निकाल देना चाहिये कि जो लोग इन जातियों में से उच्च पदों के लिये चुने जायेंगे वे योग्य नहीं होंगे। मैं अनुभव करता हूं कि सन् 1935 ई॰ के एक्ट के अनुसार अब इस विषय में एक परंपरा (Convention) बना ली जानी चाहिये। मुझे विश्वास है कि बहुमत सद्भावना से प्रेरित करके मंत्रिमंडलों में अल्पमतों को, जोकि इस समय निर्बल हैं, उचित प्रतिनिधित्व दिलाने में प्रयत्नशील होगा। श्रीमान्, नौकरियों के विषय में मैं बलपूर्वक प्रार्थना करूंगा कि अल्पमतों को हर प्रकार की सुविधायें दी जानी चाहिये ताकि इस उपमहाद्वीप (Sub-continent) की नौकरियों में वे अपना पूरा भाग प्राप्त कर सकें। यह प्राय: करके कहा जाता है कि दलित जातियों के लोगों को आवश्यक योग्यता के होने पर भी किसी न किसी बहाने से नौकरियां प्राप्त करने के पूर्ण अवसर नहीं दिये जाते। श्रीमान्, मेरी इच्छा है कि इस रिपोर्ट के विधान-परिषद् द्वारा स्वीकार कर लिये जाने के पश्चात् वे बहुसंख्यक जातियां, जिनकी बात इस विषय में मानी जाती है, यह ध्यान रखेंगी कि परिगणित जातियों की उपयुक्त मांगें इस संबंध में भुलाई नहीं जातीं। मैं जानता हूं और यह एक तथ्य भी है कि आरम्भ के तौर पर वर्तमान औपनिवेशिक मंत्रिमंडल ने इस संबंध में एक चलाऊ (executive) आदेश जारी भी कर दिया है। इस आदेश के अनुसार परिगणित जातियों के लिये प्रतियोगिता वाली और प्रतियोगिता के बिना ही दी जाने वाली नौकरियों में यथा संख्य करके 12½% और 16½% भाग सुरक्षित कर दिया है। यह एक शुभ शकुन है। मुझे विश्वास है कि यह हृदय परिवर्तन की परम्परा और भी आगे जायेगी और नौकरियों में परिगणित जातियों के प्रतिनिधियों को एक उचित भाग (quota) मिलता ही रहेगा।

श्रीमान्, अंतिम बात यह है कि यह रिपोर्ट एक वैधानिक पंचायत (Statutory Commission) और प्रांतों में कुछ एक अफसरों की नियुक्ति के बारे में विचार

उपस्थित करती है। उक्त पंचायत और अफसरों के जिम्मे यह कार्य होगा कि वे जांच करके पता लगायें कि ऐसी कौन सी बातें हैं जिनके कारण ये लोग सामाजिक, आर्थिक और शिक्षा-क्षेत्रों में अभी तक पिछड़े हुए हैं। मैं भाषण समाप्त करने से पहले इन प्रस्तावनाओं (तजबीजों) का स्वागत करता हूं। इन बातों से हमें बहुत दूर तक लाभ पहुंचेगा। यह पंचायत और अफसर स्वयं अपनी आंखों से परिगणित जातियों के कष्टों को देखकर आगामी दस वर्षों में ऐसे उपायों को कार्यरूप में लायेंगे कि इन दस वर्षों के पश्चात् परिगणित जातियां एतद्विषयक बातों और प्रान्तीय धारा-सभाओं में कहीं भी 'सुरक्षा' की मांग न कर सकेंगी। यह बहुमत का कर्तव्य है कि वह देखे कि इन अल्पमतों के साथ न्याय हो ताकि इन्हें अच्छी शिक्षा मिल सके और समाज में इनका स्थान ऊंचा किया जा सके। ऐसा होने पर ही तो ये लोग देश के प्रशासन में पूरा भाग ले सकते हैं। श्रीमान्! मेरे बहुत-से मित्रों के और विशेषकर परिगणित जातियों के मन में यह आंशका हो रही है कि अब जब कि हिंदू शक्ति संभाल रहे हैं और हिंदूराज पुनः स्थापित हुआ चाहता है, कहीं ये लोग (हरिजनों को) तंग करने के लिये 'वर्णाश्रम' को फिर जारी न कर दें। ऐसे अपने मित्रों को मैं बताना चाहता हूं कि इस बार यदि 'वर्णाश्रम' धर्म का आरंभ हुआ तो इसका स्वरूप पहले जैसा न होगा; इस बार यह हजारों वर्ष पहले देश में प्रचलित वर्णाश्रम धर्म से सर्वथा भिन्न होगा। मैं यकीन रखता हूं कि यह रिपोर्ट परिषद् द्वारा सर्वसम्मति से स्वीकृत कर ली जायेगी। और कि इसमें कोई ऐसा संशोधन पेश न किया जायेगा जिससे कि मेरे मित्र माननीय श्री वल्लभभाई जी पटेल द्वारा तैयार की गई इस उत्तम रिपोर्ट का सदाशय ही नष्ट हो जाये।

***श्री एफ॰आर॰ एन्थॉनी** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय! मैं महसूस करता हूं कि ''अल्पमत उप-समिति'' और ''परामर्श समिति'' के सदस्य होने की हैसियत से मैं भी कुछ शब्द इस रिपोर्ट के संबंध में कहूं। मैं आपको बता दूं कि कुछ एक विषय बड़े ही विवादास्पद थे। इनमें से अनेकों पर न केवल कई घंटों तक अपितु कई बार तो कई दिनों तक भी युक्तियां-प्रतियुक्तियां दी जाती रहीं। परंतु दोनों ओर से यह विचार विनिमय बड़ी उदारतापूर्वक किया गया। श्री मुंशी जैसे शक्तिशाली वकील की युक्तियों का उत्तर देना सर्वदा कोई आसान बात न थी। इस बहस में कई दृष्टिकोण थे। बहुत सारे व्यक्ति तो, स्पष्ट ज्ञात होता था अपने अटल सिद्धांतों को सामने रखकर बातचीत करते थे। यह सौभाग्य की बात है कि कतिपय दूसरों ने वस्तुस्थिति को समझकर सच्चे राजनीतिज्ञों की तरह इस बात पर विचार किया।

[श्री एफ.आर. एन्थानी]

जहां तक मेरी जाति के हितों का संबंध है, मुझे सब सदस्यों और विशेषतया सरदार पटेल की प्रशंसा करना तथा धन्यवाद देना है; जिन्होंने हमारी समस्याओं पर यथार्थता की दृष्टि से विचार किया। अपनी ओर से हमने सर्वसम्मत निश्चय पर पहुंचने के लिये जो कुछ संभव था, सब कुछ किया और मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता है कि आखिरकार हम सफल हो ही गये। मैं अनुभव करता हूं कि मुझे अपनी जाति की ओर से उन सबकी प्रशंसा तथा धन्यवाद करना चाहिये जिन्होंने एंग्लो इंडियन जाति की विशेष आवश्यकताओं को समझा और आखिर में उन्हें 'परामर्श समिति' की रिपोर्ट में उचित रूप से उपस्थित किया। श्रीमान्, यह रिपोर्ट भविष्य के लिये एक शुभ शकुन है। मैं सर्वदा उन लोगों में रहा हूं जो यह महसूस करते हैं कि हमें अपने सिद्धांत बदलकर यथार्थ तथ्यों के अनुकूल बना लेने चाहियें। राजनीतिज्ञता का मार्ग समझौते का मार्ग है। मैं प्रसन्न हूं कि राजनीतिज्ञता और यथार्थता के भावों ने हमारी कार्यवाही पर पूरा प्रभाव डाला। सच पूछो तो ये दोनों ही इसमें ओत-प्रोत हो गये और यह सब कुछ सरदार पटेल ने ही किया। वदान्य होकर—और सचमुच बहुसंख्यक ऐसा था ही, अर्थात् अल्पसंख्यकों के प्रति उदारता का व्यवहार दर्शाकर आपने हमारे इस भय को कि अल्पसंख्यकों की आवश्यकताओं और उनके दृष्टिकोणों की परवाह न की जायेगी, हटाने में सहायता दी है। राजनीतिज्ञता के इस कारनामे से आपने जाति-निर्माण के कार्य के प्रति अल्पसंख्यकों की वफादारी को जगाने में सहायता की है। और आप जानते हैं कि जाति-निर्माण का महान् कार्य ही इस समय मुख्यतया हमारे सामने है।

मैं समझता हूं कि आज के हालात अल्पसंख्यकों के लिये एक चुनौती (Challenge) हैं। प्रत्येक बुद्धिमान अल्पमत उस भावी समय की ओर देख रहा है जबकि वह सांप्रदायिक चिन्ह (label) या नाम का परित्याग करके सारी भारतीय जाति में घुल मिल जायेगा। याद रखो, ऐसा समय जल्दी आए या देर से, पर आएगा अवश्य *(सुनो, सुनो की आवाजें)*। मैं समझता हूं कि आज के हालात कतिपय घटनाओं की भित्ति के कारण बहुमत के कुछ सदस्यों के लिये भी एक चुनौती हैं। मैं उनसे कहता हूं कि इस भावना से प्रेरित होकर आओ, हम आगे बढ़ें। आओ, हम सब इस आदर्श के लिये आगे बढ़ें कि हम बहुत शीघ्र ही सब सांप्रदायिक चिन्हों (labels) का परित्याग कर देंगे। आओ, सबको मजबूर कर देने वाली इस भावना से कि हम सब एक ही भारतीय जाति से संबंधित हैं, प्रेरित होकर एक हो जायें। *(करतल ध्वनि)*

*श्री रोहिणी कुमार चौधरी (आसाम: जनरल): मेरी इच्छा है कि मैं इस प्रस्ताव पर बोलूं ताकि इस विषय में अपने भावों को व्यक्त कर सकूं। हमने जब से स्वतंत्रता प्राप्त की है, सचमुच यह पहला अवसर है कि मैं किसी प्रस्ताव पर बोल रहा हूं। श्रीमान्, मैं नहीं जानता कि मैंने इस वाद-विवाद को समझा है कि नहीं। न ही मुझे पता है कि इस रिपोर्ट का अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर क्या प्रभाव पड़ेगा। परंतु मुझे ऐसा जान पड़ता है और मैं समझता हूं कि मुझे यह कहने के लिये क्षमा किया जायेगा कि इस समय यहां पर दो प्रकार के अल्पसंख्यक विद्यमान हैं। इन अल्पसंख्यकों में से एक तो उस भारत से संबंधित हैं जो कभी हमारा था परंतु जो आज सर्वथा विनष्ट कर दिया गया है। इस अल्पसंख्यक की रक्षा स्वर्ग में जो कि सब धार्मिक पुरुषों और संत महात्माओं के लिये शरणस्थान है, प्रभु स्वयं कर रहे हैं। इसीलिये तो इह लोक में उनके द्वारा छोड़े गये स्थानों के बदले 16 अगस्त से लेकर आज तक स्वर्ग में असंख्य स्थान उनके लिये सुरक्षित कर दिये गये हैं। यद्यपि स्वर्ग में स्थानों के लिये इतनी मांग है, परंतु वहां पर जगह की अभी तक कमी नहीं हुई। परंतु हमारा उनके ध्येय से कोई संबंध नहीं। हम तो विधान निर्मातृ संस्था के सदस्य हैं, हमें उनके संतोष और कष्टों से क्या? शुक्रवार तक तो हम कुछ एक नियम बनायेंगे उसके पश्चात् शनिवार को हम विविध प्रांतीय सभाओं और कौंसिलों में चले जायेंगे। इसके पश्चात् हम दशहरा और दुर्गापूजा की छुट्टियां मनायेंगे। हम पुन: फिर एक बार इस विधान को परिमार्जित करने के लिये आयेंगे। तब भारत के विभाजन के शिकार हुए अभागे दुखी लोगों के लिये हमारे पास समय होगा। श्रीमान्! मुझे विश्वास है कि इन अभागे लोगों के हितों को इस परिषद् को कुछ मिनटों के लिये अर्थात् एक या दो मिनटों के लिये मौन रहकर या इसी प्रकार की कोई और बात करके जीवित रखना चाहिये। इस प्रकार हम उन लोगों को जिन्होंने लड़ते हुए जान दी है मौन रहकर श्रद्धांजलि पेश करते हैं। हमने मरने वालों के लिये मौन रखने का रिवाज आज जारी किया है। परंतु मुझे डर है कि हमारे इस अभागे देश में इस रिवाज का अनुकरण बहुत ही लंबे समय तक होता रहेगा।

श्रीमान्, एक दूसरे प्रकार का अल्पसंख्यक भी है जिससे हमारा संबंध जल्दी नहीं होगा। मुझे यह कहते हुये प्रसन्नता है कि उस अल्पसंख्यक के लिये काफी कुछ कर दिया गया है। उनके लिये आगामी दस वर्ष तक के लिये 'स्थान' सुरक्षित कर दिये गये हैं। साथ ही उन्हें असुरक्षित स्थानों पर चुनाव लड़ने का अवसर भी प्राप्त होगा। सुरक्षित 'स्थानों' द्वारा वे अपनी सांप्रदायिक पार्टी से चिमटे रहेंगे

[श्री रोहिणी कुमार चौधारी]

और कांग्रेस पार्टी की उदारता के सहारे वे असुरक्षित स्थानों पर भी काबिज हो जायेंगे। मैं समझता हूं कि इस विधि से दस वर्षों से पहले ही अल्पसंख्यक बहुसंख्यक में परिणत हो जायेगा। उसके बाद फिर कोई अल्पसंख्यक न रहेगा। और ऐसा होना ठीक भी है क्योंकि हमने ऐसी नीति को अपनाया है जिसने हमारे कर्तव्य और उत्तरदायित्व को विभक्त कर दिया है।

वह प्रदेश कि जिसका 'पाकिस्तान' नाम है वहां की सरकार बहुसंख्यक के हितों की रक्षा करेगी और उस प्रदेश में कि जिसको हिन्दुस्तान कहा जाता है, हम लोग अल्पसंख्यक की रक्षा करेंगे। आज तक हम ऐसा करते आये हैं और भविष्य में भी हम खुशी से ऐसा ही करेंगे।

श्रीमान्, इस देश के विविध प्रांतों में बसे हुये अल्पसंख्यकों का विचार करते हुये इस परिषद् को एक अत्यंत ही पिछड़े हुये प्रांतों को भी भुला नहीं देना चाहिये। मेरा आशय आसाम और उड़ीसा से है। इन दोनों प्रांतों में एक भी ऐसा मनुष्य नहीं मिल सका कि जिसे भारतीय सरकार में लिया जा सकता या अधिष्ठाता (Governor) बनाया जाता या रेलवे, डाक, अथवा तार के विभागों के उच्च पद पर या इम्पीरियल सेक्रेटेरियट में ही, जिसकी कि राजसी शान अभी तक कायम है, नियुक्त किया जा सकता।

मिट्टी और राख को वहां एकत्रित करके किसी प्रांत विशेष को अवहेलित (Cindrella) करार देना बहुत आसान है। और इसी प्रकार, अन्य प्रांतों को जो अवसर मिलते हैं उनसे वंचित रख कर किसी प्रांत विशेष के लोगों को जो कि पहले ही न्यून भाव (inferiority complex) का शिकार हो रहे हों, ऐसे नामों से पुकारना और भी आसान है। श्रीमान्, इस परिषद् के कतिपय माननीय सदस्यों के चेहरों पर मैं कोप के चिन्ह देख रहा हूं और मैं समझता हूं कि मेरी खैर अब इसी में है कि मैं दौड़ कर अपने स्थान पर चला जाऊं।

***श्री एस॰ नागप्पा** (मद्रास: जनरल): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, सचमुच आज का दिन भारतीय इतिहास में बहुत महत्त्वपूर्ण है। अत: जैसा कि मेरे मित्र पहले ही कह चुके हैं, परामर्श समिति सर्वसम्मत रिपोर्ट के लिये धन्यवाद की पात्र है। मैं इस बात की ओर आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं कि ये अल्पसंख्यक बहुत देर से हमारी स्वतंत्रता का मार्ग रोके हुये थे। अंग्रेज अल्पसंख्यकों का पक्ष आज तक इसलिये लेते रहे हैं ताकि हमें स्वतंत्र करने में वे देर कर सकें। हम

15 अगस्त को स्वतंत्र हुये हैं और आज 27 तारीख है और केवल 12 दिनों में ही अल्पसंख्यकों के साथ समझौता हो गया है। अतः श्रीमान्, आप स्वयं देख सकते हैं कि भारत में कितनी एकता विद्यमान है। क्योंकि हम हमेशा के लिये बटे हुये दिखाई देते थे, इसलिये अंग्रेज यह चाल हमारे साथ खेल रहे थे। अब कुछ महीनों में ही हमने एक दूसरे को समझ लिया है और इस कारण ही हम अल्पसंख्यक समिति की सर्वसम्मत रिपोर्ट तैयार कर सके हैं। याद रखें कि इस समिति में सब मतों के प्रतिनिधि तो थे ही, परंतु बहुसंख्या अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधियों की थी। इन्होंने इन बातों के आधार पर हमारी स्वतंत्रता के प्रश्न को बहुत देर तक खटाई में डाले रखा। इससे हमारे मित्रों की ईमानदारी का खोखलापन क्या स्पष्ट जाहिर नहीं होता? पर खैर मैं अतीतकाल की बातों में नहीं जाना चाहता। मैं प्रसन्न हूं कि रेम्जे मैक्डेनल्ड द्वारा 15 वर्ष पहले पैदा की गई शरारत को आज हमने समाप्त कर दिया है। आज जो तबाही हो रही है उसके लिये वह उत्तरदायी है। इस देश में जो जाती और माली नुकसान हुआ है उसके लिये वह ही जिम्मेदार है। यदि मेरे पास शक्ति होती तो मैं उसे इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिये बुलाता। यही वह व्यक्ति है जिसने 15 वर्ष पूर्व सांप्रदायिक बटवारे द्वारा हमारे देश में फूट का बीज बोया।

श्रीमान्! आज का दिन बहुत मंगलमय है क्योंकि सब अल्पसंख्यक एक होकर समझने लग गये हैं कि व्यक्ति या किसी संप्रदाय विशेष के हितों से देश का हित बहुत ऊंचा है।

अब मैं विशेष रूप से श्री सरदार जी को बधाई देता हूं जिन्होंने अल्पमतों को असुरक्षित स्थानों पर चुनाव लड़ने की आज्ञा दी है। सचमुच यह एक बहुत बड़ी चीज है। हमें उन्हें बधाई इसलिये भी देनी है कि वे जब समय था तब अवसरनुसार सख्त भी हो गये थे। जहां आवश्यकता हो वहां सख्त हो जाना ही तो राजनीतिज्ञता है। कुछ एक मांगों को उन्होंने स्वीकार नहीं किया, विशेषकर मतों की प्रतिशत संख्या वाली मांग को। जहां उदार होने की आवश्यकता हो वहां उदार हो जाना और जहां दृढ़ता की आवश्यकता हो वहां दृढ़ता का प्रदर्शन करना, ये ही राजनीतिज्ञता के प्रमुख गुण हैं।

1935 के एक्ट (Act) के 'आदेश यंत्र' (Instrument of Instruction) में मंत्रिमंडल की बनावट के संबंध में एक शर्त है। परंतु यह अच्छा होगा कि अल्पसंख्यक के सदस्यों को यकीन दिला दिया जाये कि उन्हें भी मंत्रिमंडल में

[श्री एस. नागप्पा]

लिया जायेगा और यदि इस विषय में कोई वैधानिक शर्त बना दी जाये तो यह और भी संतोषजनक होगा। उदाहरण के तौर पर मैं अपने प्रांत को ही लेता हूं। हमारे यहां 215 सदस्य हैं। इनमें 30 हरिजन हैं। इस तरह धारा-सभा में उनकी संख्या 117 है जबकि प्रांत भर में उनकी गणना 115 है। उनकी जनसंख्या चार करोड़ नब्बे लाख के प्रांत में अस्सी लाख है। अर्थात् वे जनसंख्या में $1^1/_5$ और धारा-सभा में वे 117 हैं। परंतु मंत्रिमंडल में उन्हें कोई हिस्सा नहीं मिला। हमारे मंत्रिमंडल में 13 या 14 मंत्री हैं, अतः अपनी सदस्य संख्या के अनुपात से उनके 2 मंत्री होने चाहिये थे क्योंकि वे धारा-सभा में 117 की गिनती से हैं। लेकिन जब मंत्रिमंडल के निर्माण का प्रश्न उठा तो हरिजनों को एक स्थान भी न दिया गया। अब हमारे यहां 13 मंत्री हैं और उनमें से एक भी हरिजन नहीं। मैं कहता हूं कि हरिजन स्वयं मंत्री चुनना नहीं चाहते। मंत्रियों को चुनने का कार्य प्रधानमंत्री पर छोड़ दिया गया है। मेरी मांग तो केवल यह है कि मंत्रिमंडल में हरिजनों का भाग विधान द्वारा सुरक्षित कर दिया जाये। मैं अनुभव करता हूं कि हमें प्रधान मंत्री की दया पर नहीं रहना चाहिये। अपनी मर्जी से मंत्रियों को चुनने का अधिकार तो प्रधानमंत्री को मिल जाना चाहिये, परंतु हम ऐसी स्थिति में रहने के लिये तैयार नहीं जिससे हमें महसूस हो कि उसने हम पर कोई मेहरबानी की है। मंत्रिमंडल में लिया जाना हमारा उचित अधिकार है। यह मांग करके हम कोई दान नहीं मांग रहे। श्रीमान्! यह मार्ग है जिस पर चल कर न्याय किया जायेगा। आज हम खुली आंखों से अन्याय होता देख रहे हैं। इसलिये यह बेहतर होगा कि इन अल्पसंख्यकों को मंत्रिमंडल में उनकी वास्तविक स्थिति के संबंध में कोई यकीन दिला दिया जाये।

श्रीमान! यह संभव नहीं कि अल्पसंख्यकों में से प्रधानमंत्री लिये जायें, क्योंकि प्रधानमंत्री तो वह ही बन सकता है जिसे सदस्यों की बहुसंख्या का विश्वास प्राप्त हो। इसलिये यह आशा करना कि बारी-बारी सब संप्रदायों में से प्रधानमंत्री बनाये जायेंगे, ठीक न होगा। परंतु यह संभव है और शायद ऐसा हो भी कि एक ऐसी शर्त बना दी जाये जिसके अनुसार प्रांतों के अधिष्ठाता (Governors) बारी-बारी करके सब संप्रदायों में से चुने जाया करें। यदि इस रिपोर्ट में यह बात शामिल कर ली जाती तो काम बहुत ही सरल हो जाता।

श्रीमान्! पुनः यह भी संभव नहीं कि अल्पसंख्यक के किसी व्यक्ति को औपनिवेशिक प्रधानमंत्री बना दिया जाये। परंतु साथ ही साथ यह तो सहज है कि

औपनिवेशिक अध्यक्ष, अधिष्ठाता, उपाधिष्ठाता (Deputy Governor) और उपाध्यक्ष उन में से बारी-बारी से बनाये जायें। उदाहरणार्थ, 12 बारियों में–ये पद 6 बार बहुसंख्यक जाति के, 3 बार परिगणित जातियों के, 2 बार मुसलमानों के और एक बार अन्य छोटे अल्पसंख्यकों के हिस्से में आने चाहियें। यदि इस प्रकार किया जाये तो अल्पसंख्यकों को पर्याप्त विश्वास हो जायेगा कि बहुसंख्यक उनके प्रति ईमानदार और अनुकूल हैं।

औपनिवेशिक सरकार ने हाल ही में नौकरियों के बारे में जिस नीति का अवलंबन किया है, तदर्थ प्रसन्नतापूर्वक मैं उसे बधाई देता हूं। इसने कई एक जातियों से न्याय किया है और विशेषतया ईसाई जाति और ऐसी ही किसी अन्य जाति को तो न्याय से भी अधिक भाग दिया गया है। इस विषय में सरकार का कदम उपयुक्त ही है। मेरे विचार में यदि रिपोर्ट में ही यह दर्ज कर दिया जाता कि प्रत्येक जाति विशेष को नौकरियां उनकी जनसंख्या के अनुपात में ही मिलेंगी तो बेहतर होता। मैं एक से छीन कर दूसरे को देने के हक में नहीं। यह नीति बहुत ही बुरी है। मैं अपना हिस्सा लेना चाहता हूं, चाहे मैं अज्ञानी, अबोध अथवा गूंगा भी क्यों न होऊं। मेरी उपयुक्त मांग अवश्य स्वीकार की जानी चाहिये। मेरे गूंगे अथवा अबोध होने का आप लोग लाभ न उठायें। मैं तो केवल अपना उचित भाग चाहता हूं और कुछ नहीं। अन्य लोगों की भांति मैं पासंग (Weightage) या पृथक राजसत्ता नहीं चाहता, हालांकि इस देश के आदिवासी होने के कारण पृथक राजसत्ता के लिये हमारा सबसे अधिक अधिकार है।

श्रीमान्! जहां तक नौकरियों का मामला है मैं औपनिवेशिक सरकार को बधाई देता हूं। बेहतर होता कि इस रिपोर्ट में एतत्संबंधी कोई शर्त रख दी जाती, ताकि प्रांतीय सरकारें भी उसका अनुकरण कर लेतीं। अब भी औपनिवेशिक सरकार प्रांतीय सरकारों को इस विषय में अनुकरण करने का आदेश दे सकती है। अब मैं जनसंख्या के बारे में कुछ कहना चाहता हूं। श्रीमान्, सन् 1931 की जनगणना के अनुसार हमारी संख्या 7 करोड़ थी। हम देखते हैं कि 1941 की जनगणना के अनुसार देश में औसतन 14 प्रतिशत लोगों की बढ़ोतरी हुई। क्योंकि गरीबी में जनसंख्या अधिक बढ़ती है, अत: हमारी जाति की संख्या 20 प्रतिशत से कम क्या बढ़ी होगी। यह श्री माल्थस (Mr. Malthus) का सिद्धांत (theory) है। परंतु मैं इसका समर्थन नहीं कर रहा हूं। मैं तो केवल इतना ही कहना चाहता हूं कि धनी लोगों का जीवन स्तर (standard of life) ऊंचा होता है। अत: वे तब ही विवाह करते हैं जब वे किसी उच्च पद अथवा शक्ति या सम्पत्ति को प्राप्त कर लेते हैं। इस

[श्री एस. नागप्पा]

कारण उनके यहां औलाद कम होती है। किसी अमीर के यहां जाकर देख लीजिये आप उसे परमात्मा के दरबार में बच्चों के लिये प्रार्थना करते पायेंगे। इसके विपरीत यदि आप किसी निर्धन के यहां जायें तो आपको बच्चे ही बच्चे इधर-उधर घूमते हुए मिलेंगे। अतः हम श्री माल्थस (Mr. Malthus) के इस सिद्धांत से कि गरीबी में जनसंख्या अधिक बढ़ती है, चौंक उठने का कोई कारण नहीं देखते। श्रीमान्! 1931 की जनगणना में तो हम 6 करोड़ से अधिक थे फिर 1941 की जनगणना में घटकर किस तरह साढ़े पांच करोड़ रह गये हैं। इसमें सचमुच कोई गोलमाल हुआ है। विशेषकर के पंजाब और बिहार में; ओहो, आप मुझे क्षमा करें, पंजाब मैं भूल से कह गया, बंगाल कहना था; बिहार और बंगाल में इस संबंध में किसी ने बहुत शरारत की है। उन दिनों बंगाल में हिंदू और मुसलमानों में आपस में वाद-प्रतिवाद चल रहा था। इन दोनों ने ही निर्धन अबोध हरिजनों पर छापा मारने में अपनी भलाई समझी। इस तरह बहुत से हरिजन या तो मुसलमान बना लिये गये या हिन्दू होने के कारण उन्हें हिन्दुओं के खाने में लिख दिया गया और पृथक संकेत न किया। इस तरह 7 करोड़ से अधिक बढ़ जाने की बजाय हम घट कर साढ़े पांच करोड़ रह गये हैं। इसलिये मेरा निवेदन है कि हरिजनों को 'स्थान' देते समय 1931 की जनगणना को सामने रखा जाये। जनगणना हरिजनों ने नहीं की थी। यह तो सरकारी व्यवस्था द्वारा की गई थी और हमारा उसमें कोई हाथ न था। कोई हरिजन भी इस विषय में शरारत न कर सकता था क्योंकि यह तो सरकारी लिखत थी। आप जानते हैं सारी ही जनता की आबादी बढ़ी है। आप हमारे बारे में माध्यमिक बढ़ती का ही हिसाब लगा लें। मैं कोई विशेष शर्त रखवाना नहीं चाहता। उसी जनगणना के अनुसार कृपया फैला कर देख लें। पिछले दस वर्षों में हम दो करोड़ घट गये हैं, यदि इसी हिसाब से घटते गये दो आगामी दस या बीस वर्षों में कोई भी हरिजन न रहेगा। हरिजन से मेरा आशय यथार्थ अर्थों में हरिजन है और क्योंकि भविष्य में प्रतिनिधित्व जनगणना के आधार पर दिया जाना निश्चय हुआ है, अतः इस विषय में मुझे बहुत आशंका हो रही है। जैसा कि बम्बई के माननीय प्रधानमंत्री कहते हैं, मैं यदि आर्थिक दृष्टि से उनसे ऊंचा नहीं, तो उन जैसा ही होता या उनके बराबर ही होता तो मैं केवल एक 'स्थान' लेने को ही अधिक महत्त्व देता। परंतु अब यह सब कुछ विधान पर छोड़ दिया गया है। यह अभी देखा जाना है कि इस जाति के मामले में आप कितनी शीघ्र गति से काम करेंगे।

सारी की सारी ही यह रिपोर्ट हमारी बधाई की पात्र है। सरदार पटेल भी जिन्होंने इस प्रकार यह सर्वसम्मत रिपोर्ट तैयार की, हमारी बधाई के पात्र हैं। इसके साथ

ही हमें 'परामर्श समिति' और 'अल्पसंख्यक समिति' के प्रत्येक सदस्य को भी बधाई देनी है कि जिनके सहयोग से यह रिपोर्ट तैयार की जा सकी। श्रीमान्, मैं परिषद् से सिफारिश करता हूं कि इस रिपोर्ट पर अब विचार आरंभ किया जाये।

*__डा॰ एच॰सी॰ मुखर्जी__ (पश्चिमी बंगाल: जनरल): माननीय अध्यक्ष महोदय! मैं आरंभ में ही यह कह देना चाहता हूं कि मैं उन लोगों में से नहीं हूं कि जिनका ख्याल हो कि देश के अंगीभूत किसी समुदाय विशेष के महत्त्व या उसकी आर्थिक अथवा राजनैतिक महत्ता को ऊंचा कर देने से देश का गौरव बढ़ जाया करता है। इसके विपरीत मैंने तो सर्वदा ही राष्ट्रीय हितों को समुदाय विशेषों के हितों से ऊपर रखने का प्रचार किया है। इसके साथ ही ''अल्पसंख्यक-उप-समिति'' के सभापति की हैसियत से मेरे अनुभव ने मुझे यह विश्वास करा दिया है कि शांति के निमित्त और देश की भावी उन्नति के निमित्त अल्पमतों की इच्छाओं को पूरी करने के लिये प्रयत्न अवश्य किये जाने चाहिये। मैं स्वयं एक अल्पसंख्यक जाति का सदस्य हूं और मुझे यह देखकर कि मेरी जाति ने सब विशेष सुविधाओं को छोड़ने का निश्चय किया है, बड़ा गर्व महसूस होता है। अत: सबसे पहले मैं अपनी जाति के उन साथियों को जो यहां के सदस्य हैं और जो आज यहां उपस्थित भी हैं, धन्यवाद देता हूं। इस बात के साथ-साथ ही मुझे यह भी ज्ञात हुआ कि देश के कई एक समुदाय अल्पसंख्यक में अविश्वास रखते हैं। यदि मैं अपने अनुभव की बात कहूं तो यह है कि अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधियों की बहुसंख्या की ही ऐसी धारणा है। मैंने अपने तौर पर उन्हें कई बार कहा और अब भी बार-बार कहता रहता हूं कि उन्हें बहुसंख्यकों का थोड़ा बहुत विश्वास करना ही होगा। क्योंकि वे यदि संरक्षणों की मांग करते हैं तो वे संरक्षण तभी पूरे किये जा सकते हैं जब बहुसंख्यक पर विश्वास किया जाये, अन्यथा नहीं। परंतु मैं समझता हूं कि जब तक यह अविश्वास दूर नहीं होता हमें उनकी इच्छाओं को पूरा करने के लिये कुछ न कुछ करना पड़ेगा। इस अवसर पर मैं श्री मुंशी महोदय की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता कि जिन्होंने 'अल्पसंख्यक-उप-समिति' में विविध समुदायों की न्यून से न्यून मांग को जानने के लिये दौड़-धूप की। इतना ही नहीं इसके बाद उन्होंने जोर देकर परामर्श-समिति से ये मांगें पास भी करवाई। सरदार पटेल ने जो उदारता हमारे प्रति प्रदर्शित की है उसकी ओर संकेत किये बिना मैं नहीं रह सकता। इसलिये 'परामर्श-समिति' जिन परिणामों पर पहुंची है उनकी मैं परिषद् के सामने सिफारिश करता हूं। अपने बारे में मैं यह स्पष्ट बता

[डा. एच.सी. मुखर्जी]

देना चाहता हूं कि मेरा पक्ष तो बहुसंख्यक में विश्वास करने का है। मैं यह भी अनुभव करता हूं कि हममें से कुछ एक जो अधिक स्वाभाविक (radical) नीति का अवलंबन करना चाहते थे, उन्हें सरदार पटेल के विरुद्ध एक शिकायत सी हो गई है। इसका कारण यह है कि उन्होंने हमें अपनी मर्जी चलाने नहीं दी, यद्यपि मैं यह भी स्वीकार करता हूं कि हमें बहुसंख्यकों से हार हुई।

***अध्यक्षः** इस प्रस्ताव पर हमने काफी लंबी बहस कर ली है। यद्यपि मैं वक्ताओं को रोकना नहीं चाहता, परंतु मैं अगले दस मिनटों में इस बहस को समाप्त करना चाहता हूं। अभी तीन वक्ताओं को अपने विचार और प्रकट करने हैं। इसलिये मैं सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे अपनी वक्तृताओं को तीन मिनटों तक ही सीमित करें।

***श्री आर॰के॰ सिधवा** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): श्रीमान्, मैं परिषद् का अधिक समय नहीं लूंगा। बालकपन से ही मनुष्यमात्र की जाति अथवा मत आदि के भेदभावों से ऊपर होकर सेवा करना मैं एक धार्मिक कर्तव्य समझता रहा हूं। इसी एक बात को मैंने सर्वदा सामने रखा है और इसी का ही प्रचार करता रहा हूं। मैंने अपनी जाति को भी इसके अपनाने की प्रेरणा की है। मुझे इस बात का गर्व है कि मेरी जाति ने धारासभाओं अथवा नौकरियों में कभी भी पृथक निर्वाचन अथवा पृथक या विशेष प्रतिनिधित्व ग्रहण करने पर जोर नहीं दिया, हालांकि जाति का एक पर्याप्त भाग इस बात का विरोध करता रहा है। मुझे यह भी गर्व है और मैं इसे कहते हुये प्रसन्नता महसूस करता हूं कि यद्यपि हमने किसी प्रकार के विशेष प्रतिनिधित्व की प्राप्ति के लिये जोर नहीं दिया तो भी धारासभाओं के सुरक्षारहित सम्मिलित चुनावों से हमें वास्तविक खुशी हुई है। सरदार पटेल ने ठीक ही कहा है कि हमने राजनीतिक, शिक्षा और सामाजिक जीवन तथा जिंदगी के दूसरे अंगों में भी पूर्ण हिस्सा लिया है। इस प्रकार मैंने अपने दृष्टिकोण से अल्पसंख्यकों पर भी ऐसा प्रभाव डाला है कि वे अब समझने और महसूस करने लगे हैं कि एक ऐसी जाति को जो लोक जीवन के इन सारे ही अंगों में इस प्रकार भाग ले रही हो, कभी भुलाया नहीं जा सकता।

श्रीमान्, 'अल्पसंख्यक उप-समिति' में मेरे साथी सर होमी मोदी 'धारा सभाओं' में विशेष प्रतिनिधित्व ग्रहण करने के पक्ष में थे। मैंने उनकी इस बात का घोर विरोध किया था। मुझे वहां केवल तीन मत (votes) मिले थे, हालांकि मेरे विरोधी पक्ष को 22 । मेरा विरोध इसलिये नहीं था कि मैं गलत हूं अपितु इसलिये कि

मेरा दृष्टिकोण अपेक्षाकृत अत्यधिक युक्तिसंगत और इसी कारण बहुत अग्रगामी था। मैं आपको बताना चाहता हूं कि मेरे बिना मिले ही दूसरे दिन सर होमी मोदी यह अनुभव करने लग गये थे कि मैंने पहले दिन जो कुछ कहा था वह ठीक था और सर्वथा ठीक था। तब उन्होंने अपना दृष्टिकोण बदला। दूसरे दिन उन्होंने कहा कि पारसी जाति के लिये वह किसी विशेष प्रतिनिधित्व की मांग नहीं करते। अब वह अनुभव करने लग गए थे कि यदि उन्होंने ऐसा किया तो जाति को इससे बड़ी हानि होगी। इस बात से आप जान सकते हैं और सरदार पटेल ने वह कह भी दिया है कि हमें ही परस्पर में मिलकर अनुकूलता का ढंग बनाना होगा। मेरे एकांत में अथवा खुले रूप से मिले बिना ही सर होमी मोदी को अपना विचार बदलना पड़ा। अल्पसंख्यकों को तो मैं केवल यही कहना चाहता हूं कि सचमुच यदि वे भविष्य में अपने दृष्टिकोण को बहुसंख्यकों के दृष्टिकोण से मिलाने का प्रयत्न करेंगे, तो आगामी दस वर्षों के पश्चात् जो कि उन्हें मिले हैं, उन्हें बहुसंख्यकों के विरुद्ध न कोई क्षोभ रहेगा न कोई शिकायत। हालात को अपने अनुकूल बनाने के लिये अल्पसंख्यकों को केवल 'हृदय' की आवश्यकता है। मेरे विचार में दस वर्ष जो दिये गये हैं यह एक पर्याप्त लंबा समय है। मैं छोटे अल्पसंख्यकों से अनुरोधपूर्वक कहूंगा कि इस अवधि में वे अपने आपको इस तरह ढाल लें कि दस वर्षों की समाप्ति पर उन्हें बहुसंख्यकों के पास जाकर यह न कहना पड़े कि हमें यह दो, हमें वह दो। इसके विपरीत उनकी स्थिति ऐसी हो जानी चाहिये कि वे मांग कर सकें कि हम इस वस्तु के अधिकारी हैं। उन्हें इस बात को पूरा करके दिखाना चाहिये जैसा कि हमारी जाति करती रही है।

इन शब्दों में, मैं बहुसंख्यकों को उस उदारता के लिये जो कि उसने दिखाई है–हालांकि कुछ अल्पसंख्यकों को जो कुछ मिला है उसके अधिकारी भी न थे–बधाई देता हूं। मैं सचमुच बहुसंख्यकों को उसके लिये जो कुछ कि उसने किया, पूरा-पूरा श्रेय देता हूं। मैंने उनकी बहुत-सी बातों का विरोध किया है और मेरा वहां बहु पक्ष भी न था। परंतु इस सारे दौरान में मैं उनके उस उदारचरित से, जो कि उन्होंने छोटे अल्पसंख्यकों के लिये जगह बनाने के निमित्त व्यक्त किया है, बहुत प्रभावित हुआ हूं। श्रीमान्, मैं तो केवल इतना ही चाहता हूं कि 'अल्पसंख्यक' यह रूढ़ प्रयोग इतिहास से मिट जाना चाहिये। दस वर्ष का समय जो कि उन्हें दिया गया है, पर्याप्त है। मैं आशा करता हूं कि इन दस वर्षों में ही जब कभी पहली बार हम इकट्ठे होंगे तो ये ''अल्पसंख्यक'' उस समय आगे होकर कहेंगे कि हम अब प्रसन्न हैं और हमें अब कुछ नहीं चाहिये।

***श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): श्री अध्यक्ष महोदय, मैं स्वयं भी परामर्श समिति का सदस्य हूं, अत: स्वयं अपने आपको और अपने साथियों को बधाई देने के लिये मैं खड़ा नहीं हुआ। परंतु मैं तो आदिवासियों की ओर से कुछ शब्द कहने के लिये यहां आया हूं, क्योंकि हम पर भी अल्पसंख्यक उप-समिति की सिफारिशों का प्रभाव पड़ा है। मैं एंग्लो इंडियन और पारसियों के समान छोटे अल्पसंख्यकों को उनकी सफलता पर बधाई देता हूं। मैंने उन्हें छोटा इसलिये कहा है क्योंकि उनकी संख्या हमारी संख्या से बहुत ही कम है और इस दृष्टि से वे अत्यंत ही छोटे हैं। जहां तक एंग्लो इंडियन का संबंध है उन्हें तो निश्चय ही अपनी योग्यता से अधिक भाग मिला है। मुझे उनसे कोई ईर्ष्या नहीं। प्रभु करे उनका भविष्य और भी भाग्यशाली हो। 'हम संख्या की दृष्टि से अल्पसंख्यक हैं' इस बात को सामने रखकर हम यहां व्यवहार नहीं कर रहे। हिंदुओं या मुसलमानों से हम कम हैं अथवा पारसियों से अधिक, हमारी इस स्थिति का इस बात से कोई संबंध नहीं। हमारा पक्ष तो इस बात पर निर्भर है कि हमारे और जाति के अन्य लोगों के सामाजिक, आर्थिक और शिक्षा-स्तरों (Standard's) में जमीन और आसमान का फर्क है। और यह विधान द्वारा लगाई गई किसी विशेष शर्त द्वारा ही संभव हो सकता है कि हम लोगों को साधारण जनता के तल तक लाया जा सके। मेरे विचार में आदिवासी अल्पसंख्यक नहीं। मेरा तो हमेशा से ही यह ख्याल रहा है कि वे लोग जो देश के आदिस्वामी थे उनकी संख्या चाहे कितनी ही थोड़ी क्यों न हो कभी भी अल्पसंख्यक नहीं समझे जा सकते। उन्हें ये अधिकार परम्परा से प्राप्त हुये हैं और संसार में कोई भी उनसे ये छीन नहीं सकता। हम इस समय परम्परा से प्राप्त इन अधिकारों की मांग नहीं कर रहे हैं। हम तो दूसरे लोगों से जो व्यवहार होता है उसकी ही मांग करते हैं। भूतकाल में हमें इस तरह अलग-अलग रखा गया था मानों कि हम किसी चिड़ियाघर में रहते हों। इसके लिये मुझे बड़े राजनैतिक दलों, अंग्रेजी सरकार और प्रत्येक शिक्षित भारतीय को धन्यवाद देना है। भूत में हमारे प्रति सब लोगों का इस प्रकार का व्यवहार रहा है। हमारा कहना तो यह है कि आपको हमारे साथ मिलना ही होगा और हम भी आपके साथ मिलने के लिये तैयार हैं। इसी कारण से तो हमने धारासभाओं में स्थानों की सुरक्षा के लिये जोर लगाया है ताकि हम आपको अपने समीप आने के लिये बाध्य कर सकें और स्वयं अवश्य ही आपके समीप आयें। हमने पृथक निर्वाचन की कभी मांग नहीं की और वस्तुत: हमें यह कभी प्राप्त भी नहीं हुआ। केवल आदिवासियों के एक छोटे से अंग को जो कि अन्य मतों को और विशेषकर पाश्चात्य ईसाई धर्म को अपना चुका था, पृथक निर्वाचन प्राप्त हुआ था। परंतु इनकी

बहुत बड़ी संख्या, जहां कहीं पर भी उन्हे मत देने का अधिकार प्राप्त हुआ था, साधारण निर्वाचन के ही मातहत थी। हां, उनके लिये स्थान सुरक्षित कर दिये गये थे। अतः जहां तक आदिवासियों का संबंध है, कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ। परंतु आंकड़ों की दृष्टि से एक बहुत बड़ा परिवर्तन हो चुका है। सन् 1935 के एक्ट (Act) के अनुसार भारत की सारी प्रांतीय धारासभाओं के 1585 सदस्यों में से आदिवासियों के केवल 24 ही थे और केन्द्र में तो एक भी उनका सदस्य न था। अब वयस्क मताधिकार विधि के अनुसार, जो प्रत्येक लाख आबादी के पीछे एक सदस्य भेजने का अधिकार देती है, हमारी स्थिति में बड़ा भारी फर्क पड़ जायेगा। अब यह गिनती पहले से दस गुना होगी। जब मैं भारतीय भारत का जिक्र करता हूं, तो क्या मैं देशी रियासतों (Princely India) से भी यह निवेदन कर सकता हूं। देशी रियासतों (Princely India) में आदिवासियों को कहीं थोड़ा-सा भी प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं। मैं आशा करता हूं, भारतीय भारत के भाव वहां पर भी उचित रूप से प्रवेश कर जायेंगे।

*__श्री एम॰एस॰ अणे__ (दक्षिणी रियासतें): अभारतीय भारत अब कहीं नहीं है।

*__श्री जयपाल सिंहः__ मैं श्री अणे को बता दूं कि मैं 'अंग्रेजी भारत' इसके स्थान पर 'भारतीय भारत' इस नये रूढ़ का प्रयोग कर रहा था। इसी कारण रियासतों को मैंने देशीराज (Princely India) कहकर के पुकारा है। आप यदि किसी दूसरे प्रयोग को इस्तेमाल करना चाहें, कर लें। परंतु 'भारतीय भारत' से मेरा तो केवल 'देशी राज्यों से भिन्न' इतना ही आशय था। मैं आशा करता हूं कि भारतीय समाज के अत्यंत पिछड़े हुये भाग को आगे ले जाने के भाव देशी राज्यों में भी प्रवेश करने लगेंगे।

श्रीमान्, परिगणित जातियों के नेताओं ने नौकरियों में उनके लिये रखी गई 'सुरक्षा' के संबंध में कृतज्ञता प्रकट करते हुये बहुत कुछ कह डाला है। थोड़े ही दिन हुये जब कि भारतीय सरकार ने घोषणा की थी कि इस विषय में एक विषय नीति पर अमल किया जायेगा जिससे परिगणित जातियों को केन्द्रीय सरकार में स्थान दिया जा सके। मुझे बहुत खेद है कि अत्यंत अधिकारी समुदाय आदिवासियों को इस विषय में सर्वथा ही भुला दिया गया है। मैं आशा करता हूं कि मेरे ये शब्द भारतीय सरकार तक पहुंच जायेंगे और वह इस विशेष विषय की ओर कुछ ध्यान देगी। हम किसी असमान शर्तों पर 'सुरक्षा' की मांग नहीं करते। हमारी तो केवल इतनी ही इच्छा है कि जब तक नौकरी के लिये वांछित

[श्री जयपाल सिंह]

मानों (Standard's) को हम पूरा करते हैं तो उनसे हमें सर्वथा ही वंचित न रखा जाये।

आदिवासियों के संबंध में और बहुत कुछ कहा जा सकता है। परंतु कबीलों संबंधी दो उप-समितियों की रिपोर्टों पर विचार करते समय इस समस्या विशेष को सोचने का अवसर परिषद् को फिर प्राप्त होगा। अतः इस विषय में मैं अधिक नहीं कहूंगा। एतदर्थः मैं अल्पसंख्यक संबंधी परामर्श समिति की सिफारिशों पर परिषद् द्वारा विचार किये जाने का समर्थन करता हूं।

***अध्यक्षः** मेरा विचार है कि यदि परिषद् की मर्जी इसके विरुद्ध न हो तो अब बहस बंद कर दी जाये, क्योंकि इस विषय पर काफी बहस हो चुकी है। सदस्यों को इस विषय पर विचार करने का पुनः अवसर मिलेगा जब कि हम वाक्यखंडों को लेंगे।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, परामर्श समिति की ओर से मैं अल्पसंख्यक समिति का तथा परामर्श समिति के सदस्यों का जिन्होंने इस रिपोर्ट को, जो प्रायः सर्वसम्मत है तैयार करने में सहायता और सहयोग दिया है, धन्यवाद देता हूं। यह ख्याल किया जाता था कि यह रिपोर्ट बहुत वाद-प्रतिवाद पूर्ण होगी। इस परिषद् में किये गये भाषणों से विदित होता है कि यह रिपोर्ट संतोषप्रद है; अतः मैं प्रस्ताव करता हूं कि एंग्लो इंडियन संबंधी विषय समेत ही जिसकी ओर कि अपने आरंभिक भाषण में मैंने भी संकेत किया था, इस रिपोर्ट पर विचार किया जाये, तब हम अनुखण्डशः (clause by clause) विचार कर सकेंगे।

***अध्यक्षः** प्रश्न है कि—एंग्लो इंडियन संबंधी परिशिष्ट सहित इस रिपोर्ट पर विचार किया जाये।

प्रस्ताव पास हो गया।

***अध्यक्षः** अब हम रिपोर्ट के परिशिष्ट की मदों पर विचार करेंगे।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** सर्वप्रथम मद चुनावों की ओर संकेत करती है और वह इस प्रकार है:

''केन्द्रीय और प्रान्तीय धारा-सभाओं के सब चुनाव संयुक्त चुनाव विधि से होंगे।''

मेरा अनुमान है कि परिषद् इस विषय में एकमत है, अतः मैं इस विषय में कोई भाषण नहीं देना चाहता। श्रीमान्, मैंने प्रस्ताव प्रस्तुत कर दिया है।

***अध्यक्षः** क्या इस प्रस्ताव पर कोई संशोधन है?

***श्री बी॰ पोकर साहब बहादुरः** श्री अध्यक्ष महोदय, मैं माननीय प्रस्तावक का उन भावों के लिये, जिससे प्रेरित होकर उन्होंने परिषद् से पिछली बातों को भुलाकर मित्र भाव से प्रेरित होकर बातचीत करने के लिये अनुरोध किया है, धन्यवाद देता हूं। मैं इस भावना का स्वागत करता हूं और श्री प्रस्तावक महोदय की इच्छा को अवश्य ही पूरा करूंगा। श्रीमान्, आपको ज्ञात ही है कि हम बहुत ही विकट समय में से गुजर रहे हैं। यहां पर कहा हुआ प्रत्येक शब्द दोनों ओर बहुत गहरा असर उत्पन्न करेगा। इससे दोनों संप्रदायों का पारस्परिक संबंध घनिष्ठ बन सकता है और इससे ही दोनों में झगड़े डलवाये जा सकते हैं। श्रीमान्, इन भावों के साथ मैं अपना संशोधन पेश करता हूं, जिससे कि मुझे श्री माननीय प्रस्तावक महोदय तथा समिति की सिफारिशों से मतभेद प्रकट करना पड़ा है। श्रीमान्, इन शब्दों के पश्चात् मैं अपना पहला संशोधन जो कि आज के कार्यक्रम में अंकित है, पेश करता हूं। यह इस प्रकार है किः

''अल्पसंख्यकों के मौलिक अधिकार इत्यादि पर विचार करने के लिये बनाई गई परामर्श समिति द्वारा तैयार की गई अल्पसंख्यकों के अधिकारों संबंधी रिपोर्ट पर विचार करके विधान-परिषद् की यह बैठक निश्चय करती है कि जहां तक मुसलमानों का संबंध है, केन्द्रीय और प्रान्तीय धारा-सभाओं के सारे चुनाव पृथक विधि के अनुसार किये जायें।''

श्रीमान्, इस प्रस्ताव को पेश करते समय मुझे पूरा ज्ञान है कि मुझसे मतभेद रखने वाले सज्जन यहां बहुत हैं। यही नहीं कि वे पृथक चुनाव को पसंद ही नहीं करते, अपितु वे यह भी महसूस करते हैं कि पृथक चुनाव ही देश पर इस समय आई हुई सारी मुसीबतों की जड़ है। उनके विचार में देश की इतनी भारी हानि करने वाली आपस की भ्रांति (misunderstanding) के लिये भी यह ही जिम्मेदार है।

श्रीमान्! मेरा निवेदन है कि इस प्रश्न पर विचार करते समय परिषद् के माननीय सदस्यों को चाहिये कि वे माननीय प्रस्तावक महोदय की प्रार्थना पर अमल करें

[श्री बी. पोकर साहब बहादुर]

और पिछली बातों को भुलाकर साफ ह्रदय से कार्यारम्भ करें। उन्हें चाहिये कि पिछले कुछ वर्षों से पूर्वानुभाषित (pre-conceived) नए विचारों को काम में न लाएं और अतीत काल की बातों को भूल जाएं। इस प्रश्न पर उन्हें केवल इस दृष्टि से विचार करना चाहिये कि वह शर्त जो मैं प्रस्तुत कर रहा हूं, दोनों जातियों में अच्छे संबंध पैदा करने के निमित्त कितनी लाभकारी है और इससे सब जातियों की खुशी में कितनी वृद्धि होगी। मैं प्रार्थना करूंगा कि वे पिछली घटनाओं से अपने आपको पृथक रखकर इस प्रश्न पर विचार करें और देखें कि दो पारस्परिक मैत्री संबंधों को घनिष्ठ करना कितना आवश्यक और संभव है। उन्हें शीघ्र ही ज्ञात हो जायेगा कि देश भर की सब जातियों को संतुष्ट रखना बहुत जरूरी है और इस विषय में वे मेरी ओर से प्रस्तुत की गई शर्त को विविध जातियों की खुशी में वृद्धि करने वाली ही पाएंगे। मैं निवेदन करूंगा कि हमें अपना कार्य निम्न प्रकार की प्रस्तावना से आरंभ करना चाहिये कि हमारा सबसे पहला और मौलिक कर्तव्य है कि हम ऐसा विधान बनावें जिससे कि सारी जातियों की तृप्ति हो जाये और जिसके द्वारा इन सब में संतोष का प्रसार हो। श्रीमान्! मुझे आशा है कि सारी परिषद् इस बात में मुझसे सहमत होगी कि यदि मुख्य-मुख्य जातियां असंतुष्ट रहीं और उनमें यह भावना कि देश के राजकार्य में उनकी बात उचितरूपेण सुनी नहीं जाती, तो यह एक ऐसी बुराई होगी कि जिसका निराकरण हमें हर कीमत पर करना चाहिये। सब जातियों का संतोष और तृप्ति करना अच्छे विधान का एक अनिवार्य अंग है और यह हमारा एक धार्मिक कर्तव्य है कि हम इसे पूरा करें।

मैं देखता हूं कि कुछ एक भाषणों में तो अल्पसंख्यक अर्थात् अल्पसंख्यक जातियों की सत्ता पर भी खेद प्रकट किया गया है। तथ्य तो यह है कि ऐसी विचारधाराओं को सामने रखने से, जो कि पूरी ही न की जा सकती हों, कोई भी लाभ नहीं हो सकता। यह तो मनुष्य स्वभाव के विरुद्ध कार्य करने के समान है। मनुष्य स्वभाव जैसा कि आज है यदि ऐसा ही रहे तो 'अल्पसंख्यक' और 'अल्पसंख्यक जातियों' का किसी भी देश में होना अनिवार्य है। विशेष करके भारत जैसे किसी उप-महाद्वीप (Sub-Continent) तुल्य विस्तृत प्रदेश में तो उनका होना आवश्यक ही है और यह मनुष्य की शक्ति से बाहर है कि उनकी सत्ता को मिटा सके। हम तो केवल इतना ही कर सकते हैं कि उनके मतभेदों को कम करें और कार्य को इस प्रकार चलाएं कि सारे अल्पसंख्यक संतुष्ट होकर तृप्ति का आस्वादन लें। इस विषय में दो नियम हैं जिनका हमें ख्याल रखना पड़ेगा। विविध जातियों में ले दे कर कार्य करने की भावना होनी चाहिये और विशेषकर

बहुसंख्यक में तो उदारता के भाव काम करने चाहियें। उन्हें बहुत हिसाब से काम नहीं लेना चाहिये। न ही इस संकुचित दृष्टि से इन बातों पर विचार किया जाना चाहिये। जब कुछ अल्पसंख्यकों को बहुत ही हीन दशा (disabilities) में कार्य करना पड़ रहा हो और वे यह अनुभव भी कर रहे हों कि देश के राजकार्य में उन्हें अपना उचित भाग नहीं मिल रहा, तो ऐसी उचित शर्तें लगा देनी चाहियें जिससे कि उनका संतोष हो सके। यदि बहुसंख्यक यह भी अनुभव करें कि कोई अल्पसंख्यक विशेष अपनी बात को पूरा करवाने के लिये जिस विधि की मांग कर रहा है वह ठीक नहीं, तो भी मैं कहूंगा कि ''दो और लो'' की भावना से प्रेरित होकर बहुसंख्यक को उदारता का ही व्यवहार करना चाहिये। श्रीमान्! मैं आपके द्वारा परिषद् के सदस्यों से बलपूर्वक प्रार्थना करूंगा कि वे मेरी इस बात को विशेषकर ध्यान में रखें। उन्हें यह भी याद रखना चाहिये कि यदि बहुसंख्यक ने यह उदारता कभी प्रदर्शित की तो वे घाटे में न रहेंगे। आखिर को बहुसंख्यक बहुसंख्यक ही हैं और अल्पसंख्यक अल्पसंख्यक ही। यदि कोई ऐसा तरीका भी प्रस्तुत किया जाये जिससे किसी अल्पसंख्यक विशेष को अपनी जनसंख्या अथवा किसी अन्य चीज के अनुसार प्राप्त होने वाले भाग से कुछ अधिक भी मिले तो भी बहुसंख्यक को तो ''दो और लो'' की भावना से प्रेरित होकर उदारता का ही व्यवहार करना चाहिये। यह है वह भावना जिससे प्रेरित होकर इस प्रश्न पर विचार करने के लिए मैं परिषद् से प्रेरणा कर रहा हूं। मुझे ये आरंभिक शब्द इसलिए कहने पड़े हैं, क्योंकि मुझे पता है कि जनता का एक बड़ा भाग पृथक चुनाव के बहुत विरुद्ध है। अल्पसंख्यक समिति और परामर्श समिति की रिपोर्ट में भी यह बात मिलती है। वे लोग पृथक चुनाव को अथवा पृथक चुनाव विधि को अंगीकार करना बहुत ही खतरनाक समझते हैं।

अब मैं आपको बताना चाहता हूं कि इस देश में बहुत सारी जातियां और कई एक अल्पसंख्यक हैं और उनकी सत्ता को मिटा देना कभी संभव नहीं। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, यह हमारा कर्तव्य है, यह उन लोगों का कर्तव्य है कि जो विधान बना रहे हैं कि वे उसे इस प्रकार का बनाएं कि जिसमें ऐसी शर्तें हों कि सारे ही उनसे संतुष्ट रहें।

अब अगली बात यह है कि इन विचारों को कार्यरूप में कैसे परिणत किया जाये। श्रीमान्! मेरा निवेदन है कि जब तक यह बात मानी जाती है कि अल्पसंख्यकों को संतुष्ट रखना चाहिये और कि उनके विचार और उनकी शिकायतों को धारासभाओं में विचार-विनिमय करते समय प्रभावोत्पादक विधि से रखा जाना चाहिये तो मेरा कहना है कि इसका केवल मात्र हल यह है कि उस व्यक्ति को जो कि अल्पसंख्यक का पूर्णतया प्रतिनिधि हो, हथिया लिया जाये। इसके विपरीत, यदि

[श्री बी. पोकर साहब बहादुर]

आप यह कहें कि उस जाति को जाति के रूप मे जीवित रहने का कोई अधिकार ही नहीं और कि यह लेखनी की एक घसीट से पूरा हो जाये तो श्रीमान्, मेरी यहां अवश्य ही कोई सुनवाई न होगी। परंतु यह आवश्यक है और यह आपको भी मानना पड़ेगा कि यहां पर ऐसी जातियां हैं कि जिनमें मजहब अथवा किसी और बिना पर बड़े गहरे मतभेद हैं। ऐसी जातियों के लिये हमारा यह कर्तव्य है कि विधान में कोई न कोई ऐसी शर्तें रखें कि जिससे उन्हें पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिल सके। और किसी जाति को प्रतिनिधित्व देने की सबसे उत्तम और प्रभावशाली विधि यह ही है कि कोई ऐसा तरीका बना दिया जाये जिससे उस जाति के सबसे उत्तम पुरुष को जो कि उस जाति का प्रतिनिधित्व कर सके तथा उसके भावों को ठीक तरह से व्यक्त कर सके, धारा-सभा के लिए चुना जाए। केवल मात्र यही एक कसौटी है जिसके आधार पर हमें इस प्रश्न पर विचार करना है। अब सवाल यह है कि इस बात को पूरा करने के लिए पृथक चुनाव की आवश्यकता है कि नहीं। यह बात तो समिति की रिपोर्ट में भी मानी जा चुकी है कि जातियों के हितों को धारा-सभाओं में उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त होना चाहिए। अब केवल भेद यह रह जाता है कि वह ध्येय को किसी और प्रकार से प्राप्त करना चाहते हैं और मेरा कहना है कि उस प्रकार से कदापि सफलता नहीं हो सकती। इस विषय में अल्पसंख्यक समिति का कथन है कि ''उस अल्पसंख्यक विशेष के लोगों के लिए कुछ स्थान सुरक्षित कर दिए जाएं'', परंतु यह किए जाएंगे संयुक्त चुनाव विधि से ही। इस प्रकार तो वह व्यक्ति ही चुना जा सकेगा जिसकी पीठ पर कि बहुसंख्यक का हाथ होगा; चाहे वह बहुसंख्यक का अपना ही आदमी क्यों न हो जिसे कि अल्पसंख्यक के भेष में खड़ा किया गया हो। ऐसे उदाहरण हैं जबकि असहयोग के जमाने में हिंदू और मुसलमान दोनों ने मिल करके मखोल उड़ाने के लिए ही धारा-सभाओं का बहिष्कार किया था। ऐसे अवसर पर किसी अनपढ़ चूड़े या भंगी अथवा ऐसे ही किसी और व्यक्ति को किसी जाति विशेष की ओर से चुनाव में केवल सारी बात का हास्य उड़ाने के लिए खड़ा किया जाता रहा है। अगर उन दिनों में ऐसा किया जा सकता था तो मैं पूछता हूं कि आजकल क्या इसकी पुनरावृत्ति न होगी? इसमें कोई संदेह नहीं कि सारा मामला इस बात पर निर्भर है कि प्रश्न पर किस दृष्टिकोण से विचार किया जाये। परंतु मेरा निवेदन है कि एक व्यक्ति का किसी जाति विशेष में से होना इस बात की कोई जमानत नहीं कि उसके विचार उस जाति की तरजमानी करते हैं। किसी जाति का यदि उचित रूप से प्रतिनिधित्व किया जाता है तो यह आवश्यक है कि वह जाति अपने सदस्यों में से स्वयं कोई उचित व्यक्ति चुने। यही मेरी आपसे

प्रार्थना है। यदि कोई अयोग्य मनुष्य अथवा कोई ऐसा व्यक्ति जो जाति की आवश्यकताओं को समझने की सामर्थ्य भी नहीं रखता, प्रतिनिधि चुना जाना है, तो उससे केवल इसलिए कि वह उस जाति विशेष से संबंध रखता है, उस जाति की तरजमानी की कोई आशा नहीं की जा सकती। श्रीमान्! यह है वह कसौटी जिस पर हमें इस रिपोर्ट को परखना चाहिये और देखना चाहिये कि इससे वह नियम जिसके द्वारा विविध जातियों को धारा-सभाओं में प्रतिनिधित्व देना अभीष्ट था, पूरा होता है कि नहीं। इसके विपरीत यदि अल्पसंख्यक की सत्ता और उसके प्रतिनिधित्व प्राप्त करने के अधिकार से ही इंकार किया जाना है, तो इस विषय में मुझे और कुछ नहीं कहना। परंतु मैं आपसे इस प्रश्न को उदारतापूर्वक निपटाने की प्रार्थना करूंगा। मैं माननीय सदस्यों को उन दिनों का स्मरण कराना चाहता हूं जब 1916 की लखनऊ-संधि (Lucknow Pact) पर चलते हुए पृथक निर्वाचन विधि को स्वीकार कर लिया गया था। यह इस बात का ही परिणाम था कि 1920 के असहयोग के दिनों में दोनों जातियां भाइयों की तरह कंधे से कंधा मिलाकर चलने लगी थीं। श्रीमान्! यदि दोनों जातियों के उन दिनों के भाई-बहिनों के से व्यवहार द्वारा, हमें आज मिलने वाली स्वतंत्रता की नींव डाली जा सकती थी, तो मुझे कोई कारण दिखाई नहीं देता कि क्यों आज के बाद भी भाई-बहिनों के समान मिलकर हम फिर इस नियम पर अमल न कर सकेंगे और एक ही परिवार के सदस्यों की भांति कार्य करते हुये हम संसार भर की जातियों में क्यों न भारत को गर्वान्वित बना सकेंगे? भारत को संसार भर की जातियों में अग्रगण्य बनाना हमारा काम है और यह तभी हो सकता है, यदि हम सहानुभूति और मित्रभाव से व्यवहार करें। 1920 के असहयोग के जमाने में जिन भावों से प्रेरित होकर हम कार्य करते थे, उन्हें सामने रखकर मैं कह सकता हूं कि आज भी हम उन भावनाओं से काम कर सकते हैं। श्रीमान्, मैं निवेदन करता हूं कि मन में पूर्वभासित इस भावना को कि देश की सारी बुराइयों की जड़ पृथक् निर्वाचन-विधि ही है, एक तरफ रखकर इस परिषद् के सदस्यों को एक उदाहरण कायम करना चाहिये। यह भावना ठीक है या अशुद्ध, मैं इस बात पर बहस नहीं करना चाहता। मेरी तो आपसे केवल यही प्रार्थना है कि आप माननीय प्रस्तावक महोदय के इस कथन का, कि पिछली बातों को भुला देना चाहिये और भविष्य में मित्रभावों से प्रेरित होकर व्यवहार करना चाहिये, समर्थन करें।

मुझे एक और बात पर भी जोर देना है। धारासभा का उद्देश्य सारे देश और सब जातियों के लिये कानून बनाना है। अतः यह कानून बहुत आवश्यक है कि ऐसी धारासभाओं में सभी जातियों की आवश्यकताओं को पेश किया जाये। मैं निवेदन

[श्री बी. पोकर साहब बहादुर]

करता हूं कि इन हालात में, जैसे कि इस समय देश में प्रचलित हैं, एक विशेष जाति के सदस्यों के लिये, उदाहरणार्थ गैर मुस्लिमों के लिये, यह बहुत कठिन होगा कि वे मुस्लिम जाति की आवश्यकताओं को समझ भी सकें। मेरा कहना है कि यदि कोई गैर मुस्लिम पूरा प्रयत्न भी करे तो भी वह महसूस करेगा कि मुस्लिम जाति की भावनाओं की वह तरजमानी नहीं कर सकता। कारण यह है कि जब तक वह उस जाति से संबंधित न हो वह उस जाति विशेष की वास्तविक आवश्यकताओं का पता लगाने, समझने और उनकी कदर करने की स्थिति में ही नहीं होता। उनके लिये आवश्यकताओं को ठीक-ठीक समझना प्रायः असंभव ही है। इस संबंध में हमेशा ही बहुत सारे ऐसे प्रश्न होते रहे हैं और विशेषकर के आगे को भी होंगे कि जिनके विषय में जातियों के लिये धारासभाओं में आवाज उठाना जरूरी होगा। जैसा कि दान में दी हुई सम्पत्तियां, विवाह, संबंध-विच्छेद (divorce) तथा समाज के लिये और भी अन्य महत्त्वशाली बातें। मैं परिषद् से प्रार्थना करूंगा कि वह इस विषय में तनिक विपरीत दिशा में भी सोचने का कष्ट करे। यदि मुसलमानों को धारासभा में हिंदुओं की शिकायतों की तरजमानी करनी हो और उन्होंने ही उदाहरणार्थ मानो मंदिर प्रवेश तथा विवाह संबंधी रिवाजों इत्यादि के रास्ते में पेश आने वाली कठिनाइयों को हटाने के निमित्त प्रभावोत्पादक उपाय सोचने हों, तो जरा ख्याल दौड़ाइये इसे हिंदू किस प्रकार महसूस करेंगे? मैं मानता हूं कि दोनों ओर ही, हिन्दू और मुसलमान दोनों ही की आवश्यकताओं को अच्छी तरह से जानने वाले मिल जाते हैं पर उनकी गिनती बहुत थोड़ी है। इसीलिये ही तो मैं कहता हूं कि नियम यह होना चाहिये कि किसी जाति विशेष के सबसे उत्तम आदमी को ही उसके विचारों की तरजमानी करने के लिये चुना जाये। और यह मकसद पृथक निर्वाचन विधि के बिना पूरा नहीं हो सकता।

मैं आपके सामने एक और बात भी रखना चाहता हूं। वह यह है कि पृथक् निर्वाचन विधि रूपी संस्था का उपभोग मुसलमान इस शताब्दी के प्रथम दस वर्षों से ही कर रहे हैं। अर्थात् इस सुविधा से लाभ उठाते हुये उन्हें आज 40 वर्ष हो गये हैं और आज जब कि स्वतंत्रता प्राप्त की जा चुकी है, इसका खात्मा किया जा रहा है। मेरा निवेदन है कि इससे मुसलमानों में ये भाव जागृत होंगे कि उन्हें इस विकट समय में पूर्व प्रचलित संस्थाओं के लाभ से वंचित किया जा रहा है और यह कि उनकी अवहेलना की जा रही है और उनकी आवाज को दबाया जा रहा है। मैं सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि वे इस प्रकार की स्थिति आने ही न दें और भारतीय मुसलमानों में इन भावों को उत्पन्न न होने दें।

एक और बात जिसकी ओर मैं इशारा करना चाहता हूं, यह है कि इस देश में मुसलमान सुसंगठित हैं। देश के सामूहिक हित की दृष्टि से यह बहुत ही आवश्यक है कि प्रत्येक महत्त्वशाली जाति सुसंगठित हो जाये। तभी तो सारे मिलकर देश की भावी राजसत्ता के संबंध में कोई समझौता कर सकेंगे। इस समय मुसलमान शक्तिशाली और सुसंगठित हैं। अत: यदि उन्हें यह महसूस करने पर मजबूर किया गया कि उनकी आवाज की धारासभा में सुनवाई नहीं हो सकती तो वे उद्दण्ड हो जायेंगे। मैं आपसे प्रार्थना करूंगा कि आप ऐसा अवसर आने ही न दें। आपको पूर्णतया पता है कि इस समय कांग्रेस और मुस्लिम लीग के ध्येयों में बहुत थोड़ा भेद है। इसमें कोई शक नहीं कि केवल थोड़े दिन पहले ही उन दोनों में बहुत बड़े मतभेद विद्यमान थे। परंतु बुद्धिमत्ता से कहो या मूर्खता से अथवा गलत या ठीक तौर पर वे अब मिटा दिये गये हैं। आज इन दोनों बड़ी संस्थाओं में समझौता हो चुका है। वे मौलिक बातें जिन पर कि उनका मतभेद था, अब सुलझाई जा चुकी हैं। अत: इस समय इन दोनों में वस्तुत: कोई भेद नहीं। इस दशा में उन्हें आपस में अवश्य मिल जाना चाहिये, ताकि देश से ध्वंसकारी अंशों का विनाश किया जा सके। मुझे विश्वास है कि आप मुझसे इस बात में सहमत होंगे कि देश में बहुत से ध्वंसकारी अंश विद्यमान हैं। उनकी सरगर्मियां इस समय विधि और मर्यादा (law and order) के विरुद्ध हैं। प्रांतीय सरकारों ने इन ध्वंसकारी अंशों का विनाश करने के लिये आर्डिनेंस (ordinance) जारी करने की शक्ति प्राप्त कर ली है। अब मैं इस परिषद् के माननीय सज्जनों से अनुरोध करता हूं कि कांग्रेसी सज्जनों, मुसलमानों तथा दूसरी जातियों को आपस में मिलकर इस प्रकार कार्य करना चाहिये जिससे कि इन ध्वंसकारी अंशों का जिन्होंने कि हमारे महत्त्वशाली देश के इतिहास में इस विकट समय पर सर उठाया है, विनाश किया जाये। इस बात को पूरा करने के लिये ही, यह जानता हुआ भी कि इस बात पर बहुत मतभेद विद्यमान हैं, मैं कहता हूं कि मुसलमानों को पृथक चुनाव का अधिकार देकर हम अच्छा ही करेंगे क्योंकि इस प्रकार से धारा-सभा में उनकी सुनवाई हो सकेगी और वे कांग्रेस के साथ मिलकर काम कर सकेंगे। अन्यथा ये ध्वंसकारी अंश देश के लोगों की रक्षा के लिये आभयन्तर और बाह्य दोनों ओर से एक बहुत बड़ा खतरा बन जायेंगे। मैं इस बात को अधिक स्पष्टता से नहीं कहना चाहता क्योंकि मुझे पता है कि माननीय सदस्यों ने इस विषय में मेरे कथन को जान लिया है। श्रीमान्, इन शब्दों के साथ मैं अपना संशोधन पेश करता हूं।

श्री अध्यक्ष महोदय, मैंने और संशोधनों की भी सूचना दे रखी है। वे परिशिष्ट की किसी न किसी मद से अवश्य संबंधित हैं। अत: उन्हें प्रस्तुत करने के अपने अधिकार को अभी मैं सुरक्षित रखता हूं।

***अध्यक्षः** अब संशोधन और प्रस्ताव पर बहस होगी।

***श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, पूर्व वक्ता के भाषण से मैं बहुत ही निराश हुआ हूं। मेरा ख्याल था कि पाकिस्तान प्राप्त कर लेने के बाद हिंदुस्तान में रहने वाले मेरे मुसलमान मित्र अपना व्यवहार बदल लेंगे। मुझे, जब मैं यह सोचने लगता हूं कि उनके लिये इससे अधिक और क्या किया जा सकता था, तो सचमुच अचम्भा होता है। हर मुमकिन तरीके से उन्हें मनाने के लिये जब हम सब कुछ करने को तैयार हो जाते हैं तो यह बहुत ही ज्यादा है। 24 जुलाई, सन् 1923 को जनेवा के स्थान पर अपने अल्पसंख्यकों की रक्षा के लिये तुर्की ने जिस संधि पर हस्ताक्षर किये थे वह इस समय मेरे सामने है। मैं इस संशोधन के पक्षपातियों से पूछता हूं कि दुनिया में कहीं भी स्थित किसी देश के किसी कोने से भी (यदि वे दिखला सकते हों तो) मुझे वे कोई उदाहरण दिखलायें कि जहां पर एक राजनीतिक अधिकार को इस प्रकार स्वीकार कर लिया गया हो जैसा कि हमने यहां पर किया है। मैं परिषद् से प्रार्थना करूंगा कि कृपया वे तुर्की की उक्त संधि के 39वीं धारा (Article) को पढ़ें। यह नहीं कहा जा सकता कि मुसलमानों के हितों की रक्षा के लिये पिछले कुछ वर्षों में तुर्की से बढ़कर जोर लगाने वाला कोई और मुल्क है। आओ, देखें कि तुर्की में अन्य अल्पमतों को उन्होंने कौन से अधिकार दिये हैं और अपने नागरिकों के लिये दूसरे देशों से उन्होंने कौन से अधिकार मांगे हैं। मेरे पास यहां चित्र के दोनों पहलू हैं। ये दोनों ही संधियां वैधानिक उदाहरण नंबर में 3 छपी हुई हैं। मैं 39वीं धारा (Article) पढ़ता हूं:

> **''गैर मुसलमान जातियों से संबंध रखने वाले तुर्की के नागरिक तुर्की के मुसलमानों के समान ही नागरिक और राजनैतिक अधिकारों का उपभोग करेंगे।''**

सचमुच उन्हें ये अधिकार प्राप्त हैं। इसका मतलब केवल यह है कि उन्हें बाकी जाति के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने का अधिकार प्राप्त है। वे चुनाव में कहीं पर भी और किसी भी ''स्थान'' के लिये खड़े हो सकते हैं और बिना किसी रोक-टोक के किसी भी नौकरी अथवा पद के लिये उम्मीदवार बन सकते हैं। उन्हें सब प्रकार से सारी जाति का विश्वास प्राप्त करने दो। केवल यही एक मार्ग है जिसके द्वारा वे इकट्ठे हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त और कौन सा उचित मार्ग हो सकता है यह मुझे पता नहीं। इस संबंध में आप मेरे

से पूर्व बोलने वाले माननीय सदस्य से पूछ सकते हैं। उनकी शिकायत का बीज 1916 में हमारे द्वारा नहीं अपितु अंग्रेजों द्वारा बोया गया था। आप मुझे आज से कुछ देर पहले का देश का इतिहास दोहराने दीजिये, चाहे इसमें परिषद् का कुछ समय ही क्यों न लग जाये। 1857 में हिंदू और मुसलमानों ने मिलकर जंग की। हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि उस समय हम अपने देश में देशवासियों का ही राज्य स्थापित करना चाहते थे। चाहे वे हिंदू थे या मुसलमान, इस बात की कोई तमीज न थी। जो जहां थे उनका ही राज देश के विभिन्न भागों में कायम करने का प्रयत्न किया गया था। उन्होंने इस देश को विदेशियों से छुड़ाने और स्वतंत्र करने के लिये मिलकर जंग लड़ी। पाश्चात्य इतिहासकार इसे चाहे कुछ भी नाम दें, परंतु यह था जंगे-आजादी। उसके बाद अंग्रेजी सरकार ने एक जाति को दूसरी के विरुद्ध प्रयोग करने का प्रयत्न किया। अब कभी हिंदुओं पर कृपादृष्टि होने लगी और कभी मुसलमानों पर। यह ठीक है कि कतिपय माने हुये तथा देश-प्रेमी यूरोप के लोगों ने ही भारतीय राष्ट्र सभा (Indian National Congress) को बनाने का विचार हमारे मन में डाला। बेशक यह ठीक है, परंतु उनके पीछे आने वालों ने क्या किया? पंद्रह वर्ष के थोड़े समय में ही उन्होंने देखा कि स्वतंत्रता का विचार देश में पूरी तरह घर कर गया है और यह उनके लिये घातक था। इसीलिये 1903 में लार्ड कर्जन ने बंगाल में हिंदू और मुसलमानों को जुदा करना चाहा। परंतु इसकी प्रतिक्रिया इतनी प्रबल हुई कि कोई भी मनुष्य स्त्री और बच्चा तक भी बंगाल प्रांत के विभाजन को मलियामेट किये बिना दम नहीं लेना चाहता था। इस तरह हम पुनः एक हो गये। परंतु पृथक चुनाव-विधि के कारण आज हम पुनः जुदा-जुदा हैं। श्रीमान्, मुझे बताया गया है कि एक दिन एक यूरोपवासी ने, जिसका कि इस देश में पृथक चुनाव विधि जारी करने में काफी हाथ था, इंगलिस्तान में अपने किसी मित्र को लिखा कि वह संसार में सबसे उत्तम वस्तु को प्राप्त करने में सफल हो गया है। और वह वस्तु है हिंदुओं और मुसलमानों का जुदा किया जाना। इसमें कोई शक नहीं कि हिंदू और मुसलमानों में मतभेद विद्यमान हैं। एक पूर्व की ओर दूसरा पश्चिम की ओर मुंह करके अपनी प्रार्थना करता है। परंतु इसके साथ ही दोनों को इकट्ठा रखने वाले संयुक्त बंधन भी तो हैं। मुहम्मद ने विविध लड़ाके अंशों (elements) को अपने झंडे के नीचे लाने के लिये मजहब का आरंभ किया। पुराने जमाने में मजहब मिलाने वाली एक शक्ति हुआ करती थी। आज भी कोई संयुक्त प्लेटफार्म होना चाहिये, जहां सारे ही इकट्ठे हो सकें। मैं उस दिन की ओर देख रहा हूं जब सारी मानव जाति एक हो जायेगी। जब जाति और मत के सब भेदभाव मिट जायेंगे *(तालियां)*। जब बच्चे से यह पूछे जाने पर कि तुम्हारा कौन सा मजहब है, उत्तर देंगे कि: ''मेरा किसी धर्म

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

से कोई संबंध नहीं है, मैं तो केवल भारतीय ही हूं और ऐसा होने में मुझे गर्व भी है।'' मैं तो उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा हूं कि जब कोई भी भेदभाव न रहेंगे। एक बच्चा भी यह जानता है कि माता और पिता में क्या अंतर है। चाहे बिजली की एक बत्ती सफेद हो और दूसरी लाल, परंतु जो बिजली की लहर उसमें से गुजरती है वह तो एक ही है। इन सारी घटनाओं के मध्य में एक तत्वदर्शी का आना आवश्यक है जो आकर यह कहे कि ''आओ, अब हम ईसा के समय को पुन: पृथ्वी पर लायें''। हमारे अपने इलाके अर्थात मद्रास प्रांत में यद्यपि मुसलमान अल्पसंख्यक हैं, परंतु देश को बांटने वाली इस लहर में उन्होंने भी भाग लिया। क्या आपको उस तबाही की मिसाल दुनिया में मिल सकती है जो कि पंजाब में की जा रही है। इसके लिये चाहे कोई भी जिम्मेदार हो परंतु यह हमारे प्राचीन धर्म और नबी के मजहब पर एक कलंक है। देश में जो कुछ हो रहा है न तो उससे ऋषि और न ही महर्षि, यदि वे देख रहे होंगे तो संतुष्ट हो सकते हैं। क्या अब भी हमारे लिये बुद्धिपूर्वक यह सोचने का समय नहीं आया कि इन सब बातों के लिये कौन जिम्मेदार है। हम सब भाई-भाई हैं। क्या यह कहा जा सकता है कि पोकर महोदय मेरे से भिन्न हैं। वह तामिल बोलते हैं और मैं भी तामिल ही बोलता हूं। वह हिंदुस्तानी नहीं बोल सकते और मैं थोड़ी-थोड़ी हिंदुस्तानी समझ और बोल सकता हूं। यदि कल को मैं मुसलमान हो जाऊं तो आपके विचार में क्या मैं 'मद्रासी' से कुछ न्यून बन जाऊंगा? दुर्भाग्यवश देश का विभाजन हो चुका है और इस बात के लिये जिम्मेदार व्यक्ति गर्वान्वित हो सकते हैं। आखिरकार यह दो भाइयों में लड़ाई के समान ही तो है। मैं एक वकील हूं और मुझे कई एक ऐसे झगड़ों का पता है जहां छोटे भाई ने बड़े भाई के विरुद्ध अभियोग चलाया हो और जहां बड़ा भाई यह कहे कि छोटा भाई तो मेरे पिता का असली पुत्र ही नहीं। झगड़े की समाप्ति के पश्चात यदि बड़े भाई के घर में कोई विवाह आ जाये तो छोटा भाई उसमें जाने से इन्कार करता है। तब बड़ा भाई कहता है कि 'इसमें शक नहीं कि हममें लड़ाई हुई थी, परंतु यदि मेरा छोटा भाई शामिल नहीं होता तो मैं विवाहोत्सव भी नहीं करता।' इसी तरह संभवत: किसी दिन पाकिस्तान पुन: हमारे पास लौट आये। मेरे मित्र पोकर महोदय के संशोधन का क्या प्रभाव होगा? आप प्रात: मस्जिद में जाते हैं और मैं मंदिर में। परंतु हमें एक संयुक्त वेदी (Platform) बनानी होगी जिस पर कि हम कई बातों के लिये इकट्ठे हो सकें। अगर दुर्भिक्ष पड़ जाये तो हम सबको ही इसका सामना करना पड़ेगा। हमें आशा है कि यदि चुनाव संयुक्त विधि से हुये तो एक दिन ऐसा आयेगा कि जब हम आपस में मिल जायेंगे। संयुक्त चुनाव विधि के

अनुसार एक हिंदू मुसलमानों का और एक मुसलमान हिंदुओं का प्रतिनिधि हो सकता है। मैं मुसलमानों की आपकी अपेक्षा से अधिक तरजमानी करूंगा, क्योंकि मुझे यह ज्ञान रहेगा कि मैं मुसलमान नहीं हूं और इस स्थिति में मैं सर्वदा न्यूनता के भाव से शंकित रहूंगा और इसीलिये आपके हितों की अधिक देखभाल करूंगा। अत: इस बात से लाभ क्यों न उठाया जाये? मेरे मित्र पोकर महोदय कहते हैं कि उन्हें एक अच्छा और ईमानदार प्रतिनिधि चाहिये। इस अच्छाई की क्या परिभाषा है? अच्छाई हिन्दू या मुसलमान होने से नहीं आती। मेरा विश्वास है कि वह एक ऐसा व्यक्ति चाहते हैं, जो मुस्लिम की सफलतापूर्वक सहायता करे। बंगाल के हत्याकांड में हमने यह पूछने की कोशिश ही नहीं की कि कितने हिंदू और कितने मुसलमान मारे गये और आज तक भी हमें इस बात का पता नहीं। अभाग्यवश कई हिन्दू भी यह सोचने लग जाते हैं कि: ''हम भी तो मनुष्य ही हैं। अब जब कि देश का बटवारा हो चुका है तो उनकी रक्षा क्यों की जाये। इस झगड़े को अब समाप्त ही होने देना चाहिये।'' ईश्वर के लिये इस उत्पात को रोकिये। वह मनुष्य जिसको कि मुसलमानों का विश्वास प्राप्त नहीं, किस प्रकार उनका उचित प्रतिनिधि नहीं हो सकता? यदि एक सांसारिक राज्य के स्थान पर भारत में एक मजहबी राज्य बन जाये, तो भी एक व्यक्ति ही सारे कार्य को चलायेगा, चाहे वह कोई हिंदू पुजारी हो या मुसलमान मुल्ला। इससे अधिक तो और कुछ नहीं हो सकता। अत: इन बातों से हम इकट्ठे नहीं हो सकते। मैं एक हिंदू हूं और यदि आप मुझे अपना प्रतिनिधि बनने दें तो मैं न्यूनातिन्यून एक बार तो चार वर्ष में आपके पास अवश्य आऊंगा। इसी प्रकार एक मुसलमान को हिंदुओं के पास आना होगा। अन्तत: इस तरह हम एक हो जायेंगे। और यह तभी संभव हो सकता है कि यदि चुनाव संयुक्त विधि से किये जायें। मुझे उसके पास मत (vote) लेने के लिये जाना होगा। यदि मैं उसका प्रतिनिधि न होऊं तो दुनिया का कौन सा बंधन मुझे उससे संबंधित कर सकता है। यथार्थता की दृष्टि से भी मैं अपने उस मित्र से पूछता हूं कि यदि 200 सदस्यों की परिषद् में उसके साथ एक, पांच अथवा बीस सदस्य भी हों तो यह एक मामूली सी बात है। क्या ऐसी स्थिति में वह दूसरों के सहयोग बिना अपना काम चला लेंगे? क्या वह यहां इस्लाम का प्रचार करना चाहते हैं या कुरान का पाठ? क्या मुझे यहां वेद पढ़ने की आज्ञा होगी? इस परिषद् में बहुमत की सहायता के बिना कौन सी बात की जा सकती है? मैं आशा करता हूं कि बहुत शीघ्र ही यहां पर एक सांसारिक राजसत्ता बन जायेगी। क्या आप सांसारिक राजसत्ता निर्माण करने में हमारे रास्तों की रुकावट बनेंगे? क्या आप इतिहास में लिखी घटनाओं से लाभ न उठाओगे? 150 वर्ष पहले अमेरिका क्या था? क्या आप उनके इतिहास से कोई सबक न सीखेंगे? 150 वर्ष पूर्व की

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

बात है कि वे लोग जो अपने देश से निकाले गये थे, वे एस॰एस॰ मेफ्लोवर नामी जहाज में समुद्र के बीच भूमि की खोज में निकले और चलते-चलते पश्चिमी इंडीज (West Indies) पहुंच गये। और वही भूमि अर्वाचीन अमेरिका है। आज आर्थिक क्षेत्रों में वे संसार के स्वामी हैं। वे लोग ही आज यह, वह अर्थात् सब कुछ कर रहे हैं। वे आज हमारे लोगों को दांत साफ करने और मुंह धोने की शिक्षा दे रहे हैं, हालांकि यह बातें हम 5,000 वर्ष पहले ही जानते थे। उन्हें इस बात का भी पता नहीं कि बिना स्नान किये हम भोजन भी नहीं करते। वे आज यहां आकर ये बातें हमें इसलिये बता रहे हैं क्योंकि देश में विकीर्णात्मक शक्तियां काम करने लगी थीं, जिनके कारण वे आगे निकल गये और उन्नत हो गये। क्या इटेलियन, फ्रांसीसी तथा स्पेन के लोग और दूसरे भी अमेरिका महाद्वीप में मिलकर इकट्ठे आये थे? अत: यह हमारा कर्तव्य है कि हम एक सांसारिक राज्य सत्ता कायम करें। इस विषय में मि॰ जिन्ना को उद्धृत करना मेरे लिये असंगत न होगा, चाहे विभाजन से पूर्व उन्होंने कुछ ही क्यों न कहा हो। उन्होंने कहा कि: ''मेरा विचार एक सांसारिक राज्य सत्ता कायम करने का है।'' किसी ने पूछा कि मजहबी अथवा सांसारिक (secular)। उसने उत्तर में कहा कि: ''हिन्दू और मुसलमान मेरे लिये एक समान हैं। उन्हें समान अवसर प्राप्त होने चाहियें। मैं दोनों के लिये ही एक संयुक्त राष्ट्र बनाने का प्रयत्न कर रहा हूं।'' हमारे मुसलमान मित्र जो मि॰ जिन्ना के भक्त हैं और जिसका वे बहुत मान भी करते हैं, जैसा कि मैं भी करता हूं, इस विषय में उससे भिन्न क्यों सोचते हैं? मैं तो 'अल्पसंख्यक' इस शब्द को ही पसंद नहीं करता। इसीलिये मैं कह रहा हूं कि मैं इस संशोधन के विरुद्ध हूं।

***श्री बी॰ दास** (उड़ीसा: जनरल): श्री अध्यक्ष महोदय, क्या मैं पूछ सकता हूं कि इस प्रकार बरसों तक जिन बातों पर बहस होती रही हो, उनको ही इस परिषद् में पुन: बहस का विषय बनाने की क्या आप आज्ञा देंगे?

***अध्यक्ष:** मैं श्री बी॰ दास द्वारा उठाई गई वैधानिक आपत्ति की कद्र करता हूं। यह ठीक है कि प्रस्ताव का विषय ऐसा है कि उस पर बोलते हुये सब बातें बीच में कही जा सकती हैं, परंतु फिर भी मैं आशा करता हूं कि सदस्य बोलते समय अपने आपको प्रस्ताव के विषय तक ही सीमित रखेंगे। मैं यह भी आशा रखता हूं कि सदस्य घड़ी की ओर भी ध्यान रखेंगे। श्री आयंगर ने तो पहले ही 20 मिनट से अधिक ले लिये हैं।

***श्री एम॰ अनन्तशयनम् आयंगर:** हां श्रीमान्, यह पहला अवसर है कि मैं इस विषय पर, जो कि हमारे मन में सबसे अधिक महत्त्वशाली है, बोल रहा हूं। पंजाब की घटनाओं की ओर संकेत न करना कोई आसान नहीं। 165 नागरिक अफसरों में से जो यहां से रेलगाड़ी द्वारा कराची भेजे गये थे, केवल दो ही वापिस आये हैं। वे भारत में लौट आये हैं। यह खबर कल के हिंदुस्तान टाइम्स में छपी है। देहली के राज-कार्यालय (Secretariat) के शेष 163 अफसरों का क्या बना? उनकी किस्मत का क्या बना, यह अभी तक पता नहीं लग सका। मैं 20 मिनट तो क्या, ऐसी घटनाओं पर 20 वर्ष से भी अधिक रोता और चिल्लाता रहूंगा। मैं इसका कोई हल सोच रहा हूं। मैं अपने मित्र पोकर महोदय से प्रार्थना और अनुरोध करता हूं कि वे एक सांसारिक राजसत्ता का निर्माण होने दें। संस्कृति, भाषा और शिक्षा संबंधी विषयों के लिये बहुत शर्तें बनाई जा चुकी हैं; और यदि फिर भी कोई रुकावट पेश आये तो आओ, मिल कर उसे पार करें। किसी भी एक जाति और व्यक्ति का हित किसी दूसरे के लिये कुर्बान नहीं होने दिया जाना चाहिये।

राजनैतिक विषयों के संबंध में भी मुझे यही कहना है कि आओ, मिल-बैठकर अपनी समस्याओं को सुलझा लें। हमने अपने मतभेद दूर कर लिये हैं और अब हम यदि सांसारिक राजसत्ता का निर्माण कर सकें तो दुनिया में हम सबसे ऊंची जाति की हैसियत से सिर ऊंचा कर सकेंगे। इन दिनों हम पाश्चात्य संस्कृति का ख्याल करते रहे हैं। बौद्धिक ज्ञान का सूर्य जो कभी पूर्व से उदय हुआ था, आज दुर्भाग्य से अस्त होकर पश्चिम में पहुंच गया है। आओ, इस सूर्य का हम पुनरुत्थान करें। आओ, हम इस सूर्य का उदय पूर्व में पुनः पहले से भी अधिक देदीप्यमान अवस्था में करायें। इन शब्दों के साथ मैं पोकर महोदय तथा उनके साथियों से, जिन्होंने कि यह संशोधन प्रस्तुत किया है, प्रार्थना करता हूं कि वे अपना संशोधन वापस ले लें और सर्वसम्मति से मिलकर संयुक्त चुनाव विधि के हक में फैसला करें। *(तालियां)*

***अध्यक्ष:** मैं अब श्री महावीर त्यागी को भाषण देने के लिये बुलाता हूं। मुझे आशा है कि वह विषय पर रहते हुये केवल थोड़ा ही बोलेंगे, क्योंकि कुछ देर पहले मेरे द्वारा कहे हुये शब्द वह सुन ही चुके हैं।

श्री महावीर त्यागी (संयुक्त प्रांत: जनरल): *[मुझे खेद है कि पूर्व वक्ता ने आपको चकित कर दिया है।]

[श्री महावीर त्यागी]

सभापति जी, पोकर साहब ने जो तरमीम हाउस के सामने पेश की है, मैं उसका विरोध करने के लिये आया हूं। और जैसा कि आपका हुक्म है, मैं ज्यादा वक्त नहीं लूंगा; पर मैं हाउस को इस सवाल पर गौर करने से पहले यह याद दिलाना चाहता हूं कि सैपरेट इलेक्टोरेट का तजुर्बा हमारे मुल्क ने बहुत ज्यादा कर लिया है। हिन्दू और मुसलमान जो यहां हैं, वे सब इससे अच्छी तरह से वाकिफ हैं। यह जहर का इंजेक्शन अंग्रेजों ने, जो हमारे पर हुकूमत करते थे, डाला था।

*__श्री बी॰ पोकर साहब बहादुरः__ श्रीमान्जी, मुझे एक वैधानिक आपत्ति है। मैं समझता हूं कि माननीय सदस्य अंग्रेजी भाषा से खूब परिचित हैं। कुछ भी हो, यदि माननीय सदस्य अंग्रेजी में अपना भाषण दें तो मैं बहुत ही कृतज्ञ हूंगा, क्योंकि तब ही मैं उन्हें समझ सकता हूं।

*__श्री महावीर त्यागीः__ मैं अंग्रेजी में बोल सकता हूं, परंतु मेरी अंग्रेजी व्याकरण और मुहावरे की दृष्टि से शुद्ध न होगी, क्योंकि यह मेरी अपनी भाषा नहीं। इसलिये यदि आप इस प्रकार की अंग्रेजी भाषा सुन सकते हों तो मैं आपकी बात मानने को तैयार हूं।

श्रीमान्! जब अंग्रेजों ने हमें गुलाम बना लिया तो जुदा होने के यह विचार उन्होंने ही हमारे अंदर दाखिल किये। और वे इसमें रहे भी सफल। उन्होंने ही देश में यह विष बोया जो आज इतना व्याप्त हो गया है। उन्होंने हमें सांप्रदायिक रूप में हिंदू तथा मुसलमान होने का अनुभव करा दिया है। उन्होंने इस विष-बीज का हमसे ही सिंचन करवाया और हमने भी पानी के स्थान पर इस बीज को अपने खून से सींचा। आखिर को यह खेती पक कर तैयार हो गयी और अब हम इस विषैली खेती के फल भुगत रहे हैं। उनकी कूटनीति का इस प्रकार तीव्र अनुभव करके आज जब कि नये सिरे से कार्य आरंभ किया जा रहा है और भावी संतानें तथा अपनी शांति और सुख के लिये विधान बनाया जा रहा है, यदि हम खड़े होकर पुनः उस विषैले टीके से ही शुरू करने की बात कहें, तो मैं इससे कदापि सहमत नहीं हो सकता। हमने इसका काफी परीक्षण कर लिया है। जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूं, आज हम अपने देश की सीमा पर सभ्यता के इतिहास में अनहोनी अराजकता और रक्तपात के रूप में इस विषैली खेती के फल भुगत रहे हैं। आज जब यहां से सौ मील की दूरी पर स्थित स्थान भी सुरक्षित नहीं है, क्या यह समय नहीं कि हम पहचानें कि यह सब उत्पात

उस जुदा रहने की प्रवृत्ति का परिणाम है जो कि अंग्रेजों ने हममें उत्पन्न की? अब जब कि हमने अंग्रेजों को सात समुद्र पार फेंक दिया है तो क्या यह अचम्भे की बात नहीं कि हमें फिर उसी जुदा रहने की प्रवृत्ति को अपनाने और बनाये जाने वाले विधान में इस विष को दाखिल करने के लिये कहा जा रहा है। मैं निवेदन करता हूं कि सामूहिक रूप से देश इसके विरुद्ध है। मेरा अपना तो यह विश्वास है कि सम्पत्ति और राजनीति दोनों का ही पूरी तरह से सामाजिक-करण कर दिया जाना चाहिये। मैं सम्पत्ति का सामाजिक-करण किये जाने में यकीन रखता हूं। मैं विशुद्ध प्रजातंत्र में पूर्ण विश्वास रखता हूं। मैं चाहता हूं कि जनता को यथार्थ रूप से प्रतिनिधित्व मिले। यथार्थ से मेरा मतलब यह है कि किसी को न ही पासंग (weightage) दिया जाये, न ही किसी की रियायत की जाये और न ही किसी जनसमुदाय या व्यक्ति की उचित सुविधाओं की अवहेलना हो। किसी भी व्यक्ति को उसके अधिकारों से वंचित किये बिना सबको ही स्वतंत्र प्रतिनिधित्व मिलना चाहिये। साथ ही साथ केन्द्रीय तथा प्रांतीय धारासभाओं में सभी लोगों के स्वतंत्र विधि से प्रतिनिधि जाने चाहियें। यदि हम किसी के रास्ते में रुकावटें डालें अर्थात् कुछ लोगों के रास्ते को तो रोकें और दूसरों को सुविधायें दें, तो इसका मतलब यह होगा कि जन-सत्ता (Democracy) इतनी वास्तविक और साफ नहीं है जितनी कि एक विशुद्ध लोकराज में होनी चाहिये। जनता के किसी भाग को मजहबी आधार पर मत प्रदर्शन का अधिकार देना एक ऐसी बात है जो कि संसार की समझ में नहीं आती। आखिर को हम यहां मजहब के लिये कानून बनाने नहीं आये हैं। हम यहां पर ऐसे कानून बनाने के लिये आये हैं कि जिनको सारे ही देश को सामने रख सर्वत्र शांति स्थापित की जा सके। यहां कुछ लोगों के विरुद्ध और कुछ लोगों के हक में कानून बनाने की बात नहीं। यहां जनता के एक भाग अथवा दूसरे के हितों पर ही विचार नहीं करना; यहां तो विधान बनाते समय सारे ही देश का ख्याल रखा जाना है। अतः मजहबी समुदायों को प्रतिनिधित्व देना बहुत ही हास्यप्रद है। आज तक हम ऐसा करते रहे हैं, परंतु आगे को यह न किया जा सकेगा, क्योंकि भावी विधान कोई मजहबी प्रकार का न होगा। कोई भी राजसत्ता इतने मजहबों, फिरकों और समुदायों का संघ-रूप नहीं हो सकती। देश का कानून और शासन उन्हीं को सौंपा जा सकता है जिसमें देश का सबसे अधिक विश्वास हो और वही लोग इसे सुचारू रूप से चला भी सकते हैं। साधारणतया देश का शासन सबसे बड़े राजनैतिक दल के ही हवाले किया जायेगा। और यह नियम हर जगह माना भी जा चुका है। अल्पसंख्या वाले लोग 'अल्पसंख्यक' ही रहने चाहियें। और अल्पसंख्यकों के सामने तो केवल एक ही मार्ग है और वह है कि वह बहुसंख्यकों के प्रति सर्वदा भक्तिमान रहकर उसे

[श्री महावीर त्यागी]

सहयोग दें और इस प्रकार बहुसंख्यकों का विश्वास प्राप्त करें। और भी कई रास्ते तो हैं परंतु मैं न उनके पक्ष में हूं और न ही उनकी सिफारिश कर सकता हूं, क्योंकि उनका अनुसरण करने से अल्पमत की समाप्ति कर दी जाती है। हमारी सीमा के दूसरी ओर आज यही किया जा रहा है। आप मुझे यहां यह कहने की आज्ञा देंगे कि हम देश के उस भाग से संबंधित हैं कि जिसने आरंभ से ही देश के प्रत्येक मनुष्य और प्रत्येक व्यक्ति के जान और माल की जमानत दी हुई है। हमने अपनी राजनीति का आधार प्रेम और सच्चाई बनाया है। परंतु इसके विपरीत हमारे पश्चिम में राजनीति को डर और घृणा पर आश्रित किया जा रहा है। हम अल्पमतों को परे फेंकने या उन्हें समाप्त करने अर्थात् उन सबको कत्ल करने में विश्वास नहीं रखते। हम तो परिवर्तन के मानने वाले हैं। हमें पूरा विश्वास है कि हम उन सबको एक ही पक्ष में ले आयेंगे। हम समझते हैं कि अल्पमत आखिरकार एक इकाई में परिणत हो जायेंगे और वह इकाई लोगों का विशुद्ध संगठन होगा जिसे प्रजातंत्र भी कहा जा सकता है। हम न्याय द्वारा अल्पसंख्यकों को बहुसंख्यकों में घुला-मिला दें। हम इस देश में न्याय के आधार पर राज करना चाहते हैं और इसी आधार पर हम इसका शासन चलायेंगे। इन अल्पमतों की सत्ता को पृथक स्वीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि जिस देश के शासन के संबंध में यह माना जाये कि केवल मात्र न्याय को आधार मानकर वह चलाया जायेगा तो अल्पमत और बहुमत का तो वहां कोई प्रश्न ही नहीं उठता। यहां तो सारे व्यक्ति एक समान समझे जायेंगे। जहां तक राजसत्ता का संबंध है, हम मजहबों की सत्ता मानने के लिये तैयार नहीं। मुझे बहुत अचम्भा होगा यदि मेरे वे मित्र जिन्होंने अल्पमतों के लिये 'पृथक चुनाव' का सुझाव प्रस्तुत किया है हिंदुस्तान के एक बड़े नेता के इन शब्दों की कद्र करेंगे। मि० जिन्ना ने पाकिस्तान विधान-परिषद् के सामने भाषण देते हुये कहा कि: "आज हम सब इस मौलिक सिद्धांत को सामने रखकर कार्यारम्भ कर रहे हैं कि हम सारे के सारे एक ही राजसत्ता के नागरिक हैं–और नागरिक भी ऐसे कि जो सब आपस में बराबर हों–हम इस सिद्धांत को अपना आदर्श मानकर सर्वदा सामने रखेंगे। और क्योंकि मजहब तो प्रत्येक व्यक्ति का अपना निजी विश्वासमात्र ही है, अत: कुछ समय के पश्चात् आप देखेंगे कि राजनैतिक अर्थों में न हिन्दू हिन्दू रहेंगे और न मुसलमान मुसलमान।" ये हैं वे शब्द जो कि भारत के एक भाग के गवर्नर-जनरल ने कहे। श्रीमान्, वह यहां पर सबसे बड़े सांप्रदायिक मनुष्य के रूप में माना जाता था। परंतु ज्यों ही उसने एक राजसत्ता का कार्यभार संभाला, या यों कहिये कि ज्यों ही उसने एक सांप्रदायिक राज्य की बागडोर अपने हाथ में ली, अर्थात् ज्यों ही

एक बड़े देश का, जिसमें हिंदू और मुसलमान दोनों ही रहते हैं, शासन उसे संभालना पड़ा तो वह भी एकदम इस प्रकार बोलने लग पड़ा। यह सब कोई जानते हैं कि उसका राज्य एक मुसलमानी राज्य है और वे उसके मुसलमानी होने में गर्व अनुभव करते हैं और वे बड़े अभिमान से इसे पाकिस्तान पुकारते हैं। उसी राज्य में यह महोदय साफ कह रहे हैं कि राजसत्ता मजहब का कोई खयाल न रखेगी। प्रत्येक व्यक्ति व्यक्ति ही होगा और हिन्दू, जहां तक राजनैतिक अधिकार और सुविधाओं का संबंध है, अपना हिन्दूपन खो बैठेंगे। श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि वे भी जनता की एकता में विश्वास रखते हैं। तो फिर हम क्यों अपनी राजनीति में जुदा रहने की इस प्रवृत्ति को दाखिल होने दें? श्रीमान्, एक और स्थान पर भी उक्त बड़े नेता ने कहा है कि ''आपको पाकिस्तान राज्य में अपने धार्मिक मंदिरों में जाने की पूरी स्वतंत्रता होगी। आप किसी भी मजहब, जाति अथवा मत को मानें, राजकार्य का इससे कोई वास्ता नहीं।'' श्रीमान मेरा निवेदन है कि विधान-निर्माण राजकार्य है और मुसलमानों का इससे कोई वास्ता नहीं। वे यहां पर इसलिये हैं कि वे भारत के नागरिक हैं। हम सब एक कौम हैं जो न्याय के लिये खड़ी है। हम इस प्रकार के कानून बनायेंगे जो अन्याय के विरुद्ध जमानत हों और हम किसी भाग की पृथक् सत्ता स्वीकार नहीं करेंगे। श्रीमान्, यह संशोधन उन उच्च सिद्धांतों के अनुकूल नहीं, जिन्हें मान लिया गया है और जो पहले प्रस्तावों के रूप में पास किये जा चुके हैं।

अब कुछ रिपोर्ट के बारे में। मैं यह कहता हुआ प्रसन्नता अनुभव करता हूं कि यह प्राय: सर्वसम्मत है। यद्यपि मैं अभी तक ''स्थानों'' की ''सुरक्षा'' के सिद्धांत के साथ सहमत नहीं हो सका और क्योंकि हम इस समय अल्पमतों को प्रतिनिधित्व देने के लिये एक अस्थायी प्रबंध कर रहे हैं, इसलिये मैं आपके रास्ते में खड़ा नहीं होना चाहता। संभवत: यह उनकी उन आशंकाओं को कि उनकी इच्छाओं की ओर ध्यान न दिया जायेगा, शांत करने के लिये हैं। परंतु मैं इस बात को नहीं जान पाया कि उन्हें साधारण ''स्थानों'' पर खड़ा होकर चुनाव लड़ने की स्वतंत्रता क्यों दे दी गई है। प्रत्येक मनुष्य यह जानता है कि सुरक्षित स्थानों के रूप में अपने उचित भाग को प्राप्त कर लेने के पश्चात् चुनाव में वे किसी ''साधारण स्थान'' पर कदापि जीत नहीं सकते। भविष्य में उनकी हारें इस सुरक्षा-वाक्य-खंड (reservation clause) को हटाने के लिये पेश की जाया करेंगी। फर्ज करो कि एक उम्मीदवार किसी ''साधारण स्थान'' पर खड़ा होकर चुनाव लड़ता है, तो किसी हिन्दू से यह आशा लगाना कि वह अपना मत (Vote) किसी मुसलमान को देगा और खास करके पंजाब प्रांत में, यह अत्यंत ही असंभव है। कोई भी

[श्री महावीर त्यागी]

उस उम्मीदवार को मत (Vote) न देगा। हालात इस समय कुछ ऐसे ही हो गये हैं। और यह भी उस पृथक् चुनाव विधि का परिणाम है जिसका कि हमें काफी तजुरबा हो चुका है। अल्पमत के उम्मीदवारों को ''साधारण स्थानों'' पर चुनाव के लिये खड़े करना उनकी हंसी उड़ाने के तुल्य होगा। श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि हमें तो चुनाव की एक विधि को ही अपनाना चाहिये और वह है संयुक्त विधि। अल्पमतों को दस वर्ष के लिये रियायतें दिये रखना भी सिद्धांतों के सर्वथा अनुकूल नहीं। मैं समझता हूं कि हम काफी झुक चुके हैं। मुझे डर है कि यह समझौता भी कहीं व्यर्थ ही न सिद्ध हो। इससे भी कहीं बुरे परिणाम न निकलें। परंतु इस समझौते के होते हुये भी मैं समझता हूं कि रिपोर्ट बहुत अच्छी है और हमें समिति के सदस्यों का इस रिपोर्ट के लिये जो कि प्रायेण सर्वसम्मत है और इस समय परिषद् के सामने पेश की गई है, धन्यवाद करना चाहिये। हमें उन पर गर्व है और साथ ही हमें संयुक्त चुनाव-विधि पर भी जिसकी कि हम देश से सिफारिश कर रहे हैं, अभिमान है। मैं आशा करता हूं कि ये प्रस्ताव (proposals) इसी रूप में स्वीकार कर लिये जायेंगे।

*__श्री टी॰ प्रकाशम्__ (मद्रास: जनरल): तथाकथित अल्पसंख्यकों के बहुत-से नेताओं ने समिति के माननीय सदस्यों और उसके अध्यक्ष सरदार वल्लभभाई पटेल को उस उदारता के लिये जो कि बहुसंख्यकों ने इस विषय में दिखाई है, धन्यवाद और बधाई दी है। श्रीमान्, मैं कहता हूं कि उनको धन्यवाद तो दिया जाना चाहिये, परंतु प्रदर्शित उदारता के लिये नहीं अपितु कर्तव्यपूर्ति के लिये जो कि उन्होंने ऐसा करके की है। श्रीमान्, समिति के अध्यक्ष की हैसियत से आपने तथा समिति के सदस्यों ने कोई उदारता तो दिखलाई नहीं। हां, यह तो बहुसंख्यकों का एक कर्तव्य था जो कि आज तक पूरा नहीं किया जा सका था; जिसे आपने आज पूरा कर दिया है। इन अल्पसंख्यकों को अब तक कायम रहने और परिवर्धित होने की पूरी आजादी रही है, और आज हालत यह हो गई है कि सांप्रदायिकता के विष ने जो कि इतनी देर से अपना काम करता रहा है, आज हमारा गला रोंध दिया है। यह सब कुछ बहुत पहले ही रोका जा सकता था। श्रीमान्, हम इस समय बहुमत द्वारा किये गये पापों और न किये गये सत्कार्यों की सजा भुगत रहे हैं। श्रीमान्, यह बहुमत का कर्तव्य था कि वह जुदा होने की प्रवृत्ति को न बढ़ने देता ताकि अल्पमतों की जुदा हस्ती उत्पन्न ही न होती। अब वे सारे इकट्ठे कर दिये गये हैं, जैसे कि कभी पहले वे हुआ करते थे। सब जानते हैं कि यह वह देश है कि जहां आरंभ में केवल एक ही धर्म, एक ही ईश्वर और

पूजा का प्रकार भी एक ही था। ये सारी पिछली बातें बाद में धीरे-धीरे उत्पन्न हुईं। जरा इन मजहबों की जो कि प्रचलित हो रहे हैं, उत्पत्ति के तिथिक्रम को तो देखिये। उदाहरणार्थ ईसाई मत को ही लें और उस समय को ध्यान में रखें जब कि इसकी उत्पत्ति हुई थी। फिर मुसलमानी मजहब को लें और उसकी उत्पत्ति के समय को ध्यान में रखें। जब ये मजहब अभी उत्पन्न नहीं हुये थे तो संसार की क्या हालत थी। दो हजार वर्ष और तेरह सौ वर्ष से पहले संसार में ऐसी बातें न थीं जैसी कि आजकल प्रचलित हैं।

परंतु ये मजहब आज के दुखों का न तो कारण बन सकते हैं और न ही वास्तव में वे हैं ही। मैं उस समय मुलतान में ही था जबकि सबसे पहला हिन्दू-मुस्लिम दंगा वहां हुआ। तब से आरंभ होकर इतने लंबे अरसे तक साल-साल के अंतर से ये दंगे अभी तक होते ही रहे हैं और आज तो स्थिति बहुत ही बिगड़ चुकी है। यह तो बहुत ही दुर्भाग्य की बात है जो कि बहुत ही पहले रोक दी जानी चाहिये थी। आखिर को इन सब बातों का कारण क्या है? मजहब इनका कारण नहीं हो सकता। पंजाब में जो आज कत्ल और जुर्म हो रहे हैं ये केवल मजहबी मतभेद के कारण से नहीं। तथाकथित मजहब से भी बढ़कर जो बात इन दंगों के लिये जिम्मेदार है, वह है इच्छा और वह भी किसी और वस्तु की नहीं अपितु लाभ प्राप्ति की, या उच्चपद प्राप्त करने की या दूसरे की सम्पत्ति को हथियाने की। यह है असली बात जो कि आज सबसे अधिक बलशाली बन गई है। श्रीमान्, महात्मा गांधी के देश में आने के पश्चात् के 27 या 31 वर्ष तक के हमारे संघर्ष को सामने रखते हुये मुझे बहुत प्रसन्नता होती है। पहले ही वर्ष से या यूं कहो कि दूसरे वर्ष से सारे मामलों ने हिंसा का ही रूप धारण कर लिया था। परंतु फिर भी देश के बहुसंख्यक लोग इस प्रयत्न में लगे रहे कि ये बातें किसी प्रकार पाट दी जायें। अन्ततः इस संघर्ष को सफलतापूर्वक समाप्त करने का श्रेय और फक्र राष्ट्रीय सभा (National Congress) के राष्ट्रीय निमित्त को ही प्राप्त हुआ। आखिरकार सफलता प्राप्त हुई और अंग्रेजों को इस देश से जाना पड़ा। उनके देश से चले जाने से जो जागृति उत्पन्न हुई उसने कई प्रकारों से इन दंगों का रूप धारण किया। मैं सरदार पटेल तथा इस समिति को धन्यवाद देता हूं जिन्होंने उन सारे अल्पसंख्यकों को जो कि बहुत देर से कानून द्वारा जुदा हो चुके थे, यह अनुभव कराया कि वे एक हैं। इस बात को मनवा कर उन्होंने हम सब को इकट्ठा कर दिया है और यह एक बहुत बड़ी बात है जो कि प्राप्त कर ली गई है। श्रीमान्, देश के बंटवारे द्वारा पाकिस्तान के बन जाने के पश्चात् मुसलमानों में भी बहुत से भाई ऐसे हैं जो संयुक्त निर्वाचन विधि से सहमत

[श्री टी. प्रकाशम्]

हैं। और तो और यहां उपस्थित मुसलमानों की भी जिनमें कि प्राय: सब प्रांतों के प्रतिनिधि विद्यमान हैं, यही सम्मति है। यदि पिछले 25 वर्षों से हमारे यहां संयुक्त चुनाव विधि प्रचलित होती तो आज देश में कहीं भी दंगे न होते। यह केवल पदों की भूख, लाभ प्राप्ति की इच्छा, दूसरों के अधिकारों पर छापा मारने की लालसा तथा औरों को किसी न किसी तरह परे हटाकर उनकी सम्पत्ति पर कब्जा करने का जनून ही है जो कि इस समय देश में होने वाले संहार का मूल कारण है। महात्मा गांधी के अधीन चलाये गये राष्ट्रीय आंदोलन तथा संघर्ष ने भी इसी बात को काबू में लाने, रोकने तथा एक जगह एकाग्र करने का प्रयत्न किया था। अत: मैं सरदार पटेल को उस तरीके के लिये धन्यवाद देता हूं कि जिसके द्वारा वह इन विभिन्न अल्पसंख्यक जातियों को इकट्ठा करने और उनसे वह बातें मनवाने में सफल रहे हैं।

यह श्रेय इस समिति को ही प्राप्त है या यूं कहो कि यह इस समिति का एकाधिकार है अथवा इस देश के वासियों का भी इसमें भाग है कि जिन्हें यह सफलता प्राप्त हुई। और उन्हें इस प्रकार का विधान जो कि इस समय बनाया जा रहा है, प्राप्त होगा। इसी विधान में कल या इससे एक दिन पहले संकेत किया गया था कि वे जातियां जो कि आज तक पृथक गिनी जाती रहीं, आगे से जुदा न समझी जायेंगी। इस अवसर पर हम एक विधान बना रहे हैं जो कि संघ-विधान (Union Constitution) होगा और जिसका उद्देश्य है लोगों को इकट्ठा करना। आओ, हम उन्हें विरुद्ध मत वाले न होने दें और बहुसंख्यकों का अंग ही मानकर उनसे व्यवहार करें। इस प्रकार से आजकल बातों को ढाला जा रहा है। मैं यह मानता हूं कि वे बातें बहुत पहले सैकड़ों वर्षों से बिगड़ी हुई हैं और इन्हें एक क्षण में ठीक नहीं किया जा सकता और न ही सबको पल भर में इकट्ठा किया जा सकता है। इसी कारण इस समिति ने रिपोर्ट को इतनी सावधानी से तैयार किया है। और यह समिति के लिये श्रेय और मान की बात है कि उसे इतनी ऊंची सफलता प्राप्त हुई है। अत: मैं इस समिति और उसके अध्यक्ष सरदार पटेल को बधाई देता हूं।

मुझे इस बात का गर्व है कि आप, मैं और बाकी सारे जिन्होंने इस संघर्ष में भाग लिया था, इसके परिणाम और उस रूप को जो कि यह परिणाम धारण कर रहा है, देखने के लिये अभी जीवित हैं। अब तो मानो हम इस संघर्ष के अंत को पहुंच चुके हैं। यह कहा गया है कि दस वर्षों में ही ये सब बातें लुप्त हो जायेंगी। मुझे इसमें कोई शक नहीं कि दस वर्षों में ये बातें समाप्त हो जायेंगी।

संभवत: ये उससे पहले ही समाप्त हो जायें। इस देश में रहने वाले हममें से प्रत्येक को यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि इतने से ही देश की सेवा करने का हमारा कर्तव्य समाप्त नहीं हो जाता। अत: हमें देश से उच्च स्थान, बड़े पद (office) और दूसरे लोगों की सम्पत्ति को हड़प कर जाने की लालसा को मार भगाना चाहिये।

उच्च स्थिति के लोगों की सम्पत्ति और सुविधाओं को हथियाने के लिये आज जो कुछ पंजाब में हो रहा है वह हम समाचार पत्रों में पढ़ रहे हैं। पाकिस्तान के गवर्नर-जनरल तथा हमारी सरकार दोनों को ही चाहिये कि पंजाब में जो हालात हो रहे हैं उन्हें रोकें। मुझे कोई शक नहीं कि जहां तक हमारी सरकार का संबंध है, वह सब कुछ कर रही है। मुझे आशा है कि पाकिस्तान के बड़े गवर्नर-जनरल तथा वहां की सरकार ऐसा प्रबंध करेगी कि जिससे लोग पश्चिमी पंजाब में स्वयं जाकर हालात को देख सकें। यदि मुझे आज्ञा मिल सके तो मैं आज ही पश्चिमी पंजाब जाना चाहता हूं। क्या मेरे लिये रास्ते का प्रबंध हो सकता है? क्या मुझे वे सुविधायें दी जायेंगी जिससे कि पश्चिमी पंजाब में मैं जाकर अपनी आंखों से वहां के हालात को देख सकूं। पूर्वी पंजाब में तो मैं जाकर वहां क्या हो रहा है, यह स्वयं देख सकता हूं। ये बातें हैं कि जिन्हें हमें प्राप्त करना है और मुझे विश्वास है कि हमारे नेता अवश्य ही इन्हें प्राप्त करेंगे। अत: मुझे समिति को बधाई देते हुये और रिपोर्ट का समर्थन करते हुये बहुत ही प्रसन्नता होती है।

***चौधरी खलीकुज्जमां** (संयुक्त प्रांत: मुस्लिम): श्रीमान्, पिछले 30 वर्ष से संयुक्त चुनाव और पृथक चुनाव के पक्ष और विपक्ष में इतना कहा जा चुका है कि अब किसी के लिये इस विषय में पक्ष या विपक्ष में कोई भी नई युक्ति देना संभव नहीं। परंतु फिर भी पृथक चुनाव विधि के विरुद्ध उठाई गई एक बड़ी गंभीर आपत्ति की ओर मैं आपका ध्यान खींचना चाहता हूं। आपत्ति यह है कि इस विधि से तीसरे दल के हाथ मजबूत हुये। सौभाग्यवश वह तीसरा दल आज नहीं रहा। असल में यदि हम आज की स्थिति को वर्तमान हालात की यथार्थ भित्ति के सम्मुख रखकर देखें तो पृथक चुनाव विधि के संबंध में फैली हुई बहुत सी भ्रांतियां अवश्य ही दूर हो जायेंगी। अगर पृथक् चुनाव का अधिकार हमें दे दिया जाये तो आखिर बहुमत की इससे हानि तो नहीं होती। यह तो हम महसूस कर चुके हैं कि तीसरे दल के न होने के कारण आज हम किसी अन्य के पास जाकर सहायता के लिये प्रार्थना नहीं कर सकते। हमें आना तो आखिर बहुमत के पास ही होगा। यदि पूर्वी पंजाब में कोई बात हो जाती है या देहली

[चौधरी खलीकुज्जमां]

में ही कोई बुरी घटना हो जाती है, तो हम फरियाद लेकर गवर्नर-जनरल या किसी अन्य के पास नहीं जा सकते। हमे तो सरदार पटेल के पास ही आना होगा, क्योंकि देश के अल्पमतों की किस्मत का निर्णय करने वाला उनके सिवा आज और कोई नहीं। अतः इस विषय में गुजरी हुई बातों को जोकि आज सर्वथा प्रभावरहित हो गई हैं, बहस में लाने से क्या लाभ? सचमुच पृथक् चुनाव विधि के विरुद्ध बहुत सारी आपत्तियां उठाई जा चुकी हैं। परंतु गलत समझिये या ठीक, मुसलमानों ने अभी तक यह नहीं अनुभव किया कि पृथक् चुनाव विधि विविध जातियों में फूट का कारण थी। परंतु आज वे पुरानी युक्तियां कदापि लागू नहीं होतीं। यदि मुसलमानों को पृथक् चुनाव का अधिकार दे दिया जाये तो वे समझेंगे कि उनकी उचित शिकायतों और मांगों को व्यक्त करने के लिये धारासभाओं में वे अपने सच्चे प्रतिनिधि भेज सकते हैं। इन प्रतिनिधियों को इस मकसद के लिये किसी दूसरी शक्ति या सरकार अर्थात् पाकिस्तान सरकार के पास नहीं जाना है। उन्हें तो ये शिकायतें और मांगें आपके सामने ही रखनी हैं। अतः मैं आपसे तथा इस परिषद् से अनुरोध करूंगा कि वे इन नये हालात पर, जिनमें कि इस प्रश्न पर बहस हो रही है, गौर करें।

मैं जानता हूं और मुझे इस बात का पूरा ख्याल है कि इस परिषद् का एक बड़ा भाग पृथक् चुनाव विधि के विरुद्ध है। यह ख्याल करते हुये कि उपसमिति तथा अल्पमतों के लिये बनाई गई परामर्श समिति में दूषित घोषित की जाने से पहले इस मांग को बहुत थोड़ा समय दिया गया था, तो मुझे यह आशा नहीं होती कि हमारी यहां पर सुनवाई होगी। परंतु सुनवाई होने या न होने का यह प्रश्न नहीं, प्रश्न तो यह है कि क्या बहुमत उन नये हालात पर गौर करेगा जिनमें कि यह मांग की जा रही है? आप अपनी आशंकायें दूर कर दीजिये। मुझे पता है कि इस परिषद् के भीतर और बाहर एक बहुत बड़ा दल है; ऐसा है जो कि मुसलमानों के प्रति अतीत में उत्पन्न हुई उनकी आशंकाओं को त्यागने के लिये तैयार नहीं। मैं आपसे इस बात की प्रार्थना करूंगा कि आप समझें कि इस राष्ट्र की नागरिकता को अंगीकार करते समय हम ईमानदार और सच्चे थे। हमें यहां अल्पमत की हैसियत से रहना है। परंतु अल्पमत की हैसियत से किसी देश का नागरिक होने का यह मतलब नहीं कि अपनी जाति के लिये किसी बात की प्रेरणा करने का हमें कोई अधिकार ही नहीं, या हम ऐसा करने से बंद हो जायेंगे। परंतु हम अपनी जाति के हित की कोई बात करें तो मुझे विश्वास है कि पुरानी आशंकाओं को दोहराया नहीं जायेगा। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि इस विषय

में जो कुछ भी होगा अर्थात् बहुमत जो कुछ भी फैसला करेगा, मुसलमान उसे स्वीकार करेंगे। परंतु यह देखना अब आपका कर्तव्य है कि मुसलमानों की उस मांग पर जिससे कि उन्हें अधिकतर रक्षा प्राप्त होने की आशा है, इस परिषद् में विचार हो और उसे स्वीकार भी कर लिया जाये। अतः और कोई युक्ति न देता हुआ क्योंकि और कोई नई युक्ति मेरे पास है ही नहीं; मैं तो केवल आपसे यह अनुरोध करूंगा कि आप इस समस्या पर बदले हुये हालात की रोशनी में विचार करें और यह विश्वास रखता हुआ कि अपनी मांगों की पूर्ति के लिये हम केवल बहुमत का ही सहारा लेंगे। मैं आशा करता हूं कि आप इस मांग को स्वीकार कर लेंगे।

***माननीय पं. गोविंद वल्लभ पंत** (संयुक्त प्रांतः जनरल): श्री अध्यक्ष महोदय, मुझे दुख है कि प्रस्तावक महोदय ने वर्तमान हालात के होते हुये और फिर इस स्थिति में इस विषय को आरंभ किया है। मेरा ख्याल था कि हम उस स्थिति में से गुजर चुके हैं कि जब युक्तियों के स्थान पर भावनायें हम पर कब्जा पा सकती थीं। मुस्लिम लीग दल के नेता मेरे मित्र ने हमें बदले हुये हालात की ओर ध्यान देने के लिये कहा है और यही चीज मैं भी उनसे कहता हूं। मुझे दुख है कि देश में जो इतनी बड़ी क्रान्ति हो चुकी है, न तो उसके मूल्य को और न ही उसके महत्त्व को अभी समझा जा सका है। ऐसा जान पड़ता है कि प्रस्तावक महोदय इस बात को नहीं समझ पाये कि 15 अगस्त के पश्चात् इस देश के शासन की बागडोर और संचालन अर्थात् सब कुछ ही जनता के हाथ में आ गया है। मैं उन्हें और उनके साथियों को विश्वास दिलाता हूं कि मैं इस प्रश्न पर केवलमात्र अल्पमतों के दृष्टिकोण से ही देख रहा हूं। मैं उन लोगों में से एक हूं जो यह अनुभव करते हैं कि प्रजातंत्र राज की सफलता इस बात से मापी जानी चाहिये कि कौम के भिन्न-भिन्न भागों में इसने कितना विश्वास उत्पन्न किया है।

मेरा विश्वास है कि स्वतंत्र राज्य में प्रत्येक नागरिक से इस प्रकार का व्यवहार होना चाहिये कि जिससे न केवल उसकी भौतिक आवश्यकतायें ही पूरी होनी चाहियें, अपितु आत्मसम्मान की आध्यात्मिक भावना भी संतुष्ट हो। मैं यह भी समझता हूं कि न केवल इन प्रश्नों पर विचार करते समय ही बहुमत को न्याय्य होने का प्रयत्न करना चाहिये, अपितु उसे तो सर्वदा ही अल्पमतों के प्रति सच्चे आदर के भावों से पेश आना चाहिये; और कि उसके सारे निश्चय ही अल्पमतों की स्थिति को समझने की सच्ची भावना और सहानुभूति से प्रेरित होकर किये जाने

[माननीय पं. गोविन्द वल्लभ पंत]

चाहियें। अत: जब मैं इस प्रस्ताव का विरोध करता हूं तो यह इसलिये कि मुझे यकीन है कि यदि पृथक् चुनाव को प्रोत्साहना दी गई और जारी रखा गया तो यह अल्पमतों के लिये आत्महत्या के तुल्य होगा। जैसा कि मैंने पहले कहा, ऐसा जान पड़ता है कि देश की राजनैतिक स्थिति में आये हुये इतने बड़े इंकलाब को हम भूल से गये हैं। चाहे नाम कुछ भी दिया गया हो, पुराने समय में हमारी धारासभाओं का जिस प्रकार से कार्य होता था, उसे देखकर तो कहा जा सकता है कि वे परामर्श समितियों से किसी हालत में भी बढ़कर न थीं। अत्यावश्यक शक्ति तो अंग्रेजों के हाथों में थी और अंग्रेजी पार्लियामेंट ही हमारे भाग्य की अंतिम विधायक थी। जब तक शक्ति विदेशियों के हाथ में थी तब तक तो मैं समझ सकता हूं कि पृथक चुनाव विधि का कुछ लाभ था। उस समय संभवत: भिन्न-भिन्न जातियों के प्रतिनिधि अपने आपको अपनी-अपनी जातियों के सबसे बड़े वकील के रूप में जाहिर करने में कामयाब हो सकते थे और क्योंकि निश्चय करना उस समय देश की जनता के हाथ में न था, इसलिये वे इस स्थिति से संतुष्ट रह सकते थे। परंतु अब यहां केवल वकालत करने का ही प्रश्न नहीं है। किन्तु अब तो प्रश्न यह है कि इस स्वतंत्र देश की पार्लियामेंट (Parliament) और धारा-सभाओं के विचार विनिमय तथा कार्यों में एक प्रभावशाली और निश्चयात्मक आवाज कैसे प्राप्त की जाये? परामर्शदाता की स्थिति में भी एक व्यक्ति अच्छा वकील साबित हो सकता है, परंतु यदि न्यायाधीश जिसको कि उन्हें मुखातिब करना है ही, उसके हार्दिक उद्‌गारों, भावों तथा युक्तियों की कद्र न करता हो, और उस वकील की न्यायाधीश बनने की भी कोई संभावना न हो तो वह अपने लिये और अपने मुवक्किल के लिये किसी प्रकार से लाभकारी नहीं हो सकता। मैं तो वकील को जज बनने की आशा दिलाना चाहता हूं। मेरा विचार है कि बदले हुये हालात में नया दरजा (status) प्राप्त कर लेने के बाद इस देश के प्रत्येक नागरिक को पूर्ण उन्नति करने के और इस तरह देश में किये जाने वाले प्रत्येक निश्चय को सफलतापूर्वक प्रभावित करने के उचित अवसर प्राप्त होंगे। अत: मैं समझता हूं कि पृथक चुनाव विधि अल्पमतों के लिए अत्यंत हानिकर होगी। यह उनकी आत्महत्या के तुल्य है। यदि वे अलग-अलग हो गए तो वे भविष्य में अपने आपको बहुमत में कभी भी परिणत न कर सकेंगे और निराशा के भाव तो उनकी आरंभ में ही कमर तोड़ देंगे। जरा सोचें कि आप क्या चाहते हैं और इधर हम आपको कितना ऊंचा ले जाने के मंसूबे बांध रहे हैं। क्या अल्पमत हमेशा अल्पमत ही रहना चाहते हैं या उनके दिल में यह भी इच्छा है कि कभी इस बृहत् जाति का एक निजी अंग बनकर इसके भाग्य के विधायक और प्रदर्शक भी बनें? यदि

उनकी यह आशा है तो क्या वे सारी जाति से अलग-अलग रहकर इस कामना और उद्देश्य को प्राप्त कर सकते हैं? मैं समझता हूं कि सारी जाति से अलग होकर एक ऐसे डिब्बे में बंद रहना कि जहां हवा भी न जा सके, उनके लिये अत्यंत ही घातक होगा। ऐसी दशा में तो उन्हें श्वासार्थ वायु के लिये भी अन्यों पर निर्भर होना पड़ेगा। मैं उन्हें एक ऐसा दर्जा (position) दिलाना चाहता हूं कि जहां उनकी आवाज में से चीत्कार और असमता तो दूर हो जाये परंतु वह हो जाये शक्तिशाली। अल्पमतों ने यदि अपने प्रतिनिधि पृथक चुनाव विधि से चुनकर भेजे तो उन विचारों की आवाज कभी भी प्रभावशाली नहीं हो सकती। और यही बात है जिसे मि॰ जिन्ना और मुस्लिम लीग के अन्य नेता बार-बार दोहरा चुके हैं। उन्हें तो पृथक चुनाव विधि के साथ-साथ पासंग (weightage) भी प्राप्त था, परंतु पिछले तीस साल के अनुभव के आधार पर उन्होंने यह स्पष्ट घोषणा की थी कि यह सब कुछ धोखे की टट्टी थे और इनसे उनके अधिकारों और हितों की रक्षा नहीं हो सकी। बावजूद कि हिंदू और मुसलमान दोनों को पृथक चुनाव विधि तथा पासंग प्राप्त था; परंतु बताइये, पिछले तीन महीनों में वह कौनसी बुरी बात है जो कि बंगाल, बिहार और सीमा प्रांत में होकर न सुनी गई हो? क्या पृथक् चुनाव विधि ने उनकी कुछ सहायता की है? क्या इस आड़े समय में पासंग (weightage) सहित पृथक चुनाव विधि उन बेचारों के कुछ काम आई है? यह सचमुच दुर्भाग्य की बात है कि इतने कटु अनुभव के होते हुये भी आज हम फिर पृथक चुनाव विधि की मांग कर रहे हैं।

अच्छा, तो अल्पमत चाहते क्या हैं? क्या वे देश की सरकार और उसके शासन में कोई भाग लेना चाहते हैं? मै आपको स्पष्ट बता देना चाहता हूं कि यदि आप सारी जाति से अपने आपको अलग-अलग रखेंगे तो मंत्रिमंडल में आपको कोई ''स्थान'' प्राप्त न होगा क्योंकि मंत्रिमंडल को तो एक टोली (team) के रूप में अनुकूल विधि से व्यवहार करना होता है। जब तक मंत्रिमंडल का प्रत्येक सदस्य मतदाताओं के सामान्य निर्वाचन को जवाबदेह न हों तो सफलतापूर्वक कार्य नहीं चल सकता। क्या आप सरकार में अपने प्रतिनिधित्व के अधिकार को छोड़ने के लिए तैयार हैं? आप अपने संप्रदाय के केवल वकील बनना चाहते हैं। परंतु क्या आप इस दयनीय अवस्था से संतुष्ट हो सकेंगे? खासकर उस हालत में जब कि आपकी वकालत को यदि नफरत और मखौल से नहीं तो सर्वथा अनादर और अवहेलना की दृष्टि से देखा जायेगा। और यह होना अनिवार्य भी है क्योंकि वे लोग जो निश्चायक होंगे, वे तुम्हारे मतदाताओं के मंडल को जवाबदेह न होंगे।

आपका बचाव इसी बात में है कि आप अपने आपको उस गतिशील सम्पूर्ण का निजी अंग बना दें जो कि वास्तविक और सच्ची राजसत्ता है।

[माननीय पं. गोविन्द वल्लभ पन्त]

और भी, आपका अंतिम ध्येय क्या है? क्या आप वास्तविक राष्ट्रीय सांसारिक राजसत्ता चाहते हैं या कि मजहबी राजसत्ता? यदि आप उत्तर कथित चाहते हैं तो इस भारतीय संघ (Union of India) में मजहबी राजसत्ता तो केवल हिंदुओं की ही हो सकती है। इस प्रकार अपने आप को अलग-अलग कर लेना क्या आपके लिये हितकर होगा? क्या ऐसी राजसत्ता उन लोगों की कोई परवाह करेगी जिनका राजकार्य पर वास्तविक आधिपत्य रखने वाले प्रतिनिधियों के चुनाव में न कोई हाथ है और न ही उनकी वहां कोई सुनवाई है। क्या इससे अधिक घातक और कोई वस्तु हो सकती है? आपको यह भी विचार कर लेना चाहिये कि यदि इस विधि से कार्य आरंभ हो गया तो इस समय और इसके पश्चात् आप पर इसका क्या असर होगा। यदि आपको अल्पमतों के लिए पृथक् चुनाव का अधिकार मिल जाये तो उसका अनिवार्य रूप से यह परिणाम होगा कि बहुमत अल्पमतों से अलग-अलग हो जायेगा और अल्पमतों से अलग-अलग होकर बहुमत उनको अनायास ही कुचल कर रख देगा।

अत: मैं आपसे पूछता हूं कि क्या आप बहुमत को अल्पमत से अलग-अलग करना चाहते हैं? यदि यह बात है तो सोच लें कि ऐसी स्थिति में बहुमत आप में से किसी के सामने उत्तरदायी न होगा, न ही बहुमत में से कोई आपके भावों की परवाह करेगा और न ही उन्हें इस बात की चिंता होगी कि उनके कार्यों से आप या आपके साथियों पर क्या प्रभाव पड़ता है। और मेरी समझ में इससे बढ़कर और कोई वस्तु हानिकारक नहीं हो सकती। क्या आपको आज ही इसके लक्षण दिखाई नहीं देते? क्या आपको उन हलकों में जो आज तक सर्वदा ही शांत रहे हैं, भड़के हुए सांप्रदायिक भाव दिखाई नहीं देते? मुझे इसमें तनिक भी संदेह नहीं कि किसी भी दृष्टिकोण से आप देखें, जुदा चुनाव के लिये आपकी चीख व पुकार आपके हितों के लिये अत्यंत ही घातक होगी। और सब बातों के अतिरिक्त यह आज असामयिक और असंगत कही जायेगी। आखिरकार प्रजातंत्र का निष्कर्ष क्या है? प्रजातंत्र की सफलता के लिये आत्म-नियंत्रण की शिक्षा मनुष्य को लेनी होगी। प्रजातंत्र राजसत्ताओं में मनुष्य को अपने हितों का कम और दूसरों के हितों का अधिक ध्यान करना चाहिये। वहां पर विभक्त वफादारी नहीं रह सकती। सब प्रकार की वफादारियां पूर्णतया राज्य की ओर ही केन्द्रित होंगी। यदि किसी प्रजातंत्रात्मक राज्य में आप पारस्परिक विरुद्ध वफादारियां उत्पन्न करेंगे या आप एक ऐसी विधि बनायेंगे कि जिसके द्वारा कोई व्यक्ति या व्यक्ति-समूह दूसरे बड़े हितों

की परवाह न करता हुआ अपनी फजूलखर्ची को बंद नहीं करता है तो वहां प्रजातंत्र की समाप्ति हो जायेगी। इसलिये पृथक चुनाव विधि न केवल राजसत्ता (State) और समाज के लिये ही घातक है, अपितु वह अल्पमतों के लिये तो विशेष करके हानिकारक है। हमें इस संबंध में पर्याप्त अनुभव हो चुका है और यह सचमुच दुखदायक है कि उस सारे अनुभव को कुएं में फेंककर आज लोग पुनः समाप्त हुए नारों और जयकारों का आलिंगन करें। बीते हुए जमाने में कोई मनुष्य यह आवाज लगा सकता था। परंतु आज और विशेषकर इन दिनों में जब कि हम अपनी आंखों से हिंसा की तबाहकारियां देख रहे हैं और जब कि हर समय ही नरहत्याओं, लूटमार और बलात्कार तथा अन्य-अन्य बातों की दिल हिला देने वाली कहानियां हमारे कानों में पड़ती रहती हैं, तो क्या हमारे दिल में यह विचार नहीं उठता कि हमने पृथक रहने की घृणाजनक प्रवृत्ति की पर्याप्त सजा पा ली है और कि अब हमें बुद्धिपूर्वक कार्य करना चाहिये। इन कहानियों को सुनकर हममें से प्रत्येक वस्तुतः नहीं तो शर्म के मारे तो अवश्य ही मरा जाता है।

हम अब स्वतंत्र होने लगे हैं और इस स्वतंत्रता की हमने पूरी कीमत भी अदा कर दी है। हमारे एक ओर तो आज पाकिस्तान है और दूसरे ओर भारतीय संघ (Union of India) अर्थात् हिंदुस्तान है। हिंदुस्तान में मुसलमानों के साथ और पाकिस्तान में हिंदुओं के साथ विदेशियों का-सा व्यवहार करने के संबंध में बहुत चर्चा हो चुकी है। पृथक चुनाव की संस्था क्या इन तोड़-फोड़ की प्रवृत्तियों का प्रोत्साहन करेगी या उस संघ-शक्ति का उत्पादन करेगी कि जिसके बिना दोनों राजसत्ताएं (States) ही स्थिर नहीं रह सकतीं? क्या आप यह चाहते हैं कि एक राजसत्ता (State) के नागरिक अपनी रक्षा के लिये दूसरी राजसत्ता (State) में स्थित सहधर्मियों की ओर देखें या आप यह चाहते हैं कि उनके साथ स्वकीय स्वतंत्र अधीश्वर राजसत्ता (Free Sovereign State) के नागरिकों का-सा व्यवहार हो? मेरी इच्छा है कि सब अल्पमतों को भारतीय संघ (Union of India) में मानपूर्वक स्थान मिले। मैं चाहता हूं कि उन्हें आत्मज्ञान (Self-realisation) और आत्मपूर्ति (Self fulfilment) का पूर्ण अवसर प्राप्त हो। मेरी इच्छा है कि सभ्यताओं का यह सम्मिश्रण जारी रहे ताकि हम एक ऐसी राजसत्ता (State) प्राप्त कर सकें कि जहां सब मिलकर भाइयों की तरह जीवन व्यतीत करें और समता, स्वतंत्रता और भ्रातृभाव के नियमों पर पूरी तरह चलते हुए उन लोगों की कुर्बानियों के फल का जिन्होंने स्वतंत्रता की राह में सब कुछ न्योछावर किया है, हम सब उपभोग प्राप्त कर सकें *(घोर करतलध्वनि)*।

***अध्यक्षः** अब परिषद् विसर्जित होती है और 3 बजे दिन के पुनः बैठक होगी।

***एक माननीय सदस्यः** प्रश्न परिषद् के सम्मुख प्रस्तुत किया जाये।

***अध्यक्षः** यदि परिषद् की यही इच्छा है तो मैं वाद-विवाद को समाप्त किये देता हूं और प्रश्न मत-प्रदर्शन के लिये परिषद् के सामने पेश करता हूं। अब प्रश्न है कि परिषद् से भी पूछ लिया जाये।

प्रस्ताव स्वीकार हो गया।

***अध्यक्षः** मैं माननीय सरदार पटेल को जवाब देने के लिये, यदि वह कुछ कहना चाहते हों, तो बुलाता हूं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मैं अधिक समय नहीं लूंगा। मुझे यह जानकर कि इस प्रश्न पर गंभीरतापूर्वक विचार किया गया है कुछ अफसोस हुआ है। इसका कारण यह है कि जब यह प्रश्न परामर्श समिति के सामने आया था तो इस पर इतनी बहस नहीं हुई थी जितनी आज हुई। मुस्लिम लीग के मेरे उन मित्रों ने जिन्होंने कि यह संशोधन प्रस्तुत किया है और उनके समर्थकों ने इस कार्य को अपना कर्तव्य समझ कर निभाया है, वे इतने वर्षो से पृथक चुनाव के लिये जोर देते रहे और उसके परिणामस्वरूप इसे प्राप्त करके उपभोग करते रहे। अब वे महसूस करते हैं कि इसे एकदम न हटाया जाये। इसी कारण उन्होंने यह संशोधन प्रस्तुत किया है, ताकि परिषद् की राय ली जा सके। परंतु जब मैंने यहां पर हुये विस्तृत भाषण सुने तो मैंने ऐसा अनुभव किया कि मैं उस जमाने में जीवन व्यतीत कर रहा हूं कि जब सांप्रदायिक प्रश्न पर सर्वप्रथम बहस अभी आरंभ ही हुई थी। प्रारंभ के दिनों में जब मजहब के आधार पर चुनाव का प्रश्न राष्ट्रीय सभा (Congress) में रखा गया तो मुझे उन भाषणों के सुनने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ। परंतु फिर भी कई बड़े-बड़े मुसलमान ऐसे हैं जिनकी ऐसी लिखित सम्मत्ति मिलती है कि देश में लाई गई बुराइयों में पृथक् चुनाव विधि सबसे अधिक हानिकारक है। पृथक् चुनाव विधि का आरंभ एक विष था जो कि हमारे देश के राजनैतिक कलेवर में दाखिल कर दिया गया है। कई अंग्रेजों ने भी जिनका कि इसे आरंभ करने में पूरा-पूरा हाथ था इस बात को स्वीकार किया है। परंतु आज जबकि पृथक चुनाव के परिणामस्वरूप देश के दो टुकड़े किये जा चुके हैं तो मेरा यह ख्याल न था कि इस प्रस्ताव को इस प्रकार गंभीरतापूर्वक प्रस्तुत किया जायेगा। और यह तो कदापि भी ख्याल न था कि यदि यह गंभीरतापूर्वक प्रस्तुत किया भी गया तो अन्य सदस्य इस दृष्टिकोण को इतना महत्त्व देंगे। अच्छा,

जब पाकिस्तान को स्वीकार किया गया तो यह बात समझी गई थी कि शेष हिंदुस्तान में जो कि पूर्ण भारत का 80 प्रतिशत है, केवल एक राष्ट्र ही माना जायेगा और कि उसमें फिर दो राष्ट्रों की बात को न उठाया जायेगा। 'हम पृथक् चुनाव को इसलिये मांगते हैं क्योंकि इसमें हमारा भला है' यह कहने से अब कोई लाभ नहीं। हम इसे पर्याप्त समय तक सुन चुके हैं। हम इसे वर्षों तक सुनते रहे हैं और इस आंदोलन के परिणामस्वरूप ही आज हम एक जुदा राष्ट्र बन गये हैं। आंदोलन यह था कि "हम एक पृथक् जाति हैं अतः पृथक चुनाव, पासंग (Weightage) और ऐसी ही दूसरी सुविधायें हमारी रक्षा के लिये पर्याप्त नहीं। इसलिये हमें एक पृथक् राजसत्ता (State) दे दीजिये।" परंतु शेष हिंदुस्तान में अर्थात् बाकी के 80 प्रतिशत हिंदुस्तान में क्या आप केवल एक जाति के अस्तित्व को अंगीकार करेंगे? या आप अब भी यहां पर दो जातियों की बात को पुनः उठाना चाहते हैं? मैं पृथक चुनाव के विरुद्ध हूं। मुझे कोई भी स्वतंत्र देश ऐसा दिखलाइये कि जहां पृथक चुनाव-विधि प्रचलित हो। यदि कहीं भी ऐसा हुआ तो मैं इसे यहां पर भी मान लूंगा। परंतु यदि देश विभाजन के पश्चात भी इस अभागे देश में पृथक् चुनाव को जारी रखा गया तो सर्वत्र कष्ट ही कष्ट उदय होगा, जिसके कारण यहां रहना भी मुश्किल हो जायेगा। इसीलिये मैं कहता हूं कि यह केवल मेरे भले के लिये ही नहीं, अपितु आपका अपना भला भी इसमें है कि गुजरी हुई बातें भूल जाओ ताकि हम संगठित हो सकें। मैं पाकिस्तान का भला चाहता हूं। यह सफल हो और वे अपने ढंग पर निर्माण कर सकें। प्रभु करे कि वे खुशहाल हों। आओ, हम खुशहाली के लिये प्रतिस्पर्धा करें। किन्तु हमें उस प्रतिस्पर्धा में शामिल नहीं होना चाहिये जो कि पाकिस्तान में आज की जा रही है। आप नहीं जानते कि देहली में हम एक ज्वालामुखी पर बैठे हैं। आपको पता नहीं कि हमारे पड़ोस में जो कुछ हो रहा है उसके कारण हम पर कितना बोझ पड़ रहा है। मेरे मित्र संशोधन के प्रस्तावक महोदय ने कहा है कि मुस्लिम जाति आज सुसंगठित है। बहुत अच्छा, यह बात सुनकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। इसीलिये तो मैं कहता हूं कि आपको अब और किसी सहारे की आवश्यकता नहीं *(करतल ध्वनि)*, क्योंकि देश में आपके अतिरिक्त और अल्पमत भी हैं जो कि सुसंगठित नहीं हैं। इस कारण वे विशेष सहायता और सुविधाओं के पात्र हैं। इसलिये हम उनके प्रति अधिक उदार होना चाहते हैं। परंतु इसके साथ ही हमने आपको जनसंख्या के अनुपात से सुरक्षा दे दी है। यह इसलिये किया गया है कि आपको, जिन्होंने पृथक् चुनाव इत्यादि का इतने समय तक उपभोग किया है, कहीं व्यवहार भेद

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

की शिकायत उत्पन्न न हो। संसार के स्वतंत्र देशों में इस प्रकार की 'सुरक्षा' कहीं भी नहीं दी गई। क्या आप मुझे दिखा सकेंगे? यह मैं आपसे पूछता हूं। आप एक सुसंगठित संप्रदाय हैं। मुझे बतायें कि फिर आप एक पंगु की तरह क्यों व्यवहार करते हैं? क्योंकि आप सुसंगठित हैं अत: आपको एक वीर और शक्तिशाली मनुष्य की तरह आचरण करते हुये सीधे खड़े हो जाना चाहिये। जो देश के इस ओर नई जाति निर्माण की जा रही है, उसका ध्यान कीजिये। हमने एक नई जाति की नींव रख दी है। श्री चौधरी खलीकुज्जमा का कहना है कि क्योंकि इस विधान के अधीन देश से अंग्रेजी अंश (element) चला गया है अत: हमें आपस की आशंकायें भूल जानी चाहियें। अंग्रेजी अंश (element) तो चले गये हैं परंतु वे शरारत तो पीछे छोड़ गये हैं। हम इस शरारत को जारी रखना नहीं चाहते (सुनो, सुनो की आवाजें)। अंग्रेजों ने जब इसका आरंभ किया था तो उन्हें ख्याल न था कि उन्हें इतनी जल्दी जाना पड़ेगा। उन्होंने शासन को आसानी से चलाने के लिये यह किया था। यह तो ठीक है, परंतु वे अपने पीछे अपनी विरासत तो छोड़ गये हैं। क्या हम इससे छुटकारा पायेंगे या नहीं? अत: मैं आपसे अनुरोधपूर्वक यह कहता हूं कि तनिक विचारिये कि आप क्या कर रहे हैं? क्या आपको आशा है कि इस देश में मुस्लिम लीग के बाहर कोई ऐसा व्यक्ति मिल सकेगा जो कि यह कहे कि आओ, पृथक चुनाव को स्वीकार कर लें और कि ऐसा करने में कोई हानि नहीं। यदि आप कहें कि देश के इस पार जाति के आप वफादार रहना चाहते हैं तो मेरा प्रश्न है कि क्या यही वफादारी है? और कि क्या इस वफादारी का आपको उचित जवाब मिल ही रहा है न? मेरा इस विषय में बोलने का कोई इरादा न था परंतु जब इस संशोधन के प्रस्तावक महोदय ने इस विषय पर इतना लंबा भाषण दिया और फिर विरोधी दल के नेता ने भी इसका समर्थन किया तो मैंने अनुभव किया कि देश में अभी तक फिर बुराई चली आ रही है। अत: मेरे प्यारे मित्रों! मैं आपसे पूछता हूं कि क्या आप इस देश में अब शांति चाहते हैं? यदि आप शांति चाहते हो तो इस बात को त्याग दो। मेरा आपसे यह प्रश्न भी है कि यदि आप शांति नहीं चाहते तो क्या जो इस समय हमारे आसपास हो रहा है, आपको स्वीकार है? यदि स्वीकार है तो बहुत ठीक, आप इसे प्राप्त कर सकते हैं; परंतु फिर भी मैं आपसे अनुरोध करूंगा कि आओ, कम से कम देश के इस ओर तो हम यह दिखला दें कि हम सब कुछ भूला चुके हैं। यदि हम भुलाने के लिये तैयार हैं तो आओ, हम पिछली बातों को भूल जायें और साथ ही उस वस्तु को जिसके कारण से आजकल का

सब अनर्थ किया जा रहा है, उसे भी भुला दें। अतः मैं आपसे पुनः प्रार्थना करूंगा कि आप संशोधन लौटा लें ताकि यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार हो सके और बाहर की दुनिया को यह पता लगे कि हम एक हैं *(करतल ध्वनि)*।

***माननीय सदस्यगण:** संशोधन लौटा लीजिये।

***अध्यक्ष:** मैं अब पहले संशोधन पर मत (vote) ग्रहण करूंगा। संशोधन इस प्रकार है:

''अल्पमतों के मौलिक आधार इत्यादि पर विचार करने के लिये बनाई गई परामर्श समिति को अल्पमत के अधिकारों के विषय पर तैयार की गई रिपोर्ट पर विचार करके विधान-परिषद् की यह बैठक निश्चय करती है कि जहां तक मुसलमानों का संबंध है, केन्द्रीय और प्रांतीय धारासभाओं के सारे चुनाव पृथक् विधि के अनुसार किये जायें।''

यह संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्ष:** मैं अब वास्तविक प्रस्ताव पर मत (vote) लेता हूं। यह इस प्रकार है:

''केन्द्रीय और प्रांतीय धारा-सभाओं के सब चुनाव संयुक्त विधि से होंगे।''

यह प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

इसके पश्चात् 3 बजे दोपहर तक परिषद् की कार्यवाही स्थगित कर दी गई।

माननीय डा० राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में दोपहर के भोजन के पश्चात् दिन के 3 बजे भारतीय विधान-परिषद् की दोबारा बैठक हुई।

***अध्यक्ष:** हम अब आगे मदों पर बहस को आरंभ करेंगे। सरदार पटेल!

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, मैं प्रथम मद को प्रस्तुत करता हूं। यह इस प्रकार है:

''बशर्ते कि साधारण नियम के तौर पर परिगणना में प्रदर्शित किये गये अल्पसंख्यकों को उनकी जनसंख्या के अनुपात से विविध धारा-सभाओं में 'स्थानों' की 'सुरक्षा' दी जायेगी।

और बशर्ते कि स्थानों की यह सुरक्षा दस वर्षों के लिए होगी और इस अवधि के पश्चात् एतद्विषयक स्थिति पर पुनः विचार किया जायेगा।''

मैं इस प्रस्ताव को परिषद् के सामने स्वीकृति के लिये प्रस्तुत करता हूं।

***अध्यक्षः** इस पर कई संशोधन हैं। इसमें सबसे पहला श्री पंडित ठाकुरदास भार्गव का है।

***पं॰ ठाकुरदास भार्गव** (पूर्वी पंजाबः जनरल): श्रीमान्, आपकी आज्ञा से मैं प्रथम सूची में अंकित 18वें स्थान पर अपना 19वां संशोधन प्रस्तुत करने का विचार रखता हूं। यह इस प्रकार है कि:

''प्रथम पैरा (Para) की प्रथम व्यवस्था में 'स्थानों' इस शब्द की जगह 'प्रतिनिधित्व' यह शब्द रख दिया जाये।''

मुझे इस संशोधन को प्रस्तुत करते समय प्रसन्नता है क्योंकि इससे श्री मुंशी महोदय को अपने संशोधन को प्रस्तुत करने का अवसर प्राप्त होता है और मेरे विचार में उनका वह संशोधन ठीक ही है। मुझे यह कहते हुये अफसोस होता है कि वर्तमान परिस्थिति में अपने संशोधन के पक्ष में मैं और कुछ नहीं कहना चाहता।

***श्री के॰एम॰ मुंशी** (बम्बईः जनरल): श्रीमान्, अध्यक्ष महोदय, मैं श्री पंडित ठाकुरदास महोदय के संशोधन पर अपना निम्न संशोधन प्रस्तुत करता हूं कि:

''प्रथम सूची के 25-8-47 तिथि के 19वें संशोधन में 'स्थानों' इस शब्द की जगह 'प्रतिनिधित्व' यह शब्द रख दिया जाये,' इन शब्दों के स्थान पर निम्न शब्द रख दिये जायें:

'परिगणना' इस शब्द के पश्चात् ये शब्द 'और हिन्दू जाति का वह भाग जिसका कि आगे प्रथम पैरा (अ) में संकेत है' रख दिये जायें।''

व्यवस्था के शब्द निम्न प्रकार हैं:

''बशर्ते कि साधारण नियम के तौर पर परिगणना में प्रदर्शित किये गये अल्पसंख्यकों को उनकी जनसंख्या के अनुपात से विविध धारा-सभाओं में 'स्थानों' की 'सुरक्षा' दी जायेगी।''

और यदि मेरा संशोधन स्वीकार हो जाये, तो यह इस प्रकार होगी:

''परिगणना में प्रदर्शित किये गये अल्पसंख्यकों को तथा हिन्दू जाति के उन अंगों को कि जिनका संकेत इसके प्रथम पैरा 1(अ) में पाया जाता है सुरक्षा दी जायेगी।''

मैं 85वें संशोधन पर भी एक संशोधन प्रस्तुत कर चुका हूं। इस संशोधन द्वारा परिगणित जातियों की मद को उठाकर एक पृथक पैरा 1 (अ) में रख दिया जायेगा, तब इसको परिगणना में न गिना जायेगा।

इस संशोधन का आशय तथाकथित परिगणित जातियों की स्थिति को स्पष्ट करना है। जहां तक अन्तर्जातीय संधियों और अन्तर्जातीय कानून का संबंध है, 'अल्पसंख्यक' यह शब्द केवल जाति, भाषा और मजहब संबंधी अल्पमतों के अर्थों में ही सीमित है। हरिजन जिन्हें कि प्राय: परिगणित जातियां कहा जाता है, न तो जाति संबंधी, न ही भाषा संबंधी और न ही वास्तव में मजहबी अल्पमत है। अत: परिभाषा की यथार्थता के लिये यह संशोधन आवश्यक जाना गया है। परिषद् के सदस्यों को स्मरण ही होगा कि जब भारतीय सरकार-एक्ट प्रस्तुत किया गया था, तो सर सेमुलहोर ने 'अल्पसंख्यकों' की परिभाषा को इस तरह विस्तृत कर दिया था कि प्रत्येक अल्पसंख्यक समूह जिसे गवर्नर उचित समझे, 'अल्पसंख्यक' करके गिना जाये। इस परिभाषा के अर्थों का यह विस्तार बहुत ही शरारत से भरा हुआ है। मेरा संशोधन, इस विषय को जहां तक कि परिगणित जातियों का संबंध है, स्पष्ट करना चाहता है। ये जातियां परिभाषा के यथार्थ अर्थों में ''अल्पसंख्यक'' नहीं। इस संशोधन से यह व्यक्त करना भी अभीष्ट है कि हरिजन हिन्दू जाति का निजी अंग हैं और कि ये सुविधायें उन्हें उनके हितों के रक्षार्थ दी जा रही हैं और कि ये केवल तभी तक जारी रहेंगी कि जब तक वे अपने आपको हिंदुओं में पूर्णतया मिला नहीं लेते। दूसरा कारण यह है और मैं यह बता दूं कि यह दूसरा कारण उन निश्चयों पर आश्रित है, जो कि परिषद् अब तक कर चुकी है। हिन्दू जाति में परिगणित जातियों का अन्य हिंदुओं से भेद करना ही छूतछात कहलाती

[श्री के.एम. मुंशी]

है। अतः मौलिक अधिकार जो हम स्वीकार कर चुके हैं वे कानूनन छूतछात की मनाई करते हैं और भारतीय संघ में इस प्रथा को कानून द्वारा अपराध करार दिया जा चुका है। मौलिक अधिकारों में हमने यह भी स्वीकार कर लिया है कि किसी भी सार्वजनिक स्थान में किसी भी व्यक्ति का प्रवेश जन्म के आधार पर निषिद्ध न किया जा सकेगा। जहां तक संघ (Federation) का संबंध है, हमने हिन्दू जाति के भिन्न-भिन्न अंगों के मध्य से कृत्रिम दीवारों को हटा दिया है। ऊपर की बातों को ध्यान में रखते हुये परिगणित जातियों को अल्पसंख्यक की हैसियत की किसी भी प्रकार की सुविधाओं का दिया जाना अवैध होगा। और संभवतः यह हिन्दू जाति में उनके पूर्णतया मिल जाने के मार्ग में भी बाधक हो। अतः मेरा निवेदन है कि यह संशोधन जो कि मैं प्रस्तुत कर रहा हूं इस विषय में स्थिति को स्पष्ट कर देता है।

***श्री एच॰जे॰ खांडेकर:** सभापति महोदय, मेरा जो संशोधन है, वह बहुत ही सीधा है और वह ऐसा है कि जहां भी 'पापुलेशन' शब्द आया है जैसा कि नंबर 1 में: ''बशर्ते कि साधारण नियम के तौर पर परिगणना में प्रदर्शित किये गये अल्पसंख्यकों को उनकी जनसंख्या के अनुपात से विविध धारासभाओं में 'स्थानों' की 'सुरक्षा' दी जायेगी।'' उसके बाद मैं यह एड करना चाहता हूं: ''परिगणित जातियों के संबंध में 1931 के जनगणना के अनुसार।''

इस संशोधन को रखने का मेरा खास कारण जो है वह मैं इस हाउस के सामने बतलाना चाहता हूं। हिन्दोस्तान की तादाद दिनोंदिन बढ़ रही है और 1911 के सेंसस से 1941 तक के सेंसस को देखा जाये तो आज हिन्दोस्तान की तादाद 40 करोड़ तक बढ़ गयी और मैं आपके सामने, जो आप सब जानते हैं, एक बात रखना चाहता हूं कि शेडूल्ड कास्ट गिरी हुई श्रेणी से आते हैं, मगर संख्या बढ़ाने में वह किसी भी उच्च श्रेणी के लोगों से कम नहीं हैं। अगर कास्ट हिन्दू के यहां एक बच्चा पैदा होता है, तो शेडूल्ड कास्ट के यहां चार बच्चे पैदा होते हैं। मगर दुख और बड़े आश्चर्य की बात है कि अछूतों की तादाद सन् 1911 से लेकर बराबर क्यों घटती जा रही है? यह बात मेरी समझ में नहीं आती। जब हमने इसका कारण ढूंढा तो यह मालूम हुआ कि 1941 के सेंसस में बंगाल और दीगर प्रांतों में कुछ तो हमारे मुसलमान भाइयों ने सेंसस में हिस्सा लेकर शेडूल्ड कास्ट के भाइयों को मुसलमान लिखवा लिया और कास्ट हिन्दुओं ने उन्हें हिन्दू लिखवा दिया। और यही कारण है कि 1931 के सेंसस के बाद हमारी

तादाद बराबर घटती रही है और 1941 के सेंसस में शेडूल्ड कास्ट की तादाद 1931 के सेंसस से दो करोड़ घट गयी। इसलिये मैं इस संशोधन को आपके सामने रख रहा हूं जबकि संख्या के अनुसार हर माइनोरिटी को प्रोविन्शियल और सेंट्रल असेंबली में उसके हक मिल रहे हैं और चूंकि हमें 1941 के सेंसस के मुताबिक हक मिलेंगे तो हमारे बहुत से नुमाइंदे खत्म हो जायेंगे। 1931 की संख्या के अनुसार भी हम बहुत कम हैं, फिर भी यह सन् 1941 के सेंसस से तो गनीमत है, क्योंकि सन् 42 का सेंसस जब लिया गया उस वक्त लड़ाई चल रही थी और लड़ाई के जमाने मे शायद यह हो सकता है कि सेंसस ठीक तरीके से न लिया गया हो और खासकर शेडूल्ड कास्ट का ठीक तरीके से न लिया गया हो। कास्ट हिन्दुओं ने शेडूल्ड कास्ट के लोगों को हिन्दू लिखवा दिया और मुसलमानों ने मुसलमान लिखवा दिया। इसलिये मुझे इस बात का शक है कि हमारा जो सन् 1941 का सेंसस है, वह बिल्कुल गलत है और इस बात पर मैं ही नहीं बल्कि देश की सारी अछूत जाति चिल्लायी और बार-बार यह कहा कि हमारा जो सन् 1941 का सेंसस है, उसके ऊपर हमारी नुमाइंदगी और गिनती न होनी चाहिये। अब दूसरा कोई जरिया बाकी नहीं रहता। जरिया एक बाकी रहता है और वह यह कि अगर इस प्रस्ताव के मूवर हमें इस बात का आश्वासन दे दें कि सेंसस फिर से किया जायेगा और सेंसस करने के बाद वह जगह निर्धारित की जायेगी, तो मैं एमेंडमेंट वापस लेने को तैयार हूं। अगर ईमानदारी से सेंसस लिया गया होता तो हमारी संख्या कहीं अधिक होती; लेकिन सन् 1941 के सेंसस के बारे में पूरा शक है और वह ठीक तरह से हमारा सेंसस नहीं है और इसी बुनियाद पर मैं इस संशोधन को आपके सामने रखता हूं। मुझे मालूम है कि इस हाउस के प्रत्येक सदस्य को शेडूल्ड कास्ट के बारे में बहुत हमदर्दी है। मैंने बहुत सी स्पीचेज सुनीं। बहुत से लीडरान हमारी बातों से हमदर्दी रखते हैं, लेकिन वह हमदर्दी अगर सिर्फ लिप सिम्पेथी हो तो उसमें कोई मजा नहीं है। लोग यह कहते हैं कि हम हिन्दू कोम्यूनिटी के पार्ट और पार्सल हैं और मैं भी इस चीज को मानता हूं। अगर आप मेरे इस संशोधन का विरोध करेंगे तो इसका मतलब यह है कि हमको सन् 1941 के सेंसस के आधार के अलावा आप ज्यादा नहीं देना चाहते। जब आप कहते हैं कि दो चार जगह कम क्या और दो चार जगह ज्यादा क्या, वह तो हिन्दू ही हैं; तो मैं आपसे प्रार्थना करूंगा कि 1931 के सेंसस के मुताबिक अगर शेडूल्ड कास्ट वालों को दो चार जगह ज्यादा मिल जाती हैं तो हमें देने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिये। इसलिये मैं प्रस्तावक महोदय से प्रार्थना करूंगा कि वह मेरे इस संशोधन को मान लें और शेडूल्ड कास्ट के लोगों को सन् 1931 के मुताबिक हक दें। इन शब्दों के साथ मुझे उम्मीद है कि प्रस्तावक महोदय मेरे इस एमेंडमेंट को मानेंगे।

***श्री वी॰आई॰ मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, मेरे मित्र श्री मुंशी महोदय ने यह स्पष्ट कर दिया है कि परिगणित जातियां अल्पसंख्यक हैं, पर क्योंकि उनका शुमार अल्पसंख्यकों की उपर्युक्त तीनों कक्षाओं में से किसी में भी नहीं किया जा सकता; अत: उन्हें अल्पसंख्यक नहीं माना जा सकता। श्रीमान्, मैं इस परिषद् को बता देना चाहता हूं कि 16 मई से पहले तो परिगणित जातियों का इस विषय में अल्पसंख्यक करके ही शुमार होता था। परंतु इसके पश्चात् जब मंत्रिशिष्टमंडल यहां आया तो न जाने किस प्रकार से उन्होंने दलित जातियों अर्थात् परिगणित जातियों को इस गणना से निकाल दिया और केवल तदतिरिक्त जातियों को ही इस विषय में सामने रखा। पर क्योंकि मेरे मित्र श्री मुंशी महोदय ने यह स्पष्ट कर दिया है कि परिगणित जातियों के मार्ग में कई एक मजबूरियां दर पेश हैं। अत: उन्हें अल्पसंख्यक होने के सारे लाभ प्राप्त कराये जायेंगे तथा उन्हें किसी प्रकार से भी वांछित सुविधाओं से वंचित न रखा जायेगा। इस दृष्टि से मेरा विचार है कि यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाना चाहिये।

***एक माननीय सदस्य:** श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, मैं जानना चाहता हूं कि जब तक एक संशोधन पेश न हो जाये, तब तक कैसे उस संशोधन का कोई अन्य संशोधन प्रस्तुत किया जा सकता है।

***अध्यक्ष:** यह एक वैधानिक बात है। इसीलिये मैंने इस संशोधन को इस समय ही प्रस्तुत करने की आज्ञा दे दी है।

***श्री एस॰ नागप्पा:** श्रीमान्, मेरे मित्र श्री खांडेकर महोदय ने अभी-अभी 88वां संशोधन प्रस्तुत किया था कि 1931 की जनगणना.......।

***श्री के॰एम॰ मुंशी:** मैं वैधानिक आपत्ति उठाने के लिये खड़ा होता हूं। यह तो खंड 3 के संबंध में है और परिगणना में हम तो अभी पैरा 1 पर ही आये हैं।

***श्री एस॰ नागप्पा:** वह तो प्रस्तुत कर दिया गया था।

***श्री के॰एम॰ मुंशी:** वह तो पैरा 1 पर एक संशोधन था। परिषद् तो इस समय पैरा 1 पर विचार कर रही है।

***श्री एस॰ नागप्पा:** मैं तो यह कह रहा हूं कि यह भी उसी प्रकार का संशोधन है।

***अध्यक्षः** जब हम उस पर विचार आरंभ करें तो आप वह संशोधन प्रस्तुत कर सकते हैं।

***श्री के॰एम॰ मुंशीः** श्रीमान्, मेरा एक और संशोधन भी है। मेरा दूसरा संशोधन पैरा 1 के संबंध में है। यह तो केवल पहले प्रस्तुत किये जा चुके संशोधन में संकेत की गई विधि को कार्यरूप में परिणत करने के लिये है।

***अध्यक्षः** यह परिणामस्वरूप है।

***श्री के॰एम॰ मुंशीः** पूर्वकथित विचारों को जारी रखता हुआ श्रीमान्, मैं आपसे इसको प्रस्तुत करने की आज्ञा चाहता हूं। संशोधन, जो मैं प्रस्तुत कर रहा हूं, इस प्रकार है किः

''7 'परिगणित जातियां' इन शब्दों को परिगणना से निकाल दिया जाए और तदनंतर निम्न पैरा रख दिया जाएः

'1 (अ) हिंदू जाति का वह भाग जो कि परिगणित जातियों के नाम से पुकारा जाता है और जिसकी परिभाषा भारतीय सरकार के सन् 1935 के एक्ट (Government of India Act, 1935) की परिगणना 1 में की गई है, को वही अधिकार और लाभ प्राप्त कराये जायेंगे जो कि अल्पसंख्यकों को दिये गये हैं और जिनको कि परिगणना के पैरा 1 में निश्चित कर दिया गया है'।''

हरिजनों को अल्पसंख्यकों की कक्षा से निकाल कर एक स्वतंत्र कक्षा में हिन्दू जाति के अंग के रूप में रखा जाने के परिणामस्वरूप यह संशोधन है। अतः मैं इस प्रस्ताव को पेश करता हूं।

***श्री बी॰ दास** (उड़ीसाः जनरल): श्रीमान्, मैं श्री मुंशी महोदय द्वारा पेश किये गये संशोधन का संशोधन प्रस्तुत करना चाहता हूं। उन्होंने कहा है कि ''हिन्दू जाति का वह भाग जो कि परिगणित जातियों के नाम से पुकारा जाता है और जिसकी परिभाषा भारतीय सरकार के सन् 1935 के एक्ट (Government of India Act, 1935) की परिगणना 1 में की गई है''। इस पर मैं यह संशोधन पेश करना चाहता हूं किः ''जिसकी परिभाषा भारतीय सरकार के सन् 1935 के एक्ट की

[श्री बी. दास]

परिगणना 1 में की गई है'' इन शब्दों के स्थान पर ''जिसकी परिभाषा संघ-विधान-एक्ट (Union Constitution Act) की परिगणना में की गई है'' ये शब्द रख दिये जायें।

मैं भारतीय सरकार के सन् 1935 के एक्ट (Government of India Act, 1935) में इस नाम की आवृत्ति नहीं चाहता। समिति ने भारतीय सरकार के उस एक्ट (Government of India Act, 1935) की परिगणना पर विचार कर लिया है जिसकी ओर कि यहां पर संकेत किया गया है। हम उसे संघ-विधान-एक्ट (Union Constitution Act) की परिगणना के रूप में स्वीकार कर सकते हैं। यही वह संशोधन है कि जो मैं प्रस्तुत कर रहा हूं।

''भारतीय सरकार के सन् 1935 के एक्ट' इन शब्दों को निकाल कर 'जिसकी परिभाषा संघ-विधान-एक्ट (Union Constitution Act) की परिगणना में की गई है' ये शब्द रख दिये जायें।''

यह संशोधन है जो कि मैं पेश करना चाहता हूं।

***श्री के॰ संतानम्:** श्रीमान्, मैं श्री बी॰ दास महोदय द्वारा प्रस्तुत किए गए सबसे अंतिम संशोधन के संबंध में एक बात कहना चाहता हूं। यदि हमने परिगणना बना ली होती, तो अच्छा होता। परिगणना के अभाव में अविद्य-मान परिगणना की ओर किसी विषय का संकेत मैं उचित नहीं समझता। भारतीय सरकार के सन् 1935 के एक्ट (Government of India Act, 1935) की ओर ही संकेत ठीक है क्योंकि इससे एक यथार्थ बात का ज्ञान होता है। मैं यहां तीन बातों की ओर ध्यान दिलाना चाहता हूं। सबसे पहली बात यह है, इस व्यवस्था में 'धारासभाएं' यह शब्द आता है। मैं जानना चाहता हूं कि यह 'सुरक्षा' क्या दोनों ही भवनों (Houses) ऊपरले (Upper) और निचले (Lower) के लिए होगी? मेरा अनुमान है कि सुरक्षा केवल निचले भवन (Lower House) के लिये ही होगी, क्योंकि हमारे पास किये गये विधान के अनुसार प्रांतों में ऊपरले भवनों (Upper Houses) का चुनाव आयरिश ढंग (Irish model) पर होगा और संघ (Federation) के ऊपरले भवन (Upper House) का निर्वाचन अमरीकी सैनेट (American Senate) के ढंग पर प्रांतीय धारा-सभाओं द्वारा किया जायेगा। मैं नहीं समझता कि धारासभाओं के ऊपरले भवन (Upper House) में 'सुरक्षा' का कोई मतलब हो सकता है। अतः

मेरा ख्याल है कि 'विविध असेम्बलियां' (various assemblies) ये शब्द रखकर इस विषय को स्पष्ट कर दिया जाना चाहिये।

दूसरी बात कि जिसकी ओर मैं संकेत करना चाहता हूं, यह है कि यह वाक्य-खंड (Clause) पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल पर लागू नहीं किया जाना चाहिये। विभाजन के परिणामस्वरूप वहां के हालात विचित्र ही हैं। हमें पता नहीं कि आज वहां भिन्न-भिन्न जातियों की आबादी किस अनुपात से है। जब तक हमको आबादी के अनुपात का पता न लग जाये, तब तक आबादी को आधार मानकर स्थानों की सुरक्षा का नियम वहां लागू नहीं किया जाना चाहिये। क्योंकि यदि ऐसा किया गया तो ऐसे परिणाम निकलेंगे, जिनका आज अनुमान नहीं किया जा सकता। अत: मेरा विचार है कि जब तक हमें यथार्थ रूप से इन दोनों प्रांतों में आबादियों के अनुपात का पता न लग जाए तब तक यह वाक्य-खंड (Clause) वहां पर लागू न किया जाए। मेरा ख्याल है कि साधारणतया अपवाद रूप से इन दोनों प्रांतों को इस रिपोर्ट से परे ही समझा जाये।

एक और बात जिसकी ओर मैं इस संशोधन के प्रस्तावक का ध्यान खींचना चाहता हूं, वह यह है कि यदि किसी निर्वाचन मंडल (Constituency) में उस अल्पसंख्यक की बहुसंख्या हो जिसके लिये 'सुरक्षा' का प्रबंध किया गया है तो वह निर्वाचन मंडल (Constituency) 'सुरक्षा' के बिना ही 'सुरक्षित स्थान' समझा जाए। उदाहरण के तौर पर फर्ज कर लीजिये कि एक जिले में मुसलमान बहुसंख्यक हैं और वह जिला 'निर्वाचन मंडल' है और उसमें एक या दो 'स्थान' हैं। अब कोई भी ऐसी युक्ति नहीं मिल सकती कि जिसके द्वारा इस निर्वाचन मंडल में सुरक्षा लगाई जाए। मेरे विचार में अमली तौर पर इसे सुरक्षित स्थानों की गिनती में समझा जाना चाहिए। यदि ऐसा न किया गया तो इसके कई दुष्परिणाम निकलेंगे। फर्ज करो, सारे ही जिले में मुसलमानों की बहुसंख्या है और उस जिले में तीन या पांच 'स्थान' हैं। क्या आप मुस्लिम 'स्थानों' को उस 'निर्वाचन मंडल' में सुरक्षित कर रहे हैं कि जहां पर उनकी बहुसंख्या है? मेरे विचार में यह तो व्यर्थ होगा। और यदि आप इन स्थानों को 'सुरक्षित' नहीं करते तो ये 'सुरक्षित' किए जाने वाले स्थानों में न गिने जायेंगे। इस समस्या को अवश्य हल कर दिया जाना चाहिये और विशेष करके कि जब यह नियम पश्चिमी बंगाल और पूर्वी पंजाब में लागू किया जाए तो बिहार और यू॰पी॰ के कतिपय भागों में भी यह समस्या बड़ी महत्त्वशाली बन जायेगी। अत: मेरा सीधा सुझाव यह है कि यदि किसी निर्वाचन मंडल में किसी ऐसे अल्पसंख्यक की बहुसंख्या हो कि जिसके लिए सुरक्षा दी

[श्री के. संतानम्]

गई हो तो उस 'निर्वाचन मंडल' को अवश्य ही 'सुरक्षित' समझ लिया जाना चाहिये, क्योंकि वहां पर मतदाताओं में उनकी बहुसंख्या तो पहले ही विद्यमान है। तदनन्तर इस निर्वाचन मंडल के स्थानों को 'सुरक्षा' की गणना में से कम कर दिया जाना चाहिये। मैं समझता हूं कि इस बात का विवरण तो प्रत्येक प्रांत की स्थिति को विचार में लाकर ही किया जाना चाहिये। परंतु इस बात पर विचार अवश्य किया जाना चाहिये।

जनगणना के आधार पर 'सुरक्षा' को स्वीकार कर लेने से और कई विचारणीय बातें उठ खड़ी होती हैं। मैं यहां पर उनका जिकर नहीं करूंगा। और अन्य विषयों पर विचार करते समय मैं उन पर अपनी राय जाहिर करूंगा। मेरा सुझाव है कि इन तीनों बातों को यहां पर ही स्पष्ट कर दिया जाना चाहिये या इन पर किसी समय भविष्य में अवश्य ही विचार हो और तदनन्तर वहां पर निश्चय भी कर लिया जाए। वे तीनों बातें ये हैं कि क्या सुरक्षा केवल ऊपरले भवनों (Upper Houses) पर ही लागू की जानी है? और कि इस नियम का प्रयोग क्या पश्चिमी बंगाल और पूर्वी पंजाब में नहीं किया जाना तथा उन निर्वाचन-मंडलों (Constituencies) का जहां कि उन अल्पसंख्यकों की बहुसंख्या हो, जिन्हें कि सुरक्षा दी जानी है, किस प्रकार से निपटारा किया जाना है।

प्रो॰ शिब्बन लाल सक्सेना: श्री मुंशी महोदय ने परिगणना का संशोधन प्रस्तुत किया। परंतु वह परिगणना अभी तक पेश नहीं की गई। मेरा ख्याल है कि उनका संशोधन मेरे संशोधन के प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् ही आ सकता है।

***अध्यक्ष:** श्री मुंशी महोदय ने तो प्रथम वाक्यखंड के किसी एक आदेश पर अपना संशोधन प्रस्तुत किया है। उन्होंने आपके संशोधन को तो छुआ तक भी नहीं।

***श्री रेवरेण्ड जे॰ रोम डीसूजा, एस॰जे॰** (मद्रास: जनरल): श्री अध्यक्ष महोदय, मैं इन आदेशों पर जो कि सरदार पटेल ने परिषद् के सामने पेश किये हैं, अपने कतिपय साधारण अनुभवों का थोड़े से शब्दों में वर्णन करूंगा। परंतु इससे पहले मैं यद्यपि विलंबित हो गया हूं, तो भी उस तरीके पर जिससे कि अल्पसंख्यक संबंधी प्रश्न को यहां पर निबटाया गया है, अपनी अत्यधिक प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। मैं उस निपुणता और चतुराई से, जिसके द्वारा विचारों का समन्वय इस रिपोर्ट में प्राप्त किया गया है और उस अत्यधिक कृपालुता तथा समझ के भावों से,

जो कि सरदार पटेल ने इन प्रश्नों पर वाद-विवाद के समय प्रदर्शित किए हैं, बहुत ही प्रभावित हुआ हूं।

मैं जानता हूं कि 'सुरक्षा' का प्रश्न एक ऐसी बात है जिसने यहां पर बैठे हुए हममें से बहुत से लोगों के मनों को संतप्त कर दिया है। पृथक् चुनाव-विधि का तो अब खात्मा होना ही चाहिये। और यदि इस बात में अभी शक है तो इस विषय में अत्यंत उचित और शक्तिशाली व्याख्यान जो कि हमने आज सुना है, इन सब संदेहों को शांत कर देगा। इसको सुनकर तो संदिग्धात्मा व्यक्ति भी ''पृथक् चुनाव का खात्मा हो जाना चाहिये'' इस निबंध से सहमत हो गए हैं। परंतु दूसरी ओर यह सर्वथा स्पष्ट नहीं हुआ और कइयों को अभी तक इस बात पर पूर्ण विश्वास नहीं हुआ कि 'सुरक्षा' उसका सबसे अधिक हर्षोत्पादक स्थानापन्न है। यह तो एक समझौता है और अन्य समझौतों की तरह यहां भी तर्क-शून्यता का कुछ न कुछ अंश अवश्य है। मैं कहता हूं कि यह इसलिये नहीं कि सुरक्षा कोई बुरी वस्तु है; अपितु इसका कारण यह है कि सर्वत्र यह संस्कार फैल गया है कि 'सुरक्षा' प्रजातंत्र विरोधी बात है और आगामी दस वर्षों में हमें इससे किसी न किसी तरह छुटकारा अवश्य पा लेना चाहिये। मेरा निवेदन है कि मैं इससे सहमत नहीं। चुनाव के नियम को संतोषजनक तरीके से चलाने के लिये यह एक उपाय है। श्रीमान्, आखिर को हम स्वयं ही इसी परिषद् में तथा प्रांतीय दायरे में भी ऊपरले भवनों (Upper Houses) की व्यवस्था कर ही रहे हैं, जहां कि भिन्न-भिन्न व्यवसायों को प्रतिनिधित्व दिया जायेगा। व्यावसायिक आधार पर दिया गया प्रतिनिधित्व अपने ढंग से विशेष प्रकार की 'सुरक्षा' से किसी प्रकार भी कम नहीं। यहां पर आप हित विशेषों के लिए 'स्थानों' को 'सुरक्षित' करते हो। अभाग्य की बात यह है कि यहां पर 'सुरक्षा' सांप्रदायिक लाइनों पर दी जाती है। और दूसरी मुश्किल है कि 'सुरक्षा' में 'सुरक्षित स्थानों' पर चुनाव केवल उन लोगों द्वारा ही नहीं किया जाता कि जिनके लिये सुरक्षा दी गई है अपितु साधारण निर्वाचक-मंडल (Constituency) में मिले-जुले मतदाताओं द्वारा ही चुनाव किया जाता है। और यही मुसीबत की जड़ है। मैं इस परिषद् से प्रार्थना करूंगा कि वह यह समझ ले कि इस विषय में जो कुछ एक संदेह व्यक्त किए गए हैं उनका कारण भी यही चीज है और कुछ नहीं। किंतु फिर भी मेरा यह विश्वास है कि साधारण मतदाताओं द्वारा किए जाने वाले चुनाव में 'सुरक्षा' का नियम एक बहुत निर्भीक परीक्षण है। यह ठीक है कि इसमें खतरे बहुत हैं परंतु फिर भी इस नाजुक समय में सबके संतोष के निमित्त यह अवश्य ही किया जाना चाहिये। यह त्यागा नहीं जा सकता। इस परिषद् में बहुमत-दल को मैं स्मरण करा देना चाहता हूं कि वर्षों

[श्री रेवरेण्ड जे. रोम डीसूजा, एस.जे.]

तक लगातार कांग्रेस दल ने अपने आपको इस मांग से कि देश में चुनाव 'सुरक्षा' के साथ संयुक्त विधि से होने चाहियें, संबंधित रखा है। अगर इस स्थिति में 'सुरक्षा' को त्याग दिया जाये, जैसा कि मेरे कुछ-एक मित्र करना चाहते हैं, तो यह उन वायदों के विरुद्ध होगा जो यदि स्पष्ट नहीं तो अभिप्रेत रूप (implicit) से तो अवश्य किये गये थे। यह है एक कारण, जिससे कि हम इन वायदों से पीछे नहीं हट सकते। मुझे यह कहते हुये फिर प्रसन्नता होती है कि जिस विधि से सरदार पटेल ने एतद्विषयक अल्पसंख्यकों के भावों को व्यक्त किया है, उससे हम में संतोष और विश्वास की लहर दौड़ गई है और उसके लिये हम उनके प्रति कृतज्ञ हैं। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं हम सबको उस दिन सचमुच प्रसन्नता होगी यदि किसी दिन यह सुरक्षा भी हटाई जा सके। और मुझे यकीन है कि यदि दूसरा मार्ग जो कि इस समय परिषद् और देश के सामने खुला है, अपनाया गया अर्थात् यदि उन जातियों के सदस्यों को जिनके लिये कि 'सुरक्षा' दी गई है, साधारण स्थानों पर खड़ा होने दिया गया और यदि यह मार्ग कुछ संतोषजनक सिद्ध हुआ अर्थात् यदि उसे आधार मानकर कतिपय प्रमुख और सर्वप्रिय लोग चुन लिये गए, तो मैं समझता हूं कि इससे अल्पसंख्यकों को इस बात के लिये प्रोत्साहन मिलेगा कि कुछ समय के पश्चात् वे 'सुरक्षा' का भी त्याग कर दें। इससे उनके ऐसे संशय कि वर्तमान प्रबंधानुसार शायद उनके ऐसे प्रतिनिधि चुने जायें जो कि वास्तव में उनका ठीक प्रतिनिधित्व न करते हों या जो उनके हृदय की बातों को उस ढंग से व्यक्त न करते हों जैसे कि उनसे आशा की जाती हो, दूर हो जायेंगे। अत: अपने कथन को समाप्त करने से पहले मैं परिषद् से प्रार्थना करूंगा कि वे इस महत्त्वशाली परीक्षण को इस प्रकार चलायें जिससे कि यह सफल हो जाये। परंतु यह तभी हो सकता है यदि इससे उन अल्पसंख्यकों का संतोष किया जा सके जिनके लिए कि यह परीक्षण किया जा रहा है। इसका सीधा रास्ता यह है कि ऐसे ही व्यक्ति चुने जायें जो अपने विचारों के लिये दु:ख उठाने का साहस रखते हों और कि यदि साहसपूर्वक वे अपने विचारों को व्यक्त करें तो बहुसंख्यक इससे रुष्ट अथवा अप्रसन्न न हों, अपितु उनकी इस साहस तथा सच्चाई के लिए प्रशंसा की जाये। इस प्रकार का व्यवहार उन भावनाओं के व्यक्त होने के लिये एक सुरक्षित मार्ग बना देगा जो अन्यथा दबकर रूपोश हो जायेगी। इस प्रकार यह प्रजातंत्र को चलाने के लिये एक प्रभावशाली संरक्षक सिद्ध होगा।

हमें पता है कि पार्लियामेंट के ढंग का प्रजातंत्र इंग्लैंड में बहुत ही अच्छी तरह से सफल रहा है। परंतु अन्यत्र सर्वत्र यह असफल सिद्ध हुआ है। इस असफलता का असली कारण यह है कि बहुसंख्यक दल अथवा समुदाय को

चुनाव-यंत्र (Machinery of election) पर अधिकार करने की विधि आ गई है, जिससे कि वे जनता के विचारों पर अधिकार जमा लेते हैं। कतिपय योरोपियन (European) देशों में इन तरीकों के विरुद्ध बड़ी प्रबल प्रतिक्रिया का उदय हुआ, जिसके फलस्वरूप तानाशाही (Fascism) रूपी दानव संसार में प्रकट हुआ। परन्तु तानाशाही (Fascism), जो कि अभी अपने भद्दे रूप में ही थी, ने भी व्यक्ति अथवा अल्पसंख्यक के विचारों को संभवतया दबाने के लिये एक तदबीर सोची। यह तदबीर थी, कार्याधार पर प्रतिनिधित्व का दिया जाना। इसका उन्होंने सामष्टिक राजसत्ता (Corporative State) नाम रखा। यह तदबीर आज संसार में तानाशाही (Fascism) से संबंधित होने के कारण अत्यंत ही बदनाम हो गई है। कहा जाता है कि इसमें सब बुराइयां ही बुराइयां हैं और गुण कोई भी नहीं। श्रीमान्, यदि इन बातों को ध्यान में रखा जाये और 'सुरक्षा' सहित संयुक्त चुनाव-विधि की पद्धति को उचित अवसर दिया जाये, तो संभव है कि हमारा देश इस नई पद्धति का आविष्कार करके या यों कहो कि इसका साहसपूर्ण परीक्षण करके प्रजातंत्र को सामने दृष्टिगोचर होने वाले एक बहुत बड़े खतरे से बचा ले। और यह भी मुमकिन है कि अल्पसंख्यक की समस्या के हल करने का यह एक ऐसा तरीका सिद्ध हो कि जिसका अनुकरण शेष संसार के लोग करने लग जायें। यह कहते हुए मुझे अच्छी तरह पता है कि जिन अर्थों की ओर मैंने संकेत किया है, उन अर्थों में सफलता की कोई अधिक आशा नहीं। परंतु फिर भी मुझे उम्मीद है कि इसे अप्रसन्न और मजबूर होकर अल्पसंख्यकों के लिये दी गई सुविधा के रूप में न समझा जायेगा। मैं यह भी आशा करता हूं कि इस पद्धति को उन ही भावों से चलाया जायेगा जिनसे प्रेरित होकर यह बनाई गई है, ताकि अल्पसंख्यकों को वह आश्वासन मिल सके जिनके लिए कि उन्होंने आपसे प्रार्थना की है।

पं. चतुर्भुज पाठकः माननीय सभापति जी, मेरे भाई खांडेकर साहब ने जो अपने एमेंडमेंट में यह चाहा है कि सन् 1931 की जनगणना के अनुसार उन्हें प्रतिनिधित्व दिया जाना स्वीकार किया जाये, इसके लिये मुझे थोड़ा-सा निवेदन करना है कि अगर 1941 की जनगणना के अनुसार आज हम सब माइनोरिटीज को प्रतिनिधित्व नहीं देते हैं और सन् 1931 के अनुसार एक माइनोरिटी को इसका प्रतिनिधित्व दें तो उसका असर दूसरी माइनोरिटीज पर भी पड़ेगा; और जैसा कि उन्होंने बतलाया है कि जनगणना करने में गलतियां हुई हैं, उनको कहीं तो मुसलमान लिखवाया गया है और कहीं सवर्ण जातियों में दर्ज कराया गया है। चूंकि मुसलमानों की संख्या इस तरह से बंटी होगी, इसलिये वह भी सन् 1931 के अनुसार अपना

[पं. चतुर्भुज पाठक]

प्रतिनिधित्व बढ़ाना चाहेंगे और 4 साल बाद आने वाली जनगणना यदि ठीक हुई और उसमें अछूतों की संख्या बढ़ी तो खांडेकर साहब को फिर लालायित होना पड़ेगा कि हमको 1931 की जगह 1951 की सेंसस के अनुसार प्रतिनिधित्व मिलना चाहिये। मेरी समझ में यह बात नहीं आती।

श्री एच॰जे॰ खांडेकर: मैं तो यही कहता हूं कि सीटों का बंटवारा करने के पहले सेंसस लिया जाये। यों तो 1951 के सेंसस के बाद सीटों का बंटवारा हो या 1921 के सेंसस के आधार पर हमारी संख्या समझी जाये। 1951 सेंसस में, या अभी सेंसस लिया गया तो जो भी हमारी संख्या रहेगी, उसके आधार पर मैं अपनी कौम के लिए जगह स्वीकार करूंगा। मगर 1941 का सेंसस बिलकुल गलत है। उस पर सीटों का बंटवारा करना हरिजनों के प्रति बड़ा अन्याय होगा।

पं. चतुर्भुज पाठक: खांडेकर साहब ने यह बतलाया है कि अछूतों में उत्पत्ति तो अधिक होती है, पर लेकिन मतगणना के समय उनकी गिनती कम हो गई है। इसका खास कारण यह है और यह खुशी की बात है, जैसा वह कहते हैं कि कई जगह उन्हें सवर्णों में मान लिया गया है। यह अच्छी बात है। सवर्णों ने ही यह बात उठाई थी कि हरिजन भाइयों के साथ बुरा व्यवहार न किया जाना चाहिए और उन्हें अपने जैसा ही मानना चाहिए। उस पर खांडेकर साहब को आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

श्री एच॰जे॰ खांडेकर: सिर्फ सवर्णों की संख्या बढ़ाने के लिए और हरिजनों की संख्या घटाने के लिए ही उन्हें सवर्णों में लिखा गया। इस कार्रवाई से हरिजनों के सामाजिक जीवन में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। जिन हरिजनों के नाम सवर्णों में लिखे गये, वे आज भी उसी बुरी दशा में हैं। उनका स्टैंडर्ड सवर्णों जैसा नहीं है।

पं. चतुर्भुज पाठक: मैं तो ऐसा नहीं समझता। वह जब सवर्णों में आते हैं, तो उनका स्टैंडर्ड भी सवर्णों का बन जाता है। और सवर्णों के सभी अधिकार उन्हें आप से आप मिल जाते हैं।

मुझे यही निवेदन करना है कि खांडेकर साहब ने जो संशोधन रखा है कि ''सन् 1931 की जनगणना के अनुसार प्रतिनिधित्व दिया जाये'' मैं इसका विरोध करता हूं। और इसमें (प्रस्तावित रिपोर्ट में) कोई संख्या नहीं दी गई है। इसमें लिखा है:–

''उनकी जनसंख्या के आधार पर'' अर्थात् उनकी जनसंख्या के अनुसार उन्हें प्रतिनिधित्व दिया जाये। इसका मैं समर्थन करता हूं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** इसके कई एक संशोधन प्रस्तुत हो चुके हैं। एक ऐसा संशोधन श्री मुंशी महोदय ने पेश किया है। इसके द्वारा श्री मुंशी महोदय 'परिगणना' इस शब्द के पश्चात् 'और हिन्दू-जाति का वह अंग जिसका संकेत कि इसके पैरा 1 (अ) में किया गया है' रखना चाहते हैं। यह तो स्पष्टता के लिये किया जा रहा है और इससे कोई बड़ा भेद नहीं पड़ता; अत: मैं इसे स्वीकार करने का प्रस्ताव करता हूं।

जहां तक श्री खांडेकर महोदय के संशोधन का संबंध है, मेरे विचार में हम इसे स्वीकार नहीं कर सकते। परिगणित जातियों के लिये यह विशेष अपवाद बनाना कि उनको 'सुरक्षा' एक जनगणना के आधार पर दी जाये और अन्य अल्पसंख्यकों को 'सुरक्षा' किसी दूसरी जनगणना के आधार पर दी जाये, उचित न होगा। यह भेद ठीक नहीं और इससे ईर्ष्या भी उत्पन्न होगी। मैं समझ नहीं सका कि वह ऐसा क्यों करना चाहते हैं? संभवत: वह उन लोगों में से कुछ को जो कि 1931 की जनगणना में परिगणित जातियों में गिने गये थे, बाहर रखना चाहते हैं। मेरे विचार में ऐसा करना आजकल की हालत में उचित नहीं। वह प्रस्ताव जो कि मैंने प्रस्तुत किया है, उसमें तो किसी जनगणना का जिक्र नहीं। हमने तो केवल यह कहा है कि ''उनकी आबादी (population) के आधार पर,'' अत: इसे ऐसा ही रहने देना चाहिये। किसी भी जाति से अन्याय नहीं किया जा रहा और इसके साथ ही हम समता चाहते हैं, क्योंकि ऐसा करना बड़ा आवश्यक है।

श्री के० संतानम महोदय ने भी एक संशोधन प्रस्तुत किया है और उसके साथ ही दो-तीन सुझाव भी पेश किये हैं। उनमें से एक अल्पसंख्यकों के लिये विविध धारासभाओं में दी जाने वाली 'सुरक्षा' से संबंध रखता है। उनका कहना है कि यहां 'विविध लेजिस्लेटिव एसेंबलियां (Legislative Assemblies)' ये शब्द होने चाहियें। इस संशोधन को स्वीकार करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं।

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

उन्होंने यह बात भी कही है कि तीसरे वाक्यखंड से पूर्वी पंजाब को पृथक् रखना चाहिये।

***श्री के॰ संतानम्:** और पश्चिमी बंगाल को भी।

माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल: मेरे विचार में इस संशोधन को स्वीकार करना आवश्यक नहीं, क्योंकि वे नियत रूप से तीसरे वाक्यखंड में पृथक् ही रखे गये हैं।

उनका तीसरा सुझाव यह था कि उन निर्वाचन-मंडलों में कि जहां कोई अल्पसंख्यक बहुसंख्या में हों, तो वहां के 'स्थानों' की गिनती सुरक्षित स्थानों में की जानी चाहिये। मैं इस सुझाव को ठीक नहीं समझता। आबादी के आधार पर 'स्थान' सामूहिक तौर पर सुरक्षित किये जाते हैं, न कि किसी विशेष निर्वाचन स्थान को दृष्टि में रखकर। अत: मैं इसे स्वीकार कर लेने का प्रस्ताव नहीं करता।

कहने का सार यह है कि मैं श्री मुंशी महोदय के संशोधन तथा श्री संतानम् महोदय के उस सुझाव को जो कि 'लेजिस्लेटिव एसेंबलियां' इन शब्दों को रखने के लिये है, स्वीकार करने का प्रस्ताव रखता हूं। मैं परिषद् से इस प्रस्ताव (resolution) को स्वीकार करने की सिफारिश करता हूं।

***अध्यक्ष:** मैं अब पहले संशोधन पर, जोकि सरदार पटेल द्वारा कबूल कर लिया गया है, मत लेता हूं।

प्रश्न यह है कि:

''प्रथम सूची के 25-8-47 तिथि के 19वें संशोधन में ''स्थानों'' इस शब्द की जगह ''प्रतिनिधित्व'' यह शब्द रख दिया जाए, इन शब्दों के स्थान पर निम्न शब्द रख दिये जायें:

'परिगणना' इस शब्द के पश्चात् ये शब्द 'और हिन्दू जाति का वह भाग जिसका कि आगे पैरा (अ) में संकेत है' रख दिए जायें।''

संशोधन स्वीकार हो गया।

***श्री एच॰वी॰ कामत:** श्री बी॰ दास ने इसका जो संशोधन पेश किया था, उसका क्या हुआ?

***अध्यक्षः** उनका संशोधन यह था कि 'भारतीय सरकार के सन् 1935 के एक्ट (Government of India Act 1935)' इन शब्दों के स्थान पर 'संघ-विधान-एक्ट (Union Constitution Act)' ये शब्द रख दिये जायें। यह एक शाब्दिक संशोधन है। और जब एक्ट (Act) का वास्तविक लेख तैयार किया जायेगा, तो वहां पर इसे उचित रूप में रखने का ख्याल रखा जायेगा। क्या वह इसके लिये जोर देते हैं?

***माननीय श्री एन॰ गोपालस्वामी आयंगरः** आप 'संघ-विधान-एक्ट (Union Constitution Act)' यह कह नहीं सकते। इस समय जो स्थिति है, वहां पर कोई भी परिगणना नहीं। श्री मुंशी महोदय ने जो कह दिया है, वह ही यथार्थ वर्णन है।

***अध्यक्षः** क्योंकि उक्त सदस्य उपस्थित नहीं है, अतः इस संशोधन को मुझे परिषद् के सामने मत (Vote) के लिये रखना पड़ेगा।

प्रश्न है किः

" 'जिसकी परिभाषा भारतीय सरकार के सन् 1935 के एक्ट (Government of India Act, 1935) की परिगणना 1 में की गई है' इन शब्दों के स्थान पर 'जिसकी परिभाषा संघ-विधान-एक्ट (Union Constitution Act) में की गई है' ये शब्द रख दिये जायें।"

यह संशोधन अस्वीकार हो गया।

***अध्यक्षः** इसके बाद श्री खांडेकर महोदय का संशोधन है।

***श्री एच॰जे॰ खांडेकरः** मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

परिषद् की अनुमति से यह संशोधन लौटा लिया गया।

***अध्यक्षः** इसके पश्चात् श्री मुनिस्वामी पिल्ले का यह संशोधन है कि 'दस वर्ष' इन शब्दों के स्थान पर 'बारह वर्ष' ये शब्द रखे जायें।

***श्री वी॰आई॰ मुनिस्वामी पिल्लेः** मैं इसे वापस लेता हूं।

परिषद् की अनुमति से यह संशोधन लौटा लिया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है कि दो आदेश, जो कि संशोधित किये जा चुके हैं, स्वीकार कर लिये जायें।

यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** अब हम परिगणना को लेते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं परिषद् के सामने स्वीकृति के निमित्त वह परिगणना प्रस्तुत करता हूं, जो कि प्रथम पैरा में रखी गई है। ऐसा करने के निमित्त सबसे पहले मैं इसे पढ़ता हूं।

परिगणना

कक्षा (अ) भारतीय संघ में रियासतों को छोड़कर आधे प्रतिशत से न्यून आबादी वालेः

(1) एंग्लो इंडियन।

(2) पारसी।

(3) [चाय के बागों में रहने वाले कबीलों से भिन्न] आसाम के मैदानों में रहने वाले कबीले।

कक्षा (इ) वे जिनकी आबादी $1^1/_2$ प्रतिशत से अधिक नहीं।

(4) भारतीय ईसाई।

(5) सिख।

कक्षा (उ) वे जिनकी आबादी $1^1/_2$ प्रतिशत से अधिक है।

(6) मुसलमान।

(7) परिगणित जातियां।

यह परिगणना अल्पसंख्यकों के बल पर निर्धारित है। यह इसलिये बनाया गया है कि पीछे आने वाली धारा में सम्बद्ध व्यवस्थायें (Provisions) अनुकूलता-पूर्वक रखी जा सके। अतः यह रिवाजी कार्य है। इस विषय के संबंध में कोई वाद-प्रतिवाद (Controversy) नहीं। अतः मैं प्रस्ताव करता हूं कि यह परिगणना स्वीकार कर ली जाए।

अध्यक्षः इसका तो एक ही संशोधन आया है और उसके भेजने वाले हैं प्रो॰ शिब्बनलाल सक्सेना। वैसे तो यह उस संशोधन के जो कि हमने अभी-अभी

स्वीकार किया है, अन्तर्गत ही आ जाता है। परंतु फिर भी नियमानुसार यह पेश ही किया जाना चाहिये। अत: वह इसे प्रस्तुत कर सकते हैं।

***प्रो॰ शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रांत: जनरल): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, मेरा संशोधन 85वां है। इसका कहना है कि 'परिगणित जातियां' ये शब्द परिगणना से निकाल दिये जाएं। संशोधन का आशय यह है कि परिगणित जातियों को एक जुदे अल्पमत के तौर पर नहीं माना जाना चाहिये। अपितु इसे तो हिंदू जाति का एक निजी अंग करके गिना जाना चाहिये। मेरे संशोधन के शब्द इस प्रकार हैं कि:

> ''परिगणना के प्रथम पैरा के (उ) कक्षा में से '(7) परिगणित जातियां' ये शब्द निकाल दिये जाएं।''

मैं इस सभा का ध्यान एक महत्त्वपूर्ण घोषणा की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं वह यह है। सभा को याद होगा कि मि॰ जिन्ना ने परिगणित जातियों को अल्पसंख्यकों में रखने की प्राय: चेष्टा की है। 26 जून 1946 को मौलाना अबुल कलाम आजाद के पत्र के उत्तर में कहा जाता है कि लार्ड वावेल ने यह कहा था:

> ''अल्पसंख्यकों को दिये हुए स्थानों में अगर कोई स्थान रिक्त होगा तो उसकी पूर्ति के पहले अवश्य ही मैं दोनों दलों से परामर्श करूंगा।''

इस तरह मि॰ जिन्ना ने परिगणित जातियों को अल्पसंख्यकों में शामिल किया है। किन्तु जहां तक हम लोगों का संबंध है, हम परिगणित जातियों को हिंदू संप्रदाय के अंतर्गत मानते हैं। वे अल्पसंख्यक नहीं हैं। वे सदा हमारे ही अंग रहे हैं। मुझे प्रसन्नता है कि श्री मुंशी ने अपना संशोधन रखा है जिससे मेरा उद्देश्य सिद्ध हो जाता है। अत: उनके संशोधन के पक्ष में मैं अपना संशोधन वापस लेता हूं।

***श्री के॰एम॰ मुंशी** (बम्बई: जनरल): श्रीमान्, क्योंकि प्रो॰ शिब्बनलाल महोदय ने 85वां संशोधन प्रस्तुत कर दिया है, अत: अब मैं अपना संशोधन पेश करता हूं कि:

> ''तीसरी सूची के 26-8-47 तिथि के 85वां संशोधन में '(7) परिगणित जातियां' इन शब्दों को निकाल दिया जाये और पैरा 1 के पश्चात् निम्न पैरा डाल दिया जाये:

> **'1 (अ) हिंदू जाति के उस अंग, जिसे कि परिगणित जातियां कहा जाता है और जिसकी परिभाषा भारत सरकार के सन् 1935 के**

[श्री के.एम. मुंशी]

> **एक्ट (Government of India Act, 1935) की परिगणना 1 में की गई है, को वही अधिकार और लाभ प्राप्त होंगे जो कि यहां उन अल्पसंख्यकों को दिये गये हैं जो कि परिगणना के पैरा 1 में नियत कर दिये गये हैं।' ''**

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू** (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान्, इस परिगणना पर आदिवासियों के संबंध में मैं एक बात कहना चाहता हूं। मेरे विचार में यहां कोई ऐसी व्यवस्था होनी चाहिये जो कि आदिवासियों को भी इस परिगणना में शामिल कर ले। यह एक सच्चाई है कि देश में आदिवासी ढाई करोड़ हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** आदिवासी और दूसरे कबीलों से संबंधित प्रश्न पर जुदा समिति विचार कर रही है। इसकी रिपोर्ट भी शीघ्र ही पेश होने वाली है।

***श्री लक्ष्मीनारायण साहू:** परंतु क्या हम इस विषय में यहां पर कोई व्यवस्था नहीं रख सकते?

***अध्यक्ष:** आदिवासियों तथा अन्य कबीलों के लिये एक जुदा समिति बनाई गई है। और यदि ऐसी कोई सिफारिश उस समिति की रिपोर्ट में हुई तो उस रिपोर्ट पर विचार करते समय हम उस पर भी विचार कर लेंगे।

***श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): श्रीमान्, मैं जानना चाहता हूं कि क्या यह विचार न था कि मद अ॰ 3 ''आसाम में मैदानी कबीले'' पर तब तक विचार न किया जाये जब तक कि समिति की अंतिम रिपोर्ट प्राप्त न हो जाये? मेरा ख्याल था कि परामर्श-समिति में यह निश्चय किया गया था कि मद अ॰ 3 पर विचार न किया जाये; परंतु इस मद को मैं यहां पर सम्मिलित पाता हूं।

***अध्यक्ष:** मुझे डर है कि जो कुछ आपने कहा है उसे मैं समझ नहीं पाया।

***श्री जयपाल सिंह:** समिति की रिपोर्ट कल दोपहर पश्चात् (After noon) से पूर्व ही हमारे सामने आ जायेगी। क्योंकि वह अभी तक विचाराधीन है, अत:

मेरा सुझाव है कि मद अ० 3 को अलग ही रख दिया जाये। इसके शब्दों को छुआ न जाये और न ही उस पर इस समय विचार हो। हम इस पर बाद में विचार कर लेंगे, कल ही सही।

***अध्यक्षः** तो क्या आपका यह सुझाव है कि अ० 3 ''आसाम के मैदानी कबीले'' को सूची से निकाल दिया जाये?

***श्री जयपाल सिंहः** हां, इसे सूची से इस समय के लिये निकाल लिया जाये और इसके शब्दों का कल निश्चय किया जाये।

***अध्यक्षः** इस पर तब विचार किया जायेगा जब कि कबीलों संबंधी समिति की रिपोर्ट पेश होगी। इस समय तो यह पृथक् कर दिया जायेगा।

***माननीय श्रीयुत गोपीनाथ बारदोलोई** (आसामः जनरल): श्रीमान्, मुझे डर है कि श्री जयपालसिंह महोदय एक भूल कर रहे हैं। अब प्रश्न यह है कि क्या आसाम के मैदानी कबीलों को अल्पसंख्यक के रूप में माना जाना है? और इसका निश्चय अल्पसंख्यक समिति ने कर दिया है। और यही बात है कि जिस पर हम विचार कर रहे हैं। परंतु उन्हें कौन सी सुविधायें दी जानी हैं, इस बात का निश्चय 'परामर्श समिति' से प्राप्त होने वाली सम्मिलित रिपोर्ट पर छोड़ दिया गया है। और यह रिपोर्ट हमारे सामने कल या फिर कभी इसके पश्चात् आ जायेगी।

***श्री अमिय कुमार दास** (आसामः जनरल): श्रीमान्, मैं 57वें संशोधन पर कह रहा था किः

> ''पैरा 1 में 'आसाम के मैदानी कबीलों' इन शब्दों के स्थान पर 'चाय के बागों पर कार्य करने वालों के अतिरिक्त आसाम के मैदानी कबीलों' इन शब्दों को रख दिया जाये।''

क्या इस समय मुझे इसे प्रस्तुत करना है? या मैं यह समझूं कि वह पहले ही स्वीकार कर लिया गया है।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** यह स्वीकार कर लिया गया है कि ''चाय के बागों पर कार्य करने वालों के अतिरिक्त आसाम के मैदानी कबीले'' ये शब्द ''आसाम के मैदानी कबीले'' इन शब्दों के स्थान पर रख दिये जायें।

***अध्यक्षः** हां, यह उन्होंने स्वीकार कर लिया है।

***श्री लक्ष्मीनारायण साहूः** अब जब कि उन्हें सम्मिलित कर लिया गया है तो क्या मैं यह जोर नहीं दे सकता कि आदिवासियों को भी परिगणना में सम्मिलित कर लिया जाये? श्रीमान्, उड़ीसा के पहाड़ी कबीलों की संख्या पंद्रह लाख है और कुल आबादी का छठा हिस्सा हैं।

***अध्यक्षः** परंतु आपने ऐसे किसी संशोधन की सूचना (Notice) तो नहीं दी। शायद हरएक ने यही समझा कि यह विषय किसी न किसी तरह उस उपसमिति की रिपोर्ट के साथ ही पेश होगा जो कि बनाई जा चुकी है। अतः किसी ने भी इस विषय में कोई संशोधन पेश नहीं किया। मेरा ख्याल है कि जब उस उपसमिति की सिफारिशें प्राप्त हो जायें और उनमें से कोई यहां पर किये गये निश्चयों के विरुद्ध हो तो वह स्वयंमेव ही एक संशोधन का काम करेगी।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** उस उपसमिति की रिपोर्ट जब पेश होगी तो कबीलों को दिये जाने वाले संरक्षणों का निश्चय उस रिपोर्ट के अनुसार ही किया जायेगा। यहां पर भिन्न-भिन्न प्रकार के अल्पसंख्यकों की उनके बल के क्रमानुसार गिनती की गई है। अतः जहां तक परिगणना का संबंध है, किसी प्रकार के संदेह या आशंका के लिये वहां कोई जगह नहीं। उपसमिति ने जिन-जिन संरक्षणों की सिफारिश की है वे हर हालत में दिये जायेंगे। इस बात में संदेह के लिये कोई अवसर ही नहीं है।

***श्री जयपाल सिंह** (बिहारः जनरल)ः श्रीमान्, एक वैधानिक आपत्ति है। अब हम क्योंकि अल्पसंख्यकों के प्रश्न पर विचार कर रहे हैं, तो क्या मैं जान सकता हूं कि इस बात को क्या परामर्श-समिति ने या अल्पसंख्यक-समिति ने ही केवल पेश किया है? यदि मैं भूलता नहीं तो मुझे स्मरण पड़ता है कि यह मद विशेष करके रोक ली गई थी और इस बात पर सब सर्वसम्मत थे कि जब तक कबीलों-संबंधी दोनों समितियों की रिपोर्टें पेश न हो जायें तब तक इस विषय पर विचार न किया जाये।

***श्री के॰एम॰ मुंशी** (बम्बईः जनरल)ः क्या इस विषय में एक शब्द कह सकता हूं? इस बात पर कुछ गड़बड़ी दिखाई देती है। परंतु यदि आप रिपोर्ट को देखें तो स्थिति स्पष्ट हो जायेगी। रिपोर्ट के पैरा 8 में कहा गया है कि इन कबीलों

के लोगों का मामला तब उठाया जायेगा जब कि पृथक तथा अर्ध-पृथक क्षेत्रों की उपसमिति की रिपोर्ट प्राप्त हो जायेगी। परंतु इसके साथ ही आप पैरा 5 पर दृष्टि डालें। यहां पर उन अल्पसंख्यकों की गिनती की गई है जो कुछ न कुछ अधिकारों के अधिकारी हैं। इसलिये समूह (अ) में आपको ''आसाम में मैदानी कबीलों के लोग'' ये शब्द मिलते हैं। अत: जो चीज स्थगित की गई है, वह मैदानी कबीलों के लोगों की परिगणना में शामिल किया जाना नहीं अपितु वे संरक्षण हैं कि जिनको पृथक् क्षेत्रों-संबंधी समिति की रिपोर्ट के पश्चात् परिषद् को विस्तृत करना या बदलना है। अत: जिस बात को पूरा करने की कोशिश की जा रही है वह है ''आसाम में मैदानी कबीलों के लोगों का परिगणना में शामिल किया जाना''। यह ऐसी बात नहीं कि जो यह निश्चय कर सके कि संरक्षण कौन-कौन से होंगे। यह है वास्तविक स्थिति। अत: यहां पर कोई भी वस्तु परस्पर विरुद्ध नहीं।

माननीय रेवरेंड जे॰जे॰एम॰ निकोल्स-राय (आसाम: जनरल): मैं बात को स्पष्ट करने के हेतु एक प्रश्न पूछना चाहता हूं। समूह (1) मद (3) में ''बागों में काम करने वालों के अतिरिक्त आसाम में मैदानी कबीलों के लोग'' यह लिखा है। मैं ''बागों में काम करने वालों के अतिरिक्त'' इन शब्दों को समझता हूं। बागों में कार्य करने वालों से मुराद है वे लोग जो मजदूरों के तौर पर बागों में काम करते हैं। यहां उन कबीलों से मुराद नहीं जो कि आसाम में आबाद हो चुके हैं और जिनके पास भूमि और दूसरी जायदाद हैं।

अध्यक्ष: मेरे ख्याल में ये ही इसके अर्थ हैं।

डा॰ पी॰एस॰ देशमुख (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): मैंने एक संशोधन भेजा है। वह इस प्रकार है कि:

''पैरा (1) की परिगणना में निम्न शब्द और जोड़ दिये जायें:

'समूह (घ) विविध प्रांतों में उन्नत तथा धनी अल्पसंख्यक जातियां और फिरकें।'

टिप्पणी 1—यह व्यवस्था कर दी जायेगी कि इन अल्पसंख्यकों से संबंधित लोगों को 'असुरक्षित स्थानों' पर चुनाव लड़ने की आज्ञा नहीं होगी।

[डा. पी.एस. देशमुख]

टिप्पणी 2–इन अल्पमतों की सूचियां विद्यमान प्रांतों की धारा-सभाओं द्वारा निश्चित की जाया करेंगी।''

मेरे संशोधन का मुख्य उद्देश्य उन बहुत छोटे अल्पसंख्यकों के हितों का संरक्षण करना है जिनके लिये वयस्क मताधिकार के पश्चात् अपनी हस्ती को कायम रखना बहुत कठिन होगा। मेरा आशय उच्च शिक्षा प्राप्त फिरकों तथा उन जातियों से है जो कि इस समय देशभर की सम्पत्ति के एक बड़े भाग के मालिक हैं। इस समय तो दोनों ही बड़े शक्तिशाली हैं। पूर्व कथित लोगों का सरकारी नौकरियों तथा उच्चपदों पर एकमात्र अधिकार है। वेदी (Platform) के वे मालिक हैं और मुद्रण (Press) उनका एक तुच्छ सेवक है, जिस पर कि उनका एकाधिकार है। यही वे लोग हैं कि जिनकी संसार में पूछ है और कोई ऐसा कार्य नहीं जो वे चाहते हों पर कर न सकते हों। उच्च शिक्षा के कारण अंग्रेजी हितों की सेवा करने के उन्हें असीमित अवसर मिले हैं और उन्होंने इस कार्य को किया भी बहुत वफादारी से है। यही कारण है कि पहले के अंग्रेज स्वामी इन पर बहुत खुश रहते थे। उन जातियों ने जो लेन-देन और व्यापार करती थीं अंग्रेजी शासकों को युद्धसामग्री भी दी और शांति की सब आवश्यकताओं को भी पूरा किया। इस समय देश में यदि केवल यही लोग भाग्यशाली दिखाई देते हैं तो इस पर किसी को अचम्भा नहीं होना चाहिये। भारत में अंग्रेजी राज्य को कायम और जीवित रखने का श्रेय इनको ही है। 1942 के विप्लव में भाग लेकर अपनी जानों को खतरे मे डालना उनके लिए अनुकूल न था। उस समय देश के कुछ लोग तो चुपचाप जेल चले गये और दूसरे लोगों ने, जिन्हें अंग्रेजों से कम मुहब्बत थी, अपना सब कुछ न्यौछावर कर दिया, यहां तक कि जान भी दे दी। वे लोग जिन्होंने इस प्रकार का त्याग किया था इस समय महसूस करते हैं कि उनके हितों की रक्षा नहीं की जा रही और यह कि उनके त्याग की इस समय कद्र नहीं हो रही है। इसलिये उनके विचार में मौखिक सहानुभूति के अतिरिक्त उनके लिये और कुछ भी नहीं किया जा रहा। ऐसी हालत में खाते-पीते उच्च शिक्षा प्राप्त लोगों को यहां बड़ी घृणा से देखा जाया करेगा और संभव है उन पर अत्याचार भी होने लगें। हमें इस समय दूरदर्शी बनकर इन लोगों के हितों की रक्षा के निमित्त विधान में कोई व्यवस्था (Provision) अवश्य बना देनी चाहिये। इन जातियों को इस समय शिक्षा में उच्च स्थिति अथवा दौलत के बल पर दूसरों से आगे बढ़ जाने का चाहे कितना ही विश्वास क्यों न हो, पर मैं उन्हें सचेत करना चाहता हूं कि उनके अंदाजे अशुद्ध साबित हो सकते हैं। मुझे ज्ञात है कि संभवत: मेरी

दिली मंशा पर वे संदेह ही करते हों, परंतु मेरा उनसे यही कहना है कि मैं उनके लिये शुभकामना ही चाहता हूं। *(रुकावट)*

***श्री एच॰वी॰ कामठ** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): क्या मैं आपसे ''उच्च शिक्षा प्राप्त और धनी'' इन शब्दों की परिभाषा करने के लिये कह सकता हूं?

***डा॰ पी॰एस॰ देशमुख:** जब मेरे माननीय मित्र संशोधन को स्वीकार कर लेंगे तो मैं यह परिभाषा भी कर दूंगा। मुझे ज्ञात है कि वे मेरे दिली आशयों पर संदेह भी कर सकते हैं। परंतु उन्हें अन्य स्थानों पर चुनाव लड़ने की आज्ञा नहीं दी जा सकती, क्योंकि आखिर को हैं तो वे ''अन्यों का अत्यधिक खून चूसने वाली (worst parasitic)'' जातियों के ही न! फिर उस सच्चे प्रजातंत्र में जो कि हमारा ध्येय है, इन लोगों को दूसरों के अधिकारों को रौंधने की अबाधित और असीमित शक्ति कैसे दी जा सकती है? अन्यथा आप किस प्रकार इन लोगों को, यदि मैं श्री त्यागी महोदय के शब्दों में कहूं, 'विनाश' से बचा सकते हैं? मेरे विचार में तो ऐसा करने का एक ही मार्ग है और वह यह कि इन्हें ''सुरक्षित स्थान'' दे दिये जायें, परंतु साथ ही इन्हें 'असुरक्षित स्थानों' से परे रखा जाये। परंतु श्रीमान्, मुझे ज्ञात है कि ये भाव जो मैं व्यक्त कर रहा हूं तथा ये सामाजिक झुकाव जिन्हें कि मैं विधान में देखना चाहता हूं, इस परिषद् में जैसी कि वह आज बनी हुई है, अधिक पसंद नहीं किये जाते। इन हालात में तो मैं विधान-निर्माताओं से केवलमात्र प्रार्थनाा ही करूंगा कि वे इन बातों पर विचार करें। और मैं अपना संशोधन प्रस्तुत करना नहीं चाहता।

***अध्यक्ष:** मुझे यह कभी ख्याल न था कि डा॰ देशमुख अपने संशोधन को सचमुच इतनी गंभीरतापूर्वक प्रस्तुत करेंगे। मैं समझता हूं कि यद्यपि वह धनी, मानी और उच्च शिक्षाप्राप्त फिरके से संबंधित हैं, तो भी उन्हें किसी प्रकार की रक्षा की आवश्यकता नहीं। मैं इत्तफाक से उन्हें अपना संशोधन पेश करने के निमित्त बुलाना भूल गया। परंतु मुझे अब ज्ञात हुआ कि मैं जिसे इत्तफाकन भूल समझता था सचमुच एक यथार्थ बात निकली। (*हंसी*) खैर! ये हैं वे सारे संशोधन कि जिनकी सूचना (notice) मुझे प्राप्त हुई थी। सरदार वल्लभभाई पटेल यदि कुछ कहना चाहते हों तो कह लें।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल** (बम्बई: जनरल): मुझे आशा न थी कि इस पर कोई वाद-विवाद होगा; तथापि यह हो गया है। प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

द्वारा प्रस्तुत किये गये संशोधन को तो मैं पहले ही स्वीकार कर चुका हूं और अब परिषद् से इस परिगणना को स्वीकार कर लेने की सिफारिश करता हूं।

***अध्यक्षः** मैं अब श्री शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन पर, जो कि सरदार पटेल ने स्वीकार कर लिया है, मत (Vote) लेता हूं।

यह संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** मैं अब श्री शिब्बनलाल सक्सेना के संशोधन के श्री मुंशी महोदय द्वारा पेश किये गये संशोधन पर मत (Vote) लेता हूं।

यह संशोधन स्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** मैं अब संशोधित परिगणना पर मत (Vote) लेता हूं।

यह प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** अब हम वाक्यखंड (2) को लेते हैं।

माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल (बम्बईः जनरल): प्रश्न है किः

''एंग्लो इंडियंसः (अ) एंग्लो इंडियनों के लिए 'स्थानों' की 'सुरक्षा' नहीं होगी। परंतु यदि साधारण चुनाव के परिणामस्वरूप वे धारा-सभाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त न कर सकें तो संघ (Union) के अध्यक्ष (President) तथा प्रांतों के गवर्नरों को केन्द्र तथा प्रांतों में यथासंख्य करके उनके प्रतिनिधियों को मनोनीत करने का अधिकार होगा।''

जहां तक एंग्लो इंडियन जाति का संबंध है, यह एक सर्वसम्मत निश्चय है। क्योंकि परामर्श-समिति ने इसे स्वीकार कर लिया है और यह जाति भी इन प्रस्तावों से संतुष्ट हो गई है और यह है भी सर्वसम्मत। अतः मेरा ख्याल नहीं कि कोई इस पर संशोधन पेश करेगा। मैं परिषद् से इसे स्वीकार कर लेने की सिफारिश करूंगा।

***श्री के॰ संतानम्** (मद्रासः जनरल): इस विषय में मेरे एक दो संदेह हैं। मैं उन्हें दूर करना चाहता हूं। मेरा ख्याल है कि यहां धारा-सभाओं से परिषदें अभिप्रेत होंगी। तो क्या इसका मतलब है कि प्रत्येक प्रांत में गवर्नर एंग्लो-इंडियन के प्रतिनिधि नियत करेगा?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** इसका अर्थ यही है जो कि यहां पर लिखा हुआ है।

***अध्यक्षः** मैं अब इस पर मत लेता हूं।

दूसरा वाक्यखंड स्वीकृत हो गया।

***अध्यक्षः** इससे मुझे स्मरण आ गया। प्रथम वाक्यखंड को प्रस्तुत करते समय मुझसे एक भूल हो गई। मैंने उस समय ''प्रांतीय परिषद्'' नहीं कहा। मैं समझता हूं कि परिषद् इसे स्वीकार करती है।

अब हम अगली मद को लेते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं प्रस्तुत करता हूं किः

''पारसी-(इ) पारसी जाति के लिए वैधानिक सुरक्षा न होगी। परंतु उनका नाम स्वीकृत अल्पसंख्यकों की सूची पर अवश्य रहेगा; बशर्ते कि उस अवधि में जो कि पैरा (1) की व्यवस्था (2) में नियत की गई है, यदि चुनाव के परिणामरूप यह पता लगे कि पारसी जाति उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं कर सकी तो सुरक्षित स्थानों के लिए उनकी उचित मांगों पर पुनः विचार किया जायेगा और उनको पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिलाया जायेगा। परंतु यह उसी दशा में किया जायेगा यदि अल्पसंख्यकों का पृथक प्रतिनिधित्व देना उस समय के विधान की विशेषता हुई।''

पारसी जाति और परामर्श समिति दोनों ही इस बात पर सहमत थे। अतः मैं सिफारिश करता हूं कि इसे स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि इस पर किसी प्रकार के वाद-विवाद की कोई आवश्यकता नहीं।

यह प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** मैं प्रस्तुत करता हूं कि:

''3 (अ) भारतीय ईसाई-(अ) केन्द्रीय धारासभाओं तथा मद्रास और बम्बई की प्रांतीय धारासभाओं में भी, भारतीय ईसाइयों को उनकी जनसंख्या के अनुपात से सुरक्षित प्रतिनिधित्व दिया जायेगा। अन्य प्रांतों में उन्हें साधारण स्थानों से खड़े होकर चुनाव लड़ने का अधिकार होगा।''

ईसाई जाति तथा परामर्श समिति दोनों ही इस बात पर सहमत थे। अत: मैं परिषद् से इसे स्वीकार करने की सिफारिश करता हूं।

***माननीय बी॰ गोपाल रेड्डी** (मद्रास: जनरल): मेरा ख्याल है कि परामर्शक भी इसमें शामिल हैं। मद्रास कौंसिल (Council) में हमारे लिये 3 स्थान सुरक्षित किये गये हैं।

***अध्यक्ष:** हां, मैं समझता हूं कि यहां इससे लेजिस्लेटिव असेम्बली (Legislative Assembly) और कौंसिल (Council) मुराद है। मैं इसे मतप्रदर्शन के लिये परिषद् के सामने पेश करता हूं।

यह प्रस्ताव पास हो गया।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** हम पंजाब के प्रश्न को जब तक कि वहां के हालात का अच्छी तरह पता न लग जाये तथा वहां अमन कायम न हो जाये स्थगित कर देना चाहते हैं। हमें इस प्रश्न को स्थगित किये रखना चाहिये। मेरा ख्याल है परिषद् मेरे इस सुझाव से सहमत होगी।

***अध्यक्ष:** पूर्वी पंजाब में अल्पसंख्यकों के अधिकारों के प्रश्न पर पृथक् विचार किया जायेगा। मेरा ख्याल है कि यहां एक ऐसा संशोधन भी है कि जो यह कहता है कि पश्चिमी बंगाल को भी इसमें शरीक कर लिया जाये। क्या उसे भी शामिल कर लिया जाना चाहिये?

***श्री के॰एम॰ मुंशी** (बम्बई: जनरल): श्री पंडित ठाकुरदास भार्गव का 24वां संशोधन पूर्वी पंजाब से संबंधित है। उसका संशोधन (सं॰ 3) माननीय प्रस्तावक के आशय को पूरा करने के लिये मैंने पेश किया है।

***अध्यक्ष:** इस स्थिति में हम श्री मुंशी महोदय के संशोधन को लेते हैं।

*__पं. ठाकुरदास भार्गव__ (पंजाब: जनरल): मेरा संशोधन पैरा 3 के (3) भाग पर है। मैं इसे पेश करता हूं।

*__श्री के॰एम॰ मुंशी:__ श्रीमान्, मैं संशोधन पेश करता हूं। वह इस प्रकार है कि:

''कि सूची 1 के 25 अगस्त' 47 के 24वें संशोधन में 'पैरा 3 के (3) के ''स्थान'' इस शब्द की बजाए ''प्रतिनिधित्व'' यह शब्द रख दिया जाये' इन शब्दों के स्थान पर निम्न शब्द रख दिए जाएं–

खंड 3 का (3) के 'सिख (इ)' इन शब्दों से आरंभ करके अंत तक के शब्द निकाल दिये जायें, और इसके स्थान पर निम्न शब्द रखे जाएं:

'पूर्वी पंजाब (इ) पूर्वी पंजाब की इस समय की विशेष परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए इस संबंध में सारे ही प्रश्न पर फिर कभी विचार किया जाए'।''

यदि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जाए तो सारा वाक्यखंड इस प्रकार होगा–

''सिख–(इ) पूर्वी पंजाब की विशेष परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए इस संबंध में सारे ही प्रश्न पर फिर कभी विचार किया जाए।''

यह वर्तमान पैरा के स्थान पर आ जायेगा।

*__श्री एस॰एम॰ रिजवान अल्ला__ (संयुक्त प्रांत: मुस्लिम): श्रीमान्, इस संशोधन पर मैं एक वैधानिक आपत्ति रखना चाहता हूं। यह अल्पसंख्यक समिति की रिपोर्ट है। विविध अल्पसंख्यकों के संबंध में इस रिपोर्ट में भिन्न-भिन्न व्यवस्थायें रखी गई हैं। जहां तक सिखों का संबंध है, अल्पसंख्यक समिति की रिपोर्ट में उनके संबंध में कोई निश्चय नहीं किया गया। इस रिपोर्ट में कहा गया है कि सिखों से संबंधित विषयों पर बाद में निश्चय किया जायेगा।

अब सिखों के स्थान पर एक प्रांत को रखकर एक संशोधन पेश किया गया है। इस प्रकार एक अल्पसंख्यक के स्थान पर प्रदेश का सवाल सामने लाया गया है। यह अल्पसंख्यक समिति की रिपोर्ट है। इसका किसी प्रांत से कोई संबंध नहीं। अत: यह संशोधन अप्रासंगिक है।

***अध्यक्षः** मेरी समझ से वस्तुतः वैघानिक आपत्ति यहां उठती ही नहीं। वास्तविक बात यह है कि इस प्रान्त में और अल्पसंख्यक भी विद्यमान हैं। इसलिये यहां पर अल्पसंख्यकों से सम्बन्धित सारे प्रश्न को ही स्थगित कर दिया गया है। अतः यह सुसंगत ही है।

***अध्यक्षः** मैं अब श्री मुन्शी महोदय के संशोधन पर मत लेता हूं। यह इस प्रकार है:

''खण्ड 3 के (इ) के 'सिख (इ)' इन शब्दों से आरम्भ करके 'सिखों के लिए अल्पसंख्यकों के अधिकार एतत्सम्बन्धी प्रश्न पर जुदा विचार किया जाएगा' यहां तक के शब्दों को निकाल दिया जाये और इनके स्थान पर निम्न शब्द रख दिए जाएंः

''पूर्वी पंजाब (इ). पूर्वी पंजाब की इस समय की विशेष परिस्थिति को विचार में रखते हुए इस सम्बन्ध में सारे ही प्रश्न पर फिर कभी विचार किया जाये।''

यह संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं प्रस्ताव करता हूं किः

''मुसलमान और परिगणित जातियां-(3) मुसलमान और परिगणित जातियों को केन्द्रीय और प्रान्तीय धारा-सभाओं में उनकी जनसंख्या के अनुपात से 'स्थानों' की 'सुरक्षा' दी जाएगी।''

मैं उपरोक्त वाक्य-खण्ड को स्वीकृति के लिये परिषद् के सामने पेश करता हूं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): श्रीमान् अध्यक्ष महोदय, वाक्यखण्ड (1) के श्री मुन्शी महोदय तथा मेरे द्वारा पेश किये गये संशोधन क्योंकि स्वीकृत कर लिये गये हैं, अतः पैरा (3) में ''और परिगणित जातियां'' ये शब्द जहां कहीं भी आयें, अवश्य ही निकाल दिये जायें।

***अध्यक्षः** मेरे विचार में यह अनुवर्ती संशोधन है। हम पहले ही किसी और स्थान पर परिगणित जातियों की परिभाषा स्वीकार कर चुके हैं। वही चीज यहां पर भी दाखिल कर दी जाएगी।

यह संशोधन स्वीकार हो गया।

***अध्यक्षः** मैंने तो अभी तक केवल संशोधन पर मत लिये हैं।

संशोधित वाक्यखण्ड पर अब मत लिये जाते हैं।

संशोधित अनुखंड स्वीकृत हो गया।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं प्रस्ताव करता हूं किः

''अल्पसंख्यकों को एतदतिरिक्त और अधिकारः किसी अल्पसंख्यक जाति के सदस्यों को जिनके लिए कि 'स्थान' 'सुरक्षित' किए गए हों, 'असुरक्षित' 'स्थानों' पर खड़े होकर चुनाव लड़ने का भी अधिकार होगा।''

यह वह मद है जिस पर कि अल्पसंख्यक और परामर्श-समितियों में बहुत ही तीव्र वाद-विवाद हुआ था और बहुत वाद-विवाद के पश्चात् यह बात स्वीकार की गई थी। और क्योंकि यह बात पहले ही दो स्थानों पर स्वीकृत हो चुकी है, अतः मैं इस पर दोबारा वाद-विवाद आरम्भ करना बुद्धिमत्ता नहीं समझता। आखिर को बहुत वाद-विवाद के पश्चात् हमें इसे इसी रूप में स्वीकार करना पड़ेगा। मैं इस बात को परिषद् के सामने स्वीकृति-निमित्त पेश करता हूं।

सेठ गोविन्ददासः सभापति जी, इस क्लाज 4 के ऊपर जैसा अभी सरदार साहब ने कहा माइनोरिटी कोम्यूनिटीज और एडवाइजरी कमेटी में दोनों में काफी बहस हुई थी। इसके बाद मेम्बरों की आपस में भी इस मामले में काफी बहस हुई थी। जहां तक माइनोरिटीज का सम्बन्ध है, वहां बहुत माइनोरिटीज ऐसी हैं जो यथार्थ में माइनोरिटीज नहीं कही जा सकती हैं और शेडूल्ड क्लासेस जो हैं वह ऐसी माइनोरिटीज में आ जाते हैं।

शेडूल्ड क्लासेस यथार्थ में हिन्दू हैं; वह मुसलमानों के सदृश या ईसाइयों के सदृश माइनोरिटीज नहीं हैं। तो जहां तक शेडूल्ड क्लासेस का मामला है, हमें इस विषय को एक तरह से देखना चाहिये और जहां तक दूसरी माइनोरिटीज का मामला है, वहां हमें इस विषय को एक दूसरे की दृष्टि से देखना चाहिये। शेडूल्ड क्लासेस बहुत दबा कर रखे गये हैं। यह भी उनके विषय में एक अलग सोचने की बात हो जाती है। तो मैं इस सम्बन्ध में यह कहना चाहता हूं कि इस विषय पर यदि

[सेठ गोविन्ददास]

सरदार साहब आज हाउस का वोट न लें और कल के लिये मुल्तवी कर दें तो ज्यादा अच्छा होगा, क्योंकि इसमें अब भी बहुत से मेम्बर ऐसे हैं जो कि अभी विचार करना चाहते हैं और इसमें बहुत सी बातें अभी चल रही हैं। मैं यह चाहता हूं कि यह मामला इस तरह से निपटाया जाये जिसमें इस हाउस के सब मेम्बरों को और सब माइनोरिटीज को पूरा सन्तोष हो सके; और अगर आज इस पर वोट ले लिये गये तो यह मेरा ख्याल है कि यह ज्यादा अच्छा न होगा। इसलिये मैं सरदार साहब से अपील करता हूं कि वह इस मामले को कल के लिये मुल्तवी कर दें। अभी इस कमेटी की कई दूसरी सिफारिशें हैं जिन पर आज विचार किया जा सकता है।

श्री आर.वी. धुलेकर: सभापति जी, मैं भी यह प्रार्थना करना चाहता हूं कि यह विषय बड़ा जटिल है और हम लोगों को इस विषय पर विचार करने देने के लिये इसे मुल्तवी कर दिया जाये।

***अध्यक्ष:** यह सुझाव रखा गया है कि इस मद को विचारार्थ कल पर छोड़ दिया जाये।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, मैं तो परिषद् को पहले ही बता चुका हूं कि इस प्रश्न पर अल्पसंख्यक समिति तथा परामर्श-समिति दोनों में ही विचार हो चुका है और वहां पर इस पर खूब वाद-विवाद हुआ था। इसके बावजूद भी यदि हमारे मित्र इस प्रश्न को स्थगित करना चाहते हैं तो इस बात में मुझे उनका विरोध करना पड़ेगा; क्योंकि मैं इसमें कोई लाभ नहीं देखता। इस विषय पर दो बार लम्बा वाद-विवाद हो चुका है। मैं पहले ही बता चूका हूं कि उन वाद-विवादों के पश्चात् यह प्रस्ताव इसी दशा में जैसा कि अब पेश किया जा रहा है, स्वीकृत किया गया था। और इस बार भी इसे स्थगित करके कोई लाभ प्राप्त न होगा। मैं नहीं समझता कि इस विषय में कोई और बहस लाभदायक होगी। यदि मुझे इसमें थोड़ा सा लाभ भी दिखाई देता तो मैं मान गया होता। परन्तु स्थगित करने से तो तनिक भी फायदा न होगा। दो समितियों में यह बड़े भारी बहुमत से स्वीकृत किया जा चुका है। अत: मुझे इसमें कोई लाभ दिखाई नहीं देता। मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि स्थगित करने से तो केवल समय का अपव्यय ही होगा। अत: मैं प्रस्ताव करता हूं कि इसे स्वीकार कर लिया जाये।

अध्यक्षः कुछ भी हो परिषद् साढे चार बजे विसर्जित हो जायेगी। अतः अपने आप ही यह स्थगित हो जाएगा।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** हम परिषद् की इच्छा और अध्यक्ष महोदय के आदेश को शिरोधार्य करेंगे। परन्तु यदि इस पर मत लिये जायें तो यह तुरन्त ही स्वीकृत हो जाएगा।

***अध्यक्षः** परन्तु कुछ एक सदस्यों ने यह इच्छा प्रकट की है कि वाद-विवाद और लम्बा होना चाहिये। अतः मैं उन्हें निराश नहीं कर सकता। वे इस विषय पर बोलना चाहते हैं। इसके अतिरिक्त मन्त्रिमण्डल की बैठक भी है और हम में से कुछ लोगों को 5 बजे वहां भी जाना है। अतः परिषद् को कल 10 बजे प्रातः तक स्थगित किया जाता है।

तब परिषद् (Assembly) बृहस्पतिवार, 28 अगस्त सन् 1947 के 10 बजे प्रातः तक के लिये स्थगित हो गई।

CA/24/Com. 47

भारतीय विधान-परिषद्

कौंसिल हाऊस,
नई देहली, 8 अगस्त, 1947

अल्पमत सम्बन्धी 'परामर्श समिति' तथा मौलिक आधार इत्यादि समिति
के अध्यक्ष श्री माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल की ओर से
भारतीय विधान-परिषद् के अध्यक्ष के
प्रति

महोदय,

24 जनवरी, 1947 को विधान परिषद् द्वारा नियुक्त की गई और तदुपरान्त आप द्वारा मनोनीत की गई 'परामर्श समिति' के सदस्यों की ओर से आपकी सेवा में अल्पसंख्यकों के अधिकारों सम्बन्धी इस रिपोर्ट को प्रस्तुत करने का आज मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इसे उस रिपोर्ट का जो कि मैंने अपने पत्र सं. CA/24/Com./47. तिथि 23 अप्रैल, 1947 के साथ आपको भेजी थी और जिसको कि परिषद् ने अप्रैल के अधिवेशन में निपटा भी लिया था, उसके पूरक के रूप में समझा जाये। वह रिपोर्ट न्याय्य मौलिक अधिकारों के विषय में थी। जहां तक साधारणतया सब नागरिकों का तथा विशेषतया अल्पसंख्यकों के सदस्यों का सम्बन्ध है, ये अधिकार अल्पसंख्यकों को सामाजिक जीवन के पर्याप्त विस्तृत भाग में बहुमूल्य संरक्षण प्राप्त कराते हैं। वर्तमान रिपोर्ट में मोटे रूप से 'अल्पसंख्यकों के राजनैतिक संरक्षण' कहे जाने वाले विषयों पर प्रकाश डाला गया है। इस रिपोर्ट में निम्न बातों का विवरण शामिल है:

(i) धारासभाओं में प्रतिनिधित्व का प्रश्न, चुनाव संयुक्त विधि से हो या पृथक् विधि से और पासंग (Weightage) का प्रश्न।

(ii) मन्त्रिमण्डलों में अल्पसंख्यकों के लिये 'स्थान' सुरक्षित रखने का प्रश्न।

(iii) सरकारी नौकरियों (Public Services) में अल्पसंख्यकों को 'सुरक्षा' देने का प्रश्न।

(iv) अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा का आश्वासन देने के लिये एक शासन रचना का प्रश्न।

(2) अल्पसंख्यक सम्बन्धी उप-समिति तथा मुख्य परामर्श-समिति में पूर्ण रूप से वाद-विवाद करके हमने ये सिफारिशें की हैं। यह मामला ही ऐसा है कि यहां हर एक बात में पूर्ण सर्वसम्मति की आशा करना बहुत कठिन था। मुझे आपको यह सूचना देते हुये प्रसन्नता होती है कि जहां पर हम सर्वसम्मति से निश्चय नहीं कर सके तो वहां पर हमने उस बात की सिफारिश की है कि जिसके पक्ष में अत्यधिक बहुमत हो। और यह बहुमत भी ऐसा है कि अल्पसंख्यक के बहुत से सदस्य इसमें सम्मिलित हैं।

संयुक्त अथवा पृथक चुनाव और पासंग (Weightage)

(3) सबसे पहला प्रश्न जिसको कि हमने निपटाया है, पृथक चुनाव का है। हमने स्वयं अल्पसंख्यकों के लिये तथा सामूहिक रूप में देश के राजनैतिक जीवन के निमित्त इसे अत्यन्त महत्वशाली समझा है। बहुत बड़े बहुमत से यह निश्चय किया है कि पृथक चुनाव विधि को अवश्य ही इस विधान से निकाल दिया जाना चाहिये। हमारे विचार में भूत में इस विधि ने साम्प्रदायिक भेदों को इस घातक सीमा तक भड़का दिया है कि वे आज स्वस्थ राष्ट्रीय जीवन की उन्नति के रास्ते में मुख्य रुकावट का साधन बने हुये हैं। देश में जो नये राजनैतिक हालात पैदा हो गये हैं उनमें तो इन खतरों को हटाना और भी आवश्यक जान पड़ता है। इस दृष्टि को सामने रखते हुये तो पृथक चुनाव के विरुद्ध युक्तियां पूर्णरूपेण निश्चयात्मक प्रतीत होती हैं।

(4) अतः हम सिफारिश करते हैं कि केन्द्रीय और प्रान्तीय धारासभाओं के सब चुनाव सम्मिलित चुनाव विधि से होने चाहियें। हमने यह सिफारिश भी की है कि प्रायेण (as a general rule) विविध धारासभाओं में भिन्न-भिन्न स्वीकृत अल्पमतों के लिये उनकी जनसंख्या के अनुपात से 'स्थान' भी सुरक्षित कर दिये जायें। यह इसलिये किया गया है कि कहीं अल्पमतों को यह आशंका न हो जाये कि असीमित सम्मिलित चुनाव विधि का प्रभाव धारासभाओं में उनके प्रतिनिधित्व के परिमाण (quantum) पर बुरा न पड़े। आरम्भ में यह 'सुरक्षा' दस वर्ष के

लिये होगी। तदन्तर स्थिति पर पुनर्विचार किया जायेगा। हमने उन अल्पमतों के सदस्यों को कि जिनके लिये 'स्थान' सुरक्षित किये गये हैं, असुरक्षित स्थानों पर खड़ा होकर चुनाव लड़ने का अधिकार देने की भी सिफारिश की है। साधारण नियम के रूप में हम किसी भी अल्पमत जाति को पासंग (weightage) देने के विरुद्ध हैं।

(5) उपरिकथित नियमों को विशेष-विशेष अल्पमतों पर लागू करने के प्रश्न पर विस्तृत रूप से विचार करने के दो कारण हैं। पहला यह कि हमें यह ज्ञात था कि अल्पमत अपने हितों के निमित्त धारासभाओं से स्थानों की वैधानिक सुरक्षा को आवश्यक समझने में एकमत नहीं हैं। दूसरा यह कि ऐंग्लो इण्डियन जैसे अत्यन्त छोटे (microscopic) अल्पसंख्यकों पर उपरोक्त नियमों को कड़ाई से लागू करने के विषय पर सावधानीपूर्वक विचार किया जाना जरूरी ही था। परिणामत: हमने अल्पसंख्यकों को तीन समूहों में बांट दिया है। 'अ' समूह में वे शामिल हैं कि जिनकी जनसंख्या देशी राज्यों को छोड़कर भारतीय उपनिवेश में ½ प्रतिशत से न्यून है। 'इ' समूह में वे सम्मिलित हैं कि जिनकी जनसंख्या ½ प्रतिशत से तो अधिक है परन्तु 1½ प्रतिशत से न्यून है। और 'उ' समूह में वे अल्पसंख्यक शामिल हैं कि जिनकी जनसंख्या 1½ प्रतिशत से अधिक है। ये तीनों समूह निम्न प्रकार से हैं:

'अ' समूह:

1 एंग्लो इण्डियन।

2 पारसी।

3 आसाम में 'मैदानी' कबीलों के लोग।

'इ' समूह:

4 भारतीय ईसाई।

5 सिख।

'उ' समूह:

6 मुसलमान।

7 परिगणित जातियां।

(6) एंग्लो इण्डियन: देशी राज्यों को छोड़कर एंग्लो इण्डियनों की जनसंख्या एक लाख से कुछ ही अधिक है अर्थात्, 04 प्रतिशत। एंग्लो इण्डियन की ओर से श्री एन्थोनी महोदय ने यह साबित करने का प्रयत्न किया कि जनगणना के

आंकडे अशुद्ध हैं। परन्तु यदि जनगणना में दिये गये आंकड़ों से उनकी आबादी अधिक भी मान ली जाये तो भी तो यह एक अत्यन्त छोटी (Microscopic) जाति ही तो है। और यदि इससे कड़ाईपूर्वक आबादी के आधार पर व्यवहार किया जाये तो इसका यह अर्थ होगा कि इसे किसी प्रकार का प्रतिनिधित्व प्राप्त न होगा। समिति में एंग्लो इण्डियन प्रतिनिधियों ने आदि में धारासभाओं में निम्नलिखित प्रतिनिधित्व की मांग की थी:

लोक-परिषद्	3
पश्चिमी बंगाल	3
बम्बई	2
मद्रास	2
मध्य प्रान्त और बरार	1
बिहार	1
संयुक्त प्रान्त	1

परन्तु बाद में उन्होंने यह कहा कि लोक परिषद् में दो 'स्थान' और एक-एक स्थान प्रत्येक उस प्रान्त में जहां कि इस समय उन्हें प्रतिनिधित्व प्राप्त है, अर्थात् सब मिला करके कुल 8 'स्थान' दिये जाने का उन्हें विश्वास दिलाया जाना चाहिये। एक बहुत लम्बे वाद-विवाद के पश्चात् जिसमें कि एंग्लो इण्डियन जाति के प्रतिनिधियों को अपने विचारों को पूर्णरूप से व्यक्त करने का अवसर मिला, समिति ने निम्नलिखित नियम सर्वसम्मति से स्वीकार किया। अर्थात् ''एंग्लो इण्डियनों के लिए 'स्थानों' की 'सुरक्षा' न होगी। परन्तु यदि वे साधारण चुनाव के परिणाम रूप धारासभाओं में प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में असफल रहें तो संघ के अध्यक्ष तथा प्रान्तों के गवर्नरों को यथासंख्य करके केन्द्र और प्रान्तों के निचले भवनों (lower house) के लिये एंग्लो इण्डियन जाति के प्रतिनिधियों को मनोनीत (nominate) करने का अधिकार होगा। हम समिति के एंग्लो इण्डियन प्रतिनिधियों को अपने प्रस्तावों के लिये अधिक जोर न देने पर बधाई देना चाहते हैं। यदि वे ऐसा करते तो न केवल विशेष पासंग (special weightage) का नियम ही जो कि साधारण प्रस्थापन (proposition) के रूप में पहले ही अत्यधिक बहुमत द्वारा अस्वीकृत हो चुका था, जारी हो जाता, अपितु इससे अन्य छोटे अल्पसंख्यकों को भी अपनी संख्या के अनुपात से बहुत ही अधिक प्रतिनिधित्व की मांग करने में प्रोत्साहन

मिलता। हमें पूर्ण विश्वास है कि जब वह नियम जिसकी कि हमने सिफारिश की है, कार्यरूप में परिणत हो जायेगा तो स्वयमेव एंग्लो इण्डियन यह महसूस करेंगे कि अपनी जाति के विशेष हितों को धारासभाओं में प्रभावोत्पादक तरीके से पेश करने के उन्हें पर्याप्त अवसर प्राप्त हो गये हैं।

(7) पारसी: अल्पसंख्यक उप-समिति में सर होमी मोदी ने यह प्रेरणा की कि पारसी जाति के महत्व तथा देश की राजनैतिक और आर्थिक उन्नति में जो भाग इसने लिया उसको ध्यान में रखते हुए पारसियों को केन्द्रीय और प्रान्तीय धारासभाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलना चाहिये। उप-समिति भी यह अधिकार स्वीकार कर लेने के पक्ष में थी। परन्तु जब कई सदस्यों ने सर होमी मोदी से यह कहा कि पारसियों जैसी जाति तो हर हालत में निश्चित ही पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त कर लेगी; अत: उन्हें विशेष सुरक्षा की कोई आवश्यकता नहीं तो उन्होंने इस विषय पर और विचार करने की मोहलत मांगी।

जब यह मामला परामर्श-समिति के सामने आया तो सर होमी ने कहा कि यद्यपि समिति ने पहले ही पारसी जाति को स्वीकृत अल्पसंख्यक के रूप में मान लिया है जिससे कि 'अ' समूह के अन्य अल्पसंख्यकों की भांति और उसी आधार पर ही यह भी विशेष व्यवहार (Special consideration) प्राप्त करने की अधिकारिणी बन गई है। परन्तु फिर भी उन्होंने भूतकाल में जाति द्वारा इस विषय में निश्चित की गई परम्परा का अनुसरण करते हुये "वैधानिक सुरक्षा" की अपनी मांग को लौटा लेने का निश्चय प्रकट किया। उन्होंने यह विचार व्यक्त किया कि पारसी स्वीकृत अल्पसंख्यकों की परिगणना में रखे रहेंगे; साथ ही उन्होंने यह प्रेरणा भी कि की सबसे पहली अवधि में जो कि अल्पसंख्यकों को विशेष प्रतिनिधित्व देने के लिये निश्चित की गई है, यदि यह ज्ञात हुआ कि पारसी जाति पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं कर सकी तो उसकी इस मांग पर पुन: विचार किया जायेगा और उसे पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिलाया जाएगा; परन्तु यह उनके विचार में तभी हो सकेगा यदि अल्पसंख्यकों को पृथक् प्रतिनिधित्व देने की विशेषता विधान में तब तक बनी रही। समिति ने सर होमी की इस बात के लिये प्रशंसा की और इसे स्वीकार कर लिया।

(8) आसाम में मैदानी कबीलों के लोग: इन कबीलों के लोगों के मामले को पृथक् और अर्द्ध पृथक प्रदेशों के सम्बन्ध में बनाई गई उपसमिति की रिपोर्ट के प्राप्त हो जाने के पश्चात् ही हाथ लगाया जाएगा।

(9) भारतीय इसाई: भारतीय ईसाइयों के प्रतिनिधियों ने कहा कि जहां तक उनकी जाति का सम्बन्ध है वे राष्ट्र निर्माण (nation building) के रास्ते में कोई

रुकावट बनना नहीं चाहते। वे अपनी जनसंख्या के अनुपात से केन्द्रीय धारासभाओं में तथा मद्रास और बम्बई की प्रान्तीय धारासभाओं में भी 'सुरक्षा' लेने के लिये तैयार थे। अन्य प्रान्तों में उन्हें साधारण स्थानों पर खड़ा होकर चुनाव लड़ने की स्वतंत्रता होगी ही। वे इस बात के विरुद्ध थे कि किसी जाति को पासंग (weightage) दिया जाये। परन्तु उन्होंने यह स्पष्ट कह दिया है कि यदि 'इ' तथा 'उ' समूह के किसी भी अल्पसंख्यक को पासंग (weightage) दिया गया तो वे भी उसी प्रकार के पासंग की मांग करेंगे। अब क्योंकि पासंग (weightage) किसी भी जाति को नहीं दिया गया, अत: इसका यह अर्थ हुआ कि भारतीय ईसाई अपनी जनसंख्या के अनुपात से केन्द्रीय तथा मद्रास और बम्बई प्रान्त की धारासभाओं में सुरक्षा लेकर अपने भाग्य को जनसाधारण के साथ सम्बद्ध करने के लिये उद्यत हैं।

(10) सिख: क्योंकि सीमा कमीशन (Boundary Commission) ने पंजाब में अभी तक अपना निर्णय घोषित नहीं किया। अत: सिखों की स्थिति इस समय अनिश्चित सी है। इस बात को ध्यान में रखते हुये समिति ने निश्चय किया है कि सिख जाति को दिये जाने वाले संरक्षणों सम्बन्धी सारा प्रश्न इस समय स्थगित रखा जाये।

(11) 'उ' समूह: मुसलमान और परिगणित जातियां: इस विषय में भी समिति इस निश्चय पर पहुंची है कि मुसलमान या परिगणित जातियों के मामले में भी साधारण नियम के विरुद्ध जाने के लिये कोई पर्याप्त कारण नहीं हैं। अत: परिणामत: यह सिफारिश कर दी गई है कि इन जातियों के लिये उनकी जनसंख्या के अनुपात से 'स्थान' 'सुरक्षित' कर दिये जायें और इन स्थानों पर भी संयुक्त विधि से ही चुनाव हुआ करें।

(12) समिति में यह एक प्रस्थापना (proposal) रखी गई थी कि सुरक्षित स्थानों पर सफल उद्घोषित होने से पूर्व अल्पसंख्यक जाति के सदस्यों के लिये अपनी जाति के मतों (votes) की एक न्यूनतम संख्या अपने पक्ष में प्राप्त करनी अनिवार्य करार दी जाये। यह सुझाव भी रखा गया था कि वर्द्धनीय मतप्रदर्शन (cumulative voting) की आज्ञा दे दी जाये। समिति की यह राय थी कि वर्द्धनीय मतप्रदर्शन (cumulative voting) तथा किसी जाति के प्राप्तव्य मतों के न्यूनतम प्रतिशत का अनिवार्य किया जाना, इन दोनों बातों का एकत्र हो जाने से पृथक् चुनाव विधि के सारे ही दोष आ जायेंगे। अत: इन दोनों में से कोई भी प्रस्थापना स्वीकार न की जाये।

मन्त्रिमण्डल में अल्पमतों का प्रतिनिधित्व

(13) कई सदस्यों ने यह प्रस्ताव पेश किया कि एक ऐसी व्यवस्था बना दी जानी चाहिये जिससे कि यह नियत हो जाये कि मन्त्रिमण्डलों में भी अल्पसंख्यकों के लिये स्थान उनकी जनसंख्या के अनुपात से सुरक्षित कर दिये जायेंगे। समिति ने बिना संकोच के यह निर्णय किया कि इस प्रकार की वैधानिक व्यवस्था से कई गहन कठिनाइयां उत्पन्न हो जायेंगी। परन्तु इसके साथ ही समिति ने यह भी अनुभव किया कि विधान द्वारा संघ के अध्यक्ष तथा प्रान्तों के गवर्नरों का ध्यान विशेषतया इस वांछनीय बात की ओर दिलाया जाये कि वे यथासम्भव महत्वशाली अल्पसंख्यक जातियों के सदस्यों को मन्त्रिमण्डलों में अवश्य ही सम्मिलित करें। इसके परिणामस्वरूप हम सिफारिश करते हैं कि सन् 1935 के एक्ट (Act) के अनुसार गवर्नरों को जारी किये जाने वाले आदेश यन्त्र (Instrument of Instruction) के 7वें खण्ड (paragraph) की रूप-रेखा के ढंग पर परिगणना में एक परम्परा (convention) स्थापित की जाए। वह पूरा इस प्रकार है:

"7. मन्त्रिमण्डल की नियुक्ति करते समय हमारा गवर्नर इस बात का पूरा प्रयत्न करेगा कि मन्त्रियों का चुनाव निम्न विधि से हो, अर्थात् वह उस मनुष्य से जिसके सम्बन्ध में कि उसको यह भरोसा हो कि उसकी धारासभा में स्थिर रूप से बहुपक्ष का विश्वास प्राप्त करने की सबसे अधिक सम्भावना है, सम्मति करके उन लोगों को (जिनमें कि यथासम्भव मुख्य अल्पसंख्यक जातियों के सदस्य भी शामिल हों) नियुक्त करे कि जिनकी स्थिति सबसे अधिक ऐसी हो कि वे सारे मिलकर धारासभा का विश्वास प्राप्त कर सकें। ऐसा करते समय वह मन में निरन्तर इस बात का ध्यान रखेगा कि जिससे उसके मन्त्रियों में सम्मिलित उत्तरदायित्व की भावना का विस्तार हो।"

नौकरियों में प्रतिनिधित्व

(14) हमारे सामने एक प्रस्ताव यह रखा गया था कि इस बात की वैधानिक गारण्टी होनी चाहिये कि अल्पसंख्यकों को सरकारी नौकरियों में प्रतिनिधित्व उनकी जनसंख्या के अनुपात से मिलेगा। हमें किसी और विधान का ज्ञान नहीं कि जहां ऐसी गारण्टी विद्यमान हो और गुण-दोष को विचार करते हुये एक साधारण प्रस्ताव के रूप में हम ऐसी गारण्टी को एक घातक नवप्रथा (innovation) समझते हैं।

परन्तु इसके साथ ही हम यह भी समझते हैं कि प्रबन्धोत्कर्ष (efficiency of administration) की आवश्यकता के लिये यह अनुकूल रूपेण जरूरी है कि राजसत्ता (state) सरकारी नौकरियों की नियुक्ति के समय अल्पसंख्यकों की उचित मांगों (claims की ओर उपयुक्त ध्यान दे। इसलिये हमने सिफारिश की है कि मन्त्रिमण्डलों की नियुक्ति के सम्बन्ध में जैसा किया गया है वैसा ही एक अन्वादेश (exhortation) केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों के लिये विधान के भाग में या परिगणना में ही अवश्य रखा जाये, जिससे कि प्रबन्धोत्कर्ष (efficiency of administration) की अनुकूलता को सामने रखते हुये, वे अल्पसंख्यकों की उचित मांगों (claims) को सरकारी नौकरियों पर नियुक्ति करते समय अवश्य ध्यान में रखें।

समिति के एक एंग्लो इण्डियन सदस्य ने यह बात हमारे सामने पेश की कि उनकी जाति का आर्थिक ढांचा पूर्णतया कतिपय नौकरियों (services) में उनकी उच्च स्थिति तथा शिक्षा के बारे में उन्हें प्राप्त सुविधाओं पर आश्रित है। इस कारण उसने कहा कि इस मामले में उनसे विशेष व्यवहार किया जाना चाहिये। हमने इस प्रश्न पर विचारार्थ एक जुदा उप-समिति नियत कर दी है, जो जांच करके अपनी रिपोर्ट पेश करेगी।

(15) समिति में अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधियों ने स्वाभाविक रूप से शासन सम्बन्धी आदेशों (executive orders) तथा विधान, इन दोनों द्वारा ही जो जमानतें (guarantees) और संरक्षण दिये गये थे उनकी कार्यरूप में वास्तविक पूर्ति को सुरक्षित करने (ensure) के निमित्त बनाई जाने वाली शासक मशीन (administrative machinery) की शर्त्त (provision) को बहुत महत्व दिया। बड़े पर्याप्त लम्बे वाद-विवाद के पश्चात् हमें इस परिणाम पर आना पड़ा कि इसका सबसे उत्तम उपाय यह है कि केन्द्र और प्रत्येक प्रान्त एक-एक विशेष अल्पसंख्यक अधिकारी (special Minority Officer) नियुक्त करें जिसका काम उन झगड़ों (cases) की जांच-पड़ताल करना होगा कि जिनमें अधिकार और संरक्षणों के उल्लंघन की शिकायत की गई हो, और इस अधिकारी का यह कर्तव्य होगा कि वह अपनी रिपोर्ट उचित कार्यवाही के लिये उपयुक्त धारासभा के सामने पेश करे।

(16) हम प्रस्तुत किये गये प्रस्तावों में से कुछ एक को अस्वीकार करने के लिये मजबूर हो गये हैं। इसका कुछ तो कारण यह है कि हमने अनुभव किया है कि कठोर वैधानिक व्यवस्था में पर्यालोचनात्मक प्रजातन्त्र (parliamentary domocracy) को व्यर्थ (unworkable) कर देंगी जैसा कि मन्त्रिमण्डल में

स्थानों की सुरक्षा के सम्बन्ध में हुआ, और कुछ इसलिये भी कि हमने यह आवयश्क समझा कि स्वस्थ राष्ट्रीय जीवन के विकास के साथ अल्पसंख्यकों की विशेष मांगों (claims) को एकरस कर दिया जाये जैसा कि चुनाव सम्बन्धी प्रबन्धों के सम्बन्ध में हुआ। परन्तु फिर भी हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि अल्पसंख्यकों की सारी समस्या को सुलझाने के लिये हमारा साधारण ढंग यह रहा है कि राजसत्ता (state) के कार्य को इस प्रकार से चलाया जाये जिससे कि वे केवल अल्पसंख्यक होने के कारण से ही दुखी रहने की भावना को त्याग दें और इसके विपरीत यह महसूस करें कि राष्ट्रीय जीवन में उन्हें उतना ही मानयुक्त भाग लेना है जितना कि जाति के किसी अन्य भाग को। विशेष रूप से, हम इसको राजसत्ता (state) का एक मौलिक कर्तव्य समझते हैं कि वह ऐसे साधन उपस्थित करे कि जिससे कि पिछड़े हुये अल्पसंख्यक सामान्य जाति की स्थिति तक पहुंच सकें। परिणामत: हम सिफारिश करते हैं कि सामाजिक तौर पर और शिक्षा में पिछड़ी हुई जातियों के हालात की जांच पड़ताल करने तथा उन कष्टों का जिनमें कि उन्हें श्रम करना पड़ता है, अध्ययन करने के लिये एक वैधानिक कमीशन (Commission) बनाया जाये। इस पंचायत का यह काम होगा कि वह संघ (Union) अथवा इकाई (Unit) सरकार को जैसा कि अवसर हो, उनके कष्ट निवारणार्थ करने योग्य कार्रवाई की सिफारिश करे तथा इस बात का संकेत करे कि उन्हें एतदर्थ कितनी आर्थिक सहायता दी जानी चाहिये और वह सहायता किन-किन व्यवस्थाओं के अधीन दी जानी चाहिये।

(17) हमारी सिफारिशों का एक संक्षिप्त विवरण परिशिष्ट के रूप में साथ लगा दिया गया है।

भवदीय

8 अगस्त, 1947

वल्लभभाई पटेल

अध्यक्ष

परिशिष्ट 'क'
धारा सभाओं में प्रतिनिधित्व

(1) चुनाव विधि: केन्द्रीय और प्रान्तीय धारासभाओं के सारे चुनाव संयुक्त चुनाव विधि से हुआ करेंगे।

साधारण नियम के रूप में यह व्यवस्था की जाती है कि परिगणना में दिये गये अल्पसंख्यकों को उनकी संख्या के अनुपात से विविध धारासभाओं में 'स्थानों' की 'सुरक्षा' दी जायेगी।

यह भी व्यवस्था की जाती है कि इस प्रकार की सुरक्षा केवल 10 वर्ष के लिये होगी। और इस अवधि के पश्चात् स्थिति पर पुनर्विचार किया जाएगा।

परिगणना

कक्षा (अ) देशी राज्यों (state) को छोड़कर भारतीय संघ में $1^1/_2$ प्रतिशत जनसंख्या वाली जातियां:

1 एंग्लो इण्डियन।

2 पारसी।

3 आसाम में ''मैदानी'' कबीले।

कक्षा (इ) $1^1/_2$ प्रतिशत से कम जनसंख्या वाली जातियां:

4 भारतीय ईसाई।

5 सिख।

कक्षा (उ) $1^1/_2$ प्रतिशत से अधिक जनसंख्या वाली जातियां:

6 मुसलमान

7 परिगणित जातियां।

(2) एंग्लो इण्डियन: (अ) एंग्लो इण्डियनों को स्थानों की सुरक्षा न दी जाएगी। परन्तु संघ के प्रधान तथा प्रान्तों के गवर्नरों को यह अधिकार होगा कि यदि साधारण चुनाव के परिणामस्वरूप वे धारासभाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त न कर सके तो उनके प्रतिनिधियों को यथासंख्य करके केन्द्र और प्रान्तों में मनोनीत (nominate) कर दें।

पारसी: (इ) पारसी जाति के लिये कोई वैधानिक सुरक्षा न होगी। परन्तु स्वीकृत अल्पसंख्यकों की सूची पर वे बराबर रहेंगे।

यह व्यवस्था की जाती है कि यदि पैरा (1) की व्यवस्था (2) के अनुसार निर्धारित की गई अवधि में किसी चुनाव के परिणामस्वरूप यह ज्ञात हुआ कि पारसी जाति उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं कर सकी तो सुरक्षित स्थानों के लिये

उनकी मांग पर पुनः विचार होगा और उन्हें पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त कराया जायेगा। परन्तु यह उसी दशा में होगा यदि अल्पसंख्यकों को पृथक् प्रतिनिधित्व देना उस समय तक विधान की विशेषता रही।

टिप्पणी (note): उपरोक्त सिफारिशें पारसी जाति के प्रतिनिधियों की राय का प्रतिनिधित्व करती हैं।

(3) भारतीय ईसाई: (अ) केन्द्रीय धारासभाओं तथा मद्रास और बम्बई की प्रान्तीय धारासभाओं में भारतीय ईसाइयों को उनकी जनसंख्या के अनुपात से सुरक्षित प्रतिनिधित्व दिया जायेगा। अन्य प्रान्तों में उन्हें साधारण स्थानों पर खड़ा होकर चुनाव लड़ने का अधिकार प्राप्त होगा।

सिख: (इ) सिखों के लिये अल्पमत सम्बन्धी अधिकारों पर जुदा विचार होगा।

मुसलमान और परिगणित जातियां: (उ) केन्द्रीय तथा प्रान्तीय धारासभाओं में मुसलमानों और परिगणित जातियों को उनकी जनसंख्या के अनुपात से स्थानों की सुरक्षा दी जायेगी।

(4) अल्पसंख्यकों को एतदतिरिक्त अधिकार: अल्पसंख्यक जातियों के सदस्यों को जिन्हें सुरक्षित स्थान प्राप्त हैं असुरक्षित स्थान पर खड़ा होकर भी चुनाव लड़ने का अधिकार प्राप्त होगा।

(5) पासंग (weightage) नहीं होगा: वे अल्पसंख्यक जिनके लिये कि प्रतिनिधित्व सुरक्षित कर दिया गया है उनकी जनसंख्या के अनुपात से स्थान प्राप्त कर पायेंगे। किसी भी जाति को कोई पासंग (weightage) नहीं मिलेगा।

(6) अपनी जाति से अनिवार्य रूपेण प्राप्तव्य मतों की न्यूनतम संख्या वाली व्यवस्था नहीं लगाई गई: इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं लगाई गई कि सुरक्षित स्थान पर खड़े होकर चुनाव लड़ने वाले, अल्पसंख्यक के किसी उम्मीदवार को सफल उद्घोषित होने से पूर्व अपनी जाति के न्यून से न्यून इतने मत अवश्य प्राप्त करने होंगे।

(7) मत प्रदर्शन का प्रकार: बहुसदस्य निर्वाचन-मण्डल (plural member constituencies) तो हो सकते हैं। परन्तु वर्द्धनीय मतप्रदर्शन (cumulating voting) की आज्ञा नहीं दी जा सकती।

मन्त्रिमण्डलों में अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्व

(8) अल्पसंख्यकों के लिये सुरक्षा न होगी: (अ) मन्त्रिमण्डलों में अल्पसंख्यकों के लिये कानून द्वारा स्थानों की सुरक्षा न होगी, परन्तु सन् 1935 के एक्ट के अधीन गवर्नरों को जारी किये हुए आदेश यन्त्र (Instrument of Instruction) के पैरा**7 के अनुसार एक प्रथा का विधान के परिशिष्ट में समावेश होगा।

**7. मन्त्रिमण्डल की नियुक्ति करते समय हमारा गवर्नर इस बात का पूरा प्रयत्न करेगा कि मन्त्रियों का चुनाव निम्न विधि से हो, अर्थात् वह उस मनुष्य से जिसके सम्बन्ध में कि उसको यह भरोसा हो कि उसकी धारासभा में स्थिर रूप से बहुपक्ष का विश्वास प्राप्त करने की सबसे अधिक सम्भावना है, सम्मति करके उन लोगों को (जिनमें कि यथासम्भव मुख्य अल्पसंख्यक जातियों के सदस्य भी शामिल हों) नियुक्त करे, कि जिनकी स्थिति ऐसी हो कि वे संयुक्त रूप से धारासभा का विश्वास प्राप्त कर सकें। ऐसा करते समय उनके मन में निरन्तर यह ध्यान रहना चाहिये कि मन्त्रियों में सम्मिलित उत्तरदायित्व की भावना का विस्तार हो।

सरकारी नौकरियों में भर्ती

(9) सब अल्पसंख्यकों को उपयुक्त भाग दिये जाने की गारण्टी : प्रबंधोत्कर्ष (efficiency of administration) को ध्यान में रखते हुये अखिल भारतीय तथा प्रान्तीय नौकरियों पर नियुक्तियां करते समय सब अल्पसंख्यकों की उचित मांगों (claims) को ध्यान में रखा जायेगा।

(10) एंग्लो इण्डियन जाति की स्थिति : एंग्लो इण्डियन जाति का आर्थिक ढांचा, क्योंकि पूर्णतया कतिपय नौकरियों में उनकी स्थिति तथा वर्तमान में उन्हें प्राप्त शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओं पर आश्रित है, अत: इस विषय पर विचार करके रिपोर्ट करने में निमित्त निम्नलिखित सदस्यों की एक उपसमिति निर्धारित कर दी गई है:

1. पण्डित गोविन्द वल्लभ पन्त
2. श्री के.एम. मुन्शी

3. श्रीमती हंसा मेहता
4. श्री एस.एच. प्रेटर और
5. श्री एफ.आर. एन्थानी

संरक्षण का संचालन

(11) अधिकारी का नियुक्त किया जाना: केन्द्र में अध्यक्ष तथा प्रान्तों में गवर्नर एक ऐसे अधिकारी को नियुक्त करेंगे जो कि यथासंख्य करके संघ (Union) और प्रान्तीय धारासभाओं को इस बात की रिपोर्ट करेगा कि अल्पसंख्यकों को दिये गये संरक्षण कार्यरूप में कहां तक परिणत किये जाते हैं।

(12) पिछड़ी हुई जातियों के लिये वैधानिक कमीशन (Statutory Commission) : एक ऐसी व्यवस्था रख दी जायेगी जिसके द्वारा कि सामाजिक तौर पर और शिक्षा में पिछड़ी हुई जातियों के हालात की जांच करने तथा उन कष्टों का जिनमें कि उन्हें श्रम करना पड़ता है, अध्ययन करने के लिये एक वैधानिक कमीशन (Statutory Commission) बनाई जायेगी। इस कमीशन का यह काम होगा कि वह संघ (Union) अथवा इकाई (Unit) सरकारों को, जैसा कि अवसर हो, उनके कष्ट निवारणार्थ करने योग्य कार्रवाई की सिफारिश करे तथा इस बात का संकेत करे कि उन्हें एतदर्थ कितनी आर्थिक सहायता दी जानी चाहिये और यह कि वह सहायता किन-किन व्यवस्थाओं के अधीन दी जानी चाहिये।

परिशिष्ट 'ख'

सं. CA/60/Com/46

भारतीय विधान-परिषद्

कौंसिल हाउस,

नई देहली, 25 अगस्त, 1947

अल्पमत सम्बन्धी परामर्श-समिति तथा मौलिक आधार इत्यादि
समिति के अध्यक्ष
माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल
की ओर से
भारतीय विधान-परिषद् के अध्यक्ष
के प्रति

श्रीमान्,

यह मेरा सौभाग्य है कि मैं अपने पत्र सं. CA/24/Com/47 तिथि 8 अगस्त के 14वें पैरा की ओर आपका ध्यान आकर्षित कर रहा हूं। इसके साथ ही मैं कतिपय नौकरियों में एंग्लो इण्डियन की स्थिति तथा उन्हें शिक्षा सम्बन्धी विशेष सुविधायें दिये जाने के प्रश्न पर यह पूरक (Supplementary) रिपोर्ट आपको प्रस्तुत करता हूं। हमारे द्वारा नियुक्त की गई एक उप-समिति के विचार-निष्कर्ष की यह रिपोर्ट परिणाम स्वरूप है।

(2) (अ) कतिपय नौकरियों में एंग्लो इंडियनों की स्थिति हम देखते हैं कि ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण इस समय इस जाति का सारा आर्थिक ढांचा रेलवे, डाक और तार तथा बाह्य कर (custom) विभाग को कतिपय प्रकार की नौकरियों को प्राप्त करने पर ही आश्रित है। बम्बई के प्रान्तीय एंग्लो इण्डियन शिक्षापटल ने अभी-अभी जो निरीक्षण (survey) करवाया है, उससे ज्ञात होता है कि इस जाति के कार्य पर लगाये जाने योग्य लोगों का 76% भाग अपनी आजीविका के लिये इन्हीं नौकरियों पर निर्भर करता है। हमारे विचार में यह स्थिति सारे भारत में एक जैसी ही है। इन तीनों विभागों में लगे हुये एंग्लो इण्डियन की कुल संख्या इस समय 15,000 के लगभग है। भारतीय सरकार के सन् 1935 के एक्ट द्वारा दी गई विशेष सुरक्षा इन विभागों के सब प्रकार के पदों (posts) पर लागू

नहीं होती। वह तो केवल उन पर ही लागू होती है कि जिनके साथ इनका पूर्वोक्त दीर्घकालीन सम्बन्ध है। इस बात को ध्यान में रखते हुये हम अनुभव करते हैं कि इस सम्बन्ध में यदि वर्तमान संरक्षणों को किसी न किसी रूप में आगामी कुछ वर्षों के लिये जारी न रखा गया तो इस जाति पर अचानक ही एक ऐसा आर्थिक संकट आ जायेगा जिसे सम्भवतया यह पार न कर सके। अत: हम सिफारिश करते हैं कि:

(i) रेलवे, डाक और तार तथा बाह्य कर (customs) विभागों में एंग्लो इण्डियन की भरती का आधारभूत नियम (basis) अपरिवर्तित रूप में फेडरल विधान (Federal Constitution) के कार्यरूप में चालू हो जाने के दो वर्ष पश्चात् तक जारी रहेगा। इसके पश्चात् दो वर्ष की प्रत्येक अवधि के बाद सुरक्षित रिक्त स्थानों (Vacancies) को 10% घटा दिया जायेगा। तथापि इससे एंग्लो-इंण्डियन की भरती पर नौकरियों की उन कक्षाओं में जहां पर नियत किये गये परिमाण (quota) से अधिक स्थान उन्हें इस समय प्राप्त हैं, कोई प्रतिबन्ध न लगेगा; यदि वे अन्य जाति के साथ खुली प्रतियोगिता परीक्षाओं में व्यक्तिगत गुणों के जोर से उन नौकरियों को प्राप्त कर सकते हैं। और न ही यह बात इन विभागों की अथवा अन्य विभागों की भी जहां पर कि इनके लिये परिमाण (quota) निश्चित नहीं किया गया, नौकरियों में योग्यता के आधार पर इनकी भरती को किसी प्रकार की क्षति पहुंचायेगी।

(ii) फेडरल विधान (Federal Constitution) के कार्य रूप में आ जाने की तिथि के दस वर्ष पश्चात् इस प्रकार की सब सुरक्षायें समाप्त हो जायेंगी।

(iii) इन नौकरियों में दस वर्ष के पश्चात् किसी भी जाति के लिये कोई सुरक्षा न होगी।

(इ) ऐंग्लो इण्डियनों के लिये शिक्षा सम्बन्धी विशेष सुविधायें—भारत में इस समय लगभग 500 एंग्लो इण्डियन स्कूल हैं। इन स्कूलों को सरकार की ओर से दी जाने वाली कुल आर्थिक सहायता लगभग 45 लाख रुपये सालाना है। यह सहायता इन स्कूलों पर किये जाने वाले व्यय का अनुमानत: 24 प्रतिशत है। हम अनुभव करते हैं कि इस आर्थिक सहायता में यदि एकदम कमी कर दी गई तो इन स्कूलों की आर्थिक स्थिति को बहुत सख्त धक्का लगेगा। हम यह भी उपयुक्त

समझते हैं कि इन स्कूलों को इन जैसी दूसरी शिक्षा संस्थाओं के स्तर पर धीरे–धीरे लाया जाना चाहये। देश के बदले हुये हालात के अनुकूल अपने आपको ढालने के लिये इन्हें पर्याप्त समय और उचित अवसर अवश्य मिलना चाहिये। हम यह भी महसूस करते हैं कि यदि ऐसा किया जाये तो ये संस्थायें एक बहुमूल्य शिक्षा सम्बन्धी पूंजी बन सकती हैं जो कि न केवल एंग्लो इण्डियन जाति की ही नहीं, अपितु सारे राष्ट्र की शिक्षा सम्बन्धी बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करेगी। परिणामत: हम सिफारिश करते हैं कि:

(i) एंग्लो इण्डियनों की शिक्षा के लिये इस समय केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों द्वारा दी जाने वाली सहायता फेडरल विधान (Federal Constitution) के कार्य रूप में आ जाने के तीन वर्ष पश्चात् तक जारी रखी जाये।

(ii) तीन वर्ष की पहली अवधि के समाप्त हो जाने के बाद ये सहायतायें (grants) 10 प्रतिशत घटा दी जायें और छटे वर्ष के पश्चात् इनमें 10 प्रतिशत और कमी कर दी जाये। और फिर नवें वर्ष के पीछे 10 प्रतिशत न्यूनता और की जाये। दस वर्ष की अवधि के बाद एंग्लो इण्डियन स्कूलों को मिली हुई सुविधायें समाप्त हो जायेंगी।

(iii) दस वर्ष की इस अवधि में सरकार द्वारा सहायता प्राप्त करने वाले सारे स्कूलों में 40 प्रतिशत रिक्तियां (vacancies) अन्य जातियों के सदस्यों को पेश की जायेंगी।

इस रिपोर्ट में प्रयुक्त 'एंग्लो इण्डियन' शब्द के वही अर्थ हैं जो कि भारतीय सरकार के सन् 1935 के एक्ट में इसके किये गये थे।

आपके प्रति सच्चा
वल्लभभाई पटेल

Con. 3. 5.9.47
750

अंक 5
संख्या 9

बृहस्पतिवार
28 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	सदस्यों द्वारा प्रतिज्ञा ग्रहण	1
2.	अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर रिपोर्ट	1
3.	महात्मा गांधी के चित्र की भेंट और उसका उद्घाटन	57
4.	परिशिष्ट	62

भारतीय विधान-परिषद्

बृहस्पतिवार, 28 अगस्त सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद् की बैठक, कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 10 बजे माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में प्रारम्भ हुई।

सदस्यों द्वारा प्रतिज्ञा ग्रहण

निम्नलिखित सदस्यों ने प्रतिज्ञा ग्रहण की:

प्रो. एन.जी. रंगा (मद्रासः जनरल)

श्री के. कामराज नादर, एम. एल. ए. (मद्रासः जनरल)।

अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर रिपोर्ट

***श्री बी. दास** (उड़ीसाः जनरल): श्रीमान्, एक वैधानिक प्रश्न है। कल सभा ने श्री के.एम. मुन्शी द्वारा उपस्थित खण्ड 1 (क) को स्वीकार किया, जिसमें परिगणित जातियों को हिन्दू सम्प्रदाय का अंग कहा गया है। इस खण्ड पर मैंने एक संशोधन रखा था।

***अध्यक्षः** मिस्टर दास, मैं आपको बताना चाहता हूं कि हम अन्तिम रूप से विधान नहीं तैयार कर रहे हैं। अगर कोई बात ऐसी हो जो ठीक-ठीक नहीं कही गयी है, तो मस्विदा बनाने वाले उसे ठीक कर देंगे। इस सम्बन्ध में हमें परेशान होने की जरूरत नहीं है। यह तो केवल पारिभाषिक बात है।

***श्री बी. दासः** 15 अगस्त के परिशिष्ट 1 का अस्तित्व ही नहीं रह जाता। यह एडाप्टेशन ऐक्ट [दी इण्डिया (प्रोविजनल कान्स्टीट्यूशन) आर्डर 1947] में निकाल दिया गया है।

***अध्यक्षः** अगर यह नहीं भी हो, तो मैं समझता हूं कि मस्विदा बनाने वाला समझ लेगा कि इसका क्या मतलब है।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय** (ग्वालियर): श्रीमान्, बंगाल के सदस्य यह महसूस करते हैं कि अगर पश्चिमी बंगाल में अल्पसंख्यकों को अतिरिक्त स्थान के लिये चुनाव में खड़े होने का अधिकार दिया जाता है तो इससे वहां आदेश का उल्लंघन होगा और सारा अनुपात विशृंखल हो जायेगा। मेरा अनुरोध है कि हम इसे स्थगित रखें और इस पर हम बाद में विचार करें।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): क्या मैं जान सकता हूं कि इस समय जब कांग्रेस हाई कमान के लोग और अल्पसंख्यकों के सदस्य ''अल्पसंख्यकों की रिपोर्ट'' की चर्चा करते हैं तो अल्पसंख्यकों से सदा वे केवल मुसलमानों का ही बोध क्यों करते हैं? मैं मुसलमानों को अल्पसंख्यक मानने से इन्कार करता हूं। अब तो आप कहते हैं कि साम्प्रदायिकता को आपने खत्म कर दिया है। क्या हम केवल मुसलमानों के लिये ही अल्पसंख्यक का प्रयोग नहीं कर रहे हैं?

***अध्यक्ष:** मुझे खेद है कि माननीय सदस्य जो कुछ कह रहे हैं मैं उसे नहीं समझ पाता हूं।

***मौलाना हसरत मोहानी:** अध्यक्ष महोदय, अल्पसंख्यकों की रिपोर्ट सम्बन्धी वाद-विवाद में मैंने जानबूझकर कोई हिस्सा नहीं लिया। मेरा विचार यह था कि...

***सेठ गोविन्द दास** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): क्या मैं यह जान सकता हूं श्रीमान्, कि हम किस विषय पर विचार कर रहे हैं?

***अध्यक्ष:** हम किसी विषय पर इस समय विचार नहीं कर रहे हैं। मैं समझता था कि मौलाना साहब कोई वैधानिक आपत्ति उठा रहे हैं। माननीय सदस्य को पहले बता देना चाहिये कि वे किस सम्बन्ध में बोलना चाहते हैं और फिर यदि आवश्यकता हो तो उस पर बोलना चाहिये।

***मौलाना हसरत मोहानी:** श्रीमान्, इस माइनारिटी रिपोर्ट के सम्बन्ध में मेरी एक सैद्धान्तिक आपत्ति है। आप जब भी अल्पसंख्यकों की चर्चा करते हैं, स्थान सुरक्षित रखने का जिक्र करते हैं तो उससे आप केवल मुसलमानों को ही लेते हैं। आखिर यह क्यों?

***अध्यक्षः** मुझे खेद है कि मैं मौलाना साहब को बिना प्रसंग नहीं बोलने दे सकता, क्योंकि इस समय ऐसा कोई विषय नहीं है जिस पर हम विचार कर रहे हों।

***मौलाना हसरत मोहानीः** हम यह कहते हैं कि जब हम अल्पसंख्यकों का जिक्र करते हैं तो केवल मुसलमानों को ही क्यों धर्म की दृष्टि से अल्पसंख्यक कहते हैं? अगर राजनैतिक स्तर के आधार पर ही पार्टियों का संगठन होगा, तो मुसलमान यह नहीं चाहते कि उनको अल्पसंख्यक कहा जाए।

***अध्यक्षः** मैं समझता हूं कि माननीय सदस्य एक ऐसे मसले पर विचार व्यक्त कर रहे हैं जिस पर विचार हो चुका है और स्वीकृत भी हो चुका है।

***मौलाना हसरत मोहानीः** यही बात है जो मैं कहना चाहता था।

***अध्यक्षः** कल हम परिशिष्ट के खण्ड 4 पर विचार कर रहे थे और अब हम संशोधनों पर विचार प्रारम्भ करेंगे।

***श्री देवीप्रसाद खेतान** (पश्चिमी बंगालः जनरल): श्रीमान्, इस सम्बन्ध में मेरा एक संशोधन है जो सूची में 44वां है। यह संशोधन रिपोर्ट के पैराग्राफ 4 से सम्बन्ध रखता है और यही पैरा परिशिष्ट के खण्ड 4 में भी है। यदि समुचित समय पर इसे उपस्थित करने की मुझे अनुमति दी जाये तो बड़ी कृपा हो। यदि आप यह चाहते हो कि मैं इसे अभी पेश करूं तो मैं उसे अभी उपस्थित करने के लिये तैयार हूं।

***अध्यक्षः** हां, आप उसे पेश कर सकते हैं।

***श्रीयुत रोहिणी कुमार चौधरी** (आसामः जनरल): श्रीमान्, कार्यावली के अनुसार हमें पहले मूल अधिकारों पर विचार करना चाहिये और तब किसी अन्य विषय को विचार के लिये उठाना चाहिये।

***अध्यक्षः** हम इस पर पहले विचार कर रहे हैं।

***श्री देवीप्रसाद खेतानः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव करता हूं कि ''पैराग्राफ 4 के सम्बन्ध में यह सभा सिफारिश करती है कि पश्चिमी बंगाल की विशिष्ट परिस्थिति के कारण कोई भी अल्पसंख्यक सम्प्रदाय, जिसे सुरक्षित स्थान प्राप्त है, वह

[श्री देवीप्रसाद खेतान]

असुरक्षित जगहों के लिये उम्मीदवार नहीं हो सकता। मैंने आंकड़े इकट्ठे किये हैं; जिनसे पता चलता है कि वहां परिगणित जातियों की तथा मुसलमानों की सम्मिलित आबादी वहां की कुल आबादी की आधी होती है। बर्दवान और प्रेसीडेन्सी डिवीजन तथा जलपाईगुड़ी और नदिया के जिलों के जो आंकड़े मैंने इकट्ठे किये हैं उसमें अगर मुर्शिदाबाद, नदिया और दिनाजपुर जिलों के, जो अब पश्चिमी बंगाल में आ गये हैं, आंकड़े जोड़ दिये जायें तो इससे परिगणित जातियों और मुसलमानों की जनसंख्या अपेक्षाकृत कम हो जायेगी। इसलिये अगर उन सम्प्रदायों को जिनके लिये जगहें सुरक्षित रख दी गयी हैं, शेष जगहों के लिये भी चुनाव लड़ने का हक दे दिया जाता है, तो यह उचित और न्याययुक्त न होगा। यह स्मरण रहना चाहिये कि परिगणित जातियों के अतिरिक्त वहां की आम आबादी...

*__श्री एच.जे. खाण्डेकर__ (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान्, एक नियम सम्बन्धी प्रश्न है। कल हमने इस आशय का एक खण्ड स्वीकार किया है कि परिगणित जातियां हिन्दू सम्प्रदाय के ही अंग हैं और वे अल्पसंख्यक नहीं हैं। इसलिये मैं समझता हूं कि प्रस्तुत संशोधन तथा संशोधनकर्ता महोदय की वक्तृता, जिसमें आप परिगणित जातियों को अल्पसंख्यक कह रहे हैं, नियम के विरुद्ध है।

*__श्री देवीप्रसाद खेतान:__ श्रीमान्, मेरा कहना यह है कि मैं सम्प्रदायों का या एक सम्प्रदाय के वर्गों का जिक्र कर रहा हूं जिनके लिये स्थान सुरक्षित रखे गये हैं। चाहे आप उनको अल्पसंख्यक कहिये या हिन्दू सम्प्रदाय का अंग, इससे वस्तुस्थिति में कोई अन्तर नहीं आता। मैं परिगणित जातियों का जब जिक्र करता हूं तो उन्हें अल्पसंख्यक मानकर नहीं, बल्कि हिन्दू समाज का अंग मानकर करता हूं, जिसके लिये स्थान सुरक्षित रखे गये हैं। इसलिये मैं कहूंगा कि मैं नियम के बाहर नहीं बोल रहा हूं।

स्थिति यह है कि पूरी जनसंख्या को देखते हुये परिगणित जातियों और मुसलमानों की संख्या करीब आधी या कुछ ज्यादा होती है। अब मुझे यह कहना है कि परिगणित जातियों और मुसलमानों के लिये स्थान सुरक्षित रख देने के बाद आम आबादी के लोग यह चाहेंगे कि कुछ स्थान ईसाइयों को और बोद्धों को, जिनकी संख्या बंगाल में काफी बड़ी है, दिये जायें। वे यह भी चाहेंगे कि कुछ स्थान अन्य सम्प्रदायों को भी दिये जायें। वस्तुत: उचित और न्यायसंगत यह है कि उनको कुछ स्थान मिलने ही चाहियें क्योंकि परिगणित जातियों तथा मुसलमानों के लिये

तो पहले से ही स्थान सुरक्षित रख दिये गये हैं। मेरा कहना है कि इस मामले पर हमें और विचार करना चाहिये। इसीलिये मैं यह संशोधन रखता हूं और मुझे विश्वास है कि मिस्टर मुन्शी यह सिफारिश करेंगे कि जैसे पूर्वी पंजाब के मसले को और विचार के लिये अभी स्थगित रखा गया है, उसी तरह मौजूदा हालत में पश्चिमी बंगाल का यह मसला भी पुनर्विचारार्थ स्थगित रखा जाये। मैं इस सुझाव को स्वीकार करूंगा।

(श्री मोहनलाल सक्सेना और प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना ने अपने संशोधन उपस्थित नहीं किये।)

***अध्यक्ष:** केवल यही एकमात्र संशोधन रखा गया है, इसलिये इस मसले पर अब हम विचार कर सकते हैं।

***श्री के.एम. मुन्शी** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र मिस्टर खेतान का संशोधन तो केवल यह व्यक्त करने के विचार से रखा गया है कि पश्चिमी बंगाल के मसले पर नये सिरे से विचार करना चाहिये। और मैं समझता हूं कि रिपोर्ट पेश करने वाले माननीय सदस्य इसे स्वीकार करने जा रहे हैं, पर केवल इसी स्वरूप में। इसका कारण यह है कि प्रस्ताव-कर्ता के सामने इस सम्बन्ध में पश्चिमी बंगाल के जो आंकड़े पेश किये गये थे वे सही नहीं थे। अगर आंकड़े ही गलत हैं तो इस पर बाद में विचार करना जरूरी है। गलत आंकड़ों के आधार पर हम क्यों निर्णय की जल्दीबाजी करें? इसलिये यह ठीक जान पड़ता है कि पश्चिमी बंगाल के प्रश्न पर बाद में विचार किया जाये, जब कि ठीक-ठीक आंकड़े इकट्ठे कर लिये जायें। इस संशोधन का यही मुख्य उद्देश्य है। संशोधन के द्वारा यह कोशिश नहीं की गयी है कि जहां तक समस्त भारत का सम्बन्ध है, खण्ड 4 के स्वरूप में कोई परिवर्तन किया जाये। इसके द्वारा यही प्रयास किया गया है कि जैसे पूर्वी पंजाब के मसले पर फिर विचार करना तय हुआ है, उसी तरह पश्चिमी बंगाल के मामले पर भी बाद में नये सिरे से विचार किया जाये।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, जो संशोधन अभी रखा गया है उसके सम्बन्ध में मैं चन्द शब्द कहना चाहता हूं। मैं इस सभा को और खास करके परिगणित जातियों के तथा अन्य अल्पसंख्यक जातियों से सम्बन्ध रखने वाले मित्रों को बताना चाहता हूं कि इस संशोधन का अभिप्राय यह

[पं. लक्ष्मीकांत मैत्र]

नहीं है कि अल्पसंख्यक समिति की रिपोर्ट को स्वीकार करने में जो उद्देश्य सन्निहित है उसको व्यर्थ कर दिया जाये। पर सभा को साथ ही यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि पश्चिमी पंजाब और पूर्वी पंजाब की स्थिति आज शेष भारत से बिल्कुल भिन्न है। यह स्थिति-भिन्नता देश के विभाजन के कारण और विशेष करके रैडक्लिफ कमीशन के फैसले के फलस्वरूप, जो कई अंशों में सांस्कृतिक आधार पर नहीं किया गया है, उत्पन्न हुई है। बंगाल के अधिकतर सदस्य इस स्थिति में नहीं हैं कि इस समय और यहां समझ सकें कि आखिर हुआ क्या और पश्चिमी बंगाल की जनसंख्या अब क्या है और उसमें कौन लोग हैं। अगर हम रैडक्लिफ-निर्णय में जो कुछ कहा गया है और यहां जो कहा गया है, इन दोनों का मिलान करें तो हमें आंकड़ों के सम्बन्ध में उनमें बड़ी भिन्नता दिखाई देगी। यह बात ठीक-ठीक कोई नहीं जानता कि रैडक्लिफ-निर्णय के अनुसार पश्चिमी बंगाल की जनसंख्या क्या है। इसलिये बजाय इसके कि यहां और अभी जल्दी में हम कोई निर्णय करें, हमें फिलहाल रुक जाना चाहिये, ताकि इन दो नवनिर्मित प्रान्तों—पश्चिमी बंगाल और पूर्वी पंजाब— के सिलसिलेवार आंकड़े मिल जायें तो हम ठीक तरह से उनके सम्बन्ध में निर्णय कर सकें। पूर्वी पंजाब के सम्बन्ध में तो सभा ने इस सुझाव को मंजूर कर लिया है। अब हमारा यह कहना है कि पश्चिमी बंगाल के मसले पर भी कुछ दिनों बाद जब हमें सभी आवश्यक आंकड़े प्राप्त हो जायें तो विचार किया जाये और सभा इससे सहमत होगी। मैं सभा से कह सकता हूं कि रैडक्लिफ-निर्णय इतना असंगत और इतना स्वेच्छापूर्ण है कि कइयों के घरबार तो हिन्दुस्तान में पड़ गये हैं और उनकी जोत की जमीन पड़ी है पाकिस्तान में। इसलिये अभी हम इस स्थिति में नहीं हैं कि यह समझ सकें कि जब हम पाकिस्तान या हिन्दुस्तान शब्द का प्रयोग करते हैं तो उसमें ठीक-ठीक किन-किन जगहों को हम शामिल करते हैं। हम यह नहीं जानते कि कौन हिस्सा पाकिस्तान में पड़ा है और कौन हिन्दुस्तान में और उनकी आबादी कितनी है। इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुये हम इस निर्णय पर आते हैं ताकि सभी सम्बन्धित दलों के साथ न्याय हो सके, पश्चिमी बंगाल का मसला अभी स्थगित रखना चाहिये। प्रस्तुत प्रस्ताव में सिर्फ इसी बात की मांग की गयी है। जो सिद्धान्त हमने स्वीकार कर लिये हैं उनसे हटने का कोई ख्याल नहीं है। इन शब्दों के साथ मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम)**:** अध्यक्ष महोदय, इस नाजुक सवाल पर मैं ऐसी कोई भी बात नहीं कहना चाहता जिससे कोई मतभेद

खड़ा हो। इस प्रश्न के कुछ पहलुओं की ओर मैं सिर्फ सभा का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं और आशा करता हूं कि माननीय सदस्य, जिन्होंने रिपोर्ट उपस्थित की है, उन पर कृपया विचार करेंगे। पर सभा का जो भी निर्णय होगा उसे निष्ठा और प्रसन्नता से स्वीकार किया जायेगा।

श्रीमान्, इस संशोधन का असर यह होगा कि पश्चिमी बंगाल के कुछ अल्पसंख्यक–परिगणित जातियों को छोड़कर जिन्हें अब एक पृथक वर्ग ही माना गया है– यह अनुभव करेंगे कि आम जगहों यानी असुरक्षित स्थानों के लिये चुनाव लड़ने की उन्हें न सुविधा रह गयी और न अधिकार ही। जहां तक मैं समझता हूं, आम जगहों के लिये अल्पसंख्यकों को खड़े होने के जिस अधिकार की यहां बात चल रही है, उसकी तह में वास्तविक उद्देश्य यही है कि उन्हें इस बात की स्वतः प्रेरणा प्राप्त हो कि वे सुरक्षित जगहों की जो रियायत उन्हें मिली है उसे वे यथाशीघ्र छोड़ दें। वस्तुतः अगर उनके लिये जगहें सुरक्षित न हों तो स्थिति यह हो सकती है कि कई क्षेत्रों में उन्हें अधिक स्थान मिल जायें, किन्तु बहुमत के लोग अगर उनको सहयोग दें तो। इस तरह यह अल्पसंख्यकों को इस बात का प्रोत्साहन देने के लिये है कि विशेषाधिकार की मांग छोड़ दें। वस्तुतः पश्चिमी बंगाल में हिन्दुओं का प्रबल बहुमत होने के कारण आम जगहों के लिये अल्पसंख्यक सम्प्रदाय के किसी व्यक्ति को स्वेच्छा से सदस्य चुनने की इस व्यवस्था से उन्हें सुविधा मिल जाती है। ऐसी व्यवस्था होने पर भी वह उनकी मरजी पर निर्भर करती है। इस संशोधन से एक असुविधाजनक स्थिति ही दूर होती है। मैं मानता हूं कि यह अच्छा होगा कि मूल पैराग्राफ को ज्यों का त्यों रखा जाये, बजाय इसके कि यह संशोधन स्वीकार किया जाये। पर माननीय सरदार पटेल से अनुरोध करने के लिये कि वे इस मसले पर विचार करें, मैं केवल इस संशोधन के सम्बन्ध में ही यह कह रहा हूं।

जैसा कि मैंने अभी कहा है अल्पसंख्यक–परिगणित जातियां–अब से बिल्कुल ही एक भिन्न वर्ग हैं। एकमात्र अल्पसंख्यक सम्प्रदाय जो रह जाता है और जिस पर इस संशोधन का प्रभाव पड़ेगा, वह है मुस्लिम सम्प्रदाय। सो अगर हिन्दू प्रसन्नता से किसी मुसलमान को अतिरिक्त स्थान के लिये चुनेंगे तो यह उनकी इच्छा की बात है। अगर वे समझते हैं कि किसी खास मुसलमान को राष्ट्रीयता के कारण या उसकी योग्यता के कारण या अन्य कारण से चुनना चाहिये, तो यह उनकी इच्छा की बात है। यदि वे यह समझें कि अतिरिक्त स्थान पर एक और मुसलमान न चुना जाये तो यह तो सदा ही उनके वश की ही बात है। पर मैं समझता

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

हूं कि निर्वाचकों के अधिकार को अछूता रहने देना चाहिये और प्रतिबन्ध मूलक कोई कानून न रखना चाहिये। यह बात नहीं है कि एक या दो स्थान पाने या खोने के विचार से मैं यह कह रहा हूं बल्कि उच्च नीति के विचार से मैं यह कह रहा हूं। एक या दो स्थानों को पालने का कोई महत्व नहीं है पर असली महत्व इसमें यह है कि इससे अल्पसंख्यकों को अनुकूल मनोवैज्ञानिक प्रेरणा प्राप्त होती है। यह एक ऐसी स्थिति है जिस पर सुदूर भविष्य की राजनीति को दृष्टि में रखकर खूब सावधानी से विचार करना परमावश्यक है।

***श्री उपेन्द्रनाथ वर्मन** (पश्चिमी बंगालः जनरल): श्रीमान्, मेरा यह इरादा नहीं था कि इस प्रस्ताव का विरोध करूं, पर मुझे सभा के समक्ष खड़ा इसलिये होना पड़ा है कि प्रस्तावकर्ता महोदय ने अपने भाषण के सिलसिले में कुछ ऐसी बातें कही हैं जिनमें यह संकेत दिया है कि रैडक्लिफ-निर्णय के फलस्वरूप बंगाल का विभाजन हो जाने पर पश्चिमी बंगाल में परिगणित जातियों की और मुसलमानों की सम्मिलित जनसंख्या करीब-करीब 50 प्रतिशत है। इसी आधार पर आप इस मसले को अभी स्थगित रखना चाहते हैं और इसके लिये एक समिति नियुक्त करने का सुझाव देते हैं। मेरा कहना यह है कि यह कथन परिगणित जातियों के सम्बन्ध में एक ऐसा आक्षेप है जिसे हम इतने दिनों से बिल्कुल निर्मूल कर देने की कोशिश कर रहे हैं। परिगणित जातियों ने विधान निर्माण में सच्चे दिल से भाग लिया है और कांग्रेस सदस्य की हैसियत से न कि किसी अन्य संस्था के सदस्य होने के नाते, क्योंकि हम जानते हैं कि पराधीनता काल में हमारी जो भी कमियां रहीं हों, उस दुर्भाग्य काल में हमने जो भी दोष या पाप अपना लिये हों, पर हममें और बंगाल के बारे में तो खास करके कहूंगा कि ऐसे महापुरुष-विवेकानन्द, रवीन्द्रनाथ टैगोर-पैदा हुये हैं जिन्होंने हममें यह विश्वास भर दिया है कि भारत का पुनरुत्थान सुनिश्चित है। अब इस विधान-परिषद् में तथा इसकी अन्य समितियों में भाग लेते समय मेरा यह विश्वास दृढ़ है कि इस आवश्यकता के समय भारत की प्रतिभा ने इसको छोड़ नहीं दिया है। बहुसंख्यक सम्प्रदाय की सूक्ष्म बुद्धि पर हमें पूरा विश्वास है।

श्रीमान्, कांग्रेस ने यह स्वतंत्रता उन लोगों की सहायता से प्राप्त की है जो बड़ी ही दूरदर्शी, बहुत ही बुद्धिमान थे, जो शरीर और आत्मा दोनों से ही सुदृढ़ थे। हमें इसका पूर्ण विश्वास है कि शासन की बागडोर सम्भालने पर उनकी तटस्थता स्थिर रहेगी। हमें इस बात का पूर्ण विश्वास है कि भारत को जागृत करने में,

उसको समुन्नत बनाने में, जिससे वह विश्व के राष्ट्रों में समुचित स्थान पा सकें वे अपने कर्तव्य का समुचित पालन करेंगे। परन्तु ऐसे समय में दुर्भाग्यवश बंगाल से आये हुये हमारे एक मित्र ऐसी बातें कह रहे हैं जिससे हम लोगों को दुख होता है। इसलिये मेरा यह कर्तव्य हो गया है और दुखद कर्तव्य कि उनको यह याद दिला दूं कि विश्वास प्राप्त करने का यह रास्ता नहीं है। श्रीमान्, आखिर इस प्रस्ताव द्वारा हम क्या कर रहे हैं? मुझे इस बात पर आपत्ति नहीं है कि इस मामले को अभी स्थगित रखा जाये और बाद को पश्चिमी बंगाल की सारी स्थिति पर विचार किया जाये। मुझे इस बात में सन्देह नहीं है कि यह सभा, जिस पर इतनी बड़ी जिम्मेदारी का भार है, उसी निर्णय पर आयेगी जिसे हम मंजूर करने जा रहे हैं और शायद माइनारिटी कमेटी के फैसले के आधार पर मंजूर करने जा रहे हैं। पर फिर भी पश्चिमी बंगाल से आये हुये कुछ मित्र यह सोचते हैं कि उनके निर्णय पर पुनर्विचार होना चाहिये; मुझे इस पर कोई आपत्ति नहीं है। मैं एक क्षण के लिये भी किसी अतिरिक्त स्थान के लिये नहीं चिन्ता करता क्योंकि मैं अच्छी तरह जानता हूं कि जो सुरक्षित जगहें हैं उनके लिये भी हमें बहुसंख्यकों के यानी सवर्ण हिन्दुओं के वोट पर ही निर्भर करना पड़ेगा। हमारे श्रद्धेय नेताओं ने हमसे बार-बार यह कहा है कि हमारे सम्प्रदाय पर जो यह काला धब्बा है, परिगणित जाति के नाम से एक वर्ग विशेष को पुकारा जाता है, उसे अवश्य मिटा देना चाहिये और समस्त देशवासियों को एक राष्ट्र के रूप में संगठित करना चाहिये। मैं इस विचार का पूर्णतः समर्थन करता हूं। पर मेरा कहना यह है कि इस अन्तर्काल में जब तक कि यह भेदभाव नहीं मिटता, परिगणित जातियों को बहुसंख्यक सम्प्रदाय पर निर्भर रहना होगा। इसलिये सुरक्षित स्थानों के अलावा अगर अतिरिक्त स्थान के लिये कोई परिगणित जाति का सदस्य या मुसलमान चुनाव लड़ना चाहता है तो उसे बहुसंख्यक सम्प्रदाय के विश्वास और सहानुभूति पर भरोसा करना ही पड़ेगा। इसलिये जहां तक मेरे निजी दृष्टिकोण का सम्बन्ध है, मैं इसकी चिन्ता नहीं करता कि अतिरिक्त स्थानों के लिये खड़े होने का अधिकार परिगणित जातियों को मिलता है या नहीं। परन्तु जब आप किसी एक सिद्धान्त को समस्त भारत के लिये लागू करते हैं, तो सिद्धान्ततः क्या आप यह कहना चाहते हैं कि यह गौरवशालिनी सभा बंगाल या अन्य किसी प्रान्त के सम्बन्ध में कोई अपवाद रखेगी। मैं ऐसा नहीं समझता। फिर भी यह मामला स्थगित रखा जाये या नहीं, इसका निर्णय मैं सभा पर छोड़ता हूं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल** (बम्बई: जनरल): श्रीमान्, खंड 4 को लेकर केवल एक ही संशोधन है। अल्पसंख्यकों के लिये जगहें सुरक्षित रख दी गयी हैं और उनको आम जगहों के लिये भी चुनाव लड़ने का अधिकार होगा।

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

श्री खेतान के संशोधन में, जिसका समर्थन श्री मुन्शी ने किया है, यह कहा गया है कि पूर्वी पंजाब की तरह पश्चिमी बंगाल का प्रश्न भी अभी स्थगित रखा जाये। परिगणित जाति वालों को या अन्य किसी को इसके सम्बन्ध में सन्देह हो, इसका कोई कारण नहीं है। जब पूर्वी पंजाब के प्रश्न पर विचार किया जायेगा तो पश्चिमी बंगाल के प्रश्न पर भी छानबीन की जायेगी। ऐसी कोई भी बात न होगी जो उनके पीठ पीछे की जायेगी और बिना उनकी स्वीकृति या जानकारी के कोई भी अधिकार उनसे छीना नहीं जायेगा। अभी भी यह देखना बाकी है कि जनसंख्या और उसके अनुपात का इस सम्बन्ध में क्या असर होगा। इसलिये जब हमने सूची तैयार की है तथा चुनाव और मताधिकार के सम्बन्ध में हमने उसे स्वीकार किया है तो हमने उसे जनसंख्या के आधार पर निर्धारित किया है। जहां तक कि किसी अल्पमत का सवाल है, अगर वस्तुतः जनसंख्या इतनी है कि उनको चुनाव लड़ने के लिये अतिरिक्त अधिकार की जरूरत नहीं है, अगर स्थिति ऐसी है कि इससे बहुसंख्यक सम्प्रदाय पर यह प्रभाव पड़ेगा कि उनका बहुमत प्रभावशून्य हो जायेगा; तो फिर यह ऐसी स्थिति है जिस पर विचार करना जरूरी है। इसलिये अगर सिर्फ यह सुझाव दिया गया है, जैसा कि इस संशोधन में है कि इस प्रश्न को अभी स्थगित रखा जाये और पूर्वी पंजाब के प्रश्न पर विचार करते समय इस पर भी विचार किया जाये, तो इस पर आशंका की कोई आवश्यकता नहीं है। जिन लोगों ने ये रियायतें दी हैं, उनकी सच्चाई के सम्बन्ध में कोई सन्देह न होना चाहिये; वे मूल बात पर स्थिर रहेंगे। अतः मुझे यह संशोधन मान लेने में कोई हिचकिचाहट नहीं है और मेरा प्रस्ताव है कि खण्ड 4 स्वीकार किया जाये।

***अध्यक्षः** सिर्फ एक ही संशोधन है, जिसका आशय है कि पश्चिमी बंगाल का प्रश्न बाद में विचार के लिये अभी स्थगित रखा जाये। प्रस्तावक महोदय ने संशोधन को स्वीकार कर लिया है। तो क्या मैं यह मान लूं कि सभा इस सुझाव को स्वीकार करती है?

***माननीय सदस्यगणः** हां!

***अध्यक्षः** तो मैं खण्ड 4 पर मतदान लेता हूं।

खण्ड 4 संशोधित रूप में स्वीकृत हुआ।

खण्ड 5

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं प्रस्ताव करता हूं किः

''अल्पसंख्यकों को, जिनके लिए जगहें सुरक्षित रख दी गयी हैं, आबादी के आधार पर स्थान दिये जायेंगे और किसी सम्प्रदाय को कोई वजन न दिया जायेगा।''

मैं नहीं समझता कि इस पर किसी बहस की जरूरत है, क्योंकि इस प्रश्न पर समाचार पत्रों में काफी विचार किया गया है और कमेटी में भी इस पर यथेष्ट वाद-विवाद हो चुका है। मैं नहीं समझता कि कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो इससे मतभेद रखता हो। सभा की स्वीकृति के लिये मैं इसे उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्षः** इस पर दो संशोधन आए हैं।

(मि. तजम्मुल हुसैन और श्री खांडेकर ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

मैं इस खण्ड पर मतदान लेता हूं।

खण्ड स्वीकृत हुआ।

खण्ड 6

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** बाद के खण्डों पर भी मैं समझता हूं, कोई संशोधन नहीं रखे जायेंगे।

''अपने सम्प्रदाय का कम से कम एक निश्चित संख्यक मत पाने का प्रतिबंध न रहेगाः

'यह प्रतिबंध नहीं रहेगा कि अल्पसंख्यक सम्प्रदाय का उम्मीदवार जो किसी सुरक्षित जगह के चुनाव के लिए खड़ा होगा, उसको निर्वाचित घोषित होने के लिए अपने सम्प्रदाय का कम से कम एक निश्चित संख्यक मत प्राप्त करना होगा'।''

अतीत काल में बहुधा इस प्रश्न पर भी विचार किया गया है और पृथक निर्वाचन का यह एक रूपान्तर मात्र है, इस पर विचार किया गया है और बदली

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

हुई स्थिति को देखते हुये इस तरह की व्यवस्था रखने की कोई आवश्यकता नहीं है। हम इस बात पर एकमत हैं कि ऐसा प्रतिबन्ध जरूरी नहीं है। श्रीमान्, सभा की स्वीकृति के लिये मैं यह खण्ड उपस्थित करता हूं।

(सर्वश्री तजम्मुल हुसैन और केशवराव ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***श्री के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुर** (मद्रास: मुस्लिम): पोकर साहब और मैं संशोधन नं. 4 की सूचना दे चुके हैं और यह संशोधन इस खण्ड के सम्बन्ध में है।

***अध्यक्ष:** मैं इसको बाद में लूंगा। श्री नागप्पा, अब आप अपना मन्तव्य व्यक्त करें।

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं सभा की निगाह में यह बतलाना चाहता हूं कि मेरा यह अनुरोध है कि परिगणित जातियों के सम्बन्ध में यह व्यवस्था होनी चाहिये कि उन्हें अपने सुरक्षित जगहों पर निर्वाचित होने के लिये अपने सम्प्रदाय का एक निश्चित प्रतिशत वोट अवश्य प्राप्त करना होगा। श्रीमान्, मैं जानता हूं कि इससे उस सम्प्रदाय के उम्मीदवार को एक प्रतिष्ठा और नेतृत्व की मर्यादा प्राप्त होती है। उदाहरण के लिये, अगर हम सुरक्षित जगहों के लिये आज चुने जाते हैं और किसानों का झगड़ा खड़ा हो जाता है, हरिजन और किसानों में झगड़ा हो जाता है और हम इनको समझाने और मनाने जाते हैं तो ये कहते हैं "हटो, यहां से तुम सवर्ण हिन्दुओं के पिट्ठू हो। तुमने हमारी जाति को बेच दिया है और अब उनकी ओर से हमारा गला काटने आए हो। हम तुम्हें अपना प्रतिनिधि नहीं मानते।" श्रीमान्, इससे बचने के लिये मेरा यह सुझाव है कि हरिजनों के एक निश्चित प्रतिशत संख्यक वोट उम्मीदवार को मिलने ही चाहियें, ताकि वह कह सके कि उसे कुछ हरिजनों का समर्थन प्राप्त है और उनके प्रतिनिधि की हैसियत से उसे प्रतिष्ठा प्राप्त हो और वह कुछ कह सके। यह प्रतिष्ठा तथा उनकी ओर से बोलने के लिये यह अधिकार पाना उनके लिये जरूरी है।

***श्री एच.जे. खाण्डेकर:** संशोधनकर्ता महोदय अपना संशोधन रख रहे हैं या भाषण दे रहे हैं? उनको यह बता देना चाहिये कि वह अपना संशोधन पेश कर रहे हैं या नहीं।

*__अध्यक्षः__ क्या आप संशोधन पेश कर रहे हैं या नहीं?

*__श्री एस. नागप्पाः__ जी हां, मैं संशोधन पेश कर रहा हूं।

*__माननीय श्री बी.जी. खेर__ (बम्बईः जनरल): कल माननीय सदस्य महोदय ने सरदार पटेल को इसके लिये बधाई दी थी कि उन्होंने बड़ी दृढ़ता का परिचय दिया और इस संशोधन को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। अब वे इस संशोधन को पेश कर रहे हैं।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः__ वे केवल भाषण देने के लिये उसे पेश कर रहे हैं और फिर उसे वापस ले लेंगे। *(हर्षध्वनि)*

*__अध्यक्षः__ प्रत्येक सदस्य को पूर्व मत से भिन्न मत प्रकट करने का अधिकार प्राप्त है।

*__श्री एस. नागप्पाः__ श्रीमान्, मैं इसका स्पष्टीकरण करना चाहता हूं कि यह किस प्रकार पृथक निर्वाचक समूहों का प्रश्न नहीं है।

*__श्री मोहनलाल सक्सेना__ (संयुक्त प्रान्तः जनरल): सदस्य महोदय को पहले अपना संशोधन पेश करना चाहिये और उसके बाद अपना भाषण देना चाहिये।

*__अध्यक्षः__ जब उन्होंने यह कह दिया है कि वे उसे पेश कर रहे हैं तो इससे कुछ अन्तर नहीं पड़ता। श्री नागप्पा, आप कृपा करके संशोधन पढ़ दीजिये।

*__श्री एस. नागप्पाः__ संशोधन इस प्रकार हैः

''पैरा 6 के अंत में निम्नलिखित जोड़ दिया जायेः

'परन्तु शर्त यह है कि परिगणित जातियों के सम्बन्ध में उम्मीदवार को, इसके पूर्व कि यह घोषित किया जाये कि वह परिगणित जातियों के लिए सुरक्षित जगह के लिए निर्वाचित हो गया है, उस सुरक्षित जगह के लिए जो चुनाव हो उसमें परिगणित जातियों के लोगों द्वारा दी हुई वोटों में से कम से कम 35 प्रतिशत वोट प्राप्त हो गई हों'।''

[श्री एस. नागप्पा]

अब श्रीमान्, मैं इसका स्पष्टीकरण करूंगा कि किस प्रकार इससे पृथक निर्वाचन समूह नहीं बनते।

श्री के.एम. मुन्शीः क्या माननीय संशोधनकर्ता संशोधन पेश करना चाहते हैं या उसे वापस लेना चाहते हैं?

***अध्यक्षः** उन्होंने कहा है कि वे उसे पेश करना चाहते हैं।

***श्री एस. नागप्पाः** उदाहरण के लिये, मान लीजिये कि सुरक्षित जगहों के लिये चार उम्मीदवार चुनाव लड़ रहे हैं। यह भी मान लीजिये कि परिगणित जातियों के 100 मतदाता हैं और उनमें से सभी आकर वोट देते हैं। 'क' 36 वोटें पाता है और 'ख' 35। इनका जोड़ 71 हुआ। तीसरे उम्मीदवार के लिये केवल 29 वोटें रह गई। अब उस उम्मीदवार के सम्बन्ध में विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं जिसे केवल 29 प्रतिशत वोटें मिली हों। इसके अतिरिक्त दो चुनाव करने की भी आवश्यकता नहीं है। आप मतदाताओं को दो प्रकार के रंगीन पर्चे दे सकते हैं जिनमें से एक सफेद हो और दूसरा किसी अन्य रंग का। केवल परिगणित जाति के उम्मीदवार के लिये ही रंगीन पर्चा डालना चाहिये और यदि कोई उम्मीदवार परिगणित जातियों के लोगों की 35 प्रतिशत से अधिक वोटें पा जाये या यों कहिये कि रंगीन पर्चे पा जाये तो दूसरे उम्मीदवार के बारे में विचार करने की भी आवश्यकता नहीं है। श्रीमान्, यदि वह 36 प्रतिशत भी पा जाये और आम चुनाव में सबसे अधिक वोट न पाये तो उसे निर्वाचित न घोषित करना चाहिये। इस प्रकार यदि 'ग' अपनी जाति की 36 प्रतिशत वोट पाता है और 'घ' केवल 35 प्रतिशत वोट पाता है तो यदि 'ग' चुनाव में अन्य जातियों की अधिकांश वोट नहीं पाता है तो वह हारा हुआ माना जायेगा और 'घ' यदि वह आम चुनाव में, 'ग' से अधिक वोट पाये तो चाहे उसने अपनी जाति की कम वोट पाई हों वह निर्वाचित घोषित किया जायेगा। आखिर चुनाव तो आम निर्वाचक-समूह या जाति के हाथ में ही रहेगा। पूना के निर्णय के अनुसार आपने प्रारम्भिक चुनाव में चार उम्मीदवारों के निर्वाचन की व्यवस्था की है। इसका अर्थ यह है, यदि कोई व्यक्ति 25 प्रतिशत वोट पा जाये तो वह फिर आम चुनाव में खड़ा हो सकता है। इसका अर्थ पृथक निर्वाचक-समूह ही तो है। यह बहुत कुछ पृथक निर्वाचक-समूह ही हुआ। मैं पृथक निर्वाचक-समूह नहीं चाहता हूं। मैं पृथक निर्वाचक-समूहों के दोषों से परिचित हूं। मैं संयुक्त निर्वाचक-समूहों के पक्ष में हूं। संयुक्त निर्वाचक-समूहों

की व्यवस्था करने पर हमें ऐसी कोई बात न करनी चाहिये जिससे हरिजन प्रतिनिधियों के प्रति उनकी जाति द्वेष करने लगे जो कि इस समय उन्हें बहुसंख्यक जाति के दिखावे के टट्टू कहती है। यदि जिस व्यवस्था को मैंने प्रस्तावित किया है उसे स्वीकार कर लिया जाये तो हम अपनी जाति के लोगों के सामने जाकर उनसे कह सकते हैं, ''देखिये हम अपनी जाति के भी 35 प्रतिशत बहुमत से चुने गये हैं, हम दिखावे के टट्टू नहीं हैं।'' अपने संशोधन द्वारा मैं उम्मीदवारों की संख्या चार से दो कर देना चाहता हूं, और ऐसे व्यक्ति के निर्वाचन की व्यवस्था करना चाहता हूं, जिसे बहुसंख्यक जाति की अधिकांश वोट प्राप्त हों। मैं सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि वे बिना किसी प्रकार के द्वेष के इस पर विचार करें। श्रीमान्, इस संशोधन को पेश करने के लिये आपने मुझे जो अवसर दिया है उसके लिये मैं आपको धन्यवाद देता हूं।

***श्री के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुरः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह पेश करता हूं कि अल्पसंख्यकों के मौलिक अधिकारों इत्यादि से सम्बन्धित सलाहकार कमेटी की अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रिपोर्ट पर विचार करने पर विधान-परिषद् की यह बैठक यह निश्चय करती है कि यदि केन्द्रीय और प्रान्तीय धारा-सभाओं के चुनाव सभी जातियों के संयुक्त निर्वाचन-समूहों के आधार पर किये जायें और अल्पसंख्यकों के लिये जगहें सुरक्षित रखी जायें, तो चुनाव निम्नलिखित आधार पर किया जाना चाहिये।

मैं (ख) को पेश नहीं कर रहा हूं।

''उन उम्मीदवारों में से जिन्होंने अपनी ही जाति के लोगों द्वारा दी हुई वोटों की 30 प्रतिशत वोट प्राप्त की हों, वह उम्मीदवार जिसने निर्वाचकों की संयुक्त सूची में से सबसे अधिक वोट पाई हों निर्वाचित घोषित किया जायेगा। इस दशा में जबकि कोई भी ऐसा उम्मीदवार न हो जिसने अपनी जाति के लोगों द्वारा ही हुई वोटों में से 30 प्रतिशत से कम वोट प्राप्त न की हों तो उन दो उम्मीदवारों में से जिन्होंने अपनी जाति के लोगों द्वारा दी हुई वोटों में से सबसे अधिक वोट पाई हों वह उम्मीदवार निर्वाचित घोषित किया जायेगा, जिसने कुल वोटों में से सबसे अधिक वोट प्राप्त की हों।''

अध्यक्ष महोदय, इस संशोधन का उद्देश्य यह है कि खण्ड 1 के अनुसार अल्पसंख्यकों के लिये जगहें सुरक्षित रखने का जो उद्देश्य है उसकी शर्तें संतोषजनक

[श्री के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुर]

रूप से हो जायें, यदि कोई व्यक्ति किसी सुरक्षित जगह के लिये किसी निर्वाचन-क्षेत्र से चुना जाये तो साधारणतया यह समझा जायेगा कि वह व्यक्ति उस जाति के लोगों का प्रतिनिधित्व करता है और वह उस जाति विशेष के दृष्टिकोण और मत को उद्घोषित करेगा जिसके कि पक्ष में उस निर्वाचन-क्षेत्र में वह जगह सुरक्षित रखी गई हो। अब श्रीमान्, उस जाति विशेष का पर्याप्त प्रतिनिधित्व करने के लिये उसे उस जाति का विश्वास-भाजन होना चाहिये। इसलिये हम यह चाहते हैं कि यदि वह उस जाति के अधिकांश लोगों का विश्वास-भाजन नहीं है तो उसे जाति के मतदाताओं की कम से कम 30 प्रतिशत या इससे भी कम संख्या का तो विश्वास-भाजन होना ही चाहिये। श्रीमान्, आप इसे स्वीकार करेंगे कि यह एक बहुत ही न्यायसंगत प्रार्थना है। किसी भी प्रकार के प्रजातन्त्र में प्रत्येक नागरिक का यह आधारभूत तथा अत्यावश्यक अधिकार है कि उसका दृष्टिकोण व उसके विचारों को देश की धारा-सभा के सम्मुख रखा जाये। यदि धारासभा में भेजे हुये लोग उस जाति के अधिकांश लोगों के नहीं तो कम से कम उसके लोगों के पर्याप्त भाग के विश्वास-भाजन नहीं हैं तो किसी भी नागरिक को यह विश्वास कैसे हो सकता है कि उसके मत और विचारों को सभा के सामने ठीक तौर से रखा जायेगा? आपको श्रीमान्, यह भी स्मरण होगा कि इस देश के सभी दलों और इसकी सभी जातियों के बीच समझौता होने पर इलाहाबाद में सन् 1932 ई. में जो तृतीय ऐक्य सम्मेलन हुआ था, उसमें बहुत कुछ सभी के मत से इसी प्रकार की व्यवस्था स्वीकार की गई थी।

मैंने अपना संशोधन उस समय जो समझौता हुआ था कि उसी में कुछ परिवर्तन करके पेश किया है। श्रीमान्, मैं यह बताना चाहता हूं कि यदि इस प्रकार की व्यवस्था न रखी गई तो जो व्यक्ति सुरक्षित जगह के लिये निर्वाचित होगा, उससे यह आशा नहीं की जा सकती कि वह उस जाति की विचारधारा का प्रतिनिधित्व करता है जिसके पक्ष में वह जगह सुरक्षित रखी गई हो। इसका अर्थ यह होगा कि उस जाति पर वास्तव में अन्य जाति द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि को थोपा जायेगा और वही इस जाति का प्रतिनिधित्व करेगा। यद्यपि उस जाति के लाभार्थ उसके लिये जगहें सुरक्षित रखी गई थीं, परन्तु वास्तव में वह अपने प्रतिनिधि को नहीं चुन पायेगी। इतने काल बाद अब यह नहीं कहा जा सकता कि इस देश में कोई अल्पसंख्यक नहीं है और उनके कोई ऐसे विशेष हित नहीं हैं जिनकी रक्षा की जाये। मौलिक अधिकारों और अल्पसंख्यकों के सम्बन्ध में सलाहकार समिति और अल्पसंख्यकों की उपसमिति को नियुक्त करने का ही यह अर्थ है कि अल्पसंख्यक

वर्तमान हैं और यह कि उनके विशेष हित हैं। इसके पहले जो रिपोर्ट पेश की गई वह भी इसी धारणा से पेश की गई कि अल्पसंख्यकों के कुछ ऐसे हित हैं जिनकी रक्षा करना आवश्यक है। इसलिये मैं यह कहूंगा कि यह सभा यह न समझे कि कोई अल्पसंख्यक नहीं है और कोई ऐसे विशेष हित नहीं हैं जिनके सम्बन्ध में व्यवस्था करना आवश्यक हो। अब विचारणीय प्रश्न यह है कि इन अल्पसंख्यकों की सबसे अच्छी प्रकार रक्षा किस तरह की जाये। वर्तमान प्रजातंत्र का एक मुख्य प्रश्न यह भी है कि बहुसंख्यकों की कठोरता को किस प्रकार अच्छे से अच्छे ढंग से संयत किया जाये, ताकि अल्पसंख्यकों को उसका अभिशाप न भोगना पड़े। अब श्रीमान्, इस युग में राजाओं के दैवी अधिकार का स्थान जैसा कि एक न्यायविशेषज्ञ ने कहा है, बहुसंख्यकों के दैवी अधिकार ने ले लिया है। हमारा लक्ष्य यह होना चाहिये कि बहुसंख्यकों की कठोरता को किस प्रकार अच्छी से अच्छी तरह संयत किया जाये, ताकि अल्पसंख्यक को बहुसंख्यकों का और उनके बनाये हुये विधान का विश्वास हो सके ताकि वे इस विधान को सच्चाई से और नेकनीयती से प्रयोग में लाने में सहायक हो सकें। हम यहां देश के नागरिकों के नाते इस प्रकार विधान बनाने के लिये एकत्रित हुये हैं कि जनता के सभी वर्गों को अपने अधिकारों के सम्बन्ध में आश्वासन मिले और उनको इसका विश्वास हो कि उनके अधिकारों की रक्षा की जायेगी। इस संशोधन का उद्देश्य केवल इतना ही है कि इन सभी प्रतिनिधियों के चुनाव में जिनसे यह आशा की जाती है कि वे किसी अल्पसंख्यक समुदाय या जाति की विचारधारा का प्रतिनिधित्व करेंगे, उस अल्पसंख्यक समुदाय या जाति के मतदाताओं के वोटों का उचित अनुपात उन प्रतिनिधियों को प्राप्त होना चाहिये। यह एक बहुत ही न्यायोचित प्रार्थना है और श्रीमान्, इस संशोधन को स्वीकार करके हम किसी निर्वाचन-क्षेत्र की प्रतिनिधि के सम्बन्ध में अंतिम निर्णय करने का अधिकार बहुसंख्यक जाति से नहीं छीन रहे हैं। इसलिये श्रीमान्, मैं इस सभा से अनुरोध करता हूं कि वह, जैसा कि माननीय प्रस्तावक महोदय ने कहा है, इस प्रश्न पर मैत्री के वातावरण में विचार करें। माननीय प्रस्तावक महोदय ने ठीक ही कहा है कि ''हमें कटुता की परम्परा को त्याग देना चाहिये'' और हमें उत्तेजना रहित होकर इस प्रश्न पर विचार करना चाहिये। श्रीमान्, मेरी यह मनोकामना है कि इस प्रश्न पर बहुत ही शांतिपूर्ण वातावरण में विचार होना चाहिये। मैं तो यह चाहता हूं कि अल्पसंख्यकों के अधिकारों की इस रिपोर्ट पर उस समय विचार किया जाता जब कि यह देश आवेश रहित हो जाता और इस समय जो उत्तेजना है वह शांत हो जाती, परन्तु दुर्भाग्यवश यह इस समय विचार के लिये प्रस्तुत है। माननीय प्रस्तावक महोदय की अपील का

[श्री के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुर]

समर्थन करते हुये मैं आपसे यह अनुरोध करता हूं कि आप आवेश रहित होकर इस प्रश्न पर विचार करें और किसी प्रकार की उत्तेजना न उत्पन्न होने दें। आखिर हमारी प्रार्थना यही तो है कि अल्पसंख्यक जाति के लोगों को इसके लिये आवश्यक सुविधा दी जाये कि उनके नाम से चुने हुये और उनकी तरफ से बोलने वाले प्रतिनिधियों को उचित अनुपात में मतदाताओं का विश्वास प्राप्त होना चाहिये। इसमें कोई राष्ट्रविरोधी बात नहीं है और न कोई ऐसी बात है जिसका आधार ही दोषपूर्ण हो। इसके विपरीत यह एक मौलिक तथा अत्यावश्यक अधिकार प्रदान करेगा जो किसी भी प्रजातन्त्र में प्रत्येक नागरिक को प्राप्त होता है और वह यह है कि उसे अपने देश की धारा-सभा में ऐसे व्यक्ति द्वारा अपने विचारों को प्रस्तुत करने का अधिकार प्राप्त हो जिस पर उसका विश्वास हो। अल्पसंख्यकों द्वारा चुने हुये सदस्यों का आखिर अल्पसंख्यक ही दल होगा और धारा-सभा में बहुसंख्यकों के निर्णय पर उनका प्रभुत्व न होगा। इसका उद्देश्य केवल इतना ही है कि अल्पसंख्यकों और अन्य जातियों के मत और विचारों का सभा में उस व्यक्ति द्वारा उचित रूप से प्रकाशन हो जिस पर इन जातियों का विश्वास हो—कम से कम उनकी एक सीमित जनसंख्या का तो उस पर विश्वास होना ही चाहिये। इस संशोधन का उद्देश्य यही है। मेरी समझ में नहीं आता कि इससे बहुसंख्यकों के अधिकारों में हस्तक्षेप किस प्रकार होगा या इससे बहुसंख्यक जाति किस प्रकार अल्पसंख्यक जाति में परिणत हो जायेगी। श्रीमान्, किसी भी विधान के सफल होने के लिये यह आवश्यक है कि उससे जनसमाज के सभी वर्गों में विश्वास उत्पन्न हो। हम यह चाहते हैं कि जो स्वतंत्रता प्राप्त की गई है—जो नवजात स्वतंत्रता प्राप्त हुई है—उसका उपभोग जनसमाज के सभी वर्ग करें और यह तभी सम्भव हो सकता है जब इस सभा के बनाये हुये विधान में लोगों के सभी वर्गों की स्वाधीनता और स्वतंत्रता की व्यवस्था हो और उससे सभी वर्गों के लोगों के हृदय में विश्वास उत्पन्न हो। मेरा संशोधन इसी दिशा की ओर एक कदम है और मैं तो यह कहूंगा कि इससे विभिन्न वर्गों और जातियों के बीच सामञ्जस्य, सद्भाव और सुहृदयता का प्रादुर्भाव होगा। जनसमाज के विभिन्न वर्गों के बीच इस सामञ्जस्य और सद्भाव के लिये यह आवश्यक है कि उनके हृदय में विश्वास उत्पन्न किया जाये और इसीलिये मैं इस सभा से यह स्मरण रखने के लिये कहता हूं कि आखिर हम इतना ही चाहते हैं कि विशेष जातियों के मतदाताओं की एक न्यायोचित संख्या द्वारा ही प्रतिनिधि चुने जायें। श्रीमान्, मैं सभा का ध्यान इसकी ओर आकर्षित करना चाहता हूं कि सभी प्रजातन्त्रों में एकाकी हस्तान्तरित मतदान द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व

की प्रणाली मान्य है और जो विधान हम बना रहे हैं उसके अनुसार होने वाले कुछ चुनावों के सम्बन्ध में इस सभा ने भी उस प्रणाली को स्वीकार किया है। इस संशोधन का एकल संक्राम्य मतदान द्वारा अनुपाती प्रतिनिधित्व की प्रणाली से सामञ्जस्य है और इसलिये मुझे आशा है कि यह सभा उसे स्वीकार कर लेगी। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि परिगणित जातियों की तरफ से मेरे माननीय मित्र श्री नागप्पा ने भी इसी प्रकार के भाव व्यक्त किये हैं। आप यह समझ जायेंगे कि इसके लिये हमें किसी के प्रति द्वेष भाव से प्रेरणा प्राप्त नहीं हुई है परन्तु हमारी इच्छा यही है कि अल्पसंख्यकों को इसका विश्वास हो कि धारा-सभा में उनकी विचारधारा का प्रतिनिधित्व ऐसे लोगों द्वारा होगा जिनका कि उन्हें विश्वास होगा और जिनके चुनाव में वे अपने मत को तर्कपूर्ण ढंग से प्रकट कर सकेंगे। मैं यह सिफारिश करता हूं कि सभा मेरे संशोधन को स्वीकार कर ले।

***श्रीमती दाक्षायणी वेलायुदन** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, यह प्रस्ताव चार सदस्यों के नाम से है और पहला नाम माननीय डाक्टर बी. आर. अम्बेडकर का है। मुझे इसका आश्चर्य है कि एक ऐसे सदस्य महोदय ने इस संशोधन को पेश किया है जो संयुक्त निर्वाचन प्रणाली के आधार पर चुने गये हैं और एक ऐसे सदस्य भी हैं जो बराबर पृथक निर्वाचन-समूहों और कुछ प्रतिशत जगहों के तथाकथित संरक्षण का समर्थन करते रहे हैं परन्तु आज वे इस सभा से लापता हैं। यदि इस संशोधन को सच्चे हृदय से पेश किया गया है तो सूची में जिनका नाम सबसे प्रथम है वे आगे पाते। मेरी समझ में नहीं आता कि एक अन्य सदस्य महोदय ने यह जिम्मेदारी अपने मत्थें क्यों ली है। परोक्ष में इसका कुछ न कुछ कारण अवश्य होगा। संशोधन के प्रस्तावक महोदय श्री नागप्पा जब इस सभा में संयुक्त निर्वाचन प्रणाली के आधार पर आये तो उन्होंने यह कहा कि इसकी आवश्यकता नहीं है कि वे अपनी ही जाति की वोटों से यहां आयें और इसलिये उन्हें उस जाति का प्रतिनिधित्व करने का अधिकार नहीं है। यदि श्री नागप्पा का यह विचार है कि यदि वे ऐसे चुनाव से यहां पधारे हैं तो उनके लिये बुद्धिमत्ता की तथा सर्वोत्तम बात यही होगी कि वे इस सभा की सदस्यता के अधिकार को त्याग दें *(हर्षध्वनि)*। यदि कोई ऐसा व्यक्ति, जो अपनी जाति के वोटों से या आम लोगों की वोटों से चुना गया हो, यह समझता है कि वह उस जाति का प्रतिनिधित्व करने के लिए अयोग्य है तो उसे रंगमंच से अलग हो जाना चाहिये और किसी भी राजनैतिक कार्य में भाग नहीं लेना चाहिये। मेरे विचार से डा. अम्बेडकर ने इस अवसर पर उपस्थित न होकर बड़ी समझदारी का काम

[श्रीमती दाक्षायणी वेलायुदन]

किया क्योंकि वे जानते थे कि इस संशोधन को यह सभा आज या किसी दिन भी स्वीकार करने वाली नहीं है। जैसा कि कल अल्पसंख्यकों की कमेटी के सभापति ने बताया, इन बातों को कमेटी ने बहुमत से स्वीकार किया और चाहे यहां जो भी कारण बताये जायें वे जानते थे कि इस संशोधन को स्वीकार नहीं किया जा सकता। इसलिये अपना समय नष्ट न करके वे अपने काम से चले गये क्योंकि वे मन्त्रिमण्डल का कार्य कर रहे हैं। किसी महाशय ने यह बहाना बताया है कि यदि इस प्रकार के निर्वाचन समूह रखें जायेंगे तो लोगों के सच्चे प्रतिनिधि नहीं आ पायेंगे। यदि हम किसी जाति की कुछ प्रतिशत वोटों की मांग का विश्लेषण करें तो हम इस निर्णय पर पहुंचेंगे कि इसका अर्थ विशुद्ध पृथक निर्वाचन-समूह ही है (*वाह वाह*)। जिन माननीय सदस्यों ने इस संशोधन को पेश किया है उनसे मैं यह पूछना चाहती हूं कि क्या वे अन्य जातियों के लोगों की दी हुई वोटों को भी कुछ महत्व दे रहे हैं? यदि कोई उम्मीदवार अपनी जाति की वोटों की 34 प्रतिशत वोट पाता है और दूसरा उम्मीदवार 35 प्रतिशत वोट पाता है और यदि पहला उम्मीदवार आम लोगों से 200 वोट पाता है और दूसरा 100 वोट पाता है, तो यदि हम उसी जाति की प्रतिशत वोटों का हिसाब लगायें तो दूसरा उम्मीदवार अवश्य ही निर्वाचित होगा। इसका अर्थ यह होता है कि अन्य जातियों की वोटों का कुछ भी महत्व नहीं है, भले ही पहले उम्मीदवार ने आम लोगों से दूसरे उम्मीदवार से दुगनी वोट पाई हों।

इसके अतिरिक्त मैं एक अन्य कारण से इस संशोधन का विरोध कर रही हूं। यदि हरिजनों को इतने प्रतिशत वोटों द्वारा निर्णय करने का अधिकार दे भी दिया गया तो इस प्रकार की निर्वाचन प्रणाली के अन्तर्गत हरिजनों को चुनाव के समय जो प्रलोभन दिखाये जायेंगे उनसे उपराम होने का सामर्थ्य इस समय हरिजनों में नहीं है। कई दल अपने-अपने उम्मीदवारों को खड़ा कर सकते हैं और वे हरिजनों को मोल लेकर अपनी इच्छानुसार उम्मीदवारों को खड़ा कर सकते हैं और धारासभा में इस प्रकार कोई भी उम्मीदवार आ सकते हैं परन्तु यह निश्चित है कि वह अपनी जाति का प्रतिनिधित्व नहीं करेगा, भले ही उसको इस प्रणाली द्वारा निश्चित प्रतिशत वोट मिल जायें। जब तक परिगणित जातियां या हरिजन, चाहे उनको आप जो कोई नाम दें, अन्य लोगों के आर्थिक दास हैं, उस समय तक पृथक निर्वाचक-समूह या संयुक्त निर्वाचन-समूह या इस प्रकार सुरक्षित प्रतिशत वोटों के साथ किसी अन्य प्रकार के निर्वाचन-समूह की मांग करना कोई अर्थ नहीं

रखता (*वाह वाह*)। जहां तक मेरा अपना सम्बन्ध है मैं किसी जगह भी किसी प्रकार के संरक्षण के पक्ष में नहीं हूं (*वाह वाह*)। दुर्भाग्य से इन सब बातों को हमें इसलिये स्वीकार करना पड़ा कि अंग्रेजी साम्राज्यवाद अपने कुछ निशान हम पर लगा गया है और हम हमेशा एक दूसरे का भय करते हैं। इसी कारण हम पृथक निर्वाचन-समूहों को नहीं छोड़ सकते। यह संयुक्त निर्वाचक-समूह और जगहों का संरक्षण भी इस प्रकार का पृथक निर्वाचक-समूह ही है। परन्तु हमें इस दोष को सहन करना है क्योंकि हम समझते हैं कि यह दोष आवश्यकीय है। मैं इस संशोधन का विरोध इसलिये करना चाहती हूं कि यह हमारे मार्ग में बाधक सिद्ध होगा और इसलिये कि जब वास्तव में यह प्रणाली प्रयोग में लाई जायेगी तो हरिजन ठीक-ठीक विचारधारा को नहीं अपना सकेंगे। हरिजनों के ठीक विचारधारा न अपना सकने के कारण ही उन्होंने इस प्रकार का संशोधन यहां पेश किया है। यदि वे यह समझते हैं कि अन्य जातियों से अलग रहकर वे उन्नति कर सकेंगे तो उनका विचार गलत है। बहुसंख्यक जाति के साथ होकर और अपनी ही जाति की वोटों पर निर्भर न होकर वे अधिक उन्नति कर सकते हैं। मैं इस संशोधन के प्रस्तावक महोदय को यह विश्वास दिलाना चाहती हूं कि यदि आप इस प्रकार का निर्वाचन-समूह स्थापित करेंगे तो उससे हरिजनों को कोई लाभ न होगा। इसलिये मैं इस संशोधन का विरोध करती हूं और मुझे आशा है कि इस सभा का कोई सदस्य इसका समर्थन न करेगा। (*हर्ष ध्वनि*)।

(कई सदस्य बोलने के लिये उठ खड़े हुये।)

***अध्यक्ष:** बहुत से सदस्यों ने इस पर बोलने के लिये मुझसे आज्ञा मांगी है।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, अधिक बहस करने के पहले मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। श्री नागप्पा को इसी शर्त्त पर इस संशोधन को पेश करने की आज्ञा दी गई थी कि वे इसे वापस ले लेंगे। अधिक बहस करने से कोई लाभ न होगा। वे अपनी जाति को केवल यह दिखाना चाहते थे कि उन्होंने अपने को बेच नहीं दिया है। यदि आप इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करेंगे और उसे महत्व देंगे तो इससे यह प्रकट होगा कि उसमें कुछ सार है। आप उस पर विचार करके सभा का समय क्यों नष्ट करना चाहते हैं?

***अध्यक्ष:** क्या श्री नागप्पा के संशोधन पर अधिक बहस करना आवश्यक है?

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती** (मद्रास: जनरल): श्रीमान्, उस पर गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

*__कई माननीय सदस्य:__ बहस समाप्त कीजिये, बहस समाप्त कीजिये।

*__अध्यक्ष:__ बहस समाप्त करने का प्रस्ताव नहीं किया जा सकता। मि. इब्राहीम का संशोधन अभी शेष है।

(मि. काजी सैयद करीमुद्दीन बोलने के लिये उठे।)

*__अध्यक्ष:__ क्या आप उस पर बोलना चाहते हैं? हम श्री नागप्पा के संशोधन को छोड़ चुके हैं।

*__श्री काजी सय्यद करीमुद्दीन__ (मध्य प्रान्त और बरार: मुस्लिम): श्रीमान्, मैं मि. इब्राहीम के संशोधन का समर्थन करता हूं और मुझे थोड़े-से शब्द कहने हैं। संयुक्त निर्वाचक-समूहों के समर्थन में पंडित पंत और सरदार पटेल के भावपूर्ण भाषणों को मैं बड़े धैर्य से सुनता रहा हूं। मेरा कहना यह है कि वर्तमान स्थिति के लिये केवल पृथक निर्वाचक-समूह ही उत्तरदायी नहीं है। मैं उन कई बातों की गम्भीरता को कम नहीं करना चाहता जिनके कारण वर्तमान परिस्थिति उत्पन्न हुई है, परन्तु मुस्लिम लीग दल की तरफ से मैं यह कहना चाहता हूं कि इस कलंक को भारतवर्ष से मिटाने के लिये हम भी उतने ही दृढ़-प्रतिज्ञ हैं और इस सम्बन्ध में अपना योग देने में हम कोई बात उठा न रखेंगें।

श्रीमान्, मि. इब्राहीम ने यह संशोधन पेश किया है कि संयुयक्त निर्वाचक-समूह हो परन्तु जगहें सुरक्षित रखी जायें और किसी विशेष जाति के सदस्य को अपनी जाति के लोगों की 33 प्रतिशत वोट प्राप्त करनी चाहिये। हम इसे भुला नहीं सकते कि अविश्वास की भावना वर्तमान है। हम देश की वर्तमान स्थिति से विमुख नहीं हो सकते। हम सभी लोगों की यह इच्छा है कि वह अब समाप्त होनी चाहिये। किन्तु हमें भय है कि ऐसा न हो, अविश्वास की भावना प्रबल है और हमें बड़ी सावधानी से तथा शांतिपूर्वक आगे कदम उठाना है। यह सभा पृथक निर्वाचक-समूहों को समाप्त करने का निर्णय कर चुकी है और हमें एक ऐसी युक्ति निकालनी है जिससे अल्पसंख्यकों को संतोष हो जाये। मि. इब्राहीम की युक्ति या संशोधन इसकी व्यवस्था करता है कि संयुक्त निर्वाचक-समूह हों। अल्पसंख्यक जाति के किसी भी उम्मीदवार को अपनी टोपी हाथ में लेकर अन्य जातियों के पास वोट की भीख मांगने के लिये जाना होगा। साम्प्रदायिकता धीरे-धीरे मर जायेगी। इसके अतिरिक्त उस उम्मीदवार को अपनी जाति का भी प्रतिनिधित्व

करना है। आखिर किस उद्देश्य से आपने जगहें सुरक्षित की हैं? जगहें सुरक्षित इसलिये की जाती हैं कि कोई उम्मीदवार किसी विशेष जाति का प्रतिनिधित्व करे।

*__एक माननीय सदस्यः__ जी नहीं, महाशय।

*__श्री काजी सय्यद करीमुद्दीनः__ उसे अपनी जाति की भावनाओं को तथा आकांक्षाओं को दृष्टि में रखना चाहिये। यदि यह तय नहीं किया जाता कि उसे अपनी जाति की कम से कम निश्चित वोटें प्राप्त करनी चाहियें और यदि वह उन वोटों को प्राप्त नहीं कर सकता है तो मैं यह कहूंगा कि यह ऐसा ही होगा जैसे मुस्तगीज वकील को तो रखे परन्तु वकील मुस्तगीज के हितों के विरुद्ध हो। एक घास का पुतला या झूठमूठ ही अपने विचार बदला हुआ आदमी भी उस जाति के एक सच्चे आदमी को हटा देगा। इसलिये मेरी विज्ञप्ति यह है कि जगहों के संरक्षण के हित में यह कुछ काल तक आवश्यक है कि हम किसी जाति के उम्मीदवार के सम्बन्ध में यह व्यवस्था करें कि उसे कम से कम निश्चित वोटें प्राप्त करनी चाहियें। श्रीमान्, मैं यह मानने के लिये तैयार नहीं हूं कि संयुक्त निर्वाचक-समूहों को चलन में लाते ही सारे दोष जादू की तरह गायब हो जायेंगे। कई शताब्दियों तक इन संयुक्त निर्वाचक-समूहों से अधिक महत्व परिगणित जातियों की समस्या का होगा। कई और भी बातें हैं जिनके कारण वर्तमान स्थिति उत्पन्न हो गई है। आपने जगहें सुरक्षित रखकर बड़ी उदारता दिखाई है और मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप इसे भी मान जायें कि कुछ काल तक मुस्लिम अल्पसंख्यकों के उम्मीदवारों के लिये यह आवश्यक होगा कि वे कम से कम उस जाति की निश्चित वोटों को प्राप्त करें जो उनकी राजनैतिक आकांक्षाओं को पूर्ण करेगी।

श्री एच.जे. खाण्डेकरः सभापति जी, मेरे दोस्त नागप्पा ने जो अमेंडमेंट आपके सामने पेश की है उसका विरोध करने के लिये मैं खड़ा हुआ हूं। यह अमेण्डमेण्ट चार सदस्यों के नाम से है। पहला नाम डाक्टर अम्बेडकर का है और आप सब जानते हैं कि दूसरी राउण्डटेबिल कान्फ्रेन्स से उन्होंने ज्वाइंट इलेक्टोरेट की मांग को छोड़कर सैपरेट इलेक्टोरेट की मांग एडवाइज़री कमेटी की माइनोरिटी सब-कमेटी तक जारी रखी। और इस डिमाण्ड के ऊपर उनकी पार्टी के जितने हरिजन इस देश के अन्दर हैं, उनको उन्होंने यहां तक संदेश दिया कि वह हिन्दू भी नहीं हैं, हिन्दुओं से अलग रहना चाहते हैं, हिन्दुओं से अलग बस्ती बसाना चाहते हैं, अछूत स्थान चाहते हैं और वह हिन्दू धर्म के अन्दर नहीं हैं। इसलिये वह सैपरेट

[श्री एच.जे. खांडेकर]

इलेक्टोरेट चाहते हैं। 15 साल से यह चीज देश के अन्दर है और इसका नतीजा यह हुआ कि हिन्दू-जाति और डाक्टर अम्बेडकर की पार्टी के हरिजनों में एक किस्म का मनमुटाव हो गया और यहां तक हो गया कि हमारे अम्बेडकर पार्टी के हरिजन हिन्दुओं के साथ बातचीत तक करना नहीं चाहते हैं। मगर मैं यह बात खुशी के साथ कहना चाहता हूं कि जब यह ज्वाइण्ट और सैपरेट इलेक्टोरेट का मसला माइनोरिटी सब-कमेटी के सामने आया तो डाक्टर अम्बेडकर साहब ने इसको ज्यादा जोर से नहीं बढ़ाया बल्कि उसे वापस ले लिया। वापस इसलिये लिया कि उस उसूल के लिये उनके पास कोई आरग्यूमेण्ट नहीं था।

15 साल से मैं डाक्टर अम्बेडकर साहब की स्पीच बड़े गौर से सुनता आया और अखबारों में पढ़ता आया हूं। मगर ऐसा कोई सबब नहीं था कि जो सैपरेट इलेक्टोरेट को प्रेस करते हुये उन्होंने कोई मजबूत आरग्यूमेण्ट रखा हो। इस प्रकार उनके पास कोई आरग्यूमेण्ट न होने के कारण उन्होंने इस चीज को प्रेस नहीं किया और उसे वापस ले लिया। यह हम लोगों की बड़ी भारी विजय है। वापस लेने के बाद इस सैपरेट इलेक्टोरेट का जरिया निकला जिसके जरिये यह परसन्टेज का मसला यहां पेश हो गया। इसका खुल्लमखुल्ला यह अर्थ है कि वह दूसरी तरह से एक प्रकार से सैपरेट इलेक्टोरेट चाहते हैं। अगर मैं आपके सामने बयान करूं की इस सैपरेट इलेक्टोरेट से देश के अन्दर क्या परिणाम हुआ। लार्ड मौरलो मिण्टो की वजह से मुसलमानों को सैपरेट इलेक्टोरेट मिला और उसका नतीजा यह हुआ कि हमारे देश के दो टुकड़े हो गये। उसी सैपरेट इलेक्टोरेट को आज परसण्टेज के रूप में हमारे सामने ला रहे हैं। इसको अगर हरिजनों के लिये, मुसलमान भाइयों के लिये मंजूर कर लिया गया तो वही होगा जो मेरे दोस्त मि. जिन्ना हमेशा चाहते हैं; यानी पाकिस्तान और मुस्लिम हिन्दुस्तान; इसका अर्थ यह है कि हिन्दुस्तान के अन्दर एक और पाकिस्तान तैयार करना। इसलिये अब तो बहुत हो गया। हिन्दुस्तान के टुकड़े हो गये। मुसलमान भाई जो चाहते थे और जिनमें उनकी भलाई थी, ऐसा वे कहते थे, वह उनको मिल गया। मिलने के बाद मेहरबानी से वह हिन्दुस्तान के अन्दर पाकिस्तान बनाने की कोशिश न करें। खैर इस प्रकार का अमेण्डमेण्ट वह हाउस के अन्दर न लायें।

मुझे मालूम हुआ है कि जो हमारे मुसलमान भाई इस देश के अन्दर करीब 3 करोड़ हैं, उनको जितनी सहूलियतें मिलनी चाहिये थी, वह सारी की सारी मिल

गई हैं और एडवाइजरी कमेटी की रिपोर्ट से मिल रही हैं। फिर वे यह कहते हैं कि हमारे सच्चे नुमाइन्दे चुनने के लिये हमको परसण्टेज आफ वोट मिलना चाहिये। मेरे दोस्त मि. नागप्पा जो अम्बेडकर से मिले हुये हैं और किसी आशा पर उनके हाथ में खेल रहे हैं, वह भी यही कहते हैं कि इसी तरह से हमारे सच्चे नुमाइन्दे चुनकर आयेंगे। मैं इन भाइयों से पूछता हूं कि सच्चे नुमाइन्दे का क्या अर्थ है? मैं इस असेम्बली का उदाहरण पेश करना चाहता हूं। अगर मेरे दोस्त नागप्पा हरिजनों के सच्चे नुमाइन्दे बन कर आयें, हिन्दू हिन्दुओं के सच्चे नुमाइन्दे बनकर आयें और काजी साहब यहां मुसलमानों के सच्चे नुमाइन्दा बनकर आये हैं तो इस असेम्बली का क्या होगा? कानूनी काम तो होगा ही नहीं। मगर सच्चे मुसलमान भाई मि. जिन्ना की जय, और मेरे दोस्त नागप्पा डाक्टर अम्बेडकर की जय और हम लोग भारत माता की जय या दूसरे नारे इस हाउस के अन्दर लगाते रहेंगे और आपस में यहां एक न एक पर खुर्चियां चलेंगी। तब मेरे दोस्त काजी साहब और नागप्पा से मैं पूछता हूं कि ऐसे वक्त किस के सिर फूटेंगे–मैजारिटी के या मायनोरिटी के?

दूसरी बात जो मैंने अभी बताई कि यह जो परसण्टेज आफ वोट्स है वह सैपरेट इलेक्टोरेट का एक जरिया है और इसलिये मैं इसका विरोधी हूं। इसके बाद भी कुछ अमेण्डमेण्ट आपके सामने आ रहे हैं जैसे क्युमिलेटिव वोटिंग पद्धति के बारे में जो सैपरेट इलक्टोरेट का एक बच्चा है। इस प्रकार के अमेण्डमेण्ट इस हाउस के अन्दर लाना ठीक नहीं है और इनसे हाउस का वक्त बरबाद होता है। मैं बताना चाहता हूं कि इस क्युम्युलेटिव वोटिंग से अब तक जो होता रहा है उसका नतीजा हमारे सामने है। हम बड़े दुख के साथ कहते हैं कि पूना पैक्ट, जिसमें हरिजनों के लिये प्राथमिक चुनाव और क्युम्युलेटिव वोटिंग पद्धति थी और जो अप्रत्यक्ष रूप से सैपरेट इलेक्टोरेट ही था उसका अन्तिम नतीजा यह हुआ कि आज नागपुर और बम्बई में हिन्दुओं के खिलाफ कितना आन्दोलन है और जाति-जाति में मतभेद और झगड़े हैं। क्या मेरे दोस्त नागप्पा और अम्बेडकर इन झगड़ों को बढ़ाना चाहते हैं या मिटाना चाहते हैं? अगर वह मिटाना चाहते हैं तो इस संशोधन को वे वापस ले लें। हरिजनों और सवर्ण हिन्दुओं में झगड़े बढ़ाने में हरिजनों का साथ नहीं है परन्तु हाथ है। मेरे दोस्त नागप्पा और डाक्टर अम्बेडकर के इन विचारों से हरिजन सदा के लिये हरिजन रहेंगे और उनकी हालत दिन पर दिन बुरी होती जायेगी, खासकर ऐसी परिस्थिति में जबकि जाति-जाति में सबकास्ट हैं। हरिजनों में भी कई सबकास्ट हैं और हरिजन एक ही जाति के

[श्री एच.जे. खाण्डेकर]

नहीं हैं बल्कि सारे हिन्दुस्तान के अन्दर उनमें 132 जाति हैं। मैं मिसाल के तौर पर आपको बताऊंगा कि नागपुर प्रान्त में हरिजनों में महार जाति मैजोरिटी में है। अगर 35 फीसदी वोट का प्रस्ताव पास किया गया तो 3 फीसदी चमार जो नागपुर के अन्दर रहते हैं, वह इस चुनाव के अन्दर कभी नहीं आ सकते हैं। अगर उनका जातिवार चुनाव लड़ा गया तो महार जो 80 फीसदी हैं उनको 35 फीसदी वोट मिलेंगे और चुनकर आयेंगे। जो चमार, भंगी और जितनी दूसरी जातियां हैं, वह इस परसण्टेज से चुनकर नहीं आ सकते हैं, क्योंकि हरिजनों में उनकी संख्या बहुत कम है। और डा. अम्बेडकर के और मेरे जाति के महार जो बम्बई और नागपुर प्रान्तों में अधिक संख्या में हैं, वे ही नागपुर और बम्बई की हरिजन सीटों पर कब्जा कर सकते हैं, दूसरे हरिजन नहीं। इसके अलावा मुझे नागप्पा साहब से प्रार्थना करनी है कि वह इस अमेण्डमेण्ट को वापस ले लें और इसका कारण यह है कि जैसा वह समझते हैं वैसा वह परसण्टेज आफ वोट्स में हरिजनों की भलाई की चीज नहीं है। यह तो बुराई की चीज है। आज हमें इस देश की स्वतंत्रता प्राप्त हुई। हम इस देश के बाशिन्दे हैं और मालिक बन चुके हैं, ऐसी परिस्थिति में अगर मैजोरिटी कम्युनिटी को हम विश्वास में न लें और मैजारिटी कम्युनिटी हमें विश्वास में न ले ले, तो इस देश का राज ठीक नहीं चल सकता। दोस्तों, इसी हाउस के अन्दर थोड़े दिन पहले हम सब हिन्दू, मुसलमान, हरिजन, सिख, पारसी आदि ने हमारे इस प्यारे तिरंगे झण्डे को आदर से वन्दन किया था और बताया कि हम सब हिन्दुस्तानी हैं और एक हैं। फिर आज हमारा अलग-अलग होने का संशोधन पेश करना बड़ी दु:ख की बात है। मैं इस देश में शान्ति बनाये रखने के लिये नागप्पा साहब से प्रार्थना करूंगा कि वह अमेण्डमेण्ट को वापस ले लें।

***श्रीमती रेणुका रे** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): श्रीमान्, इस अन्त के संशोधन का विरोध करने के लिये मैं उठी हूं। सलाहकार समिति की रिपोर्ट से यह स्पष्ट हो जाता है कि उसके रचयिताओं ने देश के सभी वर्गों को संतुष्ट करने के लिये भरसक प्रयत्न किया है। वास्तव में श्रीमान्, यदि रिपोर्ट में कोई गलती हुई है तो वह तथाकथित अल्पसंख्यकों के प्रति अत्यधिक उदारता दिखाने की दिशा में हुई है। सन्देह और अविश्वास को दूर करने के लिये और सभी की सम्मति से समस्या को हल करने के उद्देश्य से इसमें उन सभी के हितों का ध्यान रखा गया है जिनकी साम्प्रदायिक या धार्मिक भावनायें प्रबल हैं। भले ही उनके इस रुख से राष्ट्र के हितों को हानि होती हो। आखिर श्रीमान्, हमें किसी प्रजातन्त्रात्मक

पार्थिव राज्य में धार्मिक आधार पर निर्मित अल्पसंख्यकों और बहुसंख्यकों के प्रश्न पर विचार नहीं करना है। हम थोड़े काल के लिये, अगले दस वर्ष तक के लिये, जगहें सुरक्षित करने के लिये राजी हो गये हैं ताकि वे लोग जिनको अपने को भारतीय समझने की क्षमता नहीं है, इस काल में अपनी विचारधारा ठीक कर लें। मुझे इसका आश्चर्य है कि इस संशोधन के प्रस्तावक महोदय ने इसे पेश करने के लिये इतना जोर दिया। सरदार पटेल की भावोत्पादक अपील तथा पंडित पंत की न्यायसंगत तथा विस्तृत व्याख्या के बाद, जिसका उद्देश्य यह दिखाना था कि पृथक निर्वाचक-समूह राष्ट्रहित की दृष्टि से न केवल असंगत है, परन्तु वे उन जातियों का भी अहित करते हैं जिनके लिये वे रखे गये हैं, मेरा यह विचार था कि वे इस संशोधन पर जोर नहीं देंगे। यह पृथक निर्वाचक-समूहों के प्रश्न को उपस्थित करने का वह अप्रत्यक्ष ढंग है जिसे कि सभा ने कल स्वीकार नहीं किया था। श्रीमान्, जब कि धार्मिक भेदभाव की इस कृत्रिम समस्या को, जो मध्ययुग की भावनाओं को प्रतिध्वनित करती है, पृथक निर्वाचक-समूहों जैसी राजनैतिक चालों से हमारे विदेशी शासकों के हित-साधन के लिये प्रोत्साहन दिया गया तथा उसका परिपालन व परिपोषण किया गया, हम असहायावस्था में अलग खड़े होकर केवल सब कुछ देखते रहे। आज हम देखते हैं कि इसके फलस्वरूप हमारा देश विभाजित हो गया है और मेरा अपना तथा अन्य प्रान्त भंग हो गये हैं। हम यह देखते हैं कि जिन्होंने भारतीय स्वतंत्रता के संग्राम में बलिदान किया है वे आज भारत के नागरिक नहीं हो सकते। हमें बहुत कटु अनुभव हुआ है। हमने यह सब कुछ इसीलिये सहन किया कि कम से कम शेष भारत में, जो आज हमारे अधिकार में है, हम बिना धार्मिक बातों से अड़ंगा डाले हुये एक प्रजातंत्रात्मक पार्थिव राज्य की स्थापना कर सकेंगे। धर्म एक व्यक्तिगत चीज है। अंग्रेजों ने भले ही राजनैतिक स्वार्थ-साधन के हेतु धार्मिक भेदभाव से फायदा उठाया हो, परन्तु आज के भारत में इन बातों के लिये कोई स्थान नहीं है। श्रीमान्, हमें जिस समस्या को हल करना है वह धार्मिक आधार पर निर्मित अल्पसंख्यकों या बहुसंख्यकों की समस्या नहीं है। हमें देश के एक बहुत बड़े बहुसंख्यक समुदाय की समस्या हल करनी है, चाहे उसके लोगों का धर्म जो कुछ भी हो—वह बहुसंख्यक समुदाय जो आज दिन अज्ञान, रोग, क्षुधा तथा दरिद्रता से पीड़ित है—वह पिछड़ा हुआ समुदाय जो वास्तव में बहुसंख्यक है; हमें उसकी समस्या पर विचार करना है। यदि हम इस सभा द्वारा स्वीकृत लक्ष्य-सम्बन्धी-प्रस्ताव और मौलिक अधिकारों को वास्तव में कार्यरूप में लाना चाहते हैं तो हमें इस समस्या को हल करना है। हम अब यह पसन्द नहीं करेंगे कि पृथक निर्वाचक-समूहों के लिये मांग करके या इसी प्रकार की छिपी हुई चालें चलकर मुख्य प्रश्न से हमें पराङ्मुख किया जाये। हम यह

[श्रीमती रेणुका रे]

आशा नहीं कर सकते कि जो लोग पिछड़े हुये हैं वे समान अधिकार लेकर अन्य नागरिकों की तरह सभी कार्यों में भाग लें, जब तक कि हम उन्हें अपने अधिकारों का उत्तरदायित्व समझाने के लिये कार्यवाही न करें। निस्संदेह उन्हें उन्नत बनाने के लिये हमें यथाशक्ति प्रयत्न करना चाहिये और इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये अपने सभी साधनों का उपयोग करना चाहिये तथा विधान में भी इस प्रकार की व्यवस्था करनी चाहिये; परन्तु धार्मिक आधार पर पृथक होने की मनोवृत्ति को मेरे विचार से अब हम सहन नहीं कर सकते। हमने हिन्दुओं के प्रभुत्व का कभी समर्थन नहीं किया और न अब ही करते हैं। हम नहीं चाहते कि हिन्दू धार्मिक समुदाय के रूप में किसी के हितों को हानि पहुंचायें। परन्तु हम यह अवश्य ही चाहते हैं कि भारतवर्ष का हित सर्वोच्च हित समझा जायेगा और उसके साधन के मार्ग में किसी जाति-विशेष के हित बाधा न पहुंचायें, चाहे वे बहुसंख्यक जाति के हित हों या किसी अल्पसंख्यक धर्म-समुदाय के। श्रीमान्, मुझे आशा है कि यह सभा इस संशोधन को अस्वीकार कर देगी और यह अनुभव करेगी कि हम अपने वास्तविक प्रश्नों को ही हल करके उन्नति कर सकते हैं और अन्य राष्ट्रों के बीच भारत को उपयुक्त स्थान प्राप्त करा सकते हैं, ताकि अपने यहां स्थान पाई हुई विभिन्न संस्कृतियों से सम्मिलित अपनी सांस्कृतिक परम्परा का अवलम्बन करके हम सारे संसार की समुन्नति में प्रभावपूर्ण भाग ले सकें।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मि. इब्राहीम ने जो संशोधन पेश किया है उससे कुछ हलचल पैदा हो गई है। मैं यह कहूंगा कि अच्छा तो यह होगा कि हम उस पर व्यावहारिक दृष्टिकोण से विचार करें। पश्चिमी बंगाल की जो महिला महोदया अभी बोलीं, उन्होंने जिस सुन्दर आदर्शवाद को व्यक्त किया उसकी मैं प्रशंसा करता हूं। मैं उनकी तरह ओजस्वी तथा चित्ताकर्षक भाषण देने की आकांक्षा नहीं कर सकता। मेरे विचार से आदर्शवादी होना तो अच्छा है ही, परन्तु यथार्थवादी होना अधिक लाभदायक है। इस समय जो परिस्थिति है उसे मैं किसी प्रकार पसन्द नहीं करता। मैं यह नहीं चाहता कि हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच किसी प्रकार का भेदभाव हो। मेरा यह विश्वास है कि उच्च वर्गों के बीच श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करने में कोई भेदभाव नहीं रहता। परन्तु आखिर हमारे समाज में ऐसे लोग हैं जो आदर्शवादी नहीं हैं—ऐसे भी लोग हैं जिनका साम्प्रदायिक दृष्टिकोण है। हम यह देखते हैं कि चुनावों में इसका स्पष्ट उदाहरण मिलता है। अनुभवी लोगों का यह विचार है कि म्युनिसिपैलिटियों के वे दूसरे चुनावों में जिनके लिये संयुक्त निर्वाचक-समूहों की व्यवस्था है, बहुत काल से चुनाव साम्प्रदायिक आधार पर लड़े जाते रहे हैं। मैं यह कह चुका हूं कि मुझे यह पसन्द नहीं है और कोई भी

समझदार आदमी इसे पसन्द नहीं कर सकता है। परन्तु परिस्थिति पर जैसा कि मैंने कहा है व्यावहारिक दृष्टि से विचार करना चाहिये और हर-एक चीज को ठीक-ठीक समझना चाहिये। भारतवर्ष में बहुसंख्यक जाति की जनसंख्या कितनी प्रतिशत है? वह लगभग 75 प्रतिशत है और मुसलमानों की जनसंख्या लगभग 25 प्रतिशत होगी। इस बहुत बड़े अन्तर का अनुभव कराने के लिये मैं यहां के एक सुविख्यात अखबार में निकले हुये एक व्यंग्य-चित्र का वर्णन करूंगा जिसमें प्रख्यात व्यंग्य-चित्र-कलाकार शंकर ने इस सभा में वृहत् हिन्दू जाति या मुसलमानों के प्रति जो रुख है उसे चित्रित किया है। उसने वृहत् हिन्दू जाति को एक हाथी के रूप में उपस्थित किया है जिसका रुख प्रेमपूर्ण है और वह मुस्लिम जाति को चौधरी खलीकुज्जमा की शक्ल के एक कमजोर बालक के रूप में बड़े दुलार से लपेटे हुये है। इसमें मुझे, निस्सन्देह व्यंग्य-चित्र-कलाकार की दृष्टि से, हिन्दुओं की तुलना में मुसलमानों का चित्र मिलता है। इस संशोधन द्वारा जो प्रार्थना की गई है, क्योंकि मैं उसे कोई मांग नहीं कहता, क्या प्रभाव हुआ है? वह यह है कि हिन्दू जाति ने, जिसका सामूहिक स्वरूप एक बड़े भाई का स्वरूप है, उदारता से दस वर्ष के लिये प्रतिनिधियों के लिये जगहें सुरक्षित कर दी हैं और मेरे विचार से यह पर्याप्त समय है। मुझे तो इसका अर्थ यह प्रतीत होता है कि इस दस वर्ष के समय में महान् हिन्दू जाति मुस्लिम जाति की कठिनाइयों और शिकायतों पर, चाहे वे न्यायोचित हों या न हों, विचार करने के लिये तैयार है। इस 30 प्रतिशत की सीमा के अन्दर कुछ मुसलमान सदस्यों के लिये जगहें सुरक्षित रखने का अर्थ यह है कि धारा-सभा में 25 प्रतिशत मुसलमान आ जायेंगे। कमजोर छोटा भाई अपने बड़े हाथी भाई से किस तरह की बातें कहेगा। उसकी प्रार्थना किस प्रकार की होगी? वह एक अपील होगी। यदि बड़ा भाई छोटे भाई की शिकायतों को सुनेगा तो इन दस वर्षों के समय में इसमें कोई हानि नहीं होगी। ये कठिनाइयां और शिकायतें वास्तविक नहीं हो सकती हैं या बढ़ा-चढ़ाकर कही जा सकती हैं और इसका और कोई कारण न होकर केवल भय और सन्देह हो सकता है। परन्तु मैं नम्रता से पूछता हूं कि इसका क्या प्रभाव होगा—इसका कौन सा भयोत्पादक परिणाम होगा? यदि प्रार्थना तर्कसंगत होगी तो बड़ा भाई अर्थात् स्नेहपूर्ण हाथी उसे स्वीकार कर लेगा और यदि वह तर्कसंगत न होगी तो उसे अस्वीकार कर देगा। केवल यही होगा और कुछ नहीं। मेरे विचार से इस संशोधन को स्वीकार करने का कोई ऐसा भयोत्पादक परिणाम नहीं होगा जिसके बारे में विश्वासपूर्वक भविष्यवाणी की जा रही है। श्रीमान्, मैं फिर यह कहता हूं कि यह इस वृहत् सभा के स्वरूप में अपने बड़े भाई से छोटे भाई की प्रार्थना मात्र है।

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

मैं यह जानता हूं कि इसका निर्णय पूर्वनिश्चित है। यह संशोधन और इसके समर्थन में दिये हुये भाषणों से मुझे उस वकील के तर्क का स्मरण हो जाता है, जो यह अच्छी तरह जानता है कि न्यायाधीश ने फैसला पहले से लिख लिया है और वह उसका तर्क समाप्त होने पर ही सुना दिया जायेगा। इसके बाद जो मतदान होगा उसका नतीजा हम सभी को मालूम है। परन्तु मुझे आशा है कि यदि हमारा संशोधन गिर भी जाये, तो छोटा भाई बड़े भाई के स्नेह को तो न खो बैठेगा।

*__अध्यक्षः__ मेरे पास कई सदस्यों से इस विषय पर बोलने के बारे में पर्चियां आई हैं और मैं यह देखता हूं कि कई सदस्य खड़े भी हो रहे हैं; परन्तु...

*__एक माननीय सदस्यः__ अब बहस समाप्त की जाये।

*__अध्यक्षः__ मेरा भी यह विचार है कि अब काफी बहस हो चुकी है और इसलिये मैं बहस समाप्त करने का प्रस्ताव सभा के सामने रखना चाहता हूं। प्रस्ताव यह है कि यह प्रस्ताव सभा के सामने रखा जाये।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्षः__ माननीय प्रस्तावक महोदय अब उत्तर दे सकते हैं।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः__ श्रीमान्, मुझे खेद है कि इस संशोधन पर इतना समय लग गया है, क्योंकि मैं यह समझता था कि वह वापस ले लिया जायेगा और उस पर अधिक वाद-विवाद न होगा। जहां तक परिगणित जातियों का सम्बन्ध है, मेरे विचार से इस संशोधन के विषय में कुछ अधिक कहने की आवश्यकता है, क्योंकि इस सभा में एक या दो या तीन सदस्यों को छोड़कर उनके सदस्यों के एक बहुसंख्यक समुदाय ने मेरे सम्मुख यह मत प्रकट किया कि वे सब इस संशोधन के विरोध में हैं (*वाह, वाह*) और श्री नागप्पा को इसका ज्ञान था। परन्तु श्री नागप्पा इस उद्देश्य से अपना संशोधन पेश करना चाहते थे कि उन्हें अपना वचन पूरा करना है या कम से कम अपनी जाति को यह दिखाना चाहते थे कि उन्होंने बहुसंख्यक जाति के हाथ अपने को बेच नहीं दिया है। उन्होंने अपना काम पूरा किया, परन्तु अन्य लोगों ने उनकी बातों पर गम्भीरता से विचार किया और बहुत-सा समय ले लिया।

जहां तक मुस्लिम लीग के प्रतिनिधियों द्वारा पेश किये हुये संशोधन का सम्बन्ध है, मुझे यह जान पड़ता है कि मेरी धारणा भ्रमपूर्ण थी। यदि मुझे यह मालूम

होता तो मैं निश्चित रूप से किसी प्रकार के संरक्षण के लिये सहमत न होता (*वाह, वाह*)। जब मैं आबादी के आधार पर जगहें सुरक्षित रखने के लिये सहमत हुआ तो मैं इसी ख्याल से राजी हुआ कि मुस्लिम लीग के हमारे मित्र यह समझेंगे कि हमारा दृष्टिकोण कितना तर्कपूर्ण है और देश के विभाजन के उपरांत बदली हुई परिस्थिति के अनुरूप आचरण करेंगे। परन्तु अब मैं यह देखता हूं कि वे उन्हीं तरीकों को अपना रहे हैं जिन्हें उन्होंने उस समय अपनाया था जब कि इस देश में पहले पहल पृथक निर्वाचक-मण्डल जारी किये गये थे। यद्यपि उन्होंने बड़ी मीठी भाषा का प्रयोग किया है, परन्तु जो ढंग उन्होंने अपनाया है वह पर्याप्त मात्रा में विषाक्त है। इसलिये मुझे खेद है कि यद्यपि छोटे भाई का मुझसे प्रेम न रहे परन्तु मैं इसके लिये तैयार हूं, क्योंकि जो तरीका वह अपनाना चाहता है उससे उसकी मृत्यु ही हो जायेगी। उसका प्रेम हो या न हो परन्तु मैं उसे जीवित रखना चाहता हूं। यदि यह संशोधन गिर गया तो छोटे भाई का प्रेमभाव भी न रह जायेगा। परन्तु मैं यह चाहता हूं कि छोटा भाई जीवित रहे ताकि वह यह देख सके कि बड़े भाई का दृष्टिकोण कितना बुद्धिमत्तापूर्ण है और फिर भी उससे प्रेम करना सीखे।

इस युक्ति के पीछे एक इतिहास है और जो लोग कांग्रेस में हैं उनको वह इतिहास स्मरण है। कांग्रेस के इतिहास में यह मुहम्मद अली की युक्ति के नाम से प्रख्यात है। पृथक निर्वाचक-मण्डलों के इस देश में प्रयोग में आने के उपरान्त मुसलमानों के दो दल रहे हैं—एक राष्ट्रीय मुसलमानों अर्थात् कांग्रेसी मुसलमानों का दल रहा है और दूसरा मुस्लिम लीग का अर्थात् मुस्लिम लीग के प्रतिनिधियों का दल रहा है। इस सम्बन्ध में काफी तनातनी रही है और एक समय अधिकतर लोग संयुक्त-निर्वाचन-प्रणाली के विरुद्ध हो गये। परन्तु एक समय ऐसा आया, जैसा कि संशोधनकर्ता महोदय ने बताया है कि इलाहाबाद में समझौता हो गया। किन्तु क्या हमने उस समझौते को माना? जी नहीं। आज हमारा देश विभाजित हो गया है। देश का विभाजन रोकने के लिए राष्ट्रीय मुसलमानों ने एक मध्यम मार्ग के रूप में यह युक्ति निकाली जो देश में एकता स्थापित होने तक प्रयोग में रहती, क्योंकि हमारा विचार था कि हम बाद को उसे त्याग देंगे, परन्तु अब देश का विभाजन पूर्ण रूप से हो गया है फिर भी आप कहते हैं कि हम उसी ढंग को फिर अपनायेंगे और एक बार फिर विभाजन करेंगे। प्रेम की यह परिपाटी मेरी समझ में नहीं आती। इसलिये यद्यपि मैं इस प्रस्ताव पर कुछ नहीं कहना चाहता था, परन्तु यह अच्छा ही होगा कि हम एक दूसरे की विचारधारा ठीक-ठीक समझ लें, ताकि हम यह जान सकें कि हम किस स्थिति में हैं। यदि वही ढंग फिर

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

अपनाया गया जो देश के विभाजन के लिये अपनाया गया था, तो मैं यह कहूंगा कि जो लोग इस तरह की बातें चाहते हैं उनके लिये पाकिस्तान में जगह है, यहां नहीं (*हर्ष ध्वनि*)। यहां हम एक राष्ट्र का निर्माण कर रहे हैं और एक ही राष्ट्र की नींव डाल रहे हैं और जो लोग फिर विभाजन करना चाहेंगे और फूट के बीज बोना चाहेंगे उनके लिये यहां कोई जगह नहीं रहेगी। मैं इसे साफ-साफ बता देना चाहता हूं (*वाह, वाह*)। अब यदि आपका यह विचार है कि संरक्षण का अवश्य ही वह अर्थ है जो आपके प्रस्ताविक खण्ड से अभिप्रेत है तो मैं इस संरक्षण को आप ही के फायदे के लिये वापस लेने के लिये तैयार हूं। यदि आप इससे सहमत हैं तो मैं इसके लिये तैयार हूं और मुझे इसका विश्वास है कि यदि आपको इससे सन्तोष होता हो तो इस सभा में कोई भी व्यक्ति इस संरक्षण के वापस लेने के विरोध में न होगा (*हर्ष ध्वनि*)। आप दोनों तरफ से फायदा नहीं उठा सकते। इसलिये मेरे मित्रों, आपको अपना रुख बदलना चाहिये और बदली हुई दशाओं के अनुसार आचरण करना चाहिये। इस प्रकार की बनावटी बातें न कहिये कि ''हमारा तो आपके लिये अत्यन्त प्रेमभाव है,'' हमने आपके प्रेमभाव को देख लिया है। उसकी चर्चा ही क्यों की जाये? हमें इस प्रेमभाव को भूल जाना चाहिये। हमें वास्तविकता का सामना करना चाहिये। आप अपने से पूछिये कि आप वास्तव में यहां रहकर हमसे सहयोग करना चाहते हैं कि नहीं, या आप फिर फूट के बीज बोने के उपाय काम में लाना चाहते हैं। इसलिये मेरी आपसे यह अपील है और यही अपील है कि आप अपने दिल को बदलिये और सिर्फ जबान ही को न बदलिये, क्योंकि उससे यहां कोई फायदा न होगा। इसलिये मैं आपसे फिर अपील करता हूं, ''मित्रों, आप अपने रुख पर फिर विचार कीजिये और अपने संशोधन को वापस ले लीजिये।'' आप यही क्यों कहते जाते हैं कि ''मुसलमानों की कोई सुनवाई नहीं हुई और मुसलमानों की भावना का आदर नहीं किया गया।'' यदि आप समझते हैं कि इससे आपको कोई फायदा होगा तो आप बहुत गलती पर हैं, क्योंकि मैं जानता हूं कि वर्तमान परिस्थिति में और वर्तमान वातावरण में मुसलमान अल्पसंख्यकों की रक्षा करने में मुझे कितना परिश्रम करना पड़ता है। इसलिये मैं यह राय देता हूं कि आप यह न भूलिये कि अब वह दिन नहीं रह गये हैं जब इस प्रकार का आन्दोलन चलाया गया था और अब हम एक नये युग में प्रवेश कर रहे हैं। इसलिये मैं आपसे फिर अपील करता हूं कि आप अतीत काल को भूल जाइये। जो कुछ हुआ है उसे भूल जाइये। आप जो चाहते थे वह आपको मिल गया है। आपका एक अलग राज्य हो गया

है और इसे याद रखिये, आप ही लोग और न कि पाकिस्तान में रहने वाले लोग उसके लिये जिम्मेदार हैं। आप ही ने आन्दोलन चलाया। आपकी इच्छा पूरी हो गई। अब आप क्या चाहते हैं मेरी समझ में नहीं आता। हिन्दू बहुसंख्यक प्रान्तों में आप ही अल्पसंख्यकों ने आन्दोलन चलाया। आपने देश का विभाजन करा दिया और अब फिर आप मुझसे कहते हैं कि कम से कम छोटे भाई का प्रेम प्राप्त करने के लिये मुझे फिर उसी बात के लिये राजी हो जाना चाहिये, यानी विभाजित भाग का भी फिर विभाजन करना चाहिये। खुदा के लिये यह तो समझिये कि हम भी कुछ समझते हैं। हमें इस चीज को साफ-साफ समझ लेना चाहिये। इसलिये जब मैं यह कहता हूं कि हमें अतीत काल को भूल जाना चाहिये तो मैं यह सच्चे दिल से कहता हूं। आपके लिये कोई अन्याय न होगा। आपके प्रति उदारता दिखाई जायेगी, परन्तु आपकी तरफ से भी यही होना चाहिये। यदि यह न होगा तो आप यह समझ लीजिये कि चाहे कितने ही मीठे शब्द काम में लायें, आप अपने उद्देश्य को न छिपा सकेंगे। इसलिये मैं साफ शब्दों में आपसे यह जोरदार अपील करना चाहता हूं कि हमें अतीत को भूल जाना चाहिये और एक ही राष्ट्र के लोग हो जाना चाहिये।

परिगणित जातियों के मित्रों से भी मैं यह अपील करता हूं कि हमें डा. अम्बेडकर या उनके दल ने जो कुछ किया उसे भूल जाना चाहिये। आपने जो कुछ किया उसे हमें भूल जाना चाहिये। आपकी विचारधारा के अनुसार भी देश का विभाजन होते-होते बच गया और उसके कुफल से आप बच गये। बम्बई में आपने पृथक निर्वाचन-क्षेत्रों के परिणाम को देखा है। जब आपकी जाति का सबसे बड़ा हितैषी बम्बई पधारा और भंगियों की बस्ती में ठहरने के लिये गया तो आप ही के लोगों ने उनके निवासगृह पर पत्थर मारे। वह सब क्या था? वह इसी विष का परिणाम था। मैं इसीलिये इसका विरोध कर रहा हूं कि हिंदुओं में से बहुसंख्यक लोग आपका हित चाहते हैं। उनके बिना आपका क्या हाल होगा? इसलिये उनके विश्वासभाजन बनिये और यह भूल जाइये कि आप परिगणित जातियों के लोग हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि श्री खांडेकर किस प्रकार परिगणित जाति के आदमी हैं। यदि वे और मैं दोनों हिन्दुस्तान के बाहर जायें तो कोई भी यह नहीं कह सकेगा कि वे परिगणित जाति के आदमी हैं या मैं। हमारे बीच में कोई परिगणित जाति नहीं है। इसलिये परिगणित जाति के उन सदस्यों को समझना चाहिये कि हमारे समाज से परिगणित जाति को बिल्कुल मिटाना है और यदि उसे मिटाना ही है तो वे लोग जो अछूत नहीं रह गये हैं और हमारे बीच बैठते हैं,

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

उन्हें यह भूलना है कि वे अछूत हैं वरना यदि उनमें यह निम्न भाव बना रहा तो वे अपनी जाति की सेवा न कर सकेंगे। वे अपनी जाति की सेवा केवल इसी प्रकार कर सकते हैं कि अब वे यह अनुभव करें कि वे हमारे साथ हैं। वे अब परिगणित जाति के लोग नहीं रह गये हैं और इसलिये उन्हें अपने व्यवहार को बदल देना चाहिये और मैं उनसे अपील करता हूं कि वे अपने और परिगणित जातियों के दूसरे दल के बीच में जो कुछ भी भेदभाव हो उसे मिटा दें। उनके बीच में दलबन्दी है। परन्तु प्रत्येक व्यक्ति अपने ही प्रकाश से परिश्रम करता है। हमें एक नया अध्याय आरम्भ करना है। इसलिये हमें इन वर्गों और उपवर्गों को भूल जाना चाहिये और हम सबको मिल जुलकर एकनिष्ठ हो जाना चाहिये।

***अध्यक्षः** मुझे पहले श्री नागप्पा के संशोधन को सभा के सामने रखना है।

***श्री एस. नागप्पाः** मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं देता। मैं उसे वापस लेता हूं।

***अध्यक्षः** क्या सभा उन्हें अपना संशोधन वापस लेने की आज्ञा देती है?

***माननीय सदस्यः** जी, हां।

संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।

***अध्यक्षः** अब श्री अहमद इब्राहीम बहादुर का संशोधन रह गया है जो इस प्रकार है:

''अल्पसंख्यकों के मौलिक अधिकारों इत्यादि से सम्बन्धित सलाहकार कमेटी की अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रिपोर्ट पर विचार करने पर विधान-परिषद् की यह बैठक यह निश्चय करती है कि यदि केन्द्रीय और प्रांतीय धारा-सभाओं के चुनाव सभी जातियों के संयुक्त निर्वाचक-समूहों के आधार पर किये जायें और अल्पसंख्यकों के लिये जगहें सुरक्षित रखी जायें तो चुनाव निम्नलिखित आधार पर किया जाना चाहियेः

उन उम्मीदवारों में से जिन्होंने अपनी ही जाति को दी हुई वोटों की 30 प्रतिशत वोट प्राप्त की हों, वह उम्मीदवार जिसने निर्वाचकों को संयुक्त सूची में से सबसे अधिक वोट पाई हों निर्वाचित घोषित

किया जायेगा, उस दशा में जब कि कोई भी ऐसा उम्मीदवार न हो, जिसने अपनी जाति द्वारा दी हुई वोटो में से 30 प्रतिशत से कम वोट प्राप्त न की हों तो उन दो उम्मीदवारों में से जिन्होंने अपनी जाति के लोगों द्वारा दी हुई वोटों में से सबसे अधिक वोट पाई हों, वह उम्मीदवार निर्वाचित घोषित किया जायेगा जिसने कुल वोटों में से सबसे अधिक वोट प्राप्त की हों।''

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** अब मैं मूल खण्ड 6 को सभा के सामने रखता हूं।

खण्ड 6 स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 7

***अध्यक्षः** अब हम खण्ड 7 पर विचार करेंगे।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं यह पेश करता हूंः

''7. मतदान की प्रणाली–निर्वाचन-क्षेत्रों के एक से अधिक सदस्य हो सकते हैं, परन्तु इकट्ठा वोट देने की आज्ञा नहीं होगी।''

एक संशोधन इस आशय का है कि इस प्रस्ताव को नकार में रखने के बजाये इसे निश्चात्मक रूप में रखा जाना चाहिये, अर्थात् यह कि 'मतदान वितरणशील होगा'। वह संशोधन नियमित रूप से पेश होगा और मेरा यह विचार है कि मैं उसे स्वीकार कर लूंगा। परन्तु मैं इस सभा के माननीय सदस्यों के सम्मुख यह सुझाव रखता हूं कि आज सभा स्थगित करने के पहले हमें इस रिपोर्ट को समाप्त कर देना चाहिये। इसलिये चूंकि इस रिपोर्ट पर पूर्णतया विचार किया जा चुका है और मुख्य-मुख्य बातों को स्वीकार कर लिया गया है। मैं आशा करता हूं कि यदि कोई संशोधन पेश किये जायेंगे तो उन पर लम्बे व्याख्यान न दिये जायेंगे और हम समय नष्ट न करेंगे। मैं इस खण्ड को सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** दो संशोधन हैं, एक श्री केशवराव ने पेश किया है और दूसरा श्री मलिक ने।

(श्री केशवराव और श्री मलिक ने अपने संशोधन पेश नहीं किये)

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मैं यह चाहता हूं कि आप मुझे अपने संशोधन का केवल भाग 2 पेश करने की आज्ञा दें। मैं भाग 1 पेश नहीं करना चाहता। मेरा संशोधन इस प्रकार है:

> **''मतदान वितरणशील होगा, अर्थात् प्रत्येक मतदाता को उतनी ही वोट देने का अधिकार होगा जितने कि सदस्य हों और उसे एक उम्मीदवार को केवल एक वोट देनी चाहिए।''**

यह संशोधन आवश्यक है क्योंकि मैं चाहता हूं कि संयुक्त निर्वाचक-समूहों की प्रणाली से, जिसे कि हमने स्वीकार कर लिया है, हम अधिक से अधिक लाभ उठायें। जब तक कि प्रत्येक उम्मीदवार के लिये यह आवश्यक न हो जाये कि वह निर्वाचकों के प्रत्येक वर्ग से परिचित हो और एक वर्ग की ओर विशेष ध्यान दे, तब तक पृथक निर्वाचक समूहों की विभीषिका उपस्थित ही रहेगी। मेरे संशोधन का प्रभाव यह होगा कि यदि कोई परिगणित जाति का उम्मीदवार होगा तो वह यह नहीं कह सकेगा कि मैं केवल परिगणित जाति के लोगों की वोटों को इकट्ठा करना चाहता हूं और एक ईसाई उम्मीदवार यह न कह सकेगा कि मैं केवल ईसाइयों की वोटों को इकट्ठा करना चाहता हूं। प्रत्येक उम्मीदवार को प्रत्येक वर्ग के प्रत्येक आदमी से वोट की आकांक्षा करनी होगी। इस सम्बन्ध में अब अधिक न कहकर मैं अपना संशोधन पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** क्या कोई सदस्य कुछ कहना चाहते हैं?

***श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया** (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम से जो संशोधन है वह इस प्रकार है:

> **''(1) इसकी व्यवस्था की जाये कि सभी चुनाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर एकाकी हस्तांतरित मत पद्धति के अनुसार किये जायें।**
>
> **(2) यदि उपरोक्त प्रणाली स्वीकार न की जाये, तो एकाकी हस्तान्तरित मत पद्धति की व्यवस्था की जाये।''**

रिपोर्ट के पैरा 12 में और तदनुसार परिशिष्ट के पैरा 7 में यह कहा गया है कि केन्द्रीय और प्रान्तीय धारा-सभाओं के चुनावों में इकट्ठा वोट देने की प्रणाली को प्रयोग में लाने की आज्ञा न दी जानी चाहिये, परन्तु जैसा कि सरदार पटेल जी बता चुके हैं, रिपोर्ट में इस सम्बन्ध में कोई निश्चित सुझाव नहीं है कि मतदान

किस प्रणाली से लिया जाये। इस कमी को पूरा करने के लिये श्री सन्तानम् ने इस आशय का एक संशोधन पेश किया है कि नये विधान के अन्तर्गत सभी चुनावों में अनिवार्य रूप से वितरणशील मतदान की प्रणाली स्वीकार की जाये। श्रीमान्, अपने संशोधन पर बोलने के पूर्व जिस प्रणली का सुझाव किया गया है, उसके सम्बन्ध में मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। इस इकट्ठा वोट देने की प्रणाली के अनुसार प्रत्येक मतदाता जितनी जगहें खाली हों उतनी वोट दे सकता है, परन्तु उसे अनिवार्य रूप से एक उम्मीदवार को एक ही वोट देनी होती है। कुछ देशों में यह प्रणाली प्रचलित है, परन्तु उसके प्रयोग में आने से उसके कई दोष प्रकट हो गये हैं और इसीलिये कई दार्शनिक और राजनीतिज्ञ उसके विरोधी होते जा रहे हैं, जैसा कि उनके लेखों से ज्ञात होता है। इस प्रणाली के अनुसार केवल बहुसंख्यक दल ही चुनावों में पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकता है। इसके स्पष्टीकरण के लिये मैं एक उदाहरण दूंगा। मान लीजिये कि किसी निर्वाचक-समूह के अधिकार में 100 वोट हैं और यदि किसी दल को 51 वोट प्राप्त हैं तो वह चुनाव में अपने सभी उम्मीदवारों को जिता सकता है और कोई भी दूसरा दल, चाहे उसे 49 वोट प्राप्त हों, नहीं जीत सकता है। इस प्रकार इस प्रणाली से केवल एक ही दल विजयी हो सकता है, और एक ही दल धारा-सभा में आ सकता है, जिससे वह न तो राष्ट्रीय ही कही जा सकती है और न उसमें देश के महत्वपूर्ण हितों और वर्गों का प्रतिनिधित्व ही हो सकता है। हम सभी जानते हैं कि आधुनिक प्रजातन्त्र प्रतिनिधित्व के आधार पर खड़ा है जिसका अर्थ यह है कि हमारी धारा-सभाओं में देश के लोकमत का लोक प्रतिनिधियों द्वारा पूर्ण प्रदर्शन होना चाहिये। इसलिये प्रस्तावित प्रणाली पर गम्भीर आपत्ति की जा सकती है।

इस प्रणाली के दोषों को दूर करने के लिये इस खण्ड में किसी प्रकार की आनुपातिक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था करना बहुत आवश्यक है, चाहे वह संक्राम्य मतदान द्वारा हो या असंक्राम्य मतदान द्वारा। मैं इन प्रणालियों का विस्तृत रूप से वर्णन नहीं करूंगा परन्तु इतना अवश्य कहूंगा कि इन दोनों का आधार वैज्ञानिक है और इनका आकार प्रसारशील है, तथा इनके द्वारा बहुसंख्यकों व अल्पसंख्यकों को उनके मतदाताओं की संख्या के अनुपात में ही प्रतिनिधित्व मिल जाता है। वास्तव में मेरा अपना विचार यह है कि जितनी जल्दी यह साम्प्रदायिकता हमारी राजनीति से निकल जाये उतनी ही जल्दी हमारे देश का हित होगा। परन्तु जब तक साम्प्रदायिक आधार पर अल्पसंख्यक बने हुये हैं तब तक वे उस प्रणाली से भी लाभ उठायेंगे जिसका कि मैं प्रस्ताव कर रहा हूं। जिन अल्पसंख्यकों को

[श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया]

मैंने दृष्टि में रखा है उनका राजनैतिक, आर्थिक तथा प्रादेशिक आधार है। मेरे हृदय में तो यह विचार उठता है कि उपयुक्त तो यह होता कि मतदान की इस प्रथा पर अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रिपोर्ट के सिलसिले में विचार करने के बजाये संघीय विधान-कमेटी की रिपोर्ट के सिलसिले में विचार किया जाता; क्योंकि यह धारा-सभा में प्रतिनिधित्व सम्बन्धी एक आम विषय है, चाहे अल्पसंख्यक समुदाय किसी प्रकार का भी क्यों न हो, उसे धारा-सभा में उपयुक्त स्थान मिलना चाहिये। कई देशों में यह प्रणाली प्रचलित है। उदाहरणार्थ इंग्लैण्ड में ब्रिटिश पार्लियामेंट के लिये कुछ विश्वविद्यालयों से प्रतिनिधि अनुपाती प्रतिनिधित्व के आधार पर चुने जाते हैं। उत्तरी आयरलैंड में व्यवस्थापिका की दोनों सभाओं के लिये प्रतिनिधि इसी प्रणाली के अनुसार चुने जाते हैं। भारत में भी कुछ चुनावों के सिलसिले में हम इस प्रणाली से परिचित हैं और मुझे बताया गया है कि इस सभा में भी प्रान्तीय धारा-सभाओं से जो सदस्य लिये गये वे अनुपाती प्रतिनिधित्व के आधार पर एकल संक्राम्य मतपद्धति द्वारा लिये गये। इसलिये एक ऐसी प्रणाली जो न्यायोचित है और सभी के प्रति न्यायकारी है, तथा सभी अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक समुदायों को अपने-अपने मतदाताओं की संख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व प्रदान करती है और धारा-सभा में सभी राष्ट्रीय हितों का प्रतिनिधित्व कराती है, वास्तव में स्वीकार करने योग्य है। इस पर केवल यही आपत्ति की जा सकती है कि यह थोड़ी बहुत पेचीदा प्रणाली है। चूंकि हम इस समय प्रजातन्त्र के सम्बन्ध में महान् प्रयोग कर रहे हैं, इसलिये मेरे विचार से हमारे लिये कोई भी समस्या ऐसी न होनी चाहिये जिसे हम हल न कर सकें। हमारे देश में 90 प्रतिशत लोग निरक्षर होते हुये भी बिना किसी बड़ी कठिनाई के चुनाव हो रहे हैं और राजनैतिक संस्थाओं का संचालन हो रहा है। इसलिये मेरा विचार यह है कि जन साधारण निरक्षर होते हुये भी अनुपाती प्रतिनिधित्व की प्रणाली अच्छी प्रकार प्रयोग में आ सकती है।

यदि किसी कारण एकल संक्राम्य मतपद्धति अनुपयुक्त समझी जाये तो असंक्राम्य मतदान की दूसरी पद्धति की परख की जा सकती है। इसके अनुसार प्रत्येक मतदाता एक वोट दे सकता है चाहे कितनी ही जगहें खाली हों। इससे यह होगा कि 500 मतदाताओं के किसी निर्वाचन-क्षेत्र में केवल 500 वोट दी जायेंगी। यह प्रणाली पहली प्रणाली की अपेक्षा कम पेचीदा, अधिक सीधी-सादी और हमारे देश के लिये उपयुक्त है। इसमें इकट्ठा वोट देने की प्रणाली के कोई भी दोष न रह जायेंगे। क्योंकि यह राय दी गई है कि यथासम्भव छोटे भाषण दिये जायें, इसलिये

मैं सभा का अधिक समय नहीं लेना चाहता। इस उद्देश्य से कि धारा-सभा वास्तव में प्रजातन्त्रीय हो और उसमें देश के सभी महत्वपूर्ण हितों और वर्गों का प्रतिनिधित्व हो। मैं यह सिफारिश करता हूं कि यह सभा मेरे प्रस्ताव को कृपा करके स्वीकार कर ले।

श्री अजित प्रसाद जैन (संयुक्त प्रान्तः जनरल): श्रीमान् जी, पिछले दो तीन दिन से जो संशोधन पेश हुये हैं उनमें कितनों ही का मतलब यह है कि मुश्तरका चुनाव यानी ज्वाइंट एलेक्टोरेट का जो सिस्टम इस भवन में पेश है उसमें कुछ तब्दीली की जाये।

इस वक्त जो तजवीज रखी गयी है, उसका मतलब भी वही है। सिंगल ट्रान्स्फरेबल वोट के जरिये जो चुनाव होते हैं, उसमें कुछ छोटे-छोटे ग्रुप या कुछ छोटे-छोटे गिरोह बन जाते हैं और उनको इस बात का अख्तियार होता है कि वह अपने प्रतिनिधि चुन कर भेज सकें। पिछले तजुर्बे ने यह बताया है कि जहां-जहां प्रोपोर्शनल रिप्रेजेन्टेशन सिंगल ट्रान्स्फरेबल वोट का तरीका अख्तयार किया गया है वहां थोड़े से आदमी अपने नुमाइन्दे भेज सकते हैं। जहां मुसलमान या शेड्यूल्ड कास्ट के मेम्बर या दूसरे अल्पमत हैं वहां यह अख्तयार हो जायेगा। इस जरिये से कि वह खाली अपने ही वोट्स से अपने नुमाइन्दों को भेज सकें। इसके बर्खिलाफ मुश्तर्का चुनाव का जो तरीका रखा गया है, इसका मतलब यह है कि ज्यादा से ज्यादा आदमी हर एक नुमाइन्दे के चुनाव में भाग ले सकें। यानी कोई नुमाइन्दा मुसलमान हो तो उसके चुनाव में हिन्दू और मुसलमान दोनों हिस्सा लें और अगर हिन्दू हो तो उसे भी हिन्दू और मुसलमान दोनों मिलकर चुनें। लेकिन प्रोपोर्शनल रिप्रेजेन्टेशन सिंगल ट्रान्स्फरेबल वोट्स से यह बात बिल्कुल खत्म हो जाती है। क्योंकि उसमें थोड़े से मुसलमान अपने नुमाइन्दों को चुन सकते हैं और हिन्दू अपने नुमाइन्दे चुन सकते हैं। इसलिये जो मन्शा मुश्तर्का चुनाव का है वह इससे बिल्कुल खत्म हो जाता है।

इस संशोधन का दूसरा हिस्सा यह है कि एक आदमी का सिर्फ एक ही वोट होगा चाहे जितने नुमाइन्दे चुने जाने वाले हों। इसका भी मतलब वही हो जाता है कि मुसलमानों को या शेड्यूल्ड क्लास वालों को इस तरीके से अख्तयार हो जायेगा कि वह खाली अपनी राय से नुमाइन्दे चुन सकें। इसलिये इन दोनों तरमीमों का नतीजा यह होगा कि जो अलाहिदा चुनाव की बुराई को दूर करने की इस वक्त कोशिश की जा रही है वह दूसरे तरीके से फिर ज्यों की त्यों बनी रहेगी। अल्पमत वाले यानी शैड्यूल्ड क्लास या मुसलमान या दूसरी जो माइनोरटीज़ हैं,

[श्री अजित प्रसाद जैन]

उनको इस बात का मौका मिलेगा कि वह अपनी जाति के नाम पर अपील करके अपना चुनाव करा सकें और मुश्तर्का चुनाव के जरिये से जो फिजा पैदा करना हम चाहते हैं वह पैदा न हो सकेगी।

इसलिये मैं समझता हूं कि यह तरमीम इस किस्म की तरमीम है जो फिर देश में बंटवारा और चुनावों में गड़बड़ी पैदा करने वाली है, जिसमें वही फिर्केवाराना असर, वही साम्प्रदायिक भाव दुबारा फैलने का भय है, जिसने देश को इतनी हानि पहुंचाई है। मैं इस तरमीम की जो अभी आनरेबुल मेम्बर ने पेश की थी, मुखालिफत करता हूं, क्योंकि इससे हमारे मार्ग, हमारे काम में बहुत मुश्किल पहुंचने का डर है।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं नहीं समझता कि मुझे अब कुछ कहने की आवश्यकता है। श्री सन्तानम् ने जो संशोधन पेश किया है, उसे स्वीकार करने का मेरा इरादा है। जो दूसरा संशोधन पेश किया गया है वह हमारी वर्तमान परिस्थिति के उपयुक्त नहीं है क्योंकि अब हम प्रौढ़ मतगणना के आधार पर चुनाव करने का प्रयोग करने जा रहे हैं, जिससे करोड़ों निरक्षर लोग मतदाताओं की सूची में सम्मिलित हो जायेंगे। ऐसी दशा में जिस पेचीदी प्रणाली का सुझाव दिया गया है वह बहुत ही अनुपयुक्त होगी। इसलिये उसे स्वीकार करने का मेरा इरादा नहीं है। मैं उसका विरोध करता हूं और खण्ड को सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***अध्यक्षः** श्री सन्तानम् का जो संशोधन स्वीकार कर लिया गया है वह इस प्रकार है**:**

''मतदान वितरणशील होगा अर्थात् प्रत्येक मतदाता को उतनी ही वोट देने का अधिकार होगा, जितने कि सदस्य हों और एक उम्मीदवार को केवल एक वोट देनी चाहिए।''

मैं यह समझता हूं कि इसे स्थान दिया गया है...।

श्री के. सन्तानम्: इकट्ठा वोट देने के बारे में बाद के भाग की जगह इसको स्थान दिया गया है।

***अध्यक्षः** संशोधित पैराग्राफ 7 पर अब मतदान लेना है। प्रस्ताव यह है कि:

''निर्वाचन-क्षेत्रों के एक से अधिक सदस्य हो सकते हैं परन्तु मतदान वितरणशील होगा, अर्थात् प्रत्येक मतदाता को उतनी ही वोट देने का अधिकार होगा जितने कि सदस्य हों और एक उम्मीदवार को एक वोट देनी चाहिए।''

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 8

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** यह मद मंत्रिमंडलों में प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में है। मैं इसे पेश करता हूं:

''8. अल्पसंख्यकों के लिये कोई संरक्षण नहीं होगा। (क) मंत्रिमंडलों में अल्पसंख्यकों के लिये कानून द्वारा कोई जगहें सुरक्षित न रखी जायेंगी, परन्तु सन् 1935 ई. के भारत सरकार के कानून के अधीन गवर्नरों को जारी किये हुये आदेश-पत्र के पैराग्राफ 7 के अनुरूप एक प्रथा की व्यवस्था विधान के परिशिष्ट में की जायेगी।''

इसे सलाहकार समिति में सभी अल्पसंख्यकों तथा बहुसंख्यकों के सभी प्रतिनिधियों ने एकमत से स्वीकार किया था। मुझे आशा है कि सभा इसे स्वीकार कर लेगी। सन् 1935 ई. के भारत सरकार के कानून में जो आदेश है, यह बिल्कुल उसी की प्रतिलिपि है।

(सर्वश्री एस. नागप्पा, तजम्मुल हुसैन और वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***श्री डी.एच. चन्द्रशेखरियाः** अध्यक्ष महोदय, जो संशोधन मैं पेश करना चाहता हूं, वह इस प्रकार है:

''भारत सरकार के सन् 1935 ई. के कानून के अधीन प्रान्तों के गवर्नरों को जारी किये हुये आदेश-पत्र के पैराग्राफ 7 को, जिसका कि

[श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया]

अनुकरण करने का अब विचार है, इस प्रकार संशोधित किया जाये कि अन्य लोगों के साथ मंत्रिमंडल के लिये संघ में सम्मिलित रियासतों के प्रतिनिधि भी चुने जा सकें।''

साम्प्रदायिक आधार पर निर्मित अल्पसंख्यक समुदायों के सम्बन्ध में यह प्रस्ताव किया गया है कि आदेश-पत्र के पैरा 7 का अनुकरण किया जायेगा। जैसा कि मैं अन्य प्रसंग में कह चुका हूं कि मेरी दृष्टि में केवल वे अल्पसंख्यक समुदाय नहीं हैं, जिनका स्वरूप साम्प्रदायिक या धार्मिक है; बल्कि ऐसे अल्पसंख्यक समुदाय भी हैं जिनका आधार अन्य प्रकार का है।

***श्री के.एम. मुन्शीः** मुझे एक व्यवस्था सम्बन्धी आपत्ति करनी है। यह अल्पसंख्यकों की कमेटी की रिपोर्ट है और हम केवल अल्पसंख्यकों पर विचार कर रहे हैं, न कि रियासतों पर।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** रियासतें बहुसंख्यक हैं। रियासतें तो 500 हैं और हमारा तो केवल एक ही राज्य है।

***श्री डी.एच. चन्द्रशेखरियाः** क्या इस व्यवस्था-सम्बन्धी आपत्ति के बारे में मैं एक शब्द कह सकता हूं? अल्पसंख्यकों की कमेटी की रिपोर्ट में इसका उल्लेख नहीं है कि उसमें किस प्रकार के अल्पसंख्यकों का वर्णन है। इससे किसी प्रकार के अल्पसंख्यक समुदाय का बोध हो सकता है।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** आपका समुदाय तो बहुसंख्यक है।

***अध्यक्षः** वास्तव में आप अल्पसंख्यकों के रूप में रियासतों के प्रश्न को यहां नहीं उठा सकते। अल्पसंख्यक का अर्थ साधारणतया साम्प्रदायिक अल्पसंख्यक या सांस्कृतिक अल्पसंख्यक या जातीय अल्पसंख्यक होता है ।

***श्री डी.एच. चन्द्रशेखरियाः** यदि इस रिपोर्ट में केवल साम्प्रदायिक अल्पसंख्यकों का उल्लेख है तो मुझे अधिक कुछ नहीं कहना है।

***अध्यक्षः** सारी रिपोर्ट अल्पसंख्यकों के बारे में है और इसका वर्णन आप परिशिष्ट में पायेंगे। रिपोर्ट में जिन साम्प्रदायिक अल्पसंख्यकों का उल्लेख है, उनके अतिरिक्त अन्य कोई अल्पसंख्यकों का प्रश्न नहीं उठता।

***मौलाना हसरत मोहानीः** आप अपनी जनसंख्या के अनुपात के बारे में सोच रहे हैं। इसका अर्थ यह है कि हम जातियों और राष्ट्रों की कल्पना कर रहे हैं। क्या आप किसी राजनैतिक दल के बारे में नहीं सोच सकते? इसलिये मैं यह आपत्ति करता हूं कि अल्पसंख्यकों के बारे में यह सारी रिपोर्ट एक गलत सिद्धान्त पर आधारित है। इसमें राजनैतिक दलों का उल्लेख होना चाहिये और उन दलों का उल्लेख न होना चाहिये जिनका आधार धर्म है। यह सारी रिपोर्ट बेकार है। इन सब संशोधनों पर विचार करके आप अपनी शक्ति व अपना समय नष्ट कर रहे हैं। जब आप इस रिपोर्ट को इसके अन्तिम रूप में सभा के सामने रखेंगे तो मैं यह आपत्ति करूंगा। श्रीमान्, मैं तो यह कहता हूं कि यह सारी की सारी फिजूल और बहुत ही अनर्गल है।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** इस खण्ड में कोई संशोधन पेश नहीं किया गया है। मि. हसरत मोहानी की बातें मैं नहीं समझ पाया हूं।

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): श्रीमान्, मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप माननीय सदस्य से यह कहें कि वे 'अनर्गल' शब्द को वापस लें। उससे इस सभा का अपमान होता है। वह सभा में कहे जाने योग्य नहीं है।

***अध्यक्षः** क्या आपने 'बहुत ही अनर्गल' शब्द कहे?

***मौलाना हसरत मोहानीः** जी हां, मैंने यह कहा कि यह बहुत ही अनर्गल है।

***अध्यक्षः** आप उन शब्दों को वापस लीजिये।

अब मैं खण्ड 8 पर मतदान लूंगा।

खण्ड 8 स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 9

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं प्रस्ताव करता हूं:

''9. सभी अल्पसंख्यकों को उचित भाग का आश्वासन दिया जाता हैः अखिल भारतीय और प्रान्तीय नौकरियों के लिये नियुक्तियां करते समय शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी योग्यता का ध्यान रखते हुए सभी अल्पसंख्यकों के अधिकारों को दृष्टि में रखा जायेगा।''

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

इस खण्ड को इसलिये स्थान दिया गया है कि नौकरियों में अल्पसंख्यकों का उचित प्रतिनिधित्व हो सके, परन्तु इसका भी ध्यान रखा जायेगा कि शासन के समुचित संचालन में कोई अन्तर न पड़े। इसको ध्यान में रखते हुये सरकार अल्पसंख्यकों का उचित प्रतिनिधित्व कराने की व्यवस्था करेगी। मैं इस प्रस्ताव को सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

(मि. तजम्मुल हुसैन ने अपना संशोधन पेश नहीं किया।)

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्त प्रान्तः जनरल)**:** श्रीमान्, मेरा संशोधन बहुत ही निर्दोष है और उससे कोई हानि भी नहीं हो सकती है। मैं सभा से केवल यह प्रार्थना करता हूं कि ''आश्वासन दिया जाता है'' शब्द जो कि वाक्य के आरम्भ में हैं, निकाल दिये जायें। उससे सभी अल्पसंख्यकों को आश्वासन मिल जायेगा।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रासः जनरल)**:** श्रीमान्, मुझे एक व्यवस्था सम्बन्धी आपत्ति करनी है। यह संशोधन केवल हाशिये में दिये हुये शीर्षक से सम्बन्ध रखता है। साधारणतया हम हाशिये में लिखी हुई बातों में संशोधन नहीं करते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** इस संशोधन का प्रस्ताव से कोई सम्बन्ध नहीं है।

***श्री महावीर त्यागीः** यह शब्द आपत्तिजनक है, क्योंकि रिपोर्ट के पैराग्राफ 14 में यह कहा गया है कि हमारे सामने यह प्रस्ताव रखा गया था कि सरकारी नौकरियों में अल्पसंख्यक जातियों का उनकी जनसंख्या के अनुपात से प्रतिनिधित्व कराने के लिये वैधानिक रूप से आश्वासन दिया जाना चाहिये। हम किसी भी ऐसे विधान से परिचित नहीं हैं जिसमें इस प्रकार का आश्वासन दिया गया हो। उस समय ''आश्वासन दिया जाता है'' शब्दों पर आपत्ति की गई थी, परन्तु यहां ये किसी प्रकार फिर आ गये हैं। यदि इन शब्दों को हम शीर्षक से भी निकाल दें तो यह अच्छा ही होगा।

***अध्यक्षः** ये शीर्षक से निकाले जा सकते हैं, जो फिर ''सभी अल्पसंख्यकों के लिये उचित भाग'' हो जायेगा।

***श्री महावीर त्यागी:** 'यदि आश्वासन दिया जाता है' शब्द निकाल दिये जायें तो मैं संतुष्ट हो जाऊंगा।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** मेरे लिये तो ये शब्द वर्तमान ही नहीं हैं।

***श्री महावीर त्यागी:** मैं आशा करता हूं कि वे अन्य लोगों के लिये भी वर्तमान नहीं हैं। मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं देता हूं।

(श्री पी. कक्कन और श्री उपेन्द्रनाथ बर्मन ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***श्री चन्द्रिका राम** (बिहार: जनरल): मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं। मैं अपना संशोधन पेश करना नहीं चाहता हूं, परन्तु उसे वापस लेते हुये मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** संशोधन वापस लेने का प्रश्न नहीं उठता, क्योंकि वह पेश नहीं किया गया है। परन्तु यदि आप कुछ कहना चाहते हैं तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु संक्षेप में कहियेगा।

श्री चन्द्रिका राम: सभापति जी, शुरू में जब यह बात तय हुई तो एडवाइज़री कमेटी में बहुत काफी डिस्कशन हुआ और हम लोग फील करते थे कि हम लोगों का रिजरवेशन प्रोविन्सेज की सर्विस के लिए होना चाहिये था। आपस में डिस्कशन होने के बाद हमारे कुछ आनरेबिल मेम्बरों ने कहा कि सरदार से इस बात को हम लोग डिस्कशन करें और मेन आइटम के नीचे नोट है। इस पर हमने यह उचित समझा कि प्रोविन्शियल सर्विस के लिए हम लोगों के लिए स्टेच्यूटरी प्रोवीजन होना चाहिये। सेन्टर में हमें जरूरत नहीं, क्योंकि सेन्टर में आज भी हमारी सर्विसेज ठीक होती हैं। लेकिन जहां तक प्रोविन्सेज का सवाल है वहां उनको इग्नोर किया जाता है। उदाहरण के लिये हमें पता है कि यू. पी. में हमारी संख्या 25 प्रतिशत से अधिक है और अखबारों से जो पता चला है और रिपोर्ट आई है, उसमें केवल 10 प्रतिशत रिजर्वेशन है। प्रोविन्सेज की सर्विसेज में यह काफी इग्नोर किये जाते हैं और हम चाहते हैं कि सरदार साहब से यह आश्वासन मिले कि प्रोविन्सेज में जैसा वह सेन्टर में कर रहे हैं, पौपुलेशन बेसिस पर सर्विस मिले। क्योंकि लिखने पढ़ने में या शिक्षा में रुपया-पैसा खर्च करने के कोई माने

[श्री चन्द्रिका राम]

न होंगे।; अगर हमें सर्विसेज न मिलें। यह बहुत इम्पौरटेंट चीज है। इस पर मैं इन्सिस्ट नहीं करता कि मैं यह अमेंडमेंट पेश करता हूं। लेकिन मैं सरदार से, जो इस क्लाज के मूवर हैं, मैं आश्वासन चाहता हूं कि पूरा प्रोटेक्शन रहेगा और जितना इस क्लाज में लिखा गया है, इसके लिये कान्स्टीट्यूशन में कहीं न कहीं जगह मिलेगी। मैं इन दो शब्दों के साथ अमेंडमेंट को विड्ड्रा करता हूं।

*__अध्यक्षः__ इसमें कोई संशोधन पेश नहीं किया गया है। केवल श्री चन्द्रिका राम ने एक प्रश्न पूछा है।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः__ श्री चन्द्रिका राम केवल एक प्रकार का आश्वासन चाहते हैं। मैं केवल यह आश्वासन दे सकता हूं कि यदि अल्पसंख्यकों की कमेटी की रिपोर्ट स्वीकार कर ली गई तो अल्पसंख्यकों के लिये सभी कुछ ठीक हो जायेगा।

*__अध्यक्षः__ मैं खंड 9 पर मतदान लेता हूं।

खंड 9 स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 10

*__अध्यक्षः__ अब हम खंड 10 को उठायेंगे।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः__ इस खंड में आप देखेंगे कि सलाहकार समिति ने उन रियासतों पर विचार करने के लिये एक उपसमिति नियुक्त की, जिनका उपभोग एंग्लो इंडियन जाति करती रही है। समिति ने, जिसके सदस्यों के यहां नाम दिये गये हैं, एकमत से एक रिपोर्ट तैयार की और मैं आपसे उस रिपोर्ट की ओर ध्यान देने को कहता हूं। उसी कमेटी की सिफारिशों को मैं एक प्रस्ताव के रूप में पेश करूंगा। आप देखेंगे कि पैराग्राफ 2 का एक भूमिकात्मक भाग है, जिसमें इन रियायतों के पूर्व इतिहास का वर्णन है और खंड 1 वास्तविक प्रस्ताव है। प्रस्ताव खंड (1) से आरम्भ होता है:

"(1) संघीय विधान के प्रयोग में आने के दो वर्ष बाद तक रेलवे, डाक और तार-विभाग तथा कर-विभाग में एंग्लो इंडियनों को भर्ती करने का जो आधार है वह उसी प्रकार रहेगा। उसके बाद हर दो वर्ष बाद सुरक्षित जगहें प्रत्येक बार दस प्रतिशत कम कर दी

जायेंगी, लेकिन इससे एंग्लो इंडियनों को सुरक्षित जगहों के अतिरिक्त अन्य जगहों को प्राप्त करने में कोई बाधा न होगी; परन्तु शर्त यह है कि वे अन्य जातियों के लोगों के साथ खुली प्रतियोगिता में सम्मिलित होकर अपनी योग्यता का प्रमाण दें। इससे इन विभागों में या ऐसे अन्य विभागों में जहां उनके लिये जगहें सुरक्षित न रखी गई हों, योग्यता के आधार पर नियुक्त होने में भी कोई बाधा न होगी।

(2) संघीय विधान के प्रयोग में आने के दस वर्ष बाद इस प्रकार का संरक्षण पूर्णतया समाप्त कर दिया जायेगा।

(3) दस वर्ष के बाद इन नौकरियों में किसी जाति के लिये कोई संरक्षण न होगा।''

यह प्रस्ताव का पहला भाग है। दूसरा भाग शिक्षा-सम्बन्धी सुविधाओं के सम्बन्ध में है। मैं पहले भाग को पेश करूंगा। मैं सभा को यह सूचित करना चाहता हूं कि सलाहकार समिति के सदस्यों और एंग्लो इंडियन जाति के बीच इस सम्बन्ध में समझौता हो गया है। इस निर्णय को सभी ने एकमत से स्वीकार किया है और मुझे आशा है कि यह सभा इसे व्यावहारिक रूप देगी।

***अध्यक्षः** क्या कोई सदस्य इसके सम्बन्ध में कुछ कहना चाहते हैं?

(कोई भी सदस्य बोलने के लिये नहीं उठे।)

***अध्यक्षः** मैं अब इस प्रस्ताव पर मतदान लूंगा।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** एंग्लो इंडियनों के लिये विशेष शिक्षा सम्बन्धी सुविधाएंः

''इस समय भारत में एंग्लो इंडियनों के लगभग 500 स्कूल हैं। इनकी सरकारी आर्थिक सहायता के रूप में जो कुल रकम दी जाती है, वह लगभग 45 लाख रुपया है, जो स्कूलों के खर्च का लगभग 24 प्रतिशत है। हम यह अनुभव करते हैं कि इस आर्थिक सहायता को एकबारगी कम कर देने से इन स्कूलों को आर्थिक स्थिति

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

गम्भीर संकट में पड़ जायेगी और यह कि इनको धीरे-धीरे ही इसी प्रकार के अन्य स्कूलों के स्तर में लाया जाये ताकि इनको देश की परिवर्तित स्थिति के अनुसार अपनी हालत ठीक करने का समय तथा अवसर मिल जाये। हम यह अनुभव करते हैं कि इस प्रकार इन संस्थाओं से शिक्षा के क्षेत्र में बहुत लाभ हो सकता है और न केवल एंग्लो इन्डियन जाति के लोगों की बल्कि सारे राष्ट्र के लोगों की शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकताएं पूरी हो सकती हैं। इसलिये हम यह सिफारिश करते हैं कि

(1) एंग्लो इन्डियनों की शिक्षा के लिये इस समय केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारें जो आर्थिक सहायता दिया करती हैं वे संघीय विधान के प्रयोग में आने के तीन साल बाद तक उसी प्रकार दी जाती रहें।

(2) पहले तीन वर्षों के समाप्त होने पर आर्थिक सहायता में 10 प्रतिशत की कमी कर दी जाये और छठे वर्ष के अन्त में फिर 10 प्रतिशत की कमी कर दी जाये और नवें वर्ष के अन्त में फिर 10 प्रतिशत की कमी कर दी जाये। दस वर्ष समाप्त होने पर एंग्लो इन्डियन स्कूलों को जो विशेष सुविधाएं दी जाती हों उनका अन्त हो जायेगा।

(3) इन दस वर्षों की अवधि में सरकारी सहायता पाने वाले ऐसे सभी एंग्लो इंडियन स्कूलों में खाली जगहों में से 40 प्रतिशत अन्य जातियों के लोगों को दी जायेंगी।

इस रिपोर्ट में 'एंग्लो इंडियन' शब्द उसी अर्थ में प्रयुक्त हुआ है जिस अर्थ में वह भारत सरकार के सन् 1935 ई. के कानून में प्रयोग में लाया गया है।''

इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में भी समझौता हुआ है और इसे सलाहकार समिति और उस समिति के एंग्लो इंडियन सदस्यों ने एकमत से स्वीकार किया है। इसलिये मुझे आशा है कि यह सभा इस समझौते को व्यवहार में लाने की आज्ञा देगी।

***अध्यक्ष:** क्या कोई सदस्य इसके सम्बन्ध में कुछ कहना चाहते हैं?

(कोई भी सदस्य बोलने के लिये नहीं उठे।)

***अध्यक्षः** तब इस पर मैं मतदान लूंगा।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

खंड 11

***अध्यक्षः** अब हम खण्ड 11 को लेते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** खण्ड 11 इस प्रकार हैः

''संघीय तथा प्रान्तीय धारासभाओं को इसकी सूचना देने के लिये कि अल्पसंख्यकों के लिये रखे हुए संरक्षण किस प्रकार प्रयोग में आ रहे हैं, अध्यक्ष द्वारा केन्द्र में और गवर्नरों द्वारा प्रान्तों में एक अफसर नियुक्त किया जायेगा।''

यह केवल शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी व्यवस्था है और मुझे आशा है कि सभा इसे स्वीकार कर लेगी।

***अध्यक्षः** इसमें कुछ संशोधन पेश किये गये हैं।

(श्री महावीर त्यागी और मि. तजम्मुल हुसैन ने अपने संशोधन पेश नहीं किये।)

***अध्यक्षः** और कोई संशोधन नहीं है। क्या कोई सज्जन इस पर कुछ कहना चाहते हैं?

(कोई भी सदस्य बोलने के लिये नहीं उठे।)

***अध्यक्षः** तब मैं इस पर मतदान लूंगा।

खंड 11 स्वीकार कर लिया गया।

खंड 12

***अध्यक्षः** अब हम खण्ड 12 उठाते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं प्रस्ताव करता हूं किः

''12-एक कानून द्वारा स्थापित कमीशन के संगठन के लिये भी व्यवस्था की जायेगी जो सामाजिक तथा शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों की दशाओं की जांच करेगा, उनकी कठिनाइयों पर विचार करेगा

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

और संघीय या प्रादेशिक सरकार से, जैसी भी दशा है, सिफारिश करेगा कि इन कठिनाइयों को किस प्रकार दूर किया जाये और उनको किस प्रकार की आर्थिक सहायता दी जाये और इस आर्थिक सहायता को देने के लिये क्या शर्तें लगाई जायें।''

पीड़ित तथा पिछड़े हुए वर्गों के लिये यह भी एक शासन-प्रबन्ध सम्बन्धी व्यवस्था है। मुझे आशा है कि सभा इसे स्वीकार कर लेगी।

***अध्यक्षः** इसमें कुछ संशोधन पेश किये गये हैं।

(मि. तजम्मुल हुसैन, श्री पी. कक्कन, श्री एच.वी. पातस्कर और श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले ने अपने संशोधनों को पेश नहीं किया।)

***अध्यक्षः** अब और कोई संशोधन नहीं है।

मैं खंड 12 पर मतदान लेता हूं।

खंड 12 स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** श्रीमान्, अब सभी मदों पर विचार हो चुका है और स्वीकृत संशोधनों तथा प्रस्तावों से संशोधित इस रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया जाये।

***मौलाना हसरत मोहानीः** श्रीमान्, मैं चाहता हूं कि सारी रिपोर्ट पर अपना मत प्रकट करने के लिये मुझे अवसर दिया जाये।

***अध्यक्षः** अब हमने परिशिष्ट के प्रत्येक खंड पर विचार कर लिया है और यह रिपोर्ट निस्संदेह उस हद तक परिवर्तित समझी जायेगी, जिस हद तक इसमें सभा के प्रस्तावों द्वारा परिवर्तन हुआ है।

अब प्रस्ताव यह है कि यह रिपोर्ट स्वीकार कर ली जाये। क्या इस प्रस्ताव को सभा के सामने रखने की आवश्यकता है?

***श्री के.एम. मुशीः** श्रीमान्, यह विधान-परिषद् की सलाहकार समिति की रिपोर्ट है और यह कोई रिपोर्ट का मसविदा नहीं है जिसे कि विधान-परिषद् ने स्वीकार

करना हो। इसलिये मेरी राय से इस रिपोर्ट को संशोधित नहीं किया जा सकता क्योंकि इससे हम वास्तव में सलाहकार समिति से बलपूर्वक इन शब्दों को कहलाना चाहेंगे। नियमित रूप से यह हुआ है कि रिपोर्ट पर विचार हो गया है। चूंकि सभा ने यह निश्चय किया कि इस रिपोर्ट पर विचार किया जाये, इसलिये इस रिपोर्ट में जिन निर्णयों को स्थान दिया गया है और उनको परिशिष्ट में भी स्थान दिया गया है उन पर विचार किया गया। उन निर्णयों को सभा ने संशोधित रूप में रख दिया। इसलिये श्रीमान्, मेरी राय से सारी रिपोर्ट पर निर्णय करने की कोई आवश्यकता नहीं है। यह सलाहकार समिति की रिपोर्ट है और इसी रूप में रहनी चाहिये। रिपोर्ट में कुछ संशोधनों की राय दी गई है परन्तु मैं यह कहूंगा कि वे अप्रासंगिक हैं, क्योंकि इस रिपोर्ट को विधान-परिषद् तभी स्वीकार कर सकती है जब वह विधान-परिषद् की रिपोर्ट के रूप में अन्य लोगों या संसार के लोगों के पास भेजी जा रही हो। इसलिये श्रीमान्, मेरी यह राय है कि चूंकि सभा ने निर्णयों को नियमित रूप से संशोधित कर दिया है, इसलिये रिपोर्ट के सम्बन्ध में कुछ न किया जाना चाहिये। मेरी यही मत है।

*__पं. लक्ष्मीकांत मैत्र:__ इसका क्या प्रमाण है कि सभा ने रिपोर्ट पर विचार कर लिया है?

*__श्री के.एम. मुंशी:__ श्री मैत्र कहते हैं कि इसका क्या प्रमाण है कि सभा ने रिपोर्ट पर विचार कर लिया है। एक प्रस्ताव इस आशय का सभा ने नियमित रूप से स्वीकार कर लिया था कि वह इस रिपोर्ट पर विचार करती है। फिर उसने परिशिष्ट उठाया। परिशिष्ट में ऐसे निर्णयों का वर्णन है जो प्रयोग में आयेंगे और जिनको रिपोर्ट में स्थान दिया गया है। उनको या तो बदल दिया गया है या स्वीकार कर लिया गया है। परन्तु इस सभा के सम्मुख रिपोर्ट को पेश करने के लिये सलाहकार समिति ने जिन शब्दों का प्रयोग किया है, उनको हम नहीं बदल सकते। वह यहां पेश की गई और यहीं बात खत्म हो गई।

*__पं. लक्ष्मीकांत मैत्र:__ इस सम्बन्ध में कुछ दर्ज होना चाहिये कि सभा ने रिपोर्ट को कुछ संशोधनों इत्यादि के साथ स्वीकार कर लिया है।

*__श्री के.एम. मुंशी:__ निर्णयों का कुछ अंश स्वीकार कर लिया गया है और कुछ संशोधित कर दिया गया है और रिपोर्ट सभा के सामने रखी जा चुकी है। मैं व्यवस्था सम्बन्धी यह बात कहना चाहता हूं कि रिपोर्ट में न तो नये पैराग्राफ

[श्री के.एम. मुंशी]

जोड़े जा सकते हैं और न उसमें से कुछ निकाला जा सकता है, क्योंकि यह रिपोर्ट सभा को पेश की गई है और इसके निर्णयों को या तो सभा ने नियमित रूप से स्वीकार किया है या उनमें परिवर्तन किया है। इसलिये यह रिपोर्ट इसी प्रकार रहेगी। यह श्रीमान्, एक महत्वपूर्ण व्यवस्था सम्बन्धी बात है। मैं इस सम्बन्ध में आपका निर्णय चाहता हूं, क्योंकि पिछले दिनों में हम यह कहते रहे हैं कि रिपोर्ट को या तो स्वीकार किया जाना चाहिये या इसमें परिवर्तन किये जाने चाहियें या इसमें नये पैराग्राफ जोड़े जाने चाहियें। यह एक बहुत ही गलत तरीका है क्योंकि आप किसी कमेटी की रिपोर्ट को नहीं बदल सकते हैं। यह सभा कोई अपील सुनने की अदालत नहीं है। यह केवल एक रिपोर्ट है, जिसको विचारार्थ सभा के सम्मुख रखा गया है।

***मौलाना हसरत मोहानी:** मैं इस रिपोर्ट में न कुछ जोड़ना चाहता हूं और न कुछ इससे निकालना चाहता हूं। मैं यह कहना चाहता हूं कि जब कभी मैं कोई बात कहने के लिये उठता हूं, श्रीमान्, आप यह कहते हैं कि इसके लिये यह अवसर नहीं है। मैं यह कहता हूं कि यह सारी रिपोर्ट मतदान के लिये सभा के सामने रखी जाये। जो कुछ मैं कहना चाहता हूं उसे कहने का मुझे अवसर कब मिलेगा जब कि मैं सारी ही चीज के विरोध में हूं?

***अध्यक्ष:** शांति, शांति। मुझे खेद है कि आपने वह अवसर खो दिया। जब यह प्रस्ताव किया गया कि इस रिपोर्ट पर विचार होना चाहिये। उस समय आप जो कुछ कहना चाहते थे, कह सकते थे और वही उसके लिये ठीक समय था। शायद उस समय आप सभा में उपस्थित नहीं थे।

***श्री आर. के. सिधवा** (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): व्यवस्था सम्बंधी बात यह है कि हमने रिपोर्ट पर विचार करने के लिये सभा से मतदान लिया और फिर प्रत्येक खंड में पेश किये हुए संशोधनों पर विचार किया। बराबर इसी प्रथा का अनुसरण किया जाता है कि खंडों का संशोधन हो जाने के बाद और विचाराधीन रिपोर्ट समाप्त हो जाने पर उसे उसके संशोधित रूप में स्वीकृति के लिये सभा के सामने रखा जाता है। श्रीमान्, इसी प्रथा का बराबर अनुसरण किया जाता है। इसलिये अब यह प्रस्ताव किया जाना चाहिये कि यह रिपोर्ट अपने संशोधित रूप में स्वीकार की जाये। यही न्यायोचित परिषदात्मक प्रणाली है।

इसके अतिरिक्त रिपोर्ट के पैराग्राफों के मसविदों के सम्बंध में प्रस्तावों की सूचना दी गई है। उन प्रस्तावों का आधार बिल्कुल भिन्न है, चाहे, उन पर विचार हो या वे वापस के लिये जायें या सारी रिपोर्ट स्वीकार कर ली जाये।

***अध्यक्षः** आप इस समय विशेष रूप से किस मद के बारे में विचार कर रहे हैं?

***मौलाना हसरत मोहानीः** मैं उस खंड की ओर ध्यान दिलाना चाहता हूं जिसमें साम्प्रदायिक आधार पर जगहों के संरक्षण की व्यवस्था है। मैं यह कहता हूं कि यह सारी प्रणाली गलत है, सिवाय उस खंड के जिसमें जगहों के संरक्षण और साम्प्रदायिक आधार पर साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था है। मैं और किसी का जिक्र नहीं करना चाहता। क्या आप मुझे चन्द मिनट देंगे?

***अध्यक्षः** जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, आपने इसके लिये अवसर खो दिया है।

***श्री एस. राधाकृष्णन्** (संयुक्त प्रांतः जनरल)**:** यह बिल्कुल सच है कि हम उस रिपोर्ट को स्वीकार नहीं कर रहे हैं जिसे कि सलाहकार समिति ने हमारे पास भेजा है। परिशिष्ट में कुछ खंडों का हमने संशोधन किया है और ये संशोधित खंड हमारे निर्णयों को व्यक्त करते हैं। जिन निर्णयों पर हम पहुंचे हैं उनका वर्णन करते हुए हम भूमिका के रूप में एक या दो वाक्य इस उद्देश्य से जोड़ सकते हैं कि ''एक सुव्यवस्थित प्रजातंत्रात्मक पार्थिव राज्य की स्थापना हो, राज्य के अंदर अल्पसंख्यकों को पृथक रखने के लिये अभी तक जो उपाय काम में लाये गये हैं उनको त्याग दिया जाये और एक ही राष्ट्रवादी राज्य के प्रति निष्ठा रखी जाये। यह तो सर्वमान्य लक्ष्य होना ही चाहिये परन्तु हम अपने निकट भूतकाल की उपेक्षा नहीं करना चाहते। इसलिये दस वर्ष के समय के लिये निम्नलिखित सिफारिशें की जाती हैं जिनसे कि अल्पसंख्यकों को पर्याप्त संरक्षण मिल जायेगा।'' अपने निर्णयों को उपस्थित करने से पहले हमें भूमिका के रूप में कुछ वाक्य जोड़ देने चाहियें और इस सभा में यह स्पष्ट कर देना चाहिये कि इन अल्पसंख्यकों को निरंतर बनाये रखा जाये। हमें राज्य में विध्वंसात्मक शक्तियों का अन्त कर देना चाहिये। हमारा आदर्श क्या है? हमारा आदर्श यह है कि हम एक सुव्यवस्थित प्रजातंत्र राज्य की स्थापना करें। इसी कारण हमने मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की है और सरकारी नौकरियों में हमने किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं रखा है। और हम यह कहते हैं कि हमारा राज्य पार्थिव राज्य है। यदि आप इसे इस्लामी, हिंदू या ईसाई राज्य बनायें, तो अन्य धर्मों के अनुयायियों को अपने सम्बंध में चिन्ता होने लगेगी। इसलिये हमें अपने इस लक्ष्य की घोषणा कर देनी चाहिये कि

[श्री एस. राधाकृष्णन्]

हमारी इच्छा यही है कि इस देश में एक सुव्यवस्थित प्रजातंत्रात्मक पार्थिक राज्य की स्थापना हो और अभी तक समाज के विभिन्न वर्गों को पृथक रखने के लिये जो उपाय काम में लाये गये थे उनका अन्त किया जाये। यदि हम यहां समझौते की किसी व्यवस्था को स्थान देना चाहते हैं तो वह केवल इस कारण कि भूतकाल को भी ध्यान में रखना चाहते हैं। हमें अपने आदर्श और वास्तविक परिस्थितियों के बीच के मार्ग का अवलम्बन करना है। ये रियायतें केवल दस वर्ष के लिये रहेंगी। इससे हमने जो सिफारिशें की हैं, उन पर कोई असर नहीं पड़ता। केवल दो वाक्यों का प्रयोग करके हम यह स्पष्ट कर देते हैं कि हमारे आधारभूत सिद्धांत क्या हैं। अध्यक्ष महोदय, प्रत्येक राज्य एक लक्ष्य को सामने रख कर चलता है चाहे वह सोवियत राज्य हो या नाजी राज्य हो या अमेरिकन राज्य। हमारा लक्ष्य क्या है? क्या हम इन अल्पसंख्यकों को सारे देश में पृथक वर्गों के रूप में रखना चाहते हैं? क्या इससे अभी तक जो नुकसान हमने उठाया है वह काफी नहीं है? क्या पंजाब की दु:खद घटनायें पृथक्करण की मनोवृत्ति और जान-बूझकर सिद्धांतों की उपेक्षा करने से ही घटित नहीं हुई है? यह कोई ईश्वरीय कार्य नहीं है किन्तु केवल मानवीय कार्य ही है। आपने देखा होगा कि आजाद हिंद फौज या भारतीय सेना में जहां हमने एक ही राज्य के प्रति निष्ठा रखने का प्रयत्न किया, हम सफल हुए और जहां हमने किसी राज्य के विघटन के लिये प्रयत्न किया, वहां भी हम सफल हुये। इसलिये अब इसका समय आ गया है कि हम विध्वंसात्मक मनोवृत्ति का अन्त कर दें और इससे अप्रेरित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये सचेष्ट हों और यह कह दें कि हमारी इच्छा यह नहीं है कि इन अल्पसंख्यकों को अल्पसंख्यकों के ही रूप में बनाये रखें। मध्यम मार्ग की व्यवस्था केवल अन्तरकालीन है और यह दस वर्ष के उपरांत समाप्त हो जायेगी। इसलिये सभा की अनुमति से मैं इसे नियमित रूप में पेश करता हूं कि स्वीकृत परिशिष्ट की भूमिका के रूप में मैंने जिन वाक्यों का प्रस्ताव किया है उनको रखा जाये।

***श्री एस.एम. रिजवानुल्ला** (संयुक्त प्रांत: मुस्लिम): श्रीमान्, मेरे विचार से श्री मुंशी ने जो पहली बात कही है वह व्यवस्थासंगत नहीं है। साधारणतया इस प्रणाली का अनुसरण किया जाता है कि किसी भी कमेटी की रिपोर्ट पर यह सभा विचार करती है और फिर यह सभा उसे संशोधित करके अपनी ही रिपोर्ट के रूप में स्वीकार कर लेती है। इसके बाद वह मसविदा तैयार करने वाली कमेटी के पास भेजी जाती है। इसलिये श्री मुंशी का यह मत कि इस रिपोर्ट को स्वीकार करने की कोई आवश्यकता नहीं है, न्यायसंगत नहीं है। इसके अतिरिक्त

प्रोफेसर राधाकृष्णन् ने भी जो कुछ कहा वह व्यवस्थासंगत नहीं है। अपने वाक्यों को स्थान देकर वे एक नया लक्ष्य रखना चाहते हैं। इसके लिये उचित अवसर उस समय था जबकि लक्ष्य सम्बंधी प्रस्ताव पर विचार हो रहा था। वे एक नई ही बात को स्थान देना चाहते हैं, इसलिये वह व्यवस्थासंगत नहीं है।

*__श्री शंकर दत्तात्रेय देव__ (बम्बई: जनरल): श्रीमान्, हम यह नहीं जानते कि वास्तव में किस विषय पर विचार हो रहा है।

*__अध्यक्षः__ दो प्रश्न विचारार्थ पेश किये गये हैं। पहला प्रश्न श्री मुन्शी ने उठाया है। वह यह है कि चूंकि अब हमने परिशिष्ट की मदों को स्वीकार कर लिया है, इसलिये हमारे लिये यह आवश्यक नहीं है कि हम रिपोर्ट के सम्बन्ध में कुछ कहें और सभा को इसकी स्वतन्त्रता नहीं है कि वह उस कमेटी के सदस्यों से ऐसी बातें कहलाये जो पहले से उनकी रिपोर्ट में सम्मिलित नहीं हैं। यह व्यवस्था सम्बन्धी प्रश्न उठाया गया है कि हमें रिपोर्ट के सम्बन्ध में कुछ न कहना चाहिये, क्योंकि हमें यह सब कहने का अधिकार नहीं है। हमारा जो कुछ भी मत है उसे इन निर्णयों को करते समय हमने प्रकट कर दिया है।

*__श्री शंकर दत्तात्रेय देवः__ क्या इस सम्बन्ध में आपने अपना निर्णय सुना दिया है?

*__अध्यक्षः__ मैं स्थिति का स्पष्टीकरण कर रहा हूं।

*__श्री के. सन्तानम्ः__ श्रीमान्, मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि केवल उन बातों को दर्ज किया जाना चाहिये जो मसविदे में स्थान पायेंगी और इसलिये मैं श्री मुन्शी के मत का समर्थन करता हूं। जहां तक डा. राधाकृष्णन् के मत का सम्बन्ध है, उन्होंने निस्सन्देह एक सुन्दर प्रस्ताव उपस्थित किया है, परन्तु मेरी समझ में नहीं आता कि यह मसविदे में किस प्रकार स्थान पायेगा। अनुरोध के रूप में वह ठीक ही है परन्तु मेरे विचार से वह कानून के मसविदे में स्थान नहीं पा सकता। मैं समझता हूं कि वह बहुत कुछ अप्रासंगिक है।

*__श्री आर.वी. धुलेकर__ (संयुक्त प्रान्तः जनरल): श्रीमान्, यह सारी रिपोर्ट हमारे सामने है और मेरी राय में इस समय आचार्य राधाकृष्णन का यह प्रस्ताव करना व्यवस्थासंगत ही है कि इस सारी रिपोर्ट का उद्देश्य यह है कि सभी प्रकार के संरक्षणों को समाप्त कर दिया जाये और दस वर्ष के अन्दर सभी विध्वंसात्मक

[श्री आर.वी. धुलेकर]

शक्तियों को भी समाप्त कर दिया जाये ताकि दस वर्ष के बाद हमारा राष्ट्र सुव्यवस्थित हो सके। मेरे विचार से आचार्य राधाकृष्णन् के प्रस्ताव को इसी स्थान में रखा जा सकता है। यह व्यवस्था-सम्बन्धी आपत्ति न्यायसंगत नहीं है क्योंकि यह प्रस्ताव किसी अन्य स्थान में नहीं रखा जा सकता। इसलिये मैं इस संशोधन का समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से हमने व्यवस्था-सम्बन्धी आपत्ति पर बहुत काफी वाद-विवाद कर लिया है और अब मुझे अपना निर्णय सुनाने की आज्ञा दी जाये। मैं इस विचार से सहमत होने के लिये तैयार हूं कि जहां तक इस सभा का सम्बंध है, वह इस समय कुछ मदों में कुछ खण्डों को सम्मिलित करने के बारे में मसविदा तैयार करने वाली कमेटी को केवल आदेश दे रही है और यह उस कमेटी पर निर्भर है कि वह इस सभा द्वारा स्वीकृत परिशिष्ट के आदेशों को स्वीकार करे। इसलिये इस समय कुछ अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है और यह काम मसविदा तैयार करने वाली कमेटी को सौंपा गया है कि वह परिशिष्ट में दिये हुये सभा के निर्णयों को मसविदे में सम्मिलित करे।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान्, सभा के सूचनार्थ मैं यह बताना चाहता हूं कि जहां तक सलाहकार समिति के काम का सम्बन्ध है, उसने ये बातें छोड़ दी हैं- वह भाग जिसका सम्बन्ध पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल से है और दूसरे कबाइली और पृथक क्षेत्रों की कमेटी की रिपोर्ट जो कि अब सलाहकार समिति को मिल गई है परन्तु उस पर विचार करने में उसे कुछ समय लगेगा। तीसरी बात यह है कि जब हम पिछली बार विधान-परिषद् में सम्मिलित हुये थे तो हमने कुछ मौलिक अधिकारों को स्वीकार किया था परन्तु उनसे सम्बन्धित रिपोर्ट का शेष भाग अभी पेश होना है। इन प्रस्तावों पर विचार किया जायेगा और समिति की अन्तिम रिपोर्ट सभा के सामने अगली बैठक में पेश की जायेगी। इस समय जो रिपोर्ट सलाहकार समिति ने पेश की थी उस पर विचार किया जा चुका है। मैं सभा को उसके सहयोग के लिये और इस रिपोर्ट को निश्चित समय में समाप्त कर देने के लिये धन्यवाद देता हूं।

***अध्यक्ष:** मौलिक अधिकारों के सम्बन्ध में क्या किया जाये? क्या हम उनको इस समय उठायें?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** यदि सभा उन्हें इस समय उठाना चाहती है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है।

***अध्यक्ष:** चूंकि अब समय नहीं रह गया है, हम अपने साधारण कार्य को कल दस बजे हाथ में लेंगे, परन्तु मैं यह बताना चाहता हूं कि हम आज दोपहर के बाद थोड़े समय के लिये एक विशेष कार्य के लिये सम्मिलित हो रहे हैं। हमें इस सभा को प्रदान किये हुये महात्मा गांधी के चित्र का उद्घाटन करना है। इसलिये मेरा प्रस्ताव यह है कि उसके लिये हम तीन बजे सम्मिलित हों।

इसके उपरान्त परिषद् दोपहर के भोजन के लिये तीन बजे तक स्थगित रही।

भारतीय विधान-परिषद् की दूसरी बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में दोपहर के भोजन के बाद दिन के तीन बजे माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में प्रारम्भ हुई।

महात्मा गांधी के चित्र की भेंट और उसका उद्घाटन

***अध्यक्ष:** श्री पट्टानी!

***श्री ए.पी. पट्टानी** (पश्चिमी भारत की रियासतों का समूह-4): यह मेरा सौभाग्य है कि मैं सभा के सामने निम्नलिखित प्रस्ताव रख रहा हूं:

''यह निश्चय किया जाता है कि भारतीय विधान-परिषद् सर प्रभाशंकर पट्टानी के राष्ट्र को प्रदान किये हुये सर ओसवाल्ड बर्ले द्वारा चित्रित महात्मा गांधी के चित्र को स्वीकार करती है।''

मेरे देश की इस विधान-परिषद् में खड़े होकर अपने स्वर्गीय पिता जी की मनोकामना के अनुसार अपने उत्तरदायित्व को पूरा करते हुये मैं आज जिस प्रसन्नता का अनुभाव कर रहा हूं उसे शब्दों में प्रकट करना मेरे लिये सम्भव नहीं है।

यह चित्र, जिसका थोड़ी देर में उद्घाटन होगा, दूसरी गोलमेज सभा के समय इंग्लैंड में प्रसिद्ध चित्र-कलाकार सर ओसवाल्ड बर्ले ने चित्रित किया था और मेरे पिता जी ने उसे खरीद लिया था। मैं सभा को यह बताना चाहता हूं कि सर ओसवाल्ड ने यह चित्र अपने ही लिये चित्रित किया था और वे उसे इसलिये देने के लिये तैयार हुये क्योंकि मेरे पिता जी उसे लेना चाहते थे और वह हिन्दुस्तान

[श्री ए.पी. पट्टानी]

के लिये लिया जा रहा था। परन्तु जब वह हिन्दुस्तान पहुंचा तो उसे सावधानी से उसी प्रकार बन्द करके रख दिया गया, जैसे वह आया था। हमें उसे देखने की आज्ञा नहीं दी गई और न हमारे परिवार के लोग और न इंग्लैण्ड के मित्र उनसे यह मालूम कर सके कि उस चित्र के बारे में उनका क्या इरादा था। लेकिन सन् 1935 ई. के कानून के बनने के कुछ समय बाद उन्होंने मुझसे बहुत ही गुप्त रूप से कहा कि जब इस कानून के अधीन नई सरकार की स्थापना होगी, तो मेरा विचार है कि मैं इसे राष्ट्र को भेंट कर दूंगा। बहुत समय बीत गया और उस कानून के प्रयोग में आने की कोई आशा न रही। 16 फरवरी, सन् 1938 के दिन इसके ठीक दस मिनट पहले कि वे भावनगर से हवाई जहाज से हरीपुरा महात्मा जी से मिलने जाते, उनका स्वर्गवास हो गया। वह कार्यक्रम और वह भेंट परिस्थितिवश सम्पूर्ण न हो सकी। परन्तु अपनी मृत्यु के पहले उन्होंने तीन बार मुझसे इस चित्र को और इसके सम्बन्ध में अपने विचार को ध्यान में रखने को कहा।

श्रीमान्, जैसा कि मैं कह चुका हूं, सन् 1935 ई. का कानून प्रयोग में न आ सका। परन्तु जब सन् 1947 ई. के कानून के अधीन नई सरकार स्थापित होने को हुई, तो मैंने अपने प्रधान मन्त्री पंडित जवाहरलाल नेहरू से इस चित्र के बारे में और इसके सम्बन्ध में अपने पिता के सन्देश का जिक्र किया। श्रीमान्, संक्षेप में इस अवसर का पूर्व इतिहास यही है।

इस अवसर पर मैं कुछ शब्द महात्मा जी के बारे में कहना चाहूंगा। मैं अत्यंत आदरभाव तथा दैन्यभाव से इन शब्दों का उच्चारण कर रहा हूं, क्योंकि मैं यह समझता हूं कि महात्मा जी के सम्बन्ध में मैं जो कुछ भी कहूंगा वह कैलाश पर्वत को मापदण्ड से नापने के समान है या जैसा कि हमारे शास्त्रों में कहा गया है, हिमालय पर्वत के सौन्दर्य व उसी विशालता को लेखनी से वर्णन करने के समान है। परन्तु फिर भी मुझको तथा इस सभा के कुछ अन्य सदस्यों को इसका गर्व है कि हम काठियावाड़ प्रदेश के निवासी हैं। वह भूमि जिसने श्रीकृष्ण, सुदामा, नरसी मेहता, दयानन्द सरस्वती और महात्मा गांधी जैसे महापुरुषों को उत्पन्न किया है, यदि हमें इसका गर्व है तो हमें उनका अनुसरण भी करना चाहिये, विशेषतया महात्मा गांधी का जिन्हें हमने देखा है और जिनके साथ हम रहे हैं, क्योंकि वे हमेशा नरेशों तथा जनसाधारण के मित्र रहे हैं और अब भी उनके मित्र हैं। वास्तव में उनकी अपनी कोई जाति नहीं है। उनका कोई देश नहीं है। उनका कोई घर

नहीं है। सारा संसार ही उनका घर है और मनुष्यमात्र ही उनका परिवार है। सत्य की खोज और परमार्थ-सिद्धि में उन्होंने सभी भेदभाव मिटा दिये और उन सभी से प्रेम करने लगे जो सच्चे, दृढ़निष्ठ और ईश्वर-प्रेमी हैं। उनकी इस उन्नत आत्मा को देखकर ही मेरे पिता जी उनकी ओर आकर्षित हुये और उनके विनीत अनुयायी हो गये। बापू ने मुझसे स्वयं कहा है कि उनका सम्बन्ध उस समय जुड़ा जब, मेरे विचार से पिछली शताब्दी में, वे दक्षिणी अफ्रीका में थे और मेरे पिता जी ने उनको पहला पत्र लिखा था। महात्मा जी ने इस महान् सत्य को खोज निकाला कि आधुनिक जीवन तथा वास्तव में संसार के इतिहास में भारत में व इंग्लैंड में सभी आपदाओं का मुख्य कारण यह रहा है कि इस देश में विदेशी शासन का बोलबाला रहा है। इस वास्तविक समस्या को खोज निकालने के बाद वे इसे हल करने के कार्य में जुट गये और अहिंसात्मक विद्रोह द्वारा उन्होंने भारत को स्वतंत्र कर दिया। अब यह हम पर निर्भर है कि हम इस कार्यसम्पन्नता को फलीभूत करें, ताकि जिस सुफल को उन्होंने हमको भेंट किया है, वह हममें से प्रत्येक व्यक्ति को हृष्टपुष्ट करे और हमें उच्चतर जीवन बिताने के लिये समर्थ करे।

राष्ट्र को समर्पित किया जाये; उनके शब्दों में:

''यह उस संत का चित्र है जिसने शांति के अर्थ अद्वितीय परिश्रम किया और अहिंसा को उपदेश दिया, जिससे ही वास्तव में अन्त में मनुष्य का कल्याण हो सकता है।'' *(हर्षध्वनि)*

श्रीमान्, मुझे यही सन्देश देना है। (जहां चित्र लगाया गया था उस ओर संकेत करते हुये) चित्र वह है। मैंने अपने कर्त्तव्य का पालन कर दिया। मैं प्रार्थना करता हूं कि चित्र का उद्घाटन किया जाये (*हर्षध्वनि*)।

इसके उपरान्त अध्यक्ष महोदय ने चित्र का उद्घाटन किया।

***अध्यक्ष:** माननीय सदस्यगण, मुझे विश्वास है कि श्री पट्टानी ने इस सभा को जो उपहार दिया है उसके लिये उनके प्रति मैं इस सभा के सभी सदस्यों की कृतज्ञता प्रकट कर रहा हूं (*हर्षध्वनि*)। स्वर्गीय सर प्रभाशंकर पट्टानी ने एक सुखद भावना से प्रेरित होकर ही इस सुन्दर चित्र को इतने वर्षो तक इस उद्देश्य से सुरक्षित रखा कि वह भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति की शुभ घड़ी में राष्ट्र को भेंट की जाये और यह हमारे लिये एक सुअवसर है कि अपने जीवनकाल में हम इस घड़ी में इस चित्र का उद्घाटन देख रहे हैं। कम से कम मेरे लिये

[अध्यक्ष]

यह धृष्टता ही होगी कि मैं महात्माजी ने जो कार्य सम्पन्न किया है, उसके सम्बन्ध में कुछ कहूं; क्योंकि मैं भी उन भाग्यशाली लोगों में से हूं जिन्हें उनके अधीन कई वर्षों तक सेवाकार्य में भाग लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है (*हर्षध्वनि*)। वह हमारे बीच ऐसे समय में आये जब कि देश बड़ी कठिनाई में पड़ा हुआ था और उससे छुटकारा पाने के लिये सहायता का इच्छुक था। कई प्रयत्नों के विफल होने पर हम लोग बहुत खिन्न थे। देश ने स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये बहुत प्रयत्न किये थे और वह किसी ऐसी चीज की खोज में था जिससे उसे प्रेरणा प्राप्त हो और सबसे अधिक किसी ऐसे शस्त्र की खोज में था जिससे वह स्वतंत्रता प्राप्त कर सकता। महात्मा गांधी ने वह भावना जाग्रत की और लोगों के हाथों में वह शस्त्र दिया। यद्यपि हम उनकी आकांक्षाओं को सम्पूर्ण करने में समर्थ नहीं हुये हैं, परन्तु उनकी प्रेरणा से तथा उनके पथ-प्रदर्शन से हम कम से कम इस स्वतंत्रता को तो प्राप्त कर ही चुके हैं जिसकी हम कई वर्षों से आशा लगाये बैठे थे।

राजनीति ही नहीं बल्कि मानव-जीवन का कोई भी ऐसा अंग न होगा, जिसे महात्मा गांधी ने अपने स्पर्श से उज्जवल न किया हो (*हर्षध्वनि*)। चाहे हम किसी गांव की बस्ती में जायें या शहर की बस्ती में, चाहे हम किसी करोड़पति के प्रासाद में जायें या महाराजा के महल में जायें; शायद ही कोई ऐसी जगह होगी जहां उनका प्रभाव पर्याप्त रूप से न पड़ा हो। हमारे जीवन में भी उनका इतना प्रभाव पड़ा है कि हम उसका पूर्णतया वर्णन करने में समर्थ नहीं हैं। महात्मा जी की महानता इसमें है कि जैसे-जैसे समय बीतता जायेगा उन्होंने हमारे जीवन में और संसार के इतिहास में जो प्रभाव डाला है उसका अधिक अनुभव होने लगेगा। ऐसे पुरुषों का जन्म हमेशा साधारण रूप से नहीं होता। संसार के इतिहास में उसकी धारा बदलने के लिये ही वे कभी एक बार आते हैं। यह हमारा सौभाग्य है कि आज हमें महात्मा गांधी के अधीन सेवा-कार्य में भाग लेने का अवसर प्राप्त हुआ है। उन्होंने मानव-इतिहास की धारा को बदल दिया है और अपने जीवनकाल में ही अपने आरम्भ किये हुये कार्य को सम्पन्न होते हुये देख सके हैं और यह देख रहे हैं कि उससे दिन प्रतिदिन बहुमूल्य लाभ हो रहा है। उन्होंने हमारे जीवन को इतने प्रकार से चमत्कारपूर्ण बना दिया है कि इस संक्षिप्त भाषण में उसे वर्णन करना सम्भव नहीं है। हम सभी जानते हैं कि किसी प्रकार उन्होंने मिट्टी के पुतलों को वीरों में परिणत किया और साधारण व्यक्तित्व के पुरुषों में महान् कार्यक्षमता, महान् संस्कृति और महान् प्रयत्नशीलता का प्रादुर्भाव किया। उन्होंने इतना

ही नहीं किया बल्कि व्यक्ति विशेष के अतिरिक्त सारे राष्ट्र में स्वतंत्रता की भावना का जागरण किया और वास्तव में एक प्रकार से उन्हीं के कार्य से वह प्रतिफलित भी हो गई। उन्हीं के प्रति आज अपनी श्रद्धांजलि देने के लिये हम लोग सम्मिलित हुये हैं। यह चित्र जो कि हमें उपहार रूप से दिया गया है, इस सभा में उपस्थित प्रत्येक सदस्य को इसकी याद दिलाता रहेगा कि उन्होंने हमारे देश के व संसार के इतिहास में एक संकटापन्न तथा महत्वपूर्ण काल में कितना महान् कार्य किया। वह सदस्यों को इसका भी स्मरण करायेगा कि इस देश के प्रति उनको किस महान् कर्तव्य का पालन करना है। यह हम सबको इस महान् परम्परा का स्मरण करायेगा जिसके कि वे प्रतिनिधि हैं और जो हम सभी को अपने पूर्वजों से प्राप्त हुई है। और सबसे अधिक यह हमको इसका स्मरण करायेगा कि जो स्वतंत्रता हमने प्राप्त की है उसका मनुष्यमात्र के हितार्थ किस प्रकार उपयोग किया जाये। हम यह आशा करते हैं कि इस चित्र से इस उद्देश्य की पूर्ति होगी और हम उस महान् महात्मा के सच्चे अनुयायी होंगे; जिन्होंने हमें इस लक्ष्य तक पहुंचाया है (*तुमुल हर्षध्वनि*)।

सभा की ओर से मैं इस चित्र को रस्मी तौर पर स्वीकार करता हूं और आशा करता हूं कि आप सभी इससे सहमत हैं।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, क्या मैं विनयपूर्वक यह सुझाव रख सकता हूं कि यह बहुत ही उपयुक्त होगा कि इस सभा-भवन में भारतीय संग्राम के जन्मदाता महात्मा गांधी के इस उत्कृष्ट चित्र के साथ भारतीय विद्रोह के जन्मदाता लोकमान्य बालगंगाधर तिलक तथा भारतीय क्रान्ति के जन्मदाता नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के चित्र भी सुशोभित किये जायें। यह श्रीमान्, बहुत ही उपयुक्त होगा और ये तीन चित्र हमारे राजनैतिक स्वतंत्रता की तीन स्पष्ट अवस्थाओं के श्रोतक होंगे। श्रीमान्, मुझे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि यह सभा इन चित्रों को बड़े हर्ष और कृतज्ञता से स्वीकार करेगी। क्या श्रीमान्, आप कृपा करके इसकी आज्ञा देंगे कि ये चित्र बाद को किसी अवसर पर भेंट किये जायें?

***अध्यक्ष:** सभा अब कल सुबह दस बजे तक के लिये स्थगित की जाती है।

इसके उपरान्त परिषद् शुक्रवार, 29 अगस्त, सन् 1947 ई. के दिन के दस बजे सुबह तक के लिये स्थगित रही।

परिशिष्ट

भारतीय विधान-परिषद्

प्रेषक:

श्री जी.वी. मावलंकर,

सभापति, भारतीय स्वतंत्रता के कानून के अधीन नियुक्त विधान-परिषद् की कार्य-सम्बन्धी समिति।

सेवा में:

अध्यक्ष, भारतीय विधान-परिषद्।

श्रीमान्,

विधान-परिषद् के आगे के कार्य के सम्बन्ध में कुछ मामलों पर विचार करने और उस बारे में रिपोर्ट पेश करने के लिये आपने 21 अगस्त सन् 1947 ई. को जो कमेटी नियुक्त की थी उसके सदस्यों की ओर से मैं यह रिपोर्ट पेश करता हूं:

1—प्रारम्भ

2. शुक्रवार 22 तारीख को अपनी पहली बैठक में मैं सभापति निर्वाचित हुआ। 23 और 25 तारीखों को भी कमेटी की बैठकें हुई।

3. हमने निम्नलिखित विषयों पर विचार किया:

(1) भारतीय स्वतंत्रता के कानून के अधीन विधान-परिषद् का वास्तविक कार्य क्या है?

(2) क्या यह सम्भव है कि विधान-परिषद् के विधान-निर्माता के कार्य और अन्य प्रकार के कार्य में भेद किया जाये और क्या विधान परिषद् पूर्वोक्त कार्य के लिये कुछ दिन या कुछ समय अलग रख सकती है?

(3) क्या विधान-परिषद् में भारतीय रियासतों के प्रतिनिधियों को विधान-निर्माण के अतिरिक्त अन्य कार्य में भाग लेने का अधिकार

देना चाहिये या केवल उन विषयों के सम्बन्ध में जिन्हें उन्होंने केन्द्र को समर्पित कर दिया है?

(4) विधान-परिषद् या उसके अध्यक्ष को यदि कोई नये नियम या स्थायी आज्ञाएं निर्धारित करनी हों तो कौन-सी निर्धारित करनी चाहियें और वर्तमान नियमों और स्थायी आज्ञायों में यदि कोई संशोधन करने हों तो कौन-से करने चाहियें?

हम इसी क्रम से इन विषयों पर अपना मत प्रकट करते हैं।

2—पहला विषय

4. विधान-परिषद् का कार्य दो प्रकार का है:

(क) 9 दिसम्बर सन् 1946 ई. को जो विधान-निर्माण का कार्य आरम्भ हुआ था, उसे जारी रखना और उसे समाप्त करना।

(ख) नये विधान के अधीन व्यवस्थापिका सभा का निर्माण होने तक औपनिवेशिक व्यवस्थापिका सभा के रूप में कार्य करना।

3—दूसरा विषय

5. विधान-परिषद् का काम इसकी दोनों हैसियतों में ठीक-ठीक चले, इसके लिये यह सिर्फ सम्भव ही नहीं, बल्कि आवश्यक है कि इसके विधान-निर्माण तथा व्यवस्था सम्बन्धी कामों में साफ-साफ भेद कर दिया जाये। हमारी राय में भिन्न-भिन्न दिन या एक ही दिन भिन्न-भिन्न समय दोनों कामों के लिये निर्धारित कर दिया जायो करे, जिससे कि कोई उलझन और पेचीदगी न पैदा हो।

4—तीसरा विषय

6. हम सब इस बात से सहमत हैं कि, जैसा कि इस विषय की शब्दावली से सूचित होता है, भारतीय रियासतों का प्रतिनिधित्व करने वाले परिषद् के सदस्यों को उन सभी दिनों में असेम्बली की कार्यवाही में भाग लेने का अधिकार है, जो विधान-निर्माण सम्बन्धी काम के लिये निर्धारित किये गये हों। इसके अलावा व्यवस्था सम्बन्धी काम के लिये जो दिन निर्धारित किये गये हों उन दिनों पर भी, उन विषयों के बारे में जिनके सम्बन्ध में रियासतें संघ में शामिल हुई हों,

असेम्बली की कार्रवाई में भाग लेने का उन्हें अधिकार है। यद्यपि विधान-परिषद् को यह हक है कि उन विषयों के बारे में, जिनके सम्बन्ध में रियासतें संघ में शामिल नहीं हुई हैं, वह उन्हें कार्रवाई में भाग न लेने दे या कोई प्रतिबंध लगा दे, पर हम सिफारिश करेंगे कि ऐसी कार्रवाई में भाग लेने पर नियम द्वारा कोई रोक या प्रतिबंध न लगाया जाये।

5–चौथा विषय

7. जहां तक विधान-निर्माण का सम्बन्ध है, विधान-परिषद् एवं इसके अध्यक्ष द्वारा बनाये हुये वर्तमान विधि सम्बन्धी नियम और स्थायी आज्ञाएं काफी हैं और समय-समय पर उनमें ऐसे ही संशोधनों की जरूरत पड़ेगी जो कि अनुभव के आधार पर आवश्यक समझे जायें। जहां तक विधान परिषद् के औपनिवेशिक व्यवस्थापिका की हैसियत से काम करने का सवाल है, 'भारतीय स्वतंत्रता (क) कानून 1947' की धारा 8 (2) के अनुसार, साधारणतः आवश्यक परिवर्तनों के साथ ग्रहीत ''भारत सरकार के कानून'' के प्रासंगिक आदेश तथा भारतीय व्यवस्थापिका के नियम और स्थायी आज्ञाओं के अनुसार ही चलना होगा। किन्तु उन विषयों के सम्बन्ध में, जो परिषद् द्वारा किये जाने वाले दोनों तरह के कार्यों में समान रूप से आते हों, इन नियमों और स्थायी आज्ञाओं में संशोधन करना पड़ेगा और आवश्यक परिवर्तनों के साथ इन्हें ग्रहण करना होगा। हमारे हाथ में जो समय था उसके अन्दर उन नियमों और स्थायी आज्ञाओं की विस्तारपूर्वक छान बीन करने का प्रयत्न हम न कर पाये, जिससे कि आवश्यक संशोधनों और परिवर्तनों के सम्बन्ध में सुझाव दे पाते। इस सम्बन्ध में हम यह सुझाव देंगे कि अध्यक्ष की आज्ञानुसार इनमें संशोधन किया जाये और आवश्यक परिवर्तनों के साथ इन्हें स्वीकार किया जाये।

8. हम तीन महत्वपूर्ण विषयों का उल्लेख करना चाहते हैं, जो उस प्रमुख प्रश्न से जिस पर विचार करने का भार हमें सुपुर्द किया गया है, सम्बंध रखने के अतिरिक्त, विधान-परिषद् या इसके अध्यक्ष द्वारा नये नियम या स्थायी आज्ञाओं के बनाये जाने और वर्तमान नियमों और स्थायी आज्ञाओं में संशोधन किये जाने के प्रश्न से भी सम्बंध रखते हैं।

9. भारत सरकार के कानून 1935 की धारा 22 की सभापति के निर्वाचन से सम्बंध रखने वाली व्यवस्थाओं को छोड़ दिया गया है। इस कानून में किये गये परिवर्तनों को इसके साथ मिलाकर पढ़ने से साफ है कि जब परिषद्

औपनिवेशिक व्यवस्थापिका की हैसियत से काम करती हो, उस समय भी उसका सभापतित्व वही व्यक्ति कर सकता है जो विधान-परिषद् का अध्यक्ष है, जब तक कि विधान-परिषद् के विधि सम्बन्धी नियमों में ही एक ऐसे अधिकारी के निर्वाचन की व्यवस्था न कर दी जाये, जो इसका उस समय सभापतित्व करे जबकि यह व्यवस्था सम्बंधी काम करती हो। यह स्मरण रखना होगा कि यद्यपि विधान-परिषद् दो तरह के काम करती है, फिर भी यह एक ही है और इसका एक ही अध्यक्ष हो सकता है, जो इसके विचार कार्य-सम्बंधी तथा शासन-प्रबंध सम्बंधी दोनों ही कार्यों का सर्वेसर्वा है। फिर भी हम इस बात की ओर निर्देश करेंगे कि वैधानिक दृष्टि से यह अनुपयुक्त होगा कि वह व्यक्ति जो विधान-परिषद् का उस समय सभापतित्व करता हो, जब कि वह हैसियत औपनिवेशिक व्यवस्थापिका के समवेत हो, वह औपनिवेशिक सरकार का मंत्री भी हो। यह स्पष्ट रूप से वांछनीय है कि इस अव्यवस्था को दूर करने के लिए कार्रवाई की जानी चाहिए। हमारा सुझाव है कि इस उद्देश्य के लिए निम्नलिखित दो विकल्पों पर विचार किया जा सकता है।

(क) विधान-परिषद् का अध्यक्ष ऐसा व्यक्ति होना चाहिए, जिसका सारा समय परिषद् के कार्यों में लगे, चाहे परिषद् विधान-निर्माण सम्बंधी कार्य करती हो या बहैसियत औपनिवेशिक व्यवस्थापिका के काम करती हो।

(ख) अगर विधान-परिषद् का अध्यक्ष मंत्री है, तो विधान-परिषद् के नियमों में एक पदाधिकारी के निर्वाचन की व्यवस्था होनी चाहिए, जो कि परिषद् का उस समय सभापतित्व करे, जबकि वह बहैसियत औपनिवेशिक व्यवस्थापिका के काम करे।

10. आवश्यक परिवर्तनों के साथ ग्रहीत भारत सरकार के कानून के अनुसार औपनिवेशिक व्यवस्थापिका के बुलाने और या स्थगित करने का अधिकार गवर्नर जनरल को प्राप्त है। हम समझते हैं कि उन अधिकारों के अनुसार जो न्यायत: विधान-परिषद् के हैं, तथा इसके द्वारा बनाये नियमों के अनुसार एवं इस दृष्टि से कि परिषद् के दोनों कार्यों में समुचित समन्वय रहे, परिषद् को बहैसियत व्यवस्थापिका के बुलाने का और स्थगित करने का अधिकार भी अध्यक्ष को ही होना चाहिये। इस उद्देश्य के लिये विधान-परिषद् के विधि सम्बन्धी नियमों में एक

नियम जोड़ा जाना चाहिये और भारत सरकार के कानून की तत्सम्बन्धी धारा को आवश्यक परिवर्तनों के साथ स्वीकार कर लेना चाहिये, ताकि इसे नवीन नियम के अनुरूप किया जा सके।

11. वर्तमान में औपनिवेशिक सरकार के पांच मंत्री ऐसे हैं, जो विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं। इन मंत्रियों को विधान-परिषद् की कार्रवाई में जबकि वह बहैसियत व्यवस्थापिका के समवेत हो, भाग लेने का अधिकार है; यद्यपि उन्हें मत देने का अधिकार नहीं होगा। किन्तु इन सदस्यों को विधान-परिषद् की कार्रवाई में, जब कि वह विधान-निर्माण सम्बन्धी कार्य के लिये समवेत हो तो भाग लेने का अधिकार नहीं है। फिर भी हमारी सिफारिश है कि विधान परिषद के नियमों में उपयुक्त परिवर्तन करके इन सदस्यों को विधान-परिषद की विधान निर्माण संबंधी कार्रवाई में उपस्थित रहने और भाग लेने का अधिकार दिया जाये; यद्यपि उनको वहां तब तक मत देने का अधिकार नहीं होगा, जब तक कि विधान-परिषद् के वे सदस्य न बन जायें।

आपका

जी.वी. मावलंकर

चेयरमैन

नई दिल्ली;

25 अगस्त, 1947 ई.

Con. 3. 5.10.47
750

अंक 5
संख्या 10

शुक्रवार
29 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1. सदस्यों का शपथ ग्रहण करना 1
2. हाउस कमेटी के सदस्यों का चुनाव 1
3. विधान-मस्विदे की जांच-कमेटी 2
4. विधान-परिषद् की कार्यवाही सम्बन्धी कमेटी की रिपोर्ट 28

भारतीय विधान-परिषद्

शुक्रवार, 29 अगस्त सन् 1947 ई.

माननीय डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद जी की अध्यक्षता में भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल नई दिल्ली में प्रात:काल दस बजे आरम्भ हुई।

सदस्यों का शपथ ग्रहण करना

निम्न सदस्य ने शपथ ग्रहण की:

लेफ्टी. कर्नल बृजराजनारायण (ग्वालियर)।

हाउस कमेटी के सदस्यों का चुनाव

***श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार: जनरल): श्रीमान् जी, मैं निम्न प्रस्ताव रखता हूं:

> निश्चय किया जाता है कि यह विधान-परिषद् अपने नियम 44 (2) में दी गई विधि के अनुसार हाउस कमेटी के लिये दो सदस्य चुने।

श्रीमान् जी, जैसाकि आपको विदित है कि हमारे दो सदस्य श्री अब्दुलगफ्फारखां तथा श्री ए. के. दास जो कि इस कमेटी के सदस्य थे वे इस सभा के सदस्य नहीं रहे। नियमों के अनुसार वे हाउस कमेटी के भी सदस्य नहीं रहे। अत: दो खाली स्थान हैं जिनकी पूर्ति माननीय अध्यक्ष द्वारा निर्धारित विधि से की जायेगी।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** हाउस कमेटी में दो खाली जगहों के लिये आज सायंकाल के पांच बजे तक नामज़दगी होगी और यदि आवश्यकता हुई तो कल सायंकाल को 3 और 4 बजे के बीच कौंसिल भवन की पहली मंजिल में अन्डर सेक्रेटरी के कमरे में (कमरा नं. 25) आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर एकात्मक परिवर्तनीय मत द्वारा चुनाव होगा।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

विधान-मस्विदे की जांच-कमेटी

***श्री सत्यनारायण सिनहाः** श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव रखता हूं किः

यह परिषद् निश्चय करती है कि परिषद् के कार्यालय में परिषद् में किये गये निर्णयों के आधार पर तैयार किये गये भारत के विधान के मस्विदे की जांच करने तथा उसमें आवश्यक संशोधनों का सुझाव रखने के लिए सर्वश्री–

(1) अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर,
(2) माननीय एन. गोपालस्वामी आयंगर,
(3) माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर,
(4) श्री के.एम. मुन्शी,
(5) सैयद मुहम्मद सादुल्ला,
(6) सर बी.एल. मित्तर और
(7) श्री डी.पी. खेतान की एक समिति नियुक्त की जाये।

श्रीमान् जी, आपको स्मरण होगा कि पिछली बार जब हम संघ-विधान तथा प्रान्तीय विधानों पर वाद-विवाद कर रहे थे, आपके सुझाव पर सभा ने यह स्वीकार किया था कि इस सभा में जो निर्णय हम करते हैं उनको उचित रूप-रेखा देने के लिये एक मस्विदा तैयार करने वाली समिति बनाई जाये। इस लक्ष्य को विचार में रखते हुए यह कमेटी नियुक्त की जा रही है। मैं आशा करता हूं कि सभा इन नामों को स्वीकार करेगी।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल): अध्यक्ष महोदय, एक वैधानिक आपत्ति है। जैसा कि आपको विदित है, श्री सैयद मुहम्मद सादुल्ला सदस्यता से हट गये थे और सिलहट के चुनाव के फलस्वरूप उनका अभी हाल ही में पुनः निर्वाचन हुआ है। उन्होंने अभी सदस्यों के रजिस्टर में हस्ताक्षर भी नहीं किये हैं और न सभा में अपना स्थान ग्रहण किया है। इसलिये मेरे विचार से उनको किसी समिति में चुने जाने का अधिकार प्राप्त नहीं है। श्रीमान् जी, क्या आप कृपा कर सभा को यह बतायेंगे कि जहां तक श्री सादुल्ला का सम्बन्ध है, प्रस्ताव वैधानिक है?

***अध्यक्षः** रजिस्टर में हस्ताक्षर करने के पश्चात् वे कार्य प्रारम्भ करेंगे।

***बेगम ऐजाज़ रसूल** (संयुक्त प्रान्तः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, यद्यपि मैंने इस प्रस्ताव की सूचना नहीं दी है, मैं आपकी आज्ञा से यह पेश करना चाहूंगी

कि यह सभा माननीय अध्यक्ष को किसी भी अन्य व्यक्ति को समिति का सदस्य नामज़द करने का अधिकार प्रदान करती है, यदि कोई सदस्य जो उस समिति में नामज़द किया जा चुका है और किसी कारणवश भाग नहीं ले सकता है। मैं आशा करती हूं कि सभा मेरे इस संशोधन को स्वीकार करेगी और माननीय प्रधान को यह अधिकार प्रदान करेगी।

*__अध्यक्षः__ क्या आपने इस संशोधन की सूचना दी है?

*__बेगम ऐज़ाज़ रसूलः__ मैंने अभी कहा था कि मैंने विधिवत इस प्रस्ताव की सूचना नहीं दी है, लेकिन मैं आशा करती हूं कि सभा मेरे प्रस्ताव को कृपया स्वीकार करेगी।

*__अध्यक्षः__ मैं इस विषय पर थोड़ी देर बाद विचार करूंगा। इस अरसे में अन्य संशोधन पेश किये जा सकते हैं।

*__माननीय श्री बी.जी. खेर__ (बम्बईः जनरल): अध्यक्ष महोदय, जिस संशोधन की मैंने सूचना दी है वह इस विचार से रखा गया है कि वह प्रस्तावक महोदय श्री सत्यनारायण सिनहा के मन्तव्य को और भी अधिक स्पष्ट रीति से प्रकट करे और प्रभावित करे। वह इस प्रकार है किः

> ''परिषद् के कार्यालय में, परिषद् द्वारा किये गये निर्णयों को प्रभाव देने के लिये तैयार किये गये भारत के विधान के मस्विदे की जांच करना तथा उसमें आवश्यक संशोधनों के लिये सुझाव रखने के लिये' शब्दों के स्थान में निम्न शब्द रख दिये जायें:
>
> 'परिषद् में किये गये निर्णयों को प्रभाव देने के लिये वैधानिक परामर्शदाता द्वारा तैयार किये गये भारत के विधान के मूल विषय के मस्विदे की जांच करना, मय उन सब विषयों के जो उसके लिये सहायक हैं या जिनकी ऐसे विधान में व्यवस्था करनी है और कमेटी द्वारा पुनरावलोकन किये विधान के मसविदे के मूल रूप को परिषद् के समक्ष विचारार्थ उपस्थित करना'।''

यह दो प्रकार की व्यवस्थायें रखता है। पहला परिषद् द्वारा किये गये निर्णयों को प्रभाव देने के आशय से वैधानिक परामर्शदाता मस्विदा तैयार करेंगे। उस मस्विदे की यह कमेटी जांच करेगी और श्रीमान् जी जो निर्णय हमने किये हैं उनसे सम्बन्ध

[माननीय श्री बी.जी. खेर]

रखते हुये समस्त प्रश्नों पर हमने विचार नहीं किया है और न उन पर विचार किया है जो कि बहुधा आवश्यक होते हैं और जिनको विधान में रखना चाहिये। उदाहरण के लिये, हमने एक सिद्धान्त निर्धारित किया है कि प्रान्तीय विधान में जो कुछ कार्यवाही करनी है वह गवर्नर के नाम से होगी। ऐसी बहुत-सी बातें हैं जिनको इस निर्णय के प्रभावान्वित करने के लिये रखना है, जिसको परिषद् ने निश्चय किया है और जिसको भारत सरकार के एक्ट में स्थान प्राप्त हो चुका है। ऐसी व्यवस्थायें हैं जो अन्य विधानों में सहायक रूप में हैं तथा कुछ अन्य व्यवस्थायें हैं जिनको बहुधा विधान में रखा जाता है। हमारे मस्विदे में इन सबको शामिल किया जायेगा, यद्यपि उन पर यहां अब तक वाद-विवाद या निर्णय नहीं हुआ हो। मैं इस संशोधन पर कोई लम्बा वक्तव्य देना नहीं चाहता हूं। हमारे लिये प्रत्येक आवश्यक विषय पर वाद-विवाद करना तथा उसका निर्णय करना सम्भव नहीं था। परन्तु उनके बिना विधान पूर्ण नहीं होगा। हमने लगभग सभी महत्वपूर्ण विषयों पर निर्णय कर लिया है। इनको प्रभाव दिया जायेगा, परन्तु मस्विदे में ऐसी बातें भी होंगी जो इनकी सहायक हैं और ऐसी भी बातें होंगी जो कि अन्य रूप में आवश्यक हैं। इन सब विषयों सहित मस्विदे को आवश्यक रूप से इस सभा के समक्ष वाद-विवाद तथा निर्णय के लिये रखना है। श्रीमान् जी, मैं आशा करता हूं कि सभा इस संशोधन को स्वीकार करेगी।

***अध्यक्षः** पहले उन संशोधनों पर विचार किया जायेगा जो प्रस्ताव के औचित्य पर हैं।

***श्री सत्यनारायण सिन्हाः** श्रीमान् जी, मैं संशोधन को स्वीकार करता हूं।

***श्री ए.पी. पट्टानी** (पश्चिमी भारतीय-रियासतों का समूह)**:** अध्यक्ष महोदय, मैं निवेदन करना चाहता हूं कि प्रस्ताव जो पेश किया जा रहा है, उसे छोटा कर देना चाहिये और केवल यह कह देना चाहिये कि वैधानिक परामर्शदाता को विधान का मस्विदा बनाने में सहायता देने के लिये यह समिति नियुक्त की जाये। मुझे इस बात पर आश्चर्य है कि विधान का मस्विदा बनाने के काम को क्या यह आवश्यक है कि इतनी बड़ी समिति को सौंपा जाये। यह बहुत अच्छा होगा कि वैधानिक परामर्शदाता को जो कि अनुभवी परामर्शदाता हैं, यह काम दे दिया जाये क्योंकि एकमात्र वही सम्पूर्ण विवरण से परिचित हैं। मस्विदा भागों में नहीं बनेगा वरन् एक प्रति में बनेगा। अतः वे सदस्य जिनको कमेटी में नियुक्त किया जाता है विधान बनाने में उनके (परामर्शदाता) सहायक होंगे तथा उन संशोधनों के आधार

पर जो यहां सभा द्वारा स्वीकार किये गये हैं विधान का मस्विदा बनाने में सहायक होंगे। अतः जांच करने इत्यादि के अतिरिक्त हाउस का केवल यह कहना आशय की अच्छे प्रकार से पूर्ति करेगा कि यह कमेटी वैधानिक परामर्शदाता को विधान का मस्विदा बनाने में सहायता करे।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास: जनरल): श्रीमान् जी, मैं भी पूर्व वक्ता द्वारा दिये गये सुझाव के पक्ष में हूं। यह ठीक नहीं है कि कार्यालय पर पूर्णतया कार्य सौंप दिया जाये, अफसर चाहे कितने ही कुशल क्यों न हों। हमने अनेकों विषयों पर निर्णय किये हैं जो कि हमारे समक्ष विधान के मस्विदे के रूप में रखे गये हैं। यह हमारे अधिकार की बात है कि हम विधान बनाने के लिये अग्रगण्य व्यक्तियों की समिति नियुक्त करें। ऐसी बहुत-सी बातें हैं जिनके मस्विदे में जो कि हमारे समक्ष रखा गया था, हमने संशोधन पेश किये हैं, अन्य बातों को स्वीकार किया है जो साधारणतया विधान में पाई जाती हैं और जो मान्य हैं तथा सूचियों पर भी हमें विचार करना है। उस अफसर के निर्णय पर जिसे इसे बनाना है, सूचियों को छोड़ना चाहे वे अच्छी हैं या बुरी गलत है। समय-समय पर हम सदस्यों से निर्देश प्राप्त करते रहे हैं। उदाहरण के लिये अनेकों बार माननीय अध्यक्ष महोदय ने सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर से पूछा है कि उनकी क्या राय है और इसी प्रकार अनेकों अन्य सदस्यों ने सहायता दी है। उनके पास सब संशोधन हैं जो कि रखे गये हैं। निःसन्देह संशोधन विधिवत् पेश नहीं किये गये लेकिन उन पर विचार किया जायेगा। इसलिये मैं सुझाव रखता हूं कि यह समिति प्रस्तावित कानून का मस्विदा पेश करे जिस पर एक-एक वाक्यखण्ड को लेते हुए इस परिषद् द्वारा विचार किया जायेगा।

मैं इस प्रकार से माननीया सदस्या द्वारा रखे गये सुझाव से भी सहमत हूं कि यदि किसी सदस्य को आने की सुविधा न हो और कार्य रुक न सकता हो तो अध्यक्ष को ऐसे सदस्यों की जगह भरने तथा ऐसे अतिरिक्त सदस्य लेने (co-opt) का अधिकार होना चाहिये जो कि इस उत्तरदायित्व को संभालने के लिये उद्यत हों। श्रीमान् जी, यदि सभा स्वीकार करती है तो मैं यह अधिकार भी प्रधान के लिये चाहूंगा। दो या तीन सदस्यों का यह काम नहीं है कि वे सम्मिलित हों और पूर्ण उत्तरदायित्व का भार संभालें। उदाहरणार्थ, श्री सन्तानम् यहां इन विषयों में बहुत रुचि लेते रहे हैं। वे दिल्ली में ही रहते हैं। इन सज्जनों से उस दशा में उपस्थित होने की प्रार्थना करनी चाहिये, जब कि अन्य सदस्यों को उपस्थित

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

होने की सुविधा प्राप्त न हो। इसलिये प्रधान को सामान्य अधिकार सौंपने के सहित श्री खेर का संशोधन स्वीकार किया जाये।

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रास: जनरल): मैं श्री खेर के संशोधन का समर्थन करता हूं, लेकिन मैं कुछ महत्वपूर्ण विषयों के बारे में कुछ सूचना प्राप्त करना चाहूंगा। हमने कुछ सारयुक्त बातों पर अभी तक इस सभा में निर्णय नहीं किया है। उदाहरणार्थ, हमें अभी नागरिकता की व्याख्या, विधान परिवर्तन की पद्धति, संकटकालीन अधिकार तथा विधान के अर्थ-सम्बन्धी वाक्य-खण्डों पर निर्णय करना है। मैं अब यह जानना चाहूंगा कि यह कमेटी अभी से कार्य आरम्भ कर देगी या इसे जब तक कि हम अगले अधिवेशन में इन विषयों पर निर्णय कर चुकें तब तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। इसको स्पष्ट कर देना चाहिये, नहीं तो यह समिति शान्त बनी रहेगी और कुछ भी कार्य नहीं करेगी। मैं तो यह निवेदन करूंगा कि यह समिति समस्त वाक्य-खण्डों का मस्विदा बनाना आरम्भ कर दें। उनको उन विषयों को जिन पर निर्णय हो चुका है बिल्कुल स्पष्ट रखना चाहिये। दूसरे भाग बड़े छापे में या टेढ़े छापे (*इटैलिक्स*) में रखे जा सकते हैं जिससे कि जब हम यहां सम्मिलित हों, हम इन दो भागों के लिये भिन्न-भिन्न पद्धति ग्रहण करें। जहां तक उन भागों से सम्बन्ध है, जिन पर हम निर्णय कर चुके हैं, उनके केवल मौखिक भाग की जांच की जायेगी और सिद्धान्त के कोई सारयुक्त संशोधन स्वीकार नहीं किये जायेंगे। जहां तक उन भागों से सम्बन्ध है, जिनमें वे विषय हैं जिन पर निर्णय नहीं हुआ है, हम सिद्धान्तों पर भी संशोधन रखेंगे। अत: मेरे विचार से इस समिति को उस समय तक प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है जब तक कि हम उन विषयों पर निर्णय न कर चुकें जिन पर अभी तक निर्णय नहीं हुआ है।

वे एक प्रयोगात्मक मस्विदा बनायें और पूरा मस्विदा सभा के समक्ष लाया जाये। फिर हम उन भागों पर, जो निश्चित हो चुके हैं, मौखिक संशोधनों पर विचार करें और विधान के उन भागों पर जिन पर प्रथम बार नये रूप से विचार करना है हम सिद्धान्त के प्रस्ताव रख सकते हैं। इस प्रकार हम सभा का समय बचा सकते हैं। अन्यथा उन सब नई बातों पर विचार करने के लिये एक और अधिवेशन करने से सदस्यों को बहुत परेशान होना पड़ेगा। अत: मैं आशा करता हूं कि जब हम नवम्बर में सम्मिलित हों तब हमारे पास मय उन सब विषयों के जिन पर हमने निर्णय कर लिया है तथा अन्य विषय जिन पर अभी निर्णय नहीं किया

है, पूर्ण प्रस्तावित कानून का मस्विदा तैयार हो जिससे कि हम इस पद्धति को ग्रहण कर सकें। मैं आशा करता हूं कि यह मान्य होगा। श्री खेर के संशोधन की व्याख्या और अधिक स्पष्ट रूप में, जैसा कि मैंने बताया है, करनी चाहिये।

श्री सेठ गोविन्ददास (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): सभापति जी, मैं इस सम्बन्ध में जानना चाहूंगा कि एक बहुत बड़ा मसला अभी तक तय नहीं हुआ है और वह यह है कि हमारी भाषा क्या रहेगी। आपने यह कहा था कि जो विधान हम तैयार करेंगे, वह मूल में हमारी राष्ट्रीय भाषा में होगा और उसका अनुवाद चाहें तो अंग्रेजी में हो सकता है। तो मैं यह जानना चाहता हूं कि जो कमेटी बनाई जा रही है उस कमेटी के काम में हमारी कौन-सी भाषा रहेगी? इस पर भी विचार होगा या नहीं? दूसरी बात मैं जानना चाहता हूं कि जो बिल का मस्विदा हम तैयार कर रहे हैं वह जैसा आपने उस समय कहा था वह मूल में हमारी भाषा में होगा या मूल में अंग्रेजी में होगा? मैं यह सुझाव रखना चाहता हूं कि इन विषयों पर भी इस समय निर्णय हो जाना चाहिये और मूल में जो हमारा मस्विदा हो वह हमारी राष्ट्रीय भाषा में होना चाहिये। उसका अंग्रेजी अनुवाद हो सकता है। साथ ही हमारी कौन सी भाषा रहेगी, यह भी इस समय निर्णय हो जाना चाहिये।

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): अध्यक्ष महोदय, मैं कुछ बातें रखने के लिये खड़ा हुआ हूं, क्योंकि मेरे मित्र श्री सन्तानम् ने कुछ ऐसे सुझाव रखे हैं जो कि मुझको अवैधानिक प्रतीत होते हैं। श्री सन्तानम् ने कहा है कि मस्विदा तैयार करने वाली समिति का कार्य यह होना चाहिये कि वह इस प्रकार से मस्विदा तैयार करे कि उन वाक्यखण्डों को, जो हमारे निर्णय पर आश्रित हैं, पहचानने के लिये शेष वाक्यखण्डों से किसी भिन्न प्रकार से रखें। आगे उन्होंने यह भी कहा कि उन वाक्यखण्डों पर, जो कि हमारे यहां किये गये निर्णयों पर आश्रित हैं, केवल मौखिक संशोधन रखे जायें तथा इन वाक्यखण्डों में परिवर्तन करने के लिये कोई सारभूत संशोधन रखने की आज्ञा नहीं होनी चाहिये। मैं निवेदन करता हूं, श्रीमान् जी, कि इस प्रकार सभा के अधिकारों में कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया जा सकता है (*वाह, वाह*)। वह एक ही बात है चाहे आप अब निर्णय करें। जब कि सारा मसविदा आपके समक्ष होगा तो उसे देखकर तो आपके लिये भी यह आवश्यक हो जाता है कि जो कुछ निर्णय आप कर चुके हैं उनको फिर से लें। मेरी राय से निश्चित प्रतिबन्ध वांछनीय नहीं है। मैं केवल इस विशेष बात पर आग्रह करने के लिये खड़ा हुआ हूं।

[श्री एम.एस. अणे]

दूसरी बात यह है कि एक ऐसा सुझाव रखा गया है कि अध्यक्ष को यह अधिकार होना चाहिये कि वे सूची में दिये गये नामों के अतिरिक्त जिसको चाहें नामजद करें। साधारणतया कोई व्यक्ति इस पर आपत्ति नहीं करेगा। हमने कुछ नाम देने का विचार क्यों किया, इसका प्रमुख कारण यह है कि इस प्रकार के विषय में हम अध्यक्ष महोदय को गहन उत्तरदायित्व से मुक्त करें। उनको बड़ी बुरी स्थिति में रखना होगा यदि दस आदमी उनके पास जायें और कहें ''मेरे ख्याल से मैं इस विषय के लिये बड़ा योग्य व्यक्ति हूं, अतः मेरा नाम वहां होना चाहिये''। यह अच्छा है कि सूची में जो नाम दिये गये हैं उनको स्वीकार कर लिया जाये। किसी व्यक्ति के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह सुझाव द्वारा समिति की सहायता करने के लिये कमेटी का सदस्य हो। अतः मैं उस विशेष सुझाव का विरोध करता हूं जो कि सदस्या ने रखा है और जिसका समर्थन मेरे माननीय मित्र श्री अनन्तशयनम् आयंगर द्वारा हुआ है।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, जैसा कि मैंने समझा है इस कमेटी का उद्देश्य उस कार्यवाही को लेकर तुरन्त ही कार्य आरम्भ करना है, जिसको इस सभा ने स्वीकार कर लिया है। जिसका आशय यह है कि संघ तथा प्रान्तीय विधानों से सम्बन्धित इस सभा ने जितने प्रस्ताव पास किये हैं उनको उचित रूपरेखा दी जायेगी, सिवाय उन विषयों के जैसे भाषा, नागरिकता और पहले भाग के सिद्धान्त जिनको अभी स्थगित रखना है। समिति इन विषयों पर वाद-विवाद नहीं कर सकती है जब तक कि इन अथवा अन्य विषयों पर, जिन पर कि अभी तक निर्णय नहीं किया गया है, सभा अगले अधिवेशन में पूर्ण रूप से वाद-विवाद न कर ले। परन्तु इससे कमेटी के कार्य करने में बाधा नहीं हो सकती है। अतः श्री सन्तानम् की आशंकायें विचारणीय नहीं हैं। इस कमेटी का उद्देश्य तुरन्त ही अपना कार्य आरम्भ कर देना है, अतः श्रीमान् जी, मैं निवेदन करता हूं कि श्री सन्तानम् को आशंका करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

दूसरे, जैसा कि श्री पट्टानी ने सुझाया है, मैं भी सोचता हूं कि एक विशेषज्ञ द्वारा विधान तैयार किया जा सकता है। मैं स्वयं यह सोचता हूं कि उसकी जांच करने के लिये तीन सदस्यों की समिति यथेष्ट होगी। जैसा कि कहा गया है कि कुछ सदस्य अनुपस्थित हो सकते हैं इसलिये सात सदस्यों का सुझाव रखा गया है। मैं इसके पक्ष में नहीं हूं कि अध्यक्ष महोदय से उन लोगों के स्थान में जो अनुपस्थित हों कोई और नाम देने के लिये कहा जाये। केवल तीन ही काफी

होते, पांच उससे भी अधिक संख्या है और सात और भी अधिक। अतः मैं महसूस करता हूं जैसा श्री खेर तथा श्री सन्तानम् ने बताया है कि किसी सदस्य की अनुपस्थिति के कारण स्थान रिक्त हो जाने पर अन्य किसी व्यक्ति को रखने का अधिकार अध्यक्ष को दिये बिना ही इन नामों को रखा जाये और नामों सहित श्री खेर के संशोधन को स्वीकार किया जाये।

*__डा. बी. पट्टाभि सीतारमैया__ (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, प्रस्ताव के शब्दों से जो अर्थ-बोध होता है उससे अधिक अर्थ व्यक्त हम नहीं कर सकते हैं, अतः जो कुछ श्री सन्तानम् ने सुझाया है उससे हम नहीं घबराये हैं। एक क्रियात्मक राजनीतिज्ञ होने के नाते वे आशा करते हैं कि जो प्रस्तावित कानून तैयार हो वह पूर्ण हो तथा कुछ अंशों में पूर्ण और कुछ अंशों में अपूर्ण नहीं हो सकता और इसीलिये वे सोचते हैं कि प्रस्तावित कानून पूर्ण हो। जब वह पूर्ण रूप में तैयार हो जायेगा तब उनका सुझाव प्रयोगनीय होगा। प्रस्तावित कानून पूर्ण रूप में तैयार होगा या नहीं तथा उनके सुझाव को प्रयोग में लाने दिया जाये या नहीं—यह वाद-हेतु है जिस पर हमें विचार करना है। यदि उनके सुझाव को स्वीकार किया जाता है तो इससे पूरी सभा के अधिकार छीनने का आशय होगा और उपसमिति को एक प्रकार की विधान-परिषद् का प्रतिनिधित्व प्राप्त समिति बनाना होगा—एक ऐसा कार्य जो किसी प्रकार भी वांछनीय नहीं है। जैसा कि श्री सन्तानम् ने स्वयं निश्चित रूप से बयान किया है कि संघ-विधान-कमेटी के पहले तीन परिच्छेद और उसीके अन्तिम दो परिच्छेद तथा संघीय, प्रान्तीय और सहगामी तथा संघ-अधिकार-समिति की संघ-सूची का अच्छा-सा आधा भाग ये सब मिलकर एक बड़ा मोटा भाग बनते हैं, जिसको छोड़ दिया गया है और जिस पर अभी समस्त सभा द्वारा विचार करना है। उदाहरण के रूप में संघ-विधान-समिति तथा अनुकरणीय प्रान्तीय विधान समिति की एक संयुक्त बैठक हुई, जिसमें भाषा-आधार पर प्रान्तों के लिये एक उप-समिति नियुक्त की गई और इन दोनों समितियों की एक संयुक्त समिति ने उसकी सिफारिशों पर विचार किया है। इसके बाद उसका क्या होगा? क्या वह त्रिशंकु के समान हवा में लटका रहेगा, न स्वर्ग में न पृथ्वी पर? क्या उसको छोड़ दिया जाये? मैं यह सब एक उदाहरण के रूप में रख रहा हूं न कि इसलिये कि मैं इस विषय पर किसी प्रिय सिद्धान्त के पक्ष का समर्थक हूं। इस विषय को उदाहरण के रूप में मानना चाहिये। मैं पूछता हूं ''जब 6 नवम्बर को इस परिषद् का पुनः अधिवेशन होता है तो वह किस आशय से है? क्या उसके सामने पूर्ण विवरण सहित समूचा प्रस्तावित कानून रखा जायेगा और तब

[डा. बी. पट्टाभि सीतारमैया]

वह उस पर विचार करेगी?'' इस हालत में उसमें ऐसे भाग भी होंगे जिन पर प्राथमिक रूप में इस सभा द्वारा विचार ही नहीं किया गया हो। यदि ऐसा नहीं है तो नवम्बर के छठे अधिवेशन में छूटे हुये विषयों पर विचार करना होगा और उस हालत में उस समय तक प्रस्तावित कानून तैयार नहीं हो सकता है। यह वह कठिनाई है जो तर्क के आधार पर स्वयं मेरे सामने उपस्थित होती है। अत: मैं अध्यक्ष महोदय से निवेदन करूंगा कि वे स्थिति को स्पष्ट करें और यदि सम्भव हो सकता है तो उन समस्त विषयों को पूर्ण करने के लिये, जिन पर कि अभी तक विचार नहीं किया गया है, इस सभा का अधिवेशन सितम्बर या अक्टूबर के महीने में बुलायें। और तब जो सामग्री मस्विदा बनाने वाले या मस्विदा-समिति या जांच-समिति को दी जायेगी, वह यथेष्ट तथा पूर्ण होगी और तभी वे इस विषय को ले सकेंगे। मैं इस सुझाव को इसलिये रख रहा हूं कि जो कुछ किया जायेगा उसका स्पष्ट विचार हमारे सामने हो और यदि सम्भव हो सके तो कार्य समाप्त करने के हेतु उन विषयों पर, जिनको छोड़ दिया गया है, विचार करने के लिये सितम्बर या अक्टूबर में अधिवेशन बुलाने के लिये अध्यक्ष महोदय से अनुरोध करें।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री खेर द्वारा पेश किया गया संशोधन बड़ी सावधानी से विचार करने योग्य है, तथा इस सिलसिले में जो बातें श्री सन्तानम् ने रखी हैं उनकी भी सूक्ष्म जांच करनी चाहिये। मुझे विश्वास है कि इस सभा के अनेकों सदस्यों को अभी यह बात बिल्कुल स्पष्ट नहीं हुई है कि अगले अधिवेशन में क्या होगा। श्री सन्तानम् कहते हैं कि संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट के एक भाग को अभी सभा ने लिया ही नहीं है। यह कोई नहीं जानता कि सभा उसे उसी रूप में स्वीकार करेगी या उसमें कुछ परिवर्तन करेगी। उन्होंने ऐसा सुझाव रखा था कि उन निर्णयों का, जो सभा द्वारा कर लिये गये हैं, मस्विदा बनाया जायेगा तथा सदस्यों को यह अधिकार होगा कि यदि आवश्यक हो तो वह उनमें छोटे-छोटे मौखिक परिवर्तन कर दे। मैं सभा को यह बताना चाहता हूं कि यह साधारण कानून-निर्माण का विषय नहीं है अथवा तत्सम्बन्धी कानून-निर्माण करने का विषय नहीं है जिसको एक व्यवस्थापिका बनाती है। आप स्वतंत्र भारत के लिये विधान के एक्ट बना रहे हैं, अत: आपमें से प्रत्येक का यह उत्तरदायित्व ही नहीं वरन् आवश्यक कर्तव्य है कि आप विधान-एक्ट की प्रत्येक व्यवस्था की सूक्ष्म जांच करें और स्वयं संतुष्ट

हो जायें कि वह राष्ट्र की आवश्यकता के अनुरूप है। यदि आप इस सभा के सदस्यों के अधिकारों में रुकावट डालेंगे और उन्हें केवल मौखिक परिवर्तन ही करने देंगे तो मेरे विचार से आप इस सभा तथा देश के साथ भी बड़े से बड़ा अन्याय करेंगे। ऐसा हो सकता है कि जब पूर्ण चित्र सभा के समक्ष उपस्थित किया जायेगा तो उन निर्णयों के आधार पर जिनको हम इस अरसे में तय करते हैं वह कुछ भाग में या प्रस्तावित कानून के कुछ वाक्यखण्डों में उग्र परिवर्तन करने के लिये प्रेरित हो सकती हैं। आप पहले से ऐसा कैसे कह सकते हैं कि जो मस्विदा आपके सामने आयेगा, आप उसमें केवल रस्मी या मौखिक परिवर्तन ही कर सकेंगे? क्या श्री सन्तानम् गम्भीरतापूर्वक यह सुझाव रखते हैं कि चूंकि संघ-अधिकार-समिति तथा अन्य समितियों की रिपोर्टों के सम्बन्ध में हमने कुछ सिद्धान्तों को इस सभा में स्वीकार कर लिया है इसीलिये वह एक स्वीकृत सिद्धान्त के समान प्रयोग में लाया जायेगा कि उन पर फिर विचार नहीं किया जा सकता है तथा किसी सदस्य को यह अधिकार नहीं है कि वह उन पर फिर विचार करे या स्वयं कानून की या स्वयं विधान की आवश्यकता के लिये उपयुक्त बनाने के लिये ऐसे परिवर्तन करे कि वह शेष व्यवस्थाओं के साथ रखने योग्य हो जाये? यदि उनके ये विचार हैं तो मैं उनसे प्रत्यक्ष रूप में विरोध करूंगा। मैं इस विषय पर आवश्यकता से अधिक जोर नहीं देना चाहता हूं कि आप देश के विधान एक्ट का निर्माण कर रहे हैं।

इसके पश्चात् श्रीमान् जी, मैं अपने माननीय मित्र श्री खेर के इस कथन से पूर्णतया सहमत हूं कि मसविदा बनाने का कार्य कुछ उत्तरदायी व्यक्तियों को सौंपा जाना चाहिये, क्योंकि रसोइयों की अधिक संख्या भोजन को बिगाड़ देती है और इन उत्तरदायी व्यक्तियों को यह विशिष्ट कार्य सौंपा जाये कि वे यह देखें कि अब तक जो निर्णय किये गये हैं वे सब, उन परिवर्तनों के सहित जो कि सुझाये गये थे, प्रस्तावित कानून में वास्तविक रूप में शामिल किये गये हैं। अध्यक्ष महोदय, मैं आपसे यह पूछना चाहता हूं कि आप हमें यह बतायें कि जब कानून का मस्विदा तैयार हो जायेगा और विधिवत् सभा के समक्ष विचारार्थ उपस्थित किया जायेगा तो आप इस सभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित एक जांच-समिति (Select Committee) बनायेंगे या नहीं जिसमें सब विभागों का प्रतिनिधित्व हो (सब विभागों से मेरा आशय रियासतों से भी है), और जो उस पूरे प्रस्तावित कानून का अध्ययन करे और उसकी जांच करे जो कि सभा के सामने विचारार्थ रखा जायेगा। मेरी राय में समस्त विषय पर विचार करने के लिये तथा विधान-एक्ट की प्रत्येक व्यवस्था की बड़ी

[पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र]

सावधानी तथा तत्परता से जांच करने के लिये एक समिति नियुक्त नहीं की जायेगी, तब तक मुझे विश्वास है कि हमें संतोषजनक फल प्राप्त नहीं होगा। हमें इस बात को नहीं भूल जाना चाहिये कि एक बार विधान-एक्ट पास हो जाने पर उसमें चार, छः महीने या एकाध वर्ष तक भी परिवर्तन नहीं किया जा सकता है। अतः हमें बहुत सावधानी तथा तत्परता से कार्य करना चाहिये जिससे हम उसे इतना निर्दोष बना सकें जितनी मनुष्य की सामर्थ्य है। मैं जानता हूं कि कोई मानवी संस्था पूर्ण नहीं है। लेकिन जहां तक हो सके हम पूर्ण सावधानी से देखें कि हमारा बनाया हुआ विधान-एक्ट यथासम्भव निर्दोष है। हम अपने निर्णय को उस समय तक स्थगित कर देंगे जब तक कि विधान-एक्ट की समस्त व्यवस्थाओं से सन्तुष्ट न हों। अतः भारतीय विधान पर अपनी स्वीकृति की अन्तिम मुहर लगाने से पूर्व मैं आपसे निवेदन करता हूं कि आप इस पर सावधानी से विचार करें कि आप इस बात पर हठ करेंगे या नहीं कि प्रस्तावित कानून के उपस्थित करने के लिये समस्त प्रस्तावित कानून की तथा उसकी सब व्यवस्थाओं की सावधानीपूर्वक जांच करने के लिये एक जांच-समिति होनी चाहिये और जब कि जांच-समिति की रिपोर्ट सभा के सामने आये तब आपको प्रस्तावित कानून की प्रत्येक धारा पर सावधानीपूर्वक वाद-विवाद करने का अन्तिम अवसर मिले। व्यक्तिगत रूप से मैं यह अनुभव नहीं करता हूं कि हमें अभी इतनी तीव्र गति से विधान के मस्विदे बनाने के कार्य को आरम्भ करने की आवश्यकता है जब कि हम उन नियमों को लागू कर रहे हैं जिनके द्वारा यह विधान-परिषद् व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करेगी। व्यवस्थापिका का कार्य करते हुये यह सभा सावधानी से विधान-एक्ट की व्यवस्थाओं की जांच कर सकती है।

उन भागों के सम्बन्ध में जो छोड़ दिये गये हैं, मैं सुझाव रखूंगा कि यदि यही हठ है कि नवम्बर के अधिवेशन तक पूरा मस्विदा इस सभा के सामने आ जाये, तो मस्विदा बनाने वाले इस धारणा को लेकर अग्रसर हो सकते हैं कि संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट के उस भाग के लिये जिस पर अभी तक सभा द्वारा वाद-विवाद नहीं हुआ है या जो छोड़ दिया गया है, सभा की स्वीकृति है। यदि हम यह अनुभव करते हैं कि संघ-अधिकार-समिति की सिफारिशें अन्त में सभा की स्वीकृति प्राप्त नहीं कर सकेंगी तो हम उनमें परिवर्तन कर देंगे और यदि बाद में सिद्धान्त स्वीकार नहीं हुये तो उसी के अनुसार मस्विदे में भी परिवर्तन कर दिया जायेगा। अतः मैं अपने माननीय मित्र डा. पट्टाभि सीतारमैया से सहमत नहीं हूं कि जो कार्यक्रम हमारे सामने रखा गया था उसे समाप्त करने के लिये एक मध्यवर्ती अधिवेशन की आवश्यकता होगी। मेरे ख्याल से इस विषय पर विचार करने के लिये सितम्बर के पूरे माह में परिषद् का अधिवेशन बुलाना सम्भव नहीं

होगा। मैं यह कहूंगा कि नवम्बर के अधिवेशन में सबसे पहले उन भागों पर विचार किया जाये जो कि छोड़ दिये गये हैं और जिनको अन्त में एक साथ रखा जा सकता है। किसी प्रकार भी देश का विधान कोई साधारण विषय नहीं है तथा इस पर साधारण ध्यान नहीं दिया जा सकता है। अतः श्रीमान् जी, मैं निवेदन करूंगा कि आप सभा को यह स्पष्ट बता दें कि हम किस प्रकार अग्रसर होना चाहते हैं। जहां तक मेरा सम्बन्ध है मैं यह नहीं जानता कि मैं यहां अपने माननीय मित्रों के विचारों के अनुरुप कह रहा हूं, लेकिन मैं यह सोचता हूं कि विधान का अन्तिम मस्विदा विधान-परिषद् के सदस्यों के पास उस पर विचार करने में कम से कम तीन सप्ताह पूर्व पहुंच जाये। यदि आप मस्विदे की व्यवस्थाओं को सावधानीपूर्वक पढ़ने तथा जांच करने के लिये यथेष्ट समय नहीं देंगे तो आपको यहां बहुत ही अधिक समय लगेगा। आप संशोधनों की बाढ़ को नहीं रोक सकेंगे जोकि सब दिशाओं से आयेगी, यदि आप सदस्यों को यथेष्ट समय नहीं देंगे। मैं समझता हूं कि देश के विधान के मस्विदे की जांच करने के लिये तीन सप्ताह का समय बहुत अधिक नहीं है। मेरा आशय यह है कि मस्विदा तैयार किया जाये और अधिवेशन से कम से कम तीन सप्ताह पूर्व सदस्यों में घुमा दिया जाये। यदि आप ऐसा कर सकते हैं तब तो माननीय सदस्य पूरी तैयारी करके आयेंगे और भिन्न-भिन्न वाक्य-खण्डों पर जो संशोधन होंगे वे सम्भवतः इतने अधिक न होंगे, जितने कि वे उस समय होंगे जब कि प्रस्तावित कानून का शीघ्रता में मस्विदा तैयार किया जायेगा और अधिवेशन आरम्भ होने के थोड़े दिनों पूर्व ही वह सदस्यों में घुमाया जायेगा। श्रीमान जी, मैं आपके कार्यालय पर कोई आक्षेप नहीं कर रहा हूं वरन् केन्द्रीय व्यवस्थापिका विभाग के अपने अनुभव के आधार पर मैं यह कह सकता हूं कि आपका कार्यालय आधा भी उतना निपुण नहीं है जितना कि केन्द्रीय व्यवस्थापिका का। यही सब कुछ हम उस तरीके में देखते हैं जिसके द्वारा कागज़, दैनिक आज्ञा-पत्र हमको घुमाये जाते हैं। विधान के मस्विदे के भेजने के प्रश्न पर यदि हमारे सामने ये बहाने आये कि ''समय की कमी'' या ''हमने आपके पते से भेज दिये'' या ''हम न भेज सके'' इत्यादि; तो यह दुखदायी होगा। अतः मैं कहूंगा कि इस बात पर ध्यान देने की बड़ी आवश्यकता है कि ये मस्विदे हमारे पास समय में पहुंचा दिये जायें।

तत्पश्चात् श्रीमान् जी, मैं निवेदन करूंगा कि यह आपका काम होगा कि इस सभा के अन्य प्रमुख सदस्यों की राय लें और विचार करें कि आप इस मस्विदे के एक-एक वाक्यखण्ड पर सभा द्वारा विचार करने के पूर्व समस्त प्रस्तावित कानून को देखने के लिये एक जांच-समिति की नियुक्ति ठीक समझते हैं या नहीं। जब तक यह नहीं किया जायेगा हम अपने आपको अन्धकूप में गिराने से नहीं बचा सकते हैं।

*__श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर__ (मद्रास: जनरल): श्रीमान् जी, ऐसे विषयों पर यह भी ठीक है कि हमें यह विश्वास है कि प्रस्ताव का वास्तविक अर्थ क्या है। एक बात को स्पष्ट कर देना चाहिये अर्थात् जिन निर्णयों को किया जा चुका है वे निश्चित समझे जायेंगे। यदि उनमें कोई त्रुटियां पाई जाती हैं या अनजानी कठिनाइयां उपस्थित होती हैं तो उन निर्णयों पर फिर गौर करने का अधिकार सभा को सदैव रहेगा। साधारण प्रस्तावित कानून के सम्बन्ध की जांच-समिति की उपमा देना जिसको सरकार ने प्रचलित किया है भ्रमात्मक है। सभा की कुछ समितियों द्वारा विभिन्न विषयों पर विचार करने के लिये हमने लगभग एक वर्ष ले लिया है। मौलिक-अधिकार-समिति, संघ-अधिकार-समिति तथा संघ-विधान-समिति बन चुकी हैं और उन्होंने विचार कर अपने निर्णय इस सभा के समक्ष रखे हैं। उन विषयों के लिये जिन पर परिषद् द्वारा विचार हो चुका है और जिन पर निर्णय किया जा चुका है, बाद में पुन: विचार करने के लिये क्षेत्र को स्वभावत: संकुचित कर देना चाहिये। परिषद् का हवाला दिये बिना सरकार द्वारा साधारण प्रस्तावित कानून पेश करने की उपमा भ्रमात्मक है। सरकारी विभाग व्यवस्थापिका को हवाला दिये बिना प्रस्तावित कानून तैयार करती है और उसको व्यवस्थापिका के सामने रखती है। फिर सभा एक जांच-समिति नियुक्त करती है। यदि आप समस्त विषय को उस मस्विदे के समान लें और विभिन्न महत्वपूर्ण विषयों पर जो निर्णय किये हैं उनका हवाला न दें और यदि एक-एक वाक्यांश लेकर उस पर तर्क करें तो मेरे विचार से यह उस पर फिर से विचार करने के समान होगा। इस प्रकार तो सदैव पद्धति का आरम्भ करना होगा और सभा में आरम्भ की गई पद्धति का अन्त कभी नहीं होगा। मेरे विचार से यह भी ठीक है कि यह स्पष्ट कर दिया है कि जिन विषयों पर निर्णय नहीं किया गया है वे एक भिन्न आधार पर स्थित हैं।

लेकिन मेरे मित्र श्री सन्तानम् ने जो सुझाव रखा है उसके कारण कठिनाई उपस्थित होती है कि यह समिति अन्य प्रकार की व्यवस्थाओं पर विचार करे जिन पर कोई निर्णय नहीं हुआ है। मैं यह नहीं कहता कि सभा का यह अधिकार नहीं है कि वह पूरे निर्णय पर पुन: विचार नहीं कर सकती है, परन्तु लगभग आठ या दस महीने तक जो काम हुआ है उसकी कुछ अन्तिम दशा होनी चाहिये जिससे कि हम समितियों द्वारा पेश की गई रिपोर्टों की, एक वाक्यखण्ड के पश्चात् दूसरे वाक्यखण्ड पर परिषद् के तर्क की तथा मतदान की, जो कि इस सभा में लिया गया, उपेक्षा करते हुये फिर से आरम्भ न करें, जिस प्रकार कि एक

साधारण प्रस्तावित कानून आरम्भ किया जाता है। मैं नहीं जानता हूं कि सभा की इच्छा यह है कि यह कमेटी समस्त विषयों पर विचार करे। जो धारायें इस सभा द्वारा निर्णय के विषय नहीं बनी हैं उनका विषय दूसरा है। किसी प्रकार भी उन मामलों में कुछ भेद रखना चाहिये जिन पर इस सभा में कल, परसों तथा सभा के समस्त विभिन्न अधिवेशनों में निर्णय किया है। हमने एक-एक वाक्यखण्ड पर विचार किया है और इस सभा-भवन में बड़े लम्बे तथा परिश्रम द्वारा तर्क रखे गये हैं। हमारे ऊपर जनता का कर्तव्य भार है कि हम उनको यह अनुभव करायें कि यह सब समय व्यर्थ गंवाया हुआ न समझा जाये। केवल यही विषय है जिसे मैं स्पष्ट करना चाहता हूं।

***डा. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मुझे खेद है कि मैं श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर या आयंगर के भाषण और सुझाव से सहमत होने का अपना मार्ग नहीं पाता हूं। मुझे भय है कि मैं उनके लम्बे नाम का सही-सही उच्चारण नहीं कर सकता हूं, लेकिन चाहे वह अय्यर हों चाहे आयंगर, इसमें कोई अन्तर नहीं है। किसी भी सूरत में उनको पूर्व वक्ता ठीक-ठीक कहा जा सकता है। उनका सुझाव यह है कि जो समय हमने इस सभा में खर्च किया है, उसको व्यर्थ नहीं खोना चाहिये। परन्तु श्रीमान् जी, यह वह महत्वपूर्ण कानून-निर्माण है जिसको सरलता से कभी नहीं बदला जा सकता और इस सभा में हम जो कुछ पद्धति निर्धारित करेंगे उसका संशोधन करना बड़ा कठिन होगा। हमें इस बात पर भी विचार करना होगा और जैसा कि हमारे बहुत से मित्रों ने निश्चय कर भी लिया है कि हमारे यहां रियासतों के प्रतिनिधियों की एक बहुत बड़ी संख्या आने को है। हम सब जानते हैं कि रियासतें भारत में अनुदार दल वाली हैं और वे अवश्य किसी परिवर्तन के विरोध में अपना प्रभाव डालेंगी। यह पूर्णतया निश्चित है कि यदि हम विधान में संशोधन करने का प्रयत्न करेंगे तो वे उसमें परिवर्तन करने की अपेक्षा उसे रखने के पक्ष में होंगे।

इसके अलावा श्रीमान् जी, वह ठीक स्थिति क्या है जिसमें आज हम हैं? सर अल्लादी या श्री अल्लादी ने कहा कि हमने इस काम पर एक वर्ष बिता दिया है। मुझे भय है श्रीमान् जी, कि यह अक्षरश: सत्य नहीं है। सबसे पहले हम दिसम्बर में सम्मिलित हुये। उस समय क्या कार्यवाही की गई? बहुत कम। उस अधिवेशन में हमने जो कुछ काम किया वह विशेषकर क्रियात्मक लाभ को विचार में रखते हुये बहुत अधिक नहीं था। इसके बाद हम जनवरी में बैठे, पर वह भी छोटा-सा अधिवेशन था। हमने केवल इस परिषद् का लक्ष्य-मूलक प्रस्ताव पास

[डा. पी.एस. देशमुख]

किया। सच बात तो यह है कि यदि हम सावधानी से कार्यवाही तथा अपने काम के रिकार्ड की ओर ध्यान दें तो हमें विदित होगा कि जो कुछ हमने अब तक किया है, वह मेरी तुच्छ राय में बड़ी असावधानी से किया हुआ सा काम है। हमने अनेकों समितियां बनाई लेकिन अधिकतर हमें अन्तःकालीन रिपोर्टें, अस्थायी सुझाव, प्रयोगात्मक प्रस्ताव तथा इसी प्रकार की चीजें प्राप्त हुईं। इस प्रकार के कामों को हम करते रहे। अभी तक हमारे पास विधान का पूर्ण चित्र नहीं है। सच तो यह है कि संघ-अधिकार-समिति की रिपोर्ट के महत्वपूर्ण परिच्छेदों पर अभी निर्णय करना है। फिर हम यह किस प्रकार कह सकते हैं कि हमारे पास विधान का ढांचा है। मैं कहता हूं कि अभी हमारे सामने विधान का ढांचा भी नहीं है। अतः केवल यही उचित है कि हम एक वृहद् समिति बनायें, जिसमें इस सभा के सब विभागों के सदस्य हों, जिसमें इस सभा के बड़े-बड़े विद्वान तथा कार्यकुशल व्यक्ति हों जो कि विधान के ढांचे पर ध्यान दें। ऐसा अवसर न देना तथा कानून-निर्माण कार्य को शीघ्रता में विधान-निर्माण-कार्य के समान करना बहुत अनुचित होगा। श्रीमान् जी, मैं आशा करता हूं कि जो सुझाव श्री सन्तानम् ने रखा है जिसका समर्थन श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने किया है वह सभा द्वारा स्वीकार नहीं किया जायेगा तथा इसका विरोधी सुझाव, जो कि मेरे अन्य मित्रों ने रखा है तथा जिसका समर्थन श्री अणे ने किया है सभा द्वारा स्वीकार किया जायेगा।

जैसा मैंने पहले कहा था कि हम विधान को खण्ड-रूप में लेते चले आ रहे हैं और जब तक कि हमारे सामने उसका पूरा चित्र न हो तब तक यह न समझ लेना चाहिये कि सभा किसी प्रकार भी वचन-बद्ध हो गई है। हां, कुछ विषयों में, जैसे कि अल्पसंख्यक समिति की रिपोर्ट, सब लोग सहमत थे और उन पर किये गये निर्णयों को नहीं बदला जा सकता। परन्तु ऐसी भी अनेकों सहायक बातें हैं तथा वे बातें हैं जो मुख्य विषय पर आश्रित सही अनुमान के रूप में उत्पन्न हो जाती हैं। यह उचित तथा ठीक है कि उन पर नये सिरे से निर्णय करना चाहिये। यह नहीं मान लेना चाहिये कि जो निर्णय इनके सम्बन्ध में किये जा चुके हैं वे अपरिवर्तनशील हैं। वे सरलतापूर्वक परिवर्तनशील होने चाहियें जब तक कि हमारे सामने पूर्ण चित्र न आये और जब तक कि हमें विधान के अन्तर्गत प्रत्येक सिद्धान्त, प्रत्येक धारा तथा प्रत्येक शब्द पर वाद-विवाद करने का उचित अवसर न मिले तब तक हमारे किसी निर्णय को किसी प्रकार भी अपरिवर्तनशील नहीं मानना चाहिये।

***मि. तजम्मुल हुसैन** (बिहार: मुस्लिम): मैं श्री सत्यनारायण सिनहा के प्रस्ताव का विरोध करता हूं। मेरी राय से इस दशा में समिति नियुक्त करना गलत होगा।

मैं खण्ड रूप से कार्य किये जाने में विश्वास नहीं करता हूं। मेरे विचार से हमारे खुद के हित के लिये यह बहुत अच्छा होगा कि हम यहां जब तक बैठक करें तब तक कि पूरी रिपोर्ट पर विचार समाप्त न कर लें। मैं समझता हूं कि रिपोर्ट पर विचार समाप्त करने में 15 दिन से अधिक नहीं लगेंगे। यदि हम अब से काम करते चले जायें तो मेरे ख्याल से 12 सितम्बर तक हम कार्य समाप्त कर देंगे। यदि कुछ कारणवश अन्यत्र काम में लगी रहने के कारण सरकार ऐसा करने के लिये उद्यत नहीं है तो हम कुछ दिनों के लिये स्थगित करें, फिर सम्मिलित हों और जो काम हमने अपने हाथों में लिया है उसे समाप्त करें। जब सब रिपोर्टें समाप्त हो जायें तब हम एक समिति नियुक्त करें और लगभग तीन महीने के लिये स्थगित करें। मेरे विचार से सब चीजों की जांच करने तथा प्रस्तावित कानून के रूप में रिपोर्ट पेश करने के लिये समिति को लगभग दो महीने लग जायेंगे। इसके बाद प्रस्तावित कानून पर विचार करने के लिये एक महीना हमें लग जायेगा और फिर हम प्रस्तावित कानून पर विचार करने के लिए परिषद् में आ सकते हैं। अतः मैं कहता हूं कि हम सितम्बर के अन्त अथवा मध्य तक काम करते रहें और इस रिपोर्ट पर विचार समाप्त करें। मान लीजिये कि हम सितम्बर के अन्त तक कार्य करते हैं तो हम अक्टूबर, नवम्बर तथा दिसम्बर के लिये स्थगित हो सकते हैं और फिर जनवरी में सम्मिलित हो सकते हैं और जब तक काम कर सकते हैं तब तक कि यह समाप्त न हो। मेरे ख्याल से यदि हम जनवरी और फरवरी में दो माह तक बैठें तो फरवरी के अन्त तक हम कार्य समाप्त कर सकेंगे। तीन महीने तक हम संघ-पार्लियामेंट के सदस्य की हैसियत से यहां ठहर सकते हैं। इन तीन महीनों में कुछ समय इस प्रकार व्यतीत किया जा सकता है। इसके पश्चात् हम मार्च के आरम्भ से मार्च के अन्त या अप्रैल के मध्य तक केन्द्रीय व्यवस्थापिका के बजट-अधिवेशन में बैठ सकते हैं। श्रीमान् जी, मैं सोचता हूं कि सुचारू रूप से कार्य करने के लिये यह अच्छा होगा कि हम अब कार्य प्रचलित रखें और रिपोर्ट पर विचार करने के कार्य को पूर्णतया समाप्त करके एक समिति नियुक्त करें। मैं श्री सत्यनारायण सिनहा के मूल प्रस्ताव का विरोध करने के लिये यहां आया हूं।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर** (मद्रासः मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, विधान-निर्माण-कार्य गत आठ या नौ महीने से चल रहा है। अनेकों विषयों पर विचार करने, प्रान्तों तथा केन्द्र के विधान की सिफारिश करने के लिये इस परिषद् ने कुछ समितियां नियुक्त कीं और कुछ विशेष विषयों—जैसा कि संघ के अधिकार,

[श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर]

अल्पसंख्यकों के अधिकार, मौलिक अधिकार इत्यादि-पर कुछ समितियां नियुक्त कीं। इन समितियों ने उन अनेकों विषयों पर, जो उनके हवाले किये गये थे, विचार करने के पश्चात् बड़ी सावधानी तथा जांच के उपरान्त उन्होंने अपनी रिपोर्ट परिषद् में रखीं। रिपोर्टों के अधिक भाग पर इस परिषद् में वाद-विवाद हो चुका है और यह परिषद् कुछ परिणाम पर पहुंची तथा कुछ विषयों पर इधर या उधर निर्णय किया। अत: हम किसी स्थिति पर पहुंच चुके हैं। समितियों ने प्रश्नों के अध्ययन करने तथा रिपोर्ट तैयार करने के पश्चात् इन रिपोर्टों पर परिषद् में वाद-विवाद तथा तर्क हुआ और बहुत से प्रश्नों पर निर्णय कर लिया गया है और थोड़े से विषय छोड़ दिये गये हैं। अब प्रश्न ये उठते हैं। पहला प्रश्न है कि विधान का मस्विदा बनाने के लिये समिति का निर्वाचन अब किया जाये या शेष विषयों पर इस महान् परिषद् द्वारा विचार करने के पश्चात् उसका निर्वाचन किया जाये। यह पहला प्रश्न है जिस पर निर्णय करना है। दूसरा प्रश्न है कि जो निर्णय इस सभा द्वारा किये जा चुके हैं, उन पर जब कि विधान का मस्विदा सामने आये फिर विचार किया जा सकता है या नहीं। इस प्रस्ताव पर इन दो प्रश्नों पर विचार करना है। मेरा यह स्पष्ट मत है कि उन विषयों पर, जिनका निर्णय हो चुका है, फिर विचार करने की न तो गुंजाइश है और न यह उचित है। जैसा कि मेरे मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने कहा है कि उन पर वाद-विवाद हो चुका है। उन पर विचार करने वाली कुशल समितियों द्वारा पेश की गई रिपोर्टों में उनकी जांच हो चुकी है। वे फिर पूर्ण रूप से लाये गये और इस संस्था द्वारा उन पर वाद-विवाद हुआ। अत: श्रीमान् जी, मेरे विचार से इस अवस्था में उन पर फिर विचार करने से कोई लाभदायक फल नहीं होगा और न यह ठीक तथा उचित ही है।

***श्री सी. सुब्रह्मण्यम्** (मद्रास: जनरल): श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है। कार्य-पद्धति का नियम 32 इस प्रकार है:

''कोई प्रश्न जिस पर परिषद् द्वारा निर्णय हो चुका है फिर से विचार करने के लिये नहीं रखा जायेगा जब तक कि उपस्थित सदस्यों तथा मतदाताओं के कम से कम चौथाई भाग की स्वीकृति न हो।''

अत: यह स्पष्ट है कि हमने निर्णय किये हुये प्रश्नों को फिर से विचार करने के लिये लेने की व्यवस्था रख दी है। जब ऐसी सूरत है तो मैं जानना चाहूंगा कि इस प्रश्न पर फिर वाद-विवाद ही क्यों हो? निर्णयों पर फिर से विचार करने की व्यवस्था हमने बना ही दी है। अत: मैं निवेदन करता हूं कि एक बार निश्चित

किये गये निर्णयों पर पुन: विचार करने के विषय पर कोई वाद-विवाद करने की आवश्यकता नहीं है।

***अध्यक्ष:** आपको यह वैधानिक आपत्ति उस समय उठानी चाहिये थी जबकि प्रथम वक्ता ने विषय उपस्थित किया था। अब चूंकि वाद-विवाद इतना बढ़ चुका है कि वह बीच में बन्द नहीं किया जा सकता। लेकिन फिर भी मेरे विचार से इस प्रश्न पर बहुत वाद-विवाद हो चुका है और मैं माननीय सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे यथासम्भव अपनी बातों को संक्षेप में कहें।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर:** दूसरा प्रश्न प्रस्तावित कानून का मस्विदा बनाने के लिये जांच समिति का है। मैं अपने मित्र डा. सीतारमैया से पूर्णतया सहमत हूं कि जो विषय रह गये हैं उन पर सभा द्वारा वाद-विवाद तथा तर्क किया जाये और उनकी जांच की जाये और जब हम यह कर चुकें उस समय इस मस्विदा बनाने वाली कमेटी के नियुक्त करने का अवसर होगा। मैं ऐसा कोई कारण नहीं देखता कि जो विषय छोड़ दिये गये हैं उन पर इस सभा द्वारा वाद-विवाद क्यों न हो। क्या यह विचार लिया गया है कि जो विषय छोड़ दिये गये हैं वे इतने महत्त्वपूर्ण नहीं हैं जितने कि अन्य? यह स्पष्ट है कि ऐसी बात नहीं है। एक सदस्य ने कहा है कि प्रस्तावित कानून के हाउस में आने के बाद वह जांच समिति के पास जाये। मैं नहीं समझता हूं कि जब यह बड़ी संस्था—पूरी परिषद् एक बार पूर्ण विषय पर विचार कर लेती है और इधर या उधर—उन पर निर्णय कर देती है तो इसकी कोई आवश्यकता है। अत: जांच समिति के नियुक्त किये जाने की कोई आवश्यकता नहीं है जिसके सामने मस्विदा-पत्र रखा जाये और मैं निवेदन करता हूं जैसे हमने अनेकों विषयों पर निश्चय किये हैं उसी प्रकार इस संस्था द्वारा शेष विषयों पर भी निश्चय किये जाने चाहियें जिससे कि मस्विदा बनाने वाली समिति के पास जो काम शेष रहे वह केवल उन विषयों को, जिन पर निर्णय किया जा चुका है, कानूनी रूप में रखने का हो तथा इतना निर्णयों से यदि कोई परिणामभूत व्यवस्था आवश्यक हो तो उसे रखने का हो। इतना यथेष्ट है। जब मस्विदा-पत्र इस सभा के समक्ष आयेगा तो हमारे लिये उस पर कार्यवाही करना सरल हो जायेगा तथा उस पर आरम्भ से कार्यवाही करने में हमको जितने समय की आवश्यकता होगी उससे कम समय में पास हो जायेगा। अत: मैं निवेदन करता हूं कि किसी प्रकार भी साधारणतया जबकि मस्विदा हमारे सामने रखा जायेगा उस पर पुन: विचार करने का अधिकार हमको नहीं होगा। साथ ही साथ मेरी यह राय है कि जिन विषयों पर अभी तक निर्णय नहीं किया है उन पर जिस

[श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर]

प्रकार से पहले अन्य विषयों पर निर्णय किया गया है उसी प्रकार निर्णय किया जाये और इस अवस्था में हमारे लिये समिति का नियुक्त करना आवश्यक नहीं है।

*__श्री राजकृष्ण बोस__ (उड़ीसा: जनरल): मिस्टर प्रेसीडेण्ट, मुझे इसके बारे में कुछ ज्यादा नहीं कहना है। लेकिन मेरे ख्याल में अभी तक जो कार्यवाही हुई है और उसका जो सिलसिला चल रहा है वह मुनासिब और ठीक होता कि उसकी कन्सिस्टेन्सी रहती। आज जितनी बहस हुई है उससे मालूम होता है कि हम जिस लाइन पर चल रहे थे, जिस सिलसिले के मुताबिक हम चल रहे थे, हम उसको बदलने जा रहे हैं। यहां हमने पहले यह सोचा था कि कान्स्टीट्यूशन की तैयारी के पहले हम इसके प्रिन्सिपल्स तय कर दें। इसके लिये आपने दो बड़ी कमेटियां बनाई और वह प्रिन्सिपल्स तय कर चुकी हैं। जब प्रिन्सिपल्स एक मर्तबा तय हो चुके तो हमको चाहिये था कि इस सेशन में उन प्रिन्सिपल्स के बारे में हम अपनी राय दे देते जो औलरेडी तय हो चुके थे। मैं आपसे अर्ज करूंगा कि यह नहीं हो सका। क्योंकि, यह मौजूदा सेशन 31 अगस्त से पहले खत्म होता है। इसके लिये मैं चाहूंगा कि अब से जब हम लोगों को बैठक में भाग लेने के लिये बुलाया जाये तो हम लोगों को क्लीयर डाइरेक्टिव हों कि हमें कितने दिन ठहरने के लिये तैयार रहना चाहिये। हमको अभी तक कोई डाइरेक्टिव इस बारे में नहीं मिलता और हम यह समझ कर आते हैं कि दो या तीन रोज में काम खत्म करके हम लोग अपनी-अपनी कान्स्टीट्यूयैंसीज को वापस चले जायेंगे। लेकिन अब से यह साफ डाइरेक्शन होना चाहिये कि अन्दाजन इतने दिन तक सेशन चलेगा। ताकि मेम्बरों को यह कहने का मौका नहीं मिलेगा कि हम 31 तारीख के बाद इंगेजमेंट्स कर बैठे हैं और ज्यादा ठहरने की तैयारी करके नहीं आये हैं। मैं बहुत अदब के साथ यह कहना चाहता हूं कि हम लोगों को उन प्रिन्सिपल्स पर जिनको दो कमेटियां इतनी मेहनत के बाद तय कर चुकी हैं, अपनी राय दे देनी चाहिये थी। ऐसा न करना हम लोगों की गलती है और मैं समझता हूं कि हम लोग अपना फर्ज अदा नहीं कर रहे हैं। मैं समझता हूं कि जब आपने तय कर दिया कि 31 तारीख के बाद हम नहीं बैठेंगे, अगर नहीं बैठेंगे तो मैं अर्ज करूंगा कि उन (Union Constitution Principles) के बारे में अपनी राय देने के लिये जिन पर हम अभी तक राय नहीं दे पाये हैं उसके लिये सितम्बर के आखिर में या अक्टूबर के शुरू में एक दूसरा सेशन बुलाया जाये, जिस सेशन में हम

प्रिन्सिपल्स के बारे में अपनी राय दे दें। उसके बाद ड्राफ्ट बनना चाहिये और वह (draft) हम लोग जरूर मंजूर कर लेंगे। हां, अगर लेंगुएज़ में कोई गलती, कामा, फुलस्टोप की होगी तो हम उसको दुरुस्त कर सकेंगे। ड्राफ्ट हमारे सामने आयेगा और हम उसे अमेण्ड कर सकते हैं। लेकिन असली प्रिन्सिपल्स के खिलाफ हम नहीं कह सकते। हम तब यह नहीं कह सकते कि गवर्नर एडल्ट फ्रेन्चाइस के बजाये इनडाइरेक्ट इलेक्शन के तौर पर चुना जाये। अगर इस तरह हम प्रिन्सिपल्स को चेंज करते जायेंगे तो कान्स्टीट्यूएंट असेम्बली का काम बड़ा मुश्किल हो जायेगा और काम खत्म न हो पायेगा। इसलिये मैं बहुत अदब के साथ अर्ज करना चाहता हूं कि अभी तक जो सिलसिला चल रहा है उसकी (consistency) रखी जाये और बचे हुये यूनियन कान्स्टीट्यूशन और प्राविंशियल कान्स्टीट्यूशन प्रिन्सिपल्स पर राय लेने के लिये दूसरा सेशन सितम्बर के आखिर या अक्तूबर के शुरू में बुलाया जाये। उसके बाद ड्राफ्टिंग कमेटी या कान्स्टीट्यूशनल एडवाइज़र को ड्राफ्ट तैयार करने के लिये टाइम देंगे और जब यह ड्राफ्ट तैयार होकर हमारे सामने आयेगा हम अपनी फाइनल राय दे देंगे। इसलिये यह जरूरी है कि अब तक का जो सिलसिला है उसको जारी रखा जाये। दूसरे अब से कान्स्टीट्यूशनल असेम्बली की बैठक बुलाने के वक्त यह डाइरेक्टिव होना चाहिये कि अन्दाजन इतने समय के लिये हमें ठहरना पड़ेगा और मेम्बर लोग जो खुद अन्दाज लगा लेते हैं कि इतने दिन में काम खत्म हो जायेगा और वह अपना प्रोग्राम उसके मुताबिक बना लेते हैं, वह उस अन्दाज से काम नहीं करेंगे बल्कि वह अपना प्रोग्राम आपके डाइरेक्टिव के मुताबिक बनायेंगे और तब यह तमाम मुश्किलें नहीं पैदा होंगी।

***माननीय श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, जो प्रस्ताव पेश किया गया है मैं उसका विरोध करता हूं; क्योंकि मैं अनुभव करता हूं कि इस हालत में हमारे लिये किन्हीं विशेषज्ञों की या अन्य व्यक्तियों की समिति नियुक्त करना ठीक नहीं है जोकि उन बातों पर गौर करें जिन पर हमने अभी तक निर्णय नहीं किया है। इसे मैं भली प्रकार समझ सकता हूं कि जो निर्णय किये जा चुके हैं उनको सांचे में ढाला जा सकता है और वैधानिक भाषा का स्वरूप दिया जा सकता है, परन्तु कुछ वक्ताओं ने यह संकेत किया है कि यह समिति उन विषयों पर भी गौर करेगी जिन पर सभा ने अपना निर्णय नहीं दिया है। बहुत से महत्त्वपूर्ण विषय अभी छोड़ दिये गये हैं। उन पर इस परिषद् ने निर्णय नहीं किया है और मैं नहीं समझ पाता कि विधान बनाने के अपने अधिकार को हम किसी समिति को कैसे सौंप सकते हैं। मैं समझता हूं कि इसमें कोई मतभेद हो ही नहीं सकता

[माननीय श्री जयपाल सिंह]

है। यह मैं मानता हूं कि जहां तक उन वाक्यखण्डों तथा अन्य बातों का सम्बन्ध है जिन पर हम निर्णय कर चुके हैं, एक समिति उनको उपयुक्त वैधानिक भाषा में रख सकती है। यहां एक प्रश्न उठाया गया है, किसी प्रकार के अन्तिम रूप तक पहुंच जाना चाहिये। सच है। हम एक विधान बना रहे हैं और वह शब्द स्वयं यह अर्थ रखता है कि हमें उसमें प्रति पांच मिनट के पश्चात् परिवर्तन नहीं करना है, परन्तु इसके साथ-साथ अन्तिम रूप तक पहुंचने के पूर्व हमको स्थिति के अवलोकन करने का यथेष्ट अवसर मिलना चाहिये। यह हो सकता है कि हम कुछ निर्णयों को रद्द कर दें। सभा सर्वोच्च संस्था है और उसे निर्णयों के करने तथा उन्हें रद्द करने का अधिकार है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस हालत में समिति नियुक्त कर हम एक उल्टा काम कर रहे हैं। हमने यह खूब अनुभव कर लिया है कि शीघ्रता करने से कोई लाभ नहीं। हमने विशेषज्ञों की समितियां नियुक्त कीं, उन्होंने अपनी रिपोर्टें पेश की, और जो कुछ हुआ वह यह है कि जब ये रिपोर्टें परिषद् के सामने आईं तो उनमें से सारवस्तु को ले लिया गया और विशेषज्ञों की सिफारिशों में अनेकों महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किये गये। यही हाल मस्विदा बनाने वाली समिति का होगा, जबकि वह अपनी रिपोर्ट पेश करेगी। मेरे विचार से इस मामले में भी हम अपना समय गंवायेंगे। मैं समझता हूं कि अच्छी बात यह होगी कि जो कुछ काम बाकी है हम उसे पूरा करें और तब मस्विदा बनाने वाली समिति इस स्थिति में होगी कि परिषद् द्वारा किये गये समस्त निर्णयों को पूर्णतया प्राप्त कर एक प्रस्तावित कानून बना सके जो हमारे सामने आ सकता है और तब हम अन्तिम रूप में यह निश्चय कर सकते हैं कि हम प्रस्तावित कानून की भाषा या विषय में परिवर्तन करना चाहते हैं या नहीं। श्रीमान् जी, मैं विशेषकर अनुभव करता हूं कि इस कमेटी पर उदाहरण के रूप में कबायली विषय से सम्बन्धित वाक्यखण्डों की वैधानिक भाषा का मस्विदा बनाने का कार्य भी नहीं छोड़ना चाहिये। अभी कबायली समिति को, जो कि परामर्शदातृ समिति द्वारा नियुक्त की गई समितियों में से है और जिसको इस परिषद् ने फिर नियुक्त कर दिया है, अभी अपना कार्य समाप्त करना है। क्या इसका अर्थ यह है कि यह विशेषज्ञों, मस्विदा बनाने वाले विशेषज्ञों, की समिति प्रस्तावित कानून में वे विषय रख रही है जो कि अभी तक परिषद् के सामने नहीं आये हैं? मेरे विचार से ऐसा करना हमारे लिये मूर्खतापूर्ण होगा। सभा को अपने निर्णय करने का अधिकार होना चाहिये और मैं निवेदन करता हूं कि हम किसी समिति को विधान बनाने के अधिकार नहीं सौंप सकते चाहे उसमें कितने ही महान् विशेषज्ञ क्यों न हों। हमने उनके काम को देखा है, हम उनके किये गये काम के लिये उनके कृतज्ञ हैं, परन्तु हमारा यह अनुभव है कि विशेषज्ञों को भी हटा देना पड़ता है जबकि जो विषय वे उपस्थित करते हैं सभा के समक्ष आता है।

***माननीय श्री हुसैन इमाम** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस सभा का समय लेना नहीं चाहता हूं। मैं केवल उन परिस्थितियों को बताना चाहता हूं जिनमें हम काम कर रहे हैं। इस समय देश में इतना संकट तथा इतनी गड़बड़ी है कि हमारा यहां बैठना और अपने कर्तव्य का पालन करने के लिये अपनी जगहों पर न होना अस्वाभाविक सा प्रतीत होता है। एक सुझाव रखा गया था कि इस अधिवेशन को जारी रखा जाये। मेरे ख्याल से इस अधिवेशन को अति आवश्यक समय से एक दिन भी अधिक जारी रखना घातक होगा। हमें इस अधिवेशन को यथासम्भव शीघ्र ही समाप्त कर देना चाहिये और वापस जाकर देश में शान्ति का संदेश देना चाहिये। भारत के नागरिक होने के नाते यह हमारा कर्तव्य है कि हम यह देखें कि शान्ति कायम की जा रही है। श्री सत्यनारायण सिनहा का प्रस्ताव साधारण है और मैं नहीं समझता कि सदस्यों ने इतना अधिक अविश्वास क्यों प्रकट किया। हमें इन पर शान्ति-पूर्वक विचार करने दीजिये। इस प्रकार की परिषद् विषयों की विवरण-सहित परीक्षा नहीं कर सकती है। सब जगह विवरण-पूर्ण जांच, जांच समिति के सुपुर्द की जाती है। यहां भी हमें दुहरी जांच करने का लाभ है। पहली आपकी संघ-अधिकार समिति और फिर संघ-विधान समिति। इन दोनों ने विषय पर विचार किया, समस्त विषयों का सूक्ष्म परीक्षण किया और अपनी सिफारिशें तैयार कीं। इसके बाद सभा द्वारा उन पर विचार हुआ। लेकिन सभा को मैं यह बता दूं कि इसमें सन्देह नहीं कि अनेकों संशोधन पेश किये गये, परन्तु जो संशोधन स्वीकार हुये वे अधिकतर प्रेरणात्मक संशोधन थे और जिस समिति को प्रस्तावित किया गया है वह उन विशेषज्ञों की है जिनकी राय से यह सभा प्रभावित हुई है। आपके पास गारण्टी है कि दुहरी जांच के पश्चात् विशेषज्ञों द्वारा तीसरी जांच होगी। सभा के अधिकार छीनने का प्रश्न ही नहीं है। सर्वोच्च संस्था होने से सभा को प्रत्येक चीज में परिवर्तन करने का अधिकार है जिसको उसने पहले स्वीकार नहीं किया है। केवल वे ही शुद्ध हैं जिनको सभा स्वीकार कर चुकी है और सभा की स्वीकृति के पश्चात् आप एक सर्वोच्च संस्था के रूप में निज का सम्मान करें, आत्म-नियंत्रण करें, और अपने निर्णयों को वापस न लें। अतः यदि ऐसा कोई मद आता है जिसको सभा ने स्वीकार नहीं किया है तो सभा को उसकी परीक्षा करना, उस पर पुनः विचार करना तथा उसमें परिवर्तन करने का अधिकार होगा। सभा के उन प्रस्तावों में संशोधन करने के अधिकार को, जिनको सिद्धांत रूप से स्वीकार नहीं किया गया है, कोई अस्वीकार नहीं कर सकता, परन्तु यही वह बात है जिसे मैं चाहता हूं कि सभा माने हम पहेलियों में बातें कर रहे हैं। हम वास्तव में भिन्न-भिन्न दल वाले हैं और उन्हीं के बीच निर्णय किये गये

[माननीय श्री हुसैन इमाम]

हैं। इसका कोई विचार नहीं चाहे मनुष्य कुछ भी कहें परन्तु जब किसी दल का बहुमत यह अनुभव करता है कि यह संशोधन स्वीकार किया जाना चाहिये तभी वह दल के प्रश्न के रूप में रखा जा सकता है और वे भी जो इसके विपक्ष में होते हैं पक्ष में मत देते हैं। स्थिति का वास्तविक रूप यह है। अतः यह कहना व्यर्थ है कि यदि समिति नहीं बनाई जाती तो सुझावों को स्वीकार कराने के यहां अच्छे अवसर हैं। चाहे समिति बने या नहीं दल का यंत्र संचालित रहेगा और इस कारण प्रेरणात्मक संशोधन जिनको दल की स्वीकृति प्राप्त है वे पास किये जा सकते हैं। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि पद्धति में आपत्ति करना व्यर्थ है। पद्धति बिल्कुल सही है। कार्यालय द्वारा रखे गये विधान-मस्विदे की परीक्षा करने के लिये आपने सर्वोत्तम व्यक्ति नियुक्त किये हैं और इस कमेटी की उन सिफारिशों को अस्वीकार करना कठिन नहीं होगा जिनको सभा द्वारा विशिष्ट रूप से स्वीकार नहीं किया गया है। मैं इसलिये अनुभव करता हूं कि इस प्रस्ताव को सर्वसम्मति से सभा द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिये।

***श्री शंकर दत्तात्रेय देव** (बम्बई: जनरल): श्रीमान् जी, मैं विवादान्तक प्रस्ताव रखता हूं।

***अध्यक्ष:** विवादान्तक प्रस्ताव पेश किया जा चुका है। मैं उसे सभा के समक्ष रखता हूं।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** श्री सत्यनारायण सिनहा उत्तर दे सकते हैं।

***श्री रामनाथ गोयनका** (मद्रास: जनरल): कुछ संशोधन पेश नहीं किये गये।

***अध्यक्ष:** मैं संशोधनों को बाद में लूंगा। अभी मैं प्रस्ताव के मूल विषय से सम्बन्धित संशोधन को ले रहा हूं।

***श्री सत्यनारायण सिन्हा:** श्रीमान् जी, मैं यह स्वीकार करता हूं कि मेरे अनेकों मित्रों द्वारा जो शंकायें तथा भ्रम प्रकट किये गये हैं मैं उनके गुण को ग्रहण न कर सका। मेरे विचार से मस्विदा बनाने वाली समिति की रिपोर्ट सभा के समक्ष होगी और इस सभा का परिवर्तन करने का, बदलने का या जो कुछ वह चाहे करने का स्वभाव-सिद्ध अधिकार है। मेरे विचार से परिषद् को अपने किये गये

निर्णयों में परिवर्तन करने का अधिकार है, परन्तु यह उचित नहीं है कि जो निर्णय एक बार किये जा चुके हैं उनमें वह परिवर्तन करती चली जाये और इसलिए मेरे विचार से सभा इस बात से सहमत नहीं होगी कि जिन महत्वपूर्ण सिद्धांतों पर वाद-विवाद हो चुका है और निर्णय किया जा चुका है उनमें परिवर्तन किया जाये। लेकिन उन सिद्धान्तों पर, जिनको पूरे मस्विदा पत्र के मस्विदे तैयार करने में शामिल करना है, जिन पर हमने अपना मत प्रकट नहीं किया है या निर्णय नहीं किया है, मेरे विचार से इस सभा को परिवर्तन करने या बदलने का पूर्ण अधिकार है। मैं किसी गड़बड़ी का कोई कारण नहीं देख पाता हूं। कमेटी की रिपोर्ट सभा के समक्ष होगी और उसे परिवर्तन करने, बदलने या जो कुछ वह चाहे करने का अवसर प्राप्त होगा।

***अध्यक्ष:** मेरे विचार से प्रस्ताव पर वोट लेने से पूर्व मेरे लिये यह आवश्यक है कि मैं स्थिति को स्पष्ट करूं। मैं समझता हूं कि इस सभा के सदस्यों से अधिकार छीनने की कोई मंशा नहीं है और यदि ऐसी मंशा हो भी तो उसका कोई प्रभाव नहीं हो सकता है। विचार यह है कि अगले अधिवेशन में लगभग पूर्ण रूप में सभा के सामने मस्विदा रखा जाये, जिससे कि पूर्ण मस्विदे पर सदस्य ध्यान दे सकें और फिर किसी परिणाम पर पहुंचें और मस्विदे की एक-एक धारा लेकर उसे पास करें। कुछ महत्वपूर्ण मदों के सिद्धान्तों पर हमने वाद-विवाद कर लिया है और उनको स्वीकार कर लिया है और कुछ ऐसे भी हैं जिन पर हमने अभी तक वाद-विवाद भी नहीं किया है। विचार यह है कि वह कमेटी, जिसका अभी सुझाव रखा है, न केवल उन सिद्धान्तों के मस्विदे को जो स्वीकार कर लिये गये हैं बल्कि उनके मस्विदे का भी जिन पर हमने अभी विचार नहीं किया है, तैयार करे। वास्तव में दोनों ही सभा के समक्ष होंगे, पर वे विभिन्न आधार पर होंगे। उन भागों को जिनकी स्वीकृति दी जा चुकी है सभा एक दृष्टिकोण से विचारेगी। साधारण रूप से सभा अपने पूर्व निर्णय की पुष्टि करेगी और उनमें तब तक परिवर्तन न करेगी जब तक कि वह यह न मालूम कर ले कि ऐसी कोई बात है जिससे पुन: विचार करना आवश्यक है। लेकिन उन मदों की जिन पर हमने अभी तक वाद-विवाद नहीं किया है, सभा स्वभावत: अधिक स्वतंत्रता या गुँजाइश के साथ जांच करेगी। मैं समझता हूं कि समय बचाने का यह सबसे अच्छा मार्ग है, जिससे कि सभा पूरे विषय पर विचार कर सकती है और जैसा विधान होगा उसको समझने योग्य विचारधारा रखने का अवसर प्राप्त कर सकती है। मुझे यह कहना है कि मैं विधान को समाप्त करने के लिये चिंतित हूं, लेकिन

[अध्यक्ष]

इसके साथ-साथ मैं इसके लिये भी समान रूप से चिंतित हूं कि हम कोई काम जल्दी में न करें तथा प्रत्येक वाक्य-खंड पर, वाक्य-खण्ड के प्रत्येक मद पर तथा मद के प्रत्येक शब्द पर अन्तिम स्वीकृति देने के पूर्व समस्त सदस्यों द्वारा विचार किया जायेगा, सावधानीपूर्वक विचार किया जायेगा। (*वाह, वाह*) अतः जब मस्विदा अन्तिम रूप में हमारे सामने विचारार्थ आयेगा तो उस पर यथासम्भव पूर्णातिपूर्ण विचार करने के लिये हम उतना समय लेंगे जितना कि आवश्यक समझा जाये और सदस्यों को उसमें आये हुये प्रत्येक शब्द पर विचार करने का तथा मस्विदे पर अपना निजी निर्णय देने का अवसर मिलेगा। मैं समझता हूं कि इसके साथ सदस्यगण संशोधित रूप में इस प्रस्ताव को स्वीकार करने की कृपा करेंगे जो कि इस समिति को उन विषयों का मस्विदा बनाने में, जो वास्तव में उन सिद्धान्तो के अन्तर्गत नहीं आते जिन पर हम निर्णय कर चुके हैं, लेकिन जो उनमें निहित हैं, अधिक सुविधा प्रदान करेगा। मैं अब श्री खेर के संशोधन पर सभा का मत लेता हूं।

***एक माननीय सदस्यः** आपकी उस घोषणा के बाबत क्या हुआ कि प्रस्तावित कानून हिन्दी में होगा या राष्ट्रीय भाषा में?

***अध्यक्षः** हम उसे हिन्दी में रखेंगे। जब समय आयेगा मैं उसे आपके सामने रखूंगा।

***एक माननीय सदस्यः** प्रस्तावित कानून का अध्ययन करने के लिये आप हमें कितने सप्ताह देंगे?

***अध्यक्षः** उपयुक्त समय दो से तीन सप्ताह तक का होगा। अब मैं श्री बी. जी. खेर के संशोधन पर मत लूंगा।

प्रश्न है :

''‘परिषद् के कार्यालय में परिषद् द्वारा किये गये निर्णयों को प्रभाव देने के लिये तैयार किये गये भारत के विधान-मस्विदे की जांच करना तथा उसमें आवश्यक संशोधनों के लिये सुझाव रखने के लिये’ शब्दों के स्थान में निम्न शब्द रख दिये जायें:

‘परिषद् में किये गये निर्णयों को प्रभाव देने के लिये वैधानिक परामर्शदाता द्वारा तैयार किये गये भारत के विधान के मूल विषय

की जांच करना, मय उन सब विषयों के जो उसके लिये सहायक हैं या जिनकी ऐसे विधान में व्यवस्था करनी है और कमेटी द्वारा पुनरवलोकन किये हुये विधान के मस्विदे के मूल रूप को परिषद् के समक्ष विचारार्थ उपस्थित करना'।''

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधित रूप में प्रस्ताव को रखता हूं।

संशोधित प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** सदस्यों के नामों के सम्बन्ध में जो कमेटी में होंगे मैं देखता हूं कि अनेकों संशोधन हैं।

***माननीय सदस्यगण:** हम संशोधनों को पेश नहीं कर रहे हैं।

***डा. पी.एस. देशमुख:** मैं अपने उन समस्त मित्रों से, जिन्होंने सूची में मेरे नाम के बढ़ाये जाने के संशोधन की सूचना दी है, निवेदन करता हूं कि वे अपने संशोधनों को पेश न करें। मस्विदा-समिति के सदस्य के रूप में मेरे नाम को रखने के प्रस्ताव करने की कृपा के लिये मैं उनका कृतज्ञ नहीं हूं।

***अध्यक्ष:** तो फिर सूची में नये नाम बढ़ाने के संशोधनों को हमने हटा दिया।

एक सुझाव है, जो बेगम ऐज़ाज़ रसूल ने रखा है और वह यह है कि यदि कोई सदस्य समिति में उपस्थित होने में असमर्थ है अथवा यदि कोई स्थान रिक्त होता है तो उसे भरने का मुझे अधिकार दिया जाये। मैं मानता हूं कि यह सुझाव इस कारण रखा है कि दुर्भाग्यवश मि. सादुल्ला स्वस्थ नहीं हैं और समिति की सेवा नहीं कर सकेंगे। मैं यह माने लेता हूं कि यदि वास्तव में स्थान रिक्त हुआ तो सभा मुझे उसे भरने की आज्ञा दे देगी।

***माननीय सदस्यगण:** ''हां''।

***अध्यक्ष:** प्रश्न है कि:

श्री सत्यनारायण सिनहा द्वारा प्रेषित किये गये प्रस्ताव में जो मूल रूप में नामावली दी गई है वह स्वीकार की जाये।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

विधान-परिषद् की कार्यवाही-सम्बन्धी कमेटी की रिपोर्ट-(जारी)

*__माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर__ (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि:

परिषद् के 20 अगस्त सन् 1947 ई. के प्रस्ताव के अनुसार अध्यक्ष द्वारा नियुक्त की गई कमेटी द्वारा भारतीय-स्वतंत्रता एक्ट 1947 के अन्तर्गत विधान-परिषद् के कार्यों पर पेश की गई रिपोर्ट पर यह परिषद् विचार करे।

श्रीमान् जी, कमेटी की रिपोर्ट सभा के सदस्यों में घुमाई जा चुकी है और मैं समझता हूं कि ऐसी दशा में जबकि सदस्यों के पास कम से कम गत दो दिन से रिपोर्ट रही है मुझे कमेटी के कार्यों की लम्बी व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है। मैं विचार करता हूं कि मेरे लिये मुख्यत: कमेटी की सिफारिशों की ओर ध्यान आकर्षित कराना यथेष्ट होगा।

कमेटी ने कुल पांच सिफारिशें की हैं। उसकी पहली सिफारिश यह है कि विधान-परिषद् का यह अधिकार है कि वह व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे और उसे इस रूप में कार्य करना चाहिये; (2) व्यवस्थापिका की हैसियत से काम करने में उसे यथासम्भव आवश्यक परिवर्तनों के साथ धारा-सभा के नियमों का पालन करना चाहिये; (3) आवश्यक परिवर्तन विधान-परिषद् के अध्यक्ष की आज्ञा के अन्तर्गत किये जाने चाहियें; (4) विधान बनाने वाली संस्था के रूप में विधान-परिषद् का कार्य तथा साधारण व्यवस्थापिका का कार्य पृथक्-पृथक् होना चाहिये और पृथक्-पृथक् दिवसों में पृथक्-पृथक् अधिवेशनों में होना चाहिये; (5) व्यवस्थापिका को समाप्त करने का अधिकार अध्यक्ष को होना चाहिये न कि गवर्नर-जनरल को जैसा कि भारतीय सरकार एक्ट के संशोधन में पाया जाता है। इन सिफारिशों के करने के पश्चात् कमेटी ने विचार किया कि कोई ऐसी कठिनाइयां तो नहीं हैं जो उनकी सिफारिशों को प्रभाव देने में रुकावट डालें और देखा कि ऐसी तीन कठिनाइयां हैं।

पहली यह थी कि वही एक व्यक्ति दोनों विधान-परिषद् और व्यवस्थापिका में अध्यक्ष का कार्य करे या नहीं। यह कठिनाई इस कारण पैदा हुई कि भारतीय एक्ट की धारा 22 को, जो स्पीकर के कर्तव्य के सम्बन्ध की थी, उन संशोधनों द्वारा हटा दिया गया जो कि भारतीय स्वतन्त्रता एक्ट के अन्तर्गत स्वीकार किये गये थे जिसके फलस्वरूप अध्यक्ष वह व्यक्ति है जो दोनों विधान-निर्माण-संस्था

तथा व्यवस्थापिका पर अध्यक्षता करे। साधारणतया इससे कुछ कठिनाई नहीं होनी चाहिये, लेकिन उस परिस्थिति में जबकि अध्यक्ष सरकारी मंत्री हो, यह कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। उदाहरण के रूप में यह नियम-विरुद्ध बात होगी कि वह अध्यक्ष, जो कि सरकारी मंत्री भी है, विधान-परिषद् की अध्यक्षता करे जबकि वह व्यवस्थापिका का कार्य कर रही हो। अतः कमेटी ने सोचा कि दो मार्गों में से एक को ग्रहण करना होगा। या तो अध्यक्ष मन्त्री न रहे, या यदि वह मन्त्री बना रहता है तो परिषद् एक और अफसर चुने जो स्पीकर या उपाध्यक्ष कहा जाये जिसका कार्य यह होगा कि वह उस विधान-परिषद् के अधिवेशन में अध्यक्षता करे जो कानून-निर्माण करने के आशय से हो।

दूसरी कठिनाई जो कमेटी के सामने आई वह रियासतों के प्रतिनिधियों के सम्बन्ध में थी। सभा को यह स्मरण होगा कि विधान-परिषद् जब कानून-निर्माण करने के आशय से बैठक करेगी तो वह भारतीय एक्ट के सातवें परिच्छेद की सूची (1) में दिये हुये सम्पूर्ण विषयों पर कार्य करेगी। सभा को यह भी याद होगा कि अभी रियासतें विधान-परिषद् में स्वीकृति-पत्र (Instrument of accession) नामक योजना के आधार पर सम्मिलित हुई हैं जो कि सूची (1) में दिये गये विषयों के पूर्णतया अनुरूप नहीं है। अतः जो प्रश्न उठता है वह यह है कि उन लोगों को, जो कि विधान-परिषद् के सदस्य हैं तथा स्वीकृति-पत्र के बन्धन में हैं और मदों की एक छोटी संख्या का उत्तरदायित्व ग्रहण किये हुये हैं, उन अन्य विषयों से सम्बन्धित प्रस्तावों तथा वाद-विवादों में भाग लेने दिया जाये या नहीं जो स्वीकृति पत्र की सूची में शामिल नहीं किये गये थे। इस विषय पर विचार करने के दो तरीके थे। एक यह था कि उस पद्धति को ग्रहण किया जाये जो कि "अन्दर और बाहर" के नाम से कही जाती है, कि वे परिषद् में बैठें और वोट दें जबकि किसी ऐसे मद पर वाद-विवाद हो, जो दोनों पर लागू है, अधिकार-पत्र में भी है और सूची (1) में भी और जब किसी ऐसे मद पर सभा में वाद-विवाद चल रहा हो जो कि अधिकार-पत्र के अन्तर्गत नहीं है तो उनको भाग न लेने दिया जाये। कमेटी इस परिणाम पर पहुंची कि यद्यपि सिद्धान्त रूप में दूसरी पद्धति अधिक तर्क-संगत है, परन्तु क्रियात्मक दृष्टि से ऐसा भेद-विभेद अपनी वर्तमान परिस्थितियों में नहीं करना चाहिये। अतः कमेटी ने यह सिफारिश की है कि सूची (1) तथा अधिकार-पत्र के विषयों पर ध्यान न देते हुए भारतीय रियासतों के प्रतिनिधि समस्त विषयों से सम्बन्धित प्रस्ताव में दोनों सूचियों के भेद-विभेदों पर विचार न करते हुए भाग लेते रहेंगे।

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

तीसरा प्रश्न, जिसका कमेटी ने अनुभव किया मंत्रियों की स्थिति का था। जैसा कि सभा को विदित है, ऐसे कुछ मन्त्री हैं जो कि विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं। इस प्रकार के कुल पांच मन्त्री हैं। विचार के लिये यह प्रश्न उठता है कि वे मंत्री जो विधान-परिषद् के सदस्य हैं विधान-परिषद् की कार्यवाही में तथा व्यवस्थापिका में भी भाग लें या नहीं। जहां तक उनका व्यवस्थापिका के कार्यों में भाग लेने से सम्बन्ध है उनकी स्थिति इस कारण सुरक्षित है कि भारतीय सरकार के एक्ट की धारा (10) के उप-वाक्यखण्ड (2) को संशोधन द्वारा ग्रहण कर लिया है और सभा के सदस्य जानते हैं कि धारा (10) के उप-वाक्यखण्ड (2) की व्यवस्था के अन्तर्गत बावजूद इसके कि कोई व्यक्ति व्यवस्थापिका का सदस्य नहीं है, फिर भी वह व्यवस्थापिका के कार्यों में भाग लेता रहेगा और मंत्री हो सकेगा। इसके अनुसार वे मंत्री जो विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं विधान-परिषद् में जब कि वह व्यवस्थापिका का कार्य करे बैठने के अधिकारी होंगे और वे सरकारी मन्त्री भी बने रहेंगे।

जो प्रश्न शेष रहता है वह यह है कि विधान-परिषद् के सम्बन्ध में क्या हो। अभी तक चूंकि वे विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं, वे विधान-परिषद् के विधान-निर्माण सम्बन्धी कार्य में भाग लेने के अधिकारी नहीं हैं। कमेटी इस परिणाम पर पहुंची कि विधान बनाने के विषय में विधान-परिषद् को उनकी सहायता प्राप्त करने की आवश्यकता है और जिस प्रकार धारा (10) का उप-वाक्यखण्ड (2) उनको व्यवस्थापिका के कार्यों में भाग लेने की आज्ञा देता है, उसी प्रकार विधान-परिषद् को भी ऐसी व्यवस्था बना देनी चाहिये जिसके द्वारा सरकारी मंत्री जो विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं विधान-परिषद् के कार्यों में भाग ले सकें।

श्रीमान् जी, दो विषय और हैं जिन पर कमेटी ने कुछ भी सिफारिश नहीं की है और यह आवश्यक है कि मैं उनका उल्लेख करूं। पहला प्रश्न दुहरी सदस्यता का है। जैसा कि सभा को विदित है विधान-परिषद् में कुछ ऐसे सदस्य हैं जो प्रांतीय व्यवस्थापिका के भी सदस्य हैं। अब तक कोई नियम-विरुद्ध बात नहीं है, क्योंकि विधान-परिषद् व्यवस्थापिका नहीं है। परन्तु, जबकि विधान-परिषद् व्यवस्थापिका के रूप में कार्य आरम्भ करेगी यह दुहरी सदस्यता का झगड़ा निःसंदेह उठेगा। मैं भारतीय एक्ट की धारा 68 (2) में दी गई व्यवस्था की ओर ध्यान

आकर्षित करूं जो इस विषय के सम्बन्ध में है। धारा 68 (2) किसी सदस्य को केन्द्रीय तथा प्रान्तीय दोनों व्यवस्थापिकाओं के सदस्य होने की आज्ञा नहीं देती है, लेकिन संशोधन द्वारा इस व्यवस्था को हटा दिया गया है। अतः विधान-परिषद् के सदस्यों के लिये जब कि वे व्यवस्थापिका के सदस्यों के रूप में कार्य कर रहे हैं, किसी अन्य व्यवस्थापिका के सदस्य होने की सुविधा है। परन्तु, वास्तव में ठीक तथा दृढ़ वैधानिक दृष्टिकोण से तो नियम विरोध है ही। यह विधान-परिषद् के निर्णय करने की बात है कि वह धारा 68 (2) के विपरीत सिद्धान्त को ग्रहण करेगी और दुहरी सदस्यता की आज्ञा देगी या धारा 68 (2) को रखते हुए वह कोई ऐसी उपयुक्त कार्यवाही करेगी जिससे दुहरी सदस्यता रोक दी जाये।

दूसरा प्रश्न जिस पर कमेटी ने कोई सिफारिश नहीं की है वह परिषद् की कार्यालय-सम्बन्धी व्यवस्था का है। परिषद् की कार्यालय-सम्बन्धी व्यवस्था एकमात्र विधान-परिषद् के अध्यक्ष के नियंत्रण के अंतर्गत एकात्मक व्यवस्था है। जब तक विधान-परिषद् के पास केवल यही एकमात्र कार्य, अर्थात् विधान तैयार करना था, इस विषय में कोई कठिनाई नहीं थी। लेकिन जब कि विधान-परिषद् अपने दो रूप में कार्य करेगी, एक बार विधान बनाने वाली संस्था के रूप में और दूसरी बार व्यवस्थापिका के रूप में, जिसका मुखिया कोई अन्य व्यक्ति स्पीकर या डिप्टी स्पीकर होगा तो कर्मचारियों को ठीक बिठाने के प्रश्न उपस्थित हो सकते हैं। लेकिन कमेटी ने सोचा कि विचारणीय विषय के अन्तर्गत उन्हें इस विषय पर विचार करने का अधिकार नहीं है इसलिये उन्होंने इसका उल्लेख ही नहीं किया। श्रीमान् जी, मैं समझता हूं कि जितना मैंने समय लिया है उससे अधिक सभा का समय लेने की मुझे आवश्यकता नहीं है। मेरे विचार से जो कुछ मैंने कहा है वह सदस्यों को जो कुछ कमेटी ने किया है उसकी याद दिलाने के लिये यथेष्ट होगा। और उनको रिपोर्ट पर अच्छी प्रकार से, जिसे वे पसन्द करें, विचार करने में सहायक होगा।

अध्यक्षः इस कमेटी की सिफारिशों का समावेश करते हुये श्री मुंशी ने एक प्रस्ताव की सूचना दी है। मेरे विचार से यह उत्तम होगा, यदि प्रस्ताव को पहले ले लिया जाये और वाद-विवाद उसके पश्चात् हो।

डा. पी.एस. देशमुखः श्रीमान् जी, क्या यह श्रेष्ठतर नहीं होगा कि पहले हम रिपोर्ट पर विचार करने के प्रस्ताव को लें और उस पर वाद-विवाद के पश्चात् अन्य संशोधनों को लें?

***अध्यक्ष:** क्या यह आवश्यक है कि रिपोर्ट पर विचार करने के लिये हम पृथक् वाद-विवाद करें? मेरे विचार से दोनों साथ-साथ चल सकते हैं, यदि सभा की आज्ञा हो तो। ठीक बात यह है कि जिस प्रस्ताव को श्री मुन्शी पेश कर रहे हैं वह लगभग वही वस्तु हैं।

***श्री के.एम. मुन्शी** (बम्बई: जनरल): मैं अपने संशोधन को पेश करता हूं। जिस प्रस्ताव को मैं पेश कर रहा हूं उसके पैरे रिपोर्ट के शब्दों में हैं, केवल एक या दो बातों के जिन पर मैं अभी सभा का ध्यान आकर्षित करता हूं। वाक्य-खण्ड उस रिपोर्ट में से ले लिये गये हैं जिसकी डा. अम्बेडकर ने व्याख्या की है। अत: मुझे उसे दुहराने की आवश्यकता नहीं है, परन्तु मैं एक या दो परिवर्तनों पर सभा का ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा, जो मैंने किये हैं और जो मेरे विचार से रिपोर्ट को उचित प्रभाव देने के लिये आवश्यक थे।

पैरा (4) इस प्रकार है:

''परिषद् के विचार-विमर्शों पर, जब कि वह संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे, अध्यक्ष का कार्य करने को एक अफसर, जिसको स्पीकर कहा जाये, के निर्वाचन के लिये यह विधान-परिषद् नियमों में उपयुक्त व्यवस्था बनाये।''

इस सिलसिले में मुझे यह कहना है कि रिपोर्ट ने सभा के समक्ष दो विकल्प रखे हैं:

विकल्प (क) यह है कि विधान-परिषद् का अध्यक्ष ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जिसका समस्त समय परिषद् के दोनों कामों को दिया जाये, जब कि वह विधान-निर्माण-कार्य में संलग्न हो तथा जब कि वह संघ-व्यवस्थापिका का कार्य कर रही हो। उन्होंने दूसरा विकल्प भी रखा है—यदि विधान-परिषद् का अध्यक्ष मंत्री है तो परिषद् के विचार-विमर्शों पर जब कि वह व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे अध्यक्ष का कार्य करने को एक अफसर के निर्वाचन के लिये यह विधान-परिषद् नियमों में उपयुक्त व्यवस्था रखे।

श्रीमान् जी, चूंकि आप मंत्री हैं मैंने दूसरा विकल्प चुना है और उसको मैंने अपने पैरा (4) में रखा है, जिसके फलस्वरूप सभा को परिषद् के विचार-विमर्शों पर जबकि वह व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे अध्यक्ष का कार्य करने के लिये एक अफसर का निर्वाचन करना पड़ेगा।

दूसरा परिवर्तन जिसके करने का मैंने साहस किया है वह उस अफसर का नाम है जिसके निर्वाचन के लिये मैंने सुझाव रखा है, कि निर्वाचन करने पर अफसर का नाम स्पीकर होना चाहिये, जिससे कि जब सभा विधान-परिषद् के रूप में बैठती है। हम अध्यक्ष को उस पर अध्यक्षता के लिये रखेंगे और जब वह व्यवस्थापिका के रूप में बैठती है तो निर्वाचित अफसर अध्यक्ष का पद ग्रहण करेंगे हम उनको स्पीकर कहेंगे। स्पीकर शब्द यथेष्ट महत्त्वूपर्ण होने के कारण वह यह सूचित करेगा कि हम एक व्यवस्थापिका के रूप में बैठ रहे हैं न कि विधान बनाने वाली संस्था के रूप में। मैं निवेदन करता हूं कि प्रस्ताव जैसा मैंने पेश किया है सभा द्वारा स्वीकार किया जायेगा।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम)ः श्रीमान् जी, एक वैधानिक आपत्ति है। प्रस्ताव न पढ़ा गया है न पेश किया गया है।

***श्री के.एम. मुन्शीः** मैं उसे अवश्य पढ़ूंगा। इस ओर मेरा ध्यान आकर्षित करने के लिये मैं माननीय सदस्य का बहुत आभारी हूं और मैं समझ गया हूं। मेरा प्रस्ताव इस प्रकार है किः

''विधान-परिषद् की कार्यवाही सम्बन्धी रिपोर्ट पर विचार करने के सम्बन्ध में माननीय डा. बी. आर. अम्बेडकर के प्रस्ताव के सिलसिले में यह निश्चय किया जाता है किः

(1) परिषद् का कर्तव्य होगाः

(क) विधान बनाने के कार्य को प्रचलित रखना तथा समाप्त करना, जो कि 9 दिसम्बर सन् 1946 ई. को आरम्भ किया गया था; और

(ख) संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करना, जब तक कि नये विधान के अनुसार व्यवस्थापिका न बने।

(2) विधान बनाने वाली संस्था के रूप में परिषद् के कार्य में तथा संघ-व्यवस्थापिका के रूप में उसके साधारण कार्य में स्पष्ट अन्तर रख देना चाहिये और इन दो प्रकार के कार्यों के लिये अलग-अलग दिन या एक ही दिन अलग-अगल सभायें नियत की जायें।

(3) परिषद् में भारतीय रियासतों के प्रतिनिधियों की स्थिति के सम्बन्ध में रिपोर्ट के पैरा (6) में की गई सिफारिशों को स्वीकार किया जाये।''

[श्री के.एम. मुंशी]

रिपोर्ट के पैरा (6) को मैंने शामिल कर लिया है। उस पैरे का प्रयोगनीय भाग इस प्रकार है:

''हम सहमत हैं, जैसा कि इस विचारणीय विषय के शब्दों में निहित है, कि भारतीय रियासतों का प्रतिनिधित्व करने वाले परिषद् के सदस्यों को विधान-परिषद् की विधान बनाने के कार्य के लिये नियत किये गये सब दिनों की कार्यवाहियों में भाग लेने का अधिकार है। उनको उन दिनों की कार्यवाहियों में जो उन विषयों से सम्बन्धित है जिनको रियासतों ने संघ को अर्पित कर दिया है परिषद् में, जो कि संघ व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करेगी, भाग लेने का भी अधिकार है। यद्यपि यह विधान-परिषद् के अधिकार की बात है कि वह उनको उन विषयों से सम्बन्धित कार्यवाही में जिनको रियासतों ने अर्पण नहीं किया है भाग लेने से रोक दे या उसको सीमित करे, हम यह सिफारिश करते हैं कि ऐसी कार्यवाहियों में भी भाग लेने में नियम द्वारा कोई प्रतिबन्ध या रोक न लगा दी जाये।

(4) परिषद् के विचार-विमर्शों पर, जब कि वह संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे, अध्यक्ष का कार्य करने को एक अफसर, जिसको स्पीकर कहा जाये, के निर्वाचन के लिये यह विधान-परिषद् अपने नियमों में उपयुक्त व्यवस्था बनाये।

(5) परिषद् को संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करने के लिये बुलाने तथा समाप्त करने का अधिकार अध्यक्ष को हो।

(6) संघ-सरकार के मंत्रियों को, जो कि विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं विधान-निर्माण कार्य में उपस्थित होने तथा भाग लेने का अधिकार होगा, लेकिन जब तक कि वे विधान-परिषद् के सदस्य न हों उनका वोट देने का कोई अधिकार नहीं होगा।

(7) आवश्यक परिवर्तन, संशोधन तथा वृद्धि की जाये:

(क) भारतीय व्यवस्थापिका की स्थायी आज्ञाओं तथा उसके नियमों में विधान-परिषद् के अध्यक्ष द्वारा, उनको (आज्ञाओं तथा

नियमों को) जिस रूप में भारतीय सरकार के एक्ट की प्रयुक्त व्यवस्थाओं को भारतीय स्वतंत्रता एक्ट 1947 के अन्तर्गत संशोधन कर ग्रहण किया है उसके अनुरूप बनाने के लिये।

(ख) विधान-परिषद् या अध्यक्ष द्वारा जैसी भी सूरत हो उन नियमों तथा स्थायी आज्ञाओं में पैरा 9 की व्यवस्थाओं का पालन करने के लिए और जहां आवश्यक हो भारतीय सरकार की प्रयुक्त धारा को नए नियम के अनुरूप बनाने के लिए उचित संशोधन करने के लिए।''

इस सिलसिले में मैं एक बात कह दूं जिसका कहना मैं आरंभ में भूल गया था। मेरे पेश किये संशोधन में तथा रिपोर्ट में परिषद् को बुलाने तथा समाप्त करने का अधिकार अध्यक्ष को सौंपा गया है। जैसा कि कहा जा चुका है भारतीय सरकार के एक्ट के अंतर्गत अभी यह गवर्नर का अधिकार है। उसका आशय गवर्नर जनरल से है जैसा कि प्रधान मंत्री की राय द्वारा है। परन्तु समूची विधान-परिषद् का हमारा कानून-निर्माण का कार्य एकमात्र स्वरूप होने के कारण यह आवश्यक है कि विधान-परिषद् गवर्नर जनरल से मुक्त रहे। इसलिए विचारा गया कि अध्यक्ष ही व्यवस्थापिका को बुलाने तथा उसे समाप्त करने के लिए उपयुक्त व्यक्ति होगा।

केवल ये ही वे सब बातें हैं जो मुझे कहनी हैं और मैं आशा करता हूं कि सभा इसे स्वीकार करेगी।

***अध्यक्षः** मेरे पास कुछ संशोधनों की सूचना है। मैं देखता हूं कि इनमें से चार संशोधन श्री मुंशी द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव के अंतर्गत आ जाते हैं और इसलिए उनको पेश करने की आवश्यकता नहीं है। दो ऐसे संशोधन हैं जिनकी मेरे पास सूचना है, और वे श्री मुंशी के प्रस्ताव के अंतर्गत नहीं आते हैं, एक संशोधन श्री अनन्तशयनम् आयंगर द्वारा है और दूसरा श्री टी. टी. कृष्णमाचारी द्वारा।

(श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर ने अपना संशोधन पेश नहीं किया।)

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रासः जनरल): श्रीमान् जी, मैं संशोधन पेश नहीं कर रहा हूं, परन्तु सभा के समक्ष प्रस्ताव पर मैं कुछ शब्द कहना चाहूंगा।

***अध्यक्ष:** और कोई संशोधन नहीं है। प्रस्ताव पर अब वाद-विवाद हो सकता है। आप अब बोल सकते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, डा. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये इस प्रस्ताव तथा श्री मुंशी के संशोधन पर बोलने से मेरा उद्देश्य कुछ प्रश्नों को स्पष्ट कराने से है, क्योंकि ये बातें इस रूप में हैं कि कोई व्यक्ति विरोधी प्रस्तावों की भूल भुलैयों में पड़ सकता है। पहला प्रश्न जिस पर मैं सभा का ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा वह श्री मुंशी के संशोधन के वाक्यखंड (1) की उपधारा (6) के सम्बंध में है। माननीय डा. अम्बेडकर ने मुख्य प्रस्ताव को पेश करते समय इस बात की ओर ध्यान आकर्षित किया कि रिपोर्ट ने भारतीय सरकार के एक्ट की धारा (10) की उपधारा (2) को स्वीकार किया है जिसके द्वारा सरकारी सदस्यों को जो इस परिषद् के सदस्य नहीं हैं कार्यवाही में भाग लेने का अधिकार दिया है। इसको फिर उस प्रस्ताव में दुहराया गया है जो कि मुख्य प्रस्ताव के संशोधन के रूप में पेश किया गया है। श्रीमान् जी, मैं यह जानना चाहूंगा कि जो परिमिततायें भारतीय सरकार के एक्ट की धारा (10) की उपधारा (2) में है; कि वे सरकारी सदस्य सरकारी सदस्य भी बने रह सकते हैं और केवल 6 महीने के लिए, इससे अधिक नहीं, भाग ले सकते हैं और इस काल में उनको परिषद् का सदस्य बन कर योग्यता प्राप्त कर लेनी चाहिये; वे वर्तमान सरकार के सदस्यों पर लागू होंगी या नहीं। यह प्रश्न है जिसको मैं चाहूंगा कि डा. अम्बेडकर या श्री मुंशी स्पष्ट करें।

दूसरा प्रश्न जिसे मैं कहना चाहूंगा वह उस अफसर के नाम के सम्बन्ध में है जिसको संघ-व्यवस्थापिका में अध्यक्षता करने के लिए सुझाया गया है। मुझे भय है कि भारत के सरकारी एक्ट के संशोधन तथा श्री मुंशी के कथन में कुछ विरोध है। भारत के सरकारी एक्ट का संशोधन धारा 22 पर उग्र रूप में विचार करता है, जो कि 1935 एक्ट के अंतर्गत व्यवस्थापिका पर अध्यक्षता करने वाले अफसर के संबंध में है। इस धारा की (1), (2), (3) और (5) उपधारायें छोड़ दी गई हैं और उपधारा (4) अपने मूल रूप में इस प्रकार है:

> **"राज्य-परिषद् के अध्यक्ष अथवा उपाध्यक्ष को क्रमशः उतना वेतन दिया जायेगा जितना संघ-व्यवस्थापिका के एक्ट द्वारा नियत किया जाये और जब तक इस प्रकार की व्यवस्था न बने तब तक उतना वेतन दिया जायेगा जितना गवर्नर जनरल निश्चित करें।"**

संशोधन केवल यह है कि उपधारा (4) में ''राज्य-परिषद् के'' के स्थान में ''संघ-व्यवस्थापिका के'' हो तथा ''अथवा उपाध्यक्ष'' को निकाल दिया जाये। अत: जहां तक उपधारा (4) का सम्बंध है व्यवस्था लगभग वैसी ही रहती है, सिवाय व्यवस्थापिकाओं के नाम के परिवर्तन के, तथा ''राज्य-परिषद्'' और ''नीचे की सभा'' शब्दों को हटाने के तथा ''संघ-व्यवस्थापिका'' शब्दों के रखने के। अत: जब कि पूरी योजना बदल दी गई और भारत सरकार के एक्ट की धारा (22) तथा धारा (23) में से ''स्पीकर'' शब्द निकाल दिया गया तो मैं नहीं समझता कि ''स्पीकर'' शब्द का यहां रखना बिल्कुल ठीक और कानूनी है। संभवतया मूल रिपोर्ट के शब्दों को ग्रहण करना अच्छा होता, अर्थात् ''एक अफसर अध्यक्षता करने के लिये,'' उसका चाहे बाद में कुछ भी नाम हो जाये।

तीसरा विषय जिसका मैं स्पष्टीकरण चाहूंगा वह यह है। वह वाक्यखंड (1) का उप-खंड (5) है। इस उप-खंड में जो स्थिति ग्रहण की गई है वह हमारे विचार से बिल्कुल ठीक है, क्योंकि यह सर्वोच्च संस्था है जिसे अपने कार्य-पद्धति के नियम बनाने तथा अफसर नियुक्त करने का अधिकार है। लेकिन जब तक भारत सरकार के एक्ट के, जिसका हमने व्यवस्थापिका के रूप में संशोधन किया है, अंतर्गत कार्य करेंगे तो उसमें ही कुछ और संशोधन क्यों न किये जायें और उसको इस प्रकार क्यों न बना दिया जाये कि परिषद् को बुलाने तथा समाप्त करने का अधिकार गवर्नर जनरल को नहीं होगा वे अधिकार अध्यक्ष को सौंप दिये जायेंगे? मैं नहीं समझता हूं कि इस प्रकार के संशोधन करने में कोई कानूनी रुकावट है। जैसा कि मैंने आरंभ में कह दिया था कि मुझे समझा दिया जाये, परन्तु मैं विचार करता हूं कि इस स्थिति को उचित कानून बनाने की कार्यवाही द्वारा उपयुक्त रूप में पुष्ट किया जा सकता था, अपेक्षाकृत उस पर किसी प्रस्ताव तथा संशोधन द्वारा या संशोधनकर्ता की व्याख्या द्वारा।

श्रीमान् जी, एक और विषय भी है जिसको मैं यहां कहना चाहूंगा, जो संशोधन के सम्बंध का है और जिसकी मैं सूचना दे चुका हूं। वह यह है। हम अनेकों नियमों के विरोध पर विचार कर रहे हैं, क्योंकि जिस स्थिति में हम अब हैं वह हमारी बनाई हुई नहीं है। हमारे देश में तीव्र गति से परिवर्तन होने के कारण अनेकों बातें पैदा हो गई हैं और हम को यथासंभव उत्तम प्रकार से उनको सुलझाना है। ऐसी परिस्थितियों में व्यक्ति-विशेषों का विचार किये बिना मैं यह उत्तम समझता हूं श्रीमान् जी, कि विधान-परिषद् के दो कार्यों पर अध्यक्ष अफसरों के कार्य-क्षेत्र की स्पष्ट व्याख्या कर दी जाये और इसीलिए मैं चाहता हूं कि श्री मुंशी अपने संशोधन के प्रस्ताव द्वारा कमेटी की रिपोर्ट के पैरा (6) में वे शब्द लाते जो

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

यह स्पष्ट कहते–यह स्मरण रखा जाये कि दो प्रकार के कार्य करते हुए भी परिषद् एक है और केवल एक ही अध्यक्ष रख सकती है और यह कि अध्यक्ष उसका सर्वोच्च मुखिया होना चाहिये, दोनों शासन व्यवस्था के कार्यों में तथा विचार-विमर्श के कार्यों में। मैं सभा को तुरंत यह विश्वास दिला सकता हूं कि अध्यक्ष के कार्यों की तथा किसी उस अफसर के कार्यों के तदनुसार निश्चय की, जिसे अध्यक्ष या सभा नियुक्त करे, यह विशेष स्पष्ट तथा सही व्याख्या की सभा को सूचना देते हुए मेरी किसी व्यक्ति को अतिरिक्त अधिकार देने तथा किसी अन्य से अधिकार छीनने की मंशा नहीं है। मैं केवल यह अनुभव करता हूं कि जब हम ऐसी परिस्थितियों पर विचार कर रहे हैं जिन पर हमारा नियंत्रण नहीं है तो उस काम को करने के लिए जिसे हमें करना ही है हम अच्छे से अच्छा प्रयत्न कर रहे हैं। हम यहां और अभी सही व्याख्या रखें जिससे कि बाद में, चाहे कुछ भी हो, यदि दैवयोग से कोई झगड़ा ही हो तो यह स्पष्ट विदित हो जायेगा कि सबसे बड़ा अधिकारी कौन है। मैं चाहता हूं कि श्री मुंशी प्रस्ताव के संशोधन में इस विचार को रखते। हमारे प्रयोजन के लिए यह पर्याप्त है कि प्रस्तावक यह स्वीकार कर लें कि कमेटी की रिपोर्ट के शब्द ठीक हैं और इस पेश किये गये प्रस्ताव के संशोधन द्वारा भी वे नहीं बदले जा सकते। मेरे विचार से यह आश्वासन आशय की पूर्ति करेगा। तत्पश्चात् यह परिषद् संघ-व्यवस्थापिका के रूप में विशेष कार्य करेगी, जब तक कि नया विधान प्रयोग में नहीं आता और अध्यक्षता करने वाले अफसर के अधिकार तथा स्थिति में भी अन्य परिवर्तन होंगे। परन्तु कुछ समय के लिए मेरे विचार से उसके कार्य क्षेत्र की सही व्याख्या और इस बात पर जोर देते हुए कि विधान-परिषद् का अध्यक्ष ही बावजूद इस बात के कि वे सभा की स्वीकृति से कुछ अधिकार अन्य व्यक्ति को देते हैं, अब भी सर्वोच्च मुखिया हैं दोनों सभा के शासन-व्यवस्था-सम्बंधी तथा विचार-विमर्श सम्बंधी विभागों में। इससे सदस्यों के मन का भय तथा शंकाओं का निवारण हो जायेगा। मैं यह भी आशा करता हूं कि डा. अम्बेडकर या श्री मुंशी उन शंकाओं का समाधान करेंगे जिनको मैंने श्री मुंशी द्वारा पेश किये गये संशोधन के वाक्यखंड (1) के मद (4) तथा (6) पर उठाया है।

*__श्री डी.एच. चन्द्रशेखरिया__ (मैसूर): अध्यक्ष महोदय, मैं एक वैधानिक आपत्ति रखने के लिये खड़ा होता हूं। वह यह है। जब कभी विचार के लिये सभा के समक्ष रिपोर्ट लाई जाती है तो सभा का निश्चय उस प्रस्ताव पर किया जाता है और फिर एक-एक करके वाक्य-खंड लिये जाते हैं। अब जो कुछ हुआ है, वह

यह है कि प्रस्ताव अभी अनिश्चित है और सदस्यों को अपने संशोधन पेश करने की आज्ञा दे दी गई है, और फिर भी जो संशोधन श्री के. एम. मुंशी द्वारा पेश किया गया है वह इतना व्यापक है और इतने विषयों का समावेश करता है कि इस पर वाद-विवाद तक करना सदस्यों के लिये बड़ा कठिन है। मैं यह सुझाव रखूंगा कि पहले जो संशोधन माननीय डा. अम्बेडकर ने पेश किया है, उस पर विचार करने का निर्णय किया जाये और फिर श्री मुँशी के संशोधन के अंतर्गत एक-एक बात को अलग-अलग वाद-विवाद के लिये लिया जाये और निश्चय किया जाये। यह मेरी वैधानिक आपत्ति है।

***अध्यक्षः** मेरे विचार से जो वैधानिक आपत्ति इस समय उठाई गई है वह पहले भी उठाई गई थी और उस समय सामान्यतः सभा की ऐसी इच्छा पाई गई थी कि दो संशोधनों के रखने से, जिनमें एक प्रस्ताव पर विचार करने सम्बंधी हैं और दूसरा विवरण-सम्बंधी, श्री मुंशी का प्रस्ताव है, कोई विशेष लाभ नहीं होगा। इसलिये मैंने दोनों को एक साथ ले लेने दिया। दोनों पर अब वाद-विवाद हो सकता है और सदस्यों को उस प्रस्ताव पर जो पेश किया गया है, जिसमें कि रिपोर्ट में दी हुई सब बातें हैं, बोलने की स्वतंत्रता है।

***डा. पी.एस. देशमुखः** अध्यक्ष महोदय, मैं यहां तक तो नहीं कहूंगा कि रिपोर्ट तथा रिपोर्ट पर प्रस्तावित निर्णय का समावेश करते हुये प्रस्तावित को रखने से जो परिस्थिति उत्पन्न हो गई है वह गड़बड़ी पैदा करने वाली परिस्थिति है, जैसे कि पूर्व-वक्ता श्री कृष्णमाचारी ने कहा है। परन्तु, श्रीमान् जी, मैं यह कहूंगा कि मेरा यह विचार है कि रिपोर्ट बहुत संतोषजनक नहीं है। यदि हम रिपोर्ट की बातों का विश्लेषण करें तो मैं समझता हूं कि यदि सब नहीं तो अनेकों सदस्य मेरे साथ इस बात में सहमत होंगे कि रिपोर्ट में वे बातें हैं जो कि स्पष्ट प्रत्यक्ष हैं और जो किसी भी व्यक्ति के लिये केवल सामान्यबुद्धि के विषय हैं। दूसरे रिपोर्ट में कुछ वैकल्पिक प्रस्ताव हैं। उदाहरण के रूप में, उसमें दिया हुआ है कि आप जैसा चाहें एक अध्यक्ष रख सकते हैं अथवा दो। श्रीमान् जी, विकल्प के उपस्थित करने से कोई लाभ नहीं है। ऐसी कमेटियों से जो आशा की जाती है वह यह है कि वे हमारा उचित पथ-प्रदर्शन करें। यह स्पष्ट है कि कमेटी ऐसा नहीं कर सकी है। तीसरे डा. अम्बेडकर को स्वयं यह स्वीकार करना पड़ा कि दो ऐसे मद हैं जिन पर वे अन्तिम निर्णय नहीं कर सके। चौथे, डा. अम्बेडकर के भाषण से यह स्पष्ट है कि उन्होंने तर्क अथवा जो राजनैतिक-सा था उस पर अधिक विश्वास किया, अपेक्षाकृत सभा को ऐसे आदेश देने के जो न्याययुक्त

[डा. पी.एस. देशमुख]

तथा वैधानिक हों। रियासतों के प्रतिनिधियों से सम्बन्धित सिफारिश का हवाला देता हूं। यह स्मरण रखा जाये कि हमारा रियासत के प्रतिनिधियों से कोई झगड़ा नहीं है, चाहे वे यहां शासकों की ओर से आये हों चाहे प्रजा की ओर से। मैं उनका स्वागत करता हूं; मैं यह चाहूंगा कि वे वास्तव में हमारे समान हों और उनको वे समस्त सुविधायें तथा अधिकार मिलें जो भारत के अन्य भाग से आये हुये हम लोगों में से किसी को मिलते हैं। लेकिन मैं इसमें भी विश्वास करता हूं कि कमेटी का यह कर्तव्य था कि वह हमको यह बताती कि रियासतों से आये हुये इस सभा में उपस्थित व्यक्तियों के अधिकारों के प्रयोग करने के सम्बन्ध में कानूनी स्थिति क्या है। हमें यह बताना यथेष्ट नहीं था कि क्या तर्क-सम्मत है तथा क्या राजनैतिक है। उस विवेक को हम सब प्रयोग में ला सकते हैं और लायेंगे। वास्तव में हम जिस आदेश को चाहते थे वह यह था कि क्या वैधानिक है तथा क्या न्याययुक्त है और अन्त में अपने प्रस्ताव के औचित्य के सम्बन्ध में एक दो वाक्य होते। मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि कमेटी के किसी विशेष सदस्य को अप्रसन्न करने का मेरा आशय नहीं है, डाक्टर अम्बेडकर को तो किसी रूप में भी नहीं। परन्तु इस सभा में ऐसे सदस्यों की पर्याप्त संख्या है जो हमारी अनेक समितियों के कार्य की इन्हीं शब्दों में समालोचना करते हैं, जिनका इस विशेष समिति की रिपोर्ट के सिलसिले में मुझे प्रयोग करना पड़ा है। और यही कारण है कि कम से कम कुछ समितियों से समय-समय पर जो हमें रिपोर्टे प्राप्त होती रही हैं, उनसे वे सन्तुष्ट नहीं हो पाये हैं।

यहां तक कि श्रीमान् जी, मेरे विचार से इस प्रकार की आशा करना व्यर्थ है कि हमें इस रिपोर्ट पर विचार करने के लिये आप अधिक समय देंगे या और आगे विचार करने के लिये उसी कमेटी को यह रिपोर्ट वापस कर देंगे। इस प्रकार की आशा करना आवश्यकता से अधिक है। एक यथेष्ट दीर्घकाल तक राजनीति तथा व्यवस्थापिका में रहने से मुझे यह विदित है कि सद्भावना सदैव नहीं रहा करती। अतः आपसे ऐसा निवेदन नहीं कर रहा हूं कि कमेटी की रिपोर्ट अस्वीकार की जाये अथवा वापस की जाये। जो कुछ मैं बताना चाहता हूं वह केवल यह है कि जो कुछ हमारे समक्ष प्रस्तुत है वह संतोषजनक नहीं है। हमको उस आधार पर आदेश नहीं दिये गये तथा पथ-प्रदर्शन नहीं कराया गया जिस पर कि हमें निर्देश प्राप्त होना चाहिये था और इस कारण सारी परिस्थिति बहुत असन्तोषजनक है। मैं केवल एक दो बातें ही लूंगा। मुझे बहुत प्रसन्नता हुई कि श्री कृष्णमाचारी ने एक आवश्यक भाषण दिया और श्री मुन्शी द्वारा प्रेषित प्रस्ताव में एक बहुत

प्रमुख दोष बताया। वास्तव में मुख्य उद्देश्य तथा मुख्य बात, जिसके ऊपर कमेटी के सदस्यों को स्वयं ध्यान देना था, यह थी कि जो संशोधन हमारे पीछे किये गये थे उनका क्या फल होगा। केवल एक या दो संशोधनों का उल्लेख किया गया है। लेकिन वह सब पहले ही किया जा चुका है। हमने इच्छा के अनुसार भारत सरकार के एक्ट में परिवर्तन किये हैं, ईश्वर जानता है, किसकी सुविधाचातुरी अथवा किसके आदेश के अनुसार। हमारे पास कुछ तैयार निर्णय हैं और इस रिपोर्ट तथा इस प्रस्ताव के द्वारा हम उनको कुछ स्थानों में जड़ने में प्रयत्न कर रहे हैं। वास्तविक रूप में हमारे सामने कम से कम दो निश्चित बातें हैं। यद्यपि हमको व्यवस्थापिका के अधिकार दे दिये गये हैं और संघ-व्यवस्थापिका कही जाती है, परन्तु 1935 ई. के एक्ट के संशोधन-कर्ताओं ने स्पीकर को हटा दिया है, स्पीकर के निर्वाचन सम्बन्धी धारा को हटा दिया है। दूसरी बात यह है कि हम सबमें इस प्रश्न पर हलचल मची हुई है कि विभिन्न प्रान्त के व्यवस्थापिका सदस्यों को दोनों व्यवस्थापिका तथा विधान-परिषद् के पूर्णाधिकार प्राप्त सदस्यों के रूप में यहां बैठना चाहिये कि नहीं। स्थिति यह है कि वह व्यवस्था जिसके द्वारा एक व्यक्ति दो व्यवस्थापिकाओं का सदस्य नहीं हो सकता था 1935 ई. के एक्ट से शान्तिपूर्वक निकाल दी गई है और वह इस सभा में लागू हो चुकी है। हमारा इससे कोई झगड़ा नहीं है, हम काम चलाना चाहते हैं। मैं इस बात को केवल यह बताने के लिये कह रहा हूं कि स्थिति असन्तोषजनक है। मैं किसी धारा में परिवर्तन अथवा संशोधन करने के अधिकार पर प्रश्न नहीं करता हूं परन्तु सारी स्थिति यथेष्ट रूप से स्पष्ट नहीं है तथा इस प्रकार की नहीं है कि सदस्य किसी विशेष विषय को समझ सकें। वास्तव में जब कोई बात सोची जाती है और प्रस्ताव पेश किया जाता है तो चाहे वह कैसी ही दशा में हो हमें उसका समर्थन करना पड़ता है, और हम निर्णय करने तथा विधान बनाने के लिये इतने चिन्तित रहते हैं कि हम इस बात का भी ध्यान नहीं करते कि वह किस गड़बड़ की अथवा असन्तोषजनक हालत में है। परन्तु इसके साथ-साथ आलोचना के रूप में अभी यह निवेदन करना चाहता हूं कि यह बहुत सुखदायक स्थिति नहीं है, और यदि यह सम्भव हो सके कि आप अथवा प्रस्तावक महोदय या संशोधनकर्ता हमारी शिकायत पर ध्यान दें और कम से कम आंशिक रूप में उसको दूर कर सकें तो मैं आभारी होऊंगा और मुझे विश्वास है कि सभा के अन्य अनेक सदस्य भी आभारी होंगे।

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान् जी, श्री मुन्शी द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव पर मेरा कुछ थोड़ा सा झगड़ा है, परन्तु मैं यह स्पष्ट स्वीकार करता हूं कि जो रिपोर्ट हमें दी गई है उससे मैं प्रसन्न नहीं हूं। रिपोर्ट संशोधनों का समर्थन

[श्री विश्वनाथ दास]

करती हुई प्रतीत होती है जिसका मुझे भय है कि इस सभा के बहुत कम सदस्य समर्थन करेंगे। दोनों रिपोर्ट तथा श्री मुन्शी का प्रस्ताव इस आधार पर आश्रित हैं कि विधान-परिषद् को, जो कि इस माह की 15 तारीख से संघ-पार्लियामेंट हो गई है उसे, बिल्कुल भिन्न-भिन्न दो रूपों में कार्य करना है; अर्थात् विधान-परिषद् तथा संघ-पार्लियामेंट के रूप में। इस स्थिति को ग्रहण करने पर अर्थात् पूर्ण पृथक्त्व की स्थिति को, उन्हें आवश्यक रूप से उसी मार्ग का अपनी समस्त योजना में अनुसरण करना है और यहीं पर विधियों का पृथक् होना उपस्थित होता है। भारतीय स्वतंत्रता एक्ट सन् 1947 का अध्ययन यह प्रकट करता है कि विधान-परिषद् इस देश की सर्वोच्च व्यवस्थापिका है। यह स्थिति है जिसे विधान-परिषद् ने स्वीकार कर लिया है, और यदि विधान-परिषद् ने नहीं तो कम से कम हमारे नेताओं ने तो इसे स्वीकार कर ही लिया है और विधान-परिषद् 14 अगस्त से इसका साथ दे रही है। इस विधान-परिषद् ने भारतीय स्वतंत्रता एक्ट को स्वीकार कर लिया है, अपना नेता चुन लिया है और अपने नेता को अधिकार दे दिया है कि वह जाये और लार्ड माउण्टबैटन को भारत का गवर्नर-जनरल होने के लिये आमन्त्रित करे। इस प्रश्न पर इस दृष्टिकोण से विचार करने पर विधान-परिषद् ने उस स्थिति को ग्रहण कर लिया है जो उसे भारतीय स्वतंत्रता एक्ट सन् 1947 ई. के द्वारा दी गई थी। अत: आज इतने समय बाद यह कहने से कोई लाभ नहीं है कि हम दो विभिन्न संस्थाओं के रूप में कार्य करते हैं और हम पृथक्-पृथक् कार्य करते हैं और पूर्णतया पृथक्-पृथक् उद्देश्यों के लिये काम करते हैं। उद्देश्य एक ही है; और जब कि एक ओर हमें भारत के भावी विधान के लिये बिल बनाना है और उसे एक्ट के रूप में पास करना है, हमें देश की दिन प्रतिदिन की शासन-व्यवस्था की भी देखभाल करनी है और ऐसे कानून-निर्माण कार्य को भी अपने हाथों में लेना है जो कि आवश्यक हो। अत: कमेटी का दो रूप में कार्य करने का प्रस्ताव और मेरे माननीय मित्र मुन्शी का, सभा की खामोश स्वीकृति देने वाला प्रस्ताव भी हमारे द्वारा स्वीकृत नहीं किया जा सकता। यहां मेरी शिकायत है। यदि हम एक बार इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लें तो इसका आशय होगा कि दो-कार्यालय होंगे और हमें विधान-परिषद् के कार्यालय का वही अनुभव होगा जिसके कार्यकर्त्ता न तो कुशल हैं और न विनयशील हैं। उनको विनम्रता तथा व्यवहार-कुशलता की कुछ शिक्षा प्राप्त करनी चाहिये।

***एक माननीय सदस्य:** क्या आप इसे सिद्ध कर सकते हैं?

***श्री विश्वनाथ दासः** हां, यदि आवश्यक हो तो मैं उदाहरण दे सकता हूं। एक माननीय सदस्य ने उनकी अयोग्यता के बाबत कहा था। मैं यह कहूंगा कि विधान-परिषद् का कार्यालय कुशल नहीं है। इन परिस्थितियों में ये तो केवल अतिरिक्त तर्क हैं कि हम इन दो कार्यों को दो रूप में क्यों ले सकते हैं। यदि हम विधान बनाने का कार्य अन्य दिनों में करें, जिससे मैं पूर्णतया सहमत हूं, तो यह इस कारण नहीं है कि हम भिन्न-भिन्न हैं, वरन् कार्य करने की सुविधा के कारण। दूसरे उदाहरण को उद्धृत करते हुये हम उच्च न्यायालय (हाईकोर्ट) में कार्य-व्यवस्था को लें। वहां दीवानी विषय एक दिन लाये जाते हैं तथा फौजदारी विषय अन्य दिनों तथा इसी प्रकार। इसी प्रकार यह अकेली संस्था विधान निर्माण कार्य को किन्हीं निश्चित दिनों में ले लेगी तथा सामान्य व्यवस्था सम्बन्धी कार्य को अन्य दिनों।

***श्री एच.वी. कामतः** माइक खराब हो गया है।

***श्री विश्वनाथ दासः** यह अपनी-अपनी राय का विषय है (*हंसी*)

***कुछ माननीय सदस्यः** माइक ठीक नहीं है।

***श्री विश्वनाथ दासः** मुझे बहुत खेद है। मैं जोर से बोलूंगा। ऐसी स्थिति में मैं अनुभव करता हूं कि समय आ गया है जबकि थोड़ा सा स्पष्ट कहना आवश्यक है और हमें यह बहुत स्पष्ट कर देना है कि हम एकमात्र एक व्यवस्थापिका के रूप में यहां काम करते हैं, किसी भिन्न आशय के लिये नहीं केवल अपनी कार्यवाही को सुविधापूर्वक चलाने के लिये। केवल यहीं तक मैं समिति से सहमत हूं कि हम विधान बनाने के लिये और दिन नियत करें तथा सामान्य कानून बनाने के लिये और, अन्य बातों तथा प्रबन्ध सम्बन्धी कार्यों पर वाद-विवाद करने के लिये कोई अन्य दिन या उसी दिन कोई अन्य समय नियत करें। ऐसी स्थिति में मैं सुझाव रखता हूं कि यह दुहरी कार्यवाही समाप्त होनी चाहिये।

***अध्यक्षः** मुझे भय है कि करेंट कट गई है और इस कारण माइक कार्य नहीं कर रहा है। मैं मान लेता हूं कि वक्ता महोदय इतनी जोर से बोलेंगे कि अन्य सदस्यों को सुनाई दे।

***श्री विश्वनाथ दासः** जी हां। इसे समाप्त करने के पश्चात् मैं दूसरे विषय पर आता हूं, जिस पर मैं सभा के माननीय सदस्यों को व्याख्यान देना चाहता हूं और वह विषय संशोधनों का है। श्रीमान् जी, इस सभा के माननीय सदस्यों से परामर्श किये बिना ही संशोधन कर दिये गये हैं तथा महत्वपूर्ण परिवर्तन कर दिये

[श्री विश्वनाथ दास]

गये हैं, जिस पर मैं यहां विरोध करूंगा। मैं अपने विषय को स्पष्ट करूं। हम यहां विधान-परिषद् में एक अधिवेशन के लिये एकत्रित हुये हैं। हमारे लिये एक अधिवेशन के अतिरिक्त अन्य कोई अधिवेशन नहीं है, अर्थात् कि हम आरम्भ करें और जब तथा जिस रूप में हम निर्णय कर लेते हैं हम समाप्त करें। हमारे राजा इस विषय में बहुत स्पष्ट हैं। यदि हम बार-बार स्थगित करते हैं तो यह हमारी अपनी सुविधा तथा अपनी कार्यवाही को सुविधापूर्वक समाप्त करने के लिये हैं। लेकिन यह बात तो है ही कि विधान-परिषद् एकमात्र संस्था के रूप में कार्य करेगी जब तक उसका मुख्य कार्य समाप्त न हो जाये, अर्थात् विधान का तैयार करना और उसे पास करना। श्रीमान् जी, उन नियमों को देखकर पार्लियामेंट का एक्ट बनाया गया है जिसका यह आशय है कि वह स्वीकार कर लिया गया। अत: स्थिति यह है कि विधान-परिषद् जब तक बैठे, एक वर्ष, दो वर्ष या 6 महीने वह सारा एक अधिवेशन होगा। इस स्थिति में मैं जोरदारी के साथ संशोधनों का विरोध करता हूं, जिसमें यह निर्धारित किया गया है कि पार्लियामेंट के अधिवेशनों में बैठने तथा उसकी कार्यवाही के लिये गवर्नर-जनरल हमें बुलायेंगे। उनका इससे कोई सम्बन्ध नहीं है, उनको कोई काम नहीं है। हम विधान-परिषद् के सदस्य हैं और विधान-परिषद् अपनी मर्जी से बैठती है तथा स्थगित होती है। हम उसके कार्यों को गवर्नर-जनरल को नहीं सौंप सकते, चाहे हम उनको कितना ही प्रेम करें, चाहें या उनका आदर करें। न हम इस महत्वपूर्ण कर्तव्य को माननीय अध्यक्ष को सौंपना चाहते हैं यद्यपि हम उन्हें प्रेम करते हैं, उन्हें चाहते हैं और उनका सम्मान करते हैं। श्रीमान् जी, यह संशोधन बहुत बुरा है और मेरे विचार से यह उचित है कि हम उसका विरोध करें।

इसके बाद मैं समाप्त करने पर आता हूं। हम सम्मिलित होते हैं और हम स्वयं ही समाप्त करेंगे। पृथ्वी की कोई शक्ति तथा अधिकारी हमसे इस परिषद् को समाप्त नहीं करा सकते हैं और हम इस कार्य को किसी अधिकारी को नहीं सौंप सकते, सिवाय स्वयं विधान-परिषद् के। इस विषय पर मैं संशोधन को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं हूं। मैंने अभी कुछ थोड़ी सी बातों को लिया है, पर ऐसे अनेको मद हैं जिन पर संशोधनों की आवश्यकता नहीं है और न वे हमारे लिये उचित ही हैं।

अब मैं तीसरे विषय पर आता हूं, रियासतों का भाग लेना। मेरे माननीय मित्रों, इस समिति के सदस्यों ने हमसे यह सिफारिश की है कि रियासतों के प्रतिनिधि हमारे साथ रहने चाहियें। हम उनको यहां रखने के लिये उद्यत हैं। परन्तु, क्या

उनका यह प्रस्ताव है कि वे हमारे विचार-विमर्शों तथा वाद-विवादों में ही केवल भाग न लें वरन् वोट देने के विषय में भी? मैं यह स्पष्ट स्वीकार करूंगा कि मुझे जितना समय दिया गया है उससे अधिक समय इस प्रश्न पर विचार करने के लिये चाहिये। जहां तक रियासत के प्रतिनिधियों का सम्बन्ध है, वे 62 हैं—व्यवस्थापिका की संख्या की एक अच्छी भिन्न। हमारे लिये बिना और विचार किये इससे सहमत होना बहुत कठिन होगा कि इस विधान-परिषद् के 62 सदस्यों को अपने साथ बजट पर भी वोट देने का अधिकार दिया जाये जिसके लिये उन पर कोई उत्तरदायित्व नहीं है, सिवाय तीन विषयों के।

समाप्त करने के पूर्व मैं आपसे इस प्रश्न पर विचार करने का निवेदन करूंगा कि हमारे पास व्यवस्थापिका का कार्यालय है जो दक्ष, निपुण तथा कार्य करने के लिये तत्पर है। इन परिस्थितियों में हम दुहरे कार्यालय क्यों रखें, जिसका आशय व्यर्थ व्यय तथा अयोग्यता से है? इन परिस्थितियों में मैं आपसे निवेदन करूंगा कि आप इस प्रश्न पर व्यय तथा योग्यता को ध्यान में रखते हुये विचार करें।

***माननीय श्री हुसैन इमाम:** अध्यक्ष महोदय, मुझे बहुत खेद है कि हमारे कुछ सहयोगियों ने कमेटी के कार्य पर आपत्ति की है तथा उसका अपवाद किया है। कमेटी के सदस्य की हैसियत से मैं यहां उस दशा को बताने आया हूं जिसमें हमने कार्य किया। हमारे सामने विचारणीय बातों के प्रतिबन्ध थे जो यहां आरम्भ में तय की गई थीं। जो सदस्य अब बुद्धिमान् बन रहे हैं, उन्होंने विचारणीय बातों में किसी परिवर्तन का सुझाव नहीं रखा। लेकिन अब उन सीमित विचारणीय विषयों के अन्तर्गत कार्य कर देने के पश्चात् हमारी दो बातों में समालोचना की जाती है। पहली यह है कि हम अपनी सीमा के बाहर चले गये और दूसरी यह है कि हमने यथेष्ट विचार नहीं किया। ये दो स्वविरोधी अपराध लगाये गये हैं। कमेटी की स्थिति क्या थी? कमेटी कभी अपनी उस उत्पादक संस्था से बड़ी नहीं है, जिसने उसे उत्पन्न किया। उत्पादक संस्था सदैव उच्च है और उसे कमेटी के सुझावों में परिवर्तन अथवा संशोधन करने का अधिकार है। कमेटी अपनी इच्छा पर आग्रह नहीं कर सकती है। वह जो वास्तव में करती है वह यह है कि आपके सामने कार्यवाही की किसी विशेष विधि के समस्त पहलुओं का साकार रूप रखे। यह प्रत्यक्ष है कि विधान-परिषद् की दुहरी कार्यवाही है। इस पर उड़ीसा के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री ने भी आक्षेप किया था कि उसे दुहरी कार्यवाही न रखनी चाहिये यह ऐसी बात है जिसको एक माननीय सदस्य ने प्रत्यक्ष समझा और दूसरे

[माननीय श्री हुसैन इमाम]

ने गलत समझा। लेकिन स्थिति क्या है? कृपा कर यह याद रखिये कि अब तथा भविष्य के लिये विधान बनाने और आज से लेकर जब तक नया विधान लागू नहीं होता तब तक समस्त शासन-विधान अधिकार आप पर हैं। सभा की यह स्थिति होने के कारण उसे दोनों कार्यों में से किसी की भी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। इस कमेटी की उत्पत्ति इस कारण हुई थी कि यहां एक प्रश्न उठाया गया था कि प्रबंधक सरकार (Executive Government) द्वारा आधुनिक परिस्थितियों में किये गये कार्यों पर प्रश्न उठाने के लिये हमें एक अदालत बनानी चाहिये तथा इस प्रश्न पर वाद-विवाद हुआ था। पंडित जवाहरलाल नेहरू भी उपस्थित थे और अनेकों वक्तव्यों के पश्चात् उन्होंने कहा कि यह अच्छा होगा कि एक कमेटी बैठे और समस्त उलझनों पर विचार करे और साधनों का सुझाव रखे। हम वास्तव में दुहरी कार्यवाहियों को एक ही समय किये जाने के प्रबन्ध की योजना बना रहे थे। ये दो कार्य इतने भिन्न-भिन्न हैं कि उनको पृथक्-पृथक् ही लिया जा सकता है। उदाहरण के लिये विधान-परिषद के रूप में हम अगस्त में बैठ सकते हैं और सितम्बर में व्यवस्थापिका के रूप में। हमारे लिये यह मार्ग खुला हुआ था। दूसरा मार्ग यह था कि हम एक ही अधिवेशन में पृथक्-पृथक् दिन रखते। तीसरा मार्ग यह था कि उसी दिन हम पृथक्-पृथक् समय रखते। इन सब विषयों का हमको हवाला दिया गया था और शुद्ध अन्तःकरण वाले व्यक्ति के समान हमने इन तीनों मार्गों में से किसी को नहीं चुना। हमने आपके सामने तीनों मार्गों को बता दिया है, जो आपके लिये खुले हुये हैं। आप एक ही दिन पृथक्-पृथक् अधिवेशन समय रख सकते हैं, या आप पृथक्-पृथक् दिन रख सकते हैं या आप पृथक्-पृथक् अधिवेशन कर सकते हैं, परन्तु हमने यह बता दिया है कि हम भिन्न-भिन्न समय रखने की अपेक्षा पृथक्-पृथक् बैठक करना पसन्द करते हैं। एक उद्देश्य के लिये आप प्रातःकाल बैठ सकते हैं तथा दूसरे उद्देश्य के लिये सायंकाल को, हमने केवल यही किया है। हमने इसका निर्णय आप पर ही छोड़ दिया है। अच्छा तरीका यह होता कि प्रबन्धक सरकार को, जिस पर सभा का उत्तरदायित्व है, अपने विवेक को काम में लाने दिया जाता और वह हमें व्यवस्थापिका सम्बन्धी कार्यों के लिये समय देती जिस प्रकार कि वह अधिवेशन में गैर सरकारी कामों के लिये समय देती है। एक समय ऐसा आ सकता है जब कि विधान-परिषद् का कार्य इतना कम हो जाये कि उसके लिये सप्ताह में एक दिन ही काफी हो और चार दिन व्यवस्थापिका के कार्यों के लिये दिये जा सकते हैं और दूसरे समय इसके विपरीत हो सकता है। मेरा आशय यह है कि आप विधान-परिषद् का कार्य सप्ताह में चार दिन करते रहें और व्यवस्थापिका का कार्य केवल एक दिन।

अब प्रश्न दुहरे नियंत्रण का उठता है। हमने यह इतने शब्दों में कह दिया है कि अध्यक्ष दोनों विधान-परिषद् तथा व्यवस्थापिका के कार्यों के मुखिया होंगे। अब यह सभा को अधिकार है, कि यदि वह यह समझती है कि विधान-परिषद् के कार्यालय सम्बन्धी कार्य के लिये, जब कि वह व्यवस्थापिका के रूप में कार्य कर रही हो, एक विशेष प्रकार के प्रबन्ध की जरूरत है, तो वह ऐसा नियम बना ले। यदि वह यह समझती है कि दोनों विभागों का मिलाना आवश्यक है तो वह ऐसा भी कर सकती है और यदि वह यह सोचती है कि एक कार्यालय को बरखास्त कर दिया जाये और दूसरे को नियुक्त रखा जाये तो उसे ऐसा करने का भी पूर्ण अधिकार है। कमेटी से क्यों चाहते हैं कि वह एक प्रकार के आरोपण के समान इस भार को क्यों वहन करे, जबकि यह विचारणीय बातों में नहीं है। हम अपनी इच्छा आप पर लादने के लिये समिति में नहीं थे, बल्कि आपको केवल यह बताने के लिये थे कि आपके लिये कौन-कौन से मार्ग हैं और उनमें क्या-क्या उलझने हैं। यह सच है कि हम विचारणीय बातों की सीमा को पार कर गये। ऐसा दो बार हुआ और वह आवश्यक था, क्योंकि हम कुछ बातों के इतने विरोध में थे जो कि यद्यपि विचारणीय बातों के अन्तर्गत नहीं थीं फिर भी हमारे वाद-विवाद के लिये वे इतनी उपयुक्त तथा आवश्यक थीं कि हम उनकी उपेक्षा नहीं कर सके और इस कारण हमने उन विषयों पर कुछ विचार रख दिये हैं। परन्तु हमने यह सावधानी रखी है कि किसी प्रकार हम आप पर अपनी इच्छा का भार न डालें। भारत सरकार के एक्ट की धारा 10 (2) पर जो प्रश्न किया गया है कि उसमें यह व्यवस्था की गई है कि सरकारी सदस्य 6 महीने में व्यवस्थापिका का सदस्य हो जाये या पद त्याग करे, यह भी एक ऐसी धारा है जिसमें आप परिवर्तन कर सकते हैं और यदि प्रबन्धक सरकार यह अनुभव करती है कि परिवर्तन आवश्यक है तो वह उस परिवर्तन को कर सकती है, अथवा यदि वह यह अनुभव करती है कि उनको विधान परिषद् में लाना आवश्यक है तो उन विषयों को उपस्थित करने की भी काफी गुंजाइश है। मैं इसलिये विचार करता हूं कि यह सुझाव रखना कि वाक्यखंडों का कोई संशोधन कार्य में बाधक होगा वास्तव में राई का पर्वत बनाना है। यह समझते हुये कि संशोधन करने में समय लगता है और यह कुछ कठिन भी है। हमने एक अच्छा तरीका सुझाया है कि सर्वोच्च संस्था होने के नाते विधान-परिषद् को अपनी इच्छा के अनुसार नियम बनाने का अधिकार है इस कारण हमने सिफारिश की है कि जिस कार्य को हम आवश्यक तथा तात्कालिक समझते हैं उसे नियम बनाने के अधिकार द्वारा करना चाहिये; उदाहरण के रूप में व्यवस्थापिका बुलाने के कार्य को। इन बातों

[माननीय श्री हुसैन इमाम]

का सुझाव रखने के अतिरिक्त कि वाक्यखण्ड बदल दिये जायें और गवर्नर-जनरल के अलावा और किसी को अधिकार सौंपे जायें, हमने यह सुझाव रखा है कि विधान-परिषद् के नियमों में इस प्रकार से संशोधन किया जाये कि जिससे कि अध्यक्ष को यह अधिकार मिल जाये। यह कहना कि अध्यक्ष को भी तारीख नियत करने का अधिकार न हो और यह इतना महत्त्वपूर्ण है कि सभा इस अधिकार को किसी भी व्यक्ति को नहीं सौंप सकती है मेरी राय में सन्देहों का आवश्यकता से अधिक प्रदर्शन करना है। उन परिस्थितियों को समझते हुये जिनमें होकर हम गुजर रहे हैं, हमें ठीक कार्य करने के लिये अपने अफसरों पर, अपने अध्यक्ष पर निर्भर होना पड़ेगा। अध्यक्ष सदैव सभा के अधीन है। यद्यपि वह बड़ा मुखिया है, फिर भी जनतन्त्रात्मक सिद्धान्त के अंतर्गत वे इस सभा के मत के अधीन है। अत: यदि वे कुछ त्रुटि करते हैं तो आप उन्हें सुधार सकते हैं, परन्तु प्रबन्ध-सम्बन्धी कार्यों के लिये आपको एक प्रबन्धक चाहिये। कुछ ऐसी बातें हैं जिनको प्रजातंत्र भी प्रबन्ध-समिति को सौंप देता है और यह उनमें से एक कार्य है, अर्थात् व्यवस्थापिका का बुलाना जिसको अध्यक्ष को देना चाहा है। हम सदैव आदेश देते हैं। प्रबन्ध-समिति उनको पूर्ण करती है। उदाहरण के रूप में, गत अधिवेशन के लिये तारीखें नियत नहीं की गई थीं। गत अधिवेशन उस तारीख को बुलाया गया था जिसको अध्यक्ष ने उपयुक्त समझा और उस पर किसी ने आपत्ति नहीं की। अभी तक अध्यक्ष ने अपने विवेक को गलत तरीके से काम में नहीं लिया है। ये सब मानवी अंग हैं। हम नियम तथा व्यवस्था या सिद्धान्त के वशवर्ती न हों। हम मनुष्य बने रहें और इसी दृष्टिकोण से विषयों पर विचार करें तथा जहां विश्वास आवश्यक है वहां विश्वास करें और जहां आपको अविश्वास करना चाहिये वहां अविश्वास करें। अन्यथा कार्य नहीं चल सकता। मैं इसलिये निवेदन करता हूं कि श्री मुन्शी का संशोधन स्वीकार किया जाये।

श्री आर.वी. धुलेकर (संयुक्त प्रांत: जनरल): सभापति जी, जो रिपोर्ट पेश की गई है, उसके समर्थन में मैं खड़ा हुआ हूं। जहां तक कि इसमें सिद्धांत दिये हुए हैं, वह बहुत उचित हैं और उनमें किसी को कोई उज्र नहीं हो सकता है। दो चार बातें इसके सम्बंध में मैं कहना चाहता हूं और वे इस प्रकार हैं। पहली बात यह है कि जब पहली धारा में यह बात कही गई है कि हमारी विधान-परिषद् को तब तक कार्य करते रहना चाहिये जब तक कि पूरा विधान न बन जाये और उसके बाद तब तक काम करते रहना चाहिये जब तक कि नई लोक-परिषद्

और राज्य-परिषद् दोनों न बन जायें, इसमें किसी को मतभेद हो सकता है। इसके सम्बंध में मैं केवल एक बात कहना चाहता था कि यह शब्द डोमिनियन लेजिस्लेचर जो बराबर हमारे होठों में आता है, यदि इसके बजाये हम इसे केवल इंडियन इंडिपेंडेंस एक्ट में ही सीमित कर दें तो अच्छा हो क्योंकि डोमिनियन शब्द कान में कुछ अच्छा नहीं लगता है, यह कटु मालूम होता है। सन् 1929 में डोमिनियन स्टेटस की बहुत चर्चा हुई थी और उसके विरुद्ध पूर्ण स्वराज्य (कम्पलीट इंडिपेंडेंस) के लिए हम लोगों ने प्रस्ताव पास किया था। डोमिनियन स्टेटस यद्यपि कुछ लोगों को बहुत अच्छा लगता था, परन्तु यदि उसका हिंदी भाषा में तर्जुमा किया जाये तो डोमिनियन स्टेटस का अर्थ दासता का स्थान है, या अगर फारसी या उर्दू में किया जाये तो हम उसको ओहदये गुलामी कहेंगे। इसलिए मेरी सूचना यह है कि किसी उचित अवसर पर या तो ड्राफ्टिंग कमेटी या हमारी असेम्बली या प्रेसीडेंट इसको अगर इंडियन पार्लियामेंट या पार्लियामेंट आफ इंडिया ऐसा शब्द अगर रख दें तो बहुत अच्छा होगा इसके बाद एक प्रश्न और भी है जिसके सम्बंध में कुछ लोगों के दिल में भ्रम है। जो सज्जन देशी राज्यों से आये हैं, उनके क्या अधिकार हैं? हमारे बाकी भारत में हमारी समस्याओं पर गौर करें, उन पर विचार करें और उसके साथ साथ वोट भी दें। मेरा इनसे यह कहना है कि यह भ्रम उचित नहीं है। हमको अब पूरा भारत एक समझना चाहिये, और प्रत्येक मनुष्य को जो यहां बैठे, प्रत्येक मेम्बर जो यहां पर बैठे, उसको पूरा आदरयुक्त स्थान यहां पर मिलना चाहिये। यदि हम उससे यह कहें कि आप थोड़ी देर तक बात कर सकते हैं और जब निश्चित रूप से अपनी राय देने के लिए अवसर आये-और निश्चित रूप से राय देने का मौका तभी आता है जब कि उसको हाथ उठाना पड़ता है, समर्थन में, या विरोध में-तो उस समय हम उससे कहें कि तुमको वोट देने का हक नहीं होगा और मताधिकार नहीं दिया जायेगा। मैं समझता हूं कि यह उचित नहीं है। दूसरी बात मैं यह भी कहना चाहता हूं कि जो सज्जन यह समझते हैं कि देशी राज्यों के प्रतिनिधि जो राजाओं द्वारा चुनकर आते हैं, और क्योंकि देशी राज्य पिछड़े हुए हैं इसलिए उनको पूर्ण मताधिकार नहीं मिलना चाहिये, तो मेरा उनसे यह भी निवेदन है कि आप देखते हैं कि हमारे प्रांत में कुछ प्रांत बहुत पिछड़े हुए हैं और कुछ प्रांत बहुत आगे हैं। कुछ प्रांतों में ऐसे नियम और कानून बन गये हैं जो कि लोक रूप में और लोक-नीति से बहुत अच्छे हो गये हैं। मजदूरों के लिए, किसानों के लिए और लोगों के लिए बहुत अच्छे-अच्छे कानून बन गये हैं। हमारे युक्तप्रांत में गांव हुकूमत बिल, प्रजातंत्र राज्य बिल, असेम्बली में पास हो चुका है और अब वह अपर चेम्बर में, कौंसिल में

[श्री आर.वी. धुलेकर]

भी जायेगा। ऐसा बिल अभी तब दूसरे प्रांतों में पास नहीं हुआ है, तो इसलिए जब कि हमारा प्रांत आगे भी है तो ऐसी बात कहना कि चूंकि देशी राज्य पिछड़े हुये हैं इसलिए देशी राज्यों के लोगों को यहां पर स्थान न मिलना चाहिये, यह उचित नहीं है। कुछ लोग ऐसा भी कहते हैं कि आप ऐसा करें कि जो सज्जन देशी राज्यों की प्रजा द्वारा चुनकर भेजे गये हैं, उनको तो अवसर दें, किंतु जो चुने हुए नहीं आये हैं बल्कि राजाओं द्वारा नोमिनेटेड मेम्बर्ज हैं, उनको इसका अवसर नहीं दें। मेरा कहना यह है कि उन को भी पूरा स्थान मिलना चाहिये और पूरा अधिकार मिलना चाहिये कि जिससे वे यहां पर पूरा स्थान प्राप्त कर लें। डेमोक्रेसी, प्रजातंत्र क्या होता है, लेजिस्लेटिव असेम्बली में किस तरह से कार्यवाही होती है और जो एक सामूहिक बुद्धिमत्ता है, वह कितनी अधिक इसमें होती है, यह भी उनको अगर स्पष्ट रूप से देखने को मिल जाये तो मैं समझता हूं कि वह बहुत जल्द अपने देशी राज्यों में जाकर इस बात का प्रयत्न करेंगे कि प्रजातंत्र को वहां पर बढ़ायें। इसलिए मैं समझता हूं कि यह आक्षेप कि जो देशी राज्यों के नियोजित सदस्य हैं, उनको पूर्ण अधिकार नहीं मिलना चाहिये, यह भी उचित नहीं है मैं समझता हूं कि प्रजातंत्र के आगे एक कदम बढ़ाने के लिए यह बड़ा भारी कार्य है जिस कार्य को हमारे डा. अंबेडकर साहब ने और उनके साथियों ने पूर्ण किया है, और मैं उनको बहुत धन्यवाद देता हूं। एक प्रश्न और भी है कि हम लेजिस्लेटिव असेम्बली के लिए कानून बनाने वाली लोक-परिषद् के लिए एक स्पीकर नियत करने जा रहे हैं। यह योजना बहुत अच्छी है। गवर्नर-जनरल को तो मैं पसंद नहीं करता, इस बात से कि एक तो वह विदेशी है और दूसरे गवर्नर-जनरल का शब्द भी कुछ ऐसा अच्छा नहीं है जो कान को अच्छा लगे इसलिए उनको यह अधिकार नहीं होना चाहिये कि वह असेम्बली को बुलायें या असेम्बली को मुल्तवी कर दें। अब रह गया सवाल कि-प्रेसीडेंट या स्पीकर किसको असेम्बली बुलाने या मुल्तबी करने का अधिकार हो। तो मेरी राय में कम से कम जब यह बात कही गई थी कि चूंकि प्रेसीडेंट महोदय मिनिस्टर हैं, इसलिए स्पीकर वह न हों, तो मेरी तो यह राय थी कि यदि ऐसी बात है कि जब आपने स्पीकर बनाया है तो स्पीकर को ही अधिकार दे दिया जाये कि वह लेजिस्लेटिव असेम्बली को बुलाये या मुल्तवी कर दे। क्योंकि, जो बहस पहली बात में लगती है, वही दूसरी बात में भी लगती है। अगर मिनिस्टर को इतना अधिकार नहीं होना चाहिये कि वह हमारा प्रेसीडेंट बनकर लेजिस्लेटिव असेम्बली में बैठे, तो यह बहस वहां पर भी लागू हो सकती है। किंतु हमारे मेम्बरों ने यह भी कहा कि हम लोगों को बहुत कांस्टीट्यूशन बातों में और उसके प्रोवीजनों में नहीं जाना चाहिये तो मैंने भी उसे मान लिया कि कोई हर्ज नहीं है। अब रह गई यह बात कि एक प्रश्न यहां पर

उठा है कि दोहरी सदस्यता, यानी डबल मेंबरशिप, को उपस्थित किया गया। कुछ सज्जनों का शायद ऐसा कहना था कि यहां पर प्रांतीय असेम्बलियों के जो सदस्य आये हुए हैं। उसकी वजह से प्रांत में कार्य बहुत ढीला पड़ जायेगा। और कार्यवाही पूर्णरूपेण नहीं हो सकेगी। इसलिए दोहरी सदस्यता बंद कर देनी चाहिये। इसके सम्बंध में यह भी कहा गया है कि कान्स्टीट्यूशन असेम्बली को, अर्थात् इस विधान-परिषद् को, सोचना चाहिये कि दोहरी सदस्यता रखी जाये या नहीं। मेरा नम्र निवेदन है कि विधान-परिषद् का इस प्रश्न से कोई सम्बंध नहीं है। प्रांतीय असेम्बलियों को अधिकार है कि वह अपने चुने हुए सदस्य कांस्टीट्यूएंट असेम्बली में भेजें और जिन पर उनको पूर्ण विश्वास था उन्होंने उनको भेजा और यहां पर वे कार्य कर रहे हैं। मेरी सम्मति यह है कि जब हमने विधान-परिषद् में आरम्भ से कार्य किया है तो इस समय हमारा यह ध्येय होना चाहिये कि कांस्टीट्युऐंट असेम्बली में अर्थात् विधान-परिषद् में ऐसा परिवर्तन नहीं होना चाहिये जिससे कि आज तक जितना काम हमने किया है उस काम को आगे आने वाले लोग न जान सकें। मैं इस बात को मानता हूं कि तमाम प्रांतों से प्रमुख-प्रमुख लोग यहां पर आये हैं और लोग यह थोड़ा-बहुत कह सकते हैं कि कदाचित-प्रांतो की उसमें हानि हो, लेकिन मेरा कहना यह है कि यह युक्ति बहुत ही मजबूत है इस बात के लिए कि चूंकि प्रमुख-प्रमुख लोग समस्त प्रांतों से आये हैं और वे ज्यादा से ज्यादा जिम्मेदार लोग थे जिनको कि प्रांतों ने यहां चुन कर भेजा है, इसलिए यह बहस बहुत ही मजबूत है। इस बात के लिए कि दोहरी सदस्यता तब तक कायम रखी जाये जब तक अंत में नये चुनाव होकर नई लेजिस्लेटिव असेम्बली कायम न हो जाये। इसलिए मेरा नम्र निवेदन है कि इस प्रश्न को यहां पर अधिक महत्व नहीं देना चाहिये। अब केवल एक बात कह कर खत्म करूंगा और वह यह है कि जो हमारा विधान चल रहा है उसमें कुछ ऐसी बातें हैं कि जिन पर हमारी विधान-परिषद् ने अभी तक विचार नहीं किया है। मेरी सम्मति है कि कांस्टीट्यूएंट असेम्बली और विधान-परिषद् को कम से कम एक जल्सा अवश्य उस लेजिस्लेटिव असेम्बली के पहले बुलाना चाहिये, जिसमें हम पूरे कानून पर विचार करेंगे और इसलिए मैं निवेदन करूंगा कि डोमिनियन लेजिस्लेचर के रूप में बैठने से पहले इस विधान-परिषद् का एक इजलास हो जाना चाहिये, जिसमें जितनी अपूर्ण बातें हैं, जिन पर कि विचार नहीं किया गया है, उन पर भी विचार कर लें। और जिस कमेटी को विधान तैयार करने के लिए हमने मुकर्रर किया है, उसके सामने अपनी सामूहिक राय समस्त बातों के लिए पहुंच जाये, ताकि वह अच्छा कांस्टीट्यूशन का ड्राफ्ट बना सकें। इतना कहकर मैं समाप्त करता हूं।

***अध्यक्ष:** अब मि. तजम्मुल हुसैन बोल सकते हैं। मैं उनसे संक्षेप में बोलने के लिए निवेदन करूंगा। मैं एक बजे वाद-विवाद समाप्त करना चाहता हूं।

*__मि. तजम्मुल हुसैनः__ श्रीमान् जी, मैं संक्षेप में बोलूंगा। हमारे सामने यह प्रश्न है कि इस विधान-परिषद् का किस प्रकार निर्माण हुआ? क्या यह पार्लियामेंट के एक्ट द्वारा बनी या अन्य किसी प्रकार से? श्रीमान् जी, यह किसी व्यवस्था या कानून द्वारा नहीं बनी। इसकी उत्पत्ति 16 अप्रैल की घोषणा द्वारा हुई। उसके पश्चात् इसने अधिकार ग्रहण किये और समस्त भारत के लिए यह सर्वोच्च संस्था हुई। इस प्रकार इसकी उत्पत्ति हुई और वह अपना जीवन बिता रही है। हम जानते हैं कि विधान बनाने वाली संस्था के रूप में विधान-परिषद् तथा व्यवस्थापिका-संस्था के रूप में विधान-परिषद् में कोई अंतर नहीं है। दोनों पूर्णतया एक ही हैं। कोई अंतर नहीं है। इस विधान परिषद् को बुलाया गया है। अब यह सुझाव रखना कि गवर्नर-जनरल अपने मार्ग से विचलित हों और हमें फिर बुलायें, निरर्थक है। मेरी तुच्छ बुद्धि के अनुसार आप यहां अध्यक्ष के नाते हमें विधान-परिषद् के सदस्यों के रूप में भारत के लिए विधान बनाने या देश के दिन प्रतिदिन के शासन सम्बंधी कानून बनाने के लिए बुला सकते हैं।

श्रीमान् जी, एक प्रश्न उठाया गया है कि जब हम व्यवस्थापिका के रूप में बैठें तो अन्य अध्यक्ष तथा अन्य स्पीकर होना चाहिये। मेरे विचार से विधान-परिषद् का अध्यक्ष व्यवस्थापिका के अध्यक्ष या स्पीकर के रूप में कार्य कर सकते हैं। पर कठिनाई केवल यह है कि दुर्भाग्य अथवा सौभाग्य से आप सरकार के भी सदस्य हैं। अतः यह सुझाव रखा गया है कि आपका उस आसन पर बैठना ठीक तथा उचित नहीं होगा, क्योंकि आपके अधिकार के विभागों के सम्बंध में अनेकों प्रश्न पूछे जायेंगे और आपके लिए यह कठिनाई होगी कि आप उनका उत्तर सरकार के सदस्य के रूप में दें अथवा स्पीकर के रूप में। आपको हमने यह अधिकार सौंप दिये हैं कि आप अपने अधिकारों को अन्य किसी को दे दें। आप हम लोगों में से किसी को डिप्टी स्पीकर या अन्य कोई कार्यकर्त्ता, आपका कार्य करने के लिए नियुक्त कर सकते हैं। उदाहरण के रूप में, मैं आपको एक मिसाल दूंगा। बिहार में श्री सच्चिदानन्द सिनहा (जो कि परिषद् के भी सदस्य हैं) कौंसिल के अध्यक्ष के और साथ ही साथ सरकारी राज्य-परिषद् के सदस्य थे। वे एक ही समय दोनों कार्य करते थे। श्रीमान् जी, यदि ऐसी बातें ब्रिटिश राज्य में हो सकती थीं तो हमारे राज्य में क्यों नहीं हो सकती हैं? अतः मैं निवेदन करता हूं कि भिन्न-भिन्न रूप में हमें फिर बुलाने की गवर्नर-जनरल को कोई आवश्यकता नहीं है। हमारी उत्पत्ति हो चुकी है और हम कार्य कर रहे हैं और जिस समय आप चाहें सभा बुलाई जा सकती है। जब आवश्यकता हो, आप आसन छोड़ सकते हैं और अपने काम के लिए एक डिप्टी स्पीकर नियुक्त कर सकते हैं।

श्री हीरालाल शास्त्री (जयपुर): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र डाक्टर देशमुख ने और श्री धुलेकर ने मुझे प्रेरणा दी है कि मैं भी अपना नम्र निवेदन आपके सामने उपस्थित करूं। कुछ ने कहा कि विधान और कानून के हिसाब से देशी रियासतों के प्रतिनिधियों को यहां पर बराबर के अधिकार दिये जाने ठीक नहीं हैं, दूसरे साहब ने फर्माया कि यद्यपि देशी रियासतों के लोग पिछड़े हुए हैं, तब भी अच्छा होगा उनकी ध्वनि या कहने की शक्ति कम हो तब भी उन्हें पूरा हिस्सा लेने देना चाहिये।

मैं इस विधान-परिषद् की बहुत बड़ी इज्जत करता हूं और मैं अपनी इज्जत मानता हूं कि मुझे इस परिषद् का सदस्य चुने जाने का अवसर मिला है। परन्तु यह कहे बिना मैं नहीं रह सकता कि विचित्र परिस्थितियों में इस परिषद् का निमंत्रण हुआ है, और इस परिषद् में विभिन्न रंग के लोग शामिल हैं। कितने ही लोग ऐसे हैं जो प्रान्तों कि व्यवस्थापिका द्वारा चुने हुये आये हैं और कितने लोग देशी रियासतों से आये हैं। देशी रियासतों से आने वाले जो लोग हैं, उनमें भी विभिन्न रंग के लोग हैं। कुछ ऐसे हैं, जिन्हें राजाओं ने नामजद किया है। कुछ ऐसे हैं, जिन्होंने अपने आपको नामजद कर लिया है। कुछ ऐसे हैं जो चुने हुये कहे जाते हैं। लेकिन वास्तव में उनके चुने हुये में शंका की जा सकती है। कुछ ऐसे हैं, कम से कम जो स्वयं राजा हैं, चाहे छोटे ही हों, एक कम से कम ऐसे हैं जो राजकुमार हैं। कुछ ऐसे हैं, जिन्हें हम उपराजा कहना पसंद करें। इसी प्रकार तरह-तरह के लोग यहां पर आये हैं, या परिस्थितियों का दबाव था और हमको झिझकते-झिझकते बुलाया गया। और हम भी कितनी अड़चनों के बाद आते-आते आखिरकार पहुंच गये। मैं इन बातों को दोहराऊंगा नहीं। आप सब उन बातों को जानते हैं, लेकिन आज आकर के हम प्रान्तों के प्रतिनिधियों के साथ बराबर की पंक्ति में यहां पर आकर बैठ गये। यह तो आप नहीं ख्याल करेंगे कि हम कोई भिखारियों की हैसियत रखते हैं, या कानून और विधान के खिलाफ हमको भीख मांगनी है। एक समय था कि जब यहां पर देश की आजादी की लड़ाई लड़ी जा रही थी। उस लड़ाई में देशी रियासतों की जनता ने बिना किसी निमंत्रण के भी हिस्सा लिया और मैदान में कन्धे से कन्धा लगा कर आपके साथ जूझे। उसमें निमंत्रण की आवश्यकता नहीं थी। आज तो हम बिना निमंत्रण के नहीं आ गये हैं। किसी न किसी प्रकार के निमंत्रण से हम यहां पर आये हैं। और इस पंक्ति में आज हम मौजूद हैं। अब पंक्ति में आकर बैठने के बाद जब नाना प्रकार के व्यंजन के परोसने की बात यहां पर है (यह विषय, वह विषय, वह विषय)।

[श्री हीरालाल शास्त्री]

अब हमसे कह दिया जायेगा की भैया तीन पदार्थ तुम खा सकते हो और वस्तु तुम्हारे पथ्य के विरुद्ध है, उसे न छूना। यह कहा जा सकता है, लेकिन आज यह कहने का कष्ट नहीं करना चाहिए। आप हम पर अब यह भरोसा कर सकते हैं कि कदाचित् जो हमारे लिये पथ्य नहीं होगा उससे हम स्वयं दूर रहेंगे। इसमें हम स्वयं हिस्सा न लें यह मुनासिब हो सकता है, लेकिन अगर ऐसा ख्याल है तो मुझे आपसे कुछ मांगना नहीं है। इस बारे में हमारे किसी हक से वह हक कम माने गये, यह हमारी बदकिस्मती है, लेकिन हम किसी हक से यहां मौजूद हैं तो मुनासिब यह होगा कि जो भी लोग यहां आ गये हैं, चाहे वे राजा हों, चाहे राजकुमार हों, चाहे उपराजा हों, चाहे नामजद किये हुये प्रधान मंत्री हों, चाहे खुद के नामजद किये हों, चाहे यहां वे लोग हों, जो 60 में से 20 के करीब होंगे। यहां पर बैठने वाले अधिकतर लोग बराबर हैं, किसी प्रकार पिछड़े हुये नहीं, बल्कि आगे बढ़ रहे हैं, कुछ कर सकने वाले, कुछ कर चुकने वाले, कुछ कर दिखलाने वाले, ऐसे भी लोग हैं। लेकिन बिना किसी भेदभाव के, बिना किसी प्रकार पंक्ति बाधा के, बिना किसी जाति-भेद के, मैं समझता हूं कि सब आ गये हैं और उनके अधिकार समान होने चाहिएं।

अध्यक्ष: मेरे विचार से इस पर यथेष्ट वाद-विवाद हो चुका है। मैं अब डाक्टर अम्बेडकर को उत्तर देने के लिये बुलाऊंगा।

माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर: अध्यक्ष महोदय, कमेटी द्वारा दी गई रिपोर्ट का मिश्रित भावना के साथ स्वागत किया गया है। सभा के कुछ सदस्यों ने उसको गड़बड़ी का लेख कहा है। जिन्होंने इन शब्दों में रिपोर्ट की व्याख्या की है उनको मैं कुछ भी उत्तर नहीं देना चाहता हूं, क्योंकि मैं स्वयं समझता हूं कि उन्होंने जो तर्क प्रस्तुत किया है वह यथेष्ट विचार करने योग्य नहीं है। उत्तर में मैं जो कुछ निवेदन करना चाहता हूं वह मेरे मित्र डा. देशमुख तथा श्री विश्वनाथ दास द्वारा उठाये गये कुछ प्रश्नों के सम्बंध में है। डा. देशमुख कमेटी द्वारा की गई दो सिफारिशों का हवाला देते हैं। एक रियासत के प्रतिनिधियों को परिषद् के समस्त विचार-विमर्शों में भाग लेने की आज्ञा देने के सम्बन्ध की सिफारिश थी। दूसरी सिफारिश जिसका उन्होंने हवाला दिया था, वह राज्य के मन्त्रियों के सम्बन्ध में थी, जिनके लिये कमेटी ने यह कहा कि विधान-परिषद् की कार्यवाहियों में भी भाग लेने की उन्हें इजाजत देना वांछनीय नहीं होगा। डा. देशमुख ने कहा कि जो कुछ कमेटी ने किया वह तर्कसम्मत अथवा उपयुक्त था। कमेटी ने यह नहीं

कहा कि वह वैधानिक भी था। मुझे इस प्रश्न पर बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि डा. देशमुख वकील हैं। सच तो यह है कि उनको यह अनुभव कर लेना चाहिये था कि हमारा अभी कोई विधान नहीं है। विधान-परिषद् विधान बना रही है। और जो कुछ विधान-परिषद् करेगी वह वैधानिक होगा। (*वाह, वाह*) यदि विधान-परिषद् यह कहे कि रियासत के प्रतिनिधि भाग न लें तो वह ठीक वैधानिक होगा। यदि विधान-परिषद् यह कहे कि वह भाग लें तो वह भी ठीक वैधानिक होगा। अतः ऐसा कहना पूर्णतया भ्रमात्मक है।

मेरे मित्र श्री विश्वनाथ दास ने जो प्रश्न उठाया है उसके सम्बन्ध में भी मुझे काफी आश्चर्य हुआ कि जो कुछ उन्होंने कहा उस पर उन्होंने ठीक विचार नहीं किया। जो कुछ उन्होंने कहा, यदि वह मुझे ठीक-ठीक याद है तो उनकी बातें दो विषयों पर थीं। उन्होंने कहा, कि कमेटी परिषद् को दो भागों में बांट रही है और परिषद् अविभाज्य संस्था है और वह एक रूप में कार्य कर रही है। मैं नहीं समझता कि वे इस बात को समझ भी सकते हैं या नहीं कि विधान बनाना साधारण कानून बनाने से बिल्कुल भिन्न कार्य है। इस अन्तर को यदि मैं संक्षेप में कहूं तो इस प्रकार है कि विधान-परिषद् विधान के बन्धन में नहीं है, परन्तु व्यवस्थापिका विधान के बन्धन में है। जब विधान-परिषद् व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करेगी तो स्वतन्त्रता एक्ट के अन्तर्गत जो कि भारत सरकार के एक्ट का संशोधित रूप है, उसे कार्य करना होगा। प्रत्येक व्यक्ति वैधानिक आपत्ति उठा सकेगा। प्रत्येक व्यक्ति यह कह सकेगा कि कोई विशेष प्रस्ताव कानून के अन्तर्गत है या बाहर। परन्तु, ऐसा प्रश्न उठ ही नहीं सकता जब कि विधान-परिषद् विधान बनाने वाली संस्था के रूप में कार्य कर रही है। मैंने सोचा कि इतना वास्तविक भेद-विभेद हमको यह समझने में कि ये दो कार्य भिन्न-भिन्न हैं कि उद्देश्य भिन्न-भिन्न हैं और कार्य भिन्न हैं, यथेष्ट रूप से सहायक होगा। यदि हम गड़बड़ी दूर करना चाहते हैं तो इस कार्य का क्रियात्मक रूप यही होगा कि विधान-परिषद् को व्यवस्थापिका से अलग अधिवेशन करने दें। उन्होंने संशोधनों के प्रति भी कुछ आपत्ति की। मैं यह स्पष्ट कहता हूं कि यहां का कोई भी व्यक्ति भारत सरकार के 1935 के एक्ट में किये गये संशोधनों का जिम्मेवार नहीं है। यदि वे भारतीय स्वतंत्रता बिल की धारा 8 के उपवाक्य खण्ड (1) को देखें तो उनको यह विदित होगा कि विधान-परिषद् की व्यवस्थापिका के रूप में जो स्थिति है उसके अनुरूप भारत सरकार के 1935 के एक्ट में संशोधन करने का अधिकार पूर्णतया गवर्नर-जनरल को सौंपा गया है। मेरे विचार से यह सम्भव हो सकता है कि यह निर्णय करने के लिये कि क्या संशोधन किये जायें, गवर्नर-जनरल ने किसी केन्द्र

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

से राय ली हो। अतः इस वर्तमान समय में इसका कोई जिम्मेवार नहीं है। भारत-सरकार के एक्ट में किये गये संशोधनों से यदि विधान-परिषद् संतुष्ट नहीं है तो वही धारा (8) उप-वाक्यखण्ड (1) कहता है कि विधान-परिषद् को यह पूर्ण अधिकार है कि वह अपनी इच्छानुकूल संशोधनों में परिवर्तन कर ले। अतः मैं निवेदन करता हूं कि कमेटी के समालोचकों ने जो प्रश्न उठाये हैं, उनमें कोई सार नहीं है।

एक और प्रश्न है, जिसका मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी ने उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि श्री मुन्शी के प्रस्ताव में रिपोर्ट के दूसरे भाग को छोड़ दिया गया है, जो इस बात से सम्बन्धित है कि अध्यक्ष ही विचार-विमर्श तथा शासन-व्यवस्था दोनों का एकमात्र अधिकारी है। उन्होंने यह प्रश्न किया कि श्री मुन्शी ने जो प्रस्ताव बनाया तथा हमारे सामने रखा और जो कि लगभग कमेटी के समस्त प्रस्तावों को स्वीकार करता है उसमें यह विशेष व्यवस्था क्यों नहीं है? मैं यह कहना चाहूंगा कि यदि श्री कृष्णमाचारी ध्यानपूर्वक रिपोर्ट को पढ़ें तो उनको यह विदित होगा कि कमेटी की ओर से रिपोर्ट का वह विशेष भाग निरीक्षण के रूप में है, न कि सिफारिश के रूप में। अतः मैं निवेदन करता हूं कि उसका उल्लेख न करने में श्री मुन्शी बिल्कुल ठीक हैं।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** श्रीमान् जी, मैं डा. अम्बेडकर से कुछ सूचना प्राप्त करना चाहता हूं। सर्वप्रथम तो मैं उनसे यह जानना चाहूंगा कि उनको यह विश्वास है या नहीं कि पुनः संशोधन करने की आवश्यकता है, और यदि उनका ऐसा विश्वास है तो विधान-परिषद् के अगले अधिवेशन में या इससे जल्दी किसी तारीख को कुछ विषयों के सम्बन्ध में नये संशोधन रखने का विचार है क्या? उदाहरण के रूप में, भारत सरकार के एक्ट से स्पीकर को हटाना और इस सिफारिश में यहां उसको रखना। और भी अनेकों विषय हैं जैसे मंत्रियों का, जो कि विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं परन्तु उनका सदस्य होना आवश्यक है। ऐसे भागों के लिये संशोधन करने का क्या कोई अन्य साधन विचारा गया है?

दूसरी बात, यदि मैंने उनको ठीक-ठीक समझा तो उन्होंने अपने भाषण में इस बात का हवाला दिया था कि जो विभाग स्थापित किया जा रहा है उसके शासन-नियंत्रण के प्रश्न को उन्होंने नहीं लिया है और यह कहा कि वह विचारणीय विषय से बाहर था। हमारे मन में कुछ शंकायें हैं कि इस विभाग के लिये, जबकि वह व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे, एक और स्वतंत्र रचना (कार्यालय) स्थापित करने में संघर्ष होने की सम्भावना है।

तीसरा प्रश्न यह है कि श्री मुन्शी द्वारा प्रेषित प्रस्ताव में जो बातें रखी गई हैं, क्या वे उस समय के लिये अस्थायी रूप से हैं या नहीं जब तक कि हम दोहरे विधान बनाने वाली तथा व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करें?

*__एक माननीय सदस्य:__ क्या यह भाषण है या प्रश्न?

*__अध्यक्ष:__ मैं पण्डित मैत्र को यह स्मरण दिलाऊंगा कि वह भाषण नहीं दे सकते हैं। उन्होंने प्रश्न रख दिया है और यदि चाहें तो डा. अम्बेडकर उत्तर दें।

*__एक माननीय सदस्य:__ प्रश्न भी अवैधानिक है।

*__पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:__ वह क्यों नहीं रखा जा सकता? जब माननीय सदस्य वाद-विवाद का उत्तर देता है और कोई अन्य माननीय सदस्य उसको नहीं समझ पाता तो उन बातों को स्पष्ट करने के लिये प्रश्न पूछने का उसे उचित अधिकार है।

*__अध्यक्ष:__ आपने प्रश्न रख दिया है, डा. अम्बेडकर उत्तर देंगे।

*__माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:__ मैं संक्षेप में कहूंगा। प्रथम प्रश्न यह है कि भारत सरकार के एक्ट में हम कोई परिवर्तन करने का विचार करते हैं या नहीं? मेरा उत्तर यह है कि यह सभा के निर्णय करने का प्रश्न है कि सभा क्या संशोधन चाहती है। परन्तु मैं अपने मित्र को यहां यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि हमको संशोधनों में परिवर्तन करने का अधिकार है। भारत सरकार का एक्ट अपने संशोधनों सहित हमारे ऊपर इस रूप में पूर्णतया लागू नहीं होता कि परिवर्तन करना हमारी सामर्थ्य के परे है। यदि विषय पर पुन: विचार करने के पश्चात् सभा यह अनुभव करती है कि कुछ संशोधनों में परिवर्तन किया जाना चाहिये तो उस व्यवस्था को लेना बिल्कुल सम्भव होगा।

दूसरा प्रश्न जो मेरे माननीय मित्र श्री मैत्र ने मुझसे पूछा है वह यह है कि शासन-नियंत्रण की एकता पर प्रभाव पड़ने की कोई सम्भावना है तथा इस बात पर संघर्ष होने की सम्भावना है कि दो कार्यालय हों-एक विधान-परिषद् के अध्यक्ष का तथा दूसरा व्यवस्थापिका के स्पीकर का। कमेटी ने जो कुछ कहा है वह यह है कि सिद्धान्त रूप से ऐसे संघर्ष की सम्भावना है। परन्तु मैं मानता हूं कि संघर्ष होना आवश्यक नहीं है। अभ्यास में परिषद् के अध्यक्ष तथा स्पीकर सम्बन्धी दोनों कार्यालयों के लिये मिलकर कार्य करना सम्भव होगा तथा दो कार्यालयों के होते हुए विधान-परिषद् व व्यवस्थापिका का इस प्रकार ठीक-ठीक समय नियत

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

किया जा सकेगा कि किसी भी प्रकार के संघर्ष से डरने की कोई आवश्यकता नहीं।

तीसरे प्रश्न के सम्बन्ध में, यह प्रत्यक्ष है कि विधान-परिषद् को व्यवस्थापिका के रूप में परिवर्तन करना नि:संदेह अस्थायी होगा। वह जब तक रहेगा तब तक विधान-निर्माण-कार्य पूर्ण नहीं होता। जब वह पूर्ण हो जायेगा तो दोनों में से एक समाप्त हो जायेगी और इसके पश्चात् हम केवल व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करते रहेंगे।

***मि. नजीरुद्दीन अहमद:** एक प्रश्न और है। माननीय सदस्य ने कहा है कि सभा द्वारा पुन: संशोधन किया जा सकता है। क्या गवर्नर जनरल के लिये और आगे संशोधन करना सम्भव होगा?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** यह कानून का प्रश्न है। इस सभा को संशोधन में परिवर्तन करने का अधिकार है।

***मि. नजीरुद्दीन अहमद:** मैं यह अस्वीकार नहीं करता। प्रश्न यह है कि क्या माननीय सदस्य की यह राय है कि गवर्नर-जनरल और आगे संशोधन कर सकता है?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** वह नहीं कर सकता है, क्योंकि उसे अपने परामर्शदाताओं की राय पर चलना होगा।

***मि. नजीरुद्दीन अहमद:** मंत्रियों की सलाह से क्या हम ऐसा कर सकते हैं?

***एक माननीय सदस्य:** क्या यह न्यायालय है या जांच प्रश्न?

***माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं ठीक-ठीक नहीं जानता और बिना जाने हुये उत्तर देना नहीं चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** जैसा कि सुझाया गया था, मेरे विचार से हमें एक-एक वाक्य-खण्ड को रख कर प्रस्ताव पर मत लेना है:

वाक्यखंड (1)

''(1) परिषद् का कर्तव्य होगा कि-

(क) विधान बनाने के कार्य को प्रचलित रखना तथा समाप्त करना जोकि 9 दिसम्बर सन् 1946 ई. को आरम्भ किया गया था।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

*अध्यक्षः "(ख) संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करना जब तक कि नये विधान के अनुसार व्यवस्थापिका न बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

*अध्यक्षः "(2) विधान बनाने वाली संस्था के रूप में परिषद् के कार्य में तथा संघ-व्यवस्थापिका के रूप में उसके साधारण कार्य में स्पष्ट अन्तर रख देना चाहिये और इन दो प्रकार के कार्यों के लिए अलग-अलग दिन या एक दिन में अलग-अलग सभायें नियत की जायें।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

*अध्यक्षः "(3) परिषद् में भारतीय रियासतों के प्रतिनिधियों की स्थिति के सम्बंध में रिपोर्ट के पैरा (6) में की गई सिफारिशों को स्वीकार किया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

*अध्यक्षः "(4) परिषद् के विचार-विमर्शों पर, जबकि वह संघ व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे, अध्यक्ष का कार्य करने को, एक अफसर जिसको स्पीकर कहा जाये के निर्वाचन के लिए यह विधान-परिषद् अपने नियमों में उपयुक्त व्यवस्था बनाये।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

*अध्यक्षः "(5) परिषद् को संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करने के लिए बुलाने तथा समाप्त करने का अधिकार अध्यक्ष को हो।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

*अध्यक्षः "(6) संघ-सरकार के मंत्रियों को, जोकि विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं, विधान-निर्माण-कार्य में उपस्थित होने तथा भाग लेने का अधिकार होगा, लेकिन जब तक कि वे विधान-परिषद् के सदस्य न हों उनको वोट देने का कोई अधिकार नहीं होगा।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** **''(7) आवश्यक परिवर्तन, संशोधन तथा वृद्धि की जायें–**

(क) भारतीय व्यवस्थापिका की स्थायी आज्ञाओं तथा उसके नियमों में विधान-परिषद् द्वारा, उनको (आज्ञाओं तथा नियमों को) जिस रूप में भारत सरकार के एक्ट की प्रयुक्त व्यवस्थाओं को भारतीय स्वतंत्रता एक्ट 1947 के अन्तर्गत संशोधन कर ग्रहण किया है उसके अनुरूप बनाने के लिये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** **''(ख) विधान-परिषद् या अध्यक्ष द्वारा, जैसी भी सूरत हो, उन नियमों तथा स्थायी आज्ञाओं में पैरा 9 की व्यवस्थाओं का पालन करने के लिये और जहां आवश्यक हो भारतीय सरकार की प्रयुक्त धारा की नये नियम के अनुरूप बनाने के लिये उचित संशोधन करने के लिये।''**

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न है कि पूरे प्रस्ताव को स्वीकार किया जाये अर्थात्–

''1–भारतीय स्वतंत्रता एक्ट के अनुसार विधान-परिषद् के कार्यों की रिपोर्ट पर विचार करने के सम्बन्ध में माननीय डा. बी. आर. अम्बेडकर द्वारा प्रेषित प्रस्ताव के सिलसिले में यह निश्चय किया जाता है किः

(1) परिषद् का कर्तव्य होगा कि–

(क) विधान बनाने के कार्य को प्रचलित रखना तथा समाप्त करना जो कि 9 दिसम्बर सन् 1946 को आरम्भ किया गया था।

(ख) संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करना जब तक कि नये विधान के अनुसार व्यवस्थापिका न बने।

(2) विधान बनाने वाली संस्था के रूप में परिषद् के कार्य में तथा संघ-व्यवस्थापिका के रूप में उसके साधारण कार्य में के स्पष्ट

अन्तर रख देना चाहिये और इन दो प्रकार के कार्यों के लिये अलग-अलग दिन या एक दिन में अलग-अलग सभायें नियत की जायें।

(3) परिषद् में भारतीय रियासतों के प्रतिनिधियों की स्थिति के सम्बन्ध में रिपोर्ट के पैरा (6) में की गई सिफारिशों को स्वीकार किया जाये।

(4) परिषद् के विचार-विमर्शों पर, जब कि वह संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करे, अध्यक्ष का कार्य करने को एक अफसर, जिसको स्पीकर कहा जाये, के निर्वाचन के लिये यह विधान-परिषद् अपने नियमों में उपयुक्त व्यवस्था बनाये।

(5) परिषद् को संघ-व्यवस्थापिका के रूप में कार्य करने के लिये बुलाने तथा समाप्त करने का अधिकार अध्यक्ष को हो।

(6) संघ सरकार के मंत्रियों को, जो कि विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं, विधान-निर्माण-कार्य में उपस्थित होने तथा भाग लेने का अधिकार होगा, लेकिन जब तक कि वे विधान-परिषद् के सदस्य न हों उनको वोट देने का कोई अधिकार नहीं होगा।

(7) आवश्यक परिवर्तन, संशोधन तथा वृद्धि की जायें–

(क) भारतीय व्यवस्थापिका की स्थायी आज्ञाओं तथा उसके नियमों में विधान-परिषद् के अध्यक्ष द्वारा, उनको (आज्ञायें तथा नियमों को) जिस रूप में भारत सरकार के एक्ट की प्रयुक्त व्यवस्थाओं को भारतीय स्वतंत्रता एक्ट 1947 के अन्तर्गत संशोधन कर ग्रहण किया है उसके अनुरूप बनाने के लिये।

(ख) विधान-परिषद् या अध्यक्ष द्वारा, जैसी भी सूरत हो, उन नियमों तथा स्थायी आज्ञाओं में पैरा 9 की व्यवस्थाओं का पालन करने के लिये और जहां आवश्यक हो भारतीय सरकार की प्रमुख धारा को नये नियम के अनुरूप बनाने के लिये, उचित संशोधन करने के लिये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** अब यह प्रस्ताव स्वीकृत हो ही गया। मैं प्रस्ताव रखता हूं कि नियमों तथा स्थायी आज्ञाओं में संशोधन किया जाये तथा संशोधित भारत सरकार के एक्ट की उन धाराओं में भी, जिनमें आवश्यक समझा जाये, संशोधन किया जाये।

कर्मचारियों के बारे में वाद-विवाद के अन्तर्गत जो प्रश्न उठाया गया है, उसके लिये मैं एक समिति नियुक्त करने का प्रस्ताव रखता हूं, जिसमें विधान-परिषद् तथा व्यवस्थापिका सभा के कर्मचारी हों। वह दोनों विभागों के पुनः स्थापन की योजना तैयार करें, जिससे कि कार्य यथासम्भव अच्छा तथा कम खर्च में हो।

***श्री के.एम. मुन्शीः** क्या मैं यह संकेत कर सकता हूं कि परसों छुट्टी है और सदस्य इच्छुक हैं कि कल परिषद् समाप्त कर दी जाये? परसों हिन्दुओं का त्यौहार है और बहुत से सदस्य अपने घर जाना चाहते हैं।

***अध्यक्षः** यह सदस्यों के हाथ की बात है। मैं कल अधिवेशन समाप्त करने का प्रस्ताव रखता हूं।

तत्पश्चात् परिषद् शनिवार, 30 अगस्त, सन् 1947 ई. के प्रातः 10 बजे तक के लिये स्थगित हुई।

Con. 3. 5.11.47
750

अंक 5
संख्या 11

शनिवार,
30 अगस्त,
सन् 1947 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

		पृष्ठ
1.	मौलिक अधिकारों पर पूरक रिपोर्ट	1

भारतीय विधान-परिषद्

शनिवार, 30 अगस्त, सन् 1947 ई०

माननीय डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल नई दिल्ली में दिन के दस बजे आरम्भ हुई।

मौलिक अधिकारों पर पूरक रिपोर्ट

*__अध्यक्ष:__ मौलिक अधिकार समिति की पूरक रिपोर्ट पर अब हमें विचार करना चाहिये।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल__ (बम्बई: जनरल): श्रीमान् जी, सभा को यह विदित ही है कि मेरे पत्र पर—जो मौलिक अधिकार समिति की रिपोर्ट पेश करने के विषय में था—ता० 23 अप्रैल सन् 1947 ई० को विचार किया गया था और अधिकांश मुख्य प्रस्ताव स्वीकार कर लिये गये थे। किसी सीमा तक रिपोर्ट अपूर्ण थी क्योंकि हमें अनेकों विषयों पर विचार करना पड़ा जो कि हमें फिर सुपुर्द किये गये थे, तथा कुछ उन प्रस्तावों पर भी विचार करना था जो कि हमारे पास सीधे आये थे। रिपोर्ट के दो भाग थे, एक वह जिसमें वे अधिकार थे जो न्यायालय में भेजे जाने योग्य थे और दूसरा वह जिसमें वे मौलिक अधिकार थे जो न्यायालय में भेजे जाने योग्य न थे वरन् न्यूनाधिक रूप में आदेशमूलक थे जो देश के शासन में लाभदायक सिद्ध होंगे। परामर्शदातृ समिति ने इन दोनों भागों पर विचार कर लिया और अपना कार्य समाप्त किया। इस रिपोर्ट में जिसे मैं सभा के सामने रख रहा हूं, न्यायालय में भेजे जाने योग्य प्रथम दो या तीन विषय हैं जो कि समाप्त नहीं किये गये थे और जो हमें वापस कर दिये गये थे। एक वाक्यखंड 16 के संबंध में है, जो इस प्रकार है:

> ''सरकारी कोष द्वारा संचालित अथवा सहायता प्राप्त किसी स्कूल में जाने वाले किसी व्यक्ति को उस स्कूल में दी जाने वाली किसी धार्मिक शिक्षा में भाग लेने या उस स्कूल से संबद्ध अन्य स्थान में की जाने वाली किसी धार्मिक पूजा में उपस्थित होने के लिये विवश नहीं किया जायेगा।''

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल]

जिसका आशय यह है कि सरकारी स्कूलों तथा सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों में धार्मिक शिक्षा अनिवार्य न हो। समिति ने इसे स्वीकार कर लिया है और सिफारिश करती है कि सभा इसे स्वीकार करे।

तत्पश्चात् वाक्य खंड 17 है जो धर्म-परिवर्तन के संबंध का है। वह इस प्रकार है:

''दबाव या अनुचित प्रभाव द्वारा एक धर्म से दूसरे धर्म में परिवर्तन करना कानून द्वारा प्रमाणित नहीं किया जायेगा।''

समिति इस परिणाम पर पहुंची कि जहां तक मौलिक अधिकारों का संबंध है यह साधारण वाक्यखंड पर्याप्त है। आगे विचार करने पर हमें ऐसा प्रतीत हुआ कि यह वाक्यखंड किसी स्पष्ट सिद्धान्त की व्याख्या करता है जिसका इस विधान में समावेश करना अनावश्यक था और हमने यह उचित समझा कि इसे व्यवस्थापिका पर छोड़ दिया जाये।

इसके पश्चात् वाक्यखंड 18 (2) है जो इस प्रकार है:

''धर्म, जाति या भाषा में से किसी आधार पर आश्रित किसी अल्पसंख्यक को सरकारी शिक्षणालयों में दाखिल होने के विरुद्ध कोई भेद नहीं बर्ता जायेगा और न उनको किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जायेगी।''

एक और पैरा भी था जिसमें यह सिफारिश की गई थी कि उस वाक्यखंड के पिछले भाग को अर्थात् ''न उनको किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जायेगी'' निकाल दिया जाये क्योंकि यह वाक्यखंड (16) के अंतर्गत आ जाता है।

तत्पश्चात् हमने इस प्रश्न पर विचार किया कि इस वाक्यखंड की सीमा को इतना विस्तृत कर दिया जाये कि इसमें सरकारी सहायता प्राप्त शिक्षण संस्थायें भी आ जायें, पर कमेटी इस परिणाम पर पहुंची कि वर्तमान दशा में हमारा इस प्रकार की सिफारिश करना न्यायपूर्ण नहीं होगा।

मौलिक अधिकार उप-समिति ने अपनी रिपोर्ट में हमसे यह सिफारिश की कि संघ की राष्ट्रीय भाषा हिन्दुस्तानी स्वीकार की जाये जो चाहे देवनागरी लिपि में

हो चाहे फारसी लिपि में, परन्तु इसके बाद इस विषय को स्थगित कर दिया गया, क्योंकि उस पर संघ-विधान समिति द्वारा विचार किया जा रहा था और चूंकि विधान-परिषद् में यह विषय विचारान्तर्गत है, हमने यह ठीक समझा कि इस विषय को न लिया जाये। इस कारण हमने इसके बारे में कुछ भी नहीं कहा है और इस पर अलग विचार किया जायेगा। और भी अनेकों संशोधन पेश किये गये थे। हमने उनमें से प्रत्येक पर विचार किया है और हम इस परिणाम पर पहुंचे कि पेश किये गये इन सब संशोधनों से मौलिक अधिकारों को न लादा जाये।

रिपोर्ट का एक भाग और है जिसमें न्यायालय जाने वाले अधिकारों के साथ-साथ राज्य की नीति के कुछ ऐसे आदेश हैं जो यद्यपि किसी न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किये जाने योग्य नहीं हैं, फिर भी देश की शासन व्यवस्था के लिये उनको मौलिक मानना चाहिये। जिन व्यवस्थाओं पर समिति ने विचार किया है वे परिशिष्ट (क) में शामिल हैं, जो रिपोर्ट के साथ लगा दी गयी है। रिपोर्ट के साथ जो परिशिष्ट घुमाया गया था वह भी आपके पास है। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि यह परिषद् परामर्शदातृ समिति द्वारा मौलिक अधिकारों के विषय पर पेश की गई पूरक रिपोर्ट पर विचार करे। यदि कोई सदस्य चाहता है तो वह कुछ कह सकता है।

***श्री आर॰के॰ सिधवा** (मध्य प्रान्त तथा बरारः जनरल): अध्यक्ष महोदय, आपको यह स्मरण होगा कि इस सभा ने अपने पहले और दूसरे अधिवेशन में एक स्मरणीय प्रस्ताव पास किया था जो लक्ष्य मूलक प्रस्ताव के नाम से प्रसिद्ध है। उसमें दी हुई अनेकों अच्छी बातों में से एक सामाजिक तथा आर्थिक समानता के संबंध की है। इस प्रस्ताव को पेश करते समय विद्वान पंडित जवाहरलाल नेहरू ने इस सभा में एक स्मरणीय भाषण दिया था। उसके कुछ विचारों को सदस्यों के मन में फिर से ताजा करने के लिए मैं रखूंगा। और बातों के साथ साथ प्रस्ताव में दिया हुआ है किः

''जिसमें समस्त भारतीय जनता के लिये सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक न्याय; स्थिति, अवसर तथा कानून की दृष्टि में समानता की गारंटी की जायेगी तथा उनको सुरक्षित रखा जायेगा।''

और उस प्रस्ताव को पेश करते हुये उन्होंने कहा था—

[श्री आर.के. सिधवा]

''मैं समाजवाद का समर्थक हूं और मैं आशा करता हूं कि भारत समाजवाद का समर्थक होगा, भारत समाजवादी राज्य की स्थापना करेगा और मैं यह भी विश्वास करता हूं कि समस्त संसार को इस ओर झुकना पड़ेगा।''

श्रीमान् जी, लक्ष्य के इस स्पष्ट कथन के पश्चात् जब न्यायालय में जाने योग्य अधिकार हमारे सामने आये तो मैं यह आशा कर रहा था कि हमारे विधान में सामाजिक तथा आर्थिक समानता का प्रमुख अंग होगा। न्यायालय में जाने योग्य अधिकारों में न पाकर मैंने उसे न्यायालय में न जाने योग्य अधिकारों में ढूंढा, पर वह खोज व्यर्थ ही रही। श्रीमान् जी, कहने को तो यह ठीक है कि हम गांवों से लेकर शहरों तक पूर्ण अधिकार देना चाहते हैं जिससे कि आर्थिक परिस्थिति को इस प्रकार व्यवस्थित किया जाये कि साधारण व्यक्ति सुखी तथा सम्पन्न हो सके। लेकिन श्रीमान् जी, मैं यह कह दूं कि चाहे हम कितने ही प्रयत्न करें और ग्रामोद्धार, ग्राम-पंचायत, ग्रामोन्नति इत्यादि के समान किसी भी साधन को क्रियान्वित करें, जब तक आर्थिक परिस्थितियों पर सुनीतिपूर्ण विचार नहीं किया जायेगा इन साधनों से कोई लाभ नहीं और न इनमें सफलता होगी। श्रीमान् जी, आज क्या दशा है? मैं अपने अनुभव से आपको बता सकता हूं। मुझे अखिल भारतीय स्थानीय संस्थाओं के संघ का सभापति होने का गौरव है। इन स्थानीय संस्थाओं को अधिकार दे दिये गये हैं लेकिन उनके पास खर्च करने के लिये धन नहीं है। अतः वे बिल्कुल असहाय हैं। बिना धन के वे कभी कार्य नहीं कर सकतीं। जो अधिकार उनको दिये गये हैं वे किसी प्रकार भी उनके लिये लाभदायक नहीं हैं। ये हालतें हैं जिनमें आज स्थानीय संस्थायें हानि उठा रही हैं।

जब मैं संघ-अधिकार समिति की रिपोर्ट तथा उस दिन सभा में जो मद रखे गये थे उनको सुन रहा था उस समय हम केन्द्र को अधिक आर्थिक अधिकारों से शक्तिशाली बनाने की बात बढ़ा चढ़ा कर, कर रहे थे। परन्तु यह स्वीकार कर लेना चाहिये कि प्रान्तों की आर्थिक दशा इतनी गिरी हुई है कि वे स्थानीय संस्थाओं को उतनी भी सहायता नहीं दे सकते जितनी आवश्यक है। स्थानीय संस्थायें धन के अभाव में हैं और जब वे प्रान्तीय सरकार के पास जाती हैं तो वह इस आधार पर सहायता करने में अपनी असमर्थता प्रकट करती हैं कि केन्द्र उनको उतना धन नहीं देता जितना उस पर चाहिये। श्रीमान् जी, बिजली कर, मनोरंजन

कर, जुआ कर (बेटिंग टैक्स) स्थानीय संस्थाओं के हैं पर उनका प्रान्तीय सरकार द्वारा उपभोग होता चला आया है। विभिन्न सरकारों द्वारा जांच कराई गई थी और निश्चित रूप से यह तय किया गया था कि जब तक प्रान्तीय सरकार द्वारा धन से सहायता नहीं की जायेगी स्थानीय संस्थायें सफलतापूर्वक कार्य नहीं कर सकेंगी।

श्रीमान् जी, स्थानीय संस्थायें भारत में हमारी आर्थिक परिस्थितियों का आधारभूत हैं और जब तक कि गांवों को अच्छी आर्थिक सहायता देने पर उचित विचार नहीं किया जाता तथा उनको यथेष्ठ धन नहीं दिया जाता तो मैं आपको विश्वासपूर्वक कह सकता हूं कि हम अपने साधारण नागरिक को सुखी तथा सम्पन्न नहीं बना सकेंगे। हम उनको अधिकार दे सकते हैं। हम सब उनको अधिकार देने के लिए चिंतित हैं परन्तु यदि आप उनको धन नहीं देंगे तो वे क्या करेंगे? वे किस प्रकार आगे बढ़ सकते हैं? मैंने यह आशा की थी कि न्यायालय में न जाने वाले इन अधिकारों में–जो कि शुद्ध हैं, मेरा कहने का आशय यह है कि वे शुद्ध साधन हैं क्योंकि वे न्यायालय में जाने वाले अधिकार नहीं हैं–सामाजिक अधिकारों की समानता का कुछ जिक्र होता। मैं यह सुझाव नहीं रखता हूं कि हमारी सार्वजनिक सरकारें दोनों केन्द्रीय तथा प्रान्तीय इन बातों में सावधानी नहीं रखती हैं। वे भी हमारे समान तथा हममें से अनेकों के समान व्यवस्था ठीक करने के लिये उत्सुक हैं। परन्तु उनको भी आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है और मैं आपसे यह कह दूं कि जब तक आर्थिक परिस्थितियों में सुधार नहीं होता वे किसी दिशा में उन्नति नहीं कर सकेंगे, जिनसे हम वर्षों से यह कहते चले आ रहे हैं कि जब हमको स्वतंत्रता मिल जायेगी हम इस बात का ध्यान रखेंगे कि साधारण व्यक्ति वास्तव में सच्चे आनन्द का उपभोग करे। श्रीमान् जी, प्रस्ताव में यह कहा गया है कि सब नागरिकों को, मनुष्यों तथा स्त्रियों को जीवन–यापन के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार है। ''जीवन–यापन के पर्याप्त साधन'' कहना तो बहुत भला है। परन्तु वह कहां से प्राप्त किया जाये? हमें उसके लिये व्यवस्था करनी है। हां, यह मैं स्वीकार करता हूं कि केवल यहां व्यवस्था बना देने से उद्देश्य की सिद्धी नहीं होगी। परन्तु यदि इस संबंध की वास्तव में कोई व्यवस्था होगी तो शासन प्रबन्ध को उसकी अवहेलना करना कठिन होगा।

श्रीमान् जी, इस देश में अर्थ विभाजन इतनी शोचनीय अवस्था में है कि जब तक हम उसे समानता के स्तर पर नहीं लायेंगे परिस्थितियों में सुधार नहीं होगा। मैं आपके सामने दो उदाहरण रखूंगा–दो सच्चे उदाहरण। एक उदाहरण यह है कि एक कुटुम्ब का मुखिया मरा तो वह अपने एकमात्र पुत्र के उपभोग के लिये

[श्री आर.के. सिधवा]

11 करोड़ रुपया छोड़ गया। दुर्भाग्य से या सौभाग्य से अपने पिता की मृत्यु के एक वर्ष बाद वह भी चलता बना। समस्त धनराशि का कुटुम्ब के अनेकों सदस्यों में बंटवारा हुआ जिनके पास पहले ही करोड़ों रुपये थे। यदि इस ढंग का सुनीतिपूर्ण विभाजन होता तो यह धन राज्य को मिलना चाहिये था।

मैं एक और व्यक्ति के कुटुम्ब से परिचित हूं जिसके तीन बच्चे थे और जिसने 50 लाख रुपया छोड़ा। दो लड़कों ने तीन वर्ष में अपना भाग बर्बाद कर दिया पर तीसरा लड़का कंजूस था, उसने सट्टे द्वारा अथवा अन्य साधनों द्वारा अपने भाग को दो करोड़ कर लिया। यह किस प्रकार की आर्थिक व्यवस्था है? श्रीमान् जी, इस देश में कुछ सौ या कुछ हजार व्यक्ति ऐसे हैं जो करोड़ों के फेर में हैं और करोड़ों ऐसे हैं जिनके पास खाने को दाने नहीं। यह हालत है। इसका हम कैसे सुधार कर सकते हैं जब तक कि यह आर्थिक असमानता जो कि इस देश के कुछ लोगों तक सीमित है दूर नहीं की जाती? मुझे पूरा विश्वास है कि साधारण जनता पर अनेकों प्रकार के करों का और भी अधिक भार डाले बिना ही यदि इस धन का उचित विभाजन कर दिया जाये तो राज्य के पास राष्ट्र निर्माण कार्य को सफलतापूर्वक चलाने के लिये पर्याप्त धन हो जायेगा। श्रीमान् जी, मैं जानता हूं कि सरकार में हमारे जनप्रिय सदस्य सचेष्ट हैं और वे इस विषय पर ध्यान दे रहे होंगे। मैं यह कभी नहीं कहता कि वे इसके प्रति असावधान हैं या उदासीन हैं। लेकिन मैं यह कहूंगा कि विधान में कहीं भी तो इस व्यवस्था को स्थान दिया जाये। न्यायालय में न जाने वाले तीन अधिकार विधान के पृष्ठों की शोभामात्र हैं और थोड़ा सा संतोष देने वाले हैं। मैं यह पसंद करूंगा कि वे विधान के अंग होते जिससे कि प्रत्येक नागरिक को यह कहने का गौरव होता "अब समानता तथा सम्पत्ति के उपभोग करने का मेरा समय आ गया है अत: अब मैं सदैव निर्धन नहीं रहूंगा।" यह मेरा विचार है। मैंने मौलिक अधिकार समिति में इस प्रस्ताव को पेश करने का प्रयत्न किया था और मुझसे यह कहा गया कि यह उपयुक्त स्थान नहीं है। अत: मैंने प्रतीक्षा की। अब उपयुक्त स्थान है और मैं चाहता हूं कि न्यायालय में न जाने वाले अधिकारों में इसकी व्यवस्था कर दी जाये।

जो कुछ मैं निवेदन करना चाहता हूं वह यह है कि यदि आप समाज संबंधी आर्थिक व्यवस्था की प्रणाली में सुधार करना चाहते हैं तो आपको अपने बड़े-बड़े उद्योगों का राष्ट्रीकरण करना होगा और यदि आप मजदूरों को उचित वेतन देना

चाहते हैं तथा प्रसूति संबंधी अन्य सुविधायें देना चाहते हैं–आप एक क्षण के लिये भी यह विचार न करें कि यह एक स्थिर तर्क है, परन्तु मैं शुद्ध हृदय से यह अनुभव करता हूं कि इस तर्क को स्वीकार कर लेना चाहिये। हम हड़तालें नहीं चाहते हैं। हम उनको पसन्द नहीं करते। परन्तु प्रत्येक प्रातःकाल आप जागते हैं और बाजार जाते हैं तो यदि आपने कल एक वस्तु के दस आने दिये थे तो आज आपको बारह या चौदह आने देने पड़ेंगे। इसका साधारण नौकरों पर क्या प्रभाव पड़ेगा जो कि अपनी मासिक आमदनी पर पूर्णतया निर्भर रहते हैं? वह किस प्रकार अपना बजट बना सकते हैं? श्रीमान् जी, मैं यह निवेदन करता हूं कि समस्त आर्थिक ढांचे के टुकड़े-टुकड़े हो गये हैं। हम हड़तालें नहीं चाहते हैं तथा हम अधिक उत्पादन चाहते हैं, फिर यदि मजदूर हड़तालें करते हैं तो हम सारा दोष उन पर ही न डालें। सत्य तो यह है कि वे अपना निर्वाह नहीं कर सकते हैं। मूल्य बहुत बढ़ गया है। यदि आप बाजार जायें तो क्या हालत है? उच्च वर्ग के लोग तथा धनी लोग अपने नौकरों को बाजार भेजते हैं, वे उस हालत से परिचित नहीं होते। परन्तु वह व्यक्ति जो अपनी कमाई हुई आमदनी पर निर्भर रहता है खुद बाजार जाता है और जब यह देखता है कि उसके पास खर्च करने के लिए डेढ़ रुपया है और उसे दो रुपये देने हैं तो वह निराश हो जाता है। हालतें खराब होती चली जा रही हैं और जनप्रिय सरकार को बावजूद इसके कि चाहे कैसी भी कठिनाइयां हों, इन बातों का सामना करना है। श्रीमान् जी, मैं जानता हूं कि इस सभा में मिश्रित वर्ग के लोग हैं, उच्चवर्गीय, धनी, निम्नवर्गीय तथा निर्धन और इस प्रकार के साधन का इस परिषद् में अपनाना हमारे लिये सम्भव नहीं है। परन्तु जैसा कि पंडित जवाहरलाल नेहरू ने प्रस्ताव में ठीक-ठीक कहा कि अब वह समय आ गया है और चाहे कैसी भी स्थिति हो हमें समय के अनुसार चलना पड़ेगा और यह करना पड़ेगा कि सम्पत्ति का समान विभाजन हो।

श्रीमान् जी, मैं इस बात पर जोर देता हूं कि आप चाहे कुछ भी उद्देश्य रखें, आप चाहे कोई भी व्यवस्था बनायें जब तक आप ग्राम पंचायत नहीं बनाते तथा स्वास्थ्य संबंधी समितियां नहीं बनाते जिनके पास पर्याप्त धन हो तथा खर्च प्रांत के अधिकार में न हो तब तक आप इस देश की सामाजिक व्यवस्था को नहीं सुधार सकते। इस दुःख का यही खास कारण है और इस पर शीघ्र ध्यान देने की आवश्यकता है।

***अध्यक्षः** क्या माननीय सदस्य अब विषय को लेंगे? (*हंसी*)

***श्री आर॰के॰ सिधवाः** अध्यक्ष महोदय, यदि ये बातें विधान में होने योग्य नहीं हैं तो में नहीं समझता कि और क्या बातें हैं? जब कि माननीय अध्यक्ष

[श्री आर.के. सिधवा]

ने मुझसे विषय पर आने के लिए कहा तो यहां मेरे मित्रों ने तालियां बजाईं। मुझे इसकी आशा थी और मैंने कह दिया था कि इस सभा के समान मिश्रित वर्ग की सभा में इस प्रकार के प्रस्ताव का पास होना सम्भव नहीं है। यदि सभा की यही इच्छा है कि विधान में इस प्रकार की व्यवस्था न रखी जाये तो उनको स्वयं प्रसन्न हो लेने दीजिये। मैं अपने विचार प्रकट करना चाहता हूं। मेरा यह कटु अनुभव है कि यदि आप इस देश को सुखी बनाना चाहते हैं तो विधान में इस प्रकार की व्यवस्था रखनी चाहिये। मैं अपने विचार रखूंगा, सभा की चाहे कुछ भी राय हो। इसके अतिरिक्त यह केवल मेरे ही विचार नहीं हैं। इस देश की अनेकों प्रमुख संस्थाओं के यही विचार हैं जिनके अध्यक्ष होने का मुझे गौरव है।

श्रीमान् जी, मैं इसलिए निवेदन करता हूं। यद्यपि मैं जानता हूं कि यह तर्क उपस्थित किया जायेगा कि ये कुछ सामाजिक व्यवस्थाएं हैं जिनको रूस के विधान से लिया गया है। मैं जानता हूं कि रूस के विधान में कुछ आधुनिक बातें हैं जो कि भारत में लागू नहीं की जा सकतीं, परन्तु ऐसी भी बहुत सी अच्छी बातें हैं जो भारत के लिये बहुत ही उपयुक्त हैं और यह वास्तव में हमारे हित की बात होगी यदि हम रूस के विधान की कुछ अच्छी बातों का अनुसरण करें। मैं उस अच्छी विधि को बताना चाहता हूं जिससे अच्छा फल प्राप्त होगा। मैं उनको अपना लेने के पक्ष में हूंगा। इन शब्दों के साथ-साथ श्रीमान् जी, कमेटी को इस प्रस्ताव के रखने की बधाई देते हुये मैं यह चाहता था कि इस प्रकार का वाक्यखंड रखा जाता। यह नहीं रखा गया है, पर मैं आशा करता हूं कि इस देश के शासन में तथा उसकी शासन व्यवस्था में इस दृष्टिकोण पर विशेष ध्यान रखा जायेगा कि जब तक आप अपनी आर्थिक परिस्थितियों में परिवर्तन नहीं करते तथा उनमें सुधार नहीं करते तब तक आप इस देश में किसी प्रकार का सुख तथा सम्पन्नता नहीं ला सकते।

*__श्री बी० दास__ (उड़ीसा: जनरल): श्रीमान् जी, जब कि मौलिक अधिकारों के प्रथम मसविदे पर इस सभा में वाद-विवाद हुआ था मैंने नागरिकता के संबंध में वाक्यखंड (3) पर गंभीर शंकायें प्रकट की थीं। बहुत वाद-विवाद के पश्चात् वह फिर मसविदा बनाने के लिए भेज दिया गया था। तत्संबंधी समिति ने उसका फिर से मसविदा तैयार किया और माननीय सरदार पटेल द्वारा सभा के समक्ष स्वीकृति के लिए रखा गया। उस समय जब कि तत्संबंधी समिति की रिपोर्ट पेश की गई थी मुझे शंकायें थीं कि यह नया मसविदा भारत की जनता की

आवश्यकताओं के अनुकूल होगा या नहीं। आज मैं उस वाक्यखंड को स्वीकार करता हूं। वाक्यखंड (3) के मूल रूप में कुछ थोड़े से परिवर्तन कर दिये गये हैं। श्रीमान् जी, मैं माननीय सरदार द्वारा यह आश्वासन प्राप्त करना चाहूंगा कि क्या सरकार संघ कानूनों में कुछ परिवर्तन करना चाहती है या नहीं जैसा कि वाक्यखंड (3) की व्यवस्था में दिया गया है। गत अप्रैल में जब कि हमने मौलिक अधिकारों पर वाद-विवाद किया था उस समय से कई घटनायें हो चुकी हैं। भारत का विभाजन हो चुका है और भारतीय नागरिक जो कि भारत के दोनों भागों में पैदा हुए वे अब या तो पाकिस्तान में या हिन्दुस्तान में नागरिकता का अधिकार पा सकते हैं। ऐसे कुटुम्ब भी हो सकते हैं जिनमें से एक भाई पाकिस्तान में हो उसे पाकिस्तान के नागरिक अधिकार मिलें और दूसरे हिन्दुस्तान के नागरिक हों। श्रीमान् जी, विशेष कर मैं ऐसे सरकारी कर्मचारी तथा गैर सरकारी कर्मचारियों से परिचित हूं जो अपनी सेवायें अपनी सम्पूर्ण शक्तियां पाकिस्तान की सेवा में अर्पण करने के लिये चले गये हैं। अत: यह स्वाभाविक है कि सरकार इस प्रकार का कानून निर्माण करे कि प्रत्येक व्यक्ति को यह घोषित कर देना चाहिये कि वह पाकिस्तान का नागरिक है या हिंदुस्तान का। कोई व्यक्ति यह नहीं चाहेगा कि भारत के कुशाग्रबुद्धि सम्पन्न जब पाकिस्तान जायें और फिर जब वे भारत वापस आयें, तो क्या उनको एक भारतवासी के समान वापस आने दिया जायेगा या उनको पाकिस्तान के नागरिक माना जायेगा, क्योंकि देश के विभाजन के पश्चात् उन्होंने पाकिस्तान में नौकरी की?

श्रीमान् जी, मौलिक अधिकारों के अन्य परिवर्तनों के संबंध में मैं वाक्यखंड 16 पर की गई सिफारिशों को स्वीकार करता हूं तथा मैं यह भी स्वीकार करता हूं कि वाक्यखंड (17) और वाक्यखंड (18) के उपवाक्यखंड (2) को हटा दिया जाये। श्रीमान् जी, जब कि हम भारत की जनता के मौलिक अधिकारों पर बातचीत कर रहे थे, मैं यह कहना चाहूंगा कि कुछ नागरिकों की, विशेषकर जो कि विधान-परिष्द् की नौकरी में हैं, कल अनावश्यक तथा शोचनीय आलोचना की गई थी। इस सभा में उनका कोई प्रतिनिधि नहीं है केवल विधान-परिषद् का कार्यालय है जो उन दोषों का उत्तर देगा जो सभा में लगाये गये थे। मेरे विचार से सभा में इस प्रकार का भाषण देना गलत था। यदि किसी सदस्य को कोई शिकायत थी तो उसे विधान-परिषद् के कार्यालय की योग्यता तथा अयोग्यता की जांच करने के लिए स्टाफ तथा फाइनेंस कमेटी के पास जाना चाहिये था। व्यक्तिगत रूप से मैं जानता हूं कि उन्होंने अपने गरिमामय उत्तरदायित्व को योग्यता, चतुराई तथा स्वतंत्र भारत की भक्ति सहित निभाया है। यद्यपि वे प्राचीन नौकरशाही के अंग थे फिर भी उन्होंने इतने ऊंचे परिमाण पर कार्य किया जितनी उनसे आशा

[श्री बी. दास]

थी और उन्होंने उतनी ही निष्ठा और भक्तिपूर्वक भारत की सेवा की जितनी कि हममें से किसी ने की है। अब तक उनकी सेवा तथा कार्यों के लिए मैं कृतज्ञता पूर्वक उनकी प्रशंसा करता हूं।

श्रीमान् जी, इसके बाद मैं रिपोर्ट के उस भाग पर आऊंगा जो शासन संबंधी मौलिक सिद्धांतों से संबंध रखती है। मेरे माननीय मित्र श्री सिधवा ने कुछ बातें रखी हैं और मैं उनसे सहमत हूं तथा मुझे खेद है कि इन पवित्र सिफारिशों के लिये स्थायी विधान में कोई स्थान नहीं है। मैं शासन संबंधी मौलिक सिद्धांतों को सरकार का धर्म–सरकार का कर्तव्य-पथ समझता हूं। परन्तु हम विधान एक्ट में यह नहीं रखते कि सरकार को क्या करना चाहिये और सरकार का नागरिकों तथा जनता के प्रति क्या उत्तरदायित्व है। हम कहते हैं कि सरकार यह करे और यह आशा की जाती है कि हम विधान-परिषद् के सदस्यों को अपने घरों में बच्चों के समान समझा जाये और सरकार से कुछ प्राप्त करने के लिये हम चीखें तथा आन्दोलन करें और तब सरकार, चाहे वह वर्तमान सरकार हो या उत्तराधिकारी सरकार, भारत की जनता की परिस्थितियों को सुधारने के लिए कानून का निर्माण करे। मैं कानून के विद्वानों तथा विशेषज्ञों की इस राय से संतुष्ट हूं जिसके द्वारा वे सरकार के कर्तव्यों की व्याख्या न्यायालय में जाने वाले तथा न जाने वाले के रूप में करते हैं। उन्होंने कहा है कि हम भारत के संघ-विधान में इस बात को शामिल नहीं कर सकते हैं कि सरकार को जनता के लिये क्या करना है। मैं समझता हूं कि सरकार का भुखमरी हटाने, प्रत्येक नागरिक को सामाजिक न्याय प्रदान करने तथा सामाजिक संरक्षण देने का प्रमुख कर्तव्य है। श्रीमान् जी, मुझे संतोष नहीं हुआ है यद्यपि रूस के विधान या आयरिश विधान के भागों के किसी ऐसे मिश्रित रूप को इन बारह पैरों में शामिल कर दिया गया है कि उनसे हमें कुछ आशा होती है। परन्तु करोड़ों देशवासियों को ऐसी कोई आशा नहीं होती कि दो माह के पश्चात् जो संघ-विधान स्वीकृत होगा वह उनको भुखमरी से मुक्त करेगा, उन्हें सामाजिक न्याय प्रदान करेगा, उनको जीवनयापन के निम्नतम परिमाण तथा स्वास्थ्य के निम्नतम परिमाण तक ले जायेगा। विधान के सिद्धांतों में जो हमने अब तक स्वीकार किये हैं, चाहे वह प्रांतीय विधान हों, संघीय-विधान हों अथवा संघीय अधिकार हों, मुझे ऐसी कोई बात नहीं मिली जिसने सरकार या राज्य को बाध्य किया हो कि वह सर्वसाधारण की भलाई तथा जनता के हित के लिये अपने पालनीय कर्तव्यों का पालन करे। अत: यह अच्छा है कि इन पवित्र वाक्यखंडों को परिशिष्ट में रखा जाये न कि खास विधान एक्ट में। भारतीय जनता के लिए यह कोई संतोष की बात नहीं है कि वे विधान-परिषद् का निर्वाचन करें जो

संघ-सरकार का निर्वाचन करे। सरकार का यह आवश्यक कर्तव्य है कि वह जनता पर उचित शासन करे उसकी सामाजिक भलाई तथा सामान्य हित की देखभाल करे। कल हमने संघ विधान का मसविदा तैयार करने के लिए मसविदा लेखकों की एक संस्था नियुक्त की है। मैं समझता हूं कि इस सभा के कानूनी विशेषज्ञों के लिए अब भी देर नहीं है कि वे उन उपायों तथा विधियों का आश्रय लें जिनके द्वारा वे सरकार को भारतीय जनता की भलाई तथा हित संबंधी कार्य करने के लिए बाध्य कर सकते हैं। न्यायालय जाने वाले या न जाने वाले अधिकारों को बहुत बढ़ा दिया गया है। मैं नहीं समझ पाता हूं आयरलैंड के विधान के अंतर्गत इन सुन्दर सिद्धांतों का किस प्रकार समावेश हुआ। यदि आयरिश विधान ऐसा कर सकता है तो भारतीय विधान को भी ऐसा करना चाहिये। परन्तु श्रीमान् जी, हमारे सामने तो वकीलों की एक दृढ़ दीवार खड़ी हुई है। कानून के वे विशेषज्ञ हैं और कहते हैं कि ये न्यायालय जाने वाले अधिकार हैं और ये न्यायालय न जाने वाले। इसका फल यह है कि इस सभा की स्थिति बच्चों के समान है, और बच्चों के समान ही यह कार्य करती है। वे कहते हैं कि सरकार यद्यपि जनतंत्रात्मक है, परन्तु उसे गत नौकरशाही की परम्परा तथा उसके पूर्ववर्ती दृष्टान्तों को मानना चाहिये। यदि वह ऐसा करती है तो वह जनता की सामाजिक परिस्थितियों में कोई सुधार नहीं कर सकती है।

यह बड़ा भय प्रद है। हम अपना स्वतंत्र श्रेष्ठ विधान बना रहे हैं। संभव है कि बीसवीं शताब्दी में हमारा अन्तिम विधान बने। कोई व्यक्ति यह आशा कर सकता है कि हमने अन्य देशों का ज्ञान, त्याग तथा अनुभव से लाभ उठाया होगा। मैं यह नहीं चाहता कि यह विधान एक या दो वर्षों के लिए ही बने। मन्द-मन्द ध्वनि हो रही है, परिवर्तन काल के चिह्न दृष्टिगोचर हो रहे हैं। और यदि हम फ्रांस की विधान-परिषद् का अनुकरण करेंगे तो हम बहुत अधिक सफलता प्राप्त नहीं कर सकेंगे। फ्रांस की जनता ने अपने श्रेष्ठ विधान का मसविदा बनाने के लिए क्रम से तीन विधान-परिषदों को चुना और क्रमानुसार तीन विधान-परिषदें हुईं। अंतिम विधान के अंतर्गत भी फ्रांस की सरकार अभी तक स्थायी नहीं हुई। हमारी सरकार की स्थायी होने की आशा है और वह आज भी स्थायी है। परन्तु कोई भविष्यवक्ता नहीं हो सकता तथा यह नहीं कह सकता कि वह एक या दो वर्ष से अधिक स्थायी रहेगी। और यदि मैं गांधीवादी होते हुए इस मसविदे से संतुष्ट नहीं हूं तो मैं कैसे आशा कर सकता हूं कि समाजवादी, साम्यवादी या अन्य इससे संतुष्ट होंगे? हम और अधिक मान्य मसविदा बनायें। हम वह मसविदा बनायें जो भारत की परिस्थितियों के लिए उपयुक्त हो। हम अपने विधान के मसविदे द्वारा

[श्री बी. दास]

संसार को यह बता दें कि भारत की सभ्यता तथा संस्कृति लाखों वर्ष पुरानी है। हमको वह प्रजातंत्रात्मक विधान बनाना चाहिये जिसके द्वारा राज्य प्रजा की सेवा करे और प्रजा राज्य की। हमारे विधान पर भारत की सभ्यता तथा संस्कृति की छाप हो।

***डा॰ पी॰एस॰ देशमुख** (मध्य प्रांत तथा बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, स्वयं प्रस्ताव पर बोलने से पूर्व मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि चूंकि यह अधिवेशन का अंतिम दिवस है, संभव है कि हम अपने समक्ष आये हुए प्रस्ताव पर समस्त दिन लगा दें।

श्रीमान् जी, सभा को विदित है कि हमने अनेकों बातें अधूरी छोड़ दी हैं। अनेकों रिपोर्टें हमारे समक्ष उपस्थित की गयीं और हमने उनके केवल कुछ भागों पर ही विचार किया। अनेकों धारायें तथा वाक्यखंड, उदाहरणार्थ संघ-विधान समिति संबंधी इत्यादि, आगे विचार करने के लिए छोड़ दिये गये। मैं निवेदन करता हूं कि वही हाल इस रिपोर्ट का न हो। मेरी सम्मति से यह रिपोर्ट सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें विधान का वह भाग है जिसके लिए भारत की असंख्य जनता आशा लगाये बैठी है कि हमारे नेताओं द्वारा की गई प्रतिज्ञाओं की पूर्ति होगी। वे यह देख रहे हैं कि हम उनकी स्थिति को उन्नत करने के लिये तथा जनसाधारण की जीवन शैली को उच्च बनाने के लिये दिए हुए अपने वचनों पर कितने दृढ़ हैं। इस विचार से श्रीमान् जी, मैं निवेदन करता हूं कि विधान के इस विशेष भाग को अन्य भागों की अपेक्षा अधिक महत्व दिया जाये और सदस्यों को अपने विचार प्रकट करने का पूर्ण अवसर दिया जाये। मैं आगे और निवेदन करूंगा कि जो आलोचना मैंने तथा मेरे मित्रों ने की है, यदि इस योजना के प्रवर्तकों पर उसका कोई प्रभाव पड़ा हो तो इस अधिवेशन में इन सिफारिशों पर कोई विचार न किया जाये। यह जब हो जायेगा तभी हम जनता के पास जाकर यह कह सकेंगे कि हम उनके हितों की अस्थायी नहीं वरन् स्थायी रूप से रक्षा कर सकेंगे।

वर्तमान रिपोर्ट पर मेरी प्रथम आलोचना यह है कि अन्य रिपोर्टों के समान यह भी अलौकिक असावधानी से तैयार की गई है। रिपोर्ट के निर्माता मुझे क्षमा करेंगे यदि मैं कुछ कटु शब्दों का प्रयोग करूं। मेरी समझ से समिति के सदस्यों के विचारों का ठीक प्रतिबिम्ब उस पुस्तक में दिये गये एक वाक्य से विदित

होता है जो हमको दफ्तर द्वारा दी गई है। मैं उस वाक्य को पढ़ूंगा: ''व्यवस्थाओं का समावेश करने के लिये उनको चुनने में बड़ी कठिनाइयों का अनुभव हुआ।,'' ठीक। वह भी भारतीय विधान के मौलिक अधिकारों के मसविदे में क्योंकि, ''क्योंकि ऐसा कोई एकमात्र परिमाण नहीं है कि मौलिक अधिकारों के निर्माण का क्या आधार हो और वर्गीकरण का आधार भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न है''। यह स्पष्ट है कि यही समिति का मुख्य आधार रहा है। उन्होंने संसार के विधानों पर अनेकों पुस्तकों को, एक धारा यहां से लेने तथा दूसरा मद वहां से लेने के लिए जिससे कि वह भारतीय विधान के उपयुक्त हो सके और उनके आदर्शों के अनुरूप बन सके, घोंटा है। मैं आपसे तथा सभा से निवेदन करता हूं कि श्रीमान् जी, मौलिक अधिकारों पर विचार करते समय यह ढंग ठीक नहीं था। आयरलैंड में ऐसी क्या बात है कि हम उसके मौलिक अधिकारों को ज्यों का त्यों अपनायें? जो उनके लिए लाभदायक हो वह हमारे लिये विचार करने योग्य भी नहीं हो सका है। आयरलैंड की जनसंख्या केवल 29 लाख है जो कि कम नहीं तो उतनी ही है जितनी कि बड़ौदा रियासत की। तो इस विशेष विधान में ऐसी क्या विशिष्टता है कि उसको अनुकरणीय समझा गया है? मैंने वैधानिक इतिहास अथवा वैधानिक कानूनों पर किसी महत्वपूर्ण पुस्तक को नहीं देखा है जिसमें आयरिश विधान की कोई विशेष प्रशंसा की गई हो और मैं यह समझने में असमर्थ हूं कि उसमें ऐसा क्या है जिसके कारण वह पूर्णरूपेण ग्रहण करने योग्य समझा जाता है। मेरी सम्मति से तो कमेटी ने इस सम्पूर्ण विषय पर बिल्कुल गलत तरीके से विचार किया। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे विधान निर्माताओं ने वर्तमान विधानों का अध्ययन किया और उनमें से उसको चुना जो सम्भवतया समाजवादियों तथा साम्यवादियों को शांत कर सके। मेरे विचार से जो कुछ हमारे सामने रखा गया है उसका यही संक्षिप्त साररूप है और संक्षेप में यही उसकी उचित व्याख्या है। किसी सूरत में उन्होंने दूरदर्शिता पूर्वक विचार करना नहीं चाहा लेकिन फिर भी वे विधान के सामाजिक तथा आर्थिक पहलुओं को अछूता नहीं छोड़ सके। इस प्रकार बेमन से उन्होंने उस पर विचार किया। अत: बात यह है कि हमारे सामने वह वस्तु है कि जिसको जनता का एक बड़ा भाग चाहे यहां हो चाहे बाहर स्वीकार नहीं कर सकता। श्रीमान् जी, हम यह आशा करते थे कि भविष्य में भारतीय समाज की निश्चित सिद्धान्तों के अनुसार व्यवस्था की जायेगी। वे कौन से सिद्धान्त हैं जिनका यहां समावेश किया गया है: यही कि लोगों के जीवन-यापन के साधन न्यायालय न जाने वाले अधिकारों में हैं, पुरुष तथा स्त्रियों का वेतन समान हो, जवानी तथा

[डा. पी.एस. देशमुख]

बचपन की रक्षा की जाये। ये सब बातें तथा प्रत्येक मद जो यहां रखा गया है साधारण ज्ञान के विषय हैं और कोई भी आधुनिक सरकार जो कुछ इसमें दिया गया है उसे न अपनाने में लज्जित होगी। यह वह अनियंत्रित न्यूनतम है जिसे प्रत्येक आधुनिक विधान तथा सरकार को स्वीकार करना चाहिये। हम न्यूनतम की खोखली स्वीकृति नहीं चाहते हैं। हमको अधिकतम की हट भी नहीं पकड़नी चाहिये और मैं समझौते के लिये उद्यत हूं लेकिन हम केवल सामान्य वार्ता तथा विशुद्ध कामनाओं पर निर्भर रहना नहीं चाहते हैं, क्योंकि यह वह वस्तु नहीं है जिसे प्राप्त करने के लिये हम यहां आये हों। कम से कम सन् 1942 से कांग्रेस का ढंग बिल्कुल ही बदल गया है। ये परिवर्तन इस कारण हुये कि एक भीषण प्रतिज्ञा की गई थी कि स्वतंत्र भारत की सरकार भारत के मजदूरों तथा किसानों की होगी और किसी की नहीं। इसी के कारण इतनी देहाती जनता, इतने देहाती युवक सन् 1942 की क्रान्ति में स्वयं बलिदान होने के लिये प्रेरित हुये। यदि आप अंकों का विश्लेषण करें तो श्रीमान् जी, आप यह जानकर आश्चर्यचकित हो जायेंगे कि रूढ़िवादियों तथा तब तक के देशभक्तों में से किसी ने भी त्याग नहीं किया। वह केवल पिछड़ी हुई देहाती जाति की अशिक्षित जनता थी जिसने स्वयं त्याग किया। नगर के बहुत कम लोग, जो कि उच्च तथा प्रसिद्ध कुटुम्ब के थे, इनका साथ देने को तैयार हुये। ऐसा होने से यह हमारा कर्तव्य है कि हम उन प्रतिज्ञाओं पर ध्यान दें जो हमने की थीं और रिपोर्ट पर विचार करने में हमें उस आदर्श को दृष्टि में रखना चाहिये था न कि बेमन से सिफारिशें रखने का प्रयत्न करना चाहिये था जिससे कि समाजवादियों को हम यह कह सकें कि हम भी एक प्रकार के समाजवादी हैं और साम्यवादियों को यह कह सकें कि हम उनके भी कुछ सिद्धान्तों का आदर करते हैं। श्रीमान् जी, मेरे एक मित्र ने कहा कि इन सिफारिशों में रूस तथा आयरलैंड के विधानों का मिश्रण है। मैं अपने माननीय मित्र को सूचित करूंगा कि उनको बड़ा भारी भ्रम हुआ है। इन सिफारिशों में रूस के विधान की कोई बात नहीं है। वे आदेशमूलक समझे जाते हैं। इन अनेकों मदों के रखने के अतिरिक्त हमारे विधान निर्माता हमें निश्चित कार्यक्रम बतायें जिसको प्रभावान्वित करने के लिये वे दृढ़ प्रतिज्ञ हैं और जिसके लिये कि समस्त भारत आकांक्षित है। इन सब बातों के अतिरिक्त अपने विधान में किसी कार्य साधकों के उपायों को रखे बिना कि कब तथा कैसे उनको प्राप्त किया जायेगा हम केवल सुदूर भविष्य में अस्पष्ट आशा का संचार कर रहे हैं। श्रीमान् जी, मैं निवेदन करता हूं कि यह अच्छा होगा यदि रिपोर्ट के निर्माता कृपा कर इस अधिवेशन तथा अगले

अधिवेशन के अन्तरवर्ती काल का उपयोग करें और इस सभा में रिपोर्ट पर जो कुछ आलोचना हो सकती है उसके आधार पर अपनी रिपोर्ट पर पुनः विचार करें। उस समय हम कुछ इससे अधिक अच्छी वस्तु प्राप्त कर सकेंगे जो कि आज हमारे सामने है यदि सारी चीज को मसविदा बनाने वाली समिति के पास नहीं भेजना है चाहे रिपोर्ट पर यहां पूर्ण वाद-विवाद हुआ हो अथवा नहीं। यदि ऐसा होता है तो हम मसविदे पर विचार करेंगे। लेकिन यदि यह रिपोर्ट के रूप में हमारे विचार के लिये फिर आती है तो हम आशा करते हैं कि उसका कुछ और ही रूप होगा।

वस्तुतः श्रीमान् जी, इनकी मौलिक अधिकारों के रूप में व्याख्या की गई है और श्रीमान् जी, मेरी सम्मति में मौलिक अधिकारों से मुख्य आशय जनसाधारण के सुख स्वतंत्रता तथा जीवन की रक्षा करने से है। मौलिक सिद्धान्तों का विचार वास्तव में शासक द्वारा अथवा लोगों की किसी संस्था द्वारा जो कि सरकार में प्रवेश कर सकती है, अत्याचार किये जाने के विरुद्ध अधिकार-पत्र-(मेगनाचार्य्या) के सिद्धान्तों के सदृश कोई वस्तु है। मेरा विचार यह है कि अपने विधान बनाने में इस प्रकार के मौलिक अधिकारों के रखने की आवश्यकता न थी। समस्त सिद्धान्तों का, जिनका समावेश करना हमने आवश्यक समझा और विशेषकर मौलिक अधिकारों के इस भाग का पालन करना जो कि सिफारिश के रूप में है, किसी राज्य का कर्तव्य नहीं है। अतः मैं निवेदन करता हूं कि या तो इनको साधारण व्यवस्थाओं के समान विधान के अंतर्गत रखा जाये या इनको बिल्कुल ही बदल दिया जाये। वे कौन सी कठिनाइयां हैं जिनसे हम भारतवासी दुखी हैं? हमारी कठिनाइयां तथा रुकावटें भिन्न हैं। सर्वप्रथम हमारे लोगों की निर्धनता है, तत्पश्चात् अज्ञानता तथा निरक्षरता है इसके बाद भोजन की कमी, पोषक तत्व की कमी, सदाचार की कमी, अमानवी लोभ तथा उसके परिणामस्वरूप शोषण, निर्दयता के साथ लाभ तथा उसके परिणामस्वरूप नैतिक, मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक और अंतिम पर प्रमुख आर्थिक पतन है। प्रश्न यह है कि यह मौलिक अधिकार इस पतन से कहां तक रक्षा कर सकते हैं। और हम इसको कहां तक ऐसा आधार मान सकते हैं जिस पर हम चल सकें और उन कठिनाइयों को दूर कर सकें और अपने समाज का पुनः संगठन कर सकें जिससे कि निर्धनता न रहे, अज्ञानता तथा भुखमरी का लोप हो जाये, कुछ लोगों के हाथों में धन का केन्द्रीकरण न हो इत्यादि इत्यादि। इनमें से किसी बात पर विचार नहीं किया गया है। श्रीमान् जी, एक शब्द में मैं कहूंगा कि इन पर एक धोखे के रूप में विचार किया गया है। मैं ''धोखे'' शब्द के अर्थ को समझता हूं फिर भी इसके प्रयोग करने में मुझे कोई संकोच नहीं है। श्रीमान् जी, मैं यह इसलिये कहता हूं कि एक बार

[डा. पी.एस. देशमुख]

आप इनको मौलिक अधिकारों के रूप में रख लीजिये तो फिर आप किसी भी व्यक्ति को इससे आगे बढ़ने के लिये मना करेंगे। मैं चाहता हूं कि इस बात को स्पष्ट समझ लिया जाये कि इच्छा केवल यही नहीं है कि हम आगे न बढ़ें वरन् यह भी है कि हमारे बाद में आने वाले किसी व्यक्ति को भी आगे बढ़ने से रोकें, शब्दों में यह आशय छिपा हुआ है। मैं चाहता हूं कि अपने कथन को सत्य सिद्ध करने के लिये इसे पढ़ने तथा प्रत्येक विशेष सिफारिशों के शब्दों का विश्लेषण करने के लिये मैं सभा का समय लेता। पर यह स्पष्ट है कि जिस भाषा का प्रयोग किया गया है वह भारतीय स्थिति के लिये यथेष्ट दूर भविष्य तक ही केवल लागू नहीं होती है वरन् सिफारिशें ऐसी हैं कि हमारे बाद में आने वाले किसी व्यक्ति को भी मौलिक सिद्धान्तों में परिवर्तन नहीं करने देगी और इस मार्ग की ओर अग्रसर न होने देगी जो भारत के लिये एकमात्र मार्ग है। हमारी समस्यायें बड़ी हैं, हमारी आबादी बहुत है और हम एक भाग इधर से और दूसरा भाग उधर से तथा विशेषकर आयरिश विधान से लेने के लिये ही नहीं बैठ सकते हैं। आखिर यह विधान ऐसा तो है ही। हमारे सामने आयरिश विधान के भागों की नकल है और भारत सरकार के 1935 के एक्ट की तीन चौथाई नकल है। यदि यही विधान है जिसके लिये हम जल्दी कर रहे हैं तो मेरी समझ से तो जल्दी का कोई कारण नहीं है, क्योंकि इस बात को याद रखना चाहिये कि हमारे पास भारत सरकार के एक्ट के भली प्रकार से विचारे हुये संशोधान हैं और वे हमारे प्रयोजन के लिये यथेष्ठ हैं। श्रीमान् जी, यह मुझे विश्वास है कि जो प्रतिनिधि यहां आये हैं वे ऐसे हैं कि मैं समझता हूं कि कोई भारतीय विधान-परिषद् इनसे अच्छे सदस्य नहीं रख सकती है। श्रीमान् जी, देश के सर्वोच्च कोटि के विद्वान्, इस परिषद् में सम्मिलित हैं। इस अवसर पर किसी मौलिक वस्तु की, किसी ऐसी वस्तु की जो हमारे लोगों की कुशाग्र बुद्धि के अनुरूप हो, किसी ऐसी वस्तु को जो कि हमारे देश की प्राचीन सभ्यता की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के सानुरूप हो, रचना क्यों नहीं करते? मेरा यही निवेदन है, श्रीमान् जी, मैं आशा करता हूं कि कमेटी की सिफारिशों की, जो यहां हमारे सामने हैं, केवल सामान्य आलोचना करने तक ही अपने आपको सीमित रखेंगे और मैं आशा करता हूं कि यदि वे शीघ्रता में इन सिफारिशों को स्वीकृत न होने देंगे तो वे एक महान् सेवा करेंगे। जब मैंने यह कहा था कि सभा के निश्चयों के बंधन में हम नहीं हैं तो यही विचार मेरे मन में था। मैं अनुभव करता हूं कि जब हमारे सामने समूचा विधान होगा तो हम अपने लिये स्वयं यह स्वतंत्रता चाहते हैं कि यदि आवश्यकता हो तो सारे ढांचे को बदल दिया जाये। कल मैंने कहा था कि हमने कोई ढांचा नहीं देखा है। मान लीजिये, हमारे पास ढांचा भी तो सूक्ष्म परीक्षण यह सिद्ध करेगा कि ढांचे का कुछ भाग मानवी है तथा अन्य भाग पाशविक है। यह वह ढांचा है जो न

तो शेष के अनुरूप है न उससे साम्य रखता है। यह वस्तुस्थिति होने के कारण श्रीमान् जी, मैं आपसे निवेदन करता हूं कि चूंकि हम इसके बाद एकत्रित नहीं हो रहे हैं, आज हमारी सभा का अंतिम दिवस है हम इन सिफारिशों पर केवल सामान्य वाद-विवाद ही करें। एक या दो मदों का स्वीकार करना किसी प्रकार भी हमारे आशय की पूर्ति करने में सहायक नहीं होगा। यदि वह कुछ करेगा भी तो केवल उसको कुछ हानि ही पहुंचायेगा; और सम्भव है कि बाद में हमें उनको भी बदलना भी पड़े।

इन बातों के साथ-साथ मैं अपने भाषण को संक्षिप्त करूंगा क्योंकि मैं कल दो बार बोला, इस कारण सभा का अधिक समय लेना नहीं चाहता हूं। मैं आशा करता हूं कि मेरी बातें आपको तथा सभा को मान्य होंगी।

श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी (संयुक्त प्रांत: जनरल): पूज्य अध्यक्ष महोदय, मैं इस रिपोर्ट की जो मौलिक अधिकारों के संबंध में आपके सामने और हम लोगों के सामने पेश की गई है, उसका स्वागत करता हूं। यद्यपि मैं पूरे सार से उन तमाम बातों से सहमत नहीं हूं तो भी उसके कुछ विशेष अंशों का विशेष तौर से स्वागत करता हूं।

मैं इस असेम्बली के सदस्यों का ध्यान विशेष तौर से 8वीं धारा की तरफ आकर्षित करना चाहता हूं। उसमें कहा गया है कि 10 वर्ष के अन्दर हमारी स्वतंत्र सरकार गांव-गांव में प्रत्येक गरीब के लिये प्राथमिक शिक्षा पूर्ण रूप से कर देगी। उसका एक अर्थ यह हुआ है कि 10-12 और 15 वर्ष के अन्दर अगर बूढ़े, जवान को शिक्षा नहीं मिल सकेगी तो कम से कम बालकों की शिक्षा का पूरी तरह से प्रबंध कर देगी और कोई बालक हमारे देश में ऐसा नहीं रहेगा जिसको शिक्षा पाने का सुयोग प्राप्त न हो सकेगा। इसका मैं विशेष तौर से स्वागत करता हूं। अन्य बातें बहुत आवश्यक हैं और जहां तक वे हैं, ठीक हैं। मैं नहीं समझता कि यह प्रस्ताव, यह धारा और या यह रिपोर्ट जो हमारे सामने पेश की गई है, केवल सदिच्छा से पेश की गई है। और मैं समझता हूं कि यदि हम पूरी तौर से अनुसरण करें तो इसमें शक नहीं कि हम देश को आगे बढ़ा सकते हैं। परन्तु यह होते हुये भी इसमें कुछ धारा ऐसी हैं जो अच्छी होते हुये भी बिल्कुल अपर्याप्त हैं। इस सिलसिले में विशेष तौर से धारा 3 और 4 की तरफ आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं। कुछ और भी ऐसी हैं जो इसमें रहनी चाहियें लेकिन वह उसमें नहीं हैं।

मुझे संशोधन देखने से मालूम हुआ कि किसी न किसी रूप में वह हमारे सामने आ रही हैं और जब हम प्रत्येक धारा को अलग-अलग से विचार करेंगे,

[श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी]

हमारे सामने सिद्धान्त भी आयेंगे और हमें आशा है कि इन सिद्धान्तों को पूरी तौर से विचार करके अमल करेंगे। विशेष तौर से मौलिक अधिकारों के संबंध में पहले भी एक रिपोर्ट पेश हुई थी, जिसे हम लोगों ने स्वीकार किया था। वह मौलिक अधिकार जो कानून द्वारा अलग किये जा सकते हैं, अदालत के द्वारा जिन पर अमल कराया जा सकता है, ये सिद्धान्त जो हमारे सामने हैं वे आधारभूत हैं। सिद्धान्त तो शासन के रहेंगे लेकिन अदालतों द्वारा हम उनको अलग नहीं कर सकते हैं। जिस समय वह पहली रिपोर्ट हमारे सामने पेश हुई थी उस समय हमारी विधान-परिषद् का रूप भिन्न था। यद्यपि हम चाहते थे कि उसे पूरे अधिकार हों फिर भी उस समय कुछ बंधन थे, रोक थी, जिसके कारण हम पूरे तौर से स्वतंत्रता के साथ अपना विधान बनाने में असमर्थ थे। लेकिन 15 अगस्त के बाद, यद्यपि हमारे पास औपनिवेशिक स्वराज्य है, पूर्ण स्वराज्य नहीं, फिर भी यह विधान-समिति विधान-परिषद् ऐसा विधान बनाने जा रही है जिसके द्वारा हमारे देश में पूर्ण स्वराज्य आयेगा। अब 15 तारीख के पहले से अवस्था में विशेष अन्तर हो गया है। इसलिये यह आवश्यक हो गया है कि जब हमारे सामने पूरे रूप में शासन-विधान आये तो उस समय हम लोग फिर से उन सिद्धान्तों पर विचार करें जो पहले हमने स्वीकार किये थे। इसका कारण यह है कि उस समय हमारे मस्तिष्क में कुछ बन्धन थे, रोक थी, जिसके कारण हम स्वतंत्रता के साथ अच्छी तरह से विचार नहीं कर सकते थे। परन्तु अब जब वह हमारे सामने आयेगा तो हम अधिक स्वतंत्रता के साथ विचार कर सकेंगे। मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि कल आपने हमको इस बात का अधिकार दिया है कि जब पूरा शासन-विधान हमारे सामने आयेगा तो उस पर हम बहस और मुबाहसा कर सकते हैं और अपने सुझाव परिषद् के सामने पेश कर सकते हैं। मैं विशेष तौर से आपका ध्यान धारा 3 और 4 की तरफ खींचना चाहता हूं, उसमें आर्थिक अधिकारों के संबंध में चर्चा की गई है। जो कुछ इसमें कहा गया है वह बहुत अच्छा है लेकिन उनके होते हुये भी क्या हम इस कार्य को पूरा कर सकेंगे, जो कार्य हमारे लिये आवश्यक है? हमें स्वतंत्र शासन लाने पर अवश्य विचार करना चाहिये। यह हमारी ही इच्छा नहीं है बल्कि प्रत्येक कांग्रेसजन की इच्छा है। मैं समझता हूं कि हमारे देश के प्रत्येक निवासी की यह इच्छा है कि हमारे देश में गरीबों की दशा सुधरे। गरीबों को अमीरों के ऊपर आश्रित न होना पड़े। आजकल गरीबों के लिये अमीर लोग कुयें खुदवाकर, धर्मशालायें बनाकर और गोशाला बनाकर यह पुकारते हैं कि हम गरीबों की हर प्रकार की मदद करते हैं। इससे गरीबों के स्वाभिमान पर धब्बा लगता है और

इस तरह से गरीब कभी भी उठ नहीं सकते हैं। जरूरत इस बात की है कि गरीबों को यह बात महसूस हो, यह अनुभव हो कि हम अधिक ऊंचे उठ सकते हैं और हमको भी वही अधिकार हासिल हैं जो दूसरे मनुष्यों को ऊंचे उठने के लिये होते हैं। इस भावना को गरीबों के सामने हम तभी ला सकते हैं जब कि आधारभूत सिद्धान्तों में तब्दीली करें, उनकी जड़ों को और नीचे तक पहुंचाया जाये। हम अपने शासन विधान को समाजवाद के आधार पर तैयार करें। इसका एक आभास नम्बर 3, धारा 4 में आता है। लेकिन यह धारा दुनिया के नये शासन विधानों में मौजूद है। जहां गरीबों के साथ जो न्याय देना चाहिये वह न्याय नहीं दिया जाता है। आज किसी भी देश में देखते हैं तो वहां गरीबों को अमीरों के आश्रित रहना ही पड़ता है। इसी दशा में मैं नहीं कह सकता हूं कि हमारे देश में उनका कितना प्रभाव होगा और कितना नहीं होगा।

हमारे देश में करीब 25 और 30 साल से देश की आजादी के लिए नेताओं ने बड़े-बड़े त्याग, बलिदान और तपस्या की है। हमारे बीच में हमारे अध्यक्ष मौजूद हैं, जिन्होंने अपने जीवन भर में बलिदानों का एक नमूना दुनिया और हमारे सामने पेश किया है। इस तरह से हमारे नेता भी बहुत मौजूद हैं। ठीक है, इसमें कोई संदेह नहीं है, लेकिन आज जो कानून हम बना रहे हैं, आज के लिये नहीं बना रहे हैं बल्कि सदियों के लिए बना रहे हैं। इसलिए हम उन सिद्धांतों को उसमें लायें जिन सिद्धांतों के आधार पर, आगे चलकर पूरे तौर से अमल किया जा सकेगा। चाहे हमारे ये नेता उस समय हों या न हों, वह शासन विधान तब्दील हो सकेगा। आप आज क्या देखते हैं कि हमारी सरकार हमारे साथ में होते हुए भी, हमारी कांग्रेस का त्याग और तपस्या देश के सामने होते हुए भी क्या स्थिति है और हम लोगों की कोशिशों और चेष्टाओं के बावजूद भी पूंजीपतियों का अधिकार और प्रभाव बढ़ता चला जाता है। क्या हर एक को हममें से पता नहीं है कि जितने बड़े-बड़े अखबार हैं, वह धीरे-धीरे एक-एक करके सारे पूंजीपतियों के हाथ में चले जा रहे हैं? समाचार पत्रों की श्रृंखलाएं पूंजीपतियों के हाथों में चली जा रही हैं। यदि पूंजीवाद के विरुद्ध आप अखबार में कोई चीज देना चाहें तो यह किसी तरह संभव नहीं है कि बड़े-बड़े अखबारों में वह प्रकाशित हो सके। अभी तो और गनीमत है, क्योंकि आज तो वे लोग हमारा नेतृत्व कर रहे हैं, जिन्होंने जिन्दगी को त्याग, तपस्या और गरीबों की सेवा करने में व्यतीत किया है, लेकिन 10, 15 साल बाद जब ये लोग बढ़े ही चलेंगे और इनमें काम करने की सामर्थ्य नहीं रहेगी या जिस समय और साधारण लोग ऊपर उठकर आयेंगे, जिन्होंने कि

[श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी]

देश के लिए त्याग और तपस्या नहीं की है, उस समय क्या दशा हो सकती है? क्या आप इसकी कल्पना कर सकते हैं? इसलिए हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम इस समय ऐसा विधान तैयार करें जिससे कि ऐसी संभावना हमारे सामने न आ सके। लिहाजा मेरे विचार में तो प्रत्येक विधान और खास तौर से जब भविष्य के लिए कोई विधान बनाया जाता है, उसमें चार बातें बहुत आवश्यक हैं। इन चार बातों में से कुछ बातें इसमें हैं और कुछ बातें संशोधन के रूप में आ रही हैं और कुछ बातें शायद उस समय आयेंगी, जब पहली रिपोर्ट पूरे शासन-विधान के मसविदे के साथ आयेगी, और उस सिलसिले में हम लोग अपना सुझाव पेश करेंगे। लेकिन उन चार बातों का उल्लेख मैं आपके सामने करना चाहता हूं। पहला मौलिक सिद्धान्त जो हमारे शासन का होना चाहिये वह यह है कि गरीब आदमी को इस बात का पूरा अधिकार हो कि वह ऊंचे से ऊंचा उठ सके, उसको इस बात का अवकाश हो कि वह ऊंचे से ऊंचा उठ सके, किसी की दया से नहीं बल्कि अपनी शक्ति से और समाज की सहायता से।

मैं बहुत नम्रता के साथ किसी आलोचना की दृष्टि से नहीं बल्कि जो मैं स्वयं अपने हृदय में अनुभव कर रहा हूं, वह यह है कि हमने सब चीज तो शासन विधान में बनाई, बहुत से राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रश्नों को हल करने का प्रयत्न किया, लेकिन हमने गरीब आदमी के लिए एक शब्द भी न लिखा। सिवाय सदिच्छा के और कोई शब्द हमारे पूरे शासन-विधान में नहीं मिलता। सिवाय एक बात को छोड़कर और वह यह कि उसको वोट देने का अधिकार अवश्य दे दिया गया है, इसके अलावा एक गरीब के लिए कोई बात हमारे शासन विधान में अभी तक नहीं आई है, मैं इस बात के लिए मशकूर हूं और कृतज्ञ हूं। लेकिन इतना काफी नहीं है। इसलिए मैं बहुत ही नम्रता के साथ कहूंगा कि आप इसमें कुछ ऐसे नियम लाइये जिसमें यह स्पष्ट हो सके कि हमारा जो शासन-विधान तैयार होगा और उस पर जब अमल होगा, तो उसमें यह नहीं होगा कि थोड़े से पूंजीपतियों और कुछ थोड़े से लोगों का साम्राज्य हो और उनका शासन हो। और गरीब आदमी और साधारण जन-समूह उनकी दया पर आश्रित रहे। अक्सर मेरे कुछ मित्र हैं जो समाजवाद के नाम से चिढ़ते हैं। मैं उन्हें चिढ़ाना भी नहीं चाहता और कोई जरूरत नहीं है कि समाजवाद का नाम लिया जाये। लीजिये तो बड़ा अच्छा, मुझे तो इससे प्रेम है और मैं समझता हूं कि पंडित जवाहरलाल नेहरू के उन विचारों से सहमत हूं जो उन्होंने पहले फंडामेंटल राइट्स पर बोलते हुए कहा था कि एक समय आयेगा कि जब हमारे देश में और संसार में समाजवाद का बोलबाला

होगा। फिर भी अगर कुछ लोग इस शब्द से चिढ़ते हैं, तो मैं कोई ऐसा कठपुतला नहीं हूं कि उस शब्द को बार-बार अपने लोगों और साथियों को चिढ़ाने के लिए इस्तेमाल करूं। इसलिए आप अगर समाजवाद शब्द से चिढ़ते हैं तो रहने दीजिये इस शब्द को। लेकिन आप ऐसे नियम लायें जिसमें हमारे शासन पर वैस्टैड इन्ट्रेस्ट पूंजीवादियों का, ऐसे लोगों का, जो गरीब आदमियों को हमेशा दबाये रखना चाहते हैं, प्रभुत्व न हो सके। आप कम से कम इतना ही कीजिये कि किसी भी ऊंचे ओहदे पर, धारा सभा की सदस्यता पर और मिनिस्टरी में वह लोग न खड़े हो सकें जो लोग वैस्टैड इन्ट्रेस्ट से हैं, जो पूंजीपति हैं। मुझे दुख होता है, परन्तु कहना पड़ता है, किसी भी आलोचना की दृष्टि से नहीं और मैं अपनी बात नहीं कर रहा हूं। जब मैं सड़क पर नई दिल्ली और पुरानी दिल्ली में जाता हूं, तो मेरे कानों में आवाज पहुंचती है कि अमुक-अमुक कमेटियों में कैसे-कैसे लोग रखे गये हैं। जनता को इस बात का संदेह होता है कि आखिर जो शासन-विधान बन रहा है क्या उन गरीब आदमियों के लिये बन रहा है, जिन्होंने 30 साल से लगातार त्याग और तपस्या की है और देश के लिये 30 साल से मरे हैं। हम जनता को क्या जवाब दें? ठीक है, यह भी हम मानते हैं कि एक अवस्था तक हमें पूंजीपतियों की आवश्यकता हो सकती है लेकिन शासन-विधान में उनका इस तरह से प्रभाव हो जाये, यह कोई मुनासिब नहीं और इसको देश कभी पसंद नहीं कर सकता है, और मुझे मालूम है कि हमारे नेता, जिन्होंने देश के लिये तकलीफें उठाई हैं, वह भी पसंद नहीं कर सकते और अगर वह पसन्द नहीं करते तो हमें शासन-विधान में कोई ऐसा तरीका लाना है जिससे आगे चल कर इनका, पूंजीपतियों का, प्रभाव न हो सके। यह बहुत आवश्यक बात है और इसमें दो बातें हो सकती हैं। एक तो अगर आप चाहें तो यह कर दें कि हमारा शासन-विधान हमारे शासन का निर्माण और हमारी समाज रचना भविष्य में समाजवाद के आधार पर होगी लेकिन अगर आप समाजवाद शब्द का प्रयोग नहीं करना चाहते हैं तो आप यह कह सकते हैं कि उसमें हम किसी तरह का पूंजीवाद रखने के लिये तैयार नहीं हैं और साथ ही साथ जब तक हम पूंजीवाद को रखने के लिए मजबूर हैं, तब तक हम यह कर दें कि किसी भी बड़े सरकारी ओहदे पर वह शख्स नहीं हो सकता जो लाभ उठाने के कार्य में लगा हुआ हो। आप समझ सकते हैं कि कौन शख्स प्रोफिट मोटिव से सरकार में आता है या किसी तरह से बेजा फायदा उठाता है, यह आपको अच्छी तरह से मालूम है। आप लोगों के और कांग्रेस मैनों के दिमाग में बहुत से चित्र सामने आते हैं कि किस तरह से लोग बेजा फायदा उठाते हैं। तो मैं बहुत अदब के साथ कहूंगा कि यह आवश्यक है कि हम इन मौलिक अधिकारों में कोई ऐसा संरक्षण लगायें, जिनके द्वारा हम आयन्दा के लिए शासन-विधान पर लागू होने के खातिर आ सकें। और जब तक

[श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी]

हम ऐसा संरक्षण नहीं रखेंगे तब तक इस शासन-विधान से देश के गरीब आदमियों का लाभ नहीं होगा। यह सब तो ठीक है कि हम गवर्नरों और मंत्रियों की तनख्वाहें देश की स्थिति पर ध्यान रखते हुए तय करें और सदस्यों का क्या भत्ता होगा, इसका भी फैसला करें। लेकिन सबसे बड़ी आवश्यकता इस बात के देखने की है कि हम छोटे से छोटे गरीब आदमी को किस तरह से बढ़ायेंगे। किसी की दयादृष्टि से ही उनकी आमदनी नहीं बढ़ाना है बल्कि शासन-विधान में ऐसी चीज रखनी है जिससे वे अपना जीवन सुखमय बना सकें और उनकी आमदनी बढ़ सके। यह सबसे बड़ा मुख्य और आवश्यक कार्य हमारे सामने है। आज जब बाहर जाते हैं तो लोग यह कहते हैं कि इसमें आप गरीबों के लिए क्या बात कर रहे हैं, और गरीबों को क्या स्थान दे रहे हैं? और गरीबों के लिए जब तक यह चीज नहीं होती, तब तक वह साफ-साफ कहते हैं कि यह शासन-विधान हम लोगों के लिए बेकार है।

एक तो सबसे बड़ी बात यह है और मैं समझता हूं कि सबसे आवश्यक; दूसरी चीज यह है कि हमें अपने राष्ट्र को मजबूत बनाना है, सुसंगठित बनाना है। सुसंगठित बनाने के लिए दो तीन बातों की आवश्यकता होती है। एक तो यह कि हमारे में सांस्कृतिक एकता हो। सांस्कृतिक एकता के लिए और बातों के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि हमारे देश में देश की एक भाषा हो। मैं आपका ध्यान अपने लायक दोस्त चौधरी खलिकुज्जमा के वक्तव्य की ओर खींचना चाहता हूं। जिस समय पाकिस्तान होने जा रहा था उस समय उन्होंने इस बात का ऐलान किया था कि पाकिस्तान की भाषा उर्दू होगी। मैं समझता हूं कि किसी को इससे द्वेष नहीं होना चाहिये। एक राष्ट्र में प्रधान राष्ट्रीय भाषा एक ही हो सकती है और उस दिन मुझे ख्याल हुआ कि यह बात सिद्धांत रूप में बड़ी सच्ची है और ऐसी दशा में यह भी आवश्यक है कि हम भी इस बात का निश्चय करें कि हमारे देश में भी एक भाषा होगी और जब तक हम यह निश्चय नहीं करते तब तक इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारी राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ नहीं हो सकती और सांस्कृतिक एकता भी ठीक नहीं हो सकती। हम यह भी मानते हैं कि हजार, दो हजार, दस हजार हमारे मुसलमान भाई देश के बाहर से आये थे, लेकिन इसमें संदेह नहीं कि यह कहना कठिन है कि उनमें से कुल कितने हैं और हैं या नहीं, लेकिन इस समय अधिकांश 99 फीसदी मुसलमान, 100 फीसदी हिंदू, 100 फीसदी ईसाई एक ही पूर्वजों की संतान हैं। यह हो सकता है कि हममें से कुछ गलती में आकर राम और कृष्ण को गाली देने लगे। लेकिन जब सब चीजें एक ठीक ठिकाने से बैठ जावेंगी और जब यह कलुषित भावनाएं

तथा जो विष फैला हुआ है, वह खत्म हो जायेगा तो इसमें संदेह नहीं कि यहां का प्रत्येक मुसलमान, प्रत्येक हिंदू राम और कृष्ण को अपना पूर्वज मानेगा। दुनिया के इतिहास में यही हुआ है। वह तो संयोग ऐसा है कि हमारे बीच में बेदिली बढ़ती गई और उसका परिणाम यह हुआ कि हम अलहदा-अलहदा होते गये। हमारी एक संस्कृति है, यह हम थोड़े दिन में अनुभव करेंगे। हमारी एक संस्कृति है, इसके यह अर्थ नहीं हैं एक-दूसरे की संस्कृति में हमने भाग नहीं लिया और जो संस्कृति है उसमें दोनों का भाग नहीं है। मैं मानता हूं दोनों का भाग है, लेकिन इसमें भी कोई संदेह नहीं कि हमारे संस्कार एक हैं। अगर हमारी भाषा एक कर दें तो इसमें कोई संदेह नहीं कि पूरी तौर से हमारी संस्कृति एक हो जायेगी और हमारा देश आगे बढ़ सकेगा।

मुझे यह जानकर खुशी है कि बहुत जल्द आपके सामने यह प्रस्ताव आयेगा कि हमारे देश की भाषा हिंदी हो और हमारी लिपि देवनागरी हो। मैं समझता हूं कि इस असेम्बली के तमाम सदस्य और देश का प्रत्येक बच्चा बच्चा इस चीज का स्वागत करेगा।

दूसरी बात जो अभी आपके सामने आ रही है और जो मौलिक अधिकारों में बहुत आवश्यक है, वह है हमारे यहां की संस्कृति की विशेष आवश्यकता। हमारा देश हमेशा से कृषि प्रधान रहा है, और चाहे जितना हम व्यापार बढ़ायें जब तक हम साम्राज्यवादी नहीं होना चाहते—और साम्राज्यवादी हमको नहीं होना चाहिये—तब तक हमारा देश कृषि प्रधान रहेगा, इसमें कोई संदेह नहीं। जो देश कृषि प्रधान हो उसमें गौ-रक्षा का विशेष महत्व है। मुझे इस बात को जानकर खुशी है कि आपके सामने एक प्रस्ताव बहुत सुन्दर रूप में आ रहा है और मैं आशा करता हूं कि हमारी यह परिषद् उसे स्वीकार करेगी। इस पर भी बहुत तरह का वाद-विवाद हमारे बीच में चला। मैं तो केवल आर्थिक दृष्टि से ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक दृष्टि से भी यह आवश्यक समझता हूं कि हमारे देश में गो-रक्षा का प्रबंध हो। दोनों विचारों से, दोनों दृष्टिकोणों से, चाहे आर्थिक दृष्टिकोण हो चाहे सांस्कृतिक दृष्टिकोण हो, मुनासिब है और आवश्यक है कि हम अपने देश में गो-रक्षा का प्रबंध करें और मुझे खुशी है कि वह प्रस्ताव आपके सामने आ रहा है।

दूसरी और आवश्यक बात है जो अभी आपके सामने नहीं आई है लेकिन मैं यह समझता हूं कि जब धीरे-धीरे मसविदा, जिसमें तमाम मौलिक अधिकार भी शामिल होंगे, आपके सामने आयेगा। उस समय आपके सामने पेश होगी और वह यह है कि हम अपने राष्ट्र को किसी प्रकार से बली बनायें, किसी प्रकार

[श्री विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी]

से शक्तिशाली बनायें। हम किसी भी दुनियां के राज्य पर आक्रमण नहीं करना चाहते, हम तो यह भी नहीं चाहते कि दुनियां में अब आयन्दा युद्ध भी हो। लेकिन खाली मेरे चाहने से कोई बात हमेशा नहीं होती। हम चाहते हैं कि हिंदुस्तान अगर 50 फीसदी शांति चाहता हो तो हम 100 फीसदी शांति दें और हर तरह से दुनियां में शांति लाने का प्रयत्न करें। परन्तु वह कार्य भी हम तभी कर सकते हैं जब हम बली हों। हमारा देश संसार की जनसंख्या के हिसाब से सबसे बड़ा देश है और इसलिए संसार के सामने हमारा कर्तव्य हो जाता है कि हम संसार की जो बड़ी लड़ाई चल रही है, हिंसा की, उसको रोकें। लेकिन वह रोक हम तभी सकते हैं जब हम स्वयं बलिष्ट बनें और उसके लिए आवश्यक है कि हमारे यहां का प्रत्येक नौजवान फौजी शिक्षा हासिल करे। मैं चाहता हूं कि हम यह नियम कर दें कि हमारे देश का प्रत्येक नौजवान फौजी शिक्षा हासिल करेगा, चाहे वह कोई भी हो जब तक वह शारीरिक अवस्था से असमर्थ न हो। उसके लिये आवश्यक होगा कि वह फौजी शिक्षा प्राप्त करे और राज्य उसे मजबूर करेगा कि उसे फौजी शिक्षा प्राप्त करनी होगी। वह केवल बली ही बनाने की दृष्टि से नहीं बल्कि जो शताब्दियों से कुछ असंयम (इण्डिसीपिलिन) आ गया है उसको दूर करने के लिये भी। यह आवश्यक होगा कि हमारे यहां आम तौर पर कोन्सक्रिप्शन किया जाये और फौजी शिक्षा दी जाये।

यह चार बातें बहुत आवश्यक हैं और मैं यकीन करता हूं कि समय-समय पर जब यह बातें आयेंगी तो आप उन पर विचार करेंगे और परिषद् उनका समर्थन करेगी। मैंने प्रारम्भ में ही कहा कि जहां तक सिद्धान्तों का, जो इस रिपोर्ट में दिये गये हैं, सम्बन्ध है, मैं उनका स्वागत करता हूं, लेकिन मैं समझता हूं कि वह बिल्कुल अपर्याप्त है। जब तक यह मौलिक सिद्धान्त और जोड़े नहीं जाते तब तक न गरीबों के जनसमूह का पूरी तौर से हित हो सकता है न हमारा राष्ट्र बलिष्ट बन सकता है। मैं आशा करता हूं कि इसका तमाम विधान-परिषद् और विधान-परिषद् के सदस्य स्वागत करेंगे और इन सिद्धान्तों को इसमें लाने का प्रयत्न करेंगे।

बस इन शब्दों के साथ मैं इसका फिर एक बार स्वागत करता हूं। जय हिन्द!

***श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार: जनरल): श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव रखता हूं कि:

''अब मत लिया जाये।''

***अध्यक्षः** प्रस्ताव है किः

''अब मत लिया जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***श्रीमती रेणुका रे** (पश्चिमी बंगालः जनरल): श्रीमान् जी, कल आपने सभा में यह कहा था कि बाद में रिपोर्ट के वाक्य-खंडों पर वाद-विवाद होगा। हममें से कुछ व्यक्तियों के, विशेषकर वाक्य-खंड 16 पर, संशोधन हैं। मैं आशा करती हूं कि बाद में संशोधन रखने का अवसर दिया जायेगा।

***अध्यक्षः** अभी हमने इस प्रस्ताव को लिया है कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये और यदि यह प्रस्ताव स्वीकृत होता है तो फिर हम एक-एक वाक्य-खंड को लेंगे और उस समय वाक्य-खंड पर किसी संशोधन को लिया जा सकेगा। क्या प्रस्ताविका महोदया उत्तर में कुछ कहना चाहती हैं?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मैं प्रसन्न हूं कि वाद-विवाद समाप्त हो गया। पूरक रिपोर्ट पर बड़ा ही रोचक सामान्य वाद-विवाद हुआ। पूरक रिपोर्ट की अपेक्षा मुख्य रिपोर्ट पर छोटा वाद-विवाद हुआ। जहां तक पूरक रिपोर्ट का सम्बन्ध है, सामान्य वाद-विवाद न्यायालय न जाने वाले अधिकारों पर आश्रित था और न्यायालय जाने वाले अधिकारों के उन चार वाक्य-खण्डों पर जो कि रिपोर्ट में दिये गये हैं, कुछ भी वाद-विवाद नहीं हुआ। वास्तविक लम्बा वाद-विवाद रिपोर्ट के अन्य भाग पर हुआ।

परन्तु रिपोर्ट कुछ शासन सम्बन्धी उद्देश्यों को निर्धारित करती है। हमने उद्देश्यों की व्याख्या करते हुये मुख्य प्रस्ताव को स्वीकार कर ही लिया है, चाहे आप लम्बा वाद-विवाद करें या न करें। यह बात तो न्यूनाधिक रूप में वाद-विवाद की बात है। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये और जब हम वाक्य-खण्डों को एक-एक करके लेंगे, और यदि कोई संशोधन पेश किया जायेगा तो उस समय मुझे कुछ कहना पड़े। परन्तु इस समय मुझे इससे अधिक और कुछ नहीं कहना है कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव है कि रिपोर्ट पर विचार किया जाये।

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***श्री एम.एस. अणे** (दक्षिणी रियासतें): श्रीमान् जी, मैं यह बताना चाहता हूं कि यह एक साधारण नियम है कि जब उत्तर दिया जाता है तो जिस सदस्य को उत्तर दिया जाता है, उसे अपनी आलोचना का उत्तर सुनने के लिये सभा में रहना चाहिये। समस्त व्यवस्थापिकाओं में वाद-विवाद का यह प्रमाणित नियम है।

***अध्यक्ष:** मैं आशा करता हूं कि सदस्य लोग श्री अणे जैसे अनुभवी व्यवस्थापिका सदस्य की बात पर ध्यान रखेंगे।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान् जी, मैं वाक्यखंड 16 पेश करता हूं:

''सरकारी कोष द्वारा संचालित अथवा सहायता प्राप्त किसी स्कूल में जाने वाले किसी व्यक्ति को उस स्कूल में दी जाने वाली किसी धार्मिक शिक्षा में भाग लेने के लिये या उस स्कूल से सम्बद्ध अन्य स्थान में की जाने वाली किसी धार्मिक पूजा में उपस्थित होने के लिये विवश नहीं किया जायेगा।''

हम सिफारिश करते हैं कि परिषद् इस रूप में इस वाक्य-खण्ड को स्वीकार करे। समस्त संशोधनों पर विचार करने पर परामर्शदातृ-समिति की दीर्घ वाद-विवाद के पश्चात् यह अन्तिम सिफारिश है। हम अन्त में इस परिणाम पर पहुंचे कि मौलिक अधिकारों में समावेश करने के लिये यह सबसे अधिक उपयुक्त रूप है और मैं प्रस्ताव करता हूं कि यह वाक्य-खण्ड सभा द्वारा स्वीकार किया जाये।

***अध्यक्ष:** इस वाक्य-खण्ड पर मेरे पास अनेकों संशोधनों की सूचना है।

***श्री आर.वी. धुलेकर** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): श्रीमान् जी, मैं एक छोटे से मौखिक परिवर्तन का सुझाव रखता हूं कि ''स्कूल'' शब्द के स्थान में ''शिक्षणालय'' शब्द रखा जाये।

***अध्यक्ष:** परन्तु आपने ऐसे किसी संशोधन की सूचना नहीं दी है।

***श्री आर.वी. धुलेकर:** जी नहीं।

***अध्यक्ष:** श्री धुलेकर सुझाव रखते हैं कि इस वाक्य-खण्ड की प्रथम पंक्ति में ''स्कूल'' शब्द के स्थान में ''शिक्षणालय'' रखा जाये। उन्होंने किसी संशोधन की सूचना नहीं दी है।

***श्री के.एम मुंशी:** श्रीमान जी, उससे बड़ा व्यापक अर्थ हो जायेगा। सारे का सारा मद बदल जायेगा। उससे आशय कालेज, पोस्ट ग्रेजुएट कालेज तथा किसी भी संस्था से हो सकता है। बात यह है कि दूसरे शब्द से बदलना साधारण विषय नहीं है।

***श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): श्रीमान् जी, मैं पेश करती हूं कि वाक्य-खण्ड 16 की व्याख्या के रूप में निम्न पैरा जोड़ दिया जाये:

> ''छात्रों की बुद्धि को परिमार्जित करने के लिये न कि ऐसी बनाने के लिये कि जिसमें साम्प्रदायिक पृथकत्व को प्रोत्साहन मिले, सरकारी सहायता पाने वाले शिक्षणालयों में दी जाने वाली समस्त धार्मिक शिक्षा धर्मो के तुलनात्मक प्राथमिक ज्ञान के रूप में होगी।''

श्रीमान् जी, जैसा कि रिपोर्ट के प्रस्तावक महोदय ने बताया है कि इस वाक्य-खंड का उद्देश्य यह है कि उन छात्रों को जो इन स्कूलों में जाते हैं, यदि वे धार्मिक कक्षाओं में जाना नहीं चाहते तो उन कक्षाओं में उपस्थित होने के लिये विवश किये जाने से रोकना। इससे मैं पूर्णतया सहमत हूं। परन्तु मैं जानती हूं कि ऐसी अनेकों संस्थायें हैं जो धार्मिक आधार पर चलाई जाती हैं और जो कि शिक्षा के क्षेत्र में राज्य के स्थापन होने से बहुत पूर्व पदार्पण कर चुकी हैं। मेरे प्रान्त में ऐसे मकतब और पाठशालायें हैं जो स्कूल जाने वाले उम्र के बच्चों के शिक्षण का कार्य करते हैं, लेकिन हमने देखा है कि वहां इस प्रकार की धार्मिक शिक्षा दी जाती है कि बच्चे की बुद्धि को परिमार्जित करने के स्थान में उसकी बुद्धि को दूषित करते हैं और इन मकतबों तथा पाठशालाओं में शिक्षा पाने के फलस्वरूप कभी-कभी एक विशेष प्रकार का धार्मिक अन्धविश्वास तथा कट्टरपन उत्पन्न हो जाता है। यह विवादास्पद विषय है कि हम इन धार्मिक स्कूलों को कोई आर्थिक सहायता दे या नहीं—मैं इस विषय को तो लेना ही नहीं चाहती क्योंकि इस आशय के लिये विशेषज्ञ नियुक्त कर दिये गये हैं और उनकी रिपोर्ट की प्रतीक्षा की जा रही है, और मुझे विश्वास है कि उसके पश्चात्, व्यवस्थापिका इस विषय में पूर्ण विवरण सहित प्रवेश करेगी। इस संशोधन को पेश करने से मेरा उद्देश्य यह है कि किसी भी व्यक्ति के धर्म में हस्तक्षेप किये जाने के, बिना किसी भय के सरकार इन संस्थाओं में दी जाने वाली शिक्षा में प्रतिबन्ध लगायेगी या उसे नियंत्रित करेगी। पाठ्यक्रम सरकार के नियंत्रण में होना चाहिये और वह इस प्रकार का हो कि पृथकत्व उत्पन्न करने की अपेक्षा वह बुद्धि को अधिक परिमार्जित करे। जब हम अल्पसंख्यक अधिकार समिति की रिपोर्ट पर वाद-विवाद कर रहे थे,

[श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी]

हमने कहा था कि हमारा उद्देश्य एक संयुक्त राष्ट्र बनाने का होना चाहिये और हमने पृथक निर्वाचन पद्धति (separate electorate) का अन्त कर दिया। तथा मौलिक अधिकारों से सहमत हुये और प्रत्येक व्यक्ति को अपने धर्म का अनुसरण करने का अधिकार दिया। पर मुझे विश्वास है कि आप कैसी भी पार्थिव सरकार बनायें, जब तक राज्य का एक सदस्य दूसरे सदस्य के धर्म की प्रशंसा नहीं करता तब तक हमारे लिये संयुक्त भारत बनाना असम्भव होगा। इसलिये किसी के धर्म में हस्तक्षेप किये बिना राज्य को यह देखने का पूर्ण अधिकार है कि बालक की निर्माण अवस्था में जब कि वह स्कूल जाने योग्य आयु का हो, धार्मिक शिक्षा पर नियंत्रण किया जाये और पाठ्यक्रम इस प्रकार का हो कि बालक भारत का कुशल नागरिक बने, तथा पारस्परिक विचारों की प्रशंसा करने की क्षमता रखे। हम राजनैतिक दलों द्वारा संगठित किये जा सकते हैं, परन्तु यदि हम एक दूसरे के धर्म का आदर नहीं करते तो हम देखेंगे कि अपने मध्य सच्चे धार्मिक व्यक्ति प्राप्त करने के अलावा हम एक इस प्रकार का पृथकत्व उत्पन्न कर देंगे जो बहुत हानिकारक होगा और मुझे भय है कि इस प्रकार के व्यक्तियों पर राष्ट्र के भविष्य का निर्माण नहीं किया जा सकता है। इन थोड़े से शब्दों के साथ श्रीमान् जी, मैं अपना संशोधन पेश करती हूं और आशा करती हूं कि सभा मुझसे सहमत होगी और इसे स्वीकार करेगी।

***श्रीमती रेणुका रे:** श्रीमान् जी, मैं, प्रथम भाग को छोड़ कर, अपना संशोधन पेश करती हूं, अर्थात् वाक्यखण्ड 16 के स्थान में निम्न रखा जाये:

> ''राज्य द्वारा संचालित स्कूलों में कोई साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा नहीं दी जायेगी। राज्य द्वारा सहायता प्राप्त अथवा प्रमाणित किसी भी स्कूल या शिक्षण संस्थाओं में जाने वाले किसी व्यक्ति को ऐसी किसी धार्मिक शिक्षा में उपस्थित होने के लिये बाध्य नहीं किया जायेगा।''

श्रीमान जी, मैं अनुभव करती हूं कि रिपोर्ट के निर्माताओं ने इस आशय को व्यक्त करना नहीं चाहा जो इस वाक्यखंड द्वारा व्यक्त होता है, अर्थात्, राज्य द्वारा या सरकारी कोष द्वारा संचालित स्कूलों में शिक्षा मताश्रित हो। प्रजातंत्रात्मक पार्थिव? सरकार द्वारा साम्प्रदायिक स्कूलों का संचालन नहीं किया जा सकता है। उनको प्रमाणित किया जा सकता है तथा सहायता दी जा सकती है, परन्तु उनका वस्तुत: संचालन नहीं किया जा सकता। मैं लम्बा भाषण देना नहीं चाहती हूं। मैं केवल यह बताना चाहती हूं कि यदि वाक्यखंड 16 के स्थान में मेरा संशोधन रखा जाता

है तो यह उलझन दूर हो जायेगी और जिस आशय से यह वाक्यखण्ड रखा गया है, उसका अच्छा स्पष्टीकरण हो जायेगा। मैं आशा करती हूं कि इसकी आवश्यकता को सभा स्वीकार करेगी।

श्रीमान् जी, स्वतंत्रता प्राप्त करने के पूर्व भी शिक्षा विभाग की केन्द्रीय परामर्शदातृ-समिति ने निश्चय किया था कि इस देश में जो शिक्षा दी जायेगी वह मताश्रित नहीं होगी और साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा देने का उत्तरदायित्व उस सम्प्रदाय तथा घर पर होगा जिसका वह बच्चा है। मुझे विश्वास है कि अब जब कि हमें अपने भाग्य का स्वयं निर्माण करना है और हमें वह प्रजातन्त्रात्मक पार्थिव राज्य स्थापित करना है जिसके लिये कितने ही व्यक्तियों ने त्याग किया तथा प्राण न्यौछावर किये, तो हमें यह कहने का अधिकार है कि हम उसके सम्बंध में किसी प्रकार की असमानता रखना नहीं चाहते हैं। हम इस प्रकार पार्थिव राज्य की स्थापना करना चाहते हैं जो कि शिक्षा राज्य द्वारा दी जायेगी, वह इस प्रकार की नहीं होगी कि वह अपने ही हित-साधनों के विमुख हो। मैं यह नहीं कहती कि शिक्षा मताश्रित होगी ही नहीं परन्तु मैं यह कहती हूं कि राज्य द्वारा दी जाने वाली शिक्षा इस प्रकार की हो कि यद्यपि उसमें आध्यात्मिक शिक्षा हो, उसमें राज्य द्वारा नियंत्रित धर्म हो, परन्तु उसका स्वरूप साम्प्रदायिक न हो, और मैं आशा करती हूं कि सरदार पटेल इस संशोधन को स्वीकार कर लेंगे, क्योंकि यह समिति की इच्छा के प्रतिकूल नहीं है। वह केवल वाद हेतु को स्पष्ट करने के लिये है और यह सम्भव है कि वाक्यखण्ड के वर्तमान रूप से यह अर्थ लगाया जा सके कि हम राज्य द्वारा साम्प्रदायिक शिक्षा संचालन करना मान रहे हैं।

*अध्यक्षः केवल दो संशोधनों की सूचना मेरे पास आई है। दोनों संशोधन पेश हो चुके हैं। अब प्रस्ताव तथा संशोधनों पर वाद-विवाद हो सकता है।

*श्री के. सन्तानम् (मद्रासः जनरल): श्रीमान् जी, श्रीमती रेणुका रे द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव का मैं जोरदार समर्थन करता हूं। मेरे विचार से वह उप-समिति के आशय को पूर्ण रूप से व्यक्त करता है। हमारे देश में एक ही धर्म में अनेकों प्रकार के मत हैं। हम चाहते हैं कि ग्राम पंचायतें शिक्षा पर नियंत्रण रखें, हम चाहते हैं कि स्थानीय संस्थायें शिक्षा पर नियंत्रण रखें। किसी विशेष क्षेत्र के विशेष भाग में किसी विशेष हिन्दू मत का प्राधान्य हो। हम यह नहीं चाहते कि शैवों को शैव मत की शिक्षा मिले, वैष्णवों को वैष्णव मत की शिक्षा मिले तथा लिंगायतों को लिंगायत मत की शिक्षा मिले। हम ऐसे वाद-विवादों के लिये तनिक भी गुंजायश

[श्री के. सन्तानम्]

नहीं रखना चाहते हैं। अत: यह आवश्यक है कि राज्य द्वारा संचालित समस्त स्कूलों में किसी प्रकार की भी धार्मिक शिक्षा न हो। अन्य एजेन्सियों को स्कूल समय से परे इस प्रकार की शिक्षा देने दीजिये। वह बिल्कुल ही एक भिन्न वस्तु है। इस प्रकार से मैं धार्मिक शिक्षा का विरोध नहीं कर रहा हूं और न मैं किसी साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा का ही विरोध कर रहा हूं, परन्तु हमारे सरकारी स्कूल पूर्णरूप से पार्थिव होने चाहियें। वे समस्त धार्मिक वाद-विवादों की सीमा से परे होने चाहियें। इसलिये यह संशोधन कहता है कि जहां राज्य द्वारा स्कूलों का संचालन होता है, उनमें किसी प्रकार की साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा न दी जाये। समिति के आशय को यह और भी अधिक उपयुक्त तथा पूर्ण रूप से व्यक्त करता है। यदि कोई संस्था राज्य द्वारा प्रमाणित की जाती है अथवा उसे राजकोष से सहायता दी जाती है तो वहां अनिवार्यता नहीं होनी चाहिये। किसी सहायता प्राप्त स्कूल में धार्मिक शिक्षा दी जा सकती है, परन्तु जहां किसी छोटे बालक के माता-पिता तथा स्वयं वयस्क विद्यार्थी ऐसी कक्षाओं में उपस्थित होना नहीं चाहते हैं तो उसे किसी प्रकार की सजा न दी जाये। उसे इस प्रकार की धार्मिक शिक्षा से अनुपस्थित रहने दिया जाये। मैं समझता हूं कि ये दोनों वाक्य-खंड मौलिक हैं और मैं आशा करता हूं कि ये सभा द्वारा सर्व सम्मति से स्वीकार किये जायंगे।

***श्री. एच.वी. पातस्कर** (बम्बई: जनरल): श्रीमान् जी, मैं एक बात का स्पष्टीकरण चाहूंगा। वाक्यखण्ड में दिया गया है ''स्कूल में जाने वाले किसी व्यक्ति को''। आरम्भ में श्री धुलेकर ने सुझाव रखा था कि इस शब्द ''स्कूल'' के स्थान में ''शिक्षण संस्थायें'' रखा जाये। जैसा कि मैं समझता हूं ''स्कूल'' शब्द का व्यापक रूप में प्रयोग किया गया है जिससे किसी भी शिक्षा देने वाली संस्था का बोध हो सकता है, परन्तु यदि यह विचार है कि हम कालेजों को अलग रख रहे हैं—वैसे तो वह भी एक प्रकार के स्कूल ही हैं जहां शिक्षा दी जाती है—तो मैं समझता हूं कि इसका आशय यह होगा कि सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों में आप धार्मिक शिक्षा को अनिवार्य नहीं कर सकते हैं, परन्तु यदि हम ''स्कूल'' शब्द का संकुचित रूप में प्रयोग करें तो कालेजों में आप उसे अनिवार्य कर सकते हैं। बम्बई नगर के कुछ कालेजों से मैं परिचित हूं जिनमें कुछ काल पूर्व धार्मिक शिक्षा अनिवार्य थी। अत: मैं आशा करता हूं कि माननीय प्रस्तावक महोदय उत्तर देते समय इस बात को स्पष्ट करेंगे।

*__अध्यक्षः__ मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रस्ताव तथा संशोधन पर और कोई व्यक्ति बोलना नहीं चाहता है। क्या सरदार वल्लभभाई पटेल उत्तर देंगे?

(मि. बी. पोकर साहब बहादुर खड़े हुये।)

*__अध्यक्षः__ अच्छा, आप बोलना चाहते हैं?

*__श्री बी. पोकर साहब बहादुर__ (मद्रासः मुस्लिम): जी हां, मैं संशोधन 34 के सम्बन्ध में कुछ शब्द कहना चाहता हूं। इस संशोधन का यह उद्देश्य प्रतीत होता है कि देश की समस्त जनता का एक धर्म की ओर एकीकरण करना या इससे कुछ मिलता जुलता आशय। यदि यही आशय है तब तो मैं अवश्य विरोध करूंगा। मैं यह कहूंगा कि सामान्य वाद-विवाद पर हिन्दुस्तानी में दिये गये पूर्व वक्तव्य में कुछ ऐसा ही सुझाव रखा गया था। वास्तव में मैं उसका अनुसरण नहीं कर सका और मुझे उस पर विचार करने का अधिकार नहीं है। परन्तु सामान्यतया मैं यह कहूंगा कि समस्त धर्मों के एकीकरण करने का या सरकारी स्कूलों में ऐसी शिक्षा देने का, जिसका आशय धर्म के एकीकरण से हो, प्रयत्न करना मौलिक अधिकारों के अन्य उन वाक्य-खण्डों के सर्वथा विरुद्ध है जिनको हमने स्वीकार कर लिया है। अब, श्रीमान् जी, मैं यह बताना चाहता हूं कि इस संशोधन 34 का स्वीकार करना अन्य वाक्य-खंडों के विरोध में होगा और वह मौलिक अधिकारों के प्रतिकूल होगा जिन पर हम अब तक कार्य करते चले आये हैं, और इस संशोधन का प्रचलन केवल असंतोष ही उत्पन्न नहीं करेगा परन्तु वह उन आधारभूत सिद्धान्तों का लोप करेगा जिन पर इस विधान का निर्माण किया जायेगा। मुझे संशोधन 59 पर कोई आपत्ति नहीं है पर मैं यह बताऊंगा कि यद्यपि राज्य द्वारा संचालित स्कूलों में साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा न दी जाये फिर भी स्कूल की विभिन्न कक्षाओं के लिये जो पाठ्यपुस्तकें निर्धारित की जाती हैं उन सबमें हम यह देखते हैं कि बहुत से धार्मिक विषयों का समावेश किया जाता है जो कि हिन्दू धर्म या अन्य किसी धर्म से सम्बन्ध रखते हैं। मैं यह कहना चाहूंगा कि ऐसे विषयों को स्थान दिया जाये जो किसी धार्मिक विचार के समावेश किये बिना केवल नैतिक पहलुओं से सम्बन्ध रखते हैं, यदि उनको पाठ्यपुस्तकों में स्थान दिया ही जाता है तो वे सब धर्मों के समान रूप में होने चाहिये न कि केवल एक ही विशेष धर्म से।

इसलिये मैं इस संशोधन 34 का विरोध करूंगा और मूल वाक्य-खण्ड का उसी रूप में समर्थन करूंगा, लेकिन मैं यह कहूंगा कि ऐसी अनेकों शिक्षण संस्थायें

[मि. बी. पोकर साहब बहादुर]

हैं जो किसी विशेष अल्पसंख्यकों अथवा धार्मिक अल्पसंख्यकों की उन्नति के लिये हैं, क्योंकि शिक्षा में वे पिछड़े हुये हैं। मैं निवेदन करता हूं कि ऐसी शिक्षण संस्थाओं पर इस वाक्य-खण्ड का कोई प्रभाव न हो।

***श्री महबूब अली बेग साहब बहादुर** (मद्रासः मुस्लिम): यह एक महत्वपूर्ण विषय है और मैं मूल प्रस्ताव को तरजीह दूंगा अर्थात् जैसा कि समिति द्वारा बनाया गया है। मैं संशोधन 59 की प्रस्ताविका महोदया श्रीमती रेणुका रे से पूर्णतया सहमत हूं जिनका उद्देश्य यह है कि पार्थिव शिक्षा हो जिस पर किसी प्रकार की धार्मिक या आध्यात्मिक पूजा या शिक्षा का प्रभाव न हो और यही उद्देश्य होना चाहिये। दूसरी सदस्या द्वारा प्रेषित संशोधन कुछ विवादास्पद है। बच्चे को किस प्रकार की बुनियादी शिक्षा दी जाये यह अपने-अपने विचारों का विषय है और इससे वाद-विवाद बढ़ जायेगा। अतः श्रीमान् जी, संशोधन 34 पर कोई भी विचार नहीं किया जा सकता है। वह लाभ की अपेक्षा अधिक हानि करेगा। क्योंकि तुलनात्मक धर्म के प्रारम्भिक ज्ञान की व्याख्या करना बड़ा कठिन है। जैसा कि मैंने कहा है, मैं सामान्यतः श्रीमती रेणुका रे के संशोधन का वहां तक समर्थन करता हूं जहां तक कि उसका यह लक्ष्य है कि किसी सरकारी स्कूल में धार्मिक शिक्षा न हो, वह अन्य प्रमाणित तथा सहायता प्राप्त स्कूलों में धार्मिक शिक्षा देने के विरोध में नहीं हैं। श्रीमती रेणुका रे के संशोधन से वही उद्देश्य न हो। इस बात को रखते हुये कमेटी द्वारा बनाया गया मूल प्रस्ताव बहुत ठोस है। ऐसा हो सकता है कि कुछ ऐसी संस्थायें हों जिनमें धार्मिक शिक्षा दी जाती हो और कुछ सरकारी सहायता मिलती हो, परन्तु यदि इस प्रकार की शिक्षा ग्रहण करना छात्र के लिये अनिवार्य नहीं है तो इसमें कोई हानि नहीं है। वह रह सकता है। अतः श्रीमान् जी, मैं समझता हूं कि कमेटी द्वारा संशोधित रूप में रखा गया वाक्य-खंड श्रेष्ठतर है, और मैं उसका समर्थन करता हूं।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (आसामः जनरल): अध्यक्ष महोदय, माननीय सदस्या श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी द्वारा प्रेषित प्रस्ताव का हार्दिक समर्थन करने के लिये मैं खड़ा होता हूं। प्रस्ताविका के व्यक्तित्व ने मुझे ऐसा करने के लिये प्रेरित नहीं किया है वरन् मैं समझता हूं कि दोनों प्रस्तावों को साथ-साथ लेते हुये जो प्रस्ताव श्रीमती बनर्जी द्वारा पेश किया गया है वह हमारे पार्थिव शिक्षा के आदर्श की प्राप्ति के अधिक निकट है। मेरी माननीया मित्र श्रीमती रेणुका रे ने माननीय सरदार पटेल से जोरदार अपील की है और मुझे विश्वास है कि वे दोनों संशोधनों में

से किसी को पसन्द करने की स्थिति का उपभोग नहीं कर रहे हैं परन्तु जैसा कि प्रसिद्ध है वे किसी भी कठिनाई को झेलने की क्षमता रखते हैं तथा मुझे विश्वास है कि वे इस कठिनाई को भी पार करेंगे और श्रीमती रेणुका रे की अपील का आदर करेंगे तथा श्रीमती बनर्जी के प्रस्ताव को स्वीकार करेंगे।

***श्री के.एम. मुंशीः** अध्यक्ष महोदय, इस मौलिक अधिकार के सम्बन्ध में मेरा पहला प्रस्ताव यह है कि ''पब्लिक फण्ड्स'' शब्दों के स्थान में वास्तव में ''स्टेट फण्ड्स'' होना चाहिये। श्री कामठ का प्रस्ताव प्रत्यक्ष रूप से दृष्टि से ओझल हो गया। जब कि मूल मौलिक अधिकार स्वीकार किया गया था जहां कहीं ''पब्लिक फण्ड्स'' शब्द रखे गये थे उनके स्थान में ''स्टेट फण्ड्स'' रख दिये गये थे। उद्देश्य यह था कि जनता से चन्दे द्वारा एकत्रित किये गये धन को ''स्टेट फण्ड्स'' के रूप में नहीं समझना चाहिये। इसलिये मैं प्रस्तावक महोदय से प्रार्थना करूंगा कि इस मौखिक परिवर्तन को स्वीकार किया जाये। मेरा दूसरा निवेदन श्रीमती बनर्जी द्वारा पेश किये गये संशोधन के सम्बन्ध में है। उद्देश्य चाहे कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो, सभा को यह स्मरण रखना चाहिये कि यह न्यायालय जाने वाला अधिकार है, अतः इसके एक-एक शब्द पर विभिन्न उच्च न्यायालयों तथा अन्त में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा वाद-विवाद होगा, विचार होगा तथा निर्णय होगा। यदि श्रीमती बनर्जी का संशोधन न्यायालय जाने वाले अधिकार के समान कानून बन जाता है तो यह स्थिति होगी। एक स्कूल है जिसमें धार्मिक शिक्षा दी जाती है। सबसे पहला प्रश्न किसी मित्र अथवा उत्साही व्यक्ति द्वारा उठाया जायेगा वह यह होगा–''क्या वह तुलनात्मक धर्म के आरम्भिक ज्ञान के रूप में है?'' अतः मामला सर्वोच्च न्यायालय में ले जाया जायेगा, और 11 कुशल न्यायाधीशों को यह निर्णय करना होगा कि जो शिक्षा दी जाती है वह किसी विशेष धर्म की है अथवा तुलनात्मक धर्म की प्रारम्भिक शिक्षा है। इसके निर्णय करने के पश्चात् दूसरा प्रश्न जिस पर विद्वान न्यायाधीशों को अपना ध्यान आकर्षित करना होगा यह होगा कि यह प्रारम्भिक ज्ञान छात्रों की बुद्धि को परिमार्जित करने के लिये है या संकुचित करने के लिये। तत्पश्चात् उन्हें प्रत्येक शब्द के क्षेत्र पर निर्णय देना होगा, क्योंकि यह न्यायालय जाने वाला अधिकार है जिस पर उनका निर्णय होना चाहिये। मुझे इसमें संदेह नहीं कि मेरे हमपेशे सदस्य इस बात पर यथेष्ट प्रकाश डालने में खुश होंगे कि इस प्रकार के न्यायालय जाने वाला अधिकार क्या है तथा क्या नहीं है।

एक सदस्यः ''फीस के लिये''।

***श्री के.एम. मुंशी:** हां, बहुत अच्छी फीस के लिये।

फिर उन्हें यह विचार करना होगा कि किसी विशेष प्रकार की शिक्षा साम्प्रदायिक पृथकता तो उत्पन्न नहीं करती है। इस सबके लिये मेरी समझ से काफी मुकदमेबाजी की आवश्यकता होगी, इसके पूर्व कि इस अधिकार पर अन्तिम निर्णय किया जाये।

***एक माननीय सदस्य:** क्या मैं माननीय सदस्य से यह पूछ सकता हूं कि क्या विश्वविद्यालयों तथा शिक्षण केन्द्रों में पढ़ाया जाने वाला तुलनात्मक धर्म बुद्धि को संकुचित करने वाला नहीं है और क्या छात्रों की बुद्धि उससे दूषित नहीं होती है?

***श्री के.एम. मुंशी:** यह वैधानिक आपत्ति नहीं है, वरन् एक प्रश्न है। वहां वकीलों का कार्यालय इस बात पर विचार करने के लिये नहीं है कि यह तुलनात्मक ज्ञान या प्रारम्भिक तुलनात्मक ज्ञान जो कि शिक्षण संस्थाओं में पढ़ाया जाता है, छात्रों की बुद्धि को परिमार्जित करता है या नहीं। ये निर्णय मय भारतीय रियासतों के सारे देश के लिये होंगे। परन्तु ये सब शब्द इस प्रकार के हैं कि इनकी न्यायोचित भाषा में व्याख्या नहीं की जा सकती, जब तक कि दर्जनों निर्णय न हों तथा लाखों रुपया खर्च न हो। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि यह उस सिद्धांत के सदृश अधिक है जिसको व्यापक विवेकाश्रित विज्ञान कहा जा सकता है तथा इसको कानून द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता और न्यायालय जाने योग्य तथा न्यायालय न जाने योग्य अधिकारों में निहित किया गया है। इस प्रकार के प्रयत्न करने से काफी गड़बड़ी होगी। यदि यह निर्धारित करने का विचार ही है कि धार्मिक शिक्षा इस प्रकार की न हो जो कि पृथकत्व उत्पन्न करे तो उसके लिये किसी श्रेष्ठतर वाक्यशैली का अनुसरण करना होगा।

उसके औचित्य पर मैं केवल एक शब्द कहना चाहूंगा और वह यह है: साम्प्रदायिक शिक्षण संस्थायें भी बहुधा धार्मिक शिक्षा देती हैं। वे ऐसा इसलिए नहीं करती हैं कि विद्यार्थियों को तुलनात्मक विज्ञान का सामान्य ज्ञान हो, वरन् केवल यह देखने को कि विद्यार्थियों को जो कि विशेष मत के सदस्य हैं उस मत की शिक्षा दी जाये और व्यवहार के रूप में मैं सभा को यह विश्वास दिला दूं कि यदि यह ''न्यायालय जाने वाले अधिकार'' वहां रहे भी तो इससे कोई अन्तर नहीं होगा। मान लीजिये कि किसी विशेष मत का कोई स्कूल है जहां कि कोई विशेष मत सिखाया जाता है, क्या कोई उस संस्था को अपने विद्यार्थियों को तुलनात्मक

विज्ञान की शिक्षा देने के लिए विवश कर सकता है? सबसे पहले तो उस व्यवस्था में विद्यार्थी विज्ञान को समझ ही नहीं सकते। परन्तु आप उनको विवश भी करें तो स्कूल, शिक्षक और यहां तक कि लेखक भी इस प्रकार की योजना करेंगे कि तुलनात्मक धर्म के अध्ययन करने के अंत में विद्यार्थी इसी परिणाम पर पहुंचेगा कि वही धर्म सबसे अच्छा है। मैं एक प्रत्यक्ष उदाहरण जानता हूं। एक साम्प्रदायिक स्कूल की कक्षाओं में उस सम्प्रदाय की धार्मिक पुस्तक पढ़ाई जाती थी परन्तु इसके साथ-साथ धर्म के तुलनात्मक अध्ययन पर व्याख्यान भी दिये जाते थे। उसके अंत में यह शिक्षा दी जाती थी कि उनका मत सबसे उत्तम है। इस संशोधन से उस परिस्थिति को संभाला नहीं जा सकेगा, वह उसको और भी खराब कर देगा। मैं निवेदन करता हूं कि इस सिद्धांत को वाक्य-खंड की पदावली के अंतर्गत न्यायालय जाने वाले अधिकार के रूप में लाना असंभव है। यदि इस संशोधन को स्वीकार किया जाता है तो इससे बड़ी कठिनाई होगी और यह अप्रयुक्त कानून के समान रहेगा।

इसके बाद मैं श्रीमती रे के संशोधन को लेता हूं। जहां तक उसके प्रथम भाग का सम्बन्ध है अर्थात् ''राज्य द्वारा संचालित स्कूलों में कोई साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा नहीं दी जायेगी,'' जहां तक संघ का सम्बन्ध है वह पार्थिक तथा प्रजातंत्रात्मक राज्य होगा। जहां तक इकाइयों का सम्बंध है मैं नहीं समझता हूं कि प्रांत धर्माश्रित राज्य ग्रहण करेंगे। परन्तु वर्तमान समय में यह मौलिक अधिकार केवल प्रांतों पर ही प्रभाव नहीं डालेगा वरन् रियासतों पर भी प्रभाव डालेगा। यदि भारतीय रियासतें इसे स्वीकार करती हैं तो यह कठिन विषय है, परन्तु मेरी सम्मति से जब तक इस विषय पर हम सब सर्व-सम्मत न हों तब तक भारत की आधुनिक परिस्थिति में इस सिद्धांत का निर्धारण ठीक नहीं होगा।

दूसरे वाक्य के सम्बन्ध में मैं यह स्वीकार करता हूं कि परामर्शदातृ-समिति द्वारा स्वीकृत वाक्य-खंड की वाक्यशैली में सुधार हुआ है और इस कारण ''सरकारी कोष द्वारा संचालित अथवा सहायता प्राप्त किसी स्कूल में जाने वाले किसी व्यक्ति को ....'' मूल वाक्य-खंड में ''संचालित'' शब्द का ''पूर्ण संचालित'' के रूप में बोध होता है। अत: श्रीमती रे का संशोधन इस बात को प्रमाणित करेगा। यदि उसका पूर्ण रूप से संचालन किया जाता है तो वह भिन्न बात है। यह वाक्य-खंड केवल उससे सम्बंध रखता है जो राज्य द्वारा सहायता प्राप्त संस्थायें कही जाती हैं। इसलिये उनके शब्द ''राज्य द्वारा सहायता प्राप्त अथवा संचालित किसी भी स्कूल या शिक्षण संस्थाओं में जाने वाले किसी व्यक्ति को'' एक श्रेष्ठतर

[श्री के.एम. मुंशी]

वाक्यशैली का निर्माण करते हैं। मैं निवेदन करता हूं कि उनको स्वीकार किया जाये। वह इस प्रकार है: ''सरकारी कोष द्वारा 'संचालित' '' इस शब्द के स्थान में 'प्रमाणित' रख दिया जाये। वह इस प्रकार हो जायेगा: ''सरकारी कोष द्वारा प्रमाणित अथवा सहायता प्राप्त किसी स्कूल में जाने वाले किसी व्यक्ति को।'' इस प्रकार वह स्वयमेव ही रियासतों की संस्थाओं को अपने विस्तार के बाहर कर देता है जिनकी रियासत द्वारा पूर्ण आर्थिक व्यवस्था की जाती है।

अब ''शिक्षण संस्थाओं'' शब्दों के सम्बंध में मैं निवेदन करता हूं कि वे बहुत अधिक सीमा तक ''स्कूल'' शब्द के अर्थ को बढ़ा देते हैं। यदि इन शब्दों का प्रयोग करने दिया जाये तो उनसे गंभीर कठिनाइयां उत्पन्न हो जायेंगी। धार्मिक शिक्षा देने वाली पाठशालाऐं तथा मदरसे हो सकते हैं। धार्मिक शिक्षा देना उनका प्रमुख उद्देश्य है और वर्तमान समय में हर जगह इनकी राज्य द्वारा सहायता की जाती है। किसी भी ऐसे कठोर मौलिक अधिकार का यह प्रभाव होगा कि ऐसी हजारों शिक्षण संस्थाओं का लोप हो जायेगा।

***श्री के. संतानम:** क्या मैं जान सकता हूं कि इन संस्थाओं का क्यों लोप हो जायेगा?

***श्री के.एम. मुंशी:** बात यह है कि ऐसे स्कूल हैं जो धार्मिक शिक्षा देने के आशय के लिये हैं और उनमें जाने वाले प्रत्येक विधार्थी को धार्मिक शिक्षा दी जाती है। पाठशालायें वास्तव में शिक्षण संस्थायें नहीं हैं। इसलिये ''स्कूल'' शब्द स्पष्ट अर्थ रखता है। वह अर्थ यह है कि स्कूल तथा प्राइमरी और सेंकिंडरी संस्थायें जहां शिक्षा दी जाती है और न कि विशिष्ट प्रकार की शिक्षा। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि वाक्य-खंड 16 जिस रूप में पेश किया गया है, सही विचार का प्रतिपादन करता है यदि दो शब्दों को बदल दिया जाये तो, ''संचालित'' के स्थान में ''प्रमाणित'' और ''पब्लिक फण्ड्स'' के स्थान में ''स्टेट फण्ड्स'' रखें।

***श्री देवीप्रसाद खेतान:** मेरे विचार से ''आउट ऑफ'' को ''बाई'' से बदलना होगा। तब वह इस प्रकार पढ़ा जायेगा: ''नो परसन अटेंडिंग ए स्कूल रिकग्नाइज्ड बाइ दी स्टेट।''

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** श्रीमान् जी, मै श्री मुंशी द्वारा सुझाये गये परिवर्तन को स्वीकार करने के लिये उद्यत हूं कि वाक्य-खंड में ''संचालित'' शब्द के स्थान में हम ''प्रमाणित'' शब्द रखें और ''पब्लिक फण्ड्स'' की जगह हम ''स्टेट फण्ड्स'' रखें।

इस वाक्य-खंड पर विचार करने के सम्बंध में मुझे केवल यह कहना है कि प्रत्येक व्यक्ति को यह याद रखना चाहिये कि यह न्यायालय जाने वाले अधिकारों में से है और हमें मस्विदा बनाने में तथा वाक्य-खंडों के संशोधन करने में इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि यह वाक्य-खंड केवल ब्रिटिश भारत के लिये नहीं है, वरन् समस्त भारतीय संघ के लिये है, और इन वाक्य-खंडों के ग्रहण करने में हमें इस बात पर विचार करना है कि वह इस प्रकार का न हो कि बाद में वह मुकदमेबाजी की भरमार कर दे और अनकों कठिनाइयां उत्पन्न कर दे। अतः ये मुख्यतया सामान्य प्रस्ताव होने चाहिये जिनके अंतर्गत विशेष मामले न्यायालय को जायेंगे और इसीलिये इन परिवर्तनों के साथ-साथ जिनको मैं स्वीकार कर रहा हूं, मैं प्रस्ताव को सभा की स्वीकृति के लिये पेश कर रहा हूं।

***डॉ. एस. राधाकृष्णन्** (संयुक्त प्रांतः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं एक स्पष्टीकरण चाहूंगा। क्या यह पद ''प्रमाणित अथवा सहायता प्राप्त'' उन संस्थाओं को शामिल करता है कि नहीं जिनका संचालन, शासन तथा जिन पर व्यय पूर्णतया राज्य द्वारा किया जाता है?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** वह शामिल करता है।

श्री एच.वी. पातस्करः क्या मैं जान सकता हूं कि क्या यह विचार है कि कालेजों और उच्चतर संस्थाओं को छोड़ दिया जाये, जिनमें कि धार्मिक शिक्षा अनिवार्य की जा सकती है, अथवा क्या इसका प्रयोग व्यापक रूप में किसी भी शिक्षण संस्था के लिये किया जायेगा?

***अध्यक्षः** श्री पातस्कर जानना चाहते हैं कि ''स्कूल'' शब्द में कालेज शामिल किया जाता है या नहीं?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** वह कालेजों को शामिल नहीं करता है।

***अध्यक्षः** क्या मैं संशोधन पर वोट लूं? पहला संशोधन श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी का है:

''वाक्यखंड 16 की व्याख्या के रूप में निम्न पैरा जोड़ दिया जाये:

'छात्रों की बुद्धि को परिमार्जित करने के लिये न कि ऐसी बनाने के लिये कि जिसमें साम्प्रदायिक पृथकत्व को प्रोत्साहन मिले, सरकारी सहायता

[अध्यक्ष]

पाने वाले शिक्षणालयों में दी जाने वाली समस्त धार्मिक शिक्षा धर्मों के तुलनात्मक प्राथमिक ज्ञान के रूप में होगी'।''

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** दूसरा संशोधन श्रीमती रेणुका रे का है।

''वाक्य खंड 16 के स्थान में निम्न रखा जाये:

'राज्य द्वारा संचालित स्कूलों में कोई साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा नहीं दी जायेगी। राज्य द्वारा सहायता प्राप्त अथवा प्रमाणित किसी भी स्कूल या शिक्षण संस्थाओं में जाने वाले किसी व्यक्ति को ऐसी किसी धार्मिक शिक्षा में उपस्थित होने के लिये बाध्य नहीं किया जायेगा'।''

***श्री के.एम. मुंशीः** मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या माननीय प्रस्ताविका महोदया ने ''प्रमाणित'' शब्द को ''संचालित'' शब्द के स्थान में स्वीकार कर लिया है?

***अध्यक्षः** अर्थात् मूल प्रस्ताव में ''राज्य द्वारा संचालित''। मैं समझता हूं उन्होंने स्वीकार कर लिया है।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रांतः जनरल): मैं संशोधन का ठीक अर्थ नहीं समझ सका। क्या भी वल्लभभाई पटेल द्वारा स्वीकृति का यह अर्थ है कि वाक्य-खंड 16 उन स्कूलों के सम्बंध का नहीं है, जिनका राज्य द्वारा संचालन होता है, वरन् केवल उन स्कूलों के लिये है जो राज्य द्वारा प्रमाणित हैं अथवा राज्य-कोष से सहायता पाते हैं?

***अध्यक्षः** श्रीमती रेणुका रे अपना प्रस्ताव वापस लेने के लिये कहती हैं। मैं मूल प्रस्ताव को रखता हूं।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः** सरदार वल्लभभाई पटेल ने कहा था कि वे श्री मुन्शी द्वारा पेश किये गये संशोधनों को स्वीकार करेंगे और मैं विश्वास

करता हूं कि यदि इन संशोधनों को स्वीकार किया जाता है तो वाक्य-खंड 16 इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

> ''राज्य द्वारा प्रमाणित अथवा राजकोष द्वारा सहायता पाने वाले किसी स्कूल में जाने वाले किसी व्यक्ति को बाध्य नहीं किया जायेगा इत्यादि, इत्यादि।''

क्या यह सही है?

***अध्यक्षः** मैं उसी प्रस्ताव को, जैसा कि आपने अभी पढ़ा है, सभा के सामने ला रहा हूं।

***श्री के.एम. मुन्शीः** ''राजकोष'' के स्थान में ''राज्य द्वारा प्रमाणित अथवा सहायता पाने वाले'' श्रेष्ठतर रहेगा, क्योंकि राजकोष द्वारा प्रमाणित नहीं किया जा सकता। वह केवल मस्विदा बनाने का विषय है।

***अध्यक्षः** वाक्य इस प्रकार पढ़ा जायेगा: ''राज्य द्वारा प्रमाणित अथवा राजकोष द्वारा सहायता पाने वाले किसी स्कूल में जाने वाले इत्यादि।''

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः** अर्थात इस वाक्य-खंड के अन्तर्गत उन स्कूलों को नहीं रखा गया है जिनका संचालन राज्य द्वारा होता है। यह एक अनोखी पद-रचना है और मैं चाहूंगा कि इस वाक्य-खंड के अर्थ की स्पष्ट व्याख्या की जाये। यदि सरकार की यह इच्छा है कि राज्य द्वारा साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा राज्य के स्कूलों में दी जाये तो उसको स्पष्ट करना चाहिये, जिससे हम विचार कर सकें और यह निश्चय कर सकें कि हम इस वाक्य-खंड पर किस प्रकार वोट दें।

***अध्यक्षः** यदि हम निम्न प्रकार से वाक्य-खंड को रखें तो कठिनाई दूर हो जायेगी: ''राज्य द्वारा प्रमाणित अथवा संचालित या राजकोष द्वारा सहायता प्राप्त किसी स्कूल में जाने वाले किसी व्यक्ति इत्यादि,'' क्या यह ठीक होगा?

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः** मेरे ख्याल से इससे कठिनाई दूर हो जायेगी।

***डॉ. एस. राधाकृष्णन्ः** यदि राज्य द्वारा संचालित संस्थाओं में साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा दी जाने लगी तो हमारी उस घोषणा का क्या होगा कि राज्य पार्थिव

[डा. एस. राधाकृष्णन्]

संस्था है जो किसी भी साम्प्रदायिक शिक्षा का प्रचार नहीं करेगी? यह वास्तविक प्रश्न है। हम प्रथम सिद्धान्त पर दृढ़ हैं कि राज्य किसी प्रकार के धर्म से सम्बन्धित नहीं रहेगा तथा धर्म पर निराश्रित संस्था रहेगा। दूसरे शब्दों में हमारा एक अनेकों धर्म वाला राज्य है, अतः हमको निष्पक्ष होना पड़ेगा और विभिन्न धर्मों के साथ समान व्यवहार करना होगा, परन्तु यदि राज्य द्वारा संचालित संस्थाओं को अथवा राज्य द्वारा शासित, नियंत्रित तथा अर्ध-व्यवस्थित संस्थाओं को साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा देने दिया जाता है, तो हम अपने विधान के प्रथम सिद्धान्त का उल्लंघन कर रहे हैं। दूसरी ओर यदि हम यह कहते हैं कि सहायता प्राप्त संस्थायें धार्मिक शिक्षा दे सकती हैं तो वहां हम यह कहकर धार्मिक चैतन्यता के उल्लंघन के विरुद्ध जनता के हितों की रक्षा करते हैं कि उनकी इच्छा के विरुद्ध धार्मिक कक्षाओं में उपस्थित होने के लिये उनको बाध्य नहीं किया जायेगा। अतः राज्य द्वारा संचालित संस्थाओं तथा राजकोष द्वारा केवल सहायता पाने वाली संस्थाओं में आपको कुछ अन्तर रखना पड़ेगा। जहां तक सरकारी संस्थाओं का सम्बन्ध है हम साम्प्रदायिक ढंग की किसी धार्मिक शिक्षा देने की आज्ञा नहीं दे सकते हैं। जहां तक दूसरी प्रकार की संस्थाओं का सम्बन्ध है आप आज्ञा दे सकते हैं, बशर्ते कि आप सम्बन्धित अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा कर सकें तो इस विषय को हमें स्वयं पूर्ण स्पष्ट कर देना है।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:__ श्रीमान् जी, कुछ गड़बडी है। जहां तक राज्य द्वारा पूर्णतया संचालित किसी स्कूल से सम्बन्ध है हम उन मौलिक अधिकारों को लागू करके कुछ नहीं कर सकते हैं जिनके लिये न्यायालय ले जाने का इलाज बता दिया है। क्योंकि यह केवल ब्रिटिश भारत तक ही सीमित नहीं है, यह समस्त भारत अर्थात् भारतीय संघ को लेता है। अतः कोई प्रादेशिक इकाई जो कि रियासत है, हैदराबाद का उदाहरण ले लीजिये, पूर्णतया अपना स्कूल संचालन करना चाहती है जिसमें वह धार्मिक शिक्षा रखना चाहती है, वह बाध्य कर सकती है, परंतु हम उसका यह इलाज नहीं कर सकते जिसके द्वारा कोई व्यक्ति न्यायालय जा सके और कहे ''आप यहां धार्मिक शिक्षा नहीं दे सकते हैं''। मैं समझता हूं कि इस अवस्था में अभी यह उचित नहीं है। इसलिये राजकोष द्वारा प्रमाणित अथवा सहायता प्राप्त शब्द रखे गये हैं।

*__श्री एम.एस. अणे:__ श्रीमान् जी, मेरा एक संदेह है। ''राज्य'' शब्द का अर्थ केवल संघ से ही है या प्रादेशिक इकाइयों से भी है?

***अध्यक्षः** वे जानना चाहते हैं कि ''राज्य'' में प्रादेशिक इकाइयां निहित हैं अथवा नहीं?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** ''राज्य'' में प्रादेशिक इकाइयां निहित हैं।

***श्री आर.वी. धुलेकरः** सूचना प्राप्त करने के आशय से श्रीमान् जी, मैं यह जानना चाहूंगा कि शब्द ''प्रमाणित तथा सहायता प्राप्त'' हैं या ''प्रमाणित अथवा सहायता प्राप्त'' हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** ''अथवा'' शब्द वहां है।

***अध्यक्षः** राज्य द्वारा प्रमाणित अथवा राज्य-कोष द्वारा सहायता पाने वाले। यह या वह?

***श्री आर.वी. धुलेकरः** यदि ''अथवा'' शब्द है तो इसका आशय यह हुआ कि साम्प्रदायिक संस्थायें जो कि गैर सरकारी कोष द्वारा पूर्ण रूप से संचालित की जाती हैं उनको सरकार द्वारा बिल्कुल ही प्रमाणित नहीं किया जायेगा। इसलिये ''अथवा'' शब्द वहां नहीं होना चाहिये। वहां ''तथा'' होना चाहिये। उनको सरकार द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिये तथा आर्थिक सहायता मिलनी चाहिये। यदि वे आर्थिक सहायता प्राप्त करते हैं तो यह नियम लागू होगा। यदि उनका गैर सरकारी कोष द्वारा संचालन किया जाता है तो....

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** यदि उनका गैर सरकारी कोष द्वारा संचालन होता है और यदि उनको राज्य द्वारा प्रमाणित किया गया है तो आप विद्यार्थियों को धार्मिक शिक्षा प्राप्त करने के लिये बाध्य नहीं कर सकते हैं।

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया** (मद्रासः जनरल): श्रीमान् जी, क्या मैं एक कठिनाई बता सकता हूं?

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** कठिनाइयों का अन्त नहीं होगा।

***डॉ. बी. पट्टाभि सीमारमैयाः** यदि आप इसको अस्पष्ट रीति से पास करना चाहते हैं तो कोई कठिनाई नहीं होगी। मैं प्रत्यक्ष प्रयोजन की हानि देखता हूं जिसके लिये संशोधन पेश किया गया है।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** मुझे कोई कठिनाई नहीं दिखाई देती है।

***अध्यक्षः** श्री मुंशी का संशोधन वादविवाद के अन्तर्गत रखा गया था और उसके लिये उचित रूप से सूचना नहीं दी गई थी। इसलिये यह प्रश्न उठा है।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** क्या कठिनाई है?

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैयाः** प्रान्तों अथवा राज्यों में ऐसी कुछ संस्थायें हैं जिनका कुछ दानशील व्यक्ति पूर्ण संचालन करते हैं और वे विद्यार्थियों को कोई धार्मिक शिक्षा देना चाहेंगे। हम उनको (विद्यार्थियों को) स्वतंत्र रखना चाहते हैं। यह सब ठीक है। उद्देश्य यह है कि किसी राजा, रियासत या राज्य से असम्बन्धित गैर सरकारी कोष द्वारा संचालित संस्थाओं की श्रेणी को पृथक रखा जाये। बहुत अच्छा, आपने उनको पृथक कर दिया। अब आपने संस्थाओं की दो श्रेणियां मानी। एक वह जो राज्य द्वारा अप्रमाणित है पर सहायता पाती है; इसके लिये मेरा तर्क नहीं है। लेकिन जब आप यह कहते हैं कि राज्य द्वारा प्रमाणित अथवा सहायता पाने वाले, तो आपने दो प्रकार की संस्थायें मान ली हैं। एक वे हैं जो राज्य द्वारा प्रमाणित हैं। राज्य द्वारा संचालित संस्था प्रामाणिक संस्था है और इस प्रकार वे शामिल हो जाती हैं जबकि उनको पृथक करने का आशय था। फिर तो अनिवार्यता का अधिकार छिन जाता है और वह स्वतंत्रता जो हमने दी है रहती ही नहीं, क्योंकि राज्य द्वारा संचालित संस्था भी प्रमाणित है। जिस समय वह राज्य द्वारा प्रमाणित की जाती है उसी समय जो स्वतंत्रता आपने राज्य द्वारा संचालित संस्थाओं को दी है, वह छिन जाती है। अतः यदि आप राज्य की संस्थाओं की स्वतंत्रता की पुष्टि करना तथा उसे प्रमाणित करना चाहते हैं तो आपको यह कहना चाहिये कि ''राज्य द्वारा प्रमाणित तथा सहायता पाने वाले।'' इससे केवल एक श्रेणी ही रहती है। अन्यथा ''अथवा'' शब्द से प्रयुक्त भाषा में वे संस्थायें आ जाती हैं जिनको आपने पृथक कर दिया है। हममें से प्रत्येक व्यक्ति यह निर्णय करने के लिये, कि इसका क्या अर्थ है, थोड़ा समय ले।

***डॉ. मोहनसिंह मेहता** (उदयपुर): श्रीमान् जी, मुझे बड़ी खुशी हुई जबकि माननीय पंडित कुंजरू ने उस प्रश्न को उठाया। जो व्याख्या की गई है उससे यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया कि जो कुछ हमने समझा वह आशय वास्तव में नहीं था। हमसे अब यह कहा गया है कि रियासत द्वारा संचालित संस्थाओं में धार्मिक

शिक्षा अनिवार्य हो सकती हैं। श्रीमान् जी, यह एक ऐसी स्थिति है जिसके बारे में इस सभा में कुछ लोगों के मनों में कटु भाव उत्पन्न हुये हैं और चूंकि विषय स्पष्ट नहीं है, मैं दृढ़तापूर्वक आग्रह करूंगा कि यह समिति को वापस कर दिया जाये। यदि आप श्रीमती रेणुका रे का प्रथम वाक्य स्वीकार कर लें और मूल प्रस्ताव का शेष उसके साथ रखें तो वह ठीक होगा और तब वह मेरे मित्र प्रोफेसर राधाकृष्णन् द्वारा रखे गये प्रश्न के अनुरूप होगा।

*__श्री के.एम. मुन्शी:__ क्या हम फिर उसी बात पर वाद-विवाद कर रहे हैं? मैं समझता हूं कि हमने उसे स्वीकार कर लिया है।

*__अध्यक्ष:__ कठिनाई यह है कि आपने वाद-विवाद के अन्तर्गत कुछ शब्दों को रखा जिसकी सदस्यों को कोई सूचना नहीं दी थी। प्रस्तावक महोदय ने उनको स्वीकार कर लिया और इसलिये कठिनाई उपस्थित हो गई।

*__डॉ. मोहनसिंह मेहता:__ यह विषय बड़ा महत्वपूर्ण है। कठिनाई बहुत वास्तविक है और मैं चाहता हूं कि प्रस्ताव पर हमारा मत लेने के पूर्व इसको स्पष्ट कर दिया जाये। मैं सभा को यह स्मरण करा दूं कि इस विषय पर शिक्षा विभाग के केन्द्रीय परामर्शदातृ बोर्ड के दो अधिवेशनों में वाद-विवाद हो चुका है और यह ऐसा विषय नहीं है कि जिस पर साधारण विचार किया जाये।

*__माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू:__ श्रीमान जी, क्या मैं डॉ. मोहनसिंह मेहता के सुझाव का जोरदार समर्थन कर संकता हूं? विषय के महत्वपूर्ण होने के विचार से यह वांछनीय है कि इस वाक्य-खण्ड को परामर्शदातृ समिति को वापस कर दिया जाये। मैं इस विषय पर विस्तृत रूप से बात करना नहीं चाहता हूं लेकिन यह बताने के लिये कि यह एक बहुत बड़े महत्व का प्रश्न है, मैं यह कहना चाहता हूं कि यदि हम रियासत को किसी स्कूल में धार्मिक शिक्षा देने देते हैं तो इसका आशय यह है कि हम राज-धर्म के सिद्धान्त को स्वीकार करते हैं तथा यह कि प्रमाणित धर्म के समान कोई वस्तु होगी। श्रीमान जी, जहां तक मुझे याद है कि उन समस्त वर्षो में जिनमें कि राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिये संघर्ष होता रहा, हमने लौकिक राज्य का सिद्धान्त माना। भारतीय जनमत के नेताओं की आरम्भ की पीढ़ी ने वास्तव में आयरलैंड के प्रोटेस्टेंट चर्चो के मिटाने के साधनों का स्वागत किया। तो फिर अपने पूर्व सिद्धान्तों के तदनुरूप हम किस प्रकार इस दशा को ग्रहण कर सकते हैं जिसमें रियासत धार्मिक शिक्षा दे सके और इस प्रकार

[माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू]

राज-धर्म माने जिसकी उसे सब धर्मों से अधिक रक्षा करनी पड़ेगी? इसलिये श्रीमान् जी, मैं श्री मोहनसिंह मेहता के सुझाव का जोरदार समर्थन करता हूं और मैं आशा करता हूं कि सरदार वल्लभभाई पटेल को इसमें कोई आपत्ति नहीं होगी।

ऐसे बहुत से विषय हैं जिन पर अभी तक सभा द्वारा निर्णय नहीं किया गया है। बिल में उनके सम्बन्ध की व्यवस्थायें रखी जायेंगी, वह (बिल) हमारे सामने आयेगा और उस समय हमें उन पर निर्णय करने का अवसर मिलेगा। यदि हम एक और विषय को बाद में वाद-विवाद करने तथा उस पर निर्णय करने के लिये छोड़ दें तो कोई हानि नहीं होगी। प्रश्न के प्रमुख रूप के विचार से जो कि रखा जा चुका है मेरी समझ में यह नितान्त आवश्यक है कि हम उसे जल्दी में आज तय न करें। यदि हम मौलिक सिद्धान्तों का कुछ भी सम्मान करना चाहते हैं तो हमें इसे परामर्शदातृ समिति को वापस कर देना चाहिये।

*__श्री के.एम. मुंशी:__ श्रीमान् जी, यह मान लेना सही नहीं है कि परामर्श दातृ समिति अथवा मूल मौलिक-अधिकार-समिति द्वारा इस विषय पर विचार नहीं किया गया। दो बातें भिन्न-भिन्न हैं। एक बात यह है कि राज्य द्वारा प्रमाणित कोई भी स्कूल ऐसा न हो जिसमें छात्रों को धार्मिक शिक्षा ग्रहण करने के लिये बाध्य किया जाये चाहे उसे (स्कूल को) राज्य द्वारा सहायता मिलती हो अथवा नहीं। यह एक बात है जो इसमें निहित है। ''संचालित'' शब्द के स्थान में ''प्रमाणित'' रखने का कारण यह है कि ऐसे बहुत-से-स्कूल हैं जिनको राज्य द्वारा सहायता नहीं दी जाती है लेकिन फिर भी वे प्रमाणित स्कूल हैं। मैं जानता हूं कि मेरे देश में अनेकों प्रमाणित स्कूल हैं जो कि अनेकों परीक्षाओं के लिये विद्यार्थी भेजते हैं, परन्तु उन्हें राज्य से कुछ भी सहायता नहीं मिलती, लेकिन वे स्कूल तो हैं ही। ''संचालित'' शब्द के स्थान में ''प्रमाणित'' रखने से उद्देश्य यही था कि ऐसे सब स्कूलों को ले लिया जाये जो कि राज्य द्वारा प्रमाणित हैं चाहे उनको राज्य से सहायता मिलती हो या नहीं। जहां तक इन स्कूलों से सम्बन्ध है बात बिल्कुल साधारण है कि वे किसी विद्यार्थी को उसकी इच्छा के विरुद्ध धार्मिक शिक्षा प्राप्त करने के लिये विवश नहीं करेंगे। दूसरी बात जो कि बिल्कुल ही भिन्न है, और जिसका इस वाक्य-खंड से कोई भी सम्बन्ध नहीं है वह है जो कि श्रीमती रेणुका रे के वाक्य में दी गई है कि राज्य द्वारा नियंत्रित, अपनाये हुये तथा संचालित स्कूल में धार्मिक शिक्षा नहीं होगी। ये दो पूर्णतया भिन्न-भिन्न बातें हैं।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः** क्या मैं अपने माननीय मित्र को यह संकेत करूं कि सरदार पटेल ने यह कहा था कि यह वाक्य-खंड जिस रूप में है, दोनों श्रेणियों को शामिल करता है।

***श्री के.एम. मुंशीः** परन्तु धार्मिक शिक्षा का बहिष्कार करने के लिये नहीं। यह केवल विद्यार्थी या उसके माता-पिता के यह कहने के अधिकार को प्रमाणित करता है: ''मेरे लड़के को किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा नहीं दी जायेगी।'' यह केवल उसका एक भाग है। दूसरा भाग बिल्कुल ही भिन्न है। हम दोनों को मिलायें नहीं। राज्य द्वारा संचालित तथा अपनाया हुआ स्कूल विचारपूर्वक धार्मिक शिक्षा दे या न दे; यह बिल्कुल ही भिन्न विषय है।

इस वाक्य-खंड का पूरा उद्देश्य यह नहीं है कि राज्य को धार्मिक स्कूलों के चलाने से रोके, परन्तु इस बात पर जोर देने से है कि प्रत्येक विद्यार्थी को धार्मिक शिक्षा प्राप्त करने के लिये विवश किया जायेगा। यह विषय बार-बार आया और समिति ने सदा यही निर्णय किया कि मौलिक अधिकारों में विरोधमूलक बात को न रखा जाये। यदि विरोधमूलक बात सभा के समक्ष लाई जाती है तो उस पर किसी और समय वाद-विवाद हो सकता है। परन्तु जहां तक इस बात का सम्बन्ध है यह वैसी की वैसी ही है।

***माननीय श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर** (मद्रासः जनरल): राज्य अपनी संस्थाओं को प्रमाणित नहीं करता है। प्रमाणित का विशेष अर्थ है।

***श्री के.एम. मुंशीः** यदि कोई स्कूल किसी संस्था का संचालन करता है और यदि आप उसमें धार्मिक शिक्षा का निषेध करना चाहते हैं तो यह एक पूर्ण स्वतंत्र विषय है। यह इस वाक्य-खंड के अन्तर्गत नहीं आता। यह वाक्य-खंड केवल उन स्कूलों को लेता है जो कि प्रमाणित हैं और जिनको राज्य से सहायता मिलती है। मैं ऐसा कोई कारण नहीं देखता कि जब तक दूसरे भाग पर निर्णय न हो इस भाग को स्थगित रखा जाये। इस दूसरे भाग पर बार-बार वाद-विवाद हुआ और समितियों ने इसे नियम-विरुद्ध घोषित किया। यह कहना सही नहीं है कि न तो मौलिक अधिकार समिति और न परामर्शदातृ समिति ने इस पर विचार किया।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रासः जनरल): इन कठिनाइयों पर विचार करते हुये, जो कि उत्पन्न हो गई हैं और जो कि वास्तविक हैं, यह आवश्यक

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]
है कि इस वाक्य-खण्ड पर और विचार किया जाये। जिस प्रकार से मैं विषय को रखता हूं वह यह है। आपके यहां तीन प्रकार की संस्थायें हैं। पहली वे हैं जो राज्य द्वारा संचालित हैं; दूसरी राज्य द्वारा प्रमाणित; तीसरी राज्य द्वारा सहायता पाने वाली। इस विषय पर समिति ने सामान्य रूप से विचार किया हो और मेरे मित्र श्री मुंशी बिल्कुल ठीक कहते हैं, परन्तु मैं तो व्यक्तिगत रूप से इस तर्क से प्रभावित हुआ हूं कि राज्य के पार्थिव संस्था होने के कारण इस बात के लिये अधिक शक्तिशाली तर्क हैं कि राज्य द्वारा पूर्णतया संचालित संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा क्यों नहीं दी जाये जबकि वह प्रमाणित या कुछ सहायता प्राप्त स्कूलों में दी जाती है। भारतीय रियासतों के सम्बन्ध में कठिनाइयां बताई गई हैं। यदि रियासत किसी विशेष प्रयोजन के लिये किसी संस्था का संचालन करता है तो आप अपवाद कर सकते हैं। उदाहरण के रूप में संस्कृत का ज्ञान प्राप्त करने के लिये या किसी विशेष वर्ग के पंडितों को शिक्षा देने के लिये या इसी प्रकार से अन्य शिक्षा के लिये। परन्तु सामान्यतया राज्य द्वारा संचालित संस्था का आधार अपेक्षाकृत राज्य द्वारा प्रमाणित संस्था अथवा राज्य द्वारा सहायता प्राप्त संस्था से श्रेष्ठतर होना चाहिये। अतः मैं विचार करता हूं कि समस्त विषय पर उन सुझावों के आधार पर जो कि सभा में रखे गये हैं, फिर से विचार किया जाये बनिस्बत इसके कि एक बात को स्वीकार किया जाये, दूसरी बात विचाराधीन रखी जाये और किसी बात को परामर्शदातृ-समिति के पास भेजा जाये।

जो कुछ श्री मुंशी ने कहा उससे भिन्न कथन से मेरा आशय नहीं है, परन्तु कुछ बातें यहां पैदा हो गई हैं। हम उन पर विचार करें, वे महत्वपूर्ण बातें हैं और मैं समझता हूं कि उन पर फिर विचार करने के लिये परामर्शदातृ-समिति को या उस समिति को जो मसविदे के पुनरावलोकन के लिये बनाई गई है, दे दिया जाये और वह यह देखे कि इन विभिन्न वर्गों को समान रूप में लाना सम्भव हो सकता है या नहीं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:** ये कठिनाइयां उपस्थित हो जाती हैं जबकि अन्तिम समय में कुछ सुझावों को स्वीकार करने के लिये दबाव डाला जाता है और फिर बाद में वे ही जो कि सुझाव रखते हैं यह कह देते हैं, ''हमारा आशय यह नहीं था''। इस विषय पर सभा में वाद-विवाद हुआ और वाक्य-खंड परामर्शदातृ-समिति को वापस कर दिया गया। परामर्शदातृ-समिति ने इसके समस्त पहलुओं पर विचार किया और उसको यहां रखा। फिर अन्तिम समय इन परिवर्तनों

पर जोर दिया गया। हमने कहा: ''बहुत अच्छा यदि आप इनको अच्छा समझते हैं तो हम उन्हें स्वीकार करते हैं।'' परामर्शदातृ-समिति के पास भेजने के अलावा यह अधिक उपयुक्त होगा कि इसे दो या तीन व्यक्तियों की समिति के पास भेजा जाये। मेरा सुझाव यह है कि इस छोटे से विषय को पूरी परामर्शदातृ-समिति के पास भेजने के अलावा एक छोटी कमेटी के पास भेज दिया जाये और यदि वे कुछ सुझाव रखते हैं तो उनको यहां अगले अधिवेशन में लाया जा सकता है। मैं समझता हूं कि तीसरी बार परामर्शदातृ-समिति के पास भेजना लाभप्रद नहीं है।

*__श्री के. सन्तानम्:__ हम उस पर शुरू से विचार नहीं करेंगे। उसको मस्विदा बनाने वाली समिति के पास भेज दिया जाये।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:__ यह अच्छा है।

*__अध्यक्ष:__ क्या सभा इसे मस्विदा बनाने वाली समिति के पास भेजना चाहती है?

*__माननीय सदस्यगण:__ जी, हां।

*__मि. तजम्मुल हुसैन__ (बिहार: मुस्लिम): मस्विदा बनाने वाली समिति केवल मस्विदा बनायेगी। हमको सिद्धान्त तय कर लेना चाहिये।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:__ सभा इस बात पर वाद-विवाद नहीं कर सकती है कि मस्विदा बनाने वाली समिति क्या करेगी।

*__माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू:__ श्री पटेल का सुझाव श्रेष्ठतर है। हम इसे एक छोटी समिति के पास भेजें जो अपनी सिफारिशें मस्विदा बनाने वाली समिति के पास भेज सकती है। मैं समझता हूं कि यह सभा के सब सदस्यों के विचारों की पूर्ति करेगा।

*__माननीय श्री हुसैन इमाम__ (बिहार: मुस्लिम): अध्यक्ष द्वारा नियुक्त की गई समिति ठीक रहेगी। वे अपनी सिफारिश मस्विदा बनाने वाली समिति को भेज देंगे।

***अध्यक्षः** यदि सभा की यही इच्छा है तो मुझे कोई चिन्ता नहीं।

(हिन्दी बोलने वाले सदस्य द्वारा बाधा)

मस्विदा बनाने वाली समिति के सदस्य यहां हैं और उन्होंने वाद-विवाद भी सुना है तथा उन्हें इस डिबेट की रिपोर्ट भी मिलेगी। मुझे विश्वास है कि वे सब बातों पर विचार करेंगे और तब उन सब कठिनाइयों को दूर करते हुये जिनको यहां बताया गया है, वे मस्विदा बनायेंगे।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः** श्री पटेल द्वारा दिये गये सुझाव में क्या कोई वास्तविक कठिनाई है?

***अध्यक्षः** सभा ने उसे स्वीकार कर लिया है।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः** मैं समझता हूं कि यदि सरदार पटेल उसे जोरदार ढंग से रखते हैं तो सभा उसे स्वीकार कर लेगी।

***अध्यक्षः** मैं नहीं समझता हूं कि उनके लिये ऐसा करना आवश्यक है। यदि सभा उसे स्वीकार करती है तो उसे मैं स्वीकार करूंगा।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरूः** सरदार वल्लभभाई पटेल को उसे जोरदार ढंग के साथ रखने दीजिये।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** यदि आपकी नियुक्त की गई समिति को यह भेजा जाता है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है और वह समिति उसे मस्विदा बनाने वाली समिति के पास भेज सकती है।

***अध्यक्षः** मैं चार या पांच सदस्य नामजद कर दूंगा जो कि इस विषय में वास्तविक रुचि रखते हो और वे अपनी सिफारिश मस्विदा बनाने वाली समिति को भेज सकते हैं।

***एक माननीय सदस्यः** वह सभा में आना चाहिये।

***अध्यक्षः** केवल अन्तिम रिपोर्ट सभा में आयेगी।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** एक-दो बातें हैं जिनके स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। यदि अगले मद को लेना आवश्यक नहीं है तो हम इन एक या दो विषयों पर वाद-विवाद कर सकते हैं।

***अध्यक्षः** मैं नहीं जानता हूं कि ये विषय क्या हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** उन पर अगले अधिवेशन के पूर्व वाद-विवाद किया जा सकता है।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** उदाहरण के लिये हमें अगले अधिवेशन का समय नियत करना है तथा अन्य बातें हैं। यह अधिक समय नहीं लेगा।

वाक्य-खंड 17

***अध्यक्षः** ''दबाव या अनुचित प्रभाव द्वारा एक धर्म से दूसरे धर्म में परिवर्तन करना कानून द्वारा प्रमाणित नहीं किया जायेगा।''

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** कमेटी ने इस पर वाद-विवाद किया और सभा द्वारा अनेकों अन्य सुझाव रखे गये थे और वाक्य-खंड को समिति के पास वापस भेज दिया गया। इस वाक्य खंड पर, जो कि प्रत्यक्ष सिद्धान्त की व्याख्या करता है, आगे विचार करने पर समिति इस परिणाम पर पहुंची कि इसको मौलिक अधिकार के रूप में शामिल करना आवश्यक नहीं है। वर्तमान कानून के भी यह विरुद्ध है तथा किसी समय भी यह कानून के विरुद्ध हो सकता है।

***अध्यक्षः** क्या किसी व्यक्ति को कुछ कहना है?

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल)**:** यह दुर्भाग्य की बात है कि धर्म का प्रयोग किसी व्यक्ति की आत्मा की रक्षा करने के लिये नहीं किया जाता है, बल्कि समाज को अनेक दलों में विभक्त करने के लिये किया जाता है। अभी हाल में मंत्रिमंडल की घोषणा के पश्चात् और उसके बाद ब्रिटिश सरकार की घोषणा के पश्चात् अनेकों व्यक्तियों का धर्म-परिवर्तन हुआ। यह कहा गया था कि प्रान्तीय सरकारों को अधिकार दे दिये गये हैं जिनके हवाले ये विषय

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

थे। यह संकटप्रद है। पार्थिव राज्य से धर्म का क्या सम्बन्ध है? हमारे अल्पसंख्यक साम्प्रदायिक अल्पसंख्यक हैं जिनके लिये हमने व्यवस्थायें बना दी हैं। क्या आप व्यवस्थापिकाओं में अधिक स्थान प्राप्त करने के लिये संख्या बढ़ाने का अवसर देना चाहते हैं? यही हो रहा है। सब लोगों की यही राय हुई है कि यहां पार्थिव राज्य होना चाहिये, इसलिये हमें एक सम्प्रदाय से दूसरे सम्प्रदाय में परिवर्तन नहीं होने देना चाहिये। मैं इसलिये चाहता हूं कि एक निश्चित मौलिंक अधिकार स्थापित किया जाये कि परिवर्तन नहीं होने दिया जायेगा और यदि इस प्रकार का अवसर उपस्थित हो ही जाये तो उस व्यक्ति को न्यायाधीश के समक्ष होने दीजिये और यह शपथ लेने दीजिये कि वह धर्म-परिवर्तन करना चाहता है। यह एक विषय से परे सुझाव है पर मैं सभा से यह अपील करूंगा कि वह इसके संकटप्रद परिणामों पर विचार करे। बाद में यह बड़ा रूप धारण कर सकता है। मैं चाहूंगा कि इस विषय पर विचार हो और इस प्रश्न को अन्तिम मस्विदे के लिये बाद की बैठकों में विचार करने के लिये वापस किया जाये।

श्री आर.वी. धुलेकरः सभापति जी, मेरी राय यह है कि जैसा इसमें क्लाज 17 रखा गया है वह रहना चाहिये। वर्तमान परिस्थिति में हर प्रकार की कोशिश इस बात की हो रही है कि किसी न किसी तरह से दुबारा इस मुल्क की आबादी को खासतौर से एक पक्ष में बढ़ाया जाये। ताकि फिर इस बात की कोशिश की जाये कि इस मुल्क को दुबारा बांटा जाये। इस भवन में और बाहर इस बात का सबूत मिलता है कि जो लोग यहां पर और इस देश में रहते हैं वह इस देश के बाशिन्दे बनने के लिये तैयार नहीं हैं। जिन लोगों के कारण हमारे देश के टुकड़े हुये हैं अब वह फिर यह चाहते हैं कि इस हिन्दुस्तान के और टुकड़े हो जायें। इसलिये मैं समझता हूं कि वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुये इस धारा को रहने दिया जाये।

बल्कि आवश्यकता इस बात की है और मैं रोजाना सफर करने पर देखता हूं कि स्टेशनों पर, दुकानों पर, होटलों पर और नानबाइयों पर और सैकड़ों स्थानों पर शरणार्थी अपने बच्चों को लेकर इधर-उधर जाते हैं। मगर इन नानबाइयों के आदमी इन स्त्री और बच्चों को बहका ले जाते हैं। इस चीज को रोकने के लिये कानून बनाना चाहिये ताकि उन लोगों को रोका जाये। मैं आपसे प्रार्थना करूंगा कि इस चीज़ के लिये जल्द कदम उठाना चाहिये और लाखों आदमियों को बचाना चाहिये।

मैं समझता हूं कि अब हम इस प्रकार की बातों को नहीं सह सकते हैं। हम पर आक्रमण हो रहे हैं। हम नहीं चाहते हैं कि धीरे-धीरे भारतवर्ष की संख्या

हिन्दूओं की संख्या और दूसरे समाज की संख्या रोजाना कम होती रहे और दस वर्ष के बाद वह यह कहें कि हम तो अलग राष्ट्र हैं। यह अलग-अलग की भावना को हमको कुचल देना चाहिये।

इसलिये मैं प्रार्थना करता हूं कि 16वीं धारा, जैसी एडवाइजरी कमेटी ने रखी है, वह उसमें वैसी ही रखी जाये।

*माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः इस वाद-विवाद को बहुत कम किया जा सकता है; यदि यह मान लिया जाये कि इस बात के औचित्य पर कोई मतभेद नहीं है कि जबरदस्ती किया गया धर्म-परिवर्तन कानून द्वारा प्रमाणित नहीं किया जा सकता है। इस सिद्धांत पर कोई मतभेद नहीं है। प्रश्न केवल यही है कि क्या इस वाक्य-खंड को मौलिक अधिकारों की सूची में रखना आवश्यक है। यदि शासन के अमल में लाने के लिये यह उद्देश्यमूलक है तो इसका स्थान दूसरे भाग में है जो कि न्यायालय न जाने वाले अधिकारों का है। यदि आप इसे आवश्यक समझते हैं तो हम इसे परिशिष्ट के दूसरे भाग में हस्तान्तरित करें क्योंकि यह स्वीकार किया गया है कि देश के कानून में जबरदस्ती धर्म-परिवर्तन कानून के विरुद्ध है। हमने जबरदस्ती शिक्षा देने को भी बन्द कर दिया है और हम कभी भी यह सुझाव नहीं रख रहे हैं कि जबरदस्ती किसी व्यक्ति का अन्य व्यक्ति द्वारा धर्म-परिवर्तन करना प्रमाणित किया जायेगा। लेकिन मान लीजिये कि एक हजार व्यक्तियों का धर्म-परिवर्तन किया जाता है तो इसे नहीं प्रमाणित किया जा सकता है। क्या आप कानून की शरण लेंगे और यह निवेदन करेंगे कि इसे स्वीकार नहीं किया जाये? यह केवल पेचीदगियां पैदा करेगा यह कोई हल उपस्थित नहीं करेगा। परन्तु यदि आप यह चाहते हैं कि दूसरे परिशिष्ट में छटे वाक्य-खंड के पश्चात् इसे सातवें वाक्य-खंड के रूप में रखा जाये तो किसी भी वाद-विवाद का करना अनावश्यक है, आप ऐसा कर सकते हैं। विषय के औचित्य पर कोई मतभेद नहीं है। पर इस दशा में जबरदस्ती धर्म-परिवर्तन के औचित्य की बात करना मूर्खतापूर्ण है, इसका कोई प्रश्न ही नहीं होता।

श्री आर.वी धुलेकरः मैं मंजूर करता हूं, वहां भेज दिया जाये।

माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः वहां भेज देंगे।

(मि. हुसैन इमाम बोलने के लिये मंच के निकट आये।)

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः__ क्या आप बलपूर्वक धर्म-परिवर्तन के पक्ष में हैं?

***माननीय श्री हुसैन इमामः** जी, हां। श्रीमान् जी, मैं कुछ सदस्यों के ढंग पर खेद प्रकट करता हूं जो बिना किसी तुक या तर्क के विवादास्पद विषय रखने के आदी हैं। वह वास्तव में एक व्यर्थ-सा हमला था जो कि पूर्व वक्ता ने बिना नाम बताये मुसलमानों पर किया। मुझे खेद है कि ऐसे वातावरण में जबकि हम मेल करने का प्रयत्न कर रहे हैं, इस प्रकार की बातें कहने देना उस सुन्दर वातावरण में रुकावट तथा हस्तक्षेप करना है।

श्रीमान् जी, जो कुछ मैं निवेदन करने आया हूं वह यह है कि यह ऐसी मौलिक वस्तु है कि इसकी व्यवस्था करने की कोई आवश्यकता नहीं है। कानून के अनुसार दबाव द्वारा किया गया कोई कार्य नाजायेज है। धोखे के आधार पर किया गया कोई कार्य टिक नहीं सकता है। बलपूर्वक धर्म-परिवर्तन करना उच्चतम कोटि का अवांछनीय कार्य है। परन्तु न्यायालय जाने वाले मौलिक अधिकारों में इसकी व्यवस्था करना ठीक नहीं है, जैसा कि सरदार साहब ने स्वयं ही स्वीकार किया है। उसके लिये स्थान, जिसे वह ग्रहण कर सकता है, केवल हाईकोर्ट के इतिहास में है। अनेकों फैसले मौजूद हैं जिनमें यह दिया हुआ है कि धोखे या दबाव के आधार पर किया गया कोई भी काम नाजायेज है। अतः यह न्यायालय जाने योग्य नहीं है और संचार में कोई भी समझदार व्यक्ति इसे ठीक नहीं बता सकता। मैं जोरदार ढंग के साथ यह पक्ष ग्रहण करता हूं कि मौलिक अधिकारों की किसी भी सूची में इसे रखने की आवश्यकता नहीं है।

श्री आर.वी. धुलेकरः मैं पूछना चाहता हूं कि क्या कोई व्याख्यान देने से मुसलमान हुआ है?

***अध्यक्षः** तो मैं इस प्रस्ताव को रखूंगा किः

''इसको मौलिक अधिकारों में रखा जाये।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

वाक्य-खंड 18

***अध्यक्षः** अब हम वाक्य-खंड 18(2) पर आते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** यह अन्तिम वाक्य है कि;

''धर्म, जाति या भाषा में से किसी आधार पर आश्रित किसी अल्पसंख्यक को सरकारी शिक्षणालयों में दाखिल होने के विरुद्ध कोई भेद नहीं बरता

जायेगा और न उनको किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जायेगी।''

यह वाक्य-खंड समिति को वापस सुपुर्द किया गया था और वह इस परिणाम पर पहुंची कि अन्तिम वाक्य अर्थात् ''और न उनको किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जायेगी'' आवश्यक नहीं है, क्योंकि यह वाक्य-खंड 16 में पहले ही आ जाता है जिसको हमने स्वीकार कर लिया है। उसको हटा देने पर, मैं बिना उस विशेष वाक्य के शेष को सभा की स्वीकृति के लिये पेश करता हूं।

***श्री के.टी.एम. अहमद इब्राहीम साहब बहादुर** (मद्रासः मुस्लिम): श्रीमान् जी, मैं पेश करता हूं कि वाक्य खंड 18(2) में ''शिक्षणालयों'' शब्द के पश्चात् निम्न बढ़ा दिया जाये:

''बशर्ते कि यह वाक्य-खंड उन सरकारी शिक्षणालयों में लागू नहीं होगा जो खासकर जनता के किसी विशेष सम्प्रदाय या वर्ग के लाभ के लिये संचालित किये जाते हैं।''

श्रीमान् जी, यह भली प्रकार विदित है कि राज्य द्वारा संचालित ऐसी कुछ संस्थायें हैं, जो कि विशेषतया कुछ सम्प्रदायों के लाभों के लिये हैं, जो शिक्षा में पिछड़े हुये हैं और यदि इस वाक्य-खंड को ऐसी संस्थाओं पर भी लागू किया जाता है तो ऐसी संस्थाओं के स्थापित करने के मूल उद्देश्य में क्षति होगी। इसलिये इस प्रकार की शिक्षण संस्थाओं के, जो खासकर किसी विशेष सम्प्रदाय के लाभ के लिये हैं, स्थापित करने तथा संचालित करने के उद्देश्य में क्षति न हो, यह वाक्य-खंड उन पर लागू न किया जाये। यह बहुत साधारण प्रस्ताव है और मुझे आशा है कि सभा इसे स्वीकार करेगी।

***श्री मोहनलाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्त जनरल): श्रीमान् जी, मैं पेश करता हूं कि निम्न व्यवस्था वाक्य-खण्ड 18(2) में बढ़ा दी जाये:

''बशर्ते कि धार्मिक शिक्षा देने वाली संस्थाओं को कोई सरकारी सहायता नहीं दी जायेगी जब तक कि इन संस्थाओं का पाठ्यक्रम राज्य द्वारा उचित रूप से स्वीकृत नहीं किया जाये।''

[श्री मोहनलाल सक्सेना]

मैं कोई लम्बा वक्तव्य देना नहीं चाहता हूं। यह प्रत्यक्ष है कि यदि कोई संस्था धार्मिक शिक्षा देना चाहती है और सरकारी सहायता प्राप्त करना चाहती है तो यह आवश्यक है कि धार्मिक शिक्षा का पाठ्यक्रम राज्य द्वारा स्वीकृत किया जाये, अन्यथा उसकी सहायता बन्द कर दी जायेगी। हम जानते हैं कि धर्म के नाम पर अनेकों प्रकार की शिक्षायें दी जाती हैं और चूंकि शिशु राष्ट्र की सम्पत्ति हैं, यह आवश्यक है कि सहायता देने के पूर्व राज्य कम से कम धार्मिक शिक्षा के पाठ्यक्रम की स्वीकृति तो करे जो कि उन सरकारी सहायता प्राप्त संस्थाओं में नियत किया जाता है और जिसके अनुसार शिक्षा दी जाती है। इन शब्दों के साथ मैं प्रस्ताव रखता हूं।

***श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी:** मेरा संशोधन वाक्य-खंड 18(2) पर है। वह इस प्रकार है कि:

"'सरकारी' शब्द के पश्चात् 'तथा सरकारी सहायता प्राप्त' जोड़ दिया जाये।"

संशोधन का आशय यह है कि सम्प्रदाय या जाति किसी पर आश्रित किसी अल्पसंख्यक को सरकारी तथा सरकारी सहायता प्राप्त शिक्षणालयों में प्रवेश करने के सम्बन्ध में कोई भेद नहीं बरता जायेगा। बहुत से प्रान्तों में, जैसे संयुक्त-प्रान्त ने यह प्रस्ताव पास कर लिया है कि कोई भी शिक्षण संस्था किसी भी जाति के व्यक्ति को दाखिल करने से केवल इस आधार पर मना नहीं कर सकती कि वे किसी विशेष जाति के हैं चाहे उस संस्था का संचालन कोई एक ही दानी कर रहा हो, जिसने यह विशेषरूप से निश्चय कर दिया हो कि वह संस्था उसकी विशेष जाति के सदस्यों को ही दाखिल करेगी। यदि उस संस्था को सरकारी सहायता मिलती है तो उसे अन्य जातियों के सदस्यों को दाखिल करना पड़ेगा। प्राचीन काल में एंग्लो इण्डियन स्कूलों में यह निर्धारित किया गया था कि यद्यपि ये स्कूल विशिष्टतया एंग्लो इण्डियनों के लिये हैं, 10 प्रतिशत जगहें भारतवासियों को दी जाएंगी। इस सभा द्वारा स्वीकृत अन्तिम रिपोर्ट में वह संख्या 40 प्रतिशत कर दी गई है। श्रीमान् जी, मैं निवेदन करती हूं कि बिना इस संशोधन के यदि इस वाक्य-खंड को मौलिक अधिकारों में रखा जाता है तो यह एक कदम पीछे हटना होगा और बहुत से प्रान्तों को जो आगे बढ़ चुके हैं अपने कदम पीछे हटाने पड़ेंगे। हमारे यहां ऐसी अनेकों संस्थायें हैं जिनका अनेकों परोपकारी व्यक्तियों द्वारा संचालन

किया जाता है, जिन्होंने एक बड़ी धन-राशि इनके चलाने के लिये नियत कर दी है। इस परोपकार की वृत्ति का स्वागत करते हुये जबकि एक सिद्धांत निर्धारित किया जाता है कि यदि किसी संस्था को सरकारी सहायता मिलती है, तो वह अन्य जाति के सदस्यों के दाखिले में न तो भेद रख सकती है और न मना कर सकती है, तो इस सिद्धान्त का पालन करना चाहिये। श्रीमान् जी, हम जानते हैं कि बहुत-से प्रान्तों की प्रान्तीय भावनायें हैं। यदि इस व्यवस्था को मौलिक अधिकार के रूप में रखा जाता है तो मैं निवेदन करती हूं कि वह बड़ा घातक होगा। माननीय प्रस्तावक महोदय ने हमें यह नहीं बताया कि इस वाक्य-खण्ड में से सरकारी सहायता प्राप्त संस्थाओं को खासकर हटाने का क्या कारण है। यदि उन्होंने यह समझा दिया होता तो सम्भव है सभा को विश्वास हो जाता। मैं आशा करती हूं कि समस्त शिक्षा-शास्त्री तथा इस सभा के अन्य सदस्य मेरे संशोधन का समर्थन करेंगे।

***श्री के.एम. मुंशीः** श्रीमान् जी, इस वाक्यखंड 18(2) का क्षेत्र यहीं तक सीमित है कि जहां सरकार की निजी शिक्षण संस्था है, किसी अल्पसंख्यक के साथ भेद नहीं बरता जायेगा। यह किसी सीमा तक इस सिद्धान्त को भी स्वीकार करता है कि राज्य किसी ऐसी संस्था को नहीं अपना सकता जिसमें अल्पसंख्यक का बहिष्कार किया जाता है। वास्तव में किसी सीमा तक इसमें वह विरोधी प्रस्ताव निहित है जिस पर वाक्य-खण्ड 16 में वाद-विवाद हुआ था, अर्थात् कोई अल्पसंख्यक राज्य द्वारा संचालित किसी स्कूल से बहिष्कृत नहीं किया जायेगा। ऐसा होने से उस आशय की पूर्ति हो जाती है जिस पर सदस्यों ने कुछ मिनट पूर्व वाद-विवाद किया था। यह एक अन्तिम सदूरवर्ती सीमा है जहां तक कि मेरे विचार से एक मौलिक अधिकार लागू हो सकता है।

पोकर साहब के संशोधन से तो मैं समझता हूं कि इस मौलिक अधिकार के मूल विषय तथा मूल अर्थ का ही पूर्णतया लोप हो जाता है। अल्पसंख्यक के इस अधिकार से यह आशय है कि बहुसंख्यकों द्वारा नियंत्रित व्यवस्थापिकाओं को अन्य जातियों का बहिष्कार कर अपनी जाति को श्रेय देने से रोका जाये। अतः प्रश्न यह हैः क्या राज्य को अल्पसंख्यकों के स्कूल खोलने की स्वतंत्रता होनी चाहिये? फिर तो इसका मतलब यह होगा कि अल्पसंख्यक प्रजा का एक कृपा-प्राप्त प्रिय भाग है। यह मौलिक अधिकार के मूल आधार का नाश करता है। मैं निवेदन करता हूं कि इसको अस्वीकार करना चाहिये।

दूसरा संशोधन जो मेरे माननीय मित्र श्री मोहनलाल सक्सेना द्वारा पेश किया गया है, वह वास्तव में इस वाक्य-खंड में अप्रासंगिक है। चाहे वह कितना ही

[श्री के.एम. मुन्शी]

अच्छा हो, वह उस मौलिक अधिकार से कोई सम्बन्ध नहीं रखता है जिस पर हम विचार कर रहे हैं। वह कहता है कि ''बशर्ते कि.....कोई सरकारी सहायता नहीं दी जायेगी जब तक कि....पाठ्यक्रम राज्य द्वारा उचित रूप से स्वीकृत नहीं किया जाये।'' यह वाक्य-खंड केवल सरकारी संस्थाओं के लिये है न कि उनके लिये जिनको सरकार से सहायता मिलती है। यह संशोधन सरकारी सहायता प्राप्त संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा के स्वरूप पर नियंत्रण रखने की मांग करता है। अत: यह सभा के समक्ष सामान्य प्रस्ताव के क्षेत्र से बाहर है। अपने मूल विषय में भी वह ''उचित रूप से राज्य द्वारा स्वीकृत'' कहता है। राज्य एक जाति के लिये एक प्रकार की धार्मिक शिक्षा स्वीकार करे तथा दूसरी जाति के लिये उसे स्वीकार न करे। यह उस भेद-भावना का समावेश करता है जो कि अन्य भेद-भावनाओं से अधिक कष्टप्रद होगी। मैं इसलिये निवेदन करता हूं कि सभा द्वारा यह स्वीकार न किया जाये।

इसके बाद श्रीमती बनर्जी का संशोधन है। वह स्वयं वाक्य-खंड से भी अधिक व्यापक है। जैसा कि मैंने बताया था कि वाक्य-खंड 16 तथा 18 वास्तव में अलग-अलग हैं। यह जातियों के सम्बन्ध में है। यह संशोधन, मौलिक अधिकार के माध्यम द्वारा न कि कानून-निर्माण द्वारा और न शासन-व्यवस्था द्वारा इस देश में हजारों संस्थाओं के बन्द करने की मांग करता है। जहां तक मेरे प्रान्त का सम्बन्ध है, मैं केवल एक बात कह सकता हूं। वहां अनेकों हिन्दू स्कूल हैं तथा अनेकों मुस्लिम स्कूल हैं। उनमें से अनेकों दान द्वारा चलाये जाते हैं जो या तो हिन्दू द्वारा या मुसलमान द्वारा दिया जाता है, फिर भी राज्य की शिक्षा सम्बन्धी नीति कांग्रेस के शासन-काल में यह रही कि जहां तक हो सके इन संस्थाओं में किसी छात्र के विरुद्ध शासन सम्बन्धी कार्यवाही करने में कोई भेद-भाव न बरता जाये। जब कभी कोई भेद बरता जाता है तो उस मामले की इन्स्पेक्टर जांच करता है, विशेषकर हरिजनों के सम्बन्ध में; यह बम्बई प्रान्त में सख्ती के साथ बरता जाता है। अब यदि आप इस प्रकार का मौलिक अधिकार रखते हैं तो एक स्कूल जिसमें 1000 छात्र हैं और जो 500 रुपये सरकारी सहायता पाता है, वह सरकारी सहायता प्राप्त स्कूल हो जाता है। एक जाति का ट्रस्ट स्कूल का संचालन करता है और 50 हजार रुपया स्कूल पर खर्च करके 500 रुपया सहायता सरकार से पाता है। परन्तु यकायक सर्वोच्च न्यायालय यह निश्चय करता है कि यह बड़ा अधिकार इस स्कूल पर भी लागू होता है। यह जैसा कि मैंने कहा था कानून-निर्माण द्वारा उस सरकार की शासन-व्यवस्था के जरिये से प्रान्तों में अच्छे प्रकार से किया

जा सकता है जो इन भावनाओं पर विचार करती है और कभी-कभी कुछ शर्तो में गुंजायेश कर देती है। आप इसके लिये मौलिक राज-नियम किस प्रकार रख सकते हैं? आप जरा कलम फेरकर करोड़ों रुपये के ट्रस्ट को किसी अन्य प्रयोजन में कैसे लगा सकते हैं? ऐसा विचार प्रतीत होता है कि विधान में इन दो पंक्तियों के रखने से इस देश की प्रत्येक बात को जनता से परामर्श किये बिना ही बदलना होगा या व्यवस्थापिकाओं को इस पर विचार करने का अवसर दिये बिना उनको बदलना होगा। मैं निवेदन करता हूं कि वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुये, यह बहुत अच्छा है कि इन कामों को जनता को शिक्षित बनाकर साधारण विधि द्वारा किया जाये न कि मौलिक अधिकारों में रखकर। यह वाक्य-खंड निषेधात्मक-सा है कि न संघ और न प्रादेशिक इकाई इस प्रकार की संस्था का संचालन कर सकती है जिनमें अल्पसंख्यकों का बहिष्कार किया जाता है। यदि हम यह प्राप्त कर लें तो हम बहुत उन्नति कर लेंगे और सभा को इतनी उन्नति से सन्तुष्ट रहना चाहिये।

*__माननीय श्री हुसैन इमामः__ सभा के समय में से मैं दो मिनट से अधिक नहीं लूंगा। मैं समझता हूं कि श्रीमती बनर्जी द्वारा प्रेषित संशोधन में कोई गलती नहीं है। वे न तो यह चाहती हैं कि इन दानाश्रित संस्थाओं को बन्द कर दिया जाये और न उनके कोष को किसी ऐसे काम में लगाया जाये जिसके प्रयोजन के लिये वह नहीं है। जो कुछ वे चाहती हैं वह यह है कि पार्थिव राज्य होने के कारण उसे बहिष्कार करने में साथ नहीं देना चाहिये। संस्था को यह अधिकार है कि यदि वह किसी विशेष वर्ग या किसी विशेष जाति को दाखिल नहीं करना चाहती है तो वह सरकारी सहायता लेना बन्द कर दे और इस प्रकार सरकारी सहायता लेना बन्द कर देने के पश्चात् किसी वर्ग के विद्यार्थियों का दाखिला बन्द करने की उन्हें स्वतंत्रता होगी। राज्य इस मामले में कुछ नहीं कह सकता है। यहां प्रमाणित शब्द नहीं रखा गया है। वाक्य-खंड 16 में हमने सर्वप्रिय शब्द ''प्रमाणित'' रखा था। इसीलिये सारी कठिनाई पैदा हुई और हमें उसे एक छोटी समिति के पास भेजना पड़ा। इस वाक्य-खण्ड में स्थिति बहुत स्पष्ट है। श्री मुंशी ने एक चतुर वकील के समान इस पर परदा डालने का प्रयत्न किया। जो संस्था अपने कोष से 40 हजार रुपया खर्च करती है उसे यह अधिकार है कि वह राज्य से 500 रुपया सहायता के रूप में न ले। परन्तु राज्य को यह घोषणा करने का अधिकार होगा कि राज्य की नीति के रूप में बहिष्कार को स्वीकार नहीं किया जाये और यह समान रूप से बहुसंख्यक तथा अल्पसंख्यक संस्थाओं पर

[माननीय श्री हुसैन इमाम]

लागू होगा। सरकारी सहायता पाने वाली किसी संस्था को अपना द्वार भारत के किसी अन्य वर्ग के व्यक्तियों के लिये केवल इसलिये बन्द नहीं करना चाहिये कि ऐसी शर्त शुरू में उसके दानदाता ने चाही थी। उनको सरकारी सहायता बन्द करने का अधिकार है और वे किसी प्रकार के प्रतिबन्ध लगा सकते हैं जिनको वे चाहें।

***श्री एम.एस. अणे:** श्रीमान् जी, मैं केवल स्पष्टीकरण के लिए यह निवेदन कर रहा हूं। परामर्शदातृ समिति ने हमसे यह सिफारिश की है कि इस वाक्य-खंड को अर्थात् ''न उनको कोई धार्मिक शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जायेगी'' निकाल दिया जाये और केवल शेष भाग पर सभा का मत लिया जाये, लेकिन वे सिफारिशें इस परिस्थिति में की गई थी कि वाक्य-खंड 16 सभा द्वारा स्वीकार कर लिया जायेगा। यह शर्त थी। परन्तु हमने क्या किया? वाक्य-खंड 16 को किसी कमेटी के विचारार्थ सुपुर्द किया है। इन परिस्थितियों में पूर्ण वाक्य-खंड को मय इस अंतिम वाक्य-खंड के जो कि हटाया जाने को था, सभा में मत के लिए रखा जायेगा। क्या समस्त वाक्य-खंड पर मत लिया जाये या केवल प्रथम भाग पर?

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि प्रस्ताव यह है कि अंतिम वाक्य-खंड को निकाल दिया जाये।

***माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू:** अध्यक्ष, श्रीमती बनर्जी द्वारा पेश किये गये संशोधन का मैं समर्थन करता हूं। मैंने बड़े ध्यान के साथ श्री मुंशी का व्याख्यान सुना। उनका यह विचार है कि यदि हमने इस सिद्धांत को स्वीकार कर लिया कि राज्य द्वारा संचालित शिक्षण संस्थाओं को सब सम्प्रदायों के लड़कों को दाखिल करना पड़ेगा तो उससे बहुत लाभ होगा और कहा कि हम इस विषय को अन्य विषयों से नहीं मिलायें, चाहे वे कितने ही महत्वपूर्ण क्यों न हों। मैं उनके विचारों की प्रशंसा करता हूं। फिर भी मैं यह समझता हूं कि देश में एकता की भावना उत्पन्न करने से सम्बंधित स्वीकृत व्यवस्थाओं को जो महत्व दिया गया है, उस पर विचार करते हुए यह वांछनीय है कि किसी लड़के को किसी भी स्कूल में दाखिल होने की स्वतंत्रता हो, चाहे वह सरकारी हो या सरकारी सहायता पाता हो। धर्म के कारण किसी छात्र को किसी स्कूल में दाखिल होने से न रोका जाये। श्रीमान् जी, इसका आशय यह नहीं है कि किसी स्कूल के हैडमास्टर को किसी विशेष सम्प्रदाय के लड़कों की एक विशिष्ट संख्या को दाखिल करना ही पड़ेगा।

उदाहरण के लिए किसी इस्लामिया स्कूल को लीजिये। यदि 200 हिंदू लड़के उस स्कूल में दाखिल होना चाहते हैं तो यह जरूरी नहीं कि हैडमास्टर उन सबों को दाखिल कर ले। परन्तु लड़को को केवल इस आधार पर दाखिल होने से नहीं रोका जायेगा कि वे हिन्दू हैं। हैडमास्टर यह निर्णय करने के लिये कि कौन-कौन से लड़कों को दाखिल किया जाये, किसी सिद्धांत को निर्धारित करेगा। यह एक सामान्य अनुभव है कि प्रत्येक स्कूल में दाखिल होने वालों की संख्या उस स्कूल में खाली जगह से बहुत अधिक होती है। कुछ छात्रों को निकालने (दाखिला न देने) के लिये हैडमास्टर एक ऐसे सिद्धांत का निर्णय करता है जो पार्थिव है और शिक्षा से सम्बन्धित है। यदि श्रीमती बनर्जी का संशोधन स्वीकार नहीं किया जाता है तो मुस्लिम हाईस्कूल या हिंदू हाईस्कूल के हैडमास्टर को यह पूर्ण स्वतंत्रता होगी कि वह हिन्दू या मुसलमान लड़कों के, जैसी सूरत भी हो, दाखिले को रोक दे क्योंकि वे हैडमास्टर द्वारा निर्धारित जांच के योग्य नहीं है। मेरे विचार से यह यथेष्ट गारंटी है कि हैडमास्टर इस स्थिति में होगा कि वह इस सिद्धांत का पालन कर रहा है कि सब सरकारी या सरकारी सहायता पाने वाले स्कूलों में सब सम्प्रदायों के लड़कों को दाखिल होने का अधिकार है और वह उसके ऊपर कोई ऐसा भार नहीं डालेगा जिसे वह बरदाश्त न कर सके।

श्रीमान जी, देश में एकता की भावना उत्पन्न करने के लिए हमने पृथक निर्वाचन बन्द करने का निश्चय किया है। हमने साम्प्रदायिक निर्वाचन को भी स्वीकार नहीं किया है जैसा कि सरदार पटेल ने उस दिन ठीक-ठीक कहा था कि उसके स्वीकार करने का मतलब यह होगा कि जिस खतरनाक साम्प्रदायिक निर्वाचन के सिद्धांत को हम प्रत्यक्ष रूप से अस्वीकार कर चुके हैं, उसे अप्रत्यक्ष रूप से स्वीकार कर रहे हैं। राष्ट्रीयता के भावों को उन्नत करने पर जब हम इतना महत्व देते हैं तो क्या यह वांछनीय नहीं है, क्या यह आवश्यक नहीं है कि हमारी शिक्षण संस्थायें, जो सरकारी हैं अथवा सरकारी सहायता प्राप्त हैं, ऐसी न हों कि जिनमें केवल किसी विशेष धर्म व जाति के लड़के ही हों? यदि यह वांछनीय है कि युवाओं में एकता का भाव उत्पन्न किया जाये तो क्या यह और भी अधिक वांछनीय नहीं है कि छोटे-छोटे बालकों के लिए किसी ऐसे सिद्धांत को स्वीकार न किया जाये जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में राष्ट्रीय विचार या भावना में असमानता उत्पन्न करें?

श्रीमान जी, चूंकि शिक्षा पर ही प्रत्येक राज्य का भावी कल्याण निर्भर है, इसलिये मेरे विचार से यह बड़ा ही महत्वपूर्ण है कि आज हम दृढ़ता के साथ यह सिद्धांत निर्धारित करें कि चाहे गैर सरकारी ही स्कूल हो यदि उसे सरकारी

[माननीय पं. हृदयनाथ कुंजरू]

सहायता मिलती है तो उसमें दाखिल होने का सब सम्प्रदायों के बालकों को अधिकार है। यह सिद्धांत उन निर्णयों के अनुसार होगा जो कि अन्य विषयों पर हमने तय किये हैं। इसकी अस्वीकृति एकता की आवश्यकता के लिये सामान्य भावना के विरोध में होगी जिसकी हमने अनेकों बार जोर देकर सभा में व्याख्या की है।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:__ सभा के अधैर्य को बढ़ाने के लिये मैं उत्तर देने में अधिक समय नहीं लूंगा। मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि सरकारी स्कूलों में दाखिले के विषय में अल्पसंख्यकों के विरुद्ध यह एक सादा अभेदमूलक वाक्य-खंड है। प्रश्न केवल यह है कि इस सिद्धांत को यहां तक लागू किया जाये कि इसमें सब स्कूल जो कि थोड़ी-बहुत सरकारी सहायता पाते हैं आयें या नहीं। इस प्रश्न पर समिति ने विचार किया और इस निश्चय पर पहुंची कि यदि अभी हम इसी सिद्धांत को मान लें तो यह काफी होगा और शेष व्यवस्थापिका द्वारा ग्रहण करने के लिये, जहां कहीं भी उपयुक्त परिस्थितियां हों, छोड़ा जा सकता है। मौलिक अधिकारों से इसे हटाना एक बड़ा जबरदस्त कदम होगा। इसलिये अभी मैं इस संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता हूं।

*__श्री मोहनलाल सक्सेना:__ इससे पूर्व कि आप संशोधन पर मत लें, मैं अपने संशोधन के बारे में कुछ शब्द कहना चाहता हूं। श्री मुंशी ने कहा है कि मेरा संशोधन अप्रासंगिक है। मैं निवेदन करूंगा कि वाक्यखंड 16 पर विचार करने के लिये नियुक्त की गई समिति के पास इसे भेज दिया जाये।

*__माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल:__ यह भी अप्रासंगिक है।

*__अध्यक्ष:__ सर्वप्रथम मैं श्री अहमद इब्राहीम साहब के संशोधन पर मत लूंगा।

प्रस्ताव है कि:

''वाक्य-खंड 18(2) में 'शिक्षणालय' शब्दों के पश्चात् निम्न बढ़ा दिया जाये:

'बशर्ते कि यह वाक्य-खंड उन सरकारी शिक्षण संस्थाओं में लागू नहीं होगा जो खासकर जनता के किसी विशेष सम्प्रदाय या वर्ग के लाभ के लिये संचालित किये जाते हैं।'''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं श्रीमती पूर्णिमा बनर्जी के संशोधन पर मत लूंगा।

प्रस्ताव है कि:

'' 'सरकारी' शब्द के पश्चात् 'तथा सरकारी सहायता प्राप्त' जोड़ दिया जाये।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं श्री मोहनलाल सक्सेना के संशोधन पर मत लूंगा।

प्रस्ताव है कि:

निम्न व्यवस्था वाक्य-खंड 18(2) में बढ़ा दी जाये:

''बशर्ते कि धार्मिक शिक्षा देने वाली संस्थाओं को कोई सरकारी सहायता नहीं दी जायेगी जब तक कि इन संस्थाओं का पाठ्य-क्रम राज्य द्वारा उचित रूप से स्वीकृत नहीं किया जाये।''

प्रस्ताव अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं मूल वाक्य-खंड पर मत लूंगा।

प्रस्ताव है कि:

''18(2) धर्म, जाति या भाषा में से किसी आधार पर आश्रित किसी अल्पसंख्यक को सरकारी शिक्षणालयों में प्रवेश करने के विरुद्ध कोई भेद नहीं बरता जायेगा।''

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** रिपोर्ट का यह भाग अब समाप्त हुआ। परिशिष्ट को बाद में लिया जायेगा। विदा होने के पूर्व मुझे कुछ घोषणा करनी है।

***अध्यक्ष:** सदस्यों को याद होगा कि यह सुझाव रखा गया था कि वाक्य-खंड 16 को एक उप-समिति के हवाले किया जाये और वह उप-समिति सभा को नहीं वरन् मस्विदा बनाने वाली समिति को रिपोर्ट करे जो उस रिपोर्ट पर विचार करेगी। मैं उन सज्जनों के नाम पेश कर रहा हूं जो उस विशेष वाक्य-खंड में रुचि रखते हैं।

(1) डॉ. मोहनसिंह मेहता।

(2) पं. हृदयनाथ कुंजरू।

[अध्यक्ष]

(3) श्री हुसैन इमाम।

(4) श्री राधाकृष्णन।

(5) श्रीमती रेणुका रे।

(6) श्री के.एम. मुंशी।

***माननीय सरदार वल्लभभाई पटेलः** क्या हम दूसरे भाग को लें?

***अध्यक्षः** अभी नहीं। सभा को याद होगा कि कल हमने हाउस कमेटी में रिक्त स्थानों की पूर्ति के लिये निर्वाचन किया था। केवल दो व्यक्ति नामजद किये गये और दो ही रिक्त स्थान थे, इसलिये उन दोनों को स्वीकार किया गया। उन सज्जनों को निर्वाचित घोषित किया गया। वे श्रीयुत अमियकुमार दास तथा श्री वी. सी. केशवराव हैं। अब सभा को स्थगित होना है। एक नियम के अंतर्गत अध्यक्ष को केवल तीन दिवस के लिये सभा स्थगित करने का अधिकार है। यह स्थगन बहुत अधिक काल के लिये है और सभा को यह अधिकार अध्यक्ष को देना है कि वे जब ठीक समझें सभा बुला लें, क्योंकि हम आशा करते हैं कि मस्विदा बनाने वाली समिति रिपोर्ट तैयार कर लेगी और परिषद् की बैठक बुलाने से काफी पहले मैं उसे सदस्यों में घुमाना चाहता हूं जिससे कि वे रिर्पार्ट का अध्ययन तथा उस पर विचार कर लें और फिर परिषद् की बैठक में सम्मिलित हों। आज इस बात की आशा करना संभव नहीं है कि मस्विदा-समिति की रिपोर्ट कब तक प्राप्त हो सकेगी और इसीलिये आज बैठक की तिथि का अनुमान तक नहीं किया जा सकता है। मैं इसलिये सभा से यह निवेदन करूंगा कि रिपोर्ट के तैयार हो जाने पर हमें उपयुक्त तिथि नियत करने का अधिकार दें।

परिषद् सहमत हुई।

***श्री आर.के. सिधवाः** क्या आप हमें कुछ अंदाज बता सकते हैं कि यह कब तक होगा?

***अध्यक्षः** मैं किसी बात के लिये इस दशा में वचनबद्ध होना नहीं चाहता हूं।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** क्या मैं यह जान सकता हूं कि इस काल में व्यवस्थापिका की बैठक होगी क्या?

***अध्यक्षः** यह (प्रश्न) मेरे लिये नहीं है वरन् सरकार के लिये है।

***श्री मोहनलाल सक्सेना:** श्रीमान्‌जी मैं प्रस्ताव रखता हूं कि जब तक अध्यक्ष द्वारा तारीख नियत न की जाये, यह परिषद् स्थगित की जाती है।

***मि. तजम्मुल हुसैन:** मैं इसका समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** श्री मोहनलाल सक्सेना कहते हैं कि अध्यक्ष द्वारा नियत की जाने वाली तारीख तक सभा स्थगित रहे। मैं मान लेता हूं कि सभा की यही इच्छा है।

***माननीय सदस्यगण:** जी हां, जी हां।

***अध्यक्ष:** इस प्रस्ताव के अनुसार सभा उस तारीख तक स्थगित की जाती है जिसको मैं नियत करूंगा। अध्यक्ष द्वारा नियत की जाने वाली तारीख तक सभा स्थगित की गई।

भारतीय विधान-परिषद्

कौंसिल हाउस,
नई दिल्ली, ता. 25 अगस्त सन् 1947 ई.

प्रेषक:

माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल, सभापति

अल्पसंख्यकों, मौलिक अधिकारों इत्यादि की परामर्शदातृ समिति।

सेवा में:

अध्यक्ष महोदय,
भारतीय विधान-परिषद्
श्रीमान्, जी,

मेरे पत्र संख्या वि. प. ।24। कमे. ।47 तारीख 23 अप्रैल सन् 1947 ई. के सिलसिले में समिति की ओर से मौलिक अधिकारों पर पूरक रिपोर्ट पेश करने का मुझे गौरव प्रदान किया गया है।

2-हम इस निर्णय पर पहुंचे हैं कि न्यायालय जाने वाले मौलिक अधिकारों के साथ-साथ विधान में सरकारी नीति की कुछ हिदायतें होनी चाहियें जो यद्यपि किसी न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप करने योग्य तो नहीं हैं परन्तु देश की शासन व्यवस्था में उनको मौलिक समझना चाहिये। जिन व्यवस्थाओं की हम सिफारिश करते हैं वे परिशिष्ट (क) में हैं।

3-हमारी पहली रिपोर्ट के पैरा 8 में हमने मौलिक-अधिकार-उप-समिति की सिफारिशों का उल्लेख किया है कि न्यायालय में सरकार के विरुद्ध शिकायत दूर कराने के किसी नागरिक के अधिकारों को अनुचित प्रतिबन्धों द्वारा न रोका जाये। सावधानी से विचार करने के पश्चात् हम इस परिणाम पर पहुंचे कि इस सिलसिले में अप्रैल व मई के अधिवेशन में परिषद् द्वारा स्वीकृत 22 वाक्य-खंड में दी हुई व्यवस्थाओं के अतिरिक्त विधान में और किसी अधिकार की व्यवस्था करना आवश्यक नहीं है।

4-हमारी पहली रिपोर्ट के वाक्य-खंड 16, 17 तथा 18(2) को विधान-परिषद ने हमें फिर सुपुर्द किया। हमने वाक्य-खंडों की फिर जांच की और हमारी सिफारिशें निम्न हैं:

वाक्य-खंड 16: "सरकारी कोष द्वारा संचालित अथवा सहायता प्राप्त किसी स्कूल में जाने वाले किसी व्यक्ति को उस स्कूल में दी जाने वाली किसी धार्मिक शिक्षा में भाग लेने या उस स्कूल से सम्बद्ध अन्य स्थान में की जाने वाली किसी धार्मिक पूजा में उपस्थित होने के लिये विवश नहीं किया जायेगा।"

हम सिफारिश करते हैं कि वर्तमान रूप में इस वाक्य-खंड को परिषद् द्वारा स्वीकार किया जाये।

वाक्य-खंड 17: "दबाव या अनुचित प्रभाव द्वारा एक धर्म से दूसरे धर्म में परिवर्तन करना कानून द्वारा प्रमाणित नहीं किया जायेगा।"

आगे और विचार करने पर हमें यह प्रतीत हुआ कि यह वाक्य-खंड किसी कदर उस प्रत्यक्ष सिद्धांत की व्याख्या करता है, जिसका विधान में रखना अनावश्यक है और हम सिफारिश करते हैं कि इसे पूरा का पूरा निकाल दिया जाये।

वाक्य-खंड 18 (2): "धर्म, जाति या भाषा में से किसी आधार पर आश्रित किसी अल्पसंख्यक को सरकारी शिक्षणालयों में दाखिल होने में कोई भेद नहीं बरता जायेगा और न उनको किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जायेगी।"

हम सिफारिश करते हैं कि वाक्य-खंड का पिछला भाग अर्थात् "और न उनको किसी प्रकार की धार्मिक शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जायेगी" को ऊपर दिये हुए

वाक्य-खंड 16 पर विचार करते हुए, जिसके रखे जाने की हमने सिफारिश की है, निकाल दिया जाये। हम सिफारिश करते हैं कि शेष् भाग को परिषद् स्वीकार करे।

हमने इस बात की जांच की कि आया इस वाक्य-खंड के क्षेत्र को यहां तक विस्तृत किया जाये कि इसमें सरकारी सहायता प्राप्त संस्थायें भी आ जाएं और इस परिणाम पर पहुंचे कि वर्तमान परिस्थितियों में इस प्रकार की सिफारिश करना हमारे लिये न्यायपूर्ण नहीं होगा।

5-मौलिक अधिकार उप-समिति ने अपनी रिपोर्ट में देवनागरी या फारसी लिपि में लिखी गई हिदुस्तानी को भारतीय संघ की राष्ट्र-भाषा स्वीकार करने की हमसे सिफारिश की है लेकिन हमने यह ठीक समझा कि अप्रैल 1947 में इस विषय पर विचार करना स्थगित किया जाये। इस बात पर विचार करते हुए कि विधान-परिषद्, संघ-विधान-समिति की रिपोर्ट की कुछ सिफारिशों द्वारा इस विषय पर विचार कर रही है, हमने मौलिक अधिकारों की सूची में इस विषय पर किसी व्यवस्था को शामिल करना अनावश्यक समझा।

6-हमने उन अनेकों संशोधनों की भी जांच की, जो नई व्यवस्थाओं के रूप में थे और जिनकी सूचना अनेकों सदस्यों ने परिषद् के अप्रैल-मई अधिवेशन में दे दी थी। हम उनमें से किसी को भी स्वीकार नहीं कर सके। उनमें से कुछ तो उन विषयों से सम्बंधित थे जिनकी व्यवस्था परिषद् द्वारा स्वीकृत वाक्यखंडों में या इस रिपोर्ट में सिफारिश किये गये नये वाक्यखंडों में कर दी गई है और शेष हमें अनावश्यक या अनुचित जान पड़े।

भवदीय
वल्लभभाई पटेल
सभापति

परिशिष्ट 'क'
शासन-व्यवस्था के मौलिक सिद्धान्त
भूमिका

1-इस भाग में दिये हुये नीति के सिद्धान्त राज्य के पथ-प्रदर्शन के लिये हैं। यद्यपि ये सिद्धान्त किसी न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किये जाने वाले नहीं हैं, फिर भी वे देश की शासन-व्यवस्था में मौलिक हैं और कानून बनाने में इनका प्रयोग करना राज्य का कर्तव्य होगा।

सिद्धान्त

2-एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था को, जिसमें सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक न्याय के आधार पर राष्ट्रीय जीवन की समस्त संस्थाओं का निर्माण हो, यथाशक्ति समुचित रूप में प्राप्त कर तथा उसकी रक्षा कर राज्य समस्त जनता के हित की उन्नति के लिये प्रयत्न करेगा।

3-राज्य विशेषकर निम्न बातों को प्राप्त करने के लिये अपनी नीति का निर्धारण करेगा-

(1) नागरिकों को, नर तथा नारियों को समान रूप से जीवनयापन के पर्याप्त साधनों को प्राप्त करने का अधिकार है।

(2) सम्प्रदाय के भौतिक साधनों के स्वामित्व तथा नियंत्रण का इस प्रकार वितरण किया जाये कि जिससे वह सर्वसाधारण की भलाई में सहायक हो सके।

(3) उस स्वतंत्र स्पर्धा का प्रयोग नहीं करने दिया जायेगा जिसका फल यह हो कि आवश्यक सामग्रियों के स्वामित्व तथा नियंत्रण का केन्द्रीकरण चन्द व्यक्तियों में हो और सर्वसाधारण के लिये घातक हो।

(4) दोनों (स्त्री तथा पुरुषों) के लिये समकार्य के लिये समवेतन होगा।

(5) श्रमिकों के, स्त्री तथा पुरुष की शक्ति तथा स्वास्थ्य का और बच्चों की कोमल वय का दुरुपयोग नहीं किया जायेगा और आर्थिक

आवश्यकताओं के कारण नागरिकों को किसी ऐसे पेशे में दाखिल नहीं होने दिया जायेगा जो उनकी आयु तथा शक्ति के लिये उपयुक्त न हो।

(6) बचपन तथा यौवन की शौषण से तथा नैतिक और भौतिक आत्मसमर्पण से रक्षा की जायेगी।

4-अपनी आर्थिक क्षमता तथा प्रगति की सीमा के अन्तर्गत राज्य-कार्य करने, शिक्षा देने तथा बेकारी की सूरत में प्रजा की सहायता करने, वृद्धावस्था, रोग, अशक्तता तथा अनुचित मांग के अन्य मामलों के अधिकारों की समुचित व्यवस्था करेगा।

5-श्रमिकों के लिये प्रसूत सम्बन्धी सुविधा देने तथा काम करने की ठीक तथा मानवोचित परिस्थितियां उत्पन्न कराने की राज्य व्यवस्था करेगा।

6-उपयुक्त कानून-निर्माण, आर्थिक संगठन अथवा अन्य किसी प्रकार से सब श्रमिकों को, चाहे वे औद्योगिक हों अथवा अन्य प्रकार के हों, श्रम (काम) गुजर योग्य वेतन (living wage) जीवन के उच्च मान का पूर्ण विश्वास दिलाने वाली तथा विश्राम-काल के पूर्ण उपभोग की श्रम सम्बन्धी शर्तें और सामाजिक तथा सांस्कृतिक अवसरों को प्राप्त कराने का राज्य प्रयत्न करेगा।

7-नागरिकों के लिये समान दीवानी संहिता (Civil Code) के उपयोग में लाने का राज्य प्रबन्ध करेगा।

8-प्रत्येक नागरिक को बिना फीस के प्राइमरी शिक्षा पाने का अधिकार है और राज्य का यह कर्तव्य होगा कि इस विधान के लागू होने से दस वर्ष तक के काल में सब बालकों को जब तक कि वे 14 वर्ष की आयु समाप्त न करें, बिना फीस के अनिवार्य प्राइमरी शिक्षा देने की व्यवस्था करे।

9-प्रजा के पिछड़े हुये दुर्बल भाग के, विशेषकर परिगणित जातियों तथा आदिवासी, कबायलियों के शिक्षा तथा अर्थ सम्बन्धी हित-साधनों की राज्य विशेष सावधानी के साथ तरक्की करेगा और उनकी सामाजिक अन्याय तथा समस्त प्रकार के शोषणों से रक्षा करेगा।

10-अपनी प्रजा के जीवन-मान के तथा पालन-पोषण के स्तर को उच्च करने तथा स्वास्थ्य-सुधार को राज्य अपना प्रमुख कर्तव्य समझेगा।

11-संघ के कानून द्वारा घोषित राष्ट्रीय महत्व की प्रत्येक कलात्मक या ऐतिहासिक यादगार अथवा स्थान अथवा वस्तु की लूट, विध्वंस, उसको हटाने, बेचने या उसके निर्यात करने से, जैसी भी सूरत हो, रक्षा करने और संघ के कानून के अनुसार ऐसी समस्त यादगारों, अथवा स्थानों अथवा वस्तुओं को कायम तथा सुरक्षित रखने का उत्तरदायित्व राज्य पर होगा।

12-राष्ट्रों में परस्पर प्रत्यक्ष, न्यायपूर्ण तथा आदरणीय सम्बन्धों के आदेशों द्वारा, सरकारों में परस्पर कार्य-पद्धति के वास्तविक नियमस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय ज्ञान की दृढ़ स्थापना द्वारा तथा संगठित लोगों के परस्पर व्यवहार में संधि की शर्तों के न्याय तथा उचित सम्मान सहित निर्वाह द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय शांति तथा सुरक्षा में तरक्की करेगा।

अंक 6

27.1.1948

पुस्तक सं. 2

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

लोक सभा सचिवालय, नई दिल्ली द्वारा पुनर्मुद्रित

द्वितीय पुनमुर्द्रण 2014

जैनको आर्ट इण्डिया, 1/21, सर्वप्रिय विहार, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित

भारतीय संविधान सभा

अध्यक्ष :

माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद

उपाध्यक्ष :

डा. एच.सी. मुखर्जी
सर वी.टी. कृष्णमाचारी

संवैधानिक सलाहकार :

सर बी.एन.राव

सचिव :

श्री एच.वी.आर. आयंगर, *आई. सी. एस.*

संयुक्त सचिव :

श्री एस.एन. मुखर्जी

उप सचिव :

श्री जुगल किशोर खन्ना

अवर सचिव :

श्री के.वी. पद्मनाभन

Con. 3. 6.1.48
750

अंक 6
संख्या 1

मंगलवार
27 जनवरी,
सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

1.	परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर इस्ताक्षर करना	1
2.	श्री वी.डी. त्रिपाठी की गिरफ्तारी	1
3.	वैधानिक आपत्ति	3
4.	पश्चिमी बंगाल का अतिरिक्त प्रतिनिधित्व	5
5.	पूर्वी पंजाब का अतिरिक्त प्रतिनिधित्व	7
6.	नियमों में संशोधन तथा परिवर्द्धन	20
7.	परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर	38
8.	नियमों में संशोधन तथा परिवर्द्धन	38
9.	अध्यक्ष द्वारा आगामी अधिवेशन-सम्बन्धी घोषणा	92

भारतीय विधान-परिषद्

मंगलवार, 27 जनवरी, सन् 1948 ई.

माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद जी की अध्यक्षता में भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कान्स्टीट्यूशन हाल में दिन के 11 बजे आरम्भ हुई।

परिचय-पत्रों की पेशी तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना

निम्नलिखित सदस्यों ने अपने परिचय-पत्र पेश किये तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर किये:

1. श्री के. हनुमन्थैय्या (मैसूर राज्य)
2. श्री टी. सिद्दालिंगय्या (मैसूर राज्य)
3. श्री वी.एस. सरवटे (इन्दौर राज्य)

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त तथा बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं एक वैधानिक आपत्ति उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्ष:** हमने अभी कार्यवाही आरम्भ नहीं की है। कार्यवाही आरम्भ करने के पूर्व कोई वैधानिक आपत्ति नहीं उठाई जा सकती है।

श्री वी.डी. त्रिपाठी की गिरफ्तारी

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, आज का कार्य आरम्भ करने के पूर्व मुझे गत शुक्रवार को नेता-जयन्ती के उत्सव में इस सभा के एक माननीय सदस्य की गिरफ्तारी की सूचना देने की आज्ञा दीजिये-मेरा अभिप्राय संयुक्त-प्रान्त के श्री वी.डी. त्रिपाठी से है। इस सम्बन्ध में मैं यह पूछ सकता हूं कि क्या संयुक्त प्रान्तीय सरकार ने उनके गिरफ्तार किये जाने की परिस्थितियों की तथा उनको रोके रखने के कारणों की कोई सूचना आपको दी है, जिससे कि वे इस अधिवेशन में उपस्थित न हो सके? श्रीमान् जी, मेरे तुच्छ विचार से तो यह इस सभा के सदस्यों के विशेषाधिकारों का अतिक्रमण करना है।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***श्री बालकृष्ण शर्मा** (संयुक्त प्रान्तः जनरल)**:** इस विषय में मैं एक बात कहना चाहूंगा। मैं नहीं समझता कि माननीय सदस्य का इस सभा में इस वैधानिक आपत्ति को उपस्थित करना कहां तक नियमानुकूल है। सभा के समक्ष पूर्ण विवरण नहीं रखा गया है। सभा को समस्त घटनाओं का पूर्ण ज्ञान होना चाहिये और तभी उस विषय पर उससे निर्णय की आशा की जा सकती है। श्री बी.डी. त्रिपाठी को इस कारण गिरफ्तार किया गया था कि वे स्वयं एक गैरकानूनी संस्था के सदस्य थे। इसके अतिरिक्त त्रिपाठी जी ने कानपुर शहर में अनेकों कारणों से जाब्ता फौजदारी की धारा 144 के अन्तर्गत जारी आज्ञा का उल्लंघन किया। मेरी समझ में नहीं आता कि इस सभा के किसी भी माननीय सदस्य को किस प्रकार सरकारी कानून उल्लंघन करने का अधिकार है और यदि वह उल्लंघन करता है तो उसे उसके परिणाम को भुगतने के लिये तत्पर रहना चाहिये।

***अध्यक्षः** मैं नहीं समझता कि गिरफ्तारी का प्रश्न यहां उपस्थित हो सकता है। पेश किये जाने वाले नियमों के संशोधनों पर विचार करने के लिये हम विधान-परिषद् के रूप में यहां सम्मिलित हैं। यदि कोई सदस्य गिरफ्तार कर लिया गया है तो उचित स्थान पर विचार किया जाना चाहिये। हम इस विषय को नहीं ले सकते हैं।

(श्री एच.वी. कामत खड़े हुये।)

***अध्यक्षः** शान्ति, शान्ति! यहां विधान-परिषद् में हम इस विषय को नहीं ले सकते हैं।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं यह जानना चाहता हूं कि संयुक्त प्रान्तीय सरकार ने इस सम्बन्ध में आपको सूचना दी या नहीं?

***अध्यक्षः** मुझे कोई सूचना नहीं मिली है।

***श्री एच.वी. कामतः** दूसरा प्रश्न यह है कि उनको पैरोल पर छोड़ दिया जाये जिससे कि वे अधिवेशन में उपस्थित हो सकें।

***अध्यक्षः** यह भी मामले के औचित्य पर विचार करने से सम्बन्ध रखता है जिसे मैं मानने के लिये तैयार नहीं हूं। अब हम कार्यक्रम को लेंगे।

*श्री युधिष्ठिर मिश्र (पूर्वी रियासतों का समूह 1): अध्यक्ष महोदय, एक वैधानिक आपत्ति है। प्रश्न यह है कि उड़ीसा और छत्तीसगढ़ रियासतों के राजाओं द्वारा नामजद किये गये इस सभा के माननीय सदस्य 15 दिसम्बर सन् 1947 के पश्चात् इस सभा में बैठ सकते हैं या नहीं?

राजाओं और विधान-परिषद् के मध्य परामर्श की शर्तों के अनुसार देश के भावी विधान में अपने हितों की रक्षा करने के लिये उड़ीसा नरेश ने दो प्रतिनिधि तथा छत्तीसगढ़-नरेश ने एक प्रतिनिधि इस सभा में नामजद किये हैं। परन्तु 14, 15 दिसम्बर 1947 को ये शासक अपने समस्त अधिकारों, सत्ता तथा शासनाधिकार, जिनका वे अपने राज्य में प्रयोग करते थे, भारतीय-संघ-सरकार को सौंपने के लिये सहमत हुये और 1 जनवरी 1948 को वे समस्त अधिकार सौंप दिये गये हैं। अतः 15 दिसम्बर के पश्चात् शासकों द्वारा इस सभा में नामजद किये गये सदस्य न तो शासकों के हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं और न उड़ीसा तथा छत्तीसगढ़ की जनता का प्रतिनिधित्व करते हैं। एक माननीय सदस्य ने तो अभी हाल ही में मध्य प्रान्त में नौकरी स्वीकार कर ली है। मैं निवेदन करता हूं कि जब रियासतों में शासकों का अधिकार और सत्ता नहीं रहते तो उनके मनोनीत सदस्यों को इस सभा में बैठने का अधिकार नहीं है। मैं आदरपूर्वक आपसे निवेदन करूंगा कि इस विषय पर आप निर्देश दें।

सेठ गोविन्ददास (मध्य प्रांत और बरार: जनरल): सभापति जी, जहां तक छत्तीसगढ़ रियासतों का सम्बन्ध है, छत्तीसगढ़ रियासतें यद्यपि मध्य प्रान्त और बरार प्रान्त में ले ली गई हैं; परन्तु जब तक वहां के प्रतिनिधियों का नया चुनाव नहीं हो जाता, तब तक मेरा आपसे यह निवेदन है कि वहां के जो सदस्य विधान-परिषद् में आये हैं, उनको इजाजत दी जानी चाहिये, परिषद् में काम करने के लिए। जब कि वहां के नये चुनाव हो जायेंगे, तब हम उनको यहां से अलग कर देंगे।

मैं समझता हूं कि अभी उनको अलग करने से, उन रियासतों के जो हक हैं, उन पर एक प्रकार से आघात करना होगा। इसलिये मेरा आपसे निवेदन है कि जब तक वहां का नया चुनाव नहीं हो जाता, तब तक उन सदस्यों को यहां पर बैठने और यहां की कार्यवाही में भाग लेने का अधिकार रहना चाहिये।

श्री राजकृष्ण बोस (ओडिशा: जनरल): सभापति महोदय, अभी उड़ीसा और छत्तीसगढ़ के बारे में जो प्वाइंट आफ आर्डर रेज किया गया है, वह कामयाब

[श्री राजकृष्ण बोस]

नहीं होना चाहिये। इसका कारण यह है कि 15 अगस्त के बाद सिर्फ इतना ही हुआ है कि कई स्टेट्स के रूलर्स ने अपनी पावर्स जो उनके हाथ में पहले थीं, छोड दी। यह सब स्टेट्स इण्डियन यूनियन में मर्ज हो गए। लेकिन इसके साथ कान्स्टीट्यूएंट असेम्बली के मेम्बरों का जो चुनाव हुआ था, उसका तो अन्त नहीं हुआ, अगर हम ऐसा करने जायेंगे तो हमें मेम्बरों को छोड़ देना पड़ेगा, या तो कहना पड़ेगा कि उनको इस असेम्बली में हाजिर होने का कोई हक नहीं है। ऐसा करने से मैं समझता हूं कि इस दरमियान में जब तक वह सीज कर जायेंगे, और नये इलैक्शन्स न होंगे, इस दरमियान में उन स्टेट्स के कोई प्रतिनिधि इस असेम्बली में नहीं रहेंगे। कान्स्टीट्यूएंट असेम्बली के कोई कानून में ऐसा नहीं है जिससे हम इस वक्त उनको कह सकते हैं कि वह यहां हाजिर नहीं हो सकते हैं। इसलिए मैं सोचता हूं कि जो इलैक्शन हुआ है वह इलैक्शन जारी रखा जाये। ऐसा मैं चाहता हूं, क्योंकि उड़ीसा स्टेट्स के जो 80 लाख आबादी के प्रतिनिधि आए हैं, वे यहां की कार्यवाही में शामिल रहें। उस समय जो रिप्रेजेन्टेटिव्ज हुए थे वे राजा की तरफ से चुने होने पर भी अभी मर्जर के बाद वे सब तो लोगों के प्रतिनिधि हो गए, क्योंकि राजा लोग तो सीज कर गए। इनको कोई अख्तियार नहीं रहा। आइन्दा के लिए कहा जाता है कि नया इलैक्शन होना चाहिए और कहा जाता है कि इसलिये जरूरी है कि राजा लोग सीज कर गये, तो उनके चुने हुए प्रतिनिधि उनके साथ समाप्त हो गये; ऐसा मैं नहीं समझता।

*__मि. तजम्मुल हुसैन__ (बिहार: मुस्लिम): मेरी तुच्छ सम्मति में तो आपके सामने केवल यही प्रश्न है कि उन माननीय सदस्यों को उस समय उचित रूप से नामजद किया गया था या नहीं और यह भी कि वे जिन प्रदेशों का प्रतिनिधित्व करते हैं वे अब भी भारतीय संघ के अन्तर्गत हैं या नहीं। यदि इन दो बातों को स्वीकार किया जाता है तो मेरे विचार से इन सदस्यों को इस सभा की सदस्यता से पृथक करने का कोई अधिकार नहीं है।

*__अध्यक्ष:__ मैं समझता हूं कि नियम तथा व्यवस्था के विषय के समान इस विषय को नहीं निपटाया जा सकता है। वे सदस्य इस सभा के वास्तविक सदस्य हैं और जब तक वे पद-त्याग न करें या पृथक न किये जायें, वे इस सभा के सदस्य रहेंगे। यदि कोई ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गई है कि जिससे उनको पृथक करना आवश्यक हो तो उस अभिप्राय से कार्यवाही की ही जायेगी। परन्तु जब तक वह कार्यवाही न की जाये, वे इस सभा के सदस्य रहेंगे।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रासः जनरल): श्रीमान् जी, मैं निम्न प्रस्ताव पेश करता हूं:

''चूंकि वर्तमान समय में विधान-परिषद् में बंगाल के 19 प्रतिनिधि (15 जनरल और 4 मुस्लिम) हैं;

और चूंकि यह व्यवस्था सम्राट की सरकार के 3 जून सन् 1947 ई. के वक्तव्य के पैरा 14 के अनुसार की गई थी और विधान-परिषद् ने अपने 25 जुलाई सन् 1947 के प्रस्ताव द्वारा पश्चिमी बंगाल की तत्कालीन सीमाओं के आधार पर इसकी पुष्टि की थी;

और चूंकि उक्त तारीखों के बाद सीमा सम्बन्धी कमीशन के निर्णय के आधार पर पश्चिमी बंगाल की सीमायें फिर से निर्धारित की गई;

और चूंकि उन पुनर्निर्धारित सीमाओं के आधार पर पश्चिमी बंगाल को विधान-परिषद् में 21 सदस्य (16 जनरल और 5 मुस्लिम) भेजने का अधिकार है;

अतः यह निश्चय किया जाता है कि आकस्मिक रूप से रिक्त हुये स्थानों की पूर्ति के लिये जो पद्धति निर्धारित की गई है, उसके अनुसार वर्तमान पश्चिमी बंगाल से 2 और सदस्य (1 जनरल और 1 मुस्लिम) भेजने की व्यवस्था की जाये।''

श्रीमान् जी, प्रस्ताव काफी लम्बा है और स्वयं ही व्याख्यात्मक है। आरम्भ में जब कि कल्पित विभाजन किया गया था, यह आशा की गई थी कि पश्चिमी बंगाल की जनसंख्या 1 करोड़ 90 लाख होगी, इसलिये 15 स्थान जनरल और 4 मुस्लिम के नियुक्त किये गये थे। बाद में जब कि रेडक्लिफ निर्णय हुआ, यह विदित हुआ कि प्रदेशों के मिला देने से पश्चिमी बंगाल की आबादी 2 करोड़ 10 लाख तक बढ़ गई। इसलिये अब दो सदस्य और बढ़ाने की आवश्यकता हुई, क्योंकि 1 करोड़ 90 लाख से जनसंख्या 2 करोड़ 10 लाख हो गई और वह दोनों सम्प्रदायों की बढ़ी; मुसलमानों की भी और गैर मुसलमानों की भी। यह प्रस्ताव एक और जनरल स्थान और एक मुस्लिम स्थान के बढ़ाने का विचार उपस्थित करता है। मैं सभा के समक्ष इस प्रस्ताव को पेश करता हूं और प्रार्थना करता हूं कि यह स्वीकार किया जाये।

***अध्यक्षः** मि. नजीरुद्दीन अहमद ने एक संशोधन की सूचना दी है।

***श्री बालकृष्ण शर्मा:** श्रीमान् जी, क्या आपने यह घोषित कर दिया कि प्रस्ताव पेश हो चुका है?

***अध्यक्ष:** जी हां, प्रस्ताव पेश हो चुका।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): श्रीमान् जी, मैं संशोधनों को पेश करने की आज्ञा चाहता हूं। वे एक ही प्रकार के हैं और परस्पर सम्बन्धित हैं। उनको साथ-साथ पेश करना चाहिये और साथ ही साथ उन पर विचार होना चाहिये।

श्रीमान् जी, मैं पेश करता हूं कि:

"1. प्रस्ताव के पैरा 2 में 'तत्कालीन सीमाओं के आधार' शब्दों के स्थान में 'तत्कालीन सीमाओं के अन्तर्गत जनसंख्या के आधार' रख दिये जायें।

2. प्रस्ताव के पैरा 4 में 'और चूंकि उन पुनर्निर्धारित सीमाओं के आधार पर पश्चिमी बंगाल को' शब्दों के स्थान में 'और चूंकि वर्तमान समय में निर्मित पश्चिमी बंगाल को जनसंख्या के आधार पर' शब्द रख दिये जायें।"

श्रीमान् जी, यद्यपि संशोधन केवल मसविदा से सम्बन्ध रखते हैं, फिर भी मैं उन्हें महत्वपूर्ण समझता हूं। मूल प्रस्ताव में दिया हुआ है कि पुनर्निर्धारित सीमाओं के आधार पर और सदस्यों का निर्वाचन किया जाये। मेरा संशोधन इस बात का स्पष्टीकरण करने का प्रयत्न करता हैं कि प्रस्तावित जनसंख्या के बढ़ने का आधार सीमायें नहीं हैं वरन् जनसंख्या है। सीमाओं में परिवर्तन होने के कारण जनसंख्या अब बढ़ गई, इसलिये जनसंख्या ही मुख्य आधार होना चाहिये और मैंने इसे स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूं कि संशोधन मसविदा सम्बन्धी है, परन्तु वे उस सिद्धान्त की मूल तक पहुंचते हैं जिस पर कि सदस्यों के बढ़ाने की मांग की गई है। इन शब्दों के साथ मैं अपना संशोधन पेश करता हूं।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव और दोनों संशोधन पेश किये जा चुके हैं। यदि कोई सदस्य कार्यवाही में भाग लेना चाहता है तो वह ले सकता है।

श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर: श्रीमान् जी, संशोधनों को मैं बड़ी प्रसन्नता के साथ स्वीकार करता हूं। मेरे मित्र भाषा को और अधिललित बनाना

चाहते हैं। वे पश्चिमी बंगाल की सीमाओं के अन्तर्गत आबादी को आधार बनाना चाहते हैं। यद्यपि शब्द-विन्यास ''तत्कालीन सीमाओं के आधार'' है परन्तु आशय यही था। भाषा को और भी ललित बनाने के लिये मैं संशोधनों को स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधनों पर मत लूंगा जिनको कि प्रस्तावक महोदय ने स्वीकार कर लिया है।

संशोधन स्वीकार किये गये।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधित प्रस्ताव पर मत लेता हूं।

संशोधित प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

पूर्वी पंजाब का अतिरिक्त प्रतिनिधित्व

***अध्यक्षः** मुझे पूर्वी पंजाब के सम्बन्ध में एक और प्रस्ताव की सूचना प्राप्त हुई है। उसकी सूचना विगत रात्रि को ही दी गई थी और इसलिये उस पर यथेष्ट ध्यान नहीं हो सका। यदि सभा को कोई आपत्ति न हो तो मैं उसे लेना चाहूंगा और उसे भी पास कराना चाहूंगा, क्योंकि पश्चिमी बंगाल और पूर्वी पंजाब के प्रस्ताव न्यूनाधिक एक ही आधार पर आश्रित हैं।

क्या मैं यह समझ लूं कि सभा को कोई आपत्ति नहीं है?

***अनेक माननीय सदस्यः** कोई आपत्ति नहीं है।

***अध्यक्षः** ज्ञानी गुरुमुखसिंह मुसाफिर प्रस्ताव पेश करेंगे।

ज्ञानी गुरुमुखसिंह मुसाफिर (पूर्वी पंजाब): *[अध्यक्ष महोदय, आपकी आज्ञा से मैं निम्न प्रस्ताव पेश करना चाहता हूं:

"चूंकि पूर्वी पंजाब का विधान-परिषद् में इस समय प्रतिनिधित्व 6 जनरल, 4 मुसलिम और 2 सिख द्वारा होता है;

और चूंकि यह व्यवस्था सम्राट की सरकार के 3 जून सन् 1947 ई. के वक्तव्य के पैरा 14 के अनुसार की गई थी और विधान-परिषद् ने

[ज्ञानी गुरुमुखसिंह मुसाफिर]

अपने 25 जुलाई, सन् 1947 ई. के प्रस्ताव द्वारा पूर्वी पंजाब की तत्कालीन सीमाओं के आधार पर इसकी पुष्टि की थी,

और चूंकि उक्त तारीखों के पश्चात् सीमा सम्बन्धी कमीशन के निर्णय के अनुसार न केवल पूर्वी पंजाब की फिर से सीमायें ही निर्धारित की गई हैं, वरन् जनसमूह के स्थानान्तरगमन के कारण, मुसलमानों का पूर्वी पंजाब से पश्चिमी पंजाब को गमन और गैर मुसलमानों का पश्चिमी पंजाब से पूर्वी पंजाब को गमन करने से जनसंख्या का पूर्ण ढांचा ही बदल गया है।

और चूंकि इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप सर्वोत्तम प्राप्त अनुमानों के आधार पर पूर्वी पंजाब को विधान-परिषद् में अब 8 जनरल और 4 सिख सदस्य भेजने का अधिकार है;

यह निश्चय किया जाता है कि आकस्मिक रूप से रिक्त हुये स्थानों की पूर्ति के लिये जो पद्धति निर्धारित की गई है, उसके अनुसार वर्तमान पूर्वी पंजाब से 2 और जनरल तथा 2 और सिख सदस्यों के भेजने की व्यवस्था की जाये।"]

साहिबे सदर, इस मोशन का मतलब यह है कि वेस्ट पंजाब के गैर मुस्लिमों को पाकिस्तान की आइनसाज असेम्बली में जो नुमायन्दगी हासिल थी वह अब यहां मिलनी चाहिये। यानी इंडिया की आइनसाज असेम्बली में वेस्ट पंजाब के मेम्बर बढ़ाये जायें। मेरा ख्याल है कि इस पर किसी को ऐतराज न होगा। इस मोशन के अलफाज बिल्कुल साफ हैं, ''कि जो लोग ईस्ट पंजाब में वेस्ट पंजाब से माइग्रेट करके आये हैं उनको यहां पूरा रिप्रजैन्शन दिया जाये।" जो हिन्दू और सिख वेस्ट पंजाब की असेम्बली में मेम्बर थे उनको एक आर्डिनेंस के मातहत इजाजत मिल गई है कि वह ईस्ट पंजाब की असेम्बली में बैठ सकते हैं, यानी इस उसूल को मान लिया गया है। यहां के मुताल्लिक अब सिर्फ एक सवाल रह जाता था कि जिस पर हमने गौर किया, वह चार या पांच की तादाद का सवाल था। इस वक्त पाकिस्तान की कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली में वेस्ट पंजाब के पांच मेम्बर हैं। तीन जनरल (हिन्दू) और दो सिख। इस वक्त जो मौशन मैं आपके सामने पेश कर रहा हूं, इसमें चार सीटों का मुतालवा है दो जनरल और दो सिख। मेरी तो अब भी जाती राय यह है कि पांच सीट्स ही मिलनी चाहिये, जो पाकिस्तान की आइनसाज असेम्बली में वेस्ट पंजाब को मिली हुई हैं, यानी तीन जनरल और दो सिख

आनरेविल मिनिस्टर ऑफ ला की सदारत में आइनसाज असेम्बली के प्रेसीडेंट साहब ने एक सब-कमेटी बनाई थी। इसमें सदर के अलावा हम चार मेम्बर और थे। कल सुबह इसकी मीटिंग करके गौर किया गया और हम इस नतीजे पर पहुंचे कि पांच ही मेम्बर इधर लेने चाहियें। मगर बाद में कैलकुलेट करने पर शक हो गया कि शायद हम पांच मेम्बर आबादी के लिहाज से इधर न ले सकें। वैसे तो बिल्कुल साफ है कि वेस्ट पंजाब से माइग्रेट करके सब हिन्दू-सिख इधर आ गये हैं और जो बाकी हैं, वह भी आने वाले हैं। वेस्ट पंजाब में उनकी तादाद 45 लाख से भी ज्यादा थी; यानी 45,7231। अगर इसका लिहाज किया जाये तो पांच ही मेम्बर हो सकते हैं। इसके अलावा सूबा सरहद, सिन्ध और बिलोचिस्तान से भी कुछ हिन्दू-सिख ईस्ट पंजाब में आये हैं। मगर चूंकि इस वक्त अंदाजा आबादी का नहीं लग सकता, इसलिये हमने इस पर एग्री किया कि चार ही सीट बढ़ा दी जायें। इसके बाद कैलकुलेट करने से अगर ज्यादा आबादी हुई तो फिर गौर किया जा सकता है। मैं उम्मीद करता हूं कि ये कम से कम मुतालबा, जो इस शकल में हाउस के सामने पेश किया गया है, उसको मंजूर किया जायेगा।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव पेश किया जा चुका है। यदि कोई संशोधन रखना चाहता है, या बोलना चाहता है तो वह ऐसा कर सकता है।

*__श्री बी. दास__ (उड़ीसाः जनरल): श्रीमान् जी, मेरे मित्र ज्ञानी गुरु-मुखसिंह मुसाफिर ने जो अभी प्रस्ताव रखा है, उसे पढ़ने के पश्चात् आज प्रातःकाल ही मैंने उसके स्थान में एक और प्रस्ताव भेजा है। मैं उसे समझ सकता था, यदि वे उस जनसंख्या की पूर्ण समस्या को लेते जो कि पाकिस्तान से हिन्दुस्तान में आई है। मैंने उनके प्रस्ताव में संशोधन करने की सूचना दी है, परन्तु पुनः विचार करने पर मैं उसे पेश नहीं करना चाहता हूं। परन्तु फिर भी मैं माननीय अध्यक्ष तथा सभा के विचारार्थ कुछ बातें रखना चाहता हूं। एक बड़ी जनसंख्या पाकिस्तान छोड़कर भारतीय उपनिवेश में प्रवेश कर चुकी है। पूर्वी बंगाल, सिन्ध तथा पश्चिमोत्तर सीमाप्रांत से बहुत से लोग स्थानान्तर गमन कर चुके हैं। मेरे माननीय मित्र केवल पश्चिमी पंजाब वालों का प्रतिनिधित्व चाहते हैं। लोग संयुक्त प्रांत, मध्य प्रांत और यहां तक कि बम्बई, राजपूताना और दिल्ली में भी पहुंचे हैं। यदि हम इन लोगों की उपेक्षा करें तो यह उचित नहीं होगा। इस सभा के लिये यह विचार करना उपयुक्त होगा कि वह उन हिन्दू तथा सिख सदस्यों के लिये, जिनका निर्वाचन पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत सिंध, पूर्वी बंगाल और पश्चिमी पंजाब से विधान-परिषद् के

[श्री बी. दास]
लिये हुआ था, इस बात का निश्चय करे कि उनको इस सभा में भाग लेने का अधिकार रहे या न रहे। यदि उनको भागे हुये हिन्दू या सिखों के प्रतिनिधित्व करने का अधिकार है, तब तो जैसा कि मेरे मित्र ने सुझाया है, निर्वाचन की कोई आवश्यकता नहीं है।

इसके अतिरिक्त यदि हम उनके सुझाव को स्वीकार भी कर लें, तो 8 जनरल और चार सिख सदस्यों का चुनाव पूर्वी पंजाब में आये हुये हिन्दू और सिखों की संख्या के हिसाब से बहुत अधिक है। और इससे हमारी समस्या भी नहीं सुलझती। हमने सुना है कि पूर्वी बंगाल से दस लाख से पन्द्रह लाख तक जनता पश्चिमी बंगाल में पहुंच गई है। हम जानते हैं कि पश्चिमोत्तर सीमाप्रांत में बहुत कम हिन्दू तथा सिख रह गये हैं। हमारे माननीय मित्र मेहरचन्द्र खन्ना आजकल इसी शहर में शरणार्थी हैं। यह सभा सीमाप्रांत के हिन्दुओं का प्रतिनिधित्व करने के लिये उनको ही अधिकार क्यों नहीं दे देती? इसी प्रकार हमें विदित है कि हमारे मित्र जैरामदास दौलतराम जिनका सिन्ध प्रांत से निर्वाचन हुआ था, दिल्ली में एक शरणार्थी या एक मंत्री के रूप में हैं। वे उचित रूप से सिंधी शरणार्थियों का प्रतिनिधित्व क्यों न करें?

पूर्वी बंगाल की समस्या और भी कठिन है। लोगों ने बड़ी-बड़ी संख्याओं में स्थानान्तर गमन आरम्भ कर दिया है। गत रात्रि मुझे मेरे एक मित्र ने कहा कि पूर्वी बंगाल से 5 लाख शरणार्थी पश्चिमी बंगाल में आ गये हैं। यदि पाकिस्तान की यही नीति रही, तो हो सकता है कि हिन्दुओं की समस्त जनसंख्या पश्चिमी बंगाल में आ जाये। इस जनसंख्या के सम्बन्ध में हमें विचार करना है। यह जानना है कि पूर्वी बंगाल और पश्चिमी पंजाब से आये हुये शरणार्थियों के प्रतिनिधियों के मन में विधान के सम्बन्ध में, जिसे हम पास करने जा रहे हैं, क्या है। हम उनको प्रतिनिधित्व देने का प्रयत्न कर रहे हैं। जो बात रखी गई है उसका आशय मताधिकार तथा नये सदस्यों की योग्यता से है। मैं निवेदन करूंगा कि मेरे माननीय मित्र का प्रस्ताव तब तक स्थगित किया जाये, जब तक कि अध्यक्ष महोदय पाकिस्तान के क्षेत्रों से निर्वाचित उन समस्त सदस्यों के लिये इस सभा के सदस्य होने तथा वाद-विवाद में पूर्वानुसार भग लेने के लिये कोई मार्ग न खोज निकालें।

***श्री जयपाल सिंह** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष माहोदय, सभा के समक्ष जो प्रस्ताव रखा गया है, उसका मैं तीव्र विरोध करता हूं। मैं उसे संकटपूर्ण, अपकारी

तथा साम्प्रदायिक समझता हूं। उसमें अनोखा तर्क है और वह साधारण गणितज्ञान से शून्य है। यह तर्क उपस्थित किया गया है कि प्राप्त हुये सर्वोत्तम अनुमान के अनुसार 2 और जनरल तथा 2 और सिख सदस्य बढ़ा दिये जायें, तथा प्रस्ताव के वाक्यखंड में हमें बताया गया है कि वर्तमान प्रतिनिधित्व 6 जनरल, 4 मुसलमान और 2 सिखों का है। मैं अपने माननीय मित्र से पूछना चाहूंगा कि उन्होंने यह क्यों नहीं सुझाया कि मुसलमान प्रतिनिधियों को कम कर दिया जाये? यह पहला प्रश्न है। यदि मुसलमान पूर्वी पंजाब को छोड़ चुके हैं और अन्यत्र चले गये हैं, तो उनके तर्क के अनुसार–उस तर्क के आधार पर जो उन्होंने सिख और हिन्दुओं के पक्ष में उपस्थित किया है–वास्तव में वही तर्क इस ओर भी लागू होना चाहिये। मैं कहता हूं कि श्रीमान्, जी, यह संकटपूर्ण है। मेरे मित्र श्री दास ने अभी बताया है कि अखिल भारतीय आधार पर इसे विचारना चाहिये और हमें अनिश्चित आधार पर कार्य नहीं करना चाहिये। समस्त देश में जनगणना होनी चाहिये। मेरे प्रांत बिहार को ही लीजिये। यह हम कैसे जानें कि हमें और प्रतिनिधित्व की आवश्यकता नहीं है? बिहार में पूर्वी बंगाल या पश्चिमी पंजाब से या अन्य स्थानों से कितने मनुष्य आये हैं? मैं नहीं समझता कि ऐसे अनुमानों पर हम कार्य कर सकते हैं। वे केवल अनुमान ही हैं। यह परिषद् केवल जनगणना के अंकों को ही स्वीकार कर सकती है। जब तक समस्त भारत की जनगणना न की जाये और जब तक कि हम मुसलमानों की यथार्थ संख्या न जानें और प्रत्येक प्रांत में जो उनकी संख्या में परिवर्तन हुआ है, उसे न जान लें या अन्य लोगों के परिवर्तन को न समझें–मैं नहीं समझता कि तब तक इस सभा का इस प्रस्ताव को स्वीकार करना बृद्धिमत्तापूर्ण होगा। मैं इस प्रस्ताव को अपकारी तथा साम्प्रदायिक समझता हूं।

***दीवान चमनलाल** (पूर्वी पंजाब: जनरल): श्रीमान् जी, यदि अभी-अभी बोलने वाले मेरे माननीय मित्र का भाषण न होता तो मैं इस प्रस्ताव पर नहीं बोलता, उन्होंने अंकों को निराधार बताया और यह कहा कि क्रमबद्ध गणना है ही नहीं। परन्तु मुझे शंका है कि उन्होंने स्टियरिंग कमेटी की रिपोर्ट को पढ़ा ही नहीं, जो कि उनके समक्ष है। रिपोर्ट के अनुसार.......

***श्री जयपाल सिंह:** मुझे वह रिपोर्ट प्राप्त नहीं हुई।

***दीवान चमनलाल:** यदि मेरे माननीय मित्र के पास वह रिपोर्ट नहीं है, तब तो मैं यह भली प्रकार समझ सकता हूं कि वे उस कारण को बिना समझे हुये,

[दीवान चमनलाल]

जिसने कि सभा के समक्ष इस प्रस्ताव को रखने का प्रोत्साहन दिया, बोलने के लिये क्यों खड़े हुये।

श्रीमान् जी, स्थिति यह है। हमारे पास क्रमबद्ध गणना है। काल्पनिक विभाजन के अनुसार इस ओर मुसलमानों की संख्या 30.8 लाख, सिखों की 20.1 लाख और जनरल 50.6 लाख थी। रेडक्लिफ निर्णय के पश्चात अंकों में थोड़ा परिवर्तन हुआ। 30.8 लाख मुसलमानों के स्थान में वह संख्या 40.4 लाख हो गई, 20.1 लाख सिखों के स्थान में 20.3 लाख हो गई और 50.6 जनरल 50.9 लाख हो गई। कुल जनसंख्या 102.6 लाख है। तत्पश्चात् हमारे ऊपर मुसीबत आई और प्रत्येक हिन्दू तथा सिख, सिवाय उनके जो कि कुछ बीहड़ स्थानों में रहे, पश्चिमी पंजाब से पूर्वी पंजाब में आया। इन मनुष्यों की संख्या 22.5 लाख जनरल और 16.7 लाख सिख है। यह लाहौर और मुलतान इलाकों की संख्या है और ये जनगणना की ठीक संख्यायें हैं; यद्यपि मैं स्वयं तो उस आधुनिक वृद्धि के फलस्वरूप जो कि जनगणना के पश्चात् हुई। इसमें 7 प्रतिशत की वृद्धि और करना चाहूंगा; अतः स्थिति यह है कि 120.6 लाख जनसंख्या में से 40.4 लाख मुसलमानों को छोड़कर 80.2 लाख हिन्दू तथा सिख पूर्वी पंजाब में रहे और इसके अतिरिक्त 40.92 लाख सिख और जनरल और आ गये। जो लोग लाहौर, रावलपिंडी और मुलतान के इलाकों से आये वे सामान्यतः पूर्वी पंजाब में ही रहे। उसका कुछ भाग दिल्ली पहुंचा और एक सूक्ष्म अंश अन्य विभिन्न केन्द्रों को गया। परन्तु एक बड़ा भाग अब भी पूर्वी पंजाब में है जिसने कि पंजाब परिषद् में चुने गये सदस्यों को वोट दी थी। वोट देने वाले अब भी वर्तमान हैं इसलिये उन्हें और प्रतिनिधित्व प्राप्त करने का अधिकार है। यही सिद्धांत इस प्रस्ताव का पृष्ठपोषक है। इस कारण तर्क सम्मति से तो हमें जनसंख्या के अनुसार 4 या 5 स्थानों की मांग करनी चाहिये, फिर भी अनावश्यक पासंग पैदा न होने देने के कारण हमने चुनाव के लिये 2 सिख और 2 जनरल सदस्यों की मांग से ही संतोष कर लिया। यह क्यों है कि हम आपके सामने इस प्रस्ताव के रूप में अपने लिए विधान-परिषद् में 4 और प्रतिनिधियों को नियुक्त करने का अधिकार दिये जाने की प्रार्थना कर रहे हैं? आपको विदित होगा कि ऐसा आर्डिनेंस पास किया गया था जिसके द्वारा पश्चिमी पंजाब की धारा सभा के सदस्य, जिन्होंने अपने स्थान पश्चिमी पंजाब में रिक्त कर दिये थे, पूर्वी पंजाब में अपने स्थान ग्रहण कर सकते हैं। उसी सिद्धांत पर हम निर्वाचन क्षेत्रों में दोनों सिख तथा जनरल जनगणना के बढ़ जाने पर प्रकाश

डालते हुये आपसे प्रार्थना करते हैं कि अब हमें 4 और प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया जाये। जो संख्यायें हमने ली हैं है वे रेडक्लिफ सीमा सम्बन्धी कमीशन की संख्यायें हैं। प्रान्तों की वर्तमान संख्याओं का रेडक्लिफ कमीशन की संख्याओं से मिलान करने पर हम इस परिणाम पर पहुंचे कि वृद्धि की सूरत है।

*__श्री जयपाल सिंह:__ एक वैधानिक आपत्ति है। उन्होंने अपने तक के आधार पर मुसलमानों की संख्या को क्यों नहीं घटाया?

*__दीवान चमनलाल:__ रिपोर्ट के उपरान्त पैरा में आपको निम्न बात मिलेगी:

> ''अत: तत्काल ही हम पर एक कठिनाई आ पड़ी कि उन चार मुसलमान सदस्यों का किस प्रकार विचार किया जाये जो कि अब भी विधान-परिषद् के सदस्य हैं, यद्यपि हमको यह बताया गया था कि वे विधान-परिषद् के गत अधिवेशन में उपस्थित नहीं हुये जब कि वह औपनिवेशिक धारा सभा के रूप में कार्य कर रही थी और न वे आने वाले अधिवेशनों में उपस्थित होने का विचार रखते हैं।''

मेरा व्यक्तिगत विचार यह है कि हम इस विषय को वर्तमान रूप में ही रहने दें। सम्भव है कि भविष्य में आपको परिवर्त्तन करने के लिये विवश होना पड़े, अर्थात जब कि एक सदस्य विधान-परिषद् के अधिवेशनों की एक निश्चित संख्या तक उपस्थित नहीं होता तो वह स्वत: ही अपने स्थान को रिक्त कर देता है। क्योंकि अभी ऐसा कोई नियम नहीं है, अत: हम ऐसे आदेश से लाभ नहीं उठा सकते हैं। इस विषय में जो हमने क्रियात्मक उपाय सोचा है, वह यह है कि 4 स्थानों को रहने दिया जाये और पूर्वी पंजाब में आबादी की वृद्धि पर प्रकाश डालते हुये अन्य स्थानों की वृद्धि कर दी जाये और मैं आशा करता हूं कि सभा इसे स्वीकार करेगी और न केवल उनके लिये जो कि दूसरी ओर अपना सर्वस्व खो चुके हैं, वरन् उनके लिये जो इस ओर आ गये हैं उचित विचार करेगी जिससे कि वे अपने विचार आपके समक्ष रख सकें।

*__अध्यक्ष:__ लम्बे वाद-विवाद का अन्त करने के लिये मैं उस पद्धति पर वक्तव्य दूंगा, जिसका इस विशेष प्रस्ताव के सम्बन्ध में अनुसरण किया गया है। यह विषय स्टियरिंग कमेटी के समक्ष आया और उसने यह अनुभव किया कि इस विषय को एक छोटी कमेटी के समक्ष इन अंकों का निरीक्षण करने के लिये रखना

[अध्यक्ष]

आवश्यक है। यह कमेटी डॉ. अम्बेडकर, दीवान चमनलाल, ज्ञानी गुरुमुखसिंह, श्री रफीअहमद किदवई तथा श्री अनन्तशयनम् आयंगर की बनाई गई और उन सब अंकों पर विचार करते हुये जो कि एक ओर से दूसरी ओर जनसंख्या के आने-जाने के सम्बन्ध में प्राप्त हुये, कमेटी ने कुछ सिफारिशें की, जिनके आधार पर कि यह प्रस्ताव सभा के समक्ष आया। इस विषय पर उस उपसमिति ने विचार कर लिया है, जिसको मैंने स्टियरिंग कमेटी की सिफारिश से नियुक्त किया था। सभा को यह अधिकार है कि वह इसे स्वीकार करे या नहीं। मैंने सोचा कि इस स्थिति को मुझे स्पष्ट कर देना चाहिये था। मुझे खेद है कि उस कमेटी की रिपोर्ट नहीं घुमाई गई, केवल प्रस्ताव ही घुमाया गया। यदि वह रिपोर्ट सदस्यों के सम्मुख होती, तो बहुत-सा वाद-विवाद कम हो जाता, परन्तु ऐसा नहीं हो सका; मुझे खेद है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (आसाम: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस प्रस्ताव को अभी असामयिक समझता हूं। एक बार यदि आप इस सिद्धान्त को स्वीकार कर लेंगे तो आप पश्चिमी बंगाल या अन्य स्थान के लोगों को यह अधिकार प्रदान करने में विवश हो जायेंगे। उदाहरणस्वरूप शरणार्थियों की एक बड़ी संख्या दिल्ली में भी आई है। क्या आप दिल्ली के प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ाने के लिये तैयार हैं? इसी प्रकार शरणार्थियों की एक बड़ी संख्या बम्बई भी पहुंची है। क्या आप इस सभा में उनके प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ाने पर विचार करने के लिये तत्पर हैं? श्रीमान् जी, यद्यपि यह बात सबको विदित नहीं होगी, परन्तु यह सत्य है कि बहुत से लोग पूर्वी बंगाल से पश्चिमी बंगाल और आसाम तक भी पहुंच गये हैं। यदि आप इस बात को मान लेते हैं तो क्या उनको प्रतिनिधित्व नहीं दिया जाना चाहिये? श्रीमान् जी, एक माननीय सदस्य मि. खलीकुज्जमां ने संयुक्त प्रान्त के निर्वाचन-क्षेत्र को छोड़ दिया और पाकिस्तान गये क्या उसकी भी कोई व्यवस्था नहीं होनी चाहिये? इसलिये मैं कहता हूं कि यदि आप इस आधार पर और अधिक प्रतिनिधित्व देना चाहते हैं कि लोग अन्य प्रान्तों से आ गये हैं, तो अन्य लोगों के सिलसिले में जो कि प्रान्त छोड़ चुके हैं, प्रतिनिधियों की कमी होनी चाहिये। अत: इस सबके लिये व्यवस्था की आवश्यकता है और जब तक वह व्यवस्था समस्त प्रतिनिधित्व में नहीं की जाती, माननीय सदस्य द्वारा बताई गई विधि के अनुसार कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती।

***बेगम ऐजाज रसूलः** (संयुक्त प्रान्तः मुस्लिम): श्रीमान जी, जिस रिपोर्ट का आपने अभी उल्लेख किया, मुझे खेद है कि मैं उसका अध्ययन नहीं कर सकी क्योंकि वह मुझे पत्रों में नहीं मिली। मैं इसलिये आपसे निवेदन करूंगी कि आप कृपा कर इस महत्वपूर्ण विषय पर वाद-विवाद को तब तक स्थगित कर दें, जब तक कि सदस्यों को नियमों के इन संशोधनों की पेचीदगियों का अध्ययन करने का अवसर न मिले।

श्रीमान् जी, यह सत्य है कि लोगों की एक बड़ी तादाद पूर्वी पंजाब से पश्चिमी पंजाब को गई है। इसी तरह गैर मुस्लिमों की एक बड़ी तादाद पश्चिमी पंजाब से पूर्वी पंजाब में आई है। उनको इस सभा में नुमाइन्दगी मिलनी चाहिये और जहां तक इस मजमून का ताल्लुक है, यह बिल्कुल ठीक मांग है और मैं समझती हूं कि यहां कोई भी उससे इन्कार नहीं करता है। लेकिन इसके साथ-साथ यह भी देखना है और अच्छी तरह गौर करना है कि कितने लोग पंजाब के एक हिस्से से दूसरे हिस्से को गये और वहां बस गये। हर शख्स जानता है कि गैर मुस्लिम सिर्फ पूर्वी पंजाब को ही नहीं गये, बल्कि वे यू.पी., दिल्ली प्रान्त तथा और जगह भी गये। इस वक्त हालत बड़ी नाजुक है। किसी संशोधन को इस सभा में पास करने के पहले इन सब विषयों को सन्दर्भ सहित एक साथ लेना पड़ेगा। इसलिये मैं आदर-पूर्वक आपसे विनय करूंगी कि किसी आगे आने वाली तारीख तक इन विषयों पर विचार किये जाने को स्थगित कर दें, जिससे कि हमें यह ठीक-ठीक मालूम हो जाये कि पूर्वी पंजाब में बसने वाले लोगों की क्या तादाद है और जो लोग पश्चिमी पंजाब वापस जाते हैं, उनकी क्या तादाद है और सदस्यों को भी जब तक कमेटी की रिपोर्ट पर गौर करने का मौका मिल जाये। मैं आशा करती हूं कि मेरा यह सुझाव मंजूर कर लिया जायेगा और इस विषय पर विचार करना आगे आने वाली तारीख तक स्थगित कर दिया जायेगा।

(पंडित ठाकुरदास भार्गव मंच पर आये।)

***अध्यक्षः** मैं माननीय सदस्य से यथाशक्ति संक्षेप में बोलने के लिये निवेदन करूंगा।

पं. ठाकुरदास भार्गवः जनाब प्रेसीडेंट साहब, अभी एक तजवीज बेगम साहिबा ने पेश की है कि इस मामले को पोस्टपोन कर दिया जाये और इसकी वजह यह बयान की है कि कुछ हिस्सा आबादी का वैस्ट पंजाब में बाकी है और

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

कुछ देहली आया हुआ है और कुछ यू.पी. में। लिहाजा इस वक्त इस मामले पर गौर न किया जाये। चन्द बजृ दीगर दोस्तों ने दिये हैं कि चूकि कुछ आबादी बिलोचिस्तान और सिन्ध से भी आई है, उनको भी रिप्रजेन्टेशन दिया जाये। यह बात सही है कि सब नये आने वालों को रिप्रजेन्टेशन का हक है और इस तरह से आबादी की कोई तमीज नहीं की जा सकती। मैं उसका मुखालिफ नहीं हूं कि उन सबको हो जिस तरह मुमकिन हो रिप्रजेन्टेशन दिया जाये। लेकिन उस बात को याद रखना चाहिये कि इस मामले को इस तरह से देखा जाये जो यह प्रैक्टिकल है। इसमें शक नहीं कि वैस्ट पंजाब से 40 लाख के करीब इन्सान ईस्ट पंजाब में और उन इलाकों में गये हैं और गवर्नमेंट का यह फैसला हो चुका है कि जितने मुसलमान मशरकी पंजाब में हैं, सबके सब वैस्ट पंजाब चले जायें और हिंदू सिख जो मगरबी पंजाब में हैं वे मशरकी पंजाब में आ जायें। अब हिंदुओं और सिखों का सवाल है। उनके लिये नहीं कहा जा सकता कि सही सही तादाद क्या है और जो यहां देहली में आये हुये हैं या यू.पी. में आ गये हैं, वह दोनों जगह पांच-पांच लाख से कम हैं। लेकिन चूंकि रिप्रजेन्टेशन 5 लाख से कम पर नहीं मिलता है और पांच लाख से ज्यादा पर मिलता है, इसलिये ईस्ट पंजाब में जो आबादी आई है उसको तो कम से कम जरूर रिप्रजेन्टेशन मिलना चाहिये। और देहली और यू.पी. में जो आज मौजूद हैं यह भी ईस्ट पंजाब में चले जायेंगे। इसलिये मैं अर्ज-करूंगा कि उनके रिप्रजेन्टेशन दी जाने को मुल्तवी करना या रिप्रजेन्टेशन उनको न देना सख्त बेइन्साफी होगी। यह भी आप समझ सकते हैं कि जो लोग यहां आये हैं वे राजी खुशी नहीं आये हैं और गवर्नमेंट ने एक्सचेन्ज आफ पौपुलेशन को उसे फेलवकौल से मंजूर भी कर लिया है। लिहाजा मैं गवर्नमेंट से और मेम्बरान से बहुत अदब से कहूंगा कि आप इस मामले को प्रेक्टिकल निगाह से देखिये और इस हक से उन लोगों को महरूम न कीजिये। उन लोगों को जिन्हें आज रिफ्यूजी कहा जा रहा है, उनका यूनियन में और कान्स्टीट्यूशन बनाने में उतना ही हक है जितना कि आप लोगों का। लिहाजा जिस तरह 10 लाख की आबादी पर रिप्रजेन्टेशन आपने बाकी आबादी हिंद यूनियन को दिया है, इस तरह से वैस्ट पंजाब से जो आबादी उखड़ कर आई है, उसको भी सही मानों में रिप्रजेन्टेशन दें, ताकि वह विधान बनाने में हिस्सा ले सकें। इसलिये मैं अमैंडमैंट की बहुत जोर से ताईद करता हूं।

***अध्यक्षः** क्या और वाद-विवाद करने की आवश्यकता है? मेरे विचार से तो यथेष्ट वाद-विवाद हो गया।

*श्री मिहिरलाल चट्टोपाध्याय: (पश्चिमी बंगाल: जनरल): श्रीमान् जी, मैं केवल यही निवेदन करूंगा कि जो सिद्धान्त पूर्वी पंजाब के लिये माना जाये वही पश्चिमी बंगाल के लिये भी माना जाये। प्रत्येक व्यक्ति इस बात को जानता है कि पूर्वी बंगाल से लगभग 10 लाख व्यक्ति पश्चिमी बंगाल में आये हैं। यहां इस प्रस्ताव में पश्चिमी पंजाब से पूर्वी पंजाब को स्थानान्तर गमन के आधार पर अतिरिक्त स्थान निश्चित किये जा रहे हैं। मैं निवेदन करता हूं कि पश्चिमी बंगाल के लिये भी इसी सिद्धान्त का अनुसरण किया जाये और पूर्वी बंगाल से पश्चिमी बंगाल में लोगों के आ जाने के कारण आबादी की वृद्धि पर विचार करते हुये एक और स्थान उसे भी दिया जाये। कुछ समय पूर्व ही हमने पश्चिमी बंगाल को दो और सीट देने का प्रस्ताव स्वीकार किया है। पर वह सीमा सम्बन्धी रेडक्लिफ निर्णय के आधार पर था। यदि स्थानान्तरित जनसंख्या के प्रश्न पर पश्चिमी पंजाब के मामले में विचार किया जाता है, तो मैं निवेदन करता हूं कि उसी रूप में बंगाल पर विचार करना चाहिये और उसी सिद्धान्तानुसार पश्चिमी बंगाल को एक और सीट दी जानी चाहिये।

*नवाब मुहम्मद इस्माइल खां: जनाब सदर, जो लोग वैस्ट पंजाब से आये हैं और जो अभी और आने वाले हैं और माइग्रेट करेंगे उनकी सही तादाद का इल्म अब एक नहीं हो सका है और यह भी नहीं मालूम हो सका है कि ईस्ट पंजाब की आबादी कितनी होगी। जब सही-सही फिगर्स मालूम हो जायेंगी तो उस वक्त रिप्रजेन्टेशन बिल्कुल सही-सही हो सकता है। लिहाजा मैं अर्ज करूंगा कि इसको थोड़े दिनों के लिए मुल्तवी कर दिया जाये।

*अध्यक्ष: अब मैं प्रस्तावक महोदय से प्रार्थना करूंगा कि वे उत्तर दें।

ज्ञानी गुरुमुखसिंह मुसाफिर: साहिबे सदर, मैं इस मामले को बहुत साधारण समझता था। इसलिए मैंने इस मामले को पेश करते हुये जो तकरीर की वह भी बहुत साधारण थी। मैं अब भी यह समझता हूं कि यह बिल्कुल सीधी साधी बात है। हमारे एक आनरेबल मेम्बर साहब ने इस पर ऐतराज किया है कि यह सेक्टेरियन तजवीज है। सिर्फ मेरी दाढ़ी को देखकर आप इसको अगर सेक्टेरियन समझते हैं तो यह अलहदा बात है, वरना इसमें कोई ऐसी बात नहीं। अगर दो हिंदू और दो सिख सीटों का मुतालबा करने से कोई तजवीज फिरकेवाराना हो सकती है तो अभी मिस्टर आयंगर ने वैस्ट बंगाल के लिए एक रिजोल्यूशन पेश किया, जिसमें

[ज्ञानी गुरुमुखसिंह मुसाफिर)

एक हिंदू और एक मुस्लिम सीट बढ़ाने का मुतालवा था। इसको आपने सेक्टेरियन नहीं समझा। ईस्ट पंजाब की मुस्लिम सीटों को हटाने के बारे में जो कुछ कहा गया है, उस पर मुझको कोई ऐतराज नहीं है। इस वक्त पंजाब का एक खास मामला है। मुझे यह बात कहनी पड़ती है कि ''जिस तन लागे वही जाने, कौन जाने पीर पराई'' पंजाब जख्म खुर्दा और मुसीबत जदा है। पंजाब के लोग जिन्होंने मुसीबतें उठाई हैं और जिनकी प्रौबलेम्स गवर्नमेंट के सामने हैं, उनको हल करने में वही मददगार साबित हो सकते हैं, क्योंकि उन्होंने अपनी आखों से ये सब बातें देखी हैं। अभी बेगम साहिब और नवाब साहिब ने जो इल्तवा का सवाल उठाया है, मैं समझता हूं कि इस सवाल का इस वक्त पोस्टपोन करना पंजाबियों के दिल को दुख पहुंचाना होगा। इसलिए मैं हाउस से अपील करूंगा कि मेरे मोशन को मंजूर कर लिया जाये। इस तरह की नुमायन्दगी बढ़ाने से उन लोगों को जिन्होंने तकलीफें उठाई हैं, बहुत इमदर्दी मिलेगी। यही नहीं बल्कि इससे हमारी गवर्नमेंट को जो रोजाना तकलीफें उठानी पड़ रही हैं, उनमें किसी कदर कमी हो जायेगी। हमारे मिनिस्टर्स को किसी वक्त छुट्टी नहीं मिलती, न दिन को आराम है और न रात को चैन। इसकी वजह यह है कि पंजाब से आये हुये लोगों की दास्तान इस कदर असर रखती है कि जिसको सुनकर इंसान परेशान हो जाता है। सर जफरुल्ला साहब ने यू. एन. ओ. में कहा कि मेरा घर जलाया गया है, उसका घर तो शायद जलाया गया है कि नहीं, मैं नहीं जानता। मगर हां, वैस्ट पंजाब के हजारों नहीं बाल्कि लाखों ऐसे हैं जिनकी मिसालें पेश की जा सकती हैं। उनमें से कोई यू.एन.ओ. में होता तो बताता कि किस तरह कहीं पर उनको बुरी तरह मारा और लूटा गया है, कहीं पर उनके घर जलाये गये हैं, कहीं उनकी बहू बेटियां भगाई गई हैं और इसी तरह बहुत-सी बातें हैं, जो बयान नहीं की जा सकती हैं। अभी नवाब साहब ने फरमाया है कि चूंकि पौपुलेशन का सही अन्दाजा नहीं हो सकता, इसलिए इस मामले को कुछ दिनों के लिए मुल्तवी कर दिया जाये। मैं समझता हूं और मुझे यकीन है कि इस वक्त इल्तवा का सवाल नहीं है, बल्कि पंजाब के मामलों को सुलझाने का सवाल है। पंजाब में जिन लोगों पर सख्त मुसीबत आई है, उनमें कांग्रेस के बहुत बड़े-बड़े काम करने वाले और जमींदार लोग भी थे, जिनके घर जलाये गये, जिनको जान से मारा गया। वह थे कैमलपुर के सरदार जसवन्तसिंह, गुजरात डिस्ट्रिक्ट कांग्रेस के प्रेसिडेण्ट सरदार हुकूमत सिंह लाम्बा, गुजरानवाला कांग्रेस के सदस्य लाला निरंजन दास बंगा एडवोकेट।

***अध्यक्षः** मैं माननीय सदस्य के भाषण में हस्तक्षेप करना नहीं चाहता था।

***नवाब मुहम्मद इस्माइलः** मेरा हरगिज यह मतलब नहीं था। क्या मालूम सरदार जी क्या समझे हैं और क्या उनको गलतफहमी हुई। मेरा मकसद सिर्फ इतना था कि चूंकि पौपुलेशन का एक्सचेंज नहीं हुआ है, इसलिए इसको अभी थोड़े अरसे के लिए मुल्तवी कर दिया जाये।

***अध्यक्षः** माननीय सदस्य को सभा के समक्ष प्रस्ताव पर सीमित रहना चाहिये।

ज्ञानी गुरुमुखसिंह मुसाफिरः मैंने नवाब साहब का जो फरमान था, उसको गलत नहीं समझा। मैं इसके मुताल्लिक कहूंगा कि मेरे थोड़े पंजाबी भाई देहली में आये हैं और दूसरी जगह भी गये हुये हैं, लेकिन वह अपने घर की तरफ ही देख रहे हैं और वहीं जाना चाहते हैं। जहां-जहां पंजाबी गये हैं, वहां उनकी तकलीफों का खात्मा नहीं हुआ। अलवर और भरतपुर से वापस हो रहे हैं। देहली से धक्के खाकर वापस होने की सोच रहे हैं। पटियाला और दीगर रियासतों से भी कई वापस जायेंगे। कई जगहों ने ज्यादा पंजाबियों के लेने से इन्कार कर दिया है। यहां माननीय पंत जी बैठे हैं; आप उनसे मालूम कर सकते हैं कि वह कितने पंजाबियों को अपने यहां यू.पी. में मुस्तकिल तौर पर ले सकते हैं। लिहाजा यह सवाल इस जगह पर मान लेना चाहिये कि ईस्ट पंजाब का मुतालबा बिल्कुल ठीक है। साहिबे सदर, मैंने आपकी विसातत से इस रेजुलेशन को पेश किया है, और मुझको उम्मीद है कि हाउस इसको मंजूर करेगा।

***अध्यक्षः** अब मैं प्रस्ताव पर वोट लूंगा। कोई संशोधन नहीं है।
प्रस्ताव है कि:

''चूंकि पूर्वी पंजाब का विधान-परिषद् में इस समय प्रतिनिधित्व 6 जनरल, 4 मुस्लिम और 2 सिख द्वारा होता है:

और चूंकि यह व्यवस्था सम्राट-सरकार के 3 जून सन् 1947 ई. के वक्तव्य के पैरा 14 के अनुसार की गई थी और विधान परिषद् ने अपने 25 जुलाई सन् 1947 ई. के प्रस्ताव द्वारा पूर्वी पंजाब की तत्कालीन सीमाओं के आधार पर इसकी पुष्टि की थी,

[अध्यक्ष]

और चूंकि उक्त तारीखों के पश्चात् सीमा सम्बन्धी कमीशन के निर्णय के अनुसार न केवल पूर्वी पंजाब की फिर से सीमायें ही निर्धारित की गई हैं, वरन् जनसमूह के स्थानान्तर गमन के कारण मुसलमानों का पूर्वी पंजाब से पश्चिमी पंजाब को और गैर मुस्लिमों का पश्चिमी पंजाब से पूर्वी पंजाब को गमन करने से जनसंख्या की पूर्ण रूपरेखा ही बदल गई है,

और चूकि इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप सर्वोत्तम प्राप्त अनुमानों के आधार पर पूर्वी पंजाब को विधान-परिषद् में अब 8 जनरल और 4 सिख सदस्य भेजने का अधिकार है,

यह निश्चय किया जाता है कि आकस्मिक रूप से रिक्त हुये स्थानों की पूर्ति के लिये जो पद्धति निर्धारित की गई है उसके अनुसार वर्तमान पूर्वी पंजाब से 2 और जनरल तथा 2 और सिख सदस्यों के भेजने की व्यवस्था की जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

नियमों में संशोधन तथा परिवर्द्धन

नियम 2 तथा 3 में संशोधन

श्री बलवन्तराय गोपालजी मेहता (शेष रियासतें): *[मैं प्रस्ताव करता हूं कि "विधान-परिषद् के नियमों में निम्न संशोधनों पर विचार किया जाये:

नियम-नियम 2 में वाक्यखंड (ग) के पश्चात् निम्न नया वाक्यखंड (गग) बढ़ा दिया जाये:

"(ग ग) 'मंत्री' से आशय भारत के गवर्नर जनरल की कौंसिल के सदस्य से है।"

नियम 3-नियम 3 में निम्न व्यवस्था बढ़ा दी जाये:

"बशर्त्ते कि प्रत्येक मंत्री को जो कि परिषद् का सदस्य नहीं है, परिषद् में बोलने तथा अन्य प्रकार से परिषद् की और परिषद् की किसी समिति की, जिसका वह सदस्य बना दिया जाये, कार्यवाही में भाग लेने का अधिकार है, पर इस नियम के आधार पर उसे वोट देने का अधिकार नहीं है।"]

जो संशोधन मैं आपके सामने रखता हूं, यह हमने पार्लियामैंट के लिए स्वीकार कर लिया है और मैं समझता हूं कि इस उसूल को दूसरी जगह स्वीकार कर

लिया गया है, यह सभा भी स्वीकार कर लेगी। इससे हमारे कई मिनिस्टर जो इस असेम्बली के मेम्बर नहीं हैं, चुने गये हैं; उनके यहां हाजिर होने से हम उनके अनुभवों का लाभ उठा सकें। इसलिए मैं सिफारिश करता हूं आप इसको मंजूर करेंगे।

***अध्यक्षः** मैं यह मान लेता हूं कि इस प्रस्ताव का कि ''विधान-परिषद् के नियमों में निम्न संशोधनों पर विचार किया जाये'' का वास्तविक अर्थ यह है कि निम्न संशोधन किये जायें।

प्रस्ताव पेश हो चुका है। एक संशोधन की सूचना है। श्री नजीरुद्दीन अहमद अपना संशोधन पेश करें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान् जी, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

''नियम 3 की प्रस्तावित व्यवस्था में से 'परिषद् में बोलने' और कार्यवाही में भाग लेने के पश्चात् अर्द्धविराम तथा 'इस नियम के आधार पर' शब्द हटा दिये जायें।"

ये अर्द्धविराम बिल्कुल अनावश्यक है।

'इस नियम के आधार पर' शब्दों के हटाने का अन्तिम संशोधन आवश्यक प्रतीत होता है, क्योंकि व्यवस्था मंत्री की उस स्थिति से आरम्भ होती है, जब कि वह सदस्य नहीं है। जब वह सदस्य ही नहीं है तो उसे वोट देने का अधिकार नहीं है यह प्रश्न कि उसका वोट इस नियम पर निर्भर है पैदा ही नहीं होता; क्योंकि हमने यह मानकर कि मंत्री सदस्य नहीं है आरम्भ किया है। इसलिये उसे वोट देने का अधिकार ही नहीं है। अतः ये शब्द अनावश्यक प्रतीत होते हैं। ये दोनों संशोधन मसविदा सम्बन्धी हैं।

***अध्यक्षः** संशोधन पेश हो चुका है। अब प्रस्ताव और संशोधनों पर बहस हो सकती है।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** अध्यक्ष महोदय, मैं इस प्रस्ताव का विरोध करता हूं। यह कहा जाता है कि ब्रिटिश पार्लियामेंट सर्वोच्च संस्था है और वह सब कुछ बना या बिगाड़ सकती है। यह भी कहा जाता है कि ब्रिटिश पार्लियामेंट यद्यपि सर्वोच्च संस्था है और वह सब कुछ बना या बिगाड़ सकती है, परन्तु फिर भी

[मि. तजम्मुल हुसैन]

वह कुछ प्रतिबन्धों के अन्तर्गत कार्य करती है जैसे कि वह अपना उत्तराधिकारी निश्चित नहीं कर सकती है; क्योंकि जनता की यह इच्छा नहीं है कि ब्रिटिश पार्लियामेंट यह निर्णय करे कि उसके पश्चात् उसका कौन उत्तराधिकारी हो। दूसरी बात यह है कि ब्रिटिश पार्लियामेंट ऐसा कोई कानून नहीं बना सकती जिसका पालन जनता की बहुसंख्या द्वारा न हो सके। तीसरे वह लोक सभा में सदस्य होने के लिये किसी व्यक्ति को नामजद या उसका निर्वाचन नहीं कर सकती है। यह अधिकार विशेषकर जनता को ही दिया गया है। इसी प्रकार श्रीमान् जी, इसमें सन्देह नहीं कि यह सभा सर्वोच्च संस्था है और यह सब कुछ बना या बिगाड़ सकती है, परन्तु फिर भी इसे ब्रिटिश पार्लियामेंट के समान कुछ प्रतिबन्धों के अन्तर्गत कार्य करना है। उदाहरणस्वरूप श्रीमान् जी, यह अपना उत्तराधिकारी निश्चित नहीं कर सकती। यह कोई ऐसा कानून नहीं बना सकती, जिसका जनता की बहुसंख्या द्वारा पालन न हो सके और इसे विधान-परिषद् के सदस्य होने के लिये किसी व्यक्ति का नाम न तो नामजद करना चाहिये और न कर ही सकती है।

प्रस्ताव यह नहीं कहता है कि माननीय मंत्री जो कि सदस्य नहीं हैं, वे सदस्य बन जायें, पर वह साफ कहता है कि वे मंत्री जो कि इस महान् सभा के सदस्य नहीं हैं, इस सभा की बैठकों में उपस्थित हो सकते हैं, भाग ले सकते हैं, भाषण दे सकते हैं, पर वोट नहीं दे सकते।

मेरा निवेदन यह है कि कुछ प्रतिबन्ध होना चाहिये। आपको कहीं न कहीं सीमित करना ही चाहिये। एक बार यदि आप यह स्वीकार कर लेते हैं कि यह सभा बाहर वालों को ले सकती है और ले सकेगी, तो उसका कहीं भी अन्त न होगा, यद्यपि मंत्रियों के लिये मेरे हृदय में निःसन्देह बड़ी श्रद्धा है। इस सभा के लिये तो वे बाहर वालों के समान ही हैं।

इस समय यदि आप इस सिद्धान्त को मान लेते हैं कि हम बाहर वालों को अपने साथ बिठा सकते हैं और उनकी बातों से लाभ उठा सकते हैं, तो अन्य समय आप यह कह सकते हैं कि आप विशेषज्ञों को भी लेंगे, क्योंकि उनकी बातें भी लाभप्रद होंगी। इसमें सन्देह नहीं कि आप मंत्रियों को इसलिये चाहते हैं कि यदि उनके विभागों के सम्बन्ध की किसी बात पर वाद-विवाद हो तो उनकी राय आवश्यक होगी। मुझे लगता है कि आपको इसे कहीं न कहीं सीमित करना

चाहिये। लोक-सभा में सब सदस्य निर्वाचित किये जाते हैं, एक भी नामजद नहीं होता। भारत में भी यह कानून है कि सामयिक प्रधान मंत्री उस व्यक्ति को मंत्री चुन सकता है जो कि धारासभा का सदस्य न हो। इस प्रकार वह छः मास तक मंत्री रहता है—पर उसे उस सभा में निर्वाचित हो जाना चाहिये। यदि आप माननीय मंत्रियों को इस सभा में रखना चाहते हैं, तो कुछ सदस्य क्यों नहीं पदत्याग कर स्थान रिक्त कर देते हैं। श्रीमान् जी, हम यहां पर हैं। मेरे विचार से यद्यपि मुझे पूरा विश्वास नहीं है, लेकिन फिर भी प्रत्येक सदस्य 10 लाख जनता का प्रतिनिधि है। सारा संसार जानता है कि इस विधान-परिषद् का जनता द्वारा चुनाव किया गया था। वे क्या कहेंगे? बाहर वालों को यहां रखकर क्या हम संसार के समक्ष विनोद की सामग्री नहीं बन रहे हैं?

श्रीमान् जी, विधान-परिषद् के गत अधिवेशन का मुझे कुछ स्मरण है कि ऐसी बात चली थी कि इस सभा में भाषण देने के लिये महात्मा गांधी को प्रेरित किया जाये और एक माननीय सदस्य ने कहा था कि यह ठीक नहीं है। श्रीमान् जी, महात्मा गांधी संसार का महानतम व्यक्ति है और हम यह मानते हैं कि सब उन्हीं के कारण है। हमारी सदस्यता उन्हीं के कारण है, सारा विधान उन्हीं के कारण है और हमारी स्वतंत्रता उन्हीं के कारण है। यदि इतने महान व्यक्ति को बुलाने की हम प्रार्थना न कर सकें तो क्या उन व्यक्तियों को जो कि उनसे बहुत निम्न श्रेणी के हैं, इस सभा में भाषण देने दिया जाये? जनतंत्र का नियम भी हमें किसी बाहर वालों को यहां आमन्त्रित करने से रोकता है।

हम यहां दलबन्दी के आधार पर कार्य नहीं कर रहे हैं, परन्तु कांग्रेस का दल देश पर शासन कर रहा है। वे बहुसंख्यक हैं। मैं कांग्रेसदल में नहीं हूं और वे अपनी वोटों से सब कुछ पास कर सकते हैं। अतः यदि यह दलबन्दी के आधार पर किया जाता है तो मैं इसे ठीक नहीं समझता हूं। जैसा कि मैंने कहा है कि हमें कहीं न कहीं उसको सीमित करना चाहिये। मैं निवेदन करता हूं कि सभा मेरा प्रस्ताव स्वीकार करे और इस प्रस्ताव को रद्द करे।

***अध्यक्षः** क्या मैं यह बता दूं कि विधान-परिषद् के गत अधिवेशन में एक प्रस्ताव पास किया गया था, जिसमें इसी बात को स्वीकार किया गया था और उस बात की केवल व्यवस्था करने के लिये ही यह प्रस्ताव पेश किया गया है। मावलंकर-कमेटी की रिपोर्ट के आधार पर यह प्रस्ताव पास किया गया था कि

[अध्यक्ष]

उपनिवेश के मंत्रियों को जो कि विधान-परिषद् के सदस्य नहीं हैं, विधान-निर्माण-कार्य में उपस्थित होने और भाग लेने का अधिकार है और जब तक कि वे विधान-परिषद् के सदस्य न हो जायें, उनको वोट देने का अधिकार नहीं है। गत अधिवेशन में विधान-परिषद् ने यह स्वीकृत कर लिया था और नियमों में यह संशोधन इस समय इसलिये किया जा रहा है, ताकि वह नियमों के अन्तर्गत आ जाये। वास्तव में गत अधिवेशन में इस प्रश्न पर वाद-विवाद हो चुका है और यह स्वीकार किया जा चुका है।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** अध्यक्ष महोदय, यदि आरम्भ में आपने मुझे यह बता दिया होता, तो सभा का समय व्यर्थ नहीं जाता।

***अध्यक्षः** मैंने सोचा कि जो कुछ गत अधिवेशन में हुआ था, उससे सदस्य परिचित है। खैर, स्थिति यही है।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** मैं निवेदन करता हूं कि भविष्य में आप सदस्यों को यह सूचना दे दिया करें कि यह प्रस्ताव रस्मी है और हमें वाद-विवाद करने का अधिकार है या नहीं। यदि आप यह बता देते कि यह प्रस्ताव पास हो चुका है तो कोई भी सदस्य बोलने खड़ा नहीं होता।

***अध्यक्षः** क्या और कोई सदस्य बोलना चाहता है?

मैं संशोधन तथा प्रस्ताव पर वोट लूंगा।

***श्री बलवन्तराय गोपालजी मेहताः** मिस्टर नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन को मैं स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्षः** मिस्टर नजीरुद्दीन अहमद का संशोधन प्रस्तावक को ग्राह्य है। मैं समझता हूं कि सभा संशोधन को स्वीकार करती है।

संशोधन स्वीकृत हुए।

***अध्यक्षः** अब संशोधित प्रस्ताव पर मत लिया जाता है।

प्रस्ताव अपने संशोधित रूप में पास हुआ।

अतिरिक्त नियम 5क और 5ख

***श्री पी. गोविन्द मेनन** (कोचीन)**:** अध्यक्ष महोदय, जो प्रस्ताव मैं पेश करने जा रहा हूं, उसका अभिप्राय यह है कि भारतीय रियासतों के प्रतिनिधियों की अगर

कोई जगह इस सभा में आकस्मिक रूप से रिक्त हो जाये, तो उसकी पूर्ति के लिए एक विधि निर्धारित कर दी जाये। वर्तमान नियमों में, नियम नं. 5 में प्रातों तथा अजमेर-मेरवाड़ा और कुर्ग के प्रतिनिधियों की जगहें आकस्मिक रूप से रिक्त होने पर, उसकी पूर्ति के लिए एक विधि निर्धारित करने की बात रखी गयी है। इस नियम में एक कमी है। उसमें यह नहीं बताया गया है कि भारतीय रियासतों के प्रतिनिधियों की जगह अगर खाली हो जाये तो उसकी पूर्ति कैसे की जायेगी। मेरे नाम में जो प्रस्ताव है, उसके द्वारा नियम 5 के बाद 2 अतिरिक्त नियम नं. 5-क और 5-ख जोड़ने की बात रखी गई है, ताकि यह कमी दूर हो जाये।

इसलिए श्रीमान्, मेरा प्रस्ताव है कि:

''नियम 5 के बाद निम्नलिखित 2 नियम-5-क और 5-ख और जोड़े जायें''

''5-क-जब कि मृत्यु, त्याग पत्र अथवा अन्यथा किसी तरह किसी भारतीय रियासत का प्रतिनिधित्व करने वाले किसी सदस्य का स्थान सभा में रिक्त हो जाये, तो अध्यक्ष इसकी विज्ञप्ति निकाल देंगे और सम्बन्धित भारतीय रियासत के शासक को लिखकर अनुरोध करेंगे कि वह निर्वाचन अथवा मनोनीतकरण द्वारा, जैसी भी स्थिति हो, यथासम्भव शीघ्र रिक्त स्थान की पूर्ति की व्यवस्था करें।''

''5-ख-यदि सभा के किसी ऐसे सदस्य का स्थान रिक्त हो जाये, जो एक से अधिक भारतीय रियासतों का प्रतिनिधित्व करता था, तो अध्यक्ष इसकी विज्ञप्ति निकाल देंगे और सम्बंधित भारतीय रियासतों के शासकों को लिखकर अनुरोध करेंगे कि वे उसी पद्धति से जिससे कि पूर्व सदस्य चुना गया था, यथा-सम्भव शीघ्र रिक्त स्थान की पूर्ति की व्यवस्था करें।''

श्रीमान्, विधि सम्बन्धी नियमों में यद्यपि इन नियमों को स्थान नहीं दिया गया है, फिर भी कतिपय नियमों द्वारा अध्यक्ष को जो अधिकार दिये गये हैं, उनके बल पर ये नियम स्थायी आज्ञाओं में शामिल हैं। प्रस्ताव द्वारा यही प्रयास किया जा रहा है कि इन स्थायी आज्ञाओं को ही नियमों में शामिल कर लिया जाये।

श्री सन्तानम् के नाम में इस आशय का संशोधन है कि नियम 5-क में यह आदेश जोड़ दिया जाये: ''किन्तु शर्त यह है कि पहले जो स्थान मनोनीतकरण द्वारा भरा गया था, उसके रिक्त होने पर उसकी पूर्ति शासक निर्वाचन द्वारा करेगा।"

[श्री पी. गोविन्द मेनन]

मैं इस समय भी कह सकता हूं कि पेश किये जाने पर मैं इस संशोधन को मंजूर करूंगा; क्योंकि इससे सम्बन्धित राजा को यह मौका मिलेगा कि वे रिक्त स्थान की पूर्ति चुनाव द्वारा करें, जहां पहले मनोनीतकरण द्वारा वह स्थान भरा गया था।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव पेश हो चुका है। मुझे संशोधनों की सूचना भी मिली है। मि. नजीरुद्दीन अहमद!

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान् मैं यह संशोधन पेश करने की अनुमति चाहता हूं कि:

''पैरा 1 में 'be made part' शब्दों की जगह 'be omitted and be inserted as Rules 5-A & 5-B respectively' शब्द तथा 'amendments' शब्द की जगह 'amendment' शब्द रखे जायें।"

क्या मैं अपना दूसरा संशोधन भी उपस्थित करूं?

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि आपका पहला संशोधन अनावश्यक है, क्योंकि वे लोग प्रस्ताव के दूसरे हिस्से के मुताबिक नियमों को जोड़ने ही जा रहे हैं। अगर आप इसे उठा लें तो अपना दूसरा संशोधन पेश कर सकते हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान् मैं यह संशोधन पेश करता हूं कि:

"प्रस्तावित नियम 5-क में 'भारतीय रियासत के शासक' शब्दों की जगह 'रियासत के शासक' शब्द रखे जायें।"

संशोधन के अन्य अंश को मैं नहीं पेश करूंगा।

श्रीमान्, जहां तक पहले संशोधन का सम्बन्ध है, इससे नियम पर कोई असर नहीं पड़ता है। सिर्फ उसके शीर्षक पर असर पड़ता है। दूसरे संशोधन के सम्बन्ध में यह बात है कि अगर हम सिर्फ 'रियासत' शब्द रखते हैं तो उसका मतलब ही है, 'भारतीय रियासत' से। यहां 'भारतीय' शब्द अनावश्यक है। इन शब्दों के साथ मैं संशोधनों को उपस्थित करता हूं।

***अध्यक्ष:** आप और हिस्से को नहीं पेश करते हैं?

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** नहीं, मैं नहीं पेश करूंगा।

***श्री के. सन्तानम्** (मद्रासः जनरल): श्रीमान्, मेरा प्रस्ताव है कि:

नियम 5-क के अन्त में निम्नलिखित आदेश जोड़ दिया जाये:

''किन्तु शर्त यह है कि पहले जो स्थान मनोनीतकरण द्वारा भरा गया था, उसके रिक्त होने पर उसकी पूर्ति शासक निर्वाचन द्वारा करेगा।''

चूंकि प्रस्तावक ने खुद यह कहा है वह इसे मंजूर कर लेंगे मैं सभा का अधिक समय नहीं लूंगा। मैं नहीं चाहता कि कोई राजा यह कहे: "मैं तो निर्वाचन द्वारा रिक्त स्थान की पूर्ति के लिए राजी हूं, पर परिषद् ने ऐसा करने पर रुकावट डाल दी है और नियम निर्धारित कर दिया है कि मैं चुनाव द्वारा रिक्त स्थान की पूर्ति न करूं।" आशा है सभा इस संशोधन को स्वीकार करेगी।

***अध्यक्षः** क्या कोई सदस्य इसके सम्बन्ध में कुछ कहना चाहता है?

***श्री पी. गोविन्द मेननः** श्रीमान्, जैसा कि मैंने कहा है, मैं श्री सन्तानम् के संशोधन को मंजूर करता हूं। मिस्टर नजीरुद्दीन अहमद ने जो संशोधन रखे हैं, उनके सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता हूं कि उनका पहला संशोधन, जिसमें कहा गया है कि ''be made part'' शब्द हटा दिये जायें, अगर मंजूर किया जाता है तो इसका मतलब यह जो जायेगा कि स्थायी आज्ञाओं में से कुछ शब्द हटाने पड़ेंगे। हमें स्थायी आज्ञाओं में संशोधन नहीं करना है। हम तो नियमों में संशोधन कर रहे हैं। स्थायी आज्ञाएं बनाते हैं, परिषद् के माननीय अध्यक्ष और मैं यह आवश्यक नहीं समझता कि उनमें संशोधन किया जाये। यदि नियमों में यह रख लिया जाता है, तो सम्भवतः या तो स्थायी आज्ञाओं का रखना अनावश्यक हो जायेगा, या फिर अध्यक्ष को उनमें परिवर्तन करने पड़ेंगे।

'भारतीय रियासत' की जगह 'रियासत' शब्द रखने की जो बात कही गई है, उसके सम्बंध में मैं यह कहना चाहता हूं कि इन नियमों में तथा स्थायी आज्ञाओं में सभी स्थलों पर रियासतों के लिए 'भारतीय रियासतें' ही रखा गया है और मुझे कोई कारण नहीं दिखाई देता कि खास तौर पर इस नियम में ही क्यों 'भारतीय रियासतों' की जगह 'रियासतें' शब्द रखा जाये। इसलिए मैं माननीय संशोधनकर्ता से कहूंगा कि संशोधन वस्तुतः अनावश्यक है।

[श्री पी. गोविन्द मेनन]

जो प्रस्ताव मेरे नाम में है, उसके पैरा 1 के सम्बंध में मैं यह कहना चाहता हूं कि अगर मेरा संशोधन स्वीकार किया जाता है, तो प्रस्ताव का पैरा नं. 1 नियमों में नहीं रहेगा। नियमों में तो सिर्फ 5-क और 5-ख को ही आप पायेंगे, इसलिए पैरा 1 के शब्दों को खूबसूरत बनाने की कोशिश बेकार होगी; क्योंकि वह नियमों में रखा ही नहीं जायेगा। वस्तुतः सभा के सामने प्रस्ताव यह है कि नियम 5 के बाद नियम 5-क और 5-ख जोड़ दिये जायें। नियम 5-क और 5-ख के सम्बन्ध में तो कोई संशोधन है ही नहीं। मैं मिस्टर नजीरुद्दीन अहमद से अनुरोध करूंगा कि वे अपने संशोधनों के लिए जोर न दें। मैं उनको नहीं मंजूर करूंगा।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधनों पर राय लूंगा। संशोधन के पहले अंश पर राय लेना अनावश्यक समझता हूं। देसरे हिस्से पर ही हम राय लेंगे, जो यों है...।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** संशोधनों को मैं वापस लेता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस लिए गये।

***अध्यक्षः** तो फिर श्री सन्तानम् का एक मात्र संशोधन है, जिसे प्रस्तावक ने स्वीकार कर लिया है। अब श्री सन्तानम् के संशोधन पर मत लिया जाता है।

संशोधन मंजूर हुआ।

***अध्यक्षः** संशोधित प्रस्ताव पर अब राय ली जाती है।

संशोधित प्रस्ताव मंजूर हुआ।

नये अतिरिक्त नियम 38-क से 38-फ तक

***श्रीमति जी. दुर्गाबाई** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे नाम में जो प्रस्ताव है मैं उसे उपस्थित करती हूं। प्रस्ताव यों है कि:

''विधान-परिषद् के नियमों के सम्बन्ध में आए हुए निम्नलिखित संशोधनों पर विचार किया जाये:

नियम नं. 38 के बाद निम्नलिखित अंश जोड़ा जाये—

'प्रस्तावित नियमों द्वारा अध्याय 6 में भारतीय विधान की व्यवस्था के कानून बनाने की विधि निर्धारित की गई है। ये नियम 22 धाराओं में बंटे हैं, यानी 38-क से लेकर 38-फ तक। और इनकी दो श्रेणियां हैं'।''

इन प्रस्तावित नियमों के शब्दों पर विचार करने के पहले मैं यह आवश्यक समझती हूं कि इन नियमों के उद्देश्य को तथा इनकी सीमा क्या है, इसे समझा दिया जाये। 38-क से लेकर 38-ट तक की धाराओं में एक ऐसी समुचित विधि निर्धारित की गई है, जिसके अनुसार ऐसे बिलों पर जिसके द्वारा वर्तमान विधान में जो कि इन्डियन इंडिपेंडेंस एक्ट, गृहीत गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट, या अन्य किसी आज्ञा, नियम या उसके अन्तर्गत चालू किसी अन्य नियम सम्बन्धी व्यवस्था में ये दर्ज है, संशोधन प्रस्तावित किये गये हों, विचार किया जा सके और उन्हें मंजूर किया जाये।

38-ठ से 38-फ तक की धाराओं द्वारा एक ऐसी विधि निर्धारित की गई है, जिसके अनुसार नवीन भारतीय विधान को उपस्थित किया जाये, उस पर विचार किया जाये और अन्तिम रूप से उसे स्वीकार किया जाये। इस राज्य के विधान में कोई आदेश रखने के लिए कानून बनाने का अधिकार, जैसा कि हम सभी जानते हैं, इस सर्व-सत्ता-सम्पन्न सभा को–भारतीय विधान-परिषद् को प्राप्त है। यह विधान-परिषद् व्यवस्थापिका सभा के रूप में समवेत होकर ऐसा नहीं कर सकती। इंडियन इंडिपेंडेंस एक्ट की धारा 8(1) के आधार पर, इस सर्व-सत्ता-सम्पन्न सभा को ही यह अधिकार है कि विधान में संशोधन की व्यवस्था रखने के लिए तथा अंतिम रूप से विधान स्वीकार करने के लिए यह कानून बनाए।

श्रीमान् 38-क से लेकर 38-ट तक की धाराओं में जो विधि निर्धारित की गई है, उसके द्वारा, इस आन्तरिक काल में भी हम वर्तमान विधान में संशोधन कर सकते हैं, इसके लिये नवीन विधान बन जाने तक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी। हम सबों ने यह देख लिया है कि नवीन विधान में संशोधन लाने के लिए यह आवश्यक है कि हम कुछ प्रगतिशील व्यवस्थायें बनायें; क्योंकि सदस्यगण जानते हैं कि ऐसी आकस्मिक आवश्यकता आ चुकी है और फिर भी आ सकती है। उदाहरण के लिये आप उसी घटना को लीजिये, जो अभी हाल में ही घटी है। एक बड़ा जनसमूह हमारे प्रदेश में बसने के लिये आ गया है। अत: चालू विधान में संशोधन कर लेना हमारे लिए बहुत आवश्यक हो सकता है, ताकि हम विधान में अगर कोई संशोधन प्रस्तावित हो तो उसे स्वीकार कर सकें। इस तरह यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यह बहुत ही आवश्यक है कि हम एक ऐसी विधि जरूर निर्धारित कर लें, जिससे कि विधान में संशोधन किया जा सके और यह न हो कि इसके लिये हमें अन्तिम विधान तक प्रतीक्षा करनी पड़े। जो विधि यहां रखी गई है उसके विस्तार पर हमें कुछ ज्यादा नहीं कहना है,

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

क्योंकि यह करीब-करीब वैसी ही है जिसे कि हम साधारणतः कानून बनाने में बरतते हैं।

अब मैं 38-ठ से 38-फ तक के नियमों पर आती हूं। इसके द्वारा एक विधि प्रस्तावित की गई है, जिसके अनुसार भारत के नवीन विधान को पेश किया जाये, उस पर विचार हो और अन्तिम रूप से उसे स्वीकार किया जाये। जैसा मैं कह चुकी हूं, ऐसी व्यवस्था बनाने का एकमात्र अधिकार इस सर्व-सत्ता-सम्पन्न सभा को ही प्राप्त है। और इस व्यवस्था द्वारा भारतीय विधान-परिषद् नवीन विधान पर अपनी स्वीकृति की मुहर लगायेगी। सदस्यों ने देख ही लिया है कि धारा 38-ठ से नवीन विधान को उपस्थित करने के लिए प्रस्ताव रखने की अनुमति आवश्यक नहीं रह गई। इस व्यवस्था का कुल उद्देश्य यह है कि सारी बातें सरल हो जायें और नवीन विधान को स्वीकार करने की कार्रवाई हम शीघ्रता से कर सकें। इसलिए नवीन विधान पर विचार करने की और उसे स्वीकार करने की विधि निर्धारित करने के लिये जो ये व्यवस्थायें रखी गई हैं, उसकी मुख्य-मुख्य बातों का ही मैं उल्लेख करूंगी और चाहूंगी कि संक्षेप में ही इसे समाप्त कर दूं।

जो विधि अपनाई गई है वह संक्षेप में यह है। अवश्य ही कुछ जरूरी बातों में यह उस पद्धति से भिन्न है, जिसे हमने वर्तमान विधान में संशोधन रखने वाले बिलों पर विचार करने के लिये रखी है। तीन बातों में यह उससे भिन्न है। भिन्नता की पहली बात तो यह है कि उससे नवीन विधान को उपस्थित करने के लिये प्रस्ताव रखने की अनुमति आवश्यक नहीं रही। कोई भी सदस्य 5 दिनों की सूचना देकर विधान उपस्थित कर सकता है। इस तरह देर न हो पायेगी। एक और जरूरी बात में यह भिन्न है वह बात यह है कि नियम 38-द में यह कहा गया है कि विधान के पेश होते ही उस पर विचार किया जायेगा और अन्तिम रूप से उसे स्वीकार किया जायेगा। इसमें समय का कोई व्यवधान नहीं रखा जायेगा। यहां सिलेक्ट कमेटी के विचार का अन्तरिम काल नहीं रखा गया है, फिर भी नियम 38-द के अनुसार हम विधान को पुनः ड्राफ्टिंग कमेटी को वापस भेज सकते हैं, अगर अध्यक्ष ऐसा चाहें। अध्यक्ष विधान को संशोधित रूप में ड्राफ्टिंग कमेटी के पास किसी शाब्दिक अनुवर्ती अथवा नियम सम्बन्धी संशोधन के लिये या हाशिये में नोट जोड़ने अथवा खण्डों (clauses) को पुनः संख्याबद्ध करने के लिये भेज सकते हैं। यहां भी देर नहीं होने दी गई है क्योंकि यह केवल एक रस्मी बात होगी। मतलब यह है कि ड्राफ्टिंग कमेटी तो रोज बैठेगी और पुनः संख्याबद्ध करने

का काम अथवा किसी शाब्दिक या अनुवर्ती संशोधनों को ठीक करने का काम लगे हाथ तय करती जायेगी। विधान को अन्तिम रूप से प्रस्तुत करने के सम्बन्ध में नियम 38-प में विधि निर्धारित की गई है। नियम 38 यों है:

"जब विधान सभा द्वारा स्वीकृत हो जायेगा तो वह अध्यक्ष को दिया जायेगा, जो उस पर अपना हस्ताक्षर देकर उसे प्रामाणिक घोषित करेंगे।"

माननीय सदस्यों को यह मालूम ही है कि यह सभा सार्वभौम सत्ता प्राप्त संस्था की हैसियत से समवेत हो रही है और इसलिये विधान को अन्तिम रूप से स्वीकार करने के लिये इसे किसी बाहरी अधिकारी की स्वीकृति आवश्यक नहीं है; बल्कि अध्यक्ष ही विधान पर अपना हस्ताक्षर देकर उसे प्रामाणिक घोषित करेंगे। यही बात हम इस नियम में पाते हैं।

एक दूसरा खंड है जिसकी चर्चा मैं यहां करना चाहती हूं। मैं 38-फ की ओर संकेत कर रही हूं। इसमें जो व्यवस्था है वह कुछ भिन्न है। यह ऐसे बिल के सम्बन्ध में है जो असेम्बली द्वारा स्वीकृत होने पर, पहले इसके कि अन्तिम रूप से वह कानून बन जाये, वह गवर्नर जनरल के पास उनकी स्वीकृति के लिये भेजा जायेगा। वर्तमान विधान में संशोधन रखने वाले बिलों में तथा अन्तिम विधान सम्बन्धी बिलों में जहां गवर्नर की स्वीकृति मिल चुकी है, हमें एक स्पष्ट अन्तर दिख रहा है।

श्रीमान्, पहले इसके कि सभा से इस प्रस्ताव को मंजूर करने की सिफारिश करती, मैं ये बातें सभा को समझा देना चाहती थी। मेरे सामने कुछ संशोधन हैं। मि. नजीरुद्दीन अहमद ने जिन संशोधनों की सूचना दी है उसमें तो केवल शाब्दिक परिवर्तन की मांग है। इसलिये इसके सम्बन्ध में मुझे बहुत नहीं कहना है। परन्तु श्री सन्तानम् के संशोधनों पर जरूर विचार करना है। मैं समझती हूं कि इन संशोधनों को प्रस्तावित करने में उनका प्रधान उद्देश्य यही है कि सारा मसला सरल हो जाये और बिना किसी विलम्ब के विधान एक और अधिक सरल पद्धति से पास हो जाये। मैं उनकी आपत्ति समझ रही हूं और मेरा ख्याल है कि वह जो विधि अपनाना चाहते हैं, वह यह है कि परिषद् के नियम 24 के अनुसार काम हो। नियम 24 में यह है कि सभा की कार्रवाई सभा के सामने या उसकी समिति

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

के सामने एक प्रस्ताव द्वारा लाई जायेगी; इत्यादि, इत्यादि। मैं चाहती हूं कि संशोधन के प्रस्तावक सभा के काम को समझते। जो प्रस्ताव वह रख रहे हैं तथा जो काम हमारे सामने है, इन दोनों में भेद होना चाहिये। हम जो करना चाहते हैं वह यह है कि विधान में संशोधन करने की व्यवस्था बनाई जाये। यह बात उनके प्रस्ताव से बिल्कुल भिन्न है। साधारण बिलों के लिये भी हम एक विस्तृत पद्धति अपना रहे हैं जिसके अनुसार विल अन्तिम रूप से कानून बने, उसके पहले इसे कई जगहों से होकर गुजरना पड़ता है। अगर एक साधारण कानून के सम्बंध में यह बात सच है तो फिर जो महत्वपूर्ण कानून, यानी विधान में संशोधन करने तथा उसे पास करने का कानून, जो हमारे सामने है, उसके सम्बंध में तो यह और भी सच होगा। पहले इसके कि हम इन दोनों मामलों को, जो बड़े महत्व के हैं, तय करें हमें इनके सम्बन्ध में काफी प्रकाश डालना होगा।

इसलिये मैं समझती हूं कि ऐसी परिस्थिति में हमें एक विस्तृत पद्धति रखनी होगी और उसे अपने नियम में शामिल कर लेना होगा।

वर्तमान नियमों और स्थायी आज्ञाओं में इस तरह की विधि के लिये कोई व्यवस्था नहीं है। मुझे खुशी है कि वर्तमान विधान में संशोधन लाने के लिये तथा नवीन विधान को स्वीकार करने के लिये हमने यह विधि बना ली है जो इस समय जरूरी है। समय आ गया है जबकि सारा संसार बड़े ध्यान से देख रहा है कि हमारा नवीन विधान स्वीकार होकर सामने आये। अत: हमने यह विधि बना ली है जिसके अनुसार, हम विधान का मस्विदा यहां पेश हो तो उस पर विचार करेंगे और उसे मंजूर करेंगे। इस कथन के साथ, श्रीमान्! मैं सभा से सिफारिश करती हूं कि वह मेरे प्रस्ताव को मंजूर करे!

***श्री फूलन प्रसाद वर्मा** (बिहार: जनरल): एक नियम सम्बंधी प्रश्न है, श्रीमान्! पैरा 38-फ कहता है:

> "जब ऐसा बिल जिसका जिक्र नियम 38-फ में है, परिषद् द्वारा स्वीकार हो जाता है तो उसकी एक प्रति राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के साथ गवर्नर जनरल के सामने उनकी स्वीकृति के लिए रखी जायेगी। गवर्नर जनरल जब उस पर मंजूरी दे देंगे, तो वह कानून बनेगा और गजट आफ इन्डिया में प्रकाशित किया जायेगा।"

मेरा मन्तव्य यह है उस बिल के लिये जिसे विधान-परिषद् पास कर दे, गवर्नर जनरल की स्वीकृति अपेक्षित नहीं है और जहां तक विधान-परिषद् का सम्बंध है, वहां गवर्नर जनरल का सवाल ही नहीं उठता। मेरा मत है कि इससे इस सभा की सत्ता पर आघात पहुंचता है।

***अध्यक्षः** वस्तुतः यह तो प्रस्ताव के विषय से संबंध रखने वाली बात है। क्या आपकी नियम सम्बंधी आपत्ति है? अगर माननीय सदस्य प्रस्ताव के विषय पर कुछ प्रश्न उठाना चाहते हैं, तो वह ऐसा कर सकते हैं। बतौर नियम सम्बंधी आपत्ति के यह बात नहीं उठाई जा सकती। प्रस्ताव पेश हो चुका है। श्री सन्तानम् का संशोधन इस आशय का है कि इस समस्त प्रस्ताव के बदले में एक अन्य प्रस्ताव रखा जाये। मैं उनसे कहूंगा कि वह अपना संशोधन रखें।

***श्री के. सन्तानम्ः** मैं उसे पेश नहीं करना चाहता। मैं सिर्फ प्रस्ताव के सम्बंध में चन्द शब्द कहना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** तब हम दूसरे संशोधनों को लेते हैं। दूसरे संशोधनों का सम्बंध हर खण्डों से तथा उनके शब्दों से है। परन्तु पहले हमें समूचे प्रस्ताव पर ही विचार करना है कि आया ये नियम जरूरी भी हैं या नहीं।

श्री के. सन्तानमः श्रीमान्, मेरा मत है कि सारा प्रस्ताव अनावश्यक और निरुद्देश है। इसके दो भाग हैं। एक हिस्से का अभिप्राय यह है कि इन्डियन इंडिपेंडेंस एक्ट या गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट में, जैसा कि वह इन्डिपेंडेंस एक्ट द्वारा गृहीत है, संशोधन किया जा सके। मैं नहीं समझता कि यह विधान-परिषद् तब तक अस्तित्व में रहेगी, जब कि आप इस निर्धारित पद्धति का अनुसरण करेंगे। मेरा ख्याल है कि सारा काम हम दो तीन महीनों में खत्म करके यह दूकान ही उठा देंगे। फिर इस हालत में मैं नहीं समझता कि इंडियन इंडिपेंडेंस एक्ट या गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट में संशोधन करने के लिये हम कोई ऐसी पेचीदी पद्धति निर्धारित करें, जब कि इन एक्टों का अस्तित्व ही नहीं रहेगा। अगर किसी अनुपयुक्त शब्द को बदलने के लिये आप व्यवस्था करना चाहते हैं, तो एक साधारण प्रस्ताव द्वारा भी ऐसा कर सकते हैं। जहां तक प्रस्ताव के दूसरे भाग का सम्बन्ध है, जो विधान पास करने के अभिप्राय से रखा गया है, तो बात यह है कि नियम जब बनाये गये थे, तो वे विधान को मंजूर करने के लिये ही बनाये गये थे। श्रीमती दुर्गाबाई के इस कथन को कि इन नियमों के द्वारा विधान स्वीकार नहीं किया जा सकता,

[श्री के. सन्तानम्]

मैं समझने में असमर्थ हूं। जब हमने विधान-परिषद् के नियम बनाये थे, तब विधान पर विचार करने तथा उसे स्वीकार करने के ही एकमात्र विचार से बनाये गये थे। यह कैसी बात है कि आज एकाएक हमने वह अनुभव किया कि हमारे नियमों में ऐसी व्यवस्था नहीं जिसके अनुसार हम विधान को स्वीकार कर सकें। मैं नहीं समझता कि ऐसी आशंका का कोई भी आधार है। बल्कि इन नियमों के रखने का परिणाम यह हो सकता है कि अन्य नियमों द्वारा सभा ने जो सिद्धान्त स्वीकार किये हैं, उनका कोई मूल्य नहीं रह जायेगा और विधान-परिषद् ने जो कुछ भी किया है, उनका स्थान ये नियम लेंगे और इससे हम जिस वाद-विवाद को तय कर चुके हैं, उसी पर हम पुनः आ जायेंगे। जो कुछ आपने किया है उसे अगर प्रभावपूर्ण बनाना है, तो विधान के अवशिष्ट अंश के सम्बन्ध में भी हमें वही पद्धति बरतनी होगी जिसे हम बरतते आये हैं। हमें उसीके अनुसार प्रस्ताव रखना चाहिये। खण्डों पर एक-एक करके विचार करना चाहिये। बाद में प्रस्तावित संशोधनों पर विचार करना चाहिये और तब ड्राफ्टिंग कमेटी की रिपोर्ट आनी चाहिये और उस पर विचार होना चाहिये। बहुत बहस-मुबाहिसे के बाद हमने यह पद्धति निर्धारित की थी। नियम-निर्मातृ-समिति की बैठक कई सप्ताह तक होती रही और तब कहीं उसने यह नियम बनाये। और अब कार्यवाहक समिति चन्द घंटों की बैठक के बाद यह पेचीदी पद्धति पास कर रही है और मैं तो कहूंगा कि इसकी बहुत-सी व्यवस्थाएं एकदम दोषपूर्ण हैं। उदाहरण के लिये उसी बात को लीजिये, जिसका एक सदस्य ने अभी-अभी जिक्र किया है। अर्थात् सपरिषद् गवर्नर जनरल के सामने इसे रखने की बात। मैं तो समझता था कि विधान निर्माण के लिये यह विधान-परिषद् ही क्षम है और गवर्नर जनरल को इस काम में वह न आने देगी। और बाद में एक खंड में यह कहा गया कि विधान राष्ट्रपति के सामने रखा जायेगा। किन्तु जब विधान सभा द्वारा स्वीकृत हो जाता है, तो फिर उसे राष्ट्रपति के सामने रखेगा कौन? इस काम के लिये कोई भी अधिकारी नहीं है। अतः यह सारी पद्धति दोषपूर्ण है और मुझे खेद है कि कार्यवाहक समिति ने इसे पास किया। फिर भी मैं कोई संशोधन नहीं रखना चाहता। मैं केवल यही कहूंगा कि बाद में विचार करने के लिये इसे अभी स्थगित रखा जाये।

पं. ठाकुरदास भार्गवः जनाब प्रैसीडेंट साहब, इस मोशन के बारे में जो एक तरह से दो अलहदा बातों के मुताल्लिक है, मैं अर्ज करना चाहता हूं कि

तमीजें-मुजब्बजा की वजह मेरी समझ में नहीं आती। इस मोशन का एक हिस्सा जो K तक है, वह ऐसे बिल के मुताल्लिक है जो गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट या इन्डिपेन्डेंस एक्ट से ताल्लुक रखता है और दूसरा हिस्सा कांस्टीट्यूशन के मुताल्लिक है। जो पहला हिस्सा है, जो K तक है, उसके बारे में मैं अदब से अर्ज करना चाहता हूं कि मैं यह नहीं समझता कि जो डोमीनियन लेजिस्लेचर को इन बिल्स के मुताल्लिक जो गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट अमेंडमेंट या इन्डिपेन्डेंस एक्ट अमेंडमेंट के मुताल्लिक हैं, क्यों अख्तियार नहीं है। कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली इस खास वजह से वजूद में आई कि हिंदुस्तान के अन्दर कान्स्टीटूयूशन बने। इसलिये यह ख्याल किया जाता मालूम होता है कि चूंकि सिर्फ कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली एक सावरेन बाडी है और सिर्फ एक ही ऐसी बाडी है जो गवर्नमेंट आफ इंडियां और इन्डिपेंडेन्स एक्ट के मुताबिक कन्सीडर कर सकती है। जहां तक सावरेन्टी का ताल्लुक है, मैं समझता हूं डोमीनियन लेजिस्लेचर ही एक सावरेन बाडी है और इस जरिये से इसकी हैसियत मैं कोई फर्क नहीं पड़ता कि कानून साजी के लिये उसको गवर्नर जनरल की कन्सैन्ट की जरूरत होती है। बल्कि इस सैंस में कि वह कुल मजामीन के मुताल्लिक इस बात का हक रखती है कि हिंदुस्तान का कोई भी कानून बनाये, यह सावरेन है। जिस वक्त पिछली दफा डोमीनियन लेजिस्लेचर में प्रीवी कौंन्सिल की अपीलों के अख्तियारात के मुताल्लिक जिक्र हुआ, उस वक्त हमारे काबिल ला मैम्बर की यह व्यू थी कि दरअसल गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट के प्रोविजन्स को डोमीनियन लेजिस्लेचर तबदील नहीं कर सकता। लेकिन उस वक्त यही अर्ज किया गया था कि दरअसल बमूजिव कानून यह व्यू दुरुस्त नहीं है। चुनाचे इन्डिपेंडेन्स एक्ट की दफा 6 की तरफ मैं हाउस की तवज्जह दिलाना चाहता हूं, जिसके अन्दर 6(2) में इस तरह लिखा है:

''No law and no provision of any law made by the legislature of either of the new dominions shall be void or inopportune on the ground that it is repugnant to the law of England or to the provision of this or any existing or future Acts of Parliament of U.K. or to any order, rule or any regulation made under any such act, and the powers of the Legislature of each dominion include the power to repeal or annul any such Act, order, rule or regulation in so far as it is part of Law of the dominion.''

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

("नये राज्यों में से किसी की व्यवस्थापिका द्वारा निर्मित कानून, या निर्मित कानून के आदेश, इस आधार पर शून्य या प्रभावहीन न होंगे कि वह इंग्लैंड के कानूनों के, अथवा इस या यू.के. की पार्लियामेंट के किसी वर्तमान या भावी एक्टों के अथवा ऐसे किसी एक के अधीन निर्मित किसी आज्ञा, नियम या अनियम के विरुद्ध हैं, और प्रत्येक राज्य की व्यवस्थापिका के अधिकारों में, ऐसे किसी एक्ट, आज्ञा, नियम या अनियम में विखण्डन या संशोधन करने का अधिकार भी सम्मिलित है।")

इसमें शक नहीं कि जहां तक कान्स्टीट्यूशनल ला का सवाल है, बहुत दफा ऐसा ख्याल किया जाता है कि किसी कान्स्टीटूयूशन को बदलने के लिये तरीका मामूल कवायद से मुख्तलिफ होता है, लेकिन मैं अदब से अर्ज करना चाहता हूं कि जितने फ्लेक्सिविल कान्स्टीट्यूशन हैं, उनका यह रूल नहीं है। अगर आज कोई शख्स इंग्लैंड में कानून को तबदील करना चाहे तो उसके लेजिस्लेटिव को अख्तयार है कि क्लीयर मेजौरिटी से हाउस आफ कामन्स उसे तबदील कर सकता है। इस तरह से डोमीनियन लेजिस्लेचर कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली की एक पैरेलल बाडी है। मुझे इसके मुताल्लिक इतना अर्ज करना है कि कान्स्टीट्युयेंट लेजिस्लेचर को हर सूरत में इन्डिपैन्डेंट एक्ट में तबदीली करने का पूरा हक हासिल है। अभी एक मैम्बर साहब ने अर्ज किया था कि कांस्टीट्युयेंट असेम्बली के किसी कानून के लिये गवर्नर जनरल के कन्सैन्ट की जरूरत नहीं होनी चाहिये। अगर 38 K की रू से गवर्नर जनरल की रजामन्दी की जरूरत लाजमी करार दी जाये तो जो कवायद इन एक्टों की तरमीम के मुताल्लिक बनाये गये हैं, उनमें और मामूली कानून में जो डोमीनियन लेजिस्लेचर को बनाने का हक है, किसी किस्म का कोई फर्क नहीं रहता है। चूंकि सारी ऐसी तरमीमों के लिये गवर्नर जनरल की कन्सैन्ट इतनी ही लाजमी करार दी गई है जैसी कि आयन्दा दूसरे बिल्स के वास्ते लाजमी है। तो मैं अदब से अर्ज करना चाहता हूं कि किस रूल के मातहत इसमें और डोमीनियन लेजिस्लेचर की पावर्स में तमीज की जाती है। कहा जा सकता है कि चूंकि कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली के अख्तियारात में यह तरमीम की जाती है, इसलिए इसे हक है। मैं अदब से अर्ज करूंगा कि ऐसा कानून नहीं है। बहुत से मुल्क ऐसे हैं जहां लेजिस्लेचर हर एक किस्म के एक्ट की तरमीम मामूली तरीके से करती है। इसलिये मैं अदब से अर्ज करूंगा, जहां तक डोमिनियन लेजिस्लेचर के हकूक का सवाल है, वहां कोई वजह नहीं है कि ऐसे बिल्स का जो गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट या इंडिपेंडेंट एक्ट की तरमीम के मुताल्लिक हों, क्यों न इस

लेजिस्लेचर को हक दिया जाये जो कि वह जिस तरह चाहें तबदील कर सकें। जो आम बिल होते हैं और जो कि बिल होंगे, उनकी इस किस्म के नौइयत में कतई किसी किस्म का कोई फर्क नहीं होगा। इसलिये मेरी अदब से गुजारिश यह है कि जहां तक 38K का ताल्लुक है, इस हाउस को ऐसे मंजूर नहीं करना चाहिये। बल्कि हमें करार देना चाहिये कि डोमीनियन लेजिस्लेचर ही ऐसी बाडी है जिसके अन्दर इस किस्म का बिल आ सकता है और तरमीम किया जा सकता है। जहां तक कान्स्टीटूयूशन का सवाल है वह अलहदा सवाल है। इसमें कोई शक नहीं है कि हमारा कान्स्टीट्यूशन इस तरह से अमल में नहीं आ रहा है जिस तरह से और जगहों पर यानी रिवोलूशन के बाद। हमारी नई गवर्नमेंट रिवोलूशन के बाद नहीं बनी, बल्कि यह एक कांस्टीट्युएन्ट बाडी है। हमने बहुत कानून पहले जमाने से वुरसा में पाये हैं। हम इसके वुरसे की असरात से दूर नहीं हो सकते। हम जानते हैं कि देश के कान्स्टीट्यूशन के लिये किसी गवर्नर की कन्सैंट की जरूरत नहीं है और न होनी चाहिये। दीगर हर किस्म के कानून के लिए हम एक उसूल को मान चुके हैं कि गवर्नर जनरल की रमामन्दी गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट और इन्डिपेन्डैंट एक्ट में चेंज के लिए जरूरी है। तो दफा 6 यह जाहिर करता है कि डोमीनियन लेजिस्लेचर को पूरा हक है और किसी तरह यह बाजिव नहीं है कि कोई ऐसी तमीज की जाये कि गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट में कोई तरमीम करनी हो, तो वह लेजिस्लेचर न कर सके और कान्स्टीटूयूशन में कान्स्टीटूयुयेंट असेम्बली ही करे। दर-असल दोनों बाडी सावरेन हैं और जहां तक बिल का ताल्लुक है या गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट और इंडिपेन्डैंट एक्ट की तरमीम का ताल्लुक है, दोनों को पूरा अख्तियार है। मैं यह भी न कहूंगा कि कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली हर तरह से सावरेन नहीं है। क्योंकि कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली अगर कोई बिल पास करना चाहे जिसका ताल्लुक कान्स्टीट्यूशन से हो, तो कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली को कोई हक नहीं है कि सिवाय कान्स्टीट्यूशन के और कोई बिल पास कर सके। इस तरह जैसा हमारे प्राहम-मिनिस्टर साहब ने एक मौके पर कहा था कि हमारी कान्स्टीट्युयेंट असेम्बली मामूली बिल नहीं पास कर सकती, इसलिये मेरी अदब से गुजारिश यह है कि इन्डिपैन्डैंट एक्ट और गवर्नमेंन्ट आफ इंडिया एक्ट की तरमीम का ताल्लुक है, डोमीनियन लेजिस्लेचर को तरमीम का हक होना चाहिये। और कोई ऐसा कानून नहीं है कि जिसकी रू से डोमीनियन लेजिस्लेचर को इस हक से महरूम किया जाये। इन अलफाज के साथ मैं अर्ज करूंगा कि जहां तक 38K का ताल्लुक है, वहां उसके पास करने की जरूरत नहीं है। क्योंकि ऐसी तरमीम डोमीनियन लेजिस्लेचर के

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

अख्तियारात को जहां कम करती है, वहां गवर्नर जनरल की रजामन्दी लाजिमी करार देकर कान्स्टीटूयुयेंट असेम्बली के शान व वकार को कम करती है।

***अध्यक्षः** अब सभा समाप्त होती है और 2.30 पर पुनः समवेत होगी।

इसके बाद सभा दोपहर $2^1/_2$ बजे तक के लिए स्थगित हुई।

भोजनोपरान्त दिन के 2॥ बजे अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में सभा पुनः समवेत हुई।

***श्री आर.के सिधवाः** अध्यक्ष महोदय, मैं एक बात जानना चाहता हूं।

परिचय-पत्रों की पेशी और रजिस्टर पर हस्ताक्षर

***अध्यक्षः** एक सदस्य ऐसे हैं, जिन्हें अपना परिचय-पत्र पेश करके रजिस्टर पर हस्ताक्षर करना हैः

निम्नलिखित सदस्य ने अपना परिचय-पत्र पेश किया और रजिस्टर पर हस्ताक्षर कियाः

श्री कृष्णचन्द्र शर्मा (संयुक्त प्रान्तः जनरल)।

नियमों में संशोधन तथा परिवर्द्धन

नियम 38-क से 38-ट तक को जोड़ना-(जारी)

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल): ताकि बहस मुबाहिसे का काम जल्दी खत्म हो जाये, मैं यह जानना चाहता हूं, कि इस प्रश्न पर विवाद करने के लिए यह सभा सक्षम है अथवा दूसरी सभा इस पर विवाद कर सकती है। गवर्नर जनरल को इंडिपेंडेंस एक्ट से अलग नहीं किया जा सकता और इस विषय पर सभा विचार नहीं कर सकती।

***अध्यक्षः** नियम सम्बंधी जो प्रश्न उठाया गया है, उसके सम्बंध में मैं कह सकता हूं कि यह बात बिल्कुल साफ है कि यह सभा इस मसले पर विचार कर सकती है।

मौलाना हसरत मोहानी (संयुक्त प्रान्तः मुसलिम): जब कि यूनियन का कान्स्टीट्युशन पेश किया गया, तो उस वक्त बहस के बाद यह तय हुआ कि इसके पहले के तीन क्लाजों का कंसिडरेशन पोस्टपोन कर दिया जाये। लेकिन इसको पोस्टपोन करने के सिलसिले में जितनी बातें कही गई हैं और जो डिसकशन हुआ है, मैं देखता हूं कि आपके यहां जो प्रोसीडिंग्स छपी हुई हैं, वह सब इसमें बिल्कुल ओमिट कर दिया गया है। मैं यह दरियाफ्त करना चाहता हूं कि यह ओमिशन जानबूझकर है यह गलती से।

अध्यक्षः मौलाना, मैं ठीक-ठीक नहीं समझ सका कि क्या छोड़ दिया गया है।

मौलाना हसरत मोहानीः इसमें मुख्तलिफ क्लाजों के अमेंडमेंट में उस वक्त बहस के बाद यह तय किया गया कि आपने जो यह चीज उठाई है वह रखी जायेगी। पं. जवाहर लाल नेहरू ने यह भी कहा थाः I will produce a modified constitution afterwards at the next meeting of the Constituent Assembly.

आपके यहां जो रिपोर्ट छपी है, उसमें 30 क्लाजें हैं जिनमें वह सब दिया हुआ है लेकिन पहले तीन क्लाज के मुताल्लिक जो बातें हुई थीं और जैसा डिसकशन हुआ था, उसका इसमें कहीं जिकर नहीं है, इसकी वजह मैं यह दरियाफ्त करना चाहता हूं।

अध्यक्षः आप मेहरबानी करके जो कुछ आपको कहना है, लिखकर दे दीजियेगा। क्योंकि यह बात दरियाफ्त तलब होगी और मैं तब देखूंगा कि क्या बात है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मेरा कहना है कि 38-क से 38-ट तक के नियमों का इस सभा द्वारा स्वीकृत होना कोई जरूरी नहीं है। मैं ऐसा नहीं समझता कि इस सभा को इस मसले पर विचार करने का अधिकार नहीं है। इसे इस मसले पर विचार करने का पूरा अधिकार है। किन्तु जहां तक इस सभा का सम्बन्ध है, विधान-निर्माण सम्बन्धी काम से ही इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। मैं कहूंगा कि दूसरी सभा, जहां तक सभा के कानून-निर्माण सम्बन्धी पहलू का

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

ताल्लुक है, इस पर विचार करने में पूर्णत: सक्षम है। व्यवस्थापिका सभा में एक पहले के वाद-विवाद के प्रसंग में इसका जिक्र आया था, किन्तु इस प्रश्न पर और स्पष्टीकरण की आवश्यकता है। पं. भार्गव की राय से सहमत होते हुए मैं यह कहूंगा कि जहां तक गवर्नमेन्ट आफ इण्डिया एक्ट में परिवर्तन की बात है, यह काम आगामी 31 मार्च तक इंडिपेंडैंस एक्ट की धारा 9(1)(ग) के अनुसार गवर्नर जनरल द्वारा किया जा सकता है। इस हालत में गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट में संशोधन करने के लिये जल्दबाजी से कोई व्यवस्था बनाने की जरूरत नहीं है। और फिर इंडिपेंडैंस एक्ट की धारा 5(9) के अन्तर्गत गवर्नर जनरल को 31 मार्च तक इसका अधिकार है। जहां तक इस सभा का कानून-निर्माण सम्बन्धी स्वरूप अर्थात व्यवस्थापिका सभा के सक्षम होने की बात है, मेरा कहना है कि इंडिपेंडैंस एक्ट की धारा 6(1) के अन्दर उस सभा को यह अधिकार दिया गया है। वहां कहा गया है कि व्यवस्थापिका सभा को पूरा अधिकार है कि वह कानून बनाये-'3' इत्यादि, इत्यादि। धारा 6 की उपधारा (2) में यह खास तौर पर कहा गया है कि व्यवस्थापिका सभा कानून पास कर सकती है और ब्रिटिश पार्लियामेंट द्वारा इस सम्बन्ध में पास किये हुए या अब से आगे पास किये जाने वाले कानूनों को-मय आज्ञाओं, नियमों, इत्यादि के-बदलने का, उन में संशोधन करने का या उसे रद्द कर देने का अधिकार है। इस तरह धारा 6(1)(2) के अनुसार व्यवस्थापिका सभा को इस दशा में आवश्यक परिवर्तन करने का अधिकार है। यह बात उपधारा (2) में और भी साफ कर दी गई है, जहां कहा गया है कि -''व्यवस्थापिका के समस्त अधिकारों का प्रयोग कुछ काल के लिए विधान-परिषद् करेगी।" अत: विधान-परिषद् व्यवस्थापिका के सारे कामों को अंजाम दे रही है और धारा 6 के अनुसार व्यवस्थापिका को पूरा अधिकार है कि वह कोई कानून पास करे या ब्रिटिश पार्लियामेंट द्वारा पास किसी कानून, आज्ञा और नियमादि में परिवर्तन करे। इसलिए मेरा कहना है कि इस विशेष खंड को, जिसमें ब्रिटिश एक्ट या नियमादि पर विचार करने के लिए एक व्यवस्था करने की बात है, दूसरी सभा पर या यों कहिये कि व्यवस्थापिका पर छोड़ देना चाहिए; क्योंकि वह सभा खासतौर पर इसी काम के लिये है। कार्यविधि सम्बन्धी इन बातों के लिये इस सभा को कष्ट देने की जरूरत नहीं है। इस सभा को जिस-लिए कि इसकी रचना हुई है, अपना सारा ध्यान विधान-निर्माण की ओर ही लगाना चाहिये, जो इसका सबसे आवश्यक काम है। मेरा ख्याल है कि विधान-निर्माण के बाद सभा का काम समाप्त हो जायेगा। इस हालत में अगर संशोधन के लिए सचमुच विधान-परिषद्

कोई व्यवस्था करती है तो यह स्मरण रहना चाहिये कि इस सभा का काम समाप्त होगा और इसके स्थान पर व्यवस्थापिका सभा काम करेगी। इसलिये इस सभा द्वारा बनाये नियम केवल अल्पकाल के लिए होंगे; उनकी कोई आवश्यकता नहीं है और उनको बनाने का मतलब है कि इस सभा पर ऐसा काम लाद देना, जिसे करना इसका काम नहीं है। मैं यह जरूर मानता हूं कि इस सभा को इसका अधिकार है, पर यें नियम बनाना इस सभा का वास्तविक कार्य नहीं है और शायद नियमों में संशोधन इसलिये किया जा रहा है कि लोगों को यह निराधार भय है कि इस सभा को इसका अधिकार नहीं है। मैं कहूंगा कि 38-क से 38-ट तक के नियमों पर विचार न किया जाये, या इन पर विचार स्थगित रखा जाये।

बाकी नियमों के सम्बन्ध में मेरा कहना है कि वे आवश्यक हैं। विधान-कानून को तथा उससे सम्बन्धित अन्य बातों को सुविधापूर्वक पास करने के लिये ये नियम आवश्यक हैं। इसलिये इस सम्बन्ध में मैं पं. भार्गव के सुझाव का समर्थन करता हूं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं कतिपय उन आलोचनाओं पर प्रकाश डालने के लिये खड़ा हो रहा हूं, जो श्रीमती दुर्गाबाई के उस प्रस्ताव के विरुद्ध की गई हैं जिसमें कुछ नियमों को मंजूर करने की बात कही गई है। श्री सन्तानम् ने एक बात यह कही है कि विधान-परिषद् का नियम 24 उस काम के लिये काफी है, जिसके लिये ये नियम प्रस्तावित किये जा रहे हैं। मुझे पक्का विश्वास है कि नियम 24 के सम्बन्ध में जो बात श्री सन्तानम् ने यहां कही है, उस पर उन्होंने यथेष्ट ध्यान नहीं दिया है। नियम 24 प्रस्ताव के बारे में है और कहता है कि प्रस्ताव द्वारा यह सभा कुछ भी कर सकती है। किन्तु मैं समझता हूं कि श्री सन्तानम् यह भूल गये हैं कि प्रस्ताव दो तरह के होते हैं। एक प्रस्ताव तो ऐसा होता है जिसको यहां से आगे कहीं नहीं जाना होता है और उस प्रस्ताव और तत्सम्बंधी प्रश्न पर जब यह सभा निर्णय दे देती है, तो वह यहीं समाप्त हो जाता है। और एक प्रस्ताव ऐसा होता है जिस पर यहां के बाद अन्यत्र भी विचार होता है। उदाहरणार्थ ऐसे प्रस्ताव को लीजिए जिसके द्वारा कोई बिल प्रस्तावित होता है। जब कोई बिल प्रस्ताव द्वारा उपस्थित किया जाता है और सभा उस पर अपनी स्वीकृति देती है, तो उस हालत में प्रस्ताव का काम वहीं समाप्त नहीं हो जाता। वह प्रस्ताव आगे भी जाता है और इसलिए यह बहुत आवश्यक है कि प्रस्ताव की आगे की स्थिति एक निर्धारित

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

नियम द्वारा व्यवस्थित कर दी जाये। मेरा ख्याल है कि अगर श्री सन्तानम् विधान-परिषद् (व्यवस्थापिका) के नियमों को देखते, तो उन्हें यह मालूम हो जाता कि श्रीमती दुर्गाबाई द्वारा प्रस्तावित नये नियमों में जिन व्यवस्थाओं के रखने की बात है, वे उन्हीं व्यवस्थाओं के आधार पर बनायी गई हैं, जो विधान-परिषद् के नियम 24 के समान एक नियम, बल्कि यों कहिए कि एक स्थायी आज्ञा नं. 30 है, जिसकी शब्दावली भी वही है जो नियम 24 की है। एक दूसरी स्थायी आज्ञा भी है नम्बर 37 की, जिसमें बिलों की व्यवस्था है और जो कहती है कि बिलों के सम्बंध में और कौन प्रस्ताव पेश किये जा सकते हैं। इसके आधार पर नये नियमों को स्वीकार करने का जो प्रस्ताव रखा गया है, वह उस पद्धति से बिल्कुल संगत है जिसे विधान-परिषद् ने बहैसियत व्यवस्थापिका सभा के स्वीकार किया है। किन्तु बावजूद इसके, मैं समझता हूं कि अगर विधान-परिषद् अपने व्यवस्था सम्बंधी काम के लिए केवल नियम 24 का ही सहारा लेगी, तो मुझे इस बात में जरा भी शक नहीं है कि बड़ी ही गड़बड़ी पैदा हो जायेगी। यदि विधान-परिषद् को या व्यवस्थापिका सभा को इस बात की पूरी आजादी मिल जाये कि वह जो प्रस्ताव चाहे पेश करे, तो फिर प्रस्ताव संख्या की और उनकी विविधता की कोई सीमा न रह जायेगी। फिर तो विधान-परिषद् के किसी सदस्य को यह स्वतंत्रता है कि उठकर वह यह प्रस्ताव कर दें कि विधान पर विचार स्थगित रखा जाये और इसके रोकने के लिए कोई साधन न रह जायेगा। और फिर यह सदा आवश्यक है कि बिल के सम्बंध में और प्रस्ताव पेश करने पर रोक हो। व्यवस्थापिका सभा के नियमों में सदस्य यह पायंगे कि बिल के पेश कर दिये जाने पर तीन ही प्रस्ताव पेश किये जा सकते हैं। एक प्रस्ताव तो उस बिल को गश्त दिलाने के लिए, दूसरा प्रस्ताव उसे सेलेक्ट कमेटी के सुपुर्द करने के लिए और तीसरा उसे पास करने के लिए। विधान सम्बंधी बिल को पास करने के लिए हमने जो पद्धति रखी है, उसमें से यह बात हटा दी है। विधान को गश्त दिलाने का प्रस्ताव हमने हटा दिया है, क्योंकि इससे देर होगी। एक जरूरी बात जो इस सम्बंध में ध्यान में रखने की है, वह यह है कि बिना इन नियमों को रखे बिल को और आगे की अवस्थाओं में जाने से रोकना बिल्कुल असम्भव हो जायेगा। अत: श्री सन्तानम् ने जो प्रश्न उठाया है, वह सारहीन है।

दूसरी बात जो श्री सन्तानम् ने उठायी है, वह यह है कि बिल के पास करने के सम्बंध में उस पर गवर्नर जनरल की स्वीकृति को आवश्यक करार नहीं देना

चाहिए। जैसा कि सदस्यों को याद होगा, जिस समिति ने रिपोर्ट पेश की, उसने विधान सम्बंधी काम को दो हिस्सों में बांटा। एक भाग तो भावी विधान के बनाने के सम्बंध में है, जहां इस विधान-परिषद् को अनियंत्रित अधिकार प्राप्त हैं और किसी तरह का प्रतिबन्ध नहीं है। न केवल गवर्नर जनरल की ही स्वीकृति अनावश्यक है, बल्कि अध्यक्ष की भी स्वीकृति जरूरी नहीं है। इस सभा द्वारा विधान के स्वीकृत हो जाने के बाद अध्यक्ष को सिर्फ यही अधिकार दिया गया है कि वे उस पर अपना हस्ताक्षर दे दें; सिर्फ यह व्यक्त करने के लिए कि अन्तिम रूप में विधान सम्बंधी यही कानून है। यहां 'स्वीकृति' शब्द अपने आम मानी में नहीं है। वर्तमान विधान सम्बंधी संशोधन के लिए गवर्नर जनरल की स्वीकृति आवश्यक रखी गई है। मैं जानता हूं कि कई सदस्य हैं, जिन्हें इस बात पर दुख होता है कि ऐसी व्यवस्था रखी गई है। किन्तु मैं सभा से कहूंगा कि इस मसले पर अच्छे से अच्छे कानून विशेषज्ञों ने, जो हमें मिल सके, इस पर विचार किया और सभी इसी निर्णय पर पहुंचे कि गवर्नर जनरल की स्वीकृति का रखना न सिर्फ वांछनीय है, बल्कि आवश्यक भी है। क्यों यह आवश्यक हैं, मैं इसे समझा देना चाहता हूं। पहली बात तो यह है, जैसा कि आप सभी जानते हैं कि गवर्नर जनरल को आवश्यक परिवर्तनों के साथ विधान स्वीकार करने का अधिकार प्राप्त है। और आवश्यक परिवर्तनों के साथ विधान को मंजूर करने का मतलब ही हुआ उसमें संशोधन करना। आवश्यक परिवर्तन करना या उसमें संशोधन करना इन दोनों में वस्तुतः ज्यादा फर्क नहीं है। दोनों ही बातें एक हैं। प्रश्न यह उठता है कि अगर यह बात जरूरी है, सत्य है और अनुमति योग्य है कि गवर्नर जनरल को आवश्यक परिवर्तन करने के रूप में विधान में संशोधन करने का अधिकार दिया जाये, तो फिर इसी बात में क्या हर्ज है कि यह अधिकार उसे ऐसे एक बिल के सम्बंध में दिया जाये, जिसका उद्देश्य भी विधान में संशोधन करना हो?

*__श्री के. सन्तानम्:__ क्या मैं जान सकता हूं कि फिर बिल की ही आपको क्यों आवश्यकता है?

*__माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:__ जो बात अभी उठाई गई है, उस पर इस तरह विचार कीजिए। आखिर आवश्यक परिवर्तनों के साथ विधान को स्वीकार करने का जो अधिकार गवर्नर जनरल को प्राप्त है वह तो 31 मार्च को समाप्त हो जायेगा। फिर उसके बाद क्या होगा? उत्तर यह है। अगर 31 मार्च तक, जब तक कि आवश्यक परिवर्तनों के साथ विधान को स्वीकार करने का अधिकार लागू

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

है, हम इस स्थिति में आ गए कि हम अपने भावी विधान को पहली अप्रैल को चालू कर सकें, तो फिर हमारे सामने इसका प्रश्न ही नहीं उठता। नवीन विधान का प्रयोग सारे प्रदेश में प्रारम्भ हो जायेगा; जहां आज वर्तमान विधान लागू है। किन्तु हमें अब इस बात का निश्चय हो गया है कि कम से कम कुछ महीनों तक तो अभी भावी विधान स्वीकृत नहीं हो पाता है। अप्रैल या मई के पहले–मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता कब तक–यह विधान पास नहीं हो पाता। 31 मार्च के बाद विधान पास होने में एक या दो महीने बीत जायेंगे। यह भी स्पष्ट है कि विधान, जो यह सभा बनायेगी या पास करेगी, वह सम्भव है, सारा एक साथ ही अमल में न आये। वह अंश-अंश करके प्रयोग में आ सकता है। निर्वाचन-क्षेत्रों की व्याख्या के लिए और आकस्मिक मामलों के लिए अन्तर्कालीन एवं पूरक व्यवस्थाएं भी बनाई जा सकती हैं। इन सब बातों में जरूर ही कुछ समय लगेगा। इसलिए आवश्यक परिवर्तनों के साथ विधान स्वीकार करने का अधिकार, जिसकी अवधि 31 मार्च को समाप्त हो जाती है, उसे जारी रखना होगा और यह काम एक बिल द्वारा ही किया जा सकता है, जिसे इसी सभा को पास करना होगा।

तब सवाल यह उठता है कि अगर आवश्क परिवर्तनों के साथ विधान को मंजूर करने के लिये गवर्नर जनरल की स्वीकृति आवश्यक है, तो फिर संशोधन के लिये भी यह स्वीकृति क्यों न आवश्यक हो? अवश्य ही तर्क की दृष्टि से इसमें कोई असामञ्जस्य नहीं है। मैं यह भी बता दूं कि समिति बहुत हद तक इंडिपेंडेंस एक्ट की धारा 6 की उपधारा (3) में जो व्यवस्था है, उसी के अनुसार चली है। इस उपधारा में यह कहा गया है कि औपनिवेशिक व्यवस्थापिका द्वारा पास सभी कानूनों के लिये गवर्नर जनरल की स्वीकृति आवश्यक होगी।

इस धारा का जो अभिप्राय है, उसके सम्बंध में आज निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कहा जा सकता। गवर्नर जनरल को स्वीकृति देने का अधिकार जरूर है। पर सवाल यह है कि क्या इसका मतलब यह है कि वर्तमान विधान में संशोधन रखने वाले बिल को गवर्नर जनरल की स्वीकृति के लिये सभा को उसे उनके सामने रखना ही होगा, चूंकि इंडिपेंडेंस एक्ट के मुताबिक उन्हें यह अधिकार प्राप्त है। इस सम्बंध में कोई साफ राय देने में हम असमर्थ हैं। हम यह मत रख सकते हैं कि महज इसलिये कि चूंकि धारा 6 की उपधारा (3) वर्तमान है, हम किसी संशोधनात्मक बिल को गवर्नर जनरल के सामने उनकी स्वीकृति के लिये पेश करने को बाध्य

नहीं हैं। हम समझते हैं कि बावजूद हमारे इस मत के इस सभा द्वारा स्वीकृत किसी कानून के सम्बंध में, जो स्वीकृति के लिये गवर्नर जनरल के सामने नहीं रखा गया हो, न्यायालय यह निर्णय दे सकता है और ऐसा घोषित कर सकता है कि वह अनधिकृत (ultra vires) है। और हम यह नहीं चाहते कि इस सभा द्वारा स्वीकृत कानून ऐसे संकट में पड़े। अतः केवल समधिक सावधानी के विचार से तथा यह समझकर कि इसमें कोई असंगत बात नहीं है, हमने इस अवस्था को जारी रहने दिया है। आशा है कि सभा ऐसा समझेगी कि ड्राफ्टिंग कमेटी ने, जिसे यह मसला सुपुर्द किया गया था, जो कुछ भी किया है, वह नियम-संगत है। और श्री सन्तानम् ने तथा उनके बाद के दोस्तों ने जो बातें कहीं हैं, उनमें कुछ सार नहीं है।

श्री एच.वी. कामतः श्रीमान्, माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर के प्रति, जिन्हें इस सम्बंध में जैसा कि उन्होंने अभी कहा है, अच्छे से अच्छे कानूनदाओं के मेजमान होने का मौका मिला है, समुचित आदर व्यक्त करते हुये मैं यह कहने पर बाध्य हूं कि नियम 38-फ की आवश्यकता मुझे समझ में नहीं आई। मेरी समझ में यह बात नहीं आई कि इस सभा द्वारा स्वीकृत बिल को गवर्नर जनरल की स्वीकृति के लिये उनके सामने रखने की क्या जरूरत है।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा है कि अगर सभा को यह अधिकार हो कि वह जो भी चाहे करे, तो एक दिन कोई सदस्य यह प्रस्तावित कर देंगे कि विधान पर विचार स्थगित रखा जाये। यह बिल्कुल जायेज है। मैं समझता हूं कि कोई भी सदस्य जो ऐसा प्रस्ताव पास करा लेता है, वह विधान पर विचार जरूर स्थगित रखवा देगा। मैं समझता हूं कि हमारे नियमों में एक ऐसा भी नियम है कि यह सभा प्रस्ताव करके स्वयं अपने आपको भंग कर सकती है, बशर्ते कि प्रस्ताव को दो तिहाई या तीन चौथाई का बहुमत प्राप्त हो। या तो यह सभा सर्वसत्ता-सम्पन्न है, या फिर ऐसी नहीं है। मेरा कहना है कि इस समय कोई ही व्यक्ति और खास-कर के कोई कानून या विधानवेत्ता यह कहेगा कि यह सभा सर्वसत्ता-सम्पन्न संस्था नहीं है। और अगर यह सर्वसत्ता-सम्पन्न है, तो यह बात स्वाभाविक है कि बाहरी अधिकारी को, चाहे वह गवर्नर जनरल हो या ब्रिटिश पार्लियामेंट हो, या कोई भी क्यों न हो, यह नहीं कहा जा सकता कि इस सभा द्वारा स्वीकृत बिल पर वह अपनी स्वीकृति दे दे। इसलिये अगर हम सभी राजी हैं, और मुझे विश्वास

[श्री एच.वी. कामत]

है कि इस बात पर कि यह सभा सर्वसत्ता-सम्पन्न संस्था है हम सभी एक मत हैं, तो स्पष्ट है कि नियम 38-फ की कोई जरूरत नहीं उठती। नियम यह कहता है कि नियम 38-क में उल्लिखित बिल को इस सभा द्वारा पास होने पर गवर्नर जनरल के सामने उनकी स्वीकृति के लिये पेश किया जायेगा। अगर किसी बिल पर स्वीकृति देने के लिये या उसे प्रामाणिक बनाने के लिये गवर्नर जनरल को तसवीर में लाया जाता है तो इसका साफ मतलब यही है कि यह सभा सर्वसत्ता सम्पन्न नहीं है। अत: अगर हमें गवर्नर जनरल को यहां तसवीर में लाना है तो हम इस बिल को इस सभा में नहीं पास कर सकते हैं और ऐसे बिलों को पास करने की जगह है व्यवस्थापिका यानी यही विधान-परिषद् जो व्यवस्थापिका की हैसियत से समवेत होती है, और जहां गवर्नर जनरल उस सभा का एक अंश है।

इसलिये मैं ऐसा समझता हूं कि यह धारा नं. 38-ठ, जिससे माननीया मित्र श्रीमती दुर्गाबाई ने और नियमों के साथ प्रस्तावित किया है, वह गलत है और अगर यह मंजूर कर लिया गया तो इससे इस सभा की सार्वभौम सत्ता में कमी आ जायेगी। इसलिये मैं सभा से कहूंगा कि प्रस्ताव से यह खास क्लाज हटा दिया जाये।

मौलाना हसरत मोहानी: जनाब वाला, मेरी भी कतई राय है कि इस असेम्बली में जो चीजें पेश की जावें उसके लिये गवर्नर जनरल की मंजूरी की कोई जरूरत नहीं है। इसकी बुनियादी वजह यह है कि अभी तक हमने डोमिनियन स्टेट हासिल किया है और गवर्नर जनरल जो ब्रिटिश के नुमायन्दे हैं, वह अब पब्लिक के नुमायन्दे नहीं हैं लिहाजा उनसे किसी चीज की मंजूरी की जरूरत नहीं है।

***अध्यक्ष:** इस प्रस्ताव पर राय लेने से पहले मैं प्रस्तावकर्त्री महोदया से यह पूछना चाहता हूं कि क्या वह उत्तर में कुछ कहना चाहती हैं?

***श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर:** श्रीमान्, इसके पहले मैं बीच में चन्द शब्द कहने की अनुमति चाहता हूं। माननीय डॉ. अम्बेडकर से यह जानना चाहता हूं कि इस प्रस्ताव के स्वीकृत होने के क्या परिणाम होंगे; इस पर उन्होंने सोच-विचार कर लिया है क्या? मैं इसलिये यह पूछता हूं कि क्योंकि संशोधित रूप में गृहीत गवर्नमेंट आफ इंडिया एक्ट की धारा 32 के अनुसार गवर्नर जनरल उनके सामने पेश किये हुये किसी बिल पर चाहे तो वह स्वीकृति दे सकते हैं या नहीं भी दे सकते हैं। क्या हम ऐसा समझते हैं कि जहां तक विधान में संशोधन चाहने

वाले बिल का सम्बन्ध है, गवर्नर जनरल को उस पर स्वीकृति देने या न देने का अधिकार होगा?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** गवर्नर नियमानुमोदित होगा और वह मंत्रियों की राय से काम करेगा।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** दूसरी बात जिस पर स्पष्टीकरण की आवश्यकता है वह यह है। कहा गया है कि औपनिवेशिक व्यवस्थापिका जब किसी बिल को पास करेगी तो उस पर गवर्नर जनरल की स्वीकृति आवश्यक होगी। किन्तु क्या यह बात वर्तमान विधान के संशोधन के सम्बंध में भी लागू होगी? यह इसलिए पूछ रहा हूं क्योंकि हम यहां बहैसियत व्यवस्थापिका सभा के नहीं बैठ रहे हैं बल्कि बहैसियत भारतीय विधान-परिषद् के जो सार्वभौम सत्ता सम्पन्न संस्था है। इसी कारण मैं कहता हूं कि बहैसियत अध्यक्ष के आपको यह अधिकार है। इसलिए हम यहां स्वीकार नहीं कर रहे हैं। क्या डॉ. अम्बेडकर यह समझते हैं कि जिस तरह कि नवीन विधान को गवर्नर जनरल के सामने रखने की जरूरत नहीं है उसी तरह वर्तमान विधान सम्बंधी संशोधन को भी गवर्नर जनरल के सामने रखने की जरूरत नहीं है?

***अध्यक्षः** इस बात का जवाब डॉ. अम्बेडकर ने अपने ढंग से दिया है। मा. सदस्य उनके उत्तर से संतुष्ट हैं या नहीं, यह दूसरी बात है। अब मैं प्रस्तावकर्त्री से कहूंगा कि अगर उत्तर में कुछ कहना चाहती हैं तो कहे।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** अध्यक्ष महोदय, मैं नहीं समझती कि उत्तर में कुछ ज्यादा कहने की जरूरत रह गई है, क्योंकि डा. अम्बेडकर ने कृपाकर सारी बातों पर रोशनी डाल दी है और मित्रों ने जो सवाल उठाये थे उन सबों का जवाब दे दिया है। मेरा ख्याल है कि डॉ. अम्बेडकर ने सभी सवालों पर काफी रोशनी डाल दी है और सभी बातों को साफ कर दिया है, किन्तु सदस्यों ने 38-क में उल्लिखित बिलों पर गवर्नर जनरल की स्वीकृति से सम्बंध रखने वाली व्यवस्था के सम्बंध में बहुत कुछ कहा है। डॉ. अम्बेडकर ने उस पर भी प्रकाश डाला है और मुझे इस सम्बंध में बहुत कुछ कहने की जरूरत नहीं है। किन्तु मैं सदस्यों को इस तथ्य की याद दिलाना चाहती हूं कि आज हमारा शासन सन 1935 के एक्ट से चल रहा है जिस रूप में कि वह ग्रहण किया है और जिसमें अभी भी वह व्यवस्था.........।

*__एक माननीय सदस्यः__ किन्तु जहां तक इस विधान-परिषद् का सम्बंध है, यह बात लागू नहीं है।

*__श्रीमती जी. दुर्गाबाईः__ श्रीमान्, मैं समझती हूं कि इस बात से कि बिल विधान-परिषद् द्वारा पास हो गया है, उस पर गवर्नर जनरल की स्वीकृति की आवश्यकता समाप्त नहीं हो जाती, जब तक कि विधान-परिषद् इसके प्रतिकूल कोई व्यवस्था न बना दे। इसलिए अगर आप इस व्यवस्था को हटा देना चाहते हैं तो जरूर कीजिए, परन्तु इसके लिए इसके प्रतिकूल एक व्यवस्था तो बना लीजिए, अन्यथा आप यों स्वेच्छाचारिता से इसे नहीं दूर कर सकते।

माननीय सदस्यों के दिमाग में जो बातें मैं बैठाना चाहती हूं, उसमें पहली तो यह है कि अगर बिना किसी रद्दोबदल के वर्तमान विधान के अन्दर गवर्नर जनरल की वर्तमान स्थिति को चालू रखना है, तो फिर उसकी राय लेनी आवश्यक है और बिल पर उसकी स्वीकृति लाजिमी है। दूसरी बात यह है कि यह जरूरी नहीं है कि इस व्यवस्था को हटा ही दिया जाये, क्योंकि गवर्नर-जनरल मंत्रियों की सलाह पर चलेगा। इन दोनों बातों के कारण यह डर नहीं है कि गवर्नर अकारण किसी बिल पर स्वीकृति देने से इन्कार करेगा। एक दूसरी सोचने की बात यह है कि दूसरी सभा के अभाव में, जो पुनर्विचार करे और कोई त्रुटि रह गई हो तो उसे ठीक कर सके, इस व्यवस्था से मंत्रियों को आवश्यक होने पर और अगर अवसर की मांग हो तो बिल पर पुनर्विचार करने का मौका मिल जायेगा। अतः इन सारी बातों को ध्यान में रखते हुए मैं माननीय सदस्यों से अनुरोध करूंगी कि वे बिना किसी भय के मेरे इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लें।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव यह है कि उन संशोधनों पर विचार किया जाये, जो विधान-परिषद् के नियमों के सम्बंध में रखे गये हैं। बाद में मैं एक-एक करके खण्डों को लूंगा। अभी तो मूल प्रस्ताव सभा के सामने है।

प्रस्ताव मंजूर हुआ।

*__अध्यक्षः__ मैं खण्डों को एक-एक करके लूंगा। सदस्यगण जहां तक हो सके, जल्द इसे देख लें क्योंकि और तीन प्रस्तावों पर विचार करना है और समय हमारे पास अधिक नहीं है।

*__श्रीमती जी. दुर्गाबाईः__ मैं नियम 38-क(1) को उपस्थित करती हूं!

"38-क(1) कोई सदस्य जो 'इंडियन इंडिपेंडेंस एक्ट, 1947' के सम्बन्ध में या उसके अन्तर्गत निर्धारित किसी आज्ञा, नियम, व्यवस्था या अन्य आदेश के सम्बन्ध में अथवा इस एक्ट के अनुसार, आवश्यक संशोधनों के साथ गृहीत 'गवर्नमेण्ट आफ इंडिया एक्ट 1935' के सम्बन्ध में कोई संशोधन को प्रस्तावित करना चाहता हो, तो वह इस उद्देश्य के लिए बिल उपस्थित करने की अनुमति का प्रस्ताव पेश कर सकता है और अपने इरादे की सूचना देगा और सूचना के साथ बिल की नकल और उद्देश्य और कारणों के बारे में एक पूर्ण वक्तव्य पेश करेगा।"

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** क्या मैं एक सुझाव दे सकता हूं? चंद संशोधनों को छोड़कर जिनमें छोटी-मोटी त्रुटियां सुधारने की बात है, कोई बड़ा संशोधन नहीं है। हां, मि. नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन जरूर हैं, जिनमें यत्र-तत्र एक शब्द जोड़ने की बात कही गई है। मेरा सुझाव है, उन संशोधनों को कार्यालय के ऊपर छोड़ देना चाहिए और हमें खण्डों पर विचार शुरू करना चाहिए।

***अध्यक्षः** मैं सुझाव रखूंगा कि ऐसे संशोधनों को जो प्रस्तावक को मान्य हों, अभी मंजूर कर लिया जाये और प्रस्ताव को संशोधित रूप में पेश किया जाये, जिससे कि उस पर वाद-विवाद न हो और शीघ्रता से यह सब समाप्त हो जाये। बजाये इसके कि परिवर्तनों के लिए संशोधनों को कार्यालय पर छोड़ा जाये, उपरोक्त सुझाये तरीके पर चलना ज्यादा अच्छा होगा। मि. नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन के साथ पहले क्लाज का स्वरूप यह होगाः

"कोई सदस्य जो 'इंडियन इंडिपेंडेंस एक्ट 1947' के सम्बन्ध में या उसके अन्तर्गत निर्धारित किसी आज्ञा, नियम या व्यवस्था के सम्बन्ध में अथवा भारत के इन्तजामी विधान द्वारा गृहीत 'गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया एक्ट 1935' के सम्बनध में किसी संशोधन का प्रस्ताव रखना चाहता हो, वह अपने इरादे की सूचना देगा और सूचना के साथ, इस मतलब के लिए जो बिल हो, उसकी एक नकल पेश करेगा और बिल उपस्थित करने की अनुमति का प्रस्ताव रख सकता है।"

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** मैं संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकती।

***अध्यक्षः** तब मि. नजीरुद्दीन अहमद एक-एक करके अपने संशोधन पढ़ें।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान् आपकी अनुमति से मैं यह संशोधन पेश करता हूं:

"प्रस्तावित नियम 38-क के उपनियम (1) में 'संशोधन को प्रस्तावित करना चाहता हो' शब्दों की जगह 'संशोधन का प्रस्ताव रखना चाहता हो' और 'नियम, व्यवस्था या अन्य आदेश' शब्दों की जगह 'नियम और व्यवस्था' तथा 'इस एक्ट के अनुसार ग्रहीत' शब्दों की जगह 'भारतीय (इन्तजामी विधान) आज्ञा 1947' शब्द रखे जायें।"

दूसरा संशोधन, जिसको मैं प्रस्तावित करना चाहता हूं, वह यों है:

"प्रस्तावित नियम 38-क के उपनियम (1) में 'इस उद्देश्य के लिये बिल उपस्थित करने की अनुमति का प्रस्ताव पेश कर सकता है' को हटा कर अन्त में रखा जाये।"

इन संशोधनों का उद्देश्य स्पष्ट है। सूचना देने के बाद बिल पेश करने की अनुमति का प्रस्ताव रखा जाये, ऐसा मैंने संशोधन चाहा है। बाकी संशोधन तो केवल शाब्दिक हैं।

श्रीमती जी. दुर्गाबाईः श्रीमान्, मैं संशोधन को नहीं स्वीकार करती। मूल नियम की भाषा बिल्कुल ठीक है। मैं नहीं समझती कि इसमें किसी संशोधन की जरूरत है।

***अध्यक्षः** प्रस्तावकर्त्री किसी भी संशोधन को मंजूर करने के लिए तैयार नहीं है। अब मैं संशोधनों पर राय लेता हूं।

संशोधन अस्वीकृत हुए।

***अध्यक्षः** अब हम नियम 38-क(2) को लेते हैं।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं यह नियम उपस्थित करती हूं:

"(2) इस नियम के अनुसार बिल उपस्थित करने की अनुमति से सम्बन्ध रखने वाले प्रस्ताव की सूचना की अवधि 15 दिनों की होगी, जब तक कि अध्यक्ष कम दिनों की सूचना से प्रस्ताव उपस्थित करने की अनुमति न दे दें।"

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** मैं इस संशोधन का प्रस्ताव करता हूं किः

''प्रस्तावित नियम 38-क के उपनियम (2) में 'अध्यक्ष अनुमति दे दें' शब्दों की जगह 'अध्यक्ष अपने विवेक से अनुमति दे दें' शब्द रखे जायें।''

अध्यक्ष के विवेक से अनुमति देने की बात पृष्ठ 4 और 7 पर संशोधन सम्बन्धी सूची के दूसरे क्लाजों में है। दो स्थलों पर यही शब्दावली आई है और एकरूपता लाने के लिए इस संशोधन को स्वीकार करने की दरख्वास्त करता हूं।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** श्रीमान्, मैं यह आवश्यक नहीं समझती कि इस संशोधन को स्वीकार किया जाये।

***अध्यक्षः** प्रस्तावकर्त्री संशोधन को मानने के लिए तैयार नहीं है। संशोधन द्वारा 'अध्यक्ष' शब्द के बाद 'अपने विवेक से' शब्द जौड़ने की बात कही गई है। मैं इस पर राय लूंगा।

संशोधन यह है किः

''प्रस्तावित नियम 38-क के उपनियम (2) में 'अध्यक्ष अनुमति दे दें' शब्दों की जगह 'अध्यक्ष अपने विवेक से अनुमति दे दें' शब्द रखे जायें।"

संशोधन नामंजूर हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं समूचे खण्ड 38-क(1) तथा 38-क(2) पर राय लेता हूं, जो यों हैः

38-क (1) कोई सदस्य जो 'इंडियन इंडिपेंडेंस एक्ट 1947' के सम्बंध में या उसके अन्तर्गत निर्धारित किसी आज्ञा, नियम, व्यवस्था या अन्य आदेश के सम्बंध में अथवा इस एक्ट के अनुसार आवश्यक परिवर्तनों के साथ ग्रहीत 'गवर्नमेण्ट आफ इन्डिया एक्ट 1935' के सम्बंध में कोई संशोधन प्रस्तावित करना चाहता हो तो वह इस उद्देश्य के लिए बिल उपस्थित करने की अनुमति का प्रस्ताव पेश कर सकता है, वह अपने इरादे की सूचना देगा और सूचना के साथ बिल की नकल और उद्देश्य और कारणों के बारे में एक पूर्ण वक्तव्य पेश करेगा।''

''38-क(2) इस नियम के अनुसार बिल उपस्थित करने की अनुमति से सम्बंध रखने वाले प्रस्ताव की सूचना की अवधि 15 दिनों की होगी,

[अध्यक्ष]

जब तक कि अध्यक्ष कम दिनों की सूचना से प्रस्ताव उपस्थित करने की अनुमति न दे दें।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब हम 38-ख पर आते हैं।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** श्रीमान्, मैं निम्नलिखित नियम उपस्थित करती हूंः

''38-ख यदि किसी बिल को उपस्थित करने की अनुमति के प्रस्ताव का विरोध होता है, तो अध्यक्ष........''।

***हाजी अब्दुल सत्तार हाजी इशहाक सेठ** (मद्रासः मुस्लिम)ः आपकी अनुमति हो तो मैं यह सुझाव रखूंगा कि समूचा खंड न पढ़ा जाये। यह सदस्यों में घुमा दिया गया है। उसे केवल उपस्थित करने की आवश्यकता है।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** नियम 38-ख यों हैः

''38-ख यदि किसी बिल को उपस्थित करने की अनुमति के प्रस्ताव का विरोध होता है तो अध्यक्ष, यदि ठीक समझते हों तो प्रस्तावकर्त्ता एवं विरोधकर्त्ता सदस्यों को उस सम्बंध में संक्षिप्त वक्तव्य देने की अनुमति देंगे और उसके बाद बिना और बहस के उस प्रस्ताव पर राय लेंगे।''

***अध्यक्षः** मि. नजीरुद्दीन अहमद अब अपना संशोधन रख सकते हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मेरा सुझाव है कि बजाये इसके कि मैं अपने सारे संशोधन को पेश करूं, यह ज्यादा अच्छा और सन्तोषप्रद होगा कि सरकार के मस्विदा बनाने वाले जो लोग हैं वे ही उस पर विचार कर लें। मैं देखता हूं कि मेरा संशोधनों को पेश करना व्यर्थ है, क्योंकि प्रस्तावकगण, मैं देखता हूं, मेरी बात सुनने पर या उस पर गौर करने पर राजी नहीं हैं। मैं इन संशोधनों को आवश्यक समझता हूं और यही कारण है कि मैंने उन्हें प्रस्तुत किया। वे ऐसे नहीं हैं जिनसे विलम्ब हो या जो बेकार हों। इस हालत में मैं आपसे सादर रोशनी

मांगता हूं कि मैं क्या करूं। अगर मैं संशोधन को पेश करने से इन्कार करता हूं, तो यह बात सभा की शान के खिलाफ होगी।

मैं यह संशोधन रखता हूं कि:

''प्रस्तावित नियम 38-ख में 'किसी बिल को उपस्थित करने' शब्दों की जगह 'ऐसे बिल को उपस्थित करने' शब्द रखे जायें।"

श्रीमान्, यह संशोधन जरूरी है, क्योंकि क्लाज के पहले के एक हिस्से में 'बिल' शब्द के विशेषणस्वरूप 'ऐसे' शब्द जुड़ा हुआ है और यहां इसे रख देने से अर्थ में स्पष्टता आ जायेगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, यदि अनुमति हो तो इस बात का जवाब दे दूं। यदि संशोधनकर्ता अध्याय के शीर्षक को ही देंखे तो वह ये शब्द पायेंगे:

''भारतीय-विधान में व्यवस्था रखने के सम्बंध में कानून बनाना।'' ये नियम और किसी दूसरे बिल के सम्बन्ध में नहीं हैं, बल्कि विधान के संशोधन सम्बन्धी बिल के ही सम्बन्ध में है; इसलिये 'ऐसे' शब्द बिल्कुल अनावश्यक है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, इस स्पष्टीकरण के बाद में आपकी आज्ञा से अपना संशोधन वापस लेना चाहता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, समय की बचत के लिये मैं एक सुझाव रखना चाहता हूं। ये सब संशोधन मसविदा ठीक करने के लिये हैं। अच्छा तो यह होगा कि यह सभा यह प्रस्ताव स्वीकार कर ले कि इन संशोधनों पर सरकारी तौर पर मसविदा तैयार करने वाले लोग विचार करें और जहां कहीं आवश्यक हो इन्हें सम्मिलित कर लें। यदि हम संशोधनों पर एक-एक करके विचार करेंगे, तो एक दिन से अधिक समय लग जायेगा। आखिर एक ही विचार को व्यक्त करने के लिये लोग भिन्न-भिन्न प्रकार की भाषा का प्रयोग करते हैं। अच्छा तो यह होगा कि यह काम मसविदा तैयार करने वालों के सुपुर्द कर दिया जाये, क्योंकि वे इस सम्बन्ध में साधारण ज्ञान रखने वाले उन लोगों से अधिक जानकार हैं, जो केवल सभा का समय लेते हैं।

*__अध्यक्ष:__ इस पर आने के पहले मैं सभा के सामने नियम 38-ख रखना चाहता हूं।

नियम 38-ख स्वीकार कर लिया गया।

*__अध्यक्ष:__ जहां तक माननीय डॉ. अम्बेडकर के सुझाव का सम्बन्ध है, मैं यह प्रार्थना करना चाहता हूं कि यदि मि. नजीरुद्दीन और श्रीमती दुर्गाबाई और कोई दूसरे सदस्य जिनकी इसमें दिलचस्पी हो, अलग बैठ जायें और इन संशोधनों के सम्बन्ध में निर्णय कर लें, तो इस बीच हम अन्य प्रस्तावों पर विचार कर सकते हैं। इन संशोधनों पर यदि आप चाहें तो हम पौन घंटे बाद विचार कर सकते हैं।

*__श्री नजीरुद्दीन अहमद:__ परन्तु मैंने अन्य प्रस्तावों के सम्बन्ध में भी संशोधन पेश किये हैं। श्रीमान्, किसी भी सदस्य को इन खण्डों और संशोधनों को पढ़ने का समय नहीं मिला और इसीलिये हमें इस समय कठिनाई मालूम हो रही है। विशेषतया भोजन के उपरान्त प्रत्येक व्यक्ति प्रसन्नचित्त रहता है और पेचीदी बातों में ध्यान लगाने में अपने को असमर्थ पाता है।

*__अध्यक्ष:__ मेरे विचार से इस प्रस्ताव की प्रस्ताविका श्रीमती दुर्गाबाई, इन संशोधनों पर विचार कर सकती हैं और इसका निर्णय कर सकती हैं कि वे इनमें से किनको स्वीकार कर सकती हैं। हम इस मद को कुछ समय बाद उठा सकते हैं। इस बीच हम दूसरी मदों पर विचार कर सकते हैं।

अतिरिक्त नियम 59-क

*__दीवान चमनलाल:__ श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं निम्नलिखित प्रस्ताव पेश करता हूं:

विधान-परिषद् के नियमों में निम्नलिखित संशोधनों पर विचार किया जाये:

"नया नियम 59-क नियम 59 के बाद निम्नलिखित नये नियम को स्थान दिया जाये:

59-क(1) चुनाव-सम्बन्धी अर्जी के बारे में जांच करने के लिये क्रेडेंशियल्स कमेटी या चुनाव के ट्रिब्यूनल को यह अधिकार होगा कि वे गवाहों

को बुलायें और उन्हें हाजिर होने के लिये मजबूर करें और उन्हीं साधनों से और जहां तक सम्भव हो उसी प्रकार कागजों को बलपूर्वक पेश करवायें, जिस प्रकार कि जाब्ता दीवानी सन् 1908 ई. के अधीन दीवानी अदालतों के बारे में व्यवस्था है।

(2) भारतीय शहादत कानून सन् 1872 ई. के आदेश इन नियमों और अध्यक्ष द्वारा जारी की हुई स्थायी आज्ञाओं के आदेशों के अधीन ऐसी प्रत्येक जांच पर लागू समझे जायेंगे'।''

श्रीमान्, चुनाव-सम्बन्धी अर्जियों का विषय इस सभा द्वारा स्वीकृत जाब्ते के नियमों के अध्याय 10 में है। चुनाव-सम्बन्धी अर्जी द्वारा किसी चुनाव पर आपत्ति की जा सकती है। कोई उम्मीदवार या निर्वाचक इस प्रकार की चुनाव-सम्बन्धी अर्जी पेश कर सकता है। यदि अर्जी नियमानुकूल हो और यदि अध्यक्ष को यह विश्वास हो जाये कि उसके लिये पर्याप्त आधार है, तो वह, उस अर्जी को क्रेडेंशियल्स कमेटी के पास भेजेंगे, इसके बाद क्रेडेंशियल्स कमेटी उस चुनाव-सम्बन्धी अर्जी के बारे में जांच करेगी और उसमें जो आपत्तियां की गई हों, उन पर विचार करेगी और जितनी जल्दी हो सकेगा एक रिपोर्ट पेश करेगी। यदि केडेंशियल्स कमेटी आवश्यक समझे तो वह अध्यक्ष के पास यह सिफारिश भेज सकती है कि चुनाव-सम्बन्धी अर्जी के बारे में जांच करने के लिये एक इलेक्शन ट्रिब्यूनल नियुक्त किया जाये। इसलिये हमारे पास एक दूसरा तरीका है। क्रेडेंशियल्स कमेटी या तो अध्यक्ष के पास यह सिफारिश भेज सकती है कि वे एक चुनाव-सम्बन्धी ट्रिब्यूनल नियुक्त करें या उनके पास एक रिपोर्ट भेज सकती है। यदि चुनाव-सम्बन्धी ट्रिब्यूनल नियुक्त करना हो तो अध्यक्ष एक या दो सदस्यों का एक ट्रिब्यूनल नियुक्त करेंगे, जो उस अर्जी पर विचार करेगा। अब एक बात रह गई है। इस सम्बनध में कुछ सन्देह है कि चुनाव-सम्बन्धी ट्रिब्यूनल को यह अर्जी किस तरीके से दी जाये। नियम 43(5) के अनुसार क्रेडेंशियल्स कमेटी के कार्यसंचालन के सम्बन्ध में अध्यक्ष स्थायी आज्ञाएं जारी कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में संदेह है कि वे चुनाव-सम्बन्धी ट्रिब्यूनल के सामने उपस्थित होने के लिये गवाहों को मजबूर करने या उनको बुलाने या उनके हाजिर होने या कागजात को पेश करने के लिये बलप्रयोग करने के बारे में नियम बना सकते हैं या नहीं। इसलिये इस विशेष नियम 59-क को स्थान देने की आवश्यकता पड़ी है, जिसके अनुसार उनको गवाहों को हाजिर होने और कागजात को पेश कराने के लिये कहने का अधिकार मिल जाता है।

[दीवान चमनलाल]

इस अधिकार के दो अंग हैं। जहां तक सम्भव होगा उसी ढंग से काम लिया जायेगा जो कि दीवानी के मुकद्दमों के सम्बन्ध में जाब्ता दीवानी में अपनाया गया है। दूसरे इस असेम्बली की स्थायी आज्ञाओं और इसके नियमों के अधीन शहादत का कानून उस शहादत पर भी लागू होगा जो कि चुनाव-सम्बन्धी-ट्रिब्यूनल के सामने पेश की जाये।

मेरे विचार से इस दृष्टि से लम्बे भाषण देने की कोई आवश्यकता नहीं है कि माननीय सदस्यों की समझ में आ जाये कि इस संशोधन की आवश्यकता है। मैं यह बता देना चाहता हूं कि अभी भी 5 या 6 चुनाव-सम्बन्धी अर्जियां विचाराधीन हैं और इन पर तुरन्त ही कार्यवाही करने के लिये यह आवश्यक है कि यह सन्देह मिटा दिया जाये और इस नियम को स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्षः** मि. नजीरुद्दीन अहमद ने जिस संशोधन की सूचना दी है, उसे वे पेश कर सकते हैं।

***श्री के. सन्तानम्ः** श्रीमान्, मुझे एक व्यवस्था-सम्बन्धी आपत्ति करनी है। मेरे विचार से इस सभा के प्रत्येक नियम को कानून का बल प्राप्त नहीं हो सकता। यदि आप इस प्रकार का बलप्रयोग चाहते हैं तो यह उद्देश्य धारा-सभा में एक बिल पेश करने और उसे स्वीकार कराने से पूरा हो सकता है। तभी दीवानी के अधिकारी उसे स्वीकार कर सकते हैं। दीवानी की अदालतें इस सभा के नियमों को कानूनी तौर पर नहीं मानेंगी। इसलिये मेरे विचार से यह नियम-विरुद्ध बात है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** भारतीय स्वतंत्रता के कानून के अधीन यह सभा औपनिवेशिक व्यवस्थापिका सभा मानी गई है और इसे सभी अधिकार प्राप्त हैं। इसलिये चाहे आप नियम कहें या कानून, उसे कानून का बल प्राप्त है।

***अध्यक्षः** मैं श्री अनन्तशयनम् आयंगर के विचार से सहमत हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं यह पेश करता हूं कि:

"(1) प्रस्तावित नियम 59-क के उपनियम (1) में अन्त में '1908' अंक के बाद निम्नलिखित जोड़ दिया जाये-'1908 का 5'।

(2) प्रस्तावित नियम 59-क के उपनियम (2) में 'स्थायी आज्ञाओं' शब्दों की जगह बड़े अक्षरों में 'स्थायी आज्ञाओं' शब्द रखे जायें।''

इन दोनों संशोधनों की व्याख्या उनके ही शब्दों से हो जाती है। पहला केवल कानून का नम्बर निश्चित करता है और दूसरा 'स्थायी आज्ञाओं' शब्दों को बड़े अक्षरों में देता है। ये संशोधन केवल रस्मी हैं और मैं सिफारिश करता हूं कि ये स्वीकार कर लिये जायें।

***दीवान चमनलाल:** मैं इन संशोधनों को स्वीकार करता।

संशोधन स्वीकार कर लिये गये।

प्रस्ताव संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

नियम 51, 53, 60, 61 में संशोधन और नया नियम 67

***श्री पी. गोविन्द मेनन:** अध्यक्ष महोदय, मैं जिस प्रस्ताव को पेश कर रहा हूं, वह केवल रस्मी है। इस सभा द्वारा स्वीकृत नियमों के अध्याय 10 में इस सभा के सदस्यों के चुनाव के सम्बन्ध में जो सन्देह और झगड़े उठ खड़े हों, उनका निर्णय करने के लिये जिस विधि का अनुसरण किया जायेगा उसका उल्लेख है। परन्तु उस अध्याय में 'उम्मीदवार' और 'निर्वाचित उम्मीदवार' शब्दों की परिभाषाओं को देखने से यह पता लगता है कि ये नियम भारतीय रियासतों से निर्वाचित सदस्यों पर लागू नहीं होते हैं। भारतीय रियासतों से निर्वाचित सदस्यों के सम्बन्ध में माननीय अध्यक्ष महोदय ने स्थायी आज्ञाएं जारी की हैं और इस समय इन्हीं स्थायी आज्ञाओं के अनुसार कार्य होता है। इस प्रस्ताव का उद्देश्य यह है कि ये स्थायी आज्ञाएं इन नियमों में ही सम्मिलित कर ली जायें। श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं कि नियम 51 में:

''(1) खण्ड (क) के बाद निम्नलिखित नये खण्ड जोड़ दिये जायें:

'(कक) किसी भारतीय रियासत या रियासतों के 'प्रतिनिधि' से बोध उस व्यक्ति से होता है जो इन नियमों के परिशिष्ट के आदेशानुसार इस सभा के लिये ऐसी रियासत या रियासतों का प्रतिनिधि चुना गया हो'।''

[श्री पी. गोविन्द मेनन]

''(2) खण्ड (ख) के अन्त में निम्नलिखित जोड़ दिया जाये:

'इसमें वह उम्मीदवार भी सम्मिलित है जिसके बारे में किसी भारतीय रियासत या रियासतों के नरेश या नरेशों की तरफ से अध्यक्ष को इन नियमों के परिशिष्ट के आदेशानुसार बताया गया हो कि वह ऐसी रियासत या रियासतों का नियमित रूप से चुना हुआ प्रतिनिधि है'।''

***अध्यक्ष:** इस प्रस्ताव के बारे में कोई संशोधन पेश नहीं किये गये हैं।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***श्री पी. गोविन्द मेनन:** मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि:

''नियम 53 के उपनियम (1) के खण्ड 1 में 'इस सभा के लिये पहला चुनाव होने पर' शब्दों की जगह 'इन नियमों के प्रकाशित होने के पहले इस सभा के लिये चुनाव होने पर' शब्द रखे जायें।

नियम 53 के उपनियम (1) के खंड 2 में 'यथोचित सरकारी गजट में' शब्दों की जगह 'भारत सरकार के गजट या सम्बन्धित प्रान्त के सरकारी गजट में' शब्द रखे जायें।''

***अध्यक्ष:** इस प्रस्ताव के बारे में कोई संशोधन पेश नहीं किये गये हैं।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***श्री पी. गोविन्द मेनन:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि:

''नियम 60 के उपनियम (1) में 'भारतीय व्यवस्थापिका सभा के चुनाव सम्बन्धी नियमों' शब्दों के बाद 'जो पहली अगस्त सन् 1946 ई. को प्रयोग में हो' शब्द रखे जायें।''

***अध्यक्ष:** इस प्रस्ताव के बारे में कोई संशोधन पेश नहीं किये गये हैं।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***श्री पी. गोविन्द मेनन:** श्रीमान् मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि:

''नियम 61 के अन्त में निम्नलिखित शब्द जोड़ दिये जायें:

'और इस प्रकार जारी की हुई आज्ञाएं अन्तिम होंगी और उन पर किसी अदालत में सन्देह प्रकट न किया जायेगा'।''

***अध्यक्षः** इस प्रस्ताव के बारे में कोई संशोधन पेश नहीं किया गया है।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***श्री पी. गोविन्द मेननः** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव करता हूं किः

''नियम 66 के बाद निम्नलिखित नया नियम रखा जायेः

'67. यदि इन नियमों की व्याख्या के सम्बन्ध में इनके अधीन होने वाले चुनाव के अतिरिक्त अन्य किसी बारे में कोई प्रश्न उठे, तो वह निर्णय के लिये अध्यक्ष के पास भेजा जायेगा और उनका निर्णय अन्तिम होगा'।''

***अध्यक्षः** इस सम्बन्ध में कोई संशोधन पेश नहीं किया गया है।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***श्री पी. गोविन्द मेननः** मैं यह प्रस्ताव करता हूं किः

''नियमों के अन्त में निम्नलिखित परिशिष्ट रख दिया जायेः

'परिशिष्ट

(नियम 51 देखिये)

भारतीय रियासतों के नाम वक्तव्य में जो जगहें रखी गई हैं, वे परिशिष्ट 'क' में दिखाई हुई विभिन्न रियासतों तथा रियासतों के समूहों को साधारणतया दस लाख की आबादी के लिये एक जगह के हिसाब से दी जायेंगी; अलग-अलग रियासतों के सम्बन्ध में तीन चौथाई या अधिक के अंकांश एक अंक गिने जायेंगे और इससे कम के अंकांश नहीं गिने जायेंगे और रियासतों के समूहों के सम्बन्ध में आधे से अधिक अंकांश एक अंक गिने जायेंगे और इससे कम अंकांश नहीं गिने जायेंगे।

2. अध्यक्ष किसी सम्बन्धित रियासत या रियासतों की अर्जी आने पर आज्ञा जारी करके इस परिशिष्ट के परिशिष्ट 'क' में इसलिये संशोधन कर सकते हैं कि:

(क) अलग-अलग या एकत्रित रियासतों का प्रतिनिधित्व बदला जा सके;

(ख) एक समूह को एक से अधिक समूहों में बांटकर या किसी रियासत या रियासतों को एक समूह से दूसरे समूह में रखकर रियासतों का एकत्रीकरण बदला जा सके या इसके विपरीत यह व्यवस्था कर सकते है कि:

(1) इस प्रकार के परिवर्तन से सभी रियासतों के प्रतिनिधियों की कुल संख्या या सम्बन्धित रियासतों के समूह या समूहों के प्रतिनिधियों की संख्या पर कुछ असर नहीं पड़ेगा; और

(2) इस प्रकार का कोई परिवर्तन करने में आबादी के आधार की उपेक्षा न की जायेगी और भौगोलिक निकटता, आर्थिक प्रश्नों तथा जातीय, सांस्कृतिक और भाषा सम्बन्धी सान्निध्य की ओर यथोचित ध्यान दिया जायेगा।

2-क. जब कि किसी रियासत या रियासतों के समूह के प्रतिनिधियों की संख्या या रियासतों का समूह पैरा 2 के अधीन किसी आज्ञा से बदला जाये तो अध्यक्ष उन रियासतों की तरफ से अर्जी आने पर, जिन पर इस आज्ञा का असर पड़ता हो, सभा में सम्बन्धित रियासतों के प्रतिनिधियों की जगहों को रिक्त घोषित कर सकता है।

3. सभा में रियासतों के प्रतिनिधियों की कुल संख्या की कम से कम 50 प्रतिशत संख्या ऐसे सदस्यों की होगी, जो रियासतों की धारासभाओं के निर्वाचित सदस्यों द्वारा चुने जायेंगे: या जहां इस प्रकार की धारासभायें न हों, तो वे निर्वाचक मंडलों द्वारा चुने जायेंगे, जिनका निर्माण सम्बन्धित रियासतों के नरेशों के इस सम्बन्ध में बनाये हुये आदेशों के अनुसार होगा। रियासतें निर्वाचित सदस्यों की संख्या कुल संख्या की 50 प्रतिशत से जितना अधिक हो सके, बढ़ाने का प्रयत्न करेंगी। इस प्रकार किसी रियासत या रियासतों के समूह को दी हुई जगहों की कम से कम

आधी जगहें सम्बन्धित रियासत या रियासतों के नरेश के आदेशानुसार चुनाव से भरी जायेंगी।

4. परिशिष्ट 'क' के स्तम्भ 1 में बताये हुये विभिन्न रियासतों के समूहों के संचालक उसी परिशिष्ट के स्तम्भ 4 में उनके सामने उल्लिखित नरेश होंगे। उस समूह की रियासतों से सलाह लेकर मंत्री उच्च स्तम्भ 4 में कोई ऐसे परिवर्तन कर सकता है जिन्हें वह आवश्यक और उचित समझे।

5. मनोनीतकरण या चुनाव के, जैसी भी दशा हो, समाप्त होने पर सम्बन्धित रियासत का नरेश जहां तक सम्भव होगा निम्नलिखित रूप में एक विज्ञप्ति निकालेगा, जिसमें उस व्यक्ति या उन व्यक्तियों के नाम दिये होंगे जो विधान-परिषद् के लिये प्रतिनिधि चुने गये हों, या मनोनीत हुए हों और उसे विधान-परिषद् के अध्यक्ष के पास भिजवायेगा। जहां रियासतों के किसी समूह ने चुनाव किया हो तो उस दशा में उस समूह का संचालक यह विज्ञप्ति निकालेगा।

+प्रपत्र

यह ज्ञात हो कि (यहां प्रतिनिधि या प्रतिनिधियों के नाम लिखिये)...........रियासत (यहां रियासत या रियासतों के नाम लिखिये)................. की ओर से भारतीय विधान-परिषद् के लिये प्रतिनिधि चुने गये हैं; इसके प्रमाण में यह विज्ञप्ति निकाली जाती है, जिस पर मेरे हस्ताक्षर हैं और मेरी रियासत की मुहर है।

रियासत

रियासतें

.... का नरेश

तिथि ....

+ये (2 और 2 अ) आदेश नये हैं जो कि मूल पैरा 2 के स्थान में रखे गये हैं।

परिशिष्ट 'क'
अकेली रियासतें

वितरण-संख्या जैसी कि वह भारत सरकार के कानून सन् 1935 ई. के पहले परिशिष्ट के भाग 2 से सम्बद्ध जगहों के नक्शे में दी हुई है	रियासत का नाम	विधान-परिषद् में जगहों की संख्या	संचालक
1	2	3	4
1	हैदराबाद	16	..
2	मैसूर	7	..
3	काश्मीर	4	..
4	ग्वालियर	4	..
5	बड़ौदा	3	..
9	त्रावणकोर	6	..
9	कोचीन	1	..
10	उदयपुर	2	..
10	जयपुर	3	..
10	जोधपुर	2	..
10	बीकानेर	1	..
10	अलवर	1	..
10	कोटा	1	..
11	इन्दौर	1	..
11	भूपाल	1	..
11	रीवां	2	..
12	कोल्हापुर	1	..
14	पटियाला	2	..
14	बहावलपुर	1	..
16	मयूरभंज	1	..
	20	60	

सरहदी समूह

1	2	3	4
7	सिक्किम	1	नरेश—
15	कूच बिहार		कूच बिहार रियासत
15	त्रिपुरा		
15	मनीपुर	1	त्रिपुरा
17	खासी रियासतें		

आन्तरिक समूह

8	रामपुर	1	रामपुर रियासत
	बनारस		
10	भरतपुर		
	टोंक		
	धौलपुर		
	करौली		
	बूंदी		
	सिरोही		
(13 रियासतें)	डूंगरपुर	3	बूंदी रियासत
	बांसवाड़ा		
	परतापगढ़		
	झालावाड़		
	जैसलमेर		
	किशनगढ़		
11	शाहपुरा		
11	दतिया		
	ओरछा		
	धार		
	देवास (बड़ा)		
	देवास (छोटा)		

1	2	3	4
	जावरा		
	रतलाम		
	पन्ना		
	समथर		
	अजयगढ़		
	बीजावाड़		
	चरखारी		
(26 रियासतें)	छतरपुर	3	पन्ना रियासत
	बावनी		
	नागोद		
	मयिहर		
	बरौंधा		
	बड़वानी		
	अलीराजपुर		
	झाबुआ		
	सैलाना		
	सीतामऊ		
	राजगढ़		
	नरसिंहगढ़		
	खिलचीपुर		
	कुरवई		
12	कूच		
	ईडर		
	नवानगर		
	भावनगर		
	जूनागढ़		
	धारगंध्रा		
	गौंडल		
	पोरबंदर		
(17 रियासतें)	मोर्वी	4	नवानगर रियासत
	राधनपुर		
	बांकानर		
	पालीताना		

1	2	3	4
	धौल		
	लिम्बडी		
	वाधवान		
	राजकोट		
	जफ्राबाद		
	राजपीपला		
	पालनपुर		
	कैम्बे		
	धरमपुर		
	बालासिंदूर		
	बरिया		
(14 रियासतें)	छोटा उदयपुर	2	राजपीपला रियासत
	संत		
	लूनावाडा		
	बंसदा		
	साचिन		
	जौहर		
	दांता		
13	जंजीरा		
13	सांगली		
	सावंतवाडी		
	मुधौल		
	भोर		
	जमखंडी		
	मिराज (बड़ा)		
	मिराज (छोटा)		
	कुरुंदवाड (बड़ा)		
	कुरुंदवाड (छोटा)		
	अकालकोट		
(17 रियासतें)	फल्टन	2	मिराज (छोटा) रियासत
	जाथ		
	औंध		
	रामदुर्ग		

1	2	3	4
9	पुदूकोटाई		
	बंगानापली		
14	सांदूर		
	कपूरथला		
	जींद		
	नाभा		
	मंडी		
	बिलासपुर		
	सुकेत		
(14 रियासतें)	टेहरी गढ़वाल	3	बिलासपुर रियासत
	सिरमूर		
	चांवा		
	फरीदकोट		
	मलेरकोटला		
17	*लोहारू		
	कलसिया		
	बशाहर		
	सोनपुर		
16	पटना		
	कालहांडी		
	क्यौंझार		
	धेनकानाल		
	नयागढ़		
	तालचेर		
	नीलगिरी		
	गंगापुर		
	बामूरा		
(25 रियासतें)	सराय केला	4	बौद रियासत
	बौद		
	बोनाई		
	आठगढ़		
10	पाल लहारा		

*लोहारू का प्रतिनिधित्व विशेष व्यवस्था से बीकानेर रियासत के प्रतिनिधि द्वारा होता है।

1	2	3	4
	आठ मालिक		
	हिंडोल		
	नरसिंहपुर		
	बांरवा		
	निगिरि		
	खांदपारा		
	रानपुर		
	दासपल्ला		
	रेराखोल		
	खारसांवां		
16–क	बस्तर		
	सरगूजा		
	रायगढ़		
	नन्दगांव		
	खैरागढ़		
	जशपुर	3	बौद रियासत
(14 रियासतें)	कांकेर		
	कोरिया		
	सारनगढ़		
17	चंगभाकर		
	हुलकादान		
	कवर्धा		
	शक्ति		
	उदयपुर		
17	अन्य सभी रियासतें	4	बीघट रियासत

***अध्यक्षः** इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में कोई संशोधन नहीं है।

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** हम कार्यावली के अन्त तक पहुंच गये हैं। अब हम बची हुई मद को अर्थात् श्रीमती जी. दुर्गाबाई के प्रस्तावों को उठाते हैं।

***श्रीमती जी दुर्गाबाईः** आपकी अनुमति से मैं नियम 38-ग पेश करती हूं:

''38-ग किसी बिल के पेश होने पर, जब तक कि अध्यक्ष इसके विपरीत आदेश न दें, वह बिल जितनी जल्दी हो सकेगा, भारत सरकार के गजट में प्रकाशित किया जायेगा।''

***अध्यक्षः** मि. नजीरुद्दीन अहमद ने इसके शब्दों में दो संशोधनों के बारे में सूचना दी है, अर्थात् ''नियम 38-ग में 'किसी बिल' की जगह 'बिल' शब्द रखा जाये और 'वह बिल' शब्दों की जगह 'वह' शब्द रखा जाये।''

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** मैं इस संशोधन को स्वीकार करती हूं।

***अध्यक्षः** मि. नजीरुद्दीन अहमद, उन्होंने संशोधन स्वीकार कर लिया है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं किः

''प्रस्तावित नियम 38-ग में 'किसी बिल' की जगह 'बिल' शब्द रखा जाये और 'वह बिल' शब्दों की जगह 'वह' शब्द रखा जाये।''

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** मैंने संशोधन स्वीकार कर लिया है।

संशोधन स्वीकार कर लिये गये।

***अध्यक्षः** मैं नियम 38-ग को उसके संशोधित रूप में मतदान के लिये सभा के सामने रखता हूं।

नियम 38-ग उसके संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** मैं नियम 38-घ पेश करती हूं:

'38-घ जब कोई बिल पेश किया जाये तो, या बाद को किसी समय जिस सदस्य ने बिल पेश किया हो वह उस बिल के सम्बन्ध में निम्नलिखित प्रस्तावों में से किसी एक को कर सकता है, अर्थातः

(क) यह कि उस पर सभा उसी समय या बाद को किसी ऐसे समय, जो उस समय निश्चित किया जाये, विचार करे; या

(ख) यह कि वह सेलेक्ट कमेटी के पास भेजा जाये।''

मगर शर्त यह है कि इस प्रकार का कोई प्रस्ताव उस समय तक न किया जायेगा, जब तक कि उस बिल की प्रतियां सदस्यों को उपलब्ध न हो जायें और यह कि जब तक कि प्रस्ताव पेश होने के तीन दिन पहले बिल की प्रतियां इस प्रकार उपलब्ध न हो जायें, तो कोई भी सदस्य इस प्रकार के प्रस्ताव के पेश होने पर आपत्ति कर सकता है और जब तक अध्यक्ष अपने विवेक से प्रस्ताव को पेश करने की आज्ञा न दें, इस प्रकार की आपत्ति मान्य होगी।

मैं इस संशोधन को स्वीकार करती हूं कि प्रस्तावित नियम 38-घ में 'अब कोई बिल' शब्दों की जगह 'जिस समय कोई बिल' शब्द रखे जायें।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं किः

''प्रस्तावित नियम 38-घ में 'जब कोई बिल' शब्दों की जगह 'जिस समय कोई बिल' शब्द रखे जायें।''

***अध्यक्षः** उन्होंने इस संशोधन को स्वीकार कर लिया है।

मैं इस नियम को उसके संशोधित रूप में मतदान के लिये सभा के सामने रखता हूं।

नियम 38-घ उसके संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** आपकी अनुमति से मैं नियम 38-ङ (1) पेश करना चाहती हूंः

''38-ङ (1) इस प्रकार का प्रस्ताव जिस दिन पेश हो या बाद को किसी ऐसे दिन जब तक के लिये उस पर बहस स्थगित की जाये, बिल के सिद्धांतों और साधारण आदेशों पर बहस हो सकती है। परन्तु बिल के ब्योरे पर उससे अधिक बहस न हो जितनी कि उसके सिद्धांतों की व्याख्या करने के लिये आवश्यक हो।''

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** आपकी अनुमति से मैं संशोधन नं. 9 पेश करना चाहता हूंः

''अर्थात् प्रस्तावित नियम 38-ङ के उपनियम (1) में 'बहस स्थगित की जाये, बिल के सिद्धांतों' की जगह ''बहस रोकी जाये केवल बिल के सिद्धातों' शब्द रख दिये जायें।''

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

इस सम्बन्ध में जो कानूनी भाषा प्रयोग में लाई गई है, उसमें 'स्थगित की जाये' शब्द उपयुक्त नहीं हैं। स्थगित का अर्थ है हमेशा के लिये स्थगित। 'रोकी जाये' का अर्थ है कि अधिक विचार के लिये रोकी जाये; 'रोकी जाये' शब्द अधिक उपयुक्त हैं।

मैं संशोधन नं. 10 भी पेश करना चाहता हूं:

"अर्थात् प्रस्तावित नियम 38-ङ के उपनियम (1) में 'बहस न हो' शब्दों की जगह 'बहस न होगी' शब्द रख दिये जायें।"

*__श्रीमती जी. दुर्गाबाई:__ श्रीमान्, मैं संशोधन नं. 9 को स्वीकार नहीं करती हूं। मैं संशोधन नं. 10 को स्वीकार करती हूं।

*__श्री नजीरुद्दीन अहमद:__ श्रीमान्, मैं सभा की आज्ञा से संशोधन नं. 9 वापस लेना चाहता हूं।

*__अध्यक्ष:__ क्या मैं यह समझूं कि सभा संशोधन नं. 9 वापस लेने की आज्ञा देती है।

सभा की आज्ञा से संशोधन वापस ले लिया गया।

*__अध्यक्ष:__ प्रस्ताविका ने संशोधन नं. 10 स्वीकार कर लिया है। मैं अब नियम 38-ङ (1) को उसके संशोधित रूप में मतदान के लिये सभा के सामने रखता हूं।

नियम 38-ङ(1) संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

*__श्रीमती जी. दुर्गाबाई:__ आपकी अनुमति से मैं नियम 38-ङ(2) पेश करना चाहती हूं:

"38-ङ(2) इस अवसर पर बिल के सम्बन्ध में कोई संशोधन पेश न किये जायें, परन्तु यदि वह सदस्य जिसने बिल पेश किया हो, यह प्रस्ताव करे कि उसके बिल पर विचार किया जाये, तो कोई भी सदस्य संशोधन के रूप में यह प्रस्ताव कर सकता है कि वह बिल सेलेक्ट कमेटी के पास भेजा जाये।"

*__श्री नजीरुद्दीन अहमदः__ श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं यह पेश करना चाहता हूं किः

''प्रस्तावित नियम 38-ङ के उपनियम (2) मैं 'कोई भी सदस्य' शब्दों की जगह 'कोई अन्य सदस्य' शब्द रखे जायें।''

बात यह है कि जो सदस्य प्रस्ताव करता है, वह संशोधन पेश नहीं कर सकता। इसलिये संशोधन का काम प्रस्तावक के अतिरिक्त किसी अन्य सदस्य के लिये छोड़ा जाना चाहिये।

मैं यह भी प्रस्ताव करता हूं कि प्रस्तावित नियम 38-ङ के उपनियम (2) के अन्त में 'या उस पर जनमत जानने के लिये उसे घुमाया जाये' शब्द जोड़ दिये जायें।

*__श्रीमती जी. दुर्गाबाईः__ मैं संशोधन नं. 11 को स्वीकार नहीं करती हूं। मैं संशोधन नं. 12 का भी विरोध करती हूं।

*__श्री नजीरुद्दीन अहमदः__ श्रीमान्, इन दोनों संशोधनों को वापस लेने के लिये मैं सभा की आज्ञा चाहता हूं।

*__अध्यक्षः__ मैं समझता हूं कि सभा इन संशोधनों को वापस लेने की आज्ञा देती है।

संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिये गये।

*__अध्यक्षः__ मैं अब नियम 38-ङ को उसके संशोधित रूप में मतदान के लिये सभा के सामने रखता हूं।

नियम 38-ङ संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

*__श्रीमती जी. दुर्गाबाईः__ आपकी अनुमति से मैं नियम 38-च पेश करना चाहती हूंः

''38-च(1) जिस सदस्य ने बिल पेश किया हो वह प्रत्येक सेलेक्ट कमेटी का सदस्य होगा और ऐसी किसी कमेटी की नियुक्ति के सम्बन्ध में किसी प्रस्ताव में उसका नाम सम्मिलित करने की आवश्यकता न होगी।

(2) जब बिल को सेलेक्ट कमेटी के पास भेजने का कोई प्रस्ताव किया जाये, तो कमेटी के अन्य सदस्यों को सभा नियुक्त करेगी।

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

(3) वह कमेटी अपने सभापति का पद ग्रहण करने के लिये कमेटी के किसी सदस्य को चुनेगी और उसकी अनुपस्थिति में वह कमेटी के किसी अन्य सदस्य को सभापति का पद ग्रहण करने और उसके अधिकारों को प्रयोग में लाने के लिये चुन सकती है।

(4) सभापति प्रथम बार वोट नहीं देगा, परन्तु यदि वोट दोनों तरफ बराबर हों तो वह निर्णायक वोट देगा।

(5) सेलेक्ट कमेटी विशेषज्ञों तथा उन विशेष हितों के प्रतिनिधियों की राय सुन सकती है जो विचाराधीन योजना से प्रभावित होते हों।''

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं यह पेश करता हूं कि:

''प्रस्तावित नियम 38-च के उपनियम (1) में 'प्रत्येक सेलेक्ट कमेटी का' शब्दों के बाद 'जिसको कि बिल भेजा गया हो' शब्द रखे जायें।''

विचार को पूरा करने के लिये ये शब्द आवश्यक हैं।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** सदस्य महोदय नियम 3-च के सम्बन्ध में सभी संशोधनों को पेश कर लें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं यह पेश कतरा हूं कि:

''प्रस्तावित नियम 38-च के उपनियम (2) में 'सभा नियुक्त करेगी' शब्दों की जगह 'सभा चुनेगी' शब्द रखे जायें।''

व्यवस्थापिका के चुनाव के सम्बन्ध में 'चुनाव' शब्द अधिक उपयुक्त है।

आपकी अनुमति से मैं यह भी पेश करना चाहता हूं कि:

''प्रस्तावित नियम 38-च के उपनियम (3) में 'वह कमेटी अपने सभापति का पद ग्रहण करने के लिये कमेटी के किसी सदस्य को चुनेगी' शब्दों की जगह 'उस कमेटी के सदस्य अपने सभापति का पद ग्रहण करने के लिये अपने किसी सदस्य को चुनेंगे' शब्द रखे जायें।''

श्रीमान्, यह संशोधन केवल शब्दों के परिवर्तन के सम्बन्ध में है। प्रस्तावित नियम में कहा गया है कि कमेटी के सदस्य सभापति का पद ग्रहण करने के

लिये कमेटी के किसी सदस्य को चुनेंगे, उन्हीं शब्दों को दुहराने के बजाये मैंने यह कहा है कि अपने किसी सदस्य को चुनेंगे।

मेरा दूसरा संशोधन यह है कि:

''प्रस्तावित नियम 38-च के उपनियम (3) में 'किसी अन्य सदस्य' शब्दों के पहले 'कमेटी के' शब्द निकाल दिये जायें।''

एक अन्य संशोधन इस प्रकार है:

''प्रस्तावित नियम 38-च के उपनियम (3) में 'उसके अधिकारों को' शब्दों की जगह 'उसकी अनुपस्थिति में उसके अधिकारों को' शब्द रख दिये जायें।''

इस संशोधन का उद्देश्य यह है। उस व्यक्ति का अधिकार, जो सभापति की अनुपस्थिति में सभापति का पद ग्रहण करने के लिये चुना गया हो उसी समय प्रयोग में आ सकता है जिस समय सभापति अनुपस्थित हो। नियम की शब्दावली जिस प्रकार रखी गई है, उससे यह बोध होता है कि जो व्यक्ति सभापति का पद ग्रहण करने के लिये चुना गया हो, वह उस समय भी पदासीन रहेगा और कमेटी की कार्यवाही में भाग लेता रहेगा जब कि सभापति वापस आ जाये।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** श्रीमान्, मैं इन सभी संशोधनों का विरोध करती हूं। सेलेक्ट कमेटी के सभी सदस्य 'नियुक्त' किये जाते हैं और 'चुने' नहीं जाते। इसी भाषा का प्रयोग किया जाता है और इसी को यहां भी अपनाया गया है, यह ठीक ही है।

श्रीमान्, मैं एक छोटा सा संशोधन स्वयं पेश करना चाहती हूं, अर्थात:

''खण्ड 38-च के उपखण्ड (1) में 'प्रत्येक सेलेक्ट कमेटी' शब्दों की जगह केवल 'सेलेक्ट कमेटी' शब्द रखे जायें।''

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, सभा की अनुमति से मैं नं. 13 से नं. 17 तक अपने सभी संशोधन वापस लेना चाहता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन नं. 13 से 17 तक वापस ले लिये गये।

***अध्यक्ष:** मैं अब नियम 38-च को, जैसा कि प्रस्ताविका ने उसे संशोधित किया है, मतदान के लिये सभा के सामने रखता हूं।

[अध्यक्ष]

नियम 38-च संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं नियम 38-छ पेश करती हूं:

"38-छ(1) सेलेक्ट कमेटी के सदस्यों की नियुक्ति करते समय सभा उन सदस्यों की संख्या भी निश्चित करेगी जिनकी उपस्थिति कमेटी की किसी बैठक के लिये आवश्यक होगी।

(2) यदि सेलेक्ट कमेटी की बैठक समवेत होने के पूर्व निश्चित समय पर, या इस प्रकार की बैठक में किसी समय उसके सदस्य सभा द्वारा निश्चित संख्या में उपस्थित न हों, तो कमेटी के सभापति या तो बैठक को उस समय तक के लिये स्थगित कर देंगे जबकि निश्चित संख्या में सदस्य उपस्थित हो जायें, या कमेटी का काम किसी अगले दिन के लिये रोक देंगे।

(3) यदि सेलेक्ट कमेटी का काम उपनियम (2) के अनुसार ऐसे दो दोनों के लिये लगातार रोक दिया जाये, जो कमेटी की बैठक के लिये निश्चित किये गये हों, तो सभापति इसकी सूचना सभा को देंगे।"

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** इस नियम के सम्बन्ध में मेरे नाम से जो संशोधन नं. 18 है, उसे मैं पेश नहीं कर रहा हूं।

***अध्यक्ष:** इस प्रकार अब इस नियम के सम्बन्ध में कोई संशोधन नहीं है। मैं इसे मतदान के लिये सभा के सामने रखता हूं।

नियम 38-छ स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं नियम 38-ज पेश करती हूं:

"38-ज (1) जब कोई बिल किसी सेलेक्ट कमेटी के पास भेजा जाये, तो कमेटी उस पर एक रिपोर्ट पेश करेगी।

(2) रिपोर्ट या तो प्रारम्भिक हो सकती है या अन्तिम।

(3) यदि सेलेक्ट कमेटी का कोई सदस्य किसी विषय के सम्बन्ध में अपना मतभेद प्रकट करना चाहे, तो उसे रिपोर्ट पर यह कहकर हस्ताक्षर करना

चाहिये कि वे अपने मतभेद के लेख के अधीन हस्ताक्षर कर रहे हैं और साथ ही उन्हें अपना लेख भी दे देना चाहिये।''

***अध्यक्षः** इस नियम के सम्बन्ध में कोई संशोधन नहीं है। इसलिये मैं इसे मतदान के लिये पेश करता हूं।

नियम 38-ज स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं नियम 38-झ पेश करती हूंः

''38-झ (1) किसी बिल पर सेलेक्ट कमेटी की रिपोर्ट को कमेटी का सभापति सभा के सामने रखेगा।

(2) रिपोर्ट को पेश करते समय यदि सभापति कुछ कहना चाहे तो वह केवल वस्तुस्थिति का संक्षेप में विवरण देगा परन्तु इस अवसर पर वाद-विवाद नहीं होगा।''

***अध्यक्षः** इस नियम के सम्बन्ध में भी कोई संशोधन नहीं है। इसलिये मैं इसे मतदान के लिये पेश करता हूं।

नियम 38-झ स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं नियम 35-ञ पेश करती हूंः

''38-ञ मंत्री सेलेक्ट कमेटी की प्रत्येक रिपोर्ट को छपवायेंगे और उसकी एक प्रति सभा के प्रत्येक सदस्य के उपयोग के लिये उपलब्ध कराई जायेगी। वह रिपोर्ट संशोधित बिल के साथ, जब तक कि अध्यक्ष इसके विपरीत आदेश न दें, भारत सरकार के गजट में प्रकाशित की जायेगी।''

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं किः

''प्रस्तावित नियम 38-ञ में 'संशोधित बिल के साथ' शब्दों की जगह 'उस संशोधित बिल के साथ' शब्द रख दिये जायें।''

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

मेरे विचार से श्रीमान्, जिस कारण यह संशोधन पेश किया गया है, वह स्पष्ट है और स्वीकार कर लिया जाना चाहिये।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** श्रीमान्, मैं इस संशोधन को स्वीकार करती हूं।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि सभा इस संशोधन को स्वीकार करने की आज्ञा देती है।

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधित नियम को सभा के सामने रखता हूं।

नियम 38-ञ संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** मैं नियम 38-ट को पेश करती हूं:

''38-ट (1) किसी बिल पर सेलेक्ट कमेटी की अन्तिम रिपोर्ट पेश होने पर, जिस सदस्य ने बिल पेश किया हो, वे प्रस्ताव कर सकते हैं कि:

(क) जिस बिल पर सेलेक्ट कमेटी ने रिपोर्ट पेश की है, उस पर विचार किया जाये:

परन्तु शर्त्त यह है कि यदि रिपोर्ट की एक प्रति सदस्यों के उपयोग के लिये तीन दिन तक उपलब्ध न कराई गई हो तो सभा का कोई सदस्य उस पर इस प्रकार विचार होने के सम्बन्ध में आपत्ति कर सकता है और जब तक अध्यक्ष अपने विवेक से रिपोर्ट पर विचार होने की आज्ञा नहीं दें, इस प्रकार की आपत्ति मान्य होगी; या

(ख) जिस बिल पर सेलेक्ट कमेटी ने रिपोर्ट पेश की है वह या: तो

(1) बिना सीमाबन्दी किये हुये; या

(2) केवल विशेष खण्डों या संशोधनों के सम्बन्ध में; या

(3) सेलेक्ट कमेटी को इस आदेश के साथ कि बिल में किसी विशेष या अतिरिक्त आदेश को स्थान दिया जाये;

सेलेक्ट कमेटी के पास वापस भेजा जाये।

(2) यदि वे सदस्य जिन्होंने बिल पेश किया हो, यह प्रस्ताव करें कि बिल पर बिचार किया जाये तो कोई भी सदस्य संशोधन के रूप में यह प्रस्ताव कर सकते हैं कि बिल को सेलेक्ट कमेटी के पास वापस भेजा जाये।''

***अध्यक्ष:** नियम 38-ट के सम्बन्ध में कोई संशोधन पेश नहीं हुए हैं। इसलिये मैं उस पर मतदान लेता हूं।

नियम 38-ट स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं नियम 38-ठ पेश करती हूं:

''38-ठ (1) नियम 38-क से 38-ट तक के आदेश उस भारतीय विधान के मसविदे (जिसका आगे विधान के नाम से उल्लेख किया गया है) पर लागू नहीं होंगे, जिसे इस सभा के 29 अगस्त सन् 1947 ई. के प्रस्ताव के अनुसार नियुक्त की हुई मसविदा तैयार करने वाली कमेटी ने निश्चित किया है और कोई भी सदस्य अपने इरादे की सूचना देकर विधान को पेश कर सकता है और विधान को प्रस्तुत करने की आज्ञा मांगने के लिये प्रस्ताव करने की आवश्यकता न होगी।

(2) इस नियम के अधीन विधान को पेश करने की सूचना पांच दिन पहले देनी होगी जब तक कि अध्यक्ष इससे कम समय पहले सूचना देने पर विधान को पेश करने की आज्ञा न दे दें।''

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, इस खंड के सम्बन्ध में मुझे कई संशोधन पेश करने हैं। पहले मैं यह पेश करना चाहता हूं कि:

''प्रस्तावित नियम 38-ठ के उपनियम (1) में 'विधान के मसविदे' शब्दों की जगह 'विधान के मसविदे पर विचार' शब्द रख दिये जायें।''

यह संशोधन केवल शब्दों से सम्बन्ध रखता है। इसके अतिरिक्त मैं यह पेश करना चाहता हूं कि:

''प्रस्तावित नियम 38-ठ के उपनियम (1) में '(जिसका आगे विधान के नाम से उल्लेख हुआ है)' शब्दों के साथ लगाये हुए कोष्ठक निकाल दिये जायें और 'उल्लेख किया गया है' शब्दों की जगह 'उल्लेख हुआ है' शब्द रखे जायें।''

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

इस संशोधन के सम्बन्ध में श्रीमान्, मुझे यह कहना है कि 'विधान' और विधान के मसविदे में अन्तर है। यहां विधान के मसविदे का उल्लेख बाद को 'विधान' के नाम से किया गया है। 'विधान' शब्द 'विधान के मसविदे' के अर्थ में रखा गया है परन्तु ये शब्द एक दूसरे के स्थान में नहीं रखे जा सकते। संशोधन का भाग दफ्तर की एक गलती ठीक करने के लिये पेश किया गया है।

इसके बाद श्रीमान्, मैं यह पेश करना चाहता हूं कि:

''प्रस्तावित नियम 38-ठ के उपनियम (1) में से निम्नलिखित शब्द निकाल दिये जायें:

'और कोई भी सदस्य अपने इरादे की सूचना देकर विधान पेश कर सकता है और विधान को प्रस्तुत करने की आज्ञा मांगने के लिये प्रस्ताव करने की आवश्यकता न होगी'।''

इसके अतिरिक्त मैं यह पेश करना चाहता हूं कि:

''प्रस्तावित नियम 38-ठ के उपनियम (1) के बाद निम्नलिखित नया उपनियम जोड़ दिया जाये:

'(1क) विधान का मसविदा जितनी जल्दी हो सकेगा, भारत सरकार के गजट में प्रकाशित किया जायेगा।

(1ख) कोई सदस्य अपने इरादे की सूचना देकर विधान का मसविदा पेश कर सकता है, परन्तु उसे प्रस्तुत करने की आज्ञा मांगने के लिये प्रस्ताव करने की आवश्यकता न होगी'।''

श्रीमान्, मैंने विधान के भारत सरकार के गजट में प्रकाशित होने के उद्देश्य से यहां एक नया नियम (1क) जोड़ने का प्रयत्न किया है। इससे इसका आश्वासन मिल जाता है कि जो कुछ यहां होगा उसकी सूचना जनसाधारण को मिलेगी। इसकी स्पष्टत: बड़ी आवश्यकता है। प्रकाशन और प्रचार प्रजातंत्रीय व्यवस्था का आवश्यक अंग है। इसलिये इस विधान का प्रकाशन होना चाहिये। जहां तक 1(ख) का सम्बन्ध है, यह केवल उपनियम (1) का अन्तिम भाग है; परन्तु इसे एक स्वतंत्र खंड बना दिया गया है, ताकि गजट में प्रकाशन सम्बन्धी खंड बीच में रखा जा सके।

मैं यह भी पेश करना चाहता हूं कि:

''प्रस्तावित नियम 38-ठ के उपनियम (2) में और प्रस्तावित नियम 38-ढ, 38-ण, 38-त, 38-थ, 38-द, 38-ध और 38-न में जहां कहीं, विधान' शब्द आया हो, उसकी जगह 'विधान का मसविदा' शब्द रखे जाये।''

जो प्रस्ताव मैंने पेश किया है उसीसे यह संशोधन भी पेश होता है।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** श्रीमान्, मैं नियम 38-ठ के सम्बन्ध में पेश किये हुए सभी संशोधनों का विरोध करती हूं, परन्तु संशोधन नं. 21 के अन्तिम भाग को स्वीकार करती हूं, अर्थात् 'उल्लेख किया गया है' शब्दों की जगह 'उल्लेख हुआ है' शब्द रखे जायें। प्रकाशन का जानबूझकर उल्लेख नहीं किया गया है, क्योंकि विधान का मसविदा तैयार होने पर अध्यक्ष महोदय उसे प्रकाशित करने की, जैसी भी व्यवस्था वे चाहेंगे, करेंगे।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** ऐसी दशा में मैं अन्य सभी संशोधनों को वापस लेने के लिये सभा की आज्ञा चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताविका ने केवल एक संशोधन स्वीकार किया है; अर्थात् 'उल्लेख किया गया है' शब्दों की जगह 'उल्लेख हुआ है' शब्द रखे जायें। इसे सभा ने स्वीकार कर लिया है। और सभी संशोधन वापस ले लिये गये हैं। संशोधित खंड स्वीकार कर लिया गया है।

नियम 38-ठ संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** श्रीमान्, मैं आपकी अनुमति से नियम 38-ड पेश करती हूं:

''38-ड. जब विधान पेश किया जाये, तो विधान को पेश करने वाले सदस्य यह प्रस्ताव कर सकते हैं कि सभा उस पर विचार करे:

परन्तु इस प्रकार का प्रस्ताव उस समय तक न किया जायेगा, जब तक कि विधान की प्रतियां सदस्यों के उपयोग के लिये उपलब्ध न कराई जायें और जब तक प्रस्ताव के पेश होने के पहले तीन दिन तक विधान

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

की प्रतियां उपलब्ध न कराई जायें, तो कोई भी सदस्य इस प्रकार के किसी प्रस्ताव पर आपत्ति कर सकता है। और जब तक अध्यक्ष अपने विवेक से प्रस्ताव को पेश करने की आज्ञा नहीं दें, इस प्रकार की आपत्ति मान्य होगी।''

***अध्यक्ष:** नियम 38-ड के सम्बन्ध में कोई संशोधन पेश नहीं किया गया है।

नियम 38-ड स्वीकार कर लिया गया।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं यह पेश करता हूं कि:

''प्रस्तावित नियम 38-ड के स्थान पर निम्नलिखित नया नियम जोड़ दिया जाये अर्थात्:

'38-ड जब यह प्रस्ताव किया जाये कि विधान के मसविदे पर विचार किया जाये, तो कोई अन्य दो दिन पहले सूचना देकर यह प्रस्ताव कर सकता है कि उसके सम्बन्ध में जनमत जानने के लिये उसे घुमाया जाये या यह कि उसे अध्यक्ष की बनाई हुई सेलेक्ट कमेटी के पास भेजा जाये'।''

अन्य प्रस्तावों की तरह इस सम्बन्ध में भी उद्देश्य यह है कि विधान के सम्बन्ध में जो कुछ किया जाये, उसका अधिक से अधिक प्रचार किया जाये; परन्तु श्रीमान्, यदि इस दिशा में कोई ऐसी कार्यवाही करना चाहे, जिसे आप अपने विवेक से उचित समझें, तो मैं इस संशोधन को वापस लेने के लिये तैयार हूं, परन्तु जैसा कि मैं कह चुका हूं, प्रचार प्रजातंत्रीय व्यवस्था का एक आवश्यक अंग है।

***अध्यक्ष:** मेरा अपना विचार यह है कि जब मसविदा तैयार करने वाली कमेटी आखिरी मसविदा मुझे दे देगी, तो मैं उसे गजट में प्रकाशित करवा दूंगा और साथ ही मैं इसकी सस्ती प्रतियां तैयार करवा दूंगा, ताकि जो कोई भी इसके बारे में दिलचस्पी रखता हो उसे इसकी प्रतियां मिल सकें और वह इसका अध्ययन करके जो कोई भी सुझाव देना चाहे, दे सके और मैं इसकी भी व्यवस्था करवा दूंगा कि विधान-परिषद् के सदस्यों को, उस पर विचार होने के लिये जो बैठक हो, उससे काफी समय पहले, उसकी एक-एक छपी हुई प्रति मिल जाये।

***मि. नजीरुद्दीन अहमद:** आपकी अनुमति से मैं यह कहना चाहता हूं कि इससे मेरे उद्देश्य की पूर्ति इन संशोधनों से भी अधिक हो जायेगी और मैं सभा से अपना प्रस्ताव वापस लेने की आज्ञा चाहता हूं।

सभा की अनुमति से संशोधन वापस ले लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** श्रीमान् मैं खण्ड 38-ढ पेश करती हूं:

''38-ढ, जब कोई इस प्रकार का प्रस्ताव, कि विधान पर या किसी बिल पर विचार किया जाये, स्वीकार कर लिया जाये तो कोई सदस्य विधान के या बिल, जैसी भी दशा हो, के सम्बन्ध में संशोधन का प्रस्ताव कर सकता है।''

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, मैं यह पेश करता हूं कि:

''प्रस्तावित नियम 38-ढ में 'स्वीकार कर लिया जाये' शब्दों की जगह 'सहमति से स्वीकार कर लिया जाये' शब्द रखे जायें; 'कोई सदस्य' शब्दों की जगह 'कोई अन्य सदस्य' शब्द रखे जायें और 'के सम्बन्ध में संशोधन' शब्दों की जगह 'संशोधन' शब्द रखा जाये।''

संशोधन के पहले भाग के सम्बन्ध में मुझे यह कहना है कि व्यवस्थापिका सभा में 'स्वीकार कर लिया जाये' की अपेक्षा 'सहमति से स्वीकार कर लिया जाये' शब्द सर्वमान्य हैं। संशोधन के दूसरे भाग के सम्बन्ध में 'कोई सदस्य' शब्दों की जगह 'कोई अन्य सदस्य' शब्द रखने का सुझाव पेश किया गया है, ताकि प्रस्तावक और अन्य सदस्यों में भेद हो सके। संशोधन का अन्तिम भाग केवल मसविदा ठीक करने के लिये है।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** मैं इस संशोधन का विरोध करती हूं, क्योंकि 'स्वीकार कर लिया जाये' शब्द असेम्बली के नियमों में स्वीकार किये गये हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं अपना संशोधन वापस लेने की आज्ञा चाहता हूं।

संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिये गये।

नियम 38-ढ स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** आपकी अनुमति से मैं खण्ड 38-ण पेश करती हूं:

''3-ण, (1) यदि किसी प्रस्तावित संशोधन की सूचना विधान या किसी बिल पर जैसी भी दशा हो, विचार होने के दिन के पूरे दो दिन पहले न दी गई हो, तो कोई भी सदस्य उस संशोधन के पेश होने पर आपत्ति कर सकता है और जब तक अध्यक्ष अपने विवेक से संशोधन पेश करने की आज्ञा न दे, इस प्रकार की आपति मान्य होगी।

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

(2) मंत्री, यदि समय होगा तो प्रस्तावित संशोधन की प्रत्येक सूचना को छपवायेंगे और प्रत्येक सदस्य के उपयोग के लिये उसकी एक प्रति उपलब्ध करायेंगे।''

*__श्री एच.वी. कामतः__ अध्यक्ष महोदय, मुझे अंग्रेजी भाषा का बहुत कम ज्ञान है और इसलिये बहुत सन्देह से मैं यह पेश करना चाहता हूं कि आदेशात्मक अंग्रेजी शब्द 'शैल' और दशामूलक 'इफ' बेमेल हैं और इस उपनियम के मुख्य खण्ड और उपखण्ड में इनको साथ-साथ रखने से सम्बन्धित नियमों के आशय को हानि पहुंच सकती है; परन्तु यदि यहां हमारे बुद्धिमान् भाषाविशेषज्ञों का मत इसके विपरीत हो, तो मैं इस संशोधन पर जोर नहीं देना चाहता। मैं यह संशोधन पेश करता हूं किः

''प्रस्तावित नियम 38-ण के उपनियम (2) में 'मंत्री, यदि समय होगा तो प्रस्तावित संशोधन की प्रत्येक सूचना को छपवायेंगे' शब्दों की जगह 'मंत्री, यदि समय होगा तो प्रस्तावित संशोधन की प्रत्येक सूचना को छपवा सकते हैं या मंत्री, प्रस्तावित संशोधन की प्रत्येक सूचना को छपवायेंगे' शब्द रखे जायें।''

*__श्रीमती जी. दुर्गाबाईः__ मैं इस संशोधन का विरोध करती हूं।

*__अध्यक्षः__ इस दशा में मैं श्री कामठ के संशोधन को सभा के सामने रखता हूं।

संशोधन स्वीकार नहीं किया गया।

*__अध्यक्षः__ अब मैं खण्ड 38-ण को सभा के सामने रखता हूं।

नियम 38-ण स्वीकार कर लिया गया।

*__श्रीमती जी. दुर्गाबाईः__ श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं नियम 38-त पेश करती हूंः

''38-त, संशोधनों पर साधारणतया विधान या बिल के उन खण्डों के क्रमानूसार विचार होगा, जिसके सम्बन्ध में वे पेश किये गये हों और ऐसे किसी खण्ड के सम्बन्ध में, जैसी भी दशा हो, यह प्रस्ताव किया हुआ समझा जायेगा कि 'यह खण्ड विधान का अंग होगा' या 'यह खण्ड बिल का अंग होगा'।''

***अध्यक्षः** इस नियम के सम्बन्ध में कोई संशोधन पेश नहीं किया गया है। इसलिये मैं इसे सभा के सामने रखता हूं।

नियम स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं नियम 38-थ पेश करती हूं:

''38-थ. जब यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाये कि विधान या बिल पर विचार किया जाये तो इन नियमों के आदेशों के अतिरिक्त अध्यक्ष को अधिकार होगा कि वे अपने विवेक से विधान या उसके किसी अंग के या, जैसी भी दशा हो, बिल या उसके किसी अंग के एक-एक खण्ड को असेम्बली में पेश करें। जब यह विधि स्वीकार की जायेगी तो अध्यक्ष प्रत्येक खण्ड को अलग उठायेंगे और जब उसके सम्बन्ध में संशोधनों पर विचार हो जाये तो वे यह प्रश्न सभा के सामने रखेंगे कि 'यह खण्ड (या, जैसी भी दशा हो, यह संशोधित खण्ड) विधान का अंग होगा (या, जैसी भी दशा हो, बिल का अंग होगा)'।''

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूं कि:

''प्रस्तावित नियम 38-थ में 'स्वीकार कर लिया जाये' शब्दों की जगह 'सहमति से स्वीकार कर लिया जाये' और '(या, जैसी भी दशा हो, बिल या उसके किसी अंग को)' शब्दों की जगह '(या, जैसी भी दशा हो, बिल या उसके किसी अंग के)' शब्द और कोष्ठक रखे जायें।''

श्रीमान्, पहले भाग के सम्बन्ध में विचार हो चुका है। इसलिये मैं इस पर जोर नहीं देता कि 'स्वीकार कर लिया जाये' शब्दों की जगह 'सहमति से स्वीकार कर लिया जाये' शब्द रखे जायें। परन्तु अपने संशोधन के दूसरे भाग के सम्बन्ध में मैं यह कहना चाहता हूं कि 'जैसी भी दशा हो' शब्द दो बार आये हैं। अन्त में यह शब्द कोष्ठकों के अन्दर रखे गये हैं और पहले कोष्ठकों के अन्दर नहीं रखे गये हैं। इसलिये एकरूपता की दृष्टि से ही मैंने यह संशोधन पेश किया है।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** मैं संशोधन के पहले भाग को अनावश्यक समझती हूं। शब्दों को कोष्ठकों के अन्दर रखने के बारे में जो दूसरा भाग है, उसे मैं स्वीकार करती हूं।

***अध्यक्षः** प्रस्ताविका ने दूसरा भाग स्वीकार कर लिया है और मैं अब संशोधित नियम को सभा के सामने रखता हूं।

नियम 38-थ संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं नियम 38-द पेश करती हूं:

''38-द(1) जब यह प्रस्ताव कि विधान पर विचार हो, स्वीकार कर लिया जाये और विधान के सम्बन्ध में सभी संशोधनों पर विचार हो जाये, तो कोई भी सदस्य यह प्रस्ताव कर सकता है कि विधान स्वीकार कर लिया जायेः

परन्तु शर्त यह है कि अध्यक्ष यह प्रस्ताव करने की आज्ञा देने के पहले विधान को उसके संशोधित रूप में नियम 38-ठ व उपनियम (1) में उल्लिखित मसविदा तैयार करने वाली कमेटी के पास भेज सकते हैं और उसे यह आदेश दे सकते हैं कि खण्डों की ऐसी पुनर्गणना और हाशिये के लेखों को ऐसे दुहराया और पूरा किया जाये, जैसे कि आवश्यक समझा जाये तथा विधान के सम्बन्ध में ऐसे रस्मी और अनुवर्ती संशोधनों की सिफारिश कर सकते हैं जो कि आवश्यक हों।

(2) जब विधान इस प्रकार मसविदा तैयार करने वाली कमेटी के पास भेजा जाये और कमेटी ने अपनी रिपोर्ट पेश कर दी हो, तो कोई भी सदस्य यह प्रस्ताव कर सकता है कि कमेटी द्वारा दुहराये हुए विधान को स्वीकार कर लिया जाये।

(3) उपनियम (1) या उपनियम (2) के अधीन किये हुए किसी प्रस्ताव पर कोई ऐसा संशोधन न किया जायेगा, जो विधान पर विचार होने के बाद किये हुए किसी संशोधन में रस्मी या अनुवर्ती रूप में न हो।''

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं अपने संशोधन के पहले भाग को अर्थात् 'स्वीकार कर लिया जाये' शब्दों की जगह 'सहमति से स्वीकार कर लिया जाये' नहीं पेश कर रहा हूं, परन्तु मैं संशोधन नं. 30 पेश हूं, जो इस प्रकार है किः

''प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (1) के शर्तिया खण्ड में 'मसविदा तैयार वाली कमेटी' शब्दों के बाद और 'नियम 38-ठ के

उपनियम (1)' शब्दों के पहले अर्धविराम लगाये जायें। मैं यह भी पेश करता हूं कि:

प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (1) के शर्तिया खण्ड में 'खण्डों की ऐसी पुनर्गणना' शब्दों के बाद 'और विरामों को ऐसे दुहराया जाये' शब्दों को जोड़ा जाये।''

इन संशोधनों के बारे में मुझे यह कहना है कि नियम में यह प्रस्ताव किया गया है कि जब यह सभा विधान को स्वीकार कर लेगी, विधान का मसविदा गलतियों को ठीक करने और उसमें परिवर्तन करने के लिये मसविदा तैयार करने वाली कमेटी के पास भेजा जायेगा। परन्तु उसमें विरामों को ठीक करने के लिये कोई आदेश नहीं है, यद्यपि व्यवस्थापिका सभा के नियमों में यह अधिकार मंत्री को दिया हुआ है। जहां तक विधान का सम्बन्ध है, उस नियम का अनुसरण नहीं किया जा रहा है। इसलिये कमेटी को विराम दुहराने का काम भी सौंपा जाना चाहिये।

मैं अपना संशोधन नं. 32 भी पेश करता हूं, जो इस प्रकार है कि:

''प्रस्तावित नियम 38-द के उपनियम (2) में 'मसविदा तैयार करने वाली कमेटी के पास भेजा जाये' शब्दों के पहले 'उपनियम (1) के शर्तिया खंड के अधीन' शब्द जोड़ दिये जायें।''

*श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** मैं संशोधन नं. 30 और 31 को स्वीकार करती हूं, परन्तु मैं संशोधन नं. 32 का विरोध करती हूं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** तब श्रीमान्, मैं अपना संशोधन नं. 32 वापस लेने की आज्ञा चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** मैं आशा करता हूं कि सभा संशोधन नं. 32 वापस लेने की आज्ञा देती है।

सभा की अनुमति से संशोधन नं. 32 वापस ले लिया गया।

संशोधन नं. 30 और 31 स्वीकार कर लिये गये।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** श्रीमान्, मुझे दो शब्दिक संशोधनों का प्रस्ताव करना है एक यह है कि 'सभी संशोधनों' की जगह 'संशोधनों' शब्द रखा जाये। दूसरा यह है कि 'संशोधनों' शब्द के बाद 'यदि कोई पेश किये गये हों' शब्द जोड़ दिये जायें।

***अध्यक्षः** तब मैं नियम 38-द (1), (2) और (3) को उनके संशोधित रूप में सभा के सामने रखता हूं।

नियम संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** श्रीमान्, आपकी अनुमति से मैं नियम 38-ध पेश करती हूं:

"38-ध.(1) जब यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाये कि बिल पर विचार किया जाये और उस बिल के सम्बन्ध में कोई संशोधन पेश नहीं किये गये हों, तो जिस सदस्य ने बिल पेश किया हो, वे तुरन्त प्रस्ताव कर सकते हैं कि बिल स्वीकार कर लिया जाये।

(2) यदि बिल के सम्बन्ध में कोई संशोधन पेश किया जाये, तो जिस दिन बिल पेश किया जाये, उसी दिन किसी प्रस्ताव के प्रस्तुत होने पर कोई सदस्य आपति कर सकता है और जब तक अध्यक्ष अपने विवेक से उस प्रस्ताव के प्रस्तुत होने की आज्ञा न दें, इस प्रकार की आपत्ति मान्य होगी:

परन्तु शर्त यह है कि अध्यक्ष प्रस्ताव के प्रस्तुत होने की आज्ञा देने के पहले उस बिल को संशोधित रूप में या तो नियम 38-ठ के उपनियम (1) में उल्लिखित मसविदा तैयार करने वाली कमेटी के पास भेज सकते हैं, या उस तत्सम्बन्धी कमेटी के पास भेज सकते हैं, जिसमें असेम्बली के सदस्य हों और जिसे उन्होंने नियुक्त किया हो और उसे यह आदेश दे सकते हैं कि खण्डों की ऐसी पुनर्गणना और हाशिया के लेखों को ऐसे दुहराया और पूरा किया जाये, जैसे कि आवश्यक समझा जाये तथा बिल के सम्बन्ध में ऐसे रस्मी और अनुवर्ती संशोधनों की सिफारिश कर सकते हैं, जो कि आवश्यक हों।

(3) यदि आपत्ति मान्य हो, तो यह प्रस्ताव कि बिल स्वीकार कर लिया जाये, आगे किसी अन्य दिन पेश किया जाये।

(4) जब बिल इस प्रकार उपनियम (2) के शर्त्तिया खण्ड के अधीन नियुक्त मसविदा तैयार करने वाली कमेटी के पास भेजा जाये और कमेटी ने अपनी रिपोर्ट पेश कर दी हो, तो कोई भी सदस्य यह प्रस्ताव कर सकता है कि कमेटी द्वारा दुहराये हुये विधान को स्वीकार कर लिया जाये।

(5) उपनियम (2), उपनियम (3) या उपनियम (4) के अधीन किये हुये किसी प्रस्ताव पर कोई ऐसा संशोधन न किया जायेगा, जो बिल पर विचार होने के बाद किये हुये किसी संशोधन में रस्मी या अनुवर्ती रूप में न हो।''

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** मेरे संशोधन नं. 33 का उद्देश्य यह है कि 'स्वीकार कर लिया जाये' शब्दों की जगह 'सहमति से स्वीकार कर लिया जाये' शब्द रखे जायें, परन्तु इस पर विचार हो चुका है और इसलिये मैं इसे पेश नहीं करता हूं। मैं संशोधन नं. 34 और 35 को पेश करता हूं:

''नं. 34 प्रस्तावित नियम 38-ध के उपनियम (2) के शर्तिया खण्ड में 'खण्डों की ऐसी पुनर्गणना' शब्दों के बाद 'और विरामों को ऐसे दुहराया जाये' शब्दों को जोड़ा जाये।"

''नं. 35 प्रस्तावित नियम 38-ध के उपनियम (4) में 'विधान' शब्द की जगह 'बिल' शब्द रख दिया जाये।''

श्रीमान्, जहां तक इस नियम अर्थात् नियम 38-ध का सम्बन्ध है, वह केवल बिल के बारे में है और विधान के बारे में नहीं है। कुछ नियमों में 'विधान' और 'बिल' दोनों शब्द प्रयोग में आये हैं, परन्तु इस नियम विशेष को मैंने ध्यान से देखा और मैं तो यह समझता हूं कि यह केवल बिल के बारे में है। इसलिये मेरे विचार से 'विधान' शब्द दफ्तर की गलती से रख दिया गया है और उसकी जगह 'बिल' शब्द रखा जाना चाहिये।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** श्रीमान्, मैं संशोधन नं. 34 को स्वीकार करती हूं, परन्तु संशोधन नं. 35 अनावश्यक है, क्योंकि दफ्तर की गलती ठीक कर दी गई है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** परन्तु कठिनाई यह है कि मूल प्रस्ताव उसी प्रकार है, जैसे वह छापा गया था और उसमें गलती ठीक नहीं की गई है। इसलिये उसे गलती ठीक करके पेश करना होगा।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव करती हूं कि:

" 'विधान' शब्द की जगह 'बिल' शब्द रखा जाये।"

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मेरा संशोधन भी इसी प्रकार है।

***अध्यक्ष:** इसका अर्थ यह है कि प्रस्ताविका ने दोनों संशोधनों को स्वीकार कर लिया है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** श्रीमान्, उपनियम (1) में यह कहा गया है 'बिल पर विचार किया जाये..... इत्यादि' उपनियम (4) में यह दिया हुआ है, 'जब बिल इस प्रकार...' अन्त में 'विधान' शब्द आया है। क्या उस शब्द की जगह 'बिल' शब्द रखना है?

***अध्यक्ष:** सभी जगह 'विधान' शब्द की जगह 'बिल' शब्द को रखना है। जो लोग इसके पक्ष में हैं वे 'हां' कहेंगे।

नियम संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** आपकी अनुमति से मैं नियम 38-न पेश करती हूं:

"38-न जिस सदस्य ने बिल पेश किया हो वह बिल पर विचार होने के किसी समय बिल को वापस लेने के लिये आज्ञा मांगने का प्रस्ताव कर सकता है और जब इस प्रकार की आज्ञा दे दी जाये तो उस बिल के सम्बन्ध में कोई प्रस्ताव नहीं किया जा सकेगा।"

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि:

"प्रस्तावित नियम 38-न में 'और जब इस प्रकार की आज्ञा' शब्दों की जगह 'और अगर इस प्रकार की आज्ञा' शब्द रखे जाये"।

यह केवल शाब्दिक संशोधन है।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई:** मैं इस संशोधन को स्वीकार करती हूं।

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

नियम 38-न संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

*__श्रीमती जी. दुर्गाबाई:__ आपकी अनुमति से मैं नियम 38-प पेश करती हूं:

''38-प जब विधान को असेम्बली स्वीकार कर लेगी, तो वह अध्यक्ष के सम्मुख पेश किया जायेगा, जो उस पर हस्ताक्षर करके उसे अधिकृत बना देंगे।''

*__श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:__ यहां थोड़ी-सी गलती रह गई है। खण्ड में कहा गया है, 'जब खण्ड को असेम्बली स्वीकार कर लेगी तो वह अध्यक्ष के सम्मुख पेश किया जायेगा.....।' उसे उनके सम्मुख पेश करने का कोई साधन नहीं है। इसकी जगह हम इस खण्ड को इस प्रकार संशोधित करके रख सकते हैं:

''जब विधान को असेम्बली स्वीकार कर ले, तो अध्यक्ष उस पर हस्ताक्षर करके उसे अधिकृत बना देंगे।''

*__श्रीमती जी. दुर्गाबाई:__ श्रीमान्, मैं इस संशोधन को स्वीकार करती हूं।

*__अध्यक्ष:__ प्रस्ताव यह है कि:

''जब विधान को असेम्बली स्वीकार कर ले, तो अध्यक्ष उस पर हस्ताक्षर करके उसे अधिकृत बना देंगे।''

नियम 38-प संशोधित रूप में स्वीकार कर लिया गया।

*__श्री नजीरुद्दीन अहमद:__ मैंने जिस नये नियम 38-प की सूचना दी है, उसे मैं पेश करता हूं, वह इस प्रकार है:

''नियम 38-प के स्थान पर निम्नलिखित नया नियम रखा जाये:

'38-प, अध्यक्ष द्वारा इस प्रकार अधिकृत बनाया हुआ विधान का मसविदा भारत सरकार के गजट में प्रकाशित किया जायेगा और उसके बाद वह स्वतंत्र भारत का विधान हो जायेगा'।''

*__श्रीमती जी. दुर्गाबाई:__ मैं इस नये नियम को स्वीकार नहीं करती हूं। इस विषय पर विचार हो चुका है।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** इस दृष्टि से कि यह केवल प्रबन्ध-सम्बन्धी प्रश्न, है, मैं इस प्रस्ताव को वापस लेने के लिये सभा की आज्ञा चाहता हूं।

प्रस्ताव सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** मैं सभा से इसके लिये क्षमा चाहता हूं कि मैं इतनी बार बोल रहा हूं। परन्तु ऐसा करने में मेरा यही उद्देश्य रहा है कि अपनी बुद्धि के अनुसार इन नियमों को सुधारने में सहायक बनु मुझे इसका भय है कि सभा इन बातों से ऊब गई है। मुझे इसका खेद है। चूंकि इन त्रुटियों की ओर मेरा ध्यान गया, मैंने यह सोचा कि यह मेरा कर्तव्य है कि मैं इन्हें सभा के सामने रखूं।

***अध्यक्षः** माननीय सदस्य इसके लिये सभा से क्षमा-याचना न करें। मुझे विश्वास है कि वे हम सभी के धन्यवाद के पात्र हैं।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाईः** मैं खण्ड 38-फ पेश करती हूंः

''जब नियम 38-फ में उल्लिखित किसी बिल को असेम्बली स्वीकार कर ले, तो उसकी एक प्रति, जिस पर अध्यक्ष के हस्ताक्षर होंगे, गवर्नर-जनरल को उनकी स्वीकृति के लिये भेजी जायेगी। जब उस बिल के सम्बन्ध में गवर्नर जनरल अपनी स्वीकृति दे दें, तो वह कानून हो जायेगा और भारत सरकार के गजट में प्रकाशित किया जायेगा।''

***श्री एच.वी. कामतः** श्रीमान्, इस सम्बन्ध में मुझे यह सुझाव रखना है कि चूंकि इस नियम 38-फ के विरुद्ध बहुत आलोचना हुई है, इसलिये इसे आपत्तियों के प्रकाश में फिर से जांच करने के लिये विशेषज्ञों की एक कमेटी के पास भेजा जाये।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** इस नियम के सम्बन्ध में मुझे यह कहना है कि जिस समय इस पर विचार हो रहा था, मैंने डॉ. अम्बेडकर से दो बातें स्पष्ट करने के लिये कहा था। मेरा अब भी यह विचार है कि गवर्नर-जनरल के पास भेजने और उनकी स्वीकृति प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं है। मैं इस नियम को कमेटी के पास भेजने के पक्ष में नहीं हूं, क्योंकि यदि प्रस्ताविका महोदया

डॉ. अम्बेडकर से विचार-विमर्श करके अपना विचार बदल लें, तो यह सम्भव है कि इसको यहां इसी समय बदल लिया जाये। यदि वे ऐसा करें तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। मेरे विचार से ये नियम नवीन भारतीय विधान को स्वीकार करने के बारे में है और यही नियम सिवाय एक नियम के वर्तमान विधान में संशोधन करने के बारे में भी है। विधान-परिषद् की व्यवस्थापिका सभा में भारतीय संघ के लिये नियम और कानून बनाने का अधिकार प्रबन्धकारिणी को देने के बारे में अन्य कानून भी पेश किये जायेंगे। इसलिये जहां तक इन अन्य बिलों का सम्बन्ध है, उसका नियमन भारत सरकार के संशोधित कानून द्वारा होता है। खण्ड 32 में यह व्यवस्था है कि इन नियमों के सम्बन्ध में गवर्नर जनरल की स्वीकृति आवश्यक है। उनको इसकी स्वतंत्रता है कि वे स्वीकृति न दें और या तो पूरे बिल को या उसकी किसी धारा आदि को पुनर्विचार के लिये वापस भेज दें। परन्तु जहां तक इस धारा का सम्बन्ध है, क्या हम यह चाहते हैं कि गवर्नर-जनरल इस अधिकार का प्रयोग करें? मेरा तो यह विचार है कि हम उन्हें यह अधिकार इसलिये दे रहे हैं कि सम्भव है कि कुछ त्रुटियां रह जायें। यह तर्कसंगत बात नहीं है त्रुटियां रह जाने की सम्भावना के कारण हम उन्हें यह अधिकार दें।

एक बात और कही गई थी। वर्तमान कानून के अधीन ब्रिटिश पार्लियामेंट द्वारा स्वीकृत स्वतंत्रता सम्बन्धी कानून के अधीन गवर्नर-जनरल को यह अधिकार दिया गया है कि वे सन् 1935 ई. के कानून को बदली हुई दशाओं के अनुरूप संशोधित कर लें। परन्तु इस अधिकार की अवधि 31 मार्च सन् 1948 तक ही है यदि वे उस कानून को इसीलिये संशोधित करें कि उनको इसका अधिकार दिया गया है, तो जहां तक इस कानून का सम्बन्ध है, वे व्यवस्थापिका सभा के ऊपर एक ऊंची व्यवस्थापिका का काम करेंगे। यदि किसी अन्य परिवर्त्तन के लिये इनकी स्वीकृति की आवश्यकता हो, तो वह अधिकार तो 31 मार्च सन् 1948 के बाद समाप्त हो जायेगा। अब बाद को भारत सरकार के कानून के परिवर्तित होने की कोई सम्भावना नहीं है। इसलिये जब भारत सरकार का संशोधित कानून रहेगा ही नहीं, तो हम गवर्नर-जनरल को दुबारा इस अधिकार को क्यों दें? इसके अतिरिक्त हम औपनिवेशिक व्यवस्थापिका सभा में विधान सम्बन्धी कानून का संशोधन करने का प्रयत्न नहीं कर रहे हैं। यही सभा नये भारतीय विधान पर विचार कर रही है और इसी सभा में हमने वर्तमान कानूनों का संशोधन करने का अधिकार लिया है। इसलिये ये दो बातें अर्थात् वर्तमान कानूनों के संशोधन और विधान-निर्माण में आधारभूत भेद है। विधान-निर्माण के लिये गवर्नर-जनरल की स्वीकृति लेने की कोई आवश्यकता नहीं है। जब हम कानून बना रहे हैं तो हमें यह गलती नहीं

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

करनी चाहिये। डॉ. अम्बेडकर ने कुछ ऐसी सलाह दी थी कि इस सभा को इसकी स्वतंत्रता है कि वह गवर्नर-जनरल के पास भेजने के बारे में जो आदेश है, उसमें संशोधन कर ले। इसीलिये उनका भिन्न मत है। डॉ. अम्बेडकर को तो इसकी स्वतंत्रता है ही कि वे अपना मत बदल लें। मैं उनसे अपील करता हूं कि वे इस पर फिर विचार करें। हम उस प्राचीन अभिशाप से मुक्त होना चाहते हैं, जो हमें 150 वर्ष तक पीड़ित करता रहा है। हमने इसके विरुद्ध बहुत काल तक संघर्ष किया है। हम फिर गवर्नर-जनरल के आगे गर्दन क्यों झुकायें, भले ही वह हमारा मनोनीत किया हुआ या कोई और आदमी क्यों न हो? इसलिये इस नियम को कमेटी के पास भेजने के बजाये हम सीधे-सीधे संशोधन कर सकते हैं।

*__श्री एच.वी. कामतः__ श्रीमान्, मेरी यह राय है कि जहां तक इस सभा का सम्बन्ध है आप सर्वोच्च अधिकारी हैं, और इस असेम्बली द्वारा स्वीकृत कोई बिल या प्रस्ताव स्वीकृति या समर्थन के लिये किसी बाहर के अधिकारी के पास न भेजा जाना चाहिये। ऐसी दशा में यह खण्ड अनावश्यक है।

*__अध्यक्षः__ क्या इस खंड के बारे में कोई अन्य सदस्य भी बोलना चाहते हैं? इस सम्बन्ध में कोई संशोधन भी नहीं है जब तक कि मैं श्री कामठ के इस सुझाव को कि यह कमेटी के पास भेजा जाये, एक संशोधन न समझूं।

*__श्री एच.वी. कामतः__ मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप उसे संशोधन ही समझें।

*__अध्यक्षः__ प्रस्ताव यह है कि:

‘‘प्रस्तावित नियम 38-फ मसविदा तैयार करने वाली कमेटी के पास भेजा जाये।’’

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

अध्यक्ष द्वारा आगामी अधिवेशन सम्बन्धी घोषणा

*__अध्यक्षः__ अब हम कार्यावली के अन्त तक पहुंच गये हैं। सभा समाप्त करने के पहले हमें एक काम और करना है और वह यह है कि आपको मुझे असेम्बली

का अगला अधिवेशन किसी उपयुक्त समय में करने का अधिकार देना है। नियमों के अधीन किसी निश्चित समय के बाद मैं अधिवेशन नहीं कर सकता। मेरे विचार से इस बार विधान के मसविदे पर विचार करने के लिये दूसरा अधिवेशन काफी समय बाद किया जा सकेगा। इसलिये मैं यह चाहता हूं कि आप उपयुक्त समय में अधिवेशन करने का अधिकार मुझे दें।

सेठ गोविन्ददासः सभापति जी, मैं यह प्रस्ताव करता हूं किः

''आगे हमारा अधिवेशन कब बुलाया जाये, इसका अधिकार सभापति को दे दिया जाये।''

***अध्यक्षः** क्या इस प्रस्ताव के बारे में कोई संशोधन है?

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** मेरे मस्तिष्क में जो कालक्रम (टाइम टेबुल) है, उसे मैं आपको बताऊंगा। मुझे यह आशा है कि मसविदा तैयार करने वाली कमेटी फरवरी के बीच तक अन्तिम मसविदा मुझे दे देगी और जब अन्तिम मसविदा मिल जायेगा, तो वह छपवाया जायेगा और समाचार पत्रों को भेजा जायेगा। वह गजट में प्रकाशित किया जायेगा और अन्य प्रकार से भी प्रकाशित किया जायेगा। जब व्यवस्थापिका सभा का अधिवेशन समाप्त होगा, जो मेरे विचार से मार्च के अन्त तक या अप्रैल के शुरू तक समाप्त होगा, तो मैं विधान के मसविदे पर विचार करने के सम्बन्ध में विधान-परिषद् के अगले अधिवेशन के लिये अप्रैल में किसी समय उपयुक्त तिथि निश्चित करूंगा और जब तक पूर्ण रूप से विचार न हो जाये और विधान अन्तिम रूप से स्वीकार न हो जाये, हम अधिवेशन करते रहेंगे।

***एक माननीय सदस्यः** क्या व्यवस्थापिका सभा के अधिवेशन और विधान-परिषद् के अधिवेशन के बीच कुछ समय मिलेगा?

***अध्यक्षः** मेरे विचार से मैं कुछ दिन का समय दूंगा, परन्तु लम्बा समय न मिलेगा।

***श्री आर.के. सिधवाः** हमें कम से कम पन्द्रह दिन की आवश्यकता होगी।

***अध्यक्षः** मैं कुछ समय दूंगा, परन्तु मैं इस समय कह नहीं सकता की वह कितना लम्बा होगा।

***एक माननीय सदस्यः** दो सप्ताह से कम नहीं।

***अध्यक्षः** मैं इस पर विचार करूंगा। यह इस पर निर्भर है कि व्यवस्थापिका सभा का अधिवेशन कब समाप्त होता है।

***एक माननीय सदस्यः** उसे 4 अप्रैल को समाप्त होना है।

***अध्यक्षः** हर साल यह कहा जाता है कि अधिवेशन फलां तारीख को समाप्त होगा, परन्तु वह बढ़ा ही दिया जाता है। यह सम्भव नहीं है कि आज कोई तिथि निश्चित की जाये, परन्तु, मैं उस अधिवेशन के बाद कुछ समय दूंगा।

इसके बाद सभा उस तारीख तक के लिये स्थगित हो गई, जिसे अध्यक्ष निश्चित करें।